हिन्दी

विश्वकोष

[illegible]

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,

सिद्धान्त-वारिधि, शब्दरत्नाकर, तत्त्वचिन्तामणि एम, आर, ए, एस

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सम्पादित।

नवम भाग

[ट—तैत्तिरिय]

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. IX.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU Prāchyavidyāmahārnava.

Siddhānta-vāridhi, Sabda-ratnākara, Tattva-chintāmani, M. R. A. S.

Compiler of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of Bangiya Sāhitya Parishat and Kāyastha Patrikā; author of Castes & Sects of Bengal, Mayurabhanja Archæological Survey Reports and Modern Buddhism;
Hony. Archæological Secretary Indian Research Society
Member of the Philological Committee, Asiatic
Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by P. C. Bose at the Visvakosha Press.
Published by
Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu
9 Visvakosha Lane, Baghbazar, Calcutta

1925.

हिन्दी

विश्वकोष

(नवम भाग)

ट

ट—संस्कृत और हिन्दी व्यञ्जनवर्णमालाका ग्यारहवां और ट वर्गका पहला अक्षर। इसका उच्चारण स्थान मूर्द्धा है। उच्चारणमें आभ्यन्तरप्रयत्न मूर्द्धस्थानके द्वारा जिह्वाका मध्यभाग स्पर्श और बाह्यप्रयत्न विवार, श्वास और अघोष है। मातृकान्यासमें दक्षिणस्फिगिमें (दक्षिण नितम्बमें) इसका न्यास किया जाता है। इसका आकार इस प्रकार है—"ट"। इस अक्षरमें कुबेर, यम और वायुका नित्य वास है।

तन्त्रके मतसे इसके पर्याय वा वाचक शब्द २० हैं—टङ्कार, कपाली, सोमेश, खेचरी, ध्वनि, मुकुन्द, विनदा, पृथ्वी, वैष्णवी, वारुणी, दक्षाङ्गक, अर्द्धचन्द्र, जरा, भूति, पुनर्भव, वृहस्पति, धनु, चित्रा, प्रमोदा, विमला, कटि, [illegible], गिरि, महाधनुः प्राणात्मा सुमुख और मरुत्।

कामधेनुतन्त्रके मतसे टकारका स्वरूप—यह वर्ण परम कुण्डली, कोटिविद्युल्लताकार, पञ्चदेवमय पञ्चप्राणयुक्त, त्रिगुणोपेत त्रिशक्तिसमन्वित और त्रिबिन्दुयुक्त है।

इसका ध्यान करनेसे अभीष्टकी सिद्धि होती है।

ध्यान—"[illegible] पुष्पवर्णाभां पूर्णचन्द्रनिभाननाम्।
दशबाहुसमायुक्तां सर्वालङ्कारसंयुताम्॥
धर्मकामार्थदां नित्यां भक्ताभीष्टप्रदां पराम्।
एवं ध्यात्वा ब्रह्मरूपां तन्मन्त्रं दशधा जपेत्॥"

(वर्णोद्धारतन्त्र)

इस मन्त्रको ध्यानपूर्वक दशबार जपनेसे अभीष्टसिद्धि होती है।

काव्यके प्रारम्भमें इसका विन्यास करनेसे खेद होता है।

ट (सं॰ स्त्री॰) टल्-ड। १ करङ्क, नारियलका खोपड़ा। (पु॰) २ वामन। ३ पाद चतुर्थांश, चौथाई भाग। ४ निःस्वन शब्द।

टँकना (हिं॰ क्रि॰) १ कील आदि जड़ कर जोड़ा जाना। २ सीया जाना, सिलाईमें जुड़ना। ३ सी कर बैठाया जाना। ४ रेतीका तेज होना। ५ अङ्कित होना लिखा जाना, दर्ज किया जाना। ६ सिल, चक्की आदि रेहा जाना, कुटना।

टँका (हिं॰ पु॰) १ पुराने समयका एक ताम्र जो एक तोलेके समान माना जाता था। २ नविका एक पुराना सिक्का टका। ३ एक प्रकारका गन्ना।

टँकाई (हिं॰ पु॰) १ टाँकनेकी क्रिया। २ टाँकनेकी मजदूरी।

टँकाना (हिं॰ क्रि॰) १ टाँकोंसे सिलवाना। २ सिला कर लगवाना। ३ खुरदुरा कराना, कुटाना। ४ सिला कर लगवाना।

टँकाना (हिं॰ क्रि॰) चिट्ठीकी जाँच कराना।

टँकारना (हिं॰ क्रि॰) धनुषकी ताँत तान कर ध्वनि उत्पन्न

करना, धनुषको डोरी खींच कर आवाज करना।

टंकी (हिं० स्त्री०) १ श्रीरागकी एक रागिणी। २ पानी-का छोटासा कुंड जो दीवार उठा कर बनाया जाता है, चौवच्चा, टाँका। ३ (Tank) वह बरतन जिसमें ज्यादे पानी समाता हो, टब।

टंकोर (हिं० पु०) टंकार देखो।

टंकोरना (हिं० क्रि०) १ पतञ्चिका तान कर शब्द उत्पन्न करना, धनुषकी डोरी खींच कर आवाज करना। २ ठोकर लगाना। ३ किसी वस्तुको जोरसे टकरानेके लिए तर्जनी वा मध्यमा अँगलीको कुण्डली बना कर उसकी नोकको अँगुठेसे दबा कर जोरसे छोड़ना।

टँकौरी (हिं० स्त्री०) वह छोटा तराजू जिससे सोना चाँदी आदि तौला जाता है, काँटा।

टँगड़ी (हिं० स्त्री०) घुटनेसे ले कर एँडी तकका भाग टाँग।

टँगना (हिं० क्रि०) १ लटकाना। २ फाँसी पर चढ़ना, फाँसी लटकना। ३ कपड़े आदि रखे जानेके लिये बंधी हुई रस्सी, अलगनी। ४ जुलाहोंकी उठौनी टाँगी जानेकी रस्सी।

टँगरी (हिं० स्त्री०) टंगडी देखो।

टँगा (हिं० पु०) मूँज।

टंटवंट (हिं० पु०) पूजा पाठका भारी आडम्बर, मिथ्या आडम्बर।

टंटा (हिं० पु०) १ प्रपंच, बखेड़ा, खटराग। २ उप-द्रव, हलचल, दङ्गा फसाद। ३ झगड़ा, लड़ाई, कलह।

टंडर (अं० पु०) १ किसी दूसरेसे कुछ काम करने या कोई माल किसी नियत दर पर बेचने या खरीदनेका इकरारनामा। २ अदालतका वह आज्ञापत्र जिसके द्वारा कोई मनुष्य किसीके प्रति अपना देना अदालतमें दाखिल करे।

टंडल (हिं० पु०) मजदूरोंका जमादार या मेट।

टँडिया (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका गहना जो बाँहमें पहना जाता है। यह अनन्तके आकारका होता लेकिन उससे भारी और बिना घुंडीका होता है, टाँड़, बहूंटा।

टँडुलिया (हिं० स्त्री०) काँटेदार बन चौलाई। वह साग और औषध दोनोंके काममें आती है।

टंडैल (हिं० पु०) टंडल देखो।

टंसरी (हिं० स्त्री०) एक वीणा।

टक (हिं० स्त्री०) १ स्थिर दृष्टि, गड़ी हुई नजर। २ बड़े तराजूका चौखूंटा पलड़ा जिस पर लकड़ी आदि रख कर तौला जाता है।

टकटकी (हिं० स्त्री०) स्थिर दृष्टि, गड़ी हुई नजर।

टकटोना (हिं० क्रि०) टकटोलना देखो।

टकटोलना (हिं० क्रि०) हाथसे छू कर पता लगाना, टटोलना।

टकटोहन (हिं० पु०) स्पर्श, छूनेकी क्रिया।

टकतन्त्री (सं० स्त्री०) आर्योंका एक प्राचीन वाद्ययन्त्र सितारके ढङ्गका एक प्राचीन बाजा।

टकबीड़ा (हिं० पु०) वह भेंट जो किसान विवाहादि के अवसर पर जमींदारको देते हैं, मघवच, शादियाना।

टकराना (हिं० क्रि०) १ जोरसे एक दूसरेमें ठोकर लगना, जोरसे भिड़ना। २ कार्यसिद्धिकी आशासे कई स्थानों पर कई बार आना जाना, घूमना।

टकारी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका वृक्ष।

टकसरा (हिं० पु०) आसाम, चटगाँव और बर्मामें होने-वाला एक प्रकारका बाँस।

टकसाल (हिं० स्त्री०) १ (सं० टङ्कशाला शब्दका अपभ्रंश रूप) मुद्रा प्रस्तुत होनेका कार्यालय, सिक्के बनने या ढलनेका कारखाना, वह स्थान जहाँ रुपये, पैसे आदि बनाये जाते हों।

अति प्राचीनकालसे भारतवर्षमें सोने चाँदी और ताँबे आदिके सिक्के व्यवहृत होते आये है। नाना-स्थानोंमें प्राचीन हिन्दू-राजाओंके नामाङ्कित बहुत सिक्के मिले हैं। उन सिक्कोंका आकार, परिमाण, विशुद्धता आदि अति विसदृश है। उनके देखनेसे सहजही प्रतीत होता है कि, तत्कालिक नरपतिगण राजकीय टकसालो-में अपने अपने राज्यके लिये सिक्के बनवाते थे। अलेक-सन्दरके समयसे लगा कर अंग्रेजोंके अधिकार समय तक भारतवर्षमें कोई शुमार नहीं कि कितने प्रकारके सिक्के चले हैं। मूल्य, परिमाण, आकार और गठनका पारिपाट्य प्रायः भिन्न भिन्न होता था। मुद्रा देखो।

राजाओंके सिवा और किसीके भी सिक्कोंके बनानेका

अधिकार न था। राजकीय टकसालोंमें शिल्पिगण हाथसे एक एक सिक्का बनाते थे। कहना फिजूल है कि प्राचीन हिन्दू राजाओंके समयके जितने भी सिक्के पाये गए हैं उनका सोना या चांदी अति विशुद्ध होने पर भी उनकी बनावट उतनी उमदा नहीं है क्योंकि वह हाथसे बनाया जाता था। सम्भवतः खूबसूरतीकी तरफ उनका लक्ष्य ही नहीं था ऐसा मालूम पड़ता है।

अलेकजन्दरके आक्रमणके बाद पञ्जाब और अफगानिस्तानमें, उनके द्वारा स्थापित नगरोंके शासनकर्त्ता ग्रीक-अक्षरोंमें सिक्के प्रचलित करवाते थे। परवर्ती शासनकर्त्ता ग्रीक और देशीय दोनों ही भाषाका व्यवहार करते थे।

मुगल सम्राटोंने सिक्कोंकी खूबसूरतीके विषयमें काफी उन्नति की थी। भारतवर्षसे लूटी हुई स्वर्णराशि दिल्ली और आगरेकी राजकीय टकसालोंमें मुसलमानी सिक्कोंमें परिणत हो कर देश देशमें प्रचलित हुई। कहना फजूल है कि मुगल सम्राटोंके समयमें भी भारतवर्षके बहुविस्तृत स्थानमें दिल्लीकी टकसालके सिक्के प्रचलित हुए थे।

बादशाह अकबरके समयमें मुगल साम्राज्यके ४२ नगरोंमें टकसालें थीं। उन टकसालोंमें भिन्न भिन्न धातुओंके जैसे जैसे सिक्के बनाए जाते थे उनका नीचे वर्णन किया जाता है।

१म। दिल्ली, बङ्गाल, गुजरातस्थ अहमदाबाद और काबुल, इन चार स्थानोंकी टकसालोंमें स्वर्ण रौप्य और ताम्र इन तीन प्रकारकी धातुओंके सिक्के बनते थे।

२य। इलाहाबाद, आगरा, उज्जैन, सूरत, पटना काश्मीर, लाहोर मुलतान और ताण्डा इन दश स्थानों की टकसालोंमें सिर्फ चांदी और तांबेके सिक्के बनते थे।

३य। अजमेर, अयोध्या, पाटन, अम्बर, बदायू, बनारस, भाक्कर, बहिरा पाटन, जौनपुर जालन्धर, हरिद्वार, हिस्सार, फिरोजा, काल्पी ग्वालियर गोरखपुर, कलानूर, लखनौ, मान्दू, नागर, सरहिन्द शियालकोट, सरौंज, सहारनपुर, सारङ्गपुर, सम्भल, कनोज और रणथम्गढ़ (रणथम्भपुर)—इन उनतीस नगरोंकी टकसालोंमें तांबेके सिक्के बनते थे।

इन टकसालोंमें जितने कर्मचारी, मिस्त्री और मजदूर आदि रहते थे, उनके नाम और काम संक्षेपमें कहे जाते हैं।

१। दरोगा—टकसालके कार्याध्यक्ष स्वरूप प्रत्येक कार्यका परिदर्शन करनेवाला। सब विषयोंमें निपुण और तीक्ष्णदृष्टि तथा न्यायपर व्यक्ति ही ऐसे पद पर नियुक्त किये जाते थे।

२। सर्राफ—स्वर्णपरीक्षक। ये स्वर्ण-रौप्यादिकी विशुद्धताकी परीक्षा किया करते थे। इस पर सिक्केका उत्कर्षापकर्ष निर्भर करता था, इसलिए इस पद पर सुनिपुण और न्यायपर व्यक्ति ही नियुक्त किये जाते थे।

३। आमिन—दरोगाका सहकारी।

४। मुशरिफ—दैनन्दिन व्ययका हिसाब रखनेवाला।

५। महाजन—सोना, चांदी और तांबा खरीद कर टकसालमें देनेवाला।

६। कोषाध्यक्ष—आय-व्यय और लाभका हिसाब रखनेवाला।

५में (महाजन)-को छोड़ कर उपरोक्त सभी कर्मचारी आफिसर अर्थात् उच्च श्रेणीके कर्मचारियोंमें गिने जाते थे।

७। तौला—सिक्केको धातुओंके साथ तौलनेवाला।

८। धातु गलानेवाला—मिश्र स्वर्ण, रौप्य और ताम्रको गला गला कर चद्दर बनानेवाला।

९। मिश्र स्वर्ण रौप्यादिकी चकतियां बनानेवाला—दरोगाको इसकी बनाई हुई चकतियोंको अच्छा समझ लेने पर नियोजन करानेका अनुमति देता था। नियोजित उन चकतियोंको सोहागा और ईंटके चूर्णमें कपड़ोंको आगमें जला कर शुद्ध किया जाता था।

१०। विशुद्ध धातु गलानेवाला—यह आदमी उपरोक्त नियोजित चकतियोंको गला कर चद्दर बनाता है।

११। जराब—चद्दरको काट कर सिक्केके आकार और मापका टुकड़ा बनानेवाला।

१२। खोदकार—इस्पात लोहे पर चित्र और अक्षर आदि खोद कर सिक्केके लिये ठप्पा बनानेवाला।

कम्पनीके अधिकृत सभी स्थानोंमें चलाने लगा।

१७९७ ई०में ढाका और पटनाकी टकसालें बंद कर दी गई। इसके बाद मुर्शिदाबादकी टकसालभी उठ गई।

उस समय भी काशी, फरक्काबाद, बरेली, इलाहाबाद, गोरखपुर आदि नगरोंमें स्थानीय व्यवहारके लिए सिक्के बनते थे। किन्तु बहुत जगह टकसालके कर्मचारियोंके असद्व्यवहारसे सिक्केका मूल्य घटने लगा। गवर्मेंटने यथासाध्य चेष्टा करने पर भी उसका निराकरण न कर सकी।

ईसाकी १८वीं शताब्दीके प्रारम्भमें ही कम्पनीके अधिकृत विस्तीर्ण प्रदेशमें एक तरहके सिक्के चलानेका प्रसङ्ग छिड़ा। कुछ भी हो, नवाधिकृत और करद राज्योंमें नये नये सिक्के चलने लगे।

पुराने सिक्कोंको गला कर नये सिक्के बनानेके लिए सागर, अजमेर आदि स्थानोंमें भी टकसालें स्थापित की गई थीं।

फिलहाल समग्र भारतवर्षमें सिक्का, फरक्काबादी, गोरखपुरी, बालाशाही आदि भिन्न भिन्न रुपयोंका अस्तित्व उठ कर सर्वत्र १८० ग्रेन (द्रय) वजनका रुपया प्रचलित हुआ है। १८३५ ई०में मद्राजकी टकसाल उठ गई और उसकी मशीनें आदि सब कलकत्ते और बम्बईकी टकसालमें पहुंचाई गईं। इसके बाद कलकत्ता और बम्बईकी टकसालमें ही समस्त भारतवर्षके लिए मुद्रा बनने लगी और अन्यान्य टकसालें फिजूल समझ कर उठा दी गईं। इस समय बम्बई और कलकत्तेमें ही रुपये-पैसे बनते हैं। दोनों जगहके रुपये आदि एक ही प्रकारके होते हैं।

इनके सिवा बहुतसे करद और मित्र राजाओंकी राजधानीमें टकसालें हैं। उन टकसालोंमें स्थानीय प्रदेशों के लिए रुपये आदि बनते हैं।

२ प्रामाणिक वस्तु, असल चीज।

टकसाली (हिं० वि०) १ टकसाल-सम्बन्धी, टकसालका। २ टकसालका बना हुआ, सरा, चोखा। ३ सर्व-सम्मत, माना हुआ। ४ परीक्षित, प्रामाणिक, जँचा हुआ, पक्का। (पु०) ५ वह जो टकसालकी देख भाल करता हो, टकसालका मालिक।

टकहाई (हिं० वि०) जो वेश्याओंमें खराब हो।

टका (हिं० पु०) १ रुपया, चांदीको पुरानी मुद्रा। २ दो पैसेके बराबर तांबेकी एक मुद्रा, अधन्ना, दो पैसे। ३ धन, द्रव्य, रुपया, पैसा। ४ तीन तोलेकी तौल, आधी छटांकका मान। ५ सवा सेरके बराबरकी एक तौल जो गढ़वालमें प्रचलित है।

टकाई (हिं० वि०) टकाही देखो।

टकाटकी (हिं० स्त्री०) टकटकी देखो।

टकातोप (हिं० स्त्री०) जहाजों पर रक्खी जानेवाली एक प्रकारकी तोप।

टकाना (हिं० क्रि०) टँकाना देखो।

टकार (सं० पु०) टस्वरूपे कार:। ट, ट स्वरूप अक्षर।

टकासी (हिं० स्त्री०) १ दो पैसे प्रति रुपयेका सूद। २ हरएक मनुष्यसे टकेके हिसाबसे लिये जानेका चन्दा।

टकाही (हिं० वि०) टकहाई देखो।

टकी (हिं० स्त्री०) टकटकी देखो।

टकुआ (हिं० पु०) १ चरखेमें लगा हुआ एक प्रकारका सूआ। इस पर सूत काता और लपेटा जाता है, तकला। २ चरखेमें लोहेका एक पुरजा जिससे बिनौला निकाली जाती है। ३ वह तागा जो छोटे तराजू या कांटेके पलड़ोंमें बंधा होता है।

टकुरी (हिं० स्त्री०) १ टांकी, एक प्रकारका औजार जिसे पत्थर काटा जाता है। २ नक्काशी बनानेके काममें आनेवाला एक प्रकारका लोहेका औजार जो पेचकशकी तरह होता है। ३ एक पेड़का नाम।

टकैत (हिं० वि०) जिसे रुपये पैसे हों, धनी।

टकोर (हिं० स्त्री०) १ आघात, प्रहार, हलकी चोट। २ वह चोट जो नगाड़े पर पूजाके समय की जाती है। ३ नगाड़ेकी आवाज। ४ धनुषकी कसी हुई पतञ्चिका खींच या तान कर छोड़नेका शब्द, धनुषकी डोरी खींचनेकी आवाज, टङ्कार। ५ दवा भरी हुई गरम पोटलीकी किसी अङ्ग पर रह रह कर छुलानेकी क्रिया, सेंक। ६ खट्टी वस्तु खानेके कारण दांतोंकी टीस, चमक। ७ तीक्ष्णता, तीतापन, चरपराहट।

टकोरना (हिं० क्रि०) १ ठोकर लगाना। २ बजाना, चोट लगाना। ३ सेंकना।

टकोरा (हि॰ पु॰) नगाड़ेका आघात, डङ्केकी चोट।

टकोरी (हि॰ स्त्री॰) एक छोटा तराजू जिसमें सोना आदि तौला जाता है, छोटा काँटा।

टक्क (सं॰ पु॰) टक् बन्धने पृषोदरादित्वात् उपधालोपश्च। देश-विशेष, एक देशका नाम।

टक्कदेश (सं॰ पु॰) टक्कः टक्क इति नाम्ना ख्यातः देशः, कर्मधा॰। पञ्जाबस्थ चन्द्रभागा और विपाशा नदीके मध्यवर्ती प्राचीन जनपद-विशेष। राजतरङ्गिणीमें टक्क देशको गुर्जर (गुजरात) राज्यके अन्तर्गत लिखा है। टक्कजाति किसी समयमें अत्यन्त प्रतापशालिनी और सारे पञ्जाबमें राज्य करती थी। चीन-परिव्राजक युएनचुयाङ्गने टक्क राज्यका तथा उसके अधिपति मिहिरकुलका उल्लेख किया है। उनके लेखसे यह राज्य विपाशाके पश्चिमी किनारे पड़ता है। यहाँकी जमीन उर्वरा थी। सोना चाँदी, ताँबा और लोहा अधिक मिलता था। जलवायु उष्ण था, साथ साथ तूफानका डर सदा बना रहता था। लोग बड़े क्रोधशाली तथा साहसी थे, इन लोगोंका पहनावा श्वेत रेशमी वस्त्र था। टक्कको राजधानी शाकलसे १४।१५ मील पश्चात् ३ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित थी। युएनचुयाङ्गके लेखसे पता चलता है कि उस समय टक्कमें बौद्धधर्मका उतना प्रभाव नहीं था। केवल १० सङ्घाराम थे। यहाँके लोग समस्त आतिथेय थे। यहाँ तक कि वे अतिथिशालाओंमें आगन्तुकों और दीनहीन यात्रियोंकी सेवा शुश्रूषा किया करते थे।

टक्कदेशीय (सं॰ पु॰) टक्कदेशे भवः छ। १ वास्तूकशाक, बथुआ नामका साग। (त्रि॰) २ टक्कदेशोत्पन्न, टक्कदेशका।

टक्कर (हि॰ स्त्री॰) १ दो वस्तुओंके जोरसे एक दूसरेमें भिड़ना, ठोकर। २ लड़ाई, भिड़न्त, मुकाबिला। ३ किसी कड़ी वस्तु पर सिर पटकनेका आघात। ४ क्षति, हानि, नुकसान।

टक्कारिका—बम्बई प्रान्त सोलकर्णीके मजयगढ़के शिलालेखमें लिखा हुआ एक प्राचीन नगर। उस लिपिके मतसे यह नगर कायस्थ-निवासभूत छत्तीस नगरोंमें सबसे प्रधान तथा सामान्य कायस्थोंके चाल्पिपुरुष चालुक्य का वास स्थान था।

टखना (हि॰ पु॰) पादग्रन्थि, पैरका गट्टा।

टगण (सं॰ पु॰) मात्राछन्दमें तेरह भेदात्मक गणविशेष मात्रिक गणोंमेंसे एक। इसके आकार और अधिष्ठाता देवताके विषयमें छन्दोग्रन्थमें इस प्रकार लिखा है, यथा—(ऽऽऽ) १ शिव, (॥ऽऽ) २ शशी, (।ऽ।ऽ) ३ दिनपति, (ऽ।।ऽ) ४ सुरपति (।।।ऽ) ५ शेष (ऽऽ।।) ६ अहि (ऽ।ऽ।) ७ सरोज (।ऽऽ।) ८ धाता (ऽ।।।) ९ कलि, (।।ऽ।) १० चन्द्र (।ऽ।।) ११ ध्रुव, (ऽ।।।) १२ धर्म, (।।।।) १३ शालिकर।

टगर (सं॰ पु॰) टः टङ्कण क्षारविशेषः गर इव। १ टङ्कण क्षार, सोहागा। २ विलास क्रीड़ा। ३ तगरका पेड़। (त्रि॰) ४ केकराक्ष, ऐंचा, भेंगा।

टगरगोड़ा (हि॰ पु॰) लड़कोंका एक खेल। इसमें कुछ कौड़ियाँ चित्त करके जमा देते हैं फिर एक कौड़ीसे उन्हें मारते हैं।

टगरा (हि॰ वि॰) भेंगा, ऐंचा ताना।

टघरना (हि॰ क्रि॰) १ चित्तमें दया आदिका उत्पन्न होना, हृदयका पिघल जाना। २ घी, चरबी आदिका गर्मीके कारण द्रव होना पिघलना।

टघराना (हि॰ क्रि॰) द्रव करना पिघलाना।

टङ्क (सं॰ पु॰) टकि-अच्। १ कोप, क्रोध गुस्सा। २ कोष, खजाना। ३ खड्ग तलवार। ४ पाषाणदारण पत्थर काटनेका औजार, टाँकी। (स्त्री॰) ५ जङ्घा, जाँघ। ६ परिमाणविशेष, एक तौल जो चार माशेकी होती है कोई कोई इसे २४ रत्तीकी मानते हैं। (पु॰-स्त्री॰) ७ नीलकपित्थ, नीला बेल, कठाई। ८ खनित्र, कुदाल। ९ दर्प, अभिमान। १० परशु कुल्हाड़ी फरसा।

"... चित्र टंकैश्च सर्वतश्च पुरी कृता॥" (हरिवंश २ अ॰) ११ शाखाका एक बड़ा भाग।

"पीन कषाय मधुर टंकमारगतमरुगुरु॥" (सुश्रुतसूत्र ४६)

१२ पर्वतका प्रान्तभाग। १३ पर्वतका उठान अंश, पहाड़की चोटी। १४ भित्तिमें प्रस्तर भाग पत्थरका कटा हुआ टुकड़ा। १५ रागविशेष सम्पूर्ण जातिका एक राग। यह श्री, भैरव और काम्हाड़ाके योगसे बना है। इसमें कोमल मध्यम लगता है और इसका सरगम इस प्रकार है—

सा, ऋ, ग, म, प, ध, नि। (संगीतर०)

१६ स्थान। १७ कांटेदार पेड़। इसमें बेल या कैथके बराबर फल लगते हैं। १८ टङ्कणक्षार, सुहागा। १९ नियत मान या बाट। इससे धातुको तौल कर टकसाल में सिक्के बनानेके लिये देते हैं। २० मुद्रा, सिक्का। २१ २१½ रत्तीके बराबर मोतीकी एक तौल। २२ घुटनेसे ले कर ऐंड़ी तकका अङ्ग, टांग। २३ रजतमुद्रा। २४ पाषाणदारण।

टङ्क (टोङ्क)—१ राजपूतानेके अन्तर्गत एक देशीय राज्य। इसका थोड़ा भाग तो राजपूतानेमें और थोड़ा मध्यभारत में पड़ता है। राजपूतानेमें केवल यही एक राज्य मुसलमान राजासे शासित होता है। यह राज्य परस्पर विच्छिन्न ६ विभागोंमें संगठित है, यथा—राजपूतानेमें टङ्क, अलीगढ़ रामपुर तथा मध्य भारतके निम्बाहेर, पिरवा, चपरा और सिरोञ्ज है। यह अक्षा० २३° ५२´ से २६° २८´ उ० और देशा० ७४° १२´ से ७७° ५७´ पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २५५३ वर्ग-मील है, जिनमेंसे ११११ राजपूतानेमें और १४३८ मध्य भारतमें हैं। यहांका राजस्व प्रायः १२ लाख रुपये है। राज्यमें जहां तहां घनी झाड़ियोंसे ढके हुए छोटे छोटे पहाड़ देखे जाते हैं। चित्तौर नामक पहाड़ ही सबसे बड़ा है। इसकी ऊंचाई समुद्रपृष्ठसे लगभग १८८० फुट है। यों तो राज्यभरमें अनेक नदियां प्रवाहित हैं, पर बनास और पार्वती नदी ही सबसे बड़ी है। बाढ़के समयमें ये दो नदियां बहुत भीषणरूप धारण कर लेती हैं। १८७५ ई०में उक्त नदियोंमें जो बाढ़ आई थी उससे हजारों ग्राम तथा घर बह गये थे, बहुतोंकी जान चली गई थी। इनके सिवा मासी, सोहङ्ग, गम्भीर, बेरच आदि भी कई एक छोटी नदियां बहती हैं। यहांका जलवायु शुष्क तथा स्वास्थ्यकर है।

टङ्कके अधिपति बोनर सम्प्रदायके पठान हैं। सम्राट् महम्मदशाह गाजीके राजत्वकालमें तालखां नामक कोई पठान अपनी वासभूमि बेगरको छोड़ कर रोहिलखण्डके सैन्य विभागमें चले आये। इनके पुत्र हैयतखांने मुरादाबादमें थोड़ी भूसम्पत्ति प्राप्त की। १७६८ ई०में हैयतके पुत्र टङ्कराज्यके स्थापनकर्त्ता विख्यात अमीरखांने जन्म-ग्रहण किया।

अमीरने सबसे पहले थोड़े से अनुचरोंको ले कर सैनिकवृत्ति अवलम्बन की। क्रमशः जब इनकी शक्ति कुछ बढ़ी, तब १७९८ ई०में इन्होंने यशवन्तराव होल-करके सेनापति हो कर सिन्धिया, पेशवा और अंगरेजों-के विरुद्ध लड़ाई ठान दी।

१८०६ ई०में होलकरने अमीरको टङ्क राज्य दे कर उनसे अपना पिण्ड छुड़ाया। इसके बाद अमीरखांने परस्पर विवादमें प्रवृत्त जयपुर और जोधपुरके दोनों राजा-ओंको क्रमशः सहायता दे कर दोनोंका राज्य तहस नहस कर डाला। उनकी दुर्दान्त सैन्यने दोनोंका राज्य लूटा। १८०८ ई०में उन्होंने ४० हजार अश्वारोही लेकर नागपुरकी ओर यात्रा की। रास्तेमें २५ हजार पिण्डारी उनके दलमें मिल गये। जब अंगरेज गवर्मेण्टने उनको इस काम-से मना किया, तब उनके सेनादलने राजपूताना लौट कर लूट मार मचा दी।

१८१७ ई०में मार्किस आफ हेष्टिंग्सने पिण्डारियोंको दमन करनेकी इच्छासे अमीरको होलकर-प्रदत्त राज्यमें स्थापित करनेका विचार और उन्हें सैन्यदलको लौटा देनेके लिये आदेश किया। प्रतिवाद करना निष्फल समझ कर अमीर सहमत हो गये। उनकी अधिकांश युद्धसामग्री वृटिश सरकारने खरीद ली। अलीगढ़, राम-पुर विभाग और रामपुरा भी उन्हें दे दिये गये। १८३५ ई०में अमीरकी मृत्यु हुई।

बाद उनके पुत्र वजीर महम्मदखां तथा उनके बाद वजीर महम्मदके पुत्र महम्मद अलीखां टङ्कके नवाब हुए। इन्होंने किसी सामन्त राजाके परिवारको अन्याय अत्या-चारमें आश्रय दिया था, इसीसे अंगरेजने उन्हें राज्य-च्युत कर उनके पुत्र महम्मद इब्राहिम अलीखांको नवाब के पद पर अभिषिक्त किया। इनका पूरा नाम अमीन उद्-दौला वजीर उल् मुल्क नवाब सर हफीज महम्मद इब्राहीम अलीखां बहादुर सौलत जङ्ग जी०सी०एस०आई० जी०सी०आई०ई० है। नवाबको कर नहीं देना पड़ता। इन्हें १७ तोपोंकी सलामी मिलती है। ये ८२ तोपें, २४७ गोलन्दाज सैन्य, ४४२ अश्वारोही और १०४६ पदातिक सैन्य रखते हैं।

इस राज्यमें ग्राम और शहर मिला कर कुल १२८४

लगती है। लोकसंख्या प्रायः १०१२०१ है जिनमेंसे सैकड़े ८० अर्थात् २२६५१२ हिन्दू, सैकड़े १५ अर्थात् ३१०८० मुसलमान और ११५२१ जैन हैं। यद्यपि अधिकांश मुसलमान सुन्नी सम्प्रदायके हैं। इस राज्यमें ब्राह्मण महाजन चमार धाकड़ मीना गुजर और जैन जातिके मनुष्य रहते हैं। राजपूताना प्रदेशके लोग साधारणतः हिन्दी, मारवाड़ी और उर्दू भाषा तथा मध्यभारतके लोग मालवी बोलते हैं। यहाँके अधिकांश अधिवासी कृषक हैं। यहाँके उत्पन्न शस्योंमें गेहूँ बाजरा चना और जुन्हरी है। कपास और अफीम भी यहाँ बहुत उप जाई जाती है।

इस राज्यके मध्य भागमें सूतोंका कपड़ा प्रस्तुत होता है। यहाँ लूट और शराबका कारखाना भी है।

इस राज्यमें अनाज, कपास अफीम, चमड़े और सूती कपड़ोंकी रफ्तनी होती और दूसरी दूसरी देशोंसे नमक, चीनी चावल तमाकू और मोटेजी आमदनी होती है। इस राज्यमें ४२ मील तक पक्की सड़क और ४० मील तक कच्ची सड़क गई है। टंकसे जयपुर जानेकी सड़क ही सबसे प्रधान है।

नवाब और उनके मातहत अफसरोंसे तथा एक सभासे विचार कार्य चलाया जाता है। उस सभामें केवल ८ सदस्य रहते हैं। ब्रिटिश गवर्मेण्टके नियमानुसार यहाँका भी शासनकार्य चलता है। नवाबके सिवा और दूसरोंको प्राण दण्ड देनेका अधिकार नहीं है।

यहाँ ६ अस्पताल ३ औषधालय और ६ सरकारी डाकघर हैं।

२ राजपूतानेके पूर्व टङ्क राज्यका भाग से बना था। यह अक्षा० २५ ४२ से २६ २८´ उ० और देशा० ७५ ३१ से ७६ १ पू०में अवस्थित है। इसका भूपरिमाण १०८ वर्गमील है। उत्तर पश्चिमके अतिरिक्त इसके चारों ओर जयपुर राज्य है। यहाँकी प्रधान नदी बनास और इसकी शाखा मासी तथा सोहरू है। इसमें एक शहर और १५८ ग्राम लगते हैं। यहाँकी लोकसंख्या प्रायः ८५०६८ है। प्रवाद है कि यह परगना पहले टोरी जिलेके अन्तर्गत था। १३वीं शताब्दीके मध्य भागमें एक चौहान राजपूतने इसे दखल किया। पर बादके समयमें जयपुरके शासनमें इसे इस पर अपना अधि कार जमाया किन्तु थोड़े समयके बाद यह रायसिंह सिसोदियाके अधिकारमें आ गया। पीछे यह परगना १६४५ से १७०० ई० तक चार राजपूतके अधीन रहा। जब यह जयपुरके सवाई जयसिंहके अधिकारभुक्त हुआ तब जयपुर, होलकर और सिन्धिया इसे पानेके लिए आपसमें लड़ने लगे। अन्तमें यह १८०४ ई०में ब्रिटिश गवर्मेण्टके हाथ लगा और उन्होंने फिर जयपुरके राजा को समर्पण किया। १८०६ ई०में राजाने यह परगना अमीरखाँको दे दिया। तभीसे यह उन्हींके उत्तराधि कारीके अधीन चला आ रहा है। यहाँकी प्रधान उपज ज्वार, बाजरा गेहूँ चना तिल और कपास है। आय प्रायः तीन लाख रुपयेसे अधिककी है।

३ राजपूतानेके अन्तर्गत उक्त टङ्क राज्यकी राज धानी। यह अक्षा २६ १०´ उ० और देशा० ७५ ४८´ पू० बनास नदीसे दो मील दक्षिण और जयपुर शहरसे ६० मील तथा रेलवे ब्रांचसे २४ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। नगरका अन्यतम बड़ा है तथा चारों ओर प्राचीरसे घिरा है। प्रवाद है, कि १६४३ ई०में भोला नामक किसी ब्राह्मणने इसे स्थापित किया था। इसके दक्षिण भूमगढ़ नामका किला और पूर्वमें अमरखाँकी छावनी है। यहाँकी लोकसंख्या प्रायः ३८७०८ है जिसमें सैकड़े ५२ मुसलमान और ४३में अधिक हिन्दू तथा कुछ दूसरी दूसरी जाति है। यहाँ दस सामान्य स्कूल तथा एक हाईस्कूल एक कारागार और एक चिकित्सालय है।

टङ्कक (सं० पु०) टङ्कयतीति टकि-बन्धने ण्वुल्। रजत मुद्रा, चाँदीका सिक्का, रुपया।

टङ्कपति (सं० पु०) टङ्कस्य पतिः ६-तत्। टकसाला ध्यक्ष टकसालका मालिक।

टङ्कशाला (सं० स्त्री०) टङ्कस्य शाला, ६-तत्। मुद्रा गृह, टकसाल घर।

टङ्कटीक (सं० पु० टङ्क इव टीकते टीक-अच्।) शिव, महादेव।

टङ्कण (सं० पु०) टङ्क-ल्यु, पृषोदरादित्वात् णत्वम्। १ क्षारविशेष सुहागा। इसके पर्याय—पाचनक, मालती

रज, लोहश्लेषण, रसशोधन, टङ्कणक्षार, टङ्कक्षार, रसाधिक, लोहद्रावी, रसघ्न, सुभग, रङ्गद, वत्तु ल, कनक, क्षार, मलिन, धातुवल्लभ, मालतीतोरसम्भव, द्रावी, द्रावक, लोहशुद्धिकारक और स्वर्णपाचक है। इसके गुण—कटु, उष्ण, कफ, स्थावरादि विष, काश और श्वासनाशक, अग्नि तथा वातपित्तनाशक और रूक्ष है। इसकी शोधन-प्रणाली वैद्यक ग्रन्थमें इस प्रकार लिखी है—अम्ल द्वारा भावना दे कर चूर्ण करनेसे यह सब कामोंमें प्रयोग किया जा सकता है।

"अम्लेन भावित चूर्ण सर्वकार्येषु योजयेत्।" (वैद्यक)

पहले टङ्कण काञ्जिक अम्लमें डालते हैं, बाद अम्लसे निकाल कर एक दिन रौद्रमें भावना देनी पड़ती है, पीछे नरमूत्र गोमूत्रके साथ मिला कर एक दिन रख छोड़ते हैं। इसके बाद उसे जंबीरी नीबूके रसमें डाल कर और फिर उसमेंसे निकालते हैं, तब उसे नारियलके पात्रमें मिर्च चूर्ण मिला कर शीतल जलसे प्रक्षालन करते हैं। ऐसा करनेसे टङ्कण विशुद्ध होता है और सब कामोंमें इसका प्रयोग किया जा सकता है। यह अग्निकर, रूक्ष, कफनाशक, रोचन और लघु है। २ धातुकी चीजमें टांका मार कर जोड़ लगानेका कार्य, टांका लगानेका काम। ३ अश्वभेद, घोड़ेकी एक जाति। "टकणखरनखरखण्डितं हरितालपाशुलेन।" (कादम्बरी)

४ देशविशेष, एक देश जिसका नाम बृहत्संहितामें कोङ्कण आदिके साथ आया है। (बृहत्संहिता १४।१२)

टङ्कणादिवटी—वैद्यकोक्त औषधविशेष। प्रस्तुत-प्रणाली—सुहागेका फूला, सोंठ, गन्धक, पारद, विष, मरिच, इनको बराबर बराबर चूर्ण कर अदरकके रसमें घोंटना चाहिये, फिर चनेके बराबर गोलियां बना कर सेवन करना चाहिये। यह औषध अग्निदीपिकर है।

टङ्कनल (सं० पु०) आम्र, आम।

टङ्कपति (सं० पु०) टङ्कस्य पतिः, ६-तत्। टकसालका अधिपति।

टङ्कपाणि—उड़ीसाका एक ग्राम। यह भुवनेश्वर-मन्दिरके चारों ओरके ४५ पुण्यक्षेत्रोंमेंसे एक है तथा कुण्डलेश्वरके समीप पुरी जानेके रास्ते पर अवस्थित है। किसी किसीका मत है, कि क्षेत्रपरिक्रमके समय यात्रियोंको इस स्थानका भी दर्शन करना चाहिये।

टङ्कवत् (सं० पु०) टङ्क अस्त्यर्थे मतुप् मस्य वः। पर्वतभेद, एक पहाड़ जिसका नाम वाल्मीकीय रामायणमें आया है। "टंकवन्तं शिखरिणं वन्दे प्रस्रवण गिरिम्।" (रामा० ३।५५।४४)

टङ्कविज्ञान (सं० क्ली०) टङ्कस्य विज्ञानं, ६-तत्। नानादेशीय और नानाकालीन टङ्क परिज्ञानार्थ विद्या, भिन्न भिन्न देशों और बहुत पुराने समयकी टङ्क जाननेकी विद्या। मुद्रा देखो।

टङ्कविशोधन (सं० क्ली०) टङ्कस्य विशोधनं, ६-तत्। मुद्राविशुद्धिसम्पादन, सिक्केकी परिष्कार करनेकी क्रिया।

टङ्कशाला (सं० स्त्री०) टङ्कस्य शाला, ६-तत्। टकसाल। टकसाल देखो।

टङ्का (सं० स्त्री०) टङ्क-अच-टाप्। १ जङ्घा, जाँघ। २ तारादेवी। "टंकारकारिणी टीका टंका टकारिणी तथा।" (तारासहस्रनाम)

३ रागिणीविशेष, सम्पूर्ण जातिकी एक रागिणी। यह षिपड्ज और आदि सूर्च्छनायुक्त होती है। सुवर्ण वर्णा वियोगविधुरा रागिणी अपने घरमें आ कर नलिनीदलशय्यामें निद्रित कान्तको विपन्नचित्त देख कर गान करनेसे टङ्का संज्ञा होती है। हनुमत्के अनुसार इसका स्वरग्राम इस प्रकार है—स रे ग म प ध नि स।

टङ्कानक (सं० पु०) टङ्क क्रोधं आनयति उद्दीपयति। टङ्क-आनि-णिच् ण्वुल्। वृक्षदारु, सहतूत।

टङ्कार (सं० पु०) टं चित्त-विकृतिं करोति कृ-कर्मण्यण्। १ विस्मय। २ शिञ्जिनीध्वनि, ठन ठन शब्द जो किसी कसे हुए तार आदि पर उँगुली मारनेसे होता है। ३ धनुषकी कसी हुई पतञ्चिका खींच कर छोड़नेका शब्द, वह शब्द जो धनुषकी कसी हुई डोरी पर बाण रख कर खींचनेसे होता है।

"टंकारनृत्यत्कल्लोला टीकनीया महातटा।" (काशीख० २९।६६)

४ धातु पर आघात लगनेका शब्द, ठनाका, झनकार। ५ कीर्त्ति, प्रसिद्धि, नाम।

टङ्कारकारिणी (सं० स्त्री०) टङ्कारस्य कारिणी, कृ-णिनि-ङीप्। तारादेवी।

"टंकारकारिणी टीका टंका टंकारिणी तथा।" (तारासहस्रनाम)

टङ्कारी (सं० स्त्री०) टङ्क इत्याकृति कायति कै-क ततः ङीष्। हयमिद, एक पेड़। इसकी पत्तियाँ नारंगी जैसी होती हैं। फ्रांसमें इसकी कई जातियाँ हैं। किसीमें लाल फूल किसीमें गुलाबी और किसीमें सफेद फूल लगते हैं। जब फूल झड़ जाते तब छोटे छोटे पत्तोंके गुच्छे लगते हैं। इसके पत्तेका गुण— वातश्लेष्म, शोथ और उदरव्यथानाशक तिक्त दीपन और लघु है।

टङ्किका (सं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, एक प्रकारका औजार जिससे पत्थर काटा जाता है टाँकी देखो।

टङ्कित (सं० त्रि०) टङ्क-क्त। १ उत्कीर्णित। २ बद्ध, जो सिया गया हो। ३ ग्रन्थित, बहुतसी डोरीका ग्रन्थ किया हुआ।

"बाहुश न च दंष्ट्रिभि न नमिर्त योजालिते स्यात्‌ ।" (उद्भट)

टङ्ग (सं० पु० स्त्री०) टङ्क पृषोदरादित्वात् साधु। १ खनित्र, कुदाल। २ परशु, फरसा। ३ खड्ग ओज। ४ टङ्गन, सुहागा। ५ परिमाणविशेष चार माषेकी एक तौल।

टङ्गण (सं० पु०-क्ली०) टङ्कण-पृषोदरादि० साधु। टङ्गण, सुहागा।

टङ्गमेरी—सिवाहुल प्रान्तके अन्तर्गत हाविया मामला-दोन एक ग्राम। यह अक्षा० ८ ३४ उ० और देशा० ७६ ३६ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ८८ एकड़ और लोकसंख्या प्रायः १०२१ है। यह पहले पोर्तुगीज और डचका वासस्थान था। आजकल यहाँ रोमन कायलिक रहते हैं।

टङ्गिनी (सं० स्त्री०) टङ्ग विनि पृषोदरा० साधु। वृक्ष विशेष पाठा।

टट्टो—कुमप्रदेशके पंजाबर जिलेके अन्तर्गत बारमह तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० ३० १० उ० और देशा० ७१ ३२ पू०के मध्य पंजाबर शहरसे २८ कोस की दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८०८५ है। ध्यात नामको नदी शहरके पश्चिम हो कर प्रवाहित है। अधिवासी मुसलमानोंकी प्रधान है।

टनटन (हिं० क्रि० वि०) ठीक ठीक ठक ठक।

टवनी (हिं० स्त्री०) बढ़ईका एक औजार जिससे वह बरतनोंमें नकाशी करता है।

टटावली (हिं० स्त्री०) टिटिहरो नामको चिड़िया, कुररी।

टटिया (हिं० स्त्री०) टट्टी देखो।

टटियाना (हिं० क्रि०) सूख जाना, शुष्क हो कर पकड़ जाना।

टटोया (हिं० पु०) चिरमो पक्षर।

टटोरी (हिं० स्त्री०) टिटिहरी देखो।

टट्टरा (हिं० पु०) टट्टू देखो।

टट्टुई (हिं० स्त्री०) मादा टट्टू।

टटोना (हिं० क्रि०) टटोलना देखो।

टटोरना (हिं० क्रि०) टटोलना देखो।

टटोल (हिं० स्त्री०) गूढ़ स्पर्श, उंगलियोंसे छू कर मालूम करनेकी क्रिया।

टटोलना (हिं० क्रि०) १ गूढ़ स्पर्श करना, उंगलियोंसे छू कर किसी चीजका अनुभव करना। २ किसी चीजका पता लगानेके लिये इधर उधर हाथ रखना। ३ मौन वाणसेही किसीके हृदयके भावको भाप लेना। ४ परीक्षा करना, परखना, आजमाना।

टट्टनी (सं० स्त्री०) टट इति शब्द भवति भो ड गौरा० ङीष्। छपकली, छिपकली।

टट्टर (हिं० पु०) बाँसको फट्टियोंसे बांधके बना हुआ पल्ला। यह ओट, रोक या रक्षाके लिये दरवाजे इत्यादि में लगाया जाता है।

टट्टरी (सं० स्त्री०) टट इति शब्द राति रा-क गौरादि० ङीष्। १ पटहवाद्य ढोलका शब्द। २ लम्बाचौड़ा बढ़ी चढ़ी बात। ३ मिथ्या वाक्य झूठी बात, गपशपाड़े, गप्प।

टट्टा (हिं० पु०) १ एक बांसकी फट्टियोंका परदा, टट्टर। २ लकड़ीका पल्ला।

टट्टा—१ बम्बई प्रेसीडेन्सीके अन्तर्गत सिन्धुप्रदेशमें कराची जिलेका उपविभाग। यह कराची टट्टा, मिरपुर-सकरो और घोड़ाबाड़ी तालुक ले कर गठित हुआ है।

२ बम्बई प्रेसीडेन्सीके अन्तर्गत सिन्धुप्रदेशमें कराची जिलेके मीरपुर उपविभागका एक तालुक। यह अक्षा० २४ ११ से २५ २०´ उ० और देशा० ६७ ११ से ६८ २४ पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल १२२२८ वर्गमील और लोक

संख्या प्रायः ४१७८५ है। अधिवासियोंमें अधिकांश मुसलमान है। इस तालुकमें इसी नामका एक शहर और ३५ ग्राम लगते हैं। इसके उत्तरमें पार्वत्य भूमि और दक्षिणमें मलकाली पहाड़ है। यहां प्रधान उपज धान, ईख, गेहूं, जौ, बाजरा, ज्वार और तिल है।

२ सिन्धुप्रदेशमें करांची जिलेके अन्तर्गत उक्त ठट्टा तालुकका प्रधान नगर। यह अक्षा० २४ ४५´ उ० और देशा० ६७°५८ पू० पर सिन्धु नदीके दाहिने किनारेसे ७ मील पश्चिम और करांचीसे ५० मील पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १०७८३ है।

पहले नगरकी चारों दिशायें सिन्धु नदीके जलसे प्लावित होती थी। अब भी बाढ़के बाद बहुतसी झील और खाड़ीमें जल रह जाता है और उस जलसे वायु दूषित हो कर ज्वर इत्यादि रोग उत्पादन करती है। इन्हीं सब कारणोंसे यहांका जलवायु अस्वास्थ्यकर है।

सिन्धु-पञ्जाब-दिल्ली-रेलवेके जङ्गशाही स्टेशनसे १३ मील दूर यह नगर पड़ता है। इसका मध्यवर्ती बहुत सुन्दर और सुगम है। यहां एक मुखतियारका और तप्पादारका आफिस तथा एक थाना है। इसके सिवा सरकारी-विद्यालय, डाकघर, दातव्यऔषधालय और एक कारागार है। समीपवर्ती माकली पर्वत पर प्रसिद्ध कब्रिस्तान है और इसके समीप ही फौजदारी अदालत और डिपुटिकमिश्नरका बङ्गला है।

१८वीं शताब्दीके पहले ठट्टा बहुजनाकीर्ण वाणिज्य शिल्पादियुक्त एक बड़ा नगर था। १६९९ ई०के पूर्व एक भीषण महामारीसे इसके प्रायः ८० हजार अधिवासियोंकी जान गई थी। १७४२ ई०में जब पारस्यके राजा नादिरशाह ठट्टा देशको आये थे, तब यहां ४० हजार तांती, २० हजार अन्यान्य शिल्पजीवी और ६० हजार दूसरे अधिवासी वास करते थे। किन्तु भारतीय नौ सेनादलके कप्तान (Captain) जे उड अनुमान करते हैं, कि १८३७ ई०में ठट्टाके अधिवासी १० हजारसे अधिक नहीं थे। ठट्टाका वाणिज्य और शिल्प पहलेकी तुलनामें नाम मात्र है। अभी साधारण कपड़ा और छींट तैयार होती है, किन्तु मैनचेष्टरकी प्रतियोगितासे उसका भी धीरे धीरे ह्रास होता जा रहा है। आमदनीमें अनाज, घी, चीनी और रेशम तथा रफतनीमें कपास, रेशमी कपड़ा और चमड़ा प्रधान है।

ठट्टा नगरमें बहुतसी प्राचीन कीर्तियां विद्यमान हैं, जिनमेंसे यहांका दुर्ग और जुमामसजिद प्रधान है। यह नगर अत्यन्त प्राचीन है। १५५५ ई०में पोर्तुगीज पर्वतानि ४म ग्यासकी लूटा था। १५९१ ई०में अकबरने सिन्धुप्रदेश पर आक्रमणके समय इसे तहस नहस कर डाला था।

जब शाहजहान् जहांगीरके निकटसे भागा था, तब उन्होंने ठट्टाकी मसजिदमें उपासना की थी। इस कृतज्ञतामें उन्होंने ८ लाख रुपये खर्च करके यहां जुमामसजिद बनवाई थी। यहांके लोगोंने चन्दा संग्रह कर तथा गवर्मेण्टसे कुछ सहायता ले कर इस मसजिदकी मरम्मत की जिससे यह और भी अधिक सुन्दर दीख पड़ती है। ठट्टाके निकट माकली पर्वत पर बहुविस्तीर्ण और प्राचीन विख्यात कब्रिस्तान है।

ठट्टी (हिं० स्त्री०) १ टट्टर देखो। २ चिक, परदा, चिलमन। ३ आड़ रोक आदिके लिये खड़ी की जानेवाली पतली दीवार। ४ पाखाना। ५ बागातोंमें ले जानेका फुलवारीका तख्ता। ६ अंगुर आदिकी बेलें चढ़ाई जानेके लिये बांसकी फट्टियों आदिको बनी हुई दीवार।

टट्टर (सं० पु०) टट्, इत्यव्यक्तशब्दं राति रा क भेरीका शब्द, तुरहीकी आवाज।

टट्टू (हिं० पु०) १ छोटे आकारका घोड़ा, टांगन २ निरिन्द्रिय।

टठिया (हिं० स्त्री०) टाठी देखो।

टड़िया (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका गहना जो बांहमें पहना जाता है। यह अनन्तके आकारका होता है परन्तु उसमें मोटा और बिना घुंडीका होता है।

टण (हिं० पु०) टना देखो।

टण्डुक (सं० पु०) पोतलोध्र।

टन (हिं० स्त्री०) वह शब्द जो धातुखण्ड पर आघात पड़नेसे उत्पन्न होता है, टनकार, झनकार।

टन (अं० पु०) अट्ठाईस मनके लगभगकी एक अंगरेजी तौल।

टनकना (हि॰ क्रि॰) १ टन टन बजना। २ गरमी लगनेके कारण सिरमें दर्द होना।

टनटन (हि॰ स्त्री॰) घण्टा बजनेका शब्द।

टनटनाना (हि॰ क्रि॰) घण्टा बजाना।

टनमन (हि॰ पु॰) तन्त्र मन्त्र, टोना जादू।

टनमना (हि॰ वि॰) जिसकी चेष्टा तीव्र हो, जो सुस्त न हो स्वस्थ, चङ्गा।

टना (हि॰ पु॰) १ योनि, भग। २ वह मांसका टुकड़ा जो स्त्रियोंकी योनिके बीचमें निकला रहता है।

टनाटन (हि॰ स्त्री॰) बराबर घण्टा बजनेका शब्द।

टनी (हि॰ स्त्री॰) टना देखो।

टनेल (अ॰ स्त्री॰) जमीन या किसी पहाड़ आदिके नीचे हो कर गया हुआ रास्ता, सुरंग।

टप (हि॰ स्त्री॰) १ वह कपड़ेका परदा या ओहार जो गाड़ी, फिटन टमटम या इसी प्रकारकी दूसरी गाड़ियोंमें लगा रहता है कमरा। २ वह छतरी जो लैम्प आदिके उपरमें लगी रहती है। (पु॰) ३ पानी रखनेका एक बड़ा बरतन जिसका आकार नाँदका होता है। ४ स्त्रियोंका झुमकेदार पेच बनानेका औजार। (स्त्री॰) ५ किसी चीजके अचानक गिर जानेका शब्द। ६ बूँद बूँद टपकनेका शब्द।

टपक (हि॰ स्त्री॰) १ टपकनेका भाव। २ बूँद बूँद गिरनेका शब्द। ३ ठहर ठहर कर होनेवाला दर्द।

टपकना (हि॰ क्रि॰) १ किसी तरलपदार्थका बिन्दुके रूपमें थोड़ा थोड़ा कर गिरना, चूना, रसना। २ पके फल का आपसे आप गिरना। ३ ऊपरसे सहसा पतित होना टूट पड़ना। ४ अधिकतासे कोई भाव प्रकट होना। ५ नीच या अर्पित होना, दल पड़ना टिसकना। ६ स्त्रीका संभोगकी ओर प्रवृत्त होना। ७ घाव इत्यादिके कारण शरीरमें पीड़ा होना चिलकना टीस मारना। ८ युद्धमें आघात खा कर गिरना।

टपका (हि॰ पु॰) १ बूँद बूँद गिरनेका भाव २ टपकी हुई वस्तु, रसाव। ३ पक कर आपसे आप गिरा हुआ फल। ४ वह पीड़ा जो ठहर ठहर कर होती हो टीस। ५ मवेशियोंके खुरका एक रोग खुरपका।

टपका टपकी (हि॰ स्त्री॰) १ बूँदा बूँदी। २ किसी वस्तुको प्राप्त करनेके लिये मनुष्योंका एक पर एक टूटना। ३ एकके बाद दूसरेका मरना। (वि॰) ४ भूला भटका, एक आध, बहुत थोड़ा।

टपकाना (हि॰ क्रि॰) १ चुआना। २ भबका उतारना, चुआना।

टपकाव (हि॰ पु॰) टपकानेका भाव या क्रिया।

टपना (हि॰ क्रि॰) १ निराहार रहना बिना खाये पीये पड़ा रहना। २ व्यर्थ किसी दूसरेकी आशमें बैठा रहना। ३ आच्छादित करना, ढाकना।

टपनामा (हि॰ पु॰) जहाज परका एक रजिस्टर। इसमें समुद्रयात्राके समय तूफान वर्षा आदिका विवरण रहता है।

टपमाल (हि॰ पु॰) जहाजी पर काममें आनेवाला एक बड़े नोकका रस्सा।

टपाटप (हि॰ क्रि॰ वि॰) १ बराबर टपटप शब्दके साथ। २ जल्दी जल्दी, चट पट।

टपाना (हि॰ क्रि॰) १ निराहार रखना, पड़ा रहने देना। २ निष्प्रयोजन बैठाए रखना।

टपार (हि॰ पु॰) छाजन, छप्पर।

टप्पा (हि॰ पु॰) १ गतियुक्त वस्तुके बीचमें भूमिका स्पर्श करके उछल कर जाती हुई वस्तुका बीच बीचमें टिकाव। २ उछाल, कूद फाँद छलांग। ३ नियत दूरी, मुकर्रर फासला। ४ वह विस्तृत भूमि जो दो स्थानोंके बीचमें पड़ती हो। ५ छोटा भूविभाग परगनेका हिस्सा। ६ अन्तर, फर्क। ७ दूर दूरकी पड़ाव सिलाई। ८ वह अन्तराल जहाँ आमदनी ले जानेवाले कहार बदले जाते हैं। ९ पायके जोरसे चलनेवाला घोड़ा। १० एक प्रकारका चुत्र या काँटा।

टब (अ॰ पु॰) १ नाँदके आकारका एक खुला बरतन जो पानी रखनेके काममें आता है। २ छत या किसी दूसरी ऊँचे स्थान पर लटकाये जानेका नद।

टमकी (हि॰ स्त्री॰) किसी प्रकारकी घोषणा करनेका एक छोटा नगाड़ा, डुगडुगिया।

टमटम (अ॰ स्त्री॰) एक घोड़ेकी गाड़ी जिसे सवारी करनेवाला अपने हाथसे हाँकता है।

टमटी (हि॰ स्त्री॰) एक बरतन।

उनका अन्तर्निहित धर्मभाव जाग्रत हो गया। १८५५ ई०के एप्रिल मासमें वे अपने रोजनामचेमें भगवान्‌से प्रार्थना करनेकी बात लिख गये हैं। युद्धके भीषण दृश्यसे अपने मनको हटानेके लिए उन्होंने ग्रन्थरचनामें मन लगाया। इस सिवास्टिपोलके विषयमें उन्होंने जो तीन ग्रन्थ लिखे हैं, उनमें एक तरफ जैसा वास्तव जीवनका सुन्दर चित्र है, दूसरी ओर वैसो ही प्रकृतिके सौन्दर्यका मधुर वर्णन है। युद्ध करना अन्याय है, इस बातको उन्होंने बड़े जोरके साथ लिखा था, जिसके लिए सम्राट् जारने उन्हें सेण्ट पिटर्सवर्गको लौट आनेकी आज्ञा दी थी। इसके बाद उन्होंने फिर युद्धक्षेत्रमें पदार्पण नहीं किया।

टलस्टय नये भावोंको ले कर देश लौटे। युद्धकी वीभत्सताकी बातें याद करके उनका मन बड़ा खिन्न हुआ। परन्तु सेनासे, जो मृत्युकी अवहेलना कर वीरत्वके साथ अपना कर्तव्य पालन करती है, उनका प्रेम हो गया। स्वार्थपर सम्भ्रान्त वंशीयोंके चरित्रके साथ सैनिकोंकी तुलना करके, उन्होंने सैनिकोंमें ही श्रेष्ठता पाई। सेण्ट पिटर्सवर्गमें उनकी रचनाकी ख्याति पहलेसे ही थी। अब सभोंने आदरके साथ उनकी अभ्यर्थना की। सुप्रसिद्ध उपन्यास-लेखक टुर्गनिभने टलस्टयको छातीसे लगा लिया और निमन्त्रण-पूर्वक उन्हें अपने घर ले गये। समाजमें सर्वत्र उनका सम्मान होने लगा। टलस्टयने युद्धके जीवनका जो वर्णन अपने ग्रन्थमें दिया था, उस पर सभी मुग्ध हो गये थे। राजधानीके प्रधान प्रधान राजकर्मचारिगण भी टलस्टयको निमन्त्रण दे दे कर जिमाने लगे। इन आदर अभ्यर्थनाओंसे टलस्टयका साधु भाव जाता रहा। वे पुनः विलास और आनन्दके स्रोतमें बहने लगे। परन्तु इतने पर भी उन्हें शान्ति न मिली। वे सत्यपथके यात्री थे—मन उनका सर्वदा सत्यके अन्वेषणमें लगा रहता था। यही कारण था जो रूसियाकी राजधानीके साहित्यिकोंसे, जो सत्यकी अपेक्षा चिरानुगत प्रथाको ही अधिक सम्मानकी दृष्टिसे देखते थे, उनका बन्धुत्व अधिक दिनों तक स्थायी न रहा। विशेषतः टुर्गनिभके साथ उनका मतभेद बहुत ही बढ़ गया। परन्तु फेट नामक एक कविसे उनकी आजीवन मित्रता निभी थी।

इस प्रकारसे टलस्टयकी पारिपार्श्विक अवस्थासे अच्छा हो गई। उस समय रूसियाके सिंहासन पर २य अलेकसन्दर बैठे थे (१८५५ ई०)। सम्राट् (२य) अलेकसन्दरने जनसाधारणके हितके लिए टलस्टयको अधिकतर क्षमता देनेका प्रयास किया। इसमें सम्भ्रान्तवंशीय और उच्चपदस्थ व्यक्तियोंके बाधा उपस्थित करने पर भी, रूसियाके अधिकांश लोगोंने उनके मतका समर्थन किया। इस समय बहुतसे लेखकोंने जनसाधारणके लिए लेखनी धारण की थी। परन्तु टलस्टयके द्वारा साधारणके लिए जैसा प्रयत्न हुआ, वैसा और किसीसे भी न हुआ। उन्होंने Polikoushka नामक एक ग्रन्थमें दासभावापन्न कृषकोंकी सम्पूर्ण दुर्दशाका वर्णन बड़ी खूबीके साथ किया। उन्होंने कृषकोंकी उन्नतिके लिए उन्हें शिक्षित बनानेका संकल्प किया। किन्तु वे स्वयं शिक्षा-प्रणालीके विषयमें कुछ जानते न थे; इसलिए जर्मनीमें जा कर इस विषयकी शिक्षा प्राप्त करनेका निश्चय किया।

टलस्टय १८५७ से १८६१ ई०के भीतर इटली, जर्मनी, फ्रान्स आदि नाना देशोंमें घूम आये। १८६१ ई०में वे अपने ग्राममें पहुँचे। प्रथम ही उन्होंने अपनी विपुल सम्पत्तिके अधीन जितने दासभावापन्न कृषक थे, सबको मुक्त कर दिया। उनकी असाधारण वदान्यताको देख कर सभी विस्मित हुए। उनके इस महत् कार्यका अनुसरण कर रूसियाके सम्राट्‌ने वहाँके समस्त कृषकोंको स्वाधीनता दे दी। जर्मनीमें जिस प्रणालीके ग्राम्य विद्यालय हैं, टलस्टयने उसी प्रणालीको रूसियामें प्रवर्तन करना चाहा। किण्डर-गार्डन-प्रथाका अनुसरण कर उन्होंने यसनाया पलियानामें एक विद्यालय खोला। वे शिक्षाके विषयमें सम्पूर्ण स्वाधीनतावादी थे। इसलिए उनके विद्यालयमें छात्रोंके लिए कोई वेतन निर्दिष्ट नहीं हुआ, छात्र चाहे जिस समय आते और चले जाते थे तथा चाहे जिस विषयकी शिक्षा लेना चाहें ले सकते थे। उनके विद्यालयमें किसीको भी किसी प्रकारकी सजा न दी जाती थी। टलस्टय स्वयं चित्राङ्कनविद्या, सङ्गीत और बाइबेलका इतिहास पढ़ते थे। १८६२ ई०के अक्टोबर मासमें राजकीय परिदर्शकोंने उनके विद्यालयके विषयमें इस प्रकार अपना अभिमत प्रकट किया,—

"बालकपन टलस्टयका कार्य विशेष सबाके साथ वर्णन योग्य है। शिक्षा विभागकी ओरसे उन्हें सहायता पहुचाना उचित है। उनके सम्पूर्ण मतोंसे हमारा ऐक्य नहीं है, तथापि आशा की जा सकती है कि कुछ विषयोंमें वे अपना मत परिवर्तन करेंगे।" मिनिस्टर! रूसके गवर्नमेण्टने सहायता देना तो दूर रहा उनके कार्यमें विघ्न डालना शुरू कर दिया। टलस्टय भी नाना कारणोंसे शान्त हो गये थे, जिसका प्रधान कारण था लड़कोंकी विशेष उन्नति न होना। दो वर्ष चला कर, बादमें उन्होंने विद्यालय बन्द कर दिया।

इसके बाद ये समाज-तत्त्व-वादका प्रचार करने लगे। इनके मतसे जनसाधारण ही सब कुछ है—उनके नीचे लोगोंकी कोई ज़रूरत नहीं। उनका कहना था कि पढ़ने लिखनेसे जो मनुष्यका चरित्र गठन होता हो ऐसा नहीं है। इन्होंने साधारणके विषयमें लिखा था—कि साधारण लोगोंमें भी, उच्चश्रेणीके लोगोंकी अपेक्षा अधिकतर बलिष्ठ, स्वाधीन, न्यायपरायण, दयालु और प्रयोजनीय शक्ति पाये जाते हैं। वे हमारे विद्यालयमें आ कर शिक्षा लेवें, यह ठीक नहीं। हमको ही चाहिये कि हम उनके पास जा कर शिक्षा ग्रहण करें। यह बात रूसोकी एमिलीमें प्रचारित बातोंके समान है।

इन कामोंके करनेके कारण टलस्टयकी शिक्षण शक्ति घट गई। किन्तु विवाह होनेके बाद उनको स्त्री, उन्हें लिखनेमें बहुत कुछ सहायता पहुचाने लगी। इस सुशीला महिलाके प्रयत्नसे टलस्टयका हृदय पूर्ण नूतन भावोंसे सञ्जीवित हुआ। इस नये उत्साहसे उन्होंने दो अपूर्व ग्रन्थ लिखे (१) War and Peace, (२) Anna Karenina इन दो ग्रन्थोंने ही टलस्टयका नाम हमेशाके लिए अमर कर दिया है। इनकी जीवनी लिखनेवाले रोमो रोलाका कहना है कि इन दो ग्रन्थोंका प्रभाव आधुनिक युगके यूरोपीय साहित्यके सर्वत्र ही थोड़ा बहुत पाया जाता है। १८६४ ई०में टलस्टयने अपने मित्र फेटको लिखा था—"मैं जिस काम (उपन्यास लिखना)-को इस समय कर रहा हूं उसमें कितने परिश्रमकी ज़रूरत है, उसको तुम कल्पना भी नहीं कर सकते। मैं जिनके चरित्रोंको सोच रहा हूं, उनके जीवनमें क्या क्या हो सकता है इस विषयमें कितनी ही बातें सोच कर उनमेंसे कुछ छांट लेना बड़ा कठिन काम है।"

टलस्टय ज़मींदारी और सम्पत्तिकी व्यवस्थाके लिए तरह तरहके बन्दोबस्त करने लगे। विवाहके बाद उन्होंने इस विषयमें एक चिट्ठी लिखी थी जिसमें इस विषयकी अपनी अभिज्ञता प्रकट की थी—"मैंने एक आविष्कार किया है, जो शीघ्र ही तुमसे कहूंगा। गुमाश्ता, नायब, परिदर्शक आदि सिर्फ ज़मींदारीमें बाधा पहुंचाते हैं। इन सबको विदा कर दो। खुद दिनके दस बजे तक सोये रहो। तब फिर देखना तुम्हारा कोई काम बिगड़ा नहीं है।"

१८६४ ई०में जब ये अपने मित्र फेटके घर थे, तब तुर्गेनिफके साथ इनका घोरतर विवाद हुआ था—यहां तक कि द्वन्द्वयुद्धकी नौबत आ पहुंची थी। इसी बीचमें टलस्टयने अपनी साहित्य-साधनामें मन लगाया। इनके War and Peace नामक ग्रन्थ एक महाकाव्य समझा जाता है। उसमें पियर (Pierre)के चरित्रमें ग्रन्थकारने मानो अपना ही चित्र खींच दिया है। इसी प्रकार Anna Karenina में Levin के चरित्रमें भी टलस्टय नज़र आते हैं।

इन दिनों टलस्टयने फिर अध्ययन करना शुरू किया। ग्रीक्‌भाषाकी शिक्षामें वे अधिक समय देने लगे। इस भाषाका अध्ययन करते करते वे होमरके ग्रन्थों पर मुग्ध हो गये और उनके ग्रन्थोंका रूसी भाषामें अनुवाद कर डाला। १८७१ ई०में इनके दो पुत्र और मौसीका देहान्त हो गया। इस शोकके समय इन्होंने शास्त्रोंको पढ़ा था और उससे कुछ सान्त्वना पाई थी। फिर मूल यहूदीके शास्त्रोंको पढ़नेके लिए वे हिब्रू भाषा सीखने लगे। इस शान्तिके दिनोंमें इन्होंने तुर्गेनिफसे पुनः मित्रता कर ली।

परन्तु इतना मिलने पर भी उन्हें आनन्द प्राप्त न हुआ। उन्होंने लिखा है (Confessions 1879)—"मेरी उमर अब तक पचास तक नहीं पहुंची है—मैं प्रेम करता था—मुझ पर भी लोग प्रेम रखते थे। मेरे बाल-बच्चे अच्छे हैं। मेरी सम्पत्ति भी अच्छी है, सुयश

है, स्वास्थ्य अच्छा है, नैतिक और दैहिक शक्ति भी काफी है। मैं कृषकोंकी तरह बोना और काटना जानता हूं। दश घण्टे तक स्थिरचित्तसे काम करने पर भी मुझे क्लान्ति नहीं मालूम पड़ती। किन्तु सहसा मेरे जीवनकी गति रुक गई। मैं श्वास प्रश्वास ले सकता हूं, खा सकता हूं, सो सकता हूं, परन्तु यह तो जीवन नहीं है। मुझे अब किसी बातकी इच्छा नहीं है। इच्छा करनेकी भी कुछ नहीं है। और तो क्या, सत्य जाननेकी कामना भी नहीं है। मैं गह्वरके पास आ चुका हूं—मृत्युके सिवा, मेरे सामने और कुछ भी नहीं है। मैं इतना सुखी होने पर भी समझ रहा हूं, कि जीनेसे कोई लाभ नहीं है। न मालूम कौन मुझे मृत्युकी ओर खींचे लिये जा रहा है।"

इसके बाद एक दिन टलस्टय पर भगवान्की कृपा हुई। आप लिखते हैं—एक दिन (वसन्तऋतुमें) मैं अकेला जंगलमें बैठा हुआ पत्तोंकी मर्मर ध्वनि सुन रहा था—अपने जीवनके अन्तिम तीन वर्षके दुःखोंको याद कर रहा था—भगवान्की अनुसन्धान, आनन्दसे हताशामें पतन इत्यादि बहुतसी बातोंको उधेड़बुन कर रहा था। सहसा मैंने देखा, कि जिस समय मैं भगवान् पर विश्वास करता हूं, उसी समय मालूम होता है कि मैं जीवित हूं। भगवान्का स्मरण करते ही हृदयमें आनन्दका स्रोत बह चला। चारों ओरके सम्पूर्ण पदार्थ सजीव-से दीखने लगे—सब सार्थक मालूम पड़ने लगे। परन्तु जिस मुहूर्तमें अविश्वासने हृदय पर अधिकार जमा लिया, उसी समयमें जीवनकी गति रुक गई। तो बतलाओ मैं क्या ढूंढ रहा हूं? भीतरसे न मालूम किसीने कहा—उसको ढूंढ़ रहे हो, जिसके बिना मनुष्य जी नहीं सकता। भगवान्को जानना और जीवित रहना, दोनों एक ही बात है। क्योंकि भगवान् ही जीवन है। तबसे फिर मुझे अन्धकारमें नहीं जाना पड़ा।"

जीवनकी साधनामें आनन्द पानेके लिए इन्होंने ग्रीक चार्चकी सम्पूर्ण आचार-पद्धतिको अपनाना चाहा, परन्तु बाह्य आचारकी ये युक्ति या हृदय किसीसे भी न मान सके। विशेषतः उक्त धर्म-सम्प्रदाय दूसरे धर्म-सम्प्रदायोंसे परस्पर विवाद-विसम्वाद करता और युद्ध एवं प्राणदण्डका अनुमोदन करता था, इसलिए ये उससे बाहर निकल आये। इन्होंने ईसाके उपदेशमेंसे निम्नलिखित वाक्य ग्रहण किये—

(१) क्रोध न करना।

(२) व्यभिचार न करना।

(३) शपथ न करना।

(४) दुःख वा कष्टको आनेसे न रोकना।

(५) मनुष्यसे शत्रुता न करना।

और एक उपदेशमें उन्होंने उक्त वाक्योंका सार पाया यथा 'भगवान् और अपने पड़ोसियों पर उतना ही प्रेम करो, जितना तुम अपने पर करते हो।'

धर्म-जीवनमें उन्नति प्राप्त करनेके लिए स्वावलम्बी और सरल-स्वभावी होनेकी आवश्यकता समझ टलस्टय कृषकोंकी जीवनयात्रा-प्रणालीका अनुकरण करने लगे। बहुत सवेरे बिछौनेसे उठ कर ये खेतोंमें जाते और शस्यादि काटते और रोपते थे। अपने पहननेका जूता स्वयं बना सकें, इसके लिए उन्होंने चमारका काम भी सीखा। इस तरह सुबहसे शाम तक ये कठोर परिश्रम करते थे। सरलता तो इनके जीवनका व्रत हो गया। ये आहार-व्यवहारमें संयत हो गये—मांसाहार छोड़ कर निरामिषभोजी बन गये। यहां तक कि मादक-श्रेणीभुक्त होनेके कारण इन्होंने तम्बाकू पीना भी छोड़ दिया।

परन्तु इतना करने पर भी वे अपनेको कृषकोंके समान न बना सके। टलस्टय इस बातको समझते थे, कि किसान दिन भर काम करनेके बाद अपनी छोटी-सी झोंपड़ीमें जा कर बहुत दुःख भोगते हैं, और वे शामको प्रासादमें आ कर आरामसे सोते हैं। टलस्टयने अब बन्धु-बान्धव या लोक-समाजमें जाना आना प्रायः छोड़ दिया। "अर्थही अनर्थोंका मूल है" ऐसा समझ कर हमारे रामकृष्ण परमहंसकी तरह उन्होंने उसका स्पर्श करना छोड़ दिया।

१८८० ई०में लोकगणनाके समय गवर्मेंटने टलस्टयकी सहायता पहुंचानेके लिए आमन्त्रण दिया। टलस्टयने देखा, इस मौके पर वे अनायास ही जनसाधारणकी अवस्थाका परिज्ञान कर सकते हैं,

इसलिए वे राजी हो गये। इसके बाद रूसियाके साधारण लोगोंकी जिस मर्मभेदी दरिद्रताको उन्होंने अपनी आँखोंसे देखा उससे उनका हृदय बिलकुल पिघल गया। "हमें क्या करना चाहिए" शीर्षक पुस्तिकामें उन्होंने लोकगणनाके समयकी सम्पूर्ण अभिज्ञता प्रकट कर दी। अन्तमें एक दिन उन्होंने अपनी स्त्रीको अपने कमरेमें बुला कर कहा—"धनसम्पत्तिके अधिकारको मैं पाप समझता हूं। इसलिए मैंने अपनी व्यक्तिगत अधिकारको छोड़ देनेका निश्चय किया है।" १८८८ ई०में इन्होंने अपनी सम्पत्ति स्त्री और पुत्रको दे दी। इससे उन्हें अपनी सम्पत्तिकी उन्नतिकी चिन्तासे छुट्टी मिल गई।

इसके बाद उन्होंने अपनी सम्पूर्ण शक्ति किसानोंकी जीवनोन्नति करनेमें लगा दी। किसान लोग शराब पीना छोड़ दें और राष्ट्र द्वारा उन्हें अधिकार प्राप्त हो इस विषयके अनेक ग्रन्थ भी लिखे।

१८९१-९२ ई०में जो भीषण दुर्भिक्ष हुआ था उसमें टलस्टयने स्वयं तथा उनके परिवारके लोगोंने लगातार कार्य किया था।

रूसियाके प्रतिष्ठित ईसाई धर्म पर आक्रमण करनेके कारण धर्मसम्प्रदायने उन्हें पृथक् कर दिया था (१९०१ ई०की २२ फरवरीके आदेशानुसार) १९१० ई०के २० नवम्बरको निमोनिया रोगसे इनकी मृत्यु हो गई।

काउन्ट टलस्टयने ही सबसे पहले Nonresistance या अहिंसा असहयोग नीतिका प्रचार किया था। महात्मा मोहनदास करमचन्द गान्धीके साथ इनका पत्रव्यवहार होता था। महात्मा गान्धीको ये बड़ी श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे।

मोहनदास करमचन्द गान्धी देखो।

टलेमी (टलमी)—ग्रीकके एक प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् गणितज्ञ और भौगोलिक पण्डित। इनका असली नाम था क्लाडियस टलेमियास्। ये ११८ ई०में मिस्रमें प्रादुर्भूत हुए थे और सम्भवतः १६१ ई०में वे जीवित थे। इसके सिवा इनके जीवनीके विषयमें विशेष कुछ मालूम नहीं हुआ है, किन्तु उनके द्वारा रचित ज्योतिष और भूगोलसम्बन्धी अनेक पुस्तकें अब भी मौजूद हैं जो बहुकाल पर्यन्त समग्र यूरोप और अरब आदि देशोंमें प्रामाणिक और उत्तोत्तम समझी गई हैं। इन्होंने ब्रह्माण्डके विषयमें जो मत प्रचार किया था वह अभी तक 'टलेमीका मत' इस नामसे प्रसिद्ध है। इनके मतसे, पृथिवी ब्रह्माण्डके मध्य स्थलमें अवस्थित है तथा सूर्य, चन्द्र, ग्रह और नक्षत्र समन्वित ज्योतिष्कमण्डल २४ घण्टेमें एक बार पृथिवीके चारों तरफ आवर्तन करता है। टलेमीने ग्रहोंकी गतिके विषयमें एक नये मतका तथा चन्द्रका तुङ्गान्तरप्रकार का (Evection) आविष्कार किया था। इनके मतमें विशेषत्व कुछ नहीं है, उसमें सिर्फ ज्योतिष्कोंकी प्रत्यक्ष गतिविधिको ही वैज्ञानिक प्रणालीसे प्रमाणित करनेकी चेष्टा की गई है। इसमें सबसे भारी वस्तु मिट्टीका ही पहले अवस्थान बतलाया गया है; मिट्टीके ऊपर उससे कुछ हलका पदार्थ जल है, उसके बाद वायुराशिके स्तर और वायुराशिके बाद तेजोराशि है। तेज या अग्निके बाद इथर नामक सूक्ष्म पदार्थ समस्त स्थानमें व्याप्त है। इस इथरके भीतर या बाहर क्रमशः स्वच्छ स्तर-मण्डल पृथिवीके चारों तरफ बहुत दूरी पर उपर्युपरि अवस्थान करते हैं। इन स्तरोंमें एक एक ज्योतिष्क अवस्थित हैं जो स्तरके आवर्तनके साथ पृथिवीके चारों तरफ आवर्तित होते हैं। इन स्तरोंके भीतर चन्द्रमण्डलके अवस्थान-स्तरमें पृथिवी अपेक्षा निकटवर्ती है उसके बुध, शुक्र सूर्य मङ्गल, बृहस्पति शनि और नक्षत्रोंका स्तरमण्डल यथाक्रमसे दूरवर्ती है। टलेमीके परवर्ती ज्योतिर्विदोंने क्रान्तिपात गतिकी व्याख्याके लिए पूर्वमान नवम मण्डलकी तथा दिवारात्रिकी ह्रास वृद्धि समझानेके लिए दशम मण्डलकी कल्पना की है। यह दशम मण्डल ही २४ घण्टेमें पूर्वसे पश्चिमकी ओर एक बार आवर्तित होता है तथा अपनी गतिके द्वारा अन्यान्य मण्डलोंमें गति उत्पन्न करता है। इसको प्राइमम मोबिलि (Primum mobile) अर्थात् गतिका आदिकारण कहते हैं। किन्तु टलेमी मतावलम्बी ज्योतिर्विदोंने इन मण्डलोंकी कल्पना करके भी प्रत्यक्ष घटनाओंकी सूक्ष्म और विशद व्याख्या नहीं कर सके हैं। वे ग्रह गतिकी ह्रास वृद्धि समझानेके लिए पृथिवीको सुव्यापित मण्डलके केन्द्रके पार्श्वमें अवस्थित बतलाते थे। ग्रह अपेक्षाकृत निकटवर्ती होने पर इसकी गति वृद्धि और दूरवर्ती जाने पर गति ह्रास होता

है। ग्रहोंकी वक्र और विपरीत गतिको समझानेके लिए कहा जाता था कि, ये अपने अपने स्तरमें एक स्थिर बिन्दुके चारों तरफ वृत्तपथमें परिभ्रमण करते हैं तथा उसी अवस्थामें अपने आश्रय-स्तरमण्डलकी गतिके द्वारा पृथिवीके चारों तरफ भ्रमित होते हैं। स्तरस्थ वृत्तके भीतरके अर्द्धांशमें अवस्थित होने पर ग्रहकी गति एक तरफ और बाहरके अर्द्धांशमें अवस्थित होने पर दूसरी तरफ हुआ करती है। इस तरह नाना प्रकारके जटिल और दुर्बोध्य नियमोंकी कल्पना द्वारा ज्योतिष्कविषयक तत्त्वोंकी व्याख्या होने लगी। अन्तमें कोपार्निकस ने उक्त भ्रान्त सिद्धान्तोंका उच्छेद कर जगत्सम्बन्धी विशुद्ध मतका आविष्कार किया। अब तक जो टलेमीका मत अभ्रान्त समझा जाता रहा, वह अब भ्रान्त प्रमाणित हो गया।

टलेमीके फलित ज्योतिषसम्बन्धी ग्रन्थ भी सर्वत्र आदरके साथ गृहीत हुए थे।

ज्योतिषकी तरह, टलेमीके द्वारा प्रणीत भूगोल शास्त्र भी ईसाकी १५वीं शताब्दी तक सर्वोत्कृष्ट समझे जाते थे। इन्होंने पूर्व पूर्व भौगोलिकोंके मतका उत्कर्ष साधन और परिवर्तन कर तात्कालिक पृथिवीखण्डका विवरण २२ मानचित्रों सहित लिखा था। टलेमीने पश्चिमके केनारीद्वीपसे लगा पूर्वमें भारतवर्षके पूर्वस्थ श्याम, मलय और चीन तक तथा उत्तरमें नरवेसे लगा कर दक्षिणके निरक्षरेखा तक आविष्कृत किया था। इन्होंने अपने भूगोल शास्त्रको ८ अध्यायोंमें विभक्त करके क्रमश पश्चिमसे पूर्व तक समस्त जनपदोंका वर्णन किया है। इसके सिवा प्रत्येक स्थानका अक्षान्तर और देशान्तर भी लिखा है। टलेमी केनारी द्वीपसे देशान्तरकी गणना करते हैं और निरक्षरेखाकी ओर भी १०° अंश दक्षिणमें स्थापित करते हैं। इनके अक्षांश और देशांश कहीं कहीं गलत हैं। ये अपने भूगोलकी १८०° अर्थात् गोलार्द्ध बताते हैं, वास्तवमें वह १२०°से ज्यादा नहीं है।

टलेमी फिलाडेलफास्—टलेमी (सिटार)-के कनिष्ठ पुत्र, टलेमी इनकी उपाधि थी और फिलाडेलफास् अर्थात् भ्रातृप्रिय इनका नाम था। इन्होंने ईस्वीसे २८३ वर्ष पहले पितृसिंहासन पर बैठते ही अपने दो सहोदरोंकी हत्या की थी; इसीलिए लोगोंने इनको फिलाडेलफास् अर्थात् भ्रातृप्रिय यह विद्रुपात्मक उपाधि दी थी। पिताके सामने ही राजकार्यकी पर्यालोचना करते थे। किसीके मतसे, ईस्वीसे २८७ वर्ष पहले ये यौवराज्य पद पर अभिषिक्त हुए थे। ये वाणिज्य और विद्याके वास्तविक उत्साहदाता थे। इन्होंने भी दियोनिसियासको भारतपरिदर्शनार्थ भेजा था। भूमध्यस्थ और लोहित-सागरमें टलेमीकी सैकड़ों नावें बहती थीं। इरमीसबन्दर पर विपत्ति पड़नेके कारण वेरेनिस्में बन्दर स्थापित करनेके लिए इन्होंने एक फौज भेजी थी। वहां भारतीय वाणिज्य-पोत निरापदमें रहते थे। इस नवीन मार्गमें क्रमशः वाणिज्य वृद्धि होने लगी। अलेकसन्द्रिया नगरी भी उस समय समधिक श्रीसम्पन्न और प्रसिद्ध हो गई। इन्होंने अपने प्रधान ग्रन्थाध्यक्ष दिमित्रियास्के अनुरोधसे अरीस्तिया नामक एक यहूदी पण्डितको जेरुसालेम भेजा और वहांके प्रधान याजकको एक बाइबेलकी पोथी और १२ हिमायियोंके भेजनेके लिए अनुरोध किया। इन्हींके समयमें हिब्रु बाइबेल ग्रीकभाषामें अनुवादित हुआ था।

टलेमी फिलाडेलफास्ने वर्तमान सुयेज-नहरके निकटवर्ती आरसेनासे लगा कर नीलनदके पेलुसियाक शाखा तक एक नहर खुदवाई थी। ईस्वीसे २४६ वर्ष पहले इनकी मृत्यु हुई थी।

टलेमी यूयारगेटिस—टलेमी फिलाडेलफास्के पुत्र और उत्तराधिकारी। इन्होंने सिरिया और साइलेसियाकी बहुतसी जमीन अपने राज्यमें मिला ली थी। इनके दिग्विजयके समय शत्रुओंने मौका पा कर इजिप्ट पर चढाई कर दी थी, किन्तु इनके आ जानेसे यह विद्रोहाग्नि शीघ्र ही निर्वापित हो गई थी। अन्तियोककी पत्नी इनकी बहन थीं। बहनकी मृत्यु होने पर इन्होंने उसका बदला चुकानेके लिये अन्तियोकके विरुद्ध युद्धकी घोषणा की थी। इन्होंने अपने सुशासनके प्रतापसे 'यूयारगेटिस' अर्थात् 'परोपकारी'-की उपाधि पाई थी। ईस्वीसे २२१ वर्ष पहले इनके पुत्रने इनको जहर दे कर मार डाला था। इनके पुत्रका नाम था टलेमी फिलोपिटर अर्थात् पितृहन्ता, इस दुर्वृत्तने पितामाता तथा अन्यान्य आत्मीयवर्गोंका विषप्रयोगसे विनाश कर पितृ-

सिंहासन अधिकार किया था। यहूदी जाति उनको अतिशय प्रिय हुई थी। ईसाके २०४ वर्ष पहले इनकी मृत्यु हुई।

मि॰ रैंकिनके मतसे उपरोक्त टलेमी राजाओंके राजत्व कालमें मिसरवासियोंने पाटलीपुत्र (पटना) तक अभियान किया था।

टलेमी सोटार—प्रियदर्शीके अनुशासनपत्रमें इनका तुरमय नामसे वर्णन है। इनकी उपाधि सोटार अर्थात् मुक्तिदाता थी। साधारण लोग इनको लेगसका पुत्र कहते थे, किन्तु माकिदनीय लोग इनको फिलिप और मिण्डाका पुत्र समझते थे। वास्तवमें इनको माताके जब ये पैदा हुए थे, तब इनके पिताने इनको लेगसको समर्पण कर दिया था।

टलेमी पहले महावीर अलेकसन्दरके एक सेनापति थे, इस कार्यमें इन्होंने बड़ी ख्याति लाभ की थी। अलेकसन्दरको मृत्युके बाद इजिप्ट राज्य टलेमीके करगत हुआ, उस समय इजिप्ट ग्रीकसाम्राज्यके अधीन रहने पर भी टलेमीने इसे स्वाधीन कर लिया। अलेकसन्दरने क्लियोमेनिसको इजिप्टका क्षत्रपति नियुक्त किया था। टलेमीने उसका विनाश कर राज्य अधिकार कर लिया। इनके पास बहुत धन था, उस अर्थके बलसे टलेमीने क्रमशः सिरिया और अरबका कुछ अंश अधिकार कर लिया।

ईसाके ३११ वर्ष पहले एण्टिगोनसने इजिप्ट पर आक्रमण किया था, किन्तु वे कृतकार्य न हो सके थे। उनको मृत्युके बाद टलेमी सिरो-सिरिया, फिनिसिया, जूडिया और साइप्रास-द्वीप अधिकार कर बैठे। अलेक्‌सन्द्रियानगरमें इनकी राजधानी स्थापित हुई। यहां इन्होंने ग्रीकवासियोंके सुभीतेके लिए बन्दर पर एक बड़ा आलोकगृह बनवाया। यूरोपके समस्त वाणिज्यपदार्थ यहां हो कर एशियाके भागमें जाने लगे।

इसके बाद टलेमीने नीलनदसे एक बड़ी नहर खुदवाई, जो भूमध्य सागरसे मिली है। इस नहर की लम्बाई ८६ मील, विस्तार १०० फुट और गहराई ३० फुट है।

टलेमीके समयमें अलेकसन्द्रियाकी सुख-समृद्धिकी ख्याति दिग् दिगन्तमें व्याप्त थी। इनके समयमें पार्श्व-स्थानके यहूदी लोग उन्नत हो कर अलेकसन्द्रिया नगरमें आ बसे थे। टलेमी ग्रीक और मिसरदेशवासियोंको एक धर्मसूत्रमें बांधनेके लिये यत्नवान् हुए थे। इसीके अनुग्रहसे यहूदियोंने अलेकसन्द्रियानगरमें आइसिस और जुपिटर देवका मन्दिर बना सके थे।

ईसाके २८५ वर्ष पहले टलेमीने इहलोक त्याग किया। ये जब तक जीवित रहे, तब तक राज्यको उन्नतिके लिये इन्होंने बराबर प्रयत्न किये। ये विद्योत्साही और विद्यानुराग कह कर प्रसिद्ध थे। एण्टिपेटारकी कन्या यूरिडिसके साथ इनका विवाह हुआ था। इनके गर्भसे अनेक पुत्र होने पर भी ये अपने कनिष्ठ पुत्र टलेमी फिलाडेलफासको राज्य दे गये थे।

टक्की (हिं॰ पु॰) घोड़ेका एक भेद।

टवर्ग (स॰ पु॰) व्याकरणका म्रन्तर्गत तृतीय वर्ग, ट ठ ड ढ ण—इन पांच वर्णोंका समूह।

टवाई (हिं॰ स्त्री॰) व्यर्थ घूमना।

टस (हिं॰ स्त्री॰) १ टसकनेका शब्द। २ कपड़े आदिके फटनेका शब्द, मसकने की आवाज।

टसक (हिं॰ स्त्री॰) ठहर ठहर कर होनेवाला दर्द, टीस, चसक।

टसकना (हिं॰ क्रि॰) १ किसी बड़ी वस्तुका स्थान परिवर्त्तन होना, हटना, खिसकना। २ ठहर ठहर कर पीड़ा होना, टीस मारना। ३ प्रभावित होना।

टसकाना (हिं॰ क्रि॰) किसी भारी चोजको जगहसे हटाना, खिसकाना।

टसर (हिं॰ पु॰) टसर देखो।

टसवन—पञ्जाबवासी एक हिन्दी कवि। इन्होंने पाण्डवोंके यशगाथा संस्कृतसे हिन्दीमें अनुवाद की है।

टहना (हिं॰ पु॰) पतली शाखा, पतली डाल।

टहनी (हिं॰ स्त्री॰) पतली डाली।

टहरवा (हिं॰ पु॰) ठप्पा या तवलेसे उतारा हुआ सूत कपड़ेका बाल्का टुकड़ा।

टहल (हिं॰ स्त्री॰) १ शुश्रूषा, सेवा, खिदमत। २ नौकरी, चाकरी कामधंधा।

टहलना (हिं॰ क्रि॰) १ मंद गतिसे भ्रमण करना,

धीरे धीरे चलना। २ हवा खाना सैर करना। ३ पर लोक गमन करना, मर जाना।

टहलनी (हिं० स्त्री०) १ दासी, मजदूरनी, लौंडी। २ बत्ती उसकानेके लिये चिरागमें पड़ी हुई लकड़ी।

टहलाना (हिं० क्रि०) १ धीरे धीरे चलाना, घुमाना, फिराना। २ हवा खिलाना, सैर कराना। ३ हटा देना, दूर करना।

टहलुआ (हिं० पु०) सेवक, टहल करनेवाला, चाकर।

टहलुई (हिं० स्त्री०) १ दासी, लौंडी। २ चिरागकी बत्ती उसकानेकी लकड़ी।

टहलुवा (हिं० पु०) टहलुआ देखो।

टहलू (हिं० पु०) नौकर, चाकर, सेवक।

टहका (हिं० पु०) १ पहेली। २ चमत्कार-पूर्ण उक्ति, चुटकुला।

टहोका (हिं० पु०) झटका, धक्का।

टा (सं० स्त्री०) टलति प्रलये भूकम्पादौ वा टल-डा-टाप्। पृथिवी।

टाइटिल पेज (अं० पु०) पुस्तकके ऊपरका पृष्ठ। इस पर पुस्तक और ग्रन्थकारका नाम कुछ बड़े अक्षरोंमें अंकित रहता है।

टाइप (अं० पु०) कांटेका अक्षर जो सीसेका बना होता है।

टाइप कास्टिंग मशीन (अं० स्त्री०) वह कल जिससे कांटेके अक्षर ढाले जाते हैं।

टाइप-मोल्ड (अं० पु०) वह सांचा जिसमें कांटेके अक्षर ढाले जाते हैं।

टाइप-राइटर (अं० पु०) एक कल। इसमें कागज रख कर टाइपकेसे अक्षर छाप सकते हैं।

टाइफायड ज्वर (अं० पु०) एक प्रकारका विषैला और प्राणनाशक ज्वर। ज्वर शब्दमें आन्त्रिक ज्वर देखो।

टाइफोन (अं० पु०) चीनके समुद्रमें तथा उसके आसपास बरसातके चार महीनोंमें आनेवाला तूफान।

टाइम (अं० पु०) काल, समय, वक्त।

टाइम-टेबुल (अं० पु०) १ भिन्न भिन्न कार्योंके लिये निश्चित समय लिखे रहनेका विवरणपत्र। २ रेल संबंधी कागज। इसमें रेल-गाड़ीके पहुंचने और छूटनेका समय लिखा रहता है।

टाइमपीस (अं० स्त्री०) घड़ीका एक भेद। यह मजली नहीं कमानी के यल सुइयोंके द्वारा समय बताती है।

टाई (अं० स्त्री०) अंगरेजी पहनावेमें कालरके ऊपर गांठ दे कर बांधी जानेकी कपड़ेकी पट्टी।

टाउन (अं० पु०) शहर, कसबा।

टाउनगाउटी (अं० स्त्री०) सुंगी, चौंटूटी।

टाउनहाल (अं० पु०) किसी नगरका सार्वजनिक भवन। इसमें नगरकी सफाई रोशनी आदिके प्रबंध-कर्त्ताओंकी सभाएं होती हैं।

टांक (हिं० स्त्री०) १ चार मासेकी एक तौल। इसका प्रचार जौहरियोंमें है। २ लिखावट। ३ कलमकी नोक, निबनोका डङ्क। ४ पश्चिम सेरके बराबरकी एक प्राचीन तौल। इससे धनुषकी शक्तिकी परीक्षा की जाती थी। प्राचीन समयमें इस तौलका बटखरा धनुष को डोरीमें बांध कर लटका दिया जाता था। जितने बटखरे बांधनेसे धनुषकी डोरी अपने पूरे खिंचाव पर पहुंच जाती थी, उस धनुषको उतने ही टांकका सम- झते थे। ५ अन्दाज, जांच, आंक। ६ हिस्सेदारोंका हिस्सा, बखरा।

टांकना (हिं० क्रि०) १ कील कांटे ठोंक कर एक वस्तुको दूसरी वस्तुसे मिलाना। २ सिलाईके द्वारा जोड़ना। ३ सिलाईके द्वारा एक वस्तुको दूसरे वस्तुसे अंटकाना। ४ कूटना, रेहना। ५ रेती तेज करना। ६ स्मरण रखने- के लिये कागज पर लिख लेना, दर्ज करना, चढ़ाना। ७ खाना, उड़ा जाना, चट कर जाना। ८ अनुचित रूपसे रुपया पैसा आदि ले लेना, मार लेना।

टांकली (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी घिरनी जिससे जहाजका पाल लपेटा जाता है।

टांका (हिं० पु०) १ जोड़ मिलानेवाली कील। २ सिलाईका अलग अलग भाग, डोभ। ३ सिलाई, सीवन। ४ चिप्पी, चकती। ५ वह सिलाई जो शरीर परके घाव या कटे हुए स्थान पर की जाती है। ६ धातुओंकी जोड़नेका मसाला। ७ लोहेकी कील, पत्थर काटनेकी चौड़ी छेनी। ८ हौज, चहबच्चा। ९ पानी रखनेका बड़ा बरतन, कंडाल।

टांकाटूक (हिं० वि०) जो तौलमें ठीक निकले, वजनमें पूरा पूरा।

टाँकी (हि॰ स्त्री॰) १ पत्थर गढ़नेका यन्त्र। २ काट कर बनाया हुआ छेद। ३ एक प्रकारका फोड़ा। ४ गरमी या मूत्र रोगका घाव। ५ चारीका दाँत, दाँता। ६ छोटा चीप चढ़वा। ७ पानी रखनेका बड़ा बरतन, हौज।

टाँकीबन्द (हि॰ वि॰) जिसमें लगे हुए पत्थर दोनों ओर गड़ी हुई लोहेकी कीलोंके द्वारा एक दूसरेसे खूब जुड़े हों।

टाँग (हि॰ स्त्री॰) १ जाँघकी जड़से ले कर एड़ी तकका भाग या घुटनेसे ले कर एँड़ी तकका भाग। २ कुश्तीका एक पेंच। ३ चतुर्थांश, चौथाई भाग।

टाँगन (हिं॰ पु॰) कम ऊँचाईका घोड़ा, पहाड़ी टट्टू।

टाँगना (हि॰ क्रि॰) १ किसी वस्तुको दूसरी वस्तुमें इस प्रकार बाँधना कि उसका सब भाग नीचेकी ओर लटकता रहे, लटकाना। २ फाँसी चढ़ाना फाँसी लटकाना।

टाँगा (हि॰ पु॰) १ बड़ी कुल्हाड़ी। २ घोड़े या बैलसे खींची जानेवाली एक प्रकारकी गाड़ी। इसमें सवारी प्रायः पीछेकी ओर ही मुँह करके बैठती है। इस गाड़ीके इधर उधर उलटनेका भय भी बहुत कम रहता है, क्योंकि इसके नीचेका भाग जमीनसे सटा रहता है। यह प्रायः पहाड़ी रास्तोंके लिये बहुत लाभदायक होती है।

टाँगामोचन (हि॰ स्त्री॰) खींच खसोट, खींचातानी।

टाँगुन (हि॰ स्त्री॰) सावन भादोंमें तैयार होनेवाला एक प्रकारका अनाज। इसके दाने बहुत बारीक और पीले रंगके होते हैं। यह गरीब मनुष्योंके खानेके काममें आता है।

टाँच (हि॰ स्त्री॰) १ दूसरेका काम बिगाड़नेवाली बात। २ टाँका, सिलाई, डोभ। वह टुकड़ा जो किसी फटे हुए कपड़े या और किसी वस्तुका छेद बन्द करनेके लिये टाँका जाय चकती।

टाँचना (हि॰ क्रि॰) १ टाँकना, सीना। २ काटना, छाँटना, छोलना।

टाँची (हि॰ स्त्री॰) १ कपड़ेकी वह लम्बी पतली थैली जिसमें व्यापारी रुपये भर कर कमरमें बाँध लेते हैं, हिमयानी। २ मौजी।

टाँठ (हि॰ वि॰) १ कठोर कड़ा। २ दृढ़, हट्टपुष्ट, मजबूत।

टाँड़ (हि॰ स्त्री॰) १ चीज असबाब रखनेका पाटन, पर छती। २ मचान। यह दो या चार बल्लोंके योगसे बनाया जाता है। ऊपरमें खाट या तख्ते बिछाए रहते हैं जिस पर बैठ कर कृषक खेतकी रखवाली करते हैं। ३ एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रियाँ बाहु पर पहनती हैं, टँड़िया। (पु॰) ४ समूह, ढेर, राशि। ५ समूह, पंक्ति। ६ घरोंकी पंक्ति। (स्त्री॰) ७ ऊँची करारी मही। ८ गुल्ली पर डंडेकी चोट, टोला।

टाँड़ा (हि॰ पु॰) १ बनजारोंके बैलों आदिका झुण्ड, बरदी। २ व्यापारियोंके मालकी लदान। ३ व्यापारियोंका झुण्ड। ४ परिवार कुटुम्ब। ५ गर्दन आदिकी नसको गुठलीदार कर देनेवाला एक प्रकारका फोड़ा।

टाँयटाँय (हि॰ स्त्री॰) १ अप्रिय शब्द कड़ुई बोली, टें टें। २ प्रलाप बकवाद।

टाँस (हि॰ स्त्री॰) हाथ या पैरके बहुत देर तक सिकुड़े रहनेके कारण नसोंका तनाव। इसमें यद्यपि बहुत पीड़ा होती है लेकिन यह बहुत कम काल तक ठहरती है।

टाकी—बङ्गालके चौबीस परगना जिलेके अन्तर्गत बशिरहाट उपविभागका एक शहर। यह अक्षा॰ २२° ३५' उ॰ और देशा॰ ८८° ५५' पू॰के मध्य यमुनाके किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५०८८ है। यहाँ सरकारी हाई-स्कूल, बालिका-विद्यालय और दातव्य चिकित्सालय है। यह नगर स्वास्थ्यकर है। यहाँ मलेरियाका प्रकोप नहीं देखा जाता। यहाँके राजा बसन्तरायके वंशज हैं। स्वर्गीय कालीनाथ राय बाहादुरने एक लम्बी चौड़ी सड़क प्रस्तुत कर दी है। इस नगरमें अच्छे अच्छे गड़ुवे प्रस्तुत होते हैं। यह चावल व्यवसायका केन्द्रस्थान है। यहाँ १८६८ ई॰में म्युनिसपालिटी स्थापित हुई है।

टाकू (हि॰ पु॰) टकुआ तकला, टेकुरी।

टाङ्क (स॰ क्ली॰) टङ्केन तद्वेन निवृत्त। मद्यविशेष एक प्रकारकी शराब। यह शराब मोल केवड़े रससे तैयार होती है। इसके बारह भेद हैं—पानस, द्राक्ष, माधूक, खार्जूर, ताल ऐक्षव, माध्वीक, टाङ्क मार्द्वीक, ऐरव और नारिकेलज ये ग्यारह प्रकारके मद्य हैं। बारहवें प्रकारके मद्यका नाम सुरा है। पहले ग्यारह प्रकारके

मद्य पोनेसे प्रायश्चित्त किया जा सकता है, इसका प्रायश्चित्त तीन दिन उपवास मात्र है।

"द्राक्षेक्षुटंकखर्जूरपनसादेश्च यो रसः।
मद्योजातन्तु पीत्वा तं त्र्यहाच्छुध्येत् द्विजोत्तमः।"
(पुलस्त्य) मद्य देखो।

टाङ्कमाध्वीक (सं० क्ली०) मद्यविशेष, एक प्रकारकी शराब। यह मद्य शतावरी टङ्कमूलका रस और पद्ममधु द्वारा एकत्र कर बनाया जाता है।

"शतावरी टंकमूलं लक्ष्मणप्रमेव च।
मधुना सह सन्धानात् टंकमाध्वीकमीरितं।" (तन्त्र)

टाङ्कर (सं० पु०) टङ्कयते टाङ्ग गति रा-क। स्वेच्छाचारी, रण्डीबाज।

टाङ्गाइल—१ पूर्वीय बङ्गालके मैमनसिंह जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० २३° ५७´ से २४° ४८´ उ० और देशा० ८९°४०´ से ९०° १४´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण १०६१ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ९७०२३९ है। इसके तीन ओर पुलिनमय भूभाग और शेष पूर्वकी ओर मधुपुर नामका जङ्गल है। इसमें टाङ्गाइल शहर तथा २०३० ग्राम लगते हैं। इसके समीप सुवर्णखाली नामक स्थानमें एक बड़ा बाजार है।

२ पूर्वीय बङ्गालके मैमनसिंह जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २४°१५´ उ० और देशा० ८९°५७´ पू०के मध्य यमुनाकी एक शाखा लौहजङ्गतीर पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १६६६६ है। यहां दो उच्चश्रेणीके विद्यालय हैं, जो स्थानीय लोगोंकी देख भालमें हैं। यह वाणिज्यका केन्द्रस्थल है। १८८७ ई०में म्युनिसपालिटी स्थापित हुई।

टाट (हिं० पु०) १ बिछाने, परदा डालने आदिके काममें आनेवाला एक प्रकारका मोटा कपड़ा। यह सन या पटुएकी रस्सियोंका बुना होता है। २ बिरादरी, कुल। ३ वह बिछावन जिस पर साहुकार बैठते हैं, महाजनकी गद्दी। (वि०) ४ कसा हुआ, जकड़ा हुआ।

टाटबाफोजूता (हिं० पु०) कामदार बढ़िया जूता।

टाटर (हिं० पु०) १ टट्टर, टट्टी। २ खोपड़ी, कपाल।

टाटरिक एसिड (अं० पु०) इमलीका तेजाब, इमलीका सत।

टाटा—सिन्धुप्रदेशका एक नगर। यह १४८५ ई०में सोमोयवंशके चौदहवें राजा जाम मन्दससे स्थापित हुआ है। यह नगर सिन्धु नदीके किनारे समुद्रसे १३० कोस दूर पर्वतके ऊपर अवस्थित है। वर्षाकालमें इसके निकटवर्ती बहुतसे प्रदेश जलमग्न हो जाते हैं। यह द्वीपको नाईं मालूम पड़ता है। यहांकी सड़कें अप्रशस्त और अपरिष्कार हैं। किन्तु यहांके मकान अच्छे अच्छे दीख पड़ते हैं। इसके चारों ओरकी जमीन उर्वरा है।

ठट्टा देखो।

टाटा (जमशेदजी)—भारतवर्षके गौरव-स्वरूप एक प्रधान वणिक्। ताता देखो।

टॉड (जेम्स् कर्नल) "राजस्थान" नामक प्रसिद्ध इतिहास-ग्रन्थके लेखक और राजनीतिविद्। १७८२ ई०, तारीख २० मार्चको इसलिङटन नामक स्थानमें इनका जन्म हुआ था। १७९८ ई०में इनके चाचा मि० पार्टिक हिटलेने इन्हें इष्ट इण्डियन कम्पनीके अधीन कैडेटकी नौकरी लगा दी। १७९९ ई०के मार्च महीनेमें, बङ्गालमें आ कर ये दूसरे यूरोपीय सेनामें शामिल हो गये। १८०१ ई०में ये नौकरी ले कर दिल्ली गये और वहां उन्हें एक पुरानी नहरके जरीब करनेका भार प्राप्त हुआ। १८०५ ई०में ये सिन्धिया-राज्यमें ब्रिटिशदूतके सहकारी नियुक्त हुए। सन १८१२से १७ ई० तक ये सर्वदा प्रत्नतत्त्व-विषयक संवादादि संग्रह करते रहे। राजपूत जातिके साथ घनिष्टतासे मिल कर उनका जातीय इतिहास बनाना इनके जीवनका व्रत था। १८१५ ई०में कर्नल टॉडने एक मानचित्र बना कर गवर्नर जनरलको दिया, जिसमें सबसे पहले उन्होंने 'मध्यभारत' शब्दका व्यवहार किया था और वहांके कुछ करदराज्योंको ले कर उक्त भौगोलिक अंशका दिग्दर्शन कराया था। इनके उपदेशानुसार मध्यभारतके करदराज्योंके साथ राजनैतिक सम्बन्ध स्थिर करनेके लिये एक एजेन्सी स्थापित की गई। टॉड साहबकी राजपूतानाके बहुतसे स्थानोंसे परिचय था। १८१७ ई०में जब लार्ड हेष्टिंस् पिण्डारियोंके विरुद्ध युद्धयात्रा की थी, उस समय इन्होंने उनको बहुत कुछ सहायता पहुंचाई थी। इन्होंने पिण्डारी-युद्धमें अपनी इच्छासे ब्रिटिश-शक्तिको संवाद देनेका भार ग्रहण किया था।

गवर्नर जनरलने इनके इस कार्यकी प्रशंसा की है।

१८१८ ई०में राजपूतानेके मामलात ब्रिटिश गवर्मेण्टके अधीन निश्चिन्तापूर्वक रहनेको राजी हो गये और साथ ही टॉड साहब पश्चिम राजपूतानेके राजनीतिक दूत नियुक्त हो गये। वे राजपूतजातिके अत्यन्त विश्वासभाजन हो गये थे। कार्यभार ग्रहण करनेके बाद एक वर्षके भीतर इन्हींसे यहां व्यवसायकी काफी उन्नति हो गई थी और करीब तीन सौ उजाड़ गांव फिरसे बस गये थे। १८२५ ई०में जिस समय विशप हिबर राजपूताना परिदर्शन करने आये थे उस समय उन्होंने सुना था कि टॉड साहबने राजपूतानाकी जैसी उन्नति की है, वैसी और किसीने भी नहीं की। टॉड साहब राजपूत राजाओंको इतनी नेक सलाहें देते थे, कि अफसरोंको गवर्मेण्ट समझती थी कि टॉड साहब शायद घूस लेते होंगे। इस प्रकारके बेबुनियाद सन्देह किये जाने पर टॉड साहबने काम छोड़ दिया। पीछे गवर्मेण्टको मालूम हो गया कि टॉड साहब यथार्थमें राजपूतोंके हितैषी बन्धु थे, वे घूस नहीं लेते थे।

१८२३ ई०में टॉड साहब इंग्लैण्डमें लौट गये। इन्होंने जीवनका शेष भाग राजपूतानेके इतिहास आदि प्रकाशित करनेमें व्यय किया था। रॉयल एसियाटिक सोसाइटीमें इन्होंने राजपूतानेके विषयमें कई एक निबन्ध पढ़े थे और कुछ दिन उस सभाके लाइब्रेरियन नियुक्त थे।

१८२० ई०में इन्होंने सिन्धियाके पुराने फरासीसी सेनापति काउण्ट डी० बयन्स से मुलाकात की। १८२६ ई० तारीख १० नवेम्बरको, ४४ वर्षकी उमरमें आपने लन्दनके डाक्टर क्लटरबकको कन्याका पाणिग्रहण किया। आपके एक कन्या और दो पुत्र थे।

टॉड साहबने रॉयल एसियाटिक सोसाइटीकी पत्रिकामें प्रत्नतत्त्व विषयक अनेक निबन्ध प्रकाशित कराये थे। १८३१ ई०में भारतकी राजनीतिक विषयकी आलोचनाके लिए कामन्स सभाकी कमिटीमें विचारार्थ जो बैठक हुई थी, उसमें मि० टॉडने पश्चिम भारतकी राजनीतिक विषयमें एक सुन्दर मन्तव्य पेश किया था।

आपका नाम केवल "राजस्थान" ही अमर रखेगा। यद्यपि फिलहाल ऐतिहासिक दृष्टिसे आपकी पुस्तकमें बहुतसी भूलें निकल रही हैं तथापि आपकी मेहनतें और उनकी धारा इस ग्रन्थको उपादेय बनाये रखेगी। १८३९ ई०में आपका "पश्चिम-भारत भ्रमण" नामक और एक ग्रन्थ लन्दनमें प्रकाशित हुआ है।

टॉड (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका गहना जो भुजा पर पहना जाता है, टॉड बहुंटा।

टाड़र (हिं० स्त्री०) एक पक्षीका नाम।

टाण्डा—१ युक्तप्रदेशके फैजाबाद जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २६° ९´ से २६° ४०´ उ० और देशा० ८२° २० से ८३° ८´ पू० में अवस्थित है। इसका भूपरिमाण ३६१ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २६९७१२ है। इस तहसीलमें तीन शहर और ७१५ ग्राम लगते हैं। तहसीलकी कुछ जमीन गोगरा (घर्घरा) नदीके किनारे रहनेके कारण तर और नीची है और फसल प्रायः नहीं लगती है। लेकिन कभी जमीन बहुत उर्वरा है और काफी अनाज उत्पन्न करती है। यहां झीलकी अपेक्षा कुएँसे जल सींचनेमें विशेष सुविधा है।

२ युक्तप्रदेशके फैजाबाद जिलेकी इसी नामकी तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २६° ३३´ उ० और देशा० ८२° ४´ पू० मध्य गोगरा नदीके किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १८८२१ है। यह शहर अवध रोहिलखण्ड रेलवेके अकबरपुर स्टेशनसे १२ मील दूर पड़ता है। १८वीं शताब्दीके प्रथम अवधके नवाब सादत अलीने इस नगरकी बहुत उन्नति की तथा कई एक राज्य भवन बनवाये। उस समय यह नगर तरह तरहके कपड़े बुननेका भारतवर्षमें एक प्रधान केन्द्र गिना जाता था। अमेरिकाके सिविल युद्धके समयसे यहांका वाणिज्य कुछ क्षीण होता आता है। आज भी यहां ११००से अधिक करघे चलते हैं। जामदानी नामका मलमल कपड़ा यहांका प्रसिद्ध है। इस नगरमें केवल तीन विद्यालय हैं।

३ (तांडा) पूर्वीय बङ्गालके मालदह जिलेका एक प्राचीन नगर। यह गौड़के निकट गङ्गाके दूसरे किनारे अवस्थित था। गौड़ नगरके ध्वंस होने पर १० वर्ष तक यहां बङ्गालकी राजधानी थी। यह नगर कहां पर स्थापित हुआ था, इसका पूरा पता नहीं लगता है। शायद यह

स्थान पगला नदीगर्भमें विलीन हो गया है। अभी भी उस स्थानमें एक ग्राम टाण्डा या टाँड़ा नामसे पुकारा जाता है। बङ्गालके इतिहास-लेखक स्टुयर्ट साहबका कथन है, कि गौड़ नगर जनशून्य होनेके ११ वर्ष पहले बङ्गालके शेष अफगान राजा सुलेमान शाह कररणीने १५६४ ई०में टाण्डा नगरमें बङ्गालको राजधानी स्थापित की। मुगल-सम्राट् अकबरके समयमें टाण्डा नगर समृद्ध और बङ्गालके नवाबोंका वासस्थान था। १६६० ई०में विद्रोही सुजाशाह औरङ्गजेबके सेनापति मोरजुमलाके भयसे राजमहलसे टाण्डा नगरको भाग आये थे और पीछे युद्धमें पराजित हुए। इसके बाद मुगलोंने राजमहल और ढाकामें बङ्गालकी राजधानी स्थापन की थी।

४ युक्तप्रदेशके रामपुर राज्यकी सुआर तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २८°५८ उ० और देशा० ७९° ५७´ पू०के मध्य मुरादाबादसे नैनीतालके पथ पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७९८३ है। यहाँ बञ्जार जातिका वास अधिक है। इस नगरमें एक चिकित्सालय और एक विद्यालय है।

टाण्डा-उरमार—पञ्जाबके होशियारपुर जिलेके अन्तर्गत दसूय तहसीलके शहर। ये दोनों शहर एक दूसरेसे आध मीलकी दूरी पर पड़ता है और अक्षा० ३१°४०´ उ० और देशा० ७५°३८ पू०में अवस्थित है। दोनोंकी मिश्रित लोकसंख्या प्रायः १०२४७ है। यहाँ सखी सरवर नामक एक साधुका मठ है। १८६७ ई०में म्युनिसिपालिटी स्थापित हुई है। यहां म्यु,निसिपल बोर्डके अधीन एक एङ्गलोवर्नाक्युलर मिडिल स्कूल और एक सरकारी चिकित्सालय है।

टान (हिं० स्त्री०) १ विस्तृति, फैलाव, खिंचाव। २ खींचनेकी क्रिया, खींच। ३ साँपके दाँत लगनेका एक प्रकार। इसमें दाँत धँसता नहीं केवल छीलता या खरोंच डालता हुआ निकल जाता है। ४ सितारके परदे पर उँगलिको रख कर इस प्रकार खींचनेकी क्रिया जिससे साध्यके सभी स्वर निकल आवें। (पु०) ५ मचान, टाँड़।

टानना (हिं० क्रि०) खींचना, तानना।

टाप (हिं० स्त्री०) १ घोड़ेके पैरका निचला भाग। २ वह शब्द जो चलते समय घोड़ेके पैरोंसे होता है। ३ मछली पकड़नेका झाबा। यह बेंत या और किसी पेड़की सलोनी टहनियोंका बना होता है। ४ मुर्गियोंको बंद करनेका झाबा। ५ पलंगके पायेका तलभाग। यह भाग पृथ्वीसे लगा रहता और इसका घेरा उभरा रहता है।

टापड़ (हिं० पु०) ऊसर मैदान।

टापदार (हिं० वि०) जिसके ऊपर या नीचेका छोर कुछ फैला हुआ हो।

टापना (हिं० क्रि०) १ घोड़ोंका पैर पटकना। २ इधर उधर घूमा फिरना, टकर मारना। ३ निष्प्रयोजन इधर उधर फिरना। ४ कूदना, उछलना। ५ निराहार पड़ा रहना। ६ व्यर्थ प्रतीक्षा करना, व्यर्थ किसी दूसरेकी आशा करना। ७ पश्चात्ताप करना, पछताना, हाथ मलना।

टापर (हिं० पु०) टट आदिकी सवारी।

टापा (हिं० पु०) १ टप्पा, मैदान। २ वह विस्तृत भूमि जहाँ कोई चीज उगती न हो, उजाड़ मैदान। ३ कूद, फांद, फलांग। ४ एक टोकरा जिससे कोई वस्तु ढाँकी या बंद की जाय।

टापू (हिं० पु०) चारों ओरसे घिरा हुआ भूखंड, द्वीप।

टाबर (हिं० पु०) लड़का, बालक।

टाबू (हिं० पु०) रस्सीकी बनी हुई एक प्रकारकी जाली जो कटोरेके आकारकी होती है। काम करते समय बैलोंको चारे खानेसे रोकने लिये यह उनके मुँह पर लगा दिया जाता है, जाबा।

टामन (हिं० पु०) तन्त्रविधि, टोटका।

टार (सं० पु०) टां पृथ्वीं ऋच्छति ऋ-अण्। १ तुरङ्ग, घोड़ा। २ लङ्ग, गाड़ू, लौंड़ा। ३ रङ्ग, वह मनुष्य जो स्त्री पुरुषका संयोग करा देता हो, कुटना, दलाल।

टार (हिं० पु०) १ राशि, ढेर, पुञ्ज। (स्त्री०) २ टाल टल।

टारन (हिं० पु०) १ टालने या सरकानेकी वस्तु। २ कोल्हूमें पड़ा हुआ लकड़ीका डंडा। इससे ईख चलाई या हिलाई जाती है।

टारपीडो (अं० पु०) पानीके भीतर हो कर चलानेवाला जंगी जहाज।

टाल (हिं० स्त्री०) १ भारी राशि, ऊँचा ढेर, गंज। २ लकड़ी, भुस आदिकी बड़ी दूकान। ३ बैलगाड़ीके पहि·

पैसा ठिगाना। ४ टालनेका भाव। ५ झूठा वादा। ६ गाय बैल, जांघ आदिके गलेमें बांधनेका एक घंटा। (पु॰) ७ कुश्तीका दांव।

टालटूल (हिं॰ स्त्री॰) टालमटूल देखो।

टालना (हिं॰ क्रि॰) १ हटाना, खिसकाना सरकाना। २ अनुपस्थित कर देना, भगा देना। ३ दूर करना, मिटाना। ४ नियत समयसे और आगेका समय उठा रखना, मुलतवी करना। ५ समय व्यतीत करना, गुजारना। ६ कहा न करना, न मानना। ७ किसी कार्यके सम्बन्धमें इस प्रकारकी बातें कहना जिसमें वह न करना पड़े। ८ किसी कार्यको पूरा करनेको मिथ्या आशा देना आज कलका झूठा वादा करना। ९ किसी मनुष्यको निराश करके लौटाना। १० पलटना, फेरना। ११ बचा जाना, तरह दे जाना।

टालमटाल (हिं॰ स्त्री॰) टालमटूल देखो।

टालमटाल (हिं॰ क्रि॰-वि॰) आगे पीछे, मिथ्या मिस।

टालमटूल (हिं॰ पु॰) बहाना।

टाला (हिं॰ वि॰) वर्ष पाला।

टाली (हिं॰ स्त्री॰) १ वह घंटा जो गाय बैल आदिके गलेमें बांधी जाती है। २ तीन वर्षसे कमकी बछिया। ३ एक प्रकारका बाजा। ४ आधा रुपया, अठन्नी।

टाल्ही (हिं॰ पु॰) पञ्जाबमें मिलनेवाला एक प्रकारका शीशम। इसकी लकड़ी इमारती आदिके काममें आती है।

टासो (टरकुआटो)—यूरोपके सब आगरके सुप्रसिद्ध महाकवि। इटलीके बारगामो नगरके किसी सम्भ्रान्त परिवारमें इनका जन्म हुआ था। इनके पिताने बहुत दिनों तक सालर्नोके राजाके सेक्रेटरीका काम किया था। इनकी माता नियापलिटन भी सम्भ्रान्त वीर्योंके साथ घनिष्ट सम्बन्धमें आबद्ध थीं। नेपल्सके शासनकर्ताओंके साथ सालर्नोके राजाका विवाद उपस्थित होने पर वे सम्पत्तिच्युत किये गये। टासोके पिता भी सालर्नोसे निर्वासित हुए थे। टासो उस समय छोटे बच्चे थे।

१५५२ ई॰में टासो अपनी माताके साथ नेपल्समें रह कर जेसुइट नामक यूरोपीय सम्प्रदायके निकट विद्याभ्यास करने लगे। बाल्यावस्थामें ही टासोकी बुद्धिका विकाश और धर्म-भावोंकी प्रबलता देख कर सब उन पर मुग्ध हो गये। आठ वर्षकी उमरमें ही टासोका नाम प्रसिद्ध हो गया। इसके कुछ दिन बाद ये अपने निर्वासित पिताके मिलनेके लिए रोम नगरमें पहुंचे। इनके पिताके दुःखका उस समय पारावार न था। १५५६ ई॰में उन्हें सम्वाद मिला कि उनकी माताकी मृत्यु हो गई है। टासोके पिताने कहा, कि "सम्पत्ति पानेकी आशासे मामाने अपनी बहनको विष दे कर मार डाला है।" वस्तुतः ही टासोने कभी अपनी माकी सम्पत्ति भोग न पाई थी।

१५५७ ई॰में टासोके पिताने उरबिनोके राज दरबारमें काम करना स्वीकार कर लिया। टासो दिनोंमें बहुत ही खूबसूरत थे—वे उरबिनोके राजकुमारके मिरियाके खेलने और पढ़ने लिखनेके साथी हो गये। उस समय उरबिनो विद्या, शिल्प और सौन्दर्य-चर्चाका एक केन्द्र बन गया था। इसलिए टासो कैशोर-जीवनमें विलासिता और काव्यसमालोचनाकी परिस्थितिमें परिवर्द्धित होने लगे।

१५६० ई॰में जब इनके पिता भिनिसमें आये, तब वहां टासो सबके आदर और गौरवके पात्र हो गये। इनके पिताके हृदयमें कवि भाव रहनेके कारण उन्हें बड़ा दुःख उठाना पड़ा था, इसलिए वे बालक टासोको उस मार्गसे विरत करनेके लिए यथासाध्य चेष्टा करने लगे। उन्होंने अपने पुत्र टासोको कानून पढ़नेके लिए पदुआ भेज दिया। परन्तु वहां उस युवकने व्यवहार शास्त्रका अध्ययन छोड़ कर काव्य और दर्शन पढ़ना शुरू कर दिया।

१५६२ ई॰के शेष भागमें टासोने "रिनाल्डो" नामका एक काव्य लिखा। इस काव्यमें ऐसे सुन्दर भाव और छन्दका समावेश किया गया था, कि लोगोंने उन्हें इस युगका एक प्रसिद्ध कवि मान लिया और उनको धन्य देना की।

१५६५ ई॰में टासोने फिरारा दुर्गमें प्रथम पदार्पण किया। यहां रह कर इन्होंने जैसा यश उपार्जन किया था उससे अधिक कष्ट भी पाया। एक तो ये विद्वान् समाजप्रिय सुन्दर युवक थे, दूसरे उनका ख्याति था। और मेल मद थी। इसलिए तदानीन्तन इटलीका राज

सभामें इनकी खासी खातिर तवज्जह रही। लुक्रेशिया और लिओनारा नामकी दो राजकुमारी, जो अविवाहिता और टासोसे १० वर्ष उमरमें बड़ी थीं, उनकी यह एक तरहसे खातिरदारी करने लगी। टासो राजकुमारी लिओनाराके प्रेममें पड़ गये थे। उस प्रेमकी सुप्रसिद्ध कहानीकी स्मृति अब भी उनके काव्यालोकमें प्रकाशमान है। १५६५ से ७० ई० तक इनके जीवनका सर्वापेक्षा सुखमय समय था। १५६८ ई०में इनके पिताकी मृत्यु हो गई, जिससे इनका भावप्रवण हृदय शोकाकुल हुआ था।

१५७० ई०में वे कार्डिनाल महोदयके साथ पारी नगरीमें भ्रमण करने गये। वे बड़े निर्भीक और स्पष्टवक्ता थे, इसलिए कार्डिनालके साथ बनती न थी। दूसरे वर्ष वे फ्रान्ससे फेरारा गये और वहां डिउकके अधीन कार्य करने लगे। परवर्ती चार वर्षोंमें इन्होंने "आमेनिया" और "जेरूसालेम मुक्ति" नामके दो ऊँचे दरजेके ग्रन्थ बनाये। "आमेनिया" किसानोंकी जीवनियोंके आधार पर नाटकके तौर पर लिखा गया था, किन्तु उसमें गीति कविताकी सुषमा और तदानीन्तन घटनाका भाव मौजूद था। परवर्ती दो सौ वर्ष तक जो भाव काव्य और नाटक इटलीमें लिखे गये थे, उनमेंसे अधिकांश ग्रन्थोंमें इसी "आमेनिया"का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इसलिए इसे हम टासोकी श्रेष्ठ और प्रयोजनीय रचना कह सकते हैं।

"जेरूसालेमी लिबाराटा" का प्रभाव यूरोपीय साहित्य पर और भी अधिक पड़ा है। यह ग्रन्थ उस युगका महाकाव्य समझा जाता है। इस ग्रन्थके कारण ही इनका नाम वाल्मीकि व्यास, होमर, भार्जिल आदिके साथ लिया जाता है। टासोने इकतीस वर्षकी उमरमें यह महाकाव्य समाप्त किया था। इस ग्रन्थकी समाप्तिके साथ ही इनके जीवनका सर्वोत्कृष्ट भाग व्यतीत हुआ था। इसके बाद इन्हें दुःखोंने घेर लिया। टासोने "जेरूसालेम" महाकाव्य स्वयं न छाप कर, इटलीके प्रधान प्रधान लोगोंके पास समालोचनार्थ भेज दिया। फिर क्या था; नाना मुनिके नाना मत। कोई कहने लगे कि और भी संयत बनानेकी जरूरत है, किसीने कहा कि अभी उसे और भी कवित्वमय बनाना चाहिए इत्यादि। टासोने भार्जिलके आदर्श पर इस महाकाव्यकी रचना की थी। इन्होंने किसीके कहनेसे कुछ परिवर्तन करना उचित न समझा। १५६४में इन्होंने "काव्यकी रीति" नामक जिस सन्दर्भकी रचना की थी, उसके अनुसार इन्हें भी चलना पड़ा।

इस महाकाव्यमें गडफ्रेको नायक बना कर उनके धर्मभावके प्रति हमारे मनको आकृष्ट करनेकी चेष्टा करने पर भी यथार्थ नायकके रूपमें हम भावप्रवण रिनाल्डोको, विपन्न टानक्रेडको और धीरहृदय मुसलमानोंको ग्रहण करते हैं। सुन्दरी आर्मिडाने ईसाइयोंमें किस तरह विश्रृंखला पैदा की थी और फिर वह कैसे विफल मनोरथ हुई, इसी विषयको लेकर इस महाकाव्यकी रचना की गई है। अन्तमें आर्मिडा एक ईसाई वीर पर आसक्त हो गई और उसके प्रेममें पड़ कर उसने ईसाई धर्म ग्रहण कर लिया। और रमणी क्लोरिंडाने किस तरह अपने प्रणयीके साथ युद्ध करते करते प्राण दिये और अन्तिम समयमें कैसे ईसाई धर्मको अपनाया, किस तरह आर्मेनियाने दुःखोंको सहन कर लिया, इत्यादि घटनाओंको पढ़ते पढ़ते पाषाण-हृदयोंकी आंखें भी भर आती हैं। ईसाकी सोलहवीं शताब्दीमें इस महाकाव्यमें नारीकी महिमा ऊँचे स्वरसे गायी गई। सत्रहवीं शताब्दीमें "जेरूसालेम" महाकाव्यके नायकोंके नाम यूरोपमें घर घर उच्चारित और समालोचित होते थे।

टासोके ग्रन्थोंके तदानीन्तन समालोचकगण उन्हें इतना तंग करने लगे कि फिर वे क्लान्त और उन्माद-भावापन्न हो गये। "जेरूसालेम" महाकाव्यको उस समय तक उन्होंने छपाया नहीं था। इसी बीचमें वे फ्लोरेन्समें कार्य ग्रहण करनेके लिए बातचीत कर रहे थे। इससे फेराराके डिउक अत्यन्त क्रुद्ध हुए; उन्होंने सोचा इस समय यदि टासो फ्लोरेन्स जायंगे, तो "जेरूसालेम" महाकाव्य वहांके शासनकर्त्ता मेडिसीके नाम समर्पित किया जायगा। परिणाम यह होगा कि आज तक फेराराके डिउकने जो इनका भरण-पोषण किया, उसका उन्हें कुछ प्रतिदान न मिलेगा। इसी बीचमें (१५७५-

८० ई०में) टासोका स्वास्थ्य बहुत ही बिगड़ने लगा। राजसभाके लोग इनके विरुद्ध नाना प्रकारके षड़यन्त्र रचने लगे। इस समय टासो उन्मादग्रस्त हो गये थे। उन्हें सर्वदा ऐसा मालूम होता था, कि फेरारके डिउक साहब उनको हत्या करेंगे। एक दिन ये भिक्षुकके वेशमें पैदल ही अपनी बहनके घर पहुंचे।

इसके कुछ दिन बाद फिर इन्हें फेरारा लौटनेकी आज्ञा मिली। परन्तु इनका रोग उपशम न हुआ। १५७८ ई०में वे फिर भाग गए। मेण्टुआ आदि नाना देशोंमें घूमते हुए वे पैदल ही टूरिन नगरके तोरण पर आ पहुंचे। पिमाण्टके डिउकने इनका बड़ा आदर सत्कार किया। इसके बाद टासो जहां जाते अब वहीं उनका सम्मान होने लगा। परन्तु थोड़े ही दिनों में ये सभीसे नाराज हो गये और फेराराको लौटनेके लिए पत्रव्यवहार करने लगे। फेरारके डिउक जिस समय तीसरी बार अपना विवाह कर रहे थे, उस समय टासो फेरारा पहुंचे। परन्तु वहां वे अपनेको अपमानित समझ, इतना उपद्रव करने लगे कि सबने मिल कर एक उन्मादागारमें भेज दिया। १५७९ ई० के मार्चसे ले कर १५८६ ई०की जुलाई मास तक इन्हें उस पागलखानेमें रहना पड़ा था।

कुछ महीने वहां रहनेके बाद हो, इन्हें बन्धुबान्धवों के आने पर उनसे साक्षात् करने और पत्रव्यवहार करनेकी अनुमति मिल गई। इस समय ये नाना प्रकारकी रचनाओंमें संयुक्त थे। इन दिनों ये कविता अधिक न लिखते थे, किन्तु दार्शनिक आलोचनाका विषय लिखा करते थे। उन्मादागारसे निकल देने पर भी यूरोपके लोग इनकी रचनाका आदर करते थे। १५८१ ई०में जेरुसालेम काव्यके सम्पूर्ण भाग दस बार प्रकाशित हो गये परन्तु प्रकाशकोंने इनकी अनुमति न ली और न संशोधन करने को ही जरूरत समझी। एक वर्षके भीतर इस काव्यके सात संस्करण निकल गये। १५८५ ई०में क्रुस्काके दो विद्वान् "जेरुसालेम"में नाना प्रकारके दोष दिखाने लगे। किन्तु टासोने इन प्रतिवादोंका उत्तर ऐसे अद्भुतभावसे और ऐसी भाषामें दिया था कि पढ़ कर हम उन्हें किसी तरह भी पागल नहीं समझ सकते। अन्तमें टासोको पागलखानेमें अवस्थिति एक समस्याका विषय हो जाता है। हां इतना अवश्य स्वीकार करना पड़ेगा कि टासोमें अधिक विचार बुद्धि रहने पर, जनसमाजको ये पसन्द न करते थे। टासोने राजसभामें रह कर इतनी तकलीफ पाई थी तो भी उन्होंने अपने दोनों मालिकोंको पार्मा और मण्टुआके डिउककी नौकरी दिखा दी।

१५८६ ई०में मण्टुआके डिउकके अनुरोधसे ये उन्मादागारसे छोड़ दिये गये। हजारों लोगोंने इनकी अभ्यर्थना की। इसके बाद ये कुछ दिन मण्टुआमें रहे और फिर नाना स्थानोंमें घूमने लगे। किसी भी जगह वे स्थिर न रह सकते थे। जहां जाते थे वहीं इनका आदर होता था। परन्तु ये इस तरहका अत्याचार करते थे, कि उनके मालिकोंको इन्हें आश्रय भिक्षा देनेके लिए बाध्य होना पड़ता था। इस तरह अन्तिम अवस्थामें प्रतिभाके अद्भुत महाकवि इटलीके उपहास-पात्र हो गये।

१५९२ ई०में अष्टम क्लेमेण्टको पोपका पद मिला। क्लेमेण्ट और उनके भतीजे टासोका आदर करनेके लिए तत्पर हो गये। १५९४ ई०में उनके आमन्त्रणसे ये रोम पहुंचे। टासो रोममें कविसम्राट् का मुकुट पहन करेंगे ऐसा प्रस्ताव हुआ। किन्तु पोपके भतीजेके बीमार हो जानेके कारण वैसा हो न सका। पोप साहबने टासोके लिए गुजरेका बन्दोबस्त कर दिया और उनकी पैतृक सम्पत्तिसे कुछ आय उन्हें प्राप्त हो ऐसी व्यवस्था करा दी। टासोके दुःखमय जीवनमें आनन्दका क्षीण प्रकाश दिखलाई दिया।

१५९५ ई० तारीख २५ अप्रेलको सेण्ट ओनोफ्रियो मठमें टासोकी मृत्यु हुई। उस समय इनकी उमर ५१ वर्षकी थी परन्तु इनकी अन्तके बीस वर्षोंकी रचनाओंमें विशेष कुछ प्रतिभा दृष्टिगोचर न हुई थी। टासोने अपने जीवनमें बड़े बड़े दुःख पाये थे। यही कारण है कि आज हम उनका वर्णन करते हुए भी सहानुभूति और शोक प्रकट किया करते हैं।

टिचर (अ० पु०) स्पिरिटके योगसे बना हुआ किसी औषधका सार।

टिंचर आयोडीन (अ० पु०) एक [illegible] जो छाजन पर लगाया जाता है।

टिंचर ओपियाई (अं० पु०) अफीमका अर्क ।

टिंचर कार्डिमम (अं० पु०) इलायचीका अर्क ।

टिंचर स्टील (अं० पु०) फौलादके मारका अर्क ।

टिंड (हिं० पु०) एक प्रकारकी बेल । इसमें ककड़ीके जैसे गोल गोल फल लगते हैं । फल तरकारीके काममें आता है ।

टिंडा (हिं० पु०) टिंड देखो ।

टिंडर (हिं० पु०) रहटमें लगी हुई हँडिया ।

टिंडसी (हिं० स्त्री०) टिंड नामकी तरकारी ।

टिंडो (हिं० स्त्री०) १ हलकी पकड़ कर दबानेवाली मुठिया । २ जाँता घुमानेका खूँटा ।

टिक (हिं० पु०) टिक्कर, लिट्टी, पूआ ।

टिकई (हिं० स्त्री०) वह गाय जिसके माथे पर सफेद टीका हो ।

टिकट (अं० पु०) १ प्रमाणपत्रके रूपमें दिये जानेका कागजका टुकड़ा । यह किसी प्रकारका महसूल, भाड़ा, कर या फीस चुकानेवालेको दिया जाता है । २ अधिकारपत्र जिसके द्वारा मनुष्य कहीं आ जा सकता है । ३ किसी कार्यकर्त्ताओंके ऊपर लगाये जानेका कर, फीस या महसूल ।

टिकटिक (हिं० स्त्री०) १ वह शब्द जो घोड़ोंको हाँकनेके लिए मुँहसे किया जाता है । २ घड़ीके बजनेका शब्द ।

टिकटिकी (हिं० स्त्री०) १ लकड़ियोंका ढाँचा जो तीन लकड़ियोंको तिरछी करनेसे बनता है । इसमें अपराधियोंके हाथ पैर बांध कर उनके शरीर पर बेंत या कोड़े लगाये जाते हैं । २ ऊँची तिपाई, टिकठी । ३ सारे भारतमें मिलनेवाली एक प्रकारकी चिड़िया । इसकी लम्बाई लगभग आठ नौ अंगुलकी होती है और इसका रंग भूरा और कुछ लाली लिए होता है । जाड़ेमें यह प्रायः जलाशयोंके किनारेकी झाड़ियोंमें घोंसला लगती है । यह एक बारमें चार अंडे देती है ।

टिकठी (हिं० स्त्री०) १ टिकटिकी देखो । २ एक तरहकी ऊँची तिपाई । इस पर अपराधियोंको खड़ा करके उनके गलेमें फांसीका फंदा लगाया जाता है । ३ तीन ऊंचे पाए लगे हुए काठका आसन, तिपाई । ४ टो लकड़ियोंका बना हुआ ढाँचा जिस पर बुना हुआ कपड़ा फैलाया जाता है । यह कपड़ेको चौड़ाईके समान फैल सकता है ।

टिकड़ा (हिं० पु०) १ किसी वस्तुका चक्राकार सुन्दर, चिपटा गोल टुकड़ा । २ एक तरहकी मामूली रोटी ।

टिकड़ी (हिं० स्त्री०) छोटा टिकड़ा ।

टिकना (हिं० क्रि०) १ ठहरना, डेरा करना, मुकाम करना । २ तलछटके रूपमें नीचे बैठ जाना । ३ स्थायी रहना कुछ दिनों तक चलना । ४ स्थित रहना, ठहरना, इधर उधर न गिरना ।

टिकली (हिं० स्त्री०) १ छोटी टिकिया । २ एक प्रकारकी टिकिया जो कांच या पन्नीकी बनी होती है । स्त्रियां शृंगार करनेके लिये इसे अपने ललाट पर चिपकाती हैं, सितारा, चमकी । ३ छोटा टीका, छोटी बेंदी । ४ एक प्रकारका औजार जिससे सूत काता जाता है ।

टिकस (अं० पु०) कर, महसूल ।

टिकाऊ (हिं० वि०) कुछ दिनों तक काम देनेवाला, टिकनेवाला ।

टिकाना (हिं० स्त्री०) १ टिकने या ठहरनेका भाव । २ ठहरनेका स्थान, पड़ाव, चट्टी ।

टिकाना (हिं० क्रि०) १ निवासस्थान देना, ठहराना । २ स्थित करना, अड़ाना, ठहराना ।

टिकानी (हिं० स्त्री०) पैंजनी डाल कर रस्सीसे बांधी जानेकी छकड़ा गाड़ीकी लकड़िया ।

टिकारी—गया जिलेके अन्तर्गत एक जमींदारी । यह अक्षा० २४° ५६´ उ० और देशा० ८४° ५०´ पू०के मध्य गया नगरीसे १५ मील उत्तर पश्चिममें मुरहर नदीके किनारे अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः ६४३७ है । यहां म्युनिसपालिटी है । प्रति अधिवासीको ।⁄) तीन आनेके हिसाबसे टैक्स देना पड़ता है ।

यहांके मट्टीका दुर्ग उल्लेखयोग्य है । शत्रुके आक्रमणसे नगरकी रक्षा करनेके लिये टिकारी-राजाओंने इस दुर्गको बनाया है । दुर्गप्राचीरकी मोरचामें तोप रखनेका स्थान और चारों ओर नाला कटी हुई है ।

इतिहास ।—यहांका राजवंश अत्यन्त अप्राचीन नहीं है । नादिरशाहके आक्रमणके बाद मुगल-शासनकी विशृङ्खला न्यस्त हो जाने पर वर्त्तमान राजवंशके पूर्व-

पुरुष धीरसिंहका प्रादुर्भाव हुआ। ये भी एक सामान्य ज़मींदार थे। उनके पुत्र सुन्दरसिंहने बंगाल बिहारके सूबेदार अलीवर्दीखाँको मरहठोंके विरुद्ध सहायता पहुँचाई थी तथा पटनाके विद्रोह दमनमें सफलता भी प्राप्त की थी। इस सूबेदारकी ओरसे इन्हें 'राजा'की उपाधि मिली। राजा सुन्दरसिंह एक साहसी वीर थे। उन्होंने थोड़े समयमें अपनी सम्पत्तिकी बहुत कुछ उन्नति कर डाली। थोड़े ही दिनोंके अन्दर उन्होंने भोजपुरी सनवत्, पश्चिम सिमावर, दमनावर, पाहुड़ी और पहरा तथा अमराव, और सारे परगने इत्यादि अपने राज्यमें मिला लिया। इसके सिवा उन्होंने बिहार और रामगढ़के अन्य स्थानोंमें भी प्रचुर सम्पत्ति पाई थी। अन्तमें उन्हींके एक जमादारने उनका प्राणनाश किया। सुन्दरके तीन पुत्र थे—बुनियादसिंह, फतेहसिंह और निहालसिंह। कोई कोई कहते हैं कि ये तीनों सुन्दरके भतीजे थे और उन्होंने केवल ज्येष्ठ बुनियादसिंहको दत्तकपुत्र ग्रहण किया था।

बुनियादसिंह शान्तिप्रिय थे। अंग्रेजोंके साथ उनका अच्छा सद्भाव था। उन्होंने आनुगत्य स्वीकार कर अंग्रेजोंको एक पत्र लिखा। वह पत्र नवाब मीरक़ासिमके हाथ लगा। पत्र पा कर क़ासिमअली बहुत बिगड़ा और उसने बुनियादसिंह तथा उनके दोनों भाइयोंको पटने बुलवा कर मार डाला। इस घटनाके कुछ पहले बुनियादसिंहके एक पुत्र हुआ था। क़ासिमअलीने इस छोटे बच्चेको मार डालनेके लिये एक आदमी भेजा। किन्तु रानीने पुत्रको बचानेके लिये उसे एक धोबिनकी टोकरीमें रख कर बुनियादके प्रधान कर्मचारी दर्पनारायण बख्शीके निकट भेज दिया। बख्शीकी सहाई तथा दर्पनारायणने राजपुत्रकी बहुत सावधानीसे रक्षा की थी। इस राजकुमारका नाम मित्रजित्सिंह था। मैनेजराय शासनकालमें मित्रजित्सिंहने अपनी समस्त सम्पत्ति भी खो डाली थी। पश्चात् लॉ साहब (Mr. Law) जब बिहारके कलेक्टर हुए, तब मित्रजित्सिंहने पुनः अपनी पूर्व सम्पत्ति तथा दिल्ली दरबारसे 'महाराज'की उपाधि पाई। अंग्रेज सरकार भी उन्हें 'महाराज' कहा करती थी। जब कभी सिरेके कोल्हन नामक स्थानमें जब

विद्रोह हुआ तब मित्रजित्ने ससैन्य अंग्रेजोंकी रक्षा की थी। उन्होंने गयामें टिकारी तक उसके ऊपर एक बड़ा पुल बनवाया और राम ग्राममें एक वृहत् सरोवर खोदवाया था। उनके समयमें टिकारी राज्यकी आय दुगनी बढ़ गई थी। १८४० ई०में ये परलोकको सिधारे।

उनके बड़े पुत्र हितनारायण ९ आने तथा छोटे पुत्र मोदनारायणसिंहने ७ आनेकी सम्पत्ति पाई। १८४५ ई० के १० मईको हितनारायणको 'महाराज'की उपाधि तथा लार्ड हार्डिंजसे सनद मिली थी। ये निर्विरोध और धार्मिक थे। ये अपनी सहधर्मिणी महारानी इन्द्रजित्कुमारी पर राज्यका भार सौंप कर आप वृन्दावनमें गङ्गाके किनारे समय व्यतीत करने लगे। उसी स्थान पर १८६१ ई०में उनकी मृत्यु हुई।

इन्द्रजित्कुमारीके शासनमें राज्यकी उन्नति चरम सीमा तक पहुँच गई थी। तथा प्रजा भी बहुत सुखसे रहती थी। उन्होंने पतिकी अनुमति ले कर अपने भतीजे रामकृष्णसिंहको दत्तकपुत्र ग्रहण किया और निहालसिंहके उत्तराधिकारियोंने उनका अधिकार कायम रखनेके लिये एक पत्र लिखवा लिया था।

१८७० ई०में रामकृष्णसिंह उत्तराधिकारी हुए। इन्हें १८७१ ई० में महाराजकी उपाधि तथा ब्रिटिश गवर्मेण्टसे ११,०००) रु० मूल्यकी खिलअत मिली। दूसरे वर्ष इन्हें एक दूसरा अधिकार मिला, जिससे उनको आलम अदालतमें जानेकी आवश्यकता न रही। किन्तु १८७१ ई०में उनकी मृत्यु हो गई। ये बड़े आचारवान् थे। अयोध्या नामक स्थानमें तथा गया जिलेके धर्मशाला नामक स्थानमें एक बड़ा मन्दिर निर्माण कर गये हैं।

मोदनारायणके भी कोई सन्तान न थी। उनकी मृत्युके बाद उनकी दो रानी अगमितकुमारी और राजरूप गोविन्दकुमारीने अपने स्वामीकी सारी सम्पत्ति दो बराबर भागोंमें बाँट ली। गोविन्दकुमारीने अपने भतीजे रामेश्वरसिंहको दत्तकपुत्र बनाया। उनका देहान्त होनेपर बहुमाताने [illegible] दत्तकपुत्र ग्रहण किया। इनमेंसे भारी पैतृक सम्पत्ति पर दावा

किया। अनन्तर धकुमारीके दत्तकपुत्रने भी मातृसम्पत्ति पर अपना अधिकार जमाया।

महारानी इन्द्रजित्कुमारीने रामेश्वर, द्वारका आदि तीर्थस्थानोंमें पर्यटन कर वृन्दावनधाममें १८९८ ई०को प्राणत्याग किया। उनके १८९७ ई०के इच्छापत्र के अनुसार उनकी पुत्रवधू महारानी राजरूपकुमारी सारी सम्पत्तिकी अधिकारिणी हुई।

महारानी इन्द्रजित्कुमारीने दो तीन लाख रुपये खर्च करके पटने और वृन्दावनमें दो बड़े बड़े देवालय निर्माण किये हैं। उन्होंने सिपाही विद्रोहके समय अपने अधिकारभुक्त कलकत्ते जानेका पथस्थित मजुयाचको निरापद रक्खा था। विधवा राजरूपकुमारीके भी कोई पुत्र न था। उनकी एकमात्र कन्या राधाकिशोरी उत्तराधिकारी हुई। महारानी राजरूपकुमारी अत्यन्त दानशीला थीं। उनके यत्नसे टिकारी-राज्यके नाना स्थानोंमें अतिथिशाला और विद्यालय स्थापित हुए हैं, जिनमें प्रति वर्ष तीस हजार रुपये देने पड़ते हैं।

१८८८ ई०में राधिश्वरी एक पुत्ररत्नको छोड़ इस लोकसे चल बसी। लड़केका नाम था महाराजकुमार गोपालशरणनारायण सिंह। इनकी नाबालगी तक टिकारी राज्यका ८ आना हिस्सा कोर्ट अफ वार्डको देख रेखमें रहा। १९०४ ई०में जब ये राजगद्दी पर बैठे, तब इन्होंने बहुत अच्छे अच्छे काम कर दिखलाये। चाकन्द महालमें जाल और जमु नहर काटी गई जिससे जमीन पहलेसे बहुत उर्वरा हो गई, साथ साथ एक लाख रुपयेकी आय भी बढ़ गई। यहांकी हैमन्तिक फसल ही प्रधान है।

इस राज्यकी आय लगभग तेरह लाख रुपयेकी है और गवर्मेण्टको लगभग दो लाख रुपये करमें देने पड़ते हैं।

२ गया जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २४°५६´ उ० और देशा० ८४°५०´ पू०के मध्य मुरहर नदीके किनारे गया शहरसे १६ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६४३७ है। इस शहरकी आय ६७००) रु० और व्यय ६१००) रु० है।

टिकाव (हिं० पु०) १ स्थिति ठहराव। २ स्थिरता। ३ यात्रियोंके ठहरनेका स्थान, पड़ाव।

टिकिया (हिं० स्त्री०) १ चक्राकार छोटी मोटी वस्तु गोल और चिपटा छोटा टुकड़ा। २ वह चिपटा गोल टुकड़ा जो कोयलेकी बुकनीको किसी लसीली चीजमें सान कर बनाया जाता है। यह चिलम परकी आग सुलगानेके काममें आती है ३ एक प्रकारकी गोल चिपटी मिठाई। ४ बाहर सिरा निकला हुआ बरतनके मचिका उपरी भाग। ५ रोटीका एक भेद, लिट्टी। ६ ललाट, माथा। ७ वह बिन्दी जो माथे पर लगाई जाती है। ८ वह चिह्न या खड़ीरेखा जो उँगलीमें चूना, रंग या और कोई वस्तु पोत कर बनाई जाती है। अनपढ़ लोगोंको जब रोजाना लेन देनकी वस्तुका हिसाब रखना होता है, तो वे इस प्रकारके चिह्न प्रायः दीवार पर बनाते हैं।

टिकुरा (हिं० पु०) भीटा, टीला।

टिकुरी (हिं० स्त्री०) सूत कातनेकी फिरकी, टिकली।

टिकुला (हिं० पु०) टिकोरा देखो।

टिकुली (हिं० स्त्री०) टिकलि देखो।

टिकैत (हिं० पु०) १ राजाका उत्तराधिकारी कुमार, युवराज। २ अधिष्ठाता, सरदार।

टिकैतराय—लखनऊके नवाब आसफउद्दौलाके दीवान। ये अत्यन्त विद्योत्साही और १७७१ से १७९७ ई० तक विद्यमान थे। हिन्दीके कवि सागर, गिरधर और बेणीकवि इन तीनों कवियोंने स्वीकार किया है कि, उन्हें टिकैतरायसे बहुत कुछ सहायता मिली है। इनके नामका बाराबंकीके पास एक नगर भी है जो टिकैतनगर कहलाता है।

टिकोर (हिं० स्त्री०) टकोर देखो।

टिक्कड़ (हिं० पु०) १ बड़ी टिकिया। २ सेंकी हुई रोटी, लिट्टी। ३ मालपूवा।

टिक्का (हिं० पु०) १ मूंगफलीके पौधेका एक रोग। २ स्मरण, सुध, याद। ३ उँगलीसे रंग आदि लगा कर बनाया हुआ खड़ा चिह्न।

टिक्की (हिं० स्त्री०) १ टिकिया। २ लिट्टी, बाटी। ३ बिन्दी। ४ गोल टीका। ५ ताशकी बूटी। ६ उँगलिसे गोला चूना या रंग आदि पोत कर दीवार पर बनाई हुई खड़ी रेखा या चिह्न।

टिखटिख (हिं० स्त्री०) टिकटिक देखो।

टिपनना (हि॰ क्रि॰) टिपकना, गलना।

टिपलाना (हि॰ क्रि॰) टिपकाना।

टिपस (अ॰ वि॰) १ प्रस्तुत तैयार ठीक। २ उद्यत, मुस्तैद।

टिटकारना (हि॰ क्रि॰) टिक टिक शब्द करके किसी पशुको हाँकना।

टिटिभ (स॰ पु॰) टिटीत्यव्यक्तशब्द भणति भण-ड। पक्षिविशेष, टिटिहरी नामका पक्षी।

टिटिभक (स॰ पु॰) टिटिभ स्वार्थे कन्। टिटिभ देखो।

टिटिभ (स॰ स्त्री॰) संख्याविशेष, १०० लाखजनका एक टिटिभ माना गया है।

टिटिह (हि॰ पु॰) एक पक्षीका नाम।

टिटिहरी (हि॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी छोटी चिड़िया जो प्रायः पानीके किनारेमें ही पायी जाती है। इसका मस्तक लाल, गरदन सफेद, पर चितकबरे, पीठ भूरे रङ्गकी और चोंच काली होती है। इसकी बोली कड़ई होती है। कहा जाता है कि रातको यह अपने दोनों पैर ऊपर करके चित सोती है क्योंकि इसे यह भय लगा रहता है कि शायद आकाश न टूट पड़े।

टिटिहा (हि॰ पु॰) टिटिह देखो।

टिटिहारोर (हि॰ पु॰) १ चिल्लाहट, शोरगुल। २ क्रन्दन, रोना पीटना।

टिट्टिभ (सं॰ पु॰-स्त्री॰) टिट्टीत्यव्यक्तशब्द भणति भण-ड। १ पक्षिविशेष टिटिह पक्षी। इसके पर्याय-टिट्टिभक और टिटीक। स्त्रीके लिए इसको सोमभक्षण निषिद्ध है। २ कश्यप मन्वन्तरीय इन्द्रशत्रु दानवविशेष। तेरहवें मन्वन्तरमें एक दैत्यका नाम जो इन्द्रका शत्रु था। अन्तमें मायाकृप धारण कर इसको मारा था। (मत्स्यपु॰ ८० अ) ३ बकरकी मभारथक दानवविशेष बकरकी सभाको रक्षा करनेवाला एक असुरका नाम (भारत २।१।१५)

टिट्टिभक (स॰ पु॰) टिट्टिभ स्वार्थे कन्। टिट्टिभ देखो।

टिड्डा (हि॰ पु॰) १ अनुक एक प्रकारका कीड़ा। इसकी लम्बाई लगभग चार पाँच अङ्गुलकी होती है। २ बड़ी टिड्डी यह कई प्रकारका होता है।

टिड्डी (हि॰ स्त्री॰) एक प्रकारका उड़नेवाला कीड़ा। यह दल बाँध कर चलता है और रास्तेमें पेड़ पौधों और फसलको बड़ी हानि पहुँचाता है। जिस समय यह दल बाँध कर ऊपरमें उड़ता है उस समय आकाश लाल बादल को घटाके समान दीख पड़ता है। ये हजार डेढ़ हजार कोस तकको मञ्जी यात्रा करती हैं। जहाँ ये जाती हैं वहाँकी फसलको नष्ट करती जाती हैं। ये पहाड़को कन्दरा तथा रेगिस्तानोंमें रहती और बालूमें अण्डे पारती हैं। अफ्रिकामें वर्ष वर्ष और एशियाके दक्षिणी भागोंमें ये कई बार आती जाती हैं इनके उत्पातसे वहाँकी फसल अच्छी तरह होने नहीं पाती है।

टिढ़बिगा (हि॰ वि॰) बाँका टेढ़ामेढ़ा।

टिण्टिनिका (स॰ स्त्री॰) १ चञ्चु शिरोपिका जन चिरमका पेड़ दाढ़ीम। २ जलौका जोंक।

टिण्डिश (स॰ पु॰) शाकविशेष, टिण्डा, डेंड़सी। इस के पर्याय—रोमशफल, तिण्डिश सुनिर्मित और तिण्डिश है। इसका गुण—रोचक भेदक, पित्तश्लेष्मा, अश्मरीनाशक सुशीतल, वातल रूक्ष और मूत्रल है।

टिप (हि॰ स्त्री॰) साँप काटनेका एक प्रकार।

टिपटिप (हि॰ स्त्री॰) बूँद बूँद गिरनेका शब्द।

टिपकाना (हि॰ क्रि॰) १ दबवाना, मिसवाना। २ धीरे धीरे प्रहार करवाना पिटवाना।

टिपारा (हि॰ पु॰) मुकुटके आकारको एक टोपी। इस में कलगीकी तरह तीन शाखायें एक सिरे पर और बगलमें निकली होती हैं।

टिपुर (हि॰ पु॰) १ अभिमान, घमण्ड गुमान गुरूर। २ आडम्बर, पाखण्ड।

टिप्पणी (हि॰ स्त्री॰) टिप्पनी देखो।

टिप्पन (स॰ पु॰) १ व्याख्या टीका। २ जन्मकुण्डली, जन्मपत्री।

टिप्पनी (स॰ स्त्री॰) व्याख्या, टीका।

टिप्पी (हि॰ स्त्री॰) १ वह चिह्न जो उँगलीमें रंग आदि पोत कर बनाया जाता है। २ ताशकी बूटी।

टिप्पिस (अ॰ स्त्री॰) अंगरेजोंका दोपहरका जलपान।

टिबरी (हि॰ स्त्री॰) पहाड़ोंकी छोटी चोटी।

टिमटिमाना (हि॰ क्रि॰) १ मन्द प्रकाश देना मन्द

मन्द जलना। २ झिलमिलाना। ३ मरणासन्न होना, मरनेके निकट होना।

टिमाक (हिं॰ स्त्री॰) सिंगार, बनाव, ठमक।

टिर (हिं॰ स्त्री॰) टर देखो।

टिरफिस (हिं॰ स्त्री॰) प्रतिवाद, विरोध।

टिलटिलाना (हिं॰ क्रि॰) दस्त आना।

टिलवा (हिं॰ पु॰) १ गठीला और टेढ़ा मेढ़ा लकड़ीका टुकड़ा। २ नाटा आदमी। ३ चापलूस आदमी।

टिलिहू (हिं॰ पु॰) सुमात्रा, जावा आदि टापुओंमें मिलनेवाला एक प्रकारका नेवला। इसका सिर सूअरके ऐसा और पूँछ बहुत छोटी होती है।

टिल्ला (हिं॰ पु॰) धक्का, टकोर, चोट।

टिल्लेनवीसी (हिं॰ स्त्री॰) १ निकृष्ट सेवा, नीच सेवा। २ व्यर्थका काम, निठल्ला काम। ३ हीला हवाली, बहाना।

टिसुआ (हिं॰ पु॰) आँसू।

टिहुकना (हिं॰ क्रि॰) १ ठिठकना। चौंकना।

टिहुनी (हिं॰ स्त्री॰) १ घुटना। २ कोहनी।

टी (सं॰ स्त्री॰) संयुक्त वर्ण।

टींड (हिं॰ पु॰) रहटमें बांधनेकी हँडिया।

टींडसी (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी बेल। यह ककड़ीकी जातिकी होती और इसमें गोल फल लगते हैं। इन फलोंकी तरकारी बनती है।

टींड़ा (हिं॰ पु॰) वह खूँटा जिससे जाँता घुमाया जाता है।

टीक (हिं॰ स्त्री॰) १ एक प्रकारका सोनेका गहना जो गलेमें पहना जाता है। २ माथेमें पहननेका सोनेका एक गहना।

टीकन (हिं॰ पु॰) वह खम्भा जो किसी बोझको रोकनेके लिये नीचेसे लगाया जाय, टाँढ़, खम्भा।

टीका (सं॰ स्त्री॰) टीक्यते गम्यते बुध्यते वानया टीक-अथवं क-टाप् च। १ व्याख्याग्रन्थ, किसी वाक्य या पदका अर्थ स्पष्ट करनेवाला वाक्य।

टीका (हिं॰ पु॰) १ वह चिह्न जिसे गीले चन्दन, केसर आदिसे मस्तक बाहु आदि अङ्गों पर साम्प्रदायिक सङ्केत वा शोभाके लिये लगाते हैं, तिलक। २ विवाह-सम्बन्ध स्थिर करनेकी एक रीति। इसमें कन्या पक्षके लोग वरके माथेमें दही अक्षत आदिका टीका लगाते और कुछ द्रव्य उसके साथ देते हैं। ३ माथेका वह भाग जो दोनों भौंके बीचमें होता है। ४ श्रेष्ठ मनुष्य, शिरोमणि। ५ राजसिंहासन पर प्रतिष्ठा, राज्याभिषेक, गद्दी। ६ राजाका वह पुत्र जो उनके मरनेके बाद गद्दी पर बैठे, युवराज। ७ आधिपत्यका चिह्न, प्रधानताकी छाप। ८ वह भेंट जो असामी राजाको देते हैं। ९ माथे पर पहननेका एक आभूषण। १० घोड़ोंके माथेका मध्यभाग जहां भँवरी होती है। ११ चिह्न, दाग, धब्बा। १२ शीतला रोगसे बचानेके लिये उसके चेप या रसको ले कर किसीके शरीरमें सूइयोंसे चुभा कर प्रविष्ट करनेकी क्रिया। इसका व्यवहार विशेष कर शीतला रोगसे बचानेके लिये ही इस देशमें बहुत पहलेसे चला आ रहा है। मनुष्य और गौके शरीरमें शीतला रोगके कारण जो पीप वा रस निकलता है उसीको ले कर प्राचीन कालमें टीका लगाया जाता था। उसी पीप वा रसको बीज वा नीर कहते हैं। प्राचीन आर्य ऋषि लोग भी अच्छी तरह जानते थे, कि गो-नीरका टीका ही निरापद है। मनुष्यके नीर द्वारा टीका देना मानो शीतला रोगको बुलाना है। कई बार तो इससे कितनोंकी जानें चली गई हैं। गो-नीरके टीकेमें वह भय नहीं है। यद्यपि इससे भी सारे शरीरमें गो वसन्तका रस मिल जाता है, मगर उसका प्रकोप मनुष्य-वसन्तके जैसा भीषण नहीं है। यहां तक कि शीतला रोग रोकनेकी जो इसमें शक्ति है वह मनुष्य-नीरसे किसी अंशमें कम नहीं है।

शीतलाके नीरको रक्तके साथ मिश्रित कराना ही टीका लगानेका उद्देश्य है। इसका सञ्चार कई प्रकारसे होता है। शरीरके किसी स्थानमें अस्त्र द्वारा क्षत करके उसमें वसन्त (शीतला)-का रस देना ही टीका लगाना हुआ। सचराचर बाहु और हाथमें ही टीका लगाया जाता है। चमड़ेको छेद करनेके लिये सूई वा तेज छुरी ही काममें आती है। संथाल आदि असभ्य लोग अस्त्रसे क्षत करनेके बदले आगसे शरीरमें ३।४ फफोले डाल कर उसके फूटने पर शीतलाका नीर प्रविष्ट करते हैं। फलतः

इससे टीका लगानेका फल कम नहीं होता वरं उससे अधिक ही होता है।

कुछ दिन पहले तक हम लोगोंके देशमें मनुष्य-शरीर द्वारा टीका लगाया जाता था जिसे देशी टीका कहते थे। वर्त्तमान प्रणालीसे गो-शरीर द्वारा जो टीका लगाया जाता है उसे अङ्गरेजी टीका कहते हैं। देशी टीकाके स्थान बहुत जल्द सूज जाता है और पक जाता है। और कभी कभी सारे शरीरमें शीतला निकल आती है। देशी टीका लेनेसे जब तक टीका सूख न जाता, तब तक अपने परिवारके सभी लोग शुद्धाचारसे रहते हैं, निरामिष खाते हैं और कपड़ा नहीं पछारते हैं अर्थात् शीतला रोग होने पर जो सब नियम पालन करने पड़ते हैं वही सब इसमें भी करने पड़ते। अनुभव ऐसो। यथार्थमें देशी टीका कृत्रिम वसन्तके सिवा और कुछ नहीं है। गो शरीरका टीका लेनेमें ये सब कठोर नियम पालन नहीं करने पड़ते।

अङ्गरेजी टीका गो-वसन्त नामक व्याधि शरीरमें सञ्चारित हो जाती है। मसूरिकाके साथ यदि इसकी तुलना की जाय, तो इसकी आक्रमण शक्ति बहुत सामान्य और अल्प कष्टदायक है। सम्प्रति यही टीका इस देशमें प्रचलित हुआ है। गवर्मेण्टने मनुष्य द्वारा टीका लगानेकी प्रथा उठा दी है और समस्त प्रधान प्रधान नगरोंमें गो-शरीर द्वारा टीका लगानेका केन्द्र स्थान स्थापित कर दिया है। इन सब स्थानोंसे अनेक शिक्षित लोग गांवोंमें टीका लगानेके लिये भेजे जाते हैं। इसके लिये किसीको कुछ खर्च नहीं पड़ता है। कलकत्तेमें साधारणतः कनिष्ठ माघ या फाल्गुनका महीना लेकर प्रत्येक भागमें टीका लगाया जाता है। अन्यान्य स्थानोंमें गवर्मेण्ट द्वारा रक्षित और भेजा जाता है। कहना नहीं पड़ेगा कि टीका लगानेकी प्रथा दिनों दिन जितनी ही बढ़ती जा रही है उतनी ही शीतला रोगसे जन-संख्या घटती जाती है।

अङ्गरेजोंमें टीका लगानेको भैक्सिनेशन (Vaccination) कहते हैं। इसका अर्थ है भैक्सिनिया अर्थात् गो वसन्तरोगको मनुष्यके शरीरमें संचालित करना। सबसे पहले जेनर (Jenner) नामक एक चिकित्सकने इस महोपकारी विषयको यूरोपमें निकाला। १७९८ ई०में इन्होंने परीक्षालब्ध निम्नलिखित कई एक विषय जन साधारणमें प्रकाश किये—

१ गो-वसन्तरोगको मनुष्यके शरीरमें संक्रामित करनेसे उसे शीतला निकलनेका डर नहीं रहता। २ गौके शरीरमें वसन्तरोगके अन्यान्य एक और प्रकारकी फुंसी निकलती है जो देखनेमें ठीक वसन्तकी तरह लगती है। पर उसके शरीरसे टीका लगानेसे शीतला रोग होनेका डर बना ही रहता है। ३ सुविधा देख कर सभी समय निपुण अध्यक्ष द्वारा गो-शरीरका टीका लगाया जा सकता है। ४ एक मनुष्यको गो-शरीरका टीका दे कर उसके शरीरसे दूसरेको और फिर उसके शरीरसे तीसरेको इसी प्रकार बहुतसे लोगोंमें इसका प्रचार कर सकते हैं। अन्तिम मनुष्यको भी उसका वैसा ही असर पड़ेगा जैसा पहलेको गो शरीरका टीका लेनेसे पड़ता है।

टीका लगाते समय निम्नलिखित थोड़े विषयों पर विशेष ध्यान रखना चाहिये। आस पासमें वसन्त रोगका प्रादुर्भाव न रहे तो छोटे छोटे दुर्बल बच्चोंको टीका लगानेकी जरूरत नहीं। पेटमें दर्द होता हो, अथवा किसी प्रकारका चर्मरोग हो या कर्णमूल, ग्रीवा और कुक्षिमें उत्ताप मालूम पड़ता हो, तो टीका लगाना उचित नहीं है। अकसर देखा जाता है, कि एक वर्षसे कम उमरके बच्चे ही विशेष कर शीतला रोगसे आक्रान्त होते हैं। इसलिये बच्चा यदि सुस्थ और सबल हो, तो खूब थोड़ी उमरमें ही टीका लगाना उचित है। डा० सिटन (Dr Seaton)-का कहना है कि बड़े बड़े नगरोंमें स्वास्थ्य सबल शिशुको १।१। महीनेमें ही टीका लगाना चाहिये। अपेक्षाकृत दुर्बल शिशुको १॥ महीनेमें एक टीका लगानेका जब तक बिलकुल अनुपयुक्त न हो, तब तक सभी बच्चोंको ३ महीनेमें टीका लगाना कर्त्तव्य है।

सुस्थ और सबल बच्चेके उन्नत टीकेसे और ग्रहण करना उचित है। अपनी ओर कुछ कष्ट रहता है। अपक्क टीकेसे उसकी ओरसे टीका लगाना अच्छा नहीं। अधिक उमरके बालक और बालिकाकी अपेक्षा कम उमरके बच्चेका ही और उत्कृष्ट है। विशेषतः बच्चे,

बने, चिकने और परिष्कार चमड़े वाले बच्चेके शरीरमें ही सर्वोत्कृष्ट नीर पाया जाता है। साथ साथ वही नीर ले कर टीका लगाना ही प्रशस्त है। यदि उस तरहका बच्चा न पाया जाय तो अन्तमें रक्षित नीरसे ही टीका लगाना पड़ता है। लेकिन यह जरूरी है कि अच्छा नीर जब तक न मिले, तब तक टीका बन्द रखना ही उचित है। एक परिपक्व सतको कुछ चीर कर उससे जो रस निकलता है, उससे ५।६ मनुष्योंको टीका लगा सकते हैं और भविष्यमें ५।६ मनुष्योंको टीका लगानेके लिये हाथी दांतकी बनी हुई सीकके मुंहमें रस लगा कर ही काम चल सकता है।

टीका किस तरहसे लगाया जाता है, अब उसका संक्षिप्त विवरण यहां दिया जाता है। बाहुका ऊपरी भाग ही टीका लगानेका उपयुक्त स्थान है। इस स्थानके चमड़ेको खींच कर उसे एक परिष्कार सुतीक्ष्ण बीज रक्षित छुरीसे मुंहसे कुछ टेढ़ा करके चीर देते हैं। बाद चमड़ेको छोड़ देने पर वह नीर छिन्न स्थान पर रुक जाता है। फलतः चमड़ेमें बीज प्रवेश और शोषित कराना ही टीका लगानेका उद्देश्य है। एक स्थान पर टीका लगानेसे यदि वह न उठे, तो उस आशङ्काको दूर करनेके लिये प्रत्येक बाहु पर ३ इञ्चकी दूरी पर कमसे कम तीन जगह टीका लगाना कर्त्तव्य है। सीकमें यदि नीर सूख गया हो, तो उसे पहले उष्ण जल या वाष्पमें डाल कर सलाईके मुंह तक लगाये रखना चाहिये। बहुतेरे डाक्टर चमड़ेको समान्तर भावमें और थोड़े आड़े करके चीर देते हैं। कोई तो केवल दुअन्नी भर भागमें अनेक बार भेद कर ही उसमें नीर लगा देते हैं। फिर अनेक डाक्टर ऐसे भी हैं जो भिदे हुए स्थानके चमड़ेको आड़े करके काट डालते हैं। यथोक्त प्रकारका टीका लगाना ही डा० सिटनके मतसे सर्वोत्कृष्ट है। अच्छी तरहसे टीका लगाये जाने पर वह स्थान २।३ दिनमें सूज जाता है। ३।४ दिनमें लाल और कठिन हो जाता है और ५।६ दिनमें इसके मध्यभाग पर कुछ सफेद फुंसी निकल आती है। इससे पीप निकलती है। आठवें दिनमें टीका ठीक अवस्था पर आ जाता है। नवें और दशवें दिनमें इसके चारों ओर लाल हो कर सूजन पड़ जाती है और ग्यारहवें दिनमें यह फुंसी और भी फैल जाती है, मगर मध्य भागकी सूजन कुछ कम जाती है। चारों ओरके फूले हुए स्थानका घेरा लग भग १ इञ्चसे ३ इञ्च तक हो जाता है। बाद तेरहवें या चौदहवें दिनमें यह फोड़ा सूखने लगता है और एक सप्ताहके भीतर एक दम ही मिट जाता है। अर्थात् पचीस दिनसे ज्यादे फोड़ा रहने नहीं पाता है। पीछे वह स्थान गोल, आपीतवर्ण लोमशून्य कुछ निम्न और बिन्दुमय या छुद्र छिद्रयुक्त हो जाता है।

टीका लेने पर प्रायः ही थोड़ी कम्पना, पाकयन्त्र की विशृङ्खला और बगलकी गिलटी फूलना आदि उपद्रव देखे जाते हैं। यद्यपि ये सब उपद्रव उतने कष्टकर नहीं हैं, तो भी शरीरमें एक प्रकारकी पीड़ा मालूम पड़ती है। टीकेके आनुषङ्गिक उपसर्गके लिये चिकित्सा की जरूरत नहीं पड़ती। कभी तो टीका बहुत समय तक रह जाता और कभी शीघ्र ही सूख जाता है। जो टीका अच्छी तरहसे उठ कर नियमित रूपसे सूख जाय, वही वसन्तनिवारक है, अन्यथा उस टीकेका कोई फल नहीं।

प्रायः देखा जाता है, कि टीका कई जगह अधिकतर नहीं उठता है। इसके कई एक कारण हो सकते हैं। पहला टीका लगानेवाले विशेष अभिज्ञ नहीं हैं और उपयुक्त परिमाणसे नीरका प्रयोग नहीं करते, दूसरा नीरकी अनुपयोगिता, तीसरा यंत्र और सतर्कताका अभाव। इससे अनेक समय टीकाके निष्फल नहीं होने पर भी वह अभिप्रेत फलोत्पादन नहीं करता। चौथा बहुत पुराने नीरका व्यवहार।

डा० सिटन साहबने परीक्षा करके कहा है, कि पूर्णरूपसे टीका लेनेका फल असम्पूर्ण टीकेकी अपेक्षा ३० गुण वसन्तनिवारक है और सबसे निकृष्ट टीका भी टीका नहीं लेनेकी अपेक्षा ४० गुण वसन्तनिवारक है। और भी देखा गया है, कि टीका लेनेके बाद भी यदि शीतला रोग हो जाय, तो वह उतना मारात्मक नहीं होता तथा आरोग्य होने पर शरीरको उतना विकृत नहीं कर डालता।

एकबार टीका लिये जानेके बाद कितने दिन तक

१८की शक्ति रखती है, वह आठ दस दिन नहीं रहता है। जो कुछ हो, अब देखा जाता है कि एक बार चमकत प्रयोजित व्यक्ति फिरसे भी वसन्तरोगाक्रान्त होते हैं तो पसात वर एवीं वर्षमें टीका लेना उचित है। टीकाके अच्छी तरह नहीं उगने पर फिर भी टीका लेना अच्छा है। कोई कोई डाक्टर तो हर तीसरे वर्षमें या उससे भी कम दिनमें टीका लेनेकी सलाह देते हैं।

टीकेका मौर लेना बहुत ही सावधानीका काम है। जिस गौको शीतलाके मौर लिया जाय वह यदि कोढ़ी हो अथवा उपदंश आदि रोगोंसे आक्रान्त हो, तो बच्चे सब रोग हमारी बालकोंमें सिर्फ टीका लगाने जाता है, वे न जाते हैं। इसी कारण सबसे पहले बच्चेके माता पिताको कोई न कामक रोग है या नहीं अच्छी भाँति जाँच कर लेनी चाहिये। फिर कोई डाक्टर कहते हैं कि टीका द्वारा व्याधि संक्रामित नहीं होती।

मनुष्य और गौके वसन्तरोगके विषयमें मतभेद है। डा० सीमर कहते हैं कि यह यथार्थमें एक ही रोग है। परीक्षा करके दिखा गया है, कि गौको मनुष्य मौर द्वारा टीका लगानेसे उसे शीतला रोग हुआ है और गौके उस की शीतलाका मौर ले कर टीका लगानेसे मनुष्यको भी मौरको नाईं फल हुआ है। अतः मनुष्य और गौ दोनों का शीतला रोग एक ही है। घोड़े आदि भी इस रोगसे आक्रान्त होते हैं। घोड़ेके मौरसे टीका लगाना भी मौर और परीक्षा सम्मत है। बेलुचिस्तानके ऊँटोंमें भी एक प्रकारका शीतला रोग व्याप्त है। लेकिन विशेषता यह है कि उन अंचलोंमें जो इसका प्रतिपालन करते हैं वा दूध पीते हैं वे अकस्मात् वसन्तरोगसे आक्रान्त नहीं होते। भारतवर्षमें टीकाका प्रचार अंगरेजी शासनकालमें हुआ है।

प्राचीन कालमें भारतवासी गो मौर और मनुष्य-मौर दोनोंमेंसे किसी एकके द्वारा ऐसी सुविधा देखते टीका लगाते थे। इसके विषयमें धन्वन्तरिने कहा है—

"धेनुस्तन्यमसूरिका नराणाञ्च मसूरिका।
तज्जलं बाहुमूलाच्च शस्त्रान्तेन गृहीतवान्॥
बाहुमूले च शस्त्राणि रक्तोत्पत्तिकराणि च।
तज्जलं रक्तमिलितं स्फोटकज्वरसम्भवम्॥"
(धन्वन्तरि कृत शाक्तेय ग्रन्थ)

धेनुके स्तनमें अथवा मनुष्यके बाहुमूलमें जो शीतला निकलती है, उसके रसको शस्त्रके अग्रभागसे ले कर बाहुमूलमें प्रविष्ट करना चाहिये। शस्त्रद्वारा बाहुमूलमें जो रक्त निकलेगा, उसके साथ वह रस मिल कर स्फोटकज्वर उत्पादन करता है।

२ विवृति, अर्थका विवरण, व्याख्या।

टीकाकार (सं० पु०) टीकां करोति कृ-अण्। व्याख्याकार वह जो किसी ग्रन्थका अर्थ लिखता हो।

टोटा (हि० पु०) टटा देखो।

टीण्डल—सुप्रसिद्ध अंग्रेज वैज्ञानिक। १८२० ई०में आयर्लैण्डके कार्लो नगरके निकटवर्ती एक छोटेसे गाँवमें इन का जन्म हुआ था। टीण्डलके पितामाता अत्यन्त दरिद्र थे। दरिद्रताके कारण वे पुत्रको पढ़ानेमें असमर्थ थे। इसलिए थोड़ीसी पूँजी पढ़ा कर उन्हें शिक्षा बन्द कर देनी पड़ी। गार्हस्थ्य अवस्थाको अतीव शोचनीय देख कर, बहुत थोड़ी उमरमें ही टीण्डल स्कूल छोड़ कर पैमाइश विभागमें किसी काम पर भरती हो गये।

जो बड़ा विज्ञानके अत्यन्त गुप्त तत्त्वोंका आविष्कार करनेके लिए उत्पन्न हुए थे उन्हें ये सब काम क्यों अच्छे लगने लगे? कुछ दिनों बाद इन्होंने यह काम छोड़ दिया और मञ्चेस्टरके एक कारखानेमें काम करते हुए यन्त्रादिका काम सीखने लगे। इस अवस्थामें उन्हें ज्यादा दिन न रहना पड़ा कुछ ही दिनोंमें वे कल कारखानेके काममें विशेष अभ्यस्त हो गये और शीघ्र ही अच्छे दरकी रेलवे कम्पनीमें इञ्जीनियर नियुक्त हो गये। टीण्डल यहाँ अध्यापनके साथ तीन वर्ष तक इस कामको करते रहे। इस समय इनको कार्यकुशलताके कारण अच्छे दरकी रेलवे कम्पनीको विशेष लाभ हुआ था। १८४७ ई०में हम्पशायरमें क्वीनवुड कालेज प्रतिष्ठित हुआ कालेजके अधिकारियोंने टीण्डलकी असाधारण बुद्धिमत्ता देख कर उन्हें उस कालेजका प्रोफेसर नियुक्त किया। क्वीनवुड-कालेज ही टीण्डलका प्रथम कर्मक्षेत्र कार्यक्षेत्र है। यहीं प्रसिद्ध रसायनवित् फ्रैंकलैण्डके साथ टीण्डलकी मित्रता हुई थी और यहीं रह कर उन्होंने बड़े परिश्रमके साथ पदार्थविद्या-सम्बन्धी नाना अज्ञात तत्त्वोंका आविष्कार कर जगत्में ख्याति पाई थी।

वर्ष भर अध्यापकोंका कार्य करनेसे टीण्डलका ज्ञान और भी बढ़ गया। वे विज्ञानुशीलनको इच्छासे जर्मनी चल दिये। प्रिय मित्र फैङ्कलैण्ड भी इनके साथ गये थे। दोनों मित्रोंने मारवर्ग विश्वविद्यालयके प्रसिद्ध अध्यापकोंके पास कुछ दिन रह कर अध्ययन किया। पीछे उन्होंने स्वाधीनभावसे वैज्ञानिक तत्त्वोंका अनुसन्धान और चिन्ता करनेका निश्चय किया। बूनसेन आदि प्रसिद्ध अध्यापकगण वैदेशिक छात्रयुगलकी प्रतिभाको देख कर विस्मित हुए थे, उन्हें यह स्वीकार करना पड़ा था कि अल्पायास और अल्प समयमें दुरूह वैज्ञानिक विषयोंको सम्पूर्ण तया सीख लेना, केवलमात्र आइरीस युवक टीण्डलके लिए ही सम्भवपर था। विश्वविद्यालयको पढ़ाई समाप्त कर ये वार्लिनस्थ सुप्रसिद्ध मैं गनस परीक्षागारमें स्वाधीनतापूर्वक नाना वैज्ञानिक गवेषणाओंके लिए नियुक्त हुए। इनके इस समयके अनुसन्धान और चिन्ताओंके फलसे ही इनके जीवनकी महती कीर्ति थी। इनके द्वारा आविष्कृत चुम्बक और आलोक-विज्ञानके सत्य आधुनिक विज्ञानकी अतुलनीय सम्पत्ति हैं, इस बातको सभी स्वीकार करते हैं।

१८५१ ई०में टीण्डल जर्मनीसे स्वदेशको लौट आये स्वदेशकी विज्ञान-मण्डलीमें ये विशेष आदरके साथ सम्मानित हुए थे और नाना वैज्ञानिक समाजोंसे इन्हें नाना सम्मानसूचक उपाधियाँ प्राप्त हुई थीं। कुछ दिनोंमें ये सुप्रसिद्ध "रायल इनष्टिटिउसन"में जड़-विज्ञानके आचार्य पद पर नियुक्त हो गये और विख्यात वैज्ञानिक फैराडेके पदत्यागके बाद उनके स्थान पर तत्त्वावधायकताका कार्य करने लगे।

चार वर्ष तक इङ्गलैण्डमें उपर्युक्त कार्योंमें नियुक्त रह कर १८५६ ई०में ये सुइजरलैण्ड चल दिये। सुइजरलैण्डके पार्वत्यप्रदेशस्थ वर्फकी गतिका निर्णय करना तथा कठिन तुषारराशिका तरल पदार्थवत् प्रवाहित होनेके यथार्थ कारणको खोज करना, यही इनका उद्देश्य था। प्रसिद्ध वैज्ञानिक हक्सली टीण्डलके साथ थे और भीषण जनहीन पार्वत्य प्रदेशमें वैज्ञानिक वन्धुको परिदर्शन-कार्यमें सहायता पहुँचाया करते थे। कुछ दिन परिदर्शनादि करनेके बाद टीण्डलने स्वदेश लौट कर तुषारराशिकी गतिके सम्बन्धमें एक सम्पूर्ण नूतन पुस्तक लिख डाली। इस पुस्तकमें गतिके सम्बन्धमें जितने भी कारण दिखलाये गये थे, आजकल वे सब विज्ञान सम्मत माने जाते हैं।

१८७२ ई०में टीण्डल अमेरिका पहुँचे। विज्ञानानुरागी मार्किनोंने प्रत्येक नगरमें इनकी विशेष अभ्यर्थना की थी। अमेरिका-भ्रमणके समय आप निश्चिन्त न थे; युक्तराज्यके प्रधान प्रधान नगरोंमें आपने विविध वैज्ञानिक विषयोंको वक्तृताएँ दी थीं। इन वक्तृताओंमेंसे २५।३० तो लिपिबद्ध हैं और उनकी भाषा अत्यन्त सरल है। विज्ञानसे सर्वथा अनभिज्ञ व्यक्ति भी सहजमें वैज्ञानिक तत्त्वोंको समझ सकता है। टीण्डल केवल अपनी वुविद्वत्तिकी चरमोन्नति कर शान्त न होते थे, किन्तु जिससे विज्ञानानुरागी प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति स्वाधीन चिन्ता और गवेषणा द्वारा विज्ञानको पुष्टि कर सकें, उसके भी उपाय निकालते थे तथा दरिद्र वैज्ञानिकोंको हर एक विषयमें उत्साह देते थे। अमेरिकामें आपने वक्तृता द्वारा करीब साठ हजार रुपये कमाये, जिसमेंसे अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए कुछ छोड़ कर अवशिष्ट रुपयोंसे अमेरिकाके कलोम्बिया कालेजमें एक छात्र-वृत्तिकी स्थापना कर आये। अमेरिकामें स्वाधीन भावसे चिन्ता और वैज्ञानिक अनुसन्धान करनेवाले योग्य छात्रोंको अब भी यह वृत्ति दी जाती है।

अमेरिकासे स्वदेश लौट कर अध्यापक टीण्डल तापनिवारणके विषयमें नाना प्रकार अनुसन्धान करनेमें नियुक्त हुए, और थोड़े ही दिनोंमें इस विषयमें अपना स्वाधीन मत प्रकट किया इससे उनकी ख्याति और भी बढ़ गई थी।

१८७६ ई०में ५६ वर्षको अवस्थामें टीण्डलने लार्ड क्लाडहामिल्टनकी प्रथमा दुहिताका पाणिग्रहण किया। इनका दाम्पत्य-जीवन बड़े सुखसे बीता। ज्यादा उम्रमें विवाह करनेसे प्रायः गार्हस्थ्य शान्तिभङ्ग होनेका डर रहता है, किन्तु इनका शेष जीवन बड़े आनन्दसे बीता था। वृद्ध टीण्डलने करीब बीस बाईस वैज्ञानिक ग्रन्थ लिखे हैं। इनका प्रत्येक ग्रन्थ सुन्दर और सरल है। सरल भाषामें ग्रन्थ लिखना, यह उनका एक प्रधान गुण

था और इस गुणके कारण वे साधारण पाठकोंके भी आदरणीय थे।

शराबमस्त हो कर टौम्सनने अपने जीवनमें कुछ सारे दिन काट पाया था। इसके अनुभव और विचक्षणताने सोचा था, इस पीड़ासे अत्यधिक टॉम्सनको अब छुटकारा नहीं मिल सकता। परन्तु एक आकस्मिक कारणसे टोम्सनकी मृत्यु हो गई। कुछ दिनोंसे वे नाना प्रकारकी पीड़ाओंसे तकलीफ पा रहे थे, किन्तु चिकित्सकोंके परामर्शसे शारीरिक यन्त्रणादिके निवारणार्थ नियमित रूपसे "एक्सट्रैक्ट आव सम्र्मनिस्यम्" काममें लाते थे और अनिद्रा दूर करनेके लिए कभी कभी दो एक बूंद 'क्लोरल सीराप' भी लिया करते थे। एक दिन टोम्सनको भूलसे अधिक ज्यादा 'क्लोरल' पिला दी जिससे उनकी मृत्यु हो गई।

बहुतोंका कहना है, कि टोम्सन ईश्वरकी सत्ता पर विश्वास न करते थे और न उनको ईसाई धर्म पर विशेष श्रद्धा ही थी। मारपेस्टमें लिखित "सिराफिम" आदिके विरुद्ध वे अपनी कविताओंसे अन्धे लोग इन्हें ईसाई धर्मका विरोधी समझते थे। अध्यापकोंकी डी० सी० एल० उपाधि ग्रहण करते समय टोम्सनको धार्मिकताके विषयमें लिखना पड़ा था किन्तु कोई आपत्ति कार्यकारी न हुई। टोम्सनका कहना था कि "उच्छृङ्खल इच्छा और लोलिकी शक्तियों द्वारा दमन करना मनुष्यका प्रधान कार्य है एवं पाशवहत्तियोंको जितना दमन करेंगे वे उतने ही आदर्श चरित्रके निकटस्थ होंगे।"

टीन (अ० पु०) १ एक रासायनिक धातु। रांगा देखो। २ लोहेकी पतली चद्दर जिस पर रांगेकी कलई की हुई रहती है। ३ लोहेकी पतली चद्दरका बना हुआ बरतन।

टीप (हिं० स्त्री०) १ दबाव, दाब। २ हलका प्रहार। ३ मसकी पिटाई। ४ टकार, ध्वनि, और शब्द। ५ घोरको नाम। ६ दूध और पानीका जोरा। ७ स्मरण रखनेके लिये किसी बातकी टाँक लेनेकी क्रिया, नोट। ८ दस्तावेज। ९ हुंडी, चेक। १० कम्पनी, सेनाका एक भाग। ११ मजीरेका एक चिह्न। १२ टिप्पन, कुण्डली। १३ वह लकीर जो बिना पलस्तरकी दीवारमें ईंटोंके जोड़ोंमें मसाला दे कर बनाई जाती है। १४ हाथीके शरीर पर शेष करनेकी औषध। १५ सशाजनका एक काग़ज। इस पर वे कलमके समय ब्याजके बदलेमें अनाज आदि देनेका इकरार लिखा लेते हैं।

टीपटाप (हिं० स्त्री०) दिखावट ठाट बाट।

टीपन (हिं० स्त्री०) गाँठ, टाँका बह।

टीपना (हिं० क्रि०) १ चापना, मसकना। २ हलका प्रहार करना धीरे धीरे ठोकना। ३ ऊँचे स्वरसे गाना, जोरसे तान लेना। ४ अंकित कर लेना, दर्ज कर लेना, लिख लेना। ५ ताशके खेलमें दो पत्तोंसे एक पत्ता जीतना।

टीपू शाह—आर्काटके एक प्रसिद्ध मुसलमान फकीर। इन्हींके नामानुसार मैसूरके शासनकर्त्ता प्रसिद्ध टीपू सुलतानका नामकरण हुआ था। टीपू सुलतानके पिता हैदरअली इनकी अत्यन्त भक्ति करते थे। अब भी टीपू शाहकी कब्र पर बहुतसे फकीर आया करते हैं। कर्णाटकी भाषामें टीपू शब्दका अर्थ व्याघ्र होता है।

टीपू सुलतान—मैसूरके राजा हैदरअलीके पुत्र। १७४९ ई०में इनका जन्म हुआ था। जिस समय कर्नल स्मिथने मराठी सेनाकी सहायतासे हैदरअलीके विरुद्ध युद्ध घोषणा की थी जिस समय हैदरअली १०० अश्वारोहियोंके साथ और रात्रिमें शत्रुके भयसे भाग गये थे, उस समय टीपूकी उम्र कुल ८ वर्षकी थी। हैदरअलीके परिवारवर्गके साथ टीपू भी महाराष्ट्रों द्वारा कैद किये गये थे। हैदरअलीके साथ सिन्धि हो जाने पर वे छूट गये थे। हैदरअली देखो।

जिस समय टीपूकी उम्र १७ वर्षकी थी, और हैदरके साथ अंग्रेजोंका घोर युद्ध चल रहा था, उस समय युवक टीपू मात्र सेना सहित मद्राजके चारों तरफ लूट मचा रहे थे।

१७८०में अंग्रेजोंके हैदरअलीके विरुद्ध अभियान करने पर हैदरअलीने टीपू सुलतानको ५००० पैदल और ६००० अश्वारोही सेनाके साथ कर्नल बेलीको रोकनेके लिए भेजा था। ६ सितम्बरको इन्होंने कर्नल बेली पर आक्रमण किया था इसके आक्रमणसे भीत हो कर अंग्रेजसेनानायक ईश्वरने मनरोसे सहायता मांगी थी। इसके बाद हैदरअली जब सरफदरअलीको याचित

करनेके लिए आर्कटकी तरफ गये थे, उस समय टीपूने वन्दीवाम अवरोध किया था। उस समय टीपूके रणनैपुण्य और कार्यकुशलताको देख कर अंग्रेजसेनानायक तक चमत्कृत हो गये थे। जिस दिन अंग्रेजसेनानायक आरनीकी तरफ गये, उस दिन हैदरने बहुतसी सेना दे कर टीपूको आरनो भेज दिया। आरनीमें हैदरका मुख्य अड्डा था। अंग्रेजसेनापति सर आयार कुटका इसोलिए आरनो पर विशेष लक्ष्य था। १७८२ ई०में २रो जूनको सेनापतिने आरनोके पास शिविर स्थापित किया। इस समय मौका देख कर टीपू अंग्रेजो सेना पर गोला बरसाने लगे। अंग्रेजो फौज घबरा गई। उस दिन टीपूकी हो जय हुई। सर आयार कुटको मद्राजमें पृष्ठप्रदर्शन करनेके लिए बाध्य होना पड़ा। २० नवम्बरको कर्नल हम्बरष्टोनने पोनानीको तरफ सेना चलाई। टीपूने फरासीसी-सेनानायक लालिके साथ वृटिशसेना पर आक्रमण किया था। इस समय वे सर्वदा ही रणक्षेत्रमें रहते थे।

७ दिसम्बरको बोरवर हैदरअलोने अपने तम्बूमें प्राणत्याग किया, उस समय चारों तरफ विपद् देख कर पूर्णिया और कृष्णराव नामक दोनों मन्त्रियोंने उनकी मृत्युसंवाद प्रकट नहीं होने दिया। हैदरके द्वितीय पुत्र अबदुल करीमको यह बात किसी तरह मालूम पड़ गई, वे दो सेनापतियोंकी सहायतासे पितृसिंहासन अधिकार करनेके लिए षड़यन्त्र रचने लगे। किन्तु विज्ञ मन्त्रियोंके कौशलसे शीघ्र ही षड़यन्त्र प्रकट हो गया दोनों मन्त्रियोंने यथासमय विश्वस्त अनुचरके जरिये टीपूको पिताका मृत्युसंवाद भेजा। टीपूको ११ तारोखको यह संवाद मिला था, देरो न कर शीघ्रही वे (१७८३ ई०को २री जनवरोको) पितृशिविरमें आ पहुँचे। उस समय तक भी सबको हैदरको मृत्युका समाचार नहीं मालूम हुआ था। टीपूने शामको प्रधान प्रधान कर्मचारियोंको बुला कर एक सभा को। सभामें वे मलिन वेशमें साधारण एक गलोचे पर बैठे थे। उनकी अवस्था देख कर सभो लोग चौंक पड़े। शीघ्र ही सबको हैदरअलोका मृत्युसंवाद मालूम हो गया। अमात्योंने टीपूको मसनद पर बैठानेके लिए अनुरोध किया किन्तु सुचतुर टीपूने अतिशय पितृशोक प्रकट करके उस अनुरोधको रक्षा करनेमें असमर्थता दिखाई होना सुचतुर मन्त्रियोंके कौशलसे टीपू सुलतान हो गये।



टीपू सुलतान।

हैदरअलोके मृत्युसंवादको सुन कर अंग्रेज लोग महिसुर-राज्य पर आक्रमण करनेके लिए अभिसन्धि करने लगे, किन्तु अंग्रेज-राजपुरुषोंके मतभेदके कारण उन्होंने मौका और सुभोता खो दिया। टीपूने सुलतान हो कर प्रथमतः युद्धविग्रहमें मन न दिया था; उन्होंने कर्णाटकसे अपना तमाम दलबल हटा लिया, पश्चिमको तरफ सिर्फ एक दल फरासीसी सेना रही। हेष्टिंसने सर आयार कुटको फिर मद्राज भेजा, किन्तु वृद्धसेनापतिने रोग और पथकष्टके कारण मार्गमें ही लोलासंवरण को। फरासीसी-सेनानायक बुसो भारतमें आये और १० अप्रीलको उन्होंने कुड्डालूरमें फरासीसी सेनाका आधिपत्य ग्रहण किया। समय पर टीपूको सहायता पहुंचानेको बात थो, उस समय अंग्रेजोंकी अवस्था बड़ी सङ्कटजनक थी। इसके थोड़े हो दिन बाद इंगलैण्ड और फ्रान्समें एक सन्धि स्थापित हुई। बुसोने जो सेना टीपूके कार्यमें लगा रखो थो, अंग्रेजोंसे सन्धि हो जानेसे उसको हटा लिया।

टीपूके विरुद्ध अस्त्रधारण कर सकें, वरन उन्हें, नाना फड़नवीसके साथ जो उन्होंने अभिसन्धि की थी, वह भी छोड़ देनी पड़ी। टीपूने जब देखा कि, क्रमशः उनके सब विरुद्ध हुए जा रहे हैं, तब वे भी क्रमशः उग्र होने लगे।

वे अपने राज्यके अधिवासी हिन्दू और ईसाइयोंको मुसलमान धर्ममें दीक्षित करने लगे। कोड़गके हजारों अधिवासियोंको पकड़ कर उन्होंने उनको दासत्व शृङ्खलामें बद्ध किया; सभी भीत और चकित हुए। कोई भी इनके विरुद्ध कुछ बात करनेके लिए साहसी नहीं हुआ। १७८५ ई०में टीपूने अपने राज्यके उत्तरप्रदेशों पर दृष्टि डाली। उनकी सेनाने बहुत दिनोंसे मराठोंसे युद्ध नहीं किया था। महाराष्ट्रराजकी सीमान्तस्थित अधिकांश हिन्दू-प्रजा मुसलमान धर्ममें दीक्षित हुई थी, इसलिए उनका सैन्यदल काफी बढ़ गया। इस समयमें धर्मत्यागकी अपेक्षा प्राणत्याग करना योग्य समझ कर बहुतसे ब्राह्मणोंने आत्महत्या कर ली थी। इससे नानाफड़नवीस अत्यन्त विचलित हुए थे। उन्होंने देखा कि, निजामसे सहायता लेना वृथा है। टीपूने जिस तरहकी सेना संग्रह की है और वह भी फरासीसी सेनानायकके द्वारा शिक्षित हुई है, ऐसी दशामें उन पर आक्रमण करना सहज बात नहीं है। नानाफड़नवीसने अंग्रेजोंसे सहायता मांगी। किन्तु मङ्गलूरकी सन्धिके अनुसार वे मध्यस्थ रहनेके लिए बाध्य थे, इसलिए नानाफड़नवीसने साहाय्य-प्रार्थी हो कर यातगिरके पास निजाम और बरारके माधोजी भोंसलेसे मुलाकात की। यहां परस्परमें टीपूके विरुद्ध युद्धघोषणा और अधिकृत राज्य विभाग कर लेनेके लिए एक सन्धिपत्र स्थिर हुआ।

१७८६ ई०में टीपूने न मालूम क्या सोच कर उन लोगोंसे सन्धिकी प्रार्थना की। १७८७ ई०में सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर किये गये। मराठोंका कुछ राज्य और आदनि वापिस मिले। टीपू भी ४५ लाख रुपये देनेके लिए राजी हुए जिसमें ३० लाख रुपये नगद और बाकीके रुपये एक वर्षमें देनेका निश्चय हुआ। टीपूने क्यों सहसा ऐसी सन्धि की थी, तत्कालीन किसी भी इतिहासमें इसका जिक्र नहीं है और न टीपू ही कुछ लिख गये हैं। किन्तु यह सन्धि ज्यादा दिन तक नहीं रही। निजामके साथ फिर उनका झगड़ा शुरू हो गया। १७८८ ई० तक निजाम और टीपू सुलतानमें परस्पर युद्ध चलता रहा था। उस वर्षके अन्तमें निजामके पास गण्टूर-सरकार समर्पण कर देनेके लिए बड़े लाटने कप्तान केनावेको भेजा। पहले कुछ युद्ध होनेकी सम्भावना हुई थी, किन्तु निजाम-ने गण्टूर समर्पण करनेमें कुछ भी आपत्ति नहीं की। मसलिपत्तनकी सन्धिके अनुसार, हैदर और टीपूने निजामका जितना भूभाग अधिकृत किया था, निजामने उसके पुनरुद्धारके लिए अंग्रेज गवर्नमेण्टसे सेना प्रार्थना की। इतनेसे भी सन्तुष्ट न हो कर उन्होंने टीपू सुलतानके पास स्वर्णाक्षरोंमें लिखित एक कुरान ग्रन्थ उपहार दे कर उनके पास एक दूत भेजा। दूतने जा कर कहा कि, दिन दिन अंग्रेज लोग क्रमशः प्रबल हुए जा रहे हैं, इससे आगे हम अपने धर्म और मानकी रक्षा भी न कर सकेंगे। अब परस्पर एकतासूत्रमें बद्ध हो कर धर्मरक्षाके लिए उनके विरुद्ध हम लोगोंको अस्त्रधारण करना चाहिये। सचमुच टीपू सुलतान वैवाहिक सूत्रमें बद्ध हो कर मित्रता स्थापन करनेके लिए सम्मत हुए। किन्तु निजामने उनका यह प्रस्ताव अग्राह्य किया। वे नीच घरमें लड़की देनेके लिए राजी न हुए। अब फिर परस्पर और शत्रुता हो गई। टीपूने मसलिपत्तनकी सन्धिको नितान्त दोषावह ठहराया। क्योंकि उसमें टीपूका नाम और क्षमता स्वीकृत नहीं हुई थी। इधर इङ्गलैण्डके राजपुरुषोंने निश्चय किया कि, भारतमें अब ज्यादा शान्तिस्थापनाके विषयमें उदासीन रहनेकी जरूरत नहीं; इसलिए टीपू भी युद्धका आयोजन करने लगे।

मङ्गलूरकी सन्धिके अनुसार त्रिवाङ्कुरराज्य अंग्रेजों-के आश्रित हैं, ऐसा स्थिर हुआ। त्रिवाङ्कुर-राजने उस समय ओलन्दाजोंसे कोरङ्गनूर और आयाकोट नामके दो नगर खरीदे थे। टीपू उन दो नगरोंको मांग बैठे; उन्होंने कहला भेजा कि, 'जब वे दोनों नगर हमारे आश्रित कोचीन-राजके अधिकारभुक्त हैं, तब ओलन्दाज लोग उसे किसी हालतमें भी बेच नहीं सकते। बड़े लाट कार्न-वालिसने त्रिवाङ्कुरराजके पक्षका समर्थन करनेके लिए मद्रासके अंग्रेज-अध्यक्ष हालैण्ड साहबको अनुमति दी,

किन्तु इस बातको न मान कर वे त्रिवाङ्कुर राज्यमें रहने लग बैठे।

त्रिवाङ्कुर-राजने अंग्रेज और समुद्र मध्यवर्त्ती अपने राज्यकी उत्तर सीमाका दुर्ग खड़वा दिया। अब तक टीपू त्रिवाङ्कुर जय करनेके लिए विशेष यत्न कर रहे थे, अब तक त्रिवाङ्कुर राज्य दुर्भेद्य था किसी भी तरफसे शत्रुके आनेका मार्ग नहीं था। अब मौका देख कर टीपूने सेना बढ़ाई।

१७८९ ई०के २८ दिसम्बरको उन्होंने त्रिवाङ्कुर पर आक्रमण किया। मद्रास गवर्मेण्ट उनका कुछ भी प्रतिकार न कर सका। त्रिवाङ्कुर राज्य पर आक्रमण होनेका सम्वाद पा कर मार्क्विस कर्नवालिसने टीपूके विरुद्ध युद्ध करनेके लिए १७९० ई०के मार्च मासमें अंग्रेजोंने सन्धि कर ली। जुलाई मासमें निज़ामके साथ भी उसी अभिप्रायसे सन्धि हुई। बड़े लाट कर्णवालिसने मद्रासके सेनापति मिडोज पर सैन्य परिचालनका भार दिया। १७९० ई०की २६वीं मईको १५००० सुदक्ष सेना ले कर अंग्रेज-सेनापति त्रिचिनापल्लीसे चल दिये। २१ जुलाईको सेनाने कोयम्बातूरमें उपस्थित हो कर उस दुर्ग पर कब्जा कर लिया। थोड़े दिनके भीतर पालघाटचेरी और डिण्डिगुल अंग्रेजोंके अधिकारमें आ गया। अब वह विपुलवाहिनी महिसूरकी सीमा पर उपस्थित हुई। टीपू सुलतान भी निश्चिन्त नहीं थे, उन्होंने विपुल विक्रमसे अपनी शक्ति दिखा कर अंग्रेज सेनापति कर्नेल फ्लायड पर आक्रमण किया। अंग्रेज सेनापतिको पीठ दिखा कर भाग जाना पड़ा। यहां तक कि अंग्रेजी सेना टीपूका कुछ कर न सकी वरं उधर सत्यमङ्गलमें टीपूके सेनापति कुमरुद्दीनने अंग्रेजोंको परास्त कर दिया।

उधर महाराष्ट्र-सैन्याने कप्तान लिटिलके अधीन सेनाके साथ मिल कर टीपूके अन्य सेनापति बदरुल्-ज़मान और कुतुब उद्दीनको पराजित कर धारवाड़ दुर्ग अधिकार कर लिया, उधर निज़ाम सेनावाहिनी कपालदुर्ग और बहादुरबन्द अधिकार करनेकी अग्रसर हुए, इसी प्रकार चारों ओरसे आक्रान्त हो कर भी एकमात्र टीपू किञ्चित्‌ मात्र विचलित नहीं हुए। वे अपना अदम्य साहस-से नाना उपायोंका अवलम्बन कर शत्रुकी गतिको रोकने लगे। बड़े लाट कर्णवालिसने जब देखा कि टीपू सहजमें वशीभूत नहीं होंगे और उनको वश करना भी सामान्य बात नहीं है तब उन्होंने स्वयं ही युद्धक्षेत्रमें अवतरण किया। वे महिसूरके गिरिसङ्कट मुगलीघाट पार गये, यद्यपि उन्होंने कोयम्बतूर बगलूर पाया था। यहां टीपूके साथ घोरतर युद्ध होने लगी। १७९१ ई० २० मार्चको रातको शत्रुओंने अकस्मात्‌ दुर्ग आक्रमण किया। निज़ामकी प्रायः १०००० सेना आ कर लार्ड कर्णवालिसके साथ मिल गई। बड़े लाटने इस भारी सेनाके साथ श्रीरङ्गपत्तनकी तरफ यात्रा की। अंग्रेज-सेनापति अबरक्रम्बी उनके साथ देनेको अग्रसर हुए। इस विषम विपदके समय टीपूने जब देखा कि महा शक्ति उनके विरुद्ध खड़ी है जिसका प्रतिरोध करना उनकी हैसियतसे बाहर है तब वे अपनी समस्त सेनाको एकत्र करके राजधानीकी रक्षार्थ अग्रसर हुए। १५ मईको अरिकेरा नामक स्थानमें शत्रुओंके साथ घोरतर युद्ध हुआ।

१२ मईकी रातको बड़े लाटने दुर्ग अधिकार करनेकी चेष्टा की। १३ मईको दुपहरके समय घोरतर युद्धके बाद टीपू पराजित हुए। किन्तु लार्ड कर्णवालिसके अवसादसे विशेष कुछ लाभ नहीं हुआ। उनकी सेनाका रसद निपट गई इसलिए उन्हें पीछे लौटना पड़ा। इस समय मौका पा कर टीपूने उनकी तोपें, गाड़ियां और भण्डार लूट लिया।

उस समय बड़े लाट बड़े सङ्कटमें पड़ गये। इस समय यदि अंग्रेज सेनापति कप्तान लिटल, परशुराम भाऊ द्वारा परिचालित महाराष्ट्र सेनाके साथ आ कर सहायता न करते तो शायद उस अभियानसे वे लौट कर न आते। कुछ भी हो, दूसरी बारके युद्धमें भी कुछ फल नहीं हुआ। इसके बाद टीपूको चारों तरफसे आक्रमण करनेके अभिप्रायसे परशुरामभाऊ और कप्तान लिटलने बहुसंख्यक सेना ले कर उत्तर पश्चिम विभागमें अग्रसर और अंग्रेजी सेना ले कर उत्तर-पूर्व तथा लार्ड कर्णवालिसने महाराष्ट्र और हैदराबाद साथ मध्यभाग आक्रमण किया।

टीपू भी महोत्साहसे उनके प्रतिरोधमें विशेष यत्नवान् हुए। उन्होंने अपने प्रधान प्रधान सेनापतियोंको राज्य और सम्मानकी रक्षाके लिये उत्तेजित करके उपस्थित वीरव्रतमें नियुक्त किया।

इधर लार्ड कर्नवालिसने असीम साहससे नन्दीदुर्ग, सुवर्णदुर्ग, रायकोट आदि दुर्गोंको जय किया।

१७९२ ई०की जनवरी महीनेमें कर्नवालिस निजाम और महाराष्ट्रसेनाके साथ मिले और ५ फरवरीको श्रीरङ्गपत्तनमें उपस्थित हुए। ६ फरवरीको बम्बईके अंग्रेज सेनापति जनरल आबरक्रम्बीने आ कर उनका साथ दिया। इतने दिन बाद टीपू विचलित हुए, उनके पिताने कहा था "टीपू राज्यकी रक्षा न कर सकेगा।" अब वह बात इनको याद आई। इस समय टीपूने अपने एक मित्रसे कहा था कि, "हम अंग्रेजोंको देख कर नहीं डरते, पर हमारी होनहारको सोच कर हमें डर लगता है।"

२४ फरवरीको सुलतानने लेफ्टेनाण्ट चामारस् नामक एक बन्दी अंग्रेज-सेनापतिके जरिये सन्धिका प्रस्ताव करा कर लार्ड कर्नवालिसके पास भेजा। पहले बड़े लाट सन्धिके प्रस्ताव पर सहमत न हुए। अन्तमें कोडगके राजाका सुभीता सोच कर सहमत हुए। कोडगके राजाने जनरल आबरक्रम्बीको काफी सहायता दी थी। तथा वे टीपूकी प्रतिहिंसासे इसीसे भी अत्यन्त डरते थे। कुछ भी हो, इस समय कोड़गके राजाके लिए ही सन्धि हुई। २६ तारीखको टीपूने अपने दो पुत्रोंको अंग्रेज-शिविरमें भेजा। अंग्रेज पक्षके सभी लोगोंने महासमादर और सम्मानके साथ सुलतानके पुत्रोंका अभिनन्दन किया। सन्धिपत्रके अनुसार टीपूके दोनो पुत्र अंग्रेज शिविरमें ही रहे। १८ मार्चको सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर हुए। टीपूने अपना आधा राज्य छोड़ दिया, जिसमेंसे मलवार, कोडग और बारमहल अंग्रेजोंके हिस्सेमें आया। इसके सिवा युद्धव्ययके हिसाबमें टीपूने ३३ लाख रुपया देना मञ्जूर किया, जिसमें आधा नगद और आधा एक वर्षके भीतर देनेका वायदा हुआ। निजाम और महाराष्ट्रीने अपने अपने राज्यके निकटवर्ती भाग लिए।

इसके बाद ४।५ वर्ष तक विशेष कुछ गड़बड़ी नहीं हुई। टीपूने राज्यकी उन्नति और प्रजाकी सुखसमृद्धिके लिये अनेक प्रयत्न किया था। इस समय उन्होंने नाना देशोंसे बहुत अर्थ व्यय करके असंख्य फारसी, संस्कृत और दाक्षिणात्यकी स्थानीय भाषामें लिखित बहुत प्रकारकी हस्तलिपि संग्रह की थी।

१७९८ ई०में निजामके तथा महाराष्ट्रके सेनापतिगण गुप्तभावसे टीपूके साथ षड़यन्त्र करने लगे। टीपूने भी पूर्वोक्त सन्धिसे अपना अत्यन्त अपमान समझा था। अब तक वे मौका ढूंढ रहे थे, किन्तु अब उक्त सेनापतियोंकी प्ररोचनासे उत्तेजित हो गये।

अंग्रेजोंको इस षड़यन्त्रका हाल मालूम हो गया। १७९८ ई०के १७ मईको लार्ड मर्निंटन गवर्नर जनरल हो कर आये। टीपू सुलतानकी गतिविधि पर उनकी पहले दृष्टि पड़ी। उस समय यूरोपमें अंग्रेज और फरासियोंमें घोरतर युद्ध हो रहा था। इसलिये टीपू भारतमें आयी हुई फरासीसी सेनाको सहज ही हस्तगत करने लगे। फरासीसी कर्मचारिगण टीपूकी देशीय सेनाको अच्छी तरह युद्धकी शिक्षा देने लगे। टीपूने अपने नौ-सेनादलके साहाय्यार्थ मरिचद्वीपमें फरासीसी शासनकर्ता जनरल मलारटिककी ३०,००० सेनाके लिये लिख भेजा। हैद्राबादमें फरासीसी सेनानायक मूसो रेमण्ड १५००० सेना ले कर ठहरे हुए थे, वे भी कार्यकालमें टीपूकी सहायता करनेको सहमत हुए। इधर सिन्धिया-राज्यमें फरासीसी वीर डो-बइन ४०,००० सेना और ४५० तोपें ले कर अपेक्षा कर रहे थे। वे भी जातीय गौरवकी रक्षार्थ अंग्रेजोंके विरुद्ध अस्त्रधारण करनेके लिये उद्यत थे।

लार्ड मर्णिंटनने अंगरेजोंका विपद नजदीक आता देख मन्द्राजके प्रधान अंगरेज सेनापति लार्ड हारिसको हुक्म दिया कि वे बहुत जल्द सेनाको ले कर श्रीरङ्गपत्तनकी ओर रवाना हो जाय।

उस समय मन्द्राजमें केवल ८००० सेनायें थीं। वहांका कोषागार भी बिलकुल खाली था। अतः मन्द्राजके अफसरोंके इस समय टीपूसे युद्ध ठान देना उचित न समझा। किन्तु बड़े लाटने उन सबोंकी युक्ति न सुन

कर फौज को समरसज्जा करनेका आदेश दिया। इधर उन्होंने हैदराबादके नवाबको मासिर उल मुल्कको (और पेशवाको) टीपूके विरुद्ध उत्तेजित किया।

इस समय महावीर नेपोलियन इजिप्टमें उपस्थित थे। वह भारतमें आ जाय इसका कोई पता नहीं। इसी अवसरमें फौज की कार्रवाई करनेके अभिप्रायसे बड़े लाटने अपने भाई कर्नल आर्थर वेलेसलि (भावी डिउक आव वेलिंगटन)को ३३ दल पदातिक और १००० सिपाही दे कर मन्द्राज भेज दिया। आखिर टीपू के साथ एक मीमांसा करनेके लिये वे स्वयं मन्द्राज पहुंचे। कर्नल डोभटन बड़े लाटका पत्र ला कर पहले ही टीपूके पास चले गये थे। इस पत्रमें यही लिखा गया था कि जिसमें फरासीसियोंसे टीपूका कुछ सम्बन्ध न रहे।

टीपूने कर्नलके साथ मुलाकात नहीं की। कहला भेजा कि 'अंग्रेजके साथ पहले जो सन्धि हुई है, वही यथेष्ट है। इस अंग्रेज जातिमें उनकी हमेशा की मित्रता है।" इधर उन्होंने फरासीसी गवर्नरको सेना भेजनेके लिए तथा अफगानके राजा जमानशाहको भारतमें आ कर इस युद्धकी घोषणा करनेके लिए अनुरोध किया।

टीपूको ऐसा भरोसा था कि फरासीसोंका फौज भी इजिप्ट जय करके भारतमें पदार्पण करेगी और तो क्या नेपोलियनसे भी उनका पत्रव्यवहार चल रहा था। किसी तरह एक पत्र उनके अंग्रेजोंके हाथ पड़ गया। अंग्रेजोंने तुरकिस्तानके सुलतानसे पत्र लिखवा कर टीपूको होशियार हो जानेको कहा। किन्तु टीपूने उस पर भ्रक्षेप भी न किया। १७९९ ई० ११ फरवरीको २१००० अंग्रेजी सेना और १०००० निजामकी सेना वेलूरसे चल दी। इधर पश्चिम उपकूलसे जनरल ष्टुआर्ट और हार्टलिके अधीन ६००० सैन्य अग्रसर हो रही थी। १५ मार्चको जनरल हरिस अम्बूर आ पहुंचे। १६ मार्चको बाड़्गराज्यकी सीमा पर महावीर नामक स्थान पर घोरतर युद्ध हुआ। इस युद्धमें टीपूको १००० सेना नष्ट हो गई।

अब सुलतान अपनी बची हुई सेना ले कर प्रबल पराक्रमसे शत्रुकी गतिरोधके लिए अग्रसर हुए। २७ मार्चको मालवल्ली नामक स्थान पर टीपूकी सेना पराजित हो गई। इस पराजयसे टीपू भी शोक और मर्माहत हो गये। पिताकी मृत्युके बादकी भावी व्यापद अवस्थाएं उनके स्मृतिपट पर उदय होने लगीं। वे तुरंत ही राजधानीको लौट आये। यहां आ कर सुना कि उनके बहुतसे कर्मचारी उनके विरुद्ध षड्यन्त्र कर रहे हैं। इस समय वे और भी हताश हो गये। किसी किसीने उनसे अंग्रेजोंसे सन्धि करनेके लिए कहा। पहले तो वे सन्धि करनेके लिए कुछ कुछ राजी भी हुए थे, पर जब सुना कि, अंग्रेज सेनापति हरिस सुदीर्घ कावेरी नदीके एक गुप्त स्थानको पार कर चुके हैं और शीघ्र ही वे श्रीरङ्गपत्तन पर चढ़ाई करेंगे, तब उनके हृदयमें सन्धिके प्रस्तावने स्थान नहीं पाया। इधर लार्ड हरिसने—सेनाकी रसद निबटी जा रही है देख कर तुरंत ही श्रीरङ्गपत्तन पर धावा कर दिया। अंग्रेजोंने भारतवर्षमें ऐसा भीषण युद्ध कभी भी नहीं किया था। ६ अप्रेलसे युद्ध आरम्भ हुआ। तीसरे दिन टीपूने—न मालूम क्या सोच कर—सन्धिका प्रस्ताव कर भेजा। किन्तु अंग्रेज सेनापति हरिस २ करोड़ रुपये और आधा राज्य मांग बैठे। इसके प्रत्युत्तरमें टीपूने कहला भेजा कि—"इस घृणित प्रस्तावको स्वीकार करनेकी अपेक्षा वीरों की भांति मृत्यु ही वाञ्छनीय है। हम वीरके पुत्र हैं, वीरों की तरह अपनी सम्मान रक्षा करना जानते हैं।" उस दिन रातको उन्होंने अपने प्रधान प्रधान अमात्य और कर्मचारियों को बुला कर कहा—"आज तक अपने जातीय सम्मान और धर्मकी रक्षाका भाव विमल न करेंगे। जो इस कार्यसे डरते हों, वे अभी इस स्थानसे प्रस्थान करें।"

सुलतानके उत्साह भरे वचनोंसे सभी प्राणों की ममता छोड़ कर घोरतर युद्धमें प्रवृत्त हुए। अंग्रेजों ने भारतमें ऐसा भीषण युद्ध न देखा था और न सुना ही था। इस युद्धमें दोनों पक्षकी कितनी सेना नष्ट हुई इसकी कोई शुमार नहीं। ३री मईको दुर्ग तोड़नेकी तैयारियां हुई। ४थी मईको चार हजार सेना गड़खाईको पार कर दुर्गको तोड़ने लगी। टीपू सुलतान स्वयं वीरवेशमें

सज कर दुर्गकी रक्षा करने लगे। किन्तु टीपू पर विधाता ही उलटे थे, उनको सब चेष्टायें व्यर्थ हुईं। अधिकांश दुर्गवासी सायंकालके प्रारम्भमें आत्मसमर्पण करने लगे। दुर्गमें प्रवेश कर शत्रुओंने देखा तो वीर टीपू सुलतानको अपने सम्मान और गौरवके रक्षार्थ रण शय्या पर हमेशाके लिए सोते पाया। कोई कोई कहते हैं कि, जिस समय टीपू दुर्ग-रक्षार्थ स्वयं युद्ध कर रहे थे, उस समय पोछेसे किसी व्यक्तिने गुप्तभावसे उनको मार दिया था।

कुछ भी हो, अंग्रेज सेनापतिने वीरमदसे आज दुर्भेद्य श्रीरङ्गपत्तनके दुर्गमें प्रवेश किया। यथासमय महासमारोहसे मुसलमान-प्रथानुसार टीपू सुलतानकी मृत-देह समाधिस्थ की गई। वीरनादसे अंग्रेजोंकी तोपें टीपूके सम्मान और श्रीरङ्गपत्तनविजयकी घोषणा करने लगीं। साथ ही महिसूरसे चणस्थायी मुसलमान राजत्वका भी अन्त हुआ।

इस युद्धमें जयलाभ करके बड़े लाट मर्निंटन वेलिसलि उपाधिसे विभूषित हुए। इसी नामसे ये भारत-इतिहासमें प्रसिद्ध हैं। श्रीरङ्गपत्तनदुर्ग जय करके अंग्रेजोंने नगद २ करोड़ रुपये, ८२८ तोपें, ४२४०० पीतल और लोहेके गोले तथा ६५०० मन बारूद पाई थी।

लालबाग नामक उद्यानमें हैदरके समाधि-मन्दिरमें टीपूकी कब्र हुई। टीपू अत्यन्त अत्याचारी, चञ्चल और अस्थिर प्रकृति होने पर भी इनमें बहुतसे सद्गुण थे। ये नित्य नवीन पसंद करते थे। इनके प्रासादमें बहुतसे संस्कृत ग्रन्थ, कुरानोंका अनुवाद और हिन्दुस्तान विशेषतः मुगल-साम्राज्यके इतिहास-मूलक बहुतसी हस्तलिपियां मिली हैं, जो कलकत्तेके पुस्तकालयमें सुरक्षित रक्खी गई हैं। वे देशीय शिल्प और पण्डितोंका विशेष समादर करते थे।

टीपू सिर्फ पुस्तक-संग्रह करके ही शान्त नहीं हुए थे। ये स्वयं भी विद्वान् थे इन्होंने फारसी भाषामें दो ग्रन्थ भी लिखे हैं—एकका नाम है "फरमान बनाम अलीराजा" और दूसरेका "फत-उल् मजाहिदीन।" इस के सिवा ये अपने जीवनकी बहुतसी घटनायें लिख गये हैं।

टीपूका परिवारवर्ग पहले वेलूरमें स्थानान्तरित हुआ था, किन्तु उसमें ब्रटिश गवर्मेण्टका सुभीता न हुआ, इसलिए सब कलकत्तेमें लाये गये। इस समय टीपूके घरानेके सभी लोग ब्रटिश गवर्मेण्टकी वृत्ति पाते हैं और कलकत्तेके रसापगला वा टालीगञ्ज नामक स्थानमें रहते हैं।

टीबा (हिं॰ पु॰) टीला, भीटा।

टीम (अं॰ स्त्री॰) खेलनेवालोंका दल।

टीमटाम (हिं॰ स्त्री॰) १ बनाव, सिंगार, सजावट। २ पाखंड, तड़क भड़क।

टीला (हिं॰ पु॰) १ पृथ्वीका तलसे ऊँचा भाग, भीटा। २ मट्टी या बालूका ऊँचा ढेर। ३ छोटी पहाड़ी।

टीस (हिं॰ स्त्री॰) ठहर ठहर कर होनेवाली पीड़ा, कसक चसक।

टीसना (हिं॰ क्रि॰) ठहर ठहर कर दर्द उठना, कसक होना।

टुंगना (हिं॰ क्रि॰) १ कुतरना, कोमल पत्तियोंको दांतसे काटना। २ कुतर कर चबाना।

टुंच (हिं॰ वि॰) क्षुद्र तुच्छ, टुच्चा।

टुंटा (हिं॰ वि॰) जिसके हाथ न हो, लूला।

टुंड (हिं॰ पु॰) १ छिन्न वृक्ष, वह पेड़ जिसको डाल टहनी कट गई हों, ठूंठ। २ पत्तियोंसे रहित वृक्ष, बिना पत्तेका पेड़। ३ कटा हुआ हाथ, लूला। ४ एक प्रकारका प्रेत। प्रवाद है कि यह प्रेत घोड़े पर चढ़ कर अपना कटा हुआ सिर आगे रख कर रातको निकलता है।

टुंडा (हिं॰ वि॰) १ ठूंठा, जिसमें डाल टहनी न हो। २ जिसके हाथ न हो, लूला, लुंजा। ३ एक सींगका बैल, डूंडा। (पु॰) ४ वह मनुष्य जिसके हाथ कट गये हों, लूला आदमी। ५ एक सींगका बैल।

टुंडी (हिं॰ स्त्री॰) १ मुश्क, भुजा, बाहुदंड। (वि॰) २ लूली जिसे हाथ न हो।

टुइयाँ (हिं॰ स्त्री॰) १ तोतेकी एक नीच जाति, सुग्गी। इसकी चोंच पीली और गरदन बैंगनी रंगकी होती है। (वि॰) २ नाटा, बौना।

टुइल (अं॰ स्त्री॰) एक तरहका सूती कपड़ा। यह

बहुत मुलायम होती है और इससे अच्छे अच्छे कुर्ती, कमीज़ इत्यादि बनते हैं।

टुक (हि० वि०) किंचित्, तनिक भर, थोड़ा।

टुकड़गदा (हि० पु०) १ घर घर रोटीका टुकड़ा माँगने वाला आदमी भिखारी। (वि०) २ तुच्छ नीच। ३ अत्यन्त निर्धन बहुत गरीब, कंगाल।

टुकड़गदाई (हि० पु०) १ टुकड़गदा देखो (स्त्री०) २ टुकड़ा माँगनेका काम।

टुकड़तोड़ (हि० पु०) पराश्रित मनुष्य वह आदमी जो दूसरेका दिया हुआ टुकड़ा खा कर रहता है।

टुकड़ा (हि० पु०) १ खण्ड किसी पदार्थका अंश। २ चिह्न आदिके द्वारा विभक्त भाग हिस्सा। ३ रोटीका टुकड़ा ग्रास कौर।

टुकड़ी (हि० स्त्री०) १ खण्ड, छोटा टुकड़ा। २ कपड़े का टुकड़ा, थान। ३ समुदाय मंडली। ४ पशु पक्षियोंका दल झुंड जत्था। ५ सेनाका एक भाग।

टुकनी (हि० स्त्री०) टोकनी देखो।

टुकरी (हि० स्त्री०) १ एक कपड़ा जो मलमलकी तरहका होता है। २ टुकड़ा।

टुकलाना (हि० क्रि०) १ मुँहमें रख कर धीरे धीरे चबाना चुभलाना। २ जुगाली करना, पागुर करना।

टुच्चा (हि० वि०) तुच्छ नीच।

टुटका (हि० पु०) टोटका देखो।

टुटनी (हि० स्त्री०) झारीकी पतली नली, छोटी टोंटी।

टुटपुँजिया (हि० वि०) थोड़ी पूँजीका कम पोतावाला।

टुटरूँ (हि० पु०) छोटी पंडुकी, छोटी फाख्ता।

टुटरूँटूँ (हि० स्त्री०) १ पंडुकीकी बोली। (वि०) २ अकेला। ३ कमजोर दुबला पतला।

टुटुहा (हि० स्त्री०) चमड़ेसे मढ़ा हुआ एक बाजा।

टुड्डी (हि० स्त्री०) १ नाभि, ढोंढ़ी। २ ठुड्डी देखो।

टुण्टुक (सं० पु०) टुण्टु इत्यव्यक्तशब्दं कायति कै-क। १ पक्षीविशेष, एक चिड़ियाका नाम। २ श्योनाकवृक्ष सोनापाठा वृक्ष। ३ कृष्ण खदिर काला कत्था पेड़। (स्त्री०) ४ टिण्टिमोलव (वि०)। ५ अल्प, थोड़ा। ६ क्रूर, कठोर।

टुण्टुका (सं० स्त्री०) १ टिण्टिमोलव। २ पाठा।

टुनहा (हि० पु०) एक प्रकारका रोग। इसमें मूत्रस्राव अधिक होता और उसके साथ धातु भी गिरता है।

टुनकी (हि० स्त्री०) पानकी फसलको नुकसान करनेवाला एक परदार कीड़ा।

टुनगा (हि० पु०) डालका अग्रभाग टहनीका अगला हिस्सा।

टुनगी (हि० स्त्री०) टहनीका अगला भाग जिसकी पत्तियाँ छोटी और मुलायम होती हैं।

टुनाका (सं० स्त्री०) ताम्रमूली हल, मुसली।

टुना (हि० पु०) एक मछलीका नाम।

टुप्पा (हि० पु०) वह रंगीट जो बरसे पानी पर मिल हो जाती है।

टुर्रे (हि० पु०) कण टुकड़ा, डली दाना।

टुसड़ा (हि० पु०) पूरबी बंगाल और आसाममें होने वाला एक प्रकारका बाँस।

टुसकना (हि० क्रि०) टसकना देखो।

टुँ (हि० स्त्री०) गुदामार्गसे वायु निकलनेका शब्द, पादकी आवाज़।

टुँगना (हि० क्रि०) १ कोमल पत्तियोंको दाँतसे काटना, कुतरना। २ कुतर कुतर खाना।

टुँड (हि० पु०) १ मच्छड़ मक्खी, टिड्डे आदि कीड़ोंके मुँहके आगे निकली हुई दो पतली नलियाँ। ये बालकी तरह पतली होती हैं। ये इन्हें धँसा कर रस आदि चूसते हैं। २ वह पतला अवयव जो जौ गेहूँ, धान आदिकी बालमें दानोंके कोषके सिरे पर निकला रहता है, सींग, शूक।

टुँडी (हि० स्त्री०) १ टुंडी देखो। २ नाभि ढोंढ़ी। ३ गाजर मूली आदिकी नोक। ४ किसी वस्तुकी दूर तक निकली हुई नोक।

टूक (हि० पु०) खण्ड टुकड़ा।

टूका (हि० पु०) १ खण्ड, टुकड़ा। २ रोटीका टुकड़ा। ३ रोटीके चार भागोंमेंसे एक भाग। ४ भिक्षा, भीख।

टूट (हि० स्त्री०) १ टूट कर अलग हो गया हुआ अंश खण्ड टुकड़ा। २ टूटनेका भाव। ३ भूलसे छूटा हुआ वह शब्द या वाक्य जो छोड़के किनारे पर लिख दिया जाता है।

टूटना (हिं० क्रि०) १ खण्डित होना, भग्न होना टुकड़े टुकड़े होना। २ किसी अङ्गके जोड़का उखड़ जाना। ३ चलते हुए क्रमका भङ्ग होना, सिलसिला बंद होना जारी न रहना। ४ झपटना, झुकना। ५ दल बांधकर आना पिल पड़ना। ६ आक्रमण करना एकबारगी धावा करना। ७ अकस्मात् प्राप्त होना, एकाएक कहींसे आ जाना। ८ पृथक होना, अलग होना। ९ किसी स्थानका शत्रुके अधिकारमें जाना १० क्षीण होना, दुबला पड़ना। ११ फलोंका एकत्र करना। १२ शरीरमें दर्द होना। १३ निर्धन होना, कंगाल होना। १४ बंद हो जाना। १५ हानि होना, टोटा या घाटा होना। १६ रुपयेकी बाकी पड़ना वसूल न होना।

टूटा (हिं० वि०) १ भग्न, खण्डित, टुकड़े किया हुआ। २ क्षीण, शिथिल कमजोर, दुबला। ३ धनहीन, दरिद्र, कंगाल।

टूनटोटी (हिं० स्त्री०) चुंगी।

टूम (हिं० स्त्री०) १ आभूषण, गहना। २ सुन्दर स्त्री, खूबसूरत औरत। ३ धनी स्त्री, मालदार औरत। ४ चालाक और चतुर मनुष्य। ५ धक्का झटका। ६ व्यङ्ग, ताना।

टूरनामेण्ट (अं० पु०) इनाम मिलनेवाला एक खेल।

टूसा (हिं० पु०) खण्ड, टुकड़ा।

टूसी (हिं० स्त्री०) जो फूल अच्छी तरह खिला न हो, कली।

टें (हिं० स्त्री०) तोतेकी बोली।

टेंकिका (हिं० स्त्री०) तालका एक भेद।

टेंगड़ा (हिं० पु०) टेंगरा देखो।

टेंगना (हिं० स्त्री०) टेंगरा मछली।

टेंगर (हिं० स्त्री०) टेंगरा हीकी तरहकी एक मछली। यह टेंगरासे कुछ बड़ा होती है।

टेंगरा (हिं० स्त्री०) भारतवर्षके अनेक स्थानोंमें विशेष कर अवध, बिहार और बङ्गालके उत्तरके जलाशयोंमें पाई जानेवाली एक प्रकारकी मछली। (Macrones vittatus) इसकी गरदन शरीरके सब अङ्गोंसे बड़ी और पोंछेकी पतली होती है। इसके शरीरमें सेहरा नहीं होता और मुंहके किनारे लम्बी मूंछे होती हैं। इस मछलीके कई भेद होते हैं। मछलीके शरीरमें तीन कांटे होते हैं, दो अगल बगलमें और एक पीठमें। जब यह क्रुद्ध हो कर मनुष्योंको बिधती है तो बहुत देर तक वे दर्दसे बेचैन रहते हैं। सबसे बढ़ी विलक्षणता इस मछलीमें यह है कि यह मुंहसे गुनगुनाहटके जैसा एक प्रकारका शब्द निकालती है। इनके आकार और आयतनमें बहुत विभिन्नता है। कोई कोई ४।५ इञ्च और कोई ८।१० इञ्च लम्बी होती है। मन्द्राजको टेंगरा मछली काली किन्तु बङ्गालकी रुपयेके समान सफेद रङ्गकी होती है। इसका स्वाद बहुत बढ़िया होता है।

टेंघुना (हिं० पु०) घुटना।

टेंघुनी (हिं० स्त्री०) टेंघुना देखो।

टेंट (हिं० स्त्री०) १ कमर पर पड़ी हुई धोतीकी मण्डलाकार ऐंठन। इसमें मनुष्य कभी कभी रुपया पैसा भी रखते हैं। २ कपासकी ढोंढ़। ३ करील। ४ पशुओंके शरीर पर एक प्रकारका घाव। वह घाव देखनेमें तो सूखा मालूम पड़ता है, पर उसमेंसे समय समय पर रक्त बहा करता है।

टेंटड (हिं० पु०) टेटर देखो।

टेंटर (हिं० पु०) आंखके डेले परका उभरा हुआ मांस जो रोग या चोटके कारण होता हो।

टेंटा (हिं० पु०) एक बड़ा पक्षी। इसकी चोंच एक बित्तेकी और पैर डेढ़ हाथ तक ऊंचे होते हैं। इसके समूचे शरीरका वर्ण चितकबरा पर चोंच काली होती है।

टेंटार (हिं० पु०) टेंटा देखो।

टेंटी (हिं० स्त्री०) १ करील। २ करीलका फल, कचड़ा।

टेंटू (हिं० पु०) स्योनाक, सोनापाठा।

टेंटुआ (हिं० पु०) १ गला, घेंटू। २ अंगूठा।

टेंटें (हिं० स्त्री०) १ तोतेकी बोली। २ व्यर्थकी बकवाद, हुज्जत।

टेंड (हिं० स्त्री०) टेंढ़ देखो।

टेढ़की (हिं० स्त्री०) १ वह वस्तु जो किसी वस्तुको लुढ़कने या गिरनेसे बचानेके लिये उसके नीचे लगी रहती है। २ तानेकी डांड़ीमें लगी हुई जुलाहोंकी एक लकड़ी।

यह इसके इसलिये लगाई जाती है जिसमें नाला जमीन पर न गिरे।

टेक (हिं॰ स्त्री॰) १ किसी भारी वस्तुको गड़ाए या टिकाए रखनेका खंभा चाँड़, थम। २ सहारा, पीठके को चीज। ३ आश्रय, अवलम्ब। ४ बैठनेका ऊँचा चबूतरा। ५ हठ, जिद्द, अड़, हठ जिद। ६ मल्लार, पाटन, ताल। ७ बार बार गाये जानेका गीतका पद, स्थायी। ८ छोटो पहाड़ी, ऊँचा टीला

टेकचन्द—सरहिन्दवासी एक हिन्दू कवि। इनके पिताका नाम बखतराम था। इन्होंने [illegible] मास में गुलशने [illegible] नामक ग्रन्थकी रचना की है। इस ग्रन्थमें आदिसे अन्त तक कामरूपका इतिहास लिखा है। ये शाहजहाँके समयमें विद्यमान थे।

टेकचन्द मुन्शी—एक हिन्दू कवि। इनका कविता सम्बन्धीय नाम बहार था। फारसी बोली पर भी इनकी बनाई हुई कभी किताबें गई हैं। यों तो इन्होंने बहुत सी किताबें रची हैं, मगर फारसी मुहावरोंकी किताब "बहार ए आज" और "मवाहिब उल मावलिक" मशहूर हैं। पहली किताब १७३९ ई॰में और दूसरी १७८२ ई॰में रची गई है। इन दो पुस्तकोंके सिवा ये "[illegible]" नामक एक और भी पुस्तक बना गये हैं।

टेकन (हिं॰ पु॰) किसी भारी चीजको टिकाए रखनेके लिये उसके नीचेमें लगाई जानेवाली वस्तु, अटकन, रोक।

टेकना (हिं॰ क्रि॰) १ सहारा लेना, आश्रय बनाना। २ ठहराना। ३ सहारेके लिये थामना। ४ हाथका सहारा लेना। ५ एक प्रकारका [illegible] चाल चलाना।

टेकनी (हिं॰ स्त्री॰) टेक, टेकी।

टेकर (हिं॰ पु॰) १ टीला ऊँचा पुश्त। २ छोटी पहाड़ी।

टेकरी (हिं॰ स्त्री॰) टेकर देखो।

टेकली (हिं॰ स्त्री॰) वह वस्तु जिसमें कोई चीज लटकाई या टिकाई जाती है।

टेकान (हिं॰ पु॰) १ टेक, चाँड़ थम। २ ऊँचा चबूतरा या मचान। इस पर बोझा उठानेवाला अपना बोझा रख कर कुछ काल तक आराम लेता है, थाक ठीहा।

टेकाना (हिं॰ क्रि॰) १ किसी वस्तुको ले जानेमें सहारा देनेके लिये थामना। २ सहारा देनेके लिये थामना।

टेकानी (हिं॰ स्त्री॰) वह लोहेकी कील जो पहियेको रोकनेके लिए लगी रहती है, किल्ली।

टेकी (हिं॰ पु॰) १ प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहनेवाला। २ दुराग्रही, हठी, जिद्दी।

टेकुआ (हिं॰ पु॰) १ वही जिस पर सूतको लपेटनेका चरखेका तकला। २ वह वस्तु जिसमें कोई चीज पड़ाई जाती है। ३ मालाको ऊपर उठाये रखनेकी एक लकड़ी। यह इसी समयमें काम आती है जब इसमें एक पट्टिका निकाल लिया जाता है।

टेकुरी (हिं॰ स्त्री॰) १ वह सुआ जिसमें फिरकी लगी रहती है। इसे घुमानेसे धुनी हुई रुईका सूत कात कर लिपटता जाता है, सूत कातनेका तकला। २ रस्सी बटनेका तकला। ३ तागा खींचने और निकालनेका चमारोंका सुआ। ४ मूर्त्ति बनानेवालोंका एक औजार। इससे वे मूर्त्तिका तल साफ और चिकना करते हैं। ५ सुनारोंकी एक किल्ली। यह लोहेकी डाँड़ीके एक छोर पर नालीदार बनाई जाती है और इसकी नोकमें रेशम फँसाया रहता है। ६ ठठेरोंकी सलाई जो गोल बरतनका मुँह बनानेके काममें आती है। इसमें तार खींच कर चढ़ा दिया जाता है।

टेकमो—मन्द्राजके उत्तर विशाखपत्तन जिलेका एक नगर। यह अक्षा॰ १८ १० उ॰ और देशा॰ [illegible] १४ पू॰ इस तोड़से ५ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। टेकमो राज्यके प्राचीन अधिपति रघुनाथ देवके आदरमें कोई कोई इसे रघुनाथपुरम भी कहते हैं। लोकसंख्या प्रायः ७११० है। वर्त्तमान समयमें राज्याधिपतिकी आदमियोंसे यहां डाकबङ्गला बनाया गया है।

टेकिन (अ॰ पु॰) एक प्रकारका घोटा। इसके एक ओर माथा और दूसरी ओर पीठ और हिस्से होते हैं।

टेढ़ (हिं॰ स्त्री॰) १ वक्रता, टेढ़ापन। २ नटखटी ऐंठ अकड़।

टेढ़ाबेड़ा (हिं॰ वि॰) वक्र, टेढ़ा मेढ़ा।

टेढ़ा (हिं॰ वि॰) १ वक्र कुटिल जो एक सीधमें न

गया हो। २ जो समानान्तर न गये हो, तिरछा। ३ कठिन, मुश्किल, पेचीला। ४ उद्दत, उग्र, उजड्ड।

टेढ़ई (हिं० स्त्री०) वक्रता, टेढ़ापन।

टेढ़ापन (हिं० पु०) टेढ़ाई देखो।

टेढ़े (हिं० क्रि०वि०) पेचीला।

टेना (हिं० क्रि०) १ तेज करनेके लिये रगड़ना। २ मूछके बालोंको खड़ा करनेके लिये ऐंठना।

टेनिस (अं० पु०) गेंदका एक खेल।

टेनिसन (लॉर्ड अलफ्रेड)—१९वीं शताब्दीके सर्वश्रेष्ठ अंग्रेज कवि। १८०९ ई० ता० ६ अगस्तको लिनकन्न शायरके अन्तर्गत सोमार्सबी नामक स्थानमें आपका जन्म हुआ था। आप अपने पितामाताके १२ पुत्रपुत्रियोंमें चतुर्थ पुत्र थे। आपके पितामह जॉर्ज टेनिसनने, जो पार्लामेंटके सदस्य थे, अपने पुत्रको त्याग दिया था, इस कारण कविके पिताको अपने जीवनमें अपनी ही कोशिशसे धनोपार्जन करना पड़ा था। लिनकन्नशायरकी शस्यश्यामला भूमि, छोटी छोटी नदियों और वन, उपवन आदिकी प्राकृतिक शोभाको देखते देखते बचपनमें ही टेनिसनमें कवि-प्रतिभा जाग उठी थी। यही कारण है कि आपने बाल्यावस्थामें ही कविता बनाना प्रारम्भ कर दिया।

१८१५ ई०को बड़े दिनकी छुट्टियोंके बाद आप लाउथके विद्यालयमें भर्ती हुए। इस विद्यालयमें पाँच वर्ष अध्ययन करनेके बाद आप सोमार्सबी लौट आये और अपने पिताके पास पढ़ने लगे। आपके पिता खृष्टीय धर्मसम्प्रदायके एक उच्चश्रेणीके पुरोहित थे—उनके मकानमें नाना प्रकारके ग्रन्थोंसे परिपूर्ण एक पाठागार था। यहां रहते समय बालक टेनिसनका साहित्यके साथ इतना घनिष्ट सम्बन्ध हो गया था, कि कवि बायरनका मृत्यु संवाद सुन कर आप अत्यन्त दुःखित हुए थे। अपने वनमें जा कर एक काठके ऊपर खोद दिया—'बायरन आज मर गये।" टेनिसनको पहलेसे ही साहित्यचर्चाका शौक था। बारह वर्षकी उम्रमें आपने ६००० पंक्तियोंका एक महाकाव्य रचा था, चौदह वर्षकी अवस्थामें अमित्राक्षर छन्दमें एक नाटक लिखा था। ये दोनों ग्रन्थ छापने उस समय प्र... न थे। टेनिसन-परिवार ग्रीष्मऋतुमें समुद्रके किनारे रह... था, इस कारण कविको बाल्यकालसे ही समुद्रकी शोभा पसन्द थी। कवि एवं समालोचक मि० फिज जेरल्डने ठीक ही कहा है कि "आपको कविकी स्वाभाविक प्रीति लिनकन्नशायरके प्राकृतिक सौन्दर्यसे ही प्राप्त हुई है।"

१८२७ ई०में फ्रेडरिक, चार्लस और अलफ्रेड इन तीनों टेनिसन भाताओंने मिल कर एक साथ "दो भाइयोंकी कवितावली' इस नामसे एक पुस्तक निकाली। चार्लस और अलफ्रेडकी कविताएँ अधिक होनेके कारण पुस्तकका नाम "दो भाइयोंकी कवितावली" रक्खा गया था इस पुस्तकको बेच कर इन्होंने बीस पाउण्डका लाभ उठाया था। मिल्टनके विश्वविख्यात महाकाव्य "पराडाइस लष्ट"के बेचनेसे कुल ५ पौण्ड प्राप्त हुए थे, इसको तुलनामें टेनिसनका लाभ बहुत ज्यादा है।

१८२८ ई०को ... चार्लस और अलफ्रेडने केम्ब्रिजके ट्रिनिटि कालेजमें प्रवेशिका परीक्षामें उत्तीर्ण हुए। दोनों भाई जरा नाजुक प्रकृतिके थे, पहले वे किसीसे मित्रता न कर सके थे। किन्तु अब कुछ ही दिनोंमें इनकी कई एक प्रतिभासम्पन्न युवकोंसे मित्रता हो गई, जिनमें ट्रेञ्च, लॉर्ड हाफटन, जेम्स स्पेडिं, डब्ल्यू० एच० टमसन, एडवर्ड फिज् जेरल्ड आदि प्रसिद्ध प्रसिद्ध व्यक्ति भी थे। १८२९ ई०के जून मासमें 'टिमबुक्टू" नामकी कविता पर टेनिसनको चान्सेलरका पदक प्राप्त हुआ था। इसी समय आपने कुछ गीति-कविताएँ लिखी थीं जो कि प्रशंसनीय हैं। १८३० ई०में इनमेंसे कुछ कविताएँ प्रकाशित हुईं। कवि बायरनकी मृत्युके बाद छ वर्ष तक अंग्रेज जातिको काव्यरसका आस्वाद नहीं मिला था, अब इक्कीस वर्षके युवक कविके काव्यालोकसे परिचित हो लोग अपनेको धन्य समझने लगे। नवीन कविकी कल्पनाके सुकुमार भाव, छन्दकी मधुर गति और चित्रकलाका अपूर्व समावेश देख कर सब समझ गये कि इङ्गलैण्डमें फिर एक प्रतिभावान् कविका अभ्युदय हुआ। तदानीन्तन सुप्रसिद्ध कवि कोलरिजने आपकी कविताओंकी बहुत ही प्रशंसा की, साथ ही जहां जहां छन्दपतन हुआ था, उसका भी दिग्दर्शन करा दिया।

१८३० ई०में टेनिसन और हलाम दोनों ने मिल

मेरी" नामका एक नाटक प्रकाशित किया, सर हेनरो आरभिङ्गने इसका अभिनय किया था। १८७६ ई०में "हेरल्ड" और १८७८ ई०में 'The Revenge" प्रकाशित हुआ। १८८३ ई०में ग्लाडष्टोनके साथ आप भ्रमणको निकले। इसके बाद ग्लाडष्टोनने प्रधान मन्त्रीकी हैसियतसे आपको लार्ड की उपाधि दी। १८८४ ई०में आपका ऐतिहासिक नाटक "Becket" प्रकाशित हुआ। १८८२ ई०में 'अकबरका स्वप्न" नामक एक बहुत ही उमदा कविता प्रकाशित हुई। १८८२ ई० ता० ६ अक्टोबरकी रातको ८४ वर्षकी अवस्थामें आपकी मृत्यु हो गई।

टेनी (हिं० स्त्री०) छोटी उँगली।

टेपारा (हिं० पु०) टिपारा देखो।

टेबुल (अं० पु०) मेज।

टेम (हिं० स्त्री०) १ दीपकको ज्योतिः दियेकी लौ। (पु०) २ समय, वक्त।

टेमन (हिं० पु०) साँपका एक भेद।

टेमा (हिं० पु०) छोटी अंटिया जो कटे हुए चारेकी बनाई जाती है।

टेर (हिं० स्त्री०) १ गानेमें ऊंचा स्वर, तान, टीप। २ पुकारनेको आवाज, बुलाहट। ३ निर्वाह, गुजर।

टेर—मैनपुरी जिलेके एक कवि। ये १८३१ ई०में जन्म ग्रहण किया था।

टेरक (सं० त्रि०) केकर पृषोदरादित्वात् साधुः। वक्रचक्षु, ऐंचा, भेंगा। इसके पर्याय—वलिर, केकर और केदर है।

टेरना (हिं० क्रि०) १ तान लगाना जोरसे गाना। २ पुकारना, बुलाना। ३ पूरा करना, निबाहना। ४ व्यतीत करना, बिताना, गुजारना।

टेरवा (हिं० पु०) चुक्केको नलो।

टेरा (हिं० पु०) १ अंकोलका पेड़, ढेरा। २ वृक्षस्तम्भ, धड़, तना। ३ शाखा। वि०) ४ ऐंचाताना, टेपरा।

टेराकोटा (अं० पु०) १ पकी हुई मट्टीके जैसा रङ्ग, ईंटकोछिया रङ्ग। २ पकी हुई मट्टी। इससे मूर्तियां, इमारतोंमें लगानेके लिये बेलबूटे आदि बनते हैं।

टेरो (हिं० स्त्री०) १ पतली शाखा, टहनी। २ वह मूआ जिससे दरी बुनी जाती है। ३ एक पौधा। इसकी कलियां रङ्गने और चमड़ा सिझानेके काममें आती हैं। ३ वक्रमको कलो।

टेरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका सरसों, उलटी।

टेलिग्राफ (अं० पु०) यह शब्द Tele और grapho इन दो ग्रीक शब्दोंसे उत्पन्न हुआ है। इसका मौलिक अर्थ है दूरलिपि। जिसमें किसी यन्त्रादिके द्वारा बहुत दूर तक इशारेसे संवाद आदि भेजे जाते हैं, उसको टेलिग्राफ (वा तार) कहते हैं। बहुत प्राचीनकालमें अग्निके द्वारा सङ्केतादि बहुत दूरवर्ती स्थान तक भेजे जाते थे। उसके बाद इस कामके लिये नाना प्रकारकी पताका, लालटेन, नोलोचिराग आदि दृश्यमान चिह्न तथा बन्दूककी आवाज, भेरीध्वनि, घडी और ढक्कावाद्य व्यवहृत होने लगा। जिस चिह्न द्वारा सङ्केत किया जाता था, उसका अर्थ पहलेसे ही दोनों पक्षवालोंको मालूम रहता था। इसलिए इन सङ्केतों द्वारा कुछ निर्दिष्ट संख्याके सिवा और कुछ अभिप्राय व्यक्त नहीं किया जा सकता। फिलहाल बिजलीके द्वारा ही सर्वत्र टेलिग्राफ कार्य सम्पन्न होता है, इसके द्वारा हर एक तरहका संवाद अतिशीघ्र बहुत दूर तक स्पष्टरूपसे भेजा जाता है। इसका विवरण ताड़ितवार्तावह शब्दमें देखो।

यद्यपि ताड़ितवार्तावहके द्वारा संवाद भेजनेके उपाय अति आधुनिक है, किन्तु सङ्केत द्वारा निर्दिष्टसंख्यक संक्षिप्त अभिप्राय दूरस्थानमें व्यक्त करनेकी प्रथा बहुत प्राचीन है। ईसाकी प्रायः ६ठी शताब्दीसे पहले शत्रुके आगमनको जतलानेके लिए उच्चस्थान पर अग्निके निशान देनेकी प्रथाका उल्लेख पाया जाता है। एस्किलस् द्वारा वर्णित आगामेमूननके वृत्तान्तके पढ़नेसे मालूम होता है कि, ट्रय-नगरकी ध्वंससंवाद ग्रीसीवस अनलमाला द्वारा बहु दूरस्थ ग्रीसमें विज्ञापित हुआ था। यही टेलिग्राफ द्वारा संवाद-प्रेरणकी सर्वापेक्षा प्राचीनतम घटना है। स्काटलैण्डमें एक गुच्छे काठकी अग्निसे अंग्रेजोंके आनेकी आशङ्का, दोनोंकी जलनेसे यथार्थ आगमन और बराबर बराबर चार अग्नि जलनेसे शत्रुओंकी संख्या बहुत ज्यादा है—ऐसा मालूम होता था। रातको इस तरहकी अग्नि

बहुत दूरसे दिखाई देती थी और दिनको धुएँसे इशारे मालूम पड़ जाते थे। प्रज्वलित मशालको इधर उधर घुमा फिरा कर अथवा एक बार छिपा कर और फिर दिखा कर इशारे किये जाते थे। पीछे सङ्केत करके घण्टे मशाल आदिके द्वारा खबर निर्देश करनेकी प्रथा चली। १६८४ ई०में इङ्गलैण्डके डाक्टर राबर्ट हुक (Dr Robert Hooke)ने ऊँचे स्तम्भादि पर बड़े बड़े अक्षरोंकी प्रतिकृति रख कर दूरसे सम्वाद भेजनेका एक तरीका निकाला। रातको अक्षरोंके बदले पुतले आलोक द्वारा सङ्केत ज्ञापन करनेका तरीका निकाला। अफसोस उन अक्षरोंको भाषा उन लोग समझ नहीं पाते थे। इसके प्राय: ४० वर्ष बाद आमण्टनने (M Amonton) आपसमें युक्तकी भाँतिका एक उपाय उद्भावन किया, किन्तु पीछे इन दोनोंके कोई भी अधिक दिन तक नहीं ठहरे। १७९२ या १७९४ ई०में मि० शापि (M Chappe)ने जिस टेलिग्राफका आविष्कार किया था वही उस समय फरासीसी गवर्मेण्ट द्वारा वहाँ प्रचलित हुआ था। इसका आकार एक वृहत् T की भाँतिका था। इसलिये अभी भी लोग इसको टी टेलिग्राफ भी कहा करते हैं। एक सीधी गड़ी हुई लकड़ीके छोर पर दूसरी एक आड़ी लकड़ी के दोनों छोरों पर दो लकड़ियाँ और लगी होती है इन लकड़ियोंको डट डोरा रस्सीसे खींच कर नानारूप अवस्थाओंमें रक्खा जा सकता है। इस तरहसे प्राय: १९२ प्रकारसे भिन्न भिन्न आकारों द्वारा १९२ प्रकारके इशारे किये जाते थे। इन इशारोंसे अक्षर या अङ्क एवं शब्द या वाक्य लगी हो सकते थे। शब्द या वाक्य पुस्तकोंमें लिखे रहते थे और सङ्केतानुसार सङ्केतोंके आकारसे उसका अर्थ लगाना पड़ता था। फरासीसी विप्लवके समय इस टेलिग्राफके द्वारा बहुत समाचार भेजे जाते थे। दूरवीक्षणकी सहायतासे चिह्न पहचाने जाते थे। किसी ष्टेशनसे एक तरहका चिह्न दिखाये जाने पर उसी समय परवर्ती ष्टेशनसे भी वही चिह्न दिखाया जाता था, उससे फिर अन्य स्थानमें—इसी तरह क्रमश: दूरवर्ती स्थानमें बात पहुंच जाया करता था।

मि० शापिके बाद मि० एजवर्थ (Edgeworth)ने इङ्गलैण्डमें इसी तरहका टेलिग्राफ आविष्कार किया। इसमें कुछ संख्याएं निर्दिष्ट थीं। प्रत्येक संख्याका एवं अर्थ पुस्तकमें लिखा रहता था जो आवश्यकतानुसार ढूंढ़ लेना पड़ता था।

मि० गेम्बलने टेलिग्राफमें एक बड़े काठकी चौखटके छः प्रकोष्ठोंमें छः दरवाजे संयुक्त होते थे वे किवाड़ इच्छानुसार खोले और बन्द किये जा सकते थे। इनको नाना प्रकारसे खोलने और बन्द करनेको अवस्थाओंके द्वारा नाना प्रकारके सङ्केतोंसे अक्षरादि सूचित होते थे।

१७९६ ई०में पहले पहल इङ्गलैण्डमें लण्डनसे डोभर तक टेलिग्राफ लाइन स्थापित हुई थी। यह टेलिग्राफ शीषोक्त टेलिग्राफका ईषत् रूपान्तर मात्र था। कहा जाता है कि इसके द्वारा ७ मिनटमें डोभरसे लण्डनको संवाद भेजा जाता था। १८१६ ई० तक ऐसा टेलिग्राफ ही व्यवहृत होता था।

इसके बाद बहुतोंने नानारूप परिवर्तन या उत्कर्ष साधन करके नाना प्रकारकी तरकीबोंका निकालना शुरू किया। फरासीसी लोग इस समयमें एक खूंटो पर दो या तीन डण्डे लगा कर टेलिग्राफ करते थे।

पूर्वोक्त नाना प्रकारके सङ्केतोंका अनेक प्रकारसे परिवर्तन करके अब एक प्रकारके टेलिग्राफ इङ्गलैण्ड और यूरोपमें प्रचलित हुए थे। इस प्रकारके सङ्केतादि दूरस्थ जहाजोंके साथ संवाद आदान प्रदानमें अत्यन्त उपयोगी था। बहुत समय इसकी आवश्यकता अति अपरिहार्य हो जाती थी। जहाजोंमें सङ्केत करनेके लिए प्रधानत: नाना वर्णोंके भिन्न भिन्न आकारकी पताकाएं व्यवहृत हुआ करती थीं। अन्यान्यके टेलिग्राफकी तरह इनमें भी संख्या आदि निर्दिष्ट थी और अर्थ पुस्तक द्वारा अर्थका निर्णय होता था। १७९८ ई०में इङ्गलैण्डके नौ सेना विभागने एक पुस्तक निकाली। उसमें प्राय: ४०० वाक्य सङ्केत द्वारा प्रकट करनेकी तरकीब लिखी थी। किन्तु यदि कोई संवाद उस ४०० संख्याके बाहर होता तो उस टेलिग्राफसे काम नहीं चलता था। यह देख कर सर होम पपम (Sir Home Popham)ने अक्षरों द्वारा खबर लिख करनेकी प्रथा चलाई। इन्होंने सब सङ्केतोंका विवरण लिख कर एक पुस्तक जनसमाजमें भेजी। पीछे यह पुस्तक

लण्डनमें परिवर्द्धित और संस्कृत हो कर छपो थी।

कुछ भी हो, ऐसे टेलिग्राफ बहुत समय सहज और सुविधाजनक होने पर भी कभी कभी अस्पष्ट और असंलग्न हो जाता था। वायुराशि कुज्झटिकामय होनेसे दूरस्थ सङ्केत दीखता नहीं था। बहुत दूरके शब्द आदि भी सुनाई नहीं पड़ते थे। रस्सीसे दूरस्थ स्थानका घण्टा बजा कर तथा जल या वायुपूर्ण नलसंयोग करके सङ्केत किये जाते थे। किन्तु ऐसा टेलिग्राफ बहुत समय असम्भव हो जाता था। आखिर ताड़ित अर्थात् बिजलीका आविष्कार और धातुके तारों द्वारा इसका अतिशीघ्र स्थानान्तरमें परिचालनव्यवहार आविष्कृत होने पर टेलिग्राफका युग परिवर्तन हुआ। फिलहाल सर्वत्र इसी तरीकेसे टेलिग्राफ होता है। बेतारके टेलिग्राफका भी आविष्कार हो गया है।

ताड़ितवार्तावह और बेतारका तार देखो।

टेलिग्राम (अं० पु०) वह संवाद जो तारके द्वारा भेजा जाता है।

टेलिफोन (अं० पु०) यह शब्द ग्रीक टेलि=दूर और फोनी=श्रवण करना, इन दो शब्दोंसे उत्पन्न हुआ है। इसका अर्थ दूर-श्रवणयन्त्र है, अर्थात् जिसके द्वारा दूरसे सुना जाय वह यन्त्र।

दो बांस, कागज वा टोनके चोंगाका एक तरफसे कागज, चाम या धातुको पत्ती द्वारा आच्छादित करके मध्यस्थलमें एक लम्बा सूत वा तार बांध दें। इस तरहके दो चोंगोंमेंसे एकमें बात करनेसे दूसरेमें वह स्पष्ट सुनाई पड़ती है। द्वितीय चोंगको कान पर रखना चाहिये। यह एक प्रकारका सरल टेलिफोन है। इससे थोड़ी दूर तककी बात सुनाई पड़ती है, पर ज्यादा होनेसे शब्द अस्पष्ट हो जाते हैं। इसका नासिकास्वर होता है। नीचे ताड़ितप्रवाह द्वारा जो टेलिफोन होता है, उसका संक्षेपमें वर्णन किया जाता है।

एक चम्बुकदण्डके ऊपर रेशमादि अपरिचालक सूत्रमण्डित तांबेका तार लपेट कर उस तारके दोनों छोर एक तरफ दो बन्धनी स्क्रूके साथ कसे होते हैं। पीछे वह तार लपेटा हुआ चुम्बक एक नलके बीचमें स्थापित होता है और उसके किनारे एक बहुत पतली लोहेकी पत्ती चुम्बकके अति निकट बद्ध रहती है। लोहेको पत्ती काठके चोंगके भीतर चारों तरफसे कसा होता है तथा उसके बीचमें चुम्बकके दूसरे तरफ खुला रहता है।

टेलिफोन द्वारा बातचीत करनेके लिए इस तरहके दो यन्त्रोंको जरूरत होती है, एक कहनेका और दूसरा सुननेका। प्रथमतः उक्त दोनों नलोंको रेशममण्डित तांबेके तारसे संयुक्त करना होगा। एक चुम्बक पर लपेटे हुए तांबेके तारके एक छोरको उक्त बन्धनोंके द्वारा एक लम्बे तारके साथ संयुक्त करके दूसरेको एक स्क्रूमें बांध देना चाहिये। अन्य दो स्क्रूओंको या तो अन्य तार द्वारा परस्पर संयुक्त करें या प्रत्येकको सुद्र तार द्वारा पृथिवीके साथ संयुक्त कर दें। इनमेंसे एक चोंगेसे मुंह लगा कर बात कहनेसे अन्य व्यक्ति दूसरे चोंगेमें कान लगा कर हूबहू शब्द सुन सकता है। इसमें कण्ठस्वर अनेकांशमें क्षीण और ईषत् नासिकासुरकी भांति हो जाने पर भी बहुत दूरसे पूर्वपरिचित स्वर मालूम हो सकता है और बात भी समझी जा सकती है। सागरमध्यस्थ तार द्वारा प्रायः ६०।७० मील तथा स्थलभागस्थ ऊपरके तार द्वारा प्रायः २०० मील तककी दूरीसे दो मनुष्य आपसमें बातचीत कर सकते हैं। यह वैज्ञानिक आविष्क्रिया अतीव आश्चर्यजनक है।

अब किस तरह दूरवर्ती नलमें प्रतिरूप शब्द उत्पन्न होता है, उसका विवरण लिखा जाता है। शब्द वायुराशिका कम्पन मात्र है। शब्द देखो। मुखसे निकली हुई शब्द-तरङ्ग चोंगाके मध्यस्थित वायुराशिको कम्पित करती है और उसके बात प्रतिघातसे नलसंलग्न सूक्ष्म लोहेकी पत्तियां भी स्पन्दित हुआ करती हैं। इस प्रकारका स्पन्दन लोहेकी पत्तियोंका एक बार आगे और एकबार पीछे हटनेके सिवा और कुछ नहीं है। यह स्पन्दन इतना द्रुत और अल्पदूरव्यापी है कि हम उसको देख नहीं सकते। कुछ भी हो इस तरहके स्पन्दनके कारण निकटस्थ चुम्बकदण्डकी शक्ति एक बार ह्रास और एक बार वृद्धि होती है तथा चुम्बकके चारों तरफको तार कुण्डलीमें एक बार एक तरफ और एक बार दूसरी तरफ ताड़ित स्रोत उत्पन्न होता है। चुम्बक देखो। यह ताड़ितप्रवाह तार द्वारा दूरस्थ ष्टेशन पर पहुंचता है और

बरो युग्म+दण्डकी चारों तरफकी कुण्डलीमें प्रवाहित हो कर एक बार युग्मदण्डकी शक्तिको ह्रास और एक बार वृद्धि करता है। इसलिए उसके पासकी लोहेकी पत्तियां एक बार पश्चिम और एक बार अन्य ओरसे आकृष्ट हो कर स्पन्दित होती रहती हैं यह स्पन्दन क्षीण होने पर भी प्रथम स्तरकी पत्तियोंके स्पन्दनके प्रबल अनुरूप होने में क्षीणतर होता है, किन्तु अनुरूप शब्द उत्पन्न करता है।

बहुत समय दूरीके लिए युग्मदण्डके स्थान पर लौह-दण्ड दिया जाता है और तड़िच्चोपके साथ संयुक्त करके उसको चक्राकार कुण्डलमें परिणत किया जाता है।

किसी तारमें अति क्षीण तड़ित्प्रवाहको पकड़नेके लिए टेलिफोन व्यवहृत होता है टेलिफोनके तारका तड़ित्प्रवाह साधारण तड़ित् वार्तावहके तारके प्रवाहकी अपेक्षा बहुत थोड़ा होता है। किन्तु उतनेसे भी टेलिफोनमें श्रवण करने योग्य शब्द उत्पन्न होता है। इसलिए उस तारके पास टेलिफोनका तार रखनेसे उसमें विपरीत तड़ित्स्रोत उत्पन्न हो कर टप् टप् शब्द उत्पन्न होता है।

१८७५ ई०में मि बलने टेलिफोनका आविष्कार किया था। १८७७ ई०में जर्मन राज्यमें पहले पहल टेलिफोन प्रचलित हुआ था। आजकल टेलिफोनका बहुत प्रचार हो गया है। क्या विलायत और क्या हिन्दुस्तान, सबत बड़े बड़े नगरोंमें धनवान् लोग अपने अपने मकानोंमें टेलिफोन-यन्त्र लगवाते हैं। इसके जरिये बहुत फासलेसे विचार किया अथवा सभी संवाद भेजे जा सकते हैं। घर घर टेलिफोनसे बात करनेके लिए एक मकानसे दूसरे मकान तक तार नहीं रखना पड़ता। सब मकानोंके टेलिफोनका तार एक साधारण टेलिफोन आफिसमें संयुक्त रहता है वहां पर इच्छानुसार कोई भी दो मकानोंके टेलिफोन द्वारा बातचीत करनेके लिए संयुक्त हो सकता है। बड़े बड़े शहरोंमें इसी तरह टेलिफोनमें तार जोड़े जाते हैं।

टेपी (हिं० पु०) आसाम कछार सिलहट और चटगांवमें होनेवाला मझले आकारका एक पेड़। इसकी लकड़ी लाल और मजबूत होती है।

टेव (हिं० स्त्री०) अभ्यास आदत, बान।

टेवको (हिं० स्त्री०) १ नावका वह छोटा पाल जो सब पालोंके ऊपरमें रहता है। २ बांसकी वह लकड़ी जो दोनों छोरों पर कुछ दूर तक चिरी रहती है। जुलाहा छीछोंमें इसे इसलिए लगाते हैं कि तागा सिमिट न पावे।

टेवा (हिं० पु०) १ जन्मपत्री, जन्मकुण्डली। २ लग्न पत्र। इसमें विवाहकी तिथि, लग्न, घड़ी आदि लिखी रहती है। विवाहसे कुछ पहले नाई लड़कीके यहांसे शकुनके साथ इस लग्नपत्रीको ले कर लड़केके पिताको देता है।

टेसू (हिं० पु०) १ पलाशका फूल ढाकका फूल। २ पलाशका पेड़। ३ लड़कोंका एक उत्सव। इसमें छोटे छोटे लड़के विजयादशमीको तीन लकड़ी और मिट्टीका पुतला बना कर कुछ गाते हुए दरवाजे दरवाजे घूमते हैं। इसी तरह वे पांच दिन तक घूमा करते हैं और लोगोंसे जो कुछ मिलता उससे वे मिठाई और खाजा खरीदते हैं। अन्तिम दिन वे लोग कुए वेदी पर जाते और पवित्र तरहसे पैठ जागरण इत्यादि करते हैं। बाद मिठाई आदि आपसमें बांट कर शामको घर लौट आते हैं।

टेहरी-१ युक्तप्रदेशके अन्तर्गत एक देशीय राज्य। यह अक्षा० ३०° ३´ से ३१° १८´ उ० और देशा० ७७° ४९´ से ७८° २४´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ४२०० वर्गमील है। इसके उत्तरमें बशाहर राज्य और बमहर राज्य तथा तिब्बत, पूर्व और दक्षिणमें गढ़वाल जिला तथा पश्चिममें देहरादून है। राज्यका अधिकांश हिमालयसे आच्छन्न है। ऊंचे ऊंचे पहाड़की ऊंचाई समुद्रतलसे २०००० फुटसे ले कर २१००० फुट तक है। राज्यमें गङ्गा और यमुना दोनों नदी प्रवाहित है। यहां गङ्गा भागीरथी नामसे प्रसिद्ध है। यह दक्षिण-पश्चिमसे हो कर दक्षिण पूर्व होती हुई देवप्रयागके समीप अलकनन्दासे जा मिली है। यमुनोत्री पहाड़ पर्यन्त हो कर यमुना नदी बहती है। यह दक्षिण पश्चिम होती हुई राज्यकी पूर्वीय सीमाको चली गई है। इन दो प्रसिद्ध नदियोंके उद्गम स्थानके समीप यमुनोत्री और गङ्गोत्री प्रसिद्ध तीर्थस्थानोंमें गिने जाते हैं।

यहांके जङ्गलमें बाघ, चीता, भालू, हरिन तथा तरह तरहके भेंडे पाये जाते हैं। आबहवा गढ़वाल जिलेकी सी है।

गढ़वाल जिलेके इतिहासको ही इस राज्यका प्राचीन इतिहास कह सकते हैं। एक ही वंशके राजा दोनों देश के शासनकार्य चलाते थे। प्रद्युम्नशाह नामक अन्तिम राजा गोरखायुद्धमें काम आये। लेकिन १८१५ ई०में नेपाल-युद्धके समाप्त होने पर उनके लड़के सुदर्शनशाहने वृटिशगवर्मेण्टसे वर्तमान टेहरी राज्य प्राप्त किया। सन् सत्तावनके गदरमें सुदर्शनशाहने अंगरेजोंको खासी मदद दी थी। १८५८ ई०में इनका देहान्त हुआ। बाद इनके दत्तकपुत्र भवानीशाह राज्यके अधिकारी हुए। इन्हें एक सनद तथा दत्तकपुत्र ग्रहण करनेका अधिकार मिला था। १८७२ ई०में इनके स्वर्गवास होने पर इनके लड़के प्रतापशाह १८८७ ई०में सिंहासनारूढ़ हुए। बाद १८९४ ई०में राजा कीर्तिशाहने टेहरीका सिंहासन सुशोभित किया। इन्होंने नेपालके महाराज जङ्गबहादुरकी पोतीको ब्याहा था। ये K.C.S.I. उपाधिसे भूषित थे। वर्त्तमान राजाका नाम नरेन्द्रशाह है।

राज्यमें कुल २४५६ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी बड़ा नहीं है। लोकसंख्या प्रायः २६८८८५ है। सैकड़े ८८ हिन्दूकी संख्या है। राज्य भरमें केवल एक ही तहसील है।

धान और गेहूं यहांकी प्रधान उपज है। राज्यके पश्चिम कुछ चाय भी उपजाई जाती है। यहांसे देवदार, घी, धान और आलूकी रफ्तनी होती तथा दूसरे दूसरे देशोंसे चीनी, नमक, लोहे, पीतलके बरतन, दाल, मसाले और तेलका आमदनी होती है।

राज्यमें केवल राजाकी ही पूरी क्षमता है। विचार-कार्य वजीरके अधीन है। राजस्व आदिका मामला एक तहसीलदार और तीन डिपटी-कलेक्टरसे तै होता है। तृतीय श्रेणीके दो मजिष्ट्रेट देव प्रयाग और कीर्ति नगरमें रहते हैं। द्वितीय श्रेणीकी सामान्य क्षमता-प्राप्त डिप्टी कलेक्टरके हाथ और प्रथम श्रेणीकी वजीर तथा एक मजिष्ट्रेटके हाथ है। मृत्युदण्ड केवल राजासे ही दिया जाता है। दीवानी मुकदमा डिपटी-कलेक्टरके इजलासमें पेश होता है। सभी मुकदमोंको अपील राजा सुनते हैं। राज्यकी आय ३०४०००) रु०की है।

राजाको ११३ पदातिक सैन्य और २ तोपें रखनेका अधिकार है। राज्य भरमें केवल दो अस्पताल और एक कारागार है।

२ उक्त राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० ३०°२३´ उ० और देशा० ७८° ३२´ पू०के मध्य भागीरथी तथा भेलिङ्ग नदीके सङ्गम स्थान पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ३३८१ है। यह शहर समुद्रपृष्ठसे २२७८ फुट ऊंचा है। यहां गर्मी बहुत पड़ती है। इस समय राजा शहरसे ८ मील दूर प्रतापनगरमें जा कर रहते हैं। यहां-लत चिकित्सालय और स्कूलके सिवा यहां अनेक मन्दिर तथा धर्मशालायें भी है

टैभरनियर (जियान वैप्टिष्टा)—प्रसिद्ध यूरोपीय पर्यटक। ये मुगल-साम्राज्यके शेष युगमें भारत-भ्रमणके लिए आये थे। इनके भ्रमणवृत्तान्तसे उस युगके अनेक ऐतिहासिक तथ्य मालूम हो सकते हैं।

टैभरनियरका जन्म १६०५ ई०में सौन्दर्यके अमर निकेतन पारिस नगरीमें हुआ था। इनके पिता एक फ्लेमिश जिल्दीके औरसजात थे और उन्होंने देशभ्रमणमें ही अपना जीवन बिताया था। टैभरनियरने भी पिता-का आदर्श सामने रख कर पन्द्रह वर्षकी उम्रमें हां पितासे आज्ञा ले कर देश-भ्रमण प्रारम्भ कर दिया। प्रथमतः आपने यूरोपके भिन्न भिन्न स्थानोंमें परिभ्रमण किया और फिर दो फरासीसी सम्भ्रान्त व्यक्तियोंके अधीन काम करते हुए आप प्राच्यदेशकी तरफ चल दिये। १६३० ई०के दिसम्बर महीनेसे आपका भ्रमण शुरू हुआ था। रीजमवर्ग, ड्रेसडेन, भियेना, कनस्तान्तिनोपल आदि स्थानोंमें भ्रमण करनेके बाद आपने उक्त फरासीसी सज्जनोंका साथ छोड़ दिया। पीछे एकिजिरीयम, ताब्रिज, इस्पाहन, बोगदाद, आलेपो और स्काण्डारुन आदि स्थानोंमें घूमते हुए आप १६३३ ई०में समुद्रके रास्ते रोम नगरीमें उपस्थित हुए। १६३८ ई०में आप दूसरी बार भ्रमणके लिये निकले। इस बार आपने मार्सेलिससे ले कर स्काण्डारुन तक भ्रमण किया। पीछे आप सिरिया पार हो कर इस्पाहान और फारसके

दक्षिण-पश्चिम प्रदेशोंमें घूमते हुए भारत आये।

आपका यह भ्रमण १६४३ ई०में समाप्त हुआ था। १६४३ ई०से १६४८ ई० तक तृतीय बार भ्रमणका समय है। इस बार आपने इस्पाहानसे चल कर आगरा आदि पूर्व भारतीय देशोंमें पर्यटन किया था। चतुर्थ और पञ्चम बारके भ्रमणका समय निर्णय करना कठिन है। सम्भवतः ये दोनों भ्रमण १६५१से १६५८ ई०के भीतर हुए होंगे। १६६१ ई०में उन्होंने छठी बार भ्रमण शुरू किया। सिरिया और पारस्यकी मरुभूमि पार कर आरब होते हुए आप भारतवर्ष आये। १६६८ ई०में आप यूरोप पहुंच गये।

टैभर्नियरने आगारस्थित मणिकारोंके व्यवसायी बन कर भ्रमण किया था। जिस समय आप भारतवर्ष आये थे उस समय भारतके गौरव ताजने माध्य आकाशमें उदित हो कर समग्र जगत्को आलोकित किया था। आपने भारतके प्रायः सभी प्रधान प्रधान नगरोंमें भ्रमण किया था। उस समय मुगल साम्राज्यके गौरव और वाणिज्य व्यवसायकी उन्नतिके कारण भारतवर्षकी कैसी अवस्था थी, इसका परिज्ञान आपके भ्रमणवृत्तान्तसे अच्छी भांति हो जाता है। इसके सिवा आपके भ्रमणवृत्तान्तमें भारतके प्रधान प्रधान बन्दरों और मुगल शासन प्रणालीका विवरण भी मिलता है। वस्तुतः आपके भ्रमणवृत्तान्तसे भारतके इतिहासकी १७वीं शताब्दीकी बहुतसी घटनाएं मालूम हो सकती हैं। टैभर्नियर फ्रान्सके बैरन नामसे अभिहित हुए थे। राजनैतिक परिवर्तनके कारण आपको बाध्य हो कर [illegible] रहना पड़ा था। वहां आप ईष्ट इण्डिया कम्पनीके डिरेक्टर नियुक्त हुए थे।

आप रूसियाके भीतरसे भारतवर्ष तक एक मार्ग निकालनेके लिए (१६८८ ई०में) बार्लिनसे चल दिये। परन्तु (१६८९ ई०में) मस्कौ नगरमें आपका देहान्त हो गया। आपके भ्रमणवृत्तान्तके दो भाग १६७६-७७ ई०में और एक खण्ड १६७८ ई०में प्रकाशित हुआ था।

टैसीटस् (कर्नेलियस)—सुप्रसिद्ध रोमन ऐतिहासिक। आपके लिखे हुए इतिहासोंमें ही सबसे पहले जर्मन-जातिका विवरण लिपिबद्ध हुआ है। आपके जीवन कालमें रोमके सिंहासन पर निम्नलिखित सम्राट बैठे थे—नीरो, गेलबा, ओटो, भिटेलियस, भेस्पेसियन, टाइटस, डोमिसियन, नार्भा और ट्राजान।

आपके व्यक्तिगत जीवनके विषयमें, जिन्हें वे स्वयं लिख गये हैं तथा प्लिनीके साथ आपका जो पत्रव्यवहार हुआ था उससे कुछ मालूम हो सकता है। टैसीटस जहां तक अनुमान हो सकता है, ईसाके ५१ या ५२ वर्ष पहले उत्पन्न हुए थे। आप जुलियस ऐग्रिकोलाके जामाता थे। इससे मालूम होता है कि आप समाजके उच्च पदस्थ और सम्भ्रान्त व्यक्ति थे। आप अपने श्वशुरकी एक जीवनी लिख गये हैं।

८० ई०में टैसीटसको क्वेष्टरका पद प्राप्त हुआ था। ईसाकी ३री शताब्दीमें सम्राट टैसीटस अपनेको ऐतिहासिक टैसीटसके वंशधर समझ कर गौरव अनुभव करते थे। उन्होंने आदेश दिया था कि प्रति वर्ष टैसीटसके ग्रन्थकी दश प्रतिलिपि करा कर साधारण पाठागारमें रक्खी जावें।

प्लिनीने बड़ी श्रद्धाके साथ कई जगह टैसीटसका उल्लेख किया है। प्लिनीने एक पत्रमें अपने जन्मस्थानके विद्यालयके विषयमें टैसीटससे उपदेश चाहा था। एक जगह प्लिनी टैसीटसको लिखते हैं—"मैं जानता हूं कि आपका नाम इतिहासमें अमर रहेगा। इसलिए मैं चाहता हूं कि उसमें मेरा भी नाम रहे।"

टैसीटसके ग्रन्थोंकी सूची इस प्रकार है—(१) वक्ताओंका कथोपकथन (सम्भवतः ७५ या ७७ ई०का) (२) ऐग्रिकोलाकी जीवनी, (३) जर्मनी (४) इतिहासमाला और (५) घटनावली।

आपके इतिहाससे रोमसाम्राज्यकी बहुतसी बातें मालूम हो सकती हैं।

टैंया (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी छोटी कौड़ी। इसकी पीठ साधारण कौड़ीसे कुछ चिपटी होती है। इसका रङ्ग बिलकुल सफेद होता है। फेंकनेसे यह सदा चित पड़ती है इसी कारण जुएमें इसका व्यवहार होती है। इसका दूसरा नाम चित्ती है।

टैक्स (अ० पु० Tax) राजकर, महसूल।

टैन (हिं॰ स्त्री॰) चमड़ा सिझानेके काममें आनेवाली एक प्रकारको घास।

टोआ (हिं॰ पु॰) गर्त्त, गड्ढा।

टोइयां (हिं॰ स्त्री॰) तोतेकी एक जाति। इसकी चोंच पीली और कंठसे ले कर चोंच तक सारा भाग बैंगनी होता है, तोती।

टोईं (हिं॰ स्त्री॰) एक गिरहसे दूसरे गिरह तकका भाग, पोर।

टोंगा (हिं॰ पु॰) टाँगा देखो।

टोंगू (हिं॰ पु॰) फैलनेवाली एक झाड़ी। इसकी छालके रेशोंसे रस्सी बनाई जाती हैं, जिती, जक।

टोंचना (हिं॰ क्रि॰) चुभाना, गड़ाना।

टोंट (हिं॰ स्त्री॰) चोंच, ठोर।

टोंटा (हिं॰ पु॰) १ वह वस्तु जिसका आकार चिड़ियोंकी चोंच जैसा हो। २ चोंचके आकारमें गढ़े हुए काठके टुकड़े। ये डेढ़ दो हाथ लंबे होते हैं और दीवार परकी छाजनको सहारा देनेके लिये लगाए जाते हैं। ३ वह नली जो पानी आदि ढालनेके लिये बरतनमें लगी रहती है।

टोंटी (हिं॰ स्त्री॰) १ झारीमें लगी हुई नली, तुलतुली। २ पशुओंका थूथन।

टोक (हिं॰ पु॰) १ उच्चारण किया हुआ अक्षर। (स्त्री॰) २ प्रश्न आदि द्वारा किसी कार्यमें बाधा, पूछ ताछ। ३ खराब दृष्टिका प्रभाव, नजर।

टोकना (हिं॰ क्रि॰) १ प्रश्न आदि करके किसी कार्यमें बाधा डालना, बीचमें बोल उठना। २ बुरी दृष्टि डालना, नजर लगाना। ३ एक पहलवानको दूसरेसे लड़नेके लिये कहना, ललकारना।

टोकनी (हिं॰ स्त्री॰) १ टोकरी, डलिया। २ पानी रखनेका छोटा बरतन ३ बटलोई, देगचो।

टोकरा (हिं॰ पु॰) खाँचा, डला, झाबा।

टोकरी (हिं॰ स्त्री॰) १ छोटा डला, झाँपी, झपोली। २ बटलोई, देगची।

टोकवा (हिं॰ पु॰) नटखट लड़का।

टोकसी (हिं॰ स्त्री॰) नारियलकी आधी खोपड़ी।

टोका (हिं॰ पु॰) उर्दकी फसलकी हानि पहुँचानेवाला एक कीड़ा।

टोट (हिं॰ पु॰) टोटा देखो।

टोटका (हिं॰ पु॰) १ तान्त्रिक प्रयोग, यंत्र मंत्र टोना, लटका। २ वह काली हाँडी जो खेतमें फसलको नजरसे बचानेके लिये रखी जाती है।

टोटकेहाई (हिं॰ स्त्री॰) जादू करनेवाली।

टोटल (अं॰ पु॰) जमा, ठीक, जोड़।

टोटा (हिं॰ पु॰) १ बाँसका खंड। २ मोमबत्तीका जलनेसे बचा हुआ टुकड़ा। ३ कारतूस। ४ एक प्रकारकी आतशबाजी। ५ घाटा, हानि, नुकसान। ६ अभाव, कमी।

टोडरमल—१ सम्राट् अकबरके सुनामप्रसिद्ध राजस्वसचिव और अन्यतम सेनापति। इनका जन्म १५२३ ई॰को अयोध्याके अन्तर्गत लाहरपुर नामक स्थानमें हुआ था। मासिर-उल-उमराके मतानुसार इनका जन्मस्थान लाहोरमें था। इनके पिताका नाम भगवतीदास था। इनकी थोड़ी अवस्थामें ही इनके पिताका देहान्त हुआ। माता अत्यन्त कष्टसे इनका पालन पोषण करने लगीं। पितृवियोगके कुछ समय बाद इन्होंने सम्राट्के निकट एक उपयुक्त कार्य पानेकी प्रार्थना की। सम्राट्ने इनके गुणग्रामसे संतुष्ट हो कर इन्हें एक मुहर्रिरके पद पर नियुक्त किया, परन्तु कार्यकौशलसे ये शीघ्रही उच्चपद पर प्रतिष्ठित हुए।

९७२ हिजरीमें जब सम्राट्ने खाँजमानके विरुद्ध युद्धयात्रा की तब टोडरमल सम्राट्के अधीन सैनिक विभागमें काम करते थे। सम्राट्के राजत्वके अठारहवें वर्ष अर्थात् १५७४ ई॰में गुजरातके अधिकृत होने पर वहांके भूपरिमाण निर्द्धारण और आभ्यन्तरीण बन्दोबस्त करनेके लिये टोडरमल ही नियुक्त हुए। इसके दूसरे वर्षमें पटनाके विजयकालमें इन्होंने अद्भुत क्षमता दिखलाई थी और सम्राट्के आदेशानुसार ये मुनिमखांके साथ बङ्गदेशको गये थे। इस समय बङ्गदेशमें दाऊदखां विद्रोही हो उठे थे। उनको दमन करनेके लिये ही मुनिमखां और टोडरमल वहां भेजे गये। युद्धमें टोडरमलने असीम उत्साह और विक्रम दिखलाते हुए विजय प्राप्त की। इस युद्धमें सेनापति खां आलम मारे गये तथा मुनिमखांका घोड़ा अत्यन्त भयभीत

हो कर उनको लिये हुए भाग चला। परन्तु टोडरमल इससे तनिक भी हतोत्साह न हुए, वरं आश्चर्य साहसके साथ शत्रुओंको पराजय किया। इसके बाद वे बङ्ग और उड़ीसाका शासन प्रबन्ध कर सम्राट्‌के दरबारमें आ पहुंचे। फिर भी इन्होंने खानजहानके सहकारी रूपमें माइनियको जा कर पठानोंको और दाऊदखांको पराजित किया। १५७५ ई०की ३री मार्चको मुगल मारोके युद्धमें भी टोडरमलने अपनी क्षमताका पूरा परिचय दिया था। जब टोडरमलने सुना कि दाऊदने सम्राट् अकबरका शासन अग्राह्य कर हरिपुर नामक स्थानमें सेनावास स्थापन किया है तो वे शीघ्र हो वर्द्धमानसे जितुआ परगनाको चल दिये। मुनीमखां वहां आ कर उनसे मिले। दाऊदने इच्छा की थी कि सम्राट्‌की सेना जिसमें उड़ीसा प्रवेश न कर सके वैसा ही कार्य करना चाहिए परन्तु इलियासखां लङ्गा नामक एक मुसलमानने सम्राट् सेनाको एक सहज रास्ता दिखला दिया था। इसी राहसे मुनीमखां गन्तव्य स्थानको जानेमें समर्थ हुए। लड़ाईमें दाऊद पराजित हो कर भाग गया। टोडरमल उसका पीछा करते हुए भद्रकको आ पहुंचे। दाऊद कटकके निकट सैन्य सञ्चय करके फिर भी लड़नेके लिए प्रस्तुत हुए। जब टोडरमलको यह खबर मिली तो उन्होंने मुनीमखांको शीघ्र ही उनसे मिलनेके लिए एक पत्र लिख भेजा। यथासमय मुनीम भी पहुंच गये। दोनोंकी सेना एकत्रित हो कर कटककी ओर चली गई। यहां पर दाऊदके साथ एक सन्धि हुई। १५७७ ई०में टोडरमल दूसरी बार गुजरातको भेजे गये। जब वे अहमदाबाद नामक स्थानमें वजीरखांके साथ सम्राट्‌के कार्यका प्रबन्ध कर रहे थे, तब मुजफ्फर हुसैनको उत्तेजनासे सारे अमीर गुजराती इनके विरुद्ध हो उठे। वजीरखांने टोडरमलको दुर्गमें आत्मरक्षण करनेका आदेश दिया। किन्तु टोडरमलने इस आदेशके अनुसार काम न करके अहमदाबादसे १२ कोस दूर धोल्का नामक स्थान पर जा कर विद्रोहियोंके परामर्शदाता और प्रधान सहायक मुजफ्फरको अच्छी तरह परास्त किया।

इसी बच, सम्राट्‌ने टोडरमलको वजीरके पद पर नियुक्त किया। इस समयसे ही राजा टोडरमल नामसे सम्मानित होने लगे।

जब सम्राट्‌को मालूम हुआ कि मुजफ्फरकी मृत्यु हो गई है, परन्तु विद्रोहियोंने बङ्ग और बिहार पर अधिकार जमा लिया है तो उन्होंने टोडरमल और सादिक खांको फतहपुर सिकरीसे बिहारको प्रस्थान करनेके लिये एक पत्र लिख भेजा। मुहिब अली और महम्मद मसूम खां उनको मदद देनेके लिये नियुक्त हुए। महम्मद मसूमखांने ३००० सुशिक्षित अश्वारोही सैन्य ले कर टोडरमलकी मददमें गये लेकिन इनके मनमें विद्रोहाग्नि धधकती थी। राजाने यह जान कर मसूमखांको किसी तरह अपने कब्जेमें रख लिया सही किन्तु यह सम्वाद इन्होंने सम्राट्‌को जता दिया।

बङ्गदेशके विद्रोहिगण मुङ्गेरके निकट एक किला स्थापन कर रहने लगे। राजा टोडरमलने अपने दुर्गमें विश्वासघातकताकी आशङ्का समझ कर सङ्कटावस्थामें युद्ध न करके मुङ्गेरके दुर्गमें आश्रय लिया। दुर्गके घेरे जानेके समय हुमायूं फरमिली और तरखानदिवाना नामक दो सेनापति विद्रोहियोंके साथ मिल गये। अधिक दिन अवरोध किये जाने पर दुर्गमें रसदका अभाव होने लगा। टोडरमल इससे तनिक भी चिन्तित न हो कर साहसके साथ दुर्गकी रक्षा करने लगे। शीघ्र राज्यकी सहायताके लिये बहुतसी सेनाएं आ पहुंची। विद्रोहिगण छिन्न भिन्न हो गये। मसूम काबुली दक्षिण बिहार और अरबबहादुर पटनाको ओर भाग गये। टोडरमल और सादिकखां मसूमका पीछा करते हुए बिहार पहुंचे। मसूम एक लड़ाईमें पराजित हो कर बङ्गालकी ओर भाग चले। इसी तरह टोडरमलने दक्षिण बिहारको दिल्ली साम्राज्यके अन्तर्गत कर लिया।

९८० हिजरीमें टोडरमल दीवानके पद पर नियुक्त हुए। इस वर्षमें इन्होंने राजस्वसम्बन्धमें एक नया नियम निकाला। इसी नये नियमके लिये राजा टोडरमलने ऐसी प्रसिद्धि लाभ की है। इस समय टोडरमलने मुद्रा सम्बन्धमें भी बहुत हेरफेर किया था। इन्होंने चार प्रकारकी मोहरें प्रचलित कीं। इन चार प्रकार

की मोहरोंके मूल्य भी चार प्रकारके थे जैसे - ४००) ३६०, ३५५, और ३५०) मूल्य। इस समय तीन प्रकार के रुपये भी प्रवर्त्तित हुए जिनका मूल्य क्रमशः ४०, ३९ और ३८) रखा गया था। पहले हिन्दू मोहरिर राजकीय हिसाव हिन्दी भाषामें लिखा करते थे। टोडरमलने नियम चलाया कि अबसे समस्त राजकार्य्य उर्दू भाषामें लिखे जांयगे। तभीसे वाध्य हो कर 'अर्थोपार्जनके लिए हिन्दूगण उर्दू भाषा सीखने लगे। मुसलमान ऐतिहासिकोंने स्वीकार किया है—टोडर मलसे ही उर्दू भाषाकी बहुत कुछ उन्नति हुई है।

एक क्षत्रिय बहुत दिनोंसे टोडरमलको अत्यन्त घृणा-दृष्टिसे देखता आ रहा था, यहां तक कि उसने एक बार इन्हें मार डालनेकी भी चेष्टा की थी। १५८५ ई०को एकदिन रात्रिकालमें उसने टोडरमल पर अस्त्राघात किया। सौभाग्यवस उस आघातसे टोडरमलका कोई विशेष अनिष्ट न हुआ। वह नराधम उसी समय पकड़ा गया और मार डाला गया।

युसुफजाइयोंको दमन करनेके लिए राजा वीरबल भेजे गये थे। परन्तु वे उन्हें वशीभूत तो क्या करते आप स्वयं उन लोगोंसे मार डाले गये। वीरबलकी मृत्युकी प्रतिहिंसा लेने और युसुफजाइयोंको सम्पूर्ण रूपसे वशीभूत करनेके लिये टोडरमल प्रधान सेनापति मानसिंहके साथ १५८८ ई०में भेजे गये। १५९० ई०में अकबर जब काश्मीरको पधारे थे, तब लाहोरकी रक्षाका भार राजा टोडरमल ही पर सौंपा गया था।

इस समय टोडरमल वृद्ध हो गये थे। तथा राजकीय कार्यके गुरुतर परिश्रमसे इनका शरीर क्रमशः दुर्वल होता जा रहा था। इसी लिए राजकार्यसे छुटकारा पा कर धर्मचर्चामें जीवनका अवशिष्ट काल बितानेके लिए इन्होंने सम्राट्से प्रार्थना की। लेकिन सम्राट्ने सम्मति तो दे दी, मगर बहुत अनिच्छासे। टोडरमल जब हरिद्वारमें रहते थे, तब सम्राट्ने इन्हें फिर बुला भेजा। टोडरकी आनेकी तनिक भी इच्छा न थी, किन्तु सम्राट्की आज्ञा पालन करनेके लिये ये आनेको वाध्य हुए। जो कुछ हो, इन्होंने ९९८ हिजरीमें गङ्गातीर पर प्राणत्याग किया।

राजा टोडरमलका चरित्र अत्यन्त महत् और उदार था। सम्राट् अकबरके शुभानुध्यायियोंमें टोडरमल भी प्रधान गिने जाते थे। इनकी कार्यदक्षताके प्रभावसे अकबरके राज्यमें बहुतसे सुनियम और सुश्रृङ्खला स्थापित हुई थीं। सम्राट्के प्रधान सभासदोंमें अबुलफजल और मानसिंह सरीखे राजा टोडरमलके नामसे कौन नहीं परिचित है? वे अपने गुणसे चार हजार सेनाओंके अधिपति हो गये थे। राजस्व-नियमके स्थापनके जैसा ये निपुण थे, वैसा इनका साहस भी असीम था।

अबुलफजल टोडरमलके कट्टर विद्वेषी थे। किन्तु जब वे सम्राट्के सामने टोडरमलकी शिकायत करते, तब सम्राट् उत्तर देते थे कि 'टोडरमल जैसे प्रभुभक्त और विश्वासी व्यक्तिको कदापि पृथक् नहीं कर सकते।' अन्तमें अबुलफजल भी राजा टोडरमलकी कार्यदक्षता, सत्यवादिता और साहसकी यथेष्ट प्रशंसा करने लगे थे एवं धर्मसम्बन्धमें अन्धविश्वासी कह कर उनकी निन्दा करते थे।

राजा टोडरमल एक कट्टर हिन्दू थे। वे प्रतिदिन नियमितरूपसे बहुतसी देवमूर्त्तियोंकी अर्चना करते तथा पूजादि किये बिना किसी कार्यमें हाथ नहीं डालते थे। सम्राट्के साथ पंजाब जाते समय एक दिन जल्दीमें उनकी एक देवमूर्त्ति कहीं गिर पड़ी; इस कारण उन्होंने कई दिन तक उपवास किया था, वे चिन्ताके मारे कुछ भी खाते पीते नहीं थे। अन्तमें सम्राट्ने अत्यन्त कष्टसे उनका मानसिक दुःख दूर किया।

पहले हिन्दूगण कर दिये बिना किसी तरहका धर्मानुष्ठान नहीं कर सकते थे। अकबरने राजा टोडरमलके आदेशसे उक्त कर तथा जिजिया कर सदाके लिये उठा दिया।

कर वसूल होनेका कोई निर्द्धारित नियम नहीं रहनेसे प्रजा और जमींदार दोनोंको अत्यन्त कष्ट झेलना पड़ता था। राजा टोडरमलकी सहायतासे अकबरने कृषिविषयमें नये नियम निकाले। प्राचीन हिन्दूरीतिके अनुसार अकबरके राजस्व नियम बनाये गये थे। पहले भूमिका परिमाण निर्णय कर, बाद जमीनसे जितनी

अर्जन उत्पन्न होगी उसके मूल्यका तीसरा भाग राजकर निर्धारित हुआ। पहले उत्तम प्रति वर्ष भूमिका परिमाण निरूपण करके उसे उपजके कर वसूल होने लगा। किन्तु इसमें प्रजाको बहुत कष्ट होता था। इसलिये पहलेमें न्याय वर्षके लिये प्रजाके साथ जमीन बन्दोबस्त कर दी गई। राजा टोडरमलको बहुत प्रयत्नसे इस तरहका नियम स्थापन करना पड़ा था। इस नियममें प्रजाको यथेष्ट सुविधा होती थी। आईन-इ-अकबरी आदि सभी इतिहासमें राजा टोडरमलका नाम परिचित है। राजस्व सम्बन्धी प्रबन्ध लिखे जो उनका नाम चिरस्मरणीय है। वे पवित्र कृष्णके थे। कोई कोई मूलमें इस [illegible] करते हैं किन्तु यथार्थमें उनका पूर्वनाम था।

इन्होंने ही हिन्दी भाषामें भागवतपुराणका अनुवाद किया था। फारसि भाषामें भी इनकी बहुतसी कविताएँ देखनेमें आती हैं।

राजा टोडरमलका नाम कोई कोई 'तारदमल' लिखा करते हैं। लेकिन टोडरानन्द नामक संस्कृत ग्रन्थमें 'टोडरमल' नाम देखा जाता है। टोडरमलने इस वृहद् संस्कृत ग्रन्थकी रचना की है। यह ग्रन्थ तीन खण्डोंमें विभक्त है—धर्मशास्त्र, ज्योतिष और वैद्यक। धर्मशास्त्रखण्ड भी फिर आचार काल और व्यवहार निर्णय इन भागोंमें विभक्त।

१ सम्राट् अकबरशाहके एक सभासद। इस समय वे बहुत प्रसिद्ध थे।

टोडरमल पण्डित—दिगम्बर जैन सम्प्रदायके सुप्रसिद्ध विद्वान् और ग्रन्थकार। इनको जाति खण्डेलवाल जैन और निवासस्थान जयपुर था। ये वि० सं० १८२४ तक विद्यमान थे। केवल २१ वर्षकी अवस्थामें वे इतना काम कर गये थे कि सुन कर आश्चर्य होता है। इनके समयमें जैन समाजका [illegible] ज्ञानका प्रचार हुआ [illegible] प्रकाशित होने लगा है। जहाँ धर्म सिद्धान्तकी चर्चा करना केवल संस्कृत या प्राकृतके विद्वानोंके हिस्सेमें था वहाँ आपकी कृपासे साधारण हिन्दी जाननेवाले लोग भी धर्मसम्बन्धीय विद्वान् बनने लगे। सुना जाता है कि जयपुर राज्यके दीवान अमरचन्दने इनको बाल्यकाल [illegible] देख कर इनके परिवारवर्गके निर्वाहका भार अपने ऊपर ले कर इनको "गोम्मटसार" नामक ग्रन्थको हिन्दी टीका रचनेके लिए बाध्य किया था। दीवान अमरचन्दने इनको इस तरहसे निश्चिन्त कर दिया था। जैन धर्मके ये असाधारण विद्वान् थे। इन्होंने प्रधान जैन ग्रन्थ गोम्मटसारकी विस्तृत टीका रची है जो छप भी चुकी है इसकी पृष्ठ संख्या लगभग १००० है। इसके साथ ही लब्धिसार क्षपणसारकी टीका रची है, जिसकी श्लोक संख्या ४१ हजार है। इन ग्रन्थोंमें जीव और कर्मसिद्धान्तका विस्तृत विवेचन है। इनका दूसरा ग्रन्थ त्रिलोकसारवचनिका है इसमें जैनमतके अनुसार भूगोल और खगोलका वर्णन है। इसकी श्लोकसंख्या लगभग १०।१२ हजार होगी। तीसरा ग्रन्थ गुणभद्राचार्यकृत संस्कृत आत्मानुशासनकी वचनिका (भाषा टीका) है। इसमें बहुत ही हृदयग्राही आध्यात्मिक उपदेश है। शेष दो ग्रन्थ अधूरे हैं—१ पुरुषार्थसिद्ध्युपाय हिन्दी वचनिका और २ मोक्षमार्ग प्रकाशक। इनमेंसे पहले ग्रन्थको तो पण्डित दौलतरामजी काशलीवालने पूर्ण किया था, परन्तु दूसरा ग्रन्थ मोक्षमार्गप्रकाशक अधूरा ही है। यह ग्रन्थ छप चुका है पृष्ठ ५०० हैं। यह ग्रन्थ उनका बिलकुल स्वतन्त्र है। इसके पढ़नेसे मालूम होता है कि यदि टोडरमल पूर्णायुष्य तक जीते, तो जैनसाहित्यको अनेक अपूर्व रत्नोंसे अलंकृत कर जाते। इनके ग्रन्थोंकी भाषा जयपुरके [illegible] हुए तमाम ग्रन्थोंसे सरल, शुद्ध और साफ है। इन्होंने ग्रन्थोंके मङ्गलाचरण आदिमें जो अपने पद्य दिये हैं, उनसे मालूम होता है कि, आप कविता भी अच्छी बना सकते थे।

टोडा (हिं० पु०) दीवारमें गड़ी हुई या टोंटी सी बढ़ी हुई काठकी सहारा देनेके लिये बनाया जाता है टोंटा।

टोडा—नीलगिरिकी एक पार्वत्य जाति। ये कुछ भैंसे [illegible] पालते और उनके दूधसे अपनी गुजर करते हैं। ये ही इनकी सम्पत्ति या जायदाद है। इनकी रहन सहन साधारण किसानोंकी भांति है, पर ये 'विलोहार' कामको बड़ा अपमान समझते हैं।

इनकी स्त्रियोंका [illegible] ईश्वर समझके इन्हीं [illegible] और देव विश्वास करना है। यूरोपियोंने आ कर इनमें ईसाईधर्मका प्रचार किया है; जैसा कि डा०

जे० मर्ट कहते हैं—"टोडा जाति दिनोदिन दुर्बल होती जाती है, जिसका कारण यूरोपीयों द्वारा प्रवर्तित कुत्सित व्याधि और अमितपान प्रथा है।" सचमुच ही वहिर्जगत्‌के संसर्गसे इस जातिको उपदंश रोगने घेर लिया है। बहुतोंका कहना है, कि टोडारमणियोंका चरित्र अत्यन्त हीन है; परन्तु यह बात यूरोपियोंके आवासस्थानके निकटवर्ती ग्राममें ही पाई जाती है, सर्वत्र नहीं।

वर्तमान समयमें टोडा लोग तामिल भाषा बोलते है। कोई कोई तामिल भाषा लिख भी सकते हैं। टोडा पुरुष साधारणतः हृष्टपुष्ट, ऊँची नाकवाले और मझोले कदके होते हैं। ये लोग लोहेकी गरम सींकसे कन्धे पर नाना प्रकारके चिह्न बनाते हैं। इनका विश्वास है कि ऐसा करनेसे महिष दोहनकार्य अच्छी तरह किया जा सकता है। गर्भवती स्त्रियाँ पांचवें मासमें हाथकी कलो पर चिह्न करती है। टोडा स्त्रियोंका सौन्दर्य बहुत थोड़े दिन रहता है। इसीलिए स्त्रियोंकी अपेक्षा पुरुष अधिकतर सुन्दर होते हैं। स्त्री-पुरुष सब सफेद कपड़े पहनते हैं। ऋतुमती स्त्रियोंके शरीर पर एक प्रकारका चिह्न रहता है।

टोडाओंके वासस्थानका नाम 'मागड' है। मागडमें छोटी छोटी मिट्टीकी कुटीर और गोशालाएँ रहती हैं। डा० विभर्सका अनुमान है कि टोडा मलवारकी किसी जातिकी शाखा हो सकती है। परन्तु इस अनुमानको कोई भित्ति नहीं है।

ये लोग महिषदलके साथ ग्रामसे ग्रामान्तरमें भ्रमण किया करते हैं। एक ग्रामकी शस्य-सम्पद जब निबट जाती है, तब इन्हें दूसरे ग्राममें जाना पड़ता है। महिषादि सम्पत्तिके ऊपर इनका निजस्व स्वत्व है। किन्तु जमीन तमाम ग्रामवासियोंके अधीन होती है, किसी एक व्यक्तिकी नहीं। जमीनको कोई बेच भी नहीं सकता।

टोडा लोग सामाजिक हिसावसे दो भागोंमें विभक्त हैं—एक देवलया और दूसरे तारसेरजहल। इन दोनों श्रेणियोंमें परस्पर विवाह नहीं होता। पहली श्रेणीमें पेकी लोग हैं, जो ब्राह्मणोंके समान समझे जाते हैं। और दूसरी श्रेणीमें पेकान, कुट्टान, केन्न और टोड़ी नामकी चार शाखाएँ हैं। कोई भी पेकी स्त्री तारसेरजहलके पास नहीं जा सकती, किन्तु तारसेरजहल स्त्रियाँ पेकियोंके पास जा सकती हैं। प्रथम रजोदर्शन होनेके बाद बालिकाओंका एक बलिष्ठ पुरुषसे संयोग कराया जाता है।

इनमें एक स्त्री कई पति ग्रहण कर सकती है। एक भाईकी स्त्रीके साथ अन्य भाई भी सहवास किया करते हैं। सन्तानका कौन पिता है, इस बातका निर्णय बड़ा कौतुकावह है। गर्भके सातवें मासमें एक उत्सव होता है, इसमें जो व्यक्ति गर्भवतीके हाथमें एक कृत्रिम धनुर्वाण देता है, वही गर्भस्थ सन्तानका पिता समझा जाता है। साधारणतः बड़ा भाई ही धनुर्वाण देता है। जब तक सब भाई एक साथ रहते है, तब तक सभी भाई बालकके पितृत्वका दावा रखते हैं; किन्तु जब एक ही स्त्रीके स्वामिगण विभिन्न वंशीय हो जाते है, तब धनुर्वाण प्रदान करनेवाला व्यक्ति, सिर्फ गर्भस्थ शिशुका ही नहीं बल्कि उसके बाद जितने भी बच्चे होंगे, सबका पिता माना जाता है। यदि समयान्तरमें अन्य कोई व्यक्ति गर्भिणीको धनुर्वाण प्रदान करे, तो वह व्यक्ति पिता समझा जायगा। टोडोंमें अब भी पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंकी संख्या कम है। इसलिए बहुतोंका अनुमान है कि ये लोग कन्याओंको सौवरमें ही मार डालते हैं। जिस तरह दो भाई मिल कर एक स्त्रीके साथ विवाह कर सकते हैं, उसी तरह चाहें तो वे बहुतसी स्त्रियोंका भी पाणिग्रहण कर सकते हैं।

इनका नाच बड़े अद्भुत ढंगका है। स्त्रियाँ नाचमें शामिल नहीं होतीं। सात आठ पुरुष एक दूसरेका हाथ पकड़े हुए गोल हो कर खड़े हो जाते हैं और फिर "ओ—हाऊ" "ओ—हाऊ" कह कर चिल्लाते और सब एक साथ तालसे पैर पटकते हुए घूमा करते हैं। यह इनका आनन्दोत्सव नहीं, बल्कि मृत्यूत्सव है। किसीके मरने पर ये मृत व्यक्तिको ले कर एक गाँवसे दूसरे गाँव जाते हैं और प्रत्येक ग्राममें ऊपर लिखे अनुसार मुरदेको घेर कर ईश्वरका नाम लेते हैं। ग्रामकी प्रदक्षिणा समाप्त होने पर मुरदा गाँवमें लाया जाता है और सम्पूर्ण तैजस अलङ्कारादिके साथ घरमें ही

उसकी दाहक्रिया होती है। फिलहाल इस प्रथामें कुछ परिवर्तन हो गया है। अब कुटुम्ब और कुम्हादि मुर्देके साथ भस्मीभूत नहीं की जाती बल्कि उसके बनानेके लिये एक न्यारी कुटुम्ब बनाई जाती है। सब मिल कर जो टो एक लेखपत्र देते हैं, मात्र अभी मुर्देके साथ जलाया जाता है। शवदाहके बाद युवक लोग मिल कर ८।१० मछलियोंको मारते हैं और स्त्रियाँ उन्हें रांध कर देती हैं। इनमें स्त्रियाँ नाचती नहीं और पुरुष गाते नहीं। ये मांस-मछली कुछ नहीं खाते और इसीलिए मनुष्य-लोकके लिये उनका वध भी नहीं करते।

इस धर्मकर्मके सिवा इनमें और कोई भी उत्सव नहीं होता। और तो क्या विवाहमें भी कोई उत्सव नहीं होता। पितामाता मिल कर निश्चय कर लेते हैं कि हम अपनी कन्याका ब्याह तुम्हारे पुत्रके साथ करेंगे। बस, इसके बाद किसी दिन कन्या स्वामीके घर आ कर रहने लगती है। इनमें लड़कोंका ब्याह १।७ वर्षकी उम्रमें और लड़कियोंका ८।१० वर्षकी उम्रमें होता है।

टोडा भीम—राजपूतानेके जयपुर राज्यके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २६ ५५ उ० और देशा० ७६ ४८ पू०के मध्य जयपुर नगरसे ६२ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६६२८ है। नगरमें केवल ८ स्कूल हैं।

टोड़ी (हि० स्त्री०) १ रागिनीका एक भेद। इसके गानेका समय १० दण्डसे १६ दण्ड तक है। इसका आलाप इस प्रकार है—स रे ग म प ध नि स स नि ध प म ग ग म रे स। रे म नि ध नि ध ध नि स रे नि रे स नि ध। प म ग म म रे ग रे स रे नि स नि ध स रे ग म प ध ध प। म ग म ग रे स नि स रे रे स नि ध ध ध नि स। हनुमत्‌के मतानुसार इसका आलाप यह है—स प ध नि स रे स स अथवा स रे स स प ध नि स। इसे मध्यम जातिकी रागिनी मानते हैं। इसमें शुद्ध मध्यम और तीव्र मध्यमके सिवा और सब स्वर कोमल होते हैं। यह भैरव रागकी स्त्री है। इसका रूप इस प्रकार है—हाथमें वीणा लिये हुए पियके विरहमें गाती है। शरीर पर सफेद वस्त्र है और चीव बहुत सुन्दर है। २ चार मात्राओंका एक ताल। इसमें २ आघात और २ खाली रहते हैं। इसका तबलेका बोल यों है—

+ ० ३ ० +
धिन्, ता गिदिन, तिरकिट, गिदिन, धा।

+ ० ० ० +
अथवा धेंटा, धेंटे धेटा धेटे धा।

टोनहाई (हि० स्त्री०) १ जादू चलानेवाली स्त्री, नजर लगानेवाली। २ जो स्त्री मन्त्र और झाड़ फूँक करती है।

टोनहाया (हि० पु०) वह मनुष्य जो टोना करता हो, जादू करनेवाला आदमी।

टोना (हि० पु०) १ मन्त्र तन्त्रका प्रयोग, जादू। २ विवाहके अवसरमें गाये जानेका एक गीत। ३ एक शिकारी चिड़िया।

टोनाहाई (हि० स्त्री) टोनहाई देखो।

टोप (हि० पु०) १ बड़ी टोपी सिरका बड़ा पहनावा। २ सिपाही लोगोंकी वह टोपी जो लड़ाईके समय सिरकी रक्षाके लिये पहनी जाती है, खोद, कूड़। ३ खोल, गिलाफ। ४ अंगुश्ताना, उंगली पर पहिननेकी लोहे या पीतलकी एक टोपी। इसे दरजी लोग सीते समय एक उंगलीमें पहन लेते हैं।

टोपन (हि० पु०) टोकरा।

टोपा (हि० पु०) बड़ी टोपी।

टोपी (हि० स्त्री०) १ मस्तक आच्छादन वस्तु सिर परका पहनावा। २ राजमुकुट, ताज। ३ कोई गोल वस्तु जिसका आकार गोल और गहरा हो, कटोरी। ४ बन्दूकका पड़ाका। ५ शिकारी जानवरके मुंह पर चढ़ाई जानेकी थैली। ६ लिङ्गका अगला भाग, सुपारा।

टोपीदार (हि० वि०) टोपी लगी हुई।

टोपीवाला (हि० पु०) १ टोपी पहना हुआ आदमी। २ अहमदशाह और नादिरशाहकी सेनाके सिपाही। ये लाल टोपियां पहन कर भारतवर्ष आये थे और टोपीवाले कहलाते थे। ३ अंगरेज या यूरोपियन जो हट (hat) लगाते हैं।

टोर (हि० स्त्री०) सनकी अलसीको काम कर निकाल लेने पर बचा हुआ जौरेकी मडीका पानी। इसे फिर उबाल और छान कर शोरा निकाला जाता है।

टोरा (हिं० पु०) वह तराजू जिससे जुलाहे सूत तौलते हैं।

टोरी (हिं० पु०) अरहरका छिलके सहित खड़ा दाना जो तैयार की हुई दालमें रह जाती है।

टोल—१ चतुष्पाठी, संस्कृत विद्याशिक्षाका स्थान। यदि कोई जीवनकी उन्नति करनी चाहे तो सबसे पहले विद्या-शिक्षाकी आवश्यकता है। जिस समाजके मनुष्य जितने ही शिक्षित हैं, वे उतनी ही संसार और आत्माको उन्नति कर सकते हैं। एकमात्र विद्याशिक्षा ही सब प्रकारकी उन्नतिका मूल है। प्रत्येक सभ्य जातिके मनुष्योंमें विद्याशिक्षाकी व्यवस्था एक न एक प्रकारकी निर्धारित है। हम लोगोंके देशमें भी विद्याशिक्षाका स्थान टोल है। कबसे यह टोल-प्रथा प्रचलित हुई है, उसका निर्णय करना अत्यन्त कठिन है। किन्तु थोड़ी विवेचना कर देखनेसे स्पष्ट ही अनुमान किया जाता है, कि यह ब्रह्मचर्यका अंशमात्र है। जबसे हम लोगोंके देशमें ब्रह्मचर्यप्रथा बिलकुल अस्तमित हो गई है, तभीसे यह टोल प्रथा प्रवर्त्तित हो गई है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। ब्रह्मचर्यके अभावसे ही हम लोगोंके देशमें प्रकृत शिक्षा और उन्नतिका अभाव हो गया है।

पूर्व समयमें तीनों वर्णके बालक किस तरह गुरुगृहमें रह कर विद्यार्जन करते थे, इस विषयको स्थिर करनेमें ब्रह्मचर्यके विषयकी आलोचना करनी आवश्यक है।

भारतमें जब हिन्दूधर्मका पूर्ण विकाश तथा वर्णाश्रमविभाग था, तब गुरु और विद्यार्थी किस प्रकार परिचालित होते थे, उसीको देखना चाहिये।

तीनों वर्णके बालक उपनयनके बाद गुरुगृहमें आ कर रहते थे। उपनयनकाल ब्राह्मणका आठ, क्षत्रियका ग्यारह और वैश्यका बारह वर्ष निर्दिष्ट था। यथासमय बालकगण उपनीत हो कर पितामाता और आत्मीय स्वजनोंसे कुछ कुछ भिक्षा ले गुरुगृहमें जाते थे। गुरुगृहमें वे कौनसी शिक्षा प्राप्त करते थे तथा किस आदर्शसे उनका हृदय संगठित होता था, उसके विषयमें मनुने यों कहा है—

"उपनीय गुरुः शिष्यं शिक्षयेच्छौचमादितः।
आचारमग्निकार्यञ्च सन्ध्योपासनमेव च॥" (मनु २।६९)

गुरु उपनयनके बाद शिष्यको सबसे पहले शौच, आचार, अग्निकार्य और सन्ध्योपासनाकी शिक्षा दें।

बालकका हृदय नवनीतकी नाईं सुकोमल है। लड़कपनसे वह जिस भावमें परिचालित किया जायगा युवावस्थामें भी वह उसी भाव गठित होगा तथा उसीके अनुसार कार्य-प्रणाली जीवनके भावि-शुभाशुभ उत्पन्न करेगी। इसी अवस्थामें बालकको विशेष सावधानीसे विद्या शिक्षा देनी आवश्यक है। केवल बहुतसी पुस्तकोंको कण्ठस्थ कर लेनेका नाम विद्याशिक्षा नहीं है। जिस विद्याके पढ़नेसे मनुष्य देवभाव धारण कर लें और अशेष गुणराशिके आधार हो जावें वही प्रकृत विद्या-शिक्षा है। गुरु लोग वही शिक्षा छात्रको देते थे। वे जानते थे, कि छात्रोंके अन्तःकरणको निर्मल नहीं करानेसे आन्तर और बाह्यविषयका पूर्ण प्रतिविम्ब उस पर नहीं पड़ सकता और विशुद्ध सत्वका स्फुरण नहीं होनेसे उसमें ज्ञानात्मिका वृत्ति उत्पन्न नहीं हो सकती है। इसी कारण ज्ञानोपदेशके पहले मानसिक निर्मलता आवश्यक है। यह निर्मलता एकमात्र शौचके अधीन है। शौच भी दो तरहका है, बाह्य और आन्तर। मृदादि द्वारा बाह्य शौच और मानसिक मलशुद्धि आन्तर-शौच है। वे दोनों प्रकारके शौच सम्पन्न हो जानेसे हृदयमें ज्ञानज्योतिका विकाश होता है। इसी कारण आर्य ऋषिगण वेदाध्ययनके पहलेही शौचशिक्षा देते थे। अभी उस शिक्षाका कैसा दुर्दिन हो आया है। शिक्षक वा छात्र शौच किसे कहते हैं, वह भी नहीं जानते तथा जाननेकी कोशिश भी नहीं करते हैं। शौचशिक्षाके समाप्त होने पर आर्य ऋषिगण आचार शिक्षा देते थे। गुरुके प्रति शिष्यका कैसा व्यवहार होना चाहिये तथा इस अवस्थामें किस द्रव्यकी सेवा और किस विषयका परित्याग करना चाहिये इसी विषयकी शिक्षाका नाम आचारशिक्षा है।

ब्रह्मचारीको समावर्तनकाल तक निम्नोक्त विधि और निषेधका पालन करना चाहिये।

विधि। पहले इन्द्रियजय, प्रतिदिन जल, पुष्प, गोमय (गोबर), कुश, समिध आदि आहरण, सद् ब्राह्मणोंके घरसे माधुकरी वृत्तिके अनुसार भिक्षासंग्रह, स्नान,

देवता ऋषि और पितृतर्पण, देवताओंकी पूजा, सन्ध्या वन्दन, साय प्रातर्होम, वेदपाठ, गुरुके निकट सब प्रकारकी विनति, गुरुके प्रति पितृवत् भक्ति, गुरुका प्रसन्नतासाधन, गुरुजनके प्रति सम्मान।

निषेध—मधु, मांस, गन्ध, माल्य, विविध रसास्वाद, स्त्री-प्राणिहिंसा, सर्वाङ्गमें तैलमर्दन, दिनमें शयन, चर्मपादुका और छत्रव्यवहार, विषयाभिलाष, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोक, नृत्य, गीत, वाद्य, अक्षादिक्रीड़ा (पासा), लोगोंके साथ वृथा कलह, दुर्वाक्य प्रयोग, दूसरे पर दोषारोपण, मिथ्याकथन, मन्द अभिप्राय, स्त्रियोंको अवलोकन वा आलिङ्गन, दूसरेका अनिष्टाचरण और केवल एक बार दिनमें और एक बार रात्रिमें भोजन। इन विधि और निषेधात्मक यमनियम पालन कर ब्रह्मचारीको जितेन्द्रिय हो कर वेदादि शास्त्र पढ़ना चाहिये। भारतवर्षके विद्यार्थीको विद्याकोश होनेका उपयोगी बनाना आचारका मुख्य प्रयोजन है।

प्राचीन कालमें जो ऋषि जितने शिष्य पढ़ाते थे वे उतने ही प्रधान गिने जाते थे। छात्रोंकी संख्याके अनुसार उनको भी उपाधि रहता था। इसी उपाधिसे ही जितने शिष्योंको पढ़ाते हैं, यह साफ साफ मालूम हो जाता था। इसी लिये कण्वादि ऋषि कुलपति कहे जाते थे—

"मुनीनां दशसाहस्रं योऽन्नदानादिपोषणात्।
अध्यापयति विप्रर्षिरसौ कुलपतिः स्मृतः॥" (मनु०)

जो दश हजार मुनिको अन्नादि द्वारा पालन कर पढ़ाते थे, उन्हें कुलपतिकी उपाधि मिलती थी। उस समय प्रत्येक ऋषि अपने सामर्थ्यके अनुसार शिष्योंको रखते और उन्हें पढ़ाते थे। क्रमसे नियमपूर्वक ब्रह्मचर्यकी प्रथा अदृश्य हो गई किन्तु शिक्षाका भार पहलेकी नाईं ब्राह्मणोंके हाथमें हो रहा, तभीसे प्रकृत शिक्षाका लोप हो गया है। अभी उपनयनके बाद तीनों वर्णके बालक गुरुगृहमें जा कर अध्ययन समाप्त करके ही घरको लौट आने लगे हैं, अब कोई कठिन नियम कायम न रहा, अवनतिका सूत्रपात आरम्भ हो गया। इस समय अब केवल एक ही नियम रह गया है। अभी इस लोगोंके देशमें जो टोल प्रथाको प्रचलित है, उनमें गुरु सामर्थ्यानुसार कर एक छात्रको आहारादि दे कर विद्या सिखाते हैं किन्तु पहलेकी नाईं आचारादिकी शिक्षा कुछ भी नहीं दी जाती है। आजकल विजातीय शिक्षाके प्रभावसे इस तरहकी प्रथा प्रायः लोपसी हो गई है। पहले ऐसा कोई ग्राम नहीं था, जहां १।४ टोल न रहे। अभी १०।१५ ग्रामोंमें अनुसन्धान करने पर एक आध टोल देखनेमें आता है वह भी विकृतभावमें परिचालित है। वर्त्तमान समयमें टोलकी ऐसी दुरवस्था देख कर पहलेकी तरह जिसमें वह प्रथा अब भी प्रचलित रहे इसके लिये गवर्मेण्टने अध्यापक और छात्रको वृत्ति देनेकी व्यवस्था कर दी है। देशके धनी और ज्ञानियोंमें भी कोई कोई टोल कायम कर पहलेकी नाईं जिसमें प्रकृत शिक्षा प्रचलित हो उसके लिये यत्नवान् हुए हैं। आजकल भारतवर्षके कई देशोंमें टोल संस्थापित हुआ है। किन्तु शिक्षाप्रथाको विजातीय नियमानुसार चलाई जाती है पहलेकी नाईं कुछ भी नहीं है। इस लोगोंके देशमें जैसी शिक्षा-प्रथाको प्रचलित थी और जो कुछ रह भी गई है उससे मालूम होता है कि किसी दूसरी सभ्यजातिमें ऐसी प्रथा प्रचलित नहीं है। बिना अर्थकी सहायताके कोई बालक शास्त्रवित् पण्डित् हो जावे, ऐसी प्रथा किसी जातिमें न थी और न है। इस भारतका वर्त्तमान हित हो जानेसे इस तरहका सुन्दर नियम विलुप्त हो गया है। कोई कोई जातियोंमें जिस तरह इस प्रथाको आदर देखा जाता है, उससे बहुत जल्द इसकी उन्नति होनेकी सम्भावना है।

२ कुटीर, झोपड़ी।

टोल (हिं० स्त्री०) १ मण्डली, समूह, जत्था। (पु०) २ सम्पूर्ण जातिका एक राग। इसके गानेका समय २५ दण्डसे ले कर २८ दण्ड तक है।

टोल (अ० पु०) महसूल, चुंगी।

टोला (हिं० पु०) १ महल्ला, बड़ी बस्तीका एक भाग। २ उंगलीको मोड़ कर पीछे निकली हुई हड्डीसे मारनेकी क्रिया, ठूंग। ३ पत्थर या ईंटका टुकड़ा, रोड़ा। ४ बेंत आदिकी चोटका पड़ा हुआ चिह्न। ५ बड़ी कौड़ी, कोड़ा, टग्गा। ६ गुल्ली पर डण्डेकी चोट।

टोलिया (हिं० स्त्री०) टोली, छोटा महल्ला।

टोली (हिं० स्त्री०) १ वस्तीका छोटा भाग। २ समूह, झुण्ड, जत्था, मण्डली। ३ पत्थरकी चौकोर पटिया, सिल। ४ पूर्वीय हिमालय सिकिम और आसाममें मिलनेवाला एक प्रकारका बाँस। यह बाँस कुछ कुछ पेड़ोंसे मिलता जुलता है। इसके बड़े बड़े मजबूत टोकरे बनते हैं। इससे अच्छी अच्छी चटाइयाँ भी बनाई जाती हैं। इसका दूसरा नाम नाल और पकौक है।

टोली धनवा (हिं० पु०) एक प्रकारकी घास जो धानकी तरह होती है। इसके पत्ते बहुत नरम होते और इन्हें चावसे खाते हैं। कहीं कहीं गरीब मनुष्य इसके सबेरो दाने भी खाते हैं।

टोवा (हिं० पु०) पानीकी गहराई नापनेवाला माझी। यह हमेशा गलही पर बैठा रहता है।

टोह (हिं० स्त्री०) १ अन्वेषण, खोज, ढूँढ़, तलाश। २ देखभाल, खबर।

टोहना (हिं० क्रि०) अन्वेषण करना, तलाश करना, खोजना, पता लगाना।

टोहाटाई (हिं० स्त्री०) १ अन्वेषण तलाश, ढूँढ, छान-बीन। २ देखभाल, खबर।

टोहिया (हिं० वि०) १ अन्वेषण करनेवाला, ढूँढ़ने-वाला। २ जासूस, भेदिया।

टोही (हिं० वि०) अन्वेषण करनेवाला, ढूँढनेवाला, पता लगानेवाला।

टौंस (हिं० स्त्री०) एक नदी। तमसा देखो।

टौनहाल (हिं० पु०) टाउनहाल देखो।

ट्रङ्क (अं० पु०) लोहेका सफरी सन्दूक।

ट्रम्प (अं० पु०) ताशके खेलका एक रङ्ग। यह दूसरे रङ्गोंके बड़ेसे बड़े पत्तेको काटनेके लिये मान लिया जाता है, तुरुपका रङ्ग। २ ट्रम्पका खेल।

ट्राइटस्के—सुप्रसिद्ध जर्मन राजनीतिविद् और ऐतिहा-सिक। जिन चिन्ता वीरोंकी युक्ति, तर्क और उत्तेजनाके फलसे वर्तमान जर्मनजातिके हृदयमें विजिगीषा और रण-लिप्साका सञ्चार हुआ था, उनमें ट्राइटस्केको अन्य-तम समझना चाहिए। इतिहासके अध्यापक, प्रजा-सभा-के प्रतिनिधि और संवादपत्रोंके लेखक बन कर आप दीर्घकाल तक जर्मनोंको जातीयता और उसके लिए दिग्विजय-साधनके अवश्य कर्तव्यताका प्रचार कर गये हैं।

१८३४ ई०में, ड्रेसडेन नगरमें ट्राइटस्केका जन्म हुआ था। बाल्यकालमें ही आपके चरित्रमें विशेषत्व लक्षित हुआ था। चार वर्षकी अवस्थामें विद्यारम्भके समय ही आपकी ज्ञानार्जनकी क्षमताका यथेष्ट विकाश हुआ था। आठ वर्षकी उम्रमें आप विद्यालयमें भरती किये गये। थोड़े ही दिनोंमें आप सहपाठियोंमें सर्वश्रेष्ठ छात्र गिने जाने लगे। थोड़ी ही उम्रमें इन्हें रणरङ्गका शौक हो गया। आपने बड़े आग्रहसे ग्रीक भाषा सीखी। आप अपने पिताके युद्धवेशमें सज्जित हो कर होमर-वर्णित युद्धोंका पुनः पुनः अभिनय किया करते थे। बारह वर्ष-की उमरमें आप ड्रेसडेनके उच्च विद्यालयमें प्रविष्ट हुए और शीघ्र ही सहपाठियोंमें प्रधान हो गये। सत्रह वर्ष-की अवस्थामें आप योग्यताके साथ वहांकी अन्तिम परीक्षा उत्तीर्ण हो गये। यहां पढ़ते समय ही आपके हृदयमें अपरिमेय देशभक्ति जाग्रत हो गई। विद्यालय छोड़ते समय पुरस्कार-वितरण-सभामें आपने स्वरचित एक कविता पढ़ी थी, जिसमें जातीय सम्मानकी रक्षाके लिए वैर-साधनद्वारा मनुष्यत्व प्राप्त करनेके लिए समग्र जर्मन जातिको प्रस्तुत रहनेके लिए उत्साहित किया था।

इसके बाद उच्चशिक्षा प्राप्त करनेके लिए पहले आप Bonn विश्वविद्यालयमें प्रविष्ट हुए और वहांके प्रसिद्ध इतिहास अध्यापक Dahlmann के साथ आपका विशेष परिचय हो गया। जर्मन-साम्राज्यकी प्रतिष्ठा उस समय भी भविष्यके गर्भमें थी। प्रसिद्ध जर्मन राजनीतिज्ञ डल-मान इनके गुरु थे। उन्होंने जर्मनोंकी एकताके सूत्रमें आबद्ध हो कर जातीय संगठनके लिए इन्हें उत्साहित किया। इस समय आपकी कर्णपीड़ा द्विगुणित थी, इस लिए अध्यापकोंकी बहुतसी वक्तृताएं आपके कर्ण-गोचर न हुईं। बोन् विश्वविद्यालयसे आप लीपजिकके विश्वविद्यालयमें गये। परन्तु कुछ दिन रह कर आप फिर बोन् लौट आये और व्यवहारशास्त्र, राष्ट्रीय इतिहास आदिका अध्ययन करने लगे। इसी समय आपको Rochon प्रणीत ग्रन्थके "राष्ट्रभक्ति ही नामान्तर है"

ऐसे मतसे परिचय हुआ। आपका भी ऐसा ही मत था। १८५४ ई०में जब कि आप बीस वर्षके युवक थे लीपजिग विश्वविद्यालयसे डाक्टरकी उपाधि प्राप्त हुई। इसके बाद आप अध्यापकपदकी आशासे गटिनबर्ग पहुंचे। यहां आपने अरचित दो कवितापत्र प्रकाशित किये। इसमें भी जर्मनजातिकी एकताके लिए उत्तेजना दी गई थी। अनन्तर आप लीपजिगके अध्यापक हुये और इसी कार्यमें आपने जीवन बिता दिया।

आपने अध्यापकके आसनसे ही जर्मनीके एकछत्र साम्राज्य स्थापनका प्रचार किया था। १८६३ ई०में आपको बेडेन राज्यके अन्तर्गत फ्राइबर्ग-विश्वविद्यालयमें अतिरिक्त अध्यापकका पद मिला। प्रुशिया-आस्ट्रिया युद्धके समय आपने अपना ऐसा मत प्रचारित किया था, कि उक्त दोनों राज्य प्रुशियामें मिला दिये जाय और इन नीचे छोटे छोटे राज्योंका विलोप कर साम्राज्य का गठन किया जाय। इस पर आपको विद्यार्थियोंने आपका मुँह तक देखना छोड़ दिया। जब बादेनवासी आस्ट्रियाके साथ मिल गये तब आप अध्यापकी से इस्तीफा दे कर एक संवादपत्रका सम्पादन करने लगे।

१८६७ ई०में आपको कील-विश्वविद्यालयमें अध्यापक नियुक्त हुए। पीछे आप हाइडेलबर्गमें अध्यापक हुए। यहां आपने फ्रांको-प्रुशियाके युद्धके समय छात्रोंको उत्साहित किया था। १८७१ ई०में आप जर्मन रेखस्टाग नामक महासभाके प्रतिनिधि निर्वाचित हुए और बहुत सम्मान पाया। १८७९ ई०में, लगातार अठारह वर्ष तक परिश्रम करनेके बाद आपने "उन्नीसवीं शताब्दीका जर्मन-इतिहास"का प्रथम खण्ड प्रकाशित किया। इसका पांचवां खण्ड १८९४ ई० में निकला था। छठा खण्ड लिखते लिखते आप बीमार पड़ गये और १८९६ ई०को अप्रैल मासमें आपका देहान्त हो गया।

ट्राम (अ० की०) बड़े बड़े नगरोंमें एक प्रकारकी लम्बी गाड़ी जो लोहेकी बिछी हुई पटरी पर चलती है। इसका आविष्कार सबसे पहले इंगलैण्डमें १८६० ई०को हुआ था। अब यह भारतवर्ष तथा दूसरे दूसरे देशोंके बड़े नगरोंकी हर एक गलीमें चलने लगी है। यह बहुत कुछ रेलगाड़ीसे मिलती जुलती है। किन्तु दोनोंमें फर्क यही है, कि रेलगाड़ी वाष्प द्वारा चलती और ट्रामगाड़ी बिजलीके जोरसे चलाई जाती है। पहले इसमें घोड़े जुतते थे, अब केवल बिजलीके द्वारा बहुत वेगसे अर्थात् घण्टेमें २० से २५ मीलके हिसाबसे चलती है। बिजली पहले डायनेमोसे बनती है। इसी डायनेमोमें विद्युत्‌की शक्ति भरनेके लिये तार लगे रहते हैं। हरएक ट्रामके अगले कमरेमें ह्वील रहती है। यही ह्वील ऊपरके विद्युत्-तारसे लगी रहती है। बिजलीका तार लगनेसेही गाड़ी आपसे आप चलने लगती है। इसमें किसी प्रकारकी कल नहीं है केवल विद्युत्‌के प्रवाहको यथारीति करनेके लिये गाड़ीके अगले कमरेमें एक चक्का लगा रहता है। इसी चक्केको घुमानेसे गाड़ी विद्युत् शक्तिके बलसे चलती है। हरएक गाड़ीमें फर्स्ट और सेकेण्ड क्लासके दो डब्बे रहते हैं। हरएक डब्बेमें टिकट बाँटनेके लिये एक एक कर्मचारी रहता जिसे कण्डक्टर (Conductor) कहते हैं। इसके सिवा गाड़ी चलानेके लिये एक ड्राइवर रहता है। रेलगाड़ीकी तरह इसका स्टेशन दूर दूरमें नहीं रहता है। जहां कहीं दस पांच आदमी एक जगह खड़े रहते उसी जगह पर ठहर जाती है। हरएक डब्बेमें पचास साठ आदमीसे कम नहीं बैठते हैं। इसमें कभी कभी जोखम नष्ट होनेका भी डर रहता है। बिजलीकी शक्ति अधिक पड़ने अथवा और दूसरे कारणोंसे इसमें आग लगती देखा गया है और जब विद्युत्‌का प्रवाह कुछ भी न रहता तथा तारमें लगी हुई ह्वील उससे अलग हो जाती है, तो कभी कभी यह अपनी लाइनसे हट कर जमीन पर गिर जाती है। भारतवर्षमें यह प्रायः विद्युत्‌तारोंमें लगी हुई ह्वीलोंके द्वाराही चलती है, किन्तु यूरोप आदि देशोंमें विद्युत्-प्रवाहकी जमीनके भीतर अथवा ऊपर हो कर एक नली बनी गई है जिसे ओपन कण्डुइट (open conduit) कहते हैं। यह हरएक गाड़ीमें संयुक्त रहती है। एक शहरमें केवल एक ही ट्रामगाड़ी नहीं रहती वरन् अनेक लाइनें और सड़कोंके लिये कई एक निश्चित की हुई रहती हैं। जब ट्रामगाड़ी नहीं थी, तब बड़े बड़े शहरमें घूमने फिरने तथा कहीं

जाने आनेमें बहुत असुविधा होती थी और मार्गमें भी बहुत खर्च भी करने पड़ते थे, किन्तु जबसे इसका आविष्कार हो गया है, तबसे बहुत थोड़े समयमें अर्थात् कुछ आने पैसेमें ही क्या गरीब क्या अमीर सभी दो चार कोस तक आसानीसे चले जाते हैं। रेलगाड़ीकी नाईं इसमें कोई निश्चित समय नहीं रहता, वरन् हर एक सड़क और गलीमें जब और जिस स्थान पर इच्छा होती, उसी जगह इस पर चढ़ कर आनन्द लूटते हैं। आजकल यह भारतवर्षके बड़े बड़े देशोंमें चलने लगा है, यथा—मन्द्राज, राजपूताना, बरकल, चट्टग्राम, पञ्जाब, बम्बई प्रदेश, बम्बई शहर, बरमा, कलकत्ता, कानपुर, मध्यप्रदेश, त्रिचनापल्ली, कोचिन, धौलपुर, धोराजी, काठियावाड़, जयपुर, जोधपुर, करांची, कलाबा इत्यादि।

ट्रेडमार्क (अं० पु०) बने या बेचे हुए माल पर लगाये जानेका चिह्न, छाप।

ट्रेडिल मशीन (अं० स्त्री०) एक प्रकारकी छोटी कल। इसको एक ही आदमी पैरसे चलाता और हाथसे उसमें कागज रखता जाता है। इसमें फोटोकी तस्वीरें बहुत स्पष्ट और उत्तम छपता है और काम बहुत जल्दीसे होता जाता है।

ट्रेन (अं० स्त्री०) १ रेलगाड़ीमें लगी हुई गाड़ियोंकी पंक्ति। २ रेलगाड़ी।

ठ

ठ—संस्कृत और हिन्दी वर्णमालाका तेरहवां अक्षर, टवर्गका द्वितीय वर्ण। इसका उच्चारणस्थान मूर्द्धा है। अर्द्धमात्रा समयमें इस वर्णका उच्चारण होता है। इसके उच्चारणमें आभ्यन्तरप्रयत्न, जिह्वा-मध्य द्वारा मूर्द्धस्थान स्पर्श और बाह्यप्रयत्न, विवार, श्वास, अघोष और महाप्राण है। मातृकान्यासमें दक्षिण जानुमें न्यास करना होता है। इसको लिखन-प्रणाली इस प्रकार है—"ठ"। इस ठकारमें सूर्य, चन्द्र और अग्नि सर्वदा अवस्थान करते हैं।

इस वर्णकी अधिष्ठात्री देवीका ध्यान करके इस वर्णका दश बार जप करनेसे साधक शीघ्र ही सम्राट नाम कर सकता है। इसका ध्यान—

"ध्यानमस्य प्रवक्ष्यामि शृणुष्व कमलानने।
पूर्णचन्द्रप्रभां देवीं विकचपङ्कजेक्षणाम्॥
सुन्दरीं षोडशभुजां धर्मकामार्थमोक्षदाम्।
एवं ध्यात्वा ब्रह्मरूपां तन्मन्त्रं दशधा जपेत्॥" (वर्णोद्धारतन्त्र)

यह देवी पूर्णचन्द्रकी भाँति प्रभासे युक्त, प्रस्फुटित पद्मकी तरह नयनोंवाली, सुन्दरी, षोडशभुजा और धर्म काम अर्थ मोक्षदायिनी है।

कामधेनुतन्त्रमें इनका स्वरूप इस प्रकार लिखा है—यह मोहनरूपिणी कुण्डली, पीतविद्युल्लताकार, त्रिगुणयुक्त, पञ्चदेवात्मक, पञ्चप्राणमय त्रिविन्दु और त्रिशक्तियुक्त।

इसके ३१ वाचक शब्द हैं—शून्य मञ्जरी, बीज, पलिनी, लाङ्गली, अक्षा, धनज, नन्दन, जिह्वा, सुनन्द, पूर्णक, सुधा, वर्त्तुल, कुन्तल, वह्नि, अमृत, चन्द्रमण्डल, दधिजा, अनुभाव, देवभक्त, बृहद्ध्वनि, एकपाद, विभूति, ललाट, सर्वमित्र, वृषघ्न, नलिनी, विष्णु, महेश, ग्रामणी और शशी। (नानातन्त्र) काव्यके प्रारम्भमें इसका प्रयोग करनेसे दुःख होता है। पद्यके आदिमें इस शब्दका विन्यास करनेसे शोभा होती है। (वृत्त० र० टी०)

ठ (सं० पु०) ठ-पृषोदरादि० साधु, वा ठयते ठौ बाहुल कात् ड। १ शिव महादेव। २ महाध्वनि। ३ चन्द्रमण्डल। ४ मण्डल। ५ शून्य। ६ लोकगोचर, इन्द्रियग्राह्य वस्तु।

ठंठ (हिं० वि०) जिसकी डाल और पत्तियाँ सूख कर या और किसी प्रकारसे गिर गई हों, ठूँठा, सूखा।

ठंठनाना (हिं० क्रि०) ठनठनाना देखो।

ठंठार (हिं० वि०) रिक्त खाली, छूँछा।

ठंठो (हिं० स्त्री०) १ दाना पीटनेके बाद बालमें लगा हुआ अनाज। (वि०) २ जिससे बच्चा और दूध पानेकी सम्भावना न हो।

ठंढ (हि॰ स्त्री॰) ठंढ देखो।
ठंढक (हि॰ स्त्री॰) ठंढक देखो।
ठंढा (हि॰ वि॰) ठंढा देखो।
ठढ (हि॰ स्त्री॰) शीत, सरदी, जाड़ा।
ठढई (हि॰ स्त्री॰) ठंढाई देखो।
ठढक (हि॰ स्त्री॰) १ उष्णताका अभाव शीत सरदी। २ तापकी कमी, तरी। ३ शान्ति, प्रसन्नता तसल्ली। ४ किसी प्रकारके रोग या उपद्रवकी शान्ति।
ठढा (हि॰ वि॰) १ शीतल सर्द। २ बुझा हुआ बुता हुआ। ३ उग्रतारहित शान्त। ४ जिसे कामोद्दीपन न होता हो नामर्द, नपुंसक। ५ सन्तोष शान्त, धीर। ६ उदासीन, सुस्त, मन्द। विरोध न करनेवाला जो अपनी शिकायत सुन कर भी कुछ नहीं बोलता हो। ७ मृत, प्रसन्न, खुश। ८ निर्जीव, मृत मरा हुआ। १० जिसमें चमक दमक न हो जो भड़कीला न हो बैठीमध।
ठढाई (हि॰ स्त्री॰) १ शरीरकी गरमी शान्त करनेवाली दवा। सौंफ इलायची, ककड़ी, खरबूजे आदिके बीज, गुलाबकी पत्ती, गोलमिर्च आदिको एकमें घोल कर ठढाई बनाई जाती है। २ सिद्धि, भांग
ठढामुन्दा (हि॰ पु॰) बिना तापके कोना चांदी चढ़ानेकी रीति।
ठढी (हि॰ वि॰) ठंढा देखो।
ठप (हि॰ स्त्री॰) १ ठोकनेका शब्द, वह आवाज जो एक वस्तु पर दूसरी वस्तुकी ठोकरसे होता है। (वि॰) २ स्तब्ध, मौनका। (पु॰) ३ धातु आदिको बनाई या मूआ। इसमें अक्षरादिका निशान बना कर के बने हैं।
ठपक्का (हि॰ स्त्री॰) धपका, धक्का, झमका। ठटा।
ठपकाना (हि॰ क्रि॰) १ खटखटाना। २ ठोकना, पीटना।
ठपर्लपिया (हि॰ वि॰) ठटा करनेवाला तकरार कर निभाना, ठुमको।
ठपठोपा (हि॰ पु॰) १ एक प्रकारका करताल। २ जो करताल बजा कर दरवाजे दरवाजे भीख मांगता हो। ३ एक छोटी नाव।
ठकार (स॰ पु॰) ठ स्वरूपी वार। ठ व्यञ्जनवर्ण, 'ठ' अक्षर। "ठकार चञ्चलापांगि।"(कामधेनुत॰)
ठकुर सुहाती (हि॰ स्त्री॰) दूसरोंको प्रसन्न करनेके लिये कही जानेवाली बात, खुशामद।
ठकुरायत (हि॰ स्त्री॰) ठकुरायत देखो।
ठकुराइन (हि॰ स्त्री॰) ठाकुरकी स्त्री, स्वामिनी मालकिन। २ क्षत्रियकी स्त्री, क्षत्राणी। ३ नाईकी स्त्री, नाइन नाउन।
ठकुराई (हि॰ स्त्री॰) १ आधिपत्य सरदारी प्रधानता। २ ठाकुरका अधिकार। ३ राज्य रियासत। ४ उच्चता, महत्व बड़प्पन।
ठकुरानी (हि॰ स्त्री॰) १ सरदारकी स्त्री, जमींदारकी औरत। २ रानी। ३ मालिकको मालकिन। ४ क्षत्रियकी स्त्री, क्षत्राणी।
ठकुराव (हि॰ पु॰) क्षत्रियोंकी एक जाति।
ठकुरायत (हि॰ स्त्री॰) १ आधिपत्य, सरदारी २ राज्य, रियासत।
ठकोरी (हि॰ स्त्री॰) वह लकड़ी जिसके सहारा दी जाती है।
ठक्कर (हि॰ स्त्री॰) टक्कर देखो।
ठक्कुर (स॰ पु॰) १ देवप्रतिमा, देवताकी मूर्त्ति। २ ब्राह्मणोंकी एक उपाधि। ३ देवविग्रहवत् पूजनीय व्यक्ति वह मनुष्य जिसका सम्मान देवता और ब्राह्मणके जैसा किया जाय। "ठक्कुरप्रमुखोऽपि श्रीमान् कुम्भरठक्कुरः।" (भक्तमा॰)
ठग (हि॰ पु॰) १ वह मनुष्य जो धोखा दे कर दूसरोंका धन हरण करता है, धुतका दे कर लोगोंका माल लेनेवाला। डाकू और इनमें बहुत भेद है। डाकू जबरदस्ती दूसरेका माल हरण करता पर ठग अनेक प्रकारको धूर्त्तता करके अपना काम सिद्धि लेता है। भारतवर्षमें इनका एक पृथक् संप्रदायका हो गया था किन्तु विलियम बेण्टिकके समय यह सम्प्रदाय सदाके लिये लोप कर दिया गया। बहुधा थानकालमें ही ये भारतवर्षके सर्वत्र व्याप्त हुए थे। हिमालयके कुमारिका तथा आसामसे गुजरात तक सभी स्थानों के रास्तोंमें इन ठगोंका काम था। एक बारके सालभरमें प्रायः १०० ठगोंको रस्सीसे प्राणदण्ड हुआ था। किसी और आगेके रास्तेमें कोई अपरिचित व्यक्ति साथ न आने पाये इसके लिए पथिकोंको सामिप्तार

कर दिया जाता था। ठगोंके दलमें हिन्दू मुसलमान दोनों ही रहते थे, हिन्दुओंकी उपास्यदेवी काली थी।

ठगोंमें प्रवाद है कि—ये दिल्लीके निकटस्थ प्रदेश-वासी मुसलमान-धर्मावलम्बी समजातिसे उत्पन्न हैं। कालक्रमसे ये मुसलमानधर्मको छोड़ कर कालिका देवीकी उपासना करने लगे। इनकी प्रथम-उत्पत्तिके विषयमें वंशपरम्परागत ऐसा प्रवाद चला आ रहा है कि,—किसी समय एक दुर्धर्ष असुरके साथ कालिका-देवीका युद्ध हुआ। युद्धमें कालीने खड्गाघातसे असुरके टुकड़े कर डाले। किन्तु असुर रक्तबीज था, इस लिए उसके भूतल-पतित प्रत्येक रक्तबिन्दुसे तुल्य बल-शाली एक एक असुर उत्पन्न होने लगा। कालीने उन सब असुरोंको भी काट डाला, फिर उनके रक्तसे असंख्य दानव उत्पन्न होने लगे। अन्तमें कालीने सोचा कि, इस तरह जितने काटे जायंगे उतने ही अधिक दानवोंकी उत्पत्ति होगी। उन्होंने दो वीरोंकी सृष्टि करके उनको उत्तरीय-निर्मित फांस प्रदान की। उन फांसोंके जरिये दोनों वीर असुरोंको मारने लगे। इससे रक्त न गिरनेके कारण असुरोंका उत्पन्न होना बंद हो गया, धीरे धीरे समस्त असुर मारे गये। कालीदेवीने दोनों वीरों पर सन्तुष्ट हो कर वे फांसें उन्हें ही दे दीं और पुत्रपौत्रादि-क्रमसे उसीके जरिये जीविकानिर्वाह करेंगे—ऐसा वर दिया। उक्त दोनों वीर ही ठगोंके आदिपुरुष थे। प्रवादानुसार ठग लोग वंशानुक्रमसे नरहत्या-व्यवसायी हो गये और मध्यभारतसे लगा कर दाक्षिणात्यके कुछ दूर तक फैल गये। ये नाना स्थानोंमें भिन्न भिन्न सम्प्रदायमें निरीह प्रजाकी तरह कृषि आदि जीविका अवलम्बन करके रहते थे। किन्तु सर्वदा चारों तरफ इनके गुप्तचर रहते थे, जो कहां निराश्रय पथिक जा रहा है, इसकी खोज रखते थे। ठगोंमें एक साधारण सङ्केत था, जिससे वे परस्परको पहिचान लिया करते थे। बहुत समय ये लोग दल बांध कर अल्पाधिक संख्यामें निकलते थे और छद्मवेशमें रह कर मौका देख पथिकोंका सर्वनाश करते थे। प्रथमतः ये लोग पथिकोंसे इस ढंगसे पेश आते थे कि, जिससे पथिक किसी भी तरह इनको पहिचान नहीं सकते थे। पीछे मौका पाते ही असावधानी दशामें उन अभागोंको गलेमें फांसी दे कर मार डालते थे। अनन्तर उसका सर्वस्व लूट कर उसकी लाशको ऐसी जगह गाड़ देते थे कि, उसका किसी तरह पता नहीं चल सकता था। जिन लोगोंको मारनेसे उनको उलटी चोट होनेकी सम्भावना नहीं या जिनके न मिलनेसे लोग उनको भागा हुआ समझें, ऐसे लोग सहजहीमें ठगोंके चक्करमें पड़ कर प्राण खो बैठते थे। अश्वारोहम सैनिक या प्रभुका मर्यादिवाहक भृत्य या ठगोंके कबलमें पड़ते थे। किन्तु ठग लोग स्त्री, कवि गङ्गाजलवाहक, धोबी, तेली, झाड़ू-वाले, नट आदि नीच जातिवालोंको अथवा मजूर, फकीर और भिखारीको कभी नहीं मारते थे। इनकी एक प्रकार साङ्केतिक भाषा थी जिसे दूसरा कोई नहीं समझता था। इनके ठगोंमेंसे उपयोगितानुसार कार्य नेता होता था, कोई राहगीरको भुलावा दे कर अभिप्रेत स्थानपर ले आता था, कोई गलेमें फांसी लगा कर मारता था, कोई गुप्तचरका काम करता और कोई गड्ढा खोद कर लाशको गाड़ता था। दल और साहसी ठग लुण्ठित द्रव्यका अंश पाते थे।

ठगोंमें साधारण दस्युओंकी तरह सिर्फ दस्युवृत्तिके द्वारा ही पारस्परिक सम्बन्ध नहीं था। ये भलीभांति समाजसङ्गठन करके भिन्न भिन्न जातियोंके साथ एकत्र वास करते तथा पुरुषानुक्रमिक नरहत्या और चौर्य द्वारा जीविकानिर्वाह करते थे। इनका विश्वास था, कि इसमें उनको पाप नहीं लगता, वरन् नरहत्या-व्यवसाय ही उनका मूलकर्म है। इसलिये जो जितना निष्ठु-राचरण करके निराश्रय पथिकोंको मारता था, वह उतना ही प्रशंसनीय और कालिकादेवीका प्रियपात्र समझा जाता था। वास्तवमें इन पाषण्डी नार-कियोंके हृदयमें जरा भी धर्मभय वा अनुताप नहीं था। इसलिये इस तरहकी निर्दय भीषण नरहत्या करनेमें इनके हृदयमें तनिक चोट भी न लगती थी। किन्तु आश्चर्य है, ये नरपिशाच लोग भी इस तरहके बीभत्स कार्यके लिए निकलते समय अपनी उपास्यदेवी भवा-नीकी पूजा कर उनकी प्रीति और आशीषकी कामना करते थे। इस प्रकारके पैशाचिक कार्यमें भी अर्थ-लोभसे उनको प्रोत्साहित करने तथा कालीदेवीकी पूजा

करनेके लिये पुरोहित ब्राह्मणोंका भी अभाव नहीं था। नितान्त दुष्कर्मी व्यक्ति भी अपने परिवारवर्गसे अपने दुष्कर्मोंको छिपा रखता है, उनमेंसे किसीको भी अपनी तरह अपराधकर्ममें नहीं बनाना चाहता। किन्तु ठगोंमें ठीक इसके उलटी रीति थी। ये लोग बचपनसे ही लड़कोंको नरहत्याकी शिक्षा देते थे। युवावस्थामें बालकगण चारदलमें घूमा करते थे। फिर उनको पथिकोंकी लाश दिखाई जाती थी। ये ठगोंके साथ निकलते थे और पथिकोंको फुसलाने तथा अन्य कार्योंमें उनकी सहायता करते थे। अन्तमें जब वे योग्य हो जाते, तब इनके गाँवमें जीविकानिर्वाहके लिए एक मात्र अवलम्ब फाँसी दी जाती थी। इस कार्यमें दीक्षित करनेके समय एक उत्सव होता था और दीक्षा गुरु कालीकी पूजा करके उनके बयान पर दीक्षा-शिष्य देकर उनको कालीको प्रसादी एक प्रकारका गुड़ शिष्य देते थे। प्रवाद है—इस प्रसादी गुड़की शक्ति अति भीषण थी, इसके खानेसे ही वह पक्का ठग हो जाता था।

ठग लोग इतनी चतुराई और निपुणताके साथ अपना काम बनाते थे कि कभी वे पकड़े नहीं जाते थे। वे सिपाहियोंको मधुर प्रलोभन देकर भाग जाया करते थे। मध्यभारतके अनेक स्थानोंमें विशेषतः पश्चिमभारतमें अधिकांश सदार राजकर्मचारीके सिवा इनके अपहरणमें अपेक्षा करते थे, ऐसा नहीं, बल्कि उन्हें उनकी लूटके माल उनमेंसे हिस्सा तक नियमितरूपसे मिलता था। बहुतसे तो आयका प्रकट अंश सदा लेकर अपने राज्यमें इनकी रक्षा करते थे। इनके साथ यह शर्त रहती थी कि, वे उन राज्योंके अन्दर नरहत्या न कर सकेंगे। इसलिये अन्य स्थानोंमें अत्याचार करने पर कोई भी अनिष्ट नहीं होता था। जमींदार, महाजन, दूकानदार, मोदी आदि अनेक अर्थलोभसे इनके पक्षपाती होते थे। ऐसी दशामें ठगोंको खोज कर निकालना अत्यन्त कठिन कार्य था। अत्याचारसे डरके कोई भी इनसे कुछ कहता नहीं था। इस प्रकार भारतवर्षके विस्तीर्ण भूभाग पर यह गुप्त अत्याचार बेखटके चल रहा था। आखिर अंग्रेजोंके शासनमें यह निवारित हुआ।

जिस तरह यह अत्याचार होता था, उसमें प्रति वर्ष कितने लोग ठगोंके द्वारा मारे जाते थे इसकी कोई शुमार नहीं। कोई कोई कहते हैं कि, प्रायः १०००० आदमी प्रतिवर्ष ठगोंके द्वारा मारे जाते थे। यह संख्या अत्यन्त अधिक और अविश्वसनीय मालूम पड़ने पर भी जो प्रमाण मिलते हैं उससे सत्य मालूम होती है।

१७९९ ई॰में इस अत्याचारका हाल अंग्रेज गवर्मेण्टके गोचर हुआ। १८१० ई॰में दोआबके नाना कालीके कूएँमें ३० लाशें मिली थीं। १८३० ई॰में कप्तान स्लीमानके प्रयत्नसे गवर्मेण्टको मालूम हुआ कि, भारतवर्षका कोई भी स्थान ठगोंसे शून्य नहीं है। इस गुप्त अत्याचारका दमन करनेके लिए गवर्मेण्टने एक नया विभाग खोला। इस ठग निवारक विभागके कर्मचारी अपराधियोंको प्रलोभन देकर ठगोंको खोज करके उनको पकड़ने लगे। क्या अंग्रेजी राज्य और क्या देशीय राज्य सर्वत्र इस बीभत्स ठगोंके अत्याचारको निवारनेके लिए बद्धपरिकर हो कर अंग्रेज गवर्मेण्टने ८ वर्ष तक लगातार प्रयत्न किया था जिससे हैदराबाद, सागर और जबलपुरमें प्रायः २००० ठग पकड़े गये थे और उनका न्याय हुआ था। इनमेंसे १४६० आदमी हत्याके अपराधमें अभियुक्त हुए जिसमें १५२ आदमियोंको प्राणदण्ड, ८०९को देशनिकाला, ७७को यावज्जीवन कारावास, १८२को निर्दिष्ट काल तक कारावास और १को छुटकारा हुआ था तथा ११ आदमी भाग गये थे ३१ आदमी विचारकालमें ही मर गये थे और बाकी २१० आदमियोंने राजाकी तरफ गवाही दी थी।* फाँसीदार ठगको फाँसी ही होती थी। उन दण्डितोंमेंसे किसी किसीने २०० तक नर हत्या की थी यह स्वीकार किया था।

ठगोंको न्यायोपार्जित वृत्तिद्वारा जीविकानिर्वाह करनेकी शिक्षा देनेके लिए जबलपुरके मध्य जेलखानेमें एक कार्यालय स्थापित हुआ, वहाँ पर ठगोंके बच्चों और युवकोंको दरी और सूतके वस्त्र बुनने तथा तम्बू बनानेकी शिक्षा पाने लगे। १८६० ई॰के भीतर भीतर ठगीका अन्त हो गया, वहाँ भी उनका नाम सुननेमें न

* Asiatic Journal, 1836.

जाता था। लार्ड वेण्टिंकके शासनकालमें भारतवर्षमें सतीदाहको तरह यह भी एक भीषणकाण्ड दमित हुआ। ठग-निवारक-विभागके कर्मचारियोंको पुलिस और विचारक दोनों प्रकारकी ही क्षमता दी गई थी। कोई ठग अभियुक्त होने पर प्रकाश्य भावसे उसका विचार होता था। कहना फजूल है कि, उक्त विभागके कर्मचारियोंकी कार्यकुशलता, कठोररूपसे कर्तव्य-परायणता और तत्परताके कारण शीघ्र ही बहुतसे ठग पकड़े गये, तथा नाना स्थानोंमें बहुतायतसे लाशें मिलने लगीं। इस तरहसे उक्त विभागने अविचल उत्साह, अदम्य साहस और अविश्रान्त अध्यवसायकी सहायतासे कठोर कानूनोंके द्वारा शीघ्र ही ठगोंका निवारण करके पथिकोंको निश्चिन्त कर दिया। गौरवके साथ ठग-विभागने अपना कार्य समाप्त करके अवसर ले लिया।

२ प्रतारक, धोखेबाज।

ठगण (सं० क्रि०) पाँच मात्राओंका एक गण। इसके ८ उपभेद हैं।

ठगना (हिं० क्रि०) १ छल और धूर्त्ततासे दूसरेका धन छीनना। २ धूर्त्तता करना, छल करना। ३ उचितसे ज्यादे कीमत लेना, सौदा बेचनेमें बेईमानी करना। ४ प्रतारित होना, धोखा खाना। ५ आश्चर्यमें स्तब्ध होना, चक्करमें आना, दंग रहना।

ठगनी (हिं० स्त्री०) १ ठगकी स्त्री। २ वह स्त्री जो दूसरेको भुलावेमें डाल कर उसका माल छीनती है। ३ धूर्त्त स्त्री। ४ कुटनी।

ठगपना (हिं० पु०) १ ठगनेका भाव या काम। २ धूर्त्तता, छल, चालाकी।

ठगमूरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी विषैली जड़ी बूटी। पूर्व समयमें ठग इसी जड़ीसे पथिकोंको बेहोश करके उसका धन लूट लेते थे।

ठगमोदक (हिं० पु०) ठगलड्डू।

ठगलाड़ू (हिं० पु०) नशीली या बेहोशी करनेवाली चीजकी बनी हुई मिठाई। पूर्व समय ठग इसी तरहके लड्डूको पासमें रखते थे। जब कोई पथिक मिलता तो वे किसी बहानेसे अपना लड्डू उसे खिला देते थे और थोड़ी देरके बाद जब वह निशासे बेहोश हो जाता था तो वे उसके पासके सब माल ले लेते थे।

ठगवाना (हिं० क्रि०) दूसरेसे धोखा दिलवाना।

ठगविद्या (हिं० स्त्री०) धूर्त्तता, धोखेबाजी, छल।

ठगाठगी (हिं० स्त्री०) धूर्त्तता, धोखेबाजी।

ठगिन (हिं० स्त्री०) १ वह औरत जो धोखा दे कर दूसरेका धन लूट लेती है। २ ठगकी स्त्री। ३ धूर्त्त स्त्री, चालबाज औरत।

ठगिनी (हिं० स्त्री०) ठगिन देखो।

ठगिया (हिं० पु०) ठग देखो।

ठगी (हिं० स्त्री०) १ ठगका काम। २ ठगनेका भाव। ३ धूर्त्तता, चालबाजी।

ठगोरी (हिं० स्त्री०) मोहित करनेका प्रयोग, वह शक्ति जिससे दूसरेका होश हवाश जाता रहता है।

ठट (हिं० पु०) १ समूह, पुंज, भाड़, पंक्ति। २ रचना, सजावट, बनाव।

ठटकीला (हिं० वि०) जिसमें चमक दमक हो, सजीला, तड़क भड़कवाला।

ठटना (हिं० क्रि०) १ स्थिर करना, ठहराना। २ सजाना, तैयार करना। ३ आरम्भ करना, छेड़ना। ४ सुसज्जित होना, तैयार होना। ५ खड़ा रहना, डटना, अड़ना।

ठटनि (हिं० स्त्री०) रचना, सजावट, बनाव।

ठटया (हिं० पु०) एक जंगली जानवरका नाम।

ठटरी (हिं० स्त्री०) १ अस्थिपंजर, हड्डियोंका ढाँचा। २ वह जाल जिसमें घास भूसा आदि रखा जाता है, खरिया खड़िया। ३ किसी पदार्थका ढाँचा। ४ वह रथी जिस पर मुरदा उठाया जाता है, अरथी।

ठट्ट (हिं० पु०) समूह, झुंड, भीड़।

ठट्ठी (हिं० स्त्री०) अस्थिपंजर, ठटरी।

ठठई (हिं० स्त्री०) दिल्लगी, हँसी।

ठठ्ठा (हिं० पु०) उपहास, हँसी।

ठठ (हिं० पु०) ठट देखो।

ठठरी (हिं० स्त्री०) ठटरी देखो।

ठठाना (हिं० क्रि०) १ आघात लगाना, ठोंकना, पीटना। २ अट्टहास करना, जोरसे हँसना।

ठठेरमंजारिका (हिं० स्त्री०) ठठेरेकी बिल्ली। यह बिल्ली रातदिन बरतन पीटे जानेसे न तो कुछ डरती और न किसी अच्छे शब्द पर मोहित होती है।

ठठेरा (हिं० पु०) १ जो धातु पीट पीट कर बरतन बनाता है, कसेरा। २ ज्वार बाजरेका डण्ठल।

ठठेरा—एक हिन्दूजाति। तांबे और पीतलके बरतन बनाना तथा बेचना ही इन लोगोंकी उपजीविका है। कसेरा और ठठेरा दोनों एक ही श्रेणीके अन्तर्गत हैं। मि० नेसफिल्डका कहना है, कि कसेरा तांबे, टीन और जस्ते आदिको गला कर तरह तरहके बरतन बनाते हैं और ठठेरा उन्हीं सब बरतनोंमें ओप चढ़ाते तथा बेल बूटे उभाड़ते हैं। किन्तु बहुतोंका मत है, कि ठठेरे लोग केवल अन्यान्य धातुके उपयुक्त टीन, रांगे आदिके गहना बनाते हैं। मिरजापुरके ठठेरा कहते हैं, कि इन लोगोंका आदिम वास पञ्जाबमें था। सबसे पहले चार पुरुष हुए कि वे लोग माबाबाद जिलेके नसीरगञ्जमें आ कर बस गये हैं। अजमगढ़के ठठेरे अपनेको क्षत्रिय-वंशोद्भव बतलाते हैं। इन लोगोंका कहना है कि परशुरामने जब जगत्‌को क्षत्रियरहित कर डाला था तभी उनमेंसे एक गर्भवती क्षत्रियाणीने कमण्डलु-ऋषिके यहां आश्रय लिया था। उसके गर्भसे जो सन्तान उत्पन्न हुई वह ठठेरा कहलाने लगी। ये लोग अपना आदिम वास पश्चिमदेशके रतनगढ़में बतलाते हैं। बनारसके ठठेरे यज्ञोपवीत पहनते और क्षत्रिय तथा वैश्यके बाद अपना ही स्थान समझते हैं।

इन लोगोंका विवाह सनातन धर्मावलम्बियोंका होता है। विधवा विवाहकी प्रथा भी जारी है। महाबीर, पांच पीर, भगवती तथा कालो इन लोगोंका उपास्य देवी हैं। ये लोग ब्राह्मण राजपूत और हलवाईके यहां केवल पक्की रसोई खाते हैं और कच्ची उसी हालतमें खा सकते यदि उन्हींकी जातिमेंसे किसीने बनाई हो। मुजफ्फर नगर, फर्रुखाबाद, शाहजहानपुर, इलाहाबाद, झांसी, बनारस, मिरजापुर, बस्ती, आजमगढ़, गोण्डा, प्रतापगढ़ आदि स्थानोंमें ये अधिक संख्यामें पाये जाते हैं।

ठठेरी (हिं० स्त्री०) १ ठठेराकी स्त्री। २ ठठेरेका काम, बरतन बनानेका काम।

ठठोल (हिं० पु०) १ ठिठोलिया, दिल्लगीबाज। २ उपहास, हंसी।

ठठोली (हिं० स्त्री०) उपहास, हंसी, दिल्लगी।

ठड़िया (हिं० पु०) एक प्रकारका भैंसा जिसकी सींगें बिलकुल खड़ी होती हैं।

ठड्डा (हिं० पु०) १ रीढ़, पसली। २ पतङ्गमें लगी हुई खड़ी कमाची।

ठड़िया (हिं० स्त्री०) काठकी कंची बोधनी।

ठण्डीराम—हिन्दीके एक अच्छे कवि। इनकी कविता बड़ी ही सरल और भक्तिपूर्ण होती थी। उदाहरणार्थ एक नीचे दी जाती है—

"शकुन धारे जब अंबाल कुरा कर धर लिए निवाज।
बैंठी ओर किया जिन दिवस धाम मुरलीधीधराज॥
जोधारको भिक्ष बतावो नाम अपनकी गुरुलीलाज।
पुनाकी सब रीति बनाई सबै करिया करी शिकाज॥
शिशिर दूर कर हाथ दिखायो घटमें दीपक दीयो बाल।
बहालमासके पर बड़भाए सबन सबनके सुन्दर बसाल॥
सम सुन्य मीत तीन ध्यान सबै राम दासिनी भी सुस्थाय।
ऐसे ठण्डीराम गुरुस्वामी विष्णुदासकी करी शिवराज॥"

ठन (हिं० स्त्री०) वह शब्द जो किसी धातु पर आघात पड़नेसे होता है।

ठनक (हिं० स्त्री०) १ मृदङ्ग इत्यादिका शब्द। २ ठहर ठहर कर होनेवाला दर्द, चसक, टीस।

ठनकना (हिं० क्रि०) १ ठन ठन शब्द करना। २ ठहर ठहर कर पीड़ा होना।

ठनका (हिं० पु०) १ धातु खण्ड आदि पर आघात पड़नेका शब्द। २ आघात, ठोकर। ३ ठहर ठहर कर होनेवाली पीड़ा।

ठनकाना (हिं० क्रि०) बजाना, शब्द निकालना।

ठनकार (हिं० पु०) धातुखण्डके बजनेका शब्द।

ठनगन (हिं० पु०) वह हठ जो पुरस्कार पानेवाले विवाह आदि मङ्गल अवसरों पर करते हैं।

ठनठन (हिं० क्रि०) धातुखण्डके बजनेका शब्द।

ठनठनगोपाल (हिं० पु०) १ वह वस्तु जिसके भीतर कुछ भी न हो, निःसार वस्तु। २ निर्धन मनुष्य, गरीब आदमी।

ठनठनाना (हिं० क्रि०) बजाना, आवाज निकालना।

ठनना (हिं० क्रि०) १ अनुष्ठित होना, समारम्भ होना, छिड़ना। २ निश्चित होना, स्थिर होना पक्का होना।

३ प्रयुक्त होना, ठहरना, जमना। ४ उद्यत होना, मुस्तैद होना।

ठनमनना (हिं० क्रि०) ठनमनना देखो।

ठनाका (हिं० पु०) ठनकार, ठनठन शब्द।

ठनाठन (हिं० क्रि०) झनकारके साथ।

ठपना (हिं० क्रि०) १ आरम्भ करना, छेड़ना। २ समाप्त करना, अच्छी तरहसे करना। ३ निश्चित करना, पक्का करना। ४ प्रयुक्त करना, लगाना, नियोजित करना। ५ ठनना। ६ मनमें दृढ़ होना। ७ स्थापित करना ठहराना। ८ स्थित होना, जमना। ९ लगना, प्रयुक्त होना।

ठप्पा (हिं० पु०) १ लकड़ी धातु मट्टी आदिका खण्ड। इस पर किसी प्रकारकी आकृति इस प्रकार खुदी रहती है कि उसे किसी वस्तु पर रख कर दबानेसे दूसरी वस्तु पर भी वही आकृति बन जाती है, साँचा। २ छापा। ३ वह साँचा जिससे गोटे पट्टे पर बेल बूटे उभारे जाते हैं। ४ छाप, नक्श। ५ एक प्रकारका चौड़ा नक्काशीदार गोटा।

ठमक (हिं० स्त्री०) १ रुकावट। २ चलनेमें हाव भाव, लचक।

ठमकना (हिं० क्रि०) १ चलते चलते रुक जाना। २ लचकके साथ चलना।

ठमकाना (हिं० क्रि०) ठहराना, रोकना।

ठमकारना (हिं० क्रि०) ठमकाना।

ठरना (हिं० क्रि०) १ अत्यन्त शीत लगनेसे ठिठुरना। २ अत्यन्त ठण्ढ पड़ना।

ठर्रा (हिं० पु०) १ मोटा सूत। २ वह बड़ी ईंट जो अच्छी तरह पकी न हो। ३ महुवेकी निकृष्ट शराब। ४ अंगियाका बन्द, तनी। ५ एक प्रकारका जूता। ६ भद्दा और बेडौल मोती।

ठर्रो (हिं० स्त्री०) १ धानके बीज जिनके अंकुर उठे हुए न हों। २ बिना अंकुर उठे हुए धानकी बोआई।

ठवनि (हिं० स्त्री०) एक स्थिति, बैठक। २ मुद्रा, आसन।

ठवर (हिं० पु०) ठौर देखो।

ठस (हिं० वि०) १ कठिन, ठोस, कड़ा। २ जिसके भीतरका भाग खाली न हो, भीतरसे भरा हुआ। ३ जिसकी बुनावट बहुत घनी हो, गाठा, गफ। ४ दृढ़, मजबूत। ५ गुरु, भारी। ६ निष्क्रिय, सुस्त मट्ठर। ७ जो कुछ खोटा होनेके कारण ठीक आवाज न दे। ८ सम्पन्न, धनाढ्य। ९ कृपण, कंजूस। १० हठी, जिद्दी।

ठसक (हिं० स्त्री०) १ अभिमानपूर्ण चेष्टा, नखरा। २ दर्प, गुमान, शान।

ठसकदार (हिं० वि०) १ घमण्डी, शान करनेवाला। २ जिसमें खूब तड़क भड़क हो।

ठसका (हिं० पु०) १ सूखी खाँसी। २ ठोकर, धक्का।

ठसाठस (हिं० क्रि०-वि०) अच्छी तरहसे परिपूर्ण किया हुआ, खूब कस कर भरा हुआ, खचाखच।

ठस्सा (हिं० पु०) १ छोटी रुखानी जो नक्काशी बनानेके काममें आती है। २ गर्वपूर्ण चेष्टा, नखरा। ३ अहङ्कार, घमण्ड, शान, गुमान। ४ ठाट बाट, वह जिसमें तड़क भड़क हो। ५ मुद्रा, आसन।

ठहक (हिं० स्त्री०) नगारे बजनेका शब्द।

ठहरा (हिं० क्रि०) घोड़ोंका बोलना। २ घण्टेका बजना, ठनठनाना।

ठहर (हिं० पु०) १ ठौर, स्थान, जगह। २ वह स्थान जो रसोईके लिये मट्टीसे लीपा गया हो, चौका। ३ रोई घरमें मट्टीकी लिपाई, पोताई।

ठहरना (हिं० क्रि०) १ गतिमें न होना, रुकना, थमना। २ विश्राम करना, कुछ काल तकके लिये आराम करना। ३ स्थित रहना, इधर उधर होना। ४ स्थिर रहना, टिका रहना। ५ बहुत दिन तक रहना, जल्दी खराब न होना, चलना। ६ क्षुब्ध जलको स्थिर होने देना, पानी आदिका हिलना डोलना बंद करना, थिराना। ७ प्रतीक्षा करना, आसरा देखना। ८ रुकना, थमना। ९ निश्चित होना, पक्का होना, ते पाना।

ठहराई (हिं० स्त्री०) १ स्थिर करानेकी क्रिया। २ स्थिर करानेकी मजदूरी। ३ अधिकार, कब्जा।

ठहराऊ (हिं० वि०) १ नियत समयके पहले नष्ट नहीं होना, ठहरनेवाला। २ दृढ़, मजबूत, टिकाऊ।

ठहराना (हिं० क्रि०) १ गति बंद करना, चलनेसे रोकना। २ विश्राम करना, टिकाना। ३ टिकाना,

गिरने न देना, थकाना। ४ स्थिर रखना, चलविचल न होने देना। ५ किसी कामको रोकना, बंद करना। ६ निश्चित करना, ते करना।

ठहराव (हिं॰ पु॰) १ स्थिरता, ठहरनेका भाव। २ निर्धारण निश्चय मुकर्ररी।

ठहरौनी (हिं॰ स्त्री॰) वह प्रतिज्ञा जो विवाहमें लेन देनके विषयमें की जाती है।

ठहाका (हिं॰ पु॰) अट्टहास, जोरकी हँसी।

ठां (हिं॰ पु॰) १ बन्दूककी आवाज। २ ठांव देखो।

ठांई (हिं॰ स्त्री॰) १ स्थान जगह। २ तई। ३ समीप निकट, पास।

ठांउँ (हिं॰ स्त्री॰) ठांई देखो। २ निकट, समीप, पास।

ठांठ (हिं॰ वि॰) १ नीरस जिसका रस सूख गया हो। २ जो दूध न देती हो।

ठांयँ (हिं॰ स्त्री॰) १ स्थान ठौर, जगह। २ निकट, पास। ३ वह शब्द जो बन्दूक छूटनेसे होता है।

ठांव (हिं॰ पु॰-स्त्री॰) स्थान जगह ठिकाना। यह शब्द प्रायः पुलिङ्गमें ही व्यवहार होता है, परन्तु दिल्ली मेरठ आदि स्थानोंमें इसे स्त्रीलिङ्ग मानते हैं।

ठांसना (हिं॰ क्रि॰) १ वस्तुएं को प्रविष्ट करना दबा कर घुसाना। २ जोरसे भरना। ३ ठन ठन शब्दके साथ खांसना।

ठाकुर (हिं॰ पु॰) १ देवमूर्त्ति देवता। ईश्वर, परमेश्वर, भगवान्। ३ पूज्यव्यक्ति। अधिष्ठाता, नायक सरदार। ५ जमींदार, गाँवका मालिक। ६ क्षत्रियोंकी उपाधि। ७ स्वामी, मालिक। ८ नाइयोंकी उपाधि नापित।

ठाकुर—१ एक हिन्दू कवि। कोई तो इन्हें फतहपुर जिलेके असनी ग्रामका भाट बतलाते हैं और कोई बुन्देलखण्डके कायस्थ। १६३१ ई॰ में इनका जन्म हुआ था और ये कुछ बाद आगेके समय तक (१७१८ ई॰) जीवित रहे। इनके विषयमें बुन्देलखण्डमें दन्तकहानी है कि बुन्देला लोग जब गोसाई हिम्मती बहादुरको पकड़ा करनेके लिये जयपुरमें एकत्र हुए थे, तब ठाकुर कविने उन लोगोंके पास एक कविता लिख भेजी थी। जिसका पहला चरण यों था—'कहिबे सुनिबे को कछु न कियो' * इसीसे पाजिके साथही वे लोग तुरन्त तितर बितर हो गये। हिम्मती बहादुरको यह बात मालूम होने पर उन्होंने इनकी कविताको खूब प्रशंसा की और इन्हें यथेष्ट पुरस्कार दे विदा किया।

२ इस नामके और एक कवि हो गये हैं जो १७९० ई॰में विद्यमान थे और जिन्होंने "ठाकुरशतक" तथा बिहारी सतसईकी टीका रची है।

ठाकुरगांव—१ बङ्गालके अन्तर्गत दीनाजपुर जिलेका उत्तरीय उपविभाग। यह अक्षा॰ २५ ४॰ से २६ २९´ उ॰ और देशा॰ ८८ २´ से ८८ १८´ पू॰में अवस्थित है। भूपरिमाण ११७१ वर्गमील है। उपविभागके दक्षिण बहुतसी नदियां बहती हैं। लोकसंख्या लगभग ३८१०८६ है। इसमें १८८० ग्राम लगते हैं। शहर एक भी नहीं है। कान्तनगरमें एक बढ़िया मन्दिर है।

२ उक्त उपविभागका शहर। यह अक्षा॰ २६ २´ उ॰ और देशा॰ ८८ २६ पू॰ पर तंगन नदीके किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १६१८ है। यहां एक छोटा कारागार है जहां सिर्फ १८ कैदी रखे जाते हैं।

ठाकुरदास—हिन्दीके ये अच्छे कवि हो गये हैं। इनके पिताका नाम गुमान सिंह था। ये जातिके कायस्थ थे और चरखारीमें रहते थे। सम्वत् १८८०में इनका जन्म और १९३३में देहान्त हुआ था। इनकी भक्तिपक्षकी कविता इतनी सुहावनी और सरस होती थी, कि चरखारी-नरेशने एक बार इन्हें यथेष्ट पारितोषिक दिया था। यों तो इनकी सभी कविताएं एकसे एक बढ़कर हैं, पर यहां केवल एक ही देते हैं—

"प्रभु जी अबकी बार उबारो।
पीतबसन पीतमुकुटधर हे वह बिरद बिहारो॥
नन्दनन्दन पै कृपा कीजै नाथ वेग ही तारो।
नाह मार भव भय दुःखको नाथे किये बिसारो॥
काम क्रोध हिरण्यकुश जाति ईस ईस कर जारो।
मदन मदीलिन रथा जैसी नाथ दुःख मारो॥
इन्द्रादिक सुर रहे कहाना जनमे सदा बिचारो।
ठाकुरदास दास पावन को आपे जाके बिहारी॥"

* पूरी कविता शिवसिंह सरोज नामक ग्रन्थके ११४ पृष्ठमें दी गई है।

ठाकुरद्वारा (हिं॰ पुं॰) १ देवालय देवस्थान। २ पुरुषोत्तमधाम, पुरीमें जगन्नाथका मन्दिर।

ठाकुरद्वारा—युक्तप्रदेशके मुरादाबाद जिलान्तर्गत इसी नामकी तहसीलका एक शहर। यह अक्षा॰ २८° १२´ उ॰ और देशा॰७८°५२´ पू॰ पर मुरादाबाद शहरसे २७ मील उत्तरमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६१११ है। यह शहर मुहम्मदशाहके शासन-कालमें (१७१८-४८ ई॰) बसाया गया था। १८०५ ई॰में पिण्डारी-नामक अमीरखाँने इसे लूटा था। यहां एक तहसीली, पुलिस स्टेशन, अस्पताल और American Methodist mission की एक शाखा है।

ठाकुरप्रसाद (हिं॰ पु॰) १ नैवेद्य। २ भादों और आश्विनके मध्यमें होनेवाला एक प्रकारका धान।

ठाकुरप्रसाद खत्री—हिन्दीके एक धुरंधर तथा निष्कपट विद्वान्। इनका जन्म सन् १८६५को काशीमें हुआ था। स्वनामधन्य बाबू विश्वेश्वरप्रसाद जो काशीके सरकारी कोषागारमें हेड क्लर्क रहे, इनके पिता थे। हिन्दी तथा फारसीमें इनकी अच्छी पैठ थी। अंग्रेजीमें इन्होंने १८८५ ई॰में कलकत्ता युनिवर्सिटीकी इंट्रेंस परीक्षा पास की थी। इंट्रेंस होने पर भी अंगरेजीमें इनका पूरा दखल था। पिताके मरने पर कई पदों पर काम करने बाद ये पुलिसके कोषाध्यक्ष बना दिये गये। पुलिस-विभागमें इन्होंने कई श्रेष्ठ कार्य किए तथा कई अच्छे प्रशंसा-पत्र भी प्राप्त किये थे। अन्तमें इनकी रुचि इस ओरसे हट गई और ये अपना समय पढ़ने लिखनेमें व्यतीत करने लगे। 'लखनऊकी नवाबी' नामकी पुस्तक इन्हींकी लिखी हुई है। भूगर्भ विद्या, ज्योतिष और उत्तर-ध्रुवकी यात्राके लेख पर इन्हें काशी-नागरी प्रचारिणी सभासे चाँदीके तीन पदक मिले थे।

कपड़े बुननेमें भी ये बड़े सिद्ध हस्त थे। इस विषय पर इन्होंने 'देशीय करघा' नामकी एक पुस्तक भी लिखी है। इन्होंने 'विनोदवाटिका' तथा 'जमींदार' नामका पत्र कुछ काल तकके लिए निकाला था। दिनों दिन कपड़ा सीनेकी मशीनोंका प्रचार बढ़ते देख ये उसके साधारण दोष दूर करनेके विषय पर 'जगत् व्यापारिक पदार्थकोष'-नामक एक उत्तम और उपयोगी ग्रन्थ लिख गये हैं। इसके लिए सरकारकी ओरसे इन्हें १०००) रु॰की सहायता मिली थी।

ये बड़े मिलनसार, सच्चरित्र और हंसमुख थे। हिन्दीमें व्यापार सम्बन्धी पुस्तकोंको लिख कर ये इतने प्रसिद्ध हो गये हैं।

ठाकुरप्रसाद त्रिपाठी—संस्कृतके एक विद्वान्। रायबरेली जिलेके किशुनदासपुरमें इनका घर था। १८८२ ई॰में इनका जन्म हुआ था। 'रसचन्द्रोदय' नामक संस्कृत ग्रन्थ इन्हींका बनाया हुआ है। इनके पास भाषा-साहित्यका अच्छा पुस्तकालय था।

ठाकुरप्रसाद त्रिवेदी—ये भी एक अच्छे विद्वान् थे। इनकी जन्मभूमि गोंडा जिलेके अल्लीगञ्जमें थी। १८८३ ई॰में ये विद्यमान थे। इन्होंने 'चन्द्रशेखर' काव्यकी रचना की है।

ठाकुरप्रसाद मिश्र—अवध देशान्तर्गत पयागीके एक ब्राह्मण कवि। इनकी कविता बड़ी ओजस्विनी और सरस होती थी। ये महाराज मानसिंह अयोध्या-नरेशके यहां रहते थे। इनकी एक कविता नीचे दी जाती है।

"बाजे मुरदंगके अरद चोट बाजे
धीर मुखरी उमैर छैनें मढ़ाकी बंदरी।
सुगढ़ ठाढ़ होत मैं द अंदेस धीर
लावत हमारे दरबार फेरे चौपरी॥
पंडित प्रवीन कहैं मानसिंह भूपति समान पै
अरोपत तो तीनों तीर कैपरी।
लिपके लपेटे गज बाजके लपेटे लखा
तैसे भूले भूतल मकरतनकी भाहरी॥"

ठाकुरबाड़ी (हिं॰ स्त्री॰) देवालय, मन्दिर।

ठाकुरराम—हिन्दीके एक कवि।

ठाकुरवंश—कलकत्ताके विख्यात ब्राह्मणवंशसम्भूत सम्भ्रान्त पीराली गोष्ठी। ये अंगरेजोंसे यथेष्ट सम्मानित होते थे। इसमेंसे किसी किसीको अंगरेजोंसे 'महाराज'-की उपाधि मिली है। ये अपनेको भट्टनारायण-वंशके महात्मा द्वारिकानाथ ठाकुर, प्रसन्नकुमार ठाकुर, बतलाते हैं। इस वंशमें महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर, महाराज यतीन्द्रमोहन ठाकुर, राजा शौरीन्द्रमोहन ठाकुर प्रभृतिने जन्मग्रहण किया है। पीराली देखो।

ठाकुरसेवा (हिं॰ स्त्री॰) १ देवताका पूजन। २ किसी मन्दिरमें देवताके नामसे उत्सर्ग की हुई सम्पत्ति।

ठाकुरी (हिं॰ स्त्री॰) आधिपत्य, आधिपत्य ठकुराई।

ठाकुरीवंश—नेपालका एक पराक्रान्त राजवंश।

लिच्छविराज शिवदेवके राजत्वकालमें महासामन्त अंशुवर्मा आविर्भूत हुए। येही ठाकुरी-राजवंशके प्रथम पुरुष थे। उनने मौखरीवंशीय गुप्तके से त्रिशीर्ष जनपदके अधीश्वर हुए। लिच्छविराजका प्राधान्य स्वीकार करने पर वे एक पराक्रान्त स्वाधीन राजा हो गये थे। नेपालके पार्वतीय वंशावलीके मतसे १००० कलियुगाब्दमें अर्थात् ई॰ सनके १०१ वर्ष पहले अंशुवर्मा राजगद्दी पर बैठे थे और उनके पहले विक्रमादित्य नेपाल जा कर वहां अपना सम्वत् चला आये थे। फ्लिट, कीरहर्न प्रभृति प्रत्नतत्त्वविदोंके मतानुसार अंशुवर्मा ६३८ ई॰में राज्य करते थे। किन्तु उस पार्वतीय वंशावली और प्रत्नतत्त्वविदोंका मत समीचीन जैसा मालूम नहीं पड़ता है।

भोजमादिष्टोले शिलालेखके अनुसार अंशुवर्मा और लिच्छविराज शिवदेव दोनों समसामयिक हैं। वह लेख ३१६ से एक अनिर्दिष्ट सम्वत्में खुदा गया है। उन यूरोपीय प्रत्नतत्त्वविदोंने उस अङ्कको गुप्त सम्वत्ज्ञापक और उसके बाद अंशुवर्मा प्रभृतिके शिलालेखमें जो अङ्क हैं उन्हें वर्ष सम्वत्‌ज्ञापकके जैसा स्थिर किया है।

हर्षवर्द्धनके समय चीनपरिव्राजक युएनचुयाङने नेपाल की यात्रा की थी। उन्होंने लिखा है, कि महाराजा अंशुवर्मा उनसे बहुत पहले इस लोकसे चल बसे हैं। पार्वतीय वंशावलीमें लिखा है, कि अंशुवर्माने ६८ वर्ष तक राज्य किया था उनके राज्याभिषेकके पहले विक्रमादित्य नेपाल जा कर अपना सम्वत् प्रचलित कर गये हैं। फ्लिट प्रभृति पुराविदोंने पार्वतीय वंशावलीके आधार पर उस विक्रमादित्यको वर्ष बतलाया है। जब उन वंशावलीके मतसे अंशुवर्माने ६८ वर्ष राज्य किया है और उनके पहले सम्वत् प्रचलित हुआ था तथा वर्षके समसामयिक चीन परिव्राजकके अनुसार उनके नेपाल जानेके पहले ही अंशुवर्माकी मृत्यु हो चुकी थी तो यह सम्भव है, कि हर्षदेवसे नेपालका सम्वत् प्रचार हुआ हो चीनपरि-व्राजक युएनचुयाङ ६३० ई॰का पूर्वी फरवरीको नेपाल गये थे। नेपालमें अंशुवर्माके समयके जो बहुतसे शिलालेख आविष्कृत हुए हैं, उनमें ३८ और ४५ अङ्क खुदे हुए हैं। यूरोपीय पुराविदोंने उन अङ्कोंको हर्ष-सम्वत्‌ज्ञापक माना है। डाक्टर बुहार और फ्लीट् साहबके मतसे ६०६ ई॰में हर्ष सम्वत् आरम्भ हुआ है। अतएव उनके मतसे अंशुवर्मा (६०६+३८)=६४४ ई॰में विद्यमान थे, किन्तु चीनपरिव्राजकका वर्णनाके अनुसार ६३० ई॰के पहले ही अंशुवर्माकी मृत्यु हुई थी। ऐसी हालतमें अंशुवर्माके शिलालेख वर्णित अङ्कोंको हर्ष सम्वत्‌ज्ञापक नहीं मान सकते हैं।

पहले अंशुवर्माके समसामयिक शिवदेवका जो सम्वत् अङ्कित शिलालेख पाया गया है वह गुप्त-सम्वत्‌ज्ञापक है तथा अंशुवर्माके शिलालेखके अङ्कको गुप्तसम्वत् ज्ञापक मान लें तो कोई आपत्ति नहीं। ३१९ ई॰में चन्द्रगुप्तने विक्रमादित्य गुप्तसम्वत् प्रचार किया है। उन्होंने नेपालके लिच्छवि राजकन्या कुमारदेवीसे विवाह किया था। गुप्तवंश देखो। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं, कि विवाह करके वे नेपालमें अपना सम्वत् प्रचार कर आये थे। इस शिवदेवके शिलालेखके अनुसार ३१६ (गुप्त) सम्वत् अर्थात् ६३५ ई॰में अंशुवर्माका पराक्रम नेपालमें बहुत बढ़ा चढ़ा था। उसने पहले ही (अर्थात् ३१८+३४=३५२ ई॰के कुछ पहले) वे महाराजको उपाधिसे भूषित हुए थे।

अंशुवर्माके बाद उस वंशमें कौन कौन राजा हुए उनका विशेष परिचय सामयिक शिलालेखमें भी नहीं पाया जाता है। पार्वतीय वंशावलीके मतसे अंशुवर्माके बाद उनके पुत्र कृतवर्मा कृतवर्माके बाद क्रमशः भीमार्जुन, नन्ददेव, वीरदेव, चन्द्रकेतुदेव, नरेन्द्रदेव, वरदेव, शङ्करदेव वर्द्धमानदेव, बलवामदेव, भोजदेव, लक्ष्मीकामदेव और जयकामदेवने राजा होते गये।

Fleet's Corpus Inscript onum Indicarum Vol III p 181 and Dr. Hoernle's Synchronistic Table in Journal of the Asiatic Society of Bengal for 1889 pt I

Cunningham's Ancient Geography of India, p [illegible]

† Buhler's Note on the twenty-three inscriptions from Nepal p 13 and fleet's Inscriptions of the Gupta kings

अन्तिम राजाके कोई पुत्र न रहनेके कारण उनकी मृत्युके बाद नवाकोटके ठाकुरोवंशीय भास्करदेव राज्यसिंहासन पर बैठे। इनके बाद यथाक्रम बलदेव, पद्मदेव, नागार्जुनदेव और शङ्करदेव राजा हुए। शङ्करदेवकी मृत्युके बाद अंशुवर्माके वंशीय और एक शाखाभुक्त वामदेव राज्यसिंहासन पर आरूढ़ हुए। इनके बाद पुत्रादिक्रमसे वामदेव, हर्षदेव, सदाशिवदेव, मानदेव, नरसिंहदेव, नन्ददेव, रुद्रदेव, मित्रदेव, अरिदेव, अभय मल्ल और आनन्दमल्ल राजा कहलाये। आनन्दमल्लके समयमें कर्णाटक वंशीय नान्यदेवने नेपाल राज्य पर आक्रमण कर उसे अपने अधिकारमें कर लिया। इसी समयसे ठाकुरोवंशका राज्य जाता रहा। अब भी नेपालके अनेक स्थानोंमें ठाकुरीवंशका वास है। उनकी अवस्था हीन होने पर भी वे अपनेको राजवंशीयके जैसा सम्मानित और गौरवान्वित समझते हैं।

ठाट (हिं० पु०) १ लकड़ी या बाँसकी फट्टियोंका बना हुआ परदा। २ ढाँचा, पंजर। ३ वेश, विन्यास शृङ्गार, रचना, सजावट। ४ आडम्बर, दिखावट धूमधाम। ५ आराम, सुख, मजा। ६ प्रकार, शैली, ढब, तरीका। ७ आयोजन, सामान, तैयारी। ८ सामग्री, सामान। ९ युक्ति, उपाय। १० कुश्तीमें खड़े होनेका ढंग, पैतरा। ११ कबूतर या सुरगीका प्रसन्नतासे पर झाड़नेका ढंग। १२ सितारका तार। १३ समूह, झुंड। १४ वह मांसका पिण्ड जो बैल या सांडको गरदनके ऊपर रहता है, कूबड़।

ठाटना (हिं० क्रि०) १ निर्मित करना, संयोजित करना, बनाना। २ अनुष्ठान करना, ठानना। ३ सुसज्जित करना, सजाना, सँवारना।

ठाटबंदी (हिं० स्त्री०) छप्पर या परदे आदि बनानेका काम, ठाट, टट्टर।

ठाटबाट (हिं० पु०) १ सजावट, बनावट सजधज। २ आड़म्बर, दिखावट, तड़क भड़क।

ठाटर (हिं० पु०) १ ठाट, टट्टर, पट्टी। २ ठठरी, पंजर। ३ ढाँचा। ४ टट्टरकी छतरी जिस पर कबूतर आदि बैठते हैं। ५ शृङ्गार, सजावट, बनाव।

ठाठर—भविष्यब्रह्मखण्ड-वर्णित स्वर्गभूमिके मध्यभागमें काशीसे एक योजन पश्चिममें अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। मुसलमानराजाके समय यहां बहुतसे ठठेरे या कसेरे रहते थे इसी कारण ग्रामका नाम ठाठर पड़ा है। यहांके राजा भूमिहार जातिके थे। गुलाबसिंह नामक एक मनुष्यने मुसलमानोंको भगा कर यहां पर कुछ काल तक राज्य किया था। यहांका कोटगढ़ उन्होंका बनाया हुआ है। उनके बाद गोतमगोत्रीय राजपूतोंने इसे अपने अधिकारमें लाया। अभी पूर्व समृद्धि लुप्त हो गई है। आजकल यहां केवल कृषकोंका वास है।

(ब्रह्मखं० ५७ २३७ २४६)

ठाठर (हिं० पु०) नदीका गहरा स्थान जहां बाँस या लग्गी न लगती हो।

ठाड़ा—काशीके पश्चिम नन्दा नदीके तीर पर अवस्थित एक ग्राम। यहां हिन्दू और मुसलमानोंमें घमसान लड़ाई हुई थी। (ब्रह्मखं० ५७।२३-२४)

ठाड़ा (हिं० पु०) खेतकी एक प्रकारकी जोताई।

ठाड़ेश्वरी—एक प्रकारके संन्यासी। वे दिनरात खड़े रहते हैं और इसी अवस्थामें भोजन इत्यादि सब काम करते हैं। सामनेमें किसी चीजका सहारा मिल जानेसे ही ये सो जाते हैं।

ठान (हिं० स्त्री०) १ अनुष्ठान, समारम्भ, कामका शुरू होना। २ कार्य शुरू किया हुआ काम। ३ दृढ़संकल्प, पक्का इरादा। ४ चेष्टा, अंदाज।

ठानना (हिं० क्रि०) १ अनुष्ठित करना, किसी काम को मुस्तैदीसे शुरू करना। २ स्थिर करना, दृढ़संकल्प करना, पक्का करना।

ठार (हिं० पु०) १ अत्यन्त शीत, गहरी सरदी। २ हिम, पाला।

ठाल (हिं० स्त्री०) १ जीविकाका अभाव, बेकारी। २ अवकाश, फुरसत।

ठाला (हिं० पु०) १ किसी प्रकारके रोजगारका न रहना। २ जीविकाका अभाव, रुपये पैसेकी कमी।

ठाली (हिं० वि०) १ रक्त, खाली, बेकाम।

ठावँ (हिं० स्त्री०) ठाव देखो।

ठासा (हिं० पु०) लोहारोंका एक यन्त्र। इससे वे संकीर्ण स्थानमें लोहेको कोर निकालते और उभारते हैं।

ठाइफ़ायड (हि० पु०) मात मात्राओंका मुद मथा पना ताप। इसमें घोर थापका घोतामें बहुत थोड़ा अन्तर है।

ठिंगना (हि० वि०) कम ऊँचाईका छोटे कदका नाटा।

ठिठ (हि० स्त्री०) धातुको ठहरका बना हुआ छोटा टुकड़ा जो केवल जोड़ लगानेके काममें आता है टिकली।

ठिकरौर (हि० स्त्री०) जहाँ ठीकरे आदिसे आच्छादित भूमि, वह जमीन जहाँ अधिक ठीकरे आदि पड़ने पड़े हों।

ठिकाई (हि० स्त्री०) जिसमें कम कर ठीक ठीक बैठ लिया जाय।

ठिकाना (हि० पु०) १ स्थान और जगह पता। २ निवास स्थान, ठहरनेकी जगह। ३ आश्रयस्थान, निर्वाह करनेका ठौर। ४ प्रमाण ठीक। ५ प्रबन्ध आयोजन बन्दोबस्त। ६ पारावार, अन्त, हद। (क्रि०) ० लगना ठहरना, पहुँचना।

ठिठकना (हि० क्रि०) १ गतिमें एकाएक रुक जाना एक दम ठहर जाना। २ लज्जित होना न हिलना न डोलना।

ठिठरना (हि० क्रि०) अधिक शीतसे संकुचित होना, जाड़ेसे अकड़ना।

ठिठुरना (हि० क्रि०) ठिठरना देखो।

ठिनकना (हि० क्रि०) १ छोटे छोटे लड़कोंका ठहर ठहर कर रोनेका शब्द निकालना। २ ठनकने रोना, रोनेका नखरा करना।

ठिर (हि० स्त्री०) कठिन शीत गहरा जाड़ा।

ठिरना (हि० क्रि०) अधिक शीतसे संकुचित होना जाड़ेसे अकड़ना।

ठिलना (हि० क्रि०) १ बलपूर्वक किसी ओर बढ़ाया जाना, ठेला जाना। बलपूर्वक बढ़ना घुसना, धँसना।

ठिलिया (हि० स्त्री०) गगरी, छोटा घड़ा।

ठिलुवा (हि० वि०) निकम्मा, निठल्ला, बेकाम।

ठिठो (हि० स्त्री०) ठिठोली देखो।

ठिठोली (हि० स्त्री०) विनोद मजाक दिल्लगी।

ठीक (हि० वि०) १ वास्तविक उचित यथा। २ यथायुक्त अच्छा, भला चंगा। ३ शुद्ध सही। ४ जिसमें कुछ त्रुटि न हो अच्छा, दुरुस्त। ५ जिसको नाप बैठ जानेवाला, जो ढीला न हो। ६ स्थिर निश्चित पक्का। ७ निर्दिष्ट जिसमें कुछ फर्क न पड़े। निश्चित स्थिर पक्का। (पु०) ८ दृढ़ बात पक्की बात। १० स्थिर प्रबन्ध, पक्का आयोजन बन्दोबस्त। ११ जोड़, जोड़, टोटल मीज़ान।

ठीकठाक (हि० पु०) १ निश्चित प्रबन्ध, बन्दोबस्त। २ जीविकाका प्रबन्ध, ठौर ठिकाना। ३ निश्चित ठहराव। (वि०) ४ अनुकूल, बन कर तैयार।

ठीकड़ा (हि० पु०) ठीकरा देखो।

ठीकरा (हि० पु०) १ मट्टीके बरतनका टूटा फूटा टुकड़ा। २ भीख माँगनेका, पुराना बरतन। ३ भिक्षापात्र, भीख माँगनेका बरतन।

ठीकरी (हि० स्त्री०) १ मट्टीके बरतनका टूटा फूटा टुकड़ा। २ तुच्छ वस्तु निकम्मी चीज। ३ चिलम पर रखे जानेवाला मट्टीका तवा। ४ स्त्रियोंकी योनिका उभरा हुआ तल भाग।

ठीका (हि० पु०) १ कुछ धन आदिके बदलेमें किसीके किसी कामको पूरा करनेका जिम्मा। २ किसी वस्तुका कुछ कालके लिये कुछ रुपया देकर इस शर्त पर लेना कि वह उस वस्तुकी आमदनी वसूल करे और कुछ अपना मुनाफा काट कर बराबर मालिकको देता जाय इजारा।

ठीकेदार (हि० पु०) वह जो ठीका देता हो।

ठीठा (हि० पु०) ढेंड़ देखो।

ठीठी (हि० स्त्री०) हँसीका शब्द।

ठीहँ (हि० स्त्री०) हिनहिनाहटका शब्द।

ठीहा (हि० पु०) १ लकड़ीका कुन्दा जिसे लोहार, बढ़ई आदि जमीनमें गाड़ देते हैं। इसका थोड़ासा भाग जमीनके ऊपर रहता है जिस पर वे वस्तुओंको रख कर पीटते गढ़ते छीलते हैं। २ बढ़ईयोंका लकड़ी काटनेका कुन्दा। इसमें वे लकड़ीको रख कर गढ़ा कर छीलते और काटते हैं। ३ बैठनेका ऊँचा स्थान बैठनेकी गद्दी। ४ सीमा हद।

ठुंठ (हि० पु०) १ सूखा हुआ गिरा हुआ पेड़। २ वह मनुष्य जिसका हाथ कटा हो, लूला।

ठुकना (हिं॰ क्रि॰) १ आघात सहना, चोट खाना, पिटना। २ चोटसे धँसना गड़ना। ३ ताड़ित होना मार खाना। ४ परास्त होना, हारना। ५ घाटा लगना नुकसान होना। ६ पैरमें बेड़ी पड़ना। ७ दाखिल होना।

ठुकवाना (हिं॰ क्रि॰) १ ठोकर मारना लात मारना। २ खराब जान कर पैरसे हटाना।

ठुकवाना (हिं॰ क्रि॰) १ किसी दूसरेसे ठोकनेका काम कराना। २ गड़वाना, धँसवाना। ३ प्रसंग करना।

ठुड्डी (हिं॰ स्त्री॰) १ चिबुक, ठोढ़ी। २ भूना हुआ दाना, ठोर्री।

ठुनठुन (हिं॰ पु॰) १ धातुके टुकड़ोंसे बजनेका शब्द। २ छोटे छोटे लड़कोंके ठहर ठहरके रोनेका शब्द।

ठुमक (हिं॰ वि॰) नखरेबाजी ठमक भरी।

ठुमुक ठुमुक (हिं॰ क्रि॰ वि॰) छोटे छोटे बच्चोंके जैसा फुदकते या रह रह कर कूदते हुए।

ठुमकना (हिं॰ क्रि॰) १ कूदते हुए चलना। २ पैरमेंके घुंघरू बजाते हुए चलना।

ठुमकारना (हिं॰ क्रि॰) धपका देना, झटका देना।

ठुमकी (हिं॰ स्त्री॰) १ धपका, झटका। २ रुकावट। ३ छोटी खरी पूरी। नाटी, छोटे डीलकी।

ठुमरी (हिं॰ स्त्री॰) १ छोटासा गीत। इसमें चार मात्राका ताल लगता है, दो ताल और दो फाँक। इसकी बोली इस प्रकार है—

	⊥	०	१	०	
(१)	धिधा,	किटि,	नेधा	किटि	: :
(२)	तावाकि	धुन्	धा	धुन्ना	: :
(३)	धाक	धिन्	धिधा,	गेदिन	: :
(४)	धागे,	धिनधिन्,	धागे,	धिन्धिन्	: :

२ गप, अफवाह। (सङ्गीतरत्ना॰)

ठुरियाना (हिं॰ क्रि॰) सरदीसे ठिठुरना।

ठुर्री (हिं॰ स्त्री॰) भूना हुआ दाना जो भूनने पर न खिले।

ठुसकना (हिं॰ क्रि॰) ठुसकी मारना।

ठुसकी (हिं॰ स्त्री॰) ठुस शब्द करके पादनेकी क्रिया।

ठुसना (हिं॰ क्रि॰) १ कस कर भरा जाना। २ मुश्किलसे घुसना।

ठुसवाना (हिं॰ क्रि॰) १ कस कर भरवाना। २ जोरसे घुसवाना।

ठुसाना (हिं॰ क्रि॰) १ कस कर भरवाना। २ जोरसे घुसवाना। ३ अच्छी तरह खिलाना।

ठूँग (हिं॰ स्त्री॰) १ चोंच, ठोर। २ चोंचका प्रहार। ३ टोना।

ठूँगा (हिं॰ पु॰) ठूँग देखो।

ठूँठ (हिं॰ पु॰) १ सूखा वृक्ष, सूखा पेड़। २ कटा हुआ हाथ, टुण्ड। ३ ज्वार, बाजरे, ऊख आदिकी फसल को नष्ट करनेवाला एक कीड़ा।

ठूँठा (हिं॰ वि॰) १ जिसमें पत्तियाँ और टहनियाँ न हों। २ कटे हुए हाथका, लूला।

ठूँठी (हिं॰ स्त्री॰) फसल काट लिये जाने पर खेतमें बची हुई खूँटी।

ठूँसना (हिं॰ क्रि॰) ठूसना देखो।

ठूँसा (हिं॰ पु॰) ठेंगा देखो।

ठूठ (हिं॰ पु॰) पटवोंकी टेढ़ी कील। इस पर वे गहने अटका कर उन्हें गूँथते हैं।

ठूसना (हिं॰ क्रि॰) १ अच्छी तरह भर देना। २ घुसेड़ना, जोरसे घुसाना। ३ पेट भर कर खाना।

ठेगना (हिं॰ वि॰) जिसकी ऊँचाई कम हो, नाटा।

ठेंगा (हिं॰ पु॰) १ अंगूठा। २ शिश्न लिङ्ग। ३ सोंटा, डंडा, गदका। ४ जुगोंका सहसून।

ठेंगुर (हिं॰ पु॰) नटखट मवेशियोंके गलेमें बाँध दिये जानेका काठका लंबा कुंदा।

ठेंवा (हिं॰ पु॰) ठेपा देखो।

ठेंठ (हिं॰ स्त्री॰) ठेठी देखो।

ठेंठी (हिं॰ स्त्री॰) १ कानकी मैल। २ वह वस्तु जिससे कानका छेद बंद किया जाता है। ३ वह वस्तु जिससे शीशी बोतल आदिका मुँह बंद किया जाता है, काग।

ठेपी (हिं॰ स्त्री॰) ठेठी देखो।

ठेक (हिं॰ स्त्री॰) १ सहारा, ओठंगनेकी चीज। २ टेक, चाँड़। ३ वह वस्तु जिसके देनेसे दोनों वस्तु जकड़ कर बैठ जाय और तनिक भी हिलने डोलने न पावे, पच्चड़।

३ पेंदा, तला। ५ पनाज व रसोईका टोकरियाँ आदिके लिए चुना स्थान। ६ घोड़ेकी एक चाल। ७ वह बलनी जो इधर उधर बरतनमें लगी रहती है। ८ एक प्रकारको मोटो मसहरी। ९ चड़ी या काठोंको मामो।

ठेकना (हि॰ क्रि॰) १ सहारा लेना, सहारा लेना। २ टिकना, रखना, ठहरना।

ठेकवा बाँस (हि॰ पु॰) बंगाल और आसाममें होने वाला एक प्रकारका बाँस। यह छाजन तथा चटाई आदिके बनानेके काममें आता है।

ठेका (हि॰ पु॰) १ घोठगनेकी वस्तु, टेक। २ बैठक, अड्डा। ३ तबलेमें थाप। ४ ढोलकी ताल। ५ ठोकर, धक्का। ६ ठीका देखो।

ठेकाई (हि॰ स्त्री॰) कपड़े लगायेकी छपाई।

ठेकी (हि॰ पु॰) सहारा, टेक।

ठेकनी (हि॰ स्त्री॰) वह लकड़ी जिससे सहारा लगा जाता है।

ठेठ (हि॰ वि॰) १ निपट, बिलकुल। २ शुद्ध, खालिस, निर्मिश्र, निर्मल खास। ३ ग्रामीण बोली। ४ प्रारम्भ, शुरू।

ठेप (हि॰ स्त्री॰) १ घंटोंमें ससा जानेमें लायक कोने वालोंका बड़ा टुकड़ा। (पु॰) २ होपना विराम।

ठेपी (हि॰ स्त्री॰) वह वस्तु जिससे शीशी या बोतलका मुंह बंद किया जाता है, काग।

ठेलना (हि॰ क्रि॰) ठेलना, धकेलना।

ठेला (हि॰ पु॰) १ धक्का, आघात, टक्कर, धक्का। २ मनुष्योंसे ठेली जानेवाली एक प्रकारकी गाड़ी। ३ छिछली नदियोंमें लग्गीसे चलाई जानेवाली नाव। ४ धक्कम धक्का, भीड़में एकके ऊपर दूसरेका गिरना।

ठेलाठेल (हि॰ स्त्री॰) बहुतसे मनुष्योंका एकके ऊपर दूसरेका गिरना।

ठेस (हि॰ स्त्री॰) आघात, चोट, ठोकर।

ठेसना (हि॰ क्रि॰) ठूसना देखो।

ठेसमठेस (हि॰ क्रि॰-वि॰) बिना जगहके अनाजोंका भरना।

ठेहरी (हि॰ स्त्री॰) दरवाजोंका पल्लोंको चूलमें गड़ी हुई छोटीसी लकड़ी।

ठेहो (हि॰ स्त्री॰) मारो हुई ईख।

ठैंगर (हि॰ पु॰) गोमूत्री जातिका एक छोटा पेड़। जब यह डालोंके साथ उबाला जाता है तो एक प्रकार का कत्था जैसा रस तैयार होता है।

ठैराई (हि॰ स्त्री॰) ठहराई देखो।

ठोंक (हि॰ स्त्री॰) १ प्रहार, आघात। २ टोंकने पुन ठोंक कर ठस करनेकी क्रिया।

ठोंकना (हि॰ क्रि॰) १ आघात पहुंचाना, प्रहार करना, पीटना। २ ठोकर मारना, मारना पीटना। ३ गाड़ना। ४ पेश करना, दाखिल करना, दायर करना। ५ बेड़ियोंमें जकड़ना, काठमें डालना। ६ तबला बजाना। ७ जमाना, जड़ना। ८ थपथपाना, थपथप करना। ९ थपथपाना, ताल मारना।

ठोंग (हि॰ स्त्री॰) १ चोंच। २ चोंचका प्रहार। ३ अंगुलोंकी ठोकर, ठुंका।

ठोंगना (हि॰ क्रि॰) १ चोंचसे आघात पहुंचाना। २ अंगुलोंसे ठोकर मारना।

ठोंठा (हि॰ पु॰) ज्वार, बाजरा और ईखको नुकसान पहुंचानेवाला एक कीड़ा।

ठोकवा (हि॰ पु॰) आमको गुठलीका आवरण।

ठोकना (हि॰ क्रि॰) ठोंकना देखो।

ठोकर (हि॰ स्त्री॰) १ चलते समय किसी कड़ी वस्तुके पैरोंमें चोट लगना, ठेस। २ रास्तेमें पड़ा हुआ उभरा पत्थर। ३ पैर या जूतेका मारा आघात। ४ कड़ा प्रहार, धक्का। जूतेके सामनेका भाग। ६ कुश्तीका एक पेंच।

ठोकरी (हि॰ स्त्री॰) वह गाय जिसे बच्चा दिये कई महीने हो चुके हों। ऐसी गायका दूध गाढ़ा और मीठा होता है।

ठोकवा (हि॰ पु॰) ठेकवा देखो।

ठोट (हि॰ वि॰) जड़, मूर्ख, गावदी।

ठोड़ी (हि॰ स्त्री॰) चिबुक, दाढ़ी, ठुड्डी।

ठोढ़ी (हि॰ स्त्री॰) ठोड़ी देखो।

ठोप (हि॰ पु॰) बिन्दु, बूंद।

ठोर (हि॰ पु॰) एक प्रकारकी मिठाई।

ठोसा (हि॰ पु॰) १ रेशम फेरनेवालोंका एक औजार, यह लकड़ीको चौकोर छोटी पटरीके रूपमें होता है। २ मनुष्य, आदमी।

ठोस (हिं० वि०) १ जिसका मध्य भाग खाली न हो, जो पोला या खोखला न हो। २ दृढ़, मजबूत। (पु०) ३ ईर्ष्या डाह, कुढ़न।

ठोसा (हिं० पु०) अंगूठा।

ठौका (हिं० पु०) पानी जमा होनेका गड्ढा। किसान इसी गड्ढेका पानी दौरीसे ऊपर उलीच कर जमीन सींचते हैं।

ठौर (हिं० पु०) स्थान, जगह, ठिकाना। २ अवसर घात, दाव, मौका।

ड

ड—संस्कृत और हिन्दी वर्णमालाका तेरहवां व्यञ्जनवर्ण और ट-वर्गका तीसरा अक्षर। इसके उच्चारणमें आभ्यन्तर प्रयत्न जिह्वामध्य द्वारा मूर्द्धस्थान स्पर्श और वाह्यप्रयत्न संवार, नाद, घोष एवं अल्पप्राण लगता है। मातृकान्यासमें दक्षिणपादगुल्फमें न्यास होता है।

वर्णोद्धारतन्त्रमें इसकी लेखनप्रणाली इस प्रकार लिखी है—"ड"। इस अक्षरमें लक्ष्मी, सरस्वती और भवानी सर्वदा वास करते हैं। यह ब्रह्मरूप और महाशक्ति माता कहा गया है।

वर्णाभिधानतन्त्रमें इसके वाचक शब्द लिखे हैं; यथा—स्मृति, दारुक, निन्दिपिणी, योगिनी, प्रिय, कौमारी, शङ्कर, त्रास, त्रिवक्र, नदक, ध्वनि, दुरूह, जटिली, भीमा, द्विजिह्व, पृथिवी, सती, कौरगिरि, क्षमा, कान्ति, नाभि, लोचन।

इसका स्वरूप—यह सदा त्रिगुणयुक्त, पञ्च देवमय, पञ्च प्राणमय, त्रिशक्ति एवं त्रिबिन्दुयुक्त, चतुर्ज्ञानमय, आत्मतत्त्वयुक्त और पीतविद्युल्लताकार है। (कामधेनुतन्त्र) इसका ध्यान—

"जवासिन्दूरसंकाशा वराभयकरा पराम्।
त्रिनेत्रां वरदा नित्यां परमोक्षप्रदायिनीं॥
एवं ध्यात्वा ब्रह्मरूपा तन्मन्त्रं दशधा जपेत्।"

(वर्णोद्धारतन्त्र)

इसका वर्ण जवा और सिन्दूरसदृश है। यह अभयप्रदायक, त्रिनेत्र, वरदायक, नित्य और ब्रह्मरूप है। इसका ध्यान करके जप करनेसे साधक शीघ्र ही अभीष्ट प्राप्त कर सकता है। पद्यको आदिमें इसका विन्यास किया जाता है।

"ड: शोभा हो विशोभा" (वृत्त० र० टी०)

ड (सं० पु०) डयते उड्डीयते भक्तानां हृदयाकाशे यः। डी बाहुलकात् ड। १ शिव, महादेव। २ शब्द, आवाज। ३ त्रास, डर। ४ वाड़वाग्नि (स्त्री०) डाकिनी।

डंक (हिं० पु०) १ वह विषैला कांटा जो भिड, बिच्छू मधुमक्खी आदि कीड़ोंके पीछेमें रहता है। जब वे गुस्साते तो इसी कांटेको जीवोंके शरीरमें चुभा देते हैं। भिड मधुमक्खी आदि उड़नेवाले कीड़ेका कांटा नलीके रूपमें होता है। इसी हो कर विषकी गांठसे विष निकल कर चुभे हुए स्थानमें प्रवेश करता है। यह कांटा सिर्फ मादा कीड़ोंको होता है। २ निब कलमकी जीभा। ३ वह स्थान जहां डंक मारा गया हो।

डंकदार (हिं० वि०) जिसके डंक हो, डंकवाला।

डंका (हिं० पु०) १ तांबे या लोहेके बरतनों पर चमड़ा मढ़ कर बनाया हुआ एक प्रकारका बाजा। पूर्व समय यह लड़ाईके स्थानमें बजाया जाता था। २ वह नियत घाट जहां जहाज आ कर ठहरता है।

डंकिनी (हिं० स्त्र) डाकिनी देखो।

डंकी (हिं० स्त्री०) १ कुश्तीका एक पेंच। मलखंभकी एक कसरत।

डंकुर (हिं० पु०) एक पुराना बाजा।

डंग (हिं० पु०) अधपका कुहारा।

डंगम (हिं० पु०) एक पेड़का नाम। यह दारजिलिङ्गके आसपास तथा खसियाकी पहाड़ियोंमें बहुत पाया जाता है। इसके पत्ते प्रति वर्ष जाड़ेकी मौसिममें झड़ जाते

है। इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है।

डंगर (हि॰ पु॰) मवेशी, चौपाया।

डंगरी (हि॰ स्त्री॰) १ लम्बी ककड़ी, कांकरी। एक प्रकारकी चुड़ैल, डाइन। ३ पूर्वीय हिमालय सिक्किम, भूटानसे लगा कर चटगांव तक होनेवाला एक प्रकारका मोटा बेंत। इससे बहुत अच्छी अच्छी छड़ियां और डंडे निकालते हैं। इससे टोकरे भी बनाये जाते हैं।

डंगवारा (हि॰ पु॰) वह सहायता जो किसान लोग खेतकी जोताई बोआईमें एक दूसरेको देते हैं, हूँड़।

डंगूज्वर (अ॰ पु॰) एक प्रकारका ज्वर। इसमें शरीर पर चकत्ते पड़ जाते हैं।

डंघोरी (हि॰ स्त्री॰) एक पेड़। इसका काठ बहुत मजबूत और चमकदार होता है। यह आसाम और बंगालमें बहुत उपजता है।

डंठल (हि॰ पु॰) छोटे पौधोंकी पेड़ी और शाखा।

डंठी (हि॰ स्त्री॰) डंठल।

डंड (हि॰ पु॰) १ लाठी, सोटा। २ बाहु दण्ड बाहु। एक प्रकारका व्यायाम जो हाथ पैरके पंजोंके बल पट पड़ कर किया जाता है।

डँड़ (हि॰ पु॰) दण्ड देखो।

डंडपेल (हि॰ पु॰) १ वह जो खूब डंड लगाता हो, कसरती, पहलवान्। २ बलवान् मनुष्य।

डंडस (हि॰ स्त्री॰) बंगाल और बरमामें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली। यह लगभग १८ इंच लम्बी होती है। यह हमेशा पानीके ऊपर अपनी चोंचें निकाल कर तैरती है।

डँडवार (हि॰ पु॰) १ बहुत दूर तक फैली हुई नीची दीवार। २ दक्षिणकी वायु, दक्खिनैया।

डँडवारी (हि॰ स्त्री॰) किसी स्थानको घेरनेके लिये उठाई जानेवाली कम ऊंची दीवार।

डँडहरा (हि॰ स्त्री॰) बंगाल, मध्यभारत और बरमामें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली। इसकी लम्बाई लगभग १ इंच तक होती है।

डँडहरी (हि॰ स्त्री॰) आसाम बंगाल और उड़ीसा और दक्षिण भारतकी नदियोंमें पाई जानेवाली एक प्रकारकी छोटी मछली।

डँड़िया (हि॰ पु॰) बैलोंकी पीठ पर लदे हुए दो बोरोंको फसाए रखनेका एक डंडा।

डंडा (हि॰ पु॰) १ लकड़ी या बांसका सीधा लम्बा टुकड़ा। २ लाठी, सोटा। ३ चारदीवारी, डांड़।

डंडाडोली (हि॰ स्त्री॰) छोटे छोटे लड़कोंका एक खेल।

डंडाम (हि॰ पु॰) दुन्दुभि, नक्कारा।

डँड़िया (हि॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी साड़ी जिसमें बेल बूटेकी ऊंची लकीरें बना कर टांकी गई हो। २ गेहूं के पौधेकी पत्ती सींक। (पु॰) ३ वह जो कर वसूल करता हो।

डँडियाना (हि॰ क्रि॰) दो कपड़ोंकी लंबाईके किनारों को एकमें सीना।

डंडी (हि॰ स्त्री॰) १ छोटी पतली लम्बी लकड़ी। २ मुठिया, हत्था, दस्ता। ३ तराजूकी सीधी लकड़ी। इसीमें रस्सियां लटका कर पलड़े बन्धे रहते हैं। ४ पत्ता फूल या फल लगा हुआ लम्बा डंठल, नाल। ५ फूलके नीचेका लम्बा हिस्सा। ६ हरसिंगारका फूल। ७ पहाड़ों पर चलनेवाली एक प्रकारकी सवारी। यह डंडेमें बन्धी हुई झोलीकी आकारकी होती है, झप्पा। ८ लिङ्गेन्द्रिय। ९ वह संन्यासी जो दण्ड धारण करता हो। (वि॰) १० जो एक दूसरेसे झगड़ा लगाता हो, चुगलखोर।

डँडीर (हि॰ स्त्री॰) सीधा रेखा।

डंडोरना (हि॰ क्रि॰) ढूंढ़ना, उलट पुलट कर खोजना।

डंडोत् (हि॰ पु॰) दण्डवत् देखो।

डंबेल (अं॰ पु॰) १ कसरत करनेकी लोहे या लकड़ी की मुंगरी, इसके दोनों सिरे लट्टूकी तरह गोल होते हैं। इसको हाथमें ले कर तानते हैं। २ इस प्रकारके लट्टूसे की जानेवाली कसरत।

डँवरुआ (हि॰ पु॰) वातका एक रोग, गठिया।

डमरूआमान (हि॰ पु॰) धातु या लकड़ीके दो टुकड़ों को मिलानेके लिये एक प्रकारका जोड़। यह जोड़ बहुत दृढ़ होता और खींचनेसे भी नहीं उखड़ता है।

डंवाडोल (हि॰ वि॰) चञ्चल घबराया हुआ।

डंस (हि॰ पु॰) १ बड़ा मच्छर, डांस। २ वह स्थान

जहां डंक चुभा हो या सांप आदि विषैले कीड़ोंका दांत चुभा हो।

डंसना (हिं॰ क्रि॰) डसना देखो।

डक (हिं॰ पु॰) १ एक प्रकारका पतला सफेद टाट। २ एक प्रकारका मोटा कपड़ा।

डकई (हिं॰ स्त्री॰) केलेकी एक जाति।

डकरा (हिं॰ पु॰) काली मट्टी।

डकराना (हिं॰ क्रि॰) बैल या भैंसेका बोलना।

डकार (सं॰ पु॰) डकारप्रत्ययः, ड स्वरूप वर्ण, ड अक्षर।

डकार (हिं॰ स्त्री॰) १ मुखसे निकला वायुका उद्गार। २ बाघ सिंह आदिकी गरज, दहाड़, गुर्राहट।

डकारना (हिं॰ क्रि॰) १ डकार लेना। २ हजम करना, पचा जाना। ३ बाघ सिंह आदिका गरजना, दहाड़ना।

डकिकि—उर्दूके एक प्रसिद्ध कवि। ये अमीर मनसूर सामानीके पुत्र द्वितीय अमीरनूहके दरबारमें रहते थे। उन्हींके अनुरोधसे इन्होंने 'शाहनामा' लिखना आरम्भ कर दिया था। लेकिन उसे समाप्त करनेके पहले ही ये अपने एक भृत्यके साथसे मार डाले गये। इनका रचना प्रायः ९८० ई॰में साबित होता है।

डकैत (हिं॰ पु॰) बलपूर्वक दूसरेका माल छीननेवाला लुटेरा।

डकैती (हिं॰ पु॰) डकैतका काम, लूट मार, छापा।

डकोत (हिं॰ पु॰) वह जो सामुद्रिक, ज्योतिष आदिका ढोंग रचता हो, भड्डरी। इनकी एक पृथक् जाति है। ये अपनेको ब्राह्मण बतलाते हैं, पर ब्राह्मण इन्हें नीच समझते हैं।

डक्कारी (हिं॰ स्त्री॰) चाण्डालकी ढक्का, चाण्डालकी एक ढोल।

डग (हिं॰ पु॰) १ कदम, फाल। २ उतनी दूरी जितनी पर एक स्थानसे दूसरे कदम पड़े, पैंड।

डगडगाना (हिं॰ क्रि॰) हिलना, कांपना डोलना।

डगडौर (हिं॰ वि॰) चलायमान, हिलनेवाला।

डगण (सं॰ पु॰) छन्दोग्रन्थोक्त पांच भागोंमें विभक्त गणविशेष। यथा (ऽऽ गज १) (॥ऽ रथ २) (।ऽ। अश्व ३) (ऽ॥ पदाति ४) (॥॥ पत्ति ५)

डगमगाना (हिं॰ क्रि॰) १ इधर उधर हिलना डोलना, थरथराना लड़खड़ाना। २ विचलित होना, किसी बात पर कायम न रहना।

डगर (हिं॰ स्त्री॰) मार्ग, रास्ता, पथ, पैंड़ा।

डगरा (हिं॰ पु॰) १ मार्ग, रास्ता। २ टोकरा, छिछला बरतन डालरा।

डगाना (हिं॰ क्रि॰) डिगाना देखो।

डगार (हिं॰ पु॰) १ एशिया और अफ्रिकाके बहुतसे भागोंमें मिलनेवाला एक प्रकारका मांसाहारी पशु। यह रातको कभी कभी शिकारके लिये बाहर निकलता है और कुत्ते बकरोंके बच्चों आदिको उठा कर ले भागता है। इसके मुख्य दो भेद हैं, चित्तीवाला और धारीवाला। इसका पिछला भाग बहुत छोटा और आगेका भाग भारी होता है। कन्धे पर खड़े खड़े बाल होते हैं। इसके दांत बहुत तेज होते हैं। कहा जाता है कि यह प्रायः कब्रमें गड़े हुए मुरदेको निकाल कर खाता है। २ एक प्रकारका दुबला घोड़ा, जिसके पैर बहुत लम्बे लम्बे होते हैं।

डग्गा (हिं॰ पु॰) दुबला पतला घोड़ा।

डङ्का (हिं॰ स्त्री॰) डमित्यव्यक्तशब्दं कायति कै क-टाप्। १ दुन्दुभिध्वनि। यह बाजा मनुष्योंको सचेत करनेके लिये बजाया जाता है। २ टिकारा।

डङ्गरी (हिं॰ स्त्री॰) डं भयं गिरति नाशयति गृ-अच् पृषो॰ साधुः गौरा॰ ङीष्। ललाफल एक प्रकारकी ककड़ी। इसके पर्याय—डाङ्गरी, दीर्घवीज, डङ्गरी, डङ्गारी, नागशुण्डी और गजदन्तफला है। इसका गुण शीतल, रुचिकारक, दाह, पित्त, अस्रदोष, अर्श, जाड्य और मूत्ररोधदोषनाशक, तर्पण और गौल्य है।

डट (हिं॰ पु॰) १ चिह्न, निशाना।

डटना (हिं॰ क्रि॰) १ स्थिर रहना, अड़ना। २ लगे होना, छू जाना, भिड़ना।

डटाना (हिं॰ क्रि॰) १ सटाना, भिड़ाना। २ एक वस्तुको दूसरी वस्तु द्वारा आगेको ओर ठेलना। ३ खड़ा करना, जमाना।

डटाई (हिं॰ स्त्री॰) १ डटानेका भाव। २ डटानेकी मजदूरी।

डट्टा (हिं॰ पु॰) १ हुक्केका नैचा, टेकुआ। २ गट्टी,

भाग। ३ बड़ो मेख। ४ उप्पा जिससे छींट छापी जाती है सांचा।

डकुनी (हि॰ स्त्री॰) मछलीका एक भेद।

डढ़ा-रा (हि॰ वि॰) १ जिसके बड़े दाढ़ें हों दांतवाला। २ जिसके दाढ़ी हो।

डढ़ियल (हि॰ वि॰) दाढ़ीवाला, जिसके दाढ़ी बड़ी हो।

डण्डमत्स्य (स॰ पु॰) मत्स्य विशेष, एक मछली।

डपट (हि॰ स्त्री॰) १ डांट, झिड़की। २ तेज, दौड़, सरपट चाल।

डपटना (हि॰ क्रि॰) १ कठोर स्वरसे बोलना डांटना। २ तेज दौड़ना।

डपोरसंख (हि॰ पु॰) १ बढ़ बढ़कर अपनी बड़ाई करनेवाला डींग हांकनेवाला। २ वह जो देखनेमें युवक हो पर उसकी बुद्धि बच्चोंकीसी जान पड़े।

डप्पू (हि॰ वि॰) बहुत मोटा, बहुत बड़ा।

डफ (हि॰ पु॰) एक प्रकारका बड़ा बाजा। इस पर चमड़ा मढ़ा होता है और लकड़ीसे बजाया जाता है, डफला। २ लावनी गानेका बाजा, चङ्ग।

डफर (हि॰ पु॰) जहाजका एक तरफका पाल।

डफला (हि॰ पु॰) १ डफ नामका बाजा २ जातिभेद। डफला देखो।

डफली (हि॰ स्त्री॰) छोटा डफ, खंजरी।

डफालची (हि॰ पु॰) डफाली देखो।

डफाली (हि॰ पु॰) वह जो डफला बजाता हो। मुसलमानोंकी एक जाति डफला बजाती तथा चमड़े से मढ़े हुए बाजोंकी मरम्मत करती है।

डब (हि॰ पु॰) १ कैथा थैला। २ वह चमड़ा जिससे कुप्पा बनाया जाता है।

डबकना (हि॰ क्रि॰) १ किसी धातुकी चद्दरको कटोरेके आकारका गहरा बनाना। २ थोड़ा दर्द टीस मारना। ३ लँगड़ाना।

डबकौंहा (हि॰ वि॰) आंसुसे भरा हुआ, डबडबाया हुआ।

डबडबाना (हि॰ क्रि॰) अश्रुपूर्ण होना, आंखोंमें आंसू भर आना।

डबरा (हि॰ पु॰) १ पानी जमा रहनेका गड्ढा और कम गहराईका गड्ढा कुण्ड, हौज। ३ खेत जोते जानेमें छूटा हुआ कोना।

डबरी (हि॰ स्त्री॰) छोटा गड्ढा।

डबल (अ॰ वि॰) १ दोहरा। दोगुना (पु॰) २ पैसेको ताम्बेका पैसा।

डबलरोटी (अ॰ स्त्री॰) पावरोटी।

डबलविक (अ॰ वि॰) दोहरी बत्ती।

डबला (हि॰ पु॰) कुल्हड़, मट्टीका पुरवा।

डबोना (हि॰ क्रि॰) १ मग्न करना बोरना डुबाना। २ नष्ट करना बिगाड़ना।

डब्बा (हि॰ पु॰) १ कोई ठोस या भुरभुरी चीजें रखी जानेका ढक्कनदार छोटा गहरा बरतन। २ रेलगाड़ीकी एक कोठरी

डब्बू (हि॰ पु॰) कटोरेके आकारका एक बरतन। इसमें डांडी लगी रहती है और भोज इत्यादिमें यह कोई चीज परोसनेके काममें आता है।

डभका (हि॰ पु॰) वह पानी जो कुएंसे तुरन्त निकाला गया हो।

डभकौरी (हि॰ स्त्री॰) उड़दकी पीठीकी बरी। यह बिना तले हुए कढ़ीमें डाल दी जाती है।

डम (स॰ पु॰) ड भीषयोनिस्थान् मीति माति-मा-क। वर्णसङ्कर जातिविशेष। ब्रह्मवैवर्तपुराणके मतसे इस जातिकी उत्पत्ति लेट और चाण्डालीसे हुई है।

डोम देखो।

डमर (स॰ क्ली॰) डं भावे अप् भरं पालनं डेन भावेन भर पलायन इ-तत्। १ भयसे पलायन, भगोड़। इसके पर्याय—मृगालिका, विद्रव और द्रिम्ब है। (पु॰) डेन भयेन मरो मतिरिव यत्र, बहुव्री॰। २ परचक्रादि भय। ३ अपकमर, उपद्रव हलचल। इसके पर्याय विप्लव, डिम्भ, डिम्ब और डामर है।

डमरी (स॰ पु॰) डमर-णिनि। छोटा डफ, खञ्जरी।

डमरु (स॰ पु॰) डमिसम्पातमात्रं ऋच्छति डम-ऋ-कु। मृगय्वादयश्च। उण् १।३८। इति सूत्रेण निपातनात् साधु। १ वाद्यविशेष, एक बाजा। इसका आकार बीचमें पतला और दोनों सिरोंकी ओर बराबर चौड़ा होता जाता है। इसके दोनों सिरों पर चमड़ा मढ़ा होता है।

इसके बीचमें एक डोरी बन्धी रहती रहती है। डोरीके दोनों सिरों पर दो कौड़िया दो पुई रहती है। बीचमें पकड़ कर जब यह हिलाया जाता है तो कौड़िया चमड़े पर पड़ती है और शब्द होता है। बन्दर भालू आदि के लिए मदारी इसे अपने साथ रखता है। यह बाजा शिवजीको बहुत प्रिय है।

शिवजीके हाथमें यह बाजा हमेशा रहता है।

"त्रिशूल-डमरुकं।" (शिवपुराण) २ वह वस्तु जो बीचमें पतली हो और दोनों ओर बराबर चौड़ी होती गई हो। ३ ३२ लघु वर्णयुक्त एक प्रकारका दण्डक-वृत्त। ४ विस्मय, ताज्जुब।

डमरुका (सं० स्त्री०) डमरुका कन् स्त्रियां टाप्। तन्त्रोक्त मुद्राभेद, एक प्रकारका आसन।

डमरुमध्य (सं० पु०) डमरु इव मध्यं यस्य बहुव्रो०। योजक, जमीनका वह संकीर्ण भाग जो दो बड़े बड़े खण्डोंको मिलाता हो।

डमरुयन्त्र (हिं० पु०) एक प्रकारका यन्त्र। इसमें अर्क खींचे जाते और सिंगरफका पारा, कपूर, नौसादार आदि उड़ाये जाते हैं। यह दो घड़ोंका मुंह मिलाने और कपड़मट्टी द्वारा बनता है। जोड़नेसे जिस वस्तुका अर्क चुवाना होता है उसे पानीके साथ एक घड़े में रख देते हैं और तब दोनों घड़ोंका मुंह जोड़ दिया जाता है। तब दोनों जुड़े हुए घड़े इस प्रकार खड़ा कर रखे जाते हैं कि एक घड़ा आंच पर और दूसरा ठण्डी जगह पर रहता है। गर्मी लगनेसे वस्तु मिश्रित जलका वाष्प उड़ कर दूसरे घड़े में जा टपकता है। वाष्पका जल ही उस वस्तुका अर्क है। जो घड़ा नीचे रहता है उसके पेंदेमें आंच लगती है और ऊपरके घड़े के पेंदेको भींगा हुआ कपड़ा आदि रख कर ठण्डा रखते हैं। जब नीचेके घड़ेमें गर्मी लगती है तो सिंगरफसे पारा उड़ कर ऊपरके घड़ेके पेंदेमें जम जाता है।

डमसार—पूर्व वंगालका एक प्राचीन ग्राम।

(म० प्रश्नसं० १५।५२)

डम्फ—एक प्रकारका प्राचीन बाजा। यह लकड़ेसे गोल बड़े मेंढ़रे पर चमड़ा मढ़ कर बनाया जाता है। युक्त-प्रदेशमें इसका व्यवहार अधिक है।

डम्बर (सं० पु०) डप-अरन्। १ समूह। २ आयोजन, आडम्बर, धूमधाम। 'अजायुद्धे ऋषिश्राद्धे प्रभाते मेघडम्बरः।' (चाणक्य) ३ धातदत्त कुमारके एक अनुचरका नाम। "डम्बराडम्बरौ चैव ददौ धाता महात्मने।" (भा० ९।४६ अ०) ४ विस्तार। ५ विलास ६ एक प्रकारका चँदोवा, चटरछत।

डयन (सं० क्ली०) डीयते आकाशमार्गे गम्यते अनेन डि करणे ल्युट्। १ कांरिय, पालकी, डोली। २ नभोगति, उड़ान, उड़नेका क्रिया।

डर (हिं० पु०) १ भय, भीति, त्रास, खौफ। २ आशंका, अनिष्टको भावना, अन्देशा।

डरना (हिं० क्रि०) १ भयभीत होना, खौफ करना। २ आशंका करना, अंदेशा करना।

डरपना (हिं० क्रि०) भयभीत होना, डरना।

डरपोक (हिं० वि०) भीरु, कायर, जो बहुत डर खाता हो।

डराना (हिं० क्रि०) भय भीत करना, डर दिखाना, खौफ दिलाना।

डरावना (हिं० वि०) भयानक, भयंकर।

डरावा (हिं० पु०) फलदार पेड़ोंमें बंधी हुई एक लकड़ी जो चिड़ियोंका उड़ानेके लिये लगी रहती है। इसमें एक लम्बी रस्सी बंधी होती है।

डरी (हिं० स्त्री०) डली देखो।

डरोल (हिं० वि०) जिसमें शाखा हो, डारवाला, टहनीदार।

डल (हिं० पु०) १ खण्ड, अंश, टुकड़ा। (स्त्री०) २ झील। ३ काश्मीरकी एक झील।

डलई (हिं० स्त्री०) डलिया देखो।

डलना (हिं० क्रि०) डाला जाना, पड़ना।

डलवा (हिं० पु०) डला देखो।

डलवाना (हिं० क्रि०) डालनेका काम किसी दूसरेसे कराना।

डला (हिं० पु०) १ खण्ड, टुकड़ा। २ बाँस इत्यादिकी फट्टियोंका बनाया हुआ बरतन, दौरा, टोकरा।

डली (हिं० स्त्री०) खण्ड, छोटा टुकड़ा। २ सुपारी। ३ डलिया।

डलहौसी—इनका यथार्थ नाम जेम्स एण्ड्रु ब्राउन रामसे दशम अर्ल और प्रथम मारक्विस् आफ डलहौसी (James Andre Brown Ramsay tenth Earl and first marquis of Dalhousie)। १८१२ ई०को २२वीं अप्रेलको इनका जन्म हुआ था। ये डालहौसीके ९म अर्ल जर्ज डलहौसीके तृतीय पुत्र थे। इन्होंने पहले हरोर विद्यालयमें शिक्षा प्राप्त की थी पीछे अक्सफोर्ड विश्वविद्यालयके क्राइष्टचर्च कालेजमें अध्ययन करके १८३८ ई०में एम०ए० उपाधि प्राप्त किया था। अग्रज दो सहोदरोंकी मृत्यु होनेके कारण १८३२ ई०में ये लार्ड रामसे (Lord Ramsay) नामसे प्रसिद्ध हुए। इन्होंने पार्लियामेण्टकी मन्त्रिसभामें कुछ दिन कार्य किया था। पीछे ये भारतवर्षके गवर्नर जनरल (बड़े लाट) नियुक्त हुए थे। इन्होंने १८४८ ई०को १२वीं जनवरीको कार्यभार ग्रहण और १८५६ ई०को २८वीं फरवरीको कार्य परित्याग किया था।

१८४० ई०के अन्तमें मारक्विस् आफ हार्डिञ्ज भारतवर्षसे चले जाने पर डलहौसीने आ कर भारतका शासनभार ग्रहण किया। जब ये इस देशमें आये थे तब भारत राज्यमें किसी तरहकी विशृङ्खला नहीं थी। समस्त प्रदेशोंमें एक प्रकार सुव्यवस्थित विराजमान थी। किन्तु अकस्मात् मुलतानमें एक विप्लव उदय हुआ। १८४४ ई०में सावनमलकी मृत्यु होनेसे उनके पुत्र मूलराज मुलतानके दीवान चुने गये। ये ३० लाख रुपये और निर्धारित कर प्रदान करेंगे, इस शर्त पर लाहोर-दरबारने इनको दीवान मनोनीत किया था। मूलराज अत्यन्त साहसी थे वे अधीनताकी अपेक्षा मृत्युको श्रेयस्कर समझ कर शुपचुप स्वाधीन होनेका मौका ढूंढ़ते थे। इस समय लाहोर दरबारमें बड़ी विशृङ्खला उपस्थित थी। प्रधान प्रधान सामन्तोंमें परस्पर वास्तविक एकता बिलकुल न थी। मूलराजने लाहोरको मञ्जूर किये हुए ३० लाख रुपये अथवा निर्धारित कर कुछ भी नहीं भेजा। इसका सन्तोषजनक उत्तर देनेके लिए प्रधान मन्त्रीने आप्पर्न मूलराजको लाहोर आनेके लिए आह्वान किया तथा यदि मूलराज सहजमें न आवें, तो उनको बलपूर्वक लानेके लिए एक दल सेना भी भेजी। इधर मूलराज भी निश्चिन्त न थे, वे विपत्तिकी आशङ्का जान कर पहलेहीसे तैयार थे। लाहोरसे सेना आ कर उपस्थित होने पर मूलराजके साथ एक युद्ध हुआ।

युद्धमें मूलराजने विजय प्राप्त की। उनमें अङ्गरेज गवर्नमेण्टसे भयाक्रान्त हो कर दोनों पक्षमें एक सन्धि करा दी। सन्धिके नियम मूलराजको पसन्द न होनेसे उन्होंने रेसिडेण्टके पास मुलतानकी दीवानी छोड़ देनेकी इच्छा प्रकट की और साथ लिख दिया कि दीवानी छोड़ देनेकी बात साधारणको मालूम न होने पावे। रेसिडेण्ट जानलरेन्स साहबने आपकी अनुरोधकी रक्षा करनेमें जवाब लिख भेजा।

१८४८ ई०की ६ठी मार्चको सर फ्रेडेरिक करी (Sir Frederic Currie) रेसिडेण्ट हो कर लाहोर आये। मूलराजका पदत्याग विषय इनसे फिरसे कहा गया। किन्तु लारेन्सका प्रस्ताव इन्होंने ग्राह्य नहीं किया। नये रेसिडेण्टने मन्त्रिसभामें मूलराजका इस्तीफा पेश किया और मन्त्रिसभा द्वारा वह मञ्जूर हो गया।

खाँसिंह नामी दीवान नियुक्त कर मुलतान भेजा गया। उनके साथ एग्निउ (Agnew) और एण्डरसन् (Anderson) नामक दो अङ्गरेज कर्मचारी भी गये। १८ अप्रैलको ये सेना सहित मुलतानके किलेके पास ईदगाहमें पहुंच गये। मूलराज वहां आये और उनके साथ साक्षात् करके दुर्ग अर्पण करनेके लिए राजी हो गये। दूसरे दिन सबेरे एग्निउ और एण्डरसन् दो अङ्गरेज कर्मचारियोंने दस गुरखा सिपाहीके साथ दुर्गमें प्रवेश किया। जब वे दुर्ग परिदर्शन कर पुलके ऊपरसे आ रहे थे, तब मूलराजके एक सैनिकने सहसा अग्रसर हो कर एग्निउ साहबको बरछा मार कर घोड़ेसे गिरा दिया और तलवारसे उन पर दो गहरी चोट की किन्तु साहब को विनाश करनेके पहले ही वह परिखामें गिर गया। मूलराजने इस घटनामें किसी प्रकारका हस्तक्षेप न कर अपने आहत आगन्तुकोंको और घोड़ा दौड़ा दिया। इसके बाद मूलराजके कुछ सैनिकोंने एण्डरसन पर आक्रमण किया और उनको मुर्देकी तरह वहां छोड़ कर प्रस्थान किया। एग्निउने कुछ सुस्थ हो कर लाहोरमें

रेसिडेण्ट साहबको सब हाल लिख भेजा तथा मूलराजको उनको निर्दोषित' प्रमाण और दोषियोंको आबद्ध करनेके लिखा। मूलराजने जवाब दिया कि, "हम इस पत्रके अनुसार कार्य करनेमें सम्पूर्ण अक्षम हैं।"

मूलराजका प्रथम उद्देश्य कुछ भी हो, पर अब वे प्रकाश्यरूपसे विद्रोही हो गये। ता० १६ को मूलराजने अंग्रेजोंके यानवाहनादि सब छीन लिये। अंग्रेज पक्षने भागनेका कोई उपाय न देख कर एडगामें ही आश्रय ग्रहण किया। उनको भरोसा था कि, ३।४ दिनमें ही लाहोरसे सेना आ कर उनकी रक्षा करेगी। किन्तु उनकी यह आशा मुकुलमें ही सूख गई। लाहोरके गोलन्दाजोंने युद्ध करना अस्वीकार किया। ता० २० को सायंकालके समय खाँसिंह, ८। १० सैनिक कुछ मुन्सी और अंग्रेजोंके कुछ नौकरों तथा कर्मचारियोंके सिवा अन्यान्य सभी लोगोंने अंग्रेजोंका पक्ष छोड़ दिया। उन लोगोंने जीवनकी कुछ आशा न देख कर मूलराजकी अधीनता स्वीकार करके सन्धिका प्रस्ताव किया। मूलराजने उनको चले जानेके लिये कहलवा भेजा, किन्तु उनकी सेना इतनी उत्तेजित थी कि, वह रक्तपातके सिवा किसी तरह भी सन्तुष्ट न थी। जब खाँसिंह आदि चले जा रहे थे, तब मुलतानके सैनिकगण घोर रवसे उन पर टूट पड़े। खाँसिंहकी कैद और अंग्रेज-कर्मचारियोंका मार डाला। मूलराजने सैनिकोंको पुरस्कार दिया।

रेसिडेण्ट साहबको दो दिन बाद विद्रोह-संवाद मालूम हुआ। उन्होंने पहले सोचा था कि, मूलराज इस विद्रोहमें शामिल नहीं हैं। इसलिये उन्होंने कुछ सैनिकोंको भेज दिया। ता० २३ को समस्त संवाद अवगत हो कर वे समझ गये कि, यह युद्ध सहजमें नहीं निबटेगा। लाहोर-दरबारकी सेनाने अंग्रेजोंके साथ विश्वासघातकता की है, यह संवाद पा कर रेसिडेण्ट कार्री साहब मुलतानमें अंग्रेजी सेना भेजनेके लिये राजी न हुए। किन्तु अङ्गरेजोंकी सहायताके बिना सिख-सर्दारगण मूलराजको किसी तरह भी वश न कर सकेंगे, इस धारणासे लाहोर-दरबारके अङ्गरेजी सेना भेजनेके लिये रेसिडेण्टको बार बार अनुरोध करने पर कार्री साहब अङ्गरेजी सेना भेजनेके लिये राजी हो गये। उन्होंने सिमलामें प्रधानसेनापति लार्ड गाफको इस आशय का एक पत्र भेजा कि—'ब्रटिश-शासित भारतके सुनामकी रक्षा और राजनीतिक स्वार्थ साधनोंहेतु इससे लाहोर-दरबार की सेनाके अभावमें भी जिससे अङ्गरेजी सेना मुलतानके दुर्ग और नगर पर अधिकार कर सके, ऐसी एक दल सेना शीघ्र ही भेज देना उचित है।' किन्तु लार्ड-गाफने उस समय सेना न भेजी। मन्त्रिसभाधिष्ठित गवर्नरजनरल साहबकी भी यही राय थी। इसलिए युद्धयात्रामें विलम्ब हो गया।

इधर अग्निउ साहबने सुस्थ हो कर लाहोरका विद्रोह-संवाद और लेफ्टेनन्ट एडवर्ड्स साहबको सहायतार्थ शीघ्र आनेके लिये लिख भेजा। एडवर्ड्स साहब उस पत्रको पा कर अधीनस्थ सैन्य संग्रह करके मुलतानकी तरफ अग्रसर हुए। उन्होंने लिइया नामक स्थानमें पहुँच कर शिविर स्थापित किया। इस स्थानमें एक पत्र पा कर उनके मनमें सिखोंकी विश्वस्तता पर सन्देह हुआ। इस समय उन्होंने सम्वाद पाया कि, मूलराज चन्द्रभागा नदी पार हो कर लिइयाकी तरफ अग्रसर हो रहे हैं। एडवर्ड्स साहबने उस समय सिन्धुनद पार हो कर गिरिङ्ग-दुर्गमें आश्रय लिया। इस स्थान पर सेनापति कर्टलैण्डने कुछ मुसलमान-सेनाके साथ आ कर उनका साथ दिया। क्रमशः अङ्गरेजोंकी सेना बढ़ने लगी।

बहवलपुरके नवाब शतद्रु नदी पार हो कर मुलतान आक्रमण करनेको उद्यत हुए। अङ्गरेजी सेनाने आ कर देरागाजीखाँ घेर लिया। मूलराजने जलालखाँ पर इस प्रदेशका शासन भार छोड़ दिया था। जलालके प्रधान शत्रु वराखाँने अङ्गरेजोंके साथ मिल कर जलाल पर आक्रमण किया। जलालखाँ पराजित हो कर भाग गये। देरागाजीखाँ अङ्गरेजोंके हस्तगत हो गया। इसके बाद केनेरी नामक स्थान पर युद्ध हुआ, उस युद्धमें भी अङ्गरेज पक्षने विजय पाई। किनेरीके युद्धके बाद बहुतसे सिख सर्दार अङ्गरेजोंका पक्ष ग्रहण करने लगे, मूलराजने अत्यन्त भीत हो कर दुर्गमें आश्रय लिया। एडवर्ड्स पुनः पुनः विजय लाभ करनेके कारण अत्यन्त उत्साहके।

साथ मुलतान पर आक्रमण करनेको अग्रसर हुए। साम ग्रामके पास दोनों पक्षोंमें एक छोटा युद्ध हुआ। अङ्गरेजोंकी तरफ सेना बहुत ज्यादा थी। कुछ देर बाद मूलराजने युद्धस्थलसे प्रस्थान किया। उनके सैन्यगण लोगोंने भी उनके दृष्टान्तका अनुकरण किया। अङ्गरेज लोग उनका पीछा करते हुए मुलतान-दुर्गके पास तक पहुंचे। एडवर्डस साहबने दुर्गको शीघ्र ही अवरोध करना चाहिये—इस आशयकी एक चिट्ठी रेसिडेण्टके पास भेजी। इन्होंने और मि० ग्राफ उस समय तक भी दुर्गको घेरनेके पक्षपाती न थे किन्तु उनके पत्र पानेके पहले ही रेसिडेण्ट साहब दुर्ग अवरोध करनेके लिये मुलतानको खबर दे चुके थे और तदनुसार प्रबन्ध भी कर चुके थे। इसलिए इन लोगोंने रेसिडेण्टकी क्षमता और आज्ञाको अक्षुण्ण रखनेके लिये उनके प्रस्तावमें सम्मति दे दी। २४ जुलाईको इङ्गलैण्डके साथ मुलतान दुर्ग अवरोध करनेके लिए सेनापति हुइसने युद्ध यात्रा की। बहावलपुरके शेख साहबके अधीन १००० प्यादे और १८०० अश्वारोही तथा राजा शेरसिंहके अधीन ८०८ प्यादे और ११८२ अश्वारोही सिख सेना मुलतान अव-रोधके लिए अग्रसर हुई। कार्टलेण्ड एडवर्डस, हि उर और शेरसिंहके अधीन बहुत बड़ी सेनाने मुलतान घेर लिया। मूलराज बहुत डर गये। उन्होंने हठयोगी और उनके मित्र महाराज दिलीपसिंहको आत्मसमर्पण करनेका विचार किया। किन्तु इसी समय एक नवीन घटनाने उनके विचारको सहसा पलट दिया। अङ्गरेज और दलीपसिंहके पक्षके सिक्खोंमें विद्रोहके लक्षण दिखाई दिये। थोड़े दिनोंमें शेरसिंह भी पिता छत्रसिंहके विद्रोही हो गये। मूलराजके हृदयमें नूतन आशाका अङ्कुर उदित हुआ।

७ सितम्बरको दुर्ग पर आक्रमण किया गया। शेरसिंह अभी तक रामतीर्थ नामक स्थानमें ठहरे हुए थे। १४ सितम्बरको उन्होंने मुलतानमें अग्रसर हो कर उनका समस्त साजसामानोंके नामसे बजनेके लिए आदेश दिया। यह सम्वाद सुन कर अङ्गरेज सेनापतियोंने परामर्श करके टिब्बी नामक स्थानमें पीछे लौटनेका निश्चय किया और पहुंच कर वे प्रधान सेनापतिकी भेजी हुई सेनाकी बाट देखने लगे।

शेरसिंहने मूलराजका साथ देनेका प्रस्ताव करके उनके पास दूत भेजा, पर मूलराज शेरसिंहका पूरी तरह विश्वास न कर सके। उन्होंने शपथ खाई, पर तो भी मूलराजका सन्देह मूलसे दूर न हुआ। आखिर शेरसिंहने भी कहा कि उनको सेनाको कुछ अग्रिम वेतन देनेसे वे खजानेमेंसे ला कर अपने पिताका साथ देंगे। मूल-राजने इस मौकेको हाथसे न जाने दिया। शेरसिंह इसे पाकर अपनेयोंमें जा कर भला बिलकुल प्रज्वलित कर दिया।

अङ्गरेजोंके अवरोध छोड़ कर चले जाने पर मूलराज निश्चिन्त नहीं हुए थे। वे समझते थे कि अङ्गरेज लोग पुनः विपुल उत्साह और अधिकतर बलके साथ दुर्ग पर आक्रमण करेंगे। इसलिए उन्होंने दुर्ग को सम्पन्न कराके और सेना सञ्चय करनेकी कोशिश करने लगे। सिर्फ इतनेसे ही सन्तुष्ट नहीं हुए, बल्कि काबुलके दोस्त महम्मद और कन्दाहारके सरदारोंसे सहायता देनेके लिए लिख भेजा।

इधर अङ्गरेज लोग भी दुर्ग जय करनेके लिए तरह तरहकी तरकीबें सोच रहे थे। जिससे उनको पैदा कम लगी हो इसके लिए वे काफी उपकरणोंका सञ्चय भी कर रहे थे। क्रमशः बम्बई और बङ्गालसे कई दल सेना आ कर उपस्थित हुई। अधिक समय नष्ट न कर अङ्गरेज सेनापतिने २७ दिसम्बरको पुनः दुर्ग पर आक्रमण करनेके लिए आदेश दिया। बाद की आयासमें दुर्गके कई एक स्थान टूट जाने पर मूलराजने डर कर आत्म-समर्पणका प्रस्ताव किया। अङ्गरेज सेनापतिने उनसे बिना शर्तके आत्मसमर्पण करनेके लिए कहा। किन्तु इसमें राजी न हो कर मूलराज आत्मरक्षा करने लगे।

कुछ दिन बीत गये। किन्तु इससे क्या होता? बाहर असीम बल बढ़ रहे थे, उनकी सेना बहुत थोड़ी थी। वह दिन दिन विजय लाभ कर रहे हैं। वे उनको घटा नहीं सकते। क्रमशः उनका साहस क्षय होने लगा। लाचार हो कर १८४९ ईस्वी जनवरी महीनेमें मूल-राजने आत्मसमर्पण किया। अङ्गरेजोंने दुर्ग पर अधि-कार कर लिया। लाहोरमें मूलराजका विचार हुआ; विचारमें वे दोषी प्रमाणित हुए और निर्वासित किये गये।

इधर छत्रसिंहका विद्रोहानल क्रमशः प्रज्वलित होने लगा। २४ अक्टोबरको पेशावरकी समस्त सिखसेना विद्रोही हो गई। मेजर लारेन्स उनको दमन न कर सकनेके कारण प्राणभयसे कोहाट भाग गये। कोहाटके शासनकर्ता दोस्त महम्मदके भाई सुलतान महम्मद थे। उन्होंने पेशावर विभागके किसी स्थानके तटसे मेजर लारेन्स, उनकी स्त्री और उनके सहकारी मि० बाउईको छत्रसिंहके हाथ बेच दिया। छत्रसिंह विद्रोही थे।

शेरसिंहने अङ्गरेजोंका पक्ष छोड़ दिया है इस संवादसे डलहौसी अत्यन्त भयभीत हो गये। उन्होंने सोचा कि सिक्खोंने एकत्र हो कर अंगरेजोंके विरुद्ध पुनः रणाङ्गनमें अवतीर्ण होनेका विचार किया है। यदि ऐसा ही हुआ, तो वृटिशगवर्नमेण्ट पर बड़ी भारी विपद् आने वाली है। अङ्गरेजराज्यको रक्षा करनी हो, तो अभीसे पूरा सावधानी रखनी चाहिये। ऐसा विचार कर वे उत्तरपश्चिम प्रदेशकी तरफ चल दिये और प्रधान सेनापति गाफ साहबको फिरोजपुरमें सैन्य समावेश करनेके लिए परामर्श दे गये। लार्ड गाफ अब उदासीन न रह सके, वे स्वयं युद्धमें व्यापृत हुए और शीघ्र ही चन्द्रभागाकी तरफ उन्होंने एक दल सेना भेज दी। उक्त नदीके वाम तट पर प्रायः १२ मील दूर रामनगर नामक स्थानमें शेरसिंह ठहरे हुए थे। इस स्थानसे उनको हटानेके लिए चेष्टा की गई। युद्धमें शेरसिंहकी ही जय हुई। अङ्गरेज-पक्षके कर्नल हैवलक और क्रिउरटन निहत हुए। पीछे सर जोसेफ थैकवेल और लार्ड गाफ दोनोंने मिल कर शेरसिंहकी सेना पर आक्रमण किया, किन्तु उनकी विशेष कुछ क्षति नहीं कर सके।

१८४९ ई०को १२ जनवरीको लार्ड गाफ डिङ्गि नामक स्थान पर उपस्थित हुए, यहां आ कर उन्होंने देखा कि पास ही सिख-सेना ठहरी हुई है। शत्रुओंकी अवस्थाको अच्छी तरह जाननेके लिए उन्होंने रसूल नामक स्थानको जाना विचारा, इसी समय कुछ लोग खालसा ग्रामके सामने आ कर अंग्रेजों पर गोलियां बरसाने लगे। लार्ड गाफने उनको डरानेके लिए कुछ तोपें दाग कर आवाज करवाई, पर इससे कुछ फल न हुआ। सिखोंकी तरफसे असंख्य गोलियोंने आ कर उनका जवाब दिया। अब गाफ समझ गये कि विपक्षी लोग युद्ध करनेको तयार हैं। उन्होंने भी सैनिकोंको युद्धके लिए तयार होनेकी आदेश दिया। इसके बाद ही वह प्रसिद्ध चिलियनवालाका युद्ध हुआ। १८४९ ई०की १३ जनवरीका दिन सिक्खोंका चिरस्मरणीय है। इस युद्धमें शेरसिंहकी सेनाने जैसा असीम साहस, अमित तेज और प्रबल पराक्रम दिखलाया था, वह असाधारण है। वास्तवमें इस युद्धमें अङ्गरेजोंकी पराजय हुई थी। उस युद्धके बाद गाफकी सेना अत्यन्त निरुत्साहित हो गई। इस युद्धमें तुरुक्, पेनिकुइक आदि कई एवं सेनापति और प्रायः २४००० सेना मारी गई थी। सिक्खोंने अङ्गरेजोंसे ४ तोपें तथा ८ पताकाएं छीन ली थीं। युद्ध करते करते रात हो गई थी, रात्रिके शेषांशमें सिख लोग युद्धक्षेत्र छोड़ कर चले गये थे, इसी लिए शायद अङ्गरेज ऐतिहासिकोंने इस युद्धका फल असीमांसित बतलाया है। इसके बादसे ही शेरसिंहके अदृष्ट पर शनिकी दृष्टि पड़ी। २१ फरवरीको सिखसेना गुजरातमें उपस्थित हुई। लार्ड गाफने वहीं जा कर उन पर आक्रमण किया। अङ्गरेजोंकी जय हुई। अङ्गरेजोंका अदृष्ट अति सुप्रसन्न था, इसीलिए वे इस युद्धमें जयलाभ करनेमें समर्थ हुए थे। बड़े लाट डलहौसीने भी इस बातको माना है। उन्होंने लिखा है—'ईश्वरके अनुग्रहसे ही अङ्गरेजी सेना इस तरह जय प्राप्त करनेमें समर्थ हुई। २१ फरवरीको युद्ध भारतमें अङ्गरेजोंके युद्धके इतिहासमें चिरस्मरणीय है।" चिलियनवालाके युद्धके उपरान्त डलहौसीने भयभीत हो कर इङ्गलैण्डसे सेना मंगाई थीं, किन्तु उस सेना आनेकेसे पहले ही गुजरातके युद्धमें लार्ड गाफने उनके प्रणष्ट गौरवका उद्धार कर दिया। शेरसिंह वितस्ताके उस पार भाग गये। उन्होंने पुनः युद्ध करनेका सङ्कल्प छोड़ दिया और पहले मेजर लारेन्सको जो कैद कर रक्खा था, उनके द्वारा वे अङ्गरेज-गवर्मेण्टकी अधीनता स्वीकार करनेका उपाय सोचने लगे।

इसके बाद, पञ्जाब शासनके विषयमें क्या होना चाहिये, डलहौसीने पहले ही इसका निश्चय कर रक्खा था, सुतरां उसको प्रकट करनेमें जरा भी देर न लगी।

सीख फौजें लाहौरको संभाल भेजा गया। महाराज रनजीत्‌सिंहके परिवारमें शोकध्वनि हो उठी। दलीपसिंह का मुख क्षमताके लिए उतर गया। डलहौसीने लाहौर दरबारको कहला भेजा कि, सिख-राजत्वका अन्त हो गया। दलीपसिंह उसी समय कुछ समय सिर्फ नाममात्रको थे। दरबारके सदस्योंने डलहौसीके प्रस्ताव पर कुछ आपत्ति नहीं की। दलीपसिंह बिना अपराध के दण्ड हुआ, यह डलहौसीको जताने पर भी कोई लाभ होता या नहीं सन्देह था। कुछ भी हो, एक सन्धिपत्र लिखा गया, जिस पर महाराज दलीपसिंहके हस्ताक्षर कराये गये (ई० सन् १८४९)। इस सन्धिपत्रमें निम्नलिखित ५ नियम लिखे थे—

(१) महाराज दलीपसिंहने पञ्जाबका स्वत्व सदाके लिये परित्याग किया।

(२) राजसम्पत्ति इष्टइण्डियाकम्पनीके अधीन हुई।

(३) कोहिनूर इङ्गलैण्डकी रानीके मस्तक पर सुशोभित हुआ।

(४) गवर्नर-जनरल जो स्थान मनोनीत करेंगे, वहीं दलीप रहेंगे।

(५) 'महाराज दलीपसिंह बहादुर' यह नाम उन का यावज्जीवन रहेगा। वे यथोचित सम्मानके साथ सम्मानित होंगे तथा ४ लाखसे ज्यादा और ५ लाखसे कम रुपये उन्हें वृत्ति मिला करेगी।

२८ मार्चको लार्ड डलहौसीने निम्नलिखित आशय का एक घोषणापत्र प्रचारित किया—

"भारतगवर्मेण्टने पहले घोषणा की थी कि गवर्मेण्टको अब अधिक राज्य विजयकी इच्छा नहीं है और अब तक उस प्रतिश्रुत वाक्यकी रक्षा हुई थी। अब भी गवर्मेण्टको राज्य-अधिकारकी इच्छा नहीं है। किन्तु अपनी निरापदता और प्रजाका भार उस पर है, उसकी न्याय रक्षा करनेके लिए गवर्मेण्ट बाध्य है। इस उद्देश्यसे तथा बिना कारण युद्धविग्रहसे राज्यकी रक्षा करनेके लिए जिन सिक्खोंका उत्पात पहिले शासन नहीं कर सकी, किसी प्रकारका दण्ड भी जिनको अत्याचारसे विरत या भीत नहीं कर सकता और किसी प्रकारकी भी मित्रता जिनको शान्तिसे नहीं रख सकती, उनको सम्पूर्ण रूपसे अधीन करनेके लिए भारतके गवर्नर जनरलको बाध्य होना पड़ा है। इसलिए गवर्नर जनरल प्रचार करते हैं और इसके द्वारा घोषणा करते हैं कि, पञ्जाब-राजत्व खो गया। महाराज दलीपसिंह बहादुर का अधीनस्थ समस्त प्रदेश अबसे भारत-साम्राज्यके अन्तर्गत हुआ।" पञ्जाब, सिख और सिक्खयुद्ध देखो।

चिलियनवाला-युद्धका संवाद इङ्गलैण्ड पहुंचने पर कम्पनीके साथ सभी कर्मचारी सर चार्ल्स नेपियरको सेनापति बना कर भारत भेजनेके लिए डिरेक्टरोंसे पुनः पुनः अनुरोध करने लगे। डिरेक्टरोंने इच्छा न होते हुए भी उनको नियुक्त किया। किन्तु डलहौसी नेपियरको समताकी बड़ी ईर्षा रखते थे। भारत आ जाने पर डलहौसी और नेपियर दोनोंमें मनोविकार होने लगा; एक वर्षके भीतर ही भीतर यह मनोमालिन्य अत्यन्त बद्धमूल हो गया। पञ्जाबमें इनका प्रकाश्य विवादका सूत्रपात हुआ। खाद्य पदार्थोंके अतिरिक्त भत्ता उठानेके कारण डलहौसीने सिपाहियोंका वेतन घटा दिया था। इससे पञ्जाबके सैनिकोंमें भावी विद्रोह की सूचना हो रही थी। इस पर चार्ल्स नेपियरने गवर्नर-जनरल अथवा सुप्रिम कौन्सिलकी अनुमति बिना लिए स्वयं पहलेके नियम बहाल कर दिये। डलहौसी उस समय समुद्रयात्रा कर रहे थे। इसके बाद विद्रोहकी आशङ्का देख नेपियरने ६६ संख्यक देशीय पदाति सेनाको कर्मच्युत कर दिया। डलहौसीने पत्र द्वारा इस विषयमें असम्मति प्रकट की किन्तु नेपियरके विषयको उन्होंने मनमें नहीं छोड़ा, इस विषयमें मतामत प्रकट करके सैनिक बोर्ड द्वारा सेना विभागके एडजुटाण्ट जनरलको नियमानुसार पत्र भी भेज दिया। वह पत्र तीव्र तिरस्कारसे भरा हुआ था। उस पत्रमें निम्नलिखित भाव अभिव्यक्त था—"सेनापतिने जो पञ्जाबके कर्मचारियोंको आदेश दिया है, उससे मन्त्रि-समाविष्ट गवर्नर-जनरल अत्यन्त दुःखित और असन्तुष्ट हुए हैं। भविष्यके लिए उनको सूचित किया जाता है कि, भारतके सैनिकोंके भत्ता या वेतनके परिवर्तनके विषयमें कैसी भी अवस्था क्यों न हो—यदि वे कोई आदेश दें, तो गवर्नर जनरल कभी भी उस पर सम्मति नहीं देंगे। इस विषयमें

आदेश देनेकी चमता एक मात्र सुप्रिम गवर्मेंटको ही प्राप्त है। वे इसमें किसी भी तरह चमता प्रकट नहीं कर सकते, इस पत्रके पानेके बाद सर चार्लस नेपियर इस्तीफा दे कर १८५१ ई०में इंगलैंड चले गये।

पञ्जाबकी गड़बड़ी पूरी तरह शान्त हो भी न पाई थी कि, इतनेमें दूसरी ओर फिर रणदुन्दुभि बज उठी। ब्रह्मदेशके राजाके साथ जो सन्धि हुई थी, उसमें एक नियम था कि, वृटिश प्रजा ब्रह्मदेशके बंदरमें बेखटके वाणिज्य कर सकेंगे। डलहौसीके समय १८५१ ई०में कुछ वणिकों और वाणिज्य-जहाजके अध्यक्षोंने कलकत्तेको एक आवेदनपत्र इस आशयका भेजा कि—रंगूनके शासनकर्त्ता अङ्गरेज वणिकों पर अत्यन्त अत्याचार कर रहे हैं, जिससे व्यवसायको बड़ी भारी हानि हो रही है। चति-पूर्ति करानेके लिए नौ-सेनापति लैमबार्ट एक दल सेनासहित रंगून भेजे गये। गवर्नर जनरलने उनसे कह दिया कि, 'पहले आप रंगूनके शासनकर्त्ताके पास जा कर समस्त विषयको संचेपसे कहें, यदि वे चति-पूर्ति न करें, तो आप वापिस चले आवें।' किन्तु मामला सहजमें तय हो जायगा, इसमें सन्देह था, इसलिए डलहौसीने लैमबार्टके साथ दोनों गवर्मेंटकी मित्रताकी रक्षाके लिए रंगूनके शासनकर्त्ताको पद-च्युत करनेके लिए ब्रह्मदेशके राजाके नाम एक पत्र लिख दिया और सेनापतिको आज्ञा दी कि 'यदि रंगूनमें चतिपूर्त्ति न हो, तो इस पत्रको ब्रह्मके राजाके पास भेज देना।' नवम्बरके मासके अन्तमें वे रंगून पहुंचे और २८ तारीखको उन्होंने कलकत्तेकी कौन्सिलको लिखा कि, 'रंगूनके शासनकर्त्ताके विरुद्ध जो अभियोग लगाया गया है, वास्तवमें वह अभियोग उसकी अपेक्षा बहुत गुरुतर है, इसलिए मैं उक्त शासनकर्त्तासे किसी विषयका उल्लेख न कर ब्रह्म-राजाके पास उस पत्रको भेजता हूं।' डलहौसीने सेनापतिके कार्यकी पूरी तरहसे अनुमोदना की और कहा कि, स्थानीय शासन कर्त्ताके साथ बादानुवाद न करके लैमबार्टने बुद्धिमत्ताका ही परिचय दिया है, किन्तु सहसा युद्ध न होने पावे इस विषयमें उनको सावधान कर दिया गया। सम्भव है ब्रह्मके राजा पत्रका उत्तर न दें, अथवा अंग्रेजोंके प्रस्तावसे सहमत न हों, इसलिए गवर्नर-जनरलने यह निश्चय किया कि, जिससे इस अनिष्टको सहने वा सहसा युद्धमें व्यापृत न होना पड़े, उसके लिए मौलमेनको जिन दो नदियोंसे ब्रह्मदेशमें वाणिज्यतरी आती जाती है, उन दो नदोंको घेरना आवश्यक है। १८५२ ई०की १ली जनवरीको आवासे उत्तर आया कि, रंगूनमें दूसरे शासन-कर्त्ता नियुक्त हुए हैं और उपयुक्त चतिपूर्तिके लिए उन पर आदेश है। नौ-सेनापतिने इस संवादसे अत्यन्त उत्साहित हो कर नवीन प्रतिनिधिसे समस्त विषयका उल्लेख करनेके लिए फिसबोर्न तथा अन्य कर्मचारियोंको भेजा। किन्तु उन्होंने जो सोचा था, कार्यमें उसका विपरीत हुआ। उन लोगोंने रंगून पहुंच कर वहांके शासनकर्त्तासे मुलाकात करनी चाही; उनको कहा गया कि, 'शासनकर्त्ता सो रहे हैं, इस समय मुलाकात नहीं हो सकती।' अङ्गरेजोंने सम्भवतः इस प्रकारके उत्तरसे सन्तुष्ट न हो कर किसी प्रकारकी चमता प्रकट की होगी, और इसी लिए उन्हें अपमानित हो कर लौट आना पड़ा। इस अपमानका बदला लेनेके लिए ही लैमबार्टके आदेशानुसार फिसबोर्नने आवा राज्यका एक जहाज रोक लिया। इससे समरानल प्रज्वलित हो उठा। १० जनवरीको प्रकाश्य रूपसे युद्धका आरम्भ हुआ। लैमबार्ट संवाद देनेके लिए कलकत्ते आ गये। डलहौसीने उस समय ब्रह्मराजको निम्नलिखित मर्मका एक पत्र लिखा:—

(१) ब्रह्मराज रंगूनके वर्तमान शासनकर्त्ताके कार्यका अनुमोदन नहीं करें और वृटिश-कर्मचारियों पर जो अत्याचार हुए हैं, उनके लिए दुःख प्रकट करें।

(२) दो कप्तानों पर अत्याचार और अङ्गरेज वणिकोंकी अर्थ हानिके कारण आवाराज चतिपूर्ति स्वरूप गवर्मेंटको १० लाख रुपये देवें।

(३) यान्दाबूकी सन्धिके अनुसार एक एजेण्ट रंगूनमें रहेंगे और ब्रह्मराज्यकी प्रजामात्र उनका यथोचित सम्मान करेगी।

(४) रंगूनके वर्त्तमान शासनकर्त्ताको स्थानान्तरित करना पड़ेगा। उपरोक्त नियमों पर सम्मति और १२ अप्रैलसे पहले उसके अनुसार कार्य न करनेसे युद्ध होगा।

इसकी यथाविधि आज्ञा पहुँचने पर राजाने उसके अनुसार कार्य नहीं किया। दोनों पक्षमें युद्धकी तैयारियां होने लगीं। कलकत्तेसे सेनापति गडविन २८ मार्चको रवाना हो कर २ अप्रैलको इरावती नदीके किनारे नौ सेनाके प्रधान अधिपति आष्टिनसे मिले। मद्रासके और एक दल सेना अग्रसर हुई। गडविनने शीघ्र ही मार्त्तावान पर आक्रमण करके उस पर कब्जा कर लिया। ११ अप्रैलको अंग्रेजी सेना रंगूनमें उतर कर अग्रसर होने लगी। उसने थोड़ी बहुत बाधाओंको अतिक्रम कर १४ अप्रैलको पागोड़ा अधिकार कर लिया। पागोड़ाके युद्धमें ब्रह्मवासियोंने काफी साहस दिखाया था। युद्धमें वे पुनः पुनः वर्जित हो कर भी ब्रह्मवासिगण मौन न हुए और २६ मईको मार्त्तावानके पुनरुद्धारके लिए कृतसङ्कल्प हो कर अमित तेजसे अंग्रेज सेना पर आक्रमण किया। यद्यपि इस युद्धमें भी वे जय लाभ न कर सके थे, पर तो भी उन लोगोंने यह प्रमाणित कर दिया था कि, वे सहजमें अंग्रेजोंके वशीभूत नहीं होंगे। इन लोगोंको दमन करनेके लिए राजधानी आवा अथवा अमरपुर पर आक्रमण करनेकी कल्पना हुई। कप्तान टारलेटन प्रोम तक जा कर अधिवासियोंका काफी नुकसान कर आये। इससे भी जब लोग नहीं डरे तब लार्ड डलहौसी स्वयं २० जुलाईको रंगून पहुँचे। कुछ दिन तक वहां ठहर कर उन्होंने अधिकतर सेना व युद्धके विपुल आयोजनसे युद्धार्थ प्रस्तुत होनेके लिए अवसर दिया। ८ अक्तूबरको अंग्रेज-चमू पुनः प्रोमकी तरफ उन्नीत हुआ। ब्रह्मवासियोंने इस बारमें किसी तरहकी बाधा नहीं पहुँचाई। अंग्रेजोंकी सेना क्रमशः अग्रसर करने लगी। उन लोगोंने पेगू अधिकार कर लिया। मकडक्लन थोड़ीसी सेनाके साथ मेजर हिलको वहां छोड़ कर खुद रंगून चले आये। ब्रह्मवासियोंने कुछ दिन बाद पेगू अधिकार कर पागोड़ा चढ़ाई कर ली। हिलने उनके आक्रमणमें बाधा देनेके लिए गडविनसे सेना मांगी। सेनापति सहायताके लिए निकले। मार्गमें ब्रह्मसैन्यने कुछ दिन तक उनको रोक रक्खा। अन्तमें ब्रह्मवासी पेगूसे भाग गये। पेगू फिर अंग्रेजोंके हाथ पड़ा। २० दिसम्बरको उन्होंने पेगू अधिकारका सम्वाद पा कर निम्नलिखित घोषणापत्र प्रचारित किया —

"ब्रह्मराजके कर्मचारियोंके द्वारा ब्रिटिश प्रजाओंका अनेक अपमान और अनिष्ट हुआ है। आवा दरबार उसकी क्षतिपूर्ति देनेमें असमर्थ होनेके कारण गवर्नर जनरलने अगत्या उससे युद्ध करना निश्चय किया था। इसके लिए उपयुक्त दुर्ग और नगरों पर आक्रमण हुआ था। बहुत स्थानोंमें ब्रह्म-सेना भाग गई है और पेगू प्रदेश अंग्रेजोंके अधिकारमें पड़ा है। भारत गवर्मेण्टने न्याय और उपयुक्त रूपसे आवा राजसे अपराध किया है, क्षतिपूर्तिके लिए उनको काफी मौका दिया गया था, पर उन्होंने तदनुसार कार्य नहीं किया। तथा उनके राज्य-विनाशको निवारण करनेके लिए वे यथासमय वशीभूत नहीं हुए। अतएव गतविषयकी क्षतिपूर्ति और भविष्यकी शान्तिके लिए मन्त्रि-समाविष्टित गवर्नर जनरलने यह निश्चय किया है कि, आजसे पेगू प्रदेश-ब्रिटिश गवर्मेण्टके अधिकारमें आया। इस प्रदेशमें ब्रह्म-सैन्य पहुँचने पर वह शीघ्र ही दूरीभूत होंगे; विभिन्न विभागोंको शासन करनेके लिए शीघ्र ही अंग्रेज कर्मचारी नियुक्त होंगे। मन्त्रिसमाविष्टित गवर्नर जनरल पेगूके अधिवासियोंको ब्रिटिश गवर्मेण्टकी अधीनता स्वीकार करनेके लिए आदेश देते हैं। क्षतिपूर्ति होनेके बाद गवर्नर जनरल ब्रह्मदेशमें और भी विजयकी इच्छा नहीं करते तथा दोनों राज्यकी शत्रुताका नाश चाहते हैं। किन्तु यदि ब्रह्मके राजा ब्रिटिश-गवर्मेण्टके साथ अपनी पूर्व मित्रताके संबंध नहीं अथवा यदि अंग्रेजों द्वारा अधिकृत प्रदेशमें अशान्ति फैलावें, तो गवर्नर जनरल अपनी क्षमताका पुनः प्रयोग करेंगे। उनका राज्य सम्पूर्ण रूपसे विध्वस्त तथा राजा और राजवंश निर्वासित होगा।"

इरावती नदीका मुख अंग्रेजोंके द्वारा अवरुद्ध होनेसे खाद्य द्रव्यके अभावके कारण ब्रह्मराजधानीमें अकाल पड़ गया। अब राजा अत्यन्त अप्रिय हो उठे। उनके भाईने उनके पद पर बैठ कर अंग्रेजोंके सन्धि कर लेना प्रस्ताव कर भेजा। १८५२ ई०को ४ अप्रैलको ब्रिटिश और ब्रह्म-अभिभावकगण सन्धिके नियम अवधारित करनेके लिए प्रोम नगरमें एकत्र हुए। इन लोगोंको घोषणाके अनुसार दो राज्यप्रतिनिधियोंने सन्धिपत्र पर

हस्ताचर करना मंजूर किया, सिर्फ पेगूकी प्रान्तसीमा मिद नामक स्थान निर्दिष्ट न करके प्रोमके पास ही कुछ नीचेक कोई स्थान निर्धारित करना चाहा। डलहौसीके पास आवेदन भेजा गया, वे सम्मत हो गये। आवाराज-प्रतिनिधियोंने कहा कि, जिस पर प्रदेश अर्पण करनेको बात लिखी है, ऐसे सन्धिपत्रमें राजा हस्ताचर नहीं कर सकते। इस पर उनको चले जानेके लिए कहा गया, तथा पुनः प्रचण्डतर युद्ध होगा ऐसा अनुमान होने लगा। किन्तु ब्रह्मराजने सब कुछ स्वीकार करके डलहौसीके पास एक पत्रमें भेज दिया। डलहौसीने इस पत्रको ही सन्धिपत्रके रूपमें ग्रहण कर सन्तुष्ट हुए। १८५३ ई०की ३० जूनको साधारण विज्ञापन द्वारा सन्धि पत्र प्रचारित हुआ।

डलहौसी सार्वभौमचमताके अत्यन्त पचपाती थे। उन्होंने वृटिश-गवर्मेंटको भारतका सर्वेसर्वा तथा भारतके छोटे छोटे राजोंको क्रमशः वृटिश-साम्राज्यमें शामिल करनेका निश्चय कर लिया था। इस उद्देश्यको कार्य में परिणत करनेके लिए उन्होंने १८४८ ई०में सतारा राज्यको वृटिशशासनमें शामिल कर लिया। सताराका राजा अपुत्रक थे; किन्तु मृत्युके पहले उन्होंने शास्त्रानुसार एक पोष्यपुत्र ग्रहण किया था। नियमानुसार वह पोष्यपुत्र ही राज्यका उत्तराधिकारी था, किन्तु डलहौसीने कहा - "सतारा वृटिश-साम्राज्यका अधीन राज्य है, सताराके राजा वृटिश-गवर्मेंटके बिना अनुमोदन किये पोष्यपुत्र ग्रहण नहीं कर सकते, करनेसे वह अग्राह्य है। वृटिश गवर्मेंटकी अनुमति बिना ही पोष्य पुत्र ग्रहण किया गया है, इसलिए यह बालक राज्यका अधिकारी नहीं हो सकता। अतएव सताराके देशीय राजत्वका अन्त हुआ।

१८५२ ई०में करौलीके राजाकी मृत्यु हुई। इस राज्यको विलुप्त करनेके लिये डलहौसीको इच्छा हुई; परन्तु डिरेक्टरोंने उनके इस प्रस्तावको मञ्जूर न किया। करौलीके राजाकी भी निःसन्तान अवस्थामें मृत्यु हुई थी और उन्होंने विना डलहौसीको आज्ञा लिये ही पोष्यपुत्र ग्रहण किया था। सताराको तरह इस राज्यको भी डलहौसी ग्रास करना चाहा, पर यह मित्र राज्य था, नकि अधीन राज्य, इसलिये डिरेक्टरोंने करौली-राज्यका अस्तित्व लोप नहीं किया।

कुछ भी हो, डलहौसी देशीयराज्योंका ग्रास करनेसे निवृत्त न हुए, वे अवसर ढूढने लगे। अबकी बार झाँसी राज्यमें सुभीता मिला। १८३५ ई० में झांसीके राजा बाबा गङ्गाधरराव देवलोक सिधारे। इन्होंने मृत्युसे १ दिन पहले एक दत्तकपुत्र ग्रहण किया था। किन्तु डलहौसीने झांसी-राज्य अङ्गरेज साम्राज्य-भुक्त हुआ तथा राजनैतिक नियमके अनुसार उक्त साम्राज्य-भुक्त ही रहेगा, ऐसा निश्चय कर १८५४ ई०में निम्नलिखित मन्तव्य डिरेक्टरोंके पास भेजा—

'वृटिशगवर्मेंटके करद और अधीन राज्य झांसीके राजाने मृत्युके एक दिन पहले एक पोष्यपुत्र ग्रहण किया था। इस राज्यमें पहले जो एक घटना हुई थी, उसके अनुसार हमने निश्चय किया है कि, यह पोष्यपुत्र ग्रहण सङ्गत नहीं है—इसके द्वारा दत्तक पुत्रको राज्य शासनका अधिकार नहीं हो सकता तथा इस राज्यके राजाको या पूर्ववर्ती राजाओंकी सन्तानादि न होनेसे यह राज्य वृटिश-साम्राज्यमें शामिल किया जाता है।' विधवा रानीने युक्ति दिखा कर डलहौसीके आदेशके विरुद्ध आवेदन किया। किन्तु उससे कुछ भी नतीजा न निकला, सताराकी भाँति झांसीका नाम भी देशीय राज्योंमेंसे विलुप्त हो गया।

डलहौसीकी संयोजन नीतिको जब कर्टपक्षियोंने द्वितीय बार अनुमोदन किया, तब उन्हें बड़ी खुशी हुई। अबकी बार उन्होंने महाराष्ट्र-प्रदेशका वृहत्तर राज्य विलुप्त कर दिया। नागपुरके राजा रघुजी भौंसलेकी १८५३ ई०के ११ दिसम्बरको मृत्यु हुई। उनका कोई पुत्र या निकटसम्बन्धी नहीं था और न उन्होंने कोई दत्तकपुत्र ही ग्रहण किया था। इस राज्यको ग्रहण करते समय डलहौसीने निम्नलिखित मन्तव्य प्रकट किया था,—

'इस राज्यके (नागपुरके) राजा उत्तराधिकारी न रख कर मर गये, इसलिए यह राज्य पुनः वृटिशगवर्मेंटके हस्तगत हुआ है, जो अधिकार हस्तगत हैं उसको हस्तान्तरित करना उचित नहीं, क्योंकि द्वितीय बार इस स्वत्वको छोड़ना न्याय और विचारानु-

सार ठीक नहीं तथा राजनीतिके अनुसार इस सत्वको छोड़ देना सर्वतोभावसे अविवेक है।

लार्ड डलहौसीने मानो देशीय राजाओंके प्रभुत्वको नाश करनेके लिए ही इस देशमें पदार्पण किया था। वे सिर्फ इन राज्योंको ही ब्रिटिशराज्यमें शामिल कर शान्त न हुए। उन्होंने हैदराबादके निजामको कुछ विभाग छोड़नेके लिए बाध्य किया तथा सुदूर दाक्षिणात्यके कर्णाट और तञ्जोर राज्यको ब्रटिश साम्राज्यमें शामिल कर लिया। उत्तरापथमें पेशवा बाजीराव सिंहासनच्युत हो कर वार्षिक ८०,०००० रुपयेकी वृत्ति पा रहे थे। १८५१ ई०में उनकी मृत्यु होनेके कारण उनके पुत्र नानासाहबने उस वृत्तिके लिए प्रार्थना की किन्तु डलहौसीने वृत्ति भी बन्द कर दी।

इतने पर भी डलहौसीकी राज्य पिपासा नहीं मिटी थी अन्तमें अयोध्या-राज्य ग्रास करनेको उद्यत हुए। अबकी बार उन्होंने एक नयी चाल चली। १७६५ ई०में सुजाउद्दौलाने क्लाइवसे अयोध्याका पुनरधिकार पाया था। इसीसे उनके वंशधर उस राज्यका शासन करते आ रहे थे। अंगरेजोंके साथ मित्रताके कारण उनको किसी तरहकी बुराईसे आहत नहीं होना पड़ता था। अयोध्याके शासनकर्तागण क्रमशः अत्यन्त अकर्मण्य और प्रजापीड़क हो गये थे। भिन्न भिन्न गवर्नरजनरलोंने उनसे राज्यमें सुप्रबन्ध स्थापित करनेके लिये पुनः पुनः अनुरोध किया था। अन्तमें लार्ड हार्डिंग स्वयं अयोध्या जा कर वहांके शासनकर्ताको दो वर्षके भीतर अपने राज्यमें सुप्रबन्ध करनेके लिए विशेष रूपसे कह आये थे। उस समय वाजिद अली अयोध्याके शासनकर्ता थे। वे हार्डिंगके डरानेसे विचलित न हुए और न उन्होंने राज्यमें कोई सुप्रबन्ध ही किया। लार्ड डलहौसी गवर्नर जनरल हो कर आये। उन्होंने निर्दिष्ट अतीत समय होते ही तत्कालीन रेसिडेण्ट मि० स्लिमानको राज्य परिभ्रमणपूर्वक समस्त विषय अच्छी भांति जान कर बतलानेके लिए लिख भेजा। १८५२ ई०को स्लिमानने डलहौसीको लिखा कि, राज्यमें अत्याचारके कारण नवाब वाजिद अलीके विरुद्ध जैसा अभियोग उपस्थित हुआ है, उसका एक अक्षर भी अतिरञ्जित नहीं है—अभियोगकी मात्रा उससे भी ज्यादा है। प्रजासाधारण सभी सानन्द रूपसे अंगरेज गवर्मेण्ट द्वारा शासित होनेकी इच्छा करती है। इस विषयमें राजकर्मियोंकी इच्छा ही सबसे अधिक पायी जाती है।

डलहौसीकी यद्यपि उसी समय इस राज्यको अधिकृत कर लेनेकी इच्छा थी तथापि क्रिमियाके साथ युद्ध और पारस्यराज्यके साथ मनमुटावके झगड़ामें वे अपने इच्छाके अनुसार कार्य न कर सके। इसी समय डलहौसीका भारत-शासनकाल निबटनेको हुआ। उन्होंने डिरेक्टरोंको लिख भेजा कि,—"यदि आप लोगोंकी इच्छा हो तो मैं और कुछ दिन भारतमें रह कर अयोध्याके विषयमें आप लोग जैसा सिद्धान्त निर्णीत करें उसको कार्यमें परिणत कर जाऊं।" डिरेक्टरोंने आनन्दके साथ इस प्रस्तावको मंजूर कर लिया और अयोध्या ग्रहणके पक्षपाती हो कर कार्यका पूर्ण भार डलहौसी पर सौंप दिया। पहले अयोध्याके साथ जो सन्धि हुई थी उसका लोप करके अयोध्या ब्रटिश साम्राज्यमें शामिल कर ली गई। १८०१ और १८३७ ई०में अयोध्याके साथ अंगरेजोंकी दो सन्धि हुई थीं। पूर्वसन्धिके अनुसार नवाब कर्मचारियोंके परामर्शानुसार राज्यकी श्रीवृद्धि करेंगे इस शर्त पर अयोध्याका अर्धांश ब्रटिश-गवर्मेण्टको प्राप्त हुआ। दूसरी सन्धिका नियम यह था कि यदि सुनियमसे राज्य-शासन न हो, तो अंगरेज-कर्मचारी उन्हींके नाम अयोध्याका शासन भार ग्रहण कर सुप्रबन्ध करेंगे तथा व्ययातिरिक्त अर्थ अयोध्याके राजकोषमें पहुंचेगा। सैन्यरक्षाके लिए वार्षिक १६,००,००० रुपये अंगरेज गवर्मेण्टको देने पड़ेंगे यह भी उस सन्धिमें लिखा था। किन्तु डिरेक्टरोंने इस अंशका अनुमोदन नहीं किया, क्योंकि सैन्यरक्षाके लिए नवाबने उनको राज्यका अर्धांश पहले ही दे दिया था। इस अंशके सिवा उस सन्धिके अन्य किसी भी अंशको डिरेक्टरोंने अग्राह्य नहीं किया था।

इस प्रकारका सन्धिपत्र होते हुए भी ब्रिटिशगवर्मेण्टने अयोध्याराज्य पर कब्जा कर लिया। डलहौसीने रेसिडेण्ट आउट्रामको निम्नलिखित आशयका एक पत्र लिखा, आशानुरूपसे समझ सम्भव है, राजा अयोध्याके नवाब १८३७ ई०की सन्धिको मान बैठेंगे। इसलिए

इन्होंने भारतकी वणिकामें पर पदार्पण किया था। कंपनीके स्वार्थके लिये इनका बहुत ही कर्तृत्वपूर्ण काम हुआ था। इन्होंने बहुत ही कार्यक्षमतामें अधिकारयुक्त करनेके लिए इनका क्षमता हृदय दूषित होनेसे अवलम्बन करनेमें तनिक भी विचलित नहीं हुआ था। इन्होंने बहुतसे मन्त्रियोंका भी अनुशासन किया था परन्तु वे अवश्याविके कारण पानेमें दूबे हुए हैं। एकच्छत्रताके विशेष पक्षपाती होनेके कारण इनका सुयश स्फूर्तिको प्राप्त न हो सका। कुछ भी हो, बहुतसे यूरोपीय ऐतिहासिकोंने इनको एक श्रेष्ठ राजनीतिकुशल बतलाया है। किन्तु भारतीयों पर इन्होंने विशेष अन्याय किया था और ये ही परवर्ती सिपाही विद्रोह (गदर)-के मूल कारण थे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। डिरेक्टरोंका नाम ले कर अयोध्या पर अधिकार करते समय इन्होंने जो उनका अपवाद किया था, उससे इनकी अभिनिष्ठा पर सन्देह होता है।

इनके समयमें कम्पनीकी शासनरीतिका एक प्रधान परिवर्त्तन हुआ था। १८५३ ई०के २० अगस्तको पार्लामेण्ट सभामें स्थिरीकृत हुआ कि जब तक पार्लामेण्ट कोई नवीन आदेश न दे, तब तक इङ्गलैण्डकी महारानी की प्रजा और कम्पनीका अधिकृत राज्य इङ्गलैण्डकी महारानीके प्रतिनिधिस्वरूप कम्पनीके ही शासनाधीन रहेगा। थोड़े ही दिनमें कुछ परिवर्त्तन होना इस आशासे कम्पनीके सत्ताधिकारियोंने डिरेक्टरोंको संख्या घटा कर २४ की जगह १८ कर दिये। इन १८ डिरेक्टरोंमेंसे १२को शासी चुनेंगे और ६ अधिकारियों द्वारा नियुक्त होंगे। इसके बाद ही और एक नियम हुआ कि, पहले डिरेक्टरगण विशेष विशेष व्यक्तियोंको भारतके असिष्टेण्ट सार्जन और सिविल सर्विसके कार्यमें नियुक्त करते थे अबसे ऐसा नियम हुआ कि साधारणकी प्रतियोगी परीक्षा द्वारा उक्त पद पर कर्मचारी नियुक्त होंगे। डलहौसीके समयमें ही पैटरनाष्ट्र सबनर्थके पदकी सृष्टि हुई।

ढलन (स॰ क्लो॰) १ कंसादिनिर्मित पात्रविशेष और पत्रादिको पट्टियों का बना हुआ बरतन, डला, टोरा। किसी व्रतमें टोरेमें खाद्य पदार्थ उपवीत और वस्त्र दे कर ब्राह्मणोंको दान देना चाहिए।

"त्रिवत्स सप्तरिक ढलके ढलकेदुती।
सभोज्यं धौतीसम सौवहारं सभोदरं॥" (महारैन्दु)

२ काश्मीरकी एक राजाका नाम।

"कल्ह्ढनम् प्रजाधिर्स ढलको नाम दृश्यि"

(राजतर॰ ८।१३१)

ढलनाचार्य—निबन्धसंग्रह नामधेय सुश्रुतके एक प्रसिद्ध टीकाकार। ये जातिके ब्राह्मण थे। इनके पिताका नाम भरत था।

ढकोत (हि॰ पु॰) ढकल देवे।

ढक्ति (स॰ पु॰) १ ढालमय धूम, काठका बना हुआ धूम।

"नित्य काष्ठका डरो ढक्तिवस्तनके समः" (सुश्रुत॰)

२ कुलपात्रि ढ प्रामेद।

"ढक्षमयाः एकमविनायियो इविहातिक्यविनाशन।"

(वाभिसर्ग)

ढल (हि॰ स्त्री॰) १ मद्यविशेष, एक प्रकारकी शराब। २ पहले बैठे रहनेकी तराजूकी डोरी होती। ३ कपड़े आदिका वह किनारा जहाँ लम्बाई समाप्त हो, छोर।

ढलन (हि॰ स्त्री॰) ढलनेको क्रिया या भाव। २ ढलने का ढंग।

ढलना (हि॰ क्रि॰) १ सांप आदि विषैले कीड़ोंका काटना। २ डंक मारना।

ढलवाना (हि॰ क्रि॰) ढलना देखो।

ढलाना (हि॰ क्रि॰) दांतसे कटवाना।

ढहकना (हि॰ क्रि॰) १ छल करना, धोखा देना, ठगना। २ ललचाना। ३ विलपना, विलाप करना। ४ विस्तृत करना, फैलाना, छितराना। ५ गरजना, हुंकारना।

ढहकाना (हि॰ क्रि॰) १ नष्ट करना, गंवाना। २ वञ्चित होना, ठगा जाना। ३ छल करना, धोखा देना।

ढहढहा (हि॰ वि॰) १ लहलहाता हुआ ताजा हरा भरा। २ प्रफुल्लित प्रसन्न, आनन्दित। ३ टटका, ताजा तुरन्तका।

ढहढहाना (हि॰ क्रि॰) १ लहलहाना हरामरा होना। २ प्रसन्न होना खुश होना।

ढहढहाव (हि॰ पु॰) प्रफुल्लता, प्रसन्नता, ताजगी।

ढहन (हि॰ पु॰) १ पड़ पर, ढेला। (स्त्री॰) २ ढहन, दाह।

ढहना (हि॰ क्रि॰) १ भस्म होना, दग्ध होना, जलना। २ ऐंठ करना, कुढ़ना, चिढ़ना। ३ मनाम करना, दुःख पहुंचाना।

डहर (हिं० स्त्री०) १ पथ, मार्ग, रास्ता। २ आकाशगङ्गा।

डहरना (हिं० क्रि०) भ्रमण करना, चलना, फिरना।

डहाला (सं० स्त्री०) डाहलभूमि, चेदिराज्यका दूसरा नाम। डाहल देखो।

डहु (सं० पु०) दहति तापयति सर्वशरीरं दहक। मृगय्वादयश्च। उण् १।३८। इति सूत्रे ण निपातनात् साधुः। १ वृक्षविशेष, लकुच, डडहर। इसके पर्याय—लकुच और लिकुच है। इसका गुण—गुरु, त्रिदोष और शुक्रपुष्टिकारक है। लकुच देखो। २ बड़हर।

डहू (सं० पु०) पृषो० साधुः। डहु देखो।

डा (सं० स्त्री०) डीं-ड स्त्रियां टाप्। डाकिनी, डाइन।

डा (हिं० पु०) सितारकी गतिका एक बोल।

डाइन (हिं० स्त्री०) १ भूतनी, राक्षसी चुड़ैल। २ वह औरत जिसकी दृष्टि आदिके प्रभावसे बच्चे मर जाते हैं। ३ खराब और खौफनाक औरत।

डाइरेक्टर (अं० पु०) १ कार्य-संचालक, वह जो इन्तजाम करता हो। २ गति उत्पन्न करनेवाला मशीनका एक पुरजा।

डाइरेक्टरी (अं० स्त्री०) एक पुस्तक जिसमें किसी किसी नगर या देशके प्रधान प्रधान मनुष्योंकी सूची अक्षर क्रमसे हो।

डाई (अं० पु०) १ पासा। २ ठप्पा, साँचा। ३ रङ्ग।

डाईप्रेस (अं० स्त्री०) वह कल जिससे उभरे हुए अक्षर छापे जाते हैं।

डाँक (हिं० स्त्री०) कागजकी तरह पतला ताँबे या चाँदीका पत्तर।

डाँगर (हिं० पु०) १ चौपाया, ढोर। २ एक नीच जातिका नाम। (वि०) ३ कृश, दुबला-पतला। ४ मूर्ख, जड़।

डाँगा (हिं० पु०) जहाजके मस्तूलमें आड़ी लगी हुई धरन जिस पर रस्सियाँ फैलाई जाती हैं।

डाँट (हिं० स्त्री०) १ वश, दाब, दबाव। २ क्रोधका शब्द डपट, झिड़की।

डाँटना (हिं० क्रि०) क्रोधपूर्वक कर्कश स्वर कहना, डपटना।

डाँड़ (हिं० पु०) १ डण्डा, सीधी लकड़ी। २ गदका। ३ वह लम्बा डंडा जिससे नाव खेई जाती है, बल्ला। ४ अंकुशका डण्डा। ५ रीढ़की हड्डी। ६ ऊँची उठी हुई सङ्कीर्ण जमीन जो बहुत दूर तक चलती रेखाकी तरह चली गई हो, ऊँची मेंड़। ७ कम ऊँचाईकी दीवार जो आड़ आदिके लिये उठाई जाती है। ८ ऊँचा स्थान, छोटा भीटा। ९ मेंड़। १० समुद्रका टापुआ रेतीला किनारा। ११ सीमा, हद। १२ जङ्गल कटा हुआ मैदान। १३ अर्थदण्ड, जुरमाना। १४ नुकसानका बदला, हरजाना। १५ ऊदा, डाँस।

डाँड़ना (हिं० क्रि०) अर्थदण्ड देना, जुरमाना करना।

डाँठर (हिं० पु०) बाजरेकी खूँटी जो फसलके काट लिये जाने पर खेतमें रह जाती है।

डाँड़ा (हिं० पु०) १ डण्डा, छड़। २ गदका। ३ बाँसका लम्बा डण्डा जिससे नाव खेई जाती है। ४ सीमा, हद।

डाँड़ामेंड़ा (हिं० पु०) १ परस्पर अत्यन्त सामीप्य लगाव। २ झगड़ा, टण्टा।

डाँड़ागहेल (हिं० पु०) जङ्गलमें मिलनेवाला एक प्रकारका साँप।

डाँड़ी (हिं० स्त्री०) १ लम्बा पतला काठ। २ लम्बा हत्था। ३ पलड़े बँधे रहनेका तराजूकी सीधी लकड़ी। ४ पतली शाखा, टहनी। ५ फूल या फल लगा हुआ लम्बा डंठल। ६ वे चार सीधी लकड़ियाँ या डोरीकी लड़ें जो हिंडोलेमें लगी रहती हैं। ७ जुलाहोंकी करघोंकी घवनीमें डाली जानेकी लकड़ी। ८ पीतल लगा हुआ गहनाईकी लकड़ी। ९ वह आदमी जो डाँड़ खेता है। १० चालमें अनुपात। ११ मर्यादा, इज्जत। १२ वह स्थान जहाँ चिड़ियाँ आ कर बैठा करती हैं। १३ फूलके नीचेका वह भाग जो लम्बा और पतला होता हो। १४ पालकीके दोनों ओर निकले हुए लंबे डंडे। कहार इन्हींमें कंधा लगा कर चलते हैं। १५ पालकी। १६ पहाड़ी सवारी, झप्पान।

डाँबू (हिं० पु०) दलदलमें होनेवाला एक प्रकारका नरकट।

डाँवरा (हिं० स्त्री०) पुत्र, लड़का, बेटा।

डाँवरो (हि॰ स्त्री॰) पुत्री, कन्या, बेटी।

डाँवरू (हि॰ पु॰) बालक, बच्चा।

डाँवाडोल (हि॰ वि॰) चञ्चल, विचलित।

डाँसपारिका (हि॰ पु॰) वसुन्धराके व्यापक में टोलेके एक।
इसमें ३ पाचातके बाद १ शून्य होता है।

डाँस (हि॰ पु॰) १ बड़ा मच्छड़, दंश। २ मक्खियोंको दुःख देनेवाली एक मक्खी।

डाँसर (हि॰ पु॰) इमलीका बीज, चिंयाँ।

डाक (हि॰ स्त्री॰) १ वह स्थान जहाँ कोई गाड़ी आदि बदले जाते हैं। २ सरकारको ओरसे चिट्ठियोंके आने जानेको व्यवस्था। ३ चिट्ठीपत्री। ४ वमन, उल्टी, कै।

डाक (अ॰ पु॰) १ समुद्रके किनारेका वह स्थान जहाँ जहाज आ कर ठहरता है। २ नीलामकी बोली।

डाक—हिन्दीके एक प्रसिद्ध कवि। इनका दूसरा नाम घाघ है। कृषिसम्बन्धीय इनकी बहुतसी कविताएँ लोगोंके मुखसे सुनी जाती हैं। उदाहरणार्थ एक नीचे दी जाती है—

"जो पुरवाईं पुरवाई पावे। झूरी नदिया नाव चलावे॥

वहै डाक कह बादल थिर रहै। कहीं न जाय ॥ जल देनो॥

डाकखाना (हि॰ पु॰) वह स्थान जहाँ मनुष्य भिन्न भिन्न स्थानों पर भेजनेके लिये चिट्ठी पत्री आदि छोड़ते हैं। और वहाँसे आई हुई चिट्ठियाँ लोगोंको बाँटी जाती हैं।

डाक विभागकी प्रथा अत्यन्त आधुनिक नहीं है। पहले राजा अपने राजकीय कार्योंकी सुविधाके लिये डाक प्यादा रखते थे। वे राजकागजपत्रादि ले कर बहुत तेजीसे एक स्थानसे दूसरेको जाते और फिर वहाँसे दूसरा आदमी उन सब पत्रोंको ले कर दूसरी जगह जाता था। इसी तरह थोड़े ही समयमें बहुत दूर दूर देशोंमें संवाद पहुँचाये जाते थे। यहाँ तक कि भारतवर्षमें और अमेरिकाके मेक्सिकोवासी प्राचीन जातियोंमें भी इसी तरहसे डाकके आदान प्रदानका नियम प्रचलित था। रोमसाम्राज्यकी समृद्धिके समय वहाँ भी अनेक तरहके डाकविभाग थे जिन्हें (Cursus publicus) कहते थे।

१३वीं शताब्दीकी प्रथममें डाक-विभाग स्थापित हुआ। १५वीं शताब्दीके आरम्भमें राजा ११वें लुईके समयमें डाक विभागमें बहुत उन्नति हुई। १७वीं शताब्दीकी फरासीसी विप्लवके समय प्रायः साधारण मनुष्योंमें भी डाक-प्रथा प्रचलित हो गई थी।

१५१६ ई॰में अष्ट्रियाके राजाके अनुरोधसे फ्रांज (Franz Von Thun) और टैक्सिस (Taxis) ने सार्वजनिक डाकविभाग स्थापन किया। इनके वंशजोंने ब्रुसेल्स और वियानामें संवाद पहुँचानेके लिए बहुतसे डाकघर निर्माण किये। क्रमशः इन्हींके यत्नसे बहुत दूरस्थित नेदरलैण्ड और मिलिन तक डाकविभाग स्थापित हुआ था।

१६वीं शताब्दीमें शेरशाहने सबसे पहले घोड़ेका डाक तथा दिल्लीश्वर अकबरने सबसे पहले शाम्राज्यके सभी स्थानोंमें थोड़े ही समयमें संवाद भेजनेके लिए डाक-विभाग स्थापित हुआ। काफीखाँ नामक एक मुसलमानने इतिहासमें लिखा है, बादशाह अकबरने जो सब नये नियम चलाये उनमेंसे 'डाकचौकी' भी एक बड़ा उपयोगी है। स्थान स्थान पर उसका अड्डा था।"* मेवाड़कर जो आदमी अकबरोंमें लिखा है, मेवाड़ मेवाटके अधिवासी थे। ये दौड़नेमें बड़े तेज थे। बहुत दूरसे थोड़े ही समयमें संवाद ला देते थे। उत्तम नौकरीमें भी उनको मिलती थी।

१ गर्लण्डके राजा १म चार्ल्सके समय में इङ्गलैण्डमें डाकविभाग स्थापित हुआ। वुद्धिमान् स्मिथके मन्त्रित्वके समयमें डाककी आवश्यकता व गरीबोंमें सम्भव इसकी उपलब्धि की। इसी समयमें डाककी उन्नति आरम्भ हुई।

१७वीं शताब्दीको अमेरिकाके युक्तराज्यमें डाक प्रचलित हुआ।

डाकसे वाणिज्य व्यवसायियोंके अनेक उपकार होने पर भी पहले अधिक व्यय इसकी प्रयोजनीयता उपलब्धि कर न सके।

१८वीं शताब्दीके मध्यभागसे डाक विभागकी बहुत कुछ उन्नति की गई। पहले डाक-विभागसे राजा और राजपुरुषोंको ही सुविधा थी। अब क्या राजा क्या प्रजा सभी एकसा उपकार पाते हैं। डाकके होनेसे वाणिज्यादिमें जो लाभ हुआ है वह अवर्णनातीत है।

१८४० ई॰में रालेण्ड हिलने एक सर्टाव नीलकी

* Khafi Khan, I, p. 243

दूरोको चिट्ठी होने पर भी सिर्फ एक पेनि खर्च दे कर भेजनेको सम्मति अंगरेजोंसे लो। यूरोपके दूसरे दूसरे देशोंमें भी थोड़े ही समयमें सभोंने रावलैण्ड-हिलका पन्न अवलम्बन किया। भारतके अंगरेज शासनकर्त्ता बड़े लाट डलहौसीने यहाँ सबसे पहले सार्वजनिक डाक-विभाग स्थापन किया।

१८७० ई०में अष्ट्रियासे सबसे पहले पोष्टकार्ड प्रचलित हुआ। बाद वह भी बहुत थोड़े दिनोंमें ही जगत्के समस्त सभ्य देशोंमें चलाया गया।

पहले देश में दर्के अनुसार डाकखर्च भी लगता था। १८७४ ई०में जबसे आन्तर्जातिक डाक-सम्मेलन (International Postal Union) स्थापित हुआ, तबसे विदेशको चिट्ठी भेजनेमें खर्चकी जो गड़बड़ी थी वह जाती रही।

अभी सभी सुसभ्य देशोंके प्रधान प्रधान नगरों और ग्रामोंमें डाकघर स्थापित हो गया है। डाकसे सब लोगोंको समान सुविधा मिलने पर भी डाक विभाग देशके राजाके अधीन है।

डाकगाड़ी (हिं० स्त्री०) चिट्ठी पत्री ले जानेको रेलगाड़ी इसका इन्तजाम सरकारको ओरसे है। यह और गाड़ियोंसे तेज चलती है। अधिक महसूल ले कर इसमें आदमी भी बैठाये जाते हैं।

डाकघर (हि० पु०) डाकखाना देखो।

डाकना (हिं० क्रि०) १ उलटी करना, कै करना। २ लांघना, फांदना, कूदना।

डाकबंगला (हिं० पु०) एक स्थानसे दूसरे स्थान जानेमें राजपुरुषों या भ्रमणकारियोंके सुविधार्थ और विश्रामार्थ घर। ईस्ट इण्डिया कम्पनीके समयमें इस प्रकारके घर स्थान स्थान पर बने थे। रेल होनेके पहले इन्हीं स्थानों पर डाक ली जाती और बदली जाती थी।

डाकमुंशी (हिं० पु०) वह पुरुष जिसके हाथ डाकघरका इन्तजाम हो, पोष्टमाष्टर।

डाकर (हिं० पु०) सूखे हुए तालाबोंको चिटकी हुई मट्टी।

डाकव्यय (हिं० स्त्री०) डाकका खर्च, डाक महसूल।

डाका (हिं० पु०) किसीका धन छीननेका आक्रमण, बटमारी।

डाकाजनी (हिं० स्त्री०) डकैती करनेका काम, बटमारी।

डाकिन (हिं० स्त्री०) डाकिनी देखो।

डाकिनी (सं० स्त्री०) डाय भयदानाय अकति व्रजति-डाय अक-इनि वा डाकानां समूहः इति डाक इनि। खलादिभ्यइनिर्वक्तव्यः। पा ४।२।५१ वार्त्तिक। १ कालीके एक गणका नाम।

"डाकिन्य डाकिनीनाथ विकटानां त्रिकोटिभिः।" (ब्रह्मपु०)

२ पिशाची, यह किसी मनुष्यको देखनेसे हो उसका अनिष्ट करती है। ३ स्त्रीविशेष, डाइन। ४ शिव और पार्वतीका अनुचर। इसको संहार-शक्तिका अंश-विशेष कहा जाता है। यह मारण, वशीकरण प्रभृति कार्योंका तथा इनके मन्त्रका उपास्य देवता है।

"डाकिनी शाकिनी भूतप्रेतवेतालासुराः।" (काशीखं १० अ०)

भोटदेशवासी अभी भी डाकिनीकी उपासना करते हैं।

डाकी (हिं० स्त्री०) १ उलटी, कै, वमन। (पु०) २ पेटू, बहुत खानेवाला।

डाकू (हिं० पु०) १ वह जो बलपूर्वक दूसरेका माल लूट लेता है, लुटेरा, बटमार। २ वह जो बहुत खाता हो, पेटू।

डाकेट (अं० पु०) किसी पत्रका सारांश, चिट्ठीका खुलासा।

डाकोत—एक ब्राह्मण जाति। ये लोग कहीं डाकोत कहीं भडरी कहीं भडलो, कहीं जोतगो, कहीं दिसन्धी, कहीं जोषी, कहीं शनिश्चरिया, कहीं ग्रहविप्र, कहीं ज्योतिषीजी, कहीं नक्षत्रजीवी और कहीं थावरिया कहलाते हैं। प्रवाद है कि, ब्राह्मणके वीर्य व भडनी नामको एक शूद्राके संयोगसे जो सन्तान उत्पन्न हुई वह डाकोत या भडरी कहलाई। आज कल जैसे अन्य ब्राह्मणगण मन्दिरोंके पुजारी हैं, तैसे ही ये डाकोत लोगभी शनिदेवके मन्दिरके पुजारी हैं।

यथार्थमें यह जाति डक ऋषिको सन्तान है। महाभारतके अनुशासनपर्वमें लिखा है कि भृगुजीके गुणोंके समान च्यवन, वज्रशीर्ष, शुचि, शुक्र, वरेण्य और विभुसवन ये सात उनके पुत्र पैदा हुए। इन्हीं शुक्राचार्यके वंशमें डक ऋषि हो गये हैं और उन्हीं डकके वंशमें

डाकोत है। पहले ये लोग डका कहलाते थे बाद डका डका कहातेकहाते डाकोत कहलाने लगे हैं।

डाकोर (हि॰ पु॰) विष्णु भगवान्, ठाकुर। यह शब्द सिर्फ गुजरातमें प्रयोग किया जाता है।

डाक्टर (अ॰ पु॰) १ अध्यापक, विद्वान् आचार्य। २ चिकित्सक, वैद्य, हकीम।

डाक्टरी (हि॰ स्त्री॰) १ चिकित्साशास्त्र, वैद्यक-विद्या। २ पाश्चात्य आयुर्वेद।

डाखर (हि॰ पु॰) डाक्टर देखो।

डागा (हि॰ पु॰) वह डंडा जिससे नगाड़ा बजाया जाता है, चोब।

डागुर (हि॰ पु॰) जाटोंकी एक जाति।

डाहुति (स॰ स्त्री॰) बच्चा और पक्षीका शब्द।

डाङ्री (म॰ स्त्री॰) कड़री पृषोद॰ साधु। दोवकवैंटो।

डाङ्गाग्राम—हरमहाके अन्तर्गत काममोचिके १ कोस उत्तरमें अवस्थित एक ग्राम। (भ॰ ब्रह्म॰ ४०।११६)

डाट (हि॰ स्त्री॰) १ टेक चाँड़। २ वह वस्तु जिससे कोई छेद बन्द किया जाता है। ३ वह वस्तु जिससे बोतलका मुंह बंद किया जाता है, काग।

डाटना (हि॰ क्रि॰) १ एक पदार्थको दूसरे पदार्थ पर जोरसे दबाना। २ टेकना, चाँड़ लगाना। ३ छिद्र बन्द करना, मुंह कसना। ४ कस कर भरना, अच्छी तरह ठूंसठूंस। ५ खूब भर खाना, कस कर खाना। ६ डटाना, भिड़ाना।

डाढ़ (हि॰ स्त्री॰) १ चौभड़, दाढ़। २ बट आदि वृक्षोंकी जटाएं जो नीचेको ओर लटकती रहती हैं, बरोह।

डाढ़ा (हि॰ स्त्री॰) १ दावानल, वनकी आग। २ आग। ३ ताप, दाह, जलन।

डाढ़ी (हि॰ स्त्री॰) १ चिबुक, ठुड्डी। २ चिबुक और गण्डस्थल परके लोम, दाढ़ी।

डाब (हि॰ स्त्री॰) १ डाभ नामकी घास। २ कच्चा नारियल। ३ तलवार लटकानेका चमड़े या मोटे कपड़ेका चौड़ा पट्टा।

डाबक (हि॰ वि॰) डाबर देखो।

डाबर (हि॰ पु॰) १ नीची जमीन। २ गर्त, पोखरी, गड़ही, गढ़ा। ३ हाथ धोने और कुल्ली करनेका बरतन चिलमची। ४ अपरिष्कार जल, मैला पानी। (वि॰) ५ मटमैला गदला।

डाबा (हि॰ पु॰) डब्बा देखो।

डाबी (हि॰ स्त्री॰) कटी हुई घास।

डाभ (हि॰ पु॰) १ एक प्रकारका कुश। २ कुश। ३ आम्रमञ्जरी, आमका मौर। ४ कच्चा नारियल।

डामच (हि॰ वि॰) ताजा, टटका।

डामचा (हि॰ पु॰) मचान, माचा।

डामर (स॰ पु॰) १ महादेवकथित तन्त्रशास्त्रविशेष। इन तन्त्रोंकी संख्या, इनके नाम और श्लोकसंख्या वाराही तन्त्रमें इस प्रकार लिखी है, १ योगडामर—इसकी श्लोक संख्या २३५३३ है। २ शिवडामर—इसकी श्लोकसंख्या ११००० है। ३ दुर्गाडामर—इसकी श्लोक संख्या ११३०४ है। ४ सारस्वतडामर—इसकी श्लोक संख्या ८८०६ है। ५ ब्रह्मडामर—इसकी श्लोकसंख्या ७१०२ है। गन्धर्व-डामर—इसकी श्लोकसंख्या ६००६० है। वाराहीतन्त्र देखो। २ चमत्कार। ३ गर्व आडम्बर ठाटबाट।

"रतिपतिरिव कमितैः कुसुमानि शिवमित्रशिवककडामरे।"

(गीतगोविन्द १२।११)

४ घोटकजातिविशेष, घुड़के शुभाशुभ जाननेके लिए बनाए जानेवाले चक्रोंमेंसे एक।

"इमको मिरिधेवन वधः घोटक डामर।" (जयमाहल)

५ शिवपार्श्वविशेष, ४८ भैरवोंमें एकोमेंसे एक। ६ धूम, हलचल।

डामर (हि॰ पु॰) १ साल वृक्षका गोंद, राल। २ एक प्रकारका गोंद। इसका पेड़ दक्षिणमें पश्चिमी घाटके पहाड़ों पर मिलता है। करवा देखो।

३ छोटी मधुमक्खियोंके छत्तेसे निकलनेवाला एक प्रकारका कसीला राल। ४ इस तरहका राल बनानेवाली छोटी मधुमक्खी।

डामल (हि॰ स्त्री॰) १ जीवन पर्यन्त कारागार, जन्म भरके लिये कैद। २ देश निकालेका दण्ड। भारत वर्षमें अंगरेजी सरकार उन अपराधियोंको अण्डमन टापूमें भेजा करती है जो बहुत भारी अपराध करते हैं। कभी इनको डामल कहते हैं।

डामाडोल (हि॰ वि॰) डाँवाडोल देखो।

डायँडाय (हिं० क्रि०-वि०) व्यर्थ इधरसे उधर, व्यर्थ धूल छानते हुए।

डायन (हिं० स्त्री०) १ पिशाचिनी, डाकिनी। २ कुरूपा स्त्री, बदसूरत औरत।

डायनामो (अं० पु०) बिजली उत्पन्न करनेवाली एक प्रकारका छोटा एञ्जिन।

डायमण्डकट (अं० पु०) हीरेकीसी काट, डामल काट।

डायमण्ड हारबर (Diamond Harbour)—१ बङ्गालके अन्तर्गत २४ परगने जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० २१° ३१' से २२° २१' उ० और देशा० ८८° २' से ८८° ३१' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण १२८३ वर्ग-मील है, जिनमेंसे ८०७ वर्गमील तक सुन्दरवन व्याप्त है। इस उपविभागमें डायमण्ड-हारबर, देवीपुर, बांकीपुर, काल्पी और मथुरापुर नामक ५ थाने हैं। ३ दीवानी और ३ फौजदारी अदालतमें विचारकार्य सम्पन्न होता है। विख्यात सागरद्वीप इसी उपविभागके अन्तर्गत है। १८६४ ई०के तूफानमें यहांके बहुतसे अधिवासियोंकी मृत्यु हुई थी। प्रायः ५६२५ अधिवासियोंमें केवल १४८८ मनुष्योंकी जान बची थी। १८६६ ई०के दुर्भिक्षमें भी बहुत लोग मरे थे। कलकत्तेसे डायमण्ड-हारबर तक रेलपथ हो जानेसे इसकी दुरवस्था बहुत कुछ जाती रही। अभी यहांकी लोकसंख्या प्रायः ४६०७४८ है। इसमें १५७५ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है।

२ बङ्गालके अन्तर्गत २४ परगने जिलेके डायमण्ड-हारबर उपविभागका प्रधान स्थान और एक विख्यात बन्दर। इसी स्थानके नामानुसार उपविभागका नाम पड़ा है। डायमण्ड-हारबर शब्दका अर्थ (डायमण्ड=हीरक, हारबर=बन्दर) उत्कृष्ट बन्दर है। यह अक्षा० २२° १०' उ० और देशा० ८८° १२' पू० पर भागीरथीके बायें किनारे अवस्थित है। पहले यहां इष्ट इण्डिया कम्पनीके जहाज रहते थे। अभी यहां एक टेलिग्राफ आफिस और फ्लोट-घर है। जो जहाज नदी हो कर प्रतिदिन जाते हैं, बन्दरके मालिक उनमेंसे प्रत्येकका विवरण बोझ आदिकी तादाद कलकत्तेमें टेलिग्राफ द्वारा जताते हैं। कलकत्तेके टेलिग्राफ गजटमें वह प्रतिदिन प्रकाशित हो जाता है। जो कुछ हो, अभी यह समृद्धशाली स्थान हो गया है। प्राचीन चिह्नोंमेंसे एक कब्रिस्तान विद्यमान है। रेलपथके द्वारा यह कलकत्तेसे ३८ मील दूर है। यह रेलपथ कलकत्ते और साउथ इष्टर्न बेङ्गल ष्टेट रेलपथके सोनापुर स्टेशनसे निकला है। यह कलकत्तेसे पैदल ३० मील और नदी द्वारा ४१ मील दूर पड़ता है।

डायरी (अं० स्त्री०) दिनचर्या, रोजनामचा।

डायल (अं० पु०) घड़ीका चेहरा, जहां अंक बने होते हैं और सूइयां घूमती हैं।

डायस (अं० पु०) किसी सभाका ऊंचा स्थान जहां सभापतिका आसन रखा जाता है।

डार (हिं० स्त्री०) १ डलिया, टोकरा। २ शाखा डाल। ३ एक प्रकारकी खूंटी जो फानूस जलानेके लिये दीवार में लगाई जाती है।

डारना (हिं० क्रि०) डलना देखो।

डारियास (हिं० पु०) बाबून बन्दरकी एक जाति।

डाल (हिं० स्त्री०) १ शाखा, शाख। २ दीवारमें लगी हुई एक प्रकारकी खूंटी जो फानूस जलानेके लिये दीवारमें लगाई जाती है। ३ तलवारका फल। ४ मध्यभारत और मारवाड़में पहने जानेका एक प्रकारका गहना। ५ डलिया, चँगेरी। ६ डलियेमें सजा कर किसीके यहां भेजी जानेवाली खाने पीनेकी वस्तु। ७ विवाहके समय वरकी ओरसे वधूको दिये जानेका कपड़ा और गहना।

डालना (हिं० क्रि०) १ नीचे गिराना, छोड़ना, फेंकना। २ छोड़ना, ऊपरसे गिराना। ३ स्थित या मिश्रित करना रखना, मिलाना। ४ प्रविष्ट करना, भीतर घुसेड़ना। ५ परित्याग करना, सुधि न लेना, भुला देना। ६ चिह्नित करना, अङ्कित करना, लगाना। ७ विस्तृत कर रखना, फैलाना। ८ शरीर पर धारण करना, पहनना। ९ सौंपना, भार देना। १० गर्भपात करना, पेट गिराना। ११ उपयोग करना, लगाना। १२ वमन करना, करना। १३ स्त्रीको तरह रखना।

डालफिन (अं० पु०) एक प्रकारकी ह्वेल मछली।

डाभर (प० पु०) तोल करने दो पानीके बराबर भरी रिकाबका एक हिस्सा।

डाभी (हि० स्त्री०) १ टोकरा, चंगेरी। २ पतले काम या भाजी पोलेकी वस्तु को डलियामें रखा कर जिसमेंसे भीगी जाय।

डाबड़ा (हि० पु०) १ पिछलग। २ बाबरा देखो।

डाबरा (हि० पु०) पुत्र, बेटा।

डाबरी (हि० स्त्री०) कन्या, बेटी।

डाम (हि० पु०) चमारोंका एक यन्त्र। इससे वह चमड़ेके भीतरका कम साफ करता है।

डासन (हि० पु०) बिछावन बिछौना, बिस्तर।

डासना (हि० क्रि०) बिछाना, बिछाना।

डासनी (हि० स्त्री०) चारपाई पलंग, खाट।

डाह (हि० स्त्री०) ईर्ष्या द्वेष जलन।

डाहना (हि० क्रि०) दिक करना, सताना, जलाना।

डाहिर देशपति—सिन्धप्रदेशके एक हिन्दू राजा। समस्त सिन्धुदेश, मुलतान और सिन्धुनदके बहुत दूर तकका प्रदेश इनके अधिकारमें था। इनके राजत्वके पहले अरबी लोग सिन्धुप्रदेश पर आक्रमण कर लूट मचाते तथा स्त्रियों और बच्चोंको कैद कर-ले जाते थे। डाहिरके राजत्वकालमें उनके राज्यके अन्तर्गत देवल बन्दरमें अरबियोंका एक जहाज लूट गया था। अरबियोंने उसकी क्षतिपूर्तिके लिए दावा करने पर डाहिरने जवाब दिया—"देवल हमारे राज्यके अन्तर्गत नहीं है, इसलिए उसके लिए हम जिम्मेवार नहीं।" इस पर अरबियोंने पहले एकदल सेना भेजी, जो पराजित और निहत हो गई। इसके बाद ७११ ई०में बसोराके शासनकर्त्ताने बड़ी भारी सेनाके साथ अपने भतीजे मुहम्मद बिन् कासिमको डाहिरके विरुद्ध युद्धार्थ भेजा। बिन-कासिमने पर कर पहले ही देवल आक्रमण और अधिकार किया।

इसके बाद मुहम्मद बिन् कासिम द्वारा परिचालित मिस्री अरबी सेना निरुन (वर्तमान हैदराबाद) आदि नगरोंको जीतनेके लिए उत्तरकी तरफ अग्रसर होने लगी। डाहिरने अपने ज्येष्ठ पुत्र जयसिंहको बहुत ज्यादा सेनाके साथ भेजा, किन्तु इतनेमें आरब्धने और जो २००० अश्वारोही सेनाने आ कर मुहम्मद बिन् कासिमका साथ दिया, इसलिए जयसिंहको भाग जाना पड़ा। मुहम्मद राजधानी आरोरकी तरफ अग्रसर होने लगा। अबकी बार डाहिरने समस्त सेना ले कर खुद आ कर बिन-कासिमके विरुद्ध युद्धारम्भ किया। उनकी तरफसे उस समय ५०,००० सेना युद्ध कर रही थी। बिन कासिम एक सुदृढ़ स्थानमें आश्रय ले कर आत्म रक्षा करने लगा। बहुत दिन तक युद्ध हुआ। आखिर एक दिन डाहिर स्वयं हाथीकी पीठ पर युद्ध करते करते विपक्षके तीरसे विद्ध हो गये। उनके हाथीने भी उस समय एक जलती हुई आगके गोलेसे आहत हो कर डरके मारे नदीमें प्रवेश किया। इस अतर्कित विपद्‌में समस्त सेना छिन्न भिन्न हो गई। इसके बाद राजाने घोड़े पर सवार हो कर अपनी सेनाको पुनः उत्साहित करने और युद्धमें शत्रुओंको बहुत पीड़ा दी पर सब व्यर्थ हुई। वे खुद युद्ध करते मारे गये। सिन्धुनद और देवलबन्दरके मध्यवर्ती रावर दुर्गके पास यह युद्ध हुआ था। पराजित सेनाने भाग कर रावर दुर्गमें आश्रय लिया। डाहिरके पुत्र जयसिंह और विधवा रानी राणीबाईने दुर्गकी रक्षाके लिए भी जानसे कोशिश करनेकी ठान ली। परन्तु डाहिरके विश्वस्त मन्त्रीने जयसिंहको उस दुर्गको छोड़ कर ब्राह्मणाबाद आश्रय लेनेका परामर्श दिया।

रावरका दुर्ग बिन कासिमके कब्जेमें आ गया। दुर्ग-वासी राजपूत-सेनाने जीवनकी आशा छोड़ कर शत्रुओंके बीच भारी वेगसे प्रवेश किया और युद्ध करते करते प्राण त्याग किया। रानीने कई एक कन्याओं सहित अग्निमें प्रवेश किया। विजयी मुसलमान सेनाने युद्धके शस्त्रधारी पुरुषमात्रको मार डाला और स्त्रियां तथा बालकोंको कैद कर लिया। इसके बाद मुहम्मद बिन् कासिमने ब्राह्मणाबाद जय किया। जयसिंह पहलेसे ही उसका रक्षाभार १६ सेनापतियोंको सुपुर्द करके काश्मीर चले गये थे।

डाहिरकी दो कन्याओंने भारतके साथ देशद्रोह नहीं किया था। वे मुहम्मद बिन् कासिमके हाथ कैद हुईं। मुहम्मदने इन दोनोंका अलोकसामान्य सौन्दर्य देख कर खलीफाको उपहार देनेका विचार किया। दोनों कन्याएं को तात्कालिक राजधानी दामस्कस नगरमें खलीफा

खलिफके सामने लाई गईं। उनमेंसे बड़ीने करुण स्वरसे कहा—"धर्मावतार! हम आपके लायक नहीं हैं, महम्मदबेन् कासिमने पहले ही हमारा सर्वनाश कर डाला है।" खलीफा इस बातको सुन कर अत्यन्त क्रुद्ध हुए, उन्होंने सत्यासत्यका विचार बिना किये ही महम्मदबेन्कासिमको चामको थैलीमें भर लानेका आदेश दे दिया। उनका आदेश प्रतिपालित हुआ और यथासमय पर बेन कासिमकी मृतदेह खलीफाके सामने लाई गई। राजकुमारीने पितृशत्रुको मृतदेहको देख कर कहा—"इतने दिन बाद हमारी अभीष्टसिद्धि हुई। मैंने मिथ्या कह कर अपने कुलोच्छेदकारी इस दुर्वृत्तके प्राणनाश करवाये हैं।" इस तरह डाहिरकी कन्याओं-ने पितृनिधनकी प्रतिहिंसा साधन की।

डाहुक (हिं० पु०) टिटिहरीके आकारका एक पक्षी। यह सदा जलाशयोंके निकट पाया जाता है।

डिंगल (हिं० वि०) १ दूषित, घृणित नीच, अधम, पामर। (स्त्री०) २ राजपूतानेकी एक भाषा। इसमें भाट और चारण काव्य तथा वंशावली आदि लिखते हैं।

डिंगसा (हिं० पु०) खसिया पर्वत तथा चटगाँव और बरमाकी पहाड़ियों पर होनेवाला एक प्रकारका पेड़। इससे एक प्रकारका उमदा गोंद या राल निकलती है। तारपीनका तेल भी इससे निकलता है।

डिंडस (हिं० पु०) एक प्रकारकी तरकारी।

डिंडसी (हिं० स्त्री०) टिंडया टिंडसी नामकी तरकारी।

डिंडिसी (हिं० स्त्री०) डिंडिस देखो।

डिंभिया (हिं० वि०) १ पाखण्डी, जो आडम्बर रचता हो। २ अभिमानी, घमंडी।

डिकामाली (हिं० स्त्री०) मध्यभारत तथा दक्षिणमें होनेवाला एक पेड़। इसमेंसे एक प्रकारका गोंद निकलता है। गोंद हींगके तरह मृगी रोगमें दिया जाता है। इससे घाव जल्दी सूखता है और मक्खियाँ बैठने नहीं पातीं।

डिकी (हिं० स्त्री०) १ सींगोंका धक्का। २ आक्रमण धावा, झपट।

डिक्टेशन (अं० पु०) वह वाक्य जो लिखनेके लिए बोला जाय, इमला।

डिक्री (अं० स्त्री०) १ आज्ञा, हुक्म। २ ओसकी आज्ञा।

डिक्शनरी (अं० स्त्री०) शब्दकोष।

डिगना (हिं० क्रि०) १ प्रतिज्ञा छोड़ना, अपनी बात पर कायम न रहना। २ स्थान परित्याग करना, जगह छोड़ना हिलना, टलना।

डिगरी (अं० स्त्री०) १ विश्वविद्यालयकी परीक्षामें उत्तीर्ण होनेकी उपाधि। २ समकोणका ९०, भाग, अंश, कला। ३ न्यायालयका वह फैसला जिसके द्वारा लड़नेवाले पक्षोंमेंसे किसीको कोई हक मिलता है।

डिगरीदार (अं० पु०) वह मनुष्य जिसके पक्षमें अदालत-की डिगरी हुई हो।

डिगवा (हिं० पु०) एक पक्षीका नाम।

डिगाना (हिं० क्रि०) १ जगहसे हटाना, खसकाना, सर काना। २ विचलित करना, बात पर कायम न रहना।

डिग्गी (हिं० स्त्री०) १ तालाब, पोखरा। २ हिम्मत, साहस।

डिङ्गर (सं० पु०) डङ्गर पृषो० साधुः। १ डङ्गर, मोटा आदमी, मोटासा। २ धूर्त्त, बदमाश, ठग। ३ क्षेप, फेंकना। ४ वन, जंगल। ५ सेवक, दास, गुलाम।

डिङ्गि—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत सिन्धुप्रदेशमें खैरपुर राज्यका एक दुर्ग। यह अक्षा० २६° ५२´ उ० और देशा० ६८° ४०´ पू०में अवस्थित है। यहां जल बहुत मिलता है।

डिटेक्टिव (अं० पु०) गुप्तचर भेदिया, जासूस।

डिठार (हिं० वि०) आंखवाला, जिसे सुझाई दे।

डिठोहरी (हिं० स्त्री०) एक जङ्गली पेड़के फलका बीज। इसको तागेमें पिरोकर छोटे छोटे लड़कोंको पहनाते हैं। कहा जाता है कि इससे उन्हें दूसरेकी दृष्टि नहीं लगती है।

डिठौना (हिं० पु०) काजलका टीका। स्त्रियाँ लड़कों के मस्तक पर नजरसे बचानेके लिये वह लगा देती हैं।

डिडका (सं० स्त्री०) यौवनकालजात रोगभेद, मुहाँसा।

"यौवने डिडकास्वेव विशेषाच्छर्दनं हितं।" (सुश्रु०)

इस रोगमें वमन विशेष उपकारी है। धन्या, वच, लोध और कुष्ठ अथवा रोध्र, वच, सैन्धव और सर्षप एकत्र करके प्रलेप देनेसे यह रोग आरोग्य होता है।

डिड़ई (हिं॰ पु॰) आसाममें होनेवाला एक प्रकारका धान।

डिड़वा (हिं॰ पु॰) एक प्रकारका धान जो आसाममें तैयार होता है।

डिण्डिमा (स॰ पु॰) मध्य ट ये जोका पक्षी। मयूर देखो।

डिण्डिम (स॰ पु॰) डिण्डोति शब्द करोति मा क। वाद्य-भेद प्राचीन कालका एक बाजा, डिमडिमी, डुगडुगिया। २ आम्रावा पक्व करौंदा।

डिण्डिमेश्वरतीर्थ (स॰ पु॰) शिवपुराणोक्त तीर्थविशेष।

डिण्डिर (स॰ पु॰) डिण्डि॰ पृषो॰ साधु। १ समुद्र फेन। २ पानीका झाग।

डिण्डिरमोदक (स॰ स्त्री॰) डिण्डिर इव मोदकं मोदि ल्युट्। १ गृञ्जन, गाजर। २ लहसुन।

डिण्डिश (स॰ पु॰) डिण्डिश पृषोदरा॰ साधु। डिण्डिश छप्पन टिंडे या टिंडसी नामकी तरकारी। इसका गुण—रुचिकारक, भेदक और पित्तश्लेष्मनाशक, शीतल वातल, रूक्ष, मूत्रल और अश्मरीनाशक है। (भावप्र॰)

डितिका (स॰ स्त्री॰) बाहलोल।

डिम्ब (स॰ पु॰) १ प्राकृतमय बच्चों कालका बना खाको।
"डिम्ब आहवृ॰ हस्ते शौणिक्लालयमो मृगः।" (भागवत॰)
२ एक प्रकार मात्र शोषक न प्राप्त व्यवित्य। ३ विशेष नवयौवन पुरुष।
"युवाप्यसो युवा विद्वान् सुन्दर, प्रियदर्शनः।
सर्वकलाभिज्ञता न डिम्ब इत्यभिधीयते॥"
(प्रभाषणा॰ टीका)
यौवनाप्त युवा, विद्वान् सुन्दर, प्रियदर्शन और सर्व शास्त्रविद्या विद्वान् पुरुषको डिम्ब कहते हैं।

डिप्टी (अं॰ पु॰) सरकारी सहायक नायब।

डिपाजिट (अं॰ पु॰) धरोहर, अमानत, जमा।

डिपार्टमेण्ट (अं॰ पु॰) विभाग, सुहकमा महकमा।

डिपो (अं॰ स्त्री॰) भाण्डार, गुदाम, जखीरा।

डिप्लोमा (अं॰ पु॰) विद्यासम्बन्धिनी योग्यताका प्रमाण पत्र सनद।

डिब्रूगढ़—१ आसामके अन्तर्गत लखीमपुर जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा॰ २७° ० से २७° ५१ उ॰ और देशा॰ ९४° १०´ से ९५° २ पू॰में अवस्थित है। भूपरिमाण ११५८ वर्ग मील है। यह उप विभाग ब्रह्मपुत्र नदीके दोनों किनारे बसा हुआ है और इसमें तीन और पहाड़ है। लोकसंख्या लगभग १८६५-७२ है। इसमें १ शहर और ८८० ग्राम लगते हैं।

२ उक्त उपविभागका एक शहर। यह अक्षा॰ २७° २८ उ॰ और देशा॰ ९४° ५५ पू॰ डिब्रू नदीके बायें किनारे अवस्थित है। इसके चारों ओर चाय के पेड़ हैं जिनका दृश्य देखने योग्य है। यहां इतना जाड़ा पड़ता नहीं लगता है कि लोग अच्छी तरह गुजर कर सकें। शहरमें एक कारागार मिशन अस्पताल मेडिकल स्कूल और एक हाई स्कूल है। १८७८ ई॰में यहां म्युनिसपालिटी भी स्थापित हो गई है।

डिबिया (हिं॰ स्त्री॰) छोटा सम्पुट, छोटा डिब्बा।

डिबिया टंगड़ी (हिं॰ स्त्री॰) कुश्तीका एक पेंच। यह पेंच उस समय किया जाता है जब विपक्षी कमर पर होता है और उसका दहना हाथ कमरमें लिपटा होता है। इसमें विपक्षीको दाहिने हाथसे छोड़कर बायां हाथ कमरके पाससे उसकी बांह तक खींचते हुए और बायें हाथसे कमीज पकड़ते हुए बाये पैरसे भीतरसे टांग मार कर गिराते हैं।

डिबेंचर (अं॰ पु॰) १ ऋणस्वीकारपत्र। २ मालको रपतनीके महसूलका रुपया, बट्टा।

डिब्बा (हिं॰ पु॰) १ छोटा सम्पुट, डिबिया। २ रेलगाड़ीका एक कमरा। ३ पसलीके दर्दकी बीमारी। यह बीमारी प्रायः छोटे छोटे बच्चोंको हुआ करती है।

डिम (स॰ पु॰) डिम-क। दृश्यकाव्य रूप नाटकका एक भेद। इसमें माया, इन्द्रजाल, लड़ाई और क्रोध आदिका समावेश विशेष रूपसे होता है। यह रौद्ररस प्रधान होता है और इसमें चार अङ्क होते हैं। इसके नायक देवता, गन्धर्व यक्ष, रक्ष या महोरग होते हैं। इसमें भूतों तथा पिशाचोंकी लीला दिखाई जाती है। शान्त, हास्य और शृङ्गार ये तीनोंरस इसमें वर्जनीय हैं। अन्य तीनों रस प्रदीप होना आवश्यक है। (साहित्य॰द॰) नाटक देखो।

डिमडिमी (हिं॰ स्त्री॰) लकड़ीसे बजाए जानेका एक प्रकारका बाजा, डुग्गी।

डिमरेज (अं॰ पु॰) १ वह हर्जा जो बन्दरगाहमें जहाजके ज्यादा ठहरनेसे लगता है। २ वह हर्जा जो स्टेशन पर आए हुए मालके अधिक दिन पड़े रहनेके कारण पानेवालेको देना पड़ता है।

डिमाई (अं॰ स्त्री॰) कागजकी एक माप जो १८×२२ इंच होती है।

डिम्ब (सं॰ पु॰) डिब-वञ्। १ भय, डर। २ कलल, गर्भाशयमें रज और वीर्य्यको एक अवस्था। इसमें एक पतली झिल्लीसा बन जाती है और यह कललके बाद होती है। ३ फुप्फुस फेफड़ा। ४ डमर, भयसे पलायन, भगदड़। ५ भयध्वनि, हलचल। ६ अण्ड, अंडा। ७ प्लीहा, पिलही। ८ विप्लव, उपद्रव। ८ कोड़ेका छोटा बच्चा।

डिम्बक (सं॰ पु॰) डिम्भक देखो।

डिम्बज (सं॰ पु॰) डिम्बात् जायते डिम्ब-जन-ड। अण्डज, वह जिसकी उत्पत्ति अंडेसे हो।

डिम्बाहव (सं॰ क्लो॰) डिम्बं भयध्वनियुक्तं आहवं, कर्मधा॰। सामान्य युद्ध, ऐसी लड़ाई जिसमें राजा आदि सम्मिलित न हों।

'डिम्बाहवहतानाञ्च विद्युता पार्थिवेन च।'' (मनु ५।९५) इस डिम्बाहवमें मरनेसे केवल एक दिनका अशौच होता है।

डिम्बिका (सं॰ स्त्री॰) डिम्ब-ण्वुल्-टाप्। १ कामुकी, मदमाती स्त्री। २ जलविम्ब, जलकी परछाई। ३ शोणाक वृक्ष, सोनापाठा।

डिम्भ (सं॰ पु॰) डिभ-अच्। १ शिशु, बच्चा। २ मूर्ख।

डिम्भक (सं॰ पु॰) डिम्भ स्वार्थे कन्। १ बालक। २ शाल्वदेशाधिपति ब्रह्मदत्तका पुत्र। हरिवंशमें इस प्रकार लिखा है—

शाल्वनगरमें ब्रह्मदत्त नामके एक परम दयालु नरपति थे। उनकी परम रूपवती और असामान्यगुणशालिनी दो भार्याएं थीं। ब्रह्मदत्तने पुत्रके लिए महिषीद्वयके साथ एकाग्रचित्तसे दस वर्ष तक महादेवकी आराधना की।

महादेवने इनकी आराधनासे प्रसन्न हो कर एक दिन रातको स्वप्नमें दर्शन दिये और कहा—"राजन्! तुम्हारी आराधनासे मुझे अत्यन्त प्रीति हुई है, अब तुम वर मांगो। राजाने उत्तर दिया—"भगवन्! दो रानियोंके गर्भसे दो पुत्र उत्पन्न हों—यही मेरी प्रार्थना है।" भगवान् 'तथास्तु' कह कर अन्तर्हित हो गये और नरपतिको निद्राभङ्ग हो गई।

कालक्रमसे रानियोंके गर्भसे शङ्करके प्रसादसे दो महावीर्य पुत्र उत्पन्न हुए। नृपतिने बड़ेका नाम रक्खा हंस और कनिष्ठका डिम्भक।

क्रमशः हंस और डिम्भकको तपश्चरणकी अभिलाषा हुई। दोनों जिनके अंशसे उत्पन्न हुए थे, उन्हीं शङ्करकी आराधनाके लिए हिमालयप्रस्थ पर जा कर तपस्या करने लगे। इनका मुख्य उद्देश्य था—वीर्य और अस्त्रबलमें वे सर्वप्रधान हों।

महादेव इनकी तपस्यासे सन्तुष्ट हो कर वहां उपस्थित हुए और उन्होंने वर मांगनेको कहा। दोनोंने कहा—"भगवन्! यदि आप सन्तुष्ट हुए हों, तो हमें यह वर दीजिये कि, देवता, असुर, राक्षस, गन्धर्व और दानवोंमेंसे कोई भी हमें परास्त न कर सके। दूसरी प्रार्थना यह है कि, रुद्रास्त्रसमुदय हम संग्रहीत कर रक्खें। अन्यान्य जितने अस्त्र और कवच आदि हैं, उन पर हमारा अधिकार हो और हम लोग जब युद्धयात्रा करें, तब दो महाभूत हमारी सहायता करें।" महादेवने तथास्तु कह कर अङ्गीकार कर लिया तथा भूतप्रधान कुण्डोदर और विरूपाक्षको बुला कर कहा—'वत्स विरूपाक्ष और कुण्डोदर! तुम भूतोंमें श्रेष्ठ हो। जब ये दोनों वीर युद्धयात्रा करेंगे, तब तुम दोनों इनकी सहायता करना।'

इस तरहसे ये महादेवका प्रसाद पा कर देव दानव आदिके अजेय हो गये।

एक दिन हंस और डिम्भक घोड़े पर सवार हो कर शिकार खेलने निकले। बहुतसे मृग, व्याघ्र और सिंहोंका संहार कर वे श्रान्त हो गये। पिपासा दूर करनेके लिये वे एक सरोवरके किनारे पहुंचे, वहां पर उन्होंने सरोवरमें स्नान कर पद्मके मृणाल और पत्र भोजन करके श्रान्ति दूर की। उस सरोवरके किनारे ब्राह्मणगण मध्याह्नकालोचित वेदगान कर रहे थे। इन्होंने उन ब्राह्मणोंसे कहा—"आप लोग इस यज्ञको समाप्त करके हमारे आलयको चलिये, हमारे पिता राजसूययज्ञमें प्रवृत्त हुए हैं, हम दिग्विजयके लिये निकले हैं,

त्रिभुवनमें हम लोगोंको पराजित कर सके ऐसा और कोई भी नहीं है हमने महादेवसे समस्त अस्त्र ले लिये हैं आप लोग निश्चय समझिये कि, कोई भी शत्रु हम दोनोंको पराजित न कर सकेगा।"

मुनियोंने उत्तर दिया—"राजन्! यदि ऐसा ही है, तो हम अवश्य ही शिष्य सहित आपके आश्रयको चलेंगे किन्तु अभी हम इसी आश्रममें रहेंगे।" इसके बाद दोनों और महोदरके उत्तर तीर पर गये, जहां यतियोंके साथ भगवान् दुर्वासा वास करते थे। उनको आश्रम देख कर घोरतर चिल्लाने लगी—'यह अपाय यज्ञकारी अनर्थक महामूढ़ कौन है? गृहस्थाश्रम छोड़ कर यह कौनसा आश्रम ग्रहण किया है। गृहस्थाश्रम ही तो धार्मिक और धर्मोंमें श्रेष्ठ है, गृहस्थ ही सर्वश्रेष्ठ है गृहस्थ ही सर्व जीवोंका जीवन और माता है। जो मूढ़ ऐसे गृहस्थाश्रमको छोड़ कर अन्य आश्रम ग्रहण करता है वह तो अवश्य निकृष्ट और महामूढ़ है। हमारी समझमें यह भण्ड तपस्वी सिर्फ आगके इनसे लोगोंको धोखा देना होगा। ये जिस तरहके घोर मूढ़ विश्वाससे आच्छन्न हैं, उससे मालूम होता है इन पर बलप्रयोग करना पड़ेगा। कौनसा मूर्ख इन दुर्मतियोंका उपदेष्टा है, वह भी नहीं मालूम पड़ता।' इस तरहकी चिन्ता करते हुए दोनों सहसा उन अतीन्द्रिय दुर्वासाके सामने उपस्थित हो कर क्रोधभावसे कहने लगे—"ब्राह्मण! हम देख रहे हैं, तुम्हें त्रिभुवन हिताहितका ज्ञान नहीं है तुम यह क्या कार्य कर रहे हो? तुमने जिसका आश्रय लिया है वह कौनसा आश्रम है? तुमने गृहस्थाश्रमको छोड़ कर यह कौनसा आश्रम ग्रहण किया है? अब तो मालूम पड़ता है कि घोरतर दम्भ ही इसका मूल कारण है। हमें मालूम होता है कि इन सबका नाश करोगे, सबको नरकमें डालोगे! तुम स्वयं नष्ट हुए हो, औरोंको भी नष्ट करनेमें प्रवृत्त हो, क्या कोई तुम पर शासन करनेवाला नहीं है? हम कहते हैं सावधान होओ। यह सब छोड़ कर शीघ्र ही गृही बनो, पञ्चयज्ञका अनुष्ठान करो जिससे स्वर्ग प्राप्त कर सको, स्वर्ग ही मनुष्योंके लिये परम सुखास्पद है।"

दुर्वासाने इन बातोंको सुन कर ऐसी दृष्टि निक्षेप की कि, मानो दोनोंके साथ तक जला दिये। मानो त्रिलोक भस्म हो गये। उन्होंने रोषारुणनेत्रोंसे नृपतिद्वय को कहा—"तुम्हारा शीघ्र ही विनाश हो, विनाश हो तुम यहांसे शीघ्र ही दूर हो जाओ, विलम्ब मत करो। हम समस्त नृपतियोंका दमन कर सकते हैं, किन्तु हम यतिधर्मावलम्बी हैं हम किसीका अनिष्ट नहीं करेंगे भूतनाथ भगवान् ही तुम लोगोंको इसका फल चखा देंगे।" इतना कह कर वे वहांसे प्रस्थान करनेको उद्यत हुए। यह देख कर दोनों भाइयोंने उनका हाथ पकड़ लिया और अङ्गुलियोंसे उनकी कौपीन छिन्न कर डाली। यह देख कर अन्य यति सब भागने लगे। अनन्तर हंस और डिम्भकने आनन्दित हो कर महाक्रोधसे महर्षिके शिष्य कमण्डलु, दारुमय हिंदल, दण्ड और आसनसूत्र को छिन्न भिन्न कर दिया। इसके बाद दुर्वासा अत्यन्त अपमानित हो कर श्रीकृष्णके पास पहुंचे और उनसे अपना सब हाल कह सुनाया। श्रीकृष्णने सब वृत्तान्त सुन कर कहा—"शीघ्र ही हम इसका प्रतिविधान करेंगे।"

इसके बाद हंस और डिम्भकने राजसूययज्ञके लिए श्रीकृष्णके पास दूत भेजा। श्रीकृष्णने इनके अत्यन्त गर्वको देख कर शीघ्र ही युद्धार्थ इनका आह्वान किया।

मार्गमें दोनों दलोंमें घोर युद्ध हुआ। श्रीकृष्ण हंसके साथ और सात्यकि डिम्भकके साथ घोरतर युद्ध करने लगे। श्रीकृष्ण हंसको बहुत दूर ले गये। हंस रथसे उतर पड़े और कालोदयह्रदमें जा कर श्रीकृष्णके साथ घोरतर युद्ध करने लगे। इधर डिम्भक हंस श्रीकृष्ण द्वारा मारा गया, यह सुन कर युद्ध छोड़ दिया और यमुनामें भक्तिपूर्वक अपनी जिह्वा उत्पाटन करके प्राणत्याग किया। इस आत्महत्याके पापसे डिम्भक घोर नरकमें गये थे। (हरिवंश १२५।१२)

डिम्बयाग (सं० स्त्री०) डिम्ब इव याग। मनुष्योंके ग्राम याम निर्वाह करनेका याग।

डिम्बज (सं० त्रि०) जिसकी उत्पत्ति अण्डेसे हो।

डिम्बा (सं० स्त्री०) डिम्ब-टाप्। अति शिशु, छोटका बच्चा।

डिल (हिं० पु०) १ गीली भूमिमें उगनेवाली एक प्रकारकी घास, मोथा। २ उनका लच्छा।

डिलिवरी (अं० स्त्री०) डाकखानोंसे आई हुई चिट्ठियों, पारसलों, मनीआर्डरोंका वितरण।

डिल्ला (सं० पु०) १ छन्दविशेष, एक प्रकारका वर्णवृत्त। इसके प्रत्येक चरणमें १६ मात्राएँ और अन्तमें भगण होता है। २ एक वर्णवृत्तका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें दो सगण होते हैं।

डिल्ला (हिं० पु०) ककुद, बैलोंके कंधे पर उठा हुआ कूबड़।

डिसमिस (अं० पु०) १ च्युत, बरखास्त। २ खारिज।

डिस्ट्रिब्यूट करना (अं० क्रि०) छापेखानेमें कम्पोज किये हुए टाइपोंको केसोंमें अपने स्थान पर रख देना।

डिहरी (हिं० स्त्री०) १ ६००० गांठोंका एक मान। इसके अनुसार कालीनोंका दाम लगाया जाता है। २ अनाज रखनेका कच्ची मट्टीका एक बड़ा बरतन।

डींग (हिं० स्त्री०) अभिमानकी बात, लम्बी चौड़ी बात, अपना बड़ाईकी झूठी बात।

डीक (हिं० स्त्री०) मोतियाबिन्द, जाला।

डीग—मध्यभारतमें राजपूतानेके अन्तर्गत भरतपुर राज्यका एक नगर। यह अक्षा० २७ २८ उ० और देशा० ७७ २० पू० भरतपुरसे २० मील और मथुरासे २२ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १५४०८ है। यहां एक दुर्ग है। यह नगर चारों ओर जलाभूमिसे घिरा है। इसलिये वर्षामें अधिकांश समयमें शत्रुके लिये दुर्गम रहता है। अङ्गरेजोंके अधिकारमें आनेके पहले इसका दुर्ग अत्यन्त दुर्जय था। अब भी मथुरासे २४ मील पश्चिममें उसका भग्नावशेष विद्यमान है। उस दुर्गमें भग्नराजप्रासाद आज भी देखा जाता है इसका गठन-प्रणाली अत्यन्त दृढ़ और सुन्दर है तथा इसके स्तम्भ प्राचीरादि मनोहर और सूक्ष्म शिल्पकार्ययुक्त चित्रोंसे चित्रित हैं। यह नगर बहुत प्राचीन है। बहुतसे पुराणादिमें इसका उल्लेख है। १७७६ ई०में नजाफखांने यह नगर जाटोंसे जीता था। किन्तु उनकी मृत्युके बाद यह नगर पुनः भरतपुरके राजाके हाथ लगा। १८०४ ई०के १३ नवम्बरको जब अंगरेजी सेनाने होलकरका अनुसरण कर उसे परास्त किया, तब उसकी बहुतसी सेनाने डीगके दुर्गमें आश्रय लिया था। जनरल फ्रेजर (General Fraser) से परिचालित अङ्गरेजी सेनाने डीगको घेर लिया। एक माससे अधिक घेरे जानेके बाद १८०४ ई०के २४ दिसम्बरको यहांका दुर्ग और नगर अङ्गरेजोंके अधिकारमें आ गया। डीग नगरका राजप्रासाद सौन्दर्य और शिल्पनैपुण्यके लिये विख्यात है। बदनसिंहने यहांका दुर्ग बनाया था। भरतपुर दुर्ग अधिकृत होने पर डीगका सुदृढ़ नगर-प्राचीर तोड़ डाला गया। भरतपुर देखो।

डीठ (हिं० स्त्री०) १ दृष्टि, नजर। २ देखनेकी शक्ति। ३ ज्ञान, सूझ।

डीठबन्ध (हिं० पु०) १ इन्द्रजाल नजरबन्दी। २ इन्द्रजाल करनेवाला, जादूगर।

डीतर (सं० वि०) डी-क्विप्, ततः तरप्। अनुगामी, जो दूसरोंका जल्दीसे पीछा करता हो।

डीन (सं० क्ली०) डी भावे क्त। १ पक्षियोंकी गति, उड़ान, ऊपर नीचे आदि इसके २६ भेद किये गये हैं। खगपति देखो। २ आगम शास्त्र।

"डामरं डमरं दीनं श्रुतं कामि विलासकं।" (शु ० १।१०)

डीनडीनक (सं० क्ली०) डीनेन सह डीनकं। पक्षियोंकी गति।

डीनावडीनक (सं० क्ली०) डीनेन सह अवडीनक। पक्षियोंकी गति।

डीमडीम (हिं० पु०) १ अहङ्कार, ऐंठ, ठसक। २ आडम्बर, धूमधाम ठाटबाट।

डील (हिं० पु०) १ शरीरका विस्तार, कद। २ शरीर, देह। ३ व्यक्ति, प्राणी, मनुष्य।

डीला (हिं० पु०) पश्चिमोत्तर भारतमें मिलनेवाला एक प्रकारका नरकट।

डीह (फा० पु०) १ आबादी, गांव, बस्ती। २ भग्नावशेष, उजड़े हुए गांवका टीला, खण्डहर। ३ ग्राम देवता।

डीहदारी (हिं० स्त्री०) जमींदारोंका एक तरहका हक। इसमें वे अपनी जमीन बेच सकते हैं। खरीदार उनको गांवका कोई अंश देता है जिससे उनका निर्वाह हो।

डुक (हिं० पु०) घूँसा, मुक्का।

डुकिया (हिं० स्त्री०) डोकिया देखो।

डुकियाना (हिं० क्रि०) घूंसा लगाना, मुक्का जमाना।

डुगडुगाना (हिं॰ क्रि॰) चमड़ेसे मढ़े हुए बाजेको लकड़ीसे बजाना।

डुगडुगी (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारका बाजा, डौंडी, डुग्गी।

डुग्गी (हिं॰ स्त्री॰) डुगडुगी देखो।

डुण्डरी (सं॰ स्त्री॰) कौड़ी, वराट।

डहुका (हिं॰ पु॰) एक रोग जो प्रायः बालकोंकी पीठमें हुआ करता है।

डुण्डु (सं॰ पु॰) विमुख सर्प, दो मुंहवाला सांप।

डुण्डुभ (सं॰ पु॰) डुण्डु सन् भाति-भा क। सर्पविशेष, पानीमें रहनेवाला सांप। इसमें बहुत कम विष होता है, ढेड़हा सांप, धोड़ा सांप। इसका संस्कृत पर्याय-राजिल, दुण्डुभ, नागपद् और डुण्डु है।

डुण्डुल (सं॰ पु॰) डुण्ड इति शब्द लाति ला क। क्षुद्र पेचक छोटा उल्लू। पर्याय—क्षुद्रोलूक, शाकुनेय पिङ्गल कुचावेधी दृढ़नाभो, विशालाक्ष और मण्डर।

डुलुक (हिं॰ पु॰) १ हरिणभेद, एक प्रकारका हरिण। २ पक्षिभेद, पानीमें रहनेवाला एक पक्षी।

डुप्ले—इनका असली नाम था फ्रान्सिस जोसेफ डुप्ले। भारतवर्षीय फरासीसी-अधिकारमें प्रसिद्ध शासनकर्ता और सेनापति। ये फरासी इष्टइण्डिया कम्पनीके अन्यतम डिरेक्टरके पुत्र थे।

थोड़ी ही उम्रमें डुप्लेने भारतीय फरासीसी अधिकारके प्रधान नगर पूदिचेरीकी मन्त्रिसभाके प्रधान सदस्यका पद प्राप्त कर लिया। दस वर्ष इस पदपर कार्य करनेके उपरान्त १७३० ई॰में वे चन्दननगरकी कोठीके अध्यक्ष नियुक्त हुए। इस कामको अत्यन्त दक्षताके साथ करनेसे शीघ्र ही वे कम्पनीके अध्यक्षोंके विश्वासभाजन हो गये। १७४२ ई॰में वे शासनकर्ता नियुक्त हो कर पूदिचेरी भेजे गये। डुप्ले अब तक फरासीसी इष्टइण्डिया कम्पनीकी वाणिज्यवृद्धिके लिए यथासाध्य चेष्टा करते आ रहे थे और इसमें उन्होंने काफी सफलता भी पाई थी। किन्तु इस पदको पा कर उनका मन दूसरी तरफ चला गया। वे असाधारण अतिशय उच्चाकांक्षी और चतुर, किन्तु असाधारण प्रतिभाशाली थे। पूदिचेरीके शासनकर्ता हो कर वे भारतभूमिमें फरासीसी अधिकार और फरासीसी प्रभाव बद्धमूल करनेके लिए कल्पना करने लगे। उस समय इस देशमें कई जगह इङ्गलिश और ओलन्दाजोंकी भी कोठी बन गई थी तथा वाणिज्य व्यापारमें भी ये लोग खूब बढ़े चढ़े थे। डुप्लेने विचारा कि वाणिज्यके विषयमें इनके साथ प्रतियोगिता करके वे कभी भी अपने उद्देश्य को कार्यमें परिणत न कर सकेंगे। इसलिए वे उपायान्तर अनुसन्धान करने लगे। उन्होंने अपनी असाधारण बुद्धि बल और मनुष्यगुणके सहारे शीघ्र ही देशीय लोगोंको रीति नीति जान ली और देशीय राज्योंकी राजनीतिके अन्तःस्थलमें प्रवेश कर मनस्कामना सिद्ध करनेके लिए उपाय निकाल लिया।

इस समय मुगलसाम्राज्यका ध्वंस आरम्भ हो गया था। इसके अधीनस्थ सूबेदारगण अपने अपने अधिकृत प्रदेशोंका स्वाधीन भावसे शासन करते थे और नवाबगण भी सूबेदारोंके दृष्टान्तका अनुसरण करते थे। वास्तवमें उस समय मुगल साम्राज्यमें सर्वत्र विशृङ्खला फैल गई थी। दुर्बल शासनकर्त्ता किसी बलवान् सूबेदारके आश्रयमें और सहायतासे अपनी स्वाधीनता प्रचारित करते थे। फरासीसी गवर्नर डुप्ले भी इस समय अपनी चिर पोषित आशा फलवती करनेके लिए सचेष्ट हुए। सौभाग्यवश उनकी सहधर्मिणीने इस विषयमें उनको यथेष्ट सहायता पहुंचाई। इन्होंकी सहायतासे डुप्लेने अपनी मनोरथ पूर्ण करनेका उत्तम और उत्तम सुयोग निकाला। उनकी स्त्रीने भारतवर्षमें ही जन्म लिया था एवं भारतमें ही प्रतिपालित और शिक्षित हुई थीं। बहुतसी भारतीय भाषा भी वे जानती थीं, इसलिए उन्होंने अपने स्वामी और अधिवासियोंका मनोभाव प्रकाशन और परामर्श का पथ सुगम कर दिया था। इस तरहसे अपनी सहधर्मिणीकी सहायतासे डुप्ले फरासीसी राज्य और क्षमता वृद्धि करनेके उपायोंको खूब सावधानीसे परिपुष्ट करने लगे।

१७४४ ई॰में यूरोपमें फरासीसी और अंग्रेजोंमें समर-अनल प्रज्वलित हुआ। साथ ही इस देशमें भी दोनों कम्पनियोंमें मुठभेड़ हो गई। ला बोर्डोने फरासीसी रण पोतके अध्यक्ष हो कर भारतमें आये। ये भी फरासीसी

चमतावृद्धिके एकान्त पक्षपाती थे ; उन्होंने सोचा था कि, डुप्लेके साथ कर्मक्षेत्रमें अवतीर्ण हो कर उद्देश्यको कार्यमें परिणत करेंगे। किन्तु पूँदिचेरी पहुँच कर वे निराश हो गये। पूँदिचेरी पहुँचने पर गवर्नर डुप्लेने उनकी अन्तःकरणसे अभ्यर्थना नहीं की। लाबोर्डोनेके प्रति उनकी ईर्षा हुई है, इस बातके लक्षण पहलेसे ही दिखाई देने लगे। डुप्ले आशङ्का करने लगे कि, यदि उन पर कभी विपत्ति पड़ेगी, तो लाबोर्डोने उनका स्थान अधिकार कर लेंगे। उन्होंने देखा कि, युद्ध आदि उनको अधिकारसीमामें सङ्घटित नहीं होंगे, पक्षान्तरमें लाबो-र्डोनेको अनुकूल परामर्श और सैन्य तथा अपने प्रयत्नों द्वारा सहायता करनेके लिए कर्तृपक्षने उनको आदेश दिया है। लाबोर्डोनेको क्षमतासे ये अत्यन्त द्वेषपरतन्त्र हो उठे और क्रमशः उनके साथ शत्रुताचरण करने लगे। इस शत्रुभावने ही लाबोर्डोने और डुप्लेका सर्वनाश किया तथा प्रतिकूल कार्योंके कारण भारतसे फरासीसी क्षमता विलुप्त हुई।

कुछ भी हो, लाबोर्डोनेने पूर्व सिद्धान्तानुसार १८ सेप्टेम्बरको मद्राजके दुर्ग पर चढ़ाई कर दी और २५ तारीखको दुर्ग अधिकार कर लिया। ४४ लाख रुपये देने पर ६ मास बाद फरासीसी सेना मद्राज परित्याग करेगी, इस नियम पर मद्राज दुर्गवासी अंग्रेजोंने लाबोर्डोनेके पास आत्मसमर्पण किया। किन्तु डुप्लेने इस सन्धि पर विशेष आपत्ति की। उनका कहना था कि, "मद्राज हमारे शासित प्रदेशके अन्तर्भुक्त है, इस लिए एकमात्र हम ही उस विषयको मीमांसा कर सकते हैं।" इसी समय आर्काटके नवाबने डुप्लेके पास एक इस आशयका पत्र भेजा कि—"हमारे राज्यमें रह कर हमारी बिना अनुमतिके फरासीसियोंको मद्राज पर आक्रमण करनेका कोई भी हक नहीं था।" डुप्लेने नवाबको उत्तर दिया कि, "उक्त नगर हमारे हस्तगत होते ही हम आपको लौटा देंगे।" इसके बाद डुप्लेने लाबोर्डोनेको लिखा कि, "आप मद्राजके दुर्गमें स्थित व्यक्तियोंके साथ सन्धिके किसी नियम पर अपना मत न देवें, क्योंकि उक्त विषय पूँदिचेरीके शासनकर्त्ताका ही विचार्य है। किन्तु इस पत्रके पहुँचनेके पहले ही दुर्ग लौटा देनेको बात पक्की हो गई थी। लाबोर्डोनेको आत्ममर्यादाका ज्ञान यथेष्ट था, जिस नियमको उन्होंने स्वीकार किया था, उसको ताड़ना उन्होंने हीन अनो-चित कार्य समझा। डुप्लेको नगर समर्पणके नियम स्थिर करनेको क्षमता है, इस बातको वे मान न सके, पक्षान्तरमें उन्होंने डुप्लेको लिख भेजा कि, यह उनकी नितान्त दाम्भिकता और परस्परके कार्यको प्रतिकूलताके सिवा और कुछ नहीं है। इससे डुप्ले क्रोधान्ध हो गये और लाबोर्डोनेको कागज़ कर अपना प्रभुत्व प्रकट करनेको चेष्टा करने लगे। पूँदिचेरी नगरमें उन्होंने एक षड़यन्त्र रचा, पूँदीचेरीके फरासीसी अधिवासियों द्वारा एक इस आशयका आवेदनपत्र लिखवाया कि, 'अर्थ ले कर मद्राज नगर छोड़ देनेसे फरासीसियोंकी हानि होनेकी सम्भावना है।' लाबोर्डोनेने भी अपना यह दृढ़सङ्कल्प डुप्लेको जतलाया कि, हमारी सम्मतिके अनुसार प्रत्येक कार्य न होनेसे हम मद्राज नहीं छोड़ेंगे। इधर डुप्ले अपने उद्देश्यको कार्यमें परिणत करनेके लिये जब तक भलीभाँति प्रस्तुत न हो सकें, तब तक मद्राज जिससे अंग्रेजोंके हाथ न सौंपा जाय, उसके लिए विविध उपायोंका अवलम्बन करने लगे। इस समय फ्रान्ससे और भी कई एक जङ्गी जहाज़ आ पहुंचे। डुप्ले और लाबोर्डोनेने यदि मिल कर कार्य करते, तो वे अब तक अंग्रेजोंके समस्त स्थान अधिकृत कर सकते थे। अंग्रेजोंके सौभाग्यवश हो उस समय ये आपसी झगड़ेमें फँस गये।

कुछ दिन बाद डुप्ले लाबोर्डोनेके प्रस्तावानुसार कार्य करनेके लिए तैयार हुए। लाबोर्डोनेने डुप्लेकी बात पर विश्वास करके मद्राज परित्याग किया।

उधर आर्काटके नवाब आनवारउद्दीनने अब तक मद्राज अपने हाथमें न आते देख, १०,००० सेनाके साथ अपने पुत्र महाफजखाँको बलपूर्वक उक्त नगर अधिकार करनेके लिए भेजा। डुप्लेने कूटनीतिका अवलम्बन कर उससे सन्धिका प्रस्ताव किया। सन्धिके प्रस्तावको ले कर डुप्लेके जो दो दूत गये थे, उनको महाफजखाँने कैद कर लिया। डुप्ले इस पर अत्यन्त असन्तुष्ट और क्रुद्ध हुए। रणवाद्य बज उठा। फरासीसियोंकी बन्दूकोंसे

बहुतसी मुसलमानोंने साथ छोड़ दिये अवशिष्ट सेना भी इतस्ततः भाग गई। महाराष्ट्रोंने अपनी सेनाको एकत्र करके मेलापुर नामक स्थानमें शिविर स्थापित करनेका हुक्म दिया। इस स्थान पर भी सम्मुख और पश्चात् दोनों तरफसे फरासीसी सेना द्वारा आक्रान्त और पराजित हो कर भाग गये।

इसी बीच एक दूषित कार्यमें प्रवृत्त हुए। उन्होंने मद्राजके विषयमें ला बोर्डोनेके साथ जो हुई थी उसकी भी प्रतिज्ञाका पालन नहीं किया। १७४६ ई०के ३० अक्टोबरको उन्होंने अङ्गरेजोंको सूचित किया कि उनकी समस्त सम्पत्ति फरासीसी गवर्नमेण्टके अधिकारमें शामिल कर ली गई और वे या तो युद्धके कैदियोंकी तरह रक्खे जायेंगे या पण्डिचेरीको भेज दिये जायेंगे। इसके बाद किसी किसीने भाग कर सेण्टडेविड दुर्गमें आश्रय लिया, तथा अवशिष्ट लोगोंको पकड़ कर पण्डिचेरी भेज दिया गया। साथ ही मद्राजके अङ्गरेज शासनकर्त्ता कैद किये गये।

अब डूप्ले अङ्गरेजोंको उपकूल-प्रदेशसे सम्पूर्ण रूपसे दूरीभूत करनेके अभिप्रायसे सेण्टडेविड-दुर्गको हस्तगत करनेकी चेष्टा करने लगे। डूप्लेने मद्राज अधिकार कर वहां पाराडिस नामक एक सुइसदेशवासीको शासनकर्त्ता नियुक्त किया। डूप्लेके आदेशानुसार डेविड दुर्ग पर आक्रमण करनेके लिये ३०० यूरोपीय सेनाके साथ पाराडिस पण्डिचेरीकी तरफ जा रहे थे, मार्गमें महफूजखांने १०००० अश्वारोही और २००० पदातिक सेना ले कर उन पर आक्रमण किया। डूप्लेने खबर पाते ही वहां एक दल सेना भेज दी। वह फौज पाराडिसको निरापद पण्डिचेरी ले आई। दिसम्बर मासमें फेरीके अधीन सेण्टडेविड-दुर्ग अधिकार करनेके लिये कुछ सेना अग्रसर हुई। ८ दिसम्बरको वह फौज दुर्गके निकटवर्ती किसी स्थानको अधिकार कर वहां विश्राम कर रही थी कि, इतनेमें महफूजखां और महम्मद अलीने सहसा आ कर उन पर आक्रमण किया जिससे फरासीसी फौज डर कर भाग गई। इस सामरिक सफलताके बाद दोनोंमें पारस्परिक आक्रमणसे दुर्ग अधिकार करनेके लिए डूप्लेने गुप्त रीतिसे १०० सेना भेज दी। किन्तु इस बार भी डूप्लेकी आशा फलवती न हुई। डूप्ले इससे जरा भी भीत या हताश न हुए। उन्होंने फिर विविध उपाय अवलम्बन किये। इनके आदेशसे फरासीसी सेना मद्राजके निकटवर्ती नवाब शासित प्रदेशोंको लूटने लगी। उन्होंने यह अच्छी तरह समझ लिया था—कि अङ्गरेजोंको मित्रतासे विशेष कुछ लाभ नहीं—यह मालूम होते ही नवाब अङ्गरेजोंसे फिर कुछ सम्बन्ध न रक्खेंगे। बहुत थोड़े समयमें ही नवाबके साथ फरासीसियोंकी सन्धि हो गई। सेण्टडेविड दुर्गमें पुनराक्रमण नवाब सेनाके साथ महफूजखां पण्डिचेरीको भेजे गये। डूप्लेने नवाब पुत्रकी अति समारोहसे अभ्यर्थना की। डूप्ले फिर डेविड दुर्ग अधिकार करनेकी कल्पना करने लगे। १७४७ ई०की १९वीं फरवरीको नवाबकी सेना तथा फरासीसी सेनाके अध्यक्ष हो कर पाराडिस अग्रसर हुए। सौभाग्य वशतः इस समय अङ्गरेजोंके सहायतार्थ बङ्गालसे एक रणपोत आ पहुंचा। फरासीसी सेनाका वार निष्फल हुआ, वह लौट आई। १७४८ ई०में ऐसी अफवाह सुनी गई कि, डूप्ले फौज ले डेविड दुर्ग पर पुनः आक्रमण करेंगे। इस समय अङ्गरेज शिविरमें एक विषम षड़यन्त्र प्रकाशित हुआ। कई अभावनिष्ठ दूतोंके साथ अङ्गरेज अधीन देशीय सेनाका फरासीसी पक्ष अवलम्बन करनेको प्रकाशित कर रही थी। अङ्गरेज गवर्नर इस विषयमें सशङ्कित अवश्य हुए। डूप्लेने बार बार पराजित होते हुए भी पुनः दुर्ग आक्रमण करनेके लिए सेना भेजी किन्तु इस बार भी कृतकार्य न हो सके। २८ जुलाईको एडमिरलके कुछ बड़े जहाजोंने आ कर सेण्टडेविडदुर्गके पास लंगर डाल दिये। अङ्गरेजोंकी इतनी वृद्धि होते देख नवाब पुनः अङ्गरेजोंसे मिल गये। अब अङ्गरेजोंने साहसी हो कर विपुल सेना द्वारा पण्डिचेरी घेर लिया। किन्तु कुछ दिन बाद अङ्गरेजी सेना अवरोध छोड़ कर डेविड-दुर्गमें चली गई। अङ्गरेजोंकी पराजयसे डूप्ले चारों तरफ फरासीसी प्रभाव घोषित करने लगे। उन्होंने देशीय राजन्यवर्गको, यहां तक कि मुगल सम्राट्के पास भी अङ्गरेजोंकी भीरुता लिख भेजी। इतने पर भी वे

चान्त न हुए। सहसा मद्राज हस्तच्युत न हो, इस बातको भी वे पूरी कोशिश करने लगे। किन्तु इसी समय यूरोपमें अंग्रेज और फरासीसियोंको सन्धि होने के कारण यहां भी सन्धि हो गई। अंग्रेज मद्राजको पुनः प्राप्त हुए।

युद्धके समय डुप्लेने देखा कि, अति अल्पसंख्यक यूरोपीय सेना बहुसंख्यक देशीय सेनाको सहजमें हो पराजित कर सकती है। इससे इनको राज्याधिकारको लालसा और भी बढ़ गई। देशीय राजा उस समय परस्पर शत्रुताचरणमें व्याप्त थे। उनमेंसे एकका पक्ष ले कर डुप्ले फरासीसी क्षमताको विस्तृत करनेमें प्रवृत्त हुए। १७४१ ई०में चान्दसाहबने त्रिचिनपल्लीकी विधवारानीको धोखेमें डाल कर उक्त नगर अधिकार कर लिया था। रघुजी भोंसलेने चान्दसाहबको उपयुक्त दण्ड देनेके लिए त्रिचिनपल्लीको घेर लिया। चान्दसाहबने अपने स्त्री पुत्रोंको गुप्तभावसे डुप्लेके आश्रयमें रख कर रघुजीके सामने आत्मसमर्पण किया, रघुजीने उनको कैद करके सतारा भेज दिया। पहले कहा जा चुका है कि, आर्काटके नवाब आनवारुद्दीन् स्वार्थसिद्धिके लिए कभी अंग्रेजों और कभी फरासीसियोंका पक्ष अवलम्बन कर रहे थे। डुप्ले अब उसका बदला लेनेका मौका ढूंढने लगे। मौका भी हाथ आया। जब चान्दसाहबकी स्त्री पुंडीचेरीमें थीं, तब डुप्लेकी स्त्रीने उनसे गाढ़ी मित्रता जोड़ ली थी। वे डुप्लेकी स्त्रीसे अपने स्वामीकी मुक्तिके प्रार्थना करने लगीं, डुप्लेने अपनी स्त्रीसे इस बातको सुन कर सोचा कि, चान्दसाहब आनवारके प्रतिद्वन्दी हैं और प्रजासाधारण आनवारको अपेक्षा चान्दसाहबके अधिक वशमें हैं। चान्दसाहबका छुटकारा होनेसे सभी उनको नवाब रूपमें मानने लगेंगे और फरासीसी सेनाको सहायतासे वे सिंहासन अधिकार कर सकेंगे। साथ ही फरासीसियोंका बल भी बढ़ जायगा। ऐसी कल्पना करके उन्होंने चान्दसाहबकी स्त्रीके द्वारा गुप्तरीतिसे ७ लाख रुपये रघुजीके पास भिजवा दिये; चान्दसाहब मुक्त हो कर पुंदिचेरीके तरफ चल दिये। इसी समय निजाम उल-मुल्कको मृत्यु होनेसे उनके सिंहासनको ले कर अत्यन्त गड़बड़ी होने लगी। उनके दौहित्र मजफरजङ्ग सिंहासनका दावा करते थे। उनको राज्य मिलनेकी कुछ भी सम्भावना न थी। किन्तु चान्दसाहबने आ कर उनका साथ दिया, और फरासीसी सेना उनका पृष्ठपोषण करती है यह बात भी उनसे कहो। इससे मजफरको मालूम हुआ, वे चान्दसाहबके साथ मिल कर आनवारके साथ युद्ध करने लगे। युद्धमें आनवार निहत हुए और उनके पुत्र महाफज कैद कर लिए गये। मजफर और चान्दसाहबने यथाक्रमसे सूबेदार और नवाबकी उपाधि ग्रहण कर आर्काटमें प्रवेश किया। इसके बाद वे पुंदिचेरी पहुंचे, डुप्लेने अपनी अभिसन्धि पूर्ण करनेके अभिप्रायसे विशेष यत्नके साथ उनकी अभ्यर्थना की। चान्दसाहबने पुंदिचेरीके निकटवर्ती ८१ गांव फरासीसियोंको दिये। थोड़े ही दिन बाद डुप्लेने चान्दसाहब और मजफरको त्रिचिनपल्ली अवरोध करनेका परामर्श दिया। इस स्थानमें आनवारके पुत्र महम्मदअलीने आश्रय लिया था। चान्दसाहब त्रिचिनपल्ली न जा कर पहले तञ्जोर चले गये। इस मौके पर नाजिरजङ्ग (मजफरके प्रतिद्वन्दी) ने आ कर आर्काट अधिकार कर लिया। चान्दसाहब और मजफरको इस बातकी खबर भी न थी; डुप्लेने ही पहले उनको नाजिरजङ्गके आगमनका संवाद दिया। वे पुंदिचेरीको तरफ अग्रसर हुए।

फरासीसियोंको चान्दसाहब और मजफरका पक्ष अवलम्बन करते देख अंग्रेजोंने भी महम्मदअली और नाजिरजङ्गका पक्ष अवलम्बन करना शुरू कर दिया। नाजिरजङ्गको बहुसंख्यक सेनाके साथ मजफर पर आक्रमण करनेके लिए आते देख डुप्लेने मजफर और चान्दको सहायताके लिए कुछ फरासीसी सेना भेजी। किन्तु डुप्लेके साथ सैनिक विभागके कर्मचारियोंका उतना सद्भाव न था। किसी अप्रकाश्य कारणसे फरासीसी सेना युद्धक्षेत्रसे चल दी। मजफरके आत्मसमर्पण करने पर नाजिरजङ्गने उनको शृङ्खलाबद्ध किया, चान्दसाहबने साहसके साथ युद्ध करते करते अन्यत्र जा कर आश्रय लिया।

फरासीसी सेनाके बिना युद्ध किये युद्धक्षेत्र छोड़ कर चले आनेसे डुप्ले भविष्यत्में विपत्तिको आशङ्का करने लगे। वे कौशलसे अपने प्रभावको अक्षुण्ण रखनेको

लिए यत्नवान् हुए। पर निर्युक्त करके डुप्लेने जाना कि, नासिरजङ्गको बिना विरोध मारना सुगम नहीं है। डुप्लेने नासिरजङ्गके साथ सन्धि करेंगे, ऐसा प्रस्ताव कर डुप्लेने उनके पास कुछ दूतों को भेजा। डुप्लेने उन दूतोंसे नासिरजङ्गको बिना विरोधके जो काम उस विषयमें चेष्टा करनेके लिए भी कह दिया। दूत भी तदनुरूप कार्य करके लौट आये।

नासिरजङ्गके आदेशसे फरासीसियोंकी एक वाणिज्य कुठी लूट ली गई थी। इसका बदला लेनेके लिए डुप्लेने १७५० ई०में मसलिपत्तन अधिकार करनेके लिए जल पथसे एक दल सेना भेज दी। उसने वह स्थान अधिकृत कर लिया। महम्मद अली डर कर भाग गये। इस समय फरासीसियोंके प्रसिद्ध सेनापति बुसिने चान्दसाहबके साथ मिल कर जिञ्जी-दुर्ग हस्तगत कर लिया।

नासिरजङ्गने फरासीसियोंकी सफलतासे भयभीत हो कर सन्धि करनेके लिए पुँदिचेरीको दो दूत भेज दिये। डुप्लेने निम्नलिखित प्रस्तावानुसार सन्धि करना मञ्जूर किया—"मुजफ्फरजङ्ग मुक्त किये जाय, चान्दसाहब को कर्णाटकी नवाब उपाधि मिले तथा मसलिपत्तन और उसके अधीन प्रदेशसमूह फरासीसियोंके दिये जांय।' नासिरजङ्गने उक्त नियमोंमें आबद्ध होना स्वीकार नहीं किया। वे युद्धके लिये तैयार हुए। डुप्लेने उनके प्रधान सर्दारोंके साथ भी षड्यन्त्र रचा था, नासिरजङ्गको उसकी खबर भी मालूम न थी। डुप्लेने टोचे (Touche)को नासिरजङ्गके साथ युद्ध करनेके लिए आदेश दिया। युद्धमें फरासीसी सेनाने विजय पाई, नासिरजङ्ग मारे गये और मुजफ्फरजङ्गको सूबेदारकी उपाधि मिली। मुजफ्फरजङ्गने मसलिपत्तन और उसके अधीन प्रदेश-समूह फरासीसियोंको तथा २० लाख रुपये डुप्लेको दिये। इस समय और एक विपत्ति आ खड़ी हुई। अफगानोंने डुप्लेसे कहा—'नासिरजङ्गके अधीन जो ३ सर्दार आपके साथ षड्यन्त्रमें लिप्त थे, वे दावा करते हैं कि उनको उनके अधिकृत प्रदेशके लिए कर माफ कर दिया जाय और नासिरजङ्गका धन उनमें बाँट दिया जाय।' डुप्लेने इस विषयमें मध्यस्थ हो कर अनेक वादानुवादके बाद एक सन्धि कर दी।

इसके बाद डुप्लेने अपनेको कृष्णा नदीके दक्षिण भूभागका सुबा प्रतिनिधि बतलाया। उनके आदेशानुसार उक्त प्रदेशका समस्त कर डुप्लेके जरिये मुगल सम्राट्के पास भेजा जाता था तथा पुँदिचेरीमें जो सिक्के बनते थे, उनके सिवा अन्य सिक्के कर्णाट प्रदेशमें नहीं चलते थे। १७५१ ई०में मुजफ्फरजङ्गके निहत होने पर डुप्ले सलावतजङ्गको सूबेदार मान कर उनका पक्ष समर्थन करने लगे। इस समय महम्मदअली त्रिचिनापल्लीमें ठहरे हुए थे। डुप्लेने फरासीसी सेनाके जरिये उनको पकड़नेके लिए चांदसाहबको परामर्श दिया। अंग्रेजोंने अभी तक किसीका भी पक्ष नहीं लिया था। फरासीसियोंके प्रभावसे ईर्षान्वित हो कर उन लोगोंने अली महम्मदका पक्ष ग्रहण किया। अबसे डुप्लेकी सेना प्रायः सभी युद्धमें पराजित होने लगी। चांदसाहब आखिर जानसे भी हाथ धो बैठे। चांदसाहबकी मृत्युके बाद डुप्लेने स्वयं नवाबकी उपाधि ग्रहण की। कुछ दिन बाद वे राजासाहबको नवाबकी तरह सम्मान करने लगे। किन्तु मुरतजाअलीसे ८०००००) रुपये ले कर लोभसे डुप्लेने नवाबकी उपाधि दे दी। १७५२ ई०में अंग्रेजी सेनाने फरासीसियोंका जिञ्जि-दुर्ग आक्रमण किया परन्तु पराजित हो कर उसे भागना पड़ा। इससे डुप्लेके हृदयमें यथेष्ट आशाका सञ्चार हुआ पर आषाढ़ मासके अन्तमें फरासीसीसेनाके विशेषरूपसे पराजित होनेसे डुप्लेकी आशालता सूख गई। तब भी वे डुप्ले बिलकुल हो निरुत्साहित नहीं हुए। उन्होंने देखा कि, यह युद्ध सहजमें नहीं निपटेगा इसलिए वे सेना संग्रह करने लगे। १७५३ ई०में डुप्लेके दुर्भेद्य कौशलसे महाराष्ट्र और महिसुरकी सेनाने अंग्रेजोंका पक्ष छोड़ कर फरासीसियोंका साथ दिया। पुँदिचेरीमें रणवाद्य बज उठा। इस युद्धमें कभी फरासीसियों और कभी अंग्रेजों की जय होने लगी। १७५४ ई० तक इसी तरह युद्ध होता रहा।

इस तरहके युद्धविग्रहसे दाक्षिणात्यमें फरासीसियोंका प्रभाव और अधिकार बढ़ता तो जाता था, पर अधिक अर्थव्ययके कारण कम्पनीको विशेष कुछ लाभ नहीं हुआ। इसलिए ऊपरवाले डुप्लेको युद्ध बन्द करनेके

लिए पुनः पुनः आदेश दे रहे थे। यद्यपि डुप्लेका अभिप्राय दूसरा था, तथापि ऊपरवालोंके आदेशसे डर कर १७५४ ई०के प्रारम्भमें ही उन्होंने मद्राजको सन्धिका प्रस्ताव भेज दिया। मद्राज-गवर्मेण्टने भी सन्धिके प्रस्तावका अनुमोदन करके नियमादि स्थिर करनेके लिए प्रतिनिधि भेज दिया। दोनों पक्षके प्रतिनिधियोंने कुछ दिन वादानुवाद करके अपने अपने स्थानको प्रस्थान किया।

फरासीसी इष्ट इण्डिया कम्पनीके डिरेक्टरगण डुप्लेसे अत्यन्त असन्तुष्ट थे। वे शान्ति चाहते थे उन लोगोंने डुप्लेको अनुपयुक्त समझ कर मि० गडेह।(M Godeheu)को पुंदिचेरीका गवर्नर नियुक्त करके भेज दिया। गडेहीने १७५४ ई०को २री अगस्तको भारतमें आ कर डुप्लेसे शासनभार ग्रहण किया। इसके बाद दो महीने तक डुप्ले पुंदिचेरी नगरमें रहे थे। दो महीने तक उन्होंने अपनेको कर्णाटका नवाब समझ कर बड़े ठाट-बाटसे उमदा उमदा पोशाक पहन कर भ्रमण किया था।

कुछ भी हो, उन्होंने फ्रान्स जा कर यथोपयुक्त सम्मान नहीं पाया। इस देशमें रह कर फरासीसी राज्यके विस्तारके लिए उन्होंने अपनी निजी-सम्पत्ति भी खर्च की थी। फरासीसी गवर्मेण्टने उनकी कुछ भी वृत्ति नहीं दी, सिर्फ उनके महाजनोंके हाथसे रिहाई-नामा (Letter of protection) का प्रचार करा कर उनकी रक्षा की। इन्होंने अपने रुपये वसूल करनेके लिए न्यायालयका आश्रय लिया. किन्तु उसके फैसलेसे पहले ही इनका देहान्त हो गया।

डुप्ले अत्यन्त प्रतिभाशाली सुदक्ष राजनीतिकुशल शासनकर्त्ता थे। ये अत्यन्त उच्चाकांक्षी, अहङ्कारी और पराक्रमप्रिय व्यक्ति थे। चारित्रकी वास्तविक उन्नति पर इनका उतना ध्यान नहीं था। इन्होंने फरासीसी राज्य विस्तारके लिए सब तरहके उपायोंका अवलम्बन किया था। भारतमें फरासीसी अधिकारके साथ डुप्लेके नामका चिर-सम्बन्ध है।

डुबकी (हिं० स्त्री०) १ डुब्बी, गोता, बुड़की। २ एक प्रकारकी बिना तली बरी। यह पीठीकी बनी होती है। ३ एक प्रकारका बटेर।

डुबवाना (हिं० क्रि०) डुबानेका काम किसी दूसरेसे कराना।

डुबाना (हिं० क्रि०) १ मग्न करना, गोता देना, बोरना। २ नष्ट करना, सत्यानाश करना, बरबाद करना।

डुबाव (हिं० पु०) अथाह, डूबनेभरकी गहराई।

डुबोना (हिं० क्रि०) डबोना देखो।

डुब्बी (हिं० स्त्री०) डुबकी देखो।

डुभकौरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी बिना तली बरी। यह पीठीकी बनी होती है और इसीके झोलमें पकाई तथा डुबा कर रखी जाती है।

डुमई (हिं० स्त्री०) कछारमें होनेवाला एक प्रकारका चावल।

डुमरावँ—१ शाहाबाद जिलेके अन्तर्गत एक जमींदारी। प्रायः ७५८ वर्गमील क्षेत्रफल ले कर यह संगठित हुआ है।

यहां डुमरावँके राजवंश रहते हैं। वे पंमार नामक राजपूत कुलोद्भव हैं। उनके पूर्वपुरुष उज्जयिनी नगरमें वास करते थे, वहींसे आ कर वे मध्यभारतमें रहने लगे। महाराज सिन्धोलसिंहने सबसे पहले विहारमें वास किया। वे अपने पुत्र भोजसिंहको राज्य-शासन का भार सौंप गये। भोजसिंहके नामानुसार उनका अधिकृत जनपद भोजपुर नामसे विख्यात हुआ। कालचक्रसे यह राजवंश कई एक शाखा प्रशाखाओंमें विभक्त हो गया। उनमेंसे प्रधान वंश अपने पूर्वपुरुषकी राजधानी डुमरावँमें रहने लगे। एक शाखा बक्सर और दूसरी शाखा जगदीशपुरमें जा रहने लगीं।

इसी वंशमें राजा नारायणमल्ल उत्पन्न हुए। उन्होंने १६०५ ई०में सम्राट् जहाङ्गीरसे राजाकी उपाधि प्राप्त की। उनके बाद यथाक्रम वीरवरसाहि, रुद्रप्रतापसाहि, मान्धातासाहि, होविलसाहि, छत्रधारीसिंह और विक्रमजित् सिंह राजाशासन कर मुगल बादशाहोंके प्रीतिभाजन हुए थे। आलमगीर, फरुखशियर, महम्मदशाह और शाहआलम्से उक्त राजाओंने बहुतसी जागीर पाई थी।

१७६४ ई०के अक्टूबर मासमें अयोध्याके नवाब सुजा

अंग्रेजोंके साथ अमीरखांका जो युद्ध छिड़ा था उसमें जयप्रकाशसिंह ने मध्यरेख-सैन्यनायक ऐक्टर साहबको यथेष्ट सहायता दी थी।

इसी कृतज्ञतामें १८५६ ई०में १० मार्चको बड़े लाट मार्किस ऑव डेल्हौसीने जयप्रकाशसिंह को 'महाराजा बहादुर'की उपाधि दी।

जयप्रकाशके बाद उनके पोते जानकीप्रसादसिंह ने बहुत कम अवस्थामें राज्य प्राप्त किया। किन्तु थोड़े दिन बाद ही उनकी मृत्यु हो जानेसे महेश्वरबख्शसिंह बहादुर १८४४ ई०में डुमरांवके राजसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। इन्होंने नेपाल-युद्ध तथा सिपाही विद्रोहके समय इंग्लिश गवर्मेण्टकी यथेष्ट सहायता की थी। जब दोमपुरमें उनके भ्राता कुमारसिंह विद्रोही होने पर महाराज महेश्वरबख्शने थोड़े ही समयमें उन्हें पराजित और शासित किया था। इन्हीं कारणोंसे १८७४ ई०में इंग्लिश गवर्मेण्टने उन्हें 'महाराज' तथा K. C. S. I की उपाधि दी। उनके जीतेजी १८७१ ई०में राजकुमार राधाप्रसाद सिंहको भी "राजा"-की उपाधि मिली थी।

महाराज राधाप्रसादके समयमें भी डुमरांव राज्य उच्च शिखर पर पहुंच गया था। १८८८ ई०में वे के सी आइ ई (K. C. I. E.) बनाये गये थे। इनका देहान्त १८९४ ई०में हुआ। इनके मरने पर उनकी स्त्री महारानी बेनीप्रसादकुंवरी उत्तराधिकारिणी हुईं। इन्हें इंग्लिश सरकारको चार लाखसे अधिक रुपये करमें देने पड़ते हैं।

२ शाहाबाद जिलेके अन्तर्गत बक्सर उपविभागका एक नगर। यह अक्षा० २५ ३३´ उ० और देशा० ८४ ८´ पू० पर कलकत्तेसे ४०० मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १७२१६ है। यहां डुमरांवके राजाका राजप्रासाद और प्रेस है।

डुमार—ब्रह्मखण्ड वर्णित भोजदेशके अन्तर्गत सिंहासनके दक्षिणभागमें अवस्थित एक नगर। (यह वर्तमान डुमरांवके जैसा अनुमान किया जाता है।) भविष्य ब्रह्मखण्डके मतसे यहां भूमिहार जातिके प्रबल पराक्रान्त उदयवन्तसिंह नामक राजा था। उन्होंने व भोज विक्रमसिंह ने यहां एक दुर्ग निर्माण किया था।

(भ० ब्रह्म० ३१ अ०)

डुम्बुर (सं० पु०) एक प्रकारका वृक्ष और उसका फल, गूलर। यह वृक्ष भारतवर्षमें तथा ब्रह्मदेशमें सब जगह पाया जाता है। हिमालयके निम्नस्थानसे ले कर आसाम और समुद्र तक यह पेड़ समुद्रपृष्ठसे ४००० फुटकी ऊंचाई पर भी देखा गया है।

भारतवर्षमें कई तरहके गूलर होते हैं। यद्यपि उनके पेड़ तथा फल एकसे दीख पड़ते, तो भी आकारमें बहुत प्रभेद है। किसी किसी जातिके गूलरके पत्ते और फल बहुत बड़े होते तथा पेड़ लताकी तरह होता है। फिर किसी जातिका पेड़ पीपल पेड़के जैसा सुदीर्घ और शाखाप्रशाखाविशिष्ट होता है। किन्तु उसका पेड़ जितना ही बड़ा होता जाता है उतना ही उसके पत्ते और फल छोटे होते जाते हैं।

गूलरमें फूल नहीं लगता। उसकी त्वचा भेदने गुच्छाका गुच्छा फल निकलता है। इसका धड़से तथा शाखा प्रशाखाके अग्रिमभागसे ही अधिकांश फल निकलता है। इस देशमें लोगोंका ऐसा विश्वास है कि गूलरका फूल देखनेसे राजा होता है। पर पूछिये तो गूलरका फूल देखनेमें आता ही नहीं।

उद्भिद्तत्त्वविद् पण्डित लोग गूलरको पीपल, बरगद, पाकर आदि वृक्षोंके अन्तर्गत मानते हैं। इनमेंकी पेड़ी डाल आदि काटनेसे दूधकी तरह सफेद एक प्रकारका गोंद निकलता है। इस गोंदसे रबरके जैसा पदार्थ उत्पन्न होता है। गूलरका गोंद कभी कभी वार्निश अथवा मरहमकी तरह व्यवहृत होता है।

नीचे थोड़े प्रकारके विभिन्न जातीय गूलरका विवरण दिया जाता है।

यज्ञडुम्बुर (Ficus glomerata)—साधारणतः होमकार्यमें इसकी शाखा काम आती है। इसी कारण इसका नाम यज्ञडुम्बुर पड़ा है। हिमालय प्रदेश, राजपूताना, मध्यभारत, बङ्गाल, दाक्षिणात्य, आसाम, ब्रह्मदेश आदि स्थानोंमें यह पेड़ पाया जाता है। बम्बईमें इसके दूध अथवा गोंदसे एक प्रकारका रबर बनता है।

इस वृक्षसे कभी कभी लाह उत्पन्न होती है। कई शिकारी इसके दूधसे पक्षी पकड़नेके लिये गोंद प्रस्तुत करता है।

छोटनागपुरमें यज्ञडुम्बुरको छालको सिझा कर एक प्रकारका काला रंग तैयार होता है जिससे कपड़ा रंगाया जाता है। यज्ञडुम्बुरके पत्ते, मूल छाल और फल सबके सब देशीय वैद्योंसे औषधरूपमें व्यवहृत होते हैं। वे इसकी छालको विरेचक औषध रूपमें तथा घाव आदि धोनेके काममें लाते हैं। बाघ तथा बिल्लाव आदिके काटने पर भी यह विषघ्न माना गया है।

इसका मूलतन्तु आमाशय रोगमें विशेष उपकारी है। बहुतेरे डाकरोंका मत है कि मूलतन्तुका रस बहुत तेजस्कर तथा बलकारी औषध है। अधिक काल तक व्यवहार करनेसे यह आश्चर्य फल देता है। पित्तके बढ़ने पर इसकी सूखी पत्तियोंको चूर कर मधुके साथ सेवन करें। आटकिनसन साहब (Atkinson)-ने लिखा है—इसके पत्तों पर चेचकके जैसा जो दाग उठ जाते हैं उन्हें दूधमें भिगो कर मधुके साथ सेवन करनेसे शीतला रोगमें उसका दाग शरीर पर नहीं पड़ता है। यह अनेक प्रकारके रजोरोग, मूत्ररोग, मेहघटित रोग और कामरोगमें अनेक तरहसे व्यवहृत होता है। अर्श और उदरामयरोगमें यज्ञडुम्बुरका दूध दिया जाता है। उस दूधमें यदि थोड़ा तिलतैल मिला दें, तो वह घावकी उत्तम मरहम बन जाता है। ताजा गूलरका रस धातुघटित औषधके अनुपानके रूपमें व्यवहृत होता है।

देवकार्यमें व्यवहृत होनेके कारण इस देशके कितने लोग यज्ञडुम्बुर नहीं खाते। इसका आकार साधारण गूलरकी अपेक्षा कुछ बड़ा, पर उतना सुस्वादु नहीं होता। वैशाखसे भाद्र तक फल लगते हैं। नीच श्रेणीके लोग कच्चे गूलरको तरकारीके साथ खाते हैं। पकने पर समूचा फल छाई रंगोला लाल हो जाता है। अजन्मा और दुर्दिनके समय बहुतसे लोग इसे खाते हैं।

बकरे भेड़े गूलरको बड़े चावसे खाते हैं। इसके पत्ते हाथो आदिके खाद्य हैं।

गूलरकी लकड़ी अन्तःसारशून्य, लघु तथा जल्दी टूटनेवाली होती है। यदि इसे कुछ समयके लिए जलमें रख छोड़ें तो यह बहुत दिन तक ठहरती है। इसी कारण लोग इसे कुएंके चारों ओर रखते हैं और कहीं कहीं इसे बेड़ा तथा जल सींचनेके काममें लाते हैं।

काकडुम्बुर (Ficus hispida)—इसका पेड़ यज्ञडुम्बुरको पेड़से कुछ छोटा होता है और भारतवर्षमें सब जगह तथा मलय, सिंहल, चीन आन्दामन द्वीप, अष्ट्रेलिया आदि स्थानोंमें मिलता है। भारतवर्षमें हिमालय पहाड़ पर यह पेड़ ३५०० फुट ऊंचे पर उगता है।

इसकी छालसे एक प्रकारकी रस्सी बनती है। फल, बीज और छाल वमनकारक तथा विरेचक है। इसके शुष्कफलचूर्णको जलमें मिला कर बम्बई और कोङ्कण प्रदेशमें विदारिका आदिमें प्रलेप देते हैं। दुग्धवती गाय यदि कम दूध देने लगे, तो इसके खिलाने से वह दूध देने लगती है। आयुर्वेदीयके मतसे यह दुग्धकर और गर्भस्थ व्रणके लिए हितकर है।

काकोदुम्बर देखो।

इसके पत्ते आदि पशुओंके खाद्यपदार्थ हैं। लकड़ी जलानेके सिवा और किसी काममें नहीं आती। चिड़ियां इसके बीजको अट्टालिकाकी दीवारों पर ले जा कर खाती हैं और जो बीज वहीं छोड़ देतीं उससे अट्टालिका पर पेड़ उग जाता है। यह पेड़ मकानका बहुत अनिष्ट करता है।

डुम्बुर (Ficus Roxburghii)—यह वृक्ष हिमालय प्रदेशसे ले कर भूटान आसाम, श्रीहट्ट, चट्टग्राम तकके देशोंमें पाया जाता है। यह पेड़ ६००० फुट ऊंचे पर होता देखा गया है। पेड़ मझोले कदका होता है। इसका कच्चा फल तरकारीके साथ व्यवहृत होता है। पकने पर यह कोमल, लाल और सुगन्ध तथा मीठा होता है। बहुतसे लोग पक्का गूलर खाते हैं। पेड़के नीचे तथा शाखा प्रशाखाओंमें गुच्छाका गुच्छा फल लगता है। शतद्रु नदीके किनारे गूलरकी छालसे एक प्रकारकी मोटी रस्सी बनती है। इसकी लकड़ी किसी काममें नहीं आती। मवेशी इसके पत्तेको बहुत पसन्द करते हैं।

भूडुम्बुर (Ficus heterophylla)—इस जातिका गूलर लताके आकारमें पैदा होता है। यह भारतवर्ष और ब्रह्मदेशके उष्ण प्रदेशमें, चट्टग्राम, तेनासेरिम, सिंहल आदि स्थानोंमें नदीके किनारे उत्पन्न होता

है। स्थानभेदसे इसके कई भेद हो गये हैं। इसके पत्ते और मूल औषधमें व्यवहृत होते हैं। जड़का स्वाद बहुत कड़ुआ होता है। उसका चूर्ण धनियाके साथ मिला कर सेवन करनेसे कास, श्वास आदि रोग जाते रहते हैं।

गूलरके पुंपुष्प और स्त्रीपुष्प अलग अलग होते हैं। गर्भाधान कीड़ोंकी सहायतासे होता है। पुष्प ज्यों ज्यों बढ़ता जाता है त्यों त्यों कीड़ोंकी उत्पत्ति होती जाती है। ये कीड़े पुंपरागको गर्भकेशरमें ले जाते हैं। ये कीड़े किस प्रकार उत्पन्न हो जाते हैं, यह जाना नहीं जाता। लेकिन यह निश्चय है कि ये उत्पन्न जाते हैं और उन्हींसे गर्भाधान होता है तथा कोष बढ़ कर फलके रूपमें होते हैं। फल बिलकुल मांसल और मुलायम होता है। उसके ऊपर कड़ा छिलका नहीं होता, बहुत महीन छिलकी होती है।

डुम्पुर—बङ्गदेशके चन्द्रद्वीप भूभागके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। भविष्यब्रह्मखण्डमें लिखा है—

एक दिन महादेव उमाके साथ आकाशमार्गमें हो कर चन्द्रपुरको जा रहे थे। अकस्मात् चन्द्रद्वीप पर उनकी दृष्टि पड़ी। वहां के भक्तोंका नृत्य देख कर विमोहित हो गये और उनका डमरू हाथसे नीचे गिर पड़ा। डमरूके गिरनेसे अपूर्व शब्द होने लगा। यह देख कर चन्द्रद्वीपके ब्राह्मण भक्तिसे डमरूकी पूजा करने लगे। इस पर शिव उनको सन्तुष्ट हो कर वर दिया। यहांके सभी मनुष्य धार्मिक, विद्वान्, ज्ञानी, धनी और निरोगी होंगे।" जिस स्थान पर डमरू गिरा था वही स्थान कालक्रमसे डुम्रु या डुम्पुर नामसे मशहूर हो गया है। (भ० ब्रह्म० ११ अ०)

डुम्बरपर्णी (स० स्त्री०) दन्तीवृक्ष।

डुलि (स० स्त्री०) दुलि पृषो० साधु। १ कच्छपी, कमठी, कछुई। २ यानविशेष, वाहन, सवारी, असवारी।

डुलिका (स० स्त्री०) डुलिरिव कायति कै-क। खञ्जनाकार पक्षिविशेष, खञ्जनकी जातिका एक पक्षी।

डुलो (स० स्त्री०) चिल्ली साग, शाकपत्तोंका बथुआ।

डूगर (हि० पु०) १ टकरा, टीला। २ छोटी पहाड़ी।

डूमरगढ़—मध्यप्रदेशके खैरागढ़ सामन्त राज्यका एक शहर। यह अक्षा० २१° ११´ उ० और देशा० ८०° ५६ पू०में मध्य बङ्गाल नागपुर रेलवे द्वारा बम्बईसे ६३० मील की दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५८१६ है। यह शहर व्यापारका एक केन्द्र है। यहां एक वर्नाक्युलर मिडिल स्कूल, बालिका स्कूल और एक औषधालय है।

डूंगरपुर—१ राजपूतानेके दक्षिणका एक राज्य। यह अक्षा० २३° २०´ से २४° १´ उ० और देशा० ७३° २२´ से ७४° २३´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण १४४७ वर्गमील है। इसके उत्तरमें मेवाड़ वा उदयपुर, पूर्वमें बांसवाड़ा, दक्षिणमें रेवाकांठा एजेन्सीकी रियासतें—सूथ व कडाणा और पश्चिममें महीकांठाके अन्तर्गत रियासत ईडर वा रेवाकांठाके अन्तर्गत लूनावाड़ा राज्य है।

राज्य विशेषकर अरावलीपर्वत-मालाकी शाखाओंसे आच्छादित है। लेकिन ऊंचाई सब जगह बहुत कम है। ऊंचेसे ऊंचा शिखर समुद्रतटसे १८८१ फुट ऊंचा है। वर्षाकालमें यहांका दृश्य देखनेयोग्य है। जिधर ही दृष्टि डालिये उधर ही हरी भरी सुहावनी जमीन नजर आती है। जङ्गलकी छटा और भी निराली है। राज्यका दक्षिणी भाग कुछ समतल है और यहीं भाग बहुधनाढ्य तथा सम्पत्तिशाली है।

यहां ऐसी एक भी नदी नहीं है जो बारहों मास बहती हो। जितनी नदियां यहां हैं भी उनमें केवल दो ही प्रधान हैं, माही और सोम। माही नदी राज्य को पूर्वमें बांसवाड़ासे और दक्षिणमें सूथसे अलग करती है। वर्षाऋतुमें ये दोनों नदियां बड़ी भयानकाकार हो जाती हैं। सोम नदी राज्यके मध्यमेंसे बहती हुई वक्रगतिसे बहती है। इनके सिवा मादर, माजम और भादर आदि कई छोटी छोटी नदियां हैं। इस प्रान्त में स्वाभाविक झील तो नहीं है, पर कृत्रिम तालाबोंकी भी कमी नहीं है। सबसे बड़ा तालाब गैवसागर राजधानीमें है। रेल रियासतके किसी भागसे हो कर नहीं गई है। राज्यान्तर्गतमें कोई पक्की सड़क भी नहीं है और जो एक दो है भी वे केवल एक ही दो मील तक

राजधानीसे वीरपुर कोठी तक गई है। शेष सभी मार्ग कच्चे हैं।

जिस प्रकार और प्रान्तोंमें घोड़ोंको सवारी काममें लाई जाती है, उसी प्रकार इस प्रान्तमें बैलोंको। पर यह सवारी भारतके अन्य प्रान्तोंमें हेय समझी जाती है। यहांका जलवायु अप्रेलसे जून तक गर्म और शुष्क, पर सितम्बर और अक्टूबर महीनेमें बहुत खराब रहता है। शीतकाल सबसे अच्छा समझा जाता है। यहां पर वार्षिक वृष्टिपातका औसत २७ इञ्च है।

इतिहास—डूंगरपुरके वर्तमान राजवंशका वर्णन करनेके पहले यह कह देना उचित होगा, कि इस वंशको स्थापनाके पहले किस किस वंशका इस देश पर आधिपत्य रहा। ३री शताब्दीके पूर्व यह प्रान्त मौर्य साम्राज्यके अन्तर्गत था। बाद यह कुशनवंशके संस्थापक कनिष्कके हाथ लगा। इसी प्रकार कालक्रमसे यह क्षत्रप, गुप्त, हूण, वैस तथा परमारवंशके हस्तगत होता गया। अब वर्तमान डूंगरपुर राज्यकी स्थापनाके विषयमें कहते हैं, कि मेवाड़नरेशके दो पुत्र थे—माहुप और राहुप थे। बड़े पुत्र माहुपने ही वर्तमान राज्यकी स्थापना की। ये कुछ काल तक अहाड़में रहते थे, इस कारण उनके वंशज अहाड़ा कहलाये। डूंगरपुरमें यह कथा प्रसिद्ध है, कि महारावल वीरसिंहजीने डूंगरपुर राजधानीकी स्थापना की है। जहां पर आज कल डूंगरपुरकी राजधानी है, वहां पर पहले डूंगरिया नामके एक भीलका आधिपत्य था। वह भ्रष्टाचारी था। किसी एक अबलाका धर्म बचानेके लिये वीरसिंहने उसे मार डाला। बाद उसकी दो स्त्रियोंने वीरसिंहसे कहा, "इस स्थान पर आप अपनी राजधानी बना कर उसका नाम हमारे पतिके नाम पर ही रखना, और हमारा ही वंशज आपके उत्तराधिकारियोंको प्रथम राजतिलक किया करेगा।" तभीसे यह स्थान डूंगरपुर नामसे प्रसिद्ध हुआ है। बहुत दिनों तक तिलकको भी प्रथा उसी तरह जारी रही पर अब नहीं है।

वीरसिंहके बाद भसुण्डी राजसिंहासन पर बैठे। इन्होंने केवल एक वर्ष तक राज्य किया। इनके उत्तराधिकारी डूंगरसिंहजी हुए। दो ही वर्ष तक राजत्व करके आप १३६१ ई०में परलोककी राह गये। इनके उत्तराधिकारी करमसिंहने २१ वर्ष राज्य किया और इनके लड़के रावल कानहड़देवने लगभग १३८३से १३९९ई० तक राज्य किया। इन्होंने कानहड़दा पोल बनवाई, जहां पर फिलहाल कोतवाली, खजाना और हिसाब दफ्तर हैं। बाद पातारावल राजसिंहासनारूढ़ हुए, इन्होंने १३९९ से १४११ ई०तक राज्य भोग किया। इन्होंने एक तालाब खुदवाया जो पातेला तालाब कहलाता है। इनके उत्तराधिकारी इनके लड़के गैप रावलजी हुए। लोग इन्हें रावल गोपीनाथ भी कहते थे। इन्होंने अपने नाम पर गैप नामका तालाब बनवाया। यही तालाब राज्य भरमें सबसे बड़ा है। तालाबके एक किनारे पर 'उदयविलास' नामका एक नवीन राजप्रासाद सुशोभित है। इनका देहान्त १४४८ ई०में हुआ था। बाद सोमदासजी राजतख्त पर बैठे। इनके समयमें महम्मद खिलजीने राजधानी पर धावा मारा। जब वे बहुत उत्पात मचाने लगे तब सोमदासने दो लाख रुपये और २० घोड़े भेंटमें दे कर शत्रुसे पिण्ड छुड़ाया।

गङ्गा रावलको उत्तराधिकारी छोड़ आप १४८१ ई०में परलोकको सिधारे। गङ्गाने १४८२से ले कर १४९८ तक राज्य किया। बाद रावल उदयसिंहजी १म सिंहासनासीन हुए। इस समय मेवाड़के सिंहासन पर महाराणा संग्रामसिंहजी सुशोभित थे। इन्हींके समयमें बाबरने दिल्लीमें मुसलमानी साम्राज्यकी नींव डालनेका विचार किया। दोनोंमें घनघोर युद्ध चला। रावल उदयसिंह संग्रामसिंहके पक्षमें थे। रणस्थलमें कदम बढ़ानेके पहले इन्होंने राज्यको दो भागोंमें बाँट दिये, एक भागका नाम डूंगरपुर रखा और दूसरेका बांसवाड़ा। डूंगर ज्येष्ठपुत्र पृथ्वीराजको और बांसवाड़ा कनिष्ठपुत्र जगमलको सौंप दिया। रावल उदयसिंह खनवाकी लड़ाईमें खेत रहे।

रावल पृथ्वीराजजीके समयसे २०० वर्ष तक डूंगरपुरमें सुख-शान्ति विराजती रही। सन् १४४३ और १५५४ के बीचमें पृथ्वीराजका स्वर्गवास होने पर उनके लड़के आसकरणजी राजसिंहासन पर बैठे। इन्होंने अपने नाम पर "आसपुर" नामका ग्राम बसाया। सोम

और माही नदीके सङ्गम पर बैणेश्वर महादेवका जो मन्दिर है वह भी इन्होंका बनवाया हुआ है। इसके सिवा ये राजधानीमें चतुर्भुजजीका मन्दिर निर्माण कर गये हैं। कहते हैं कि लूटमें जो इन्हें ८४ मन सोना हाथ लगा था, उसीसे इन्होंने तुला-दान किया। सम्राट् अकबरकी अधीनता स्वीकार कर ये उन्हें वार्षिक कर देने लगे।

इनके बाद सहसमलजी राजगद्दी पर सुशोभित हुए। इनके शासन कालमें राज्य भरमें शान्ति विराजती रही। राज्य उन्नतिकी चरमसीमा तक पहुंचा हुआ था। १५८० ई०में इन्होंने सुरपुरमें माहुनी नदीके किनारे श्री माधवरायजीके विशाल मन्दिरका निर्माण कराया। १८ वर्ष राज्य कर चुकनेके बाद १६०६ ई०में आप इस लोकसे चल बसे। इनके उत्तराधिकारी कर्मसिंहजी हुए, जिन्होंने केवल पांच ही वर्ष तक राज्य किया। इनके समयमें कोई विशेष घटना न घटी। बाद १६११ ई०में पूंजाजीने डूंगरपुरकी गद्दी सुशोभित की। इन्होंने अपने नाम पर पूंजपुर स्थापित कर वहां "पूंजेला" नामका एक वृहत् तालाब खुदवाया। मुगलसम्राट्ने इनको डेढ़ हजारीका मन्सब और माही मुरातब प्रदान किया। पचीस वर्ष राज्य करनेके बाद १६५१ ई०में इनका देहान्त हुआ।

बाद महारावल गिरिधरजी राजसिंहासन पर आसीन हुए। इस समय मुगलसम्राट् औरङ्गजेब और मेवाड़के शासक राजसिंहजी थे। आपने दो लड़के छोड़ कर मानवलीला समाप्त की। बड़े लड़के जसवन्तजीने १६९० ई० तक राज किया। इनके छोटे भाई हरिसिंहजी या केसरीसिंहजी थे जिन्हें सावलेकी जागीर मिली। जसवन्तके भी दो लड़के थे बड़े खुमानसिंहजी और छोटे फतहसिंहजी। बड़े खुमानसिंहजी राज्याधिकारी हुए और छोटे फतहसिंहजीको गींद लोड़ा ठिकाना मिला। इनके समयका कोई विशेष विवरण नहीं मिलता। इनके पांच लड़कोंमें रामसिंहजी बड़े थे। ये बड़े उद्धत और अत्याचारी थे। जिससे कारणवश पिताने इन्हें निर्वासनकी आज्ञा दी थी। किन्तु मरते समय वात्सल्यप्रेम उमड़ आया और युवराजको बुलवा भेजा।

१७०० ई०में महारावल रामसिंहजी डूंगरपुरके सिंहासन पर आरूढ़ हुए। ये बड़े प्रतापी और लोक-समादृत निकले। इनके समयमें सारे राज्यमें सुख शान्तिका साम्राज्य था। यहां तक कि इनके राज्यको 'राम-राज्य' कहते थे। १७२८ ई०के लगभग इनका स्वर्गवास हुआ। बाद शिवसिंहजी राज्यके उत्तराधिकारी हुए। ये भी योग्य पिताके योग्य पुत्र थे। विद्वानोंका आदर इनके समयमें अधिक था, कारण, आप स्वयं विद्वान् और कवि थे। ये कट्टर धार्मिक भी रहे। यहां तक कि वराहस्वामीमें आप योगीकी भांति अपने अस्त्र धारण किये रहने लगे थे। इन्होंने राज्यमें अच्छी अच्छी इमारतें बनवाईं। कहते हैं कि गुमटा बाजार आप ही बनवा गये हैं। १७८५ ई०में इनका स्वर्गवास हुआ।

इनके पश्चात् महारावल वैरिसालजीने डूंगरपुरकी गद्दीको सुशोभित किया। इनकी महिषी [illegible]ने राजधानीमें एक मन्दिर बनवाया जिसमें मुरली मनोहरकी मूर्ति स्थापित की गई। अपने लड़के फतहसिंहजी पर राजकार्य सौंप आप १७९८ ई०में इस लोकसे चल बसे। फतहसिंहजी रातदिन नशेमें चूर रहते थे, राज्य शासन उनकी माता किया करती थीं। नशेके कारण आप एक बार अन्धे भी हो चुके थे। डूंगरपुर राज्यमें जहां एक समय सुख-शान्तिका साम्राज्य था, आज वहां आपत्तिका घनघोर बादल छा गया। यहां तक उसकी स्वतन्त्रता भी गई। इसी मौकेमें १८०१ ई०को मरहठोंने भी राजधानी पर धावा मारा। शत्रुसे मुठभेड़ करनेकी तो ताकत फतहसिंहमें था नहीं, दो लाख रुपये दे कर उनसे अपना पिण्ड छुड़ा लिया।

१८०८ ई०में महारावल फतहसिंह परलोकको प्राप्त हुए। बाद जसवन्तसिंहजी राजगद्दी पर बैठे। इस समय सिन्धी फौजोंने डूंगरपुर राज्यमें प्रवेश कर उसे चारों ओरसे घेर लिया। दोनोंमें १० दिन तक घनघोर युद्ध होता रहा। अन्तमें 'बापा पिरिया महाराज'वाली कहावत चरितार्थ हुई। इनमेंसे किसी एक भीलने रातको राम-फाटक खोल दिया। जिससे अनेक लोग हताहत हुए। क्या पुरुष, बाल, वृद्ध सभी शत्रुके शिकार बन गये। नगरमें हाहाकार मच गया। मकान लूटे और दग्ध

किये गये। बाद कई एक राजाओंकी सहायतासे अब-की हार तो हुई सही, पर अगले तीन साल तक राज्यमें एक तरह अराजकता फैली रही। इन्होंने प्रतापगढ़के महारावल सावन्तसिंहके पौत्र दलपतसिंहको गोद लिया था और जीतेजी राज्यका भार उन्हीं पर सुपुर्द भी कर दिया था। उचित उत्तराधिकारी न होनेके कारण फिर राज्यमें विप्लव उपस्थित हुआ। दिन दहाड़े डाके पड़ते थे और ठाकुर लोग आततायियोंको उत्तेजना देते थे। अन्तमें १८०२ ई०में जसवन्तसिंहको मासिक पेन्शन १२००) रु० दे कर वृन्दावन भेज दिया गया। इधर दलपतसिंहने भी विवश हो सावली ठाकुर साहबके पुत्र उदयसिंहजीको अपनी गोदमें ले डूंगरपुरका अधि-कारी स्वीकार कर लिया। तभीसे सभी गड़बड़ी मर मिट गई।

१८५७ ई०में महारावल श्रीउदयसिंहजीने डूंगरपुर राजसिंहासनको सुशोभित किया। राजके सुधारकी ओर इन्होंने अटूट परिश्रम किया। इस समय भीलोंने फिर एक बार उत्पात मचाना शुरू कर दिया। अन्तमें उनकी पूरी हार हुई, कितनोंके तो सिर भी धड़से अलग कर दिये गये। १८७० ई०में एक भयङ्कर अकाल पड़ा। महारावल साहबने दुर्भिक्षके निवारण करनेका अच्छा प्रबन्ध किया। जगह जगह पर Relief work खोले गये, हजारों तालाब, बावड़ी आदि खोदी गईं। १८७७ ई०में प्रथम दिल्ली-दरबारके उत्सव पर राजराजेश्वरी महा-राणी विक्टोरियाकी ओरसे डूंगरपुर दरबारको एक झण्डा प्रदान हुआ। १८८० ई०में आपने तुलादान किया जिसमें लगभग १ लाख रुपये खर्च हुए। पहलेसे यहां शिक्षाका कोई प्रबन्ध नहीं था। इन्होंने ही पहले पहल पाठशालाएं स्थापित कीं।

आपके बाद श्रीमान् महारावल साहब श्रीविजय-सिंहजी बहादुर के. सी. आई. ई. राज्यके उत्तराधिकारी हुए। पितामहके मरते समय आपकी अवस्था केवल ११ वर्षकी थी। नाबालगी तक राज्य प्रबन्धके लिये मेवाड़की देखरेखमें चार मेम्बरोंकी कौन्सिल नियुक्त हुई और आप मेयो कालेज अजमेर पढ़नेके लिये भेजे गये। इनके समयमें भी प्रजाको दुर्भिक्षका सामना करना पड़ा था। ये बड़े विज्ञ, प्रतापी और प्रजा-वत्सल राजा थे। डूंगरपुर राज्यकी जो शोचनीय अवस्थामें चला आ रहा था आपहीने संस्कार किया। धर्मकी ओर भी आपकी श्रद्धा कम न थी। सङ्गीतके भी आप अच्छे प्रेमी थे। प्रजाकी भलाईके लिये आप अच्छे अच्छे काम कर गये हैं। इस थोड़ीसी अवस्थामें आपका मेल जोल भारतके प्रायः सभी मुकुटधारी रईसों-के साथ खूब बढ़ गया था।

१९१२ ई०में सम्राट्के वार्षिक जन्मदिनके उत्सव पर आप 'के, सी, आई, ई' की उपाधिसे विभूषित हुए थे। १९१४ ई०के विश्वव्यापी युद्धमें आपने गवर्मेण्टके प्रति सच्ची भक्ति दिखलाई थी। सारे राज्यमें सुख-शान्ति स्थापित कर १९१८ ई०के १५ नवम्बरको आप इस लोक-से चल बसे। बाद इनके बड़े लड़के लक्ष्मणसिंहजी बहादुर राजसिंहासन पर आरूढ़ हुए। ये अभी नाबा-लिग हैं और मेयो-कालेज अजमेरमें शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। ये भी योग्य पिताके योग्य पुत्र जैसे मालूम होते हैं।

राज्यभरमें कुल ७७२ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः १८८२७२ है। अधिवासियोंमें अधिकतर भील हैं। इसके सिवा यहां ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, मुसलमान, बोहरे आदि भी रहते हैं। मुख्य धर्म जो राज्यमें प्रच-लित है, वह वैदिक-हिन्दूधर्म है। इसके सिवा जैन और महम्मदी भी हैं। जैन भट्टारककी गद्दी भी है।

यहांकी मुख्य उपज मकई, धान, मूंग, उरद, तिल सरसों, गेहूं, चना और जौ है। पहले अफीमकी खेती जितनी ही अधिक होती थी, अब उतनीही कम गई है।

वन-विभागकी ओर उतना ध्यान आकर्षित नहीं होता। पतरीली जमीन होनेके कारण उपयोगी वृक्ष बहुत कम दिखाई पड़ते हैं। फलदार वृक्षोंमें महुआ और आम खूब होते हैं। राज्यभरमें लोहे और तांबेकी खानें हैं सही, पर उस ओर राजका कम ध्यान रहता है। बोड़ीगामेमें एक नकली हीरेका पत्थर अच्छा होता है और बहुत पाया जाता है।

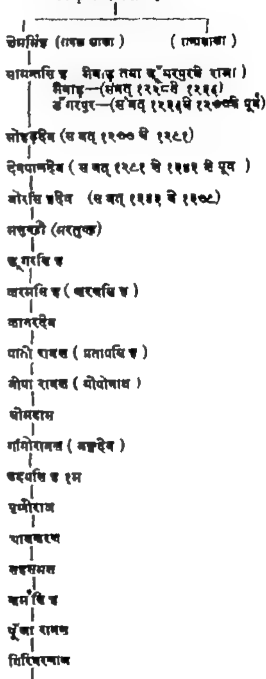
यह राज्य कृषिप्रधान देश है। सैंकड़े पीछे ७६ खेतीबारी करके अपनी जीविकानिर्वाह करते हैं। कोई

बना-बोंगन उतने उपयोग्य नहीं हैं। पत्थर तथा काठ परकी खुदाईका काम प्रशंसनीय है। चांदी सोनेके भी कई अच्छे कारीगर हैं।

यहांके नरेशोंकी उपाधि 'रायरायां महाराजा धिराज महारावल श्री १०८ श्री — बहादुर' है। प्रत्येक तोपोंकी सलामी है और आठ जागीरदारोंकी वापसीकी मुलाकात-(Return Visit) होती है। राजाको राज्यके आभ्यन्तरिक प्रबन्धमें पूरा अधिकार है। राज्य का "प्रधान कार्यालय" दरबारके अधीन है। भिन्न भिन्न विभाग एक एक अफसरकी देखरेखमें हैं। राज्यकार्य की सुविधाके लिए वर्तमान महारावल विजयसिंहजी दो सभाएं स्थापित कर गये हैं। पहली सभाका नाम "राजप्रबन्धकारिणी सभा" है। इसमें वह मुकदमा पेश किया जाता है, जो प्रधान-कार्यालयके अधिकारसे बाहर रहता है। दूसरी सभा "राज-शासनसभा" कहलाती है। इसमें बड़े बड़े फौजदारी और दीवानी मुकदमें तथा दीवानी फौजदारीकी अपीलें सुनी जाती हैं। नवीन कानून भी इसी सभासे पास होता है। "राज-शासनसभा" में केवल मेम्बर ही नहीं बैठते, मगर कुछ अमेम्बर भी बैठते हैं। राज्यकी आमदनी दो लाख रुपयेकी है, जिसमेंसे १७५०) रु० वृटिश गवर्नमेण्टको देने पड़ते हैं। डूंगरपुर राज्यमें अपना सिक्का नहीं चलता। सब जगह अंगरेजी सिक्का ही चलता है। राजपूतानेके जैसा, यहां भी जमीनकी अनुसार माप सुधारके लिए की गई है।

राज्यमें विद्याकी उतनी उन्नति नहीं है किन्तु इसने आजकल कुछ बढ़ोतरी पर है। भील लोगोंके लिये खास एक स्कूल है। स्कूलके अतिरिक्त दो अस्पताल हैं। मगर इसाई पादरिके लिये स्कूल मिशनरियोंके भी स्थापित हैं।

१ उक्त राज्यका एक नगर। यह अक्षा० २३ ५१ उ० और देशा० ७३ ४२, पू० उदयपुरसे ६६ कोस दक्षिणमें अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग १०८३ है। कहते हैं कि १३वीं शताब्दीमें यह नगर महारावल डोंगरसिंहसे भील-सरदार डूंगरियाके नाम पर बसाया गया। १८वीं शताब्दीमें महाराष्ट्र-सेनाने ग्यारह सालतक इस नगरको अधीन किया था। यहां एक पहाड़ी डाकघर, टेलिग्राफ आफिस, कारागार, अस्पताल और एकलो अंगरेजी स्कूल है।



से १२ ४० २१´ पू० में अवस्थित है। इसके उत्तरमें स्कागारक उपसागर, पूर्वमें काटिगट और साउण्डप्रणाली तथा बाल्टिक सागर, दक्षिणमें जर्मनीके कई एक प्रदेश एवं पश्चिममें जर्मनसागर या पश्चिम महासमुद्र है।

जिलण्ड, फिउनन्, लालाण्ड प्रभृति द्वीप, जटलाण्ड उपद्वीप और बाल्टिक सागरका बर्नहोल्म द्वीप ले कर यह राज्य संगठित हुआ है। पहले श्लेसविग होलष्टिन और लौयेनबर्ग नामक दो प्रदेश भी डेनमार्कके अन्तर्गत था। १८६४ ई०में जर्मनोंके साथ युद्धमें डेनमार्कने उक्त दो प्रदेशको खो डाला। वर्तमान राज्यका परिमाणफल १५५८ वर्गमील है। अधिवासियोंमें प्राय सैकड़े ११ कृषिजीवी हैं और प्राय ४० शिल्प तथा वाणिज्य आदि द्वारा जीविकानिर्वाह करते हैं। लोकसंख्या प्रायः १२००००० है।

इसका जटलण्ड उपद्वीप श्लेसविगके साथ मध्य तथा उत्तर दक्षिण तक विस्तृत है। इसकी लम्बाई उत्तर-दक्षिणमें प्राय २०० मील है और चौड़ाई पूर्व पश्चिममें भिन्न भिन्न स्थानोंमें भिन्न भिन्न प्रकारकी है; किसी स्थानमें केवल ३० मील और कहीं १०० मील है। इसके उपकूल भागकी लम्बाई प्राय ११०० मील है, किन्तु इस सुदीर्घ उपकूलका अधिकांश छिछला है और इसमें कई जगह रेत जम हो गया है। छोटा द्वीप और बालूका बांध रहनेसे वाणिज्यमें बहुत असुविधा होती है।

सभी द्वीपोंमें जिलण्ड बड़ा है। राजधानी कोपेनहेगेन इसी द्वीपमें अवस्थित है। इस द्वीपकी भूमि नीची और प्राय समतल है तथा समुद्रपृष्ठसे कई फुट ऊंचा पर है। कहीं कहीं दो एक पहाड़ भी देखे जाते हैं, जिनकी ऊंचाई समुद्रपृष्ठसे ३०० फुटसे अधिक नहीं है। जिलण्ड और जटलण्डके बीच फिउनन द्वीप अवस्थित है। लालाण्ड, फालष्टर, मोयेन आदि छोटे छोटे द्वीप जिलण्डके दक्षिणमें पड़ते हैं। इनकी प्रकृति तथा निकटवर्ती समुद्रकी कम गहराई देख कर अनुमान किया जाता है कि बहुत पहले ये समस्त द्वीप पूर्वमें सुइडेन और पश्चिममें जटलण्ड तक विस्तृत एक बड़ा भूखण्ड था। कालक्रमसे इसका अंश खो कर ये कई एक छोटे छोटे द्वीपोंमें परिणत हो गये हैं।

डेनमार्कके थोड़े अन्तर पर देशमें बहुतसे सागर शाखायें प्रविष्ट हैं। उत्तर भागमें लिमफियोर्ड थोड़ी गहरी है। १८२५ ई०में इसका पश्चिम भाग टूट फूट जानेसे यह जर्मन सागरके साथ मिल गई है। डेनमार्कमें छोटी छोटी अनेक झील हैं, किन्तु एक भी ऊंचा पर्वत और बड़ी नदी नहीं है। यहां बहुतसी छोटी छोटी नदियां छोटे छोटे पहाड़ और जङ्गल आदि हैं।

समुद्रके निकट रहनेसे डेनमार्कमें शीत ग्रीष्मका प्रकोप उतना अधिक नहीं है। वायु अनेक समय नरम और मनोरम रहती है। बड़े दिनके पहले तथा फाल्गुनके बाद शीतकी प्रबलता प्राय नहीं रहती है। कभी कभी ग्रीष्मकालमें यहां बहुत गरमी पड़ती है। यहांकी जलवायुकी अवस्था अत्यन्त परिवर्तनशील है, वृष्टि तथा तूफान प्राय आया करता है। राजधानी कोपेनहेगेनका तापांश शीतकालमें ३१.८ वसन्त कालमें ४१.७, ग्रीष्मकालमें ६०.१ और शरत्कालमें ४८.१ फा० रहता है।

यहांकी भूमि उर्वरा है, इसीसे गेहूं, जौ, राई प्रभृति तरह तरहके अनाज उत्पन्न होते हैं। केवल जिलण्ड द्वीपमें एक मात्र इत्यादि उपजती है। प्रतिवर्ष प्रायः २६००० से २८००० घोड़े विदेशमें भेजे जाते हैं। विशेषतः दूधके लिये ही यहांके लोग गाय-भैंस आदि पालते हैं। खाड़ी और नदीमें मछली अधिक मिलती है। कहीं कहीं मछली पकड़नेका निर्दिष्ट स्थान भी है, और इससे आय बहुत होती है। नदीसे सीप भी निकाली जाती है किन्तु यह राजाके अधीन है। जटलण्डके उत्तर भागमें कड नामकी एक प्रकारकी बड़ी मछली पाई जाती है जिसकी चर्बीसे तेल इत्यादि तैयार होता है। तिमि मछली भी यहां मिलती है। डेनमार्कमें खान बहुत कम है। बर्नहोल्म द्वीपमें अमलिया कोयला बहुत कम मिलता है। यहांका काठ भी अच्छा नहीं होता है।

यहां कृषि और शिल्पकी अवस्था क्रमशः बढ़ती जाती है। मद्य, मक्खन, पनीर, गमकीला मोम, शराब, चमड़ा, भेड़ा, घोड़ा, गाय इत्यादि पशु, चमड़ा, चर्बी, टोपी और तरह तरहकी मछली तथा काठ और तिमि मछलीका

इत्यादि विदेशमें भेजा जाता है। आमदनीमें सूती और रेशमी कपड़ा, लोहा, शराब, फल, चाय, तमाकू, कहवा और वोमवर्गा आदि प्रधान हैं।

डेनमार्कमें सैन्यसंख्या १२०,००० है, प्रयोजन पड़ने पर इसकी संख्या और भी अधिक बढ़ाई जाती है। ३७ युद्ध-जहाज और उनमें २२७ तोपें तथा १२७० सैन्य कर्मचारी रहते हैं।

डेनमार्कके रेलपथका परिमाण प्रायः २७०० मील टेलिग्राफतार ६६८८ मील है।

राज्यकी आय प्रायः ३३००००००) रु० है। डेनमार्कमें विद्याशिक्षाका अच्छा प्रवन्ध है। यहांका विश्वविद्यालय बहुत प्रसिद्ध है। ७ वर्षसे ले कर १४ वर्ष तकके लड़केको पढ़ानेके लिये उनके अभिभावक ही वाध्य किए जाते हैं। डेनमार्कके सभी विद्यालय राजाके अधीन हैं।

यहांके राजाओंको लुथारसंस्कृत ईसाई धर्म अवलम्बन करना पड़ता है। किन्तु प्रजा अपने इच्छानुसार किसी धर्मको ग्रहण कर सकती है। १५३६ ई०में लुथारका संस्कार डेनमार्कमें आरम्भ हुआ है। इस राज्यमें ८ विशप हैं। विशपोंको राजा स्वयं चुनते हैं। उन्हें शासनसम्बन्धमें कोई अधिकार नहीं है।

डेनमार्कके भिन्न भिन्न शहरों और नगरोंमें बहुतसे विचारालय हैं, किन्तु सबसे उच्च विचारालय कोपेनहेगन नगरमें अवस्थित है। कोर्ट आफ कनसिलिवेसन (Court of Conciliation) नामक अदालतमें सबसे पहले अभियोग उपस्थित करना पड़ता है। छोटी अदालतमें अच्छी तरह विचार नहीं किये जाने पर बड़ो अदालतमें अपील की जाती है।

पहले इस राज्यमें वंशानुक्रमिक राज-नियोग प्रचलित नहीं था। १६६० ई०को तृतीय फ्रेडरिकके राजत्वकालमें राज्यशासनका अधिकार वंशानुगत हुआ। उसी समयसे राजा अपने इच्छानुसार राज्य करते आ रहे थे। किन्तु बहुतोंके असन्तुष्ट होने पर १८३१ ई०में जटलण्ड और द्वीपों पर शासन करनेके लिये प्रधान प्रधान मनुष्योंको ले कर एक सभा संगठित की गई। ऐसा होनेसे कार्यमें बहुत विशृङ्खला होने लगी। अन्तमें राजा सप्तम फ्रेडरिकने डेनमार्कको वर्तमान शासनप्रणाली नियत कर दी गई। प्रजामेंसे प्रतिनिधि निर्वाचित और इन्हीं प्रतिनिधियोंने मन्त्रिसभामें आसन ग्रहण किया था। इस जातिकी सभा दो भागोंमें विभक्त है—Folkething and Landsthing। ये दोनों सभा बहुत कुछ ब्रटिश पार्लियामेंट House of Commons से मिलती जुलती है।

डेनमार्कमें राजाका शरीर बहुत पवित्र माना जाता है। अगर राज्यमें किसी तरहकी विशृङ्खला हो तो उसके लिये मन्त्रिगण ही दायी हैं।

राज्यके प्रधान मनुष्यको राजा काउण्ट तथा व्यारण ये दो प्रकारकी उपाधि देते हैं किन्तु उपाधिहीन प्राचीनवंशीय व्यक्ति ही साधारणके निकट अधिकतर सम्मान पाते हैं। उपनिवेशमें शासन करनेके लिये राजाके अधीन शासनकर्त्ता नियुक्त होते हैं। राजाकी एक मन्त्रिसभा है। यह सभा राजा और उनके उत्तराधिकारी तथा ८ सभ्य द्वारा संगठित है।

यहांके अधिवासी अत्यन्त वलिष्ठ होते हैं। इनके शरीरका वर्ण परिष्कार, आंख नीलवर्ण और वाल बहुत हलका होता है। ये सहज ही किसी काममें नियुक्त नहीं होते। अगर इन लोगोंका स्वत्व कोई अधिकार भी कर ले, तौभी वे सहज ही उसे किसी प्रकारकी वाधा नहीं देते हैं। किन्तु ये अत्यन्त साहसी तथा स्वदेशका रक्षाके लिये आत्मविसर्जन करनेमें तनिक भी नहीं हिचकते हैं। डेनमार्कके सभी श्रेणीके मनुष्य बहुत यत्नसे मृत मनुष्यकी कब्र रक्षा करते हैं। ये फूल बहुत पसन्द करते हैं। इनका सौन्दर्यज्ञान प्रशंसा करने योग्य है।

सिमरीगण (Cymri) ही डेनमार्कके आदिम निवासी हैं। इसके बाद अडिनके अधीन गथगण आ कर कुछ काल तक यहां रहने लगे। उस समय डेनमार्क छोटे छोटे राज्योंमें विभक्त था और अधिवासी जलमें चोरी डकैती कर अपनी जीविकानिर्वाह करते थे। अधिवासीगण विनडर (Boender) और ट्रेल (Traelle) इन दो श्रेणियोंमें परिचित होते थे। ट्रेलश्रेणीके लोग कृषिकर्म तथा शिकार इत्यादि करके अपनी जीविकानिर्वाह करते थे। उस समय वहांकी स्त्रियां भी पुरुषोंकी नाईं काम करती थीं। रोम साम्राज्यके अवनतिके

समय ये इंगलैण्ड प्रभृति देशोंमें लूट मार करने लगे थे। ८२६ ई०में डेनमार्कके राजा हारोल्डक्लाक (Haroldklak) जर्मनदेशसे पवित्र धर्म ग्रहण करके थे। उस समय उक्त राजा अन्सगेरियससे ईसाई धर्ममें दीक्षित हुए। किन्तु प्रजा ईसाई धर्मको बहुत घृणा करती थी। १०१४ ई०में एलफ्रिडसन डेनमार्कके राज्यसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। लेकिन गृहविवाद और अविश्वासके आगमनसे डेनमार्क धीरे धीरे दुर्बल होता गया। तृतीय वल्डिमार-के शासनकालमें डेनमार्ककी जातीय विधिव्यवस्था संग्रहीत हो कर प्रचारित हुई। १३७५ ई०में उनकी लड़की मारगारेट समस्त स्कान्डिनेवियाकी रानी हुई, किन्तु १४१२ ई०में उनकी मृत्युके बाद एक सम्पूर्ण राज्य पुनः पृथक् पृथक् हो गया। पीछे क्रिश्चियन डेन-मार्क पर शासन करने लगे। १४४८ ई०में प्रथम ईसाईने डेनमार्कका तथा १५२३ ई०में प्रथम फ्रेडरिकने निर्वाचनानुसार डेनमार्क और नरवे युक्तराज्यका सिंहा-सन अधिकार किया। १६८८ ई०में ४थे ईसाईने राजा-को कर डेनमार्कको अप्रतिहत क्षमताशाली बना दिया। किन्तु उनके शीघ्रताके प्रतिकूल आचरण करनेसे डेन-मार्कका पूर्व गौरव जाता रहा। १६६० ई०में Arve En-Vold's Regiering's Akt के अनुसार राजाका अधि-कार फिर बढ़ गया। इसके बाद प्रायः एक शताब्दी तक जनसाधारण अत्यन्त अधीनता भोग करने लगी। ७म ईसाई-के समय डेनमार्क एक ऊँचे शिखर पर पहुँच गया था। इनके राजत्वकालमें कृषकवर्गको स्वाधीनता दी गई तथा अमेरिकाका अनिष्टकर व्यवसाय बन्द हो गया। नेपो-लियनके साथ मिल कर युरोपीय दूसरे दूसरे राज्योंके विरुद्ध सर्वदा लड़ाई करनेसे डेनमार्क प्रायः दिवालिया हो गया था। १८०७ ई०में अंगरेजोंने डेनमार्कवालोंको सम्पूर्णरूपसे पराजित किया। इस युद्धके बाद किएलकी सन्धिके अनुसार डेनमार्क राज्यके नरवे सुईडनके हाथ मिला दिया गया। बहुत पहलेसे दो राज्य ले कर जर्मन और डेनमार्कमें शत्रुभाव चला आता था। इस कारण १८४८ ई०में दोनोंमें लड़ाई छिड़ गई। १८४९ ई०में डेनमार्कको जीत होने पर दोनों राज्यमें सन्धि कायम हो गई। डेनमार्कको प्रजामें राजाके अधीन स्वाधीनता भाव-को ले और अभी सुखसे समय व्यतीत करती है। किन्तु डेनमार्कके अधीन छोटे छोटे राज्योंमें आज तक भी असन्तोष भाव दूर नहीं हुआ है।

१८५२ ई०को ८वीं जनवरीको डेनमार्क और जर्मनीके बीच एक प्रकारकी सन्धि हो गई। शर्त यह ठहरी कि समय पड़ने पर एक दूसरेकी मदद करे और राज्यके साधारण विषयोंमें एक दूसरेका अधिकार रहे। तदनुसार होलस्टीन (Holsteen) डेनमार्कको वापिस मिला तथा श्लेसविग और ... बन्दनसभामें भाग लेनेको राजी हुआ। १८५५ ई०की २री अक्तूबरको यहां नया नियम चलाया गया जिससे उक्त सन्धिका प्रति-पालन न कर राज्यमें बहुत हेरफेर हुआ। १८६३ ई०में ७म फ्रेडरिकके मरने पर ९म ईसाई राज्यसिंहा-सन पर आरूढ़ हुए। इन्होंने जर्मनसे सम्बन्ध रख श्लेसविगको भावी आपदा करते हुए १८६३ ई०के नव-नियमोंको कानून बना दिया। आष्ट्रियावालोंने ईसाईके लड़के फ्रेडरिक होलष्टीन और जर्मनको सहायतासे अपनेको ड्युक कर घोषणा कर दी। बाद दोनोंमें लड़ाई छिड़ गई जिसे १८६४ ई०का युद्ध कहते हैं। अन्तमें १८६६ ई०को एक सन्धि कायम की गई जिससे श्लेसविग जिलेका उत्तरीय भाग पुनः डेन-मार्कके हाथ आया। १८७२ ई०में करका विषय ले कर डेनमार्कमें खूब हलचल मचा था। प्रधान मन्त्री [illegible] कुयवी इस हलचलके कारण थे। १८९४ ई०में इनके मन्त्रिपदसे हटने पर रिगसडग (Rig dag) के प्रस्तावसे इसका अच्छी तरह निबटारा हो गया।

सम्प्रति १८९९ ई०में डेनमार्क उन्नतिकी चरम सीमा तक पहुँच गया था। इस समय यहां इतनी फौज थी कि किसीको डेनमार्क पर चढ़ाई करनेका साहस नहीं होता था। लेकिन यहांके ३०००० दस्त-कारोंके बागी हो जाने पर डेनमार्कको ५०००० रोजका घाटा हुआ था। १९०६ ई०में बहुत दिन राज्य कर चुकनेके बाद राजा ईसाईकी मृत्यु हुई। इनके उत्तराधिकारी इनके लड़के ८म फ्रेडरिक हुए। १९१२ ई०को १४वीं मईको ८म फ्रेडरिककी मृत्यु होनेके बाद उनके पुत्र १०म ईसाई सिंहासनारूढ़ हुए।

डेपुटेशन (अं॰ पु॰) प्रसिद्ध मनुष्योंको मण्डली। ये किसी सभा संस्थाको ओरसे सरकार, राजा महाराजा इत्यादिके पास किसी विषयमें प्रार्थनाके लिये जाते हैं।

डेरा (हिं॰ पुं॰) १ टिकान, ठहराव, पड़ाव। २ ठहरावका आयोजन, छावनी। ३ ठहरनेका स्थान, छावनी, कैम्प। ४ खेमा, तम्बू, शामियाना। ५ नाचने तथा गानेवालोंकी मण्डली। ६ निवास-स्थान, मकान, घर। ७ पञ्जाब, अवध, बंगाल तथा मध्यप्रदेश और मद्रासमें मिलनेवाला एक प्रकारका जंगली पेड़। इसकी छाल और जड़ साँप काटने पर पिलाई जाती है।

डेरा इस्माइलखाँ—१ उत्तर-पश्चिम सीमान्तप्रदेशका दक्षिणस्थ जिला। यह अक्षा॰ ३१° १५´ से ३२° ३२´ उ॰ और देशा॰ ७०° ५´ से ७१° २२´ पू॰में अवस्थित है। भूपरिमाण ७७५० वर्गमील है। इसके उत्तरमें बन्नू जिला, पूर्वमें झङ्ग और साहपुर, दक्षिणमें डेरागाजीखाँ और मुजफ्फरगढ़, तथा पश्चिममें सुलेमान पहाड़ है। यही जिला भारतकी अन्तिम सीमा है।

यहाँ दो गढ़ोंके भग्नावशेष देखे जाते हैं जिन्हें काफिरकोट कहते हैं। शायद ग्रीक लोगोंने ये गढ़ निर्माण किये थे। १४वीं शताब्दी तक इस देशका विशेष विवरण कुछ नहीं मिलता है। १५वीं शताब्दीके अन्तमें मालिक सोहरावके अधीन एक दल बलूची यहाँ आ कर रहने लगी। इस्माइलखाँ और फतेहखाँ नामक उनके दो पुत्रोंने अपने नाम पर दो नगर स्थापित किये। बलूचियोंकी हट जाति कहते थे। इस हट जातिने ३०० वर्ष तक स्वाधीनभावसे राज्य किया। पीछे १७५० ई॰में अहमदशाह दुरानीने उन्हें मार भगाया और देश अपने कब्जेमें कर लिया। १७९२ ई॰में दुरानीके सिंहासन अधिकारी शाहजमान महम्मदखाँने एक अफगानको नवाबकी पदवी दे कर यहाँ भेजा। महम्मदखाँने देशको अधिकृत कर मनकेरा नामक स्थानमें राजधानी स्थापित की। उनके मरनेके बाद उनके नाबालिग नाती सेर महम्मदखाँ राज्य-सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। इस समय रणजित्‌सिंह देश जीतनेमें लगे हुए थे। उनके मनकेरा अधिकार कर लेने पर सेर महम्मद डेरा इस्माइलखाँ भाग गये और वहाँ सिखराजाका करद हो कर उन्होंने पन्द्रह वर्ष तक राज्य किया। कर बाकी पड़ जानेके कारण १८३६ ई॰में नवनिहालसिंहने यह देश अपने अधिकारमें कर लिया। नवाबको खर्च वर्चके लिये राजस्वका कुछ अंश देनेका नियम कर दिया गया। आज भी उनके वंशधर उस अंशका भोग कर रहे हैं। सिख-शासनकालमें यपर डेराजात दीवान लक्खीमलके अधीन आ गया, पीछे इनके लड़के दीवानरायके हाथ लगा। १८४७ ई॰में वृटिश गवर्मेण्टका इस ओर ध्यान आकर्षित हुआ। गवर्नर एडवर्ड (पीछे सर हरबर्ट) जब लाहौर दरबारमें प्रतिनिधि स्वरूप बना कर भेजे गये थे, तब उन्होंने राजस्वका एक संक्षिप्त बन्दोवस्त कर दिया। दूसरे वर्ष डेरा इस्माइलखाँ तथा बन्नूके योद्धाओंने एलवर्डका मुलतान तक साथ दिया तथा पञ्जाब अधिकृतकालमें भी उनकी यथेष्ट सहायता की। पञ्जाब फतह किये जानेके साथ साथ डेरा इस्माइलखाँ भी अंगरेजोंके हाथ लगा। अंगरेजोंने इसे जिलेके सदर कायम किया और बन्नूको भी उसके अन्तर्गत कर लिया। १८६१ ई॰में बन्नू एक पृथक् कर्मचारीके हाथ सुपुर्द किया गया और लोह जिलेका दक्षिणस्थ आधा भाग डेरा इस्माइलखाँके साथ मिला दिया गया। १८५७ ई॰में सिपाहीविद्रोहके समय यहाँ भी विद्रोहका सूचना देखी गई थी, किन्तु डिपुटी कमिश्नर कर्नेल कक्सने विद्रोह-अग्नि धधकनेके पहले ही उसे शान्त कर दिया। १८७१ ई॰में पञ्जाबके लेफटेनण्ट गवर्नर सर हेनरी दुरन्द जब एक दिन टाङ्क शहरके तोरणद्वार हो कर हाथीकी पीठ पर चढ़े भीतर जा रहे थे, तब संयोगवश उन्हें तोरणसे धक्का लगा और औंधे मुंह वहाँसे गिरे और पञ्चत्वको प्राप्त हुए। उनकी लाश डेरा इस्माइलखाँमें गाड़ी गई। उनकी मृत्यु होने पर जिला भरमें शोक फैल गया था। १९०१ ई॰में युक्तप्रदेशके संगठनके समय भक्कर, लोह जिला तथा कुलाची तहसीलके बत्तीस ग्राम इस जिलेसे पृथक् कर लिये गये थे।

इस जिलेमें ३ शहर और ४०८ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः २४७८५७ है। यहाँ हिन्दू, मुसलमान, सिख, पठान, बलूची, जाट, चमार, धोबी और मल्लाह लोग वास करते हैं। खेतीको अच्छी सुविधा नहीं है।

नहर द्वारा जमीन सींची जाती है। गेहूं, जौ, ज्वार, चीनी, तमाखू, खरबूजे, मूंग, मटर, अरहर आदि जिन्सों की प्रधान उपज है। डेरा इस्माइलखाँ और कुलाचीमें साल भरमें दोबार आमदनी और रफ्तनी होती है। चमड़े, नमक आदिकी आमदनी और गेहूं और बड़ी ज्वारकी रफ्तनी होती है।

शासन-कार्यकी सुविधाके लिये यह जिला तीन तालुकमें विभक्त है, डेरा इस्माइलखाँ, टांक और कुलाची। प्रत्येक तहसील एक एक तहसीलदार और नायब तहसीलदारके अधीन है। डिपुटी कमिश्नर तथा सहकारी कमिश्नर द्वारा विचारकार्य सम्पादन होता है। एक सहकारी कमिश्नरके अधीन पुलिसका इन्तजाम है। दीवानी कार्य डिष्ट्रिक्ट जज द्वारा चलाया जाता है जिनकी अदालत बन्नूमें है।

जिलेमें दो म्युनिसिपालिटी हैं, एक डेरा इस्माइलखाँमें और दूसरी कुलाचीमें। यहां ४ सेकेण्डरी, २१ प्राइमरी ७ बालिका स्कूल हैं। इस विभागमें वार्षिक ११४०० रु० खर्च होते हैं। इसके सिवा यहां एक कारागार और एक अस्पताल है। जिलेमें घेघका प्रकोप बहुत अधिक है।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३१ १८ से ३२ ३२ उ० और देशा० ७० ११´ से ७१ २२´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण १५८९ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १६४११७ है। इसमें १५० ग्राम लगते हैं।

३ उक्त जिलेका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० ३१ ४९´ उ० और देशा० ७० ५५´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ३१७३० है। यह शहर सिन्धु नदीसे ४ मील, लाहोरसे २०० मील तथा मुलतानसे १२० मील दूर पड़ता है। यह शहर १५वीं शताब्दीमें बलूचके प्रधान सर्दार सोहराबके लड़के इस्माइलखाँसे स्थापित हुआ। उन्हींके नाम पर शहरका नामकरण हुआ है। यहां दो स्कूल, कार्पोरेशन, चिकित्सालय तथा औषधालय है। यहांसे अनाज लकड़ी और घी की रफ्तनी तथा दूसरे दूसरे स्थानोंसे चमड़े नमक आदिकी आमदनी होती है।

डेरा गाजीखाँ—१ पञ्जाबके अन्तर्गत मुलतान विभागका एक जिला। यह अक्षा० २८ २१´ से ३१ २०´ उ० और देशा० ६८ १८´ से ७० ५४ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ५३०६ वर्गमील है। इसके उत्तरमें डेरा इस्माइलखाँ, पूर्वमें सिन्धु नदी, दक्षिणमें उत्तर सिन्धका प्रान्त सीमान्त जिला और पश्चिममें सुलेमान पहाड़ है।

यह जिला बालुकामय निम्नभूमिसे समाच्छन्न है। एक ओरसे सुलेमान पहाड़ और दूसरी ओरसे सिन्धुका किनारा इसको घेरे हुए हैं। जिलेके पश्चिम भागमें गिरिमाला पहाड़की सानुभूमिकी ओर विस्तृत है। कहीं बहुतसे प्राचीन अट्टालिकाओंके भग्नावशेष हैं। पहाड़से अनेक जलस्रोत निकले हुए हैं सही किन्तु सभी जमीनमें जा कर के गोचरको सूख जाते हैं। कहा और महर नदियोंमें बारहों महीने जल रहता है। अन्य नदियोंका जल जब सूख जाता है तब लोग अपने अपने मवेशियोंको ले कर पहाड़ पर चराने जाते हैं। जैकबाबादमें ६,००० फुट जमीनके नीचे पानी मिलता है। पश्चिमकी ओर नदीके किनारे निर्जन मरुभूमि दृष्टिगोचर होती है। बीच बीचमें १८० फुट गहरा कुआं म्युनिसिपलकी ओरसे खुदा दिया गया है जिससे पथिकोंको जल मिल जाया करता है। पूर्वकी ओर सिन्धु नदीके जलसे जमीन कुछ कुछ उर्वरा हो गई है इसी कारण मनुष्योंका वास भी कम और अधिक है। लोकसंख्या प्रायः ४७११४० है। इसमें ४ शहर और ७१० ग्राम लगते हैं। अधिवासियोंमें अधिकांश जाट हिन्दू और भिन्न भिन्न जातियोंके मनुष्य लोग हैं। इस अञ्चलमें खजूरके अनेक वृक्ष देखे जाते हैं। यहांका खजूर बहुत प्रसिद्ध है। यहांके जंगलमें जो लकड़ी मिलती है वे केवल जलानेके काम आती है। खेतीबारीकी सुविधाके लिए कई एक नहरें काटी गई हैं। सङ्घर और जामपुर तहसीलका अंश काधापानी नामसे मशहूर है। दो नदियोंमें बारहों महीने काले रंगका पानी रहता है इसीसे इस अंचलको काधापानी कहते हैं।

यहांके सुलेमान पहाड़की प्रधान चोटीका नाम एक भाग है जो समुद्रपृष्ठसे ७४५२ फुट ऊंची है। इसके बाद की गम्भारी नामक चोटी है। मोजगाहमें सुलेमान

पहाड़का ऊपरी भाग बहुत ठंडा रहता है। सुतरां यूरोपियनोंके लिये बहुत मनोरम है। यहां ८२ गिरिसङ्कट हैं जिनमेंसे सङ्गर, सखीसर्वार चाचर, कहा और मोरो प्रधान हैं।

सिन्धु नदीमें जब बाढ़ आती है, तो पूर्वांशका कोई कोई स्थान डूब जाता है। जो जो ग्राम जलप्लावित होते हैं, वहां दलदल जम जानेसे जमीन उर्वरा हो जाती है। कभी कभी सिन्धु नदमें भारी बाढ़ आ जाती है। १८३३ और १८४१ ई०में जब भीषण बाढ़ आई थी, तब सिन्धु नदीका जल २० फुट ऊपर उठ कर ६ कोस तकको जमीनको डूबाता हुआ शायद उपत्यका तक आ गया था। १८५६ ई०के प्लावनसे डेरा गाजीखांका सेनानिवास बह गया था।

खनिजद्रव्योंमें यहांके पहाड़ पर लोहा, तांबा और शीशा मिलता है। अच्छे कोयले भी पाए जाते हैं। जिलेके दक्षिणभागमें फिटकरी निकाली जाती है। पहाड़ पर मुलतानी नामकी एक प्रकारकी मट्टी पाई जाती है जो औषध बनानेके काममें आती है और साबुनके बदले व्यवहृत होती है। यहां खार नामक एक प्रकारका पेड़ है जिसे जला कर सज्जी प्रस्तुत होती है। सिन्धुप्लावित भूमिमें मूंज नामकी काफी उगती है। जङ्गली पशुओंमें बाघ, हिरण, सूअर, गदहा और तरह तरहके पक्षी तथा कबूतर पाये जाते हैं।

इतिहास—पहले इस जिलेमें केवल हिन्दूजातिका वास तथा हिन्दूराजत्व था। जिलेके अनेक नगरोंमें आज भी हिन्दूराजाओंके कीर्त्तिकलाप वर्णित हुआ करते हैं। यहांके हिन्दू राजाओंमें वीरवर रसालूका नाम बहुत मशहूर है। रसालू देखो।

सङ्घर तथा दूसरे दूसरे स्थानोंमें मुसलमान आक्रमणकी पूर्ववर्त्ती प्राचीन कीर्त्तियोंके अनेक ध्वंसावशेष देखे जाते हैं। ७१२ ई०में मुलतानके साथ साथ यह जिला अरब-विजेता महम्मद बेन्‌कासिमके हाथ लगा। मुसलमान राजत्वकालमें इस जिलेकी आय राजपरिवारको वृत्तिके रूपमें दी जाती थी। प्राय: १४५० ई०में तत्कालीन नवाबके आत्मीय लोदीवंशके नाहिरोंका प्रभाव बहुत बढ़ गया। वे किन और सीतपुर अञ्चलमें स्वाधीनभावसे राज्य करते थे। नाहीरवंशमें डेराजात विभागमें अपना आधिपत्य विस्तार किया था। किन्तु पश्चिमप्रान्तवासी पार्वतीय बलूची जातिके आक्रमणसे उनका अधिकार बहुत कुछ कम हो गया। बलूचियोंमें मालिक सोहराब हो प्रधान थे। बाद सरदार हाजी खाँ बहुत बढ़ चढ़ गये। इनके पुत्र गाजीखांने १५वीं शताब्दीमें अपने नाम पर शहर और जिलेका नाम रखा। तभीसे डेरा-गाजीखाँ नाम प्रचलित है। उक्त बलूची लोग मुलतानके राजाके अधीन सामन्तोंमें गिने जाते थे। क्रमश: वे अपने दलको मजबूत कर दो वर्षके बाद डेराजातके स्वाधीन राजा हो गये। इसी वंशके १८ राजाओंने डेराजात पर राज्य किया और उनके उत्तराधिकारियोंने हाजी और गाजीखांकी उपाधि धारण की। अकबरके समयमें गाजीखांके वंशने नाममात्र मुगल साम्राज्यकी अधीनता स्वीकार की। यद्यपि इन लोगोंका राज्य इस समय भी जागीरमें गिना जाता था और उन्हें कुछ कुछ कर भी देने पड़ते थे, तो भी एक तरहसे वे सम्पूर्ण स्वाधीनता भोग करते थे। दक्षिणांशमें नाहीरोंने १२वीं शताब्दी तक अपनी स्वाधीनता बचाये रखी थी। मुगलोंकी अवनतिके समय १७३८ ई०में सिन्धुनदीका पश्चिम कूलवर्त्ती प्रदेश नादिरशाह दुर्रानीके अधिकारमें आया। इस समय गाजीखाँ दुर्रानीकी अधीनता स्वीकार कर पैतृक अधिकार निर्विवादसे भोग करने लगे। उनकी मृत्युके बाद कोई उत्तराधिकारी नहीं रहनेसे यह जिला पुन: थोड़े समयके लिये नाममात्र मुलतानमें मिला दिया गया। इस समय कल्होरा राजाओंने इस जिलेको अपने अधिकारमें कर लिया, किन्तु १७७० ई०में महम्मूद गुजर नामक अहमदशाह दुर्रानीके अधीनस्थ एक शासनकर्त्ताने इसे उद्धार किया। उन्हींके यत्नसे इस जिलेमें कई जगह कुएँ और नहरें काटी गईं, जिससे कृषिकार्यको अच्छी सुविधा हो गई है। दुर्रानी राजाओंके अधीन यहां कई एक व्यक्तियोंने यथाक्रम शासनकार्य किया। पीछे बलूची जातिके अन्तर्विद्रोहसे यह स्थान श्रीभ्रष्ट और उत्सन्न हो गया।

इस समय नहरें आदि बरबाद हो गईं, कृषिकर्म उठ गया और प्रजा दुर्दशाग्रस्त हो गई। रणजित्‌सिंहके

अन्तु इसके समय यह जिला लाहौर दरबारके अधीन हुआ। १८१८ ई०में रणजित्‌सिंहने अपना आधिपत्य सिन्धुनद तक फैला लिया। यहां तक कि इस जिलेका दक्षिणीय भाग भी इनके हाथ आ गया। बहावलपुरके नवाब सादिक मुहम्मदखांने लाहौर दरबारमें कुछ वार्षिक कर दे कर ये सब नवीन अधिकृत प्रदेश बतौर जागीरके ले लिये। १८२० ई०में नवाबने इसके उत्तरीय भाग पर भी धावा मारा। १८३१ ई०में सारा जिला सुलतान से सावनमलके हाथ आ गया। द्वितीय सिख-युद्ध तक सावनमलके लड़के मूलराजका इस पर अधिकार रहा। बाद जब समूचा पञ्जाब इङ्गलिश गवर्मेण्टके शासनाधीन हुआ तब यह जिला भी उसीके साथ साथ इङ्गलिशके दखलमें आ गया। जबसे यह जिला अङ्गरेजोंके अधीन आया है, तभीसे इसकी उन्नति दिन दूनी और रात चौगुनी होने लगी है।

जिलेकी खेती फसलमें गेहूं ही प्रधान है। इसके अलावा चना, पोस्त, तमाकू, धान, रुई और नीलकी उपज भी कम नहीं होती। यहां कम्बल, गलीचा, खेस तथा और दूसरे दूसरे प्रकारके ऊनके कपड़े तैयार होते हैं। रेशमकी बुनावट भी यहांकी अच्छी होती है। यहां की हाथी दांतकी चूड़ियां बनती हैं जो सब जिलोंमें खप कर होती हैं। इस जिलेसे गेहूं, बाजरा, नील, अफीम, रुई, चमड़ा और लिसोड़ा करांची और मुलतान भेजा जाता है तथा वहांसे गेहूं, चना, नमक, इस्पात, चीनी, कपड़े और लोहेकी आमदनी होती है।

इस जिलेमें रेल नहीं गई है। सिन्धु जहाज तथा नाव द्वारा वर्षाकालमें नदी पार होती है। २८ मील तक पक्की सड़क और ६६० मील तक कच्ची सड़क गई है। सभी बराबर नामकी पक्की सड़क ही सबसे बड़ी तथा मशहूर है। शासनकार्यकी सुविधाके लिये यह जिला चार तहसीलोंमें विभक्त किया गया है डेरा गाजीखां, राजनपुर और सङ्घड़। प्रत्येक तहसील तहसीलदार और नायब तहसीलदारके अधीन है। डिपटी कमिश्नर फौजदारी मामलेका विचार करते हैं और डिष्ट्रिक्ट जज दीवानीका। इन दोनोंके ऊपर मुलतान डिविजन डिविजनके डिविजनल जज हैं।

जिला-विभागमें वार्षिक १३०००) रु० व्यय होती है। स्कूलके सिवा यहां कई एक अस्पताल और औषधालय भी हैं। जिलेमें पांच शहर लगते हैं,—डेरा गाजीखां, दजल जोमचरा, जामपुर, राजनपुर और मिथनकोट।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २८° ३३´ से ३०° ११´ उ० और देशा० ७०° १०´ से ७०° [illegible]´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण १४६७ वर्गमील और लोकसंख्या प्राय: १८६०३४ है। इसके पूर्वमें सिन्धु नद और पश्चिममें स्वाधीन राज्य है। यहां एकबासाय और फोर्ट मुनरो नामक पर्वतश्रृङ्ग क्रमशः ७४६२ और ६३०० फुट समुद्रपृष्ठसे ऊँचे हैं। इसी तहसीलमें इसी नामका एक शहर और २११ ग्राम लगते हैं।

३ उक्त तहसीलका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० ३०° ३´ उ० और देशा० ७०° ४७´ पू० पर सिन्धु नदके किनारे पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: २३७३१ है।

१४७६ ई०में गाजीखां मिरानी नामक किसी बलूची ने यह नगर स्थापित किया था। नगरके पूर्वमें कसूरे नामकी नहर है। जिसके दोनों बगल घने खजूरके जंगल हैं बीच बीचमें अनेक घाट भी हैं। ग्रीष्मकालमें बहुतसे लोग यहां स्नान करने आते हैं। नगरके ऊपर एक बहुत ऊंचा बांध है जो १८५८ ई०में बाढ़से नगरको बचानेके लिये तैयार किया गया है। पहले यहां छावनीका उद्यान था। अभी यहां अदालत है और प्राचीन दुर्गमें तहसीलकी कचहरी और पुलिस कार्यालय है। इसके अलावा यहां टाउनहाल, विद्यालय औषधालय बाजार आदि हैं, बीच बीचमें अनेक मसजिदें भी देखनेमें आती हैं। इनमेंसे गाजीखां अबदुल जव्वार और चूतानीकी मसजिद प्रसिद्ध है। सिखोंके आधिपत्यकालमें उक्त तीनों मसजिदें सिक्खोंके उपासना-स्थलके रूपमें गिनी जाती थीं। यहां प्राचीन हिन्दू देवमन्दिर और दो मुसलमान साधुओंकी समाधियां हैं।

शहरमें लोग अफीम खजूर, गेहूं, कपास, अंगनी, चमड़े आदिको रफ्तनी और दूसरे दूसरे देशोंसे चीनी, धातुके तरह तरहके पात्र, विलायती कपड़े, धातु, नमक तथा गरम मसालेकी आमदनी होती है। किसी समय यहां रेशम और रुईका कारबार था, अब प्राय: नहींके बराबर है।

ग्रीष्मकालमें नहरके किनारे सप्ताहमें दो बार हाट लगती है। शान्तिरक्षाके लिये यहांके किलेमें एक दल अश्वारोही और दो दल पदातिक रहते हैं। १८६७ ई०में यहाँ म्युनिसपालिटी कायम हुई है। यहाँ ऐङ्गलो वर्नाक्युलर हाई-स्कूल और एक अस्पताल है।

डेरा गोपीपुर—पञ्जाबके कांगड़ा जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३१° ४०´ से ३२° १२´ उ० और देशा० ७५° ५५´ से ७६° ३२´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ५१५ वर्गमील और लोकसंख्या लगभग १२५५३६ है। इसमें कुल १४५ ग्राम लगते हैं। यहांकी आय लगभग दो लाख रुपयेकी है।

डेराजात—पञ्जाब प्रदेशके अन्तर्गत एक कमिश्नरके अधीन एक विभाग। यह अक्षा० २८°३०´ से ३४°१५´ उ० और देशा० ६८°१५´ से ७१° पू०में अवस्थित है। इसके अन्तर्गत डेरा इस्माइलखाँ, डेरा फतहखाँ और डेरा गाजीखाँ ये तीन जिले हैं। यह उपविभाग उत्तरमें शेख बुदिन पहाड़ और दक्षिणमें जामपुर शहर तक विस्तृत है। इसकी लम्बाई ३२५ मील और चौड़ाई ५० मील है। १८४९ ई०में यह विभाग अंगरेजोंके हाथमें आया। १५वीं शताब्दीमें यह विभाग बलूचके शासनाधीन था। मुलतानके लङ्गाधिपति सुलतान हुसेनने जब देखा कि सिन्धुप्रदेशका अधिकार उनके हाथमें अब रखनेको नहीं है, तब उन्होंने बलूच-सेनाओंको बुलाया और मलिक सोहराबको वे सब प्रदेश जागीरमें दे दिये। सोहराबके लड़के इस्माइल और फतहखाँने अपने अपने नाम पर दो डेरा अर्थात् वासस्थान स्थापित किये। इधर गाजीखाँ जो बलूचके प्राचीन मिरानी वंशके प्रधान थे और लङ्गाके दरबारमें नौकरी करते थे, सुलतान हुसेनके पोते महमूदके शासनकालमें स्वतन्त्र हो गये। उन्होंने अपने लड़केके नाम पर एक शहर बसाया जिसका नाम डेरा गाजीखाँ रखा गया। १५२६ ई०में बाबरके उत्तरीय भारत पर चढ़ाईके समय मिरानीने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली। बाबरके मरने पर उनके लड़के कामरानने, जो काबुलके शासक थे, डेराजात पर अपना अधिकार जमाया। फिर हुमायूंने इसका पूरा अधिकार मिरानीको दे दिया। १७३८ ई०में नादिरशाहने सिन्धुका पश्चिमीय प्रदेश हस्तगत कर लिया और मिरानीका सारा स्वत्व जाता रहा। बाद कई एक राजाओंने इस पर एक एक कर आक्रमण किया सही, लेकिन कोई अधिक दिन तक ठहर न सके। कालक्रमसे हरवर्ट एडवर्डके यत्नसे यह विभाग १८४८ ई०में सदाके लिये अंगरेजोंके हाथमें आ गया।

डेरा नानक—पञ्जाबके गुरुदासपुर जिलेके अन्तर्गत बटाला तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० ३२° २´ उ० और देशा० ७५° ७´ पू० पर रावी नदीके दक्षिण किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५११८ है। यह गुरुदासपुर शहरसे २२ मीलकी दूरी पर अवस्थित है।

इस नगरके निकट दूसरी तरफ पखोवाकी ग्राममें सिखोंके आदिगुरु नानक रहते थे और उसी ग्राममें उनकी मृत्यु भी हुई। उनके वंशधर बेदीगण बराबर उसी ग्राममें रहते थे, किन्तु जब वह ग्राम इरावती नदीमें कट गया, तब वे नदी पार कर गये और वहां उन्होंने एक नया नगर बसाया जिसका नाम अपने आदिपुरुष नानकके नाम पर डेरा-नानक रखा। तभीसे यह नगर सिखोंके निकट बहुत पवित्र माना जाता है। बाबा नानकके स्मरणार्थ यहां एक सुन्दर मन्दिर बनाया गया है जिसे दरबार साहब कहते हैं। शहरमें नानकके वंशधर ही प्रधान हैं।

एक समय यहां वाणिज्यव्यापार खूब जोर था। रेल हो जानेसे व्यवसाय कुछ कम गया है। तो भी यहांका शाल प्रस्तुत करनेका व्यवसाय आज भी प्रसिद्ध है। यहांसे कपास और चीनीकी रफ्तनी अधिक होती है। रावी नदीकी बाढ़से नगरके विशेष अनिष्ट होनेकी सम्भावना रहती थी, इसीसे वहां एक बांध दे दिया गया है। इस पर भी मन्दिर और नगर भूगर्भशायी हो जानेकी आशङ्का सदा बनी रहती है।

यहां थाना, अंगरेजी और देशीभाषा सिखानेके विद्यालय, औषधालय आदि हैं। १८६७ ई०में यहां म्युनिसपालिटी स्थापित हुई है।

डेरापुर—१ युक्तप्रदेशके कानपुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २६° २०´ से २६° ३७´ उ० और देशा० ७९° ३४´ से ७९° ५५´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ३०८

वर्गमील और लोकसंख्या लगभग १८८९८२ है। इसमें २७८ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है। इसके उत्तरमें सिन्द नदी और दक्षिणमें पैहुज नदी प्रवाहित है।

२ डेरापुर जिलेका एक प्रधान नगर। यह सेंगुर नदीके बायें किनारे कानपुर शहरसे १० कोस पश्चिममें अवस्थित है। यहां तहसीलकी कचहरी, प्रथम श्रेणीका थाना, विद्यालय, डाकघर आदि हैं। महाराष्ट्रोंके शासनकालमें (१७५१-१७६२ ई०को) इस प्रदेशके शासनकर्ता गोविन्दराय पण्डित यहां एक सड़क बनवा गये हैं। नगरमें अनेक प्राचीन मसजिद भी हैं।

डेरोली श्रीगौड़—श्रीगौड़ ब्राह्मणोंकी जातिका एक भेद। मालव प्रान्तमें ये अधिक संख्यामें पाये जाते हैं। इनका आचार विचार साधारण है। शूद्रकन्याकी सन्तान होनेके कारण इनका पद नीचा है। कहते हैं कि अकबरके शासनसे ये लोग निकृष्ट हो गये हैं इसलिए आज कल भी हीन हैं।

डेल (हिं० स्त्री०) १ ढेलोंको फलसे सिंचे जोती हुई जमीन। (पु०) २ जङ्गलमें होनेवाला एक प्रकारका बड़ा और ऊँचा पेड़। इसकी लकड़ी मेज कुरसी आदि बनानेके काममें आती है। इसके बीज खाये जाते हैं और उनमेंसे एक प्रकारका तेल निकलता है जो दवा और जलानेके काममें आता है। ३ उल्लू पक्षी। ४ पत्थर, मट्टी आदिका खंड, ढेला, पिंडा।

डेल्टा (अं० पु०) वह तिकोनी जमीन जो नदियोंके मुहाने या सङ्गमस्थान पर उनके द्वारा लाए हुए कीचड़ और बालूके जमनेसे बनती है।

डेवा (हिं० पु०) १ पाँवका कोना। २ नटखट चौपायोंके गलेमें बाँधे जानेका काठ, ठेंगुर।

डेलिगेट (अं० पु०) प्रतिनिधि, वे किसी स्थानके निवासियोंकी ओरसे किसी सभामें अपनी सम्मति देनेके लिये भेजे जाते हैं।

डेम्फिया (हिं० पु०) काले या नीले रङ्गका फूल देनेवाला एक प्रकारका पौधा।

डेंवकना (हिं० क्रि०) १ पांव पर रक्खी हुई रोटीका फूलना। २ कपड़ेका तह लगाना।

डेवढ़ा (हिं० वि०) १ आधा और अधिक, डेढ़गुना। (पु०) २ गलीका पथ, तंग रास्ता, जिसका एक किनारा ढालू हो। ३ कुछ ऊंचे स्वरका गान। ४ डेढ़गुनी संख्याका पहाड़ा।

डेस्क (अं० पु०) लिखनेके लिये छोटा ढालुआं मेज।

डेहरिया—काशी प्रदेशके पूर्वभागमें कर्मनाशा नदीके किनारे अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। भविष्यब्रह्मखण्डके मतसे यहां प्राचीन कालमें ताड़का राक्षसी रहती थी। उसकी मृत्यु रामचन्द्रके हाथसे हुई और इसी स्थान पर उसकी हड्डियां कालक्रमसे मट्टीमें मिल गईं।

(भ० ब्रह्म० ५८।४०)

डेहरी (हिं० स्त्री०) दहलीज, देहली।

डेहल (हिं० पु०) देहरी देखो।

डेंगना (हिं० पु०) वह काठ जो नटखट चौपायोंके गलेमें बांध दिया जाता है, ठेंगुर।

डैना (हिं० पु०) पक्ष, पंख, पर।

डैम (अं० पु०) सत्यानाशी, अभागा।

डैश (अं० पु०) अङ्गरेजी विराम चिह्न। इसका प्रयोग वहां किया जाता है। वाक्यके बीच रुक कर जब कोई वाक्य लिखा जाता है, तब उस वाक्यका व्याकरण सम्बन्ध प्रधान वाक्यसे नहीं होता। इसका चिह्न —ऐसा है। जैसे जो मनुष्य अच्छे पढ़े लिखे हैं—चाहे वे हिन्दू हों, चाहे मुसलमान हों, चाहे ईसाई हों—सभी उनका आदर करते हैं।

डोंगर (हिं० पु०) पहाड़ी टीला।

डोंगा (हिं० पु०) १ वह नाव जिसमें पाल नहीं रहता है। २ नाव।

डोंगी (हिं० स्त्री०) १ बिना पालकी छोटी नाव। २ छोटी नाव। ३ नावाकारका वह पानीका बरतन जिसमेंसे सीधा काम करने सुभीता है।

डोका (हिं० पु०) १ बड़ी दमामची। २ कारतूस, टोटा।

डोंडी (हिं० स्त्री०) १ पोस्तेका फल जिसमेंसे अफीम निकलती है। २ कपासका टेंटी। ३ छोटी नाव।

डोई (हिं० स्त्री०) काठकी बड़ी करछी। यह बटलोईमें दूध घी, चाशनी आदि चलानेके काममें आती है।

डोक (हिं० पु०) पक्का कुआं, कुआरा।

डोकर (हिं० पु०) डोकरा देखो।

डोकरा (हिं० पु०) अशक्त और वृद्ध मनुष्य, बुड्ढा आदमी।

डोकरी (हिं० स्त्री०) बुढ़ा स्त्री, बुड्ढी औरत।

डोका (हिं० पु०) तेल आदि रखनेका काठका छोटा बरतन।

डोकिया (हिं० स्त्री०) डोका देखो।

डोकी (हिं० स्त्री०) डोका देखो।

डोज (अं० स्त्री०) मात्रा, खुराक।

डोडदयी (हिं० स्त्री०) तलवार।

डोडहा (हिं० पु०) वह सांप जो पानीमें रहता है।

डोडी (सं० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक प्रकारको बेल। इसके पर्याय—जीवन्ती, शाकश्रेष्ठा, सुखालुका, बहुवमी, दीर्घपत्रा, सूक्ष्मपत्रा और जीवनी हैं। इसमें कटु, तिक्त उष्ण, दीपन, कफ, वात, कण्ठामय रक्तपित्त, दाहनाशक और रुचिकर गुण माना गया है। (राजनि०)

डोड़ी (हिं० स्त्री०) औषधके काममें आनेवाली एक प्रकारकी लता। इसका दूसरा नाम जीवन्ती है। यह मधुर, शीतल, नेत्रहितकर, त्रिदोषनाशक और वीर्यवर्द्धक मानी जाती है।

डोडो (अं० स्त्री०) एक पूर्व समयकी चिड़िया। यह बत्तखके बराबर होती थी। इसका शरीर भारी और बेढङ्गा था। यह अपने बचावके लिये कुछ नहीं कर सकती क्योंकि यह अधिक उड़ नहीं सकती थी। १६८१ ई०के जुलाई मास तक यह मारिशस टापूमें देखी गई थी। १८६६ ई०में इसकी बहुतसी हड्डियां पाई गई थीं। यूरोपियनोंके बसने पर इस दीन पक्षीका समूल नाश हो गया।

डोब (हिं० पु०) गोता, डुबकी।

डोबा (हिं० पु०) डुबकी, गोता।

डोम—भारतवर्षकी एक अस्पृश्य और नीच जाति। ये कई एक स्थानोंमें विस्तृत तथा नाना श्रेणियोंमें विभक्त हैं। इनकी उत्पत्तिके विषयमें बहुतोंका मतभेद है। बिहारका मघैया डोम कहता है, कि एक दिन महादेव और पार्वतीने सब जातियोंको भोजन करनेके लिये निमन्त्रण किया था। डोमोंका आदिपुरुष सुपत भक्त सबसे पीछे निमन्त्रणस्थल पर पहुंच कर देखा, कि अन्यान्य जातियोंका भोजन शेष हो गया है। उन्हें बहुत भूख लगी थी इसलिये उसने सभोंका उच्छिष्ट भोजन एकत्र कर अपनी भूख तृप्त कर ली। उपस्थित मनुष्य इस घृणित कार्यसे उसकी खूब निन्दा करने लगे। अन्तमें वह जातिच्युत कर दिया गया। बिहारके भिक्षोपजीवी डोमसे उसकी जातिकथा पूछने पर यह अपनेको उच्छिष्ट भक्षक बतलाता है। परन्तु मध्य और पश्चिम बङ्गालके डोम अपना उत्पत्ति-विवरण कुछ दूसरा ही बतलाते हैं। ये कहते हैं, कि बागदी जातिकी नेट श्रेणीके पुरुषके औरस तथा चण्डाल जातिकी स्त्रीके गर्भसे कालुवीरका जन्म हुआ। इस ढंगो।

वही कालुवीर समस्त डोम श्रेणियोंका आदिपुरुष है। कालुवीरके प्राणधीर, मनधीर, बानधीर और गानधीर नामके चार पुत्रोंसे आहरिया, बिशभनिया, बाजुनिया और मघैया इन चार श्रेणियोंके डोम उत्पन्न हुए हैं। धकल्दिगिया अथवा नवसुरिया डोम भी अपनेको कालुवीरके वंशज बतलाते हैं। ये दूसरेके मृत शरीरको एक स्थानसे दूसरे स्थान तक पहुंचाते और चिता काटते हैं। इन डोमोंका प्रवाद है, कि महादेवने कालुवीरके एक पुत्रको गङ्गासे जल लाने भेजा था। गङ्गातट पर आ कर उसने देखा कि बहुतसे मनुष्य शवको जलानेके लिये वहां इकट्ठा हो रहे हैं। तब मृतव्यक्तिके आत्मीयसे रुपये ले कर उसने सहा ज्रोट करके चिता प्रस्तुत कर दी। लौटने पर शिवजीने उसे इस तरह अभिशाप दिया 'तुम तथा तुम्हारे वंशधर बहुत काल तक मृतदेहका सत्कारादि करके कालयापन करेंगे।" डोमकी स्त्रियां धात्रीका काम कर 'धाय' नामसे पुकारी जाती हैं। इस श्रेणीके पुरुष मजदूरी कर अपनी जीविकानिर्वाह करते हैं। एक श्रेणीके डोम बांस काट कर उसकी फट्टियोंसे सूप डले आदि बनाते हैं। इन्हें बांसफोड़ कहते हैं। इसी श्रेणीका जो डोम छप्पर छानता है वह छपरिया कहलाता है।

डोमोंमें भिन्न भिन्न गोत्र हैं। इनमें ब्राह्मणोंके गोत्र ही अधिक प्रचलित हैं। साधारणतः डोमोंके पांचवें पुरुषमें विवाह निषिद्ध है। बिहारके मघैया डोमोंमें

विवाहके लिये डोमका नियम अत्यन्त सहज है। (१) पिता (२) पितामही (३) प्रपितामही (४) वृद्ध प्रपितामही (५) माता, (६) मातामही तथा (७) प्रमातामही ये जिस गोत्रकी होती हैं उस गोत्रमें मगहिया डोम विवाह नहीं करता है। बङ्गालके डोमोंमें केवल एक मूलकी स्त्री पुरुषका विवाह नियम-विरुद्ध है। बांकुड़ामें कमसे कम ३ पीढ़ीमें विवाह नहीं होता, परन्तु मैं भादि रखने पर १ पीढ़ीमें भी विवाह नहीं हो सकता है। २४ परगनावासी कोई डोम सपिण्ड को ग्रहण नहीं करता।

यदि किसी दूसरी जातिका मनुष्य डोम होना चाहे तो वह पञ्चायतको निर्दिष्ट अर्थ और निकटवर्ती डोमों को एक भोज दे कर डोम जातिमें मिल सकता है। जो मनुष्य डोम में दीक्षित होना चाहता है, उसे सिर मुड़वा कर पञ्चायतमें एक प्रकारकी दीक्षा ग्रहण करनी पड़ती है।

मध्य और पूर्व बङ्गालके डोम थोड़ी ही अवस्थामें अपनी लड़कीका विवाह कर देते हैं। १० वर्षसे अधिक उम्रकी कन्याका विवाह नहीं करनेसे समाजमें कन्याके पिताकी निन्दा होती है। इनमें कन्याका पण ५) रुपयेसे ले कर १५) रुपये तक है। ढाका जिलेके डोम विवाहकार्यमें ब्राह्मणोंको आमन्त्रण करते हैं। निमन्त्रितगणके आ जाने पर वरका पिता पुत्रको गोदमें ले कर मण्डप पर बैठता तथा कन्याका पिता भी कन्याको ले कर वरके सामने बैठ जाता है। कन्याका पिता ७ पीढ़ीके तथा वरका पिता ३ पीढ़ीके नाम उच्चारण करता है। इसके बाद वे ईश्वरको इस विषयमें साक्षी रखते हैं और वरका पिता कन्याके पितासे यह जिज्ञासा करता है कि वह अपनी कन्याको परित्याग करता है या नहीं। कन्याके पिताके सम्मतिसूचक उत्तर पाने पर वर कन्याके ललाटमें सिन्दूर देता है। इसी तरहसे विवाहक्रिया सम्पन्न होती है। २४ परगनेके डोम विवाहसमयमें विवाह-सभाके मध्यस्थल पर मट्टी जलसे पूर्ण एक पात्र रखते हैं। इस पात्रके ऊपर वर और कन्याके हाथ रखाते हैं। धर्मपण्डितके मन्त्रादि पढ़ने पर अन्तमें वर और कन्या दोनोंकी माला परस्पर बदली जाती है। विवाहके पहले दुर्गा, महादेव गणेश प्रभृति देवताओंकी अर्चना की जाती है।

डोमोंमें बहुविवाह और विधवा-विवाह निषिद्ध नहीं है। विधवायें प्रायः उनकी स्वामीका कनिष्ठ भाई विवाह कर सकता है। वस्त्र और सिन्दूर दान ही सगाई विधवा-विवाहका अङ्ग है। मुर्शिदाबादके डोमोंमें पति पत्नी परित्यागकी प्रथा प्रचलित है। परन्तु यह परित्याग पञ्चायतकी अनुमतिसे होना आवश्यक है। पञ्चायतके 'आलो' करनेसे ही सब झगड़े जाते रहते हैं। उत्तर भागलपुरमें स्वामी कुछ पत्तोंको ले कर सबके सामने दो खण्ड कर देता है और इस तरह विवाह सम्बन्ध विच्छिन्न हो जाता है। मुङ्गेरमें २४ स्वामी पञ्चायतको एक भोज देता और उसमें सूअर काटता है। जब कोई किसी स्त्रीका सतीत्व नष्ट करता है, तो वह उसके पूर्व स्वामीको ८) रुपये दे कर ही समाजमें मुक्ति पा लेता है।

डोमोंके पञ्चायतोंकी भिन्न भिन्न उपाधि हैं। यथा— सरदार, प्रधान, मण्डल, मलिक, मोड़ल और कविराज। एक मनुष्यको सन्तान ही उत्तराधिकारसूत्रसे पञ्चायत नाम प्राप्त करती है। प्रति पञ्चायतके अधीनमें एक एक छड़ीदार रहता है।

डोमोंमें धर्मकी एकता नहीं है। विभिन्न प्रदेशीय डोमोंको धर्मप्रथाकी समानता देखी नहीं जाती। इनके कोई ब्राह्मण पुरोहित नहीं रहनेके कारण इनका धर्मानुष्ठान भिन्न भिन्न स्थानोंमें विभिन्न भावसे सम्पन्न होता है। आमिनिल ही विशेषकर पुरोहितका काम करता है। आमिनिल अथवा आमिनियसम्प्रदायीय किसी व्यक्तिके न रहने पर परिवारका कर्त्ता ही मन्त्रादि पाठ करता है। बङ्गालके बांकुड़ा जिलेमें देघरिया तथा अन्यान्य जिलोंमें धर्मपण्डित नामसे अभिहित डोमोंसे पुरोहितका कार्य किया जाता है। इनका पद पुरुषानुक्रमिक है। बाङ्गालीमें तविनी पंगूडीसे ये पहचाने जाते हैं। चम्पारन परगनेमें भाषित ही पौरोहित्य करता है।

बांकुड़ा और पश्चिम बङ्गालके बहुतसे डोम वैष्णव हैं। परन्तु राधा और कृष्णके अतिरिक्त धर्मराजको भी इनके

प्रधान उपास्य हैं। ये दुर्गापूजाके समय ढाकपूजा किया करते हैं। मध्य बङ्गालके डोम एकान्त कालीभक्त हैं। पूर्व बङ्गके बहुतसे डोम शोभनभक्तको गुरुरूपमें पूजते हैं। इनमेंसे थोड़े ऐसे भी हैं जो महाराज हरिश्चन्द्रसे अपनी उत्पत्ति बतलाते हुए अपनेको हरिश्चन्द्री मानते हैं। उनका कहना है कि हरिश्चन्द्र जब अपना सर्वस्व विश्वामित्रको दान कर चुके थे तब उन्होंने एक डोमके निकट दासत्व स्वीकार किया था। डोमके घरमें आ कर और उसके व्यवहारसे सन्तुष्ट हो कर उन्होंने समस्त जातिको अपने धर्ममें दीक्षित किया, तभीसे डोम वह धर्म प्रतिपालन करता आ रहा है।

पूर्व बङ्गालमें श्रावणिया पूजा डोमोंका प्रधान उत्सव है। यह उत्सव श्रावण मासमें किया जाता है। उस समय एक शूकर बलिदान कर एक पात्रमें उसका शोणित और दूसरेमें दुग्ध तथा तीसरेमें सुरा रख कर नारायणको उत्सर्ग किया जाता है। भाद्र कृष्णारात्रिमें भी इसी तरह वे एक दिन एक पात्र दुग्ध, चार पात्र सुरा, एक नारियल और गांजा इत्यादि हरिरामको उत्सर्ग करनेके बाद शूकरकी बलि दे कर उत्सव करते हैं। कुछ दिन पहले बङ्गालमें सर्वत्र एक ही प्रथा थी। सूर्य या चन्द्रग्रहणके समय प्रत्येक हिन्दू गृहस्थ द्वारके बाहरमें बहुतसी ताम्रमुद्राएं रख देते थे जो डोमोंको ही मिला करती थीं। परन्तु आजकल ग्रहाचार्यने उन पर अपना स्वत्व जमा लिया है। रिसले साहबका अनुमान है, इस प्रथासे प्रतीत भी होता है कि डोम पहले अग्नि, जल, वायु प्रभृति भूतोपासक अनार्य जातियोंके पुरोहित थे।

बिहारके डोम भी महादेव, काली, गङ्गा प्रभृतिकी समय समय पर पूजा करते हैं। इनके अतिरिक्त श्याम सिंह, रक्तमाला, गोहिल, गोरैया, बन्दी, लोकेश्वर और दिहवार प्रभृति इनके अगण्य देवता हैं। इनमेंसे ये श्यामसिंहको अपना आदिपुरुष अनुमान करते हैं। श्यामसिंह ही इन लोगोंका प्रधान देवता हैं। दरभंगेके देवधा नामक स्थानमें इनका एक मन्दिर है। विवाह अथवा और किसी प्रकारके उत्सवमें डोम मट्टीकी पिण्डाकृति बहुतसी मूर्त्तियां निर्माण करके शूकरकी बलि देते हैं और उनकी उपासना करते हैं। ग्रामके बाहरमें एक घरमें अथवा वृक्षके नीचे पूजादिका कार्य किया जाता है। कहना नहीं पड़ेगा, कि इन देवताओंकी संख्या और उत्पत्ति-विवरण असंख्य है। जो डोम अपने कार्योंसे तथा मृत्यु, या किसी दूसरे कारणसे प्रसिद्ध हो गया है, डोम लोग उसे ही ठाकुरके जैसा उपासना करते हैं। श्यामसिंह भी सम्भवतः इसी तरहसे हो उत्पन्न हुए होंगे। गयाके निकटस्थ मघैया डोम प्रसिद्ध डकैत हैं। जब कोई उनमेंसे लूटके लिये बाहर निकलता है, तो पहले वह अपने मङ्गलके लिये सनमारी माई देवीकी पूजा कर लेता है। बहुतोंका अनुमान है कि यह देवी कालीके ही नामभेद मात्र हैं। परन्तु दूसरे इस देवीको पृथिवी बतलाते हैं। इस देवीकी उपासनाके लिये प्रतिमूर्त्तिका प्रयोजन नहीं पड़ता है। घरमें आध बित्ता परिमित स्थान पर गोबरके जलसे एक मण्डली बनाई जाती और उपासक उस मण्डलीके सामने अपने घुटनेको टेक कर बैठता है। बाद दाहिने हाथमें डोमोंकी प्रसिद्ध कुल्हाड़ी ले कर उसके द्वारा बाईं बाहुमें एक जगह काटता है। बाद वह अंगुलीसे चार पांच बुन्द लेहू ले कर मण्डलीके मध्य चिह्नित कर देता है, तथा मृदुस्वरसे देवीके निकट प्रार्थना करता है कि आजकी रात्रि खूब अन्धकारमय हो, जिससे उसे प्रचुर धनचोरीसे हाथ लगे एवं वह अथवा उसका कोई अनुचर पकड़ा न जाय।

बहुतोंका विश्वास है कि डोम मृतदेहका न तो अग्निसत्कार करते और न उसे मट्टीमें गाड़ते ही हैं। वे निशियोगमें मृतदेहको खण्ड खण्ड करके पासकी नदीमें फेंक देते हैं। जो कुछ हो, यह भीषण धारणा अत्यन्त अमूलक है, सम्भवतः डोमोंको पहले रात्रियोगमें ही मृतसत्कार करनेमें बाध्य करानेसे ऐसा प्रवाद प्रचलित हुआ होगा। ढाका प्रदेशमें डोम मृतदेह नदीमें फेंक देते हैं, सम्भ्रान्त होने पर उसकी देह गाड़ दी जाती है। आजकल अधिकांश स्थानमें ही दाह करनेकी प्रथा प्रचलित हो गई है। मृतका सत्कार समाप्त होने पर वे स्नान कर एक एक करके लोहे, पत्थर और सूखे गोबरको स्पर्श कर शुद्ध हो जाते हैं, तथा

मृतकी प्रेतात्माके उद्देश्यसे अन्न और मद्य उत्सर्ग करते हैं। ८ दिन तक कोई मछली या मांस नहीं खाता है। १०वें दिन सूअरका मांस खा कर और मद्य पी कर उत्सव करते हैं। पश्चिम बङ्गाल और बिहार प्रदेशमें डोम प्रायः मृतका अग्निसंस्कार ही करते हैं। लेकिन जो बालक प्रभृति रोगसे अथवा तीन वर्षसे कम अवस्थामें मरता है उसे गाड़ दिया जाता है। कहीं स्थान काल पर ११वें १२वें या १३वें दिनमें मृतका श्राद्ध होता है।

समस्त हिन्दू डोमोंको अत्यन्त घृणा और भयसे देखते हैं। इनका आचार व्यवहार तथा खाद्य प्रभृति ऐसा जघन्य है कि हिन्दू उनको छाया स्पर्श करनेसे भी अपनेको अपवित्र समझते हैं। फिर भी इनका काम ऐसा जरूर है जिससे मालूम पड़ता है कि ये दया मायासे रहित हैं। इनका मद्यदोष और चरित्रदोष अत्यन्त प्रबल है। ये जो कुछ उपार्जन करते हैं उसे मद्य इत्यादिमें खर्च कर डालते हैं। भविष्यत्‌के लिए ये कुछ भी बचा कर न रखते। ऐसा प्रवाद है कि ढाकाके किसी नवाबने जल्लादका काम करनेके लिये एक डोम को नियुक्त किया था। ढाकाके डोम उसीके वंशज हैं। फांसीदण्डाज्ञा कार्यमें परिणत करनेके लिये प्रायः प्रति जिलेमें एक डोम नियुक्त है। जब दण्डित मनुष्यको फांसी हो जाती है तब वह डोम पुकार महाराजको या पुकारके सब साहब कह कर चिल्लाता है। वह सोचता है कि, ऐसा करनेसे वो इस पापसे मुक्त हो जायगा।

डोम श्मशानघाट बहुत साफ सुथरा रखता है। डोमोंकी सहायताके बिना काशीमें मृतदेह सत्कारमें विविध असुविधा होती है। ये पहले चिता सजा देते और तब अग्नि, पुआल तथा काठ प्रभृति ला देते हैं। इन कार्योंके लिए ये मृतव्यक्तिके आत्मीयसे यथाशक्ति कुछ द्रव्य लेते हैं। कलकत्ता प्रभृति स्थानोंके श्मशानघाटमें बहुतसे डोम नियुक्त हैं।

सभी डोम श्मशानघाटके कामोंमें लगे नहीं रहते, परन्तु मृतदेह सत्कारके पहले और पीछेका जो काम है उसे ये लोग अपना जातीय पेशा अवश्य मानते हैं। खाद्य सम्बन्धमें इन लोगोंमें कोई रोक टोक नहीं है। ये सूअर, घोड़े, कुत्ते, ऊंट, मूषे इत्यादिका मांस खाते हैं। किसी किसी देशके डोमोंमें गोमांस भी प्रचलित है।

डोम धोबीका छुआ हुआ द्रव्य नहीं खाता है। इस सम्बन्धमें एक गल्प इस तरह है—एक दिन डोमोंका आदिपुरुष सुपत भक्त अत्यन्त श्रान्त और क्लान्त हो दूर देशसे घरकी ओर आ रहा था। रास्तेमें उसने एक धोबीको गदहेकी पीठ पर बहुतसे कपड़े लाद कर ले जाते देखा तथा उससे कुछ खाद्यपदार्थ और थोड़ा जल मांगा। धोबीने उसे कुछ भी न दिया। इस पर दोनोंमें गालियोंकी बौछार होने लगी। अन्तमें उसने धोबीको मार कर भगा दिया और उसके गदहेको उसी जगह मार कर मांस खा लिया। क्षुधा निवृत्त होने पर गदहे को खा कर उसे बहुत दुःख हुआ। धोबी ही इस पापका मूल है ऐसा सोच कर वह धोबी जातिको अत्यन्त घृणादृष्टिसे देखने लगा। उसी समयसे कोई डोम धोबीके घरमें अथवा उसका स्पर्श किया हुआ पदार्थ ग्रहण नहीं करता है। गोरखपुरवासी मगहिया तथा बिलसिलिया डोम न तो घोड़े पकड़ते और न कुत्ते ही मारते हैं। ये डोम गड़हेमें काठका जला नहीं लगाते। उस देशके डोम कुत्तोंको तो नहीं मारते मगर भरे गवरके डोम कुत्तोंको मार कर अर्थ उपार्जन करते हैं।

एच डोवर प्रभृति प्रस्तुत करना ही डोमोंका जातिगत व्यवसाय है। किन्तु इन लोगोंमें अब बहुत हो कृषिकार्यमें लग गये हैं। इनकी रैयती स्वत्व नहीं है, क्योंकि ये प्रायः स्थान परिवर्तन किया करते हैं। मानभूम जिलेके दक्षिणांशमें विशेषकर डोमोंका अधिकारभुक्त है। बहुनिया डोम विवाहकालमें बाजे बजाते हैं और शिकार आखेट किया करते हैं। किसी किसीके मतसे चौर्यवृत्ति ही अभ्यासगत सर्वथा डोमोंका व्यवसाय है। इसलिये ये डोम अधिक दिन एक स्थान पर नहीं रहते। ये किसी छोटे ग्राममें रास्तेके निकट सिरकी बांधते और कहींसे चोरी करनेके लिये इधर उधर निकल पड़ते हैं। सर्वथा डोममें सबके सब चोर नहीं होते। मगहियासे अपेक्षा बांस और कृषिकार्य द्वारा काल यापन करते हैं।

महामहोपाध्याय पण्डित हरप्रसाद शास्त्रीजीका कहना है कि भारतवर्षमें बौद्धधर्म अब तक भी सम्पूर्ण रूपसे लुप्त नहीं हुआ है। भारतवर्षके भिन्न भिन्न स्थानोंमें डोम बौद्धधर्मके अस्तित्वका साक्षी देते हैं। वे यह भी कहते हैं कि डोम ब्राह्मणोंका प्रभुत्व स्वीकार नहीं करता। धर्मपुरोहित श्रेणीके डोमोंसे उनका धर्मानुष्ठान किया जाता है। बुद्धदेवका एक नाम धर्मराज है। सबसे पहले कालु डोमने धर्मराजका पौरोहित्य प्राप्त किया था। घनरामकी पुस्तकमें लिखा है कि गौड़ेश्वर धर्मपालने महामदको मन्त्रीके पद पर नियुक्त किया था। महामद रञ्जाको अत्यन्त घृणा करता था। किन्तु धर्मराज रञ्जाको बहुत चाहते थे। महामद अपने भांजा रञ्जाके पुत्र लाउसेनको विविध उपायसे विनष्ट करनेकी चेष्टा करने लगा। परन्तु धर्मराजका प्रियपात्र होनेके कारण वह उसका कुछ भी अनिष्ट कर न सका। महामदकी सारी चेष्टा निष्फल होने पर उसने लाउसेनको युद्धके लिये कामरूप और उड़ीसा भेजा। धर्मराजके अनुग्रहसे लाउसेन प्रत्येक कार्यमें ही कृतकार्य हुआ। अन्तमें महामद अपना भ्रम समझ कर अपने भांजेको प्यार करने लगा। मद्य और शूकरका मांस खानेकी स्वाधीनता दे कर लाउसेनका प्रिय सेनापति कालु डोम धर्मराजका पुरोहित बनाया गया। धर्मपाल बौद्धधर्मावलम्बी थे। साधारण मनुष्योंको सुविधाके लिये मालूम पड़ता है कि बौद्धधर्मसे धर्मराज पूजाकी सृष्टि धर्मपालके समयमें ही हुई है। वह पूजा आज भी प्रचलित है। डोम पक्व द्रव्यसे देवताकी अर्चना नहीं करते। डोम प्राय सूअरके मांससे धर्मराजकी उपासना करते हैं। ध्यानके मन्त्र सुननेसे धर्मराज ही बुद्धदेव हैं, ऐसा प्रतीत होता है।

"यस्यान्तो नादिमध्ये न च कर चरणं नास्ति कायनिदानम्।
नाकारं नादिरूप नास्ति जन्म ग्रयस्य (?)
योगीन्द्रो ज्ञानगम्यो सकलजनहितं सर्वलोकैकनाथम्।
तत्वं तंच निरञ्जनं मरवाद पातु वः शून्यमूर्तिः॥"

इस मन्त्रकी सम्यक् आलोचना करनेसे बुद्धदेवका रूप ही मनमें उदित हो आता है। शास्त्रीजीने और भी कहा है कि शूकरबलि और ध्यानके लिये धर्मराज पूजा बौद्ध धर्मानुगत नहीं है इसमें प्रायः सब कोई सन्देह कर सकते हैं। परन्तु बौद्धधर्मका इतिहास पढ़नेसे यह सन्देह जाता रहता है। भोटदेशीय तारानाथके पुस्तकमें लिखा है कि रामपालके राजत्व कालमें विरूप आविर्भूत हुए। वे धर्मपाल नामसे भी प्रसिद्ध थे। धर्मपालके शिष्यका नाम कान-विरूप और कानविरूपके प्रधान शिष्यका नाम विरूप-डेरूक था। ये त्रिपुराके राजा थे। ये आचार्य कानविरूपके निकट दीक्षित हुए, बाद सिद्धिलाभ करनेके लिये भविष्यवाणीके अनुसार इन्होंने डोम जातिकी पद्मावती नामकी किसी स्त्रीको शक्ति रूपसे ग्रहण किया। इस पर प्रजाने उन्हें राज्यसे निकाल दिया। राजा डोमनीके साथ जङ्गल जा कर ब्रत रक्षा करने लगे और सिद्ध हो कर डोमराज या डोमाचार्य नामसे परिचित हुए। बाद एक दिन त्रिपुरा राज्यमें भारी उपद्रव उपस्थित होने पर ये विशेष अनुरुद्ध हो कर वहां गये। वहां आ कर वे धर्म नामक बौद्ध तान्त्रिक मत प्रचार करने लगे। बहुतसे इनके शिष्य हो गये। डोमाचार्यकी अद्भुत क्षमता देख कर राढ़देशके राजाने भी उनका शिष्यत्व स्वीकार किया और दूसरे दूसरे लोग भी इनका यथेष्ट आदर करने लगे। धर्म उपासनाने भी वृद्धि पाई। बौद्धधर्मके शेषकालमें धर्म उपासना प्रवर्तित हुई। धर्मराजकी अर्चना बौद्ध उपासनाकी तान्त्रिक आकृति है। इस उपासना प्रणालीमें भङ्गी, डोम प्रभृति अन्त्यजोंमें आवद्ध है। बौद्धधर्मकी शेषावस्थामें बुद्ध और बोधिसत्वोंकी उपासना परित्यक्त तथा दिक्पाल और धर्मपाल प्रभृतिकी पूजा प्रचलित हो गई थी।*

बहुतोंके मतसे डोम भारतकी आदिनिवासी अनार्य जातिकी एक श्रेणी है। इनकी आकृति देखनेसे भी ये बहुत कुछ उन लोगोंसे मिलते जुलते हैं। मघैया डोमोंकी आकृति छोटी, वर्ण काला, बाल बड़े बड़े और आंख अनार्योंसी होती है। पूर्व बङ्गालके डोमोंके बाल काले और लम्बे होते हैं। किसीका मत है कि डोम द्राविड़ श्रेणीके अन्तर्गत है। परन्तु इस सम्बन्धमें

* Journal of the Asiatic Society of Bengal for 1895, p. 64.

पण्डितोंका एक मत नहीं है। जो कुछ हो, कई शताब्दीसे डोम अत्यन्त हीन और घृणित कार्य करके कालक्षेपण करते हैं।

पूर्वी डोमोंके आचार-व्यवहार तथा और सभी तरहके काम ब्राह्मणके जोरोंसे बहुत कुछ मिलते जुलते हैं पर जिस तरह ब्राह्मणमें कोई कभी मृतदेहको न जला कर उसे अलग कर फेंक देते हैं उस तरह इस देशमें नहीं है। यहांके डोम हिन्दूके जैसा मृतदेहको जलाते हैं पर जिसको चेचक अच्छी नहीं है वह नदीमें फेंक देता है। कुंआरेकी लाश चाहे वह धनी हो चाहे गरीब, नदीमें ही फेंकी जाती है। लेकिन गोरखपुरका मघैया डोम मृतदेहको जङ्गलमें फेंक देता है। व्रत कर्म तथा धर्मोप ब्राह्मणके डोमों मरोला है। हिन्दूके देवी काली, महादेव आदि भी इनके उपास्यदेवता हैं। पीपल वृक्षको भी ये लोग पवित्र मानते और उसके पत्ते आदि तोड़नेसे डरते हैं। हिमालय प्रदेशके कुमाऊंके डोम इन सब कामोंको घृणादृष्टिसे देखते हैं। यहां तक कि इनमेंसे कोई यदि उनके घरमें प्रवेश कर जाये तो घरको पवित्र करनेके लिये वह गोबर आदिसे लीपता है। पाकाल मकान तो किसी कामसे छू ही नहीं सकता। यहांके कुछ डोम ऐसे हैं जो अच्छे अच्छे कपड़े बुनते तथा तरह तरहके बरतन और चूनेको पैदा बनाते हैं।

यह जाति अस्पृश्य है इसलिये यदि इससे स्पर्श हो जाय तो स्नान कर १०८ बार गायत्रीको जप करनी पड़ती है। "स्पृष्टा प्रमादतः स्नात्वा गायत्र्यष्टशतं जपेत्।"
(मत्स्यसूक्त ३९ पटल)

डोमकौआ (हिं० पु०) एक प्रकारका बड़ा कौआ। इसका सारा शरीर काला होता है।

डोमतमोला (हिं० पु०) एक पखाड़ी जाति। ये पीतल तांबका काम करते हैं।

डोमनगढ़—युक्तप्रदेशके अन्तर्गत गोरखपुर जिलेका एक प्राचीन दुर्ग। यह गोरखपुर नगरसे प्रायः १॥ मील उत्तर पश्चिम रोहिन और राप्ती दोनों नदियोंके सङ्गमस्थानके पास अवस्थित है। दुर्गका अवस्थान स्वभावतः दुर्गम है। इसके उत्तर पश्चिम, पश्चिम और दक्षिण पश्चिममें रोहिन नदी, दक्षिणमें राप्ती नदी, उत्तर-पूर्व, पूर्व और दक्षिण-पूर्वमें बकरादुआ नाला है। वर्षा कालमें यह प्रायः चारों ओरसे अपार हौजोंकी भांति घिरा रहता है। यद्यपि यह अभी टूटेफूटे अवस्थामें पड़ा है तो भी यदि चाहें तो फिरसे इसे एक मजबूत सुदृढ़ दुर्ग बना सकते हैं। प्राचीन कालमें यह एक दुर्भेद्य दुर्ग समझा जाता था इसमें सन्देह नहीं। अभी दुर्गका चिह्न मात्र शेष रह गया है। सम्मुखके ऊपर बहुतसे अधिवासियोंके मकान बस गये हैं। अंगरेज लोग अभी भी हवा खानेके लिये गोरखपुरसे यहां आते हैं।

प्रवाद है कि डोमवंशी राजाओंसे यह दुर्ग बनाया गया था, उन्हींके अनुसार इसका नाम डोमनगढ़ पड़ा है। सभीका विश्वास है, कि यह जाति अधिक प्राचीन थी और शायद इन लोगोंने तत्पूर्ववर्ती डोम राजाओंको काट कर या मार कर राज्य प्राप्त किया होगा। डोम शब्द नामसे तो ऐसा अनुमान किया जाता है। साधारण लोगोंका भी विश्वास है, कि डोमनगढ़ अर्थात् डोमोंका दुर्ग डोम राजाओंसे ही बनाया गया है। फिर किसीका यह भी अनुमान है कि डोम जातिके अधिपतियोंसे इस दुर्गका निर्माण हुआ है। अब पूछिये तो ये डोम थे नहीं और लोगोंने यहां राज्य भी नहीं किया। जो कुछ हो, डोमनगढ़ एक समय ऐसा बड़ा था, कि प्रायः वर्तमान समस्त गोरखपुर और राप्ती नदीके किनारेसे ले कर बहुत दूर तक इसका राज्य फैला हुआ था। बहुतेरे यह भी कहते हैं कि इस प्रदेशके आदिम अधिवासी डोम थे। आज भी डोमनगढ़, डोमरी, डोमरहार, डोमकैथा, डोमघ, डोमघाट, डोमरिया, डोमा, डोमाड आदि अनेक ग्रामोंके नाम प्राचीन डोम अधिवासियोंका परिचय देते हैं।

प्राचीन डोमनगढ़के भग्नावशेषोंमें जो दो एक ईंटें पाई गई हैं उनका आकार चौखूटा बड़ा और मोटा है।*

डोमनी (हिं० स्त्री०) १ डोम जातिकी स्त्री। २ डोमकी स्त्री। ३ एक प्रकारकी नीच जातिकी स्त्री। ये

* Cunningham's Archaeological Survey of India vol. xxii, p. 65-67

उत्सवों पर गाने बजानेका काम करती है। आजकल इस जातिकी स्त्रियां वेश्यावृत्ति भी करने लगी हैं।

डोमर—पूर्वीय बङ्गाल और आसामके रङ्गपुर जिलेके अन्तर्गत नीलफामारी उपविभागका एक शहर। यह अक्षा० २६° ६' उ० और देशा० ८८° ५' पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १८६८ है। यहां पटसनकी कई एक कलें हैं और दूर दूर देशोंमें इसकी रवानगी होती है।

डोमर—डोम जातिका एक भेद। इलाहाबाद विभागमें ये अधिक संख्यामें पाये जाते हैं।

डोमा (हिं० पु०) एक प्रकारका सांप।

डोमिन (हिं० स्त्री०) १ डोमजातिकी स्त्री। २ डोमनी देखो।

डोम्बर—कर्णाटक प्रदेशकी एक जाति। कोलाटि देखो।

डोर (सं० क्ली०) दोष-रा ड पृषो० साधुः। हस्त प्रभृति का बन्धनसूत्र, डोरा, सूत। अनन्त प्रभृति व्रतमें यह धारण करना पड़ता है। हिन्दू स्त्रियां इसे बायें हाथमें और पुरुष दाहिने हाथमें पहनते हैं। व्रत देखो।

डोरक (सं० क्ली०) डोर-स्वार्थे कन्। डोर देखो।

"चतुर्दशसमायुक्तं कुंकुमाक्तं सुडोरकम्।" (अनन्तव्रतकथा)

डोरडा (सं० स्त्री०) डोरमिव डयते डी-ड गौरा० ङीष्। बृहती, बरहंटा।

डोरा (हिं० पु०) १ सूत्र तागा, धागा। २ धारी, लकीर। ३ आंखोंकी बहुत सूक्ष्म लाल नस। जब मनुष्य नशेकी उमंगमें होता अथवा सो कर उठता है तो ये नसें दीख पड़ती हैं। ४ तलवारकी धार। ५ घी निकालने तथा कड़ाहमें दूध आदि चलानेकी करछी। ६ स्नेह-सूत्र, प्रेमका बन्धन। ७ अनुसन्धानसूत्र, सुराग। ८ काजल या सुरमेकी रेखा। ९ नृत्यमें कण्ठकी गति। १० पोस्ते आदिका ढोंढ़, डोडा।

डोरिया (हिं० पु०) १ एक प्रकारका सूती कपड़ा। इस तरहके कपड़ेमें मोटे सूतकी लम्बी धारियां बनी रहती हैं। २ हरे पैरवाला एक प्रकारका बगला। ज्यों ज्यों ऋतु बदलती जाती है त्यों त्यों इसका रंग भी बदलता जाता है। ३ एक नीच जाति। पूर्व समय यह जाति राजाओंके यहां शिकारी कुत्तोंकी रक्षाके लिए नियुक्त की जाती थी। ये कुत्तोंको शिकार पर सधाते थे।

डोरियाना (हिं० क्रि०) बन्धन लगा कर पशुओंको ले जाना, पशुओंको रस्सीमें बांध कर ले चलना।

डोरिहार (हिं० पु०) पटवा, वह जो रेशम या सूतमें गहने गूथता हो।

डोरिहार—एक प्रकारके गोंव योगी। ये डोरी अर्थात् कार्पाससूत्रके वस्त्र पहनते हैं इसलिए ये डोरिहार कहलाते हैं।

डोरी (हिं० स्त्री०) १ रज्जु, रस्सी। २ तागा, सूता। ३ पाश, बन्धन, बांधनेकी डोरी। ४ कड़ाहमेंका दूध और चाशनी आदि चलानेका डांडीदार कटोरा।

डोल (हिं० पु०) १ कुएंसेमे पानी खींचनेका लोहे या पीतल बरतन। २ झूला, पालना, हिंडोला। ३ शिविका, पालकी, डोली। (स्त्री०) ४ एक प्रकारकी काली मट्टी जो बहुत उपजाऊ होती है।

डोल गुजरातके काठियावाड़के अन्तर्गत गोहेलवाड़का एक छोटा राज्य। यहांका राजस्व १५००) रु० है। जिनमेंसे ३३७) बरोदाको और ५८) जूनागढ़को देने पड़ते हैं।

डोलक (सं० पु०) प्राचीन कालका एक बाजा जिसमें ताल दिया जाता है।

डोलची (हिं० स्त्री०) छोटा डोल।

डोलडाल (हिं० पु०) १ घूमना फिरना। २ टट्टी जाना।

डोलना (हिं० क्रि०) १ गतिमें होना, हिलाना। २ टहलना, चलना, घूमना। ३ दूर होना, चला जाना, हटना। ४ दृढ़ न रहना, विचलित होना।

डोलरवा—गुजरातके दक्षिण काठियावाड़का एक छोटा राज्य। इसमें केवल एक ग्राम लगता है। राजस्व २२००) रु० है जिसमें १०३) बरोदाको और २३) जूनागढ़को कर स्वरूप देने पड़ते हैं।

डोला (हिं० पु०) १ शिविका, पालकी, डोली। २ झूलेमें दिये जानेका झोंका, पेंग।

डोलाना (हिं० क्रि०) १ गतिमें करना, हिलाना, चलाना। २ पृथक् करना, दूर करना, हटाना।

डोलायन्त्र (हिं० पु०) दोलायन्त्र देखो।

डोली (हिं० स्त्री०) शिविका, पालकी।

डोली करना (हिं० क्रि०) टालना, हटाना।

डोगू (हिं॰ स्त्री॰) १ हिमालयके कांगड़ा, नेपाल, सिक्किम आदि प्रदेशोंमें बोलनेवाली हिन्दी भेद व बोली। इसका दूसरा नाम पहाड़ी और जुमली भी है। २ पूर्वीय बङ्गाल आसाम और भूटानसे मैं जार करना तथमें आये जानेवाला एक प्रकारका बाँस। यह चोंगी और छाते बनानेके काममें विशेषकर आती है।

डोंडो (हि॰ स्त्री॰) १ डुगडुगिया, डिंडोरा। २ घोषणा मुनादी।

डोर (हि॰ पु॰) खेतोंमें लगनेवाली एक प्रकारकी घास।

डोया (हि॰ पु॰) काठका चमचा।

डौल (हि॰ पु॰) १ मानचित्र रूप, ढाँचा, ठाट। २ रचना प्रकार, ढब शैली। ३ भाँति, प्रकार, किस्म। ४ उपाय, तदबीर। ५ लक्षण, आयोजन रंग ढंग, सामान। (स्त्री॰) ६ खेतोंकी मेंड़, डाँड़।

डौलडाल (हि॰ पु॰) युक्ति, प्रयत्न, उपाय।

डौलदार (हि॰ वि॰) सुन्दर, खूबसूरत।

डौवर (हि॰ पु॰) एक प्रकारका पक्षी। इसका पर, छाती और पेट सफेद, दुम काली और चोंच लाल होती है।

ड्योढ़ा (हि॰ वि॰) १ आधा और अधिक डेढ़गुना। (पु॰) २ सङ्कीर्ण पथ, तंग रास्ता। ३ गीतका ऊँचा स्वर। ४ डेढ़गुनेका पहाड़ा।

ड्योढ़ी (हि॰ स्त्री॰) १ फाटक, दरवाजा, चौखट। २ दरवाजेमें प्रवेश करते समय सबसे पहले पड़नेवाला कमरा पौरी।

ड्योढ़ीदार (हि॰ पु॰) ड्योढ़ीवान देखो।

ड्योढ़ीवान (हि॰ पु॰) द्वारपाल, दरबान।

ड्राइंग (अं॰ पु॰) कागजोंमें चित्र या आकृति बनानेकी विद्या।

ड्राइवर (अं॰ पु॰) वह जो गाड़ी चलाता हो।

ड्राई प्रिंटिंग (अं॰ स्त्री॰) बिना भिगोए हुए छपाई। इस प्रकारकी छपाईसे कागजकी चमक ज्योंकी त्यों रह जाती है और छपाई भी साफ होती है।

ड्राफ्टसमैन (अं॰ पु॰) वह जो खूब मानचित्र प्रस्तुत करता हो नकशा बनानेवाला।

ड्राम (अं॰ पु॰) तीन माशेके बराबर एक अंग्रेजी मान। इससे पानी आदि द्रवपदार्थ मापा जाता है।

ड्रिल (अं॰ स्त्री॰) कवायद।

ड्रेक—कलकत्तेके एक अंग्रेज शासनकर्ता। जिस समय (१७५६ ई॰में) सिराजने कलकत्ते पर आक्रमण किया था उस समय ये ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी ओरसे कलकत्तेके शासनकर्ताके पद पर नियुक्त थे।

ड्रेस करना (हि॰ क्रि॰) मरहम पट्टी करना।

ड्रेगून (अं॰ पु॰) सवार, सिपाही।

ढ

ढ—संस्कृत और हिन्दीवर्णमालाका चौदहवाँ व्यञ्जन, टवर्गका चौथा वर्ण। इसका उच्चारणस्थान मूर्द्धा और उच्चारणकाल अर्द्धमात्रा है। इसके उच्चारणमें आभ्यन्तर प्रयत्न है—जिह्वामध्य द्वारा मूर्द्धाका स्पर्श। बाह्य प्रयत्न संवार, नाद, घोष और महाप्राण।

मातृकान्यासमें इसका दक्षिण पदाङ्गुलिके मूलमें न्यास होता है।

इसकी लिखन-प्रणाली इस प्रकार है—'ढ' इस वर्णमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर नित्य विराजते हैं। (वर्णोद्धारतन्त्र)

वर्णाभिधानमें इसके वाचक शब्द इस प्रकार लिखे हैं—ढक्का, निर्गुण, धूर्त, ढक्केश, धनदेश्वर, अर्द्धनारीश्वर, तोय, ईश्वरी, विघ्नेश, हस्तपादाङ्गुलीमूल, सिद्धिदायक, विनायक, प्रकाश, विवेश, कर्णि, निर्गुण, निर्वंश, अग्नि, विशेष, पाणिनी, तद्कारिणी, ओष्ठपुच्छक, पिनाकधृक्, लगाम्बा, विद्याख्या, श्री, मन और रति। (वर्णागम)

इस वर्णकी अधिष्ठात्री देवी परमाराध्या पद्मकुण्डली, पञ्चदेवात्मक, पञ्चप्राणमय, त्रिगुण और आत्मादि सकल तत्त्वोंसे संयुक्त तथा विद्युल्लताकार है। (कामधेनुत०) इसका ध्यान कर इस अक्षरको दस बार जपनेसे साधक

ढहाना (हिं० क्रि०) ध्वस्त करना, गिराना।

ढाँक (हिं० पु०) कुश्तीका एक पेच।

ढाँकना (हिं० क्रि०) १ छिपाना, ओटमें करना। २ किसी वस्तुको इस प्रकार फैलाना जिससे उसके नीचेकी वस्तु छिप जाय।

ढाँचा (हिं० पु०) १ किसी रचनाकी प्रारम्भिक अवस्था, ठाट, ढड्‌ढर, डौल। २ पंजर, ठटरी। ३ रचना प्रकार, बनावट, गढ़न। ४ प्रकार, भाँति, तरह। ५ भिन्न भिन्न रूपोंसे एक दूसरेके साथ इस प्रकार जोड़े हुए लकड़ी आदिके बंधे या छड़ जिससे उनके बीचमें कोई वस्तु जमाई या जड़ी जा सके। ६ चार लकड़ियोंका बना हुआ खड़ा चौखट। इनमें जुलाहे नचनी लटकाते हैं।

ढाँपना (हिं० क्रि०) ढाँकना देखो।

ढाँस (हिं० स्त्री०) सूखी खाँसी आने पर गलेमेंका शब्द।

ढाँसना (हिं० क्रि०) सूखी खाँसी खाँसना।

ढाई (हिं० वि०) १ दोसे आधा अधिक। (स्त्री०) २ कौड़ियोंसे खेले जानेका लड़कोंका एक खेल। ३ इस खेलमें रखी जानेकी कौड़ी।

ढाक (हिं० पु०) १ पलाशका पेड़। २ वह बड़ा ढोल जो लड़ाईमें बजाया जाता है।

ढाका—१ कमिश्नरके अधीन पूर्व बङ्गालका एक विभाग। यह अक्षा० २१° ४८' से २५° २६' उ० और देशा० ८८° १८' से ९१° १६' पू०में अवस्थित है। इसके उत्तरमें गारो पहाड़, पूर्वमें सुरमा, त्रिपुरा और मेघना, दक्षिणमें बङ्गोपसागर तथा पश्चिममें खुलना, यशोर, पावना, बगुड़ा, मयमनसिंह और रङ्गपुर जिला है। लोकसंख्या प्रायः १०७८३९८८ और क्षेत्रफल १५९३७ है। अधिवासियोंमें अधिकांश मुसलमान हैं। इनके सिवा यहाँ हिन्दू, ईसाई और बौद्ध भी रहते हैं। इस उपविभागमें १७ शहर और २६९२८ ग्राम लगते हैं, जिनमेंसे ढाका और नारायणगञ्ज सबसे बड़े हैं। ढाका, मैमनसिंह, फरिदपुर और बाकरगञ्ज नामके चार जिला इस उपविभागके अन्तर्गत हैं। ब्रह्मपुत्र, पद्मा और मेघना यही तीन नदियाँ इस विभागमें जल देती हैं। पर इनका जल सुसङ्ग पहाड़ी तक नहीं पहुँच सकता। प्रसिद्ध 'मधुपुर जङ्गल' नामक भूभाग कुछ ऊँचा है। यह भूभाग मैमनसिंह और ढाका जिलेमें ले कर ढाका शहर तक विस्तृत है। वर्षा यद्यपि इस विभागमें कम होती है तो भी इस विभागको आज तक दुर्भिक्षका सामना न करना पड़ा है, कारण यहाकी जमीन बहुत ही उर्वरा है। विक्रमपुर और सोनारगाँवसे प्राचीन अट्टालिकाओंके भग्नावशेष देखे जाते हैं। कहते हैं, कि पहले यहाँ सेनवंश तथा मुसलमान राजाओंकी राजधानी थी।

२ पूर्व बङ्गालका एक जिला। यह अक्षा० २३° १४' से २४° २० उ० और देशा० ८९° ४५' से ९०° ५९' पू०में अवस्थित है। क्षेत्रफल २७८२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २६४९५२२ है। इसके उत्तरमें मैमनसिंह जिला, पूर्वमें त्रिपुरा, दक्षिण पश्चिममें बाकरगञ्ज, फरिदपुर एवं पश्चिममें पावना जिलेका कुछ अंश है। इसकी सब दिशायें नदीसे सीमाबद्ध हैं, पूर्वमें मेघना दक्षिण-पश्चिममें पद्मा और पश्चिममें यमुना नदी नामक ब्रह्मपुत्र नदीकी प्रधान शाखा अवस्थित है। ढाका नगर इस जिलेका सदर है।

ढाका जिलेकी भूमि समतल है। धलेश्वरी इसी समतलमें पूर्वसे पश्चिमकी ओर प्रवाहित हो कर इसको दो भागोंमें विभक्त करती है। इन दोनों भागोंकी प्रकृतिमें बहुतसे विभेद हैं। उत्तर भाग फिर लाखा नदीसे दो भागोंमें विभक्त है। इन दोनों भागोंके पश्चिम दिशामें ढाका नगर अवस्थित है। इसकी भूमि बाढ़के जलकी अपेक्षा ऊँची है। स्थान स्थानमें कीचड़ है और उसके ऊपर गली हुई उद्भिज वस्तु भी देखी जाती हैं। लाखा नदीके दोनों किनारे ऊँचे तथा गभीर जलपूर्ण हैं। स्थान स्थानमें नदीतीरका दृश्य अत्यन्त मनोरम मालूम पड़ता है। ढाकासे प्रायः २० मील उत्तर मधुपुर जङ्गलमें छोटे छोटे पहाड़ अर्थात् टीले देखे जाते हैं। इन टीलोंकी ऊँचाई कहीं भी ३०।४० फुटसे अधिक नहीं है और ये प्रायः तृणगुल्म वा जङ्गलादिसे ढके हुए हैं। इस भूमिखण्डका अधिकांश अनुर्वर है तथा खूँखार, जंगली जन्तुसे भरा अरण्यमय है। सम्प्रति इस विभागमें कृषि विस्तारकी चेष्टा हो रही है। नगरके निकट झील और नहरोंके चारो तरफकी भूमि, धान, सरसों और तिल आदि पैदा करनेके लिए उपयोगी है। ढाकाके पूर्वभागसे

मि कर बंशीखरी और बालू नदीके संगमस्थान तकको भूमि पङ्कमय और उर्वरा है। पूर्वोत्तर खण्ड लाखा और मेघना नदीका मध्यवर्ती तथा अधिकांश पङ्कमय है। अतएव पश्चिमस्थ खण्डकी अपेक्षा समस्त कृषिकार्यकी अवस्था बहुत अच्छी है। वर्षामें अनेक स्थान बाढ़से डूब जाते हैं। बंशीखरी नदीका दक्षिणस्थ विभाग भी जिलेमें सबसे अधिक उर्वरा है। यह विस्तीर्ण समतल भूभाग वर्षाकालमें ६ फुटसे १४ फुट पर्यन्त बाढ़के जल से डूब जाता है। इस समय यह स्थान एक प्रशस्त झीलसा दिखाई देता है। वर्षाकालमें समस्त भूभाग हराभरा मालूम पड़ता है। बीच बीचमें कृत्रिम उच्च भूमि पर ग्राम बसे हुए हैं। अधिवासिगण छोटे छोटे नावोंके द्वारा इन खेतोंके मध्य हो कर इधर उधर जाते आते हैं। अभी यहां स्थान स्थान पर पाट सन आदिकी खेती होती है।

इस जिलेमें नदियोंकी संख्या अधिक है। वर्ष भर जलपथ हो कर ही लोग अधिकांश स्थानमें जाते आते हैं। पद्मा मेघना और यमुना इन तीन नदियोंके अति-रिक्त आरियालखाँ कीर्त्तिनाशा, बंशीखरी, बूढ़ीगङ्गा, लाखा, सिदोखाली और गाजीखाली नामक ७ नदियों में भी बड़ी बड़ी नावें आ जा सकती हैं। इनका अधिकांश महापद्मा या ब्रह्मपुत्रकी शाखाएं अथवा प्राचीन परित्यक्त नदीका गर्भ है। आज भी जिलेके दक्षिणखण्डमें समस्त नदियोंका गर्भ बाढ़के समय परिवर्त्तित हो जाता है। अपेक्षाकृत छोटी नदियोंमें ढिल्लाभारी, बांसी, तुराग टुंगी, बालू और ब्रह्मपुत्रके प्राचीन स्रोत प्रधान हैं। इन नदियोंमें ज्वारका प्रभाव लक्षित होता है। ढाकाके निकटस्थ बूढ़ीगङ्गाकी ज्वार २ फुट पर्यन्त ऊपर उठती है। अनेक स्थानोंमें नदीके तट भागमें विस्तीर्ण झील बन गई है। एक नदीसे दूसरी नदीमें जानेके लिये अनेक नहरें खोदी गई हैं। जिले की सभी नदियां उत्तर पश्चिमसे दक्षिण-पूर्वकी ओर बहती हुई प्रान्तभागमें गङ्गा और मेघनाके सङ्गम स्थानके निकट उससे जा मिल गई हैं।

कुछ जङ्गल और जलजी उद्भिदको छोड़ कर यहां विविध प्रकारके फल पुष्पादि उत्पन्न नहीं होते। जङ्गलोंमें काष्ठादिमें भी सामान्य थोड़ीसा होती है। चरागाह भी अधिक नहीं है। नदियोंमें प्रति वर्ष बहुतसी मछलियां पकड़ी जाती हैं।

ढाका बहुत दिनों तक मुसलमानोंकी राजधानी रहनेके कारण अन्यान्य स्थानोंकी अपेक्षा इस समय यहां मुसलमान अधिवासियोंकी संख्या बहुत ज्यादा है। लोकसंख्या प्रायः २६८८५२२ है।

अच्छा जिलेकी आबहवा और खेती आदिकी सुविधा होने तथा पाटका व्यवसाय खूब जमनेसे यहांकी जन संख्या क्रमशः बढ़ती जाती है। यहांके मुसलमान प्रायः अधिकांश शेख सम्प्रदायके हैं। सैयद मुगल और पठानों की संख्या उनकी अपेक्षा बहुत थोड़ी है। हिन्दुओंमें ब्राह्मण कायस्थ वैद्य, बढ़ई अर्थात् सूत्रधर, तम्बोली, बनिया, ग्वाला, धोबी नापित कुम्हार, लोहार, मल्लाह तांती शूद्री इत्यादि प्रधान हैं। चण्डाल और कोच जाति भी हिन्दू धर्म स्वीकार करती है। इनकी संख्या भी थोड़ी नहीं है। जातिभ्रष्ट अनेक हिन्दू वैष्णव सम्प्रदायके कहे जाते हैं। इस सम्प्रदायकी लोकसंख्या कम नहीं है। अधिकांश नीच जातिके लोग पहले मुसलमान अथवा ईसाई धर्ममें दीक्षित हुये थे। अब शिष्ट लोग इनको निकृष्ट वैष्णव बतलाते हैं। ढाकाके ईसाई सम्प्रदायकी उत्पत्ति भिन्न प्रकारकी है। ये लोग पोर्त्तुगीज, आर्मेनीय, ग्रीक यूरोपीय अथवा देशीय ईसाइयोंके वंशधर हैं। फिरङ्गी अर्थात् पोर्त्तुगीज ईसाई देशियोंके मिश्रणसे उत्पन्न हैं। ईसाई जिलेके अनेक स्थानोंमें छोटे छोटे दल बांध कर निवास करते हैं तथा कृषि आदिके द्वारा जीविकानिर्वाह करते हैं। ये लोग गोआ नगरके प्रधान पादरी साहबको अपना प्रधान गुरु मानते हैं।

निम्नलिखित सात नगरोंमें ५ सहस्रसे अधिक मनुष्य निवास करते हैं। यथा १ ढाका, २ नारायणगञ्ज, मदनगञ्ज ३ माणिकगञ्ज, ४ परवजिरा, ५ मोषमङ्ग, ६ कमारगांव तथा ७ नरिसा ये ही सात नगर हैं। इनमेंसे प्रथमोक्त तीन नगरोंमें म्युनिसपालिटी है। ढाका नगरमें जिलेका सदर है जो भाखा नदीके परस्पर विपरीत तीर पर अवस्थित है। नारायणगञ्ज और मदन

गञ्ज वाणिज्यका प्रधान अड्डा है। शहरमें वास करना अधिवासियोंको पसन्द नहीं पड़ता कारण शिल्पादिका कोई कार्यालय नहीं है। उपरोक्त नगरोंमें कितनेको छोड़ कर निम्नलिखित स्थान भी उल्लेखयोग्य है। यथा सुवर्णग्राम, यहीं पूर्व बङ्गालको सर्व प्रथम मुसलमानकी राजधानी थी, फिरङ्गीबाजार, पोर्तुगीजका आदि उप निवेश, विक्रमपुर, साभार और दुरदुरिया। शेषोक्त दो स्थानोंमें कितने भग्न प्रासादादि देखे जाते हैं, लोग उनको भुंइयां और पाल राजाओंकी कीर्ति बतलाते हैं। इसके सिवा जिले के अनेक स्थानोंमें प्राचीन हिन्दू और मुसलमान राजाओंकी अनेक कीर्तियां विद्यमान हैं। सम्प्रति कृषिकार्यको विशेष उन्नति होने एवं कृषिजात द्रव्योंका मूल्य बढ़ जानेसे कृषकोंकी अवस्था बहुत अच्छी हो गई है। तिल, सरसों, कुसुमफूल सन और पाट आदिकी खेती द्वारा अनेक कृषकोंकी अवस्था सुधर गई है। कहना नहीं पड़ेगा कि निर्दिष्ट वेतन भोगी कर्मचारी वा करप्राही तालुकदारोंकी इस उन्नतिसे कोई सम्बन्ध नहीं है।

कृषि—बङ्गालके अन्यान्य स्थानोंकी नाईं यहां भी चावल ही लोगोंका प्रधान खाद्य है। चार तरहके धान विशेषकर पैदा होते हैं। १ आमन वा हैमन्तिक, २ आउश वा आशु धान, ३ बोरो धान तथा ४ जङ्गोधान अर्थात् दलदल आदिमें आपसे आप होनेवाला धान। इन-मेंसे हैमन्तिक वा आमनधान ही प्रधान है। ढाकामें जितना धान उत्पन्न होता उतनेसे इस जिलेका काम नहीं चलता है। दूसरे दूसरे स्थानोंसे चावलकी आमदनी होती है। उत्पन्न द्रव्योंमें ज्वार, बाजरा, जुन्हरी, अनेक तरहके उर्द, तिल, सरसों, रूई, सन, पटसन, कुसुम फूल, जख, पान, सुपारी और नारियल प्रभृति प्रधान हैं। फिलहाल रूईकी खेती बहुत कम गई है, पहले यहा की रूई बहुत प्रसिद्ध थी, इसमें संदेह नहीं। उसी रूईसे संसारविख्यात ढाकेकी साड़ी बनती थी। इस समय तिल, सरसों, सन, पटसन, कुसुमफूल इत्यादि यहांसे दूसरे स्थानोंमें भेजे जाते हैं। धानका खेत अधिकांश बाढ के जलसे प्लावित हो जाता है। इसलिये उनमें सारको आवश्यकता नहीं होती। रब्बीके खेतोंमें बहुत खाद देनी पड़ती है। समस्त जिलेमें ही अंशमें हल चलता है। अच्छे धानके खेतोंमें धानके कट जाने पर एक दूसरी फसल उत्पन्न होती है।

ढाका जिले में अतिवृष्टि, अनावृष्टि, बाढ़ प्रभृति दैव-दुर्विपाक अधिक नहीं होते हैं। दैवदुर्घटनासे धानको हानि बिलकुल नहीं होती। १७७७-७८ ई०में भयानक बाढ़ और उसके बाद भीषण दुर्भिक्ष हुआ था। १८६५ और १८७० ई०में अनावृष्टि होनेके कारण अन्न मंहगा हो गया था। सम्प्रति कई एक वर्षोंसे विक्रमपुरमें दुर्भिक्षकी बातें प्रायः सुनी जाती हैं। अभी रेलपथ और जलपथसे अन्यान्य जिलोंके साथ संयोग हो जानेके कारण अन्तर्वाणिज्यकी वृद्धि हो रही है। तथा घोर दुर्भिक्षको आशङ्का नष्ट हो रही है। ढाका जिलेमें बहुत-सी बड़ी बड़ी नदियां रहनेके कारण साल भर प्रायः सभी स्थानोंमें जलपथसे जाने आनेकी सुविधा रहती है। ऐसा कोई स्थान नहीं है जो बड़ी नदीसे दूर हो। विशेष कर जाना आना और वाणिज्य व्यापारादि अधिकांश जलपथसे ही सम्पन्न होता है।

ढाका नगरके मध्य हो कर त्रिपुरा और चट्टग्राम तक जो पक्की सड़क गई है, वही सबसे प्रधान है। ढाकासे मैमनसिंह और नारायणगञ्ज तक एक दूसरी सड़क गई है, जिनमेंसे नारायणगञ्जकी सड़क हो कर बहुत वाणिज्य होता है। ढाकासे नारायणगञ्ज और मैमन सिंह तक रेललाइन गई है। शिल्पद्रव्योंमें यहांका सूती कपड़ा, शङ्ख और सोने तथा चांदीके बने हुए तरह तरहके पदार्थ, मट्टीके बरतन और कपड़ेके ऊपर पालिश करनेका काम प्रधान है। पहले ढाकाके कपास-के सूतकी बनी हुई अत्यन्त महीन तरह तरहकी मल-मल वा मस्लिन जगत्‌में विख्यात थी। अब भी यूरोपमें अनेक उत्कृष्ट उत्कृष्ट मशीनोंके रहते हुए भी ऐसी आश्चर्योत्पादक मलमल नहीं बनती। अभी उसकी खपत नहीं रहनेके कारण ढाकेका पूर्व गौरव जाता रहा। जो उक्त वस्त्रके लिये सूत कातते तथा जो तांती उस भुवनविख्यात मलमलको बुनते थे, वे अब एक भी नहीं है। जिस कपाससे उसका सूता बनता था, बहु-तोंका कहना है कि उसका भी लोप हो गया है। कहा

जाता है, कि मसलमलके लिये बनेहोका जाता हुआ आध छटांक सूतीका मूल्य ३०) रु०से कम नहीं था। आज भी दो एक तांती कुछ शौकीन व्यक्तियोंके लिये पहलीका मसलमल थोड़ा बहुत बनाते हैं। अधिकांश तांती तरह तरहकी देशी वस्त्र बुनते हैं। इनमेंसे अधिक महाजनोंके निकट ऋणग्रस्त हैं अतः महाजन उन्हें जैसे कपड़े दे कर रखते हैं। सोने और चांदीके अलङ्कार बनानेवाले तथा शङ्खशिल्पको अवस्था वैसी नहीं है। वे व्यवसायमात्रसे अपने अपने कर्मशालोंमें काम करते हैं और अपने द्रव्यको इच्छानुसार बना तैयार किया करते हैं। इसके सिवा यहां भिन्न भिन्न प्रकारके वाद्ययन्त्र, सोने चांदीका फीता, बाघो टोलके कई तरहके द्रव्य, चित्र फूलदार साड़ी आदि बनती हैं।

ढाका एक बड़ा वाणिज्यका केन्द्र है। अतएव जो कुछ कि इसका अधिकांश वाणिज्य होता है। अभी रेलपथसे भी इसका बहुत वाणिज्य चल रहा है। पहले यूरोपीय ग्रहको मुसलमान मारवाड़ी आदि जातिके वणिक् तथा देशी वणिक यहां कपड़ेका कारबार बहुत करते थे। अभी उस व्यवसायका ह्रास हो गया है। नारायणगञ्ज और उसके निकट मदनगञ्ज नामक ग्रामोंमें नगर है। यहां वाणिज्य अधिक होता है। सुन्योगके प्रति वर्ष तीन सप्ताह तक मेला लगता है। उस मेलेमें भारतवर्षके नाना स्थानोंसे, यहां तक कि दिल्ली, ग्वालियर, पाराकान आदि दूर दूर देशोंसे भी वणिक् आते हैं।

इस जिलेमें विद्याकी उन्नतिके लिये विशेष चेष्टा की गई है। ढाका शहर छोड़ कर अन्यान्य स्थानोंमें भी पाठशाले स्थापित हुए हैं और मासिक तथा साप्ताहिक पत्र निकलते हैं। पाठशाले आदिमें सबसे पहले सहायता मिलनेकी प्रथा प्रचलित हो जानेसे छात्रसंख्या बहुत बढ़ रही है। भाइयोंको स्कूल भी यहां बहुतसे हैं। ढाका नगरमें एक कालेज है। लड़कियोंको पढ़ानेके लिये यहां कई एक कन्या-पाठशालाएं हैं। मुसलमानोंके लिये मदरसा है।

शासनकार्यको सुविधाके लिये यह जिला ढाका, नारायणगञ्ज, माणिकगञ्ज और मुन्शीगञ्ज इन चार उपविभागोंमें और फिर ये भी कुल ११ थानोंमें विभक्त हैं।

जलवायु। जिलेके चारों ओर बड़ी बड़ी नदियोंके रहनेसे ग्रीष्मकालमें यहांको जलवायु कुछ शीतल रहती है। वैशाखके अन्तसे आश्विन मास तक यहां वृष्टि होती रहती है। इस समय चारों ओरकी भूमि जलमग्न रहती है। वर्षाकालका अन्त भाग अस्वास्थ्यकर रहता है। वार्षिक वृष्टिपात प्रायः ७४ इञ्च और तापांश प्रायः ७८·८ फा० होता है। भूमिकम्प भी प्रायः हुआ करता है। १७६२ और १७७५ ई०की मई मासमें भीषण भूमिकम्प हुआ था।

अभी रोगोंमें ज्वर, गलगण्ड, आमाशय, अतिसार वात, आंखका दुःख होना इत्यादि साधारण हैं। प्लेग और वसन्त रोगसे भी कभी कभी बहुत मनुष्योंकी मृत्यु होती है। छोटे छोटे ग्रामवासियोंको स्वास्थ्यरक्षाकी ओर विशेष भी ध्यान नहीं है। नवाब अबदुलगनिने ढाका नगरके स्वास्थ्यकी उन्नतिके लिये धर्मशालाएं और स्वास्थ्यसमिति स्थापन तथा परिष्कृत जल आनेका अच्छा बन्दोबस्त कर अधिवासियोंका बहुत उपकार कर गये हैं। दातव्य चिकित्सालयोंमें एक पागलागार, मिटफोर्ड अस्पताल, अबदुलगनिप्रतिष्ठित एक सदावर्त और १० दूसरे दूसरे अस्पताल हैं।

इतिहास। अभी बङ्गाल कहनेसे जिस तरह राढ़ वरेन्द्र, वङ्ग, बागड़ी प्रभृति स्थानोंका बोध होता है, पहले वैसा नहीं था। अभी जिसको ढाका विभाग कहते हैं, उसीका अधिकांश पहले वङ्ग नामसे प्रसिद्ध था। उस समय लोग जिसे पूर्व बङ्गाल कहते हैं, महाभारत और पौराणिक समयसे ले कर सेनराजाओंके राजत्वकाल तक उसीको केवल वङ्ग कहते थे। वर्तमान ढाका जिलेका अधिकांश और फरीदपुर जिलेका कुछ अंश सेनराजाओंके समयमें विक्रमपुरनामसे मशहूर था। सेनराज विश्वरूपके ताम्रशासन द्वारा यह प्रमाणित होता है।*

ढाका नाम कबसे प्रचलित है, उसका स्थिर करना कठिन है। महाराज समुद्रगुप्तके इलाहाबादके शिलालेखमें लिखा है, कि उन्होंने डवाक और समतटको जय किया था। प्रत्नतत्त्वविद् समुद्रगुप्तवर्णित डवाक

* Journal of the Asiatic Society of Bengal for 1895.

पहले समतट नामसे प्रसिद्ध था। दोनों नामके आस पास रहनेसे वर्त्तमान ढाका ही पहले डवाक था, ऐसा अनुमान किया जाता है।

प्रवाद है, कि आदिशूर प्रभृतिके बहुत पहले यहां विक्रमादित्य नामक एक राजा राज्य करते थे उन्हीं के नामानुसार विक्रमपुरका नामकरण हुआ है।

भविष्य-ब्रह्मखण्डमें लिखा है—"यहां ढक्कावाद्य प्रिया महाकाली वास करती हैं, इसीसे देशीय मनुष्य इस स्थानको ढक्का (ढाका) कहा करते हैं। इसका दूसरा नाम जाङ्गीरपत्तन (१) (जहांगीराबाद) है।

ढाका जिलेका प्राचीन इतिहास अन्धकारमय है। महाभारतके समय यहां क्षत्रिय-वीरगण राज्य करते थे। व। देखो। बौद्धप्राधान्यके समय गौड़के दूसरे अंशमें बौद्धधर्मको सूचना होने पर भी यहां किसी समय बौद्ध-धर्म प्रबल था, उसका कोई विशेष प्रमाण नहीं है। छठी शताब्दीमें काश्मीरराज बालादित्यने पूर्वसमुद्र तक जीत कर काश्मीरियोंके रहनेके लिये यहां कालम्बा नामक एक जनपद स्थापन किया (२)।

८वीं शताब्दीमें गौड़राज्य पालवंशीय-राजाओंके अधीन होने पर यहां भी उनके वंशीय कोई कोई स्वाधीनभावसे राज्य करते थे। दक्षिण प्रदेशके तिरुमलय शिलालेखमें लिखा है, कि जब (१०वीं शताब्दीमें) महाराज राजेन्द्रचोलने वङ्गराज्य पर आक्रमण किया तब यहां गोविन्दचन्द्र नामक एक राजा राज्य करते थे। गौड़ शब्द देखो।

पाश्चात्यवैदिक-कुलपञ्जिकाके मतसे १००१ शकमें महाराज श्यामलवर्मा (पूर्व) वङ्गमें राज्य करते थे। उत्कलके विख्यात भुवनेश्वरमें अनन्तवासुदेवके मन्दिरमें भट्टभवदेवको एक प्रशस्ति है, जिसमें वङ्गाधिप हरिवर्मदेवका परिचय मिलता है। शायद ये १२वीं शताब्दीके किसी समय विद्यमान थे। सेनवंशीय राजाओंके समयमें दक्षिणराढ़, वङ्ग और वरेन्द्र इन्हीं तीन स्थानोंमें उन लोगोंकी राजधानी थी। सेन-राजवंश देखो। महम्मद-इ-बख्तियारके ११९८ ई०में नदिया अधिकार करने पर महाराज लक्ष्मणसेनके पुत्र केशवसेन गौड़राज्य परित्याग कर विक्रमपुर भाग आये थे। उस समय यहां लक्ष्मणसेनके दूसरे पुत्र विश्वरूपसेन शासनकर्त्ता स्वरूप थे। ये भी मुसलमानोंके साथ युद्ध कर स्वाधीनभावसे राज्य करने लगे। उनके समयमें पूर्व वङ्गाल और समतट स्वाधीन था, मुसलमान उसे जीत न सके थे। उनके बाद सदासेनने (?) कुछ काल तक राज्य किया, इस समय सुवर्णग्राममें सेनराजाओंकी राजधानी थी। तदनन्तर प्रबल पराक्रान्त सेनराज दनौजामाधवने बहुत दिनों तक राज्य किया। पीछे दिल्ली सम्राट् बलबन तुघ्रिलखांको दमन करनेके लिये गौड़राज्य पहुंचे। महाराज दनौजामाधवने जलपथसे सम्राट्को यथेष्ट सहायता की थी। मालूम पड़ता है कि उसी कारण लक्ष्मणावतीके सूबादार उन पर विरक्त हुए थे और जब बलबन लौट कर आया तब सुबादारोंने भी दनौजके ऊपर अत्याचार आरम्भ किया। राजा दनुज-मर्दनने गौड़ परित्याग किया और चन्द्रद्वीपमें आ कर राजधानी स्थापन की। इस समय वर्त्तमान ढाका जिलेका अधिकांश मुसलमानोंके अधिकारमें आया। सुवर्णग्राम देखो। वर्त्तमान फरीदपुर और बाखरगञ्ज ले कर चन्द्रद्वीप राज्य स्थापित हुआ। दनुज-मर्दनके वंशधरोंने बहुत समय तक चन्द्रद्वीपमें राज्य किया। चन्द्रद्वीप देखो। प्रायः १३३० ई०में जब ढाका जिला मुसलमानोंके हाथ आया, तब थोड़े समयके बाद ही वैद्यवंशीय बल्लाल नामक एक व्यक्तिने प्रबल हो कर विक्रमपुरका अधिकांश अधिकार किया और वहां कुछ काल तक स्वाधीनभावसे राज्य किया था। उनके आदेशसे उनके शिक्षक गोपालभट्टने १३०० शक अर्थात् १३७८ ई०में 'बल्लालचरित' नामकी पुस्तक बनाई।

(१) 'ब्रह्मपुत्रातटे वेदवर्षसाहस्रपर्यये।
स्थापितव्यन्न यवनैर्जाङ्गीरं पत्तनं महत्॥
तत्र देवी महाकाली ढक्कावाद्यप्रिया सदा।
गास्यन्ति पत्तनं ढक्कासहकं देशवासिनः॥"
(भ० ब्रह्मखण्ड १९ अ०)

(२) "यस्याद्यापि जयस्तम्भाः सन्ति ते पूर्ववारिधौ।
प्रभावांकेन बंकालां जित्वा येन व्यधीयत।
काश्मीरिकनिवासाय कालम्भ्याख्या जनाश्रयः॥"
(राजतर० ४।४०२)

उनके समयमें जो राजभवन और सरोवर बनाया गया वह अभी भग्नावशेष और बल्लालदीघी नामसे मशहूर है। प्रवाद—इस तरह है कि बल्लाल आदमशाह नामक एक मुसलमान फकीरके साथ युद्ध करने लगे। युद्धयात्राकालमें वे अपने परिवारवर्गसे इस तरह कह गये "युद्धमें यदि मेरी मृत्यु हो जायगी, तो मेरा साथी कबूतर उड़ कर यहाँ पहुँच जायगा और तब तुम लोग भी अग्निकुण्डमें कूद कर प्राणत्याग करना।" इतना कह कर वे रणक्षेत्र में गये और वहाँ बल्लालकी जय हुई। वे ज्यों ही एक सरोवरमें प्रवेश कर अपने रक्ताक्त कलेवरको साफ करने लगे त्यों ही असावधानता वश उनका कबूतर उड़ गया। इधर कबूतरको देख कर राजपरिवारवर्गने अग्निकुण्डमें कूद कर अपना अपना प्राणत्याग किया। जब बल्लाल लौट कर आये, तब वे उस घटनाको देख अत्यन्त शोकातुर हुए और उन्होंने भी उसी जलते हुए अग्निकुण्डमें कूद कर प्राण छोड़ा। उनका विस्तृत राज्य भोग करनेके लिये अब कोई न बचा। अतः बिना युद्धके मुसलमानोंके हाथ आया। किसीके मतानुसार उस समय भी भावाल और आमर प्रभृति स्थानोंमें हिन्दू जमींदारगण स्वाधीन भावसे राज्य करते थे। भावाल देखो।

१३३० ई०में महम्मद तुगलकने पूर्व बङ्गाल अपने अधिकारमें किया। इस समय बङ्गराज्य लखनौती, सातगांव और सोनारगांव इन तीन भागोंमें विभक्त हुआ। ढाका सोनारगांव विभागके अन्तर्गत था। १३३८ ई०में सोनारगांवके शासनकर्त्ता तातार बहरामखांकी मृत्यु होनेसे फकर-उद्दीन् सिंहासन पर बैठे और उन्होंने मुबारकशाह नामसे १० वर्षसे अधिक समय तक उक्त प्रदेशमें राज्य किया। १३५१ ई०में शमसुद्दीन इलियासशाह तथा उनके पुत्र सिकन्दरशाहकी अपरिमित चेष्टासे समस्त बङ्गदेश एक राज्यभुक्त तथा ढाकाके निकटवर्ती सोनारगांवमें राजधानी स्थापन की। सिकन्दरके पुत्र आजम शाहने दिल्लीकी अधीनता परित्याग की। राजा गणेशके शासनकालके समय यह प्रदेश त्रिपुरा, आसाम और आराकानके राजाओंसे कई बार उत्पीड़ित हुआ था। १४८२ ई०में महम्मदशाहने पुनः समस्त बङ्गालको अपने अधिकारमें कर लिया। इस वंशके शासनकालमें ढाका, फरीदपुर और बाकरगञ्जके चारों ओरके प्रदेश जलालाबाद और फतेयाबाद नामसे परिचित थे। १५३८ ई०में शेरशाहने बङ्गदेशपर शासन किया। उनके उत्तराधिकारी मुगलोंसे पराजित हुए। मुगल-सम्राट अकबर द्वारा अफगानोंके समाप्त होने पर उन्होंने उड़ीसा और ढाकामें आ कर आश्रय ग्रहण किया। १६०४ ई०में इनके एक सर्दार उसमान खांके निकट लूटा गया था। उन्होंने उक्त प्रदेशको १६१२ ई० तक अपने अधिकारमें रखा था। इस वर्ष पूर्व बङ्गके किसी स्थानमें मुगलोंके साथ युद्धमें वे मारे गये। उस समय इसलामखाँ बङ्गदेशके शासनकर्त्ता थे। इस युद्धके बाद उन्होंने राजमहलसे ढाकामें अपनी राजधानी स्थानान्तरित की। तबसे १६९८ ई० तक पर्त्तगीज और अराकानवासियोंसे ढाका कई बार उत्पीड़ित हुआ था। इस समय आसामवासी और मगोंने यथाक्रम ढाकाका उत्तर और दक्षिण भूभाग लूटा था। १६३९ ई०में सुलतान महम्मद सुजाने ढाका परित्याग कर पुनः राजमहलमें राजधानी स्थापन की। १६६० ई०में जोर सुलतान जब राजप्रतिनिधि नियुक्त हुए, तब राजधानी फिर ढाकामें लाई गई। मीरजुमलाके शासनकालमें ढाका सबसे अधिक उन्नतिशिखर पर पहुँच गया था। मग और आराकानको बाधा देनेके लिये उन्होंने नाना और लक्ष्मी नदीके पास पर बहुतसे दुर्ग निर्माण किये थे, जिनमेंसे हाजीगञ्ज और इदरकपुरके दुर्ग ही सबसे अधिक विख्यात हैं। इनके समयमें ढाकाके निकट बहुतसी सड़कें और पुल प्रस्तुत हुए। शाइस्ताखांके शासनकालमें इस नगरमें स्थापत्यविद्याकी बहुत उन्नति हुई थी। उन्होंने यहां बहुतसी मसजिदें बनाईं। इनके समयमें ईंटोंके घर बनानेके लिये एक नयी पद्धति आविष्कृत हुई जिसे शाइस्ताखानी कहते हैं। इस पद्धतिके दो एक घर अब भी ढाका नगरोंमें देखे जाते हैं।

शाइस्ताखांने ढाका शहर तथा निकटवर्ती स्थानको उत्तरकी ओर टङ्गी तक विस्तृत किया था। सम्राट औरङ्गजेबके आदेशसे उन्होंने कुछ दिनके लिये अंग्रेज वणिकोंके ढाकास्थित एजेण्टोंको नजरबन्द कर रखा था। जब औरङ्गजेब सम्राट हुए, तब बङ्गदेशका राजस्व बढ़ानेके लिये उन्होंने मुर्शिदकुलीखांको बङ्गदेशका

दीवान बना कर भेजा। इस समय कुमार आजिम-उशान सम्राट् के आदेशसे वङ्गदेशको निजामतमें नियुक्त थे। मुर्शिदने ढाका जा कर सम्राट् पौत्रको बहुतसी जागीर साम्राज्यके अन्तर्गत कर ली। इस पर आजिम-उशान अत्यन्त विरक्त हो कर मुर्शिदका प्राणनाश करनेके लिये षड़यन्त्रमें प्रवृत्त हुए। मुर्शिद अपने साहसमे षड़यन्त्र-कारियोंके हाथसे छुटकारा पा कर मुर्शिदाबादमें जा कर रहने लगे। यह सब हाल जान कर सम्राट्ने अपने पौत्रको विहार भेज दिया और मुर्शिदकुलोखाँको नाजिम बनाया। फरुखसियरके राजत्वकालमें वे प्रकृत नाजिम हो गये। इस तरह १७०४ ई०में ढाकासे राजधानी उठा दी गई। पूर्व प्रदेशके शासनका भार एक नायब अर्थात् अधीन नाजिमके ऊपर सौंपा गया। १७१७ ई०में मिर्जा लतीफउल्लाने त्रिपुरा राज्यको ढाका निजामतके अन्तर्गत किया। परवर्ती अधिकांश नायब ही अधीन कर्मचारी पर इसका भार सौंप कर मुर्शिदाबादमें जा बसे। ऐसा होनेसे अनेक कर्मचारी ढाका और निकटवर्ती स्थानोंके अधिवासियोंका सर्वस्व हरण कर आप धनी हो गये। १७६५ ई० तक ढाकावासियोंने इस तरहका अत्याचार सह्य किया। इस समय अंग्रेज कम्पनीने बङ्गालकी दीवानी पाई। तब इजरी और निजामत इन दो विभागोंमें ढाकाशासनका बन्दोबस्त हुआ। राजस्वसम्बन्धीय प्रथम विभागका कार्य मुर्शिदाबादके दीवान द्वारा चलाया जाता था। दीवानी और फौजदारी अभियोग आदि दूसरे विभागके अन्तर्गत थे। १७६८ ई०में दोनों विभागको देखभाल करनेके लिये एक कर्मचारी नियुक्त हुए। १७७२ ई०से यही कर्मचारी कलेक्टर कहलाते आ रहे हैं। इसी वर्ष एक दीवानी अदालत और १७७४ ई०में एक कौन्सिल स्थापित हुई। नायब राजस्व वसूल तथा दीवानी अदालतमें विचार करते थे। उक्त कौन्सिलमें इनके कार्यका प्रतिवाद किया जा सकता था। १७८१ ई०में कौन्सिल उठ गई और राजकीय कार्य आदि चलानेके लिये मजिष्ट्रेट, कलेक्टर जज प्रभृति नियुक्त हुए।

पूर्व समयके जागीरदारोंने ढाका विभागका ३ अंश अधिकार किया था। प्रधान जागीरको नवारा कहते थे। मग और आसामवासियोंके आक्रमणसे उपकूल प्रदेशकी रक्षा करनेके लिये नवाराको आय खर्च होती थी। नवारा भी फिर कई एक तालुकोंमें विभक्त था। मल्लाह प्रभृति अपनी तनख्वाहके बदले इस तालुककी आय भोग करते थे। इस तरह नवाब प्रधान सेनापति आदिका खर्च चलानेके लिये साकार अलि, आहसाम प्रभृति प्रदेश अवधारित किया था।

नवाब ढाकासे निम्नलिखित कर वसूल करते थे—

(१) पट्टा बदलनेके समय जमींन्दारोंसे एक प्रकारका कर।

(२) ईद तथा और दूसरे दूसरे मुख्य मुसलमान पर्वोंमें नवाबके निकट जितने उपहार भेजे जाते, उनका खर्च जुटानेके लिये एक प्रकारका कर।

(३) विभागीय राजस्वके ऊपर सैकड़े कर।

(४) ढाकासे राजधानी दूसरी जगह ले जानेमें नायब द्वारा गृहीत जमीनके ऊपर एक प्रकारका स्थायी कर।

(५) महाराष्ट्रीय चौथ।

निम्नलिखित विषयोंसे सायर लिया जाता था।

(१) नौकाप्रसूत (जितने जलयान ढाका बन्दरमें आते अथवा वहांसे दूसरी जगह जाते उनके ऊपर भी यह कर लगाया जाता था) (२) बजारमें बेचे जानेके द्रव्य (३) घास बेचना (४) जो बाजारमें बेचनेके लिये बाँस, पयाल आदि लाते थे। (५) जो युद्धसज्जा प्रस्तुत करते थे। (६) सिन्दूर प्रस्तुत। (७) पान बेचना। (८) माकसली आदि बेचना (९) कागज बेचना। (१०) नगरमें जो व्यवसाय करते थे। (११) दूकानदार इत्यादि। (१२) वानर, भालु, साँपके खेल इत्यादि कामोंमें जो नियुक्त रहते थे। (१३) गायक। (१४) काठविक्रय। (१५) वजन या तालके निरीक्षक कर्मचारी भी सैकड़े ३) आनेके हिसाबसे कर लेते थे।

मुगल सम्राटोंके अधीन ढाकाका राजस्व वसूल करनेमें कुल राजस्वके सैकड़े दश रुपयेसे अधिक खर्च नहीं होता था। कम्पनीके दीवानी ग्रहण करने पर ढाकाका राजस्व कुछ कम गया। श्रीहट्ट प्रभृति अन्यान्य स्थान ढाका विभागसे अलग कर दिये गये। किन्तु १७९२ ई०के चिरस्थायी बन्दोबस्तके समय बाखरगञ्ज

और फरीदपुर ढाका कमिश्नरीके साथ मिला दिये गये। १८०१-१८०४ ई०में ढाकासे ५११००० रु० राजस्व वसूल हुआ है। इस समय गवर्मेण्टने सायर कर उठा कर शराब, अफीम इत्यादि मादक द्रव्योंके ऊपर कर रखा है।

ढाकामें ८८३१ जमींदारी चिरस्थायी बन्दोबस्तके अधीन हैं जोकि ४५० जमींदारी और कम बन्दोबस्तके अधीन हुईं और २१४ लाखराज जमीन है। इस जिलेके १११० जमींदारियोंका स्वत्व गवर्मेण्टने बेच दिया है। निर्दिष्ट समय पर कर नहीं चुकानेसे गवर्मेण्ट फिर ब्लाको प्रथाके अन्तर्गत सभी जमींदारोंको प्रकाश्य नीलाममें बेच सकती थी। १२ जनवरी, २८ मार्च, २८ जून और २८ सितम्बर ढाका कलक्टरीमें कर जमा करनेका निर्धारित समय है। ढाका करिदके समय बहुतसी लाखराज जमीन प्रकाशित हो पड़ी है। गवर्मेण्टने अभी उनमें इसीको अपनाया किन्तु बहुत समय तक गवर्मेण्टका कोई स्वत्व नहीं रहनेसे अथवा अन्य जमींदारोंके अन्तर्गत हो जानेसे गवर्मेण्ट उन्हें छोड़नेको बाध्य हुई।

अङ्गरेजोंकी भांति फरासीसी और ओलन्दाजोंने ढाकामें वाणिज्य कोठियां खोलीं। किन्तु ये भी क्रमशः १७७८ और १७८१ ई०में अङ्गरेजोंके हाथ लगीं। मुसलमानोंके शासनकालमें ढाकेका कपड़ा व्यवसाय और साधारण वाणिज्य विशेष प्रसिद्ध था। ढाकेकी मलमलकी प्रशंसा सब जगह फैली हुई थी। किन्तु अंग्रेज शासनमें यहांका व्यवसाय लोप हो गया है मैञ्चेस्टरके महाजनोंके यहांके तांतियोंका सुख निर्मूल हो गया है। अंग्रेज वणिकोंने ढाका अधिकार कर यहां व्यवसाय आरम्भ किया। किन्तु धीरे धीरे आय कम जानेसे १८१० ई०में उनकी कोठियां उठा दी गईं।

अंग्रेज राजत्वकालमें ढाकामें उतनी अधिक राजनैतिक दुर्घटना न घटी किन्तु १८५७ ई०का सिपाही विद्रोह यहां उल्लेखयोग्य है। ७३ नं० देशीय पदातिक सैन्य दो दलमें यहां रहती थी। मेरठके सिपाही विद्रोही हुए हैं, यह समाचार पा कर ढाकेके सिपाहियोंमें भी असन्तोषका चिह्न झलकने लगा। इसलिए गवर्मेण्टने भावी अमङ्गल जान कर नगरकी रक्षाके लिये बहुतसी सेना भेजी। यूरोपीय और मुसलमानने भी नगरकी रक्षाके लिये सैण्टरमें अपना अपना नाम लिखाया। २१ नवम्बर तक कोई विशेष घटना न हुई। उस दिन ऐसा संवाद आया कि चटग्रामके सिपाही विद्रोही हो गये हैं। यह समाचार पा कर गवर्मेण्टने ढाकाके सिपाहियोंको अस्त्र छोड़ देनेके लिये कहा। दूसरे दिन प्रातःकाल ५ बजे सिपाहियोंको निरस्त्र करनेके लिये यूरोपीय सेना आई थी। सबसे पहले कोषागारका पहरा निरस्त्र किया गया। बाद लालबागकी ओर यात्रा की। कुछ भी प्रबल अवस्था देख कर मालूम पड़ता था, कि सिपाही सहजमें गवर्मेण्टके प्रस्तावको स्वीकार कर लेंगे, किन्तु लालबागमें पहुंच कर अंग्रेजोंने देखा कि सिपाही सामना करनेके लिये प्रस्तुत हो गये हैं। अतः दोनों पक्षमें एक छोटी लड़ाई छिड़ गई। सिपाही पराजित हो कर भाग गये। इनमें से कई एक पकड़े गये और उन्हें फांसी हो गई।

१५९८ ई०में सम्राट् अकबरके राजस्वसचिव टोडर मलने करसंग्रहकी सुविधाके लिये बाजुहा और सोनारगांव इन दो विभागोंमें ढाकाको विभक्त किया था। ढाका शहर प्रथम विभागके अन्तर्गत था तथा पूर्वकी ओर ब्रह्मपुत्रके ओर तक विस्तृत था। मुगल सम्राट्गण शुल्क और सायर इन दो उपायोंसे राजस्व वसूल करते थे। जमीनकी मालगुजारी अदा करनेके लिये बाजुहा ३२ और सोनारगांव ५२ परगनोंमें विभक्त हुआ था। प्रत्येक विभागसे यथाक्रम ९८७०२१) और ३१५२८९) रु० वसूल होते थे। १७२२ ई०में बङ्गदेश १३ चकलोंमें परिवर्तित हुआ। सोनारगांव, बाकरगंज, बाजुहा विभागके कई अंश त्रिपुरा, सुन्दरवन और मोयामालाके [illegible] तक जहांगीरनगर (ढाका) विभागके अन्तर्गत थे। ये फिर २३६ परगनोंमें और कई एक जमींदारियोंमें विभक्त हुए। इस प्रदेशसे १९२८२८) रु० कर निर्धारित हुआ था।*

१ बाजुहाके अन्तर्गत ढाका जिलेका सदर उपविभाग।

---

* ढाकेका विस्तृत विवरण जाननेके लिए निम्नलिखित ग्रन्थ द्रष्टव्य Dr Taylor's Topography of Dacca. D'Oyley's Antiquities of Dacca. Hunter's Statistical Account of Bengal Vol. VII

यह अक्षा० २३° ३०' से २४° २०' उ० और देशा० ९०° से ९०° ४३' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण १२६६ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ८८१५१७ है। इसमें ढाका शहर तथा २६४० ग्राम लगते हैं। यहां लालबाग, माभार, कपासिया और नवाबगञ्ज नामके ४ थाने हैं।

४ पूर्वीय बंगालके अन्तर्गत ढाका जिलेका सदर नगर। यह अक्षा० २३° ४३' उ० और देशा० ९०° २४' पू० पर बूढ़ीगङ्गा नदीके दहिने किनारे अवस्थित है। यही नगर जिलेमें सबसे बड़ा है। ढाका विभागके कमिश्नर साहब यहां वास करते हैं। ढाका म्युनिसपालिटीके अन्तर्गत स्थानका परिमाण प्रायः ८ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ९०५४२ है।

यह नगर नदीके उत्तरी किनारे प्रायः ४ मील तक लम्बा और नदी किनारेसे उत्तरकी ओर प्रायः १½ मील चौड़ा है। दोलाई खाडीकी एक शाखाने इसे दो भागों-में विभक्त किया है। नगरमें दो प्रधान सड़क हैं, एक पश्चिममें लालबाग प्रासादसे पूर्वमें दोलाई खाडी तक प्रायः २ मील और दूसरी नदीसे उत्तरकी ओर प्राचीन दुर्ग तक गई है। दो राज-सड़क ही सबसे बड़ी हैं और उनके दोनों किनारे सुन्दर अट्टालिका और विपणि (दूकान)-श्रेणी-द्वारा सुशोभित हैं। शेष सड़कोंमेंसे अधिकांश छोटी और टेढ़ी हैं। नगरके पश्चिमप्रान्तमें चक अर्थात् बाजार पड़ता है। यूरोपीयगण नगरके मध्यभागमें नदी किनारे प्रायः ¾ मील तकके स्थानमें वास करते हैं। आर्मेणीय और ग्रीक पल्लीमें बहुतसी बड़ी बड़ी अट्टालिकायें भग्नदशामें पड़ी हैं। देशीय लोगोंकी वासभूमि बहुत सङ्कीर्ण है। विशेष कर तांती और शङ्खवणिकके वासस्थानका सम्मुखभाग ६।७ हाथ-से अधिक नहीं है, किन्तु उसकी लंबाई प्रायः ४० हाथ तक रहती है। इस तरह मकानका मध्यस्थान खुला है, केवल दो ही प्रान्तमें घर हैं।

१७वीं शताब्दीमें ढाकानगर बङ्गालके मुसलमान राजाओंकी राजधानी था। किन्तु अभी उसकी पूर्व समृद्धिका अधिक परिचय विद्यमान नहीं है। सम्राट् जहांगीरकेसमयमें प्रतिष्ठित ढाकेका दुर्ग बहुत पहले लोप गया है। मुसलमान राजाओंके केवल दो चिह्न दीखाई पड़ते हैं—सुलतान महम्मद सुजासे निर्मित कटरा और लालबागप्रासाद। ये दोनों अभी भी भग्नावस्थामें पड़े हैं। १७वीं शताब्दीकी बनी हुई अंगरेज और फ्रांसीसी कोठियां भी नदी-गर्भमें विलीन हो गई हैं।

बहुत समयसे ढाकाके चारों ओरके प्रदेशों पर मग और पोर्त्तगीज डकैत बहुत ऊधम मचाते थे। इन लोगों-के आक्रमणसे इस प्रदेशको बचानेके लिये १६१० ई०में बङ्गालकी राजधानी ढाका नगरमें स्थापित हुई। १७०४ ई०में मुर्शिदकुलीखां ढाकासे निज प्रतिष्ठित मुर्शिदाबाद-में राजधानी उठा लाये। उसी समयसे ढाकाकी अवनति आरम्भ हुई। कहा जाता है, कि इसकी समृद्धिके समय ढाका नगर बहु जनाकीर्ण और नदीके किनारेसे उत्तर-की ओर १५ मील तक विस्तृत था। अभी भी अरण्यके मध्य टूङ्गी ग्राममें बहुतसी अट्टालिकायें और मसजिद प्रभृतिका भग्नावशेष देखा जाता है। १८वीं शताब्दीमें ढाका नगरकी मलमल बहुत आदरके साथ यूरपखण्डमें बिकती थी। उस समय यहांके हिन्दू तांतियोंने वंशपरम्पराक्रमसे ढाका-मलमलका प्रभूत उत्कर्ष साधन किया था। सूक्ष्मतामें, बुनावटके ढंगमें, चिकनाहटमें तथा परिष्कार परिच्छन्नतामें कोई भी इन लोगोंकी बराबरी नहीं कर सकते थे। ढाकेकी कपास भी उस समय महीन सूत निकालनेमें भूमण्डल पर अतुलनीय समझी जाती थी। १८वीं शताब्दीके अन्तमें इष्ट इण्डिया कम्पनी और देशीय सौदागर प्रति वर्ष प्रायः २५ लाख रुपयेकी ढाकेकी मलमल खरीदते थे। १८वीं शताब्दीके आरम्भ-में ही मञ्चेष्टर-तांतियोंकी सुलभ मलमलकी प्रतिद्वन्द्वितासे ढाकेकी मलमलकी खपत कमने लगी। अन्तमें १८१७ ई०की इष्टइण्डिया कम्पनीकी कोठी उठ गई। यह ढाकाकी अवनतिका दूसरा कारण है। तभीसे इसकी उन्नतिकी कोई आशा न रही। केवल वस्त्रव्यवसाय ही ढाकेकी प्रधान आयका मूल था। अभी वह व्यवसाय यहांसे लोप हो जाने पर अधिवासीगण धनहीन हो गये हैं। बहुतसे अधिवासी स्थान छोड़ कर दूसरी जगह जा बसे। अब भी तांतियोंकी दुरवस्था और बहुतसे परित्यक्त गृहादि इसका विषमफल घोषणा करते हैं। १८०० ई०में यहांके अधिवासियोंकी संख्या दो लाखसे कम नहीं

थी, किन्तु १८९२ ई०में लोकसंख्या केवल ८२३२१ रह गई। १९०१ ई०में इसकी संख्या ९०५४२ थी। रेल तथा वाणिज्यकी वृद्धि हो जानेसे दिनों दिन यहांकी लोकसंख्या कुछ कुछ बढ़ रही है। किन्तु फिर भी यह नगर अभी पूर्व-गौरव पा सकेगा, यह आशा दुराशा मात्र है। सम्प्रति ढाकेकी मलमलका बोझा बहुत आदर होता है। कोई कोई तांती मनकुबेरके कसीदेके अत्यन्त सुन्दर और सूक्ष्म मलमल प्रस्तुत करते हैं। यह ढाकामें जुबिलीशिंटि प्रतिष्ठित हुई है।

ढाका नगरका अवस्थान वाणिज्यके पक्षमें बहुत ही सुविधाजनक है। गङ्गा यमुना और मेघना इन तीन बड़ी नदियोंसे यह अधिक दूर नहीं पड़ता है। मलमल और नारायणगञ्जको ढाकेका बन्दर कह सकते हैं। इस का वाणिज्य पटना छोड़ कर बङ्गालके अन्यान्य समस्त नगरोंसे अधिक है। यहांके प्रधान वाणिज्य द्रव्य—चावल, पाट, तिल सरसों, चमड़ा और वस्त्रादि हैं। ढाकाके मांझी बङ्गालके सभी मांझियोंमें श्रेष्ठ गिने जाते हैं।

ढाका नगरकी जलवायु अत्यन्त खराब थी। वर्षा कालमें चारों ओर जलमग्न हो जानेसे अनेक रोग उत्पन्न होते थे। अभी विशुद्ध जलप्राप्तिकी सुविधा हो जानेसे ढाका पहलेसे स्वास्थ्यकर हो गया है। यहांका केन्द्र-कारागार पूर्वीय बङ्गालमें सबसे बड़ा है, जिसमें प्रायः ११०१ कैदी रखे जाते हैं। १८५८ ई०में मिटफोर्ड अस्पताल स्थापित हुआ। इसके सिवा यहां बड़ा डफरिन जनाना अस्पताल और पागलखाना है।

ढाकादक्षिण—श्रीहट्ट जिलेके अन्तर्गत एक परगना। इस परगनेके मध्यमें ही चैतन्यदेवका पितृस्थान 'ढाकादक्षिण' ग्राम है। यह श्रीहट्टके मध्य एक प्रसिद्ध तीर्थस्थानमें गिना जाता है और गुप्तवृन्दावन नामसे मशहूर है। यह अक्षा० २४ ४८ और देशा० ९२ १०´ पू०में अवस्थित है।

यह ग्राम श्रीहट्ट नगरसे सात कोस दूर दक्षिण-पूर्व कोनेमें अवस्थित है। नगरसे ढाकादक्षिण तक पक्की सड़क गई है। ढाकादक्षिण एक समृद्धशाली बड़ा ग्राम है। यहां कई हजार ब्राह्मण कायस्थ इत्यादि वास करते हैं।

यह ढाकादक्षिण श्रीचैतन्यदेवके पिता जगन्नाथ मिश्रजीका जन्मस्थान और उनका पितृालय है। उपेन्द्र मिश्रजीका वासभवन जो अभी वैष्णवतीर्थ रूपमें परिगणित हुआ है। प्रति वर्ष बहुतसे वैष्णव इस तीर्थ को देखनेके लिये आते हैं।

प्रायः साढ़े चार सौ वर्षके प्राचीन चैतन्योदयावली तथा परवर्ती मनःसन्तोषिणी ग्रन्थोंमें इस तीर्थकी उत्पत्ति और माहात्म्य इस तरह लिखा है—

ढाका दक्षिणमें उपेन्द्रमिश्रके पुत्र जगन्नाथमिश्रका वास था। जगन्नाथ नवद्वीपमें पढ़ते थे। नवद्वीपके नीलाम्बर चक्रवर्तीकी लड़की शचीदेवीके साथ उनका विवाह हुआ। विवाहके बाद वे नवद्वीपमें रहने लगे। कुछ दिनके बाद वे सपरिवार पितृदर्शनके लिये यहां आये। यहां शचीको गर्भ रहा। इसी गर्भकी सन्तान श्रीचैतन्यदेव थे। गर्भावस्थामें शचीको ले कर जगन्नाथ पुनः नवद्वीप को लौट आये। आनेके पहले शचीसे उनकी सासने अनुरोध किया था कि पुत्र जन्म लेने पर उसे एक बार ढाकादक्षिणमें भेज देना।

यथासमय सासका अनुरोध शचीदेवीने अपने पुत्रसे कह सुनाया था, किन्तु गौराङ्ग संन्यासके पहले श्रीहट्ट में आ न सके। संन्यासके बाद १४११ शकमें वे श्रीहट्टके ढाकादक्षिणमें आये।

पूर्वोक्त दोनों ग्रन्थोंमें लिखा है, कि इन्होंने अपने पौत्रके सामने अनेक तरहकी कथा-वार्त्ताके साथ अपने पारिवारिक सुख-दुःखकी बातें भी कही थीं। इस पर चलनेके उन्हें दो मूर्त्तियां दीं, एक गौराङ्गमूर्त्ति और दूसरी अपनी। मूर्त्ति दे कर चैतन्यदेव चले गये किन्तु आश्चर्यका विषय था कि इन दोनों मूर्त्तियोंके प्रभावसे यह ग्राम हरिभक्त हो गया—किसी बातकी कोई भी न रहा तथा इन दोनों मूर्त्तियोंके प्रभावसे किसी प्रकारका पारिवारिक अभाव जाता रहा। आज भी मूर्त्तिपूजाके सिवा मिश्रवंशको और कोई दूसरी जीविका नहीं है। उत्सव आदिके उपलक्षमें यहां जो आमदनी होती है, उसीसे एक वंश (१८ घर ब्राह्मण)-का भरण पोषण होता है।

उपेन्द्रमिश्रका मकान जहां दोनों मूर्त्तियां विद्यमान हैं, अभी 'ठाकुरबाड़ी' नामसे प्रसिद्ध है। इस ठाकुर

भाड़ीके सामने डाकघर, बाजार प्रभृति हैं। रथयात्रा तथा भूलनोत्सव यहाँ बहुत धूम-धामसे मनाया जाता है।

इसके सिवा ढाकाटविलमें प्रसिद्ध 'गोपिकरगिव' हैं। ठाकुरबाड़ीसे पाय- दो कोस दूर कैनाम नामक एक छोटे पहाड़के ऊपर शिवालय है। उक्त ग्रन्थमें लिखा है, कि चैतन्यदेव इन्हों शिवको देखनेके लिये गये थे। कैनामके पास हो अग्निकुण्ड है।

ढाकापाटन (हिं० पु०) एक प्रकारका महीन कपड़ा जिसमें फूलके चिह्न दिये रहते हैं।

ढाकेवालपटेल (हिं० पु०) एक प्रकारकी पुरानी नाव। इसके ऊपर धूप तथा वर्षासे बचानेके लिये छप्पर दिये रहते हैं।

ढाटा (हिं० पु०) १ डाढ़ी बाँधनेकी कपड़ेकी पट्टी। २ वह बड़ा मुरेठा जिसका एक फेंट डाढ़ीसे ले कर गाल तक लपेटा रहता है। ३ कफनके सरकनेसे बचानेके लिये मुरदेका मुँह बाँधनेका कपड़ा।

ढाड़ (हिं० स्त्री०) १ चिग्घाड़, चोख, गरज। २ चिल्लाहट।

ढाढ़स (हिं० पु०) १ धैर्य, आश्वासन, सान्त्वना, तसल्ली। २ दृढ़ता, साहस।

ढाढ़िन (हिं० स्त्री०) ढाढ़ीकी स्त्री।

ढाढ़ी (हिं० पु०) एक प्रकारकी नीच जाति। ये जन्मोत्सवके अवसर पर लोगोंके यहाँ जा कर बधाई आदिके गीत गाते हैं।

ढाढ़ीन (हिं० पु०) जलसिरिसका पेड़। यह जङ्गली सिरिससे कुछ छोटा होता है। इसका गुण—त्रिदोष, कफ, कुष्ठ और अतिसारनाशक है।

ढाना (हिं० क्रि०) १ ध्वस्त करना, ढहवाना। २ गिराना।

ढापना (हिं० क्रि०) ढापना देखो।

ढाबा (हिं० पु०) १ ओलती। २ जाल। ३ परछत्ती। ४ रोटीकी दूकान।

ढामक (हिं० पु०) ढोल नगारे आदिका शब्द, ढमढम।

ढामना (हिं० पु०) एक प्रकारका साँप।

ढामरा (सं० स्त्री०) हंसी, मादा हंस।

ढार (हिं० पु०) १ उतार, ढाल जमीन। २ पथ, मार्ग, रास्ता। ३ रचना, बनावट। (स्त्री०) ४ एक प्रकार, का गहना जो कानमें पहना जाता है। इसका आकार ढालसा होता है, बिरिया। ५ पछेली नामक गहना।

ढारस (हिं० पु०) ढाढ़स देखो।

ढाल (सं० पु०) ढाक-अच पृषो० साधुः। १ चर्मनिर्मित फलक, चमड़ेका एक प्रकारका अस्त्र। इससे तलवार, भाले आदिका वार रोका जाता है। यह थालीके आकार गोल होती और गैंडेके पुट्ठे, कछुएकी खोपड़ी, धातु आदि कई चीजोंकी बनती है। २ उतार, तिरछी जमीन। ३ प्रकार, तरीका, ढङ्ग।

ढालना (हिं० क्रि०) १ एक बरतनसे दूसरे बरतनमें गिराना, उँडेलना। २ मद्यपान करना, शराब पीना। ३ बिक्री करना, बेचना। ४ कम दाम पर माल बेचना। ५ व्यङ्ग बोलना, ताना छोड़ना। ६ पिघली हुई धातु आदिको साँचेमें ढाल कर बनाना।

ढालवाँ (हिं० वि०) ढालदार, ढालू।

ढालिया (हिं० पु०) वह जो साँचेमें ढाल कर बरतन आदि बनाता हो, साँचिया, भरिया।

ढाली (सं० वि०) ढालमस्यास्ति ढाल-इनि। ढालविशिष्ट, ढालधारी, चर्मी।

ढालुआँ (हिं० वि०) ढालवाँ देखो।

ढालू (हिं० वि०) ढालवाँ देखो।

ढासना (हिं० पु०) १ सहारेकी वस्तु, टेक, उँढकन। २ तकिया, बालिश।

ढिंढोरना (हिं० क्रि०) १ अनुसन्धान करना, खोजना, तलाश करना।

ढिंढोरा (हिं० पु०) १ घोषणा करनेका ढोल, डुगडुगी। २ घोषणा, मुनादी।

ढिकचन (हिं० पु०) एक प्रकारका गन्ना।

ढिकुली (हिं० स्त्री०) ढेकुली देखो।

ढिग (हिं० क्रि० वि०) १ समीप, निकट, नजदीक। (स्त्री०) २ सामीप्य, पास। ३ तट, किनारा। ४ पाढ़, कोर, हाशिया।

ढिठाई (हिं० स्त्री०) १ धृष्टता, चपलता, गुस्ताखी। २ निर्लज्जता। ३ अनुचित साहस।

ढिबरी (हिं० स्त्री) मट्टीका तेल जलानेकी डिबिया।

२ मशीन पेंचोंका नाम। ३ चौड़िया चौड़ा टुकड़ा जो किसी कमी आनेवाले छेदमें गिर या लगा रहता है इससे छेद बाहर नहीं निकलता है। ४ चमड़े या मूँजकी बनती। यह चरखेमें इसलिये लगाई जाती है जिससे तकला न घिसे।

ढिलढिला (हि॰ वि॰) १ ढीला ढाला। २ पानीकी तरह पतला।

ढिलाई (हि॰ स्त्री॰) १ ढीला होनेका भाव। २ शिथिलता आलस्य सुस्ती। ३ ढीलनेकी क्रिया।

ढिलाना (हि॰ क्रि॰) १ ढीलनेका काम किसी दूसरेसे कराना। २ ढीला करना।

ढिल्लड़ (हि॰ वि॰) मट्ठर सुस्त।

ढिसरना (हि॰ क्रि॰) १ प्रवृत्त होना, झुकना। २ फलोंका पकना आरम्भ होना।

ढींढ (हि॰ पु॰) १ बड़ा पेट। २ गर्भ।

ढींढन (हि॰ पु॰) एक प्रकारकी तरकारी।

ढीट (हि॰ स्त्री॰) रेखा लकीर।

ढीठ (हि॰ वि॰) जो बड़ोंके सामने संकोच न रखता हो धृष्ट, बेअदब, शोख। २ साहसिक, जिसको डर न हो। ३ साहसी हिम्मतवर।

ढीठ्यो (हि॰ पु॰) ढीठ देखो।

ढीमा (हि॰ पु॰) पत्थर आदिका टुकड़ा ढेला ढोका।

ढील (हि॰ स्त्री॰) शिथिलता, सुस्ती आलस्य। २ बन्धन को ढीला करनेका भाव।

ढीलना (हि॰ क्रि॰) १ तना न रखना ढीला करना। २ बन्धनसे छुटकारा देना छोड़ देना।

ढीला (हि॰ वि॰) १ जो तना न हो। जो कसावसे बंधा न हो। २ जो खूब कस कर पकड़े हुए न हो। जिसमें जलका भाग अधिक हो गया हो, पानीका अधिक होना। ५ जो अपने संकल्पमें शिथिल हो। ६ शान्त, नरम, मन्द। ७ शिथिल, मन्द, सुस्त। ८ आलसी सुस्त, मट्ठर। ९ नपुंसक।

ढीलापन (हि॰ पु॰) शिथिलता ढीला होनेका भाव।

ढीह (हि॰ पु॰) ऊँचा टीला।

ढुँढाना (हि॰ क्रि॰) अन्वेषण कराना तलाश कराना।

ढुंढी (हि॰ स्त्री॰) बाहु मोड़।

ढुकना (हि॰ क्रि॰) १ प्रवेश करना घुसना। २ ताक करना टूट पड़ना। ३ घातमें छिपना।

ढुका (हि॰ पु॰) ढूका देखो।

ढुण्ढन (सं॰ स्त्री॰) ढुण्ढ ल्युट्। अन्वेषण, खोज तलाश।

ढुण्ढा (सं॰ स्त्री॰) एक राक्षसीका नाम। यह हिरण्यकशिपुकी बहिन थी। शिवजीसे वर पा कर यह अग्निमें भी नहीं जलती थी। जब हिरण्यकशिपु प्रह्लादको मार डालनेके अनेक उपाय करके हार गया तो उसने ढुण्ढाको साथ अग्निमें बैठ जानेके लिये कहा। श्रीरामचन्द्रकी कृपासे इसका परिणाम उलटा हो गया, प्रह्लाद तो न जले ढुण्ढा जल कर भस्म हो गई।

ढुण्ढि (सं॰ पु॰) ढुण्ढ यति अन्वेषयति ढुण्ढ इन्। गणेश ये सब प्रकारकी सिद्धियां प्रदान करते हैं। काशीखण्डमें लिखा है—

"अन्वेषणे ढुण्ढिरयं प्रथितोऽस्ति धातु
सर्वार्थढुण्ढिततया तव ढुण्ढिनाम।
काशीप्रवेशमपि को लभतेऽत्र देही
तोषं विना तव विनायक ढुण्ढिराज॥" (काशीख॰)

ढुण्ढि यह धातु जगत्में अन्वेषणार्थवाचकरूपमें ही प्रथित है भाई। विषय तुम्हारे अन्वेषित या ढूंढे हुए हैं इसीसे तुम्हारा नाम ढुण्ढि है। तुम्हारे सन्तोषके बिना कोई मनुष्य काशीमें प्रवेश नहीं कर सकता है तुम मुझसे कुछ दक्षिण ढुण्ढिराजरूपमें विराजमान रह कर भक्तोंको अन्वेषण कर उन्हें समस्त अभिलषित पदार्थ प्रदान करते हो इसी लिये हो तुम्हारा नाम ढुण्ढि पड़ा है। जो मनुष्य विविध प्रकारके मन्त्रसाम्यादि द्वारा ढुण्ढिराजकी पूजा करता है वह शिवजीका अनुचर हो कर काशीमें अवस्थान करता है। प्रतिचतुर्थीमें जो उनकी पूजा करता है वह भी इस संसारका अभीष्ट प्राप्त करता है।

माघमासकी शुक्लचतुर्थीमें नक्तव्रत करके जो मनुष्य ढुण्ढिगणेशकी पूजा करते, स्तेतिलके अन्न बना कर होम करते तथा जो तिलसे होम करते हैं, वे सब प्रकारकी बाधाओंसे रहित हो कर यथेष्ट सिद्धिलाभ करते हैं। (काशीखण्ड ५७अ॰) काशी देखो।

२ जातकपद्धति नामक ज्योतिष ग्रन्थकार। ३ मीमांसा-टिनिर्णय नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। ४ एक संस्कृत शास्त्रानुरागी राजा। इन्हींके उत्साहसे विश्वनाथभट्टने विख्यात "ढुण्ढिप्रताप" नामक एक बृहत् स्मृतिनिबन्ध प्रकाश किया है।

ढुण्ढिराज—एक विख्यात ज्योतिर्विद्। ये पार्थपुरवासी नृसिंहके पुत्र थे। इन्होंने बहुतसे ज्योतिःशास्त्रीय ग्रन्थ प्रणयन किये हैं, जिनमेंसे निम्नलिखित कई एक पाये जाते हैं—ऋणभङ्गाध्याय, कुण्डकल्पलता, ग्रहफलोत्पत्ति, ग्रहलाघवोदाहरण, जातककौस्तुभ, जातकाभरण, ताजिकभूषण, ताजिकाभरण पञ्चाङ्गफल, राजयोगाध्याय, शिष्टाध्याय, अनन्तरचित सुधारसकी सुधारसमारिणी नामकी टीका, सुधारसकरणचतुष्क प्रभृति। इनके पुत्र गणेशने गणितमञ्जरीको रचना की है। २ बौधायनीय चातुर्मास्य-प्रयोगरचयिता। ३ कावेरीस्तोत्र प्रणेता।

ढुण्ढिराज लक्ष—एक वैदिक पण्डित। इन्होंने कृतपत्नीकाधान, स्वर्गद्वारेष्टिसत्रप्रयोग तथा बौधायनीय शौव सामान्य नामके ग्रन्थ रचे हैं।

ढुण्ढिराज व्यासयज्वन्—एक महाराष्ट्र-पण्डित। इन्होंने १७१३ ई०में शाहजीके अनुरोधसे शाहजिविलास नामक एक सङ्गीत पुस्तक और उसके बाद मुद्राराक्षस-टीका रचना की है।

ढुण्डुभ (सं० पु०) डुण्डुभ, डेड़हा साँप।

ढुरना (हिं० क्रि०) १ ढलना, टपकना, गिरकर बहना। २ इधर उधर डोलना, डगमगाना। ३ हिलना, डोलना। ४ लुढ़कना, फिसल पड़ना। ५ प्रवृत्त होना, झुकना। ६ प्रसन्न होना, खुश होना।

ढुरहुरी (हिं० स्त्री०) १ फिसलनेकी क्रिया। २ पगडंडी, पतला रस्ता। ३ सोनेके गोल दानोंकी पङ्क्ति जो नथमें लगी रहती है।

ढुराना (हिं० क्रि०) १ ढरकाना, टपकाना। २ हिलाना डुलाना। ३ लुढ़कना।

ढुरुआ (हिं० पु०) गोल मटर, केराव मटर।

ढुरी (हिं० स्त्री) पगडंडी, पतला रास्ता।

ढुलकना (हिं० क्रि०) फिसलना, सरकना।

ढुलकाना (हिं० क्रि०) लुढ़काना, सरकाना।

ढुलना (हिं० क्रि०) १ गिर कर बहना २ । लुढ़कना, फिसल पड़ना। ३ प्रवृत्त होना, झुकना। ४ प्रसन्न होना, खुश करना। ५ हिलना, डोलना।

ढुलवाई (हिं० स्त्री०) १ ढोनेका काम। २ ढोनेकी मजदूरी।

ढुलवाना (हिं० क्रि०) ढोनेका काम किसी दूसरेसे कराना।

ढुलाना (हिं० क्रि०) १ ढालना, ढरकना। २ गिराना। ३ लुढ़काना, सरकाना। ४ प्रवृत्त करना, झुकाना। ५ प्रसन्न करना, खुश करना। ६ इधर उधर हिलाना, फहराना। ७ चलाना, फिराना। ८ ढोनेका काम कराना।

ढुलुआ (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी चीनी जो खजूरसे बनाई जाती है।

ढुवारा (हिं० पु०) घुन नामका कीड़ा।

ढुँकना (हिं० क्रि०) ढुकना देखो।

ढूँका (हिं० पु०) किसी पदार्थको देखनेके लिये घातमें छिपनेका काम।

ढूँढ़ (हिं० स्त्री०) अन्वेषण, खोज, तलाश।

ढूँढ़ना (हिं० क्रि०) अन्वेषण करना, तलाश करना।

ढूँढ़ला (हिं० स्त्री०) ढुंढा नामकी राक्षसी।

ढूका (हिं० पु०) ईंधन, घास इत्यादिके बोझका एक मान। यह दश पूलेके बराबर माना गया है।

ढूँढिया (हिं० पु०) श्वेताम्बर जैनोंकी एक श्रेणी, ये मूर्तिपूजा नहीं करते और गृहस्थ धर्मग्रन्थ पाठ करते समय और साधु हमेशा अपने मुँह पर पट्टी बांधे रहते हैं।

ढूसर (हिं० पु०) बनियोंकी एक जाति। धूसर देखो।

ढूसा (हिं० पु०) कुश्तीका एक पेच।

ढेंक (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी चिड़िया। जो सदा पानीके किनारे रहती है। इसकी चोंच और गरदन लम्बी होती है

ढेंकली (हिं० स्त्री) १ एक औजार जिसके द्वारा सिंचाईके लिये कुएँसे पानी निकाला जाता है। इसमें एक आड़ी लकड़ी एक ऊंची खड़ी लकड़ीके ऊपर इस प्रकार टिकी रहती है कि उसके दोनों ओर क्रमशः नीचे ऊपर हो सकते हैं। २ एक प्रकारकी सिलाई। ३ एक प्रकारका

लकड़ीका औजार जिससे धान इत्यादि कूटा जाता है, धान-कूटो ढेंकी। ३ एक प्रकारका यन्त्र जिसके द्वारा मनकेसे पानी उठाया जाता है, मथानुपकयन्त्र। ४ एक प्रकारकी क्रिया जो सिर नीचे और पैर ऊपर करके की जाती है, कलाबाजी। कलैया। ५ मथानुपकयन्त्र, मनकेसे पानी उठानेका यन्त्र।

ढेंका (हि॰ पु॰) १ कोल्हूमेंका बाँस। यह जाठमें सिरेसे कसा रहता है। २ बड़ा ढेंकी।

ढेंकिया (पु॰ स्त्री) एक प्रकारका वृक्ष।

ढेंकिया (हि॰ स्त्री॰) ढिबरीसे चद्दर बनानेमें कपड़ेकी एक बाट और सिलाई। इससे कपड़ेकी लम्बाई एक तिहाई घट जाती है और चौड़ाई उतनी ही बढ़ जाती है।

ढेंकी (हि॰ स्त्री॰) ढेंका देखो।

ढेंकुली (हि॰ स्त्री॰) ढेंकली देखो।

ढेंढ (हि॰ पु॰) १ काक, कौआ। २ मृत जन्तुओंका मांस खानेवाली एक प्रकारकी नीच जाति। ३ मूर्ख, मूढ़, जड़। ४ कपासपौधेके फलादिका ढोंढ़ा।

ढेंढर (हि॰ पु॰) रोग या चोटके कारण आँखके ढेलेपरका उभरा हुआ मांस, ढेंढर।

ढेंढवा (हि॰ पु॰) एक प्रकारका बन्दर जिसका मुँह काला होता है, लङ्गूर।

ढेंढा (हि॰ पु॰) ढेंढ देखो।

ढेंढी (हि॰ स्त्री॰) १ कपासका ढोंढ़ा। २ पोस्तका ढोंढ़। ३ एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है, तरकी।

ढेंप (हि॰ स्त्री) १ टहनीसे लगा हुआ फल या पत्तेके छोरका भाग। २ कुचाग्र, ढेपी।

ढेपी (हि॰ स्त्री॰) ढेंप देखो।

ढेकरी—मान्दोल डाकाखाने तल्लामें अवस्थित एक ग्राम। यह पहले खोवनिवासके पूर्णाधीन था, किन्तु वर्तमानमें यह ग्वालपाड़ा और कामरूपका अंश समझा जाता है। मुगल-बादशाहोंके समयमें तथा इष्ट इण्डिया कम्पनीके अधिकारके प्रारम्भमें यह सरकार ढेकरी कहलाता था। ग्वालपाड़ा जिलेके प्रधान गौरीपुर-राजकी जमींदारी अब भी 'ढेकरी'के नामसे प्रसिद्ध है।

ढेबरी (हि॰ स्त्री॰) डिबरी देखो।

ढेमलोल (हि॰ स्त्री॰) समुद्रकी ऊँची लहर।

ढेर (हि॰ पु॰) समूह पुञ्ज राशि, गञ्ज।

ढेरना (हि॰ पु॰) वह फिरकी जिससे सूत या रस्सी बटी जाती है।

ढेरा (हि॰ पु॰) १ सूतको बटनेकी फिरकी। २ लकड़ी या लोहेका पेंदा जो मोटकी सूँड़ पर लगा रहता है। ३ पहाड़ोंका पेड़।

ढेराढीक (हि॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी मछली।

ढेरी (हि॰ स्त्री॰) ढेर समूह, राश।

ढेल (हि॰ पु॰) ढेला देखो।

ढेलवांस (हि॰ स्त्री॰) १ ढेला फेंकनेका रस्सीका एक फन्दा।

ढेला (हि॰ पु॰) १ ईंट मट्टी इत्यादिका छोटा टुकड़ा। २ खण्ड, टुकड़ा। ३ धानका एक भेद।

ढेला चौथ (हि॰ स्त्री॰) भादों सुदी चौथ। कहा जाता है कि इस तिथिको चन्द्रमा देखनेसे कलङ्क लगता है। यदि उस दिन चन्द्रमा देखा जाय तो देखनेवालेको लोगोंसे कुछ गालियाँ सुन लेनी चाहिए। जिसमें गालियाँ सुननेके लिये उस दिन लोगोंके घरमें ढेला फेंका जाता है।

ढेकली (हि॰ स्त्री) ढेंकली देखो

ढैंचा (हि॰ पु॰) एक प्रकारका पेड़ जो सनईकी तरह होता है। इसकी छालसे रस्सियाँ बनाई जाती हैं, जयन्ती।

ढैया (हि॰ स्त्री॰) १ ढाई सेरका एक बटखरा। २ ढाई गुनेका पहाड़ा। ३ शनैश्चरके एक राशि पर स्थिर रहनेका ढाई वर्षका काल।

ढोंकना (हि॰ क्रि॰) ढोंका पी जाना।

ढोंका (हि॰ पु॰) १ पत्थर या और किसी कड़ी वस्तुका बड़ा अनगढ़ टुकड़ा। २ कोल्हूका भाग। यह कोल्हूमें जाठके सिरेसे ऊपर कोल्ह तक बँधा रहता है। ३ दो कौड़ी या चार की ताश।

ढोंग (हि॰ पु॰) पाखण्ड, आडम्बर, ढकोसला।

ढोंगधतूर (हि॰ पु॰) धूर्तविद्या, धूर्तता पाखण्ड।

ढोंगबाजी (हि॰ स्त्री॰) पाखण्ड, आडम्बर।

ढोंगी (हिं० वि०) पाखण्डी, जो झूठा आडम्बर करता हो।

ढोंटा (हिं० पु०) ढोंटा देखो।

ढोंढ़ (हिं० पु०) १ कपास आदिका जोडा। २ कली।

ढोक (हिं० स्त्री०) १२ इंच लम्बाईकी एक मछली, ढेरी।

ढोका (हिं० पु०) ढोंका देखो।

ढोटा (हिं० पु०) १ पुत्र, बेटा। २ बालक, लडका।

ढोटी (हिं० स्त्री) लडकी।

ढोढ मिश्र-प्राणकृष्णमिश्रके पुत्र और आह्निकविवेकके रचयिता।

ढोना (हिं० क्रि०) १ किसी वस्तुको एक स्थानसे दूसरे स्थान पर पहुँचाना। २ उठा ले जाना।

ढोर (हिं० पु०) चौपाया, मवेशी।

ढोरा (हिं० पु०) ढोर देखो।

ढोरी (हिं० स्त्री०) १ ढालनेका भाव। २ रट धुन लौ।

ढोल (सं० पु०) कानका परदा।

ढोल (सं० पु०) ढक्का तदाकारं लाति ला-क पृषो० साधुः। १ वाद्ययन्त्रविशेष, एक प्रकारका बाजा, जिसके दोनों ओर चमडा मढा होता है। रुद्रयामलमें इस वाद्यका नाम पाया जाता है। यह एक ग्राम्य वहिर्द्वारिक यन्त्र है, ढोलकसे कुछ बडा होता है। यह बाजा प्रायः गलेमें लटका कर एक तरफ हाथसे और एक तरफ लकडीसे बजाया जाता है। (यन्त्रकोष)

२ रागविशेष, एक रागिणीका नाम। यह ओडव, बरारी और रेखवसे उत्पन्न होती है। (सङ्गीतर०)

ढोलक (सं० पु०) ढोल-स्वार्थे कन्। ढोलके आकारका यन्त्रविशेष, छोटी ढोलकी। हिन्दीमें ढोलक शब्द स्त्रीलिङ्गमें व्यवहृत होता है।

ढोलकिया (हिं० पु०) वह जो ढोल बजाता है।

ढोलकी (हिं० स्त्री०) ढोलक देखो।

ढोलन (हिं० पु०) ढोलना देखो

ढोलना (हिं० पु०) १ एक प्रकारका जंतर। यह ढोलके आकारका होता और तागेमें पिरो कर गलेमें पहना जाता है। १ ढोलके आकारका एक बडा बेलन यह सडक परके कंकड पत्थर आदि पीटनेके काममें आता है। ३ बच्चोंका छोटा झूला, पालना। (क्रि०) ४ इधर उधर हिलाना।

ढोलनी (हिं० स्त्री०) बच्चोंका झूला, पालना।

ढोलपुर (धोलपुर) राजपूतानेके उत्तर पूर्व कोणका एक देशीय राज्य। यह अक्षा० २६° २२´ से २६° ५७´ और देशा० ७७° १४´ से ७८° १७´ पू०में अवस्थित है। यह राज्य उत्तर-पूर्वसे दक्षिण पश्चिमकी ओर ७२ मील लम्बा और लगभग १६ मील चौडा है। इसके उत्तरमें आगरा, दक्षिणमें चम्बल नदी और पश्चिममें करौली तथा भरतपुर है। इसका प्रधान शहर ढोलपुर है। इस राज्यमें एक ब्रटिश गवर्मेण्टके प्रतिनिधि कर्मचारी (Political agent) रहते हैं। भूपरिमाण ११८७ वर्गमील है।

चम्बल नदी इस राज्यके दक्षिण-पश्चिमसे उत्तर-पूर्वमें १०० मील तक प्रवाहित है। ग्रीष्मकालमें इसकी चौडाई ३०० गज और वर्षाकालमें १००० गज रहती है। चम्बल नदीके समतलका आकस्मिक परिवर्तन हो जानेके कारण नदीके ऊपर हो कर जाने आनेमें डर लगता है। इस नदीको पार कर ग्वालियर जानेको कई एक घाट हैं। परन्तु उनमें राजघाट ही सबसे प्रसिद्ध है। इस राज्यके उत्तरमें बाणगङ्गा (अथवा उतनगां) नदी है। ढोलपुरमें पार्वती और मोर्क नामक इसकी दो शाखा नदी भी हैं। ग्रीष्म कालमें ये तीनों नदियां कई जगह सूख जाती हैं। यहांकी नदिया साधारणतः देशके समतलकी अपेक्षा बहुत निम्न हैं और इनका किनारा कहीं कहीं बडे बडे गड्ढोंसे परिपूर्ण है।

ढोलपुरकी चौडाईकी ओर एक लाल रेतीले पत्थरका छोटा पहाड है। अधिवासिगण इस पहाडसे पत्थर ले कर घर आदि बनाते हैं। बाहरमें रखनेसे यह पत्थर कठिन हो जाता है और गिरानेसे भी नहीं टूटता। चम्बलका रेलवे पुल इसी पत्थरका बना हुआ है। नदीके किनारे अनेक गड्ढोंमें कङ्कड मिलते हैं। ढोलपुर शहरसे २१ मीलके मध्य चूनेके पत्थर देखे जाते हैं। पहाडकी निकट भूमि अनुर्वर है। उत्तर और उत्तर-पश्चिम भागकी बालू और कीचडमिश्रित मट्टीमें फसल अच्छी होती है। राजाखेरा परगनेके निकटस्थ काली मट्टी हैमन्तिक शस्यके लिये अनुकूल है। बाजरा, ज्वार, जौ, गेहूं ढोलपुरके प्रधान उत्पन्न शस्य हैं। यहां रूई और धान भी होता है। कुएं और तालावसे जल ले कर

जमीन नीचे जाती है। कूपमें प्राय २५ फुट नीचे जल रहता है।

धौलपुरके राजा ही इस समय भूस्वत्वके एकमात्र अधिकारी हैं। जमींदार अथवा तालुकदार कृषकोंसे कर वसूल कर राजकोषमें भेजते हैं। आपसके झगड़े कर्ताके न रहनेपर वे जमींदारके अधीन हैं। जब तक जमींदारगण राजाके साथ निर्धारित नियमोंका पालन करते हैं तभी तक वे जमीनका अधिकार भोग कर सकते हैं। परती जमीन तालाब आदि राजाके खास अधिकारमें हैं।

१८७५ ई में राज्य एक बार मापा गया था। यहांकी लोकसंख्या प्राय २७०९७३ है। हिन्दू, मुसलमान ईसाई और जैनधर्मके माननेवाले बहुतसे लोग यहां रहते हैं। राजपूत, गुर्जर, काछी लोधा, जाट, बनिये अहीर इत्यादि वे लोग भी इस प्रदेशमें देखे जाते हैं। बारी और मिर्ठ तालुकेके गुर्जरोंमें प्रायः बहुत लोग चोरी करते हैं। लोगोंमें अधिकांश हिन्दू हैं। वैष्णव धर्म ही धौलपुर राज्यमें प्रबल है। इस राज्यमें धौलपुर बारी, पुरा और राजाखेड़ा नामके चार प्रधान शहर तथा ५५८ ग्राम लगते हैं। यहां हिन्दी पारसी अंग्रेजी आदि सिखानेके लिये बहुतसे विद्यालय हैं।

धौलपुर राज्यके बीच हो कर आगरेसे बम्बई तक आग्रा-रोड गई है। धौलपुरसे राजाखेड़ा होती हुई आगरा, धौलपुरसे बारी और धौलपुरसे कोलारी तथा बसेड़ी तक तीन अच्छी सड़कें हैं। सिन्धिया ईष्ट रेलवे लाइन भी इस राज्यमें हो कर गई है।

राजकार्यकी सुविधाके लिये यह राज्य ५ तहसीलोंमें विभक्त है। यथा (१) सिर्ट धौलपुर (२) बारी (३) बसेड़ी (४) कोलारी, (५) राजाखेड़ा। इन तहसीलोंमें यथाक्रम ६, ७, ६, ४ और २ तालुक हैं। सेवकी सहायता पानेके लिये ११ ग्राम जागीर और ८४ ग्राम देवोत्तर रूपसे दिये गये हैं। जागीरदारोंके अत्याचार करने पर राजा उनका विचार करते हैं। प्रजाकी जीवनमृत्युकी क्षमता राजाके हाथ है। राजकार्यमें सलाह देनेके लिये कौंसिलमें ४ सदस्य रहते हैं। नाजिम पुलिस और विचार विभागके प्रधान कर्त्ता हैं। किन्तु कौंसिलकी अनुमति लिये बिना वे किसीको भी १ वर्षसे अधिक समय तक कैद नहीं कर सकते। इस राज्यमें बहुतसे थाने, फाड़ी तथा प्रति ग्राममें एक एक चौकीदार हैं। वन-विभागका बन्दोबस्त तहसीलदारके हाथ है। धौलपुरको व्यवस्था इटिश-भारतकी नाईं है।

देशका जलवायु साधारणतः स्वास्थ्यकर है। चैतमें ग्रीष्म और ज्येष्ठ मासमें अत्यन्त उष्ण वायु चलती है। वार्षिक वृष्टिपातका परिमाण २७ से ३० इंच है। इस राज्यमें ६ दातव्य चिकित्सालय हैं, जिनका खर्च राजकोषसे दिया जाता है।

१००५ ई०में तोमरवंशके राजा धौलन देव तवरार चम्बल और बाणगङ्गा नदीके मध्यवर्ती प्रदेश पर शासन करते थे। प्रवाद है, कि उन्हींके नामानुसार धौलपुरके राजाने बाबरको कुछ काल तक बाधा दी थी। अकबरके समयमें धौलपुर मुगल राज्यमें मिलाया गया। १६५८ ई०में धौलपुरसे ३ मील पूर्व रञ्जकुल नामक स्थानमें राज्यके दारा औरङ्गजेब मुरादके साथ युद्धमें प्रवृत्त हुए थे। औरङ्गजेबकी मृत्युके बाद आजम और मुआज्जमके बीच धौलपुरमें एक लड़ाई छिड़ी। नवीन सम्राट मुआज्जमको विपदापन्न देख कर राजा कल्याणसिंहने धौलपुरको अपने अधिकारमें कर लिया।

धौलपुरके शासनकर्त्ता जाटवंशके हैं। इनके पूर्व पुरुष प्राचीन कालमें ग्वालियरके निकटवर्ती गोहद नामक एक ग्रामके जमींदार थे। प्राचीन ग्रन्थके अनुसार धौलपुर कनौज राज्यका एक अंश जैसा अनुमित होता है। सम्राट् अकबरने धौलपुरको आगरा राज्यके अन्तर्गत किया था। जो कुछ हो, धौलपुरके शासनकर्त्तागण अत्यन्त परिश्रमी और बुद्धिमान होनेके कारण धीरे धीरे उन्नति करने लगे। पेशवा बाजीरावके समयमें वे महाराष्ट्रीयके अधीन गोहदराज उपाधिसे भूषित हुए। १७६१ ई०को पानीपतके भीषण युद्धके बाद गोहदराजने ग्वालियरका अधिकार और अपनी स्वाधीनता प्रचार कर राणाकी उपाधि धारण की। १७७९ ई०में गोहदके महाराणा छत्रसिंहके साथ अंगरेजोंकी इस शर्त पर सन्धि हुई कि इंग्लिशगवर्मेण्ट महाराणाको महाराष्ट्रोंके विरुद्ध युद्ध करनेमें सैन्यसाहाय्य करेंगे तथा अपराजयकी

फलभागी होगी। अंगरेजोंकी सहायतासे महाराणाका राज्य बहुत बढ़ गया था। किन्तु महाराणाने अपनी प्रतिज्ञा पूरी न की। इसी अपराधसे अंगरेज गवर्मेंटने उनके साथ मित्रता छोड़ दी और सुअवसर पा कर सिन्धिया ग्वालियर और गोहद अधिकार तथा महाराणाको बन्दी किया। १८०३ ई०में सिन्धियाके प्रतिनिधि शासनकर्त्ता अम्बजी इङ्गलियाने गोहद, ग्वालियर और अन्यान्य कई एक स्थान ब्रटिशगवर्मेंटको प्रदान किये। १८०४ ई०में ब्रटिश गवर्मेंटने महाराणा लकिन्द्रके पुत्र किरातसिंहको गोहद और उसके अधीन देश लौटा दिये। किन्तु थोड़े समयके बाद ब्रटिश गवर्मेंटने महाराणा किरातसिंहसे गोहद प्रदेश ले कर सिन्धियाको दे दिया। महाराणाको चति पूर्त्तिके लिये ब्रटिश गवर्मेंटने उन्हें ढौलपुर, बर और रजकोर परगने अर्पण किये। इस प्रकार किरातसिंह ढौलपुरके महाराणा हुए। १८३६ ई०में किरातसिंहको मृत्यु होने पर उनके पुत्र भगवन्त सिंहने महाराणाकी उपाधि पाई। इन्होंने सिपाही विद्रोहके समय ब्रटिश गवर्मेंटको यथेष्ट सहायता की थी। पुरस्कारस्वरूप इन्हें ब्रटिशगवर्मेंटसे के० सी० एस० आई० की उपाधि और १८६८ ई०में जी० सी० एस० आईकी उपाधि मिली थी। पटियालेके महाराजको बहनके साथ इनका विवाह हुआ था। निहाल सिंह नामक इनके एक पुत्र थे। १८७३ ई०में महाराणा भगवन्तसिंहकी मृत्युके बाद निहालसिंह पिटपट पर अभिषिक्त हुए। ये आगरेमें प्रिन्स आफ वेल्सकी अभ्यर्थना-सभा तथा दिल्लीदरबारमें उपस्थित थे। १९०१ ई०में उनकी मृत्यु हुई। बाद उनके लड़के रामसिंह राज्याधिकारी हुए। इनका जन्म १८८३ ई०में हुआ था। इनके मरने पर उदयभानसिंहने राजसिंहासन सुशोभित किया। फिरहाल यही यहांके महाराणा हैं। इनका पूरा नाम है—

एच एच रैस—उद्-दौला सिपाहदार-उल मुल्क महाराजाधिराज श्रीसवाई महाराजराणा सर उदय भानसिंह लौकिन्द्र, बहादुर, दिलेरजङ्ग जयदेव, के, सी, एस, आई० ।

ढौलपुरके महाराणाको १५ तोपोंकी सलामी है। इस राज्यमें १८३ अश्वारोही, ८८४ पदाति और ३२ तोपें हैं।

ढौलपुर राज्यमें सफेद और लाल रंगके रेतीले पत्थरसे स्तम्भ गुम्बज, वक्र और अन्यान्य आकारके झरोखे प्रस्तुत होते हैं। जो देखनेमें बहुत अच्छे लगते हैं। शिल्पकार्यके तारतम्यके अनुसार इसके मूल्यका ह्रास हुआ करता है। ढौलपुरमें पीतलका एक प्रकारका चित्रित और अलङ्कृत हुक्का बनता है, जिसे उस प्रान्तमें कासो कहते हैं। इस राज्यके काठके बने हुए खिलौना और दूसरे दूसरे द्रव्य भी अत्यन्त सुन्दर होते हैं। यहांका पालिश करनेका द्रव्य विशेष प्रसिद्ध है।

इसके दक्षिण-पश्चिमके जंगलोंमें शेर, चीता, भालू, सम्भर, लकड़बग्घा, हरिण, नीलगाय और जंगली सूअर आदि जानवर दिखलाई देते हैं। यहांसे रेतीला पत्थर, रुई, और घीको रफतनी होती है। कपड़ा, नमक, चीनी चावल और तमाकू बाहरसे आती हैं। इस राज्यको वार्षिक आय ७६००००) रु० है।

२ राजपूतानेके अन्तर्गत ढौलपुर राज्यकी राजधानी और शहर। यह अक्षा० २६° ४२´ उ० और देशा० ७७° ५३´ पू०में पड़ता है। यह आगरेसे बंबई तक ग्राण्डट्राङ्करोड पर आगरेसे ३४ मील दक्षिण तथा ग्वालियरसे ४० मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १८७१० है। ढौलपुरसे ३ मील दक्षिणमें राजघाटके निकट चर्मण्वती नदीके ऊपर एक नौसेतु है, जो १ नवम्बरसे १५ जून तक रहता है। वर्षके अन्तमें उतारेकी नाव द्वारा नदीमें आते जाते हैं। आगरेसे ग्वालियर पर्यन्त सिन्धिया ष्टेट-रेलवे ढौलपुर हो कर गयी है। यह रेलपथ ढौलपुरसे ५ मील दूर सेतु हो कर चर्मण्वती नदी पार होता है।

कहते हैं, कि राजा ढौलनदेवने वर्त्तमान नगरके दक्षिणमें प्राचीन ढौलपुर नगर बसाया था। सम्राट् बाबरने १५२६ ई०में इसे अपने अधिकारमें किया था। उनके पुत्र हुमायूं चर्मण्वती नदीके गर्भशायी होनेकी आशङ्कासे नगरको नदी तीरसे उठा कर और भी उत्तरमें ले गये। सम्राट् अकबरने यहां एक ऊंचो और सुरक्षित सराय निर्माण की है। नगरका नूतन अंश तथा राजप्रासाद राणा किरातसिंहसे बनाया गया है। कार्तिक

मासमें १५ दिन तक यहाँ एक मेला लगता है जिसमें बहुतसे मवेशी तथा दिल्ली, आगरा कानपुर लखनऊ आदि स्थानोंके झुण्ड बिकने आते हैं। ढोलपुरसे ४ मील दक्षिण मुचुकुन्द ह्रदके समीप भी प्रतिवर्ष ज्येष्ठ और भाद्र मासमें दो मेला लगते हैं। इस समय बहुतसे लोग आ कर यहाँ स्नानादि करते हैं। यह ह्रद (झील) प्रायः १२५ बीघा चौड़ा और बहुत गहरा है। चारों ओरके पर्वतोंसे वृष्टिजल आ कर इस ह्रदमें जमा रहता है। इसके चारों ओर कमसे कम ११४ देवालय हैं। फाल्गुन मासमें ढोलपुरसे १४ मील उत्तर पश्चिमके समपो नगरमें भी एक बड़ा मेला लगता है। यहाँ कई एक विद्यालय और औषधालय हैं।

ढोलसमुद्र—बङ्गालके अन्तर्गत फरीदपुर जिलेकी एक झील। यह फरीदपुर शहरसे दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। वर्षाकालमें यह झील बढ़ कर नगरके मकानोंके पास तक पहुंच जाती है। शीतकालमें यह थोड़ी थोड़ी सङ्कुचित हो कर अन्तको ग्रीष्मकालमें एक या दो मील तक रह जाती है।

ढोला (हिं० पु०) १ एक प्रकारका छोटा सफेद कीड़ा जिसके पर नहीं होते हैं। इसकी लम्बाई आध अंगुल तककी होती है। यह प्रायः सड़ी हुई वस्तुओं तथा पौधोंसे झड़ी पत्तियों पर रहता है। २ सीमा, सूचित करनेका निशाना। ३ गोल मिहराब बनानेका ठाट, कलबूत। ४ शरीर, देह। ५ प्रियतम, पति। ६ एक प्रकारका गीत। ७ मूर्ख मनुष्य, जड़।

ढोलिनी (हिं० स्त्री०) वह औरत जो ढोल बजाती है, डफालिन।

ढोलिया (हिं० पु०) वह पुरुष जो ढोल बजाता है।

ढोली (सं० त्रि०) ढोल अस्त्यर्थे इनि। जो ढोल बजाता है।

ढोली (हिं० स्त्री०) २०० पानोंकी गड्डी। २ परिहास, हंसी दिल्लगी।

ढोव (हिं० पु०) भेंट, डाली, नजर।

ढौंचा (हिं० पु०) साढ़े चारका पहाड़ा।

ढौंसना (हिं० क्रि०) आनन्दध्वनि करना।

ढौकन (सं० क्ली०) ढौक-ल्युट्। १ गमन, जाना। २ उत्कोच, घूस, रिशवत।

ढौकना (हिं० क्रि०) पीना।

ण

ण—संस्कृत और हिन्दी व्यञ्जनवर्णका पन्द्रहवां अक्षर और टवर्गका पांचवां वर्ण। इस वर्णका अर्द्धमात्रा कालमें उच्चारण होता है। इसका उच्चारणस्थान मूर्द्धा है। इसके उच्चारणमें आभ्यन्तरिक प्रयत्न है—जिह्वा मध्य द्वारा मूर्द्धाका स्पर्श और नासिकामें प्रयत्नविशेषका प्रभेद। बाह्यप्रयत्न—संवार, नाद, घोष और अल्पप्राण है। इसकी लिखनप्रणाली इस प्रकार है—पहले एक खड़ी लकीर खींचे फिर उसके नीचे लगभग उतनी बड़ी तीन लकीरकी ऊपर नीचे खींच कर नीचे पहली लकीरसे एक तिरछी लकीर खींच दे। इसका आकार ऐसा हो जायगा—"ण"। इस अक्षरमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर सर्वदा अवस्थान करते हैं। मातृकान्यासमें इस वर्णका दक्षिण पादाङ्गुलमूलमें न्यास करना पड़ता है।

इसके पर्यायवाची शब्द—निर्गुण, रति, ज्ञान, जम्भन, पक्षिवाहन, जया, शम्भु, नरकजित्, निष्कल, योगिनीप्रिय, द्विमुख, कोटवी, श्रोत्र, समृद्धि, बोधनी, त्रिनेत्र, मानुषी, व्योम, दक्षपादाङ्गुलिमुख, माधव, शङ्खिनी, वीर और नारायण। (नानातन्त्र)

इसकी अधिष्ठात्री देवीका स्वरूप—वे परमकुण्डली, पीतविद्युल्लताकार, पञ्चदेवतामय, पञ्चप्राणमय, त्रिगुणयुक्त आत्मा आदि तत्त्वयुक्त और महामोक्षप्रद है। (कामधेनु०) इसका ध्यान कर इस मन्त्रका दश बार जप करनेसे साधक शीघ्र ही अभीष्ट प्राप्त कर सकता है। इसका ध्यान—

"द्विभुजां वरदां रम्यां भक्ताभीष्टप्रदायिनीं ।
राजीवलोचनां नित्यां धर्मकामार्थमोक्षदां ॥
एवं ध्यात्वा ब्रह्मरूपां तन्मन्त्रं दशधा जपेत् ॥" (वर्णोद्धारत०)

ये द्विभुजा, वरदायिनी पद्मलोचना, धर्म-अर्थ-काम मोक्षदायिनी हैं। ये सर्वदा भक्तोंको अभीष्ट प्रदान करती हैं। (त० र० टी०)

ण (सं० पु०) ण—रक-ड पृषो० साधुः। १ विन्दुदेव, एक बुद्धका नाम। २ भूषण, गहना। ३ निर्णय। ४ शिवका एक नाम। ५ पानीका घर। ६ दान। ७ पिङ्गलमें एक गणका नाम। ८ ज्ञान। (एकाक्षरको०) (सं० वि०) ९ गुणरहित गुणशून्य।

णकार (सं० पु०) ण-स्वरूपे कारप्रत्ययः। ण स्वरूप वर्ण, णकार।

णगण—दो मात्राओंका एक मात्रिक गण।

णत्वविधान (सं० क्लो०) णत्वस्य विधानं, ६ तत्। णत्व-विषयकविधान। पाणिनिमें इसका विधान इस प्रकार लिखा है—

ऋ ॠ, र और ष इन चार वर्णोंके बाद दन्त्य न रहे तो वह मूर्द्धन्य होता है। यदि स्वरवर्ण, कवर्ग, पवर्ग, य, व, ह और अनुस्वार व्यवधान रहे तो भी दन्त्य न मूर्द्धन्य होता है।

पदका अन्तस्थित दन्त्य न मूर्द्धन्य नहीं होता है तथा न भिन्न तवर्ग युक्त (त, थ, द, ध) एवं प और भ युक्त दन्त्य न मूर्द्धन्य नहीं होता है।

यदि एक पदमें ऋ, ॠ, और ष रहे और दूसरे पदमें दन्त्य न रहे तो न मूर्द्धन्य नहीं होता है।

यदि अन्य पदस्थित दन्त्य न 'विभक्ति स्थान पर हो अथवा विभक्ति युक्त हो या स्त्रीलिङ्गविहित ई प्रत्ययके साथ मिला हो, तो विकल्पसे मूर्द्धन्य होता है। परन्तु युवन्, भगिनी, कामिनी, भामिनी, यामिनी, यूनी प्रभृतिका दन्त्य न मूर्द्धन्य नहीं होता है।

ओषधिवाचक और वृक्षवाचक शब्दके परस्थित वन शब्दका न विकल्पसे मूर्द्धन्य होता है, परन्तु, तिरिकाइ इरिका, हरिद्रा, तिमिरा, विदारी और कर्मार इन शब्दों के बाद वन शब्द रहनेसे मूर्द्धन्य नहीं होता है।

धानके पक जाने पर जिन समस्त उद्भिदोंका जीवन शेष हो जाता है उन्हें ओषधि कहते हैं। ओषधिवाचक शब्दमें यदि दो या तीन स्वर न हों तो नियम लागू नहीं है।

शर इक्षु, प्रक्ष, आम्र, और खदिर (खैर) इन शब्दोंके परस्थित वन शब्दका न सदा मूर्द्धन्य होता है।

प्र, निर, अन्तर, अग्र इन शब्दोंके परस्थित वन शब्दका न नित्य मूर्द्धन्य होता है। अन्य पदस्थित र प्रभृति परवर्त्ती पान शब्दका न विकल्पसे मूर्द्धन्य होता है।

प्र, पूर्व, अपर प्रभृति शब्दोंके परवर्ती अहन् शब्दका न नित्य मूर्द्धन्य होता है।

पर, पार उत्तर, चन्द्र और नार शब्दोंके परवर्ती अयन शब्दका न नित्य मूर्द्धन्य होता है।

अग्र और ग्राम शब्दोंके परवर्त्ती नी शब्दका न मूर्द्धन्य होता है।

शूर्पके परस्थित नखका न तथा प्र, दु, स्वर और वाघ्री शब्दके परस्थित नसका न मूर्द्धन्य होता है।

गिरि, नदी, स्वर्णदी, गिरिनितम्ब, गिरिनख, गिरिनद, चक्रनदी, चक्रनितम्ब, तुर्यमान, माषोर्ण, आर्गयन इन समस्त शब्दोंके न विकल्पसे मूर्द्धन्य होता है।

प्र, परा, परि और निर, इन चार उपसर्गों तथा अन्तर शब्दके बाद यदि नद्, नम्, नश्, नह, नी, नु, नुद्, अन् और हन् ये सब धातु रहें, तो उनका मूर्द्धन्य होता है।

यदि हन् धातुका न म और व युक्त हो तो विकल्पसे मूर्द्धन्य होता है।

हन् धातुको ह के स्थानमें घ हो तो न मूर्द्धन्य नहीं होता है।

प्र, परा, परि और निर ये चार उपसर्ग और अन्तर शब्दके बाद निंस्, निक्ष् और निन्द्, इन धातुओंके विकल्पसे मूर्द्धन्य होता है।

प्र प्रभृतिके बाद हिनु और मीनका न नित्य मूर्द्धन्य होता है।

प्र प्रभृतिके बाद लोट्की आनि विभक्तिका न सदा मूर्द्धन्य होता है।

प्र प्रभृतिके बाद नद्, गद्, दा, धा, नम्, नद्, पत्, दाम् हो मो, दे पै, मा या, द्रा, प्सा, वप, वह, शम्, चि, चार, दिह्, इन समस्त धातुओंके पूर्ववर्ती नि उपसर्गका न नित्य मूर्द्धन्य होता है।

धातुके पहले यदि प्र, परा, परि और निर् ये चार उपसर्ग अथवा अन्तर शब्द रहे तो कृत् प्रत्ययका न विकल्पसे मूर्द्धन्य होता है।

जिन धातुओंके आरम्भमें तो व्यञ्जन वर्ण हो और अन्तिमवर्णके पहिले अ या इ भिन्न कोई वर्ण हो तो उनमें लगे हुए कृत्प्रत्ययका नकार विकल्पसे मूर्द्धन्य 'ण' हो जाता है।

अन्त धातुके उत्तर विहित कृत् प्रत्ययका न विकल्पसे मूर्द्धन्य होता है।

भा, भू, पू, कम, गम, प्याय, वेप और अन्य इन समस्त धातुओंको अन्त करनेसे उनके उत्तर विहित कृत्में न मूर्द्धन्य नहीं होता है।

कृत् प्रत्ययका न व्यञ्जन वर्णमें मिला रहनेसे मूर्द्धन्य 'ण' नहीं होता है।

नश धातुका श मूर्द्धन्य होने पर न मूर्द्धन्य होता है।

क्षुभ्नादिका न मूर्द्धन्य नहीं होता है।

णमोकारमन्त्र (सं० पु०) जैनोंका महामन्त्रविशेष। जैनोंका प्रधान मन्त्र। इसमें पांच पद, और पैंतीस अक्षर हैं, यथा—'णमो अरहन्ताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं।' इस मन्त्रके आदिमें ॐ जोड़ कर १०८ बार जपनेसे विघ्न बाधाएँ दूर होती हैं। साधारणतः हृदयमें भूत प्रेत आदिका भय सञ्चार होने पर इस महामन्त्रका सौ बार जप किया जाता है। अनेक जैनग्रन्थोंमें इसके माहात्म्यका वर्णन किया है। यह मन्त्र जैनोंके सब मन्त्रोंमें उत्तम पूज्य है। इसके प्रत्येक अक्षरसे सैकड़ों मन्त्रोंकी उत्पत्ति हुई, जिनका वर्णन "णमोकारकल्प" नामक ग्रन्थमें किया गया है। "पुण्यास्रव" नामक जैनग्रन्थमें इसके माहात्म्यको आठ कथाएं लिखी हैं। उनमेंसे एक कथा यहां संक्षेपमें लिखी जाती है—'किसी समय चक्रवर्ती कई कर्मोंको जीत कर जातेसे कष्टको जय करनेके लिए समुद्र पार हो रहे थे। मार्गमें उनको पूर्वभवके शत्रु एक देवसे साक्षात् हो गया। देवके आक्रमण करते ही उन्होंने णमोकार मन्त्र जपना प्रारम्भ कर दिया, जिससे देव उनको स्पर्श तक न कर सका। कुछ देर बाद उनके चुप होने पर देवने उनको कहा कि "यदि तू मन्त्रको लिख कर मिटा दे तो हम तुझे छोड़ देंगे, अन्यथा समुद्रमें बिना डुबोये नहीं छोड़ेंगे।" अनेक वादानुवादके पश्चात् चक्रवर्ती अपनी मृत्युसे विचलित हो गये और उन्होंने उस मन्त्रको लिख कर मिटा दिया। देवकी अभिलाषा पूर्ण हुई उसने चक्रवर्तीको समुद्रमें डुबो दिया।

णय (सं० पु०) ब्रह्मलोकस्थित एक सरोवर।

"अरश्च णश्चार्णवौ ब्रह्मलोके तृतीयस्यां।" (छान्दोग्य ८०)

त

त—संस्कृत और हिन्दी वर्णमालाका सोलहवाँ अक्षर, तवर्गका प्रथम वर्ण। अर्द्धमात्राकालमें इसका उच्चारण होता है। इसके उच्चारणमें आभ्यन्तरिक प्रयत्न है- दन्तमूल द्वारा जिह्वाके अग्रभागका स्पर्श। वाह्यप्रयत्न—विवार, श्वास और अघोष है। इसके उच्चारणस्थान है- दन्त। मातृकान्यासमें इसका वामस्फिच्‌ पर न्यास करना चाहिये। इसकी लिखनप्रणाली इस तरह है—'त'।

इस अक्षरमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर नित्य विराजित रहते हैं।

इसके वाचक शब्द पूतना, हरि, शुद्धि, शक्ति शुक्ति जटी, ध्वजी, वामस्फिच (वामनितम्ब), वामकटी, कामिनी, मध्यकर्णक, आषाढी, तण्डतुम्न, कामिका, पृष्ठ पुच्छक, रत्नक, श्याममुखी, वाराही, मकर, अरुणा, सुगत, ऊर्ध्वमुख, ऊर्ध्वजानु, क्रोष्टुपुच्छक, गन्ध, विश्व, मरुत्‌, छत्र, अनुराधा सौरक, जयन्ती, पुलक, भ्रान्ति, अनङ्ग, और मदनातुरा। (नानात०) यह स्वयं परमकुण्डली तथा पञ्चप्राणमय और पञ्चदेवात्मक है। यह वर्ण त्रिशक्तियुक्त तथा आत्मादि तत्त्वोपेत, त्रिविन्दुयुक्त और पीतविद्युत्‌की भाँति प्रभाविशिष्ट है। (कामधेनुत०)

इसका ध्यान कर इस वर्णका दश बार जप करनेसे शीघ्र ही अभीष्टकी सिद्धि होती है। ध्यान—

"चतुर्भुजां महाशान्तां महामोक्षप्रदायिनीम्‌।
सदा षोडशवर्षीयां रक्ताम्बरधरां पराम्‌॥
नानालंकारभूषा वा सर्वसिद्धिप्रदायिनीम्‌।
एवं ध्यात्वा तकारन्तु तन्मन्त्रं दशधा जपेत्‌॥" (वर्णोद्धारत०)

इन वर्णाधिष्ठात्रीके चार हाथ हैं। ये परम मोक्ष प्रदान करती हैं। ये सर्वदा षोड़शवर्षीया रक्तवस्त्रपरिधायिनी और नानाभूषणद्वारा परिशोभिता हैं तथा साधकोंकी समस्त सिद्धि प्रदान करती हैं।

इस वर्णका मात्रावृत्तमें प्रथक्‌ प्रयोग करनेसे धन नष्ट होता है। (वृत्तर० टी०)

त (सं० पु०) तक-ड। १ चोर, चोर। २ अमृत। ३ पुच्छ, दुम। ४ क्रोड़, गोद। ५ म्लेच्छ। ६ गर्भ, हमल। ७ शठ। ८ रत्न। ९ सुगतदेव, बुद्ध। १० गौरववर्जित, वह जिसके अभिमान न हो। ११ क्रोष्टुपुच्छ, गीदरकी पूँछ। १२ तरण। १३ पुण्य। १४ नौका, नाव। १५ झूंठ।

तअज्जुब (अ० पु०) आश्चर्य, अचम्भा।

तअम्मुल (अ० पु०) १ सोच, फिक्र। २ विलम्ब, देर, अरसा। ३ धैर्य, सब्र।

तअल्लुक (अ० पु०) संबन्ध, इलाका।

तअल्लुका (अ० पु०) वह जमींदारी जिसमें बहुतसे मौजे लगते हों, बड़ा इलाका।

तअल्लुकादार (अ० पु०) १ इलाकेका मालिक। (स्त्री०) २ इलाकेदारका पद।

तअल्लुका (हिं० पु०) तअल्लुका देखो।

तअल्लुकादार (हिं० पु०) तअल्लुकादार देखो।

तआल्लुकेदार (हिं० पु०) तअल्लुकादार देखो।

तअल्लुकेदारी (हिं० स्त्री०) तअल्लुकादारीका पद।

तअस्सुब (अ० पु०) पक्षपात, तरफदारी।

तइक (हिं० पु०) मोची, चमार।

तइनात (हिं० पु०) तैनात देखो।

तई (प्रत्य०) १ से। २ प्रति, को, से।

तई (हिं० स्त्री०) कम गहराईका कड़ाही। यह बाजारोंमें मिलती तुलती है और इसमें कड़े लगे होते हैं।

तउ (सं० स्त्री०) १ नौका, नाव। २ पवित्र, पुण्य।

तंग (फा० पु०) १ घोडोंकी पेटी, कसन। (वि०) २ दृढ़, मजबूत। ३ दुःखी, दिक्‌, आजिज। ४ सङ्कुचित, सङ्कीर्ण, पतला, सकरा, सकेत।

तंगदस्त (फा० वि०) १ कृपण, कंजूस। २ दरिद्री, गरीब, कङ्गाल।

तंगदस्ती (फा० स्त्री०) १ कृपणता, कंजूसी। २ दरिद्रता, गरीबी।

तंगहाल (फा० वि०) १ निर्धन, गरीब। २ विपद्‌ग्रस्त, जो तकलीफमें पड़ा हो। ३ रोगग्रस्त, मरणासन्न, बीमार।

तंगा (हिं० पु०) १ एक पेड़का नाम। २ आध आना, डबल पैसा।

तंगी (फा० स्त्री०) १ संकीर्णता, तंग होनेका भाव। २ दुःख कष्ट, क्लेश। ३ निर्धनता, दरिद्रता। ४ न्यूनता, कमी।

तंजेब (फा० स्त्री०) एक प्रकारका सूक्ष्म और उमदा मलमल।

तंड (हि० पु०) नृत्य, नाच।

तंडव (हि० पु०) नृत्यविशेष, एक तरहका नाच।

तंत (हि० पु०) १ तार लगा हुआ एक प्रकारका बाजा। २ क्रिया काम। ३ [illegible]। ४ प्रबल कामना, इच्छा। ५ अधीनता, परवशता, मातहती। (वि०) ६ जो बन्धनमें होय हो।

तंतु (हि० पु०) तन्तु देखो।

तंदाम (हि० पु०) एक प्रकारका छोटा और बढ़िया अंगूर। यह डँठलमें पास-पास होता है। इसको सुखा कर किसमिस बनाते हैं।

तंदुआ (हि० पु०) ऊसर जमीनमें होनेवाली एक प्रकारकी घास जो बारहों मास उपजती है। यह मवेशीको खिलाया जाता है।

तंदुरुस्त (फा० वि०) स्वस्थ, नीरोग, चंगा।

तंदुरुस्ती (फा० स्त्री०) १ आरोग्यता, चंगा होनेका भाव। २ स्वास्थ्य।

तंदूर (फा० पु०) एक प्रकारका मट्टीका बहुत बड़ा, गोल और ऊँचा बरतन। इसकी बनावट अँगीठी चूल्हे या भट्ठे आदिकी तरह होती है। नीचे आँच दी जाती है और जब वह अच्छी तरहसे गर्म हो जाता है तब उसकी दीवारों पर भीतरकी ओर मोटी मोटी रोटियाँ चिपका देते हैं रोटियाँ थोड़ी देरमें सिक कर लाल हो जाती हैं।

तंदूरी (हि० पु०) १ मालदहकी ओरका एक प्रकार का रेशम, यह अत्यन्त महीन और नर्म तथा खाकी रङ्ग-का होता है। (वि०) २ तंदूर सम्बन्धी।

तंदेही (हि० स्त्री०) १ परिश्रम, मेहनत। २ प्रयत्न, प्रयास, कोशिश। ३ आज्ञा चितावनी, ताकीद।

तंबा (हि० पु०) एक प्रकारका पायजामा।

तंबाकू (हि० पु०) तमाकू देखो।

तंबाकूगर (हि० पु०) वह जो तमाकू बनाता हो।

तंबिया (हि० पु०) एक प्रकारका छोटा तसला जो ताँबेका बना होता है।

तंबियाना (हि० क्रि०) १ ताँबेके रंगका होना। २ ताँबे का स्वाद या गन्ध आ जाना।

तंबीह (अ० स्त्री०) १ शिक्षा, नसीहत। २ दण्ड सजा।

तंबू (हि० पु०) १ कपड़े आदिका बना हुआ घर, शामियाना खेमा, डेरा। २ मछलीकी तरहकी एक मछली।

तंबूर (फा० पु०) एक प्रकारका छोटा ढोल।

तंबूरची (फा० पु०) वह जो तंबूर बजाता हो।

तंबूरा (हि० पु०) सितारकी तरहका एक बहुत प्राचीन बाजा। यह आलापचारीमें केवल सुरका सहारा देनेके लिये बजाया जाता है। कहा जाता है कि तम्बुरु गन्धर्वने इसे बनाया था इसीसे इसका नाम तंबूर पड़ा है।

तंबूरतोप (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी बड़ी तोप।

तंबोरा (हि० पु०) तंबूरा देखो।

तंबोल (हि० पु०) १ एक प्रकारका पेड़। इसके पत्ते बिजौरेके पत्तेसे होते हैं। २ बरातके समय वरको दिये जानेका टीका। ३ [illegible]।

तँबोलिन (हि० स्त्री०) वह औरत जो पान बेचती है, बरइन।

तँबोलिया (हि० स्त्री०) गङ्गा और यमुनामें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली। इसका आकार पानका होता है।

तंबोली (हि० पु०) पान बेचनेवाला मनुष्य, बरई।

तंभन (हि० पु०) स्तम्भन देखो।

तंवार (हि० स्त्री०) १ वह चक्कर जो कभी कभी सिरमें आ जाता है, घुमटा घुमेर। २ बुखार, हरारत।

तँवारी (हि० स्त्री०) तँवार देखो।

तंसु (सं० पु०) तसि-कुन्। पुरुवंशीय नृपभेद, पुरुके वंशमें एक राजाका नाम। इन्होंने पौरवराज मतिनारके औरस तथा सरस्वतीके गर्भसे जन्मग्रहण किया था। राजा मतिनारके और तीन पुत्र थे; परन्तु तंसुने अपने वीर्यबलसे पुरुवंशका उत्कर्ष तथा यशोपार्जन किया था। (भारत आ० ९४।१५)

तक्त (सं० त्रि०) तं गौरवपर्यन्त यथातथा कायति कै-क्त। १ निन्दित, दूषित, बुरा। २ सहनशील। ३ आश्रित।

तक (हिं० अव्य०) १ किसी वस्तु या व्यापारकी सोमा अथवा अवधि सूचित करनेवाली एक विभक्ति, पर्यन्त। (स्त्री०) २ तराजू। ३ तराजूका पल्ला।

तकड़ी (हिं० स्त्री०) रेतीली जमीनमें होनेवाली एक प्रकारकी घास। यह सालमें ६ या ७ बार हुआ करती है। घोड़े इसे बहुत चावसे खाते हैं। इसे कोई कोई चरमरा और हैन कहते हैं।

तकत् (सं० अव्य०) तक वा अति। अत्यन्त अल्प, बहुत छोटा।

तकदमा (हिं० पु०) अनुमान, अंदाज।

तकदीर (अ० स्त्री०) प्रारब्ध, भाग्य, किस्मत।

तकदीरवर (हिं० वि०) भाग्यवान्, जिसकी किस्मत अच्छी हो।

तकन (हिं० स्त्री०) दृष्टि, नजर।

तकनकर—दाक्षिणात्य और बरारप्रदेशवासी एक भ्रमणशील जाति। ये तेलगूभाषामें बोलते हैं। पत्थर काट कर चक्की बनाना ही इनकी उपजीविका है। इसीलिए ये चक्कीवाले या चकधार भी कहलाते हैं। ये एक जगह ज्यादा दिन नहीं रहते, जगह जगह घूम घूम कर चक्की बनाते फिरते हैं। इनके एक देवता हैं जिनका नाम है—सट्वाई। तकनकर लोग इनकी मूर्त्ति बनवा कर गलेमें पहनते हैं। यह मूर्ति हनूमानकी मूर्त्ति जैसी है। ये फूसकी झोपड़ियोंमें रहते हैं। इनमें विवाहके लिए उसका कोई नियम नहीं है, कि कब करेंगे। ये गोमांस नहीं खाते, पर मृतदेहको गाड़ते हैं।

तकना (हिं० क्रि०) १ अवलोकन करना, देखना, निहारना। २ आश्रय लेना, पनाह लेना।

तकमील (अ० स्त्री०) पूर्णता, पूरा होना।

तकरमवही (हिं० स्त्री०) वह हँसिया जिसके द्वारा भेड़ोंके ऊपरसे ऊन काटा जाता है।

तकरार (अ० स्त्री०) १ विवाद, हुज्जत। २ झगड़ा, टंटा। ३ धानका खेत जो फसल काटनेके बाद फिर खाद डाल कर जोता गया हो। ४ वह खेत जिसमें जो इत्यादि कई तरहके अनाज एक साथ बोए गये हों।

तकरी (सं० स्त्री) तं निन्दितं करोति क-ट् ङीप्। कुत्सितकारिणी स्त्री, खराब चलन वाली औरत।

तकरीर (अ० स्त्री०) १ वार्त्तालाप, बातचीत। २ वक्तृता, भाषण।

तकरीब (अ० स्त्री०) उत्सव, जलसा, भोज।

तकर्रुरी (अ० स्त्री०) नियुक्ति, मुकर्रर, बहाल।

तकला (हिं० पु०) १ सूत कातनेके चरखेमें लगी हुई लोहेकी सलाई, टेकुआ। २ सोनारोंकी वह सलाई जिससे वे सिकरी बनाते हैं। ३ रस्सा या रस्सी बनानेकी टिकुरी।

तकली (हिं० स्त्री) छोटा तकला, टेकुरी।

तकलीफ (अ० स्त्री) १ कष्ट, दुःख, क्लेश। २ विपत्ति, मुसीबत।

तकल्लुफ (अ० पु०) शिष्टाचार, सम्मान, आदर।

तकवाना (हिं० क्रि०) देखनेका काम किसी दूसरेसे कराना

तकवारा—पञ्जाब प्रदेशके अन्तर्गत डेरा-इस्माइलखां जिलेका एक शहर। यह शहर कुछ ग्रामोंको ले कर बना है और डेरा इस्माइलखांसे २० मील उत्तर-पश्चिममें, अक्षा० ३२°८' उ० और देशा० ७०° ४०' पू०में अवस्थित है। यहां गन्दपूर और जाट जातिका निवास है। अधिवासियोंमें अधिकांश कृषिकार्य करते हैं। पर्वतके उपत्यका प्रदेशमें १२।१४ फुट खोदनेसे ही पानी निकल आता है। यहां रसद बहुत मिलती है।

तकवालवाल—पेशावर जिलेका एक ग्राम। यह ग्राम पेशावरसे खाईवार, जामरूड आदिके रास्तेमें, बुर्ज-इ-हरिसिंहसे १४ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। यहां बहुतसे प्राचीन बौद्धस्तूप भग्नावस्थामें पड़े हैं। एक स्तूपको वहांके लोग, तकवालवालको 'टेहरी' कहते हैं। ये स्तूप बहुत बड़े हैं। 'तकवाल वालको टेहरी-को खुदाई हुई थी, उसमें दो पुरुषमूर्ति और एक स्त्री-मूर्तिका बड़ा भारी मस्तक निकला है। इनमेंसे एक मूर्ति बुद्धदेवकी है और एक किसी राजाकी बतलाई जाती है, स्त्री-मुखका आकार बड़ा विकट है।

तकसीम (अ० स्त्री०) १ विभाग करनेकी क्रिया, बँटाई। २ भाग, हिस्सा।

तकसीर (अ० स्त्री०) १ अपराध, दोष, कसूर। २ भ्रम, भूल, चूक।

तकाई (हिं० स्त्री०) १ देखनेकी क्रिया या भाव। २ देखने-

के बदलेमें दिये जानेका धन।

तक़ाज़ा (अ॰ पु॰) १ तगादा, माँगना। २ कोई ऐसा काम करनेके लिये कहना जिसके लिये वचन मिल चुका हो। ३ प्रेरणा, उत्तेजना।

तकान (हि॰ स्त्री॰) थकन देखो।

तकाना (हि॰ क्रि॰) दिखाना, बतलाना।

तकार (सं॰ पु॰) त स्वरूपे कार। तस्वरूप वर्ण त अक्षर। "एष भाषा तकारन्तु तस्तस्य रचना भवत्" (कामधेनु॰)

तकारा—बम्बई प्रदेशकी एक पत्थर काटनेवाली मुसलमान जाति। प्रवाद है कि, यह जाति बीजापुरकी कल्लुफोड़ा अर्थात् पत्थर-काटनेवाली जातिसे उत्पन्न हुई है। तकार लोगोंका कहना है कि, सम्राट् औरङ्गजेबने उनको मुसलमान धर्ममें दीक्षित किया था। इनकी आकृति और पोशाक मुसलमानोंके समान है। ये परस्परमें हिन्दी तथा दूसरोंके साथ मराठी बोलते हैं। पुरुषगण मध्यमाकृति सुगठित और काले होते हैं। तथा मस्तक मुड़ाते और लम्बी या छोटी दाढ़ी रखते हैं। पहनावेमें ये धोती, अचकन और पगड़ी व्यवहार करते हैं। स्त्रियां मराठी कामिनियों जैसी पोशाक पहनती हैं। अभिप्राय यह है कि वे गन्दे रहते हैं। पत्थरके पत्थर उठाना और उससे चक्की, मूर्ति आदि बनाना ही इनकी उपजीविका है। ये मितव्ययी और परिश्रमी होते हैं। काम न होने पर गरीब तकारा लोग जगह जगह चक्की खोदते फिरते हैं। इनमें जिनकी अवस्था कुछ अच्छी है वे घर [illegible] लोगोंको परमात्माके अनुसार पत्थर दिया करते हैं। इस समय कामकी कमताईसे प्रायः सभी गरीब हो गये हैं और बहुतसे कृषि, मजदूरी, नौकरी आदि करने लगे हैं। वे सुन्नि सम्प्रदायके होते हुए भी शुक्रवारको मस्जिद नहीं जाते हैं तथा अल्लाई और मरियाई देवताको मानते हैं। नियमानुसार वह नमाज भी नहीं पढ़ते। मुसलमान धर्माचरणमें सिर्फ सुन्नत पड़ कर ही शान्त होते हैं। इनमें समाज-पति कोई नहीं है, वे काजीको मानते हैं। काजी ही इनके विवाह आदिमें रजिस्टरी और सामाजिक विवादकी मीमांसा करते हैं। ये लड़कोंको पाठशाला नहीं भेजते। धीरे धीरे इनकी संख्या घटती जा रही है।

तकारी—बम्बई प्रदेशकी पत्थर काटनेवाली एक जाति। अहमदनगर जिलेके जामखेड़ा, कर्मेटनगर आदि स्थानोंमें इनका वास है। सम्भवतः ये तैलिङ्ग से यहां आ कर बसे हैं। ये बलिष्ठ कर्मठ और काले हैं। दूसरोंके साथ मराठी और आपसमें तैलङ्गी भाषामें बातचीत करते हैं। ये गाय और सूअर आदिके मांसके सिवा अन्य मांस खाते और शराब पीते हैं। पुरुषोंका पहनावा धोती चादर, कुर्ता, जूता और मराठी पगड़ी है। स्त्रियां मराठी स्त्रियों की भांति साड़ी और चोली पहनती हैं, पर कांच नहीं लगातीं। स्त्रियां हाथ और गले आदिमें ये कुछ गहने और नाक कपड़े तथा कलाइ गहने पहना करती हैं। तकारीगण साधारणतः साफ-सुथरे, परिश्रमी मितव्ययी और आतिथेय होते हैं इनमें बहुतसे मंडकटे भी होते हैं। स्त्रियां घर और गृहस्थी सम्भाल तथा पतियोंका काम-काज करती हैं। पुरुषगण पत्थर काट कर अपना जीविका-निर्वाह करते हैं। कोई कोई कृषि और मजदूरी भी करते हैं। ये भैरवोदेवी और खण्डोबाकी प्रतिमूर्ति घरमें रख कर तथा हिन्दू-त्योहारमें उनकी पूजा करते हैं। पूजा और विवाह आदिके समय ब्राह्मण ही एक पुरोहितका कार्य करता है। विवाहके समय कन्याका पिता या अन्य आत्मीय कोई प्रौढ़ व्यक्ति वर और कन्याके वस्त्रमें गांठ बांध देता है। इनमें विधवा विवाह और पुरुषोंका बहुविवाह प्रचलित है। ये धर्मानुष्ठानके समय भेंट या पुरश्चादि नहीं पढ़ते। अनेकांशमें ये कणबियोंकी तरह सन्तानोंको पढ़ाते नहीं और न किसी नये व्यवसायमें ही प्रवृत्त करते हैं।

तकावी (अ॰ स्त्री॰) सरकार या जमींदारकी ओरसे गरीब खेतिहरोंको दिये जानेका धन। यह ऋणस्वरूप दी जाती और नियत समय पर सूद समेत वसूल की जाती है।

तकिया (फा॰ पु॰) १ कपड़ेका बना हुआ गोल या चौकोर थैला। इसको रूई इत्यादिसे भर कर सोनेके समय सिरके नीचे रखते हैं बालिश। २ छज्जे रोक या सहारेके लिये लगाई जानेकी पत्थरकी पटिया मुतक्का। ३ विश्रामका स्थान, आराम करनेकी जगह। ४ आश्रय, सहारा आसरा। ५ अखरके बाहर या बस्ति

तक्ष (सं॰ स्त्री॰) तक्षित, छिन्न।

तक्मन् (सं॰ पुं॰) १ वसन्त नामक चर्मरोग। २ शीतलादेवी।

तक्मनाशन (सं॰ स्त्री॰) वसन्त-नाशकारी, वह जिससे वसन्तरोग जाता रहता है।

तर्क्य (सं॰ त्रि॰) तर्कं अर्हति तर्क यत्। हविष्मति नयति हविष्मते महाव्रत। पा ५।१।६५ इति सूत्रस्य वार्त्तिकोक्तत्वात् यत्। तर्कणीय, तर्कने योग्य, बरदाश्त करने लायक।

तक्र (सं॰ क्ली॰) तनक्ति सङ्कोचयति दुग्धं तनच्-रक्। (उणादि २।१३) दधिविशेष, चतुर्थांश जलके साथ मथा हुआ दही मठा, छाछ। मथित दधिमेंसे नवनीत निकाल लेने पर जो द्रवभाग अवशिष्ट रहता है उसको तक्र या घोल कहते हैं। पर्याय—गोरसज, कालशेय, बिलोडित, दण्डाहत, अरिष्ट, घट, उदश्वित् मथित और दण्ड। (राजनि॰) भावप्रकाशमें लिखा है कि—तक्र पाँच प्रकारका है—घोल, मथित, तक्र, उदश्वित् और छच्छिका। बिना पानी दिये मलाई सहित दहीको मथने से घोल बनता है। बिना मलाईवाले दहीको पानीके साथ मथ कर जो रस बनाया जाता है उसे मथित कहते हैं। दहीको चतुर्थांश जलके साथ मथनेसे तक्र, अर्द्धांश जलके साथ मथनेसे उदश्वित् और बहुत पानीके साथ मथ कर नवनीत निकाल लेनेसे उस मठाको छच्छिका कहते हैं। गुण—घोल वायु और पित्तनाशक है। घोल देखो।

मथित—कफ और पित्तनाशक है। तक्र—मधुर और अम्लरसविशिष्ट, थोड़ा कषाय, लघु, उष्णवीर्य, अग्निदीप्तिकर, शुक्रवर्द्धक, प्रीतिजनक और वायुनाशक, ग्रहणी-शोथ, अतीसार, ग्रहणी पाण्डु, अर्श, प्लीहा, गुल्म, अरुचि, विषमज्वर, तृष्णा, वमनप्रसेक, शूल, मेद, श्लेष्मा और वायुरोगके लिए हितकर है। तक्र लघु होनेसे धारक है, पर विपाकमें मधुर होनेसे पित्तप्रकोपक नहीं है। इसके कषायत्व, उष्णत्व, विकाशित्व और रूक्षत्वके द्वारा कफ नष्ट होता है।

तक्र सेवन करनेवालेको कोई क्लेश या रोग नहीं होता। विद्वानोंका कहना है कि जैसे अमृतपान देवोंके लिए सुखावह है, वैसे ही मनुष्योंके लिए तक्र सुखावह है।

उदश्वित्—कफकारक, बलकारक और अत्यन्त श्रमविनाशक है।

छच्छिका—शीतवीर्य, लघु, कफनाशक तथा पित्त, श्रम, पिपासा और वायुनाशक है। यह लवणयुक्त होने पर अग्निदीप्तिकर भी है।

जिस तक्रमेंसे सम्पूर्ण घी निकाल लिया गया हो वह अत्यन्त हितकर और लघु होता है। जिस तक्रमेंसे थोड़ा घी निकाला गया हो वह उससे कुछ गुरु, पुष्टिकारक और कफनाशक है। जिसमेंसे घी बिलकुल ही नहीं निकाला गया हो, वह घन, गुरु, पुष्टिकारक और कफवर्द्धक है।

वायुशान्तिके लिए सोंठ लवण और अम्लरसयुक्त तक्र प्रशस्त है।

पित्तप्रशमनके लिए चीनी और मधुर रस मिला कर घोल सेवन करना चाहिये।

कफप्रशमनके लिए त्रिकटुयुक्त घोल हितकर है।

घोलमें हींग, जीरा और सेंधा नमक मिला कर पीनेसे सब तरहकी वायु प्रशमित होती है। यह घोल रुचिकारक, पुष्टिकर, बलप्रद, वस्तिशूलनाशक, अर्श और अतीसार रोगमें विशेष फलदायक है।

गुड़-मिश्रित घोल मूत्रकृच्छ्ररोगमें पीनेसे फायदा होता है।

अपक्व तक्र—कोष्ठगत कफनाशक पर कण्ठगत कफकी वृद्धि करता है।

पक्व तक्र—पीनस, श्वास और काशरोगके लिए हितकर है।

शीतकालमें, मन्दाग्नि, वायुरोग और अरुचिके स्रोतोंके रुक जाने पर तक्र अमृतकी भाँति फलप्रद है।

क्षयरोगमें दुर्बल शरीरमें, मूर्छा, भ्रम, दाह और रक्तपित्त रोगोंमें तथा गर्मियोंमें तक्र नहीं सेवन करना चाहिये। (भावप्र॰ तक्रवर्ग)

तक्रकूर्चिका (सं॰ स्त्री॰) तक्रजाता तक्रयोगेन उत्पादुग्धात् जाता कूर्चिका। फटा हुआ दूध, छेना। इसका गुण—मलावरोधक, वायुवर्द्धक, रूक्ष तथा अत्यन्त गुरुपाक

है। इससे अच्छे अच्छे खाद्यद्रव्य प्रस्तुत होते हैं।

तक्रजननी (सं० स्त्री०) मट्ठा, छाछ, मठा।

तक्रजन्म (सं० क्ली०) दधि, दही।

तक्रपर्याया (सं० स्त्री०) तक्राह्वा।

तक्रपिण्ड (सं० पु०) तक्रेण जातः पिण्डः। तक्रदुष्ट दुग्धपिण्ड, फटा हुआ दूध छेना।

"दुग्धं तक्रेण वा दुष्टं दग्धं यद् सुवासया।
द्रव्यभागेन हीन यत् तक्रपिण्डः स उच्यते॥"

दही और मट्ठेसे दूध खराब होने पर उसे उत्तम कपड़ेमें बांध देते हैं, बाद उससे सब पानी निकल जाने पर जो पिण्डके आकारका पदार्थ रह जाता है उसीको तक्रपिण्ड कहते हैं।

तक्रमेह (सं० पु०) पुरुषोंका एक रोग। इसमें छाछसा सफेद मूत्र होता है और मट्ठेसी गन्ध आती है।

तक्रभक्षा (सं० स्त्री०) तक्रा, एक प्रकारका क्षुप।

तक्रभिद् (सं० क्ली०) कपित्थ कैथ। (Feronia elephantum)

तक्रमांस (सं० क्ली०) तक्रयोगेन पाचितं मांसं। तक्रसंयोगसे पक्कमांस, मांसका रसा, अखनी। तक्रमांसका विषय भावप्रकाशमें इस तरह लिखा है—किसी पात्रमें घीसे हींग और हल्दी भून लेते हैं। बाद बकरेके मांसको खण्ड खण्ड कर उसी घीमें भूननेके बाद उपयुक्त जल दे कर उसे धीमी आंचमें रांधा करते हैं। तदनन्तर जीरे इत्यादि मिश्रित मट्ठेमें मांसको डाल देते हैं। इसी तरहसे प्रस्तुत किये जानेको तक्रमांस कहते हैं। इसका गुण वायुनाशक, लघु, रुचिजनक, बलकारक, कफनाशक और कुछ पित्तवर्द्धक है। यह तक्रमांस समस्त खाद्य पदार्थोंका परिपाकजनक है।

तक्रवटक (सं० पु०) पिष्टकविशेष, एक प्रकारका पीठा।

तक्रवामन (सं० पु०) तक्रं वामयति वाम-णिच्-ल्यु। नागरङ्ग, नारंगी।

तक्रसन्धान (सं० पु०) एक प्रकारकी कांजी। यह सौ टके भर मट्ठेमें एक टके भर सांभर नमक, राई और हल्दीका चूर्ण डाल कर बनाया जाता है। यह कांजी पन्द्रह दिन तक उसी अवस्थामें रहनेके बाद तैयार होती है। प्रतिदिन यह दो दो टंक सेवन करनेसे २१ दिनोंमें तापतिल्ली अच्छी हो जाती है।

तक्रसार (सं० पु०) मक्खन।

तक्राट (सं० पु०) तक्राय तक्रोत्पादनाय अटति अट्-अच्। मन्थनदण्ड, मथानी।

तक्रारिष्ट (सं० पु०) तक्रेण प्रस्तुतः अरिष्टः। अरिष्ट औषधविशेष। इसकी प्रस्तुत-प्रणाली—अजवायन, आंवला, हड़ और मिर्च प्रत्येकके ७ पल और पंचलवणके १ पलको एकत्र चूर्ण कर ८ सेर मट्ठेमें मिला कर चार दिन तक रखते हैं। इसीका नाम तक्रारिष्ट है। इसके सेवन करनेसे अग्निकी दीप्ति होती तथा शोथ, गुल्म प्रभृति रोग जाते रहते हैं। यह औषध प्रायः संग्रहणी रोगमें व्यवहार की जाती है। (चक्रदत्त)

तक्राह्वा (सं० स्त्री०) एक प्रकारका क्षुप।

तक्व (सं० त्रि०) तक गतौ व। गमनशील, जल्दी जानेवाला।

तक्वन् (सं० त्रि०) तक गतौ वनिप्। १ गतिशील, तेजीसे दौड़नेवाला। (पु०) २ चोर, चोर।

तक्ववी (सं० स्त्री०) तक्वानां चौराणां वीः गतिः, ६-तत्। चोरोंकी गति, चोरोंका भगाना।

तक्ष (सं० पु०) १ नृपतिविशेष, रामचन्द्रके भाई भरतके बड़े पुत्र।

"तक्षः पुष्कल इत्यास्तां भरतस्य महीपतेः।" (भाग० ९।११।१२)

२ वृकके एक पुत्रका नाम। ३ पतला करनेकी क्रिया।

तक्षक (सं० पु०) तक्षः-ण्वुल्। १ सर्पविशेष, अष्ट नागोंमेंसे एक।

"अनन्तो वासुकिः पद्मो महापद्मोऽथ तक्षकः।" (भारत०१)

पुराणके मतानुसार अष्ट नागोंमें शेष, वासुकि और तक्षक ये तीन प्रधान हैं। कश्यपके औरस और कद्रूके गर्भसे तक्षकका जन्म हुआ था। खाण्डवारण्यमें इसका आवास था। शृङ्गी नामक ऋषिकुमारके शापको सफल करनेके लिये तक्षकने राजा परीक्षित्को काटा था। इस कारण राजा जनमेजयने इस पर क्रुद्ध हो कर सर्पयज्ञका अनुष्ठान किया। तक्षकको यह खबर मिलते ही उसने इन्द्रकी शरण ली तथा वासुकिने महर्षि आस्तीकको सर्प-यज्ञ रोकानेके लिये भेजा। राजा जनमेजयने तक्षकको इन्द्रका शरणागत जान कर इन्द्रके

कोंने कहा—यदि इन्द्र तक्षकको न छोड़ें, तो तक्षकको इन्द्रके साथ भस्म कीजिये।

होताने राजाकी आज्ञा पा कर तक्षकका नाम ले कर अग्निमें आहुति दी। उसी समय तक्षकके साथ इन्द्र अग्निकी ओर आकृष्ट होने लगे। इन्द्रने भयभीत हो कर तक्षकको छोड़ दिया और अपने स्थानको प्रस्थान किया। तक्षक अर्धविह्वल हो कर क्रमशः प्रज्वलित अग्निशिखाके समीपवर्ती हुआ। इसी समय आस्तीकने महाराज जनमेजयसे सर्पयज्ञ निवारित होनेकी भिक्षा मांग कर इसकी रक्षा कर ली। (भारत आदि पर्व) परीक्षित, जनमेजय, आस्तीक देखो।

हिन्दुओंका विश्वास है कि तक्षक इच्छानुसार मनुष्य शरीर धारण कर सकता था। कोई कोई पण्डितोंका कहना है कि तक्षक तक्षककी सन्तान हैं। टॉड साहब कहते हैं कि राजा शालिवाहनने तक्षकवंशमें जन्मग्रहण किया था। नाना लोग भी अपनेको तक्षकके वंशधर बतलाते हैं।

यूरोपीय पुराविदोंका कहना है कि प्राचीन हिन्दुओंने अनार्योंको तक्षक और नाग नामसे उल्लेख किया है। संस्कृत भाषामें तक्षक शब्द सिर्फ एक व्यक्तिके लिये ही प्रयुक्त नहीं हुआ है; खाण्डवदाहके समय अर्जुनने एक तक्षकको दग्ध किया था। तक्षक और नागवंशीय लोग वृक्ष और सर्पोपासक थे। शक जातिके विभिन्न वंश तक्षक और नाग नामसे परिचित होते थे।

कनिंहमका कहना है कि सर्पोपासक तक्ष और हिन्दुओं द्वारा वर्णित तक्षक जाति दोनोंका एक ही वंश था और पञ्जाबमें उनका वास था। पञ्जाबवासी तक्ष अथवा तक्षकोंके साथ दिल्लीके पाण्डवोंका एक भारी युद्ध हुआ था। उस युद्धमें परीक्षित्‌की मृत्यु हुई थी और तक्षकोंने जय प्राप्त की थी। इसीको ही महाभारतमें तक्षक दंशनसे परीक्षित्‌की मृत्युरूपमें वर्णन किया गया है।

टॉड साहबके मतसे तक्षक शकद्वीपकी जातिकी एक शाखा थी। ये पहले उत्तर-पश्चिम प्रान्तमें वास करते थे। महाभारतीय युद्धके बादसे ये लोग क्रमशः भारतके नाना स्थान अधिकार करने लगे। इनका जातीय चिह्न सर्प था इसलिये इनके वंशका नाम तक्षक हो गया। ईसासे ६०० वर्ष पहले इस वंशने भारत पर आक्रमण किया था। मगध तक इनका अधिकार विस्तृत हुआ था। तक्षकवंशीय राजा १० पीढ़ी तक मगधके सिंहासन पर बैठे थे। इस राजवंशमें एक राजाके नामानुसार ही नागपुरका नामकरण हुआ है। टॉड साहब कहते हैं कि, शिशुनागका आक्रमण और पार्श्वनाथ तीर्थङ्करके जन्म सामयिक है। कहा जाता है कि, इस वंशके किसी किसी व्यक्तिने ब्राह्मणधर्म ग्रहण किया था जिनका वंश अग्निकुलके नामसे प्रसिद्ध है।

तक्षक लोग राजा भारतके बहुत प्रदेशोंका शासन दण्ड परिचालन करते थे। गुजरातमें भी कुछ समय तक तक्षक लोगोंने स्वाधीनतासे राज्य किया था।

नागपुर जिलेके बहुत जगह तक्षक एक मान्य देवता है।

"मधूनि निम्बपत्राणि योऽत्ति मेषगते रवौ।
भक्षितेऽप्यमिषस्तस्य तक्षकः किं करिष्यति॥" (तिथित)

रविके मेषराशिमें गमन करने पर (अर्थात् वैशाख मासमें) जो मधु और निम्बपत्र भक्षण करते हैं, तक्षक दंशन कर के भी उनका कुछ बिगाड़ नहीं सकता। "तक्षकः किं करिष्यति"में तक्षक पद भावका, अर्थात् वैशाख मासमें मधु और निम्बपत्रका भक्षण सर्प विषका नाशक है।

२ विश्वकर्मा। (शब्दर०) ३ सूत्रधार। (हेम०) ४ संकर जातिविशेष, बढ़ई। सूत्रकारके औरस और शिल्पकन्याके गर्भसे इसकी उत्पत्ति हुई है। सूत्रधर देखो। ५ स्वनाम-प्रसिद्ध प्रसेनजित्‌के पुत्र। (भाग० ९।१२।८) ६ नागवायु। (त्रिका०) ७ ईटक।

तक्षकीय (स० त्रि०) तक्षक अस्त्यर्थे नड़ादित्वात् छ कुक् च। तक्षविशिष्ट जिसमें सांप हो।

तक्षण (स० क्ली०) तक्ष तन् करने भावे ल्युट्। १ छेदकरण लकड़ीको साफ करनेका काम छेदा करनेका काम।

"प्रोक्षणं संहतानाञ्च दारवाणाञ्च तक्षणम्।" (मनु ५।११५)

२ बढ़ई। ३ लकड़ी पत्थर आदि गढ़ कर मूर्तियां बनाना।

तक्षणी (स० स्त्री०) तक्ष्यतेऽनया तक्ष करणे ल्युट्

टित्वात् ङीप्। वासीयन्त्र, बढ़इयोंका रंदा नामक एक औजार इससे वे लकड़ी छोल कर साफ करते हैं।

तक्षन् (सं० पु०) तक्ष कनिन्। कनिन् युवृषितक्षिरा-जीति। उण् १।१५६। १ त्वष्टा, बढ़ई। २ विश्वकर्मा। ३ चित्रा नक्षत्र। (त्रि०) ४ तक्षणकर्त्तृमात्र, जिससे काठ इत्यादि साफ किया जाता है।

तक्षशिल—तक्षशिलाके एक राजा। ग्रीक-ऐतिहासिकोंका कहना है कि, ३२७ ई०के पहले अलेकसन्दरके सिन्धु नदके किनारे तक पहुंचने पर उक्त राजाने अग्रसर हो कर अलेकसन्दरका साथ दिया था।

अलेकसन्दरने जब भारत पर आक्रमण किया था, तब पञ्जाब क्षुद्र राज्योंमें विभक्त था। ये राजगण प्रायः सर्वदा ही आपसी कलहमें प्रवृत्त रहते थे। इन राजाओंमें पुरु अधिक क्षमताशील थे। उनसे ईर्षा कर तक्षशिल अलेकसन्दरके साथ मिल गये थे।

तक्षशिला—देशविशेष, एक प्राचीन देशका नाम। भरतके पुत्र तक्षको इस स्थान पर राजधानी थी। महाभारतके मतानुसार यह स्थान गान्धारके मध्य है। (भारत १।३।२०) जनमेजयने यहां सर्पयज्ञ किया था।

(भारत स्वर्गारोहण ५ अ०)

इस नगरका भग्नावशेष अभी ६ वर्गमील भूमिके ऊपर फैला हुआ है। भग्नावशेषमें बहुतसे बौद्धमन्दिर और स्तूप देखे जाते हैं।

प्राचीन कालके तक्षवंशीयगण इस प्रदेश पर शासन करते थे। इसी वंशके नामानुसार तक्षशिला नाम पड़ा है। १ली शताब्दीके प्रारम्भमें तक्षशिला नगर अमन्द नामसे परिचित था।

तक्षशिलाकी जमीन बहुत उर्वरा है। यहां बहुतसी नदियां और सोते हैं। फल और पुष्प यहां बहुत उपजते हैं। अधिवासिगण अत्यन्त साहसी और सतेज हैं। पहले यहां अनेक सङ्घाराम (बौद्धमठ) थे, अभी उनका केवल भग्नावशेष देखा जाता है। बहुत थोड़े बौद्ध यहां वास करते हैं।

३२१ ई० सनके पहले अलेकसन्दर भारत आक्रमणके समय जब तक्षशिला आये थे, तब यहांके राजाने तीन दिन तक यथेष्ट आदरके साथ उनको अपने यहां रखा था। चीन परिव्राजक भी यहां आये थे। उन्होंने भी तीन दिन तक इस राज्यमें यथेष्ट सम्मान पाया था। तीन दिन तक अभ्यागत व्यक्तिको अभ्यर्थना करनेका नियम इस नगरमें प्रचलित था।

चीन-परिव्राजकके भ्रमणवृत्तान्त पढ़नेसे मालूम होता है, कि तक्षशिलावासी भारतके मध्यप्रदेशमें जो भाषा प्रचलित है वही भाषा बोलते थे। इन लोगोंमें ताकरी अक्षर प्रचलित था।

तक्षशिलाका दृश्य अत्यन्त रमणीय है। राजधानीके उत्तर-पश्चिम भागमें नागराज एलापत्रका सरोवर है। इस सरोवरका जल अत्यन्त स्वच्छ है। तरह तरहके कमलके फूल सरोवरको शोभाको बढ़ा रहे हैं। सरोवरके दक्षिण पूर्वमें अशोकनिर्मित गह्वर है। प्रवाद है, कि इस गह्वर (गुफा) के चारों ओर १०० पद तकको जमीन भूकम्पमें कभी कंपती नहीं है। शहरके उत्तरमें अशोकने एक स्तूप निर्माण किया था। पर्वके दिनमें नागरिकगण स्तूपको पुष्पादिसे आच्छादित और आलोकित करते थे।

पण्डितोंके मतानुसार तक्षवंशके राजाओंने वितस्ता नदीके किनारे तक्षशिला राज्य स्थापन कर बहुत दिनों तक स्वाधीनतासे यहां राज्य किया था अलेकसन्दरके समयमें भी तक्षशिला स्वाधीन राज्य था। अलेकसन्दरने यहांके राजाके साथ मित्रता की थी। महाराज अशोकके समय तक्षशिला उनके साम्राज्यभुक्त था। मौर्यवंशके राजाओंने कुछ काल तक यहां शासन किया था।

जब अशोक पञ्जाबके शासनकर्त्ता थे, तब तक्षशिला-नगरमें ही उनकी राजधानी थी। उनके पुत्र कुणाल यहां रहते थे। कनिंहमका कहना है, कि खृ० पू० शताब्दीके प्रारम्भमें तक्षशिला युक्रेटाइडिस राज्यके अन्तर्गत था। १२६ ई० सनके पहले अबर नामक शकगणने इस प्रदेशको अधिकार कर प्रायः एक शताब्दी तक यहां राज्य भोग किया था। बाद कुषाण कुलोद्भव कनिष्क तलवारके बलसे इस प्रदेशके राजा हुए। इस समय उनके प्रतिनिधि शासनकर्त्तागण तक्षशिलामें राज्य करते थे। इन शासनकर्त्ताओंकी बहुतसी मुद्राएं और उत्कीर्णलिपि शाहधेरी नगरमें मिली हैं। स्वार्टस् साहबने जिस लिपिको पाया है, उसमें तक्षशिलाका नाम अङ्कित है।

चीनका भ्रमण पढ़नेसे मालूम पड़ता है, कि तक्षशिला नगरके चारों ओर चीन प्रदेशोंकी भांति प्राचीर और नगरमें बहुतसी गलियां थीं। कार्टियसने नगरके एक सूर्यका मन्दिर, एक उद्यान और एक मनोहर सरोवरका उल्लेख किया है। उस समय नगरके बाहरमें भी एक बड़े बड़े पत्थरोंसे घिरा हुआ मन्दिर था। चीनके बाद बहुत काल तक तक्षशिलाका विवरण नहीं मिलता है। इसी शताब्दीमें फाहियान इस राज्यमें आये थे। उन्होंने तक्षशिलाको चान्‌-शि-लो कहा है। बुद्धदेवने इस स्थान पर अपना मस्तक किसी मनुष्यको दान दिया था। इसी कारण चीन-भ्रमणकारीने इस नगरका यह नाम रखा था। भारतीय बौद्धगण तक्षशिलाको तक्षशिर कहते हैं। ६३० ई०में युएन-चुयाङ् यहां आये थे। इस समय राजवंश निर्मूल तथा तक्षशिला काश्मीरके अधीन हो गया था। बौद्धमठकी संख्या कम नहीं थी, किन्तु थोड़े से महायान मतावलम्बी उनमें वास करते थे।

इस नगरकी अवस्थितिके विषयमें बहुत मतभेद है। प्लिनी कहते हैं कि प्राचीन तक्षशिला पुष्कला नगरसे ५१ मील दूरमें है। प्लिनीके वर्णनानुसार यह नगर सिन्धु नदके दो दिनके रास्ते पर एक नदीके किनारे अवस्थित है। किन्तु चीनपरिव्राजकोंके भ्रमण-वृत्तान्तसे मालूम पड़ता है कि सिन्धु नदके पूर्वदिशाकी ओर तीन दिन तक पैदल चलने पर इस नगरमें पहुंचते हैं। चीनकी लिपिके अनुसार हसन अब्दालके निकटस्थ किसी स्थानमें तक्षशिला नगर था ऐसा अनुमान किया जा सकता है। जेनरल कनिंघम कहते हैं कि शाहढेरी प्राचीन तक्षशिला है। सभी प्राचीन लेखकोंने तक्षशिलाको अन्यान्य नगर समझा था।

तक्षशिलाकी प्रजा जब मगध-राज बिन्दुसारके विरुद्ध विद्रोही हुई थी, तब बिन्दुसारके आदेशानुसार सुसिमने एक बार यह नगर अवरोध किया था। किन्तु उनके अकृतकार्य होने पर अशोकके ऊपर इस कार्यका भार सौंपा गया। अशोकके आने पर तक्षशिलावासियोंने उनकी अधीनता स्वीकार की। महाराज अशोकके शासनकालमें तक्षशिलाकी आय ३६ करोड़ रुपये की थी। शाहढेरी नगरका भग्नावशेष और स्तूपादि अभी भी इसके पूर्व-गौरव और सम्पन्नताका पूर्ण परिचय दे रहे हैं।

तक्षशिलाका भग्नावशेष कई एक भागोंमें विभक्त है जो अभी भिन्न भिन्न नामोंसे पुकारे जाते हैं। वे दक्षिण पश्चिमसे उत्तर-पूर्वमें विस्तृत हैं। दक्षिणकी ओर इनके नाम (१) बीर (२) हतियाल (३) सिर-काप-का कोट (४) काछ कोट (५) बाबरखाना और (६) सिर-सुख-का-कोट हैं। इस नगरके स्तूप, मठ इत्यादि अत्यन्त आश्चर्यजनक हैं। पञ्जाबके अन्यान्य स्थानोंकी अपेक्षा इस प्रदेशमें प्राचीन मुद्रा और पुरावस्तुएं बहुत पायी जाती हैं। कालकाओंके तथा नगरका निकटवर्ती स्थान बहुत उर्वरा है। स्ट्राबो और प्लिनी दोनों कहते हैं, कि चारों ओर विस्तृत पर्वतके मध्यका प्रदेश पर तक्षशिला अवस्थित है। शाहढेरी नगरकी अवस्थिति और इसके भग्नावशेषके साथ प्राचीन तक्षशिलाकी अवस्थिति और उसकी अट्टालिकाओंका सामञ्जस्य देखनेमें आता है। यहां जो शिलालेख पाया गया है, उसके पढ़नेसे भी यही प्रतीत होता है कि यही स्थान तक्षशिलाके नामसे प्रसिद्ध था। बौद्धग्रन्थमें लिखा है, कि बुद्धदेवने तक्षशिलामें अतीव आश्चर्य कार्य किये थे, जिसका निदर्शन भी इस नगरमें पाया जाता है। इन्हीं सब कारणोंसे शाहढेरी नगर ही प्राचीन तक्षशिला है ऐसा अनुमान किया जाता है

यह पञ्जाब विभागके रावलपिण्डी जिलेमें अक्षा० ३३ १० उ० और देशा० ७२ ४८´ पू०में अवस्थित है।

यह नगर अत्यन्त प्राचीन है। रामायणमें भी इसका उल्लेख है। यह नगर गन्धर्वोंकी राजधानी था। भरतने यह राज्य जय किया था। केकयभूपति युधाजित्‌ने इस राज्यको जीतनेके लिए जब रामचन्द्रजीसे अनुरोध किया, तब भरत गन्धर्वदेश अधिकार करनेके लिये भेजे गये। भरतने राज्यको जय कर अपने पुत्र तक्षको यहां स्थापन किया। रामायणमें तक्षशिलाको सिन्धुनदके उत्तरमें अवस्थित बतलाया है।

तक्षशिलादि (म० पु०) तक्षशिला आदिर्यस्य बहुव्री०। पाणिनिका गण। सोऽस्याभिजनः इस अर्थमें तक्षशिलादि शब्दके उत्तर यथाक्रमसे अञ् और छ होता है तक्षशिला, वत्सोद्धरण, कौर्मदुर,

को राजा बनाया। जब तख्तसिंह मारवाड़के राजा हो गये तो अहमदनगरवालोंने बखेड़ा शुरू किया। आखिर इनके पुत्र भी छ वर्ष बाद जोधपुर चले आये। इनका अपने पुत्रसे कई बातोंमें मतभेद था। इनके शासनकालमें प्रजा विशेष सुखी न थी। (राजस्थान)

तख्ता (फा० पु०) १ लकड़ीका चीरा हुआ बड़ा पटरा, पल्ला। २ लकड़ीकी बड़ी चौकी, तख्त। ३ मुर्देको श्मशान ले जानेको लकड़ीकी बनी हुई टट्टरी, अरथी, टिकठी। ४ कागजका ताव। ५ जमीनका अलग अलग टुकड़ा, क्यारी।

तख्तापुश्त (फा० पु०) किताबकी जिल्द पर लगाये जानेका पट्ठोंका जुज। इसके अनुसार यह शब्द भी लिया जाता है।

तख्ती (फा० स्त्री०) १ छोटा तख्ता। २ लिखनेकी पटी। ३ किसी चीजकी छोटी पटरी।

तगड़ा (हि० वि०) १ बलवान्, मजबूत, सबल। २ अच्छा और बड़ा।

तगड़ी (हि० स्त्री०) तागड़ी देखो।

तगण (सं० पु०) छन्दःशास्त्रोक्त त्रिवर्णात्मक गणविशेष, छन्दःशास्त्रमें तीन वर्णोंका समूह। इसमें पहले दो गुरु और तब एक लघु (ऽऽ।) वर्ण होता है।

तगदमा (अ० पु०) अनुमान, अन्दाजा, तखमीना।

तगना (हि० क्रि०) तागा जाना।

तगपहनी (हि० स्त्री०) जुलाहोंका एक औजार। इससे वे टूटे हुए सूत जोड़ते हैं।

तगमा (हि० पु०) तमगा देखो।

तगर (सं० पु०) तग कौटिल्ये अर, ६-तत्। १ महोरगोपजात वृक्षविशेष, तगरमूल, एक प्रकारका वृक्ष जो काश्मीर, भूटान अफगानिस्तान और कोङ्कण देशमें नदियोंके किनारे होता है। कोङ्कणमें यह तरवट और कोङ्कणदेशमें पिण्डीतगर नामसे प्रसिद्ध है। इसके पर्याय-वाची शब्द—कालानुसारिवा, वक्र, कुटिल, शठ, महोरग, नत, जिह्म, दीपन, तगरपादिक, विनम्र, कुञ्चित, पत्र, नहुष, दण्डहस्त, बर्हण, पिण्डीतगरक, पार्थिव, राजहर्षण, कालानुसार्य, चक्र और दीन। गुण—शीतल, तिक्त तथा दृष्टिदोष, विषदोष, भूतोन्माद भय-नाशक और पथ्य। (राजनि०)

भावप्रकाशके मतसे तगर दो प्रकारका है जिनमेंसे पहलेका नाम है वक्र वा नत तगर। पर्याय—कुटिल और नहुष। दूसरेका नाम है पिण्डतगर। पर्याय—दण्डहस्ती और बर्हिण। ये दोनों प्रकारके तगर उष्णवीर्य मधुर रस स्निग्ध लघु तथा विष अपस्मार शूल, अक्षिरोग और त्रिदोषनाशक है।

साधारणतः नदीके समीपवर्ती वृक्षको पाकुड़ या तगर पाकुड़ (Patrocarpus Dalbergiodes) कहते हैं। यह भारतवर्षमें सिटाङ्ग नदीके पूर्वाञ्चलसे अराकान तथा चट्टग्राम, उत्कल और त्रावनकोर नदीके किनारे भी थोड़ा बहुत पाया जाता है। दूसरा पिण्डीतगर (Tabernaemontana Coronaria) कोङ्कणदेशमें बहुतायतसे होता है। किसी किसीका कहना है कि जब तगरका नामान्तर दण्डहस्त है, तो अवश्य ही भारत नदीमें उत्पन्न होने वाला कदलीजातीय कोठरसमन्वित नोकपुष्प याने तगरपादुप है क्योंकि इसका काण्ड दण्डाकृति और पत्ते पादुकाकृति हैं। किन्तु विचार कर देखनेसे मालूम होता कि, उस गाछके पुष्प लोकवर्ण और कोठरमय हैं। इसलिए उसको नीलपुष्प कहना ही सङ्गत है।

२ तगरमूलजात गन्धद्रव्यविशेष, एक वृक्षकी जड़ जिसकी गिनती गन्धद्रव्योंमें होती है। इसको जलानेसे दांतोंकी पीड़ा जाती रहती है। ३ मदनवृक्ष, मैनफल। ४ पुष्पवृक्षविशेष तगरपुष्प, इसमें बहुतसी पखड़ियां होती हैं और यह देखनेमें सफेद है। पर्याय—सितपुष्प, कालपर्ण, नट भन्द। (शब्दा०) यह पुष्प नारायणकी पूजाके लिए प्रशस्त है। (भारत १५।२०४।८६)

तगर (हि० पु०) एक तरहकी मधुकी मक्खी।

तगर—टलेमीके भूगोल और पेरिप्लस वर्णित भारतवर्षका एक प्राचीन नगर। यह प्रतिष्ठान नगरसे पूर्व दश दिनके पथ पर अवस्थित तथा वाणिज्यके लिये प्रसिद्ध था। किन्तु अभी इसकी वर्तमान अवस्थाका पूरा पूरा निर्णय करना कठिन है। यह नगर एक समय शिलाहारके राजाओंकी राजधानी था। पण्डित भगवानलाल इन्द्रजी कहते हैं, पूना जिलेका वर्तमान जुन्नार नगर ही प्राचीन टलेमीवर्णित तगर है। इसका कारण बतलाते हुए कहते हैं कि जुन्नार नगरकी प्राचीन शिलालिपि

को प्रविष्ट या भाग पहना दिया। उन्हींकी सन्तान कालान्तरमें तगा ब्राह्मण कहाने लगी।" कनिंगहम साहब लिखते हैं, कि गौड़-ब्राह्मण और गौड़ तगा ब्राह्मण इन दोनोंका आदि स्थान उत्तर कोशल (गोंडा जिला) है, न कि बंगाल प्रान्तका गौड़देश।

इन सब प्रमाणोंको देखते हुए यही स्थिर किया जा सकता है, कि ये गौड़-ब्राह्मण अवश्य हैं पर धर्म आचार व्यवहारमें कुछ गिरे हुए हैं।

तगाड़ा (हि॰ पु॰) लोहेका छिछला बरतन। इसमें मजदूर मसाला या चूना रख कर जोड़ाई करनेवालोंके समीप ले जाता है।

तगादा (हि॰ पु॰) तकाजा देखो।

तगाना (हि॰ क्रि॰) तागनेका काम किसी दूसरेसे कराना।

तगार (हि॰ स्त्री॰) १ वह गड्ढा जिसमें चूना गाड़ा जाता है। २ चूना गारा इत्यादि ढोनेका लोहेका छिछला बरतन। ३ हलवाइयोंका मिठाई बनानेका मिट्टीका बरतन।

तगारी (हि॰ स्त्री॰) तगार देखो।

तगियाना (हि॰ क्रि॰) तागना देखो।

तगीर (हि॰ पु॰) परिवर्तन, बदली।

तगीरी (हि॰ स्त्री॰) तगीर देखो।

तग्गार (हि॰ स्त्री॰) तगार देखो।

तग्गारी (हि॰ स्त्री॰) तगार।

तङ्क (सं॰ पु॰) तन्क भावे अच्। १ पाषाणभेदनास्त्र, पत्थर काटनेकी टाँकी। २ दुःख द्वारा जीवनधारण। ३ प्रियविरहके लिये सन्ताप, वह दुःख जो किसी प्रियके वियोगमें हो। ४ भय, डर। ५ परिधेयवसन, पहननेका कपड़ा।

तङ्कन (सं॰ क्ली॰) तङ्क भावे ल्युट्। कष्ट द्वारा जीवनधारण।

तङ्का—मुद्राविशेष, एक प्रकारका सिक्का। यह संस्कृत टङ्क शब्दसे उत्पन्न हुआ है। पहले भारतवर्ष तुर्किस्तान प्रभृति देशोंमें तङ्का प्रचलित था। अभी भी तुर्किस्तानमें तङ्गा या तङ्का नामक मुद्रा प्रचलित है। मुसलमान राजाओंके समय १४वीं शताब्दीमें सोने और चाँदीका तङ्का ही व्यवहृत होता था। सम्प्रति तङ्का और टङ्काके बदले रुपया प्रचलित हुआ है। अभी रुपया जिस अर्थमें व्यवहृत होता है, एक समय तङ्का शब्द भी उसी अर्थमें प्रचलित था।

वर्तमान समय राजसरकारमें अवसरप्राप्त कर्मचारी, सैनिक अध्यापक समाजपण्डित ब्राह्मणपण्डितको जो वृत्ति दी जाती है, उसे भी तङ्का कहते हैं।

तङ्गण (सं॰ पु॰) १ भोटदेशीय अश्व, भोट देशका घोड़ा। वाह देखो।

२ म्लेच्छ प्रधान पुराणवर्णित एक प्राचीन जनपद। यह वर्तमान अफगानिस्तानके निकट अवस्थित है। आर्यावर्त देखो।

तचाना (हि॰ क्रि॰) तप्त करना, जलाना, तपाना।

तच्छील (सं॰ त्रि॰) तत् शील यस्य, बहुव्री॰। तत् स्वभावविशिष्ट जो फलकी अपेक्षा न करके स्वभावके अनुसार काम करता है।

तज (हि॰ पु॰) कोचीन, आसाम, पूर्व बंगाल, खासिया की पहाड़ियाँ और ब्रह्मदेशमें होनेवाला एक प्रकारका सदाबहार पेड़। यह तमाल और दारचीनीकी जातिका मझोले आकारका होता है। यह सिर्फ भारतवर्षमें ही नहीं होता वरं चीन, सुमात्रा और जावा आदि स्थानोंमें भी होता है। वर्षाके बाद जहाँ कहीं धूप पड़ती है वहाँ यह पेड़ बहुत जल्द बढ़ता है। कोई कोई इसे और दारचीनीके पेड़को एक ही मानता है, पर यथार्थमें यह उससे भिन्न है। इसकी छालका पत्ता तेजपत्ता और तज (लकड़ी) इसका काम है। इसमें सफेद सुगन्धित फूल लगते हैं। इसके फल करौंदेके होते हैं। फलसे जो तेल निकलता है उससे दवा तथा अर्क बनाया जाता है। यह वृक्ष प्रायः दो वर्ष तक जीवित रहता है। विशेष विवरण त्वक् शब्दमें देखो।

तजकिरा (अ॰ पु॰) चर्चा, जिक्र।

तजगरी (फा॰ स्त्री॰) चन्दा पैदा करनेकी लोहेकी पटरी। यह दो अंगुल मोटी और लगभग डेढ़ बालिश्त लम्बी होती है।

तजना (हि॰ क्रि॰) त्यागना, छोड़ना।

तजरबा (अ॰ पु॰) १ परीक्षा द्वारा प्राप्त ज्ञान, उपलब्ध ज्ञान, अनुभव। २ किसी चीजका ज्ञान प्राप्त करनेकी परीक्षा।

तजरवाकार (हिं॰ पु॰) वह जिसने अनुभव किया हो।

तजरवाकारी (हिं॰ स्त्री॰) अनुभव, तजरवा।

तजरुवा (हिं॰ पु॰) तजरवा देखो।

तजरुवाकार (हिं॰ पु॰) तजरवाकार देखो।

तजरुवाकारी (हिं॰ स्त्री॰) तजरवाकारी देखो।

तजवीज (अ॰ स्त्री॰) १ सम्मति, सलाह, राय। २ निर्णय फैसला। ३ प्रवन्ध, इन्तिजाम।

तजवीजसानी (अ॰ स्त्री॰) एक ही हाकिमके सामने होनेवाला पुनर्विचार।

तज्ज (सं॰ त्रि॰) ततो तस्मात् जायते जन्-ड। १ उसीसे उत्पन्न, उसीमें लगा हुआ। २ शीघ्र, हठात्, तुरन्त।

तज्जलान् (सं॰ त्रि॰) ततो जायते जन-ड, तस्मिन् लीयते ली-ड, तेन तज्जलेन अनिति अन्-क्विप्। उसीसे उत्पन्न, उसीमें लीन और उसीमें अवस्थित पदार्थविशेष, अर्थात् ब्रह्म। ब्रह्मसे यह जगत् उत्पन्न हुआ है और उसी पर रहता है, बाद अन्तमें उसीमें लीन हो जायगा।

"सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत।" (छन्दो॰)

'यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते, येन जातानि जीवन्ति, यत् प्रविशन्ति अभिसंविशन्ति॥" (श्रुति)

जहांसे ये समस्त भूत जन्मते तहांसे जीवन धारण करते और अन्तमें जहां लीन हो जाते हैं, वही ब्रह्म है।

"यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे।
यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये॥" (स्मृति)

आदि सर्गकालमें जहांसे समस्त भूत उत्पन्न हुए हैं और युगक्षय होने पर जिसमें लीन हो जायगे, वही ब्रह्म है। ब्रह्म देखो।

तज्जी (सं॰ स्त्री॰) तं निम्हितं जवते जु-क्विप्, गौरा॰ ङीष्। हिङ्गुपत्रीवृक्ष।

तज्ञ (सं॰ त्रि॰) १ तत्त्वज्ञ, जो तत्त्व जानता हो। २ ज्ञानी।

तञ्जोर (तञ्जावुर)—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत अङ्गरेज शासनाधीन एक जिला। यह अक्षा॰ ८° ४८´ से ११° २५´ उ॰ और देशा॰ ७८° ४७´ से ७९° ५२´ पू॰में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ३७१० वर्गमील है। इसके उत्तरमें कोलरुण नदी, त्रिचिनापल्ली और दक्षिण अर्काटसे इसको पृथक करती है पूर्व और दक्षिण पूर्वमें बङ्गोपसागर दक्षिण-पश्चिममें मदुरा जिला और पश्चिममें पुदुकोट राज्य तथा त्रिचिनापल्ली जिला अवस्थित है। तञ्जोर जिला दक्षिण कर्णाटका एक अंश है। तञ्जोर नगर जिलेका सदर है जो कावेरी नदीके दहिने किनारे पड़ता है।

यह जिला मन्द्राज प्रदेशका उपवनस्वरूप है। इसका उत्तर भाग बहुजनाकीर्ण तथा असंख्य नारियलके कुञ्जसे शोभित है। कावेरी नदीके विस्तीर्ण डेल्टेमें बहुत धान उपजता है। अनेक प्रयःप्रणाली इस खण्डको जालको नाईं ढके रहती है। इन खाड़ियोंके द्वारा बड़ी आसानीसे शस्यक्षेत्र सींचे जा सकते हैं।

तञ्जोर नगरके दक्षिण पश्चिमांश कुछ ऊंचा है, किन्तु समस्त जिलेके मध्य कहीं भी पहाड़ नहीं है। उपकूल भागमें वालुकास्तूप और उसके बादही सामान्य जङ्गल है। केवल कालीमीर अन्तरीपसे अद्रमपत्तन अन्तरीप तक एक विस्तीर्ण लवणाक्त जलाभूमि देखी जाती है। यहां अधिक पत्थर नहीं मिलते हैं।

दक्षिण भागमें उपकूलसे प्रायः आध मील दूर जमीनसे दो गज नीचेमें पत्थरका स्तर निकला है। यह पत्थर नरम होने पर भी घर बनानेमें उपयोगी है। नग्नपत्तनके दक्षिणमें मट्टीके नीचे सीप शङ्ख और घोंघेका विस्तीर्ण स्तर खोदा हुआ है। इस स्तरके उपरी भागमें बहुत दिनोंसे सञ्चित कोमल मिट्टी पड़ी हुई है। इस तरह सीपके स्तरोंमेंसे कुछ अत्यन्त प्राचीन और कुछ आधुनिकके जैसा मालूम पड़ता है। यहांकी सब जमीन उर्वरा नहीं है, केवल जलसिञ्चनका अच्छा बन्दोवस्त रहनेसे ही शस्यादि यथेष्ट उपजते हैं। डेलटाके सिवा ऊंची भूमिकी मट्टी लोहितवर्ण और कृष्णवर्णकी है जहां कपासकी फसल अच्छी होती है और कहीं कहीं वालुकामय हल्की मट्टी है। पीले रङ्गकी चार मट्टी भी देखी जाती, जो बहुत अनुर्वर होती है।

जिलेका उपकूल भाग प्रायः १४० मील है। उपकूल भागमें ऐसी भीषण तरङ्ग आती है कि जहाज इत्यादि वहां आसानीसे जा नहीं सकते।

चावल ही यहांके अधिवासियोंका प्रधान खाद्य है। कृत्रिम उपायसे जल सींचने पर धानकी फसल अच्छी

होती है। दूसरी हैन टेको समतल भूमिमें तथा ऊंची भूमिमें केवल बड़े बड़े तालाबके निम्नवर्ती जमींकी धानकी खेती होती है। वहां कार और पिशानम् नामक दो प्रकारके धान उपजाये जाते हैं। कार धान जेठ मास में बोया जाता और कार्त्तिक मासमें काटा जाता है। पिशानम् धान आषाढ़में बोते और माघ मासमें काट लेते हैं।

रब्बी-फसल यहां बहुत कम होती है। केला, बाजरा, चना और ईख अधिक उपजती हैं। जिलेके पश्चिम भागमें ऊंची जमीन पर केला और रुई अधिक होते हैं। डेल्टेमें जहां जल सींचनेकी सुविधा नहीं है उस तरहकी भूमिमें अगहन मासमें खेतमें धान काटनेके बाद उस फसलकी खेती होती है।

तञ्जोरमें नारियल बहुत मिलता है। पञ्जमंगुल उद्यान और नगेनोर प्रभृतिमें मूली, प्याज और आलू तथा तरह तरहके साग सब्जी होती हैं। अम्बियां नीबू आदि फल भी यहां बहुत होते हैं।

इस जिलेके डेल्टा विभागमें केला, पान, तमाखू ईख इत्यादि अधिक उपजते हैं। ऊंची भूमिमें सन और पटसन (पाट) भी पैदा होते हैं। नदीके समीपकी ऊंची जमीन तथा नदी किनारे की बालू तमाखूकी खेती होती है। इसके सिवा जिलेके दक्षिण-पूर्व प्रान्त में कामीसोर पत्तनके निकट बालू जमीनमें भी तमाखू उपजता है। तमाखूके पत्ते मोटे तथा उनकी गन्ध बहुत कड़ी होती है। ये प्रायः पान अथवा चूनाके साथ व्यवहृत होते हैं। यहां तमाखू ही प्रधान वाणिज्य द्रव्य है। प्रतिवर्ष अधिक परिमाणमें तमाखू सिंगापुर और स्ट्रेटसेटलमेण्ट प्रभृति स्थानोंमें भेजी जाती है। कपास भी यहां कुछ कुछ उपजती है। जिलेका दक्षिण पश्चिमांश छोड़ कर दूसरी सब जगह आम, नारियल, इत्यादिके वृक्ष बहुत सुगमतासे उपजते हैं। दक्षिण पश्चिम भागमें पत्थरोंकी भरी रहनेसे वहां कोई अच्छे पेड़ नहीं उगते हैं।

अधिवासियोंमेंसे आधेके भू-सम्पत्ति शून्य तथा मजदूर लोग हैं। इनमेंसे प्रायः ३ भाग कृषिकार्यमें नियुक्त रहते हैं। ये प्रधानतः पल्लार तथा परिया जातिके हैं और किसी न किसी भूस्वामीके खेतमें चिरस्थायी रूपसे काम करते हैं। शेष लोग जो कोई हिन्दू हैं और सर वर प्रभृति कावेरी नदीके दक्षिणस्थ प्रदेशसे इस जिलेमें आये हुए हैं।

डेल्टा भागमें जहां भंटोंकी बाढ़से जमीन डूब जाती है वहां कीचड़ और रेतीकी मिट्टी जम जाती है जिससे उत्तम खादका काम निकलता है। किन्तु ऊंची भूमिमें तथा जहां बाढ़ी इत्यादिसे जल सींचा जाता है वहां खादका प्रयोजन पड़ता है। सब जगह इस तरहकी जमीन मवेशियोंका गोबर दे कर उर्वरा बनाई जाती है। इसके सिवा सड़ा पत्ता उद्भिज्ज खार, मुर्दाबरदफ आदि खार रूपमें व्यवहृत होता है।

तञ्जोर जिलेमें स्वभावतः जल अधिक होता है। इसके अलावा अङ्गरेज अधिकारके पहलेसे जो अनेक बांधें रहनेके कारण खेतमें जल भी अधिकी और भी अच्छी सुविधा हो गई है। उत्तरी सीमामें प्रवाहित कोलरुण नदी बहुत निकली रहनेसे इसका जल उतना अधिक काममें नहीं लाया जाता है।

इस जिलेमें बहुतसी नदियां हैं। इनके अतिरिक्त खाड़ी द्वारा भी जमीन अच्छीभांति सींची जाती है। त्रिचिनापल्लीसे ८ मील पूर्वमें कावेरी नदी, तञ्जोर जिले में प्रवेश कर कई एक शाखा-प्रशाखाओंमें विभक्त हो कर उत्तरकी ओर चली गई है। इसी प्रदेशको कावेरी नदी का डेल्टा कहते हैं, यहां धान बहुत उपजता है। जिलेके पश्चिम भागमें कोलरुण और कावेरी नदी परस्पर अत्यन्त निकटवर्ती हैं। उस जगह कोलरुणका गर्भ कावेरी नदीके अपेक्षा प्रायः ८।१० फुट ऊंचा है। अतः बहुत कम स्रोत पानीसे जो कावेरी नदीका जल क्रम क्रम कोलरुण नदीमें आ पड़ता है। इस आपदाको दूर करनेके लिये १री शताब्दीमें चोलवंशके किसी राजा ने उस स्थान पर शाखा कावेरी नदीके किनारे एक बड़ा पक्का बांध तैयार किया है, इसी कारण इसको तञ्जोरका कर्ण रतारयाल बांध कहते हैं यह बांध पत्थरका बना हुआ है। इसकी लम्बाई १०८० फुट चौड़ाई ४० से ६० फुट और ऊंचाई १५ से १८ फुट है। १८३६ ई०में कोलरुण शाखाके ऊपर एक आनिकट प्रस्तुत हुआ इससे

कावेरीकी शाखाका जल बहुत बढ़ जानेसे १८४५ ई०में कावेरीके ऊपर एक दूसरा आनिकट बनाया गया। यह कोलरुणके निकट ७५० गज तथा कावेरीके निकट ६५० गज लंबा है। शेषोक्त दो आनिकट द्वारा तञ्जोरमें जलागम सम्पूर्णरूपमें आयत्ताधीन किया गया है। कोलरुणके ऊपर आनिकट हो जानेसे इसका जल बहुत कम जाता है। पहले जो जमीन इसके जलसे सींची जाती थी, अभी उतनी दूर तक इसका जल नहीं पहुंचता है। इसके प्रतिकारके लिये पूर्वमें आनिकटसे ७० मील नीचे एक दूसरा आनिकट बनाया गया है। इस समय कोलरुणसे दो खाडी काट कर एक आर्कट और दूसरी तञ्जोर नगर तक ले गये हैं। उत्तरी खालको उत्तर-रञ्जनवायाखाल और दक्षिणी खालको दक्षिण-रञ्जनवायाखाल कहते हैं। इसके सिवा और भी कई एक खाडी खोदी गई हैं। उक्त खाडियोंसे फिर शाखा प्रशाखा निकाल कर बहुविस्तीर्ण प्रदेशमें जल सींचा जाता है। जो कुछ हो, धीरे धीरे इस जिलेकी उन्नति हो रही है। कहना नहीं पड़ेगा, कि नदीद्वारा ही प्रायः ९० अंश शस्यक्षेत्रमें जल पहुंचाया जाता है। बहुत थोडी जमीन तालाव या वृष्टिजलके ऊपर निर्भर है।

तञ्जोरमें बाढ, अनावृष्टि प्रभृति दैवदुर्विपाक प्रायः नहींके बराबर है। समुद्रके किनारे बालूका ऊंचा पहाड रहनेसे तूफानद्वारा उत्पन्न सागरतरङ्ग जिलेमें प्रवेश नहीं कर सकती है। पूर्व भागकी जमीन भी किनारेकी ओर ढालू रहनेसे नदी वा वर्षाका जल सहजहीमें निकल जाता है। सुतरां जल जमा हो कर देशको प्लावित नहीं करता है।

व्यवसाय-वाणिज्य—तञ्जोरमें सब जगह जाने-आनेकी विशेष सुविधा है। दक्षिणभारतीय रेलपथकी दो शाखायें इसके मध्य हो कर गई हैं। एक शाखा त्रिचिनापल्लीसे उपकूल होते हुए नग्नपत्तन नगर और दूसरी तञ्जोर नगरसे वहिर्गत हो कर मन्द्राजकी ओर चली गई है। जिलेके मध्य प्रायः १२३३ मील लम्बा, चौड़ा और नदी खाडी आदिके ऊपर सेतुयुक्त रास्ता है। एक ३२ मील लम्बी खाड़ी हो कर नाव इत्यादि जाती आती हैं। उन नावों पर विशेष कर वेदारण्यम् नामक स्थानका उत्पन्न लवण लादा जाता है।

शिल्पके मध्य तञ्जोरके भिन्न भिन्न धातुके तार, रेशमी कपडा, कार्पेट (गलीचा) तथा काठकी बनी हुई वस्तु प्रधान हैं। सूती कपडा और सूत, यूरोपमें कई तरहके धातु, स्ट्रेटस्‌सेटलमेण्टस् और सिंहलद्वीपमें सुपारी प्रभृतिकी आमदनी होती है। रफ्तनी द्रव्योंमें चावल ही प्रधान है।

तञ्जोरमें वृष्टिपात करमण्डल उपकूलके अन्यान्य स्थानोंकी नाईं सब वर्ष एकसा नहीं है। ज्येष्ठ मासमें दक्षिण-पश्चिम मौसम वायु आरम्भ हो कर भाद्र मास तक प्रबल रहती है। इस समय वर्षा बहुत कम होती है और जब कभी होती भी है तो दो घण्टेसे अधिक काल तक नहीं ठहरती। आश्विन वा कार्त्तिकसे पौष मास तक उत्तर पूर्व वायु बहती है। इस समय वृष्टि पड़नेसे अधिक और बहुत देर तक रहती है। तब वार्षिक-वृष्टिपात क्रमशः १५ और २५ इंच होता है। प्रायः सब मासमें वृष्टि होती किन्तु भादोंसे अगहन मास तक ही सबसे अधिक होती है। चैतसे जेठ तकका समय ग्रीष्मकाल रहता है। तापांश फाल्गुनमें प्रायः ८२°, ग्रीष्मकालमें प्रायः १०४° तथा शीतकालमें ६४° तक हुआ करता है।

आँधी मेह आदि अक्सर होता रहता है। तूफानके समय नाव जहाज इत्यादि जिलेके दक्षिणस्थ पक उपसागरमें ठहरते हैं।

तञ्जोरमें कोई भी रोग क्यों न हो, देशभरमें फैलता नहीं है। पहले यहां पीलपा (पैर फूल जाना) रोगका बड़ा प्रादुर्भाव था, अभी यह कुम्भकोनम् तक फैल गया है। स्वास्थ्यकी ओर सभीकी दृष्टि आकर्षित होनेसे यह रोग प्रायः विलुप्त हो रहा है। ज्वर, वसन्त और हैजा रोग ही संक्रामक हो जाता है। जिले भरमें प्रायः ३८ औषधालय हैं। जिनमें अनेक लोग विना व्ययके चिकित्सित होते हैं। जिलेके मध्य ५ म्युनिसपालिटि हैं।

यहांकी लोकसंख्या प्रायः २२४५०२८ है, जिनमेंसे हिन्दुओंकी संख्या अधिक है। अधिवासियोंमें वेलियर (मजूर), वेल्लनर (कृषक), परिया, ब्राह्मण, शेम्बडवन (धीवर), इदैयर (मेषपालक), कम्मलर (कारीगर), कैकलार (तांती), सतानी, (मिश्रजाति), शानर (पासी), सेट्टी

(गौड़क) अम्बट्टन् (नापित) वैश्वान (धोबी), कुशवन (कुम्हार), चत्रिय, वन्नान (धोबी) प्रभृति प्रधान हैं। मुसलमानमें शीया, सैयद सुन्नी पठान, लब्बई, राउथर प्रभृति सम्प्रदायमें विभक्त हैं। इनके अलावा ईसाई और जैन तथा थोड़ी संख्यामें अन्यान्य जाति वास करती हैं।

तञ्जापुरी माहात्म्यमें तञ्जाउर (तञ्जोर)की उत्पत्ति का विवरण इस तरह लिखा है—तञ्जन नामक एक राक्षस तञ्जापुरमें बहुत उधम मचाया करता था। अधिवासियोंको दुःखित देख विष्णुभगवान्‌ने इस राक्षसको वध किया। राक्षसने मरते समय विष्णुसे प्रार्थना की थी कि यह नगर मेरे ही नामसे प्रसिद्ध हो। विष्णु भगवान्‌ने "वैसा ही होगा" ऐसा कह कर प्रस्थान किया। उसी राक्षसके नामसे संस्कृत नाम तञ्जापुर और तामिल तञ्जाउर पड़ा है।

बहुत पहलेसे ले कर १३०० ई० तक चोलराजाओंने यहाँ राज्य किया किन्तु तञ्जाउर ठीक किस समय राजधानीके रूपमें परिणत हुआ था उसका निर्णय करना कठिन है। चोलराजाओंने त्रिचिनापल्लीके निकट उरेयुर नामक स्थानमें तथा उसके ध्वंस होनेके बाद कुम्भकोणम्‌में राजधानी स्थापन की थी।

तञ्जाउरके बृहदीश्वर महादेवके मन्दिरमें उत्कीर्ण अनुशासनसे पता चलता है, कि राजा कुलोत्तुङ्गने यह अनुशासन प्रदान किया था। अतएव यह अनुमान किया जा सकता है कि राजा कुलोत्तुङ्ग चोल अथवा उनके पिता तञ्जाउरमें राजधानी उठा लाये थे। शायद १०११से १०८० ई०के किसी समय यह घटना हुई होगी।

डाक्टर बुर्नेल साहबने चोलराजवंशकी जो तालिका प्रस्तुत की है उससे मालूम होता है कि द्वितीय कुलोत्तुङ्ग चोल ११२८ ई०में तञ्जाउर सिंहासन पर अधिष्ठित थे। उनके शासनकालसे ही तञ्जाउरके चोलराजवंशका अधःपतन आरम्भ हुआ था तथा चोल राज्यको क्रमशः घटना हो गई।

तञ्जाउर-बृहदीश्वर चरित नामक हस्तलिपिके पढ़नेसे मालूम होता है कि चोलवंशके शेष राजाका नाम वीरशेखर था। ये प्रभूत पराक्रमशाली थे। त्रिचिनापल्ली और मथुरापुरी इन्हींके समयमें तञ्जाउरमें मिलाये गये। मथुरापुरीके सिंहासनच्युत राजा चन्द्रशेखरने विजयनगरके राजासे सहायता मांगना की। विजयनगराधिपति कृष्णरायने उनको मथुरापुरीमें पुनः स्थापन करनेके लिये नागम नायक नामक सेनापतिके अधीन एक दल सैन्य भेजी। इधर वीरशेखर भी युद्धके लिये प्रस्तुत हुए। मथुरापुरीके निकट दोनों दलमें घमसान लड़ाई हुई, बाद तञ्जोरके राजाने अपना प्राण परित्याग किया। मथुरापुरी, त्रिचिनापल्ली और तञ्जाउर विजयनगरके अधीन हुए। १५३० ई०में अच्युतराय विजयनगरके सिंहासन पर बैठे। उनको पत्नीके साथ शेवाप्पा नायकका विवाह हुआ। इस सम्बन्धके कारण उस वर्ष अच्युतरायने शेवाप्पा नायकको तञ्जाउर और त्रिचिनापल्लीके शासनकर्त्ता बना कर भेजा। तभीसे तञ्जाउरमें नायक-राजवंशकी उत्पत्ति हुई। नायकराजगण पहले विजयनगरके अधीन हो राज्य करते थे। किन्तु १५६५ ई०में विजयपुरके राजाने विजयनगरको राजधानी ध्वंस किये जाने पर उस समय १६६२ ई० तक उन राजाओंने स्वाधीनभावसे तञ्जाउरमें शासन किया था। इन राजाओंके समयमें अनेक गोड़ा पशुकोट, कैलासनाथ प्रभृति कई एक दुर्ग और देवमन्दिर निर्माण किये गये थे। नायकराजाओंके समय १६१२ ई०को पोर्त्तगीजोंने नागपत्तनमें तथा १६२० ई०में डेनमार्कके लोगोंने ट्रान्क्युबार नामक स्थानमें निवासस्थान कायम किया।

जब नायकवंशके शेष राजा विजयराघव तञ्जाउरके सिंहासन पर अधिष्ठित थे, तब मदुराके चोक्कनाथ नायकने तञ्जाउर पर आक्रमण करनेके पहले राजकन्याका पाणिग्रहण करनेके लिये दूत भेजा। राजाके अस्वीकार किये जाने पर उन्होंने १६६० ई०में दलवाय वेङ्कटकृष्णप्पा नायकको तञ्जाउर जीतनेके लिये भेजा। सेनापति गोविन्द दीक्षितने उन्हें रोका, किन्तु दलवायने उन्हें पराजित कर तञ्जाउर अधिकार कर लिया और शीघ्र ही वे राजभवनके समीप पहुंच गये। उस समय विजयराघव ध्यानमें निमग्न थे। ध्यान भङ्ग होनेके बाद जब उन्हें सब बातें मालूम हुईं, तब उन्होंने अपने जोरपुत्रको बुला कर कहा, कि राजभवनकी सभी महि

स्त्रियोंको एक घरमें रख कर उनके चारों ओर बारूद संग्रह कर रखो और सङ्केत पाने पर उसमें आग लगा तुम तलवार हाथमें लिये युद्धके लिये बाहर रणभूमिमें निकल पड़ना। विजयराघव युद्ध करते करते मारे गये। इधर पुत्रने पिताका मृत्यु संवाद सुन कर अन्दर महल को बारूदमें आग लगा दी। तञ्जावुर श्मशानभूमिमें परिणत हो गया। राजभवनके दक्षिण पश्चिम-कोणमें यह दुर्घटना हुई थी। यह अंश अब भी उसी तरह भग्नावस्थामें रह कर पूर्व दुर्घटनाका स्मरण दिलाता है।

तञ्जावुर जीते जाने पर चोक्कनाथनायकने एकमात्र-पायी एलागिरिको वहांका शासनकर्त्ता नियुक्त किया। एलागिरि पहले चोक्कनाथके अधीनमें राज्य करने लगे, किन्तु कुछ कालके बाद उनके साथ मतान्तर हो जानेसे वे स्वाधीन हो गये। तञ्जावुरका राजभवन बारूदसे उड़ाये जानेके पहले एक दाई विजयराघवके नाबालिग पुत्रको ले कर नगपत्तनमें भाग आई थी। वह बालको किसी बनियेके घरमें भरणपोषण किया गया था। ५।७ वर्षके बाद विजयराघवके अन्यतम सेक्रेटरी वेनकन्ना नामक कोई नियोगी ब्राह्मण बालकका सन्धान पा कर स्वर्गीय राजाके कई एक आत्मीयवर्गोंकी सहायतासे उक्त बालक और दाईको साथ ले विजनगरको गये। जब विजापुरके सुलतानको पूरा ब्योरा मालूम हुआ, तब वे तञ्जावुरके नायकोंके दुःखसे अत्यन्त दुःखित हो गये। इस समय शिवाजीके छोटे वैमात्र भाई एकोजी विजापुरके सेना-नायकके पद पर अधिष्ठित थे। एलागिरिको भगा कर विजयराघवके नाबालिग पुत्र सिंहमालदासको तञ्जा-वुरके सिंहासन पर प्रतिष्ठित करनेके लिये विजापुरके सुलतानने एकोजीसे कहा। एकोजी जानते थे कि चोक्क नाथके साथ एलागिरिका विरोधभाव चल रहा है। अत-एव उन्होंने शीघ्र ही आयमपट्टी नामक स्थानमें एलागिरि को पराजित कर सिंहमालदासको तञ्जावुरके राजपद पर अभिषिक्त किया। वेनकन्नाने आशा की थी, कि सिंह मालके राजा होने पर उन्हें मन्त्रीका पद मिलेगा, किन्तु दाईके अनुरोधसे बनिया ही मन्त्री हुआ। इस पर वेन कन्ना नितान्त असन्तुष्ट हो कर एकोजीको राज्य ग्रहण करनेके लिये बारबार उसकाने लगा। पहले तो एकोजी-ने इस ओर तनिक भी ध्यान न दिया, किन्तु विजापुरके सुलतानका मृत्युसम्वाद पा कर वे तञ्जावुरको जीतनेकी इच्छासे ससैन्य पहुंच गये। वेनकन्नाने भी राजभवनमें सम्वाद दे दिया कि भारी विपत्ति आ पड़ी है। राजा इस घटनासे अत्यन्त भीत हो कर भाग चले। बिना खून-खराबीके तञ्जावुर एकोजीके हाथ लगा। इस तरह तञ्जावुरमें महाराष्ट्रीय राजवंश स्थापित हुआ। यह घटना शायद १६७४ ई०में हुई होगी।

एकोजीके अन्यान्य पुत्र तकाजीके ५ लड़के थे। तकाजीकी मृत्युके बाद सबसे बड़े लड़के बाबासाहब राज-सिंहासन पर बैठे। १७३६ ई०में उनकी मृत्यु होने पर उनकी स्त्री सुजानाबाई राज्यशासन करने लगीं। किन्तु कोहनजी-घाटगे नामक किसी व्यक्तिने रूप नामको किसी स्त्रीके पुत्रको एकोजीके ज्येष्ठ पुत्र शरभोजीको उत्तरा-धिकारी कह कर स्थिर किया और किसी मुसलमान किलादारकी सहायतासे सुजानाबाईको राज्यसे भगा दिया। इस तरह वे रूपोके पुत्रके लिये सिंहासन-ग्रहण करनेमें समर्थ हुए। परन्तु अन्यान्य मन्त्रियोंने शीघ्र ही कोहनजीका यह षड़यन्त्र जान कर तकाजीके ३य पुत्र शयाजीको राजपद पर अभिषिक्त किया। १७४० ई०में तकाजीके छोटे पुत्र प्रतापसिंह कई एक राजमन्त्रियोंकी सहायतासे शयाजीको भगा कर आप सिंहासन पर बैठे। १७४४ ई०में आर्कटके नवाबके साथ प्रतापसिंहका दो बार लड़ाई छिड़ी। दोनों लड़ाइयोंमें पराजित हो कर प्रतापसिंहने नवाबको ७ लाख रुपयेका एक तमस्सुक लिख दिया।

१७४८ ई०में शयाजीने पुनः राज्य लौटानेके लिये सेण्टडेविड दुर्गके अंगरेज गवर्नरसे सहायता मांगी। प्रतापसिंहने आसन्नविपदको जान कर चुपकेसे अंगरेजोंके साथ इस शर्त पर सन्धि कर ली, कि यदि उन्हें राज-पदसे च्युत न करें, तो वे देवकोट नामका दुर्ग तथा उपस्थित युद्धका आयोजन-व्ययस्वरूप ६ हजार पैगोडा (सिक्का) अंगरेजोंको और शयाजीके खर्चके लिये वार्षिक ४००० पैगोडा अर्थात् १४८०० रु० देंगे।

१७४९ ई०में प्रतापसिंहने चांदसाहबके भयसे उन्हें ५८ लाख रुपयेकी एक दस्तावेज लिख दी। किन्तु कुछ

दिन बाद ही उन्होंने १०४० अंगरेजोंकी और २००० पदातिक सैन्य महीजोंके सेनापतित्वमें महम्मद अलीको सहायताके लिये चाँदसाहबके विरुद्ध भेजा। महम्मद अलीने जयलाभ कर तञ्जाउरके राजाको पुरस्कारस्वरूप बकाया दश वर्षका पेशकश (नजर) छोड़ दिया और कोइलड़ी तथा कड़ाड़ु नामके दो प्रदेश भी दिये।

१७५१ ई०में प्रतापसिंह उनके मन्त्री मानोजीके ऊपर असन्तुष्ट हो सेनापति मानोजीको कार्यसे अलग कर दिया। मुरारिराव यह जान कर कोइलड़ी अधिकार कर तञ्जाउरकी ओर अग्रसर होने लगे। राजाने कोई उपाय न देख कर मानोजीको शरण ली। मानोजीने महाराष्ट्रीय सेनापतिको मार भगाया।

१७५४ ई०में फरासीसी सेनाध्यक्षने तञ्जाउर राज्य लूट कर कोलरूनका बांध काट दिया। प्रतापसिंहने अंगरेजोंकी सहायतासे पुनः कोलरूण नदीका बांध संस्कार कर लिया।

१७५८ ई०में प्रतापसिंहने चाँदसाहबको जो ५६ लाख रुपयेकी दस्तावेज लिख दी थी, वह फरासीसी गवर्नरके हाथ लगी। इस रुपयेको पानेके लिये फरासीसी गवर्नर लालीने आ कर एक स्थान लूट कर तञ्जाउर दुर्गके सामने आ पहुंचे। इस समय उनको बारूद और रसद कम गई। इसी समय प्रतापसिंहने उनका अनुसरण कर उन्हें राज्यसे बाहर निकाल भगाया।

महम्मद अली अंगरेजोंके साथ लड़ाईका खर्च चुकानेमें बहुत अपसन्न हो गये थे। उन्होंने नवाब हो कर ऋण-परिशोधका कोई सुविधा न देखी। अन्तमें जब उन्हें मालूम पड़ा कि प्रतापसिंह ५ वर्षोंसे पेशकश नहीं देते हैं तब उन्होंने सोचा, कि तञ्जाउरको खास अपने दखलमें लानेसे बहुत नगद रुपये मिल सकते हैं। यह सोच कर उन्होंने मन्द्राजके गवर्नरकी सहायता मांगी। उस प्रस्तावमें सहमत न हो कर उन्होंने राजाका बाकी पेशकश चुकानेके लिये कौन्सिलके अन्यतम सदस्य बोसियार-को भेजा था। उन्होंने यह मीमांसा की, कि राजा प्रति वर्ष नवाबको ४ लाख रुपये पेशकश देंगे। बाकी पेशकश (२२ लाख रुपये) दो वर्षोंके मध्य चार दफेमें परिशोध करना होगा। यह सन्धि १७६२ ई०में हुई थी।

कावेरीके उत्तरी किनारे त्रिचिनापल्लीके निकट नेमूर नामक स्थानमें एक बांध था। राजा प्रतापसिंहको प्रार्थना और अर्थसे त्रिचिनापल्लीके शासनकर्ता महाशिवने उसे बनाया था। कभी उक्त शासनकर्ता और कभी राजाके अर्थसे उस बांधकी मरम्मत होती रही। १७६४ ई०में उसका एक स्थान टूट गया। नवाबने उसकी मरम्मत न की और न तो राजाको ही उसे मरम्मत करनेकी अनुमति दी। इस समय तुलजाजी तञ्जाउर (तञ्जोर)-के राजा थे। उन्होंने असन्तुष्ट हो कर अंगरेज गवर्नरकी सहायता ली। इस समयसे जब कभी बांधकी मरम्मत करनेका आवश्यक होता तभी राजाको अंगरेजोंसे सहायता लेनी पड़ती थी।

इसके बाद हैदरअलीके तञ्जोर आक्रमण करने पर राजाने उन्हें प्रचुर धन दिया। १७६८ ई०में उनके साथ राजाकी एक सन्धि हुई। जिससे राजा ८ वर्ष पहले तञ्जोरकी जो सम्पत्ति खो गये थे, राजा तुलजाजीने १७७१ ई०में उसे पुनः अपने अधिकारमें लिया। इस पर नवाब बहुत अप्रसन्न हुए। राजाके यहां दो वर्षका कर बाकी है इसी बहाने तञ्जोर आक्रमण करनेमें वे सन्नद्ध हुए। १७ सितम्बरको नवाबपुत्रने तञ्जोरका दुर्ग अवरोध किया, बाद २७ तारीखको राजाने बाध्य हो कर उनके साथ सन्धि कर ली। सन्धिपत्रमें यह लिखा रहा, कि २ वर्षका बाकी पेशकश ८ लाख रुपये और युद्धव्ययस्वरूप ३२॥ लाख रुपये नवाबको देंगे और मित्र मराठे राजाको जो सम्पत्ति लौटा गये हैं उसे छोड़ देंगे, आर्नी, विमानुर, हनाहल और कैमदी छोड़ देने पड़ेंगे तथा उक्त ३२॥ लाख रुपये चुकानेके लिये मायावरम् और कुम्भकोणम् ये दोनों प्रदेश रेहनके लिये नवाबके अधिकारमें छोड़ देंगे, राजा नवाबके मित्रके साथ मित्रता और शत्रुके साथ शत्रुता रखेंगे। १७७१-७२ ई०का पेशकश फिर बाकी रह जानेसे नवाबने १७७३ ई०में अंगरेज गवर्नरके निकट तञ्जोरराज्यके विरुद्ध यह नालिश की कि पेशकशका प्रायः दश लाख रुपये बाकी रह गया है। राजा हैदरअली और महाराष्ट्रोंके साथ नवाब तथा अंगरेजोंके विरुद्धमें षड़यन्त्र कर रहे हैं। अंगरेज गवर्नरकी आज्ञासे सेनापति स्मिथने सित-

स्वर मझौनेमें तञ्जोर आ कर राजा तुलजाजीको कैद कर लिया और नवाब तञ्जोरके खास अधिकारी हो गये।

डाइरेक्टरोंके निकट यह सम्वाद पहुंचने पर उन्होंने असन्तोष प्रकाश किया। वे बोले, कि १७६२ ई०को सन्धिके अनुसार अंगरेज गवर्मेण्ट तुलजाजीको सहायता करनेमें बाध्य है। पेशकशके बाकी रह जानेसे राजाको कैद कर लेना मन्द्राज गवर्नरने बहुत अन्याय किया है। उन्होंने पिगट साहबको मन्द्राजका गवर्नर नियुक्त कर यह आज्ञा दी, कि उन्हें तुलजाजीको सिंहासन पर पुनः अधिष्ठित करना होगा। राजा नवाबको वार्षिक ४ लाख रुपये पेशकश देंगे। मन्द्राज गवर्नरकी अनुमतिके अनुसार नवाबके साहाय्यार्थ राजा समय समय पर सैन्य-साहाय्य करेंगे और राजा अंगरेजके मित्र बने रहेंगे। एक दल अंगरेजी सेना तञ्जोरमें रह कर शान्ति रक्षा करेगी और उसका खर्च राजाको देना पड़ेगा। अंगरेजोंकी अनुमतिके विना राजा किसीसे सन्धि-स्थापन नहीं कर सकते।

डाइरेकृरोंके आदेशानुसार पिगट साहबने १७७६ ई०के ११ अप्रेलको तुलजाजीको तञ्जोरके सिंहासन पर अभिषिक्त किया १२ अप्रेलको राजाने सन्धिपत्र पर अपना हस्ताक्षर किया। और अंगरेजी-सेनाके खर्चके लिये वार्षिक १४ लाख रुपये देनेको स्वीकार किया।

१७८१ ई०में हैदरअलीने तञ्जोरका दुर्ग छोड़ कर और सभी जगह ६ मास तक अपना अधिकार जमाये रखा था।

१७८७ ई०में तुलजाजीकी मृत्यु हुई। उन्होंने मरनेके पहले शरभोजी नामक किसी आत्मीय-पुत्रको दत्तक लिया था। किन्तु उनकी मृत्युके बाद उनके छोटे भाई दत्तक-शास्त्रसङ्गत नहीं है, यह अंग्रेजके निकट प्रमाण कर आप स्वयं राजा हो गये। तुलजाजीकी विधवा स्त्रीको वार्षिक ३ हजार और शरभोजीको ११ हजार पैगोडा (सिक्का) देना कबूल कर सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर किया।

मन्द्राजमें रहते समय तुलजाजीकी विधवा स्त्रीने लार्ड कर्नवालिसके निकट दत्तकग्रहण शास्त्रसङ्गत है या नहीं इसका अनुसन्धान करनेके लिये आवेदन किया। बनारस (काशी) प्रभृति स्थानोंके पण्डितोंके मतानुसार देखा गया कि दत्तकग्रहणमें कोई दोष नहीं है। डाइरेक्टरको यह बात मालूम होने पर, उन्होंने शरभोजीको राज्यसिंहासन पर अभिषिक्त करनेका आदेश किया। मार्क्विस आफ वेलेसलीने १७९८ ई०में उक्त आदेशको कार्यमें परिणत किया।

राजकार्यमें शरभोजीको अनभिज्ञता रहनेसे मन्द्राज गवर्मेण्टने उनके बदले कुछ काल तक राज्यशासन किया था।

१७९९ ई०के २५ अक्तूबरमें जो सन्धि हुई, उसमें यह शर्त थी, कि वृटिशगवर्मेण्ट राजाके प्रतिनिधिस्वरूप तञ्जोर पर शासन करेंगी। राजा दुर्गमें रह कर एक लाख पैगोडा और समस्त आयका ½ अंश मात्र पावेंगे। इस सन्धिके अनुसार तञ्जोर-दुर्गको छोड़ कर और सभी प्रदेश एक प्रकारसे वृटिशसाम्राज्यभुक्त हो गये थे। महाराष्ट्रवंशीय राजाओंने १२२ वर्ष तक यहां राज्य किया था।

शरभोजीके बाद उनके पुत्र २य शिवाजीने पिलपट पाया। शिवाजीने मरनेके पहले एक दत्तकपुत्र ग्रहण किया था। किन्तु मार्क्विस आफ डलहौसीने इस दत्तकको स्वीकार न कर १८५५ ई०में तञ्जावुर राज्यका अस्तित्व लोप कर दिया। राजपरिवारवर्गको मासिक वृत्ति निर्धारित हुई थी।

अभी तञ्जोरकी पूर्वश्री जाती रही। दुर्ग कहीं कहीं टूट-फूट गया है। राजभवनकी भी अच्छी तरह मरम्मत नहीं होती है। रानियोंकी भूसम्पत्ति रिसोवरोंके हाथ लगी। इस सम्पत्तिकी वार्षिक आय १॥ लाख रुपये है। तञ्जोरका सरस्वती-भवन नामक पुस्तकालय सुरक्षित है। इस पुस्तकागारमें राजा शरभोजी बहुतसे हस्तलिखितग्रन्थ संग्रह-कर गये हैं।

तञ्जोरमें वृहदेश्वर महादेवके मन्दिरके पश्चिम-उत्तर कोणमें सुब्रह्मण्य स्वामीका मन्दिर विशेष उल्लेखयोग्य है। इसकी गठन-प्रणाली बहुत अच्छी है। प्रसिद्ध मन्दिरके सामने जो प्रकाण्ड नन्दीकी मूर्ति है, उसके विषयमें एक प्रवाद सुना जाता है। नन्दीकी आकृति पहले बहुत छोटी थी। किसी समय उस मूर्तिकी इच्छा

हुई कि मैं शिवजीके पावतनमें बड़ो हो जाऊँ। यह सोच कर वह प्रतिदिन बढ़ने लगी। शिवजी भी नन्दी से छोटे रहनेकी इच्छा न करते हुए दिनों दिन बढ़ने लगे। अर्थ कारण यह देख कर बहुत संकटमें पड़ गये। अन्तमें उन्होंने नन्दीकी वृद्धि निवारण करनेके लिये नन्दी के पिछले भागमें एक बड़ी कोड़ियो कोल ठोंक दी उस दिनसे नन्दी और बढ़ न सकी। महादेव भी उसी अवस्थामें हैं। यह प्रवाद सत्य या असत्य जो कुछ हो, किन्तु इस तरहका बड़ा मन्दिर लिङ्ग और नन्दी-मूर्ति अन्यत्र देखनेमें नहीं आते।

हिन्दू राजाओंके शासनकालमें तन्जोर सब प्रकारके शिल्प वाणिज्य, शास्त्रविद्या, काव्यरचना और चित्रविद्या का केन्द्रस्थल था। अभी वह सभो विषय धीरे धीरे लोप होते जा रहे हैं। लेकिन अब भी तन्जोरमें जो चित्र बनता है, वह अत्यन्त मनोहर दीख पड़ता है। हालमालमें यह कम्पनीके मार्टिन् डिपोने जिसको अधिक उन्नत कर दिया है।

२ मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत तन्जोर जिलेका प्रधान उप-विभाग और तालुक। यह अक्षा० १० २६ से १० ५१´ उ० और देशा० ७८ ५०´ से ७९ २२ पू०में अव-स्थित है। भू-परिमाण ४५८ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ३०७४१८ है। इसमें तन्जोर, तिरुवदो बल्लम और अयम्पेट नामके चार शहर तथा ३५२ ग्राम लगते हैं। दक्षिण भारतीय रेलवेने इस उपविभागके उत्तरमें प्रवेश कर तन्जोर नगर होता हुआ पश्चिमको गया है। यहाँ सब प्रकारोंके धानकी फसल हो अच्छी होती है।

३ मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत तन्जोर जिलेका प्रधान नगर और सदर। इसका प्रकृत नाम तञ्जावुर है। यह अक्षा० १० ४७ उ० और देशा० ७९ ८´ पू० पर दक्षिण भारतीय रेलवेके किनारे मन्द्राजसे २१८ मील और तुतीकोरिनसे १२६ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ५७८७० है, जिनमेंसे सैकड़े ८५ हिन्दू, ११०० मुसलमान, ४०८६ ईसाई और १२७ जैन हैं।

यहाँ जिलेके जज कलक्टर मजिष्ट्रेट प्रभृति वास करते हैं। इस नगरमें म्युनिसपालिटी है।

यह नगर अपने दक्षिण प्रदेशके प्रथम पराक्रान्त हिन्दू राजवंशको राजधानी तथा राजनीति, धर्मनीति, विद्यानुशीलन प्रभृतिका केन्द्रस्थान था। यह स्थान प्राचीन हिन्दू राजाओंको कीर्ति तथा पूर्वतन स्थापत्यके गुणका परिचायक है। यहाँका मन्दिर सुप्रसिद्ध है और इसकी ऊँचाई १८० फुट है। इसके सिवा उस मन्दिरमें और बहुतसे छोटे छोटे देवालय हैं। उनमेंसे किसी किसीके सूक्ष्मप्रथाओं और निर्माणपारिपाट्य देखनेसे आश्चर्य मालूम पड़ता है। मन्दिरकी देवमूर्ति एक मूर्ति आदि भी विस्मयकर है।

तन्जोरका सप्तावशिष्ट दुर्ग बहुत दूर तक फैला हुआ है। दुर्गके प्राचीरके अभ्यन्तर ही राजप्रासाद और नगर स्थापित है। राजप्रासादको प्रकाण्ड अट्टालिकाओं मेंसे एकके ऊपर राजाओंका पुस्तकालय था। इसमें इतनी संस्कृतग्रन्थ थे कि उतने और कहीं पाये नहीं जाते। मन्द्राजके सिविलसर्विसके भूतपूर्व डाक्टर बर्नेल ने उन पुस्तकोंकी एक सूची बनाई है।

तन्जोर नगर नानाविध शिल्पकार्यके लिये विख्यात है। यहाँका रेशमी कार्पेट, तांबेके बरतनका कलाकार्य तथा नाना तरह तरहके खिलौने इत्यादि अत्यन्त सुन्दर होते हैं। तन्जोरसे ३ कर पूर्वकी ओर समुद्र किनारे नागपत्तन बन्दर तक तथा पश्चिममें त्रिचिनापल्ली तक रेलपथ द्वारा संयुक्त है।

तट क (हि॰ पु॰) कर्णफूल एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है।

तट (सं॰ क्लो॰) तट अच्। १ नदी प्रभृतिका कूल किनारा, तीर। २ उपवेश, पर्व्वतो अमीन। (पु॰) ३ शिव। शिवको प्रधान देवता समझ कर उनका नाम तट रखा गया है। "नमस्तटाय तटाय तटाभ्यां पतये नमः"।

(भारत १३।१४।३६६)

(त्रि॰) ४ उच्छ्रित उन्नत, ऊँचा हुआ।

तटग (स॰ पु॰) तड़ाग पृषो॰ साधु। १ तडाग तालाब, सरोवर (त्रि॰) तट गम-ड। २ तटगामी तालाब पर जानेवाला।

तटस्थ (स॰ त्रि॰) तटे समीपे तिष्ठति स्था-क। १ समीप स्थित, समीप रहनेवाला। २ उदासीन व्यक्ति निरपेक्ष

जो किसीका पक्ष ग्रहण न करे। ३ तीरस्थ, किनारे पर रहनेवाला। ४ व्यस्त। ५ चमत्कृत आश्चर्यान्वित विस्मित। (पु०) ६ लक्षणविशेष किसी पदार्थका वह लक्षण जो उसके स्वरूपको नहीं वरन गुण और धर्मको ले कर कहा जाय। लक्षण देखो।

प्रत्येक वस्तु दो प्रकारके लक्षणों द्वारा समझी जा सकती है—एक स्वरूप-लक्षण और दूसरा तटस्थलक्षण।

किसी बातका अर्थ समझाते समय जिस विशेषणके कहनेसे विशेष कुछ मर्म न समझा जाय सिर्फ एक ही तरहका अर्थ समझ पड़े अर्थात् पहलेकी बातमें जिस अर्थका बोध हो दूसरी बार समझाने पर भी उतना ही समझ पड़े, उसको स्वरूपलक्षण विशेषण कहते हैं। एक उदाहरण दिया जाता है,—कलस और कुम्भ, इस जगह कुम्भ, कलसका स्वरूपलक्षण विशेषण हुआ, तथा कलस भी कुम्भका स्वरूपलक्षण विशेषण हो सकता है, कारण यहाँ कुम्भ शब्दके द्वारा कलसका वा कलस शब्दके द्वारा कुम्भका विशेष मर्म नहीं मालूम पड़ता। कुम्भ कहनेसे जितना ज्ञान होता है, कलस कहनेसे भी उतना ही समझ पड़ता है। कुछ विशेष ज्ञान नहीं होता। और भी एक दृष्टान्त दिया जाता है,—किसीने आपसे पूछा, "पोल क्या चीज है?" आपने कहा, "पोल शून्य पदार्थ है।" किन्तु इस शून्य शब्दसे पोलका कुछ मर्म नहीं मालूम हुआ। पोल कहनेसे पहले जितना ज्ञान हुआ था, शून्य कहनेसे भी उतना ही ज्ञान हुआ। अतएव शून्य शब्द पोलका स्वरूपलक्षण हुआ। यह तो हुआ स्वरूपलक्षणका वर्णन, अब तटस्थलक्षणका वर्णन किया जाता है। किसी अन्य वस्तुकी सहायतासे यदि अन्य किसी वस्तुका लक्ष्य किया जाय तो वैसे वाक्यको तटस्थलक्षण कहते हैं।

यह तटस्थलक्षण भी उक्त पोल वा शून्यके दृष्टान्तसे समझा जा सकता है।

आपसे किसीके यह पूछने पर कि, पोल वा शून्य पदार्थ क्या है, आपने उत्तर दिया कि, इस घरमें यहाँसे लगा कर भीत तक पोल वा शून्य है। यहाँ भीतकी सहायतासे शून्य पदार्थको समझाया गया, इसलिए यह वाक्य तटस्थलक्षण हुआ।

ब्रह्मको भी उक्त दोनों लक्षणोंसे समझाया जा सकता है। ब्रह्म चित्स्वरूप है सत्स्वरूप है, अनन्तस्वरूप है इत्यादि कहनेसे उनका स्वरूपलक्षण प्रकट होता है, क्योंकि इसके द्वारा उसका विशेष कुछ ज्ञान नहीं हुआ। चित् कहनेसे जितना बोध होता है, सत् कहनेसे भी उतना ही ज्ञान होता है तथा ब्रह्म इत्यादि कहनेसे भी उतना ही बोध होता है। हाँ, जब यह कहा जाय कि, वे कर्त्ता हैं, हर्ता हैं और विधाता हैं तो कर्तृत्व, हर्तृत्व, विधा-इत्यादि गुणोंकी सहायतासे उनका लक्ष्य किया गया, अतएव यह तटस्थलक्षण हुआ। क्योंकि कर्तृत्वशक्ति और पालयितृत्वादि शक्तियाँ प्राकृत पदार्थ अर्थात् प्रकृतिसे विकाशित होती हैं। इसलिए वह ब्रह्मका कोई गुण वा शक्ति नहीं है, वह तो ब्रह्मसे विभिन्न ही पदार्थ है। अतिरिक्त वा पृथक्भूत किसी वस्तुकी सहायतासे किसी वस्तुका प्रकाश किया जाय तो तटस्थलक्षण विशेषण हुआ करता है। स्वरूपलक्षण देखो।

तटाक (सं० पु०) तट-आकन् वा तट प्रकृति अक-अण्। तड़ाग, सरोवर, तालाब।

तटाघात (सं० पु०) तटे आघातः, ७-तत्। वपक्रीडा, पशुओंका अपने सींगों या दाँतोंसे जमीन खोदना।

तटिनी (सं० स्त्री०) तटमस्त्यस्याः तट-इनि ततो ङीप्। नदी, सरिता, दरिया।

तटी (सं० स्त्री०) तट-अच्-ततो ङीप्। १ तीर, तट, किनारा। २ नदी, द[illegible]। ३ तराई, घाटी।

तट्य (सं० पु०) तटं उच्छ्रायं अर्हति तट-यत्। शिव, महादेव। "नमस्तटाय तट्याय," (भार० १३।२८४।३६)

तड़ (हिं० पु०) १ पक्ष, तरफ। २ स्थल, जमीन। ३ वह शब्द जो थप्पड़ आदि मारने या कोई चीजके पटकनेसे उत्पन्न होता है। ४ लाभका आयोजन।

तड़क (हिं० स्त्री०) १ तड़कनेकी क्रिया। २ वह चिह्न जो तड़कनेके कारण किसी चीज पर पड़ जाता है। ३ स्वाद लेनेकी इच्छा, चाट। ४ धरन, कड़ी।

तड़कना (हिं० क्रि०) १ चटकना, कड़कना। २ किसी चीजका सूखने आदिके कारण फट जाना। ३ उच्चस्वरसे शब्द करना, जोरकी आवाज करना। ४ चिढ़ना, झुंझलाना, बिगड़ना। ५ उछलना तड़पना, कूदना।

तड़का (हिं० पु०) १ प्रभात, प्रातःकाल, सुबह। २ बघार, घी और कुछ मसाला गर्म करके दाल आदि तरकारिमें डालना।

तड़काना (हिं० क्रि०) १ किसी सूखी हुई चीजको फाड़ना २ तड़ शब्द करना, जोरसे आघात करना। ३ किसीको क्रोध दिलाना।

तड़ग (सं० पु०) तड़ाग पृषो० साधु। तड़ाग, सरोवर।

तड़तड़ाना (हिं० क्रि०) तड़ तड़ शब्द होना।

तड़तड़ाहट (हिं० स्त्री०) तड़तड़ानेकी क्रिया।

तड़प (हिं० स्त्री०) कूदनेकी क्रिया। २ चमक, भड़क।

तड़पदार (हिं० वि०) भड़कीला, चमकीला, भड़कदार।

तड़पना (हिं० क्रि०) १ व्याकुल होना, छटपटाना, तड़फड़ाना। २ घोर शब्द करना, चिल्लाना।

तड़पाना (हिं० क्रि०) कूदनेका काम किसी दूसरेसे कराना।

तड़पाना (हिं० क्रि०) १ मानसिक या शारीरिक वेदना पहुंचा कर व्याकुल करना। २ किसीको गरजनेके लिए बाध्य करना।

तड़फड़ाना (हिं० क्रि०) तड़पना देखो।

तड़फना (हिं० क्रि०) तड़पना देखो।

तड़बंदी (हिं० स्त्री०) समाज इत्यादिमें पृथक् पृथक् पक्ष बनना।

तड़ाग (सं० पु०) तडन्ति आघ्नन्ति ऊर्मिभिः तड़ आघाते, पिनाकादित्वात् उण् ४।१५। तड़ाग, तालाब।

तड़ाक (हिं० पु०) १ किसी पदार्थके फटनेका शब्द। (क्रि० वि०) २ जल्दीसे, चटपट, तुरन्त।

तड़ाका (सं० स्त्री०) तड़ाक स्त्रियां टाप्। १ नदी और समुद्रका तटभाग। २ आघात, चोट। ३ प्रभा, दीप्ति, चमक।

तड़ाका (हिं० पु०) कामरूप मुरगेजातीका एक कीड़ा। इसकी लम्बाई प्रायः डेढ़ गजकी होती है और यह नदियोंमें बसा रहता है।

तड़ाग (सं० पु०) तड़-आग। तडागादयश्च। इति निपातनात् साधुः। १ यन्त्रमुक्त पक्षि इत्यादि पकड़नेका फंदा। २ जलाशयविशेष, पुष्कर, तालाब। इसके संस्कृत पर्याय—पद्माकर, तड़ाक, तटाक और तड़ग है। पाँच सौ धनुष लम्बी पुष्करिणी, दीर्घिका तथा प्रशस्त भूभागमें रहनेवाली तथा बहुत दिनोंका जलाशयको तड़ाग कहते हैं। २४ अंगुलीका एक हाथ और चार हाथका एक धनुष माना गया है। एक सौ धनुष परिमित स्थानके जलाशयको पुष्करिणी कहते हैं, और पाँच सौ धनुष परिमित स्थानके जलाशयको तड़ाग कहते हैं।

"प्रशस्तभूमिभागस्थो बहु वत्सरतोयिनः।
जलाशयस्तडागाख्यः स्यादित्याहु र्मनीषिणः॥" (प्रायश्चि०)
"चतुर्विंशांगुलो हस्तो धनुस्तच्चतुरुत्तरं।
शतधन्वन्तरेणैव तावत् पुष्करिणी स्मृता॥
पञ्च धनुः शतेनैव तडाग इति निर्णयः।" (वह्नि)

इसके जलका गुण—वायुवर्द्धक, स्वादु, कषाय और कटुपाक तथा शिशिर और हिमकालमें अत्यन्त प्रशस्त है। (राजव०) जो मनुष्य यथाविधि तड़ागोत्सर्ग करते हैं, वे एक कल्प ब्रह्मालयमें और उसके बाद दिव्यकुसुम स्वर्गमें वास करते हैं। तड़ागोत्सर्गका विशेष विवरण पुष्करिणी प्रतिष्ठा देखो।

कालविशेषमें तड़ागके जलका फल—

वर्षा और शरत्कालमें अवस्थित जल अग्निष्टोमफल सदृश, हेमन्त और शिशिरकालमें वाजपेय, वसन्तकालमें अश्वमेध और ग्रीष्मकालमें राजसूयफल सदृश फलदायक है।

"प्रावृट्काले स्थितं तोयं अग्निष्टोमफलं स्मृतम्।
शरत्काले स्थितं तोयं तदुक्तफलदायकम्॥
वाजपेयफलसमं हेमन्तशिशिरस्थितम्।
अश्वमेधफलं प्राहुर्वसन्तसमयस्थितम्॥
ग्रीष्मेऽपि तु स्थितं तोयं राजसूयफलाधिकम्॥" (पद्मपुराण)

जो तड़ागोत्सर्ग करते हैं। वे भी इस फलको पाते हैं। एक तड़ागोत्सर्ग करनेसे भी समस्त यज्ञका फल होता है।

तड़ागज (सं० पु०) धानहीक, एक प्रकारका धान्य, मनसाक।

तड़ातड़ (हिं० क्रि०) तड़ तड़ शब्दके साथ।

तड़ाना (हिं० क्रि०) ताड़नेका काम किसी दूसरेसे कराना।

तड़ावा (हिं० स्त्री०) १ आडम्बर, ऊपरी तड़क भड़क। २ धोखा, कपट, छल।

तडि (सं० पु०) तड-आघाते तड़-इन्। १ आघात, चोट। (त्रि०) २ आघातकर्त्ता, चोट पहुँचानेवाला।

तडित् (सं० स्त्री०) ताडयत्यभ्रं तड-आघाते इति प्रत्ययः। ताडे णिलुक्च। उण १।१००। विद्युत्, बिजली। विद्युत् देखो।

तडित्कुमार (सं० पु०) जैनोंके एक देवता। ये भुवनपति देवगणमेंसे हैं।

तडित्पति (सं० पु०) मेघ, बादल।

तडित्प्रभा (सं० स्त्री०) तडितः प्रभेव प्रभा यस्याः बहुव्री०। १ कुमारानुचर मातृभेद, कार्त्तिकेयकी एक मातृकाका नाम।

'केशयन्त्री त्रुटिनामा क्रोशनाऽथ तडित्प्रभा।"
(भारत शल्य ४६ अ०)

(त्रि०) २ विद्युत्सदृश दीप्तियुक्त जिसमें बिजलीसी चमक हो।

तडित्वत् (सं० पु०) तडित् विद्यतेऽस्य मतुप्, मस्य वः, झयन्तात्त्वात् तस्य न दः। १ मेघ, बादल। २ मुस्तक, नागरमोथा। (त्रि०) ३ तडिद्विशिष्ट, विद्युत्युक्त।

तड़ित्वती (सं० त्रि०) तड़ित्वत् स्त्रियां ङीप्। तडित्युक्ता, जिसमें बिजलीसी चमक हो।

तडिद्गर्भ (सं० पु०) तडितो गर्भे यस्य, बहुव्री०। मेघ बादल।

तडिन्मय (सं० त्रि०) तड़िदात्मकः स्वरूपे तडित् मयट्। तडित् स्वरुप, बिजलीके सदृश।

तडिया (हिं० स्त्री०) समुद्रके तटकी वायु।

तडी (हिं० स्त्री०) १ चपत, धौल। २ धोखा, छल। ३ बहाना, हीला।

तण्ड (सं० पु०) तडि अच्। १ ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम। (स्त्री०) भावे अ। २ आहति, चोट, मार।

तण्डक (सं० पु०) तण्डते नृत्यते तण्ड-ण्वुल्। १ खञ्जनपक्षी। २ फेन। ३ समासबहुलवाक्य, वह वाक्य जिसमें बहुतसे समास हो। (क्ली०) ४ गृहदारुविशेष, गृहस्तम्भ, घरमें लगाये जानेका खम्भा। ५ तरुस्कन्ध, पेडका तना। ६ परिष्कार, शुद्धि, सफाई। ७ बहुरूपी, बहुरूपिया। ८ रोग। (त्रि०) ९ मायाबहुल मायावी। १० उपघातक, नाश करनेवाला।

तण्डि (सं० पु०) सत्ययुगके एक ऋषिका नाम। इन्होंने दश हजार वर्ष शिवजीकी आराधना की। बाद शिवजीने इनकी तपस्यासे सन्तुष्ट हो उन्हें दर्शन दे कर कहा था "मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हुआ, तुम्हें मेरे प्रसादसे एक पुत्ररत्नकी प्राप्ति होगी। वह पुत्र यशस्वी, तेजस्वी, दिव्यज्ञानसमन्वित, अमर और वेदका सूत्रकर्त्ता होगा।" शिवजीके वरसे तण्डिके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। तण्डिके पुत्रने ही यजुर्वेदीय ताण्डिन शाखाका कल्पसूत्र प्रणयन किया था। (भारत अनु० १६।१७ अ०)

तण्डु (सं० पु०) महादेवजीके द्वारपाल, नन्दिकेश्वर। 'नन्दी भृंगिरिटस्तण्डु नन्दिनौ नन्दिकेश्वरः।' (मल्लिनाथधृत को०)

तण्डुरीण (सं० पु०) तण्डा अस्त्यर्थे उरच्, तत्र भवः, कः। १ कीटमात्र, कीड़ा मकोड़ा। (क्ली०) तण्डुले भवः कः लस्य रः। २ तण्डुलोदक, चावलका पानी। (त्रि) ३ बर्बर, असभ्य, जङ्गली।

तण्डुल (सं० पु०-क्ली०) तण्ड्यते आहन्यते तड-उलच्। सानसिवर्णसीति। उण ४।१०७। १ निस्तुष धान, चावल। चावल देखो। २ वोढ़ङ्ग, वायविड़ङ्ग। ३ तण्डुलीयशाक, चौलाईका साग। ४ प्राचीन कालकी हीरेकी एक तौल जो ८ सरसोंके बराबर होती है।

तण्डुल-जल (सं० पु०) तण्डुलोदक, चावलका पानी। यह वैद्यकमें बहुत हितकर बतलाया गया है। इसके प्रस्तुत करनेकी दो प्रणाली हैं—(१) चावलको कूट कर अठगुने जलमें पका कर छान लिया जाता है, यह उत्कृष्ट तण्डुल-जल है। (२) चावलको थोड़ी देर तक भिगो कर छान लिया जाता है, यह साधारण तण्डुलजल है।

तण्डुलपरीक्षा (सं० स्त्री०) तण्डुलेन परीक्षा, ३-तत्। दिव्यविशेष, नौ प्रकारके दिव्योंमेंसे एक। वीरमित्रोदयमें लिखा है कि किसी चीजकी चोरी होने पर विचारक इस दिव्यका प्रयोग करें। इसका विधान—चावलको अच्छी तरह धो कर उसे देवताके स्नानके जलमें एक नवीन मट्टीके पात्रमें भिगो कर एक रात तक रख देना चाहिये। दूसरे दिन विचारक शुचि हो कर नियमपूर्वक आसन पर बैठें। बाद जिसके ऊपर सन्देह हो उसे स्नान करा कर पूर्वकी ओर बैठावे। तब एक भोजपत्रके ऊपर अथवा उसके अभावमें पीपलके पत्तेके ऊपर निम्नलिखित मन्त्र लिख डालें।

"आदित्यमादिमभिष्टुत्य द्रौपुत्रिकालीवदेवं समस्त।
नारद रक्षितय इमे च समस्थितवीहि मामाहि वरस्व पूर्ण॥"

इसके बाद वह एक उसके मस्तक पर एक पत्र बांधकर उसे पानीमें भिंगो देवें। यदि उसने यथार्थमें चोरी या अपराध किया होगा तो उसका शरीर कांपने लगेगा और तालू सूख जायगा तथा उसे चबा कर भोजपत्र या पीपल के पत्ते पर थूक फेंकनेमें मुंह दिखने जैसा लाल होना पड़ेगा। अन्तमें उसे ही दोषी समझ कर अपराधके अनुसार दण्ड देवें।

तण्डुला (स० स्त्री०) तण्डु पचन अस्त्यस्य। १ विड़ङ्ग, वायविड़ङ्ग। २ मदामसहायक शककी नामका पेड़।

तण्डुलाम्बु (स० क्ली०) तण्डुलाश्रित अम्बु, मध्य-पदलो०। तण्डुलोदक चावलका पानी। इसके संस्कृत पर्याय—तोठाम्बु, तण्डुलोदक और तण्डुलोत है। एक परिमित चावलको अठगुने जलमें डाल देवें। बाद उसे पका कर ग्रहण करे। इस प्रकारका जल विशेष हितकर है।

तण्डुलिकाश्रम (स० पु० क्ली०) तीर्थविशेष एक तीर्थ का नाम। जो मनुष्य इस तीर्थमें जाता है वह इस संसारमें कष्ट नहीं पाता और अन्तमें ब्रह्मलोकको प्राप्त होता है।

"जम्बूमार्गादुपावृत्त गच्छेत्तण्डुलिकाश्रमं।
न दुर्गतिमवाप्नोति स्वर्गलोके च पूज्यते॥"

(भारत वन० ८२ अ०)

तण्डुलिया (हि० स्त्री०) चौलाई, चौराई।

तण्डुली (स० स्त्री०) तण्डुल-ङीष्। १ यवतिक्ता लता। २ ममानु की तरह की एक प्रकारकी ककड़ी। ३ तण्डुलीयशाक, चौलाईका साग।

तण्डुलीक (स० पु०) तण्डुलीय कायति कै क। तण्डुलीयशाक, चौलाईका साग।

तण्डुलीय (स० पु०) तण्डु काय तद्धप्रत्यय हित तण्डुल-छ। विभाषाहविरपूपादिभ्य। पा ५।१।४। शाकविशेष चौलाईका साग। इसके संस्कृत पर्याय— अल्पमारिष तण्डुलीक, तण्डुल भण्डीर, तण्डुली, तण्डुलीयक अल्पिष बहुवीर्य मेघनाद घनस्वन, सुशाक, पथ्यशाक, एकाञ्जलि अतिवीर्य और और तण्डुलवल्ली है। (Amaranthus polygonoides) इसका गुण—शिशिर, मधुर, विष पित्त दाह और भ्रमनाशक, रुचिकारक दीपन और पथ्य है। इसके पत्तेका गुण—हिम, रुक्ष पित्तघ्न और विषनाश नाशक, पाचक मधुर, दाह और शोषनाशक तथा रुचि कारक है। भावप्रकाशके मतसे इसके पर्याय—तण्डुलेर, तण्डुलेरक, मेघनाद, तण्डुली, चौर, विषघ्न और अल्प मारिष है। इसका गुण—लघु शीतवीर्य रुक्ष, पित्तघ्न, कफनाशक, रक्तदोषापहारक मलमूत्रनिःसारक रुचि जनक, अग्निप्रदीपक और विषनाशक है। (भावप्रकाश)

एक दूसरे प्रकारका भी तण्डुलीय होता है जिसे पानीय तण्डुलीय कहते हैं और कोई कोई इसे जल तण्डुलीयक नामसे भी पुकारते हैं। इसका गुण— तिक्त रुक्ष, पित्तघ्न, वातनाशक और लघु है। (भावप्र०)

तण्डुलीयक (स० पु०) १ तण्डुलीयशाक चौलाईका साग। २ विड़ङ्ग वायविड़ङ्ग।

तण्डुलीयकमूल (स० क्ली०) तण्डुलीयकस्य मूल, ६ तत्। तण्डुलीयशाकका मूल, चौलाई नामको जड़। इसका गुण—रूक्ष, क्लेशनाशक रक्तरोधकर रक्तपित्त और प्रदरनाशक है। (आत्रेयसंहिता०)

तण्डुलीयिका (स० स्त्री०) तण्डुलीय स्वार्थे कन् स्त्रियां टाप कापि अत इत्व। विड़ङ्ग, वायविड़ङ्ग।

तण्डुलु (स० पु०) तण्डुल पृषो० ऊर्ध्व साधु। विड़ङ्ग, वायविड़ङ्ग।

तण्डुलेर (स० पु०) तण्डुल चातुरर्थ्यात् स्वार्थे ढक्। तण्डुलीयशाक चौलाईका साग।

तण्डुलेरक (स० पु०) तण्डुलेर स्वार्थे कन्। तण्डुलीय शाक चौलाईका साग।

तण्डुलोत्थ (स० क्ली०) तण्डुलात् उत्तिष्ठति उत्-स्था क। तण्डुलाम्बु, चावलका पानी। तण्डुलाम्बु देखो।

तण्डुलोदक (स० क्ली०) तण्डुलस्य उदकं ६ तत्। तण्डुलपक्वाश्रित जल, चावलका धोया हुआ पानी।

तण्डुलौघ (सं० पु०) तण्डुलानामोघ ६-तत्। १ तण्डुल राशि, चावलका ढेर। २ एक प्रकारका बांस।

तण्डेश्वर (स० पु०) ६२ शिवमूर्तियोंमें एक प्रधान मूर्ति। शिव देखो।

ततुरि (स० त्रि०) तुर्व हिंसायां कि द्वित्व पृषोदरादित्वात् साधु। १ हिंसक, हिंसा करनेवाला। २ तारक, तारनेवाला।

ततुवि—ततुरि देखो।

ततैया (हि० स्त्री०) १ बर्रे भिड़, हड्डा। २ छोटा मिर्च जो बहुत कड़ुई होती है। (त्रि०) ३ तेज़ फुरतीला। ४ बुद्धिमान्, चालाक।

तत्कर (स० त्रि०) तत् करोति तत्-कृ-ट। तत्पदार्थ कारक।

तत्काल (स० पु०) स कालो कालश्चेति, कर्मधा०। १ वर्तमानकाल। २ उसी समय, तुरन्त, फौरन। (त्रि०) ३ कालो यस्य, बहुव्री०। ४ तत्कालउत्पत्ति।

तत्कालधी (स० त्रि०) तस्मिन् काले कार्यकाले धी उपस्थिता बुद्धिर्यस्य बहुव्री०। प्रत्युत्पन्नमति उपस्थित बुद्धि।

तत्कालवण (स० क्ली०) विट्लवण।

तत्कालप्राप्त (स० त्रि०) तस्मिन् काले प्राप्त, ७-तत्। जो उस समय हुआ हो।

तत्कालसम्भूत (स० त्रि०) तस्मिन् काले सम्भूतः, ७-तत्। जो उस समय उत्पन्न हुआ हो।

तत्कालीन (स० त्रि०) उसी समयका।

तत्क्रिय (सं० त्रि०) वेतन विना स्वभावतः सा क्रिया कर्म यस्य बहुव्री०। कर्मकरणशील, जो विना कुछ लिये भार ढोता हो।

तत्क्षण (स० पु०) स चासौ क्षणश्चेति कर्मधा०। उसी समय, तत्काल।

तत्प्रतिमान (सं० क्ली०) जैनमतानुसार मान, उन्मान अवमान, गणिमान, प्रतिमान और तत्प्रतिमान इन लौकिक मानके ६ भेदोंमेंसे एक। तुरङ्ग अर्थात् घोड़ आदिके मूल्यको तत्प्रतिमान कहते हैं। (त्रि० प्र०)

तत्तुल्य (स० त्रि०) तत्सदृश, उसके समान।

तत्तोबंबो (हि० पु०) १ दमदिलासा, बहलावा। २ झगड़ा शान्त करना, बीच बचाव।

तत्त्व (स० क्ली०) तनोति सर्वमिदं तन-क्विप् तुकश्च षष्ठी० भावः। तस्य भावः तत्-त्व। १ यथार्थता, वास्तविकता, असलियत। २ स्वरूप। ३ ब्रह्म। (अमर) ४ समारोपित स्वरूप परमात्मा "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" (श्रुति) यह समस्त जगत् ब्रह्ममय है। जो कुछ भी है वह सब ब्रह्म ही है। ५ विम्बित मायादि। ६ चित्त। ७ वस्तु। ८ पंचभूत। ९ सारवस्तु सारांश। १० सांख्योक्त प्रकृति आदि, जगत्का मूल कारण। सत्त्व रज और तम।

इस परिदृश्यमान जगत्‌रूप कार्यको देख कर इसके कारणका भी अनुमान होता है। कारणके विना किसी भी वस्तुकी उत्पत्ति नहीं हो सकती। जैसे मनुष्यके सींग होना असम्भव है वैसे ही असत् अर्थात् असत्से कुछ उत्पन्न होना असम्भव है। क्योंकि प्रत्येक वस्तुका कोई न कोई उपादानकारण है, यह सर्वप्रसिद्ध है। जैसे—मिट्टीसे घड़ाको और सूतसे कपड़ेकी उत्पत्ति इत्यादि। अतएव यह मानना पड़ेगा कि इस जगत्का मूल कोई तत्त्व है, वह तत्त्व प्रधानतः प्रकृति और पुरुष है।

आदिकारणसे समस्त कार्यपरम्पराकी उत्पत्ति हुई है, इसलिए सांख्यशास्त्रवित् विद्वानोंने आदिकारणको ही प्रकृति बतलाया है। कारणका कारण और उस कारणका पुनः अन्य कारण, इस प्रकारकी यदि कारणपरम्परा हो, तो भी एक स्थान पर जा कर कारणका अन्त होगा। प्रकृति उस आदिकारणका ही नामान्तर है। इस प्रकृतिसे समस्त तत्त्व आविर्भूत हुए हैं। प्रकृतिमें उत्तम, मध्यम और अधम अर्थात् सुख, दुःख और मोह ये तीन गुण पाये जाते हैं। इसलिए प्रकृतिसे उत्पन्न तत्त्वोंमें भी यह गुण देखनेमें आते हैं, इसी लिए जगत्को सुख दुःख और मोहमय कहा गया है।

तत्त्व पदार्थ गुण होना असम्भव है कारण गुणसे पदार्थ वा तत्त्वकी उत्पत्ति नहीं हो सकता। किन्तु सत्त्व, रजः और तम ये तीन गुण-द्रव्य नहीं बल्कि पदार्थद्रव्य हैं।

सत्त्व रज और तमोगुणात्मिका प्रकृति, महत् (बुद्धि तत्त्व) अहङ्कार, मन, चक्षु, कर्ण नासिका, जिह्वा, त्वक्, वाक्, पाणि, पायु, पाद, उपस्थ, शब्द, स्पर्श, रूप रस, गन्ध, क्षिति अप्, तेजः, वायु, आकाश और पुरुष ये २५ तत्त्व हैं।

ये पचीस तत्त्व ही जगत्‌के मूल कारण हैं। इन तत्त्वोंसे जगत्‌की उत्पत्ति हुई है। जब इस जगत्‌का नाश होगा, तब उक्त समस्त तत्त्व प्रकृतिमें लीन हो जांयगे। फिर सृष्टिके प्रारम्भमें प्रकृतिसे तत्त्वसमूह उत्पन्न होंगे।

प्रकृतिसे इसी तरहसे तत्त्व उत्पन्न हुआ करते हैं। पहले प्रकृतिसे महत्तत्त्व (बुद्धितत्त्व) उत्पन्न होता है, पीछे महत्तत्त्व अहङ्कारतत्त्व, अहङ्कारतत्त्वसे एकादश इन्द्रिय (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ) और मन और पञ्चतन्मात्रतत्त्व, पञ्चतन्मात्रतत्त्वसे पञ्चमहाभूततत्त्व की (पृथ्वी जल आदि) उत्पत्ति होती है, इसी तरह सृष्टिके विलोपकालमें पञ्चमहाभूत पञ्चतन्मात्रमें, पञ्च तन्मात्र और एकादश इन्द्रिय अहङ्कारमें, अहङ्कारमहत्तत्त्वमें और महत्तत्त्व प्रकृतिमें लीन हो जाता है। उस समय सिर्फ प्रकृति और पुरुष बाकी रहते हैं।

(सांख्यद० १।६१)

पातञ्जलदर्शनके मतसे तत्त्व छब्बीस हैं—पचीस तो सांख्यवाले और छब्बीसवाँ ईश्वर भी तत्त्व है। सांख्यके पुरुषसे योगके ईश्वरमें विशेषता इतनी ही है कि योगका ईश्वर क्लेश कर्म, विपाक आदिसे पृथक् माना गया है। मायावादी वेदान्तिकोंके मतसे ब्रह्म ही एकमात्र परमार्थ तत्त्व है, उसके सिवा और कुछ भी तत्त्व नहीं है, सिर्फ मायाकल्पित है। सब ही ब्रह्ममय है, जो कुछ दीखता है, वह सब ब्रह्म है, इसलिए एकमात्र ब्रह्म ही परमार्थ तत्त्व है, ब्रह्मातिरिक्त अन्य तत्त्वान्तर नहीं है।

माया परब्रह्मकी शक्तिस्वरूप है। ब्रह्म मायावच्छिन्न होते ही जगत् उत्पन्न होता है। किन्तु स्थलान्तरमें वे नित्य मुक्तस्वभाव कहे गये हैं।

वैदान्तिकगण एक उपमा दे कर इन दो परस्पर विरुद्ध वाक्योंका सामञ्जस्य किया करते हैं। जैसे वृक्षश्रेणीके अभ्यन्तरसे उसके अन्तरालस्थ महान् आकाशको देखनेसे वह खण्ड खण्ड दीखता है, किन्तु वास्तवमें आकाश खण्डित नहीं होता, उसी तरह ब्रह्म मायावच्छिन्न होने पर भी वास्तवमें अवच्छिन्न नहीं होते। वे स्वभावतः पूर्ण और मुक्तस्वरूप हैं तथा उसी रूपमें रहते हैं।

वेदान्तके मतमें परब्रह्म निर्गुण, निर्विकार और चिन्मयस्वरूप है। जगत् यदि भ्रम हो है, तो उनको जो जगत्कर्त्ता, सर्वनियन्ता इत्यादि कहा गया है, वह भी सत्य नहीं, आरोपमात्र है। वास्तविक स्वरूप नहीं है। जीव वास्तविक परब्रह्मके सिवा और कुछ नहीं है, अयमात्मा, अहं ब्रह्मास्मि, तत्त्वमसि इत्यादि वाक्योंसे ब्रह्म ही एक तत्त्व है, तदतिरिक्त अन्य कोई भी तत्त्व नहीं है। विस्तृत विवरण ब्रह्म और प्रकृति शब्दमें देखो।

चतुस्तत्त्व—तेजः अप् पृथिवी और आत्मा। पञ्चतत्त्व—शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध। षट् तत्त्व—क्षिति, अप्, तेज, मरुत्, व्योम और परमात्मा।

सप्ततत्त्व—पञ्चमहाभूत, जीव और परमात्मा। नवतत्त्व—पुरुष, प्रकृति, महत्तत्त्व, अहङ्कार, नभः वायु, ज्योति, अप् और क्षिति। एकादशतत्त्व—जीव, त्वक्, जिह्वा, चक्षु, नासिका, वाक्, पाणि, पायु, पाद, उपस्थ और मन।

त्रयोदशतत्त्व—नभः, वायु, ज्योति, अप्, क्षिति, जीव, त्वक्, चक्षु, घ्राण, जिह्वा, मन, जीवात्मा और परमात्मा। षोडशतत्त्व—पञ्चभूत, पञ्चज्ञानेन्द्रिय, मन, रूप, रस, गन्ध, शब्द और स्पर्श। सप्तदशतत्त्व—षोडशतत्त्व और आत्मा।

शून्यवादी बौद्धोंके मतसे शून्य ही एकमात्र जगत्‌का तत्त्वभाव अर्थात् जिसका अस्तित्व अनुभूत होता है, उसका शेषफल अभाव वा विनाश है। वह विनाश वस्तुमात्रका स्वधर्म वा स्वभाव है। शून्यवादियोंका मनोभाव यह है कि, वस्तुकी आदिमें उत्पत्तिसे पहले शून्य वा अभाव ही तत्त्व है, शेषमें भी शून्य वा अभाव है। मध्यमें जो किञ्चित् स्थायित्व पाया जाता है, विचार कर देखनेसे वह भी अभाव वा शून्य है। शून्यतत्त्ववादियोंके मतसे, मृत्युके बाद शून्यके सिवा और कुछ भी नहीं रहता। अतएव मरनेसे ही मुक्ति होती है। शून्य ही तत्त्व है, शून्य ही सार है, यह मूढ़बुद्धि कुतार्किकोंका प्रलाप है; शून्यवादी नास्तिकबुद्धि मोहवशतः ऐसी कल्पना करते हैं, जिसको प्रमाणित नहीं कर सकते।

चार्वाक्‌मतसे क्षिति, अप्, तेज और मरुत्, ये चार तत्त्व हैं, ये ही जगत्‌के कारण हैं। इन चार भूतोंसे ही स्थावरजङ्गमात्मक परिदृश्यमान जगत्‌की उत्पति हुई है।

इन चार तत्त्वोंके सिवा पाँचवाँ तत्त्व नहीं है। (चार्वाक)

द्वैतवादी पूर्णप्रज्ञाचार्यके मतसे तत्त्व दो प्रकारका है—एक स्वतन्त्र और दूसरा अस्वतन्त्र। रामानुजोंके मतसे चित्, अचित् और ईश्वर ये तीन तत्त्व हैं।

पाशुपतशास्त्रवित् नकुलीशाचार्य शैवोंके मतसे पति, पशु और पाश ये तीन तत्त्व हैं।

ज्योतिषमें तत्त्वका विषय इस प्रकार लिखा है—तत्त्व पाँच प्रकारका है—पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। इनके गुण—अस्थि, मांस नख, त्वक् लोम ये ५ पृथिवीके गुण हैं। शुक्र, शोणित मज्जा, मल मूत्र, ये ५ जलतत्त्वके गुण हैं। निद्रा क्षुधा, तृष्णा, क्रान्ति, आलस्य, ये ५ तेजस्तत्त्वके गुण हैं। धारण, चालन क्षेपण, संकोचन और प्रसारण ये ५ वायुतत्त्वके गुण हैं। काम, क्रोध, मोह, लज्जा और लोभ ये आकाशतत्त्वके गुण हैं। आकाशसे वायुकी वायुसे अग्निकी, अग्निसे जलकी और जलसे पृथिवीकी उत्पत्ति हुई है। पृथिवी जलमें जल अग्निमें और अग्नि वायुमें लय होता है। इन पाँच तत्त्वोंसे सम्पूर्ण सृष्टि हुई है। पृथिवीतत्त्वके ५ गुण हैं। जलके चार गुण हैं। तेजके तीन गुण हैं। वायुके दो और आकाशमें एक गुण है। पृथिवी गन्धतन्मात्र है। जल रस तन्मात्र, अग्नि रूपतन्मात्र, वायु स्पर्शतन्मात्र और आकाश शब्दतन्मात्र है। ये पाँच पञ्चतत्त्वके गुण हैं।

तत्त्वोंकी प्रकृतियाँ—पृथिवीतत्त्व कठिन, जल शीतल, अग्नि उष्ण वायु चर और स्थिर है।

तत्त्वोंके स्थान—पृथ्वीतत्त्वका स्थान है नासिका उपरि-देश, जलतत्त्वका स्थान है मस्तिष्क, अग्नितत्त्वका स्थान है पित्त वायुतत्त्वका स्थान है नाभिदेश और आकाश तत्त्वका स्थान है मस्तक।

तत्त्वोंके द्वार—पृथ्वीतत्त्वका द्वार है मुख, जलतत्त्वका द्वार है लिङ्ग, अग्निको द्वार है नेत्र, वायुके द्वार हैं नासिकाके दोनों छिद्र और आकाशके द्वार हैं दोनों कान।

तत्त्वद्वारोंकी क्रियायें—पृथ्वीतत्त्वद्वारकी क्रिया है भोजन जलद्वारकी क्रिया है वमन, अग्निद्वारकी क्रिया है दृष्टि वायु द्वारकी क्रिया है आघ्राण और आकाश द्वारकी क्रिया है शब्द।

तत्त्वोंके गुण—पृथ्वीतत्त्वका गुण है भय, जलका लोभ, अग्निका लज्जा, वायुका सन्तोष और आकाशका गुण है दुःख।

एक एक तत्त्वमें पञ्चतत्त्वका उदयचक्र—

पृथ्वी	आकाश	वायु	अग्नि	जल
जल	पृथ्वी	आकाश	वायु	अग्नि
अग्नि	जल	पृथ्वी	आकाश	वायु
वायु	अग्नि	जल	पृथ्वी	आकाश
आकाश	वायु	अग्नि	जल	पृथ्वी

बहुतोंको मालूम है कि, श्वास प्रश्वास दिन रात दोनों नासारन्ध्रोंसे समानरूपसे बहता है, किन्तु यह भ्रम मात्र है। श्वास-प्रश्वास ज्वार भाटाकी तरह अमावस्या और पूर्णिमा पक्षादिके आवर्तनके तथा तिथिके अनुसार यथा-नियम इड़ा पिङ्गला अर्थात् वाम किम्वा दक्षिण नासापुटमें क्रमशः सूर्योदयके समय उदित होता है। पीछे एक एक नासिकामें ढाई दण्ड (प्रायः एक घण्टा) तक फिर एक बार दोनों नासारन्ध्रोंमें २४ बार सङ्क्रमित हुआ करता है। इस ढाई दण्ड समयमें जब किसी नासिकामें श्वास प्रश्वास बहता है उस समय पृथ्वी जल, अग्नि वायु और आकाश इन पाँच तत्त्वोंका उदय होता है। पृथ्वीतत्त्व उदय हो कर ५० पल (२० मिनट) तक ठहरता है इसी तरह जलतत्त्व ३० पल (१६ मिनट) अग्नितत्त्व ३० पल (१२ मिनट) वायुतत्त्व २० पल (८ मिनट) और आकाशतत्त्व १० पल (४ मिनट), उदय हो कर अवस्थिति करता है।

प्रत्येक नासापुटमें वायु बहनेके समय पञ्चतत्त्वका उदय हुआ करता है। पञ्चतत्त्वका विवरण निम्नलिखित उपायसे जाना जा सकता है। पहले तत्त्वको स्वरूपका निरूपण, दूसरे श्वासका प्रस्थान, तीसरे स्वरका चिह्न, चौथे वायुकी गति, पाँचवें वर्ण छठे तत्त्वका उपदेश स्थान सातवें आकृति उपदेशयन्त्र और आठवें मतिका लक्षण जानना चाहिये। प्रातःकालमें यत्न-पूर्वक हाथ अङ्गुलि द्वारा दोनों नासापुट धारण कर तत्त्वादिका ज्ञान करना चाहिये।

पृथ्वीतत्त्वका लक्षण—नासारन्ध्रके मध्यस्थलसे श्वास किसी बाधाके न लग कर श्वास चलेगा। यह श्वास द्वादशाङ्गुल पर्यन्त निकलता है। उस समय गलेमें

मधुर रसकी उत्पत्ति और मनमें सिर्फ पीतवर्णके विषयों को चिन्ता होगो। किसी प्रकरणके करने पर पीत वर्णका दर्शन होगा। उत्तम दर्पणमें निःश्वास त्यागने से चतुष्कोण और पीतवर्ण दिखलाई देगा। जानु देशमें इसको स्थिति ढाई दण्ड समयके भीतर ५० पल समय तक इस अवस्थामें स्थित रहेगा। इस प्रकारका कार्य होने पर उसको पृथ्वीतत्त्व समझे। रविग्रहके आकर्षणसे वाम नासिकामें पृथ्वीतत्त्वका उदय होता है तथा दक्षिण नासिकाके वहनकालमें जब पृथ्वीतत्त्वका उदय होता है, तब बुधग्रह उसका अधिपति होता है। पृथ्वीतत्त्वके नक्षत्र—२३ धनिष्ठा, २७ रेवती, १८ ज्येष्ठा, १७ अनुराधा, २२ श्रवणा, अभिजित्, २१ उत्तराषाढा।

जलतत्त्वका लक्षण—इसकी गति अधोगामी अर्थात् नासिकापुटके निम्नभागसे छूट कर श्वास चलेगा। श्वासका परिमाण १६ अङ्गुल होगा। उस समय गलेमें कषाय रसका अनुभव होता है, दर्पण पर निःश्वास त्यागनेसे वह अर्द्धचन्द्राकृत और सफेद दीखेगा। हृदयमें श्वेतवर्ण उदित होगा। किसी प्रकरणके होने पर श्वेतवर्ण दृष्टिगोचर होगा। पादान्तमें इसकी स्थिति भी ढाई दण्डके मध्य ४० पल समय होगी। इन कार्योंको जलतत्त्वका लक्षण समझना चाहिये। दक्षिण-नासिकाके वहनकालमें शनिग्रह और वाम नासिकाके वहनकालमें चन्द्र इस तत्त्वका अधिपति होता है। इस तत्त्वके नक्षत्रों के नाम—२० पूर्वाषाढा, ८ अश्लेषा, १८ मूला, ६ आर्द्रा, ४ रोहिणी, २६ उत्तरभाद्रपद, २४ शतभिषा।

अग्नितत्त्वका लक्षण—इसकी गति ऊर्ध्वगामी अर्थात् नासिकापुटके उपरिभागमें लग कर श्वास चलता है। प्रश्वासका परिमाण ४ अङ्गुल है। गलेमें तिक्त रसका उद्भव होता है। दर्पण पर निःश्वास त्यागनेसे वह त्रिकोणाकार और लाल दीखेगा। ढाई दण्डके मध्य ३० पल तक उसी प्रकारसे स्थिति रहेगी तथा मनमें रक्तवर्णका उदय होगा और प्रकरण करनेसे रक्तवर्ण दिखलाई देगा। स्कन्धदेशमें इसकी स्थिति है। दक्षिण-नासिका वहनकालमें मङ्गल ग्रह और वाम नासिका-वहनकालमें शुक्र ग्रह इसका अधिपति होता है। इस तत्त्वके नक्षत्रों के नाम—२ भरणी, ३ कृत्तिका, ८ पुष्या, १० मघा, ११ पूर्वफाल्गुनी, २५ पूर्वभाद्रपद, १५ स्वाति।

वायुतत्त्वका लक्षण—इससे श्वास तीर्यक्गामी अर्थात् नासापुटमें तिरछी तरहसे किनारेमें लग कर चलता है। इस वायुका परिमाण ८ अङ्गुल है। उस समय गलेमें अम्ल रसकी उत्पत्ति होती है दर्पणमें श्वास निक्षेप करनेसे वह गोलाकृति और श्यामवर्ण किम्वा नीलवर्ण दीखता है। नाभिमूलमें इसकी स्थिति है। दक्षिण नासिका-वहनके समय राहु ग्रह और वामनासिका वहनके समय बृहस्पति अधिपति होता है। इस तत्त्वमें ये नक्षत्र होते हैं—१६ विशाखा, १२ उत्तरफल्गुनी, १३ हस्ता, १४ चित्रा, ७ पुनर्वसु, १ अश्विनी, ५ मृगशिरा।

आकाशतत्त्वका लक्षण—इसमें नासापुटके सर्व स्थानसे वायु निकलती है। सर्वगामी होनेसे इसके परिमाणका निर्णय नहीं किया जा सकता। गलेमें कटु-रसका उदय होता है। दर्पण पर निःश्वास छोड़नेसे वह बिन्दु बिन्दु नाना वर्णोंका दीखता है तथा मिश्रितवर्ण मालूम पड़ता है। इसकी स्थिति ढाई दण्डकालके भीतर १० पल मात्रकी है। यह तत्त्व सर्वकार्यमें निष्फल है। इसलिये इस तत्त्वके वहनकालमें कोई भी कार्य न करना चाहिये, करनेसे वह काम सिद्ध नहीं होता।

पृथ्वीतत्त्वके अधिष्ठात्री देवता ब्रह्मा, जलतत्त्वके विष्णु, अग्नितत्त्वके रुद्र, वायुतत्त्वके ईश्वर और आकाश तत्त्वके सदाशिव हैं।

पृथ्वी अथवा जलतत्त्वके समय प्रश्न होनेसे कामका शुभ फल होता है। वह्नितत्त्वके समय प्रश्न होने पर शुभाशुभ मिश्रफल होता है। वायु वा आकाशतत्त्वके समय प्रश्न होने पर हानि और मृत्युकर फल होता है।

अग्नितत्त्वके उदयकालमें मारणादि कार्य करना चाहिये। जलतत्त्व-वहनकालमें शान्तिकार्य, वायुतत्त्वमें उच्चाटन, पृथ्वीतत्त्वमें स्तम्भनादि कार्य और आकाशतत्त्वके समय कोई भी कार्य न करना चाहिये। पृथ्वीतत्त्वके समय स्थिरकार्य और जलतत्त्वके समय चर कार्य करें।

जलतत्त्व पश्चिम, दिशाका अधिपति है, पृथ्वीतत्त्व पूर्वदिशाका, अग्नितत्त्व दक्षिणदिशाका, वायुतत्त्व उत्तरदिशाका और आकाशतत्त्व ऊर्द्ध, अधः और मध्यस्थलका तथा अग्नि, ईशान, वायु, नैऋत दिशाका अधिपति है।

पञ्चतत्त्वका उदय और अवसान जाननेका उपाय—६ घण्टेसे ७ घंटा तक बाम नासिकामें वायु चलेगी उस समय पृथ्वीतत्त्वका उदय हो कर ५० पल (२० मिनट) तक उसको स्थिति होगी। इसके बाद जलतत्त्वका उदय और ४० पल (१६ मिनट) तक उसकी स्थिति होगी, फिर अग्नितत्त्वका उदय और ३० पल (१२ मिनट स्थिति, वायुतत्त्वका उदय और २० पल (८ मिनट) स्थिति, आकाशतत्त्वका उदय और १० पल (४ मिनट) उसकी स्थिति होगी। वामनासापुटमें वायुकी स्थिति काल तत्त्वका उदय और स्थितिका उदाहरण—

घण्टा	मिनट	तत्त्व	ग्रह
६	२०	पृथ्वी	बृहस्पति
६	३६	जल	शुक्र
६	४८	अग्नि	बुध
६	५६	वायु	चन्द्र
७	०	आकाश	०

दक्षिण नासापुटमें वायुके स्थिति कालमें तत्त्वका उदय—

घण्टा	मिनट	तत्त्व	ग्रह
७	२०	पृथ्वी	रवि
७	३६	जल	शनि
७	४८	अग्नि	मङ्गल
७	५६	वायु	राहु
८	०	आकाश	०

इस नियमके अनुसार किस समय किस तत्त्वका उदय होगा, वह जाना जा सकता है।

जैनमतानुसार—तत्त्व सात हैं—१ जीव, २ अजीव, ३ आस्रव, ४ बन्ध, ५ संवर ६ निर्जरा और ७ मोक्ष। इन सात तत्त्वोंके संशय विपरीत अनध्यवसायरहित यथार्थ ज्ञानसे मोक्षकी प्राप्ति होती है।

विस्तृत विवरणके लिए जैनधर्म शब्द (भाग ८ पृ० ४६१ ४६२) देखो।

तत्त्वज्ञ (सं० त्रि०) *तत्त्वं जानाति तत्त्व-ज्ञा-क*। १ तत्त्व जानी जिसके ईश्वर-विषयक ज्ञान उत्पन्न हुआ हो ब्रह्मज्ञानी। यह जगत्में सभी वस्तुएं दुःखमय हैं, ऐसा ज्ञान कर जिसने तत्त्व (ब्रह्म) को समझ लिया है, वही तत्त्वज्ञ है। तत्त्वज्ञान प्राप्त करनेके लिए समाधिको आवश्यकता है। योगशब्द देखो।

२ दर्शनशास्त्रका ज्ञाता, दर्शन जाननेवाला, दार्शनिक।

तत्त्वज्ञान (सं० क्ली०) तत्त्वस्य ब्रह्मतत्त्वस्य ज्ञानं ६-तत्। ब्रह्मज्ञान, आत्मज्ञान। नैयायिकोंके मतसे प्रमाण प्रमेय संशय प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त अवयव तर्क निर्णय वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास छल जाति, निग्रहस्थान, इन षोड़श पदार्थोंके ज्ञानको तत्त्वज्ञान कहते हैं। (गौतमसू० १) इनका यथार्थ ज्ञान होनेसे जीव अपवर्ग लाभ कर सकता है। जब तक इन षोड़श पदार्थोंका तत्त्वज्ञान नहीं होगा तब तक अपवर्ग नहीं हो सकता। न्याय देखो।

सांख्य और पातञ्जलके मतसे प्रकृति और पुरुषका भेदज्ञान ही तत्त्वज्ञान है। पुरुष जब निरन्तर दुःखमें अभिभूत हो कर प्रकृतिके तत्त्वानुसन्धानमें प्रवृत्त होगा, तब वह अपनेको इस प्रकारके ज्ञानसे सम्पन्न करनेकी चेष्टा करेगा कि—'मुझे' दुःख और मोहमयी प्रकृतिकी मायामें अभिभूत नहीं होना चाहिये। मैं पुरुष निर्गुण निर्लेप, सच्चिदानन्दमय हूं प्रकृतिने मुझे अब तक विमोहित कर रखा था, अब सावधान होना उचित है।" प्रकृति और पुरुषके इस प्रकारके भेदज्ञानका नाम तत्त्वज्ञान है। प्रत्येक पुरुष (जीवात्मा) को कभी न कभी एक बार तत्त्वज्ञान अवश्य हो होता है या होगा। जब तक यह तत्त्वज्ञान न होगा तब तक प्रकृतिसे पुरुष छुटा न हो सकेगा। प्रकृति पुरुषको यह ज्ञान उत्पन्न करा कर निवृत्त हो जाती है। सांख्य देखो।

वेदान्तमतसे अभिभूत हो कर मनुष्य आत्म नहीं जान पाता। रज्जुमें सर्पकी तरह ब्रह्ममें अविद्यमान जगत् अवलोकन करता है। जगत्में जो कुछ दिखलाई देता है सब ब्रह्म है, किन्तु अविद्याभिभूत जीव जगत्में ब्रह्मको न देख कर घट, पट, मठ आदि देखा करता है। जब तक अविद्याका नाश न होगा, तब तक जीवको ब्रह्मका स्वरूप किसी तरह भी मालूम न होगा।

अविद्याका नाश होते ही जगत् नहीं दीखेगा फिर यह जगत् ही जो ब्रह्म दिखने लगेगा। पहले जिसको भिन्न समझता था, उसीको फिर वह ब्रह्म समझने लगेगा, "त्वं अहं" तुम-हमका भेद न रहेगा सभी एक परमात्म हो जायगी। इस प्रकारके ज्ञानको तत्त्वज्ञान कहते हैं।

जीव ब्रह्मसाक्षात्कार होते ही ब्रह्म हो जाता है, आत्मज्ञ संसारदुःखको अतिक्रम करता है, इत्यादि श्रुतिवाक्योंके प्रमाणसे और तदनुकूल युक्तियोंसे स्थिर होता है कि, तत्त्वज्ञानके सिवा जीवके लिए दुःखातीत होनेका और कोई उपाय नहीं है। ब्रह्म ही मैं हूं, इत्याकार असन्दिग्ध अनुभवका नाम है तत्त्वज्ञान. इस तत्त्वज्ञानके प्रधान उपाय श्रवण, मनन और निदिध्यासन उसके सहायकमात्र हैं। शास्त्रकथा सुननेसे ही श्रवण होता है ऐसा नहीं। गुरुके मुखसे शास्त्रीय उपदेश सुनना, हृदयमें उसका विचारित अर्थ धारण करना, साक्षात् अथवा परम्परासे ब्रह्म ही समस्तशास्त्रका तात्पर्य है, इस विषयमें विश्वास, इन सबके एकत्र होने पर तब कहीं वह श्रवण कहलाता है। इनके बिना श्रवण नहीं होता। इसका एक लौकिक दृष्टान्त दिया जाता है।

कल्पना कीजिये, आपके घरमें जा कर हमने आपके नौकरसे कहा, "एक ग्लास पानी लाओ।" परन्तु वह पानी नहीं लाया। पीछे हमने दुःखित हो कर आपसे कहा "आपके नौकरने हमारी बात नहीं सुनी।" अब देखना चाहिये कि सचमुच ही क्या नौकरने हमारी बात नहीं सुनी या 'एक ग्लास पानी ला" ये शब्द उसके कानमें प्रविष्ट ही नहीं हुए अथवा प्रविष्ट हुए थे, उसने सुना था पर ध्यान नहीं दिया या उसके अनुसार कार्य नहीं किया।

अतएव ऊपरका सुनना सुनना नहीं है। सैकड़ों मनुष्य वेदान्त अध्ययन करते हैं, 'तत्त्वमसि' वाक्य भी सुनते हैं और उसका अर्थ भी आदरपूर्वक ग्रहण करते हैं, फिर भी उनको तत्त्वज्ञानका उदय नहीं होता। संसारमें ऐसे भी बहुत मनुष्य हैं, जो बिना वेदान्त अध्ययन किये और 'तत्त्वमसि' वाक्यको बिना सुने ही तत्त्वज्ञान प्राप्त करते हैं। शास्त्रमें कहा गया है कि, कपिल, वामदेव आदि जन्मसे ही तत्त्वज्ञानी थे, अतएव श्रवणके लिये तत्त्वज्ञान वा तत्त्वज्ञान श्रवणका कार्य है, यह बात कैसे मानी जा सकती है? आचार्यदेव शङ्कर कहते हैं, इसके प्रत्युत्तरमें हमारा यह कहना है, कि चित्तकी अनिर्मलता और जन्मान्तरीय पाप आदि प्रतिबन्धकोंसे श्रवण-फल तत्त्वज्ञान अवरुद्ध रहता है। उससे उसकी कारणताका अभाव नहीं होता। जैसे अग्निका संयोग होने पर भी मणिमन्त्रादि प्रतिबन्धकके कारण दाहकार्य अवरुद्ध रहता है, उसी प्रकार श्रवणफल तत्त्वज्ञान नाना प्रतिबन्धकों द्वारा अवरुद्ध रहता है। प्रतिबन्धकका क्षय होते ही उसका उदय होता है। कपिल आदिका ऐसा ही हुआ था। उनके पूर्वजन्मके श्रवणने इस जन्ममें प्रतिबन्धक शून्य हो कर तत्त्वज्ञान उत्पन्न किया था, इस लिये इस जन्ममें उनको श्रवण-मननादि नहीं करना पड़ा था। अतएव श्रवण ही तत्त्वज्ञानका प्रधान कारण है, मनन और निदिध्यासन उसके सहकारी हैं। 'तत्त्वमसि' इस महावाक्यके श्रवण करनेसे, उसके अर्थमें जो अविश्वास और असम्भव बोध आदि जो कार्य होते हैं, वे कार्य मनन द्वारा निवारित होते हैं। मननके बाद भी यदि स्पष्ट रूपसे 'मैं ब्रह्म हूं' और कुछ नहीं, ऐसा अनुभव न हो, तो निदिध्यासनकी जरूरत पड़ती है। निदिध्यासनसे सिद्धि प्राप्त कर लेनेसे ही यह अनुभव स्थिरतर होता है, अन्यथा करनेसे तत्त्वज्ञान नहीं होता।

कोई कोई आचार्य कहते हैं कि निदिध्यासन ही तत्त्वज्ञानका मूल कारण है, श्रवण और मनन उसके सहायक मात्र हैं। अपने ब्रह्मभावका अपरोक्ष ज्ञानमें आरूढ़ होना ही तत्त्वज्ञान है। जैसे मरु-मरीचिकामें जलकी भ्रान्ति होती है, उसी तरह ब्रह्ममें दृश्यकी भ्रान्ति होती है। इसलिए दृश्यप्रपञ्च मिथ्या और ब्रह्म ही सत्य है। पहले यह ज्ञान-अभ्यास भी दृढ़ करना पड़ता है बादमें मैं ही ज्ञान हूं और उसके अवलम्बन शरीर, मन और इन्द्रियां सभी भ्रान्तिविशेषका विलास है, इसलिये मैं ही ज्ञान और ज्ञानका अवलम्बन हूं, समस्त ही ब्रह्मसे है, रज्जु सर्पकी भांति यह मिथ्याज्ञान जब अविचाल्य होता है, तब अपने आप "अहं" अर्थात् "मैं" यह ज्ञान इन्द्रिय और मन आदिको त्याग कर ब्रह्ममें जा मिलता है। अहंज्ञानके ब्रह्मावगाही होते ही तत्त्वज्ञान हुआ है, ऐसी अवधारणा करनी चाहिये। ऐसा तत्त्वज्ञान होते ही मोक्षकी प्राप्ति होती है। तत्त्वज्ञान ही जीवके उद्धारका एकमात्र उपाय है, ऐसा तत्त्वज्ञान होने पर उसको आत्मज्ञान वा ब्रह्मज्ञान कहा जा सकता है। यह तत्त्वज्ञान सात्त्विक, राजसिक और तामसिक मनो-

प्रतीति भी प्रतीत है, इसलिये सुखातीत भी है। जब किसको सुख दुःख समझते हो, तब उसका उस सुख-दुःखके प्रतीत है। (वेदान्त०)

जैनमतानुसार—जब तत्त्वोंका यथार्थ ज्ञानपूर्वक यह शरीर आत्मा अपनेको कर्मादि बाह्य पदार्थोंसे भिन्न समझ कर सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्ररूप मोक्षमार्गका अवलम्बन करता है, तब उसके उस ज्ञानको तत्त्वज्ञान कहते हैं। यह तत्त्वज्ञान तीन प्रकारका होता है, १ उपशम सम्यक्त्व २ क्षायोपशम सम्यक्त्व और ३ क्षायिक सम्यक्त्व। इनमेंसे पहलेके दो हो कर छूट भी जाते हैं, परन्तु जिस जीवको क्षायिक सम्यक्त्व या अक्षय तत्त्वज्ञान हो जाता है, वह अवश्य ही मोक्षप्राप्त करता है। विशेष विवरण जैनधर्मशब्द भाग ८ पृष्ठ ४०१—४०२) में देखो।

तत्त्वज्ञानार्थदर्शन (सं० क्ली० तत्त्वज्ञानस्य अर्थः प्रयोजनं तस्य दर्शनं ६-तत्।) तत्त्वज्ञानके लिये आलोचन और मोक्षके लिये तत्त्वज्ञानके साधन, मैं कौन हूँ, यह ऐसे साक्षात्कारका प्रयोजन अविद्या और उसका कार्य निखिल दुःखनिवृत्तिरूप और परम आनन्दप्राप्तिरूप मोक्ष है। उसकी आलोचना ही तत्त्वज्ञानार्थदर्शन है।

तत्त्वज्ञानी (सं० पु०) तत्त्वस्य ज्ञानमस्यास्ति ज्ञान-इनि। १ जिसने ब्रह्म, आत्मा और सृष्टि आदिके सम्बन्धका यथार्थ ज्ञान हो। तत्त्वज्ञ देखो। २ दार्शनिक।

तत्त्वतः (सं० अव्य०) तत्त्व तसिल्। यथार्थरूपसे, वस्तुतः, वास्तविक।

तत्त्वता (सं० स्त्री०) तत्त्व भावे तल् स्त्रियां टाप्। १ यथार्थता, वास्तविकता। तत्त्व होनेका भाव या गुण।

तत्त्वदर्श (सं० त्रि०) १ जिसने तत्त्व दर्शन किया है जिसको तत्त्वज्ञान उत्पन्न हुआ हो। (पु०) २ सावर्णि मन्वन्तरके एक ऋषिका नाम।

तत्त्वदर्शिता (सं० स्त्री०) तत्त्वदर्शीका भाव, तत्त्वदर्शिन् तल् स्त्रियां टाप्। वह जो दर्शन शास्त्र जानता हो। तत्त्वज्ञता।

तत्त्वदर्शी (सं० पु०) तत्त्वं पश्यति तत्त्व दृश णिनि। १ तत्त्वज्ञानी, वह जो तत्त्व जानता हो। २ रैवतक मनुके एक पुत्रका नाम।

तत्त्वदीपन (सं० क्ली०) तत्त्वालोक, तत्त्वज्ञानकी आभा।

तत्त्वदृष्टि (सं० स्त्री०) वह दृष्टि जो तत्त्वका ज्ञान प्राप्त करनेमें सहायक हो, ज्ञानचक्षु, दिव्यदृष्टि।

तत्त्वनिरूपण (सं० क्ली०) तत्त्वस्य निरूपणं ६-तत्। १ यथार्थरूप ईश्वर निरूपण, ब्रह्मनिर्णय। २ जैनमतानुसार—जीव, अजीव, आस्रव बन्ध आदि सात तत्त्वोंका निरूपण।

तत्त्वनिर्णय (सं० पु० तत्त्वस्य निर्णयः ६-तत्।) तत्त्वनिरूपण देखो।

तत्त्वन्यास (सं० पु०) तन्त्रोक्त—विष्णुपूजाङ्ग न्यासविशेष तन्त्रके अनुसार विष्णुपूजामें एक अङ्गन्यास। इस न्यासके विषयमें तन्त्रसारमें इस प्रकार लिखा है। अपनी पूजा विधिके अनुसार पूजा दि कर सिद्धिलाभके लिये साधकको यह न्यास करना चाहिए।

"ॐ परायापरशुरामाय तत्त्वात्मने नमः।"—(तन्त्रसार०)

पहले नमः पराय और इसके बाद तत्त्वात्मने नमः यह वाक्य प्रयोग करना पड़ेगा।

मं नमः पराय जीवतत्त्वात्मने नमः मं नमः पराय प्राणतत्त्वात्मने नमः इत्युक्त्वा व्यापके।

ततो हृदयमेव तत्त्वमयं विन्यसेत्।

मं नमः पराय मतितत्त्वात्मने नमः मं नमः पराय अहंकारतत्त्वात्मने नमः मं नमः पराय मनस्तत्त्वात्मने नमः इत्युक्त्वा हृदि।

मं नमः पराय शब्दतत्त्वात्मने नमः मस्तके।

यं नमः पराय स्पर्शतत्त्वात्मने नमः मुखे।

रं नमः पराय रूपतत्त्वात्मने नमः हृदि।

वं नमः पराय रसतत्त्वात्मने नमः गुह्ये।

लं नमः पराय गन्धतत्त्वात्मने नमः पादयोः।

शं नमः पराय श्रोत्रतत्त्वात्मने नमः श्रोत्रयोः।

षं नमः पराय त्वक्तत्त्वात्मने नमः त्वचि।

सं नमः पराय चक्षुस्तत्त्वात्मने नमः चक्षुषोः।

हं नमः जिह्वातत्त्वात्मने नमः जिह्वायां।

ळं नमः पराय घ्राणतत्त्वात्मने नमः घ्राणयोः।

क्षं नमः वाक्तत्त्वात्मने नमः वाचि।

थं नमः पराय पाणितत्त्वात्मने नमः पाण्योः।

धं नमः पराय पादतत्त्वात्मने नमः पादयोः।

फं नमः पराय पायुतत्त्वात्मने नमः गुह्ये।

वं नमः पराय वनस्पतितत्त्वात्मने नमः लिंगे ।
हं नमः पराय आकाशतत्त्वात्मने नमः मूर्ध्नि ।
यं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः मुखे ।
रं नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः ।
वं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः लिंगे ।
लं नमः पराय पृथिवीतत्त्वात्मने नमः पादयोः ।

इत्याद्युनीकृततनुर्विदधीत तत्त्वान्यास मपूर्वकपरान्तरन्यपेतं । मूमपराय च नदाद्धयमात्मने च नत्यन्तमुदरस्य तत्त्वमनुक्रमेण ॥
सकलवपुषि जीवं प्राणमायोज्य मध्ये
न्यस्तुमतिमहंकारनत्वं मनस्य ।
कमुखहृदयगुह्यंघ्रिष्वथोशब्दपूर्वं
गुणगणमथकर्णादिस्थितं श्रोत्रपूर्वं ॥
वागादीन्द्रियवर्गमात्मनि नमेदाकाशपूर्वं गणं ।
मूर्द्धास्ये हृदये शिरे चरणयो हृत्पुण्डरीक हृदि ।
यं नमः पराय हृत्पुण्डरीकतत्त्वात्मने नमः हृदि ।
हं नमः पराय द्वादश कलाव्यास-सूर्यमण्डलतत्त्वात्मने नमः हृदि ।
सं नमः पराय षोडशकलाव्याससोममण्डलतत्त्वात्मने नमः हृदि ।
रं नमः पराय दशकलाव्यासवह्निमण्डलतत्त्वात्मने नमः हृदि ।
पं नमः पराय परमेष्ठितत्त्वात्मने वासुदेवाय नमः मस्तके ।
मं नमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने संकर्षणाय नमः मुखे ।
लं नमः पराय विश्वतत्त्वात्मने प्रद्युम्नाय नमः हृदि ।
वं नमः पराय निवृत्तितत्त्वात्मनेऽनिरुद्धाय नमः लिंगे ।
लं नमः पराय सर्वतत्त्वात्मने नारायणाय नमः पादयो ।
क्षं नमः पराय कोपतत्त्वात्मने नृसिंहाय नमः सर्वगात्रे ।
एवं तत्त्वानि विन्यस्य प्राणायाम समाचरेत् । (तन्त्रसार)

इस प्रकार उक्त मन्त्र द्वारा सर्वाङ्गमें न्यास कर प्राणायाम करना चाहिये । यथानियमसे तत्त्वन्यास करने पर समस्त सिद्धि लाभ होती है और वह मनुष्य विष्णुको स्वरूपता प्राप्त करता है ।

तत्त्वप्रकाश (सं० पु०) तत्त्वस्य प्रकाशः, ६ तत् । तत्त्वदीपन, तत्त्वज्ञानकी आभा ।

तत्त्वबोधिनी (सं० स्त्री०) वह जिसके द्वारा तत्त्वज्ञान उत्पन्न होता हो ।

तत्त्वभाव (सं० पु०) प्रकृति, स्वभाव ।

तत्त्वभाषी (सं० त्रि०) तत्त्वं भाषते भाष णिनि । यथार्थवादी, जो स्पष्टरूपसे यथार्थ बात कहता हो ।

तत्त्वमङ्गलम्—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत कोचिन राज्यके चित्तूर जिलेका एक नगर । यह अक्षा० १०° ४१´ ३०´´ और देशा० ७६° ४२´ पू०में अवस्थित है । यहाँ एक मुन्सफी अदालत है । इसका क्षेत्रफल प्रायः ५६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ६२२२ है ।

तत्त्वरश्मि (सं० पु०) तन्त्रके अनुसार स्त्री देवताका बीज, वधूबीज ।

तत्त्वरायर—१७वीं शताब्दीके एक विख्यात तामिल शैव सन्यासी । इन्होंने तामिल भाषामें बहुतसे ग्रन्थ लिखे हैं ।

तत्त्ववत् (सं० त्रि०) तत्त्वं विद्यतेऽस्य तत्त्व मतुप् । तत्त्वविशिष्ट, तत्त्वज्ञानसे भरा हुआ ।

तत्त्ववाद (सं० पु०) दर्शनशास्त्रसम्बन्धी विचार ।

तत्त्ववादी (सं० पु०) तत्त्वं वदति, वद-णिनि । १ यथार्थवादी, वह जो स्पष्टरूपसे यथार्थ बात कहता हो । २ वह जो तत्त्ववादका ज्ञाता और समर्थक हो ।

तत्त्वविद् (सं० पु०) १ तत्त्ववेत्ता । २ परमेश्वर ।

तत्त्वविद्या (सं० स्त्री०) दर्शनशास्त्र ।

तत्त्ववेत्ता—एक कविका नाम । ये १६२३ ई०में हुए थे ।

तत्त्ववेत्ता (सं० पु०) १ तत्त्वज्ञानी, वह जिसे तत्त्वका ज्ञान हो । २ दार्शनिक, दर्शनशास्त्रका ज्ञाता, फिलासफर ।

तत्त्वशास्त्र (सं० पु०) दर्शनशास्त्र ।

तत्त्वश्रद्धान (सं० क्लो०) जिस वस्तुका जो स्वरूप है उसका उसी तरहसे श्रद्धान करना । जैन शास्त्रानुसार सम्यग्दृष्टिके यह होता है ।

तत्त्वसञ्चय (सं० पुं०) बौद्धशास्त्रका एक भेद ।

तत्त्वार्थश्रद्धान—(सं० क्लो०) तत्त्वश्रद्धान देखो ।

तत्त्वार्थसूत्र (सं० क्लो०) जैनधर्मका मूलतत्त्व प्रकाशक सूत्रग्रन्थविशेष । यह ग्रन्थ संस्कृत भाषामें लिखा हुआ है इसमें प्रायः समस्त ही जैनधर्मकी ज्ञातव्य बातोंका उल्लेख है । आचार्य श्रीउमास्वामीने इसे बनाया है । दिगम्बर श्वेतांबर दोनों संप्रदायवाले कुछ परिवर्तनके साथ समानभावसे इसे मानते हैं । इसके सूत्रोंका पाठ करनेसे एक उपवास करनेका फल मिलता है । बहुतसे जैनी इसका प्रतिदिन पाठ करना अपना कर्तव्य समझते हैं ।

जो लोग पढ़ना नहीं जानते हैं वे भी इसको दूसरोंसे सुनके ही पुण्य समझते हैं।

इस ग्रन्थमें दश अध्याय हैं। उनमें पहिले अध्याय में सम्यग्दर्शन और निर्देशका वर्णन है। दूसरे अध्याय में औपशमिक औपशमिक आदि ५३ भाव उनके लक्षण स्थावर संसारी मुक्त आदि भेद, मनुष्य तिर्यंच आदि जन्मप्रकार और योनि आदिका विस्तृत वर्णन है। तीसरे अध्यायमें अधोलोक नरकावास और मध्यलोकके समुद्र द्वीप पर्वत नदी आदिका वर्णन है। चौथेमें ऊर्ध्वलोक-स्वर्ग ज्योतिषचक्र उनके विमान, आयु, ज्ञान प्रभृतिका वर्णन है। पाँचवें अध्यायमें जीव, पुद्गल, धर्म (द्रव्यविशेष) अधर्म द्रव्य, आकाश और काल इन छह द्रव्योंका वैज्ञानिक ढंगसे वर्णन है। छठेमें जीवके साथ मन वचन कायकी क्रिया से ज्ञानावरणादि कर्मोंका किस प्रकार आस्रव (आगमन) होता है, कौन काम करनेसे क्या फल होता है इत्यादि बातोंका विस्तार है। सातवेंमें मुनि और श्रावकके आचारका वर्णन है। आठवेंमें ज्ञानावरणादि कर्मोंकी स्थिति, प्रकृति अनुभाग और प्रदेशोंका कथन है। नवमें में कर्मोंको नष्ट करनेके कारण गुप्ति समिति अनुप्रेक्षा परीषहजय ध्यान आदिका वर्णन है और दशवेंमें मोक्ष तत्त्वका विशेष व्याख्यान है। जैनधर्म और उमास्वामि देखो।

तत्त्वानुसन्धान (सं॰ स्त्री॰) तत्त्वस्य अनुसन्धानं, ६-तत्। प्रकृत अवस्थाका अन्वेषण।

तत्त्वानुसन्धायी (सं॰ त्रि॰) तत्त्व अनुसन्धा यिनि। जो तत्त्वानुसन्धान करता हो।

तत्त्वावधान (सं॰ स्त्री॰) तत्त्वस्य अवधान ६-तत्। निरीक्षण, जाँच पड़ताल, देखरेख।

तत्त्वावधायक (सं॰ पु॰) तत्त्वस्य अवधायकः, ६-तत्। तत्त्वावधानकारी, निरीक्षक, जो देखरेख करता हो।

तत्त्वावधारक (सं॰ पु॰) तत्त्वस्य अवधारकः ६-तत्। स्वरूपपरिज्ञाता, जो किसी विषयका तत्त्वनिरूपण करता हो।

तत्त्वावधारण (सं॰ क्ली॰) तत्त्वस्य अवधारण ६-तत्। तत्त्वनिर्णय, यथार्थ बोध।

तत्त्वावबोध (सं॰ पु॰) तत्त्वस्य अवबोधः, ६-तत्। तत्त्व-ज्ञान। तत्त्वज्ञान देखो।

तत्पत्री (सं॰ स्त्री॰) तत्पत्र अस्याः बहुव्री॰। १ हिङ्गुपत्री, इस नामको घास। २ बड़की हड़ वेतिका पेड़।

तत्पद (सं॰ क्ली॰) तदिति पद, कर्मधा॰। १ विष्णुका परम पद निर्वाण।

"तत्त्वमसि श्वेतकेतो इत्यादिवाक्यस्थ तत्पद ब्रह्मादि" (श्रुति) हे श्वेतकेतो! जो सत्य है वही आत्मा वह आप सत्य है इसीलिये उस आत्माको तत्पद समझना चाहिये। "तत्पद दर्शन येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।" (भागवत) २ [illegible]।

तत्पदलक्ष्यार्थ (सं॰ पु॰) तत्पदस्य लक्ष्योऽर्थः, ६-तत्। चित्स्वरूप ब्रह्म।

तत्पदवाच्य (सं॰ त्रि॰) तत्पदस्य वाच्यः, ६-तत्। ब्रह्म श्रुतिप्रतिपाद्य एकमात्र ब्रह्म ही तत्पदवाच्य है।

तत्पदवाच्यार्थ (सं॰ पु॰) तत्पदका वाच्य अर्थ ६-तत्। ब्रह्मके वाच्यार्थमें अज्ञानादिसमूह उपस्थित सर्वज्ञत्व प्रभृति विशिष्टचैतन्य और अनुपहितचैतन्य ये तीन तत्पदवाच्यके अर्थ हैं।

तत्पदार्थ (सं॰ पु॰) तत्पदस्य सर्वज्ञत्वादिविशिष्टस्य अर्थं ६-तत्। जगत्कारण परमात्मा, सृष्टिकर्त्ता। ब्रह्म ही एक मात्र जगत्का कारण है। ब्रह्म देखो।

तत्पदाभिध (सं॰ त्रि॰) तत्पदस्य सर्वज्ञत्वादिविशिष्टस्य अभिधा यस्य, बहुव्री॰। तत्पदवाच्य ब्रह्म।

तत्पर (सं॰ त्रि॰) तत् परम उत्तम यस्य, बहुव्री॰। १ तद्गत उसमें अनन्य रखनेवाला। २ तदासक्त, उसमें लगा हुआ। तस्मात् पर ५ तत्। ३ सन्नद्ध उद्यत जो कोई काम करनेके लिये तैयार हो। ४ निविष्ट, यत्नवान्। ५ निपुण दक्ष। ६ समर्थ चतुर, होशियार। (पु॰) ७ एक निमिषका तीसवाँ भाग।

तत्परता (सं॰ स्त्री॰) तत्पर-तल्-टाप्। १ सन्नद्धता, मुस्तैदी। २ दक्षता, निपुणता। ३ यत्न, आग्रह। ४ सतर्कता होशियारी।

तत्परायण (सं॰ त्रि॰) तदेव परं अयनं यस्य बहुव्री॰। १ तदासक्त, उसमें लगा हुआ। २ तत्प्रधान, उसमें लीन।

तत्पुरुष (सं॰ पु॰) १ समासविशेष एक प्रकारका समास। इस समासमें उत्तरपदकी प्रधानता होती है

अर्थात् दो पदोंमें समास हो कर जो पद बनता है उसका लिङ्ग प्रभृति होता है। प्रधानतः यह समास ६ भागोंमें विभक्त है—द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी और सप्तमी तत्पुरुष। द्वितीयादि विभक्तिके अन्तका उत्तर द्वितीयादि तत्पुरुष होता है। स ख देखो। २ रुद्र भेद, एक रुद्रका नाम। ३ ईश्वर, परमेश्वर। ४ मत्स्यपुराणके अनुसार एक कल्पका नाम।

तत्पूर्व (सं० त्रि०) स एव पूर्वः, कर्मधाः। सर्व प्रथम, सबसे पहला।

तत्प्रकार (सं० त्रि०) उसी तरह।

तत्प्रतिरूपक व्यवहार (सं० पु०) जैनियोंके मतसे एक अतिचार। यह विक्रेय शुद्ध पदार्थोंमें खोटे पदार्थोंको मिलान करनेसे होता है।

तत्फल (सं० पु०) तनोति तन-क्विप् तत् फलं यस्य, बहुव्री० वा तत् विस्तृतं फलति फल-अच्। १ कुवलय, नीलकमल। २ कुठ नामक औषधविशेष, कूट नामकी दवा। ३ चौर नामक सुगन्धि द्रव्य। ४ रोहितृण (क्लो०) तस्य फलं, ६-तत्। ५ उसका फल।

तत्र (सं० अव्य०) तत् त्रल्। वहाँ, उस स्थान पर उस जगह।

तत्रक (हिं० पु०) यूरोप, अरब, फारससे ले कर पूर्वमें अफगानिस्तान तक होनेवाला एक प्रकारका पेड़। यह कुछ कुछ अनार पेड़सा मिलता जुलता है। इसके पत्र नीमके पत्तोंकी तरह कटावदार और कुछ ललाई लिये होते हैं। इसके बीजको समाक कहते हैं और ये बाजारमें बिकते हैं। हकीमी दवामें इसके बीज बहुत उपयोगी हैं। एक प्रकारका रंग इसके पत्तोंसे बनाया जाता है। इसके डंठल और पत्ते चमड़े सिझानेके काममें आते हैं। हिन्दुस्तानमें चमड़ेके बड़े बड़े कारखानोंमें इसके पत्ते सिसिलीसे मंगाये जाते हैं।

तत्रत्य (सं० त्रि०) तत्र भवः अव्ययात् त्यप्। तत्स्थानस्थ, उस स्थान पर उत्पन्न।

तत्रभवत् (सं० त्रि०) पूज्यार्थे तत्र भवान् नित्यसः वा सुप्सुपेति समासः। पूज्य, मान्य प्रशंसनीय श्रेष्ठ।

अत्रभवान् देखो।

तत्रस्थ (सं० त्रि०) तत्र तिष्ठति स्था-क। तत्रस्थित, उस स्थानका, उस जगह पर।

तत्रापि (सं० अव्य०) तथापि, तोभी।

तत्संक्रान्त (सं० त्रि०) तस्य संक्रान्तः, ६-तत्। मदीय। उसका, उससे सम्बन्ध रखनेवाला।

तत्सदृश (सं० त्रि०) तस्य सदृशः, ६-तत्। तथाविध, उसके समान।

तत्सम (सं० पु०) भाषामें व्यवहृत होनेवाला संस्कृतका एक शब्द।

तत्समानन्तर (सं० अव्य) तदनन्तर उसके बाद।

तत्साधुकारी (सं० त्रि०) तत्साधु यथा तथा करोति तत्-साधु-कृ-णिनि। जो उसके प्रति उत्तम व्यवहार करता हो।

तत्स्थ (सं० त्रि०) तत्र तिष्ठति तत् स्था क। वहाँ पर अवस्थित।

तत्स्थानाभिषिक्त (सं० त्रि०) तस्य स्थाने अभिषिक्तः, ६ और ७-तत्। उसका प्रतिनिधि, जो दूसरोंका स्थानापन्न हो कर काम करता हो।

तत्स्वरूप (सं० त्रि०) तस्य स्वरूपः ६-तत्। उसके समान, उसीके जैसा।

तथा (सं० अव्य०) तेन प्रकारेण तद्-थाल्। १ इसी तरह, ऐसे ही। २ और, व। ३ अभ्युपगम, निकट, समीप। (पु०) ४ पूर्व प्रतिवचन, पहलेको कही हुई बात। ५ सत्य। ६ सीमा, हद। ७ निश्चय। ८ समानता।

तथाकर (सं० अव्य०) किसी प्रकारसे करके।

तथागत (सं० पु०) तथा सत्यं गतं ज्ञानं यस्य, बहुव्री० यथा न पुनरावृत्तिर्भवति तथा तेन प्रकारेण गतः। १ गोतमबुद्ध, सुगत। पूर्व पूर्व बुद्धोंकी तरह आगमन हुआ था, इसलिए इनका नाम तथागत हुआ। बुद्ध देखो। (त्रि०) तथा तेन प्रकारेण आगतः ३-तत्। २ उसी प्रकार एवं उसी रूपमें आये हुए। (भारत ३।७७।५)

तथागतगर्भ (सं० पु०) बौद्धके एक शास्त्रका नाम।

तथागतगुणज्ञानचिन्त्यविषयावतारनिर्देश (सं० पु०) बौद्धके एक शास्त्रका नाम।

तथागतगुप्त (सं० पु०) एक बौद्ध राजा।

तथागतगुह्यक (सं० पु०) नेपाली बौद्धोंके ८ प्रधान शास्त्रोंमेंसे एक।

तथागतभद्र—नागार्जुनके एक प्रधान शिष्य।

तथागुण (सं॰ त्रि॰) तद्‌गुणसम्पन्न, वैसा ही गुण वान्।

तथाच (सं॰ अव्य॰) तथा च च, च, इति, द्वन्द्व॰। तथापि तो भी।

तथाता (सं॰ स्त्री॰) तथा भावे तल् टाप्। तथात्व, उस तरह।

तथात्व (सं॰ क्ली॰) तथा भावे त्व। तथाभूतत्व उस तरह।

तथापि (सं॰ अव्य॰) तथा च अपि च, द्वन्द्व। तथापि, तो भी, तिस पर भी, तब भी।

तथाभावी (सं॰ त्रि॰) तद्‌रूपभावसम्पन्न, उसी स्वभाववाला।

तथाभूत (सं॰ त्रि॰) तेन प्रकारेण भूतः भू-कर्त्तरि क्त। उसी प्रकारसे उत्पन्न, उसी तरहसे भया हुआ।

तथामुख (सं॰ त्रि॰) उसी ओर मुख घुमा कर। उसी ओर मुंह रख कर।

तथाराज (सं॰ पु॰) तथेति राजते राज टच्। बुद्ध।

तथारूप (सं॰ त्रि॰) तदनुरूप, उसी प्रकार।

तथारूपी—तथारूप देखो।

तथाविध (सं॰ त्रि॰) तथा विधा यस्य, बहुव्री॰। तादृश उसी प्रकार।

तथाविधेय (सं॰ त्रि॰) उसी प्रकार कर्त्तव्य जो उसी तरह किया जाय।

तथाव्रत (सं॰ त्रि॰) उसी तरह व्रतपरायण।

तथास्तु (अव्य॰) वैसाही हो।

तथोक्त (सं॰ त्रि॰) उसी तरह उच्चारण किया हुआ।

तथाहि (सं॰ अव्य॰) तथा च हि च, द्वन्द्व। १ निदर्शन, दिखलानेकी क्रिया। २ प्रसिद्ध, ख्याति। ३ समर्थन।

तथैव (सं॰ अव्य॰) तथा च एव च, द्वन्द्व। तद्वत् उसी तरह, वैसाही।

तथैवच (सं॰ अव्य॰) तथा च एव च चच, द्वन्द्व। उसी प्रकारसे ही।

तथ्य (सं॰ क्ली॰) तथा साधु तथा यत्। (तत्र साधुः। पा ४।४।९८) १ सत्य, यथार्थता, यथार्थ। (त्रि॰) २ तथ्ययुक्त।

तथ्यज्ञान (सं॰ क्ली॰) तथ्यस्य ज्ञान, ६ तत्। यथार्थ ज्ञान, प्रकृत ज्ञान। तत्त्वज्ञान देखो।

तथ्यबोध (सं॰ पु॰) तथ्यस्य बोध ६ तत्। तथ्यज्ञान, प्रकृत ज्ञान। ज्ञान देखो।

तथ्यभाषी (सं॰ त्रि॰) तथ्य भाषते भाष-णिनि। यथार्थ वादी, साफ और सच्ची बात कहनेवाला।

तथ्यवादी (सं॰ त्रि) तथ्य वदति वद णिनि।

तथ्यभाषी देखो।

तथ्यानुसन्धान (सं॰ क्ली॰) तथ्यस्य अनुसन्धान, ६ तत्। प्रकृत अवस्थाका अनुसन्धान।

तद् (सं॰ त्रि॰) तन् आदि त्यद्। १ बुद्धिस्थ परामर्श विशेष, वह। इसका प्रयोग यौगिक शब्दोंके आरम्भमें होता है। तत् देखो।

तदग्र (सं॰ पुं॰) तस्य अग्रः, ६ तत्। उसका भाग या हिस्सा।

तदतिरिक्त (सं॰ त्रि॰) तस्य अतिरिक्त, ६ तत्। उसके अतिरिक्त, उसके सिवा।

तदधिक (सं॰ त्रि॰) तदतिरिक्त, उससे ज्यादा।

तदन्त (सं॰ त्रि॰) १ उसी प्रकारसे समाप्त होना। (पु॰ क्ली॰) २ अभिप्राय, मतलब।

तदनन्तर (सं॰ क्ली॰) उसके पीछे, उसके उपरान्त।

तदन्तर (सं॰ क्ली॰) तस्य अनन्तर ६-तत्। उसके बाद, उसके पीछे।

तदर्थ (सं॰ त्रि॰) तदेव अर्थः यस्य, बहुव्री॰। जिस तरह आयत अवकाशमें पत्रादि मौजूद्योग उसी तरह उसमें भी।

तदनु (सं॰ त्रि॰ क्रि॰) १ एवं उसी प्रकार, उसी तरह। २ उसके बाद तदनन्तर।

तदनुरूप (सं॰ त्रि॰) तस्य अनुरूप, ६ तत्। तद्रूप। उसीके जैसा।

तदनुसार (सं॰ पु॰) तस्य अनुसार ६-तत्। उसके अनुकूल, उसके मुताबिक।

तदनुयायी (सं॰ त्रि॰) तदनुयाति अनु या णिनि। तदनुयायी, उसीके अनुसार चलनेवाला।

तदन्य (सं॰ त्रि॰) तस्मादन्यः ५ तत्। भिन्न उससे अलग।

तदन्यबाधितार्थप्रसङ्ग (सं॰ पु॰) तदन्यं बाधितार्थस्य प्रसङ्ग। प्रमाणबाधित अर्थका प्रसङ्गरूप तर्कभेद, न्यायमें तर्कके पाँच प्रकारोंमेंसे एक। पाँच प्रकारके तर्कोंके नाम—आत्माश्रय, अन्योन्याश्रय, चक्रक, अन

वस्था और प्रमाणबाधितार्थ प्रसङ्ग। तर्क देखो।

तदपि (सं० अव्य०) तथापि, तौभो।

तदबीर (अ० स्त्री०) युक्ति उपाय, तरकीब।

तदभिन्न (सं० त्रि०) तस्मादभिन्नः, ५ तत्। तत्स्वरूप उसीके समान, उसीके जैसा।

तदर्थ (सं० त्रि०) १ तत्प्रयोजनक, उसके लिये। २ तदभिधेय। ३ तत्प्रयोजन, तन्निमित्त, तज्जन्य।

तदर्पण (सं० क्ली०) तस्य तस्मिन् निक्षिप्तस्य अर्पणं ६-तत्। उस वस्तुका प्रत्यर्पण, उस पदार्थका देना।

तदर्ह (सं० त्रि०) तद्योग्य, उसके लिये।

तदवधि (सं० क्ली०) सः अवधि यस्मिन् तत्, बहुव्रो०।

तदवस्थ (सं० त्रि०) सा अवस्था यस्य बहुव्रो०। जो उसी अवस्थामें हो, जिसको पहली अवस्था कुछ भो नहीं घटो हो।

तदा (सं० अव्य०) तस्मिन् काले तद्-दा। उस समय, जिस समय, तब।

तदाकार (सं० त्रि०) १ तद्रूप, उसी आकारका, वैसा ही। २ तन्मय, तल्लीन, लगा हुआ।

तदात्मा (सं० पु०) १ तत्स्वरूप, उसके ऐसा। २ तद्विध, उसीके सदृश।

तदात्व (सं० क्ली०) तदा इत्यस्य भावः तदा-त्व। तत्काल, वर्तमान समय।

तदानीं (सं० अव्य०) तस्मिन् काले तद्-दानीं। तदो दा च। पा ५।३।१९। उसी समय, तब।

तदानीन्तन (सं० त्रि०) तत्र भव इति ख्युन् ख्युट् च। तदातन, उस समयका।

तदाप्रभृति (सं० त्रि०) तदा तत्कालः प्रभृतिरादिर्यस्य, बहुव्रो०। उसी समयसे।

तदामुख (सं० त्रि०) तदा मुखं यस्य बहुव्रो०। आरंभ, शुरू।

तदायुक्तक (सं० पु०) तस्मिन् आयुक्तः, ७-तत् स्वार्थे-कन्। राजपरिषद्‌विशेष, राजाकी एक सभा।

तदारुक (अ० पु०) १ किसी खोई हुई चोज अथवा अपराधीका अन्वेषण। २ प्रबन्ध बन्दोबस्त, पेशबन्दी। ३ दण्ड, सजा।

तदित् (सं० त्रि०) तदेति इन् क्विप्, तुक। तद्-विषयक स्तोत्र।

तदितर्थ (सं० त्रि०) तदित् तदेवार्थः प्रयोजनं यस्य, बहुव्रो०। तद्विषयक स्तोत्र, उस सम्बन्धी स्तुति। जिसका प्रयोजन है। "वयुमु त्वा तदिदर्था इन्द्र" (ऋक् ८।२।१६) 'तद्विषयक स्तोत्र तदित्,तदेवार्थः प्रयोजन येषां तादृशा।' (सायण)

तदीय (सं० त्रि०) १ तत्सम्बन्धी, उसका, उससे सम्बन्ध रखनेवाला।

तदुपरान्त (सं० अव्य०) उसके पीछे, उसके बाद।

तदुपरि (सं० त्रि०) तत् उपरि। उसके ऊपर।

तदेक (सं० त्रि०) स एव एकः प्रधानं यस्य, बहुव्रो०। तत्स्वरूप, उसके सदृश।

तदेकात्मा (सं० त्रि०) स एव एकः आत्मा आत्मस्वरूपः यस्य, बहुव्रो०। उसीके जैसा, उसीके समान।

तदोकस (सं० त्रि०) वही स्थान वहां।

तदोजस (सं० त्रि०) सर्ववलस्वरूप, उसीके जैसा वलवान्।

तद्गज (सं० त्रि०) तत् गजः, २-तत्। १ तदासक्त, उसके अन्तर्गत। २ उससे सम्बन्ध रखनेवाला।

तद्गुण (सं० त्रि०) तस्य गुण इव गुणो ऽस्य, बहुव्रो०। १ तत्तुल्य गुणयुक्त, उसीके समान गुणवान्। २ अर्था-लङ्कारविशेष, एक अर्थालङ्कार। जहां अपना गुण त्याग करके समीपवर्ती किसो दूसरे उत्तम पदार्थका गुण ग्रहण किया जाता है, वहां यह अलङ्कार हुआ करता है। (पु०) तस्य गुणः, ६-तत्। ३ उसका गुण। ४ प्रधान विशेषण।

तद्गुण संविज्ञान (सं० पु०) तत्र बहुव्रीहौ गुणस्य गुणी-भूतस्य विशेषणस्य संविज्ञानं सम्यक्ज्ञानं यत्र, बहुव्रो०। समासविशेष, एक समास। बहुव्रीहि समासके दो भेद हैं—तद्गुणसंविज्ञान और अतद्गुणसंविज्ञान। बहुव्रीहि समास करने पर समस्यमान पदार्थ जहां समासवाच्यमें रहता है, उसको तद्गुणसंविज्ञान कहते हैं। यथा—"त्रीणि लोचनानि यस्य स त्रिलोचनः शिव।" यहां पर समास वाच्यमें अर्थात् शिवके तीन नेत्र हैं ऐसा जान कर इसका नाम तद्गुणसंविज्ञान पड़ा है। समास देखो।

तद्दण्ड (सं० त्रि०) तत्दण्ड, कर्मधा०। वह दण्ड, वह काल, तब।

तद्दिन (सं० क्ली०) तत् दिनं, कर्मधा०। वह दिन, उस दिन।

तद्दिनम् (सं॰ अव्य॰) १ दिन मध्य दिनमें। २ प्रतिदिन, रोज रोज।

तद्धन (सं॰ त्रि॰) तदेव धनं यस्य बहुव्री॰। १ कृपण, कंजूस। (क्ली॰) तत् धन, कर्मधा॰। २ वह धन या दौलत। तस्य धन ६ तत्। ३ उसका धन।

तद्धर्म (सं॰ त्रि॰) स धर्मो यस्य, बहुव्री॰। तथाभूत धर्मयुक्त, उसीके ऐसा धर्मोंका।

तद्धित (सं॰ त्रि॰) तस्मै हित ४-तत्। १ उसकी भलाई। (पुं॰ क्ली॰) २ व्याकरणोक्त प्रत्ययविशेष, व्याकरणमें एक प्रकारका प्रत्यय। इसे संज्ञाके अन्तमें लगा कर शब्द बनाते हैं। यह प्रत्यय पांच प्रकारसे शब्द बनानेके काममें आता है। यथा—अपत्यवाचक, कर्तृवाचक, भाववाचक, ऊनवाचक और गुणवाचक। अपत्यवाचक वह है जिससे अपत्यता या अनुयायित्वका बोध हो। इसमें या तो संज्ञाके पहले स्वरको वृद्धि कर दी जाती है अथवा उसके अन्तमें 'ई' प्रत्यय जोड़ दिया जाता है। कर्तृवाचक वह है जिससे किसी क्रियाके कर्ता होनेका बोध हो। इसमें प्रायः वाला या हारा प्रत्यय लगाया जाता है। भाववाचक वह है जिससे भावका बोध हो। इसमें आई, ई, त्व, ता, पन या पा, हट, वट आदि प्रत्यय लगते हैं। ऊनवाचक वह है जिससे किसी प्रकारकी न्यूनता या लघुता आदिका बोध हो। इसमें संज्ञाके अन्तमें, क, ड़ा आदि लगाये जाते हैं और 'आ' 'ई'में बदल दिया जाता है। गुणवाचक वह है जिससे गुणका बोध हो। इसमें संज्ञाके अन्तमें आ, इक, इत, ई, ईला, एला, लू, वंत, वान, दायक, कारक आदि प्रत्यय लगाये जाते हैं।

३ इसी तरहके प्रत्यय लगा कर बना हुआ शब्द।

तद्घ (सं॰ पुं॰) तस्मिन् तत्रो एव वर्ण यस्य, बहुव्री॰। वाद्यविशेष, एक प्रकारका बाजा।

तद्भव (सं॰ पुं॰) संस्कृतसे शब्दका अपभ्रंश रूप। जैसे कृष्णका कान्ह।

तद्भाव (सं॰ पुं॰) तस्य भाव, ६ तत्। १ उसका अपना धारण धर्म। यथा घटमें घटत्व, गोमें गोत्व। तस्मिन् भावः ७-तत्। २ विषयकी चिन्ता।

तद्भावापन्न (सं॰ त्रि॰) तद्भाव आपन्न, २-तत्। तदवस्थ, जो उसी अवस्थामें हो, जिसकी पहली अवस्था कुछ भी बदली न हो।

तद्भिन्न (सं॰ त्रि॰) तस्मात् भिन्न, ५ तत्। तद्व्यतिरिक्त, उसके सिवा।

तद्यपि (सं॰ अव्य॰) तथापि, तोभी।

तद्राज (सं॰ पुं॰) तस्य राजा, ६ तत्। उसका राजा।

तद्रूप (सं॰ त्रि॰) तत् रूपं यस्य बहुव्री॰। सदृश, समान, वैसा ही।

तद्रूपता (सं॰ स्त्री॰) सादृश्य, समानता।

तद्वत् (सं॰ अव्य॰) तेन तुल्य वा तस्य तुल्य वा चेत् क्रिया इत्यर्थे वति। १ तत्सदृश क्रियायुक्त, उसीके समान जिसकी क्रिया हो। २ तत्सदृश उसीके जैसा, ज्योंका त्यों। (त्रि॰) मतुप् अर्थमें मतुप् मस्य व। ३ तद्युक्त, उसकी नाईं।

तद्वत्ता (सं॰ स्त्री॰) तद्वतो भावः तद्वत् तल्-टाप्। तद्विशिष्ट, सादृश्यता, समानता।

तद्वश (सं॰ त्रि॰) तदधीन।

तद्वा—तद्र देखो।

तद्वाचक (सं॰ त्रि॰) तदर्थक।

तद्विध (सं॰ त्रि॰) सा विधा प्रकारो यस्य बहुव्री॰। तथाविध उसी तरह।

तद्व्यतिरिक्त (सं॰ त्रि॰) तस्मात् व्यतिरिक्त, ५ तत्। तद्भिन्न उसके सिवा

तन (सं॰ पुं॰) १ धन। २ अपत्य सन्तान।

तन (हिं॰ पुं॰) १ शरीर, देह। २ स्त्रीकी मूत्रेन्द्रिय, भग, योनि।

तनक (सं॰ पुं॰) वैतनक।

तनक (हिं॰ पुं॰) एक रागिनीका नाम। इसे कोई कोई मेघरागकी रागिनी मानते हैं।

तनकपुर—अल्मोड़ा जिलेके चम्पावत तहसीलका अन्तर्गत प्रधान एक ग्राम। यह अक्षा॰ २८. ५ उ॰ और देशा॰ ८०. ० पू॰ पर हिमालयकी तलहटीमें सारदा नदीके निकट बसा हुआ है। लोकसंख्या लगभग ६८१ है। यह तिब्बतके व्यापारियोंका प्रधान व्यापारस्थान है। भूटानवाले यहां सुहागा और ऊन ला कर बेचते हैं और कपड़ा चीनी खरीद ले जाते हैं।

तनकीह (अ० स्त्री०) अन्वेषण, जाँच, खोज। २ न्यायालयमें उपस्थित अभियोगमेंसे विवादास्पद बातोंको ढूँढ निकालना।

तनख्वाह (फा० स्त्री०) वेतन, तलब।

तनख्वाहदार (फा० पु०) वेतनभोगी, तलब पानेवाला नौकर।

तनखाह (हिं० स्त्री०) तनख्वाह देखो।

तनज़ेब (फा० स्त्री०) एक प्रकारका सूक्ष्म और सुन्दर सूती कपड़ा।

तनज़्ज़ुल (अ० पु०) अवनति, घटाव।

तनज़्ज़ुली (फा० स्त्री०) अवनति, घटाव।

तनतना (हिं० पु०) १ रोबदाब, हुकूमत। २ क्रोध, गुस्सा।

तनतनाना (हिं० क्रि०) १ रोबदाब दिखलाना। २ क्रोध करना।

तनदिही (हिं० स्त्री०) तदेही देखो।

तनधर (हिं० पु०) तनुधारी देखो।

तनना (हिं० क्रि०) १ झटके, खिंचाव वा खुश्कीसे किसी पदार्थका विस्तार बढ़ना। २ जोरसे खिंचना। ३ अकड़ कर खड़ा होना। ४ अभिमानसे ऐंठना।

तनपाल (हिं० पु०) तनुपाल देखो।

तनपोषक (हिं० वि०) स्वार्थी, खुदगरजी।

तनवाल (सं० पु०) १ जनपदविशेष, एक प्राचीन देशका नाम। २ उस देशके निवासी।

तनमय (हिं० वि०) तन्मय देखो।

तनमानसा (सं० स्त्री०) ज्ञानकी सात भूमिकाओंमें तीसरी भूमिका।

तनय (सं० पु०) तनोति विस्तारयति कुलं तन कयन्। वलिमलितनिभ्य: कयन्। उण् ४।९९। १ पुत्र, बेटा। २ जन्मलग्नसे पाँचवा स्थान।

तनय—चन्द्रवंशी राजा कुशके पुत्र।

तनया (सं० स्त्री०) तनय-टाप्। १ कन्या, बेटी। २ मक्षकुल्यालता, पिठवन लता। ३ घृतकुमारी, घीकुवार, ग्वारपाठा। ४ क्षणतुलसी।

तनयित्नु (सं० पु०) तन शब्दे तन-इत्नु, पृषोदरा० साधुः। १ अशनि, बिजली, वज्र। २ मेघ, बादल।

तनराग (हिं० पु०) तनुराग देखो।

तनवाना—ताननेका काम दूसरोंसे कराना, तनाना।

तनवाल (हिं० पु०) वैश्योंकी एक जाति।

तनस् (सं० पु०) तनोति वंशं तन-असुन्। पौत्रादि।

तनसम (हिं० पु०) स्फटिक, बिल्लौर।

तनसीख (अ० स्त्री०) अस्वीकार करना, रद्द करना।

तनसुख (हिं० पु०) एक प्रकारका उमदा फूलदार कपड़ा।

तनहा (फा० वि०) एकाकी, अकेला।

तनहाई (फा० स्त्री०) १ तनहा होनेका दशा। २ एकान्त, वह स्थान जहाँ और कोई न हो।

तना (सं० स्त्री०) तन-घञ् टाप्। धन, दौलत।

तना (फा० पु०) १ पेड़का धड़, मंडल। (क्रि० वि०) २ ओर, तरफ।

तनाई (हिं० स्त्री०) तनाव देखो।

तनाजा (अ० पु०) १ प्रपंच, झगड़ा, टंटा। २ अवनता, वैर।

तनादि (सं० पु०) धातुपाठोक्त धातुगणविशेष।

तनाना (हिं० क्रि०) ताननेके काममें किसी दूसरेको लगाना।

तनाव (हिं० पु०) १ तननेका भाव या क्रिया। २ धोबीके कपड़े सुखानेकी रस्सी। ३ रज्जु, रस्सी, डोरी।

तनावल—उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेशके अन्तर्गत हजारा जिलाके अधीन एक पार्वत्य जनस्थान है। यह अक्षा० ३४° १५´ तथा ३४° २३´ उ० और देशा० ७२° ५२´ तथा ७३° १०´ पू०में सिन्धु नदीके पूर्व किनारे पर अवस्थित है। उत्तर-पश्चिमकी ओर सिरान नदी बहती है। अकबरके शासनान्त कालमें यूसफजायके निवासी पठानोंने तनावलको जीता था और अब भी इस प्रदेशके किसी किसी भागमें अफगानोंका निवासस्थान देखा जाता है। दुर्रानियोंके समयमें यह कुछ दिनोंके लिये नाममात्र को काश्मीरके अधीन था। तनावलके निवासी ही इस प्रदेशके प्रकृत शासनकर्त्ता हैं। ये मुगलोंकी शाखान्तर्भुक्त हैं। तनावल-निवासी पुलाल और हिन्दवाल—दो श्रेणीमें विभक्त हैं तथा वर्त्तमान तनावल स्टेट हिन्दवाल तनावलियोंके वासस्थान और उनके अधिकृत स्थानोंसे गठित है।

इस प्रदेशका क्षेत्रफल लगभग १०४ वर्गमील तथा जनसंख्या प्रायः ११६२२ है। इसके उत्तरमें लक्ष्य पर्वत, पश्चिममें सिन्धु नद, दक्षिणमें हरिपुर तथा अबोटाबाद तहसील और पूर्वमें हजारा जिलाका मानसेर तहसील अवस्थित है। इस प्रदेशका थोड़ा भाग वहांके शासन कर्त्ता नवाब सर मुहम्मद अकरम खाँ के० सी० एस० आई० के अधीन और थोड़ा भाग पुत्रके हाथ खाता मुहम्मद खांके अधीन है। ये दोनों हिन्दुस्तानके प्रदेशके तनावली हैं। मुहम्मद अकरम खाँने १८६८ ई०में नवाबकी उपाधि पाई थी। सिपाही-विद्रोहके समयमें इनके पिताने अंगरेजोंका यथेष्ट उपकार किया था और इन्होंने भी १८६८ ई०में हजाराविचारके समय अत्यन्त साहस तथा प्रभाव भक्तिका परिचय दिया था। इसी लिये अंगरेजोंने इन्हें नवाबकी उपाधि दी। इन्हें १८७१ ई०में सी० एस० आई० और १८८८ ई०में के० सी० एस० आईकी उपाधि मिली। इन्होंने हजारा जिलाके अन्तर्गत हरिपुर तहसीलका ८०००) की जागीर उपभोग कर रहे हैं।

तनिक (हि० वि०) १ थोड़ा, कम। २ छोटा।

तनिका (स० स्त्री०) तन्यते आकृष्यतेऽनया करणे स टाप्। अथवा तन् कापि यत् टाप्। बन्धन रज्जु, कोई चीज बांधनेकी रस्सी।

तनिमन् (स० पु०) तनोर्भावः तनु-इमनिच्। १ तनुत्व, कृशता, दुर्बलता, दुबलापन। २ यकृत्, उदररोग क्षीणा।

तनिया (हि० स्त्री०) १ लंगोट, लंगोटी। २ कछनी, जांघिया। ३ चोली।

तनिष्ठ (स० त्रि०) अयमनयोः अतिशयेन तनुः वा अयमेषामतिशयेन तनुः तनु-इष्ठन्। जो बहुत दुबला पतला छोटा या कमजोर हो।

तनी (हि० स्त्री०) बन्धन, बन्द।

तनीयस् (स० स्त्री०) अयमनयोरतिशयेन। अत्यन्त छोटा।

तनु (स० स्त्री०) तन-उ। १ शरीर, देह। २ त्वच्, चमड़ा। ३ स्त्री, औरत। ४ कंचुकी। (वि०) ५ क्षाम, दुबला-पतला। ६ अल्प, थोड़ा। ७ विरल, सुन्दर, बढ़िया। ८ कोमल, नाजुक। ९ योगशास्त्रोक्त अस्मित् आदि क्लेश। "अविद्याक्षेत्रमुत्तरेषां प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम्" (पातञ्ज० साधन० ४)

अविद्या ही समस्त दुःखोंका मूल है। अनात्मामें आत्माभिमानका नाम ही अविद्या है। इस अविद्यासे ही अस्मितादि चतुर्विध क्लेशोंकी उत्पत्ति होती है। ये अस्मितादि क्लेश चार प्रकारके हैं—प्रसुप्त, तनु, विच्छिन्न और उदार। जो क्लेश चित्तभूमिमें रह कर भी अपने सहकारी उद्बोधकके बिना अपना कार्य कर नहीं सकता उसको प्रसुप्त कहा जा सकता है। जैसे बाल्यावस्थामें बालकोंका चित्त वासनारूपमें अवस्थित हो कर भी सहकारी उद्बोधक अभावके कारण उसको व्यक्त नहीं कर सकता। जो क्लेश अपने प्रतिपक्षोंकी चिन्ताके द्वारा स्वकार्यशक्तिसे शिथिल होने पर वासनारूप चित्तमें रहता है, किन्तु प्रभूत कार्योत्पादक सामग्रीके अभावसे स्वकार्य प्रारम्भ करनेमें असमर्थ होता है उसको तनु कहते हैं। जैसे योगियोंके चित्तमें वासना रहती अवश्य है, पर वह उपयुक्त सामग्रीके अभावमें किसी तरहका कार्य करने नहीं दिया सकती। जो क्लेश अन्य प्रबल क्लेशके आक्रमणसे पराभूत होता है उसको विच्छिन्न कहते हैं। जो क्लेश सहकारीका सन्निधानमात्र अपना कार्य सम्पादन करता है, उसको उदार कहते हैं। (स्त्री०) १० ज्योतिषोक्त लग्नका स्थान। (ज्योतिष सार)

तनुक (स० क्ली०) तनु स्वार्थे कन्। १ शरीर, देह। २ जातीपुष्प, चमेली फूल। ३ विभीतक वृक्ष, तिन्तिडीका पेड़। ४ त्वच्, दारचीनी।

तनुकूप (स० पु०) रोमकूप।

तनुक्षीर (स० पु०) तनु अल्प क्षीरं निर्यासो यस्य, बहुव्री०। आम्रातक वृक्ष, आमड़ेका पेड़।

तनुस्थान (स० क्ली०) ज्योतिषोक्त लग्नभेद, ज्योतिषके अनुसार एक प्रकारका घर।

तनुच्छद (स० पु०) तनुं देहं छादयति छादि अच् प्रत्यय। छादेर्घेऽद्व्युपसर्गस्य। पा ६।४।९६। कवच वख्तर।

तनुच्छाय (स० पु०) तनुः छाया यस्य बहुव्री०। १ नाम बबूंरक वृक्ष, नाम बबूलका पेड़। (स्त्री० क्ली०) २ शरीर छाया, शरीरकी परछाईं। (त्रि०) ३ अल्पछाया

युक्त, जिसमें थोड़ी छाया हो। (स्त्री०) तन्वी छाया, कर्मधा०। ४ अल्पछाया।

तनुज (सं० पु०) तनोर्देहात् जायते जन-ड। १ पुत्र बेटा। २ जन्मकुण्डलीमें लग्नसे पाँचवा स्थान।

तनुजा (सं० स्त्री०) तनुज स्त्रियां टाप्। कन्या, बेटी।

तनुता (सं० स्त्री०) तनु भावे तल् टाप्। १ तनुत्व, कृशता, दुर्बलता, दुबलापन। २ लघुता, छोटाई

तनुत्यज् (सं० त्रि०) तनुं त्यजति त्यज-क्विप्। तनु-त्यागकारी, जो शरीर छोड़ता हो।

तनुत्याग (सं० पु०) तन्वा त्यागः, ६-तत्। देहत्याग।

तनुत्र (सं० क्लो०) तनुं त्रायते त्रा-क। वर्म, कवच, बख्तर।

तनुत्रवत् (सं० त्रि०) तनुत्रं विद्यते अस्य तनुत्र मतुप्। तनुत्रधारी, कवच धारण करनेवाला।

तनुत्राण (सं० क्लो०) तनुस्त्रायतेऽनेन त्रै करणे ल्युट्। वह चीज जिससे शरीरकी रक्षा हो। कवच, बख्तर।

तनुत्वच् (सं० स्त्री०) तन्वी त्वक् वल्कलं यस्याः, बहुव्री०। १ क्षुद्राग्निमन्थवृक्ष, छोटी अरणी (त्रि०) २ सूक्ष्मत्वग्युक्त, जिसकी छाल पतली हो।

तनुधारी (सं० त्रि०) शरीरधारी, शरीर धारण करनेवाला।

तनुपत्र (सं० पु०) तनूनि कृशानि पत्राणि यस्य, बहुव्री०। १ इङ्गुदीवृक्ष, गोंदनी या गोंदीका पेड़। (त्रि०) २ अल्पपत्रयुक्त वृक्षमात्र, जिसमें बहुत कम पत्ते हों।

तनुपात (सं० पु०) मृत्यु, मौत।

तनुबीज (सं० पु०) १ राजबेर। (त्रि०) २ जिसके बीज छोटे हों।

तनुभव (सं० पु०) तनोर्भवति भू-अच्, ५ तत्। १ पुत्र, बेटा। (स्त्री०) २ कन्या, बेटी, लड़की।

तनुभस्त्रा (सं० स्त्री०) तनोः शरीरस्य भस्त्रेव। नासिका, नाक।

तनुभाव (सं० पु०) दुबला।

तनुभूमि (सं० स्त्री०) बौद्धश्रावकोंके जीवनकी एक अवस्था।

तनुभृत् (सं० त्रि०) तनुं बिभर्त्ति भृ-क्विप्। देहधारी, शरीर धारण करनेवाला।

तनुमध्या (सं० स्त्री० तनु कृशं मध्यं यस्याः, बहुव्री०। १ कृशमध्या, जिसकी कमर पतली हो। २ एक वर्णवृत्तका नाम जिसके प्रत्येक चरणमें एक तगण एक यगण होते हैं। इसको चौरस भी कहते हैं। ३ जिसका बीचका भाग पतला हो।

तनुरस (सं० पु०) तनोर्देहस्य रस इव। घर्म, पसीना।

तनुराग (सं० पु०) एक प्रकारका सुगन्धित उबटन, जो केसर, कस्तूरी, चन्दन, कपूर, अगर आदिको मिला कर बनाया जाता है।

तनुरुह् (सं० पु०) तनौ तन्वां वा रोहति रुह-क्विप। लोम, शरीर परके बाल, रोंगटे।

तनुरुह (सं० क्लो०) तनौ तन्वां वा रोहति रुह-क। लोम, रोम, रोआँ।

तनुल (सं० त्रि०) तन-उलच्। विस्तृत, फैला हुआ।

तनुवात (सं० पु०) तनुः क्षीणः वातः यत्र, बहुव्री०। १ नरकविशेष, एक नरकका नाम। (त्रि०) २ अल्प वायु युक्त स्थान, वह स्थान जहाँ हवा बहुत ही कम हो।

तनुवार (सं० क्लो०) तनुं देहं वृणोति वृ-अण्, उपपदस०। कवच, बख्तर।

तनुवीज (सं० पु०) तनूनि कृशानि बीजानि यस्य, बहुव्री०। १ राजबदर, राज बेर। (त्रि०) २ स्वल्पबीजयुक्त, जिसके बीज बहुत छोटे हों।

तनुव्रण (सं० पु०) तनुः क्षुद्रः व्रणो यत्र, बहुव्री०। वल्मीकरोग।

तनुस् (सं० क्लो०) तनोति तन-उसि। शरीर, देह।

तनुसञ्चारिणी (सं० स्त्री०) तनु अल्पं यथा तथा सञ्चरति सम्-चर-णिनि-ङीप्। युवती स्त्री, जवान औरत।

तनुसर (सं० पु०) तनोः सरति तनु-सृ अच्, ५-तत्। स्वेद, पसीना।

तनुह्रद (सं० पु०) तनोर्ह्रद इव। पायु, मलद्वार, गुदा।

तनू (सं० पु०) तनोति कुलं तन-ऊ। १ पुत्र, बेटा, लड़का। २ शरीर, देह। ३ प्रजापति। ४ गो, गाय। ५ अप जल, पानी।

तनूकरण (सं० क्लो०) अतनुं तनुं करणं अभूततद्भावे च्वि। अल्पीकरण, छोटा करना।

तनूकु—मद्रास प्रदेशके कृष्णा जिलाके अन्तर्गत एक

—तालुक। यह अक्षा० १६ ३१´ तथा १६ ४८० उ० और देशा० ८१ ३२´ तथा ८१ ४०´ पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ३०१ वर्गमील तथा जनसंख्या लगभग १२८०७८ है। इसमें १०७ ग्राम हैं। यहांकी जमीन उपजाऊ है। गोदावरी नदीके जलसे यहांकी जमीन सींची जाती है। चावल यहां प्रधानतया उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त गन्ना और रोगनदार बीज भी (आयल) पैदा होता है।

तनूकृ—अतनु तनु करोति तनु अभूततद्भावे च्वि कृञोऽनुप्रयोग। क्षीणीकरण, छोटा बनाना।

तनूकृत् (सं० त्रि०) तनु-कृ-क्विप्। पुत्ररूपशरीरकारी।

तनूकृत (सं० त्रि०) तनू-कृ-कर्मणि क्त। १ नष्ट, छोटा हुआ।

तनूक्षव (सं० पु०) पुत्रके लिये स्तुति।

तनूज (सं० पु०) तन्वाः देहात् जायते जन्-ड। पुत्र बेटा।

तनूजनि (सं० पु०) 'तन्वाः जनि' ६-तत्। १ पुत्र बेटा। (स्त्री०) २ कन्या बेटी।

तनूजन्मन् (सं० पु०) तन्वाः जन्म, ६ तत्। पुत्र, बेटा। (स्त्री०) २ कन्या, बेटी।

तनूजा (सं० स्त्री०) तनूज टाप्। कन्या, बेटी।

तनूत्राण (सं० क्ली०) पक्ष, पक्ष पर।

तनूतल (सं० पु०) परिमाणभेद, एक व्याम।

तनूत्यज् (सं० त्रि०) शरीरत्यागी शरीर छोड़नेवाला।

तनूदूषि (सं० त्रि०) शरीरदूषक, शरीरका नाश करनेवाला।

तनूदेवता (सं० पु०) अग्निमूर्तिभेद, अग्निकी एक मूर्तिका नाम।

तनूदेश (सं० पु०) अङ्गप्रत्यङ्ग, शरीरका प्रत्येक अंग।

तनूद्भव (सं० पु०) 'तनोरुद्भवति उद्-भू-अच्, ५-तत्। १ पुत्र, बेटा। (स्त्री०) २ कन्या, बेटी।

तनून (सं० क्ली०) तन्वा नम। वायु, हवा।

तनूनप (सं० क्ली०) तन्वा नप्यं पाति पा-क। घृत, घी। घी शरीरको मजबूत बनाता है इसलिये इसका नाम तनूनप पड़ा है।

तनूनपात् (सं० पु०) तनू न पातयति पत-णिच्-क्विप्। बहुलग्रहणात्। पा ६।३।७५। इति निपातनात् न लोप आ तन्-नप् पुन अति-पत-क्विप्। १ अग्नि, आग। २ मज्जा चित्रक पौधा। ३ चित्रकवृक्ष, चीता। (क्ली०) ४ घृत घी। ५ मक्खन। ६ अग्नि देवताक प्रयाजभेद।

तनूनप्त्र (सं० पु०) तनोति तन्-उ परमात्मा तस्य नप्ता पौत्र, ६ तत्। वायु, तनु जो परमात्मा है परमात्मासे आकाश उत्पन्न हुआ है, आकाशसे वायु इसीलिए वायु परमात्माके पौत्र हैं। श्रुति और वेदान्तदर्शनके मतसे पहले परमात्मासे निर्विघ्न क्रमसे महदादि आकाश उत्पन्न हुआ तथा आकाशसे वायु प्रभृति निकली है।

तनूपा (सं० पु०) तनूं पाति पा क्विप्। १ जठराग्नि। इसके द्वारा खाया हुआ अन्न पच जाता है और इसका सारांश रस मांसादिरूपमें शरीरमें परिणत हो कर देहको पोषण करता है, इसीलिये जठराग्निका नाम तनूपा पड़ा है। २ देहपालकमात्र, वह जो केवल शरीरका पालन करता है।

तनूपान (सं० त्रि०) शरीरपालक, अङ्गरक्षक जो शरीरकी रक्षा करता है।

तनूपावन् (सं० त्रि०) तनू का जीवनरक्षाकारी, शरीर या प्राणकी रक्षा करनेवाला।

तनूपृष्ठ (सं० पु०) सोमयागका एक भेद।

सोमयाग देखो।

तनूबल (सं० क्ली०) शरीरबल, ताकत, जोर।

तनूर (फा० पु०) तंदूर देखो।

तनूरुह (सं० क्ली०) तन्वां रोहति रुह क। १ लोम, रोम, रोआं। २ पक्षियोंका पर, पक्ष। ३ पुत्र, बेटा, लड़का। ४ मयद् (देह)

तनूरुहाङ्कुर (सं० क्ली०) लोम, रोआं।

तनूर्ज (सं० पु०) उत्तममनुके पुत्र एक राजा। (हरिवं० ७ अ०)

तनूवशिन् (सं० पु०) अग्नि आग।

तनूशुभ्र (सं० त्रि०) शरीरभूषक, शरीरकी शोभा बढ़ानेवाला।

तनूहविस् (सं० क्ली०) वैदिक तनूरूप हवि। वेदमन्त्र द्वारा तनूरूपको इत्यादि हवन करनेकी वस्तु।

तनूद्र—तन्दूर देखो।

तनैना (हिं० वि०) वक्र टेढ़ा, तिरछा।

तनैना (हिं० पु०) तनेना देखो।

तनैला (हिं० पु०) एक प्रकारका छोटा पेड़। इसके फूल सुगन्धित और सुफेद होते हैं।

तन्ति (सं० स्त्री०) तन-कमणि क्तिच् वेदे न दीर्घः न लोपाभावश्च। १ दीर्घप्रसारिता रज्जु, बहुत लम्बी रस्सी। २ गोमाता, गौ, गाय। ३ विस्तार, फैलाव।

तन्तिपाल (सं० पु०) तन्तिं गोमातरं पालयति पालि-अण्। १ गोमातृपालक, गौकी रक्षा करनेवाला। २ सहदेव, विराटगृहमें सहदेव गुप्तावस्थानके समयमें इसी नामसे परिचित हुए थे। (भारत विराट १० अ०)

तन्तु (सं० पु०) तन्यते विस्तार्यते तन्-तुन्। सित निग-मीति। उण् १।७०। १ सूत्र, सूत, तागा। २ ग्राह। ३ सन्तान, बालबच्चे। ४ तांत। तात देखो। ५ विस्तार, फैलाव। ६ यज्ञकी परम्परा। ७ वंशपरम्परा। ८ मकड़ीका जाला।

तन्तुक (सं० पु०) तन्तुरिव कायति कै-क वा संज्ञायां कन्। १ सर्षप, सरसों। २ वनशूकर, जङ्गली सूअर। ३ स्नायुरोग। ४ जलजन्तु। ५ सन्तति। ६ सूत्र, सूत। ७ मण्डलीसर्पभेद। (स्त्री०) ८ नाड़ी।

तन्तुकाष्ठ (सं० क्ली०) तन्तुसमन्वितं काष्ठं, मध्यपदलो०। तन्तुयुक्तकाष्ठ, जुलाहोंकी एक लकड़ी जिसे तूली कहते हैं।

तन्तुकी (सं० स्त्री०) तन्तुक स्त्रियां ङीप्। १ नाड़ी। २ शिरा। ३ नाड़ीशाकभेद। ४ राजिका, राई।

तन्तुकीट (सं० पु०) तन्तूत्पादकः कीट, मध्यपदलो०। १ कीटविशेष, मकड़ी। २ रेशमका कीड़ा।

तन्तुजाल (सं० पु०) नसोंका समूह।

तन्तुण (सं० पु०) तन बाहुलकात् तुनन् निपातनात् णत्वं दन्त्यनकारान्त इत्येके। ग्राह।

तन्तुनाग (सं० पु०) तन्तुर्नाग इव। ग्राह, मगर।

तन्तुनाभ (सं० पु०) तन्तुर्नाभौ यस्य, बहुव्री०, अच् समासान्तः। लूता, मकड़ी।

तन्तुनिर्यास (सं० पु०) तन्तुवत् निर्यासो यस्य, बहुव्री०। तालवृक्ष, तालका पेड़।

तन्तुपर्वन् (सं० क्ली०) तन्तोः यज्ञोपवीतसूत्रस्य दानरूपं पर्वं यत्र, बहुव्री०। चान्द्रश्रावण पौर्णमासी, श्रावण मासकी पूर्णिमा। इस तिथिमें भगवान् वामनदेवको यज्ञोपवीत दान देना चाहिये।

इस तिथिमें नक्षत्र प्रभृति विरुद्ध होने पर भी यज्ञोपवीत दान अवश्य कर्तव्य है। इस पूर्णिमामें मङ्गलके लिये हाथमें राखी बाँधी जाती है। इसका विषय निर्णय-सिन्धुमें इस प्रकार लिखा है;—श्रावणी पूर्णिमाके दिन प्रातःकाल विधिपूर्वक स्नान कर देवता और ऋषियोंका तर्पण करना चाहिये। बाद अपराह्नसमयमें राखीको पोटलीको मिलायें और अक्षतसे अर्पित कर उसमें सुवर्ण संयुक्त कर देना पड़ता है। उसके बाद पुरोहित निम्न-लिखित मन्त्र द्वारा राखी बाँधते हैं।

मन्त्र—'येन बद्धो बलिराजा दानवेन्द्रो महाबलः।
तेन त्वामपि बध्नामि रक्षे मा चल मा चल॥"

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र प्रत्येकको उचित है कि इस तिथिमें यथाशक्ति ब्राह्मणोंको दान दे कर राखी हाथमें धारण करें। रक्षाबन्धन देखो।

तन्तुभ (सं० पु०) तन्तुरिव भाति भा-क। १ सर्षप, सरसों। २ वत्स, बछड़ा।

तन्तुमत् (सं० पु०) तन्तुः विद्यतेऽस्य तन्तु-मतुप्। अग्नि, आग।

तन्तुमती (सं० स्त्री०) तन्तुमत् स्त्रियां ङीप्। मुरारि-की माता।

तन्तुर (सं० क्ली० तन्तु रस्यस्य कुञ्जादित्वात् तन्तु-र। मृणाल, भसींड़, कमलकी जड़।

तन्तुल (सं० क्ली०) तन्तु-र रस्य ल वा तन्तु-लच्। मृणाल, कमलकी जड़।

तन्तुवादक (सं० पु०) तन्त्री, वीन आदि तारके बाजे बजानेवाला।

तन्तुवान (सं० क्लि०) बुननेकी क्रिया।

तन्तुवाप (सं० पु०) तन्तून् वपति वप-अण्। १ तन्तु-वाय, ताँती। तन्तुवाय देखो।

तन्तुवाय (सं० पु०) तन्तून् वयति विस्तारयति वे-अण्। १ लूता, मकड़ी। २ नवशाखके अन्तर्गत जातिविशेष, ताँती। नवशाख देखो।

वस्त्रवयनोपजीवी मनुष्यमात्रको ही तन्तुवाय (ताँती)

करते हैं सुतरां जिन्होंने केवल यही व्यवसाय अवलम्बन किया है, वे सभी इस व्यवसायके अन्तर्गत तन्तुवाय जातिके नहीं हैं। भिन्न भिन्न जातियोंके एक व्यवसाय अवलम्बन करनेके कारण यह साधारण वृत्तिबोधक नाम रखा गया है। बहुतोंका कहना है कि तन्तुवाय शिवदास या कामदासके वंशधर हैं। किसी समय नाचते समय शिवजीके शरीरसे एक बूंद पसीना गिरा। उस पसीनेसे तुरंत ही शिवदास उत्पन्न हुआ। पसीनेसे पैदा होनेके कारण इसका नाम कामदास पड़ा। इसके बाद शिवजीने एक कूप से कर कामदासके लिये कुमवती नाम की एक कन्या सृष्टि की। यह कुमवती कामदासकी स्त्री हुई। शिवदासके चार पुत्र बलराम उद्धव पुरन्दर और मधुकर हुए। इन चारोंसे चार सम्प्रदायके तन्तुवाय निकले। जातिकौमुदीके मतसे मणिबन्ध पुरुष और मणि-कारो स्त्रीसे तन्तुवायकी उत्पत्ति हुई है। परशुरामको जातिमालाके मतानुसार—

"है कुवाद् मणिबन्धात्तो तन्त्रवायस्य सम्भव ।"

वैश्योंके औरस और मणिकारोंको शूद्रोंके गर्भसे तन्तुवायका जन्म हुआ है। ब्रह्मयामलोक्त जातिमालाके मतानुसार—

"वणिकन्यात् कामिकायां तन्तुवायस्य सम्भवाम् ।
स पुन् दत्वा मुनिभिर्ब्र तन्त्रवायसमाख्याम् ॥
मणिबन्धा तन्त्रवायात् गोपजीवस्य सम्भवः ।"

मणिबन्धके औरस और वणिकादि-कन्याके गर्भसे तन्तुवायने जन्मग्रहण किया है। इसने किसी मुनिवर को तन्तु दिया था इसलिये इसका नाम तन्तुवाय पड़ा है। तन्तुवायके औरस और मणिबन्ध कन्याके गर्भसे गोपजीवका जन्म हुआ।

मनुसंहिताके मतानुसार—

"कुवाचा वैश्यवैश्याद्गोमात इति स्मृत ।
तन्तुवायो भवत्येव वसुकांस्योपजीविन ।
शौण्डश्च केवितश्चैव शौण्डं कलिरिति ॥"

क्षत्रियानीके गर्भ और वैश्यके औरससे गोपजीवकी उत्पत्ति हुई। तन्तुवाय भी इसी तरह उत्पन्न हुआ है। इसको जीविका वस्त्रनिर्माण करना है। फिर बहुतोंका मत है कि विश्वकर्माके औरस और शापभ्रष्टा घृताचीके गर्भसे आठ पुत्र उत्पन्न हुए। विश्वकर्माने उन आठों पुत्र को भिन्न भिन्न शिल्पशास्त्रोंमें शिक्षा दी। उन्होंसे आठ जातिके शिल्पकार उत्पन्न हुए। उन आठोंमें तन्तुवाय भी एक है।

बङ्गालके तन्तुवाय निम्नलिखित सम्प्रदायोंमें विभक्त हैं। यथा—आश्विना या आश्विनतांती फिर वे भी वर्धमानी वर्धकुल, मध्यकुल, मान्दारण और उत्तर कुल इन पांच श्रेणियोंमें विभक्त हैं बङ्गालमें बड़ बड़ामानिक या मंगानिया, वारेन्द्र, छोटा भागिया या बावत, तांती काहुर, कोरा, चोर, मधुकरो, मगन मड़ियानो मोर, पान, पुरन्दरो, पूर्वकुल, राढ़ो और उत्तरो।

बिहारके तन्तुवाय बैंधार, कनौजिया, जामार, सैमार, कहार कनौजिया, चिकुलिया और उत्तरा ये श्रेणीके हैं।

उड़ीसाके तन्तुवाय मानिक्य तांती, गाम्हा तांती और हंसो तांती इन कई एक श्रेणियोंमें विभक्त हैं।

बङ्गालके तांतियोंकी उपाधि बराट, बसाक मण्ड, मड़, बी सिंह, चन्द्र, कुंगरो दलाल, दास, दत्त दे गुँह, प्रामाणिक रक्षो, हावलदार कर, कु मण्डल सेन, सुविम, नन्दो पाल, साहू, मदार, रक्षित और मोल है।

बिहारमें इनको उपाधि दास, महतो, मांझी, मराल और मालिक है।

बङ्गालके तांती निम्नलिखित गोत्रोंमें विभक्त हैं—अगस्त्य ऋषि, अन्नदायी, अलम्यान, अत्रिऋषि बड़ ऋषि काश्यप, भरद्वाज, विश्वामित्र, शाण्डिल्य, गर्गऋषि गौतम, जमदग्नि, काश्यप कृष्णऋषि, मधुकुल्या, पराशर, शाण्डिल्य, सावर्ण और व्यास। बिहारमें इनके चामर तांती शिवगुरु काश्यप प्रभृति गोत्र हैं।

पश्चिम बङ्गालमें आश्विना तांती हो सबसे अधिक है। उनका कहना है कि आश्विन तांती ही मूल जाति हैं इन्होंसे दूसरी दूसरी तन्तुवाय उत्पन्न हुए हैं। ये भिन्न भिन्न स्थानके नामानुसार ७ विभिन्न शाखाओंमें विभक्त हैं। आश्विन तांतीमें एक विशेष लक्षण यह है कि इनको स्त्रियां कभी नाकमें नथनी नहीं पहनतीं।

ढाकाके तांती बड़ाभागिया या मध्यनिया और छोटा भागिया या कायतिया इन दो दलोंमें विभक्त हैं। बड़ा

भागिया या झम्पनिया ताँती पाल्कोमें बैठ कर विवाह करते, इसलिये ये झम्पनिया कहलाये। शेषोक्त ताँती पहले कायस्थ थे, बाद वस्त्रवयनवृत्ति अवलम्बन करनेके कारण ये जातिच्युत किये गये।

इनमेंसे पहला या बड़ा भागिया शाखा ही बहुत दूर तक विस्तृत है। इनमें बहुतोंकी उपाधि बसाक है। पहले जब कोई सम्भ्रान्त तन्तुवाय वस्त्र बुनना छोड़ कर कपड़ेका व्यवसाय आरम्भ करता था तब उसे यह उपाधि दी जाती थी। इष्ट इण्डिया कम्पनीकी कोठीमें जितने तन्तुवाय नियुक्त थे उनकी उपाधि वंशानुक्रमिक आज तक भी चली आती है। यथा—याचनदार या मूल्यनिरूपक, मुखिम, परिदर्शक, दलाल और सर्दार (एक दल कारीगरका सर्दार)।

ढाकाके मग बाजारमें मगी श्रेणी नामक एक दल जातिभ्रष्ट तन्तुवाय वास करते हैं। पतित होने पर भी इनका आचार व्यवहार शूद्र तन्तुवायोंके जैसा है।

डाक्टर वाइजने लिखा है कि छोटा भागिया अर्थात् कायेत ताँती पहले सोनार थे, बाद अपना व्यवसाय छोड़ कर इन्होंने कपड़े बुननेका व्यवसाय आरम्भ किया। अभी वे भी बसाकके साथ खाते पीते हैं। बसाक भी उन्हें सामाजिक मर्यादा प्रत्यर्पण करते हैं।

कुछ धनी कायेत ताँती अपनेको कायस्थ बतलाते हैं। ये ढाकामें रहते हैं। इनमेंसे बहुत महाजनी या नक्काशी वृत्ति द्वारा अपनी जीविका निर्वाह करते हैं।

पूर्व बङ्गालमें बङ्गताँती नामक एक दूसरी श्रेणीके ताँती बसते हैं। ये नागरिक ताँतियोंसे सम्पूर्ण स्वतन्त्र हैं। ये कहते हैं कि ये ही इस देशके आदिम ताँती हैं तथा सम्राट् जहाँगीरके पहलेसे ही देशोंमें कपड़ा बुन कर देते आ रहे थे। जो कुछ हो बसाक ताँती इन्हें अपनेसे श्रेष्ठ मानते हैं। ढाकासे २० मील उत्तर धामराई नामक नगरमें प्रायः २५० घर ताँती वास करते हैं। ढाकाके ताँती विवाहके समयमें लाल वस्त्र पहनते हैं, किन्तु बङ्ग ताँती शुक्ल वस्त्र धारण करते हैं।

पहले इसी धामराई नगरमें ही सुविख्यात सूक्ष्म सूत प्रस्तुत होते थे। स्त्रियाँ चरखेमें हाथसे महीन सूत तैयार करती थीं। उनके हस्तनिर्मित सूक्ष्म सूतकी प्रशंसा करते हुए किसीने कहा है कि एक कातनेवालीका प्रस्तुत उत्कृष्ट ८८ गज सूती तोलमें एक रत्तीसे भी कम हुए थे। अभी एक रत्ती बढ़िया महीनसे महीन सूता ७० गजसे अधिक नहीं होता है। इससे साबित होता है कि या तो स्त्रियाँ पहलेकी नाईं सूता कात नहीं सकती अथवा कपास ही मोटी हो गई है। आजकल उनका यह व्यवसाय विलुप्त हो गया है।

बिहारके ताँतियोंको तँतवा कहते हैं। ये प्रधानतः दो सम्प्रदायोंमें विभक्त हैं—कनौजिया और तिरहुतिया।

मालूम पड़ता है कि बिहारके चमार ताँती और कहार ताँती चमार और कहार जातिसे उत्पन्न हुए हैं। शायद कोई चमार और कहार वस्त्रवयनवृत्ति अवलम्बन करके क्रमशः ताँती हो गये हों। उड़ीसेके मातिवंश ताँती मोटा कपड़ा बुनते हैं। इनमेंसे बहुत आजकल वस्त्रवयन वृत्ति छोड़ कर पाठशालाके शिक्षक हो गये हैं। गाला ताँती सूक्ष्म वस्त्र और हंसी ताँती अनेक तरहके रंगीन वस्त्र प्रस्तुत करते हैं।

ढाकेमें अनेक हिन्दुस्थानी या मुंगेरिया ताँती वास करते हैं। इनमेंसे अनेक बाहरमें प्यादा, सोटिया, मजदूर तथा पंखा खींचनेका काम करते और घरमें वस्त्रवयन और कृषिकार्य भी किया करते हैं। ये दो श्रेणियोंमें विभक्त हैं—कनौजिया और तिरहुतिया। कनौजियेकी ही संख्या अधिक है। समाजमें इन्होंने अधिक उन्नति की है। तिरहुतिया पाल्की-वाहक, गायक, वाद्यकर, सहीस, माँझी प्रभृति निकृष्ट कार्य करते हैं।

बङ्गालके तन्तुवाय नवशाखके अन्तर्भुक्त हैं। इसलिए इनके विवाहादि दूसरी दूसरी नवशाख जातिकी नाईं हैं। पश्चिम बङ्गालमें कहीं पर कोई कोई पण ले कर कन्याका विवाह करते हैं। कन्यादान करना ही समाजमें सर्वत्र सम्मानसूचक और यशस्कर है। अभी दूसरी उच्च श्रेणीके हिन्दूकी नाईं कन्याकर्त्ताको भी वरकी विद्या, बुद्धि और ऐश्वर्यानुसार पण दे कर कन्यादान करना पड़ता है।

बिहारके ताँतियोंमें विधवा विवाह और परित्यक्त स्त्रीको सगाईकी प्रथा प्रचलित है। जब कोई स्त्री स्वजातीय किसी पुरुषके साथ संभोग करती है तो एक

करते हैं, किन्तु अधिकांश ही बुदराम नामक विलतवासी किसी मोची (चमार)-के प्रवर्त्तित धर्मको मानते हैं। इस बुदराम मोचीका मत बहुत कुछ नानकशाहके मत से मिलता जुलता है। उसके मतावलम्बी तांती जाति-भेद नहीं मानते हैं किन्तु धर्माचरणके अनेक तरहसे बाह्य अनुष्ठान किया करते हैं। बिहारके बन्दी, गोरैया धर्मराज प्रभृति जिन देवताओंकी पूजा करते हैं इन्हें छोड़ तांती सेमियार, कारुवर आदि अपने पूर्वपुरुषोंकी पूजा करते हैं। श्रावण मासके शनि और मङ्गलवारको उनके उद्देश्यसे मेष बलिदान कर प्रेतपुरुषोंको प्रसन्न करते हैं। इस काममें पुरोहितका प्रयोजन नहीं पड़ता है। पुरुष ही स्वयं इस कार्यको करते हैं।

पहले ही कहा जा चुका है, कि बङ्गालके तन्तुवाय नवशाखके अन्तर्गत हैं, सुतरां उनके पुरोहित ब्राह्मण ही उनका पौरोहित्य करते हैं। कहना नहीं पड़ेगा कि तन्तुवायोंकी या-कता करानेके लिये वे दो चार विशुद्ध ब्राह्मणोंके निकट हेय होने पर भी ब्राह्मणसमाजमें कुलीन ब्राह्मणोंके समान गिने जाते हैं।

बिहारमें कई जगह तांतियोंके पुरोहित नहीं हैं और जहां हैं भी वहां वे नीच ब्राह्मणोंमें गिने जाते हैं। बहुत जगह जहां तांतियोंके पुरोहित नहीं हैं, वहां इन्हीं लोगोंमेंसे कोई एक पुरोहित बन जाता है और कभी कभी उनका भांजा ही पुरोहितका काम करता है। इस तरहके अनार्य कामोंसे साबित होता है कि बिहारके तांती नीच जातिके हैं और नीच जातिसे क्रमशः हिन्दूधर्म ग्रहण करते हुए समाजमें प्रवेश होते हैं। उच्च श्रेणीके हिन्दुओंका अनुकरणसे बिहारके तांती भी तेरह दिनों तक अशौच मानते हैं। जो कुछ हो कितने ही पवित्र वे क्यों न रहें तोभी हिन्दूसमाज तथा कोई सद्ब्राह्मण इनके हाथका जल ग्रहण नहीं करते हैं।

कौन तांती उच्च और कौन नीच श्रेणीका है इसका पता उनके व्यवहृत मण्ड (लेई) द्वारा ही चलता है। उच्च श्रेणीके तन्तुवाय कपड़ा बुननेके समय लावेकी लेई व्यवहार करता है। ये अनाजकी लेईको अपवित्र और उच्छिष्ट समझते हैं, परन्तु निम्नश्रेणीके तांती अनाजकी लेई व्यवहार करते इसीसे इन्हें मेडो तांती कहते हैं। बङ्गालके तांती खाने पीनेके विषयमें यथार्थ नवशाख जातिके होते हैं। वे समाजमें न शराब पीते हैं और न मांस खाते हैं। परन्तु बिहारके तांती मद्य मद्यमांस व्यवहारमें लाते हैं। शराब पीनेके पहले वे दो चार बूंद अपने इष्टदेव काली या महादेवके नामसे पृथ्वी पर गिरा कर तब पीते हैं।

पहले ही कहा जा चुका है कि कपड़ा बुनना ही तन्तुवायकी उपजीविका है। इन लोगोंका यह व्यवसाय बहुत दिनोंसे चला आ रहा है। किन्तु विलायती कपड़ा कुछ सस्ता हो जानेके कारण आज कल इनका व्यवसाय विलुप्त हो गया है। बहुतसे तांतियोंने लाचार हो कर अपना व्यवसाय छोड़ दिया है और वाणिज्य, कृषि प्रभृतिमें लग गये हैं। बाङ्गाल और मदिनापुरियोंने प्रायः ; इन्होंने कृषिकार्य अवलम्बन किया है। यह कहना अत्युक्ति नहीं होगा कि जिन्होंने अपनी वृत्ति परित्याग कर अन्यान्य व्यवसाय अवलम्बन किया है, उनकी अवस्था पहलेसे उन्नत हो गई है, परन्तु जो पुरुषानुक्रमिक व्यवसायमें लगे हुए हैं, उनकी उन्नतिकी बात तो दूर रहे, क्रमशः दुर्दशा बढ़ती जा रही है। इस व्यवसायसे वे केवल पेट भी पोषते, कुछ सञ्चय नहीं कर सकते हैं। इस विषयमें एक प्रवाद इस तरह है—शिवजीने शिवदासको सृष्टि कर उसे वस्त्र बुननेका आदेश किया। इस पर शिवदासने उनसे सूत, तसर इत्यादि मांगा। तब शिवजीने एक असुरको मार कर उसकी आंखोंसे कपासकी गोटी सृष्टि की। उस गोटीसे कपासका बीज उत्पन्न हुआ। बाद उस बीजसे कपास हुए और क्रमशः उससे रुई तैयार हुई, और विश्वकर्माने आ कर एक चरखा प्रस्तुत किया। दुर्गाजीने स्वयं सूता कात दिया, परन्तु वे बोलीं कि पहला वस्त्र उन्हें ही देना पड़ेगा। इसके बाद विश्वकर्माने तन्तु निर्माण किया और देवताओंने आ कर उसे पृथक् पृथक् अङ्गमें अधिष्ठान किया। शिवदासने प्रथम वस्त्र बुन कर गौरीको प्रदान किया। गौरी जब प्रसन्न हो कर शिवदास-को वर देनेको राजी हुई तो शिवदासने कहा कि मुझे यही वर दीजिए कि मैं एक वस्त्र बुन कर छह मास तक उससे घर बैठे जीविकानिर्वाह करूं। गौरीने भी

उसे ऐसा ही वर दिया। इधर इन्द्रादि देवताओंने जब सुना कि शिवरामको केवल एक वस्त्र बुननेसे ही छह मास तकको जीविका प्रतिपालन करनेका वर मिला है तो उन्होंने सोचा कि ऐसा होनेसे समस्त मनुष्योंको वस्त्र नहीं मिलेंगे, ऐसी हालतमें अब उपाय कर करना नितान्त आवश्यक है जिससे वह शिवदास अनेक वस्त्र प्रस्तुत कर सके ऐसा सोच कर उन्होंने सरस्वतीको शिवदासकी स्त्री कुमावतीके पास भेजा। सरस्वती कुमावतीके कण्ठ पर जा बैठीं। इतनेमें जब शिवदास वर ले कर घरको लौटा तो कुमावतीने उससे पूछा "आपने कौनसा वर लिया है?" शिवदासने आद्योपान्त समस्त विवरण कह सुनाया। कुमावती सरस्वतीकी प्रेरणासे बोली, "आह! आपने यह क्या कर लिया है? यदि एक वस्त्र बुन कर छह मास तक बैठे खायेंगी तो आलसवश किस तरह हम कार्यको छोड़ेंगे, प्रतिदिन कपड़ा बुननेसे ही [illegible] हो सकेगी। इसलिये आप अभी जा कर वर लौटा दीजिये और इस बातको उनसे प्रार्थना कीजिये कि मैं प्रतिदिन कपड़ा बुनूंगा और प्रतिदिन खाऊंगा।" शिवदास स्त्रीको बुद्धिकी प्रशंसा करते हुए उसी समय गौरीके पास गया और वर लौटा कर पुन घर आया। उसी दिनसे वह कपड़ा बुनने लगा और उसे प्रतिदिन बेच कर खाने लगा। देवताओंकी इच्छा पूरी हुई। इस तरह बुद्धिमान् तन्तुवायोंको सुबुद्धि आदि पुरुषने थोड़ासा बुद्धिमत्ताका परिचय दे कर अपनेको तथा अपने व अपरोंको कर्मकुशल और परिश्रमी होनेमें बाध्य किया। आज भी अब तन्तुवायगण अपनी दुरवस्था देख कर इस उपाख्यानको कहते हुए अपने आदिपुरुषोंको दोषी ठहराते हैं।"

यह गल्प यथार्थमें सत्य हो वा न हो लेकिन साधारण मनुष्योंका दृढ़ विश्वास है कि तांतियोंकी बुद्धि उनके उपाख्यान वर्णित आदि पुरुषसे अधिक उन्नत नहीं है। तांतीकी निर्बुद्धि और भीरुताका अर्थ पारिभाषिकसा हो गया है और इसी पर वे निर्बोध, दुर्बल, भीरु, उदास मूर्ख और बोदे लोगोंमें अन्तर्भुक्त हो जाते हैं। समस्त दिन परिश्रम करके अत्यन्त कष्टसे दिन व्यतीत करने पर भी वे सन्तुष्ट रहते हैं। बलवानका अत्याचार ये आत्मसम्मानपूर्वक सहन करते तथा क्षमता रखने पर भी किसीके विरुद्ध वे हाथ न उठाते हैं। इनको निर्बुद्धिता हो या न हो तोभी तांती कहनेसे ही वे निर्बोध और कापुरुष समझे जाते हैं। मनुष्योंका यह विश्वास इतना प्रबल है कि इनकी निर्बुद्धिताके विषयमें इस तरहकी कई एक गल्प प्रचलित हो गये हैं। कोई तांती घासके [illegible] अपने तैर रहा है, उधर कोई तांती कुएं पर गिरी हुई रोटीको पीछे चन्द्रमाके भ्रमसे देख रहा है, कोई तांती आकाशके [illegible] है, और [illegible] दम्पति आ कर उनके मुंहमें [illegible] से [illegible] और कानसे कई बोझ कर अपनी अथाह बुद्धिका विकाश करते हुए [illegible] काट कर हाथ बाहर निकालनेका उपाय बतला रहा है तथा उसी समय दूसरे आर आंखमें [illegible], मुंहमें कांटा और कानमें कई लगा देता है यह जान कर कि शायद सुतोंकी बुद्धि बाहर न निकल जाय। इधर कोई तांती दूध देनेवाली गायको एक मास तक न दुह कर खिलानेके दिन एक ही बारमें उससे एक मासका दूध जब दुहनेके लिये जाता और उतना दूध नहीं पाता है तो गायको पीठ पर बैठी हुई मक्खीको चोरचोर समझ कर मारनेमें गायको ही हत्या कर डालता है और वह मक्खी जब उड़ कर उसके भाईके ऊपर जा बैठती है तो उसका भाई उसे बतला देता है कि मक्खी यहीं है, मक्खीको मारनेमें वह अपने भाईको ही धराशायी कर देता है। उधर कोई तांती बोझसे कट रहा है और कोई अभिमानमें चूर है। कहीं तांती [illegible] साथ सिकड़से लड़नेके लिये जा रहा है। इस तरहके सैकड़ों गल्प अत्यन्त रंजित भावसे उन्हें ख्यापित करते हैं। ये सब गल्प तन्तुवायोंकी निर्बुद्धिताके परिचायक हों या न हों, रचयिताकी सिर्फ कुबुद्धि, परनिन्दाप्रियता और तन्तुवायोंके ऊपर बद्धमूल बैर भाव प्रकाश करते हैं।

जो कुछ हो, आज कल बहुतसे तन्तुवाय-युवक अपनी अपार बुद्धिमत्ताका परिचय देते हुए राज्यकार्यमें प्रविष्ट हो रहे हैं। वे जिस तरह तीक्ष्ण बुद्धि, सब कार्य कुशलता, उद्यमशीलता प्रभृति द्वारा बहुतोंको परास्त कर रहे हैं उससे अब कोई उन्हें निर्बोध कहनेका

साहस नहीं कर सकते हैं। मुसलमान जोला तांती निर्वोधके आदर्श हैं।

तन्तुवायोंमें एक विशेष पार्थक्य है। उत्तरकुल सम्प्रदाय केवल कपासके सूतसे वस्त्र प्रस्तुत करते हैं, मडयाली तांती केवल तसरका वस्त्र बनाते कभी सूतसे कपड़ा नहीं बुनते हैं और आश्विना तांती दोनों तरहके वस्त्र प्रस्तुत करते हैं।

ढाकाके तांती पहले जगत्‌विख्यात उत्कृष्ट कपास वस्त्र प्रस्तुत कर प्रचुर धन उपार्जन करते थे। अभी उस तरहका कपड़ा कहीं देखनेमें नहीं आता है। उनके सौभाग्यके समय जो अच्छे अच्छे वस्त्र बनते थे डाक्टर वाइज (Dr. Wise) ने उनके ५ प्रकारकी तालिका दी है, यथा— मलमल—इसमें पहले प्रकारका अर्थात् सबसे अच्छे अबवान, तञ्जेब और देशीय कपासके सूतका बना हुआ मलमल है। दूसरे प्रकारका शावनाम खासा, सूती, गङ्गाजल और तरिन्दम है। तीसरे प्रकारका मलमलिन जो सबसे मोटा होता है, इसका साधारण नाम बफ्ता है।

२। डोरिया—अर्थात् मोटे सूतकी लम्बी धारीदार मलमल, यथा—राजकोट, ढाकाई, पाटशाहीडोरा, बूटीदार, कागजी और खिलापट।

३। चारखाना—चारखाना मलमल, यथा—नन्दनशाही, अनारदाना, कबूतरखोपी, शाकुहा, बच्छदार और कुण्डीदार।

४। जमदानी—अर्थात् छोटे छोटे बूटेदार मलमल। पहले यूरोपीय वणिक् इसे नयनसुख कहते थे। बूटेके आकार, लता, फूल इत्यादिकी प्रतिमूर्ति तथा उसके वर्णभेदसे जमदानीका नामभेद हुआ है, उनमेंसे शाह वर्णाबूटि, चादर, सेल, तलचा और धुबनोनाल साधारण हैं।

५। कसीदा या चिकन—मलमलको लाल, नीले, हल्दी और बैंगनी रङ्गमें रङ्गा कर उसके ऊपर तसर इत्यादिका फूल छपा रहता है। इस प्रकारके कपड़ेमें कटा डुरमी, नौबाड़ी, यहदो आजिजुल्ला और समुद्रलहर प्रधान हैं।

तन्तुवायदण्ड (सं० पु०) तन्तुवायस्य दण्डः, ६-तत्। कपड़े बुननेका यन्त्र, करघा।

तन्तुविग्रहा (सं० स्त्री०) तन्तुभिः निर्मितो विग्रहो यस्याः, बहुव्री०। कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

तन्तुशाला (सं० स्त्री०) तन्तुवयनार्थं या शाला। तन्तुवयनगृह, वह स्थान जहाँ कपड़ा बुना जाता है।

तन्तुसन्तत (सं० त्रि०) तन्तुभिः सन्ततं व्याप्तं, ३-तत्। स्यूतवस्त्र, सिया हुआ कपड़ा। इसके पर्याय—ऊत उत और स्यूत हैं।

तन्तुसन्तति (सं० स्त्री०) तन्तूनां सन्ततिः, ६-तत्। वयन, बुननेकी क्रिया।

तन्तुसार (सं० पु०) तन्तुः सारो यस्य, बहुव्री०। गुवाकवृक्ष, सुपारीका पेड़।

तन्त्र (सं० क्ली०) तनोति तन्यते वा तन्-ष्ट्रन् वा तन्त्रि कुटुम्ब धारणे घञ्। १ कुटुम्बकृत्य, कुटुम्बके भरण पोषण आदिका कार्य। २ वेदकी एक शाखा। ३ सिद्धान्त, मीमांसा, विचार। ४ दृढ़ प्रमाण, पक्का सबूत। ५ परिच्छद, वस्त्र, कपड़ा। ६ औषध, दवा। ७ झाड़मन्त्र, झाड़ने फूँकनेका मन्त्र। ८ प्रधान। ९ कार्य, काम। १० कारण। ११ उपाय। १२ राजसममिव्याहारी लोक, राजकर्मचारी। १३ सैन्य, सेना। १४ अधिकार। १५ राज्य। १६ स्वराज्यचिन्ता, राज्यका प्रबन्ध। १७ इतिकर्तव्यता, धर्म, फर्ज। १८ सूत, दूत। १९ तन्तुवाय, तांती। २० तन्तु, तांत। २१ पद, कार्य करनेका स्थान। २२ समूह, ढेर। २३ वस्त्रवयनकी सामग्री, कपड़े बुननेकी सामग्री। २४ आह्लाद, प्रसन्नता, आनन्द। २५ राज्यशासन। २६ राज्यका समृद्धिसम्पादन, वह कार्य जिससे राज्यकी उन्नति हो। २७ गृह, घर। २८ धन, सम्पत्ति, दौलत। २९ अधीनता, परतन्त्रता। ३० चर्मनिर्मित सूक्ष्म रज्जु, चमड़ेकी पतली रस्सी। ३१ दल, संप्रदाय। ३२ उद्देश्य। ३३ कुल, खानदान। ३४ शपथ, कसम। ३५ अधीन। ३६ उभयार्थ प्रयोजक। ३७ विधिके अन्तमें मङ्गल समुदाय। ३८ शिवोक्त शास्त्रभेद, एक शास्त्र, जो शिवके मुखसे कहा गया है। यह शास्त्र प्रधानतः आगम, यामल और तन्त्र इन तीन श्रेणियोंमें विभक्त है। वाराहीतन्त्रके मतसे—

"सृष्टिश्च प्रलयश्चैव देवतानां यथार्चनम्।
साधनञ्चैव सर्वेषां पुरश्चरणमेव च॥
षट्कर्मसाधनञ्चैव ध्यानयोगश्चतुर्विधः।
सप्तभिर्लक्षणैर्युक्तमागमं तद्विदुर्बुधाः॥"

सृष्टि, प्रलय, देवताओंकी पूजा सबका साधन, पुरश्चरण, षट्कर्मसाधन और चतुर्विध ध्यानयोग, इन सात प्रकारके लक्षणोंके रहने पर उसको आगम कहा जा सकता है।

"सर्गश्च प्रतिसर्गश्च मन्त्रनिर्णय एव च।
देवतानाञ्च संस्थानं तीर्थानाञ्चैव वर्णनम्॥
तथैवाश्रमधर्मश्च विप्रसंस्थानमेव च।
संस्थानञ्चैव भूतानां यन्त्राणाञ्चैव निर्णयः॥
उत्पत्तिर्विबुधानाञ्च तरूणां कल्पसंज्ञितम्।
संस्थानं ज्योतिषाञ्चैव पुराणाख्यानमेव च॥
कोषस्य कथनञ्चैव व्रतानां परिभाषणम्।
शौचाशौचस्य चाख्यानं नरकाणाञ्च वर्णनम्॥
हरचक्रस्य चाख्यानं स्त्रीपुंसोश्चैव लक्षणम्।
राजधर्मो दानधर्मो युगधर्मस्तथैव च॥
व्यवहारः कथ्यते च तथा चाध्यात्मवर्णनम्।
इत्यादिलक्षणैर्युक्तं तन्त्रमित्यभिधीयते॥"

सृष्टि, प्रलय, मन्त्रनिर्णय, देवताओंका संस्थान, तीर्थवर्णन, आश्रमधर्म, विप्रसंस्थान, भूतादिका संस्थान, यन्त्रनिर्णय, विबुधगणकी उत्पत्ति, कल्प वर्णन, ज्योतिष-संस्थान, पुराणाख्यान, कोषकथन, व्रत कथा, शौचाशौचवर्णन, स्त्री-पुरुषका लक्षण, राजधर्म, दानधर्म, युगधर्म, व्यवहार और आध्यात्मिक विषयकी वर्णना इत्यादि लक्षणोंके रहने पर उसको तन्त्र कहा जा सकता है।

"सृष्टिश्च ज्योतिषाख्याने नित्यकृत्यप्रदीपनम्।
क्रमसूत्रं वर्णभेदो जातिभेदस्तथैव च॥
युगधर्मश्च संख्यातो यामलस्याष्टलक्षणम्।"

सृष्टितत्त्व, ज्योतिष-वर्णन, नित्यकृत्य क्रमसूत्र, वर्णभेद, जातिभेद और युगधर्म, ये आठ यामलके लक्षण हैं।

वाराहीतन्त्रके मतसे समस्त तन्त्र लोक देव लोक ब्रह्मलोक और पाताललोकमें ८ लाख तथा भारतमें १ लाख मात्र हैं। इनमें—

"आगमं त्रिविधं प्रोक्तं चतुर्थमीश्वरं स्मृतम्।
तन्त्रञ्च तुर्यं प्रोक्तं आगमो डामरस्तथा।
यामलञ्च तथा तन्त्रं तेषां भेदाः पृथक् पृथक्॥"

आगम तीन प्रकारका है, चौथा ईश्वर है। तन्त्र भी चार प्रकारका है—आगम, डामर, यामल और तन्त्र। महासिद्धसारतन्त्रमें लिखा है—

"चतुःषष्टिश्च तन्त्राणि वामस्थानि च पार्वति।
कलकत्तादि वाराहे विष्णुक्रान्ताख्य भूमिषु॥
रथक्रान्तेश्च तन्त्राणि कथितानि च तानि च।
अश्वक्रान्ताश्रयाणेव विष्णुक्रान्तेऽपि सुन्दरि॥"

यामल आदिको ले कर ६४ तन्त्र विष्णुक्रान्ता भूमि पर प्रचलित हैं। इनमें इसके सो तन्त्र कहे गये हैं, वे पाषण्ड मोहनके लिए हैं उनसे कुछ फल नहीं होता।

देखो। महानिर्वाण तन्त्रमें महादेवने कहा है—

"कलिकल्मषदीनानां द्विजातीनां सुरेश्वरि।
मेध्यामेध्यविचाराणां न शुद्धिः श्रौतकर्मणा।
न संहितायैः स्मृतिभिरिष्टसिद्धिर्नृणां भवेत्॥
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं मयोच्यते।
विना ह्यागममार्गेण कलौ नास्ति गतिः प्रिये॥
श्रुतिस्मृतिपुराणादौ मयैवोक्तं पुरा शिवे।
आगमोक्तविधानेन कलौ देवान् यजेत् सुधीः॥" १८०।

कलिके दोषसे दीन ब्राह्मण क्षत्रियादिके पवित्र और अपवित्रका विचार न रहेगा। इसलिए वेदविहित कर्म द्वारा वे किस तरह सिद्धिलाभ करेंगे? ऐसी अवस्थामें स्मृतिसंहितादिके द्वारा भी मानवोंकी इष्टकी सिद्धि नहीं होगी। प्रिये! मैं सत्य ही कहता हूं कि कलियुगमें आगममार्गके सिवा और कोई गति नहीं है। प्रिये! मैंने वेद स्मृति और पुराणादिमें कहा है कि, कलियुगमें साधक तन्त्रोक्तविधान द्वारा देवीकी पूजा करेंगे।

"कलावागममुल्लङ्घ्य योऽन्यमार्गे प्रवर्तते।
न तस्य गतिरस्तीति सत्यं सत्यं न संशयः॥"

कलिकालमें जो आगम (तन्त्र) उल्लङ्घन करके अन्य मार्गमें अवलम्बन करेगा, सचमुच ही उसकी सद्गति नहीं होगी।

"निर्वीर्याः श्रौतजातीया विषहीनोरगा इव।
सत्यादौ सफला आसन् कलौ ते मृतका इव॥

नाम	श्लोकसंख्या
प्रत्यङ्गिरातन्त्र	८८००
महालक्ष्मीतन्त्र	५५०५
देवीतन्त्र	१२०००
त्रिपुरार्णव	८८०६
सरस्वतीतन्त्र	२२०५
याद्यातन्त्र	२२८१५
योगिनीतन्त्र (१म)	२२५३२
योगिनीतन्त्र (२य)	६३०३
वाराहीतन्त्र	,,
गवाक्षतन्त्र	६५१५
नारायणीतन्त्र	५०२०३
मृडानीतन्त्र (१म)	४४८०
मृडानीतन्त्र (२य)	३०००
मृडानीतन्त्र (३य)	३३०

वाराहीतन्त्रमें लिखा है—इनके सिवा बौद्ध और कपिलोक्त अनेक उपतन्त्र हैं। जैमिनि, वसिष्ठ, कपिल, नारद, गर्ग, पुलस्त्य, भार्गव, सिद्ध, याज्ञवल्क्य भृगु, शुक्र बृहस्पति आदि मुनियोंने बहुतसे उपतन्त्र रचे थे, उनको गिनती नहीं हो सकती।

हिन्दुओंके तन्त्र जिस प्रकार शिवोक्त हैं, बौद्धोंके तन्त्र भी उसी प्रकार बुद्ध द्वारा वर्णित हैं। बौद्धोंके तन्त्र भी संस्कृत भाषामें रचे गये हैं। बौद्धतन्त्रोंमें ये तन्त्र ही प्रधान हैं—१ प्रमोदमहायुग, २ परमार्थसेवा, ३ पिण्डोक्रम, ४ सम्पुटोद्भव, ५ हेवज्र, ६ बुद्धकपाल, ७ सम्बरतन्त्र वा सम्बरोदय, ८ वाराहीतन्त्र वा वाराही-कल्प, ९ योगाम्बर, १० डाकिनीजाल, ११ शुक्लयमारि, १२ कृष्णयमारि, १३ पीतयमारि, १४ रक्तयमारि, १५ श्यामयमारि, १६ क्रियासंग्रह १७ क्रियाकन्द, १८ क्रियासागर, १९ क्रियाकल्पद्रुम, २० क्रियार्णव, २१ अभिधानोत्तर, २२ क्रियासमुच्चय, २३ साधनमाला, २४ साधनसमुच्चय २५ साधनसंग्रह, २६ साधनरत्न, २७ साधनपरीक्षा, २८ साधनकल्पलता, २९ तत्त्वज्ञान, ३० ज्ञानसिद्धि, ३१ गुह्यसिद्धि, ३२ उद्यान, ३३ नागार्जुन, ३४ ३४ योगपीठ, ३५ पीठावतार, ३६ कालवीरतन्त्र वा चण्डरोषण, ३७ वज्रवीर, ३८ वज्रसत्व, ३९ मरीचि, ४० तारा, ४१ वज्रधातु, ४२ विमलप्रभा, ४३ मणिकर्णिका, ४४ त्रैलोक्यविजय, ४५ सम्पुट ४६ मर्मकालिका, ४७ कुरुकुल्ला, ४८ भूतडामर, ४९ कालचक्र, ५० योगिनी, ५१ योगिनीसञ्चार, ५२ योगिनीजाल, ५३ योगाम्बरपीठ, ५४ उड्डामर, ५५ वसुन्धरासाधन, ५६ नैरात्म, ५७ डाकार्णव, ५८ क्रियासार, ५९ यमान्तक, ६० मञ्जुश्री, ६१ तन्त्रसमुच्चय, ६२ क्रियाक्रमसंत, ६३ हयग्रीव, ६४ मञ्जीर्ण, ६५ नामसङ्गीति, ६६ अमृतकर्णिकानामसङ्गीति, ६७ गूढोत्पादनामसङ्गीति, ६८ मायाजाल, ६९ ज्ञानोदय, ७० वसन्ततिलक, ७१ निष्पन्नयोगाम्बर, और ७२ महाकालतन्त्र।

इनके सिवा हिन्दुओंके तान्त्रिक कवचकी भाँति नेपाली बौद्धोंमें भी असंख्य धारणीसंग्रह हैं। बौद्धतन्त्रोंमें बहुतोंका चीन और तिब्बती भाषामें अनुवाद हो गया है। तिब्बतमें तन्त्र ऋग्युद्के नामसे प्रसिद्ध है, ऋग्युद् ७८ भागोंमें विभक्त है। इसमें २६४० स्वतन्त्र ग्रन्थ हैं। उसमें प्रधानतः बौद्धोंके गुह्य क्रियाकाण्ड, उपदेश, स्तव, कवच, मन्त्र और पूजाविधिका वर्णन है। शिवोक्त तन्त्र शाक्त, शैव और वैष्णवके भेदसे तीन प्रकारके हैं। तान्त्रिकगण स्वसंप्रदायभुक्त तन्त्रके अनुसार ही चला करते हैं।

उत्पत्ति। तन्त्रशास्त्रकी उत्पत्ति कबसे हुई है, इसका निर्णय नहीं हो सकता। प्राचीन स्मृतिसंहितामें चौदह विद्याओंका उल्लेख है, किन्तु उसमें तन्त्र उद्धृत नहीं हुआ है। इसके सिवा किसी महापुराणमें भी तन्त्रशास्त्रका उल्लेख नहीं है, इत्यादि कारणोंसे तन्त्रशास्त्रको प्राचीनतम आर्यशास्त्र नहीं माना जा सकता। तन्त्रोक्त मारणोच्चाटन-वशीकरणादि आभिचारिक क्रियाका प्रसङ्ग अथर्वसंहितामें पाया जाता है सही किन्तु तन्त्रके अन्यान्य प्रधान लक्षण नहीं मिलते। ऐसी दशामें तन्त्रको हम अथर्वसंहितामूलमें नहीं कह सकते। अथर्ववेदीय नृसिंहतापनीयोपनिषद्में सबसे पहले तन्त्रका लक्षण देखनेमें आता है। इस उपनिषद्में मन्त्र-राज-नरसिंह-अनुष्टुभ प्रसङ्गमें तान्त्रिक मालामन्त्रका स्पष्ट आभास सूचित हुआ है। शङ्कराचार्यने भी जब उक्त उपनिषद्के भाष्यकी रचना की है तब निःसन्देह वह ईसाकी ७वीं शताब्दीसे भी पहलेका है। हिन्दुओंके

अनुष्ठानमें बौद्धतन्त्रोंकी रचना हुई है। ईसाकी ८वीं शताब्दीसे ११वीं शताब्दीके भीतर बहुतसे बौद्ध तन्त्रोंका तिब्बतीय भाषामें अनुवाद हुआ था। ऐसी दशामें मूल बौद्धतन्त्र ईसाकी ७वीं शताब्दीके पहले और उनके आदर्श हिन्दूतन्त्र बौद्धतन्त्रके भी पहले प्रकाशित हुए हैं इसमें सन्देह नहीं। श्रीमद्भागवतमें ४र्थ स्कन्धके २य अध्यायमें लिखा है—दक्षयज्ञमें शिवनिन्दा सुन कर नन्दीके शिवनिन्दक दक्ष और उसके समर्थनकारी ब्राह्मणोंको अभिसम्पात करने पर भृगुने भी इस प्रकार अभिशाप दिया था—

"भवव्रतधरा ये च ये च तान् समनुव्रताः।
पाषण्डिनस्ते भवन्तु सच्छास्त्रपरिपन्थिनः॥
नष्टशौचा मूढधियो जटाभस्मास्थिधारिणः।
विशन्तु शिवदीक्षायां यत्र दैवं सुरासवम्॥
ब्रह्म च ब्राह्मणं चैव यद् यूयं परिनिन्दथ।
सेतुं विधारणं पुंसामतः पाषण्डमाश्रिताः॥"

जो महादेवका व्रत धारण करेंगे और जो उनके अनुवर्ती होंगे वे सत्शास्त्र प्रतिकूलाचारी और पाषण्डी नामसे प्रसिद्ध हों। शौचाचारहीन और मूढ़बुद्धि व्यक्ति ही जटाभस्मधारी हो कर उस शिवदीक्षामें प्रवेश करें, जहां सुरासव ही देवता आदरणीय है, तुम लोगोंने शास्त्रोंके मर्यादास्वरूप ब्रह्म, वेद और ब्राह्मणोंकी निन्दा की है इसलिये तुम लोगोंको पाषण्डाश्रित कहा है।

पद्मपुराणके पाषण्डोत्पत्ति अध्यायमें लिखा है—लोगोंको भ्रष्ट करनेके लिये ही शिवको दुहाई दे कर पाषण्डियोंने अपना मत प्रकट किया है। उक्त भागवत और पद्मपुराणमें जिस तरह पाषण्डीमतका उल्लेख किया गया है उसमें यही विशेष उपदेश कहा गया है। गौड़ीय वैष्णवग्रन्थके पढ़नेसे मालूम होता है कि वे तन्त्रदेवके भी तान्त्रिकोंको पाषण्डोंके नामसे सम्बोधन किया है। ऐसा होनेसे भागवत और पद्मपुराणके रचनाकालमें जो तान्त्रिक मत प्रचारित हुआ था, वह एक तरहसे अनुमान किया जा सकता है। चीन-परिव्राजक फाहियान और यूयेनचुवाङ्गने भारतमें आ कर यहांके अनेक पदार्थोंका विवरण लिखा है, किन्तु तान्त्रिकोंके विषयमें कुछ नहीं लिखा है। ई० ८वीं शताब्दीमें भोटदेशमें बौद्धतन्त्र अनुवादित हुए थे। किन्तु ई० ७वीं शताब्दीमें यूयेनचुवाङ्गने नानाप्रकारके बौद्ध शास्त्रोंका उल्लेख करने पर भी तन्त्रशास्त्रका कोई उल्लेख नहीं किया। जब ८वीं शताब्दीमें मूल ग्रन्थका अनुवाद हुआ है, तब मानना पड़ेगा कि, मूलतन्त्र ग्रन्थ उससे पहले रचे गये हैं। हां, यह हो सकता है, कि उस समय उनकी प्रसिद्धि नहीं हुई होगी अथवा नागार्जुनने उनको बौद्धमत मान कर ग्रहण नहीं किया होगा। दाक्षिणात्यमें बहुतोंका विश्वास है कि अद्वैतवादी शङ्कराचार्यने ही तान्त्रिक मतका प्रचार किया था और इसी कारण वे मायावादी नामसे प्रसिद्ध हैं। किन्तु शङ्कराचार्यको इस तन्त्रमतका प्रचारक किसी हालतमें भी नहीं मान सकते। शंकराचार्य देखो।

दक्षिणाचार-तन्त्रराजमें लिखा है—गौड़, केरल और काश्मीर इन तीनों देशके लोग ही विदग्धमात्र हैं। किन्तु इस गौड़देशको ही प्रधानस्थान या तान्त्रिकोंकी जन्मभूमि मान सकते हैं। तान्त्रिकोंमें शैव, वैष्णव और शाक्त ये तीन सम्प्रदायभेद रहने पर भी शाक्तता सभी मान हैं। बौद्ध तान्त्रिकोंको भी इस दल विभागमें मान कर लेना चाहिए। शाक्त देखो।

बङ्गालमें जिस प्रकार शाक्तोंका प्राधान्य है, भारतमें और कहीं भी वैसा नहीं है। जिस समय बौद्धधर्म हीनप्रभ होता जा रहा था, उस समय गौड़में तान्त्रिक धर्मका प्रचार हुआ था। इस समय जितने भी प्राचीन तन्त्र पाये जाते हैं, उनकी रचनाप्रणालीकी पर्यालोचना करनेसे सहजमें ही मालूम होता है कि, वे गौड़देशमें रचे गये थे। तन्त्रमें जैसी एकप्रकार वर्णमाला प्रदर्शित हुई है, वह भी अपूर्व गौड़ या बङ्गदेशमें प्रचलित थी। वरदातन्त्र, वर्णोद्धारतन्त्र आदि तन्त्रोंमें वर्णमालाकी जैसी लिपिप्रणाली लिखी है उसे भी इस बङ्गला अक्षरके सिवा अन्य कोई लिपि नहीं मान सकते। तन्त्रोक्त लिपि अब सिर्फ बङ्गालमें ही प्रचलित है। इस लिपिको हजार या बारह सौ वर्षसे ज्यादा पुरानी नहीं कह सकते। इसलिये अब इसमें कोई सन्देह नहीं रह जाता कि उस प्रकारकी लिपिके तन्त्र भी उसके बाद रचे गये हैं। भोटदेशमें अतिशका नाम बहुत प्रसिद्ध

है। ये बङ्गाली थे, ईसाकी ११वीं शताब्दीमें इन्होंने तिब्बतमें जा कर तांत्रिक धर्मका प्रचार किया था। यह सम्भव नहीं कि, इनसे भी पहले किसी बङ्गवासीने जा कर वहां धर्म प्रचार किया होगा। अतएव सम्भव है कि बङ्ग वा गौड़से ही नेपाल, भूटान, चीन आदि दूर देशोंमें तान्त्रिक धर्म विस्तृत हुआ था।

गुजराती भाषामें लिखे गए 'आगमप्रकाश'में लिखा है हिन्दू राजाओंके राज्यकालमें बङ्गालियोंने गुजरात डभोई, पावागढ़, अहमदाबाद, पाटन आदि स्थानोंमें आ कर कालिकामूर्त्ति स्थापित की थीं। बहुतसे हिन्दू राजा और प्रधान प्रधान व्यक्तियोंने उनकी मंत्रदीक्षा ग्रहण की थी। (आगमप्र० १२) वास्तवमें देखा जाय तो फिलहाल जो बङ्गाल आदि देशोंमें मंत्रगुरुका प्रचलन है वह भी तांत्रिकोंके प्राधान्य कालमें प्रचलित हुआ था। ऐसा मंत्रगुरुका नियम पहले न था। बङ्गाली तांत्रिकोंने ही इस प्रथाका प्रथम प्रचार किया था। उनकी देखा-देखी भारतके नाना स्थानों वा नाना संप्रदायोंमें इस प्रकारके मंत्रगुरुकी प्रथा चल पड़ी है।

सभी तंत्र प्राचीन नहीं माने जा सकते। योगिनी-तंत्रमें कोचराजवंशके प्रतिष्ठाता विश्वसिंहका परिचय दिया गया है। विश्वसारतंत्रमें नित्यानन्दकी जन्मकथाका वर्णन किया गया है। इसलिए ऐसे तंत्र ईसाकी १५वीं शताब्दीसे बादके हैं, इसमें सन्देह ही क्या? बङ्गालमें महानिर्वाणतंत्रका सर्वत्र आदर होता है, किन्तु बहुत जगह किम्वदन्ती है कि, महात्मा राममोहन रायके गुरुने इस ग्रन्थकी रचना की थी। भक्तिरत्नाकरमें वृहन्निर्वाणतंत्रका उल्लेख है। किन्तु नितान्त आधुनिक प्राणतोषिणीके सिवा अन्य किसी प्राचीन वा आधुनिक तंत्रसंग्रहमें महानिर्वाणतंत्रका नामोल्लेख न रहनेसे इसका आधुनिकत्व ही प्रतिपन्न होता है। और मेरुतन्त्रमें लंडन, अंग्रेज इत्यादि शब्दो द्वारा यही प्रमाणित होता है कि, भारतमें अंग्रेजोंके आगमनके बाद उक्त तन्त्रोंकी रचना हुई है।

प्रतिपाद्य विषय। तंत्रोंमें प्रातःस्मरण, स्नानविधि, त्रिपुण्ड्र धारण, भूशुद्धि, भूतशुद्धि, प्राणायाम, संध्या, जप, पुरश्चरण, कराङ्गन्यास, अन्तर्मातृका, बहिर्मातृका, चित्रान्यास, नामादिविद्या, नित्यादिविद्या, मन्त्रविद्या, तत्त्वन्यास, द्वारपूजा, तर्पण, ध्यानविन्यास, पात्रनिर्णय, नित्यपूजा, मुद्राख्य तीर्थसंस्कार, गुर्वादि पूजन, दीक्षा, पूर्णाभिषेक, प्रायश्चित्त, शिवपुष्पपूजा, दमनकपूजा, वसन्तपूजा, श्रीचक्रपूजा, दीक्षाकाल, दीक्षाभेद, सर्वतोभद्रादिचक्रनिर्णय, यंत्रनिरूपण, पुण्याहवाचन, नान्दीश्राद्ध, नक्षयोनि, कौलश्राद्ध, मंत्रशोधन, मन्त्रोद्धार, नामपारायण, तत्त्वपारायण, षडाङ्गन्यास, महाषोढान्यास, महान्यास, सम्मोहनन्यास, सौभाग्यवर्द्धनन्यास, अन्त्येष्टिक्रिया, विविधमुद्रा, अयभूतादि निर्णय आदि नाना विषयोंका वर्णन किया गया है।

मनुके टीकाकार कुल्लूकभट्टने लिखा है—

"वैदिकी तान्त्रिकी चैव द्विविधा श्रुतिकीर्त्तिता।"

वैदिकी और तान्त्रिकी इन दो श्रुतियोंका निर्देश है। इसलिए कुल्लूकभट्टके मतसे, तन्त्रको भी श्रुति कहा जा सकता है। आदियामलके मतसे—

"आगतः शिववक्त्रेभ्यो गतोऽपि गिरिजामुखे।
मग्नं तत्र हृदम्भोजे तस्मादागम उच्यते॥"

हे दुर्गे! शिवके मुखसे निकल कर तुम्हारे हृदयपद्ममें मग्न हुआ है, इसीलिए इसको आगम कहते हैं।

कुलार्णवके मतसे—

"कृते श्रुत्युक्त आचारस्त्रेतायां स्मृतिसम्भवः।
द्वापरे तु पुराणोक्तं कलौ आगमकेवलम्॥"

विष्णुयामलमें वर्णित है—

"आगमोक्तविधानेन कलौ देवान् यजेत् सुधीः।
नहि देवाः प्रसीदन्ति कलौ चान्यविधानतः॥"

बुद्धिमान् मनुष्य कलिकालमें आगमोक्त व्यवस्थाके अनुसार ही पूजा करेंगे; अन्य नियमसे पूजा करनेसे देवगण प्रसन्न नहीं होते।

रुद्रयामलके मतसे—

"पञ्चमन्त्रैर्भवेद्दीक्षास्त्वागमोक्ता शृणु प्रिये।
यां कृत्वा कलिकाले च सर्वाभीष्टं लभेन्नरः॥"

आगमोक्त पञ्चमंत्र द्वारा दीक्षा लेवें, इसके लेनेसे मनुष्यको कलिकालमें सर्व अभीष्टकी सिद्धि होगी।

दीक्षा। तंत्रोंके मतसे, सबसे पहले दीक्षा ग्रहण करके पीछे तांत्रिक कार्यमें हाथ डालना चाहिये, बिना

दीक्षाके तान्त्रिक कार्यमें अधिकार नहीं है।

गौतमीयतन्त्रमें लिखा है—

"द्विजानामनुपेतानां स्वकर्माध्ययनादिषु।
यथाधिकारो नास्तीह स्याच्चोपनयनादनु॥
तथात्रादीक्षितानान्तु मन्त्रदेवार्चनादिषु।
नाधिकारोऽस्त्यतः कुर्यादात्मानं शिवसंस्तुतम्॥"

जैसे द्विजातियोंको उपनयन बिना हुए अध्ययन और सन्ध्यापूजा आदि स्वकर्ममें अधिकार नहीं होता, उसी तरह अदीक्षित व्यक्तियोंको मन्त्र और पूजादि कर्ममें अधिकार नहीं होता। इसी लिए दीक्षित होना आवश्यक है। रुद्रयामलमें भी ऐसा लिखा है—

"दद्याति दिव्यज्ञानेनेह क्षिणुयात् पापसन्तति।
तेन दीक्षेति विख्याता मुनिभिस्तत्त्वपारगैः॥
तां विना नैव सिद्धिः स्यान्मन्त्रो वर्षशतेरपि॥"

दिव्यज्ञान देती और पापसन्तति नाश करती है इस लिए तत्त्वपारग मुनि द्वारा यह दीक्षा नामसे प्रसिद्ध है। इसके बिना सौ वर्ष मंत्र पढ़नेसे भी सिद्धि नहीं होती।

दीक्षा लेनेके लिए सद्गुरुको आवश्यकता है। दीक्षा गुरुका लक्षण इस प्रकार है—

"शान्तो दान्तः कुलीनश्च शुद्धान्तःकरणः सदा।
पञ्चतत्त्वार्चको यस्तु सद्गुरुः स प्रकीर्त्तितः॥
सिद्धोऽभ्यासादि येन स्यात्तो बहुभिः शिष्यपालकः।
चमत्कारी दैवशक्त्या सद्गुरुः कथितः प्रिये॥
सुप्रसन्नः सदा शान्तः सुधीः सर्वहिते रतः।
... ...
... ...
... ...
परमार्थे सदा दृष्टिः परमार्थप्रकीर्त्तितम्।
गुरुपादाम्बुजे भक्तिर्यस्यैव सद्गुरुः स्मृतः॥"

(ज्ञानार्णवतन्त्र १ पटल)

शान्त, दान्त, कुलीन, शुद्धान्तःकरण, पञ्चतत्त्वके पूजक, सिद्ध, प्रसिद्ध बहुशिष्यपालनकारी, चमत्कारी, दैवशक्तिसम्पन्न, साधु, मनोहर, प्रसन्न और तत्त्वज्ञ तत्त्वदर्शी तन्त्र मन्त्रको सम्यक् भावसे जानते हों, शिष्य जीवोंके जो सर्वदा ही हित करते रहते हों, निग्रहानुग्रहमें समर्थ हों, सदा परमार्थमें दृष्टि रखते हों और जो सदा परमार्थ तत्त्व कीर्त्तन करते रहते हों, गुरुके पादपद्ममें जिनकी अचल भक्ति हो, उन्हींको सद्गुरु समझना चाहिये। इसलिए उसको प्रधान तन्त्रोंमें लिखा है—

"अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥"

अज्ञानरूप तिमिररोगसे जो अन्ध हुआ है, ज्ञानरूप अञ्जनको शलाकाके द्वारा जो उसकी अन्धता नष्ट कर ज्ञाननेत्रको खोल देते हैं, ऐसे श्रीगुरुको नमस्कार है।

जैसे गुरु हैं वैसे शिष्यकी जरूरत है। गौतमीय तन्त्रमें लिखा है—

"शिष्यः कुलीनः शुद्धात्मा पुरुषार्थपरायणः।
अधीतवेदः कुशलः पितृमातृहिते रतः॥
वाङ्मनःकायकर्मभिर्गुरुशुश्रूषणे रतः।
सदा ज्ञानार्जनासक्तो दयावेशो दयावान्॥
हिंसादि व्यक्तिनो नित्यं परलोकार्थकर्मकृत्।
... ...
अनित्य कर्मत्यागी नित्यानुष्ठानतत्परः।
जितेन्द्रियो निरालस्यो निर्मोहो निर्मत्सरः॥
गुरुपुत्रकलत्रेषु तत्कुलजातिषु भक्तिमान्।
एवंविधो भवेच्छिष्यः इतरो दुःखकृद्गुरोः॥
सर्वेषामेव मार्गस्थो शिष्यः सर्वगुणान्वितः।
... ...
... ...
तदा शिष्यो भवेद् योग्य इतरो दुःखदायकः॥
... ... दीक्षाविधिमाचरेत्॥" (१ अध्याय)

शिष्य कुलीन, शुद्धान्तःकरण पुरुषार्थपर, वेदपाठमें निपुण पितामाताकी सेवामें तत्पर, धर्मज्ञ, धार्मिक गुरुसेवामें अनुरक्त, सर्वदा तत्त्वज्ञानका यथार्थ मन इ इन्द्रिय और इन्द्रियचित्त प्राणियोंका सर्वदा मङ्गलकारी, परलोकमें मङ्गलके लिए धर्मकारी कायमनोवाक्यसे यावज्जीवन गुरुसेवामें निरत, अनित्य कर्मत्यागकारी, सर्वदा तत्त्वानुष्ठानमें तत्पर, जितेन्द्रिय, आलस्यत्यागकारी, मोह और मत्सरको त्याग करनेवाले, गुरुपुत्र और गुरुके परिवारवर्गकी गुरुके समान भक्ति करनेवाला ऐसा शिष्य होना चाहिये; अन्य प्रकार शिष्य गुरुके लिए दुःखदायक है। सर्वगुणान्वित ब्राह्मण एक वर्षमें, क्षत्रिय दो वर्षमें

वैश्य तीन वर्ष में और शूद्र चार वर्ष में शिष्य होनेके उपयुक्त होता है। शिष्य उपयुक्त होने पर सद्गुरुको चाहिये कि, उससे कृपापूर्वक सम्पूर्ण दीक्षाको विधियोंका पालन करावें।

उक्त लक्षणाक्रान्त होने पर भी सबसे दीक्षा लेनेको विधि नहीं है। योगिनीतन्त्रमें लिखा है—

"पितुर्मन्त्रं न गृह्णीयात् तथा मातामहस्य च।
सोदरस्य कनिष्ठस्य वैरिपक्षाश्रितस्य च॥"

पिता, मातामह, सहोदर वा अपनी अपेक्षा छोटी उम्रवालेसे तथा शत्रुपक्षवालोंसे मंत्र ग्रहण न करना चाहिये।

कामाख्यातंत्रके मतसे—

"अन्धं खञ्ज तथा रुग्नं स्वल्पज्ञानयुतं पुनः।
सामान्यकौलं वरदे वर्जयेन्मतिमान् सदा॥
उदासीनं विशेषेण वर्जयेत् सिद्धिकामुकः।
उदासीनमुखाद्दीक्षा बन्ध्या नारी यथा प्रिये॥
अज्ञानाद् यदि वा मोहादुदासीनन्तु पामरः।
अभिषिक्तो भवेद् देवि विघ्नस्तस्य पदे पदे।
सर्वं हि विफलं तस्य नरकं याति चान्तिमे।" (८म०)

मतिमान् सिद्धिकामुक व्यक्तिको चाहिये कि, वह अन्धा, लूला, रुग्न, अल्पज्ञानी, सामान्य कौल, विशेषतः उदासीनको परित्याग कर दे। क्योंकि वन्ध्या नारी जैसी है, उदासीनके पास दीक्षा लेना भी वैसा ही है। यदि विना जाने किम्वा मोहसे उदासीनसे दीक्षा ले ली हो तो उसको पदपदमें विघ्न हुआ करते हैं। उसके सभी कार्य विफल हैं। अन्तको वह नरक जाता है।

गणेशविमर्षिणीतंत्रके मतसे—

"यतेर्दीक्षा पितुर्दीक्षा दीक्षा च वनवासिनः।
विविक्ताश्रमिणो दीक्षा न सा कल्याणदायिका॥"

यति, पिता, वनवासी और गृहस्थाश्रम परित्यागीसे दीक्षा लेना मङ्गलजनक नहीं है।

रुद्रयामलमें लिखा है—

"न पत्नीं दीक्षयेद् भर्त्ता न पिता दीक्षयेत् सुताम्।
न पुत्रञ्च तथा भ्राता भ्रातरं न च दीक्षयेत्॥
सिद्धमन्त्रो यदि पतिस्तदा पत्नीं स दीक्षयेत्।
शक्तित्वेन वरारोहे न च सा पुत्रिका भवेत्॥"

पति पत्नीको, पिता कन्या वा पुत्रको, भ्राता भाईको दीक्षा न देवें। पति सिद्धमंत्र होने पर पत्नीको दीक्षित कर सकते हैं; क्योंकि उनकी शक्तित्वके कारण वह कन्या नहीं समझी जाती।

गणेशविमर्षिणीके मतसे—

"प्रमादाद्वा तथाज्ञानात् पितुर्दीक्षां समाचरन्।
प्रायश्चित्तं ततः कृत्वा पुनर्दीक्षां समाचरेत॥"

प्रमाद वश वा अज्ञान वश यदि पितासे दीक्षा ली जाय, तो प्रायश्चित्त करके पुनः दीक्षा लेनी पड़ती है।

कृष्णानन्दने तंत्रसारमें लिखा है—

"वैष्णवे वैष्णवो ग्राह्यः शैवे शैवश्च शाक्तिके।
शैवः शाक्तोऽपि सर्वत्र दीक्षाग्राही न संशयः॥"

वैष्णवका वैष्णव तथा शैवका शैव और शाक्त ग्राह्य है। शैव और शाक्त सर्वत्र ही दीक्षागुरु हो सकते हैं।

देशभेदसे भी गुरुओंमें तारतम्य होता है। बृहन्नीलतंत्रके मतसे—

"पाश्चात्या गुरवो मुख्या दाक्षिणात्यास्तु मध्यमाः।
गौडदेशोद्भवा न्यूना कामरूपोद्भवास्तथा।
कलिङ्गाद्याश्च ये प्रोक्ता अधमास्ते द्विजाः स्मृताः॥"

पाश्चात्य वैदिक गुरु प्रधान, दाक्षिणात्यमें मध्यम, गौड़ और कामरूपके ब्राह्मणगण उनकी अपेक्षा न्यून, कलिङ्गादि अधम हैं।

विद्याधराचार्यकृत आगमवचनके मतसे—

"मध्यदेशे कुरुक्षेत्रं लाटकोङ्कणसम्भवाः।
अन्तर्वेदिप्रतिष्ठाना अवन्त्याश्च गुरूत्तमाः॥
गौड़ाः शाल्वोद्भवाः सौरा मागधाः केरलास्तथा।
कोशलाश्च दशार्णाश्च गुरवः सप्त मध्यमाः॥
कर्णाट-नर्मदा-रेवा-कच्छतीरोद्भवास्तथा।
कलिङ्गाश्च कम्बलाश्च काम्बोजाश्चाधमा मताः॥"

मध्यदेशमें कुरुक्षेत्र, लाट कोङ्कण, अन्तर्वेदि, प्रतिष्ठान और अवन्ति, इन स्थानोंके गुरु उत्तम वा श्रेष्ठ, गौड़, शाल्व, सौर, मगध, केरल, कोशल, दशार्ण, इन सात स्थानोंके गुरु मध्यम तथा कर्णाट, नर्मदा, रेवा और कच्छतीरवासी, कलिङ्ग, कम्बल और काम्बोजवासी गुरु अधम होते हैं।

तांत्रिक दीक्षा वा मंत्रगुरु ग्रहण करनेमें स्त्री शूद्र

सभीको समान अधिकार है। गौतमीयतन्त्रमें शास्त्रमें भी लिखा है—

"सर्वेषामधिकारश्च नारीणां योग्य एव च ॥"

मत्स्यसूक्तमहातन्त्रके मतसे—

"शूद्राणां प्रणवं देवि चतुर्दशस्वरं प्रिये।
नादबिन्दुसमायुक्तं स्त्रीणां नैव वदाम्यहं ॥
अथो स्वाहा च या देवि शूद्रोच्चार्या न पण्डितैः।
होमकार्ये वदेयानि शूद्रः स्वाहां न चोच्चरेत् ॥
नमोऽन्ते चापि शूद्रे शिवबीजं स्त्रियं प्रिये ॥"

हे देवि! शूद्र और स्त्रियोंका प्रणव चौदहवाँ नाद बिन्दुसमायुक्त अक्षर है। शूद्रको मन्त्रमें भी स्वाहा उच्चारण न करना चाहिये। होम-कार्यमें भी शूद्र स्वाहा उच्चारण न करे। शिवबीजके सिवा शूद्रको और कोई भी मन्त्र न उच्चारण करना चाहिये।

गौतमतन्त्रके मतसे दीक्षाकाल इस प्रकार है—

'कृष्णपक्षस्य चाष्टम्यां शुभे वारे शुभेऽहनि।
पूर्वभाद्रपदायुक्ते सितताराविभूषिते ॥
अथवा अनुराधायां रेवत्यां वा प्रशस्यते।
भानौ राहूपरागे च चन्द्रग्रहणे तथा ॥
शुभे मासि विशेषेण कार्त्तिके च विशेषतः।
महाष्टम्यां विशेषेण सर्वकामार्थसिद्धये ॥
रोहिणी श्रवणार्द्रा च धनिष्ठा चोत्तरात्रयम्।
पुष्या शतभिषा चैव दीक्षानक्षत्रमुच्यते ॥"

कृष्णपक्षकी अष्टमी तिथि शुभ लग्न और शुभ दिनमें सिततारादियुक्त पूर्वभाद्रपद, अनुराधा या रेवती नक्षत्रमें चन्द्रग्रहणमें अगहन, आश्विन, या कार्त्तिक मासमें दीक्षा लेना प्रशस्त है। विशेषतः सब कार्य्य-कामकी सिद्धिके लिए महाष्टमी परम प्रशस्त है। रोहिणी, श्रवणा, आर्द्रा, धनिष्ठा, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपद, उत्तरफल्गुनी, पुष्या, और शतभिषा ये दीक्षानक्षत्र समझे जाते हैं।

मतभेदसे दीक्षागुरुमें भी भेद होता है। योगतन्त्रके मतसे—"विष्णुर्विष्णुमन्त्रस्यापि वीरः वीरविदां मतः।
शाक्तस्तु देवेशि शक्तिदीक्षाप्रदायकः।
शैवः शाम्भव एवात्र दीक्षास्वामी न संशयः ॥'

वैष्णवोंके गुरु विष्णुमन्त्रोपासक, सौरमतावलम्बियोंके गुरु सौर और गाणपत्योंके गुरु गणेशोपासक होंगे। शैव और शाक्त सबके ही दीक्षा गुरु हो सकते हैं इसमें सन्देह नहीं।

उक्त पाँच सम्प्रदायोंमें भी विभिन्न देवमूर्ति और अपना अपना बीज है, उन बीजोंके अनुसार वे इष्टदेवकी पूजा और ध्यान आदि किया करते हैं। बीज देखो।

तान्त्रिकगण उपासना और बीजमन्त्रके भेदसे नाना आम्नायों और सम्प्रदायोंमें विभक्त होने पर भी किसी किसी तंत्रमें शाक्तमात्रको ही शाक्त कहा गया है।

"सर्वे शाक्ता द्विजाः प्रोक्ता न शैवा न च वैष्णवाः।
आदिदेवीं च गायत्रीं उपासकविमोहना ॥"

सभी द्विज शाक्त, शैव या वैष्णव नहीं हैं, क्योंकि उपासकको मुक्तिदात्री आदि देवी गायत्री (उनकी आराध्य) है।

आचारभेद। तांत्रिकगण पाँच प्रकारके आचारोंमें विभक्त हैं। कुलार्णवतन्त्रके मतसे—

'सर्वेभ्यश्चोत्तमा वेदा वेदेभ्यो वैष्णवं महत्।
वैष्णवादुत्तमं शैवं शैवाद्दक्षिणमुत्तमम् ॥
दक्षिणादुत्तमं वामं वामात् सिद्धान्तमुत्तमम्।
सिद्धान्तादुत्तमं कौलं कौलात् परतरं नहि ॥"

सबसे वेदाचार श्रेष्ठ है, वेदाचारसे वैष्णवाचार महत् है, वैष्णवाचारसे शैवाचार उत्कृष्ट है, शैवाचारसे दक्षिणाचार उत्तम है, दक्षिणाचारसे वामाचार श्रेष्ठ है, वामाचारसे सिद्धान्ताचार उत्तम है और सिद्धान्ताचारकी अपेक्षा कौलाचार उत्तम है। कौलाचारसे बढ़ कर और कोई नहीं है।

वेदाचार—प्राणतोषिणीधृत नित्यानन्दतन्त्रके मतसे—

"वेदाचारं प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वाङ्गसुन्दरि।
ब्राह्मे मुहूर्त्ते उत्थाय गुरुं नत्वा स्वनामभिः ॥
आनन्दनाथशब्दान्तैः पूजयेच्च साधकः।
सहस्राम्बुजे ध्यात्वा उपचारैस्तु पञ्चभिः ॥
प्रजप्य वाग्भवबीजं चिन्तयेत् परमां कलाम् ॥"

हे सर्वाङ्गसुन्दरि! वेदाचारका वर्णन करता हूँ, तुम सुनो। साधकको चाहिये कि वह ब्राह्म मुहूर्त्तमें उठे और गुरुके नामके अन्तमें आनन्दनाथ योग कर उनको प्रणाम करे। फिर सहस्रदलपद्ममें ध्यान करके पञ्च उपचारसे पूजा करे और वाग्भवबीज जप करके परम कलात्मिकाका ध्यान करे।

वैष्णवाचार—"वेदाचारक्रमेणैव सदा नियमतत्परः।
मैथुनं तत्कथालापं कदाचिन्नैव कारयेत्॥
हिंसां निन्दां च कौटिल्यं वर्जयेन्मांसभोजनम्।
रात्रौ मालां च यन्त्रं च स्पृशेन्नैव कदाचन॥"

वेदाचारकी विधिके अनुसार सर्वदा नियमतत्पर होना चाहिये। मैथुन वा उसका कथाप्रसङ्ग भी कभी न करना चाहिये, हिंसा, निन्दा, कुटिलता और मांस भोजन परित्याग करना चाहिये। रातको कभी माला वा यन्त्र न छूना चाहिये।

शैवाचार—"वेदाचारक्रमेणैव शैवे शाक्ते व्यवस्थितम्।
तद्विशेषं महादेवि। केवलं पशुघातनम्॥"

शैव और शाक्तोंके लिए जैसे वेदाचारकी व्यवस्था दी गई है, इनके लिए भी वैसी ही है। शैवाचारमें विशेषता इतनी ही है कि, इसमें केवल पशुहत्याकी व्यवस्था है।

दक्षिणाचार—'वेदाचारक्रमेणैव पूजयेत् परमेश्वरीम्।
स्वीकृत्य विजयां रात्रौ जपेन्मन्त्रमनन्यधीः॥"

वेदाचारके क्रमानुसार आद्याशक्तिकी पूजा करें और रातको विजया ग्रहण करके एकाग्रचित्तसे जप करें।

वामाचार—"पञ्चतत्त्वं खपुष्पं च पूजयेत् कुलयोषितम्।
वामाचारो भवेत्तत्र वामा भूत्वा यजेत् पराम्॥"
(आचारभेदत०)

पञ्चतत्त्व अथवा पञ्चमकार, खपुष्प अर्थात् रजस्वलाके रजः और कुलस्त्रीकी पूजा करें। ऐसा करनेसे वामाचार होता है। इसमें स्वयं वामा हो कर पराशक्तिकी पूजा करें।

सिद्धान्ताचार—"शुद्धाशुद्धं भवेत् शुद्धं शोधनादेव पार्वति।
एतदेव महेशानि सिद्धान्ताचारलक्षणम्॥"

पार्वति! शुद्ध क्या अशुद्ध वस्तुओंके शोधन करनेसे शुद्ध हुआ करता है। सिद्धान्ताचारका लक्षण निम्न प्रकार है। समयाचारतन्त्रमें सिद्धान्ताचारियोंके विषयमें लिखा है—"देवपूजारतो नित्यं तथा विष्णुपरो दिवा।
नक्तं द्रव्यादिकं सर्वं यथालाभेन चोत्तमम्॥
विधिवत् क्रियते भक्त्या स सर्वं च फलं लभेत्॥"

जो सर्वदा देवपूजामें निरत है, दिनमें विष्णुपरायण हो कर रातको यथासाध्य और भक्तिभावसे यथाविधि मद्यदान और मद्यपान करता है, वह समस्त फलोंका लाभ करता है।

कौलाचार—"दिक्कालनियमो नास्ति तिथ्यादिनियमो न च।
नियमो नास्ति देवेशि महामन्त्रस्य साधने॥
क्वचित् शिष्टः क्वचित् भ्रष्टः क्वचित् भूतपिशाचवत्।
नानावेशधरा कौलाः विचरन्ति महीतले॥
कर्दमे चन्दनेऽभिन्नं मित्रे शत्रौ तथा प्रिये।
श्मशाने भवने देवि तथैव कांचने तृणे।
न भेदो यस्य देवेशि स कौलः परिकीर्तितः॥"
(नित्यातन्त्र)

दिक्कालका नियम नहीं है, तिथ्यादिका भी नियम नहीं है, देवेशि! महामन्त्रसाधनका भी नियम नहीं है। कभी शिष्ट कभी भ्रष्ट और कभी भूतपिशाचके समान, इस तरह नाना वेशधारी कौल महीतल पर विचरण करते हैं। प्रिये! कर्दम और चन्दनमें, मित्र और शत्रुमें, श्मशान और गृहमें, स्वर्ण और तृणमें जिनको भेदज्ञान नहीं उन्हें ही कौल कहा जा सकता है।

यद्यपि नित्यातंत्र और कुलार्णवमें सात प्रकारके आचारोंका उल्लेख है, तथापि प्रधानतः दक्षिणाचार और वामाचार ये दो प्रकारके आचार ही देखनेमें आते हैं। दक्षिणाचारतंत्रराजमें लिखा है—
'दक्षिणाचारतन्त्रोक्तं कर्मतच्चतुर्वेदिकम्।"

दक्षिणाचारतंत्रमें जिस प्रकारकी कर्मपद्धति विहित हुई है, वही शुद्ध वैदिक है।

वास्तवमें दक्षिणाचारी लोग वेदोक्त विधिके अनुसार अर्थात् पशुभावसे भगवतीकी अर्चना किया करते हैं। वे वामाचारियोंकी तरह मद्य-मांस व्यवहार वा शक्तिसाधनादि नहीं करते। दक्षिणाचारतंत्रके मतसे रक्त-मांसादि रहित सात्विक वलि देना ही ब्राह्मणोंके लिए विधेय है। दाक्षिणात्यमें बहुतसे दक्षिणाचारी रहते हैं। कामाख्यातंत्रमें (४र्थ पटल) पशुभावका विषय इस प्रकार लिखा है—

"पंचतत्त्वं न गृह्णाति तत्र निन्दां करोति न।
विवेन कथितं वस्तु तत्सत्यमिति भावयन्॥
निन्दायाः पातकं वेत्ति पशवः स प्रकीर्तितः।

दक्षाचारे महाम्नाये नतु सन्ध्यावन्दनम् ।
दक्षिणे मद्यपैश्चैव ताम्बूलं न स्पृशेदपि ।
ऋतुस्नातां विना नारीं कामभावे नहि स्पृशेत् ।
परस्त्रीषु कामभावो यदा चैव समुत्सृजेत् ।
वैष्णवैस्तत्त्वमांसानि पशवो निन्दयेत च ।
पञ्चतत्त्वानि द्रव्याणि वीराणि प्रमदैश्च च ।
देवालये सदा तिष्ठेदाचारार्थे गृहं व्रजेत् ।
गुर्वादुत्तमजातिभ्यः ऊर्ध्वदृष्ट्या समाचरेत् ।
देवद्रव्यं प्रार्थयेन्नैव यदस्ति तन्न त्यजेत् ।
धनलाभे सदा दीनं यदि दरिद्र ददाति च ।
क्रोधोऽहङ्कार त्यजेत् यस्मात् चाराधिकारतः ।
निर्वेदेन गृहस्थेति । लोभं सर्वथैवहि ।
कदाचित्पशुभावेन नैव परमेश्वरि ।
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं मन्त्रदानं न च ।
अज्ञानाद् यदि वा मोहात्मन्त्रदानं करोति च ।
तस्य वक्त्रं महादेवि देवीशापं प्रजायते ।
इत्यादि बहुधाचारा कथितस्तु मयोदितः ।
तथापि च न मोक्षः स्यात् सिद्धिश्च वरानने ।
यदि पश्वाचारे चैव बहुधाचारे यदा नर ।
पश्वाचारे सदा कुर्यात् किन्तु सिद्धिर्न जायते ।
जन्मदोषे कदापि देवि ब्राह्मणो हि वरानने ।
पशुरेव स्यात् पशुत्वात् पशुमन्त्रात् विमानवा ॥"

जो अपतत्त्व भक्षण नहीं करते और न उनकी निन्दा ही करते हैं, जो निर्मोह कथाको सत्य मानते हैं और पाश्चात्यको निन्दनीय समझते हैं वे ही पशु नामसे प्रसिद्ध हैं। तुम्हारे सन्देहको दूर करनेके लिए मैं उनका आचार कहता हूं, सो सुनो। जो प्रतिदिन दक्षिण आचार करते हैं, ताम्बूल नहीं छूते, ऋतुस्नाता अपनी स्त्रीके सिवा अन्य किसीको भी कामभावसे नहीं देखते, परस्त्रीके कामभावको देख कर उसका साथ त्याग देते हैं, मत्स्य-मांस कभी भी भक्षण नहीं करते, मत्स्यमांस भक्ष और चौर नहीं लेते, सर्वदा देवालयमें रहते हैं, और आचारके लिए घर जाते हैं, गुरुजनाचार्योंको अति ही ऊर्ध्वदृष्टिसे देखते हैं, देवपर्वको नहीं चाहते या जो है उसको भी त्याग नहीं करते, धन होने पर सर्वदा दरिद्रोंको दान देते हैं, कभी आपसमें क्रोध और अहङ्कारादि प्रकट नहीं करते, विशेषतः जो अपना स्रोत अर्जन करते हैं, परमेश्वरि! ऐसे पशुओंको दीक्षा न देनी चाहिये। सत्य कहता हूं, मेरा कहना कभी अन्यथा न होगा। अज्ञान वा भ्रमसे पशुको मन्त्र देनेसे मेरे मुख को देखो ही आपको भागी होना पड़ेगा। इस तरहसे बहुप्रकार आचारोंकी बात कहते हैं। उनको कभी मोक्ष वा सिद्धि नहीं होती। पश्वाचार कितना ही क्यों न करे, किसी तरह भी सिद्धि नहीं होती। हे देवि! जिसको आशा है कि, इस जन्म दोषमें ब्राह्मण कभी पशु न होंगे।

बङ्गालमें तान्त्रिक समाजमें प्रधानतः वामाचारियोंका ही बोध होता है। किसीके मतसे ये वेदविरुद्ध विपरीत आचरण करनेके कारण वामाचारीके नामसे मशहूर हैं। बङ्गालके तान्त्रिकोंमें वामाचार और दक्षिणाचार दोनों ही आचार लिखित देखनेमें आते हैं। किन्तु अपनेको तान्त्रिकगण इस बातको नहीं मानते।

नामकेश्वरतन्त्रके ११वें पटलमें लिखा है—

"आचारो द्विविधो देवि दक्षवामविभेदतः ।
जन्मकाले दक्षिणं हि अभिषेकेण वामकम् ॥"

देवि! वामाचार और दक्षिणाचारके भेदसे आचार दो प्रकारका है। जन्ममात्रमें दक्षिण और अभिषेक होने पर वामाचारी होता है।

भाव। उक्त सात आचार निर्दिष्ट होने पर भी तन्त्र में प्रधानतः तीन भावोंका विषय वर्णित है। यथा—पशुभाव, वीरभाव और दिव्यभाव। नामकेश्वरतन्त्रके मतसे—

"जन्मभावे पशुभावं सर्वोऽप्यशुभमन्वित ।
ततश्च वीरभावस्तु यावत् पञ्चाशको भवेत् ।
द्वितीयांशे वीरभावस्तृतीये दिव्यभावकः ।
एवं भावत्रयेणैव भावमेकं भवेत् प्रिये ।
दिव्यभावात् कुलाचारो देव देवमयो भवेत् ।
भावोऽपि मानसो धर्मो मनसैव सदाभ्यसेत् ॥"

जन्मकालसे सोलह वर्ष तक पशुभाव, इसके बाद द्वितीयांशमें पचास वर्ष तक वीरभाव, इसके बाद तृतीयांशमें दिव्यभाव होता है। इन भावत्रयसे भावऐक्य होता है। दिव्यभावसे कुलाचार होता है इस कुलाचारके द्वारा ही मानव देवमय हुआ करता है। भाव ही मानस धर्म है, मन ही मन सर्वदा उसका अभ्यास करना

उचित है। कुब्जिकातंत्रके ७वें पटलमें लिखा है—

"भावश्च त्रिविधो देवि दिव्यवीरपशुक्रमात्।
विश्वञ्च देवतारूपं भावयेत् कुलसुन्दरि।
स्त्रीमयञ्च जगत् सर्वं पुरुषं शिवरूपिणम्।
अभेदे चिन्तयेद् यस्तु स एव देवतात्मकः।
नित्यस्नानं नित्यदानं त्रिसन्ध्यञ्च जपार्चनम्।
निर्मलं वसनं देवि परिधानं समाचरेत्।
वेदशास्त्रे दृढ़ज्ञानं गुरौ देवे तथैव च।
मन्त्रे चैव दृढज्ञानं पितृदेवार्चनं तथा।
वलिन्दद्यं तथा श्राद्धं नित्यकार्यं शुचिस्मिते।
शत्रु' मित्रसमं देवि चिन्तयेत्तु महेश्वरि।
अन्नञ्चैव महेशानि सर्वेषां परिवर्जयेत्।
गुरोरन्नं महेशानि भोक्तव्यं सर्वसिद्धये।
कदर्यञ्च महेशानि निष्ठुरं परिवर्जयेत्।
सत्यञ्च कथयेद् देवि न मिथ्या च कदाचन।
केवलं दिव्यभावेन पूजयेत् परमेश्वरीम्॥"

भाव तीन प्रकारके हैं—दिव्य, वीर और पशु। हे कुलसुन्दरि! यह विश्व देवतारूप है, समस्त जगत् स्त्रीमय और पुरुष शिव है, इस प्रकार अभेदभावसे जो चिन्ता करता है, वह देवतात्मक वा दिव्य है। उसको चाहिये कि, वह नित्यस्नान, नित्यदान, त्रिसन्ध्या जपपूजा, निर्मल वसन परिधान, वेदशास्त्र, गुरु और देवतामें दृढ़-ज्ञान, मंत्र और पितृदेवपूजामें अटल विश्वास, वलि-दान, श्राद्ध और नित्यकार्य, शत्रु मित्रमें समज्ञान, सबका अन्नपरित्याग, सर्वसिद्धिके लिए गुरुका अन्नभोजन, कदर्य और निठुरताचरण त्याग तथा दिव्यभावसे सर्वदा परमेश्वरीकी पूजा करे। उसको सर्वदा सत्य बोलना चाहिये, कभी झूट न बोले। पिच्छिलातंत्रके १०वें पटलमें लिखा है—

"दिव्यवीरौमहाभावावधमः पशुभावकः।
वैष्णवः पशुभावेन पूजयेत् परमेश्वरि॥
शक्तिमन्त्रे वरारोहे पशुभावो भयानकः।
दिव्यैर्वीरैर्महेशानि जायते सिद्धिरुत्तमा॥
दिव्ये वीरे न भेदोऽस्ति भेदो वीरो महोद्धतः।
दिव्यवीरौ प्रवक्ष्यामि सर्वभावोत्तमौ मतौ।
विना शक्तिं न पूजास्ति मत्स्यमांसं विना प्रिये।
मुद्राञ्च मैथुनञ्चापि विना नैव प्रपूजयेत्॥
स्त्रीभगं पूजनाधारः स्वर्णरूप्यात्मकः कुशः।
अभावे सर्वद्रव्याणामनुकल्पः कलौ युगे।
अथवा परमेशानि मानसं सर्वमाचरेत्॥
स्नानन्तु मानसं प्रोक्तं वैदिको मानसः सदा।
यत्र भुक्त्वा महापूजा मानसं भोजनन्तु तत्॥
स्वकीया परकीया वा मानसन्तु रमेत् प्रिये।
मानसं मद्यमांसादि स्वीकुर्याद् साधकोत्तमः॥
स्वयम्भूकुसुमं तद्वन्मानसं समुपाचरेत्।
मानसं भगरोमादिमानसं भगपूजनम्॥
सर्वन्तु मानसं कुर्यात्तेन सिद्ध्यति साधकः।
न कलौ प्रकृताचारः संभवन्ति नैव हि।
मानसेनैव भावेन सर्वसिद्धिमुपागमेत्॥"

दिव्य और वीर ये दो महाभाव हैं, पशुभाव अधम है। वैष्णवको पशुभावसे पूजा करनी चाहिये। शक्ति-मंत्रमें पशुभाव भीतिजनक है। दिव्य और वीरभावमें प्रभेद नहीं है। वीरभाव अति उद्धत है। सर्वभावोंमें ये उत्तम और दिव्य वीरभावका विषय कहा जाता है। शक्ति वा मद्य, मत्स्य, मांस, मुद्रा और मैथुनके विना पूजा नहीं की जाती। स्त्री-भग पूजाका आधार है—स्वर्ण और रौप्यात्मक कुश। कलियुगमें सर्वद्रव्यके अभावमें अनुकल्प है अथवा मन ही मन सब कार्य करनेका मार्ग है। मानसस्नान, सर्वदा मानस वैदिककाण्ड जहां महापूजाभोग वहीं मानसभोजन और मन ही मन स्वकीया वा परकीया नारीसे रमण करें। साधकश्रेष्ठ मन ही मन मद्यमांसादि ग्रहण करें और तद्रूप स्वयम्भूकुसुम भी उपाचार दें, तथा मन ही मन भग-रोम आदिकी चिन्ता और भग-पूजा करें। इस प्रकारसे मन ही मनमें सब कार्य करना चाहिये। कलिकालमें नियम ही वास्तविक आचार नहीं है। इस प्रकारसे मानसभावोंके द्वारा ही सर्वसिद्धि प्राप्त होती है।

पशुभावका लक्षण इससे पहले ही लिखा जा चुका है। रुद्रयामलमें (उत्तरखण्डमें) लिखा है।

"दुर्गापूजा विष्णुपूजां शिवपूजाञ्च नित्यशः।
अवश्यं हि यः करोति स पशूत्तमः स्मृतः॥
केवलं शिवपूजां च यः करोति च साधकः।

पशूनां मध्यगं श्रीमान् शिवता यदि गोपयेत् ॥
केवल भैरवो वीरः पशूनां मध्यगः स्मृतः ।
भूतानां देवतानां च सेवां कुर्वीत सर्वदा ॥
पशूनामधमाः प्रोक्ता नरकाणां च संगवः ।
प्रपूजैर्वा मम देवो न ममाभिन्नाधिदेवकम् ।
इत्याद्युपदेवभूतानां यक्षिण्यां महात्मनो ।
यक्षिणीनां मूर्तिनीनां तथा देवी शुभप्रदाम् ॥
यः पशु मध्यगत्वादि सेवांश कुरुते सदा ।
तथा भौतारकमसलेषां वै वा करोत्यसौ ॥
तेषामधाप्यभूतादि देवता सर्वकामदा ।
वर्जयेत् पशुमार्गेन विष्णुसेवापरो यथा ॥"

जो प्रति दिन दुर्गापूजा, विष्णुपूजा और शिवपूजा सम्पन्न करता है वही पशु उत्तम है। पशुओंमें जो व्यक्ति सब शिवपूजा करता है अथवा जो व्यक्ति शैव और वैष्णव है, उसको मध्यम तथा पशुओंमें जो भूत दि उपदेवताकी सर्वदा सेवा करता है, उसको अधम कहते हैं। अधम निश्चय नरकगामी होता है। जो पशु भावमें, भैरों और सिद्ध आदिको सेवा करके बादमें भवभूत, नायिका यक्षिणी, भूतिनी आदिको सेवा करता है, उसको भी अधमतर समझें। और जो पशु ब्रह्म कल्पादि और तारकब्रह्मको सेवा करता है, भूतादि देवताको सेवा उस किए कामप्रद है, सुतरां आवश्यक नहीं। ये सब भी पशुमार्गके भूतादिकी सेवा छोड़ देनी चाहिये। रुद्रयामलके मतसे—

"पशुभावस्थितो मन्त्री सिद्धिमेव मवाप्नुयात् ।
यदि पूर्वापरत्वं च महाकौलिकसेवनात् ॥
कुलमार्गस्थितो मन्त्री सिद्धिमाप्नोति निश्चितं ॥
यदि दिव्यः प्रभोरस्मि वीरभावं तदाश्रयेत् ।
वीरभावप्रसादेन दिव्यभावमवाप्नुयात् ।
दिव्यभावं वो भाव वै शुद्धिम्य नरोत्तमाः ।
आचारकल्पमेव वा पतनस्ते न संशयः ॥"

यदि पूर्वापर पशुभावसे एक बार महाकौलिक देवताका सत्सङ्गकारी केवल सिद्धि लाभ करे, तो कुलमार्गमें सत्सङ्गकारी निश्चय सिद्धि लाभ करेगा। महाविद्याके प्रसन्न होने पर वीरभाव प्राप्त होता है। वीर भावके प्रसादसे दिव्यभावकी प्राप्ति होती है। जो नरवर दिव्य और वीरभाव ग्रहण करता है, वह निःसन्देह वाक्यावचनजसताका अधिपति है अर्थात् वह चाहे सो कर सकता है।

अभिषेक। तान्त्रिक आचार्यादिका प्रकृत साधन करनेके लिए उनको अभिषिक्त होना ही पड़ता है, अभिषेकके बिना हुए कोई पूजा या साधनमें अधिकार नहीं होता। निरुत्तरतन्त्रमें (१०वें पटलमें) लिखा है—

"अभिषिक्तो भवेत् वीरो अभिषिक्ता च कौलिनी ।
एव च वीरशक्ति च वीरचक्रे नियोजयेत् ॥
अनभिषिक्तो कवेश्वरे अभिषिक्ता च कौलिनी ।
अहो वीर्यं याति तत्र सर्वं न संशयः ॥"

वीर और कुलकी दोनों ही अभिषिक्त हों, ऐसे वीर और शक्तिको चक्रमें नियुक्त करे जो अभिषिक्त नहीं हुआ हो, ऐसे पुरुष और कन्याओंको चक्र पर नहीं बैठने देना चाहिये। यदि बैठे तो वह उभयकुल ही नरकको जायगा।

अभिषेक साधारणतः पूर्णाभिषेक या पूर्णाभिषेक नामसे प्रसिद्ध है। यथाविधि दीक्षित हो कर जो गुरुका उपदिष्ट मन्त्र और तान्त्रिक परिभाषा समझ कर उसके अनुसार काम करनेमें समर्थ सैकड़ों बार पञ्चमकार को सेवा करके भी जो विचलित नहीं होते, उनको पूर्णाभिषिक्त कहा जा सकता है। इस प्रकार पूर्णाभिषिक्त आचार्यपद पर अभिषिक्त होनेको क्रियाका नाम पूर्णाभिषेक है। कुलार्णवतन्त्रमें लिखा है—

"गुरुशिष्यमार्गेण योग कुर्यात् तथा पञ्चकः ।
साधुसुखस्वपाशितस्य परापरसमो भवेत् ॥
योगसिद्धा क्रियाः सासान गुरवस्मद्य भवेत् ।
एषा दीक्षितरा दीक्षा अपवर्गविनोदनी ॥
सर्वोपरीयसुपेन कृत्वा पुरितेन च ।
अर्थ क्रियाविशेषस्य आचार्यस्तारय पावसि ॥
पूर्णाभिषेकहीना ये मतास्त कुलमालिके ।
शिवः पूर्णाभिषेकेन शिवसायुज्य माप्नुयात् ॥
तेन तुष्टि समस्तीति पाम्मथी पापरमवीन् ।"

दीक्षित शिष्यगण व्यक्तिके गुरुके उपदिष्ट मार्ग पर विचरण करके सम्पूर्ण ज्ञान लाभ करने पर वह भय लज्जा और क्रोधसे मुक्त हो कर परमानन्दमय हो जाता

है। मत्स्यमद्यादियुक्त इस कठोर दोक्षामें जीव भवबन्धनसे विमुक्त होता है। हे कुलनायिके! जिनका पूर्णाभिषेक नहीं हुआ है, उनको मृत समझना चाहिये। पूर्णाभिषेकके द्वारा सिद्ध शिवसायुज्य लाभ करता है। स्वयं शिवने कहा है कि, इस पूर्णाभिषेकके द्वारा निश्चय ही मुक्ति होती है।

पूर्णाभिषेकका विधान महानिर्वाणतंत्रमें इस प्रकार लिखा है—"विधानमेतत् परमं गुप्तमासीद्युगत्रये।
गुप्तभावेन कुर्वन्तो नरामोक्षं ययुः पुरा॥
प्रबले कलिकाले तु प्रकाशे कुलवर्त्मनः।
नक्तं वा दिवसे कुर्यात् स प्रकाशाभिषेचनम्॥
नाभिषेकं विना कौलः केवलं मद्यसेवनात्।
पूर्णाभिषिक्तः कौलः स्याच्चक्राधीशः कुलार्चकः।
तत्राभिषेकपूर्वाह्णे सर्वविघ्नोपशान्तये॥
यथाशक्त्युपचारेण विघ्नेशः पूजयेद् गुरु।।
गुरुर्वेदाधिकारीस्यात् शुभपूर्णाभिषेचने।
तदाभिषिक्तकौलेन तत्सर्वं साधयेत् प्रिये॥
सान्तार्णं विन्दुसंयुक्तं बीजमस्य प्रकीर्त्तितम्।
गणकोऽस्य ऋषिच्छन्दो नीवृद्विघ्नस्तु देवता॥
कर्त्तव्यकर्मणे विघ्नशान्त्यर्थे विनियोगिता
षड्दीर्घयुक्तमूलेन षडङ्गानि समाचरेत्॥
प्राणायामं ततः कृत्वा ध्यायेत् गणपतिं शिवे।
सिन्दूराभं त्रिनेत्रं पृथुतरजठरं हस्तपद्मैर्दधानं।
शङ्खपाशांकुशेष्टान्युरुकरविलसद्वारुणीपूर्णकुम्भं।
बालेन्दूद्दीप्तमौलिं करिपतिवदनं बीजपूरार्द्रगण्डम्॥
भोगीन्द्राबद्धभूषं भजत गणपतिं रक्तवस्त्रांगरागम्।
ध्यात्वैवं मानसे पिष्ट्वा पीठशक्तिं प्रपूजयेत्॥
तीव्रा च ज्वालिनी नन्दा भोगदा कामरूपिणी।
उग्रा तेजस्वनी सत्या मध्ये विघ्नविनाशिनी॥
पूर्वादितोऽर्चयित्वैता पूजयेत् कमलासनं।
पुनर्ध्यात्वा गणेशान पञ्चतत्त्वोपचारकैः॥
अभ्यर्च्य च चतुर्दिक्षु गणेशं गणनायकं।
गणनाथं गणक्रीडं यजेत् कौलीनसत्तमः।
एकदण्डं वक्रतुण्डं लम्बोदरगजाननौ।
महोदरञ्च विकटं धूम्राभं विघ्ननाशनम्॥
ततो ब्राह्मीमुखाः शक्तीर्दिक्पालांश्च प्रपूजयेत्।
तेषामस्त्राणि संपूज्य विघ्नराजं विसर्जयेत्॥
एवं संपूज्य विघ्नेशमधिवासनमाचरेत्।
भोजयेच्च पञ्चतत्त्वैर्ब्राह्मणान् कुलसाधकान्॥
ततः परदिने स्नातः कृतनित्योदितक्रियः।
आजन्मकृतपापानां क्षयार्थं तिलकाञ्चनम्॥
उत्सृजेत् कौलतृप्त्यर्थं भोज्यैकैकमपि प्रिये।
अर्घ्यं दत्वा दिनेशाय ब्रह्मविष्णुशिवप्रधान्॥
अर्चयित्वा मातृगणान् वसुधारां प्रकल्पयेत्।
कर्मणोभ्युदयार्थाय वृद्धिश्राद्धं समाचरेत्॥
ततो गत्वा गुरोः पार्श्वं प्रणम्य प्रार्थयेदिदं।
एहि नाथ कुलाचार नलिनीकुलवल्लभ॥
त्वत्पादाम्भोजच्छाया देहि मूर्द्ध्नि कृपानिधे।
आज्ञां देहि महाभाग शुभपूर्णाभिषेचने॥
निर्विघ्नं कर्मणः सिद्धिमुपैमि त्वत्प्रसादतः।
शिवनाथस्याज्ञया मम कुरु पूर्णाभिषेचनम्॥
मनोरथमयी सिद्धिर्जायतां शिवशासनात्।
इत्यमाज्ञां गुरोः प्राप्य सर्वोपद्रवशान्तये॥
आयुर्लक्ष्मीबलारोग्यावाप्त्यै संकल्पमाचरेत्।
ततस्तु कृतसंकल्पो वस्त्रालंकारभूषणैः॥
कारणैः शुद्धिसहितैरभ्यर्च्य वृणुयाद् गुरुं।
गुरुर्मनोहरे गेहे गैरिकादिविचित्रिते॥
चित्रध्वजपताकाभिः फलपुष्पेण शोभिते।
किंकिनीजालमालाभिश्चन्द्रातपविभूषिते॥
घृतप्रदीपावलिभिस्तमोलेशविवर्जिते।
कर्पूरसहितैर्धूपैर्यक्षधूपैः सुवासिते॥
व्यजनैश्चामरैर्बर्हैर्दर्पणाद्यैरलंकृते।
सार्द्धहस्तमितां वेदीमुच्चकैश्चतुरांगुलां॥
रचयेन्मृण्मयीं तत्र चूर्णैरक्षतसम्भवैः।
पीतरक्तासितश्वेतश्यामलैः सुमनोहरैः॥
मण्डलं सर्वतोभद्रं विदध्यात् श्रीगुरुस्ततः।
स्व स्व कल्पोक्तविधिना कुर्यादर्चा विधिक्रियां॥
कृत्वा पूर्वोक्तविधिना पंचतत्त्वानि शोधयेत्।
संशोध्य पंचतत्त्वानि पूर्वकल्पितमण्डले॥
स्वर्णं वा राजतं ताम्रं मृण्मयं घटमेव वा।
क्षालितं चन्द्रबीजेन दध्यक्षतविचर्चितम्॥
स्थापयेद् ब्रह्मबीजेन सिन्दूरेणाङ्कयेत् प्रिया।

अथवाचरणास्तीर्थैर्मुनिभूषितैः ॥
मूलमन्त्रप्रभावेन पूरयेत् कारणेन च ।
अथवा तीर्थतोयेन दुग्धेन पायसापि वा ॥
कलशं पूर्णं वा मण्डले विनिक्षिपेत् ।
ब्रह्मोर्ध्वमर्त्यपातालकुलकलशमुत्तमम् ॥
पल्लवं तन्मुखे दद्यात्तदनुमन्येन कुलाधिपः ।
तत्र मातृकाणि पञ्चरत्नसमन्वितं ॥
रक्तो माला समुच्चार्य स्थापयेत् पल्लवोपरि ।
अश्वत्थादिसमुत्पन्नं पीठं तस्य वरानने ॥
तथौ एव सिते भिन्ने शेषताय प्रकीर्तितं ।
एवं एवं मात्रं एतं स्वाहा त्रिपत्रिका पल्लवाः ॥
निःक्षिप्य च पञ्चरत्नानि मणिमालापि निक्षिपेत् ।
तदर्थं अन्निरत्नं स्यात् तृणानां हिरण्यकम् ॥
नीलायस्तु वज्रयुक्तं ताम्रान्यपि कल्पयेत् ।
पाषाणस्त्वौहानां रत्नानि परिकल्पयेत् ॥
अभावे प्रकल्पयेत् पात्रं यदीच्छा प्रपूजने ।
पात्राणां स्थापनं कृत्वा गुरुः देवीं प्रपूजयेत् ॥
ततस्तदुक्तसंपूर्णमावाहनं कुर्यात् सुधीः ।
दत्वा वा पूर्णपूर्णां सर्वमुक्तिं हरेत् ॥
प्राणायामं ततः कृत्वा ध्यात्वा समर्पयेत् ।
तत्त्वकला पूर्ववदेव विधाय निक्षिपेत् ॥
होमन्तु कृत्वा विधिवत् कुमारीभोजनादिकं ।
पुरश्चरणवत्सो निर्वपेत् च गुरु शिवे ॥
यदुक्तन्तु कौलं मे शिष्यं प्रतिगृह्यताम् ।
पूर्णाभिषेकसंस्कारे भवद्भिरनुमन्यताम् ॥
एवं पृच्छति कौले वै गुरुमुच्चारयन् ।
महामायाप्रसादेन प्रभावात् परमात्मनः ॥
सिद्धो भवति पूर्णोऽस्य परतत्त्वपरायणः ।
शिष्येण च पुरस्तैर्मुद्रिकाभिषेके कृते ॥
कार्यं मात्रां एतां कलशं स्थापयेत् परमुत्तमम् ।
हरिः हरं कलशमुद्धृत्याभिमुख गुरुः ॥
मन्त्रैरेतैरमभिः अभिषिञ्चेत् कुलान्वितः ।
शुभपूर्णाभिषेकस्य सदाशिव ऋषिः स्मृतः ॥
छन्दोऽनुष्टुप् देवताया प्रकृतिः कीर्तितं ।
शुभपूर्णाभिषेकार्थे विनियोगः प्रकीर्तितः ॥"

सत्य त्रेता और द्वापर युगमें इस पूर्णाभिषेकका विधान अतिशय गुप्त था। उस समय गुप्तभावसे इसका अनुष्ठान करके मानवोंने मोक्ष लाभ किया है। बादमें जब कलिका प्रभाव बढ़ जायगा तब कुलाचारी कौल रात या दिनको प्रकाश्यभावसे अभिषिक्त करेंगे। अभिषेकके बिना सिर्फ मद्य सेवन करनेसे ही कौल नहीं होते। जिनका पूर्णाभिषेक हुआ है, वे ही कुलार्णव बतलाये मार और कौल हो सकते हैं। अभिषेकके पहले दिन गुरुको सब विघ्नोंकी शान्तिके लिए यथाशक्ति उपचार द्वारा विघ्नराजकी पूजा करनी चाहिये। यदि गुरु इस पूर्णाभिषेकमें अधिकारी न हों, तो पूर्णाभिषेकमें अभिषिक्त कौल द्वारा उक्त संस्कारका साधन करना चाहिये।

'ग'—इस वर्णके अन्तिम वर्णमें चन्द्रबिन्दु जोड़नेसे (गँ) गणपतिका बीज होगा। इस गणपति मन्त्रके ऋषि गणक छन्द, नीचृत् और देवता विघ्न हैं, सर्व कर्मके विघ्नोंकी शान्तिके लिए विनियोग कीर्तन करना होगा *। इस दीर्घस्वरयुक्त मूलमन्त्र द्वारा षड़ङ्गन्यास (१) करना चाहिये। अनन्तर प्राणायाम करके (२) गणपतिका ध्यान करना पड़ता है।

जो सिन्दूरके समान रक्तवर्ण हैं, जो नयनत्रय विशिष्ट हैं, जिनका जठर स्थूलतर है जो चार बाहुओंमें शङ्ख पाश, अङ्कुश और वरको धारण किये हुए हैं, जो विशाल शुण्डदण्ड वारणीपूर्ण कुम्भ धारण करते हैं, न तम शशिकलाके द्वारा जिनका मस्तक शोभायमान

* ऋष्यादिन्यास, यथा—अस्य गणपति बीजमन्त्रस्य गणक ऋषि नीचृच्छन्दो विघ्न देवता सर्वकर्मस्य पूर्णाभिषेककर्मणो विघ्न शान्त्यर्थे विनियोगः। शिरसि गणकाय ऋषये नमः। मुखे नीचृच्छन्दसे नमः। हृदये विघ्नाय देवताये नमः। अस्यमन्त्रस्य शुभ-पूर्णाभिषेककर्मणो विघ्नशान्त्यर्थे विनियोगः।

(१) अंगुष्ठादि षड़ङ्गन्यास यथा—गां अंगुष्ठाभ्यां नमः। गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। गूं मध्यमाभ्यां वषट्। गैं अनामिकाभ्यां हुम्। गौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। गः करतलपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्। हृदयादि षड़ङ्गन्यास यथा—गां हृदयाय नमः। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गैं कवचाय हुम्। गौं नेत्रत्रयाय वौषट्। गः करतल पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।

(२) गँ—इस बीजमन्त्रको पढ़ कर प्राणायाम करना पड़ता है।

हैं, जिनका मुखमण्डल गजराजके सदृश है, जिनके गण्डद्वय सर्वदा मदधारासे भीग गये हैं, जिनका शरीर सर्पराज द्वारा विभूषित है जो रक्तवस्त्र और रक्त अङ्गराग धारण करते हैं, ऐसे देव गणपतिको भजना करनी चाहिये।

इस प्रकारका ध्यान करके मानस उपचार द्वारा (प्रणव उच्चारणपूर्वक चतुर्थी विभक्त्यन्त नाम उच्चारण करके 'नमः' यह शब्द अन्तमें लगा कर गन्ध पुष्पादि द्वारा) पूजा कर पीठ शक्तियोंकी पूजा करना चाहिये। तीव्रा, ज्वालिनी, नन्दा, भोगदा, कामरूपिणी, उग्रा, तेजस्वती और सत्या, इन आठ पीठशक्तियोंकी पूर्वादिक्रमसे पूजा करके मध्यदेशमें विघ्नविनाशिनीकी पूजा करनी चाहिये। तीव्रा, ज्वालिनी नन्दा, भोगदा, कामरूपिणी, उग्रा, तेजस्वती और सत्या इन आठ पीठशक्तियोंको पूर्वादिक्रमसे पूजा करके मध्यदेशमें विघ्नविनाशिनीको पूजा करनी चाहिये। (३) बादमें (प्रणवपाठपूर्वक 'नमः' पदान्त नाम उच्चारण करके) कमलासनकी पूजा करनी पड़ती है। कौलिकश्रेष्ठको पुनः ध्यान करके संशोधित पञ्चतत्त्वरूप उपचार द्वारा गणेशकी पूजा करनी पड़ती है। इसके उपरान्त उनके चतुर्दिक् गणेश, गणनायक, गणनाथ, गणक्रीड़ एकदन्त, रक्ततुण्ड, लम्बोदर, महोदर, विकट, धूम्राभ, विघ्ननाशन, गजानन, इनको पूजा करनी चाहिये।

अनन्तर ब्राह्मी आदि अष्टशक्ति और इन्द्र आदि दश दिक्पालोंको पूजा करके दिक्पालोंके अस्त्रसमुदायको पूजा (विघ्नराज क्षमस्व इस वाक्यके द्वारा) पूर्वक विघ्नराजको विसर्जन करें।

इस प्रकारसे विघ्नराजको पूजा करके अधिवास करें और पञ्चतत्त्वके द्वारा ब्रह्मज्ञ कुलसाधकोंको भोजन करावें।

दूसरे दिन स्नानपूर्वक नित्यक्रिया समाधान करके जन्मसे किये हुए पापपुञ्जके क्षयके लिये तिलकाञ्चन उत्सर्ग करे (४)। प्रिये! उसके बाद कौलोंको तृप्तिके लिये एक भोज्य उत्सर्ग करना चाहिये (५)। पीछे सूर्यको अर्घ्य प्रदानपूर्वक ब्रह्मा, विष्णु, शिव, नवग्रह और मातृगणोंकी पूजा करके वसुधारा देनी चाहिये। फिर कर्मके अभ्युदयको कामनाके लिये वृद्धिश्राद्ध करे।

अनन्तर गुरुके पास जा कर प्रणतिपूर्वक प्रार्थना करें कि, 'नाथ! आप कौलिकरूप पद्मवनके वल्लभ हैं। कृपानिधे! अब मेरे मस्तक पर अपने चरण कमलको छाया प्रदान करें। महाभाग! मेरे शुभपूर्णाभिषेकके विषयमें आप आज्ञा प्रदान करें। मैं आपके प्रसादसे निर्विघ्न कार्यसिद्धि कर सकूं।"

"वत्स! शिवशक्तिके आज्ञानुसार पूर्णाभिषेकसे अभिषिक्त होओ। महेश्वरके आदेशानुसार तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध होवे।" शिष्य गुरुसे इस प्रकारको आज्ञा ले कर सर्वोपद्रवोंकी शान्तिके लिये तथा आयु, लक्ष्मी, बल और आरोग्य लाभके लिये सङ्कल्प करे *।

इस प्रकारसे कृतसङ्कल्प हो कर वस्त्र, अलङ्कार, भूषण और शुद्धिके साथ कारण द्वारा गुरुको अर्चना कर वरण करे †।

---

(३) पूर्व दिशामें—एते गन्धपुष्पे ओं तीव्रायै नमः। अग्नि दिशामें—एते गन्धपुष्पे ओं ज्वालिन्यै नमः। दक्षिण दिशामें—ओं नन्दायै नमः। नैरृत दिशामें—ओं भोगदायै नमः। पश्चिम दिशामें—ओं कामरूपिण्यै नमः। वायु दिशामें—ओं उग्रायै नमः। उत्तर दिशामें—ओं तेजस्वत्यै नमः। ईशान दिशामें—ओं सत्यायै नमः। मध्यमें—ओं विघ्नविनाशिन्यै नमः।

(४) एते गन्धपुष्पे ओं कमलासनाय नमः।

(५) एते गन्धपुष्पे ओं गणेशाय नमः। एते गन्धपुष्पे ओं गणनायकाय नमः इत्यादि।

* ओं तत्सदद्य अमुके मासि अमुकराशिस्थे भास्करे अमुके पक्षे अमुकतिथौ अमुकवारे अमुकनक्षत्रे अमुकगोत्रः अमुकप्रवरः अमुकवेदी अमुकशाखाध्यायी कुमारिकाखण्डान्तर्गतामुकप्रदेशीयामुकग्रामवासी श्रीअमुक देवशर्मा निःशेषोपद्रवशान्तिकाम आयुर्लक्ष्मीबलारोग्यकामश्च शुभपूर्णाभिषेचनमहं करिष्ये। इस वाक्यको कह कर संकल्प करना चाहिये।

† ओं तत्सदद्य अमुके मासि अमुकराशिस्थे भास्करे अमुके पक्षे अमुकतिथौ अमुकवारे अमुकनक्षत्रे अमुकगोत्रः अमुकप्रवरः अमुकवेदी अमुकशाखाध्यायी कुमारिकाखण्डान्तर्गतामुकप्रदेशीयामुकग्रामवासी श्रीअमुक देवशर्मणः अमुक गोत्रं अमुक प्रवरं अमुकवेदीनं अमुकशाखाध्यायिनं कुमारिकाखण्डान्तर्गत-अमुक-प्रदेशीय-अमुकग्रामनिवासिनं श्रीमंतममुकानन्दनाथं गुरुत्वेन भवन्तं

शुद्ध गैरिकादि द्वारा चित्रित मनोहर गृहमें उपवेशन करें। वह गृह मनोहर ध्वजा पताका द्वारा और फल पत्रादि द्वारा सुशोभित तथा चिह्निनी अर्थात् सूत्र वस्त्रिकासमूहकी मालासे विभूषित चन्द्रातप द्वारा वह घर प्रच्छन्न होना चाहिये। इस समय इस तरह घृत प्रदीप जलाने होंगे कि जिससे कहीं भी अन्धकारका लेशमात्र न रहे। वह स्थान कर्पूरमिश्रित शाल्मलियाससे निर्मित धूपों द्वारा सुवासित और पंखा, तालवृन्त, चामर, मयूरपुच्छ, दर्पणादि द्वारा सुसज्जित होना चाहिये।

गुरुको चाहिये कि इस गृहके भीतर चार अङ्गुलि उच्च और चार हस्त परिमित मध्यम वेदीकी रचना करें। पीछे पीत रक्त कृष्ण श्वेत, श्यामल, इन पांच वर्णों के अक्षत-चूर्ण द्वारा सुमनोहर सर्वतोभद्र मण्डल बनावें। फिर वह स्व कल्पोक्त विधानानुसार सामान्यपूजा पर्यन्त समस्त कार्य सम्पन्न करके मन्त्र द्वारा पञ्चतत्त्व शोधन करें।

पञ्चतत्त्वशोधनके बाद पूर्व कल्पित सर्वतोभद्र मण्डलके ऊपर सुवर्ण निर्मित रजतनिर्मित, ताम्रनिर्मित अथवा मृत्तिकानिर्मित घट ला कर 'फट्' इस मन्त्रके द्वारा उस घटका प्रक्षालन करें। तब पाद्य दधि और अक्षत विलेपन पूर्वक प्रणव उच्चारण करके उसको उस मण्डलमें स्थापित करें। पीछे "क्षौं" यह बीजमन्त्र पढ़ कर सिन्दूर द्वारा उसको लिख दें। अनन्तर चन्द्रबिन्दु विभूषित 'अ' से 'क्ष' पर्यन्त पञ्चाशत् वर्णोंके साथ मूलमन्त्र तीन बार जप करके कारण द्वारा उस घटको भर दे अथवा तीर्थजल द्वारा या विशुद्ध जो हो तो अम्भ द्वारा घट पूर्ण करके उस घटमें नवरत्न व सुवर्ण निक्षेप करें। तत्पश्चात् कृपा निधि गुरु "हीं" यह बीजमन्त्र उच्चारण कर कलसके मुख पर बटहर, उडुम्बर, अश्वत्थ, बकुल और आम्र, इन पांच प्रकारके वृक्षोंके पत्ते रखें। पीछे "श्रीं क्रीं" यह मन्त्र उच्चारण करके आतप-तण्डुल और फलसमन्वित सुवर्णमय, रजतमय ताम्रमय वा मृण्मय शराव (सरवा)-को पत्तोंके ऊपर रक्खें। कालमें! अवकृष्ण

समाकेताधिरिक्त हुये। इस प्रकार भेदकर बाद गुरुसे वरण करना चाहिए।

द्वारा उस घटका योगावलम्बन करना चाहिये। शिवे! अविमन्त्रसे शक्तरूप और विष्णुमन्त्रसे चैतन्य हो सकता है। इसके उपरान्त 'ह्रीं ह्रीं क्रीं श्रीं शिरो मन्त्र' इस मन्त्रको पढ़ कर स्थिरोक्त अन्य घट पर पञ्चतत्त्व स्थापन करके नवपात्रका विन्यास करना चाहिये।

शक्तिपात्र रजतनिर्मित गुरुपात्र सुवर्णनिर्मित, श्रीपात्र महाशङ्खविरचित और अन्य समस्त पात्र ताम्र निर्मित होने चाहिये। महादेवीकी पूजाके समय पाषाणनिर्मित पात्र, काष्ठनिर्मित पात्र वा लौहनिर्मित पात्रको छोड़ कर शक्तिके अनुसार अन्य पदार्थके पात्रोंका व्यवहार करें। पात्र स्थापन करके गुरुओंको भगवती (और आनन्दभैरवादि)-का तर्पण करें। तत्पश्चात् आगमी व्यक्ति अमृतपूर्ण घटको पूजा करें। फिर धूप दीप मत्स्यमांसपूर्वक पूर्वोक्त मन्त्र बोल कर सर्वभूत बलि प्रदान करें। अनन्तर पीठदेवताओंको पूजा करके षडङ्गन्यास करें। पीछे प्राणायाम करके महेश्वरीका ध्यान और आवाहनपूर्वक अपनी शक्तिके अनुसार यथोक्त देवताकी पूजा करें, किसी तरह भी वित्तशाठ्य नहीं करना चाहिये। शिवे! सद्गुरुको चाहिये कि वे होम तक समस्त कार्य सम्पन्न करके पुष्प चन्दन और वस्त्र द्वारा कुमारिकी और शक्ति साधकोंको अर्चित करें।

"हे कुलमत योगमय! आप लोग मेरे शिष्य पर अनुग्रह प्रकट करें। इस पूर्णाभिषेक संस्कारमें आप लोग अनुमति प्रदान करें।" यह कहके ऐसा प्रश्न करने पर योगिगण समादरपूर्वक कहेंगे कि, "महामायाके प्रसाद और परमात्माके प्रभावसे आपके शिष्य परमतत्त्व परायण और श्रेष्ठ हों।

तदनन्तर गुरु शिष्यके द्वारा देवी भगवतीकी पूजा करा कर अर्चित घट पर 'ह्रीं श्रीं क्रीं' यह मन्त्र जप कर उस निमग्न घटकी चालना करें। फिर यह मन्त्र पढ़ें कि हे ब्रह्म कलस तुम निधिदाता हो और देवता स्वरूप कल्याण करते हो। मेरा शिष्य तुम्हारे जल और पल्लवसे सिक्त हो कर ब्रह्मनिरत होवे।

गुरु इस मन्त्र द्वारा कलस सञ्चालित करके कृपायुक्त हृदयसे, उत्तरकी तरफ मुंह करके शिष्यको अभिषिक्त

करें और यह मंत्र पढते रहें कि, शुभपूर्णाभिषेकमें ऋषि सदाशिव, छन्द अनुष्टुप्, वीज प्रणव, शुभ पूर्णाभिषेकार्थं विनियोग कीर्तन करना होगा * ।

उसके बाद यह अभिषेक-मंत्र पढें—

"गुरवस्त्वाभिषिञ्चन्तु ब्रह्म-विष्णु-महेश्वराः ।
दुर्गा लक्ष्मी भवान्यस्त्वामभिषिञ्चन्तु मातरः ॥
षोड़शी तारिणी नित्या स्वाहा महिषमर्दिनी ।
एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु मन्त्रपूतेन वारिणा ॥
जयदुर्गा विशालाक्षी ब्रह्माणी च सरस्वती ।
एतास्त्वामभिषिंचन्तु बगला वरदा शिवा ॥
नारसिंही च वाराही वैष्णवी वनमालिनी ।
इन्द्राणी वारुणी रौद्री त्वामभिषिंचन्तु शक्तयः ॥
भैरवी भद्रकाली च तुष्टिः पुष्टिरुमा क्षमा ।
श्रद्धा कांतिर्दया शांतिरभिषिंचन्तु ते सदा ॥
महाकाली महालक्ष्मीर्महानीलसरस्वती ।
उग्रचण्डा प्रचण्डा च अभिषिंचन्तु सर्वदा ॥
मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नृसिंहो वामनस्तथा ।
रामो भार्गवरामस्त्वामभिषिंचन्तु वारिणा ॥
असितांगरुरुश्चण्डः क्रोधोन्मत्तभयंकर ।
कपाली भीषणस्त्वामभिषिंचन्तु वारिणा ॥
काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी ।
विप्रचित्तामहोग्रास्त्वामभिषिंचन्तु सर्वदा ॥
इन्द्रोग्निः शमनो रक्षो वरुणः पवनस्तथा ।
धनदश्च महेशानः सिंचन्तु त्वा दिगीश्वराः ॥
रविः सोमो मंगलश्च बुधो जीवः सितः शनिः ।
राहुः केतुः सनक्षत्रा अभिषिंचन्तु ते ग्रहा ॥
नक्षत्रं करणं योगो वाराः पक्षौ दिनानि च ।
ऋतुर्मासोह्ययनस्त्वामभिषिंचन्तु सर्वदा ॥
लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिदुग्धजलान्तकाः ।
समुद्रास्त्वाभिषिंचन्तु मन्त्रपूतेन वारिणा ॥
गंगा गुर्वीमुखा रेवा चन्द्रभागा सरस्वती ।
सरयुर्गण्डकी कुन्ती श्वेतगंगा च कौशिकी ॥
अनन्ताद्या महानागा सुपर्णाद्याः पतत्रिणः ।
तरवः कल्पवृक्षाद्याः सिंचन्तु त्वां दिगीश्वराः ॥
पातालभूतलव्योमचारिणः क्षेमकारिणः ।
पूर्णाभिषेकसन्तुष्टा अभिषिंचन्तु पावनाः ॥
दौर्भाग्यं दुर्यशोरोगा दौर्मनस्यं तथा शुचः ।
विनश्यन्त्वभिषेकेण कालीबीजेन ताडिताः ॥
भूताः प्रेताः पिशाचाश्च ग्रहा ये रिष्टकारिणः ।
विद्रुतास्ते विनश्यन्तु रमाबीजेन ताडिताः ॥
अभिचारकृता दोषा वैरिमन्त्रोद्भवाश्च ये ।
मनोवाक्कायजा दोषा विनश्यन्त्वभिषेकतः ॥
नश्यन्तु विपदः सर्वाः सम्पदः सन्तु सुस्थिराः ।
अभिषेकेण पूर्णेन पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ॥
इत्येकाधिकविंशत्या मंत्रैः संसिच्य पदम् ।
पश्चात्तस्मै स्वमन्त्रं पुनः संश्रावयेद् गुरुः ॥
पूर्वोक्तनाम्ना संबोध्य शपथान् शक्तिमुख्यकान् ।
दद्यादानन्दनाथान्तमात्मानं कौलिको गुरुः ॥
शुभमन्त्रगुरोर्मन्त्रैः संपूज्य निजदेवताम् ।
पञ्चतत्त्वोपचारेण गुरुमभ्यर्चयेत्ततः ॥
गोभूहिरण्यवासांसि नानालङ्करणानि च ।
गुरवे दक्षिणां दत्वा यजेत् कौलान् शिवात्मकान् ॥
सर्वकौलार्चनो धीरः शान्तोऽतिविनयान्वितः ।
श्रीगुरोश्चरणौ स्पृष्ट्वा भक्त्या नत्वेदमर्पयेत् ॥
श्रीनाथ जगतां नाथ मन्नाथ करुणानिधे ।
यथाकृतप्रदानेन पूरयास्मन्मनोरथम् ॥
आज्ञां मे दीयतां कौलाः भक्तसिद्धिप्रदायिनः ।
उच्छिष्टाय विनीताय ददामि परमामृतम् ॥
चक्रेशपरमेशान कौलपंकजभास्कर ।
कृतार्थं कुरु सत्शिष्यं देयमुष्मै कुलामृतम् ॥
आज्ञामादाय कौलीनं परमामृतपूरितम् ।
सशुद्धिकं पानपात्रं शिष्यहस्ते समर्पयेत् ॥
इत्याकृष्य गुरुर्देवीं स्वयमुत्तमभस्मना ।
स्वस्य शिष्यस्य कौलानां कूर्चे च तिलकं न्यसेत् ।
ततः प्रसादतत्त्वानि कौलेभ्यः परिवेशयन् ।
चक्रानुष्ठानविधिना विदध्यात् पानभोजनम् ॥

---

* मन्त्र, यथा—"एषां शुभपूर्णाभिषेकमन्त्राणां सदाशिव ऋषिरनुष्टुप् छन्द आद्याकाली देवता ओं वीजं शुभपूर्णाभिषेकार्थे विनियोगः । शिरसि सदाशिवाय नमः । मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः । हृदये आद्यायै कालिकायै देवतायै नमः । गुह्ये ओं वीजाय नमः । शुभपूर्णाभिषेकार्थे विनियोगः ।" ऐसा ऋषिन्यास करना चाहिये ।]

इति ते कथितं देवि कुम्भपूर्णाभिषेचनम् ।
महाज्ञानप्रकाशस्य त्रिलोकसुखदायकम् ॥
अथवा सप्तपात्रं च पञ्चपात्रं त्रिपात्रकम् ।
अथवाप्येकपात्रेण कुर्यात् पूर्णाभिषेचनम् ॥
संस्कारेऽस्मिन् कुम्भानि च कलशाः प्रकीर्तिताः ।
नवपत्रं त्रिपात्रञ्च सर्वतोभद्रमण्डलम् ॥
नवनाभं पञ्चपत्रे च चाष्टपत्रे वेदपात्रके ।
त्रिपत्रे वेदपत्रे च पद्ममष्टदलं लिखेत् ॥
कलशे सर्वतोभद्रे नवनाभेऽपि साधकः ।
स्थापयेत् नव कुम्भांश्च पञ्चके च सर्वकम्भकान् ॥
अग्निनेत्रदले देवि चतुर्वेदे प्रकीर्तिताः ।
संस्थाप्यमेवाष्ट केवपात्रेषु पूजयेत् ॥
पूर्णाभिषेकविधिना कौलानां शिवकारणम् ।
दर्शनात् स्पर्शनात् ज्ञानात् ब्रह्मसुखिर्भवेद् ॥"

गुरु तुमको अभिषिक्त करें । ब्रह्मा, विष्णु, और महेश्वर तुमको अभिषिक्त करें । दुर्गा, लक्ष्मी भवानी ये मातायें तुम्हें अभिषिक्त करें । षोडशी तारिणी नित्या, स्वाहा महिषमर्दिनी ये तुमको मन्त्रपूत सलिल द्वारा अभिषिक्त करें । जयदुर्गा विशालाक्षी ब्रह्माणी सरस्वती अम्बिका, वरदा, शिवा, ये तुमको अभिषिक्त करें । नारसिंही, वाराही, वैष्णवी, वनमालिनी इन्द्राणी वारुणी, रौद्री, ये समस्त शक्तियां तुम्हें अभिषिक्त करें । भैरवी, भद्रकाली, तुष्टि, पुष्टि, उमा क्षमा श्रद्धा, कान्ति दया, शान्ति, ये सर्वदा तुम्हें अभिषिक्त करें । महाकाली, महालक्ष्मी, महानीलसरस्वती, उग्रचण्डा प्रचण्डा ये सर्वदा तुमको सलिल द्वारा अभिषिक्त करें । मत्स्य, कूर्म, वराह नृसिंह, वामन, राम परशुराम, ये सर्वदा तुम्हें सलिल द्वारा अभिषिक्त करें । असिताङ्ग रुरु, चण्ड, क्रोधोन्मत्त, भयङ्कर, कपाली भीषण, ये सबकिसी तुम्हें अभिषिक्त करें । काली, कपालिनी कुल्ला, कुरुकुल्ला, विरोधिनी, विप्रचित्ता, महोग्रा, ये तुमको अभिषिक्त करें । इन्द्र, अग्नि, पितृपति नैऋत, वरुण, मरुत्, कुबेर, ईशान, ये अष्टदिक्पाल तुम्हें अभिषिक्त करें । रवि, सोम, मङ्गल, बुध बृहस्पति, शुक्र, शनि राहु, केतु, ये ग्रह और नक्षत्र तुमको अभिषिक्त करें । अश्विनी आदि नक्षत्र, बव आदि करण, विष्कम्भ आदि योग, रवि आदि वार, शुक्लपक्ष, कृष्णपक्ष वसन्त आदि छह ऋतुएं वैशाख आदि बारह मास उत्तरायण, दक्षिणायन ये सर्वदा तुम्हें अभिषिक्त करें । लवण समुद्र इक्षुसमुद्र, सुरासमुद्र, घृतसमुद्र दधिसमुद्र, दुग्धसमुद्र और जलसमुद्र, ये समस्त समुद्र मन्त्रपूत सलिल द्वारा तुम्हें अभिषिक्त करें । गङ्गा, यमुना, रेवा, चन्द्रभागा सरस्वती, सरयू, गण्डकी, कुन्ती, श्वेतगङ्गा कौशिकी, ये मन्त्रपूत जल द्वारा तुम्हें अभिषिक्त करें । अनन्त, वासुकि, पद्म आदि महानाग गरुड़ आदि पक्षी, कल्पवृक्ष आदि वृक्ष और पर्वत तुम्हें अभिषिक्त करें । पातालचारी, भूतलचारी और व्योमचारी जीव तुम्हारा मङ्गल करें तथा ये पूर्णाभिषेक दर्शन करके परितुष्ट हो तुम्हें सलिल द्वारा अभिषिक्त करें । पूर्णाभिषेक तथा परमात्माके तेज द्वारा तुम्हारा दुर्भाग्य, अयश रोग दौर्मनस्य और शोक समुदाय विध्वस्त होवे ।

अलक्ष्मी कालकर्णी, डाकिनी, योगिनी, ये अभिषेक और वाग्वीजके द्वारा ताड़ित हो कर विनष्ट होवें । भूत, प्रेत, पिशाच, ग्रह तथा और और समस्त अनिष्ट कारीगण रमाबीज द्वारा ताड़ित हो कर नष्ट हो जावें । अभिचार जनित दोष वैरमन्त्र उत्पन्न दोष, मानसिक दोष, वाचनिक दोष कायिक दोष ये सब तुम्हारे अभिषेकके द्वारा अस्त होवें । तुम्हारी समस्त विपत्तियां दूर होवें । तुम्हारी समस्त सम्पद स्थिरतर होवें । इस पूर्णाभिषेकके द्वारा तुम्हारे समस्त मनोरथ पूर्ण होवें ।

इन श्लोक मंत्रोंसे साधकको अभिषिक्त होना चाहिये । यदि शिष्य पहले पाश होचित हुआ हो, गुरु को चाहिये कि, उसे पुनः वही मन्त्र सुनावें । अनन्तर कौलिक गुरु अभिलाषकोंको सूचना देते हुए शुभ नाम पदकपूर्वक शिष्यको सम्बोधन करके आनन्दनाथान्त नाम प्रदान करें । शिष्यको चाहिये कि वह गुरुसे मन्त्र सुन कर पञ्चतत्त्वोपचार द्वारा मन्त्रमें अपने अभीष्ट देवता की पूजा करके गुरु पूजा करें ।

इसके बाद गुरुको गामी भूमि, सुवर्ण अन्न पेय द्रव्य, अलङ्कार इन सबको दक्षिणा दे कर साक्षात् शिव स्वरूप कौलोंको पूजा करनी चाहिये । पीछे ब्राह्मी आदि कौलिनीयोंकी अर्चना करके शान्त और अति विनीत हो

भक्तिके साथ श्रीगुरुको चरण छू कर नमस्कार करे और प्रार्थना करे कि, श्रीनाथ आप जगत्के नाथ हैं, मेरे नाथ और करुणानिधि हैं। आप परमामृत प्रदान कर मेरा मनोरथ पूर्ण कीजिए। गुरु कौलोंसे यह कहेंगे—कौलगण! आप प्रत्यक्ष शिवरूपी हैं। आप आज्ञा देवें जिससे मैं इस विनयसम्पन्न सत्शिष्यको परमामृत प्रदान कर सकूं। कौल यह कहेंगे—चक्रेश्वर! आप साक्षात् परमेश्वर हैं, आप कौलरूप पद्मवनके लिए भास्करस्वरूप हैं। आप इस सत्शिष्यको चरितार्थ करें। इसको कुलामृत देवें।

तदनन्तर गुरु कौलोंकी अनुमति ले कर शुद्धिके साथ परमामृत-पूरित पानपात्र शिष्यके हाथ पर रक्खें। बादमें गुरुको चाहिये कि, देवी भगवतीको हृदयमें धारण कर स्वयमंलग्न-भस्मके द्वारा अपने शिष्य और कौलोंके ललाट पर तिलक लगा दें। पश्चात् प्रसादतत्त्व समुदाय कौलोंको परिवेशन करके चक्रानुष्ठानके विधानानुसार पान और भोजन करें। यह मैंने तुमसे शुभ-पूर्णाभिषेक कहा। इससे ब्रह्मज्ञान और शिवत्व प्राप्त होता है।

नवरात्रि, सप्तरात्रि, पञ्चरात्रि, त्रिरात्रि अथवा एकरात्रि पूर्णाभिषेक करना चाहिये। कुलेश्वरि! इस संस्कारमें पाँच कल्प हैं। यदि नवरात्रि अभिषेक करना हो, तो सर्वतोभद्रमण्डलकी रचना करनी चाहिये। प्रिये! सप्तरात्रि अभिषेकमें नवनाभमण्डल, पञ्चरात्रि अभिषेकमें पञ्चाब्जमण्डल, त्रिरात्रि और एकरात्रि अभिषेकमें अष्टदल-पद्मकी रचना करनी चाहिये। साधकोंको उचित है कि, वे सर्वतोभद्रमण्डल और नभमण्डल पर ८ घट तथा पञ्चाब्जमण्डल पर ५ घट स्थापन करें। अष्टदलपद्ममें सिर्फ एक घट स्थापना करना पड़ता है। इस पद्मके केशरादि अङ्गदेवता और आवरण-देवताओंकी पूजा करनी पड़ती है। जो पूर्णाभिषेकसे अभिषिक्त कौल हैं, जो निर्मलहृदय है, उनका दर्शन, स्पर्शन वा घ्राण द्वारा द्रव्यशुद्धि हुआ करती है।

साधक और साधिका। तांत्रिक साधक और साधिकाके लक्षणोंका भी तंत्रोंमें वर्णन है। निरुत्तरतंत्रके (११वें पटलमें) मतसे—

"आत्मनो ज्ञानमात्रेण तत्त्वज्ञानं भवेत् प्रिये।
तत्त्वज्ञानी भवेद्योगी स योगी त्रिविधः स्मृतः॥
निरालम्बः सालम्बो भक्तश्च परमेश्वरि।
भक्तोपि वीरभावेन साधयेत् कुलसाधनम्॥
शक्तिमात्रं यजेद्योगी भक्तो योगपरायणः।
अभिषेकेन देवेशि भैरवो जायते भुवि॥
अवधूतो भवेद्वीरो दिव्यश्च कुलसुन्दरि।
श्मशानागमनिष्ठश्च कुलशास्त्रपरायणः॥
कुलशास्त्रार्थवेत्ता च बलिदानरतः सदा।
निर्द्वन्द्वो निरहंकारो निर्लोभो निर्भयः शुचिः॥
गुरुदेवरतः शान्तो घृणालज्जाविवर्जितः।
रक्तचन्दनलिप्ताङ्गो रक्तकौपीनभूषणः॥
जटान्वितः सर्वत्र धर्मज्ञानपरायणः।
कुलशास्त्रो धीरः पण्डितः कुलधर्मगः॥
कुलतत्त्वार्थवेत्ता च कुलशास्त्रविशारदः।
महाबलो महाबुद्धिः महासाहसिकः शुचिः॥
नित्यकर्मणि निष्णातो दम्भहिंसाविवर्जितः।
परनिन्दासहिष्णुः स्वाद्वन्नाहारः सदा॥
वीरासनसमासीनः पितृभूमिगतः शुचिः।
सर्वदानन्दहृदयः कुमारीपूजने रतः।
एवं यदि भवेद्वीरस्तदैव सिद्धिमाव्रजेत्॥
दिव्योऽपि वीरभावेन साधयेत् कुलसाधनम्।
कुलस्य सर्वजातीनां पूजनीयं कुलं प्रिये॥
श्मशाने निर्जने रम्ये शिवान्ते शून्यमण्डपे।
ग्रामे पातालके वापि साधयेत् कुलसाधनम्॥"

प्रिये! आत्माको स्वरूप ज्ञान होते ही तत्त्वज्ञान होता है। तत्त्वज्ञानी योगी हो सकते हैं, वे योगी तीन प्रकारके होते हैं—निरालम्ब, सालम्ब और भक्त। भक्तको भी वीरभावसे कुलसाधन करना चाहिये। योगपरायण भक्तयोगीको शक्तिमात्रकी पूजा करना उचित है। देवेशि! अभिषेकके द्वारा इस संसारमें भैरव तथा दिव्य और वीराचारी अवधूत हुआ करता है। श्मशानागममें निष्ठावान् कुलस्तोपरायण, कुलशास्त्रार्थ जो अच्छी तरह कर सकता हो, नित्य बलिदानमें रत, द्वन्द्वहीन, अहङ्कारहीन, निर्लोभ, निर्भय, शुद्ध, गुरु और देवतासे अनुरक्त, शान्त, घृणालज्जारहित, जिसके अङ्ग पर रक्तचन्दन लिप्त हो, रक्तवर्णकी कौपीन धारण करनेवाला,

उदारचित्त, सब समय वैष्णवाचारमें तत्पर, कृपा वत्सल, भोगाचारी, कुलमार्गमें पण्डित कुलज्ञ तत्त्ववेत्ता, मन्त्रप्रयोगमें सिद्धहस्त, महा बलवान् बुद्धिमान् अतिशान्त, गुणाचारी, निष्काम सिद्ध, दम्भ और हिंसावर्जित, परनिन्दासहिष्णु, सब दा परोपकारमें रत, भोगासनमें समासीन, चित्तभूषित, सब दा तो धाम स्थित और कुमारीपूजनमें रत, ऐसा होने पर और तान्त्रिकसाधनमें होनेका यत्न करें। दिव्य और वीर भावसे अनुष्ठान करें। कुलपूजामें सभो जातिको स्त्री पूजनीय है। श्मशानमें, निर्जन वा रमणीय स्थानमें, शिवालय और शून्य मण्डपमें, ग्राम वा नगरके भीतर कुलपूजा करनी चाहिये।

नायिकाके लक्षण—

"निर्लोमा कमलाक्षी या निर्मज्जा दम्भवर्जिता।
शिवप्रसादा स्वाभी सौभाग्या विपरीतगा॥
चतुर्वेदोद्भवा रम्या प्रशस्ता कुलपूजने।
चतुर्वेदोद्भवाभावे च पुरस्त्री नियोजयेत्॥
वर्णसंकरतो जाता हीनजा परिकीर्तिता।
कन्या कौलिकमन्त्र वा वा अथवा कुलवेश्या॥
नानाशास्त्रपुरुस्त्री च या दीक्षा कुलपूजने।
अभावे हीनजा देवी स्वका वा प्रपूजयेत्॥
सर्वासां कौलिकी देवी यथावत् परिपूजयेत्॥
यथावत् पूजयेद्देवि दीक्षितां स्वस्यदीक्षिताम्।
दक्षिणाङ्गे सदीक्षिते प्रयत्नेनापि स्थापयेत्॥
हीनजाते तु च पुष्प दीक्षितासिद्ध सर्वदा।
कामिनी शक्तिका चापि वेश्या नारी चैव हि।
सर्वाः नायते योग्या नायिकानाम् कुलार्णवे॥"

(निरु० ११ प०)

जिन स्त्रीको लोभ नहीं कामना नहीं, लज्जा नहीं, दम्भ नहीं, जिस स्वामीमें चित्त स्थिर किया है, जो स्त्री अपने स्वभावके विपरीत रमण करती है, ऐसी चारो ही वर्णोको स्त्रियां कुलपूजाके लिए प्रशस्त हैं। चारों वर्णोंको कुलस्त्रियोंके लिए पुरस्त्रियाका विधान है। वर्णसङ्करमें उत्पन्न नारी हीनजा नामसे प्रसिद्ध है। जिसके कुलसक्षण पर मनका थाभा हो, उस साक्षात् कुलनेत्रदी है। इस प्रकारको नाना जातिकी स्त्रियोंको कुलपूजामें दीक्षित किया जा सकता है। अथवा हीन जातीया देवीको मन ही मन पूजा करेगा। कौलिकोदेवी मालूम न होने पर यथावत् अर्चना करेगा। भोगचारी दीक्षिता वा अदीक्षिता स्त्रीको यथावत् पूजा करेगे अथवा मात्रयोगमना हो कर शक्तिमात्रका स्मरण करेगे। हीनजा मात्र ही सब दा दीक्षिता है। वेश्या या नायकसनी वैश्यको अथवा अवैश्यको नायिकायोंको कुलसाधनमें योग्य समझना चाहिये।

सङ्केत। तान्त्रिक उपासक मात्रको ही सङ्केतका जानना विशेष आवश्यकीय है, नहीं तो कुलपूजामें उनका किञ्चित् अधिकार नहीं अथवा उनके मध्य वह स्थान पानेके योग्य नहीं होता। निरुत्तरतन्त्रमें लिखा है—

"जपसंकेतक चैव पूजासंकेतमेव च।
मन्त्रसंकेतक चैव च वर्णसंकेतकस्तथा॥
किञ्च ■ सर्वसाया संकेत पुरुनिम्य।
संकेतज्ञ विना वीरे यदि चक्रे नियोजयेत्॥
निष्फल पूजन देवि पुत्रा तस्य पदे पदे।
संकेतहीनो यो वीरो वर्णितेऽपि पुरा क्रमात्॥
कुलनारं च पातित्य कर्मेद्रियवाके।"

(निरु० १० प०)

जपसङ्केत, पूजासङ्केत, मन्त्रसङ्केत, वर्णसङ्केत, गुरुके मन्त्र और यन्त्र लिखनेका सङ्केत इन सङ्केतोंको जिसने नहीं जाना है उसको चक्रमें नियुक्त करनेसे पूजा निष्फल होती और पद पदमें उसको दुःख हुआ करता है। जो वीर सङ्केत नहीं जानता अथवा जो गुरुके क्रमानुसार अभिषिक्त नहीं है, वह कुलभ्रष्ट और पापिष्ठ है, उसको वीरचक्रमें परित्याग करना चाहिये।

जपसङ्केत—जपपुष्प, जयमपुष्प कुण्डोद्भव, गोलोद्भव, वज्रपुष्प, अङ्गाल, बीज इत्यादि।

तन्त्रमें उक्त तान्त्रिक शब्दोंके अर्थका निर्णय किया गया है।...बहुतसे साङ्केतिक शब्द ऐसे भी हैं जिनका

---

* "अष्टोत्तरशत देवि तद्रूपेण गुरुतो जपेत्।
स्वयम्भू कुसुम देवी पुजन भजना वदेत्॥
तु वटी भावरी इड वा एव च विपरीतरा।
च इव कालिकातुल्य सदाशिव इवापर॥" (निरु० ११ प०)

अर्थं अभिषिक्त गुरुके सिवा और कोई नहीं बता सकता।

स्वयम्भूकुसुम प्रथम ऋतुमतीका रजः है। यथा—

"हरसम्पर्कहीनायाललतायाः काममन्दिरे।
जातं कुसुममादौ यन्महादेव्यै निवेदयेत्॥
स्वयम्भूकुसुमं देवि रक्तचन्दनसंज्ञितम्।
तथा त्रिशूलपुष्पं च वज्रपुष्पं वरानने॥
अनुकल्पं लोहिताक्षचन्दनं हरवल्लभम्।"

(मुण्डमालातन्त्र ७प०)

हर अर्थात् पुरुषके संस्रवके विना लता अर्थात् स्त्रीको योनिसे जो कुसुम अर्थात् रजः निकलता है, उसीको स्वयम्भूकुसुम वा रक्तचन्दन कहा जा सकता है। इसके अभावमें महादेवीको त्रिशूलपुष्प और वज्रपुष्प (चण्डालिनका रजः) चढ़ाना चाहिये। इसका अनुकल्प शिवप्रिय लोहिताक्ष चन्दन है।

कुण्डोद्भव अर्थात् सधवा स्त्रीका रजः। यथा—

"जीवद्भर्तृकनारीणां पञ्चम कारयेत् प्रिये।
तस्या भगस्य यद्द्रव्यं तत्कुण्डोद्भवमुच्यते॥"

(समयाचारतन्त्र २य प०)

गोलोद्भव अर्थात् विधवा स्त्रीका रज। यथा—

"मृतभर्तृकनारीणां पंचमं चैव कारयेत्।
तस्या भगस्य यद्द्रव्यं तत् गोलोद्भवमुच्यते॥"

कुलार्णवके मतसे—

"तत्त्वत्रयं स्यादारम्भः कथित कुलनायिके।
कथितस्तरुणोल्लासे तरुणं सुखमंविके॥
यौवनं मनसः सम्यगुल्लासः कथितः प्रिये।
स्खलनं दृङ्मनोवाचां प्रौढ इत्यभिधीयते॥"

तत्त्वत्रयको आरम्भ, अरुण सुखको तरुण उल्लास, यौवनको मनका महोल्लास, दृष्टि मन और वचनको स्खलनको प्रौढ कहते हैं।

पूजा-सङ्केत—तंत्रसारमें इस प्रकार उद्धृत है—

"द्रव्याणां यावती सङ्ख्या पात्राणां द्रव्यसंहतिः।
हाटकं राजतं ताम्रं मारकतमृतादिना॥
उपचारविधाने तद् द्रव्यमाहुर्मनीषिणः।
आसने पंचपुष्पाणि स्वागते षट्चतुःपलम्॥
जलं श्यामाकदूर्वा च विष्णुक्रान्तामिरीरितम्।
पाद्येनार्घ्ये जलं तावत् गन्धपुष्पाक्षतं जदा॥
दूर्वास्तिलाश्च नतारः कुशाग्रः श्वेतसर्षपाः।
जातीफललवङ्गक ककोलाश्च षट्पलम्॥
प्रोक्तमाचमनं कांस्ये मधुपर्कः पुनं मधुः॥
दध्ना सह पलैकन्तु शुद्धं पाद्ये तथा च मे।
परिमाणन्तु पंचाशत् पलं स्नानार्थ संभवः॥
निर्मलेनोदकेनाथ यत्रेत्र परिपूर्णता।
मलिनं गर्हितं सर्वं त्यजेत् पूजाविधौ हरेः॥
वितस्तिमात्रादधिकं वासो युग्मन्तु नूतनम्।
स्वर्णाद्याभरणान्येवं मुक्तारत्नयुतानि च॥
चन्दनागुरुकर्पूरपङ्कं गन्धफलानि।
नानाविधानि पुष्पाणि पंचाशदधिकानि च॥
कांस्यादि निर्मिते पात्रे धूपो गुग्गुलुकर्पमात्।
घृतवर्त्यादि संयुक्तो दीपश्चाच्चतुरंगुलः॥
यावद् भक्ष्यं भवेत् पुंसस्तावदद्याजनार्दने।
नैवेद्यं विविध वस्तु भक्ष्यादिकन्तु नागमम्॥
कर्पूरादियुता वर्ति सा च कार्पासनिर्मिता।
घृतवर्त्यादि संयुक्तो दीपश्चाच्चतुरंगुलः॥
शिलापिष्टं चन्दनाद्यं सम्यक् वर्त्तयेत्नरः।
कार्य ताम्रादिपात्रे तत् प्रीनये हरिमेधसः॥
दूर्वाक्षतप्रमाणं च विप्रयन्तु ततोऽधिकम्।
उत्तमोऽयं विधिः प्रोक्ते विभवे सति सर्वदा॥
एषामभावे सर्वेषां यथाशक्त्या तु पूजयेत्।
अनुकल्पं विवर्जेच्च द्रव्याणा विभवे सति॥"

द्रव्यकी जितनी संख्या है, पात्रको भी उतनी ही संख्या समझनी चाहिये। उपचार द्रव्य कहनेसे सुवर्ण, रजत, ताम्र और कांस्य इन चारका बोध होता है। पञ्चविध पुष्पसे आसन, षट्पुष्पसे स्वागत, चार पल जलमें पाद्य, श्यामाक (विष्णुक्रान्ता), अपराजिता, शुभ्रपुष्प आतपतण्डुल, दूर्वा, तिल, कुशाग्र, श्वेतसर्षप, जायफल, लवङ्ग और काकोल, इनका अर्घ्य, षट्पल जलमें आचमन, कांस्यपात्रमें घृत, मधु और दधिसे मधुपर्क, एक पल विशुद्ध जलमें आचमन, ५० पल विशुद्ध जलमें स्नान, वितस्तिमात्रसे अधिक दो नये कपड़ोंसे वसन, मुक्ता और रत्नादियुक्त स्वर्णादि द्वारा आभरण, चन्दन, अगुरु और कर्पूरसे गन्ध, ५० प्रकारसे अधिक फलोंसे पुष्प,

ताम्रादिपात्रमें चूना और गुग्गुलुके धूप, तथा सप्तवर्तीयुक्त दीप द्वारा धूप बनती है। जितने द्रव्यके भक्षण करनेसे एक पुरुषका पेट भरता है, उतनेसे नैवेद्य बनता है। (इस नैवेद्यमें नानाप्रकारके पदार्थ मिलाये जाते हैं, खाद्य-वस्तु ४ प्रकारसे कम न होनी चाहिये)। कार्पासादि सूत्रके द्वारा ४ अङ्गुल परिमित ७ बत्ति बना कर उनमें कर्पूर युक्त कर जला देनेसे दीप और ७ बार प्रदक्षिणा करके प्रणाम करनेसे उसको वन्दना समझना चाहिये। (विष्णुप्रीतिके लिए ताम्रादि पात्रमें यह कार्य करना चाहिये।)

दूर्वाक्षत करनेके एकमौसे पवित्र दूर्वा और अक्षत लेना चाहिये। धनवालो व्यक्तिके लिए यही उत्तम विधि है। इस विधिके अनुसार जो पूजा करता है, वह समस्त भोगोंको भोग कर आखिर हरिपुरको गमन करता है। निम्नश्रेणि व्यक्ति यथाशक्ति उपचार द्वारा पूजा कर सकता है। यह अनुकल्प धनवानोंके लिए नहीं है। धनवान् व्यक्तिके ऐसा करने पर वह निष्फल होता है।

मन्त्रसङ्केत—अर्थात् बीज। जैसे भुवनेश्वरी बीज।

"नकुलीशोऽग्निमध्यस्थो वामनेत्रार्द्धचन्द्रवान् ॥"

नकुलीश शब्दसे 'ह्', अग्नि शब्दसे 'र', वामनेत्र शब्दसे 'ई' और अर्धचन्द्र शब्दसे 'ँ'—इन सबसे "ह्रीँ" मन्त्रका उद्धार हुआ।

कामबीज, यथा—

'वर्णाद्य वह्निसंयुक्तं रतिबिन्दुसमन्वितम्।'

वर्णाद्य शब्दसे 'क्', वह्नि शब्दसे 'र्', रति शब्दसे 'ई' और बिन्दु शब्दसे 'ं'—इनसे "क्रीं" इस मन्त्रका उद्धार हुआ। इस प्रकारके लिए पञ्चमुण्डको मन्त्रसङ्केत कहते हैं। बीज शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

इस प्रकारसे जिस तरहका काम होनेसे उसको जो यन्त्र कहते हैं, वह जिस रीतिसे बनाया जाता है, इन सब सङ्केतोंके जाननेको यन्त्रसङ्केत कहते हैं। यन्त्रशब्द देखो।

पीठन्यास-पूजा। तन्त्रमें पीठन्यास-पूजा एक प्रधान अङ्ग है। तन्त्रसार-दीपिकाके द्वितीय पटलमें लिखा है—

"आदौ दीक्षां देवेशि पञ्चमा पीठपूजिता।
यस्य लिङ्गमात्रेण ज्ञानमुक्तो भवेन्नरः॥

सर्वेषामेव देवानां पीठपूजा प्रकीर्तिता।
अन्यथा विना विना च विघ्नमाप्नोति वराचन॥
विना पूजां विना ध्यानं विनाचारं महेश्वरि।
साधको ज्ञानमार्गेण मन्त्रमुक्त महामना॥
शक्तिके चैव शाक्ति तद्गेहेन भासितसंस्थितः।
कामं देवात् धनं देवात् तुष्ट देवात् प्रियोऽपि च॥
एतां सिद्धिं महेशानि न दद्यात् यस्य कस्यचित्।
कामी भोजक पूर्णपूजक उदयान्तरम्॥
कल्पादौ चतुर्दशी दिने दक्षिणे कार्त्तिके तथा।
पुष्करत्रयेण पीठानि वक्ष्यामि स्थापयित्वा तु॥
पीठोऽयं कथितः प्रोक्तं वह्निदिक्पूजा करान्तम्।
दक्षिण कालिका प्रोक्ता देवता तत्रमोचिता॥
पीठशक्ति च देवेशि पूर्व कलशो स्थाप्य प्रिये।
संख्याकरमासो सम्भवा परिकीर्तितौ॥
ज्ञानहस्ता घोरा भूतवेशी दिगम्बरीम्।
चतुर्भुजां महादेवीं मुण्डमालाविभूषिताम्॥
पञ्चाननापि वह्निसायोर्ध्वपात्रसमुद्यम्।
अमर्थ दरदैव दक्षिणयोर्ध्वपरिमितम्॥
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बरीम्।
कण्ठावसक्तमुण्डालीगलद्रुधिरचर्चिताम्॥
घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नतपयोधराम्।
शवरूप-महादेव-हृदयोपरिसंस्थिताम्।
महाकालेन च सार्द्धं विपरीतरतातुराम्॥
इत्येवं ध्यानमेवेत स्वेष्टदेवीं संस्थितः॥
रक्तपुष्पे रक्तवस्त्रे रक्तमाल्यसमन्वितैः।
संपूज्य कलशे मन्त्री परिवारान् समर्चयेत्॥
पीठपूजां ततो देवि साधकश्चिन्तयेत्।
प्रकृतिं कमठञ्चैव शेषं पृथ्वीं तथैव च॥
सुधाम्बुधिं मणिद्वीपं चिन्तामणिगृहं तथा।
श्मशानं पारिजातञ्च तन्मूले मणिवेदिकाम्॥
तस्योपरि मध्ये पीठं स्थापयेत् साधकोत्तमः।
चतुर्दिक्षु मुनीन् देवान् शिवांश्च सम्मुखम्॥
धर्माधर्मादीनि चैव यो वा ज्ञानमये नमः।
केशरेषु च पूर्वादिदिक्षु शक्तिमा तथा॥
कामिनी कामदा चैव रतिः प्रीतिस्तथैव च।
शिवा मध्ये महेशानि मध्ये देव मनोन्मनी॥

कालीं कपालिनीं कुल्लां कुरुकुल्लां विरोधिनीम् ।
विप्रचित्तां महेशानि बहिः षट्कोणकेषु च ॥
उग्रामुग्रप्रभां दीप्तां न्यसेत् पत्रत्रिकोणके ।
मात्रां मुद्रां सितांचैव न्यसेच्चान्यत्रिकोणके ॥
सर्वाः श्यामा असिकरा मुण्डमालाविभूषिताः ।
तर्जनीं वामहस्तेन धारयन्त्यः शुचिस्मिताः ।
दिगम्बरा हसन्मुख्यः स्वस्ववाहनभूषिताः ।
एवं ध्यात्वा प्रयत्नेन पूजयेदष्टपत्रके ॥
ब्राह्मीं नारायणीञ्चैव तथा माहेश्वरीं प्रिये ।
अपराजिताञ्च कौमारीं वाराहीमर्चयेद्बुधः ॥
नारसिंहीं प्रपूज्यैव ततो दक्षिणतो यजेत् ।
महाकालं यजेत् देवि विपरीतरतान्तरे ॥
दिगम्बरं मुक्तकेशं चण्डवेशं प्रयत्नतः ।
एवं संपूज्य यत्नेन भजेत् मन्त्रमनन्यधीः ॥
विना मद्यं विना मांसं यदि देवीं प्रपूजयेत् ।
देवता शापमाप्नोति मृतो नरकमश्नुते ॥"

वीराचार पूजामें पहले दीपनी आवश्यक है जिसके जाननेसे मनुष्य जीवन्मुक्त होता है इसीलिये समस्त देवताओंके लिए दीपनी कही गई है, इस विद्याके बिना आयत्त हुए कभी भी सिद्धि प्राप्त नहीं होती। साधक पूजा, ध्यान और आचारके बिना एकमात्र ज्ञान द्वारा मुक्त होता है तथा जो मुक्त होता है उसके कुलमें कोई दरिद्र वा मूर्ख नहीं रहता। प्राण, धन, कुल और तो क्या स्त्री भी दान की जा सकती है, किन्तु यह मन्त्र हर एकको नहीं देना चाहिये। कालीके वीजद्वय, उसके बाद कूर्च वीजद्वय और लज्जावीजद्वय, देवी दक्षिणकालिका, पुनः ये ही वीज होंगी। इसके ऋषि भैरव, छन्द उष्णिक् और देवी दक्षिणाकालिका हैं।

इसके वीज कूर्च और लज्जाशक्ति हैं, अङ्गन्यास और करन्यास मायावीज द्वारा करके देवीका ध्यान करना पड़ता है।

करालवदना, घोरा, मुक्तकेशी, दिगम्बरी, चतुर्भुजा इत्यादि रूपमें कालीका ध्यान करके मद्य, मांस, रक्तपुष्प और रक्तपद्म द्वारा तथा रक्त वस्त्रान्वित हो कर भक्तिपूर्वक पूजा करनी चाहिये।

उसके बाद परिवारपूजा, फिर पीठ-पूजा की जाती है। 'प्रकृति, कमठ, शेष, पृथ्वी, सुधाम्बुधि, मणिद्वीप, चिन्तामणिगृह, श्मशान, पारिजात, इनको जड़में मणिवेदिका बनावें। उसमें साधक रत्नपीठ मणिपीठ न्यस्त करें। चारों ओर मुनि, देवता, शिव, नरमुण्ड, धर्माधर्मादिको 'ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' इतना कह कर स्थापन न्यस्त करें।

पीछे साधक काली, कपालिनी, कुल्ला, कुरुकुल्ला, विरोधिनी, विप्रचित्ता, इन सबको बहिःषट्कोणोंमें न्यस्त करें।

उग्र, उग्रप्रभा और दीप्ताको पत्रत्रिकोणमें तथा मात्रा, मुद्रा और सिता को अन्य त्रिकोणमें न्यस्त करें।

बादमें "सर्वाः श्यामा असिकरा" इत्यादि मन्त्रद्वारा ध्यान करके अष्टपत्रमें भक्तिपूर्वक पूजा करें।

तदुपरान्त साधक ब्राह्मी, नारायणी, माहेश्वरी, अपराजिता, कौमारी और वराहीको पूजा करें। पीछे नारसिंहीकी पूजा करके फिर याग करें। विपरीत रतान्तरमें महाकाल याग करें। साधकको चाहिये, कि अनन्यचित्त हो कर चण्डवेश, मुक्तकेश और दिगम्बरको यत्नपूर्वक पूजा करें। मद्य और मांसके व्यतीत यदि देवीकी पूजा की जाय, तो देवता शापग्रस्त होते हैं और पूजाकारी व्यक्ति अन्तमें नरक जाता है।

"विना परस्त्रिया देवि जपेद् यदि तु साधकः ।
शतकोटिजपेनैव तस्य सिद्धिर्न जायते ॥
स्त्रियो गति स्त्रियो प्राणाः स्त्रियः सिद्धिर्न संशयः ।
नारीणां स्मरणे काली स्मारिता स्यान्न संशयः ॥
कण्ठे कण्ठं मुखे वक्त्रं वक्षोजे चोरसि प्रिये ।
तस्यै कुलरसं देवि पाययित्वा यथोचितम् ॥
स्वयं पीत्वा जपेन्मन्त्रं सिद्धिर्भवति नान्यथा ।" ।

साधक परस्त्रीके बिना यदि जप करें तो शत कोटि जप करने पर भी उसको सिद्धि प्राप्त न होगी। क्योंकि इसमें स्त्रीही एकमात्र गति है, स्त्री ही एकमात्र प्राण है, स्त्री ही एकमात्र सिद्धि हैं, इसमें जरा भी संशय नहीं। नारीके स्मरणसे कालीका स्मरण करना होता है। कण्ठसे कण्ठ, मुखसे मुख, उरस्थलसे वक्षोज, इस तरह उसको कुलरस पिला कर और खुद पी कर यथोचित जप करें।

इस प्रकारसे जप करने पर सिद्धि होती है, अन्यथा होने पर सिद्धि नहीं होती।

इसमें अधिकारी कौन है?

"एतस्य च प्रयोगेण स्वसिद्धिस्य प्रजायते।
कलिकालान्तरमेषु नाधिकारी स उच्यते॥"

ऊपर जो कहा गया है, उस पर जिसकी भ्रान्ति उपस्थित हो, वह घोराचारपूर्णमें अनधिकारी है।

पुरश्चरण—

"जपमात्रजपेनैव पुरश्चरणमुच्यते।
क्षत्रियाणां द्विगुणं स्यात् वैश्यानां त्रिगुणकम्॥
शूद्राणान्तु चतुर्गुणं पुरश्चरणमुच्यते।
अथवात्र जपेद्देवि हविष्याशी दिवाशुचिः॥
रात्रौ निशीथे ताम्बूलं पीत्वा कुलरसं प्रिये।
कुलनारीयुतो देवि जपेल्लक्षमनन्यधीः॥
एवमुक्तविधानेन दशांशं होममाचरेत्।
तद्दशांशं तर्पणं च तद्दशांशाभिषेचनम्॥
तद्दशांशं द्विजभोज्यं कीर्तितं पार्वतीपते।
पुष्पैर्मांसमकरन्देन होमतर्पणमाचरेत्॥
एवं प्रयोगमात्रेण सिद्धो भवति नान्यथा।
सम्पूर्णसिद्धिं लभते देवि कलियुगे प्रिये॥
धनेनापि कुबेरस्यात् विद्यया स्यात् बृहस्पतिः।
भारतीयोगिवत् भूत्वा अन्ते मुक्तिमवाप्नुयात्॥"

जपमात्र जप ही इसका पुरश्चरण है किन्तु क्षत्रियके लिये दो लाख, वैश्योंके लिए तीन लाख और शूद्रोंके लिए चार लाख जपका पुरश्चरण होता है। यदि दिनमें हविष्याशी हो निशीथरात्रमें कुलरस पी कर तथा कुलनारीयुक्त हो अनन्यचित्तसे एक लक्षका जप करे। इस तरहसे जपकार्यको पूरा करके विधानानुसार दशांश होम, दशांश तर्पण और दशांश अभिषेक करे बादमें दशांश ब्राह्मण भोजन करावें। पुष्पकी मकरन्द द्वारा होम तथा तर्पण करें। इस प्रकारसे प्रयोग किया जाय तो सिद्धि होती है, अन्यथा होने पर नहीं। साधक सिद्धि तथा निमग्न कवित्वशक्ति प्राप्त होती है, धनमें कुबेरके समान, विद्यामें बृहस्पति तुल्य और भोजन कम्पात्य पर्यन्त जायी होता है। अन्तमें वह मुक्ति लाभ करता है।

"प्रयोगे स्थापयेत् च सुरा दुग्धसमा भवेत्।
लोहितं वा भवेद्देवि मांसं पुष्पसमं भवेत्॥
सुरापाने भवेत् सुम्भे मांसानां विशेषतः।
कामचकाश्वतायेन पुष्पं पुष्पान्तरं भवेत्॥
नवनीतं मांसतुल्यं मांसं पुष्पं भवेत् प्रिये।
एवं ज्ञात्वा साधकेन्द्रो जायते च क्रमेण तु॥"

इसके प्रयोगारम्भकालमें सुरा दुग्धतुल्य और मांस पुष्पस्वरूप है। सुरा और मांसपात्र बादमें शून्य हो जायेंगे। उनमें बाकी कुछ न बचेगा। इसमें नवनीत मांसतुल्य है। साधकको इस प्रकार ज्ञान कर कार्य करना उचित है।

"सौवर्णं राजतं चैव तथा मौक्तिकमेव च।
विद्रुमं पद्मरागं च तथैव हरवल्लभे॥
प्रोक्तं मालाचतुष्कं च यत्नानेन भाविताः।
ग्रथयेत् पट्टसूत्रेण पुष्पिण्यो ऋतुमतिनी॥
गोमयेन धरातले वर्णाढ्ये कुलेश्वराम्।
स्थापयेत् च घटस्येव मकरन्देन पार्वति॥
तारं माया कूर्चयुग्मं वह्नि जाये पदं तथा।
वहि चाप ! समुच्चार्य मन्त्राभिमन्त्रयेत्॥
स्थापयेत् पीठमध्ये तु घटशाखे वरानने।
ततश्चां मालिकां देवि गृहीत्वा वस्त्रतः सुधीः॥
ज्ञाता सिद्धिस्तु सिद्धे वसेत्जपमाचरेत्।
षोडशाब्दा चतुरश्री समाधीन प्रयत्नतः॥
तद्गुह्ये रक्त कर्णे स्थापयेत् हरवासिता।
विधाय वारलीमन्त्रैर्भिम्बपुष्पे हृदन्तिमिः॥
पूजयित्वा च विधिवत् भोजयेत्ता वरानन्माम्।
आसव पाययेत् श्रीमन् मिश्रं तन्मय पिबेत्॥
ततो मन्त्री स्मयेत्ता रतिनिःकन्दे स्त्रा यदा।
तस्या हस्ते ततो मालां दत्वा तां वाचयेद्गुरुः॥
नीत्वा मालां तथा दत्तां मातृमान् भोजयेत्ततः।
तदा जपेदर्हतो साक्षात् भवति नान्यथा॥"

सुवर्ण, रौप्य, मौक्तिक विद्रुम और पद्मराग, इनकी माला पट्टसूत्रमें गूंथ कर उनसे ऋतुवतियों पुष्पिणियों को पूजित करें। बादमें पञ्चमय और मकरन्द द्वारा ध्यान करावें। इसके बाद कलिकासाला (स्वाहा) उच्चारण कर अभिमन्त्रण करना और पीठके मध्य मालिकाको स्थान

कराना चाहिये। इस प्रकारके आचरण करनेसे सिद्धिको निकटवर्ती समझें और महोत्सव करें। षोड़शवर्षीया युवतीको यत्नपूर्वक ला कर शुद्ध जल और गन्ध द्वारा स्वयं उसको स्नान करावें। फिर दिव्य अलङ्कार, सुगन्ध पुष्प और मिष्टान्नादि द्वारा पूजा करके तन्मय हो कर उसको आसव पिलावें और स्वयं भी पीवें। उस समय यदि वह षोडशी युवती रतिके लिये प्रार्थना करे, तो उसके साथ रमण करें, तथा उसके हाथमें माला देवें। पीछे उस मालाको उससे वापस ले कर ब्राह्मण-भोजन करावें। इसके बाद आधी रातको जप करनेसे निश्चय साक्षात् होगा, इसमें अन्यथा नहीं।

"तत्रापि प्रत्ययो नोचेत् कक्षामध्ये विशेद्बुधः।
पर्यङ्कस्य चतुःपार्श्वे पट्टसूत्रं मनोरमम्॥
बद्धा द्वाविंशतिं ग्रन्थिं रम्भापूटितमूलकैः।
निविश्यैव स्वरक्षार्थं पाञ्चाली सैन्धवी तथा॥
वक्ष्यमाणक्रमेणैव वस्त्रोपरि निधापयेत्।
षोडशाब्दां परलतां गणिकां च विशेषतः॥
समानीयप्रयत्नेन दिव्यपुष्पैर्निवेदयेत्॥
भोजयेत् मिष्टभोज्यानि क्षौमकं परिधापयेत्।
लेपयेत् दिव्यगन्धेन भूषणैर्भूषयेत् स्वयम्।
रमयेत् परया भक्त्या साधकः सिद्धिहेतवे॥
जपस्यार्द्धजपेनैव सिद्धिर्भवति नान्यथा।
विना मद्यं महेशानि न सिध्यति कदाचन॥
तस्मादादौ प्रयत्नेन पीत्वा तां पाययेद्बुधः।"

पूर्वोक्त प्रकारसे यदि ज्ञानोत्पत्ति अर्थात् सिद्धि न हो तो इस प्रकारसे करने पर सिद्धि होगी—

साधक कक्षाके बीच निर्विघ्नित हों, फिर पर्यङ्कके चारों ओर मनोहर पट्टसूत्रसे रम्भापुटित मूलक द्वारा बाईस गाँठे बाँध कर अपनी रक्षाके लिये वक्ष्यमाणके नियमानुसार पांचाली और सैन्धवी वस्त्रके ऊपर स्थापित करें। बादमें साधक यत्नके साथ षोड़शी परलता वा गणिकाको ला कर उसको दिव्य पुष्प देवें और मिष्ट भोजन खिलावें, क्षौमवस्त्र पहनावें तथा दिव्य गन्ध और भूषण द्वारा विभूषित करें। साधक सिद्धिके लिये परा भक्तिके द्वारा उसके साथ रमण करें। इस तरहसे सब कार्य कर चुकनेके बाद जपका अर्द्धभाग जपनेसे ही सिद्धि होती है। किन्तु इसमें मद्यके विना कभी भी सिद्धि नहीं हो सकती। इसलिये पहले यत्न पूर्वक स्वयं मद्य पान करके और उसको पिला कर पीछे जप करना चाहिये।

"तत्रापि प्रत्ययो नोचेत् चरुहोमं प्रकल्पयेत्।
निशीथे निर्भयो देवि श्मशाने प्रान्तरे तथा॥
गन्धैः स्नानादिकं कृत्वा पादशौचादिपूर्वकम्।
घटमारोपयेत्तत्र सौवर्णं राजतं तथा॥
ताम्रं वा तन्महेशानि विभवानुक्रमेण तु।
कल्पयित्वा निशाभागे पूजयेत् परमेश्वरीम्॥
उपचारैर्यथाशक्ति वित्तशाठ्यं विवर्जयेत्।
देवीपूजा वावायेत्र पिष्टन्तु परिदापयेत्।
चरौ निधाय यत्नेन चतुःपिष्टकवर्त्तुलम्।
ततश्चरुं पाचयेत्तु कुण्डमध्ये तु पूजयेत्॥
रक्तां घर्नां बलाकाव नीलां कालीं कलावतीं।
द्वारेषु पूजयेन्मन्त्री लोकपालान् प्रयत्नतः॥
ग्रहान् सम्पूजयेन्मन्त्री चतुष्कोणक्रमेण तु।
हविर्दारां हुनेन्मन्त्री यथाशक्त्या ततश्चरुम्॥
श्रावयेत् मूलमन्त्रेण मधुना सिद्धिहेतवे।
हुत्वा संच्छादयेन्मन्त्री ततो दक्षिणकालिकाम्॥
धूपदीपश्च नैवेद्यैः प्रदक्षिणमथाचरेत्।
पिष्टवर्त्तुलसंख्यातं सुवर्णादि प्रजायते॥
एकेनैव प्रयोगेण यदि सिद्धिर्भवेत्प्रिये।
तथा होमो द्वितीयेन रौप्यं वापि सुरेश्वरि॥
तृतीयेन भवेत्ताम्रं लौहं तुर्येण च स्मृतम्।
एषामन्यतमां ज्ञात्वा साधयेत् सिद्धिमुत्तमाम्॥
सिद्धाया कालिकायाश्च नेन्द्रं दुर्लभमुच्यते।
गुरुमूलमिदं सर्वं तस्मादादौ समर्चयेत्॥
तस्य प्रसादमात्रेण सिद्धो भवति नान्यथा।"

पूर्वोक्त प्रकारसे यदि सिद्धि न हो, तो साधकको चरु-होम करना चाहिये। साधक श्मशान या प्रान्तरमें जा कर निशीथ समयमें वहां स्नान करें। अनन्तर पाद-शौचादि पूर्वक विभवानुसार सुवर्ण, रजत वा ताम्रमय घट स्थापन करके पूजा करें। देवी-पूजाके उपचारके विषयमें कृपणता न करनी चाहिये। यथाशक्ति देवी पूजा करके पिष्टक बनावें। वर्त्तुलाकार चतुःपिष्टकको

यत्नपूर्वक घरमें रख कर जपपाठ करे और कुण्डके मध्य पूजा करे। साधकको उचित है कि, रम्भा, घना बलाका, मोचा, काली कदलकी और दारुसमूहकी जोड पार्वोको पूजा करे। पीछे चतुष्कोणकी क्रमसे सबोंकी पूजा तथा यथाशक्ति बलिद्वारा प्रक्षेप करे। मूलमन्त्र और स्तुति द्वारा बलि तथा दीप, धूप, नैवेद्य आदिके द्वारा पूजा करके प्रदक्षिणा देनी चाहिये। बादमें पिड बर्तुंक स स्थाने अनुसार सुवर्णादि उत्पन्न होते हैं। एक प्रयोगमें यदि सिद्धि हो तो होम करना पड़ेगा। द्वितीय द्वारा रौप्य, तृतीयसे ताम्र और चतुर्थसे लौह होता है। इनमें अन्यतम होने पर उत्तम सिद्धि जाननी चाहिये।

इस प्रकारसे कालिका सिद्ध होने पर इन्द्रत्व भी दुर्लभ नहीं है।

ये सभी सिद्धि गुरुमूलक हैं, गुरुके बिना किसी तरह भी सिद्धि नहीं हो सकती। इसलिये सबसे पहले गुरुकी अर्चना करे। गुरुके साधक पर प्रसन्न होने से सिद्धि होती है। अन्यथा नहीं।

"तथापि प्रसन्नो नो चेत् प्रदक्षिणमथाचरेत्।
अमावास्यादिने चैव निशीथे ध्यानमाचरेत्॥
श्मशाने प्रान्तरे वापि गत्वा देवीं प्रपूजयेत्।
मद्यमांसोपचारैश्च धूपदीपैर्मनोरमैः॥
नैवेद्यैः पायसान्नैश्च तथैव परमान्नकैः।
इन्दीवरादिपुष्पैश्च समानयत्नपूर्वकैः॥
जपन्मूलं मोहयन्त्र प्रदक्षिणमथाचरेत्।
प्रणमेद्दण्डवद्भूमावभिलाषीत सिद्धये॥
निशावासुरुयं यावन्नियतो महेश्वरि।
यदि भीतिर्भवेत्तस्य तदा शङ्करं स्मरेत्॥
इन्द्रादिदिक्पालांश्चैव मनसा संस्मरेत्।
अवश्यं श्रूयते शब्दः शिवा च दृश्यते ततः॥
यदि तत्र भवेद्देवि शब्दो घुमघुमो भवेत्।
तदा पराक्रान्तस्य पुन कार्यं तथैव च॥
तदा यदि वाञ्छति देवमाली शुभोदया।
सिद्धिसमयं ज्ञात्वा यथोक्तमथाचरेत्॥"

इसके भी यदि सिद्धि न हो, तो प्रदक्षिण आचरण करना चाहिये। साधकको चाहिये कि, वे अमावास्याके दिन निशीथ रात्रिको भयरहित हो कर श्मशान अथवा प्रान्तरमें जा कर वहाँ देवीको मद्य, मांस, धूप, दीप और मनोरम उपचार, पायसान्न, इन्दीवर और अन्यान्य पुष्पादि द्वारा पूजा करे। बादमें मूलमन्त्रका जप और दण्डवत् हो कर प्रदक्षिण करे।

जब तक निशा शेष न हो तब तक हो प्रदक्षिणा करना प्रशस्त है। यदि साधकको उस समय भय उपस्थित हो तो उस समय उनको शम्भु इन्द्र और इन्द्रादि दिक् हो कर मन हो मन स्मरण करना चाहिये। उस समय अवश्य हो शब्द सुनाई पड़ेगा और उस स्थान पर शिवा दिखाई देगी। यदि वहाँ घुमघुम शब्द हो, तो पराक्रमसे साधक हो कर पुनः कार्य आरम्भ करे और उसके बाद यदि शुभोदया देववाणी हो तो सिद्धिको उपस्थित जान कर प्रतीक्षा करे।

"तथापि प्रसन्नो नो चेत् गण्डमसमथाचरेत्।
कामिनीं युवतीं स्वामात् पुरीतकम्प विशेषतः॥
शालग्राम वक्षोन तस्य च मूलमथाचरेत्।
तत्पुत्रस्य लावण्येन सुवर्णैस्वर्णैस्तथा॥
स्त्रियर्गोमहिला च मनसा परमशा शिवे।
तां स्त्रियां स्त्रियाश्चैव स्थापयेद्धर्मनन्दने॥
तत्र पूजां विधायैव नानालङ्कारभूषितां।
तर्पयेत् सम्पूज्य तस्य स्वयम्भुकुसुमादिभिः॥
अन्यथा नगरन्धा अन्यदेशो समर्चयेत्।
पूर्वोक्तप्रकारेण तु ततो देवीं प्रपूजयेत्॥
स्वयम्भू स्वयम्भू स्वयम्भू स्वयम्भू नीरधे।
पूजयेत् भक्तितो मन्त्री देवीदर्शनकाम्यया॥
एतस्मिन् समये देवि सीमिपाठ वा यदा।
अन्यस्तु एतस्मिन्नेव कालमेव क्रीति च॥
पुनिनीमवमेव तथा होमं समाचरेत्।
ओं नमस्ते जगन्माया जगन्नाथ शुभे॥
महामाये महाभागे मोक्षदेहिकरामिति।
ममपाद्याः प्रसादेन मम सिद्धिर्भविष्यति॥
अपकर्षं नरपेत् वाच्य वाञ्छ कार्यं विचारया।
इति ते कथितं देवि गुह्याद्गुह्यतरं परं॥
प्रमाणात् कार्यसिद्धिः स्यात् तस्मात् यत्नेन गोपयेत्।"

इससे भी सिद्धि न हो तो साधकको प्राणत्याग करना

चाहिये। साधकको उचित है कि, एक युवती पुष्पिणी कामिनीको यत्नपूर्वक ला कर स्वयं उसको गन्धादि द्वारा भूषित करें। उसको मिष्टान्न भोजन करा कर तथा विवस्त्रा (नंगी) करके जर्द्धतल्प पर स्थापन करें। पीछे रक्त चन्दन और अलक्तक द्वारा यन्त्र बनावें और नाना उपकरणोंसे पूजा करें। भगयागमें भग ही नाम है, भग ही प्राण हैं, भग ही देह है और भग ही स्तन है. अष्ट पत्रके मध्य देवीकी पूजा करें। पूजा करते समय रक्त-गन्ध, रक्तवस्त्र, रक्तमाल्य आदि प्रदान करें। देवीके दर्शनको कामना करके इस प्रकारसे पूजा करें। उस समय यदि वह रतिके लिए प्रार्थना करे, तो जब तक होम न होवे तब तक लभामें रत रहना चाहिये। पीछे पुष्पिणी-मकरन्द द्वारा होम करें। औं भगमालायै नमः, तुम भगरूपधारिणी हो तुम महाभागा हो, तुम्हीं एक मात्र मोक्षदायिनी हो, इत्यादि कह कर प्रणाम करें। 'तुम्हारे अनुग्रहसे मुझे सिद्धि प्राप्त हो, इस प्रकारका आचरण करनेसे सिद्धि होती है। यह अत्यन्त गुह्यतम है। कोई इसको प्रकट कर दे तो कार्यमें हानि होती है। इसलिए इसको सब तरहसे गुप्त रखना चाहिये।

'अत्राशक्तो महेशानि कलावतीं समाचरेत्।
कुंकुमं चन्दनं चन्द्र एकीकृत्य तु पेषयेत्॥
जपेत् सहस्रं देवेशि देवीञ्चैव प्रपूजयेत्।
कामिनी पूजयेत् भक्त्या तस्या मूर्द्धनि कारयेत्॥
तिलकं वश्यमात्रेण स्वयं शिरसि धारयेत्।
रमा वाणीर्भवानी च सर्वं सम्मोहिनी तथा॥
ऐंयुता परमेशानि वह्निशान्तावधिर्मनुः।
अनेन शतजपेन तिलकं मूर्ध्नि कारयेत्॥
कलाञ्च पूजयेद्यत्नात् नानाभरणभूषिताम्।
पाययेत् सा स्वयं यत्नात् स्वयं पीत्वा च यत्नतः॥
जायते दैववाणी च ततो देवीं न संशयः।
एवं भूत्वा वरारोहे ततो यत्नं समाचरेत्॥
अथवा देवदेवेशि नग्नीभूय विचक्षणः।
नग्नां परलतां पश्यन् जपेत् मन्त्रमनन्यधीः॥
यामोत्तरं समारभ्य यामद्वयमतन्द्रितः।
मद्यमांसोपचारैश्च पूजयित्वेष्टदेवताम्॥
रक्षार्थंखड्गपाणिस्तु स्वपार्श्वेऽपि नियोजयेत्।
गणनाथं क्षेत्रपालं वटुकं योगिनीं तथा॥
एभिभिः सामिषान्नेनैव यजेत् परमसुन्दरि।
घृतप्रदीपं प्रज्वाल्य ततो देवीं समर्चयेत्॥
ततः सहस्रं जपतो देवत दर्शनं भवेत्।
अथवा नियमीभूत्वा भूतलिप्यादिसंपुटम्॥
जपेत् प्रतिदिने देवि सहस्रं सिद्धिहेतवे।"

यदि पूर्वोक्त कार्यमें साधक अशक्त हों, तो उन्हें कलावती आचरण करना चाहिये। कुङ्कुम चन्दन और चन्द्र (कर्पूर) को एकत्र करके पेषित करें तथा सहस्र जप करके देवीको पूजा करें। अनन्तर कामिनी-पूजा करें। ऐंयुता इत्यादि मंत्र सौ बार जप कर उसके मस्तक पर तिलक लगा दें और खुद भी तिलक लगावें। यत्नपूर्वक नाना आभरणसे भूषित कलाको पूजा करें। पीछे यत्नपूर्वक मद्य पी कर उसको भी पिलावें और उस समय दैववाणी होने पर और भी यत्नके साथ जपादि आचरण करें। अथवा उस समय साधक स्वयं नग्न हो कर तथा उसको नंगी करके, उसे देखते हुए अनन्यचित्तसे जप करें।

यामोत्तरमें प्रारम्भ करके यामद्वय अतन्द्रितभावसे मद्य और मांस आदि उपचार द्वारा इष्टदेवीको पूजा करें। आत्मरक्षाके लिए खड्गधारी होना तथा पार्श्वमें रक्षा करना जरूरी है।

तत्पश्चात् गणनाथ, क्षेत्रपाल, वटुक और योगिनी, इनका सामिषान्न द्वारा याग करें तथा घृतप्रदीप प्रज्व-लित करके देवीको अर्चना करें। इस प्रकारसे हजार जप करने पर देवताके दर्शन होते हैं। अथवा नियमी हो कर भूतलिप्यादि संपुट प्रतिदिन हजार जप करें। इससे भी सिद्धि होती है।

"दिवारात्रौ संस्मरणं हविष्याशनमेव च।
कुमारीं पूजयेत् यत्नात् नानाभरणसंयुताम्॥
मासे पूर्णे वरारोहे निशीथे मत्तसाधकः।
महापूजां प्रकुर्वीत लतामण्डलमध्यगः॥
मद्यै मांसैश्च विविधैरन्यैश्च विविधैस्तथा।
संपूज्य विधिवद्भक्त्या सर्वदा तिमिरालये॥
सहस्रजपमात्रेण सिद्धिर्भवति नान्यथा।
साक्षादायाति सा देवी सत्यं सत्यं न संशयः॥
साक्षात् याति वरारोहे भवेदिन्दुसमोनरः।

अजयं पादुकासिद्धिः खड्गसिद्धिरपि ध्रुवम् ।
अञ्जनसिद्धा इत्ती कामिनी सिद्धिहेतवे ।
तथा मधुमती सिद्धिर्जायते नात्र संशयः ।
इत्येवं मदमत्त शतशश्चाप्यथापि हि ।
स्वर्गे मर्त्ये च पाताले न यत्र गन्तुमिच्छति ।
तत्रैव चेटिका सर्वा नयन्ति नात्र संशयः ।
रम्भा वा उर्वशी वा यदि जपति त्यक्षः ॥
मर्त्येन साधि ना इत्ती नात्र कथा विचारणा ।
इच्छामात्रेणैव हि दिव्यानि नयन्ति ते ॥"

अथवा साधक रतिकालमें दो बार दिवाराज उसकी का स्मरण करे और नानाप्रकारके भूषित कुमारी की पूजा करे। इस प्रकार एक मास करके मासके अन्तिम दिनमें निशीथके समय निज शय्यामें मनामण्डनमें मग्न गत हो कर सहाय आ करे। मद्य मांस आदि विविध उपचारों द्वारा विधिवत् पूजा करके मन्त्र जप करे इससे निश्चय ही सिद्धि होगी। सिद्धि प्राप्त होनेके बाद देवीका साक्षात् होगा। इस तरहसे पादुकासिद्धि खड्ग सिद्धि, मधुमती आदिकी सिद्धि निश्चय ही होगी। जिसको सिद्धि प्राप्त होती है सैकड़ों चेटिका किंकरा आदि उसके वशीभूत हो जाती हैं तथा स्वर्ग मर्त्य और पातालमें कहीं जानेकी इच्छा हो, उसी समय चेटिकायें उन्हें ले जाती हैं। साधक यदि रम्भा, तिलोत्तमा आदिका जप करे, तो वह भी उपस्थित होगी और उसकी इच्छानुरूप होगी।

"अथवा वनितां गत्वा पूजयेत् भक्तिभावतः ।
तथा च जपेन्मन्त्रं निशीथे सिद्धिमाप्नुयात् ॥
निवेद्य दत्वा भक्त्या जपेन्मन्त्रं प्रयत्नतः ।
एवं कृत्वा दिनान्तु मासमेकं न संशयः ॥
अर्काद्दिनमेवाहात् निजं स्वादिप्रभोजनम् ।
मासपूर्णे साधकेन्द्रो निशीथे च समायुतः ॥
साक्षात् पूजाक्रमेणैव पूजयेत् परमेश्वरीम् ।
महातिमिरमध्यस्थो जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥
तत्क्षणात् साधके सिद्धिं ददाति देवी ते ।"

अथवा साधक मणिकारी पास जा कर भक्तिपूर्वक पूजा करे। उसके साथ सहस्र बार मन्त्र जपे और अनन्त उत्साह पूर्वक उसको प्रणाम विना कर एक भी

मैं। इस तरहसे एक मास तक अनुष्ठान करे। प्रति दिन होम और ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिये। मास पूर्ण होने पर साधक निशीथ रात्रिमें स्नानशुद्ध हो कर साक्षात् पूजाक्रम द्वारा परमेश्वरीकी पूजा करे और महातिमिरमें एकाग्रचित्तसे मन्त्र जपे। ऐसा करनेसे साक्षात् सिद्धि होगी।

"अथवापि वारांङ्गे प्रयोगविधिमाचरेत् ।
नरमुण्डं समानीय मार्जारस्यापि वायसीं ।
खेचरं समानीय भूमौ निक्षिप्य साधकः ।
तत्र पीठं समारोप्य देवीं ध्यात्वा तु साधकः ॥
पूजयेदर्द्धरात्रौ साधकः समन्वितः ।
जपेत् परया भक्त्या सहस्रमपि साधकः ॥
ततः साक्षात् भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा ॥"

अथवा साधकको चाहिये कि प्रयोग विधिका अनुष्ठान करे। साधक नरमुण्ड मार्जार-मुण्ड और भी मुण्डको यत्नपूर्वक ला कर भूमि पर निक्षेप करे। उस पर पीठ आरोपण करके देवीका ध्यान और अर्द्धरात्रिमें समग्र पूजा करे और पानभादि युक्त हो कर भक्तिके साथ सहस्र जप करे। इतनेहीसे देवी साक्षात् दर्शन देंगी और साधक भी सिद्धि लाभ करेंगे।

"अथवा वनितां गत्वा यत्वा देवैरि कारयेत् ।
पीत्वा तदधरं सम्यक् कर्पूरेण तु पूरयेत् ॥
तद्योनौ तु कुङ्कुमेन तत्कर्णे कौङ्कुमेन च ।
ततो मुक्त्वा तु तां कान्तां तत्कन्यं परमेश्वरि ॥
तत् तु कुङ्कुम तत्त्वोऽप्येकीकृत्य प्रयत्नतः ।
तेन तिलकं कृत्वा निशीथे चतुरात्मना ॥
सहस्रन्तु जपेत् मन्त्री तदा साक्षात् भवेद्धरा ।"

अथवा साधक रमणी योग्य स्त्रीमें रत हो उसके अधरामृतको पान कर पीछे कर्पूर पूरण करे। योनि पर कुङ्कुम और कर्णमें कौङ्कुम प्रदान करे। पीछे उसके साथ उन कुङ्कुम आदिको एकत्र कर उससे तिलक करे। तिलक लगा कर निशीथ रात्रिमें निर्भय हो हजार बार जप करे। ऐसा करनेसे देवी साक्षात् होगी।

"अथवापि हरीन्द्रियनिरेव कारयेत् ।
मन्त्र निर्माय यत्नेन तत्र देवी समर्पयेत् ॥
मद्यमांसोपचारैश्च कर्कुन्दैर्यजेत् ।
साधकमात्रेण सिद्धो भवति नान्यथा ॥"

अथवा साधक अपने शरीरसे उत्थित रुधिरके द्वारा यन्त्र बना कर मद्य और मांस उपचार तथा अर्कपुष्प द्वारा देवीकी पूजा करें, फिर अनन्यचित्त हो कर हजार जप करें। इससे साधकको सिद्धि हो जायगी।

"अथवा परमेशानि गंगातीरे वसेत् सुधी।
उपवासद्वयं कृत्वा कुर्यात् स्नानमतन्द्रितः॥
ततो देवीं समभ्यर्च्य धूपदीपैर्मनोरमैः।
हविष्यान्नैश्च नैवेद्यैः स्वयं भुञ्जीत वाग्यतः॥
भुक्त्वा पीत्वा स्त्रिया सार्द्धं निशीथे गतसाध्वसः।
जपेत् सहस्रं देवेशि ततः सिद्धिर्वरानने॥"

अथवा साधक गङ्गाके किनारे जा कर दो उपवास करें, फिर अतन्द्रितभावसे स्नान करें तथा धूप, दीप, हविष्यान्न और नैवेद्य द्वारा पूजा करके स्वयं हविष्यान्न भोजन करें।

भोजन और पान करके स्त्रीके साथ निशीथरात्रिमें निर्भय हो सहस्र जप करें। इससे साधकको सिद्धि होगी।

"अथवा वटमूलस्थो दिग्वासामुक्तकेशवान्।
लताभिर्वेष्टितोभूत्वा जपेन्मन्त्रमनन्यधीः॥
ततः साक्षात् भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा।"

पूर्वोक्त उपायसे यदि सिद्धिलाभ न हो तो साधक नग्न और मुक्तकेश हो वटवृक्षके तले लता द्वारा वेष्टित हो कर अनन्यचित्तसे मन्त्र जपें। इसीसे निश्चय ही देवीका साक्षात्कार होगा।

"एतेनापि प्रयोगेन यदि साक्षान्नजायते।
ततो देवि! प्रवक्ष्यामि उपायं परमाद्भुतम्॥
एकेनैव प्रयोगेण यदि साक्षान्नजायते।
द्वितीयं वापि कुर्वीत तृतीयं वाथवा प्रिये॥
तृतीयेन नचेत् सिद्धि स्तत्रोपायं वदामि ते।
वस्त्रे शुक्ले तथा रक्ते पीते वा नीलवाससि॥
पुत्तली रचयेद्देव्याः सर्वावयवसुन्दरीम्।
पूजयेत् क्रोधरूपेण रक्तवर्णैर्मनोहरैः॥
तत्र देवीं जपेत् यन्त्रे समभ्यर्च्य सहस्रकम्।
रक्तचन्दनबीजेन तत्र कल्पितमालया॥
ततः शाल्मलीकाष्ठेन निम्बकाष्ठेन वा प्रिये।
वह्निं प्रज्वाल्य यत्नेन तत्र वह्निं प्रपूजयेत्॥
ततः पुत्तलिका भाले लिखेत् मन्त्रं वरानने।
सिन्दूरपुत्तलीं देवि ततो वह्नौ तु तापयेत्॥
ताड़येत् मूलमन्त्रेण मूलमन्त्रेण रक्षयेत्।
क्षालयेत् शुद्धदुग्धेन अथवा दधिवारिणा॥
ततो हुंकारं प्रजपेत् सहस्रं परमेश्वरि।
ततः साक्षात् भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा॥"

पहले जितने भी उपाय कहे गये हैं, उनमें यदि देवीके साक्षात न हो, तो साधकोंके हितार्थ और भी एक परम अद्भुत उपाय कहा जाता है। यदि एक प्रयोगके द्वारा सिद्धि न हो, तो द्वितीय और तृतीय उपाय जानना चाहिये।

पहले शुक्ल, रक्त, नील और पीत वस्त्रमें सम्पूर्ण अवयवसम्पन्न एक पुत्तलिका बनावें। मनोहर रक्तवर्ण द्वारा क्रोधरूपमें उस मूर्तिकी पूजा करें। उसके बाद यन्त्रमें रक्तचन्दन लिखित बीजमन्त्र द्वारा अभ्यर्चना करके सहस्र जप करें। तत्पश्चात् शाल्मलीकाठ वा निम्बकाठके द्वारा अग्नि जलावें और पूजा करें। अनन्तर पुत्तलिकाके कपाल पर मन्त्र लिखे और सिन्दूरका पुत्तलिकाको अग्निमें तपावें। मूलमन्त्र द्वारा ताड़न और रक्षा करें। बादमें दुग्ध अथवा दधि वा जल द्वारा क्षालित करें। पीछे सहस्रवार हुङ्कार मन्त्रका जप करें। इससे निश्चय ही देवीके साक्षात् दर्शन होंगे, इसमें सन्देह नहीं।

"अथवा ताड़येत् देवि नारसिंहेन पार्वति।
हविष्याशी दिवा भूत्वा ब्रह्मचारिसमो नरः॥
रात्रौ ताम्बूलपूरास्यो लतामण्डलमध्यगः।
नारसिंहेन देवेशि पुटितन्तु मनुं जपेत्॥
ततो लक्षजपेनैव साक्षात् भवति नान्यथा।
अवश्यं जायते साक्षात् ममैव वचनं यथा॥"

अथवा नारसिंह मन्त्र द्वारा देवीको ताड़ित करे, दिनमें हविष्याशी हो कर ब्रह्मचारीके समान होवें। रात्रिको ताम्बूल चर्वण करके लतामण्डल मध्यवर्ती हो नारसिंह मन्त्र पुटित कर जप करें। इस प्रकार १ लाख बार जप करनेसे देवी साक्षात् दर्शन देती हैं। इसमें बिन्दुमात्र भी सन्देह नहीं।

"अथवापि वरारोहे नौकालौहेन पार्वति।
शूलं निर्माय यत्नेन पटे देवीन्तु लेपयेत्॥

तां पूजयेत् प्रयत्नेन रक्तवस्त्रानुलेपनैः ।
पुष्पमिश्च प्रयत्नेन तरुणीं पीठदेवताम् ॥
आसाद्य विधिवत्तस्या जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ।
एक चैत्रमपैतलाताईन समपुर्णकम् ॥
यो महागुरु मनस्तुष्टः सर्वैश्चमन्तवादिभिः ।
अखण्ड समुचार्य ततः एवेन वर्तते ।
हृदये देव तर तसी आयाति च न संशयः ।
अतस्य जायते साक्षात् सर्वेव भक्त यथा ॥"

पूर्वोल्लिखित उपायसे यदि देवीका साक्षात् न हो, तो मोका-मील द्वारा शून्य बनावें और उसमें यथापूर्वक देवीकी कल्पना करें। रक्तचन्दन और रक्तपुष्प द्वारा भक्तिके साथ उसकी और पीठ देवतायोंकी पूजा करें। पीछे विधिपूर्वक अनन्यचित्तसे मन्त्र जपें। अनन्तर गुरुकी पूजा कर "ॐ महागुरु" इस मन्त्रके द्वारा प्रणाम करे। इस प्रकारके प्रयोगसे कालो निश्चय दर्शन देंगी।

"अथवा कालिकायोश्च एतत् कौलिक सत्तम ।
एकैक तु कुलेन तत्र देवीसमयका ॥
सिन्दूरं पुनि देवेशि तत्र कान्तां समानयेत् ।
तदग्रे पूजयेद्देवीं मायामन्त्रसमुन्नताम् ॥
निशीथे तु जपेन्मन्त्रमेकान्ते भोजया वह ।
जपेन च वदेत् तु ततः साक्षात् भवेद्ध्रुवम् ॥
इति ते कथितं देवि गुह्याद्गुह्य देवताम् ।
अप्रकाश्यमिदं देवि गोपयेत् मातृजारवत् ॥"

पूर्वकथित उपायसे साक्षात् न होने पर कुलध्यान और सप्तमन्त्राके द्वारा भी कालिकाकी सिद्धि होती है। सिन्दूर लगा कर आसन बिछा कर बैठावें और उसके शरीरमें देवीकी पूजा करें। निर्जन स्थानमें निशीथरात्रिको कान्ताके साथ एकाग्रचित्त हो कर हजार मन्त्र जप करें। ऐसा करनेसे निश्चय ही देवीका साक्षात् होगा। यह अतिशय गुह्यतम और अप्रकाश्य है, यह अन्य मात्र जारवत् गोपनीय है।

"एवमायकालिकादीनां कलावालुरवैभवम् ।
कन्यारूपे महेशानि पुत्रादीनाञ्च लभ्यते ॥
सायत्नेषु वा काया झरदन्यो महेश्वरी ।
रसाङ्केषु बहुनाथे सिद्धयोगकनीनिका ॥
पूजयेत् वाच अन्यथा या भुङ्क्ते आसनः ।
पाययेत् आसवं यत्नात् स्वयं चापि पिबेत्ततः ॥
मकारैश्च मकारैश्च मकारैश्च समर्चितम् ।
जपेत्तोलकसेत तावत् कर्मे पृथक् पृथक् ॥
तदन्तर्थं प्रयत्नेन कृत्वा चक्रि साधकः ।
योगमायायुतां देवि जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥
एतस्मिन् समये देवी रतिमिच्छति सा यदा ।
तदा तां रमयेत् अम्बी पीडा न जायते यथा ॥
सर्वमेतत्प्रयत्नेन न कर्तव्योऽवसरम् ।
कर्तिपूर्तीचैव न कौलाभिमत प्रिये ॥
यदा जायते पीडा तदा सिद्धिर्विनाशिनी ।
एवं प्रयोगेषु काली साक्षात् भवति नान्यथा ॥
इति ते कथितं देवि गुह्याद् गुह्यतरं च यत् ।
भक्तिहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च वर्जयेत् ॥
तत्रापि सिद्धमेव निष्फलं नैव जायते ।
अभिलाषा न यत्नं आलस्यं नैव कारयेत् ॥
सर्वेषां अन्यकथानां आपुलायं धारयेत् ।
पुस्तकस्थे यथा नरि कार्य अस्ये यथा वदः ॥
तथा यद्युक्तः कालो इति कालस्य संशयः ।
सर्वं सिद्धादि त कल्याः सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥
इति ते कथितं देवि गोपनीयं प्रयत्नतः ।"

यह तन्त्रशास्त्र अत्यन्त गुह्यतम है विशेषतः गुरुके उपदेशके बिना इसकी कोई भी प्रक्रिया नहीं जानी जा सकती। इसलिये इसका विस्तृत वृत्तान्त लिखना दुःसाध्य है।

इस प्रकारका मीलाचार पूजा और सिद्धि प्रक्रियाके और भी बहुत तरहको हैं जिनकी संख्या नहीं हो सकती। इन प्रक्रियाओंको करने पर भी किसी किसीको सिद्धि होनेमें विलम्ब होता है। किसी किसीको तो जन्म भर तक सिद्धि नहीं होती। इसका कारण यह है, कि कोई भक्तिहीन, कोई क्रियाहीन और कोई विधिहीन हो कर जप करते हैं। सद्गुरुके उपदेशानुसार विधि पूर्वक अनुष्ठान करने पर शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है।

इसका गुह्यतम वृत्तान्त सद्गुरुके बिना दूसरा कोई भी नहीं बता सकता। इसलिये इसको पढ़नेसे हृदयमें नाना तरहके भाव उदित होते हैं। किन्तु वास्तविक तत्त्वका निरूपण गुरूपदेशके बिना किसी तरह भी नहीं हो सकता।

पञ्चमकार तन्त्रका प्रधान अङ्ग है।

"मकारपंचकं देवि देवानामपि दुर्लभम्।
मद्यैर्मांसैस्तथा मत्स्यैर्मुद्राभिर्मैथुनैरपि॥
स्त्रीभिः सार्द्धं महासाधुरर्चयेत् जगदम्बिका।
अन्यथा च महानिन्दा नीयते पण्डितैः सुरैः॥
कायेन मनसा वाचा तस्मात्तत्त्वो परो भवेत्।
कालिका तारिणी दीक्षां गृहीत्वा मद्यसेवनम्॥
न करोति नरोयस्तु स कलौ पतितो भवेत्।
वैदिके तांत्रिके चैव जपहोमबहिष्कृत:॥
अब्राह्मण सएवोक्तः स एव हस्तिमूर्खकः।
शुनीमूत्रसम तस्य तर्पणं यत् पितृष्वपि॥
कालीतारामनुप्राप्य वीराचारं करोति न।
शूद्रत्वं तच्छरीरेण प्राप्नुयात् स न चान्यथा॥
या सुरा सर्वकार्येषु कथिता भुवि मुक्तिदा।
तस्या नाम भवेद् देवि तीर्थपानं सुदुर्लभम्॥
शुद्धाणा भक्षयोग्याणा यन्मांस देवनिर्मितम्।
वेदमंत्रेण विधिवत् प्रोक्तो सा शुद्धिरुत्तमा॥
भोक्ष्य योग्याश्च कथिता ये ये मत्स्या वरानने।
ते रहस्ये मया प्रोक्ता मीनाः सिद्धिप्रदायकाः॥
पृथुका तंदुला भ्रष्टा गोधूमचणकादयः।
तस्य नाम भवेद्देवि मुद्रा मुक्तिप्रदायिनी॥
भगलिंगस्य योगेन मैथुनं यद् भवेत् प्रिये।
तस्य नाम भवेद्देवि पंचमं परिकीर्त्तितम्॥
प्रथमस्तु भवेत् मद्यं मांसं चव द्वितीयकम्।
मत्स्यंचैव तृतीयं स्यात् मुद्राश्चव चतुर्थिका॥
पंचमं पंचमं विद्यात् पंचैते नामतः स्मृताः।"

पञ्चमकार तन्त्रके प्राणस्वरूप है। पञ्चमकारके विना तान्त्रिकको किसी भो कार्यमें अधिकार नहीं है। पञ्चमकार देवताओंके लिए भी दुर्लभ हैं, मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन इन पांच मकारोंसे जगदम्बिकाकी पूजा की जाती है। इसके विना कोई कार्य भी सिद्धि नहीं होता और तन्त्रवित् पण्डितगण निन्दा करते हैं। काली वा ताराका मन्त्र ग्रहण करके जो मद्य सेवन नहीं करता, वह कलिमें पतित होता है, तान्त्रिक जप, होम आदि कार्योंमें अनधिकारी होता है तथा वह व्यक्ति अब्राह्मण और हस्तिमूर्ख कहलाता है। उस व्यक्तिका पितृ-तर्पण कुत्तेके मूत्रके सदृश है। जो व्यक्ति काली और ताराका मन्त्र पा कर वीराचार नहीं करता, वह शूद्रत्वको प्राप्त होता है। सुरा सभी कार्यों में उक्त है तथा पृथिवी पर येही एकमात्र मुक्तिदायिनी है। इस सुराका नाम ही तीर्थ और पान है।

वैदिक आदि ग्रन्थोंमें जिन मांसोंको भक्ष्य कहा गया है, वे ही मांस विशुद्ध हैं। रहस्यमें जिन मीनोंको भक्ष्ययोग्य कहा है, वे मत्स्य सिद्धिप्रदायक हैं। पृथुक, तण्डुल भ्रष्ट, गोधूम, चणक आदिको मुद्रा कहते हैं, यह मुद्रा मुक्तिप्रदायिनी है। भग और लिङ्गके योगसे मैथुन होता है। यह मैथुन ही पञ्चम है। मकारोंमें प्रथम मद्य द्वितीय मांस, तृतीय मत्स्य, चतुर्थ मुद्रा, पञ्चम मैथुन है, ये ५ द्रव्य ही पञ्चमकार है।

पञ्चमकारका अर्थ—

"मायामलादि शमनात् मोक्षमार्गनिरूपणात्।
अष्टदुःखादिविरहान्मत्स्येति परिकीर्त्तितम्॥
मांगल्यजननाद्देवी सम्विदानन्ददानतः।
सर्वदेवप्रियत्वाच्च मांस इत्यभिधीयते॥
पंचमं देवि सर्वेषु मम प्राणप्रिय भवेत्।
पंचमेन विना देवि चण्डीमन्त्रं कथं जपेत्॥
यदि पंचमकारेषु भ्रान्ति चेत् कुरुते प्रिये।
तस्य सिद्धिः कथं देवि चण्डीमन्त्रं कथ जपेत्।
आनन्दं परमं ब्रह्म मकारास्तस्य सूचकाः॥"

जिससे माया और मलादिका प्रशमन, मोक्षमार्गका निरूपण और आठ प्रकारके दुःखोंका अभाव होता है, उसका नाम मत्स्य है। माङ्गल्यजनन, सम्विदोंको आनन्ददायक और सब देवताओंका प्रिय होनेसे इसका नाम मांस पड़ा है। पञ्चमकार सब कार्योंमें मेरे प्राणोंके समान प्रिय है। पञ्चमकारके विना चण्डीमन्त्रका जप कैसे हो सकता है? इसलिए उसके लिए सिद्धि भी असम्भव है। आनन्द ही परम ब्रह्म है और पञ्चमकार उसका सूचक है।

"सुमन सेवितत्वाच्च राजत्वात् सर्वदा प्रिये।
आनन्दजननाद्देवि सुरेति परिकीर्तिता॥
मुदं कुर्वन्ति देवानां मनांसि द्रावयन्ति च।
तस्मान्मुद्रा इति ख्याता दर्शिता व्याकुलेश्वरी।"

देवगण पुष्प इसका सेवन करते हैं तथा इससे आह्लाद और आनन्द उत्पन्न होता है इसलिए इसका नाम पुष्प है। इससे देवताओंका मन आनन्दित और द्रवीभूत होता है तथा इसके देखनेसे पशुगण भी व्याकुल होते हैं, इसलिए इसका नाम मुद्रा है।

पञ्चमकारका फल महानिर्वाणतन्त्रके ११वें पटलमें इस प्रकार कहा है—

"अष्टैश्वर्यं परं मोक्षं मद्यपानेन देवते ।
मांसभक्षणमात्रेण साक्षान्नारायणो भवेत् ॥
मत्स्यभक्षणमात्रेण काली प्रत्यक्षतामियात् ।
मुद्रासेवनमात्रेण विष्णुरूपधरः ॥
मैथुनेन महायोगी मम तुल्यो न संशयः ॥"

मद्यपान करनेसे अष्टैश्वर्य और परामोक्ष तथा मांस के भक्षणमात्रसे साक्षात् नारायणत्व लाभ होता है। मत्स्य भक्षण करते समय ही कालीका दर्शन होता है। मुद्राके सेवन मात्रसे विष्णुरूप प्राप्त होता है। मैथुन द्वारा मेरे (शिवके) तुल्य होता है, इसमें संशय नहीं।

पञ्चमकारके दानका फल—

"मद्यं मांसं तथा मत्स्यं मीनं मुद्रा च मैथुनम् ।
पञ्चतत्त्वसंयुक्तं प्रदद्यात् भैरवाय च ॥
कन्याकोटिप्रदानेन हेमभारशतानि च ।
यत्फलं लभते देवि कौलिके बिन्दुदानतः ॥
पृथिवीं हेमसम्पूर्णां दत्त्वा यत्फलमाप्नुयात् ।
तत्फलं कौलिके दत्त्वा तृतीयं मत्स्ययुक्तम् ॥
द्वितीयं मत्स्ययुक्तं यो दद्यात् कुलयोगिने ।
तुष्यन्ति मातरः सर्वा भैरवैर्योगिनीगणैः ॥
गवां कोटिप्रदानेन पुण्यमक्षयमाप्नुयात् ।
तत्फलं लभते देवि कौलिके दानतत्परः ॥
दत्त्वा कौलिकदानेन अक्षुण्णं लभते नरः ।
तत्फलं लभते देवि न संशयः ॥
पञ्चमेन विना द्रव्यं यः कुर्यात् कल्पनाधमः ।
तस्य सर्वं निष्फलं देवि सत्यं न संशयः ॥
चाण्डाली चर्मकारी च मातङ्गी सौण्डिकी तथा ।
कपालिनी च रजकी धीवरी वनवासिनी ॥
अष्टैताः कुलयोगिन्यः सर्वसिद्धिप्रदायकाः ॥"

मद्य, मत्स्य, मांस, मुद्रा और मैथुन इन पाँच मकारा-

रात्रि में भैरवको पूजा करे। कोटि कन्या दान करनेसे तथा भूमि और एक लाख सोना दान करनेसे जो फल होता है, कौलिक कार्यमें इसको एक बूंद दान करनेसे उतना ही पुण्य होता है। सुवर्ण संयुक्त पृथिवी दान देनेसे जो फल होता है मत्स्ययुक्त तृतीय द्रव्य या मत्स्ययुक्त द्वितीय द्रव्य दान देनेसे भी वही फल होता है। माताएं योगिनी और भैरवादि सभी इससे तुष्ट होते हैं। कोटि गो दान करनेसे जो पुण्य होता है, पञ्चमकार प्रदान करनेसे भी मद्यपायीको उतना ही पुण्य होता है। जो मायाधम पञ्चमकारको छोड़ कर अन्य द्रव्य कल्पित करता है उसको सब कुछ निष्फल है। इसको अत्यन्त सत्य मानो।

चाण्डाली, चर्मकारी, मातङ्गी, सौण्डिकी, कपालिनी, रजकी, धीवरी और वनवासिनी, ये आठ स्त्रियाँ कुलयोगिनी हैं। ये ही समस्त सिद्धियोंको देनेवाली हैं।

पञ्चमकारका विषय वर्णित हुआ, किन्तु पञ्चमका एक शोधन किया जाता है।

"असंशोधितमकारैः सिद्धिर्नैव च साधकः।
कार्यैः सिद्धिहानिः स्यात् क्रुद्धा भवति सुन्दरी ॥"

जो साधक पञ्चमकारका शोधन किये बिना मद्यादि व्यवहार करता है उसके कार्यमें हानि होती है और उस पर देवी भी क्रुद्ध होती है तथा वह कभी भी सिद्धि लाभ नहीं कर पाता।

पञ्चतत्त्व।—शान्तिकादि लिए प्रयोग कार्यमें जिस प्रकार पञ्चमकारसाध्य है उसी प्रकार समस्त कार्योंमें पञ्चतत्त्वकी भी आवश्यकता है।

"पूजयेत् पञ्चतत्त्वेन च यत्नेन कौलिकः ।
एवं पूजा कृता सिद्धिदायिनी इति मे मतिः ॥
शैवे शाक्ते गाणपत्ये सौरे वैष्णवे ।
सम्प्रदायेषु सर्वेषु पञ्चतत्त्वं प्रकीर्तितम् ॥
गुरुतत्त्वं मन्त्रतत्त्वं मनस्तत्त्वं सुरेश्वरि ।
देवतत्त्वं ध्यानतत्त्वं पञ्चतत्त्वं वरानने ॥"

योगियोंको चाहिये कि अति यत्नसे पञ्चतत्त्व द्वारा पूजा करें। ऐसा करनेसे ही सिद्धि प्राप्त होगी। शैव, शाक्त, गाणपत्य, वैष्णव इन सभी सम्प्रदायोंके लिए पञ्चतत्त्वका मानना पड़ता है। गुरुतत्त्व, मन्त्रतत्त्व, मन

स्तत्त्व, देवतत्त्व और ध्यानतत्त्व ये पाँच तत्त्व हैं।

मांसादि शोधन—

"वक्ष्येऽहं च महेशानि मांसादेः शोधनं प्रिये।
पूर्ववत् मण्डलं कृत्वा पूजयेत् मण्डलोपरि॥
आधारशक्तिं कूर्मञ्च अनन्तः पृथिवीं तथा।
तन्मध्ये स्थापयेत् मांसं मत्स्यं मुद्राञ्च पार्वति॥
हुँ बीजेन समन्त्र्य फट्कारैः प्रोक्षणं चरेत्।
वारुणेन च धेन्वादि दर्शयेत् साधकोत्तमः॥
ततो माया वधूश्चैव श्रीबीजं क्रमशो जपेत्।
शुद्धिमन्त्रं पठेद्भक्त्या मूलमन्त्रं समुच्चरन्॥
पवित्रं कुरु देवेशि मांस मत्स्यं कुलेश्वरि।
मुद्रां शस्योद्भवां दिव्यां पूजार्थं कुलनायिके॥
ततो हुँफट् वारुणञ्च तस्योपरि जपेत् प्रिये।
मूलमन्त्रञ्च तन्मध्ये दशधा जपमाचरेत्॥"

मांसादिका शोधन करना हो, तो पहलेकी तरह मण्डल बना कर उस पर आधारशक्ति, कूर्म, अनन्त और पृथिवीकी पूजा करें तथा उस मण्डलके बीच मत्स्य, मांस और मुद्रा स्थापित करें। पीछे 'हुँ' इस बीज-मन्त्रको संमन्त्रित करके 'फट्' इस मन्त्रके द्वारा प्रोक्षण करें तथा धेनु आदि मुद्रा दिखावें। उसके बाद माया-बीज, वधूबीज और श्रीबीजका क्रमशः जप करें। पीछे मूलमन्त्र उच्चारण करके भक्तिपूर्वक 'पवित्रं कुरु देवेशि" इस शुद्धिमन्त्रको पढ़ें और 'हुँ फट्' यह मन्त्र उसके ऊपर और मूलमन्त्र उसके भीतर जपें। इस प्रकारसे मत्स्य, मुद्रा और मांस शोधित होता है।

मद्यादि शोधन—

अपने बाईं तरफ षट्कोणान्तर्गत त्रिकोण बिन्दु लिख कर वृत्तचतुरस्र विधानपूर्वक सामान्यार्घ्योदकके द्वारा अभ्युक्षित करके उस पर "आधारशक्तिभ्यो नमः" इस मन्त्रके द्वारा पूजा करें।

"नमः" इस मन्त्रके द्वारा आधारपात्रको प्रक्षालित करके उसे मण्डलके ऊपर रक्खें और "मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः" इस मन्त्रके द्वारा पूजा करके "फट्" इस मन्त्रके द्वारा कलस प्रक्षालित करें। रक्तवस्त्र और माल्यादिसे विभूषित कर आधारके ऊपर देवी मान कर उसको संस्थापित करें। इसके बाद "मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः" इस मन्त्रके द्वारा आधारकी पूजा करके "अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः" इस मन्त्रसे कलस और "ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः" इस मन्त्रसे पूजा करें। तदनन्तर 'फट्' इस मन्त्रसे दर्भ द्वारा सन्ताडित करके "हुँ" इस मन्त्रसे अवगुण्ठित करें। पीछे मूलमन्त्र प्रोक्षण करें। अनन्तर अभ्युक्षण करके मूलमन्त्र द्वारा तीन बार गन्ध ग्रहण करें। "ॐ" इस मन्त्रसे कुम्भमें पुष्प निक्षेप करें। "ह्सौः" इस मन्त्रसे त्रिकोण अङ्कित करें। "ह्सौः ह्सौः नमः" इस मन्त्रसे पूजा करके "ह्रूं क्रौं परमस्वामिनि परमाकाशशून्यवाहिनि चन्द्रसूर्याग्निभक्षिणि पात्रं विश विश स्वाहा" इस मन्त्रसे घट पकड़ें और दश बार जप करें। "ऐं ह्रीं श्रीं आनन्देश्वराय विद्महे सुधादेव्यै धीमहि। तन्नोऽर्द्धनारीश्वरः प्रचोदयात्" इस मन्त्रको पात्रके ऊपर जपें। इससे शापविमोचन होता है।

अन्य शापविमोचनमन्त्र—

"अन्यच्च शृणु देवेशि यथा पानादिकर्मणि।
दोषो न जायते देवि तान् वै मन्त्रान् शृणुष्व मे॥
एकमेव परं ब्रह्म स्थूलसूक्ष्ममयं ध्रुवम्।
कचोद्भवां ब्रह्महत्यां तेन ते नाशयाम्यहम्॥
सूर्यमण्डलसम्भूते वरुणालयसम्भवे।
अमाबीजमये देवि शुक्रशापाद्विमुच्यताम्॥

पूर्वोक्त तीन मन्त्रों द्वारा सुराको अभिमन्त्रित करके कालिकाको प्रदान करें उसके बाद स्वयं भोजन करें। देवीका घट थाम कर इस मन्त्रको तीन बार जपें—"ॐ वां वीं वूं वैं वौं वः ब्रह्मशाप-विमोचितायै सुधादेव्यै नमः।' इसके जपनेसे ब्रह्मशाप विमोचित होता है।

शुक्रशाप विमोचन—

"ॐ शां शीं शूं शैं शौं शः शुक्र शापाद्विमोचितायै सुधादेव्यै नमः" इस मन्त्रको दश बार जपनेसे शुक्रका शाप विमोचित होता है।

कृष्णशाप-विमोचन—

"ऐं ह्रीं श्रीं क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रः कृष्णशापं विमोचय अमृतं स्रावय स्रावय स्वाहा" इस मन्त्रको दश बार जपनेसे कृष्णशाप विमोचित होता है।

द्रव्यशुद्धि —

"ॐ" व मः सुधिवष्णुरसुरलतोय सर्वोत्ता पैदिमटतिमि दूंषेममत्। सुनदरमदतपदयोमयत्का गोभा मतआ पङ्क्तिआ भवत ह्रदत्।" इस मन्त्रको द्रव्यके ऊपर तीन बार पढ़े। इसके बाद द्रव्यमें आनन्दभैरव और आनन्दभैरवीका इस मन्त्रके द्वारा ध्यान करे।

पहले पञ्चमकारका विषय वर्णित हुआ है, बहुतोंके मनमें धारणा हो सकती है कि पञ्चमकारका सेवन पुण्यप्रद है किन्तु शोधन और साधनके बिना मद्य पान करनेका निषेध है। इसी लिए कुलार्णवतन्त्रमें पञ्चमकार का विषय निम्नलिखित रूपसे वर्णित हुआ है—

"बहवः कौलिकं धर्मं मिथ्याज्ञानविडम्बकाः।
स्वबुद्ध्या कल्पयन्तीत्थं पारम्पर्यविवर्जिताः॥
मद्यपानेन मनुजो यदि सिद्धिं लभेत वै।
मद्यपानरताः सर्वे सिद्धिं गच्छन्तु पामराः॥
मांसभक्षणमात्रेण यदि पुण्या गतिर्भवेत्।
लोके मांसाशिनः सर्वे पुण्यभाजो भवन्ति हि॥
स्त्रीसम्भोगेन देवेशि यदि मोक्षं लभन्ति वै।
सर्वेऽपि जन्तवो लोके मुक्ताः स्युः स्त्रीनिषेवणात्॥
यथा पानन्तु देवेशि सुरापानं तदुच्यते।
तन्महापातकं देवि वेदादिषु निरूपितम्॥
अवार्यं समयमेष्वनरपूरतान्यपेयकम्।
मद्यं मांसं पशूनान्तु कौलिकानां महाफलम्॥
अमेध्यानि द्विजातीनां मद्यान्येकादशैव तु।
द्वादशं तु महापापं सर्वेषामधमं स्मृतम्॥
सुरा वै मलमन्नानां पाप्मा मलमुच्यते।
तस्माद् ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्च न सुरां पिबेत्॥
सुरादर्शनमात्रेण कुर्यात् सूर्यावलोकनम्।
तद्गन्धाघ्राणमात्रेण प्राणायामत्रयं चरेत्॥
आजानुमग्नो भवेत् यो वै बोधपदेशतः।
कुर्यान्नाभिमितान्तु सप्ताहं स्पर्शने विधिः॥
सुरापाने ऽज्ञानकृते ज्वलदग्नौ तां निक्षिपेत्।
मुखे तथा निक्षिप्ते तत्र शुद्धिमवाप्नुयात्॥
मत्स्यमांसादिदोषस्य प्रायश्चित्तमिदं स्मृतः।
अभिचारेण यो हन्यात् मात्सर्यात् प्राणिनं प्रिये॥
निर्दयत्वे घोरे दिवानि बहूनमपि।
अभितापि दुराचारैर्वर्णाश्रमेषु गायते॥
बहुमत्य निधनिता निरता अविवेकी।
धीरकता योगहता न कालिनो न कामका॥
मनेन न केवा द्विज कालिका योषमोषध।
वादकी श्वादनश्चाभ्यामियेन विधियोक्ता॥
मांसदर्शनं कृत्वा सूर्यदर्शनमाचरेत्।
तस्मादविधिना मांसं मद्यं नाचरेत् क्वचित्॥
विधिवत् सेव्यते देवि परमार्थं प्रसीदति।"

(कुलार्णवतन्त्र)

बहुतसे मनुष्य मिथ्याज्ञानके द्वारा विडम्बित हो कर मद्यादि पान करनेसे पुण्य होता है ऐसी कल्पना किया करते हैं। यह उनका महाभ्रम है। मद्य पीनेसे ही यदि सिद्धि होती, तो शराबी पामर भी सिद्धि लाभ कर लेते। मांस भक्षण करनेसे ही यदि पुण्य होता, तो सभी मांसभक्षी मनुष्य पुण्यवान् हो सकते हैं। स्त्रीसम्भोगसे ही यदि मुक्ति होती, तो सभी लम्पटी अनायास मुक्त हो जाते किन्तु ऐसा नहीं है, वृथा मद्य पीना तो शराबखोरोंका शराब पीना है। वेद आदिमें शराब पीनेके कितने दोष लिखे हैं वृथा मद्य पान करनेसे बड़ा महापाप लगता है। यह शराब अभक्ष्य, अनाघ्रेय और अपेय है। केवल कौलिक कार्यमें फलप्रद है।

इसी प्रकारका मद्य द्विजोंके लिये अपेय है। अन्नका मल ही मद्य है इसलिये द्विजोंको कभी भी शराब न पीनी चाहिये। यदि किसी तरह शराबको देख लें, तो सूर्यका दर्शन करना उचित है। दैववश यदि सुराको सूंघ ले तो उन्हें प्राणायामत्रयका आचरण करना पड़ेगा। घुटनों पानीमें खड़े हो कर एक दिन उपवास करनेसे शराब छूनेका पाप नष्ट होता है। दैववश यदि मद्यका स्पर्श हो जाय, तो नाभि पर्यन्त जलमें खड़े हो कर तीन दिन उपवास करनेसे उसका पाप जाता रहता है। और यदि अज्ञानसे सुरा पान कर लें तो वे अग्नि प्रज्वलित करके आप उसमें निक्षिप्त होवें। ऐसा करनेसे अज्ञानकृत सुरापानका पाप नष्ट होता है। मत्स्य और मांसादिका प्रायश्चित्त भी इसी भांति है। अभिचारसे अपनी प्रीतिके लिए जो लोग मत्स्य और मांसादिका ग्रहण करते हैं वे शतपदके रोमकी संख्याके अनुसार घोर नरकमें वास करते हैं तथा

फिर तिर्यग्योनिमें जन्म लेते हैं। इस प्रकारको पशु-हत्यामें घातक अनुमोदक, विश्वसिता, निहन्ता, खरीदने वाले, बेचनेवाले, संस्कर्ता, उपहर्ता और खानेवाले ये सभी पापके भागी होते हैं। इसलिये मांसके देखते ही सूर्यका दर्शन करना चाहिये। किन्तु विधिवत् अर्थात् सद्गुरुके उपदेशानुसार पञ्चमकार सेवन करनेसे परमार्थ तत्त्व लाभ होता है, अन्यथा सभी निष्फल और विशेष पापजनक है। अतएव तान्त्रिकोंको कोई भी कार्य अपनी इच्छाके अनुसार न करना चाहिये।

शुद्ध शक्तिका फल—

"साधिता च जगद्धात्री यद्यद्वदति पार्वति।
तत्सर्वं सत्यतां याति सत्य सत्य न संशयः॥"

नारी शोधिता होने पर जगद्धात्रीके तुल्य होती है और वह नारी जो कहे वही सत्य होता है, इसमें अनु मात्र भी संशय नहीं।

शक्तिशोधन—

"इदानीं कथयिष्यामि नारीणां शोधनं प्रिये।
अग्रे वा दक्षिणे वापि संस्थाप्य मण्डलोपरि॥
भाले च मण्डलं कुर्यात् त्रिपुरं सिन्दूरेण च।
नयने कज्जलं दद्यात् मूलमन्त्रं जपेत् सुधीः॥
अन्यैश्च विविधैर्द्रव्यैर्भावयेत् शाक्तमन्त्रतः।
ताम्बूलं वदने दद्यादिष्टमूर्तिं विभाव्य च॥
ततः षडङ्गमन्त्रैश्च षडङ्गन्यासमाचरेत्।
मातृकार्णं ततोन्यस्य ऋष्यादिन्यासमाचरेत्॥
मूलेन व्यापकं कृत्वा मूर्द्ध्नि मूलं शतं जपेत्।
हृदये कामबीजञ्च वधूबीजञ्च सञ्जपेत्॥
नाभौ श्रीं गुह्यदेशे च सर्वबीजञ्च पार्वति।
मौलौ च वाग्भवं काम कुण्डलीं कुलकुण्डलीम्॥
शक्तिबीजं जपेन्मन्त्री सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्।
वामे मायां श्रावयेच्च कर्णेचैव महेश्वरि॥
एवं क्रमेण देवेशि नारी शुद्धिः प्रजायते॥"

नारीशुद्धि करनी हो, तो नारीको ला कर उसे अग्र भागमें या दक्षिणमें मण्डलके ऊपर स्थापित करें। कपाल पर सिन्दूर द्वारा त्रैपुरमण्डल करें। नयनोंमें काजल लगा दें। फिर साधक मूल मन्त्र जपें। अन्य विविध द्रव्य द्वारा शक्तिमन्त्रसे उसको सम्बोधन करें। मुखमें ताम्बूल देवें और इष्टमन्त्रका ध्यान कर षडङ्गमन्त्र द्वारा षडङ्गन्यास करें। बादमें मातृकान्यास करके ऋष्यादिन्यास करें। मूल द्वारा व्यापक करके मस्तक पर सौ बार मूलमन्त्रका जप करें। हृदयमें कामबीज और वधूबीज नाभिमें श्रीबीज, गुह्यदेशमें सर्वबीज, मौलिमें कामबीज और कुण्डलीमें कुलकुण्डली शक्तिबीजका जप करें। वाममें माया और कर्णमें महेश्वरी श्रवण करावें। उक्त रूप अनुष्ठान करनेसे नारीशुद्धि होती है।

"सूर्यकोटिप्रतीकाशं चन्द्रकोटिसुशीतलम्।
अष्टादशभुजं देवं पञ्चवक्त्रं त्रिलोचनम्॥
अमृतार्णवमध्यस्थं ब्रह्मपद्मोपरिस्थितिम्।
वृषारूढं नीलकण्ठं सर्वाभरणभूषितम्॥
कपालखट्वाङ्गधरं घंटाडमरुवादिनम्॥
पाशाङ्कुशधरं देवं गदामूषलधारणम्।
खड्गखेटकपट्टीशमुद्गरं शूलदण्डधृक्॥
विचित्रं खेटकं मुण्डं वरदाभयपाणिनम्।
लोहितं देवदेवेशं भावयेत् साधकोत्तमः॥"

इस मन्त्रसे ध्यान करके "ह्सक्षमलवरयुं आनन्द भैरवाय वषट्" इस मन्त्रके द्वारा आनन्दभैरवका तीन बार पूजा करें। पीछे आनन्दभैरवीका ध्यान करें।

"भावयेच्च सुधां देवीं चन्द्रकोट्ययुतप्रभाम्।
हिमकुन्देन्दुधवलां पञ्चवक्त्रां त्रिलोचनाम्॥
अष्टादशभुजैर्युक्तां सर्वानन्दकरोद्यताम्।
प्रहसन्तीं विशालाक्षीं देवदेवस्य सम्मुखीम्॥"

इस प्रकारसे आनन्दभैरवीका ध्यान करके "ह्सक्ष मलवरयीं सुधादेव्यै वषट्" इस मन्त्रसे पूजा करें तथा द्रव्यमें शक्तिचक्र लिख कर क्रमानुसार "ह्ं ल्ं च" लिखें।

ऐसा करनेसे शिव और शक्तिका योग होता है, इस लिये द्रव्यमें अमृतत्वकी चिन्ता कर धेनुमुद्रा द्वारा अमृती करें। "वं" इस वरुणबीजको तथा मूलमन्त्रको आठ बार जप कर देवतास्वरूप उस द्रव्यका ध्यान करें।

इस तरहसे द्रव्यशुद्धि होती है।

"एतत्तु कारणं देवि सुरसंघनिषेवितम्।
अतएव तस्यानाम सुरेति भुवनत्रये॥
अस्याः गन्धः केशवस्तु तेन गन्धेन कौलिकः।
पूजयेच्च परां देवीं कालिकां दक्षिणां शिवाम्॥"

देव इसका सेवन करते हैं इसलिये इसका नाम सुरा है। इस सुराकी गन्ध भी भीषण है, उस गन्धसे द्वारा शोधित पात्र कालिका देवीकी पूजा करे।

मांसशोधन—"ॐ प्रतद्विष्णु स्तवते वीर्येण मृगो न भीम कुचरो गिरिष्ठाः यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा।" इस मन्त्रसे मांस शोधित होता है।

मत्स्यशुद्धि—"ॐ तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः दिवीव चक्षुराततम्। ॐ तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते विष्णोर्यत् परमं पदं" इस मन्त्र द्वारा मत्स्य शुद्धि करे।

मुद्राशुद्धि—"ॐ विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंशतु आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते।

"गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति।
गर्भं ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ॥"

इस मन्त्रके द्वारा मुद्राशुद्धि करे। पहले जो विधान कहे गये हैं, उनसे पञ्चमकार शोधित होते हैं। किन्तु पञ्चमकार शोधित करनेके लिये सिद्ध गुरुकी जरूरत है। बिना सिद्ध गुरुके कोई भी साधक इसको अपनी इच्छानुसार नहीं कर सकता, यदि करेगा, तो उसकी फलकी प्राप्ति न होगी।

चक्रानुष्ठान—सिद्धतान्त्रिकगण चक्रानुष्ठान किया करते हैं। यह अति गुह्य व्यापार है। निशीथरात्रिमें इसका अनुष्ठान करना पड़ता है।

वीरचक्र—'वीरचक्रं प्रवक्ष्यामि [illegible] सिद्धिविद् साधकः'।
अथवा शून्यगेहे देहसिद्धिप्रदायके॥
तत्र वै च समानीय साधकान् निवेशयेत्।
शूद्रस्त्री वैश्यस्त्री लक्ष्मीका सुलक्षणा॥
मुद्रा सर्वाणि वस्त्राणि पुष्पाणि चन्दनानि।
नैवेद्यं च पुष्पाणि रक्तानि च विशेषतः॥
मार्जारं च वराहं च मत्स्यं तथा प्रिये।
कल्पयेत् वीरचक्रं च यथाकल्पेन सुन्दरी॥
वीरेभ्यो दक्षिणां दद्यात् आचार्याय विशेषतः।
सर्वकल्पतरुश्चैव प्रत्यक्षसिद्धिदायकम्॥
यापयेत् तत्क्षणात् देवि वीरचक्रप्रभावतः।
दक्षिणाविधिहीनं च तच्चक्रं निष्फलं भवेत्॥"

इस वीरचक्रका विषय कहा जाता है, कि जिसको पूजाके प्रभावसे साधक शीघ्र ही सिद्धि लाभ करते हैं। इसमें समर्थ होने पर समस्त द्रव्य न दे कर सिर्फ प्रत्यक्ष द्रव्य निवेदन करना चाहिये।

शूकर और शिखर आदिका मांस हो उत्तम सिद्धिप्रद है। इसी प्रकारसे भक्ष्यको शुद्ध करते हैं। अनन्तर, पीत और रक्तपुष्प लाना चाहिये। पञ्चवीर, सप्तवीर या नववीर इनमेंसे जो प्राप्त हो उसको कल्पना करे। इस प्रकारकी कल्पना करनेसे वीरचक्र होता है। आचार्यको दक्षिणा दे कर पीछे वीरको दक्षिणा देवें। अन्य चक्र पातक और ब्रह्महत्यादि पातक वीरचक्रके प्रभावसे तत्क्षण दूर हो जाते हैं। चक्र यदि विधि और दक्षिणाहीन हो तो वह निष्फल है।

राजचक्र—"चतुर्वर्णा कुलाचार्य रजका इमनोदरा।
कामिनी योगिनी चैव रजकी श्वपची तथा॥
कैवर्तकन्यकाश्चैव पञ्चैते स्वाहुता।
एता अवश्या पञ्च साधकेन नियोजिता॥
अर्चयेत् मधुपानं च शुद्धिमांसकल्पना।
सर्ववैश्यशुद्धार्थं राजचक्रं विधीयते॥
सर्वमेव तत्त्वानि देवलोके महीयते।"

अतिशय रूपवती इमनोदरा चतुर्वर्णा कुमारी—ऐसी कामिनी, योगिनी, रजकी, चाण्डाली और कैवर्ती—ये पञ्चशक्ति हैं, ये पञ्चकन्या साधक द्वारा नियोजित होने पर प्रशस्ता होती है। पश्चात् मद्य, मत्स्य और मांस अर्पण करे, इस प्रकारसे राजचक्र होता है। इस राजचक्रके प्रभावसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्ति तथा देवलोकमें अति उत्तम वास होता है।

देवचक्र—"देवचक्रं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व गिरिजे मम।
कामरूपा महाभागा चित्ररूपा मनोरमा॥
राजवेश्या नागरी च गुप्तवेश्या तथा प्रिये।
देववेश्या ब्रह्मवेश्या पञ्चैव देवता॥
राजवेश्या राजवेश्या गुप्ता च कौलका।
देववेश्या गुप्ताश्च महावेश्या च तीर्थगा॥
नागरी अवनिग् कन्या एतत्समरतत्परा।
पञ्चैता कन्यका देवि देवचक्रं नियोजयेत्॥"

देवचक्रका विषय कहा जाता है—देवता सर्वदा देवचक्रका अनुष्ठान किया करते हैं। इस देवचक्रमें

राजवेश्या, नागरी, गुप्तवेश्या, देववेश्या और ब्रह्मवेश्या ये पञ्चवेश्या ही पञ्चशक्ति हैं। राजसेवापर यणा राजवेश्या, कौलजा गुप्तवेश्या, नृत्यकारिणी देववेश्या, तीर्थगामिनी ब्रह्मवेश्या और कोई भी रजस्वला कन्या नागरी कहलाती है, ये पाँचों वेश्या हैं इनको देवचक्रमें नियोजित करे।

"राजचक्रे राजदं स्यात् महाचक्रे समृद्धिदम्।
देवचक्रे च सौभाग्यं वीरचक्रं च मोक्षदम्॥"

राजचक्रका अनुष्ठान करनेसे राज्यलाभ, महाचक्रसे समृद्धि, देवचक्रसे सौभाग्य और वीरचक्रसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। (रुद्रयामल)

"पञ्चचक्रे प्रशस्ता यास्ताः शृणुष्व वरानने।
चक्रं पञ्चविधं प्रोक्तं तत्र शक्तिं प्रपूजयेत्॥
राजचक्रं महाचक्रं देवचक्रं तृतीयकम्।
वीरचक्रं चतुर्थं च पशुचक्रं च पंचमम्॥"

पञ्चचक्रमें जो प्रशस्त है, उनका विषय कहा जाता है चक्र पाँच प्रकारके हैं, उनसे शक्तिकी पूजा करें। राजचक्र, महाचक्र, देवचक्र, वीरचक्र और पशुचक्र ये चक्र हैं।

"पञ्चचक्रे यजेद्दिव्यो वीरश्च कुलसुन्दरि।
ब्रह्मचारी गृहस्थश्च पंचचक्रे प्रपूजयेत्॥
ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वीरचक्रेण पूजयेत्।
योगिभिः पूज्यते देवि सर्वचक्रेषु कामिनी॥
माता च भगिनी चैव दुहिता च स्नुषा तथा।
गुरुपत्नी च पंचैता राजचक्रे प्रपूजयेत्॥
गौड़ी चाप्यथवा माध्वी सुरा शस्ता कुलेश्वरी।
शुद्धिश्चागोद्भवा शस्ता तृतीया वेदसम्भवा॥
मुद्रा गोधूमजा शस्ता स्वयम्भूकुसुमस्तथा।
कुण्डगोलोद्भवं द्रव्यं अनुकल्पं नियोजयेत्॥"

वीर पञ्चचक्रसे याग करें। ब्रह्मचारी और गृहस्थ भी पञ्चचक्रसे पूजा कर सकते हैं। योगिगण सभी चक्रसे कामिनी पूजा कर सकते हैं। माता, भगिनी, पुत्री पुत्रवधू, गुरुपत्नी, इन पाँचोंकी राजचक्रमें पूजा करनी चाहिये। गौरी, माध्वी, सुरा, मुद्रा, स्वयम्भूकुसुम, कुण्डगोलोद्भव द्रव्य, इन सबका अनुकल्पमें प्रयोग किया जाता है।

"रक्तचन्दनं तथा श्वेतमनुकल्पं च चन्दनम्।
वस्त्रालंकारभूषाद्यैर्गन्धमाल्यानुलेपनम्॥
पूजयेत् परमभक्त्या देवतायै निवेदयेत्।
भक्ष्यं नानाविधं द्रव्यं नानावस्त्रमनोरमम्॥
आसवं शुद्धिसंयुक्तं ताभ्यो दद्यात् पुनः पुनः।
प्रणमेत् प्रजपेन्मन्त्रं दृष्ट्वा सहस्रकम्॥
अङ्गं नैव स्पृशेत्तासां स्पृष्टेन नरकं व्रजेत्।
मधुमत्ता यदा तास्तु न ददन्ति सु स्वदः॥
तत्तदैव भवेन्मर्मं भल न संशयः।
षष्टिवर्षसहस्राणि ब्रह्मलोके महीयते॥"

रक्तचन्दन और अनुकल्पसे श्वेतचन्दनको वस्त्र, अलङ्कार आदिके द्वारा भूषित करें तथा परमभक्तिके साथ उसे देवताको सेवामें उपस्थित करें। नाना प्रकारके भक्ष्य पदार्थ, चित्र-विचित्र वस्त्र आदि तथा आसव शुद्धि करके उन्हें पुन पुनः प्रदान करें। प्रणाम करके उनको और अवलोकन पूर्वक हजार जप करें। उनका अङ्ग स्पर्श न करें यदि स्पर्श करेंगे, तो रौरव नरकको जाना पड़ेगा। वे मधुमत्तागण उसको शाप नहीं देते तथा वे षष्टि सहस्र वर्ष पर्यन्त स्वर्गलोकमें वास करते हैं।

"माता भग्नी स्नुषा कन्या वीरपत्नी कुलेश्वरी।
महाशक्ति यजेदेताः पंचशक्ति पुनः पुनः॥
द्रव्यदाने तु सपूज्या न शक्ता शिवयोजनम्।
योजयेत् सिद्धिहानिः स्यात् रौरवं नरकं व्रजेत्॥
महाव्याधिर्भवेद्देवि धनहानिः प्रजायते।
सदैव दुःखमाप्नोति सर्वं तस्य विनश्यति॥
आद्यं च गौड़िकं प्रोक्तं द्वितीयं अर्कोद्भवम्।
तृतीयं रोहितं प्रोक्तं चतुर्थं मांससम्भवं॥
करवीरोद्भवं पुष्पं चंदनं रक्तचंदनम्।
पूजयेत् परया भक्त्या शिवलोके महीयते॥
षष्टिवर्षसहस्राणि तत्र देवीं प्रपूजयेत्।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां अमायां च कुजे ऽहनि॥
राजचक्रे महाचक्रे भक्त्या शक्तिः प्रपूजयेत्।
शुक्लपक्षे गुरोर्वारे चतुर्थ-सप्तमी तिथौ॥
महाचक्रे यजेत् भक्त्या सर्वकामार्थ सिद्धये॥"

माता, भगिनी, पुत्रवधू, कन्या और वीरपत्नी ये कुलेश्वरी और पञ्चशक्ति हैं, चक्रमें वार वार इनकी पूजा की जाती है। द्रव्यसे इनकी पूजा करें, इन शक्तियोंमें कभी

भी लिङ्ग योजन न करना चाहिये। योजन करनेसे निरिहानि, रौरव नामक नरकमें वास, महाव्याधि, धन हानि, सर्वदा दुःखशोक और सर्वनाश होता है। प्रथम गौड़ी, द्वितीय कुण्ड रौरव तृतीय रोहित, चतुर्थ नाम जात करवीरपुष्प, चन्दन और रक्तचन्दन इन सबसे [illegible] समन्वित पूजा करनेसे शिवलोकको गमन होता है। वहां वह साठ हजार वर्ष तक देवीकी पूजा किया करता है। अष्टमी, चतुर्दशी अमावस्या अथवा महानवमीको राजयाग नामक महापातकसे अभिपूर्ण [illegible] शक्तिकी पूजा करें। सम्पूर्ण कामना और अर्थसिद्धिके लिए शुक्लपक्षमें कृष्णतिथि चतुर्थी या सप्तमी तिथिमें महापातकसे अभिपूजक याग करें।

माता, भगिनी आदि जिन पञ्चकन्याशक्तियोंका विषय लिखा गया है, उन पांचों शब्दोंको पारिभाषिक समझना चाहिये। निरुत्तरतन्त्रके १०वें पटलमें लिखा है—

'भूमौ [illegible] माता दुहिता [illegible] ।
[illegible] च [illegible] च [illegible] ॥
योगिनी [illegible] स्यात् [illegible] प्रकीर्तिताः ।"

माता कहनेसे राजकन्या, दुहिता कहनेसे रजकीको कन्या, भगा कहनेसे नटकी, [illegible] कहनेसे नापितकी तथा चपला शक्तिको योगिनी समझना चाहिये- ये पांच पञ्चकन्या कहलाती हैं।

"[illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] प्रकीर्तिताः ॥
गौरिक [illegible] [illegible] द्वितीय [illegible] ।
तृतीय [illegible] चतुर्थं च [illegible] ॥
सुगन्धि गन्धपुष्प च देवचक्रे निवेदयेत् ।
देवचक्रे [illegible] देवलोके [illegible] ॥
[illegible] देवचक्रे [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥
[illegible] [illegible] [illegible] ।
यदि स्यात् [illegible] रौरवे नरके व्रजेत् ॥
[illegible] चतुर्दश्यां [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥
[illegible] [illegible] [illegible]"

देवचक्रका विषय कहा जाता है—धर्मकामिको पांच विदग्धा कन्या, प्रथम रम्य गौरिका, द्वितीय पचि मध्यम, तृतीय शालिमध्य, चतुर्थ भाग्यसम्भव और सुगन्धि गन्धपुष्प इनके द्वारा देवचक्रमें शक्तिपूजा करनी चाहिये। देवचक्रमें याग करनेसे देवलोककी प्राप्ति होती है। पञ्चकन्या चक्रमें याग करे, कभी भी इसके अतिरिक्त याग न करे। लोभवश अथवा छल या कामसे मदोन्मत्त हो यदि कोई इनके साथ सङ्गम करे, तो वह रौरव नरकमें जाता है। दोनों पक्षको अष्टमी और चतुर्दशीको पितृभूमिमें जा कर वीरचक्रमें पूजा करनी चाहिये।

"[illegible] भवेत् वीरो [illegible] ।
[illegible] भवेत् वीरो [illegible] च [illegible] ॥
[illegible] च वीरचक्रे निवेशयेत् ।
[illegible] [illegible] च [illegible] ॥
[illegible] रौरव [illegible] ।
[illegible] [illegible] वीरचक्रे [illegible] यदि ॥
सिद्धिहानि सिद्धिहानि रौरव नरकं व्रजेत् ।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥
[illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥
[illegible] [illegible] वीरचक्रे पुनः पुनः ।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥
[illegible] च [illegible] निवेदयेत् ।
[illegible] च [illegible] ॥
[illegible] च [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥
[illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥
[illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥
[illegible] [illegible] वीरचक्रे [illegible] ।
[illegible] [illegible] रौरव नरक व्रजेत् ॥
[illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] च ॥
[illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] च [illegible] ॥
[illegible] [illegible] सिद्धि [illegible] ।

पण्डितं वीरसन्तानं क्षेत्रं देवींच योगिनी ॥
कुलाचारं गुरुदूतीं मनसापि न निन्दयेत् ।
मातृयोनिं पशुक्रीडां नग्नां स्त्रीमुन्नतस्तनीं ।
कायेन शोभितां कांतां कामतो नावलोकयेत् ।
देवीं गुरुं सुधां विद्यां श्रेष्ठां शक्तिं क्रियात्मजा ॥
योगिनीं भैरवीतत्त्वं अष्टतत्त्वं प्रपूजयेत् ।
विमाता दुहिता भग्नी स्नुषा पत्नी च पंचमी ॥
पशुचक्रे यजेद्धीमान् पशुवत्तोषणं चरेत् ।
गंधपुष्पंच माल्यंच वस्त्राद्याभरणानि च ॥
सिन्दूरागुरुकस्तूरी नानापुष्पाणि सुन्दरि ।
भक्ष्यं नानाविधं द्रव्यं फलं नानाविधं प्रिये ॥
एतद्द्रव्यगणं यस्तु भक्त्या ताभ्यो निवेदयेत् ।
षष्टिवर्षसहस्राणि क्षितौ राजा भवेद्ध्रुवम् ॥
वीरचक्रे मन्त्रसिद्धिर्भवत्येव न संशयः ।
अमावस्यां चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ॥
श्मशानेन गते नार्चेत् सूचितं न प्रकाशितम् ।"

मन्त्रसिद्ध होनेसे ही वीर होता है, मद्य विना पीये वीर नहीं होता। यथाविधि अभिषिक्त होने पर वीर और यथाविधि अभिषिक्त होने पर कौलिकी होती है। वीरचक्रमें इस प्रकारसे वीर और शक्तिको नियुक्त किया जाता है।

वीर और कौलिकीको अभिषिक्त विना हुए चक्र पर बैठ कर याग न करना चाहिये। यदि करें, तो उन्हें रौरव नामक नरकमें जाना पड़ेगा। इस क्रमके सिवा वीरचक्र पर कभी भी न बैठना चाहिये। इस क्रमके विना वीरचक्र पर बैठनेसे पद पदमें उसकी सिद्धिहानि होती है और रौरव नरकको जाना पड़ता है। सब तरह-की शराब, मत्स्य, मुद्रा, पुष्प, स्वयम्भूकुसुम, कुण्डगोलोद्भवद्रव्य, ये सब चीजें साधकको पुनः पुन वीरचक्र पर चढ़ानी चाहिये तथा अपनी शक्तिकी पूजा करनी चाहिये। भक्ष्य द्रव्य ज्येष्ठादि क्रमसे कनिष्ठको निवेदन करें। परस्पर स्पर्श न करें। एक आसन पर और एक पात्रमें भोजन न करें। हीनजा देवीको ला कर शक्तिमन्त्र द्वारा शोधित करें। वीर हीनजाकी पूजा और उनका शोधन करके शक्ति निवेदन करें। मधुसक्त वीरको जो हीनजा कन्या प्रदान करेगा उसको इतना पुण्य होता है कि, वह कोटि मुखसे भी नहीं गाया जा सकता।

वीरचक्रका आचरण करनेके लिए वीरको शक्तिदान करना पड़ता है। वीरचक्रके विना यदि शक्तिदान किया जाय, तो दाता रौरव नरकको जाता है। यह कार्य अत्यन्त गुप्तभावसे करना चाहिये। अर्थात् काम, क्रोध, मात्सर्य, विकार लोभ, कुत्सा, निन्दा, दुरालाप, इन आठोंको गुप्त रक्खें।

मन्त्र, मुद्रा, अक्षरमाला, योनि, वीरसङ्गम, मण्डल, घट, पीठ और सिद्धिद्रव्य, इन सबको गुप्त रखें। पण्डित वीर, सन्तान, क्षेत्र, देवी, योगिनी, कुलाचार और गुरुदूती इनको मनमें भी निन्दा न करें।

मातृयोनि, पशुक्रीडा, नग्ना स्त्री, उन्नत स्तनी, कान्ति शोभिता और कान्ता, इनको कामभावसे अवलोकन न करें। देवी, गुरु, सुधा, विद्या श्रेष्ठशक्ति, योगिनी, भैरवीतत्त्व और अष्टतत्त्वकी पूजा करें।

पशुचक्र—माता, दुहिता, भगिनी, पुत्रवधू और पत्नी, ये पाँच शक्तियाँ समन्विता हो कर पशुचक्रमें याग करेंगे। इसमें पशुवत् तुष्टि आचरण करें। गन्ध, पुष्प, माल्य, वस्त्रादि आभरण, सिन्दूर अगुरु, कस्तूरी, नाना प्रकारके पुष्प और फल ये सब द्रव्य भक्तिपूर्वक उनको अर्पण करें। इस तरह पशुचक्रमें याग करनेवाला साठ हजार वर्ष तक पृथिवी पर राजा होता है। वीरचक्रमें मन्त्रसिद्धि अवश्य होगी, इसमें सन्देह नहीं। दोनों पक्षकी अमावस्या और चतुर्दशीको श्मशानमें जा कर ऐसा आचरण करें। कभी भी किसीसे प्रकट न करें।

"न निंदेत् न हसेत् वापि चक्रमध्ये मदाकुलान् ।
एतच्चक्रगता वार्ता बहिर्नैव प्रकाशयेत् ॥
तेभ्यो भोजनं कुर्वीत नाहितंच समाचरेत् ।
भक्त्या संरक्षयेदेतान् गोपयेच्च प्रयत्नतः ॥"

चक्रमें मदिरासक्त व्यक्तियोंको देख कर हास्य और निन्दा न करें। इस चक्रको बात बाहरमें प्रकट न करें। उनके पास बैठ कर भोजन करें और अहित आचरणसे विरत रहें। भक्तिपूर्वक उनकी रक्षा करें और यत्नपूर्वक ये सब वृत्तान्त गुप्त रक्खें। (प्राणतोषिणी)

वीरसाधन—"पुरश्चरणसम्पन्नो वीरसिद्धिं समाचरेत् ।
सम्यक्पुरश्चरणेनापि नैव सिद्धिं क्वचित्विना ॥
साधके तत्र कल्पना साधके वीरसाधना ।
पुरश्चरणसम्पन्नेष्वेवमोहविवर्जितः ॥
मन्त्रं वा साधयिष्यामि देहं वा पातयाम्यहम् ।
प्रतिज्ञामीदृशीं कृत्वा चण्डिरूपाणि चिन्तयेत् ॥
यस्य मन्त्रस्य यद्द्रव्यं तत्तद्द्रव्यं च साधयेत् ।
तत्तद्द्रव्यं दैवेषि ग्राह्य पशुनामिति ॥
वर्जयेत् वीरहीनानां समूहं वीरसाधने ।
साधको नामयेत् तस्मात् रचयेत् वीरसाधनम् ॥
महासाधनं प्रशस्तं स्यात् प्रयाते वीरसाधने ।
कृष्णपक्षे शिवां समस्तां साधयेद्वीरसाधनम् ॥
कुजा प्रयोगमतुलं प्रशस्तः सर्वसिद्धये ।
स्वयं द्विवर्णाद् यदि वा पञ्चा तदय यदि ॥
बासनत्यागमाश्रित्य कार्यं यदि वा क्वचम् ।
चांडाल वामिनम् च वीरं निर्विकल्पकम् ॥
वनैश्वरविविधैर्वेतं कार्यं वा विषमे पथम् ।
वरमानीय वत्सं वा हरेत् रणेच्छया पथम् ॥
वीरसाधनविधिवारपूरं वर्जं हि तद्वचम् ।
कुशादिरोमसंयुक्तं पुष्पाणि गृहे रोपेत् ॥
न दुर्भिक्षं मध्ये वापि न धूर्तिनमेव वा ।
वीरनन्दन सम्यक् तस्मै कर्षेत् ॥
शून्यागारे नदीतीरे विल्वमूले चतुष्पथे ।
श्मशाने वा विशेषेण वीरो वीरस्य पूजयेत् ॥
शून्यागारे नगरे वा वीरा चैव विभूषयेत् ।
संस्थाप्य पुष्पवस्त्राणि दुर्गा विन्यसेच्चम् ॥
साधीर स्वाचरेणादौ न्यासजाल समाचरेत् ।
पीठस्य मं समाविश्य च वस्त्रादिविचित्रतः ॥
मन्त्रार्थं साधन कृत्वा रक्षां च भैरवं स्मरेत् ।
ततः नवाख्यं निचिन्त्य एव वासनाम चरेत् ॥
पुष्पैरुरी पद्मपात्रस्थः कवितामसयौतमाः ।
तत्र सर्वं वाक्शिरा स्वार्थं च प्रयाततः ॥
यदि मनोयच मिदिरे भेदं भय भवेत् ।
एकावधान चर्तुर्गुणाशितस्मिंदेवे ॥
ताम्बूल समुद्रे दद्यात् सर्व कुशासनानुकम् ।
स्पर्शनिता च स्पृष्टे च दोष विवेकवेत् ॥
वागुभूमासिविवादान्त बहुरक्त विनाय च ।
बंध पद्म गतरोर रक्तप्रेतनिर्मितम् ॥
ततश्चैवमृत्यवाहित सम्पन्नमस्ति स्मरेत् ।
पूजायाश्चैव चरितौ च पूरे पीठसाधनम् ॥
संस्थाप्य साधकश्चैव तत्र पातोहम भवेत् ।
कुशान् वस्त्राणि कृत्वा यदवेत्थाम् प्रसार्य च ॥
तत्र विनयं सुविधिं तस्य देवरूपिणम् ।
तस्य देह पूर्वपूजा चढेपूत्वाय सम्मुखे ॥
ओं मीनमोहनासायासकरश्चैव प्रमुखः ।
गाहि मां देवदेवेश यथाय वधिवासिन ॥
इति पाठवे तस्य शिरोपस्थसमासीनेत् ॥'

साधक पुरश्चरण सिद्ध हो कर वीरसिद्धि का सब साधना करे । सम्यक् पुरश्चरण के बिना सिद्धि नहीं होती, ऐसा स्थिर करके साधक वीरसाधनमें प्रवृत्त होवें । वीर साधन करना हो तो पुत्र, दारा और धनादिमें मोह, मोह, लोभ आदि त्याग दे । मन्त्रका साधन अथवा शरीर पतन दोमें एक होगा, ऐसी प्रतिज्ञा कर साधनमें प्रवृत्त होवें और यथाविधि आचरण करें । जिस जिस मन्त्रमें जिस जिस द्रव्यको आवश्यकता हो, साधक वहीं द्रव्यों का आहरण करें ।

इस वीरसाधनका प्रधान उपकरण शव है, जिसका विषय पहले कहा है । सभी लोकलोग अन्तुकि सब वीरसाधनके उपयुक्त है किन्तु इनमें कुछ (शव साधनमें) प्रशस्त भी है । साधकको गांसव स्नान कर शवसाधन करना चाहिये । प्रधान वीरसाधनमें महाशव ही एकमात्र प्रशस्त है । इस वीरसाधनमें श्मशान करके साधना करनी होगी । प्रयोगकर्ताओंके लिए शूद्र ही प्रशस्त, और पवन सिद्धिका निमित्त है । दो वर्ष के ऊपर पचास वर्ष पर्यन्त अथवा तरुण और समर का पटम मासीय मर्तक चण्डालका शव ही प्रशस्त है । [illegible] शवद्वारा आराधना करनेमें शीघ्र फल होता है ।

यदि पापिष्ठ द्वारा प्रहार् वा वध्वाम यात्र, शूल पार वा हमसे पाषाणसे कि वा सर्पदंशसे मरा है । अथवा पानीमें डूब कर वा मध्य पशुसे प्रमायत परा प्राण हो कर मरा है, तब यदि सुन्दरकान्तिविशिष्ट

शौर्यवान् और तरुणवयस्क हो, तो शवसाधनार्थ उसको लाना चाहिये।*

स्त्री-रमण द्वारा पतित और कुष्ठादि महापातक रोगग्रस्त शवका परित्याग करना उचित है। स्वेच्छापूर्वक मरे हुए व्यक्तिका और वृद्धका शव ग्रहण न करना चाहिये। दुर्भिक्षसे मरे हुए व्यक्तिका शव अथवा बासी मुर्दा भी शवसाधनके लिए अनुपयुक्त है। स्त्रियों जैसे रूपवालेका शव भी वर्जनीय है।

नाना प्रकारके साधनोंमें शवसाधन वीराचारियोंका एक प्रधान साधन है, इसलिए इसका स्थान विशेष होना आवश्यक है। शून्य गृहमें, नदीतीर पर, पर्वत पर, निर्जन स्थानमें, बिल्ववृक्षके तले अथवा श्मशान वा उसके समीपवर्ती वनस्थलमें साधना करनी चाहिये। अष्टमी या चतुर्दशी अथवा कृष्णपक्षीय मङ्गलवारको द्विप्रहर-रात्रि ही शवसाधनाका उपयुक्त समय है। श्मशानादि स्थलमें शवको ला कर कुश-शय्यापर स्थापन करें और फिर न्यास करना प्रारम्भ करें। पीठमन्त्र लिख कर गन्ध पुष्पादिके द्वारा अर्चना करें। पीछे आसन प्रदान कर मन्त्र द्वारा रक्षा करें। उसके बाद शवके मुख पर विधिपूर्वक देवताओंका आप्यायन (तुष्टि) आवरण डालें। 'भुवनेशी' और अन्तमें 'फट' का प्रयोग करें उसके बाद शवको प्रक्षालित करके यत्नपूर्वक स्थापित करें और किसी प्रकारसे भीत न होवें, यत्नसे भी यदि स्थापित न हो, तो एला, लवङ्ग, कर्पूर, जातीफल, खदिर और आर्द्रक द्वारा शवको अधोमुख कर तथा उसके मुखमें ताम्बूल देवें। उसके पीठ पर रख कर चन्दन विलेपित करें। बादमें मूलको आदि करके कटीदेश तक चतुरस्र मण्डल कर बीचमें चतुर्द्वारयुक्त अष्टदल पद्म बनावें। उसके बाद चैलेय, अजिन, कम्बलान्तरित करके न्यास करें और निकटमें पूजाद्रव्य रख देवें। कुछ दूरी पर एक उत्तर साधकको रखना चाहिये। शवको संस्थापन करके अर्चना करें और उस पर आरोहण करें। कुछ कुशोंको उसके पैरोंके नीचे डाल देना चाहिये। शवके केशोंको प्रसारित करके उसकी चोटी बाँध देवें। उसके शरीरको देवस्वरूप मान कर पूजें और बादमें उत्थित हो कर 'भीम-भीरु-भयाभाव', इस मन्त्रका पाठ करें। उसके पैरोंके तले त्रिकोणयन्त्र लिखना चाहिये।

"शवोत्पातं न शक्नोति शवश्च निश्चलो भवेत्।
उपविश्य पुनस्तत्र बाहू निःसार्य पादयोः॥
हस्तयो कुशशास्तीर्य पादौ तत्र निधापयेत्।
ओष्ठौ तु सपुटौ कृत्वा स्थिरचित्त स्थिरेन्द्रियः॥
यदा देवी हृदि ध्यात्वा मौनीजपमथान्तरेत्।
चलासनात् भय नास्ति भये जाते भयेन्नृतम्॥
यत्प्रार्थयसि देवेशि दातव्यं कुञ्जरादिकम्।
दिनान्तरे च दास्यामि स्वनाम कथयस्व मे॥
इत्युक्त्वा संस्कृतेनैव निर्भयस्तु पुनर्जपेत्।
ततस्त्वं मधुरं वक्ति सत्यं दीप्या नरं॥
ततः सत्यं कारयित्वा वरन्तु प्रार्थयेन्नरः।
यदि सत्यं न कुरुते च वरं वा न प्रयच्छति॥
तदा पुनर्जपेद्धीमान् एकाग्रगतमानसः।
सत्ये कृते वरं लब्ध्वा त्यजेत्तु जपादिकम्॥
फलं जातमिदं ज्ञात्वा शिखां मोचयेत्ततः।
शवं प्रक्षाल्य संस्थाप्य मोचयेत् पादबन्धनम्॥
पादचक्रं मोचयित्वा पूजाद्रव्यं जले क्षिपेत्।
शवं जले च गर्ते वा निःक्षिप्य स्नानमाचरेत्॥
ततश्च स्वगृहं गत्वा बलिं दत्वा दिनान्तरे।
पूजयित्वा ततो देवीं याचितोऽहं बलिप्रियम्॥
तेन गृह्णन्तु सर्वे च मया दत्तमिदं बलिम्।
परेऽह्नि नित्यमाचार्यः पञ्चगव्यं पिबेत्ततः॥
ब्राह्मणान् भोजयेत्तत्र पंचविंशतिसंख्यकान्।
सप्तपंचविहीनं वा क्रमाच्चैव दशावधि॥
ततः स्नात्वा च भुक्त्वा च निवसेदुत्तमे स्थले।
यदि न स्यात् विप्रभोज्यं तदा निधनितां व्रजेत्॥
तेन चेन्निधनं नस्यात् तदा देवी प्रकुप्यति।
त्रिरात्रं वा षड्रात्रं वा नवरात्रं च गोपयेत्॥
स्त्री-शय्या यदि गच्छेत्तु तदा व्याधिं विनिर्दिशेत्।

---

* "यष्टिविद्धं शूलविद्धं खड्गविद्धं पयोमृतम्।
वज्रविद्धं सर्पदष्टं चाण्डालं चाभिभूतकम्॥
तरुणं सुन्दरं शूरं रणे नष्टं समुज्ज्वलम्।
पलायनविशून्यं च सम्मुखे रणवर्तिनम्॥"
(-तन्त्रसारधृत भावचूड़ामणि)

गीतं श्रुत्वा च बधिरो निष्ठुरं भ्रमवर्जनात् ।
यदि नचि दिवा साधक तदास्य मूकता भवेत् ।
न पश्येत् दिव सन्ध्यां देवि देवस्य संस्थितिः ॥
ना स्त्रीकुर्यात् मनसुखे यदि गच्छति यदा भवेत् ।
तदा नरं परिकल्प्य दद्यात् पात्रमाम्बरम् ॥
भोजनादिविनिन्दोष न कु र्यात् कदाचन ।
देवी भोजनमासीरय न स्पृशेत् प्रभात भपि ॥
प्रातर्नित्यक्रियान्ते च बिल्वपत्रोदक पिबेत् ।
ततः स्नात्वा च गत्वा प्राच्ये षोडशवासरे ॥
स्नात्वा मन्त्रमुच्चार्य तर्पणन्ते नमः स्मरम् ।
एव मन्त्रपार्श्वे देव वै तर्पयेत् ।
देवतर्पणमन्त्रमु भस्मान्ते वस्त्र तर्पणम् ।
भ्रनेन विधानेन सिद्धि प्राप्नोति साधक ॥
इति श्रुत्वा वरान् भोजनात् करके यातिदेवरः परम् ॥"

पैरों तले त्रिकोणयन्त्र नियमसे बाद उत्थान करने को प्राप्त होवें और यह भी नियम होवेगा । पुनः उस पर उपवेशन करके पद द्वारा दोनों बाहुओंको निकाले और उस पर कुश बिछा कर पैरोंको स्थापित करे । घोड़ोंको अद्भुत करके स्थिरचित्त और स्थिरेन्द्रिय होवें । इस प्रकार अनन्यचित्तसे हृदयमें देवीका ध्यान कर जप करे । इस प्रकारसे अनुष्ठान करनेसे यदि आसन चलायमान होवे, तो डरना नहीं चाहिये । भय होने पर उसकी पूजा करे और कहे कि "हे देवेशि ! तुम को चाहतो हो सिद्ध प्राप्त होने पर उसीमें तुम्हें दूंगा । तुम अपना नाम प्रकट करो ।" अनन्तर उसको वह बात कह कर निःशंकतासे पुनः जप करे । उसके बाद यदि वह मधुरवाक्य न कहे, तो साधकको उचित है कि, सत्य करा कर उस से वर प्रार्थना करे । यदि वह सत्य न करे या वर न दे, तो साधक पुनः अनन्यचित्तसे जप करना शुरू कर दे । पुनः ऐसा होने पर जब वह सत्य करे और वर दे, उसके बाद उस वरको ले कर साधक जप करना छोड़ दे । उसके बाद अब प्राप्त हो गया—ऐसा समझ कर चोटी खोल दे । पीछे यन्त्रको प्रक्षालित करके संध्या पत्र पूर्वक पादबन्धन मोचन करावें और पादबन्ध मोचन करा कर पूजा-द्रव्यको जलमें निक्षेप करे । उसके बाद यन्त्रको वामी या गड्ढेमें फेंक कर स्नान करके घर को लौट आवे ।

दिनके अन्तमें साधक देवीको पूजा करके बलिप्रदान करे और प्रार्थना करे कि—हे देवि ! मेरे द्वारा प्रदत्त बलिको ग्रहण कीजिये । दूसरे दिन पञ्चगव्य पान कर पचीस ब्राह्मणोंको जिमावें । तदनन्तर स्नान और भोजन करके उत्तम स्थानमें वास करें । साधक यदि ब्राह्मणभोजन न करावें तो वह निर्धन होता है और यदि नियम भी न करे तो देवी उस पर कुपित होती है । ५ दिन, ६ दिन या ७ दिन तक इसको गुप्त रखना चाहिये । साधक यदि स्त्रीको शय्या पर गमन करे तो उसको व्याधि होती है तथा गीत सुननेसे बहरा, नाच देखनेसे अन्धा और दिनको सोनेसे गूंगा होता है । इस प्रकारसे पन्द्रह दिन बिताने चाहिये । क्योंकि पन्द्रह दिन तक शरीरमें देवताका अवस्थान रहता है । इन पन्द्रह दिनोंमें सफेद वस्त्रोंका व्यवहार न करना चाहिये । बाहर जाना हो तो वस्त्र बदल कर जावें । भक्त और ब्राह्मणको कभी निन्दा न करे । देवता भक्त और ब्राह्मणका प्रतिदिन स्पर्श करे । प्रातःकालमें नित्य क्रिया करनेके उपरान्त बिल्वपत्रोदक पान करे । पश्चात् १६वें दिन गङ्गा-स्नान कर स्नानान्त मन्त्र उच्चारणपूर्वक तर्पण करे और तर्पण कर तुलसी पर नमः पद प्रयोग करे ।

इस प्रकारसे तीन सौ वर्षके अन्तमें देवतर्पण करे । स्नान करके बिना तर्पण न करनेसे, देवतर्पण न होगा । साधकको ऐसा आचरण करने पर अवश्य ही सिद्धि प्राप्त होगी । इस तरह सिद्धिलाभ करनेसे वह संसारमें विविध भोग और अन्तमें स्वर्गमें गमन होता है । (भोजतन्त्र)

तन्त्रके मतसे मूर्तितत्त्व—

"निराकारं निर्गुणं च स्तुतिनिन्दाविवर्जितम् ।
पुंलिङ्गं सर्वकर्तारं कर्माधीन गुणिपदम् ॥
वैशारदीन पञ्चम किमाकारं प्रतिष्ठित ।
तस्मादुत्तमिदैवेन निराकारेण वा दे ॥

अपर अत्र च—

मनु दैवि परं ब्रह्म सर्वाधीश च मे शौ ।
पुरुषको गुणाधीशं स्तुतिनिन्दादिवर्जितम् ॥
भावाभावविर्जितं निराकारं लोकगोचरविवर्जितम् ।

पूजायोगं च देवेशि स्वयमुत्पत्तिकारणम् ॥
येन रूपेण ब्रह्माण्डा जायन्ते शृणु तत् शिवे ।
आकाशाज्जायते वायुर्वायोरुत्पद्यते रविः ॥
रवेरुत्पद्यते तोयं तोयादुत्पद्यते मही ।
पंचभूतेषु ब्रह्माण्डा भवेयुः पर्वता-मजे ॥
ब्रह्माण्डस्थापनार्थाय कूर्मपृष्ठे ह्यनन्तकः ।
तन्मूर्ध्नि वायुराकारा ब्रह्माण्डा बहवः स्थिताः ॥
कारणं वारिमध्ये तु कूर्मश्चरति नित्यशः ।
अहमेव त्रिशूलेन पालयामि पुनः पुनः ॥"

हे देवेश ! निराकार, निर्गुण, स्तुतिनिन्दाविवर्जित वर्णातीत, सुनियत, संज्ञाविरहित यह किस आकारसे प्रतिष्ठित है और कहाँसे इसकी उत्पत्ति हुई है तथा उत्पत्ति हुई तो किस आकारमें हुई ? यह सब कह कर मेरा संशय दूर कीजिये। महादेवने पार्वतीके प्रश्नके उत्तरमें कहा—हे पार्वति ! श्रेष्ठतत्त्वका मैं वर्णन करता हूं और जिस तरहसे इस ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति हुई है उसकी कथा भी कहता हूं, तुम ध्यान दे कर सुनो।

गुणालया, गुणातीता, स्तुति और निन्दाविवर्जिता आकाररहिता, नित्या, रोगशोकविवर्जिता शक्ति स्वयं ही उत्पत्तिका कारण है, उसके बाद जिस तरह ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति हुई है वह कहता हूं। पहले आकाशसे वायु वायुसे रवि, रविसे जल, जलसे मही वा पृथिवी उत्पन्न हुई है। ये पाँच पञ्चभूत हैं, इन्हीं पञ्चभूतोंसे ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति हुई है। कूर्मपृष्ठ पर ब्रह्माण्ड संस्थापित है तथा अनन्तके मस्तक पर वालुकाकार अनेक ब्रह्माण्ड अवस्थित हैं। कारण-वारिमें कूर्म विचरण करते हैं, मैं त्रिशूल द्वारा पुनः पुनः पालन करता हूं।

'श्रीचण्डिकोवाच ।
कथं वा लभते जन्म कथं मृत्युर्भवेत् प्रभो ।
तत्प्रकारं महादेव श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ॥
श्रीशंकर उवाच ।
इह यत् क्रियते कर्म तत्परत्रोपभुज्यते ।
जीवस्तृणजलौकेव देहाद्देहान्तरं व्रजेत् ॥
संप्राप्य चोत्तमं देहं देहं त्यजति पूर्वकम् ।
इति श्रुत्वा च सा चण्डी पप्रच्छ परमेश्वरम् ॥
श्रीचण्डिकोवाच ।
प्राणेऽन्तगतेऽदेहस्तु पिण्डदानादिकं कथम् ।
शिव उवाच ।
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मायादेहं तदैव हि ।
मायादेहं परमेशानि वायुरूपेण चान्यथा ॥
वायुरूपो यतो देह आकाशस्थो निराश्रयः ।
ततश्च पिण्डदानेन वायुः स्थिरतरो भवेत् ॥
प्रथमे मस्तकं देवि जायते न क्रमादपि ।
ततो यमपुरं गत्वा धर्माधर्मादिकं च यत् ॥
तद्भुक्त्वा चापरे किञ्चित् यदा कर्म न विद्यते ।
तदाज्ञया तदा जीवः प्रययौ ब्रह्मशासनम् ।
तस्मात् कर्मानुसारेण यदि स्यात् दुर्लभां तनुम् ।
महाविद्यां भाग्यवशात् यदि प्राप्नोति सद्गुरुम् ॥
तत्त्वज्ञानं महेशानि यदि भाग्यवशाद्भवेत् ।
तदैव परम मोक्षं यावद्ब्रह्माण्डं तिष्ठति ॥
ब्रह्माणस्य महामोक्षं सायुज्यं सन्निधस्य च ।
सारूप्यं चोत्तमत्वस्य शूद्रस्य सहलौकिकम् ॥
महाविद्याप्रसादेन पुनरागमनं नहि ।
ब्रह्माण्डनाशे तु सर्वमोक्ष यदा शिव ॥
तदा सर्वस्य निर्वाणं भवत्येव न संशयः ।
श्रीचण्डिकोवाच ।
ब्रह्माण्डबाह्ये तु किं पुनः परमेश्वरं ।
तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति ॥
शिव उवाच ।
ब्रह्माण्डस्य बाह्ये देहो ब्रह्माण्डो बहवः स्थिताः ।
अनन्तस्य प्रमाणन्तु किं वक्तुं शक्यते मया ॥
स एव निर्मितं सर्वं सैव सर्वं महेश्वरि ।"

मनुष्य कैसे तो जन्म लेते हैं और कैसे उनकी मृत्यु होती है इस विषयको सुननेकी मेरी बड़ी इच्छा हुई है। हे शिव ! आप इसका यथार्थ विवरण कहिये। महादेव पार्वतीसे कहने लगे—"हे शिवे ! मनुष्य इस जगत्में जो कर्म करते हैं, अर्थात् पाप और पुण्यका जैसा अनुष्ठान करते हैं, उन्हीं कर्मोंके अनुसार परलोकमें स्वर्ग नरकादि भोग करते हैं। जोंक जैसे तृणसे तृणान्तरको गमन करती है, उसी प्रकार जीव भी देहसे देहान्तरको गमन करता रहता है। जैसे जोंक एक तृणका बिना आश्रय लिये पहला तृण नहीं छोड़ सकती, उसी प्रकार जीव भी

एक शरीरका बिना आश्रय लिए पहिला शरीर नहीं त्यागता।" पार्वतीने महादेवका इस बातको सुन कर कहा—"यदि जीव दूसरी एक देहका ग्रहण बिना किये पूर्वदेहको नहीं छोड़ते, तो मृत व्यक्तिका पिण्डादि ग्रहण कैसे होता है? आप अनुग्रहपूर्वक मेरे इस संशयको भी दूर कीजिये।" महादेव बोले—हे प्रिये! मृत्युके समय मायादेह होती है, मायामय देह वायुरूप है वह मायादेह आकाशमें स्थित हो कर निराश्रय भावसे रहती है। जब तक पिण्डदान नहीं दिया जाता तब तक वह इसी तरह निराश्रय रहती है।

उसके बाद मृत व्यक्तिको पिण्डदान दिये जाने पर वह वायु स्थिर होती है और क्रमसे मस्तक उत्पन्न हो कर पश्चात् अवयव सब उत्पन्न होते हैं। पीछे यमपुरको जा कर पाप और पुण्य जो कुछ होता है उसको भोगता है। पाप और पुण्य रहनेसे स्वर्ग और नरक भोगता है। उसका भोग हो जाने पर जब कोई कर्म बाकी नहीं रह जाते, तब जीव अपने भाग्यके अनुसार ब्रह्माण्डको भ्रमण करता है। पीछे कर्मानुसार उत्तम आदि तनु लाभ करता है।

किन्तु यदि कोई भाग्यक्रमसे सद्गुरु, महाविद्या का तत्त्वज्ञान प्राप्त कर ले, तो वह जब तक इस ब्रह्माण्ड में रहता है, तब तक मोक्ष लाभ करता है। इसमें ब्राह्मण महामोक्ष क्षत्रिय सायुज्य वैश्य सारूप्य और शूद्र सालोक्य पाते हैं। महाविद्याके प्रभावसे पुनरागमन नहीं होता। हे प्रिये! जिस समय इस ब्रह्माण्डका नाश होगा, उस समय सभी जीव मुक्त होंगे। इस ब्रह्माण्डको बाह्य देह और ब्रह्माण्ड प्रदेश है, ब्रह्माण्ड भी अनन्त है। इस अनन्तका प्रमाण करनेको क्या कोई समर्थ है?

"ब्रह्मणा कल्प्यते तु वै ब्रह्मणा सृज्यते जगत्।
लोमकूपकूटं देवि यथातोये विलीयते॥
अन्यथा कल्पते सर्वं अन्यथा सृज्यते जगत्।
लोमकूपकूटं देवि यथा तोये विलीयते॥
तस्मात् प्रकृतियोगेन जायते ब्रह्मणा क्वचित्।
ततः विष्णु शिवो वाऽपि प्रकृत्या जायते ध्रुवम्॥
तथा ब्रह्माण्डकेषु ब्रह्मणा सृज्यते पुनः।"

(निर्वाणतन्त्र)

प्रकृतिमें ही समस्त पुरुष अवस्थान करते हैं, प्रकृतिसे ही जगत्की उत्पत्ति है। जैसे जलमें बुदबुदे होते और फिर विलीन हो जाते हैं, उसी प्रकार प्रकृतिसे ही सब उत्पन्न होते और उसीमें लय हो जाते हैं। ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर प्रकृतिसे ही उत्पन्न हुए हैं तथा प्रकृतिमें ही लीन हो जायेंगे। प्रलयकालके उपस्थित होने पर यह ब्रह्माण्ड प्रकृतिमें ही विलुप्त हो जायगा।

तान्त्रिकतत्त्व—

"स्त्रीरूपां वा स्मरेद्देवीं पुंरूपां वा स्मरेत् प्रिये।
स्मरेद्वा निष्कलं ब्रह्म सच्चिदानन्दरूपिणीम्॥
नैव योषित् न पुमान् न षण्ढो न जडः स्मृतः।
तथापि कल्पवल्लीव स्त्रीशब्दश्च प्रयुज्यते॥
साधकानां हितार्थाय अरूपा रूपधारिणी।"

उस सच्चिदानन्दरूपिणी देवी चाहे स्त्रीरूपमें हों या पुरुषरूपमें और चाहे निष्कल ब्रह्मभावमें हो हो—उनका स्मरण करना चाहिये। वास्तवमें वह न तो स्त्री है, न पुरुष और न षण्ढ अथवा जड़ ही है। तथापि कल्पलता जैसे स्त्रीवाचक है, उसी तरह उनमें भी स्त्री शब्दका प्रयोग करना चाहिये। उनका रूप नहीं है, वह साधकोंके मङ्गलके लिए रूपधारिणी हैं।

प्रपञ्चसारमें लिखा है—

"तामेवा कुण्डलिनीके बद्ध्वे हृदयमां विभुः।
सा रौति सततं देवी भृङ्गीसङ्गीतकध्वनिम्॥"

यह महाशक्ति कुण्डलिनी योगीन्द्रोंके हृदयको आनन्द कर रहती है तथा वह हो योनिके मूलाधारमें निरत हो भ्रमरसङ्गीतवत् गुन गुन ध्वनि करती है।

शारदातिलकमें कहा गया है—

"योगिनां हृदयाम्भोजे नृत्यन्ती नृत्यमञ्जसा।
आधारे सर्वभूतानां स्फुरन्ती विद्युदाकृतिः॥
शंखावर्तक्रमाद्देवी सर्वमावृत्य तिष्ठति।
कुण्डलीभूतसर्पाणामङ्गश्रियमुपेयुषी॥
सर्वदेवमयी देवी सर्वमन्त्रमयी शिवा।
सर्वतत्त्वमयी साक्षात् सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरा विभुः।
त्रिधामजननी देवी शब्दब्रह्मस्वरूपिणी॥"

वे योगियोंके हृदयकमलमें चपला चपला रूप प्रकाश कर अपने आनन्दमें मग्न करती हैं। सर्वभूत

[illegible]

लोकका सोरोप्य गोलोकमें भी चौगुना है। इसके ऊपर षोड़शपद्मयुक्त मोहान्धकारनाशक निर्मल पद है जो उमालोक कहलाता है। यहाँ वाणी और गौरी और दाक्षिणी और सदाशिव विराजमान हैं। इस पदके ऊपर अष्टदलसमन्वित व्याप्य है जो तपोलोक कहलाता है। यहाँ शिवको शक्ति और महानन्दरूपिणी शिवकामी अवस्थान करती हैं।

"तपोलोके गोलोकस्य चतुर्गुणत्वं शिवे।
ब्रह्मलोकेषु वै देवा वैकुण्ठे वै सुरास्तथा॥
तथापि न लभन्ते तपोलोकमतः शिवे।
तपोलोकसमा नास्ति लोकसंघे सुलोचने।
सालोक्यं महर्लोके स्यात् सारूप्यं जनलोकके।
सायुज्यं तपोलोकेषु निर्वाणं हि तदूर्ध्वके॥
अतो ब्रह्मादयो देवास्तपोलोकाभिलाषिणः सदा।
तस्य लोकस्य माहात्म्यं वक्तुं न शक्यते॥"

तपोलोक गोलोककी अपेक्षा चार लाख गुना प्रधान है। ब्रह्मलोक और वैकुण्ठस्थित देवगण भी तपस्याके द्वारा इस तपलोकको नहीं पाते। इस तपोलोकके समान दूसरा कोई लोक नहीं है। महर्लोकमें सालोक्य, जनलोकमें सारूप्य और इस तपोलोकमें सायुज्यलाभ होता है। इसके बाद ही निर्वाण है। ब्रह्मादि सभी देवता इस तपोलोककी प्रार्थना करते हैं। इस लोकका माहात्म्य वर्णन करनेमें मैं समर्थ नहीं हूं।

"किमाश्चर्यं महाज्ञानं तन्मे ब्रूहि महेश्वर।
सविकारं तन्मन्ये निराकारं हि तत्कथम्॥"

ईश्वर उवाच—

ब्रह्माण्डाकारं ब्रह्माण्डं कथयामि शृणु पार्वति।
ब्रह्माण्डं त्रिविधं ज्ञेयं स्थूलसूक्ष्मादिकं हि तत्।
मेरुः पर्वतराजश्च तथा सप्तकुलाचलाः॥
पृथ्व्यादिसप्तलोकाश्च वै [illegible]।
स्थितं मेरोश्चोपरिष्टात् [illegible]॥
सूर्येन्दुवह्निलोकानि लक्षलक्षेण हि।
इदं श्रुत्वा वरारोहे [illegible] परमेश्वरि॥
सत्यलोके निराकारा महाज्योतिःस्वरूपिणी।
मायाच्छादितात्मानं चणकाकाररूपिणी॥
हस्तपादादिरहिता चन्द्रसूर्याग्निरूपिणी।
मायावल्कलसंवेष्टा द्विधा भिन्ना यदोन्मुखी।
शिवशक्तिविभागेन जायते सृष्टिकल्पना।
प्रथमे जायते पुत्रो ब्रह्माऽसौ हि पार्वति॥"

ब्रह्माण्डका आकार कैसा है और सृष्टि किस तरह होती है? पार्वतीने महादेवसे ऐसा प्रश्न किया। उत्तरमें महादेवने कहा—"हे पार्वति! नाना विषयविशिष्ट वस्तुका आकार जो ब्रह्माण्ड है तथा स्थूल-सूक्ष्मादि विषय जो ब्रह्माण्ड कहलाता है, उसमें मेरुपर्वत और सप्तकुलाचल (महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान, ऋक्ष पर्वत, विन्ध्य, पारियात्र ये ७ कुलपर्वत हैं) भू आदिसे लेकर सत्यलोक पर्यन्त सुमेरु पर्वत है। मेरुके सर्वदेशमें सूर्य्यादि ग्रहगण, और अधोभागमें सप्त पाताल हैं। सत्यलोकमें आकाररहित महाज्योतिःस्वरूपिणी महाशक्ति मायाके द्वारा आत्माको आच्छादित कर रखा है। यह महाशक्ति चणकाकाररूपिणी तथा हस्तपदादिरहिता और चन्द्र-सूर्याग्निस्वरूपिणी है। यह महाशक्ति माया-रूप वल्कलका परित्याग कर स्वयं अपनेको दो भागोंमें विभक्त करती है। उस समय शिव और शक्ति विभागसे पहले सृष्टिकी कल्पना होती है तथा उसी समय प्रथम पुत्र होता है जिसका नाम है ब्रह्मा।

"जातः पुत्र महावीर विवाहं कुरु सत्वरः।
त्वत्प्रसूता ततो ब्रह्मा उवाच वचनं शिवे॥
त्वां विना कस्यापि नास्ति शक्तिर्मे देहि सुन्दरीम्।
तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य स्वदेहान्मोहिनीं ददौ॥
द्वितीया वा महाविद्या सावित्री परमा कला।
तस्याः सङ्गमुपायाय वेदविस्तारं कुरु॥
प्रजानां सृष्टिकर्ता भव त्वं पद्मजन्मके॥"

इस प्रकार ब्रह्माके उत्पन्न होने पर महाशक्तिने उनसे कहा—"हे महावीर! तुम विवाह करो।" ब्रह्माने शक्तिको इसके उत्तरमें कहा—"आपके बिना मेरे और कोई भी अपनी नहीं है, मैं विवाह न करूंगा। आप मुझे शक्ति प्रदान करें।" इस पर महाशक्तिने अपने शरीरसे मोहिनीशक्ति उत्पन्न कर ब्रह्माको दी और कहा—"यह शक्ति द्वितीय महाविद्या और परमकला है, इसका नाम है सावित्री। तुम इसका संग करके वेदविस्तार करो। इस महीमण्डल पर तुम प्रजाजातके सृष्टिकर्ता होओगे।"

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

सेवकगोंकमें महाकाली महारुद्र द्वारा समुदित हुईं। यह महाकाली चन्द्रसूर्याग्नि रूपविशिष्टा, अनादि रूप संयुक्ता और ज्वलनकी भाँति चाकचिक्यविशिष्टा हैं। समस्त जीव इन महाकालीके अंशमात्र हैं। जिस तरह ज्वलन्त अग्निसे विस्फुलिङ्ग स्फुरित होते हैं किन्तु वे अग्निसे भिन्न नहीं हैं, उसी प्रकार जीव भी महाकालीसे भिन्न नहीं उनके अंशमात्र हैं। महाकालीसे जिस समय पञ्चभूतात्म हो कर भूमि पर पड़े, वे देव। उसी समय वे मतियुक्त हुए। स्थावरादि कीट और पशुपक्षि आदि चौरासी लाख योनियोंमें जन्म लिया, उसके बाद दुर्लभ मनुष्यत्व प्राप्त किया. यह मनुष्य-शरीर ही धर्म और अधर्मका आकर है। इन धर्माधर्मके द्वारा मनुष्य एक बार जन्म ले कर फिर मरता है। इस तरह मानव-समूह कर्मपाश द्वारा नियन्त्रित हो कर नाना प्रकारकी योनियोंमें परिभ्रमण करता है।

तन्त्रके मतसे तत्त्वज्ञान—

पञ्चभूत, एक एक भूतके पाँच पाँच करके २५ गुण हैं। अस्थि, मांस नख, त्वक् लोम, ये ५ क्षितिके गुण हैं। शुक्र, शोणित, मज्जा, मल और मूत्र, ये ५ जलके गुण हैं, निद्रा, क्षुधा, तृष्णा, क्लान्ति और आलस्य ये पाँच तेजके गुण हैं। धारण, चालन क्षेपण, सङ्कोच और प्रसव, ये ५ वायुके गुण हैं। काम क्रोध, मोह लज्जा और लोभ ये ५ आकाशके गुण हैं। समुदायमें पञ्चभूतके २५ गुण हैं। यह पञ्चभूत—क्षिति जलमें जल तेजमें, तेज वायुमें और वायु आकाशमें विलीन होती है।

इन पञ्चतत्त्वके बाद भी तत्त्व हैं—स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु और श्रोत्र, ये पाँच इन्द्रियाँ और मन साधन इन्द्रिय है। यह ब्रह्माण्डस्वरूप देहके मध्य अवस्थित है तथा सप्तधातु, आत्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा ये भी शरीरके मध्य अवस्थित हैं। शुक्र, शोणित, मज्जा, मेद, मांस, अस्थि और त्वक् ये सप्तधातु हैं।

शरीर ही आत्मा है, अन्तरात्मा है। मन और परमात्मा शून्यरूप है, इस परमात्मामें ही मन विलीन होता है।

रक्तधातु माता शुक्रधातु पिता और शून्यधातु प्राण, इन्हींसे गर्भपिण्डकी उत्पत्ति होती है।

आकाशसे प्राण, प्राणसे मन और मनसे वाक्यकी उत्पत्ति होती है तथा मन वाक्यके साथ विलीन होता है। सूर्य, चन्द्र वायु और मन ये कहाँ अवस्थान करते हैं? तालुमूलमें चन्द्र, नाभिमूलमें दिवाकर सूर्यके आगे वायु और चन्द्रके आगे मन तथा सूर्यके आगे चित्त और चन्द्रके आगे जीवन अवस्थित है। किस स्थानमें शक्ति शिव अवस्थान करते हैं? प्राण कहाँ रहता है और कहाँ जाती है?

पातालमें शक्ति अवस्थित है, ब्रह्माण्डमें शिव वास करते हैं, अन्तरीक्षमें प्राणकी अवस्थिति है और इस प्राणसे ही प्राणकी उत्पत्ति होती है। कौन तो आहारका आहार करता है और कौन पानभोजनादि करता है तथा जाग्रत, स्वप्न सुषुप्ति किसको होती है और कौन प्रतिबुद्ध होता है?

प्राण आहारका आहार करते हैं, हुताशन पान भोजनादि करता है तथा जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्तिमें वायु ही प्रतिबुद्ध होती है।

कौन तो कर्म करता है कौन पातकमें लिप्त होता है तथा पापका आचरण करनेवाला कौन है और पापोंसे मुक्त कौन होता है? मन पापकार्य करता है, मन ही पापमें लिप्त होता है। मन ही तन्मना हो कर पुण्य और पाप उपार्जन करता है। जीव किस प्रकारसे शिव होता है? भ्रान्तियुक्त होने पर उसको जीव कहते हैं, वह जब भ्रान्तिमुक्त हो जाता है, तब उसे शिव कहते हैं। तामस व्यक्ति इन तीर्थोंके लिये इसी तरह भ्रमण करते रहते हैं। यथाशास्त्र हो कर आत्मतीर्थमें व्याकुल नहीं होते। आत्मतीर्थके बिना जाने कैसे मोक्ष हो सकता है?

वेद भी वेद नहीं है, अर्थात् ४ वेदोंका भेद नहीं कहा जा सकता, सनातन ब्रह्म ही वेद है। चार वेद और समस्त शास्त्रोंके अध्ययन करके योगी उनका सार संग्रह करते हैं, किन्तु पण्डितगण तक्र पीया करते हैं। तप तपस्या नहीं है, ब्रह्मचर्य ही तपस्या है; जो ब्रह्मचर्यके प्रभावसे ऊर्ध्वरेता होते हैं, वे ही तपस्वी हैं।

होम आदि भी होम नहीं है ब्रह्माग्निमें आत्माका समर्पण करना ही होम है मोक्ष लाभ करनेके लिए पाप पुण्य दोनोंका ही त्याग करना पड़ता है।

बुद्धमत प्रतिपाद्य बौद्धयार्थ्योंमें पञ्चमकारकी निन्दा है और उनको ग्रहण करनेका निषेध है। किन्तु बौद्ध तान्त्रिक उसमें अन्यथा किया करते हैं। पञ्चमकारकी सेवा बौद्धतन्त्रका एक प्रधान अङ्ग है। जिस मद्य और मांसको ग्रहण करना बौद्धयार्थ्योंमें विशेषरूपसे निषिद्ध बतलाया गया है, बौद्धतन्त्रोंमें उन्हींको सुख्याति पाई जाती है।

"मिश्रं मद्यमांसमोदी मदिरासवघूर्णितम्।"
"... ... मद्यन्तैः पीत्वा मद्यं प्रिया सह।
स्वपन्नितत्वो दत्वाकरे भावयेद्बोधिमानसम्।"
(अभिधान॰ ४ प॰)

बौद्ध तन्त्रोंमें मद्य और मैथुन, इन दो भावोंका उल्लेख है। जो वास्तविक सिद्धान्तिक है, बौद्ध तन्त्रोंमें उन्हींको योगनायक कहा गया है। बौद्धतान्त्रिकगण भी इस जगत्‌को मायोद्भव मानते हैं। बौद्ध तन्त्रोंमें चक्रपूजा, वीरसाधन, शवपूजा आदिका विषय भी वर्णित है। वर्तमानके नास्तिक बौद्धगण प्रायः जातिभेदको नहीं मानते किन्तु बौद्धतान्त्रिकगण चतुर्वर्णका विशेषरूपसे विचार करते हैं। (क्रियासंग्रहपञ्जिका १म अ॰ द्रष्टव्य है।)

तान्त्रिकविषयने जिस तरह भारतीय हिन्दुओंका हृदय अधिकार किया है, उसी प्रकार बौद्धतान्त्रिकविषय भी तिब्बत और चीनके बहुत स्थल बौद्धोंमें एवं प्रचलित हुआ है। पद्मकर्प नामके तिब्बतवासी एक लामाने (ई॰ की १६वीं शताब्दीमें) कहा है—"जो यथार्थ तन्त्र तत्त्वसे वाकिफ नहीं है, वह मोक्षमार्गमें राजभृत्य पथिककी भाँति है, इसमें सन्देह नहीं। वह भगवान् बुद्ध मतके निर्दिष्ट मार्ग बहुत दूर विचरण करता है।"*

तन्त्रक (सं॰ क्ली॰) तन्त्रात् तुरन्तवयनात् अचिरापहृतं तन्त्र कन्। तंतादचिरापहृते। पा ५।२।७०। नूतन वस्त्र, नया कपड़ा।

तन्त्रकाष्ठ (सं॰ क्ली॰) तन्त्रार्थं काष्ठ। तन्त्रनिर्मित काष्ठ भेद तांतिसीकी एक लकड़ी।

तन्त्रणा (सं॰ स्त्री॰) पालन या प्रबन्ध आदि करनेका काम।

तन्त्रता (सं॰ स्त्री॰) तन्त्रस्य भावः तन्त्र तल् टाप्। कई कार्योंके उद्देशसे कोई एक कार्य करना कोई ऐसा कार्य करना जिससे अनेक उद्देश्य सिद्ध हों।

जिस तरह शास्त्रानुसारसे स्नान किये बिना कोई काम करना निषिद्ध [illegible] परन्तु एक ही स्नानसे पूजा तर्पण और होम कर सकता है।

'अस्नात्वा नाचरेत् कर्म जपहोमादि किञ्चन।' (स्मृति)

इस शास्त्रीय वचन अनुसारसे उनके प्रत्येक कार्यके बाद स्नान करना आवश्यक जान पड़ता है। उनके लिये तन्त्रता स्वीकार कर समस्त कार्योंके एक बार स्नान करनेसे काम चल सकता है। प्रत्येक कार्यके बाद स्नान करनेका कोई प्रयोजन नहीं।

यदि किसीसे अनेक ब्रह्महत्या हो तो उन ब्रह्महत्या पापनाशके लिये एक एक प्रायश्चित्त न करके सबोंके लिये एक प्रायश्चित्त कर लेनेसे ही समस्त ब्रह्महत्याका पाप नाश हो जाता है। (स्मृति)

तन्त्रधारक (सं॰ पु॰) तन्त्र तन्त्रप्रापकपद्धतिग्रन्थं धारयति धारि-ण्वुल्। पुस्तकधारक, यज्ञ आदि कार्योंमें वह मनुष्य जो कर्मकाण्ड आदिकी पुस्तक ले कर याज्ञिक आदिके साथ बैठता हो। याज्ञिक कैसाही पारदर्शी क्यों न हो तो भी तन्त्रधारकके बिना पूजा यज्ञ प्रभृतिका अनुष्ठान नहीं करना चाहिये। पूजादिमें एक पूजा करनेके लिये बैठे और दूसरेको चाहिये [illegible] वह पुस्तक ले कर उसके अनुसार पढ़ाते जाय।

'पुस्तकधरस्तु लिखितसाद्यपन्त प्रचारत।' (स्मृति)

तन्त्रयुक्ति (सं॰ स्त्री॰) शास्त्र शरीरस्यमनेन तन्त्र विधि तन्त्र युक्तयः, ६ तत्। सुश्रुतोक्त ३२ प्रकारकी युक्ति। इनकी सहायतासे किसी वाक्यका अर्थ आदि निकालनेमें या समझनेमें सहायता हो जाती है। ३२ युक्तियोंके नाम—अधिकरण योग, पदार्थ, हेत्वर्थ, प्रदेश, अतिदेश, अपवर्ग, वाक्यशेष, अर्थापत्ति, विपर्यय, प्रसंग, एकान्त, अनेकान्त, पूर्वपक्ष, निर्णय, अनुमत, विधान, अनागतावेक्षण, अतिक्रान्तावेक्षण, संशय, व्याख्यान, स्वसंज्ञा, निर्वचन, निदर्शन, नियोग, विकल्प, समुच्चय, ऊह्य, उद्देश, निर्देश, उपदेश और अपदेश। इन ३२ प्रकारकी तन्त्रयुक्तियोंसे वाक्य और अर्थ योजित होते हैं। जहां पर असमस्त वाक्य रहता है, वहां उस

* E. Schlagintweit's Buddhism in Tibet, p 42.

२० पूर्वपक्ष—इस शब्दका अर्थ प्रश्न है।

२१ विधान—इसका अर्थ पर्यायक्रमसे निर्देश है। यथा उदररोग ८ प्रकारका निर्देश कर पीछे पर्यायक्रमसे ८ प्रकारकी चिकित्सा भी बतलाई गई है।

२२ अनुमत—परमतका प्रतिषेध नहीं करनेको अनुमत कहते हैं। यथा किसी किसीके मतसे अष्टि चिकित्साका एकमात्र उपकरण है।

२३ व्याख्यान—इस शब्दका अर्थ व्याख्या करना है।

२४ संशय—इस शब्दका अर्थ यह अथवा वह इस तरह सन्देहयुक्त है।

२५ अतीतावेक्षण—पूर्वोक्तके पुनः उल्लेख करनेको अतीतावेक्षण कहते हैं। यथा सूत्रस्थानकी विधि श्लोकस्थानके अध्यायमें उल्लिखित होनेसे वहाँ एक मुख्य तत्त्व है।

२६ अनागतावेक्षण भविष्यत्‌को वर्तमान उल्लेखको अनागतावेक्षण कहते हैं। यथा ज्वर-परिच्छेदमें कहा गया है कि वमन विरेचनका नियम कल्पस्थानमें देखो।

२७ स्वसंज्ञा—जो संज्ञा किसी दूसरे शास्त्रमें व्यवहार नहीं होती उसे स्वसंज्ञा कहते हैं। यथा चतुष्पद शब्दका अर्थ आयुर्वेदमें वैद्य, रोगी, परिचारक और औषध है।

२८ ऊह्य—जो वाक्यमें नहीं रह कर भी समझमें आ जाता है, उसे ऊह्य कहते हैं। यथा दोषदोषान्तर द्वारा आक्रान्त होने पर रोगका निर्णय करना कठिन होता है यहाँ पर यही बात छिपी है कि केवल आयुका लक्षण देख कर आयुको चिकित्सा करनेमें कभी कभी भ्रान्त भी होना पड़ता है।

२९ समुच्चय—समुच्चय शब्द इत्यादि बोधक है। यथा दाड़िम अर्थात् अनारफल है। यहाँ पर आँवले इत्यादि को भी अम्ल समझना चाहिये।

३० निदर्शन—निदर्शन शब्दका अर्थ उपमा है। यथा अग्निसे अग्निपिण्ड जिस तरह प्रक्षिप्त हो जाता है, भूम और उदरसे ग्रथ भी उसी तरह प्रक्षिप्त होता है।

३१ निर्वचन—किसी बातका निश्चय करके कहनेको निर्वचन कहते हैं। यथा कुलनाशक पुरुषोंमें खदिर (खैर) ही प्रधान है।

३२ सन्नियोग—इस शब्दका अर्थ आज्ञावाक्य है। जैसे माता ओढ़ी बनी या काम जाओ।

३३ विकल्पन—यह अर्थबोधक है। जैसा मधुर या खोड़े या अधिक खानेमें या समयसे बीत जाने पर भोजन करनेका नाम विषमाशन है।

३४ प्रत्युच्चार—जिससे बुद्धिकी तीक्ष्णता सभ्यता और निपुणताके मिटने या किसी दूसरे कारणसे एकही अध्याय एक ही विषयमें भिन्न भिन्न प्रकारसे दो तीन बार कहनेको प्रत्युच्चार कहते हैं।

३५ सम्भव—इस शब्दका अर्थ उत्पत्तिका कारण है। यथा दोषका प्रकोप रोगका कारण है।

३६ उद्धार—सूत्रके अनुवर्तिको उद्धार कहते हैं। यथा कटु कहनेसे मरिचादि, तिक्त कहनेसे नीम आदि को समझना चाहिये। यह तन्त्रयुक्ति प्रत्येक कार्यमें प्रयोजनीय है। (सुश्रुत उत्त०)

तन्त्रवाय (सं० पु०) तन्त्र वयति वय-अण्। १ तन्तुवाय तांती। २ लूता, मकड़ी।

तन्त्रवाय (सं० पु०) तन्त्र वयति वे-अण्। १ तन्तुवाय, तांती। यह सङ्कर जाति है। मणिबन्धके औरस और मणिकारोके गर्भसे इस जातिकी उत्पत्ति हुई है। इस जातिकी उत्पत्तिके विषयमें पराशरके साथ भगवान् मनुका मतभेद देखा जाता है। मनुके मतसे कारिकाओंके गर्भ तथा मैत्रके औरससे इस जातिकी उत्पत्ति हुई है। २ लूता, मकड़ी। धातुमें अण्। ३ तन्तु, तांत।

तन्त्रसंस्था (सं० स्त्री०) तन्त्रस्य संस्था, ६-तत्। राज्यशासनव्यवस्था।

तन्त्रस्थिति (सं० स्त्री०) तन्त्रस्य संस्थितिः, ६ तत्। राज्यशासनव्यवस्था।

तन्त्रस्कन्ध (सं० पु०) ज्योतिषशास्त्रका एक अंग। इसमें गणितके द्वारा ग्रहोंकी गति आदिका निरूपण होता है, गणितज्योतिष।

तन्त्रहोम (सं० पु०) तन्त्रोक्त होमः, ६ तत्। तन्त्रशास्त्रके मतसे अनुष्ठित होम, वह होम जो तन्त्रशास्त्रके मतसे हो। होम देखो।

तन्द्रा (सं० स्त्री०) तन्द्रि भावे अ टाप्। अल्पनिद्रा थोड़ी नींद।

तन्त्रायिन् (सं० पु०) तन्त्रं व्याप्याप्यायं प्रति गच्छति णिनि। आतपव्यापी सूर्यादि।

तन्त्रि (सं० स्त्री०) तन्त्र-इ। १ तन्त्री, वीणा सितार आदि बाजोंमें लगा हुआ तार। २ तन्द्रा, उँघाई ऊँघ।

तन्त्रिका (सं० स्त्री०) तन्त्री एव स्वार्थे कन् पूर्व ह्रस्वश्च। १ गुडूची, गुरुच। २ तन्त्र, ताँत।

तन्त्रिज—तन्त्रि देखो।

तन्त्रित (सं० वि०) तन्त्रा तन्द्रा जाता अस्य तारकादित्वादितच्। आलस्ययुक्त, आलसी।

तन्त्रिन्—तन्त्रिन् देखो।

तन्त्रिपात—तंत्रिपाल देखो।

तन्त्रिपालक (सं० पु०) जयद्रथ राजा। (शब्दमाला)

तन्त्री (सं० स्त्री० तन्त्रयति मोहयति लोकान् तंत्र-ङीप्। १ वीणागुण, बीन सितार आदि बाजोंमें लगा हुआ तार। २ गुडुची, गुरुच। ३ देहशिरा, शरीरकी नस। ४ नाडी। ५ नदीभेद, एक नदीका नाम। ६ युवतीभेद, एक जवान औरत। ७ रज्जु, रस्सी। ८ वह बाजा जिसमें बजानेके लिये तार लगे हों। ९ कर्णपालीगत रोगविशेष। १० सैंहली पिप्पली। (पु०) ११ बाजा बजानेवाला। १२ गवैया, वह जो गाता हो। (त्रि०) १३ आलस्ययुक्त, आलसी। १४ अधीन।

तन्त्रीमुख (सं० पु०) हस्तका अवस्थानभेद, हाथकी एक मुद्रा।

तन्त्वग्र (सं० क्ली०) तन्तूना अग्रं, ६-तत्। सूतका अग्रभाग, सूतेका अगला हिस्सा।

तन्यो (सं० अव्य०) स्वीकार, अङ्गीकार मंजूरी।

तन्दो—हैद्राबाद जिलेका एक उपविभाग। इसमें गुनो, बदीन, तन्दोबागो, डेरा महाबत ये चार तालुका लगते हैं।

तन्दो अलाहियर—१ हैद्राबाद जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २५°७´ और २५° ४८´ उ० और देशा० ६८° ३५´ और ६९°२´ पू० पर अवस्थित है। जनसंख्या ८०९९०-के लगभग है। इसमें ३ शहर और १०७ ग्राम लगते हैं। बाजरा और तमाकू यहां प्रधानतया उपजते हैं। क्षेत्रफल प्राय: ६९० वर्गमील है।

२ उक्त तालुकका शहर। यह जोधपुर-बीकानेर रेलवेकी हैद्राबाद बलोत्तरा शाखा पर अक्षा० २५°२७´ उ० और देशा० ६८°४६´ पू० में अवस्थित है। लोकसंख्या ४३२४ के लगभग है। यहां चीनी, आग्रो, रेशम, कपड़ा, रूई और तेलका व्यवसाय चलता है। यह १७९० ईस्वीके लगभग तालपुर राज्यके प्रथम राजपुत्रने बसाया था। यहांका किला देखने लायक है। १८५६ ईस्वीमें म्युनिसपलिटी स्थापित हुई थी। यहां तीन लड़कोंके स्कूल, एक लड़कियोंकी पाठशाला, एक रूईकी जीन, एक कपास ओटनेका पेच और एक अस्पताल है।

तन्दो आदम—(आदमजी) तन्दो हैद्राबाद जिलेके तन्दो अलाहियर तालुकका एक शहर। यह अक्षा० २५°४३´ उ० और देशा० ६८°४२´ पू० पर अवस्थित है। यहां हो कर नार्थ वेष्टर्न रेलपथ गया है। इसको सन् १८०० ई०में आदमखाँ मरीने अपने नाम पर बसाया था। जनसंख्या ८६६४ है। रेशम, रूई, तेल, चीनी और घीका अच्छा व्यापार होता है। यहां १८६० ई०से म्युनिसपलिटीकी स्थापना हुई थी। यहां तीन रूईके जीन, पाँच स्कूल और एक अस्पताल है।

तन्दोबागो—हैद्राबाद जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २४°३५´ और २५°२´ उ० और देशा० ६८°४६´ एवं ६९° २२´ पू०के बीच अवस्थित है। लोकसंख्या ७४८७६के लगभग है। इसमें १४१ ग्राम लगते हैं। नहरोंके पानीसे जमीन सींची जाती है और चावल, रूई, ईख और यव अधिक उत्पन्न होते हैं। इसका क्षेत्रफल प्राय: ६९७ वर्गमील है।

तन्दो मस्तीखाँ—बम्बईके अन्तर्गत खैरपुर राज्यका एक शहर। यह अक्षा० २७°२६´ उ० और देशा० ६८°४२ पू० पर खैरपुर शहरसे १३ मील दक्षिणमें अवस्थित है। हैदराबादसे रोहरी तककी प्रधान सड़क इसी शहरसे हो कर गई है। लोकसंख्या प्राय: ६४६५ है। १८०३ ई०में वाटेरी मस्तीखाँने यह शहर बसाया था। कोटेसरका भग्नावशेष अब भी शहरके दक्षिणमें देखा जाता है। कहते हैं, कि एक समय यहां बहुत मनुष्योंका वास था। पश्चिममें शाहजरी पीर फजलनह्नी और शेख मक्की मसजिदें हैं।

तन्दो महम्मदखाँ—बम्बईके हैदराबाद जिलेके अन्तर्गत गुनी तालुकका सदर। यह अक्षां २५°८´ उ० और देशा० ६८°३५´ पर फुलेली नहरके दाहिने किनारे तथा हैदराबाद शहरसे २१ मील दक्षिणमें अवस्थित है। लोकसंख्या लग-

मेल ४६१६ है। महाराष्ट्र कम्पनीके इसमें कारण यहाँ होंदो पादाघात तथा यहाँ एक सरकारी मकान है। १८६६ ई०में यहाँ म्युनिसपालिटी स्थापित हुई है। दूसरे दूसरे देशोंके चावल तथा दूसरे प्रकारके अनाज, रेशम, धातु, तमाखू, रुई, कोमके कपड़े और घोड़ोंकी आमदनी तथा यहांसे ज्वार, बाजरे, चावल तथा तमाखूकी रफतनी होती है। शहरमें ताँबे, कोई तथा मट्टीके बरतन, रेशम, कम्बल, सूता, कपड़े, जूते ऐसी सराब तथा लकड़ीकी बढ़ी अच्छी चीजें प्रस्तुत होती हैं। प्रवाद है कि मीर तुरुष्क-ताजउर माहबानीने इस शहरको बसाया था, जिनकी मृत्यु १८१२ ई०में हुई। यहाँ एक औषधालय और तीन स्कूल हैं।

तन्द्र (स० स्त्री०) तन्द्र-अच्। पंक्तिच्छन्दः, एक प्रकारका छन्द।

तन्द्रयु (स० त्रि०) तन्द्रा आलस्य याति या-कु पृषो० साधु। आलस्ययुक्त, आलसी।

तन्द्रवाप (स०पु०) तन्त्रवाय पृषो० साधु। तन्त्रवाय तांती। तन्त्रवाय देखो।

तन्द्रवाय (स० पु०) तन्त्रवाय पृषो० साधु। तन्त्रवाय देखो।

तन्द्रा (स० स्त्री०) तत् द्रातीति तत् द्रा-क, वा तन्द्र भाव आदि तन्द्र-अच् ततष्टाप्। १ निद्राविशेष, ऊंघाई, ऊंघ। २ आलस्य, सुस्ती। इसका संस्कृत पर्याय—प्रमीला, तन्द्री, तन्द्रि तन्द्रिका और निद्राणता है।

इसमें मनुष्यको व्याकुलता बहुत होती, इन्द्रियोंका ज्ञान नहीं रह जाता मुखसे वचन नहीं निकल सकता तथा बार बार जँभाई आती रहती है। यही तन्द्राका प्रकट लक्षण है। चरकसंहितामें इसका लक्षण इस प्रकार लिखा है। मधुर, स्निग्ध, गुरु और अन्नसेवन, चिन्तन, भय शोक और व्याध्यानुषङ्ग (रोगाक्रान्त)के लिये कफ वायु प्रेरित होकर हृदयको आश्रय करके हृदय स्थित ज्ञानको आच्छादन करते हैं तभी तन्द्रा उपस्थित होती है। इस तन्द्राके उपस्थित होने पर हृदयमें व्याकुलताभाव, वाक्य, चेष्टा और इन्द्रियोंकी गुरुता, मन और बुद्धिकी असमर्थता उत्पन्न होती है। निद्रा और तन्द्रा इन दोनोंमें प्रभेद यह है कि निद्रामें आच्छादित होनेसे क्लान्ति मालूम पड़ती और तन्द्रामें आच्छादित होनेसे क्लान्ति मालूम पड़ती है। कफनाशक यवागू और कटुतिक्त भक्षण अथवा व्यायाम और रक्तमोक्षण करनेसे तन्द्रा दूर होती है।

तन्द्रा सूर्यकी भार्या, निन्द्रा कन्या और प्रीति भगिनी है। (कथासरि०)

तन्द्रालु (स० त्रि०) तन्द्रा-आलुच्। स्पृहि गृहीति। पा ३।२।१५८। आलस्ययुक्त, आलसी।

तन्द्रि (स० स्त्री०) तन्द्रिसीको धातु क्रिन्। तन्द्रयस्त्री। ७।१६६। अल्पनिद्रा, ऊंघाई, ऊंघ।

तन्द्रिकसन्निपात (स० पु०) एक प्रकारका सन्निपात ज्वर। इसमें ऊंघाई अधिक आती ज्वर वेगसे चढ़ जाता प्यास अधिक लगती जीभ काली हो कर खुरदरी हो जाती, दम रुक जाता, दस्त अधिक होता कफ नहीं होता और कानमें दर्द रहता है। यह ज्वर सिर्फ २५ दिन तक रहता है।

तन्द्रिका (स० स्त्री०) तन्द्रिरिव स्वार्थे कन् टाप् च। तन्द्रि अल्पनिद्रा, ऊंघाई, ऊंघ।

तन्द्रिज (स० पु०) वसुदेवके भाई श्वफल्क राजाके पुत्र। (हरिवं ३९ अ०)

तन्द्रित—तन्त्रित देखो।

तन्द्रिता (स० स्त्री०) तन्द्रिणो भाव तन्द्रि-तल् टाप्। निद्रालुता आलस्य।

तन्द्रिपाल (स० पु०) वसुदेव श्वफल्क राजाके एक पुत्रका नाम।

तन्द्री (स० स्त्री०) तन्द्रि ङीप्। १ तन्द्रा ऊंघ। २ अकड़ो, मोह।

तन्न (स० अव्य०) तत्-न। वह नहीं।

तना (हि० पु०) १ जमीनसे तनेका स्तूप जो कमाईसे लाना जाता है। २ ऐसा पदार्थ जिस पर कोई चीज तानी जाती है।

तनि (स० स्त्री०) तनयति भी धातुष्काप् त्रि। १ काम तृष्णा, पिपासा। २ कामरूपकी चन्द्रतुल्य नदीका नाम।

तन्निबन्धन (स० क्ली०) तत् निबन्धन कर्मधा०। उसी लिये।

तन्निमित्त—तदर्थ उसके लिये।

तन्वी (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी बाँसुरी। इसके

लोहेका मैल खुरचते हैं। २ एक प्रकारका रस्सा जो जहाजके मस्तूलको जडमें बंधा रहता है। इसको सहायतासे पाल आदि चढाते हैं। ३ तराजूमें जोतीको रस्सी, जोती। (पु०) ४ व्यापारी जहाजका एक अफसर जिसके हाथ व्यापार सम्बन्धी कार्योंका इन्तजाम रहता है। ५ तरनी देखो।

तन्मतता (सं० स्त्री०) तस्य मतं, ६-तत्, तन्मत तल्-टाप्। उसी तरह, वैसा ही।

तन्मध्य (सं० क्लो०) तस्य मध्यं, ६-तत्। उसमें।

तन्मध्यस्थ (सं० त्रि०) तन्मध्ये तिष्ठति स्था-क। तन्मध्यवर्त्ती, उसके मध्यका, उसमेंके।

तन्मनोहराङ्गनिरीक्षण (सं० क्लो०) जैनशास्त्रानुसार ब्रह्मचर्य-व्रतका एक अतिचारदोष। ब्रह्मचारी अथवा स्वदारसन्तोष-व्रतवाले श्रावकको परस्त्रियोंके मनोहर अंगोंको न देखना चाहिये। यदि वह ऐसा करे तो उसे उक्त दोष लगता है। जैनधर्म देखो।

तन्मय (सं० त्रि०) तदात्मकं तद्-मयट्। दत्तचित्त, तदासक्त चित्त, लवलीन, लीन, लगा हुआ।

तन्मयता (सं० स्त्री०) लिप्तता, एकाग्रता, लीनता।

तन्मयासक्ति (सं० स्त्री०) भगवान्में दत्तचित्त हो जाना।

तन्मात्र (सं० क्लो०) तदेव एवार्थे मात्रच् वा सा मात्रा यस्य, बहुब्री०। सांख्यमतानुसार सूक्ष्म अमिश्र पञ्चभूत; शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध। सत्त्व, रज और तमोगुणात्मिका प्रकृतियोंसे महत्तत्त्व उत्पन्न होता है। महत्तत्त्वका अपर पर्याय है—बुद्धितत्त्व।

उस त्रिगुणात्मक महत्तत्त्वसे त्रिगुणान्वित अहङ्कार उत्पन्न होता है। यह अहङ्कार भी तीन प्रकारका है—सात्विक अहङ्कार, राजस अहङ्कार और तामस अहङ्कार।

राजस अहङ्कारके साथ सात्विक अहङ्कारमेंसे एकादश इन्द्रियाँ तथा तामस अहङ्कार और राजस अहङ्कारके संयोगसे पञ्चतन्मात्रकी उत्पत्ति होती है और अल्प सात्विक सम्बन्ध होनेसे उसका लिङ्ग उत्पन्न होता है। लिङ्ग अर्थात् अनुद्भूत स्वभाव बाह्येन्द्रियके अग्राह्य मोहादि लिङ्ग।

शब्दादि पञ्चतन्मात्र योगिग्राह्य हैं, वे मात्राएँ जिनसे इस व्युत्पत्तिके अनुसार तन्मात्र शब्द निष्पन्न हुए हैं, अर्थात् जो स्वयं अवयवशून्य पर समस्त पदार्थोंके अवयव हैं, उनको तन्मात्र कहते हैं। वे तन्मात्र, ५ हैं—शब्द-तन्मात्र, स्पर्शतन्मात्र, रूपतन्मात्र, रसतन्मात्र और गन्ध-तन्मात्र।

इन पाँच तन्मात्रोंसे क्रमशः आकाश, वायु, तेज, जल और क्षिति ये पाँच महाभूत उत्पन्न होते हैं। इन आकाशादि पञ्च महाभूतोंमें उत्तरोत्तर एक एक तन्मात्रको क्रमशः वृद्धि होती है। जो जिससे उत्पन्न होता है, वह उसके गुणोंको पाता है, इस न्यायके अनुसार शब्द तन्मात्रसे शब्दगुण आकाश, शब्द-तन्मात्रसंयुक्त स्पर्श-तन्मात्रसे शब्द स्पर्श-गुण वायु, शब्दस्पर्श-तन्मात्र संयुक्त रूपतन्मात्रसे शब्द-स्पर्श रूप गुण तेज, शब्दस्पर्शरूप-तन्मात्र युक्त रसतन्मात्रसे शब्द, स्पर्श, रूप और रसगुण अप् तथा शब्द, स्पर्श, रूप और रसतन्मात्रके साथ गन्धतन्मात्रसे शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध-गुण पृथिवी उत्पन्न हुआ करती है।

शब्द स्पर्शादि पाँच तन्मात्र स्थूलताको प्राप्त हो कर यथाक्रमसे विशिष्ट भावापन्न होते हैं।

ये पञ्चतन्मात्र सुखदुःख और मोहात्मक अहङ्कारसे उत्पन्न हुए हैं, इसलिए कहना होगा कि, इन पाँच तन्मात्रके सुख-दुःख और मोह ये तीन धर्म हैं अर्थात् शब्द तन्मात्र आदि क्रमशः सुख दुःख और मोहादि रूप धर्म-विशिष्ट होनेके कारण अनुभवयोग्य होते हैं। अतएव इस जगह समझना होगा कि जो अविशिष्ट भावापन्न पञ्चतन्मात्रका सूक्ष्मत्व हेतु है, उसका सुख दुःखादि रूप द्वारा विशेषरूपसे अनुभव नहीं किया जा सकता। जैसे—किसी सुललित शब्दको सुन कर सुख और विकृत शब्द सुन कर दुःखका अनुभव होता है, तथा यदि वह सुललित और विकृत शब्द अति सूक्ष्मभावसे होता तो, सुननेमें नहीं आता, सुतरां उसमें सुख वा दुःख कुछ भी नहीं होता। महत्, अहङ्कार और पञ्चतन्मात्र इन सात इन्द्रियां और भूतके कारणत्वके कारण दर्शनविदोंने इनको प्रकृति कहा है। गीतामें मनको शामिल करके ८ प्रकृति कही गई है। (गीता ७।४)

मूल प्रकृतिमें कोई कारण नहीं है, इसलिए उसको प्रकृति कहना दार्शनिकोंका अभिमत है।

परन्तु महत् अहङ्कार और पञ्चतन्मात्र इन सातों को प्रकृतिका कार्य समझना चाहिये।

प्रकृति अव्यय जो कारण है उसका पृथक् कोई कारण नहीं है। महत् अहङ्कार और पञ्चतन्मात्र ये सभी कार्य हैं। (सांख्यद०)

विशेष विवरण प्रकृति शब्दमें देखो।

तन्मात्रता (सं० स्त्री०) तन्मात्रस्य भावः तन्मात्र-तल् टाप्। तन्मात्रत्व। तन्मात्र देखो।

तन्मात्रिक (सं० त्रि०) तन्मात्र सम्बन्धीय।

तन्यता—तन्यतु देखो।

तन्यतु (सं० पु०) तनोति विस्तारयति तन-यतुच्। १ वायु, हवा। २ रात्रि, रात। ३ वाद्य-सङ्गीतशास्त्रविशेष प्राचीन कालका एक प्रकारका बाजा। ४ गर्जन, गरजना। ५ अशनि, वज्र, बिजली। ६ पर्जन्य गरजता हुआ बादल।

तन्व (सं० त्रि०) तन-क्वुन्। १ समादेश, उपदेशका अभाव। (पु०) २ वायु, हवा।

तन्वि—काश्मीरकी चन्द्रभागा नदीका एक नाम।

तन्वी (सं० स्त्री०) तनु ङीष्। १ कृशाङ्गी, वह स्त्री जिसके अङ्ग कृश और कोमल हों। २ शालपर्णी। ३ कोकिलाक्षी एक क्षुपका नाम। (हरि० १५८ अ०) ४ छन्दोविशेष, एक छन्दका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें २४ वर्ण रहते हैं तथा १।४।५।६।१२।१३।१६।२१ और २४ अक्षर गुरु होता है। तथा ५वें, १२वें और २४वें अक्षर पर विराम देना पड़ता है।

तप (सं० पु०) तप-अच्। १ ग्रीष्म, ज्येष्ठ और आषाढ़ मास। २ तपस्या। ३ ज्वर, बुखार।

तप आचार (सं० पु०) तपका आचरण करना, उसकी प्रभावना करना आदि सब तप आचारके ही भे० हैं। तपस् देखो।

तपःकर (सं० त्रि०) तपः करोति कृ ट। १ तपस्याकारी जो तपस्या करता है। (पु०) २ तपस्विमत्स्य तपसी मछली।

तपःक्षम (सं० त्रि०) तपसा क्षम, ३-तत्। तपसे क्षीण।

तपःक्लेशसह (सं० त्रि०) तपस्, क्लेश सहति सह-अच्। इन्द्रिय व समादिकारक तपस्वी, जो तपस्याके होनेवाले कष्टको सहन कर सकता है।

तपःप्रभाव (सं० पु०) तपसः प्रभावः, ६ तत्। तपस्याका प्रभाव।

तपःक्षीण (सं० त्रि०) तपः एव क्षीणं अभावो यस्य, बहुव्री०। तपस्यापरायण तपस्यामें लीन।

तपःसाध्य (त्रि० पु०) तपसा साध्यः, ३ तत्। तपस्या द्वारा साधनीय, तपस्यासे साधन करने योग्य।

तपःसिद्ध (सं० त्रि०) तपसा सिद्धः, ३ तत्। तपस्या द्वारा सिद्ध जिसने तपस्या करके सिद्धि लाभ की है।

तपकना (हिं० क्रि०) १ उछलना, धड़कना। २ टपकना (?)।

तपकाव (हि० पु०) एक प्रकारका तुर्की घोड़ा।

तपड़ी (हि० स्त्री०) १ कुछ ऊंचा टीला। २ जाड़ेके ऋतुमें होनेवाला एक प्रकारका अन्न। पकने पर यह पोस्तापन लिये लाल रङ्गका हो जाता है।

तपती (सं० स्त्री०) १ सूर्यकी कन्या। यह सूर्यको पत्नी छायाके गर्भसे उत्पन्न हुई थी बहुत रूपवती थी। कुरु के पोत्र चन्द्र-राजपुत्र संवरण सूर्यके अच्छे भक्त थे। उनको इस पर आशिक हो कर सूर्यदेवने तपतीको उन्हीं के साथ विवाह कर दिया था। (भारत १।१७१अ०) २ नदीविशेष, एक नदीका नाम। यह नदी दाक्षिणात्य प्रदेशमें सह्याद्रि पर्वतसे निकल कर पश्चिमसमुद्रमें अरब समुद्रमें गिरी है। यह नदी गोदावर देशकी उत्तरीय सीमा है। ताप्ती देखो।

तपन (सं० पु०) तपतीति तप कर्त्तरि ल्यु। १ सूर्य। २ भल्लातक वृक्ष, भिलावेका पेड़। ३ अर्कवृक्ष मदार, आक। ४ ग्रीष्मकाल गरमीका मौसम। ५ अन्यान्विशिष्ट शास्त्रोक्त नरकविशेष, एक प्रकारका नरक जिसमें जाने से शरीर जल जाता है। ६ क्षुद्राग्निमन्थ वृक्ष, अरनीका पेड़। ७ सूर्यकान्तमणि सूरजमुखी। ८ साहित्यदर्पणोक्त स्त्रियोंके यौवन कालमें सात्त्विक अलङ्कारभेद यह प्रिया का ताप भाव आदि जो नायकके वियोगमें नायिका करती है। ९ सन्धिभेद, एक प्रकारकी सन्धि। (पु०) १० शिव, महादेव। ११ ताप जलन, दाह आँच। १२ धूप।

१३ जैनशास्त्रानुसार विद्युत्प्रभ नामक वक्षस्कार पर्वतके नवकूटोंमेंसे एक। (त्रिलोकसार ७४ १२८ गाथा)

तपनक (सं० पु०) शालिधान्य भेद, एक प्रकारका धान।

तपनकर (सं० पु०) तपनस्य करः, ६-तत् । रश्मि, सूर्यकी किरण ।

तपनच्छद (सं० पु०) तपनः अतिरूचः छदो यस्य, बहुव्री० । आदित्यपत्रवृक्ष, मदारका पेड़ ।

तपनतनय (सं० पु० तपनस्य तनयः, ६-तत् । सूर्यके पुत्र यम, कर्ण, शनि, सुग्रीव आदि ।

तपनतनया (सं० स्त्री०) तपनतनय-टाप् । १ शमीवृक्ष । सूर्यकी कन्या यमुना, तपती प्रभृति ।

तपनमणि (सं० पु०) तपनः सूर्यः तत् प्रियो मणिः । सूर्यकान्तमणि ।

तपनांशु (सं० पु०) तपनस्य अंशुः, ६ तत् । रश्मि, सूर्यकी किरण।

तपना (सं० स्त्री०) क्षुद्राग्निमन्थ ।

तपना (हिं० क्रि०) १ तप्त होना, गरम होना । २ सन्तप्त होना, कष्ट सहना, मुसीबत झेलना। ३ गरमी फैलाना । प्रबलता दिखलाना, रोब दिखलाना ।

तपनात्मज (सं० पु०) १ यम, कर्ण प्रभृति । (स्त्री०) तपनस्य आत्मजा, ६-तत् । २ सूर्यको कन्या, गोदावरी नदी, यमुना तपती प्रभृति ।

तपनी (सं० स्त्री०) तप्यते पापमनया तप-ल्युट्-ङीप् । १ गोदावरी नदी । २ पाठा, एक लता, पाढ़ ।

तपनीय (सं० क्ली०) तप-अनीयर् । १ स्वर्ण, सोना । २ कनकधुस्तूर, धतूरा । ३ वह जो उत्तप्त करनेका उपयुक्त हो, वह जो तापनेके काबिल हो ।

४ जैनशास्त्रानुसार सौधर्मादि चार स्वर्गोंके अड़तीस इंद्रकविमानोंमेंसे एक । (त्रिलोकसार ४६५ गाथा)

४ (पु०) ५ शालिधान्य भेद ।

तपनीयक (सं० क्ली०) तपनीय स्वार्थे कन् । सुवर्ण, सोना ।

तपनेष्ट (सं० क्ली०) तपनस्य सूर्यस्य इष्टं, ६-तत् । ताम्र, तांबा ।

तपनेष्टा (सं० स्त्री०) शमीभेद, एक प्रकारका शमीवृक्ष ।

तपनोपल (सं० पु०) तपन इति नाम्ना ख्यातः य उपलः । सूर्यकान्तमणि ।

तपन्तक (सं० पु०) महाराज उदयनके विदूषक वसन्तका पुत्र, नरवाहनदत्तका बन्धु ।

तपभूमि (हिं० स्त्री०) तपोभूमि देखो ।

तपराशि (हिं० पु०) तपोराशि देखो ।

तपलोक (सं० पु०) तपोलोक देखो ।

तपवाना (हिं० क्रि०) १ गरम करवाना, किसी दूसरेको तपानेके काममें प्रवृत्त करना । २ अनावश्यक व्यय करना, बिना प्रयोजनका खर्च कराना ।

तपविनय (सं० पु) तपस्वी पुरुषोंको विनय करना ।

तपवृद्ध (हिं० त्रि०) तपोवृद्ध देखो ।

तपश्चरण (सं० क्ली०) तपसः चरणं । तपश्चर्या, तपस्या ।

तपश्चर्या (सं० स्त्री०) तपसः चर्या, ६-तत् । व्रतचर्या, तप, तपस्या ।

तपस् (सं० क्ली०) तप असुन् । १ वह जिसके द्वारा मन निर्मल हो, शरीरको कष्ट देनेवाले वे व्रत और नियम जो चित्तको शुद्ध और विषयोंसे निवृत्त करनेके लिये किये जांय, तपस्या । २ आलोचनात्मक ईश्वरध्यानविशेष । ३ क्षुत्पिपासा, क्षुधा और तृष्णा, भूख, प्यास । ४ मौनादि व्रत । ५ शरीर वा इन्द्रियको वशमें रखनेका धर्म । ६ शास्त्रानुसार शरीर, इन्द्रिय और मनका शोधन । ७ कष्टसे किये जानेवाला चान्द्रायण प्राजापत्यादि प्रायश्चित्त । ८ शास्त्रविहित तप्तशिलारोहणादि । ९ वानप्रस्थावलम्बीका असाधारण धर्म ।

तपके तीन भेद हैं—शारीरिक, वाचिक और मानसिक ।

देवताओंका पूजन, बड़ोंका आदर सत्कार, ब्रह्मचर्य, अहिंसा आदि शारीरिक तपके अन्तर्गत हैं ।

सत्य और प्रिय बोलना, वेदशास्त्र पढ़ना आदि वाचिक तप हैं ।

मौनावलम्बन, आत्मनिग्रह आदि मानसिक तप हैं ।

ये तप फिर तीन प्रकारके हैं—सात्त्विक, राजसिक और तामसिक ।

जो फलकी आकाङ्क्षासे परिशून्य हो कर परम श्रद्धासे उक्त तीनों प्रकारकी तपस्याका अनुष्ठान करता है, वही सात्त्विक तप है । जो मनुष्य-समाजमें सत्कार, सम्मान और पूजादि लाभके लिये उक्त तीनों प्रकारकी तपस्याका अनुष्ठान करते हैं, उसी पारत्रिकफलशून्य तपस्याको राजस तप कहते हैं और अत्यन्त दुराग्रहद्वारा दूसरेके

उपार्जनके लिये आत्माको यथेष्ट पीड़ा पहुँचा कर जो तपस्या की जाती है उसे तामस तप कहते हैं। (गीता) पातञ्जलदर्शनमें तपस्याको क्रियायोग बतला कर वर्णित है।

शास्त्रान्तरोपदिष्ट चान्द्रायण प्रभृति तपस्यासे चित्तकी शुद्धि होती और मनकी एकाग्रता उत्पन्न होती है।

तपस्यासे मनुष्य अभीष्ट फल पाते हैं। तपस्यासे पाप क्षीण होता है और मनुष्य स्वर्गको जाते और वहाँ सुख पाते हैं। इस लोकमें और परलोकमें मनुष्योंका जो कुछ अभिलषित रहता है, वह एक तपस्यासे ही प्राप्त होता है।

इस जगत्‌में तपःसिद्ध मनुष्योंके कुछ भी असाध्य नहीं है। मनुके मतानुसार ब्राह्मणोंका एकमात्र ज्ञान ही तप है। क्षत्रियोंको केवल वही काम करना चाहिये जिससे प्राण उपार्जन हो। रक्षा करनी ही क्षत्रियोंका तप है। क्षत्रियोंको उचित है कि वे ब्राह्मण, वैश्य और शूद्र इन तीन वर्णोंको विपद् समयमें रक्षा करें। रक्षा ही उनकी एकमात्र तपस्या है। वैश्योंकी वार्त्ता ही (कृषि वाणिज्य प्रभृति) एकमात्र तपस्या है। शूद्रके लिये उक्त तीन वर्णोंकी सेवा ही तप है।

'ब्राह्मणस्य तपो ज्ञानं तपः क्षत्रस्य रक्षणम्।
वैश्यस्य तु तपो वार्त्ता तपः शूद्रस्य सेवनम्॥'

(मनु ११।[illegible])

सत्ययुगमें तपस्या, त्रेतामें ज्ञान, द्वापरमें यज्ञ प्रधानतः कलियुगमें दान ही प्रधान है। (मनु १।[illegible])

ब्राह्मणोंके विधिपूर्वक वेदाध्ययन ही तपस्या है। (मनु ५।[illegible]) तपःसिद्ध ब्राह्मण तपस्या द्वारा त्रिभुवन का अवलोकन कर सकते हैं। १० माघमास माघका महीना। ११ नियम। १२ धर्म। १३ ज्योतिषोक्त लग्न स्थानसे नवम स्थान ज्योतिषमें लग्नसे नवाँ स्थान। १४ तपोलोक। यह लोक जनलोकके ऊपर और अत्यन्त तेजोमय है।

जो वासुदेवके अत्यन्त भक्तिपरायण हैं और जो अपना समस्त कर्म परम गुरु श्रीकृष्णमें अर्पण करते जो तपस्यासे लोकत्रयको सन्तुष्ट रखते और जिनकी सब कामना परित्यक्त हो गई है, वे ही इस लोकमें वास करते हैं और जो हिरण्मय वृत्ति द्वारा अपनी जीविका निर्वाह करते, जो ग्रीष्मकालमें अत्यन्त कठोर पञ्चाग्निसाध्य तपस्या करते और जो वर्षाकालमें स्थण्डिलशायी, हेमन्त और शिशिर कालमें जलमें अवस्थान कर तपस्या करते हैं वे ही इस लोकके अधिकारी हैं।

जो चातुर्मास्य व्रत प्रभृतिके अत्यन्त कठोर नियम पालन करते और ईश्वरमें सदा लीन रहते, वे ही निर्भयसे इस लोकमें वास करते हैं। (पद्मपुराण) १५ अग्नि, आग।

तपन (सं० पु०) तप् अच्। १ सूर्य। २ चन्द्रमा। ३ पक्षी।

तपना (हिं० स्त्री०) १ तपस्या, तप। २ ताप्ती नदीका दूसरा नाम। यह बैतूलके पहाड़से निकल कर खम्भात की खाड़ीमें गिरती है।

तपसाली (हिं० पु०) तपस्वी।

तपसी (हिं० पु०) तपस्या करनेवाला, तपस्वी।

तपसी मछली (हिं० स्त्री०) बंगालकी खाड़ीमें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली। इसकी लम्बाई लगभग एक बालिश्तकी होती है। अंडे देनेके लिये यह बैसाख या जेठ मासमें नदियोंमें चली आती है।

तपसीराम—हिन्दीके एक कवि। ये जातिके कायस्थ थे। सारन जिलेके मुबारकपुर ग्राममें रहा करते थे।

तपसोमूर्ति (सं० पु०) बारहवें मन्वन्तरके चौथे सावर्णिके सप्तर्षियोंमेंसे एक। (हरिवं० ७अ०)

तपस्तक्ष (सं० पु०) तपः तपस्यां तक्षति तनू करोति तपस्-तक्ष-अण्। इन्द्र।

तपस्पति (सं० पु०) तपसां पतिः ६ तत्। हरि, विष्णु।

तपस्य (सं० पु०) तपसि साधु यत्। १ फाल्गुन मास, फागुनका महीना। २ अर्जुन, अर्जुनका एक नाम फाल्गुन था इसीलिये तपस्य भी अर्जुनका नाम हुआ है। (क्ली०) ३ कुन्दपुष्प। ४ तपश्चर्य, तपस्या। ५ तामस मनुके दश पुत्रोंमेंसे एक। (हरिवं० ७।[illegible])

तपस्या (सं० स्त्री०) तपस्यति तपस्-क्यङ्। कर्मणो रोमन्थ तपोभ्यां वर्तिचरोः पा ३।१।१५। ततो अ ततः टाप्। १ व्रत चर्या तप। इसके संस्कृत पर्याय—व्रतादान, परिचर्या नियमस्थिति और व्रतचर्या। तपस् देखो। २ फाल्गुन मास फागुनका महीना।

तपस्यामत्स्य (सं॰ पु॰-स्त्री॰) मत्स्यभेद, तपसो मछली। इसके पर्याय—तपःकर, वेष्टक और वेष्ट।

तपस्वत् (सं॰ त्रि॰) तपस् मतुप् मस्य व। तपस्वी।

तपस्विता (सं॰ स्त्री॰) तपस्विनो भावः तपस्विन्-तल्-टाप्। तपस्विन्त तपस्वी होनेकी अवस्था।

तपस्विन् (सं॰ त्रि॰) तपो विद्यतेऽस्य तपस्-विनि। तपःसहस्राभ्यां विनीनी। पा ५।२।१०२। १ तपोयुक्त, तपस्या करनेवाला। इसके पर्याय तापस, पारिकाङ्क्षी, पारकाङ्क्षी और तपोधन है।

स्वाध्यायरूप तप, समयरूप तप तथा मनके साथ इन्द्रियों का एकाग्रतारूप तप, इन तीन प्रकारके तपस्याविशिष्ट-को तपस्वी कहते हैं। विधिपूर्वक वेदादि अध्ययनके समय यथाशास्त्र नियमादि पालन और मनके साथ इन्द्रियोंको एकाग्रता अर्थात् स्थिरत्व सम्पादन नहीं करनेसे तपस्वी नहीं कहला सकता है।

जिनके वशित्व, नियमित्व और वैदिकत्व ये तीन गुण विद्यमान हैं, वे ही प्रकृत तपस्वी है। जिन्होंने संसार-आश्रम परित्याग कर अरण्य वास किया है और वहाँ तन-मनसे देवताको आराधना करते हैं, वे भी तपस्वी कहलाते हैं।

इस संसारमें मनुष्य दुर्निवार इन्द्रियसुखमें आसक्त हो कर कभी न कभी अवसन्न हो जाते हैं। बुद्धिमान् मनुष्य जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि और मानसिक क्लेशसे संसारको असार समझ कर तपस्याके लिये यत्नशील हो जाते तथा वे कायमनोवाक्यसे पवित्र, अहङ्कारपरिशून्य और संसारसे निर्लिप्त हो कर भिक्षावृत्ति अवलम्बन करके तपस्याका अनुष्ठान किया करते हैं।

प्राणियोंके प्रति दया करनेसे उनमें अनुराग उत्पन्न हो सकता है, इसलिये प्राणियों पर उपेक्षा दर्शाना तपस्वियोंको उचित है। शुभकर्मका अनुष्ठान करके यदि उन्हें दुःख भोग करना पड़े तो वे विरत नहीं होते। तपस्वी अहिंसा, सत्यवाक्य, भूतानुकम्पा, क्षमा और सावधानता अवलम्बन किया करते हैं।

वे अवहितचित्तसे समस्त प्राणियोंके प्रति समान दृष्टिसे देखते हैं। दूसरेकी अनिष्टचिन्ता, असम्भव स्पृहा और भविष्य या भूत विषयके अनुष्ठानसे सर्वदा विरत रहते हैं। वे कठिन यत्नसे तपस्याके फल ज्ञानार्जनमें प्रविष्ट होते हैं। उनके वेदवाक्यानुशीलनके प्रभावसे ज्ञान प्रवर्त्तित होते रहते हैं। वे अविचलितचित्तसे हिंसा, अपवाद, शठता, परुषता, क्रूरतापरिशून्य और परिमित सत्यवाक्य प्रयोग किया करते हैं। तपस्वी संसारके भयसे भीत हो कर राजसिक और तामसिक कार्य परित्याग करके संसारकी यन्त्रणा अर्थात् जन्म, मृत्यु, जरा और व्याधिके फंदेसे विमुक्त होते हैं। वे वीतस्पृह, परिग्रहपरिशून्य, निर्जनविहारी, अल्पाहारनिरत और जितेन्द्रिय होते हैं। जो तपस्याके प्रभावसे समस्त क्लेशको निवारण कर योगानुष्ठानमें एकान्त अनुराग दिखलाते हैं, वे निश्चय ही अपने वशीकृत चित्तके प्रभावसे परम गति पानेमें समर्थ होते हैं। बुद्धिमान् मनुष्य पहले बुद्धिवृत्तिको निग्रहीत कर पीछे उसी योगशक्तिके प्रभावसे मनको तथा मनःप्रभावसे शब्दादि इन्द्रियविषय समूहको निग्रहीत करते हैं। जितेन्द्रिय हो कर चित्तको वशीभूत करनेसे सब इन्द्रियाँ प्रसन्न हो बुद्धितत्त्वमें लीन हो जाती है। इन्द्रियोंके साथ मनको एकता सम्पादित होनेसे ही तपस्याका फल ब्रह्मज्ञान उत्पन्न होता तथा उसी समय मनमें ब्रह्मभाव आ जाता है।

तपस्वीगण विशुद्धवृत्ति अवलम्बन कर तण्डुलकणा, सुपक्वमाष, शाक, उष्णजल, पक्वयवचूर्ण, शक्तु और फलमूल प्रभृति भिक्षालब्धद्रव्य भक्षण करके जीवनधारण करते हैं।

तपस्याका कार्य आरम्भ होनेसे उन्हें व्याघात करना कर्तव्य नहीं है। अग्निकी नाईं क्रमशः उनको उत्तेजना करना ही विधेय है। ऐसा होनेसे धीरे धीरे सूर्यकी नाईं तपस्याका फल ब्रह्मज्ञान प्रकाशित हुआ करता है। ज्ञानानुगत अज्ञान, जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओंमें ही मनुष्यको अभिभूत करता और बुद्धिवृत्तिके अनुगत ज्ञान और अज्ञान द्वारा उपहत (नष्ट) हुआ करता है। मनुष्य जब तक अवस्थात्रयातीत परमात्माको इन तीन अवस्थायुक्त कह कर समझते हैं, तब तक उन्हें कुछ भी समझमें नहीं आ सकता। फिर जब तपस्याके प्रभावसे पृथक्त्व और अपृथकत्वका विषय समझमें आ जाता है, तब उनकी स्पृहा सदाके लिये दूर

हो जाती है तथा उस समय तपस्वी तपस्याके प्रभावसे जरा और मृत्युको पराजय कर परमपदके अधिकारी होते हैं। विशेष विवरण योगिन् शब्दमें देखो। २ अनुकम्पाके योग्य दया करने योग्य। ३ दीन, दुखिया। ४ तपस्या मग्न तपस्वी मनुष्य। ५ कुतमत्स्य, बोरुआर। ६ नारद। ७ चौथे मन्वन्तरके सप्तर्षियोंमें ऋषिका नाम। तपोमूर्ति देखो। ८ भागवतके अनुसार बारहवें मन्वन्तरके सप्तर्षि। तपोमूर्ति देखो। ९ शिवपुत्र। १० दमनपापड़ होनेका पेड़।

तपस्विनी (स० स्त्री०) तपस्विन् स्त्रियां ङीप्। १ तपोयुक्ता तपस्या करनेवाली स्त्री। २ जटामांसी। ३ कटु, रोहिणी कुटकी। ४ महाश्रावणिका, बड़ी गोरख मुण्डी। ५ दीना, दुःखिता, दीन और दुखिया स्त्री। ६ पतिव्रता सती स्त्री। ७ वह स्त्री जो अपने पतिकी मृत्यु पर विधवा अपनी सन्तानके पालन करनेके लिये सती न हो और कष्टपूर्वक अपना जीवन बितावे। ८ तपस्वीकी स्त्री। ९ मुण्डीरी, गोरखमुण्डी। १ झिझिनी, झिमिमका पेड़।

तपस्विपत्र (स० पु०) तपस्विप्रिय पत्र यस्य, बहुव्री०। दमनकाख्य होनेका पेड़।

तपा (स० पु०) १ ग्रीष्म ऋतु। २ माघ मास।

तपाक (फा० पु०) १ आवेग, जोश। २ वेग, तेजी।

तपागच्छ (स० पु०) श्वेताम्बर जैन साधुओंका एक संघ। श्वेताम्बर देखो।

तपात्यय (स० पु०) तपस्य ग्रीष्मस्य अत्ययो यत्र बहुव्री०। १ वर्षाकाल, बरसात। तपस्य अत्यय', ६ तत्। ग्रीष्मावसान, गरमी ऋतुको समाप्ति।

तपात्मज (स पु०) तपसे उत्पन्न शिव।

तपाना (हिं० क्रि०) १ तप्त करना, गरम करना। २ दुःख देना, कष्ट देना।

तपान्त (स० पु०) तपस्य अन्तो यत्र बहुव्री०। १ ग्रीष्म काल। तपस्य अन्त, ६-तत्। २ ग्रीष्मावसान, गरम ऋतुका अन्त।

तपाव (हिं पु०) ताप गरमाहट।

तपावन्त (हिं० पु०) तपस्वी, तपसी।

तपित (स० त्रि०) तप-दाहे क्त। तप्त, उष्ण गरम।

तपित (स० पु०) जैनशास्त्रानुसार बालुकाप्रभा नामक तीसरी नरकभूमिमें नारकियोंके रहनेके जो विमान हैं उनमें ८ इन्द्रकबिल कहे जाते हैं। तपित दूसरे इन्द्रकबिलका नाम है।

तपिया (हिं० पु०) मध्यभारत, बङ्गाल तथा आसाममें होनेवाला एक प्रकारका वृक्ष। इसके छिलके और पत्ते दवाके काममें आते हैं। इसका दूसरा नाम विरमो है।

तपिश (फा० स्त्री०) तपन गरमी आंच।

तपिष्ठ (स० त्रि०) अतिशयेन तप्त तप्तृ शब्द इष्ठन् तृचो लोप। १ अत्यन्त तापक अधिक गरम। २ अत्यन्त दाह, अधिक तथा तृषा।

तपिष्णु (स० त्रि०) तप-इष्णुच्। तपकारी, तपन देने वाला।

तपी (हिं पु०) १ तापस, तपस्वी, ऋषि। २ सूर्य।

तपीयस् (स० त्रि०) अतिशयेन तप्ता तप्तृ ईयसुन् तृचो लोपः। १ अत्यन्त तापकारी, अधिक गरमी देनेवाला। २ अत्यन्त तपस्याकारक, कठिन तप करनेवाला।

तपु (स० त्रि०) तप-उन्। १ तापक, ताप उत्पन्न करने वाला। २ तापयुक्त, जिसमें अधिक गरमी हो। ३ तप्त, उष्ण, गरम। (पु०) ४ अग्नि, आग। ५ रवि, सूर्य। ६ शत्रु, दुश्मन।

तपुरग्र (स० त्रि०) अग्रभाग उष्णतायुक्त, जिसका अग्रभाग बहुत गरम हो।

तपुर्जम्भ (स० पु०) अग्नि, आग।

तपुर्मूर्धन् (स० पु०) जिसका मस्तक उत्तप्त हो, अग्नि।

तपुर्वध (स० त्रि०) उत्तम अग्रयुक्त गरम हथियार।

तपुषि (स० त्रि०) तप बाहुल्यात् उसि। तापक गरम करनेवाला।

तपुषी (स० स्त्री०) तपुषि स्त्रियां ङीप्। क्रोध, गुस्सा।

तपुष्पा (स० त्रि०) ज्वालाके रक्षा आगसे बचानेवाला।

तपुस् (स० पु०) तपति तापयति वा तप उसि। अर्चिरूपः दीप्ति। ऋक् १।११८। १ रवि, सूर्य। २ अग्नि, आग। ३ तापयुक्त, वह जिसमें अधिक गरमी हो। ४ तपन, जलन, आंच। (स्त्री०) ५ तपन्यौत तपानेवाला।

तपोज (स० त्रि०) तपस' तपस्यायाः अग्नेर्वा जायते जन ड। १ तपस्याजात, जो तपस्यासे उत्पन्न हुआ हो। २ अग्निजात, जो अग्निसे उत्पन्न हुआ हो।

तपोजा (सं० स्त्री०) तपोज टाप्। जल, पानी। तपस्या को अग्निसे धूप (जल) उत्पन्न होता है। पहले अग्निसे धूम, धूमसे अभ्र (मेघ) और मेघसे वृष्टि होती है। इसीलिये वृष्टि तपस्यासे उत्पन्न होनेके कारण इसका नाम तपोजा हुआ है।

तपोड़ी (हिं० स्त्री०) काठका एक बरतन।

तपोद (सं० पु०) मगधका एक तीर्थ।

तपोदान (सं० क्ली०) तप इव दान यत्र, बहुव्री०। तीर्थभेद, पुण्य-तीर्थोंमें तपोदान एक प्रधान तीर्थ माना गया है। (भारत १३।२५ अ०) तीर्थ देखो।

तपोधन (सं० त्रि०) तपोधन यस्य, बहुव्री०। १ तपोरत, तपस्वी। तपोधन मन वाक्य और काय द्वारा जो कुछ पाप करते, वे तपस्यासे नाश हो जाते हैं। (क्ली०) २ तप एव धनं, कर्मधा०। ३ तपोरूप धन वह तपस्या जो जिसका एक मात्र धन हो। तपः धनं मूल्यं यस्य। ३ तपस्या द्वारा पाने योग्य स्वर्गादि। ४ दमनकवृक्ष, दौने का पेड़।

तपोधन—गुजराती ब्राह्मणोंकी जातिका एक भेद। नाना मठोंके तीरवर्ती देशोंमें ये अधिक संख्यामें पाये जाते हैं। प्राचीन कालमें इस वंशके लोग बड़े तपस्वी थे, यहां तक कि तपस्याको ही अपना सर्वस्व समझते थे और लौकिक धनकी इच्छा न रख करके तपस्या धनको उपार्जित करनेवाले थे। इसी कारण इन्हें तपोधनकी उपाधि मिली थी। आज कल ये नाम मात्रके तपोधन रह गये हैं।

तपोधना (सं० स्त्री०) तपोधन-टाप्। मुण्डीरीक्षुप, गोरखमुण्डी।

तपोधर्म (सं० पु०) तपः एव धर्मो यस्य, बहुव्री०। १ तपस्या ही जिसका धर्म है, तपस्वी। तपसो धर्मः, ६-तत्। २ तपस्याका धर्म। ३ ग्रीष्मकालका धर्म।

तपोधृत (सं० पु०) तपसि धृतः सन्तोषो यस्य, बहुव्री०। १ तपोरत, तपस्वी। २ महर्षिभेद, बारहवें मन्वन्तर चौथे सावर्णिके सप्तर्षियोंमेंसे एक ऋषि।

तपोनिधि (सं० पु०) तप एव निधिः धनं यस्य, बहुव्री०। तपोनिष्ठ, तपस्वी।

तपोनिष्ठ (सं० पु०) तपसि निष्ठा यस्य, बहुव्री०। तपोरत, तपस्वी।

तपोभूमि (सं० स्त्री०) तप करनेका स्थान, तपोवन।

तपोभृत् (सं० त्रि०) तपो बिभर्त्ति [illegible] क्विप्, तुक् च। तपोधारक, जो तपस्या धारण करते हैं।

तपोमय (सं० पु०) तप प्रचुरः तपः स्वरूपत्वात् [illegible] तपसो वा तपस् मयट्। १ तपः प्रचुर, अधिक तपस्या। २ परमेश्वर।

तपोमयी (सं० स्त्री०) तपोमय-ङीप्। तपःप्रचुरा, वह जिसमें अधिक तपस्या की हो।

तपोमूर्त्ति (सं० पु०) तप, [illegible] मूर्त्ति यस्य वा तप प्रधाना मूर्त्तिर्यस्य, [illegible]। १ परमेश्वर। २ तपस्वी। ३ महर्षिभेद, बारहवें मन्वन्तरके चौथे सावर्णिके सप्तर्षियोंमेंसे एक। [illegible] तपोमूर्त्ति देखो।

तपोमूल (सं० पु०) तपो मूलं यस्य, बहुव्री०। १ तपस्यासे मिले स्वर्गादि। २ तामस मनुके एक पुत्रका नाम। [illegible] देखो।

तपोयुक्त (सं० त्रि०) तपसा युक्त, ३ तत्। तपस्या द्वारा युक्त, तपस्यामें अनुरक्त।

तपोरति (सं० त्रि०) तपसि रति यस्य, बहुव्री०। तपःपरायण, जो तपस्यामें लीन हो। (पु०) २ तामस मनुके एक पुत्रका नाम। [illegible]।

तपोरवि (सं० पु०) तपसा रविरिव। १ वह जो सूर्यके सदृश तेजस्वी हो। २ बारहवें मन्वन्तरके चौथे सावर्णिके समयमें सप्तर्षियोंमेंसे एक ऋषिका नाम।

तपोराशि (सं० पु०) महामुनि, बहुत बड़ा तपस्वी।

तपोलोक (सं० पु०) तपोनाम लोकः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। ऊर्ध्वस्थित लोकविशेष, ऊपरके सात लोकोंमेंसे छठा लोक। यह लोक जनलोकसे चार करोड़ योजन ऊपरमें अवस्थित है।

"चतुःकोटिप्रमाणं तु तपोलोकोऽपि भूतलात्।" (काशीख० २४।३०)

भू प्रभृति सात लोक ब्रह्मासे उत्पन्न हुए हैं। ब्रह्माके दोनों पैरसे भूर्लोक, नाभिसे भुवर्लोक, हृदयसे स्वर्लोक, वक्षःस्थलसे महर्लोक, गलेसे जनलोक, दोनों स्तनसे तपोलोक और मस्तकसे सत्यलोक उत्पन्न हुआ है। (भागवत ३।५।१८३-९) विशेष विवरण सप्तलोकमें देखो।

तपोवट (सं० पु०) तपसो वट-इव। ब्रह्मावर्त्त देश।

तपोवन (सं० क्ली०) तपसो वनं, ६-तत्। १ तापसोचित वनविशेष मुनियोंका आश्रयस्थान, वह एकान्त स्थान जहाँ मुनिगण कुटी बना कर तपस्या करते हैं। २ इसी नामका एक तीर्थ, वृन्दावनस्थित एक वन। यहाँ गोप कन्या कात्यायनी-व्रत करते हैं। इसके पासहो चीरघाट है। (व्रजभक्ति) वृन्दावन देखो।

तपोधन (सं० क्ली०) तपसः धन, ६ तत्। तपस्याका फल, तपस्याका प्रभाव।

तपोवृद्ध (सं० त्रि०) तपसा वृद्ध, ३-तत्। तपोवृद्ध जो तपस्या द्वारा श्रेष्ठ हो।

तपोद्युति (सं० पु०) १ सावर्णिमेरु, तपोमूर्तिका एक नाम। २ तामस मनुके एक पुत्रका नाम।

उत्तम देखो।

तपोनी (हिं० स्त्री०) १ ठगोंकी एक रस्म। जब वे मुसाफिरोंको लूट मार कर उनका माल घर ले आते हैं तब यह रस्म की जाती है। इसमें वे मिल कर देवीकी पूजा करते और उन्हें गुड़ चढ़ा कर उसीका प्रसाद आपसमें बाँटते हैं।

तप्त (सं० त्रि०) तप-क्त। १ उष्ण, तपा हुआ, जलता हुआ। २ तापयुक्त, जिसमें अधिक गरमी हो। ३ दुःखित पीड़ित।

तप्तक (सं० क्ली०) १ रौप्य चाँदी। २ स्वर्णमाक्षिक।

तप्तकाञ्चन (सं० क्ली०) तप्त यत् काञ्चन, कर्मधा०। अग्निके योगसे विशुद्ध काञ्चन, आगसे साफ किया हुआ सोना।

तप्तकुण्ड (सं० पु०) प्राकृतिक उष्ण जलधारा, गरम पानीका सोता। पहाड़ों या मैदानोंमें कहीं कहीं गरम पानीके सोते मिलते हैं। इसका कारण यह है कि या तो पानी बहुत अधिक गहराईसे या भूगर्भके मध्यकी अग्नि के तप्त स्तरसे होता हुआ आता है। ऐसे जलमें खनिज पदार्थ मिले रहनेके कारण इसमें स्नान करनेसे प्रायः रोग जाता रहता है। ऐसे गरम जलके सोते यूरोप और अमेरिकामें बहुत पाये जाते हैं। दूर दूरसे मनुष्य उन्हें देखने तथा उनका जल रोगोंके लिए यहाँ आते हैं और बहुतसे मनुष्य रोगसे छुटकारा पानेके लिये महीनों उनके किनारे रह जाते हैं। जल जितना ही गरम होता उसमें उतना ही गुण अधिक होता है।

तप्तकुम्भ (सं० पु०) तप्तः कुम्भो यत्र, बहुव्री०। नरक-विशेष, एक भयानक नरकका नाम। इसके चारों ओर गरम कड़ाहे हैं जिनमें तेलका चूर्ण और तेल सदा खौलता रहता है। इन्हीं कड़ाहोंमें दुराचारियोंको मस्तक नीचेको ओर करके यमदूत फेंक दिया करते और फिर उनके तेल, अग्नि इत्यादि उभाड़ उभाड़ उनमें डाल देते हैं। जब उनमें उनका प्रत्येक अङ्ग गल जाता है तो यमदूत उन्हें काकों या बगलोंको सौंपते हैं।

इस तरह पापसंयुक्त मनुष्य दुष्कर्मकारी मनुष्य उत्पीड़ित होते हुए अनेक प्रकारकी यन्त्रणा पाते हैं। (मार्कण्डेयपुराण) नरक देखो।

तप्तकृच्छ्र (सं० पु०-क्ली०) तप्तेन जलदुग्धादिना साध्य कृच्छ्र व्रत या तप्तेन आचरितं। द्वादशाहसाध्य व्रतविशेष, बारह दिनोंमें समाप्त होनेवाला एक प्रकारका व्रत। इस व्रतमें व्रत करनेवालेको पहले तीन दिन तक प्रति दिन तीन पल उष्ण दूध, तब तीन दिन तक प्रति दिन एक पल घी, बाद तीन दिन तक नित्य ६ पल उष्ण जल और उसके तीन दिन तक तप्त वायु सेवन करना पड़ता है। दूध गरम किये जाने पर जो वाष्प निकलता है वही तप्तवायु मानी गई है।

यह व्रत करनेसे द्विजोंके सब प्रकारके पाप नष्ट हो जाते हैं। प्रायश्चित्तविवेकके मतसे यह व्रत चार दिनोंमें भी किया जा सकता है। पहले तीन दिन यथाक्रमसे दूध, घी और जल सेवन करना चाहिए और चौथे दिन उपवास करना चाहिये। इसको चतुरहसाध्य तप्तकृच्छ्र कहते हैं। प्रायश्चित्त देखो।

तप्तखल्व (सं० पु०) औषध कूटनेका गरम किया हुआ खल।

तप्तजला (सं० स्त्री०) तप्तं जलं यस्याः, बहुव्री०। जैन-शास्त्रानुसार सीतानदीके दक्षिण तट पर देवारण्यमें बहनेवाली इस नामकी एक विभङ्ग नदी है। इसका जल गरम है इसीलिये यह नाम पड़ा है।

तप्तपाषाणकुण्ड (सं० पु०) तप्तानां पाषाणानां कुण्डमिव। नरकविशेष एक नरकका नाम।

तप्तवालुक (सं० पु०) तप्ता वालुका यत्र, बहुव्री०। १ नरक विशेष, एक नरकका नाम। नरक देखो। (त्रि०) २ उष्ण वालुकामय, गरम किया हुआ बालू।

तप्तमाष (सं० पु०) तप्तं माषमितं सुवर्णादिकं यत्र, बहुव्री०। परीक्षाविशेष, प्राचीन कालकी एक प्रकारकी परीक्षा। यह परीक्षा किसी मनुष्यको अपराधी या निरापराधी साबित करनेके लिये की जाती थी। इसमें लोहे या तांबेके बरतनमें बीस पल तेल और घी डाल कर उसे अग्निद्वारा उत्तप्त करते थे। बाद उसमें एक माषा सोना छोड़ कर अपराधीको उसे बाहर निकालनेके लिये कहा जाता था। यदि उसकी अंगुलीमें छाले आदि न पड़ते तो वह सच्चा समझा जाता था। (बृहस्पति)

इसका दूसरा विधान भी इस तरह है—

सोने चांदी, तांबे, लोहे और मट्टीके बरतनको भली भांति परिष्कार कर अग्नि पर रख छोड़ते थे बाद उनमें गायका घी या तेल डालते थे। इसके बाद विचारक धर्मका आवाहन और पूजादि करके निम्नलिखित मन्त्र द्वारा अग्निको शुद्ध करते थे।

"ओं परं पवित्रममृतं घृतत्वं यज्ञकर्मसु।
दह पावक पापं त्वं हिमशीतशुचौ भव॥"

बाद जिस मनुष्यकी परीक्षा करनी होती उसे उपवास करना पड़ता और तब स्नान कर आर्द्रवस्त्रयुक्त हो प्रतिज्ञापत्र मस्तक पर रख कर निम्नलिखित मन्त्र पढ़ना पड़ता था—

"ओं त्वमग्ने सर्वभूतानामन्तश्चरसि पावक।
साक्षिवत् पुण्यपापेभ्यो ब्रूहि सत्यं करे मम॥"

यह मन्त्र पढ़ कर उस खौलते हुएमेंसे तप्तमाष निकालने पर यदि परीक्षार्थीकी उंगलीमें छाले आदि न पड़ते तो वह सच्चा समझा जाता था। (दिव्यतत्त्व) दिव्य देखो।

तप्तमुद्रा (सं० स्त्री०) तप्ता अग्निसन्तप्ता मुद्रा, कर्मधा०। शरीर पर धारणोपयोगी अग्निसन्तप्त भगवानके आयुधादि चिह्न, द्वारकाके शंखचक्रादिके छापे। वैष्णव लोग इसे तपा कर अपनी भुजा तथा दूसरे अङ्गों पर दाग लेते हैं। यह धार्मिक चिह्न होता है और वैष्णव लोग इसे मुक्तिदायक मानते हैं। मुद्रा देखो।

तप्तरहस् (सं० क्ली०) तप्तं रहः, कर्मधा० अच् समासान्त। १ वह्नि, आग। २ तप्तवत् निर्जनस्थान, वह एकान्त स्थान जहां पर कोई दूसरा मनुष्य जा नहीं सकता।

तप्तराजतैल (सं० क्ली०) आयुर्वेदोक्त तैलविशेष, एक तरहका दवाईका तेल।

प्रस्तुत-प्रणाली—सरसोंका तेल ४ सेर, मदार सहिञ्जन, धतूरा, वासक, मल्लिका, दशमूल करञ्ज, इनका प्रत्येकका रस ६४ सेर कल्कार्थ पीपल, बच, सोंठ पीपलामूल, चीतेकी जड़, कटफल, धतूरेका बीज, वच्य, जीरा, सोंया, पुनर्णवा, कनटार, देवदारु, इंगलाइचा, शुष्क मूला, कुड़, दुरालभा, कालाजीरा, मिजफा गांठ, मदारकी गांठ, जयपालमूल, नागदौना, विडंग, सैन्धव, यव क्षार, रक्तचन्दन, सहिञ्जनकी जड़, उत्पल, मिर्च, मेंठी मधु, रास्ना, काकड़ासींगी, कण्टकारी और करञ्जकी छाल, प्रत्येकका दो तोला। इस प्रकारसे यह तैल बनता है। शिरःपीड़ामें यह औषध विशेष फलप्रद है। तथा नेत्रशूल कर्णशूल, तेरह तरहका सन्निपात, वातश्लेष्मा, गलग्रह, सब तरहका शोथ, ज्वर, पिलही, अपस्मारोग, ये सब रोग उपशान्त होते हैं।

यह तैल और एक प्रकारका होता है। प्रस्तुतप्रणाली—

कटुतैल ४ सेर, गोमूत्र १६ सेर, क्वाथके लिये धतूरा (पूतिका), डहरकरञ्ज, झिण्टी, जयन्ती, सम्भालु, शिरीष, हिज्जल और सहिंजन मिलित दशमूल, प्रत्येक २ सेर, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर। कल्कार्थ मदनफल, त्रिकटु, कुड़, काला जीरा, सोंठ, कटफल, वरुण-छाल, मोथा, हिज्जल, वैनगरी, हरिताल, जवापुष्प, विष, मनःशिला, काकड़ासींगी, रक्तचन्दन, सहिञ्जनकी छाल, अजमायन और बैंचीकी जड़, प्रत्येकका दो तोला। इससे शिरःशूल, नेत्रशूल, कर्णशूल, ज्वर, दाह, स्वेद, कामला, पाण्डु और तेरह तरहका सन्निपात नष्ट होता है।

शिर शूलमें यह तैल विशेष फलप्रद है। (भैषज्यरत्नावली)

तप्तरूपक (सं० क्ली०) तप्तं वह्नियोधितं रूपकं रूप्यं कर्मधा०। विशुद्ध रौप्य, तपाई हुई और साफ चांदी।

तप्तलोमश (सं० पु०) काशीश, एक प्रकारकी धातु, कसीस।

तप्तलोह (सं० पु०) नरकविशेष, एक नरकका नाम।

तप्तशूर्मिकुण्ड (सं० पु०) तप्ता अग्निमयी शूर्मि लौहप्रतिमूर्तिर्यत्र तथाविधं कुण्डं यत्र, बहुव्री०। नरकविशेष, एक नरकका नाम।

तप्तसूर्मी (सं० पु०) तप्ता सूर्मी यत्र, बहुव्री०। नरकविशेष, एक नरक। यदि पुरुष अगम्या स्त्रीके साथ और स्त्री अगम्य पुरुषोंके साथ सम्भोग करे तो वे इस नरकमें भेजे जाते हैं।

इस नरकमें पुरुष तप्त लोहेकी नारीको आलिङ्गन कर और नारी तप्त लोहेके पुरुषको आलिङ्गन कर अनेक प्रकारकी यन्त्रणा पाते हैं। (भागवत ५।२६।२०) नरक देखो।

तप्तसुराकुण्ड (सं० क्ली०) तप्ता सुरा यत्र कुण्डमिव। नरकविशेष, पुराणानुसार एक नरकका नाम। नरक देखो।

तप्ताम्भ (सं० क्ली०) तप्त अम्भः, कर्मधा०। तप्त जल, गरम पानी।

तप्ताम्बु (सं० क्ली०) उष्ण सलिल, गरम जल।

तप्तायनी (सं० स्त्री०) तप्तेन अयनं, ल्युट् ङीप्। भूमिविशेष, वह भूमि जो दीन दुःखियोंको बहुत सता कर प्राप्त की जाय।

तप्य—महाभारतके सोपाक राजाओंकी मकराल या रिपा मत।

तप्यार (सं० पु०) तप-ष्यत्। १ शिव, महादेव। (त्रि०) २ तपनीय, जो तपने या तपाने योग्य हो।

तप्यतु (सं० त्रि०) तप-अतुन्। तापक सूर्यादि।

तफज्जुलहुसेनखां—फरुखाबादके अन्तिम राजाओंके नवाब। ये मुजफ्फरजङ्गके उत्तराधिकारी तथा पौत्र थे। १८५७ ई०के गदरमें इन्होंने बागी पक्ष ले उनकी स्त्री तथा बच्चोंको कतल कर डाला था। अन्तमें ये पकड़े गये और दोष प्रमाणित होने पर फांसीकी आज्ञा दी गई। लेकिन अवध जिलेके कमिश्नर नेमर मेरी इन्हें पहले ही आश्वासन दे चुके थे, इस कारण गवर्नर-जनरलने प्राणदण्ड न दे कर वृटिश राज्यसे बाहर निकाल देनेका विचार किया। नवाबने मक्का जानेकी इच्छा प्रकट की। अन्तमें १८५८ ई०की २२वीं मईको बम्बोर डाल कर इन्हें मक्का भेजवा दिया। जाते समय केवल अपनी सन्तानसे भी मुलाकात कर लेनेकी इन्हें आज्ञा मिली थी।

तफरीक (अ० स्त्री०) १ भिन्नता, जुदाई। २ वियोग, अलगाव, बाकी निकालना। ३ अन्तर, फरक। ४ भाग, बँटवारा, बाँट।

तफरीह (अ० स्त्री०) १ प्रसन्नता, खुशी, फरहत। २ हँसी, ठट्ठा दिल्लगी। ३ सैर, हवाखोरी। ४ ताजापन, ताजगी।

तफसील (अ० स्त्री०) १ विस्तृत वर्णन, लम्बा चौड़ा ब्योरा। २ सूची, फर्द, फेहरिस्त। ३ विवरण, कैफियत। ४ टीका तफसीर।

तफावत (अ० पु०) १ अन्तर, फर्क। २ दूरी, फासिला।

तब (हि० अव्य०) १ उस समय उस वक्त। २ इस कारण इसलिये।

तबक (अ० पु०) १ लोक, तल। २ परियोंकी जमात। मुसलमान स्त्रियाँ परियोंकी आशासे अनेक दिन यह जमात पढ़ती हैं। ३ घोड़ोंका एक रोग। इसमें उनके शरीर पर सूजन हो जाती है। ४ शरीर पर एक प्रकारका दाग जो रक्तविकारके कारण हो जाया करता है चकत्ता। ५ तह, तल, परत। ६ चौड़ी और कम गहरी थाली।

तबकगर (अ० पु०) सोने चाँदी आदिके तबक या पत्तर बनानेवाला, तबकिया।

तबकफाड़ (अ० पु०) कुश्तीका एक पेंच।

तबका (अ० पु०) १ विभाग, खंड। २ तह, परत। ३ लोक, तल। ४ मनुष्योंका समूह। ५ पद, श्रेणी, दर्जा।

तबकिया (अ० पु०) तबकगर देखो।

तबकिया हड़ताल (हि० पु०) एक प्रकारकी हड़ताल। इसके टुकड़ोंमें तबक या परत होते हैं।

तबदील (अ० वि०) परिवर्त्तित, बदला हुआ।

तबदीली (अ० स्त्री०) परिवर्त्तित होनेकी क्रिया, बदली।

तबर्रुक (अ० पु०) प्रसाद देखो।

तबर (फा० पु०) १ कुल्हाड़ी टाँगी। २ लड़ाईका एक हथियार जो कुल्हाड़ीसा होता है।

तबर (हि० पु०) एक प्रकारकी पाल जो मस्तूलके सबसे ऊपरी भागमें लगाई जाती है।

तबरदार (फा० पु०) वह जो कुल्हाड़ी या तबर चलाता है।

तबरदारी (फा० स्त्री०) तबर, कुल्हाड़ी या फरसे चलानेका काम।

गयामें हर गाँव इस राज्यके हैं। राजाको उपयुक्त २०५ गाँवोंकी मालगुजारी १२०७८८) रुपये वार्षिक सरकारमें देनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त दरभङ्गा तथा मुजफ्फरपुरके जिलोंमें भी ८८ गाँव लगते हैं। इस प्रकार इस राज्यमें कुल गाँवोंकी संख्या ४५० है। उक्त ८८ गाँवों को वर्तमान राजा साहबके स्वर्गवासी पिताजीने मुजफ्फरपुर जिलान्तर्गत सुरसण्ड नरेश राजा रघुनन्दन सिंहजीसे प्राप्त किया था।

तमकोही-नरेश भूमिहार ब्राह्मण हैं। काशी-राज वंशके साथ आपका घनिष्ट सम्बन्ध है। इनके पूर्वज पहले बिहार उड़ीसा प्रदेशान्तर्गत जिला सारनमें हुसेपुरके अधिपति थे। मुगल साम्राज्यमें इनके पूर्वज राजा कल्याण साही सबसे अधिक प्रभावशाली हुए। फलतः तत्कालीन दिल्ली-बादशाहने उन्हें राजाकी उपाधि दी और साथ ही एक डंका एक पताका तथा एक मत्स्याकार मत्स्याकृति मुकुट (माहीमरातिब) भी दिया था।

राजा कल्याणसाहीके छठे वंशधर राजा गन्धैयाजी उपनाम हमीरसाहीने दिल्ली-अधिपति महम्मदशाहका विशेष उपकार किया था। अतः उपर्युक्त अधिपतिने इन्हें पुरस्कारस्वरूप एक उपाधिविशिष्ट एवं चिह्नाङ्कित पदक प्रदान किया। राजा हमीरसाहीके तृतीय वंशधर राजा फतहसाहीने अपने कनिष्ठ भ्राताके साथ मनोमालिन्य होनेके कारण अपनी प्राचीन राजधानी हुसेपुरको छोड़ दिया और गोरखपुर जिलान्तर्गत तमकोही नामक ग्राममें एक नई राजधानी स्थापित की। राजा खड्गबहादुर साहीने अपने राजत्वकालमें ब्रिटिश सरकारसे भी अपनी वंशपरम्परागत "राजा" उपाधिको स्थापित कराया। इन्होंने अपनी नाना दिलदारी-सरीखे विशेष स्थावर सम्पत्ति प्राप्त कर तमकोही राज्यकी आय बढ़ायी थी।

वर्तमान राजा इन्द्रजित्प्रताप बहादुर साहीके स्वर्गीय पिता राजा शत्रुजित्प्रताप बहादुर साहीने मुजफ्फरपुर जिलान्तर्गत सुरसण्ड-अधिपति राजा रघुनन्दनसिंहजीकी पौत्रीसे विवाह किया और उनसे प्रचुर स्थावर सम्पत्ति प्राप्त कर राज्यकी आयको और भी बढ़ा दिया।

सन् १८८८ ई०के अक्टूबर मासमें राजा शत्रुजित् प्रताप बहादुर साहीके स्वर्गवास होनेपर उनके सुयोग्य पुत्र वर्तमान राजा इन्द्रजित् प्रताप बहादुरसाही राज्याधिकारी हुए। आप बड़े सुशिक्षित उन्नतिशील नवयुवक पुरुष हैं। आपने लखनऊ कालविन तालुकदार स्कूलमें तथा अपने घर पर अनुभवी पण्डितों और गवर्नमेंटके उच्च कर्मचारियोंसे शिक्षा प्राप्त की है।

उक्त राजा साहब उर्दू, हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजीको भाषामें निपुण होते हुए, अश्वारोहण तथा आखेट आदि में भी भली भांति कुशल हैं। आप १९११ ई०के दिल्ली दरबारमें निमन्त्रित थे और उस समय आपको बादशाहसे मुलाकात एवं रौप्यपदक भी मिला था। दीन तथा असहायोंके प्रति आपकी दयादृष्टि सर्वदा रहती है। महानुभावता आपमें पूर्णरूपसे विद्यमान है। राज्यशासनमें राजा साहबकी समीचीनता एवं प्रजाकी आर्थिक अवस्थाकी उन्नतिमें दत्तचित्तता विशेषरूपसे प्रशंसनीय है। आपने प्रजाहितार्थ अपने राज्यमें कई कारखाने खोल रखे हैं।

विगत यूरोपीय महायुद्धमें वर्तमान राजा साहबने गवर्नमेण्टको विविध प्रकारसे यथेष्ट सहायता कर राजभक्तिका पूर्णरूपसे परिचय दिया था। फलतः युद्धके पश्चात् आपको पुरस्कारस्वरूप एक सनद, तथा प्रान्तीय सरकारसे एक बहुमूल्य एक तलवार भी मिली थी। [illegible] आप सदस्य भी हैं।

राजा साहबका निवासस्थान तमकोहीमें है। यहाँ एक मनोहर राज-प्रासाद एवं बृहद् पाकशालाके एक उच्च मन्दिर सुरक्षित दुर्ग, तथा चारों ओर खाईं हैं। राजप्रासादके समीप ही दक्षिण ओर नजरबागमें एक मनोहर और सुसज्जित बगीचा है जिसमें उच्च कोटिके भारतीय और यूरोपीय अतिथि निवास किया करते हैं।

तमकोहीमें एक पोष्ट आफिस, तारघर, मिडिल वर्नाक्यूलर स्कूल जिसमें अंगरेजीकी भी शिक्षा दी जाती है, अपर तथा लोअर प्राइमरी स्कूल, ज्योतिष और व्याकरण शिक्षा देनेवाली संस्कृत पाठशाला एक साधारण पुस्तकालय तथा एक दातव्य चिकित्सालय भी है। उक्त राजा साहबने एक कोष, एक पोलोका दल तथा दो और कृषि विभागके फार्म खोल कर अपनी प्रजाओं का विशेष उपकार किया है। तमकोहीमें प्रति वर्ष

आश्विन विजयादशमीके अवसर पर एक भारी मेला लगता है जिसमें पशुप्रदर्शनी भी कराई जाती है। राजा साहब अपने हाथसे उन कृषकोंको जिनके पशु उत्तम तथा पुष्ट होते हैं उचित पुरस्कार दे कर प्रजामण्डल-को उत्साहित करते हैं।

तमगा (तु० पु०) पदक, तगमा।

तमगुन (हिं० पु०) तमोगुण देखो।

तमङ्ग (सं० पु०) मञ्चस्थान।

तमङ्गक (सं० पु०) इन्द्रकोष, मञ्चक, मचान।

तमचर (हिं० पु०) १ राक्षस, निशाचर। २ उल्लू, उलूक।

तमत (सं० त्रि०) तम काङ्क्षायां अतच्। तृषित, प्यासा।

तमतमाना (हिं० क्रि०) १ अधिक गरमी अथवा क्रोध-के कारण चेहरा लाल हो जाना। २ चमकना दमकना।

तमतमाहट (हिं० स्त्री०) तमतमानेका भाव।

तमता (सं० स्त्री०) १ तमका भाव। २ अन्धकार, अंधेरा।

तमप्रभ (सं०पु०) तम इव प्रभा अस्मिन् बहुव्री०। नरक-भेद, एक नरकका नाम।

तमरंग (हिं० पु०) एक प्रकारका नीबू।

तमर (सं० क्ली०) तमं राति रा-क। १ वङ्ग, रांगा। २ शीषधातु, शीशा।

तमर (हिं० पु०) अन्धकार, अंधेरा।

तमरसेरि—मन्द्राज प्रदेशके मालवा विभागका एक गिरि-पथ। यह अक्षा० ११° २८' ३०" और ११° ३०' ४५" पू० तथा देशा० ७६°४' ३०" और ७६°५' १५" पू० के मध्य अवस्थित है। कालिकटसे महिसुर तकका रास्ता पश्चिम-घाट पर्वतके ऊपर हो कर तमसेरिको ओर चला गया है। कहवे आदिकी रफ्तनीके लिये यह पथ विशेषरूपसे व्यवहृत होता है।

१७७३ ई०में कालिकटकी यात्राके समय हैदर अली तथा मालवा पर चढ़ाई करनेके लिये सुलतान टीपू इसी पथसे गये थे।

तमराज (सं० पु०) तम इव राजते राजा टच्। शर्करा-विशेष, एक प्रकारकी खाँड। इसका दूसरा नाम शालक है। इसका गुण—ज्वर, दाह, रक्तपित्त और पित्तनाशक हैं (राजव०)

तमला—एक नदी। यह वर्द्धमान जिलेके उखराग्रामके पश्चिममें सेरगड़ परगनासे निकल दक्षिण-पूर्वको ओर बहती हुई भोटरा ग्राम तक जा कर दामोदरमें गिरी है।

तमलुक—वङ्गदेशके मेदिनीपुर जिलेका एक उप विभाग। यह अक्षा० २१° ५४' और २२° ३१' उ० एवं देशा० ८७° ३८' और ८८° ११' पू०में अवस्थित है। यहां हिन्दू, मुसलमान, ईसाई इत्यादिका वास है। हिन्दुओंकी संख्या सबसे अधिक है। इस उपविभागमें तमलुक, पांश-कुड़ा, मसलन्दपुर, सुताहाटा और नन्दिग्राम इन पांच स्थानोंमें ५ पुलिसथाना है। १८८४ ई०को इसमें ४ फौज-दारी, २ दीवानी अदालत और १४७ पुलिसकर्मचारी तथा १३८० चौकीदार नियुक्त हुआ था।

इस उपविभागमें ११ बड़े बड़े जमींदार हैं। तम-लुक शहर और कैलोमाल ग्राम सबसे प्रसिद्ध स्थान है। पहले तमलुकमें हिजलीके कलक्टरके अधीन नमककी आढ़त थी।

पूर्व समयमें यहां बौद्धोंका एक विख्यात शहर और पूर्वदेशीय वाणिज्यका केन्द्रस्थल था। बहुत दिन हुए, तमलुकसे बौद्धधर्मके सभी निदर्शन लोप हो गये हैं, किन्तु अब भी तमलुकका कोई कोई हिन्दू-परिवार बौद्धोंकी नाईं मृतदेहको जमीनमें गाड़ता है। राजपूत-कुलोद्भव मयूरवंश पहले तमलुकमें राज्य करते थे। मयूरध्वज, ताम्रध्वज, हंसध्वज, गरुड़ध्वज, और विद्या-धरराय तमलुकके इन पांच राजाओंके नाम विशेष प्रसिद्ध हैं। तमलुकके ४८वें राजा केशवराय कर नहीं देनेके कारण १६४५ ई०में मुगल सम्राट्से राज्यच्युत हुए और १६५४ ई० तक हरिरायने राज्यशासन किया। हरि-रायकी मृत्युके बाद उनके भाई और लड़केमें सिंहासनके लिये विवाद उपस्थित हुआ। बाद राज्य दो भागोंमें विभक्त किया गया। १७०१ ई०में हरिरायके भाईका वंशलोप होने पर पुनः तमलुक राज्य एकत्र हो कर नारायणराय और उनके उत्तराधिकारियोंके हाथ लगा। १७५७ ई०में मिर्जा दीदार-बेगने बलपूर्वक सिंहासन हस्तगत कर १७६६ ई० तक अपने अधिकारमें रक्खा। उक्त ई०में गवर्मेण्टके आदेशसे तमलुक पुनः सिंहासन-

च्युत राजाओंकी कलौपर्मियों तथा ब्राह्मणियोंके अधि-कारमें आया। रानी कृष्णप्रियाके दत्तक और लक्ष्मी प्रियाके गर्भजात पुत्र थे। इन्होंके समय राज्यका ७ तथा ४॥ आना बंट गया। (१८८३ ई० में ४॥) आनेके ज़िम्मेदार आनन्दनारायणराय ४) आनेके ज़िम्मेदार शिवनारायणरायके विरुद्ध एक दीवानी मुकदमा चला कर उनको सब सम्पत्तिके अधिकारी हो गये। आनन्द नारायणने अपुत्रक अवस्थामें प्राणत्याग किया। उनको दोनों स्त्रीने लक्ष्मीनारायणराय और बदननारायणराय नाम दो दत्तकपुत्र ग्रहण किये। इन्होंने सारी सम्पत्ति आपसमें बांट ली। किन्तु दोनों भाइयोंमें परस्पर विरोध हो जानेसे थोड़े थोड़े दोनोंकी सम्पत्ति जाती रही।

तमलुक परगनेमें कई एक बांध हैं इसी कारण बाढ़के दिन बढ़ नहीं आती। मूरा और रूपनारायणके निकट तमलुक अवस्थित है। इसीसे इस प्रदेशके उत्पन्नद्रव्य बहुत आसानीसे दूसरे दूसरे स्थानोंमें भेजे जा सकते हैं। धान, नारियल, शहतूत और तरह तरहके शाक सब्जी इस परगनेका प्रधान उत्पन्नद्रव्य है। यहां विरकारी बन्दोबस्त प्रचलित है।

न सुन्दर अनेक अधिक लोग पूर्व समयमें नमक तैयार कर जीविकानिर्वाह करते थे। अशोक समयका व्यव-साय बहुत प्रसिद्ध हो गया था। अबसे यह प्रदेश सब मैच्छ अधीन आया तबसे यहांका वह व्यवसाय नष्ट हो गया है। अभी तमलुकवाला नमक तैयार नहीं कर सकते हैं। इस कारण अनेक दरिद्र लोग बहुत कष्ट पाते हैं।

तमलुक नदीके मुहानेके निकट अवस्थित है। इसीसे ११वीं शताब्दी तक विभिन्न देशोंके वाणिज्यके जहाज आया करते थे।

नदीके पश्चिम मुहानेके निकटस्थ तमलुकके अधि वासियोंको दर्शनिक का समर्थित करती है।

तमलुक प्राचीन अवस्थित्माला देश था यह अनेक ग्रन्थोंमें भी लिखा है। ताम्रलिप्त नामक तमलुकका एक नगर था। इस नामका उल्लिखित प्रमाण लोप होता जा रहा है। ताम्रलिप्त नामसे ही प्राचीन तमलुकका जन अधिवासका यथेष्ट परिचय पाया जाता है।

इस उपविभागका भूपरिमाण ६२२ वर्गमील है। इसमें १५७२ ग्राम लगते हैं। १८११ ई०के नवम्बर मासमें तमलुक उपविभागमें परिणत हुआ है। यहां ६१६ एकड़ जमीन जागीर है। लोकसंख्या प्रायः ६८१२१८ है।

२ उक्त तमलुक उपविभागका नगर। यह अक्षा० २२ १८ उ० और देशा० ८७ ५६ पू० पर मेदिनीपुर जिलेके दक्षिण-पूर्व भागमें रूपनारायण नदके ऊपर अवस्थित है। तमलुक शहरमें एक मिडल स्कूल तथा अच्छा बन्दोबस्त है। यहां विभिन्न धर्मावलम्बी लोग वास करते हैं हिन्दुओंकी संख्या सबसे अधिक है। तमलुक शहर मेदिनीपुर जिलेका प्रधान वाणिज्यकेन्द्र है।

आधुनिक इतिहासमें तमलुक बौद्धोंका एक बन्दर कह कर वर्णित हुआ है। ५वीं शताब्दीके पूर्व भागमें प्रसिद्ध चीनपरिव्राजक फाहियान इसी स्थानसे सामुद्रिक जहाज पर चढ़ कर सिंहल देश गये थे। इसके २५० वर्ष पीछे हुएनसुयङ्ग तमलुकमें आये थे। इन्होंने भी तमलुकको बौद्धधर्मका कोलाहल स्थान उल्लेख किया था। उनके ग्रन्थ पढ़नेसे मालूम होता है कि यहां बहुतसे बौद्धमठ थे और महाराज अशोकका बनाया हुआ २५० फुट ऊंचा एक स्तम्भ था। बौद्धधर्मकी अवनतिके बाद भी यह स्थान सामुद्रिक वाणिज्यका आगार जैसा वर्णित है। बहुतसे धनी वणिक् और महाजनगण इस बन्दरमें वास करते थे। लोग शहतूत, रेशम और रुई तथा लकड़ीके बहुमूल्य द्रव्यादि भी तमलुक नगरसे विदेश को भेजे जाते थे। पहले नगरके पास ही समुद्र बहता था। समुद्र बहुत दूर हट जाने पर भी वाणिज्यकी विशेष क्षति नहीं हुई है। ६११ ई०में हुएनसुयङ्गने इस नगरके ७ मील दूर समुद्रको बहते देखा था किन्तु अभी समुद्र नगरसे ६० मील दूर हट गया है। गङ्गाके मुहाने पर भाटेका ज्वार बढ़ जानेसे समुद्र अभी गङ्गाके दूरमें पड़ता है। रूपनारायण पूर और पूर्व इसी होकर समय १ से २० फुट तक बहुतसा सामुद्रिक नोन पानी है।

प्राचीन मयूरवंश ब्राह्मणोंमें घाई और दू

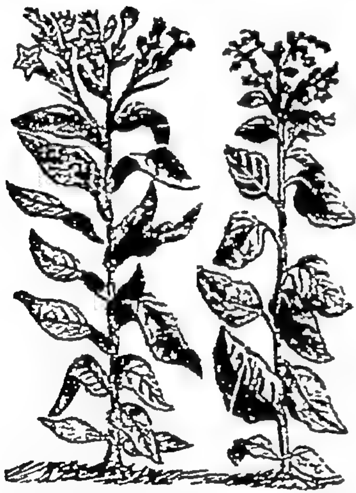
ईंट बांध देतीं और उनको माताकी लड़का होती है।

बर्गभीमादेवीसे सभी अत्यन्त भय करते हैं। देवीका कोप बहुत प्रचण्ड है। १८वीं शताब्दीमें महाराष्ट्रीय सैन्य बङ्गदेशको लूटते लूटते जब तमलुकमें पहुंचे थे, तब देवीके भयसे उन्होंने यहां कोई अत्याचार न किया। उन्होंने बहुत धूमधामसे देवीकी अर्चना की। मन्दिरके निकट रूपनारायण नदीका वेग मन्द है, किन्तु कुछ दूर जा कर इसका वेग बहुत तीव्र हो गया है। अधिवासियों-का कहना है कि रूपनारायण नदी देवीके भयसे दूर हो कर मन्दिरके निकट धीरे धीरे बहने लगी है। अनेक बार नदी बढ़ कर मन्दिरके समीप तक पहुंच गई थी। एक बार मन्दिरसे केवल १ गजका ही फर्क था। उसके आघातसे मन्दिर नष्ट हो जायगा इस आशङ्कासे पुरोहित गण भागने लगे। किन्तु नदीका जल कुछ दूर और बढ़ कर पीछे हट गया। मन्दिर निरापदसे रहा।

तमलुकमें जिष्णु का एक मन्दिर है। प्रवाद है, युधिष्ठिरके अश्वमेधयज्ञका घोड़ा जब तमलुकमें आया, तब यहांके मयूरध्वज राजा ताम्रध्वजने उसे पकड़ा। अतएव अश्वरक्षक सेनाके अधिपति अर्जुनके साथ उनकी गहरी मुठभेड़ हुई। लड़ाईमें ताम्रध्वजकी जीत हुई और वे कृष्णके साथ अर्जुनको बांध कर लाये। कृष्ण स्वयं विष्णु थे इस कारण कृष्ण और अर्जुनको एक साथ बंधे हुए देख ताम्रध्वजके पिताने अपनी गद्दीका सिर न्वार तथा कृष्णसे सविनय निवेदन किया। सदा कृष्ण और अर्जुनके दर्शन होते रहे, इस आशासे उन्होंने एक मन्दिर बनवाया और उसमें कृष्ण तथा अर्जुनकी प्रतिमूर्ति स्थापन करनेकी आज्ञा दी। इन दोनों प्रतिमूर्तियोंका नाम जिष्णु और नारायण है। प्रायः ३।४ सौ वर्ष व्यतीत हुए, रूपनारायण नदीने इस मन्दिरको आत्मसात् कर लिया है, किन्तु दोनों प्रतिमूर्तियोंकी रक्षा की गई थी। बाद गोपजातीय किसी व्यक्तिने एक मन्दिर निर्माण कर उसमें उन मूर्तियोंको स्थापित की। मन्दिरकी आकृति और निर्माणकौशल वर्गभीमा देवीके मन्दिर सरीखा है।

तमलुक अत्यन्त प्राचीन नगर है। इसका संस्कृत नाम ताम्रलिप्त है। महाभारतमें भी ताम्रलिप्तका उल्लेख मिलता है। दशकुमारचरित, बृहत्कथा प्रभृति ग्रन्थोंमें ताम्रलिप्त बङ्गदेशका प्रधान बन्दरके जैसा वर्णित है। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ पढ़नेसे मालूम पड़ता है कि बङ्गोपसागर और भारत महासागर द्वीपसमूहोंके साथ ताम्रलिप्तका यथेष्ट वाणिज्य चलता था और समुद्रसे केवल ८ कोसकी दूरी पर यह नगर अवस्थित रहा। ताम्रलिप्तमें बौद्धधर्म प्रवर्तित होने पर यह हिन्दूधर्मका तीर्थ पीठ हो गया है। किसी किसीने तमस् लिप्त अर्थात् पाप-कलुषित, इन दो शब्दोंसे ताम्रलिप्तकी व्युत्पत्ति निर्धारित की है इससे जाना जाता है कि पूर्वकालको इस स्थानमें धर्मनियम उतना प्रतिपालित नहीं होता था। जो कुछ हो, ताम्रलिप्तके उत्पत्ति सम्बन्धमें एक कहानी इस तरह प्रचलित है—विष्णु जब कल्कि अवतारमें दैत्योंको विनाश करते करते बहुत क्लान्त हो गये, तब उनके शरीरसे ताम्रलिप्तमें पसीना गिरा। देवताके द्वारा लिप्त हो जानेसे यह स्थान पवित्र क्षेत्रमें परिणत हो गया और इसका नाम ताम्रलिप्त पड़ा। ब्रह्माण्ड पुराणोंमें लिखा है कि भारतवर्षके दक्षिण दिक्‌में ताम्रलिप्त तीर्थमें स्नान करनेसे मनुष्य सब पापोंसे विमुक्त होते हैं। फिर भी कहा है कि जब महादेवने दक्षका वध किया, तब ब्रह्महत्या पापके कारण उनके हाथसे दक्षका शिर कपाल परिभ्रष्ट न हुआ। दूसरा कोई उपाय न देख उन्होंने देवताओंकी शरण ली। देव गणने उन्हें पृथ्वीके समस्त तीर्थोंमें पर्यटन करनेकी सलाह दी। महादेव ताम्रलिप्त छोड़ कर और दूसरे दूसरे तीर्थोंमें हो आये, किन्तु उनका अभीष्ट सिद्ध न हुआ। उनके हाथमें दक्षका मस्तक वर्त्तमान अवस्थामें रह गया। तब वे हिमालय पर्वत पर तपस्या करने लगे। इस समय विष्णु भगवान्‌ने उनके सामने उपस्थित हो कर ताम्रलिप्तमें जानेके लिये उनसे कहा। उनके कथनानुसार शिवजीने ताम्रलिप्तमें जा वर्गभीमा और जिष्णु नारायणके मध्यवर्ती जलाशयमें स्नान किया। स्नान करनेके बाद ही उनके हाथसे दक्षका मस्तक नीचे गिर पड़ा। इसी कारण इस स्थानको कपालमोचन कहते हैं और यह एक प्रधान तीर्थक्षेत्रमें गिना जाता है। आज कलसे यह स्थान नदी गर्भमें हो गया है। अब भी

Nismes)ने तमाकूकी आमदनी की थी। उन्हींके नामानुसार इस श्रेणीके उद्भिद्का नाम पड़ा है। निकोटियाना-श्रेणीमें कई एक प्रकारकी तमाकूके सिवा अन्य कोई भी उद्भिद् गृहीत नहीं होता। वन्य और कृषिलब्ध समस्त तमाकूओंमें आज तक ५० प्रकारके तमाकूके पेड़ोंका विवरण प्रकाशित हुआ है। इन ५० प्रकारके पेड़ोंमेंसे ४८ प्रकारका आदिस्थान अमेरिका है, अवशिष्ट २ प्रकारके पेड़ोंमेंसे एक प्रकारका पेड़ आष्ट्रेलियामें और एक प्रकारका नये क्यालिडोनिय द्वीपमें पाया जाता है। उक्त ४८ प्रकारके तमाकूके पेड़ोंमेंसे विशेषतः इस देशमें निकोटियाना टाबाकम् (N tabacum) और निकोटियाना रास्टिका(N rastica) इन दो श्रेणियोंका प्रचलन अधिक है। देश और जमीनके भेदसे तथा कृषिकी प्रकृतिके भेदसे इनके नाना प्रकारके सामान्य विभाग देखनेमें आते हैं,



१। साधारण तमाकूका पेड़। २। तुर्की तमाकूका पेड़।

जिनमें अधिकांश ही व्यवसायके स्थान और जन्मस्थानके नामसे परिचित हैं। भार्जियाना, मेरिलैण्ड, केण्टाकि, लाटाकिया, हाभाना, मानिला, सिराज आदि एसिया, यूरोप और अमेरिकाको प्रसिद्ध तमाकू एक निकोटियाना टाबाकमसे ही उत्पन्न हुई हैं। प्रसिद्ध तुर्की तमाकू निकोटियाना राष्टिकासे उत्पन्न है।

निकोटियाना राष्टिका वा तुर्की तमाकू साधारणतः यूरोपमें पूर्वभारतकी तमाकू (Turkish or East Indian tobacco) के नामसे तथा बङ्गाल, बिहार और युक्तप्रदेशमें विलायती वा कलकत्तेकी तमाकूके नाममें प्रसिद्ध है। पञ्जाबमें कन्धारी तमाकू वा कान्दाहारी कक्कर नामसे प्रसिद्ध है।

निकोटियाना टाबाकम् वा साधारण तमाकू अमेरिका वा भार्जियानाकी तमाकू कहलाती है।

भिन्न भिन्न देशोंमें तमाकूके नाम इस प्रकार हैं—

युक्तप्रदेशमें	···	तमाकू, तम्बाकू, बज्जरभाङ्ग।
बङ्गालमें	···	तामाक, दोक्ता, तामाकू।
सिन्ध, गुजरात और राजपुतानामें	···	तमाकू।
बम्बई प्रदेशमें	···	तम्बाखू।
उड़िष्यामें	···	धूमपतड़ (धूम्रपत्र)
संस्कृतमें	···	कलञ्ज।
" (गठित)	···	धूम्रपत्र, ताम्रकूट।
तामिलमें	·	पोगई-इलाई।
तैलगूमें	··	पोगाकु, धूम्रपत्रमु।
काश्मीरमें	···	सवन् पाण्डव।
कर्णाटकमें	···	होगेसप्पु।
मलयमें	·	पुकाइला, पुकाल्लो, ताम्बाको।
ब्रह्मदेशमें	···	से, साक, साकपिन।
सिंहलमें	·	दुम्बाजक्का, दुंकोला।
पारस्यमें	··	तम्बाकू।
अरबमें	···	तुतन, बज्जरभाङ्ग।
तुरुष्कमें	···	तुतन, टोवन।
वालि वा यवद्वीपमें	··	ताम्बाको।
चीनदेशमें	··	सियांइयेन, ह्येनमाई, तान्‌या।
जापानमें	·	टाबाको।
इटलीमें	···	टैबाक्को।
लैटिनमें	··	टाबाकम्।
रूस, जर्मन, डेनमार्क और फ्रान्समें	·	टाबाक।
इङ्गलैण्डमें	··	टोबाक।
पर्तुगाल, स्पेन और इङ्गलैण्डमें	···	टोबाको।
मेक्सिको देशमें	···	कोयाकरियेट।

तमाकूका पेड़ सीधा होता है। इसके पत्ते काण्डाश्लेषी, वृन्तहीन और कोणाकार होते हैं तथा काण्डकी तरह बिलकुल जड़से ही उगते हैं। काण्डके ऊपर क्षुद्र कोमल लोमवत् काँटे होते हैं। पत्तोंमें आवरक पत्ते

हरे और पत्तीयों होते हैं। इसका पेड़ बहुत कोमल होता है। वास्तवमें यह वृक्ष किस देशका स्वभाव जात है, इसका अभी तक निश्चय नहीं हुआ। हां, इतना तो निश्चय हो चुका है कि मध्य या दक्षिण अमेरिकाके किसी न किसी स्थानसे यह पृथिवी भरमें फैल गया है। कोई कोई कहते हैं, कि पिरुवरिका और उसका निकटवर्ती स्थान ही इसकी आदि जन्मभूमि है। इस समय यह पृथिवीके प्रायः सभी उष्णप्रधान और नातिशीतोष्ण देशोंमें यथेष्ट उत्पन्न होता है।

विलायती या तुर्की (Turkish) तमाकू निकोशियाना रूष्टिकाके स्वभावजात पौधे हैं। वर्डवुड साहबके मतानुसार यह भार्जिनियाकी तमाकूसे बहुत कुछ अलग है। इस जातिकी तमाकू सबसे पहले रूममें पाई गई थी इसलिए इसको विलायती तमाकू कहते हैं। सर वाल्टर राले इस तमाकूको पसन्द करते थे।

पञ्जाबके, वन-विभागके परिदर्शक डा० ष्टयार्ट (१८६१ई०में) ने सबसे पहले यह आविष्कार किया था, कि उत्तरभारतमें इस जातिकी तमाकूकी खेती होती है। उन्होंने लाहोर, मुलतान होशियारपुर दिल्ली आदि स्थानोंमें अन्यान्य प्रकारकी तमाकूकी तरह इस श्रेणीकी तमाकूकी भी बहुत खेती होते दिखलाई थी। हिमालय प्रदेशके उत्तरांशमें पाडि नामक स्थानमें बम्बू मामाके अववारियामें, लखनऊके निकट, आसाम प्रदेशमें, यहां तक कि सुदाम प्रदेशमें १०५०० फुट ऊंचाई पर भी इसकी खेती होती है। बङ्गालमें, कोच बिहार, रङ्गपुर, और बङ्गाल मनीपुर, आसाम आदि स्थानोंमें भी इसकी खेती होती है। दक्षिणदेशमें गोदावरी जिलेकी "लङ्का तमाकू" इसी जातिकी तमाकूसे उत्पन्न है। यह अन्य प्रकारकी तमाकूकी अपेक्षा कड़ी होनेके कारण तमाकूके व्यवसायी लोग ग्राहकोंकी रुचिके अनुसार इसको दूसरी तमाकूके साथ मिलाया करते हैं। तमाकूके इसके पौधे मजबूत हैं और अधिकताके उत्पन्न होते हैं। इसकी खेती करनेमें भी परिश्रम कम लगता है और इसको मिलावटकी जो तमाकू बनती है, उससे पैसा भी ज्यादा आता है। पञ्जाबमें इसके पत्ते मोड़ कर मलते बांध रखते हैं। इसकी थोड़ी बहुत सुंघनी (नस्य) बनती है, पर कोई इसे सुर्ती बना कर खाता नहीं। इसमें गुड़ (शीरा) मिला कर पीनेकी तमाकू नहीं बनती किन्तु हुक्केके लिए इसका अधिक प्रचलन है। इस तमाकूको हुक्केमें कुछ मीठापन होनेसे मि० बेडेन पावेलने अनुमान किया था कि इसमें कुछ मधुका अंश है। इसको कुमाऊंवाले कान्दाहारी विलायती और विलायती तमाकू कहते हैं। इन नामोंसे अनुमान होता है कि भारतमें यह पहले पहल उन देशोंसे आई थी।

अमेरिका या भार्जिनियाकी तमाकू ही साधारणतः सब देशोंमें मिलती है। भारतवर्षमें तमाकूकी खेती अधिक होने पर भी आजकल अनुसन्धानसे देखा गया है कि भारतवर्षके मध्यप्रदेशमें इस जातिकी तमाकू अई अल्पमात्रामें यथेष्ट उपजती है। किन्तु इस तरह इस देशमें तुर्की या विलायती तमाकू होते कहीं भी नहीं देखी गयी है। डा० वाटका कहना है, कि अफगानिस्तानके निकट पार्वत्यके मध्यवर्ती स्थानोंमें, गांवोंके भीतर, सड़कके किनारे, दीवारके निकट, खण्डहरोंमें और गोबर स्थान पर इस श्रेणीके तमाकूके पौधे अपने आप पैदा होते हैं। बहुत पुरानी दीवारों पर तथा कुएंकी और मकानोंके बालुकामय छतोंमें भी यह अपने आप पैदा होता है। जिस स्थानमें यह पौधा होता है, वहां दूसरा कोई भी स्वभावजात वृक्षगुल्मादि नहीं जम सकते, परन्तु इतनी बात जरूर है कि ये खेतवाले तमाकूके पौधोंकी तरह परिपुष्ट नहीं होते। ये प्रायः अल्पमें होते हैं, और खेत में गांवमें इन पर खूब लगते हैं। डा० वाटने जिस जातिके स्वभावजात तमाकूके पौधेको जन्म अवस्था बतलाई है वह क्या चीज है, यह हम ठीक नहीं कह सकते। डाक्टरने इसकी बहुलताके विषयमें जैसा लिख रखा है, उससे मालूम होता है कि गांवके लोग इसे बहुत जानते और अवश्य ही किसी नये नामसे पुकारते होंगे। परन्तु हम बहुत कोशिश करने पर भी उसके विषयमें कुछ निर्णय नहीं कर सके हैं। कोई कहते हैं कि उक्त डाक्टरने जिस पौधेका उल्लेख किया है, वह "निकोटिया टोबैकम" नहीं, उसी जातीय "निकोटियाना ग्राण्डिफ्लोरिया" है परन्तु डाक्टरने इस बातको अस्वीकार किया है।

तमाकूका इतिहास।—१४९२ ई०में यूरोपियोंमें तमाकू प्रथम प्रचलित हुई थी। कोलम्बस ने टनसालवाडर अर्थात् पश्चिम भारतीय द्वीपपुंजमें पहुंच कर इस चीज पर लक्ष्य दिया था। उन्होंने किस द्वीपमें इसे पहले देखा था, इसमें भी बहुत गड़बड़ है। कोई तो यह कहते हैं उसका पौधा क्युबामें उन्होंने स्वयं देखा था और कोई ऐसा कहते हैं, उन्होंने जिन लोगोंको अमेरिका भेजा था, उन्होंने गुयानाहनी द्वीपमें (सनसैल्वेडरमें) उपस्थित हो कर इस वस्तुको देखा था। उन लोगोंने उस देशके आदमीको एक पत्तोंके गुच्छेको जला कर उसका धुआं पीते देखा था। उस देशके लोग इस पौधेको "कोहिबा" और जलते हुए गुच्छेको 'टोबाको' कहते थे। कोलम्बसकी द्वितीय यात्रामें (१४९४—९६ ई०में) स्पेनदेशके संन्यासी रोमैनो भी साथ थे, उनका कहना है, कि सन डोमिङ्गो द्वीपके लोग "गुइयोजा" वा "कोहबा" नामक एक प्रकारके वृक्षके पत्तोंको लपेट कर 'टोबाको' नामकी नली द्वारा धूम्रपान करते थे। उनके विवरणसे उक्त देशमें नस्य ग्रहणका विषय भी मालूम पड़ता है। १५३५ ई०को सन-डोमिङ्गोके शासनकर्त्ता द्वारा लिखित गञ्जालो फार्नाण्डेज डि ओभिडो अपनी पुस्तकमें इस 'टोबाको' नामक धूम्रपानकी नलीकी ऐसी वर्णना कर गये हैं। यह देखनेमें ठीक अंग्रेजी अक्षर Y जैसी होती थी। इसमें तमाकू भरनी नहीं पड़ती थी। आग पर पत्तेको देते थे, उससे धुआं निकलता रहता था, उस धुएंके ऊपर उस नलीके नीचेका भाग पकड़े रहते थे और ऊपरके दोनों मुंह दोनों नासारन्ध्रोंमें लगा कर उससे धुंआ खींचा करते थे। उक्त ग्रन्थसे यह भी पता चलता है, कि सनडोमिङ्गोके लोग भैषज्यगुणके कारण इसका बड़ा आदर करते थे। १५०२ ई०में स्पेनके लोगोंने दक्षिण-अमेरिकाके उपकूलवासियोंमें तमाकू चबानेकी प्रथा सबसे पहले देखी थी। पहले पहल अमेरिकामें जितने भी पर्यटक गये थे, उन सबके विवरणोंमें ऐसा लिखा है, कि अमेरिकामें इसका तीन तरहसे व्यवहार होता था, किन्तु टाइसमानका कहना है, कि दक्षिण अमेरिकाके लोग धूम्रपान करते ही न थे, सिर्फ सुंघनी (नस्य सूंघते और तमाकू चबाते थे तथा लाप्लाटर, उरुगोया और पारागोया इन तीन देशोंमें तमाकूका किसी प्रकार भी व्यवहार न होता था। उत्तरअमेरिकाके पानामा-योजकसे कनाडा, कालिफर्निया, पश्चिम भारतीय द्वीपपुञ्ज आदि समस्त स्थानोंमें धूम्रपानका अधिकतासे प्रचार था। इसका भी प्रमाण मिलता है कि अति प्राचीन कालसे ही यह धूम्रपानकी प्रथा उक्तदेशोंमें प्रचलित थी। उक्त 'टोबाको' नामकी नलियों पर अति सूक्ष्म, सुदृश्य और मनोहर शिल्पकार्य है, यह भी थोड़े दिनोंका उद्भावित नहीं है। मेक्सिको देशको पर्वतक जातिकी कब्रों तथा अमेरिकाके युक्तराज्यको स्तूपराशियोंसे उक्त प्रकारके शिल्पकार्यविशिष्ट नल आविष्कृत हुए हैं। इन पर कुछ ऐसे जीवोंकी भी आकृति है, जो उत्तर अमेरिकामें नहीं पाये जाते।

अमेरिकाके नाना स्थानोंमें इसके भिन्न भिन्न नाम प्रचलित हैं। मेक्सिको देशमें इसके नाम पितम (Petum) वा पिटन् (Petun) है। इस शब्दसे ही एक श्रेणीको तमाकूका नाम 'पिटुनिया' (Petunia) हुआ है। 'येट्ल्' (yetl) नाम भी मेक्सिकोके किसी किसी भागमें सुनाई देता है। पेरूमें इसको 'स्यरी' (Sary) कहते हैं।

यूरोपमें सबसे पहले १५६० ई०में तमाकू पहुंची थी। द्वितीय फिलिपके समयमें फ्रान्सिस्को फार्नाण्डेज, मेक्सिकोके अन्यान्य स्थान आविष्कार करने गये थे, वे ही तमाकूके पत्ते यूरोपको लेते गये थे। स्पेनमें कई वर्ष तक धूम्रपान प्रचलित होने पर भी तमाकूका विशेष आदर नहीं हुआ। अन्तमें पोर्तुगालसे ही इसका विशेष प्रचार हुआ। जियांनिको (Geau nicot) नामके एक फरासीसी दूत इस समय पोर्तुगीजके दरबारमें रहते थे। उन्होंने एक ओलन्दाजसे तमाकूके बीज ले कर लिसबन नगरमें अपने उद्यानमें बो दिये। तमाकूके भैषज-गुणसे अपने आदमियोंके अनेक रोग नष्ट होते देख वे आश्चर्यान्वित और प्रलोभित हुए। १५६१ ई०में उन्होंने इसे फ्रान्सके राजाके पास भेजा। फ्रान्सकी रानीने इसके गुण सुन कर इसका विशेष आदर किया जिससे इसकी कृषिने बहुत जल्द उन्नतिलाभ की। उस समय इसको नाना प्रकार पवित्र नाम दिये गये थे, जैसे—"हारबाना साक्टा"

(पवित्र गुल्म) "हार्बा पैनिसिया" "हार्बा डिवाइन" "हार्ब डि एल आम्बस्याडिअर" (दूत-गुल्म) इत्यादि। पोर्तुगालके कार्दिनाल साण्टाक्रोस इसे इटलीमें ले गये, वहां इसका नाम उनके नामानुसार 'हार्बा साण्टाक्रोस' पड़ गया। इटलीसे इसका क्रमशः उत्तर युरोपमें विस्तार हो गया।

१५८४ ई में सर वाल्टर रालेने आमिडासने कप्तान राल्फ लेन नामक किसी व्यक्तिके अधीन एक उपनिवेश स्थापित किया। वहां औपनिवेशिकोंने इसको पीते थे। १५८६ ई०में कप्तान लाइनने इसे पहले पहल इंगलैण्ड भेजा। उस समय तमाकू पर २ पेन्स शुल्क लगता था किन्तु १० वर्ष बाद प्रथम जेम्सने १६०१ ई०में इसको बढ़ा कर ६ शिलिङ्ग १० पेन्स कर दिया।

कुछ दिनों तक युरोपमें इसका प्रचार खूब आदरके साथ होता रहा, सभी विचारते थे कि इसका सेवन गुण अति आश्चर्यजनक है मानसिक पीड़ाको दूर करनेका यह एक इसे अव्यर्थ महौषध है। अन्तमें कुछ दिन पीछे यह भ्रम दूर हो गया। उस समय सम्राट्, राजा और पोपोंको इसका व्यवहार उठानेके लिए अति निष्ठुर दण्डको व्यवस्था करनी पड़ी थी। तुर्किस्तानमें धूमपायियोंके लिए ओठ का छेदन और नस्यपायियोंके लिए नासाच्छेदनको व्यवस्था हुई। किसी किसी समय तो प्राणदण्ड तक होता था। इतने पर भी तमाकूका व्यवहार उठा नहीं। अन्तमें यह-मात्र मद्यवाला व्यवहार्य मालूम हो गई। विदेशी तमाकूका आमदनीमहसूल बहुत ही बढ़ गया था, आखिर १६६० ई०में यह भी उठा दिया गया। १८६० ई को आयर्लण्डमें भी महसूल उठा दिया गया और १८८६ ई०में कुछ ठहरे हुए नियमोंके अनुसार इंग्लैण्ड और स्काटलण्डमें मस्यकरी तमाकूकी खेती करनेके कानून बन गये।

भारतमें तमाकू—युरोपियोंके मतसे अकबर बादशाहके राजत्वके बाद पोर्तुगीज लोग १६०२ ई०में इसे भारतमें लाये थे। बहुतसे ऐसा भी कहते हैं कि अमेरिका आविष्कारसे बहुत पहले एशिया और भारतमें धूमपान प्रचलित था परन्तु आज तक इसका कोई प्रमाण नहीं मिला है। युरोपियोंका कहना है, कि संस्कृत ग्रन्थमें इसका कुछ उल्लेख नहीं मिलता तथा एशिया और भारतमें सर्वत्र इसका यूरोपीय नाम होनेसे और भी विश्वास होता है कि यह इस देशमें कभी भी ई०की १० वीं शताब्दीसे पहले परिचित न थी। किन्तु सिद्धान्त नारायणी नामक वैद्यक ग्रन्थोक्त "तमस्ख" शब्दका अर्थ तमाकू है इस बातको सब मानते हैं। "बलवाम के हत"-का अर्थ शुद्ध हो अनुमित होता है। ... इसके सिवा डयून और कार्नेगीमोव शब्दके इतिहासमें १६०४ ई०में लिखित आसाद-बेगके विवरणसे भी तमाकूकी बात जाहिर होती है।

आसादबेग लिखते हैं —"बीजापुरमें मैंने तमाकू देखा। भारतवर्षमें अन्यत्र कहीं भी इसका पता नहीं पाया। मैंने कुछ साथमें ले आया और जवाहरातकी एक नली बनवाई। अकबर बादशाह मेरे उपहारोंको पा कर बड़े सन्तुष्ट और विस्मित हुए। उन्होंने कहा—'इतने थोड़े समयमें आपने इतने अचम्भेकी चीजें कैसे इकट्ठी की? इसी समय हाथोंमें धूमपानकी नली और अन्यान्य चीजोंको देख कर उन्होंने पूछा, कि यह क्या है और आपने कहांसे प्राप्त की है?'

नवाब खां आजमने उत्तर दिया—इसका नाम है तमाकू, यह मक्का और मदीनेमें विशेषरूपसे व्यवहृत होती है। हकीम साहब आपको दवाके लिए इसे लाये हैं। बादशाहने उसे देखभाल कर मुझे उनके बनानेके लिए कहा। वे धूमपान करने लगे। उस समय चिकित्सक वर्ग तमाकू पीनेके लिए निषेध करने लगे। मेरे पास तमाकू कुछ ज्यादा थी मैंने अमीर उमरावोंके पास भी कुछ कुछ तमाकू भेज दी। सेवन करके अमीरोंने और भी इसकी इच्छा प्रकट की। इस तरह तमाकूका व्यवहार प्रचलित हुआ। इसके बाद सौदागरोंने इसका रोजगार करना शुरू कर दिया। मगर बादशाहने इसके पीनेका अभ्यास न डाला।"

भारतमें भी इसके कुछ दिन बाद युरोप जैसी घटना हुई। जहांगीरके समयमें तमाकूका व्यवहार प्रचलित हुआ था यह ठीक है, किन्तु जहांगीरने इसको अनिष्टकारिता समझ कर इसके व्यवहारको बन्द करनेके लिए ऐसा आदेश दिया था कि—'तमाकूके पीनेसे सुबबोंका

मन और स्वास्थ्य नाना प्रकारके दोषोंसे दूषित हो रहा है, इसलिए कोई भी इसे न पीवे।" ईरान देशमें जहाँगीरके भाई शाह अब्बासने भी इसी समय तमाकू बंद करनेका आदेश दिया था। जहाँगीरने तमाकू पीनेवालों के लिए "तशीर' (उलटे गधे पर सवार होनेका) दण्ड जारी किया था।

सिख, श्रोहवो और कई एक श्रेणीके हिन्दू, और जैनी धर्महानिकर होनेसे कारण तम्बाकू नहीं पीते। मुसलमान लोग पहले इससे बहुत घृणा करते थे, किन्तु दिन दिन वह लोप होती गई। वर्तमान समयमें भारतके प्राय: सभी स्थानोंमें तमाकूको खेती एक मुख्य चीज हो गई है। विहारमें तमाकूको प्रियता इतनी बढ़ गई है, कि उस पर कहावतें भी बन गई हैं—

"जो खाय न खाय तमाकू पीये।
सो नर बेटवा कैसे जीये॥"

भारतवर्षकी तमाकू अमेरिका वा विलायती तमाकूको तरह व्यवसायसे उतनी आदरणीय नहीं है। हाँ, १८२८ ई०में गवर्मेण्टको तरफसे इसके लिए कोशिश की गई थी। कप्तान वामिल्‌ हॉलने इस विषयमें कलकत्तेकी एग्रिहार्टिकल्‌चरेल सोसाइटीमें जैसा उपदेश दिया था, उसके अनुसार उन लोगोंने मेरिलैण्ड और भार्जिनिया तमाकूके बीजसे खेती करके जो तमाकू पैदा की थी, वह विलायतमें बड़े आदरके साथ गृहीत हुई। विलायती वणिकोंका कहना है, कि भारतीय तमाकूसे इतनी उमदा तमाकू उन्होंने और कभी भी नहीं देखी। यह तमाकू विलायतमें १ पौण्ड ६ शिलिं ८ पेन्सके हिसाबसे बिकी थी, किन्तु इसके बाद अहमदाबादसे एक बार तमाकू विलायतको भेजी गई थी, उसका इतना आदर नहीं हुआ। उसके पत्ते ज्यादा सूखे और छोटे थे। हिन्दुस्तानकी तमाकूमें धूल-रेत ज्यादा होता है, इसलिए विदेशोंमें व्यवसायके लिए भारतकी तमाकू वणिकोंसे आदर नहीं पाती।

तमाकूकी खेती—१८८८-८९ ई०में स्थिर हुआ कि देशीय राज्योंको छोड़ कर ब्रटिश अधिकारमें प्रायः लाख बीघा जमीनमें तमाकूकी खेती और उससे करोड़ मन के करीब तमाकू उत्पन्न होती है। भारतमें मन्द्राज, गोदावरी कृष्णा, कोयम्बातुर, विहुत, (बंगालमें) रङ्गपुर, (बम्बईमें) खेड़ा और अहमदाबादमें तमाकूकी खेती अधिकतासे होती है। प्रसिद्ध "लङ्का तमाकू" गोदावरी और कृष्णा जिलेमें तथा त्रिचिनापल्ली-चुरटकी तमाकू कोयम्बातुर और मदुरा जिलेमें उत्पन्न होती है।

युक्तप्रदेश—यहाँ प्राय: १२३८८४ बीघा जमीन पर तमाकू उत्पन्न होती है। फरक्काबाद और बुलन्दशहरमें ही तमाकू ज्यादा होती है। इस प्रदेशमें कहीं दो और कहीं तीन बार तमाकूकी फसल होती है।

पहली फसल (श्रावणसे खेती शुरू होनेके कारण) "श्रावणी" नामसे प्रसिद्ध है। दूसरी फसल (जेठ असाढ़में फसल काटी जाती है, इसलिए) "असाढ़ी" नामसे मशहूर है। 'श्रावणी" फसल कट जानेके बाद उसकी जड़ जो खेतोंमें रह जाती है, उससे दूसरी मान ऊँखाखर्त और एक फसल मिलती है, जिसे 'रतुन' फसल कहते हैं। 'रतुन' फसल अच्छी नहीं होती। इलाहाबादके पश्चिमाञ्चलमें फसल जड़के पाससे काटी जाती है और उसके पूर्वाञ्चलमें एक एक पत्ते तोड़ लिये जाते हैं। इस देशमें विहारकी पूसा कोठीसे पहले भी गाजीपुरमें तमाकूकी एक कोठी बनी थी। वहाँ जितनी तमाकू हुई थी, वह इंग्लैण्ड और अष्ट्रेलियामें नमूनेकी तौर पर भेजी गई थी। उस समय यह ॥) सेरके हिसाबसे बिकी थी।

इससे साबित होता है, कि हिन्दुस्तानी तमाकूकी खेती यत्नपूर्वक की जाने पर, वह अमेरिकाकी तमाकूसे किसी अंशमें हीन नहीं समझी जा सकती।

अयोध्या—यहाँ प्राय: ४०१२२ बीघा जमीनमें तमाकूकी खेती होती है। सीतापुर और खेरी जिलेमें तमाकूकी खेती कुछ अधिकतासे होती है।

पञ्जाब—यहाँ १८५६९८ बीघामें तमाकूकी कृषि होती है। जालन्धर, सियालकोट और लाहौर जिलेमें इसकी फसल ज्यादा है। इस प्रान्तमें विशेषत: लाहौर जिलेमें, निकोटियाना राष्टिका वा कान्दाहारी वा कक्कर तमाकू ही ज्यादा होती है। लाहौरी कक्कर और शिकारपुरी कक्कर ज्यादा प्रसिद्ध है। इसका पत्तियाँ छोटी और गोल होती हैं। इसके सिवा यहाँ और भी

नई तरहका मशहूर तमाकू पैदा होता है।

बोम्बाइको तमाकूकी फसल खूब अच्छी और ज्यादा होती है, कारण किसान लोग खानेके लिए इसकी चीज ज्यादा काममें लाते और पसन्द करते हैं। सम्भवत: इसके बीज सबसे पहले बोम्बाइसे ही भारतमें लाये गये थे, इसी लिए इसका नाम ऐसा पड़ा है।

मोटी—इसकी पत्तियाँ खूब लम्बी और मोटी-दार होती हैं, इसलिए इसका नाम "मोटी" पड़ा है। यह देशी और "गोड़ा" के भेदसे दो प्रकारकी है।

लाहली—यह लाहोर अमृतसर और सियालकोटमें होती है। इसकी सिर्फ पत्तियाँ ही व्यवहृत होती हैं, डंठल किसी काममें नहीं आते।

पूर्बी—पहले बङ्गालमें इस जातिका तमाकूके बीज ला कर लाहोरकी तरफ इसकी खेती की गई थी इस-लिए इसका नाम पूर्बी पड़ा है। इसकी खेतीमें यहाँ कुछ ज्यादा खर्च पड़ता है। यद्यपि लोग इसे पानमें खाया करते हैं। धनिक लोग इसकी पीते भी हैं।

बेंगनी—इसकी पत्तियाँ देखनेमें बैंगनकी पत्तियोंसे मिलती-जुलती होती हैं, इस कारण इसका नाम बैंगनी पड़ा है। इस देशमें इसीका प्रचार ज्यादा है।

सुरती—सूरतसे बीज ला कर इसकी पहले पहल खेती की गई थी इसलिए इसका नाम सुरती पड़ गया। यह तीव्र और कड़ी होती है। बरमान जिलेमें ऐसी तमाकू, जिनोंके गुण और पत्तोंके आकारानुसार तीन तरहकी उत्पन्न होती है—कुमड़ी, सुरतानी और पत्थरी। डेरा-इस्माइलखाँ जिलेमें दो प्रकारकी तमाकूकी पैदायश है—मिस्वार और गरोबा। गरोबा अति निकृष्ट तमाकू है। यद्यपि लोग इसे कान्दाहारी तमाकूके साथ मिला कर पीते तमाकू बनाते हैं। गरोबा तमाकूमें स्वाद और गन्धकी विशेषता कुछ भी नहीं है।

सिन्ध—अंगरेज शासनके बाद इस देशमें तमाकूकी खेती होती है। यहाँ तमाकूकी पहली फसलको भिटरा कहते हैं। एक मास बाद दूसरी फसल कटती है, जो बाल्टी या "बाचड़" कहलाती है। शिकारपुरी तमाकू इस देशमें उमदा समझी जाती है। इसके सिवा काठी मोठी और सिन्धी ये तीन तरहकी तमाकू यहाँ होती है।

काठी—यह तीव्र और मधुर आस्वादविशिष्ट है।

मीठी—इसका स्वाद मीठेपनको लिए होता है।

सिन्धी—अति निकृष्ट है।

मध्यभारत—भोपालके पूर्वान्तर्गत भेलसा नामक स्थानकी तमाकू बहुत उमदा होती है। बङ्गालमें यह भेलसाकी नामसे प्रसिद्ध है। राजपूतानाके अन्तर्गत आमेरकी तरफ भी एक प्रकारकी उत्कृष्ट तमाकू पैदा होती है जिसे आमेरी कहते हैं।

बङ्गाल।—इस देशमें यथेष्ट तमाकू होती है। तमाकूकी खेतीके लिए इस देशमें कितनी जमीन लगी हुई है इसका निर्णय नहीं हुआ। यद्यपि यहाँ तमाकूकी उत्पत्ति अधिकतासे होने पर भी देशकी खपतमें उसकी मिलती नहीं है। रङ्गपुर जिला पूर्णिया दरभङ्गा, २४ परगना, दुआर, सहयाम पहाड़ और कोचबिहार जिलेमें और ब्रह्ममें तमाकूकी खेती ज्यादा होती है तथा सब स्थानोंके अधिक लाभ हो व्यवसाय चलता है। अन्यान्य स्थानोंकी तमाकू वहींके लोगोंके व्यवहारमें खतम हो जाती है। जो किसान तमाकूकी खेती करनेका निश्चय करता है, वह इसके लिए मकान अपने घर या गाँवके पासकी जमीन चुनता है। बारासातकी तरफ जहाँ नीलकी खेती बन्द हो गई है, उन जमीनों पर तमाकूकी खेती अच्छी होती है। श्रावण भाद्र और आश्विन मासमें, तमाकूके पौधे ३।४ इञ्च होने पर उन्हें दूसरी जमीनमें गाड़ते हैं तथा माघसे चैत्र मास तक पत्ते तोड़ लिए जाते हैं। रङ्गपुर और बङ्गालकी तमाकू समस्त पूर्वभारत और ब्रह्मदेशमें जाती है। रङ्ग-पुरकी जमीन और आब-हवा तमाकूके लिए बहुत ही उपयोगी है। राजपुरुषोंका अनुमान है कि कुछ दिन बाद यहाँकी तमाकू और भी उमदा हो कर बङ्गालमें देशमें विस्तृत होगी। तमाकूकी रक्षा करनेकी व्यवस्था अच्छी होने पर इस विषयमें आशाके अनुसार फल मिल सकता है।

१८६० ई०में रङ्गपुरमें एक व्यक्तिने अपने यत्नसे प्रस्तुत तमाकू दिखलाई प्रदर्शनीमें भेज कर पदक पुरस्कार

पाया था। रङ्गपुरकी तमाकू देशीय लोगोंको बहुत प्रिय है। उक्त जिलेमें इसकी खेती आज कल धान या सनकी ममकच हो गई है। प्रति वर्ष ४०।५० मग आ कर सब तमाकू खरीदते और कलकत्ते, नारायणगञ्ज, चट्ट-ग्राम और ब्रह्मदेशको भेजते हैं। इसका अधिकांश ही ब्रह्म और कलकत्तेमें 'वर्मा चुरट' बनानेके लिए व्यवहृत होता है। यहां प्रति बीघेमें लगभग ३।४ मन तमाकू उत्पन्न होती है और ६) ७) रुपये मन बिकती है। मग लोग ब्रह्ममें चुरटके लिए तमाकू छांट कर लेते हैं। खूब चौड़े, मोटे और मोठे-कड़े पत्ते वे ७) मनके भावसे भी खरीद लेते हैं। यहां सबसे उमदा तमाकूके पत्ते हाथीके कानके समान होते हैं और "हाथीकान" नामसे ही उनकी प्रसिद्धि है। मग लोग इस तमाकूको ही अधिक पसंद करते हैं। कोचविहारकी तमाकू भी बहुत उमदा होती है। २४ परगना और नदीयामें जितनी तमाकू पैदा होती है, वह स्थानीय लोगोंके काममें ही आती है। बारासत, बनगांव और रानाघाटमें जो तमाकू पैदा होती है, उसमेंसे कुछ रफ्तनी भी होती है।

गोबरडांगाके निकटवर्ती गाइघाटा थानेसे ३।४ मील दूरी पर यमुनाके पश्चिम किनारे हिङ्गली ग्राममें जो तमाकू होती है, वही बङ्गालमें 'हिङ्गली' नामसे सर्वा-पेक्षा प्रसिद्ध और उत्कृष्ट समझी जाती है। रानाघाट और बारासतकी तमाकू भी हिङ्गलीके नामसे चलती है। असली हिङ्गली ग्राममें उत्पन्न तमाकू परिमाणमें थोड़ी होती है। सुना गया है, कि हिङ्गली ग्राममें २।३ बीघा मात्र जमीनमें इसकी खेती होती है। हिङ्गली-तमाकू ५)से ८) मन तक बिकती है।

आसाममें—तमाकू बहुत कम पैदा होती है, किन्तु यहांके मिशमी और अरब जातिके स्त्री-पुरुष मात्र ही तमाकूके प्रेमी हैं। वे प्रायः बिना हुक्केके निकलते ही नहीं। यहां बङ्गालसे तमाकू आती है। पार्वत्यजातियां अपने कामके लायक थोड़ी तमाकू बोती हैं। कुकी लोग हुक्केको लकड़ीको चबा कर नशा करना पसन्द करते हैं।

विहारमें—गङ्गानदीके उत्तरकूलमें तमाकूकी खेती होती है। यहां तीन प्रकारकी तमाकू पैदा होती है—देशी या बड़की, विलायती या कलकतिया और जेठुया। जेठुया तमाकूको पूस माघमें बोते और बरसातमें काटते हैं। दरभङ्गामें ही तमाकूकी खेती ज्यादा है। त्रिहुत और हाजीपुरको तमाकूको ही इस प्रदेशमें अच्छी समझी जाती है। इसके पत्ते खूब बड़े होते हैं। सम्भवतः यही तमाकू कलकत्तेकी तरफ "मोतिहारी तमाकूके नामसे प्रसिद्ध है।

इस देशमें प्रति बीघामें लगभग ६।० मन तमाकू पैदा होती है। किन्तु सर्वोत्कृष्ट तमाकूका मूल्य ५) मनसे अधिक नहीं होता। इधरकी तमाकू ही नेपाल, गोरखपुरमें रेल और नावोंसे युक्तप्रदेशके अन्यान्य स्थानोंमें पहुंचती है। किसी किसी जमीन पर पहली फसलमें २० मन और दूसरी फसलमें १५ मन तक उत्पन्न होती है। किसी किसी जमीन पर ३।४ बार भी फसल होती है। यहां त्रिहुतके अन्तर्गत पूसा नामक स्थानमें अंग्रेजोंने नीलकी कोठीकी तरह तमाकूकी कोठी बनाई है। उनकी खेती बहुत अच्छी होती है।

बम्बई- इस प्रदेशमें प्रायः १०१४६१ बीघेमें तमाकू पैदा होती है। खेड़ा और खानदेशकी तरफ ही तमाकूकी खेती ज्यादा है। खेड़ा और बेलगांव जिलेमें प्रधानरूपसे इसकी आबादी है। गुजरातमें एक तरहकी उमदा तमाकू होती है, जो युक्तप्रदेशको भेजी जाती है। पारस्यदेशीय सिराजा और अमेरिकाकी हाभाना, मेरीलैण्ड आदि तमाकू इस देशमें पैदा होती है।

भड़ौंच जिलेमें इनकी आबादी ज्यादा है। यहांकी तमाकू अधिकतर मरिचगञ्ज और बोरबों द्वीपमें भेजी जाती है।

मद्राज—इस प्रान्तमें २६३५८० बीघा जमीन पर तमाकूकी फसल होती है, जिसमें कृष्णा जिलेमें ही इस-की खेती ज्यादा है।

गोदावरी जिलेकी 'लङ्कातमाकू'के सिवा डिण्डिगुल और त्रिचिनापल्लीकी तमाकूने भी इंग्लैण्डमें ख्याति लाभ की है। इससे चुरट बहुत उमदा बनती है।

इस देशके अंग्रेजोंकी अपेक्षा दो प्रकारकी तमाकू ही ज्यादा पसन्द है। डिण्डिगुल-तमाकूका व्यवहार बहुत ज्यादा है। मसलीपत्तनकी तमाकू नस्यके लिए प्रसिद्ध है। यहांकी नास पृथिवी भरमें प्रचलित है।

और सुगन्धित बनानेके लिये उसमें सड़े केले, अतर तथा अन्यान्य मसाले डालते हैं।

'गुड़ुक' या पीनो तमाकूमें खमीरा ही विशेष प्रसिद्ध है। बहुत उमदा तमाकूके पत्तोंके साथ गुलकन्द (मिसरी और गुलाबको पखड़ोंसे बनता है), सेवका मुरब्बा, पानका सूखा चुआ चूरा, सुगन्धवाला (चन्दनको भाँति सुगन्धवाली लकड़ी), चन्दन, इलायची, केवड़े-का द्रव कोकनवर (सुमिष्ट फलविशेष) और अमल तासका चूर्ण मिला कर फिर उसे सड़ा कर खमीरा-तमाकू बनायी जाती है। सस्तीमें सस्ती खमीरा-तमाकू रुपयेमें ८० सेर तक बिकती है। असली खमीरा-तमाकू डग्ड़ में भर कर बिना वजनके बिकती है। पञ्जाब, दिल्ली, लखनऊ आदि स्थानोंमें खमीरा-तमाकू बनती है। खमीराके साथ सफेद तमाकूके पत्ते मिला कर दूसरी तमाकू बनती है।

बिहारकी तरफ खमीरा बनानेके लिए जटामांसी, कपिला, सुगन्धवाला और सुगन्धकोकिल नामक गन्धद्रव्य मिलाते हैं। लखनऊमें "बादशाही" तमाकू खमीरासे अलग न है। यह अति उपादेय वस्तु है।

पीनी-तमाकू बहुत जगह अच्छी बनती है। पञ्जाबकी खमीरा और लखनऊकी बादशाही-तमाकूके सिवा चुनार, चण्डालगढ, गया आदिकी तमाकू भी बहुत उमदा होती है। बङ्गालमें विष्णुपुर और आनन्दपुरकी पीनी-तमाकू अति उत्कृष्ट समझी जाती है। कलकत्तेमें विष्णुपुर, आनन्दपुर, गया, चण्डालगढकी तमाकू ही ज्यादा बिकती है। इनके साथ ग्राहकोंकी रुचिके अनुसार खमीरा-तमाकू भी मिलाई जाती है। विष्णुपुरकी सर्वोत्कृष्ट पीनी तमाकू कलकत्तेमें ॥) सेर बिकती है। हिन्दुओंमें इसको "पियानी" या पिइनी कहते हैं। तमाकू पीनेके लिये हुक्का, नली आदिकी आवश्यकता होती है।

नस्य या नास।—ममलीपत्तनकी नास जगत्प्रसिद्ध और जगद्व्याप्त है। यह बोतल भर कर बेची जाती है और खूब सरस और खुशबूदार होती है। इसके सिवा काशी, उड़िष्या और पञ्जाब प्रान्तमें भी सूंघनी बनती है। काशीकी नास सुगन्धयुक्त और प्रसिद्ध पर बहुत कड़ी होती है। पञ्जाबमें नोका और बिहारमें मोतिहारी नाम बनती है। कर्णाटक प्रदेशमें पीनी तमाकू नहीं चलती, सूंघनीका ही अधिक प्रचलन है। इस देशमें हिन्दू लोग, हुक्का क्या चीज है यह भी नहीं जानते। मुसलमानोंके हुक्केमें तमाकू पीना हिन्दुओंके लिये जातिनाशका कारण समझा जाता है किन्तु नस्यसेवन अति आदरणीय है। यहूदी, आर्मेनी और अरबके व्यवसायी लोग मसलीपत्तन-की नास ले कर नाना स्थानोंमें फिरते हैं। मसली-पत्तनकी नस्यप्रस्तुतप्रणाली बहुत ही सहज है। जितनी पत्तियोंकी नास बनानी हो, उनके डण्ठल और नसें निकाल कर आधोंको घाममें सुखा दें और सूख जाने पर उसका चूरा बना लें। बची हुई आधी तमाकूको नमकके पानी-में उबाल ले। उबालनेके बाद जो पानी बचे, उसमें नया तमाकू भी उबाली जा सकती है। ऐसा करते रहनेसे पानी क्रमशः तमाकूके अर्कसे गाढ़ा होता रहता है। अन्तमें पानी जब गुड़की तरहका हो जाता है तब उसको ठण्डा किया जाता है। फिर उसमें थोड़ीसी ब्राण्डी (विलायती शराब) मिला कर पूर्वोक्त तमाकूका चूरा डाल दिया जाता है। कुछ दिन तक यह सड़ता रहता है। पीछे वह नस्य बोतलमें भर कर बेचा जाता है।

चुरुट—त्रिचिरापल्ली, ब्रह्मदेश आदि स्थानोंमें चुरुटके कारखाने हैं। इन स्थानोंसे अपने नामसे मशहूर हर तरहके चुरुटोंका विलायतके लिए रफ्तनी होती है। इसके सिवा सभी जगह देशी चुरुट बनते हैं। मानिला, हावाना, लङ्का और यवद्वीपकी तमाकूके चुरुट भी विदेश-की जाते हैं।

बीड़ी—यह शाल या बादाम आदिके पत्तोंमें तमाकू-का चूरा लपेट कर बनाई जाती है। गरीब लोग इसे चुरुटकी तरह सुलगा कर पीते हैं। यह ब्राह्मणोंके सिवा अन्य लोगोंके लिए बड़ी प्रिय वस्तु है।

'खैनी' या 'सुर्ती'—पश्चिममें विशेषतः बिहारमें इसका ज्यादा प्रचार है। तमाकूके सूखे पत्तोंको 'खैनी' कहते हैं। बंगालमें इसे 'दोक्ता' कहते हैं। लोग इसको चबा कर खाते हैं।

सुर्ती—तमाकूके पत्तेको चूनाके साथ रगड़ कर गोली-सी बना लेते हैं और जीभके तले रख कर इसका रस चूसा करते हैं।

गुटी—तमाकूमें कस्तूरी चन्दन आदि मसाले डाल कर उसे कूटें और मटरकी बराबर गोलियाँ बना ले। यह पानके साथ खायी जाती है। खानेकी सुगन्धि उत्पन्न होती है।

विशेषता—तमाकूके पत्तोंसे एक प्रकारका निर्यास निकलता है, जो विषाक्त है। धूएँकी नलोंमें उक्त तैल और तमाकूके पत्ते व्यवहृत होते हैं। देशीय वैद्योंके मतसे तमाकू संक्रामक तथा विषघ्न है।

धूएँके पानीसे विष कोड़े आदिका विष और सूजन जाती रहती है। धूएँकी नलकोंसे जो तैलवत् पदार्थ निकलता है, उससे नमकका घाव और क्षतोंकी अच्छे हो जाते हैं। कोषवृद्धि रोगमें नास, चूना और सुहागेको अल्पमात्रामें पूरा तोलाके एक साथ मिला कर प्रलेप देनेसे रोग आरोग्य होता है। डा० मिचेलका कहना है, कि धनुष्टंकारमें मेरुदण्ड पर तमाकूकी पुल्टिस देनेसे फायदा पहुंचता है। ज्यादा नास सूंघनेसे अथवा ज्यादा चुरट पीनेसे शरीरयन्त्रमें दुर्बलता, यकृत्में कार्यक्षय, पाकयन्त्रमें कार्यहानि इत्यादि होते हैं। कभी कभी मृगी जैसा आक्षेप भी होता है। तमाकूके पत्ते गरम पानीमें सेकने पर धनुष्टंकारका आक्षेप घट जाता है। तमाकूका धुआँ गुह्यदेशमें लगानेसे मृदु विरेचन होता है। एक तरहका पोता बढ़नेसे उस पर तमाकूका पत्ता बांध देनेसे सूजन और दर्द जाता रहता है पर सिर और देह घूमती तथा कै होती है। स्ट्रिकनाइन विषमें तमाकूका पानी प्रतिषेधकका काम करता है। चूनेमें तमाकूके पत्तोंका चूरा मिला कर डंक (बिच्छू)के ऊपर उसका प्रलेप देनेसे फायदा होता है। मधुमक्खीके काटने पर तमाकू दबा रखनेसे आराम पहुंचता है।

इसके अलावा अति तमाकू सेवनका अभ्यास होनेसे इससे उदरामय, वमन, दस्त और खांसी हो जाती है। यक्ष्मा तकका भी हो सकता है। तमाकू चबानेसे जितना अनिष्ट होता है उतना तमाकू पीनेसे नहीं होता तथा नस्य लेनेमें उससे भी कम अनिष्ट होता है। नास सूंघनेसे घ्राणादि, घ्राणशक्तिकी तीक्ष्णताका नाश, अग्निमान्द्य और स्वरका परिवर्तन हो जाता है।

तमाकूमें दो प्रकारका तैल और एक प्रकारका क्षार है। इन तीन चीजोंसे ही उक्त कार्य होते हैं। एक प्रकारका तैल उड़ायु है। जलोंमें तमाकू उबालनेसे, पानीके ऊपर यह तैल तैरने लगता है। इसमें ही तमाकूका गन्ध और स्वाद (थोड़ा नशा लानेवाला)-गुण रहता है। यह उत्ताप लगनेसे वायुमें मिल जाता है। तमाकू पीते समय धुएँके साथ यह ही शरीरमें जा कर अपना काम प्रकाश करता रहता है।

दूसरे प्रकारका तैल तमाकू जलते समय पैदा होता है। इसका स्वाद कड़ुआ होता है। यह विषाक्त द्रव्य है। इसकी एक ही बूंदसे बिल्लीकी दम निकल जाती है। सिगिसार या गिरगिटके इस तैलको शोषित कर उसीमें इसका असर जाता रहता है।

तमाकूका क्षार—थोड़ासा अम्लद्रावक मिला कर केवल पात्रमें तमाकूको भिगो दें, फिर उसमें चूनेका चूना डाल कर उसे चुआनेसे ऐसा करनेसे एक प्रकारका वर्णहीन तैलवत् उड़ायु क्षार निकलेगा। यह अग्निसे भारी और अति विषाक्त होता है। इसकी एक बूंदसे कुत्ता मर जाता है। इसकी गन्ध इतनी तीव्र है कि एक घरमें यदि इसकी एक बूंद कमरेके बाहर छिड़क दें तो वहाँ श्वास लेना भी कष्टकर हो जाता है। सूखे तमाकूके पत्तोंमें यह क्षार १से ८ भाग तक रहता है। मैंनी खाने वाले इसके साथ चूना मिला कर खाते हैं, इसलिए उनके शरीरमें इस द्रव्यकी अनिष्टकारिता बहुत ज्यादा होती है।

हुक्केमें पानी रहनेके कारण हुक्केसे तमाकू पीने पर उक्त विषाक्त द्रव्य शरीरके अन्दर अल्प परिमाणमें प्रविष्ट होते हैं। धुएँके साथ, नलोंके भीतरसे आनेके समय, उसका कुछ अंश नलोंमें और कुछ पानीमें रह जाता है। नलीदार हुक्केकी नली बड़ी होनेके कारण उसमें विषाक्त द्रव्य और भी कम पेटमें जाते हैं। चुरट पीनेसे यह सुभीता नहीं होता। गन्ध बनाते समय तमाकूका क्षार और तैल भाग बहुत कुछ नष्ट हो जाता है, इस कारण चुरटको अपेक्षा यह कम अनिष्टकर है। पृथिवी पर ८० करोड़से अधिक लोग तमाकू पीते हैं। थोड़ा व्यवहार करनेसे शरीर और मन कुछ उत्तेजित और अवसादशून्य होता है,

तमालिनी (सं॰ स्त्री॰) तमाली तमालवर्णोऽस्त्यस्याः इति इनि ङीप्। १ ताम्रलिप्त देशका एक नाम। २ भूम्यामलकी भुइँआँवला।

तमाली (सं॰ स्त्री॰) तम बाहुल्यम् गौरा॰ ङीष्। १ जिस वृक्षमें होनेवाली ताम्रवल्ली नामकी लता। २ मञ्जिष्ठा मजीठ। ३ वरुणवृक्ष।

तमाशबीन (फा॰ पु॰) १ तमाशा देखनेवाला, सैलानी। २ वेश्यागामी, ऐयाश।

तमाशबीनी (फा॰ स्त्री॰) वेश्यागामी रण्डीबाजी।

तमाशा (फा॰ पु॰) १ चित्तको प्रसन्न करनेवाला दृश्य। २ अद्भुत व्यापार, अनोखी बात।

तमाशाई (फा॰ पु॰) जो तमाशा देखता हो।

तमाह्वय (सं॰ क्ली॰) तालीशपत्र।

तमि (सं॰ पु॰) ताम्यते आम्यतेऽत्र तम इन्। सर्वधातुभ्यो इन्। उण् ४।११७। १ रात्रि रात। २ मोह। ३ हरिद्रा हल्दी।

तमिन् (सं॰ त्रि॰) तम अस्त्यर्थे इनि। तमिस्रादिभ्यो विनिः। पा ५।२।१२१। अन्धकारयुक्त, अँधेरा।

तमिनाथ (सं॰ पु॰) तम्याः नाथः ६-तत्। निशानाथ, चन्द्रमा।

तमिपोषि (सं॰ स्त्री॰) तमि मोह मिषति मिष इन् न आर्यां पत्न्यं इत्यो॰ दोर्घं। १ अप्सरोभिः एक अप्सराका नाम। (अथर्व ४।३।५) (त्रि॰) २ अन्धकार ताडनकार।

तमिस्र (सं॰ क्ली॰) तमोऽस्त्यत्र। ज्योत्स्ना तमिस्रेति। पा ५।२।११४। इति निपातनात् साधु' वा तमिस्रा अन्धकारोऽस्त्यस्य तमिस्राख्य अच्। १ अन्धकार, अँधेरा। २ क्रोध, गुस्सा। ३ नरकविशेष एक नरकका नाम। (भागवत ५।२६।८)

तमिस्रपक्ष (सं॰ पु॰) तमिस्रं अन्धकारं तद्युक्तो पक्षः, मध्यपदलो॰। कृष्णपक्ष, जिस मासका कृष्णपक्ष अँधेरा हो।

तमिस्रा (सं॰ स्त्री॰) तमो बहुलमस्ति यस्यां। ज्योत्स्ना तमिस्रेति पा ५।२।११४। इति निपातनात् साधु। १ अन्धकार रात्रि, अँधेरी रात। २ दर्शरात्रि अमावस्याकी तिथिकी रात। ३ तमस्तति, अन्धकार राशि। ४ हरिद्रा, हल्दी।

तमी (सं॰ स्त्री॰) तमि-ङीष्। १ रात्रि रात। २ हरिद्रा, हल्दी।

तमोचर (सं॰ पु॰) निशाचर, दैत्य दनुज।

तमोघ्न (सं॰ क्ली॰) १ विषैले भमें बुरेका विचार। २ पश्चात्, चिह्न। ३ ज्ञान बुद्धि। ४ कष्ट, आपदा।

तमोपति (सं॰ पु॰) चन्द्रमा निशाकर।

तमीश (सं॰ पु॰) चन्द्रमा।

तमुद्घोष (सं॰ क्ली॰) तमुद्भि इत्यादिमन्त्रमभिव्याप्य प्रवृत्ता इतिष्ट। एक सूक्तका नाम।

तमिक (सं॰ त्रि॰) ताम्यति तम घञ्। ग्लानियुक्त, जिसे तन्द्रा हो।

तमोगा (सं॰ त्रि॰) १ अन्धकारमें जानेवाला। (पु॰) २ राक्षसका नामान्तर।

तमोग्र (सं॰ पु॰) राहु।

तमोगुण (सं॰ पु॰) तमसः गुणः, ६-तत्। प्रकृतिका ततीय गुण। इस गुणका प्राबल्य होनेसे मनुष्य क्रोधमें आ कर पराये अनिष्ट काम करते हैं। तमस् देखो।

तमोगुणी (सं॰ त्रि॰) जिसकी प्रवृत्तिमें तमोगुण हो।

तमोघ्न (सं॰ पु॰) तमोऽन्धकार वा मोह हन्ति हन् टक्। १ सूर्य। २ वह्नि आग। ३ चन्द्रमा। ४ बुद्ध। ५ विष्णु। ६ शिव, महादेव। ७ ज्ञान। ८ दीप, दीया, चिराग। ९ बौद्धमतके जिनादि। (त्रि॰) १० तमोनाशक, जिससे अँधेरा दूर हो।

तमोज्योतिस् (सं॰ पु॰) तमसि ज्योतिर्यस्य, बहुव्री॰। खद्योत जुगनू।

तमोदर्शन (सं॰ क्ली॰) पैत्तिक ज्वर, वह ज्वर जो पित्तके प्रकोपसे उत्पन्न हो।

तमोनुद् (सं॰ त्रि॰) तमोऽज्ञानं अन्धकारं वा नुदति नुद-क्विप्। १ अग्नि, आग। २ सूर्य। ३ चन्द्रमा। ४ दीप, दीया, चिराग। ५ तमोनाशक, जिससे अँधेरा दूर हो।

तमोनुद (सं॰ पु॰) तमो नुदति नुद-क। इगुपधेति। पा ३।१।१३५। १ अग्नि, आग। २ चन्द्रमा। ३ ईश्वर, प्रकृतिप्रेरक। (त्रि॰) ४ अन्धकारनाशक। ५ अज्ञान नाशक।

तमोऽपहत् (सं॰ पु॰) तमसोऽपः करोति कृ-क्विप्। १ वह जो समस्त अज्ञान विनाश करता हो। २ वह जिससे समस्त अन्धकार दूर होता है।

तमोऽन्त्य (सं० क्ली०) ग्रहणभेद, दश तरहसे ग्रहण हो सकता है, उनमेंसे तमोऽन्त्य एक है।

तमोऽपह (सं० पु०) तमोऽन्धकारं अपहन्ति अप-हन-ड। अपे क्लेशतमसोः। पा ३।२।५०। १ सूर्य। २ चन्द्र। ३ अग्नि। ४ ज्ञान। (त्रि०) ५ तमोनाशक, जिससे अँधेरा दूर हो। ६ मोहनाशक।

तमोभिद् (सं० पु०) तमस्तिमिरं भिनति नाशयति भिद्-क्विप्। १ खद्योत, जुगनू। (त्रि०) २ तमोभेदक, जिससे अँधेरा दूर हो।

तमोभिद (सं० पु०) तमोभिद् देखो।

तमोभूत (सं० त्रि०) १ अन्धकारकृत, अँधेरा किया हुआ। २ अज्ञ, अज्ञानी, जड़, मूर्ख, नादान।

तमोमणि (सं० पु०) तमसि अन्धकारे मणिरिव। १ खद्योत, जुगनू। २ गोमेदक मणि।

तमोमय (सं० त्रि०) तम आत्मकं तमः प्रचुरं वा तमस्-मयट्। १ अन्धकारात्मक, अँधेरासे घिरा हुआ। २ अज्ञानावृत, अज्ञानी, मूर्ख। ३ तमोगुणयुक्त। (पु०) ४ राहु।

तमोरि (सं० पु०) सूर्य।

तमोलिन (हिं० स्त्री०) तँबोलिन।

तमोलिप्ती (सं० स्त्री०) तमसा लिप्यते लिप-क्त निपातनात् ङीप्। जनपदविशेष, एक मुल्कका नाम। इसके पर्याय—तामलिप्त, वेलाकुल, तमालिका, दामलिप्त, तमालिनी, स्तम्बपू और विष्णुगृह है। तमलुक देखो।

तमोली (हिं० पु०) तँबोली देखो।

तमोविकार (सं० पु०) तमसैव विकारो यत्र, बहुव्री। १ रोग। तमसो विकार, ६-तत्। २ तमोगुणका विकार, निद्रा और आलस्य आदि। तमस् देखो। ३ तमिस्रा, रात्रि, रात।

तमोवृध् (सं० त्रि०) तमसि वा तमसा वर्द्धते वृध् क्विप्। १ अँधेरो रातमें घूमनेवाला राक्षस। २ अज्ञान वृद्ध, भारी नादान।

तमोव्रण (सं० पु०) वल्मीक।

तमोहन् (सं० त्रि०) तमोहन्ति हन-क्विप्। १ अज्ञाननाशक। २ अन्धकारनाशक, सूर्य, चन्द्र प्रभृति।

तमोहर (सं० त्रि०) तमो हरति हृ-अच्। १ अज्ञाननाशक। २ अन्धकारनाशक, जिससे अँधेरा दूर हो। (पु०) ३ सूर्य। ४ चन्द्रमा।

तमोहरि (सं० पु०) तमसा हरिः, ६-तत्। १ सूर्य। २ चन्द्रमा। ३ अग्नि। ४ ज्ञान।

तम्पा (सं० स्त्री०) तम्बति गच्छति तम्ब-अच् पृषो० साधुः। सोरभेयी गाभी, अच्छी गाय।

तम्बा (सं० स्त्री०) तम्बति तम्ब-अच्-टाप्। गाभी, गाय।

तम्बिका (सं० स्त्री०) तम्ब ण्वुल् टाप्, टापि अत इत्व। गाभी, गाय।

तम्बोर (सं० पु०) तम्ब-ईरन्। योगभेद, ज्योतिषका एक योग। योग देखो।

तम्बौर—१ अयोध्याके सीतापुर जिलेकी बिसवन तहसीलका परगना। इसके उत्तरमें खेरी जिला, पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिममें कुन्द्रि, बिसवन और लाहरपुर परगना है। भूपरिमाण १८० वर्गमील है। इस परगनेमें बहुतसी नदियाँ बहती हैं। उत्तरमें दहावर नदी तथा पश्चिममें घर्घरा, चौका और कई एक छोटी छोटी नदियाँ, मध्यदेशको विच्छिन्न करती हैं। इस परगनेमें सब जगह एक प्रकारकी गीली मट्टी पाई जाती है। इस कारण खेतमें जल सींचनेका प्रयोजन नहीं पड़ता है। वर्षाकालमें परगनेका प्रायः सभी ग्राम जलप्लावित हो जाते हैं। चौका और दहावर नदी अक्सर प्रवाहपथ बदला करती हैं। ये दोनों नदियाँ जिस ग्राम हो कर बहती है, प्रति वर्ष उस ग्रामकी बहुत क्षति होती है।

तम्बौर परगनेके कुर्मी और मुराव गृहस्थ कृषिकार्यमें बड़े सुदक्ष और अभिज्ञ हैं।

इस परगनेमें १६६ ग्राम लगते हैं। इसमें ८० तालुक हैं, जिनमेंसे ४२ गौड़ राजपूतोंके अधिकारभुक्त हैं। ८६ ग्राम जमीन्दारी हैं, इनमें भी ४०के अधिकारी गौड़ राजपूत हैं।

तम्बौर परगनेमें सोरा तैयार होता है। एक सड़क इस परगने हो कर सीतापुरसे मल्लापुर तक चला गई है।

२ उक्त सीतापुर जिलेकी बिसवन तहसीलका एक शहर। यह मल्लापुरसे ६ मील पश्चिम और सीतापुर शहरसे ३५ मील उत्तर पूर्वमें अवस्थित। ... १९८० वर्षसे अधिक समय हुए, ताम्बूलीने यह नगर स्थापन किया

था। इन्हींके नामानुसार इसका 'तम्बोर' नाम हुआ है।

अहमदाबादके पास तम्बोर नगरके मध्यमें है। यह अभी कुर्मी-पञ्चायतके दखलमें है। इस नगरमें एक स्कूल, बाजार, महादेवका मन्दिर और एक महात्माकी कब्र है। यहांका ईंटेका बना हुआ मानसरोवर और और बरबाद होता जा रहा है। पहले इस नगरमें एक दुर्ग था।

तम्र (सं॰ वि॰) ताम्यत्यनेन तम करणे र। ग्लानिमापन, जिसे ग्लानि उत्पन्न हो।

तय (अ॰ वि॰) १ समाप्त, पूरा किया हुआ। २ निश्चित, स्थिर मुकर्रर। ३ निर्णीत फैसल।

तर (सं॰ पु॰) तृ-भावे अप्। अत्रोरप्। पा ३।३।५७। १ तरण, पार करनेकी क्रिया। २ कृशानु अग्नि। ३ पथ। ४ मत्वर्थनिर्थीक एक प्रत्ययका नाम, दोमें एकका उत्कर्ष या अपकर्ष समझे जानेसे गुणवाचक शब्दके बाद तर प्रत्यय आता है। ५ पथ रास्ता। ६ गति, चाल। ७ नाव [illegible]। ८ [illegible]।

तर (फा॰ वि॰) १ आर्द्र, भीगा हुआ, गीला। २ शीतल, ठण्ढा। ३ हरा जो सूखा न हो। ४ मालदार, भरा पूरा।

तरक (हिं॰ स्त्री॰) १ तड़क देखो। (पु॰) २ विचार, सोच विचार उधेड़बुन, ऊहापोह। ३ तर्क, उक्ति प्रत्युक्तिका वचन। ४ पृष्ठ या पन्ना समाप्त होनेपर उसके नीचे किनारेकी ओर लिखा हुआ अक्षर या शब्द। यह शब्द अगले पृष्ठके आरम्भका अक्षर या शब्द सूचित करनेके लिए लिखा जाता है। ५ व्यतिक्रम, भूलचूक।

तरकना (हिं॰ क्रि॰) कूदना, झपटना उछलना।

तरकश (फा॰ पु॰) तूणीर, तीर रखनेका चोंगा।

तरकस (हिं॰ पु॰) तरकश देखो।

तरकसी (फा॰ स्त्री॰) [illegible] छोटा तरकश।

तरका (हिं॰ पु॰) तड़का देखो।

तरकारी (फा॰ स्त्री॰) १ वह पौधा जिसकी पत्ती, जड़ [illegible] आदि [illegible] तरकारीके काममें आती है। २ शाक, भाजी। ३ [illegible] मांस।

तरकी (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रियां कानमें पहनती हैं। इस गहनेका जो भाग कानके भीतर रहता है वह ताड़के पत्तेको गोल लपेट कर बनाया जाता है। इसीसे यह शब्द 'ताड़' से निकला हुआ प्रतीत होता है। इस तरहका शब्द ताड़ङ्कसे भी बना प्रतीत होता है। कहीं कहीं इसे तालपत्र भी कहते हैं। इस गहनेका व्यवहार छोटी जातकी स्त्रियोंमें अधिक होता है।

तरकीब (अ॰ स्त्री॰) १ संयोग, मिलान, मेल। २ युक्ति, उपाय, ढंग। ३ रचनाप्रणाली, शैली, तरीका। ४ बनावट, रचना।

तरकीहार—एक प्रकारकी नीच हिन्दू जाति। ये लोग विशेष कर ताड़के पत्तोंसे 'तरकी' नामका गहना जिसे नीच जातिकी स्त्रियां पहनती हैं, बनाते हैं। इसीसे इनका नाम तरकीहार पड़ा है। मुजफ्फरपुरमें जो तरकीहार हैं वे अपनेको केवल राजपूत और मारभूमें ब्राह्मण बतलाते हैं। लेकिन ब्राह्मण या राजपूत होनेका इनका कोई प्रमाण नहीं मिलता है। जो कुछ हो अवश्य ये लोग हिन्दू हैं इसमें सन्देह नहीं। क्योंकि मर्दुमशुमारीमें भी इन्हें हिन्दू ही बतलाया है।

ये लोग पांचसे ले कर ग्यारह वर्षकी अवस्थामें लड़कोंका विवाह करते हैं। इनमेंसे यदि कोई पहली स्त्रीके रहते दूसरा विवाह करना चाहे, तो जब तक पञ्चायत इजाजत नहीं देती तब तक वह विवाह नहीं कर सकता है। विधवाविवाह भी इस जातिमें प्रचलित है। सरवरिया व अथवा तिवारी ब्राह्मण इनके पुरोहित होते हैं। इनका प्रधान व्यवसाय तरकी बनाना है। कभी कभी ये लोग सिन्दूर और टिकुली भी बना कर भी मेलेमें बेचने जाते हैं। इस जातिके लोग शराब पीते, मांस, मछली तथा हरिणमांस खाते हैं। ब्राह्मण केवल इनके हाथका जल ही पीते हैं और कुछ नहीं।

तरकुला (हिं॰ पु॰) एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है, तरकी।

तरकुली (हिं॰ स्त्री॰) कानका एक गहना, तरकी।

तरक्की (अ॰ स्त्री॰) वृद्धि, उन्नति, बढ़ती।

तरक्ष (सं॰ पु॰) तरक्षु पृषोदरादित्वात् लोपः। तरक्षु देखो।

तरक्षु (सं॰ पु॰) तर बल मांसं वा क्षिणोति क्षिण-डु।

व्याघ्रविशेष, लकड़बग्घा, चरग। पर्याय—तर्क्षु, मृगादन और तरक्षुक। (शब्दर०)

यह मांसाशी हिंस्रजन्तु है। इसका आकार बाघके समान और सर्वाङ्ग रेखादि द्वारा चित्रित होनेसे, इसको हायना (Hyæna Striata) भी कहते हैं। यह कुत्तेसे कुछ बड़ा होता है, इसके शरीरका चमड़ा पिङ्गलवर्ण लोमोंसे ढका है तथा स्कन्ध कपिश रेखान्वित और पीठ पर केशरको तरह दीर्घ लोम हैं। इसके सामनेका पैर पीछेसे कुछ बड़े और पूंछ छोटी होती हैं। पेटकी धारियां सुस्पष्ट होती है, पीठका रंग घोर होनेके कारण वहांकी तिरछी धारियां स्पष्ट नहीं दीखती।

इनकी दोनों डाढ़ें (दांत) अत्यन्त सबल और दृढ़ हैं और तो क्या यह उनसे हड्डी तकको कतर सकता है। ये भारतवर्ष, सिंहल, अफ्रीका, अरब, आदि स्थानोंमें रहते हैं। ये घने जङ्गलोंमें रहना पसन्द करते हैं। विरल गुल्मपूर्ण पर्वतको गुहा, नदीतीरस्थ वनके प्रान्त आदि स्थानोंमें ही इनका वास है। दिनको पर्वतकी गुफा वा जङ्गलके गड्ढोंमें सोते हैं तथा सन्ध्याके बाद श्मशानमें, लोकालयके किनारे वा प्रान्तरमें आहारकी खोजमें निकलते हैं। ये मुर्दे खाते और उनकी हड्डी चबाना पसन्द करते है। कुत्ता, बिल्ली, गाय, बकरी इत्यादिको पाते ही पकड़ ले जाते हैं।

इसका गर्जनसे एक प्रकारका विकट शब्द होता है, कुत्ते भी उसे सुनते ही उसीकी ओर भागते हैं, इसी मौके पर यह कुत्तोंको पकड़ता है। स्वभावतः यह डरपोक होता है। यह मनुष्य पर प्रायः आक्रमण नहीं करता। समतल स्थानमें ये उतनी तेजीसे नहीं दौड़ सकते किन्तु पार्वत्य-स्थानमें इसको दौड़ देखनेसे विस्मित होना पड़ता है। बचपनसे पालनेसे यह हिलता है, पर ज्यादा उत्तेजित करने वा छेड़नेसे यह भयानक हो जाता है। नाना स्थानोंमें नाना प्रकारके तरक्षु देखनेमें आते है। उन सभीका स्वभाव प्रायः एकसा है।

इसके गुह्यद्वारके नीचेकी थैलीको चमड़ा सिकुड़ा हुई है, इसलिये पहले योरुप लोग इसको उभय लिङ्ग समझते थे। प्लिनि, इलियन आदि प्रसिद्ध ग्रन्थकारोंने लिखा है, कि यह एक वर्ष तक पुलिङ्ग रहता है, दूसरे साल स्त्रीलिङ्ग हो जाता है। इस प्रकारके और भी बहुतसे अलीक उपाख्यान हैं, जिनसे ग्रीक-ऐन्द्रजालिकगण इसकी हड्डी, चमड़ा, लोमादि, जादू आदि विषयोंमें आश्चर्य शक्तियुक्त जान कर आदरके साथ रखा करते थे।

तरक्षुक (सं० पु०) तरक्षु स्वार्थे कन्। तरक्षु देखो।

तरखा (हिं० स्त्री०) तीव्रप्रवाह, तेज प्रवाह।

तरखान (हिं० पु०) बढ़ई, वह जो लकड़ीका काम करता हो।

तरगुलिया (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका छिछला बरतन जिसमें अक्षत रखा जाता है।

तरङ्ग (सं० पु०) तरति प्लवते इति तृ-अङ्गच्। तरत्यादिभ्यश्च। उण् १।११६। ऊर्मि, लहर, हिलोर। वायु द्वारा नदी इत्यादिका जल उछाले जाने पर वह तिर्यक्रूपमें बहने लगता है, इस प्रकारको गतिका नाम तरङ्ग है। एकमात्र वायु ही तरङ्गका कारण है। इसके पर्याय—भङ्ग, ऊर्मि, ऊर्मी, वीचि, वीची, हल्ली, विलि, लहरि, लहरी, जललता, भृङ्गि, उत्कलिका और ऊर्मिका है। २ वस्त्र, कपड़ा। ३ अश्व प्रभृतिका समुत्फाल, घोड़े आदिको फलांग या उछाल। ४ चित्तको उमङ्ग, मनकी मौज। ५ एक प्रकारकी चूड़ी जो हाथमें पहनी जाती है। ६ स्वरलहरी, सङ्गीतमें स्वरोंका चढ़ाव उतार।

तरङ्गक (सं० पु०) तरङ्ग-स्वार्थे कन्। १ पानीकी लहर, हिलोर। २ सङ्गीतमें स्वरोंका चढ़ाव उतार।

तरङ्गभीरु (सं० पु०) तरङ्गेन भीरुः, ३-तत्। चतुर्दश मनुका पुत्रभेद, चौदहवें मनुके एक पुत्रका नाम।

तरङ्गवती (सं० स्त्री०) तरङ्गिणी, नदी।

तरङ्गालि (सं० स्त्री०) नदी।

तरङ्गिणी (सं० स्त्री०) तरङ्गिन् स्त्रियां ङीप्। नदी, सरित्।

तरङ्गित (सं० वि०) तरङ्गः सञ्जातोऽस्य तारकादित्वादितच्। १ जाततरङ्ग, हिलोर मारता हुआ, लहराता हुआ। २ चञ्चल, चपल। ३ भङ्गिविशिष्ट।

तरङ्गिन् (सं० वि०) तरङ्गोऽस्त्यस्य तरङ्ग इनि। १ तरङ्गयुक्त, जिसमें लहर हो। २ आनन्दी, मनमौजी।

तरचखी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका पौधा। यह सजावटके लिये उद्यानमें लगाया जाता है।

तरकट (हिं॰ स्त्री॰) तरकस देखो।

तरका (हिं॰ पु॰) वह माल जो किसी मौतपर मिला करता है।

तरख (हिं॰ पु॰) तर्क देखो।

तरकना (हिं॰ क्रि॰) १ ताड़न करना, डाँटना, डपटना। २ उचित-अनुचित कहना, बिगड़ना।

तरकनी (हिं॰ स्त्री॰) १ तलवेमें अँगूठेके पासकी उँगली। २ भय, डर।

तरजुमा (अ॰ पु॰) भाषान्तर, अनुवाद, उल्था।

तरट (सं॰ पु॰) चाक्रमर्द वृक्ष, चकवँड़।

तरण (सं॰ पु॰) तीर्यतेऽनेन तृ करणे ल्युट्। १ उड़प, पानी पर तैरनेवाला तख्ता, बेड़ा। २ स्वर्ग (क्ली॰) भावे ल्युट्। ३ ग्रहनक्षत्रका देशान्तर गमन, बेड़ा पर चढ़ कर दूसरा देश जाना। ४ पारगमन, नदी आदिको पार जानेका काम। ५ निस्तार, उद्धार। ६ उत्तरण।

तरणतारण—१ पञ्जाबके अमृतसर जिलेके दक्षिण भागमें अवस्थित एक तहसील। यह अक्षा॰ ३१ १° तथा ३१ ३° और देशा॰ ७४ ३१ तथा ७५ १० पू॰में अवस्थित है। इस तहसीलमें सब जगह बड़े बड़े मैदान हैं और इसके अधिकांश स्थानमें ही खेती होती है। क्षेत्र ५८७ वर्गमील है। इसमें शहर और ग्राम मिला कर कुल ३३० लगते हैं। यहाँ हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई इत्यादि विभिन्न धर्मावलम्बियोंका वास है। मुसलमानोंकी संख्या सबसे अधिक है। लोकसंख्या प्रायः २२६५०८ है।

इस तहसीलमें गेहूँ, जौ, ज्वार, रूई, चना, छुहारी ईख, उड़द तथा तरह तरहकी शाक सब्जी उत्पन्न होती है। यहाँकी वार्षिक आय प्रायः २८६५०७) रु॰की है। इस तहसीलमें एक फौजदारी और दो दीवानी अदालत हैं। एक तहसीलदार और एक मुन्सिफ विचारकार्य करते हैं। यहाँ ३ थाने हैं, जिनमें बहुतसे कान्सटेबल और चौकीदार रहते हैं।

२ उक्त तहसीलका प्रधान शहर। यह अक्षा॰ ३१ २७ उ॰ और देशा॰ ७४ ५६ पू॰ पर अमृतसर शहरसे १२ कोस दक्षिणमें शतद्रु और विपाशा नदीके संगम स्थल पर अवस्थित है। इस शहरमें म्युनिसपालिटीका बन्दोबस्त है। हिन्दू, मुसलमान, सिख प्रभृति धर्मके सभी मनुष्य यहाँ वास करते हैं।

गुरु रामदासजीके पुत्र गुरु अर्जुनजीने यह नगर स्थापित किया है। इसके सिवा ये नगरके मध्य एक सुन्दर तालाब और उसके बगलमें एक सिख धर्ममन्दिर निर्माण कर गये हैं। प्रवाद है कि जो कुष्ठरोगी तैर कर यह तालाब पार हो जायँ, वह उसी समय आरोग्य हो जाता है। इसी कारण शहरका नाम तरणतारण रखा गया है। तालाबके पार्श्वस्थित मन्दिरकी प्रति महाराज रणजितसिंहको अगाध भक्ति थी। उन्होंने बहुत रुपये खर्च करके मन्दिरको अलङ्कृत तथा इसका ऊपरी भाग सोनेसे मढ़वा दिया था। उक्त सरोवरके दोनों किनारे नवनिहालसिंहके बनाये हुए ऊँचे स्तम्भ विद्यमान हैं। यह शहर मध्याह्नको राजधानी कह कर प्रसिद्ध है। तथा वारिकुण्डका माहात्म्य भी है। ८ इस स्थानको इतिहासमें सिक्खोंका दुर्ग बतलाया है। अब भी यहाँके [illegible] बहुत [illegible] करती है।

अमृतसरके साथ इस शहरका वाणिज्यसम्बन्ध है। यहाँ लोहेके अच्छे अच्छे बरतन तैयार होते हैं।

यहाँसे थोड़ी ही दूर पर वारि-कुण्डको [illegible] शाखा है। इस शाखासे एक नाला हो कर तरणतारणके सरोवरमें जल गिरता है। यह नाला भौंदके राजासे बनाया गया है। शहरमें विचारालय, पुलिस, थाना, सराय, चिकित्सालय, डाकघर और विद्यालय है। अनाथ घर और पादरीविभागकी तरफ दरिद्र कुष्ठ रोगियोंके लिये भी कुष्ठाश्रम प्रतिष्ठित हुआ है, यह शहरके बाहरमें पड़ता है। शहरके समीप भी बहुतसे कुष्ठरोगियोंका वास है। यहाँके अधिवासियोंका कहना है, कि गुरु अर्जुनजी इन रोगोंके आदिपुरुष हैं।

तरणि (सं॰ पु॰) तीर्यतेऽनेन तृ-अनि [illegible]। उण् २।१०२। १ सूर्य। २ भेलक, बेड़ा। ३ अर्कवृक्ष, मदार का पेड़। ४ किरण, रोशनी। ५ ताम्र, ताँबा। (स्त्री॰) ६ नौका, नाव। ७ घृतकुमारी, घीकुआर, ग्वारपाठा। ८ महाज्योतिष्मती। (त्रि॰) ९ तारक, उद्धार करनेवाला। १० शीघ्रगन्ता, जल्दी जानेवाला। ११ जो मनुको उल्लंघन कर वर्त्तमान थी।

तरणिकुमार (सं० पु०) तरणिसुत देखो।

तरणिजा (सं० स्त्री०) १ सूर्यकी कन्या, यमुना। २ छन्दोविशेष, एक वर्णवृत्तका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें एक नगण और एक गुरु होता है।

तरणि-तनय (सं० पु०) तरणिः सूर्यस्य तनयः ६-तत्। सूर्यके पुत्र, यम, शनि, कर्ण।

तरणितनुजा (सं० स्त्री०) सूर्यको कन्या, यमुना।

तरणिधन्य (सं० पु०) शिव, महादेव।

तरणिपेटक (सं० पु०) तरणिः पेटक इव। काष्ठाम्बु-वाहिनी, काठका वह पात्र जिससे नावका पानी वाहर फेंका जाता है।

तरणिपोत (सं० पु०) तरणिः पोत इव। तरणिपेटक देखो।

तरणिमणि (सं० पु०) तरणिप्रियः मणिः। सूर्यप्रिय माणिक्य।

तरणिरत्न (सं० क्ली०) तरणिः सूर्यः तत् प्रियं रत्नं, मध्य-पदलो० कर्मधा०। पद्मराग मणि।

तरणिसुत (सं० पु०) तरणितनय देखो।

तरणी (सं० स्त्री०) तरणि ङीप्। १ नौका, नाव। २ पद्मचारिणी लता, स्थलकमलिनी। ३ घृतकुमारी घीकु-आर, ग्वारपाठा। ४ कुब्जकन्तीवृक्ष।

तरणीसेन (सं० पु० विभीषणके पुत्र और रामजीके एक भक्तका नाम। विभीषणके कहनेसे रामचन्द्रजीने इसे लड़ाईमें मारा था। (कृत्तिवासीरामा) वाल्मिकी रामायणमें इस तरणिसेनकी कथाका कुछ भी उल्लेख नहीं है।

तरणीय (सं० त्रि०) तृ-अनीयर्। तरणयोग्य, पार होने काबिल।

तरणीवल्ली (सं० स्त्री०) कण्टकशतपुत्रीपुष्पवृक्ष, एक प्रकारका गुलावका पौधा

तरण्ड (सं० पु०-क्ली०) तरति प्लवते तृ वाहुलकात् अण्डच्। १ मछली मारनेकी डोरीमें बँधी हुई छोटी लकडी। २ प्लव, नाव खेनेका डाँडा। ३ नौका, नाव। ४ कुम्भतुम्बी, केलेके पत्तेका वेड़ा। ५ देशविशेष, एक देशका नाम।

तरण्डक (सं० क्ली०) तरण्ड संज्ञायां कन्। १ तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम। तीर्थ देखो। २ वडिशसूत्रबद्ध लघु-काष्ठभेद मछली मारनेको डोरीमें बँधी हुई छोटी [illegible]ी।

तरण्डपादा (सं० स्त्री०) तरण्डः प्लवनशीलः पादः प्रायेन तुरीयांशो यस्याः, नञ्ङीो०। नौका, नाव।

तरण्डी (सं० स्त्री०) तरत्यनया तरण्ड गौरा० ङीष्। नौका, नाव।

तरतम (सं० त्रि०) तरेति तमेति प्रत्ययार्थौ वध्यतया अस्त्यत्र अच्। न्यूनाधिक, थोड़ा-बहुत।

तरतीब (अ० स्त्री०) क्रम, सिलसिला।

तरत्सम (सं० त्रि०) तरत् समित्यादि ऋचः सन्त्यत्र। इति अच्। पावमान सूक्तान्तर्गत एक सूक्तका नाम।

तरत्समन्दीय देखो।

तरत्समन्दीय (सं० क्ली०) पावमान सूक्तान्तर्गत एक सूक्तका नाम। मनुष्य यदि अप्रतिग्राह्य अर्थादि ग्रहण करे अथवा विगर्हित (निषिद्ध) अन्न भक्षण करे तो यह सूक्त तीन दिन जप करनेसे वह पापसे विमुक्त हो जाता है।

"प्रतिगृह्याप्रतिग्राह्यं भुक्त्वा चान्नं विगर्हितम्।
जपंस्तरत्समन्दीयं पूयते मानवस्त्र्यहात्॥"
(मनु ११।२५४)

तरद (सं० स्त्री०) तरत्यनेन तृ वाहुलकादटि। १ प्लव, बेड़ा। तृ कर्त्तरि अदि। २ कारण्डवपक्षी, एक प्रकारका बतक।

तरदी (सं० स्त्री०) तरेण तरणेन दीयते खण्ड्यते दो खण्डने घञर्थे क गौरा० ङीष्। कण्टकयुक्त वृक्ष, एक प्रकारका कटीला पेड़। इसके संस्कृत पर्याय-तारदी, तीव्रा, खर्वुरा और रक्तवीजका है। इसका गुण तिक्त, मधुर, गुरु, बल्य और कफनाशक है।

तरदीद (अ० स्त्री०) १ काटने या रद करनेकी क्रिया, मंसूखी। २ प्रत्युत्तर, खंडन।

तरद्दुद (अ० पु०) चिन्ता, फिक्र, सोच।

तरद्दटी (सं० स्त्री०) पक्वान्नभेद, एक प्रकारका पकवान। इसको प्रस्तुत प्रणाली—घी और दहीके साथ माड़े हुए वतासा मिला कर गोली वनाते हैं। वाद घीमें धीमी आँचसे उसे पका कर कपूर और मिर्चका चूर्ण मिला-देनेसे तरद्दटी प्रस्तुत होती है। इसका गुण बल्य, पुष्टि-कर, हृद्य, पित्त और वायुनाशक, स्निग्ध तथा कफ-कारक है।

तरईषम (स० पु०) शत्रुके आक्रमणकारी शब्द।

तरतार (हि० पु०) निस्तार, मोक्ष, मुक्ति।

तरनतारन (हि० पु० १ मोक्ष, उद्धार। २ वह जो भव भावरसे पार करता हो।

तरना (हि० क्रि०) १ पार करना। २ मुक्त होना, सद्गति प्राप्त करना।

तरनाग (हि० पु०) एक पक्षीका नाम।

तरनाल (हि० पु०) पालकी कोठीके भरनमें बांधनेका रस्सा।

तरनि (हि० स्त्री०) तरणि देखो।

तरनिजा (हि० स्त्री०) तरणिजा देखो।

तरनी (हि० स्त्री०) १ नौका नाव। २ मिठाईका थाल या चौकी रखनेका छोटा मोढ़ा।

तरन्त (स० पु०) तरतीति तृ-झच्। गृह्‌णादिभ्यश्च। उण् ३।१२८। १ समुद्र। २ प्लव, बेड़ा। ३ भेक, मेढ़क। ४ राक्षस। ५ पक्षिविशेष, एक चिड़ियाका नाम।

तरन्ती (स० स्त्री०) तरन्त गौरा० ङीष्। नौका नाव।

तरन्तुक (स० क्लो०) कुरुक्षेत्रका द्वारपाल, कुरुक्षेत्र अन्तर्गत एक स्थानका नाम।

तरपण्य (स० क्लो०) तृ भावे अप तरस्तारस्तस्य पण्यं। पानर उतराई नदी पार जानेका महसूल।

तरपन (हि० पु०) १ दक्षिणा,सुभीता। २ आराम चैन सुख।

तरपन (हि० पु०) तर्पण देखो।

तरपना (हि० क्रि०) तड़पना देखो।

तरपर (हि० क्रि०) १ नीचे ऊपर। २ क्रमानुसार, एकके पीछे दूसरा।

तरपू (हि० पु०) मनमार और पंजकवादके पहाड़ोंमें मिलनेवाला एक प्रकारका पेड़।

तरफ (अ० स्त्री०) १ दिशा ओर। २ पार्श्व किनारा बगल। ३ पक्ष, पासदारी।

तरफ—बङ्गालके चट्टग्राम विभागका एक प्रधान जमीन विभाग। इस विभागसे अधिक राजस्व वसूल होता है। १७५८ ई०में गवर्मेण्ट कौन्सिलने इस विभागके जमीन्दारोंका स्वत्व स्थिर कर दिया। जमींदारोंका अधिकार नष्टकर अलग बन्दोबस्त किया गया। १७६४ ई०को

सरोवके अनुसार जो १८८० ई०को तरफमें दशसाला बन्दोबस्त हुआ और बाद १८८६ ई०में यही दशसाला बन्दोबस्त चिरस्थायी बन्दोबस्तमें परिणत हो गया। १७६४ ई०में जिस जमीनका बन्दोबस्त हुआ था केवल उसी जमीनका खजाना खास गवर्मेण्टने छोड़ दिया। किन्तु तरफ-मालिकगण उस बन्दोबस्तके अनुसार बहुतसी जमीन अपने अधिकारमें करने लगे। चट्टग्राममें सबसे पहले बन्दोबस्तकारी रिकेटस साहबने इन अधिकारको जोरो अधिकारके ऐसा वर्णन किया है।

रिकेटस साहब क्रमेव द्वारा बहुतसी जमीन निकाल कर उसके ऊपर कर निर्धारित किया। १७८० ई०में महालकी संख्या ११८१ थी किन्तु १८४८ ई०के बन्दोबस्तके बाद उसकी संख्या १११० तथा १८१२ ई०में ११०८ हो गई। इस समय ४४१११० रु० राजस्व वसूल होते देखा गया है। किन्तु बहुत जमीन नदीके किनारे रहने अथवा और दूसरे दूसरे कारणोंसे राजस्व कम गया है।

तरफका आयतन छोटा है। यह एक ग्रामके अधीन भिन्न भिन्न लोगोंके अथवा एक ही लोगके विभिन्न स्थानोंमें छोटे छोटे खण्डोंमें विभक्त है। तरफको ऐसी उत्पत्ति और आकृतिके विषयमें बहुतोंका भिन्न भिन्न धारणा है। कोई कोई कहते हैं कि हुमायू और मिरजाके इरादा आक्रमणके कारण गोडअधिवासीगण छोड़कर और चट्टग्रामके बहुसंख्य प्रदेशमें आ कर वास करने लगी। [illegible]ईसाई मुल्लाह अथवा उनके बाद जमीं दारोंको अधीनता स्वीकार न करके वे अपने खुशनाम अवस्थामें रहते थे। वे ही मुसलमान चट्टग्राममें तरफदार नामसे परिचित हैं। मोड़ अधिवासी भिन्न भिन्न दलमें चट्टग्राम आये थे। वही विस्तार जमीन देख कर वे अपने इच्छानुसार एक एक खण्डमें वास करने लगे। अर्थात अधिकारकर्म अपने बलोमूल लोगोंने जितनी जितनी जमीन पर अधिकार कर ली। बाद गुप्त भूमाग चापाव कौन्सिलको आज्ञाके अनुसार १६६६में १७६० ई०के अन्दर बहुतसे विदेशियोंके अधिकारमें आ गया। जरा जब ममत जो वह जमीन अधिकारके अधीन थी, तब भी पहले उसको जितनी तरफमें कर ली। किसी दूसरे

तरमीम (अ० स्त्री०) संशोधन, दुरुस्ती ।

तरम्बुज (सं० क्लो०) तरं तरलं अम्बुवत् जायते यत्र जन बहुलवचनात् ड तरबूज देखो ।

तरल (सं० पु०) तृ-कालच । वृषादिभ्यश्चित् । उण् १।१०८। इति कल प्रत्ययश्चित् । १ हारके बीचका मणि । २ हार । ३ तल, पेंदा । (त्रि०) ४ चंचल चञ्चल, । ५ कामुक, इच्छुक । ६ विस्तीर्ण, फैला हुआ । ७ भास्वर, चमकोला । ८ मध्यशून्यद्रव्य, खोखला, पोला । ९ द्रवीभूत पदार्थ, पानीको तरह बहनेवाला । (पु०) १० जनपदविशेष, एक देशका नाम । ११ उस देशका रहनेवाला । १२ क्षणभङ्गुर, अनित्य । १३ हीरकरत्न हीरा । १४ लौह, लोहा । १५ घोटक, घोड़ा । १६ मद्य विशेष, एक प्रकारको शराब । १७ मधुमक्खी ।

तरलता (सं० स्त्री०) तरल भावे तल् स्त्रियां टाप् । १ तरलत्व । २ चञ्चलता ।

तरलनयन (सं० पु०) छन्दोविशेष, एक वर्णवृत्तका नाम । इसके प्रत्येक चरणमें चार नगण होते हैं ।

तरलनयनी (सं० स्त्री०) तरलं नयनं यस्याः, बहुव्री० । १ चञ्चलाक्षि, चंचल आंख । २ छन्दोभेद, एक प्रकारका छन्द ।

तरलभाव (सं० पु०) १ पतलापन । २ चञ्चलता चपलता ।

तरललोचन (सं० त्रि०) तरलं लोचनं यस्य, बहुव्री० । १ चञ्चल नेत्र, जिसकी आंखें चञ्चल हों । (क्लो०) तरलं लोचनं, कर्मधा० । २ चञ्चलनेत्र, चलायमान आंख ।

तरललोचना (सं० स्त्री०) तरलं लोचनं यस्याः, बहुव्री० । चञ्चलनयना स्त्री, वह औरत जिसकी आंखें चञ्चल हों ।

तरला (सं० स्त्री०) तरल-टाप् । १ यवागू, जौका मांड़ । २ सुरा, मदिरा, शराब । ३ काञ्जिक । ४ मधुमक्षिका, शहदकी मक्खी ।

तरला (हिं० पु०) छाजनके नीचेका बांस ।

तरलाई (हिं० स्त्री०) १ चञ्चलता, चपलता । २ द्रवत्व ।

तरलित (सं० त्रि०) तरलमस्य सञ्जातं तारकादित्वादितच्, यद्वा तरल इव चरति तरलं करोति तरल क्विप् णिच् क्त । कम्पित, कंपता हुआ, थर थराता हुआ । इसके संस्कृत पर्याय—प्रेङ्खोलित, लुलित, प्रेङ्खित, द्रुत चलित, कम्पित, धुत, वेल्लित और आन्दोलित हैं ।

तरवट (सं० क्लो०) वृक्षभेद, एक पेड़का नाम । (Cassia auriculata)

तरवड़ी (हिं० स्त्री०) छोटी तराजूका पलड़ा ।

तरवन (हिं० पु०) १ एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है, तरकी । २ कर्णफूल ।

तरवर (हिं० पु०) १ बड़ा वृक्ष । २ मध्यभारत और दक्षिणमें होनेवाला एक प्रकारका बड़ा पेड़ । इसके छिलकेसे चमड़ा सिझाया जाता है ।

तरवांसी (हिं० स्त्री०) जुएके नीचेकी लकड़ी सचैरी ।

तरवाई मिवाई (हिं० स्त्री०) पहाड़ और घाटी, ऊंची जमीन और नीची जमीन ।

तरवाना (हिं० क्रि०) १ वैलोंका लँगड़ाना । २ तारनेको प्रेरणा करना ।

तरवारि (सं० पु०) तरं समागतविपक्षबलं वारयति वृ णिच् इन् । खड्गभेद, तलवार । खड्ग देखो ।

तरस् (सं० क्लो०) तृ-असुन् । १ बल । २ वेग । ३ तीर तट । ४ वानर । ५ रोग ।

तरस (सं० क्लो०) तृ बाहुलकात् असच् । १ मांस । २ दया, करुणा, रहम । (त्रि०) तरस् अस्त्यर्थे अच् । ३ वेगयुक्त, तेज ।

तरसत् (सं० पु० स्त्री०) तरस इव आचरति तरस् क्विप् शतृ । मृगभेद, एक प्रकारका हिरण ।

तरसना (हिं० क्रि०) अभावका दुःख सहना ।

तरसान (सं० पु०) तरत्यनेन तृ-आनच् सुट् च । नौका, नाव ।

तरसाना (हिं० क्रि०) १ अभावका दुःख देना । २ व्यर्थ ललचाना ।

तरस्थान (सं० क्लो०) तराय अवतरणाय यत् स्थानं तरस्य स्थानं वा । १ घट्ट, घाट । २ वह स्थान जहां उतराई ली जाती है ।

तरस्वत् (सं० त्रि०) तरोबलं वेगो वा अस्त्यस्येति मतुप् मस्य व. । १ शूर, वीर, बहादुर । २ वेगयुक्त, तेज । ३ चतुर्थ मनुके एक पुत्रका नाम ।

तरस्विन् (सं० त्रि०) तरो वेगः बलं वास्त्यस्य तरस-

विनि ; अस् मायामेधास्रजो विनिः । पा ५।२।१२१ । १ वेगयुक्त, निपुण । २ शूर, वीर, बहादुर । (पु०) ३ वायु । ४ बाज़ ।

तरह (अ० स्त्री०) १ प्रकार, भाँति, किस्म । २ रचना प्रकार, ढाँचा, बनावट । ३ प्रणाली, रीति तर्ज़ । ४ युक्ति उपाय । ५ अवस्था, हाल, दशा ।

तरहटी (हि० स्त्री०) १ नीची भूमि । २ पहाड़की तराई ।

तरहदार (फा० वि०) १ जिसकी बनावट अच्छी हो । २ शौकीन मज़ाक़वाला ।

तरहदारी (फा० स्त्री०) मज़ाक़का ढब ।

तरहा (हि० पु०) १ एक प्रकारकी नाव जो प्रायः कुएँ खोदनेमें आती है । २ एक कपड़ा । इस पर नहीं पैदा कर बड़ा ढालनेका ढाँचा बनाया जाता है ।

तरहुवान—बुन्देलखण्डमें बाँदा ज़िलेका एक प्राचीन नगर। यह बाँदा नगरसे ४२ मील पूर्वमें पयोष्णी नदीके निकट अवस्थित है । यह नगर छोटे छोटे खण्ड होता जा रहा है । यहाँ एक दुर्ग है, वह भी ध्वंसावस्थामें पड़ा है । कहा जाता है कि प्रायः २८० वर्ष पहले पन्नाके राजा छत्रसालने इस दुर्गका निर्माण किया था । इस दुर्गमें १ मील लम्बा एक सुरङ्ग था । सुरङ्ग हो कर पानी लाने जाते थे । अभी यह रास्ता सम्पूर्णरूपसे बन्द कर दिया गया है । ६ हिन्दूमन्दिर और ५ मसजिद अब भी विद्यमान हैं । राजा छत्रसालके बाद पेशवाओंने नवाब की उपाधि तथा तरहुवान राज्य प्राप्त कर यहाँ सुख्य स्थान उपनिवेश स्थापन किया था । पेशवा रघुनाथके पुत्र अमृतराव यहाँ वास करते थे । १८०१ ई०में वृटिशगवर्मेण्टने उन्हें तथा उनके पुत्रको वार्षिक ७०००००) रु० की वृत्ति स्वीकार की और वे तरहुवानमें रहने लगे । यहाँ उन्होंने एक छोटी जागीर भी पाई थी । अमृतराव के पुत्र विनायकरावकी मृत्यु होने पर वृटिश-गवर्मेण्टने यह वृत्ति बन्द कर दी । इस पर उनके दो दत्तक पुत्र नारायणराव तथा माधवराव सिपाही-विद्रोहियोंके साथ मिल गये । नारायणराव १८६० ई०को बन्दी अवस्थामें प्राणत्याग किया । माधवरावका दोष क्षमा कर वृटिश-गवर्मेण्टने उन्हें ३०००) रु०की वृत्ति स्वीकार की ।

इस शहरमें एक विद्यालय और एक बाज़ार है । यहाँके पथ, घाट प्रभृतिको परिष्कार रखने तथा पुलिसका खर्च चलानेके लिये एक प्रकारका कर ग्रहण किया जाता है ।

तरहेल (हि० वि०) १ अधीन । २ पराजित, जीता हुआ ।

तराँव—बुन्देलखण्डमें पोलिटिकल एजेन्सीके अधीन एक चौबे जागीर । भूपरिमाण २६ वर्गमील है । १८१० ई०में कालिञ्जरके रामकृष्ण चौबेका राज्य ५ भागोंमें विभक्त हुआ जिनमेंसे तराँव उनके चौथे पुत्र मनोहरके लड़के गयाप्रसाद चौबेके हाथ लगा । वर्तमान जागीर दारका नाम चौबे ब्रजमोपाल है । यहाँकी लोकसंख्या प्रायः ११०८ है । इसमें कुल १६ ग्राम लगते हैं । राजस्व १०००) रु०का है ।

तराई (हि० स्त्री०) १ पहाड़के नीचेका वह मैदान जहाँ तरी रहती है पहाड़के नीचेकी भूमि । २ पहाड़की घाटी । ३ मूँजके सूत जो छाजनमें खपड़ोंके नीचे दिए जाते हैं ।

तराई—१ हिमालय पहाड़के नीचेकी भूमि या उपत्यका । यह सब जगह एकसी नहीं है, किसी जगह १० और किसी जगह १० मील चौड़ी देखी गई है । यह एक प्रकाण्ड वनभूमि है । पञ्जाबसे आसाम तक यह हिमालयके निम्नभागमें विस्तृत है । इस वन भागमें शाल और शीशमके वृक्ष बहुत पाये जाते हैं । कोसी और काली नदीमें कहीं कहीं कल ढक पत्थर पाये जाते हैं ।

नेपालकी तराईको मोरङ्ग कहते हैं । तराईकी मट्टीमें बालू, कङ्कड़ और पत्थर मिले रहते हैं पर्वतके निकटवर्ती भूभागमें बड़े बड़े पत्थर देखे गये हैं । शिविर पर्वतसे २० मील दक्षिण तकको ज़मीन कङ्कड़मय है ।

इस प्रदेशमें आवुल नामक एक प्रकारका रोग देखा जाता है । वर्षमें ८।१० मास तक यह व्याधि अत्यन्त प्रबल रहती है । इस समय कोई भी तराई भूमि पार नहीं कर सकता है । यह तराई प्रायः पञ्जाबसे उत्तर में ब्रह्मपुत्र नदी तक ६० मील विस्तृत है । यहाँ बहुतसे अच्छे अच्छे पेड़ पाये जाते हैं । यदि यहाँ अधिक लोग यदि कोई यूरोपीय इस प्रदेशमें किसी समय निद्रा अवस्थामें रहे तो यह निश्चय है कि मानो मृत्युमुख पतित होगा । दिसम्बरमासमें तापमानयन्त्रका पारा ७० फैरं० और नवम्बरमें ७५ से ८० पर्यन्त चढ़ता है । नवाब राज्यके अधीन

तराई-भूमिमें बहुत वृक्ष लगते हैं, जिनसे नेपाल राज्यको यथेष्ट आमदनी होती है। व्यवसायीगण इस प्रदेशसे बहुमूल्य वृक्ष, गजदन्त तथा कई तरहके चमड़े बूढ़ी-गण्डक हो कर कलकत्तेमें लाते हैं। १८१५ ई०में युद्धके बाद नेपालके राजाने कुमायूँ और अन्य कई एक पार्वत्य प्रदेशोंके साथ साथ तराईके भी कई एक अंश वृटिश गवर्मेण्टको दिये हैं। नेपाली लोग अयोध्या और बरेलीके उत्तर अंगरेजाधिकृत प्रदेशको लूटते थे। लॉर्ड मिण्टोके नेपाल-दरबारमें यह बात सूचित करने पर भी कोई फल न निकला। लॉर्ड मयराके शासन कालमें नेपालियोंका अत्याचार और भी बढ़ जानेसे उन्होंने इस विषयका प्रतिविधान करनेकी इच्छा की। उनके आदेशसे भूटवाल नगर अधिकृत हुआ। उस समय नेपाल दरबारमें दो पक्ष थे। अमरसिंह दूसरे पक्षके युद्धमें शामिल थे, किन्तु दूसरे पक्षने सन्धि करने की राय दी। जो कुछ हो नेपाल गवर्मेण्टने अंगरेज गवर्मेण्टके विरुद्ध लड़ाई ठान दी। युद्धमें अंगरेजोंकी जीत हुई। नेपालीगण सन्धि करनेकी चेष्टा करने लगे। बामसाने नेपाल-पक्षसे अंगरेजपक्षीय गार्डनर साहबको खबर दी, कि नेपालदरबार काली नदीका पश्चिम अंश-स्थित भूभाग अंगरेज गवर्मेण्टको देनेमें प्रस्तुत है, किन्तु वे तराईप्रदेश छोड़ नहीं सकते गार्डनरने इसके जवाब-में कहला भेजा, कि बिना तराई-प्रदेशको लिये वृटिश-गवर्मेण्ट सन्धि करनेमें राजी न होगी। इस पर बामसाने कहा, कि पार्वत्यप्रदेशमें केवल तराई ही नेपाल राज्यकी लाभजनक सम्पत्ति है, इसको छोड़ देनेसे पार्वत्य प्रदेश-में उनकी बहुत क्षति होती है। अंगरेज गवर्मेण्ट यदि इस प्रदेशको अधिकारमें लानेकी एकान्त चेष्टा करती, तो नेपालमें पुनः समरानल प्रज्वलित हो उठता। पहले जो लड़ाई हुई थी, उसमें नेपालके सब मनुष्योंने योग न दिया था। किन्तु जब यह मालूम हो जाता कि तराईके लिये लड़ाई होती है, तो नेपालके छोटेसे बड़े सभी व्यक्ति ईर्षा और अन्तर्कलह परित्याग कर अंगरेजों-के विरुद्ध तलवार धारण करनेमें तनिक भी विलम्ब न करते। ऐसा होनेसे फल क्या होता, वह कहा नहीं जा सकता है। वृटिश गवर्मेण्टको भी मालूम हो गया, कि गोरखाली सैन्यसामन्तगण सभी एकस्वरसे तराई छोड़ देनेका प्रतिकूल मत देते हैं। गार्डनर साहबने कहा कि गवर्नर जेनरल इस विषयमें विचार करेंगे। तराई-प्रदेश कुछ काल तक अंगरेजके अधिकारमें था। उस समय उन्होंने देखा, कि इस प्रदेशको जलवायु अत्यन्त अहितकर है पर अधिवासियोंका सम्पूर्ण आयत्ताधीन रखना भी कष्टकर है। इस कारण इस प्रदेशको अधि-कारमें लानेका गवर्नर जेनरलको वैसी इच्छा न थी। किन्तु विपक्षियोंको भय दिखानेके लिये उन्होंने सैन्य सजानेका आदेश दिया। इधर गोरखालोगण बरपर्सा (मकवानपुर), विजपुर, महोतरी सप्तोतरो (मोरङ्ग) तथा पर्वतके नीचेकी भूमि छोड़ कर तराईके अवशिष्ट अंश वृटिश गवर्मेण्टको अर्पण करनेमें उद्यत हुए। २री दिसम्बरको गजराजमिश्रने अंगरेजपक्षीय कर्नल ब्राडसके साथ सन्धि नियम स्थिर किया। इस सन्धिके अनुसार अंगरेज गवर्मेण्टने काली नदीके पश्चिम भागमें पार्वत्यप्रदेश और मेचीका पूर्वीय प्रदेश पाया। १५ दिनके मध्य नेपाल राजाको सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करना पड़ेगा, यह स्थिर किया गया। किन्तु इसी बीच अमर-सिंह दूसरे पक्षके दरबारमें प्रधान हो गये, अतः सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर न हुआ। दोनों पक्षमें पुनः नवीन उत्सा-हके साथ युद्धका आयोजन होने लगा। एक सामान्य लड़ाईके बाद दोनों पक्षने सन्धिपत्र पर स्वाक्षर किया। २री दिसम्बरको गुरु गजराजमिश्रने सन्धिकी जो शर्तें लिखित की थीं, प्रायः वही शर्तें कायम रहीं, किन्तु अंगरेज गवर्मेण्टने तराईके जो अंश पाये थे, उनका अधिकांश नेपाल दरबारको लौटा दिया गया। अयो-ध्याके प्रान्तवर्ती तराईका अंश अयोध्याके नवाबको तथा मेची और तिस्ता नदीका मध्यवर्ती छोटा अंश सिकिमके राजाको मिला।

शारदा नदीके समीपवर्ती तराईभूमि जङ्गलसे परि-पूर्ण है। इस प्रदेशमें आज तक कोई उपयुक्त फसल नहीं हुई है। शीतकालमें कई मास इस प्रदेशके प्रान्तर-में सर्वे यो इत्यादि घास खाते हैं। किन्तु यहाँ बाघका डर हमेशा बना रहता है। पहरूके रहते भी बाघ असंख्य गाय भैंस-इत्यादिका प्राणनाश कर डालते हैं।

दिनके समयमें भी बाघ गृहपालित पशुओं पर आक्रमण करनेमें डरते नहीं। इस जीव बाघ इतने भयानक होते हैं कि सवेरे चरानेवालेको इन्हें बाधा देनेका साहस नहीं होता। इस प्रदेशमें बहुतसे झील और दलदल हैं, जो तरह तरहकी घासोंसे आच्छादित हैं। जिन दलदलोंमें घास इत्यादि बहुत तथा घनी रहती है, उस स्थानमें गैंडा पाया जाता है।

२ युक्तप्रदेशके नैनीताल जिलेके अन्तर्गत सब-डिविजन या संयुक्तके अधीन एक जिला। यह अक्षा० २८ ४१ और २८ २५ उ० तथा देशा० ७८ ५ और ८० ५ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ७०५ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ११८३१२ है। इसमें कुल ४०४ ग्राम लगते हैं। इसके उत्तरमें कुमायूं जिला, पूर्वमें नेपाल और पिलिभित जिला, दक्षिणमें बरेली मुरादाबाद और रामपुर राज्य तथा पश्चिममें बिजनौर है। जिलेका प्रधान शहर काशीपुर है, किन्तु ग्रीष्मकालमें जिलेके सर्वप्रधान युरोपीय कर्मचारी नैनीतालमें जा कर रहते हैं। वैशाखसे लगा कर कार्तिक मास तक नैनीताल तराईके प्रधान शहरमें परिणत होता है।

तराई जिला हिमालयके नीचे पूर्व और पश्चिमकी ओर प्रायः ८० मील विस्तृत है। इसकी चौड़ाई लगभग १२ मील होगी। कुमायूंके जनशून्य वनप्रदेशमें बहुतसे सोते हैं। इन सोतोंका जल भिन्न भिन्न दिशाओंसे एकत्र हो कर नदीके रूपमें तराई जिलेके सब स्थानोंमें प्रवाहित होता है। इस जिलेके दक्षिण पूर्व कोणमें प्रति मीलमें १२ फुट ढालू है। उक्त नदियोंका किनारा असमान है तथा नदीगर्भस्थ स्तर भी कीचड़मय है। अब सब प्रान्तरके ऊपर हो कर वे नदियां बहती हैं। शिवालक पहाड़श्रेणीमें जो नदियां निकली हैं, उनमेंसे अन्तिम नदी शारदा नदीके साथ मिलती है। इस जिलेकी देवहा नदी ही सबसे बड़ी है। पिलिभितके निकट नदी स्थानको छोड़ कर इस नदीमें नाव चलती जाती है। सूखी नदी वर्षाकालके बाद ही सूख जाती है। किच्छा नदीका स्रोत बहुत प्रबल है। कोसी नदी काशीपुर पर मनिमें बहती है। किच्छा और कोसी नदीके उत्पत्ति स्थानमें एक बड़ा झील और दबका नदी भिन्न भिन्न दिशाओंमें चली गई हैं। सब नदियां अन्तको रामगङ्गामें मिली हैं।

काले बाघ, लाल चिताबाघ, सूअर, तरह तरहके हरिण इत्यादि जङ्गली जन्तु इस जिलेमें बहुत देखे जाते हैं।

बहुत प्राचीन कालसे तराई जिला नैपालराज्यके शासनाधीन था। रोहिल्लाओंने कई बार अधिवासियोंको अत्यन्त कष्ट दिया था। सम्राट् अकबरके राजत्वकालमें इस प्रदेशकी आय ८ लाख रुपयेकी थी और यह ८४ कोस तक विस्तृत समझा जाता था। इसीसे तराईको उस समय नौलखिया और चौरासी कोस कहते थे। १७४४ ई०में इसका कर ४ लाख तथा रोहिल्लाओंके समयमें २ लाख रुपयेमें परिणत हुआ था। अब बरवाहक और मिकालोगान लोग लूट मार करने लगे, तब यह स्थान ऊजड़ तथा मनोहरोंका आश्रयस्थल हो गया। अन्तर्गतमें सार्वजन राजस्वको अवनति होने पर काशीपुरके शासनकर्ता सुयवनर देव कर निकले हो गये और पहलेमें इन्होंने अयोध्याके नवाबको तराईप्रदेश समर्पण किया। १८०२ ई०में रोहिलखण्ड अंगरेजोंके हाथ लगा, तब नन्दरामके वंशोंका अधिकार इस राज्यसे इजारदार (ठीकेदार) के तराईका आबकारी, कूप इत्यादि देखनेसे मालूम पड़ता है, कि यह प्रदेश एक समय समुन्नत था। ब्रिटिश गवर्मेण्टके अधीनमें इस प्रदेशकी अधिक उन्नति हुई है। पहले पहल गवर्मेण्टने इस प्रदेशके प्रति विशेष ध्यान न दिया था। १८५१ ई०से तराई प्रदेशमें बांध और जल सींचनेका अच्छा प्रबन्ध कर दिया गया है। १८६१ ई०में तराई जिलेकी सृष्टि हुई है तथा १८८० ई०में कुमायूं विभागके अन्तर्भुक्त हो जानेसे इसने आशातीत उन्नति लाभ किया है।

थारू और बूक्सा लोग इस प्रदेशमें सर्वदा वास करते हैं। दूसरे दूसरे अधिवासी कभी कभी तराई छोड़ कर अन्यत्र चले जाते हैं। थारू और बूक्सा अपनेको राजपूत बतलाते हैं। यहां एक प्रकारका संक्रामक रोग होता है। इस रोगसे आक्रान्त होने पर मरनेका डर अधिक बना रहता है। किन्तु यह संक्रामक रोग थारू और बूक्साका कोई अनिष्ट कर नहीं सकता है। इन

लोगोंका कहना है, कि लगातार सूअर और हरिनका मांस खानेके कारण वे इस रोगसे उद्धार पाते हैं। ज्वर और अन्यरोगसे भी यहां बहुत लोग मरते हैं। आबादी अधिक होनेके कारण यहांके अधिवासियोंकी संख्या बहुत बढ़ गई है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, जैन प्रभृति धर्मावलम्बी मनुष्य इस प्रदेशमें वास करते हैं। ब्राह्मण, कायस्थ, राजपूत, बनिया, गोसाईं, चमार, कुर्मी, कहार, माली, लोध गड़ेरी, लोहार, अहीर, भड़्गी, नाई, जाट और धोबी इत्यादिकी संख्या अधिक है।

इस जिलेमें काशीपुर और यशपुर नामके दो प्रधान शहर लगते हैं। इन्हीं दो स्थानोंमें लोकसंख्या सब जगहसे ज्यादे है।

इस जिलेकी जमीन बहुत उर्वरा है। थोड़े परिश्रमसे ही अच्छा फसल उपजती है। इस स्थानका प्रधान अन्न धान है। जौ, गेहूं, बाजरा, जुन्हरी, उरद, मरसों तीसी, ईख, रूई, तमाकू, तरबूज, अदरक, हल्दी, मिर्च, पटसन इत्यादि उत्पन्न होते हैं। इस प्रदेशकी भूमि और वायु आर्द्र है, सुतरां, अनावृष्टिके कारण उत्पन्न द्रव्योंकी विशेष क्षति नहीं होती है। किन्तु १८६८ ई०के दुर्भिक्षसे तराई जिलेके किसी किसी ग्रामवासियोंको अत्यन्त कष्ट भोगना पड़ा था।

रोहिलखण्डके जमींदारों तथा अन्यान्योंके अनेक पशु तराईप्रान्तरमें विचरण करते हैं।

शारदा नदीसे ले कर पूर्व और पश्चिमकी ओर एक रास्ता है, जो परगनेके चारों ओर गया है। राजपुर परगना हो कर मुरादाबाद और नैनीतालका रास्ता २१ मील विस्तृत है। बरेली और नैनीतालका रास्ता १३ मील लम्बा है। मुरादाबाद और रानीखेटकी रास्ता रामनगर तक चला गया है। रोहिलखण्ड और कुमायूं रेलपथ तराई जिलेके मध्य बरेली, नैनीताल रास्ताके साथ समान्तर भावमें अवस्थित है।

तराई जिलेमें एक सुपरिण्टेण्डेण्ट, उनके सहकारी और रुद्रपुरके तहसीलदार दीवानी विचार करते हैं। इन लोगोंका फौजदारी विचार करनेका भी अधिकार है। कुमायूंके कमिश्नरके निकट इनके विचारकी अपील हो सकती है। राजपुर, गदारपुर और रुद्रपुरमें एक देशीय विशिष्ट मजिष्ट्रेट रहते हैं। यह जिला काशीपुर, राजपुर, गदारपुर, रुद्रपुर, किलपुरी, नानकमाता और बिलहरी नामक परगनोंमें विभक्त है। काशीपुर और नानकमाता छोड़ कर और किसी परगनेका जमीनमें मालिकान स्वत्व नहीं है। गवर्मेण्ट ही सभी जमीनके अधिकारी हैं। इस जिलेमें पशु चुरानेका मुकदमा ही अधिक चलता है। पहले मेवाती, गुर्जर और अहीरगण इस काममें अत्यन्त लिप्त थे। इस जिलेमें ७ पुलिस स्टेशन और बहुतसे विद्यालय हैं। इस जिलेकी अनेक स्त्रियां पढ़ी लिखी हैं।

२ दार्जिलिङ्ग जिलेका एक उपविभाग। क्षेत्रफल २७१ वर्गमील है। इसमें ७१७ ग्राम लगते हैं, जिनमें हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध प्रभृति वास करते हैं। इस विभागका प्रधान शहर शिलिगुड़ी है। यह स्थान हिमालय पहाड़के नीचे अवस्थित है। शिलिगुड़ीमें उत्तरबङ्गस्टेट रेलवे और दार्जिलिङ्ग हिमालय-रेलवेकी अन्तिम सीमा है। इस विभागमें ४३ चायके बगीचे हैं।

अब यह प्रदेश वृटिश साम्राज्यभुक्त हुआ, तब उन्होंने इस प्रदेशका उत्तरांश दार्जिलिङ्ग और दक्षिणांश पुर्णियाके कलेक्टरीभुक्त करनेकी इच्छा की, किन्तु दक्षिण प्रदेशवासीने पुर्णिया कलक्टरीके अधीन होनेमें असन्तोष दिखलाया, बाद समस्त तराई विभाग दार्जिलिङ्गके अधीन कर दिया गया। लेकिन इसके पहले पुर्णियाके कलक्टरने तराईके निम्नस्थानवासी राजवंशी और मुसलमानोंके साथ तीन वर्षके लिये जमीनका कर निर्द्धारण किया था। पहले तराईसे निम्नलिखित प्रकारका राजस्व वसूल किया जाता था, (१) मेच और धिमालोंसे दा-कर, (२) निम्नतराईके बङ्गाली अधिवासियोंसे जमीनका कर, (३) तराईके निकटवर्ती बङ्गदेशके भूभागसे आगत गृहपालित पशुके विचरणके लिये पशुपालकोंसे शुल्क, (४) वनमें उत्पन्नद्रव्योंकी आय, (५) बाजारका शुल्क, (६) अर्थदण्ड, (७) गायकोंके ऊपर एक प्रकारका कर, (८) आबकारी आय। पहले दो प्रकारके करको चौधरी वसूल करते थे। इन्हें फौजदारी और दीवानी विचारका भी अधिकार था।

तराई प्रदेशमें ५४४ जोतें थीं और प्रायः १८५०२

इनके शासनमें बहुत हानि थी। प्रति वर्षके अन्तमें जोतदार लोग चौधरीसे अपनी जोतका अधिकार प्राप्त करते थे। किन्तु महालवर्ममें जोतदारोंका एक प्रकारका मुख पारम्परिक स्वत्व था।

ब्रिटिश गवर्मेण्टने प्रथम शासनकालमें चौधरीसे शासनके दोषाको और जोतदारोंका अधिकार छीन लिया गया, और जोत पांच वर्षोंके लिए ठीका दिया गया कि वे १७ रु॰ कमीशन या दस्तूरी पावेंगे।

१८८६ ई॰में तराईका आबादी पर १० वर्षके लिये पुनः बन्दोबस्त किया गया। यह बन्दोबस्त केवल जोतदारोंके साथ था। पर इस गवर्मेण्टने १८८६ जोतके ऊपर २००१९५ रु॰ कर स्थिर किया। कर निर्धारित होनेके समय गवर्मेण्टने जमीनको बिना नापे व दाखल कर अदा करनेकी आज्ञा दी।

तराज (फा॰ स्त्री॰) तौलनेका यन्त्र तुला, तखरी।

तराव—मध्यभारतके इन्दोर राज्यके अन्तर्गत नेमावरपुर जिलेके एक परगनेका सदर। यह अक्षा॰ २१ २० उ॰ और देशा॰ ७५ ५ पू॰के मध्य तथा इन्दोर शहरसे ४० कोस और कर्बन मूणामौवके तराव स्टेशनसे ८ कोस की दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ४४८० है। अकबरके समयमें यह मालवाके सूबा सारङ्गपुर सरकारके महालका सदर था और नौगांव नामसे पुकारा जाता था। पीछे इसका नाम बदल कर नौगाम तराव हो गया। यहां पासके बड़े बड़े सुन्दर ग्राम तथा प्राचीन भग्नस्तूप देखनेसे मालूम पड़ता है कि एक समय यह स्थान उन्नत दशामें था। अभी प्राचीन कीर्त्तियोंमेंसे केवल गुप्तकालीन किलेका भग्नांश रह गया है। यह नगर १८वीं शताब्दीमें होलकरके अधीन था। पद्मावतीका बनाया हुआ यहां एक सिद्धनाथजीका प्राचीन मन्दिर है। कहते हैं कि नगरके आसपास जो सुन्दर पेड़ देखे जाते हैं वे बाईजीके ही लगाये हुए हैं। अहल्याबाईने अपनी लड़की मुक्ताबाईको यशवन्त राव फणसेके साथ ब्याहा था और दहेजमें उन्हें तराव नगर दे दिया। १८४८ ई॰ तक यह नगर उन्हींके वंशधरोंके अधिकारमें रहा। पीछे राजा मालवाके चरित्र दूषित हो जानेके कारण तराव उनसे छीन लिया गया। १९०२ ई॰में यहां म्युनिसपालिटी स्थापित हुई है। यहां स्टेटका डाकघर, एक पुलिस स्टेशन एक स्कूल और एक औषधालय है।

तराना (फा॰ पु॰) १ एक प्रकारका गाना। इसका बोल इस प्रकारका होता है—दिर दिर ता दि या ना रे ति लो म् ता ना ना दे रे ता दा रे दा नि ता ना ना दे र ना ता ना ना दे रे ना ता ना ना ता ना तोम् दे र ता रे दा नी। तराना प्रत्येक रागका हो सकता है। इनमें कभी कभी सरगम और तबलेके बोल भी मिला दिये जाते हैं। २ बढ़ियां गीत।

तरान्तु (स॰ पु॰) तरति तरत्यास अन्तुरिच, पतियथोर लाव्। नौकाविशेष एक प्रकारकी नाव। इसके पर्याय कोड, बड़ल, बार्वट और वहित्र है।

तरापा (हि॰ पु॰) जलमें तैरती हुई शहतीर, बेड़ा।

तराबोर (फा॰ वि॰) आर्द्र खूब भींगा हुआ।

तरमग (हि॰ पु॰) १ छाजनमें ऊपरसे नीचे दिये जानेवाले मूंजके सूई। २ मुगदर नोचेका लकड़ी।

तरामीरा (हि॰ पु॰) उत्तरीय भारतमें होनेवाला सरसों की तरहका एक पौधा। इसके बीज जाड़ेकी फसलके साथ बोए जाते हैं और उनसे एक प्रकारका तेल निकलता है। मवेशी इसके पत्ते बड़े चावसे खाते हैं।

तरारा (हि॰ पु॰) १ उछाल, छलांग। २ किसी वस्तु पर लगातार गिरनेकी पानीकी धार।

तरालु (स॰ पु॰) तरति तरत्यास अनति पर्याप्नोति अच उच। नौकाविशेष, एक प्रकारकी नाव।

तरावट (फा॰ स्त्री॰) १ गीलापन, नमी। २ शीतलता ठण्ढक। ३ वह आहार जिससे शरीरकी गरमी शान्त होती है। ४ स्निग्धभोजन।

तराश (फा॰ स्त्री॰) काटनेका तरीका, काट। २ बना बट, रचना प्रकार।

तराशखराश (फा॰ स्त्री॰) बनावट, काट छांट।

तराशना (फा॰ क्रि॰) कतरना काटना।

तरिंदा (हि॰ पु॰) समुद्रमें किसी स्थान पर बहरके द्वारा बांधे जानेवाला एक पीपा।

तरि (स॰ स्त्री॰) तरत्यनया तॄ-इ। अच् इः। उण् ४।१३४। १ नौका नाव। २ वस्त्रादिपेटक, कपड़ोंका पिटारा। ३ कपड़ेका छोर, दामन।

तरिक (सं॰ पु॰) तराय तरणाय हितं तृ-ठन्। १ प्लव, बेड़ा। तरे तरणार्थं देयशुल्काय गौ अधिकृत इति-ठन्। २ नावको उतराई लेनेवाला। ३ मल्लाह, केवट, मांझी।

तरिका (सं॰ स्त्री॰) तरिक-टाप्। नौका, नाव।

तरिकिन् (सं॰ पु॰) तरिक-इनि। नाविक, मांझी।

तरिकेरो—१महिसुर राज्यके कदूर जिलेका उत्तरीय तालुक। यह अक्षा॰ १३° ३०´ और १३° ५४´ उ॰ तथा देशा॰ ७५° ३५´ और ७६° ८´ पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७८४७२ और क्षेत्रफल ४६८ वर्गमील है। इसमें २ शहर और २३६ ग्राम लगते हैं। तालुकके दक्षिण-पश्चिममें बाबाबुदन पहाड़ और उत्तरमें उगानो पहाड़ है। आजमपुरके समीप लोहेका कारखाना है।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा॰ १३° ४३´ उ॰ और देशा॰ ७५° ४८´ पूर्वमें अवस्थित है। लोक-संख्या लगभग १०१६४ है। इसके उत्तर-पूर्वमें काटूर नामका एक स्थान है, वहीं प्राचीन शहर था और जो १२वीं शताब्दीमें ऊयशालसे स्थापित हुआ था। १४वीं शताब्दीमें विजयनगरके राजाने इसे हस्तगत कर अपने एक प्रधानके हाथ सौंप दिया। पीछे उनके परिवारसे भी विजापुरके सुलतानने छीन लिया। अन्तमें मुगलोंने इस पर अपना पूरा अधिकार जमा कर इसे बासवपत्तन-के सरदारोंको अर्पण कर दिया, जिन्होंने १६५८ ई॰में तरिकेरीका दुर्ग और शहर स्थापित किया। १७६१ ई॰में यह हैदरअलीके अधिकारमें था। रेलके हो जानेसे पहलेसे आजकल इसकी अवस्था बहुत कुछ सुधर गई है। १८७० ई॰में यहां म्युनिसपालिटी स्थापित हुई। शहरकी आय लगभग ८८००) रु॰की है।

तरिणी (सं॰ स्त्री॰) तरन्त्यनया तरणं सत्यत्वे नास्त्यस्याः इति इनि ङीप् च। नौका, नाव।

तरित (सं॰ वि॰) उत्तीर्ण, पार किया हुआ।

तरिता (सं॰ स्त्री॰) तरन्त्यनया तरणं सत्यत्वे नास्त्यस्याः तार कादित्वात् इतच्-टाप्। १ तर्जनी उँगली। २ गञ्जन, गांजा। ३ रसोन, लहसुन।

तरित्र (सं॰ क्ली॰) तरत्यनेन तृ-इत्र। तरणसाधन नौकादि, पार होने योग्य नाव इत्यादि।

तरिया—दिनाजपुर जिलेमें बड़गांव परगनाके मध्य एक प्रसिद्ध ग्राम।

तरित्र (सं॰ पु॰) तरे नयस्य परित्राननात्। अरित्र, बल्ला जिससे नाव खेते हैं, डांड।

तरिवन (हिं॰ पु॰) १ एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रियां कानमें पहनती हैं, तरकी। २ कर्णफूल।

तरी (सं॰ स्त्री॰) तरत्यनया तृ ई। अवितृस्तृ-तन्त्रिभ्य ई। उण् ३।१५८। १ नौका, नाव। २ गदा। ३ वस्त्र-पेटक, कपड़ा रखनेका पिटारा, पेटी। ४ धूम, धुआं। ५ डोंगी, डोंगी। ६ कपड़ेका छोर, दामन।

तरी (फा॰ स्त्री॰) १ आर्द्रता, गीलापन। २ शीतलता ठंढक। ३ नीची भूमि जहां बरसातका पानी बहुत दिनों तक जमा रहता है, कछार। ४ तराई, तरहटी।

तरीका (अ॰ पु॰) १ रीति, प्रकार, ढंग। २ चाल, व्यव हार। ३ युक्ति, उपाय।

तरीयस् (सं॰ वि॰) अतिशयेन तरीता ईयसुन्-तृणो लोप। अतिशय तारक, बहुत तारनेवाला।

तरीष (सं॰ पु॰) तृ-ईषन्। कृतृभ्यामीषन्। उण् ४।२६। १ शुष्क गोमय, सूखा गोबर। २ नौका, नाव। ३ पानीमें बहनेवाला लट्ठा, बेड़ा। ४ व्यवसाय। ५ समुद्र। ६ समर्थ। ७ स्वर्ग।

तरीषन् (सं॰ पु॰) तृ-छन्दसि ईष नकारस्य नित्वं। तरण, पार होनेको क्रिया।

तरुपी (सं॰ स्त्री॰) तरीष संज्ञायां ङीप्। इन्द्रको कन्या।

तरु (सं॰ पु॰) तरति समुद्रादिकमनेनेति तृ-उ। भृमृशी-तृचरीति। उण् १।७। वृक्ष, गाछ, पेड़। (त्रि॰) २ तारक, उद्धार करनेवाला। (पु॰) ३ एक प्रकारका चोड़। इसके पेड़ खासिया पहाड़ों, चटगांव और बरमामें पाये जाते हैं। इसका गोंद सबसे अच्छा होता है। तारपीनका तेल भी इससे बहुत अच्छा निक-लता है।

तरुआ (हिं॰ पु॰) उबाले हुए धानका चावल।

तरुकूणि (सं॰ पु॰) तरौ वृक्षे कूणयति कूण-इन्। पक्षि विशेष, एक प्रकारकी चिड़िया।

तरुक्ष (सं॰ त्रि॰) तृ-बाहुलकात् उक्षन्। १ याग और

घोड़े इत्यादिको रथमें चलानेवाला। २ जो साथ घोड़े आदिको पालनेमें नियुक्त हो।

तरुखण्ड (सं॰ पु॰) तरूणां समूहः। भिक्षादिभ्योऽण्। पा ४।२।३८। इति सूत्रस्थ खण्डिकादिगणे पठितत्वात् खण्डः। वृक्षसमूह बहुतसे पेड़ोंका समूह।

तरुण (सं॰ त्रि॰) तॄ-उनन्। १ युवक, जो पीढ़ीसे उत्पन्न हो। (पु॰) २ एरण्डवृक्ष, सफेद अण्डा।

तरुणजीवन (सं॰ क्ली॰) तरोर्जीवनं, ६-तत्। वृक्षमूल, पेड़की जड़।

तरुणी (सं॰ स्त्री॰) तॄ-उनन् जो सब के वा। उणु ३।५४। १ कुब्जपुष्प, कुब्जाका फूल, मोतिया। २ कुम्भीरक, बड़ा जीरा। ३ रक्तपुनर्नवा, रेंड़का पेड़। (त्रि॰) ४ युवा जवान। ५ नूतन, नया।

तरुणक (सं॰ पु॰) तरुण-कन्। १ तरुण। २ तरुण दधि पांच दिनका दही।

तरुणज्वर (सं॰ पु॰) तरुणश्चासौ ज्वरश्चेति, कर्मधा॰। नवज्वर, वह ज्वर जो सात दिनका हो गया हो।

तरुणतरणि (सं॰ पु॰) बालसूर्य देखो।

तरुणदधि (सं॰ क्ली॰) तरुणं तरुणावस्थापन्न दधि, कर्मधा॰। पांच दिनका दही। यह दही बहुत अभिलषित है। दही पांच दिनमें अधिकका हो जानेसे वह तरुणदधि कहलाता है।

तरुणदारु (सं॰ पु॰) दन्तदारुवृक्ष, सिवारका पेड़।

तरुणपीतिका (सं॰ स्त्री॰) मनःशिला, मनसिल।

तरुणप्रभसूरि—ये चन्द्रप्रभके शिष्य जिनकुशलसूरिके शिष्य थे। इन्होंने जिनकुशलसूरिसे दीक्षा और आचार्यपद प्राप्त किया था। जिनचन्द्र और जिनलब्धिसे इनकी सुरिसंज्ञा पायी थी। इन्होंने १४११ सम्वत्‌में षडावश्यकसूत्र-बालावबोध नामक पुस्तककी रचना की थी।

तरुणसूर्य (सं॰ पु॰) दोपहरका सूर्य।

तरुणाभाव (सं॰ पु॰) कर्कट कन्धी।

तरुणास्थि (सं॰ स्त्री॰) पतली नरमीली हड्डी।

तरुणी (सं॰ स्त्री॰) तरुण गौरादित्वात् ङीष्। १ युवती स्त्री जवान औरत। १६ वर्षसे ले कर ३२ वर्ष तक की स्त्रीको तरुणी कहते हैं।

तरुणी स्त्रीके साथ सम्भोग करनेसे शक्तिका ह्रास होता है। इसके पर्याय—युवती, तरुणी, युवति, धनी, चिकनी, धनिका और रमणी है। २ घृतकुमारी घीकुआर, ग्वार पाठा। ३ दन्तीवृक्ष, जमालगोटा। ४ चीड़ा नामक गन्ध-द्रव्य। ५ पुष्पविशेष, कुब्जाका फूल, मोतिया। इसके पर्याय—सेवती, गन्धा, कुमारी, गन्धाढ्या, चारुकेशरा, लक्षपुष्पा, रामतरुणी, सुदला, बहुपत्रिका और महासहा है। गुण—शिशिर, त्रिदोष पित्त, दाह, ज्वरमुखपाक, तृष्णा और विसर्पनाशक तथा मधुर है। इससे एक फूलसे पूजा करनेमें जितना फल होता है उतना कि एक हजार चमेलीके फूलसे होता है। ६ कर्कटकोल, एक प्रकारका बड़ा काला जीरा। ७ मेघरागकी एक रागिनी।

तरुणीकटाक्षमाल (सं॰ पु॰) तरुणीनां कटाक्षाणां माला यत्र, बहुव्री॰। तिलकपुष्प वृक्ष।

तरुतूलिका (सं॰ स्त्री॰) तरुषु तूलिका तूलिका चित्रमयशाका दव वा तरौ इव तौलयति तस्मात् वा तुल-ण्वुल् टापि अत इत्वं उपमि॰ समास। चमगादड़।

तरुतूलिका (सं॰ स्त्री॰) तरुतूलिका देखो।

तरुतृ (सं॰ त्रि॰) तॄ उन्। अविलसत्प्रमितशलकृत्सुकतृकवितिति। पा ३।२।१६१। इति सूत्रेण निपातनात् सिद्ध। तारक उद्धार करनेवाला।

तरुत्र (सं॰ त्रि॰) तॄ बाहु॰ उत्र। तारक, तारनेवाले।

तरुधूलिका—तरुतूलिका देखो।

तरुनख (सं॰ पु॰) तरोर्नख इव। कण्टक, कांटा।

तरुनाथ (सं॰ पु॰) वृक्षवल्कल, जमालो।

तरुपङ्क्ति (सं॰ स्त्री॰) तरूणां पङ्क्तिः, ६-तत्। वृक्ष श्रेणी, पेड़ोंकी कतार।

तरुभुज (सं॰ पु॰) तरु भुङ्क्ते भुज क्विप्। वन्दाक, बांदा। वृक्ष पर लगनेसे यह उसको धीरे धीरे नष्ट कर डालता है।

तरुमार्जिनी (सं॰ स्त्री॰) भूम्यामलकी, भुइँआंवला।

तरुमूल (सं॰ क्ली॰) तरूणां मूलं, ६-तत्। वृक्षमूल, पेड़की जड़।

तरुमृग (सं॰ पु॰ स्त्री॰) तरौ तिष्ठन् मृग इव मध्य पदलो॰। शाखामृग, वानर।

तरुराग (सं॰ क्ली॰) तरूणां रागो रक्तिमा यस्मात्, बहुव्री॰। किसलय, नया कोमल पत्ता।

तरुराज (सं० पु०) तरूणां राजा, ६-तत् अत्युच्चत्वात् समासे टच्। १ तालवृक्ष, ताड़का पेड़। २ पारिजात-पुष्पवृक्ष, कल्पवृक्ष। यह वृक्ष नरलोकमें पूजित होता है और देवलोकमें पाया जाता है। (त्रि०) ३ तरुश्रेष्ठ-मात्र, वृक्षोंमें सबसे बड़ा।

तरुरुहा (सं० स्त्री०) तरौ रोहति रुह-क-टाप्। १ वन्दाक, बाँदा। (त्रि०) २ वृक्षरोहिमात्र।

तरुरोहिणी (सं० स्त्री०) वन्दाक, बाँदा।

तरुवल्ली (सं० स्त्री०) तरुषु वल्लीव। जतुकालता, पलाशी।

तरुवा—मध्यप्रदेशके चाँदा जिलेका एक ह्रद। सेगाँवसे १४ मील पूर्वमें चिमूर पहाड़से यह ह्रद निकला है। इसकी गहराई बहुत है।

अनेक पुत्राभिलाषिणी स्त्रियाँ इस ह्रदके निकट आ कर अर्चनादि करती हैं। पीड़ित मनुष्य भी आरोग्यता लाभ करनेकी आशासे यहाँ आते हैं।

मध्यप्रदेशीय लोगोंका विश्वास है, कि देवताओंकी इच्छासे यह ह्रद उत्पन्न हुआ है।

इस ह्रदके एक ओर एक कृत्रिम बाँध है—

प्रवाद है, कि बहुत वर्ष पहले गोली लोग वर और कन्याको ले कर बहुत समारोहके साथ चिमूर पहाड़ हो कर जा रहे थे राहमें उनमेंसे बहुतोंको प्यास लगी, किन्तु जल कहीं न मिला। हठात् एक अस्सी वर्षसे अधिक उम्रवाला वृद्ध मनुष्य उन लोगोंके सामने आ पहुँचा। उनके जलकष्टका विवरण सुनाने पर वृद्धने जवाब दिया, कि वर और कन्याके जमीन खोदने पर एक झरनेकी उत्पत्ति होगी और उसी झरनेके जलसे वे अपनी प्यास निवृत्त कर सकते हैं। वृद्धके उपदेशानुसार वर और वधूने ज्यों ही जमीन खोदी, त्यों ही एक सोता निकल कर ह्रद (झील)-के रूपमें परिणत हो गया। इस ह्रदके किनारे एक ताड़का पेड़ उत्पन्न हुआ। वह पेड़ प्रति दिन दिनके समय ऊपर उठता, किन्तु सन्ध्याके समय मट्टीके नीचे चला जाता था। एक दिन बहुत सवेरे कोई यात्री इस पेड़ पर बैठा था। वह इठात् वृक्षके साथ आकाशको चला गया और वहाँ सूर्य-किरणसे दग्ध हो गया तथा वृक्ष भी उसी समय चूर चूर हो धूलमें मिल गया। वृक्षके बदले उस स्थान पर ह्रदकी अधिष्ठात्रदेवी तारोबा देवीकी प्रतिमूर्त्ति देखी गई। दूसरा प्रवाद यह भी है, कि पहले यात्री लोग कार्यके अन्तमें अपनी नाव ह्रदमें रख कर जाते थे। कालक्रमसे कोई दुष्ट मनुष्य नावको उस जगह न रख कर अपने साथ ले गया। किन्तु वह नाव उसी समय अदृश्य हो गई। उसी दिनसे नाव उस ह्रदमें नहीं मिली।

इस ह्रदमें ढोलकी नाईं शब्द सुना जाता है। वृद्ध मनुष्योंका कहना है कि ज्वार भाटाके समय ह्रदमें स्वर्ण-खण्डशोभित एक मन्दिर देखा जाता है।

तरुविटप (सं० पु०) तरूणां विटपः, ६-तत्। वृक्षशाखा, पेड़की डाली।

तरुविलासिनी (सं० स्त्री०) तरौविलासिनीव। नव-मल्लिका, चमेली।

तरुश (सं० त्रि०) तरुः अस्त्यत्र तरु श। तरुयुक्त, वृक्षसे घिरा हुआ।

तरुशायी (सं० त्रि०) तरौ तरुकोटरे शाखायां वा शेते शी णिनि। १ पक्षी, चिड़िया।

तरुष (सं० क्ली०) तरुषति हिनस्त्यत्र तरुष आधारे क्विप्। युद्ध, लड़ाई।

तरुष (सं० त्रि०) तृ-उषन्। तारक, उद्धार करनेवाला।

तरुषण्ड (सं० पु०) वृक्षश्रेणी, वृक्षकी कतार।

तरुस् (सं० त्रि०) तृ-उसि। तारक।

तरुसार (सं० पु०) तरोः सारः, ६-तत्। १ कर्पूर कपूर। २ वृक्षका सार, गोंद।

तरुस्थ (सं० त्रि०) तरौ तिष्ठति तरु-स्था क। वृक्षस्थित, जो पेड़ पर टिका हो।

तरुस्था (सं० स्त्री०) तरुस्थ-टाप। वन्दाक, बाँदा।

तरूट (सं० पु०) तरोः उट इव। पद्ममूल, कमलकी जड़, मुरार, भसींड।

तरूणक—तरुणक देखो।

तरूषस् (सं० त्रि०) तृ-उषस्। १ तरणकुशल, जो पानीमें तैरना जानता हो। २ आपदुद्धारक, जो विपत्तिसे बचाता हो।

तरेंदा (हिं० पु०) १ पानीमें तैरता हुआ काठ, बेड़ा। २ तैरनेवाली वस्तु।

तरेटो (हि॰ स्त्री॰) वह जमीन जो पहाड़के नीचे रहती है। तराई, घाटी।

तरेड़ा (हि॰ पु॰) तरेरा देखो।

तरेरना (हि॰ क्रि॰) दृष्टि कुपित करना, आँखके इशारे से असन्तोष जाहिर करना।

तरेमी (हि॰ स्त्री॰) चरिम और कलको एकमें सटाके रखनेका पत्थर।

तरेला (हि॰ पु॰) किसी स्त्रीका वह पुत्र जो उसके दूसरे पतिसे पैदा हो।

तरैनी (हि॰ स्त्री॰) तरौनी देखो।

तरौंच (हि॰ स्त्री॰) १ कोल्हूके नीचेकी लकड़ी। २ तरौंछी देखो।

तरोंदा (हि॰ पु॰) फसलका वह परिमित अन्न जो कटाई आदि मजदूरीको देनेके लिये निकाल दिया जाता है।

तरोई (हि॰ स्त्री॰) तुरई देखो।

तरोता (हि॰ पु॰) मध्यभारत और दक्षिण भारतमें होनेवाला एक प्रकारका मझोला पेड़। इसके छिलके चमड़ा सिझानेके काममें आता है। इसका दूसरा नाम तरवर है।

तरोना—मथुरा जिलेके अन्तर्गत छाता तहसीलका एक छोटा ग्राम। यह अक्षा॰ २७ ४० ४६ उ॰ और देशा॰ ७७ १० ३२ पू॰में अवस्थित है। लक्षिकायके लिये यह ग्राम सर्वसाध्य है। इस ग्रामका दाऊजीगोविन्द देवका मन्दिर विशेष प्रसिद्ध है। प्रति वर्ष कार्त्तिक मासमें त्रयोदशीसे पूर्णिमा पर्यन्त उक्त मन्दिरके निकट एक मेला लगता है।

तरौंछी (हि॰ स्त्री॰) १ करघेमें नीचेकी ओर लगी हुई लकड़ी। २ बेंत बाड़ेमें कुलावांके नीचे लगी हुई पतली लकड़ी।

तरौंटा (हि॰ पु॰) चक्कीके नीचेका पत्थर।

तरौना (हि॰ पु॰) छाजनमें ठाठके नीचे दिये जानेकी लकड़ी।

तरौच—शिमला पहाड़के अन्तर्गत और पञ्जाब गवर्मेण्टके अधीन एक देशीय राज्य। यह अक्षा॰ ३० ५२ और ३१ ४ उ॰ तथा देशा॰ ७७ १० और ७७ २१ पू॰में अवस्थित है। इस राज्यका क्षेत्रफल ६७ वर्गमील है। थोड़े मुसलमान छोड़ कर इस प्रदेशके सभी अधिवासी हिन्दू हैं। तरौच पहले करमोंके राज्यके अन्तर्गत था। अंगरेजोंके साथ आनेके समय ठाकुर कमरसिंह तरौचके शासनकर्त्ता थे। किन्तु वार्द्धक्ययुक्त वे कोई काम नहीं कर सकते थे। उनके भाई भोपू समस्त राजकाज चलाते थे। १८१८ ई॰में करमसिंहको मृत्युके बाद भोपूको एक सनद मिली, जिससे उनके तथा उनके उत्तराधिकारीके हाथ तरौच राज्यका शासनभार अर्पण किया गया। १८८८ ई॰में ठाकुर केदारसिंह तरौचके राजा थे। केदार सिंहकी मृत्युके बाद ठाकुर अम्बसिंह राजा हुए।

इस राज्यकी आय प्रायः १०००) रु॰ है। राजाको ८० सैन्य रखनेका अधिकार है।

तरौना (हि॰ पु॰) १ एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रियाँ कानमें पहनती हैं, तरकी। २ कर्णफूल नामक गहना। ३ स्त्रियोंका चौपाया रखनेका मोढ़ा।

तर्क (स॰ पु॰) तर्क भावे घञ्। १ अविज्ञाततत्त्वार्थ निर्णयके कारण, अर्थात् अविज्ञात अर्थके विषयमें प्रवृत्ति कारण द्वारा तर्क विशेष, वह तर्क जो शास्त्रसे अविरोधी और सन्दिग्ध पूर्वपक्षको निरास कर उत्तरपक्षमें व्यवस्थापनपूर्वक शास्त्रार्थमें निश्चयताका अवधारण करता है। २ आकांक्षा चाह। ३ व्याप्यके आरोपके कारण व्यापकका प्रसञ्जन। ४ आगमका अविरोधी न्याय। ५ आगमार्थ परीक्षा। ६ मीमांसारूप विचार या शास्त्रार्थ। ७ मानस प्रत्यक्ष। ८ अपनी बुद्धिके अनुसार तर्क (विचार) मात्र। (वैद्यकन्याय॰)

जो अर्थ अविश्वसनीय हैं किसी कारणसे भी जिसका विषय निश्चित नहीं हो सकता उन विषयोंका कभी भी तर्क द्वारा निर्णय न करें। क्योंकि अप्रतिष्ठित तर्क द्वारा कभी भी अपौरुष धर्मका निश्चय नहीं हो सकता।

इस प्रकारका तर्क करनेसे अप्रतिष्ठादोष लगता है। तर्कमें अप्रतिष्ठा दोष होने पर, वह निराकृत होता है, वह तर्क ग्रहणीय नहीं। तर्क बिना किये धर्मक्ष मीमांसा न करें ऐसी विधि है। किन्तु वह तर्क दुष्ट न होना चाहिये। धर्मशास्त्रके एक मत हो कर तर्क

करें। इस प्रकारके तर्कसे ही यथार्थ ज्ञान होता है। इसीलिए वेदान्तदर्शनमें तर्कका विषय इस प्रकार लिखा है—"तर्का प्रतिष्ठानादित्यादि"। (वेदान्तसूत्र)

जो वस्तु शास्त्रगम्य है, तर्कमात्रका अवलम्बन कर उस वस्तुके विरुद्ध उद्यम नहीं करना चाहिये। कारण, पुरुष शास्त्रावलम्बनके बिना बुद्धिमात्रसे जितने भी तर्कोंका उद्भावन करता है, उन तर्कोंकी प्रतिष्ठा नहीं होती, क्योंकि कल्पनामें कोई अङ्कुश (नियामक) नहीं होता। जो जहाँ तक समझता है, वह वहीं तक कल्पना करता है। अनुसन्धान करनेसे देखा जाता है, कि एक विद्वान्‌ने बहुत यत्नसे एक तर्क छेड़ा, अन्य विद्वान्‌ने उसी समय उसको मिथ्या बता दिया और उनसे भी अधिक विद्वान्‌ने उनके तर्कको भी मिथ्या सिद्ध कर दिया। मानवबुद्धि विचित्र है, इसी लिए प्रतिष्ठित तर्क असम्भव है। जब कि मानवबुद्धि ही अनवस्थित है, एक प्रकार नहीं, तब उससे उत्पन्न तर्क भी अनवस्थित होगा एक प्रकारका नहीं। इसी लिए तर्क अप्रतिष्ठादोषसे दूषित है अर्थात् स्थिरतर तर्क नहीं होता। अतएव तर्क अविश्वास्य है। तर्कका विश्वास करके शास्त्रार्थ निर्णय करना अन्याय्य है। मान लो, प्रसिद्ध कपिल देव सर्वज्ञ थे, इस कारण उनका तर्क प्रतिष्ठित था, ऐसा कहनेसे भी कहेंगे कि, वह भी अप्रतिष्ठित था अर्थात् वह बात भी तर्कमें अन्यरूप हो जाती है। कपिल सर्वज्ञ थे और गौतम असर्वज्ञ, इस विषयमें क्या प्रमाण हैं? कपिल, कणाद, गौतम, ये सभी ख्यातनामा हैं, सभी महात्मा और सर्वविदित हैं परन्तु तो भी इनके मतमें परस्पर विरोध पाया जाता है।

कपिलके मतमें कणाद और गौतमको आपत्ति है तथा कणाद और गौतमके मतमें कपिलको आपत्ति है। यदि कहोगे, कि हम ऐसे एक तर्कका अनुमान करेंगे, जिसमें प्रतिष्ठा-दोष नहीं आवेगा। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि, अप्रतिष्ठित तर्क है ही नहीं। एक न एक प्रतिष्ठित तर्क है, यह अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा। हाँ, ऐसा कह सकते हो कि, किसी किसी तर्कको अप्रतिष्ठितत्व देख कर तर्कमात्रमें अप्रतिष्ठितत्वकी कल्पना करनेसे व्यवहार उच्छेदकी आपत्ति हो सकती है, सभी तर्क यदि मिथ्या हैं, तो लोगोंका प्रवृत्ति-निवृत्ति व्यवहार किस तरह होगा?

हम देखते हैं, कि प्रत्येक व्यक्ति भविष्यमें सुख दुःखको प्राप्ति और परिहारके लिए सर्वदा चेष्टमान है, वह चेष्टा भी तर्कमूलक है।

तर्कका दूसरा नाम है कल्पना, तर्कमें सत्यता न होती तो उसका व्यवहार न रहता, अब तक वह उच्छिन्न हो जाता। श्रुतिके अर्थमें सन्देह होने पर वाक्यवृत्तिनिरूपणरूप तर्कके द्वारा उसके तात्पर्य अर्थका निर्णय होता है। भगवान् मनुने भी ऐसा ही कहा है—

जो धर्मशुद्धिकी इच्छा रखते हैं, उन्हें प्रत्यक्ष अनुमान (तर्क) और विविधशास्त्रका उत्तमरूपसे ज्ञान रखना चाहिए। जो पुरुष वेदशास्त्रके अविरोध तर्कका अवलम्बन कर ऋषिसेवित धर्मविधिकी खोज करते हैं, उन्हें ही धर्मका वास्तविक रहस्य मालूम पड़ता है। अप्रतिष्ठित तर्कको शोभा दोष नहीं है। जिस तर्कमें दोष हैं, उसे छोड़ देना चाहिये, निर्दोष तर्क ग्रहणीय है। पूर्वपुरुष मूढ़ थे, इसलिए हमको भी मूढ होना पड़ेगा, ऐसा कोई नियम नहीं। एक तर्कमें दोष देख कर समस्त तर्कोंमें दोष बतलाना बड़ा अन्याय है।

सम्यक्‌ज्ञान एक ही प्रकारका होता है, नाना प्रकारका नहीं। मेरे एक तरहका और तुम्हें दूसरी तरहका हो, ऐसा भी नहीं; क्योंकि सम्यक्‌ज्ञान वस्तुके अधीन है, न कि मनुष्यके। जैसे—अग्नि उष्ण है। अग्नि उष्ण है यह ज्ञान एक ही भाँतिका अर्थात् सब समय और सब पुरुषोंके लिए एकसा है। इसलिए सम्यक् ज्ञानमें मतामत (तर्क)-का होना असम्भव है। तर्क बुद्धिसे उत्पन्न है। इसलिए वह नाना व्यक्तियोंका नाना प्रकार है तथा विरुद्ध तर्कजनित ज्ञान भी विभिन्न और परस्पर विरुद्ध होते हैं, किन्तु सम्यक् ज्ञान एक ही प्रकारका होता है। किसी हालतमें भी विभिन्न नहीं होता।

एक तार्किकने तर्कबलसे कहा कि यही सम्यक् ज्ञान है और दूसरेने उसका खण्डन कर कहा कि नहीं, वह सम्यक्‌ज्ञान नहीं, यह सम्यक् ज्ञान है। अतएव जो एक प्रकारका नहीं, वह अस्थिर तर्कसे उत्पन्न है, ऐसा ज्ञान किस तरह सम्यक् हो सकता है।

इसलिए तर्क द्वारा वह मीमांसित नहीं होता। दुरूह विषयमें तर्क छोड़ कर शास्त्रका अनुसरण करना उचित है। शास्त्र समझनेके लिए भी तर्ककी जरूरत है किन्तु वह तर्क शास्त्रानुकूल है, शास्त्रके प्रतिकूल तर्क भी प्रतिषिद्ध हुआ है। शास्त्र आदि किसी भी विषयके जाननेमें तर्क ही एकमात्र कारण है। तर्कके बिना किसी भी विषयका वास्तविक तत्त्वार्थ मालूम नहीं होता। यह तर्क शास्त्रानुयायी होना चाहिये, ऐसा न होनेसे उसे कुतर्क वाद आदि कहते हैं। इस प्रकारके कुतर्कवादियोंसे किसी तरहका भी तर्क न करना चाहिये तथा करनेसे भी कोई फल नहीं होगा। (वेद शब्द०)

गौतमसूत्रमें तर्कका विवरण इस तरह लिखा है

'अविज्ञाततत्त्वेऽर्थे कारणोपपत्तितस्तत्त्वज्ञानार्थमूहस्तर्कः।'

(गौतमसू १।१।४०)

व्याप्यका आरोपप्रयुक्त व्यापकका आरोप ही तर्क पदार्थ है अर्थात् धूमादिका आरोप करके व्यापक है। व्यापक वह्नि आदिका जो आरोप होता है उसी को तर्क कहते हैं।

'आरोप'का अर्थ है अयथार्थ ज्ञान। सूत्रमें 'कारणोपपत्तितः' इन शब्दोंसे व्याप्यका आरोपप्रयुक्त' यह अर्थ तथा 'ऊह' शब्दसे व्यापकका आरोप ऐसा अर्थ हुआ है।

'तर्क द्वारा क्या फल होता है?' शिष्यने जब गौतम ऋषिसे यह प्रश्न किया, तब महर्षिने उत्तर दिया—'किसी पदार्थमें विविध संशय होने पर तर्क करना चाहिये तर्कसे संशयकी निवृत्ति हो कर यथार्थ अर्थका निर्णय हो जायगा।

इसलिये तर्क पदार्थनिर्णयमें विशेष प्रयोजनीय है। तर्कके बिना कभी भी एकतरका निश्चय नहीं होता। जैसे पर्वतमें उत्थित बाष्पको देख कर बहुतोंको 'बाष्प है या धुआँ' ऐसा सन्देह हुआ करता है। अनन्तर यह यदि धुआँ हो, तो उसमें अग्नि हो सकती है, किन्तु वस्तुतः उसमें अग्नि नहीं होती तो बाष्पका निकलना कैसे सम्भव हो सकता है, अतएव यह धूम नहीं है। इस प्रकारकी आपत्ति जिसको उपस्थित होती है, उसको इस तर्कके द्वारा 'यह धुआँ नहीं, बाष्प है' ऐसा निश्चय होता है। दूसरे एक रूपमें काष्ठको देख कर उसमें मनुष्यका भ्रम हुआ पीछे 'यदि यह मनुष्य है तो हाथ पैर अवश्य होते ऐसा तर्क उदित होने पर यह वास्तवमें मनुष्य नहीं है ऐसा स्थिर होता है। सौगत शास्त्रके बौद्ध कहा करते हैं, कि यह दृश्यमान विचित्र पदार्थ समूह विज्ञानमय ज्ञानस्वरूप है अर्थात् सोते समय जैसे बाघ, हाथी, मनुष्य आदि देख पड़ते हैं किन्तु असलमें वे कुछ भी नहीं हैं केवल ज्ञान है, उसी प्रकार जाग्रत्-अवस्थामें पृथिवी, जल मनुष्य आदि जो कुछ दृष्टिगोचर हो रहे हैं वे पदार्थ भी ज्ञानस्वरूप हैं, ज्ञानसे अतिरिक्त कुछ भी नहीं।

इसमें नैयायिकोंका कहना है, कि सोते समय जो पदार्थ अनुभूत होते हैं, जग जाने पर वे पदार्थ मिथ्या अर्थात् मनःकल्पित मात्र मालूम पड़ते हैं इसलिए स्वाप्निकपदार्थ ज्ञानस्वरूप होने पर भी जाग्रत् अवस्थामें जो नाना प्रकारके पदार्थ देख रहे हैं वे कभी भी ज्ञानमय नहीं ज्ञानसे भिन्न हैं। इस प्रकार दोनोंके वाक्य सुन कर, हम जो पदार्थ समूह देख रहे हैं वह ज्ञानस्वरूप है या ज्ञानसे अतिरिक्त यह संशय अवश्य ही उपस्थित होता है। बादमें दृश्यमान चराचर पृथिवी जल, मनुष्य पशु, पक्षी आदि पदार्थ यदि ज्ञानस्वरूप हों, ज्ञानसे भिन्न न हों, तो हम प्रतिदिन पृथिवीको पृथिवी, जल को जल, मनुष्यको मनुष्य नहीं समझ सकते थे तथा पृथिवीको पृथिवी और जलको जल इत्यादि रूपमें हमको जैसा ज्ञान हो रहा, वैसा औरोंका भी होता है, वास्तवमें बाह्यपदार्थ स्वाप्निकज्ञानकी भांति ज्ञानरूप होते तो पृथिवीको पृथिवी जलको जल इत्यादि एक रूपसे समस्त व्यक्तियोंके अनुभवका विषय नहीं होता। जब देखते हैं, कि साधारणतामें सबका ज्ञान एकसा नहीं होता इस प्रकारका तर्क उदित होने पर दृश्यमान पदार्थसमूह ज्ञानस्वरूप नहीं ज्ञानसे पृथक् है, अवश्य ही ऐसी अवधारणा होती है। इन तर्कोंके बिना पक्ष संशय रूपसे कभी भी एकतरकी अवधारणा नहीं होती। इस लिए पदार्थनिर्णयमें तर्क बहुत आवश्यक है। प्रायः सामको तर्क हुआ करता है, किन्तु विशेष परिचय न होनेसे उसको तर्क नहीं समझते

न्यायशास्त्रमें तर्कपदार्थका विस्तृतरूपसे प्रकाश होने

से न्यायशास्त्रको तर्कशास्त्र भी कहते हैं। तर्क पहले संशय, फिर तर्क और अन्तमें निर्णय—इन तीन अंशों में परिसमाप्त होता है।

उक्त तर्कमें कोई पदार्थ आपाद्य वा आपादक (अर्थात् व्याप्यव्यापकभाव) नहीं होता। क्योंकि जलाशय यदि धूमविशिष्ट होता, तो पटविशिष्ट भी होता, इस प्रकारको आपत्ति कभी भी सम्भव नहीं तथा यह यदि मनुष्य होता, तो शृङ्गविशिष्ट होता, ऐसी आपत्ति कोई नहीं करता। इसी लिए व्याप्यका आरोपयुक्त व्यापकका आरोप कहा गया है, अर्थात् व्यापक पदार्थमें ही आपत्ति हुआ करती है। उक्त स्थानमें धूमका व्यापक पट नहीं है और न मनुष्यत्वका व्यापक शृङ्ग है इस लिए उनकी वह आपत्ति नहीं हुई। उक्त आपत्तिके पक्षमें आपाद्यका अभाव निश्चय होने पर यह ज्ञान उत्पन्न होता है। इसलिए जलाशय यदि धूमविशिष्ट होता तो द्रव्य होता, ऐसी आपत्ति नहीं होती। कारण, जलाशयमें द्रव्यत्वका अभाव नहीं, किन्तु द्रव्यत्वका निश्चय ही है। यह तर्क ५ प्रकारका है—आत्माश्रय, अन्योन्याश्रय, चक्रक, अनवस्था और बाधितार्थ प्रसङ्ग।

इनमें जो आपत्ति स्वमें स्व अपेक्षणीय होने पर होती है, उसका नाम है आत्माश्रय, अर्थात् आपत्तिमें आत्माको (अपनी) अपेक्षा करती है इसलिए इस आपत्तिका नाम आत्माश्रय है।

जिसके अभावसे जो वस्तु सम्भव नहीं होती, उसकी अपेक्षा कहते हैं, अपेक्षा भी उत्पत्ति, स्थिति और ज्ञप्तिके भेदसे तीन प्रकारका है। यथा—वृक्ष उपजनेमें बीज और पुत्रादिकी उत्पत्तिमें पिता माता, वस्त्रादि बनानेमें तांत सूत आदिकी अपेक्षा होती है, तथा किसी पदार्थके संस्थापनको आवश्यकता होने पर अधिकरणको अपेक्षा चाहिये, किसी पदार्थकी ज्ञप्ति अर्थात् अभिव्यक्ति (ज्ञान) आवश्यक होने पर इन्द्रियादि अपेक्षित होती है, इसलिए उत्पत्ति, स्थिति और ज्ञप्तिके भेदसे आक्षेप तीन प्रकारका होनेसे आत्माश्रय भी तीन प्रकारका है। वस्तुतः जिस आपत्तिमें स्वमें स्वजन्य आपादक होता है, वही आपत्ति प्रथम आत्माश्रय है, जैसे-एक वृक्षको देख कर 'यह वृक्ष इस वृक्षसे उपजा है या नहीं' ऐसा सन्देह होने पर यह वृक्ष यदि इस वृक्षसे उत्पन्न होता, तो इस वृक्षका अनधिकरण कालके उत्तर-क्षणमें उत्पन्न न होता अर्थात् इस वृक्षके उत्पन्न होनेसे पहले भी यह वृक्ष होता, क्योंकि जो वस्तु जिस पदार्थमें उत्पन्न होती है, उस वस्तुमें पहले वह पदार्थ अवश्य ही रहता है। अपनी उत्पत्तिसे पहले आप कभी भी नहीं रहते। इसलिए यह वृक्ष इस वृक्षसे उत्पन्न नहीं है। अन्य जिस आपत्तिमें स्वमें स्ववृत्तित्व आपादक होता है। उस आपत्तिका नाम भी आत्माश्रय है। जिस प्रकार इस पृथिवी पर पर्वत आदि स्थित हैं, उसी प्रकार इस पृथिवीके उपरिस्थित हो कर यह पृथिवी है या नहीं? ऐसा संशय होने पर यदि यह पृथिवी इस पृथिवीके ऊपर स्थित होती तो इस पृथिवीसे यह पृथिवी भिन्न होती, क्योंकि अधिकरणसे आधेय पृथक् होता है, यह सब जगह देखा गया है। अधिकरण और आधेय एक ही व्यक्ति हो, ऐसा किसीने भी नहीं देखा।

यह आपत्ति द्वितीय आत्माश्रय है। जिस आपत्तिमें स्वप्रत्यक्षसे स्वमात्र अपेक्षणीय अथवा स्वमें स्वज्ञानस्वरूप आपादक होता है, वह आपत्ति तृतीय आत्माश्रय है। यथा—इस घटका प्रत्यक्ष यदि इस घटमात्रसे उत्पन्न होता, तो घटकी उत्पत्तिके बाद सब समय इसका प्रत्यक्ष होता जब कि इस घटका प्रत्यक्ष कारण यह घट मात्र है और वह घट सर्वदा ही है। कारणके बिना कार्य क्यों नहीं होगा, अथवा यह घट यदि एतद्घट ज्ञानरूप हो, तो यह घट ज्ञान सामग्रीसे उत्पन्न होता, कारण जो ज्ञानरूप होता है, वह ज्ञान सामग्रीसे अवश्य ही उत्पन्न होता है। सामग्री शब्दसे उस कारण समूहका बोध होता है, जिससे कार्य हुआ करते हैं।

स्वमें स्वापेक्ष अपेक्षणीय होने पर जो अनिष्टकी आपत्ति होती है, उसको अन्योन्याश्रय कहते हैं। फलतः जिस आपत्तिमें स्वजन्य जन्यत्व, स्ववृत्ति वृत्तित्व, स्वज्ञान ज्ञानमयत्व, इनमेंसे कोई भी एक आपादक हो, वही अन्योन्याश्रय है। यथा—यह वृक्ष यदि इस वृक्षजात फलजन्य होता तो यह वृक्षजात फल इस वृक्षके पैदा होनेसे पहले अवश्य ही होता, क्योंकि कारण कार्यसे

पहले अवश्य ही रहता है। किन्तु जैसे वह दुग्ध उस दधिका पूर्ववर्ती नहीं होता, उसी तरह उस दुग्धसे उत्पन्न अन्न भी इस दधिका पूर्ववर्ती नहीं होता। इस लिए वह दुग्ध इस दधिजात अन्नका जन्य नहीं है। इसी तरह यह घट यदि इस घटसे भिन्न होता तो यह घट इस घटसे भिन्न होता तथा यह घट यदि इस घटज्ञानसे जन्य हो, तो यह घट ज्ञान सामग्रीसे जन्य होता। और जिस पदार्थको स्वीकार किया उस तरहके पदार्थमें असीम आपत्ति धाराकी कल्पनाके कारण अनिष्ट प्रसङ्ग होता है, इस अनवस्था दोष और उस अनवस्थाके दोषसे बचने किसी एक पदार्थकी सीमा स्वीकार करना पड़ता है। यथा—अविभक्त परमाणुको निरवयव न मान कर उसको सावयव मानना होता है तथा उस अवयवमें पुनः अवयवकी कल्पना आवश्यक है। इस प्रकार अनन्त अवयवकी कल्पना करने पर सर्षप और सुमेरुके समान परिमाणापत्ति हो सकती है। कारण जो वस्तु जिसकी अपेक्षा अधिक संख्यक अवयवों द्वारा संगठित है, वह वस्तु उसकी अपेक्षा महत् परिमाणविशिष्ट है। तथा जो द्रव्य जिस वस्तुकी अपेक्षा अल्पसंख्यक अवयवों द्वारा संगठित है, वह वस्तु उसकी अपेक्षा क्षुद्र है।

अतएव इस जगह जैसे पार्वतीय परमाणुके अवयव अनन्त हैं उसी प्रकार सर्षपीय परमाणुके अवयव भी अनन्त हैं दोनोंके न्यूनाधिक्यका निश्चय करना साध्यातीत है। इस तरह दोनोंको अनन्त अवयवविशिष्ट मानना पड़ता है। सुतरां दोनोंमें परिमाणगत कोई वैलक्षण्य न होनेसे दोनोंमें ही समान परिमाणकी आपत्ति हो सकती है। इस अनवस्थाभयसे परमाणुको निरवयव कहना होता तथा जैसे विचारालयमें अपराधी है या निरपराधी यह निश्चय करनेके लिए गवाहको जरूरत है उसी प्रकार गवाह देनेवाला उस वक्त घटनास्थल पर था या नहीं, इस तरहकी आपत्तिसे यदि गवाहको गवाहीसे दूर की जाय, तो उस गवाहके लिए गवाहीको जरूरत है इस तरह असंख्य साक्षीकी आवश्यकता होती है। सुतरां किसी तरह भी विचारके निष्पन्न होनेकी सम्भावना नहीं इस स्थानमें भी ऐसे अनवस्थादोषके भयसे केवल एक साक्षी प्रचलित है अथवा मनुष्यमात्र ही किसी न किसी शरीरी द्वारा सृष्ट है, अतः निराकार जगदीश्वर द्वारा उसकी सृष्टि नहीं हो सकती इस प्रकारकी शङ्का उठा कर यदि उनमें भी शरीरकी कल्पना करें तो जगदीश्वरके शरीरकी सृष्टिके लिए पृथक् एक शरीरी जगदीश्वरकी कल्पना करनी पड़ेगी और उनके शरीरकी सृष्टिके लिए भी पुनः पृथक् शरीरी परमेश्वरकी कल्पना करनी पड़ेगी, इस तरह अनन्त, कोटी कोटी साकार जगदीश्वरकी कल्पना करने पर भी किसी वक्तमें सृष्टिकार्यका निर्वाह नहीं हो सकता। इसलिए दार्शनिकोंने एकमात्र जगत् स्रष्टा माना है। अथवा यह ससागरा पृथिवी शून्यमें अपनी शक्तिसे है या अन्य किसी वृहद् साकार आधार पर है, इस प्रकार सन्देहाक्रान्त हो कर यदि पृथिवीका कोई साकार आधार मान लेवें तो उस आधार वस्तुकी स्थितिके लिए पुनः और एक साकार आधारकी कल्पना करनी पड़ेगी।

इस प्रकारसे उनके भी आधारको कल्पना करनी पड़ेगी, पर तो भी यह निर्णय नहीं होगा कि पृथिवी किसके आधार पर है। इस प्रकारके अनवस्थादोषके कारण ज्योतिर्विदोंने पृथिवीका कोई साकार आधारान्तर नहीं माना पृथिवी अपनी शक्तिके बलसे सर्वदा आकाशमें विद्यमान है, ऐसा ही स्वीकार करते हैं।

आत्माश्रय आदि जो चार आपत्तियोंका उल्लेख किया गया है उनके सिवा अन्य आपत्तियोंका नाम है प्रमाणबाधितार्थप्रसङ्ग।

यह प्रमाणबाधितार्थप्रसङ्ग दो प्रकारका है—एक व्याप्तिनिर्णायक और दूसरा विषयपरिशोधक। व्याप्तिनिर्णायक उसे कहते हैं, जिस तर्कके द्वारा व्याप्तिकी निश्चयता हो जैसे धूममें वह्निको व्याप्तिका निश्चय होने पर, उस धूमके द्वारा वह्निको अनुमिति हुआ करती है। किन्तु जब तक धूममें वह्निके व्यभिचारका सन्देह रहे तब तक व्याप्तिका निश्चय नहीं होता।

इसलिए तर्क द्वारा व्यभिचार सन्देह (वह्नि अर्थात् अभावाधिकरणमें धूमकी विद्यमानताका अभाव)-को दूर करना आवश्यक है, जैसे—धूम वह्निव्यभिचारी है या नहीं ऐसा सन्देह होने पर धूम यदि वह्नि व्यभिचारी हो, तो वह्निसे उत्पन्न नहीं होता। कारण जो जिससे

उत्पन्न होता है, वह उसका व्यभिचारी नहीं होता, ऐसा नियम है। ऐसी आपत्ति करनेसे धूमसे वह्नि-व्यभिचारका सन्देह निवृत्ति हो कर वह्निकी व्याप्तिका निर्णय होता है। इसलिए यह तर्क व्याप्तिनिर्णायक है। जिस तर्कके द्वारा व्याप्तिसे भिन्न विषयका अवधारण हो, उस का नाम है विषयपरिशोधक। जैसे—पर्वत यदि वह्निका अभावविशिष्ट हो, तो धूमका भी अभावविशिष्ट हो सकता है। इस तर्कसे पर्वतमें वह्निका सन्देह नष्ट हो कर वह्निके रूपसे विषयका अवधारण होता है इसलिए इस तर्कका नाम विषयपरिशोधक है। (गौतमसूत्र)

करणे वच्। ८ न्यायशास्त्र, तर्कशास्त्रका नामान्तर। इस शास्त्रमें तर्कका विषय विशेषरूपसे वर्णित हुआ है इसलिए इसका नाम तर्कशास्त्र है। न्यायशास्त्र चार भागों में विभक्त है—प्रत्यक्ष, अनुमिति, उपमिति और शाब्दज। इनमें अनुमानखण्डमें ही तर्कका आधिक्य है, इसलिए उसको ही तर्क कहते हैं, किन्तु इन चारों खण्डोंमें तर्क-प्रणाली विशेषरूपसे अवलम्बित हुई है। नवद्वीपके गदाधर भट्टाचार्य आदि महामहोपाध्यायगण तर्कशास्त्रकी विशेष उन्नति कर गये हैं। न्याय देखो।

१० मीमांसाशास्त्र। तर्कसे शास्त्रकी मीमांसा होती है, इसलिए मीमांसाका नाम भी तर्क है।

तर्कक (सं० त्रि०) तर्कण आकाङ्क्षया कायति प्रकाशते के-क। १ याचक, मांगनेवाला। तर्कयति तर्क-ण्वुल्। २ तर्ककारक, तर्क करनेवाला।

तर्कारिन् (सं० त्रि०) तर्क करोति कृ-णिनि। तर्ककारक, तर्क करनेवाला।

तर्कग्रन्थ (सं० पु०) तर्काधिकृतः ग्रन्थः, मध्यपदलो०। तर्कप्रधान ग्रन्थ।

तर्कच्छाया (सं० स्त्री०) १ वह पदार्थ जिसमें उत्तेजित करनेकी क्रिया हो। २ बौद्धशास्त्रभेद।

तर्कण (सं० क्ली०) चिन्तन, तर्क करनेकी क्रिया।

तर्कणा (सं० स्त्री०) १ विवेचना, विचार। २ युक्ति, उपाय।

तर्कणीय (सं० त्रि०) चिन्तनीय, विचार करने योग्य।

तर्कना (हिं० स्त्री०) १ तर्कणा देखो। २ तर्क करना।

तर्कमुद्रा (सं० स्त्री०) तन्त्रोक्त मुद्राविशेष, तन्त्रकी एक मुद्रा। मुद्रा देखो।

तर्कवागीश (सं० पु०) तर्कशास्त्रवेत्ता, वह जो तर्कशास्त्र अच्छी तरह जानता हो।

तर्कवितर्क (सं० पु०) १ विवेचना, सोच विचार। २ वाद-विवाद, बहस।

तर्कविद्या (सं० स्त्री०) तर्करूपा या विद्या तर्कस्य विद्या वा। न्यायविद्या, युक्तिविद्या। गौतमप्रणीत प्रमाण प्रमेय प्रभृति सोलह पदार्थरूप विद्या और कणादोक्त छह पदार्थरूप विद्या, आन्वीक्षिकी विद्या।

तर्कश (फा० पु०) तूणीर, भाथा, तीर रखनेका चोंगा।

तर्कशास्त्र (सं० क्ली०) तर्करूपं शास्त्रं मध्यपदलो०। १ न्यायशास्त्र। २ वह शास्त्र जिसमें ठीक तर्क वा विवेचना करनेके नियम आदि निरूपित हों।

तर्कसी (फा० स्त्री०) छोटा तरकश।

तर्काभास (सं० पु०) तर्कस्य आभासः, ६ तत्। कुतर्क, ऐसा तर्क जो ठीक न हो।

तर्कारी (सं० स्त्री०) तर्क आकृति कृ-अण्। कर्मण्यण्। पा ३।२।१। ङीप् च। १ जयन्तीवृक्ष, जैंतका पेड़। पर्याय-वैजयन्ती विजया, जया, जयन्ती। (Sesbania Aegyptiaca or Aeschynomene Sesban) इसको युक्तप्रान्तमें—जैंत, विहारमें—सन्तरी वा सेवरी, उडिष्यामें वज जन्ति, बङ्गालमें जयन्ती वा धनिया, गुजरातमें—रायसिंगनि, महाराष्ट्रमें—सेवरी, बम्बईमें—जेत वा जनजन, द्राविड़में—चम्पई वा करुमसेम्बाई तथा तैलङ्गमें—सइमिण्डा वा समिण्डा कहते हैं।

भारतमें सर्वत्र ही यह वृक्ष होता है; और तो क्या, हिमालयके चार हजार फुट ऊँचाई पर भी इसका वृक्ष देखनेमें आता है। हाँ, दक्षिणदेशमें कुछ अधिक होता है। कृष्णा और वेणवा नदीके किनारे, जो जो स्थान बाढ़ आनेसे डूब जाते हैं, उन उन स्थानों पर इसके एक एक वृक्ष २० फुट ऊँचे होते हैं। इसकी लकड़ी नरम होती है। इससे माचे वगैरह भी बनते हैं। इसकी छालसे रस्सी बन सकती है।

इसके पत्ते और बीज बड़े फायदेमन्द हैं। पूय-सञ्चय निवारणार्थ इसके पत्तोंकी पुल्टिस दी जाती है। और कोढ़ वा वातरोगकी सूजनमें इसका प्रयोग किया जाय, तो सूजन घट जाती है। हकीमोंग्रन्थके मतसे-

इसके बीज तिक्तरस रक्तपित्तनाशक और मलरोधक उदर मयनाशक, पित्त रक्तोत्थापनिवारक और शोथादि दूरकारक है। बहुतसे हिन्दू मुसलमान, फूलसे आदिमें इसको सम्भवतः बना कर खाते हैं। पञ्जाबमें इसके बीज बट कर मैदेके साथ भी आग पर पकाते हैं। मराठोंका विश्वास है कि इसके बीजको पीसनेसे बिच्छू काटनेका दर्द जाता रहता है। कार्बेमें बहुतसे लोग इसके ताजे पत्तोंको बट कर १ सप्ताह तक खाते हैं जिससे उनका कामिरोग अच्छा हो जाता है। तरवटी देखो।

२ गनियारिका, गनियारका पेड़। (भावप्र॰) गनियारिका देखो। ३ देवताड़वृक्ष, रामबांस। ४ पश्चिम बन पर्णोका पेड़। ५ बृहदग्निमन्थ अग्निमन्थका पेड़। ६ शोनक नागरमोथा। ७ शिरपाक्ष श्योनाकका पेड़। ८ वनकपासी, वनबंगो।

तर्दिण (स॰ पु॰) चक्रमर्दक चकवँड़, पँवार।

तर्कित (स॰ त्रि॰) तर्क-क्त। १ विचारित सोचा हुआ। २ आलोचित, विचार किया हुआ। ३ सम्भावित अनुमान किया हुआ। ४ अनुमित विचारा हुआ अन्दाजा हुआ।

तर्किन् (स॰ त्रि॰) तर्कयति तर्क-णिनि। तर्कद्वारा मीमांसा करनेवाला।

तर्कीण (स॰ पु॰) तर्क-इनन्। तर्किन देखो।

तर्कीश (हि॰ स्त्री॰) तरकश देखो।

तर्कु (स॰ स्त्री॰) कृत उ निपातनात् साधु। सूत्रनिर्माण यन्त्र, तकला टेकुआ। इसके पर्याय—कर्पासनालिका तकुठी और सूत्रला है। (शब्दच॰)

तर्कुक (स॰ स्त्री॰) तर्कु स्वार्थे कन्। तई देखो।

तर्कुट (स॰ क्लो॰) तर्कयति सूत्रोत्पादकतया शोभते तर्क-अटन्। कर्त्तन, कातना।

तर्कुटी (स॰ स्त्री॰) तर्कुट स्त्रियां गौरा॰ ङीष्। तकुआ टेकुआ।

तर्कुपिण्ड (स॰ पु॰) तर्कुस्थित पिण्ड, मध्यपदलो॰। तकुवेकी फिरकी। इसके पर्याय—वर्त्तिनी, तर्कुपीठी, वतुर्ला है।

तर्कुपीठी (स॰ स्त्री॰) तर्कुस्थिता पीठी। तर्कुपिण्ड तकुवेकी फिरकी।

तर्कुम (हि॰ पु॰) १ ताड़का पेड़। २ ताड़का फल।

तर्कुशासन (स॰ पु॰) तर्कुं शास्ति शास् णिच्-ल्युट्। तर्कुचालनयन्त्र, चरखा।

तर्कुशाण (स॰ पु॰) तर्कोः शाणः, ६-तत्। सामान्य बड़ छोटा पत्थर जिसकी तकुवेको फिरकी पर शान चढ़ाई जाती है।

तर्क्य (स॰ त्रि॰) विचार्य, जिस पर कुछ सोच-विचार करना आवश्यक हो।

तर्क्षु (स॰ पु॰) तरक्षु पृषो॰ साधु। तरक्षु, तेंदुआ या चीता।

तर्क्ष्य (स॰ पु॰) यव क्षद् बाहुलकात् गुण। यवक्षार जवाखार नमक।

तर्खान—प्राचीन तुरकी भाषाकी एक सम्भ्रमसूचक उपाधि। तर्खान शब्दसे उनका बोध होता है जो उच्च वंशोत्पन्न हैं और जिनको किसी तरहका निषेध कर न देना पड़ता हो। प्राचीन तुरष्कभाषामें लिखित बहुतसे दस्तावेजोंमें तुर्क शब्दका उल्लेख देखनेमें आता है। इसका अर्थ आज्ञालिपि और सम्मानसूचक अनुज्ञापक लिपि है। तूरानीके अभिधानमें इसका अर्थ 'उच्च पदवी' लिखा है। मरवनि और तबरि लोग तर्खानकी जगह तर्खन लिखते हैं जिससे विशेष व्यक्तिका बोध करानेके लिए वे इस शब्दका प्रयोग करते हैं। चङ्गेज खाँको मारनेके लिए दो हार अमृने जो इन्तजाम किया था वह और कलमकको मालूम होते ही उन्होंने चङ्गेजसे कह दिया। उनके परामर्शसे जीवनकी रक्षा होनेसे चङ्गेजने दोनोंको तर्खानकी उपाधि प्रदान की। इनके सन्तानसन्तति भी तर्खान उपाधिसे विभूषित हैं। खुरासान और तुर्किस्तानमें इनका वास है।

भारतवर्षमें सिन्धुदेशको तरफ तर्खानवंश देखनेमें आता है। कहा जाता है, कि तैमूरने यह उपाधि दी थी। तुकलमियखान् जब तैमूर पर आक्रमण करनेके लिए अग्रसर हुए थे, उस समय अर्धुमगोंके अधीन एक सेनापति ओमरशाइखने उनकी गति रोक कर युद्धमें आत्मत्याग दिये। तैमूर अपनी आँखोंसे उनके वीरत्वको देख कर अतीव विस्मित हुए। उन्होंने अधुतैमूरके

आत्मीयवर्ग को 'तर्खान'को उपाधि दो। तभोसे सिन्धु-देशमें तर्खानवंशकी उत्पत्ति हुई है।

परगना प्रदेशमें भी तर्खानवंशियोंका वास है। ७०३ ई०में वहांके तर्खानोंने अत्यन्त समारोहके साथ कासमके सुलतानकी अभ्यर्थना की थी। कास्पीय सागरके पश्चिममें खजरके खाकनोंमें कर्मचारीविशेषको तुर्खान कहते हैं।

भारतमें तर्खान-वंशके लोग इस समय नसरपुर और ठट्टामें रहते हैं।

१५२१ ई०में सिन्धुदेशमें अर्घुनवंशियोंका आधिपत्य देखनेमें आता है। १५५४ ई०में इस वंशके शाह हुसेन-की अपुत्रक दशामें मृत्यु होने पर तर्खानवंशने अर्घुन-वंशका स्थानाधिकार किया। किन्तु ये कुछ ही दिन वहां राज्य करनेमें समर्थ हुए थे। १५९२ ई०में बाद-शाह अकबरने मिर्जा जानोबेगको परास्त कर सिन्धुदेश मुगल साम्राज्यमें मिला लिया था।

तर्ज (अ० स्त्री०) १ प्रकार, तरह, किस्म। २ रीति शैली, ढंग, ढब। ३ रचनाप्रकार, बनावट।

तर्जन (सं० क्ली०) तर्ज भावे ल्युट्। १ तिरस्कार, फट-कार। २ अवज्ञापूर्वक निर्देशकरण, घृणा करनेका कार्य। ३ भयप्रदर्शन, धमकानेका कार्य। ४ आस्फा-लन, ताडन, मार, फटकार। ५ क्रोध, गुस्सा।

तर्जना (हिं० क्रि०) डाटना, धमकाना, डपटना।

तर्जनी (सं० स्त्री०) तर्ज्यतेऽनया तर्ज करणे ल्युट्, तत. -स्त्रियां ङीप्। अङ्गुष्ठसमीपाङ्गुली, अँगुठेके पासकी उँगली। इसके दूसरा पर्याय प्रदेशिनी है।

तर्जनीमुद्रा (सं० स्त्री०) तन्त्रोक्त मुद्राभेद, तन्त्रकी एक मुद्रा। इसमें बायें हाथकी मुट्ठी बाँध तर्जनी और मध्यमाको फैलाते हैं।

तर्जिक (सं० पु०) तर्ज स्तर्जनमस्त्यत्र तर्ज-ठन्। देश-विशेष, एक देशका प्राचीन नाम, ताजिकदेश।

तर्जित (सं० त्रि०) तर्ज-क्त भर्त्सित, अपमानित, अना-दर किया हुआ।

तर्जुमा (अ० पु०) अनुवाद, भाषान्तर, उल्था।

तर्ण (सं० पु०) तर्णोति तृणादिकं भक्षयति तृण अच्। १ वत्स, बछड़ा। २ शालिधान्यविशेष, एक प्रकारका धान।

तर्णक (सं० पु०) तर्ण एव स्वार्थे कन्। १ सद्योजात-वत्स, तुरतका जन्मा गायका बछड़ा। २ शिशु, बच्चा।

तर्णि (सं० पु०) तरन्त्याकाशं पद्भिः तृ-नि। १ सूर्य। २ प्लव, बेड़ा।

तर्त्तरीक (सं० क्ली०) तीर्यतेऽनेन तृ-ईक्। फर्फरीका-दयश्च। उण् ४।२०। इति निपातनात् साधु। १ नौका, नाव। कर्त्तरि-ईक। (त्रि०) २ पारग, पार करनेवाला।

तर्त्तव्य (सं० त्रि०) तृ-तव्य। तरणीय, पार होने योग्य।

तर्दू (सं० स्त्री०) तरति प्लवते तृ-ऊ दुकागमश्च। शेदुकून। उण् १।११। दारुहस्तक, लकड़ीका हत्था।

तर्द्मन् (सं० पु०) तृद वा मनिन्। १ छिद्र, स्थान, सुराख। २ तर्दन प्रदेश।

तर्पण (सं० क्ली०) तृप-प्रीणने भावे ल्युट्। १ तृप्ति, प्रीणन सन्तोष होनेकी क्रिया। २ यज्ञकाठ। तृप्यन्ति पितरो येन तृप-करणे ल्युट्। ३ आहारविशेष। ४ नेत्रतर्पणानुष्ठान। ५ जलदान दे कर देवर्षि, पितृ, मनुष्य आदिको तृप्त वा परितुष्ट करनेका कार्य। यह तर्पण पञ्च महायज्ञके अन्तर्गत महायज्ञका भेद है।

तर्पण दो प्रकारका है—प्रधान तर्पण और अङ्ग-तर्पण। शातातपने प्रधान तर्पणका वर्णन इस प्रकारसे किया है,—

स्नातक द्विजगण शुचि हो कर प्रतिदिन देव, ऋषि और पितरोंका यथाक्रमसे तर्पण करें तथा विधवा स्त्रियाँ कुशतिलोदक द्वारा भर्ता और श्वशुरादिके नाम गोत्रका उल्लेख कर प्रतिदिन तर्पण करें।*

इनके मतसे अङ्गतर्पण इस प्रकार है—

स्नान तीन प्रकारका है—नित्य, नैमित्तिक और काम्य, तर्पण उसका अङ्ग है। प्रात्यहिक प्रातः और मध्याह्न सम्बन्धी स्नान नित्य है। ग्रहणादिके निमित्तसे जो स्नान किया जाता है, उसे नैमित्तिक कहते हैं।

* "तर्पणन्तु शुचिः कुर्यात् प्रत्यहं स्नातको द्विजः।
देवेभ्यश्च ऋषिभ्यश्च पितृभ्यश्च यथाक्रमम्॥
तर्पणं प्रत्यहं कार्यं भर्तुः कुशतिलोदकैः।
तत् पितुस्तत्पितुश्चापि नामगोत्रादिपूर्वकम्॥"
(आह्निकतत्त्व)

गङ्गा आदि तीर्थोंमें जो स्नान किया जाता है वह काम्य स्नान है। चाण्डालादिके स्पर्श, मद्यस्पर्श, मद्यपान, मैथुन, रुदन और अस्पृश्य स्पर्श करनेसे जो स्नान करते हैं, वह भी नैमित्तिक स्नान है। किन्तु ऐसे नैमित्तिक स्नानमें तर्पणादि अनुक्रिया नहीं की जाती। पूर्वोक्त नित्य नैमित्तिक और काम्यस्नान करनेसे ही तर्पण करना आवश्यकीय है। जो पुत्र नास्तिकताके कारण प्रतिदिन पितरोंका तर्पण नहीं करता पितृगण क्षुधार्त्त हो कर उसका देहके रुधिरको पीते हैं। अतएव यति यत्नपूर्वक प्रतिदिन तर्पण करे। स्नान करके तर्पण करना उचित है। इस नियमके अनुसार यदि किसी दिन शारीरिक असुस्थताके कारण प्रातः, मध्याह्न स्नान न किया जाय तो क्या उस दिन तर्पण करना निषिद्ध है? परन्तु वचनान्तरमें "तर्पण प्रकार कार्य" इत्यादि वचन द्वारा तर्पणकी नित्यता प्रतीत होती है।

"नास्तिक्यभावाद् यश्चापि न तर्पयति वै सुत।
पिबन्ति देहरुधिरं पितरो वै जलार्थिनः॥"
(योगी याज्ञवल्क्य)

तर्पणकी नित्यताके कारण "स्नान कर तर्पण करें" इस वचनके अनुसार प्रधान तर्पण मध्याह्न और सन्ध्याके बाद करना उचित है। क्योंकि ब्रह्मयज्ञान्त तर्पण मध्याह्नकालमें कहा गया है।

यदि प्रातःस्नान तर्पण करके मध्याह्नस्नान न कर सके, तो भी प्रधान तर्पण करना निषेध है या नहीं? इसके उत्तरमें शातातपने लिखा है, कि प्रातःस्नानानन्तर तर्पण करनेसे ही ब्रह्मयज्ञाधीन एवं यज्ञाङ्गगत प्रधान तर्पणकी भी सिद्धि होती है। मनुने कहा है-द्विजगण स्नान करके जल द्वारा पितरोंको जो तर्पण करते हैं उसी तर्पणके द्वारा ही उन्हें समस्त पितृयज्ञ क्रियाका फल प्राप्त होता है।

"यदेव तर्पयत्यद्भिः पितॄन् स्नात्वा द्विजोत्तमः।
तेनैव सर्वमाप्नोति पितृयज्ञक्रियाफलम्॥" (मनु)

मनुके मतसे—रात्रिके शेष चार दण्डमें आगामी रात्रिके प्रथम चार दण्डके भीतर स्नान करें, अर्थात् प्रातः और मध्याह्न स्नानका अवसर न रहनेके कारण अरुणोदय कालीन तर्पण द्वारा भी पितृयज्ञ तर्पणकी सिद्धि होती है। अरुणोदयके समय स्नान करनेसे सामवेदियों को मध्याह्न तर्पणके बाद पितृतर्पण करना चाहिये। पीछे मध्याह्नस्नान करने पर मध्याह्न सन्ध्या तर्पण करके पितृतर्पण करना चाहिये। प्रातःस्नान न करनेसे सूर्योदयके बाद जो स्नान होता है उसको पश्चात्स्नान कहते हैं, इसलिये पितृतर्पण मध्याह्न सन्ध्याके बाद करें।

प्रातःकालमें स्नान और तर्पण करके यदि पश्चात्स्नान न किया जाय तो मध्याह्नकालमें प्रधान तर्पण नहीं करना पड़ता। कारण—अरुणोदय तर्पणसे ही प्रधान तर्पणकी सिद्धि होती है। चन्द्रसूर्यग्रहण और अर्द्धोदय आदि योगोंमें स्नान करनेसे केवल तर्पण करना पड़ता है।

शरीर अस्वस्थ होने पर यदि प्रातः और मध्याह्नस्नान न किया जाय, तो मध्याह्नसन्ध्या तर्पणके बाद प्रधान तर्पण करना पड़ता है। किसी कारणसे जो व्यक्ति एक दिन प्रातः और मध्याह्नसन्ध्या कर पश्चात्स्नान करता है उसको मध्याह्नस्नानानन्तर तर्पण करना चाहिये। सन्ध्यादि करके यदि तीर्थादिमें स्नान किया जाय तो भी स्नानके बाद तर्पण करना चाहिये।

जिस जलाशयका जल समस्त प्राणियोंके लिये उत्सर्ग नहीं हुआ है और अभोज्य है अर्थात् म्लेच्छादि द्वारा खनित कूप पुष्करिणी आदिका जल और निपानके जलसे तर्पण न करना चाहिये। (कूपके पास गाय भैंस आदिके पीनेके लिये रचित जलाशयको निपान कहते हैं।)

"अप्रदत्तं चोद्धृतं यच्चाप्यन्त्यनिपानजम्।
तदूर्ध्वं क्षिप्य तत्तोयं नैव पितृकर्मणि॥" (आह्निकतत्त्व)

शूद्रके जलसे तर्पण न करना चाहिये। शूद्र और म्लेच्छ आदिके जलमें स्नान, आचमन, दान, होम और पितृतर्पण न करें। जो अज्ञ ब्राह्मण क्या होते समय शूद्रजल मिश्रित जलसे तर्पण करता है, उसको निश्चय घोर नरकमें जाना पड़ता है। ईंटके बने हुए स्थान पर [illegible] कर पितृतर्पण न करना चाहिये।

"इष्टकाचिते स्थाने पितॄन् न तर्पयेत्।" ([illegible])

आर्द्रवस्त्र हो कर तर्पण करना हो तो जलमें रह कर ही तर्पण करना चाहिये। आर्द्रवस्त्र परित्याग करने पर तीर पर बैठ कर तर्पण करें। किन्तु तीर्थ-

में शुष्कवस्त्र पहनें कर तर्पण करना हो, तो एक पैर जलमें और एक पैर स्थल पर रख कर तर्पण करें। जलमें उतर कर तर्पण करना हो तो नाभिमात्र जलमें रहें। स्थल पर तर्पण करनेके नियम कुछ विशेष है, यदि कोई उद्धृत जल द्वारा तर्पण करें तो उसमें तिल मिला लेवें। यदि तिलमिश्रित न किया जा सके, तो विचक्षण व्यक्ति को चाहिये कि, वह वामहस्तके द्वारा तिल ग्रहण करें।

तिलतर्पण करना हो तो अङ्गुष्ठ और अनामिका द्वारा वामहस्तसे तिल ग्रहण करें और पात्रस्थ करके पितरोंका तर्पण करें।

जो व्यक्ति तिलको रोमसंस्थ करके पितरोंका तर्पण करते हैं, पितृगण उस तर्पणके द्वारा तर्पित न हो कर उनका रुधिर और मल द्वारा तर्पित होते हैं।

"रोमसंस्थान् तिलान् कृत्वा यस्तु सन्तर्पयेत् पितॄन्।
पितरस्तर्पितास्तेन रुधिरेण मलेन च॥" (आह्निकतत्त्व)

वाम करमें जहां रोम न हों, वहीं तिल रखना चाहिये। किसी शुद्ध पात्रमें तिल रख कर तर्पण करना उचित है, ऐसा करनेसे लोमसे मिलनेकी सम्भावना नहीं। व्यवहार भी इसी तरहका देखनेमें आता है। विज्ञगण ताम्रनिर्मित तिलधानीको वामहस्तके मणिबन्धमें संयुक्त करके तर्पण किया करते हैं। तिलके बिना शुद्ध जलसे भी तर्पण हो सकता है। किन्तु तिलतर्पण अधिक फलदायक है।

कुश, रौप्य वा स्वर्णाङ्गुरीय दाहिने हाथकी अनामिकामें पहननी चाहिये। एक हाथसे तर्पण करना निषिद्ध है। यव और त्रिपत्र द्वारा देवतर्पण, तिल और कुशमोटक द्वारा पितृतर्पण करना विधेय है। तिलके अभावमें सुवर्ण और रजतयुक्त करके जल देवें। उसके अभावमें दर्भयुक्त जल द्वारा तर्पण करें। इसके सिवा अन्य प्रकारसे तर्पण न करें। तिलके अभावमें क्रमशः प्रतिनिधि कहे गये हैं। इससे ही स्पष्ट प्रतीयमान होता होता है, कि तिलयुक्त तर्पण ही प्रशस्त है। रविवार, शुक्रवार, द्वादशी और अमावस्यानिमित्तक श्राद्धके सिवा अन्य श्राद्धके दिन, सप्तमी, जन्मतिथि और संक्रान्तिमें तिल तर्पण न करें। किन्तु अयन और विषुवसंक्रान्ति, ग्रहणकाल, युगादि, प्रेतपक्ष (महालया) अमावास्यासे

पहलेकी प्रतिपदसे (महालया अमावास्या तक प्रेतपक्ष कहलाता है) और गङ्गादि तीर्थमें सब दिन तिल तर्पण किया जा सकता है। दाहान्तमें और प्रेतके उद्देश्यसे निषिद्ध दिनको भी तिलतर्पण करें। ऐसी दशामें किसी दिन भी तिलतर्पण निषिद्ध नहीं है।

सौवर्ण, ताम्र वा रौप्यमय अथवा खड्गनिर्मित पात्रसे पितरोंका तर्पण करनेसे सब कुछ अक्षय होता है।

सुवर्णादिके पात्रके बिना अथवा तिल और दर्भके बिना तर्पणोदक पितरोंके लिये तृप्तिकर नहीं होता। किन्तु ऐसा समग्र द्रव्यके अभावमें समझें। सौवर्ण आदि पात्रमें सुवर्ण द्वारा उदक पितृतीर्थको स्पर्श करके देना पड़ता है।

जलसे तर्पण करना हो तो पात्रमेंसे जल ले कर अन्य शुद्ध पात्रमें वा जलसे भरे हुए गड्ढेमें निक्षेप करें, वह्निःशून्य स्थानमें परित्याग न करें। तर्पणका जल जलपात्रसे एक बित्तस्त ऊँचेसे छोड़ना चाहिये।

उपवीती हो कर देवोंका, निवीती हो कर मनुष्योंका और प्राचीनावीति हो कर पितरोंका तर्पण किया जाता है। तर्पण करते समय वामहस्त बहुतर कुशयुक्त करें और दक्षिणहस्त कुशपत्रद्वय निर्मित पवित्रयुक्त करें। किन्तु गृहस्थियोंके लिये प्रतिदिन इन द्रव्योंका संग्रह कर कार्य करना अत्यन्त कठिन है; इसी लिए शास्त्रकारोंने एक सहज उपाय निर्धारित किया है। दहिने हाथकी तर्जनीमें रजत और अनामिकामें सुवर्ण धारण करें, ऐसा करनेसे ही कुशादि धारण करनेका कार्य हो जायगा।

"तर्जन्या रजतं धार्यं स्वर्णं धार्यमनामया।
कुशकार्यकरं यस्मात्तनुबन्धाः कुशाः कुशाः॥" (आह्निकतत्त्व)

सामगगणको चाहिये कि वे सनकादि दिव्यमनुष्यका तर्पण प्रत्यङ्मुख हो कर करें। सामगेतर लोग उदङ्मुख हो कर तर्पण करें। देवगण पूर्व, पितृगण दक्षिण, मनुष्यगण प्रतीची और असुरगण उत्तर दिशाको भजना किया करते हैं, इसलिए तर्पणादि कार्य भी उक्त दिशाओंकी तरफ मुंह करके करने चाहिये। देवोंकी प्रीतिके लिए तीन बार जलतर्पण करें और ऋषियोंके लिए एक बार। पिता, पितामह, प्रपितामह, मातामह,

प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह माता पितामही और प्रपितामही, इनको तीन बार पितृतीर्थ द्वारा तर्पण करे। किन्तु माताके अनुरोधसे मातामही प्रमातामही और वृद्धप्रमातामहीको एक बार तर्पण करना चाहिये।

इन बारह व्यक्तियोंमेंसे जो जीवित हों उनको छोड़ कर उनसे ऊँचे पुरुषको ग्रहण कर बारह संख्या पूर्ण करे। संन्यासी और पतित व्यक्तिके लिए भी ऐसा ही विधान समझें।

तदनन्तर विमाता ज्येष्ठ भ्राता पितृव्य, मातुल आदिका तर्पण करे। बान्धवोंके तर्पणके बाद सुहृदोंका तर्पण करे। सुहृद् यदि अबान्धव हों तो भी उनका तर्पण किया जा सकता है।

ब्राह्मणको असमर्थ होने पर भी भीष्माष्टमीमें भीष्म का तर्पण करना आवश्यक है। ब्राह्मण आदि जो वर्ण भीष्माष्टमीमें भीष्मको जल नहीं चढ़ाते, उनका एक वर्षमें कमाया हुआ पुण्य नष्ट हो जाता है।

'ब्राह्मणाद्यास्तु ये वर्णा दद्युर्भीष्माय नो जलम्।
संवत्सरकृतं तेषां पुण्यं नश्यति सत्तम ॥"

(आह्निकतत्त्व)

पहले देवतर्पण, फिर मनुष्यतर्पण पश्चात् मरीच्यादि ऋषितर्पण, उसके बाद अग्निष्वात्तादि पितरोंका तर्पण, अनन्तर चतुर्दश यमतर्पण करके पितरोंका तर्पण करे। पीछे रामतर्पण करें।

इन समस्त तर्पणोंमें असमर्थ होने पर ब्रह्ममुनि निर्दिष्ट संक्षिप्त तर्पण करे। इस संक्षिप्त तर्पणसे समस्त तर्पण सिद्ध होंगे।

स्त्री और शूद्र तर्पणमन्त्र ब्राह्मणके द्वारा पाठ करा कर खुद 'नमः नमः' उच्चारण करके जल चढ़ावें। किन्तु पित्रादिका नामोल्लेखपूर्वक जो वाक्य कहे जाते हैं उन्हें स्त्री और शूद्र कहेंगे। अनुपनीत और जीवत् पितृक व्यक्ति भी तत्पक्षके सिवा अन्य तर्पण नहीं कर सकते।

तर्पण करनेसे पहले स्नानवस्त्रको निचोड़ना न चाहिये। याज्ञवल्क्यने कहा है कि जो तर्पणके पहले स्नानवस्त्र निचोड़ते हैं, उनके पितृगण महर्षियोंके साथ निराश हो कर चले जाते हैं।

तर्पण प्रयोग—पहले जो समय कहा गया है, उस समयके अनुसार प्राचीनावीती और दक्षिणमुख हो कर कृताञ्जलि पूर्वक—

'ओं कुरुक्षेत्रं गया गङ्गा प्रभास पुष्कराणि च।
तीर्थान्येतानि पुण्यानि तर्पणकाले भवन्त्विह ॥"

यह मन्त्र पढ़ कर तीर्थ आवाहन करे। पीछे पूर्वमुख उपवीती हो कर देवतर्पण करें। 'ॐ ब्रह्मास्तृप्यतां, ॐ विष्णुस्तृप्यतां ॐ रुद्रस्तृप्यतां, ॐ प्रजापतिस्तृप्यतां' इत्यादि प्रत्येक देवताको नामके साथ देवतीर्थ द्वारा एक एक अञ्जलि जलप्रदान करें। इस प्रकारसे देवतर्पण करके—

"ओं देवा यक्षास्तथा नागा गन्धर्वाप्सरसोऽसुराः।
क्रूराः सर्पाः सुपर्णाश्च तरवो जम्भगाः खगाः ॥
विद्याधरा जलाधारास्तथैवाकाशगामिनः।
निराधाराश्च ये जीवाः पापे धर्मे रताश्च ये ॥
तेषामाप्यायनायैतद्दीयते सलिलं मया।"

यह मन्त्र पढ़ कर देवतीर्थके द्वारा एक अञ्जलि जल प्रदान करे। बादमें पश्चिममुख निवीती हो कर—

"ओं सनकश्च सनन्दश्च तृतीयश्च सनातनः।
कपिलश्चासुरिश्चैव वोढुः पञ्चशिखस्तथा ॥
सर्वे ते तृप्तिमायान्तु मद्दत्तेनाम्बुना सदा।"

यह मन्त्र दो बार पढ़ कर प्रजापतितीर्थके द्वारा दो अञ्जलि जल प्रदान करे। उसके बाद पूर्वमुख उपवीती हो कर 'ॐ मरीचिस्तृप्यतां, ॐ अत्रिस्तृप्यतां ॐ अङ्गिरास्तृप्यतां, पुलस्त्यस्तृप्यतां ॐ पुलहस्तृप्यतां, ॐ क्रतुस्तृप्यतां ॐ प्रचेतास्तृप्यतां ॐ वसिष्ठस्तृप्यतां ॐ भृगुस्तृप्यतां ॐ नारदस्तृप्यतां" यह कह कर मरीचिसे नारद पर्यन्त यथाक्रमसे प्रत्येकको देवतीर्थ द्वारा एक एक अञ्जलि जल चढ़ावे।

इसके उपरान्त दक्षिणमुख प्राचीनावीती हो कर ॐ अग्निष्वात्ताः पितरस्तृप्यन्तामिदं सतिलोदकं तेभ्यः स्वधा ॐ सोम्याः, ॐ हविष्मन्तः ॐ ऊष्मपाः ॐ सुकालिनः, ॐ बर्हिषदः ॐ आज्यपाः इनको पितृतीर्थ द्वारा सतिल एक एक अञ्जलि जल देवें। पीछे—

"ओं यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च ।
वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च ॥
औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने ।
वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः ॥"

इस मन्त्रको तीन बार पढ़ कर पितृतीर्थ द्वारा तीन अञ्जलि जल चढ़ावें । यदि समर्थ हो, तो चतुर्दश यमोंको प्रत्येकका नामोल्लेख कर तीन तीन अञ्जलि जल प्रदान करें ।

उसके उपरान्त तर्पण समाप्तिपर्यन्त दक्षिणमुख प्राचीनावीती हो कर पितृतीर्थके द्वारा तिलतर्पण करें, कृताञ्जलि हो कर—

"ओं आगच्छन्तु मे पितर इमं गृह्णन्त्वपोऽञ्जलिं ।"

इस मन्त्रको पढ़ कर पितरोंका आवाहन करें । पीछे "विष्णुरों अमुकगोत्र पिता अमुकदेवशर्मा तृप्यतामितत् सतिलोदकं तस्मै स्वधा ।" यह वाक्य तीन बार कह कर तीन अञ्जलि जल पितरोंको चढ़ावें । इस तरह पितामह, प्रपितामह, मातामह, प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहको भी सतिल तीन अञ्जलि जल देवें ।

"विष्णुरों अमुकगोत्रा माता अमुकी देवी तृप्यतामेतत् सतिलोदकं तस्यै स्वधा ।" इस प्रकार कह कर सतिल तीन अञ्जलि जल देवें ।

तत्पश्चात् पितामही और प्रपितामहीको भी इस तरहसे तीन अञ्जलि जल प्रदान करें । मातामही, प्रमातामही, वृद्धप्रमातामही, विमाता, पितृव्य, मातुल और भ्राता आदि सभीको एक एक अञ्जलि जल देवें ।

पितृतर्पण समाप्त कर भीष्माष्टमीमें भीष्मका तर्पण करना विधेय है । भीष्माष्टमीके अलावा भीष्मके तर्पण करनेकी जरूरत नहीं ।

भीष्मतर्पण—

"ओं वैयाघ्रपद्यगोत्राय साङ्कृतिप्रवराय च ।
अपुत्राय ददाम्येतत् सलिलं भीष्मवर्मणे ॥"

इस मन्त्रको पढ़ कर एक अञ्जलि जल चढ़ावें ।

"ओं भीष्मः शान्तनवो वीरः सत्यवादी जितेन्द्रियः ।
आभिरद्भिरवाप्नोतु पुत्रपौत्रोचितां क्रियां ॥"

इस मन्त्रके द्वारा भीष्मको नमस्कार करें । अनन्तर—

"ओं अग्निदग्धाश्च ये जीवा येऽप्यदग्धाः कुले मम ।
भूमौ दत्तेन तृप्यन्तु तृप्ता यान्तु परां गतिं ॥"

इस मन्त्रको पढ़ कर एक अञ्जलि जल देवें ।

"ओं ये बान्धवाबान्धवा वा येऽन्यजन्मनि बान्धवाः ।
ते तृप्तिमखिला यान्तु ये चास्मत्तोयकांक्षिणः ॥"

इस मन्त्रको पढ़ कर एक अञ्जलि जल देवें । तदनन्तर—

"ओं आब्रह्मभुवनाल्लोका देवर्षिपितृमानवाः ।
तृप्यंतु पितरः सर्वे मातृमातामहादयः ॥
अतीतकुलकोटीनां सप्तद्वीपनिवासिनां ।
मया दत्तेन तोयेन तृप्यंतु भुवनत्रयम् ॥"

इस मन्त्रसे तीन अञ्जलि जल दे कर

"ओं आब्रह्मस्तम्बपर्यंतं जगत्तृप्यतु ।"

इस मन्त्रसे तीन अञ्जलि जल चढ़ावें । तदुपरान्त—

"ओं ये चास्माकं कुले जाता अपुत्रा गोत्रिणो मृताः ।
ते तृप्यंतु मया दत्तं वस्त्रनिष्पीडनोदकम् ॥"

इस मन्त्रसे स्नानवस्त्र निचोड़ कर भूमि पर एक बार जल छोड़ना चाहिये ।

"ओं पिता स्वर्गः पिता धर्मः पिता हि परमं तपः ।
पितरि प्रीतिमापन्ने प्रीयंते सर्वदेवताः ॥"

इस मन्त्रसे पिताके चरणोंको नमस्कार करें । प्रति दिन तर्पण करनेमें अशक्त होने पर—

"ओं आब्रह्मस्तम्बपर्यंतं जगत्तृप्यतु ।"

इस मन्त्रसे तीन बार जलाञ्जलि दे कर तर्पण सम्पन्न किया जा सकता है ।

संक्षेपमें तर्पणके मन्त्रान्तर—

"आब्रह्मस्तम्ब पर्यंतं देवर्षिपितृमानवाः ।
तृप्यन्तु सर्वे पितरो मातृमातामहादयः ॥
अतीतकुलकोटीनां सप्तद्वीपनिवासिनां ।
आब्रह्मभुवनाल्लोकादिदमस्तु तिलोदकम् ॥"

शूद्र और यजुर्वेदियोंको तर्पणकालमें 'तृप्यतु' शब्दका प्रयोग करें, जैसे—"ब्रह्मा तृप्यतु" "सनकश्च सनन्दश्च" इस मन्त्रको उत्तरमुखी हो, पढ़ कर दो अञ्जलि जल चढ़ावें ।

'कुरुक्षेत्रं गया गंगा प्रभास-पुष्कराणि च ।
तीर्थान्येतानि पुण्यानि तर्पणकाले भवन्त्विह ॥"

इस मन्त्रके द्वारा पहले तीर्थ-आवाहन करना चाहिये।

गृहस्थ भोज्य तर्पण करके पितृतर्पण करे। और सब नियम सामवेदियोंके समान है।

ऋग्वेदियोंका तर्पण यजुर्वेदियों जैसा है सिर्फ अग्निष्वात्तादि पितरोंका तर्पण तीन बार करना पड़ता है। जन्माष्टमी तिथिमें सिर्फ जलसे ही पितरोंका तर्पण किया जाय, तो भी वर्ष के गया श्राद्धका फल होता है।

(आह्निकतत्त्व)

तन्त्रके मतसे तर्पण तीन प्रकारका है—१ आन्तर २ मानस और ३ बाह्य। होम कर्म और जपकर्मके न सह से क्योंकि जो परम अमृत, उस दिव्य अमृतसे परम देवताका जो तर्पण किया जाता है उसको आन्तर तर्पण कहते हैं। मानसको सम्पन्न कर अर्थात् चित्त देवता का तर्पण करें उस देवताके मनमें होम हो कर जो तर्पण किया जाता है उसका नाम है मानस तर्पण। विशुद्ध आसनमें बैठ कर तर्पण आरम्भ करना चाहिये। पहले गुरुका तर्पण कर पीछे मूलदेवीका तर्पण करे। पहले होमादि समाप्त करे, पश्चात् विद्या और कुलसुन्दरिता (?) शुद्ध करके मूलदेवीका नाम ले कर "तर्पयामि नमः" इस पदका प्रयोग करे।

कुलचारि द्वारा देवता, ऋषि और कापियोंका तर्पण करे। तर्पणके आदिमें "आम्नाय" इस पदका प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकारसे विष्णु, रुद्र, प्रजापति, अग्निमन्, शिव यम और भैरवोंका तर्पण करे। तर्पणके प्रारम्भमें 'त्रिपुर पूर्व' इस पदका प्रयोग करना आवश्यक है। *

(त्रि०) ६ तृप्तिपूरक।

---

* "तर्पणञ्च त्रिधा प्रोक्तं आन्तरं तच्छृणुष्व मे।
होमान्तेऽप्यथवा जपाद् स्वकीयं अमृतप्लावनम्॥
देवामृतेन दिव्येन तर्पयेत् परदेवताम्।
आन्तरं तर्पणं होतव्यमथो शृणु मानसम्॥
मानसं तन्मयम् कृत्वा यथा सम्पर्कितास्मयात्।
तर्पणं सर्वकार्येषु तस्मात् विरचयन्नत्र॥
उपविष्टः शुचौ देशे तदारम्भमारभेत्।
तर्पणन्तु गुरवादौ मूलदेवीञ्च तर्पयेत्।
होमन्तं समाप्य विद्या कुलसुन्दरिता तथा।
ततो देव्याः स्वनाम्नैव तर्पयामि नमः पदं॥
देवानृषीन् पितॄंश्चैव तर्पयेत् कुलचारिणा।
तर्पणादौ प्रयुञ्जीत आम्नायम् इति भैरव॥
तथैव परमेशानि विष्णुं रुद्रं प्रजापतिम्।
एवं भगवन् प्रतर्प्यैव त्रिदशानि च भैरवान्॥
आम्नायं पूर्वतनाद्या त्रिपुरा भैरव आम्नायम्।
आदौ त्रिपुरपूर्वं च तर्पणे विनियोजयेत्॥"

(तन्त्रतत्त्व)

तर्पणघाट—दिनाजपुर जिलेके मरदह परगनेके अधीन एक ग्राम। परगनेमें यही ग्राम सबसे मनहर है और करतोया नदीके किनारे अवस्थित है। इसके पास दो अनेक गुफा और प्राचीन वन हैं। प्रतिवर्ष चैत्र या वैशाख मासमें यहाँ एक भारी मेला लगता है जिसमें प्रायः ३।४ हजार मनुष्य इकट्ठे होते हैं।

तर्पणमञ्जरी (सं० स्त्री०) 'क्रियामञ्जरी' नामक ग्रन्थमें उल्लिखित एक रत्न।

तर्पणी (सं० स्त्री०) तृप णिच् करणे ल्युट् ङीप्। १ पद्म कन्दक विरलोका पेड़। २ गङ्गा। (त्रि०) ३ प्रीति दायिनी, तृप्ति देनेवाली।

तर्पणीय (सं० त्रि०) तृप्तिके योग्य।

तर्पणेच्छु (सं० पु०) तर्पण इच्छति इष-उ निपातनात् साधु। १ भीष्म। (त्रि०) २ तर्पणाकांक्षी जो तर्पण करनेमें इच्छुक हो।

तर्पयितव्य (सं० त्रि०) तृप णिच्-तव्य। तृप्तिके योग्य।

तर्पयन्ती (सं० स्त्री०) तर्पयति प्रीणयति तृप णिच् णिनि, ततो ङीप्। पद्मचारिणी लता स्वर्ण कमलिनी।

तर्पित (सं० त्रि०) तृप णिच् क्त। प्रीणित, सन्तुष्ट किया हुआ।

तर्पिन् (सं० त्रि०) तृप-णिच्-णिनि। १ प्रीणयिता सन्तुष्ट करनेवाला। २ तर्पण करनेवाला।

तर्पिणी (सं० स्त्री०) तृप णिच् णिनि ङीप्। पद्मचारिणी। कहीं कहीं तर्पिणी ऐसा भी पाठ देखा जाता है जिसका अर्थ भी यही है। तर्पिणी करिरादि०। रक्षण तर्पिणी। स्वार्थे कन्। तर्पिणिका, तर्पिणिका।

तर्मूल (हि० पु०) तरबूज देखो।

तर्मन् (सं० क्लो०) तरति तॄ-मनिन् । सर्वधातुभ्यो मनिन्। उण् ४।१४४ । यूपाग्र, यज्ञके काठका अलगा भाग ।

तर्य (सं० पु०) ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम ।

तर्वट (सं० पु०) तर्वति द्रुतं गच्छति तर्व बाहुलकात् अटन् । १ वत्सर, वर्ष । २ चक्रमर्द, चकवँड, पँवार ।

तर्रा (हिं० पु०) चाबुकका फीता ।

तर्राना (हिं० पु०) एक प्रकारका गाना । तराना देखो।

तर्री (हिं० स्त्री०) प्रत्येक ऋतुमें होनेवाली एक प्रकार की घास।

तर्ष (सं० पु०) तृष तृष्णायां भावे घञ् । १ अभिलाष इच्छा । २ तृष्णा, चाह । ३ प्लव, बेड़ा । ४ समुद्र । ५ सूर्य ।

तर्पण (सं० क्लो०) तृष भावे ल्युट् । १ पिपासा, तृष्णा प्यास । २ अभिलाष, इच्छा।

तर्षित (सं० त्रि०) तर्षोऽस्य जातः। तर्ष तारका० इतच्। १ तृषित प्यासा। २ जाताभिलाष, वाञ्छित, चाहा हुआ।

तर्षुल (सं० त्रि०) तृष-उलच् । तृष्णायुक्त, जिसे प्यास लगी हो।

तर्षावत् (सं० त्रि०) तृषावत् वेदे दृषो० साधुः। तृषित, प्यासा।

तर्हन् (सं० पु०) अनिष्ट करना, बुराई करनेकी क्रिया ।

तर्हि (सं० अव्य०) तद्-र्हिल् । उस समय, तब ।

तल (सं० पु०-क्ली०) तलति तल-अच् । १ अधोभाग, पेंदा, तला । २ पाताल । ३ पृष्ठदेश, किसी वस्तुका बाहरी फैलाव । ४ मूलदेश, वह स्थान जो किसी वस्तुके नीचे पड़ता हो । ५ हथेली । ६ पैरका तलवा । ७ मध्यदेश । ८ स्वरूप, स्वभाव । ९ कानन, जङ्गल । १० गर्त, गड्ढा । ११ ज्याघातवारण, चमड़ेका बना जो धनुषकी डोरीकी रगड़में बचनेके लिये बाईं बाँहमें पहना जाता है । १२ घरको छत पाटन । १३ कार्य-बीज । १४ थप्पड़, तमाचा । १५ तालवृक्ष ताड़का पेड़ । १६ खड्गादिमुष्टि, तलवार इत्यादिका मूठ । १७ मध्य हस्त द्वारा तन्त्रीवादन, बाएँ हाथसे वीणा बजानेकी क्रिया । १८ गोधा, गोह । १९ कलाई पहुँचा । २० नरकविशेष, एक नरकका नाम । इस नरकमें व्यभिचारी, हत्याकारी इत्यादि वास करते हैं । २१ आधार, सहारा । २२ महादेव । २३ वालिश्त, बित्ता । २४ जलके नीचेकी भूमि । २५ वक्ष, छाती ।

तलक (सं० क्लो०) तलेन गभीरगर्त्तेन कायति कै-क। १ पुष्करिणी, ताल, पोखरा। २ फलविशेष, एक फलका नाम ।

तलकर (सं० पु०) १ एक प्रकारका कर या लगान । यह कर मुर्शिदाबाद जिलेमें प्रचलित है । सूखे तालाओंकी जमीनके स्वत्वको तलकर कहते हैं ।

२ मुर्शिदाबाद जिलेके एक बिलका नाम । इस जिलेमें जितने बिल हैं सबसे यही बिल बड़ा है । बहरमपुरसे कई मील पश्चिमको ओर जानेसे ही यह बिल देखा जाता है ।

तलकाड—१ महिसुर राज्यमें महिसुर जिलेके अन्तर्गत एक तालुक ।

२ उक्त तालुकका प्राचीन नगर । यह अक्षा० १२°११' उ० और देशा० ७७°२' पू० पर महिसुर शहरसे २८ मील दक्षिण-पूर्वमें कावेरी नदीके किनारे अवस्थित है । पूर्व समयमें यह नगर तलकाडु, तल्काड, तथा तालकाड, नामसे भी प्रसिद्ध था । लोकसंख्या प्रायः ३८५७ है ।

इस नगरमें कावेरी नदीके एक किनारे बहुतसे शैव-मन्दिर देखे जाते हैं । उक्त मन्दिरोंका सर्वांश बालूसे ढका हुआ है । कावेरी नदीके दूसरे किनारे जो मन्दिर विद्यमान है, उसके विषयमें निम्नलिखित दन्तकथाएँ प्रसिद्ध हैं । किसी समय एक भिक्षुक महादेवकी अर्चनाके लिये तलकाडमें आये हुए थे । यहाँ आ कर वे बड़े ही असमञ्जसमें पड गये । असंख्य शिवमन्दिर देख कर वे सोचने लगे, कि यदि सब मन्दिरमें पूजा की जाय तो पूजाके जितने उपकरण उनके पास सञ्चित हैं, उनमेंसे कुछ भी नहीं हो सकता, अथवा सब मन्दिरमें पूजा किये बिना भी नहीं बनता, क्यों कि यदि वे किसी मन्दिरमें अर्चना न करें, तो उस मन्दिरकी देवमूर्त्ति असन्तुष्ट हो जायगी । ऐसा सोचते सोचते अन्तमें उन्होंने संग्रहीत अर्थसे उरद खरीदा । वे एक एक उरद प्रति-मन्दिरमें उत्सर्ग करने लगे । किन्तु आश्चर्य है कि जब एक मन्दिरमें उपासना बाकी रह गई, तब सब उरद

नष्ट हो गया। इस पर यह भिक्षुक बहुत ही चिन्तित हो पड़े। जिस मूर्ति की पूजा न हुई, उसे वे नदीके दूसरे किनारे उठा ले गये इस ख्यालसे कि दूसरी दूसरी मूर्तियाँ उन पर अपनी प्रधानता कर न सकें।

प्राचीन तलकाड़ नगरका अधिकांश बालूसे ढक गया है। यह बालूराशि छोटे पहाड़की भाँति प्रायः १ मील लम्बी है। प्रतिवर्ष १० फुटके हिसाबसे यह बालूराशि बढ़ती जा रही है। इस बालूकास्तूपसे ३० मन्दिर लोप हो गये हैं। कुछ मन्दिरोंमेंसे दोके शिखर अब भी दीख पड़ते हैं। किसी किसी पर्वोपलक्षमें कीर्तिनारायणके मन्दिरकी बालुकाराशि कुछ कुछ अलग की जाती है। इस नगरके प्रायः सभी अंश बालुकामय हैं। वर्तमान अवस्था देखनेसे अनुमान करते हैं कि शीघ्र यह भी लोप हो बालुकाच्छादित हो जायगा। स्थानीय लोगोंका कहना है, कि इस नगरकी पवित्र रानीने यह स्थान बालूमें परिणत होगा ऐसा शाप दे कर कावेरी नदीमें अपना प्राणत्याग किया था।

तलकाड़के अधिवासियोंमें अधिकांश हिन्दू हैं। १८६८ ई० तक तलकाड़ नरसीपुर तालुकका प्रधान शहर था। संस्कृत भाषामें तलकाड़को दलवन कहते हैं। दलवनपुर नामसे भी इसका उल्लेख देखा जाता है।

तलकाड़का प्राचीन इतिहास नहीं मिलता और अगर मिलता भी है तो २८८ ई०से [illegible] ई०में गङ्गवंशीय क्षत्रियोंने तलकाड़में अपनी राजधानी स्थापन की। ९वीं शताब्दीमें इस वंशके किसी दूसरे राजाने तलकाड़का दुर्गादि संस्कार किया। ८वीं शताब्दीके अन्तमें चोल-राजगण यहाँ शासन करते थे। यह शहर और चोल राजाओंके अधीन भी कुछ काल तक था। १०वीं शताब्दीको यहाँ हयसाल बल्लाल वंशकी राजधानी थी। १६वीं शताब्दीमें पुनः गङ्गवंशको अधपतनका इस नगरमें आदरमें लगे। विजयनगरके पराक्रमसे ही यह स्थान फिरसे महीशूरके हाथ लगा था। किन्तु इस वंशके लोभसे अधिक राजा तलकाड़में राज्य न कर सके। बाद यह विजयनगरके किसी करदराजाके अधीन आ गया। अन्तमें १६१० ई०को महिसुरके हिन्दूराजाने युद्धमें विजयी हो कर तलकाड़ पर अधिकार कर लिया। १८८८ ई०में यहाँ म्युनिसपालिटी स्थापित हुई है।

तलकावेरी—कावेरी नदीका उत्पत्तिस्थान। यह कुर्ग प्रदेशमें पश्चिमघाट पर्वतके ब्रह्मगिरि शृङ्गमें अक्षा० १२° २३´ १०´´ उ० और देशा० ७५° ३४´ १०´´ पू०में अवस्थित है। यहाँ एक देवमन्दिर है। अनेक हिन्दूयात्री प्रतिवर्ष यहाँ आते हैं। कार्तिक अथवा अगहन महीनेमें मकरस्नान पर्वोपलक्षमें बहुतसे लोग स्नान करनेको यहाँ आते हैं। इस समय कुर्गके प्रत्येक परिवार स्नान करनेके लिये एक एक प्रतिनिधि भेजते हैं। प्रतिवर्ष मन्दिरमें नवमस्तका प्रायः २११५) रु० खर्च होता है।

तलकी (हिं० स्त्री०) पञ्जाब, अवध, बङ्गाल, मध्यप्रदेश तथा मन्द्राजमें मिलनेवाला एक पेड़का नाम। इसका काठ लाल और कुछ कुछ भूरा होता है और चीजोंके सामान इत्यादि बनाने तथा मकानोंमें लगानेके काममें आता है।

तलकोट (सं० पु०) वृक्षविशेष एक पेड़का नाम।

तलकोन—मन्द्राजके कड़ापा जिलेके अन्तर्गत कामलपाड़ तालुकका एक मन्दिर, जलप्रपात और उपत्यका। यह अक्षा० १३° ४० उ० और देशा० ७८° १४´ पू०में [illegible] पहाड़ पर अवस्थित है। इसके आस पासमें बाघ और रीछकी बस्ती होती है। समूचा पहाड़ घने जङ्गलसे आच्छादित है जिसमें कई तरहके हरिन और सूअर पाये जाते हैं। मन्दिर भी इसीके बीच अवस्थित है। एक ओर जलप्रपात कलकल शब्द करता हुआ बह रहा है। इसके पास ही दो विशाल पत्थरके दरख्त हैं जिन्हें लोग राम और लक्ष्मण नामसे पुकारते हैं। ऊपर जानेको जितनी राहें गई हैं सभी बड़ी भयानक हैं और हमेशा उनको जानवरोंका डर बना रहता है। जलप्रपात ७० या ८० फुट नीचे जमीन पर गिरता है। कहते हैं, कि इस जलप्रपातमें स्नान करनेसे सभी पाप छूट जाते हैं।

शिवरात्रिके उपलक्षमें अनेक यात्री दूर दूर देशोंसे यहाँ आते हैं। यात्रियोंमें विशेष कर स्त्रियोंकी संख्या ही अधिक रहती है। प्रवाद है, कि इस प्रपातमें स्नान कर एक मन्दिरमें पूजा करनेसे बन्ध्या भी पुत्रवती होती है तथा जिनको केवल लड़की ही होती है, वे भी

यहांके प्रभावसे पुत्र प्रसव करती हैं। सचमुच यहांका दृश्य देखने योग्य है।

तलगङ्ग—१ पञ्जाबके अटक जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३२°३४' और ३३°१२' उ० तथा देशा० ७१°४८' और ७२°३२' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ११८८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ८२५८४ है। इसमें ८६ ग्राम लगते हैं। लवणके पर्वतसे यह तहसील कहीं कहीं विच्छिन्न हो गई है। मुसलमान, हिन्दू, सिख, ईसाई प्रभृति इस स्थानमें वास करते हैं। मुसलमानोंकी संख्या सबसे अधिक है।

गेहूँ, जौ, बाजरा, ज्वार, लुन्दरी, उरद और रूई यहांके प्रधान उत्पन्नद्रव्य हैं।

राजस्व एक लाख रुपयेसे अधिक है। इस तहसीलमें एक दीवानी, एक फौजदारी विचारालय और २ थाने हैं। एक तालुकादार सब प्रकारके विचारकार्य करते हैं।

२ पञ्जाबके अटक जिलेके अधीन तलगङ्ग तहसीलका प्रधान शहर। यह अक्षा० ३२°५५' उ० और देशा० ७२°२८' पर पू० झेलम नगरसे ८० मील उत्तर-पश्चिम कोणमें अवस्थित है। इस शहरमें म्युनिसपलटी-का बन्दोबस्त है। लोकसंख्या प्रायः ६७०५ है, जिनमें मुसलमानोंकी संख्या सबसे अधिक है।

१६२५ ई०के प्रारम्भमें किसी अवान सर्दारने यह नगर स्थापन किया, तभीसे इसी शहरमें स्थानीय राजकार्य चलाया जाता है। सिखके राजत्वकालमें तथा वृटिश शासनकालमें भी इस स्थानसे विचारालयादि स्थानान्तरित न हुए। यह शहर एक मालभूमिके ऊपर बसा हुआ है। कई एक गुफा हो कर नगरका जल निकास होता है।

तलगङ्गके निकटवर्त्ती स्थानमें भिन्न भिन्न प्रकारके अनाज उत्पन्न होते हैं। यहांका व्यवसाय बहुत विस्तृत है। यहां एक प्रकारका जूता तैयार होता है। जूतेमें सुनहरी जड़ाऊका काम किया हुआ रहता है, जो दूसरे दूसरे प्रदेशोंमें भेजे जाते हैं। पञ्जाबकी स्त्रियां इस जूतेको काममें लाती हैं।

सिख-आधिपत्यके समय सरदार जिस दुर्गमें रहते थे, वह मट्टीका बना हुआ है। अभी इस दुर्गमें पुलिस और तहसीलकी कचहरी है।

अङ्गरेजके शासनकालमें बहुत दिनों तक इस स्थानमें एक सैन्यावास था। किन्तु १८८२ ई०में वह यहांसे उठा दिया गया।

शहरमें एक स्कूल और एक दातव्य औषधालय है।

तलगू (हिं० स्त्री०) तेलङ्ग देशकी भाषा।

तलवखा (हिं० पु०) तहखाना।

तलघाट—मन्द्राज विभागके सालेम जिलेका दक्षिणांश। पहले यह प्रदेश कोङ्गु देशके अन्तर्गत था। कोंगुवंशीय वा गङ्गराजगण चेरराजाओंके पहले इस प्रदेशमें शासन करते थे।

९वीं शताब्दीमें कोङ्गुवंशीय राजाओंने दुर्ग तक तथा ८वीं शताब्दीमें तुङ्गभद्रा नदीतीरस्थ हरिहर तक अपना राज्य फैलाया था। ८८४ ई०में ये लोग पल्लववंशसे अधिकारच्युत किये गये। ११वीं शताब्दीके मध्य चोलराजाओंके अधीन कई एक सामन्त प्रबल हो उठे। इनमेंसे हयशाल वंशीय किसी सामन्तने १०८० ई०में सालेम प्रदेश पर अधिकार किया। १३१० ई०में यह प्रदेश मुसलमानोंके हाथ लगा। कुछ कालके बाद यह विजयनगर राज्यमें मिला लिया गया। १६वीं शताब्दीके अन्तको इस प्रदेशमें नायकोंका आधिपत्य रहा। १७९९ ई०में श्रीरङ्गपत्तनके अवरोधके बाद यह प्रदेश सदाके लिये वृटिश राज्यके अन्तर्भुक्त किया गया।

तलचेरी—मन्द्राज विभागके अन्तर्गत मलवार जिलेके कोत्तयम् तालुकका एक शहर और बन्दर। यह अक्षा० ११°४५' उ० और देशा० ७५°२८' पू०के मध्य कालिकट शहरसे २४ मील और मन्द्राजसे रेल द्वारा ४५७ मील पर अवस्थित है। इस शहरमें म्युनिसपालिटिका प्रबन्ध है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई प्रभृति भिन्न भिन्न धर्मके लोग इस शहरमें वास करते हैं। हिन्दूकी संख्या सबसे अधिक है। इस नगरको तेल्लिचेरी और तलसेरी भी कहते हैं।

तलचेरी मलवार विभागका एक उपविभाग है। इस स्थानमें उत्तर मलवार जिलेकी अदालत, कारागार,

मुख्य कार्यालय, गवर्मेण्टके अन्यान्य कार्यालय तथा बहुत-से वाणिज्य कार्यालय हैं। शहर साफसुथरा और देखनेमें सुन्दर है। यह ढालुआ पहाड़ीके ऊपर बसा हुआ है। पहाड़ समुद्र तक फैला हुआ है। निकटवर्ती स्थानके साथ शहरका भूपरिमाण ५ वर्गमील है। एक समय इसके चारों ओर एक दृढ़ महीका प्राचीर शोभा देता था। नगरके उत्तरमें तलचेरी दुर्ग है, जो आज तक भी सुदृढ़ भावमें विद्यमान है। यह दुर्ग अभी कारागार रूपमें व्यवहृत होता है। दक्षिण-पूर्व और उत्तर-पश्चिम भागमें दो समचतुर्भुजाकार मैदान हैं। दक्षिण-पूर्व मैदानमें एक कबरोंकी शोभा देखा जाता है। उत्तरकी ओर एक दूसरा मैदान है, जो दुर्गसे १६० गजकी दूरीमें एक दृढ़ प्राचीर दुर्गको अनवच्छिन्न शोभाको रक्षा करता है। इस प्राचीरमें कहीं कहीं बन्दूक छोड़नेका छेद था।

मरिचा, इलायची और चन्दनकाठ इस स्थानसे दूसरे दूसरे स्थानोंमें भेजे जाते हैं। यहाँकी रफ्तनी आमदनी से दूनी है।

वार्षिक इस्तियात प्राय १२७१९ रु० है।

१६८३ ई०में इष्ट इण्डिया कम्पनीने मिर्च और इलायचीका व्यवसाय करनेके लिये यहाँ एक वाणिज्य कोठी खोली थी। १७०८से १७६१ ई० तक कई बार कम्पनीको चिरक्कलके राजा तथा कालीघ दूसरे दूसरे जमींदारोंसे तलचेरी और उसके समीपमें बहुतसी जमीन मिली थी। उन्हें जमींदारीमें राजस्व वसूल तथा विचारादि करनेका अधिकार भी दिया गया था। हैदर अलीने कम्पनीकी बहुतसी अधिकृत जमीन दखल कर ली। १७६६ ई०में इस कोठीने रेसिडेन्सीका आकार धारण किया। १७८० ई०से १७८२ तक यह प्रदेश हैदर अलीके सेनापति सरदारखाँके अधीन अवरुद्ध था। अबर्क्रोम्बीने आ कर इसे उद्धार किया। मलिकपुरमें अंग्रेजी सेना तलचेरीसे बाढ़ पर्यन्त पार हुई थी। बहादुरके बाद इस स्थानमें उत्तर मलबारके सुपरिण्टेण्डेण्टका कार्यालय और प्रादेशिक शासन सभा स्थापित हुई। लोकसंख्या प्राय २७८८६ है।

तलछट (हिं० स्त्री०) किसी पदार्थके नीचे बैठी हुई तलौंछ, गाद।

तलताल (सं० पु०) तलेन करतलेन ताल्यते ताड़ कर्मणि घञ् उपपदस०। करतल द्वारा वादनीय वाद्यभेद, हथेलीसे बजानेका एक प्रकारका बाजा।

तलत्र (सं० क्ली०) तलं त्रायते त्रै-क। चमड़ेका बना हुआ दस्ताना।

तलत्राण (सं० क्ली०) तलं करतलं त्रायते त्रै करणे ल्युट्। करतलरक्षक चमड़ेका बना हुआ दस्ताना।

तलध्वनि (सं० पु०) तलस्य ध्वनिः ६ तत्। करतलका शब्द।

तलना (हिं० क्रि०) कड़कड़ाते हुए घी और तेलमें डाल कर पकाना।

तलपट (हिं० वि०) नाश, बरबाद, चौपट।

तलप्रहार (सं० पु०) तलेन प्रहारः ३ तत्। तमाचा, थप्पड़।

तलफ (अ० वि०) नष्ट, बर्बाद।

तलफना (हिं० क्रि०) १ बेचैन होना, छटपटाना। २ व्याकुल होना, विकल होना।

तलफी (फा० स्त्री०) १ बरबादी, बरबादी। २ हानि।

तलब (अ० स्त्री०) १ अन्वेषण, खोज तलाश। २ इच्छा, चाह, रुचि। ३ आवश्यकता, माँग। ४ बुलावा, बुलाहट। ५ तनखाह, वेतन।

तलबगार (फा० वि०) चाहनेवाला, माँगनेवाला।

तलबाना (फा० पु०) १ एक प्रकारका खरचा। यह गवाहोंको तलब करनेके लिये टिकटके रूपमें अदालतमें दाखिल किया जाता है। २ समय पर मालगुजारी नहीं देनेके कारण इसकी वसूली जमींदारको ओरसे किये जानेका खरचा।

तलबी (अ० स्त्री०) १ बुलाहट। २ माँग।

तलबेली (हिं० स्त्री०) छटपटाहट, छटपटी, बेचैनी।

तलभेद (सं० पु०) तलस्य भेदः ६ तत्। वह जिसके पेंदेमें छेद हो गया हो।

तलमल (सं० पु०) तलछट, तलौंछ, गाद।

तलमलाहट (हिं० स्त्री०) व्याकुलता, बेचैनी।

तलमीन (सं॰ पु॰) तले जलनिम्ने स्थितो मीनः। जल-निम्नस्थित मत्स्य, झींगा मछली।

तलम्ब—पञ्जाबके मुलतान जिलेके अन्तर्गत कबीरवाला तह-सीलका एक शहर। यह अक्षा॰ ३०°३१´ उ॰ और देशा॰ ७१°१५´ पू॰के मध्य मुलतान शहरसे ५२ मील उत्तर-पूर्वमें तथा चन्द्रभागा नदीके बायें किनारेसे २ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। शहरमें म्युनिसपालिटी है। लोक-संख्या प्रायः २५२६ है।

शहरसे १ मील दक्षिणमें एक प्राचीन दुर्ग था। उस दुर्गकी ईंटोंसे तलम्बके कई एक राजभवन बनाये गये हैं। दुर्गकी ईंट प्राचीन मुलतानकी अट्टालिकाकी ईंटसी हैं। बहुतोंका मत है, कि अलेकसन्दर इसी स्थान पर चन्द्रभागा उत्तीर्ण हुए थे और यहीं उन्होंने मल्लियोंको पराजित कर इस प्रदेश पर अधिकार जमाया था यह प्रदेश एक बार महमुदके सी हाथ लगा था। तैमूरने भारतवर्षमें आ कर तलम्बको लूटा तथा अधिवासियोंकी हत्या की किन्तु दुर्ग नष्ट नहीं किया।

तलम्बमें अनेक ध्वंसावशेष देखे जाते हैं। कहा जाता है, कि महमुद लङ्गके समय (१५१०-१५२४)-में चन्द्रभागा नदीकी गति परिवर्त्तित हो कर यह स्थान परित्यक्त हो गया है। यहांका विस्तीर्ण ध्वंसावशेष एक नगर सरीखा दीख पड़ता है, जो दक्षिणकी ओर ऊँचे दुर्गसे सुरक्षित है। बहिर्भागका मट्टीका प्राचीर २०० फुट मोटा और २० फुट ऊँचा है। इस प्राचीरके ऊपर प्रायः समान ऊँचाईका एक दूसरा प्राचीर देखनेमें आता है। पहले दोनोंका सम्मुखभाग बड़ी बड़ी ईंटोंसे समाच्छादित था।

वर्त्तमान तलम्ब ग्राममें एक पुलिस, एक डाकघर, एक स्कूल, एक चिकित्सालय और एक सराय है। ये सब एक अट्टालिकाके मध्य अवस्थित हैं।

शहरसे प्रायः ½ मील दक्षिण-पश्चिममें एक छावनी स्थान और एक सुन्दर कूप है।

तलयुद्ध (सं॰ क्ली॰) तलस्य चपेटस्य आघातेन युद्धं। चपेटाघात द्वारा युद्ध, मुक्का-मुक्कीसे लड़ाई करनेकी क्रिया।

तललोक (सं॰ पु॰) तलस्थो लोकः, मध्यपदलो॰। पाताल।

तलव (सं॰ त्रि॰) तलं हस्तादि तलं वादित्र निष्पन्ति वा-क। तलवाद्यकारक।

तलवकार (सं॰ पु॰) १ सामवेदकी एक शाखा। २. एक उपनिषद्‌का नाम।

तलया (स्त्री॰ पु॰) पैरके नीचेका भाग।

तलवा—भागलपुर जिलेकी एक छोटी नदी। पहले यह नदी बहुत बड़ी थी। स्थान स्थान पर इसका प्राचीन गर्भ देखा जाता है जिसकी चौड़ाई लगभग १५से २० चेनकी है। देखनेसे मालूम पड़ता है कि अभी जिस स्थानसे तिलजूगामें जल आता है, पहले उसी स्थानसे इस नदीमें जल आता था। वर्षा ऋतुके बाद यह नदी कहीं कहीं सूख जाती है। नदीगर्भस्थ शुष्क स्थानमें फसल उपजाई जाती है। मट्टी पंकसे आच्छादित रहनेके कारण फसल भी खूब लगती है। यह नदी निःसन्दपुरकूरा पर गनेके पश्चिमकी ओर प्रवाहित है। वर्षा कालमें सोनबर्षा और बैजनाथपुर तक बोझसे भरी हुई नावें आती जाती हैं। यह नदी पर्वान और लोरनके साथ मिली है।

तलवार (स्त्री॰ स्त्री॰) १ खड्ग, कृपाण। असि, खड्ग देखो। २ घोड़ा तैयार करनेके लिये जिस हँसियेसे गुल्मादि काटे जाते हैं, उसे भी तलवार कहते हैं।

तलवारण (सं॰ क्ली॰) तले आहतन्ते वारयति वारि ल्युट्। १ ज्याघात वारणार्थ हस्ततलवद्ध चर्मभेद, वह कवच जो धनुषकी डोरीके आघातसे बचनेके लिये हाथके तले बाँधा जाता है। २ खड्ग, तलवार। ३ स्थान।

तलसान—बम्बई प्रदेशके काठियावाड़ विभागमें झाला-वारका एक छोटा राज्य, इसमें ७ छोटे छोटे ग्राम लगते हैं। भूपरिमाण ४३ वर्गमील है और राज्यकी आय प्रायः १०५००) रुपये की है जिनमेंसे १०५२) रुपये वृटिश सरकारको और जूनागढ़के नवाबको देने पड़ते हैं। लोकसंख्या प्रायः १६८१ है। यहांके राजा झालाराजपूत वंशोद्भव हैं।

बम्बई-बरोदा और मध्यभारतीय रेलपथकी वढवान शाखाके लखतर ष्टेसनसे ११ मील दक्षिणपूर्वमें तलसान ग्राम अवस्थित है। प्रतिकनागके मन्दिरके लिये यह ग्राम विशेष प्रसिद्ध है। काठियावाड़में सर्पपूजाके जो सब निदर्शन पाये जाते उनमेंसे यह एक है।

तलसारक (सं० क्ली०) तले सार्यते अव यस्य बहुव्रीहि कप्। घोटकका वक्षःस्थलस्थ रज्जु, वह रस्सी जो घोड़े की छातीमें बंधी रहती है। इसके संस्कृत पर्याय—वक्षपट्ट और तलिका है। किसी किसी पण्डितके मतसे इसका अर्थ घोटकका अश्वभोजनपात्र है अर्थात् वह बरतन जिसमें घोड़े को खानेके लिये भोजन दिया जाता है।

तलस्थित (सं० त्रि०) तले स्थितः, ७-तत्। जो नीचे रहता है।

तलहटी (हिं० स्त्री०) पहाड़की तराई, घाटी।

तलहारि—मध्यप्रदेशके रायपुर जिलेके अन्तर्गत एक स्थान। रत्नपुरमें जगपालका जो प्रस्तर लेख लिखा है, उसके पढ़नेसे जाना जाता है, कि रामदेवके राजत्वकालमें जगपालने यह स्थान जय किया था। फिर ८९६ सम्वत्‌के रत्नपुर शासनमें लिखा है, कि तलहारिके जाजल्लदेव वार्षिक कर वसूल करते थे।

तलहृदय (सं० क्ली०) तलस्य हृदयमिव। पदतलका मध्यभाग तलवा।

तला (सं० स्त्री०) तल स्त्रियां टाप्। गोधा, चमड़ेका बना जो धनुषकी डोरीकी रगड़से बचानेके लिये बाईं बाँहमें पहना जाता है।

तला (हिं० पु०) १ किसी वस्तुके नीचेकी सतह, पेंदा। २ जूतेके नीचेका चमड़ा।

तलाई (हिं० स्त्री०) छोटा ताल, तलैया, बावली।

तलाक (अ० पु०) पति पत्नीका विधान पूर्वक सम्बन्ध त्याग।

तलाची (सं० स्त्री०) तलमञ्चति अञ्च क्विप् ङीप्। तृणनिर्मित कट, बेंत या बांसकी पट्टियोंकी बनी हुई चटाई।

तलाजा—बम्बई विभागके अन्तर्गत काठियावाड़के भावनगर राज्यका नगर। यह अक्षा० २१° २१ १५ उ० और देशा० ७२ ३ ३० पू० पर भावनगरसे ११ मील दक्षिणमें अवस्थित है। नगर चारों ओर दीवारोंसे घिरा हुआ है। इसका दुर्ग एक छोटा सुरक्षित स्तूपाय पर्वत सरीखा है। यह समुद्रपृष्ठसे ३०० फुट ऊंचा है। इसके पासमें एक पहाड़के ऊपर एक हिन्दू-मन्दिर और एक सुन्दर तालाब है। उस तालाबका जल अत्यन्त निर्मल है। पहाड़में कहीं कहीं कन्दरा भी है। पहले डकैत इन्हीं कन्दराओंमें छिप कर रहते थे। १८२१ ई० तक भी इनमें डकैतोंका रहना देखा गया था।

तलाजिया—गुजराती ब्राह्मण सम्प्रदायका एक भेद। भावनगरसे ११ मील दक्षिण तलाजा नामका एक ग्राम है। वहींसे इन लोगोंका निकास हुआ है, इसलिये ये तलाजिया नामसे प्रसिद्ध हैं। आज कल ये लोग विशेष रूपसे दुकानदारीसे गुजारा करते हैं। नासिक, बम्बई, अहमदनगर और सूरत आदि जिलोंमें ये अधिक संख्यामें पाये जाते हैं। ब्राह्मणधर्मकी अपेक्षा वैष्णवधर्ममें इनकी प्रवृत्ति विशेष देखी जाती है।

तलाटु—तामिल भाषामें लिखे हुए बहुतसे पद्य। इनमें देवताओंकी यशोगाथा वर्णित है। प्रतिवर्ष निर्दिष्ट पर्वके दिनमें मन्द्राजके दक्षिणांशवासी बहुतसी छोटी छोटी देवमूर्तियोंको डोलीमें पर झुला झुला कर यह पद्य गाते हैं। इनमें बहुतसे पद्य अश्लील और बहुतसे हिन्दू अलङ्कार पर परिपूर्ण हैं। इनमें एक पद्यका नाम तलाटु है जिसकी भाषा अत्यन्त मधुर है। मन्द्राजकी स्त्रियां छोटे छोटे बच्चोंको सुलानेके लिये यह पद्य गाया करती हैं।

तलातल (सं० क्ली०) नास्ति तलं यस्मात् इति अतलं तस्मादपि अतलम्। पातालभेद, सात पातालोंमेंसे एक पातालका नाम। यहां मयदानव शिवसे रक्षित हो कर वास करते हैं। (भागवत) पाताल देखो।

तलाभिघात (सं० पु०) तलेन अभिघातः, ३-तत्। करतल द्वारा प्रहार, तमाचा, थप्पड़।

तलाभिधि (सं० पु०) प्रवाल, मूंगा।

तलाश (तु० स्त्री०) १ अन्वेषण, खोज ढूंढ़ ढांढ़। २ आवश्यकता, चाह, माँग।

तलाशा (सं० स्त्री०) वृक्षभेद, एक पेड़का नाम।

तलाशी (फा० स्त्री०) खोज, वस्तु आदिकी देख भाल।

तलाह्व (सं० क्ली०) तालीपत्र देखो।

तलिका (सं० स्त्री०) तल वक्षःस्थलस्य अभ्यन्तरस्थान तल क्रम्। तलसारक, वह रस्सी जिससे घोड़ेकी छाती बंधी रहती है।

तलित् (सं० स्त्री०) तडित् डस्य-लः। विद्युत्, बिजली।

तलित (सं० क्ली०) तलतारका इतच्। भृष्टमांस, तला हुआ मांस। शुद्ध मांस जिस तरह प्रस्तुत किया जाता है उसी तरह मांसको अच्छी तरह सिद्ध कर उसे घीमें भुन लेते हैं इसीको तलित कहते हैं। इसके गुण—बल, मेधा, अग्नि, मांस, श्रोजोधातु और शुक्रवृद्धिकारक, तृप्तिजनक, लघु, स्निग्ध, रुचिकर और शरीरपुष्टिकर है।

तलिन् (सं० वि०) तला अस्यास्ति इनि। गोधायुक्त, जिसमें चमड़ेका बना लगा हो।

तलिन (सं० क्ली०) तल्यते शयनार्थं गम्यतेऽत्र तल-इनन्। तलि पुलिभ्यां च। उण् २।५३। १ शय्या, सेज, पलङ्ग। (वि०) २ विरल, अलग अलग। ३ स्तोक, थोड़ा, कम। ४ स्वच्छ, शुद्ध, साफ। ५ दुर्बल, दुबला।

तलिपरम्ब—१ मन्द्राज विभागमें मलवार जिलेका एक शहर।

२ मलवार जिलेमें चिराकल तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १२° ३´ उ० और देशा० ६५° २२´ पू० पर कननूरसे १५ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहां भिन्न भिन्न धर्मावलम्बी मनुष्य वास करते हैं। हिन्दूकी संख्या सबसे अधिक है। यहां सब मजिष्ट्रेट, डिष्ट्रिक्ट मुन्सिफकी अदालत और एक मन्दिर है। मन्दिरकी छत पीतलसे मढ़ी हुई है। इसके पास ही रेतीले पहाड़ पर बहुतसी कन्दरायें खुदी हुई हैं जो देखनेमें अत्यन्त मनोरम और आश्चर्यजनक लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः ७८४८ है।

तलिम (सं० क्ली०) तल बाहुलकात् इमन्। १ कुट्टिम, छत, पाटन। २ शय्या, पलङ्ग। ३ खड्ग। ४ वितानक, चँदवा। ५ चन्द्रहास।

तलिया (हिं० स्त्री०) समुद्रकी थाह।

तली (हिं० स्त्री०) १ तल, पेंदी। २ तलछट, तलौंछ।

तलीद्य (सं० पु०) प्रत्यङ्गभेद, शरीरका कोई अङ्ग।

तलुन (सं० पु०) तरति वेगेन गच्छति तृ उनन्। श्रोरश्चलोवा। उण् ३।५४। रस्य लत्व। १ वायु, हवा। २ युवा पुरुष।

तलुनी (सं० स्त्री०) तलुन-ङीष्। तरुणी, युवती स्त्री।

तले (हिं० क्रि० वि०) नीचे।

तलेक्षण (सं० पु०) तले अधोभागे ईक्षणं यस्य, बहुव्री०। शूकर, सूअर।

तलेटी (हिं० स्त्री०) १ पेंदी। २ तलहटी, तराई, घाटी।

तलैङ्ग—पेगुके अधिवासियोंका साधारण नाम। मगगण इन्हें तलैङ्ग और श्यामवासीगण मिङ्ग-मोन कहा करते हैं। इनमेंसे अनेक इरावती नदीके डेल्टेमें वास करते हैं। पेगु, मार्त्तावान, मोलमेन और आमहार्टके अधिवासी मोन नामसे मशहूर हैं। यह नाम इन लोगोंमें आपसमें चलता है।

पेगुवासकी भाषा मोन अथवा तलैङ्ग है। इस भाषाके अक्षर भारतीय अक्षरमूलक हैं। पाली अक्षरके साथ यह बहुत कुछ मिलता जुलता है। बौद्धग्रन्थ इसी अक्षरमें लिखे हुए मिलते हैं। मग और श्यामवासी यह भाषा समझ नहीं सकते। तलैङ्ग शब्द सम्भवतः तैलङ्ग शब्दका अपभ्रंश है।

तलैचा (हिं० पु०) इमारतका वह भाग जो मेहरावसे ऊपर और छतसे नीचे रहता है।

तलैया (हिं० स्त्री०) छोटा ताल।

तलोदरी (सं० स्त्री०) तलं निम्नमुदरं यस्याः, बहुव्री० ततः ङीष्। भार्या, स्त्री।

तलोदा (सं० स्त्री०) तले उदकं यस्याः बहुव्री०, उदकशब्दस्य उदादेशः। नदी, दरिया।

तलोदा—१ बम्बई प्रदेशके खान्देश जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २१° ३०´ और २२° २´ उ० तथा देशा० ७३° ५८´ और ७४° ३२´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ११७७ वर्गमील है। इस उपविभागमें इसी नामका एक शहर और १८३ ग्राम लगते हैं। छिखली और काथी नामके दो छोटे देशीराज्य इसके अधीन हैं। लोकसंख्या प्रायः ३३८८१ है, जिनमेंसे हिन्दूकी संख्या सबसे अधिक है। बहुतसे मुसलमान तथा अन्यान्य धर्मके लोग भी यहां वास करते हैं।

स्थानीय नैसर्गिक दृश्योंमेंसे सातपुरा पहाड़श्रेणीका दृश्य अत्यन्त मनोहर है। यह पहाड़ पूर्वसे पश्चिमकी ओर विस्तृत है। पहाड़के नीचे एक बड़ी वनभूमि

टेको जाती है। इस अवसरमें तरह तरहके पक्ष रहते हैं।

तलोदाकी मट्टी काली है और उसमें उद्भिद् प्राणिका सार मिश्रित है। जिस स्थानमें जितने कीड़े हैं वहांका जलवायु खराब नहीं है। सातपुड़ा पहाड़के नीचे पास पासके ग्रामोंमें मलेरिया रोग अत्यन्त प्रबल है। यहां ज्वर और प्लीहा रोग अकसर हुआ करता है। अप्रैल और मई मास छोड़ कर यूरोपीयगण इस स्थानमें निर्विघ्न नहीं रह सकते हैं। वार्षिक वृष्टिपात प्रायः १ [illegible] है।

२ उक्त तालुकका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० २१° ३४' उ० और देशा० ७४° १३' पू० धूलियासे ६२ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६३८२ है। हिन्दू, मुसलमान, जैन, पारसी प्रभृति अधिवासी यहां देखे जाते हैं। हिन्दुओंकी संख्या सबसे ज्यादे है। खान्देश जिलेमें तलोदाके तख्तेका व्यवसाय विशेष प्रसिद्ध है। भिन्न भिन्न स्थानोंसे बहादुरी काठ यहां ला कर बेचा जाता है। रोसाघास तेल और धानका व्यवसाय भी यहां कम नहीं है। खान्देशकी सर्वोत्कृष्ट गाड़ियां इसी स्थानमें बनाई जाती है। प्रत्येक गाड़ीका मूल्य ४०। ४५) रु० रहता है। इस शहरमें म्युनिसपालिटि है। इस शहरमें एक डाकघर, स्कूल और दातव्य औषधालय है।

तलौंछ (हिं० स्त्री०) किसी द्रव पदार्थकी वह मैल जो नीचे जम जाती है, तलछट।

तल्क (सं० क्ली०) तल बाहुलकात् कन्। वन, जङ्गल।

तल्ख (फा० वि०) १ कटु, कड़ुआ। २ जिसका स्वाद खराब हो, बदमजा।

तल्खी (फा० स्त्री०) कड़ुआहट, कड़ुआपन।

तल्प (सं० पु०-क्ली०) तल्प-ते [illegible] तल-प। [illegible] । अमर ३।१८ । १ शय्या, पर्यङ्क। २ अट्टालिका, अटारी। ३ दारा, स्त्री।

तल्पक (सं० पु०) तल्प-कन्। शय्यास्तरणकार भृत्य वह नौकर जो पलंग या खाटको सजा कर रखता है।

तल्पकीट (सं० पु०) तल्पे शय्यायां जात कीटः। कीट विशेष, खटमल।

तल्पगिरि (सं० पु०) दाक्षिणात्यके तिरुपतिके समीप जो विष्णुके नामसे उत्सर्ग किया हुआ एक पहाड़।

तल्पज (सं० त्रि०) तल्प जन ड। क्षेत्रज पुत्र।

तल्पन (सं० क्ली०) तल्प इव आचरति तल्प क्विप् ल्युट्। १ हस्तिपृष्ठ हाथीकी पीठ। २ पृष्ठास्थिका मांस पीठका मांस।

तल्पशीवन् (सं० त्रि०) शय्याशायी जो हमेशा बिछौने पर पड़ा रहता है।

तल्पेश्य तल्पशीवन् देखो।

तल्प्य (सं० पु०) तल्पे भव तल्प-यत्। १ वरुणके एक पुत्रका नाम। २ शय्यागामी।

तल्ल (सं० क्ली०) तल्लिक्ष्य मीयते मो ड। १ बिल, गड्ढा। (पु०) २ जलाधारविशेष, ताल, पोखरा। ३ (त्रि०) उसमें लीन, उसमें लगा हुआ।

तल्लज (सं० पु०) तत् प्रसिद्ध यथा तथा लजति लज अच्। प्रशस्तिवाचक आदरसूचक शब्द।

तल्लक (सं० पु०) कुक्कुर, कुत्ता।

तल्ला (सं० पु०) १ सामान्य कोण, पास। २ तलेको परत, अस्तर, भितल्ला।

तल्लिका (सं० स्त्री०) तल्लिस् मीयते [illegible] वाम् आदि यत् स्त्व। कुञ्चिका, कुञ्जी, ताली।

तल्ली (सं० स्त्री०) तल्लमिव तथा लजति लज ड [illegible] । १ तरुणी युवती। २ नौका, नाव। ३ वरुणकी स्त्री।

तल्ली (हिं० स्त्री०) १ भूमिका तला। २ नादेकी तलछट।

तल्लुआ (हिं० पु०) एक प्रकारका बबूल, रहकन्दा, नूकरी बबूल।

तल्व (सं० क्ली०) दुर्गन्धिद्रव्यके संसर्गसे उत्पन्न सौरभ वह सुगन्ध जो सुगन्धित पदार्थोंको रगड़नेसे उत्पन्न हो।

तल्वकार (सं० पु०) सामवेदकी एक शाखा।

तव (सं० त्रि०) युष्मद् शब्दकी षष्ठीका एक वचन। तुम्हारा।

तवक (सं० त्रि०) तव क। तुम्हारा।

तवक्षीर (सं० क्ली०) तु अच् तव क्षीरमिति, कर्म धा०। १ श्वेतसार तवाशीर, तीखुर। इसका गुण-मधुर शिशिर, दाह, पित्त, श्वास, कास, ज्वर और वातरोगनाशक है। २ नखपत्री, वनकपूर।

तवक्षीरी (सं॰ स्त्री॰) तवक्षीर-ङीप्। गन्धपत्रा, कनक-चूर। इसकी जड़से एक प्रकारका तीखुर बनता है। अबीर इसी तीखुरसे बनता है।

तवज्जह (अ॰ स्त्री॰) १ ध्यान, रुख। २ कृपादृष्टि।

तवनी (हिं॰ स्त्री॰) छोटा तवा।

तवर (सं॰ क्ली॰) निर्दिष्ट उच्च संख्या, कोई इष्ट बड़ी राशि।

तवरक (हिं॰ पु॰) समुद्र और नदियोंके तट पर होनेवाला एक प्रकारका पेड़। इसमें इमलीके जैसे फल लगते हैं जिन्हें खानेसे गाय भैंस इत्यादि अधिक दूध देती है।

तवराज (सं॰ पु॰) तु-अच् तव पूर्णः सन् राजते राज-अच्। यवासशर्करा, तुरंजबीन।

तवराजोद्भवखण्ड (सं॰ पु॰) तवराजादुद्भवति उत्-भू-अच्, तवराजोद्भवः यः खण्डः, कर्मधा॰। यवासशर्करा-का खण्ड, तुरंजबीनका टुकड़ा। इसके संस्कृत पर्याय-सुधामोदकज, खण्डजोद्भवज, सितिमोदक, अमृत-सारज और सितखण्ड है। इसके गुण—दाह, वात, तृष्णा, मोह, मूर्च्छा और श्रमनाशक, इन्द्रियोंका तर्पण-कारी, शीतल और सदा मधुररस है।

तवर्ग (सं॰ पु॰) त, थ, द, ध न, ये पाँच तवर्ग है।

तवर्गीय (सं॰ पु॰) तवर्गे भवः वर्गान्तत् छ। तवर्गसे उत्पन्न वर्ण, तवर्गका अक्षर।

तवर्गाहृत् (सं॰ पु॰) गरुड़।

तवस् (सं॰ वि॰) तु-असुन्। १ वृद्ध, बुड्ढा। २ महत्, बड़ा। (क्ली॰) ३ बल, ताकत।

तवस्य (सं॰ क्ली॰) तवसे बलाय हितं तवस् यत्। बल-साधन।

तवस्वत् (सं॰ वि॰) तवोऽस्त्यस्य मतुप् मस्य वः सान्त-त्वात् मत्वर्थेन विसर्गः। बलयुक्त, ताकतवर।

तवा (हिं॰ पु॰) १ रोटी सेंकनेका एक छिछला, गोल लोहेका बरतन। २ खपड़ेका गोल ठीकरा। इसे चिलम पर रख कर तमाखू पीते हैं। ३ एक प्रकारकी लाल मट्टी।

तवाकुल सुग्गो—शाहनामा और समसेर खानीके रच-यिता। उक्त दो किताबें १६५२ ई॰में बनाई गई थीं। फिर १८१० ई॰में सम्राट् द्वितीय शाह अकबरके समय उनका अनुवाद किसी दूसरे कविसे उर्दूमें हुआ था।

तवाखीर (हिं॰ पु॰) वंशलोचन।

तवाग (सं॰ वि॰) तवसा बलेन गीयते गै कर्मणि क्विप् पृषो॰ साधु। प्रबल बलयुक्त, जिसे खूब ताकत हो।

तवाजा (अ॰ स्त्री॰) १ आवभगत, आदर, मान। २ आतिथ्य, मेहमानदारी, दावत।

तवाना (फा॰ वि॰) बली, मोटा ताजा।

तवाना (हिं॰ क्रि॰) किसी दूसरेसे गरम कराना।

तवायफ (अ॰ स्त्री॰) वेश्या, रंडी।

तवायफ—वेश्याकी एक जाति। गन्धर्व कञ्चन, कश्मीरी, पतुरिया, रामजानी, बकतरिया, कसबी, भड़ुआ, हुरकिया, कबूतरी मिरासी, मारवाकार, नायिका, गौनहारिन ब्रज-वासी और नेगराव ये सब तवायफ जातिके ही अन्तर्गत हैं। इनमेंसे पात्र, रामजानी और गन्धर्व ये तीनों हिन्दू स्त्रियाँ हैं। पातकी उत्पत्तिके विषयमें प्रवाद है, कि कुमायूँके राजाके यहाँ दो दासी कन्यायें थीं जिनमेंसे एक तो राजपूतसे ब्याही गई थी और दूसरी पहाड़ी क्षत्रियसे। जो पहाड़ी क्षत्रियसे ब्याही गई थी, वही पात्र कहलाई। आजकलकी पात्र या पतुरिया उसीके वंशकी मानी जाती है। महादेव, कालू पीर और मीरां इनके उपास्य देवता हैं जो लड़कियाँ जन्म लेती हैं, उन्हें बचपनसे ही नाचना गाना सिखाया जाता है, बाद वे पीपल वृक्षसे विवाह कर वेश्यावृत्ति अवलम्बन करती हैं।

नोरंगी, मिरासी, गौनहारिन, डोमिन और आकाश-कामनी ये सब मुसलमान स्त्रियाँ हैं। पात्रके जैसा ये लोग भी अपनी लड़कीका विवाह नहीं करती। किन्तु इनका लड़का जब विवाहके योग्य होता है, तब वे एक निम्नश्रेणीकी हिन्दू वा मुसलमान लड़कीको खरीद कर उसीके साथ उसका विवाह कर देती है। इस प्रकारसे ब्याही हुई स्त्रियाँ वेश्या-वृत्ति नहीं करती वरं वे विवाहोपलक्षमें तथा और किसी दूसरे त्योहारमें गृहस्थके यहाँ नाच गान कर अपना गुजारा करती हैं।

जब कोई हिन्दूस्त्री इस समाजमें आना चाहती है, तब पहले उसे इसलाम धर्ममें दीक्षित होना पड़ता है। विशेष कर हिन्दू विधवा या भगोड़ी स्त्रियाँ ही तवायफ

शुरू करती है। इस जातिमें ऐसी रस्म है कि लड़की जब बारह तेरह वर्षकी होती, तब वह किसी दूसरे घर से यहाँ भेजी जाती है, इस रस्मको 'सिर ढकाई' कहते हैं। लड़की जब मायके घरसे लौट आती है, तब अपने जात भाइयोंको एक भोज देना पड़ता है। मिस्सी नामकी एक दूसरी रस्म है जिसमें वे अपने दाँतोंमें मिस्सी लगाना आरम्भ करती हैं। इसके बाद लड़की जिसे वे पसन्द करती हैं उसके घरमें जाती है, उतार दी जाती है इस रिवाजको 'नथनी उतारना' कहते हैं। आज कल भारतवर्षमें प्रायः सब जिलोंमें तवायफ पाई जाती हैं। कभी कभी ये लोग महफिलमें जा कर नाचने जाती हैं।

तबारा (हि॰ पु॰) अमन, नाच, दाव।

तवारीख (अ॰ स्त्री॰) इतिहास।

तवालत (अ॰ स्त्री॰) १ दीर्घता लम्बाई। २ आधिक्य, अधिकता, अधिकाई। ३ झंझट, बखेड़ा।

तविपुला (सं॰ स्त्री॰) विपुला छन्दोभेद विपुला नामका छन्द। चार चरणोंका तगण होने पर यह छन्द होता है।

तविषम (सं॰ त्रि॰) प्रबल बलवान्।

तविष (सं॰ पु॰) तव टिषच्। १ स्वर्ग। २ समुद्र। ३ व्यवसाय। ४ शक्ति। ५ स्वर्ण, सोना। (त्रि॰) ६ वृद्ध, बुड्ढा। ७ महत्, बड़ा। ८ बलवान्, ताकतवर।

तविषी (सं॰ स्त्री॰) तविष स्त्रियां ङीष्। १ भूमि, जमीन। २ नदी दरिया। ३ देवकन्या। ४ बल।

तविषीमत् (सं॰ त्रि॰) तविषी अस्त्यर्थे मतुप्। दीप्ति युक्त, चमक दमक।

तविषीयु (सं॰ त्रि॰) तविषीयत्-उ। बलप्रयोगकारी।

तविषीवत् (सं॰ त्रि॰) ताकती।

तविष्या (सं॰ स्त्री॰) बल शक्ति, ताकत।

तव्य—१ प्रत्ययभेद। (त्रि॰) तव यत्। २ शक्तिशाली, बलवान् ताकतवर।

तशखीस (अ॰ स्त्री॰) १ निश्चय, ठहराव। २ रोगका निदान।

तशरीफ (अ॰ स्त्री॰) महत्व इज्जत बुजुर्गी।

तश्त (फा॰ पु॰) १ एक प्रकारका छिछला बरतन जिसका आकार थालीसा होता है। २ परात, लगन। ३ पाखानेमें रखने लायक तांबेका बड़ा बरतन तसला।

तश्तरी (फा॰ स्त्री॰) रिकाबी।

तष्ट (सं॰ त्रि॰) तक्ष-क्त। १ तनूकृत, छोला हुआ। २ छिन्नकृत, छील कर छोटे टुकड़ोंमें किया हुआ। ३ ताड़ित, पीटा हुआ। ४ सुघित, सुघ किया हुआ।

तष्टा (सं॰ पु॰) १ विश्वकर्मा। २ छील छाल कर गढ़ने वाला। ३ छालनेवाला। ४ एक आदित्यका नाम।

तश्ता (फा॰ पु॰) तांबेकी एक छोटी तश्तरी। इसका व्यवहार ठाकुर पूजनके समय मूर्तियोंको स्नान करानेके लिये होता है।

तष्टि (सं॰ स्त्री॰) तक्ष-क्तिन्। तक्षण, रन्दा करनेका काम।

तष्टृ (सं॰ पु॰) तक्ष तृन्, पृषोदरा॰ क्षलोपे साधुः। १ सूत्रधार बढ़ई। २ विश्वकर्मा। ३ आदित्यभेद, एक आदित्यका नाम।

तस (हि॰ वि॰) तैसा वैसा।

तसकीन (अ॰ स्त्री॰) दिलासा, तसल्ली।

तसकुरगान—अफगान-तुर्किस्तानका एक शहर। यह अक्षा॰ ३६ ४२ उ॰ और देशा॰ ६७ ४१´ पू॰ पर समुद्रपृष्ठसे १४८१ फुट ऊंचे पर अवस्थित है। यह शहर अपने प्रदेशमें सबसे विस्तृत और मजबूत है तथा मध्य एशिया और काबुलका वाणिज्य-केन्द्र है। इसमें ४००० घर लगते हैं, उजबेग और ताजिकको ही संख्या सबसे अधिक है। यहाँ प्रायः जितनी सड़कें हैं, सभी १० वा १२ फुट चौड़ी हैं। तारीफ तो इस बातकी है कि वे सबके सब बिलकुल सीधी चली गई हैं, टेढ़ापन कहीं भी नहीं है। समूचा शहरमें तसकुरगान नदीसे जल जाता है। काफी पानी नहीं मिलनेके कारण यहांकी जमीन रहती भी उपज बहुत कम होती है। चना, मेवे आदि ही अधिक पाये जाते हैं।

तसगर (हि॰ पु॰) जुलाहोंके तानेकी एक लकड़ी जो बीनकरीके पास रहती है।

तसदीक (अ॰ स्त्री॰) १ सचाई। २ समर्थन पुष्टि, सचाईका निश्चय। ३ साक्ष्य, गवाही।

तसद्दुक (अ॰ पु॰) १ निछावर, सदका। २ बलिप्रदान कुरबानी।

तसनीफ (अ॰ स्त्री॰) ग्रन्थकी रचना।

तसबीह (अ॰ स्त्री॰) जपमाला, सुमिरनी।

तसमा (फा० पु०) चमड़े को पट्टी जो कुछ चौड़ी और डोरीको आकारको लम्बी होती है, चमड़ेका चौड़ा फीता।

तसर (सं० पु०) तनोतीति तन-सरन् किञ्च। १ सूत्रवेष्टन, जुलाहोंकी ढरको। २ एक प्रकारका कोड़ा।

तसर—कौषेय-सूत्रविशेष, एक तरहका कड़ा और मोटा रेशम। बङ्गालके अन्तर्गत छोटा नागपुर प्रदेश, बालेश्वर, मयूरभञ्ज, केंयझड़ आदि स्थानोंमें, बांकुड़ा, वीरभूम, मेदनीपुर जिलेके जङ्गलोंमें तथा बङ्गालके अन्यान्य स्थानोंमें शाल, पियाल, हरीतकी, विभीतकी आमलकी, कुसुम, मौल, बदरी आदि वृक्षों पर तसरके कोड़े पालते हैं। इन्हीं कोड़ोंसे तसर पैदा होता है। यह कहना फिजूल है, कि तसर रेशमका ही एक भेद है।

रेशम देखो।

ऊपर जिन स्थानोंके नाम लिखे गये हैं, उन प्रदेशोंके जङ्गलोंमें तसर अपने आप ही उत्पन्न होता है। इसकी खेती भी होती है। तसरकी खेती रेशम जैसी नहीं है। रेशम उत्पन्न करनेके लिए जैसे तूतियाके पत्ते खिला कर रेशमके कोड़ोंको पालते हैं और यत्न-पूर्वक उनको घरमें ही रख कर, घरमें ही गुटिका उत्पन्न कराते हैं, तसरके उक्त प्रदेशोंमें वैसा नहीं करते। चांईबासा, हजारीबाग, लोहारडागा आदि स्थानोंमें तसर उत्पादनकारियोंको तसरको खेती ऐसी यत्नसाध्य नहीं है। इनको जङ्गलोंमें आपसे आप होनेवाले कोड़ोंको सिर्फ चिड़ियों और चींटियोंसे बचानेके सिवा और कुछ भी नहीं करना पड़ता।

तसरकी उत्पत्ति—पहलेसे कुछ पके हुये बीज वा कोषोंका संग्रह कर रखते हैं और यथासमय उनमेंसे कोड़े निकलने पर उनको पासके जङ्गलमें छोड़ देते हैं। वहां वे अपने अपने जोड़े ढूंढ़ लेते हैं। शीघ्र ही मादा कोड़े वृक्षके पत्तों पर छोटे छोटे चपटे, सरसों जैसे अण्डे देने लगते हैं। ये अण्डे कुछ चिपकने होनेसे पत्ते पर खूब चिपट जाते हैं। एक एक कोड़ा ३।४ दिनमें २००से २५० तक अण्डे देता है। एक बारगी मब अण्डे दे देने पर इनके जीवन-कार्यका अन्त हो जाता है अण्डे देनेके ३।४ दिन बाद ही ये मर जाते हैं। नर कोड़े शीघ्र मर जाते हैं। तब सिर्फ अण्डे ही भविष्यत् तसर-कीटवंशके वंशरक्षक रह जाते हैं।

इन अण्डोंसे १०।१२ दिनके भीतर छोटे छोटे लट जैसे कीड़े निकलते हैं और पत्तों पर रेंगते फिरते हैं। इस समय ये कोड़े बड़े ही पेटुक होते हैं। लगातार कोमल पत्तोंको खा खा कर जल्दी जल्दी बढ़ते रहते हैं। इस समय ये ३।४ बार खोली या कलेवर बदलते रहते हैं। खोली बदलते समय कुछ देरके लिए ये आहारविहार छोड़ कर चुपचाप पड़े रहते हैं। इस तरह १०।१५ दिनमें ये अपनी पूरी बाढ़को पहुंच जाते हैं। उस समय इनका आकार ३।४ इञ्चसे ५।६ इञ्च तक होता है। ये कोड़े मटमैले, नीले, पीले, भूरे, लाल आदि नाना रंगोंसे चित्रविचित्र होते हैं। इनको आंखें उज्ज्वल और पैर छोटे छोटे होते हैं।

अंडे फूटनेके बादसे अब तक इनके शत्रुओंकी कमी नहीं रहती। प्रथमतः क्षुद्र अवस्थामें चीटियां इनकी परम शत्रु हैं। चील, कोए और अन्यान्य वनचर पक्षी, गिलहरी, सांप आदि मौका लगते ही इनको खा जाते हैं। इसलिए पालनेवालोंको इस समय बड़ी सावधानीसे इनकी रक्षा करनी पड़ती है। रक्षकगण तीरधनु, कांकड़ बांस आदिसे उक्त जानवरोंको मार कर भगा देते हैं।

जो लोग इनकी रक्षाके लिए नियुक्त होते हैं, वे कठोर ब्रह्मचर्य अवलम्बन कर जङ्गलमें ही रहते हैं। उनका विश्वास है, कि ऐसा न करनेसे कोड़े मर जाते हैं। अतएव वे जङ्गलमें झोंपड़ी बना कर २।३ मास तक व्रतपरायण हो शुद्धाचारसे रहते हैं। मल-मूत्र त्यागनेके बाद हो ये स्नान करते हैं और प्रतिदिन हविष्यान्न भक्षण कर तृणशय्या पर सोते हैं। जब तक कोड़े पूरी बाढ़को नहीं पहुंचते, तब तक ये स्त्रीपुत्रादिका मुखावलोकन नहीं करते। इनको और भी एक ऐसा ही विश्वास जम गया है, कि रक्षा करते समय वहांसे यदि व्याघ्रका गमन हो, तो कोड़ोंमें उत्पादिका शक्ति बढ़ जाती है। इसीलिए व्याघ्रके गमन करने पर रक्षकगण अधिक लाभकी आशा करते हैं। सन्थाल, कोल, कुरमी आदि जातियां ही प्रधानतः तसर पैदा करनेका काम

करती है। विशेषतः बहुतसे पक्षीय शत्रुओंकी भी इस तरफ दृष्टि पड़ती है।

कीड़े पूर्णावयवको प्राप्त होने पर कोष बनानेके लिए व्यग्र होते हैं। उस समय वे वृक्षकी छोटी छोटी डालियों पर मुखसे निकली हुई लारसे वृन्त बनाते हैं। यह लार ही वायुमें सूख कर मजबूत तसर का सूतके रूपमें परिणत हो जाती है। वृन्त बन जाने पर सूत निकालते हुए घूम घूम कर वे अपने लिए एक कोष बना लेते हैं और उसीमें बन्द हो जाते हैं। इन कोषोंकी आकृति कुछ लम्बेपनको लिए गोल अण्डेके समान है। कीटकी जातिके अनुसार कोष भी छोटे बड़े कई प्रकारके होते हैं। बड़ेसे बड़ा कोष २। २½ इंच तक लम्बा होता है।

कोषके अन्दर ६।७ दिन तक लगातार सूत निकाल कर, वे कीड़े चुपचाप सोते रहते हैं। इस अवस्थामें वे खाना पीना सब छोड़ कर मुरदेकी तरह निष्पन्द और निश्चेष्ट हो जाते हैं। किन्तु आश्चर्यकी बात तो यह है कि दो तीन मास तक इस तरह पड़े रहने पर भी इन की मृत्यु नहीं होती। इस अवस्थामें कोषको चीर कर इनको बाहर निकालनेसे, वे निद्रामग्न मांसपिण्डवत् मालूम पड़ते हैं, किन्तु थोड़ी ही देर हिल-डुल कर सजीवताका प्रमाण दिखाते हैं। इस तरह असमयमें इनकी निद्राभङ्ग करनेसे वे ज्यादा देर तक जीते नहीं, शीघ्र ही मर जाते हैं। समय पर ये अपने आप कोषको काट कर खूबसूरत प्रजापतिके रूपमें बाहर निकलते हैं।

कोष सम्पूर्ण बन जाने पर रक्षकगण उनको उतारनेके लिए तयार रहते हैं। उन्हें अपनी अभिज्ञतासे जब कोष पकता और छोड़नेके लायक होता है, इसका ज्ञान हो जाता है। इस समय कोषसंश्लिष्ट तसरजीवक वनभूमि अग्निशिखा प्रदेशके समान शोभायमान रहती है। जब कोष छोड़ कर दो-एक कीड़ा भागनेकी तैयारी करता है तब रक्षकगण उन्हें इकट्ठा कर घर ले आते हैं। कीड़े जीवित रहनेसे कोष काट कर भाग जायेंगे, इस भयसे वे कोषोंको खारके साथ गरम पानीमें उबाल कर मार डालते हैं। जिन कोषोंको उबाला नहीं जाता, वे 'बीजो' नामसे प्रसिद्ध हैं। इनका तसर सबसे उम्दा होता है। इनको 'मूढ़न' भी कहते हैं। यह कोष बहुत कड़ा होता है, जोरसे दाबने पर भी दबता नहीं। इससे भीषिदर्शके कोषोंको डाबा, बगुई, जाबुई आदि कहते हैं। जिन कोषोंको काट कर कीड़े बाहर निकल जाते हैं, उनको दाबकटा, चाम, पिते कोकरू, धूके, तथा फूटी कहते हैं। जो कोष अधिक शीतसे पहले ही असमयमें कीड़े या उबाले जाते हैं वे बहुत कोमल होते हैं, उनको सहज ही दाब कर चपटा किया जा सकता है। वह किसी कामके नहीं होते और बहुत कम दाममें बिकते हैं। कटे हुए कोष बिलकुल ही नष्ट नहीं हो जाते। कीड़े कोषके ऊपरका भाग सूत ठेल कर बाहर निकल जाते हैं। अतः उनसे भी सूत पाया जाता है। चींटी, चूहे आदिके काटने पर कोष नाकाम हो जाते हैं। आषाढ़ श्रावणमें आमपोते, भाद्रमें मूढ़न, आश्विनमें मूगा, कार्तिकमें डाबा, अग्रहायणमें बगुई, पौष और माघमें जाबुई कोष उत्पन्न होते हैं।

कोषोंके संग्रह किये जानेके उपरान्त रक्षकगण अनु-सार उनमेंसे चुन चुन कर पृथक् पृथक् ढेरे लगाते हैं। हाटमें उनको बाजारमें बेचते हैं। चाईबासा सिंहभूम, मानभूम आदि जिले और वनभूम, शिखरभूम, ढालभूम आदि स्थानोंके व्यापारी कोष जंगल-वासियोंसे इन कोषों को खरीद लेते हैं। वे फिर उनको बाँकुड़ा, विष्णुपुर, मेदिनीपुर, मानकर, सोनामुखी, राजग्राम आदि स्थानों से आये हुए व्यवसायियोंको या उनके योग्य माल लेने वालोंको बेच देते हैं। ये दलाल या पैकारी नाम अधिक लाभकी आशासे बहुधा गाँव गाँवमें घूम घूम कर कोष संग्रह किया करते हैं। किन्तु अधिकांश कोष निकटस्थ हाटोंमें बिकते हैं। तसर कोषोंके संग्रहके समय उन हाटोंमें पूर्वोक्त स्थानोंसे बहुतसे व्यापारियों का समागम होता है। चाईबासाके अन्तर्गत …पुकुर नामकी हाटमें तथा …गुड़ा नामक स्थानमें इन कोषोंकी बड़ी भारी खरीद बिक्री होती है। बिक्रीके लिए हाटोंमें उनको अलग अलग ढेरी लगा दी जाती है। खरीददार अपनी इच्छानुसार एक एक ढेरीसे मुट्ठी भर भर उनकी परीक्षा करते हैं। इनको आप या जानती

करना कहते हैं। इस जांचसे जैसा उत्कर्ष वा अपकर्ष होता है, तमाम ढेरो वैसी ही समझी जाती है। पीछे एक एक ढेरीको कीमत ठहराई जाती है। कहना फिजूल है, कि इस तरह तसरके छोटे बड़े आदि आकार, अक्षुणता, पुष्टता आदि गुणोंके अनुसार कीमतमें कमी बेशी हुआ करती है। बहुधा ये अरण्यवासी तसरविक्रेता धूर्त्त दलाल और पैकारियोंके चंगुलमें फंस कर धोखा खाते हैं।

संख्याके अनुसार ही इनका मूल्य निर्धारित होता है। तौल कर बेचनेकी रिवाज नहीं है। पैकारी वा दलाल लोग फुटकर खरीदते समय गण्डे आदिके भावसे खरीदा करते हैं। बड़ी बड़ी हाटोंमें जब बहुसंख्यक कोशोंकी खरीदबिक्री होती है, तब गिनना मुश्किल हो जाता है। इस समय कूत वा अनुमानसे एक एक ढेरीकी संख्या निर्णीत होती है। किन्तु अधिक संख्या होने पर भी प्रायः गिन लेना ही अच्छा समझा जाता है। संख्या स्थिर होने पर उनका मूल्य ठहराया जाता है। तसरकी उपज अच्छी न होने पर उत्कृष्ट कोशोंकी कीमत फी काहन (काहनकी संख्या १२८० हो) १२)से ७) तक, मध्यम प्रकारके कोशोंकी ७) से ५) तक तथा निकृष्ट प्रकारके कोशोंकी कीमत लगभग ५) से ३) रु० तक होती है। और उपज अच्छी होने पर उत्कृष्ट कोशका भाव ७) से ६) रुपया, मध्यमका ७) से ५) रुपया और निकृष्टका भाव ४) से २) रुपये तक हुआ करते हैं। वर्षा, शरत्, हेमन्त और शीतऋतुमें ही तसरके कोशोंकी उत्पत्ति होती है। वसन्त और ग्रीष्मऋतुमें जब सूर्यका तेज अत्यन्त प्रखर होता है, तब ये कोशके भीतर सोते रहते हैं।

खरीददार लोग उन कोशोंको खरीद खरीद कर बांकुड़ा और उसके अन्तर्गत राजग्राम, सोनामुखी, विष्णुपुर, जयपुर, तथा वर्द्धमानमें मानकर और हुगली जिलेमें बदनगञ्ज, श्यामबाजार, कृष्णगञ्ज आदि स्थानोंमें भेजा करते हैं। उपर्युक्त स्थानोंमें कोशोंसे तसरका सूत बनता है। यह सूत कुछ तो स्थानीय जुलाहे लोग खरीद लेते हैं और सफेद वा नाना रङ्गोंमें रङ्ग कर तरह तरहके कपड़े बनाते हैं तथा बाकीका कलकत्ता और अन्यान्य प्रधान प्रधान नगरोंको रवाना होता है।

मुर्शिदाबाद और उसके निकटवर्ती बहरमपुर तथा मालदह आदि स्थानोंमें भी कुछ कुछ तसर पैदा होता है। परन्तु इन स्थानोंमें तसरकी अपेक्षा रेशमकी अधिक उपज है।

कोशसे सूत निकालनेके लिए पहले उनको खारके पानीमें उबाला जाता है। इससे कोश कोमल हो जाते हैं और सहजमें सूत निकलता है तथा सूतका मैल भी कुछ कुछ निकल जानेसे सूत साफ हो जाता है। अनन्तर समस्त कोशोंके शीतल और परिष्कृत होने पर उन्हें पुनः पुनः धो कर उनके डंठल और ऊपरका अपरिष्कृत अंश फेंक दिया जाता है। पीछे एक पात्रमें थोड़ा पानी रख कर उसमें ४ ५ वा उससे ज्यादे कोश छोड़ देते हैं, और उनके छोरोंको एकत्र कर एक साथ सबका सूत चरखी पर लपेट लेते हैं। यह काम अकसर करके औरतें ही किया करती हैं। सूत निकालनेके लिये इससे उमदा और कोई यन्त्र व्यवहृत नहीं होता। तमाम सूत निकलनेके बाद कोशके भीतरसे कृष्णाभ रक्तवर्ण मांसपिण्डवत् सूत तसर-कीट निकलता है। नीच जातिके लोग उसका तसरलड्डू कहते और उपादेय समझ कर खा जाते हैं। तसर कातनेवाले उनको रख देते हैं और नीच लोगोंको बेच देते हैं।

कोशोंकी पुष्टता और आकारके अनुसार उनके सूतमें भी कमीबेशी होती है। उत्कृष्ट कोशोंमें १०।१२से ही १ तोला सूत निकलता है। कोश निकृष्ट होने पर उसके अनुसार कोशोंकी संख्या भी बढ़ जाती है। तसरका सूत बहुत उमदा होनेसे रुपयेमें ८।१० तोला और निकृष्ट होने पर १२।१३ तोला तक मिलता है।

कोशोंके डंठल और सूत निकल जाने पर बाकीका जो भीतरी अंश बच रहता है, वह और छिन्न तसर सूतादि भी नष्ट नहीं होते। इनसे एक प्रकारका मोटा सूत बनता है। औरतें इनको कोमल बना कर अच्छी रेशमकी भांति—रूईकी तरह उतन उतन कर चरखीसे उनका सूत बनाती है। इस सूतसे करधनी और एक तरहका खूब मोटा कपड़ा बनता है। बङ्गालमें इस कपड़ेको केटिया, मटका इत्यादि कहते हैं। बहुतसे लोग इसको पवित्र और मजबूत समझ कर देवपूजा और व्रतो-

देखनेमें बहुत कुछ पशमीना जैसे होते हैं। तसरका स्वाभाविक रङ्ग गेरुआ होता है। इसको कुसुमी, चोबी आदि नाना रङ्गोंमें रङ्ग कर उससे उत्कृष्ट धोती साड़ी दुपट्टे आदि बनाते हैं। बिना रँगे हुए सादे तसरके सूतसे दोबे आमखायो और खूबसूरत चिकना कपड़ा बनता है। सिवाय तसरके थान तथा तसरकी तानी और ऊनकी भरनी दे कर नाना प्रकारके मजबूत कपड़े बनाये जाते हैं। इससे कोट व मरदा आदि अच्छे बनते हैं। इसके एक गज कपड़ेकी कीमत २) ३।) तक होती है। बांकुड़ा, विष्णुपुर, मालदह, मुर्शिदाबाद, भागलपुर आदि स्थानोंमें उमदा उमदा तसरके कपड़े बनते हैं। तसरके कपड़े मजबूत और व्यवहार्य होनेसे साधारण लोग कहा करते हैं कि—

"पहने तसर और खाये घी,
पैसा बचे और उमदा जी।"

बाफ्ता तसरकी धोती, साड़ी इत्यादि जल्दी फटते नहीं बल्कि मजबूत होती है।

तसरका सूत पानीसे जल्दी सड़ता नहीं और बराबर के कपासके सूतकी अपेक्षा बहुत मजबूत होता है। इस लिये इससे मछली पकड़नेका डोरा भी बनाया जाता है। इस कामके लिये रखनेवाले लोग इसे और भी मजबूत बनानेके लिये सिर्फ पानीमें भिगो कर कच्चे कोयोंसे भी सूत निकालते हैं। बहुतसे लोग कामकाजके समय भी कच्चे कोयोंसे सूत निकालते हैं। इस तरहसे निकाला जानेवाला सूत बहुत उमदा और मजबूत होता है पर मछुवादिके लिये सूत निकालनेमें इतनी मिहनत करना लोग पसन्द नहीं करते और अनायास ही कच्चे-खोलों की टिकी उबाल कर अपना रोजगार चलाते हैं। तसर और आदिका विस्तृत विवरण और इसके प्रस्तुतिकरण आदि रेशम शब्दमें देखो।

तसला (फा० पु०) चोटी, पीतल, तांबे आदिका एक प्रकारका गहरा बरतन।

तसली (हि० स्त्री०) छोटा तसला।

तसलीम (अ० स्त्री०) १ प्रणाम सलाम। २ किसी बात की स्वीकृति, हामी।

तसल्ली (अ० स्त्री०) १ आश्वासन सान्त्वना, ढाढ़स। २ धैर्य, धीरज।

तसवीर (अ० स्त्री०) १ चित्र, नकशा। (वि०) २ मनोहर, खूबसूरत।

तसू (फा० पु०) लम्बाईकी एक माप जो १½ इंचके बराबर मानी गई है।

तस्कर (सं० पु०) तद् करोति इति तत् कृ ट, सुट् दलोपश्च। १ चोर चोर। २ मदनवृक्ष, एक प्रकारका साग। ३ मदनवृक्ष, मैनफल। ४ चोरनामक गन्धद्रव्य। ५ श्रवण, कान। ६ एक प्रकारके लम्बे और अधिर केतु। इनकी संख्या ५१ है और ये बुधके पुत्र माने गये हैं।
(बृहत्संहिता)

तस्करता (सं० स्त्री०) तस्करस्य भावः तस्कर तल् स्त्रियां टाप्। चौर्य, चोरका काम, चोरी।

तस्करस्नायु (सं० पु०) तस्कर इव स्नायुरिव नाडिका यस्याः बहुव्री०। काकनासालता कौवाठोंठी।

तस्करी (सं० स्त्री०) तस्कर तद् जातचौराद्यर्थे ट, टित्वात् ङीप्। १ वह स्त्री जो चोर हो। २ चोरकी स्त्री। ३ चोरका काम चोरी। ४ काकनासालता, कौवाठोंठी। ५ अभिमानं अभिमान। ६ अत्यन्त क्रोधयुक्ता।

तस्तुभ (सं० स्त्री०) वैद्यकपद नामकी औषध।

तस्थिवस् (सं० त्रि०) स्था वसु स्थित ठहरा हुआ।

तस्थु (सं० त्रि०) स्था कु द्वित्व। स्थावर, एक ही स्थान पर रहनेवाला।

तस्थुष (सं० पु०) स्था कुसि द्वित्व। मानव, मनुष्य।

तस्मात् (सं० अव्य०) इसलिये।

तस्त (फा० पु०) तसला।

तस्सू (हि० पु०) तसू देखो।

तह— तहाँ देखो।

तह (फा० स्त्री०) १ मोटाईका फैलाव, परत। २ तल, पेंदा। ३ तल, थाह। ४ किसी महीन पटल।

तहकीक (अ० स्त्री०) १ सत्य यथार्थता। २ अनुसन्धान खोज। ३ जिज्ञासा, पूछताछ।

तहकीकात (अ० स्त्री०) अन्वेषण, अनुसन्धान, जाँच।

तहखाना (फा० पु०) तलघर जमीनके नीचेकी कोठरी भुइँ घरा।

तहज़ीब (अ० स्त्री०) सभ्यता, शिष्टता।

तहदरज (फा० वि०) बिलकुल नया, जिसका व्यवहार न हुआ हो।

तहनिशाँ (फा० पु०) लोहे पर सोने चाँदीको पच्चीकारी।
तहपेच (फा० पु०) पगड़ीके नीचेका कपड़ा।
तहबाज़ारी (फा० स्त्री०) सट्टोमें सौदा बेचनेवालोंसे लिये जानेका महसूल।
तहमत (फा० पु०) वह कपड़ा जो कमरमें लपेटा जाता है, लुंगी।
तहरी (हिं० स्त्री०) १ पेठेकी बरी और चावलकी खिचड़ी। २ मटरकी खिचड़ी। ३ कालीन बुननेवालोंकी ढरकी।
तहरीर (अ० स्त्री०) १ लिखावट, लेख। २ लेखशैली। ३ लिखी हुई बात, लिखा हुआ मज़मून। ४ लेखबद्ध प्रमाण। ५ लिखनेकी मजदूरी, लिखाई।
तहरीरी (फा० वि०) लेखबद्ध, लिखा हुआ।
तहलका (अ० पु०) १ मृत्यु, मौत। २ नाश, बरबादी। ३ विप्लव, धूम, हलचल।
तहलील—अरबदेशकी स्त्रियोंका एक प्रकारका कर्कश शब्द। जिह्वा और कण्ठकी गतिके एकत्र संयोगसे यह शब्द निकला है। यह शब्द निकालते समय वे मुंह पर बहुत तेजीसे हाथ फेरती है। तहलील सुननेसे ही अरब अथवा कुर्दलोग जोशमें आ कर ज्ञानरहित हो जाते हैं।

कर्जेरन और बुसहरके मध्यवर्ती देशोंकी अरबी स्त्रियाँ किसी अपरिचित व्यक्तिकी अभ्यर्थनाके समय यह शब्द उच्चारण करती हैं। यह उनका आमोदज्ञापक निदर्शन है। मृत व्यक्तिके लिये शोक प्रगट करते समय भी यह शब्द व्यवहृत होता है।

तहवील (अ० स्त्री०) १ सुपुर्दगी। २ धरोहर, अमानत। ३ जमा, खजाना।
तहवीलदार (अ० पु०) वह मनुष्य जिसके जिम्मे रुपयेका हिसाब रहता है, खजानची।
तहसनहस (हिं० वि०) नष्ट भ्रष्ट, बरबाद।
तहसील (अ० स्त्री०) १ चंदा, उगाही, वसूली। २ जमीनकी वार्षिक आय। ३ तहसीलदारकी कचहरी, मालकी छोटी कचहरी।
तहसील—राजस्व वसूलकी सुविधाके लिये एक एक प्रदेश भिन्न भिन्न भागोंमें विभक्त किया जाता है। इसके प्रत्येक भागको तहसील कहते हैं। हर एक तहसीलमें एक तहसीलदार रहता है और वही वहाँका मुख्य मुख्य काम करता है।

तहसीलका कर संग्रह करना ही तहसीलदारका प्रधान कार्य है। पञ्जाबके तहसीलदारोंके हाथ दीवानी और फौजदारी विचारकी क्षमता है। इन्हें मजिष्ट्रेट-कासा अधिकार रहता है।

तहसीलदारके कार्यालयको भी कभी कभी तहसील कहते हैं।

गवर्मेण्टकी नाईं जमींदारोंके अधीन भी बहुतसी तहसीलें हैं। जमींदारोंका परगना अनेक तहसीलों और डीहोंमें विभक्त रहता है।

तहसीलदार (हिं० पु०) १ किसी परगने या तालुकका प्रधान कर वसूल करनेवाला। फारसी तहसीलदार और अरबी तहसील शब्दसे हिन्दी तहसीलदार शब्द उत्पन्न हुआ है। मुसलमानोंके राजत्वकालमें इस शब्द-की सृष्टि हुई है। बाद अंगरेज गवर्मेण्ट भी इस शब्द-का व्यवहार करती आ रही है। २ जमींदारोंसे सरकारी मालगुजारी वसूल करनेका अफसर। यह मालके छोटे मुकदमोंका फैसला भी करता है।
तहसीलदारी (अ० पु०) १ मालगुजारी वसूल करनेका काम, तहसीलदारका काम। २ तहसीलदारका पद।
तहसीलना (अ० क्रि०) वसूल करना, उगाहना।
तहाँ (हिं० अव्य०) उस स्थान पर, वहाँ।
तहाना (हिं० क्रि०) लपेटना, तह करना।
तहोबाला (फा० क्रि०) क्रमभङ्ग, ऊपर नीचे, उलट पुलट।
ता (सं० पु०) विशेषण और संज्ञा शब्दोंके आगे लगाये जानेका एक भाववाचक प्रत्यय।
ता (फा० अव्य०) पर्यन्त।
ताई (हिं० स्त्री०) १ ताप, ज्वर। २ वह बुखार जो जाड़ा दे कर आता हो, जूड़ी। ३ मालपूआ, जलेबी आदि बनानेकी एक प्रकारकी छिछली कराही। ४ बापके बड़े भाईकी स्त्री, जेठी, चाची।
ताईद (अ० स्त्री०) १ पक्षपात, तरफदारी। २ समर्थन, पुष्टि।
ताईं (हिं० अव्य०) १ पर्यन्त, तक। २ निकट, समीप। ३ समक्ष, प्रति। ४ लिये, वास्ते, विषयमें।

ताऊ (हिं॰ पु॰) बाप या पिताका बड़ा भाई, बड़ा चाचा।

ताऊन (अ॰ पु॰) एक प्रकारका संक्रामक रोग। इसमें रोगीको गिलटी निकलती और बुखार आता है।

ताऊस (अ॰ पु॰) १ मयूर, मोर। २ एक प्रकारका बाजा जो सारंगी और सितारसे मिलता जुलता है। इस पर मोरका चिह्न बना रहता है।

ताऊसी (अ॰ वि॰) १ मोरकासा मोरके रंगका। २ गहरा बैंगनी।

ताओई—(ताओचि नामसे प्रसिद्ध) चीनदेशका एक प्राचीन धर्ममत और सम्प्रदाय। ई॰से ६०४ वर्ष पहले लेओकाङ् नामके एक दार्शनिकने जन्मग्रहण किया था, वे ही इस मत और सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। उनकी जीवनी अद्भुत और अलौकिक उपाख्यानोंसे भरी हुई है। उनके बाल बहुत ही सफेद थे, इसलिए वे 'लाओचि' अर्थात् 'वृद्धकेश' के नामसे प्रसिद्ध थे।

पहले लाओचि चू-वंशीय एक चीन सम्राट्के पुस्तकालयके अध्यक्ष थे। इस कार्यसे उन्हें नाना शास्त्र परिदर्शनमें विशेष सुभीता हुआ था। धीरे धीरे उनके पाण्डित्यकी चर्चा नाना स्थानोंमें फैल गई। चीन सम्राट्‌ने उनको मान्दारिन्‌का पद दे दिया। कुछ दिन बाद वे तिब्बतमें जा कर एक लामाके पास धर्मोपदेश लेने लगे। इस शिक्षाके बलसे ही उन्होंने ताओई वा ताओचो अर्थात् अमरपुत्र नामक सम्प्रदायका प्रवर्त्तन किया था। इन्होंने अनेक ग्रन्थ रचे हैं, जिनमें ताओई ग्रन्थ ही प्रधान है। ताओई मत बहुत अंशोंमें ग्रीक विद्वान् एपिक्युरसके मतका अनुयायी और कुछ चार्वाक-मतके समान है।

इस मतमें—उपशमावलम्बन दुष्ट कामनाओंको छोड़ कर दुर्दम इन्द्रियोंको वशीभूत करना ही मनुष्यका प्रधान धर्म और उद्देश्य बतलाया है। आत्मा और मनको धैर्य बनी—हर एक तरहसे शान्त सुखी रखनेकी चेष्टा करना कर्तव्य बतलाया है। और यह भी बताया है, कि कभी भी दुश्चिन्ता और शोकरूपी वृत्तिको मनमें स्थान न देना चाहिये।

लाओचिके मतका उनके शिष्योंने बहुत कुछ परिवर्तन कर डाला। उन्होंने देखा कि, मनुष्य ज्यों ज्यों स्फाति-पथ पर आरूढ़ होने पर मन चञ्चल होता और सुख दूर भाग जाता है। इसलिए उन लोगोंने स्थिर किया कि, ऐसा एक अमृतरस बनाना चाहिये जिसके पीनेसे अमरत्व प्राप्त हो, फिर रोग, शोक जरा और मृत्यु आदि भी न कर सके। इस उद्देश्यसे वे रसायनशास्त्र अध्ययनमें प्रवृत्त हुए। अमृतरस पी कर अमर हो जायँगे, इस आशासे सैकड़ों लोग उनका मत ग्रहण करने लगे। क्या धनी और क्या गरीब, क्या स्त्री और क्या पुरुष, सभी अभिनव नीतिशिक्षामें व्यस्त हो गये। इस तरह थोड़े ही दिनोंमें ताओचो सम्प्रदाय अत्यन्त प्रबल हो गया। चीनमें सर्वत्र ही इन्द्रजाल, प्रेतानुष्ठान, भविष्यद्वाणी इत्यादिका प्रचार होने लगा। बहुतसे चीन सम्राटोंने भी ताओचियोंके आपातमनोरम वचनों पर मुग्ध हो कर उन्हें आश्रय दान दिया था। ताओचियोंने भी लोगोंको आकर्षित करनेके लिए नाना स्थानोंमें देवमन्दिर और देवमूर्त्तियाँ स्थापित कर पूजा, होम, बलि इत्यादि करना प्रारम्भ कर दिया। इस देशके तन्त्रशास्त्रोंमें जो चीनाचारक्रमका उल्लेख है ताओचियोंका क्रिया-काण्ड प्रायः उससे मिलता जुलता है। इस देशके लोगोंका विश्वास है, कि तन्त्रोक्त चीनाचार चीनदेशमें इस देशसे प्रचारित हुआ है। सम्भव है, कि चीनके ताओचियोंने जिस मतका प्रचार किया है, वही इस देशमें चीनाचारके नामसे प्रचलित हुआ हो।

ताओचियोंमें बहुतोंको पिशाचसिद्ध देखा जाता है।

इस समय ताओचि लोग शूकर, पक्षी और मत्स्यके उपास्य देवताको पूजा किया करते हैं। बहुतसे तो अब वैष्णव कहलाते हैं।

बहुत दिनोंसे चीनके विद्वान् और बुद्धिमान व्यक्ति ताओचि-धर्मको असारता प्रतिपादन करते आये हैं, किन्तु तो भी बहुतसे चीनवासी कुछ स्वार्थको छोड़ कर ताओई धर्मका परित्याग नहीं कर सके हैं।

ताओचियोंके प्रधान धर्माध्यक्ष चीनके किसी प्रधान मान्दारिनको अपेक्षा भी अधिक सुख-सम्पद्का भोग करते हैं। कियाङ्सी प्रदेशके प्रधान नगरमें धर्माध्यक्षका प्रासाद है, देवता समझ कर उनके श्रीचरणके दर्शन अथवा उनका उपदेश सुननेके लिए बहुत दूर-देशान्तरोंसे

सैकड़ों लोग धर्माधायकको सेवामें उपस्थित हुआ करते हैं।

ताँत (हिं० स्त्री०) १ चमड़े या नसोंको बनी हुई डोरी। २ धनुषकी डोरी। ३ सूत, डोरी। ४ सारंगी आदिका तार। ५ जुलाहोंका राछ।

ताँतड़ी (हिं० स्त्री०) ताँत।

ताँतवा (हिं० पु०) आँत उतरनेका रोग।

ताँता (हिं० पु०) श्रेणी, पंक्ति, कतार।

ताँतिपाड़ा—१ वीरभूम जिलेमें हरिपुर परगनेका एक छोटा ग्राम। यह नगरसे कई मील दक्षिणमें अवस्थित है। यहाँ बहुतसे ताँती रहते हैं। जो तसरके कपड़े तथा सूते तैयार करते हैं। इस गाँवके पूर्व और पश्चिमको ओर प्रायः ३००।४०० गज विस्तृत पत्थरका एक प्रसिद्ध बाँध है और इससे भी एक मील दक्षिणमें वक्रेश्वर नामक कई एक गरम सोते प्रवाहित हैं। वक्रेश्वर देखो।

२ मालदह जिलेके भट्टिया गोपालपुर परगनेका एक छोटा ग्राम। यह महानन्दा नदीके समीप ही अवस्थित है। यहाँ बहुतसे मनुष्य वास करते हैं। इसी कारण यह परगनेमें विशेष प्रसिद्ध है।

ताँतिया (हिं० वि०) जो ताँतकी तरह दुबला हो।

ताँतिया तोपी (तात्या टोपे)—सिपाहीविद्रोहके नायक प्रसिद्ध नानासाहबके प्रधान मन्त्री और पृष्ठपोषक। सिपाही-विद्रोह (सन् ५७का गदर)-के इतिहासमें नानासाहबने जैसी प्रसिद्धि लाभ की है, ताँतिया तोपीकी प्रसिद्धि भी उनसे कुछ कम नहीं है। कानपुरके विद्रोहमें ताँतियाने जैसे साहस और वीरत्वका परिचय दिया था, उससे उस समयके सेनापति उइण्डहाम, कलिन आदि बहुतसे अंग्रेज भीत और चकित हो गये थे। इन्होंके उत्तेजित करने पर ग्वालियरकी बड़ी फौजने सिन्धियाका पक्ष छोड़ कर विद्रोह किया था और चर्खारीराजको विशेषरूपसे विपद्ग्रस्त कर दिया था। अंग्रेजी सेना आ कर यदि राजाको सहायता न करती तो शायद उस समय चर्खारीराज्यका अस्तित्व ही मिट जाता। जिस समय झाँसीकी रानी अपने पार्श्वस्थित द्वारा परित्यक्त हो कर तथा अंग्रेज-सेनापतिके प्रबल आक्रमणसे अत्यन्त विपद्ग्रस्त हुई थीं, ताँतिया तोपी उस समय सेना सहित रानीकी सहायताके लिए उपस्थित हुए थे। रानीके साथ ब्रटिश-सेनाका जितनी दफा युद्ध हुआ था इन्होंने प्रत्येक युद्धमें रानीको यथेष्ट सहायता की थी। काल्पी अंग्रेजोंके हाथ पड़नेके बाद गोपालपुरमें आ कर इन्होंने रानीसे भेंट की और ग्वालियर अधिकार किया। यहाँ इन्होंने बहुत धन एकत्रित किया था। अंग्रेजी सेनाने आ कर जब ग्वालियर अधिकार कर लिया और झाँसीकी वीर रानी जब शत्रुकी गोलीसे मारी गईं, तब ताँतिया एक तरहसे निरुत्साह हो गये। परन्तु साथमें बहुत सेना और अर्थबल होनेसे ये नानासाहबका नाम ले कर दाक्षिणात्यवासियोंको उत्तेजित करनेमें अग्रसर हुए। ब्रटिश-गवर्मेण्ट भी इससे बहुत डर गई थी। बड़े लाटके आदेशानुसार सेनापति नेपियर ताँतियाको पकड़नेके लिए अग्रसर हुए। तात्याने शत्रु साहबके साथ चर्मण्वती नदीको पार कर राजपूतानामें प्रवेश किया। उनकी इच्छा थी, कि राजपूत राजाओंको उत्तेजित कर अंग्रेजोंके विरुद्ध युद्ध घोषणा करें। किन्तु राजपूतानामें दो एक जगह विद्रोहके चिह्न दीखने पर भी तात्याका अभिप्राय सिद्ध न हुआ। जयपुरको इन्होंने चर भेजे थे, वहाँसे विशेष सहायता पानेका सुभीता हुआ था, पर बात प्रकट हो जानेसे नसीराबादसे रवार्ट साहब दो हजार सेनाके साथ तात्याकी गतिरोध करनेके लिए आ पहुँचे। तात्या अपनी फौजके साथ नर्मदा नदी पार होनेके अभिप्रायसे टोंकके भीतरसे धावित हुए। उस समय चम्बल नदीका पानी इतना बढ़ा हुआ था, कि उनकी सेनाको उसे पार करनेकी हिम्मत न हुई। इसके लिए वे पश्चिमकी तरफ बुन्दीगिरि पार हुए। उस समय राजपूतानेकी सभी नदियाँ उद्वेलित हुई थीं। इतने पर भी रवार्ट साहबने उनका पीछा करना छोड़ा नहीं। भीलवाड़ेके पास रवार्टकी एक बार ताँत्याकी सेना दीख पड़ी थी, किन्तु शीघ्र ही वह आँखोंके ओझल हो गई। बनास नदीके किनारे पर पहुँच कर रवार्ट तात्या पर आक्रमण करनेके लिए तैयारियाँ करने लगे। वहाँ तात्या तोपी भी निश्चिंत न थे, वे सेनाको होशियार करके स्वयं पासके देवालयमें पूजाके लिए चले गये। आधी रातको आ कर उन्होंने सुना कि, शत्रु लोग बहुत ही पास आ गये हैं। इस पर उन्होंने शीघ्र ही रण-भेरी

बज़ारमेंका घाटिया दिया। पदातिकगण सभी भाग गये थे, उन लोगोंने तांत्याका आदेश पालन नहीं किया। अस्त्र गोली और गोलन्दाज़ सब तैयार हो गये। दूसरे दिन एक छोटा युद्ध हुआ। किन्तु दुर्भाग्यवश तांत्याको सेनाको पीठ दिखाना पड़ा। धीरे धीरे नाना चम्बल नदीको पार हो कर झालरा पाटनकी तरफ बढ़ने लगे।

झालरापाटन एक प्रसिद्ध देशीय राज्यकी राजधानी है। तांत्याने अनायास ही उस राजधानी पर अधिकार कर अधिवासियोंसे करस्वरूप ५ लाख रुपये वसूल कर लिये। इसके सिवा राजकोषसे भी उनको प्रायः ८ लाख रुप-येकी चीज़ें और १० तोपें मिली थीं। वहां उन्होंने बहुत थोड़े समयके भीतर बहुतसी नई सेना बना ली।

अब तांत्यातोपी ऐश्वर्य और अर्थबलसे विशेष बलवान् हो गये। इन्दोर पर उनका लक्ष्य गया। महाराष्ट्र मात्र ही नानासाहबको पेशवा मानते थे। तांत्याको विश्वास था, कि इन्दोर अधिकार कर लेनेसे तथा नाना साहबका नाम घोषित होने पर होलकर-राज्यके सम्पूर्ण लोग आ कर उनकी सहायता करेंगे। किन्तु उनके सेनापतियोंमें परस्पर वैमनस्य होनेसे उनका यह उद्देश्य सिद्ध न हुआ। तांत्यातोपी पर आक्रमण करनेके लिए लकार्ट, होप और मेजर जनरल माइकेल सेना सहित राजगढ़में उपस्थित हुए। तांतिया कौशली और बुद्धिमान् होने पर भी युद्धमें साहसी न थे, युद्धके समय वे प्रायः रण-क्षेत्रमें उपस्थित न होते थे, इसी दोषके कारण उनकी सेना उनको कायर समझ कर घृणाकी दृष्टिसे देखती थी। इसी दोषसे विपुल सेना और सहायक होते हुए भी वे बार बार अंग्रेज़ोंसे पराजित होते आये थे। और अबकी बार भी वे इसी दोषके कारण पराजित हो गये। उनकी सेना तितर बितर हो गई। कुछ दिन तांतिया जंगलोंमें घूमते रहे। अन्तमें उन्होंने अपनी सेनाके दो विभाग कर दिये एक दल रावसाहबके अधीन उत्तरकी तरफ भेज दिया और एक दलको वे अपने साथ ले कर दक्षिणकी ओर चल दिये।

तांत्यातोपी नर्मदा नदीको पार हो कर दाक्षिणात्यकी तरफ अग्रसर हो रहे हैं, यह सुन कर बम्बईके गवर्नर भीत और चकित हुए। जिसमें तांतिया नर्मदा नदी पार न हो सकें, इसके लिए विशेष बन्दोबस्त किया गया था। तांतिया अन्य किसी भी तरफ जानेका मौका न देख कर पश्चिमकी ओर आ कर खारगुन नामक स्थानमें पहुंच गये। इधर मेजर सदरलैंड उनकी गति रोकनेके लिए सिमनास आ पहुंचे। तांतिया देरी न कर नर्मदाकी तरफ अग्रसर हुए। छोटा उदयपुर नामक स्थानमें पहुंचते ही ब्रिगेडियर पार्कने आ कर उनकी सेनाको परास्त कर दिया। इससे तांतिया भग्नहृदय हो कर बांसवाड़ाके घने जंगलको लौटने लगे। उन्हें अब यह उम्मेद न थी कि वे फिर दाक्षिणात्यमें पहुंचके विद्रोह खड़ा करेंगे। किन्तु अकस्मात् आशाका क्षीण-आलोक दिख-लाई दिया। संवाद मिला कि, कुमार फिरोजशाह अवधसे आ रहे हैं; इसने उनका साथ दिया। वे जिस स्थानमें थे, अब उस स्थानको छोड़नेके लिए उन्होंने एक बार फिर साहस बढ़ाया। प्रतापगढ़के ब्रिगेडियर सिरिकाहटको भेद कर उन्होंने मेजर रोकको ससैन्य परास्त किया। कर्नल बेनसनने झालावाड़से आ कर जोधपुरमें तांतियाकी सेना पर आक्रमण पूर्वक ५ तोपें छीन लिये।

तांतिया इन्द्रगढ़ नामक स्थानमें आ कर फिरोज शाहके साथ मिल गये। इस समय दोनों पक्षोंकी पूरी ताकत हो गई थी, किन्तु दोनों दलोंके मिल जाने पर कुछ कुछ आशाका संचार हुआ। वे इन्द्रगढ़से मालवामें हो कर राजपूतानाके उत्तरांशको चालित हुए। इधर कर्नल हम-फ्रीने नसीराबादसे २४ घण्टेके भीतर ३६ कोस रास्ता पार कर सीकर नामक स्थानमें विद्रोहियों पर आक्रमण किया। इस आकस्मिक आक्रमणसे तांतिया अत्यन्त विचलित हुए। उन्होंने अम्बोनाथ हो कर कुछ अनुच-रोंके साथ चम्बल नदी पार करते हुए फिर पासके निकट वर्ती सिन्धियाके जंगलमें प्रवेश किया। इस जंगलमें मानसिंहके साथ उनकी मुलाकात हो गई। मानसिंह सिन्धियाके अधीन एक सामन्त राजा थे सिन्धियाने उनकी समस्त सम्पत्ति छीन ली थी। इसी लिए वे दस्युवृत्ति कर जंगलमें ही जीवन यापन करते थे। तांतियाके साथ उनका खूब परिचय था। उन्होंने तांत्यातोपीको आदरके साथ आश्रय दिया।

इधर सेनापति मीडने मेजर मिडको मानसिंह

और तांत्यातोपीको पकड़नेके लिए भेज दिया। १८५८ ई०को ८वीं मार्च को मेजर मिडने, जिस गाँवमें मान सिंह रहते थे उस गाँवके ठाकुरको पत्र दिया। उसमें मानसिंहके लिए लिखा गया, कि यदि वे स्वयं आ कर पकड़ाई देंगे, तो उनके लिए बहुत सुभीता होगा। अन्तमें मानसिंहको कहा गया, कि उनको वृटिश-शिविरमें रक्खा जायगा, सिन्धिया उनका बाल भी बाँका नहीं कर सकेंगे, प्रत्युतः उनके सुखस्वच्छन्दताके लिए अङ्गरेज सेनापति विशेष कोशिश करेंगे। मानसिंह अंग्रेज सेनापतिके पास जा कर मिले। किन्तु तब भी तांत्यातोपीको कुछ सन्देह न हुआ। उन्होंने मानसिंहको कहलवा भेजा, कि वे यहीं रहें या फिरोजशाहके साथ फिर जा मिलें। मानसिंहने उत्तर दिया कि, "मैं तीन दिनके भीतर आ कर आपसे मुलाकात करूंगा।" वृटिश सेनापति जानते थे कि मानसिंहके सिवा और किसीको भी ताकत नहीं कि तांत्या तोपीको पकड़ लावे। इसलिए नाना प्रकारका लोभ दे कर मानसिंह पर यह भार सौंपा गया। ७ अप्रोलको ग्रामके बाद मानसिंहने तात्यासे जा कर भेंट की और कहा—"मिड साहब आप पर सदय हुए हैं।" उस समय भी तांतियाने पूछा, कि यहां रहें या फिरोजशाहके पास जांय। किन्तु 'कल इसका जवाब दूंगा' इतना कह कर मानसिंह चल दिये। उसी रातको दो पहरके समय मानसिंहने कुछ सिपाहियोंके साथ आ कर देखा, कि तांत्या तोपी गहरा नींदमें सो रहे हैं। विश्वासघातक मानसिंह उसी अवस्थामें उनको कैद कर मिड साहबके शिविरमें ले गये। पीछे तांत्यातोपी सोकरीको भेजा गया। विचारमें तांत्यातोपी दोषी ठहराये गये। विचारके समय तांत्यातोपीने जवाब दिया था कि —"अपने प्रभुके आदेशसे इतने दिन युद्ध किया है, मैंने कभी भी किसी अंग्रेज पुरुष, स्त्री वा बालकको हत्या नहीं की।" १८५८ ई०, १८ अप्रोलको उनके प्राणदण्डका दिन स्थिर हुआ। मृत्युसे पहले तांत्यातोपीने यह बात कही थी—"मैं अपने लिए जरा भी दुःखित नहीं हूं परन्तु मेरा परिवारवर्गको कष्ट न पहुँचना चाहिये।"

नानासाहब, सिपाहीविद्रोह, झांसीकी रानी आदि शब्दोंमें अन्यान्य विवरण देखो।

ताँतियाभील, (तांत्याभील)—एक प्रसिद्ध भील-दस्यु या डाकू। मध्यप्रदेशमें नीमार जिलेके अन्तर्गत घाटसेरोंके निकट विरदा नामका एक ग्राम है, यहाँ हिन्दू भीलोंके बीच कई एक घर गोपोंके भी वास हैं। इसी वंशमें (१८४२ ई०में) कृषिजीवी भाऊसिंहके औरससे तांतिया का जन्म हुआ था।

बाल्यावस्थामें ही इसकी माताका देहान्त हो गया। विद्याशिक्षाके अभावके कारण ज्ञानमार्जित नहीं हो सका था, किन्तु उसमें उनके सद्गुण, असाधारण बुद्धि और न्यायपरता अवश्य थी।

बचपनसे ही तांतिया अस्त्र-शस्त्रसे खेलना ज्यादा पसन्द करता था। उसमें शारीरिक सामर्थ्य भी कम न थी। एक दिन एक भैंसा क्षिप्त अवस्थामें गाँवके अन्दर घुस आया, ग्रामका कोई भी उसको पकड़ न सका। किन्तु तांतियाने खेल समझ कर उसके दोनों सींग इस तरहसे पकड़ कर नवा दिये कि, फिर वह भैंसा किसी तरह भी अपना मस्तक उठा न सका और थर्राता हुआ जमीन पर गिर पड़ा।

तभीसे लोगोंको तांतियाके पराक्रमका परिचय मिलने लगा। जिस ग्राममें भाऊसिंह रहता था, वहाँ उसको कुछ सम्पत्ति न थी।

ग्रामसे कुछ दूरी पर पाखार नामक गांवमें उसको कुछ जमीन थी। शिव पटेल नामक एक व्यक्तिके साझेमें वह खेती करता था। तांतियाको उम्र जब ३० वर्षको हुई, तब उसके पिता भाऊसिंहको मृत्यु हो गई। पिताकी मृत्युके बाद उस शिव पटेलने तांतियाकी उस जमीनसे दूर कर दिया। इस पर तांतियाने शिव पटेलके नाम अदालतमें नालिश ठोंक दी; किन्तु अर्थाभावसे वह मुकदमेमें हार गया।

तांतियाने मुकदमेमें हार कर शिव पटेलको उत्तम-मध्यम कुछ शिक्षायें दीं। इस अन्याय अत्याचारके कारण उसे एक वर्षकी कैद हुई।

यह उसका प्रथम कारागार दर्शन है। नागपुरके इस जेलमें बड़े कष्टसे एक वर्ष बिताया।

तांतिया जेलसे लौट तो आया पर गांवके कुछ लोगोंके षड़यन्त्रसे उसे फिर तीन महीनेके लिए जेल जाना पड़ा।

जिसने कुटम्बारा था कर अपको बार बार अपनेको राज्यमें न रह कर होलकर राज्यमें पीपा नामक ग्राममें रहने लगा।

इस समय फिर वह पूर्वोक्त षड्यन्त्रकारियोंके षड्यन्त्रमें पड़ गया। इस षड्यन्त्र और इनके कठोर व्यवहारने ही तांतियाको डाकू बना दिया उसकी दस्युवृत्ति ग्रहण करनेमें यही प्रधान कारण था। षड्यन्त्रका हाल मालूम पड़ते ही तांतियाने वह ग्राम छोड़ दिया और एक जगहसे दूसरी जगह एक जङ्गलसे दूसरे जङ्गलमें घूम फिर कर एक वर्ष काट दिया। इस समय जीविका निर्वाहके लिए उसको कुछ कुछ चोरी और डकैती भी करनी पड़ती थी।

पहोमाधापरमें बिजनिया नामका तांतियाका एक विश्वस्त मित्र था, उससे तांतियाको षड्यन्त्रके विषयकी बहुत कुछ खोज मिला करती थी। तांतिया किसन पटेल आदि कुछ षड्यन्त्रकारियोंके षड्यन्त्रसे पुलिसके द्वारा फिर पकड़ा गया।

उसके साथ बिजनिया और दौलिया ये दोनों भी पकड़े गये। इस हाजत-घरमें तांतियाके अनुचर सोन कैदी १० थे वे हाजत-घरसे पेड़ काट कर निकल भागे और पहरेवालोंको वध कर चल दिये।

तांतिया अपने दल बलके साथ जेलसे निकल कर ६ घण्टा लगातार चला, १० कोस चल कर तब निरापद हुए थे। यहाँ भी कोढ़ीकी तरह बंधुना आदि तोड़ डालीं। जिन लोगोंने तांतियाके विरुद्ध षड्यन्त्र रचा था, समय पा कर अब उनको वह उपयुक्त सजा देने लगा। इसी तरह तांतिया कञ्जूसका माल लूट कर गरीबोंको बांटता था जो अपने अभावसे भूखा मारा फिरता था उसे तांतिया बहुत रुपये देता था। कंजूस या दुर्दान्तके लिये तो तांतिया यमके समान था।

जिस जिस आदमीने तांतियाके विरुद्ध षड्यन्त्र किया था और उसको पुलिसके हाथ पकड़वा दिया था, उन सबको उसने विशेषरूपसे दण्ड दिया। उनके घर द्वार जला दिये, धन लूट कर गरीबोंको बांट दिया। पुलिस ने इसको पकड़नेके लिए बड़ी बड़ी कोशिशें कीं, पर सब व्यर्थ हुईं। पुलिस जब ने कई बार कोशिश करके इसे पकड़ न सकी तब अनन्योपाय हो कर उसको पकड़नेके होलकर-राजकी सहायता मांगनी पड़ी। होलकर राज भी ब्रिटिश-पुलिसके साथ एकमत हो कर उसके अनुसन्धानमें प्रवृत्त हुए।

तांतियाको पकड़नेके लिये पुलिस जितना यत्न करने लगी, उतना ही उसका पकड़ना उनके लिये कठिन होने लगा। इस समय सिर्फ भील ही तांतियाके दलमें न थे वरन् और बनजारोंमेंसे भी बहुतसे आ कर उसके दलको बढ़ाने लगे।

तांतियाको न पकड़ सकनेका प्रधान कारण यह था, कि वह दरिद्रोंका पिता और विपन्नका एकमात्र आश्रय दाता था। तांतिया जिस ग्राममें लूट करता उसी ग्रामके दरिद्रोंको सबके सामने समान भागसे बटवारा कर देता था।

ब्राह्मण साधु और स्त्री, ये तीन तो तांतियाके लिये विशेषरूपसे रक्षणीय होने पर भी वह उनका किसी तरह अनिष्ट न करता था।

जिन गुणोंके कारण उस प्रदेशको दरिद्र प्रजासमूह तांतियाको विशेषरूपसे आदर करती थी, वे गुण उसने डाकू होनेके बाद नहीं सीखे थे। बचपनसे ही उसके हृदयपट पर इन गुणोंका अङ्क पड़ा हुआ था।

तांतियाको पकड़नेके लिये गवर्मेण्ट राशि राशि अर्थ व्यय करने लगी, होलकर महाराजने बहुतसे शिक्षित कर्मचारी और सदस्य पुलिस, कोई भी कामयाब न हो सके। तांतिया इसी तरह कभी अंगरेजी राज्यमें और कभी होलकर राज्यमें जा कर दुष्टोंका दमन करने लगा।

इसी समय तांतियाका दाहिना हाथ दौलिया पकड़ा गया और डकैतीके लिये उसे कालेपानीकी सजा हुई। तांतियाने बहुत चेष्टा करके न मालूम क्या सोच कर कुछ दिनोंके लिये सौम्यमूर्ति धारण कर ली।

तांतियाने इन ५ वर्षोंमें इतनी डकैतियां की थीं, कि जिसका अन्त न सम्भव है। उनके द्वारा यथाक्रमसे बड़ी बड़ी ४०० प्रसिद्ध डकैतियां हुई थीं। कभी पुलिसके भाषमें और कभी पुलिसको प्रतारित करके ये डकैतियां की गई थीं। उस समय तांतियाने कुछ पुलिस-कर्मचारियोंकी नाक काट ली थी। इस समय तांतियाको

उम्र ४५ वर्षकी थी, इस तरह असमयमें बहुत परिश्रम, शारीरिक अनेक अत्याचार आदिसे उसका शरीर कुछ दुर्बल हो गया तथा लगातार ११ वर्ष तक पुलिस, पल्टन, मालगुजार आदिके साथ युद्ध कर और हजारों वर जला कर वह बहुत ही क्लान्त हो गया। अब दस्युपति ताँतिया इन सबको छोड़ कर गवर्मेण्टसे क्षमा पानेके उपाय सोचने लगा। इसके लिये आखिर उसे बहुतोंके साथ मित्रता करनी पड़ी। उसकी तरफसे गवर्मेण्टको दो एक बात कहनेके लिये बहुतोंको उसने रुपये भी दिये।

पहले इसकी हिम्मत यहाँ तक बढ़ी हुई थी, कि जब उसे गरीबोंके कष्ट निवारण करनेकी इच्छा होती और सहजमें कहींसे द्रव्य-संग्रहका उपाय न देखता, तब चलती गाड़ीमें चढ़ कर बाहुबलसे गाड़ीका दरवाजा खोल डालता था। इस तरह जी० आई० पी० रेल गाड़ीमें चढ़ कर चावल, गेहूं, चना आदिके बोरे नीचे डाल देता और बादमें उस गाड़ीसे उतर कर उन चीजोंसे गरीबोंका अभाव दूर करता था। किन्तु अब उस शक्तिका क्षय हो गया, दृष्टिशक्ति भी घट गई वह तेज, वह उद्यम अब उसमें कुछ भी नहीं रहा।

ताँतियाने मेजर ईश्वरीप्रसाद सी० आई० ई०-से अङ्गरेजोंसे क्षमा माँगनेके लिये मित्रता की। ईश्वरीप्रसादने एक दिन ताँतियाको निमन्त्रण दिया। ताँतिया जब इनके मकान पर निमन्त्रण रक्षाके लिये उपस्थित हुआ, तब इन्हींके षड़यन्त्रसे पुलिसके द्वारा पकड़ा गया। इस पर ताँतियाके अनुचर पुलिससे बहुत कुछ लड़े, पर किसी तरह भी कृतकार्य न हो सके।

"ताँतिया पकड़ा गया है" इस संवादको पा कर अङ्गरेज गवर्मेण्टके आनन्दकी सीमा न रही। पुलिस-कर्मचारी मात्र ही अपने कष्टका लाघव समझ कर आनन्दसे नाचने लगे। ईश्वरीप्रसादने ताँतियाको विचारार्थ अङ्गरेजोंके पास भेज दिया। किन्तु बहुतसे लोग सन्देह करने लगे, कि वह असली ताँतिया है या और कोई। अन्तमें अनेक प्रमाणों द्वारा निर्णय हो गया कि, यही असली ताँतिया है।

अब ताँतियाका विचार होने लगा। ताँतियाके ८ हजारों अभियोग उपस्थित हुए। ताँतियाके विचारके दिन अदालत लोगोंकी भीड़से ठसाठस भर गई। ताँतियाको जो कुछ पूछा गया, उसने सबका सच स्वीकार किया था। ताँतियाके लिए फाँसीका हुक्म हुआ।

ताँतियाको मजबूतीसे बाँध कर जब्बलपुरकी जेलके भीतर पहुँचाया गया। बहुतसे लोग ताँतियाके लिये रोने लगे। ताँतिया राजदण्डसे दण्डित हो हमेशाके लिये इस लोकसे विदा हो गया।

ताँती (हिं० स्त्री०) १ पंक्ति, कतार। २ बालबच्चे, औलाद। (पु०) ३ जुलाहा।

ताँबा (हिं० पु०) ताम्र देखो।

ताँबी (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारका ताँबेका छोटा बरतन जिसका मुँह चौड़ा रहता है। २ ताँबेकी करछी।

ताँबेकारी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका लाल रङ्ग।

ताँबेल (पु०) जलकच्छप, कछुआ।

ताँवर (हिं० स्त्री०) १ ताप, ज्वर, हरारत। २ जूड़ी। ३ मूर्च्छा, पछाड़।

ताँवरी (हिं० स्त्री०) ताँवर देखो।

ताक़ (अ० पु०) १ चीज वस्तु रखनेके लिये दीवारमें बना हुआ गड्ढा, आला, ताखा। (वि०) २ विषम, जो संख्यामें बराबर न हो। ३ अद्वितीय, अनुपम।

ताक (हिं० स्त्री०) १ अवलोकन, ताकनेकी क्रिया। २ अनुसन्धान, खोज, तलाश। ३ किसी अवसरकी प्रतीक्षा, घात, दाँव। ४ स्थिरदृष्टि, टकटकी।

ताक़जुफ्त (फा० पु०) एक प्रकारका जुआ। इसमें एक खिलाड़ी मुट्ठीके भीतर कुछ कौड़ियाँ वा इसी प्रकारकी दूसरी वस्तुएँ ले कर दूसरेको पूछता है कि वस्तुओंकी संख्या सम है या विषम। यदि उत्तरदाता ठीक बतला देता है, तो वह जीत जाता है।

ताकझाँक (हिं० स्त्री०) १ कुछ प्रयत्नपूर्वक दृष्टिपात, ठहर ठहर कर बारबार देखनेकी क्रिया। २ छिप कर देखनेकी क्रिया। ३ निरीक्षण, देखभाल। ४ अन्वेषण, तलाश, खोज।

ताक़त (अ० स्त्री०) बल, शक्ति, जोर। २ सामर्थ्य।

ताक़तवर (फा० वि०) १ बलवान्, बलिष्ठ। २ सामर्थ्यवान्, जिसे बल हो।

ताकना (हिं० क्रि०) १ विचारना, जाँचना, सोचना। २ एक दृष्टिसे देखना, टकटकी लगाना। ३ ताड़ना, समझना। ४ पहलेसे देख कर स्थिर करना, तजवीज करना। ५ दृष्टि रखना, रखवाली करना।

ताकरीलिपि—कासियानके यमुना नदीके किनारे तक्कके प्रदेशमें जो जो अक्षर प्रचलित हैं, उनका नाम है ताकरी। ताकरी अक्षर नागरी लिपिके समान नहीं, बल्कि शारदाका रूपभेद हो सकता है। सम्भवतः तक्क वा टाकीमें इन अक्षरोंका पहले पहल प्रचलन किया है, इसीलिये उनके नामानुसार इसका ताकरी नाम पड़ा है। सिन्धु नदीके पश्चिमकी तरफ और शतद्रु नदीके पूर्व भागमें तथा काश्मीर और काङ्गड़ाके प्रान्तोंमें इस लिपिका प्रचलन है। काश्मीर और काङ्गड़ाके हिन्दुओंमें और सिक्खोंमें यही अक्षर देखनेमें आते हैं। कल्हणका राजतरङ्गिणी नामक ग्रन्थ भी टकारी लिपिमें लिखा गया है। रघुनाथ और निमन्ताके बीच २६ स्थानोंमें यह लिपि देख पड़ती है। इसमें कोई कोई स्थान ताकरी लुण्डे और मुण्डे नामसे परिचित है।

इस लिपिमें विशेषता इतनी है, कि स्वरवर्ण व्यञ्जनके साथ कभी भी संयुक्त नहीं होता, अलग लिखना पड़ता है। इस लिपिके संख्यावाचक अक्षर कांगड़ेके प्रचलित अक्षरोंके समान हैं। यह अक्षरसे लिखी जा सकती है। इसमें सिर्फ 'र' व्यञ्जनवर्णके साथ संयुक्त किया जाता है।

ताकारी—सतारा नासिकके पासके दक्षिणमें अवस्थित एक गण्डग्राम। यह पैठ नामक स्थानसे १० कोस उत्तर पूर्व तथा कराड़से १६ कोस दक्षिण-पश्चिममें पड़ता है। सतारेके रास्तेसे प्रायः १ कोस उत्तरमें एक छोटा पहाड़ देखनेमें आता है जो दक्षिण-पूर्वकी ओर विस्तृत है। इस पहाड़में एक आश्चर्य रमणीय गुहा है। इसी गुहाके लिये ताकारी ग्राम बहुत मशहूर हो गया है। प्रायः ½ कोस पहाड़के ऊपर कुछ दूर जानेसे उस गुहाके पास पहुंच जाते हैं। गुहाके पश्चिम दिशाकी पार्श्वस्थ भूमि प्रायः २० गज पर्यन्त समतल है। समतलभूमिकी दाहिनी तरफ मन्दिर दक्षिण पूर्व कोनमें प्रतिष्ठित है। यह गुहा १० फुट लम्बी और १० फुट गहरी है। इसके मध्य एक आयताकार सरोवर है, जिसका जल बहुत परिष्कार और स्वास्थ्यजनक है। पूर्वकी ओर जल तक बहुतसी सीढ़ियाँ बना दी गई हैं। तालाब देखनेमें बहुत सुन्दर लगता है। इसका परिमाण ११×११ है। गुहाके पश्चिम दिशामें एक महादेवका मन्दिर है, जिसमें शिवलिङ्ग स्थापित है। मन्दिर प्राचीनका सा प्रतीत होता है। इसका परिमाण ११×१० फुट है। आयताकार, गुम्बाकार और षट्कोणाकार इन तीन प्रकारके ६ फुट ऊँचे स्तम्भोंसे मन्दिरका दालान सुरक्षित है। इसकी छत समतलमय है। जिस कोठरीमें शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित है, वह समचतुष्कोणाकार है। मन्दिरके शिखर पर एक कलस दीख पड़ता है। कहा जाता है, कि पैठनके अधीन निम्बोडीके निकटवर्ती अम्बरके राम राव सवचन्तने १७१० ई०में यह मन्दिर निर्माण किया है। माघ मासकी कृष्ण चतुर्दशीको यहां प्रतिवर्ष मेला लगता है। प्रत्यक्ष रविवारको कमड-भैरवोंकी प्रतिमूर्तिको पालकी पर चढ़ा कर यात्रा कराते हैं।

ताकि (फा० अव्य०) इसलिये कि, जिसमें।

ताकीद (अ० स्त्री०) किसीको सावधान करके दी हुई आज्ञा या अनुरोध।

ताखानो (हिं० स्त्री०) एक औषधका नाम।

ताक्षक (सं० त्रि०) तक्षक सम्बन्धीय।

ताक्षण्य (सं० पु० स्त्री०) तक्ष्णोऽपत्यं तक्षन्-ण्य तक्ष्णो अपत्य। तक्षका अपत्य बढ़ईकी सन्तान।

ताक्षशिल (सं० त्रि०) तक्षशिलोऽभिजनोऽस्य तक्षशिला-अण्। तक्षशिलाजात जो तक्षशिला नगरीमें उत्पन्न हुआ हो, या जो तक्षशिला नगरीसे आया हो।

ताक्ष्ण्य (सं० पु० स्त्री०) तक्ष्णोऽपत्यम् तक्षन्-ष्यञ्। शिवादिभ्योऽण्। पा ४।१।११२। तक्षकका अपत्य, बढ़ईकी सन्तान।

ताखो (अ० वि०) जिसकी दोनों आँखें भिन्न भिन्न रङ्ग या जातकी हों।

ताग (हिं० पु०) तागा देखो।

तागड़ (हिं० स्त्री०) रस्सीकी बनी हुई एक प्रकारकी सीढ़ी जो मस्तूलों पर चढ़नेके लिये लगी रहती है।

तागड़ी (हिं० स्त्री०) १ कमरमें पहननेका एक गहना करधनी कांची। २ कटिसूत्र, कमरमें पहननेका रंगीन डोरा।

तागना (हिं० क्रि०) सुईमें तागा डाल कर सिलाई करना।

तागपहनी (हिं० स्त्री०) एक पतली लकडी। इसका एक सिरा नोकदार और दूसरा चिपटा होता है।

तागपाट (हिं० पु०) रेशमके तागेमें सोनेके तीन जंतर डाल कर बनाया हुआ एक प्रकारका गहना। यह केवल विवाहमें काम आता है।

तागा (हिं० पु०) १ सूत, डोरा, धागा। २ प्रति मनुष्यके हिसाबसे लगनेवाला एक कर।

ताङ्क—१ युक्तप्रदेशके अन्तर्गत डेरा इस्माइलखाँ जिलेका उपविभाग और तहसील। यह अक्षा० ३२´ और ३२´३०´ उ० तथा देशा० ७०´४´ और ७०´४३´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ५७२ वर्गमील है। इसके पश्चिममें वजीरिस्तान पडता है। यह तहसील पहले एक प्रकारकी स्वाधीन थी। यहाँके नवाब दौलत खेल वंशके कतिखेल सम्प्रदायभुक्त थे। अन्तिम नवाबका नाम शाह नवाज खाँ था, जिनकी मृत्यु १८८२ ई०में हुई। पीछे उनके लडके सरवारखाँ नवाब बने। ये बड़े शूरवीर निकले। उन्होंने अपना सारा समय राज्यको सुधारने तथा अपनी जातिको उन्नत बनानेमें लगा दिया था। सिख लोगोंने जब डेरा इस्माइलखाँ हस्तगत कर लिया, तब सरवारखाँको उनकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी और वे वार्षिक १२०००) रु० उन्हें देनेको राजी हुए। सिखकी गोटी जब धीरे धीरे जमने लगी, तब वार्षिक कर बढ़ा कर ४००००) रु० कर दिया गया। सरवारखाँके मरने पर उनके लडके अलादादखाँ राज्याधिकारी हुए। इस समय सिखका एक लाख रुपया पावना उनके यहाँ हो गया था। अलादाद खाँमें ऐसी शक्ति नहीं थी कि उक्त ऋणका परिशोध करें, अतः वे पहाड़ों पर भाग कर महशूदकी शरणमें पहुँचे। अन्तमें यह तहसील सिख सरदार नवनिहालसिंहकी जागीरके रूपमें दे दी गई। कुछ काल तक यह तहसील मालिक फतेहखाँ तिवानाके अधीन रही, पीछे सिख सरदार दीवान लक्खीमलके लड़के दौलत रायने इस पर अपना अधिकार जमाया। १८४६ ई०में अलादादके लडके शाह नवाजखाँने अंगरेज प्रतिनिधि एडवर्डकी शरण ली। दयापरवश एडवर्डने (पीछे सर हरवर्ट) उन्हें ताङ्कका शासक बना दिया। साथ साथ पूरी स्वाधीनता भी दे दी। किन्तु ऐसी स्थिति सदा एकसी न रही। यहाँकी जनसंख्या लगभग ४८४६७ है। इसमें एक शहर और ७८ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० ३२´ १५´ उ० और देशा० ७०´३२´ पू०के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४४०२ है। यह शहर ताङ्कके प्रथम नवाब कतलखाँसे बसाया गया है। समूचा शहर मट्टीकी दीवारसे घिरा हुआ है। दीवारकी ऊँचाई १२ फुट और चौड़ाई ७ फुट है। बीच बीचमें दो एक फाटक भी लगे हुए हैं, लेकिन वे सब अभी भग्नावस्थामें पड़े हैं। यहाँ भग्न मट्टीका दुर्ग भी देखनेमें आता है। शहरसे अनाज, कपड़े, तमाकू तथा और दूसरी दूसरी चीजोंकी रफ्तनी होती है। पञ्जाबके प्रतिनिधि सर हेनरी दुरन्दकी इसी शहरमें मृत्यु हुई थी।

ताच्छीलिक (सं० पु०) तच्छीलार्थे विहितः ठञ्। तच्छीलार्थ विहित-प्रत्यय।

ताच्छील्य (सं० क्ली०) तत्शीलं यस्य तस्य भावः ष्यञ्। तच्छीलता, किसी कामको लगातार करनेकी क्रिया।

ताज (अ० पु०) १ राजमुकुट, बादशाहकी टोपी। २ कलगी, तुर्रा। ३ मोर, मुर्गा आदि चिड़ियोंके सिर परकी चोटी, शिखा। ४ दीवारकी कंगनी या छज्जा। ५ मकानके सिरे पर शोभाके लिये बनाई जानेकी बुर्जी। ६ गंजीफेके एक रंगका नाम। ७ आगरेका ताजमहल।

ताज—मुसलमान जातिकी एक स्त्री कवि। इनके वंश, स्थान इत्यादिका कोई ठीक पता नहीं लगा। शिवसिंह सरोजमें इनका सम्वत् १६५२ कहा गया है और मुन्शी देवीप्रसादने सम्वत् १७०० के लगभग इनका समय बतलाया है। इनकी सभी कविताएँ सरस और मनोहर हैं। श्रीकृष्णचन्द्रजीकी भक्तिमें भी ये खूब रंगी थीं। इसका परिचय इनकी कवितासे ही झलकता है। जान पड़ता है, कि ये पञ्जाबके तरफकी होंगी, क्योंकि इनकी भाषा पञ्जाबी और खड़ी बोली मिश्रित थी। यों तो इनके बनाये हुए अनेक छन्द विद्यमान हैं पर उदाहरणार्थ यहाँ एकही दिया जाता है—

"हैज को कमीज़ पर रंगीं रंगीन
बड़ा चितचार बहारोंका खूब देखनेसे प्यारा है।
माथ पे कोई ताज मोती पेच कोई सर
कोई मन कुमकुम सुन्दर सीस धारा है।
कुछ मन धारे चतुर रखवारे साथ
चित हित धारे प्रेम प्रीति का धारा है।
मस्तमूल प्यारा जिन कंठको उतारा
यह इस्लामपरस्त कृष्ण ताजक हमारा है।"

ताजक (फा॰ पु॰) १ ईरानियोंकी एक जाति। तुर्कोंके खानाते और बदख्शानमें ये अधिक देखे जाते हैं। इनमेंसे बहुतसे खोकन्द, खिवा, बोखाराहार और अफगानिस्तानमें रहते हैं।

ताजक शब्दकी उत्पत्तिका निर्णय करना अतीव कठिन है। इसका व्यवहार अफगान, उज़बेक और तुर्क शासित प्रदेशोंमें जो लोग स्थायीरूपसे रहते हैं साधारणतः ताजक शब्द उन्हींके लिए प्रयोग किया जाता है। समस्त प्रदेशोंमें तुरकी, तुर्क, उज़बेक और बेलुचि भाषा व्यवहृत होती है मतलब यह कि फारसी भी प्रचलित है। अफगानिस्तान और तुर्किस्तानमें जिन अधिवासियोंकी जातिगत भाषा फारसी है, वे ताजक और पारसिवान इन दोनों नामोंसे परिचित हैं। पारस्य देशमें ताजक और इलियत ये दो विपरीत अर्थबोधक शब्द प्रचलित हैं। यहां सर्वत्र ही ताजकसे यायावरोंका बोध न हो कर कृषकोंका बोध होता है। तुर्कमें यह जाति सर्त, अफगानिस्तानमें देहान और बेलुचिस्तानमें देहवारके नामसे प्रसिद्ध है। काबुल नदीके निकटवर्ती ईरानी लोगोंको ताजुकी कहते हैं। सिस्तानके अधिवासी लोग ताजक हैं। ये खूब पक्की झोपड़ियोंमें रहते और मछली तथा पक्षी पकड़ कर जीवनधारण करते हैं। तुर्क आक्रमणके पहलेसे ही बदख्शानमें ताजकोंका वास था। यहांके ईरानी पर्वत, उपत्यका और स्थानमें परिवेष्टित ग्रामोंमें वास करते हैं। बदख्शानके ताजक पितृवंश लोगोंकी तरह खूबसूरत नहीं होते। पश्ताव इनकी बोली है।

तुखाराके ताजक तीन शताब्दीसे पहलेसे यहां रहते आये हैं। ये पहले अग्निउपासक थे। किन्तु बादको अरबोंके शासनकालमें इनको जबरन मुसलमान बनाया गया था। तुखाराके ताजक लम्बे और खूबसूरत तथा इनका चेहरा और बाल भी साफ होते हैं। ये बड़े डरपोक, लोभी मिथ्याचारी और विश्वासघातक होते हैं।

कोई कोई कहते हैं कि 'ताज' शब्दसे 'ताजक' शब्दकी उत्पत्ति हुई है। ताज शब्दका अर्थ है—पवित्र पुरुषका मुकुट। किन्तु ताजक लोग इस व्याख्याको नहीं मानते।

ताजक लोग ज्यादातर खेतीबारी और रोजगार हो करते रहते हैं, सभ्यता और शिक्षाको आलोचनासे भी ये उदासीन नहीं हैं। इन्हीं लोगोंके प्रयत्नसे मध्य एशियामें तुखारा सभ्यता और उन्नतिका केन्द्रस्थल हो गया है। बहुत दिनोंसे ये मानसिक उन्नतिके लिए सचेष्ट हैं और यद्यपि विदेशियों द्वारा प्रपीड़ित होने पर भी ये उनको सभ्यताकी शिक्षा देते रहे हैं। मध्य-एशियाके अधिकांश महत् व्यक्ति ताजकवंशके ही हैं। तुखारा और खिवाके प्रधान प्रधान व्यक्ति सब ताजक हैं।

ताजक और सर्त दोनोंमें शरीर-गत बहुत वैषम्य दिखनेमें आता है। वाम्बेरी साहबका कहना है कि पारसिक क्रीतदासियोंके साथ सर्त पुरुषोंके विवाहकी प्रथा प्रचलित रहनेके कारण सर्त लोगोंकी आकृति खर्व हो गई है।

मध्य एशियाके ताजक-सम्प्रदाय सभी कविता और किस्से पढ़ना पसन्द करते हैं। यहांका साहित्य भी केवल किस्से कहानियोंसे भरा हुआ है। स्थानीय मुल्ला ईशानोंने बहुतसे धार्मिक ग्रन्थ लिखे हैं। किन्तु सभी दुर्बोध हैं—साधारण लोग उन पुस्तकोंको बिल्कुल ही नहीं समझ पाते। ताजकोंके पुस्तक लिखित कभी दृष्टान्त विदेशीय कवियोंके रचे हुए हैं।

उजबक, तुर्क और किरघिज लोग अत्यन्त सङ्गीतप्रिय हैं। गाते समय ये लोग मृदु रागिणीको पकड़ रखते हैं। उजबकोंकी कविताओंका मूलभाव प्रायः फारसी आख्यानोंसे लिया गया है, ऐसा जान पड़ता है। इनमें अपूर्वत्व तो विरलो ही कवितामें पाया जाता है।

तातार लोग वीररस-गाथा रचना और उसको गाना खूब पसन्द करते हैं।

२ यवनाचार्यका बनाया हुआ ज्योतिषका एक ग्रन्थ। पहले यह ग्रन्थ अरबी और फारसीमें था। बाद राजा समरसिंह नीलकण्ठ आदिसे यह संस्कृतमें बनाया गया। ताजिक देखो।

ताज़गी (फा० स्त्री०) १ शुष्कताका अभाव, हरापन, ताजापन। २ प्रफुल्लता, स्वस्थता। ३ नयापन।

ताजत् (सं० त्रि०) तन्ज शब्दोंसे आदिष्ठत्रिर्ननोधे। शोघ्र।

ताजदार (फा० वि०) १ ताजके आकारका। (पु०) २ ताज पहननेवाला बादशाह।

ताजद्रुम (वै० पु०) कोविदारवृक्ष, कचनारका पेड़।

ताजन (फा० पु०) चाबुक, कोड़ा।

ताजना (हिं० पु०) ताजन देखो।

ताजपराकाठि—बम्बई विभागके बोउड और गवार अञ्चलवासी एक जाति।

ताजपुर—१ दरभङ्गा जिलेका एक उपविभाग। यह पहले तिरहुतके अन्तर्गत था। १८७५ ई०को १ली जनवरीमें दरभङ्गा, मधुवनी और ताजपुर इन तीन महकुमेको ले कर दरभङ्गा जिला संगठित हुआ है। १८६७ ई०को इस स्थानमें प्रथम महकुमा स्थापित हुआ था। यह अक्षा० २५°२८′१५″ और २६°२′ उ० तथा देशा० ८५°३′६″ और ८६°४′ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ७६४ वर्गमील है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, कोल प्रभृति यहां वास करते हैं। हिन्दूको संख्या सबसे अधिक है।

ताजपुर महकुमेमें ३ थाना, एक दीवानी और फौजदारी अदालतें हैं।

२ उक्त ताजपुर महकुमेका प्रधान शहर। यह अक्षा० २५°५१′३२″ उ० और देशा० ८५°४२′ पू०के मध्य मुजफ्फरपुरसे २४ मील दूर दलसिङ्गसरायके रास्ते पर अवस्थित है। यहां एक स्कूल, दातव्य औषधालय और विचारालय है। शहरके नीचे यमन नदी प्रवाहित है।

ताजपुर—पुर्णिया जिलेका एक परगना। इस परगनेमें धान, तिल, सरसों, आलू इत्यादि बहुत उपजते हैं परगनेके किसी किसी स्थानमें ४३ से ७३ हाथका कट्ठा चलता है। साधारणतः ४ से ५ हाथका कट्ठा हो विशेष प्रचलित है। प्रजाको प्रति बीघेमें एक रुपया मालगुजारी देनी पड़ती है।

इस परगनेमें ४४ जमींदारी लगती हैं। यहांका कर प्राय: ६८८४२ रु० है।

ताजपुर—१ दिनाजपुर जिलेका एक परगना। यह जिलेके दक्षिण पश्चिम कोणमें अवस्थित है। इस प्रदेशको जमीन समतल नहीं है, कहीं ऊंची और कहीं नीची है तथा दक्षिण पश्चिमको ओर ढालू है। यह प्रदेश समुद्रपृष्ठसे १५० फुट ऊंचा है। थोड़े परिश्रमसे ही खेतमें अच्छी फसल उपजती है। कहीं कहीं घासकी जमीन और जलाभूमि है। वर्षाकालमें परगनेकी सभी नदियोंका जल बहुत बढ़ जाता है जिससे सब ग्राम जलमय हो जाता है।

धान, ईख, तिल सरसों, उरद इत्यादि यहांके प्रधान उत्पन्न द्रव्य हैं। ग्रामके निकटस्थ जमीनमें तमाकू बहुत उपजता है। पहले यहां बहुतसी नोनकी जमीन थी।

ताजपुर परगनेके सभी स्थानोंमें मछली पाई जाती है। धीवर मछली पकड़ कर रायगञ्ज और निकटवर्ती बाजारमें बेचते हैं।

१८७४ ई०के दुर्भिक्षकालमें दुर्भिक्ष-प्रपीड़ित मनुष्योंके थोड़े खर्चसे परगनेमें कई एक राहें तैयार हो गई हैं।

यहांको जमीन कुछ कुछ धूसरवर्ण तथा बालू मिली हुई कीचड़सी है।

इस परगनेका जलवायु स्वास्थ्यकर नहीं है। वर्षाके बाद ही ज्वरका प्रकोप आरम्भ होता है, जिससे अनेक लोगोंको मृत्यु हो जाती है। ग्रीष्मकालमें दिनके समय अत्यन्त गरमी और रातके समय ठण्ढा मालूम पड़ती है। बहुत दिनों तक ज्वरके रह जानेसे वात-रोग हो जाता है। अतीसार और कुष्ठ रोगका प्रकोप भी यहां कम नहीं है।

२ दिनाजपुर जिलेके विजयनगर परगनेके अधीन एक ग्राम। यह ग्राम अत्यन्त आधुनिक नहीं है। मुसलमानोंके समयमें यह स्थान विशेष प्रसिद्ध था। उस समय ताजपुर एक प्रधान सैन्यावासके रूपमें गिना जाता था

और पूर्णिया तथा दिनाजपुरकी सीमान्त प्रदेशमें अवस्थित था। अभी इस स्थानका नाम सरकार ताजपुर रखा गया है। ताजपुरके पूर्वभागमें ही प्रधान मुसलमान-राजधानी देवकोट नगर है। बहुतोंने विद्रोही हो कर ताजपुरमें दिल्लीकी वृटिश सेनाके साथ कई एक युद्ध किये। १७७० ई०में अंग्रेज गवर्मेण्टके अधीनमें ताजपुर जिलेका संस्कार किया गया। पहले यहां एक कचहरी थी, जो १७८८ ई०में यहांसे उठा दी गई है। नगरसे ताजपुर तक एक सड़क चली गई है।

ताजपुर—युक्तप्रदेशके बिजनौर जिलेके अन्तर्गत धामपुर तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २९° १०´ उ० और देशा० ७८° २९´ पू० पर बिजनौर शहरसे २० कोस दक्षिण पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २०११ है। तगा वंशीय परिवारका वास होनेके कारण यह शहर प्रसिद्ध है। उक्त वंशके बहुतोंने ईसाईधर्म ग्रहण किया है। १८वीं शताब्दीमें यह राज्य तगा वंशीय राजाओंके हाथ लगा था। १८५७ ई०के सिपाही विद्रोहके समय यहांके राजा बागी न हुए थे। वर्त्तमान राजा प्रादेशिक व्यवस्थापक-सभाके सदस्य हैं। यहां एक औषधालय और दो स्कूल हैं।

ताजपोशी (फा० स्त्री०) वह उत्सव जो राजमुकुट धारण करने या राजसिंहासन पर बैठनेके समय किया जाता है।

ताजबावड़ी—एक प्रसिद्ध तालाब। इस बावड़ीका दूसरा नाम ताजबावरी भी है। बम्बई विभागके बिजापुर शहरके पश्चिम और नगरके मक्कादरवाजेसे १०० गज पूर्व शाहिनशा-पेठके समीपमें अवस्थित है। इसके दक्षिणमें लगता बन है और प्रवेश-द्वार पर एक प्रकाण्ड मेहराब है जिसका दृश्य देखते ही बनता है।

१६२० ई०में ताजरानीके सम्मानार्थ इब्राहिम रोजाके स्थपति मालिक सन्दलने यह विख्यात बावड़ी खोदवाई थी। इसके विषयमें दन्तकथाएं इस प्रकार प्रचलित है—मालिक सन्दल सुलतान महमूदके अन्यतम कर्मी थे। सुलतान स्त्रियोंकी खूबसूरतीकी खूब तारीफ करते थे। एक दिन सुलतानने रम्भाको दरबारमें लानेके लिये मालिक सन्दलसे कहा। हुक्म पाते ही मालिक बोखला सा रह गया। उन्हें मालूम पड़ा कि शायद उन्होंने राजाका कोई अनिष्ट किया है जिससे उन पर अभियोग लगाया जायगा। रम्भाको सुलतानके सामने आनेमें उन्हें भारी विपद्‌की आशङ्का हुई। इस विपद्‌से बचनेके लिये वे पहले ही अपनी निर्दोषिताके अनेक प्रमाण संग्रह कर रम्भाको साथ ले चल दिये। जब वे बहुतसे रमणियोंके साथ रम्भाको ले कर दरबारमें पहुंचे तब उन्हें मालूम पड़ा कि उन्हें अलग इसकी आज्ञा हुई है। इस पर मालिकने फौरन अपनी पुंसत्व-विहीन प्रमाणोंको राजाके सामने पेश किया। सुलतानने जब देखा कि मालिकके प्रति बहुत अन्याय विचार किया गया है, तब वे बहुत लज्जित हुए। बाद सुलतानने मालिकसे कहा, कि तुम्हारा जो जी चाहे सो मांगो। इस पर मालिकने बहुत विनीत भावसे कहा 'यदि आप मुझ पर खुश हैं तो अपना नाम चिरस्मरणीय रखनेके लिये मैं एक कीर्ति स्थापन करना चाहता हूं।' मालिकका अभीष्ट सिद्ध करनेके लिये सुलतानने उपयुक्त धन दे दिया। उसी धनसे ताज बावड़ी खोदवाई गई। बावड़ीकी गहराई ५२ फुट है।

ताजबीबी (फा० स्त्री०) शाहजहान्‌की अत्यन्त प्यारी और प्रसिद्ध बेगम मुमताजमहल। इसीके लिये आगरेमें ताजमहल नामका मकबरा बनाया गया।

ताजमहल (अ० पु०) आगरा शहरमें यमुनाके किनारे पर स्थित जगत्प्रसिद्ध समाधि मन्दिर। स्थानीय लोग इसे रौजा या ताजबीबीका रौजा कहते हैं। एशियाके सात आश्चर्यजनक पदार्थोंमें इसकी भी गिनती होती है।

बादशाह शाहजहान्‌ने अपनी प्रियतमा पत्नी मुमताजमहलके स्मरणार्थ यह सुरम्य हर्म्य बनवाया था। मुमताजका यथार्थ नाम था अर्जुमन्द-बानू बेगम या नवाब आलियाबेगम। शाहजहान् इनको अपने प्राणोंसे भी ज्यादा प्यार करते थे। एकदिन बेगमने स्वप्न देखा कि उनके गर्भका बालक रोता है। उन्होंने बादशाहको बुला कर कहा, "प्रियतम! मैं गर्भस्थ बालकका रोना सुन रही हूं। ऐसा रोना कभी किसीने नहीं सुना। मुझे निश्चय मालूम होता है कि मैं अब बचूंगी नहीं। किन्तु आपसे मेरी इतनी प्रार्थना है, कि मेरी मृत्युके बाद आप किसीका पाणिग्रहण न करें। आप मेरे पुत्रोंको ही राज्याधिकारी

बनावे। और एक प्रार्थना है, आपने कहा था, कि मेरी कब्रके ऊपर एक हर्म्य बनवा देंगे। आपका यह वायदा भी पूरा होना चाहिये।" बेगमकी बात सच्ची निकली, प्रसव होनेके बाद, १६३१ ई०में उनकी मृत्यु हो गई। शाहजहाँने भी प्रियतमाके अन्तिम अनुरोधकी रक्षा की। उन्होंने फिर अन्य किसी भी रमणीका पाणिग्रहण न किया अथवा ऐसा समझें, कि फिर उनके कोई सन्तान होनेकी बात नहीं सुननेमें आई।

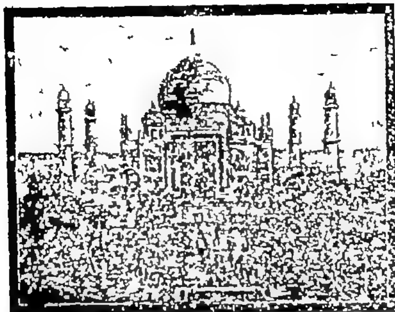
प्रियतमा पत्नीकी मृत्युके बाद ही शाहजहाँने ताज-महल बनवाना शुरू कर दिया। ऐसा सुना जाता है कि, उस समय भारतवर्षमें देशी और विदेशी जितने भी मुख्य मुख्य शिल्पी और स्थपति मौजूद थे, सभीने इस महाकार्यमें साथ दिया था।

यमुनाके किनारे प्रसिद्ध अकबराबाद (वर्तमान आगरा) नगरमें ताजमहल बनना शुरू हो गया। प्रसिद्ध भ्रमणकारी टाभर्नियरने इस अनुपम अट्टालिकाको प्रारम्भ और सम्पूर्ण होते देखा है। उस समय वर्तमान कालकी अपेक्षा मालमसाला और मजदूरी कहीं ज्यादा सस्ती होने पर भी ३१७४८०२४) रुपये व्यय और लगा-तार ३० वर्ष परिश्रम करनेके बाद यह महाकार्य समाप्त हुआ था।

यह महल १८ फुट ऊँचे और ३१३ फुट श्वेतमर्मर-मण्डित ठीक चतुरस्र चबूतरे पर प्रतिष्ठित है। इसके चारों कोने १३३ फुट ऊँचे अत्यन्त रमणीय भारतभरमें अतुलनीय चार मीनारोंसे सुशोभित हैं। उक्त सफेद संग-मर्मरके चबूतरेके बीचमें १८६ फुट चतुरस्र भूमि पर जगत्-प्रसिद्ध समाधि-मन्दिर अवस्थित है। ठीक बीचमें ५८ फुट विस्तृत और ८० फुट ऊँची एक प्रधान गुम्बज है। इस गुम्बजके भीतर लदाव पर सफेद संगमर्मरकी जालियाँ लगी हुई हैं। ऐसी खूबसूरत और शिल्प-नैपुण्य-मय जालियाँ वा यवनिका संसार भरमें और कहीं भी नहीं है। इस गुम्बजके भीतर ठीक बीचमें बेगम मुम-ताजमहलकी कब्र और उसके बगलमें बादशाह शाहजहाँ-नकी कब्र है।

इस महागृहके प्रत्येक कोने पर गुम्बजकी आकृतिके २६ फुट ८ इंच आयतनके दुमजले गृह बने हैं। इसमेंसे गृहान्तरमें जाने आनेके लिए बहुतसे मार्ग और दालान हैं। इस गृहके प्रत्येक लदावके ऊपर, भीतर और बाहर अति उज्ज्वल सफेद संगमर्मरकी जालियाँ लगी हुई हैं, जिनमेंसे काफी प्रकाश पहुँचता है। अकबरकी मृत्युके बाद मुगल लोग शिल्पनैपुण्यका कितना आदर करते थे, इस गृहकी कारीगरी देखनेसे उसका काफी परिचय मिल सकता है। सारांश यह है, कि नाना प्रकार और नाना वर्णके मूल्यवान् मणि-प्रस्तरादि द्वारा कितनी खूबसूरती, कितना मनोहर और कितना स्वाभाविक शिल्पनैपुण्य दिखलाया जा सकता है, इसमें उसकी परा-काष्ठा दिखलायी गई है। इसमें नाना प्रकारके बहुमूल्य लाल, सब्ज आदि रंग बिरंगे पत्थरोंके टुकड़े जड़ कर बेल बूटोंका ऐसा उमदा काम बना है, कि जिसको देख कर चित्रका भ्रम होता है। यहाँ तक कि एक गुलाबकी प्रत्येक पखड़ीमें जितने प्रकारका रंग, जैसा आकार हो सकता है, वहाँ उन उन रंगोंके पत्थर लगाये गये हैं। ज्यादा क्या कहें, मानो वे प्रकृतिके साँचेमें ही ढाले गये हैं, ऐसे मालूम पड़ता है। ऐसा अपूर्व मनोहर शिल्पनैपुण्य संसारमें क्या और भी कहीं है? ताजमहलमें जहाँ जाओगे, जहाँ देखोगे, वहीं ऐसी मनोमुग्धकर तसवीर तुम्हारे नेत्रपथकी पथिक होगी कि, जिसे तुम जनम भर भूल नहीं सकते। ज्यादा दिन नहीं हुए भारतवासी जिस असाधारण शिल्पनैपुण्य और भास्करकार्य (पच्चीकारी, नक्काशी आदि) में अपना पाण्डित्य दिखला गये हैं, उसकी तुलना और कहाँ है? ताजमहल ही उसकी तुलना है! चित्रकरकी तूलिका, कविकी कल्पना और भावुककी भावना भी ताजमहल-की तसवीर उतारनेमें असमर्थ है। जिसने इसे अपनी आँखोंसे देखा है, उसीने समझा है, वही पिवला है, उसीके हृदयने इसका स्पर्श किया है। इस सामान्य लेखनीके द्वारा ताजमहलका खींचना तो दूर रहा, उसका वर्णन करना भी असम्भव है।

बहुत दिनकी बात नहीं है, ठगोंको दमन करने वाले प्रसिद्ध कर्नल स्लीमन सस्त्रीक एक बार इस अनु-पम भारतीय कीर्तिको देखने गये थे। वे स्वयं तो मुग्ध हुए ही थे, जब उन्होंने अपनी प्रणयिनीसे यह



ताजमहल।

पूछा कि—'कहो कैसा देखा ?'—तब उनको स्त्रीके मुंहसे यही निकला कि—"अगर मेरे ऊपर भी ऐसा ही मकबरा बने, तो मैं कल मरनेको तैयार हूं।" वास्तवमें जिन स्त्रीने एक बार ताजमहल देखा है, उनको हृदयमें इस तरहके भावका उदय हुआ है।

ताजमहलके दोनों बगलमें तीन गुम्बजोंवाली सफेद संगमर्मरकी दो मसजिदें हैं। दाहिनी तरफकी मसजिदको साधारण लोग जवाब कहते हैं, इसमें उपासना आदि नहीं होती। इनको गुमटी या चोटीके सोना चढ़े चन्द्र और चौकन दिखाई देते हैं।

ताजमहलका कौनसा भाग कब बना है यह भी यहांके शिलालेखों द्वारा विदित हो सकता है। मसजिदके सामने पश्चिम दिशाके मन्दिरकी रोक पर शाहजहांके राज्यका ९ वां वर्ष और १०४६ हिजरा खुदा हुआ है। ताजमहलके भीतर प्रवेशपथके बाईं ओर १०४८ हिजरा और फाटकके सामने १०५७ हिजरा (अर्थात् १६४८ ई०) खुदा हुआ है। यह अन्तिम अङ्क ही ताजमहल पूरा होनेका समय है। इसी तरह मुमताज महलकी कब्रके ऊपर १०४० हिजरा और शाहजहांकी कब्र पर १०७६ हिजरा खुदा हुआ है। इन् दोनों कब्रोंके ऊपर जो इनके जैसी ही दो कब्रें ऊपर बनी हुई हैं। यथार्थ कब्रें नीचे हैं। प्रवेशद्वारसे घुसते ही सामने नीचे जानेके लिये सोपानयें भी हैं। मालूम होता है ऊपरकी कब्रें लोगोंके देखनेके लिये प्रकृतिके बराबर (ठीक उनके समान) बनाई गई हैं तथा इससे भीतरकी शोभा भी अपूर्व हो गई है। भीतर जानेसे यह मालूम होता है, कि मानो वे दो (ऊपरकी) असली कब्रें हैं। पहले कहां कहां तारीख खुद हुई है उन सभी पत्थरों पर तुघरा लिपिमें कुरानके उद्धरण पूर्ण खुदा लिखे हुए हैं। इसी तरह फाटकके सामने "पवित्र और सरल हृदय! चिरशान्तिमय स्वर्गीय उद्यानमें आओ!" इत्यादि वाक्य लिखे हैं।

ताज़ा (फा० वि०) १ जो सूखा न हो, तरावटदार। २ जो डालसे तोड़ कर तुरन्त लाया गया हो। ३ जो श्रान्त न हो, स्वस्थ, चञ्चल। ४ सद्यःप्रस्तुत, हालका बना हुआ। ५ जिसको व्यवहारमें लानेके लिये तुरन्त निकाला हो।

ताजिक (स० स्त्री०) एक ज्योतिषका ग्रन्थ। यवनाचार्य कृत जातकविषयक ग्रन्थ जो फारसी और अरबी भाषामें लिखा हुआ था। राजा समरसिंह, नीलकण्ठ आदिने इसे संस्कृत भाषामें अनुवादित किया था।

संस्कृत ताजिक ग्रन्थमें निम्नलिखित विषयोंका वर्णन मिलता है—

प्रधान बारह राशियोंमें मेष आदि चार चार राशियें यथाक्रमसे पित्त, वायु, सम और कफस्वभावी हैं अर्थात् मेष, सिंह और धनु: इनका पित्तस्वभाव, मकर, वृष और कन्या इन तीनोंका वायुस्वभाव है; मिथुन, तुला और कुम्भ इन तीनोंका समस्वभाव (वायु, पित्त और कफको समता) तथा कर्कट, वृश्चिक और मीन इन तीन राशियोंका कफस्वभाव है।

मेषसे लगा कर चार चार राशि क्रमसे क्षत्रियादि चार वर्ण हैं, अर्थात् मेष, सिंह और धनु ये तीन राशियां क्षत्रियवर्ण, वृष, कन्या मकर ये तीन वैश्यवर्ण, मिथुन, तुला और कुम्भ ये तीन शूद्रवर्ण तथा कर्कट, वृश्चिक और मीन इनका ब्राह्मणवर्ण है। इस प्रकार राशियोंका स्वरूप और वर्ण जान कर ज्योतिःशास्त्रको गणना करनी चाहिये, इसीलिये पहले राशिका स्वरूप कहा गया है।

वर्षका शुभाशुभ फल जाननेके लिये वर्षप्रवेश-समय निर्णय—जन्म-समयमें रवि जिस राशिके जितने अंशादिमें अवस्थिति करता है, पुनः जिस समय वह उसी राशिके उतने ही अंशादिमें आगमन करता है, वही समय वर्षप्रवेश-समय है।

रविस्फुटका स्थिर करके भी वर्षप्रवेश-समयका निर्णय किया जा सकता है। बादमें वर्षप्रवेशमें तिथ्यानयन, वर्षप्रवेशमें योगानयन, वर्षप्रवेश ग्रहस्फुटानयन चन्द्रस्फुटानयन, प्राड्नत और पद्मानतदण्डानयन ; तथा लग्नखण्डा, लग्नकुण्डली और भावकुण्डली, पञ्चवर्गी ओकान्तचक्र, उच्च-नीच कथन, लग्नखण्डाचक्र, बलनिरूपण, द्वादशवर्गविवरण, क्षेत्रचक्र, होराचक्र, चतुर्थांश चक्र, पञ्चमांशचक्र, षष्ठांशचक्र, सप्तांशचक्र, अष्टमांशचक्र, नवांशचक्र, दशमांशचक्र, एकादशांशचक्र, द्वादशांशचक्र, भावचिन्ता, वर्षाधिपानयन ग्रहका स्वरूप, दृष्टि-प्रकरण, दृष्टिसाधन, मैत्रीभाव, नक्षयोग, वर्षप्रवेश, दशानिरूपण, मासप्रवेशानयन, अन्तर्दशानयन, वर्षारिष्ट, विचाररिष्टभङ्ग, भावविचार, धनभाव, सहजभाव, चतुर्थभाव, पञ्चमभाव, षष्ठभाव, सप्तमभाव, अष्टमभाव, नवमभाव, दशमभाव, एकादशभाव, द्वादशभाव और रवि आदि दशाका विषय विशेषरूपसे वर्णित है।

और भी कई एक विषयोंका वर्णन है, जिनके नाम संस्कृत नहीं जान पड़ते ; अरबी वा फारसीसे लिये गये हैं। नीचे उनके नाम दिये जाते हैं—

इक्काविवरण, मुन्थानयन, इक्कबालयोग, इन्दिहायोग, इत्थशालयोग, इशराफ योग, नक्तयोग, जमया योग, मनूत योग, कम्बूल योग गैरिकम्बूलयोग, खल्लासरयोग, रद्दयोग, दुफालिकुत्थ योग, दुत्थोत्थ दवीरयोग, तम्बीरयोग, कुत्थयोग और दुरुत्थयोग ये षोड़श योग, सहम नाम, सहम ५० प्रकार, सहमसाधन, सहमदल और मुन्थाभावफल।

ताजिया (अ० पु०) मृत-व्यक्तिके लिए विलाप करना तथा शोक प्रकट करना। मुहर्रमके समय मुसलमान लोग सामान्य उपकरणसे हुसेन और हासनको कब्र बना कर जो बाहर निकला करते हैं, उसीको भारतवर्षमें ताजिया कहते हैं। यह बांसकी कमचियों पर रङ्ग बिरङ्गे कागज, पन्नी वगैरह चिपका कर बनाया जाता है और आकारमें मकबरे (मण्डप) जैसा होता है।

फारस देशमें मुहर्रमके दिनोंमें अलौकिक वर्णनायुक्त अनेक नाटकादि रचे जाते हैं, जिनको वहांके लोग ताजिया कहते हैं।

अमेरिकामें भी ताजिया शब्द प्रचलित है। इस देशसे जो मजदूर लोग अमेरिकाके भिन्न भिन्न स्थानोंमें गये हैं, वे वहां ताजिया शब्दका व्यवहार किया करते हैं। मुहर्रम ही इन मजदूरोंका प्रधान पर्व है, हिन्दू मजदूर भी मुहर्रमको प्रधान पर्व मानने लगे हैं।

१८८४ ई०में त्रिनिडाटके किसी एक शहरके भीतरसे ताजिया ले कर जानेको मुमानियत हुई ; जिसमें आखिर एक भीषणतम घटना हुई थी।

मुहर्रमके समय बहुतसे मुसलमान ताजिया बनाते हैं ; बहुतसे फकीर और दूसरे लोग तरह तरहकी पोशाकें पहन पहन कर छाती पर हाथ पीटते पीटते ताजियाके पीछे पीछे जाया करते हैं। बहुतसे मराठी सर्दारोंको ताजिया बनाते देखा गया है। परन्तु वे

आश्रम व मोक्ष नहीं है। आश्रम सदैव ताजिया नहीं बनाते।

भारतवर्षमें जूनागढ़ आदिकी तरफ ताजियाओंको ले कर हिन्दू और मुसलमानोंमें परस्पर बड़ी भारी लड़ाई हुआ करती है। मुहर्रम देखो।

ताज़ी (फा॰ वि॰) १ अरब सम्बन्धी, अरबका। (पु॰) २ अरबका घोड़ा। ३ शिकारी कुत्ता। (स्त्री॰) ४ अरबकी भाषा।

ताज़ीम (अ॰ स्त्री॰) सम्मान प्रदर्शन, झुक कर सलाम करना इत्यादि।

ताज़ीमीसरदार (फा॰ पु॰) वह सरदार जिसके आने पर राजा या बादशाह उठ कर खड़े हो जाते हैं।

ताटङ्क (स॰ पु॰) १ आभूषणविशेष, एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है, करनफूल, तरकी। २ छप्पयके २३वें भेदका नाम। ३ छन्दविशेष, एक प्रकारका छन्द। इसके प्रत्येक चरणमें १६ और १४के विरामसे ३० मात्राएं होती हैं और अन्तमें मगण होता है।

ताटङ्ग (स॰ पु॰) ताड्यते ताड़ घञ्॰ कर्मणि टः तथा भूतो टङ्ग इव, पृषो॰। कर्णाभरणविशेष, कानमें पहननेका एक गहना, करनफूल, तरकी।

ताटस्थ्य (स॰ क्ली॰) तटस्थस्य भावः ष्यञ्। १ औदास्य, उदासीनता। २ नैकट्य, जो समीपमें है।

ताड़ (स॰ पु॰) तुरादि॰ तड़ भावे घञ्। १ ताड़न, प्रहार, चोट, आघात। २ मुष्टम। कर्मणि घञ्। ३ शब्द, ध्वनि, धमाका। ४ मुष्टिपरिमित तृणादि, घास, धनाकी डंठल आदिकी पूंठिया जो मुट्ठीमें आ जाय मूठी। ५ पर्वत पहाड़। ६ हाथका आभूषणविशेष, हाथका एक गहना। ७ मूर्ति निर्माण विद्यामें मूर्तिके ऊपरी भागका नाम। ८ तालवृक्ष, माड़ जातिका एक बड़ा पेड़। यह पेड़ खम्भेके रूपमें ऊपरको और बढ़ता चला जाता है। इसके डंठल सिरे पर हो पत्ते होते हैं। ये पत्ते चिपटे मज़बूत डंठलोंमें चारों ओर इस प्रकार फैले रहते हैं जैसे पंखियोंके पर। इसकी लकड़ीको भीतरी बनावट उसके भीतर नसोंकी भांति होती है। ऊपर गिरे हुए पत्तोंके डंठलोंके मूल रह जानेके कारण चाल खुरदरी दिखाई पड़ती है। इसके संस्कृत पर्याय—

तालद्रुम, पत्नी, दीर्घस्कन्ध, ध्वजद्रुम, तृणराज, मधुरस, मदाढ्य, दीर्घपादप, चिरायु, तरुराज, दीर्घपत्र, गुच्छपत्र, आसवद्रु, लेख्यपत्र और महोन्नत है।

भारतके नाना स्थानोंमें बरमा, सिंहल, सुमात्रा, जावा आदि द्वीपोंमें, तथा अरबके समुद्रके तटस्थ प्रदेशोंमें ताड़के पेड़ बहुत पाये जाते हैं। बङ्गालमें ताम्रपर्णीके किनारे हो इसके पेड़ दिखे जाते हैं। इसकी ऊंचाई लगभग ७० फुटकी होती है और मोटाई १६ फुटसे अधिककी नहीं होती।

तामिल भाषामें ताल-विलास नामक एक ग्रन्थ है जिसमें ताड़ पेड़के ८०१ प्रकारके गुणोंका परिचय वर्णित है, इस वृक्षका सर्वांश ही किसी न किसी काममें आता ही है।

पुराना ताड़का पेड़ ही अधिक काममें आता है। यह जितना पुराना होता जायगा उतना ही यह कड़ा और काला रङ्गका होता जाता है।

इसकी बड़ी लकड़ी मकानोंमें लगती है। लकड़ी खोखली करके एक प्रकारकी छोटी नाव भी बनाई जाती है। कि इसके अकबा नामक नगरका ताड़का पेड़ बहुत प्रसिद्ध था। अनेक प्रकारके द्रव्य प्रस्तुत होनेके कारण इसकी लकड़ी दूर दूर देशोंमें भेजी जाती थी। डाक्टर ब्रांडसने परीक्षा करके यह देखा था कि ताड़की लकड़ी साखूकी लकड़ीसे किसी अंशमें निकृष्ट नहीं है।

इसके पत्तेके डंठलके रेशेसे मज़बूत रस्से तैयार होते हैं और मसलीपत्तन इनसे एक प्रकारका सुन्दर काम बनाते हैं। पत्तोंसे पंखे बनते हैं और छप्पर छाए जाते हैं। दक्षिणके देशोंमें बहुत समय कागजके बदले इसके पत्तोंका ही जिसमें पत्रोंके काममें लाते हैं। इसके बहुत आसानीसे दियासलाईके बक्स तैयार होते हैं और खर्च भी कम पड़ता है। प्राचीन कालमें ताड़-पत्र पर ग्रन्थ लिखे जाते थे।

ताल-वृक्ष इसमें प्रधानतः सिरका, ताड़ी और गुड़ प्रस्तुत होता है।

ताड़का रस स्निग्ध, पित्तनाशक तथा ताजेमें अत्यन्त मधुर होता है। यदि प्रतिदिन प्रातःकाल नियमपूर्वक इसका रस पीया जाय तो वह शरीरमें

मुलायमसा काम करता है। प्रदाहिक रोग तथा शोथमें भी यह बहुत उपकारी है। इसके फूलोंके कच्चे अंकुरोंको पोंछनेसे बहुतसा नशीला रस निकलता है जिसे ताडी कहते हैं। ताडी देखो।

ताडीका पुलटिस फोड़े या घावके लिए अत्यन्त उपकारी है। ताजा ताडके रसको मैदामें मिला कर थोडी आँच देनेसे उससे जो फेन निकलने लगता है, वही पुलटिस है। पके हुए ताडकी मज्जा चर्मरोगमें बहुत उपकारी है। शरीरका कोई अङ्ग क्षत होने पर सिंहलके चिकित्सक लोहू रोकनेके लिये उसके ऊपर ताडकी आँठीके रेशे चिपका देते हैं।

जिस रससे तुरन्त फेन बाहर निकला है उसे खानेसे मूत्रकृच्छ्ररोग जाता रहता है। यह शोथमें भी बहुत उपकारी है।

ताडकी गरीके जलसे वमन और वमनोद्रेक चङ्गा होता है।

ताडके ताजा रससे बढ़िया गुड़ और चीनी तैयार होती है। चीनी देखो। ताड़ीको चुआनेसे अरक या शराब बनती है। मद्य देखो।

चैतके महीनेमें इसमें फूल लगते हैं और वैशाखमें फल जो भादोंमें खूब पक जाते हैं। एक एक फलमें कमसे कम तीन तीन आँठी रहती है, छोटे फलमें दो भी पाई जाती है। कच्ची अवस्थामें फलोंके भीतर गरी रहती है जो खानेके योग्य होती है। इस अवस्थामें इसके भीतर जल रहता है। ज्यों ज्यों फल पकता जाता है त्यों त्यों जल कड़ा होता जाता है। अन्तमें उस आँठीके मध्य गरी होती है जो खानेमें मिष्ट, मुखप्रिय तथा नारियलकी गरीके सदृश इसमें अनेक गुण हैं।

पहले ही कहा जा चुका है कि ताड़की लकडीसे अनेक प्रकारकी गृहसामग्री प्रस्तुत होती है। उसी तरह इसका रस भी भोजन इत्यादिके अलावा और दूसरे दूसरे कामोंमें व्यवहृत होता है। डिब्बेके पानीमें ताडका रस डाल कर यदि उसमें शंख या सीपका चूर्ण मिला दिया जाय तो सुन्दर पालिश तैयार होती है और मेज पर इसका लेप देनेसे यह बहुत चमकने लगता है।

ताड़में अनेक गुण रहनेके कारण इसे पवित्र वृक्षोंमें गिनते हैं। कोई कोई इसे ही कल्पद्रुमसा समझते हैं।

वैद्यकके मतसे इसके गुण—मधुर, शीतल, पित्त, दाह और श्रमनाशक है। इसके रसका गुण—श्लेष्म, पित्त, दाह और शोथनाशक तथा मत्तताकारक है। फलका गुण—पक्का ताड़ दुर्जर, मूत्र, तन्द्रा, अभिष्यन्द, शुक्र, पित्त, रक्त और कफवृद्धिकर होता है। (भावप्रकाश) राजवल्लभके मतसे इसके गुण वात, क्रिमि, कुष्ठ, तथा रक्त पित्तनाशक, बृंहण, हृद्य और स्वादु हैं।

ताड़की गरीका गुण—मूत्रकर, मिष्ट, वातपित्तनाशक और गुरु है। ताडकी अस्थिमज्जाका गुण—मधुर, मूत्रल, शीतल और गुरु है। ताड़के जलका गुण पित्तनाशक, शुक्र और स्तन्यवृद्धिकर तथा गुरु हैं। नूतन ताडीका गुण—मदकर, कफ, पित्त, दाह और शोथनाशक है, खट्टा हो जानेसे यह वातनाशक और पित्तवृद्धिकर होती है। ताडके कोपलका गुण—स्वादु, तिक्त, कषाय, मूत्ररोगनाशक, बल, प्राण और शुक्रवृद्धिकर है। ताडकी तरुण मज्जाका गुण सारक, लघु, शीतल, वात और पित्तनाशक है। ताड़की जटाका गुण—रूक्ष और क्षयरोगनाशक है। (राजवल्लभ) ८ क्षुपताल, तमालका पेड। १० हिन्ताल। ११ कण्टकताल।

ताड़क (सं० वि०) ताड़-कन्। १ प्रहारकारी, ताडन करनेवाला। (क्ली०) २ इन्द्रारकबीज, वधारका बीज।

ताडकजङ्गल—ताड़का देखो।

ताडका (सं० स्त्री०) १ राक्षसीभेद, एक राक्षसीका नाम, इसकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कथा है कि सुकेतु नामक किसी पराक्रमशाली यक्षने सन्तानके लिये ब्रह्माके उद्देशसे कठोर तपस्या की। ब्रह्माने उसकी तपस्यासे सन्तुष्ट हो कर उसे एक वर दिया जिससे उन्हें ताडका नामकी एक कन्या उत्पन्न हुई। ब्रह्माके वरसे ताड़काको हजार हाथियोंका बल था। यह जम्भनन्दन सुन्दकी व्याही थी। जब अगस्त्य ऋषिने किसी बात पर क्रुद्ध हो कर सुन्दको मार डाला, तब यह अपने पुत्र मारीचको ले कर अगस्त्य ऋषिको खाने दौड़ी। ऋषिके शापसे माता और पुत्र दोनों घोर राक्षस हो गये। इसी समयसे यह राक्षसी अगस्त्यजीका तपोवन नाश करने लगी और उसे उन्होंने

ऋषियोंसे शून्य कर दिया। यह अरण्य ताड़काकानन नामसे प्रसिद्ध है। यह और इसका पुत्र दोनों ब्राह्मणको देखनेसे ही उनके प्रति अत्यन्त अत्याचार करते थे तथा यज्ञीय अग्निमें खून को आकाशसे फेंकता देते थे इसलिये साथ वहां पहुंच जाते और अनेक तरहका ऊधम मचाया करते थे। उनके इस अत्याचारसे कोई भी यज्ञ करनेका साहस नहीं करता। इसी प्रकार ताड़का उस वनमें रह कर अपना दिन बिताने लगी। बाद विश्वामित्रने इनका दमन करनेके लिए दशरथजीकी शरण ली और उन्हें सब वृत्तान्त कह कर वे रामचन्द्र और लक्ष्मण को अपने साथ उस तपोवनमें लाए। रास्तेमें ही विश्वामित्रके आदेशसे रामचन्द्रजीने इसे मार गिराया और मारीचको बाण द्वारा बहुत दूर फेंक दिया। ताड़काको मारनेके समय रामचन्द्रने विश्वामित्रसे कहा था "प्रभो! यह स्त्री है, अतः किस प्रकार इसका वध करूं।" इस पर विश्वामित्रने कहा, 'यह स्त्री नहीं है, जो स्त्री घोरके समान युद्ध करती है, जिसने स्त्रियोंके योग्य लज्जा और कोमलताका त्याग कर दिया है, वैसी स्त्रीको मारनेमें स्त्रीवधका प्रायश्चित्त नहीं होता।' (रामायण १।२५-२६ अ०)। २ देवदासी, एक लता।

ताड़काफल (सं० क्ली०) ताड़केव लम्बमानं फलमस्य, बड़ी। इलदीका बड़ी इलायची।

ताड़कायन (सं० पु०) विश्वामित्रके एक पुत्रका नाम। (भारत अनु० ४ अ०)

ताड़कारि (सं० पु०) ताड़काया अरिः, ६-तत्। ताड़काके शत्रु, श्रीरामचन्द्र।

ताड़केय (सं० पु०) ताड़काया अपत्यं ढक्। ताड़काका पुत्र, मारीच।

ताड़घ (सं० पु०) ताड़ हन्ति हन टक्। 'शिल्पिनि चाणुणी' पा ३।२।५५। कर्मकार, घन या हथौड़ा मारनेवाला लुहार।

ताड़घात (सं० पु०) ताड़ हन्ति हन् अण्। वह जो हथौड़े आदिसे पीट कर काम करता हो।

ताड़ङ्क (सं० पु०) ताड़ अङ्कः चिह्न यस्य वा ताड़ अङ्कते लक्ष्यते अङ्क-घञ् मध्य वृत्त पृषोदरादित्वात् साधुः। १ कर्णाभरणविशेष, कानमें पहननेका एक प्रकारका गहना, करनफूल। इसके संस्कृत पर्याय—कर्णदर्पण, ताटङ्क, कर्णिका, तालपत्र, ताड़पत्र और कर्णपुष्प हैं। २ हस्ताभरणविशेष हाथमें पहननेका एक गहना।

ताड़न (सं० क्ली०) ताड़ि भावे ल्युट्। १ आघात, प्रहार, मार। २ दोषादि विषयमें दोषबोध मन्त्रसंस्कारविशेष। इसमें मन्त्रोंके वर्णोंको चन्दनसे लिख कर प्रत्येक मन्त्र को वायुबीज द्वारा एक एक कर मारते हैं। (शारदाति०) ३ गुणन। ४ शासन, दण्ड सजा। ५ डांट डपट, घुड़की।

ताड़ना (सं० स्त्री०) ताड़न टाप्। १ प्रहार मार। २ भर्त्सना डांट डपट। ३ शासन दण्ड। ४ उत्पीड़न, कष्ट, तकलीफ।

ताड़ना (हिं० क्रि०) १ दण्ड देना, मारना पीटना। २ शासित करना डांटना डपटना। ३ किसी बातको लक्षणसे समझ लेना, भांपना, लख लेना। ४ मारपीट कर भगाना हांकना, हटा देना।

ताड़नी (सं० स्त्री०) ताड़न स्त्रियां ङीप्। अश्वताड़न-यष्टि कोड़ा, चाबुक।

ताड़नीय (सं० त्रि०) ताड़-अनीयर्। शासनयोग्य, दण्ड देने योग्य सजा देने काबिल।

ताड़पत्र (सं० क्ली०) ताड़स्य पत्रमिव पत्रं यस्य। कर्ण भूषणविशेष, कानका एक गहना।

ताड़पत्रि—मन्द्राज प्रदेशके बेल्लारी जिलेके अधीन एक शहर। १२वीं शताब्दीमें यह शहर स्थापित हुआ है। यहां राम और चिन्तरायके दो मन्दिर हैं। दोनों मन्दिर अच्छे अच्छे शिल्पकार्योंसे खचित हैं जो देखनेमें बहुत अच्छे लगते हैं।

ताड़वाला (हिं० वि०) ताड़नेवाला, समझ जानेवाला।

ताड़यितृ (सं० त्रि०) ताड़-तृच्। ताड़नकारी मारने वाला।

ताड़ाग (सं० त्रि०) तड़ागे भवः अण्। तड़ागभव जल, तालाबका पानी। गुण—वातवर्द्धक, स्वादु कषाय और कटु पाक। हेमन्तकालमें तड़ागका जल बहुत हितकर है।

ताड़ि (सं० स्त्री०) ताड़यति पर्णं शोभते तड़-णिच् इन्। १ वृक्षविशेष एक प्रकारका पेड़। ताड़ी पेड़। २ ताड़ रस।

ताड़ित (सं० त्रि०) तड़-णिच्-क्त। १ आहत २ तिरस्कृत। ३ उत्पीड़ित। ४ दूरीकृत। ५ दण्डित। ६ विद्ध। (क्लो०) तड़ित् भावार्थे अण्। ७ विद्युत् बिजली। ताड़ितकी उत्पत्तिका विषय सिद्धान्तशिरोमणिमें इस प्रकार लिखा है–समुद्रमें वड़वाग्नि है, जलभरनिमग्न इस वड़वाग्निसे धूमराशि उत्पन्न होती है और वह धूम राशि आकाशमें वायुद्वारा नीत हो कर चारों तरफ फैल जाती है। पीछे सूर्यरश्मि किरण द्वारा प्रदीप्त होने पर स्फुलिङ्ग निकलते हैं, इन्हीं स्फुलिङ्गोंको ताड़ित या बिजली कहते हैं। ये अनुकूल और प्रतिकूल वायुके आघातसे उद्भ्रान्त हो कर पार्थिवांशके साथ मिश्रित होते हैं, बादमें अकस्मात् वैद्युत तेजः निकलता है, यह प्राय अकालवर्षणसे हुआ करता है। यह तीन प्रकारका है-पार्थिव, आप्य और तैजस। जिसमें पृथिवीका अंश अधिक हो वह पार्थिव, जिसमें जलीय अंश अधिक हो वह आप्य और जिसमें तेजका भाग अधिक हो वह तैजस कहलाता है।

विशेषपरिचय–यूरोपीय विज्ञानमें ताड़ितका परिचय इस प्रकार दिया गया है—अम्बर (Amber) नामक पदार्थको घर्षण करनेसे, वह छोटे छोटे पंख, तृण आदिको आकर्षित करने लगता है। बहुत दिनोंसे लोग अम्बरके इस गुणको जानते थे। अम्बरके ग्रीक नामसे अङ्गरेजी Electricity शब्दकी उत्पत्ति हुई है। संस्कृत प्राचीन ग्रन्थोंमें तृणमणि और अम्बरको एक ही पदार्थ बतलाया गया है। डाक्टर गिलबार्टने तीन सौ पचास वर्ष पहले, अन्यान्य पदार्थोंमेंभी अवस्थाभेदसे इस तरहकी आकर्षणशक्तिका आविष्कार किया था।

डेढ़ सौ वर्ष पहले ताड़ितके विषयमें मनुष्य जातिका ज्ञान सङ्कीर्ण और सीमाबद्ध था। वास्तवमें देखा जाय तो सुप्रसिद्ध आमेरिक वैज्ञानिक फ्राङ्कलिन और अंग्रेज कावेण्डिसके समयसे ही ताड़ित-विज्ञानकी सृष्टि हुई है। पीछे ताड़ितकी इतनी उन्नति हुई कि अब उसने विज्ञानका शीर्षस्थान लाभ कर लिया है। वर्तमानमें यह कहना अत्युक्ति न होगा कि, मनुष्य-समाजकी स्थिति और उन्नतिके लिए ताड़ितशक्ति ही प्रधान अवलम्बन है। सभ्यतम मनुष्य जातिका व्यवसाय, वाणिज्य, राजनीति इत्यादि सब कुछ ताड़ितशक्तिकी विविध प्रक्रियाके ऊपर प्रतिष्ठित है।

यूरोप और अमेरिकाके प्रधान प्रधान मनस्वियोंके द्वारा ताड़ितके विषयमें विविध आविष्क्रियाओंका संघटन और ताड़ितविज्ञानकी विविध उन्नति सम्पादित हुई है। इस छोटेसे निबन्धमें सबका उल्लेख करना असम्भव है। किन्तु कुछ लोगोंका उल्लेख न करनेसे निबन्ध अधूरा रह जायगा। फ्राङ्कलिन और कावेण्डिसके बाद आपेयार, माइकेल फाराडे, लार्ड केलविन (सर विलियम टोमसन), क्लार्क मक्सवेल और हार्टजके नाम ताड़ितविज्ञानके इतिहासमें समधिक प्रसिद्ध हैं। इनमें आपेयार फरासी, हार्टज जर्मन तथा और सब अंग्रेज थे। इङ्गलैण्डके लिये यह बड़े गौरवका विषय है।

वर्तमान समयमें ताड़ितशक्ति विविध विधानानुसार मनुष्य और मनुष्य-समाजका भृत्यभावसे उपकार कर रही है। कितने विषयोंमें कितने उपायोंसे ताड़ित शक्तिका व्यवहारिक प्रयोग हो रहा है, उसको शुमार नहीं। वर्तमान निबन्धमें ताड़ितशक्तिकी वैज्ञानिक आलोचना की जायगी। ताड़ितके व्यवहारिक प्रयोगके लिए स्वतन्त्र निबन्धकी आवश्यकता है। ग्रेहमबेल, एडिसन आदि जगत्‌विख्यात व्यक्तियोंने जिन कौशलोंसे विविध यन्त्रोंका उद्भावन कर ताड़ित शक्तिको मनुष्योंके कार्यसाधनमें नियोजित किया है, इस निबन्धमें उन सबको आलोचनाको ही स्थान मिलेगा या नहीं सन्देह है।

ताड़ित एक जड़पदार्थ अथवा जड़ पदार्थका एक प्रकार धर्ममात्र है, अथवा शक्तिका किस तरहका भेद मात्र है, इसका अभी तक निःसंशय निरूपण नहीं हुआ है। आज तक भी इस विषय पर विविध तर्क वितर्क चल रहे हैं। फिल हाल हम उस वितण्डाजालमें प्रवेश नहीं करना चाहते। उस विषयमें आधुनिक वैज्ञानिकोंके मत अन्तमें कहेंगे।

ताड़ित किसको कहते हैं?—ताड़ित कहनेसे हम क्या समझते हैं, पहले यही बतलाना आवश्यक है। एक काँचके डण्डेको रेशमी रूमाल पर घिस कर छोटे छोटे कागजके टुकड़ोंके ऊपर रखनेसे मालूम होगा कि कागजके टुकड़े उछल उछल कर काँचके डण्डे पर लग रहे हैं।

सञ्चायककी पट्टी फलालेन पर घिस कर अथवा रबरको चमड़े या बालों पर घिस कर कागजोंके टुकड़ोंके ऊपर थामनेसे भी ऐसा होता है। कांच, लाक्षादण्ड या ऐसे ही इस प्रकारसे घर्षणके पहले किसी प्रकारकी विकृति नहीं होती। घर्षणसे पहले कागज देखनेमें जैसा था बादमें भी ठीक वैसा ही रहता है, किन्तु न मालूम उसमें एक नूतन क्षमता या धर्म कहांसे आ जाता है। यह नवाविर्भूत आकर्षणशक्तिविशिष्ट कांचदण्ड और लाक्षादण्डको ताड़ित-धर्मान्वित कहा जा सकता है। इस नूतन आविर्भूत धर्मका नाम है ताड़ित-धर्म।

ताड़ित-विकाशके उपाय—कांच, रेशम और लाख पर घर्षण करनेसे बहुत मात्रामें ताड़ितधर्मका विकाश होता है। साधारणतः भिन्न भिन्न प्रकृतिसम्पन्न किसी भी दो पदार्थोंको परस्पर घिसनेसे न्यूनाधिक मात्रामें ताड़ितका विकाश हुआ करता है अथवा घर्षणका भी प्रयोजन नहीं होता। इटलीके विज्ञानी वोल्टाने पहले पहल देखा था कि दो धातु-द्रव्योंके परस्पर स्पर्श होनेसे ही दोनोंमें ताड़ितधर्मविकाश होता है। हां इसमें विकाशकी मात्रा सर्वत्र समान नहीं होती है। यह ठीक है सामान्यतः यह नियम निर्दिष्ट किया जा सकता है, कि दो भिन्न रासायनिक प्रकृतिसम्पन्न द्रव्योंको परस्पर छुआ देनेसे दोनों ही ताड़ितधर्माक्रान्त होते हैं। स्पर्श ही जहां ताड़ित-विकाशके लिए यथेष्ट है, वहां दो द्रव्योंको घर्षणसे विशेष फल होगा, यह निश्चित है।

स्पर्श और घर्षणके सिवा अन्य नाना कारणोंसे ताड़ितका विकाश होते देखा जाता है। आघात प्रयोग और तापप्रयोगमें ताड़ितका विकाश देखनेमें आता है। बहुतसे जीव-शरीरोंमें ताड़ितका विकाश होता है। वे आत्मरक्षाके लिए इस ताड़ितका व्यवहार करते हैं। जलके बाष्प होते समय ताड़ितका विकाश होता है। इसके सिवा जो ताड़ितप्रवाह उत्पन्न करनेके उपाय हैं, उनका उल्लेख आगे किया जायगा।

ताड़ित निरूपणके उपाय—ताड़ितका विकाश हुआ है या नहीं, इसके समझनेके लिए विविध उपाय हैं। एक सोनाके टुकड़े पर एक सूतको लम्बित करके थामनेसे ही प्रथममें ताड़ित-निरूपणका समस्त उपाय होता है। कोई भी ताड़िताक्रान्त पदार्थ उसके पास आते ही सोनाका टुकड़ा उसकी तरफ आकृष्ट होगा। एक कांचकी बोतलमें काग बन्द कर, उसके कागमें सुराख कर उसमें एक पीतलकी सींक पिरो देवें। सींकका एक छोर बोतलके भीतर और एक बाहर रहना चाहिये। जो छोर भीतर रहे उस पर दो सूक्ष्म सोनेकी या तांबेकी पत्तियां लपेट देवें। इस यन्त्रको ताड़ित निरूपक या तड़िद्दीक्षणयन्त्र कहा जा सकता है। कांच या लाख या अन्य कोई पदार्थमें ताड़ितका विकाश होने पर उस पदार्थको बोतलके बाहरकी सींकके छोर पर थामनेसे ही अभ्यन्तरस्थ दोनों पत्तियां अलग अलग हो जायेंगी। दोनों पत्तियोंमें परस्पर विकर्षण होगा। इस विकर्षणका विषय पीछे और भी विशेषरूपसे कहा जायगा।

ताड़ित दो प्रकारका है। जिस तरह रेशम पर कांच घिस कर उस कांचको तड़िद्दीक्षणके पास लानेसे पत्तियां अलग अलग हो जाती हैं, उसी तरह फलालेन या पशम पर लाख घिस कर उस लाखको तड़िद्दीक्षणके पास लानेसे भी पत्तियां अलग अलग हो जाती हैं अर्थात् कांच और लाख दोनोंमें ही ताड़ितधर्मके विकाशका प्रमाण मिलता है। किन्तु ऐसी अवस्थामें यदि कांच और लाख दोनोंको एक साथ यन्त्रके पास लाया जाय, तो पत्तियोंको उस तरह अलग अलग होते नहीं देखा जाता। कांच और लाख दोनोंमें ताड़ितके विकाश हुए हैं, किन्तु वे परस्पर विरुद्ध धर्माक्रान्त हो गये हैं। एकत्र भावसे दोनों जो कार्य करते हैं एकत्र होनेसे परस्पर उस कार्यमें प्रतिकूलता करते हैं। इनमें कांच और लाखके टुकड़ोंको जांच देनेसे मालूम होगा कि दोनों आकर्षित हो रहे हैं। दो कांचके टुकड़ोंको रेशम पर घिस कर टांग देनेसे देखेंगे कि दोनोंमें आकर्षण न हो कर विकर्षण हो रहा है। और लाखके दो टुकड़ोंको पशम पर घिस कर उनको लम्बित करनेसे दोनोंमें परस्पर विकर्षण होते देखेंगे। अतएव मालूम होता है कि—

(१) कांचका ताड़ित कांचके ताड़ितको विकर्षित करता या हटा देता है।

(२) लाखका ताड़ित लाखके ताड़ितको विकर्षित करता या हटा देता है।

पिंजरेके बाहर प्रभूत परिमाणसे ताड़ितका संचय होने पर भी उस जगहके पदार्थ पर या तड़िद्वीक्षणयन्त्र पर उसका ज़रा भी प्रभाव नहीं पड़ता। माइकेल फाराडेने एक बड़े भारी काठके बक्सको धातुके रंगीले पत्तियोंसे मढ़ कर यन्त्रके ज़रिये उसमें प्रभूत ताड़ितका सञ्चय किया और स्वयं तड़िद्वीक्षणादि ले कर उसके भीतर घुस गये। बक्सके बाहरसे बड़े अग्निस्फुलिङ्ग इधर उधरको विक्षिप्त हो रहे थे, किन्तु बक्सके भीतर उन्हें कुछ भी मालूम न हुआ।

अभिज्ञताके अनुसार देखा जाता है, कि जिस प्रदेशमें ताड़ितकी कोई क्रिया नहीं है वहाँ ताड़ितका अस्तित्व भी नहीं है। धातुद्रव्यके भीतर जैसे बिजलीकी क्रिया नहीं होती, उसी तरह उसके भीतर बिजली भी सञ्चित नहीं रहती। ठोस या पोली कैसी भी क्यों न हो, किसी भी धातुकी चीज़में बिजली सञ्चित करनेसे समस्त ताड़ित या बिजली उसके ऊपर आ जाती है। उसके भीतर ज़रा भी नहीं रह जाती। किसी ताड़ित विशिष्ट द्रव्यको बक्स या पिंजरे जैसे पोले धातुमय पदार्थके भीतर घुसेड़ देनेसे कार्य मात्रसे समय ताड़ित उस बक्स या पिंजरेके ऊपर आ जाता है। उस समय उस द्रव्यको निकाल कर तड़िद्वीक्षण द्वारा उसकी परीक्षा करनेसे मालूम होगा कि, उसमें ज़रा भी बिजली नहीं रही है।

एक पिंजरे या कोठेके कामके भीतर रहनेसे वज्राघातको कुछ आशङ्का नहीं रहती।

अपरिचालक पदार्थके भीतर सर्वत्र ताड़ितक्रियाकी स्फूर्ति होती है तथा उसके ऊपर और भीतर सर्वत्र ही ताड़ित सञ्चित हो सकता है।

परिचालक पदार्थमें सिवा ऊपरके अभ्यन्तर कहीं भी बिजली नहीं रहती। और ऊपर भी सर्वत्र समान परिमाणसे नहीं रहती। एक गोलेके भीसे पर सर्वत्र समान भावसे बिजली मौजूद रहती है। किन्तु धातुमय द्रव्यका उपरिभाग ऊँचा नीचा होने पर सब जगह समान बिजली नहीं होती। जो ज़मीन जितनी ऊँची होगी वहाँ उतनी ही ज्यादा बिजली ठहरेगी और नीची ज़मीन पर उतनी ही कम। इस प्रकार जहाँ जहाँ नोकसी निकली रहेगी वहाँ वहाँ बिजली कुछ ज्यादा जमती है; अन्यत्र उससे कुछ कम ठहरती है।

परिचालकके भीतर जो ताड़ितकी क्रिया प्रकट नहीं होती ठीक उसी अर्थमें फलसे ऐसा होता है, यह गणित-शास्त्रकी सहायतासे प्रमाणित हो सकता है। किसी निर्दिष्ट आकारके धातुमय पदार्थके उपरिभागके किसी अंश पर ताड़ित जमनेसे भीतरमें ताड़ितकी क्रिया प्रकट नहीं होगी, इसको गणितकी सहायतासे गणना हो सकती है। गणितप्रयोग वर्त्तमान निबन्धसे बहिर्भूत है।

परिचालक और अपरिचालकमें प्रभेद।—परिचालकके भीतर बिजली अवस्थान नहीं करती, पर अपरिचालकके भीतर बिजलीका वास प्रयुक्त होता है। दो ताड़ितयुक्त पदार्थ वायुके मध्य रखनेसे दोनोंमें या तो आकर्षण या विकर्षण होते देखा जाता है। दोनोंसे एकको पिंजरे या बक्समें भर देनेसे फिर आकर्षण या विकर्षण कुछ भी उस बक्सको धातुको भेद कर नहीं जाता। पिंजरा या बक्स मानो मिट्टी हो कर रहता है। ऐसी हालतमें भीतरकी बिजली और बाहरकी बिजली परस्पर सम्बन्ध रहित और स्वाधीनभावसे रहती है। परिचालक पदार्थ ताड़ितबलके उत्पादनमें असमर्थ है किन्तु अपरिचालक पदार्थ इसमें पटु है। दोनोंका यह प्रभेद इस प्रकारसे कुछ कुछ समझा जा सकता है। इस्पात, काँच मट्टी, पत्थर, रबर आदि कठिन द्रव्योंको खींचा, तोड़ा और टेढ़ा किया जा सकता है, किन्तु जल, तेल, गुड़, कीचड़ इत्यादि तरल द्रव्योंको इस तरह खींचा, तोड़ा और टेढ़ा नहीं किया जा सकता। काँचको दोनों हाथोंसे पकड़ कर खींचा जा सकता है काँच उस खींचनेमें प्रवेश आता पहुँचाता है। थोड़ासा कीचड़ ले कर खींचनेसे कीचड़ इतनी कम बाधा पहुँचाता है कि, खींचना ही नहीं पड़ता। जल इससे भी ज्यादा है। बिजलीके लिए अपरिचालक पदार्थ कठिन द्रव्यके समान है और परिचालक पदार्थ जल या कीचड़के समान। अपरिचालकके भीतर बिजलीको खींचना पड़ता है और बाधा भी लगता है, परिचालकके भीतर न तो खींचना पड़ता है और न बाधा ही लगता है। कठिन मट्टीका उपरिभाग ऊँचा नीचा या असमान हो सकता है, किन्तु तरल जलका उपरिभाग समतल ही होता है, ऊँचा नीचा नहीं। जलके भीतर सब स्थानमें दाबकी समानता होते

हो जल अपने आप हट कर दावको सर्वत्र समान कर लेता है, परन्तु कठिन पदार्थके भीतर विभिन्नस्थलोंमें विभिन्न मात्रासे दाब देनेसे कठिन पदार्थ टेढ़ा या नत्र जाता है। जलकी तरह बहता ढरकता नहीं। इसी तरह अपरिचालक पर ऊपर या भीतर विभिन्नस्थलोंमें ताड़ित-की विभिन्न मात्राओंमें दाब पड सकती है, उस दाबसे ताड़ितको एक जगहसे दूसरी जगह ढकेल देना चाहता है। किन्तु ताड़ित अपरिचालकको भेद कर सहजमें नहीं जा सकता। परिचालकके भीतर ताड़ितकी दाबमें थोड़ी बहुत घट बढ होनेसे ही उसी समय थोडीसी बिजली पानीकी तरह ढरक जाती है, परिचालक उसमें कुछ भी बाधा नहीं देता। अतएव परिचालकके भीतर ताड़ित की दावकी कुछ कमीवेशी नहीं होती, सर्वत्र समान दाव होनेसे न खींचन पडती है और न धक्का ही लगता है।

पानीके दावके साथ बिजलीके जो गुणोंकी तुलना की गई है, उसको अब हम उद्गति (potential) शब्दसे व्यवहार करेंगे। कठिन पदार्थके विभिन्न स्थलों पर दावकी कमीवेशी हो सकती है, तरलपदार्थके विभिन्न स्थानोंमें दाबकी थोडी बहुत कमीवेशी होनेसे तरलपदार्थ हट कर दाबकी बराबर कर लेता है। अप-रिचालकके भीतर ताड़ितकी उद्गति विभिन्न स्थान पर विभिन्न परिमाणसे हो सकती है। परिचालकके अन्दर ताड़ितकी उद्गति सर्वत्र समान होगी; जरा भी कमी-वेशी होनेसे ताड़ित कुछ हट कर उद्गतिको समान कर लेगा। परिचालक और अपरिचालक दोनोंका ही स्वभाव वैसा है। दोनोंमें ताड़ितकी जो क्रियाएं देखनेमें आती हैं, वे सभी इस विभिन्न स्वभावसे उत्पन्न हैं। परि-चालकके भीतर उद्गति सर्वत्र समान होती है, इस कारण परिचालकके भीतर अवस्थित ताड़ितका कोई खिंचाव या धक्का प्रकट नहीं होता। अतएव परिचालक-के किसी स्थान पर जरासी बिजलीका सञ्चार करने मात्र से समस्त ताड़ित केवल ऊपर ही फैल जाता है और वह इस तरह फैल जाता है जिससे परिचालकके भरमें उसकी उद्गति समान होती है, अर्थात् परिचालकके भीतर किसी जगह खिंचाव या धक्का नहीं पाया जाता। जैसे पानी जहां ज्यादा दाब है, वहांसे, जहां कम दाब है, वहां जानेकी कोशिश करता है, उसी तरह बिजली भी जहां उद्गति अधिक है, वहांसे, जहां उद्गति कम है, वहां जानेकी चेष्टा करती है। बीचमें यदि अपरि चालकका व्यवधान हो तो सिर्फ चेष्टा मात्र ही कर रह जाती है, बिजली एक स्थानसे अन्यत्र नहीं जाने पाती बीचमें सिर्फ खिंचाव पड जाता है। और यदि अपरिचालकका व्यवधान हो तो बिजली सहज ही ढरक कर जाती है, दोनों जगह उद्गति समान हो जाती है, खिंचाव नहीं पडता।

परिचालक और अपरिचालकका इस स्वाभाविक प्रभेदको याद रखनेसे ताड़ित-घटित प्रायः सभी क्रिया ओंको एक प्रकारसे समझा जा सकता है। मान लो, कि एक पीतलके गोलेमें धन-ताड़ित सञ्चित करके उसको डोरेमें बांध कर टांग दिया गया। उसके चारों ओर सिर्फ अपरिचालक वायु विद्यमान है। पासमें उद्गति अधिक है, जितनी दूर जाओगे उद्गति उतनी ही घटती जायगी। और एक छोटे गोलेमें धन-ताड़ित ले कर उसे उसके पास थामनेसे वह क्रमश दूर जाना चाहेगा। क्योंकि यह धन-ताड़ित, जिधर जानेसे उद्गति घटती है उसी तरफ जाना चाहता है। धन-ताड़ितके साथ ऋण-ताड़ितके प्रभेदको याद करनेसे ही समझ सकते हैं, कि उस प्रदेशमें ऋण-ताड़ितयुक्त एक छोटा गोला रखनेसे वह क्रमशः दूरसे पास आवेगा। धन ताड़ित जहां उद्गति अधिक है, वहांसे जहां कम है, उसी तरफ जाता है। ऋण-ताड़ित जहां कम है वहांसे जहां अधिक है, उसी तरफ जाता है। धन-ताड़ित धन-ताड़ितको धक्का मारता है, ऋण ताड़ित भी ऋण ताड़ितको ठेल देता है, किन्तु धन-ताड़ित ऋण-ताड़ितको खींचता है।

ताड़ितका परिमाण।—तड़िद्वीक्षणयन्त्र ताड़ितके अस्तित्व निरूपणार्थ व्यवहृत होता है। ताड़ित किस जातिका है, इसका भी सहजमें निर्णय किया जा सकता है। उपस्थित ताड़ितमें जब यन्त्रको दोनों पत्तियां अलग अलग हो जाय, तब काचके ताड़ितको पास ले जाने पर यदि पृथक्त्व और भी बढ जाय तो समझना चाहिये कि, उपस्थित ताड़ित धन ताड़ित है। और यदि पृथकत्व

बैठ जायँ तो उसे ऋण-ताड़ित समझना चाहिये। धन और ऋण दोनोंके परस्पर-बराबर रहनेसे यदि पत्तियां जरा भी परस्पर अलग न हों तो समझें कि धन और ऋण दोनोंका परिमाण समान है। कुछ यन्त्रोंको देख कर ताड़ितका परिमाण भी स्थूलतः निर्णीत हो सकता है। सूक्ष्मतासे ताड़ित-परिमाणकी प्रणालियोंका उल्लेख करना अनावश्यक है। यहां इतना याद रखना चाहिये कि यन्त्र द्वारा ताड़ितकी जाति और परिमाण दोनोंका ही निर्णय किया जा सकता है।

ताड़ितकी अनश्वरता।—इसी तरह यन्त्र द्वारा परिमाण और परीक्षा करके देखा गया है कि, ताड़ितका ध्वंस नहीं है। जिसको एक स्थानसे दूसरे स्थानको एक आधारसे अन्य आधारमें ला सकते हैं, इसकी अविनश्वरताका भी ध्वंस नहीं होता। साधारणतः बिजलीको बहुत देर तक एकत्र आबद्ध नहीं रख सकते, उसका प्रधान कारण पार्श्ववर्ती पदार्थका चालक परिचालकत्व ही है। बिजली वायु, पवन तथा धूलिकणा जलकणा आदिको आश्रय कर धीरे धीरे परिचालित हो कर एक वस्तुके ऊपरसे अन्य वस्तुके ऊपर जाया करती है, किन्तु उसका ध्वंस नहीं होता। कोई वैज्ञानिकने कांचका पोला गर्त्त वायुशून्य करके उसके भीतर जरा सा ताड़ितयुक्त पदार्थको आबद्ध कर रखा था, बहुत वर्षोंमें भी ताड़ितके परिमाणका ह्रास नहीं हुआ था।

अर्थात् दस भाग धन-ताड़ितमें पांच भाग धन ताड़ित मिलानेसे सर्वत्र और सर्वदा ठीक पन्द्रह भाग धन ताड़ित पाया जाता है। मिलानेके समय परिमाण घटता नहीं। दस भाग ऋण-ताड़ितमें पांच भाग ऋण-ताड़ित मिलानेसे सर्वत्र पन्द्रह भाग ऋण-ताड़ित होता है। और दस भाग धनमें आठ भाग ऋण मिलानेसे दो भाग धन होता है। दस भाग धनमें दस भाग ऋण मिलानेसे धन या ऋण किसीका भी अस्तित्व नहीं रहता। इस हालतमें भी कहना पड़ेगा, कि धन और ऋणमें योग हुआ है। उनका ध्वंस या नाश हुआ है, ऐसा कहना भूल है।

ताड़ितका संक्रमण थोड़ेसे धन ताड़ितके पास एक पीतलकी गोली रोक कर उसको मध्यस्थताके पासमें। पूर्वोक्त नियमानुसार धन-ताड़ितके पासमें उद्गति अधिक और दूरमें उद्गति कम होती है। अतएव इस धातुखण्डका जो पार्श्व धन-ताड़ितके सम्मुख और निकटस्थ है, वहां उद्गति अधिक तथा जो पार्श्व पीछे और दूरी पर स्थित है, वहां उद्गति कम होती है। उस वस्तुको वहां लानेसे पहले उसके ऊपर किसी स्थानमें ताड़ितका चिह्नमात्र न था किन्तु अब देखोगे कि, सामनेके भागमें ऋण ताड़ित और पश्चाद्भागमें धनताड़ितका आविर्भाव हुआ है अर्थात् परिचालक धातुखण्डके समभावापन्न किंचित् धनताड़ित, जहां उद्गति अधिक थी वहांसे, जहां उद्गति कम है, वहां चला गया है, निकटसे दूर और सामनेसे पीछे गया है। और थोड़ासा ऋण ताड़ित विपरीत दिशाको अर्थात् दूरसे पासमें, पश्चात्से सामने गया है। आगेसे देखोगे कि, नूतन आविर्भूत धन-ताड़ितका परिमाण ठीक ऋण ताड़ितके समान है। पहले मानो उस धातुके भीतर शून्य परिमित ताड़ित अव्यक्तभावसे निहित था, अब वही शून्य परिमित ताड़ित किंचित् धन और उतने ही ऋणसे विश्लिष्ट हो कर विभिन्न दिशाको हट गया है। इसीको ताड़ितका संक्रमण कहते हैं।

यह कहना आवश्यक मालूम है कि, परिचालकके समभावापन्नसे ऐसा होता है। अपरिचालक पदार्थसे ऐसा नहीं होता; क्योंकि उसके दोनों पार्श्वमें उद्गति समान न होनेसे भी ताड़ितमें गति नहीं होती। और परिचालककी दोनों पार्श्वमें उद्गति असमान होनेसे जो कुछ धन-ताड़ित अपने आप हट कर पश्चात् भागकी उद्गतिको जरा बढ़ा देता है। थोड़ासा ऋण ताड़ित अपने आप हट कर सामनेकी उद्गति घटा देता है। इससे उसके भिन्न भिन्न अंशमें उद्गति असमान नहीं रह सकती, सब ही उद्गति समान हो जाती है। उस समय उसके भीतर ताड़ितका खिंचाव नहीं रहता अर्थात् ताड़ितकी क्रियामें उद्गति नहीं रहती।

इस संक्रमणके समय जितने धन और ऋण उतने ही अव्यक्तका विकाश होनेसे समग्र ताड़ितका परिमाण पहले जितना था अब भी उतना ही रहता है। ताड़ित

का जैसे ध्वंस नहीं है, वैसे ही सृष्टि भी नहीं है। एक जगहसे कुछ धन ताड़ितको हटा कर एकत्र सञ्चित करनेसे अन्यत्र किसी न किसी जगह ठीक उतने ही ऋण-का आविर्भाव और विकाश होता है। योगफल शून्य ही रहता है। माइकेल फराडे इस मतके प्रतिष्ठाता है।

एक टीनके या अन्य किसी धातुके बकसको भूमिसे अलग कर अर्थात् अपरिचालक द्रव्यमें परिवृत करके उस-के भीतर एक धन ताड़ितयुक्त गोला लटका दो। बकस के बाहरके हिस्से पर धन ताड़ित और भीतरके हिस्से में ऋण ताड़ितका विकाश होगा। उल्लिखित संक्रमण ही इसका कारण है। बकसके बाहरी हिस्से को छूनेसे वहाँका धन ताड़ित तत्क्षणात् शरीरके मध्यसे चला जाता है। अभ्यन्तरमें गोलाका धन और बकसके भीतरी हिस्से में ऋण-ताड़ित वर्तमान रहता है। तड़िद्वीक्षण द्वारा बाहरमें कहीं भी कोई ताड़ितक्रिया देखनेमें नहीं आती. भीतरके गोलेको सहसा बाहर निकाल लेनेसे ऋण-ताड़ित भी साथ ही साथ बकसके अन्तःपृष्ठसे बाहरके पृष्ठमें आ कर पड़ता है और तड़िद्वीक्षणसे पकड़ा जाता है। और गोलेका यदि निकालनेसे पहले बकसके गात्रसे स्पर्श कराया जाय, तो बाहर निकालनेके बाद गोला अथवा बकसमें कहीं भी किसी ताड़ितका लेशमात्र नहीं मिलता। प्रमाणित हुआ कि, गोलामें जितना धन था, बकसके भीतर भी उतना ही ऋणका आविर्भाव हुआ था, नहीं तो दोनोंका योगफल शून्य नहीं होता।

जिस कोठरीके भीतर मैं बैठा हूं, उसको एक वृहत् परिचालक बकसके समान समझ सकता हूं। कोठरीके भीतर किसी जगह कुछ धन-ताड़ित रखनेसे कोठरीके भीतर दीवारों पर ठीक उतने ही ऋण-ताड़ितका आविर्भाव होगा अर्थात् चारो ओरको दीवार, नीचेकी जमीन और ऊपरकी छत पर सर्वत्र थोड़ा बहुत ऋण-ताड़ितका विकाश होगा, सबको एकत्र करनेसे ठीक अभ्यन्तरस्थ धन-ताड़ितके साथ परिमाणमें सामान होगा, जरा भी कम वा ज्यादा न होगा।

कोठरीके भीतर न झुला कर यदि खुले मैदानमें धन-ताड़ितयुक्त एक गोला लटकाया जाय, तो उसके चारो ओर जहां जहां परिचालककी ओट है, वहां वहां कुछ कुछ ऋण-ताड़ितका विकाश होगा। नीचे मैदान-में जमीन पर कुछ दूरवर्ती वृक्ष या पहाड़ पर किञ्चित् उपरिस्थ आकाशमें एक मेघ होनेसे उसके गात्रमें भी यत् किञ्चित् ऋण-ताड़ितका आविर्भाव होगा। किन्तु यदि जगतमें जहां जितना ऋण-ताड़ितका ऐसा आविर्भाव हुआ है, उसको एकत्र संग्रह कर रखा जाय, तो उस-की समष्टि उस सुवलम्बित गोलेके पृष्ठदेशवर्ती धन-ताड़ितकी अपेक्षा जरा भी कमती या बढ़ती न होगा।

ऊपर जो टीनके बकसका उल्लेख किया गया है, उसके भीतर धन-ताड़ित ले जानेसे बाहरके हिस्सेमें धन और भीतरी हिस्सेमें ऋण-ताड़ितका आविर्भाव होता है। किन्तु बकसके भीतर यदि रेशम पर कांच घसा जाय, तो कांचमें धन-ताड़ितका विकाश होता है, किन्तु बकस-के बाहरी हिस्सेमें किसी भी ताड़ितका चिह्न नहीं मिलता। कांचमें जैसे धनका विकाश होता है, वैसे ही रेशममें साथ साथ ऋणका विकाश होता है। कांचमें जितना धन उत्पन्न होता है रेशममें ठीक उतना ही ऋण उत्पन्न होनेसे बाहर कोई फल नहीं होता।

ताड़ितकी प्रकृति।—पहले ही कह चुके हैं, कि ताड़ित पदार्थ क्या, शक्ति है या धर्म, इसका अभी तक कुछ निर्णय नहीं हुआ। ताड़ितके स्वरूपनिर्णयमें प्रवृत्त होने पर इस बातको याद रखनी चाहिये। ताड़ित कोई भी पदार्थ क्यों न हो, जगत्में उसकी नूतन सृष्टि वा ध्वंस नहीं है। शुद्ध धन वा शुद्ध ऋण-ताड़ितका हम किसी तरह भी सञ्चय नहीं कर सकते। कुछ धन ताड़ित किसी जगह किसी उपायसे सञ्चित होने पर ठीक उतना ही ऋण-ताड़ित साथ ही साथ किसी न किसी जगह आविर्भूत होगा। और इसी तरह कुछ धनका किसी स्थानमें लोप होनेसे ठीक उतने ही ऋणका अन्यत्र कहीं लोप होगा। योगफल समान ही रहेगा। धन-ताड़ित सिर्फ समपरिमाण ऋण ताड़ि-तसे पृथक होता है। पानी जिस तरह दाब पहुंचता है, बिजली उसी तरह उद्गति उत्पन्न करती है। धन ताड़ि-तके जितने पासमें जाओगे, उतनी ही उद्गति अधिक

होगी और ऋण-ताड़ितके जितने पासमें आयेगी उद्गति उतनी ही कम होगी। धन अधिक उद्गतियुक्त स्थानसे दूर जानेकी और ऋण उससे विपरीत दिशाको जानेकी चेष्टा करता है। धन जब एक तरफ चले, तो समझना चाहिये कि ऋण भी विपरीत दिशाको जा रहा है। अपरिचालक प्रदेशमें उद्गतिकी कमीबेशी हो सकती है, क्यों कि अपरिचालकके भीतरसे बिजली सहजमें आ नहीं सकती। परिचालकके भीतर उद्गति सर्वत्र समान होती है, क्योंकि वहां धन और ऋण बिना बाधाके चल फिर कर उद्गतिको समान कर लेते हैं। सर्वत्र उद्गतिको समान करते समय धन ताड़ितकी गति ऋणकी तरफ अथवा ऋणकी गति धनकी तरफ होती है। वह स्वरूप दोनोंका सम्मिलन या योग होता है, अर्थात् कुछ धन और उतने ही ऋणका तिरोभाव होता है।

ताड़ित मात्राकी वैषम्य।—साधारणतः दो धातु द्रव्योंको ताड़ितयुक्त करके दोनोंको छुआ देनेसे सम्पूर्ण ताड़ितको दोनों बांट लेते हैं। तात्पर्य यह है कि जो बड़ा होता है, उसमें ही ताड़ितका अंश अधिक पड़ता है। द्रव्यके आयतन और आकारको देख कर किसके हिस्सेमें कितना पड़ेगा, इसकी गणना की जा सकती है।

किसी द्रव्यमें कुछ धन-ताड़ित देने पर उसकी उद्गति बढ़ जाती है, ताड़ित जितना ज्यादा दिया जायगा, उद्गति उतनी ही बढ़ जायगी। और छोटी वस्तुमें बराबर विद्युत् देनेसे जितनी उद्गति बढ़ती है एक बड़ा वस्तुमें उतनी देनेसे उद्गति उतनी नहीं बढ़ती। एक थालीमें और एक ग्लासमें समान जल डालनेसे ग्लासके पानीमें उच्चता और भार जितनी होती है, उतनी थालीके पानीमें नहीं होती, ऐसा ही इसका हिसाब है। आकृति और परिमाण मालूम रहने पर, कितना विद्युत् देनेसे कितनी उद्गति बढ़ती है यह कहा जा सकता है। दो चीजोंको छुआ देनेसे जिसमें उद्गति अधिक है वहांसे जिसमें कम है, उसमें थोड़ासा धन-ताड़ित चला जाता है। इसलिए समग्र ताड़ित दोनों चीजोंमें बंट जाने पर दोनोंकी उद्गति समान हो जाती है।

अन्यान्य द्रव्योंकी तुलनामें पृथिवीका आकार इतना बड़ा है कि अन्य द्रव्योंसे पृथिवीमें ताड़ितके आने जानेमें पृथिवीकी उद्गतिकी जरा भी क्षति-वृद्धि नहीं होती। इसीलिए किसी ताड़ितयुक्त द्रव्यका भूमिसे स्पर्श होने पर उसकी प्रायः तमाम बिजली पृथिवीमें चली जाती है, पृथिवीके हिस्सेमें प्रायः सब पड़ता है। परन्तु तो भी पृथिवीकी उद्गतिका जरा भी व्यतिक्रम नहीं होता। महासागरमें कितना ही पानी गिरता है और कितना ही निकलता है, पर तो भी उसमें कुछ घटती बढ़ती नहीं होती, उसकी मर्यादा समान ही रहती है, इसका हिसाब भी प्रायः ऐसा ही है।

पृथिवीकी उद्गतिकी सहजमें ह्रास वृद्धि नहीं होती, इसीलिए अन्यान्य ताड़ितयुक्त पदार्थोंकी उद्गतिको पृथिवीके साथ मिला कर परिमाण निर्णय करनेकी प्रथा है। पर्वतकी उच्चता नापनी हो तो वह समुद्रपृष्ठसे कितना ऊंचा है और समुद्रकी गंभीरता नापनी हो तो वह कितना नीचा है, यही देखा जाता है, इसी तरह किसी स्थानमें ताड़ितकी उद्गतिका निश्चय करनेके लिए वह पृथिवीसे कितनी ज्यादा या कम है, इसी बातका निर्णय किया जाता है।

पानी जैसे ऊंचेसे अपने आप नीचेको जाता है, ताप जिस तरह गरम जगहसे शीतल स्थानको जाता है, धनताड़ित भी उसी तरह जहां उद्गति ज्यादा है वहांसे जहां कम हो, वहां जाना चाहता है। इसलिए किसी जगह ताड़ित सञ्चित करना हो तो उद्गति जितनी कम हो, उतना ही सुभीता है। पानीको ऊंचे जगहमें न रख कर नीचे जगहमें रखनेसे सुभीता पड़ता है, गिरनेका डर नहीं रहता, इसे भी कुछ कुछ ऐसा ही समझिये। इसीलिए ऐसे स्थानमें और ऐसे उपायसे धन ताड़ित सञ्चित कर रखना चाहिये कि, वहां उद्गति खूब ज्यादा न हो। अन्यथा ताड़ितके निकल जानेकी आशंका रहेगी।

लीडेन जार।—एक शीशेकी चद्दर पर कुछ धन-ताड़ित सञ्चित कर रक्खो। और एक टीनकी चद्दरको जमीनसे लगा कर उसके सामने समान्तराल करके रक्खो। इस चद्दरकी जो पीठ पहली चद्दरके सामने है, उस पीठ पर ऋण ताड़ित स्वभावतः आविर्भूत होता है। पहली चद्दरमें जितना धन होगा, इसमें उतना ही ऋण

रहेगा। यदि सिर्फ धन ताड़ित हो उसमें यथेष्ट उद्गति होती, पासमें ऋण होनेसे उसकी उद्गति उतनी नहीं हो सकती।

दूसरी चद्दरको जितने पासमें रक्खा जायगा, उद्गति उतनी ही कम होगी। इसलिए ऐसे स्थल पर पहली चद्दर पर बहुत धन-ताड़ित सञ्चित कर रखने पर भी उसकी उद्गति ऊँचेको नहीं चढ़ती। ताड़ित सञ्चित कर रखनेकी जरूरत पड़ने पर ऐसा उपायका अवलम्बन करना उचित है। एक काँचकी बोतलके भीतर और बाहर जस्ताके वरक चिपटा देनेसे, वह ताड़ित पकड़ रखनेका उमदा यन्त्र बन जाता है। ऐसे यन्त्रको लोडेन जार कहते हैं। ऐसे ही कुछ लोडेन-जारोंको बराबर बराबर सजा कर सबके भीतर और बाहरके हिस्सेको धातु द्वारा जोड़ दो, इस तरह बैटरी बन जायगी। उसमें काफी बिजली सञ्चित की जा सकती और बहुत देर तक रक्खी जा सकती है। बाहरका हिस्सा जमीनको छुए रहता है, भीतर जितना धन होता है, बाहर उतना ही ऋण सञ्चित रहता है। मतलब यह है कि धन अपने सहचर ऋणके पास रहे, तो दोनों दोनोंको बाँध रखते हैं, अन्यत्र नहीं जाने देते। और दूर रहनेसे दोनों ही अन्यत्र जानेकी कोशिश करते रहते हैं।

योंतो जहां भी ताड़ित है, वहीं ऐसे लोडेन-जारकी भी सृष्टि होती है। किसी चीज पर कुछ धन ताड़ित रहनेसे ही अन्य किसी चीज पर दीवाल या जमीन पर उसका सहवर्ती ऋण-ताड़ित अवश्य ही रहेगा। इसके सिवा कुछ धनके सामने कुछ ऋण रख कर बीचमें अपरिचालकका व्यवधान देनेसे लोडेन जारकी सृष्टि होती है। बात यह है, कि वह व्यवधान जितना कम होगा, धन और ऋण जितने पास पास होंगे, उस लोडेन जारकी कार्यकारिता, अर्थात् दोनों ताड़ितकी स्थितिशीलता उतनी ही अधिक होगी। वायवीय-व्यवधानकी अपेक्षा काँच आदिके द्रव्योंका व्यवधान उस स्थितिशीलताके अधिक अनुकूल होता है।

ताड़ितका सञ्चालन—पुनः पुनः उल्लिखित हुआ है, कि धनताड़ित जहां उद्गति अधिक है, वहांसे जहां उद्गति कम है, उसी तरफ तथा उसका सहवर्ती ऋण-ताड़ित उलटी तरफको जानेकी चेष्टा करता है। बीचमें अपरिचालक रहनेसे सहजमें परस्पर मिल नहीं सकते, परिचालक रहनेसे उसी समय मिल जाते हैं। ताड़ितका यह सञ्चालन या गतायात साधारणतः तीन प्रणालियोंसे होता है।

(१) बीचमें परिचालकका व्यवधान होनेसे दोनों ताड़ित उसी समय मिल जाते हैं। एक ताँबे या पीतल अथवा किसी भी धातुके छड़, तार या जञ्जीरसे धन ताड़ित और ऋण-ताड़ितको परस्पर छुआ देनेसे, दोनों ही उस धातु द्रव्यके द्वारा विपरीत दिशाको धावित होते हैं। उस धातुमें क्षणिक प्रवाहका सञ्चार होता है। दोनों ताड़ितोंका मिलना प्रवाहका फल है। मिल जानेसे सर्वत्र उद्गति समान हो जाती है और प्रवाह बन्द हो जाता है। ताड़ित-प्रवाहके विशेष धर्मकी बात पीछे कहेंगे। मामूली तौरसे यह याद रखना चाहिये, कि उद्गति समीकरणकी चेष्टासे ही परिचालकमें ऐसे क्षणिक प्रवाहकी उत्पत्ति होती है। जिसके भीतरसे प्रवाह चलता है, वह उत्तप्त होता है।

(२) धन और ऋण ताड़ितके मध्य काँच, वायु आदि अपरिचालक व्यवधान होनेसे दोनोंका मिलना सहजमें नहीं होता। धनके निकटवर्ती प्रदेशमें उद्गति अधिक और ऋणके निकटस्थ प्रदेशमें उद्गति कम रह जाती है। किन्तु इस उद्गति-वैषम्यके फलसे धन हमेशा ऋणकी तरफ और ऋण धनकी तरफ जानेकी चेष्टा करता है। जिन दो पृष्ठों पर दोनों ताड़ित सञ्चित होते हैं, वे परस्पर आकृष्ट होते हैं और यदि रोका न जाय तो अग्रसर हो कर आखिर तक एक दूसरेको छू ते हैं। दोनोंके मध्यवर्ती प्रदेशमें एक खिंचावसा पड़ जाता है। इस उद्गतिके वैषम्यको क्रमशः बढ़ानेसे वह खिंचाव आखिर तक इतना बढ़ जाता है कि फिर मध्यवर्ती अपरिचालक भी दोनों ताड़ितको पृथक् नहीं रख सकता। इस्पात या रबरका तार बहुत कुछ खिंचावको सह लेता है, किन्तु ज्यादा खिंचाव पड़ने पर टूट भी जाता है। इसी प्रकार बीचका परिचालक भी आखिर तक टूट जाता है। परिचालकको तोड़ कर ताड़ित मानो अपनी रास्ता कर लेता है और उस रास्तासे दोनों

ताड़ितका सम्मिलन होता है। सम्मिलनके बाद फिर उद्‌गतिमें वैषम्य नहीं रहता, और न अपरिचालकके बीचमें खिंचाव ही रहता है।

इस तरह अपरिचालक छिन्न हो कर दोनों ताड़ित का मेल होने पर विविध उत्पात होते हैं। अपरिचालक यदि वायवीय द्रव्य हो, तो वह सहसा इतना उत्तप्त और प्रसारित होता है, कि उसमेंसे अग्निस्फुलिङ्ग निकलते और शब्द होने लगता है। कांच कागज, लकड़ी वा कठिन पदार्थमें होनेसे वह टूट या फट जाता है। बीचमें बारूदकी तरहका दाह्य पदार्थ होनेसे वह जलने लगता है। कोई जीव-शरीर हो तो उसमें प्रचण्ड आघात लगता है।

ताड़ितमें स्फुलिङ्ग, आनुषङ्गिक शब्द और आघात आदि इसी तरह हुआ करते हैं।

बड़े बड़े ताड़ित यन्त्रोंकी सहायतासे ये सब चिह्न आसानीसे दिखाये जाते हैं। आलोक शब्द आदि उत्पन्न करके विविध कौशलसे तरह तरहके तमाशे दिखाये जा सकते हैं। लीडेन जारकी बेटरीमें बहुत ताड़ित सञ्चित करके उस ताड़ितसे ऐसे सहायता द्वारा नाना प्रकारके आश्चर्यजनक कार्य किये जा सकते हैं। बहुतसे लोगोंको एक दूसरेका हाथ पकड़ कर खड़ा करके एक लीडेन जारके ताड़ितसे आघात करनेसे सबका शरीर कांप उठता है।

बड़े बड़े कांचके नलोंमें थोड़ी थोड़ी अक्सिजन क्लोरिन आदि विविध वायु भर कर, उसमें इस तरह ताड़ित सञ्चालित करनेसे नाना प्रकारके विचित्र वर्णोंके आलोकोंका विकाश होता है। इन आलोकोंका विकाश अत्यन्त मनोहर होता है। विविध आकारके नल बना कर नाना प्रकारके उमदा उमदा भिन्न तमाशे दिखाये जा सकते हैं। ऐसे नलको गेसलरका (Geissler) नल कहते हैं।

इस विद्युत्‌के साथ ताड़ित-यन्त्रमें उत्पन्न अग्निस्फुलिङ्ग और उसके आनुषङ्गिक कार्योंका सादृश्य देख कर बैञ्जामिन् फ्राङ्कलिनने अनुमान किया है कि दोनों ही एक ही कारणसे उत्पन्न होते हैं। उन्होंने पतङ्ग उड़ा कर उसमें मेघस्थ ताड़ितका सञ्चालन कराया था। वह ताड़ित पतङ्गसे लगी हुई भीगी सूतके द्वारा आ कर उनकी अङ्गुलियोंमें स्फुलिङ्ग देने लगा था। अन्यान्य परीक्षाओं द्वारा उन्होंने मेघके ताड़ित और यन्त्रके ताड़ितमें एकता प्रमाणित की थी। वास्तवमें विद्युत् ताड़ितका वृहत् स्फुलिङ्ग मात्र है और वज्रध्वनि तदानुषङ्गिक वायुका आकस्मिक उत्ताप और प्रसारजनित शब्द मात्र है।

लार्ड केलविन द्वारा आविष्कृत उद्‌गतिमान यन्त्रकी सहायतासे दिखा गया है कि जमीनके ऊपर वायुमण्डलमें प्राय सर्वत्र ताड़ितका थोड़ा बहुत खिंचाव है। वायु रहित मेघ प्राय सर्वदा ही ताड़ितयुक्त रहता है। पानीसे भाफका होना और वायुके साथ घर्षण ही प्राकृत इस ताड़ित विकाशका कारण है। क्षुद्र क्षुद्र अदृश्य जल कणा जब जम कर ह्रस्वतर जल कणाका आकार धारण करते और मेघकी सृष्टि करते हैं, उस समय उस ताड़ितका परिमाण थोड़ा होने पर भी उसकी उद्‌गति बहुत ज्यादा हो जाती है। जमीन पर वा आसपासके मेघमें अधिक ताड़ित न होने पर भी पूर्वोक्त नियमानुसार विपरीत ताड़ितका सञ्चय होता है। उद्‌गतिका वैषम्य और ताड़ितका खिंचाव बहुत ज्यादा हो जाने पर मध्यस्थ वायुराशिको छिन्न करके उसमें प्रकाण्ड ताड़ित-स्फुलिङ्गकी उत्पत्ति होती है साथ ही गर्जन आदि भी होती है।

(१) बहुवर्ती विपरीत ताड़ित यदि अत्यन्त दूर हो, तो ताड़ितके लिए मध्यस्थ व्यवधानको भेद कर उसके साथ मिलना कठिन हो जाता है। किन्तु ऐसी हालतमें भी किसी एक चीजके ऊपर इच्छानुसार ताड़ितका सञ्चय नहीं किया जा सकता। इस देश पर जहां जहां ऊंचा वृक्ष, सूच्यग्र स्थान वर्तमान है, अधिकांश बिजली उसी अग्रभागमें आ कर जमती है और चारों ओरकी बिजली उसकी तरफ दौड़ती रहती है। इस तरहके ऊंचे ऊंचे स्थानोंसे बिजली उन स्थानोंके वायु-पथसे निकल जाया करती है। वायुके भी अपरिचालक अंश नष्ट हो जाते हैं। वायुका हर एक कणा उस सञ्चित ताड़ितमेंसे कुछ कुछ ग्रहण करता तथा बिखर और विच्छिन्न हो कर जहां उद्‌गति कम है वहींसे चलता रहता है। इसी प्रकारसे वायुमें प्रवाह उत्पन्न होता और वायुवेगसे वायु-

वायुका अवलम्बन ले कर धीरे धीरे ताड़ित निकलता रहता है।

किसी नुकीले पदार्थमें ताड़ित सञ्चित करने पर उस ताड़ितको रोकना कठिन हो जाता है। नुकीले स्थानमें ताड़ित जमता है और चारो तरफसे धक्का पा कर वायुपथसे निकल जाता है। वायुमें जो प्रवाह उत्पन्न होता है, उसको कौशलसे प्रत्यक्ष दिखाया जा सकता है। इसके सिवा सूचीके मुँहके पास वायुमें नाना प्रकारके आलोकोंका विकाश होता है। अँधेरे घरमें ताड़ित-यन्त्र चलानेसे सूचीके मुँह पर ऐसे आलोकोंका विकाश देखने में आता है।

वज्रपातकी आशङ्का निवारणार्थ मकानके बगलमें सूक्ष्माग्र धातुदण्ड गाड़ रखनेकी प्रथा है। ऊपरमेघमें ताड़ित सञ्चित होने पर नीचे जमीन पर भी उसके सहवर्ती विपरीत ताड़ितका संक्रमण होता है। वह ताड़ित जमीन पर आवद्ध न रह कर धातुदण्डके सूक्ष्म अग्रभावसे क्रमशः निकल जाता है। एक साथ ज्यादा ताड़ित भूपृष्ठ पर आवद्ध वा सञ्चित न हो सकनेके कारण, वज्रपात अर्थात् सञ्चित ताड़ितके खिंचावसे वायुराशिमेंसे आकस्मिक भेदजनित स्फुलिङ्ग निकलनेकी आशङ्का नहीं रहती।

फिलहाल ताड़ित-स्फुलिङ्गके विषयमें नये नये विविध तत्त्वोंका आविष्कार हुआ है। उनसे मालूम होता है, कि इस तरहके धातु दण्ड द्वारा सम्यक् फलप्राप्तिकी सम्भावना कम है। वज्रपातकी आशङ्काको निर्मूल करनेके लिये मकानको लोहे या ताँबेके जालसे ढक देनेके सिवा अन्य उपाय नहीं है।

ताड़ितयन्त्र—पर्याप्त परिमाणमें ताड़ित उत्पादन और सञ्चय करनेके लिए विविध यन्त्रोंका आविष्कार हुआ है। अल्प मात्रामें ताड़ितकी आवश्यकता होने पर सहजमें मिल सकता है। एक तश्तरीमें थोड़ोसी लाख गला कर रक्खो। और दूसरी एक तश्तरीको काँच वा अन्य अपरिचालक दण्डके हत्थेसे थामो। पहली रकाबी को लाख पर फलालेन वा बिल्लीका चमड़ा दो चार बार घिसने से उसमें कुछ ऋण-ताड़ितका विकाश होगा। दूसरी रकाबीको इस ताड़ितके सामने लाओ और उँगलीसे उसे एक बार छू दो। अब इन रकाबीमें भी कुछ धन-ताड़ित संक्रमित और आविर्भूत होवेंगे। वास्तवमें पहलीके ऋण और दूसरीके धनमें कुछ वायुभाव और व्यवधान रहनेसे एक प्रकार लीडन जारकी सृष्टि हो जाती है। अब हत्थेको पकड़ कर दूसरी तश्तरीको अलग कर दो और सञ्चित धन ताड़ितका यथेच्छ व्यवहार करो। इस तरहके यन्त्रको ताड़िद्वहयन्त्र कह सकते हैं इसका अंग्रेजी नाम है Electro-phorus.

प्रचुर परिमाणमें ताड़ितोत्पादनके लिए नाना प्रकारके बड़े बड़े यन्त्र हैं। ये यन्त्र साधारणतः दो श्रेणीके होते हैं। प्रथम श्रेणीमें घर्षण द्वारा काँच वा अन्य द्रव्य पर ताड़ित उत्पन्न होता है। उस ताड़ितको फिर बड़े बड़े ताड़िताधारमें किसी तरह सञ्चालित और सञ्चित किया जाता है। इस श्रेणीमें रामसडेनका (Ramsden) यन्त्र ही प्रसिद्ध है। इनमें ताड़ित शक्तिका अत्यन्त अपचय होता है, यही दोष है। जितनी मेहनत की जाती है, उसका अधिकांश वृथा नष्ट हो जाता है, उतना फल नहीं मिलता।

दूसरी श्रेणीके यन्त्र कुछ कुछ ताड़िद्वहयन्त्रसे मिलते जुलते हैं। मान लो कि, दो बड़े बड़े 'क' और 'ख' ताड़ितके आधारस्वरूप विद्यमान हैं। शुरूसे ही 'क'में थोड़ा धन और 'ख' में थोड़ा ऋण सञ्चित है। और एक तृतीय क्षुद्र द्रव्य 'ग' को लो। 'ग' को 'क' के पास पकड़ और एक बार जमीनसे छुआओ। 'ग' में किञ्चित् ऋणका संक्रमण होगा। 'ग' को अब हटा कर 'ख' को छू दो, 'ग' का प्राय सम्पूर्ण ऋण 'ख' में चला जायगा। क्योंकि 'ग' छोटा और 'ख' बड़ा है, 'ख' में ऋणका परिमाण बढ़ गया। फिर 'ख' को 'ग' के सामने रख कर भूमि स्पर्श कराओ। अबकी बार 'ग' में धन संक्रान्त होगा। 'ग' को 'क'के पास ले जा कर 'क' को छू दो। प्रायः सम्पूर्ण धन 'क' में चला जायगा। अबकी बार 'क' में धनकी मात्रा बढ़ गई। इसी तरह मध्यवर्ती 'ग' को एक बार 'क' को तरफ और एक बार 'ग' की तरफ ले जानेसे तथा बीच बीचमें भूमिस्पर्शको व्यवस्था करनेसे 'क' में क्रमशः धन और 'ख' में क्रमशः ऋणकी मात्रा बढ़ जायगी। दोनों ताड़ितका थोड़ा थोड़ा अंश ले कर प्रारम्भ

करनेसे यैव तक दोनोंका प्रचुर प्रभाव हो सकता है।

इस श्रेणीके यन्त्रोंमें शक्तिका अधिक अपव्यय नहीं होता, तथा एक छोटेसे यन्त्रमें इतनी बिजली सञ्चित हो जा सकती है कि, जिससे विचारके 'क' और 'ख' दोनोंके मध्य वायुपथमें चार इञ्च या चार फुट लम्बी स्फुलिङ्ग आसानीसे निकल सकती है।

होल्ट्ज (Holtz), वस् (Voss) विम्सहर्स्ट (Wimhurst) आदिके बनाये हुए ताड़ितयन्त्र इसी श्रेणीके अन्तर्गत हैं। आजकल इन्हीं यन्त्रोंका आदर होता है।

ताड़ित-प्रवाह।—एक ताड़ितयन्त्रसे ताड़िताधारमें कुछ ताड़ितका सञ्चय करके एक तांबेके तारसे उस ताड़िताधारको जमीनसे छुआ देनेसे उसी समय सम्पूर्ण ताड़ित उस तारके जरिये जमीनमें चला जाता है। इस तरह ताड़िताधारकी अवस्थिति भूमिकी अवस्थितिके समान हो जाती है, इसीका नाम है ताड़ित प्रवाह। यह प्रवाह तत्क्षणात् ठहरता है। प्रवाहके कारण तार कुछ गरम हो जाता है। प्रवाहको यदि कायम रखना चाहो तो यन्त्रके कार्यको बन्द न करके लगातार ताड़ित उत्पन्न करते रहो। एक तरफ नये ताड़ित आधारसे निकल कर तारके जरिये चलता रहेगा, दूसरी ओर उसी तरह नवीन ताड़ित आधारमें सञ्चित होता रहेगा। इस तरह जब तक चाहो ताड़ितका प्रवाह तारमें चलाया जा सकता है। तार क्रमशः उत्तप्त हो जाता है। तारके पास यदि एक चुम्बकका कांटा रखा जाय तो वह अपने स्थानसे थोड़ासा हट जायगा।

लीडिन-जारके दोनों तरफ धातुदण्ड या तार जोड़ देनेसे दण्ड और तारमें ताड़ितप्रवाह चलता है। इसमें सञ्चित ताड़ित बाहर निकल जाता है। धन ताड़ित एक तरफसे एक ही ओर जाता है, ऋण-ताड़ित अन्य तरफसे अन्य दिशाको जाता है। इस हालतमें भी ताड़ित प्रवाह क्षणस्थायी होता है। प्रवाहको स्थायी बनानेके लिए एक तल (पृष्ठ) ताड़ितयन्त्रके साथ और दूसरा तल भूमिके साथ संयुक्त करके अविरत यन्त्रको चलाते रहना चाहिये।

स्पष्ट देखनेमें आता है, कि परिचालक पदार्थकी अवस्थितिको समान करनेके लिए इस प्रवाहकी उत्पत्ति होती है। जब तक जोरसे या नूतन ताड़ित उत्पन्न करके परिचालक पदार्थके दोनों अंशोंकी अवस्थितिको असमान रक्खा जाता है, तभी तक ताड़ितका स्रोत एक अंशसे अन्यत्र चलता रहेगा। अवस्थितिके समान होते ही स्रोत भी बन्द हो जाता है।

ताड़ित-यन्त्रके द्वारा ताड़ितका जो स्रोत उत्पन्न होता है, उसमें प्रवाहित ताड़ितका परिमाण अधिक नहीं होता। ताड़ितमें प्रबल स्रोत बहानेके अन्य उपाय भी हैं।

साधारणतः ताड़ितका प्रवाह कहनेसे धन ताड़ितके प्रवाहका ही बोध होता है। किन्तु इस बातका हमेशा ख्याल रक्खो कि, ताड़ित 'क' से 'ख' की तरफ बहता है ऐसा कहनेसे धनताड़ित 'क' से 'ख' की तरफ और साथ ही ऋण ताड़ित 'ख' से 'क' की तरफ प्रवाहित होता है ऐसा समझो।

ताड़ितयन्त्रके बिना ताड़ितस्रोत उत्पन्न करनेके लिए तीन प्रधान उपाय हैं—

(१) एक टुकड़ा तांबा और एक टुकड़ा दस्ता, दोनोंके छोरोंको मिला कर अन्य दो प्रान्तोंको मण्डूक वा प्राणहीन मण्डूककी देहसे छुआनेसे उसका निर्जीव शरीर भी उछलने लगता है। गलभनी (Galbani) ने इस घटनाका आविष्कार किया था। दो विभिन्न धातुके समागमसे दोनोंमें ताड़ितका आविर्भाव होता है। एकमें धन और दूसरेमें ऋण आविर्भूत होता है। वोल्टा (Volta) इस घटनाके आविष्कर्ता थे। थोड़ासा पानीमें जरासा गन्धक या कोई विन्दु द्रावक डाल कर उसमें एक तांबे और एक जस्तेके टुकड़ेको आंशिकभावसे डुबो दो तथा एक तारके द्वारा तांबेके साथ बाहरमें जस्तेको संलग्न कर दो। बाहरमें तांबेसे जस्तेकी तरफ तार द्वारा ताड़ितका (अर्थात् धन ताड़ितका) स्रोत चलेगा। पानीके भीतर जस्तेसे तांबेकी तरफ स्रोत चलेगा। जब तक दोनों धातुएं पानीके भीतर डूबी रहेंगी तब तक यह ताड़ित-स्रोत बहता रहेगा। डूबे हुए जस्तेका थोड़े थोड़े क्षय हो जायगा।

इस तरह ताड़ितका कोष (Cell) तैयार होता है। कोषके अन्दर साधारणतः गन्धकद्रावक पानीमें मिला

कर व्यवहृत होता है। इस गन्धकद्रावकमें एक जस्ते का और एक अन्य धातुका टुकड़ा पड़ा रहता है। यह द्वितीय धातु विभिन्न कोषोंमें विभिन्न होती है। इसमें तांबा, प्लाटिनम्, पारद तथा जमा हुआ कोयला तक व्यवहृत होता है। इस धातुखण्डको तार द्वारा जस्तेके साथ जोड़ देनेसे उस तारसे ताड़ितका स्रोत बहता है। जस्ता क्रमशः गन्धकद्रावकके साथ रासायनिक मिश्रणसे मिल कर क्षयको प्राप्त होता है। इस रासायनिक प्रक्रियासे हाइड्रोजन वायु उद्भूति हो कर तांबे या तद्विध अन्य किसी भी धातुके कोषमें रहती है, उसके गात्रमें उत्पन्न होती और ताड़ितप्रवाहका क्रमशः ह्रास करती है। इस लिए इस हाइड्रोजन वायुको जला देनेकी जरूरत पड़ती है। प्लाटिनम् अथवा कोयलाको इसी लिए एक मिट्टीके भांड़में नाइट्रिक एसिड (यवक्षारद्रावक) द्वारा भिगो रखनेकी रीति है। उक्त द्रावक हाइड्रोजन वायुको जला देती है।

ताड़ितप्रवाहके लिए विविध कोष प्रचलित हैं। डानियेलके कोषमें तांबा और जस्ता, ग्रोवके कोषमें प्लाटिनम् और जस्ता, बुनसेनके कोषमें कोयला और जस्ता व्यवहृत होता है। डानियालका कोष औरोंसे कुछ कमजोर होता है। क्षीणप्रवाह उत्पादनके लिए उसका व्यवहार किया जाता है। हाइड्रोजन जलानेके लिए नाइट्रिकके बदले क्राईक्रोमिक एसिड आदिका भी व्यवहार होता है।

बाहरमें ताड़ित-स्रोतका प्रतिबन्धक अधिक होने पर कुछ कोषोंको बराबर बराबर सजा कर एकका तांबा दूसरेका जस्ता, इस तरह क्रमसे संलग्न करके बेटरी बनानी चाहिये। बाहरमें प्रतिबन्धक अधिक न होने पर एक कोष ही दश कोषका काम देता है, क्योंकि कोषोंमें भी कुछ कुछ प्रतिबन्धक क्षमता मौजूद है। संख्या बढ़ानेसे प्रतिबन्धक भी बढ़ेंगे।

ताड़ितयन्त्रसे ताड़ितस्रोत उत्पन्न करनेसे उस ताड़ितका परिमाण अधिक नहीं होता, किन्तु उसमें उद्भूति बहुत ज्यादा होती है। कोषसे जो प्रवाह उत्पन्न होता है, उसकी उद्भूति उसके सामने बहुत कम है, किन्तु प्रवाहगत ताड़ितका परिमाण अधिक होता है। यन्त्रजात प्रवाहको ऊँचे स्थानसे पतनशील सवेग क्षीण जलधाराके साथ और कोषजात प्रवाहको प्राय: समभूमि पर धीरे प्रवहमान विशाल नदीके स्रोतके साथ तुलना हो सकती है। यन्त्रका प्रवाह मानो नायाग्राका जलप्रवाह है और कोषका प्रवाह मानो भागीरथीका स्रोत।

(२) एक तांबे और एक लोहेके तारके दोनों छोरोंको जोड़ कर यदि एक सन्धिस्थलमें उत्ताप और दूसरेको ठण्ढा रखा जाय, तो दोनों तारोंमें ताड़ित-प्रवाह चलने लगता है। कोषज प्रवाह रासायनिक शक्ति भी ऐसी हालतमें प्रवाह-तारसे उत्पन्न होती है।

इस प्रवाहका उद्भूति बहुत कम होती है, हां, दोनों सन्धियोंके बीचमें उष्णताका असामान्य स्तरविशेष होनेसे ही थोड़ा बहुत प्रवाह दीख पड़ता है। तांबे और लोहेके बदले अन्य दो धातु विशेषत: एण्टिमनि (रसाञ्जन) और विसमथका व्यवहार किया जा सकता है। दोनों सन्धियोंमें उष्णताके सामान्य तारतम्यसे यह ताड़ितप्रवाह उत्पन्न होता है, इसलिए यह प्रवाह उष्णताके आविष्कारके लिए व्यवहृत होता है। जहां उष्णता इतनी कम हो कि जो साधारण पारदघटित तापमान-यन्त्रसे भी पकड़ी नहीं जा सकती, वहां भी इस उपायसे वह पकड़ाई देती है। चन्द्र और नक्षत्रके आलोकके उत्तापको जाननेके लिए इस यन्त्रका व्यवहार होता है।

(३) आजकल प्राय: विविधकार्योंमें अत्युच्च उद्भूतियुक्त पर परिमाणमें भी प्रबल, ताड़ितप्रवाहका प्रयोग किया जाता है। यन्त्रज, कोषज वा तापज प्रवाहसे भी ये काम नहीं होते। डाइनामो नामक यन्त्र द्वारा इन उग्र प्रबल प्रवाहोंकी उत्पत्ति होती है। एक चुम्बकके पास तांबेका तार घुमाते रहनेसे उसमें भी ताड़ितप्रवाह उत्पन्न होता है। डाइनामोके विषयमें विशेष विवरण पीछे दिया जायगा।

ताड़ित प्रवाह बहनेके नियम।—ताड़ितप्रवाह अपरिचालक पदार्थमेंसे नहीं बह सकता और इसीलिए इससे ताड़ित स्फुलिङ्ग आदिके तमाशे अच्छी तरह नहीं दिखाए जा सकते। इसकी उद्भूति यन्त्रज ताड़ितकी अपेक्षा बहुत कम है। हां, यह परिचालक मात्रके भीतरसे अनायास ही जा सकता है। सब धातुओंमें परिचालकता समान नहीं होती। जिसमें परिचालकता कम है, उस-

में प्रवाह प्रतिबन्धकी क्षमता अधिक है। धातुओंमें सबसे ज्यादा परिचालकता चांदीमें होती है, उससे नीचे तांबेमें। प्लाटिनम् लोहा, सीसा आदिमें परिचालकता कम और प्रतिबन्धकता अधिक है। जिनमें प्रतिबन्धकता अधिक है, उसमेंसे ताड़ित प्रवाह चलता तो है पर जल्दी नहीं जा सकता। अधिक समयमें थोड़ा ताड़ित प्रवाहित होता है। और जिसमें प्रतिबन्धकता कम है, उसमेंसे थोड़ा समयमें अधिक ताड़ित प्रवाहित होता है। इसके सिवा जो तार जितना लम्बा होगा, उसकी प्रतिबन्धकता भी उतनी ही अधिक होगी; जो जितना मोटा होगा, उसकी प्रतिबन्धकता उतनी ही कम होगी। तांबेके मोटे और छोटे तारमें अथवा छड़ दण्डमें प्रतिबन्धकता बहुत कम होती है।

ताड़ितप्रवाह जोड़के निकट पर परिचालक रास्तेसे चलता है। जोड़में दो चार मार्ग मिलने पर थोड़ा बहुत सबमें जाता है। जिस मार्गमें प्रतिबन्धकता अधिक है, उस मार्गमें प्रवाह थोड़ा हो जाता है, और जिस मार्गमें प्रतिबन्धकता कम है, उसमें प्रबल हो जाता है। और मार्ग जहां पर आ कर एकत्र होते हैं ताड़ित प्रवाह भी वहीं आ कर मिलता है। इस विषयमें नदी ही मानो ताड़ित प्रवाहका पूरा आदर्श है।

प्रवाहके धर्म।—प्रवाहके विविध धर्मोंमेंसे तीन ही प्रधान और इन तीनोंसे बहुत काममें आते हैं—

(१) जिस धातुके भीतर प्रवाह चलता है, वह गरम हो जाती है। जोड़के भीतर कितनी शक्तिका व्यय हुआ, यह देख कर कुल कितना ताप उत्पन्न हुआ उसका हिसाब लगाया जा सकता है। प्रवाहके मार्गमें जहां प्रतिबन्धकता अधिक है, वहां ताप भी अधिक उत्पन्न होता है। प्लाटिनम् धातुमें परिचालकता कम है, प्लाटिनमके पतले तारमें प्रवाह चलानेसे वह तापसे उद्दीप्त हो जाता है। कांचके वस्तुके भीतर प्लाटिनम् या कोयलेका बारीक तार बना कर साधारण ताड़ित प्रदीप (बिजली बत्ती) बनाये जाते हैं। उस तारमें प्रवाह चलनेसे वह उत्तप्त हो कर प्रकाश देने लगता है। यदि कोयलेका तार दिया जाय तो वस्तुको वायुशून्य कर देना चाहिये, नहीं तो कोयलेका तार जल जायगा।

राजपथ, मकान आदि आलोकित करनेके लिए दो एक जोड़से काम नहीं चलता। बहुत बड़ा जोड़ोंको पंक्ति बद्ध कर लगा कर उन बैटरीसे प्रवाह लिया जाता है। बाहरमें जो तार रहता है, उसको एक जगहसे काट कर दो कोयलेके टुकड़े लगा दिये जाते हैं। दोनों टुकड़ोंके बीचमें सामान्य वायुके स्तरका व्यवधान रहता है। प्रबल प्रवाह उस वायुस्तरको भेद कर चलता रहता है। कोयलेका टुकड़ा और मध्यस्थ वायुस्तर उत्तप्त और प्रदीप्त हो कर तीव्र रोशनी देता है।

आजकल ऐसे स्थान पर डाइनामो-जनित प्रवाह व्यवहृत होता है। एक छोटासा डाइनामो बहुतसे जोड़ोंका काम देता है।

(२) ताड़ितप्रवाहके मार्गमें थोड़ासा पानी रखो अर्थात् जोड़के दोनों प्रान्तोंसे आये हुए दोनों तारोंका मुंह पानीमें डुबो दो। पानीमें दो चार बूंद अम्ल द्रावक छोड़ दो। प्रवाह जितना चलेगा, पानी उतना ही विश्लिष्ट होता जायगा। जो तार जस्तेसे मिला हुआ है, उसके मुंह पर हाइड्रोजन और जो तांबे या प्लाटिनम् से संलग्न है, उसमें अक्सिजन उत्पन्न होगा। जलके सिवा अन्य पदार्थमें भी इस तरहका विश्लेषण हो सकता है।

साधारणतः द्रावक पदार्थ, क्षार पदार्थ तथा द्रावक और क्षारके समवायसे उत्पन्न लावणिक पदार्थ मात्र ही यदि तरल अवस्थामें हों तो ताड़ित प्रवाहके द्वारा उनमें रासायनिक विश्लेषण हुआ करता है। किसी किसी वाष्पीय और कठिन पदार्थमें भी विश्लेषण होता है, वह विशेष लक्षित हुआ है। लावणिक पदार्थका एक भाग धातुमय और अन्य भाग अधातुमय (Non-metallic) होता है धातुभाग जस्तेसे संलग्न तारके मुखमें और अधातु भाग ताम्रलग्न तारके मुखमें संचित होता है। बहुतसे मूल पदार्थ जो अन्य रासायनिक उपायसे यौगिकके भीतरसे बाहर निकाला नहीं जा सका है, वह इस उपायसे विश्लेषित और आविष्कृत हुआ है। १८वीं शताब्दीके आरम्भमें सर हम्फ्री डेवीने इसी तरह पटासियम् (पलक), सोडियम (सर्जिक), कालसियम् (खटिक)

आदि कुछ नवीन धातुओंका आविष्कार किया था। फरासीसी मौयासी साहबने फ्लूरिन् (दीपक) नामक अत्युग्र वायवीय उपधातुको इस उपायसे यौगिक पदार्थमेंसे निकाला है।

ताड़ित-प्रवाह धातुज द्रव्यको विश्लिष्ट करके धातु भागको पृथक् कर सकता है, इसलिए आजकल कलईके काममें ताड़ितप्रवाह व्यवहृत होता है। किसी पदार्थ पर चाँदी, सोना, ताँबा आदि धातुओं बारीकीसे चढा देनेका नाम कलई वा गिल्टी है। इन धातुओंसे घटित लावणिक पदार्थको पानीमें गला कर उसमें ताड़ितप्रवाह चालित करो। जिस पदार्थ पर कलई चढानी हो, उसको लस्तेसे लगी हुए तारमें हिलगा कर उस द्रवमें डुबो दो। शीघ्र ही उस पदार्थ पर धातुमय सूक्ष्म आवरण जम जायगा किसी पदार्थ पर जरा मोटा आवरण चढ़ा कर उससे ढाँचेका काम लिया जा सकता है।

(३) जिस तारसे ताड़ित-प्रवाह चल रहा हो, उसको एक चुम्बककी कीलके ऊपर समान्तराल भावसे थामनेसे कील उसी वक्त घूम कर तारके साथ खड़े होनेकी कोशिश करेगी। चुम्बकका काँटा स्वभावतः उत्तर-दक्षिणमें रहता है, तारको उसके पास (उत्तर-दक्षिणमें) पकड़नेसे काँटा घूम जाता है। पृथिवीका चौम्बक-बल काँटेको उत्तर-दक्षिणमें रखना चाहता है और ताड़ित प्रवाह उसे पूर्व-पश्चिममें रखना चाहता है। तार-वाहित प्रवाह यदि दक्षिणसे उत्तरकी तरफ हो और काँटा तारके नीचे हो, तो काँटेका उत्तरवर्ती मुख बाईं ओर (वा पश्चिमकी तरफ) घूम जाता है एवं दक्षिणवर्ती मुख दाहिने (पूर्वकी ओर) घूम जाता है। एकके उलटनेसे सब उलट जाते हैं।

ताड़ित-प्रवाहमें चुम्बक-शलाकाको इस प्रकार घुमानेको शक्ति होनेसे टेलिग्राफ वा ताड़ित वार्तावहकी सृष्टि हुई है। कलकत्तेमें ताड़ितकोष है और दिल्लीमें काँटा। कलकत्तेके कोषसे तार निकल कर दिल्ली चला गया और वहाँ चुंबककी कीलके पाससे घूम कर कलकत्तेको लौट आया। प्रवाह कलकत्तेसे तारके जरिये दिल्ली चला गया, वहाँ कीलको घुमा कर फिर कलकत्तेके कोषमें वापस आ गया। लौटते समय तारके रास्तेसे न आ कर जमीनके रास्तेसे भी आ सकता है। भूमि-पथमें परिचालकता भी अधिक है और खर्च भी कम है। इस तरह कलकत्तेमें बैठ कर इच्छानुसार दिल्लीमें चुंबकका काँटा घुमाया जा सकता है। चुंबकके काँटेको घुमानेसे ही सङ्केत हो जाता है। कीलको पाँच तरहसे घुमा कर पाँच तरहका सङ्केत भेजनेके लिए विविध कौशल प्रचलित हैं। आज कल इस देशमें टेलिग्राफ स्टेशनोंमें मोर्सको पद्धति पर सङ्केत किये जाते हैं। उसमें चुम्बकसे संलग्न एक हथौड़ी खट् खट् करके नाना प्रकारके शब्द करती है, अथवा एक कागज पर आँक बना देती है। उक्त शब्दोंको सुन कर वा आँक देख कर सङ्केत निरूपित होते हैं। टेलिग्राफ-विद्या अब एक प्रकाण्ड और स्वतन्त्र विद्या हो गई है। स्थानाभावके कारण इस निबन्धमें उसका विशेष विवरण नहीं देना चाहते। ताड़ितवार्तावह शब्दमें विशेष विवरण देखो।

तार द्वारा प्रवाह पल भरमें बहुत दूर चला जाता है। प्रवाह कितने समयमें कितनी दूर जाता है, इसका कोई निर्दिष्ट हिसाब नहीं है। वस्तुतः ताड़ित-प्रवाहमें किसी तरहका निर्दिष्ट वेग नहीं है। आजकल महासागरके भीतरसे, एक महादेशसे दूसरे महादेशको सङ्केत भेजे जाते हैं। इन तारोंमें प्रतिबन्धकता इतनी ज्यादा है, कि ताड़ित-प्रवाह उसमें अत्यन्त क्षीण हो जाता है। इतना क्षीण हो जाता है, कि चुम्बकका काँटा भी सहजमें नहीं हिल सकता। एक टेशनमें तार-कोषसे संलग्न करने पर तारमें सिर्फ एक ताड़ितका धक्का लगता है। वह धक्का फिर दूरवर्ती टेशनमें पहुँचता है, इसमें भी कुछ समय लगता है। इस धक्केके पहुँचने पर सङ्केत मालूम पड़ता है ऐसे स्थल पर सुचारुरूपसे सङ्केत पानेके लिए पहले बड़ा कष्ट उठाना पड़ता था। ग्लासगोके अध्यापक सर विलियम टमसनको प्रतिभाने समस्त विघ्न बाधाओंको पराजित कर उनके नामको जगद्विख्यात कर दिया। इन्हीं टमसनको इस समय लॉर्ड केलविनके नामसे प्रसिद्धि है।

ताड़ितप्रवाहको नापनेका तरीका।—प्रति सेकेण्डमें तारसे कितनी बिजली जाती है, इसका निश्चय कर, प्रवाहका परिमाण निर्धारित होता है। दोनों उपायोंमें

सको परिमाण सहज है। अथवा अन्य तत्त्वपदार्थ जितने समयमें जितना विश्लेषित होता है, उसको देख कर प्रवाहके प्राबल्य या क्षीणताको निर्णय हो सकता है। अथवा चुम्बककी कोण जितनी घूम गई उसको देख कर प्रवाहका परिमाण हो सकता है। प्रवाह जितना प्रबल होगा चुम्बकके लिए उसका प्रत्युत्क्षम भी उतना ही अधिक होगा। प्रवाह यदि नितान्त क्षीण हो, तो तारको उस कोण पर कई बार फिरा लेना चाहिये। जितने फेरा होंगे, प्रवाहका बल भी उतना ही बढ़ जायगा। चुम्बकको कोणके बक्समें लटका कर उसके चारो तरफ तार लपेटनेसे तड़ित-प्रवाहके नापनेका यन्त्र बन जाता है। इसका अंग्रेजी नाम है Galvanometer

तड़ित प्रवाहसे चुम्बकत्व।—तड़ित्प्रवाह चुम्बककी सुईको घुमा देता है। वस्तुतः तड़ित्प्रवाह स्वयं ही एक प्रकारसे चुम्बकत्व युक्त है। एक चुम्बकके चारो पार्श्वके प्रदेशमें जो जो घटनाएं होती हैं तड़ित्प्रवाहके पार्श्वस्थ प्रदेशमें भी ठीक वैसी ही घटनाएं होती हैं। तारकी एक अंगूठी तैयार करके उसमें प्रवाह चलाते ही, वह चुम्बकरूपमें परिणत हो जाती है। एक बड़ा इस्पातके चुम्बकके पार्श्वमें छोटा रखनेसे वह चुम्बकत्व पाता है चुम्बककी कोण रखनेसे, वह एक निर्दिष्ट दिशामें स्थिर होकर ठहरती है। इसी तरह तड़ित प्रवाहके समीप भी छोटा चुम्बक पाता है। चुम्बक सुईका निर्दिष्ट दिशामें ठहरती है। छोटा लोहेका टुकड़ा उसकी तरफ आकृष्ट होता है।

इस्पातको प्रबल चुम्बकके पास ज्यादा देर तक रखने या चुम्बकसे उसमें घर्षण करनेसे वह स्थायी चुम्बक बन जाता है। इसी तरह इस्पात पर तड़ित्प्रवाहका तार लपेट देनेसे भी वह स्थायी चुम्बक हो जाता है। लोहे पर तार लपेट देनेसे जब तक प्रवाह रहता है, तभी तक उसमें चुम्बकत्व रहता है। वास्तवमें आजकल स्थायी या अस्थायी चुम्बक तैयार करनेके लिए तड़ित्प्रवाह ही व्यवहृत होता है। सबलप्रवाहकी सहायतासे आसानीसे क्षमताशाली चुम्बक बनता है।

एक लकड़ीके दण्ड पर थोड़ा ढका हुआ तार लपेट कर उसको निकाल लेनेसे जो लपेटा हुआ तार रह जाता है, उसको अंग्रेजीमें Sobnoid कहते हैं। सिलिण्डरमें ऐसे कुण्डलको बना सकते हैं। तारके एक लम्बे कुण्डलीमें विद्युत्प्रवाह चलानेसे वह सर्वांशमें चुम्बक-दण्डके अनुरूप होता है। उसका एक छोर मानो उत्तरकी तरफ और दूसरा दक्षिणकी ओर रहता है। दो चुम्बकोंमें परस्पर जैसे आकर्षण विकर्षण आदि होता है, कुण्डलकी और चुम्बककी या दो कुण्डलियोंमें भी उसी तरह आकर्षण-विकर्षण आदि जारी रहता है। अथवा कुण्डलीको बाल जैसी दीखते बराबर तारको एक फेर लपेट कर (सिर्फ अंगूठीके समान करके) उसमें तड़ित स्रोत चलानेसे वह भी चुम्बक समाक्रान्त इस्पातकी रकाबीकी तरह काम करती है। उसका एक पार्श्व उत्तरवर्ती और दूसरा पार्श्व दक्षिणवर्ती होना चाहता है। इसी तरह दो अंगूठीको परस्पर सम्मुख करनेसे दोनोंमें आकर्षण या विकर्षण होता है। प्रवाह यदि दोनोंमें एक तरफ चले, तो आकर्षण और विपरीत दिशामें चले तो विकर्षण होता है। फरासीसी विद्वान् आम्पियरने पहले पहल उच्च गणितके प्रयोगसे यह आकर्षणादि घटनाकी व्याख्या की थी। विलियम फराडे और मक्सवेल द्वारा प्रदर्शित पद्धतिसे ये घटनाएं और भी सहजमें सम्पादित होती हैं।

तड़िच्चय क्षेत्र।—चुम्बकके पार्श्व प्रदेशको चौम्बक प्रदेश कहेंगे। उस प्रदेशमें लोहा रखनेसे उसमें चुम्बकत्व आ जाता है। चौम्बक प्रदेशका प्रधान लक्षण यह है कि वहां और और चुम्बकोंको यदृच्छा-क्रमसे रखा नहीं जा सकता। उस दूसरे चुम्बकको चाहे जिस तरह रखो, छोड़नेके साथ ही वह घूम कर एक निर्दिष्टरूप अवस्थानको ग्रहण करेगा। वहांसे सम्पूर्ण हटाने पर भी वह पुनः वहीं पहुंच जायगा। तड़ित-प्रवाहके चारों पार्श्वका प्रदेश भी चौम्बक प्रदेश है। वहां भी चुम्बक या अन्य तड़ित्प्रवाहको यदृच्छाक्रमसे हर एक अवस्थामें नहीं रख सकते। रखनेसे वह घूम कर पुनः अपने निर्दिष्ट स्थानको ग्रहण कर लेता है। इसी तरह उस चौम्बक प्रदेशमें चुम्बक और तड़ित-प्रवाह अपने आप गतिशील हो जाता है। गति प्रधानतः घूर्णन गति होती है। चौम्बकक्षमसे तड़ित

प्रवाहका पुनः पुनः दिक्-परिवर्तन करके इस गतिको घूर्णनमें परिणत किया जा सकता है। प्रबल ताड़ित प्रवाह तारके कुछ अंशोंमें प्रवाहित हो कर शक्तिशाली चौम्बक-प्रदेशको सृष्टि करता है। उस प्रदेशमें तारके अन्य अंश इस तरह सजे हुए रहते हैं, कि उसमें प्रवाह प्रवाहित होते ही वह तेजोसे घूमने लगता है। उसके साथ बड़े बड़े चक्रोंको जोड़ देनेसे, वे भी घूमा करते हैं। साधारण वाष्पीय एञ्जिनसे जो कार्य होते हैं, इस तरहके ताड़ितके एञ्जिनसे भी वे कार्य हो सकते हैं। वाष्पीय एञ्जिनका कार्य तापसे उत्पन्न होता है जो कोयले जलानेसे होता है। बिजलीके एञ्जिनका कार्य भी ताड़ितशक्तिसे उत्पन्न होता है और वह कोषके मध्य गन्धकद्रावक द्वारा जस्ता जलानेसे मिलता है। गन्धकद्रावकके साथ जस्तेका सम्मिलन, साधारण दाहन-क्रियासे मूलतः अभिन्न नहीं है। कोयलेको अपेक्षा जस्तेमें खर्च ज्यादा पड़ता है, इसलिये ताड़ितका एञ्जिन वाष्पीय एञ्जिनका स्थान ग्रहण नहीं कर सका है।

ताड़ित-प्रवाहके साथ चुम्बकका सम्बन्ध।—चुम्बकके साथ ताड़ित-प्रवाहके इस साधर्म्यको देख कर दोनों को प्रकृतिगत अभिन्नताकी बात सहजहीमें मनमें जगह पाती है। चुम्बकके अन्दर लोहेके प्रत्येक अणुके चारों तरफ ताड़ितप्रवाह घूम रहा है। अनुमान करनेसे दोनोंमें यह सादृश्य खूब मिलता है। विविध युक्तियां इस अनुमानका समर्थन करती है। वस्तुतः लोहमात्रका (चाहे उसमें चुम्बक हो, चाहे न हो) प्रत्येक अणु ताड़ितका एक एक क्षुद्र आवर्तस्वरूप है। गोला जैसे एक अक्षरेखाके चारों तरफ घूमता है, पृथिवी, जैसे अपनी अक्षरेखाके ऊपर आवर्तन करती है, प्रत्येक आणविक ताड़ितआवर्त भी उसी तरह एक एक अक्षका अवलम्बन कर उसके चारों तरफ हमेशा घूम रहा है। साधारण लौह-पिण्डमें यह अक्षरेखाएं इतस्ततः विभिन्न दिशाओंमें विक्षिप्त होती हैं, परन्तु चुम्बकमें ये अक्षरेखाएं प्रधानतः एक ही दिशामें रहती हैं। सिर्फ चुम्बकके भीतर ही नहीं, बाहर चौम्बक प्रदेशमें भी ये आवर्त विद्यमान रहते हैं। हम जिसको शून्य कहा करते हैं, वास्तवमें वह शून्य नहीं है। कोई एक अदृश्य सामग्री समय शून्यप्रदेशमें व्याप्त है। चुम्बकके चारों तरफ इस अदृश्य सर्वदेशव्यापी पदार्थमें भी ताड़ितके क्षुद्र आवर्त विद्यमान हैं। वहां लोहेको ले जानेसे वे आवर्त लोहेमें आ कर, उसमें चुम्बकत्वको उत्पत्ति करते हैं, अर्थात् उन आवर्तोंके वेगसे लोहेको आणविक अक्षरेखाएं निर्दिष्ट दिशाको घूम जाती है।

ताड़ित-प्रवाहका संक्रमण।—ऊपर कह चुके हैं, कि चौम्बक प्रदेशमें ताड़ितप्रवाहको इच्छानुसार नहीं रखा जा सकता। वह अपनेसे ही एक निर्दिष्ट अवस्थानको ग्रहण कर लेता है। वह अपने आप जिस तरफ जाना चाहे, उस तरफ उसे बे-रोकटोक जाने दो। देखोगे—प्रवाह चलते चलते कुछ क्षीण हुआ। मानो प्रवाह जिस तरफ चलता था, उससे विपरीत दिशामें दूसरा एक प्रवाह उत्पत्ति हुई और उसने पूर्वतन प्रवाहको क्षीण और दुर्बल कर दिया। प्रवाह जिस तरफ जाना चाहे, उस तरफ उसे मत जाने दो, बलपूर्वक उसे उलटो तरफ लौटा ले चलो। देखोगे—प्रवाह और भी कुछ प्रबल हो चला है। मानो दूसरे एक नये प्रवाहने उत्पन्न हो कर उसके प्रवाहको बढ़ा दिया है। चौम्बक प्रदेशमें गतिके प्रभावसे इसी प्रकार ताड़ितप्रवाह कभी क्षीण और कभी प्रबल होता रहता है; अथवा इस छोर पर वा उस छोर पर नवीन प्रवाह उत्पन्न हो कर वर्तमान प्रवाहको घटाता या बढ़ाता है। चौम्बक प्रदेशमें गतिके प्रभावसे इस नवीन प्रवाहकी सृष्टिका नाम है—ताड़ितप्रवाहका संक्रमण। माइकेल फाराडेने इसका आविष्कार किया है। जो तार वा परिचालक द्रव्य चौम्बक प्रदेशमें घूम रहा है, उसमें ताड़ितप्रवाह बिल्कुल न होने पर भी उक्त गतिके प्रभावसे नवीन प्रवाहका आविर्भाव होता है। वह जब तक चलता है, प्रवाह भी तभी तक रहता है, गति बन्द होने पर प्रवाह भी बन्द हो जाता है। तारको चुम्बकके पाससे ले जानेसे जो फल होता है, चुम्बकको दूरसे तारके पास लाने पर भी ठीक वही फल होता है। ताड़ित-प्रवाह सब विषयोंमें चुम्बकके समान है; इसलिए तारके पास सहसा एक प्रवाह उपस्थित करनेसे भी ठीक वैसा ही फल होगा। गतिके प्रभावसे नये प्रवाहका आविर्भाव

होता है, अवाविच्छिन्न प्रवाह ऐसी दिशामें बहता है जिससे वह उस गतिको बाधा पहुँचाता रहता है। इस नियम को याद रखनेसे, किस तरफ प्रवाह चलेगा, इस बातका सहजमें निश्चय किया जा सकता है। जैसे सहसा घोड़ा चलनेसे सवार पीछेको झुक जाता है और खड़े होने पर सामने झुक जाता है, यह भी कुछ कुछ वैसा ही है। ताड़ितप्रवाहको सहसा किसी तार पर चलानेसे भीतरमें एक बाधासी पड़ती है, सहसा प्रवाहमान स्रोतको रोकना चाहो तो वह रुकता नहीं बल्कि कुछ समयके लिए प्रबलतर हो जाता है, इसमें भी यही कारण है। यह साधारण नियम है, कि चौम्बक प्रदेशमें एक तारको घुमानेसे ही उसमें प्रवाहका आविर्भाव या संक्रमण होगा। चौम्बक प्रदेशमें किसी न किसी चुम्बकका अथवा तदनुरूप ताड़ितप्रवाहका प्रभाव विद्यमान है। यह प्रभाव सर्वत्र समान होता है ऐसा नियम नहीं। कहीं ज्यादा और कहीं कम होता है। अधिक प्रभावके स्थानसे कम प्रभावके स्थान पर अथवा कम प्रभावके स्थानसे अधिक प्रभावके स्थान पर किसी भी परिचालकको ले जा सकते हैं, उसीमें एक तरफ (छोर पर) ताड़ितप्रवाह उत्पन्न होगा। प्रवाह जब तक चलता रहेगा, उसकी स्थिति भी तभी तक रहेगी। यदि दोनों जगहका प्रभाव समान हो, तो सम्भव है प्रवाह उत्पन्न न हो। परिचालक जितनी शीघ्रतासे एक स्थानसे अन्य स्थानमें ले जायगा उत्पन्न प्रवाह भी उतना ही प्रबल और पुष्ट होगा। बहुत तेजीसे तारको कई बार ऐसे कर अति वेगसे चौम्बक प्रदेशमें चलाने या घुमानेसे, अत्यन्त प्रबल ताड़ितप्रवाह मिल सकता है। अवस्थानुरूप इस प्रकारसे ताड़ित-प्रवाह उत्पन्न करनेमें उसका और वह तिके विषयमें वह ताड़ितयन्त्रोत्पन्न प्रवाहके समान होता है।

अकसर करके रुमकफ की कुण्डली (Roomkorff's Coil) नामक एक तरहका यन्त्र व्यवहृत होता है, उसमें ताड़ितप्रवाहकी शक्ति इतनी ज्यादा होती है, कि वह प्रवाह अनायास ही अपरिचालक वायुको भेदकर चला जाता है। २।१० इंच लम्बा ताड़ित-स्फुलिङ्ग एक छोटेसे कुण्डलीके द्वारा भी मिल सकता है। बड़े भारी चौम्बक या बैटरीसे ४ इंचका स्फुलिङ्ग भी नहीं मिल सकता। वायवीय पदार्थमें ताड़ित-स्फुलिङ्गके चलनेसे भी तमाशे होते हैं, वे सब भी इस यन्त्रकी सहायतासे सुचारु रूपसे दिखाये जा सकते हैं। गायसलरके नलको बात पहले कह चुके हैं। उसके भीतर विविध वायवीय पदार्थ अल्प परिमाणमें रहते हैं। उसमें ताड़ितप्रवाह चलानेसे विविध वर्णके विचित्र आलोकोंका विकास होता है। क्रुक्स् साहबने कांचके नलके भीतरसे वायुको प्रायः सम्पूर्ण-रूपसे निकाल कर, कुण्डली द्वारा ताड़ितप्रवाह चला कर नाना प्रकारके आश्चर्यजनक तमाशे दिखाये थे। क्रुक्सके नलके भीतर वायु करीब करीब होती ही नहीं, ऐसा भी कहा जा सकता है। कुछ नल इधर उधर दौड़ा करते हैं। वे भी अद्भुत ताड़ित मण्डल करके दस्तखत दौड़ते हैं। नलके भीतर एक छोटी चक्कियासिंह होरेका टुकड़ा आदि विविध पदार्थ रखनेसे वे अद्भुत रूप पर चढ़ा दे कर विचित्र उज्ज्वल आलोकका विकास करते हैं। क्रुक्स्-नलके ये कार्य अत्यन्त सुन्दर और मनोहर होते हैं।

रुमकर्फकी कुण्डलीमें जो उग्र ताड़ितप्रवाह उत्पन्न होता है, वह एक ही तरफको अविच्छेद स्रोतमें नहीं बहता। इधर उधर कर और क्रम क्रम कर बहता है। १ मिनटके अन्दर २०।३० बार अथवा २०००।३०० बार कह रहा और बहता है। इस विच्छेदोंको न जाको यदि किसी तरह दबाई और सैकड़ेको पार कर जाय और करीबमें बढ़ाया जाय तथा साथ ही प्रवाहको उग्रता और वह तिको खूब ऊँचे पर चढ़ाया जाय, तो क्रुक्स्-नलको यन्त्रके साथ संलग्न रखनेकी भी आवश्यकता नहीं रहती। यन्त्रके पासमें किसी स्थान पर नलको रखनेसे उसका अन्तर्देश उज्ज्वल हो उठता है बीचमें मनुष्यका व्यवधान रखनेसे उग्र ताड़ितप्रवाह उसको भेद कर चला जाता है और तुरन्त नलको उद्दीप्त करता है। आश्चर्यका विषय है, कि जिसका शरीर भेद कर जाता है, उसे कुछ भी मालूम नहीं पड़ता। साधारण रुमकर्फके यन्त्रका या साधारण डायनामोका धक्का मनुष्यशरीर सह नहीं सकता, किन्तु इस अद्भुत ताड़ितप्रवाहके वर्ष — विविधतामें भी भाव वाए प्रचण्ड उग्रताके साथ—देह भेद करने पर भी कोई व्याघात नहीं होता। तोप वर्ष

हुए होंगी, इटलीके युवक नि ना तेम्लाने इस अद्भुत घटनाका आविष्कार कर लोगोंको आँखोंमें चकाचौंध लगा दिया है।

डाइनामो।—चौम्बक प्रदेशमें ताँबेके तारको तेजीसे घुमाने पर पुष्ट और उग्र ताड़ितस्रोत उत्पन्न होता है। पुष्टका अर्थ परिमाणमें अधिक और उग्रका अर्थ उद्गतिमें ऊँचा होता है। क्लार्क, साइमेनस, ग्राम, एडिसन आदिके बने हुए विविध प्रकारके डाइनामो आजकल विविध कार्योंमें व्यवहृत होते हैं। चौंबक प्रदेश विभिन्न तरहसे प्रस्तुत होता है। कहीं कहीं बड़े बड़े प्रतापशाली इस्पातके चुम्बक व्यवहृत होते हैं। कहीं कहीं बैटरीसे ताड़ितप्रवाहको बृहत् लौह पिण्ड पर लपेट कर, उस लोहेको पराक्रान्त चुंबकरूपमें परिणत किया जाता है। क्षेत्रविशेषमें तार घुमा कर जो प्रवाह उत्पन्न हो रहा है उसीका कुछ अंश वा अधिकांश वा पूरा लौहपिण्ड पर लपेट कर चुम्बक बनाया जाता है। प्रवाह क्रमशः पूर्व होता है, चुंबकका प्रभाव भी उतना ही बढ़ता है। प्रवाह और चुंबक दोनों ही क्रमशः प्रबल हो कर एक दूसरेको और भी प्रबल कर देते हैं।

नगरके राजपथोंको आलोकित करनेके लिए ट्राम गाड़ी चलानेके लिए तथा अन्यान्य बड़े बड़े कार्योंके सम्पादन करनेके लिए डाइनामोओंसे ताड़ितप्रवाह उत्पन्न किया जाता है। इन डाइनामोओंके तारोंको वेगसे घुमानेके लिए वाष्पीय एञ्जिनको जरूरत पड़ती है। छोटे छोटे डाइनामो हाथसे घुमाये जा सकते हैं। जिस डाइनामोमें इस्पातके स्थायी चुंबक द्वारा चौंबक प्रदेश उत्पन्न किया जाता है, उसको डाइनामो न कह कर बल्कि माग्नेटो यन्त्र कहते हैं। डाक्टरी बैटरी छोटा माग्नेटो मात्र है। एक इस्पातके चुंबकके पास तार घुमानेसे जो प्रवाह उत्पन्न होता है, वही रोगीके शरीरमें चालित होता है। इस बैटरीका प्रवाह एक तरफा नहीं होता, एक बार इस तरफ, एक बार उस तरफ चलता है। प्रवाहको एक तरफा और अविच्छिन्न करनेके लिए किसी किसी डाइनामोमें विशेष विशेष कौशल है।

एक फेर वा कई फेर लपेटा हुआ तार चौंबक प्रदेशमें घुमानेसे, उसमें काफी प्रवाह वा स्रोत उत्पन्न हो जाता है। जरासे धातुमय पिण्डको सहसा चौम्बक प्रदेशमें ठेल देनेसे उसमें काफी प्रवाह पैदा नहीं होता है। सिर्फ उसके ऊपरसे थोड़ीसी बिजली छूट जाती है। उसके ऊपर एक बिजलीका धक्कासा लगता है। यह धक्का उसका गात्र भेद कर जितना भीतर प्रवेश करता है, उतना ही क्षीण हो जाता है और उसके प्रवेशका वेग जल्दी घट जाता है। और यदि एक धक्केके बदले पुनः पुनः सेकेण्डमें हजार बार या लाख बार, एक दफा इस तरफ और एक दफा उस तरफ धक्का लगे, तो वे धक्के प्रवेश करनेमें असमर्थ होते हैं। कुछ प्रवेश करनेके पहले ही वे नष्ट हो जाते वा उत्ताप रूपसे परिणत हो जाते हैं।

ताड़ितप्रवाहका आन्दोलन वा स्पन्दन—डाक्टरी बैटरीमें, बहुतसे डाइनामोमें, रूमकार्फ वा तेसलाके यन्त्रोंमें ताड़ितका एक तरफा स्रोत नहीं बहता; एक बार इस छोरकी ओर एक बार उस छोरकी ओर बहता है। वास्तवमें प्रवाह आन्दोलित वा स्पन्दित होता रहता है। अबतक सबको धारणा थी, कि ताड़ितका एक एक स्फुलिङ्ग एक एक धक्का मात्र है। प्रत्येक स्फुलिङ्गके साथ एक एक धन-ताड़ित एक तरफ और एक ऋण ताड़ित दूसरी तरफ सहसा चला जाता है। किन्तु फिलहाल निश्चित हुआ है, कि यह एक स्फुलिङ्ग सिर्फ धक्का नहीं, बल्कि यह भी एक आन्दोलन मात्र है। लोडेन जार वा ताड़ितयन्त्रमें 'क'से 'ख' की तरफ एक पृष्ठसे अन्य पृष्ठ पर थोड़ा धन ताड़ित सहसा वायुभेद कर चला गया, जिनसे स्फुलिङ्ग उत्पन्न हुआ, एक क्षणिक आकस्मिक उग्र प्रवाह उत्पन्न हुआ। ऐसा अब तक विश्वास था। किन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं है। धक्का एक बार इधरसे उधर और उधरसे इधर, इसी तरह पुनः पुनः जाता आता रहता है। प्रवाह जा कर फिर लौट आता है। एक स्फुलिङ्ग क्षणिक घटना है, उसका स्थितिकाल एक सेकेण्डका न्यूनाधिक भाग मात्र है। किन्तु उस क्षण भरके भीतर सौ लाख धक्के इधर उधर लग जाते हैं। बहुत बार ताड़ित प्रवाहके इतस्ततः स्पन्दन वा आन्दोलनका समष्टिफल एक स्फुलिङ्ग है। एक स्फुलिङ्गके दर्पणगत प्रतिबिम्बको दर्पणके वेगसे घूर्णन द्वारा विस्फारित करनेसे

प्रतिबिम्ब बड़ा हुआ सा जान पड़ता है। अणु विन्दुके मध्य ताड़ितका आन्दोलन ही इस प्रकार होनेका कारण है।

ताड़ितकी तरंगें।—परिचालकके विभिन्न अंशोंमें ताड़ितकी प्रवृत्ति विभिन्न नहीं हो सकती। परिचालकका यही धर्म है। इस स्थानमें प्रमाणसे परिचालकमें ताड़ितप्रवाह पैदा होता है। प्रवाहके जन्मसे परिचालक गरम हो जाता है और उसका पार्श्ववर्ती समग्र प्रदेश चौम्बक-धर्माक्रान्त होता है। प्रवाह सिर्फ परिचालकके भीतर हो जाता हो, ऐसा नहीं। हाँ अपरिचालकके भीतर प्रवाह सहजमें जाता नहीं, जब जाता है तब एक उग्र प्रचण्ड धक्का दे कर अपरिचालकको फाड़ कर जाता है। धक्का भी एक तरफ नहीं लगता, एक धक्का लगनेसे ही साधारणतः कुछ देर तक उसका इतस्ततः आन्दोलन चलता है। इस आन्दोलनके रहते हुए अणु विन्दुका अन्तर्द्धान और सर्वत्र प्रवृत्ति समान हो जाती है। परिचालक और अपरिचालकमें यही प्रभेद है। परिचालकके भीतरसे ही प्रवाह जाता है ऐसा सब समय नहीं कहा जा सकता। परिचालक सिर्फ प्रवाहका रास्ता दिखला देता है। ताड़ित-स्रोत उसके ऊपरसे चलता है। अपरोधकी भीतर घुसनेकी कोशिश करता है और घुसनेके बाद तापरूपमें परिणत होता है। प्रवाह जिस रास्तेसे चलता है, उसके चारों तरफ चौम्बक प्रदेश है। चारों तरफका प्रदेश बिलकुल वायुशून्य होने पर भी उसका चुम्बकत्व नष्ट नहीं होता। अनुमान होता है कि शून्य स्थानमें भी ऐसे पदार्थ विद्यमान हैं जिनसे वह चुम्बकत्व मौजूद रहता है। साधारणमें जिस स्थानको शून्य कहते हैं, वह बिलकुल शून्य नहीं है। आलोकविज्ञान कहता है कि शून्य स्थानमें भी पदार्थविशेष ओतप्रोत भावसे व्याप्त है। उस पदार्थको अंग्रेजीमें ईथर कहते हैं; हिन्दीमें आकाश या आसमान कहेंगे। यहाँ आकाशका अर्थ शून्य नहीं, बल्कि शून्यव्यापी पदार्थविशेष है। यह ईथर या आकाश सूक्ष्म, अदृश्य और अनुभवसे अतीत होने पर भी अत्यन्त कठिन कि तमाम पदार्थ वायुमण्डल और भूपिण्डके अणु बराबर अनवरत उसके भीतरसे बिना बाधाके चले जाते हैं, आश्चर्य है, तो भी काठिन्यविषयमें इस्पात भी इससे पराजित होता है। यह आकाश जड़पदार्थोंके अणुओंके इतस्ततः कम्पन और आन्दोलनजात धक्कोंकी लहरोंको वहन करता है। ये तरंगें आकाशके भीतरसे सेकेण्डमें एक लाख छियासी हजार मील तक चलती हैं।

अध्यापक ताड़ितप्रवाह ही चतुःपार्श्वस्थ आकाशमें इस चौम्बकधर्मको देता है। माइकेल फाराडेने, चुम्बकके साथ आलोकके कुछ सम्बन्धका आविष्कार किया था। आलोक आकाशका स्पन्दन मात्र है। इस स्पन्दनको निर्दिष्ट रूप दिया है। चौम्बक प्रदेश इस स्पन्दनकी दिशाको घुमा सकता है। इससे तथा अन्यान्य कारणोंसे यह अनुमित होता है कि चौम्बकधर्म आकाशका ही धर्म है।

चौम्बक धर्म यदि आकाशका ही धर्म हो, तो जिस स्थानमें ताड़ितप्रवाह एकतरफा न बह कर बार बार आन्दोलित हो रहा है, वहाँ उस आकाशमें भी एक आन्दोलन उपस्थित होगा। जड़पदार्थके अणुओंके कम्पनसे तरंगें उत्पन्न हो कर जैसे चारों ओर आकाशमें व्याप्त होतीं और आलोक उत्पन्न करती हैं, ताड़ितका आन्दोलनसे उसी प्रकार तरंगें उत्पन्न हो कर चारों ओर आकाशमें प्रसारित होती हैं। इन तरंगोंको ताड़ितोर्मि या चौम्बकोर्मि कह सकते हैं। वस्तुतः किसी स्थान पर ताड़ितकी एक तरंग उत्पन्न होने पर उसके साथ चुम्बकत्वकी भी तरंगें उत्पन्न होती हैं, दोनों सहचरी हैं, क्योंकि जहाँ ताड़ितका प्रवाह होता है, उसीके पार्श्वमें चुम्बकत्वका आविर्भाव होता है। ताड़ितके प्रवाहकी तुलना स्रोतके साथ और चुम्बकत्वकी तुलना आवर्त या घूर्णिके साथ हो सकती है। तथा इस प्रवाहके साथ घूर्णिका अविच्छेद्य सम्बन्ध देखनेमें आता है। अतएव क्लार्क मक्सवेलके मनमें ऐसा प्रश्न उपस्थित हुआ कि जिस आकाशमें आलोक विकम्पित होता है उसी आकाशमें ताड़ितकी तरंगें क्यों न चलेंगी? यदि ऐसा ही हो अर्थात् यदि एक आकाश दोनों प्रकारकी लहरोंको वहन करे, तो आलोक और ताड़ितकी तरंगें दोनों ही एक ही वेगसे आकाशपथ पर चलती होंगी। विविध युक्तियों द्वारा मक्सवेलने अङ्कोंमें इसका समर्थन किया था।

ताड़ितका स्फुलिङ्ग सिर्फ कम्पन वा आन्दोलन मात्र है, यह—कई वर्ष हुए—स्थिर हो गया है। किन्तु मक्सवेलने इस बातका सिर्फ अनुमान ही किया था, कि इस आन्दोलनके फलसे चारों ओर आकाशमें ताड़ितकी तरङ्ग उत्पन्न हो सकती हैं। वे उन उर्मियोंके अस्तित्वको प्रत्यक्ष नहीं कर सके थे। जर्मनके विद्वान् हार्टज (Hertz) ने १८८७ ई०के शेष भागमें आकाशवाही ताड़ितोर्मिके अस्तित्वको प्रत्यक्ष दिखलाया था। तभीसे ताड़ितोर्मि एक प्रकारसे चर्मचक्षुके गोचर होती है। तरङ्गोंकी लम्बाईका भी निश्चय हो गया है। सेकण्डमें कितनी तरङ्ग होती हैं, इसकी गणना हो गई है। देखा गया है, कि ताड़ितोर्मि भी ठीक आलोकोर्मिकी भांति एक लाख छियासी हजार मील वेगसे आकाशपथमें चारों तरफ धावित होती है। ताड़ितोर्मि सर्वांशमें आलोकोर्मिके ही अनुरूप, सदृश और सजातीय है। मक्सवेलका अनुमान और भविष्यवाणी ज्योंका त्यों फलीभूत हुई है। वर्तमान शताब्दीमें जिन वैज्ञानिक तथ्योंका आविष्कार हुआ है, उनमें यही आविष्कार शायद सर्वप्रधान है।

ताड़ितकी लहरें और आलोककी तरङ्गें सर्वांशमें समधर्मा हैं। आलोकको रश्मि जैसे प्रतिफलित वक्रीकृत वा विवर्त्तित और विस्फारित होती है, ताड़ितकी रश्मि भी ठीक उसी तरहका आचरण करती है। आलोकके स्पन्दनकी जैसी निर्दिष्ट दिशा है, ताड़ितोर्मिके स्पन्दनकी भी वैसी ही निर्दिष्ट दिशा है। ताड़ितोर्मियोंकी प्रकृतिके विषयमें आज कल विविध गवेषणाएं चल रही हैं। हमारे देशके अध्यापक सर जगदीशचन्द्र वसु सम्प्रति इस विषयमें नवीन तथ्य निकाल कर यशस्वी हुए हैं।

दोनों उर्मियोंमें अन्य प्रभेद नहीं है, विभेद सिर्फ लम्बाईको ले कर है। वर्णभेदसे आलोकोर्मिमें भी छोटे बड़ेका भेद होता है। साधारणतः चक्षुके गोचर आलोककी तरङ्गें अति क्षुद्र होती हैं, एक इञ्चका लक्षभाग वा दश लक्षभागके हिसाबसे उनके दैर्घ्यका नाप होता है। ताड़ितकी तरङ्गें खूब बड़ी होती हैं। आकाशमार्गमें २ या १० हाथसे लगा कर २ या १० मील तककी लम्बी तरङ्गें देखी गई हैं। उपयुक्त यन्त्रके क्षुद्र घनान्दोलित प्रवाहोत्पादनके द्वारा एक इञ्च आध इञ्च तक ताड़ितोर्मि उत्पन्न हुई है। अनुप्रमाण यन्त्रकी सृष्टि होनेसे तापादिकी सहायताके बिना आलोकसृष्टि भी सम्भवपर होगी।

मक्सवेल और हार्टजकी गवेषणाके फलसे यह स्थिर हुआ कि, आलोक ताड़ितकी ही छोटी छोटी तरङ्गें हैं तथा आलोकविकाश ताड़ित-विज्ञानकी ही शाखा है।

ताड़ितका स्वरूप।—ताड़ितका स्वरूप अब कुछ समझा जा सकता है। आकाश सर्वत्र व्याप्त है, धातुपदार्थके भीतर आकाश मानो तरल है, अपरिचालकके भीतर और शून्यदेशमें आकाश मानो कठिन है, कठिन पदार्थके भीतरसे धक्का सञ्चारित होता है, तरलके भीतर नहीं होता। कठिनमें खिंचाव पड़ता है, तरलमें नहीं। इस्पात या काठके साथ कीचड़ वा मोमकी तुलना करनेसे ही समझ सकेंगे। उक्त तिर्क वैषम्यसे आकाशमें खिंचाव पड़ता है। खिंचावसे आकाशके दाहिनी ओर हट जाने पर यदि धन-ताड़ितका आविर्भाव हो, तो बाईं तरफ हटने पर ऋण ताड़ितका आविर्भाव होगा। दाहिनी तरफ जरासा हटनेसे साथ साथ आकाश बाईं ओर भी जरासा हटता है। धन ताड़ितके साथ साथ ऋण-ताड़ितका भी विकाश होता है। अपरिचालकके भीतर खिंचाव होता है, परिचालकके भीतर नहीं होता; इसीलिए अपरिचालकसे परिचालकमें प्रवेश करते ही एक परिवर्तन अनुभूत होता है। इसलिए धातुमय दाथके गात्रके सिवा अन्यत्र ताड़ितका विकाश नहीं मालूम पड़ता। धातुके भीतर यत्सामान्य आकर्षणसे ही तरल आकाशमें स्रोत उत्पन्न होता है; जब तक खिंचाव रहता है, तब तक स्रोत रहता है। इस स्रोतकी तरल जलस्रोतके साथ तुलना हो सकती है। अपरिचालकके भीतर कठिन आकाशमें थोड़े खिंचावसे प्रवाह उत्पन्न नहीं होता, अधिक खिंचावसे आकाश फट जाता है। अपरिचालकका खिंचाव इस्पातके खिंचावके साथ तुलनीय है। आकाशके फट जाने पर उत्ताप, आलोक, स्फुलिङ्ग आदिका विकाश होता है। कठिन आकाश स्थितिस्थापक पदार्थ है, खिंचावसे फटनेके बाद हिलता

थों स्पन्दित होतो रहता है। यही स्पन्दन चारों ओर आकाशमें ऊर्मि उत्पन्न करके आकाश द्वारा दस गुने विपुल वेगसे प्रवाहित होता है। अपरिचालक भेद कर आने पर यहो ऊर्मि पर ऊर्मि सञ्चारित करता है, परिचालक भेद नहीं सकता क्योंकि परिचालक धक्का देने में अक्षम है, धक्का पानी की तरह आकाश रुद्ध कर शुष्क जाता है। धक्का उसके ऊपर लग कर लौटता और प्रतिफलित होता है। यदि धक्का रुक जाय, तो कुछ दूर जाते जाते ही तरङ्ग पदार्थके अणुके तापरूपमें परिणत हो जाता है। ताड़ितका प्रवाह चारों ओरके आकाशमें छुद्र छुद्र घूर्णी या आवर्त्त उत्पन्न करता है, वह प्रदेश चौम्बक प्रदेशमें परिणत होता है। उस प्रदेशमें लोहा रखनेसे, उसके अणुओंको घेर कर आकाशका आवर्त्त घूमता रहता है। अणु भी शायद निर्दिष्ट दिशामें अक्षरेखा पर घूमने लगते हैं। सिर्फ लोहा हो नहीं, अन्यान्य जड़-पदार्थके अणुओंमें भी यह आवर्त्तोत्पादन और घूर्णन आरम्भ होता है। फाराडेने दिखाया है, कि पदार्थ मात्र ही थोड़ा बहुत चुम्बकत्व पा सकता है। ताड़ितको तरङ्ग बड़ी बड़ी हों तो भी साधारण अपरिचालक पदार्थको भेद करजाती हैं साधारण परिचालकके ऊपरसे प्रतिफलित होतो और लौट आती हैं। इसी लिए अब तक उनका अस्तित्व मालूम नहीं हो सका था। छोटो छोटी तरङ्गें परिचालक धातुपदार्थके ऊपर पड़ कर कुछ प्रतिफलित होती और कुछ भीतर घुस कर उत्ताप उत्पन्न करती हैं; इसी लिए त्वगिन्द्रिय, तापमानयन्त्र आदिके द्वारा उसका अनुभव होता है। उन्हींमेंसे छोटी छोटी कुछ तरङ्गें चक्षुके आवरिक यन्त्रमें प्रवेश हो कर दृष्टिविधान करती हैं। परिचालकके भीतरसे ताड़ितको या आलोककी तरङ्गें नहीं जा सकतीं। धातुपदार्थ मात्र इसी लिए आलोकके लिए अस्वच्छतावीन है।

रोण्टगेन द्वारा आविष्कृत रश्मि।—१८८५ ई०के आरम्भमें जर्मनीके अध्यापक रोण्टगीन (Rontgen) ने एक नये रश्मिका आविष्कार किया है। ऊपर जिस क्रूक्स नलको बात कही गई है, उसका अभ्यन्तर भाग प्रायः वायुशून्य होता है, कायवीय पदार्थके कुछ अणु ताड़ितको ग्रहण कर दौड़ते हैं और पदार्थविशेषमें प्रतिहत होने पर विचित्र आलोक उत्पन्न होता है। रोण्टगीनने दिखाया है कि क्रूक्स नलके भीतरसे एक प्रकारकी रश्मि निकलती है, जो आलोकरश्मि या ताड़ित रश्मिसे सम्पूर्ण भिन्न प्रकृतिकी है। यह रश्मि बिना बाधाके काठ तथा कागज आदि अस्वच्छ पदार्थोंको भेद कर जा सकती है। धातुओंमें आलुमिनियमको सहजमें भेद सकती है, सीसेको नहीं भेद सकती। कांचके भीतरसे भी सहजमें नहीं जा सकती। नलके बाहर अदृश्य रश्मियां सरलरेखाके क्रमसे चलती हैं। बाहरमें फोटोग्राफके लिए बना हुआ कागज या कांच सामनेसे इसके विरञ्जित आलोककी तरह दाग पड़ता है। विशेष विशेष पदार्थ पर पड़नेसे उसको उद्दीप्त और उज्ज्वल करती है। रास्तेमें यदि धातु या कांचको भांतिकी कोई चीज आजो जाय, तो उसकी छाया पड़ती है। मनुष्य-शरीरका अस्थिकङ्काल इस रश्मिके लिए अस्वच्छ है, पर मांसपेशी आदि स्वच्छ हैं इसलिए रश्मिके मार्गमें मनुष्यके खड़े होने पर उसके कङ्काल भागको छाया पड़ती है और फोटोग्राफ या आलोकचित्रण द्वारा उस कङ्कालको छाया स्पष्ट दिखनेमें आती है। हड्डीके भीतर किसी स्थानके टूट जाने पर, कहीं कुछ व्याधि होने या बन्दूककी गोली घुसने पर, इस नवीन फोटोग्राफसे वह सहजमें पकड़ा जा सकता है।

क्रूक्स नलके सिवा अन्य उपायसे भी इस रश्मिके उत्पादनकी चेष्टा कुछ सफल हुई है। इस रश्मिके आविष्कारसे पृथिवीके वैज्ञानिक समाज चकित हो गये थे। प्रति सप्ताह या प्रतिदिन इसके विषयमें नवीन तथ्य निकल रहे हैं। वास्तवमें रोण्टगीनने एक नये जगत्‌का आविष्कार किया है। ताड़ित रश्मिके साथ इसका निर्णीत होने पर शायद पदार्थविज्ञानमें युगान्तर उपस्थित होगा।

उपसंहार।—डेढ़ सौ वर्षसे पहले ताड़ित कौतुक की सामग्री थी। किन्तु आज मनुष्यकी सभ्यता इसी पर प्रतिष्ठित है। १८८५ ई०में रोण्टगीनको रश्मिका आविष्कार हुआ है। १९८५ ई०में विज्ञानकी क्या अवस्था होगी, यह कल्पनाके भी अगोचर है।

ताड़ितपदार्थ (सं० पु०) ताड़ित रूपः यः पदार्थः कर्मधा०। दो वस्तुओंको रगड़से निकला हुआ ज्योतिर्मय पदार्थ।

ताड़ितपरिचालक (सं० पु०) ताड़ितस्य परिचालक-६-तत्। (The conductor of electricity) वे वस्तु जिनसे ताड़ित पदार्थ एक स्थानसे दूसरे स्थानको जल्दीसे पहुंचाया जाता है।

ताड़ितवार्त्ता (सं० स्त्री०) तारको खबर।

ताड़ितवार्त्तावह देखो।

ताड़ितवार्त्तावह (सं० पु०) ताड़ित एव वार्तावहः कर्मधा०। ताड़ित-बलके द्वारा शीघ्र संवाद प्रेरण करनेका यन्त्र, वह यन्त्र जिसके द्वारा बिजलीकी सहायतासे एक स्थानसे दूसरे स्थान पर समाचार भेजा जाता है तारके जरियेसे खबर भेजनेकी कल, टेलिग्राफ (Telegraph), तार। जिस यन्त्रसे ताड़ित अर्थात् बिजलीकी तरह शीघ्र सम्वाद आ वे वा पहुंचे, उसका नाम 'ताड़ितवार्त्तावह' वा Electric telegraph है।

पूर्वकालमें किस प्रकारके सङ्केतादि द्वारा दूरवर्ती स्थान पर संवादादि भेजे जाते थे, इसका कुछ कुछ वर्णन "टेलिग्राफ" शब्दमें लिखा जा चुका है। फलतः वे हो सङ्केत, समुद्रके मध्य एवं समय समय पर आवश्यक होने पर स्थल भागमें, ताड़ितके आविष्कारके बाद विज्ञानके बलसे सर्वोत्कृष्ट वार्तावहके रूपमें सर्वत्र नियोजित हुए हैं। बिजलोके जरिये बहुदूरवर्ती प्रदेशोंमें भी, इतनी सरलता एवं शीघ्रतासे संवाद भेजा जाता है, कि जिसको देख कर आश्चर्य होता है। विज्ञानके चरमोत्कर्षसे ताड़ितको यह उपयोगिता अब भूमण्डलस्थ समस्त सभ्यदेशोंमें सम्यक्‌रूपसे सद्व्यवहारमें आने लगी है तथा सन्धि, विग्रह, व्यवसाय वाणिज्य आदिका प्रभूत उपकार कर रही है। सभ्यसमाजमें प्रतिदिन काम आने वाला यह महोपकारी व्यापार किस प्रकारसे आविष्कृत हुआ और इसकी कार्यप्रणाली कैसी है, इसका स्थूल मर्म यहां लिखा जाता है।

ताड़ित अत्यद्भुत द्रुतगतिके आविष्कारके बाद ही उसके द्वारा दूरवर्ती स्थानमें सङ्केत करनेका उपाय उद्भावित हुआ। १७४७ ई०में बिशप् वाट्सन् साहबने इस विषयकी बराबर परीक्षा की थी। इन्होंने ६०० फुट लम्बे तारसे एक लोडेन-जार (Leyden-jar) बिजलीको मुक्त किया था। १७५७ ई०में स्कट्स् मेगाजिन (Scots' Magazine) नामको पत्रिकामें, बिजलीसे दूरवर्ती स्थान पर किस तरह अक्षर भेजे जा सकते हैं, इसका एक सहज उपाय प्रकाशित हुआ था। परन्तु वह कभी कार्यमें परिणत नहीं हुआ। १७७४ ई०में जिनेभा नगरमें २४ अक्षरोंके लिए २४ तारोंमें एक एक पिथबाल इलेक्ट्रोस्कोप (Pith ball electroscope) जोड़ कर टेलिग्राफ बनाया गया। इसी वर्ष जर्मनीमें रिउसर (Reussur) साहबने पिथ-बॉलके बदले सोनेकी दो पत्तियां और उन पर अक्षर लिख कर, उसके द्वारा अक्षर प्रकट किये। ये सब टेलिग्राफ घर्षण-जनित ताड़ित (Frictional electricity)-के द्वारा उत्पन्न होते थे। इसमें कभी कभी परेशानीसे सङ्केत पहुंचते थे, और कभी कभी परिश्रम व्यर्थ भी जाता था। अन्तमें वल्टा साहबने प्रवाह ताड़ित (Current electricity) का आविष्कार किया। यह ताड़ित सहजमें और सुविधासे तारके भीतरसे स्थानान्तरको भेजा जा सकता है और उसमें इसकी शक्तिका भी तादृश अपचय नहीं होता।

प्रवाह-ताड़ितके द्वारा कैसे संवाद भेजा जा सकता है, इस विषयको अनेक परीक्षाएं हुईं। १८११ ई०में मिउनिकवासी सोमरिङ् साहब (Sommering) ने २५ पृथक् पृथक् तारोंके साथ २५ जलपात्र संयुक्त कर, पात्रस्थ जलके विश्लेषण द्वारा सङ्केत ज्ञापन करनेका प्रस्ताव किया। १८२० ई०में आंपियर (Ampire) साहबने जलपात्रके बदले २५ कम्पासके कांटोंके हलन चलनके द्वारा अक्षर प्रकट किये। बादमें १८३२ ई०में मि० बेरन स्किलिङ् (Baran Schilling)-ने रूसराज्यमें सिर्फ एक कम्पासको सूचिकाके परिदोलन द्वारा अक्षर प्रकट करके टेलिग्राफ बना डाला।

१८३३ ई०में, वेबर (Weber) और गस (Gauss) साहबने दो तारोंके द्वारा ८००० फुटकी दूरी पर एक छोटी चुम्बकशलाकामें संलग्न दर्पणके आन्दोलनसे सङ्केतोंका परिचालन किया था। यह यन्त्र टमसन-

साहबके वर्त्तमान दर्पण-ताड़ितमान-यन्त्र (Mirror galvanometer) के समान था।

उपरोक्त वैज्ञानिकोंके अनुरोध करने पर मिउनिच वासी अध्यापक मि० ष्टाइन-हिल (Mr Stein Heel) ने इस विषयमें बहुत परीक्षाएं कीं और यथेष्ट उन्नति भी की। बहुत परिश्रमके बाद आपने १८३० ई० में एक टेलिग्राफ बनाया और उसी वर्ष उसे Gottengon Academy of Sciences सभामें सबको दिखाया। इन्होंने सबसे पहले ताड़ितप्रवाहके प्रत्यागमनके लिए दूसरा तार न रख कर एक ही तारके दो छोरोंको दो स्टेशनोंमें जमीनमें गाड़ कर एक ही तारसे संवाद भेजनेकी प्रथाका आविष्कार किया था। इस समय दो चुम्बकके कांटोंके कम्पन द्वारा दो मूल अक्षरों के संमिश्रणसे सम्पूर्ण वर्णमाला प्रकट की जाने लगी। ये दोनों कांटे, एक धन और दूसरी ऋणताड़ितप्रवाह द्वारा, एक ही तरफ झुक जाते थे। इन्हीं कांटोंकी गति को देख कर और इन्हीं कांटोंसे एक कागज पर बिन्दु अंकित कर अक्षर सूचित होते थे। बिन्दु अंकनके लिए कांटेके अग्रभागमें स्याही या मसी-पूर्ण सूक्ष्म नल रहता था। कांटे क्रमशः हट जाते थे और उनसे बिन्दुओंकी दो श्रेणी अंकित हो जाती थीं। स्थायी चुम्बकसे उत्पन्न ताड़ितके द्वारा यह ताड़ितवार्त्ता सम्पन्न होती थी।

एक लौह-दण्डके ऊपर अपरिचालक सूत्रादि मण्डित तांबेका तार लपेट कर उस कुण्डलीमें ताड़ित स्रोत प्रवाहित करनेसे उस लोहेमें चुम्बकत्व आ जाता है और ताड़ित-स्रोत बन्द होने से उसका चुम्बकत्व नष्ट हो जाता है। ऐसे ताड़ितीय चुम्बकके आकर्षणसे आकृष्ट करके, एक अक्षर पर चोट मार कर अंकित करनेकी प्रथा उद्भावित हुई। यही मोर्स साहबके टेलिग्राफका मूल सूत्र है। हुइटष्टोन साहबने इस उपायसे अक्षर बना कर टेलिग्राफ करनेसे पहले ही तारके संवादको मतर्क करनेका उपाय निकाला था।

१८३० ई०में सर्व प्रथम तीन देशोंमें टेलिग्राफ व्यवसाय रूपमें संस्थापित हुआ। जर्मनीमें ष्टाइनहिल साहबका, अमेरिकामें मोर्स साहबका और इंग्लैण्डमें हुइटष्टोन और कुक साहबका टेलिग्राफ प्रचलित हुआ। इंग्लैण्डमें अध्यापक कमिंक हम और वेटवेस्टने रेलवेमें सबसे पहले टेलिग्राफ लगाया था। इन टेलिग्राफोंके तारोंको अपरिचालक पदार्थसे मण्डित कर मट्टीके नीचे गाड़ा जाता था, परन्तु पीछे इसमें व्यय अधिक होनेसे काठकी खूंटियों पर लगाया गया। एक कांटेके यन्त्रमें एक तार और दो कांटोंके यन्त्रमें दो तार लगा कर टेलिग्राफका व्यवहार होने लगा। इसके बाद हुइटष्टोन साहबने इसकी बहुत कुछ उन्नति की थी।

अब ताड़ितवार्त्तावह या टेलिग्राफ यन्त्रके मूलतत्त्व, उसकी गठन और कार्य प्रणालीका विवरण लिखा जाता है।

ताड़ितस्रोत या बैटरी—सम्प्रति जितने भी प्रकारके टेलिग्राफ प्रचलित हैं, सब प्रवाह ताड़ित द्वारा सम्पन्न होते हैं। घर्षणीय ताड़ितको टेलिग्राफमें नियोजित करनेके लिए बहुत कोशिश की गई थी, पर उसमें खर्च अधिक पड़ने तथा दिक्कत होनेके कारण उसका व्यवहार नहीं हो सका।

ताड़ित-वार्त्तावहके लिए अब नाना देशोंमें नाना प्रकारके ताड़ित-कोष प्रचलित हैं। कुछ समय पहले डानियल साहबका ताड़ितकोष व्यवहृत होता था। अब अधिकांश कामोंमें उसके बदले 'बायक्रमिट बैटरी' काममें आती है। इस देशमें टेलिग्राफ आफिसोंमें मिनोटोका (Minottos) ताड़ितकोष व्यवहृत होता है।

तार—टेलिग्राफका तार साधारणतः लौह-निर्मित और जस्ते द्वारा मण्डित होता है। कहीं कहीं विशेष सुभीतेके लिए तांबेका तार भी व्यवहृत होता है। यह तार काठ या लोहेके खम्भों पर लगी हुई चीनामट्टीकी अपरिचालक टोपियोंमें बांध कर ले जाया जाता है। ये टोपियां इतनी सफाईसे बनाई जाती हैं कि वर्षा होने पर भी इनका कुछ अंश सूखा रहता है और इसलिए ताड़ितप्रवाह तारसे निकल कर खम्भोंमें नहीं जाता। आजकल प्रायः सभी स्थानोंमें खम्भों पर तार जाता है। जहां जहां कहीं बाहरमें विपदकी आशंका अधिक है, जमीनके भीतरसे तार लगा है। इस तार पर गुटापार्चा, कुचुक, रबर आदि अपरिचालक वस्तुएं चढ़ी रहती हैं

और उसे नलके भीतरसे ले जाते हैं। ऐसे तारमें ताड़ित का अपचय तो कम होता है, पर यह द्रुत सङ्केत ज्ञापनके लिए उतना उपयोगी नहीं है।

ताड़ितवार्त्तावहके पूर्व पूर्व आविष्कर्त्ताओंका विश्वास था कि ताड़ितप्रवाहके प्रत्यावर्त्तनके लिए एक दूसरे तारके बिना काम नहीं चल सकता। पूर्वोक्त स्टाइन-हिल साहबने, एक दिन रेल पथका लौहवर्त्म लाइनके ताड़ितवाही तारका काम दे सकता है या नहीं, इस बातकी जाँच करते हुए आविष्कार कर डाला कि पृथिवी ही ताड़ित-प्रत्यावर्त्तनके लिए तारका काम कर सकती है। दो स्टेशनोंमें तारके दोनों छोरोंको जमीनमें गाड़ देनेसे, दूसरे तारका काम निकल आता है। ऐसा होने पर भी तारमें जैसा वास्तविक ताड़ितस्रोत लौट आता है, वैसा पृथिवीमें नहीं आता। पृथिवी तारके दोनों छोरोंसे विभिन्न प्रकारका ताड़ित शोषण करती है, इसलिए तारमें ताड़ितका प्रवाह अव्याहत रहता है। जमीनमें तार अच्छी तरह गड़ जाना जरूरी है नहीं तो वह कामयाब नहीं होता। तारके एक छोरमें बड़ी ताँबेकी पत्ती लगा कर उसे साधारणतः पुष्करिणी वा कूपादिमें गाड़ देना चाहिये। बड़े बड़े शहरोंमें गैस या पानीके नलोंमें तारका मुँह लगा देनेसे ही काम चल जाता है। स्थानविशेषमें वज्राघात-निवारक तार वा पत्तीके साथ जोड़ दिया जाय तो कोई हर्ज नहीं। तात्पर्य यह कि तारका छोर जो जमीनमें गाड़ा जाता है, वह सर्वदा आर्द्र रहना चाहिये, कभी सूखना न चाहिये।

ताड़ितवार्त्तावहके मूल उपादान ३ हैं—१ दोनों स्थानोंके बीचमें धातुमय तारका संयोग और ताड़ित-प्रवाह-उत्पादक एक यन्त्र, २ एक स्टेशनसे दूसरे स्टेशन को संवाद भेजनेका यन्त्र और ३ संवाद ग्रहण करनेका यन्त्र। जिन कौशलोंसे ये कार्य, विशेषतः शेषोक्त दो कार्य सम्पन्न होते हैं, वे बहुत प्रकारके हैं, जिनमें काँटेका टेलिग्राफ, डायल-टेलिग्राफ और प्रिंटि टेलिग्राफ वा मुद्रणवार्त्ता ये तीन प्रधान हैं।

कम्पासके काँटेका टेलिग्राफ प्रधानतः एक तड़ित्-प्रवाहमान यन्त्र (Galvanometer) के सिवा और कुछ भी नहीं है। एक अपरिचालक पदार्थमण्डित तारकी कुण्डलोमें ऊर्द्धाधोभावसे एक चुम्बक-शलाका लम्बित रहती है और उस चुम्बक-शलाकाके साथ तारका एक काँटा संलग्न रहता है। यह शेषोक्त काँटा ही यन्त्रके बाहर दृष्टिगोचर होता है। तार द्वारा विभिन्न प्रकारका ताड़ितप्रवाह उस कुण्डलोमें प्रवाहित होने पर चुम्बक शलाका दो विभिन्न दिशाओंमें हिलती रहती है। इसीसे सङ्केत समझाया जाता है। प्रेरक इच्छानुसार धन वा ऋण-ताड़ित प्रवाहित कर उस काँटेको दाहिने वा बायें हिला सकता है।

डायल टेलिग्राफमें एक डायल वा गोलाकृति कागज पर २४ अक्षर लिखे रहते हैं। केन्द्रस्थलमें एक काँटा लगा रहता है, जो ताड़ितीय चुम्बकको सहायतासे दूर-वर्ती स्टेशनसे इच्छानुसार घुमाया जा सकता है। यह काँटा जिस अक्षरका निर्देश करता है, वह प्रेरित अक्षर है, ऐसा समझा जाता है। ऐसे टेलिग्राफोंमें बहुत समय नष्ट होता है और यन्त्रादि अत्यन्त कुटिल होनेसे शीघ्र ही विशृङ्खल हो जाते हैं। अव्यवसायीगण अपने अपने कामके लिए ऐसा टेलिग्राफ कभी कभी व्यवहारमें लाते हैं, अन्यथा इसका व्यवहार नहींके बराबर होता है।

मोर्सटेलीग्राफ—यह टेलिग्राफ सम्प्रति बहुत प्रचलित है। मोर्स टेलिग्राफका प्रधान अङ्ग एक लौह-दण्ड और ताड़ितप्रवाहके गमनकालमें उसका अस्थायीरूपमें चुम्बकधर्म-प्राप्ति है। नीचे इसकी कार्य-प्रणाली संक्षेपसे लिखी जाती है।

लौहनिर्मित एक ताड़ितीय चुम्बक पर, अपरिचालक पदार्थमें डुबोया हुआ (अर्थात् अपरिचालक पदार्थ-से मढ़ा हुआ) ताँबेका तार लिपटा रहता है। इस तारका एक छोर जमीनमें और एक छोर लाइनके तारके साथ लगा होता है। उक्त चुम्बकके ऊपर, एक लौह-दण्ड इस प्रकार लगा रहता है कि जिससे वह मध्यस्थानके अवस्थानके ऊपर आन्दोलित होता रहता है। एक छोटेसे स्प्रिङ्के सहारे वह डंडा चुम्बकसे विच्छिन्न हो कर अवस्थान करता है। चुम्बकको विपरीत दिशामें डंडेके छोर पर एक पेन्सिल वा सुई लगी रहती है। उस सुई वा पेन्सिलके बहुत ही पासमें सटा हुआ, पर उससे अलग एक कागजका पतली फीता रहता है इस

यन्त्रको इण्डिकेटर वा रिसिभर (Indicator or Receiver) (अर्थात् संवाद निर्देश वा ग्रहण करनेका यन्त्र) कहते हैं।

आरम्भके तारसे ताड़ितप्रवाह ज्यों ही उस ताड़ितीय चुम्बकको तार कुण्डलीमें हो कर जाता है त्यों ही उस का लौह चुम्बकरूपमें परिणत हो जाता है और संश्लिष्ट लौह दण्डको आकर्षित करता है। उस लौहदण्डका एक छोर नोचेको आकृष्ट होने पर दूसरा छोर जिसमें पेन्सिल वा सूई लगी होती है, ऊपरको उठ जाती है और फिर वह सूई या पेन्सिल कागजसे लग जाती है। इस प्रकार जब तक ताड़ितप्रवाह प्रवाहित होता रहता है तब तक सूई वा पेन्सिल कागजसे सटी रहती है और ताड़ितप्रवाहके बन्द होते ही 'स्प्रिङ्'के जोरसे वह अलग हो जाती है। ताड़ित स्रोतको कम वा अधिक समय तक प्रवाहित कर, संवाददाता इच्छानुसार कम वा अधिक समय तक पेन्सिल वा सूईका मुँह कागजसे सटाये रख सकता है। उपरोक्त कागजका फीता एक छोटे पहिये पर लिपटा रहता है और वह कागज वा घड़ीको भाँति किसी कलके द्वारा क्रमागतरूपसे खींचा जाता है; सुतरां पेन्सिल वा सूई अल्पमात्र वा कुछ अधिक समय तक कागजके फीते पर सटी रहनेसे उस कागज पर क्रमसे बिन्दु (·) वा रेखा (—) अङ्कित हो जाती है। कहीं कहीं पेन्सिल वा सूईके बदले स्याही का व्यवहार होता है। इसमें चिह्न भी स्पष्ट होता है और अपेक्षाकृत थोड़ेसे ताड़ित प्रवाहसे काम चल जाता है। इन बिन्दु और रेखाओंके विन्याससे समस्त अक्षरोंका विन्यास हो जाता है। नीचे मोर्स साहबकी टेलिग्राफको वर्णमाला लिखी जाती है—

A	—	N	— ·		
B	–	O	— — —	1	- —-- -
C	— —	P	— —	2	— — —
D	— -	Q	— — - —	3	- — —
E		R	—	4	—
F	—	S	·	5	
G	— —	T	—	6	—
H		U	—	7	— —
I		V	—	8	— — —
J	— — —	W	— —	9	— — — —
K	— —	X	— - —	0	— — — — ·
L	— ·	Y	— — —	Understood	- - - —
M	— —	Z	— —		

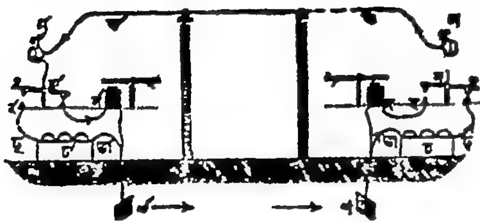
दो अक्षरोंके बीचमें एक "डैस" वा रेखाके बराबर जगह खाली छोड़ दी जाती है और दो शब्दोंके बीचमें उससे प्रायः दूना स्थान खाली रखा जाता है। एक काठिके यन्त्रमें ऐसा-चिह्न काटिके बाईं तरफ तथा ऐसा चिह्न दाहिनी ओर खुदा हुआ मालूम पड़ता है। फलतः, ये यथाक्रमसे मोर्स साहबके बिन्दु और रेखाके समान हो काम करते हैं। व येको अब मात्राओंको तरह उपर्युक्त चिह्नों द्वारा हिन्दीके अ, आ, इ, ई आदि भी सूचित किये जा सकते हैं।

संवाद भजनेका यन्त्र वा मोर्स साहबकी चाभी (Morse's key)—यह यन्त्र एक लकड़ीकी छोटी पटिया पर बना



है। इसके ऊपर 'द' अवकाशमें स्थित 'ध' 'ध' धातुमय दण्ड अवस्थित है। इसका 'न' प्रान्त 'न' युक्त स्प्रिङ्के सर्वदा 'ह' तारके साथ लगी हुई 'ग' नामक एक धातु खण्डमें संलग्न रहता है और अपर प्रान्त 'म' ऊपरको उठ जाता है। 'ठ' नामका तार 'ध ध' दण्डके साथ संलग्न है। 'ग' धातुखण्ड 'प' तारके द्वारा ताड़ितकोषके एक सिरेके साथ संलग्न है। 'घ' धातुपिण्ड 'च' तारके द्वारा इण्डिकेटर वा निर्देशक यन्त्रके साथ संयुक्त है। 'ड' कोनामही वा अन्य कोई अपरिचालक पदार्थ निर्मित छोटा हैण्डल (दस्ता) है। इस चित्रमें संवाद-ग्रहण के समय इसको जैसी अवस्था रहती है, वही दिखाई गई है। दूसरी ईंशनसे ताड़ितप्रवाह आरम्भमें 'ठ' तारमें हो कर आता और 'ध ध' दण्डमें प्रविष्ट होता है फिर वहाँसे प्रान्तमें हो कर 'ग' 'च' तारके द्वारा संवाद निर्देशक यन्त्रको तार-कुण्डलो परिभ्रमण करता हुआ भूमिमें प्रवेश करता है। निर्देशक यन्त्रमेंसे जाते समय वहाँ सङ्केत ज्ञापित हो जाता है। संवाद भेजते समय, संवाददाता ज्यों ही हैण्डलको दाब कर 'म' के साथ ताड़ितकोषका संयोग करता है, त्यों ही उसका दूसरा छोर 'न' से अलग हो जाता है। फिर ताड़ित कोषसे ताड़ितप्रवाह अपने आप 'ध ध' दण्ड और 'ठ'

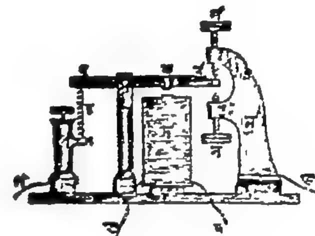
तारकी लाइनके द्वारा दूसरी स्टेसन पर पहुंच जाता है। इस प्रकारसे संवाददाता इच्छानुसार हैण्डलको कम वा अधिक समय तक दाब कर, तार द्वारा कम वा अधिक समय तक ताड़ितप्रवाहको प्रवाहित रख सकता है और दूसरी स्टेशन पर बिन्दु वा रेखा अङ्कित कर सकता है। दो स्टेशनोंका परस्पर किस प्रकारसे सम्बन्ध रहता है, इस बातको समझानेके लिए नीचे एक मामूली चित्र दिया जाता है।



इस चित्रमें दो स्टेशनोंके यन्त्रादि हूबहू बना दिये गये हैं और बीचमें दो तारके खंभे भी लगे हुए है। 'ट और 'ट' ताड़ितकोष है, 'क' और 'क' ये दो संवाद देनेके यन्त्र (Key वा चाबी) हैं, 'न' और 'न' संवाद ग्रहण करनेके यन्त्र (वा निर्देशक) हैं, 'ग' और 'ग' ताड़ितमान यन्त्र हैं तथा 'त' और 'त' लाइनका तार है। 'ट' और 'ट' इन दो ताड़ितकोषोंका एक एक प्रान्त 'छ' और 'छ' स्थानीय संवाद देनेके यन्त्रमें तथा अपर प्रान्त 'छ' और 'छ' भूगर्भके साथ संयुक्त हैं; चित्रमें दाहिनी ओरकी स्टेशनसे बाईं तरफकी स्टेशनमें संवाद आ रहा है, और बाईं ओरकी स्टेशनमें वह संवाद-निर्देशक यन्त्रमें ज्ञापित हो रहा है। ताड़ितस्रोत 'ट' ताड़ितकोषमेंसे निकल कर 'क' चाबीमें और 'ग' ताड़ितमान यन्त्रमें होता हुआ लाइनके तारमें प्रवेश कर रहा है; और दूसरी स्टेशन पर पहुँच कर वहांके 'ग' ताड़ितमान यन्त्रमें होता हुआ 'क' चाबीमें प्रवेश कर रहा है। 'क' चाबी 'न' निर्देशक-यन्त्रमें संलग्न होनेके कारण ताड़ितप्रवाह वहां जा कर संवाद ज्ञापन कर रहा है और अन्तमें वह 'ग' स्थानसे भूगर्भमें प्रवेश कर रहा है। ताड़ितमान यन्त्र मात्रसे इतना ही मालूम होता रहता है कि ताड़ितप्रवाह जा रहा है या नहीं। इस तरह एकही तारसे संवाद भेजना और ग्रहण करना दोनों काम होते हैं।

टेलिग्राफ-कार्यालयमें और भी कुछ यन्त्र रहते हैं। नीचे उनका वर्णन लिखा जाता है।

रिले (Relay)—यह यन्त्र प्रायः निर्देशक-यन्त्रके समान ही है, पर यह उसकी अपेक्षा अनेकांशोंमें सूक्ष्म और अपेक्षाकृत क्षीणतर ताड़ितप्रवाह द्वारा परिचालित हो सकता है। तारका ताड़ितप्रवाह स्वभावतः क्षीण है, जिससे अधिक दूर गमन करते करते नाना कारणोंसे और भी क्षीणतर हो जाता है; सुतरां वह निर्देशक यन्त्रको तेजीके साथ परिचालित नहीं कर सकता और न उससे कागज पर अच्छी तरह दाग ही पड़ता है। इसी लिए प्रत्येक स्टेशन पर केवल स्थानीय निर्देशक यन्त्रमें प्रेषित संवादके मुद्रणके लिए एक पृथक् ताड़ित कोष रहता है। इस ताड़ितकोषके दो मेरुओंमेंसे एक साक्षात्‌रूपसे निर्देशक यन्त्रके साथ संलग्न है; दूसरा तारके द्वारा 'ख' रिलेयन्त्रके 'न' स्थानके साथ संलग्न है।



निर्देशक-यन्त्रके ताड़ितीय चुम्बकको तार कुण्डलीका दूसरा छोर 'ग' तार-द्वारा 'प व' होता हुआ 'व न' दण्डके साथ जा मिला है। रिलेमें स्थित 'प' तार कुण्डलीका एक छोर लाइनमें जा मिला है और दूसरा जमीनमें गड़ा है। अब ज्यों ही लाइनके तारसे ताड़ितस्रोत रिलेमें स्थित ताड़ितीय चुम्बकके 'प' तार-कुण्डलीमें हो कर जमीनमें जाता है, त्यों ही वह ताड़ितीय चुम्बक 'क' दण्डको आकर्षण करता है और उसका 'व' प्रान्त 'न' के साथ संयुक्त हो जाता है। सुतरां स्थानीय ताड़ितकोष के दोनों मेरुओंके संयुक्त होने पर, उसका प्रबल ताड़ितप्रवाह बिना बाधाके 'ख,न,क,व,व,ग' मार्ग निर्देशक यन्त्र हो कर गमन करता है और उसे कार्यकारी बनाता है; और ज्यों ही लाइनके तारमें ताड़ितप्रवाह बन्द हो जाता है, त्यों ही 'व' स्प्रिङ्के जोरसे 'क' ऊपर

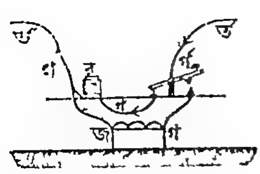
भी उठ जाता है, इतरां निर्देशक यन्त्रमें ताड़ितप्रवाह छिन्न होता है। इसी प्रकार प्रत्येक बार जैसे प्रेषक यन्त्रमें हो कर ताड़ितप्रवाह गमन करता है निर्देशक यन्त्रमें भी ठीक इसी प्रकारसे क्रमशः ताड़ितप्रवाह गमन करता है और सूईयोंका अक्षरका निर्देश करता है।

वर्णमुद्रकताड़ितवार्त्तावह—टेलिग्राफ कार्यालयमें, कर्मचारीगण इतनी क्षिप्रताके साथ अभ्यासरूपसे संवाद भेजते और ग्रहण करते हैं कि जिसको देख कर आश्चर्य होने लगता है। एक सुदक्ष कर्मचारी प्रत्येक मिनटमें ३०। ४० शब्द प्रेरण और ग्रहण कर सकता है। सुनिपुण कर्मचारी संवाद ग्रहण करते समय कागजकी तरफ आँख उठा कर देखता भी नहीं। वह मात्र निर्देशक-यन्त्रके ताड़ितीय चुम्बकके साथ लौहदण्डके आघात-जनित शब्दसे ही सङ्केत समझ लेता है। इसी पहले अमेरिकावालोंने एक प्रकारका नया टेलिग्राफ आविष्कृत किया, जिसमें रिले-यन्त्र जैसा एक यन्त्र रहता है। ताड़ितप्रवाह ज्यों ही तार द्वारा उसमें प्रवेश करता है, त्यों ही उसका ताड़ितीय चुम्बक एक छोटी हथौड़ीको आकर्षित करता है। चुम्बक पर इस हथौड़ीके पड़ते ही 'टक' शब्द होता है और प्रवाह बन्द होते ही स्प्रिंगके जोरसे हथौड़ा ऊपरको उठ जाता है। इस प्रकारसे ताड़ितस्रोत को कम वा अधिक समय तक प्रवाहित रख कर, शब्दके ह्रस्व और दीर्घताका तारतम्य प्रकट किया जा सकता है। यह ह्रस्व और दीर्घ शब्द क्रमसे मोर्सके बिन्दु और रेखाके समान है। समयकी किफायत और प्रथाकी सहज होनेके कारण आजकल सब जगह यही टेलिग्राफ प्रचलित हो गया है।

जिस स्टेशन पर संवाद भेजा जाता है, उस स्टेशनके कर्मचारियोंको सावधान करनेके लिए और एक यन्त्र व्यवहृत होता है, जिसे हम ताड़ितीय घण्टी कह सकते हैं। इसका गठनप्रकार इस प्रकार है, एक लकड़ीकी पटिया पर एक चुम्बक लगा रहता है, जिसके एक ओर पर स्प्रिङ्ग द्वारा आबद्ध एक धातुकी पत्ती और उस पर एक छोटी हथौड़ी तथा उस हथौड़ीके पार्श्वमें एक घण्टी लगी होती है। यह हथौड़ी स्प्रिङ्गके जोरसे सदा चुम्बकसे पृथक् रहती है। ताड़ितीय चुम्बककी तार कुण्डलीका एक छोर हथौड़ीके साथ संयुक्त रहता है। लाइनके साथ इस यन्त्रको जोड़ देने पर ज्यों ही ताड़ितप्रवाह उस हथौड़ीमें हो कर तारकुण्डलीमें प्रवेश करता और दूसरी ओरसे निकल जाता है, त्यों ही चुम्बककी शक्तिसे हथौड़ी आकर्षित हो कर घण्टी पर पड़ती है। परन्तु हथौड़ीके आकर्षित होते ही ताड़ितप्रवाह खण्डित हो जाता है और इसीलिए वह (आकृष्ट होनेसे) स्प्रिङ्गके जोरसे अलग हो जाती है हट कर पूर्वावस्थाको प्राप्त होते ही फिर उसमें ताड़ितप्रवाह संयुक्त होता है और वह पुनः घण्टे पर पड़ती है। इस प्रकारसे जब तक ताड़ितप्रवाह चलता रहता है, तब तक घण्टी बजती रहती है। कर्मचारी उस शब्दको सुन कर यन्त्रके पास आता है और कौशलसे ताड़ितस्रोतको उस यन्त्रसे हटा कर सीधा निर्देशक यन्त्रमें जाने देता है।

कभी कभी अत्यन्त शीत आदिसे तारका स्वाभाविक ताड़ित विच्छिन्न हो जाता है और संवाद देनेमें कठिनाई उपस्थित होती है। यहाँ तक कि भयानक उपद्रव भी होने लगते हैं। इस दैव उपद्रवके निराकरणके लिए, लाइनका तार एक ताड़ित परिचालक यन्त्रके साथ जुड़ा रहता है। लाइनके तारसे ताड़ितप्रवाह सीधा टेलिग्राफके यन्त्रोंमें नहीं जाता, बल्कि इस यन्त्रमें हो कर जाता है। इसका गठन-प्रणाली इस प्रकार है,—धातुके समान दाँतवाली दो तीन पत्तियाँ लम्बाईमें आस-पास इस तरह लगी रहती हैं कि जो एक दूसरेका स्पर्श नहीं करती। इनमेंसे एक तो लाइनके तारके साथ और एक भूगर्भके साथ संयुक्त रहती है। मेघादिकी प्रबोधन शक्तिके कारण ज्यों ही तारमें ताड़ित सञ्चित होता है, त्यों ही वह धातुके छुचोंके दाँतोंमें हो कर यह भूमिमें प्रवाह हो जाता है। और फिर विपद्‌की आशङ्का नहीं रहती। दाँत एक दूसरेसे सटे न रहनेके कारण तारका ताड़ितस्रोत भूमिमें नहीं जाता, इतरां वार्त्तावहकी कुछ क्षति नहीं होती। सिर्फ मेघादि-द्वारा उपयोगमान ताड़ित ही नष्ट होती है।

दो प्रधान स्टेशनोंके बीचमें उससे अधिक स्टेशन हों तो उनमें हो कर किस प्रकारसे संवाद भेजा जाता है, सो दिखाते हैं।



'छ ग' ताड़ितकोष है। इसका एक मेरु 'ग' संवाद देनेके यन्त्र की पटियासे और दूसरा मेरु 'ञ' लाइनके तारके साथ जुड़ा हुआ है। ताड़ितप्रवाह 'ञ' लाइनके तारमें हो कर संवाद भेजनेके यन्त्रमें प्रवेश कर रहा है और वहांसे 'ग' की तरफ निर्देशक-यन्त्रमें हो कर 'ञ'' लाइनके तारमें जा रहा है। इस प्रकारसे गमन करते समय वहां निर्देशक-यन्त्रमें संवाद सूचित होता है, इसमें समय भी कम लगता है। ताड़ितप्रवाह अव्याहतभावसे उसी समय (खटकानेके साथ ही) निर्दिष्ट स्थान वा स्टेशन पर जा कर वहां संवाद ज्ञापन करता है। इस प्रकार एक स्टेशनसे दूसरी स्टेशनको संवाद भेजते समय, मध्यवर्ती स्टेशनोंमें भी वह संवाद ज्ञापित होता है।

यदि एक स्टेशनसे दूसरी स्टेशन बहुत दूर हो, तो प्रबल ताड़ितकोषका व्यवहार करने पर भी, प्रवाह गमन करते करते क्षीण हो जाता है। इसलिए दूरवर्ती स्टेशनों के बीचमें एक स्टेशनका होना आवश्यक है। इस मध्यवर्ती स्टेशनके यन्त्रादि किस प्रकारसे विन्यस्त रहते हैं, सो लिखा जाता है।



'छ' ताड़ितकोष है। इसका एक मेरु 'ग' 'ढ ढ' दण्डसे लगा हुआ है, और दूसरा मेरु 'क' जमीनमें गड़ा है। 'म' ताड़ितोय चुंबक है; इसकी तार-कुण्डलीका एक छोर लाइनके तारसे लगा है और दूसरा छोर जमीनमें गड़ा हुआ है। 'द' धातुमय दण्ड है, जो दूसरी तरफ 'ञ' लाइनके तारके साथ संयुक्त है। 'ढ ढ' दण्ड साधारणतः स्प्रिङ्के जोरसे 'द' से पृथक् रहता है। ताड़ित प्रवाह 'ञ' लाइनके तारसे 'म' ताड़ितोय चुंबककी कुण्डलीमें घूमता हुआ जमीनमें प्रवेश करता है, परन्तु उस समय 'ढ ढ' दण्डका 'ढ' प्रान्त चुंबकके आकर्षणसे आकृष्ट होता है और इस प्रकार ढ 'द' के संयुक्त होने पर 'छ' ताड़ितकोषसे नवीन और प्रबलतर ताड़ितप्रवाह 'ढ ढ' और 'द' दण्डमें हो कर 'गं गं' को और 'ञ'' लाइनके तारमें प्रवाहित होता है। और 'ञ' तारमें ताड़ितस्रोत बन्द होते ही 'द' और 'ढ' पृथक हो जाते हैं और इस कारण 'ञ'' तारमें भी ताड़ितप्रवाह बन्द हो जाता है। ञ तारमें जब तक ताड़ितप्रवाह रहता है, तब तक ञ' तारमें भी मध्यवर्ती स्टेशनके ताड़ितकोषसे प्रबल ताड़ितस्रोत प्रवाहित होता है; और इसीलिए दूर गमनवशतः प्रवाहकी क्षीणता-जन्य कोई हानि नहीं होती।

यहाँ तक, साधारणतः आजकल जो टेलिग्राफ सर्वत्र प्रचलित है, उसीका संक्षेपमें वर्णन किया गया है। वर्तमान समयमें इसके सिवा और भी अनेक प्रकारके ताड़ितवार्त्तावह आविष्कृत हुए हैं और हो रहे हैं; जिनमेंसे कुछ टेलिग्राफोंका विवरण नीचे लिखा जाता है।

Telediagraph वा तसवीरें बतानेवाला टेलिग्राफ—टेलिग्राफसे संवाद जाता है और फोटोग्राफसे फोटो उतरती है, यह बात सभी जानते हैं, पर टेलिग्राफसे फोटो उतरती है और फोटोग्राफसे संवाद भेजा जाता हो, यह बात किसीके भी समझमें न आई होगी। परन्तु विज्ञानने ये असम्भावनीय बातें भी सिद्ध करके दिखा दीं।

टेलिग्राफकी सहायतासे जिस यन्त्रके द्वारा तसवीर उतारी जाती है, उस यन्त्रका नाम Telediagraph है। इसमें खर्च भी अधिक नहीं पड़ता और न इसमें कुछ जटिलता ही है। इसके जरिये विलायतके बहुतसे संवादपत्रों और पुलिस-कर्मचारियोंने प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली है। सैकड़ों मीलकी दूरी पर किसी राज्यमें सहसा कोई विप्लव उपस्थित हो, तो तुरंत ही उसके नेताओंका चित्र प्रकाशित हो कर चारों तरफ फैल जाता है; जनसाधारण आश्चर्यमें डूब कर धन्य धन्य कहने लगते हैं। यह टेलिडियाग्राफ' क्रमशः व्यवसाय-वाणिज्यका अङ्ग होता जा रहा है।

इसके आविष्कारक मि॰ अर्नेष्ट ए॰ हुमेल (Mr Ernest A, Hummel, of St. Paul minnesota) हैं।

आप एक घड़ी बनानेवाले कारीगर थे। मध्य अवस्थामें ही आपने इस अद्भुत वस्तुका आविष्कार किया था। आपने पहले पहल १८९५ ई० के मई मासमें इसका सूत्रपात कर कार्य प्रारम्भ किया था।

इस समय आप अपने माता पिताके मिलनेके लिये अमरीका गये थे और वहां किसी संवादपत्रमें एक तसवीर देख कर आप इसके आविष्कारके सम्बन्धमें उत्सुक हो गये। इसके बाद १८९८ ई० के जनवरी महीनेमें आपने "New York Herald" आफिसमें इसकी परीक्षा करनी शुरू कर दी। उक्त कार्यालयके दो कमरे आपने अपने लिये भाड़े पर लिए, जिनमेंसे एकमें टेलिग्राफ भेजने का संयोग (Transmitter) और दूसरेमें टेलिग्राफ लेनेका संयोग (Receiver) रख कर विजली आदान प्रदानके विषयमें परीक्षा करने लगे। पहले पहल आपने आफिसके चारों ओर ८० मील लम्बा तार लगा कर कार्य प्रारम्भ कर दिया और उसमें जिन जिन चीजोंकी कमी थी, उनकी खोज करने लगे।

इस प्रकारसे एक वर्ष खोज करनेके बाद आपने इतनी उन्नति कर ली कि सन् १८९९में, १८ अप्रीलको आपने New York Herald आफिससे Chicago Times Herald, The St. lones Retonlico, The Boston Herald और The Philadelphia Inquirer इन आफिसोंमें फोटो भेजे। एक ही समयमें, एक ही तार-द्वारा एक ही उक्त फोटो आफिसोंमें पहुंचनेसे शीघ्र ही आपकी कीर्ति चारों ओर फैल गई।

आचार्य मोर्सने जो टेलिग्राफ बनाया है उसमें बिन्दु और रेखाका अनुवाद करना पड़ता है किन्तु हुमेल साहबने ऐसी तरकीब निकाली कि उन्हीं बिन्दु और रेखाओंके द्वारा बड़ी तसवीर खींच कर तैयार हो जाती है।

टेलिग्राफमें जैसे पृथिवीको एक Conductor बना कर सिर्फ एक तारसे एक (Complete circuit) पूर्ण चेइन बनाया जाता है, उसी प्रकार Teledrigraph में भी एक स्थानसे बिन्दु और रेखा भेजी जाती है। इस पत्रमें काममें सुना जाता था। पीछे परीक्षा द्वारा आविष्कृत हुआ कि भेजनेवालेकी संयोगके जरिये बिन्दु या रेखा भेजे भी जिस भेजी जाती हैं, वे सब ज्योंकि त्यों लेने वालेके संयोगमें भी एक पतला कागज रख देनेसे उसमें भी अङ्कित हो जाते हैं। इसी मसालेके पर हुमेलके आविष्कार रूप भित्ति प्रतिष्ठित है।

दोनों यन्त्र एक ही प्रकारके बने हैं और तार-द्वारा संयुक्त हैं। प्रत्येक यन्त्रमें एक एक cylinder है जिसकी लम्बाई आठ इञ्च है और घड़ीके पूर्जेके समान एक प्रकारके यन्त्र (Clock work)से, एक ही प्रकारसे घुमाया जा सकता है। प्रत्येक सिलण्डरके ऊपर एक पतला छोटा नामका कांटा (Stylus या needle) है, जिसका आकार टेलिग्राफकी चाभीके अग्रभागके समान है। इसके सिवा तसवीर उतारनेके लिए और भी कई चीजोंकी आवश्यकता होती है। जैसे—८ इञ्च लम्बी और ६ इञ्च चौड़ी एक पत्ती, तथा इसी नापका एक Carb in manifold co ying paper (छोटे आफिस आदिमें काम आनेवाला लिखा कागज) इत्यादि।

अब भेजनेकी तरकीब लिखी जाती है। जिसकी तसवीर भेजनी हो, उसका फोटो पहले उक्त टीनकी पत्ती पर उसकी एक तसवीर खींचनी चाहिये किन्तु तसवीरके चारों ओर एक एक इञ्च स्थान खाली छोड़ देना चाहिये, कलम या कूंचीसे तसवीर खींचना चाहिए, परन्तु लेखन-पदार्थ स्याहीको अपेक्षा घना और non conductor of electricity होना चाहिये। 'इस्मार' से पिघलाया हुआ अपड़ासे स्याहीका काम लिया जा सकता है।

उस पत्तीको, जिस पर अपड़की स्याहीसे तसवीर खींची गई है, सिलण्डर पर लपेट कर भेरितव्य स्थान पर भेज बाद भेजनेके साथ ही बड़ी तसवीर तयार हो जाती है। उस समय प्राप्तक यन्त्रके सिलण्डर पर दो कागज चढ़े रहते हैं। (जिनमें एक 'कारबोन पेपर होता है) और उनके ऊपर कांटा तथा Stylus लगाया जाता है। जब दोनों स्टेशनोंका प्रवाह (Current) जोड़ा जाता है और दोनों सिलण्डर अपने अपने संयोगकी सहायता से समभावसे घूमने लगते हैं तथा प्रेरक यन्त्रका कांटा जब पत्तीके अपड़ेको छूने जाता है, तब अपड़ाके noncondactor होनेसे प्राप्तक यन्त्रमें वैद्युतिक प्रवाह न

पहुंचनेके कारण ग्राहक यन्त्रका काँटा कागज पर जोरसे लग कर चिह्न बना देता है। प्रेरक यन्त्रमें जैसी भी तसवीर लगी रहती है, ग्राहक यन्त्रके कागज पर हूबहू वैसे ही चिह्न या रेखाएँ आदि खींच जाती हैं। पत्तीके जिन स्थानोंमें चपड़ा नहीं रहता, उन स्थानों पर काँटेके लगते ही वैद्युतिक प्रवाह चालित होता है और तत्क्षणात् ग्राहक यन्त्रका काँटा कागजसे अलग हो कर ऊपरको चढ़ जाता है, फिर उस कागज पर किसी तरहका दाग नहीं पड़ता। इस प्रकार सिलण्डर एक बार घूम कर कुछ देर ठहरता है और कुछ बाईं ओर हट कर फिर घूमने लगता है। क्रमशः रेखाओंके पार्श्वमें रेखायें बनती जाती हैं और २० वा ३० मिनटमें एक चित्र बन कर तैयार हो जाता है। इसके बाद कागज खोल कर चित्रकारको दिया जाता है और वह उसे देख भाल कर जहां जो कुछ कमी रह जाती है, उसे सुधार देता है, फिर वह चित्र प्रकाश-योग्य हो जाता है। सिरके बाल पके हों, तो लिख दिया जाता है। उसके अनुसार चित्रकार आलोक और छाया डाल कर उसे सुधार देता है। एक ही मशीनसे उसी समय वही तसवीर भिन्न भिन्न दूरवर्त्ती स्थानों पर भेजी जा सकती है।

यह स्थिर हो चुका है कि, बिजली एक सेकेण्डमें ४००००० मील दौड़ सकती है। अतएव यह कहा जा सकता है, कि चाहे कितनी भी दूर क्यों न हो इसका भी प्रवाह तत्क्षणात् पहुंच जाता है। फिलहाल इस यन्त्रको "New York Herald"ने अपने ही कब्जेमें रखा है।

ह्यु साहबका प्रिण्टिङ् टेलिग्राफ (Hughe's printing-telegraph—इसके द्वारा दूरवर्त्ती स्टेशन पर अंग्रेजी अक्षरोंमें छपा हुआ संवाद पहुंचता है। इसके यन्त्रादि बहुत ही जटिल हैं; इसलिए सुनिपुण कर्मचारी ही इसका व्यवहार कर सकते हैं। फिलहाल इसकी और भी उन्नति हो गई है।

काउपर साहबका राइटिङ् टेलिग्राफ (Cowper's Writing telegraph—इस अद्भुत यन्त्रके द्वारा, एक स्टेशन पर संवाददाता जो कुछ भी लिखेगा, वह तत्क्षणात् दूसरी स्टेशन पर लिख जायगा। इसकी अब काफी तरक्की हो गई है।

सामुद्रिकतार—जो तार समुद्रमें हो कर जाते हैं, वह बहुत मजबूत होते हैं और उस पर नाना प्रकारके अपरिचालक पदार्थ चढ़े रहते हैं। सामुद्रिक तारको गठन-प्रणाली इस प्रकार है,—पाँच या सात विशुद्ध तांबेके तारोंको एक साथ ऐंठ कर, उसके ऊपर अपरिचालक कोई पदार्थ मढ़ा जाता है; फिर उस पर गुटापार्चा कुचुक आदि पदार्थ ४।५ बार चढ़ाये जाते हैं। अन्तमें उसे लोहेके तार और अलकतरेमें डुबोये हुए सन आदिके द्वारा वेष्टित किया जाता है। इस प्रकारसे मध्यस्थित तारके सुरक्षित हो जाने पर, फिर उसे धूना तारपिन तेल, अलकतरे आदिसे परिपूर्ण उत्तम कड़ाहेमें डुबो लिया जाता है।

बे-तारका तार—(Wireless Telegraph) इस टेलिग्राफमें तारको आवश्यकता नहीं, बिना तारके ही खबर पहुंच जाती है। केवल दोनों स्थानों पर दो विद्युत्यन्त्र होते हैं, जिनकी सहायतासे एक स्थानका संवाद दूसरे स्थान तक बिना तारकी सहायताके ही पहुंच जाता है। विशेष विवरणके लिये 'बे-तारका तार" देखो।

ताडित वियोजन (सं० क्लो०) ताड़ितस्य वियोजनं ६ तत्। (Electrical repulsion) जो ताडित पदार्थोंके गुण द्वारा छोटी वस्तु काँच या लाहसे अलग हो जाय, उसे ताड़ित-वियोजन कहते हैं।

ताडिताकर्षण (सं० क्लो०) ताडितस्य आकर्षणं ६ तत्। (Electrical attraction) वह वस्तु जो ताडित पदार्थोंके गुण द्वारा काँच या लाहके साथ मिल जाती है उसे ताडिताकर्षण कहते हैं।

ताड़ितापरिचालक (सं० पु०) ताड़ितस्य अपरिचालकः ६-तत्। (non-conductor of electricity) वह वस्तु जिससे ताडित पदार्थोंका सञ्चालन निवारण किया जाय।

ताडितालोक—ताड़ितका आलोक, बिजलीका प्रकाश।

ताड़ी (सं० स्त्री०) ताडि ङीष्। ताडका पेड़। इसका पर्याय—ताडि, ताली और तालि है। २ आभरणविशेष, एक प्रकारका गहना।

ताड़ी (हिं० स्त्री०) मादकशक्ति विशिष्ट ताड़का रस, वह नशीला रस जो ताड़के फूलते हुए डंठलोंमेंसे निक-

गता है। प्रधानतः ताड़के रसको ताड़ी कहा जाने पर भी ईख, खजूर, गोल मैरेय नारियल आदि वृक्षसे जो रस निकलता है, जिससे पीनेसे नशा होता है, उसको भी साधारणतः ताड़ी कहते हैं।

भारतमें ताड़ीका व्यवहार कुछ नया नहीं है। कुमार्ज तन्त्रमें तालिकाके नामसे ताड़ीका उल्लेख पाया जाता है। सम्भव तन्त्रके १२वें पटलमें इक्षुरस बदरी रस, जम्बूरस खर्जूररस नारिकेल और द्राक्षारससे मादक-द्रव्य बनानेका विवरण है। मद्य देखो।

भारतवर्षमें अब भी जगह जगह नशेके लिये ताड़, खजूर, नारियल मैरेय आदिका ताड़ी व्यवहृत होती है। ताड़ीमें मादकताशक्ति होने पर भी ताड़ी और मद्यमें बहुत पार्थक्य है। स्वभावतः या कृत्रिम उपायसे ताड़ आदिके वृक्षसे जो रस निकलता है उसको धूप या तापसे फेनयुक्त करके तैयार किया जाता है इसीका नाम ताड़ी है और इसे सड़ा चुआ कर जो आसव बनाया जाता है उसको मद्य कहते हैं।

भारतमें भिन्न भिन्न वृक्षोंसे जैसे जैसे ताड़ी उत्पन्न होती है, नीचे उन सबको प्रणाली लिखी जाती है।

ताड़-वृक्षके ऊर्ध्वभागमें जो कच्ची कच्ची पुष्पित शाखा या फलोंके गुच्छ डंठल निकलती हैं, उनके सिरेको अच्छी तरह छील कर रस निकलनेके स्थानमें एक भाण्डपात्र बांध दिया जाता है। पश्चात् चढ़नेवाले लोग रोज सुबह उसे खोल कर उसका रस दूसरे पात्रमें ढाल कर ले जाते हैं और पूर्ववत् डंठलोंको छील कर पात्र बांध देते हैं। इस तरह जब तक उन डंठलोंका मूल तक न कट जाय तब तक वे छीले जाते हैं। साधारणतः फाल्गुनसे वैशाख मास तक ताड़ वृक्ष काट कर रस निकाला जाता है। भारतमें सर्वत्र ही ताड़से रस निकाला जाता है किन्तु दाक्षिणात्यमें कुछ अधिक। ताड़ देखो।

अकसर करके पासी लोग इसमें थोड़ीसी पुरानी बासी या फेनयुक्त ताड़ी मिला देते हैं, जिससे उस रसमें मादकताशक्ति बहुत जल्द बढ़ जाती है।

ताड़का रस या ताड़ी साधारण लोगोंको नशा करनेका सहज उपाय है। इससे गवर्मेण्टको आबकारीमें हानि होते देख, एक बार बंबई गवर्मेण्टने थाना और ताड़वृक्षोंको काट डालनेका आदेश दिया था।* इसके अनुसार एक सूरत जिलेमें ही प्रायः लाखसे ज्यादा वृक्ष काटे गये थे। किन्तु रक्तबीजका झाड़ क्या सहजमें निर्मूल हो सकता है? कुछ दिन बाद ही प्रायः पचास हजार वृक्ष फिर पैदा हो गये। कुछ भी हो अब गवर्मेण्ट ताड़ और खजूरके पेड़को निर्मूल करना नहीं चाहती बल्कि इससे जो ताड़ी बना कर बेचते हैं, गवर्मेण्ट उनसे कुछ कुछ कर वसूल करती है।

भारत और सिंहलके रोटीवाले प्रायः सर्वत्र ही पाव रोटी बनानेके लिए ताड़ीका व्यवहार करते हैं। इससे सिरका भी बनाते हैं।

भावप्रकाशके मतसे ताड़का ताजा रस अत्यन्त मादक, खट्टा होने पर पित्तजनक और वायुदोषनाशक है।

खजूर।—देशी खजूर पिण्ड खजूर आदि नाना प्रकारके खजूरवृक्षके डंठलोंको छील काट कर जो रस निकाला जाता है उससे भी ताड़ी बनती है। खजूर रस सूर्योदयसे पहले और प्रातःकालमें खूब मीठा और मादकतारहित रहता है, किन्तु जितना दिन चढ़ता रहता है उतनाही उसमें खमीर बढ़ता और ताड़ी रूपमें परिणत होता रहता है। दिन चढ़े बाद उस फेनयुक्त खजूर रसको पीनेसे नशा होता है।

मैरेय (मरि) (Caryota urens)—इसकी ताड़ी मन्द्राज प्रदेशोंमें अधिक प्रचलित है। इसके १५ से २० वर्ष तकके पेड़से मन्द्राजी लोग रस निकाला करते हैं। ग्रीष्मऋतुमें ही इससे अधिक रस निकलता है। एक एक पेड़से १२ वर्षमें एक मनसे भी ज्यादा रस प्राप्त होता है। पेड़को काट देने पर भी एक महीने तक रस निकलता रहता है। ताजा रस खानेमें बहुत मीठा लगता है, किन्तु थोड़ी देर रख छोड़नेसे उसमें खमीर आ जाता है और वह तीव्रमादकताशक्तिविशिष्ट ताड़ीमें परिणत हो जाता है। दक्षिणमें ब्राह्मणके सिवा अन्य जातिके अधिकांश लोग इस ताड़ीको व्यवहारमें लाते हैं। इसको चुआनेसे मैरेय (Gin) बनता है।

नारियल। जैसे ताड़ वृक्षके फलहीन हुए डंठलोंको छील कर उसमेंसे रस निकालते हैं उसी तरह नारियल

* Bombay Gazetteer Vo. II p. 26.

वृक्षके अग्रभागको—जहांसे शाखाएँ निकलती हैं उससे नीचेके भागको काट छील कर रस निकाला जाता है। आर्यावर्त्तमें नारियलके पेड़से रस निकालनेको प्रथा अधिक प्रचलित न होने पर भी दाक्षिणात्यमें यथेष्ट प्रचलित है। बंबई प्रदेशके लोग दो तरहसे नारियलके पेड़की रक्षा करते हैं, एक फल पानेके लिए और दूसरे रसके लिए। जिस पेड़से रस निकाला जाता है, उस समय उस पर फल नहीं लगते हैं। बम्बई प्रदेशमें सानार लोग नारियलका रस निकालते हैं। इसके लिए उन्हें पेड़ पीछे १) से ३) रु० तक कर देना पड़ता है। ताड़ वा खजूर रससे अपेक्षा नारियलका रस अति शीघ्र ही आग दे कर ताड़ीरूपमें परिणत हो जाता है। इसलिए जो गुड़ बनाना चाहते हैं, वे ताजा रस ले कर शीघ्र ही आग पर चढ़ा देते हैं नारियलको ताड़ी साधारणतः नोरा नामसे प्रसिद्ध है। भारतवर्षके सिवा भारत महासागरीय द्वीपोंमें भी नोरा व्यवहृत होता है।

नारिकेल देखो।

नीम।—किसी किसी निंबवृक्षके काण्डसे भी दो तीन जगहसे रस निकलता है। कोई कोई इस रसको नीमको ताड़ी कहते हैं। रस निकलनेसे कुछ पहिलेसे ही जहांसे रस निकलेगा, वहां एक तरहका चूँ चूँ शब्द होता रहता है। शब्द सुनते ही लोग समझ लेते हैं कि, पेड़में रस हुआ है, शीघ्र निकलेगा, उस समय वहां एक पात्र लगा देते हैं। उसमें बहुत थोड़ा बूंद बूंद रस टपकता रहता है। नीमके पेड़से जैसे स्वभावतः रस निकलता है, उसी तरह कृत्रिम उपायसे भी किसी किसी स्थानसे रस निकाला जा सकता है। कृत्रिम उपायसे रस निकालना हो तो पेड़के उस स्थानका—जहांसे शाखाएं निकलती हैं —प्रायः आधा हिस्सा काट कर उसके नीचे पात्र रख देना चाहिये। स्वभावतः जैसा स्वच्छ और वर्णहीन रस निकलता है, कृत्रिम उपायसे वैसा वा उसका एकदशांश रस भी नहीं निकलता। मन्द्राज प्रदेशमें कोई कोई नीमको ताड़ीसे तेज शराब बना कर पीया करते हैं।

ताड़ल (सं० पु०) ताड़यति तड़ णिच-उल्। ताड़क, ताड़न करने वाला।

ताड्य (सं० त्रि०) १ ताड़न योग्य, ताड़नेके योग्य। २ डाँटने डपटने लायक। ३ दण्ड्य, सजा देनेके काबिल।

ताड्यमान (सं० त्रि०) तड़ णिच्-शानच्। १ वाद्यमान, जिसपर प्रहार पड़ता हो, जो पीटा जाता हो। २ जो डाँटा जाता हो। (पु०) ३ ढक्का, ढोल।

ताण्ड (सं० क्लो०) तण्डिना मुनिना कृतं अण्। नृत्य शास्त्र।

ताण्डव (सं० क्लो०) तण्डिना मुनिना कृतं ताण्डि नृत्य शास्त्रं तदस्यास्तीति वा तण्ड्ना नन्दिना प्रोक्तं तण्ड् अण्। १ नृत्य, नाच। २ पुरुषका नृत्य। पुरुषोंके नृत्यको ताण्डव और स्त्रियोंके नृत्यको लास्य कहते हैं। यह नृत्य शिवको अत्यन्त प्रिय है, इसी लिये कोई कोई कहते हैं, कि इस नृत्यका प्रवर्त्तक नन्दी है। किसी किसीके अनुसार तण्डु नामक ऋषिने पहले पहल इसको शिक्षा दी, इसीसे इसका नाम ताण्डव पड़ा है। ३ उद्धत नृत्य, वह नाच जिसमें बहुत उछल कूद हो। ४ शिवका नृत्य। ५ तृण विशेष एक प्रकारकी घास।

ताण्डवतालिक (सं० पु०) ताण्डवे शिवनृत्यकाले यस्तालः स कार्यतयास्यस्येति ठन्। शिवजीके द्वाररक्षक नन्दी।

ताण्डवप्रिय (सं० पु०) ताण्डवं प्रियं यस्य बहुव्री। १ महादेव। (त्रि०) २ नृत्यप्रिय मात्र, जिसको नाच बहुत प्रिय हो।

ताण्डवित (सं० त्रि०) ताण्डव कृतौ क्त कर्मणि क्त। नर्त्तित, नाच किया हुआ।

ताण्डवी (सं० पु०) संगीतमें चौदह तालोंमेंसे एक।

ताण्डि (सं० क्ली) ताण्डेन मुनिना कृतं ताण्ड-इञ्। नृत्यशास्त्र।

ताण्डिन् (सं० पु०) ताण्ड्येन प्रोक्तं अधीयते इति इनि यलोपः। तण्डिमुनिपुत्र ताण्डप्रोक्त शाखाध्यायी, सामवेदको ताण्ड्य शाखाका अध्ययन करनेवाला। २ यजुर्वेदका एक कल्पसूत्रकार।

ताण्डिन (सं० पु०) ताण्डिन् अण्, इनो न टिलोपः। मुनिभेद, तण्डिमुनिके पुत्रका नाम। इन्होंने यजुर्वेदका कल्पसूत्र प्रणयन किया है। तण्डि देखो।

ताण्डी (सं० स्त्री०) ताण्ड्य स्त्रियां ङीप्, यलोपः। तण्डि मुनिकी स्त्रीके वंशज।

ताण्ड्य (सं० पु०) तण्डिमुनेरपत्यं गर्गादि यञ्। १ तण्डि मुनिके अपत्य। २ सामवेदके एक ब्राह्मणका नाम।

तात (सं० पु०) तनोति विस्तारयति गोत्रादिकं तन् क्त दीर्घश्च (पुत्तनिम्बा दीयन्ते च। १।६०) अनुदात्तेति तनेर्लोप। १ पिता। २ अनुकम्पा अनुग्रहपात्रके प्रति सम्बोधनमें व्यवहृत शब्द प्यारका एक शब्द या सम्बोधन जो माई बन्धु पुत्र मित्र विशेषतः अपनेसे छोटेके लिये व्यवहृत होता है। ३ अनुकम्पा दया। (त्रि०) ४ पूज्य, आदरणीय।

तातगु (सं० पु०) तातस्य पितुरिव गौर्वाचकशब्दो यस्य बहुव्री। १ पितृव्य, चाचा। (त्रि०) २ जनकहित, पिताकी भलाई करनेवाला।

तातजनयित्री (सं० स्त्री०) तातश्च जनयित्री च। पिता और माता यह शब्द नित्य द्विवचनान्त है।

ताततुल्य (सं० त्रि०) तातेन पितृतुल्य तुल्यः तत्। पिताके तुल्य, जो पिताके समान हो। इसका पर्याय—पितृसम मनोज्ञसम मनोज्ञर पितृसदृश और तातन है।

तातन (सं० पु०) तात इव प्रियं यस्य तथा भूयते तात स्वार्थे क। खञ्जन पक्षी खिड़रिच।

तातरी (हिं० स्त्री०) एक पेड़का नाम।

तातल (सं० पु०) तात आनि अ त प्रो० यत्न त। १ रोग। २ पाक, पकना। ३ लोहकूट, लोहेका काँटा। ४ पितृतुल्य सम्बन्धी। ५ मनोज्ञ अनके समान जिसका बोध हो पतिरैणवात्। (त्रि०) ६ तप्तमात्र गरम।

ताता (जमशेदजी)—भारतवर्षके गौरव स्वरूप एक प्रधान वणिक। इन्होंने हमारे देशके व्यवसाय वाणिज्यमें ढिलोंयोंको प्रतिष्ठा स्थापित की है। आज इनके द्वारा स्थापित जमशेदपुरका लोहेका कारखाना देख कर पथिकोंके प्राय सभी व्यक्ति आश्चर्य करते हैं।

१८३८ ई०में बड़ोदा राज्यके अन्तर्गत नामसारीमें इनका जन्म हुआ था। जिस समय मुसलमानोंके अत्याचारोंसे घबड़ा कर पारसी लोग भारतमें आये थे, उस समय नामसारी पारसी समाजका एक प्रधान केन्द्र हो गया था। जमशेदजी तातामे पारसी जातिमें ही जन्म लिया था। बाल्यावस्थामें जमशेदजीने नामसारीमें ही प्रारम्भिक शिक्षा पाई थी और यहीं धर्मग्रन्थोंका पढ़ना सीखा था। उस समय वे शिकार खेलना बहुत पसन्द करते थे। अल्प समयमें इन्होंने विशेष व्युत्पत्ति लाभ की थी। इसके बाद १८५२ ई०में ये उच्च शिक्षा लाभ करनेके लिए बम्बई भेजे गये, उस समय इनकी उमर १० वर्षकी थी।

बम्बई पहुँच कर ताताने मानो नयी दुनियामें पैर रक्खा। यहां चारों ओर नाना जातिके लोग नाना कार्योंमें मशगूल थे, नयी नयी चिन्ताओं और नये नये कार्यों की विचित्र धारा प्रवाहित हो रही थी। जमशेदजी बम्बई आ कर एलफिन्स्टन स्कूलमें भरती हुए। १८५८ ई०में इनका विद्याभ्यास समाप्त हुआ। छात्र जीवनमें ये विशेष कोई कृतित्व नहीं दिखा सके थे।

जमशेदजीके पिता एक मामूली रोजगार करते थे। चीनदेशके साथ उनका वाणिज्य चलता था। ताता कालेजसे निकल कर पिताके साथ व्यवसायमें लग गये। अफीमका रोजगार उस समय पारसियोंके हाथमें ही था। अन्य लोग इस व्यवसायको कम समझते थे। किन्तु उस समय चीनमें चीजोंको आमदनी रफ्तनीका विशेष सुभीता न था। ताताने जिताके पास रह कर कुछ काम सीखा और फिर वे हांग कांग भेजे गये वहां अफीमके रोजगारको इन्होंने भली भांति सीख लिया जिससे इनकी वाणिज्य बुद्धि खुल गई।

इसके कुछ दिन बाद ही अमेरिकामें अन्तर्विग्रह होनेके कारण वहांसे रूईको रफ्तनी बन्द हो गई, फिर क्या था, बम्बई नगर रूईके व्यवसायका केन्द्र हो गया। ताता कम्पनीने प्रसिद्ध प्रेमचन्द रायचन्दके साथ मिल कर रूईका व्यवसाय प्रारम्भ कर दिया। ताता लन्दन जा कर रूईके व्यवसाय पर्यवेक्षण करने लगे। १८६५ ई०में अमेरिकाका युद्ध सहसा समाप्त हो गया, जिससे ताताको कुछ क्षतिग्रस्त होना पड़ा। लन्दनमें जमशेदजीने जो रूई बेचनेके लिए शाखायें खोली थीं उन्हें बेच कर वे भारत लौट आये। बम्बईमें जो उनका कारोबार था, वह किसी तरह कायम रहा।

ताताकम्पनी धीरे धीरे इस क्षतिकी पूर्तिके लिए

कोशिश करने लगे। इसके कुछ दिन बाद ही अबिसिनियाके राजा थिओडरके साथ भारत गवर्मेण्टका युद्ध शुरू हो गया। अन्यान्य कम्पनियोंके साथ साथ ताता कम्पनीको भी सैनिकोंको रसद पहुँचानेका ठेका मिल गया। इस ठेकेमें ताताको कुछ फायदा हुआ था। इसके बाद जमशेदजीने कुछ हिस्सेदारोंके साझेमें एक तेलकी मिल खरीद ली, पीछे वह कपड़ेकी मिल बना दी गई इस मिलमें सूत भी बनता था। उन दिनों उस प्रान्तमें कुछ ७।८ मिलें थीं, इस लिए उन्हें खूब लाभ होने लगा। इस मौके पर केशोजी नायक नामके एक दलालने बहुत ज्यादा कीमत दे कर उनसे मिल खरीद ली। थोड़े दिनकी अभिज्ञतासे ताता समझ गये, कि बम्बईमें कपड़ेकी मिल खोल कर खूब लाभ उठाया जा सकता है। उन्होंने स्वयं एक मिल चलानेका निश्चय किया, परन्तु अच्छी तरह बिना समझे वे किसी काममें हाथ न डालते थे इस लिए उन्होंने पहले इंग्लैण्ड की मिलोंकी कार्य-प्रणाली देख आना आवश्यकीय समझा तदनुसार वे बम्बईसे मैनचेस्टरकी तरफ चल दिये।

इंग्लैण्डसे लौट आनेके बाद ताता विचारने लगे, कि भारतमें किस जगह कपड़ेकी मिल खोलनेसे विशेष सफलता प्राप्त हो सकती है। अन्तमें, नागपुरमें मिल खोलनेका निश्चय किया। ताताका यह अभिमत था, कि जिस प्रान्तमें खूब रुई पैदा होती हो, वहीं कपड़ेकी मिल खोलनी चाहिए। नागपुरमें रेल-लाइन होनेके कारण माल भेजने वा मंगानेमें भी किसी तरहकी अड़चन न पड़ती थी।

१८७६ ई०में मिल बन कर तैयार हुई और १८७७ ई०को १ली जनवरीको वह चालू हो गई। इस दिन महारानी विक्टोरिया भारतकी सम्राज्ञी हुई थी, इस लिए ताताने अपनी मिलका नाम रक्खा 'एम्प्रेस् मिल'। पहले पहले मिलके चलानेमें इन्हें बड़ी दिक्कतें झेलनी पड़ी थीं, परन्तु उनके मैनेजर बिजनजी दादाभाई बहुत योग्य और समझदार व्यक्ति थे, इसलिए धीरे धीरे सब दिक्कतें दूर हो गईं।

"एम्प्रेस मिल" स्थापित करनेके बाद, ताता उसे अच्छी तरह चलानेकी व्यवस्था करने लगे। इस व्यवस्था विधानसे इनकी प्रतिभाका परिचय मिला। ये चिर-प्रचलित रीतिका अन्ध-अनुसरण करना पसन्द न करते थे। इन्होंने पृथिवीके नाना प्रदेशोंमें परिभ्रमण कर वहांकी मिलोंकी क्रिया-पद्धतिका पर्यवेक्षण करके जो कुछ सीखा था, उसे भारतमें प्रचलित करनेकी पूरी चेष्टा की थी। सबसे पहले इन्होंने देखा, कि मिलको अच्छी तरह चलानेके लिए उसकी मशीन बहुत अच्छी होनी चाहिए। इसलिए उन्होंने पुरानी चीजोंके बदले बहुतसी नई चीजें खरीदीं। जिन मशीनोंसे थोड़े समयमें बहुत माल तैयार हो सके, ऐसी मशीनें मंगाई। हमारे देशमें उस समय ऐसी अच्छी मशीनें नहीं थीं। मिल-वाले अपेक्षाकृत कम कीमतकी मशीनोंसे काम चलाते थे। आखिर ताताके दृष्टान्तका अनुसरण कर अन्य मिल वालोंने भी अच्छी मशीनें मंगानीं। इसके बाद, अच्छी मशीनोंसे बने हुए अच्छे मालोंकी खपत किस स्थानसे हो सकती है, इस बातका पता लगानेके लिए ताताने चारों तरफ आदमी भेजे। स्थान ठीक होने पर, वहां किस तरह कम खर्चमें माल पहुँचे, इस बातका बन्दोबस्त करने लगे। इसके सिवा आपने मिलके पास ही कपासकी खेतीका इन्तजाम किया और अन्यान्य स्थानोंसे भी किफायतसे रुई मंगानेका बन्दोबस्त किया। ताता इस बातको जानते थे कि मिलको अच्छी तरह चलानेके लिए छोटी-बड़ी सभी बातोंमें पूरा पूरा ध्यान दिया जाता है।

इस प्रकारकी कोशिशसे कुछ ही वर्षोंमें मिल बड़े जोरशोरसे चलने लगी—लाभ भी काफी होने लगा। कर्मचारियोंको उत्साहित करनेके लिए ताताने कुछ पुरस्कार भी नियत किये और वार्षिक-लाभमेंसे उन्हें कुछ अंश भी देना प्रारम्भ कर दिया। इससे कर्मचारीगण मिलकी उन्नतिके लिए जी तोड़ कर परिश्रम करने लगे। जो कर्मचारी काम करते करते विकलाङ्ग वा वृद्ध हो जाते थे, उन्हें पेन्शन भी दे दी जाती थी। इसके अलावा कर्मचारियोंको और भी बहुतसे आराम थे। इसलिए वे अन्य मिलोंमें न जाते थे।

'एम्प्रेस मिल' में, ताताने उस समय शिक्षानवीश रख कर काम सिखानेका बन्दोबस्त किया था। शिक्षित

युवकोंको वे अच्छे वेतन पर नियुक्त करके उन्हें काम सिखाते थे और फिर उनमेंसे अच्छे आदमियोंको चुन कर उन्हें मिलका काम देते थे। इस तरह बहुतसे युवकों को आपको मिलमें काम मिला करता था और बहुतसे व्यवसाय सीख कर देशकी सम्पत्ति वृद्धि करते थे।

एक मिलको दस वर्ष तक चलानेके बाद टाटाने विचारा कि अब इस देशमें अच्छी चीजोंके बनानेका समय आया है, इसलिए ऐसे सूतोंमें सूत कातने चाहिए जिनसे खूब महीन धोती बन सके। इसीके लिए आपने दूसरी मिल खोलनेका निश्चय किया। भाग्यसे उस समय 'धरमसी मिल'का नीलाम हो रहा था। टाटाने १२॥ लाख दे कर उसे खरीद लिया। 'धरमसी मिल' उस जमानेमें सबसे बड़ी मिल थी। पचास लाख रुपये लगा कर मिल फिरसे चलाई गई। लोगोंने समझा टाटाने बहुत सस्ते दामोंमें मिल ले ली, किन्तु यह उनका कोरा भ्रम था। इस मिलमें टाटा पूरी ठगाये गये थे। मिलके कल-पुर्जे बिलकुल रद्दी थे जिनकी मरम्मत कराते कराते दस वर्ष बीत गये। दस वर्ष बाद मिल चालू हुई। इसमें टाटाको प्रचुर अर्थ व्यय करना पड़ा था। परन्तु रुपयों की अपेक्षा टाटाके धैर्यका ही अधिक प्रयोजन था। 'धरमसी मिल'को फिर चलाना टाटा के जीवनकी एक अपूर्व कीर्ति है। आपके अध्यवसाय को देख कर लोग चकित हो गये थे। दूसरा मिल मालिक होता तो कभीका बेच कर छुट्टी करता। परन्तु टाटा हटनेवाले न थे। दस वर्षकी घोर चेष्टाके बाद उन्होंने असम्भवको सम्भव कर दिखाया। यही टूटी धरमसी मिल अब लाखसे रुपये वर्षमें लाने लगी। इस मिलका आपने नाम रखा "स्वदेशी मिल"। अब भी 'स्वदेशी मिल' अच्छी अवस्थामें चल रही है।

टाटाकी दोनों मिलें अच्छी तरहसे चलने लगीं। पर तो भी उन्हें सन्तोष न हुआ। वे उन्नतिके नये नये मार्गोंके आविष्कार करनेमें सर्वदा व्यस्त रहते थे। उन्होंने देखा, भारतमें कपासकी खेती जिस ढंगसे की जाती है वह अच्छी नहीं है। मिस्रमें आप कपासकी खेती देख आये थे। आपने सोचा, भारतके लोग भी मिस्रजात होने पर कैसा उपाय अवलम्बन करेंगे। इस पर आपने एक छोटीसी पुस्तक भी लिखी, किन्तु उस समय आपकी बात पर किसीने भी ध्यान न दिया। परन्तु इस समय गवर्मेण्ट तक टाटा कम्पनीको रूईके विषयमें प्रमाण (Authority) मानती है।

इस समय विलायती जहाजवालोंने बम्बईके माल का भाड़ा बहुत ही ज्यादा कर दिया। जिससे मालिकोंको यह व्यवहार बहुत ही बुरा लगा पर वे कुछ कर न सके। आखिर टाटा जापान गये और वहांकी जहाज कम्पनीसे बन्दोबस्त कर आये। बम्बई लौट कर आपने तमाम मिल-वालोंका एक संगठन किया, जिसमें सबने जापानी जहाजमें माल भेजनेके लिए प्रतिज्ञापत्र लिख दिया। विलायती कम्पनियां टाटाको बारंबार देख कर [illegible] लगीं। कुछ दिन बाद उनके झगड़ेने विवादका रूप धारण किया अब जहाजवालों का रोजगार मिट्टी हो गया। परिणाम यह हुआ कि दोनोंमें प्रतिद्वन्द्विता होने लगी। पहले जिस चीजका महसूल १३) रु०से १८) रु० तक था, उसका अब २) रु० मात्र रह गया। पी० एण्ड ओ० कम्पनीने १) को रुपया महसूल कर दिया। दोनों दलोंमें भीषण संग्राम चलने लगा। टाटाने सबको समझाया कि "सावधान रहना, लोभमें आ कर कोई प्रतिज्ञापत्रको भङ्ग न करना। याद रखना, जापानी कम्पनी यदि एक बार भी पराजित हो गई, तो फिर विलायती कम्पनियोंके फन्देमें पड़ना पड़ेगा।" परन्तु मानता कौन था—लोभ बुरी बला है। बहुतसे व्यापारियोंने प्रतिज्ञापत्रकी शर्त तोड़ दी। परन्तु विलायती कम्पनियोंको भी खूब शिक्षा मिल गई। उन्होंने फिर भाड़ा बढ़ानेका नाम भी न लिया, बल्कि पहलेसे कुछ कम ही रखा।

टाटाने अन्यान्य धनियोंकी तरह धनको ही जीवन-का लक्ष्य न बनाया था। उनके जीवनमें सुख या विलासिताके लिए तनिक भी स्थान न था। तात्पर्य यह, कि टाटा धनका सदुपयोग करना जानते थे। आप सब तरह जिस तरह देशका हित हो, सर्वदा इसी चिन्तामें रहते थे। साधारण मनुष्योंकी तरह आपका जीवन निरर्थक नहीं था। कुछ कामोंकी कल्पना तो आपके मनमें सर्वदा जाग्रत रहती थी और उन कामोंको

सम्पन्न करनेके लिए आप सर्वदा सचेष्ट रहते थे। दोनों मिलोंको कम्पनीके हाथ सौंप कर जब आप निश्चिन्त हुए, तब आपने अपना मन दूसरी तरफ लगाया।

भारतके प्रतिभावान् छात्र जिससे विलायत जा कर आधुनिक वैज्ञानिक प्रणालीसे शिक्षा प्राप्त कर सकें, इसके लिए आपने दो छात्रवृत्तियाँ स्थापित कीं। (१८९२ ई०) पहले आपने ये वृत्तियाँ सिर्फ पारसी छात्रोंके लिए ही नियुक्त की थीं, किन्तु दो वर्ष बाद ही यह नियम उठा दिया गया। अब भारतका हर एक योग्य छात्र इस वृत्तिको प्राप्त कर विलायत जा सकता है। इस वृत्तिसे आज तक ३८ छात्र विलायतसे पढ़ कर आये हैं, जिनमें २३ छात्र पारसी हैं। विलायतसे लौट आनेके बाद यह रुपया मय ब्याजके वापस कर देना पड़ता है। ब्याज उसकी आमदनीके अनुसार लगाई जाती है।

ताताके जीवनका और एक उद्देश्य था, एक वैज्ञानिक गवेषणागारकी स्थापना करना। ताता इस बातको भली भाँति जानते थे कि विज्ञान ही सब प्रकार शिल्प वाणिज्यक उन्नतिका मूल है। इसी ख्यालसे उन्होंने सबसे पहले एक शिक्षित व्यक्तिको यूरोप और अमेरिका भेज कर आवश्यकीय संवादोंका संग्रह किया और अनेक विशेषज्ञोंके साथ इस विषयकी आलोचना एवं परामर्श किया। इसके बाद आप, भारतवर्षमें कैसा विज्ञानागार होना चाहिये, सम्प्रति उसमें किस किस विषयकी शिक्षा दी जानी चाहिए इत्यादि विषयोंका अनुसन्धान करने लगे। अन्तमें निर्णय हुआ, कि तीन लाख रुपयेका फण्ड हो जानेसे उसका तमाम खर्च निर्वाह हो सकता है और उसमेंसे जो बाकी रुपये बचेंगे, उसकी ब्याजसे उसका वार्षिक खर्च चल सकता है।

१८९८ ई०में जब लार्ड कर्जन बम्बई पधारे, तब इस विज्ञानशालाकी बात कही गई। १८९९ ई०में तीन बार विवेचना करनेके बाद गवर्नमेण्टने इस विज्ञानागारके खोलनेकी अनुमति दे दी। बैंगलोरमें इसकी नींव खुदी। महिसूरके विद्योत्साही महाराज बहादुर तथा गवर्मेण्टने इसके प्रतिष्ठानमें यथेष्ट सहायता की। परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है, कि ताता इस कालेजको अपने सामने चलते न देख सके। १९१० ई०में इस विज्ञान-मन्दिरका उद्घाटन हुआ। इसका नाम रक्खा गया "The Indian Institute of Research" अर्थात् भारतीय गवेषणा समिति। इस विज्ञानमन्दिरमें निम्न लिखित तीन विषयोंकी शिक्षा दी जाती है,—

(१) विज्ञान और शिल्पविज्ञान।
(२) आयुर्वेद
(३) दर्शन और शिक्षा।

इस विज्ञान मन्दिरमें संलग्न पुस्तकागार, जादूघर और वैज्ञानिक परीक्षागार भी है।

ताताके अन्यान्य कार्योंसे भले ही सब परिचित न हों, पर उनके प्रसिद्ध लोहेके कारखानेके विषयमें सभी जानकारी रखते हैं। यह कारखाना उनका अक्षय कीर्त्ति है और भारतवर्षमें एक अभिनव उद्योग है। हमारे देशमें बहुत प्राचीनकालसे लोहेका व्यवहार होता आता है। परन्तु वर्तमान वैज्ञानिक प्रणालीसे लोहा बनानेकी प्रथा यहाँ प्रचलित न थी। सम्भव है, किसी ज़मानेमें वैज्ञानिक उपायसे यहाँ भी लोहा, इस्पात आदि बनता था, किन्तु अन्यान्य विद्याओंकी तरह यह विद्या भी इस देशसे लुप्त हो चुकी थी। ताताकी बहुत दिनोंसे इच्छा थी, कि आधुनिक वैज्ञानिक उपायसे भारतमें भी लोहा बनानेकी चेष्टा होनी चाहिए। सुना जाता है, पहले भारतमें अच्छा लोहा ज्यादा नहीं मिलता था। अतएव अब यहाँ एक लोहेका कारखाना खुलना चाहिये, इस उद्देश्यसे भूतत्त्वविदोंने धीरे धीरे लोहेकी खान और पहाड़ोंका अनुसन्धान करना शुरू कर दिया। ताता इनके नये नये आविष्कारोंकी खोज रखते थे। बहुत अर्थ-व्यय करके आपने भी भूतत्त्वविदोंको नियुक्त किया और उनसे लोहेकी खानोंकी खोज कराने लगे। अनुसन्धानसे मालूम हुआ कि भारतमें बहुत लोहा है और यहाँ अनायास ही लोहेका कारखाना खोला जा सकता है। करीब तीस वर्षके अनुसन्धान और प्रयत्नके फलस्वरूप मध्यप्रदेशमें कारखानेके लायक एक जमीन पाई गयी। उस स्थानका नाम है साकची। यह हवड़ासे १५५ मीलकी दूरी पर तातानगर (पहले इसका नाम 'कालीमट्टी' था)-स्टेशनके पास ही है। तातानगर उतर कर

भारतीयोंको जाते हैं; ईंधनसे टो मेन खपना पड़ता है।

परन्तु खेद है कि टाटा इस कारखानेको तैयार न देख सके। १९०४ ई०में आपकी मृत्यु हो गई। उस समय कारखानेका काम चालू नहीं हुआ था। हाँ, उन के दोनों सुपुत्रोंने पिताके प्रयत्नको व्यर्थ नहीं जाने दिया; पुत्रोंने उनके सभी उद्योगोंको सार्थक कर दिखाया है।

टाटाको बगीचेका बड़ा शौक था। उन्होंने देश देशके पौधे ला कर अपने बागमें लगाये थे। वणिक होने पर भी आप बड़े मितव्ययी और मद्यपानके बड़े विरोधी थे। सब प्रकारके लोकसेवाके नेताओंको आप काफी आर्थिक सहायता दिया करते थे।

राजनीतिक विषयोंमें साधारणतः आप किसी प्रकार का मन्तव्य जाहिर नहीं करते थे। इस विषयमें चुप चाप काम करते रहना ही आप बुद्धिमत्ता समझते थे।

६५ वर्षकी अवस्थामें टाटाकी मृत्यु हुई थी। मृत्युके कई मास पहले आपको हृद्रोग हुआ था। डाक्टरों और हितैषियोंके अनुरोधसे १९०४ ई०के जनवरी मासमें चिकित्साके लिये आप यूरोप गये थे। इसी साल मार्चके महीनेमें आपको थोड़ा ठेकाम हो गया। १९वीं मई को जर्मनीके नाहिम शहरमें आपकी भी मानवलीला समाप्त हो गई। मृत्युके समय आपके पुत्र दोराब टाटा और ज्ञाति भाई रतन टाटा आपके पास थे।

आप नामके भूखे न थे। काम करना ही आपके जीवनका उद्देश्य था। आप चाहते तो बहुतसी उपाधियोंसे विभूषित हो सकते थे, किन्तु ऐसा विचार आपके हृदयमें कभी नहीं हुआ। परन्तु 'टाटा कम्पनी' आपके नामको अमर बनाये रखेगी, इसमें सन्देह नहीं।

'टाटा-कम्पनी' और इसका कारखाना-जमशेदजी टाटाके उद्योगसे १९०५ ई०में इस कम्पनीकी प्रतिष्ठा हुई और १९०७ ई०में इसका कार्य आरम्भ हुआ था।

गत युद्धके समय इस कम्पनी या कारखानोंने नाना प्रकारसे गवर्नमेंटको माल दे कर सहायता पहुँचाई है। इसके लिये भारत-गवर्नमेंट-रक्षणात्मक स्वत्व लगाकर कम्पनीको धन्यवाद दे चुकी है।

टाटा कम्पनीकी कार्यप्रणाली अत्यन्त चमत्कार है। इस कम्पनीने अपने प्रतिष्ठाताके नामानुसार (उनके सम्मानार्थ) शहरका नाम जमशेदपुर कर दिया है। जमशेदपुर अच्छा शहर है। यहाँके मकानात, बाजार, नाना चिकित्सालय, विद्यालय आदि सब टाटा द्वारा प्रतिष्ठित हैं। टाटानगर देखो।

इस कम्पनीके अधीन चिकित्सा और सफाई विभाग है। शिक्षा-विस्तारके लिये कम्पनीने चार विद्यालय खोल रखे हैं। कम्पनीके कर्मचारियोंके आमोद प्रमोदके लिए भी अच्छा इन्तजाम है। वहाँ दो इन्स्टिट्यूट और उनके साथ दो लाइब्रेरियाँ हैं। हर एक कर्मचारी चन्दा दे कर उसका सदस्य बन सकता है। इसके सिवा मद्रासी बङ्गाली और मारवाड़ियोंके भिन्न नाट्य-समाज हैं।

टाटाके कारखानेमें एक वृहद् विद्युतागार है। जिसे 'पावर हाउस' (Power House) कहते हैं। भारतवर्षमें इतने बड़े विद्युतागार बहुत कम हैं। इसके भीतर इतना भीषण शब्द होता है, कि प्रवेश करनेसे कान बहरे से हो जाते हैं। तमाम कारखानेका काम इसी विद्युतागार पर निर्भर है। कारखानेके भीतर सर्वत्र रेल-लाइन हैं भारी चीजें रेल पर लाद कर एक जगहसे दूसरी जगह पहुँचाई जाती हैं। चीजोंके लिए एंजिन भी बहुतसे हैं। ये सब कम्पनीकी सम्पत्तियाँ हैं। कारखानेमें सर्वत्र बिजली-बत्ती और टेलिफोनका प्रबन्ध है। कर्मचारियोंकी पिपासा-निवृत्तिके लिए बर्फ और सोडा वाटरका भी इन्तजाम है। इसके लिए उन्हें पैसे नहीं देने पड़ते।

टाटाका लोहेका कारखाना बहुत उत्कृष्ट समझा जाता है। इसका माल अमेरिका, जापान चीन एशिया न्यूजिलैण्ड, फ्रान्स, अफरीका और इटलीको जाता है। एशियाके प्रायः सभी बड़े बड़े नगरोंमें टाटाके कार्यालय (आफिस) हैं। भारतमें अन्यत्र कहीं भी ऐसा लोहेका कारखाना नहीं है।

टाटा-कम्पनीकी और एक अक्षय कीर्ति—'टाटा हाइड्रो इलेक्ट्रिक पावर सप्लाइ कम्पनी' है। यह एशियामें एक सर्वोपयोगी वैज्ञानिक व्यापार है। १९११ ई०में बाद

सौडिनश्रमके हाथसे पश्चिम-घाटके लोनड्ला नामक स्थान में इसकी स्थापना हुई थी। यहां पानीको रोक कर झट बनाया गया है। यहाँ चेरापुञ्जीसे भी ज्यादा वर्षा होती है। पृथिवी भरमें चेरापुञ्जीमें ही सबसे अधिक वर्षा होती है, ऐसा हमें मालूम है। परन्तु यहां ३१ दिन-में जितनी वर्षा होती है, चेरापुञ्जीमें उतनी वर्षा ४।५ मासमें होती है। इस झटका पानी खण्डाला उपत्यकासे खापोलीमें १७४० फुट नीचे जा कर गिरता है। इस जल-प्रवाहसे बिजली उत्पन्न होता है और वह बिजली तांबेके तारके भीतरसे बम्बई पहुंचती है। इस 'पावर-हाउस'की शक्ति १०००० घोडेके बराबर है, पृथिवी भरमें इसका द्वितीय स्थान है।

ताताथेई (हिं० स्त्री०) १ नृत्यमें एक प्रकारका बोल। २ नाचनेमें पैरके गिरने आदिका अनुकरण शब्द।

तातानगर (जमशेदपुर)-विहार उड़ीसा-प्रदेशके अन्तर्गत सिंहभूम जिलेका एक नगर। यह बङ्गाल-नागपुर रेलवे लाइन पर हवड़ेसे १५५ मील पश्चिम तथा जम-शेदपुर रेलवे-ष्टेशनसे तीन मील उत्तरमें अवस्थित है। यहां ताताका बहुत विस्तीर्ण कारखाना है। आजसे लगभग १५ वर्ष पहले यहां घोर जङ्गल था। रात-दिन बाघ-भालू और चीते आदि वन्य पशु क्रीडा किया करते थे। इस स्थानका नाम पहले "साकची" था। गत महायुद्धमें ताता-कम्पनीने लोहा इस्पात आदि दे कर सरकारकी सहायता की थी। उसीके पुरस्कारमें भारतके भूतपूर्व वायसराय लार्ड चेम्सफोर्डने इसका नाम, स्वर्गीय देशभक्त श्रीमान् जमशेदजी नसरवानजी ताताकी स्मृति रखनेके लिये, 'साकची' नामसे 'जमशेदपुर' और रेलवे-ष्टेशनका 'कालीमाटी'से 'तातानगर' कर दिया। ताता देखो।

जो स्थान पहले घनघोर जङ्गलसे परिपूर्ण था, आज वही नए ढङ्गका लक्ष्मीका लीलास्थल-स्वरूप एक सुन्दर नगरमें परिणत हो गया है। लोकसंख्या प्रायः ८० हजार है। यहांका दृश्य देखनेसे ऐसा प्रतीत होता है, मानो प्रकृति-माता इस नवजात नगरशिशुको अपनी गोद-में खिला रही है। इसके पश्चिममें खड़खाई नामकी नदी और कारखानेसे लगभग १½ मील उत्तरमें स्वर्णरेखा नामकी नदी बहती है। खड़खाई नदीको पार करने में यथेष्ट सुविधा नहीं, वरन् खतरेका खौफ है। इस पारके निवासी मजदूर वर्षा ऋतुमें रेलवे-पुल द्वारा, जो इस पर बना हुआ है, नदी पार करते हैं। सुवर्ण रेखा का दृश्य बहुत मनोरम है। इसके दोनों तट पर हरे भरे द्रुम हैं, जिससे इसकी नैसर्गिक शोभा बहुत बढ़ गई है।

यह नगर गत तीन चार वर्षोंसे जिलेका एक सब-डिवीजन बन गया है। पम्प-हाउस (Pump House) के निकट नदीकी धारा एक पक्के बांधसे बांध दी गई है। जब नदीमें अधिक जल होता है, तब इस बांधके ऊपरसे निकल जाता है। बांधके पश्चिम ओर जल जमा रहता है और वही जल बिजलीकी शक्तिसे खींच कर ४८ इञ्च व्यासवाले नल (Pipe) द्वारा, कारखानेके पास एक सुवृहत् तालाबमें पहुंचाया जाता है। शहरमें दो जल-भण्डार (Water Reservoirs) हैं, एक कदमा में और दूसरा नगरके उत्तरी भाग (Northern Town) में। नगरके भिन्न भिन्न विभाग L Town, G. Town, H. Town, आदि नामोंसे पुकारे जाते हैं। नगरमें जितनी सड़कें गई हैं, सभी पक्की हैं और जिनके दोनों बगलमें अच्छे अच्छे पौधे लगे हुए हैं। दृश्य दर्श-नीय है।

यहांका जल वायु साधारणतः उत्तम तथा शुष्क है। यहां प्रत्येक ऋतु अपना-अपना पूरा प्रभाव दिखाती है। कारखानेमें हजारों टन कोयला प्रतिदिन खाक होता है और कारखाने भी दिनोंदिन बढ रहे हैं। इन कारणोंसे जल-वायुमें कुछ दोष अवश्य आने लगे हैं। यहां दातव्य चिकित्सालय, मिसेज पेरिन मेमोरियल हाई स्कूल (Mrs. Perin Memorial High School) मिडिल स्कूल, बालिका स्कूल, टेक्निकल इंस्टीट्यूट (Technical Institute) रात्रि-औद्योगिक विद्यालय (Night Technical School) है। विहार-उड़ीसा प्रान्तमें जितने हाई-स्कूल हैं, उनमेंसे यही एक ऐसा स्कूल है जिसमें विज्ञान (Science) की शिक्षाका भी प्रबन्ध है, इसके सिवा स्वर्गीय लोकमान्य तिलक महा-राजका स्मारक-स्वरूप एक पुस्तकालय है।

यहांका नगर प्रबन्ध प्रायः सभीय है। आयमें इस कार्यमें किये भी जो कोम कर भाग करती है। नगर प्रबन्धके लिए बोर्ड आफ वर्क्स (Board of works) नामकी एक सभा है। यह ठीक म्युनिसिपालिटो सो है, दिनों दिन शहरको उन्नति हो रही है।

विशेष विवरण ताता शब्दमें देखो।

तातार (फा॰ पु॰) मध्य एशियाको मध्यप्रदेश-वासी एक जाति। ये मुगल-शाखाके अन्तर्गत हैं। भारत चीन और फारसके उत्तरमें जापानके पश्चिममें, कैस्पियन सागर और कृष्णसागरके पूर्वमें तथा हिमालय महासागरके दक्षिणमें जितने विस्तीर्ण भूभाग हैं वहांके अधिवासी युरोपियोंके निकट तातार नामसे परिचित हैं। पहले केवल मुगलजाति ही तातार नामसे प्रसिद्ध थी, लेकिन चङ्गिसखांके अभ्युदयके बाद मुगल शासनाधीन समस्त जाति ही तातार कहलाने लगी है। इस समय मध्य एशियाका तुर्क शासनाधीन भूभाग तातारी तथा उन की भाषा भी तातारी नामसे व्यवहृत हो गई है। अभी हिमालयके सीमान्तवर्ती तिब्बतके भोट, यारकन्द, भूटान और तुखारके तुर्क तथा चीनको माञ्चू जातिके लोग अपनेको तातारवंशी बतलाते हैं।

बहुतोंके मतसे तातार जाति तुर्क, मुगल और माञ्चू, प्रधानतः इन तीन श्रेणियोंमें विभक्त है।

काश्मीरके उत्तर लदाख प्रदेशमें भी अनेक तातारोंका वास है। तातार जातिके परिवारमें प्रति व्यक्तिका द्वितीय पुत्र लामा तथा तृतीय पुत्र ढोबाका पद पाता है, ये दोनों विवाह नहीं कर सकते, आजीवन ब्रह्मचर्य अवलम्बन पूर्वक रहते हैं।

पूर्व समयमें सिथियन, हिंस और अन्यजातिने यूरोपके उत्तरी भाग पर अधिकार किया था, वे भी तातार देश छोड़े हुए वहां गये थे। मग, हूण, सुइटिस माश्याज और शाक जाति भी इसी तातारवंशी है।

तातारी भाषा बोलनेमें दो भाग प्रकट होते हैं। एशियाकी असभ्यसीथ हूण जाति जो भाषा व्यवहार करती है, वह एक है। वह तुरानीय नामसे भी प्रसिद्ध है। फिर मध्य एशियामें जिस भाषाके साथ तुरुष्क भाषाका अधिक सादृश्य देखा जाता है, वही भी तातारी कहती है।

मध्य एशियाका एक देश। हिन्दुस्तान और फारसके उत्तर कैस्पियन सागरसे ले कर चीनके उत्तर प्रान्त तक तातार देश कहलाता है।

तातारी (फा॰ वि॰) १ तातार देश सम्बन्धी तातार देशका। (पु॰) २ तातार देशका निवासी।

ताति (स॰ पु॰) तायते तन-क्तिच्। १ पुत्र, बेटा। तायमाने क्तिन्। (स्त्री॰) २ वृद्धि, उन्नति, तरक्की।

तातील (अ॰ स्त्री॰) छुट्टीका दिन, छुट्टी।

तात्कालिक (स॰ वि॰) तस्मिन् काले भव' तत्काल-ठञ्। कालादिसूत्रेषु तत्कालात्। पा ४।३।११ इत्य सूत्रस्य वार्त्तिकोक्तत्वात् ठञ्। तत्कालीन उसी समयका।

महागुरु निपातमें बारह दिनका अशौच होता है। किन्तु ग्यारहवें दिन अशौच होते भी श्राद्धादि कार्य किये जाते हैं, उस समय अर्थात् श्राद्धकालीन अशौचकी तात्कालिक शुद्धि हुआ करती है।

तात्स्थ्य (स॰ क्ली॰) तत्स्थानता वह जो उसी समयका हो।

तात्पर्य (स॰ क्ली॰) तत्परस्य भावः तत्पर-ष्यञ्। १ वक्ताको इच्छा वह भाव जो किसी वाक्यको कह कर वक्ता प्रकाश करना चाहता हो। २ अभिप्राय ३ तत्परता।

"वक्तुरिच्छा तु तात्पर्यं परिकीर्तितं।" (भाषाप॰)

वक्ताकी इच्छा ही आकांक्षा है और वही तात्पर्य है। इसी तात्पर्यके अनुसार अर्थ मालूम हुआ करता है। एक उदाहरणसे ही इसका अर्थ स्पष्ट हो जायगा। 'गंगायां घोषः' इस वाक्यका अर्थ गङ्गाके किनारे घोष (अहीर) वास करता है, तात्पर्यके अनुसार ही इस तरहका अर्थ लगाया गया है। यदि तात्पर्य स्वीकार न किया जाय तो गङ्गामें अहीरोंका रहना संभव है। "गङ्गायां" अर्थात् गङ्गाके किनारे ऐसा अर्थ लक्षणाशक्तिके द्वारा प्रकाशित होता है किन्तु "गङ्गायां" इस शब्दसे गङ्गामें और "घोष" पदमें मत्स्यादिको समझना नहीं हो सकती अर्थात् "गङ्गायां घोष" ऐसा कहनेसे गङ्गामें मत्स्य रहा करती है ऐसा अर्थ हो जो नहीं सकता क्योंकि यहां पर बोलनेवालेका ऐसा अभिप्राय नहीं है। गङ्गाके किनारे घोष अहीर) वास करता है, यही बोलनेवालेका

प्रकृत अभिप्राय है। इस तरहके अभिप्रायका नाम ही तात्पर्य है। इसी तरह सब जगह वक्ताके तात्पर्यानुसार ही अर्थ लगाया जाता है और दूसरा उदाहरण लीजिये, जैसे 'काशी गङ्गा पर बसी है' इस वाक्यका शब्दार्थ काशी गङ्गाके जलके ऊपर बसी है, ऐसा होगा। लेकिन कहनेवालेका तात्पर्य यह है कि काशी गङ्गाके किनारे बसी है।

तात्पर्यक (सं० त्रि०) १ भावोद्दोपक, अर्थबोधक । २ तत्पर, उद्यत, मुस्तैद।

तात्य (सं० त्रि०) तद् छान्दसस्य: दकारस्य थात्वं । तत्कालीन, उसी समयका।

तात्विक (सं० त्रि०) १ तत्त्वसम्बन्धी। २ तत्त्वज्ञानयुक्त। ३ यथार्थ।

तात्स्तोम्य (सं० क्लो०) उसी तरहको स्तुति।

तात्स्थ (सं० क्लो०) उसमें स्थित, उसमें रक्खा हुआ।

तात्स्थ्य (सं० पु०) १ किसीके बीचमें रहनेका भाव। २ एक व्यञ्जनात्मक उपाधि। इसमें जिस वस्तुका कहना होता है, उस वस्तुमें रहनेवाली वस्तुका ग्रहण होता है। यथा—यदि कहा जाय कि 'सारा घर गया है' तो इसका 'घरके सब लोग गए हैं' इसके सिवा दूसरा अर्थ नहीं हो सकता।

तात्थाभाव्य (सं० त्रि०) स्वरितके परे जिसका उदात्त उच्चारण हो।

ताथेई (हिं० स्त्री०) तातायेई देखो।

तादर्थिक (सं० त्रि०) उसी तरह।

तादर्थ्य (सं० क्लो०) तदर्थस्य भावः तदर्थ-ष्यञ्। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।२४। १ तन्निमित्त, उसके लिये। २ तदर्थता, उसके वास्ते।

तादात्म्य (सं० क्लो०) तदात्मनो भावः तदात्मन् ष्यञ्। तत्स्वरूपता, एक वस्तुका मिल कर दूसरी वस्तुके रूपमें हो जाना।

तादाद (अ० स्त्री) संख्या, गिनती, शुमार।

तादोना (अव्य०) तदानीं पृषो० साधुः। तदानी, उसी समय।

तादुरी (सं० स्त्री०) मेंढकका एक नाम।

तादृक्ष (सं० त्रि०) स इव दृश्यते तद् दृश्-क्स, सर्वनाम टेरात्वं। उसी तरह, उसीके जैसा।

तादृग्विध (सं० त्रि०) तादृगो विधा यस्य बहुव्री०। उसी तरह।

तादृश् (सं० त्रि०) स इव दृश्यतेऽसौ तद्-दृश-क्विन्। त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ्च। पा ३।२।६०। सर्वनाम टेरात्वं। उसीके समान, वैसा।

तादृश (सं० त्रि०) स इव दृश्यते तद्-दृश कञ्। तत्तुल्य, उसीके जैसा।

तादृशी (सं० स्त्री०) तादृश ङोप्। तत्तुल्या, उसीके समान, वैसी।

ताद्धर्म्य (सं० क्लो०) एकधर्म, एक नियमता।

ताधा (हिं० स्त्री०) तातायेई देखो।

तान (सं० पु०) तन-घञ्। १ विस्तार, फैलाव, खींच। २ ज्ञानका विषय। ३ गानाङ्गभेद, गानेका एक अङ्ग। अनुलोम विलोम गतिसे गमन और मूर्च्छनादि द्वारा किसी रागको अच्छी तरहसे खींचनेका नाम तान है। सङ्गीत दामोदरके मतसे स्वरोंसे उत्पन्न तान ४८ हैं। इन ४८ तानोंसे भी ८३०० कूट तानें निकली हैं।

किन्तु बङ्गला सङ्गीतरत्नाकरमें तानके चार भेद लिखे हैं, यथा—अरचक, घातक, सातक, और सुरातक। जिस तानमें अनुलोम या विलोममें एक सुर दो वार प्रयुक्त होता हो उसे अरचक कहते हैं। जिसमें अनुलोममें एक वार और विलोममें एक वार प्रयुक्त होता है, वह घातक है; तीन वार व्यवहृत होनेसे सातक और चार बार व्यवहृत होनेसे सुरातक कहलाती है।

एक सुरमें	१ तान।
दो सुरमें	२ तान।
तीन सुरमें	६ तान।
चार सुरमें	२४ तान।
पांच सुरमें	१२० तान।
छः सुरमें	७२० तान।
सात सुरमें	५०४० तान।
समग्र	५९१३ तान।

(संगीतरत्ना०)

४ कम्बलका ताना। ५ भाटेका हलड़ा, लहर, तरङ्ग।

६ पक्षी या चौपाये जन्तुओंके लिए बनाई जालीकी मोटी मोटी छड़। ७ एक पेड़का नाम।

तानतरा (सं० स्त्री०) मन्दाग्रधारी, सरयकी लहर।

तानतरंग—हिन्दीके एक प्राचीन कवि। इनकी प्रायः सभी कविताएँ सराहनीय हैं। उदाहरणार्थ एक नीचे दी जाती है—

"जब हो जाति हेरे कुंवरिया कन्हैया मेरे पनघट पाटकी।
छटा जाति हेरे पहने पटि रँ
यह उमड़ मोहि मधुवनपर हाटकी।
मेरे संगकी दूर निकस गई हो मैं भी रह गई पनघटकी।
तानतरंग प्रभु झगरो कान्हे हाथ झुलाई पारकी।"

तानना (हिं० क्रि०) १ जोरसे खींचना, बढ़ाना। २ बल-पूर्वक विस्तीर्ण करना जोरसे बढ़ा कर पसारना। 'तानना' और 'खींचना'में भेद इतना ही है, कि तानने में वस्तुका स्थान नहीं बदलता, लेकिन 'खींचना' किसी वस्तुको इस प्रकार बढ़ानेको भी कहते हैं, जिसमें वह अपना स्थान बदलती है। जैसे खूंटेसे बंधी डोरीको तानना, गाड़ी खींचना वह खींचना। ३ तानेकी तरह ऊपर किसी प्रकारका परदा लगाना। ४ कारागार भेजना। ५ किसीके विरुद्ध कोई लिखा-पढ़ी या दरखास्त आदि भेजना। ६ किसी पदार्थको एक छोरसे दूसरे छोरके स्थान तक ले जाकर बांधना। ७ प्रहारके लिये शस्त्र उठाना।

तानपूरा (हिं० पु०) एक प्रकारका बाजा जो सितारके आकारका होता है। यह गानेवालेको सुर भरनेमें बड़ा सहायता देता है। इसमें चार तार होते हैं जिनमेंसे दो लोहेके और दो पीतलके रहते हैं। सुरबांधनेका क्रम—

पि	लो	लो	पि
प	स	स	प

तानव (सं० क्ली०) तनोर्भाव तनु-अण्। (इगन्तात्‌ लघुपूर्वात्‌। पा ५।१।१३१) शरीरकी लघुता, शरीरकी दुर्बलता।

तानसुर—हिन्दीके एक प्राचीन कवि। इनकी सारी कविताएँ उत्कृष्ट, मधुमय और चमत्कार होती थीं। यों तो ये अनेक कविताएँ बना गये हैं पर यहाँ एक ही उद्धृत की जाती है—

"धर्मसों बीच पाप, पापसों बीच क्रोध क्रोधसों बीच लोभ
लोभसों बीच मोहमद, मदसों बीच मत्सर बढ़ाइगा।
सर्पसों बीच ..., ... बीच दुख
सिरसों बीच पांव, रामसों बीच प्रजा पाइगा।
... बीच ..., ... बीच ... बैरसों बीच ...
... बीच निर्गुन, बैरसों बीच ... आइगा।
देवसों बीच ..., ... बीच ...
कवि तानसुर सगुनसों बीच निर्गुनी पाइगा।"

तानवरन—हिन्दीके एक कवि। इनकी कविता सरस तथा सराहनीय होती थी, उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं—

"देवनमें प्रथम महा मासनमें प्रथम बैसाख कार्तिक
रितुनमें प्रथम बसन्त तिथनमें प्रथम आदितको कीजिये।
वेदमें प्रथम सामवेद पुरान प्रथम श्रीभागवत
ज्ञान प्रथम नारायण रागनी प्रथम भैरव सो चित्त दीजिये।
सुर प्रथम नाद दीप प्रथम जम्बूदीप नक्षत्र प्रथम अश्विनी
राग प्रथम भैरव कहि दीजिये।
... प्रथम करन गुन प्रथम रजोगुण रस प्रथम ...
कहत कवि तानवरन सुधा प्रथम पीजिये।"

तानव्य (सं० पु० स्त्री०) तनोरपत्य गर्गादित्वात्‌ यञ्‌। तनु ऋषिके गोत्रज।

तानव्यायनी (सं० स्त्री०) तनोरपत्य स्त्री तनु लोहितादित्वात्‌ ष्फ, षित्वात्‌ ङीष्‌। तनुऋषिकी गोत्र स्त्री।

तानसेन—भारतवर्षके एक अद्वितीय गायक। अबुल-फजलका कहना है कि, हजार वर्षके भीतर ऐसे गायक देखनेमें नहीं आये। पहले ये एक ब्राह्मण हिन्दू थे। वृन्दावनमें जा कर हरिदास गोस्वामीके शिष्य बने थे। भाठके अधिराज रामचन्द्रने इनके संगीतगुण पर मुग्ध हो कर इनको अपनी सभामें रक्खा था। प्रवाद है कि उन्होंने तानसेनके गाने पर खुश हो कर इनको करीब एक करोड़ रुपये दिये थे।

तानसेनकी ख्याति बहुत थोड़े समयमें ही भारत भरमें फैल गई थी। उस समय आदिल सूरने इनको अपने दरबारमें बुलानेके लिए बहुत कोशिश की थी पर ये बुलाने नहीं गये थे। बादशाह अकबर भी तानसेनकी अपूर्व संगीत-प्रतिभाका परिचय पा कर इनको दिल्ली बुलानेके

लिये व्यग्र हुए। उन्होंने तानसेनको आगरे ले आनेके लिये जलाल उद्दीनकुर्चीको भेजा। राजा रामचन्द्रको अकबरको आज्ञा उल्लङ्घन करनेका साहस न हुआ। उन्होंने रोते रोते तानसेनको विदा किया। तानसेनने जिस दिन पहले पहल दरबारमें उपस्थित हो कर गाना सुनाया, उसी दिन बादशाहने उनको दो लाख रुपये इनाममें दिये।

प्रवाद इस प्रकार है—पहले तानसेन दिल्लीश्वरके साथ मुलाकात नहीं करना चाहते थे। उनके पास पहुंचने पर भी वे कुछ गाते नहीं थे। बादशाह प्रायः छिप कर इनका गाना सुना करते थे। आखिर एक दिन अकबरने तानसेनके पास अपनी लड़की भेज दी। बादशाहजादीके रूपने तानसेनको मोहित कर लिया। शाहजादी भी तानसेन पर लट्टू हो गई। अकबरने दोनोंका विवाह कर दिया। तबसे तानसेन मुसलमान और अकबरके सभासद हो गये। पहले वे स्वरचित जितने भी गीत गाते थे, उसमें उनके प्रतिपालक रामचन्द्रके नामका स्वस्तिप्रकाश वा भनिता होता था। इन गीतोंको सहज-दृष्टिसे देखनेसे मालूम होता है कि उनमें रघुपति रामचन्द्रकी महिमा गायी गई है। परन्तु अकबरके आश्रित होनेके बाद वे भनितामें अकबर वा 'तानसेनपति अकबर' का नाम देते थे।

तानसेन एक सङ्गीतसाधक व्यक्ति थे। साधकका भाव उनके हृदयसे कभी भी दूरीभूत नहीं हुआ। वे वेदान्तिक भावसे ब्रह्मको जगत्के साथ एकाकार समझते थे। यों तो इनके बनाए हुए अनेक गीत मिलते हैं, पर यहां केवल एक ही गीत उद्धृत किया जाता है—

"प्यारे! तुही ब्रह्म तुही विष्णु तुही शेष तुही महेश।
तुही आदि तुही अनादि तुही अनाथ तुही गणेश॥
जल स्थल मरुत व्योम तुही अकार तुही सोम।
तुही उकार तुही मकार निरोङ्कार तुही धनेश।
तुही वेद तुही पुराण तुही हदीश तुही कुरान,
तुही ध्यान तुही ज्ञान तुही त्रिभुवनेश।
तानसेन कहे बैन तुही देन तुही रमण।
तुही धर पल्लुन तुही वरुण तुही दिनेश।"

मुसलमान धर्ममें दीक्षित होनेके बाद ये मियाँ तानसेनके नामसे प्रसिद्ध हुए थे।

तानसेनकी मृत्युके विषयमें भी एक अपूर्व उपाख्यान सुननेमें आता है। तानसेन अकबरके अत्यन्त प्रियपात्र हो गये थे, इसलिए बहुतसे लोग उनसे ईर्ष्या करते थे। बहुतसे उस्ताद सङ्गीत-संग्राममें परास्त हो कर उनको मारनेका षड़यन्त्र कर रहे थे। परन्तु उसमें वे कृतकार्य न हो सके। इसके बाद उन लोगोंने निश्चय किया कि, दीपक राग गानेसे गायक जल जाता है, इसलिए तानसेनसे दीपक राग गवानेसे ही इन लोगोंकी अभीष्टसिद्धि हो सकता है। एक दिन अकबर जब दरबारमें पहुंचे, तब उस्तादोंने दीपकका प्रसङ्ग छेड़ा। बादशाहने उन लोगोंसे दीपक गानेके लिए अनुरोध किया। उस्तादोंने कहा—'हम लोग दीपक नहीं जानते, दीपक गाना तो मियां तानसेन ही जानते हैं।' अकबरने तानसेनको दीपक गानेके लिए आदेश दिया। गायकचूड़ामणि तानसेनने बादशाहके पास आ कर कहा—"यदि आप मुझे चाहते हैं, तो दीपक गानेका आदेश न दें।" किन्तु दीपक सुननेके लिए बादशाहका कुतूहल बहुत बढ़ गया था। उन्होंने तानसेनकी बात पर ध्यान न दिया। तब तानसेन क्या करते? उन्होंने अपनी कन्याको मल्लार गानेके लिए कहा और खुद दीपक गाने लगे। उनका विश्वास था कि, मल्लारके गुणसे दीपकानल कुछ प्रशमित होगा। तानसेनकी कन्या मल्लार गाने लगी, किन्तु पिताके मरनेकी आशङ्कासे उसका स्वर विकृत हो गया।* तानसेन भी दीपक राग गाते गाते अपने ही दाहनसे आप दग्ध हो गये। कहा जाता है कि, उनके स्वरके प्रभावसे सभास्थ निर्वापित दीप उठे थे। किन्तु उनके जीवन-प्रदीपके साथ साथ वह दीपावली भी निर्वापित हो गई थी।

तानसेनकी कब्र उन्हींके आदिलीलाक्षेत्र ग्वालियरमें स्थापित हुई। अब भी वहां इनका कब्र देखनेके लिये बहुत दूर दूरसे नर्तकी और गायक आया करते हैं। इनकी कब्रके ऊपर एक वृक्ष अब भी मौजूद है। बहुतोंका विश्वास है कि, उस वृक्षकी पत्ती खानेसे कण्ठस्वर परिष्कार और गीतशक्तिकी वृद्धि होती है। इसलिए बहुतसे गायक और नर्तकी वहां आ कर उसकी पत्तियां चबाते हैं। ग्वालियर देखो।

* इस विकृत मल्लारका ही मियां मल्लार नाम पड़ गया है।

तानसेन सिर्फ एक अद्वितीय गायक ही थे, ऐसा नहीं, वे बहुतसे नवीन नवीन राग-रागिनी भी बना गये हैं। मियाँमल्लार, तोड़िया और दरबारी-कानाड़ा ये राग इन्होंके बनाये हुए हैं। आईन इ अकबरी और 'बादशाह नामा'में यथाक्रमसे तानतरङ्ग और बिलास नामक इनके दो पुत्रोंका उल्लेख पाया जाता है। दोनों ही प्रसिद्ध गायक थे। प्रसिद्ध गायक सुरतसेन इन्हींके वंशधर थे। इनके वंशज ग्वालियरमें खान्‌-उपाधिका व्यवहार किया था।

तानसेनके शिष्य भी प्रसिद्ध गायक हो गये हैं, जिनमें चाँदखाँ और सूरजखाँका नाम ही प्रसिद्ध है।

ताना (हिं० पु०) १ कपड़ेकी बुनावटमें वह सूत जो लम्बाईके बल होता है। २ दरी या कालीन बुननेका करघा।

ताना (हिं० क्रि०) १ तप्त करना, तपाना, गरम करना। २ पिघलाना। ३ गरम कर परीक्षा करना। ४ परीक्षा करना, जाँचना।

ताना (अ० पु०) आक्षेप वाक्य, व्यंग्य बोली ठोली।

ताना बाना (हिं० पु०) कपड़ेकी बुनावटमें लम्बाई और चौड़ाईके बल फैलाए हुए सूत।

तानारीरी (हिं० स्त्री०) साधारण गाना बजाना, राग।

तानाशाह (फा० पु०) अबुल्‌हसन कुतुबशाहका दूसरा नाम।

तानी (हिं० स्त्री०) कपड़ेकी बुनावटमें वह सूत जो लम्बाईके बल हो।

तानोपद (सं० पु०) आवश्यक ढब सुईका छेद।

तानुको—एक प्रसिद्ध पारसी कवि। इनका दूसरा नाम अबुल-आला था। ये तानके रहनेवाले थे। इनकी बनाई हुई कविताएँ अब समीप हैं।

तानूनपात (सं० त्रि०) अग्नि सम्बन्धीय।

तानूनप्त्र (सं० क्ली०) तनूनप्त्रा देवता अस्य अण्‌। वायुके लिये दिया जानेवाला दधि मिश्रित घृत, वह दही मिला हुआ घी जो वायुको चढ़ाया जाता है।

तानूर (सं० पु०) तन बाहुलकात्‌ ऊरण्‌। १ जलावर्त्त, पानीका भँवर। २ वायुका भँवर। ३ बहुवातचक्र, बवंडर।

तान्त (सं० त्रि०) तम-क्त। १ क्लान्त, बिलकुल थका हुआ। २ म्लान, मैला हुआ।

तान्तव (सं० क्ली०) तन्तोर्विकारः अण्‌। १ वस्त्र कपड़ा। (त्रि०) २ तन्तुनिर्मित, जिसमें तन्तु या तार हो, जिसमेंसे तार या तन्तु निकल सके।

तान्तवता (सं० स्त्री०) तान्तव तल्‌ टाप्‌। कठिन द्रव्यका विशेष धर्म। जिस गुणके रहनेसे कुछ पदार्थोंको खींच कर तन्तु अर्थात्‌ तार बनाया जा सकता है, उसका नाम तान्तवता है। आघातसहित गुणके साथ तान्तवता गुणका कोई भी सम्बन्ध नहीं है।

जिससे पतली पत्ती बनती है, उसीसे पतला तार बनता होगा ऐसा कोई नियम नहीं। लोहेका तार जैसा बारीक होता है पत्ती उतनी बारीक नहीं होती। रांगा और सीसेको पीट कर पतली पत्ती बनाई जा सकती है, पर उनको खींच कर तार नहीं बनाया जा सकता। प्लाटिनम्‌, चांदी, तांबा, सोना, लोहा, रांगा, सीसा इनमेंसे पूर्ववर्ती धातुओंकी अपेक्षा परवर्ती धातुओंमें क्रमशः यह गुण थोड़ा पाया जाता है। वस्तुतः प्लाटिनम्‌ अर्थात्‌ सित काञ्चन नामक धातुमें तान्तवता गुण सबसे ज्यादा है। किसी किसीने इसका इतना बारीक तार बनाया है कि जिसका व्यास एक इंचके एक लाख भागमें तीन भाग है।

तान्तव्य (सं० पु० स्त्री०) तन्तोः सन्तानस्य अपत्यं यञ्‌। तन्तुका अपत्य, तन्तुकी सन्तान।

तान्तव्यायनी (सं० स्त्री०) तन्तोरपत्यं स्त्री फक्‌ पित्वात्‌ ङीष्‌। तन्तुकी अपत्य स्त्री।

तान्तुवायि (सं० पु० स्त्री०) तन्तुवायस्य अपत्यं तन्तुवाय इञ्‌। तन्तुवायका अपत्य, तांतीका लड़का।

तान्तुवाय्य (सं० पु० स्त्री०) तन्तुवायस्य अपत्यं तन्तुवाय ण्य। सेनान्तलक्षणकारिभ्यश्च। पा ४।१।१५२। तन्तुवायके अपत्य, तांतीके लड़के।

तान्त्र (सं० क्ली०) १ तन्त्रीनिर्मित, वह जिसमें तार लगे हों। २ तन्त्रशास्त्र सम्बन्धीय।

तान्त्रिक (सं० त्रि०) तन्त्र सिद्धान्तमधीते वेद वा तन्त्र उक्थ्यादित्वात्‌ ठञ्‌। १ ज्ञातसिद्धान्त, जो सिद्धान्त जानता हो। २ शास्त्राभिज्ञ जो शास्त्र जानता हो।

३ तन्त्रशास्त्रवेत्ता, जो तन्त्र-शास्त्र जानता हो। मारण मोहन, उच्चाटन आदिका प्रयोग करनेवाला। ४ तन्त्र सम्बन्धी। (पु०) ५ सन्निपात-रोगविशेष, एक प्रकारका सन्निपात, जिस सन्निपातमें अत्यन्त उँघाई और उसमें अधिक प्यास लगती हो, अतिसार, अत्यन्त श्वास, कास, गात्र वेदना हो शरीर अधिक गरम और गला सूख जाता हो, नाकका अगला भाग शीतल हो जाता हो, जीभमें काली पड़ जाती हो, थकावट मालूम पड़ती हो तथा श्रवण-शक्तिका ह्रास और दाह उत्पन्न होता हो उसे तान्त्रिक सन्निपात कहते हैं।

तान्त्रिकी (सं० स्त्री०) तान्त्रिक-ङीप्। १ तन्त्र-सम्बन्धीया। श्रुतिप्रमाणक धर्म दो प्रकारका है, वैदिक और तान्त्रिक। तन्त्र देखो।

तान्दन (सं० पु०) वायु, हवा।

तान्दूर (सं० क्ली०) तन्दूरेण पाकयन्त्रभेदेन निर्वृत्तं अण्। तन्दूरपक्व-मांसभेद, अङ्गारसे परिपूर्ण गड्ढे में अलग अलग शुद्ध मांससे आच्छादन कर उसे तन्दूर-यन्त्र द्वारा पाक करनेसे तान्दूर मांस प्रस्तुत होता है।

तान्व (सं० पु०) तन्वाः प्राणाधिष्ठितत्वात् प्राणवत्या अयं अञ्, संज्ञा पूर्वकविधेरनित्यत्वात् वेद्दे न गुण। १ तनुज, पुत्र, बेटा। २ ऋषिभेद, तनु नामक ऋषिके वंशज। तनु दशा पवित्रवस्त्रं तस्येदं अण्। ३ दशा-पवित्र-वस्त्र-सम्बन्धी स्वार्थे अण्। ४ दशावस्त्र।

तान्वङ्ग (सं० पु०) तन्वङ्ग ऋषिके वंशज।

ताप (सं० पु०) तप-घञ्। १ क्लेशजनक उष्णादि स्पर्श-जन्य सन्ताप। २ कृच्छ्र, दुःख। ३ उष्णता, आँच, लपट। ४ ज्वर, बुखार। ५ यातना, मानसिक कष्ट, हृदयका दुःख। ६ आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक दुःख। दुःख देखो।

ताप (Heat)—प्रकृति-कार्यमें सामञ्जस्य-स्थापनके लिए विशेष उपयोगी एक प्राकृतिक शक्ति, जिसका प्रभाव पदार्थोंके पिघलने, भाप बनने आदि व्यापारोंमें पड़ता है, उष्णता, गरमी, तेज। इसके द्वारा आंधी तूफान आदि सैकड़ों आश्चर्यजनक भयानक घटनाएं होती हैं। इसके न होनेसे विशेष परीक्षाके द्वारा रसायनशास्त्रकी आलोचना नहीं की जा सकती। यथार्थमें ताप, पदार्थोंके संश्लेषण, विश्लेषण अवस्थान्तर वा रूपान्तर-प्राप्ति आदि क्रियाओंका एक प्रधानतम साधक है।

ऐसी कोई रासायनिक क्रिया नहीं, जिसमें तापका विनियोग, उद्भव या लोप नहीं पाता हो। इसके स्वतन्त्र और यथायोग्य विनियोग-प्रणालीको भलीभांति ज्ञान लेनेसे संसारमें सैकड़ों अद्भुत और महोपकारी कार्योंका सम्पादन किया जा सकता है। वाष्पीय-शकट, वाष्पीय यान (रेल जहाज) और तापमानयन्त्र आदि इसीके निदर्शन-स्वरूप हैं। क्या प्राणि राज्य और क्या जड़-राज्य तापकी महोपकारिता सर्वत्र ही विशेषतासे देखनेमें आती है।

तापके न होनेसे प्राणियों और उद्भिज्जोंका जन्म, परिवर्द्धन और पचन कुछ भी न होता। ताप विशेष उपकारी है, किन्तु इसका लक्षण क्या है? ताप अदृश्य है, प्रदीपकी ज्वलता देख कर यह नहीं कहा जा सकता कि वह उत्तम है। ताप भारविहीन है. किसी वस्तुका शीतकालमें जितना भार है, ग्रीष्मकालमें भी उतना ही भार रहता है। ताप-द्वारा भारमें कुछ भी परिवर्तन नहीं होता। फिर भी उसकी सत्ताकी उपलब्धि होती है। वह सत्ता स्पर्शग्राह्य और प्रक्रमानुमेय है। ताप जब किसी पदार्थसे संक्रामित होता है, तब पदार्थ उसे शोषण करता है, और उससे उसका अवस्थान्तर या रूपान्तर होता है। उस समय तापका प्रक्रम देखा जा सकता है और उसी समय विस्तारण, तरलीकरण और वाष्पीकरण प्रभृति क्रियाओंकी उपलब्धि होती है।

ताप समस्त पदार्थों अल्प वा अधिक मात्रासे वर्तमान रहता है। यहां तक कि तुषारपिण्ड जो अत्यन्त शीतल है उसमें भी ताप है। कारण तापमानयन्त्र-द्वारा यह निर्द्धारित हो चुका है कि शीतप्रधान देशोंका तुषार ग्रीष्मकालमें जितना रहता है, शीतकालमें उसकी अपेक्षा अधिक शीतल हो जाता है।

तापकी गति सीधी रेखाके रूपमें और आलोककी तरह एक वस्तुसे दूसरी वस्तुमें प्रतिफलित एवं संक्रामित होती है। कोई कोई पदार्थ इसे आत्मसात् वा शोषित करते हैं, किसी किसी वस्तु-द्वारा यह प्रतिफलित भी होता है और किसी किसी वस्तु-द्वारा परिचालित प्रसा

रित और तिरोहित होता है। सभी स्थानोंमें ताप प्रत्यक्ष ग्राह्य और परिमेय है। कई स्थानोंमें तापका शोषण करती है किन्तु उत्तप्त नहीं होते अथवा उतना उत्तप्त होता देखनेमें नहीं आता। ऐसे स्थानोंमें ताप गूढ़ अनिन्द्रिय ग्राह्य वा अनुमित-ग्राह्य कहलाता है।

अतएव ताप दो प्रकारका है—प्रत्यक्षग्राह्य (Sensible) और अनुमितग्राह्य (latent)

तापका लक्षण—जिसके किसी वस्तुमें रहनेसे वह वस्तु उष्ण मालूम पड़े उसीका नाम ताप है।

तापकी प्रकृति (Nature of heat)—पश्चिम विज्ञानविद् विद्वान् इस विषयमें नाना प्रकारके मत प्रकाशित कर गये हैं किन्तु उन सबमें एक भी यथार्थ सुन्दर रूपसे प्रतीत नहीं हो सका। किन्तु यह स्थिर है कि ताप, आलोक और तड़ित्, ये तीनों एक पदार्थ हैं—एक ही पदार्थके रूपान्तर मात्र हैं।

इन तीनोंका उपादान पदार्थ ईथर (Ether) है जो अणुओंके परस्पर अवान्तर प्रदेशमें परिव्याप्त हो कर अवस्थान करता है।

प्राचीन विद्वानोंका कहना है कि, जिसका उष्णस्पर्श है उसका नाम तेज है। पुरातन यूरोपीय विद्वान् भी इस प्रकारका अत्यन्त सूक्ष्म पदार्थ समझते थे, किन्तु नये विद्वानोंका मत है कि ताप कोई स्वतन्त्र या भिन्न पदार्थ नहीं है।

उन्होंने प्रमाणित किया है कि जड़ात्मक अणुओंका कम्पन ही ताप है। उनके मतसे जड़ पदार्थोंके परमाणु समूह ईथर या आकाश नामक एक प्रकारके विश्वव्यापी सूक्ष्म पदार्थसे परिवेष्टित हैं, उन्हींके आन्दोलनसे (जड़ द्रव्योंके समस्त अणु आन्दोलित होनेसे) ताप उत्पन्न होता है।

कुछ भी हो, तापके विषयमें यही दो प्रधान मत प्रचलित हैं, जिनमेंसे शेषोक्त मत ही सर्वत्र परिगृहीत हुआ है।

१—ताप एक सूक्ष्मतम तरल पदार्थ ईथर (Ether) है। यह सब जगह और समस्त वस्तुओंके अणुओंमें अवस्थान करता एवं प्रयोजनवश पुनः उन सबसे अलग हो जानेमें समर्थ है। इस प्रकार संयोग और विच्छेदसे तापको प्रसारण संकोचन आदि क्रियाएँ लक्षित कर सकती हैं।

२—ताप अणुओंके कम्पनसे उत्पन्न होता है। जिस समय किसी पदार्थके समस्त अणु कम्पित होते रहते हैं, उस समय उसे स्पर्श करनेसे वह कम्पन हमारी नसोंमें आकर आघात करती है और इसीसे हमें उष्ण-स्पर्शानुभव होता है। यह कम्पन सिर्फ एक वस्तुओंमें ही अवस्थान करता हो ऐसा नहीं, वह समस्त वस्तुओंके अवान्तर प्रदेशस्थित ईथरमें भी विद्यमान रहती है। यही (शेषोक्त) मत इस समय विशेष युक्तिसङ्गत प्रतीत होता है। कारण इस संसारमें जो कुछ पदार्थ दृष्टिगोचर होते हैं, यथार्थमें वे सभी अनवच्छिन्न गतिशील हैं।

वस्तुतः यथार्थ स्थिति किसीकी भी नहीं है, वह स्थितिशील है, ऐसा किसीके विषयमें नहीं कहा जा सकता। तो भी यह गति किसी किसी स्थानमें प्रत्यक्ष और किसी किसी स्थानमें अनुमित होती है। यह गति भी उसका रूपान्तर मात्र है। यही उस फिर आलम्बन या अवलम्ब हो सकता है। कुछ भी हो, उस गति या उससे ताप उत्पन्न होता है। पदार्थोंके परस्पर संघर्षसे तापकी उत्पत्ति होती है। जिन अणुओंसे वह पदार्थ बना है, उनके चलने या परस्पर संघर्ष करनेसे तापकी उत्पत्ति होती है। आघात करनेसे वस्तुमें उष्णता आ जाती है, अतः जितना अधिक बल प्रयोग किया जायगा, उतना ही अधिक ताप उत्पन्न होगा। वाष्पीय शकट या वाष्पीय यान इसके निदर्शनस्वरूप हैं। जब कहीं ताप अवस्थान्तरको प्राप्त होता है अर्थात् जब उसे पुनः किसी प्रकारकी शक्तिसमुत्पादनमें प्रवृत्त किया जाता है, तब वह तिरोहित हो जाता है।

तापके उत्पत्ति-स्थान (Sources of heat)—यहां तापके उत्पत्ति स्थानका वर्णन किया जाता है। जितने तापप्रद पदार्थ हैं उनमें सूर्य एक प्रधानतम है। सूर्यका ताप पृथ्वी पर पड़ता है एवं उसके सम्बन्धसे ताप यहां दिखाई देते हैं। ग्रीष्मकालमें अधिक तापका अनुभव होता है, उस समय नदियोंका परिवर्तनादि ताप क्रियाएं लक्षित होती हैं। ताप पृथ्वी पर पतित हो कर पृथ्वीको उत्तप्त करता है इसीसे समस्त पदार्थ उत्तप्त

होती हैं, किन्तु वह पृथ्वीके आभ्यन्तरमें केवल दो चार हाथ ही प्रवेश करता है, यह जानकर अनेक लोग ग्रीष्मकालमें मिट्टीके भीतर घर बना कर रहते हैं। रेलगाड़ीके रास्तेमें रेल (लाइन) का जहां परस्पर संयोग होता है, उस स्थानमें ग्रीष्मकालमें अधिक तापके समय परिसरण होगा, यह जान कर जरा जरा अन्तर रक्खा गया है। इस समय नाना प्रकारके फल परिपक्व होते हैं इस समय तापके आधिक्य होनेसे परिशोषण क्रियाके विशेष लक्षण देखनेमें आते हैं। नहर, तालाव आदि सब सूख जाते हैं।

सूर्यको छोड़ कर संघर्षण (friction), पेषण, संघटन (percus sion) रासायनिक क्रिया आदि भी तापप्रभव हैं। तड़ित् और दहन, ये भी रासायनिक क्रियाको अन्यपरिणति मात्र हैं। इनसे भी तापकी उत्पत्ति होती है।

संघर्षण—वस्तुओंमें परस्पर संघर्षण होनेसे तापको उत्पत्ति होती है। काष्ठ काष्ठमें संघर्षण होनेसे ताप उत्पन्न होता है। काचकी शीशीकी डाट लगा कर रस्सीसे उसका गला घर्षण करनेसे वह स्थान उत्तप्त हो कर प्रसारित होता है और डाट खुल जाती है। वरफ पर वरफ घिसनेसे वह गल जाती है। डेभि साहबने परीक्षा करके देखा है कि रेल (पटरी)-के ऊपर पहियोंके घर्षणसे अग्निस्फुलिङ्ग निकलते हैं। घर्षणसे ताप उत्पन्न न हो, इसीलिए रेलगाड़ीमें चर्वी व्यवहृत होती है। इसीसे मशीनके समस्त कल-पुरजे भलीभांति यथायोग्य स्थानमें सजाये जाते हैं।

संघट्टन—संघर्षण और पेषण इन दोनोंको एकताको संघट्टन कहते हैं। चकमक पत्थरको परस्पर ठोंकने और घिसनेसे अग्नि उत्पन्न होती है। लुहारके हतोड़ेसे लोहा पीटते समय लोहा उत्तप्त हो जाता है।

रासायनिक क्रिया—वस्तुओंके परस्पर मिलित होनेसे जो नूतन प्रकार वस्तुकी सृष्टि होती है, उसे रासायनिक क्रिया कहते हैं। कभी कभी इससे अग्न्युत्पात भी होता है, जो प्रायः देखनेमें नहीं आता। चूनेमें पानी डालनेसे और जलमें गन्धकद्रावक देनेसे ताप उद्गत होता है। पानीमें पोटाश डालनेसे वह जलने लगता है। प्रदीप जलना आदि भी रासायनिक क्रियाके उदाहरण हैं।

ऊपर कहा गया है कि ताप दो प्रकारका होता है—एक प्रत्यक्षग्राह्य और दूसरा गूढ़ या अनुमितिग्राह्य। प्रत्यक्षग्राह्य ताप प्रायः स्पर्शशक्ति द्वारा अनुभूत होता है। विशेष विवेचनापूर्वक देखा जाय तो स्पर्शबोध हम लोगोंका एक प्रकारका तापमानयन्त्र है। जब हम कोई उष्ण वस्तु स्पर्श करते हैं, तब हमें उष्णस्पर्शानुभव होता है। इसी तरह जब हम एक तुषारपिण्ड पर हाथ देते हैं, तब हमें शीतलस्पर्शानुभव होता है, किन्तु वह कितना उष्ण या कितना शीतल है, यह निश्चय नहीं कर सकते। निश्चय न कर सकनेके कारण तापके वैलक्षण्य और ह्रासवृद्धि आदिके बारेमें भी कुछ स्थिर नहीं कर सकते; इसलिए तापमानयन्त्रको सृष्टि हुई है। इन्द्रियों द्वारा सामान्यतः जो कुछ स्थिर किया जाता है, वह यथार्थ हो हो, यह सम्भव नहीं। क्योंकि यदि किसी गृहस्थके एक धातुकी, एक काष्ठकी और एक सूतकी इस तरह तीन चीज हों और उनमेंसे प्रत्येकका यदि क्रमानुसार स्पर्श किया जाय, तो हमें तीन विभिन्न प्रकारका स्पर्शानुभव होगा। यदि गृहस्थित वायु उष्ण हो, तो वस्त्र उष्ण, काष्ठ उष्णतर और धातुका पदार्थ उष्णतम मालूम पड़ेगा, किन्तु उसी वायुके शीतल होनेसे इसके विपरीत, अर्थात् धातुका पदार्थ शीतलतम, काष्ठ शीतलतर और वस्त्र शीतल प्रतीत होगा। वस्तुतः हमारी स्पर्शशक्ति बिलकुल अनिश्चित है।

कोई एक पथिक किसी पर्वतसे उतर रहा है और दूसरा उसी पर्वत पर चढ़ रहा है; उतरनेवाला तो जितना नीचे उतरता है, उतना ही उष्णताका अनुभव करता है और चढ़नेवाला क्रमशः शीतका ही अनुभव करता है; इन दोनोंमेंसे कोई भी उष्णता और शीतलता की उपलब्धि विशेष रूपसे नहीं कर पाता। और तो क्या; कभी कभी ग्रीष्मकालमें किसी किसी दिन शीतानुभव होता है और शीतकालमें कभी कभी गरम मालूम पड़ती है। इन विलक्षणताओंको सूक्ष्मरूपसे जाननेके लिए स्पर्श-शक्तिके ऊपर किसी प्रकार विश्वास नहीं किया जा सकता। कोई कोई तापको एक सूक्ष्म तरल पदार्थ कहते हैं, किन्तु यह तरल पदार्थकी तरह सेरके

हिसाबसे तौला नहीं जा सकता। फलत साक्षात् सम्बन्धसे तापको किसी प्रकार भी मापा नहीं जा सकता, किन्तु हम पदार्थोंके ऊपर नाना प्रकारके परिमाण करके तापके परिमाण निर्धारणमें समर्थ होते हैं। तापमान देखो।

उष्णता और शीतलता—उष्णता और शीतलतामें कोई विशेष प्रभेद नहीं है। एक वस्तुके साथ तुलनामें जो वस्तु उष्ण बोध होती है अन्य एक वस्तुकी तुलनामें वही फिर शीतल ज्ञात होती है। एक हाथ अति उष्ण जलमें और दूसरा हाथ बरफके पानीमें डुबो रखनेके बाद दोनों हाथोंको गुनगुने पानीमें डुबो देनेसे, जो हाथ उष्ण जलमें निमज्जित हुआ उसे शीतल और जो हाथ हिमजलमें निमज्जित हुआ उसे उष्णताका अनुभव होता है।

तापके कारण वस्तुका प्रसार—तापके कारण द्रव्यके परमाणु एक दूसरेको दूरीभूत करते हैं। इसी लिए तापके समागमसे द्रव्यादि प्रसारित होते हैं। उत्तप्त होनेसे कठिन द्रव्यकी अपेक्षा तरल द्रव्य और तरल द्रव्यकी अपेक्षा वाष्पीय द्रव्य अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत होते हैं। इसी तरह उत्तप्त होनेसे कठिन द्रव्य द्रव और द्रव-द्रव्य वाष्प हो जाते हैं। सभी कठिन द्रव्य उत्तप्त होनेसे प्रसारित होते हैं, इसीलिए रेलको पटरी बनाते समय उनके बीचमें थोड़ी थोड़ी जगह छोड़ दी जाती है।

यन्त्र-द्वारा परीक्षा करके देखा गया है कि, जो शीतल लौहदण्ड किसी छिद्रमें अनायास प्रविष्ट होता है वह उत्तप्त होने पर उसमें प्रवेश नहीं कर सकता। जो कठिन पदार्थ तापके समागमसे विकृत नहीं होते, उत्तप्त करनेसे वे ही क्रमशः कोमल हो जाते हैं और अन्तमें तरल हो जाते हैं। कठिन द्रव्योंकी तरह द्रव-द्रव्य भी उत्तप्त होनेसे प्रसारित होते हैं।

इसीलिये जलपूर्ण पात्रमें ताप देनेसे जल उच्छलित होता है। वाष्पीय सभी पदार्थ ताप लगनेसे अतिशय प्रसारित होते हैं। यदि किसी वायुपूर्ण चर्मथैलेका मुंह बन्द कर उसमें ताप दिया जाय तो वह अपने आप फूल सकती है।

समान मात्रामें ताप प्राप्त होने पर भी सम्पूर्ण प्रकार के कठिन और तरल द्रव्य समान परिमाणमें प्रसारित नहीं होते, किन्तु समस्त वाष्पीय द्रव्य समान ताप प्राप्त होने पर प्रायः समान परिमाणमें ही विस्तृत होते हैं।

तापका फल—इस विषयमें पहले ही कहा गया है कि घन तरल वा वाष्पीय सभी पदार्थ तापसे प्रसारित और शीतसे सङ्कुचित होते हैं। यह प्रसरण घन पदार्थोंमें कम तरल पदार्थोंमें कुछ अधिक और वाष्पीय पदार्थोंमें सबसे अधिक लक्षित होता है अर्थात् पदार्थों के समस्त अणु जितने शिथिलबद्ध होंगे प्रसारण भी उतना ही अधिक लक्षित होगा। सब पदार्थ एक प्रकारसे तापसे एकरूपमें प्रसारित नहीं होते।

घन पदार्थोंका प्रसरण इतना अल्प है कि उसे हम देख कर समझ नहीं सकते। हां सूक्ष्मरूपसे परिमाण करनेसे वह जाना जा सकता है।

लोहेका घेरा उत्तप्त किये बिना पहियेमें नहीं पहनाया जा सकता। इसका अर्थ इसके सिवा और कुछ नहीं कि उत्तापसे उसका आयतन बढ़ जाता है। किन्तु वह वृद्धि इतनी अल्प है कि सूक्ष्म दृष्टिसे भी अगोचर है। कांच सहसा उत्तप्त वा शीतल होनेसे तड़क जाता है, क्योंकि वह अपरिचालक है। उसके सम्पूर्ण भागोंमें ताप समभाव और शीघ्रतासे परिचालित नहीं होता।

इसलिए जिस स्थलका ताप अपेक्षाकृत अधिक हो जाता है, वह स्थान कुछ अधिक प्रसारित होनेकी चेष्टा करता है। इस प्रकार असम प्रसारणके कारण वह कांच चटक जाता है। किसी वस्तुके अत्यन्त उत्तप्त होने पर शीतल होते समय उसके सङ्कोचनसे जो बल उत्पादित होता है, वह अत्यन्त अधिक है। इसके लिए एक उदाहरण देना ही यथेष्ट होगा।

पेरिस नगरमें किसी घरकी भीत फट कर बाहरकी ओर फूल उठी थी लौहदण्ड द्वारा वह पीड़ित किया गया। इसके बाद लोहेके डण्डे गरम किये गये, खूब उत्तप्त हो जाने पर डण्डे स्क्रूसे अच्छी तरह कस दिये गये। वे डण्डे जिस समय क्रमसे शीतल हो कर सङ्कुचित होने लगे तो उनके साथ भीत भी संकुचित हो गई।

तरल पदार्थोंका प्रसरण हम प्रत्यक्ष देख सकते हैं। यह दो प्रकारका है—यथार्थ (real) और प्रत्यक्ष

(apparent)। किसी भी तापक्रमयन्त्रके वर्तुलाकार भागमें ताप देनेसे पारा नलमें चढ़ने लगेगा ; जितना चढ़ना देखेंगे, उतना ही उसका प्रत्यक्ष प्रसरण है। कारण तापसे पारद जिस तरह प्रसारित हुवा, उसी तरह वर्तुलाकार भाग भी ईषत् प्रसारित हुवा, इसलिए वर्तुलाकार भागमें अब पारदको पूर्वापेक्षा अधिक स्थान पूर्ण करना पड़ा, किन्तु यदि वर्तुलाकार भाग अपनी पूर्वावस्थामें ही रहता तो पारद नलके और भी ऊपर चढ़ता और वही पारदका यथार्थ प्रसरण कहलाता। इस तरह तरल पदार्थ किसी भी पात्रमें क्यों न रहे, तापसे तरल पदार्थके साथ उस पात्रका भी कुछ प्रसरण होता है। अतएव तरल पदार्थोंके प्रसरणमें हम लोग केवल प्रत्यक्ष प्रसरण ही देख पाते है।

तरल पदार्थोंका प्रसरण समस्त पदार्थोंके प्रसरणकी अपेक्षा अल्प नियमानुयायी है, तापक्रम जितना ही वाष्पीभाव-विन्दुके समीपवर्ती होता है, उतना ही उसके नियमका व्यतिक्रम भी बढ़ने लगता है।

घन और तरल उभय प्रकारके कितने ही पदार्थों में प्रसरण-नियमका वैपरीत्य लक्षित होता है। गन्धक और किसी किसी मिश्रधातुके गलानेसे वह घनीभूत होनेके समय सङ्कुचित न हो कर प्रसारित होती हैं। जिस धातुसे छापनेके अक्षर बनते हैं, साँचेमें ढालनेके बाद शीतल होते समय वह अल्प प्रसारित हो कर अक्षरका अग्रभाग सुस्पष्ट रूपसे विभिन्न कर देती है।

तापके अंश लिख कर प्रकाश करने हों तो उनकी संख्याके दाहनी ओर कुछ ऊपरमें एक छोटी बिन्दी लगा देनी चाहिए। और शतांशिक, फारेनहीट अथवा रिमर जिस प्रणालीके अंश हों, उसके नामका आदि अक्षर लिखना चाहिये; जैसे २७° श, ६०° फा, १२° रि अर्थात् शतांशिकके २७, फारेनहीटके ६० और रिउमरके १२ अंश। शून्यसे नीचेका कोई अंश हो तो ऋण-चिह्न देना चाहिए; जैसे—१५° श० अर्थात् शतांशिक तापमानके शून्यसे १५ अंश नीचे।

तरल पदार्थोंमें जल भी इनका उदाहरण-स्थल है। शतांशिक तापक्रमके ४० अंश पर्यन्त जल शीतसे संकुचित होता है। किन्तु जलका तापक्रम इसके नीचे जितना कम होता जाता है, उतना ही जल प्रसारित होता है। कारण ४° श०में जल गाढ़तम अर्थात् संकोचनकी चरम सीमाको प्राप्त होता है। फिर चाहे इसे उत्तप्त करें या शीतल, यह प्रसारित ही होगा। जलमें यदि यह वैपरीत्य न होता, तो शीतप्रधान देशोंमें, शीतकालमें जो नद नदी ह्रद आदि तुषारावृत रहते हैं, उन सब तलेका जल जब तक बरफ न हो जाता तब तक ऊपरके जलका बरफ होना असम्भव होता। तलस्थ जलके बरफ हो जानेसे कोई जलचर ही जीवित न रहता। किन्तु ४° श०में जल गाढ़तम होनेसे बरफ, जिसका तापक्रम ०° श है। जलकी अपेक्षा लघु होनेके कारण उसके ऊपर तैरता रहता है और बरफ अपरिचालक है, इसके ऊपर रहनेसे बाहरका शीत निम्नस्थ जलमें प्रवेश नहीं करता। उस जलका तापक्रम ४०°श रहता है और उसी जलमें मत्स्य एवं अन्यान्य जलचर जीवन धारण करते हैं।

वाष्पीय पदार्थोंका प्रसरण अन्य पदार्थोंके प्रसरणकी अपेक्षा अधिक नियमानुयायी है और समस्त वाष्पीय पदार्थोंमें प्रायः समभावसे होता है। यह प्रसरण तरल पदार्थोंके प्रसरणकी अपेक्षा १२ गुण अधिक होता है। वाष्पीय पदार्थोंके प्रसरणसे मानव-जीवनको सैकड़ों लाभ पहुंचते हैं। केवल मानव-जीवन ही क्यों, ऐसा कोई जीवन ही नहीं जो इसके अभावसे नष्ट नहीं होता हो।

जिसके अभावसे हम मुहूर्त मात्र भी जी नहीं सकते, उस वायुसे आच्छन्न रहने पर भी हम उसके ही अभावसे मर जाते। हम जो वायु निःश्वास द्वारा त्याग करते हैं, वह यदि प्रसरण गुणके कारण तत्क्षणात् ऊर्द्ध गति न होती और उसके बदले यदि परिष्कार वायु न पाते, वही परित्यक्त वायु हमें फिर ग्रहण करनी पड़ती, तो उसके द्वारा हमारे जीवनका संहार हो जाता। मृदु मलयानिल वायुसे ले कर प्रचण्ड तूफान तक, सभी वायुगतियोंका यही एक मात्र कारण है। इसके सिवा इस वायुगतिके न होनेसे मेघ जहां उठते, वहीं अर्थात् समुद्रके ऊपर ही रह जाते, पृथ्वीके प्रायः समस्त देशोंमें अनावृष्टि होती, कृषिकार्य न चलना, इत्यादि अशेष-विध असंगत होते। किन्तु तापके प्रसरण-बलमें पूर्वोक्त किसी भी प्रकारकी अमङ्गल नहीं होते।

यहाँ प्रश्न हो सकता है कि जब ताप किसी पदार्थमें गूढ़ भावसे रहता है तो उस समय क्या वह ताप नहीं कहलाता? हाँ, उस समय भी वह ताप कहलाता है; क्योंकि यहाँ पूर्वमें उसका अस्तित्व अवगत हुआ है और पश्चात् भी उसका अस्तित्व दिखलाई देता है। अतएव अवस्था विशेषमें दृष्टिगोचर न होने पर भी अनुमान किया जा सकता है कि वहाँ पर ताप वर्त्तमान है।

कोई एक गोला ऊपर फेंका गया, वह नीचे न गिर कर किसी छत पर या किसी उच्च भूमि पर रह गया उसका पतन उस आधार न होनेसे न हुआ, तो क्या यह कहा जायगा कि उसकी पतनशक्ति नष्ट हो गई? नहीं कारण आधार शून्य होते ही वह गोला अपने आप जमीन पर गिरेगा। वह शक्ति सिर्फ उस आधारभूमिने उस गोलेकी पतनक्रियाका प्रतिरोध किया था, गुरुत्वशक्तिके खिंचावके कारण वह शक्ति उस समय प्रकाशीभूत नहीं हुई थी। इसी तरह ताप भी अवस्थाविशेषमें गूढ़ भावसे रहता है; वस्तु उष्ण हुई है, यह मालूम नहीं होता अर्थात् तापका कोई कार्य जो यहाँ दृष्टिगोचर नहीं होता, किन्तु अवस्थान्तरमें वह भली भांति लक्षित होता है।

ताप वस्तुओंकी अवस्थाओंका परिवर्त्तन करता है। पदार्थ जो घन, तरल और वाष्पीय इन तीन अवस्थाओंमें देखा जाता है, उसका कारण ताप ही है।

पदार्थ तापके व्यवहारसे घनसे तरल, तरलसे वाष्पीय तथा तापके अपसरणसे वाष्पीयसे तरल और तरलसे घन अवस्थामें परिणत होते हैं। बरफ, जल और जलीय वाष्प एक ही उपादानसे बने हैं, केवल तापभेदसे तीन अवस्थाओंमें परिणत हुए हैं।

लोहा इतना कठिन है किन्तु ताप देनेसे वह भी गल जाता है; उससे भी अधिक ताप देनेसे वाष्प रूपमें परिणत हो जाता है।

समस्त पदार्थोंको इस अवस्थात्रयमें परिणत नहीं कर सकते। किन्तु हम नहीं कर सकते, इसलिए होता हो न हो, ऐसा नहीं वायु और हाइड्रोजन कभी अवस्थान्तरमें परिणत नहीं हुआ अलकोहल कभी जमाया नहीं गया। किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि यथेष्ट ताप अपसृत किया जाय तो यह उद्देश्य सिद्ध हो सकता है। अङ्गार तथा किसी किसी धातुको अन्य साधारण अग्निमें नहीं गलती, किन्तु तड़िताग्निमें कोई भी पदार्थ क्यों न हो वह गल कर वाष्प हो जायगा।

ताप सभी वस्तुओंका एक रूपसे परिवर्त्तन करता है, अर्थात् यथेष्ट उत्ताप हो जाने पर समस्त वस्तुएं वाष्पीभूत और यथेष्ट ताप अपसृत कर सकने पर समस्त वस्तुएं घनीभूत हो जाती हैं।

तरल पदार्थ दो प्रकारसे वाष्पीभूत होते हैं। स्वाभाविक तापक्रमसे भी उड़नशील तरल पदार्थ अनावृत अवस्थामें ऊपरके भागसे धीरे धीरे वाष्पाकारमें परिणत होते हैं और तापक्रमकी वृद्धिके साथ उस वाष्पीभावकी वृद्धि होती है। इसी कारण कोई पात्र सम्पूर्ण कर अनावृत रखनेसे वह क्रमशः कम हो कर निःशेषित हो जाता है एवं अल्पायतनादि पोषकाधारमें शून्यप्राय हो जाते हैं। यही कारण है कि गीला वस्त्र हवामें रखनेसे शुष्क हो जाता है। इस वाष्पीय भावका नाम उद्‌बाष्पन (Evaporation) है। तापके संयोगसे किसी पदार्थका समस्त भाग जब वाष्पाकारमें परिणमनशील होता है और जब नीचेसे वाष्प त्वरित उद्‌गत होने लगता है, तब जो वाष्पीभाव होता है, उसका नाम स्फुटन है। इसे हम प्रत्यक्ष देख सकते हैं, किन्तु पूर्वोक्त उद्‌बाष्पन हर वक्त देखनेमें नहीं आता। ऊपर कहा जा चुका है कि, तरल पदार्थके वाष्पीभावमें परिणत होनेके लिए हर वक्त समान ताप नहीं लगता। भू-वायुका पीड़न अल्प होनेसे अल्प ताप और अधिक होनेसे अधिक ताप लगता है। जहाँ भू-वायुका पीड़न नहीं है वहाँ जल और अलकोहल आदि किसी किसी तरल पदार्थके लिए बिलकुल तापकी जरूरत नहीं होती। एक अर्द्ध-पूर्ण पात्रको वायु निष्कासन यन्त्रमें रख कर उसके भीतरी भागका शून्य कर लेनेसे जल अपने आप खौलने तो लगता है पर जल उत्तप्त नहीं होता वरन् शीतल होता रहता है। साधारणतया १०० ताप मानसे जल खौलता है किन्तु उच्च उच्च पर्वतोंके ऊपर, जहाँ भू-वायुका पीड़न अपेक्षाकृत अल्प होता है, वहाँ ८० या ८१ में ही पानी उबलने लगता है।

इसके सिवा तापके और भी अनेक फल हैं। ताप रासायनिक संयोग और वियोगका एक प्रधान उत्तेजक है। तड़ित् चुम्बकाकर्षणके सम्बन्धमें तापके फल पीछे लिखे जायेंगे।

तापके कारण जड़वस्तुओंकी अवस्थान्तरोत्पत्ति—उत्तापसे कठिन द्रव्य द्रव होते हैं। काठ, कागज और पशम प्रभृति द्रव्योंको द्रव नहीं किया जा सकता। उष्ण करनेसे इनके समस्त उपादान पृथक् हो जाते हैं। बहुतोंकी धारणा है कि अङ्गारादि कतिपय द्रव्य गलाये नहीं जा सकते। किन्तु यह सिद्धान्त युक्तियुक्त नहीं मालूम पड़ता। अङ्गार कोमल अवस्थामें परिणत किया गया है; सम्भव है कि कालान्तरमें यह द्रवीभूत भी किया जा सकेगा। द्रव्यमात्र एक एक निर्दिष्ट परिमाणकी उष्णतामें द्रव होते हैं। ०° श (अथवा ३२° फा० परिमाण) उष्णतामें बर्फ गल कर पानी हो जाता है। भूतलस्थ सभी द्रव्यों पर वायुराशिका दबाव है। सागरपृष्ठकी वायुराशिका दबाव प्रायः ३० इञ्चके समान है। ३० इञ्च दबाव और ०° श उष्णतासे बर्फ गल जाता है, किन्तु अधिक दबाव होनेसे समधिक उष्णताके विना नहीं गलता।

द्रवमाण वस्तुमें कितना ही ताप क्यों न दिया जाय उसकी उष्णता किसी तरह भी नहीं बढ़ती।

और भी देखनेमें आता है कि, द्रवमाण द्रव्य तथा उससे उत्पन्न द्रवकी उष्णता समान होती है। ०° श, अथवा ३२° फा परिमित उष्ण होने पर बर्फमें कितना भी ताप क्यों न दिया जाय, उसके तापकी वृद्धि नहीं होती। किन्तु इसी तापके प्रभावसे बर्फ द्रव हो जाता है। द्रवमाण बर्फसे जो जल उत्पन्न होता है, उसकी भी उष्णता ०° श अथवा ३२° फा होती है।

अतएव यह निश्चित है कि ०° श बर्फको ०° श जलमें परिणत करनेके लिए कुछ तेज अन्तर्हित होता है। यही अन्तर्हित तेज जलके अन्तर्गत अप्रत्यक्ष प्रच्छन्न या गूढ़ तेज कहलाता है। ८०° श प्रमाण उष्ण एक सेर जलके साथ ०° श प्रमाण उष्ण एक सेर जल मिलानेसे ४०° श प्रमाणका दो सेर जल प्रस्तुत होता है।

किन्तु ८०° प्रमाण उष्ण एक सेर जलमें ०° श प्रमाण एक सेर तुषार-चूर्ण मिला देनेसे ०° श प्रमाण उष्ण दो सेर जल होता है। इस तरह निश्चय होता है कि ०° श प्रमाण एक सेर बर्फ गल कर ०° श प्रमाण एक सेर जल होनेमें जो तेज अन्तर्हित होता है, उसके द्वारा एक सेर जलकी उष्णता ८०° अंश बढ़ाई जा सकती है। अन्यान्य कठिन द्रव्योंके द्रव होते समय भी ऐसा ही हुआ करता है। किन्तु समस्त द्रव द्रव्योंके अन्तर्गत अप्रत्यक्ष प्रच्छन्न तेजका परिमाण समान नहीं होता।

०° श परिमाण उष्ण होने पर जिस प्रकार बर्फ गलकर उसका पानी हो जाता है, उसी तरह ०° परिमाण शीतल होनेसे पानी जम कर बर्फ हो जाता है। बर्फके द्रव होते समय जितना तेज अन्तर्हित होता है, जल जमते समय ठीक उतना ही तेज विनिर्गत होता है।

तात्पर्य यह है कि जितनी उष्णतासे कोई वस्तु द्रव होती है, ठीक उतनी ही उष्णतासे तदुत्पन्न द्रव द्रव्य पुनः घनीभूत होता है। और गलते समय जिस परिमाणमें तेज अन्तर्हित होता है जमते समय भी उतना ही तेज निर्गत होता है। इसीलिए शीतप्रधान देशोंमें जब दारुण शीतके प्रभावसे जलाशयादिका जल जम कर बर्फ होने लगता है, उस समय उस हिममय जलके अन्तर्गत छिपा गूढ़ तेज प्रकाशित हो कर दुरन्त शीतका पराक्रम कुछ खर्व कर देता है।

द्रवीभूत होनेसे द्रव्यादिके आयतनकी वृद्धि होती है। १०० घन इञ्च गन्धकको गलानेसे वह १०५ घन इञ्च होता है, किन्तु बर्फ द्रव होनेसे संकुचित एवं जल जमने पर प्रसारित होता है। अन्यान्य तरल द्रव्य जमने पर भारी होते हैं, किन्तु जल जम कर बर्फ होने पर हलका हो जाता है, इसीलिए वह जलमें तैरती है। जल जमते समय विस्तृत होता है, इसीसे शीतप्रधान देशीय नद, नदी ह्रद समुद्र आदिका जल जम कर बर्फ होने पर वह ऊपर तैरा करता है एवं निम्नमें ४०° श प्रमाण उष्ण जल रहनेसे मत्स्यादि जलचर जीवगण जलके अभावसे मरते नहीं। जल जम कर जब बर्फ होता है, तब उसकी आयतन वृद्धिके कारण प्रसारणशक्तिकी भी आश्चर्यजनक वृद्धि होती है। यदि किसी जलपूर्ण लोहेकी बोतलका मुख बन्द करके किसी अतिशय शीतल पदार्थके भीतर कुछ क्षणके लिए रखा जाय, तो

इसमें उसके भीतरका जल बर्फ़में परिणत हो जायगा और बर्फ़ होते समय उसके प्रसारणका जल इस तरह प्रबल हो उठेगा कि वह लोहमय पात्र फट जायगा। शीतप्रधान देशोंमें रात्रिकालमें शीतके प्रभावसे जल प्रणालोंका जल जम जानेसे कभी कभी नल फट जाते हैं।

पर्वतोंके ऊपर जो वृष्टिका जल गिरता है, उसका कुछ अंश शिलाओंमें प्रविष्ट होता है। पीछे शीत द्वारा जब वह तुषाररूपमें परिणत होता है तब प्रसारणके कारण प्रस्तरखण्ड विदीर्ण हो जाते हैं।

कठिन द्रव्य उत्तप्त होनेसे वाष्प होते हैं। कागज, काठ प्रभृति जितने ही कठिन द्रव्योंको जैसे गलाया नहीं जा सकता उसी प्रकार मिट्टी और आलिकहल तैल प्रभृति कति पय तरल द्रव्योंको भी वाष्पीय रूपमें परिणत नहीं किया जा सकता। उत्तापके कारण इनके उपादान पृथक् अथवा भिन्न प्रकारसे संयुक्त होते हैं। कपूर, आयडीन (नवसार) प्रभृति कतिपय कठिन द्रव्य द्रव न हो कर एकदम वाष्प हो जाते हैं। सभी वाष्पीय द्रव्य प्रायः वर्णहीन और स्वच्छ होते हैं। केवल आयडीन प्रभृति कुछ द्रव्योंका वाष्प वर्णविशिष्ट होता है। वाष्प और वायुमें कोई विशेष प्रभेद नहीं है। वाष्पकी वायव्यता नैमित्तिक और वायुकी स्वाभाविक होती है।

जो पदार्थ स्वभावतः तरल होते हैं, उनके परिणामसे जो वायुवत् द्रव्य उत्पन्न होता है, उसे वाष्प कहते हैं। वायवीय वस्तुओंकी तरह वाष्प भी स्थिति-स्थापक है। उष्णता और दबावके तारतम्यानुसार वायवीय द्रव्योंमें आयतन-वृद्धिका जैसा तारतम्य है, वाष्प-समूहका भी ठीक वैसा ही तारतम्य हुआ करता है।

फारनहीटके एक अंश परिमाणमें उष्णताकी वृद्धि होनेसे वायवीय और वाष्पीय वस्तुओंका आयतन ·३६· वा ·००२१६१ परिमाणमें वर्द्धित होता है, अर्थात् १ घन इञ्च या १ घन फुट किसी वायु या वाष्पको उष्णता यदि १८ बढ़ाई जाय तो उसका आयतन १·६· या १·००२१६१ घन इञ्च या घनफुट प्रमाण होगा। इस तरह ४०१ अंश प्रमाण तापकी वृद्धि होनेसे ताप दुगुना हो जायगा।

जिस तरह कठिन द्रव्योंके द्रव करनेमें समान उत्ताप प्रयोग नहीं होता उसी तरह द्रव द्रव्योंके वाष्प करनेमें भी समान उत्तापकी आवश्यकता नहीं होती। भिन्न भिन्न द्रव द्रव्य भिन्न भिन्न उष्णतासे वाष्पाकार धारण करते हैं। सुरासार, जल, तार्पीनतैल और पारा इन द्रव द्रव्योंको खौलानेके लिये यथाक्रमसे फारनहीटके २०१, २१२, ३१६ और ६६० अंश परिमित गरम करना चाहिए।

एक जातिकी कठिन वस्तुएं जिस तरह एक प्रकारकी उष्णतामें द्रव होती हैं उसी तरह एक जातिकी द्रव वस्तुएं भी समान परिमाणमें उष्ण होनेसे खौलने लगती हैं। जैसे—सब देशों और सब समयोंमें १०० अंश वा २१२ अंश समान उष्ण होनेसे पानी खौलने लगता है।

पहले लिखा जा चुका है, कि भूतलस्थ सभी पदार्थ पर वायुराशिका दबाव है। उस दबावका अतिक्रम किये बिना द्रव द्रव्य कभी खौल नहीं सकते। वास्तवमें जब किसी द्रव द्रव्य सम्भूत वाष्पकी प्रसारण-शक्ति वायुराशिके दबावके समान होती है, तभी वह खौलता है।

जब वायुराशिका दाब ३० इञ्च पारदके समान होता है, केवल उसी समय फारनहीटके २१२ अंशमें जल उबल उठेगा। दाबके न्यूनाधिक होनेसे स्फुटन-बिन्दुका (Boiling point) भी न्यूनाधिक होता है।

पर्वतोंके ऊपर वायुराशिका दबाव अपेक्षाकृत अल्प होनेसे वहां अपेक्षाकृत अल्प उत्तापसे जल खौलाया जा सकता है।

परीक्षा द्वारा निरूपित हुआ है कि जितना ऊंचा चढ़ा जायगा उतना ही प्रति ५९० फुटमें स्फुटनबिन्दु फारनहीटका १ अंश कम होता जायगा। पर्वतोंकी ऊंचाई नापनेका यही एक उपाय है।

वायुनिष्कासन यन्त्रके आवरण-पात्रके भीतर एक जल पूर्ण पात्र रख कर वायु निकाल देनेसे आवश्यक जल ७० अंश परिमित उष्णतामें भी जोरसे खौलने लगता है। फलतः ऐसा कोई नियम नहीं कि कम होनेसे जल उबलता है या बढ़नेसे जल गरम होता है।

द्रव द्रव्य जब खौलने लगते हैं, तो उस समय कितना ही उत्ताप क्यों न दिया जाय, किसी तरह भी उसकी उष्णता-

वृद्धि नहीं होगी। और भी देखा जाता है कि द्रवभाग कठिन द्रव्य और उनसे उत्पन्न द्रव द्रव्योंकी उष्णता जिस तरह बिलकुल अभिन्न है, खौलते हुए द्रव्य और उनसे उत्पन्न वाष्पकी उष्णता भी ठीक उसी तरह समान है। विशुद्ध जल २१२° फा उष्ण होनेसे उबल उठता है एवं एक बार खौल उठने पर भी जितना उत्ताप दिया जाय, उसके द्वारा उष्णताकी कुछ भी वृद्धि नहीं होती। और खौलते जलसे जो वाष्प उत्पन्न होता है उसको उष्णता भी ठीक २१२° फा रहती है। अतएव यही प्रतीत होता है कि कठिन द्रव्यके द्रव होते समय जिस तरह किञ्चित् परिमाणमें तेज अप्रत्यक्ष रहता है. उसी तरह द्रव द्रव्यके वाष्प होते समय भी तेजका कियदंश प्रच्छन्न रह जाता है। जिस परिमाणमें ताप देनेसे १ दण्डमें तुषारहिम जल खौल उठता है, उसी परिमाणमें फिर ५‡ दण्ड काल उत्तप्त न होनेसे वह वाष्प नहीं होता, अर्थात् हिम जलको ३२° फारनहीटसे २१२° फा प्रमाण उष्ण करनेमें जितने तापका प्रयोग करना पड़ता है, २१२° फा प्रमाण उष्ण जलको वाष्पमें परिणत करनेके लिये उसको अपेक्षा ५.४ गुणा अधिक ताप प्रयोग करनेकी आवश्यकता होती है। अतएव जलीय वाष्पके अप्रत्यक्ष गूढ तापका परिमाण प्राय: १८०° ५.४=९७२° फा हुआ। ०° श एक सेर जलके साथ १००° श एक सेर जल मिश्रित करनेसे ५०° श प्रमाण उष्ण दो सेर जल प्रस्तुत होता है किन्तु १०० श एक सेर जलीय वाष्पको शीतल जलके मध्यस्थित किसी नलके द्वारा परिचालित कर १००° श एक सेर जल उत्पादन करनेसे इतना तेज निकलता है कि उसके द्वारा ५.४ सेर जल १° शसे १००° तक उष्ण होता है। सुतरां जलीय वाष्पका अप्रत्यक्ष तेज परिमाण हुवा १०० ५.४=५४०° श या ५७२ फा।

और भी देखा जाता है कि जलके वाष्प होने पर जो तेज अन्तर्हित होता है, वही तेज जलीय वाष्पके घनीभूत हो कर जल होनेमें पुन: प्रकाशित होता है।

जो द्रव्य जलमें द्रवीभूत हो कर रहते हैं, जलके बर्फ या वाष्प होने पर उन सबको नियुक्ति हो जाती है। बर्फके द्रव या वाष्पके घनीभूत होनेसे जो जल पैदा होता है, वह इसीलिये विशुद्ध है। वृष्टिका जल भी इसी कारणसे शुद्ध है। अधिकांश विशुद्ध जल प्रस्तुत करनेके लिये जलाशयादिका जल ले कर उसे उत्ताप द्वारा वाष्प बनाते हैं और उस वाष्पको घनीभूत करके पुनः जल बनाया जाता है। इस तरह जो जल तैय्यार होता है, उसे तापका जल कहते हैं।

द्रव द्रव्यके ऊपरी भागसे सर्वदा ही वाष्प उत्थित हुवा करता है। यह सभी जानते हैं कि, नदी ह्रद सरोवरादिके पृष्ठदेशसे नित्य ही वाष्प उत्थित होता है। दाबकी न्यूनाधिकतासे वायुनिःसरणमें भी न्यूनाधिक्य हुवा करता है। जलादिके ऊपर वाष्प राशिका दवाव जितना अल्प होता है, उतना ही वाष्प निःसरण अधिक हुवा करता है। वायु-निष्काशन-यन्त्रमें किञ्चित् इथर नामक तरल द्रव्य रख कर वायु-निष्काशन करनेसे वाष्प इतनी जोरसे निकलने लगता है कि फिर वह शीघ्र ही उबल उठता है। फलत: वाष्प परिणामशील द्रव द्रव्यमात्र ही वायुविहीन स्थलमें पहुंचते ही उसी समय वाष्परूपमें परिणत हो जाता है।

यूडिकलोन, इथर आदि शीघ्र वाष्प-परिणामशील वस्तुओंके स्पर्शसे शरीर शीतल होता है; इसका कारण यही है कि ये वस्तुएं वाष्प होते समय शरीरसे तेज ग्रहण करती हैं। वृष्टिके बाद वायु शीतल हो जाती है, क्योंकि वर्षाके समस्त जलकण भूमि और वायुसे तेज ले कर वाष्प होते हैं। ग्रीष्मऋतुमें सुराहीमें जल रखनेसे वह साधारण जलकी अपेक्षा अधिक शीतल हो जाता है। इसका कारण यही है कि जलकण सुराहीके छिद्रोंमें प्रवेश करते हैं और बाहर निकल कर वाष्प-रूपमें परिणत होते समय भीतरके जलसे तेज खींच लेते हैं। इसी लिए जल शीतल हो जाता है। सुराहीका जल हवामें रखनेसे और भी अधिक शीतल होता है। धनाढ्य व्यक्तियोंके मकानोंमें पंखा और पानीसे भीगी हुई खसखसके द्वारा जो तरावट की जाती है, उसका कारण वाष्प होते समय जल-विन्दुओं द्वारा तेज ग्रहण किया जाना ही है।

ताप संचालन—परिचालन, परिवाहन और विकिरण तीन प्रकारसे एक स्थानका ताप दूसरे स्थानमें लाया जा सकता है। इस बातको तो सभी जानते हैं कि लोहेके डण्डेका एक किनारा आगमें रखनेसे क्रमश: दूसरा किनारा भी उत्तप्त हो उठता है।

जिस गुणके कारण जड़ द्रव्यके परमाणु इस प्रकारसे ताप सञ्चालन करते हैं उसका नाम परिचालकता है। और जिस क्रियाके द्वारा इस तरहसे एक अणुसे दूसरे अणुमें ताप सञ्चालित होता है, उसका नाम परिचालन है। इन वस्तुओंको जो ताप परिचालन कर सकती हैं, ताप-परिचालक कहा जाता है।

सब द्रव्योंकी परिचालकता एकसी नहीं होती। वाष्प और द्रव-द्रव्योंकी अपेक्षा कठिन वस्तुएं अधिक ताप-परिचालक हैं और कठिन वस्तुओंमें भी धातुद्रव्योंकी परिचालन-शक्ति सबसे अधिक है। चांदी, तांबा, सोना, पीतल, रांग, सीसा, फौलाद, लोहा और प्लाटिनम् ये कुछ द्रव्य विशेष परिचालक हैं। इनमें भी प्रथमोक्तकी अपेक्षा पिछलोंकी परिचालन-शक्ति कुछ कम है। धातुद्रव्योंकी अपेक्षा पत्थर और कांचकी परिचालक शक्ति बहुत कम है तथा कोयला, काठ, बर्फ, कागज़ इत्यादि द्रव्योंकी परिचालक शक्ति और भी कम है। किसी बड़े लोहेके एक प्रान्तमें अग्नि प्रयुक्त होनेसे दूसरा प्रान्त इतना उत्तप्त हो उठता है कि स्पर्श नहीं किया जा सकता किन्तु किसी प्रज्वलित काठको जिस ओर जलती है उसी ओर अग्निके पार्श्वमें हाथ देनेसे भी कुछ नहीं होता। इसी तरह कोयलेका एक भाग अग्निमय हो उठने पर भी अन्य भाग हाथसे सहजमें ही पकड़ा जा सकता है। कांचका एक भाग अग्निमें गल कर द्रव होने पर भी दूसरा भाग जरा भी उत्तप्त नहीं होता।

रुई, ऊन आदि द्रव्योंकी परिचालक शक्ति इतनी कम है कि यदि इन्हें अपरिचालक कहा जाय तो भी अत्युक्ति न होगी। जिन वस्तुओंकी परिचालक शक्ति कम है, उन्हींके द्वारा ही पहननेके कपड़े बनाने चाहिये, क्योंकि ऐसा करनेसे शीतकालमें शरीरका तेज निकल कर बाहर नहीं जा सकता और ग्रीष्मकालमें बाहरका तेज शरीरमें प्रवेश नहीं कर सकता। कम्बलमें बर्फ लपेट रखनेसे वह जल्दी गलता नहीं, कम्बलकी दुर्बल परिचालकता ही इसमें कारण है।

ताप-परिवाहन—तरल और वायवीय द्रव्योंके भीतर हो कर तेज परिचालित नहीं होता यही कारण है जो किसी जलपूर्ण पात्रके ऊपरी भागमें ताप प्रयोग करनेसे नीचेका जल कुछ भी उष्ण नहीं होता।

यदि किसी बरतनमें जल रख कर उसके नीचे आग देनेसे जो सारा जल गरम हो जाता है, उसका दूसरा कारण है। तापके संयोगसे पहले नीचेका जल गरम होता है। गरम होनेसे हलका होता है और इसीलिये वह ऊपर उठता है। इस प्रकार नीचेका हलका जल ऊपर आनेसे ऊपरका शीतल और भारी जल नीचे आता है और कुछ देर बाद गरम हो कर फिर ऊपर जाता है। इसी प्रकार ऊर्ध्व प्रवाह और अधः-प्रवाह द्वारा बरतनका समस्त जल उष्ण हो जाता है। तरल द्रव्योंमें जिस गुणके होनेसे ऊर्ध्व और अधः-प्रवाह द्वारा उनके परमाणुसमूह ताप प्रवाहित करते हैं उसका नाम है परिवाहकता। इस तरहसे ताप प्रवाहित होनेको परिवाहन कहते हैं।

इन द्रव्योंकी अपेक्षा वायवीय द्रव्योंकी परिवाहक शक्ति अधिक प्रबल है। वायु अथवा वायुवत् वस्तु परिपूर्ण किसी पात्रके नीचे आग जलानेसे ऊपर कहे अनुसार ऊर्ध्व और अधः-प्रवाहके कारण उसके भीतरकी वायु अल्पकालमें ही अतिशय उष्ण हो उठती है और इसीलिये अंगीठीसे धूममय उष्ण वायु ऊपर उठती है तथा चारों ओरसे शीतल वायु आ कर उसका स्थान पूर्ण कर देती है। यही वायु फिर अंगीठीके अग्नि-स्पर्शसे उष्ण हो कर ऊर्ध्वगामी होती है और फिर चारों ओरसे वायु आ कर उसका स्थान अधिकार करती है। अनन्तर किसी स्थानकी वायुके किसी भी कारणसे उष्ण हो कर ऊर्ध्वगामी होने पर ही चारों ओरसे वायु आ कर उसका स्थान अधिकार करती है। इसी कारण बाहरकी वायु सूर्य-रश्मिके स्पर्शसे उष्ण होती है। रविकिरणों द्वारा बाहरकी वायुके उष्ण हो कर ऊर्ध्वगामी होने पर उसका स्थान पूर्ण करनेके लिए घरसे पहिले शीतल वायु प्रवाहित होती है और ऊर्ध्वदेशसे उष्ण वायु घरमें प्रवेश करती है। इस प्रकार कुछ काल तक भीतरसे बाहर और बाहरसे भीतर वायु प्रवाह प्रवाहित होते रहनेसे अन्तमें बाहर और भीतरकी वायु समान उष्ण हो जाती है। इसलिए ग्रीष्मकालके मध्याह्न समयमें मकानके दरवाजे और खिड़कियाँ बन्द रखनी

चाहिए। यह परिवाहन ही समस्त वायु प्रवाहोंका एक प्रधान कारण है। वाणिज्य-वायु, मौसुमी वायु आदि सभी वायुप्रवाह इसी तरह उत्पन्न होते हैं।

ताप-विकिरण—यदि किसी धातुद्रव्यके ऊपर कोई उत्तप्त अयःपिण्ड रक्खा जाय, तो उसके तापका कुछ अंश आधार-द्रव्य द्वारा परिचालित होता है, कुछ अंश चारों ओर स्थित वायु द्वारा प्रवाहित होता है तथा अवशिष्ट अंश किरणरूपमें चारों ओर निक्षिप्त हो कर पार्श्ववर्ती द्रव्यादि द्वारा परिशोषित होता है। इस कारण वह अयःपिण्ड क्रमशः शीतल हो कर चारों ओरकी वायुके समान उष्ण हो जाता है। जिस क्रियाके द्वारा द्रव्यादिका तेज किरणाकारमें चतुर्दिक् विकीर्ण होता है, उसे विकिरण कह सकते हैं। अग्निके सामने खड़े होनेसे उसकी तैजस किरणोंके शरीर पर पड़ने तथा शरीर द्वारा परिशोषित होनेसे उष्णताकी उपलब्धि होती है। सूर्यका तेज किरणके रूपमें आ कर पृथ्वी पर पतित होता है, परिचालित या परिवाहित हो कर नहीं आता।

सूर्यकी किरणें वायुराशिमें हो कर पृथिवी पर पतित होती हैं, किन्तु उनके द्वारा वायुराशिकी उष्णताकी वृद्धि वैसी नहीं होती। पृथ्वीके ऊपरसे तेज प्रतिफलित परिचालित और परिवाहित हो कर उसे उष्ण करता है, इसीलिए वायुमण्डलका अधोदेश मात्र ही उष्ण है, ऊर्द्ध्व प्रदेश अतिशय शीतल है। सब वस्तुओंकी विकिरणशक्ति समान नहीं होती। कालिखकी विकिरणशक्ति सबसे अधिक है। इसीलिए किसी द्रव्यके ऊपरी भागमें कालिख पोत देनेसे उसकी विकिरणशक्ति अधिक प्रबल हो जाती है। परीक्षा द्वारा निरूपित हुआ है कि जो द्रव्य जिस परिमाणमें तेज परिशोषण करता है उसकी विकिरण-शक्ति भी ठीक उसी परिमाणमें प्रबल होती है। तैजस किरणें उज्ज्वल और चिकने धातु द्रव्यके ऊपर पतित होते ही प्रतिफलित हो जाती हैं। इसी कारण उनके द्वारा तेज परिशोषित नहीं होता, सुतरां उनकी विकीरणशक्ति भी नितान्त अल्प होती है। ऐसा नहीं है कि अतिशय उत्तप्त होने पर द्रव्योंसे तेज विकीर्ण नहीं होता। गरम हों या ठण्डे, समस्त द्रव्य, सदैव तेज विकीर्ण करते हैं। बर्फ जो इतना शीतल है, वह यदि ठोस पारे या ऐसा ही किसी बर्फसे ठण्डी वस्तुके निकट रख दिया जाय तो उससे भी इतना तेज निकलता है कि उस हिममय पारेकी उष्णता की वृद्धि होती है। जो वस्तु जितना तेज विकीर्ण करती है उसके ऊपर अन्यान्य पदार्थोंसे यदि ठीक उसी परिमाणका तेज विकीर्ण हो कर पतित हो तो उसकी उष्णतामें किसी प्रकारका परिवर्तन घटित नहीं होता, इसके अन्यथा होनेसे ही न्यूनाधिक्य होता है। समस्त तप्त पदार्थ तेज विकिरण करनेके बाद शीतल हो जाते हैं। इसका कारण यह है कि चारों ओरके पदार्थोंसे उत्तप्त द्रव्य जिस परिमाणमें तेजकी किरणें पाते हैं, उसकी अपेक्षा अधिक परिमाणमें तेज उनके द्वारा चारों ओर विक्षिप्त होता है।

यहां पर विवेचना कर देखनेसे प्रतीत होगा कि केवल उष्ण पदार्थोंके स्पर्शसे ही द्रव्य उत्तप्त नहीं होते, वरन् गरम वस्तुओंसे दूर रखे जाने पर भी ठण्डे पदार्थ गरम हो जाते हैं, गरम पदार्थोंसे तेज, परिवाहन करनेसे पदार्थ गरम हो जाते हैं। गरम पदार्थोंके तेजका परिचालन या परिवाहन करनेसे पदार्थ जिस तरह उष्ण हो जाते हैं, उनके द्वारा निक्षिप्त तैजस किरणका शोषण करके भी उसी तरह उष्ण हो सकते हैं। शीतल पदार्थोंके स्पर्शसे उष्ण द्रव्य जिस तरह शीतल होते हैं तेज-विकिरण द्वारा भी वैसा ही होता है।

यह विकिरण शक्ति ओसकी उत्पत्तिका प्रधान कारण है। रात्रिमें धरातलकी समस्त वस्तुओंके वायुमण्डलकी अपेक्षा अधिक शीतल होनेसे वायुके भीतरका कुछ अंश घनीभूत हो कर शिशिर बिन्दुओंके रूपमें पदार्थोंके ऊपरी भागमें बिखर जाता है। वाष्पीय वस्तुओंके सम्बन्धमें अब तक जो कुछ लिखा गया है, विवेचना कर देखनेसे उससे जाना जायगा कि दिनमें सूर्य-किरणों द्वारा धरापृष्ठके उत्तप्त हो जानेसे वायुमें जितना वाष्प रह सकता है, रात्रिकालमें तेज विकीर्ण कर पृथ्वीके अधिक शीतल हो जाने पर उसके ऊपरकी वायुमें उतना ही वाष्प रहे, यह किसी प्रकार सम्भव नहीं। उष्णताका जितना ही ह्रास होता है, वायुमण्डलमें उतना ही कम वाष्प रह सकता है, अर्थात् उतने ही अल्प वाष्प द्वारा वायुराशि

परिचित होती है। सुतरां वायु दिनमें जो भाप रखती है, रातमें शीतल होनेसे यदि वह परिचित हो उठे तो शीतल द्रव्यके स्पर्शमात्रसे ही उसके भीतरके वाष्पका कुछ अंश घनीभूत हो कर ओसके रूपमें परिणत हो जाता है। वायुमें जितने अधिक परिमाणमें वाष्प रहता है उतने ही अल्प परिमाणमें शीतल होनेसे ही ओस उत्पन्न होती है। यही कारण है कि ग्रीष्मकालमें दिनमें वायुमण्डल अत्यन्त उष्ण होता है। किन्तु रात्रिमें उतना ठण्डा नहीं होता इसीलिए वायुका वाष्प ओसके रूपमें परिणत नहीं होता।

जिन वस्तुओंकी विकिरण शक्ति अधिक प्रबल होती है, वे सब रात्रिकालमें अधिक शीतल हो जाती हैं। इसी कारण उन सब वस्तुओंमें अधिक ओस इकट्ठा होती है। धातुओंकी विकिरण शक्ति अत्यन्त अल्प है इसीलिए उनमें विशेष ओस नहीं ठहरती किन्तु मिट्टी, कांच, बालू, पेड़के पत्ते, ऊन प्रभृति द्रव्योंकी विकिरण-शक्ति अधिक होनेके कारण उनके ऊपर प्रचुर परिमाणमें ओस संचित होता है।

घर्षणसे तापोत्पत्ति—समस्त जड़ द्रव्योंके परस्पर संघर्षणसे ताप उत्पन्न होता है। प्राचीन कालमें आर्य लोग अरणि संघर्षण द्वारा अग्नि उत्पन्न करते थे। असभ्य लोग दो काठोंको आपसमें घिस कर आग जलाते हैं। घिसनेसे दियासलाई जल उठती है। चकमक पत्थर और इस्पातमें परस्पर चोट करनेसे आगकी चिनगारियां निकलती हैं। बर्फ यद्यपि इतना शीतल है। तथापि घर्षण करनेसे उष्ण हो जाता है।

संकोचन—जिस तरह तापके निकल जानेसे वस्तु सिकुड़ जाती है उसी तरह वस्तुके सिकुड़ने पर ताप निकलता है। संकोचनसे आयतनका जितना ही ह्रास होगा उष्णताकी भी उतनी ही वृद्धि होगी। काचि-वर्तित पिचक यन्त्र द्वारा किसी उष्ण वस्तुके ऊपर दबाव डालनेसे वह आकुञ्चित और उत्तप्त होता है। जल और तेल संकुचित होनेसे गरम होते हैं।

आघात—यह सभी जानते हैं कि आघात-प्राप्त होनेसे समस्त जड़ द्रव्य उष्ण हो उठते हैं। निहाईके ऊपर लोहेका एक टुकड़ा रख कर उस पर हथौड़ेकी चोट करनेसे लोहेके परमाणु विकम्पित हो कर उत्तप्त हो जाते हैं। इसी तरह किसी ऊंचे स्थानसे बन्दूककी गोलीके किसी कठिन पदार्थ पर पतित होने पर भी ताप उत्पन्न होता है। पतनशील वस्तुके भूतल पर पतित होनेसे उसकी उस भागकी गतिके रुक जाने पर सहस्र परमाणु आणविक गति या ताप उत्पन्न होता है।

पदार्थशास्त्र विशारदोंने परीक्षाके द्वारा यह प्रमाणित किया है कि कोई एक सेर भारी पदार्थ १३८९ फुटसे अथवा १३८२ सेर भारी पदार्थको १ फुट ऊंचेसे गिरानेमें जो वेग प्राप्त होता है, उसके तिरोहित होने पर इतना ताप उत्पन्न होता है कि उसके द्वारा १ सेर जलकी उष्णता फारनहिट तापमानको १ डिग्री बढ़ा सकती है।

रासायनिक संयोग—लकड़ी आदिके जलनेसे जो अग्नि उत्पन्न होती है उसमें जलनेवाले पदार्थके साथ वायुमें रहनेवाले अम्लजनका रासायनिक संयोग ही इसका कारण है। दीपक व दियेसे जो प्रकाश निकलता है वह भी तेल आदिके अङ्गारके सहित वायुके अम्लजनके संयोग होनेसे उत्पन्न होता है। हम जो आगको स्पष्ट देखते हैं वह केवल अत्यन्त उष्ण वाष्प है। वाष्प या वायवीय द्रव्य अधिक उत्तप्त होनेसे अग्नि शिखाके समान हो दिखाई देते हैं।

तड़ित—बिजलीसे भी ताप उत्पन्न होता है। वज्राग्नि भी इसी बिजलीकी आगका रूपान्तर मात्र है।

जीवदेह—जीवशरीर भी तापका एक उत्पत्तिस्थान है। हमारे शरीरकी उष्णता चारों ओरकी वायुके समान नहीं है। क्या घोर निदाघ ग्रीष्मकालमें मरुभूमि और क्या तुषारमण्डित सुमेरु शिखरके निकट कहीं जाओ, सब जगह मनुष्य शरीरकी उष्णता फारेनहीटके ९८ अंश रहेगी।

सूर्य—ज्वालामुखी पहाड़ोंसे निकली अग्नि और भूगर्भकी उष्णता देख कर निश्चित किया है कि पृथ्वीका भीतरी भाग अग्निमय पदार्थोंसे परिपूर्ण है। सूर्यके उत्तापसे ही एक दो तीन फुट ऊपरकी मिट्टी रात्रिकी अपेक्षा दिनमें अधिक उष्ण हो जाती है। ग्रीष्मकालमें शीतकालकी अपेक्षा कुछ अधिक दूर जाने तक इसी तरह विदित होता है। जो हो ५० ७० या १००

फुटमे अधिक नीचे सूर्यरश्मिका प्रभाव अनुभव नहीं होता। फ्रान्स देशकी राजधानी पेरिस नगरके मान-मन्दिरके ५८ फुट नीचे एक तापमानयन्त्र लगा है। जाड़ा गर्मी, रात, दिन कभी भी उसके भीतरके पारेका चढ़ाव उतार नहीं देखा जाता। भूपृष्ठके सभी स्थानोंमें कुछ दूर नीचे एक ऐसा स्थान है जहां रात, दिन, जाड़ा गर्मी, कभी भी उष्णतामें घटती बढ़ती नहीं होती। उस स्थलके ऊर्ध्व भागमें सौर और अधोभागमें पार्थिव तेजका प्रादुर्भाव देखा जाता है। इसे चिर-समोष्णस्थल कहते हैं, इस चिर-समोष्णस्थलकी उष्णता सब जगह एकसी नहीं है। मानचित्रमें समोष्णरेखामें जो उष्णता है, उसके निम्नस्थ चिर-समोष्णस्थलमें भी वही उष्णता देखी जाती है। चिर-समोष्णस्थलसे जितना नीचे जाया जाय, उतने ही औसतन प्रति ६० फुटमें १०° फारनहीटके हिसाबसे उष्णताकी वृद्धि होगी। इसीसे जाना जाता है कि पृथ्वीको सतहसे कुछ नीचे तापका इतना प्रादुर्भाव है कि वहां पर ले जाने पर लोहा गल कर पानीकी तरह हो सकता है।

सूर्य—जिन सब तेजोंका अब तक वर्णन किया है, सौर तेजके सामने ये नितान्त तुच्छ ज्ञात होते हैं। सूर्य ही तापका आदि कारण है। उसीसे हम ताप और प्रकाश पाते हैं। किन्तु सूर्यने ताप और प्रकाश कहांसे पाया, यह हम नहीं जानते। ताप और प्रकाश सम्बन्धी जितने व्यापार हैं, सब सूर्य हीसे सम्पादित होते हैं। दीप-शिखा और ईंधनकी आगमें भी सूर्य ही प्रकाशमान है। दावाग्नि, वज्राग्नि और बिजलीकी अग्नि इन सबमें भगवान् भास्कर ही विराजमान हैं। उन्होंने ही सागरको जलका शरीर और वायुको वाष्पीय आकार प्रदान किया है। वे ही समुद्रके जलको वाष्प रूपमें परिणत कर मेघ उत्पन्न करते हैं। उन्होंने नवपल्लवोंसे तरु-लताओंको सुशोभित किया है। वे ही तेजके रूपमें प्रकट हो कर पुनः तेज-रूपमें अन्तर्ध्यान होते हैं। उन्हींके आगमन और गमनकालमें समस्त प्राकृतिक व्यापार सम्पादित होते हैं।

अनुमितिग्राह्य ताप—जो ताप स्पर्शशक्ति या तापमान यन्त्र किसीसे लक्षित नहीं होता और उसकी सत्ताकी उपलब्धि होती है, उसीका नाम गूढ़ या अनुमितिग्राह्य ताप है। तापसे अनेक पदार्थ गल जाते हैं। यह देखा जाता है जब तक पदार्थोंके गलनेका कार्य सम्पूर्ण रूपसे समाप्त नहीं हो जाता, तब तक उनका तापक्रम स्थिर और समभावसे रहता है। ताप दिया जाता है किन्तु तापमानमें उसका कोई लक्षण हो नहीं देखा जाता, इसका कारण क्या है? समस्त पदार्थ गलते समय कुछ ताप शोषण करते हैं, किन्तु वह ताप जाता कहां है, और वह लक्षित हो क्यों नहीं होता? वह ताप उस पदार्थको तरल अवस्थामें रखनेमें पर्यवसित रह जाता है। जब पदार्थ तरल हो जाता है, तो उस तापको उस कार्यके करनेकी आवश्यकता नहीं रहती। सुतरां तापमान प्रत्यक्ष किया जा सकता है। इसकी पहली अवस्थामें अर्थात् पदार्थके तरल होते समय ताप अलक्षित रहता है, किन्तु यदि वह न होता तो उस पदार्थको तरल अवस्थामें रखनेमें और कौन समर्थ हो? इस प्रकार अनुमान करनेसे उसकी सत्ताकी उपलब्धि होती है, जान कर उसे अनुमितग्राह्य ताप कहा जाता है। यह और भी स्पष्ट किया जा सकता है। देखा जाता है कि यदि आध सेर जल जिसका तापक्रम ८०° और आध सेर जल जिसका तापक्रम ०° है, उन्हें एकत्रित किया जाय तो इनके मिश्रणका तापक्रम ४०° होता है। किन्तु यदि आधसेर चूर्णित वर्फके साथ जिसका तापक्रम ०° है और आधसेर जल जिसका तापक्रम ८०° हो, मिलाया जाय तो वर्फ गल जायगा। इस मिश्रणसे जो एकसेर जल प्रस्तुत होगा, उसका तापक्रम ०° हो होगा। यहां ०° का आधसेर वर्फ अपने तापक्रमसे अर्थात् ०° से कुछ भी अधिक नहीं बढ़ा, तब वह ८०° ताप गया कहां? वह वर्फके जल बनानेमें लग गया। सुतरां समान परिमाणके वर्फके समान तापक्रमको जलमें परिणत करनेके लिए जितना ताप आवश्यक होता है, वह उतने ही परिमाण जलको ८०° तक उष्ण कर देता है। तापका यही परिमाण गूढ़ या अनुमितिग्राह्य ताप कहलाता है। वर्फके गलते समय जितना ताप लगता है उतना ही अधिक समय उसे गलानेमें लगता है क्योंकि जब तक वर्फसे तापका वह परिमाण बाहर न निकल जायगा तब तक वह जम नहीं सकता।

आपेक्षिक ताप—एक ही तापक्रमके दो विभिन्न पदार्थोंको एकही पात्रमें समान दूरी पर रख, एक साथ एक ही मात्राका एकसा ताप दें तो उन दोनों पदार्थोंके तापक्रममें अन्तर देखा जायगा। पारद और जल इसी तरह रखनेसे देखेंगे कि जलकी अपेक्षा पारद अधिक उत्तप्त हो जाता है।

पारेको ० तापक्रमसे किसी निर्दिष्ट तापक्रम तक उठानेके लिए जितना ताप लगता है उतनेसे नहीं होगा; अर्थात् पारा और पानीको समान तापक्रम तक उष्ण करनेमें पारेकी अपेक्षा जलके लिये अधिक ताप आवश्यक होगा। इसी तरह यदि समान परिमाणका पारा और पानी १०० से शीतल करना शुरू किया जाय तो पारेके बराबर शीतल होनेमें पानीको अधिक समय लगेगा। ठीक इसी तरह जल पारदके समान उष्ण होनेमें जितना अधिक ताप लेगा उसके बराबर शीतल होनेमें उतना ही अधिक ताप त्याग भी देगा।

जब एक तापक्रमके एक पदार्थके साथ दूसरे पदार्थका मिश्रण किया जाय और दोनोंका परिमाण एक ही हो, तो उनके तापक्रममें विशेष अन्तर पड़ जाता है। यदि १०० तापक्रमका आधसेर पारद ० तापक्रमके आधसेर पानीमें मिलाया जाय तो मिश्रणका तापक्रम करीब ३ होगा अर्थात् पारदका तापक्रम ९७ कम हो कर पानीका तापक्रम केवल ३ बढ़ेगा। सुतरां बराबर तौलके पानी और पारेको बराबर तापक्रम तक उठानेमें पानीके लिए पारेकी अपेक्षा ३२ गुणा ताप अधिक प्रयोग करना पड़ेगा।

इसी तरह यदि अन्यान्य वस्तुओंको जलके साथ तुलना की जाय तो सब वस्तुओंमें ही तापक्रमकी यह विषमता लक्षित होगी। किसी पदार्थके तापक्रमको ०से १ तक बढ़ानेमें वह पदार्थ जितना ताप शोषण करेगा और उसी अवस्थाके उतने ही जलको उसी तापक्रममें लानेके लिए जल जो ताप शोषण करेगा उन विभिन्न तापोंकी तुलना करनेसे जो फल पाया जाता है वही उस पदार्थका आपेक्षिक ताप है। यथा—शीशेका आपेक्षिक ताप जाननेके लिए समान परिमाणका जल और शीशा ली, अब शीशेको ० से १ तापक्रममें लानेके लिये जितना ताप आवश्यक होता है, उस तापसे जलका तापक्रम जितना बढ़ता है, उस तापमें जलका ०·०३१४ तापक्रम होगा। सुतरां शीशेका आपेक्षिक ताप तुलनामें ०·०३१४ हुआ। आधा सेर जलका तापक्रम ० से १ पर्यन्त बढ़ानेमें जितना ताप आवश्यक होता है, उसे वैज्ञानिक लोग तापाङ्क (Thermal unit) कहते हैं। यही आपेक्षिक तापका माप है।

ठोस और तरल पदार्थोंका आपेक्षिक ताप जाननेके लिए तीन प्रकारके उपाय काममें लाए जाते हैं—बरफका गलन, मिश्रण और शीतलीकरण। अन्तिम प्रथाको समयके द्वारा जाना जाता है, अर्थात् किसी एक विशेष तापमें ला कर पदार्थोंके शीतल होनेमें जिसके जितना समय लगता है उसी समयके घट-बढ़के अनुसार विभिन्न पदार्थोंके आपेक्षिक तापका निरूपण किया जाता है।

आधसेर बर्फ गलानेके लिए ८० तापाङ्कोंकी जरूरत होती है। यदि किसी पदार्थका कोई एक निर्दिष्ट तापक्रम, मान लो १००में लाकर एकदम तुषारके ऊपर रखा जाय तो देखा जायगा कि वह शीतल हो कर १००से ० के तापक्रममें आनेमें कुछ बर्फ गला कर पानी बना देता है। उस पानीका वजन और उस पदार्थका वजन ठण्डा होनेमें जितना तापाङ्क नीचे गिर पड़ेगा, उसकी संख्या देख कर उस पदार्थके आपेक्षिक तापका निरूपण सहज ही किया जा सकता है। इसे सहजहीमें जाननेके लिए सुप्रसिद्ध विद्वान् लाप्लासने तापमिति (Calorimeter) नामक एक यन्त्र प्रस्तुत किया है। इस यन्त्रमें धातुके तीन बर्तन एकके भीतर एक लगे रहते हैं। प्रथम द्वितीयके बीचको तुषार बर्फसे भर दी जाती है और तीसरे बर्तनके भीतर जिस पदार्थका आपेक्षिक ताप जानना होता है, उसे रखा जाता है। प्रत्येक बर्तनमें ढक्कन लगा दिया जाता है। प्रथम और द्वितीय बर्तनके बीचकी जगहमें जो बर्फ रहता है, वह द्वितीय और तृतीय बर्तनके अन्दर रखे बर्फके साथ बाहरके तापका सम्बन्ध अलग कर देता है, यहां पर केवल तीसरे बर्तनका ही ताप पहुंच सकता है और किसी तापके वहां पहुंचनेका रास्ता नहीं। सुतरां उस तापसे बरफ गल कर जितना जल होगा उसे नल द्वारा होशियारपूर्वक निकाल कर तौल

डालनेसे हो आपेक्षिक ताप निकाला जा सकता है।

ताप-विषयक निबन्ध एक तौर पर शेष हो गया। विज्ञानका यह भाग अत्यन्त विशद है। ताप, तड़ित् और प्रकाश इनके द्वारा दिनोंदिन कितने आविष्कार होते हैं, उनका वर्णन दुःसाध्य है। इसो तापसे मेघ, वर्षा, आंधो, ओस और वर्फको उत्पत्ति है।

तापक (सं० पु०) तापयतीति तप-णिच ण्वुल्। १ ताप कारक, ताप उत्पन्न करनेवाला। २ ज्वर, बुखार। ३ रजोगुण। एकमात्र रजोगुण हो तापका प्रतिकारण है। ताप या दुःख हो रजोगुणका धर्म है।

दुःख और रजोगुण देखो।

तापतिल्ली (हिं० स्त्री०) ज्वरयुक्त प्लीहा-रोग, पिलही बढ़नेकी बीमारी।

तापती (सं० स्त्री०) १ सूर्यकी कन्या तापो। तापी देखो। २ एक नदी। यह सातपुरा पहाड़से निकल कर पश्चिम ओर प्रवाहित हो खंभातकी खाड़ीमें जा मिली है।

तापत्य (सं० पु० स्त्री०) तपत्याः सूर्यकन्यायाः अपत्यं क्षत्रियत्वात् ण्य। तपतीके वंशज कुरु।

तपती और तापी देखो।

तापत्रय (सं० क्ली०) तापानां त्रयः, ६ तत्। त्रिविध दुःख, तीन प्रकारका ताप, जैसे—आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक।

तापदुःख (सं० क्ली०) तापरूपं दुःखं। दुःखभेद। पातञ्जलदर्शनमें इस दुःखका विषय इस प्रकार लिखा है

. कर्मके पुण्यापुण्यके अनुसार सुख और दुःख हुआ करता है। पुण्यकर्मके फलसे उत्कृष्ट जाति, चिरायु और विषयभोगादि फल सुखप्रद होते हैं तथा पापकर्मके प्रभावसे परितापादि दुःख भोग रूप फल मिलता है। अतएव सुख और दुःखभोग कर्मफलानुसार हुआ करता है। जन साधारण उक्त दो प्रकारके फल भोग करते हैं, किन्तु योगिगण सुख-दुःखादि भोगरूप सभी कर्मफलोंको दुःख मानते हैं। क्लेशादिका ज्ञान हो जानेसे जिन्हें विवेक उत्पन्न हो गया है, वे भोग साधक सभी द्रव्योंको विषमिश्र सुस्वादु अन्नके जैसा प्रतिकूल समझते हैं। योगिगण दुःखके लेशमात्रसे हो उद्विग्न हो जाते हैं। जिस तरह कोमलसे कोमल ऊनके डोरेके स्पर्शसे आंखोंको महती पीड़ा होती है, उसी तरह अल्प दुःखके अनुभवसे भी विवेकीको अत्यन्त कष्ट मालूम पड़ता है; क्योंकि सभी विषयोंका उपभोग करनेसे परिणाममें संस्कारवशतः दुःख भुगतना पड़ता है। मनुष्य जितना विषय भोग करता है, उतना भी अधिक भोग-लालसा बढ़ती है। किन्तु विषयभोगके समय किसी विषयके नहीं मिलने पर जो दुःख होता है, उसे कोई परिहार नहीं कर सकता; वरन् दुःखान्तर उपस्थित हुआ करता है। सुतरां विषयभोगमें कुछ भी सुखकी सम्भावना नहीं है। सुखसाधक सामग्रीके उपस्थित होने पर उसके विरोधीके प्रति द्वेष उत्पन्न होता है और सुखानुभवके समय भी तापरूप दुःख पहुंचता है। उस समय तो सुख मिलता है और जब अनभिमत द्रव्य उपस्थित होता है, तब दुःख हुआ करता है। इस प्रकार पुनःपुनः सुख और दुःखकी उत्पत्ति होती है। अतएव सभीको दुःखमय समझ कर विवेकशाली मुनि लोग विषयभोगादिका परित्याग करते हैं। सुखानुभवके समय भी तापदुःख उपस्थित होता है, क्योंकि सुखसाधक सामग्रीके उपस्थित होने पर भी उसके विरोधीके प्रति द्वेष रहता है। अतः तापदुःख, संस्कार दुःख और परिणाम दुःख इन तीन प्रकारके दुःखों द्वारा सत्व, रज और तम इन तीन गुणकी वृत्तिका स्वरूप देखा जाता है। अतएव किसी प्रकारका विषयभोग क्यों न हो, उससे दुःखके सिवा सुखकी सम्भावना नहीं है। विशेष विवरण दुःखमें देखो।

तापन (सं० क्ली०) तप णिच् भावे ल्युट्। १ तापकरण। (पु०) कर्त्तरि ल्यु। २ सूर्य। ३ कामदेवके पांच बाणोंमेंसे एक बाण। ४ सूर्यकान्त मणि। ५ अर्कवृक्ष, मदार। ६ आनद्ध यन्त्र, ढोल नामका बाजा। (त्रि०) ७ तापक, ताप देनेवाला। (क्ली०) ८ नरकविशेष, एक नरकका नाम। ९ तन्त्रमें एक प्रकारका प्रयोग। इससे शत्रुको पीड़ा होती है।

तापना (हिं० क्रि०) १ अग्निकी गरमीसे अपनेको गरम करना। २ शरीर गरम करनेके लिये जलाना, फूंकना। ३ नष्ट करना, बरबाद करना।

तापनी (सं० क्ली०) १ उपनिषद्भेद, एक उपनिषद्का नाम। २ स्वर्णमय, वह जो सोनेका बना हो। स्वर्णस्र

विशारा पञ्च । ६ नियत परिमाण सुवर्ण । (त्रि॰) ८ ताप्योग्य गरम होनेके काबिल ।

तापमान-यन्त्र—यन्त्रविशेष एक यन्त्र जिसे अंगरेजीमें थर्मामीटर (Thermometer) कहते हैं। जिस यन्त्रके द्वारा उष्णताका निरूपण किया जाता है उसका नाम तापमान यन्त्र है। साधारणतः जिस तापमानका व्यवहार होता है, वह कन्द व सूक्ष्म छेदमय एक कांचकी नली है, जिसके कन्द और नलका कुछ भाग पारदसे भरा रहता है। उष्णताकी ह्रासवृद्धि होनेके कारण यन्त्रके भीतरका पारा संकुचित और विस्तृत हुआ करता है। द्रवमान तुषार या हिमशलमें डालनेसे पारा जिस अङ्क तक नीचे गिर जाता है, उसे द्रवणाङ्क कहते हैं और खौलते हुए पानीमें अथवा उसके निकले भापमें डालनेसे जिस अङ्क तक पारा चढ़ जाता है उसे स्फुटनाङ्क (Boiling point) कहते हैं।

इन दो अङ्कोंके बीचको अलगको कोई १८०, कोई १०० और कोई ८० के बराबर भाग कर उष्णताके अंश-क्तिओंको अङ्कित करते हैं।



इङ्गलण्डमें प्रथमोक्त तापमान प्रचलित है। फारनहीट नामक एक जर्मनदेशीय विद्वान्‌ने इसका आविष्कार किया था, इसीलिये यह फारनहीटका तापमान कहलाता है। फारनहीटका द्रवणाङ्क ३२ स्फुटनाङ्क २१२, और इन दोनों अङ्कोंके भीतरका स्थान १८० समान अंशोंमें विभक्त है। द्रवणाङ्कसे ३२ अंश नीचे शून्य है।

फ्रान्स देशमें दूसरे तरहका तापमान प्रचलित है। इसका द्रवणाङ्क ० और स्फुटनाङ्क १०० तथा इन दो अङ्कोंके बीचका स्थान १०० समान अंशोंमें विभक्त है।

तीसरी तरहका तापमान रूसराज्यमें प्रचलित है। रिउमर नामक एक व्यक्तिने इसका पहले पहल प्रचार किया। इसका द्रवणाङ्क ० और स्फुटनाङ्क ८० है और इन दो अङ्कोंके बीचका स्थान ८० सम भागोंमें विभक्त है। अतएव देखा जाता है कि जिस उष्णताके कारण हिमखण्ड गलने लगता है उसीके १८०, १०० अथवा ८० समभागोंके एक भागके प्रत्येक अंशको उष्णताका परिमाण कल्पित होता है।

हिमखण्ड जितना गरम होनेसे गलने लगता है उतना ही गरम होनेसे फारनहीट, सतांशिक और रिउमर इन तीनों तापमान-यन्त्रोंमें पारा यथाक्रम—३२, ० और ० से २१२, १०० और ८० चिह्न तक उठेगा। उष्णताके अंश लिखते समय संख्याके दक्षिण और अंकके ऊपर एक छोटा शून्य देते हैं और सतांशिक फारनहीट या रिउमर जिस यन्त्रके अंश हों उसके नामका प्रथम अक्षर लिखा जाता है।

यथा—२० स, ६८ फा १६ रि; अर्थात् सतांशिकके २०, फारनहीटके ६८ और रिउमरके १६ अंश। शून्यसे नीचेका कोई अंश लिखना हो तो उसके आगे ऋण चिह्न देते हैं। यथा—१५ स; अर्थात् सतांशिक तापमानके शून्यसे १५ अंश नीचे।

तापमानके विषयमें विशेषरूपसे लिखनेके पहले तापका एक प्रधान गुण वर्णन करना बहुत जरूरी है। तापके उस गुणका नाम प्रसारण (Expansion) है। तापके लगनेसे समस्त वस्तुएँ प्रसारित होती हैं। वस्तुओंके परमाणु विषम होनेसे वस्तुका प्रसरण होता है। घन, तरल और वाष्पीय ये तीनों पदार्थ तापके इस गुणके वशमें हैं जिसमें वाष्प, सबसे अधिक तरल उससे अपेक्षा कम और घन सबकी अपेक्षा अल्प प्रसरित है। दूध तरल पदार्थ है। किसी एक कड़ाहीमें दूध रख कर उत्ताप देनेसे वह उफन उठता है।

कड़ाही घन पदार्थ है इसलिये उत्ताप लगनेसे उसका प्रसरण लक्षित नहीं होता। दूध तरल है इसलिये उसका प्रसरण खूब दिखाई देता है। किसी मटकेमें दूध आधा भर कर उसे गरम करनेसे, मटका उससे परिपूर्ण हो कर तब तापसे फेन उठेगा, किन्तु यह प्रसरणका

नियम सर्वत्र एकसा नहीं होता। जलके सम्बन्धमें इस नियमका उल्लङ्घन देखा जाता है, जो आगे दिखाया जायगा। जो हो इसी प्रमाण गुणके आधार पर ताप-मान-यन्त्रकी सृष्टि हुई। वह तापमान कई पदार्थोंका हो सकता है, जिनमें पारद, वायु और सुरासार (Alcohal) सबसे अच्छे हैं। इन तीनोंकी निर्माणविधि एकसी है। पारेका तापमान सर्वत्र प्रसिद्ध है, इसलिये उसीका वर्णन करना चाहिये, पहले यह बतलाया जाय कि वह किस तरह बनाया जाता है। एक कांचका नल जिसके बीचमें ऊपरसे नीचे तक बालके बराबर एक छेद रहता है। इस नलका एक भाग खुला रहता है और दूसरा भाग कुछ प्रसारित हो कर एक गोलाकार वर्तुलके अनुरूप होता है। इस नलका मुंह खुला होनेसे बाहरकी हवा उसमें प्रवेश कर सकती है। नलीके मध्यभागमें भी वायु है, नलीका वर्तुलाकार भाग अग्निमें उत्तप्त करनेसे नलीके भीतरकी वायु गरम हो कर प्रसारित होती है, अधिक स्थान घेरनेके कारण नलीके भीतर नहीं रह सकती। ऊपरका मुंह खुला है, इसी रास्ते बाहर निकल आती है। इस तरह नलीके भीतरकी हवा ठण्डी होनेके पहले ही उसे एक पारेसे भरे पात्रमें डुबाओ। नलीके भीतरकी हवाके शीतल होते ही वायु संकुचित होनेसे नलके भीतरका स्थान शून्य (खाली) हो जाता है। उस समय बाहरकी हवाके पेषणसे उस पात्रके पारेका कुछ भाग शून्यस्थलको पूर्ण करते करते नलीके वर्तुलाकार भागमें जा कर पड़ता है। इसके बाद नलीको वहांसे निकाल कर पूर्ववत् वर्तुलाकार भाग और नलीका सारा हिस्सा आगसे गरम करो। पारा गरम होने लगेगा और क्रमशः उबल कर जब वाष्पाकार धारण करेगा, तब सारा नलीमें घिर जायगा और वायुके बचे हुए भागको वहांसे निकाल बाहर कर देगा। तब उस नलीके भीतर और उसके वर्तुलाकार भागमें पारद वाष्पको छोड़ कर कुछ नहीं रहता। उक्त नलीका खुला भाग पुनः पारद पूर्ण पात्रमें निमज्जित करो। इस समय उस नलीमें वायु नहीं है, समस्त भाग केवल पारद-वाष्पसे परिपूर्ण है। यह वाष्प क्रमशः शीतल और संकुचित हो कर तरल पारदके रूपमें परिणत हो कर नलीका कुछ भाग शून्य कर देता है। तब बाहरकी हवाके पेषणके कारण उस वर्त्तनका पारा क्रमशः नलीमें बढ़ने लगता है। और नली एवं उसका वर्तुलाकार भाग पारदसे पूर्ण हो जाता है। पारद अभी सम्पूर्ण शीतल नहीं हुवा। ऐसी अवस्था में ऊपर कहा हुआ नलीका खुला भाग अग्निमें गला कर बढ़ाओ, जिससे उसमें और वायु प्रवेश न कर सके; इसके बाद नलीके सम्पूर्ण रूपसे शीतल हो जाने पर देखा जायगा कि केवल वह वर्तुलाकार भाग और नलीका थोड़ासा हिस्सा पारेसे पूर्ण है, बाकी हिस्सा शून्य हो गया।

इसे ले कर अब एक तुषारपूर्ण पात्रमें डुबाओ पहले पहल तुषार जल गलने लगता है। तुषारके अत्यन्त शीतल होनेसे पारा संकुचित हो कर नलीके निम्न भागमें गिरता है। प्रायः १५ मिनट रखनेके बाद जब पारा नीचे नहीं गिरता, तब उस जगह एक रेखा खींचो। जब कभी यह पारद द्रवमाण तुषार या ऐसे ही किसी दूसरे शीतल पदार्थोंमें डुबाया जायगा वह इस रेखाके नीचे कभी नहीं गिरेगा। इसके बाद इस तापमान नलीको उबलते हुए पानीके पात्रमें डुबा कर १५ मिनिट तक रहने दो, इसमें पारा जितना ऊपर उठेगा, उस चरम सीमामें एक और रेखा अङ्कित करो। जलको कितनी ही आग क्यों न दी जाय, पारा उससे ऊपर कभी न उठेगा। अब दो रेखाएं मिलीं। पहली, द्रवमाण तुषारके संसर्गसे नीचे गिरे पारेकी अवनति-की चरम सीमा बतलाती है और दूसरी, खौलते पानी-में डालनेसे नलीके ऊपर पारेके उत्थानकी चरम सीमा व्यक्त करती है। यहां पर यह कह देना जरूरी है कि खौलते हुए पानीका ताप सब समय एक सा नहीं रहता। वायुमण्डलके पेषण (दबाव)के कारण उसमें घटती बढ़ती होती है। जो हो मोटी तौर पर यहां यह मान लिया गया कि वह एकसा रहता है। अब यह जाना गया कि ये दो रेखाएँ दो चरम सीमाएं जतलाती हैं। प्रथम रेखा जलका घनीभाव या तुषाराकार बतानेवाली और दूसरी वाष्पीभाव बतानेवाली है। इन दोनोंके बीचका भाग एक सौ बराबर हिस्सोंमें विभक्त करनेसे शतवांशक शतांशिक तापमान होगा। पहली रेखाके पास

एक शून्यबिन्दु दूसरे रेखाके पास १०० एकमोंका चाङ्ग किया जाता है। नलोके ऊपर चाङ्ग लिखनेके लिए उसे मोम लगा कर चारों ओरसे ढक दो। इसके बाद प्रथम रेखासे द्वितीय अर्थात् अन्तिम रेखा तक ठीक जगह पर सुईसे चाङ्ग दे कर सारे नलो हाइड्रोफ्लूरिक (Hydro-fluoric) एसिड् (तेजाब)-में डुबाओ। कुछ देर बाद निकाल कर मोम पोंछ लेने पर देखा जायगा कि (उस तेजाबके साथ कांचका एक विशेष गुण होनेके कारण, उसके सहयोगसे) कांचके सभी अङ्कित स्थानोंमें चत हो गये हैं। उपरोक्त नलोका वर्तुलाकार भाग लोहेको और रखनेसे शून्यके ऊपर एकके बाद एक चाङ्ग तापको क्रमश: उन्नतिका बोध कराते हैं। सुतरां उपरोक्त रेखाओंके बीचको किसी रेखाके ऊपरको रेखा अपेक्षाकृत अधिक ताप प्रकाश करती है।

सबसे पहले यही शतांशिक तापमान-यन्त्र व्यवहारमें लाया गया। अत्यन्त सुविधाजनक होनेके कारण यह आजकल सब त्र प्रचलित है। स्वीडन देश-वासी एक वैज्ञानिकने इसे निर्माण किया है। उनका नाम सेल्सियस (Celsius) था। उन्होंने सन् १७०१ ई०में जन्म लिया और सन् १७४४ में उनकी मृत्यु हुई।

फारनहीट (Fahrenheit) नामक एक प्रुसिया देश वासी वैज्ञानिकने एक दूसरा तापमान यन्त्र बनाया। यही तापमान इङ्गलैण्डमें अधिक व्यवहारमें लाया जाता है। यह सेल्सियसके तापमानसे भिन्न है। यह तापमान घनीभावबोधिका और वाष्पीभावबोधिका रेखा तक १८० समभागोंमें विभक्त है। इस यन्त्रके वाष्पीभाव बिन्दुमें २१२ और घनीभाव बिन्दुमें ३२का चाङ्ग लिखा रहता है। शून्यबिन्दु घनीभाव-बिन्दुसे ३२ अंश नीचे रहता है। कारण, उनके मतसे लवण और तुषार साथ मिलानेसे निम्नतम तापक्रम उत्पन्न करते हैं इसीलिये उन्होंने वहीं पर शून्य बिन्दु निर्धारित किया। इन दो तापमानोंको छोड़ कर एक और तापमान है; उसका नाम है रिउमर (Reaumer)। रिउमर नामक किसी रासायनिकने इसका निर्माण किया। यह काम लोगोंके उत्तरमें व्यवहृत होता है। यह वाष्पाभाव बोधकसे घनीभाव-बोधिका रेखा तक ८० भागोंमें विभक्त है। प्रयोजनके अनुसार इन तीनों प्रकारके तापमान-यन्त्रोंको दोनों तरफ बढ़ाए जा सकते हैं और घनीभाव बिन्दु उसके मध्यस्थलमें कभी १०के भेदसे और कभी ५के भेदसे अङ्कित किया जाता है तथा तापांश प्रकाश करते समय अक्षरके अन्त-के ऊपर एक बिन्दु दिया जाता है। जैसे १ गर्म दफे ग्रीष्मकालका तापक्रम ९१ ।

फारेनहीट तापमानके साथ सेल्सियस वा रिउमर तापमानको तुलना किंवा सेल्सियस वा रिउमर तापमान के साथ फारेनहीटको तुलना करनी हो तो इस प्रकार करनी चाहिये —

(फारेनहीट फ, सेल्सियस स, रिउमर र) घनीभाव बिन्दु से वाष्पीभाव तक फ १८० स १०० और र ८० अंशोंमें विभक्त है। सुतरां १८० फ = १०० स = ८० र। प्रत्येकमें २० का भाग दे कर निकला—

९ फ = ५ स = ४ र

सुतरां १ फ = $\frac{5}{9}$ स = $\frac{4}{9}$ र

और १ स = $\frac{9}{5}$ फ = $\frac{4}{5}$ र

सुतरां १ र = $\frac{9}{4}$ फ = $\frac{5}{4}$ स

और १ स = $\frac{9}{5}$ फ = $\frac{4}{5}$ र

तथा १ र = $\frac{5}{4}$ फ = $\frac{5}{4}$ स

अब इनके द्वारा किसी एक तापमानके चाङ्ग देनेसे और दो तापमानोंके अंश सहज ही प्राप्त किये जा सकते हैं। इसके तीन नियम नीचे दिखलाए जाते हैं।

यह याद रखना चाहिये कि फ के ३२ = र और स के ० सुतरां फको र वा समें परिणत करनेके लिए पहले ३२ घटाना होगा।

प्रथम नियम। फको स वा रके मतानुसार करनेकी प्रणाली इस प्रकार है:—

फ − ३२
———
स = ९ × ५

फ − ३२
———
र = ९ × ४

फको समें परिणत करनेके लिये फ से पहले प्रथम ३२ घटा कर बाकीका $\frac{5}{9}$ से गुणा करो यथा—

२१२ फ = (२१२ − ३२) $\frac{5}{9}$ = १८० × $\frac{5}{9}$ = १०० स

फको रमें बदलनेके लिए फके अङ्कसे ३२ घटाओ, जो बाकी बचे उसे ४/९ से गुना करो।

२१२°फ = (२१२—३२) ४/९ = १८०×४/९ = ८० र,

दूसरा नियम। रको फ या रमें परिणत करना हो तो—

फ = स/५ × ९ + ३२,

र = स/५ × ४,

तीसरा नियम। रको स या फमें बदलना हो तो—

स = र/४ + ५

फ = र/४ × ९ + ३२.

रको समें लानेके लिये ५/४ से गुणा किया जाता है;

यथा– ८०°र = ८०° × ५/४ = १००°स।

रको फ बनानेके लिए ९/४ के साथ गुणा करो और गुणनफलमें ३२ जोड़ दो।

यथा–८०°र = ८० + ९/४ = १८० + ३२ = २१२°फ।

पारदको छोड़ कर स्पिरिट और वायुके भी तापमान हुआ करते हैं। एक स्पिरिटका तापमान (Alcohol-thermometer) अत्यन्त निम्नतम ताप बता देता है क्योंकि अलकोहल कभी जमता नहीं। लेकिन पारा घनीभूतविन्दुके ४० अंश नीचे जम जाता है। इसलिए इससे भी नीचेका तापक्रम जाननेके लिए अलकोहल ही काममें लाया जाता है। पर इस प्रकारके तापमानसे अधिकतर तापक्रम नहीं जाना जाता, क्योंकि शतांशिक तापमानके ७८° अंश गर्मी लगते ही अलकोहल उबलने लगता है। तापक्रमको विशेष बारीकियाँ जाननेके लिये वायुका तापमान काममें लाया जाता है। इसे तय्यार करनेके लिए तापमानका वर्तुलाकार भाग और दण्डाकार भागका कुछ अंश वायुसे पूर्ण करनेके बाद नलका बाकी हिस्सा किसी तरल पदार्थके द्वारा पूर्ण कर दिया जाता है। नलीका मुख उस पदार्थ मज्जित रहता है। उसी तरल पदार्थका प्रसरण और सङ्कोचन ही तापमानको ह्रासवृद्धिका बोध कराता है। अवश्य ही जब यह तापमान व्यवहारमें पाया जाता है, तब इसका वर्तुलाकार भाग ऊपरको ओर रहता है। वायुके तापमान कई प्रकारके होते हैं किन्तु इनकी निर्माण-विधि अत्यन्त सूक्ष्म और अवयव अतिशय दीर्घ होते हैं; इसलिए वे साधारण व्यवहारमें नहीं आते। किन्तु यदि अच्छी तरह बना सकें, तो और तापमानोंको अपेक्षा सूक्ष्मतर रूपसे तापक्रम जाना जा सकता है।

इनको छोड़ कर एक भेदसूचक तापमान-यन्त्र होता है। किसी एक जगहके तापक्रममें और उसके निकटवर्ती स्थानके तापक्रममें कितना अन्तर है, यह जाननेके लिए इसका व्यवहार होता है।

दो वर्तुलाकार नलियाँ वायु-द्वारा पूर्ण और नीचेके हिस्सेमें एक वक्र नली-द्वारा जुड़ी रहती हैं। यह वक्र नली किसी रंगीन तरल पदार्थसे पूर्ण रहती है। नीचेकी इस वक्र नलीका तरल पदार्थ दोनों ओर एक समतलमें रहता है। अब यदि एक ओरका वर्तुलाकार मुख दूसरी ओरके वर्तुलाकार मुखकी अपेक्षा अधिक उत्तप्त हो तो उस ओरकी वायुके विस्तारके कारण पेषण अधिकतर होगा; सुतरां एक ओरकी नलीका तरल पदार्थ उस पेषणके कारण दूसरेमें चढ़ जायगा और इसी तरह यदि दूसरी ओर अधिक उत्तप्त हो तो प्रथम नलीमें यही क्रिया देखनेमें आवेगी। सचमुच इस तरहके यन्त्र द्वारा तापक्रमका सूक्ष्मसे सूक्ष्म भेद जाना जा सकता है।

यद्यपि पारेका तापमानयन्त्र अच्छी तरह और जहाँ तक उत्कृष्ट हो सके वहाँ तक उत्कृष्टताके साथ बनाया जाता है, तथापि समय समय पर उसमें भी संशोधनकी आवश्यकता होती है।

१। शून्यबिन्दु-परिवर्तन—घनीभावविन्दु भी, महीनेमें शून्यविन्दुसे १°-उठ जाता है। सभी तापमानोंकी विशेषतः आपात निर्मित समस्त तापमानोंकी यही दशा है। इसका कारण यह है कि तापमानयन्त्रमें पारद भर देनेके बाद वर्तुलाकार भाग सहसा शीतल हो कर संकुचित होता है, किन्तु वहीं संकोचनकी चरमसीमा नहीं हो जाती, उस समय भी थोड़ा थोड़ा संकुचित होता रहता है एवं इसीलिए उसका पारद नलमें उठता जाता है। किन्तु यह संकोचनशक्ति क्रमशः कम होती जाती है। और इसीलिए आपात-निर्मित तापमानोंमें यह विशेषरूपसे लक्षित होता है। सुतरां तापमानमें तात्कालिक पढ़ने जहाँ तक निर्धारित था, उसकी अपेक्षा तानिक ऊपर ऊपर उठने लगेगा। इस दोषके

फटाकर्मके लिए बीच बीचमें तापमान कुम्भाग्न तुषार में निमग्न किया जाता है। हर एक बार तापांश कितना हुआ यह याद रखनेसे क्रमशः उन भिन्न भिन्न परीक्षाओं द्वारा परस्पर कितना भेद हुआ यह जाना जायगा अर्थात् यदि शून्यबिन्दु १° तापांश ऊपर उठ जाय तो तापक्रममें १° घटा कर संशोधन कर लेना होगा।

२। इसके सिवाय और भी कालविश परिवर्त्तन हुआ करते हैं। जिनका कारण तापमानयन्त्र क्रमश: हो कर उसका संशोधन हो जाता है। इसीलिए किसी ताप मानयन्त्रका वाष्पोत्ताप बिन्दु निर्दिष्ट करनेके पहले हो उसका हिमीभावबिन्दु निश्चय कर लेना उचित है, नहीं तो गणनामें अवश्य भूल होगी।

आजकल तापमानयन्त्र द्वारा वायवी धातो इत्यादि कितने विषय बताये जाते हैं। उनका वर्णन करना दुःसाध्य है। ज्वर आने पर वह दुःसाध्य है या सुसाध्य इसका निर्णय भी तापमानसे होता है और भी अनेक उपकार हो रहे हैं। ताप देखो।

तापयिष्णु (स० त्रि०) तापि-इष्णुच्। १ तापशील, तापने योग्य। २ सन्तापदायक जिससे दुःख हो।

तापश्चित (स० क्ली० तपसि चीयते चि-क्त स्वार्थे अण्।) १ यज्ञभेद, एक यज्ञका नाम। यज्ञ देखो। २ यज्ञाग्नि भेद, यज्ञकी अग्नि।

तापस (स० त्रि०) तपःशीलमस्य तपस्-ण। ज्योत्स्नादिभ्यो ण। पा ५।२।१०३। १ तपस्वी, तपस्या करनेवाला। (पु०) २ दमनवृक्ष दौना नामका पौधा। (क्ली०) ३ तमाल पत्र, तेजपत्ता। ४ दाक्षिणात्यके अन्तर्गत एक पौराणिक जनपद। टलेमीने इसका Tabassoi नामसे उल्लेख किया है। अनुमान किया जाता है कि इसको वर्त्तमान अव स्थिति खानदेशमें है। (पु०) ५ बक पक्षी, बगला ६ वस्तुविशेष एक प्रकारकी ईख। (सुश्रुत १।४५)

तापसक (स० पु०) तापस स्वार्थे कन्। सामान्य छोटी मोटा तपस्वी अथवा तपस्वी जिसकी तपस्या नाम को हो।

तापसज (स० क्ली०) तापसात् जायते जन ड। तेजपत्ता

तापसतरु (स० पु०) तापसप्रियस्तरु मध्यपदलोपि कर्मधा०। वृक्ष दो हाथ विशेष हाथ २ गुप्ताका पेड़। तपस्वी भीम वनमें इ गुदीका तेल ही काममें लाते थे। इसीसे इसका नाम पड़ा है।

तापसद्रुम (स० पु०) तापसप्रियः द्रुम। वृक्ष, दो हाथ, २ गुप्ताका पेड़।

तापसद्रुमसन्निभा (स० स्त्री०) तापसद्रुमेण सन्निभा तुल्या ३ तत्। गर्भदात्री क्षुप, सफेद मकरैया।

तापसपत्री (स० स्त्री०) तापसप्रिय पत्र यस्या बहुव्री० जातित्वात् ङीष्। दमनवृक्ष, दौना नामक पौधा।

तापसप्रिय (स० पु०) तापसानां प्रियः, ६ तत्। १ वृक्ष विशेष, चिरौंजीका पेड़। २ वृक्ष दो हाथ २ गुप्ताका पेड़। (त्रि०) ३ तापस प्रियमात्र जो तपस्वियों का प्रिय हो।

तापसप्रिया (सं० स्त्री०) तापसानां प्रिया, ६-तत्। द्राक्षा, दाख, मुनक्का। द्राक्षा देखो।

तापसवृक्ष (स० पु०) तापसतरु देखो।

तापसा (स० स्त्री०) द्राक्षा, दाख।

तापसी (स० स्त्री०) १ तपस्या करनेवाली स्त्री। २ तपस्वी की स्त्री।

तापसेक्षु (स० पु०) वस्तुविशेष, एक प्रकारकी ईख।

तापसेष्ट (स० पु०) तापसप्रिय देखो।

तापसेष्टा (स० स्त्री०) तापसप्रिया देखो।

तापस्य (स० क्ली०) तापसस्य धर्म ष्यञ्। तापसधर्म, तपस्वियोंका कर्त्तव्य। वानप्रस्थका विशेष धर्म ही तापस्य है। तापस्य ही मोक्षका एकमात्र साधन है। पहले राजर्षिगण इस धर्मको धारण कर ग्रहण करते थे।

तापस्वेद (स० पु०) तापेन स्वेदः ३ तत्। स्वेदक्रिया विशेष गरम बालू, कपड़ा, गरम हाथ, आगको आँच या इसी से तपा कर पसीना निकालनेकी क्रिया।

तापहर (स० त्रि०) ताप हरति हृ ट। तापनाशक, बुखारको दूर करनेवाला।

तापहरी (स० स्त्री०) तापहर स्त्रियां ङीप्। व्यञ्जन विशेष, एक प्रकारका पकवान। इसको प्रस्तुत-प्रणाली— उड़दको रातो भर भीगो हुए चावलका उससे साथ घीमें तलते हैं। तल जाने पर उसमें हल्दी हो जल डाल कर उबालते हैं। चावलों ताप से पकने आने पर उसमें अदरक और नीम डालते हैं। इस तरह जो द्रव्य प्रस्तुत होता है, उसे तापहरी या तापहरी कहते हैं। गुण—बलकारक, शुक्रवर्द्धक, कफकारक, शरीरको दृढ़

फको रमें बदलनेके लिए फके अङ्कसे ३२ घटाओ, जो बाकी बचे उसे $\frac{४}{९}$ से गुणा करो।

$२१२^\circ\text{फ} = (२१२ - ३२)\frac{४}{९} = १८० \times \frac{४}{९} = ८० \text{ र}.$

दूसरा नियम। सको फ या रमें परिणत करना हो तो—

$\text{फ} = \frac{\text{स}}{५} \times ९ + ३२.$

$\text{र} = \frac{\text{स}}{५} \times ४.$

तीसरा नियम। रको स या फमें बदलना हो तो—

$\text{स} = \frac{\text{र}}{४} + ५$

$\text{फ} = \frac{\text{र}}{४} \times ९ + ३२.$

रको समें लानेके लिये $\frac{५}{४}$ से गुणा किया जाता है। यथा—$८०^\circ\text{र} = ८०^\circ \times \frac{५}{४} = १००^\circ\text{स}$।

रको फ बनानेके लिए $\frac{९}{४}$ के साथ गुणा करो और गुणनफलमें ३२ जोड़ दो।

यथा-$८०^\circ\text{र} = ८० + \frac{९}{४} = १८० + ३२ = २१२^\circ\text{फ}$।

पारदको छोड़ कर स्पिरिट और वायुके भी तापमान हुआ करते हैं। एक स्पिरिटका तापमान (Alcohol-thermometer) अत्यन्त निम्नतम ताप बता देता है क्योंकि अलकोहल कभी जमता नहीं। लेकिन पारा घनीभूतविन्दुके ४० अंश नीचे जम जाता है। इसलिए इससे भी नीचेका तापक्रम जाननेके लिए अलकोहल ही काममें लाया जाता है। पर इस प्रकारके तापमानसे अधिकतर तापक्रम नहीं जाना जाता, क्योंकि शतांशिक तापमानके ७८ अंश गर्मी लगते ही अलकोहल उबलने लगता है। तापक्रमको विशेष बारीकियाँ जाननेके लिये वायुका तापमान काममें लाया जाता है। इसे तय्यार करनेके लिए तापमानका वर्तुलाकार भाग और दण्डाकार भागका कुछ अंश वायुसे पूर्ण करनेके बाद नलका बाकी हिस्सा किसी तरल पदार्थके द्वारा पूर्ण कर दिया जाता है। नलीका मुख उस पदार्थ मज्जित रहता है। उसी तरल पदार्थ का प्रसरण और सङ्कोचन ही तापमानकी ह्रासवृद्धिका बोध कराता है। अवश्य ही जब यह तापमान व्यवहारमें पाया जाता है, तब इसका वर्तुलाकार भाग ऊपरकी ओर रहता है। वायुके तापमान कई प्रकारके होते हैं किन्तु इनकी निर्माण-विधि अत्यन्त सूक्ष्म और अवयव अतिशय दीर्घ होते हैं; इसलिए वे साधारण व्यवहारमें नहीं आते। किन्तु यदि अच्छी तरह बना सकें, तो और तापमानोंकी अपेक्षा सूक्ष्मतर रूपसे तापक्रम जाना जा सकता है।

इनकी छोड़ कर एक भेदसूचक तापमान-यन्त्र होता है। किसी एक जगहके तापक्रमसे और उसके निकटवर्ती स्थानके तापक्रममें कितना अन्तर है, यह जाननेके लिए इसका व्यवहार होता है।

दो वर्तुलाकार नलियाँ वायु-द्वारा पूर्ण और नीचेके हिस्सेमें एक वक्र नली-द्वारा जुड़ी रहती हैं। यह वक्र नली किसी रंगीन तरल पदार्थसे पूर्ण रहती है। नीचेकी इस वक्र नलीका तरल पदार्थ दोनों ओर एक समतलमें रहता है। अब यदि एक ओरका वर्तुलाकार मुख दूसरी ओरके वर्तुलाकार मुखकी अपेक्षा अधिक उत्तप्त हो तो उस ओरकी वायुके विस्तारके कारण पेषण अधिकतर होगा; सुतरां एक ओरकी नलीका तरल पदार्थ उस पेषणके कारण दूसरेमें चढ़ जायगा और इसी तरह यदि दूसरी ओर अधिक उत्तप्त हो तो प्रथम नलीमें वही क्रिया देखनेमें आवेगी। सचमुच इस तरहके यन्त्र द्वारा तापक्रमका सूक्ष्मसे सूक्ष्म भेद जाना जा सकता है।

यद्यपि पारेका तापमानयन्त्र अच्छी तरह और जहाँ तक उत्कृष्ट हो सके वहाँ तक उत्कृष्टताके साथ बनाया जाता है, तथापि समय समय पर उसमें भी संशोधनकी आवश्यकता होती है।

१। शून्यविन्दु-परिवर्तन—घनीभावविन्दु भी महीनेमें शून्यविन्दुसे १°-उठ जाता है। सभी तापमानोंकी विशेषतः आपात निर्मित समस्त तापमानोंकी यही दशा है। इसका कारण यह है कि तापमानयन्त्रमें पारद भर देनेके बाद वर्तुलाकार भाग सहसा शीतल हो कर संकुचित होता है, किन्तु वही संकोचनकी चरमसीमा नहीं हो जाती, उस समय भी थोड़ा थोड़ा संकुचित होता रहता है एवं इसीलिए उसका पारद नलमें उठता जाता है। किन्तु यह संकोचनशक्ति क्रमशः कम होती जाती है। और इसीलिए आपात-निर्मित तापमानोंमें यह विशेषरूपसे लक्षित होता है। सुतरां तापमानमें तापक्रम पढ़ने जहाँ तक निर्धारित था, उसकी अपेक्षा तनिक ऊपर ऊपर चढ़ने लगेगा। इस दोषके

हटानेके लिए बीच बीचमें तापमान द्रवमान तुषार में निमग्न किया जाता है। पर एक बार तापांश कितना हुआ वह याद रखनेसे क्रमशः उन भिन्न भिन्न परीक्षाओं द्वारा परस्पर कितना भेद हुआ यह जाना जायगा अर्थात् यदि शून्यबिन्दु १° तापांश ऊपर उठ जाय तो तापक्रममें १ घटा कर संशोधन कर लेना होगा।

२। इसके सिवाय और भी सामयिक परिवर्तन हुआ करते हैं। जिनका कारण तापमानयन्त्रका उत्तप्त हो कर सहसा शीतल हो जाना है। इसीलिए किसी ताप मानयन्त्रका वाष्पीभाव-बिन्दु निर्दिष्ट करनेके पहले हो उसका घनीभावबिन्दु स्थिर कर लेना उचित है, नहीं तो गणनामें अधिक भूल होगी।

आजकल तापमानयन्त्र द्वारा चाँदी आदि इत्यादि कितने विषय बताये जाते हैं। उनका वर्णन करना दुःसाध्य है। ज्वर आने पर वह दुःसाध्य है या सुसाध्य इसका निर्णय भी तापमानसे होता है और भी अनेक उपकार हो रहे हैं। ताप देखो।

तापयिष्णु (सं॰ त्रि॰) तापं इष्णुच्। १ तापशील तापने योग्य। २ सन्तापदायक जिससे दुःख हो।

तापश्चित (सं॰ क्ली॰ तपसि चीयते चि क्त स्वार्थे अण्।) १ अयनभेद एक यज्ञका नाम। यज्ञ देखो। २ यज्ञाग्नि भेद, यज्ञकी अग्नि।

तापन (सं॰ त्रि॰) तपत्योऽनेन तप-णिच्-ल्यु। ज्यातिष्मो भ॰ पा ५।४।१२। १ तपस्वी, तपस्या करनेवाला। (पु॰) २ दमनकवृक्ष दौना नामका पौधा। (क्ली॰) ३ तमाल पत्र, तेजपत्ता। ४ दाक्षिणात्यके अन्तर्गत एक पौराणिक जनपद। टलेमीने इसका Tabassi नामसे उल्लेख किया है। अनुमान किया जाता है कि इसकी वर्त्तमान अव स्थिति खानदेशमें है। (पु॰) ५ बक पक्षी, बगला ६ द्रव्यविशेष एक प्रकारकी ईख। (सुश्रुत १।४५)

तापसक (सं॰ पु॰) तापस स्वार्थे कन्। सामान्य योगी छोटा तपस्वी वह तपस्वी जिसकी तपस्या थोड़ी हो।

तापसज (सं॰ क्ली॰) तापसात् जायते जन ड। तेजपत्ता

तापसतरु (सं॰ पु॰) तापसप्रियस्तरुः मध्यपदलोपि-कर्मधा॰। हिंगोट वृक्ष, हिंगोट वृक्ष इंगुदीका पेड़। तपस्वी लोग वनमें इंगुदीका तेल हो काममें लाते थे। इसीसे इसका नाम पड़ा है।

तापसद्रुम (सं॰ पु॰) तापसप्रियः द्रुमः। हिंगोट वृक्ष, इंगुदीका पेड़।

तापसद्रुमसन्निभा (सं॰ स्त्री॰) तापसद्रुमेण सन्निभा तुल्या ३ तत्। गर्भदात्री क्षुप, सफेद भटकटैया।

तापसपत्री (सं॰ स्त्री॰) तापसप्रिय पत्र यस्या बहुव्री॰ जातित्वात् ङीष्। दमनकवृक्ष, दौना नामका पौधा।

तापसप्रिय (सं॰ पु॰) तापसानां प्रियः, ६ तत्। १ वृक्ष विशेष, चिरौंजीका पेड़। २ हिंगोट वृक्ष इंगुदीका पेड़। (त्रि॰) ३ तापस प्रियमात्र जो तपस्वियोंको प्रिय हो।

तापसप्रिया (सं॰ स्त्री॰) तापसानां प्रिया, ६ तत्। द्राक्षा दाख, मुनक्का। द्राक्षा देखो।

तापसवृक्ष (सं॰ पु॰) तापसतरु देखो।

तापसा (सं॰ स्त्री॰) द्राक्षा, दाख।

तापसी (सं॰ स्त्री॰) १ तपस्या करनेवाली स्त्री। २ तपस्वीकी स्त्री।

तापसेक्षु (सं॰ पु॰) इक्षुविशेष, एक प्रकारकी ईख।

तापसेष्ट (सं॰ पु॰) तापसप्रिय देखो।

तापसेष्टा (सं॰ स्त्री॰) तापसप्रिया देखो।

तापस्य (सं॰ क्ली॰) तापसस्य धर्म ष्यञ्। तापसधर्म तपस्वियोंका कर्त्तव्य। वानप्रस्थका भिक्षुरूप धर्म हो तापस्य है। तापस्य ही मोक्षका एकमात्र साधन है। अनेक राजर्षिगण इस धर्मको ग्रहण करते थे।

तापस्वेद (सं॰ पु॰) तापेन स्वेदः ३ तत्। स्वेदक्रिया विशेष; गरम बालू अथवा वस्त्र द्वारा, पसीनेको खींच या दबा कर पसीना निकालनेकी क्रिया।

तापहर (सं॰ त्रि॰) तापं हरति हृ ट। तापनाशक, बुखारको दूर करनेवाला।

तापहरी (सं॰ स्त्री॰) तापहर स्त्रियां ङीप्। व्यञ्जन विशेष, एक प्रकारका पक्वान्न। इसको प्रस्तुत प्रणाली— उड़दकी बरी और धोए हुए चावलको घीमें साँथ कर भूनते हैं। तब आग पर उसमें उतना ही जल डाल कर उबालते हैं। पक्को तरकारी बनाने पर उसमें अदरख और लौंग डालते हैं। इस तरह जो द्रव्य प्रस्तुत होता है उसे तापहरी या तापहरो कहते हैं। गुण—बलकारक शुक्रवर्द्धक, कफकारक, शरीरको उप

पयकारक, तृप्तिजनक, रुचिकर और गुरु। इसके सिवा इसकी उपादान सामग्रीमें जो जो गुण हैं, इसमें भी वे ही गुण पाये जाते हैं। (भावप्रकाश) (त्रि०) २ ताप-हारिणी मात्र जिससे ताप दूर हो।

तापा (हिं० पु०) १ मछली मारनेका तरमा। २ मुरगीका दरबा।

तापायन (सं० पु०) वाजसनेयी शाखाका एक भेद।

तापिक (सं० त्रि०) तापे तापकाले भवं ठञ्। ग्रीष्मभव जलादि, जो गरमीसे उत्पन्न होता हो।

तापिच्छ (सं० पु०, तापिनं छादयति छद-ड पृषोदरा० साधुः। तापिञ्ज देखो।

तापिञ्छ (सं० पु०) तापिनं छदति आच्छादयति छद्-ड पृषोदरा० साधुः। १ तमालवृक्ष। (क्ली) २ तापिञ्छ पुष्प, एक प्रकारका फूल।

तापिञ्ज (सं० क्ली०) तापिनं जयति जि-ड। १ धातु-माक्षिक, सोना मक्खी। (पु०) २ तमालवृक्ष।

तापित (सं० त्रि०) तप णिच्-क्त। १ तापयुक्त, जो तपाया गया हो। २ दुःखित पीड़ित।

तापिन् (सं० त्रि०) तापयति ताप-णिनि। १ तापक, ताप देनेवाला। तप णिनि। २ तापयुक्त, जिसमें ताप हो। (पु०) ३ बुद्धदेव।

तापी (सं० स्त्री०) तापयति तप-णिच् अच् गौरादित्वात् ङीष्। नदीभेद, एक प्रकारकी नदी जो पश्चिमवाहिनी और विन्ध्याचलसे आविर्भूत होती है, तापती नदी। (मत्स्यपु० ११३) २७ विष्णुपुराणके मतसे यह नदी सह्य-पादोद्भवा है। (विष्णुपु० २।३।११)

इस नदीका जल गाढ़ा, शीतल, पित्तघ्न कफकृत्, वातदोषहर, हृद्य, कण्डू और कुष्ठनाशक है।

(हारित ७ अ०)

स्कन्दपुराणके तापीखण्डमें इसका विवरण इस प्रकार लिखा है—

जगत्प्रसिद्ध सोमवंशमें सम्वरण नामके एक राजा थे। वरुणने अगस्त्य मुनिके शापसे सम्वरणरूपमें जन्म ग्रहण किया। उक्त राजाने कठोर तपसाधन करके सूर्य-कन्या तापीको भार्यारूपमें ग्रहण किया। ये तापी अशेष पापदहनी और अत्यन्त रूपलावण्यसम्पन्न थीं।

तपती देखो।

तापीके नाम। तापीके इक्कीस नाम हैं—सत्या, सत्यो-द्भवा, श्यामा, कपिला, कापिला, अम्बिका, तापनी, तपनी, तपना, ह्लादा, नासिकोद्भवा, सावित्री सहस्रकरा, सनका, अमृतस्यन्दना, सुषुम्ना सूक्ष्मरमणी, सर्पा, सर्पविषापहा, तिग्मतिरमरणा (?), तारा और ताम्र।

माहात्म्य।—जो तापीमें स्नान करते हैं, वे समस्त पापोंसे विमुक्त होते हैं और जो इसका नामोच्चारण करते हैं, उनका पाप दूर होता है।

आषाढ़ मासमें तापीमें स्नान करनेका फल।—बारह महीनोंमें कोई भी मास आषाढ़मासके समान नहीं, क्योंकि इस मासमें जगत्पति श्रीविष्णु लक्ष्मीके साथ अनन्त-शय्या पर शयन करते हैं तथा इस मासमें विश्वकर्माने भूतोंकी सृष्टि की है। (तापीख० ३।१।२०)

आषाढ़ मासमें तापीमें स्नान करनेसे सब तरहके पापोंसे छुटकारा मिलता है। प्रयाग जा कर माघ मासमें बारह बार स्नान करके जो पुण्यलाभ किया जाता है, आषाढ़ मासमें इस तापीमें एक बार स्नान करनेसे उससे भी अधिक पुण्यलाभ होता है।

यदि कोई मनुष्य कपटता करके इसमें स्नान करे, तो भी तापीके माहात्म्यानुसार उसके शतजन्मार्जित पाप ध्वंस होते हैं। यदि बालत्ववशतः आषाढ़ मासमें तापीमें क्रीड़ा करते हुए स्नान करे, तो उसको भी देवालय वापी, कूप, तड़ाग आदि बनवानेका पुण्य होता है। यदि कोई व्यक्ति किसी द्रव्यकी कामना करके इसमें स्नान करे, तो वह समस्त पापोंसे मुक्त हो कर अश्वमेधका फल लाभ करता है।

जो जानके वा बिना जाने आषाढ़ मासमें स्नान करते हैं, वे समस्त पापोंसे मुक्त हो कर सनातन ब्रह्म-पद पाते हैं। (तापीख० ३।३०)

तापीकी मिट्टी शरीर पर लपेट कर अन्यत्र स्नान करनेसे जन्मान्तर-कृत पातक निश्चय ही ध्वंस होते हैं।

आषाढ़ मासमें तापीके किनारे जो दीपदान देते हैं, वे सहस्र कोटि कुलका उद्धार करते हैं। (तापीख० ३।४)

कुरुक्षेत्रमें प्रभूत सुवर्णदान करनेसे जो पुण्य होता है, इस तापीतट पर केवल दीपदान देनेसे वही पुण्य हुआ करता है।

कुरुक्षेत्र, काशी नर्मदा आदिमें स्नान करनेसे जितना पुण्य होता है, आषाढ़ मासमें तपतीमें विधिपूर्वक स्नान करनेसे उतना ही फल होता है।

(तापीख० २।५०)

तापी नदीके दोनों तट पर १०८ महालिङ्ग विद्यमान हैं तापीखण्डमें उनका माहात्म्य वर्णित है। तपनमें तपनेश, धर्मक्षेत्रमें धर्मेश, गोकर्णमें शिवनाथ पार्वतीरमणेश महेश अवन्तीक्षेत्रमें पुष्पातीश्वर, पिप्पलाद मुनिके क्षेत्रमें पशुपतिनाथके लिङ्ग पुष्करके क्षेत्रमें नरनारायण लिङ्ग वामक्षेत्रमें वाम, कश्यपक्षेत्रके कपोताश्रममें कोटि लिङ्ग पाराशरमुनिके क्षेत्रमें पुष्करेश्वर जैमिनि क्षेत्रमें हरिश्चन्द्रेश्वर मारिचक्षेत्रमें मरीचेश, वैरोचनक्षेत्रमें विरोचनेश्वर बटुकेश कूट और नागेश्वर वालिक्षेत्रमें अङ्गद, महेश्वर, कुम्भुमारेश्वर कर्कोटक, पापतोयेश्वर और सोम महालिङ्ग अयोतनाथक्षेत्रमें कामेश्वरलिङ्ग, कुशक्षेत्रमें नीलकण्ठ और पुष्पकण्ठ, वायुक्षेत्रमें चन्द्रचूड़ पाशुपतक्षेत्रमें उम तारकक्षेत्रमें तारेश, अग्निमुखक्षेत्रमें हंस वसिष्ठक्षेत्रमें सुखकुन्देश्वर और कुन्तक लिङ्ग, कुशेशमें विमलेश्वर, कुम्भमुनिके क्षेत्रमें कमठ और नीलकण्ठ, पञ्चतीर्थमें मार्कण्डेश, कुम्भेश्वर, रोहक, पुष्कर, नन्देश, दुर्गेश्वर, जामदग्न्येश और नागनाथोत्तमेश्वर। पूर्वमें कामनेश सुन्दरमें सुन्दरेश, राघवक्षेत्रमें रामेश, नन्दनमें चक्रेश, भरद्वाज मुनिके क्षेत्रमें उत्तमेश्वर, कुम्भक्षेत्रमें महालिङ्ग, परशुराममें हरेश्वर लिङ्ग और अमयाग्नि आदित्यक्षेत्रमें नन्देश, नारदक्षेत्रमें व्यासेश्वर, ब्रह्मक्षेत्रमें सिद्धेश्वर प्रकाशके ऊपर मतङ्गक्षेत्रमें गर्गेश्वर, अर्जुनक्षेत्रमें अर्जुनेश, यौधिष्ठिरक्षेत्रमें भीमेश्वर, अग्निकायेश सर्वेश, कृपाचार्यक्षेत्रमें अश्वत्थामा, पञ्चमुखक्षेत्रमें वामदेवेश्वर, कपिलक्षेत्रमें सिद्धेश्वर और कार्त्तिकेश्वर चतुर्मुखक्षेत्रमें चतुर्मुखेश्वर, हयवटीके किनारे मल्लेश्वर और भूतेश्वर, गौतमक्षेत्रमें गौतमेश्वर नारदक्षेत्रमें गणेश, इस स्थान पर रसधिस्तीर्थमें भीमकके क्षेत्रमें रसेश्वर लिङ्ग और चौड़की शक्ति; वरुणक्षेत्रमें प्रचेतस और वाचेश, सोमक्षेत्रमें सोमेश्वर, नारायण क्षेत्रमें नारायणेश्वर, च्यवन मुनिके क्षेत्रमें च्यवनेश्वर और च्यवनेश; कश्यपके क्षेत्रमें कश्यपेश भैरवी क्षेत्रमें भैरव, सोमेश्वर, भैरवी शक्ति, भूतनाथ और कामनाथेश्वर; मल्लिक्षेत्रमें मल्लेश्वर और पर्वतेश्वर, गोकामेश्वरक्षेत्रमें कोटीश्वर, अमरनाथेश्वर और एकवीरा शक्ति, राघवक्षेत्रमें वृषभ और दक्षयाचि अमरीषके क्षेत्रमें अमरेश्वर अम्बा अश्विनीकुमारक्षेत्रमें महातीर्थ और कालेश्वर लिङ्ग गङ्गाक्षेत्रमें गुप्तेश्वर या गुप्तेश। सोमक्षेत्रमें सोमेश्वर तपतीनदीके उत्तरक्षेत्रमें विश्वेश्वर और कालाग्नि लिङ्ग; पूषाक्षेत्रमें पूषेश्वर नारदेश कामेश, सम्भवेश्वर और तपती स्थापित तपनेश लिङ्ग, कुरुक्षेत्रमें कौरव नामक महालिङ्ग सोमक्षेत्रमें सोमेश ईश्वर और सोमेश्वर, कुशक्षेत्रमें घटकेश्वर राघवक्षेत्रमें रामेश्वर पिष्टेश्वर, दशावतारादि; शरत्कुमारमुनिके क्षेत्रमें और तपनाश्रममें तीन नागेश्वर इस प्रकार कुल १०८ लिङ्गस्थान हैं। प्रातःसमय इन १०८ लिङ्गोंके नामका पाठ करे। पाठ करनेसे मनुष्योंमें पितृगण सुधारस-द्वारा तृप्त होते हैं; अपुत्र पुत्र निर्धनी धन और मोक्षार्थी मोक्ष प्राप्त करते हैं। तापीनदीमें स्नान करके पाठ करनेसे पृथिवीके सम्पूर्ण तीर्थोंका फल होता है। इसके सिवा तापीखण्डमें और भी कई प्रधान तीर्थका उल्लेख है।

नीलगङ्गा—यह नदी भूमण्डलमें विख्यात हुई है, इसमें स्नानादि करनेसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है।

तापीके किनारे मोनापहाड़के वनमें स्नान करनेसे कुष्ठ रोग नष्ट होता और उसके सात जन्म तक कुष्ठ नहीं होता।

अक्षमालातीर्थ—तपतीने विमलको देख कर महात्मा गौतमकी शापके अक्षमाला गिर गई थी, तभीसे यह स्थान अक्षमालातीर्थके नामसे प्रसिद्ध है। यह एक प्रधान तीर्थ है। इसमें जो मनुष्य पिण्डदान और स्नानादि करता है, उसको निरामय पद और पितरोंको अक्षयप्राप्ति होती है। इस तीर्थमें गङ्गेश्वर नामक शुभ दायक लिङ्ग है, जिसको पूजा करनेसे समस्त मनोरथोंकी सिद्धि होती है।

मन्दतीर्थ—तपतीके उत्तरकूलमें जहां गौतमीके साथ तापीका सङ्गम हुआ है, उस जगह यह तीर्थ है। यह तीर्थ मनुष्योंके लिये समस्त पापोंका नाशक है।

तावेदार (अ० वि०) आज्ञाकारी, टहल करनेवाला।

तावेदारी (फा० स्त्री०) १ सेवकाई, नौकरी। २ सेवा, टहल।

ताम (सं० पु०) ताम्यतेऽनेन तम करणे घञ्। १ भीषण, डरावना, भयङ्कर। २ दोष, विकार। ३ मनोविकार, व्याकुलता, बेचैनी। ४ दुःख, क्लेश, कष्ट। ५ ग्लानि, लज्जा। ६ पाप।

ताम (हिं० पु०) १ क्रोध, गुस्सा। २ अन्धकार, अंधेरा।

तामजान (हिं० पु०) एक प्रकारकी छोटी खुली पालकी।

तामड़ा (हिं० वि०) १ जिसका रंग ताँबेसा हो। (पु०) २ जर्द रंगका एक प्रकारका पत्थर। ३ एक तरहका कागज। ४ खल्वाट मस्तक गंजेकी खोपड़ी।

तामर (सं० क्लो०) तामं ग्लानिं राति रा क। १ जल, पानी। २ घृत, घी।

तामरस (सं० क्लो०) तामरे जले सस्तीति सस-ड। १ पद्म, कमल। ताम्यतेऽनेन रसति इति रसं कर्मधा०। २ स्वर्ण, सोना। ३ ताम्र, ताँबा। ४ धुस्तूर, धतूरा। ५ सारस। ६ छन्दोभेद, एक छन्दका नाम। इसमें बारह अक्षर होते हैं। ५।८।११।१२ वां वर्ण गुरु रहता है।

तामरसी (सं० स्त्री०) तामरस ङीप्। पद्मिनी।

तामलकी (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भूंआँवला।

तामलिप्त (सं० पु०) देशभेद, एक देशका नाम।

तामलिप्तक (सं० पु०) तामलिप्त स्वार्थे कन्। तमलुक देश।

तामलूक (हिं०पु०) ताम्रलिप्त देखो।

तामस (सं० पु०) तमस्तमोगुणः प्रधानत्वेनास्त्येति अण्। १ सर्प, सांप। २ खल, दुष्ट। ३ उलूक, उल्लू। ४ चतुर्थ मनु, मन्वन्तरमें विष्णुके अवतार हरि, इन्द्र त्रिशिख, देवता वैधृतिगण, ज्योतिर्धाम आदि सप्तर्षि, तपस्याति नरादि मनुके पुत्रगण। (भाग० ८।१ अ०) ५ क्रोध, गुस्सा। ६ अन्धकार, अंधेरा। ७ अज्ञान, मोह। ८ एक अस्त्रका नाम।

(वि०) ९ तमोगुणयुक्त, जिसमें तमोगुण हो। १० तमप्रधानगुणक, जिसका तमोगुण प्रधान हो। तमोऽधिकृत्य प्रवृत्तं अण्। ११ तमोगुणाधिकार द्वारा प्रवृत्त शास्त्रविशेष तामसशास्त्रका विषय पद्मपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

"पाशुपत नामक शैवशास्त्र, कणादोक्त महत् वैशेषिक शास्त्र, गौतमोक्त न्यायशास्त्र, कपिलोक्त सांख्य, जैमिनिकथित मीमांसा, बृहस्पतिकथित चार्वाकशास्त्र, बुद्धरूपी विष्णु कथित बौद्धशास्त्र, शङ्कराचार्य-कथित मायावादयुक्त वेदान्तशास्त्र, ये सभी तामसशास्त्र हैं। इनके श्रवण करनेसे ज्ञानियोंका भी पातित्य होता है। इन तामसशास्त्रोंमें वेदका यथार्थ पथ तिरोहित हुआ है और इसमें कर्ममात्र ही त्याज्य है जीवात्मा परमात्मामें ऐक्य प्रतिपादित हुआ है। ब्रह्मका श्रेष्ठरूप निर्गुणरूपमें दर्शित हुआ है जगत्‌के नाशके लिए कलियुगमें इन शास्त्रोंकी उत्पत्ति हुई है।

कूर्मपुराणमें लिखा है, कि तामस तन्त्रका विषय है। इस जगत्‌में श्रुति और स्मृतिके विरुद्ध जो शास्त्र हैं, वे सभी तामस हैं। कपाल, भैरव, यामल, वाम—ये सभी तामसशास्त्र हैं।

अष्टादश पुराणोंमें छह सात्विक, छह राजस और छह तामस हैं। जिनमें मत्स्य, कूर्म लिङ्ग, शिव, स्कन्द ये छह तामसपुराणोंमें शिवका माहात्म्य विशेषरूपसे कीर्तित हुआ है।

विष्णु नारद, भागवत, गरुड़, पद्म, वराह ये छह सात्विकपुराण हैं इन सात्विकपुराणोंमें विष्णुका माहात्म्य कहा गया है।

ब्रह्माण्ड, ब्रह्मवैवर्त, मार्कण्डेय, भविष्य, वामन ब्रह्म ये छह राजसपुराण हैं। इनमें ब्रह्मका माहात्म्य वर्णित है। (मत्स्यपु०)

कणाद, गौतम, शक्ति, उपमन्यु, जैमिनि, दुर्वासा, मृकण्डु, बृहस्पति, शुक्राचार्य, जमदग्नि, ये सब तामस मुनि थे। गौतम, बार्हस्पत्य, सामुद्र, यम, शङ्ख, औशनस ये तामस स्मृतियां हैं।

मनुष्योंकी स्वभावसे ही तीन प्रकारकी श्रद्धा होती है—सात्विकी, राजसी और तामसी। जो लोग भूत और प्रेतादि पर श्रद्धा रखते और उनकी उपासना करते हैं, उनकी तामसी श्रद्धा समझनी चाहिये।

इसके सिवा आहार, यज्ञ, तप, दान आदि जगत्‌के सम्पूर्ण कार्य ही तीन प्रकारके होते हैं। सर्वपक्ष तथा

विरसतामात्र (जिसका अपनी स्वाद बिगड़ गया हो) पूतिमत्, पर्युषित, उच्छिष्टादि अभक्ष्य आहार तामस आहार और यह आहार हो तामस लोगोंके लिये प्रिय है।

अति दुराग्रह द्वारा दूसरेके उत्सादनके लिए आत्मामें नाना प्रकारकी पीड़ा उत्पन्न करके जो तप किया जाता है, उसे तामसतप कहते हैं और ऐसा तप तामसप्रकृतिके लोग ही करते हैं।

देश काल-पात्रादिका विचार न कर, किसी भी देश वा काल अथवा पात्रमें असत्कार और अवज्ञाके साथ जो दान दिया जाता है, उसको तामसदान कहते हैं।

भविष्यत्‌का अशुभफल, प्राणिवध, धनक्षय और परिजनादिका क्षय तथा प्राणहिंसा वा और आत्मसामर्थ्यादिकी पर्यालोचना न करके अज्ञान वा अविवेकतावश जो क्रिया अनुष्ठित होती है, उसके तामसकी क्रिया कहते हैं।

जो व्यक्ति अत्यन्त असमाहित है अर्थात् किसी भी कार्यमें विशेषरूपसे मन नहीं लगता, जिसकी बुद्धि अत्यन्त असंस्कृत है, जो निपुणताके साथ विचार न कर स्वकीय कारण महाविनय और प्रकृति मनमें उदित हो और उसके अनुसार काम कर डालता हो जो ज्ञान पर्यालोचनाके द्वारा कुछ भी परिमार्जित नहीं हुआ हो, सदुपदेश द्वारा जिसको किसी तरहसे समझाया नहीं जा सकता, अन्यान्यकार्यविलोप, मायावी, जो अन्तःकरणके भावको छिपा कर बाहरमें अन्यरूप व्यवहार करता है और परवृत्तिको बिगाड़नेमें तत्पर है, विषाद आदि करनेमें आलसी है, सर्वदा अवसन्न और दीर्घसूत्री है, ऐसे कर्त्ताको तामसकर्त्ता कहते हैं।

जो मनसे अधर्मको धर्म और अकर्त्तव्य विषयको कर्त्तव्य समझता है, ऐसे विपरीत मार्गप्रकाशक मनको तामसमन कहते हैं।

जिस व्यक्तिके किसी विशेष कारणके द्वारा सर्वदा ही मनमें शोक भय, क्रोध, विषाद मत्तता आदि उदित हुआ करती है, उस दुर्मेधा व्यक्तिको धारणाको तामसधृति कहती है।

निद्रा आलस्य और प्रमादके द्वारा जो सुख उत्पन्न होता है जो आत्मामें वर्तमान और परिणाममें मोहके सिवा और कुछ भी उत्पन्न नहीं करता उस सुखका नाम तामस सुख है। (गीता) यौगोचित याजन, दैवल (गुरुआदि द्वारा प्रतिष्ठित विग्रहादिकी नित्यपूजा), ग्रामयाजन, विष्णुविमापराध विष्णुनामापराध, असत्प्रतिग्रह, अभिचार, पशुहोमादि यजन, पातक, उपपातक, अतिपाप, महापाप, अनुपातक लोभ मोह, अहङ्कार, काम, क्रोध ये समस्त तामसकर्म हैं। (ब्रह्मवै० १० अ०)

तामसश्रद्धायुक्त और तामसद्रव्य द्वारा तामसभाव अवलम्बन कर जो यज्ञ किया जाता है, उसका नाम तामस यज्ञ है। इस प्रकारके तामस यज्ञ, तामस दान और तामस तपस्या द्वारा नरकमें जन्म होता है।

तमोगुण प्रकृतिके तीन गुणोंमेंसे एक है। जिस गुणके द्वारा तम अर्थात् ग्लानि उत्पन्न हो उसको तम अर्थात् आवरक गुण कहते हैं इसलिए तमोगुण मोहका कारण है। सत्त्व, रज और तम ये तीन गुण परस्पर मिलित हैं जब एक गुणका प्राधान्य होता है, तभी उसको उस गुणके नामसे पुकार सकते हैं। तम, रज और सत्त्व भिन्न भिन्न नहीं रह सकते। हां, जब सत्त्व और रजको पराजित कर अपना धर्म प्रकट करता रहता है, तभी उसको तम कहा जा सकता है। किन्तु पराभूत भावमें सत्त्व और रज उसमें विद्यमान रहेंगे; तम तमोगुण, रज गुण शब्दमें वैशेषिकोक्त गुणपदार्थ नहीं है इसको द्रव्य पदार्थ समझना चाहिये।

सत्त्व, रज और तम ये गुणत्रय अनुल्वणावस्थामें अव्यक्त नामसे पुकारे जाते हैं। ये गुणत्रय सर्वकार्यव्यापी अविनाशी और स्थिर होते हैं। जब ये गुण क्षुभित होते हैं तब पञ्चभूतात्मक नवद्वारयुक्त पुररूपमें परिणत हुआ करते हैं। उस पुरके मध्य इन्द्रियां अवस्थान कर जीवको विषयवासनामें प्रवृत्त करती हैं। मन उस पुरमें रह कर विषयोंको अभिव्यक्त कर देता है, बुद्धि उस पुरकी कर्त्री है। लोग भ्रान्तिपूर्वक उस पुरको जीवात्मा कहते हैं। किन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं है, जीव उस पुरमें रह कर सिर्फ सुख और दुःखका भोग करता है। गुणत्रय एक दूसरेका आश्रय ले कर अवस्थान करते

हैं। यह बात पहले ही कही जा चुकी है कि जिस स्थान पर उनमेंसे किसी एकका आधिक्य होता है, वहाँ दूसरोंकी हीनता लक्षित होती है। सत्व और रज हीन होने पर तमोगुण प्रकाशित होता है। इसी तरह तमः हीन होने पर रज और रज हीन होने पर सत्व प्रकट होता है। तमोगुण अ-प्रकाशात्मक है, उसको मोह कह सकते हैं।

इस तमोगुणके प्राबल्यसे मनुष्यको अधर्ममें प्रवृत्ति हुआ करती है। तमोगुणके कार्य ये हैं—मोह, अज्ञानता अत्याग, अनिश्चयता, स्वप्न स्तम्भ भय, लोभ, शोक, सत्कार्यदूषण, अस्मृति, अफलता, नास्तिकता, दुश्चरित्रता, सदसद्विवेकराहित्य, इन्द्रियवर्गकी अपरिस्फुटता, निकृष्ट धर्मप्रवृत्ति, अकार्यमें कार्यज्ञान, अज्ञानमें ज्ञानाभिमान, अमित्रता, कार्यमें अप्रवृत्ति, अश्रद्धा, वृथा चिन्ता, असरलता, कुबुद्धि, अक्षमता, अजितेन्द्रियता, दूसरोंका अपवाद, अभिमान, क्रोध, असहिष्णुता, मत्सरता, नीचकर्ममें अनुराग, असुखकर कार्यका अनुष्ठान, अपात्रमें दान। जो उक्त कार्योंका अनुष्ठान करते हैं, उनको तामसप्रकृतिका मनुष्य समझना चाहिये। तामसप्रकृतिके लोग जन्मान्तरमें स्थावर, राक्षस, सर्प, कृमि, कीट, पक्षी, विविध चतुष्पद जन्तु होते हैं। जो सर्वदा निकृष्ट कार्य करते रहते हैं, उनको तमोगुणके प्राधान्यसे तामसप्रकृतिका कहना चाहिये। सत्व, रज और तम ये तीनों गुण सर्वदा प्राणियोंके शरीरमें अवच्छिन्नरूपसे रहते हैं। इसलिए उनको कभी भी पृथक् रूपमें नहीं देख सकते। उक्त तीनों गुण एक दूसरे पर अनुरक्त हो कर परस्परको आश्रय किया करते हैं; सत्वगुण सत्वसे, तमोगुण तमसे, रजोगुण सत्व और तमसे किसी समय भी तिरोहित नहीं होता। उक्त गुणत्रय परस्पर मिल कर सांसारिक समस्त कार्य करते हैं। केवल जन्मान्तरीण पापपुण्यके कारण प्राणियोंकी देहमें इनका तारतम्य देखनेमें आता है। स्थावरसमुदायमें तमोगुणका आधिक्य विद्यमान है, किन्तु वे रज और तमोगुणसे विरहित नहीं हैं। जागतिक प्रत्येक पदार्थमें तम विद्यमान है न्यूनाधिक्य भावसे रहनेके कारण किसी द्रव्यका नाम सात्विक और किसीका राजसिक वा तामस हुआ हैं,

अध्यवसाय, बुद्धि धर्म, ज्ञान, विराग, ऐश्वर्य ये सात्विक और इसके विपरीत तामस हैं। (सांख्यका०)

विषादका नाम है मोह, विषादका स्वरूप ही तमोगुण है, जब कभी इस गुणका आविर्भाव होता है, तभी विषण्णता आ उपस्थित होती है। जब तमोगुण प्रकाशित होता है, उस समय वह रज और सत्वको पराजित कर अपनी वृत्ति प्रकाशित किया करता है।

सत्वगुण लघुप्रकाशक और इष्ट है। रज उपष्टम्भक और चञ्चल है तथा तमोगुण गुरु-वरणक है। गुण परस्पर विरोधी होते हैं, किन्तु विरोधी होने पर भी स्वयं सुन्द और उपसुन्दवत् विनष्ट नहीं होते। जिस प्रकार वर्ति और तैल परस्पर-विरुद्ध होने पर भी एकत्र मिलित हो कर परस्पर अर्थ प्रकट क्रिया करते है तथा वायु, पित्त और श्लेष्मा परस्पर विरोधी होने पर भी एकत्र मिल कर शरीर-धारणरूप कार्य करते हैं, उसी प्रकार ये गुणत्रय परस्पर विरोधी होने पर भी एकत्र मिलित हो कर परस्परकी वृत्ति अर्थात् सुख, दुःख और मोह प्रकट करते रहते है। तम अर्थात् अविद्याके आठ भेद हैं—प्रकृति, महत्, अहङ्कार और पञ्च तन्मात्र। ये आठ प्रकारके तम अज्ञान हैं। (सांख्यका० ४८)

नैयायिक विद्वानोंका कहना है कि आलोकका अभाव ही तम है। प्रभाकरोंके मतसे रूपके दर्शनका अभाव ही तम है।

विशेष विवरणके लिये 'प्रकृति' शब्द देखो।

(पु०) तमसो राहोरपत्यं अण्। १० राहुसुत, तामसकीलक। ११ शिवका एक अनुचर।

तामसकीलक (सं० पु०) तामस राहुसुतः कीलक इव। राहुसुत केतुभेद। तामसकीलक आदि संज्ञाविशिष्ट राहुसुत केतु तेतीस प्रकारके हैं। वर्ण, स्थान और आकारादिके द्वारा सूर्यमण्डलमें उनका लक्ष्य करके फल निर्णय किया जाता है। वे यदि सूर्यमण्डलगत हों, तो अमङ्गल होता है, चन्द्रमण्डलगत होने पर शुभफल, तथा यदि चन्द्रमण्डलमें वे काक, कबन्ध वा प्रहरणरूपमें प्रकट हों, तो अमङ्गलदायक होते हैं। उक्त केतुओंके उदयसे सब कुछ विरूप हो जाता है। जल मलिन और आकाश धूलिसमाच्छन्न होता है। प्रचण्डवायु चला करती है,

चारों तरफ अनिष्टराशि उपस्थित होती है। उस राहु सूर्यमें यदि स्निग्ध और कोमल आदि विशिष्ट राहुका दर्शन हो, तो पुत्र उत्पन्न होगा। शुक्ल विषम श्वेत अथवा बहुत दिखाई देंगे तो बहुत धान्य लाभ होगा। धूम्रवर्णमें यदि दण्डाकृति तामस ध्वान दिखाई दे, तो सर्पतिको मृत्यु और कबन्धसा ध्वान दीख पड़े, तो व्याधिका भय होता है। ध्वजाकार दोषमेंसे चोरोंका भय तथा कीलकाकार दोषके पर दुर्भिक्ष होता है। (बृहत्संहिता ३ अ०) राहु देखो।

तामसध्यान (सं० क्ली०) षट्कर्म रत्नका ध्यानरूप भेद। षट्कर्म रत्नका ध्यान तीन प्रकारका है—सात्त्विक राजस और तामस। (तन्त्रसा०)

तामसमय (सं० क्ली०) कई बारकी खींची हुई शराब।

तामसमाथ (सं० पु०) एक मन्त्रका नाम।

तामससन्न्यासी (सं० त्रि०) जो गार्हस्थ्य धर्मको छोड़ मोक्षकी कामनाके लिये वनमें घूम घूम कर तपस्या करते हैं, वे ही तामससन्न्यासी कहलाते हैं।

तामसिक (सं० त्रि०) तमसा तमोगुणेन निर्वृत्तं तामस ठञ्। तमोगुणका कार्य। तामस देखो।

तामसी (सं० स्त्री०) तमोऽन्धकारप्राधान्येन अस्ति अस्यां तमस अच् स्त्रियां ङीप्। १ अन्धकारयुक्ता रात्रि, अंधेरी रात। २ महाकाली। ३ जटामांसी, बालछड़। ४ तमोगुणयुक्ता वह जिसमें तमोगुण हो। ५ एक प्रकारकी मायाविद्या। शिवजीने निकुम्भिला यज्ञमें प्रसन्न हो कर इसे मेघनादको दिया था। इस विद्याके प्रभावसे मेघनाद अदृश्य हो कर युद्ध करता था। (रामा०)

तामालेय (सं० त्रि०) तमाल स सख्यादि० ढञ्। तमाल वृक्षके पासका स्थान।

तामिल—दक्षिणापथकी द्रविड़भाषाभाषी एक विस्तीर्ण जाति और उनकी भाषा।

तामिल शब्दका संस्कृतरूप द्राविड़ है। मनुसंहिता महाभारत आदि प्राचीन ग्रन्थोंमें द्राविड़ नामक जनपद और वहांके अधिवासियोंका द्राविड़ नामसे वर्णन है। द्राविड़ शब्दका मागधी (पालि) रूप दमिलो * है। तामिल भाषामें 'द' को जगह 'त' होता है इस तरहसे 'तमिल' या 'तमिर' रूप हो गया है। पूर्वनियमानुसार द्राविड़ शब्द पालि भाषामें दमिलो तथा उससे तामिर या तामिल हुआ है। शङ्कराचार्यके शारीरकभाष्यमें द्रमिल शब्दका उल्लेख है। इस द्रमिल शब्दका तामिल व्याकरणके अनुसार तिरमिड़ रूप होता है। किसीके मतसे इस तिरमिड़ शब्दसे भी तामिल शब्दकी उत्पत्ति हो सकती है।

प्रसिद्ध भाषातत्त्वविद् मि० प्लिनिने ईसाकी १ली शताब्दीमें इस तामिल देशका तरपिना (Tropina) नामसे उल्लेख किया है तथा तत्परवर्ती भूगोलतत्त्वानुसन्धायक पिटिङ्गरको तालिकामें दमिरिक (Damirice) नामसे इसका उल्लेख मिलता है।

नामकरण।—जैनोंके शत्रुञ्जयमाहात्म्य (७४१)-में लिखा है—

"ऋषभ पुत्रनामाभिद्राविड़ इत्यभूत्।
द्राविड़ इति देश एतस्य वसुधास्त्रम्॥"

यहां आदिनाथ ऋषभदेवके द्रविड़ नामक एक पुत्र हुए थे जिनके नामसे अद्यापर्यन्त यह द्रविड़ देश प्रसिद्ध हुआ है। किन्तु महाभारत, हरिवंश आदिके मतसे द्राविड़ नामक क्षत्रिय जातिके कारण इस जनपदका द्रविड़ या द्राविड़ नाम पड़ा है। मनुसंहिता आदिके मतसे द्राविड़ जाति पहले क्षत्रिय थी। वेद तथा ब्राह्मणके दर्शन न होनेके कारण वे वृषलत्वको प्राप्त हुए थे।

(मनु १०।४४)

महाभारत आदिपर्वमें लिखा है, कि विश्वामित्र जब वशिष्ठकी कामधेनु नन्दिनीको ले गये, उस समय नन्दिनीके प्रभावसे द्राविड़ोंकी उत्पत्ति हुई।

"असृजत् द्रविड़ान् पुण्ड्रान् शबरांश्चापरांस्तथा।"

(आदि १।१७५।३)

इधर जैनोंके शत्रुञ्जयमाहात्म्यमें लिखा है कि ऋषभके पुत्र द्रविड़की सन्तान ही द्राविड़ नामसे प्रसिद्ध हुई थी। (शत्रुञ्जयमा० ७।१)

जनपदका अवस्थान—महाभारतके निम्नलिखित श्लोकोंसे

* महावंश, १२वां परिच्छेद।

† ईसाकी ७म शताब्दीमें चीन-परिव्राजक युएन्चुअङ्ग दाक्षिणात्यमें आये थे। उन्होंने इस स्थानका 'चि मो-लो' (Chi-molo) नामसे उल्लेख किया है जिससे इस देशका 'तिमल' या 'तिमर' होता है।

पढ़नेसे मालूम होता है कि प्राचीन द्राविड़ वा तामिल देश सागरके किनारे था।

"द्रविडास्त्रिपुरदेशेषु पत्न विन्ध्य गोदावरी यावत्तावत् स्मृतम्।
ततो विपाण्ड्यादिदेशेषु गतान् गतुदधान् च च ...॥"
(पद्म ११.८।४

'आगत: प्रययौ भूमौ: दक्षिणं दक्षिणार्णवम्।
तत्रापि द्राविडान्ध्र चौड्रेवीरविदेशपि॥" (...१०८३।११)

मि॰ काल्डवेलने द्राविड़ीय व्याकरणमें लिखा है—समस्त कर्णाटक अथवा पूर्व और पश्चिम घाटके नीचे, पुलिकाटसे लगा कर कुमारिका अन्तरीप तक तथा उत्तरमें बङ्गोपसागरसे उपकूल तक तामिल भाषा प्रचलित है। भाषाके आधारसे तो दाक्षिणात्यके समस्त दक्षिणांशको ही द्राविड़ या तामिल देश कह सकते हैं। इस समय तामिल देशका रकबा करीब ६०००० वर्गमील होगा।

जातितत्त्व।—पाश्चात्य पुरातत्त्वविदोंने तामिल, तेलगू, कनाड़ी, मलयालो, तुलू, तोड़ा, कोटा, गोण्ड और कन्ध इन श्रेणियोंको द्राविड़ीय जाति वा उनकी शाखा माना है। किन्तु वज्रसूची उपनिषदमें उक्त जातियोंको द्राविड़ कहा गया है, जैसे—

'आन्ध्राः कर्णाटकाश्चैव गुर्जरा द्राविडास्तथा।
महाराष्ट्रा इति ख्याताः पञ्चैते द्रविडाः स्मृताः॥"
(वज्रसू॰ ५१)

आन्ध्र, कर्णाटक, गुर्जर, द्राविड़ और महाराष्ट्र इन पांचोंको एक साथ पञ्चद्राविड़ कहते हैं। द्रविड़ देखो।

पुरातत्त्ववेत्ताओंने तामिलोंको आर्य नहीं माना है। उनका खयाल है, कि यह भारतकी प्राचीनतम अनार्य जातिसे उत्पन्न हुई एक जाति है। रामचन्द्र जिस कपिसेनाको ले कर राक्षसराज रावणके साथ युद्ध करने गये थे, उस सेनाके सभी लोग प्राचीन द्राविड़ वा तामिल जातिसे उत्पन्न थे। वे उस समय बहुत असभ्य थे और उनकी भाषा आर्यजातिके लिये अबोध्य थी, इसलिये वाल्मीकिने उनका वानर नामसे उल्लेख किया है। किन्तु जैन-रामायण (वा पद्मपुराण)-में उस सेनाको आर्य और सुसभ्य मनुष्याख्य बतलाया है। इसका विस्तृत विवरण जैन-पद्मपुराणके २४ परिच्छेदमें देखो। वास्तवमें वे वानर न थे।

तामिल शब्दको देख कर कल्डवेल आदि विदेशी भाषाविदोंने स्थिर किया है, कि दाक्षिणात्योंमें आर्य उपनिवेशके पहले तामिल लोग कुछ कुछ सभ्य हुए थे। उस समय भी उनके राजा थे, राजगण दुर्गम प्रदेशमें रहते और छोटे छोटे भूभागका राज्य करते थे। उनमें पन्द्रो या आदमकों शासन करते थे। ... पर ... से मिलने वाला ... थे। वे एक ईश्वर मानते थे। जिसको 'क' अर्थात् राजा कहते थे। उसके रहनेका स्थान 'को इल्' अर्थात् मन्दिर कहलाते थे। वे ढोल, ... और ... के सिवा अन्यान्य समस्त धातुओंके विषयको जानते थे। वे सोमे लगा कर ... तक लिख सकते थे। औषध, कुम्हार, धाम, छोटा नगर, ग्राम, छोटे-मोटे ... थे। पर, उनका कोई बड़ा नगर वा राजधानी नहीं थी। उन्हें अन्यान्य समस्त ... पर भी ये ... और ... नहीं जानते थे। तीर, धनुष तलवार और भाला ये उनके मुख्य अस्त्र थे। युद्ध और ... उनको बड़ा आनन्द आता था। वे एक तरहका कपड़ा बुनना और रंगना जानते थे तथा मिट्टीका पात्र व्यवहार करते थे। किन्तु उनमें लिखने पढ़नेकी चर्चा न थी। ... व्याकरणका भी कोई नियम नहीं ... सभ्यता अवस्थामें इनमें विद्याशिक्षाका स्रोत बहा है।

अब वह दिन चले गये। आर्य-संसर्गमें उनमें आर्य भावोंका प्रचार हो गया है, किन्तु ... अनार्यभाव अभी तक बिलकुल दूर नहीं हुआ है। इस समय ... है, वहीं तामिल हैं, जहां ... मिलता है वहीं तामिल ... हैं। इनमें पूर्वतन कुसंस्कार बहुत कुछ दूर हो गये हैं। इस समय सभी कट्टर हिन्दू होने पर भी समाजके बाधा-विघ्नोंको ... न कर उच्च शिक्षा तथा उन्नतिके पथमें अग्रसर हो रहे हैं।

धर्म।—पूर्वकालमें तामिल लोग भूत-प्रेतोंकी पूजा करते थे। अब भी दक्षिणकी तरफ नीच लोग भूतकी पूजामें आसक्त हैं। उनके मतसे जिन मनुष्योंकी अपघातसे या अकस्मात् मृत्यु होती है, वे ही भूत हो कर मनुष्यका अनिष्ट करते हैं। ये भूत अत्यन्त शक्तिशाली क्रूर हैं और मौका पाते ही गरदन आ दबाते हैं। सभी बलि-

दाणका धूम और ताण्डवनृत्य पसन्द करते हैं। इनमें कोई बकरा, कोई सूअरका बच्चा और कोई मुरगासे सन्तुष्ट होते हैं। और कोई कोई तो बिना शराब मिले सन्तुष्ट हो नहीं होते। बहुतसे निम्न-श्रेणीके तामिलोंका विश्वास है कि भूतसे ही दुःखग्रस्त होते हैं। एक प्रकारका भूत है जो सोते समय मनुष्यको दबाता है।



तामिल भूत।

किसीको रोग होने पर अब भी निम्न श्रेणियोंमें ओझा बुलाये जाते हैं। वे सिर पर पगड़ी, गलेमें माला, हाथमें कड़े और पांवमें टँड़िया पहन कर आते और हाथमें चमड़ेदार धनुष लाते हैं। वह बड़े जोरसे चिल्ला कर कूदते हुए मन्त्र पढ़ता और उस धनुषको बजाता रहता है। इससे ओझाके शरीरमें भूतावेश होता है। फिर वह रोगको व्यवस्था करता है। भूत-पूजा नीचोंका धर्म होने पर भी उच्च श्रेणीके लोगोंमें इसका प्रचार अब बिलकुल नहीं रहा है।

बहुतोंका विश्वास है, कि दाक्षिणात्यमें ब्राह्मण प्राधान्य स्थापित होनेसे पहले बहुत समय तक यहां जैनधर्मका प्राबल्य था। पहले ही लिखा जा चुका है कि जैन-ग्रन्थ ग्रन्थकार-भाषाकारके मतसे आदि तीर्थङ्कर श्रीऋषभदेवके पुत्रके नामानुसार द्रविड़ नाम हुआ है। और उन्हींके वंशधर द्राविड़ नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। उपर्युक्त पौराणिक कथासे यह जान पड़ता है कि किसी समय तामिल देशमें जैनोंका अधिक प्राबल्य था।

ईसाकी ७वीं शताब्दीमें जब चीन परिव्राजक यूएन चुयांग इस देशमें आये थे उस समय भी उन्होंने निर्ग्रन्थ या दिगम्बर जैनोंका प्राधान्य देखा था। जैनोंके समयमें द्राविड़की यथेष्ट उन्नति हुई है। अब भी द्राविड़के नाना स्थानोंमें प्रभूत जैन कीर्त्तियां प्राचीन जैन समृद्धिका विशेष परिचय दे रही हैं। यहांके प्राचीन जैनधर्मावलम्बियोंको असभ्य, अनार्य या कोई नहीं कहा जा सकता, वे अवश्य ही सुसभ्य और आर्य थे। किसी किसी भाषाविद्का अनुमान है कि सुप्रसिद्ध कुमारिल भट्टने अन्ध्र द्राविड़ शब्दसे जिस द्राविड़भाषाका उल्लेख किया है, वह उन्हींके समसामयिक ग्रन्थोंमें व्यवहृत तामिल भाषा है।

पाण्ड्यराज सुन्दरपाण्ड्य परम शैव थे। उन्हींके समयमें तामिल भूमि पर शैवोंका प्राधान्य और जैन धर्मको अवनतिका सूत्रपात हुआ। शङ्कराचार्यके दौर दौरेसे यहां जैनधर्मका प्रभाव एकबारगी क्षीणप्राय हो गया था।

तामिलोंमें बहुत दिनों तक शैवधर्म प्रबल था, इस समय शिवोपासकगण आर्य कहलाते हैं। रामानुजके प्रभावसे वैष्णवधर्मका प्राधान्य स्थापित हुआ। तामिलोंमें अब दो वैष्णव सम्प्रदाय देख पड़ते हैं, एकका नाम तेङ्कल या दक्षिणदेशी है और दूसरेका वड़कल या उत्तर देशी।

इस समय उत्तर भारतमें जैसे पहलेकी तरह वेदका प्रचलन नहीं रहा है, वैसा द्राविड़में अभी तक नहीं हुआ; तामिलमें अब भी वेदका यथेष्ट आदर है। और तो क्या द्राविड़का ऐसा कोई मन्दिर नहीं, जहां प्रति दिन वेद न पढ़ा जाता हो। तामिल ब्राह्मण समस्त धर्मकर्ममें वेदपाठकोंको एक प्रधान अङ्ग समझते हैं। ब्राह्मणगण अब भी यथासाध्य शास्त्रको मान कर चलते हैं। यहां वर्णविचारको प्रथा भी शिथिल नहीं हुई है। अब भी ऐसे बहुत स्थान हैं जहांके ब्राह्मण शूद्रको स्पर्श करनेमें अपने धर्मनाशकी आशङ्का करते हैं। ऐसे भी बहुतसे ब्राह्मण-ग्राम हैं, जहां शूद्रोंको प्रवेश करनेका अधिकार नहीं है।

मुसलमानोंके आधिपत्यकालमें बहुत थोड़े तामिलोंने ही इसलामधर्म माना था। उनको सन्तान सन्ततियोंमेंसे बहुतोंने ईसाको १६वीं शताब्दीमें फ्रान्सिस जेवियरके प्रभावसे ईसाई धर्म मान लिया था। इस समय तामिलोंमें फीसदी १ ईसाई निकलेगा।

भाषा और साहित्य—भारतमें जितनी भी वर्णमालाएं हैं, उनमें तामिल-वर्णमाला असम्पूर्ण है। डा० बुर्नलके मतसे, तामिल-वर्णमाला वत्तेलुत्तु नामक एक प्राचीन वर्णमालासे ही उद्भावित है और अति प्राचीनकालमें फिनीक वणिकोंसे ली गई है। किन्तु इस विषयमें हमारा मतभेद है। वर्णमाला देखो।

इस भाषामें अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, (दीर्घ) ए, ओ, (दीर्घ) ओ, ऐ, और औ ये बारह स्वर तथा क, च, ट, त, प, र, ङ, ञ, ण, न, म, ल, य, र, ण, व, ड, ल ये १८ व्यञ्जन वर्ण हैं।

इस भाषामें क, ख, ग, घ इन चार अक्षरोंका उच्चारण एकसा है, च, छ, ज, झ, इन चारोंका, ट, ठ, ड, ढ, इन चारोंका, त, थ, द, ध, इन चारोंका तथा प, फ,ब, भ, इन चारों वर्णका उच्चारण एकसा है। अर्थात् 'क'के रहने पर उससे ख, ग, घ, इन तीनों अक्षरोंका काम चल जाता है। इसके सिवा श, ष, स, ह, ं, ः, ये वर्ण तो बिल्कुल हैं ही नहीं। संस्कृतभाषामें जैसे बहुसंख्यक युक्तव्यञ्जन हुआ करते हैं, तामिल भाषामें वैसे नहीं होते। सिर्फ ट्ट, ल्ल, न्न, म्म, क्क, च्च, क्क ऐसे और ट्क, ट्प, र्क, र्च, र्प थ्य, ल्ल, व्व, न्र ये युक्त-व्यञ्जन देखनेमें आते हैं। तीन व्यञ्जनोंका योग सिर्फ 'र्ड्' और 'र्म्' है। संस्कृतकी तरह समस्त व्यञ्जन न होनेसे तामिल भाषामें जब कोई संस्कृत शब्द लिखा जाता है, तब उसका रूपान्तर हो जाता है। जैसे संस्कृतका कृष्ण शब्द तामिल लिपिमें किरुट्टिनन् वा 'किट्टिनन्' लिखा जायगा।

यूरोपीय भाषाविदोंने स्थिर किया है, कि तामिल भाषा संस्कृतमूलक नहीं है। यदि संस्कृतमूलक होती, तो इसमें इतने थोड़े अक्षर वा असम्पूर्ण वर्णमाला नहीं रहती। कोई कोई प्राकृतमूलक द्राविड़ी भाषाको ही तामिल समझ कर उसको संस्कृतमूलक बतानेको तैयार हैं। आधुनिक तामिल भाषामें बहुतसे संस्कृत शब्दोंका प्रयोग होने पर भी, तामिल भाषामें लिखित जितने भी प्राचीनतम शिलालेख और ग्रन्थ मिले हैं, उनमें संस्कृतका प्रभाव बिल्कुल नहीं दीखता। इन कारणोंसे मूल तामिलको संस्कृतमूलक कहना सङ्गत नहीं।

तामिल भाषा भी नितान्त अप्राचीन नहीं है। शायद श्रीरामचन्द्रने भी यहां वर्तमान तामिल भाषाके प्राचीन स्वर सुने होंगे। बाइबिलके प्राचीन भागमें हिरमके जहाजमें सलोमानके पास मयूर ले जानेका प्रसङ्ग है। बाइबिलमें उस जगह मयूरका जो नाम* लिखा गया है, वह तामिलभाषा-मूलक है। इसके अलावा ग्रीक भाषामें धान्य आदि भारतके बहुत प्रयोजनीय शस्यादिके जो नाम लिखे गये हैं, और जो पहले पहल भारतसे ही यूरोपमें पहुंचे हैं, उनके अधिकांश नाम हम संस्कृतभाषामें नहीं पाते, किन्तु तामिलभाषामें वे मिलते हैं।

तामिलभाषा दो प्रकारकी है। एकका नाम शेन-टमिर अर्थात् प्राचीन तामिल और दूसरीका कोडुन्टमिर अर्थात् आधुनिक तामिल। दोनोंमें इतना पार्थक्य है, कि दोनोंको यदि भिन्न भिन्न भाषा कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी।

जैनोंके प्रयत्नसे ही तामिलभाषाका उत्कर्ष हुआ है। आर्य ब्राह्मणगण उक्त दोनों ही भाषामें संस्कृत शब्द मिला देते हैं। द्राविड़के ब्राह्मण कहा करते हैं, कि महर्षि अगस्त्यने ही विन्ध्याद्रि लङ्घन कर दाक्षिणात्यमें संस्कृत-सभ्यता और संस्कृत साहित्यका प्रचार किया था। द्राविड़ और मलवारके लोगोंका विश्वास है, कि अगस्त्य अब भी जीवित हैं और मलयाचलके अन्तवर्त्ती अगस्त्याद्रिमें रहते हैं। अब भी कुमारिका अन्तरीपके निकट अगस्त्येश्वरके नामसे वे पूजे जाते हैं। कोई कोई द्राविड़ पण्डित कहते हैं, कि सुन्दर पाण्ड्यके समयमें ही अगस्त्यने आ कर तामिल-वर्णमाला और तामिल-व्याकरणका प्रचार किया था। ऐसी दशामें पाण्ड्यराजके समसामयिक अगस्त्यको हम पुराण-वर्णित अगस्त्य नहीं समझ सकते। सम्भवतः ये अगस्त्य-नामधारी और ही कोई व्यक्ति थे। तामिलोंका यह भी कहना है, कि अगस्त्यने ही उनके पूर्वपुरुषोंको पहले पहल चिकित्सा शास्त्र, रसायन, इन्द्रजाल आदिकी शिक्षा दी थी। और तो क्या, बहुतसे आधुनिक ग्रन्थ भी अगस्त्यके नामसे चल गये हैं।

---

* बाइबिलमें मयूरका 'टुकि' नाम लिखा है, यह शब्द तामिल 'टोगै' वा 'टुगै' शब्दसे गृहीत है।

जैनोंके उद्योगसे तामिलभाषाके साहित्यकी समधिक उन्नति हुई है। श्रवणबेलगोलाके शिलालेख और जैन ग्रन्थोंके पढ़नेसे मालूम होता है, कि अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहुस्वामीने बहुत दिनों तक द्राविड़ देशमें वास किया था, मौर्यराज चन्द्रगुप्त वहाँ उनके शिष्य हुए थे। (चन्द्रगुप्त देखो।) यदि ऐसा ही है, तो मानना पड़ेगा, कि पहलेसे ही जैनियोंका वहाँ विस्तार हो गया था। जितने भी प्राचीन तामिल ग्रन्थ मिलते हैं, उनमें अधिकांश जैन हैं। बहुतोंका अनुमान है कि तामिल भाषाके जितनी भी प्राचीन ग्रन्थावलियोंका आविष्कार हुआ है, उनमें जैनग्रन्थ ही सबसे अधिक प्राचीन हैं। कुमारिल और शङ्कराचार्यके आविर्भावके बादसे ही द्राविड़में जैन प्रभावका ह्रास होने लगा और जैनों की संख्या भी बहुत घट गई। ऐसी दशामें तामिल जैनसाहित्यकी उन्नति और अवनति उन्हीं पर ही माननी पड़ेगी।

तामिल भाषामें कवि तिरुवल्लुवर-रचित कुरल ग्रन्थ ही सर्वप्रधान है। ईसाकी ८वीं शताब्दीके पहले यह ग्रन्थ रचा गया था। कविके निम्न श्रेणीकी पढ़िया जाति में जन्म लेने पर भी उनका ग्रन्थ सर्वत्र आदृत होता है। प्रसिद्ध विदुषी औवैयार (आविवार) तिरुवल्लुवरकी भगिनी थीं। उनकी कविताने भी द्राविड़-समाजमें विशेष आदर पाया है। कम्बनकी तामिल रामायणमें कविकी कवित्वशक्तिका यथेष्ट परिचय मिलता है। सुन्दरपाण्ड्य तामिल भाषामें कई शिव-स्तोत्र लिख गये हैं, तामिल शैवगण उनको तामिल-वेद मानते हैं। ऐसा ही १००० श्लोकोंका एक विष्णुस्तोत्र भी है जो भी वैष्णवोंके लिए वेदस्वरूप है।

तामिल भाषामें रचित जैनकाव्योंमें १५००० श्लोकात्मक "चिन्तामणि" नामक ग्रन्थ ही विशेष उल्लेखयोग्य है। इस ग्रन्थकी रचना-प्रणाली शब्दयोजना और अर्थ माधुर्य कम्बनकी रामायणकी अपेक्षा श्रेष्ठ है।

तामिस्र (स० पु०) तमिस्रा अस्त्यत्र इति अर्शआदित्वात् अच्। १ नरकविशेष एक नरकका नाम। इस नरकमें सदा घोर अन्धकार बना रहता है, जो दूसरोंका धन चुरा अपनी जीविका निर्वाह करते हैं वे ही इस नरकके अधिकारी हैं, उन्हें इस नरकमें पतित यन्त्रणा भोगनी पड़ती है। (भागवत ५।२६) तमिस्रया साम्य अण्। २ द्वेष। ३ अविद्याविशेष, एक अविद्याका नाम। भोगकी इच्छा पूर्तिमें बाधा पड़नेसे जो क्रोध उत्पन्न होता है उसे तामिस्र कहते हैं। ४ क्रोध गुस्सा।

ताम्बो (हिं० स्त्री०) १ ताँबे का तसला। २ एक प्रकारका बरतन जिससे द्रव पदार्थ मापा जाता है।

तामील (अ० स्त्री०) आज्ञाका पालन।

तामु (स० त्रि०) तम उन्। स्तोता, स्तुति करनेवाला।

तामेसरो (हिं० स्त्री०) शीशेके योगसे बनाये जानेका एक प्रकारका तामड़ा रङ्ग।

ताम्बूली (स० स्त्री०) ताम्बूली पृषो० साधुः। ताम्बूल पान।

ताम्बूल (स० क्ली०) तम-कलच् कुगागमो दीर्घश्च। यद्वा निपातनात् साधुः। उण् ४।९०। १ पर्णनामकी लता, पान। पर्याय—ताम्बूलवल्ली, ताम्बूली, नागिनी और नागवल्ली।

भारत प्रसिद्ध लताविशेषके पत्तेको ताम्बूल या पान (Piper Beetle) कहते हैं। पान शब्द संस्कृतके पर्ण शब्दका अपभ्रंश है, जिसका अर्थ है—पत्ता। पान भारतवर्षमें सर्वत्र मिलता है पर ज्यादा उत्तरमें नहीं होता।

पानके विभिन्न नाम—

हिन्दीमें -- --	पान।
बङ्गलामें --	पान।
बम्बईमें	पान, विड़िदेले।
मराठीमें ---	विड़े का-पान।
गुजरातीमें --	पान नागरवेल।
तामिलमें	वेत्तिलाई।
तेलगूमें	तमालपाकु नागवल्ली।
कनाड़ीमें	विलेदेले।
मलयमें	वेत्ता, वित्तिला।
ब्रह्ममें --	कुन्थियोर, कानिङ्गत्।
सिंहलमें --	बुलात।
अरबीमें ---	ताम्बोल।
फारसीमें	-- ताम्बोल, बर्ग-ए-तांबोल।

पान उष्णदेशमें ढोली जमीन पर होता है। भारत,

सिंहल, और ब्रह्ममें पत्ते के लिए इसकी खेती होती है। बहुतोंका अनुमान है कि यवद्वीप पानका आदि वासस्थान है, वहींसे यह सर्वत्र फैल गया है।

पानीकी खेती बड़ी कष्टसाध्य है। इसके खेतमें ताप और रसका परिमाण बराबर समान रहना जरूरी है। किसानको इसेशा देख-भाल रखनी पड़ती है। स्थान-भेदसे इनकी खेतीमें कुछ कुछ पार्थक्य है। मन्द्राजके कोइम्बातुर जिलेमें पानकी खेती काफी होती है, वहां जमीन को काम लायक बनानेके बाद उसमें दो फुट चौड़ा नाला खोद कर मेंड़ बना देते हैं, जिसका आकार ठीक पानीकी होनीर या लहर जैसा हो जाता है। भाद्रमासमें इन मेंड़ोंके किनारे मौलसिरोके बीज बोये जाते हैं और आश्विनमास तक उसकी जड़में पानी भी दिया जाता है। उसके बाद दो वर्षके पुराने पानके पौधोंको उपाट कर उनकी एक एक गाठसे एक एक टुकड़ा बनाते हैं। प्रत्येक मौलसिरोके नीचे दो टुकड़े गाड़ देते हैं। प्रथम १५ दिन तक एक दिन अन्तर पानी देते हैं। पीछे सप्ताह में एक बार पानी दिया जाता है और इसी तरह तीन महीने बीत जाते हैं। उसके बाद माघमासके प्रारम्भमें गोबर, राख इत्यादिको खाद देते रहते हैं। नालेके ऊपर जमी हुई मिट्टीको उठा कर खादके ऊपर देते हैं। इसके बाद पानकी लताओंको उक्त मौलसिरोके पौधोंसे बांध देते हैं। एक वर्ष तक इसी तरह लताको वृद्धिके साथ साथ किसानको उसे बांधना पड़ता है। एक वर्षके बाद लता अपनेसे ही उस पर लिपट कर चढ़ सकती है। असाढ़-सावनमें फिर खाद देनी पड़ती है। प्रथम वर्षके बादसे ही प्रतिदिन जड़के पासके पत्ते टूटते रहते हैं। इस तरह १६ महीने तक पत्ते तोड़े जा सकते हैं।

बहुत अच्छे खेतमें बीघा पीछे हर महीने ५ कौंगि पान होते हैं। १०० पत्तोंका १ कत्तूस (गुच्छा) होता है, २५ कत्तूसमें पालागि और ८० पालागिमें १ कौंगि होती है। प्रति पालागि ।) के भावसे बिकती है। इस तरह प्रति बीघेमें हर महीने २०) के पान होते हैं और १६ महीनेमें ३२०) रुपयेकी फसल होती है। पानकी खेतीमें जैसा परिश्रम पड़ता है, वैसा लाभ भी काफी होता है। तो भी लोग इसकी खेती उतनी नहीं करते।

मध्यभारत—मन्द्राजकी अपेक्षा इस प्रदेशमें पानका आदर अधिक है। इसलिए इसकी खेतीमें भी लोगोंका आग्रह ज्यादा पाया जाता है। इस देशमें जो लोग पानकी खेती करते हैं, वे 'बरै' नामसे प्रसिद्ध हैं। पानके खेतको यहां बरोजा कहते हैं। कहीं कहीं 'पानका टण्डा' भी कहते हैं। पानकी लता बड़ी कोमल होती है और बहुत कम उत्ताप वा आलोकसे नष्ट वा दूषित हो जाती है। यदि अच्छी तरह देखभाल रक्खी जाय तो लाभमें दो वर्षका परिश्रमफल मिलता है। पानका खेत बांस और टट्टियोंसे इस तरह ढक दिया जाता है, कि जिससे फिर पानों पर धूप और जोरकी हवा न लगे। पानकी लताओंको ढकनेके लिए और लपेट कर चढ़ानेके लिए बड़े बड़े पत्तोंवाला प्रकाण्डवृक्ष बोया जाता है। यहां पानका बरोजा बहुत बड़ा होता है और खेत इसमें भागके लिए रहते हैं, तथा जितने भी किसान हैं, सभी कई एक बरोजाकी जमीन बांट लेते हैं। यहां बरोजाके भीतर बहुत तरी रहनेसे गरमियोंमें व्याघ्र आदि जानवर आ छिपते हैं। यहां भी २ वर्ष तक पानकी खेती होती है। प्रथम वर्षको उटक और द्वितीय वर्षको करवा कहते हैं। पहली फसलकी ही कीमत ज्यादा होती है। नीमार जिलेकी खेतीमें कुछ फरक है। यहां एक बार खेती करनेसे १०।१२ वर्ष तक फसल होती है। यहांकी खेती मन्द्राजको तरह होती है। मौलसरीके बदले यहां 'सरवा' वा जयन्तीवृक्ष लगाते हैं। खेतके चारों ओर 'पाड्‌रा' या मदारकी खूंटियां गाड़ कर बाड़ी लगा देते हैं। जयन्तीवृक्षके सूख जाने पर गुग्गुलके पेड़ लगा देते हैं। दश बारह वर्ष बाद ये बरोजा बदल डालते हैं। अन्यान्य स्थानोंसे यहांकी खेती परिश्रम और अड़चनें कम पड़ती हैं।

बंगाल—बङ्गालमें जो लोग पानकी खेती करते हैं, वे 'बारई' कहलाते हैं। वे 'तामली' या ताम्बूली जातिसे पृथक् और निम्नश्रेणीके होते हैं। पानके खेतको यहां 'बरज' कहते हैं। बरज देखनेमें अच्छा होता है। यहां वर्द्धमान नामक स्थानमें तथा गङ्गाके निकटवर्ती

बागमें इसकी खेती अधिक होती है। समुद्रकिनारेके निकटवर्ती बाट्‌क पासके पान सबसे उमदा होते हैं, इसलिए यहाँके खेतोंको तरजीह दी जाती है। बङ्गालमें तीन प्रकारके पान होते हैं—'साँचो', या बासा कपूरकाठी और दिसी या बङ्गला। कपूरकाठी पान खानेमें मीठा और कपूरगन्धविशिष्ट होता है। इसकी खेती बहुत कम होती है; खेती ज्यादा होनेपर भी यह कम उपजता है।

पानका बरज किसी तालाब या नहरके निकटवर्ती ऊँचे स्थान पर होना चाहिए। इसके लिये चिकनी मिट्टी ही अच्छी है। बरजमें घास आदि नहीं होने देना चाहिये, होने पर जड़से उखाड़ देना चाहिए। मिट्टीको १ या १॥ फुट तक खोद करके चारों तरफ नाली खोद दे और उसको खाद बना दे। बरेजमें तालाबका पङ्क देना पड़ता है। मिट्टीके ढेलोंको फोड़ कर पंक्ति बार नालियाँ बना देनी पड़ती हैं। उन नालियोंके पास ही नागरबेल (पान) की एक एक गाँठ गाड़ देते। नालियाँ ३।४ हाथ लम्बी होनी चाहिए। बरेजके ऊपर चारों तरफ पनकठी छा दी जाती है। टट्टियोंको मजबूत करनेके लिए बीच बीचमें बाँसके खूँटे गाड़ दिये जाते हैं। 'बीज' अर्थात् जो नालियाँ गाड़ी जाती हैं, उनकी एक पंक्ति १८ इञ्च और एक पंक्ति १० इञ्च अन्तरमें होती है तथा १८ इञ्चकी पंक्तिके आमने सामने दो 'बीजों' का अग्रभाग खींच कर एकत्र बाँध देते हैं। पानकी गाँठ २० इञ्च दूरकी कमचो (बीज) के नीचे गाड़ते हैं। एक एक गाँठ एक हाथ या एक फुट लम्बी काटी जाती है। इसे तिरछी गाड़ कर बाजूकी पत्तियोंसे ढक देते हैं। जेठसे लगा कर कार्तिक तक रोपणकार्य चल सकता है। लताके उत्पन्न होने पर उन कमचियोंके साथ मूजसे उसको बाँध देते हैं। पीछे बरेजके ऊपर तक पहुँचने पर उसको नीचेकी तरफ झुका देते हैं। बीच बीचमें तालाबका पङ्क और खली आदिको सड़ा-गला कर जड़में देते हैं। इस तरह अनेक बार मिट्टी देते देते 'बरज' बिलकुल ऊँचा हो जाता है। बाँहुल पासमें एक एक पुराने बरजकी जमीन इसीलिये मकानके बराबर ऊँची हो गई है। मोहरका चूरा, ताम्बाके कीचड़का चूरा, सरसोंकी खली आदि पानमें मिले बहुत उमदा खाद हैं। ये कीड़ोंको और लताओंको नष्ट कर देते हैं। बरजमें मैला पानी न देना चाहिये। बरजमें पानीका जमना भी अनिष्टकर है। पानकी लता में निम्नलिखित दोष लग जाते हैं—

१ दाग लगना—पानके पत्तों पर काले काले दाग लगना। यह दाग क्रमशः आयतनमें बढ़ता रहता है और पत्ते नष्ट हो जाते हैं।

२। पानके डण्ठलोंका काला होना और अन्तमें पत्ते झड़ जाना।

३। मुरझाना—पत्तोंका क्रमशः सूख कर मुरझा जाना।

४। पत्तोंके किनारे काला हो जाना।

५। पत्तेके किनारोंका मुड़ जाना।

ये रोग सिर्फ पत्तोंमें लगते हैं।

६। पहारी—यह सामान्य फोड़ा है, यह लताकी गाँठमें होता है, जिससे लता क्रमशः काली हो कर सूख जाती है। जिस लतामें पहारी रोग लग जाय और उससे यदि अन्य लताका सम्पर्क हो, तो उसमें भी यह रोग लग जाता है। इस रोगके होने पर उस लताको जड़से तुरन्त उखाड़ देना चाहिये और जड़की कुछ मिट्टी भी निकाल कर फेंक देनी चाहिये।

७। 'गान्दी' या 'गांदी'—लतामें गान्दी रोग लगने पर उसकी जड़ नाश हो जाती है और अन्तमें सूख जाती है।

उक्त रोगोंमें लहसुनका रस मिट्टीके साथ मिला कर उस मिट्टीको लताकी जड़में देना चाहिये। इससे लाभ होता है।

उड़िष्या—यहाँ भी बङ्गालकी तरह खेती होती है। एक एक लतासे १०।१५ वर्ष तक पत्ते तोड़े जा सकते हैं। इस तरह उड़िष्यामें बीघा पीछे खर्च बाद दे कर सालमें ४००) से ४२०) रुपये तक लाभ होता है।

बम्बई—यहाँ पानकी खेतीका उतना आदर नहीं होता। अहमदनगरमें पानके पत्ते १ वर्षके पहले नहीं तोड़े जाते। वहाँकी खेती मन्द्राज जैसी है। ८ दिन अन्तर दे कर पत्ते तोड़े जाते हैं।

पूनामें पानके खेतको पान्मामा कहते हैं। यहाँ

खेतोका काम कुएंके पानोसे होता है। धारवाडके पान आवाटकी वस्तु है। यह खुलो जमोनमें होता है, ऊपर मचान नहीं बांधा जाता। २ वोघेमें प्रायः १ हजार वेलें लगाई जाती हैं। एक आवाटो ३ से ७ वर्ष तक रहती है।

कनाड़ावो पान आम्रवृक्षके नोचे बोये जाते हैं। तोन वर्ष बाद पत्ते तोड़ते हैं। थाना जिलेमें यह पथरीलो, दलदली और गीली जमोनके सिवा और सब जगह होता है। यहां १ फुट या १॥ फुट गहरे गड्ढे खोदते और पौष मासमें उनको पानोसे भर देते हैं। पानोके सूख जाने पर (मिट्टो कुछ कुछ गीलो रहतो है) एक एक गड्ढे में एक एक हाथ लम्बे चार चार डण्ठल गाड़ देते हैं, फिर उगने पर उनको कमांचियोंसे बांध देते हैं। इन गड्ढोंमें प्रायः एक एक पाव सरसोंको खली भी देनी पड़ती है। एक मास बाद फिर प्रत्येक गड्ढे में एक एक पाव खलो डालो जातो है। लताके बढ़ने पर इसका बन्धन खोल दिया जाता है, जिससे वह जमीन पर लेटने लगती है। इसके बाद फिर खली डालते हैं और जड़में राख-मिट्टी देते हैं। फिर लताकी गांठोंसे डालियां निकल कर बढ़ने लगती हैं। और एक प्रकारकी खेती होती है, जिसमें लताको जमोन पर न लिटा कर मांचे पर चढ़ा देते हैं। एक वर्ष बाद पत्ते तोड़ते रहते हैं। कोलावा जिलेमें मछलीको खाद देते और ताड़पत्र ढकते हैं। पूना, सतारा और घाटपर्वतमें उत्कृष्ट पान होते हैं।

संयुक्त प्रदेश—बुन्देलखण्डमें अच्छे पान होते हैं। पर यहां पानको खेती बहुत कम होती है।

ब्रह्मदेश—यहां करेनजातिके लोग ऊंचे स्थान पर बड़े बड़े जङ्गलो पेड़ोंके नोचे पानकी खेती करते हैं। उक्त पेड़ोंको नोचेको डालियां काट दी जाती हैं। पनबेल वृक्षके काण्ड पर चारों तरफ फैलती और लम्बे लम्बे पत्ते फैलाती है। यह देखनेमें बड़ी मनोहर लगती है। युवकगण पानके वृक्ष पर चढ़ना बड़े कौशलसे सीखते हैं। शायद इसलिये इसका नाम "कड़ो" पड़ गया है। 'मघई' नामक एक प्रकारका पान होता है, जो बहुत ही सुस्वादु होता है तथा 'मीठा' नामका पान भी खानेमें बहुत उमदा लगता है।

वैद्यकके मतसे पानके गुण—विशदगुणयुक्त, रुचिकारक, तोक्ष्ण, उष्णवीर्य, कषाय, तिक्त, कटुरस, सारक, वशीकरणक्षम, क्षारयुक्त, रक्तपित्तजनक, लघु, बलकारक तथा कफ, मुखगत दुर्गन्धमल, वायु और श्रान्तिनाशक है।

भोजनके बाद सुपारो, कपूर, कस्तूरी, लवङ्ग, जायफल अथवा मुखके लिए निर्मलत्वजनक कटु तिक्त और कषाय संयुक्त फलके सुगन्धद्रव्यके साथ ताम्बूल खाना चाहिये।

रात्रिको, निद्रावसान होने पर, स्नानके बाद, भोजनके बाद, वमनके बाद और परिश्रम कर चुकने पर, पण्डितसभा और राजसभामें ताम्बूल खाना अच्छा है।

(राजवल्लभ)

किसीके मतसे—ताम्बूल तीक्ष्ण, उष्णवीर्य, अत्यन्त रुचिकारक, सारक, क्षारसंयुक्त, तिक्त, कटुरस, कामोद्दीपक, रक्तपित्तजनक, लघु, वश्यताजनक, कफघ्न, मुखको दुर्गन्ध और मलका नाशक, वातघ्न, श्रमापहारक, मुखमें निर्मलता और सुगन्ध लानेवाला, कान्तिजनक, अङ्गसौष्ठवकारक, हनु और दन्तगत मलनाशक, रसनेन्द्रियका शोधक तथा मुखस्राव और गलरोगका विनाशक है।

नूतन ताम्बूल ईषत् कषाययुक्त, मधुररस, गुरु और कफकारक तथा प्रायः पत्रकसदृश है। पत्रशाकमें जो जो गुण होते हैं, नूतन ताम्बूलपत्रमें भी वे वे गुण मौजूद रहते हैं। जितने भी पान बङ्गालमें पैदा होते हैं, वे अत्यन्त कटुरस, सारक, पाचक, पित्तवर्द्धक, उष्णवीर्य और कफनाशक हैं।

पुराने पान कटुरसविहीन, लघु, कोमलतर और पाण्डुवर्ण होते हैं; ये अत्यन्त गुणदायक हैं। अन्यान्य पान इसको अपेक्षा हीनगुणविशिष्ट हैं। पानमें सुपारो कत्था और चूना लगा कर खानेसे कफ, पित्त और वायु नष्ट होती है, मन प्रफुल्ल होता है, मुख निर्मल और सुगन्धित होता है तथा कान्ति और अङ्गके सौन्दर्यकी वृद्धि होती है।

प्रातःकालमें ताम्बूल खावें तो सुपारो अधिक, दोपहरके समय कत्था अधिक तथा रात्रिको चूना अधिक मिलाना चाहिए।

ताम्बूलके अग्रभागमें परमायु, मूलभागमें यश और मध्यदेशमें लक्ष्मी अवस्थान करती है। इसलिए ताम्बूलके अग्रभाग, मूलभाग, और मध्यरेखाको छोड़ कर बाकी का भाग खाना चाहिये । (राजनिर्घण्ट)

ताम्बूलके मूलदेशके खानेसे व्याधि, अग्रभागके खानेसे पापसञ्चय, चूर्ण पान खानेसे परमायुका ह्रास और ताम्बूलकी शिराखानेसे बुद्धि नष्ट हो जाती है।
(राजवल्लभ)

पान, सुपारी आदिके खाने पर पहले जो रस बनता है, वह विषोपम, दूसरी बार जो रस बनता है, वह भेदक और दुर्जर तथा तीसरी बार जो रस बनता है, वह अमृतके समान गुणदायक और रसायन है। अत एव ताम्बूलका वही रस पान करने योग्य है जो तीसरी बारके चबानेसे निकलता है। ज्यादा पान खाना भी हानिकारक है। दस्तके बाद तथा भूख लगने पर पान न खाना चाहिए। इससे ज्यादा पान खानेवालेका शरीर, दृष्टि, केश दांत, अग्नि, कान, वर्ण और बलका क्षय होता है तथा अन्तमें पित्त और वायुकी वृद्धि हो जाया करती है।

दांतोंकी कमजोरी और चक्षुरोग, विषरोग, मूर्च्छा रोग, मदात्यय, क्षय और रक्तपित्त, इनमेंसे कोई भी एक रोग होने पर पान न खाना चाहिए। (भावप्रकाश)

विधवा स्त्री, यति, ब्रह्मचारी और तपस्वियोंके लिए पान खाना निषिद्ध है। इन लोगोंके लिए पान गोमांस तुल्य है। (स्मृति०)

बिना सुपारीके पान नहीं खाना चाहिये। यदि कोई सुपारीके बिना पान खावे तो जब तक वह गङ्गा स्मरण न करेगा, तब तक उसे चाण्डालके घर जन्म लेना पड़ेगा (कर्मलोचन)

भोजनके बाद कुल्ला करके पान खाना चाहिए। विद्वान् लोग देवता और ब्राह्मणोंको बिना दिये ताम्बूल नहीं खाते।

वैद्यगण पानके भैषजगुणके बड़े पक्षपाती हैं। नाना प्रकारकी औषधोंके अनुपानमें पानका रस काम आता है।

सुश्रुतके मतसे—पान सुगन्धित, वायुनिवारक, कारक और उत्तेजक है। इसके सेवन करनेसे निश्वासमें सुगन्ध आती है, स्वर साफ होता है और मुखके दोष नष्ट होते हैं।

पानका डण्ठल यदि बच्चोंके गुह्यदेशमें प्रयोग किया जाय तो उनकी कोष्ठबद्धता नष्ट होती है। पानके पत्तेको भिगो कर कनपटियों पर रखनेसे सिरका दर्द जाता रहता है। माथे और गलेके सूजने पर उस पर पानका पत्ता बांधनेसे कुछ फायदा पड़ता है। स्तनोंमें कठिन पीड़ा या सूजन आने पर उन पर पानके पत्ते बांध देने चाहिये इससे पीड़ा शांत होती है। फोड़े पर पान बांधनेसे, घाव दूषित नहीं होता और आराम पड़ता है। पानके साथ चूना सुपारी, कत्था और अन्यान्य मसाले मिला कर खाना भारतकी सभी जातियोंमें प्रचलित है। यह आगन्तुकको अभ्यर्थना करनेके लिए अति प्रिय और उपादेय उपहार रूपमें दिया जाता है। नित्य भोजनके उपरान्त भी लोग पान खाया करते हैं। यह परिपाक-कार्यमें सहायता पहुंचाता है। वक्षरोगीके लिए ज्यादा पान खाना अच्छा है। पानका रस गरम करके, कानमें डालनेसे कानका पीब और आंखमें डालनेसे नाना प्रकारके चक्षुरोग तथा मधु वा पानीके साथ चाटनेसे बच्चोंकी बैठी हुई खांसी जाती रहती है। डिफ्थिरिया (पियोमी) रोगमें चूनेके साथ पानका रस सेवन करनेसे उपकार होता है। इसकी जड़ कफ-रोधी होती है। स्त्री यदि पानकी जड़को घट कर खावे, तो उसकी गर्भधारणकी शक्ति अल्प समयके लिए नष्ट हो जाती है। वैद्यगण पानके रसके साथ कपासकी जड़ घट कर वीरकपूर्ण औषधके लिए योजित करते हैं। पानका पत्ता मधु वा आसवोंके साथ खानेसे खांसी जाती रहती है। भारी जमीन पर रहनेवालोंको पान खाना फायदेमन्द है।

ताजे पानको पानीमें चुआनेसे कुछ पीले रंगका दो तरहका तेल बनता है, एक तो जलसे भारी होता है और दूसरा हलका। दोनोंमें ही पानकी सुगन्ध होती है।

इसके सिवा पानका पत्ता गलानेसे आराबिन नामका एक तरहका सार निकलता है, इससे कोकेनको मौलिका अवयव बनाया जाता है।

ताम्बूलकरङ्क (सं० पु०) ताम्बूलस्य करङ्क ६ तत्।

ताम्बूलपात्र, पान रखनेका बरतन, बट्टा। इसका दूसरा नाम खलो है।

ताम्बूलद (सं० त्रि०) ताम्बूलं ददाति द-क। ताम्बूल-दाता, जो पान लगा कर अपने मालिकको देता है। इसका पर्याय—वागुलिक है।

ताम्बूलदायक (सं० पु०) ताम्बूल दा-एवुल्। ताम्बूल-दाता, वह नौकर जो पान इत्यादि लगानेमें नियुक्त किया जाता है।

ताम्बूलधर (सं० पु०) वह नौकर जो पान लेकर खड़ा रहता है।

ताम्बूलनियम (सं० पु०) पान, सुपारी लवंग इला-यची आदि खानेका नियम।

ताम्बूलपत्र (सं० पु०) ताम्बूलमिव पत्रमस्य। १ पिण्डालु, अरुया नामकी लता। इसके पत्ते पानके जैसे होते हैं। (क्लो०) २ पानका पत्ता।

ताम्बूलपात्र (सं० क्लो०) ताम्बूलस्य पात्रं, ६-तत्। ताम्बूलकरङ्क, पान रखनेका बरतन, बट्टा, पानदान।

ताम्बूलपेटिका (सं० स्त्री०) ताम्बूलस्य पेटिका ६-तत्। ताम्बूलपात्र देखो।

ताम्बूलबीटिका (सं० स्त्री०) पानका बीड़ा, बीड़ो।

ताम्बूलराग (सं० पु०) ताम्बूलकृतो रागः मध्यलो० कर्मधा०। १ पानकी पीक। २ मसूर।

ताम्बूलवल्लिका (सं० स्त्री०) ताम्बूल, पान।

ताम्बूलवल्ली (सं० स्त्री०) ताम्बूललता, पानकी बेल। इसका संस्कृत पर्याय—ताम्बूली, नागवल्लिका, वर्ण-लता, सप्तशिरा, सप्तलता, फणिवल्ली, भुजगलता, भक्ष-पत्रा, ताम्बूलवल्लिका, पर्णवल्ली, ताम्बूलिदिवाभोष्टा, नागिनी और नागवल्लरी। (भावप्रकाश)

ताम्बूलवाहक (सं० पु०) राजभृत्यविशेष, पान खिलाने-वाला नौकर।

ताम्बूलाधिकार (सं० पु०) वह नौकर जिसके हाथ पानका इन्तजाम हो।

ताम्बूलिक (सं० त्रि०) ताम्बूलं तद्वचनं शिल्पमस्य ताम्बूल-ठन्। १ पान बेचनेवाला, तमोली। २ तमोली जाति।

ताम्बूलिन् (सं० त्रि०) ताम्बूलं पण्यतया अस्त्यस्य इनि। ताम्बूलविक्रेता, पान बेचनेवाला, तमोली।

ताम्बूली (सं० स्त्री०) ताम्बूल-गौरा० ङीष्। २ ताम्बूल-वल्ली, पानकी बेल।

ताम्बूली—साधारणतः तंबोली या तमोली नामसे प्रसिद्ध एक जाति। बङ्गाल, बिहार और उड़ीसामें इनका काफी सम्भ्रम है। ये मूलतः ताम्बूल व्यवसायी होनेके कारण इस नामसे अभिहित हुए हैं। इस जातिको भी मिश्र जाति कहा गया है। बंगालमें इनको ताम्ली वा तामुली तथा ताम्बूल-वणिक कहते हैं।

बिहारके ताम्बूलियोंमें गोत्रभेद नहीं है। इनमें हमेशासे चले आये नियमके अनुसार विवाह आदि सम्बन्ध होते हैं। 'पियानिया' सम्पर्कको पकड़ कर ६ पीढ़ी तक और "टेयाडी" सम्पर्क पकड़ कर १४ पीढ़ी तक विवाह सम्बन्ध नहीं होता।

बङ्गाल और उड़ीसामें ब्राह्मणगोत्रके अनुसार इनके नाना विभाग है। कुलमानानुसार भी इनमें विभाग हैं। समानगोत्र और समान कुलमें विवाह नहीं होता, सपिण्ड वा समानोदक होने पर भी नहीं होता। सगो-त्रीय किन्तु भिन्न कुलके होने पर, वा समोपाधि किन्तु भिन्न गोत्रीय होने पर विवाह करनेमें बाधा नहीं।

बङ्गालके ताम्बूली पांच थाकोंमें विभक्त हैं, जैसे—सप्तग्रामी वा कुशदही, अष्टग्रामी वा कटकी, चौदहग्रामी, बियालीसग्रामी और वर्द्धमानी। सप्तग्रामियोंका कहना है, कि वे उत्तरभारतसे आ कर पहले पहल सप्तग्राममें बसे थे, वहां उनके चौदह सौ घर हैं। किसी मुसलमान नवाबके इनकी किसी स्त्री पर अत्याचार करनेके कारण ये सप्तग्रामको छोड़ कर कुशदहमें आ कर रहने लगे। बियालीस ग्रामियोंका भी अपने आदि इतिहासके सम्बन्ध में ऐसा ही कहना है। ये बङ्गालमें सप्तग्रामियोंके पीछे आये हैं परन्तु संख्या इन्होंकी अधिक है। चौदहग्रामि-योंका फिलहाल ज्यादा सम्मान नहीं है। बियालीस-ग्रामी थाकके पद्मोवरसिंह, वर्द्धमानी थाकके श्रीमन्त पालकी एक कन्याके साथ विवाह करनेके कारण, पिताके द्वारा घरसे निकाले गये थे और श्वशुरके साथ हुगली जिलेके बोंइची नामक ग्राममें आ कर रहने लगे थे। ये

की चौन्दय्यामी यात्राके प्रवर्तक थे। इन्होंने अपने समयके प्रभावसे लिखरस्तों चोदय्यामीके ताम्बुलियोंको अपनी श्रेणीमें मिला कर इस पन्थकी स्थापना की थी। इस घटनाके कुछ प्रमाण भी मिलते हैं। बीदरोमें एक देव-मन्दिरके प्रस्तरफलक पर लिखे हुए विवरणसे मालूम होता है, कि वहाँके एक गोकुलने शक सं० १५०३ (१५८२ ई०) में इस मन्दिरकी प्रतिष्ठा की थी। इससे यह स्पष्ट जाना जा सकता है कि चोदय्यामी यात्राका प्रवर्तन इससे और भी ५० वर्ष पहले हुआ था। वर्तमानमें यात्र चोदय्यामीसे पहले प्रवर्तित हुआ था। बीरभूम और वर्धमानमें इस यात्राके लोग ही अधिक हैं। अटयामियोंका कहना है, कि पहले मध्यामियोंके समकालमें ये भी उत्तरभारतसे आ कर पहले उड़ीसामें बसे थे और इसीलिए वे अपनेको अन्य यात्रोंसे कुछ श्रेष्ठ समझते हैं। इनमें कई एक गोत्रोंके काश्यप, कुम्भ पराशर, शाण्डिल्य और व्यास गोत्र हैं।

विहारी ताम्बुलियोंमें प्रधानतः आदि वासस्थानके मिलने कई एक श्रेणियाँ हैं—मगहिया, तिरहुतिया, कनौजिया, भोजपुरिया, कुरम कराम, सुर्डिम आदि।

बङ्गालके ताम्बुलियोंमें चौधरी, कोन्न, दत्त, दे, सूर, दास, पालित, रक्षित, सेन और सिंह, ये उपाधियाँ हैं। विहारमें भगत सिनोबाला, नागर भी और पैंठो उपाधियाँ हैं।

विवाह।—इनमें बाल्यविवाह प्रचलित है, तथा लड़कीवालेको दहेज देना पड़ता है। वंशमर्यादाके अनुसार दहेजमें कमी-वेशी भी होती है। दरिद्रता वश या और किसी कारण अथवा आवश्यक इनके वैवाहिक बन्धन हैं। ये सगोत्रमें असवर्ण हैं; किन्तु विधवा ब्राह्मण कायस्थों की विधवाओंके समान आचरण करती हैं। बङ्गाल और उड़ीसामें विधवाओंका पुनर्विवाह नहीं होता। विहारमें विधवाओंका दूसरा विवाह हो जाता है। विवाहके लिए कनिष्ठ देवरके साथ विवाह करना ही श्रेष्ठ माना जाता है। जोरू होने पर भी ये इसको दूसरा विवाहके कुछ दोष नहीं समझते। पंचायतकी अनुमति ले कर स्त्रीको त्याग सकते हैं। परित्यक्ता स्त्री फिर विवाह नहीं कर सकती।

बङ्गालके ताम्बूली साधारणतः वैष्णव होते हैं। इनके ब्राह्मण वैष्णव या पतित नहीं हैं तथा ये ग्रामदेवता और अन्यदेवताओंकी पूजा करते हैं। विहारमें बन्दी और नरसिंह नामके ग्रामदेवता हैं, गोरैयाके सिवा, मिरदान, देवी और दहो आदिकी उनकी पूजा होती है। अन्यान्य बङ्गालकी वणिक्जातियोंकी तरह इनमें भी कोई कोई—विश्वकर्मीय यन्त्रपूजाकी तरह—बैशाखी कि मासमें चुनादान, पान, सरौता और कत्था आदिकी पूजा किया करते हैं। इनमें १० दिनका अशौच होता है।

ताम्बूलकी खेती करना और पान बेचना इनका आदि-व्यवसाय है। उत्तरभारतमें अब भी अधिकांश तमोली पान बेचने हीका काम करते हैं, किन्तु बङ्गालके तमोलियोंने प्रायः जातीय व्यवसाय छोड़ दिया है। दुकानदारी, अनाजका रोजगार और चूना आदि बेचनेका काम करते हैं। बहुतसे लोग दफ्तरोंमें किरानीका काम करते हैं और बहुतसे जमींदारोंके यहाँ गुमाश्तेका काम करते हैं। इसके सिवा बहुतोंने उच्चतर जीविकाका अवलम्बन कर लिया है। जो कृषिकार्य करते हैं वे स्वयं हल नहीं चलाते। उत्पत्तिके विषयमें जो पौराणिक आख्यान मिलता है, उनमें किसीमें वैश्यसे और किसीमें तमोलियोंको एक जाति माना है। पराशरके मतसे तेली और ब्रह्मवैवर्तपुराणके मतसे ताम्बूली सत्शूद्र हैं। बङ्गालमें अधिकांश स्थानोंके ताम्बूली वैश्याचार मानते हैं। ये प्याज, गोश्त, केंदा आदि अन्य होम मचार नहीं खाते।

पूनाके तमोलियोंने पेशवाओंके समयमें सतारा और अहमदनगरसे आ कर यहाँ पानका व्यवसाय किया था। ये मराठी कुनबियोंके साथ आहार व्यवहार करते हैं आदान प्रदान भी होता है। इनमें महाराष्ट्रीय उपाधियाँ प्रचलित हैं। समोपाधि व्यक्तियोंमें परस्पर आदान प्रदान नहीं होता। ये कत्था चूना सुपारी और पान बेचते हैं। इनकी स्त्रियाँ रोजगारमें शामिल नहीं होतीं। लड़कोंको पढ़ाया नहीं जाता। इनमें कुछ मुसलमान भी हैं जो यथार्थमें कुनबी थे; औरङ्गजेबके प्रभावसे मुसलमान हो गये हैं। ये आपसमें हिन्दी और दूसरोंके साथ मराठी बोलते हैं। इनकी पोशाक मराठोंकी भी

है, ये पानका रोजगार करते हैं। इनकी स्त्रियां सब भी अनेक हिन्दू क्रियाकलापोंका अनुष्ठान किया करती हैं। वे अपनी ही श्रेणीमें आदान प्रदान करते हैं। धारवारके हिन्दू ताम्बूली खत्री और अत्यन्त शराब पीनेवाले हैं। दाक्षिणात्यमें सभी स्थानोंके मुसलमान तम्बोली हानिफी सम्प्रदायके सुन्नी मुसलमान और सर्वत्र एकसे आचारके हैं। मुसलमान तंबोली पान खरीद कर लाते और दूकान पर बैठ कर बेचते हैं।

ताम्र (सं॰ क्ली॰) तम्यते आकाङ्क्ष्यते तम रक् दीर्घश्च। अमितम्यादीर्घश्च। उण् २।१६। १ तैजस धातुभेद, तांबा। पर्याय—ताम्रक, शुल्व, म्लेच्छमुख, द्व्यष्ट, वरिष्ठ, उडुम्बर, द्विष्ट, उदम्बर, उदुम्बर, तपनेष्ट, अम्बक अरविन्द, रविलोह, रविप्रिय, रक्त, नैपालिक, रक्तधातु, मुनिपित्तल, अर्क, सूर्याङ्ग और लोहितायस। (शब्दरत्ना॰)

हिन्दी और बङ्गला	तांबा, तामा।
गुजराती	ताम्बा, ताम्बु।
कर्णाटक और मराठी	ताम्र।
तामिल	शेंबु, सेम्बू।
तैलगू और मलय	रागि, ताम्रमू।
भूटान	जङ्गत, नीलठोकर।
पञ्जाबी	नील टुसिया।
अरबी	नोहस।
फारसी और तुर्की	मिस।
बरमा	केयानी।
चीन	चिटुङ, टुङ, चिक्रिन।
डिनेमार	कोवार।
फरासीसी	कुइभर।
ओलन्दाज (हॉलैण्ड) सुइडेन	कोपर।
जर्मनी	कूपर।
इटली	रामे।
लेटिन	किउप्राम।
पोलैण्ड	मियेज।
पुर्तगीज, स्पेन	केमवर।
रूस	कौन्सनयजेड्, जेड्।

पुराणोंमें इसकी उत्पत्तिका विवरण इस प्रकार लिखा है—पूर्वकालमें गुडाकेश नामक एक महासुरने ताम्रका रूप धारण कर विष्णुकी आराधना की। विष्णुके सन्तुष्ट होने पर उस असुरने विष्णुके चक्रसे मरनेकी कामना की। विष्णुने भक्तकी वासनाको पूर्ण करनेके लिए वैशाख मासको शुक्लद्वादशीके दिन उसको चक्रद्वारा मार डाला। उस असुरको विष्णुलोक प्राप्त हुआ। पीछे उसके मांससे ताम्र, रक्तसे सुवर्ण, अस्थिसे रौप्य आदि तथा उन सबके मलसे अन्यान्य धातुएं उत्पन्न हुईं। (वराहपु॰)

मतान्तरमें ऐसा भी है, कि कार्त्तिकेयका जो शुक्र पृथिवी पर गिरा था, उससे ताम्रकी उत्पत्ति हुई। (विप्रकाश)

ताम्र धातु जिस आकारमें साधारणतः बाजारोंमें देखनेमें आती है, खानसे ठीक वैसी ही नहीं निकलती। अन्यान्य धातुओंकी तरह खानमें भी यह अधिकतासे विशुद्ध अवस्थामें नहीं मिलती।

फिलहाल मालूम हुआ है, कि भारतके उपद्वीपांशोंमें ही तांबेकी खानें अधिक हैं। सिंहभूम जिला तथा धलभूम राज्यमें तांबेकी अधिकताके कारण वहां खनिके कामके लिए कितने ही बार कितने ही वणिक्-दलोंका संगठन हुआ है, किन्तु किसीको भी सफलता नहीं हुई। हजारीबागमें बरागण्डा नामक स्थानमें तांबेकी खान दिखलाई दी है और चिह्नसे यह भी मालूम हुआ है, कि वहां पहले भी खदानका काम होता था। फिलहाल उन खदानोंके चलानेकी व्यवस्था हुई थी। राजपूतानेमें देशीय राज्योंमें कुछ तांबेकी खानें हैं, अंग्रेजोंके अधिकृत अजमेरमें कुछ अंग्रेज-वणिकोंने खोदनेका काम जारी किया था, पर फिलहाल वह भी बन्द है। कुमायूं और गढ़वाल जिलेमें तांबेकी खानें होने पर भी उनकी अजमेर जैसी दुर्दशा हो गई है। दार्जिलिङ्गके बीच जोंगड़ी नामक स्थानको आकरमें एक खदानका काम चल रहा है। पश्चिम-द्वारमें जितनी खानें हैं, उन्हें नेपाली लोग चलाते हैं। मन्द्राजमें कर्नुल और नेल्लुर जिलेमें खानका काम चल रहा है।

भारतमें तांबेकी खानोंके विषयमें नवीन कुछ जानने योग्य विवरण नहीं है। पहले भारतमें देशीय लोग ही

अधिकांश तांबा निकालती थी किन्तु उन लोगोंने भी समय इस कामको छोड़ रखे थे। सिंहभूम, सिंहभूम हजारीबाग आदि स्थानोंमें तांबेकी पुरानी खानोंको देखनेसे मालूम होता है कि किसी समय इस कामके लिए काफी आदमी मेहनत करते थे। भारतमें तांबेकी खानका काम चलानेके लिए अंग्रेज-कम्पनियोंका बहुत बार प्रयत्न हुआ था, किन्तु कोई भी चिरस्थायी न हो सका। इस देशमें तांबेके आकरके कामने किसी तरह भी अपना बन्दोबस्त न कर सकी। इसीलिए अंग्रेजोंने यह अनुमान किया है, कि इन विषयमें देशीय लोगोंके बिना मन लगाये उन्नति नहीं हो सकती।

भारतमें एक अक्साइड, एक प्रकार सल्फिउरेड, एक प्रकार मालकाइट, कार्बनेट, आर्सेनेट और अक्साइड एक स्थानमें मिलता है। सिक्कीमको, दामपड़ आदि स्थानोंमें सल्फिउरेट तांबेकी खान है। अजमेरमें कार्बनेट तांबा मिलता है। यहांकी सीसेकी खदानसे भी कार्बनेट तांबा निकलता है। नेलूर और कडप्पामें सिलिकेट तांबेकी खान है किन्तु वह निकालने लायक खान नहीं है। मैसोर, नागपुर, जबलपुर और जयपुर राज्यमें भी तांबेकी खानें हैं। कच्छमें तांबेकी खानका काम चल रहा है।

पञ्जाबकी मध्य नोमें शुद्धभावसे पायराइटिस तांबेका एक टुकड़ा पाया था। हिस्सार जिलेसे बहुत उमदा तांबा पाया था। कांगड़ा जिलेमें कुलूके पास मणिकर्ण और सिराजके पायराइटि नामका तांबा और सिलिके मोदिर कप्रा कार्बनेट तांबा भी पाया था। काश्मीरमें तांबा मिलता तो है, पर वहां उसका रोजगार नहीं चलता। कुमायूं, गढ़वाल, सिक्किम, नेपाल आदि स्थानोंमें तांबेकी खानें हैं। देशीय लोग तो उसका थोड़ा बहुत काम चलाते हैं। कुमायूंमें सिंघाना नामक स्थानमें तथा पाहुसे मिस्धवानी, माईमेढो, मेराई, शिवरसिरा, रोई, टोमाबिडो, दोपिटि और जनपुरमें तांबेकी खानें हैं। वैद्यनाथके पास देवघरमें भी तांबेका आकार देखनेमें आते हैं। दो फुट खोदनेसे ही यहां तांबा मिलता है। दामनकी बांधो कुआ नामक स्थानकी कोयलेकी खानके मजदूरोंकी कुछ बार एक बार परीक्षाकी गई तो उससे

को सदो १० भाग उमदा तांबा और २१ भाग अपरि मिश्रित तांबा सहज ही मिला था। नेपालके पाल्पाप्रदेशमें भी बहुत तांबेकी खानें प्रसिद्ध हैं। यहांका तांबा इतना उमदा होता है, कि किसी समय विलायती तांबेसे भी इसका बाजार ज्यादा आदर था। सिंहभूमसे तथा मेदनीपुरके पश्चिममें ८० मीलसे अधिक स्थानमें तांबेकी खदाने हैं। ११८ पौंड वजनके तीन तास्रपत्र यहां बने थे जिससे तांबेके सिक्के बनाये जा सकते थे। यह तांबा भी विलायती तांबेसे अच्छा होता था। १८८० ई०में खान खुली, नेलगिरि, नेलूर और मलयाड़में तांबेकी खानें निकली हैं। बम्बईसे २० मील पूर्वमें गुफियाम है उससे २ मीलकी दूरी पर तांबेकी खदान है। अम्बेर द्वीपका तांबा बहुत उमदा होता है। मरगुई द्वीपपुञ्जके बहुतसे द्वीपोंमें पूर्वरत्नके आकार देखे जाते हैं। इनमें भी मदो आधा अक्सार ताम्र तथा आधा अक्सन, लोहा और मङ्गल मिलता है। अण्डमान, मलविन और चेडुबा द्वीपमें हरे रङ्गका कार्बनेट तांबा मिलता है। आसाममें शिवसागरसे १० मील दूरी पर अच्छा तांबा पाया जाता है।

ब्रह्मराज्यमें तथा बादेन, मारवी और समेरु नामक स्थानमें अक्साइड मैलकाइट तांबा निकलता है।

मर्मेर नामक स्थानमें पहले चीना लोग खानोंका काम चलाते थे। तिमुर द्वीपमें भी तांबा मिलता है। जापानके उत्तरीयमें बहुतायतसे तांबा उत्पन्न होता है। पृथिवी पर अन्य किसी भी स्थानमें ऐसा बढ़िया तांबा नहीं मिलता। जापानके लोग इसको साफ करके एक इंच मोटे एक फुट लम्बे टुकड़े बना कर बेचा करते हैं। इसके सिवा शुद्ध तांबा ईंटके आकारमें बिकता है। यहांके तांबेके आकरमें खादके साथ साथ भी मिलता है। पौकम्दाम और चीनसे यह तांबा प्रति वर्ष दो हजार टन रफ्तनी करते हैं। चीनमें एक प्रकारका निकल मिला हुआ सफेद तांबा मिलता है। यह सिर्फ चीनमें ही मिलता है। इससे थाली, रकाबी आदिके सामान बनाये जाते और प्याले बनते हैं। अच्छा तरह पालिश करने पर प्रायः चांदीकी तरह चमकता है।

१८०२ ई०में आईसिया द्वीपमें भी तांबेका पता लगा

आविष्कार हुआ है। काश्मीरमें जानस्कार नदीके किनारे अति उत्कृष्ट तांवा मिलता है, जिसमें थोड़ा अंश चांदीका भी मिला रहता है।

तांबेका इतिहास—अति पुराकालसे ही तांबा मनुष्यों का परिचित हुआ है, यहां तक कि लोहेके आविष्कारसे पहले भी तांबेके अस्त्र आदि बनते थे। आदिम जाति लोहेसे पहले इसका व्यवहार करती थी। कारण शायद यह होगा कि अन्यान्य धातुओंके खानसे निकाल कर व्यवहारिक धातुरूपमें प्रस्तुत करना पड़ता है, किन्तु इसके लिए वह नियम नहीं, क्योंकि खानसे ही व्यवहारोपयोगी अवस्थामें निकलता है। यह अत्यन्त आघातको सहनेवाला है और इससे तार भी बनता है।

रोमकोंको यह काइप्रास् (साइप्रास्) द्वीपसे पहले पहल मिला था, इसलिए इसको पहले 'कइप्रियाम्' कहते थे, क्रमशः विगड़ते विगड़ते उसीका किउ-प्राम् (कु-प्राम वा कपर) रूप हो गया है।

खानमें तांबा नाना अवस्थाओंमें मिलता है, जैसे - अकसाइड, क्लोराइड, कार्वनेट, फस्फेट, सालफेट, आर्सेनेट, सिलिकेट भानाडेट, साल्फाइड और व्यवहारिक धातु। प्रकृतिके प्रायः सर्वत्र और सर्व पदार्थोंमें थोड़ा-बहुत तांवा है। समुद्रके तृण आदिमें भी तांबेके अंश हैं, अतः यह मानना पड़ेगा कि समुद्रके जलमें भी तांबा है। उच्च श्रेणीके जीव शरीरमें भी तांबा है। आटा पूला, घास, मांस, अण्डा, पनीर आदि सभी चीजोंमें तांबा है। जब रक्तमें भी तांबेकी सत्ता है, यकृत् और मूत्रयन्त्रमें तांबेकी सत्ता शरीरके अन्यान्य अंशोंकी अपेक्षा बहुत ज्यादा है। ऊपर जितने तरहके तांबोंका वर्णन किया है, उनमें सभी प्रकारके तांबोंसे व्यवहारिक तांवा नहीं मिलता।

खदानके भीतर आकर ताम्रके साथ व्यवहारिकी तांबा सर्वदा ही मिलता है,—कहीं पतला, कहीं छोटे छोटे नुकीले टुकड़ेके रूपमें और कहीं बड़ी बड़ी ईंटों (Solid blocks)के आकारमें मिलता है। अमेरिकाके सुपिरियरह्रदके किनारेकी खानमें व्यवहारिक धातु ही अधिक पायी जाती है। यहां एक एक थानका वजन ५०० टन तक होता है। उत्तर-अमेरिकामें तांबेसे फी सदी ३ अंश चांदी निकलती है। यह चांदी एक टुकड़े तांबेके साथ भली भांति मिश्रित रहती है और कहीं कहीं तांबेके साथ चूर्णवत् वा सूत्रवत् अवस्थामें पायी जाती है।

आकर-ताम्रमें नाना वर्णव्यत्यय देखनेमें आते हैं, ये ही तांबे सल्फाइड अवस्थापन्न हैं।

१। धूसर तांबा (Grey sulphide of copper)—इंग्लैण्डमें यह कर्नवाल नामक स्थानमें सर्वदा मिलता है।

२। बैंगनी तांबा (purple copper,—तांबा और फेरिक सलफाइड (Cuprous and Ferric sulphides) विभिन्न अनुपातसे मिश्रित होने पर इस खनिजकी उत्पत्ति होती है। यह तीन प्रकारका होता है, एकमें फी सदी ७० भाग, दूसरेमें ६० भाग और तीसरेमें फी सदी ५६ भाग असली तांबा रहता है। कर्नवाल, सुइडेन और उत्तर-अमेरिकामें यह बहुतायतसे मिलता है।

३। पाइराइटिस् वा पीला तांबा (Copper pyrites or yellow copper)—इस श्रेणीका तांबा अधिक मिलता है। इसमें फी सदी ३४.४ अंश तांबा होता है। कर्नवाल, डिभनसायर, सुइडेन, किउवा द्वीप, दक्षिण-अमेरिका और यूनाइटेड ष्टेटसमें बहुत जगह ऐसा तांवा मिलता है। कर्नवालकी खानमें हर साल यह एक लाख पचास हजारसे ३० हजार टन तक उत्पन्न होता है। इससे व्यवहारिक तांबा प्रायः १२ हजार टन बनता है।

४। फह्लर वा असली भूरा तांबा (Fahlore or true grey copper)—इसमें बहुतसी धातुएं मिश्रित रहती है, जिनमें प्रोटोसलफाइड तांबा (Protosulphide of copper), आर्सेनिक, रसाञ्जन, जस्ता, लोहा, चांदी और पारा ही अधिक है, फी सदी ३०से ४८ अंश विशुद्ध तांबा निकलता है। पारा फी सदी २से १५ अंश तक रहता है। चांदी जितनी कम होती है, विशुद्ध तांबेका परिमाण उतना ही ज्यादा होता है। गन्धक और रसाञ्जनके मिश्रणसे इसकी और भी एक श्रेणी उत्पन्न होती है, जिसको 'वुर्नोनाइट' (Sulphantimonite of copper) कहते हैं।

५ ऐटाकमाइट (Atacamite)—यह पेरू और चिली देशमें मिलता है। इसको Oxychloride of copper भी कहते हैं।

६। क्रिसोकोला (Chrysocolla)—सब देशमें तांबेकी खदानोंमें यह मिलता है। इसको Silicate of copper कहते हैं। इन दो धातुओंसे भी तांबा पृथक् किया जा सकता है।

तांबेमें तड़ित-परिचालन शक्ति चांदीके सिवा अन्यान्य धातुओंकी अपेक्षा बहुत ज्यादा है इसीलिए इसके तारको व्यवहारमें तड़ितवार्त्ता का तार भेजा जाता है।

तांबा प्रायः सभी प्रकारकी मौलिक धातुओंके साथ मिला रहता है, जिसका अधिकांश औषध आदिमें व्यवहार होता है। नाइट्रोसिलफ्यूरिक एसिड और अमोनियाके मलोंमें तांबा गलता है। क्लोरीन गैसके संयोगसे तांबा जल सकता है।

तांबेसे भिन्न कामोंमें आने लायक और कुछ मिश्रित धातुएं बनती हैं। (जैसे पीतल—पीतल देखो।) मुण्टकी धातु (Muntz's Metal) प्रिन्सकी धातु (Princes metal), मोजैयिक स्वर्ण (Mosaic gold), मनहिम स्वर्ण (Mannheim gold) नकल ब्रोंज (Immitation bronze) सिमिलर (Similor) टोम्बाक (Tombac) और कांसा (Bell metal)

तांबेका आपेक्षिक गुरुत्व ११·०५ है, आपेक्षिक मापसे १०० से लेकर ०·०८३१६ अवस्थाभेदसे आपेक्षिक गुरुत्व में भिन्नता होती है। यह तांबेका आपेक्षिक गुरुत्व ८·००० है।

तांबेका स्वाद कसैला है, इसमें आविलता गुण है। तांबेको ज्यादा देर तक हवामें रखनेसे भी जो धूममें जमता है। यह चांदीसे कड़ा और अत्यन्त घातक है। पीट कर इसका इतना बारीक वरक बनाया जा सकता है, कि वह हवामें उड़ने लगता है। इससे तार भी बहुत महीन बनता है। ०·०८ इंच मोटे तार पर १०२·२६ पौण्ड वजन लटकाने पर भी वह टूटता नहीं। सर्दी या हवामें रखनेसे इस पर जङ्ग लग जाती है जिसे तांबेका कलङ्क कहते हैं। यह कलङ्क विषाक्त होता है। तांबेमें टीन मिला कर इसको और भी घातक बनाया जा सकता है किन्तु उससे इसकी भङ्ग-प्रवणता बढ़ती है। जो सही ९ भाग टीन मिलानेसे यह गलानेके लिए चोखा कठिन, घन और ध्वनि कर हो जाता है। तथा जङ्ग नहीं लगती। अतः टीनके मिलानेसे तांबेके द्वारा और भी अधिक कार्य होता है। ९ भागसे अधिक जितनी टीन मिलेगी उतनी ही उसकी भङ्ग-प्रवणता बढ़ेगी।

१। Speculum metal—तांबेके साथ [illegible] भाग टीन मिलानेसे जो धातु बनती है, उसमें आलोक प्रतिफलन करनेकी शक्ति बढ़ती है; इसलिए इसको स्पेकुलम् धातु कहते हैं। ग्रिनिका कहना है कि पहले इस धातुके दर्पण बनते थे। हमारे देशमें भी कांसेके दर्पण बनते देख पड़ते हैं। वर्तमानमें बहुत समय पूजा, विवाह आदि कार्योंमें कांसेका टुकड़ा (मलिन होने पर भी) दर्पणकी तरह काममें लाया जाता है।

२। Muntz's metal—जहाज और बड़ी बड़ी नावोंके नीचे यह धातु व्यवहृत होती है। १८३२ ई॰ में मि॰ जी एफ॰ मुण्टको इसका पेटेण्ट दिया गया था। ६० भाग तांबे और ४० भाग जस्तेसे यह धातु बनती है। ढाल कर इसकी बड़ी बड़ी चद्दरें बनाई जाती हैं। चद्दरोंके बन जाने पर उनको गन्धक द्रावकसे धो दिया जाता है। यह जहाजोंमें चोखी होती है, निखालिस तांबेकी चद्दरकी अपेक्षा इस धातुकी चद्दरें सदैव अच्छी तरह साधित होती है। तांबेकी अपेक्षा इसमें तला मढ़नेमें कम खर्च पड़ता है किन्तु युद्धके जहाजोंके लिए अब भी इसका व्यवहार नहीं होता।

३। Princes metal—८० भाग तांबेके साथ २० भाग जस्ता ढाल और खोटा मिला कर यह धातु बनाई जाती है। इसमें ब्रोंज धातुकी तरहकी रङ्गकी बनाई जा सकती है। ८३·४ भाग तांबा और १६·६ भाग जस्ता मिलानेसे इस धातु पर छेनी चला कर मूर्त्ति बनाई जा सकती है। इसका रङ्ग और नाम होता है।

४। Mosaic gold—बहुत थोड़े ताप पर समभागमें जस्ते और तांबेको मिला कर गलाया जाता है। उस गलित द्रव्यको जब घोंटा जाता है, घोंटते समय फिर उसमें थोड़ा जस्ता मिलाया जाता है। घोंटते घोंटते

अन्तमें उसका रंग बदल कर बिलकुल सफेद हो जाता है। उसके बाद ठण्ढा होने पर उसका रंग सुनहरो हो जाता है। इसोको Mosaic gold कहते हैं।

५। Mannheim gold—यह धातु भो प्रिन्सेस् धातुके समान है, पर उपादानके भागोंमें कुछ तारतम्य होता है।

६। Tombac—८४'५ भाग तांबा और १५'५ भाग जस्ता मिला कर वह धातु बनाई जाती है। यह कहना अत्युक्ति नहीं, कि इसके समान घातसह धातु और दूसरो नहीं है। इसका तार भो बहुत महोन और बढ़िया बनता है।

७। Immitation bronze—ये दो वस्तुएं भो प्रिन्सेस् धातुके समान हैं। भागोंमें इतना तारतम्य है। कि इसमें ६६ भाग तांबा पड़ता है और ३२ भाग जस्ता। इसका रंग साफ पोला है; इससे मूर्त्तियां बना करती हैं।

८। कांसा (Bell-metal or bronze) कांस्य देखो।

टोम्बक धातुको पोट कर उसमे ०३६०० इञ्च पतलो चद्दर बनाई जा सकतो है। इस तरहको पतलो चद्दरको "ओलन्दाजो धातु" (Dutch metal) कहते हैं।' ब्रोञ्ज़रंग और ब्रोञ्ज़-चूर्ण भो इसो ओलन्दाजो धातुको विरोजा और पानोके साथ पोस कर बनाया जाता है; कहीं कहीं तेलके साथ भो पोस लेते हैं।

तांबा अति पवित्र धातु होनेके कारण, हमारे देशमें देवपूजाके सम्पूर्ण बरतन आदि इसीसे बनते हैं, जैसे—ताम्रकुण्ड, घट, घटी, पुष्पपात्र, जलशङ्ख आदि। तांबेके पुष्पपात्रमें नाना प्रकारके नक्शे खुदे हुए होते हैं। हिन्दुओंका विश्वास है, कि कलिकालमें तांबेके पात्र पर रख कर भोजन करनेका निषेध है, किन्तु मुसलमान लोग प्रायः हमेशा तांबेका बरतना काममें लाते हैं। वे हंडा, डेगची, रकाबी वगैरह सभो बरतनों पर कलई चढ़वा लेते हैं। तंबाकू रखनेके लिए वे बड़े बड़े तांबेके हंडे काममें लाते हैं।

आयुर्वेद, एलोपाथिक, होमिओपाथिक, हकीमी और अवधौतिक चिकित्सा-प्रणालोमें नाना तरहसे औषधके लिए तांबेका व्यवहार होता है।

जो तांबा जवापुष्पको तरह लाल, स्निग्ध और कोमल है, जो आघातसे नष्ट नहीं होता। और जिसमें लोहा वा सोसा मिला नहीं रहता, वही तांबा उत्तम है और मारणके लिए उपयोगी है।

जो तांबा काला, रूखा, अत्यन्त स्वच्छ वा सफेद और आघातसे नष्ट हो जाता है, तथा जिसमें लोहा और सोसा मिला होता है, वह तांबा दूषित है। ऐसा तांबा मारणके लिए सम्पूर्ण अनुपयोगो है।

तांबेको शोधनविधि—तांबेका बहुत बारीक पत्र बना कर उसे आगमें जलावें। पोछे उसे ज्वलन्त अङ्गारवत् तप्त अवस्थामें तैल, तक्र, काजो, गोमूत्र और कुलथोका क्वाथ, इन सब द्रव्योंमेंसे प्रत्येकमें तोन तोन बार डुबाने पर तांबा विशुद्ध होता है।

अशोधित ताम्र विषसे भो ज्यादा अनिष्टकर है; क्योंकि विषमें तो सिर्फ एक हो प्रकारका दोष है और बिना शोधे हुए तांबेमें ८ प्रकारके दोष भरे हैं। अशोधित तांबेके सेवन करनेसे भ्रम, कै, दस्त, पसीना, उत्क्लेद, मूर्च्छा, दाह और अरुचि उत्पन्न होतो है। यह अष्टदोष-युक्त तांबा हो एक मात्र विष है।

ताम्रकी मारणविधि—तांबेकी पतली पतली पत्तियो को आगमें जलावें, फिर तोन दिन अम्लमें डुबो कर खरल में डालें और उसमें चतुर्थांश पारद डाल कर अम्लके द्वारा एक प्रहर तक घोंटे। पोछे खरलसे निकाल लें। फिर दूना गन्धक अम्ल द्वारा पोस कर उन ताम्र-पत्रोंको लेप कर गोलकाकृति करें तथा स्वरस (अदरख), हिलमोचिका वा पुनर्णवा पोस कर कल्क बनावें। उस कल्कके द्वारा उक्त गोलकके ऊपर दो अंगुल परिमित लेप दें। उसके बाद उस गोलकको एक पात्रमें स्थापन करें और वालुका द्वारा उस पात्रको भर कर उसका मुंह एक सरवेसे ढक दें। फिर मिट्टो, नमक और पानो एक साथ मिला कर पात्र और सरवेके बीचको सेंधको बन्द कर दें। पोछे चूल्हे पर चढ़ा कर चार प्रहर पर्यन्त अग्नि-के उत्तापमें पकावें। अग्निके उत्तापको क्रमशः बढ़ाते रहना चाहिये। इस तरह पाक करके, शीतल होने पर, गोलकको निकाल कर जिमोंकन्दके (ओलके) रसमें एक प्रहर तक घोंटें और फिर उसे ओलके भीतर भर दें।

उसके बाद उस शिशीके चारों तरफ एक अङ्गुल मोटी मिट्टी लेप कर गजपुटमें फूंक कर पाक करे। इस तरह ताम्र मारित होता है। यह मारित ताम्र वमन, विरेचन भ्रम, क्लम, अरुचि विदाह, स्वेद और उत्क्लेद को कभी भी नहीं होने देता।

मारित ताम्रके गुण—यह कषाय मधुर, तिक्त, अम्ल रस, कटु विपाक, सारक पित्तनाशक कफनाशक, शीत, व्रणरोपक लघु लेखन गुणयुक्त किञ्चित् रुक्ष तथा पाण्डु, उदर, अर्श, ज्वर, कुष्ठ, कास, श्वास, क्षय पीनस, अम्लपित्त शोथ, कृमि और शूलको नाश करनेवाला है।

असम्यक मारित ताम्रके सेवन करनेसे दाह, स्वेद, अरुचि, मूर्च्छा, क्लेद, विरेचन वमन और भ्रम उपस्थित होता है। (भावप्र०)

रसेन्द्रसारसंग्रहके मतसे ताम्रमें आठ प्रकारके दोष हैं। इसलिए ताम्रका शोधन करना आवश्यक है।

ताम्रशोधन—मदार और थूहरके दूधसे तांबेके पत्तोंको लेप कर, आगमें तपा कर सम्भालूके पत्तेके रसमें छोड़ देनेसे ताम्रका शोधन होता है।

मतान्तरसे ऐसा भी है, कि गोमूत्रमें ताम्रपत्र डाल कर एक प्रहर तक मृदु तेज आग पर पाक करनेसे तांबा शोधित होता है।

प्रकारान्तर—इमली गन्धकके साथ पारेको घृतकुमारीके रसमें घोंट कर तांबेके पत्तों पर पोते, फिर उसको भस्मयन्त्रमें चार पहर तक पकावें, शीतल होने पर उसका चूर्ण बना कर सब रोगोंमें प्रयोग करे। तांबेके पत्र पर कागजी नीबूका रस सेंधा नमक और गन्धकका लेप दे कर भस्म होने तक उसका पुटपाक करे। इस तरह ताम्रभस्म होता है।

किसीके मतसे—तांबेके पत्तोंको अम्ल खार और अम्लीरोंके रसमें एक दिन घोंट कर उन पर हिङ्गु और थूहरका दूध पोत कर बार बार तपावें और सम्भालूके रसमें निर्वाप करे। ऐसे ही इमली पारद सूत, घी और गन्धक मिला कर तीन बार पुटपाक करनेसे भस्म हो जायगी। यथाक्रम तीन पुट देवें।

शोधित ताम्रके गुण—अनुपान विशेषके साथ सेवन करनेसे क्षय कुष्ठ, पाण्डु, शूल, मेद, अर्श और वातरोग नष्ट होता है। एक रत्तीसे दो रत्ती तककी मात्रा वर्ष भर सेवन करनेसे मेद, मृत्यु और जरा नष्ट हो जाती है।

शोधित ताम्र उग्रता विषदोष, वमन, शोथ, उदरी, कृमि शूल आमवात ग्रहणी, अर्श और अम्लपित्त आदि नष्ट करता है। (रसेन्द्रसा०)

तांबा पञ्चा॰ म योगसे शुद्ध होता है। [illegible] (मनु०

ताम्रके पात्रमें भोजन न करना चाहिये। देवपूजा आदिमें ताम्रके पात्र ही प्रशस्त हैं, देवपूजामें ताम्र निर्मित पात्र ही व्यवहृत होते हैं।

२ कुष्ठभेद एक तरहका कोढ़। ३ रक्तवर्ण, लाल रंग। ४ शोणित, एक दैत्यका नाम। (भा ८।११।१९)

ताम्र—महिषासुरका एक प्रसिद्ध सेनापति। यह दानव इन्द्रप्रभृति देवोंके साथ घोरतर युद्ध करनेके बाद अन्तमें देवीके हाथसे निहत हुआ था।

(देवीभा० ५म स्कन्ध)

ताम्रक (स० क्ली०) ताम्र-स्वार्थे कन्। ताम्र, तांबा। ताम्र देखो।

ताम्रकण्टक (स० पु०) १ निशानवाम कण्टक वृक्ष विशेष एक प्रकारका पेड़। २ रक्तखदिर इस नाम और का पेड़।

ताम्रकर्णी (स० स्त्री०) ताम्रवर्णौ कर्णौ यस्याः बहुव्री० ङीप्। १ पश्चिमदिग्हस्तीकी पत्नी पश्चिम दिग्गजकी पत्नी अञ्जना। २ ठठेरा वह जो तांबेका बरतन बनाता हो।

ताम्रकार (स० पु० स्त्री० ताम्र करोति ताम्रधातुभिः पात्रादिकं निर्मिमीते कृ-अण्। वर्णसङ्कर जातिविशेष। इसके पर्याय—ताम्रिक, शौल्विक और ताम्रकुट्टक। इस जातिके विषयमें अनेक मतभेद है। किसीके मतसे आयोगव (बढ़ई) के औरस और वैश्याके गर्भसे इस जातिकी उत्पत्ति है।

“आयोगवेन विप्रायां ताम्रकारोऽभवत् ॥”

शूद्रके औरस और वैश्याके गर्भसे आयोगव जाति उत्पन्न हुई है। यह ताम्रकार (ठठेरा) जाति न नवशाख (नवीये) जातिके अन्तर्गत है और फिर किसीके मतसे

यह जाति वेश्या और ब्राह्मणके संभोगसे उत्पन्न हुई है। किसी तीमरेका मतानुसार विश्वकर्माके औरस और शूद्रके गर्भसे इस जातिका उत्पत्ति हुई है। ये नावेके बरतन बना कर अपनी जीविका निर्वाह करते हैं।

कांस्यकार देखो।

ताम्रकिलि (सं० पु०) लोहितवर्णका कीटविशेष, बीरबहुटी नामका कीड़ा।

ताम्रकुट्ट (सं० पु०-स्त्री०) ताम्रं कुट्टयति कुट्ट-अण्। १ ताम्रकार तमेरा। ताम्रकार देखो। २ तमाकूका पेड़।

ताम्रकुट्टक (सं० पु०) ताम्रं कुट्टयति कुट्ट-ण्वुल्।

ताम्रकार देखो।

ताम्रकुण्ड (सं० क्ली०) कर्म-ड ताम्रमयं कुण्डं। ताम्रमय जलाधार पात्रभेद, तांबेका बना हुआ एक प्रकारका बरतन। इसमें पूजाके समय जल गिराया जाता है।

ताम्रकूट (सं० पु० स्त्री०) ताम्रस्य कूटमिव। क्षुपविशेष तमाकू। तन्त्रके मतसे सम्बिदा, कालकूट ताम्रकूट, धुस्तुर (धतूरा), अहिफेन (अफीम), खर्ज्जरस, तारिका (ताड़ी), और तरिता (भांग, गांजा) ये आठ प्रकारके सिद्धद्रव्य हैं।

ताम्रकृमि (सं० पु०) ताम्रवर्णः कृमिः कीटः मध्यलो०। इन्द्रगोपकीट, बीरबहुटी नामका कीड़ा।

ताम्रगर्भ (सं० क्ली०) ताम्रगर्भ-इव उत्पत्तिस्थानं यस्य बहुव्री०। तुत्थ, तूतिया। यह तांबेसे उत्पन्न होता है।

तुत्थ देखो।

ताम्रचक्षु (सं० पु०) ताम्रचक्षुषी यस्य बहुव्री०। लाल नेत्रवाला, कपोत, कबूतर।

ताम्रचूड़ (सं० पु०-स्त्री०) ताम्रा रक्ता चूड़ा यस्य बहुव्री०। १ कुक्कुट, मुरगा। मुरगा भीत हो कर 'कुकरू कूं' शब्द करता है। रातमें यदि वह उक्त शब्द छोड़ कर दूसरे तरहका शब्द करे तो भय होता है। किन्तु रात्रिके अवसान होने पर स्वस्थ चन्द्रचूड़ तारस्वरमें स्वाभाविक शब्द करनेसे राजाका राज्य और देशकी वृद्धि होती है।

(बृहत्स० ८६।२४) कुक्कुट देखो।

२ कुक्कुरद्रुम, कुकरौंधा नामका पौधा। ३ कुमारानुचर मातृभेद, कार्त्तिकेयके एक अनुचरका नाम।

"सुभगा लम्बिनी लम्बा ताम्रचूड़ा विकासिनी"।

(भारत ४७ अ०)

(त्रि०) ४ रक्त शिखायुक्त, जिसकी चोटी लाल हो।

ताम्रचूड़भैरव (सं० पु०) भैरवभेद।

ताम्रजाक्ष (सं० पु०) सत्यभामाके गर्भसे उत्पन्न श्रीकृष्ण के एक पुत्रका नाम। (हरिवंश १६२ अ०)

ताम्रतनु (सं० त्रि०) जिसके शरीरका रंग तांबेके जैसा हो।

ताम्रतुण्ड (सं० पु०) एक प्रकारका बन्दर। इसके मुखका रंग ताम्रवर्ण होता है।

ताम्रत्रपुज (सं० पु०) ताम्रञ्च त्रपु च ताभ्यां जायते जन ड। कांस्य, कांसा।

ताम्रत्व (सं० क्ली०) ताम्रस्य भावः ताम्र-त्व। ताम्रका भाव, रक्तवर्ण।

ताम्रदुग्धा (सं० स्त्री०) ताम्रं रक्तं दुग्धं क्षीरं रसो यस्याः बहुव्री०। गोरखदुग्धा, गोरखदुद्धी, अमरसंजीवनी।

ताम्रद्रु (सं० पु०) रक्तचन्दन।

ताम्रद्वीप (सं० पु०-क्ली०) दक्षिणदेशस्थित द्वीपविशेष। दक्षिणदिक् विजयके समय सहदेवने यह द्वीप जय किया था। ताम्रपर्णी देखो।

ताम्रधातु (सं० पु०) ताम्र, तांबा। ताम्र देखो।

ताम्रधूम्र (सं० त्रि०) कृष्ण और रक्तवर्ण, तमेड़ा, लाल रंग।

ताम्रध्वज (सं० पु०) रत्ननगरके राजा मयूरध्वजके पुत्र। इन्होंने युद्धमें अर्जुन और श्रीकृष्णको पराजय किया था।

ताम्रलिप्त और मयूरध्वज देखो।

ताम्रपक्षा (सं० स्त्री०) सत्यभामाके गर्भसे उत्पन्न श्रीकृष्णकी एक कन्याका नाम। (हरिवंश १६२ अ०)

ताम्रपक्षी (सं० पु०) श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम।

ताम्रपट्ट (सं० क्ली०) ताम्रनिर्मितं पट्टं मध्यलो०, कर्मधा०। ताम्रमय लेखनपत्रभेद, ताम्रशासन। पूर्वकालमें राजा धर्मविद् ब्राह्मणोंको ताम्रपत्रमें भूमिका परिमाणादि समस्त विवरण लिख कर स्वमुद्रा चिह्नित करके प्रदान करते थे, ब्राह्मण पुरुषानुक्रमसे वह भूमि भोग करते थे। इसके बाद कोई भी अन्य राजा उस भूमिका कर नहीं लेते थे। इस तरहको भूमिदान करनेको

अपेक्षा परदत्त भूमिकी रक्षा करना अनन्त पुण्यजनक है। भारतवर्षके सब स्थानोंसे ही इस तरहके सैकड़ों ताम्रशासन आविष्कृत हुए हैं। इनमें भारतीय राजाओंके व शासनके और इतिहास बहुत कुछ स्थिर होता है।

ताम्रपत्र (सं॰ पु॰) ताम्र इव पत्र यस्य बहुव्री॰। १ कोकनाव, एक प्रकारका साग। २ रक्तवर्ण पत्रयुक्त शाक, एक प्रकारका पेड़ जिसके पत्ते लाल होते हैं। कर्मधा॰। ३ ताम्रमय लिखनपत्र, तांबेकी चद्दरका टुकड़ा। ४ रक्तवर्ण नेत्र पत्रक कामरूपकी नदी [illegible]।

ताम्रपल्लव (सं॰ पु॰) अशोक देखो।

ताम्रपर्ण—सिंहल द्वीपका नामान्तर (Taprobane)। सिंहल देखो।

ताम्रपर्णी—मन्द्राजके अन्तर्गत तिन्नेवेलि जिलेकी एक नदी। इसका स्थानीय नाम "पत्रनै" है। टलेमी और पेरिप्लस इसका उल्लेख कर गये हैं। यह पश्चिम घाट पर्वतसे निकल कर दक्षिण-पूर्वकी ओर बहती हुई श्रमंटैकी तक चली गई है। फिर वहांसे उत्तर-पूर्वकी ओर होती हुई तिन्नेवेलिसे पालमकोटा तक और वहांसे फिर कभी दक्षिणकी ओर कभी पूर्वकी ओर होती हुई मनारउपसागरमें जा गिरी है।

जहांसे यह नदी निकली है, वहां किनार आदि इसकी अनेक उपनदियां हैं। ताम्रपर्णीकी लम्बाई ७० मीलके लगभग है। इस नदीसे तिन्नेवेलि जिलेकी प्रायः १८५००० बीघा जमीन सींची जाती है। जल पहुंचानेकी सुविधाके लिये इसमें आठ पुल दिये गये हैं। इनमेंसे सात तो हिन्दूराजाओंके समयके हैं और आठवां जो जोर्ठे कुरुम् नामक स्थानमें है उसे इटिश गवर्मेण्टने १८६८ ई॰में बनाया है। यह पुल समुद्रतलसे ९०० फुट ऊंचा है। जब नदीमें बाढ़ अधिक आ जाती है, तब ये सब पुल डूब जाते हैं। इसके किनारेका कोलकै नामक स्थान अभी समुद्रतीरसे ३ कोस हट गया है। किन्तु टलेमीका वर्णन पढ़नेसे मालूम पड़ता है कि यह स्थान समुद्रवर्ती एक बन्दर था। अभी यह ग्रामके रूपमें परिणत हो गया है। तामिल भाषामें कोलकैको अब भी [illegible] हैं। कायल नामक एक दूसरा छोटा ग्राम है जो समुद्रके किनारेसे दो मीलकी दूरी पर अवस्थित है। मार्कोपोलोने इसी स्थानको कैल बतलाया है।

रामायण, महाभारत तथा अन्यान्य पुराणोंमें इस नदीका उल्लेख है। प्रियदर्शी अशोकके १३वें अनुशासनमें इस नदीका जो उल्लेख है उसमें लिखा है, कि दक्षिणमें चोड़गण और पाण्ड्यगण सत्यपुत्रो (ताम्रपर्णी) तक राज्य करते थे, उस समय वहां बौद्धधर्मका प्रभाव जोरोंसे फैला हुआ था।

जहांसे यह नदी निकली है वहीं ताम्रपर्णी नामकी एक और नदी है जो पश्चिमकी ओर बहती हुई त्रिवाङ्कुर राज्यमें प्रवेश करती है।

२ बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत बेलगाम जिलेकी एक छोटी नदी। यह चिखलि नामक स्थानमें घाटप्रभा नदीसे जा मिली है।

३ सिंहल द्वीपकी एक नगरी। इस नगरीके कारण समूचे सिंहलका ताम्रपर्ण नाम पड़ा है। ४ मञ्जिष्ठा, मजीठ। ५ सरोवर, तालाब, बावली।

ताम्रपर्णीय (सं॰ पु॰) सिंहलद्वीपवासी बौद्ध।

ताम्रपल्लव (सं॰ पु॰) ताम्राणि पल्लवानि यस्य बहुव्री॰। अशोकवृक्ष। इसके संस्कृत पर्याय—हेमपुष्प, वञ्जुल, कङ्केलि, पिण्डपुष्प, गन्धपुष्प और नट। (भावप्रकाश)

ताम्रपाकी (सं॰ पु॰) पच्यते इति पाकः पच्-घञ्, ताम्रः रक्तवर्णः पाकः परिपक्वतास्थान इति इनि। गर्दभाण्ड वृक्ष, पाकरका पेड़।

ताम्रपात्र (सं॰ क्लो॰) ताम्रनिर्मित पात्र कर्मधा॰। ताम्रमय पात्र, तांबेका बरतन। ताम्रपात्रमें तर्पण करना प्रशस्त है। किसी किसी कार्यमें ताम्रपात्रमें ही तर्पण करना पड़ता है। ताम्रपात्रमें भोजन करना निषिद्ध है। ताम्रपात्रमें मधु और दुग्ध रखनेसे वह मद्यतुल्य हो जाता है।

"नारिकेलजलं कांस्ये ताम्रपात्रे स्थितं मधु।
गव्यं च ताम्रपात्रस्थं मद्यतुल्यं घृतं विना॥"

(स्मृतिसार)

ताम्रपात्रमें घृत रखना प्रशस्त है। ताम्रपात्रमें दधि और क्षीर दूषणीय है किन्तु द्रव्यान्तरयुक्त क्षीर और घृत युक्त दधि दूषणीय नहीं है। ताम्रका पात्र प्रशस्त है। ताम्रपात्रके अभावमें मृत्पात्र ही हितकर है।

"जलपानन्तु ताम्रस्य तदभावे मृतोहिनम्।" (भावप्र०)

२ ताम्रशासन, ताँबेकी चद्दरका एक टुकड़ा जिस परप्राचीनकालमें अक्षर खुदवा कर भूमि इत्यादिका दानपत्र लिखते थे।

"ताम्रपात्रे कुलं लेख्य शासनानि बहूनि च।
एतेभ्यो दत्तवान् पूर्वं कलौ बल्लालसेनकः।"
(हरिमिश्रकारिका)

ताम्रपादी (सं० स्त्री०) हंसपदी लता, लाल रंगका लज्जालु।

ताम्रपुष्प (सं० पु०) ताम्रवर्णं पुष्पं यस्य बहुव्री०। रक्तकाञ्चन पुष्पवृक्ष, लालफूलका कचनार। इसके संस्कृत पर्याय—कोविदार, चमरिक, कुद्दाल, युगपत्रक कुण्डली स्मन्तक और सल्पकेशरी। २ भूमिचम्पक। (त्रि०) ३ रक्तपुष्पयुक्त मात्र, जिसमें लाल फूल लगते हों। (क्लो) ताम्रं पुष्पं कर्मधा०। ४ रक्तपुष्प, लाल फूल।

ताम्रपुष्पिका (सं० स्त्री०) ताम्रवर्णं पुष्पं यस्याः बहुव्री०। कप्, टापि अतइत्वं। रक्तत्रिवृत्, लालफूलका निसोथ।

ताम्रपुष्पी (सं० स्त्री०) ताम्रं पुष्पं यस्याः बहुव्री० स्त्रियां ङीष्। २ धातकीपुष्प, धवका पेड़। पर्याय—धातु, पुष्पी, कुञ्जरा, सुभिक्षा, बहुपुष्पी और वह्निज्वाला। (भावप्र०)

२ पाटलावृक्ष, पादरका पेड़। ३ नागरङ्ग वृक्ष, नारङ्गीका पेड़। ४ श्यामात्रिवित्।

ताम्रप्रयोग—औषधविशेष, एक प्रकारकी दवा। इसकी प्रस्तुतप्रणाली ८ तोले परिमित ताम्रपत्रको दग्ध कर यथाक्रमसे आकन्दके गोंद सम्हालू रस, गोखुरके रस और सोनके गोंदसे तीन बार प्रक्षिप्त कर उसे शोधन करना पड़ता है। बाद पारा ४ तोला और गन्धक ८ तोला इन दोनोंकी कज्जली करते हैं और कज्जलीके अर्द्धभागको जम्बीरी नीबूके रसमें डुबो कर उसे पूर्वोक्त ताम्रपत्र लिप्त करते हैं। बाद अन्धमूषामें रख कर ५ पुट देना चाहिये।

इसे प्रतिदिन २ रत्ती मधु और घृतके साथ सेवन करना चाहिये। इससे सब प्रकारके भगन्दर और क्षत दूर हो जाते हैं। (भैषज्य रत्ना० भगन्दराधिकार)

ताम्रफल (सं० पु०) ताम्रं रक्तवर्णं फलं यस्य बहुव्री०। १ अङ्कोट वृक्ष, टेरा, ढेरा। (त्रि०) २ रक्तफलयुक्त वृक्षमात्र, जिसमें लाल फल लगते हों। (क्लो०) ताम्रं फलं कर्मधा०। ३ रक्त फल।

ताम्रफलक (सं० क्लो०) ताम्रनिर्मितं फलकं मध्यलो० कर्मधा०। ताम्रनिर्मित पट्ट, ताँबेकी चद्दरका एक टुकड़ा। ताम्रपट्ट देखो।

ताम्रमुख (सं० त्रि०) ताम्रं मुखं यस्य बहुव्री०। अरुण-वदन जिसका मुख लाल हो।

ताम्रमूला (सं० स्त्री०) ताम्रं मूलं यस्याः बहुव्री० अजादेराकृतिगणत्वात् टाप्। १ दुरालभा, जवासा, धमासा। २ लज्जालु, छुईमुई। ३ कच्छुरा वृक्ष, किवाँच, कौंच। ४ मञ्जिष्ठा, मजीठ। ५ रक्तमूलक वृक्षमात्र, वह वृक्ष जिसकी जड़ लाल हो। (क्लो) ताम्रं मूलं कर्मधा०। ५ रक्तमूल, लाल जड़।

ताम्रमृग (सं० पु०) ताम्रः रक्तवर्णः मृगः कर्मधा०। लोहितवर्ण हरिण, लाल रंगका हिरन।

ताम्रयोग (सं० पु०) ताम्रस्य योगः, ६-तत्। चक्रदत्तोक्त औषधविशेष एक देशी दवा। प्रस्तुत प्रणाली—पारद १ मासा और १ मासा गन्धक, इनका यथाविधि शोधन और मर्दन करके कज्जली बनावें, पीछे उस कज्जलीको एक दृढ़ और नूतन मृत्पात्रमें रख कर, उसमें चौलाईको जड़का चूर्ण २ मासा डालें, बादमें उसको १५ मासे कण्टकवेध-योग्य नेपालदेशीय ताम्रपत्रकी अमरोलीके रसमें शोधित करके पात्रस्थ औषध पर ढक दें तथा लेई बना कर ताम्रपत्रको मृत्तिका पात्रके साथ इस तरह जोड़ दें कि जिससे उसको भेद कर नीचे बालू आदि न घुसने पावे। फिर उस पात्रको बालूसे भर देवें। तत्पश्चात् उस पात्रके नीचे एक घण्टे तक आग जलावें, फिर पात्रको उतार लें।

शीतल होने पर पात्रके उपरिस्थित बालूको निकाल लें और निम्नस्थ ताम्रपात्र, कज्जली आदिको उठा कर एकत्र खलमें घोट लें।

उक्त पेषितचूर्ण १ रत्ती, त्रिफलाचूर्ण, त्रिकटुचूर्ण और विडङ्गचूर्ण एक एक रत्ती, इनको एकत्र मिला कर घी और मधुके साथ चाट कर ऊपरसे ठण्ढा पानी पीना चाहिये। उक्त द्रव्योंको १ रत्तीसे ले कर १२ रत्ती

तक मात्रा एक एक रत्ती बढ़ाना चाहिये। पीछे १२ दिनके बादसे एक एक रत्ती घटा कर सेवन करे। उस औषधके साथ त्रिफला और त्रिकटुचूर्णकी मात्रा भी एक एक रत्ती बढ़ाई जाती है। परन्तु त्रिकटुकी मात्रा बरा बर एकसी रखनी चाहिये। यदि रोगीको कोष्ठबद्धता हो और उसमें विरेचन आवश्यक समझें, तो त्रिवृत्चूर्ण २ रत्ती देवें; इससे कोठा साफ हो जायगा। यह ताम्रयोग यकृत्प्लीहारोगका एक उत्तम औषध है। इससे अम्लपित्त, शूल और मूत्ररोग विनष्ट होता है, बल और वर्णकी वृद्धि हो कर अग्निकी वृद्धि होती है।

(भावप्र० मध्यखण्ड)

ताम्रसायनी (स० स्त्री०) ताम्रवत् रसनिर्यासयुक्त अयनी, ६ तत्। गोरक्षदुग्ध, एक प्रकारका पेड़ जिसका रस दूधसा सफेद होता है।

ताम्रलिप्त—एक अति प्राचीन जनपद। महाभारत भीष्म पर्व (६।५४), हरिवंश, ब्रह्माण्डपुराण, भवव परिशिष्ट आदि पौराणिक ग्रन्थोंमें इसका उल्लेख है। अभिधानको त्रिकाण्डशेष और हेमचन्द्रके अभिधानचिन्तामणिमें इसके कई एक पर्याय दिये गये हैं—

तमोलिप्ति, ताम्रलिप्त, वेलाकूल, तमालिका, ताम्रलिप्ता, दामलिप्त, तमालिनी, विष्णुगृह।

जैमिनिभारतमें रत्नपुर और महाकवि काशीदासके महाभारतमें रत्नावतीपुर नामसे इसका उल्लेख है। इसका आर्यीय एक प्राचीन नाम रत्नाकर भी है। वर्त-मान नाम तमोलुक तमलुक वा तामलुक है।

पाश्चात्य भौगोलिक टलेमीने तामलितिस् (Tamlites) एवं सहावंश और द्राविड़ ग्रन्थोंमें ताम्रलिप्ति नामसे इस स्थानका उल्लेख किया है। दोनों ही शब्द संस्कृतसे उत्पन्न हैं।

चीन-दूत मेगास्थिनिसने गङ्गाके उस पार तालुक्ति (Taluctae) नामकी एक जातिका उल्लेख किया है। अनुवादक मैक्रिण्डल साहबके मतसे यह शब्द ताम्रलिप्त वासियोंका निर्देशक है।*

ताम्रलिप्तको नामोत्पत्तिके विषयमें बहुतसे बहुतसी बातें कहते हैं, पर अभी तक उनका कोई निर्णय नहीं हुआ कि क्यों यह नाम पड़ा। ब्रह्मपुराणमें लिखा है। दिग्विजय प्रकाशमें नामके विषयमें एक अद्भुत उपाख्यान दिया गया है उसे यहां हम उद्धृत करते हैं—

जिस समय वृन्दावनमें वासुदेव राक्षसोंका वध कर रहे थे, उस समय उनको इच्छासे चन्द्र सूर्यका आगमन हुआ था। पीछे सूर्यदेवने सारथिसे कहा—'मैं भारतमें दिन भर था तुम उदयाचलसे शीघ्र आओ।' सारथिके रश्मि हीन कर अश्वित होने पर उस पर ज्योत्स्ना पड़ी, फिर अरुण पूरीभूत हो कर समुद्रप्रान्तमें लिप्त हो गया। जिस स्थानमें लिप्त हुए थे, वह स्थान ताम्रलिप्तके नामसे प्रसिद्ध हुआ।† बादमें राक्षसोंका अवसान होने पर दिवाकरने उसका उद्धार किया और वह स्थान धनधान्यवान् हो गया।

प्राचीन और आधुनिक अवस्थान।—महाभारतके पढ़नेसे मालूम होता है कि यह जनपद समुद्रके किनारे और कलिङ्गके समक्ष था। पालि महावंश ग्रन्थ पढ़नेसे ज्ञात होता है, कि ईसाके जन्मसे ३०० वर्ष पहलेसे ही ताम्रलिप्त नगर समुद्रवर्ती एक बन्दरके नामसे प्रसिद्ध था। उस समय सिंहलके राजाने उस बन्दरमें जहाज पर चढ़ कर किया था। उस बन्दरसे ही बौद्धोंके पवित्र बोधि-द्रुम सिंहलद्वीपको भेजे गये थे जिनके लिए समुद्रके किनारे खड़े हो कर अशोक, ब्राह्मणोंने विलाप किया था। दाठावंशमें लिखा है कि दन्तकुमार और हेममाला इस प्राचीन बन्दरसे भगवान बुद्धके दन्त सिंहलमें ले गये थे। इन्द्रवंशका उपाख्यान पढ़नेसे यह मालूम होता है कि वे यहीं वणिक्, यहां जहाज पर चढ़ते थे। ईसाकी ५वीं शताब्दीमें चीन-परिव्राजक फा हियान् दो वर्ष तक यहां रहे थे और बौद्धधर्मग्रन्थादिको प्रतिलिपि ले कर समुद्रपथसे सिंहल गये थे।§ उनके भी दो सौ

---

* Indian Antiquary Vol. VI, p. 340 ff.

† ज्योत्स्नाप्रतिहतैरश्वैर्ऋषिर्णा ... भास्कर।
तताम्रम्रान्तभूतो च निम्नभावनिशोदितः ॥ ५९ ॥
अरुणस्य सारथेश्च अभवत् पुनरेव ...।
ताम्रलिप्तमतो लोके गतवन्ति वृन्दवासिन्ः ॥ ६० ॥

(दिग्विजयप्रकाश)

‡ महावंश ११वां और १९वां परिच्छेद।

§ Beal's Fa Hian.

वर्ष बाद चीन-परिव्राजक युएनचुआंगने यहांसे जहाज पर आरोहण किया था, किन्तु उस समय नगरसे सागर-स्रोत दूर हट गया था। *

पाण्डवविजय नामक संस्कृत भौगोलिक ग्रन्थमें लिखा है—

"ताम्रलिप्तदेशश्चैव भागीरथ्यास्तटे नृप।
त्रियोजनपरिमितो गावो यत्र च भूरिशः॥"

भागीरथीके तट पर उत्तरभागमें तीन योजन परिमित ताम्रलिप्त देश है, जहां बहुत गायें हैं।

इससे ज्ञात होता है, कि किसी समय गङ्गाकी किसी शाखाके निकट ताम्रलिप्त नगर अवस्थित था।

दो सौ वर्ष से पहलेके लिखे हुए दिग्विजयप्रकाशमें लिखा है—

"मण्डलघट्टदक्षिणे च हिजलस्य च उत्तरे।
ताम्रलिप्तप्रदेशश्च वणिकस्य निवासभूः॥
द्वादशयोजनैर्युक्तः रूपानद्याः समीपतः॥"

मण्डलघाटके दक्षिण और हिजलीके उत्तरमें वणिकोंकी वासभूमि ताम्रलिप्त प्रदेश १२ योजन विस्तृत और रूपा अर्थात् रूपनारायण नदीके निकट अवस्थित है।

दिग्विजयप्रकाशके पढ़नेसे मालूम होता है, कि उस समय ताम्रलिप्त नगर समुद्रकूलसे बहुत दूर था। हां यह कहा जा सकता है कि कभी कभी बाढ़का पानी वहां तक आ जाया करता था।

इस समय ताम्रलिप्त नगर समुद्रके किनारे नहीं, बल्कि समुद्रसे तीस कोसकी दूरी पर अवस्थित है। तमलुक शब्दमें वर्तमान अवस्थाका वर्णन देखो।

पुरातत्त्व—ताम्रलिप्त अति प्राचीन जनपद है। वेद, उपनिषद् अथवा रामायणमें इसका कोई उल्लेख न रहने पर भी महाभारत एवं प्रधान प्रधान सभी पुराणोंमें इसका उल्लेख पाया जाता है। रामायणमें ताम्रलिप्तके निकटवर्ती जनपदका उल्लेख है, किन्तु इस प्रसिद्ध स्थानका कुछ उल्लेख न रहनेके कारण अनुमान किया जाता है, कि उस समय यह स्थान समुद्रके गर्भमें होगा और महाभारतके समय वहांसे समुद्र हट जानेसे यह जनपदके रूपमें परिणत हुआ होगा। कोई कोई लिखते हैं, कि उस समय यह स्थान कलिङ्गराज्यके अन्तर्गत था। परन्तु—

"कालिङ्गास्ताम्रलिप्ताश्च पत्तनाधिपतिस्तथा।"
(भारत आदि १८६।११)

महाभारतके इस वचनके अनुसार यही प्रतीत होता है कि कलिङ्ग और ताम्रलिप्त विभिन्न राजाके अधीन भिन्न भिन्न देश थे। द्रोणपर्वमें लिखा है कि यहां क्षत्रिय राजा भी परशुरामके निशित शराघातसे निहत हुए थे। (भारत द्रोण ७०।११)

सभापर्वमें ऐसा लिखा है, कि राजसूययज्ञके भीमसेनने यहांके राजाओंको पराजित कर वसूल किया था।
(सभाप० ३९ अ०)

कुरुक्षेत्रके महासमरमें यहांके वीरोंने दुर्योधनका पक्ष लिया था। उनको म्लेच्छ कहा गया है।
(द्रोणप० ११८।१५)

उपर्युक्त विवरणके पढ़नेसे यही मालूम होता है, कि महाभारतके समय यहां म्लेच्छोंका राज्य था। जैमिनीय आश्वमेधिक पर्वमें लिखा है—

जिस समय मयूरध्वजके पुत्र ताम्रध्वज पिताके अश्वमेधीय मुक्त अश्वकी रक्षामें थे, उस समय अर्जुनका घोटक उनके घोड़ेके पास आया। ताम्रध्वजके सेनापति बहुलध्वजने उस घोटकके ललाटस्थ पत्रको पढ़ कर ताम्रध्वजसे उसका हाल कहा। शीघ्र ही श्रीकृष्ण व्यूहकी रचना करके अश्वके उद्धारके लिए अग्रसर हुए। अर्जुन, अनुशाल्व, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, हंसध्वज, सात्यकि, यौवनाश्व, बभ्रुवाहन, आदि महायोद्धा भी उनके साथ थे। ताम्रध्वजके साथ इनका घोरतर युद्ध हुआ। महावीर ताम्रध्वजने एक एक करके सबको परास्त कर दिया, औरको तो बात क्या, श्रीकृष्ण और अर्जुन भी मूर्च्छित हो गये। मणिपुरमें यह घटना हुई थी। दैवयोगसे मयूरध्वजका यज्ञीय अश्व और उसके साथ अर्जुनका घोड़ा भी रत्नपुर (ताम्रलिप्त)की तरफ दौड़ा। ताम्रध्वज भी कृष्णार्जुनको मूर्च्छित अवस्थामें छोड़ कर घोड़ेके पीछे दौड़ते हुए अपने पिताकी राजधानीमें उपस्थित हुए। उन्होंने पितासे सब हाल कह सुनाया। मयूरध्वज

* Beal's Records of the Western World.

पुत्रके मुँहसे कृष्णार्जुनकी अपमानकी बात सुन कर नितान्त दुःखित हुए। उन्होंने पुत्रको बहुत कुछ बुरा भला कहा और भर्त्सना की। ज्वर मूर्च्छा दूर होने पर ज्यों ही कृष्ण वृद्ध ब्राह्मणके वेशमें और अर्जुन बालकके वेशमें मयूरध्वजके पास पहुँचे। वहां पहुँच कर श्रीकृष्णने छलनापूर्वक मयूरध्वजसे कहा कि 'आपके एक पुत्रको सिंहने पकड़ लिया है; यदि राजा उसे अपना आधा शरीर प्रदान करें, तो आपके पुत्रको छोड़ सकता है।' धार्मिकवर मयूरध्वज इस पर राजी हो गये। उनकी स्त्री कुमुद्वती और पुत्र ताम्रध्वज दोनों ही अपना अपना शरीर अर्पण करनेके लिए अग्रसर हुए थे। किन्तु राजाने उनको बहुत समझा-बुझा कर अपना शरीर विदारण करनेके लिए आदेश दिया। भार्या और पुत्र दोनोंने मिल कर आरेसे राजाका मस्तक विदीर्ण कर डाला। उस समय वासुदेवने मयूरध्वजको सम्बोधन करके कहा था—"परके उपकारके लिए जिनका शरीर और धन है, वे ही यथार्थमें मनुष्य हैं। जो शरीर वा जो धन दूसरेके उपकारमें नहीं आता, उसकी दशा सर्वदा शोचनीय रहती है।"

वासुदेव मयूरध्वजके निःस्वार्थ आत्मोत्सर्गसे प्रसन्न हुए; उन्होंने अपने असली रूपमें दर्शन दिये। नरनारायणका रूप देख कर मयूरध्वजने अपनेको कृतकृत्य समझा। अन्तमें वे धन-जन-राज सबको त्याग कर श्री कृष्णके शरणापन्न हुए। (१)

तमलुकमें अब भी ऐसा प्रवाद प्रचलित है कि परम-वैष्णव राजा मयूरध्वजने सर्वदा नर-नारायणको कृष्णार्जुनके रूपमें रखने और उन्हें देखनेके उद्देश्यसे एक बड़ा भारी मन्दिर बनवा कर उसमें दोनोंकी मूर्तियां स्थापित की थीं जो अब भी जिष्णुनारायणके नामसे प्रसिद्ध हैं। बहुत दिन हुये, वह प्राचीन मन्दिर रूप-नारायणके गर्भशायी हो गया है। इस समय वे मूर्तियां एक दूसरे मन्दिरमें रक्खी हैं। वर्त्तमान मन्दिर चार पांच सौ वर्षसे ज्यादा प्राचीन नहीं होगा।

(१) जैमिनिभारत ४१से ४६ अध्याय। बंगला काशीदासी महाभारतमें भी यह बात है, किन्तु मूल भारतमें इसका आभो-निशान नहीं है।

ताम्रलिप्तमाहात्म्यमें लिखा है—तमोलिप्त तीर्थ जीवलोकका अतिप्रिय स्थान है। श्रीकृष्णने स्वयं अर्जुनसे कहा है कि "हे अर्जुन! तमोलिप्तसे प्यारा स्थान मेरा दूसरा नहीं है। लक्ष्मी जैसे मेरे वक्षःस्थलको नहीं छोड़ सकती वैसे ही मैं भी तमोलिप्तको नहीं छोड़ सकता। हे कौन्तेय! तुम निश्चय समझना, काल पाकर मैं और तुम तुमसे सब कुछ छोड़ सकता हूं पर तमो-लिप्तको कभी भी नहीं छोड़ सकता।"

वर्त्तमानमें जिष्णुनारायणका मन्दिर, वर्गभीमा देवी और कपालमोचनतीर्थ अति प्रसिद्ध है। ताम्र-लिप्तमाहात्म्यमें लिखा है—कपालमोचनतीर्थमें स्नान करनेसे जिष्णुनारायण और वर्गभीमाके दर्शन करनेसे पुनर्जन्म नहीं होता। इस तरहके बहुतसे माहात्म्य सूचक विवरण उक्त माहात्म्यग्रन्थमें वर्णित हैं।

जैनग्रन्थमें भी ताम्रलिप्तका उल्लेख है। सुप्रसिद्ध जैनाचार्य जिनसेनस्वामीने स्वरचित आदिपुराणमें ताम्र-लिप्त नगरका उल्लेख किया है।

इस प्रकार बहुत समयसे हिन्दू, जैन और बौद्धोंमें प्रसिद्ध होने पर भी बहुत दिनोंसे ताम्रलिप्तकी पुरानी महासम्पत्ति जाती रही है। अब वहां वैसे मन्दिर नहीं रहे। हिन्दू तीर्थयात्री इसे तीर्थ समझ कर यात्राके लिए नहीं आते।

ताम्रलिप्तकी पूर्व समृद्धि क्यों और कैसे विलुप्त हुई, इस विषयमें दिग्विजयप्रकाश नामक संस्कृत भौगो-लिक ग्रन्थमें एक उपाख्यान लिखा है, जो नीचे लिखा जाता है।

कायस्थवंशमें परद्धार नामक एक महापापिष्ठ राजा उत्पन्न हुए थे जो ताम्रलिप्त और कामकोटाका शासन करते थे। उन्होंने बहुत दूरदेशोंसे वैदिक ब्राह्मणों को बुला कर सोमादेवीके प्रासादमें वास कराया था। दैवयोग किसी ब्राह्मणने आकर उनसे १०० भर चांदी मांगी। राजा परद्धारने पूछा—"आप कहांसे आये हैं और क्यों धन मांग रहे हैं?" ब्राह्मणने उत्तर दिया—'आभीरोंके उत्तरमें कौशिकीनदीके किनारे माडवपुरका मैं रहनेवाला हूं और सनाढ्योंमें मेरा जन्म है। मुझे तीन विवाह करने होंगे। यदि तुम अपने कन्याको

शान्त करना चाहो, तो इसी समय मुझे एक लाख मुद्रा दे दे।" राजाने ब्राह्मणको असङ्गत बातको सुन कर उन्हें 'दूर दूर' कर निकाल बाहर किया। ब्राह्मणने राजाको शाप दिया कि, 'तू निर्वंश हो जा और आजसे ताम्रलिप्तकी शस्यशाली भूमि समुद्रके जलसे प्लावित होती रहे। यह स्थान क्षारभूमिमें परिणत होवे। यहांके अधिवासी क्रियाहीन, श्लीपद तथा उदररोगमें दुःख पावें। कोई भी यहां सुखी न होवें। कलिके ४५०० वर्ष बीतने पर यहां म्लेच्छोंका आधिपत्य होगा और भीमादेवी भी अपने धामको चली जायगी।' (दिग्विजयप्रकाश, १०१-१०३)

इस समय कलिको प्रारम्भ हुए करीब ५०२२ वर्ष हुए हैं। यदि दिग्विजय प्रकाशकी बात ठीक है, तो मानना पड़ेगा कि ५२२ वर्ष हुए भीमादेवी अन्तर्हित हो गई हैं, अब सिर्फ उनकी मूर्तिमात्र पड़ी है।

यहां कैवर्त्त जातिका ही अधिक वास है। ब्राह्मण और कायस्थ यहां बहुत ही कम रहते हैं। यहांके ब्राह्मण भी हीनावस्थामें पड़े हैं। शायद इसीलिए दिग्विजयप्रकाशके ताम्रलिप्त-विवरणमें ऐसा लिखा है—

"प्रायो मानकविप्राश्च बभूवः पतिताः द्विजाः।
कैवर्तसदृशाः प्रायः कृषिकर्मरताः सदा॥"

वर्गभीमाके मन्दिरके ऊपर म्लेच्छोंका लक्ष्य था, यह बात वहांके बादशाही पञ्जोंके देखनेसे मालूम होती है।

पूर्वकालके ताम्रलिप्तके राजाओंका धारावाहिक विवरण नहीं मिलता। बहुत दिन हुए, यहांके प्राचीनतम राजवंशका नाश हो गया है। वर्तमान राजवंशके पुत्रादिक्रमिक धारावाहिक तालिका इस प्रकार है—

१ विद्याधर राय	११ शम्भूचन्द्र राय
२ नीलकण्ठ राय	१२ दीपचन्द्र राय
३ जगदीश राय	१३ दिव्यसिंह राय
४ चन्द्रशेखर राय	१४ वीरभद्र राय
५ वीरकिशोर राय	१५ लक्ष्मणसेन राय
६ गोविन्ददेव राय	१६ रामचन्द्र राय
७ यादवेन्द्र राय	१७ पद्मलोचन राय
८ हरिदेव राय	१८ कृष्णचन्द्र राय
९ विश्वेश्वर राय	१९ गोलीकनारायण
१० नृसिंह राय।	२० बलिनारायण
२१ कौशिकनारायण	३० लक्ष्मीनारायण राय
२२ अजितनारायण राय	३१ चन्द्रादेवी (लक्ष्मीकी कन्या और राजा निःशङ्क रायकी स्त्री)
२३ कृष्णकिशोर राय	३२ कालूभूंयां राय
२४ चन्द्रार्क राय	३३ भाड़भूंयां राय
२५ मौञ्जीकिशोर राय	३४ मुरारिभूंयां राय
२६ इन्द्रमणि राय	३५ हरवावभूंयां राय
२७ सुधन्वा राय	३६ भाड़रभूंयां राय (शक सं० १२२५ में मृत्यु)
२८ मृगया देवी (सुधन्वाकी भगिनी और कुमार जमिनभञ्जकी स्त्री)	
२९ भानुराय (मृगयाके पुत्र)	

३६वें राजा भाड़डभूंयाके बादके पुत्रादिक्रमसे प्रत्येक राजाका राज्यकाल लिखा जाता है।

नाम	राज्यकाल (शक सवत)
३७ धिताइ राय	१२२६—१२७०
३८ जगन्नाथभूंयां राय	१२७१—१४१७
३९ यदुनाथ भूंयां राय	१४१४—१४४२
४० रामभूंयां राय *	१४४३—१४८१
४१ श्रीमन्त राय	१४८२—१५३४
४२ त्रिलोचन राय	... ...
४३ हरिराय	(अनुमानसे) १५७०
४४ रामराय (हरिके पुत्र) ॥√॥ ४५ गम्भीरराय (मनोहरके पुत्र।√॥	१५७१—१६१८
४६ नरनारायण (रामके पुत्र) ॥√॥ ४७ प्रतापनारायण (गम्भीरके पुत्र) √॥	१६१८—१६५५
४८ कृपानारायण ४९ कमलनारायण (नरनारायणकी दोनों स्त्रियोंके पुत्र)	१६५६-१६८०

शकसं० १६७४में कृपानारायणकी मृत्यु होने पर कमलनारायण सम्पूर्ण राज्यके अधिकारी हो गये थे। शकसं० १६८०में नबाब मसनदी महम्मदखांके अनुग्रहसे मिर्जा देदार अलीबेगने समस्त सम्पत्ति पर दखल कर लिया। उसी वर्ष कमलनारायणकी मृत्यु हो गई।

* इनके दो पुत्र थे, श्रीमन्त और त्रिलोचन। श्रीमन्तके ७ पुत्र थे। श्रीमन्तकी मृत्युके बाद उनके छोटे भाई त्रिलोचनको ।√ ज्येष्ठपुत्र केशवको √ और बाकी छह पुत्रोंको √॥के हिसाबसे हिस्सा मिला था।

राज-प्रासादके चारोंके भीतर अब भी दिवार चलो हैमको बाम मौजूद है। तलक देखो।

राजा लक्ष्मीनारायण और यदुनारायणमें परस्पर विवाद होनेके कारण प्रजामें कर न दिया और इसलिये जमींदारी नीलाम पर चढ़ गई। थाना प म तो मुण तालकाबाके महम्मद सुवोपाध्यायने खरीद लिया और थाना प म बलवन्तमें भी कानूनगो थी। कानूनगोका प म जिसमें पर उसी मध्यिपादकने राजाने खरीद लिया।

१८५४ ई०में राजा लक्ष्मीनारायणकी मृत्यु हो गई। उनके दो पुत्र थे उपेन्द्र और नरेन्द्र। उपेन्द्रके कोई सन्तान न थी। १८८८ ई०में नरेन्द्रनारायणकी भी मृत्यु हो गई।

ताम्रशिखक (स० पु०) ताम्रशिख स्वार्थे कन्। देश विशेष, एक देशका नाम।

ताम्रशिखिका (स० स्त्री०) ताम्रचूड़ देखो।

ताम्रशिखी (स० स्त्री०) नगरीविशेष, एक नगरका नाम।

ताम्रवर्ण (स० पु०) ताम्रस्येव वर्णो यस्य बहुव्री०। १ परिमाणविशेष, एक प्रकारकी घास। २ रक्तवर्ण, लाल रंग। ३ भारतवर्षीय द्वीपविशेष, सिंहल द्वीप, सीलोन। ४ वैद्यकके अनुसार मनुष्यके शरीरके चमड़ेकी चौथी तहका नाम।

ताम्रवर्णा (स० स्त्री०) ताम्रस्येव वर्णं यस्याः बहुव्री०। घोड़ पुष्प, अड़हुल, गुड़हरका पेड़।

ताम्रवल्ली (स० स्त्री०) ताम्रवर्णा वल्ली मध्यलो० कर्मधा०। १ मजिष्ठा, मजीठ। २ चित्रकूट देशोया लता, एक लता जो चित्रकूट प्रदेशमें होती है। इसका संस्कृत पर्याय-ताम्रा ताम्री, तमामी, तमालिका, सुक्ष्मपत्री, सुलोमा, मोधनी और तालिका है। इसका गुण—कषाय, कफदोष सुख और कफशोथ दोषनाशक तथा दीप्ता तृषिकारक है।

ताम्रबीज (स० पु०) ताम्रं बीजं यस्य बहुव्री०। १ कुलत्थ, कुलथी। (त्रि०) २ रक्तबीजक तत्समान, वह वृक्ष जिसके बीज लाल होते हों। (स्त्री०) ताम्र रक्त बीज कर्मधा०। ३ रक्तवर्ण बीज लाल बीज।

ताम्रवृक्ष (स० पु०) १ रक्तचन्दन वृक्ष। २ कुलत्थ कुलथी। ३ रक्तवर्णक वृक्ष, लाल रङ्गका पेड़।

ताम्रवृन्त (स० पु०) ताम्रं वृन्तं यस्य बहुव्री०। १ कुलत्थी, कुलथी। (त्रि०) २ रक्तवृन्तक तत्समान, लाल कुलथी का साग। (स्त्री०) रक्त वृन्त कर्मधा०। ३ रक्तवृन्त, लाल कुलथी।

ताम्रशालीय (स० पु०) ताम्रवर्णं परिच्छदधारी बौद्ध सम्प्रदाय भेद, जो रङ्गका कपड़ा पहनने वाला बौद्धका एक सम्प्रदाय।

ताम्रशासन (स० क्ली०) ताम्रपत्रे लिखितं शासनं। ताम्रपत्रमें राजनिर्दिष्ट अनुशासन लिखके अक्षरमें खुद वाया हुआ राजानुशासन। ताम्रपट्ट देखो।

ताम्रशिखिन् (स० पु० स्त्री०) ताम्रवर्णा शिखा चूड़ा अस्त्यस्य इति इनि। कुक्कुट, मुरगा। (त्रि०) ताम्र शिखायुक्त, जिसकी चोटी लाल हो।

ताम्रसार (स० क्ली०) ताम्रवत् रक्तवर्णं सारो यस्य बहुव्री०। १ रक्तचन्दन, लालचन्दन। (त्रि०) २ रक्त सारक वृक्ष मात्र जिसका रस लाल हो। (पु०) रक्तः सारः कर्मधा०। ३ रक्तसार, लाल रस।

ताम्रसारक (स० क्ली०) ताम्रसार स्वार्थे कन्। १ रक्त चन्दन। (पु०) रक्तवर्णः सारो यस्य इति कप्। २ रक्त खदिर, लाल खैर।

ताम्रसारिन् (स० पु०) ताम्र सारोऽस्त्यस्य इन्। १ रक्तखदिर, लाल खैर। २ रक्तचन्दन।

ताम्रा (स० स्त्री०) ताम्र-टाप्। १ सिंहली, सिंहलकी पीपल। २ ताम्रवल्लीलता। ३ गुञ्जा घुंघची नामको लता। ४ दक्षप्रजापतिकी कन्या। यह कश्यपकी अन्यतमा पत्नी थीं। इनसे ६ कन्यायें उत्पन्न हुई थीं जिनके नाम ये हैं—क्रौञ्ची, श्येनी, भासी, सुग्रीवी, शुचि और गृध्रिका। (गरुडपुराण)

ताम्राक्ष (स० पु०) उपद्वीपभेद, एक उपद्वीपका नाम।

ताम्राक्ष (स० पु० स्त्री०) ताम्रे रक्ते अक्षिणी यस्य बहुव्री०, अक्षिन् षच्। १ कोकिल, कोयल। (त्रि०) २ ताम्रनयन, जिसकी आंखें लाल हों।

"तत आशाय तरसा तास्मै भौतमीहत।
अकम्पयतं ताम्राक्ष पद्य दर्शना यथा॥"

(भागवत० २।७।१३)

ताम्राख्य (स० पु०) ताम्रमिति आख्या यस्य बहुव्री०। उपद्वीपभेद, ताम्रद्वीप।

ताम्राभ (सं० क्लो०) ताम्रमय आभाइव आभा यस्य बहुव्री०। १ रक्तचन्दन। (त्रि०) ताम्रा आभा यस्य। २ रक्तवर्ण आभायुक्त जिसमें लाल रङ्गकी कान्ति हो।

ताम्रायण (सं० पु०) याज्ञवल्क्यके एक शिष्यका नाम।

ताम्रायणि (सं० पु०) एक शुक्ल यजुर्वेदी ऋषि। ये याज्ञवल्क्यके शिष्य थे।

ताम्रारि (सं० पु०) ताम्रवर्ण गवुभेद।

ताम्रारुण (सं० क्लो०) तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम। इस तीर्थमें स्नानदानादि करनेसे अश्वमेधयज्ञका फल होता है और अन्तमें ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है।

"ताम्रारुणं समासाद्य ब्रह्मचारी समाहितः।
अश्वमेधमवाप्नोति ब्रह्मलोकं च गच्छति॥" (भा० ३।८४अ०)

ताम्रार्द्ध (सं० क्लो०) कांस्य, कांसा। कांसेमें आधा तांबेका भाग है।

ताम्रावती (सं० स्त्री०) ताम्रमस्यस्यामस्ति ताम्र मतुप् मस्य व, संज्ञायां दीर्घः। नदीभेद, एक नदीका नाम।

"ताम्रवती वेत्रवती नद्यस्तिस्रोऽथ कौशिकी॥"
(भारत वनप० २२१ अ०)

ताम्राश्म (सं० पु०) ताम्रं अश्म कर्मधा०। पद्मराग मणि।

ताम्रिक (सं० पु०) ताम्रं तत्पात्रादिनिर्माणं कार्यत्वेना स्त्यस्य ताम्र ठन्। १ कंसकार, कसेरा। (त्रि०) २ ताम्र निर्मित, जो तांबेका बना हो।

ताम्रिका (सं० स्त्री०) ताम्रक-टाप्। १ गुञ्जा, घुंघची। २ वाद्यविशेष, एक प्रकारका बाजा।

ताम्रिमन् (सं० पु०) ताम्रस्य भावः ताम्र-इमनिच्। वर्ण-दृढादिभ्यः ष्यञ् च। पा ५।१।१२३। ताम्रका भाव।

ताम्री (सं० स्त्री०) ताम्रस्य विकारः इति अण् ततो-ङीप्। १ वाद्यविशेष, एक प्रकारका बाजा। इसके पर्याय—मानरन्ध्रा, विकारिका। २ भारतवर्षीय प्राचीन घटिकायन्त्र, प्राचीन कालकी एक प्रकारकी धर्म घड़ी। यह समय जाननेके लिये व्यवहृत होती थी। आजकल क्लाक और 'वाच' का प्रचार हो जाने पर भी बहुत जगह घटिकायन्त्र काममें लाया जाता है।

ताम्रेश्वर (सं० पु०) ताम्रभस्म, तांबेकी राख।

ताम्रोपजीविन् (सं० त्रि०) ताम्रेण उपजीवति, ताम्र-उप-जीव-णिनि। जो ताम्र द्वारा अपनी जीविका निर्वाह करते हैं, कांस्यकार, कसेरा।

ताम्रौष्ठ (सं० पु०) ताम्र इव ओष्ठ यस्य बहुव्री०। जिसके अधर और ओष्ठ रक्तवर्ण हों। समास करने पर अकारके बाद ओष्ठ शब्द रहनेसे ओष्ठका अकार विकल्पसे लोप होता है। ताम्र ओष्ठ ताम्रोष्ठ, ताम्रौष्ठ, यहां पर एक जगह अकारका लोप हुआ है और दूसरी जगह अकार-का लोप न हो कर अ-ओकारमें वृद्धि हो कर औकार हो गया है। (पाणिनि)

ताम्र्य (सं० क्लो०) ताम्रस्य भावः ताम्र-ष्यञ्। ताम्रका भाव।

तायन (सं० क्लो०) ताय भावे ल्युट्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ उत्तम गति, अच्छी चाल।

तायना (हिं० क्रि०) तपाना, गरम करना।

तायफा (फा० स्त्री०) १ नाचने गानेवाली वेश्याओं और समाजियोंकी मण्डली। २ वेश्या, रंडी।

ताया (हिं० पु०) पिताके बड़े भाई, बड़ा चाचा।

तायिक (सं० पु०) तायै पालने मुदुरिति ठञ्। देशविशेष एक देशका नाम।

तायु (सं० पु०) ताय-उन्। चौर, चोर।

तार (सं० क्लो०) तार्यते विस्तार्यते तॄ-णिच् अच्। १ रौप्य, रूपा, चांदी। (पु०) तारयति स्वजापकान् संसारसमुद्रात् तॄ-णिच्-अच्। २ प्रणव, ब्रह्मबीज, ओंकार मन्त्र।

'तारयेद् यद्भवाम्भोधिस्वजपसक्तमानवं।
ततस्तार इति ख्यातो यस्तं ब्रह्मा व्यलोकयेत्॥" (काशी ७३अ०)

जो यह मन्त्र जप करते हैं, वे भव संसारसे उत्तीर्ण होते हैं। ३ वानरविशेष, एक बन्दरका नाम। ये राम-चन्द्रजीके सेनापति थे। बृहस्पतिके अंशसे इनका जन्म हुआ था। (रामा० १।१७ अ०) ४ शुद्धमौक्तिक, शुद्ध मोती। ५ मुक्ता विशुद्धि, शुद्ध मुक्ता। ६ देवी-प्रणव, कूर्चबीज। ७ तारण, उद्धार, निस्तार। ८ शिव। शिवजीने त्रिजगत्का उद्धार किया था। इसीसे उनका नाम तार पड़ा है। ९ नक्षत्र, तारा। १० अध्य-यनरूप प्रथम गौण सिद्धिभेद, सांख्यके मतानुसार गौण

सिद्धिका एक भेद। विधिपूर्वक गुरुमुखसे वेदाध्ययन कर इससे जो सिद्धि लाभ हो, उसका नाम तारसिद्धि है। यह गौणसिद्धि है। (सांख्यकौमु०) ११ विष्णु। १२ उच्च शब्द, जोरकी आवाज। (त्रि०) १३ उच्चशब्दयुक्त। १४ स्फुरितकिरण, जिसमेंसे किरणें फूटी हों। १५ निर्मल स्वच्छ। (क्ली०) १६ तोरद, किनारा। १७ उर्द्ध्व स्वर। १८ नेत्र-कनीनिका आंखकी पुतली। १९ प्रणव (ॐ ओं ह्रीं)। (तन्त्र)

२० अमरकण्टक पर्वतोंका एक वर्णवृत्त। २१ धातुओंका छड़, तपी धातुको पीट और खींच कर बनाया हुआ तागा। २२ धातुका वह तार या डोरी जिसके द्वारा बिजलीकी सहायतासे एक स्थानसे दूसरे स्थान पर खबर भेजा जाता है। तड़ित्‌-वार्तावह देखो। २३ वह जो तारसे आती है। खबर। २४ तन्तु, सूत्र, सूत, तागा। २५ सुतड़ी। २६ अखण्ड परम्परा सिलसिला। २७ डौल, व्यवस्था, सुबीता। २८ कार्य सिद्धिका योग, युक्ति, उपाय, ढब। २९ कर्पूर, कपूर।

तारक (सं० क्ली०) तारि कनीनिकाका आकृति अस्त्यस्य कन्। १ चक्षु आंख। (पु०) [इसावें] कन्। २ नक्षत्र, तारा। (स्त्री०) ३ चक्षुकी कनीनिका आंखकी पुतली। तारयति देवान् तृ-णिच्-ण्वुल्। ४ दशम मन्वन्तरीय इन्द्रशत्रु, असुरविशेष, दशवें मन्वन्तरके इन्द्रके शत्रु एक असुरका नाम। इसने जब इन्द्रको बहुत सताया तब नारायणने नपुंसकरूप धारण करके इसका नाश किया। (गरुड़० ८७।१९) ५ अपर असुरभेद, तारका सुर। ६ कर्ण धार। ७ भेलक मिलानेवाला। ८ छन्दोभेद, एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरणमें १८ अक्षर होते हैं।

तारकजित् (सं० पु०) तारकं तारकासुरं जयति जि-क्विप् तुगागमश्च। कार्त्तिकेय इन्होंने तारकासुरका नाश कर इन्द्रको स्वर्गके सिंहासन पर स्थापित किया था। तारक और कार्त्तिकेय देखो।

तारकटोड़ी—रागविशेष एक रागका नाम। इसमें ऋषभ और कोमल स्वर लगते हैं और पञ्चम वर्जित होता है।

तारकतीर्थ (सं० क्ली०) तारकं तीर्थं कर्मधा०। तीर्थभेद, गया तीर्थ। यहां पिण्डदान करनेसे पुरखे तर जाते हैं।

तारकब्रह्म (सं० क्ली०) तारकं च तत्‌ ब्रह्म चेति कर्मधा०। राम षड़क्षरमन्त्र राममारक मन्त्र "ॐ रामाय नमः"। पञ्चक्रोशी काशीमें मृत्यु होनेसे महादेव आप इस मन्त्रको मनुष्यके कानमें पढ़ते हैं तथा वह मृत मनुष्य षड़क्षरमन्त्रके प्रभावसे मोक्ष पाता है।

यह षड़क्षर मन्त्र सब मन्त्रोंसे श्रेष्ठ है, इस मन्त्र द्वारा जो भक्तिपूर्वक उपासना करते हैं, निश्चय ही उनको मुक्ति होती है। इस मन्त्रके प्रभावसे सब दुःख जाते रहते हैं तथा यह मन्त्र पापियोंके लिये भी मोक्षप्रद है। प्रतिदिन यह मन्त्र जप करनेसे समस्त पाप विनष्ट होते हैं।

तारकमानी (हिं० स्त्री०) चतुष्कोण आकारका एक प्रकारका यन्त्र। इसमें तारोंको खगह जोड़का तार बना रहता है। यह बमोंमें काटनेके काममें आती है।

तारकश (हिं० पु०) वह जो धातुका तार खींचता हो।

तारकशी (हिं० स्त्री०) तार खींचनेका काम।

तारका (सं० स्त्री०) १ नक्षत्र, तारा। २ कनीनिका आंखकी पुतली। ३ इन्द्रवारुणी लता। ४ नाराच नामक छन्दका नाम। ५ बालिकी स्त्री। ६ मुक्ता, मोती। ७ देवताड़ वृक्ष, रामबांस।

तारकाक्ष (सं० पु०) असुरविशेष एक असुरका नाम। यह तारकासुरका बड़ा लड़का था। यह देवताओंसे युद्धमें पराजित हो कर कमलाक्ष और विद्युन्माली नामक अपने दो छोटे भाइयोंके साथ जङ्गल और तपस्या करने लगा। इनकी तपस्यासे सन्तुष्ट हो कर जब ब्रह्माजी वर देनेको उद्यत हुए, तब इसने प्रार्थना की, "परमेश! हमलोग पूज्य हो कर पुरत्रयमें वास करें, जिसे कोई भी नष्ट न कर सके।" बाद ब्रह्माजी वरसे इन्होंने तीन पुर पाये। वर देते समय ब्रह्माने कह दिया था कि ये लोग तीनों पुर पर आरोहण कर कुमार्गसे त्रिभुवन तथा पर्यटन करते हुए एक हजार वर्षके अन्तमें केवल एक बार आपसमें मिलेंगे। उस समय यदि कोई एक बाणसे उस पुरत्रयको भेद कर सके, तो इन लोगोंकी मृत्यु होगी। उस पुरत्रयका निर्माता मयदानव था। उनमेंसे एक सोनेका, दूसरा चांदीका और तीसरा लोहेका बना था। यह पुरत्रय यथाक्रमसे स्वर्लोक, अन्तरीक्ष लोक और मर्त्य

लोक माना जाता था। तारकाक्ष स्वर्णनिर्मित पुरका अधिनायक था।

इस समय तारकाक्षके हरि नामक प्रबल पराक्रान्त एक पुत्रने कठोर तपस्या करके प्रजापति ब्रह्मासे एक वरके लिये प्रार्थना की, "मैं अपने पुरमें एक तालाब प्रस्तुत करना चाहता हूं। इस तालाबके जलमें जितने अस्त्र-निहत वीरगण निक्षेप किये जांय, वे आपके प्रसाद-से पुनर्जीवित और समधिक बलशाली हो जावें।" 'ऐसा ही होगा" यह कह कर ब्रह्माजी चल दिये। क्रमशः ये अत्यन्त बल दर्पित हो तीनों लोकमें बहुत ऊधम मचाने लगे। देवताओंने इन असुरोंसे अनेक प्रकारकी यन्त्रणाएँ पाकर शिवजीकी शरण ली। शिवजीने उसी समय देव-ताओंका आधा बल ग्रहण कर त्रिपुरको भेदते हुए उन्हें मार डाला। (भारत कर्ण ३५ अ०) त्रिपुर देखो।

तारकाख्य (सं० पु०) तारकइति आख्या यस्य बहुव्री०। तारकाक्ष। तारकाक्ष देखो।

तारकान्तक (सं० पु०) अन्तयति इति अन्तकः तारकस्य अन्तकः, ६-तत्। कार्तिकेय।

तारकादि (सं० पु०) तारक आदिर्यस्य। पाणिन्युक्त गणविशेष, सञ्जात अर्थमें तारकादिके बाद इतच् प्रत्यय होता है। तारका, पुष्प, कर्णक, मञ्जरी, ऋजीष, क्षण, सूत्र, मूत्र, निष्क्रमण, पुरीष, उच्चार, प्रचार, विचार, कुड्मल, कण्टक, मुसल, मुकुल, कुसुम, कुतूहल, स्तवक, किसलय, पल्लव, खण्ड, वेग, निद्रा, मुद्रा, बुभुक्षा, धेनुष्या, पिपासा, श्रद्धा, अभ्र, पुलक, अङ्गारक, वर्णक, द्रोह, दोह, सुख, दुःख, उत्कण्ठा, भव, व्याधि, वर्मन्, व्रण, गौरव, शास्त्र, तरङ्ग, तिलक, चन्द्रक, अन्धकार, गर्व, मुकुर, हर्ष, उत्कर्ष, कुवलय, गर्ध, क्षुध, सीमन्त, ज्वर, गर, रोग, रोमाञ्च, पण्डा, कज्जल, तृष्, कोरक, कल्लोल, स्थपुट, दल, कञ्चुक, शृङ्गार, अङ्कुर, शैवाल, बकुल, श्वभ्र, आराल, कलङ्क, कर्दम, कन्दल, मूर्च्छा, अङ्गार, हस्तक, प्रतिबिम्ब, विघ्न, तन्त्र, प्रत्यय, दीक्षा और गर्ज ये तारकादिगण हैं।

तारकामय (सं० पु०) शिव, महादेव।

तारकायण (सं० पु०) विश्वामित्रके एक पुत्रका नाम। (हरिवंश २६ अ०)

तारकारि (सं० पु०) तारकासुरके शत्रु।

तारकासुर (सं० पु०) असुर विशेष, एक असुरका नाम। इसका विवरण शिवपुराणमें इस तरह लिखा है—

यह असुर तार नामक असुरका पुत्र था। देवताओं-को जीतनेके लिये तारकाने एक हजार वर्ष तक घोर तपस्या की, किन्तु तपस्याका फल कुछ न हुआ। तब इसके मस्तकसे एक बहुत प्रचण्ड तेज निकला। उस तेजसे देवतागण दग्ध होने लगे, यहां तक कि इन्द्र सिंहासन परसे खिंचने लगे। इससे इन्द्रादि देवगण अत्यन्त भय-भीत हुए, और इसका उपाय सोचने लगे। उस समय मालूम पड़ता था कि अकालमें यह ब्रह्माण्ड लोप हो जायगा। ब्रह्माण्डकी रक्षा करनेके लिये सब देवगण ब्रह्माके निकट पहुंचे और प्रणाम कर उनसे तारका-का तपोवृत्तान्त निवेदन किया। देवताओंकी प्रार्थना पर ब्रह्मा तारकाके समीप वर देनेके लिये उपस्थित हुए और उससे वर मांगनेके लिये कहा।

तारकासुर ब्रह्माका यह वचन सुन कर बोला, भगवन्! जब आप प्रसन्न हैं तब कोई चीज असाध्य नहीं है, आप मुझे दो वर दीजिये। पहला तो यह कि मेरे समान संसारमें कोई बलवान् न हो, दूसरा यह कि यदि मैं मारा जाऊं तो उसीके हाथसे जो शिवसे उत्पन्न हो।" 'तथास्तु' कहकर ब्रह्माजी स्वस्थानको चले गये।

वर पा कर तारक भी अपने घरको लौट आया। सब असुरोंने मिलकर उसे राजगद्दी पर अभिषिक्त किया और चारों ओर यह आज्ञा प्रचार कर दी कि इस जगत्में अब किसीका भी शासन प्रचलित नहीं होगा। तारक राज-पद पर अभिषिक्त हो कर घोर अन्याय करने लगा, विशेष कर देवताओंको अत्यन्त कष्ट पहुंचाने लगा। तब देव, दानव, यक्ष, राक्षस, किम्पुरुष प्रभृति सबके सब अत्यन्त दुःखित हुए।

इन्द्रादि देवगण निरुद्दीत हो कर उसे सन्तुष्ट करनेके लिये प्रधान प्रधान रत्न प्रदान करने लगे।

इन्द्र उच्चैःश्रवा अश्व, धर्म रत्नदण्ड, ऋषि कामधुक् धेनु और समुद्र सब रत्न उसे देने लगे।

सूर्य डरके मारे तारकपुरमें प्रखर रूपसे अपनी किरण नहीं दे सकते थे, चन्द्रमा भी पूर्णभावसे दोनों पक्षमें

उदय होते थे, वायु अनुकूल हो कर सर्वदा मन्द मन्द बहती थी। तीनों भुवन तारकको आज्ञाके अधीन हो गये थे। देवगण उनको सेवा करते थे। जितने ऋषि थे, वे उसके दूतका काम करते थे। देवताओंके ऊपर तारकासुर ही शासन करता था।

अन्तमें जब देवगण इस दुःखको सह न सके तब एक दिन सब कोई मिल कर ब्रह्माके पास गये और अपना अपना दुखड़ा रोया। ब्रह्माने कहा "शिवके पुत्रके अतिरिक्त तारकको और कोई मार नहीं सकता। हिमालयके शिखर पर शिवजी तपस्यारत रहते हैं और पार्वती दो सखियोंके साथ उनकी परिचर्या कर रही हैं। तुम लोग जा कर ऐसा उपाय रचो कि उनका संयोग शिवके साथ हो जाय। शिवजीके पुत्रके सिवा तारकको मारनेका कोई दूसरा उपाय नहीं है।

इन्द्रादि देवगण रतिके साथ कन्दर्पको लेकर शिवजीका तप भङ्ग करनेके लिए हिमालय पहाड़ पर उपस्थित हुए। कन्दर्पके वहां पहुँचने पर असमय पूर्ण माधवी विराज करने लगा। शिवजी ध्यानमें वसन्तका आविर्भाव देख कर तपस्यामें तन मनसे लग गये।

इस समय पार्वती पुष्प आभरणसे भूषित हो कर शिवपूजाके निमित्त महादेवके समीप पहुँची।

कन्दर्पके प्रभावसे पार्वती विह्वल भावापन्न हो गई। महादेवको भी चित्तविकृति उपस्थित हुई।

इस समय महादेव अपने मनमें विचार कर बोले 'क्या! ईश्वर हो कर दूसरेको स्त्रीका अङ्ग स्पर्श करना मुझे उचित है? जब मेरे ही चित्तमें ऐसी विकृति आ उठेगी तो क्या क्षुद्र मनुष्य दुष्कर्म नहीं कर सकेंगे!" ऐसा सोच कर वे फिर तपस्यामें नियुक्त हो गये।

शिवजी आत्मसंवरण हो कर भी चित्त स्थिर न कर सके। अनुसन्धान करके इसका कारण देखा कि कन्दर्प रतिके साथ उनका तप भङ्ग करनेके लिये यहाँ आया है। यह देख कर शिवजीने ऐसी क्रोधभरी दृष्टि उनको ओर डाली कि कन्दर्प उनके नेत्रसे निकली हुई अग्निसे उसी समय ढेर हो गया।

मदन (कन्दर्प) के भस्म हो जाने पर शिवजीने वह स्थान छोड़ दिया। पार्वती भी अपने रूपकी निन्दा करती हुई अपने घरको लौटी। बाद पार्वतीजी शिवजीको पति बनानेके लिये घोर तपस्यामें प्रवृत्त हुईं। बहुत दिन तपस्या करनेके बाद पार्वतीने महादेवको पतिरूपमें पाया। अन्तमें शिवके साथ पार्वतीका विवाह हो गया। विवाह हो जानेके बाद जब शिवजीसे पार्वतीमें कोई पुत्र न हुआ, तब देवगण फिर भी घबरा उठे। महादेव और पार्वती क्रीड़ामें आसक्त थे, इस कारण उनके पास कोई जा नहीं सकते थे। इधर तारकासुर दिनों दिन अधिक ऊधम मचाने लगा, देवगण लाचार हो किंकर्तव्यविमूढ़की नाईं रहने लगे। बाद अग्नि कपोतका रूप धारण करके महादेवके पास उपस्थित हुए। शिवजीने ज्योंही कपोतरूपधारी अग्निको देखा त्यों ही उन्हें कहा, "हे कपटरूपधारी कपोत, तुम कौन हो? तुम्हीं हमारे वीर्यको धारण करो!" इतना कह कर उन्होंने वीर्यको अग्निके ऊपर डाल दिया। उसी वीर्यसे कार्त्तिकेय उत्पन्न हुए। कार्त्तिकेय देखो।

कार्त्तिकके उत्पन्न होने पर देवताओंने उन्हें अपना सेनापति बनाकर तारकासुरको मारनेके लिए योजित कर भेजा।

इस युद्धमें तारकासुरके साथ घमसान युद्ध हुआ। दस दिन तक बराबर लड़ाई होती रही। उसके बाद तारकासुरका सैन्य क्षीण होने लगा। बाद कार्त्तिकके शक्ति अस्त्रसे तारकासुर मारा गया।

(शिवपु० १ १०अ० और देवीभागवत)

तारकित (सं० त्रि०) तारका सञ्जाता अस्य तारकादित्वात् इतच्। नक्षत्रयुक्त, जो तारोंसे शोभित हो।

तारकिन् (सं० त्रि०) तारका अस्त्यस्य इनि। तारकायुक्त, तारोंसे भरा।

तारकिणी (सं० स्त्री०) तारकिन् ङीप्। नक्षत्रयुक्त रात्रि, तारोंसे परिपूर्ण रात।

तारकूट (हिं० पु०) एक प्रकारकी धातु जो चाँदी और पीतलके योगसे बनी है।

तारकेश्वर (सं० पु०) औषधविशेष, एक प्रकारकी दवा। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पारा, गन्धक, लोहा, बङ्ग, अभ्रक, सोहागा, जवाखार, गोखरूके बीज और गुड़, इन सबको बराबर लेकर पीसते हैं, बाद फिर पेठेके पानी, पञ्चमूल

के काढ़े और गोखुरूके रसकी भावना देकर उसे घोटते और दो दो रत्तीको गोलियाँ बना लेते हैं। इन गोलियों को अदरकके साथ खाना चाहिये। इसका पथ्य बकरीका दूध, चीनी और ईखका रस है। इस औषधके सेवनसे बहुमूत्र रोग दूर हो जाता है। (भैषज्यरत्ना०)

सरा तरीका—रससिन्दूर, लोहा, वङ्ग, अभ्रक इन सबको बराबर लेकर मधुके साथ एक दिन तक घिसते हैं और बाद एक मापसे परिमित गोलियां बनाते हैं। इसका अनुपान मधुसंयुक्त पक्व यज्ञडुम्बरका चूर्ण है। इसके सेवन करनेसे बहुमूत्र रोग जाता रहता है

(भैषज्यरत्नावली प्रमेहाधिकार)

तारकेश्वर—हुगली जिलेके अन्तर्गत एक पुण्यस्थान। यह अक्षा० २२° ५३´ उ० और देशा० ८८° ४´ पू०में अवस्थित है। तारकेश्वरके लिङ्ग और उनके मन्दिरके लिये यह स्थान अत्यन्त प्रसिद्ध है।

कालीघाटमें नकुलेश्वरको जिस तरह उत्पत्ति हुई है, बहुतोंका कहना है कि तारकेश्वरको उत्पत्ति भी उसी तरह है। किसी प्राचीन पुराण अथवा तन्त्रमें इसका विवरण नहीं रहनेके कारण यह आधुनिक प्रतीत होता है। तब भी यह दो तीन सौ वर्ष से पहलेका है। भविष्य ब्रह्मखण्ड (७।५८) में इस लिङ्गका उल्लेख है।

तारकेश्वर राढवासियोंके परम भक्तिके देवता है। उनके निकट सैकड़ों दुःसाध्यरोगियोंने आरोग्य लाभ किया है। बहुतसे राढवासी अब भी बाबा तारकनाथके नामसे डरते हैं। शिवरात्रि और चड़क-संक्रान्तिके दिन यहां बहुत उत्सव होता है, जिसमें लगभग ५०।६० हजार यात्री एकत्र होते हैं। तारकेश्वरमें बहुत आमदनी होती है जिसे वहांके महन्त उपभोग करते हैं।

पहले तारकेश्वर जाते समय बहुतसे मनुष्य दुर्दान्त-डकैतोंसे आक्रमण किये जाते थे। इस यात्रामें यात्रियों-को कितना कष्ट झेलना पड़ता था; वह अकथनीय है। अभी तारकेश्वरके पास रेल-स्टेशन हो जानेसे उनका कष्ट और भय सदाके लिये जाता रहा। इससे तारकेश्वर-के यात्रियोंको संख्या भी बढ़ गई है।

तारकोपनिषद् (सं० स्त्री०) उपनिषद् भेद, एक प्रकारका उपनिषद्।

तारचिति (सं० पु०) तारा इवा चिति यंत्र। देश भेद, एक देश जो पश्चिममें १८।१८।२० नक्षत्रोंमें अवस्थित है। यहां म्लेच्छोंका निवास है।

तारघर (हिं० पु०) वह स्थान जहांसे तारको खबर भेजी जाती है।

तारघाट (हिं० पु०) कार्यसिद्धिका योग, व्यवस्था, आयो-जन।

तारचरबी (हिं० पु०) चीन, जापान आदि देशोंमें होने वाला मोमचीना नामका पेड़। इसके फलमें तीन बीज-कोश होते हैं। ये चरबीसे भरे रहते हैं। चीन और जापानमें मोमबत्तियां इसी पेड़की चरबीसे बनती हैं। इनके बीजोंसे भी एक प्रकारका पीला तैल निकलता है, जो दवा और रोगनके काममें आता है।

तारज (सं० पु० क्ली०) धातव द्रव्यभेद।

तारटी (सं० स्त्री०) तारवी देखो।

तारण (सं० पु०) तारयनेन ल्यु। १ तेलक, तेली। कर्त्तरि ल्यु। २ विष्णु। (त्रि०) ३ तारयिता, तारने-वाला, उद्धार करनेवाला। भावे ल्युट्। (क्ली०) ४ तारण कारण, पार उतारनेकी क्रिया। ५ उद्धारण, निस्तार। ६ षष्टि संवत्सरका अष्टादश वर्ष भेद, साठ संवत्सरोंमेंसे अठारहवां वर्ष। इस तारणवर्षमें अत्यन्त वृष्टि होती है, जिससे धान्य इत्यादि दूसरे दूसरे अनाज नष्ट हो जाते हैं। (ज्योतिस्तत्त्व)

चतुर्थ हुताश नामक तृतीय वर्षका नाम तारण है, इसमें अत्यन्त वृष्टि होती है। (वृहत्सं० ८।३५)

षष्टिसम्वत्सर देखो।

तारणि (सं० स्त्री०) तार्य्यतेऽनया इ णिच् अनि। नौका, नाव।

तारणी (सं० स्त्री०) तारणि ङीप्। काश्यपकी एक पत्नी जो याज और उपयाजकी माता कही जाती है।

तारणेय (सं० पु०) तारण्याः अपत्यं ठक्। तारणीके वंशज।

तारतण्डुल (सं० पु०) तारं शुक्लंव शुभ्रंस्तुण्डुलो यस्य। धवल यावनाल, सफेद ज्वार।

तारतम्य (सं० क्ली०) १ तरतमयोर्भावः तरतम-ष्यञ्। १ न्यूनाधिक्य, एक दूसरेसे कमी बेशीका हिसाब। २

उत्तरोत्तर न्यूनाधिकके अनुसार अथवा कसौटीमें सोनेके किनारेके निम्नलिखित। ३ गुण, परिमाण आदिका परस्पर मिलान।

तारतम्यबोध (सं॰ पु॰) कई वस्तुओंमें भरे हुए आदिकी पहचान।

तारतार (सं॰ स्त्री॰) तारयतीति तार तस्याकारः प्रकारे क्विप्। सांख्यशास्त्रोक्त गौण अतीव सिद्धिभेद सांख्यके अनुसार गौणकी तीसरी सिद्धि। आगमके अविरोधी न्यायद्वारा अर्थात् युक्तियुक्त तर्कद्वारा आगमके अर्थको परीक्षा कर संशय और पूर्वपक्ष निराकरणद्वारा उत्तर पक्षका अवधारण करना ही मनन समझा गया है, इससे जो सिद्धि लाभ होती है, उसीका नाम तारतार है। यह गौणसिद्धि है। सिद्धि देखो।

तारदार (हि॰ वि॰) जिसकी बत्तियाँ अलग अलग हो गई हों, टुकड़ा टुकड़ा, उधड़ा हुआ।

तारतोड़ (हि॰ पु॰) कपड़े पर किया हुआ सूईका एक तरहका काम, कारचोबी।

तारदी (सं॰ स्त्री॰) तरदी एव स्वार्थे अण्-ङीप्। तरदीवृक्ष, एक प्रकारका कंटीला पेड़।

तारन (हि॰ पु॰) १ छतकी ढाल, छाजनकी ढाल। २ छप्परका वह बांस जो बड़ियोंके नीचे रहता है। ३ तरण देखो।

तारना (हि॰ क्रि॰) १ पार लगाना। २ उद्धार करना, मुक्त करना, निस्तार करना।

तारनाथ (सं॰ पु॰) तारानाथ देखो।

तारनाद (सं॰ पु॰) तारः नादः कर्मधा॰। उच्चनाद, जोरकी आवाज।

तारपरन—सारङ्ग पर जो परन बजती है, आलाप बजाते समय सिंहके स नीचे तारमें जो दो एक परन बजाते जाते हैं। सितार आदि बाजों पर एक प्रकारकी अलापोंसे राग आदिका आलाप बजाया जाता है उसमें तालकी नितान्त आवश्यकता होती है। उस प्रकारकी बाजनको तारपरन कहते हैं।

तारपाणि—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने अमोरसी लोला-की रचना की है।

तारपीन (हि॰ पु॰) एक प्रकारका तेल जो चीड़के पेड़से निकलता है। जमीनसे दो हाथ ऊपर चीड़के पेड़में एक चौपहला गहरा आठ बार लगाया जाता है और उसी नीचेकी ओर कुछ गहरा बना दिया जाता है। इसी गड्ढेमें चीड़का पसीज निकल कर गोंदके रूपमें जमा होता है, जिसे गन्धाबिरोजा कहते हैं। इस गोंदसे भभका द्वारा जो तेल निकाला जाता है, वही तारपीनका तेल कहलाता है। यह औषधके काममें आता है। दर्दके लिये यह रामबाण है।

तारपुष्प (सं॰ पु॰) तारं रजतमिव पुष्पं यस्य। कुन्दवृक्ष, कुन्दका पेड़।

तारबर्की (पु॰) वह तार जिससे बिजलीकी शक्ति द्वारा समाचार पहुंचाया जाता है।

तारमाक्षिक (सं॰ क्ली॰) तार रूप्यमिव माक्षिकं। उपधातुभेद रूपमक्खी नामकी एक उपधातु। उपधातु ७ हैं, जिनमें तारमाक्षिक चांदीकी उपधातु है, यह धातु चांदीके समान गुणवाली है। इसमें कुछ चांदी मिली रहनेके कारण इसको तारमाक्षिक कहते हैं। चांदीकी अपेक्षा अल्पता होनेके कारण इसमें गुण भी कुछ कम है। तारमाक्षिकमें सिर्फ चांदीका गुण हो नहीं, बल्कि अन्यान्य द्रव्योंके मिश्रित रहनेसे अन्य गुण भी मौजूद है। विशुद्ध तारमाक्षिक किंचित् तिक्तरस युक्त मधुररस मधुर विपाक, शुक्रवर्द्धक रसायन, आंखके लिये हितकारक, कफ नाशक और त्रिदोषनाशक है। अविशुद्ध तारमाक्षिक अविशुद्ध स्वर्णमाक्षिककी तरह मन्दाग्निजनक अतिशय बलनाशक, विष्टम्भी नेत्ररोग कुष्ठरोग, गण्डमाला और व्रणरोगोत्पादक है। इसलिये तारमाक्षिकका शोधन बहुत करते हैं। कर्कोटक, मेषशृङ्गी और कम्बोजे जोड़के रसद्वारा तीन दिन कड़ी धूपमें भावना देनेसे तार माक्षिक विशुद्ध होता है।

तारमाक्षिकका मारना—कुलथीके काढ़ेमें आध पोस कर तेल, मट्ठा अथवा बकरीके मूतमें पुटपाक करने पर तारमाक्षिक मारित होता है। (भावप्र॰) मतान्तरमें ऐसा भी है—सूरन या जिमीकन्दके भीतर माक्षिक रख कर मूली, कांजी, तेल, गोदुग्ध, बदलोरस कुलथीका काथ और कोदों धानका काथ, इनका ऊंट दे कर भार, अम्ल वर्ग, पञ्चगव्य, तेल और घीके साथ तीन बार पुट देनेसे

यह विशुद्ध होता है। जम्बीरी नीबूके रस द्वारा स्वेद दे कर मेषशृङ्गी और कदलीरसमें एक दिन पाक करने से भी तारमाक्षिक विशुद्ध होता है।

तारमूल (सं० क्ली०) स्थानभेद, एक स्थानका नाम।

तारयितृ (सं० त्रि०) उद्धार करनेवाला, तारनेवाला।

तारल (सं० क्ली०) तरल एव अण्। १ तरल। २ सन्तुष्ट।

तारल्य (सं० क्ली०) तरल वस्तुका धर्म, कठिन और तरल पदार्थमें प्रभेद। कठिन द्रव्योंके समस्त अणु सहज हो सञ्चालित नहीं होते; सोना, चाँदी, तांबा, लोहा, पत्थर, ईंट आदि द्रव्योंके अणु एक ओरसे दूसरी ओर नहीं ले जाये जा सकते, किन्तु जल इत्यादि तरल द्रव्यों के अणु थोड़ा बलप्रयोग करने पर सञ्चालित होते हैं और उनके एक ओरके कण सहज ही दूसरी ओर ले जाये जा सकते हैं।

जिस गुणसे जलादि द्रव्योंके अणु सहजहीमें संचालित और प्रवाहित होते हैं, उसे तारल्य कहते हैं। यही गुण होनेके कारण जल आदि पदार्थोंको तरल पदार्थ कहा जाता है।

समस्त द्रव पदार्थोंमें यह गुण दिखाई देता है, परन्तु सबमें समान परिमाणमें नहीं होता।

इथर नामक द्रव पदार्थ अतिशय तरल है। घी, शहद, गुड़ प्रभृति द्रव्योंका तारल्यगुण अत्यन्त अल्प है; इसीसे ये समय समय पर कठिन भाव धारण कर लेते हैं।

आणविक आकर्षण और आणविक विकर्षणके तारतम्यसे समस्त जड़ पदार्थ कभी कठिन, कभी तरल और कभी वाष्पीय आकार प्राप्त करते हैं। आणविक विकर्षणकी अपेक्षा आणविक आकर्षण अधिक होनेसे कठिनताका सञ्चार होता है। दोनोंका पराक्रम प्रायः समान होनेसे तारल्यकी उत्पत्ति होती है। और आकर्षणकी अपेक्षा विकर्षण अधिक बलशाली हो तो समस्त पदार्थ वाष्पाकार धारण करेंगे। उष्णताकी जितनी वृद्धि होगी विकर्षणका बल भी उतना ही बढेगा। इसीलिये तापके प्रभावसे जिन वस्तुओंके उपादान विभिन्न नहीं होते, उत्तप्त होनेसे वे ही द्रव्य कठिनसे तरल और तरलसे वाष्प हो जाते हैं।

कठिन वस्तुओंके परमाणु आणविक आकर्षण गुणसे जिस तरह दृढ़तया आबद्ध रहते हैं, तरल और वाष्पीय पदार्थोंके परमाणु वैसे नहीं होते।

कठिन वस्तुके परमाणु निविड़ सन्निवेशके कारण सहज होमें अलग नहीं होते, किन्तु तरल और वाष्पीय द्रव्योंके परमाणु सहज होमें थोड़े विनिवेशसे हो संचालित हो जाते हैं। कठिन (ठोस) पदार्थोंमें हर एककी एक निर्दिष्ट आकृति होती है, किन्तु तरल और वाष्पीय पदार्थोंकी कोई निर्दिष्ट आकृति नहीं है। इन्हें जैसे बर्तनमें रक्खा जायगा, इनकी वैसी ही आकृति हो जायगी।

तरल और वाष्पीय द्रव्योंका प्रभेद—जिस प्रकार तरल द्रव्योंके परमाणु सहज हो संचालित होते हैं, उसी प्रकार वायवीय द्रव्योंके अणु भी थोड़े हो बलप्रयोगसे संचालित होते हैं; किन्तु वाष्पीय द्रव्य जिस प्रकार दवाव पड़नेसे संकुचित होते हैं, तरल पदार्थ वैसे नहीं होते। जैसे समस्त वाष्पीय द्रव्य आकुञ्चनीय होते हैं! वैसे समस्त तरल पदार्थ दुराकुञ्चनीय हैं। परन्तु यह नहीं कि तरल पदार्थ बिलकुल ही आकुञ्चनीय नहीं। पदार्थविद् विद्वानोंने परीक्षाद्वारा स्थिर किया है कि अधिक बलप्रयोग करनेसे सभी तरल पदार्थ कुछ कुछ आकुञ्चित होते हैं। फी इञ्च साढ़े सात सेर दवाव देनेसे दश लाख भाग जलके आयतनमें पाँच भाग कम हो जाता है, और दवाव हटा लेने पर जल या जलवत् सभी पदार्थ पुनः प्रसारित हो कर अपने पूर्व आयतनको प्राप्त हो जाते हैं। अतएव यह स्वीकार करना होगा कि सभी तरल वस्तुएँ स्थितिस्थापक गुणसम्पन्न हैं।

तरल पदार्थोंमें चाप सञ्चालनका नियम—तरल वस्तुके एक अंशमें चाप प्रयोग करनेसे वह सब ओर समभागसे संचालित होता है। ईसवीकी सत्रहवीं सदीके मध्यभागमें पास्कल नामक एक फरासीसी विद्वान्‌ने तरल पदार्थोंमें चाप संचालनके नियमका आविष्कार किया; इसी लिए यह नियम पास्कलका नियम नामसे प्रसिद्ध है।

जलादिके एक ओर चाप प्रयोग करनेसे वह उसके सभी ओर सम भावसे संचालित होता है। यह विशेष परीक्षा द्वारा देखा गया है।

एक पिचकारीके सदृश वस्तुमें छिद्रोंवाला यंत्र जलसे भर कर उसका अंतस्थ डाटपूर्वक यदि भीतर डाला जाय तो उससे समस्त छिद्रोंसे जल बाहर निकलता है। यदि चारों ओर चाप संचालित न होता तो सभी छिद्रोंसे जल न निकलता।

द्रवादिके एक अंशमें चाप प्रयोग करनेसे वह चाप उसके सर्वांशमें संचालित हो कर चाप युक्त अंशके साथ समायतनसम्पन्न अंशोंके ऊपर समपरिमाणमें और उस मात्रमें कार्य करता है तरल पदार्थके एक अंशमें दिया गया चाप सर्वांशमें संचालित होता है। यह भी पूर्वोक्त परीक्षाद्वारा प्रतिपादित हुआ है।

तरल पदार्थोंका आपेक्षिक भार (दबाव)—तरल पदार्थोंके आधारमें नीचेकी ओर चाप द्वारा जिस प्रकार नीचेके अंश आक्रान्त होते हैं उसी तरह नीचेसे ऊपरकी ओर चाप द्वारा ऊपरके अंश प्रकाशित होते हैं। नीचेके स्तरोंका ऊपरके स्तरों पर अवक्षेपक चाप और ऊपरके स्तरोंका नीचेके स्तरों पर उत्क्षेपक चाप समान होता है। यह निम्नलिखित परीक्षा द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। किसी जलपूर्ण पात्रमें दोनों ओर खुली एक नली डुबानेसे देखा जायगा, पात्रमें जितना ऊंचा जल है उतना ही ऊंचा पानी नलीमें भी उठता है, किन्तु इसी नलीके नीचेका मुंह उसीके समान एक टुकड़ा कांच या अभ्रक द्वारा आवृत कर थोड़ेसे सूत द्वारा वह कांच या अभ्रक बांधके धीरे धीरे जलमें डुबाया जाय तो देखा जायगा, सूत छोड़ देने पर भी नली डूबेगी नहीं और अभ्रक चापसे उत्क्षिप्त हो उठेगी। अब यदि नलीके भीतर पानी डाला जाय तो देखा जायगा, नलीके भीतरका जल ज्योंही बाहरके जलकी अपेक्षा ऊंचा होगा त्योंही अभ्री डूब जायगी। इससे देखा जाता है कि नीचेकी ओर लगा हुआ कांच जिस चापसे उत्क्षिप्त होता है वह उसके समायतन और उसकी पृष्ठदेशके परिमाण तक जल जितना उन्नत है उसमें जो उन्नत अंशके समान होता है अर्थात् उसके ऊपरसे नीचेको जो चाप है वही चाप नीचेसे ऊपरको भी है अर्थात् जलमें अवस्थित किसी अंशके ऊपर उत्क्षेपक और अवक्षेपक चाप बराबर है।

साम्यावस्थामें तरल वस्तुओंकी पृष्ठदेश सर्वत्र समतल रहती है।

कठिन पदार्थोंका ऊपरी भाग कहीं ऊंचा कहीं नीचा हो सकता है। किन्तु तरल द्रव्योंकी सतह सर्वत्र समान ऊंची होती है। कठिन अवस्थामें आणविक आकर्षणके गुणके कारण द्रव्यके परमाणु परस्पर दृढ़रूपसे संलग्न रहते हैं। इसीलिए किसी द्रव्यका कोई अंश यदि किञ्चित् ऊंचा होने पर भी मध्याकर्षण द्वारा विच्छिन्न होकर पतित नहीं होता, किन्तु तरल अवस्थामें आणविक आकर्षण वैसा प्रबल नहीं होता। इससे तरल वस्तुके परमाणु सहज ही विचलित और प्रवाहित होकर समतलभाव धारण करते हैं।

किसी तरल वस्तुका यदि कोई भाग किञ्चित् उन्नत हो उठे तो उसीके मध्याकर्षणसे उसे पुनः निम्नमित होना पड़ता है। वास्तवमें तरल पदार्थोंकी सतह स्वभावतः समतल होती है। उसके ऊंचे नीचे होनेका कारण सभीको विदित है।

जिस तरह धरातल पर कहीं ऊंचे पर्वतशिखर कहीं गम्भीर गह्वर दिखाई देते हैं। सागर पृष्ठमें वैसा नहीं दिखाई देता। यदि कभी किसी कारणसे कहीं, पर समुद्रका जल किञ्चित् ऊंचा उठ जाता है तो उस कारणके हटते ही फिरसे जल समभाव धारण कर लेता है। यद्यपि महासमुद्रके जिस भाग पर दृष्टि डाली जाय वही समतल मालूम देता है तथापि यह नहीं कहा जा सकता कि उसका समग्र पृष्ठदेश दर्पणकी तरह समतल है। उसकी सतहका प्रत्येक बिन्दु पृथ्वीके केन्द्रके साथ तुलनामें समतलभावसे अवस्थित है किन्तु भूपृष्ठकी जलराशिका आकार गोलेकी सतहकी तरह गोल है। इस तरह जहां बहुत दूर पर्यन्त जल व्याप्त है उसकी समस्त सतहका सर्वाकार समतल होना सम्भव नहीं।

२ तरलता, द्रवत्व। ३ पतलापन।

तारणाई—हैदराबाद राज्यके बरहन्त जिलेका एक तालुक। इसमें कुल १९९ ग्राम लगते हैं। राजस्व १०८००) रु०के लगभग है। तालुकका पश्चिमांश जङ्गलसे आच्छादित है।

तारपांशु (सं० पु०) तारः पांशु कर्मधा०। कर्पूर भस्म-युक्त पांशु, बहुत लोगोंके चलनेवाली रजा।

तारविमला (सं० स्त्री०) तारा इव अत्यन्त विमला। उपधातु विशेष, रूपामक्खी नामकी उपधातु।

तारशुद्धिकर (सं० क्लो०) तारस्य रजतः शुद्धिं करोति कृ-ट। सोसक, सोसा। इससे चांदोका मैल साफ किया जाता है।

तारसार (सं० पु०) उपनिषद्भेद, एक उपनिषद्का नाम।

तारहार (सं० पु०) तारैर्निर्मितो हारः मध्यलो० कर्मधा०। स्थूल मुक्ताहार।

तारा (सं० स्त्री०) तारयति संसारार्णवात् भक्तान् तृ णिच् अच् टाप्। १ बौद्धोंको एक देव। २ वानरराज बालीको पत्नी और सुषेण वानरको कन्या। रामचन्द्रने सप्ततास भेद कर वालोका वध किया था। बालीके मारे जानेके उपरान्त श्रीरामचन्द्रके आदेशसे ताराने सुग्रीवको अपना पति बना लिया। इनके पुत्रका नाम अङ्गद था। (रामायण) प्रातःकाल उठ कर इनका नाम स्मरण करनेसे वह दिन मङ्गलमय होता है।

"अहल्या द्रौपदी कुन्ती तारा मन्दोदरी तथा।
पञ्चकन्या स्मरेन्नित्यं महापातकनाशनं॥"

किन्तु प्रातःकालमें इनके नाम स्मरणका नियम रघुनन्दनके आह्निकतत्त्वमें नहीं है।

३ अश्विनी आदि नक्षत्र। जैसे—अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्या, अश्लेषा, मघा, पूर्वफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी, हस्ता, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूला, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवणा, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद और रेवती, ये २७ प्रधान तारा हैं।

खगोल देखो।

अधिपति—अश्विनीके अधिपति अश्विनी। भरणीके यम, कृत्तिकाके दहन, रोहिणीके कमलज, मृगशिराके शशि, आर्द्राके शूलभृत्, पुनर्वसुके अदिति, पुष्याके जीव, अश्लेषाके फणि, मघाके पितृगण, पूर्वफाल्गुनीको योनि, उत्तरफाल्गुनीको अर्यमा, हस्ताके दिनकृत्, चित्राके त्वष्टा, स्वातिके पवन, विशाखाकी अग्नि, अनुराधाके मित्र, ज्येष्ठाके शक्र, मूलाके निर्ऋति, पूर्वाषाढ़ाका तोय, उत्तराषाढ़ाके विश्वविरिञ्चि, श्रवणाके हरि, धनिष्ठाके वसु, शतभिषाके वरुण, पूर्वभाद्रपदके अजैकपाद, उत्तरभाद्रपदके अहिर्बुध्न और रेवतीका अधिपति पुष्यानक्षत्र है।

नाम—आर्द्रा, पुष्या, धनिष्ठा, शतभिषा, श्रवणा, रोहिणी, उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा और उत्तरभाद्रपद इनका नाम है ऊर्ध्वमुख; तथा मूला, अश्लेषा, कृत्तिका, विशाखा, भरणी, मघा, पूर्वफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वभाद्रपद इनका नाम अधोमुख; एवं अश्विनी, रेवती, हस्ता, चित्रा, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, मृगशिरा और अनुराधा इन नक्षत्रोंका नाम तिर्यङ्मुख तारा है।

जाति—अश्विनी और शतभिषा नक्षत्र अश्वजातीय है, रेवती और भरणी हस्ती, कृत्तिका अजा, रोहिणी और मृगशिरा सर्प; आर्द्रा, हस्ता और स्वाति व्याघ्र, पुनर्वसु मेष, पुष्या, अश्लेषा और मघा इन्दुर, पूर्वफाल्गुनी और चित्रा महिष, विशाखा और अनुराधा हरिण, ज्येष्ठा कुक्कुर; मूला और श्रवणा वानर; पूर्वाषाढ़ा नकुल जातीय तथा धनिष्ठा, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपद सिंह जातीय है।

मृगशिरा, हस्ता, स्वाति, श्रवणा, पुष्या, रेवती, अनुराधा अश्विनी और पुनर्वसु नक्षत्रमें जन्मग्रहण करने पर देवगण होता है, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपद, पूर्वफाल्गुनी, पूर्वषाढ़ा, पूर्वभाद्रपद, रोहिणी भरणी और आर्द्रामें नरगण तथा ज्येष्ठा, मूला, अश्लेषा, कृत्तिका, शतभिषा, चित्रा, मघा, धनिष्ठा और विशाखामें जन्म लेनेसे राक्षसगण होता है।

किसी शुभकार्यके करनेके पहले उसके लिए चन्द्र और ताराशुद्धिका देखना जरूरी है। विशेषतः शुक्लपक्षमें चन्द्रशुद्धि और कृष्णपक्षमें ताराशुद्धि न देख कर कार्य करनेसे नाना प्रकारके अमङ्गल होते हैं।

ताराशुद्धि। यथा—जन्म, सम्पत्, विपत्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मित्र और अतिमित्र ये ९ तारा हैं; इनमें जन्म, विपत्, प्रत्यरि और वध वर्जनीय है, इनके सिवा अन्य समस्त तारे शुभकर होते हैं।

जन्मतारामें विवाद, श्राद्ध, भैषज्य, यात्रा और क्षौर कर्म निषिद्ध हैं।

निषिद्ध तारेमें यात्रा करनेसे बन्धन, कृषिकार्यमें शस्यनाश, औषध सेवनमें मरण, गृहारम्भमें गृहदाह, क्षौरकार्यमें रोगोत्पत्ति, श्राद्धमें अर्थनाश, विवादमें बुद्धिनष्ट और युद्धमें भय होता है।

अस्तताराके मध्यम हो जाते हैं। चन्द्र और तारा शुद्धि होने पर अन्य समस्त दोष नष्ट हो जाते हैं।*

विशेष विवरणके लिए ग्रहण शब्द देखो।

२ दश महाविद्याओंमेंसे दूसरो विद्या।

"काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा॥
बगला सिद्धविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका।
एता दश महाविद्याः सिद्धविद्याः प्रकीर्त्तिताः॥"

(तन्त्रसार)

काली तारा षोडशी भुवनेश्वरी, भैरवी छिन्नमस्ता, धूमावती, बगला, मातङ्गी और कमला ये दश महाविद्याएं हैं।

सतीने दक्षयज्ञमें जानेके लिए महादेवसे बार बार अनुमति मांगी थी किन्तु महादेवने किसी तरह भी उन्हें जानेकी अनुमति न दी। इस पर सतीने बड़े घोर महादेवको डरानेके लिए दश रूप धारण किये थे। पीछे महादेवने भयभीत हो कर उन्हें दक्षयज्ञमें जाने की अनुमति दी थी। दशमहाविद्या देखो।

प्रथमा तारा है और द्वितीया महाविद्या (कोषमें "काली तारा महाविद्या" है) ऐसा नहीं। काली और तारा दोनों ही आद्या महाविद्या हैं। कालिकासे ही ताराकी उत्पत्ति है।

कहा है, कोयिलोंने उत्पन्न हो कर कालिकाका रूप धारण किया था कालिका सर्वमयी हैं। तारा चिन्मयी अचिन्त्यरूपिणी और सर्वसिद्धिदायिनी हैं। साधकको यदि तारामन्त्रसिद्धिका ज्ञान हो तो वह मोक्ष को मुक्ति लाभ करता है। उसको अनर्गल कविता कहने की शक्ति हो जाती है और वह सर्वशास्त्रमें पाण्डित्य लाभ कर धनपति हो जाता है।

३ बृहस्पतिकी स्त्री। एक दिन अत्रिनन्दन चन्द्र ताराके अलोकसामान्य रूपको देख कर उन्हें हरण कर ले गये। बृहस्पतिको मालूम होने पर उन्होंने देवताओंसे कहा। देवताओंने ऋषियोंके साथ मिल कर चन्द्रसे तारा मांगी। परन्तु दुर्बुद्धि सोमदेवने ताराको लौटाया नहीं। इस पर देवाचार्य बृहस्पति अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे। शुक्राचार्य उनके पक्षावलम्बी हुए। महादेवजी रुद्र पहले बृहस्पतिके पिता अङ्गिराके शिष्य थे, वे भी गुरु पुत्रके स्नेहके कारण बृहस्पतिके पक्षपोषक हुए। महात्मा रुद्रदेव जिस ब्रह्मशिर नामक परमास्त्रका प्रयोग दैत्यों पर किया गया था और उससे दैत्योंकी यशोराशि विनष्ट हुई थी, उसी अतिभीषण आजगव शरासनको धारण कर युद्धके लिए प्रवृत्त हुए। ताराके लिए इस युद्धका आरम्भ हुआ था इसलिए यह तारकामय नामसे प्रसिद्ध हुआ। इस देव दानव समरमें अनेक लोगोंका क्षय होने लगा। आखिर देवोंने अनन्योपाय हो कर ब्रह्माकी शरण ली। देवोंकी प्रार्थनासे लोकपितामह ब्रह्मा स्वयं समरभूमि पर आये। उन्होंने शुक्राचार्य और शङ्कर रुद्रदेवको सान्त्वना दे कर युद्धसे निवृत्त होनेका आदेश दिया और ताराको चन्द्रसे ले कर बृहस्पतिको अर्पण किया। उस समय ताराको अन्तःसत्वा देख कर बृहस्पतिने कहा—"तुम मेरे क्षेत्रमें अन्यजनित गर्भधारण न कर सकोगी।" ताराने उसी समय अग्निके तुल्य दस्युहन्तमको प्रसव कर शरस्तम्ब पर फेंक दिया। नवजात कुमार शरस्तम्ब पर गिर कर ज्वलन्त पावककी तरह दीप्यमान हो गया, उसकी शरीर-कान्तिसे देवगण मानो तिरस्कृत होने लगे। देवोंने संशयापन्न हो पूछा—"देवि! सच कहना यह पुत्र सोमदेवका है या बृहस्पतिका?" किन्तु ताराने कुछ उत्तर न दिया। इस पर सर्वोत्कृष्ट दस्युहन्तम अपनी

* "अस्तङ्गतविधुस्तेऽप्यस्तारे [illegible] ।
मित्रं परममित्रञ्च कथ्यताः प्रकीर्त्तिताः॥
सर्वाण्यक्रतानि [illegible] कारयेत्।
[illegible]॥
ताराणां वधिकस्तत्र [illegible] सर्वत्र भाको भवेत्॥
भेषजे मरण तथा [illegible] प्रारम्भके।
और [illegible] कृषि [illegible]।
नारे [illegible] बुध [illegible]॥
[illegible] त्रिविधा च [illegible]।
सिद्धि [illegible] कथिता॥
ताराचक्रके अन्ते दोष [illegible] है।
है [illegible]॥"

(ज्योतिस्तत्त्व)

माताको शाप देनेके लिए तैयार हुआ, तब ब्रह्माने उसको निषेध कर तारासे पुनः पूछा—"तारे! तुम सच सच कह दो, यह पुत्र किसका है?" ताराने हाथ जोड़कर कहा—"यह महात्मा कुमार दस्युहन्तम भगवान् सोमदेवका पुत्र है।" यह सुन कर प्रजापति सोमदेवने अपने पुत्रको ग्रहण किया और उसका नाम बुध रक्खा। यह बुध अब भी गगनाङ्गनमें चन्द्रको प्रतिकूल दिशामें उदित होता है।

सोमदेव इस पापसे सहसा राजयक्ष्मारोगसे आक्रान्त हो दिन दिन क्षीणमण्डल होने लगे। अन्तमें चन्द्रने इसकी शान्तिके निमित्त अपने पिताकी शरण ली। महातपा अत्रिने इनके पापकी शान्ति कर दी। पीछे चन्द्र पापमुक्त हो कर पूर्ववत् दीप्तिशाली और पूर्णमण्डल हो गये।

६ अक्षिमध्य चक्षुका तारा, आंखकी पुतली। पर्याय—कनीनिका, तारका और विम्बिनी।

७ बुद्ध अमोघसिद्धकी स्त्री। ८ जैनशक्तिविशेष।

ताराकूट (सं० क्लो०) ताराणां कूटं, ६-तत्। ताराविषयक कूटभेद, फलित ज्योतिषमें वरकन्याके शुभाशुभ फलको सूचित करनेवाला एक कूट। इसका विचार विवाह स्थिर करनेके पहले किया जाता है। विवाह और नक्षत्र देखो।

ताराक्ष (सं० पु०) दैत्य भेद, एक दैत्यका नाम। तारकाक्ष देखो।

तारागञ्ज—रङ्गपुर जिलेके अन्तर्गत एक ग्राम। यहां धान, पाट और तमाकूका व्यवसाय अधिक होता है।

तारागढ़—१ अजमेरके मैरवाराके अन्तर्गत एक गिरिदुर्ग। यह अक्षा० २६°२६´२१´´ और देशा० ७४°४०´१४´´ पू०में अवस्थित है। अजमेरकी ओर शैलशृङ्ग जिधर ढालू हो गया है, उधर ही यह दुर्ग अवस्थित है। इसके चारों ओर दुर्भेद्य प्राचीर हैं। पूर्व समयके सभी राजगण इसी दुर्भेद्य दुर्गमें रहते थे। राथोन और चौहानके साथ जब लड़ाई छिड़ी थी, तब १२१० ई०में जहां मैयद हुसेनने प्राणत्याग किया था, वहां तुङ्गशृङ्गके ऊपर उनको भी एक सुन्दर मसजिद बनी है। अभी नसीराबादके अंगरेज सैनिक लोग यहां वायुसेवनको आते हैं।

२ पञ्जाबके नालगढ़ राज्यके अन्तर्गत एक गिरिदुर्ग। यह अक्षा० ३१° १०´ ३० और देशा० ७६° ५०´ पू०के मध्य शतद्रुनदीके बायें किनारे अवस्थित है। १८१४-१५ ई०में युद्धके समय गोरखा सेनाने इस दुर्गमें आश्रय लेकर अंगरेजोंके विरुद्ध युद्ध किया था।

ताराग्रह (सं० पु०) मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इन पांच ग्रहोंका समूह।

ताराचक्र (सं० क्लो०) ताराणां चक्रं, ६-तत्। तन्त्रोक्त चक्रभेद। इस चक्रद्वारा दीक्षणीय मन्त्रका शुभाशुभ जाना जाता है। नक्षत्र और दीक्षा देखो।

ताराचमन (सं० क्लो०) तारायाः आचमनं, ६-तत्। तारापूजाविषयक आचमन। तारापूजामें यह आचमन करना पड़ता है। तारा देखो।

ताराचरण व्यास—हिन्दीके एक अच्छे ग्रन्थकार। ये १८८८ ई०को लगभग विद्यमान थे। इन्होंने नाथानन्दप्रकाशिका नामक ग्रन्थ रचा है।

ताराज (सं० स्त्री०) एक वैराज। (ऋक्प्राति० १७।४)

ताराज (फा० पु०) १ लूट पाट। २ नाश, बरबादी।

ताराझकनक्षत्र (सं० पु०) तारोंका समूह जो आकाशमें क्रान्तिवृत्तके उत्तर और दक्षिणकी ओर रहता है। इस समूहमें अश्विनी भरणी आदि हैं।

तारादेवी (सं० स्त्री०) १ एक महाविद्या। तारा देखो। २ हिमालयका गहरा और अन्धकारमय गूढ़स्थान तथा भीषण दृश्यका एक गिरिशृङ्ग जो शिमलाके निकट विद्यमान है। ३ जैनोंकी एक शासनदेवी।

ताराधिप (सं० पु०) ताराणां अधिपः, ६-तत्। १ चन्द्र, चन्द्रमा। तारायाः अधिपः। २ शिव, महादेव। ३ बृहस्पति। ४ वालि और सुग्रीव। ५ नक्षत्राधिप, अश्वि, यम प्रभृति नक्षत्रोंके अधिपति। तारा देखो।

ताराधीश (सं० पु०) तारायाः अधीशः, ६-तत्। ताराधिप देखो।

तारानगर—बरद प्रदेशके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। (भ० ब्रह्मख० १९।४०)

तारानाथ (सं० पु०) ताराणां नाथः। १ चन्द्र, चन्द्रमा। २ तिब्बतके एक सुप्रसिद्ध बौद्धपण्डित। इन्होंने १७वीं शताब्दीमें एक बौद्धधर्मका इतिहास रचा है। भारतीय पुराविद्गण इनका यथेष्ट आदर करते हैं।

तारानाथ तर्कवाचस्पति—एक प्रसिद्ध बङ्गाली विद्वान्। १८१२ ई०में बर्दमान जिलेके कालना ग्राममें इनका जन्म हुआ था। बचपनसे ही इनको पढ़नेका बहुत शौक था। थोड़े ही दिनोंमें इन्होंने संस्कृतमें अच्छी व्युत्पत्ति लाभ की और 'तर्कवाचस्पति' उपाधिसे विभूषित हो गये। फिर काशी जा कर इन्होंने वेदान्तशास्त्रका अध्ययन किया। अध्ययन कर चुकने पर इन्होंने अपने ग्राममें चतुष्पाठी खोल दी और नैपालसे सीसमकी लकड़ी मंगा कर उसका रोजगार करने लगे। किन्तु दुर्भाग्यवश इसमें घाटा हो गया और वे कर्जदार हो गये।

संस्कृत-कालेजमें वे व्याकरणके अध्यापक नियुक्त हुए। कालेजके अध्यक्षने इन्हें प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ छपा कर प्रचार करनेकी सलाह दी। इन्होंने काठयन्त्र खरीदके छापाखाना खोल कर ग्रन्थ प्रकाशन कार्य प्रारम्भ कर दिया और कर्ज चुका कर निश्चिन्त हुए। इसके बाद इन्होंने शब्दकल्पद्रुमके तुल्यमाकार "वाचस्पत्य" नामक एक वृहत् अभिधान सङ्कलित किया। इस कोषके प्रकाशनमें करीब १२ वर्ष समय और ८०००) रुपये व्यय हुए थे। इसके सिवा इन्होंने शब्दस्तोम-महानिधि (कोष), तत्त्वकौमुदी टीका, पाणिनिकी सरल टीका धातुरूपादर्श आदि बहुतसे संस्कृत ग्रन्थ लिखे हैं।

ताराप्रथ (सं० पु०) ताराणां पन्था: ६-तत्, अच् समासान्त:। आकाश।

तारापीड़ (सं० पु०) ताराणां आपीड़: भूषणमिव, ६-तत्। १ चन्द्र चन्द्रमा। २ चन्द्रवंशीयके एक पुत्रका नाम। ये अयोध्याके राजा थे। इनके पुत्रका नाम चन्द्रगिरि था। ३ काश्मीरके एक विख्यात राजा। काश्मीर देखो।

तारापुर—बम्बई प्रदेशके गुजरात राज्यका एक नगर। यह खम्भात नगरसे ५ कोस उत्तरमें अवस्थित है।

२ थाना जिलेका एक बन्दर। यह अक्षा० १९° ५०' उ० और देशा० ७२° ४२' १०" पू० पर पड़ता है। यह माहीमके दक्षिण बैहर स्टेशनसे ९ कोस उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। माहीमके उत्तरमें यह तारापुर जिसको नाम भी मयगर है। यहां व्यापके अधिक रुपयेका कारोबार होता है।

तारापुर चिंचनी—बम्बईके थाना जिलेके अन्तर्गत माहिम और दाहानू तालुकका एक प्राचीन शहर। यह अक्षा० १९° ५२' उ० और देशा० ७२° ४१' पू० के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल लगभग ०·११ है, जिनमेंसे अधिकांश पारसी और ब्राह्मण हैं। पारसी जिजीभाई मञ्चेरजीका १८२० ई०का बनाया हुआ यहां एक मन्दिर है। यहां चावल, नमक, गुड़, मछलीके तेल तथा जोड़ीको काम इसी तथा धान, मछली और लकड़ीको रफ्तनी होती है।

ताराप्रमाण (सं० क्लो०) ताराणां प्रमाणं, ६ तत्। अश्विनी प्रभृति नक्षत्रकी संख्या-निरूपक संख्या। ज्योतिःसंहितामें इस संख्याके विषयमें इस प्रकार लिखा है— त्रिपदि ३, गुण ३, रस ६, इन्द्रिय ५, अनल ३, शशी १ विषय ५, गुण ३, ऋतु ६, अश्व ७, वसु ८, पक्ष २, एक १, चन्द्र १, भूत ५, अर्णव ४, अग्नि ३, रुद्र ११, अश्वि ८, दहन ३, शत १०० तथा द्वात्रिंशत् ३२, यह तारका-प्रमाण है। अश्विनी आदि नक्षत्रोंके साथ पूर्व लिखित तारायें युक्त हैं। इनका क्रम तारोंकी आकृतिके अनुसार हुआ करता है। (बृहत्संहिता ९७ अ०)

ताराबाई—१ महाराष्ट्रनायक राजारामकी ज्येष्ठ पत्नी और भारतप्रसिद्ध शिवाजीकी पुत्रवधू।

१७०० ई०में सिंहगढ़में राजारामकी मृत्यु हुई। बाद मुगल औरङ्गजेबने सिंहगढ़ घेर लिया। राजारामकी ज्येष्ठा महिषी ताराबाईने इस समय शोक त्यागा और शत्रुको जलाञ्जलि दे कर अपने धर्म, देश और पति-राज्यको रक्षाके लिए अस्त्रधारण किया। इस समय बहुत से मराठोंने औरङ्गजेबका पक्ष अवलम्बन किया था, किन्तु रानी ताराबाईकी सुमधुर भर्त्सना और उत्साहवाक्योंसे बहुतसे महाराष्ट्र-वीरोंने उत्तेजित हो कर पुनः ताराबाईका साथ दिया था।

पहले ताराबाईने रामचन्द्र पन्त अमात्य, शङ्करजी नारायण सचिव और धनजी यादवकी सहायतासे १० वर्षके बालक (३य) शिवाजीको सिंहासन पर बिठाया और छोटी सपत्नी राजसबाईको कैद कर रखा।

१७०० ई०से १७०१ ई० तक औरङ्गजेबने सिंहगढ़ अवरोध कर अन्तमें अधिकार कर लिया। गढ़का नाम बदल कर 'बक्सिन्दबक्सी' (अर्थात् ईश्वरका दान) नाम रखा गया।

१७०१ ई०में तुरबतखाकी अधीन सेनापरिचालित पूना छोड़

ने जिसको छिपी तौरसे पाला था वह यही उनका प्यारा पौत्र रामराजा उत्तराधिकारी हुआ। पेशवा बालाजीने माधुको (माधव राव पेशवे) लिखा था कि, "ताराबाईका पौत्र राजा होने पर भी राज्यशासन मेरे ही हाथ रहेगा तथा जिससे शिवाजीके वंशधरोंका नाम उज्ज्वल रहे, मैं उस पर विशेष लक्ष्य रक्खूंगा।"

इस समय ताराबाईकी उम्र ७० वर्षकी थी। इस वृद्धावस्थामें भी उनकी पहलेकी चेष्टाओं और बुद्धिशक्ति का जरा भी ह्रास नहीं हुआ था। यशुजीके ऊपर रामराजका भार दे कर बालाजी पूना चले आये। अबसे पूना ही महाराष्ट्र-साम्राज्यकी राजधानी हुई, रामराज नाममात्रके लिए सताराके राजा थे उनमें शक्ति कुछ भी नहीं थी। इस समय बालाजी ही सर्वप्रधान थे। किन्तु ताराबाईकी प्रकृति ऐसी न थी कि, वे किसीकी अधीनतामें रहें। बालाजी भी ताराबाईकी उतनी परवाह नहीं करते थे। अब ताराबाई बालाजीके हाथसे राजशक्ति ले कर स्वयं परिचालन करनेके लिए चेष्टित हुई।

ताराबाईने पन्तसचिवको अनुरोधपूर्वक कहला भेजा कि "मैं सिंहगढ़में पतिकी समाधि दर्शन करने जाऊँगी, उस समय आप मुझको साम्राज्यकी नेत्रीरूपमें प्रचार करनेकी चेष्टा करें।" बालाजी इस संवादको पा कर कुछ विचलित हुए थे। उन्होंने ताराबाईको हाथमें रखनेके लिए कहला भेजा कि, "आप जैसी सहायता बुद्धिमती और उच्चप्रकृतिकी रमणी दूसरी नहीं है; आप अधिनायक स्थान पर राजशक्ति परिचालन कर सकें इसमें हमें कोई आपत्ति नहीं है किन्तु हमें जो राजा साहुसे क्षमता प्राप्त हुई है उसको रामराज जिससे स्वीकार कर लें, इसकी कोशिश आप अवश्य ही करेंगी।"

महाराष्ट्र मामलातदार बालाजीकी कूटनीति समझ गये। इस समय प्रधान पद पानेके लिए उनमें बहुत झगड़ा होने लगा। इसी बीचमें बालाजीने भीतर ही भीतर षड़यन्त्रता आरम्भ कर दी। रामराज सताराके दुर्गमें कैद कर लिये गये। ताराबाईने कोल्हापुर जा कर आश्रय लिया। कुछ दिन बालाजीने उनके विरुद्ध एक दल सेना भेज दी, किन्तु उससे कुछ हुआ नहीं।

ताराबाई साम्राज्यका सब भार ग्रहण करनेके लिए चारों तरफसे महाराष्ट्रियोंको उत्तेजित करने लगी। पेशवा बालाजीने विचारा कि ताराबाईके प्रति अनिष्ट आचरण करनेसे कोई फल नहीं निकलेगा। उन्होंने ताराबाईको कहला भेजा कि, आप साम्राज्यमें गुणमें मानमें और उम्रमें सब प्रधान हैं; आपके विरुद्ध आचरण करना हमको उचित नहीं। आप पूना आ कर यथाशक्ति यत्न कीजिये।

१७५० ई०में ताराबाई इस प्रकार पूना बुलाई गई। रामराज भी कुछ दिनोंके लिए मुक्त हुए, किन्तु रामराज ताराबाईकी इच्छाके विरुद्ध कार्य करने लगे। इससे ताराबाई रामराज पर अत्यन्त असन्तुष्ट हो गई, उन्होंने दामाजी गायकवाड़ और यशुजी भी सबोंकी सहायतासे रामराजको कैद कर लिया और स्वयं सर्वमयी हो गई। बालाजी युद्धके लिए निजामराज्यमें गये थे उनके लौटने पर ताराबाईको सम्पूर्ण अधिकारोंसे हाथ धोना पड़ा। मानसिक कष्टसे कुछ दिन बाद ताराबाईका स्वर्गवास हो गया।

२ बैदनूरकी प्रसिद्ध वीरबाला। बैदनूरके सोलङ्की राज राव सुरतानकी कन्या थी। अनहलवाड़के प्रसिद्ध बलहर वंशमें सुरतानका जन्म हुआ था।

सुरतानके पूर्वपुरुषोंने कुछ समय तक टोडाटोड़ामें राज्य किया था। लल्ला नामका एक अफगानके सुरतानको वहांसे भगा कर उस राज्य अधिकार कर लेने पर सुरतानने बैदनूर आ कर आश्रय लिया था।

जिस समय पिताका भाग्य-परिवर्तन हुआ था, उस समय ताराबाई किशोरी थी। वसन भूषण इन्हें अच्छे नहीं लगते थे वे सर्वदा तलवारसे खेला करती थी और घोड़े पर चढ़ कर बाणप्रयोग किया करती थी। ताराबाला सर्वदा वीरवेशमें रहना पसन्द करती थी। देखते देखते ताराबालाके कमनीय अङ्गमें यौवन भाव दिखलाई दिये। इनके रूप, गुण, कार्यशिक्षा और अद्भुत तलवार चलानेकी कथा सारे ही राजपूतानेके वीर समाजमें फैल गई। मेवाड़के राणा रायमलके द्वितीय पुत्र जयमलने ताराबाईके साथ विवाह करनेके लिए प्रार्थना की। वीरबालाने जयमलको कहला भेजा कि "जो टोड़ाका उद्धार करेंगे, ताराबाई उन्हींको

विषद् प्रलेपक्का १ पल ग्रहण कर यदुपथ्यसे धीरे धीरे पान करते हैं। सबको पिष्टी की भांति कर इसे स्निग्ध भाण्डमें रखते हैं। भोजन करनेके बाद १ तोला सेवन करनेका विधान है। इससे पित्तशूल, कामला, पाण्डु रोग, शोथ, मन्दाग्नि, अर्श, यक्ष्मा, गुल्मोदर प्रभृति रोग जाते रहते हैं। (भैषज्यरत्ना० शूलाधि०)

तारामयी (सं० स्त्री०) तारया स्वरूपा स्वरूपे मयट्। तारास्वरूप।

तारामृग (सं० पु०) ताराकार मृग: मृगशिर:। मृगशिरा नक्षत्र।

तारायण (सं० पु०) आकाश।

तारारि (सं० पु०) ताराणां अरि: ६-तत्। विट्माक्षिक नामको उपधातु।

तारावती—१ राजा चन्द्रशेखरको पत्नी। प्राचीनकालमें अनन्त यौवन भोगवती नगरीमें इक्ष्वाकुवंशोय ककुत्स्थ नामके एक राजा थे। सर्वदेवको कन्या मनोन्मादिनीके साथ उन्होंने विवाह किया था। इनके क्रमशः १०० पुत्र हुए। किन्तु कन्या एक भी न होनेसे ककुत्स्थको पत्नीने कन्या की इच्छासे चण्डिकाकी आराधना की। तीन वर्ष बाद चण्डिकाने सन्तुष्ट हो कर उनको स्वप्नमें वर प्रदान कर दिया कि "त्रिलोकसुन्दरी सार्वभौम राजाकी स्त्री और सत्यसमान्वित तुम्हारे एक कन्या होगी।" यथासमय मनोन्मादिनीके असामान्य सुन्दरी एक कन्या हुई। दैवताके वरसे इस कन्याके स्वाभाविक ताराका चिह्न था, इसलिए पिताने उसका नाम तारावती रक्खा। तारावतीका यौवनकाल उपस्थित देख तनय पिताने वैशाखमासके माधवमें हरचन्द्र और सुमतिकको स्वयंवर सभा करके सभी दिशाओंको दूत भेजे। इस संवादको पा कर सभी राजा सभामें उपस्थित हुए, पौष्यतनय चन्द्रशेखरराज भी नानाभरणादिसे विभूषित हो कर स्वय वरसभामें पधारे।

तारावतीने स्वयं वरका दृश्यान्त सुन कर चण्डिकाके मन्दिरमें जा देवी कालिकाकी आराधना की। चण्डिकाने तुष्ट हो कर कहा—'चन्द्रशेखर नामके महेश्वरावतार पौष्यतनय मनोहर रूपवान् हैं। उन्हींको तुम वरमाला देना।' तारावतीने कालिकाके आदेशानुसार सभामें जा कर चन्द्रशेखरको ही वरमाला प्रदान की।

अनन्तर चन्द्रशेखर अपनी पत्नी तारावतीको ले कर राजधानीको लौटे। ककुत्स्थको चित्राङ्गदा नामको दूसरी एक कन्या थी जो रूपमें तारावतीके समान थी। स्वयं दासियोंकी अपेक्षा कम कर बड़ी बहनके साथ आई थी। इनका वर्णन गौरीके गर्भसे जन्म हुआ था। बाल्यकालमें एक दिन महर्षि अष्टावक्रको व्यङ्ग्य करनेसे उनके शापसे ये तारावतीको दासी हुई थीं। महाराज चन्द्रशेखरने त्वरित नदीके किनारे करवीरपुर नामका एक नगर बसाया था और वहीं वे बहुत दिन सुखसे रहते थे। एक दिन तारावती त्वरिता नदीमें स्नान कर रही थीं उसमें एक कपोत नामक ऋषिकी इन पर दृष्टि पड़ी और वे इन पर आसक्त हो गये। ये ऋषि शालिवाहकी आज्ञासे कपोत शरीर धारण कर विचरण कर रहे थे इसलिए इनका नाम कपोत ऋषि पड़ा गया था।

कपोतमें अत्यन्त कामातुर हो कर इनसे विषयभोग की इच्छा प्रगट की। तारावती डर गई और मुनिको प्रणाम कर कहने लगी — "मैं चन्द्रशेखरकी पत्नी हूं, मेरा नाम है तारावती, मैं किस तरह सतीत्वधर्मको छोड़ सकती हूं?" महर्षिने कहा—"डरो मत मैं तुम्हारे द्वारा सर्वलक्षणसम्पन्न महाबलशालो पुत्रद्वय उत्पन्न करूंगा यदि तुम मेरी बात न मानोगी, तो मैं शाप द्वारा तुम दोनोंको भस्म कर दूंगा।" तारावतीने उत्तर दिया—"आप कुछ देर ठहर जावें।" इतना कह कर तारावती घरको चली गई और अपनी बहनसे कहने लगी—"तुम मेरे समान रूपवती हो तुम्हारे सिवा अब मुझे इस विपत्तिसे अन्य कोई भी उद्धार नहीं कर सकता।" चित्राङ्गदा कुछ देर तक चुपचाप खड़ी रही, पीछे तारावतीके आदेशानुसार मुनिके पास चल दीं।

चित्राङ्गदाके गर्भसे उस मुनिके औरससे बभ्रु और तुम्बुरु नामक दो पुत्र हुए। इस तरह चित्राङ्गदा कपोत मुनिके पास रहने लगीं। और एक दिन तारावती उस त्वरिता नदीमें स्नान कर रही थीं। इसी समय उस मुनिने चित्राङ्गदासे पूछा—'यह अतीव मनोरमा सुन्दरी कौन है?' चित्राङ्गदाने डरते हुए उत्तर दिया—"ये राजा चन्द्रशेखरकी पत्नी और मेरी बड़ी बहन तारावती हैं। पुनः इस नदीमें स्नान करनेको आई

है, आप इनकी रक्षा कीजिए।" कपोतको सब भेद मालूम पड़ गया। वे अत्यन्त क्रुद्ध हुए; तारावतीके पास जा कर कहने लगे —'तारावती! तूने मुझे धोखा दिया है, उसका फल भोग। मेरे शापसे वीभत्सवेशधारी विरूप धनहीन नरकपाल कोई लोभी वृद्ध सहसा तुझे ग्रहण करेगा और एक वर्षके भीतर तेरे गर्भसे दो पुत्र उत्पन्न होंगे।" इस पर तारावतीने कहा कि 'यदि मैं सच्ची सती हूं और मेरी माताने यदि मुझे चण्डिकाकी आराधना करके प्राप्त किया हो, तो निश्चय समझें, देवताके सिवा कोई भी मेरा स्पर्श न कर सकेगा।'

इतना कह कर तारावती अपने घरको लौट गई और राजा चन्द्रशेखरसे मुनिके शापका हाल कह सुनाया। राजा चन्द्रशेखर इस वृत्तान्तको सुननेके बाद सर्वदा तारावतीके पास रहने लगे। एक दिन कुछ देरके लिए चन्द्रशेखर पास न थे, तारावती उन्नतचित्तसे चन्द्रशेखरके ध्यानमें नियुक्त थीं। इसी समय महादेवने पार्वतीसे कहा—"हे पार्वती, तुम इस तारावतीके शरीरमें प्रविष्ट होओ, मैं उस पर उपगत हो कर मुनिका शाप मोचन करूं। तारावती तुम्हारा ही अंश है। इसके गर्भसे भृङ्गी और महाकाल उत्पन्न हो कर तुम्हें शापसे मुक्त करेंगे।" पीछे पार्वतीने तारावतीके शरीरमें प्रवेश किया। महादेवने तारावतीको मुग्ध करके अस्थिमाल्यधारी वीभत्सवेश दुर्गन्धदेह जराजीर्ण और अति विरूप शरीर धारण कर तारावतीसे सम्भोग किया।

उसी समय तारावतीके गर्भसे वानरमुख दो पुत्र उत्पन्न हुए। पुत्र उत्पन्न होते ही पार्वती तारावतीकी देहसे निकल आईं।

जब मोह दूर हुआ, तब तारावती सामने वीभत्सवेशधारी महादेव और सद्योजात वानरमुख दो पुत्रोंको देख कर अत्यन्त विमर्ष हुईं और अपनेको भ्रष्ट समझ कर नाना रूप विलाप करने लगीं। इतनेमें चन्द्रशेखर भी वहां आ पहुंचे, वे भी तारावतीको इस अवस्थामें देख कर अत्यन्त दुःखित चित्तसे विलाप करने लगे। इसी समय आकाशवाणी हुई—"राजन्! तारावती पर किसी तरहका सन्देह न करें। स्वयं महादेव ही भार्याके पास आये थे, ये दोनों महादेवके ही पुत्र हैं। आप इनकी रक्षा करें। इसका पूरा वृत्तान्त नारदसे मालूम पड़ेगा।" एक दिन नारदने चन्द्रशेखरके घर उपस्थित हो कर तारावती और चन्द्रशेखरसे कहा—"राजन्! महादेवने मायिवोंके शापसे पार्वतीको इस देहमें प्रविष्ट करा कर उस पर उपभोग किया था, आप इनको भ्रष्ट न समझें। आप स्वयं भी महादेव हैं और तारावती भी साक्षात् पार्वती हैं, अब आप अपनेमें शिवत्वका अनुभव करें।"

नारदकी इस बातको सुन कर, चन्द्रशेखर अपनेमें शिवत्वका और तारावती अपनेमें साक्षात् पार्वतीका अनुभव करने लगीं। पूर्वकालमें विष्णुमायाने अपनेको दो मनुष्य योनिमें मुग्ध किया था। इसी कारण मनुष्य शरीर द्वारा अपने शिवत्वका अनुभव नहीं कर सके थे। इस तरह उनका सन्देह दूर हो गया। तारावतीके गर्भसे उत्पन्न चन्द्रशेखरके तीन पुत्र हुए—बड़ा उपरिचर, मझला दमन और छोटा अलर्क। तारावतीके गर्भसे वेताल और भैरव महादेवके सद्योजात दो पुत्र थे। इस तरह कुल ५ पुत्र थे। पीछे पति-पत्नी दोनों मनुष्यदेह छोड़ कर शिव और गौरीमें मिल गये। (कालिकापु० ४८-५१ अ०) २ काञ्चनपुरके राजा धर्मध्वजकी पत्नी।

तारावर्ष (सं० क्ली०) तारापतन, ताराओंका गिरना।

तारावली (सं० स्त्री०) मणिभद्र यक्षकी कन्या।

तारापीड़ा (सं० स्त्री०) ताराया: पीड़ा, ६ तत्। तारा-पूजाङ्ग पीड़ान्यासभेद।

तारास्थान—एक सूरका नाम।

तारिक (सं० क्ली०) तॄ-णिच्-ठन्। अ॰इनिठनौ। पा ५।१।११५। तारणमूल्य, नदी आदि पार उतारनेका भाड़ा या महसूल, उतराई।

"गर्भिणी तु द्विमासादिस्तथा प्रव्रजितो मुनिः।
ब्राह्मणा लिङ्गिनश्चैव दाप्यास्तारिकं तरे॥" (मनु ८। ४०७)

गर्भिणी स्त्री, भिक्षु, वानप्रस्थाश्रमी मुनि, ब्राह्मण, लिङ्गी और ब्रह्मचारी इन सबसे तरपण्य (महसूल) नहीं लेना चाहिये।

तारिका (सं० स्त्री०) ताड़िका इत्यर। तालरसजात मद्यभेद, ताड़ी नामक मद्य।

तारिणी (सं० स्त्री०) तारिन् ङीप्। १ बौद्धोंकी एक देवी। इसके पर्याय—तारा, महाश्री, ओंकार स्वाहाश्री, मनोरमा, जया, अनन्ता, शिवा, लोकेश्वरात्मजा, खदुरवासिनी, भद्रा, वैश्या, नीलसरस्वती, शंखिनी, महातारा, वसुधारा, धनदा, त्रिलोचना और लोचना। २ द्वितीया महाविद्या। महोग्रा, तारा, जया, अम्बा, काली, सरस्वती, कामेश्वरी और चामुण्डा ये आठ तारिणी हैं। इनकी आराधना करनेसे मनुष्य कवित्व, पाण्डित्य और धन पाते हैं तथा राजसभामें और विवाद प्रभृति सब कामोंमें जय लाभ करते हैं।

३ उद्धारिणी उद्धार करनेवाली।

तारिन् (सं० त्रि०) तारयति तृ-णिच् णिनि। तारक, उद्धार करनेवाला।

तारी (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारकी चिड़िया। २ समाधि ध्यान।

तारीक (फा० वि०) १ स्याह, काला। २ धुंधला, अँधेरा।

तारीकी (फा० स्त्री०) १ स्याही। २ अन्धकार।

तारीख (अ० स्त्री०) १ महीनेका प्रत्येक दिन। २ वह तिथि जिसमें पूर्वकालके किसी वर्षमें कोई विशेष घटना हुई हो। ३ नियत तिथि। ४ इतिहास, तवारीख।

तारीफ (अ० स्त्री०) १ लक्षण, परिभाषा। २ विवरण, वर्णन। ३ प्रशंसा, श्लाघा बखान। ४ प्रशंसाकी बात सिफत।

तारुणायनि (सं० पु०) तारुणके अपत्य।

तारुण्य (सं० पु०) तरुणस्य अपत्यम् पुमान् तरुण गर्गादित्वात् यञ्। तरुण ऋषिके अपत्य।

तारुण्यायनी (सं० स्त्री०) तरुणस्य अपत्यम् स्त्री तरुण ष्फ। सर्वत्र लोहितादिकतन्तेभ्यः। पा ४।१।१८। तरुण ऋषिकी अपत्य स्त्री।

तारुण्य (सं० पु०-स्त्री०) तरुणस्य अपत्यम् गर्गादित्वात् यञ्। १ तरुण ऋषिके अपत्य। (त्रि०) स्त्रियां ङीप्। २ तरुण, छोटी उमरका।

तारुण्य (सं० स्त्री०) तरुणस्य भावः तरुण ब्राह्मणादित्वात् ष्यञ्। यौवन, जवानी।

तारेय (सं० पु०) तारायाः अपत्यम् तारा-ढक्। १ वालिके पुत्र अङ्गद। २ बृहस्पतिकी स्त्री ताराके पुत्र बुध।

तार्कव (सं० त्रि०) तर्कोर्विकारः तर्कोरवयवो इति वा तर्कु अण्। कोपधाच्च। पा ४।३।१३७। तकुए या टेकुएका विकार।

तार्किक (सं० त्रि०) तर्कं वेत्ति तर्कशास्त्रमधीते वा तर्क ठक्। १ तर्कशास्त्रवेत्ता, तर्क शास्त्रका जाननेवाला। २ तर्कशास्त्राध्ययनकारी तर्कशास्त्रका पढ़नेवाला। तर्कशास्त्रके छः भेद हैं—वैशेषिक, बौद्ध, सांख्य, नास्तिक लोकायतिक (चार्वाक) और आर्हत। जो इन सब शास्त्रोंको पढ़ते हों या अच्छी तरह जानते हों वे ही तार्किक हैं। तर्क देखो।

तार्क्ष्य (सं० पु०) तृक्ष-यञ्। १ कश्यप ऋषि। २ विनताके गर्भसे उत्पन्न कश्यपका पुत्र गरुड़।

तार्क्ष्यज (सं० क्ली०) रसाञ्जन।

तार्क्षायण (सं० पु०-स्त्री०) तृक्षस्य अपत्यम् तृक्ष फक्। शिवादिभ्योऽण्। पा ४।१।११२। तृक्षके वंशज।

तार्क्षी (सं० स्त्री०) तार्क्ष्य गौरा० ङीष्। पातालगरुड़ लता, छिरेटी, छिरिहटा।

तार्क्ष्य (सं० पु०) तार्क्ष्यस्य अपत्यम् तार्क्ष-यञ् (गर्गादिभ्यो यञ्। पा ४।१।१०५।) १ कश्यपमुनिके गोत्रज। २ गरुड़का एक भाई, गरुड़के बड़े भाई अरुण। ३ गरुड़। ४ अश्व, घोड़ा। ५ सर्प, साँप। ६ शालवृक्ष। ७ स्वर्ण, सोना। ८ अश्वकर्ण वृक्ष एक प्रकारका शालवृक्ष। ९ स्यन्दन, रथ। १० पर्वतभेद एक पहाड़का नाम। ११ विहग मात्र, एक प्रकारका पक्षी। १२ अरिष्टनेमि। १३ महादेव। (स्त्री०) १४ रसाञ्जन।

तार्क्ष्यकेतन (सं० पु०) तार्क्ष्यः केतनं यस्य बहुव्री०। गरुड़ध्वज, विष्णु।

तार्क्ष्यज (सं० क्ली०) तार्क्ष्यात् पर्वतात् जायते जन-ड। रसाञ्जन, रसोत।

तार्क्ष्यध्वज (सं० पु०) तार्क्ष्यो ध्वजोऽस्य बहुव्री०। गरुड़ध्वज, विष्णु।

तार्क्ष्यनायक (सं० पु०) तार्क्ष्याणां सर्पाणां नायकः ६ तत्। गरुड़। इसने अपनी माताके दासत्व कालमें सर्पोंको वहन किया था।

तार्क्ष्यनाशक (सं० पु०) तार्क्ष्याणां सर्पाणां नाशकः, ६-तत्। सर्पनाशक गरुड़।

तार्क्ष्यप्रसव (सं० पु०) अश्वकर्णवृक्ष, एक प्रकारका शालवृक्ष। (राजनि०)

तार्क्ष्यशैल (सं० क्लो०) रसाञ्जन, रसौत।

तार्क्ष्यसामन् (सं० क्लो०) सामभेद। (लाट्यायन १।६।१६)

तार्क्ष्यायण (सं० पु०-स्त्री०) तृक्षस्य ऋषेरपत्यं युवा गर्गादित्वात् यञ्, यूनि फक्। तृक्षऋषिके युवा अपत्य।

तार्क्ष्यायणी (सं० स्त्री०) तृक्षस्य गोत्रापत्यं स्त्री तृक्ष-लोहितादित्वात् ष्फ। तृक्ष ऋषिकी वंशज स्त्री।

तार्क्ष्यी (सं० स्त्री०) वनलताविशेष, एक वनलताका नाम।

तार्ण (सं० त्रि०) तृणस्य इदं शिवादित्वात्-अण्। १ तृण सम्बन्धी, जो घाससे बना हो। २ तृणजन्य वह्नि, घाससे उत्पन्न अग्नि। तृणात् तद्विक्रयात् स्थानादागतः शुण्डिकादि० अण्। ३ तृणविक्रयरूप अर्थ स्थानजात कर, वह कर या महसूल जो घास पर लगाया जाता है।

तार्णक (सं० त्रि०) तृणानि सन्त्यस्मिन् तृण कुक् च तोर्णकोयास्तस्मिन् भवः विल्वकादित्वात् छ मात्रस्य लुक्। तृणयुक्त देशभेद, वह स्थान जहां घास बहुत होती हो।

तार्णकर्ण (सं० पु०-स्त्री०) तृणकर्णस्य ऋषेरपत्यं शिवादित्वात् अण्। तृणकर्ण ऋषिके वंशज।

तार्णविन्दवीय (सं० त्रि०) तृणविन्दुः देवता अस्य तृण-विन्दु-छ। छ च। पा ४।२।२८। तृणविन्दुके उद्देशसे जो दिया जाय।

तार्णायन (सं० पु० स्त्री०) तृणस्य ऋषेर्गोत्रापत्यं नडादित्वात् फक्। तृण नामक ऋषिके वंशज।

तार्त्तीय (सं० त्रि०) तृतीय एव स्वार्थे अण्। तृतीय पादन्यास।

तार्त्तीयसवन (सं० त्रि०) तृतीय सवन सम्बन्धीय।

तार्त्तीयाह्निक (सं० त्रि०) तृतीय दिन सम्बन्धीय, जो तीसरे दिन होता हो।

तार्त्तीयिक (सं० त्रि०) तृतीय एव स्वार्थे ईकक्। तृतीय, तीसरा।

तार्प्य (सं० क्लो०) तृप-ण्यत्। तृपा नामक लताजात वस्त्रभेद, तृपा नामक लतासे बना हुआ वस्त्र। इसका व्यवहार वैदिक कालमें होता था।

तार्य (सं० त्रि०) तर-कर्मणि ण्यत्। १ तरणीय, पार होने योग्य। तरे तरणे देयं पण्यम्। २ तरणार्थ देय शुल्क, नदी आदि पार उतारनेका भाड़ा, उतराई।

तार्ष्टाघ (सं० पु०) वृक्षभेद एक पेड़का नाम।

ताल (सं० पु०) तल एव-अण्। १ करतल, हथेली। ताड्यते तड-कर्मणि अच् डस्य ल। (क्लो०) २ हरिताल, हरताल। ३ तालीशपत्र, तेजपत्तेकी जातिका एक पेड़। ४ दुर्गाके सिंहासनका नाम। ५ करतलध्वनि, ताली। ६ वह शब्द जो अपने जंघे या बाहु पर जोरसे हथेली मारनेसे उत्पन्न होता है। ७ हाथियोंके कान फटफटानेका शब्द। ८ लम्बाईको एक माप, बित्ता। ९ ताला। १० मजीरा या झांझ नामका बाजा। ११ चश्मेके पत्थर या कांचका एक पल्ला। १२ विल्वफल, बेल। १३ तलवारको मूठ। १४ एक नरक। १५ महादेव। १६ वृक्षविशेष, ताड़का पेड़। ताड़शब्द देखो। १७ पिङ्गलमें ढगणके दूसरे भेदका नाम जो एक गुरु और एक लघुका होता है—ऽ।

१८ गीतके काल और क्रियाका परिमाण नाचने और गानेमें उसके काल और क्रियाका परिमाण जो बीच बीचमें हाथ पर ठोंक कर सूचित किया जाता है। यह स्वर इतने समय तक गाया जाता है, इस काल तक विलम्बित होता है, इस काल तक द्रुत है, इत्यादि विषयों तथा अंगुलियोंके आकुञ्चन और प्रसारण आदिके द्वारा गीत और नृत्यादि विषयके काल और क्रियाके परिमाणका नाम हो ताल है। गाने और बजानेमें उसके काल और क्रियाके परिमाणविशेषको ताल कहते हैं। क्रियाके द्वारा अखण्ड दण्डायमान कालके छन्दोनुयायिक परिमाणविशेषका नाम भी ताल है।

महादेव और पार्वतीके नाचनेसे तालकी उत्पत्ति हुई है। महादेवने ताण्डव और पार्वतीने लास्य नृत्य किया था। ताण्डवका 'ता' और लास्यका 'ल' इन दो अक्षरोंसे "ताल" शब्दकी उत्पत्ति हुई है।

(मधुसूदन, अमरटीकाया भरत)

गीत, वाद्य और नृत्य, ये तीनों ताल द्वारा प्रतिष्ठित हुए हैं। इसके दो भेद है—मार्गताल और देशी ताल। भरतमुनिके मतानुसार मार्गताल ६० प्रकारका है:

नैका—१ चचत्पुट २ चाचपुट, ३ षट्पितापुत्रक, ४ उद्घट्टक, ५ सन्निपात ६ कङ्कण, ७ कोकिलारव, ८ राजकोलाहल, ९ रङ्गविद्याधर, १० शचीप्रिय, ११ पार्वतीलोचन, १२ राजचूडामणि, १३ जयश्री, १४ वादिकाकुल, १५ कन्दर्प, १६ नलकुबर १७ दर्पण १८ रतिलीन, १९ मोक्षपति, २० श्रीरङ्ग, २१ सिंहविक्रम, २२ दीपक, २३ मल्लिकामोदक, २४ गजलील, चर्चरी, २६ कुक्कुभ २७ विजयानन्द, २८ वीरविक्रम, २९ टेङ्किक ३० रङ्गाभरण, ३१ श्रीकीर्ति, ३२ जयमाली ३३ चतुर्मुख, ३४ सिंहनन्दन, ३५ नन्दीश, ३६ चन्द्रबिम्ब ३७ द्वितीयक, ३८ जयमङ्गल, ३९ गन्धर्व, ४० मकरन्द, ४१ त्रिभङ्गि, ४२ रतिताल ४३ वसन्त ४४ जगझम्प ४५ गारुगि, ४६ कविशेखर ४७ घोष, ४८ हरवल्लभ, ४९ भैरव, ५० गतप्रत्यागत ५१ मल्लताली ५२ भैरवमस्तक ५३ सरस्वतीकण्ठाभरण, ५४ क्रीडा, ५५ निःसारु ५६ मुक्तावली, ५७ रङ्गराज, ५८ भरतानन्द, ५९ आदितालक और ६ सम्पर्केष्टाक इसी प्रकार १२० देशी ताल बताये गये हैं। भिन्न भिन्न मतके प्राचीन ग्रन्थोंमें भिन्न भिन्न प्रकारके तालोंके नाम और संख्याओंमें भी पार्थक्य पाया जाता है। इन तालोंमें से आजकल बहुत ही थोड़े प्रचलित हैं। किन्तु उनमें मात्रा आदिके नियम नहीं मिलते। उनके नाम और मात्राका विवरण नीचे वर्णानुक्रमसे दिया जाता है।

चिह्नोंका परिचय इस प्रकार है—लघुमात्राका चिह्न (।) दीर्घमात्राका चिह्न (ऽ), प्लुतका चिह्न (ऽ) द्रुतका चिह्न (˘), अणुद्रुतका चिह्न (+), विराम-चिह्न ( ), विभिन्नताका चिह्न ।२ इत्यादि।

अड्डताली—१। (˘।।)—२। (˘˘।।)

अनङ्गताल—१। (।ऽ।।।ऽ)—२। (˘।।ऽ)

अन्तरक्रीड़ा—(˘˘˘)

अभङ्ग—१। (ऽऽ)—२। (।।।ऽ)

अभिनन्द—(।।˘˘ऽ)

अर्द्धताल—(˘।˘।˘˘˘।˘।)

अष्टताली—(× × ˘।)

असम (आड़ाच)—(।ऽऽ)

आड़ा पैमटा—यह भी प्रचलित है, इसमें १२ मात्राएं होती हैं। किसी किसीके मतसे, यह ताल आठ तेरह मात्राओंका होता है, इसमें तीन बारके बाद एक बार विराम होता है।

ठेका—

```
+ |     |      |          १  |    |
धागे  तेटेकटे  धेने        धागे  धागे

|       ० |    |         |        १ |
तेने    तागे  तेटेकटे   धेने      धागे

|        |
धागे     धेने ।।
```

आड़ा चौताला—यह वर्तमानमें प्रचलित है। इसमें ७ मात्राएं होती हैं; चार ताल और तीन खाली।

ठेका—

```
+ |  १ |   ० |   १ |   ० |   १ |    ० |
धागे धादा दिन्ता कत्ति धाधा तेटेकट् धा दिन्ता ।।
```

इसका दूसरा नाम छोटा चौताला है।

आड़ा ठेका—यह ताल प्रचलित है इसमें ८ मात्राएं हैं; तीन ताल और एक खाली छोड़ना पड़ता है।

ठेका—

```
+ |  | +  १ |  ० |  | +  | +
धिधि ताधि धिना तिति ताधि धि ना ।
```

आदिताल—(।)

इसमें एक लघुताल होता है।

इन्द्राणी—(˘।˘˘।)

उत्सव—(।ऽ)

उदीक्षण—(।।ऽ)

उपाङ्ग—(ऽऽऽ)

उद्घट्ट—१। (˘˘।)—२। (˘,।)

एकताली या एकतालिका—

१। रामा (˘) २। चन्द्रिका (।,ऽ), ३। मणिका (।˘।), ४। त्रिपुटा—(× ˘,।), ५। (˘।), ६। (× ˘˘˘।), ७। (˘ऽ)

प्रचलित एकतालमें ६ दोर्घ मात्राएं पाई जाती हैं। यह बारह मात्राका ताल है। कोई कोई इसको तीन और कोई चार पदोंमें विभक्त करते हैं। जो तीन पदोंमें विभक्त करते हैं, वे कहते हैं कि इसमें खाली ताल नहीं है; और जो चार पदोंमें विभक्त करते हैं, वे इसमें खाली है, ऐसा बतलाते हैं।

ठेका—

\+ । । । । १। । । ।
(१) धिन् धिन् धा धा, तिन् ता कत् ते
१। । । ।
धागे नागे धिन धा ::

\+ । । । १। । । ०। ।
(२) धिन् धिन् धा धा, थुन् ना, कत् ते
। १। । ।
धागे त्रेकेटे धिन् धा ::

कोई इसमें बारह मात्राओंको जगह ६ ही मात्राएं बतलाते हैं, सो एक ही बात है।

कन्दुप—(॥ ॥ । ॥ ।)

कङ्काल—१। पूर्ण (ᵕᵕᵕᵕ ॥) मतान्तरमें—(ᵕᵕᵕᵕ । ॥), २। खण्ड (ᵕᵕ ॥ ॥) मतान्तरमें (ᵕᵕ ॥), ३। रुम ॥ ॥ ।), ४। असम (। ॥ ॥)

कन्दताल—१। (॥ । ॥ ᵕᵕ ॥ ॥), २। (। ᵕᵕ)

कन्दर्प—१। (ᵕᵕ ॥ ॥ ।)-२। ᵕᵕ)

कन्दुक—१। (। । । । ॥), २ (ᵕᵕ,)

करण—(॥)

करणयति—(ᵕᵕᵕᵕ)

कलध्वनि—(। । ॥ ॥ ।)

कल्याण—(+ + +)

कव्वाली—यह ताल अब भी प्रचलित है।

कव्वाली-यों वोंके गायक प्रायः इस तालका व्यवहार करते हैं, इसलिए इसका नाम कव्वाली पड़ गया है। यह तिताली और द्रुततिताली नामसे परिचित है। द्रुततिताली (जलदतिताल), अथतिताली (धीमा तिताला), मध्यमान और आड़ा ठेका ये सभी एक जातिके हैं; सिर्फ द्रुतविलम्बित बजानेसे एक ही बोलसे उक्त सभी वाद्य साधे जा सकते हैं। मध्यमानको दूना द्रुत करनेसे कव्वाली, मध्यमान और द्रुत कव्वालीसे विलम्बित होनेसे जलदतिताल और मध्यमान विलम्बित होनेसे धीमा तिताला हो सकता है। मध्यमानको कुछ आड़ा बजानेसे आड़ा ठेकाका बोल हो सकता है, इसका ताल चार मात्राओंका है और एक खाली पड़ता है।

ठेका—

१+ । । १ ।
(१) धा धिन् दिन्ता, तेत् धागे त्रेकेटे दिन
।० । । १ ।
ता धिन् तिन् ता, कत् तागे त्रेकेटे दिन :

।+ । १।
(२) धा धिन् धिन् धा, ता धिन् धिन् ता,
।० । ।१
ता तिन् तिन् ता ना धिन् धिन् ता ::

।+ ।१
(३) धा धिन् धा, ना धिन् धा,
।० ।१
तिन् तिन् ता, ना धिन् धा :

तीसरा ठेका द्रुत बजाते समय और सितारके साथ अधिक बजाया जाता है।

कहरवा—यह ताल वर्तमानमें प्रचलित है। इसमें दोताल और पांच मात्राएं हैं। ठेका –

\+। ।ᵕ १। ।
धिधि कत् नाक् दिन ::

काश्मीरो खेमटा—वर्तमानमें प्रचलित है। ठेका—

\+ᵕ ० ᵕ
धिक्ना धा तिता ::

कोर्तिताल—१। (। ॥ ॥ । ॥), २। (। ॥ ॥ । ॥)

कुड्डुक—(ᵕᵕ ।।)

कुण्डनाचि –(ᵕ ॥, ᵕ ॥, ᵕᵕᵕᵕ ।, ॥)

कुण्डल—१। (ᵕᵕ । ।), २। (ᵕ । । । । ᵕ ॥ ᵕ ।)

कुविन्दक—(। ᵕᵕ ॥ ॥)

कुमुद—१। (। ᵕ । ॥), २। (। ॥)

कुम्भताल (× , । × ᵕ, ॥)

कोकिलप्रिय—(। । ॥)

क्रोड़ाताल (ᵕ ᵕ,)

खण्ड—(कङ्काल)--(ᵕᵕ ॥ ॥), २। (ᵕ ॥)

खण्डताल—(ᵕᵕ ॥ +)

खयरा—प्रचलित है। कोई कोई इसको खरता भी कहते हैं। ठेका—

\+ । । । १ ।ᵕ ।
धाक् धिधा धिधि धाक् तित् ::

खामसा—प्रचलित है; ठेका—

\+ ० ० ०
। । । । । । ।
धा केटे नाक दित् थुना केटे ताक थुआ ::

धेमटा—प्रचलित है। इसमें ६ मात्राएँ हैं, किसीके मतसे चार भी है। ठेका—

+ २ ० ३

(१) धाटे ध, नाति ने ताटे थे, ना धिने

× २ ३

(२) धागेधि नातिन् नाक धि नातिन् ।

घत्र—(। । । ।)

चतरस्त्र—(ऽ [illegible])

चतुष्कोण—(। । । । ,)

चारति—([illegible])

गाम—([illegible])

गौरी—(। । । । ।)

चर्चरीट—(ऽऽऽ।ऽऽऽ।।ऽ [illegible] ।।।ऽऽ। ।।ऽ [illegible] ।।।।)

चच्चत्पुट—(ऽऽ।ऽ।)

चपटी—१ ([illegible]) २। ([illegible])

चण्डताल—([illegible] ।।)

चतुरस्र—(ऽ। [illegible] ऽ)

चतुर्थ ताल—(।। [illegible])

चतुर्मुख—(।ऽ।ऽ)

चतुस्ताल—प्रचलित है—१। (। [illegible]) २। ([illegible])

चन्द्रकला—१। (।।ऽ)—२। (ऽऽऽ।ऽ।ऽऽऽ)

चन्द्रकोड़—(+ ।)

चन्द्रताल—(।।ऽऽऽऽ [illegible])

चन्द्रिका (एकताली)—(, ऽ)

चाचपुट—(ऽ।।ऽ)

चित्रताल—(। [illegible])

चौताल—यह भी प्रचलित है। इसमें ६ दीर्घ मात्राएँ हैं जिनमें १। २। ३। ६ इन चार पदमें आघात और ४। ५ मैं खाली मानना है। चौतालके ये दो मात्राएँ खाली होते हैं, इसमें चार आघात पड़ते हैं, इसीलिए इसका नाम चौताल पड़ा है। यथा—

+ ० २ ३ ०

(१) धा धा दिन्ता कत् धिटि, ता टे ता

२ ४ ०

धिटि कता गिदि गिना ।।

+ ० २ ० ३ ०

(२) धा धी, दिन् ता तत् ताधी दिन ता,

२ ४

धिटे कता गिदि गिनि

छोटा चौताल—प्रचलित है। इसमें ७ मात्राएँ होती हैं, जिनमें ३ आघात और १ खाली होते हैं। इसको आड़ा चौताला भी कहते हैं।

जगझम्प—(। ऽ [illegible])

जयचमक—(ऽऽ।)

जयश्री—१। (।।।ऽऽऽ।ऽऽ)—२। (।ऽ।ऽऽ ऽऽ)

जयताल—१। (।ऽ।।। ऽ।), २। (।ऽ।), ३। (।।। [illegible] ।।।)

जयमङ्गल—१। (।।ऽऽऽ), २। (ऽ ऽऽऽ)

जयश्री—१। (।ऽ।।ऽ), २। (ऽ।ऽ।ऽ)

जलद तिताला—यह भारतमें प्रचलित है। यही द्रुत तिताला नामसे प्रसिद्ध है। किसी किसीके मतसे यह कव्वालीके लिचित् विभिन्न है। कव्वाली देखो।

झम्पताल—१। ([illegible] ।), २। ([illegible]), ३। ([illegible] +),

४। वर्तमानमें प्रचलित झंपताल—(ऽऽ।, ऽऽ)

इसमें चार पद और दस मात्राएँ होती हैं। बोल—

+ २

धा धी धा धी दिन्

० ३

ता ती धा धी दिन् ।

ढड—(ऽ । ऽ +)

ठुमरी—वर्तमानमें प्रचलित चार द्रुतमात्राका ताल। इसमें दो आघात और दो खाली होते हैं। बोल—

+ ० ३ ०

(१) धिना धिटि, धिना, धिटि,

(२) ताताधि धन धा दूना

(३) धाक धिन धिना धिदिन ।

(४) धागि धिनधिन धागि धिनधिन ।

ढेङ्किका—(॥ । । ।)

तिश्रोट—वर्तमानमें प्रचलित चार पदोंवाला एक ताल। इसमें ३ आघात और १ खाली लगता है। प्रथम और तृतीय पदमें तीन तथा द्वितीय और चतुर्थ पदमें चार मात्राएं होती हैं। कभी कभी दो सार्ध और चार ह्रस्वमात्राएं भी व्यवहृत होती हैं। बोल—

\+ १
धिन धा तेकेटे धिन धिन धा तेकेटे

० १
तिन ता तेकेटे धिन धिन धा तेकेटे ::

तुरगलील वा तुरङ्गलील—१। (,΄,), २। (˝ ।। । ॥ ।)

तृतीयताल—१। (˝ ,)—२। (।,)

तेवरा—वर्तमानमें प्रचलित है। यह तीव्र ताल है। इसमें ३ पद और ७ मात्राएं होती हैं। प्रथम और द्वितीय पदमें दो दो मात्राएं और तीसरे पदमें तीन मात्राएं हैं। बोल—

\+ १ १
धा धिनि नाक धागे नागे धिनि नाक ::

तोम्बुलो—(। ।,)

त्रिपुट—(˝ ।)

त्रिभङ्गी—इसका प्रचलन प्रायः जैनोंमें अधिक पाया जाता है, पूजाके अष्टकादिमें ऐसे तालका व्यवहार होता है।—१। (।।॥ ॥), २। (॥ ।।॥)

त्रिभिन्न—१। (।॥॥ ।), २। (। ॥˝)

त्र्यस्र—(।।˝˝ ।।)

दर्पण—(˝˝ ॥)

दीपक—१। (˝ ।॥˝ ।॥), २। (˝˝ ।।॥ ॥)

दुर्वल—(˝˝ ।।)

दोबहार—यह अब भी प्रचलित और १२ मात्राओंका ताल है। इसमें तीन खाली और सम् द्विमात्रा काल स्थायी होता है। बोल—

\+ ० १ १
धा धिन्नाक तेरेकेटे गेदे धिनि

१ १ १
खिटिताक धिनताक धुमाकिटि थुनथुन

१ १ १
नाकदित् धाधा खिटिताक ::

द्रुतत्रिताली—वर्तमानमें प्रचलित ८ दीर्घ मात्राओंका ताल। कोई कोई इसको कव्वाली कहते हैं और कोई कोई यह बतलाते हैं, कि कव्वालीसे किञ्चित् विलम्बित है। कव्वालीका विवरण देखो।

द्वन्द्व—(।।॥॥॥।॥)

द्वितीय—(˝ ॥)

धत्ता—(।। ΄ ।॥)

धामार—प्रचलित है।—(।। , ॥ , ॥ ,)

धीमा तिताला—वर्तमानमें प्रचलित है। यह १६ दीर्घ मात्राओंका ताल है, इसका दूसरा नाम है मध्यत्रिताली।

नन्दन—१। (॥ ।), २। (।।˝ ॥।)

नन्दिवर्द्धन—(॥ । । ॥ ।)

नान्दी—१। (।˝˝ ।।॥॥)—२। (।।॥)

निःशङ्क—(।॥ ॥ ॥॥ ।)

निःशङ्कलील—(॥॥॥॥ ।)

निःसारुक—१। (॥,), २। (। , ।)

नृप—(।˝ ।)

पञ्चताली—( )

पञ्चम—(΄˝)

पञ्चम सवारी—प्रचलित है।—(। ,। , ॥ , ॥ , ॥, ॥ , ॥ , ॥,)

पञ्चाघात—(॥॥ ।, । ॥,)

पठताल—वर्तमानमें प्रचलित दो मात्राका ताल।

परिक्रम—(˝ ॥॥॥)

पार्वतीनेत्र—(।।˝˝ ।।।॥॥॥।।)

पार्वतीलोचन—(॥॥ ॥ ।॥ ॥॥΄)

पूर्ण (कङ्काल)—१। (˝ ॥ ।)—२। (˝ ˝˝ ।॥)

पोस्ता—प्रचलित है।—(।˝, । × ,)

प्रतापशेखर—(॥ । ,)

प्रतिताल—१। (। ˝)—२। (॥˝)

प्रतिमष्ठ—१। (॥ ॥)—२। (॥ ॥)—३। (॥ ॥ ॥ ॥ । ।)

प्रत्यङ्ग—(॥ ॥ । । ।)

प्रसिद्धा—(एकतालो)—(। ।)

फोरदस्त—यह ७ दीर्घ मात्राओंका ताल अब भी प्रचलित है।

बहुदीपक—(। । । ॥ ॥ ।)

बहुभारत—(॥ ॥ । । ॥)

बड़ोपोल—(॥ ॥ । । ॥)

बसन्तगो—१। (ˇˇ ˇ । । ॥)—२। (।ˇˇˇˇ ॥

बस ताल—(॥ ।ˇ ॥ ।)

बर्धसिंह—(ˇ । ।)

बर्धमौल—(। । । । ˇ ।)

बस मणिका—१। (॥ˇ ।ˇ)—२। (।ˇ।ˇˇ)

बर्धयति—१। (। ।ˇ)—२। (। । ॥ ॥)

बर्धमौल—(ˇˇ । ॥)

बर्हन—(ˇ । ॥)

बर्हमान—(ˇ । ॥)

बसन्त—१। (। । । ॥ ॥ ॥)—२। (॥ ॥ ॥)

विजय—१। (॥ ॥ ॥ । ।)—२। (॥ । ॥)

विजयानन्द—(। । ॥ । ॥)

विद्याधर—(॥ ॥)

विन्दुमाली—(॥ˇˇˇˇ ॥)

विपुला (एकतालो)—(× , ।)

विलोकित—(॥ˇˇ ॥)

विषम—(ˇˇ , ˇˇˇˇ)

वीरपञ्च—वर्तमानमें प्रचलित है। इसमें ८ ह्रस्व मात्राएं व्यवहृत होती हैं। वीरपंचम देखो।

वीरविक्रम—(।ˇ ॥)

ब्रह्मताल—१। (। ।ˇ । ।)—२। (। । । ॥)—३। (। ।ˇˇ।ˇ)—४। वर्तमानमें प्रचलित चौदह मात्राओंका ताल। ब्रह्मताल देखो।

ब्रह्मयोग—वर्तमानमें प्रचलित १८ मात्राओंका ताल। ब्रह्मयोग देखो।

भग्नताल—(ˇ । । ।)

भद्रताल—(॥ । ॥)

मकरन्द—१। (ˇ । । ।)—२। (॥ । । ˇ,ˇ,)—३। । । । ॥ । ।

मकुन्द—१। (। । ॥ । । ।,)—२। (॥ ।ˇ । ॥ ॥ ॥)

मणिका—१ (,ˇ । ॥)—२।, (, ।)—३। (।, ॥ ॥ । ।)

मदनताल—(ˇ ॥)

मध्यमान—वर्तमानमें प्रचलित ८ दीर्घ मात्राओंका ताल। मध्यमान देखो।

मलयताल—(॥ । ॥)

मल्लताल—(। । । ।)

मल्लिकामोद—(। ।)

महासन्नि—(। । । । । । । । ।)

मिश्रताल—(, ˇ,ˇ । ॥ ॥ ॥ ॥ ।)

मिश्रवर्ण—(, , , ॥ ॥ । ॥ ॥)

मुकुन्द—१। (। ॥) २। (। ।)

मुदितमल्ल—(॥ । । । । । ।)

मोक्षपति—(१६ दीर्घ, १२ ह्रस्व और ४४ अर्द्ध मात्राएं मिलमिलेवार व्यवहृत होती हैं)

मोहन्ताल—प्रचलित है। यह १२ मात्राका ताल है। मोहताल देखो।

यत्—(। , । । । , ।, ।)—वर्तमानमें प्रचलित है। यत् देखो।

यतिताल—(। , ।)

यतिलग्न—(।)

यतिशेखर—(। । । । ।)

रङ्गताल—(॥)

रङ्गप्रदीपक—(॥ ॥ । ॥ ॥)

रङ्गलोल—(। ॥)

रङ्गाभरण—(॥ ॥ ॥ । । ॥)

रतिताल (। ॥)

रतिलोल—१। (। । ॥ ॥), २। (॥ ˇ ˇ ˇ)

रागवर्हन—(॥)

राजकोलाहल—(ˇ ॥ । ॥ । ॥)

राजचूड़ामणि—१। (। । ॥), २। (। । । ˇ । ।)

राजझङ्कार—(॥ । ॥ˇ)

राजताल—(॥ ॥ ॥ । । ॥)

राजनारायण—(ˇ, । ॥ । ॥)

राजमार्त्तण्ड—(॥।˘)

राजमृगाङ्क (˘।॥)

राजविद्याधर—(।॥˘˘)

राजशीर्षक—(॥॥॥॥)

रामा (एकताली)—(˘)

रायवङ्कोल—(॥।॥˘˘)

रासक—(।)

रासताल—वर्त्तमानमें प्रचलित है। यह १२ मात्राओंका ताल है। रसताल देखो।

रुद्रताल—वर्तमानमें प्रचलित १६ मात्राओंका ताल। रुद्रताल देखो।

रूपक—१ (।।)—२। यह ७ मात्राका ताल अब भी प्रचलित है। रूपक देखो।

लक्ष्मीताल—१। (˘˘।××˘˘˘।+×˘,˘˘।×,।,)—२। (˘˘,॥॥)—३। वर्त्तमानमें प्रचलित १८ मात्राओंका ताल। लक्ष्मीताल देखो।

लक्ष्मीश (˘,।॥)

लघु—(।।।।॥)

लघुचच्चरी—(˘।×,˘˘।×,।×,˘˘।×,˘˘।×,˘।×,˘।×)

लघुशेखर—१। (।), २। (।।,)

लयताल—(॥।॥।।॥॥˘˘˘,)

ललित—(।॥)

ललितप्रिय—(।।॥।॥)

लीलाताल—(˘।॥)

शम (कङ्काल)—(।॥।)

शरभलीलक—१। (।˘।,२। (˘˘˘।।), ३। यह ताल अब भी प्रचलित है। शरभलीलक देखो।

शार्ङ्गदेव—(˘˘।॥॥॥।)

शिवताल—(।॥)

श्रीकान्ति—(॥॥।।)

श्रीकीर्त्ति—(॥॥।।)

श्रीनन्दन—(॥।।॥)

श्रीरङ्ग—१। (।।॥।॥), २। (।।॥।।।॥)

श्रीवताली—दूसरा नाम धीमा तेताला है। धीमा तितालाका विवरण देखो।

षट्ताल—( )

षट्पितापुत्रक—१। (॥।।।॥॥।।।॥), २। (॥॥॥॥॥)

सन्निताल—(˘˘˘।।˘)

सन्निपात—१। (॥), २। (॥)

सम १। (।˘˘,), २। (।,˘˘˘)

सम्पर्केष्टीक—१। (॥॥॥॥॥), २। (॥॥॥॥)

सरस्वतीकण्ठाभरण—(॥॥।।˘˘)

सारङ्ग—(˘˘˘˘)

सारस—(।˘˘˘।।)

सिंह—(।˘˘˘)

सिंहनन्दन—(॥॥।॥।॥˘˘॥॥।॥।॥॥।।।।।।)

सिंहनाद—(।॥˘˘॥)

सिंहविक्रम—१। (॥॥।।।॥।॥॥), २। (।।॥॥।॥॥)

सिंहविक्रीडित—१। (।।॥।॥।।।॥।॥), २। (।।॥।॥॥।।॥॥॥।।।)

सिंहलील—(। ˘ ˘ ˘)

सुरफाक्ता—(। ।, ।, ।।,) यह ताल वर्तमानमें प्रचलित है। सुरफाक्ता देखो।

हंस—(।।॥,)

हंसनाद—(। ॥ ˘ ˘ ॥)

हंसलील—(।।,) (संगीतरत्ना०)

पूर्वोक्त तालोंमेंसे वर्तमानमें प्रचलित तालोंकी संख्या बहुत कम है। प्रसिद्ध तालोंके लक्षण उन्हीं शब्दोंमें देखना चाहिये। बोल साधनेकी प्रणाली देखनेके लिये बोल शब्द देखो।

तालक (सं० क्लो०) तालमेव स्वार्थे कन्। १ हरिताल, पर्याय—ताल, आल, माल, शैलुप, पिञ्जक, रोमहरण, हरितालक। तालक दो प्रकारका है—पत्र-हरिताल और पिण्ड-हरिताल। दोनोंमें पत्र-हरिताल ही श्रेष्ठ गुणयुक्त है, पिण्ड-हरिताल उससे कुछ अल्प गुणयुक्त है। पत्र-हरिताल सुवर्णवर्णतुल्य, भारबहुल, स्निग्ध, अभ्रकी भाँति स्तरसमन्वित, श्रेष्ठ गुणदायक और रसायन है। पिण्डहरिताल पिण्ड-सदृश, स्तरहीन, स्वल्प, सत्व और अल्प गुणयुक्त, लघु तथा रजोनाशक है।

शोधित तालक कटु, कषाय रस, स्निग्ध, उष्णवीर्य तथा विष, कण्डु, कुष्ठ, मुखरोग रक्तदोष कफ, पित्त और कचग्रह-नाशक है। अशोधित या अच्छी भांति नहीं मारा हुआ तालक सेवन करनेसे शरीरका लावण्य नष्ट होता है तथा बहुविध सन्ताप, आक्षेप, कफ, वायु इत्यादि और कुष्ठरोग उत्पन्न होता है। (भावप्र०)

अशुद्ध हरिताल आयुनाशक, कफ वायु और मेहकर है। अशुद्ध तालक ताप, स्फोट और अङ्ग सङ्कोचन करता है, इसलिए शोधन अति आवश्यक है।

तालकशोधन—कुष्माण्डके रसमें, चूनाके जलमें और तैलमें पाककर शोधन करनेसे तालक दोषहीन होता है। अथवा स्वच्छ १० भाग तालकको १ भाग सुहागेके साथ मिला कर जम्बीरी नीबूके रसमें एक बार तथा काञ्जीमें बार बार धोवें फिर दोहरे कपड़ेमें बांध कर दोला यन्त्रमें एक दिन पाक करे। पीछे काञ्जि, कुष्माण्डके रस और तिलनके क्षारमें एक एक दिन स्वेद देनेसे तालक विशुद्ध होता है।

प्रकारान्तर—हरितालके टुकड़े कर कपड़ेमें बांधे फिर कुष्माण्डके रसमें तैल और त्रिफलाके क्वाथमें एक प्रहर तक दोलायन्त्रमें पाक करनेसे तालक शोधित होता है।

विशुद्ध हरितालको चूनेके पानी और अपामार्ग-मूलके क्षार-जलमें भाड़ कर ऊपर और नीचे अपामार्ग-चूर्ण देवें उसे हण्डेमें रख कर ढक्कना बन्द दे फिर कुष्माण्डके रससे भर दे। इसके बाद मुंह बन्द करके चार प्रहर तक पाक करें। यह हरिताल कुष्ठ आदि रोगनाशक है।

शोधित तालकके गुण—यह कटु स्निग्ध, कषायरस, विसर्प, कुष्ठ, कण्डु और वातरक्त रस, देहशोधक, कान्ति, वीर्य और पौष्टिक वर्द्धक है।

हरितालभस्म—हरितालको पानकलमी और कालमी नीबूके रसमें तथा चूनेके पानीमें बारह प्रहर तक भावना दे कर धोवें फिर पूरे मालमलोके कारमें रख कर जमको मध्यमें वायुके उत्पन्न देव पूर्ण करके १२ प्रहर तक पकावें और ठण्डा होने पर उसका चूर्ण बना ले। इसको एक रत्तीकी मात्रा बना कर सेवन करनेसे कुष्ठ, श्लीपद आदि रोग आरोग्य हो जाते हैं। (रसेन्द्रसार०)

नागमिश्र वायति केन्द्र। २ हारकपाट, रोधनयन्त्र, ताला। ३ तुरङ्गिका शोधोपचन्दन। कार्मि स। ४ तालवृक्ष, ताड़का पेड़।

तालकट (स० पु०) देशभेद। ब्रह्म सिताके अनुसार दक्षिणका एक देश जो १२।११।१३ नक्षत्रमें पड़ता है।

तालिकेश्वर देखो।

तालकन्द (स० स्त्री०) तालमूलीके कन्दस्वरूप। तालमूली मूसली।

तालकरोर (स० पु०) तालाङ्कुर, ताड़का कोपल।

तालकाभ (स० पु०) तालकस्य हरितालस्य आभाइव आभायस्य बहुव्री०। हरित्वर्ण, हरेका रङ्ग, पीला रङ्ग। (त्रि०) २ हरित्वर्णयुक्त, जिसका रङ्ग पीला हो।

तालकी (स० स्त्री०) तालकस्य इदं अण्-ङीप्। तालरस मद्यभेद, तालरस ताड़ी।

तालकूटा (त्रि० पु०) वह जो अंगुल बना कर भजन इत्यादि गाता हो।

तालकेतु (सं० पु०) तालध्वजचिह्नित केतुरस्य। १ भीष्म। २ वह जिसकी पताका पर ताड़के पेड़का चिह्न हो। ३ बलराम।

तालकेश्वर (स० पु०) औषधविशेष, एक प्रकारकी दवा। प्रस्तुत-प्रणाली—नीबूके रस, त्रिफलाका जल, तिल-तैल, घृतकुमारीको रस और कांजी इन सबसे भावना देनी होती है। पीछे २ मासा गन्धक और २ मासा पारेकी कज्जली बना कर पलाशकी पत्तियोंमें मिला देते हैं। बाद इसमें २ मासा हरिताल मिलाकर बकरीके दूध नीबूके रस तथा घृतकुमारीके रससे यथाक्रम तीन दिन भावना देते हैं। इसके अनन्तर उसे शुष्क और चक्राकार करके इसकोंमें पलाशके क्षारके भीतर रख कर १२ प्रहर तक पाक करते हैं। ठण्ढा हो जाने पर उसे उतार लेते हैं। इसकी दो दो रत्तीकी गोली बना कर सेवन करनेसे कुष्ठ, वात, रक्त और अपचीय जाता रहता है।

दूसरा तरीका—थोड़ी हरितालको अढ़ूसे और अरसूडके पत्तोंके रसमें घोट कर सुखा देते हैं। बाद उसे पलाशके क्षारसे भरे हुए बरतनमें रख कर मुद्रपाक देते हैं। बरतनमें हरितालके नीचे और ऊपर दोनों ही तरफ क्षार रहे। बाद दिन रात पाक करनेसे हरितालभस्म

हो जायेगी। जब उसका वर्ण सफेद हो जाय और अग्निमें देनेसे धुंआ निकलने लगे, तब जानना चाहिये कि हरिताल भस्म हो गई है। इस प्रकार प्रस्तुत की हुई औषधका सेवन करनेसे कुष्ठादि रोग दब जाते हैं। इसकी मात्रा १ जो है। इसके अनुपानमें मसूर, चने और मूंगकी दाल पथ्य है।

रसेन्द्रसारके मतसे—हरिताल, पारा, गन्धक, लोह, अभ्रके समभागको मधुमें घोंट कर १ मापेकी गोली बनाते हैं। अनुपान एक तोला पका यज्ञडुम्बुर और मधु है। यज्ञडुम्बुरके अभावमें केवल मधुसे ही काम चल सकता है। इस औषधसे बहुमूत्र रोग बातकी बातमें प्रशमित हो जाता है।

तालक्षीर (सं० पु०) इक्षुभेद, एक पेड़का नाम।

तालचोर (सं० पु०) तालजातं चौरमिव शुभ्रत्वात्। शर्करा भेद, खजूर या ताड़का चीनी।

तालचोरक (सं० क्ली०) तालचोर स्वार्थे कन्। ताड़की चीनी।

तालगर्भ (सं० पु०) तालस्य गर्भः ६ तत्। तालमज्जा, ताड़का गूदा या मगीव। तलवारमें यदि तालमज्जाका पानी दिया जाय तो उससे हाथीकी सूड़ छेदी जा सकती है।

तालगुण्डा—महिसुरके शिमोगजिलेके अन्तर्गत शिकारपुर तालुकका एक ग्राम। यह अक्षा० १४°२५´ उ० और देशा० ७५°१५´ पू० बेलगामीसे २ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १००५ है। प्रवाद है, कि ३री शताब्दीमें कदम्बके राजा मुकननेने इसे स्थापित किया था। उस समय तालगुण्डामें एक भी ब्राह्मण न रहनेके कारण उन्होंने १२००० ब्राह्मणोंको दक्षिणसे ला कर यहां बसाया था। फिलहाल इसकी लोकसंख्या पहलेसे बहुत घट गई है। अनेक शिलालिपियोंमें इस ग्रामका उल्लेख देखा गया है।

तालग्राम—युक्तप्रदेशके फर्रुखावाद जिलेकी छिब्रामी तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २७° २´ उ० और देशा० ७९°३८´ पू०में फतेगढ़से २४ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ५४५७ है। अकवरके समयमें वह परगने भरमें एक सगहर-शहर था। आजकल यह उतनी उन्नतदशामें नहीं है। शहरमें कुल दो विद्यालय हैं।

तालघाट—दक्षिणप्रदेशमें वम्बईसे नासिक जानेके रास्ते पर अवस्थित एक प्रधान गिरिपथ। यह समुद्रसे १९१२ फुट ऊंचा है। यह अक्षा० १९° १४´ उ० और देशा० ७३° ३२´ पू०में अवस्थित है।

तालङ्क (सं० पु०) तालङ्क अस्य लः। भूषणविशेष, एक प्रकारका गहना।

तालचर (सं० पु०) १ देशभेद, एक देशका नाम। २ उस देशके रहनेवाले। ३ तालचर देशके राजा।

तालचेर—उड़ीसाके देशीय राजाके अधीन एक छोटा राज्य। यह अक्षा० २०°५२´ से २१°१८´ उ० और देशा० ८४°५४´ से ८५°१६´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ३९९ वर्गमील है। इस राज्यके उत्तरमें पाललहरा, पूर्वमें धेंकानल तथा दक्षिण और पश्चिममें अङ्गुल राज्य है। लोकसंख्या प्रायः ६०४३२ है। यहां कोयले और लोहेकी खानें हैं। जिस जगह ब्राह्मणी नदी पाललहरा और धेंकानलसे तालचेर राज्यको पृथक् करती है, उस जगह नदीके किनारे सोना पाया जाता है। इस नदीकी बालू धोनेसे स्वर्णरेणु संग्रहीत होता है।

इस राज्यके मध्य ब्राह्मणी नदीके किनारे अवस्थित तालचेर नगर ही प्रधान है।

तालचेरके राजगण कहते हैं, कि ५०० वर्ष व्यतीत हुए अयोध्या-पतिके एक पुत्रने यहां आ कर असभ्य अधिवासियोंको भगा राज्य स्थापन किया था। वर्त्तमान राजा उन्हींके वंशधर हैं। अङ्गुल-विद्रोहके समय यहांके राजाने वृटिश गवर्मेण्टको सहायता दे कर 'महेन्द्र वहादुर'की उपाधि प्राप्त की है।

१८७४ ई०की २१वीं मईको राजा रामचन्द्र वीरवर हरिचन्दनने वृटिशगवर्मेण्टसे पुरुषानुक्रमिक राजाकी उपाधि पाई है। राज्यकी आमदनी ६५०००) रु०की है। वृटिशगवर्मेण्टको १०४०) रु० देने पड़ते हैं। राजाके प्रायः नौ सौ सेना हैं। इस राज्यमें, एक मिडिल वर्नेक्यूलर तथा दो अपर प्राइमरी स्कूल और एक दातव्य चिकित्सालय है।

तालजङ्घ (सं० पु०) १ एक देशका नाम। २ उस देशका

धेनुकस्य पुरं गत्वा मया दृष्टं सुशोभने ॥
तत्र गौरी शची मेधा सावित्री चापरापरा ।
देवीमारोप्य तत्रैव तालस्य पल्लवे शुभे ॥
काचिद्ध्यानपरा तत्र जपस्तुतिपरायणा ।
तास्तु दृष्ट्वा मया पृष्टं व्रतं कस्येदमुत्तमं ॥
किं फलं किं स्वरूपं च तन्मे कथयत स्त्रियः ॥

स्त्रिय ऊचुः—

यस्येदं यत्फलं चास्य शृणु वीर सुरोत्तम ।
इदं व्रतं चाम्बिकाया त्रिषु लोकेषु विश्रुतं ॥
तालनवमीति विख्यातं धनधान्यविवर्द्धनं ।
सौभाग्यमथ सौन्दर्यं पुत्रपौत्रादिकं ततः ॥
इहैव कुशलं सर्वमन्ते गौरीपदप्रदं ।
विधानं शृणु धर्मज्ञ येनेदं क्रियते व्रतं ॥
अष्टम्यां नियमीभूत्वा नवम्यां तमारभेत् ।
भाद्रे मासि सिते पक्षे तालस्य पल्लवे शुभे ॥
गौरीमारोप्य यत्नेन विधानेन प्रपूजयेत् ।
फलं तालस्य नवकं दत्वा नैवेद्यमुत्तमम् ॥
पाद्यादिभिः समभ्यर्च्य गन्धपुष्पादिभिस्तथा ।
निरामिषं व्रतान्ते च कर्त्तव्यं तालभक्षणं ॥
नव वर्षव्रतं कृत्वा प्रतिष्ठा कारयेत्ततः ।
व्रताचार्याय दातव्यं काञ्चनं रौप्यमुत्तमं ॥
डल्लकं शोभनं दत्वा व्रतसांगं भवेत्ततः ।
इत्येतत् कथितं भद्र व्रतानां व्रतमुत्तमं ॥

श्रीकृष्ण उवाच—

ताभिः कृतं मया दृष्टं सत्यं सत्यं व्रतं शुभे ।
तस्मात् इद प्रयत्नेन सौभाग्यवर्द्धनं शुभे ॥
इति श्रुत्वा ततो देव्या व्रतं कृत्वा यथाविधि ।
रुक्मिण्या कृष्णपरया सौभाग्यं लब्धमुत्तमम् ॥
या नारी च प्रयत्नेन करोति व्रतमुत्तमम् ।
सा सर्वफलमाप्नोति इहलोके परत्र च ॥"
इति भविष्ये तालनवमीव्रत कथा समाप्ता ।

इस कथाको सुन कर भोज्य उत्सर्ग करें, पीछे ब्राह्मणोंको भोजन करा कर स्वयं भोजन करें। इस तरह ९ वर्ष बीत जाने पर प्रतिष्ठा करावें। व्रतप्रतिष्ठा देखो। प्रतिष्ठाके वर्ष प्रतिष्ठाविधिके अनुसार होमादि पर्यन्त करके तालडल्लक उत्सर्ग करना चाहिये।

तालके फलेको वस्त्रसे ढक कर "नमोऽद्येत्यादि यो अमुकी देवी श्रीगौरीप्रतिकामा इमं नवफलयुतं सवस्त्रं तालडल्लकं श्रीविष्णुदैवतं यथासम्भवगोत्रनाम्ने ब्राह्मणायाहं ददे" इस प्रकारसे इसका उत्सर्ग करके दक्षिणान्त करें।

"अद्येत्यादि कृतैतत् तालनवमीव्रतकर्मणः साङ्गतार्थं दक्षिणामिदं काञ्चनं श्रीविष्णुदैवतं यथासम्भव गोत्रनाम्ने ब्राह्मणायाहं ददे" इस तरह दक्षिणान्त करें। पीछे ब्राह्मणोंको भोजनद्वारा परितृप्त करके स्वयं भोजन करें। जिन्होंने इस व्रतका अनुष्ठान किया है, उन्हें ताल भक्षण और तालवृन्तद्वारा वायुसेवन वर्जन करना चाहिये। इस व्रतमें ९ प्रकारके फल चढाने पड़ते हैं, जैसे—पिण्डखर्जूर, जातिफल, एला, हरितकी, नारिकेल, पूग, रम्भा, पक्वफल और ताल।

भविष्यपुराणमें इसका और एक प्रकारान्तर है; उसमें विशेषता इतनी ही है, कि उक्त व्रतमें नारायण और लक्ष्मीकी पूजा करनी पड़ती है। कथा इस प्रकार है:—

"मञ्चपृष्ठे सुखासीनं कृष्णं कमलया सह ।
उवाच मधुरं वाक्यं स्मितपूर्वं मुदाम्बिका ॥
शृणु मे वचनं देव स्त्रीणां सौभाग्यकारणम् ।
केन वा सुभगा आसीत् केन वा दुर्भगा भवेत् ॥
किं कृतेन विमुच्येत किं कृतेन फलं शुभे ।
तन्मे ब्रूहि सुरश्रेष्ठ नारीणां कारणं ध्रुवं ॥

श्रीभगवानुवाच—

पूर्वं हि मम भार्ये द्वे सत्यभामा च रुक्मिणी ।
रुक्मिणी सुभगा साध्वी सत्यभामा च दुर्भगा ॥
तस्याः कर्मविपाकेन सौभाग्यमन्यथा गतं ।
केनचित् वाक्यदोषेण सत्यभामा च दुर्भगा ॥
दुःखार्त्ता शोकसन्तप्ता रुदती बहुशो मुहुः ।
कियत्काले च सम्पन्ने भजन्ती च तपोवने ॥
अरण्ये विजने गत्वा कस्मिन्मुनिवराश्रमे ।
रुदित्वा च विधानेन सर्वदुःखं न्यवेदयत् ॥
तच्छ्रुत्वा तु मुनिश्रेष्ठः प्रोवाच रुदतीं शुभां ।
मन्ये पुत्रिणि मारोदीः सौभाग्यं ते भविष्यति ॥

सत्यभामोवाच—

दुःखं मे बहुशस्तात ! शरीरं दुर्भगं कथं ।

कथ्यतां मुनिशार्दूल स्त्रीणां सौभाग्यकारणं ॥

मुनिरुवाच—

भाद्रे मासि सिते पक्षे नवमी या तिथिर्भवेत् ।
तस्यां नारायणं लक्ष्मीं पूजयेच्च विधानतः ॥

युधिष्ठिर उवाच—

विधानं कीदृशं तस्य किं दानं किं च तर्पणं ।
तन्मे ब्रूहि मुनिश्रेष्ठ कारणं किं वदुच्यते ॥

मुनिरुवाच —

स्वाचिरेऽमलं कृत्वा घटं तत्र निवेशयेत् ।
तत्र नारायणं लक्ष्मीं सम्पुज्याभिमर्चयेत् ॥
नैवेद्यं च वरा भक्त्या पूजयेत् भक्तवत्सलौ ।
तालेन पूजयेत् देवौ ताले नैवविधिर्भिः ॥
तस्मै तत् निधाय दद्या ब्राह्मणायोपपादयेत् ।
मन्त्रमाला समन्वर्ण विश्वस्ते समर्पितः ॥
स्वस्तीति ब्राह्मणे ब्रूयात् सर्वं कांश समाप्नुयात् ।
एवं क्रमेण तालोऽपि कर्तव्यमविशंकया ॥
नवम वत्सरे वत्सर भाति भाद्रपदे तथा ।
पुत्रपौत्रैः परिवृता सौभाग्यसंयुता भवेत् ॥
धनधान्यसमृद्धिश्च अवैधव्यं च नित्यशः ।
नवीदलसमाप्त्येति नवमीव्रतधारणात् ॥
पंचैव तु व्रते मुने भविष्यं तदनन्तरं ।
निमग्न रोहिणी देवा द्युयोज्य च विधानतः ॥
एव कृत नरा निर्भ नद्यु मासनद्युतये ।
तथा धर्मे च या नारी सुखैश्वर्यमवाप्नुयात् ॥
व्रते चंपूर्णा नारी वैधव्यत्वामुपागता ।
नीलीमालीन नद्युष्य तथा नारी विमलयुत ॥
सौभाग्यसंयुक्तस्य तथा गौरीहरस्य च ।
कर्तव्य तु सुहृदस्य तथा च नवमस्य च ॥
यथा नारायणे लक्ष्मीस्तथा मम शोभने ।
इति तस्मै वर्दं दत्वा पत्नीभिः तां गुरुं ययौ ॥
इदं च कुरुते नारी व्रतं या प्रयता भवेत् ।
एव व्रतं च या नारी कुरुते धर्मतत्परा ॥
तत्सदृशं भवने लक्ष्मीः स्थिरा नित्यं भवेत् ।
कल्पान्तरे भवेत् नारी अवैधव्यं तथा पुनः ॥
चतुरश्च सुतवा नारी पुत्रपौत्राभिवर्धयेत् ।
धनधान्यसमृद्धिश्च तथा मा जन्मसुखात् ॥"

इति भविष्यपुराणोक्त तालनवमीव्रतकथा समाप्ता ।

इस तालनवमीव्रतके प्रभावसे स्त्रियोंको इहलोकमें समस्त प्रकारके सुख, परलोकमें स्वर्ग और जन्मजन्मान्तरमें अवैधव्य प्राप्त होता है। उनके घरमें लक्ष्मी निश्चल हो कर रहती है।

तालपत्र (सं० क्ली०) तालस्य पत्रमिव। १ कर्णभूषण भेद, एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है। तालस्य, पर्ण ६ तत्। २ तालवृक्ष या पत्र तालका पत्ता। तालपत्र द्वारा वायु सेवन करनेसे गुण—रूक्ष, ईषत् उष्ण वातपित्तनिवारक, निद्राकारक, प्रीतिकारक श्रोष रोग और विचारनाशक, दाह पित्त श्रम और ग्लानि नाशक है। तालपत्रको हिला कर वायु सेवन करनेसे वायु हरि होती है। (राजव०नि०)

तालपर्णिका (सं० स्त्री०) तालपत्रके सदृश पत्र आप कप्। मुषली, तालमूली, मूसली।

तालपर्णी (सं० स्त्री०) तालस्य पर्णमिव पर्ण यस्याः ङीष्। मूषिकपर्णी, मूसाकानी बूटी।

तालपर्ण (सं० क्ली०) तालस्य पर्णमस्य। मूष नामक गन्ध द्रव्य, कपूरकचूरी।

तालपर्णी (सं० स्त्री०) तालस्य पर्णमिव पर्णमस्याः। १ महारिका, सौंफ। २ कपूरकचूरी। ३ तालमूली, मूसली। ४ सोवा, सोया नामक साग।

तालपुष्प (सं० क्ली०) तालरत्न, ताड़के पेड़का फल।

तालपुष्पक (सं० पु०) १ प्रपौण्डरीक, पुण्डरिया। २ ताल द्रव्य, कुसुम, ताड़का फल।

तालपुर—सिन्धुदेशके पश्चिम प्राचीन बलोचोंके एक प्रमत्त उपाधि। सिन्धुदेशमें चार सरदारके शासनकालमें चार भाइयोंके पुत्र मीर बहरामखांने कलहोरोंकी उन्नतिके लिये अनेक साहसिक कार्य किये थे। तालपुरोंके इन्होंका नाम सबसे पहले देखा जाता है। ये लोग बलोची मुसलमानोंको एक शाखा है। गुलाम शाहके राजत्वकालमें मीर बहराम तालपुर बहुत प्रसिद्ध हो गये थे। किन्तु जब सरफराजखाँ सिंहासन पर बैठे, तब उन्होंने मीर बहराम और उनके लड़केको गुप्त रीतिसे मरवा डाला। १००० ई०में कलहोराज मीर गुलाम नबीके साथ मीर बहरामके अन्यतम पुत्र मीरबिजय तालपुरका

एक घमसान युद्ध छिड़ा। इस युद्धमें मोरविजयको ही जीत हुई। युद्धके बाद गुन्नाम नवीके भाई अबदुल नवीखाँ सिन्धुदेशके राजा हुए और मोरविजय उनके मन्त्री बने। १७८१ ई०में मीरविजयने शिकारपुरके समीप सिन्धु आक्रमणकारी कन्धार सेनाको परास्त किया। इनका पराक्रम और क्षमता देख कर अबदुल नवी बहुत जल उठे और उन्होंने मोरविजयको मरवा डाला। १७८८ ई०में यह घटना हुई थी। नारको अबदुल नवीने भयभीत हो कर राज्य छोड़ खिलातमें जा कर आश्रय लिया। मोरविजयके पुत्र अबदुलखाँ तालपूरने मोर फतरखाँके साथ मित्रता करके सिन्धुके शून्य-सिंहासनको हथिया लिया। अबदुल नवीने फिरसे सिन्धुराजको पानेके लिए बहुत कोशिश को तथा जहां तक हो सका अपनी चाल लगाई, पर कोई फल न हुआ। पीछे उसने बहुत हीनवृत्ति द्वारा अबदुल खाँ तालपूरको मरवा भी डाला, तो भी उसका उद्देश्य सिद्ध न हुआ। मोर फतेअलोखाँने उसे पुनः सिन्धु देशसे निकाल भगाया। फते अलोखाँने सचेष्ट हो कर कन्धारके शासनकर्त्ता जमालशाहसे एक सनदपत्र ग्रहण किया, जिसमें सिन्धुराज्यका शासनभार तालपूर लोगोंके हाथ आया, ऐसा लिखा था। फतह अलोखाँसे ही तालपूरवंशके लोग उन्नतिको चरमसोमा तक पहुंच गये थे।

१७८३ ई०में मोर फतेअलोखाँ सिन्धुके सिंहासन पर बैठे। उनके पुत्र मोर फरोखाँ शाहवन्दरमें और मीरसाहवखाँ रोहरो प्रदेशमें शासन करने लगे।

तालपूरवंश साधारणतः ३ शाखाओंमें विभक्त है, (१) हैदराबाद (या शाहदादपुर), (२) मोरपुर, (३) खैरपुर (या सोहरवानी)। पहलो शाखा मध्यसिन्धु प्रदेशोंमें, दूसरो मोरपुरमें और तोसरी खैरपुरमें वास करती थी। हैदराबादसे कुछ दूर जूटझाड़ नामक स्थानमें तालपूरवंशीय अधिक संख्यामें रहते थे। हैदराबादके तालपूर लोगोंको सभी शाखाएं श्रद्धा और सम्मान को निगाहसे देखती थीं। उनको सलाह लिये बिना कोई तालपूर शासनकर्त्ता किसो गुरुतर काममें हाथ नहीं डाल सकते थे।

१७९९ ई०में तालपूरवंशीय मीरोंके साथ वाणिज्य कार्यका वन्दोवस्त करनेके लिये एक अंगरेज दूत वहां गया, लेकिन कोई फल न निकला, मोरोंने जब कराचोके अंगरेज दूतको शहर छोड़ देनेको कहा, तब वे उसो समय शहर छोड़ चले गये। १८०९ ई०में तालपूरोंके साथ अंगरेजोंको एक सन्धि हुई। धोरे धोरे अंगरेज लोग अपनी गोटी जमाने लगे।

काबुलमें जब लड़ाई छिड़ो थी, तब अमोरोंने अंगरेजोंको अच्छो सहायता न की थी। इसो विश्वासघातकताके कारण ब्रटिशगवर्मेण्ट सिन्धुराज्यको हस्तगत करनेके लिए अग्रसर हुई। इस समय तालपुर लोगोंमें गृहविवाद जोरोंसे चल रहा था। उन्होंने अन्तमें अंगरेजोंके साथ इस शर्त पर सन्धि कर ली, कि वे उन्हें वार्षिक कर दिया करेंगे। किन्तु चार्ल्स नेपियरने देशको अच्छी तरह अपने दखलमें लानेको इच्छा रखते हुए नये नियमोंसे सन्धि करनेका प्रस्ताव पेश किया। अन्तमें गृहकलहमें नियुक्त होनमति तालपूर लोगोंके साथ ब्रटिशगवर्मेण्टका लड़ाई छिड़ हो गई। युद्धमें तालपूर लोग हार गये और उनके राज्यशासनका अस्तित्व सदाके लिये जाता रहा।

तालपूरोंका कहना है, कि हसोमके पुत्र मोर हमजा उनके आदिपुरुष हैं। ये लोग अरब-जातोय बलोचोशाखासे उत्पन्न हुए हैं। इनके मोर शाहदादखाँ नामक एक दूसरे आदिपुरुष थे, जिन्होंने अपने चाचासे मनोमालिन्य हो जानेके कारण कलहोरा-राज मियाँ नहलके अधीन नोकरो को थो और सियाधमको अवलम्बन किया था। उनके साथ अनेक बलोचो सिन्धुदेशमें आये थे। आतिथेयता और अभ्यागतकी अभ्यर्थनाके लिए तो तालपूरवंशीय राजा बड़े प्रसिद्ध थे, किन्तु वे इतने पढ़े लिखे न थे। खैरपुरके तालपूरगण अपनी सेनाको यथेष्ट जागोर देते थे। ये लोग बड़े मितव्ययो थे, किन्तु घोड़े तथा अस्त्र शस्त्र खरीदते समय मितव्ययताको ओर ध्यान नहीं देते थे। शिकार खेलनेमें भो इनका प्रचुर अर्थ खर्च होता था।

तालपूर मोरगण बहुमूल्य लुङ्गो तथा काश्मोरो शाल पहनते थे। सिन्धुदेशमें आज कल जैसो टोपोका व्यवहार है, वे लोग उसो तरहको टोपो पहनते थे। इनको

तलवार और बन्दूकका कुछ अंश अवश्य रक्षित होता था।

राजकार्यके लिये ये लोग अधीन सरदार सामन्तोंको जागीर देते थे। शरीर-रक्षकके सिवा इनके पास दूसरी सेना हर वक्त मौजूद नहीं रहती थी। युद्धके समय प्रत्येक पदातिक सैनिकको हर रोज /) आना और अश्वारोहीको /) आना तनखाह मिलती थी। यद्यपि तालपुरो मीरोंके अधीन सेना नहीं थी तो भी युद्धके समय वे थोड़े कालमें प्रायः १०००० सेना जुटा लेते थे।

कर या खजाना नियम जमींदारी सरीखा था। राजकर विभिन्न प्रकारसे जुटाया जाता था, जो बटाई कहलाती थी। कहीं कहीं जमीनके ½ ⅓ अथवा ¼ अंश का मूल्य खालसा एवं राजकरस्वरूप निर्दिष्ट था। इस करको वे महसूल कहते थे। खेतमें जल सींचनेके लिये एक प्रकारका कर लगता था। इसके सिवा पशुओं पर भिन्निया कर भी प्रचलित था। अच्छी जमीनका थोड़े करमें बन्दोबस्त कर दिया जाता था। खजूरके पेड़ पर भी एक प्रकारका कर था। इनके अधीन जितने जमींदार थे वे जिनकी मीरोंके यहां खूब खातिर होती थी। जमींदार लोग मालगुजारी, जमींदारी और राजकर ये तीन प्रकारके कर उपजके अनुसार वसूल करते थे। आमदनी और रफ्तनीके ऊपर भी कर निर्दिष्ट था। बाजारमें जितनी वस्तु बेची जाती थी, उनका तराजू कर देना पड़ता था। बिना लाइसेन्सके कोई मादक द्रव्य तैयार नहीं कर सकता था। धोबी, तेली और दूकानदारोंको थोड़ा थोड़ा कर लगता था। मीर लोग अपने कर्मचारियोंको यथेष्ट इनाम और जागीर देते थे।

तालपुरोंके शासनकालमें कारदार, कोतवाल और अन्यान्य कर्मचारिगण फौजदारी विचार करते थे। कभी कभी मीरगण स्वयं अपराधोंके फैसला कर देते थे। भिन्न भिन्न अपराधोंमें हस्तपदच्छेदन, बेंतामार, बन्धन और अर्थदण्ड आदिकी सजा थी। मृत्युदण्ड प्रायः देखनेमें न आता था। व्यभिचारी उसी हालतमें सब दण्डोंसे छुटकारा पाता था, जब वह अत्याचारितके कुटुम्बोंको धन दे कर सन्तुष्ट कर देता था। अभियुक्त व्यक्ति अपनेको निर्दोष बतलाने पर भी जब तक वह अग्नि या जलपरीक्षा द्वारा साक्षात् प्रमाण न देता था तब तक उसकी मुक्ति नहीं होती थी। अभियुक्त व्यक्ति जलके नीचे रखा जाता था। एक मनुष्य धनुषमें तीर लगा कर 'अपनी ताकत भर उसे फेंकता था। दूसरा आदमी उस तीरको लानेके लिए भेजा जाता था। जब तक वह लौट कर नहीं आ जाता था तब तक यदि अभियुक्त व्यक्ति जलके नीचे रह जाता, तो निर्दोष समझा जाता था। यदि वह तीर लानेके पहले ही जलमेंसे अपना सिर उठा लेता तो वह दोषी ठहराया जाता था। अग्निपरीक्षा इससे भी कठिन थी। ७ हाथ लम्बा एक गड्ढा खन कर उसे लकड़ीसे भर देते थे। पीछे उसमें आग लगा कर अभियुक्त व्यक्तिको पीपलके पत्तेसे हाथ पैर बांध उसे गड्ढेमें छोड़ देता था। बाद उसे एक छोरसे होकर दूसरे छोर तक जाना पड़ता था। इसमें यदि वह बच जाता तो सभी उसे निर्दोष समझते थे। इन जल और अग्नि परीक्षाका नाम कर चौर दूषो था। कैदियोंके लिये उपयुक्त जेल नहीं था। दिनके समय अपराधी लोग भीख मांगनेके लिये शहरमें घुमाते थे। राजसरकारसे उन्हें भोजन नहीं मिलता था। रातको उन्हें शहरबाद अथवा कचहरीमें अथवा इधर उधर कैद कर रखते थे। दीवानी विचार फौजदारी विचारकोंके ही हाथ था। उस समय दीवानी मामलोंमें बहुत रुपये खर्च होते थे, इसी कारण दीवानी मुकदमेको सवा मास' महीनेके बराबर थी।

इतिहासमें तालपुरोंकी मुद्राका व्यवहार नामको वर्णित है।

तालप्रलम्ब (स॰ क्ली॰) तालवृक्षके प्रलम्बित म मध्य-भाग। ताड़की जटा।

तालबन्द (हिं॰ पु॰) वह हिसाब जिसमें आमदनीकी हर एक मद दिखलाई गई हो।

तालबहत—युक्त प्रदेशके ललितपुर जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। यह अक्षा॰ २५ २ उ॰ और देशा॰ ७८ २६ पू॰में ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे और झांसी-सागरकी सड़क पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २९८३ है। यहां एक बहुत बड़ा ह्रद या ताल है, उसीके नामसे इस नगरका नामकरण हुआ है। यह

समय यह स्थान विशेष समृद्धिशाली था। भग्नदुर्ग, पहाड़के चारों ओर सुशोभित दुर्भेद्यदुर्गप्राचीर, प्रासाद और अट्टालिकाएं प्राचीन समृद्धिका विलक्षण परिचय देती है। सर ह्यिड रोजने १८५७ ई०में यहांका प्राचीन दुर्ग धूलमें मिला डाला। नगरकी आय प्रायः ६००) रु० है। यहां अनेक प्रकारके अन्न और कपासका व्यवसाय चलता है। पुलिसका खर्च निभानेके लिये प्रत्येक गृहस्थसे कुछ कुछ कर लिया जाता है। यहां एक प्रकारका कम्बल तैयार होता है।

तालवैताल (हिं॰ पु॰) दो देवता या यक्ष। प्रवाद है कि राजा विक्रमादित्यने इन्हें सिद्ध किया था और ये बराबर उनकी सेवामें रहते थे।

तालभृत् (सं॰ पु॰) तालं बिभर्ति ध्वजरूपेण भृ-क्विप्। बलराम।

तालमखाना—(हिं॰ पु॰) गीली या सीड़ जमीन पर होनेवाला एक पौधा। यह औषधके काममें आता है।

संस्कृत	अतिच्छत्रा।
कर्णाटकी	कालवङ्कबीज।
तामिल	निमली।
बम्बई } मन्द्राज }	तालमखाना, कोलश्रण्डा।
सन्याल²	गोकुल जनम।

यह एक तरहका छोटा कण्टकवृक्ष है। यह भारतमें सर्वत्र विशेषतः पानी या दलदलोंके निकट होता है। इसके बीज, जड़, पेड़ सभी दवाईके काममें आते हैं। यह कण्टकारी, गोखरू आदिकी जातिका है। मुसलमानी और आयुर्वेदशास्त्रमें इसका बहुत व्यवहार देखनेमें आता है। इसके शैत्य और मूत्रकारक गुण अति प्रसिद्ध है। मूत्रकृच्छ्र, उदरी वात और लिङ्गसम्बन्धी रोगोंमें इसका व्यवहार किया जाता है। इसके बीज कामवर्द्धक हैं। इसकी जड़का उबाला हुआ पानी आधा आध चम्मच दिनमें दो बार पीनेसे मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी रोगमें फायदा पहुंचता है। मलवार प्रदेशमें चिकित्सकसे बिना परामर्श लिए ही लोग उक्त रोगोंमें इसका व्यवहार करते हैं। यूरोपीय डाक्टरोंने भी फिलहाल इसकी परीक्षा की और निम्न प्रकार गुण बतलाए हैं।

बीज—स्निग्धकारक, मूत्रकारक, बलकारक और लिङ्गदोष-प्रशमनक है।

मूल—स्निग्धकारक, तिक्त, मूत्रकारक और बलकारक है।

पत्र—स्निग्धकारक और मूत्रकारक हैं।

बम्बई प्रदेशमें इसके बीजोंका रोजगार होता है।

पर्याय—कोकिलाक्ष, काकेक्षु, इक्षुर, भिक्षु, काण्डेक्षु, इक्षुगन्धा, शृङ्खली, शूरक, शृगालघण्टी, वज्रास्थि, शृङ्खला, वनकण्टक, वज्र विक्षुर, शुक्लपुष्प, छत्रक और अतिच्छत्र। अतिच्छत्र देखो।

तालमर्द्दक (सं॰ पु॰) वाद्यभेद, एक प्रकारका बाजा।

तालमूलिका (सं॰ स्त्री॰) तालमूली देखो।

तालमूलिका (सं॰ स्त्री॰) तालमूली स्वार्थे कन् टाप, ह्रस्व। तालमूली, मूसली।

तालमूली (सं॰ स्त्री॰) तालस्य मूलमिव मूलमस्याः, बहुव्री॰। स्वनामख्यात क्षुपविशेष, मूसली। संस्कृत पर्याय—तालिका, तालमूलिका, अर्शोघ्नी, मूषली, ताली, खलिनी, सुवहा, तालपत्रिका, गोधापदी, हेमपुष्पी भूताली और दीर्घकान्दिका। गुण—शीत, मधुर, वृष्य, पुष्टि, बल और कफप्रद, पिच्छिल, पित्त, दाह और श्रमहारक है। इसके दो भेद हैं, श्वेत और कृष्ण। श्वेत अल्पगुणयुक्त और कृष्ण रसायन होता है। श्वेत तालमूली सफेद मूसली और कृष्ण तालमूली काली मूसलीके नामसे मशहूर है। गुण—मधुर, रम्य, वृष्य, उष्णवीर्य और बृंहण, गुरु, तिक्त, रसायन तथा गुदज रोगादिनाशक है। (भावप्रकाश)

तालमेल (हिं॰ पु॰) १ तालसुरका मिलान। २ उपयुक्त योजना, मिलान, मेल जोल। ३ अनुकूल संयोग, अच्छा मौका।

तालयन्त्र (सं॰ क्ली॰) मत्स्यतालुवत् द्वादशाङ्गुल परिमित यन्त्रभेद, बारह अंगुलोंका एक यन्त्र जिसका आकार मछलीके तालू सा होता है। कान, नाक और नाड़ीके शल्य निकालनेके लिये यह यन्त्र व्यवहृत होता है।

तालरस (सं॰ पु॰) ताड़के पेड़का मद्य, ताड़ी।

तालरेचनक (सं॰ पु॰) तालेन रेचयति रिच्-णिच्-ल्यु स्वार्थे-कन्। नट।

तालध्वज (सं॰ पु॰) तालो ध्वजः ध्वजो यस्य बहुव्री॰। तालध्वज, बलराम।

तालध्वजन् (सं॰ पु॰) ताल एव ध्वजः चिह्नं यस्य। बलराम।

तालवन (सं॰ क्ली॰) १ वृन्दावनमें स्थित ताड़ वृक्षपूर्ण एक वन। यह तालवन द्वादश वनोंमेंसे एक है। यह मधुवनके पास अवस्थित है। बलरामने यहां धेनुकका वध किया था। धेनुकवधसे पहले यह वन लोकजन्तुओंके लिए अगम्य था उसके बादसे यह मनुष्योंके सम्मुख आने लगा। (वृन्दावनलीलामृत माहात्म्य)

यह तालवन गोवर्द्धन पर्वतसे उत्तरकी ओर यमुनाके किनारे पर अवस्थित है। यहांकी भूमि समतल स्निग्ध प्रशस्त और कुमुदलताओं तथा ताड़के वृक्षोंसे भरी हुई है। इस वनमें मनुष्योंका आना नहीं होता यह अत्यन्त दुष्प्रवेश है। इस वनको सिद्ध कहते हैं, उसके व बड़ पत्थरोंका सम्बन्ध भी नहीं है। इस वनमें नरमांसलोलुप गर्दभरूपधारी अति दुर्दमनीय प्रभूत बलशाली धेनुक नामका एक दैत्य रहता था। एक दिन कृष्ण और बलदेव कालियदमन करके इस वनमें पहुंचे। धेनुक दैत्यने इन पर आक्रमण किया, इस पर बलदेवने उसके पैर पकड़ कर घुमाना शुरू किया और अन्तमें एक ताड़के वृक्ष पर फेंक दिया जिससे उसकी मृत्यु हो गई। धेनुकके आत्मीयवर्गके साथ निहत होने पर तालवन निरुपद्रव हुआ और तभीसे यह तीर्थमें परिणत हो गया। (हरिव० ६९ अ०)

२ तालवान्, वह जङ्गल जिसमें अधिकतर ताड़के ही पेड़ हों।

तालवाही (सं॰ त्रि॰) वह बाजा जिससे ताल दिया जाता है।

तालवृन्त (सं॰ क्ली॰) ताले करतले वृन्तं बन्धनमस्य तालस्येव वृन्तमस्य वा, बहुव्री॰। १ व्यजन, ताड़के पत्तेका पंखा। २ एक प्रकारका सोम।

तालवेचनक (सं॰ पु॰) तालेन वेचनं ध्वननं यस्य स स्वार्थे कन्। नट।

तालव्य (सं॰ त्रि॰) तालोर्भावं तालु-यत् (शरीरावयवाद्यत्। पा ५।१।६) तालुजात, तालुसे उच्चारण किया जानेवाला वर्ण। इ, ई, च, छ, ज, झ, ञ, य और श ये वर्ण तालुसे उच्चारण किये जाते हैं।

तालशस्य (सं॰ स्त्री॰) तालास्थिमज्जा, ताड़के फलके भीतरका गूदा।

तालभस्म (सं॰ क्ली॰) हरितालभस्म, हरतालकी भस्म।

तालमांस (हिं॰ पु॰) ताड़के फलके भीतरका गूदा। यह खानेके काममें आता है।

तालस्कन्ध (सं॰ पु॰) एक अस्त्र। इसका विवरण वाल्मीकि रामायणमें आया है।

ताला (हिं॰ पु॰) किवाड़ बन्द करनेका यन्त्र, जन्दरा, कुलुफ।

ताला-कुञ्जी (हिं॰ स्त्री॰) १ किवाड़, सन्दूक आदि बंद करनेका यन्त्र। २ लड़कोंका एक खेल।

तालाख्या (सं॰ स्त्री॰) ताल तत्प्रतिम आख्या यस्याः। मुरा नामक गन्धद्रव्य, कपूर। कपूरी।

तालाङ्क (सं॰ पु॰) तालस्तालचिह्नितं अङ्कं ध्वजो यस्य बहुव्री॰। १ बलदेव। २ करपत्र। ३ शाकभेद, एक प्रकारका शाक। ४ महालक्षणसम्पन्न पुरुष, शुभ लक्षणवान् मनुष्य। ५ पुस्तक। ६ हर महादेव।

तालाङ्कुर (सं॰ स्त्री॰) १ नारिकेल मज्जा, ताड़के फलके भीतरका गूदा। २ मनःशिला, मैनसिल।

तालादि (सं॰ पु॰) पाणिन्युक्त गणविशेष, पाणिनिके एक गणका नाम।

तालाब (हिं॰ पु॰) जलाशय, सरोवर, पोखरा।

तालावचर (सं॰ पु॰) तालेन अवचरति चरति अच्-चर अच्। नट।

ताड़ि (सं॰ स्त्री॰) ताड्यते प्रतिग्रहणम्या तड़ णिच् इन्। अच इ। उण् ४।१३९। भूम्यामलकी, भुइँआँवला। २ ताड़काबीज। ३ आघात, चोट।

ताड़िक (सं॰ पु॰) तडेन करतलेन निर्वृत्तः तड ठक्। तेन निर्वृत्तम्। पा ४।१।७१। १ प्रहारिताड़ पिच्छिक, मारी हुई चपेटी। इसके पर्याय—चपेट, प्रतल, तल प्रहस्त और ताल। २ तालपत्र या कागजका पुलिंदा। ३ चपत, तमाचा। ४ नली या ताला जिसमें भिन्न भिन्न विषयोंके तालपत्र या कागज बंधे हों।

तालिकट—तालकट देखो।

तालिका (सं० स्त्री०) तालिक स्त्रियां टाप्। १ चपेट, चपत, तमाचा। २ तालमूली, मूसली। ३ मञ्जिष्ठा, मजीठ। ४ ताली, कुंजी। ५ तालपत्र या कागजका पुलिंदा। ६ सूची, फिहरिस्त।

तालिकोट—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत बीजापुर जिलेके मुद्दे-बिहाल उपविभागका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० १६° २८' उ० और देशा० ७६° १८' पू०में कलाद्गी नगरसे ६० मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। १५६५ ई०की २५ वीं जनवरीको इस नगरसे प्राय: ३० मील दूर कृष्णा नदीके दाहिने किनारे विजयनगरके राजा रामराज और उनके तीन भाइयोंके साथ निजामशाही, कुतुबशाही और आदिलशाही राज्यके मुसलमानोंका युद्ध हुआ था। इस युद्धमें बीजापुरका हिन्दू राज्य बिलकुल नष्ट हो गया निजामशाहीने विजयी हो कर तालिकोट अधिकार किया। महाराष्ट्रके अभ्युदयके समय इस जगह बड़े बड़े मकान मन्दिर इत्यादि बनाये गये थे।

तालित (सं० क्ली०) ताड्यते यत् तड-णिच्-क्त डस्य लत्वं। १ वाद्यभाण्ड, एक प्रकारका बाजा। २ रञ्जित वस्त्र रंगा हुआ कपड़ा। ३ गुण, रस्सी, डोरी।

तालिन् (सं० पु०) तलेनपिं णा प्रोक्तं अधीयते शौनकादि० णिनि। १ तलोक्ताध्येता, वह जो तलऋषिका कहा हुआ अध्ययन करता है। (वि०) ताली वाद्यत्वेनास्त्यस्य इनि। दत्तताल। २ (पु०) ३ शिव, महादेव।

"वैणवी पणवी ताली खली कालंकट: कट: ।"

(भारत अनु० १७ अ०)

तालिब (अ० पु०) वह जो अन्वेषण करता हो, तलाश करनेवाला।

तालिबअली—बिलग्राम-वासी एक कवि। रस पचकी इन्होंने अनेक कविताएं रची हैं। ये १८०३ ई०में विद्यमान थे।

तालिबइल्म (अ० पु०) विद्यार्थी, छात्र।

तालिबशाह—हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म १७६८ ई०में और मृत्यु १८०० ई०में हुई थी। इनकी कविता खड़ी बोली मिश्रित है।

तालियामार (हिं० पु०) पानी काटनेवाला जहाज या नावका अगला भाग।

तालिश (सं० पु०) तलतीति तल-गतौ इश-णित्। इश: कर्प्यादि पडिलस्तलेश्च णित्। उण् १।३२९। पर्वत, पहाड़।

ताली (सं० स्त्री०) तालेन तन्नियोगेन निर्वृत्ता अण्। १ ताड़ी। तल-ण्यन्तात् अच् ङीप्। २ वृक्षभेद, एक प्रकारका पेड़। ३ भूम्यामलकी, भूम्यांवला। ४ तालमूली, मुसली। ५ अरहर। ६ तालीशपत्राख्य वृक्ष, एक प्रकारका छोटा ताड़ जो बंगाल और बरमामें होता है। ७ तालोद्घाटनयन्त्र, कुंजी। ८ ताम्रवल्लीलता। ९ छन्दोभेद, एक वर्णवृत्त। १० मेहराबके बीचोबीचका पत्थर या ईंट।

ताली (हिं० स्त्री०) १ करतलध्वनि। २ छोटा ताल, तलैया। ३ पांवके मध्य उंगलीका पोर। ४ चाबी।

तालीका (अ० पु०) १ मकानकी कुर्की। २ वह फिहरिस्त जो कुर्क किए हुए असबाबके लिये बनाई जाती है।

तालीपत्र (सं० क्ली०) ताल्या इव पत्रमस्य। तालीशपत्र।

तालीम (अ० स्त्री०) शिक्षा, उपदेश।

तालीयक (सं० पु०-क्ली०) करताल।

तालीश (सं० क्ली०) तालीव रोगान् श्यति शो-ड। स्वनामख्यात वृक्षविशेष।

तालीशपत्र (सं० क्ली०) तालीशं रोगनाशकं पत्रं यस्य। भूम्यामलकी, भूम्यांवला। यह तमाल या तेजपत्तेकी जातिका होता है और हिमालय पर सिन्धुसे ले कर सिकिम तक बहुत होता है। इसके संस्कृत पर्याय—शुकोदर, धात्रीपत्र, अर्कवेध, करिपत्र, करिच्छद, नील, नीलाम्बर, ताल, तालीपत्र, तमाह्वय और तालीशपत्रक। इसका गुण—तिक्त, उष्ण, मधुर, कफ, वात, कास, हिक्का, क्षय, श्वास और छर्दिदोष, गुल्म, आम और अग्निमान्द्यनाशक तथा लघु और अरुचिकर है। इसके पत्ते तेजपत्तेसे लम्बे होते हैं। इसकी लकड़ी बहुत खरी होती है।

तालीशपत्री (सं० स्त्री०) तालीशपत्र।

तालीशाद्यमोदक (सं० पु०) चक्रदत्तोक्त मोदकभेद, चक्रदत्तके मतानुसार एक प्रकारका मोदक। इसकी प्रस्तुतप्रणाली—तालीशपत्र १ तोला, मिर्च २ तोला, सोंठ ३ तोला, पीपल ४ तोला, वंशलोचन ५ तोला, दारचीनी ॥ (आधा) तोला, इलायची ॥ (आधा) तोला,

गोली। (भाषा) फिर इन सबको मिला कर मोदक प्रस्तुत करना पड़ता है। गोलीके समान उसमें सबको यथाविधानसे पाक करनेके बाद गोली प्रस्तुत करते हैं जो मोदककी अपेक्षा कुछ छोटी गोली चाहिये। इसके सेवन करनेसे श्वास, कास अरुचि और शोथ इत्यादि समस्त रोग जाते रहते हैं।

तालु (सं० क्लो०) तरत्यनेन वर्णो इति तॄ-ञुण् रस्य लत्व। (उण् १।५) जिह्वा जिससे परिचालन करती, मुँहके भीतरकी ऊपरी छत जो ऊपरके दाँतोंके पिछले भाग तक थोड़ा (घाटी) तक होती है तालु। पर्याय— काकुद, तालुक।

मुँहके तालु निर्मित हुआ है उसमें जिह्वा उत्पन्न हुई है। इसमें नाना प्रकारके रस उत्पन्न होती हैं जीभ उनको ग्रहण करती है।

विराट् पुरुषका तालु निर्मित पश्चात् रसरूपसे उत्पन्न होने पर लोकपाल वरुण अपनी अंशोंसे जिह्वाके साथ अधिदैवतास्वरूप उसमें प्रविष्ट हुए। (भाग० ५।६।७६)

तालुगत रोग होने पर उसका प्रतीकार सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—गलशुण्डिकारोगमें अंगूठे और दूसरी उँगलीसे पकड़ कर जलशुण्डिकाको खींचे और जीभके ऊपर रख कर उसे मण्डलाग्र शस्त्र द्वारा छेद दे; इसको अत्यन्त या पूरी तरहसे नहीं छेदे और न खींचे, किन्तु तीन भागको छोड़ कर तीन भाग छेदे। अत्यन्त छेदन करनेसे छेदनके कारण मृत्यु हो सकती है। हीनच्छेद होनेसे शोथ, लालास्राव, निद्रा, भ्रम और तमोदृष्टि ये सब उपद्रव होते हैं। इसलिये दक्षकर्मा और चिकित्सा विशारद वैद्योंको चाहिये, कि गलशुण्डी रोगमें छेदन करके नीचे लिखी प्रक्रिया करे। मरिच, अतिविषा, पाठा, वच, कुड़ और मोथा, इनका क्षार या चूर्ण मधु और सैन्धव नमक साथ प्रतिसारणमें प्रयोग करे। वच, अतिविषा पाठा रास्ना कुटकी और नीम इनका क्वाथ कवलग्रहमें प्रयोजनीय है। इङ्गुदी, दन्ती, सरल काठ, देवदारु और अपामार्ग, इनको पीस कर बत्ती बनावे और सुबह शाम उसका धूम्रपान करे। इसमें आयुष मूँगका यूष खाना चाहिये।

अध्रुष, तुण्डिकेरी, संघात और तालुपुप्पुटरोगमें रोगके अनुसार शस्त्रकार्य करे। तालुपाक रोगमें पित्त नाशक क्रिया करनी चाहिए। तालुशोषमें स्नेह, स्वेद, और वातशान्तिकर क्रिया करें।

(सुश्रुत चिकित्सितस्थान २२ अ०)

तालुक (सं० क्ली०) ताल स्वार्थे कन्। १ तालु। २ तालुका एक प्रकारका रोग।

तालुकण्टक (सं० पुं० क्ली०) एक रोग जो बच्चेके तालुमें होता है। इसमें तालुमें काँटेसे पड़ जाते हैं और तालु धँस जाता है। इसमें बच्चोंको अकसर दस्त भी आते हैं।

तालुकदारी ग्राम—कई एक ग्राम। [illegible] अनुसार उन ग्रामोंका राजस्व सर्वदाके लिये तालुकदार आपसमें बाँट लेते हैं और तालुकदारको ग्राम-के शासन तथा व्यवस्थादि सम्बन्धमें कई एक निर्दिष्ट कार्य करने पड़ते हैं। अब कभी तालुकदारगण अपने अपने अंशोंमें कुछ भी छोड़ते हैं, तब सबमें एक उनके शासन अधिकार छीन लेता है; किन्तु राजस्व मिला देती है। इन समस्त ग्रामोंको तालुकदारी ग्राम कहते हैं। राजपूत कोलि और कुम्बी मुसलमानोंमें भी इस तरह की तालुकदारी देखी जाती है।

तालुका (सं० स्त्री०) तालुकी दो नाड़ी।

तालुच्छ (सं० पुं० क्ली०) तालुचर्मीकोपन्न कन्। १ तालुच अथवा सोमक। (त्रिका०) कोषितादिभ्यात् अप विभाव् दोष। २ तालुव्यापनी।

तालुजिह्व (सं० पुं०) तालु एव जिह्वा यस्य, बहुव्री०। १ कुम्भीर, घड़ियाल। इसके जीभ नहीं होती। वह तालुसे ही रसास्वादन करता है, इसीसे कुम्भीरका नाम तालुजिह्व पड़ा है। २ काकजिह्व, गलेका कौआ (uvula)।

तालुन (सं० त्रि०) तलुनसम्बन्धीय तलुन-अण्। (पा ४।१।६९) तलुन सम्बन्धीय।

तालुपाक (सं० पुं०) सुश्रुतोक्त तालुगत रोगभेद एक तालुकी बीमारीका नाम। इस रोगका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है। तालुगत रोग ८ प्रकारका है, जैसे— गलशुण्डिका तुण्डिकेरी अध्रुष मांसकच्छप अर्बुद, मांससंघात, तालुपुप्पुट, तालुशोष और तालुपाक।

श्लेष्मा और रक्तद्वारा तालुमूलमें वायुपूर्ण वस्तिकी तरह (स्फीत मत्स्यकी भाँति) दीर्घ उन्नत शोथ उत्पन्न

होता है तथा उससे पिपासा, खाद और काश होता है; इसको गलशुण्डीरोग कहते हैं। सूज जाना, मोटा घाव होना, वेदना, दाह और पक जाना ये सब तुण्डी-केरीके लक्षण हैं। तालूमें सूजन, स्तब्धभाव (भारीपनका होना) और ललाई होनेसे उस रोगको अध्रुष समझें। यह रोग रक्तके द्वारा होता है। इसमें अत्यन्त ज्वर होता है, तालुदेश कछुवेको तरह ऊंचा हो जाता है। वेदना घटती और सूजन बढ़ती रहनेसे उसको कच्छपी रोग कहते हैं। यह श्लेष्माके द्वारा उत्पन्न होता है। तालुमें पद्माकार शोफ होने पर उसको रक्तजन्य अर्बुद कहते हैं। अर्बुदका लक्षण पहले लिखा जा चुका है। तालुके भीतर श्लेष्मा द्वारा मांस दूषित हो कर वेदनाहीन जो सूजन होती है, उसको मांससंघात कहते हैं। तालुदेशमें वेदनाहीन स्थायी और वेरकी तरहकी जो सूजन होती है, वह कफमेदजन्य पुप्पुटरोग है। वातपित्तके कारण तालुके सूख और फट जाने पर, तथा उससे तालुश्वास होने पर, उसे तालुशोष कहते हैं। पित्तके द्वारा तालूका पक जाना यह तालुपाकका लक्षण है।

तालुपात (सं० पु०) एक रोग जो छोटे बच्चोंके तालुमें होता है।

तालुपीड़क (सं० पु०) तालुपात रोग।

तालुपुप्पुट (सं० पु०) तालुगत रोगभेद, तालुमें होनेवाला एक रोग।

तालुयन्त्र (सं० क्लो०) बारह उँगलोका एक यन्त्र जो मछलीके तालुमा होता है। ताडयन्त्र देखो।

तालुर—तालूर देखो।

तालुविद्रधि (सं० पु०) तालुगत शोथविशेष। त्रिदोषके कारण तालुमें दाहरोग मिल जानेसे यह रोग उत्पन्न होता है।

तालुविशोषण (सं० क्लो०) तालुका सूख जाना।

तालुशोष (सं० पु०) सुश्रुतोक्त तालुगत रोगभेद, एक रोग जिसमें तालू सूख जाता है और उससे फटकर घावसे हो जाते हैं।

तालू (हिं० पु०) १ तालू देखो। २ खोपड़ीके नीचेका भाग, दिमाग। ३ घोड़ोंका एक ऐब।

तालूफाड़ (हिं० पु०) हाथियोंका एक रोग। इसमें हाथीके तालुमें घाव हो जाता है।

तालूर (सं० पु०) तालयति तल-णिच् बाहुलकात् ऊर आवर्त्त, जलका भंवर।

तालूषक (सं० क्लो०) तल वा उपक। तालू।

तालेवर (हिं० वि०) धनाढ्य, धनी।

तालेश्वर नदी—जशोर जिलेकी एक नदी। यह नरेन्द्रपुरके निकट अठारा-बांकाकी शाखा नदी चित्रासे निकल है और तालेश्वर ग्रामके निकट भैरव नदीमें मिली है। इसकी लम्बाई लगभग ५ मील होगी। वर्षाऋतुमें इसकी चौड़ाई करीब ५० गजकी हो जाती है। छोटी छोटी नावें इसमें सब दिन आती जाती हैं।

ताल्प (सं० वि०) तल्पके वंशज।

ताल्लुक (हिं० पु०) तअल्लुक देखो।

ताल्वर्बुद (सं० पु०) रोगविशेष, एक रोग। इसके होनेमें तालूमें एक कमलके आकारका बड़ासा अङ्कुर या कांटा सा निकल आता है। इसमें बहुत पीड़ा होती है।

ताव (हिं० पु०) १ वह गरमी जो किसी वस्तुको तपाने या पकानेके लिये पहुँचाया जाय। २ अधिकारयुक्त क्रोधका आवेश, घमण्ड लिए हुए गुस्सेको झोंक। ३ अहङ्कारका आवेश। ४ तत्काल होनेकी आवश्यकता। ५ कागजका एक तख्ता।

तावक (सं० वि०) तव इदं युष्मद् अण्, एकवचने तव कादेशः। त्वत् सम्बन्धनीय, तेरा, तुम्हारा।

तावकीन (सं० वि०) तव इदं युष्मद् खञ्। युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्। पा ४।३।१। एकवचने तवकादेश। त्वदीय, तुम्हारा।

तावत् (अव्य तत्परिमाणमस्य तत् डावतु। १ साकल्य। २ अवधि। ३ मान। ४ अवधारण, निश्चय। ५ प्रशंसा। ६ पक्षान्तर ७ संग्राम। ८ अधिकार। ९ तदा, तब तक। १० वाक्यालङ्कार। (त्रि०) तत्परिमाणमस्य तद्-वतुप्। ११ परिमाणविशिष्ट, उतने परिमाणका।

तावत् शब्द क्रियाका विशेषण होनेसे वह क्लीवलिङ्ग होता है।

तावत्क (सं० त्रि०) तावता क्रीतः संख्यात्वात् कन्। उतनी कीमतमें खरीदा हुआ।

तावत्कृत्वस् (सं० त्रि०) तावत्कृत्व इति वत्वन्तात् क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृत्वसुच्। उतनी संख्या, उतना अंक।

तावतिक (सं॰ त्रि॰) तावता क्रीतः, तावत् क्रीतार्थे ठन् । पा ५।१।२२ । उतनेमें खरीदा हुआ।

तावतिथ (सं॰ त्रि॰) तावतो पूरणः डट्, या "वतो रिथुक्" इति सूत्रेण थुक् । तावत्का पूरण।

तावन्मात्र (सं॰ त्रि॰) तावदेव तावत्-मात्रच् । "प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ्मात्रचः" पा ५।२।३७ उतना ही परिमाण, उतनेका।

तावफन्द (हिं॰ पु॰) एक प्रकारकी औषध जिसके प्रयोगसे चांदीका खोटापन तपाने पर भी प्रकाश न हो ।

तावमाव (हिं॰ पु॰) परिस्थिति, मौका।

तावर (सं॰ स्त्री॰) धनुर्गुण, धनुषकी डोरी ।

तावरी (हिं॰ स्त्री॰) १ जलन ताप । २ धूप, घाम । ३ ज्वर, बुखार । ४ मूर्छा ।

तावान (फा॰ पु॰) दण्ड डांड़ ।

तावि—बम्बई प्रदेशके काठियावाड़का एक छोटा राज्य ।

ताविष (सं॰ पु॰) तवति गच्छति स्वामिभिरत्र तव गतौ बाहु॰ तव-टिषच् । ततो दीर्घः । उण् १।४८ । १ स्वर्ग । २ समुद्र ।

ताविषी (सं॰ स्त्री॰) तवति सौन्दर्यं गच्छति तव टिषच् दीर्घः ङीष् । १ देवकन्या । २ नदी । ३ पृथिवी ।

तावीज (अ॰ पु॰) १ यन्त्र मन्त्र या कवच । यह सोने चांदी तांबे आदिके चौकोर या आठ पहले सम्पुटके भीतर रख कर गलेमें या बांह पर पहना जाता है । इससे रोग दुःख या अपदेवताकी दृष्टि दूर होती है । पहले यूरोपमें भी तावीज पहननेकी प्रथा थी । मिउटेरोनमी के ११वें अध्यायके १८वें पदमें इस विषयका आभास पाया जाता है, उसमें लिखा है—'Therefore shall ye lay up these my words in your heart in your soul and bind them for a sign upon your hand that they may be as frontlets between your eyes" हिन्दुओंमें ग्रहशान्ति और अभिचारकर्मके लिये रोग शोक दुःख आदि नाश करनेके लिये और ग्रहदोष शान्तिके लिये अनेक देवदेवी तथा उपदेवताके कवच धारण करनेकी प्रथा प्रचलित है।

२ अलङ्कारविशेष । यह सोना या चांदीका बना कर बांहमें पहना जाता है ।

ताषीय (सं॰ पु॰) ताविष पृषो॰ दीर्घः । १ स्वर्ग । २ समुद्र । ३ कांचन, सोना ।

ताषीयी (सं॰ स्त्री॰) ताविषी पृषो॰ दीर्घः । १ चन्द्रकन्या । २ इन्द्रकन्या ।

तासुरि (पु॰) तस्करादि ।

ताश (हिं॰ पु॰) १ खेलनेके लिये मोटे कागजका चौखूटा टुकड़ा जिस पर रंगोंकी बूटियां या तसवीरें बनी रहती हैं, खेलनेका पत्ता । (Playing card)

इसके एक जोड़ेमें बावन पत्ते होते हैं जो चार रंगोंमें विभक्त रहते हैं । रंगोंके नाम हुकुम, चिड़ी, पान और ईंट हैं । एक एक रंगके तेरह तेरह पत्ते होते हैं । इस प्रकार चारों रङ्गके पत्ते मिला कर बावन होते हैं । प्रत्येक रंगके तेरह पत्तोंमेंसे पहलेसे दस तक तो बूटियां होती हैं जिन्हें क्रमशः इक्का, दुक्की (या दुड़ी) तिक्की चौकी, पञ्जी, छक्का सत्ता अट्ठा नहला और दहला कहते हैं ; शेष तीन पत्तियोंमें क्रमशः गुलाम बीबी और बादशाहकी तसवीरें होती हैं ।

इन बावन ताशोंसे कई तरह अनेक प्रकारके खेल खेले जाते हैं, जिनमें साधारणतः रंगसार खेल सबसे प्रसिद्ध है । इस खेलमें विशेष कर चार मनुष्य खेलते हैं । खेलनेके समय पहले तासको अच्छी तरह फेरफार कर पांच पांच ताश एकको बांटते हैं । इस खेलमें किसी रंगकी अधिक बूटियांवाला पत्ता उसी रंगकी कम बूटियोंवाले पत्तेको मार सकता है । इसी प्रकार दहले को गुलाम मार सकता है और गुलामको बीबी, बीबीको बादशाह और बादशाहको इक्का । रंगसारमें एक सबसे श्रेष्ठ माना जाता है और वह सब पत्तोंको मार सकता है । इसी प्रकार रंगसे मार कर जब हाथके पांचों ताश खर्च हो जाते हैं तब फिर पांच पांच ताश बांट दिये हैं । इसी क्रमसे बावनों तासके खर्च जाने पर खेलनेवाले अपने अपने जीते हुए ताशोंको उठा कर रख लेते हैं । अब खेल फिर पहले जैसा शुरू होता है । अन्तमें जिसके पास अधिक ताशके पत्ते आ जाते हैं, उसीकी जीत समझी जाती है । कोट पीस नामक एक दूसरा खेल है । इसमें चार मनुष्य एक साथ खेलते हैं । दो दो मनुष्यका जोड़ा या गोइयां होता है । दाहिनी ओरसे चार

चार ताश पहली बार बाँटे जाते हैं। पहले जिसको ताशके पत्ते दिये जाते हैं, वह उन्हें ले कर जिस रंगके पत्तोंको बलवान् या अधिक देखता है, वही रंग बोलता है। सब पत्तोंके बट जाने पर वे पहले रंगमार जैसा खेल खेलते हैं। लेकिन खेलते समय दूसरेके पास उस रंगका पत्ता न रहे तो रंगसे मार सकता है। 'रंग'की दुक्की 'बदरंग'के एक्केको भी मार सकती है। इस प्रकार जब हाथके सब पत्ते खतम हो जाते हैं, तब जिसके पास जीते हुए ताशके अधिक पत्ते रहते हैं, वही जीतता है। 'गेम' नामका एक तीसरा खेल है। यह भी 'कोट-पीस' की तरह खेला जाता है। फर्क इतना ही है, कि 'कोटपीस'में चार मनुष्य खेलते हैं, लेकिन इसमें छः। तीन तीन आदमीका जोडा या गोइयाँ होता है। इसमें चारो रंगकी दुक्की अलग रख दी जाती हैं। शेष अड़तालीस ताश छहोंके बीच आठ आठ करके बाँट देते हैं। इसमें 'हाथ' बोलनेके लिये कहा जाता है अर्थात् कितनी बार वह स्वयं वा अपने जोड़ेसे ताश काट सकता है। पांचसे ले कर सात हाथ बोल सकते हैं। जब हाथ में ऐसे ऐसे पत्ते आ जांय कि उनसे लगातार आठ बार काट सके, दूसरा एक बार भी काट न सके, तब वैसी हालतमें 'गेम' बोला जाता है। छहों खेलनेवालोंको जब बराबर बराबर ताशके पत्ते मिल जाते हैं, तब वे क्रमसे 'हाथ' बोलते हैं; कोई पांच, कोई छः और कोई सात। जो जिस तरहका अपना ताश देखता है, बोल उठता है। जिसकी संख्या अधिक रहती है, पहले वही 'रंग' बोलता है। बाद 'रंगमार' जैसा खेल शुरू होता है। जो जितना हाथ बोलता है, उतना जीत लेने पर उस अङ्कको कागज पर लिख लेता है अथवा उसको याददाश्त रखी जाती है। अगर वह उतना हाथ न जीत लेता तो उसे 'पेनैलटी' लगती है अर्थात् उसके विरुद्ध पचका उससे दूना हाथ होता है। इसी प्रकार खेलते खेलते जिसके बावन हाथ पहले होते हैं, उसीको जीत होती है, तब एक गेम कहलाता है। यदि हाथ बोलते समय 'गेम' कहा जाय और जीत न सके, तो दूसरेका दो 'गेम' होना साबित होता है। ताश खेलते समय खिलाड़ीको अपने ताश इस तरह छिपाये रखना चाहिये कि दूसरा कोई उसके ताशको देख न सके। ऐसा नहीं करनेसे उसकी पोल खुल जाती है और अन्तमें हार भी उसीको होती है।

'गुलाम चोर' नामका एक और खेल है। इस खेल-का जैसा नाम है, वैसी इसकी करनी भी है। इसमें चार खिलाड़ी रहते हैं, उपर्युक्त खेलों जैसा जोड़ा नहीं रहता। सभी एक दूसरेके विपक्ष रहते हैं। खेलके प्रारम्भमें बावन पत्तोंमेंसे किसी एक पत्तेको चुरा रखते हैं। पीछे सब पत्ते आपसमें बाँटे जाते हैं। बाद हरएक खिलाड़ी अपने पासके पत्तोंका जोड़ा लगा कर अर्थात् चिड़ीकी दुक्कीके साथ हुकुमकी दुक्की, तिक्कीके साथ तिक्की, इत्यादि इसी प्रकार पानके साथ ईंटकी बूटियोंके संख्यानुसार पत्तोंका जोडा लगा कर अलग रखते हैं। अब बचे हुए पत्तोंको वे अपने अपने सामने इस तरह पकड़े रहते हैं कि कोई दूसरा उसे देख न सके। बाद एक खिलाड़ी दूसरेके हाथसे पत्ता खींच कर, अगर उसके पास उसका जोड़ा रहता है तो उसीके साथ मिला कर अलग रख देता है, या नहीं तो अपने हाथके पत्तोंमें ही उसे उलट पुलट कर दूसरेको खींचने कहता है। इस प्रकार खेलते खेलते सब पत्तोंका जोडा लग जाता है, केवल एक ही पत्ता जिसका जोड़ा चुरा कर रखा गया है, बच जाता है। जिसके हाथमें वह पत्ता रह जाता है, वह चोर समझा जाता है। इसीको 'गुलाम चोर' कहते हैं। इस-के सिवा और भी ताशके कई खेल हैं जिनका विस्तारके भयसे उल्लेख नहीं किया गया।

ताशका खेल पहले पहल किस देशमें निकला, इसका ठीक पता नहीं है। कोई मिस्र देशको, कोई बाबिलोनियाको, कोई अरबको और कोई भारतवर्षको इसका आदि स्थान बतलाते हैं। फिर बहुतोंका कहना है कि फ्रान्सके राजा ६ठे चार्लस वायुरोगग्रस्त थे। उन्हींके जी बहलानेके लिये ताशके खेलकी सृष्टि हुई। सेक्सपियरमें ताशके खेलका उल्लेख है। अभी जो 'ग्रेट मुगल' मार्काका ताश मिलता है, वह पहले पहल यूरोपसे इस देशमें लाया गया था। साहब, बीबी, गुलामकी तसवीरोंसे भारतवासीको उतना खुश न देख कर, उसके बदले तरह तरहकी देवदेवियोंकी तसवीरें हो गई हैं। फिलहाल बेलजियमसे जो 'कदम्बकेलो' नामका

ताश आता है, इसमें अप्सराओंकी जो चित्र तसवीरें हैं।

इस खेलकी उत्पत्ति किस देशमें और किस समयमें हुई इसका पता इतनेलोगोंको इसीसे लग जायगा, कि विलायतमें रायेल एशियाटिक सोसाइटीके नामसे एक म्यूजियम है जहां हजार वर्ष पहलेका एक जोड़ा ताश मिलता है। किन्तु वह ताश एक हजार वर्ष पहलेका है इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। भारतवर्षके जिस ब्राह्मणसे यह ताश खरीदा गया था, उसने कहा था, कि यह हजार वर्ष पहलेका है।

सर विलियम जोन्स लिख गये हैं, कि भारतवर्षमें चतुरङ्ग नामक एक खेल बहुत दिनोंसे प्रचलित है। प्राचीन ग्रन्थकारोंमें पद्मचक्रने कहा है,—'प्राचीन ऋषियोंने स्थिर किया था, कि ताशके कुल बारह रंग हों, और हरएक रंगके बारह बारह ताश हों; पर वे प्रत्येक रंगके भिन्न भिन्न बारह राजा नहीं मानते थे।"

अकबरके समयमें भारतवर्षमें जो ताश प्रचलित थे, उनके रंगोंके नाम भिन्न थे, जैसे, (१) अश्वपति—यह सबसे प्रधान रंग था। ताशके ऊपर दिल्लीके बादशाह अकबरकी तसवीर घोड़े पर बनी रहती थी। उनके हाथमें छत्र और पताका शोभित थी। बाद दसवाले से ले कर एका तकके पत्ते घोड़ोंकी तसवीर पर चित्रित थे। (२) गजपति—इसमें ताशके पहले पत्ते पर उड़ीसाके राजाकी तसवीर हाथी पर बनी होती थी। उनके वजीरकी तसवीर भी उसी तरह थी। बूटियोंवाले ताश हाथी पर बने रहते थे। (३) नरपति—इसमें बीजापुरके राजा सिंहासन पर बैठे हैं, पास ही उनके वजीरकी भी तसवीर थी, और सब ताश पदाति सैन्यके चिह्नोंसे चित्रित रहते थे। (४) गढ़पति—गढ़के ऊपर सिंहासन पर बैठे हुए राजाकी तसवीर और गढ़के ऊपर वजीरकी तसवीर रहती थी। (५) धनपति—राजा सिंहासन पर बैठे हैं, सामने धनराशि है और बगलमें वजीर बैठ कर राजकोषका हिसाब कर रहे हैं; शेष पत्तों पर सोने और चांदीसे भरे हुए घड़ोंकी तसवीरें रहती थीं। (६) द्रव्यपति—कर्णाटकके राजा सिंहासन पर बैठे हुए हैं और चारों ओरसे कपड़ेके थान उन्हें दिये हैं। शेष ताशमें सिर्फ कर्णाटकके पुरुषोंके ही चित्र थे। (७) नौपति—राजा जहाजके ऊपर सिंहासन पर बैठे हैं और वजीर नाव पर। दूसरे ताशोंमें नावकी तसवीरें रहती थीं। (८) स्त्रीपति—प्रथम ताशमें सिंहासनके ऊपर रानी और दूसरेमें वजीरकी स्त्री घोड़े पर बैठी रहती थीं। दूसरे दूसरे ताशोंमें भी स्त्रीकी तसवीरें थीं। (९) देवपति—पहले ताशमें इन्द्र सिंहासनके ऊपर और दूसरेमें उनके सखा चौकी पर बैठे रहते थे। शेष ताश देवताओंकी तसवीरोंसे चित्रित रहते थे। (१०) असुरपति—दानवके पुत्र सुलेमान सिंहासन पर और वजीर भालो पर बैठे रहते थे। और सब ताशोंमें दैत्योंकी तसवीरें रहती थीं। (११) वनपति—पहले ताशमें पशुराज सिंह रहता और दूसरेमें चीताका चित्र और शेष दस ताशोंमें जङ्गली पशुओंकी प्रतिमूर्ति रहती थी। (१२) अहिपति—मकरके ऊपर सर्पराज और सर्पके ऊपर वजीर बैठा रहता था। दूसरे दूसरे ताशोंमें सर्पोंके चित्र रहते थे।

प्रथम छः रंगोंके ताशोंको 'विषमवर" अर्थात् विषमबल या 'अधिकबल" और शेष छःको "कमवर" अर्थात् कम बल या "अवबल" कहते थे।

बादशाह अकबरने ताशोंमें और भी कई प्रकारके परिवर्तन किये थे जैसे—अश्वपति दस्तखत कर रहे हैं, वजीर भण्डारकी खबर ले रहे हैं। शेष दस ताशोंमें राजकोषमें नियुक्त प्रतिमूर्तियाँ थीं यथा—कोषरक्षक, धातु गलानेवाला, अथवा मुहर आदि काटनेवाला, वजन करनेवाला, ताप देनेवाला, मुहर गिननेवाला, 'मास' नामक मुद्रा गिननेवाला, पोद्दार तथा धातु पीटनेवाला रहता था। एक और प्रकारके ताशमें बादशाह अकबरने मूर्ति द्वारा राजाओंकी तसवीरें दी हैं। उनके सामने पर नाम, दानपत्र दफ्तरके कागजात रखे हुए हैं। कोई वजीर बैठे हैं और सामने दफ्तर है। पश्चात् दूसरा ताशोंमें राजके सम्बन्धीय कर्मचारियोंके चित्र हैं, यथा—कागजी, कागज पर रंग चढ़ानेवाला, दफ्तरके कागज पर लिखनेवाला, कागज पर सुनहरी रुपहरी काम करनेवाला, नकशा खींचनेवाला, सोनेके अक्षर और सोने रंगसे रेखा खींचनेवाला, फरमान लिखनेवाला, नाना बोलनेवाला तथा रंगरेज। फिर एक प्रकारके ताशमें अकबर

बादशाहने शिल्पकार्यके राजाओंको खूब भड़कीली 'तसवीरें' दी हैं; वे रेशम और रेशमके कपड़ोंका निरीक्षण कर रहे हैं। खुवरा ताशोंमें भार ढोनेवाले जन्तुओंको प्रतिमूर्त्तियां हैं। फिर एक प्रकारके ताशमें वंशोराज सिंहासन पर बैठ कर गान सुन रहे हैं। वजीर गायक और वादकोंको तदबोर कर रहे हैं। अवशिष्ट ताशोंमें गायक और वादकोंकी प्रतिमूर्त्तियाँ चित्रित हैं। और एक प्रकारका ताश है जिसमें रौप्यराज रौप्यमुद्रा वितरण कर रहे हैं। वजोर दानका तदारुक कर रहे हैं शेष ताशोंमें रौप्यमुद्रायन्त्रके कर्मचारियोंकी तसवीरें हैं। एक दूसरे प्रकारके ताशमें असिराज तलवार चला रहे हैं। वजोर आयुधागारका तदारुक कर रहे हैं। अन्य दश ताशोंमें आयुधागारके कर्मचारियोंको प्रतिमूर्तियां चित्रित हैं। ताजपति—राजा राजचिह्न प्रदान कर रहे हैं, वजोरको घोड़ा दिया है, घोड़ेमें भी राजचिह्न है। कोतदास्पति-राजा हाथो पर और वजोर में नगाड़ो पर जा रहे हैं। अन्यान्य ताशोंमें कोई भृत्य तो बैठा हुआ है, कोई शराब पो रहा है, कोई गान कर रहा है और कोई देवताको उपासनामें हो मस्त है। आईन-इ-अकबरीमें लिखा है, कि बादशाह अकबर जिस ताशसे खेलते थे, उसमें बारह रंग थे और १४४ पत्ते रहते थे। अबुल फजलने उन सब ताशोंको भारतवर्षसे हो प्राप्त किया था। वे सब ताश यदि भारतवर्षके न होते, तो उनमें भारतोय नाम नहीं रहता। पहले हर एक रङ्गके केवल बारह हो पत्ते होते थे। 'गुलाम' तो पाश्चात्य देशोंको नई सृष्टि है। आजकल जो ताश खेले जाते हैं, वे यूरोपसे हो आते हैं।

दशावतार ताश देखो।

ताशा (अ० पु०) एक प्रकारका बाजा जिस पर चमड़ा मढ़ा हुआ रहता है। इसे गलेमें लटका कर दो पतली लकड़ियोंसे बजाते हैं।

ताष्ट (सं० त्रि०) तष्टृ-ष्ण। विश्वकर्माका बनाया हुआ।

तासला (हिं० पु०) भालुओंके गलेकी वह रस्सी जिसे पकड़ कर कलन्दर उसे नचाते हैं।

तासीर (अ० स्त्री०) प्रभाव, गुण, असर।

तासुन (सं० पु०) तस बाहुलकात् उनण्। १ शणवृक्ष, सनका पेड़। तस्येदं अण्। २ तसम्बन्धो।

तासुनी (सं० स्त्री०) तासुन स्त्रियां ङीप्। शणनिर्मित मेखला, सनकी डोरी।

तास्कर्य (सं० क्लो०) तस्करस्य भाव तस्कर-ष्यञ्। तस्करता, चोरी।

तासान्ह (सं० क्लो०) सामभेद।

ताहम (फा० अव्य०) तोभी, तिसपर भी, फिर भी।

ताहीरपुर—१ बङ्गालका एक विख्यात परगना। यह दिनाजपुर जिलेमें अवस्थित है। इसका परिमाण लगभग ७६२ वर्गमील है। यह परगना केवल एक जमींदारी है।

२ राजसाही जिलेके अन्तर्गत एक विख्यात जमींदारी। यहांके जमींदारने बङ्गदेशमें विशेष ख्याति प्राप्त को है और गवर्मेण्टसे उन्हें उपाधि भी मिली हैं। जमींदार वारेन्द्र श्रेणोके भादुड़ोग्रामोण ब्राह्मण हैं।

ति (सं० अव्य०) इति वेदे। पृषा० साधुः। इति शब्दार्थ।

तिक (सं० पु०) तिक्-क। ऋषि भेद, एक ऋषिका नाम।

तिककितवादि (सं० पु०) पाणिनिका एक गण। तिक कितव, वङ्गरभण्डोरथ, उपकलमक, फलकनरक, वकनख-गुदपरिणद्ध उब्जककुभ, कलङ्कशान्तमुख, उत्तरशलङ्कट, कृष्णाजिनकृष्णसुन्दर, भ्राष्टककपिष्ठल और अग्निवेशदशेरुक ये शब्द तिककितवादिगण-भुक्त है।

तिकड़ी (हिं० स्त्री०) १ वह जिसमें कड़ियां हों। २ तोन तोन रस्सियोंको एक साथ लेकर चारपाई आदिको बुनावट।

तिकादि (सं० पु०) पाणिनिका एक गण। अपत्य अर्थमें तिकादि शब्दके बाद फिञ् होता हैं। तिक, कितव, संज्ञा, बाला, शिखा, उरस्, शाट्य, सैन्धव, यमुन्द, रूप्य, ग्राम्य, नील, अमित्र, गोकक्ष, कुरु, देवरथ, तैतिल, औरस, कौरव्य, भौरिकि, मौलिकि, चोपत, चैटयत, शैकयत, क्षैतयत, ध्वाजवत्, चन्द्रमस शुभ, गङ्गा, वरेण्य, सुयामन्, आरब्ध, वाह्यक, खल्य, वृष, लोमक, उदन्य और यज्ञ इन शब्दको लेकर तिकादिगण बना है।

तिकानी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारको तिकोनी लकड़ी जो पहियेके बाहर धुरोके पास पहियेको रोकनेके लिये लगी होती है।

तिक्तीय (सं॰ त्रि॰) तिक्त-छ। (अश्मादिभ्यश्छः। पा ४।२।८०)
तिक्तके सन्निहित देशादि, तिक्तके पासका देश।

तिकुरा (हिं॰ पु॰) फसलकी तीन बराबर राशि, जिनमेंसे एक राशि जमींदार लेते हैं।

तिकोना (हिं॰ वि॰) १ त्रिकोणयुक्त, जिसमें तीन कोने हों। (पु॰) २ एक नमकीन पकवान।

तिकोनिया (हिं॰ वि॰) तिकोना देखो।

तिकौ (हिं॰ स्त्री॰) तीन बूटीवाला ताशका पत्ता।

तिक्त (सं॰ पु॰) तिज्यति तिज बाहुलकात् कर्त्तरि क्त। १ रसभेद, छः रसोंमेंसे एक तीता रस। (क्ली॰) २ पर्प्पटकौषधि, पितपापड़ा। ३ सुगन्ध। ४ कुटजवृक्ष। ५ वरुण वृक्ष। इन सब वृक्षोंमें तीता रस अधिक रहनेके कारण इनकी गिनती तिक्तमेंकी गई है। (त्रि॰) ६ तिक्त रसयुक्त तीता रसवाला। ७ तिक्तरसवत्, तीतारसके समान।

इस रसके विषयमें सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—आकाश, वायु, अग्नि, जल और भूमि इन पञ्च भूतोंमें उत्तरोत्तर एक एक करके बढ़ कर शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध ये पांच गुण उत्पन्न होते हैं। अत एव रस जलीय गुणसे निकला है। एक दूसरेके आश्रय रखता है, आपसमें है और एक दूसरेसे मिल कर सब भूतोंके सब पदार्थोंमें मिला है। लेकिन वह उत्कृष्ट और अपकृष्टमें इसे ग्रहण किया जाता है।

जलीय गुणस्वरूप वह रस तथा और सब भूतोंके साथ मिल कर विदग्ध हो जानेसे ६ प्रकारोंमें विभक्त हो जाता है, वे ही छः रस हैं, जिनके नाम क्रमसे मधुर अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय है। विशेष विवरण रसमें देखो। वायव और आकाश गुणके अधिक रहनेसे तिक्त रस उत्पन्न होता है। किसी किसी पण्डितका कहना है, कि जगत्‌का अग्निसोमात्मक प्रयुक्त रस दो प्रकारका है—आग्नेय और सौम्य। मधुर, तिक्त और कषाय सौम्य है एवं कटु अम्ल और लवण आग्नेय। कटु, तिक्त और कषाय लघु है। सौम्य हो पर शीतल है।

जिस रसके गर्भमें ज्वाला, मुखमें वैरस्य अरुचि और दर्प हो, उसे तिक्त रस कहते हैं।

तिक्तरस छेदन, रुचि, दीप्ति और शोधनकर एवं कण्डु, कोठ, तृष्णा, मूर्च्छा और ज्वरप्रशान्तिकारक स्तन्य शोधक एवं विष्ठा मूत्र, क्लेद, मेद वसा और पूयशोषण कर है। ऐसा गुणविशिष्ट होने पर भी अधिक मात्रामें सेवन करनेसे शरीर स्वच्छरहित हो जाता, बांटमेंकी शक्ति घट जाती, वात धातुमें आक्षेप होता तथा शिरःशूल भ्रम, तोद, भेद, छेद और मुखमें वैरस्य उत्पन्न होता है। अमलतास गुरुच मजीठ कनेर हल्दी, इन्द्रयव दारुहल्दी वरुणवृक्ष, गोखरू, सहदेई हफ्ती, मटकटैया, भूमिकर्णी निर्गुण्डी, द्रोणपुष्पी कर्कोटक कारवेल्लक (करेला) वार्त्ताकु, करीर, करवीर, मालती, शङ्खपुष्पी, अपामार्ग वचा, अशोक, कुटकी, जयन्ती, ब्राह्मी, पुनर्नवा वृश्चिकाली और ज्योतिष्मती लता आदि तिक्त वर्गके अन्तर्गत है। इनमें पटोल और वार्त्ताकु उत्कृष्ट है। (सुश्रुत सूत्र॰ ४२ अ॰)

तिक्तक (सं॰ पु॰) तिक्तेन तिक्तरसेन कायति कै-क वा तिक्त स्वार्थे कन्। १ पटोल परवल। २ चिरतिक्त चिरायता। ३ कृष्णखदिर, काला खैर। ४ कटुरोहण। ५ तिक्त रस, तीता रस। ६ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़। ७ कुटज वृक्ष, कुरैया। (त्रि॰) तिक्तरसयुक्त जिसका रस तीता हो।

तिक्तकन्दिका (सं॰ स्त्री॰) तिक्तरसयुक्तः कन्दो मूलं यस्याः तिक्तकन्द कप् टाप् इत्वं। गन्धपत्रा, वन कचूर, बनआदा।

तिक्तका (सं॰ स्त्री॰) तिक्तेन रसेन कायति कै-क टाप्। कटुतुम्बी कड़वा कद्दू। इसके संस्कृत पर्याय-इक्ष्वाकु, कटुतुम्बी, तुम्बी और महाफला है। इसके गुण—शीत भेद, हृद्यकारी, तिक्तरस कटुविपाक तथा विष, कास विष, वायु और पित्तज्वरनाशक। (भावप्र॰) २ काकमाची, मकोय। ३ अरण्यनल कदली। ४ कुटुम्बा।

तिक्तगन्धक (सं॰ पु॰) भूनिम्ब चिरायता।

तिक्तगन्धिका (सं॰ स्त्री॰) कटुका, कुटकी।

तिक्तघोषातकी (सं॰ स्त्री॰) तिक्तघोषा कड़ई तरोई।

तिक्तगन्धा (सं॰ स्त्री॰) तिक्त गन्धो यस्याः बहुव्री॰। १ वराहक्रान्ता, वाराहीकन्द। २ राजिका, सफेद सरसों।

तिक्तगन्धिका (सं० स्त्री०) तिक्तगन्धा देखो ।

तिक्तगुञ्जा (सं० स्त्री०) गुञ्जेषु तिक्ता राजदन्तादित्वात् पूर्वनिपातः । करञ्जकंजा, करंजुआ । इसके पर्याय—क्षुद्ररमा, रमधा और विदपकंटो ।

तिक्तघृत (सं० क्लो०) सुश्रुतोक्त घृतभेद, सुश्रुतके अनुसार कई तिक्त औषधियोंके योगसे बना हुआ एक घृत । इसके प्रस्तुतप्रणाली—त्रिफला, पटोल, निम्ब, वासक, कटुकी, दुरालभा, त्रायमाणा और पर्पट प्रत्येकका दो दो पल जलमें डलवाते हैं । जब जलका चौथा भाग रह जाय तो नीचे उतार लेते हैं । त्रायमाणा, मूर्वा इन्द्रयव, चन्दन, भूनिम्ब और पिप्पली प्रत्येकका आध तोला ले कर उक्त क्वाथमें पीसते हैं । उसी चूर्णके साथ प्रस्थ परिमित घृत पाक करना चाहिये । इससे कुष्ठ, विषमज्वर गुल्म, अर्श, ग्रहणी, शोफ, पाण्डु, विसर्प और षण्डता रोग जाते रहते हैं । (सुश्रुत चिकि० ९ अ०)

तिक्ततण्डुला (सं० स्त्री०) तिक्तस्तण्डुलोऽन्तः यस्यं यस्याः । पिप्पली, पीपर । इसके पर्याय—चपला, शौण्डी, वैदेही, मागधी, कणा, क्षणोपकुल्या, मगधी और कोल हैं । (वैद्यकरत्नमाला)

तिक्तता (सं० स्त्री०) तिक्तस्य भावः तिक्त-तल्-टाप् । तिक्तरस, तिताई ।

तिक्ततुण्डी (सं० स्त्री०) तिक्ततुम्बी पृषोदरादित्वात् साधुः । कुटुतुम्बोलता, कड़ुई तरोईकी लता ।

तिक्ततुम्बो (सं० स्त्री०) तिक्ता तुम्बो । कड़ुआ कद्दू, तितलौकी ।

तिक्तदुग्धा (सं० स्त्री०) तिक्तं दुग्धं निर्यासो यस्याः । १ चोरिणीवृक्ष, खिरनी । २ अजशृङ्गी, मेढ़ासिंगी ।

तिक्तधातु (सं० पु०) तिक्तः तिक्तरसप्रधानो धातुः । पित्त ।

तिक्तपत्र (सं० पु०) तिक्तानि पत्राणि यस्य । १ कर्कोटक, ककोड़ा, खेखसा । (वि०) २ तिक्तपत्रक वृक्षमात्र, वह वृक्ष जिसकी पत्ती कड़ुई हो । (क्लो०) ३ तिक्तं पत्रं । कड़ुई पत्ती ।

तिक्तपर्णिका (सं० स्त्री०) गोरक्षकर्कटी, कचरो, पेहँटा ।

तिक्तपर्णी (सं० स्त्री०) गोरक्षकर्कटी, कचरी ।

तिक्तपर्वा (सं० स्त्री०) तिक्तं पर्वग्रन्थि यस्याः, बहुव्रो० । १ दूर्वा, दूब । २ हिलमोचो, हुलहुल । ३ गुडूची, गुर्च, गिलोय । ४ यष्टिमधुलता, जेठीमधु, मुलेठी ।

तिक्तपुष्पा (सं० स्त्री०) तिक्तानि पुष्पाणि यस्याः । १ पाठा । (वि०) २ तिक्तपुष्प वृक्षमात्र, वह पेड़ जिसमें कड़ए फूल लगते हैं । (क्लो०) ३ तिक्त फूल, कड़ुआ फूल ।

तिक्तफल (सं० पु०) तिक्तानि फलानि यस्य । १ कतक वृक्ष, रीठा । (वि०) २ तिक्तफलक वृक्षमात्र, वह पेड़ जिसमें कड़ए फल लगते हैं । ३ तिक्त फल, कड़ुआ फल ।

तिक्तफला (सं० स्त्री०) तिक्तानि फलानि यस्याः । १ यवतिक्ता लता, भटकटैया । २ वार्त्ताकी, कचरी । ३ षड्भुजा, खरबूजा ।

तिक्तभद्रक (सं० पु०) तिक्तस्तिक्तरसप्रधानो भद्रकः तत, स्वार्थे कन् । पटोल, परवल ।

तिक्तमरिच (सं० पु०) तिक्तो मरिच इव । कतक वृक्ष, रीठा ।

तिक्तयवा (सं० स्त्री०) तिक्तः यव इन्द्रयव रसोऽस्त्यस्य अच । १ शङ्खिनी । २ यवतिक्ता लता ।

तिक्तरसा (सं० स्त्री०) तिक्तः रसो यस्याः । ब्राह्मीशाक ।

तिक्तरोहिणिका (सं० स्त्री०) तिक्तरोहिणी स्वार्थे कन्-टाप पूर्वह्रस्वश्च । कटुका, कुटकी ।

तिक्तरोहिणी (सं० स्त्री०) तिक्ता सती रोहति रुह-णिनि ङीप् । कटुका, कुटकी ।

तिक्तला (सं० स्त्री०) शङ्खिनी ।

तिक्तवर्ग (सं० पु०) तिक्तानां वर्गः, ६-तत् । तिक्तरसात्मक द्रव्य समूह ।

तिक्तवल्ली (सं० स्त्री०) तिक्ता वल्ली । १ मूर्वालता, मुर्रा, मरोरफली । २ तिक्तलता मात्र, कड़ुई बेल ।

तिक्तबीजा (सं० स्त्री०) तिक्तं बीजं यस्याः । कटुतुम्बी, कड़ुआ कद्दू, तितलौकी ।

तिक्तशाक (सं० पु०) तिक्तः शाको यस्य । १ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़ । २ वरुणद्रुम, वरुणवृक्ष । ३ पत्रसुन्दर वृक्ष । (क्लो०) ४ एक प्रकारका कड़ुआ साग ।

तिक्तशाकतरु (सं० पु०) श्वेतप्रसूनक वृक्ष ।

तिक्तशाकद्रु (सं० पु०) वरुणवृक्ष ।

तिक्तसार (सं० पु०) तिक्तः सारो निर्यासोऽस्य । १ खदिर, खैर । २ विटखदिर वृक्ष । (क्लो०) ३ दीर्घरोहिषक तृण, रोहिस नामकी घास । ३ तिक्तसारक वृक्षमात्र, वह

पेड़ जिसका रस तीता हो। ४ तिक्तमार कड़ुआ रस।

तिक्ता (स॰ स्त्री॰) तिक्तमित्रसमोऽस्त्यस्या अच् मत्वर्थे। १ कटुरोहिणो कुटको। पर्याय—कटम्बी, कटुका, तिक्ता, कृष्णभेदा, कटुम्भरा, अशोका, मत्स्यशकला, चक्राङ्गो, शकुलादनी, मत्स्यपित्ता, काण्डरुहा रोहिणो और कटुरोहिणो है। २ पाठा। ३ यवतिक्ता लता। ४ षड्भुजा, करवल्ला। ५ छिक्कनी, नकछिकनी। ६ मृता कस्तूरी।

तिक्ताख्या (सं॰ स्त्री॰) तिक्तं ति आख्या यस्याः। कटुतुम्बी। कड़ुआ कद्दू, तितलौकी।

तिक्ताङ्गा (स॰ स्त्री॰) तिक्त अङ्ग यस्याः। पातालगरुड़ीलता छिरे टा।

तिक्तापत्ता (स॰ स्त्री॰) मलामिद, एक प्रकारको बेल। (Menispermum glabrum)

तिक्ताश्या (स॰ स्त्री॰) तिक्तेति आख्यो यस्याः। कटुतुम्बो, तितलौकी।

तिक्तिका (स॰ स्त्री॰) तिक्त स्वार्थे कन् टाप् अत इत्वम्। १ कटुतुम्बो, तितलौकी। २ काकमाची। ३ कटुका, कुटको।

तिक्तिरो—भारतं लोगोंका एक प्राचीन तुम्बा बाजयन्त्र। यह देखनेमें बहुत कुछ यूरोपीय बगपाइप (Bagpipe) जैसा होता है; भारतमें तुमड़ोके नामसे प्रख्यात है। आहितुण्डिक लोग इसका व्यवहार करते हैं। इसका दूसरा नाम पूंगी है। इस यन्त्रके निम्नभागमें छिद्रयुक्त दो नल परस्पर बराबर संयुक्त रहते हैं और ऊपरके भाग में एक बड़ीसे कटुतुम्बी संयोजित रहती है। यही वायुकोष है, इसका ऊपरी भाग नलाकार और कुछ नत रहता है। इसीमें एक छिद्र रहता है। तिक्ततुम्बी होनेके कारण इसका नाम तिक्तिरो हो गया है।

यूरोपीय संगीतशिल्पवित्‌ बेलकृत (?) रचित Travels in Siberia साइबेरिया-भ्रमण नामक ग्रन्थमें तित्ति (Titty) नामसे इसका उल्लेख किया है और यूरोपके Bag pipe के साथ तुलना की है। किन्तु आधुनिक तिक्तिरी और सम-पाइपमें यही अन्तर है कि बगपाइपका वायुकोष चर्मनिर्मित होता है। प्राचीन कालमें सम्भवतः कभी कभी तिक्त कद्दूके अभावमें चर्म द्वारा यह यन्त्र तैयार करते थे, सुतरां आधुनिक बगपाइप उस समयकी तिक्तिरीके समान कहा जा सकता है। यह कभी कभी नाकसे बजाया जाता है इसीसे इसका दूसरा नाम नासाच भी हो है। इसके एक नलमें एक व गनी पत्थर दे कर और दूसरेमें ५ छिद्र होते हैं। नलके सब से नीचेके दो छिद्र मोम द्वारा बन्द रहते हैं, जो ऊपरवाले नलके दोनों तरफ होते हैं। दूसरी नलोके पांच छेदोंमेंसे दूसरा और चौथा खुला रहता है और तीन मोम द्वारा बन्द रहते हैं। प्रथम नलसे मात्र सुर बजाये जाते हैं, दूसरा नल केवल सुर लेनेके लिये बजाया जाता है। यह तिक्तयन्त्र प्रायः दक्षिणके समस्त प्रधान देशोंमें अति प्राचीन कालसे व्यवहारमें लाया जाता है। कोम्बट्र सोनेराट (Combotour Sonnerat)ने सौपवेज् ऐन्ड इन्डेस ओरियन्टल्स (Voyages and Indes Orientales) नामक ग्रन्थमें इस Tourte नामसे वर्णित है। किन्तु ग्रन्थमें लिखा है कि उन्होंने यह यन्त्र मछोगियाके लोगोंमें देखा था। औस्लो साहब (Sir William Ously) पारस्यमें ऐसा एक यन्त्र देखा था; वहां यह "नैर अम्बाना" (Nei Ambana) नामसे प्रसिद्ध है। मिसके प्राचीन "जुगारा" (Zouggarah) एवं आधुनिक "अर्गूल" और जुम्मारा (Jummarah) यन्त्र इसी तरहका होता है। दो विभिन्न प्रकारके नल और बिना तुम्बोका 'जाम' नामक एक यन्त्र है, नापिलमें 'जामपोनिया' नामसे एक ऐसे ही यन्त्रका उल्लेख है, वही अब आधुनिक इटलीके "जामपोना" (Zampogna) और फ्रेञ्चके 'मार्पेपा'को तरह है।

तित्र (त्रि॰ वि॰) जो तीन बार होता गया था।

तित्रा (त्रि॰ वि॰) तित्र देखो।

तित्राई (त्रि स्त्री॰) तीखापन, तीखापन, तेजो।

तित्रूटा (त्रि॰ वि॰) त्रिकोणयुक्त, जिसमें तीन कोने हों, तिकोना।

तिखना (त्रि॰ क्रि॰) दृष्टि डालना, देखना।

तिगर—सिन्धु प्रदेशके अन्तर्गत शिकारपुर जिलेके मेहर उपविभागके अन्तर्गत एक तालुक। इसका भूपरिमाण ३०१ वर्गमील है।

तिमरिया—उड़ीसाके करद राज्योंमेंसे एक छोटा राज्य।

यह अक्षा० २०° २४ से ३०° ३२´ उ० और देशा० ८५° २६´ से ८५° ३५´ पू०में अवस्थित है। इसके उत्तरमें धेंकानल राज्य, पूर्वमें आठगढ राज्य, पश्चिममें बडम्बा राज्य और दक्षिणमें महानदी है। करद राज्योंमें यह सबसे छोटा होने पर भी यहां बहुत मनुष्योंका वास है। भूपरिमाण ४६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २२६२५ है। हिन्दुओंकी संख्या सबसे अधिक है। यहां पार्वतीय और जङ्गली अंश छोड कर और सब जगह अच्छी फसल होती है। मोटा चावल, तमाकू, रुई, ईख और तेलहन सरसों आदि यहांके प्रधान उत्पन्न द्रव्य हैं। प्रायः ४०० वर्ष पहले सुरतुङ्ग नामक किसी उत्तर-भारतीय मनुष्यने जगन्नाथतीर्थसे लौटते समय यहां आ कर इस देशके असभ्य आदिमें निवासियोंको भगा राज्य स्थापन किया। ये ही वर्तमान राजवंशके आदिपुरुष हैं। पहले यहां तीन गढ़ थे, उन्हीं तीन गढोंसे इसका नाम तिगडिया वा तिगरिया हुआ है। महाराष्ट्रके अभ्युदयके समय इस राज्यके कई अंश पार्श्ववर्ती राजाओंने अधिकार कर लिये थे। इसमें कुल १०२ ग्राम लगते हैं। राज्यकी आय १८,०००) और राजस्व ८८२) रु० है। इसकी सैन्य संख्या ३०० है। राज्यमें १२ स्कूल हैं। सबसे कुछ पहिले यहांके राजा वनमाली क्षत्रियवर चम्पतसिंह महापात्र थे।

तिगित (सं० वि०) निशित, चोखा, तेज।

तिगुना (हिं० वि०) तीन बार अधिक, तीन गुना।

तिगुचना (हिं० क्रि०) तिगुना देखो।

तिग्म (सं० क्ली०) तेजयति उत्तेजयति तिज मक्। युजिरुचितिजांकुश्च। उण् १।१४५। १ वज्र। २ पिप्पली। ३ पुरुवंशीय एक क्षत्रिय। (मत्स्यपु० ५०।८४) ये राजा तिमि नामसे प्रसिद्ध हैं। तिमि देखो। (वि०) ४ तीक्ष्ण, तेज। ५ तीक्ष्णस्पर्शयुक्त।

तिग्मकर (सं० पुं०) तिग्मः करः किरणो राजग्राह्यो वा यस्य। १ सूर्य। २ उग्रराजग्राह्य नृप, एक भयङ्कर राजा। तिग्मः करः कर्मधा०। ३ प्रखर किरण, तेज प्रकाश।

तिग्मकेतु (सं० पु०) ध्रुववंशीय वत्सरके औरस और सुवीथीके गर्भसे उत्पन्न एक पुत्रका नाम। (भागवत० ४।१३।१२)

तिग्मजम्भ (सं० वि०) तीक्ष्णमुख, जिसका मुंह तेज हो।

तिग्मता (सं० स्त्री०) तिग्मस्य भावः तिग्मभावे तल् टाप्। तीक्ष्णता।

तिग्मतेजस् (सं० वि०) तिग्मं तेजः यस्य। तीक्ष्ण तेजयुक्त, अत्यन्त तेज।

तिग्मदीधिति (सं० पु०) तिग्मा दीधितिर्यस्य, बहुव्री०। तिग्मांशु, सूर्य।

तिग्मभृष्टि (सं० वि०) तिग्माभृष्टिर्यस्य, बहुव्री। तीक्ष्ण तेजयुक्त, अत्यन्त तेज।

तिग्ममन्यु (सं० वि०) तिग्मः मन्युर्यस्य। १ उग्रक्रोधक, जिसे बहुत गुस्सा हो। (पु०) २ महादेव, शिव। (भारत १३।१७।४९)

तिग्मरश्मि (सं० पु०) तिग्मा रश्मयो यस्य। १ सूर्य। (वि०) २ प्रखररश्मिक, जिसकी किरण बहुत तेज हो। (क्ली०) ३ प्रखर रश्मि, तेज किरण।

तिग्मरुच (सं० वि०) तिग्मा रुक् यस्य। तिग्मरुचि, तेज कान्ति।

तिग्मवत् (सं० वि०) तीक्ष्णयुक्त, अत्यन्त तेज।

तिग्मशृङ्ग (सं० वि०) तीक्ष्णशृङ्ग, तेज सींगोंवाला।

तिग्मशोचिस् (सं० वि०) तिग्मं शोचिः यस्य। तीक्ष्णज्वाल, तेज लपट, तेज आंच।

तिग्महेति (सं० वि०) तिग्मा तीक्ष्णा हेतयो यस्य, बहुव्री०। तीक्ष्णज्वाल, तेज आगकी शिखा, तेज लौ।

तिग्मांशु (सं० पुं०) तिग्मा अंशवो यस्य। १ सूर्य। (वि०) २ प्रखर किरणयुक्त, जिसकी किरण तेज हो। (क्ली०) ३ प्रखर किरण, तेज प्रकाश।

तिग्मात्मन् (सं० पु०) उर्वके पुत्र, एक राजकुमार।

तिग्मानीक (सं० वि०) तिग्मं तीक्ष्णं अनीकं यस्य। तीक्ष्ण मुख, तेज मुंहवाला।

तिग्मायुध (सं० वि०) तिग्मं तीक्ष्णं आयुधं यस्य। तीक्ष्णायुध, तेज हथियार।

तिग्मेषु (सं० वि०) तीक्ष्णवाण, तेज तीर।

तिङ्‌ुद (सं० पु०) इङ्गुदी वृक्ष।

तिजरा (हिं० पु०) वह बुखार जो तीसरे दिन आता हो, तिजारी।

तिजवांसा (हिं० पु०) किसी स्त्रीके तीन महीनेका गर्भ होने पर उसके कुटुम्बसे किये जानेका उत्सव।

तिजारत (प० स्त्री०) वाणिज्य व्यापार, रोजगार।

तिजारा—राजपूतानाके अन्तर्गत अलवार राज्यका एक शहर। यह अक्षा० २७° ५६´ उ० और देशा० ७६° ५१´ पू० अलवार नगरसे ३० मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७७८६ है। इस स्थानसे राजपूताना मालवा रेलवेका खैरताल स्टेशन बहुत समीप है। कहा जाता है, कि त्रिजयाल नामक यादव राजपूत इस शहर के प्रतिष्ठाता हैं। अधिवासी अच्छा सुनना तथा कागज प्रस्तुत करना यहांके अधिवासियोंको प्रधान उपजीविका है। यह शहर मेवात राज्यकी प्राचीन राजधानी है। यहां म्युनिसपालिटिका बन्दोबस्त है। शहरके दक्षिणमें भरतरी नामक प्रसिद्ध प्रधान समाधि विद्यमान है, जो उत्तरी भारतवर्षके सभी समाधियोंसे बड़ी है। कहा जाता है, कि यहांके पूर्व शासनकर्त्ता सिकन्दर लोदीके भाई अलाउद्दीन आलमखांने इसे निर्माण किया है। यहां डाकघर स्कूल और अस्पताल है।

२ इसी राज्यके उत्तर-पूर्वमें अवस्थित एक तहसील। इसमें कुल १५८ ग्राम लगते हैं। यहांकी लोकसंख्या प्रायः ५५८२६ है, जिनमें एक तिहाई मेवो हैं। मुगलोंके शासनकालमें यह स्थान आगरा प्रदेशका अन्तर्भुक्त था। १७५१ ई०में यह तहसील जाटोंके प्रधान सूरजमलके अधीन आई। इसके बाद १७७५ ई०में सिख धर्मावलम्बियोंने इस तहसीलमें लूट-मार मचायी, तथा जाटोंको भगा कर इसे अपने अधिकारमें कर लिया, किन्तु १७८६ ई०में यह पुनः भरतपुरके जाटोंके अधिकारमें आ गया। भरतपुरके प्रधान मंत्रीने इसके बदले में बालिके लिये यह राज्य छीन कर अलवारको अर्पण किया गया। १८२६ ई०में महाराज बलवन्त सिंहने इस तहसीलको हस्तगत कर रखा। बलवन्त सिंह इसी निःसन्तान अवस्थामें प्राणत्याग किया बाद १८४५ ई०में यह अलवार राज्यमें मिला दिया गया।

तिजारी (हि० स्त्री०) वह बुखार जो हर तीसरे दिन जाड़ा दे कर आता है।

तिज्जिन (स० पु०) तिज्ञ इनच् किच। चन्द्रमा।

तिज्जिन (स० पु०) तैक्ष्णयति तोदयति इति तिज-इनच्। निजगुणादित्वात् किद्। उण् ३।५०। १ चन्द्रमा। २ राक्षस।

तिड्डी (हि० स्त्री०) तीन बूटियोंका ताशका पत्ता।

तिण्डी (स० स्त्री०) विद्युत्, निर्घोष।

तिन्ड्रिवनम्—१ मन्द्राजके आरकट जिलेका उपविभाग। इसमें तिन्ड्रिवनम् तिरुवन्नमलय और विल्लुपुरम नाम के तीन तालुक लगते हैं।

२ उक्त उपविभागका एक तालुक। यह अक्षा० ११° ५´ से १२° २८´ उ० तथा देशा० ७९° ३०´ से ८०° पू०के मध्य बङ्गालकी खाड़ीके किनारे अवस्थित है। भूपरिमाण ८१६ वर्गमील और लोकसंख्या लगभग २११०१८ है। इसमें एक शहर और ४०२ ग्राम लगते हैं।

३ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १२° १५´ उ० और देशा० ७९° ४०´ पू०में अवस्थित है। इसका शुद्ध नाम तिन्तिरिवनम् है, जिसका अर्थ इमलीका जङ्गल होता है। यहां इमलीके बहुतसे वन देखनेमें आते हैं। लोकसंख्या प्रायः ११९०१ है।

तितउ (न० पु०) तनोति घटयति मर्वे इति तन-डउ। तनोतेरडः सन्चच। उण् ५।५१। १ चालनी, चलनी, छलनी। २ छत्र छाता।

तितर बितर (हि० वि०) जो एकत्र न हो, छितराया हुआ बिखरा हुआ।

तितरोखो (हि० स्त्री०) एक छोटी चिड़िया।

तितली (हि० स्त्री०) १ एक उड़नेवाला सुन्दर कीड़ा या पतिंगा। यह कीड़ा बगीचोंमें फूलों पर उड़ता हुआ दिखाई पड़ता है और फूलोंके पराग और रस आदि पी कर जीवन निर्वाह करता है। इसका विशेष विवरण प्रजापति शब्दमें देखो। २ गेहूं आदिके खेतोंमें होनेवाली एक प्रकारकी घास। यह घास कमाऊंसे तक बढ़ती है। इसकी पत्तियाँ बहुत पतली पतली होती हैं। पत्तियां और बीज दवाके काममें आते हैं।

तितलौआ (हि० पु०) कड़ुआ कद्दू, तितलौकी।

तितारा (हि० पु०) १ एक प्रकारका बाजा जो सितारसे मिलता जुलता है। २ खेतकी तीसरी बारकी सिंचाई। (वि०) ३ जिसमें तीन तार हों।

तितिक्षा (स० पु०) १ क्षमाशीलता। २ मेघ। ३ परिमित, उपम दार।

तितिल (स० त्रि०) तित स्यादौ यत् पक्षम। १ मोती

ष्णादि द्वन्द्वसहनशील, जो सरदी गरमी समान भावसे सह्य कर सकता हो। (पु०) २ ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम। तस्य गोत्रापत्यं गर्गादित्वात् यञ्। ३ तितिक्ष, इसी गोत्रके युवा वंशज।

तितिक्षा (सं० स्त्री०) तितिक्ष-अ-टाप्। १ क्षमा, क्षान्ति। २ शीतोष्णादि द्वन्द्वसहन, सरदी गरमी आदि सहनेको सामर्थ्य।

शीतोष्णादि सहनेका नाम तितिक्षा है, मुमुक्षुको पहले शम, दम और उपरति साधन कर पीछे तितिक्षाका साधन करना चाहिए। शम, दमको साधे विना तितिक्षा साधी नहीं जा सकती।

अप्रतीकार पूर्वक चिन्ता और विलाप-रहित हो कर सब प्रकारके दुःखोंका सहना ही तितिक्षा है। जब तितिक्षा साधी जाती हैं, तब सुखसे हृदय न तो प्रफुल्लित होता और न दुःखसे सन्तप्त ही होता है। तब सुख दुःख और मोह अन्तःकरणको किसी तरहसे क्षुब्ध नहीं कर सकता।

तितिक्षित (सं० त्रि०) तितिक्षा सञ्जाता अस्य तारकादित्वात् इतच्। क्षान्त, सहिष्णु।

तितिक्षु (सं० त्रि०) तितिक्ष-उ। सनाशंसभिक्षउः। पा ३।२।१६८। १ क्षमाशील, क्षान्त, सहिष्णु। (पु०) २ पुरुवंशीय एक राजा। ये महामनाके पुत्र थे।

तितिभ (सं० पु०) तितीति शब्देन भणति भण-ड। इन्द्रगोपकीट, खद्योत, जुगनू।

तितिम्मा (अ० पु०) १ अवशिष्ट अंश, बचा हुआ भाग। २ परिशिष्ट, उपसंहार।

तितिर (सं० पु०-स्त्री०) तित्तिरि पृषोदरादित्वात् साधुः। तित्तिरि पक्षी, तीतर नामकी चिड़िया।

तितिल (सं० क्ली०) तिलति स्निह्यति तिल बाहुलकात् क द्वित्वञ्च। १ नन्दक, नांद नामका मट्टीका बरतन। २ तिलपिष्टक, एक प्रकारका पकवान। ३ ज्योतिषमें सात करणोंमेंसे एक।

तितीर्षा (सं० स्त्री०) १ तैरनेकी इच्छा। २ तरजानेकी इच्छा।

तितीर्षु (सं० त्रि०) १ जो तैरनेकी इच्छा करता हो। २ जो तरने या उद्धार पानेकी इच्छा करता हो।

तितुमीर—चौबीस-परगना जिलेके बादुड़िया थानाके अन्तर्गत हैदरपुर ग्राममें तितुमीरका घर था। १८वीं शताब्दीके शेष भागमें इसका जन्म हुआ था। उस समय भी अंगरेजोंका प्रभुत्व बङ्गालमें उतना अटल न था। और डकैतोंके उपद्रवसे लोग तङ्गमें आ गये थे।

बचपनसे ही तितु अपने धर्मके प्रति श्रद्धावान् था। अपने धर्म पर इसका जैसा अनुराग था, अपने सम्प्रदायके ऊपर भी उतनी ही ममता थी।

१८२८ ई०में यह मक्का तीर्थको गया। वहां वाहाबि सम्प्रदायके नायक सैयद अहमदके साथ इसकी जान पहचान हो गई। उक्त सैयदसे दीक्षित हो कर तितु अपने देशको लौटा और अपने नये मतका प्रचार करनेके लिये इच्छुक हुआ। उस समय बङ्गालके मुसलमानोंका आचार व्यवहार प्रायः हिन्दुओंसा था। तितुने उन्हें सत्यधर्मकी शिक्षा देनेकी चेष्टा की, देशस्थ सभी मुसलमानोंको अपने धर्ममें लानेके लिये इसने एक भी कसर उठा न रखी। किन्तु सम्भ्रान्त मुसलमानोंमेंसे कोई भी इसका मतानुवर्ती न हुआ। थोड़ेसे मुसलमान इसके उपदेश-वाक्यसे आकृष्ट हुए। इसने अपने शिष्योंसे दाढ़ी बढ़ानेको कहा। इसका उपदेश था, कि वे पर्वोपलक्षमें वा पुत्रकन्याके विवाहमें नाच गान न करें, सूद पर रुपये न लगावें, काछ दे कर धोती न पहने इत्यादि। धीरे धीरे लोग इसके उपदेशसे ऐसे आकृष्ट हो गये कि रात दिन वे अपना काम धन्धा छोड़ कर इसीके पास बैठे रहते थे, बाल बच्चे तथा गृहस्थीको ओर कुछ भी ध्यान न देते थे। वहांके राजाको जब इसकी खबर लगी, तब उन्होंने इस बातकी घोषणा कर दी कि कोई भी अपना कार्य नष्ट कर तथा बाल बच्चोंकी अवहेला करते हुए धर्मोपदेश नहीं सुन सकता। जो इस आज्ञाका उल्लङ्घन करेगा, उसे उचित दण्ड दिया जायगा। राजाने सबोंको यह कह कर डरा दिया, कि उन्हें दाढ़ी पीछे सवा रुपये कर देना होगा। तितुमीरको यह बात मालूम पड़ने पर वह आग-बबूला हो गया और विधर्मी हिन्दूओंको बलप्रयोग द्वारा अपने मतमें लाने लगा। १८३१ ई०में इसने दल बांध कर राजाका घर लूट लिया और बलात् उनकी लड़कोको आबरू बरबाद कर दी।

बाद इसने और दूसरे दूसरे ग्रामों पर चढ़ाई करने की आज्ञा दी। कार्तिकी पूर्णिमाका दिन था, पूर्णा नामक ग्राममें बड़ी धूमधामसे एक उत्सव होनेवाला था। तितुमीरका आगमन सुन कर सब कोई तितर बितर हो गये और डरसे जहां तहां जा छिपे। यहां पहुंच कर तितुमीरने एक गोहत्या कर डाली। यह देख पुजारीसे रहा न गया, उसने तुरंत देवोंके सामने खड़े हो कर हल्लागुल्लासे मुसलमानोंको धक्का धक्का कर दिया। पीछे बहुतोंके घेरे जाने पर आप भी मारे गये। इस समय वहांके जमींदार तथा ग्रामवासी भी तितुमीर पर टूट पड़े। बचावका कोई रास्ता न देख तितुमीरने अपने बड़े बूढ़े अनुचरोंको लूट लानेका हुक्म दे दिया। उसी समय इसने देव-मन्दिरमें गोमांस लटकवा दिया और दो ब्राह्मणोंके मुंहमें भी जबरदस्ती ठूंस दिया।

बारासातके ज्वाइण्ट मजिष्ट्रेटको यह बात मालूम होने पर उन्होंने वहांके दरोगाको तितुमीरके विरुद्ध भेजा। दरोगा जातिके ब्राह्मण थे। उन्होंने लगभग डेढ़ सौ बरकन्दाज और बहुतसे चौकीदारोंको साथ ले तितुमीर पर चढ़ाई कर दी। तितुमीरके पास भी ५००।६०० हथियारबन्द थे। आखिर दोनोंमें मुठभेड़ हो ही गई। दरोगा साहब बहुतसे अनुचरोंके साथ मारे गये। इस जीत पर तितुका साहस और भी बढ़ गया। इसने अपनेको भारतका अद्वितीय अधीश्वर समझ कर तमाम घोषणा कर दी और सबको सूचना दे दी कि जो उसे आधिपत्य न मानेगा और तदनुसार कर न देगा, उसका सिर धड़से अलग कर दिया जायगा। यहां तक कि उसने बांसका एक किला भी बना लिया था। उसी किलेके भीतर तितुके अनुचर लोग रहते थे और उसका दरबार भी वहीं जमता था।

इस समय इसकी तूती तमाममें बोलने लगी। लोग डरके देश छोड़ कर भागने लगे। कुछ तो डाकोंमें और कुछ गोबरडांगामें रहने लगे। किन्तु वहां भी उन्हें तनिक भी चैन न थी। गोबरडांगाके जमींदारने कलकत्तेसे दो सौ बन्दूकी, दो तीन सौ लाठीबाज तथा कुछ हाथी तितुके विरुद्ध भेजे। अन्ततः तितु गोबरडांगामें अपना प्रभुत्व जमा न सका और बाध्य हो कर उसे लौटना पड़ा।

बाद मोल्लाहाटी कोठीके मैनेजर डेविस साहबने भी इसमें जमींदारका साथ दिया। सबने मिल कर तितु पर चढ़ाई कर दी। दोनों पक्षके बहुतसे लोग लड़ाईमें मारे गये। किसानोंने भाग कर गोविन्दपुरमें जा कर आश्रय लिया। तितुको जब मालूम पड़ा कि शत्रुके कितने ही लोग उस ग्राममें जा छिपे हैं, तब उसने वहां धावा मारा। दोनों पक्षमें इच्छामती नदीके किनारे घमसान युद्ध हुआ। तितुके अधिकांश लोग मारे गये और कुछ नदीमें डूब मरे। पीछेसे नदीका जल लाल हो गया, तितुमीर किसी प्रकार जान ले कर भागा। इस लड़ाईमें तितु इतना विपद्ग्रस्त हुआ था कि उसे जीवित देख उसके अनुचर लोग उसे ईश्वरप्रेरित समझने लगे थे। इतना होने पर भी तितुके इने गिने अनुचरोंका साहस तनिक भी घटा न था।

उधर बारासातके थानाके दरोगाके मारे जाने पर वहांके ज्वाइण्ट मजिष्ट्रेट निश्चिन्त हो न बैठे थे। वे गवर्मेण्टको इस बातकी सूचना देकर उपयुक्त सैन्य संग्रह कर रहे थे। गवर्मेण्टने पहले सोचा था कि तितुके साथ कुछ विद्रोही मनुष्योंके लिये अधिक सैन्यदलकी जरूरत नहीं। इसलिए उन्होंने कुछ चौकीदार, बरकन्दाज कुछ अनियमित सेना और ८ गोरा सवारोंको तितुके विरुद्ध भेजे। वे जा कर तितुका बाल बांका भी न कर सके, बल्कि एक अङ्गरेज सवारोंसे और कुछ सिपाही मारे गए। इस समय तितुमीरका दल खूब बढ़ा चढ़ा था तथा दिनोंदिन इसकी और भी पुष्टि होती जाती थी। जो कुछ हो, भाग्य ही मनुष्यको उन्नत बनाता है और भाग्य ही उसे गढ़ेमें गिराता है। तितुमीरकी भी यही हालत हुई। उसकी भाग्यलक्ष्मी सदा एक सी न रही, शीघ्र ही उसका दर्प चूर्ण हो गया और अन्तमें अधःपतनको प्राप्त हुआ।

१८३१ ई०की १८वीं नवम्बरको मेजर लेफ्टेनेण्ट ह्याड द्वारा परिचालित एक दल अङ्गरेजी सेना, एक दल देशीय पदातिक और कुछ बरकन्दाज सेना पूर्वप्रेरित सेनाके साथ मिल गई और सबोंने मिल कर तितुमीरके बांसके किलेको चारों ओरसे घेर लिया। विद्रोहियोंकी धर्मोन्मत्तताने उन्हें इतना उत्साहित कर दिया था, कि

वे तनिक भी भीत वा विचलित न हो कर इस सुशिक्षित अङ्गरेजी सेनाके साथ भिड़ गये। पहले दिन उन्होंने जितनी भी अङ्गरेजी सेना नष्ट की थी उनके मृतशरीर बांसके किलेके बाहर जयचिह्नस्वरूपमें रख दिया था।

तितुमीरके बहुसंख्यक लोगोंको मार डालनेकी लेफ्टेनेण्टकी जरा भी इच्छा न थी। इस कारण उन्होंने तितुमीरको आत्मसमर्पण करनेके लिये कहला भेजा। किन्तु तितुमीरने उनके दूतको ही मार डाला। सेनापतिने विद्रोहियोंको डरानेके लिये खाली तोपकी आवाज की। इसके पहले ही बांसके किलाके चारों कोनों पर चार कमानें रख दी गयी थीं। अब उनने खाली आवाज होता देख मुसलमानोंने समझा, कि यथार्थमें फकीर जी उनके सब गोले निगल रहे हैं, जिससे खाली आवाज मात्र निकलती है। इस पर वे सबके सब एक स्वरमें चिल्ला उठे, 'हजरतने गोला खा डाला'। यह कहते हुए वे एकबारगी अङ्गरेजी सेना पर टूट पड़े। तब सेनापतिने बाध्य हो कर गोला चलानेका हुक्म दिया। इसका फल यह हुआ, कि बांसका किला तहस नहस हो गया और तितुमीर तथा उसके कितने ही अनुचर जहांके तहां मर गये। बचे खुचे अनुचर कैद कर लिये गये। बहुतसे जान ले कर भाग गये। किन्तु अङ्गरेजी सेनाने इन हतभाग्योंका पीछा कर पशुपक्षियोंकी तरह उनका शिकार किया। कोई तो प्राणभयसे बांसके वनमें और कोई आमके वनमें जा छिपे थे। अनुसरणकारी अङ्गरेजी सेनाने उन्हें उसी अवस्थामें मार गिराया। इस प्रकार ४७५ सौ निरक्षर लोगोंकी जीवनलीला समाप्त हुई।

तित्तिर (सं० पु०) तित्ति इति शब्दं गतिं ददाति रा-क। १ तीतर नामका पक्षी। २ तितली नामकी घास।

तित्तिरि (सं० पु०) तित्ति इति शब्दं रौति रु-डि। पक्षी भेद, तीतर चिड़िया। संस्कृत पर्याय—तैत्तिर-याजुपोदर, तित्तिर, कपिञ्जल, लघुमांस, खरकोण, चित्र-पक्ष, तितिर और बसन्तगौर। इसके मांसके गुण—रुच्य, लघु, वीर्य बलप्रद, कषाय, मधुर, शीत और त्रिदोष शमन। यह कृष्ण और गौरवर्णका होता है। काले तीतरको कृष्णतित्तिरि और चित्र विचित्र तित्तिरिको गौरतित्तिरि कहते हैं। कृष्णतीतर बलकारक, धारक, एवं हिक्का, त्रिदोष, श्वास, काम और ज्वरनाशक है। और तीतरमें उससे कुछ अधिक गुण हैं। (भावप्रकाश)

२ यजुर्वेदकी एक शाखाका नाम। ३ नागविशेष, एक सर्पका नाम। ४ यास्क मुनिके एक शिष्य। इन्होंने तीतर पक्षी बन कर याज्ञवल्क्यके उगले हुए यजुर्वेदको चुगा था। भागवतमें इसका विवरण इस प्रकार लिखा है—यजुर्वेदसंहिताके जाननेवाले वैशम्पायनके शिष्यों का नाम अध्वर्यु था, और ब्रह्महत्याजनित पापक्षय साधन करने तथा अपने गुरुके अनुष्ठेय व्रतका आचरण करनेसे उनका दूसरा नाम चरक पड़ा। उस व्रताचरणके समय याज्ञवल्क्य नामक उनके एक दूसरे शिष्यने कहा, 'भगवन्! इन अल्पसार शिष्योंके आचरित व्रतद्वारा आपका क्या होगा? मैं इससे सुदुश्चर व्रताचरण करके आपको पापसे विमुक्त करूंगा।" यह सुन कर उनके गुरु वैशम्पायन क्रोधसे अधीर हो उठे और बोले 'याज्ञवल्क्य! तुम मेरे शिष्य हो कर ब्राह्मणोंकी निन्दा करते हो; इसलिये तुमने जो कुछ मुझसे सीखा है उसे परित्याग कर दो और यहांसे दूर हो जाओ।" तब देवरातके पुत्र याज्ञवल्क्य पढ़े हुए यजुर्वेदको वमन कर वहांसे चले आये। इसके बाद मुनियोंने उस उगले हुए यजुर्गणको देखा और उन्हें पानेके लिए तीतर पक्षी बन कर उस यजुर्वेदको चुग लिया। तभीसे उस रमणीय यजुःशाखाका नाम तैत्तिरीय हुआ है।

(भागवत० १२।६।५४-५८)

तित्तिरिक (सं० पु०) तित्तिरि स्वार्थे कन्। तित्तिरि देखो।

तित्तिरीक (सं० क्लो०) तित्तिरैः पक्षदाहेन जातं तित्तिरि-बाहुलकात् इक। एक प्रकारका अञ्जन जो तीतर पक्षीके पंखको जलानेसे तैयार किया जाता है।

तिथ (सं० पु०) तेजयति तिज-थक्। -तिथपृष्ठगूथयूथप्रोथाः। उण् २।१२। १ अग्नि। २ काम, कामदेव। ३ काल। ४ प्रावृट्-काल, वर्षाका समय।

तिथि (सं० पु०-स्त्री०) अततीति अत-सातत्यगमने अत-इथिन्। १ पन्द्रह चन्द्रकलाओंकी क्रियारूप प्रतिपदा आदि तिथियां। २ अमावास्यासे ले कर पूर्णिमा तक और पूर्णिमासे ले कर अमावास्या तकको चन्द्रमाकी कलाओंको तिथि कहते हैं। (तिथितत्त्व) जो काल विशेष

क्षीयमाण या वर्धमान चन्द्रकलाका विस्तार करता है, उस कालविधिका नाम ही तिथि है। आकारस्वरूपा महामाया जो देवियोंकी देवनारियों हो कर वर्णित हैं तथा जो चन्द्रमण्डलके षोड़शभाग परिमित चन्द्रकी देवनारियों अमा और महाकला नामसे प्रसिद्ध नित्य और क्षयोदयरहित हैं, उनका नाम भी तिथि है। ऐसी तिथियां दो भागोंमें विभक्त हैं—शुक्ला और कृष्णा। अमा वस्याके बाद प्रतिपदासे पूर्णिमा तक और पौर्णमासीके बाद प्रतिपदासे अमावस्या तक पन्द्रह पन्द्रह दिनोंका एक एक पक्ष होता है। इस प्रकार भेदसे चन्द्रकी क्षय वृद्धि हुआ करती है। स्मार्त्त महाचार्यने इस प्रकार लिखा है—"द्वितिधः पक्षः शुक्लकृष्णपक्षात्मकः" अर्थात् जिन पन्द्रह दिनोंमें चन्द्रकी वृद्धि होती है, उस पक्षको शुक्ल कहते हैं और जिन पन्द्रह दिनोंमें चन्द्रका क्षय होता है, उसको कृष्णपक्ष कहते हैं। चन्द्रमासमें पहले शुक्लपक्ष और पीछे कृष्णपक्ष व्यवहृत होता है। सभी तिथियां प्रायः ६० दण्ड परिमित हैं। सूर्यमण्डलसे विनिःसृत हो कर चन्द्र जो कि मानात्मक राशिके द्वादश भाग तक गमन करता है वही एक एक तिथि है, राशिका परिमाण १८० दण्ड है, सुतरां उसके ३० भागमें १२ भागमें जो ६० दण्ड हुए, इस तरह ६० दण्ड ही एक एक तिथिका परिमाण है। जिसका नाम अमा है और जो क्षयोदयवर्जित, ध्रुव, षोड़शीकला है वह काल ही समान्यतः तिथि है।

हरिवंशोक्त पञ्चदशकलात्मक जो कालविभाग है, वैसे पन्द्रह तिथियां हैं। वह्नि आदि पन्द्रह देवता उन पन्द्रह कलाओंको क्रमसे पान करते हैं। जैसे—वह्नि देवता प्रथम कलाको पान करते हैं इसलिए उसका नाम प्रथम है एवं तद्युक्त कालविभागका नाम ही प्रतिपद् है।

इसी प्रकार द्वितीया आदिके विषयमें समझना चाहिये। इस तरह कलाएं जब पीत होती हैं, तब कृष्णपक्ष होता है। और तदनुसार प्रथम कला द्वितीय कला होती है एवं तद्युक्त काल ही प्रतिपदा द्वितीया इत्यादि कहलाता है। इस प्रकारसे जब समस्त कलाएं चन्द्रमण्डलको पूर्ण करती हैं, तब उस समयका नाम शुक्लपक्ष होता है।

चन्द्रकी प्रथम कलाको अग्नि द्वितीय कलाको रवि तृतीयको विश्वदेव, चतुर्थको सविताग्नि, पञ्चमको वषट्कार, षष्ठको वासव सप्तमको ऋषिसम्पद्, अष्टमको अजैकपाद नवमको यम दशमको वायु, एकादशको उमा द्वादशको पितृगण, त्रयोदशको कुबेर, चतुर्दशको पशुपति और पञ्चदश कलाको प्रजापति पान करते हैं। समस्त कलाएं जब पीत हो जाती हैं, तब चन्द्रमण्डल बिलकुल दिखाई नहीं देता। जो षोड़श कलाएं सर्वदा जलमें प्रविष्ट होती हैं तथा अमामें सोम ओषधिको प्राप्त होते हैं तथा ओषधिगत और अम्बुगत होने पर उनको गो पान करती हैं वह गोसम्भूत क्षीरसमूह अमृतस्वरूप है, द्विजाति द्वारा मन्त्रपूत हो कर यथोक्त अग्निमें हुत होता है, उससे चन्द्रमा पुनः वृद्धिको प्राप्त होता है। इस तरह दिनों दिन वृद्धिमान हो कर पूर्णिमामें वह पूर्णताको प्राप्त करता है।

सिद्धान्तशिरोमणिके मतसे चन्द्र सूर्यसे विनिःसृत हो कर पूर्व की ओर गमन करता है।

अमावस्याके दिन शीघ्रगामी चन्द्र सूर्यमण्डलसे पश्चिममें और मन्दगामी सूर्य चन्द्रमण्डलके ऊर्ध्व प्रदेशमें रहता है। सूर्यकी समग्र किरणें चन्द्रके उपरिभागमें पड़ती हैं, निम्न वा पार्श्व किसी भी तरफसे नहीं निकल सकतीं। चन्द्रके उपरिभागमें पतित हो कर उसी तरह अवस्थित रहती हैं, इस तरह चन्द्र और सूर्यके सन्निकर्षके कारण तथा सूर्यरश्मियोंसे चन्द्रके अभिभूत होनेके कारण चन्द्रमण्डल जरा भी दिखाई नहीं देता। पीछे चन्द्र शीघ्रगतिके द्वारा सूर्यसे विनिःसृत हो कर पूर्व दिशाको गमन करता है अर्थात् जिस अवस्थामें है उस राशिके द्वादश अंश द्वारा सूर्यका अतिक्रम कर गमन करता है। अतएव उस समय चन्द्रके पञ्चदश भागोंमेंसे प्रथम भाग दृष्टिगोचर होता है। सूर्यकी किरणें उस प्रथम भागमेंसे निकलती हैं इसीलिए चन्द्रको उस प्रथम कलाको सब देख नहीं पाते और उसी कलाको प्रथम कला कहते हैं। उक्त कलानिष्पत्ति परिमित कालको ही नाम तिथि है। द्वितीया आदिमें भी इसी तरह समझ लेना चाहिये।

चन्द्र और सूर्यकी गतिके द्वारा जिस समय कालका

परिच्छेद होता है, उस समय चन्द्र और सूर्यके गति-विशेषका आश्रय करके तिथिका स्वरूप-निर्णय करना चाहिये। समग्र नक्षत्र बारह राशियोंका भोग करते हैं, ३० अंशोंमें राशिका भाग होता है। सूर्यसे निकल कर चन्द्र जब तक त्रिंशत्-भागात्मक राशिके द्वादश भागमें गमन करता है, तब तक चन्द्रमातिथि अर्थात् शुक्लपक्ष है। (विष्णुधर्मोत्तर) चन्द्र नित्य राशिचक्रके मध्य १३अंश १० कला ३४ विकला ५२ अनुकला पश्चिम-दिशासे पूर्वदिशाको गमन करता है। सूर्य प्रतिदिन पश्चिम दिशासे पूर्वदिशाको ५९ कला ८ विकला गमन करता है। इस तरहसे चन्द्र सूर्यसे दिन दिन १२ अंश ११ कला ४७ विकला गमन करने पर एक एक तिथि होती है। यह मध्यगति द्वारा संघटित होता है। किन्तु चन्द्र और सूर्यकी शीघ्रगति और मन्दगतिके अनुसार इसका व्यतिक्रम भी हुआ करता है। स्फुटगणना द्वारा ज्योतिर्विद् विद्वानोंने स्थिर किया है, कि चन्द्रके सूर्यसे द्वादश अंश गमन करने पर एक एक तिथि होती है। इस प्रकारसे ३६० अंश गमन करने पर प्रतिपद आदि ३० तिथियां हुआ करती हैं। जब चन्द्रमें वृद्धि और क्षय होता रहता है, तब उसे शुक्ल और कृष्णपक्ष कहते हैं। शुक्लाष्टमीके दिन चन्द्र सूर्यसे ९० अंश पूर्वांशमें अवस्थित रहता है, इस कारण उस दिन अर्द्धचन्द्र दिखलाई देता है।

चन्द्र स्वयं तेजोमय नहीं है, सूर्यरश्मि द्वारा चन्द्रमें प्रकाश होता है। इसलिए चन्द्रमण्डलके एक ओरका हिस्सा लगातार १५ दिन तक दीप्तिमान् और दूसरी तरफका हिस्सा नियत तिमिरावृत रहता है।

"तरणिकिरणसंगादेष पीयूषपिण्डो
दिनकरदिशिचन्द्रश्चन्द्रिकाभिश्च कांति।
तदितरदिशि बालाकुन्तलश्यामलश्रीः
घटइव निजमूर्तिच्छाययैवातपस्थः॥" (ज्योतिष)

चन्द्रके जो अंश सूर्यकी ओर होते हैं, वे ही अंश सूर्यकी किरण पा कर प्रकाशित होते हैं। इसके सिवा चन्द्रके अन्य अंश वाला स्त्रीके केशोंके समान श्यामवर्ण हैं। जैसे धूपमें रक्खे हुए घड़ेका एक हिस्सा अपनी छायासे आच्छन्न रहता है, उसी तरह इसको भी समझें। हम चन्द्रमण्डलके जिस अर्द्धांशको देख रहे हैं, वह अर्द्धांश जब सूर्य-किरण द्वारा सर्वतोभावसे प्रकाशित होता है, तब उसे पूर्णचन्द्र कहते हैं और उसी दिन पूर्णिमा तिथि होती है। उस उज्ज्वल अंशको न्यूनाधिकताके अनुसार चन्द्रकलाकी ह्रासवृद्धि होती है, इसलिये तिथि भी प्रतिपदा आदि नामोंसे पुकारी जाती है। अमावस्याके बाद शुक्ल-द्वितियामें चन्द्र पश्चिमदिशामें उदित होता है तथा उक्त तिथिसे चन्द्रमण्डलका पश्चिमांश सूर्य-किरण द्वारा क्रमशः एक एक कला प्रतिदिन बढ़ता है और अन्तमें पूर्णिमाके दिन पूर्णचन्द्र हो कर प्रकाशित होता है। और जब कृष्णपक्ष प्रारम्भ होता है, तो प्रति दिन चन्द्रमण्डलके दृश्य अंशसे एक एक कलाका ह्रास हो कर अमावस्याके दिन चन्द्र सम्पूर्णरूपसे अदृश्य हो जाता है।

शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे ले कर पूर्णिमा तक चन्द्र क्रमशः सूर्यसे दूरगामी होता है, एवं तदनुसार चन्द्र-मण्डलका प्रदीप्त अंश पृथिवीके समीपवर्ती हो कर प्रकाशित होता रहता है। शुक्लपक्षमें प्रतिपदासे ले कर पूर्णिमा तक चन्द्र अपने वृत्त वा पथमें १८० अंश भ्रमण करता है; इतने समय तक चन्द्र सूर्यसे (पृथिवीके सम्बन्धसे) पश्चिममें अवस्थित रहता है और कृष्णपक्षमें पूर्वकी ओर अवस्थित होता है। इस तरह चन्द्र जितना जितना सूर्यके पास पहुंचता जाता है, उतना ही पृथिवीके लोगोंको उसमेंसे एक एक कला घटती दिखलाई देती है। अन्तमें अमावस्याके दिन इसके समस्त प्रदीप्त अंश पृथिवीसे विपरीत दिशाको ओर हो जाते हैं और तिमिरावृत अंश पृथिवीके सामने आ जाते हैं।

तिथियोंकी व्यवस्था।—जो प्रतिपदा त्रिसन्ध्याव्यापिनी होती है, वही प्रतिपदा ग्राह्य है, इसमें युग्मादरता अर्थात् दो तिथियोंका पूज्यत्व नहीं है। केवल त्रिसन्ध्याव्यापिनी तिथि पूज्य है। यह सर्वत्र ही होगी, सिर्फ हरिवासरमें इसके भेद होते हैं। कृष्णपक्षीय प्रतिपदा अमावस्यायुक्त होने पर आदरणीय है। परन्तु उपवासके लिये ऐसी व्यवस्था नहीं अर्थात प्रतिपदाके दिन उपवास करना हो तो कृष्ण-द्वितीयायुक्त प्रतिपदाकी उपवास करना चाहिये।

कार्तिकमासकी शुक्लपक्षीय प्रतिपदाके दिन बलिराज-की पूजा की जाती है। जो इस तिथिमें बलिराजकी पूजा करता है, उसे अभीप्सित सुख होता है। पूजा करके रात्रि-जागरण करना पड़ता है। इस प्रतिपदाका नाम द्यूतप्रतिपद् है।

कार्तिकमासके प्रथम दिन अर्थात् शुक्लपक्षीय प्रतिपदा को पार्वतीने द्यूतक्रीड़ा की थी, इसलिए इस तिथिको द्यूतप्रतिपदा कहते हैं। इस क्रीड़ामें शङ्कर पराजित हुए थे और पार्वतीने विजय पाई थी इसलिए शिव दुःखी और दुर्गा सुखी हुई थीं। वर्त्तमान समयमें भी इस दिनमें लोग द्यूत खेला करते हैं। इसमें राजाकी जय और पराजय होती है, तदनन्तर उनको सुख और दुःख होता है। शुभाशुभ फलाफल जाननेके लिए इस तिथिमें द्यूतक्रीड़ा विधेय है। इस तिथिमें यदि स्नान और दान किया जाय, तो शतगुण पुण्य होता है।

"स्नानं दानं शतगुणं कार्त्तिकेऽस्यातिथौ भवेत्॥" (तिथित०)

यदि अग्रहायण मासकी कृष्णपक्षीय प्रतिपदा रोहिणी नक्षत्रयुक्त हो और उस समय यदि गङ्गास्नान किया जाय, तो शतसूर्यग्रहण कालीन गङ्गास्नानका फल प्राप्त हो। इस तिथिमें कुष्माण्ड-भक्षण, तैलमर्दन और स्त्रीसंसर्ग नहीं करना चाहिये।

द्वितीया—जो द्वितीया प्रतिपद्युक्त हो वह ग्राह्य है। यह नियम शुक्ल और कृष्ण दोनों पक्षोंके लिये है। किन्तु कोई कोई परयुक्तको ही ग्राह्य बतलाते हैं।

उपवास-तिथिमें जो निषिद्ध बातें हैं, उनमें परयुक्त और पूर्वयुक्त इस प्रकार दो प्रभेद हैं, जैसे द्वितीया, एकादशी, अष्टमी, त्रयोदशी और अमावस्या, उपवास-विधिमें परयुक्त ग्राह्य नहीं है। कृष्णपक्षीय तिथियोंके लिये यह नियम लागू है, शुक्लपक्षके लिए नहीं।

शुक्लपक्षीय एकादशी, अष्टमी, षष्ठी, द्वितीया, चतुर्दशी त्रयोदशी और अमावस्या, इनका उपवास पिताको पराह कर करें। (विष्णुरहस्य)

आषाढ़मासकी शुक्लपक्षीय पुष्यानक्षत्रयुक्त द्वितीयाको जगन्नाथदेवकी रथयात्रा हुआ करती है, इसलिए उस दिन यात्रा-महोत्सव और ब्राह्मण भोजन करावें। यदि नक्षत्रयुक्त न भी हो तो भी उस तिथिके माहात्म्य-के कारण उस कर्म करना उचित है। इससे भगवान्की अत्यन्त प्रीति होती है।

यमद्वितीया—कार्त्तिकमासकी शुक्लपक्षीय द्वितीयाको भ्रातृद्वितीया कहते हैं। इस दिन बहिनोंको भाइयोंकी पूजा करनी चाहिये।

यम-द्वितीयामें यम और यमुनाकी पूजा की जाती है। यमपूर्वक उस दिन बहनके हाथका भोजन करे, बहनका दिया हुआ दान प्रतिग्रह करे एवं बहनको दान देवें।

अयनपर्वके बादकी शुक्लद्वितीया, कोजागरके बादकी कृष्णद्वितीया, चैत्रकी और कार्त्तिककी पूर्णमासीके बाद-की कृष्णद्वितीया, इन सबका तृतीयाके साथ युग्मादर है। अतः उस दिन अनध्याय है।

यमद्वितीयाके दिन यात्रा नहीं करनी चाहिये, यात्रा करनेसे मृत्यु होती है। इस तिथिमें वृहती (बड़ो भट) खाना मना है।

तृतीया—रम्भाव्रतके सिवा द्वैध और पैशाचमें चतुर्थीयुक्त तृतीया ग्राह्य है। ज्येष्ठमासकी शुक्लपक्षीय तृतीयामें रम्भाव्रत हुआ करता है। वैशाखमासकी शुक्लपक्षीय तृतीयामें कृत्तिका और रोहिणी नक्षत्र हों, तो विशेष फल होता है।

इस दिन स्नान और दानादि करनेसे उसका अक्षय फल होता है, इसीलिए उसका नाम अक्षय-तृतीया पड़ा है। उस दिन जलदान करनेसे महापुण्य होता है तथा विष्णुको चन्दनद्वारा लेपनेसे विष्णुलोकमें वास होता है।

यह सत्ययुगकी प्रथम तिथि है। वैशाखकी शुक्ला-तृतीयामें भगवान्ने यवकी सृष्टि कर सत्ययुगकी सृष्टि की थी, इसलिये यवसे विष्णुकी अर्चना और होम करे एवं ब्राह्मणको यवान्नका भोजन करावें। इस तिथिमें गङ्गा ब्रह्मलोकसे पृथिवी पर उतरी थी, इसलिए शङ्कर, गङ्गा, हिमालय कैलाश और सगर नृपतिकी पूजा करे। उस दिन जो यथाविधि गङ्गास्नान और तपहोमादि करता है, उसका अनन्तकाल पर्यन्त स्वर्गवास होता है। इस तृतीयामें युग्मादर नहीं है। तृतीया तिथिमें मांस और पटोल खानेका सर्वथा निषेध है।

चतुर्थी—चतुर्थी और पञ्चमी संयुक्त ग्राह्य होने पर एकादशी, अष्टमी, षष्ठी, अमावस्या और चतुर्थी, इनमें

शेषको पकड़ कर उपवास करना पड़ता है। किन्तु ब्रह्मवैवर्त पुराणान्तर्गत गणेशव्रतमें तृतीयायुक्त चतुर्थी ग्राह्य है।

सोमवारमें अमावस्या, रविवारमें सप्तमी और मङ्गलवारमें चतुर्थी पड़ने पर वे तिथियां अक्षया होती हैं अर्थात् उन दिनोंमें गङ्गास्नानादि करनेसे अक्षय तिथिका फल होता है। त्रयोदशी, चतुर्थी, सप्तमी और द्वादशी इन तिथियोंमें प्रदोषमें अध्ययन न करना चाहिए। हेमाद्रिके मतसे प्रदोषका शब्दार्थ प्रहर है। भाद्रमासके कृष्ण और शुक्ल दोनों ही पचको चतुर्थीका नाम नष्टचन्द्र है। इस चन्द्रमाका कभी दर्शन न करना चाहिये। अकस्मात् दर्शन हो जाने पर शान्तिकी व्यवस्था करनी पड़ती है। माघमासको शुक्लपक्षीय चतुर्थीमें गौरीपूजा की जाती है उस दिन मूली खाना और चौरकर्म कराना निषिद्ध है।

पञ्चमी —जो पञ्चमी चतुर्थी और चतुर्थीके चन्द्रसे युक्त हो, वही ग्राह्य है, पर युक्त ग्राह्य नहीं।

'चतुर्थीसंयुक्ता कार्या पंचमी परया न तु" (हारीत)

पञ्चमीके समस्त कार्य चतुर्थी संयुक्त होने पर करें, पर युक्त ग्राह्य नहीं है। कृष्णपक्षमें पञ्चमी पूर्वविद्ध ग्राह्य होनेसे, शुक्ल पक्षमें परविद्ध ग्रहणीय है, यदि पञ्चमी पूर्व दिवसके पूर्वाह्नमें चतुर्थीयुक्त हो और बादके दिन पूर्वाह्नमें षष्ठीयुक्त हो, तो पूर्वदिन उपवासादि दैवकार्य करने चाहिये। पूर्वाह्नमें चतुर्थीयुक्त पञ्चमी यदि न हो और दूसरे दिन पूर्वाह्नमें मुहूर्तके भीतर यदि कमसे कम पञ्चमी आ जाय, तो पूर्वाह्नके अनुरोधसे दूसरे दिन पूजा करनी चाहिये और उसी दिन पूजाको प्रधानताके कारण उपवास करना चाहिये।

श्रावणमासकी कृष्णपञ्चमीको नागपञ्चमी कहते हैं। उस दिन आङ्गनमें मनसादेवी और अष्टनागकी पूजा की जाती है। इस तरह प्रति पञ्चमी अर्थात् भाद्रमासकी कृष्णपञ्चमी तक पूजा करनी चाहिए। इससे सर्पभय निवारित होता है।

माघमासकी शुक्लपक्षीय चतुर्थीको वरदा वसन्त चतुर्थी कहते हैं। उस दिन गौरीकी पूजा की जाती है, इसके सिवा उक्त पञ्चमीमें लक्ष्मी और सरस्वतीकी एकत्र पूजा करके दावात और कलमको पूजा करनी चाहिये। श्रीपञ्चमीके दिन अध्ययन वा लिखना न चाहिये तथा उस दिन सरस्वतीका उत्सव करना चाहिये। इस तिथिमें तेल न खाना चाहिये।

षष्ठी—सप्तमीयुक्त षष्ठी ही ग्रहण की जाती है। जेठ मासकी शुक्लाषष्ठीको अरण्यषष्ठी कहते हैं। इस कारण उक्त षष्ठीको स्त्रियां एक एक पंखा हाथमें ले कर वनमें षष्ठीकी पूजा करने जाती हैं। इसको "जमाईषष्ठी" भी कहते हैं।

भाद्रमासकी शुक्लाषष्ठीको अक्षयाषष्ठी कहते हैं। इस दिन स्नानादि करनेसे अक्षय फल होता है।

अगहन महीनेकी शुक्लाषष्ठीको गुहषष्ठी कहते हैं, उसमें शिवाकी शान्ति की जाती है।

चैत्रमासकी शुक्लाषष्ठीको स्कन्दषष्ठी कहते हैं, उस दिन कार्त्तिककी पूजा करनेसे इस जन्ममें सुख-सौभाग्य और परलोकमें वैकुण्ठकी प्राप्ति होती है।

आश्विनमासकी शुक्लाषष्ठीको बोधनषष्ठी कहते हैं।

कृष्णाष्टमी अर्थात् जन्माष्टमी, स्कन्दषष्ठी और शिवरात्रि इनमें शेषको पकड़ कर कार्य करें। तिथिके अन्तमें पारणा करनी चाहिये।

सप्तमी—षष्ठीयुक्त सप्तमी युग्मादरके कारण ग्रहणीय है। पञ्चमी, सप्तमी, दशमी, त्रयोदशी, प्रतिपदा और नवमी, ये तिथियां उपवासविधिमें सम्मुखी अर्थात् विधस्त्याव्यापिनी, परयुक्त ग्रहणीय हैं। सिर्फ हरिवासरमें अर्थात् एकादशीमें शेषको पकड़ना उचित है। उपवासविधिके अनुसार षष्ठीयुक्त सप्तमीमें ही उपवास करना चाहिये, अष्टमीयुक्त होने पर नहीं। यदि शुक्लपक्षीय सप्तमीमें रविवार पड़ जावे, तो उसका नाम विजयासप्तमी है, उस दिन स्नान, दान और सूर्यपूजा करनेसे फल होता है।

भाद्रमासकी शुक्ला सप्तमीको ललितासप्तमी कहते हैं। इसमें कुक्कुटीव्रत किया जाता है। जो इस व्रतको करता है, दूसरे जन्ममें उसके लिए पृथिवी पर कुछ दुष्प्राप्य नहीं रहता।

माघमासकी शुक्ला-सप्तमीको माकरी सप्तमी कहते हैं। इसको युगाद्या भी कहते हैं। उस दिन अरुणोदयमें यदि गङ्गास्नान किया जाय, तो शतसूर्यग्रहण-

कालीन गङ्गास्नानका फल हो। माघकी सप्तमीको सात बदरीपत्र और सात अर्कपत्र मस्तक पर धारण करके स्नान करे। महानवमी द्वादशी, भरणी नक्षत्रयुक्त दिन, अक्षय तृतीया और रथाख्य सप्तमी अर्थात् माघ मासकी सप्तमी इन दिनोंमें अध्ययन न करना चाहिये।

मन्वन्तरा तिथि—आश्विनकी शुक्ला नवमी, कार्त्तिककी द्वादशी, चैत्र और भाद्रकी शुक्लातृतीया, पौषकी एकादशी, फाल्गुनकी अमावस्या, आषाढ़की शुक्ला सप्तमी, माघकी शुक्ला सप्तमी श्रावणकी कृष्णाष्टमी, आषाढ़की पूर्णिमा एवं कार्त्तिक, फाल्गुन चैत्र और ज्येष्ठकी पूर्णिमाको मन्वन्तरा कहते हैं। इन तिथियोंमें दानादि करनेसे महापुण्यकी प्राप्ति होती है।

अष्टमी—शुक्लपक्षकी अष्टमी नवमीयुक्त और कृष्णपक्षकी अष्टमी सप्तमीयुक्त होने पर ही ग्राह्य है। कृष्णपक्षकी अष्टमी और चतुर्दशी उपवासविधिके अनुसार पूर्व तिथियुक्त ही ग्राह्य है। परन्तु शुक्लपक्षके लिए परयुक्त प्रशस्त है।

शनि और मङ्गलवारको यदि कृष्णपक्षीय अष्टमी और चतुर्दशी पड़े, तो वह अत्यन्त पुण्यजनक तिथि होती है। बृहस्पतिवारकी अष्टमी, सोमवारकी अमावस्या, रविवारको सप्तमी और मङ्गलवारको चतुर्थी इनमें जो होम धर्म या पाप कर्म करते हैं वह ६० हजार वर्ष तक अक्षय रहता है।

जन्माष्टमी—भाद्रमासकी कृष्णाष्टमीके दिन वैवस्वत मन्वन्तरीय प्रथम युगमें देवकीके गर्भसे श्रीकृष्णने जन्म ग्रहण किया था। श्रावणमें हो चाहे भाद्रमें, रोहिणीयुक्त कृष्णाष्टमीको जयन्ती कहते हैं, जयन्ती-अष्टमीका ही अपर नाम जन्माष्टमी है। विवेचनापूर्वक देखा जाय तो इस जगह एक सन्देह हो सकता है कि एक बार श्रावण मासमें और एक बार भाद्र मासमें जन्माष्टमी कही गई, इसका तात्पर्य क्या ? तात्पर्य यह है, कि श्रावणके मुख्यचान्द्रमें और भाद्रके गौणचान्द्रमें कृष्णजन्माष्टमी होती है। इसी कारण श्रावण और भाद्र ये दोनों पद प्रयुक्त हुए हैं। किन्तु व्रतके लिए भाद्र मासका ही ग्रहण करना पड़ेगा। भाद्रमासकी कृष्णपक्षीय रोहिणीयुक्त अष्टमीमें जन्माष्टमी व्रत है और उसी दिन उपवास करनेका विधान है। जन्माष्टमी देखो।

दोनों दिन निशीथ सम्बन्ध होने या न होने पर दूसरे दिन व्रत करनेको विधान है। अमावस्या आदि तिथि गणनाके नियम ५१०के पृष्ठमें लिखे जाते हैं।

प्रथम विधि—जिस सालके जिस महीनेमें नीचे जो संख्या दी गई है, वह संख्या उस महीनेकी तिथिके लिए आवश्यक होगी। उस मासकी तारीखको उक्त संख्याके साथ जोड़नेसे जो संख्या होगी वही तिथिकी संख्या है।

प्रमाण—तालिकामें १८०१ सन्के जून मासके स्तम्भकी ११ संख्याको उस मासकी दो तारीखसे जोड़ने पर २१ होता है १९ तारीखको पूर्णिमा है। यदि ३० हो, तो उसे छोड़ देना पड़ेगा।

अमावस्याके दिननिरूपणकी विधि—ऊपरकी अङ्क तालिकामें सन्के पूर्वभागमें जो संख्या है उसका ३० से वियोग करनेसे जो संख्या बचेगी, उतने संख्यक दिन अमावस्या है। यथा—

१८०१ सन्के जून मासके स्तम्भमें ११ संख्याके ऊपर ३० रख कर यदि बाकी निकाली जाय, तो १९ बाकी बचती है। इस तरह जून मासके १९वें दिन अमावस्या हुई।

तिथियोंके अधिपति—शुक्ल और कृष्णपक्षकी प्रतिपदा तिथिके अधिपति अग्निदेव, द्वितीयाके प्रजापति, तृतीयाकी गौरी, चतुर्थीके गणेश, पञ्चमीके अहि, षष्ठीके कार्त्तिक, सप्तमीके रवि, अष्टमीके शिव नवमीकी दुर्गा, दशमीके यम, एकादशीके विश्व, द्वादशीके हरि, त्रयोदशीके काम, चतुर्दशीके हर पूर्णिमा और अमावास्याके अधिपति चन्द्र हैं।

मासदग्धा तिथि—वैशाख मासकी शुक्लाषष्ठी, आषाढ़ मासकी शुक्लाष्टमी भाद्रमासकी शुक्लादशमी, कार्त्तिककी शुक्लाद्वादशी, पौषकी शुक्लाद्वितीया और फाल्गुन मासकी शुक्लाचतुर्थी मासदग्धा होती है। श्रावणकी कृष्णाषष्ठी, आश्विनकी कृष्णाष्टमी अग्रहायणकी कृष्णादशमी, माघकी कृष्णाद्वादशी, चैत्रकी कृष्णाद्वितीया और ज्येष्ठकी कृष्णाचतुर्थी मासदग्धा होती है।

इन मासदग्धा तिथियोंमें जो व्यक्ति जन्म लेता या यात्रा करता है, वह व्यक्ति इन्द्रतुल्य होने पर भी कालका

तिथियोंकी तालिका।

ईस्वी सन्	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर
१८७१	९	११	१०	११	१२	१३	१४	१५	१७	१७	१९	१९
१८७२	२०	२२	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२८	२८	०	०
१८७३	१	३	२	३	४	५	६	७	९	९	११	११
१८७४	१२	१४	१३	१४	१६	१६	१७	१८	२०	२०	२२	२२
१८७५	२३	२५	२४	२५	२६	२७	२८	२९	१	१	३	३
१८७६	४	६	५	६	७	८	९	१०	१२	१२	१४	१४
१८७७	१५	१७	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२३	२३	२५	२५
१८६८	२६	२८	२७	२८	२९	०	१	२	४	४	६	६
१८७९	७	९	८	९	१०	११	१२	१३	१५	१५	१७	१७
१८८०	१८	२०	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	२६	२८	२८
१८८१	०	२	१	२	३	४	५	६	८	८	१०	१०
१८८२	११	१३	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१९	१९	२१	२१
१८८३	२२	२४	२३	२४	२५	२६	२७	२८	०	०	२	२
१८८४	३	५	४	५	६	७	८	९	११	११	१३	१३
१८८५	१४	१६	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२२	२२	२४	२४
१८८६	२५	२७	२६	२७	२८	२९	०	१	३	३	५	५
१८८७	६	८	७	८	९	१०	११	१२	१४	१४	१६	१६
१८८८	१७	१९	१८	१९	०	२१	२२	२३	२५	२५	२७	२७
१८८९	२८	०	२९	०	१	२	३	४	६	६	८	८

ग्रास बनता है तथा उसके विवाहमें विधवा, कृषिकर्ममें फलका अभाव, विद्या आरम्भमें मूर्ख, स्त्री-सङ्गममें गर्भपात और वाणिज्यमें मूलधनका नाश होता है। इसलिये बुद्धिमान व्यक्ति दग्धा तिथियोंमें कोई भी शुभकार्य नहीं करते।

प्रतिपदासे ले कर अष्टमी तककी व्यवस्था पहले लिखी जा चुकी है।

जन्माष्टमीको पारणविधि-रोहिणीयुक्त अष्टमी होने पर पारण न करें। अन्यथा पूर्वकृत कर्म और उपवासजनित फल नष्ट हो जायेंगे। जन्माष्टमीके पारणके लिये यह नियम है, अन्यान्य व्रतोंके लिए भी ऐसी विधि है। जिस तिथि और नक्षत्रके योगमें उपवासादि करें, उसमें एकका क्षय न होने तक पारण करना उचित नहीं। जन्माष्टमी रोहिणीयुक्त होने पर उपवासादि करें तथा पहले दिन षष्ठीदण्डात्मिका अष्टमी है, किन्तु रोहिणी योग नहीं है, दूसरा दिन यदि रोहिणीयुक्त हो तो उस दिन उपवासादि करें।

यदि जयन्तीयोगके पूर्व दिन उपवास हो और दूसरे दिन रात्रि सार्द्धप्रहर बीत जाने पर तिथि-नक्षत्र दोनोंसे या एकसे विमुक्त हो तो उस दिन सवेरे पारण करें। उपवासके दूसरे दिन तिथि और नक्षत्रके अन्तमें पारण करें और जब महानिशाके पूर्व एकका अवसान और अन्यको महानिशामें स्थिति हो, तो एकके अवसान होने पर पारण करें। महानिशामें यदि दोनोंको स्थिति हो तो उस दिन सुबह पारण करें। किसी विद्वान्ने बारह महीने ही रोहिणीयुक्त अष्टमीको जयन्ती-अष्टमी

बतलाया है, किन्तु ऐसा हो नहीं सकता। क्योंकि, सूर्यके समस्त्रपात अवस्थानके अमावस्या होती है। ज्योतिः शास्त्रमें ऐसा नियम है। यहाँ मानना पड़ेगा कि सूर्य द्वादश मासमें द्वादश राशियोंमें भ्रमण करता है। यदि ऐसा ही है, तो भाद्रमासमें जिस राशिका भोग करता है, अन्य मासमें उस राशिका भोग किस तरह कर सकता है? अतएव बारह मासोंमें रोहिणीयुक्त अष्टमीका होना नितान्त असम्भव है।

दूर्वाष्टमी—भाद्र मासकी शुक्लपक्षीय अष्टमीको दूर्वाष्टमी कहते हैं, यह पूर्वयुक्त ग्राह्य है।

महाष्टमी—आश्विन मासकी शुक्लाष्टमीको महाष्टमी कहते हैं; इसमें दुर्गा-पूजा और उपवास करे। पुत्रवान् व्यक्तिके लिए उपवास नहीं है, स्त्रियोंमें सभी कर सकती हैं दूसरे दिन पारण करना चाहिये। शतकोटि एकादशी पालनेसे जितना फल है महाष्टमीके उपवास करने पर भी उतना ही फल मिलता है। महाष्टमीका व्रत नवमीयुक्त होने पर ही करे।

गोपाष्टमी—कार्तिककी शुक्ला अष्टमीको गोपाष्टमी कहते हैं, उस दिन गो-पूजा, गोग्रासदान और गवानुगमन करनेसे महापुण्य होता है।

अष्टका—अग्रहायण पौष और माघकी कृष्णाष्टमीको अष्टका कहते हैं। अग्रहायणमासकी कृष्णाष्टमीका नाम पूपाष्टका है, उस दिन पिष्टक द्वारा पितरोंका श्राद्ध किया जाता है। पौषमासकी कृष्णाष्टमीका नाम मांसाष्टका है इसमें पितरोंका मांस द्वारा श्राद्ध होता है। माघमास की कृष्णाष्टमीको शाकाष्टका कहते हैं, उस दिन शाक द्वारा पितरोंका श्राद्ध किया जाता है।

भीष्माष्टमी—माघमासकी शुक्लाष्टमीको भीष्माष्टमी कहते हैं। इस दिन चारों वर्णोंको भीष्मका तर्पण करना पड़ता है। तर्पण देखो।

अशोकाष्टमी—चैत्रमासकी शुक्लाष्टमीका नाम अशोकाष्टमी है। इसमें ८ अशोक कलिका खाई जाती है तथा स्नानदानादि करनेसे शोकसे छुटकारा मिलता है। लौहित्य नदमें स्नान करना भी विधेय है।

अशोककलिका भक्षण करनेका मन्त्र—

"त्वामशोक हराभीष्ट मधुमाससमुद्भव।
पिबामि शोकसन्तप्ता मामशोकं सदा कुरु॥"

भविष्योत्तर देखो।

नवमी—अष्टमीयुक्त नवमी ग्राह्य है, क्योंकि अष्टमीके साथ नवमीका युग्मादर होता है। भाद्रमासकी आर्द्रायुक्त कृष्णानवमीमें बोधन तथा कल्पारम्भ किया जाता है। इस नवमीको बोधननवमी कहते हैं। यदि उस दिन आर्द्रा नक्षत्र न हो, तो तिथिमात्रके आश्रय उस दिन कार्य करना होगा।

कार्तिककी शुक्लपक्षीय नवमीको जगद्धात्री-पूजा की जाती और यह दिन युगका प्रथम दिन था, इसलिए उस दिन अक्षयपूजा की जाती है।

माघमासकी शुक्लानवमीका नाम है महानन्दा उस दिन स्नानादि करनेसे उसका फल अक्षय होता है।

श्रीरामनवमी—चैत्रमासकी पुनर्वसुनक्षत्रयुक्त शुक्ला नवमीके दिन भगवान्‌ने रामके रूपमें जन्म लिया था, इसलिये उस तिथिका नाम रामनवमी पड़ा है। कोटि सूर्यग्रहण कालकी तरह उस दिन जो कुछ किया जाता है, उससे अक्षय फल प्राप्त होता है।

वैष्णवोंके लिए अष्टमीविद्धा रामनवमीका मानना उचित नहीं अर्थात् विष्णुपरायण व्यक्तिको दशमीयुक्त होने पर उपवास आदि करना चाहिये। उपवासके उपरान्त दशमीको पारण करे, यदि दूसरे दिन दशमी न हो एकादशी हो, तो अष्टमीविद्धामें ही साधारण उपवास करे।

दशमी—शुक्लपक्षीय दशमी एकादशीयुक्त और कृष्णपक्षीय दशमी नवमीयुक्त ग्राह्य है अर्थात् उपवास और दैव पैत्र कार्यमें उक्त प्रकार प्रसिद्ध है।

दशहरा—ज्येष्ठ मासकी शुक्लपक्षीय दशमीको दशहरा कहते हैं। उस दिन गङ्गास्नान करनेसे दशविध पापोंका क्षय होता है इसलिए इसका नाम दशहरा पड़ा है।

ज्येष्ठ मासकी शुक्लपक्षीय दशमीमें यदि हस्तानक्षत्र योग हो, तो गङ्गास्नान मात्रसे दश जन्मकृत पाप नष्ट हो जाते हैं।

विजयादशमी—आश्विनकी शुक्लादशमीका नाम विजया-दशमी है। यह दशमी तिथि उदयमें प्रशस्त है। इस

दशमीमें देवीका विसर्जन होता है। यह परयुक्त होने पर अग्राह्य है।

एकादशीके साथ युग्मादर होनेके कारण परयुक्त अर्थात् द्वादशीयुक्त एकादशी ही प्रशस्त है। दोनों पक्षको एकादशीमें गृहस्थ, यति, ब्रह्मचारी और साग्निक सभीको उपवास करना चाहिये। किन्तु पुत्रवान् गृहस्थ कृष्णपक्षमें उपवास न करे। शयन और बोधनके मध्य जो कृष्णपक्षीय एकादशी पड़ती है, उसमें पुत्रवान् गृहस्थको भी उपवास करना पड़ता है। इसके सिवा अन्य कृष्णपक्षीय एकादशीमें उपवास न करे। पुत्रवती सधवा स्त्रीको तो कोई भी उपवास करना उचित नहीं। उपवास करनेसे स्वामीकी आयु क्षय होती है। किन्तु स्वामीकी अनुमति ले कर उपवास कर सकती है। जो नारी विधवा हो, उसको दोनों पक्षोंमें एकादशीव्रत करना चाहिये। यदि न करेगी, तो उसके समस्त पुण्यादिका नाश होगा और भ्रूणहत्याजनित पातक लगेगा।

वैष्णवोंके लिए शुक्ल और कृष्णपक्षके कारण एकादशीमें कुछ प्रभेद नहीं है। जो व्यक्ति इस प्रकारसे समान ज्ञान रखता है, वही वैष्णव है। विष्णुभक्तिपरायण वैष्णवोंको भक्तियुक्त हो कर प्रत्येक पक्षमें एकादशीका उपवास करना चाहिये। इनमें गृहस्थ पुत्रवान् है। इसका भी कुछ भेद नहीं। विष्णुभक्तके लिए एकादशी नित्यव्रत है। विष्णुकी प्राप्तिके लिए एकादशी उनका नित्य-कर्त्तव्य है।

ब्रह्महत्या आदि जो पातक हैं, वे एकादशीके दिन अन्नका आश्रय ले कर वास करते हैं; अतएव उस दिन अन्नभक्षण करनेसे उक्त समस्त पाप शरीरका आश्रय लेते हैं। इस लिए एकादशीके दिन अन्न न खाना चाहिये। और ८ वर्षसे लगा कर ८० वर्ष तक एकादशीका उपवास करना चाहिये।

एकादशीकी व्यवस्था।—पूर्ण एकादशी अर्थात् षष्टिदण्डात्मिका एकादशीका परित्याग करना चाहिये। यदि द्वितीय दिन कुछ समय तक एकादशी हो, तो पूर्ण एकादशीको छोड़ कर दूसरे दिन उपवास करना चाहिये। और यदि द्वादशीमें पारणयोग्य समय न मिले अर्थात् यदि पूर्व दिन ६० दण्ड एकादशी, दूसरे दिन १ दण्ड फिर द्वादशी और रात्रिके शेषमें द्वादशीका क्षय हो कर त्रयोदशी हो, तो पूर्णाको ग्रहण करना चाहिये। कारण ऐसे स्थल पर पारणयोग्य समय नहीं मिलता। यदि पूर्वदिनमें दशमीयुक्ता एकादशी हो तथा दूसरे दिन द्वादशीयुक्ता, अर्थात् पूर्वदिनमें यदि १५ दण्डके उपरान्त एकादशी हो और दूसरे दिन पारणयोग्य समय तक द्वादशी रहे वा न रहे, तो भी दशमीयुक्त एकादशीको छोड़ देना चाहिये।

दशमीविद्धा एकादशी कभी भी न करें। यदि सूर्योदयके बाद अल्प समय तक दशमी, पीछे एकादशी और उसका क्षय हो कर द्वादशी हो तो शुद्ध द्वादशीमें ही उपवास करके त्रयोदशीको पारण करें। इस प्रकार एकादशी करनेसे शत यज्ञका फल होगा। किन्तु ऐसा होना अत्यन्त दुर्लभ है।

यदि एकादशी षष्टिदण्डात्मिका दूसरे दिन न रहे और द्वादशी आ जाय तो द्वादशीके एक पदका परित्याग करके पारण करें। कारण, द्वादशीका प्रथम पाद एकादशी व्रत नित्य है, इस कारण अशौचादिकी प्रतिबन्धकता होने पर भी व्रत भङ्ग नहीं होता।

यदि एकादशीके दिन स्त्री रजस्वलादि कारणोंसे अशुद्ध हो, तो वह स्वयं उपवास करके दूसरेके द्वारा पूजा आदि करावे। एकादशी न कर सके तो उसके अनुकल्प हैं, उपवास करनेमें असमर्थ व्यक्ति यदि फल-मूल वा जलाहार करे वा एक बार हविष्य वा विष्णुका नैवेद्य खावे, तो वह प्रत्यवायी नहीं होगी। और उपवास करनेमें यदि बिल्कुल ही असमर्थ हो तो एक ब्राह्मणको जिमा दे वा भोजनसे दूना मूल्य दे देवे।

इस जगह विशेष नियम यह है, कि विष्णुशयन, पार्श्वपरिवर्त्तन और उत्थानको एकादशीमें उक्त नियम लागू नहीं होंगे।

भगवान्‌ने स्वयं कहा है, कि मेरे शयन, उत्थान और पार्श्व परिवर्तनकी एकादशीमें जो फल-मूल और जलमात्रका आहार करेगी, वह मेरे हृदयमें शल्य निक्षेप करेगी। इसलिए सभीको इन एकादशियोंका पालन करना चाहिये। भीम एकादशीके विषयमें भी ऐसा ही नियम है।

एकादशीके दिन पतितश्राद्ध और सपिण्डीकरण आदि करना पड़ता है। पतितश्राद्ध देखो।

द्वादशी।—शुक्लपक्ष हेतु अर्थात् शुक्लपक्षकी युक्त द्वादशी ही प्रशस्त है।

वैशाख मासकी शुक्ला द्वादशीको वैष्णवी तिथि या पिपीतकी द्वादशी कहते हैं। अतएव उस दिन पिपीत को व्रत करे।

ज्येष्ठ मासकी शुक्ला द्वादशीको त्रिविक्रम-द्वादशी कहते हैं। उस दिन विष्णुकी पूजा की जाती है।

आषाढ़ मासकी शुक्ला द्वादशीको रातको विष्णुका शयन, भाद्रकी शुक्ला द्वादशीको पार्श्व परिवर्तन और कार्तिककी शुक्ला द्वादशीको उनका उत्थान होता है। यद्यपि उक्त तिथिको अनुराधा नक्षत्र होता है तो भी वह उत्तम है नहीं तो तिथिमाहात्म्यके कारण रात्रिके समय विष्णुका शयन करावें। श्रवणा नक्षत्रमें पार्श्व परिवर्त्तन और रेवती नक्षत्रमें उत्थान करावें। विष्णुका रात्रिमें शयन, दिनमें उत्थान और सन्ध्याको पार्श्व-परिवर्तन करावें।

यदि उक्त नक्षत्रोंको तिथिमें सम्यक् योग न हो, तो पाद योग होनेसे भी उक्त कर्म अर्थात् शयनोत्थानादि करे। किन्तु किसी समय भी दिनको शयन और रातको उत्थान वा पार्श्वपरिवर्त्तन नहीं करते।

यदि शयन, पार्श्व-परिवर्त्तन और उत्थानको द्वादशी में उक्त नक्षत्रोंका योग न रहे, तो एकादशी, त्रयोदशी चतुर्दशी, और पूर्णिमा इन चार तिथियोंमेंसे जिस तिथि में नक्षत्रका पादयोग हो उसी तिथिमें शयनादि कर्म करे। किन्तु एकादशीसे पूर्णिमा तक किसी भी तिथि में नक्षत्र योग न होने पर, द्वादशीमें ही सभी कर्म सम्पन्न करने होंगे। यदि द्वादशीके दिन रात्रिको रेवतीका अल्पपाद हो, तो दिनके तृतीय भागमें उत्थान होगा।

भाद्रको शुक्लपक्षीय द्वादशीमें यदि श्रवणा नक्षत्रका योग हो तो उस तिथिको श्रवणाद्वादशी और विजया द्वादशी कहते हैं। उस दिन उपवास और विष्णुपूजा करनेसे अत्यन्त फल होता है। यदि उक्त नक्षत्र एकादशीमें युक्त हो, तो एकादशीके उपवासमें ही द्वादशीके उपवासका फल होगा। क्योंकि द्वादशीसे एकादशीका माहात्म्य है। और यदि एकादशीमें योग न हो कर द्वादशीमें योग हो, तो एकादशी और द्वादशी दोनों दिन उपवास करना पड़ेगा। श्रवणानक्षत्रके अवसानमें पारण किया जाता है।

अग्रहायण मासकी शुक्ला द्वादशीको अखण्ड द्वादशी कहते हैं।

फाल्गुन मासकी शुक्ला द्वादशीमें पुष्या नक्षत्रका योग होने पर वह गोविन्दद्वादशी कहलाती है। उस दिन गङ्गास्नान करनेसे महत् फल होता है। गङ्गास्नानका मन्त्र—

"महापातकसंज्ञानि यानि पापानि सन्ति मे।
गोविन्दद्वादशीं प्राप्य तानि मे हर जाह्नवि ॥"

त्रयोदशी।—शुक्ला त्रयोदशी द्वादशीयुक्त और कृष्णा त्रयोदशी चतुर्दशीयुक्त ही प्रशस्त है।

भाद्र मासकी कृष्णा त्रयोदशीमें यदि मघा नक्षत्रका योग हो, तो मधु और खीरसे पितरोंका श्राद्ध करे। इस जगह विचार कर देखें, कि मनु वचनमें मधु और खीरके अनुवचनमें यत्किञ्चित् मधुसे और विष्णुधर्मोत्तरमें उक्त श्राद्ध निष्ठ कहा गया है; किन्तु अब सिर्फ मधु और खीरसे करना चाहिये। इस सन्देहको दूर करनेके लिये विष्णुधर्मोत्तर और शातातपमें इस प्रकार लिखा है—

"पिता" पुत्रसन्तानमायुषश्च यथायु च।
तस्मात्यात् वर्षेषु पितृस्य मास्येषु च ॥"

(शातातप०)

"प्रजाहुत्य च दत्तानि यत्ता तत्र त्रयोदशी।
तस्माद् भवेत् भाद्र जहुना दायस्य च ॥"

(विष्णुधर्मोत्तर०)

इस जगह प्रथमोक्त वचनमें श्राद्धपदके निर्दिष्ट अपर्व्व श्राद्धमासादि समस्त पाटका श्राद्ध करनेकी और दूसरे वचनमें मधु और खीरसे श्राद्ध करनेकी विधि है। इस जगह स्मार्त्तभट्टाचार्य्यने ऐसा कहा है—"तथाप्युक्त् कृष्णपक्षे पक्व सत् श्राद्ध तन्मधुयोगेन पायसयोगेन वा न्याय्य भवेत्।" और मनु-वचनके अन्त पर 'पतोऽत्र सुतरां गुरुत्वाद्यधिकारः' ऐसा कहा है।

आश्विन मासके दसवें दिन तक हस्ता नक्षत्रका अधिकार है, अर्थात् १० दिन तक सूर्य्य हस्तानक्षत्रमें रहता है।

उसमें यदि महानचत्रयुक्त कृष्णा त्रयोदशी पड़े, तो उसको गजच्छायायोग कहते हैं। उसमें श्राद्ध करनेसे पूर्वापेक्षा फल अधिक होता है। इसमें विभक्त अविभक्त का भेद नहीं है, अर्थात् ज्येष्ठ-कनिष्ठ सभी कर सकते हैं।

जैसे वार्षिक एकोद्दिष्ट श्राद्धमें ज्येष्ठ-कनिष्ठका भेद नहीं है, इसमें भी वैसा ही है। इस श्राद्धमें पुत्रवान् व्यक्तिको पिण्डदान न करना चाहिये। जिस श्राद्धमें पिण्डदानका निषेध है, उसमें स्वधावचन ("स्वधां वाचयिष्ये") का पाठ करके पवित्र मोचन न करना चाहिये। किन्तु इसमें अग्निदग्धका पिण्ड देना पड़ता है।

वारुणी—चैत्रमासकी शतभिषानक्षत्रयुक्त कृष्णा त्रयोदशीको वारुणी कहते हैं। इसमें गङ्गास्नान करनेसे शत सूर्यग्रहणकालीन गङ्गास्नानका फल होता है। इसमें यदि शनिवार-योग हो, तो उसको महावारुणी कहते हैं। उस दिन स्नान करनेसे कोटि-सूर्यग्रहण-कालीन स्नानका फल होता है। यदि शनिवारमें शतभिषा नक्षत्र शुभ योगके साथ संयुक्त हो, तो उसको महामहावारुणी कहते हैं। उस दिन गङ्गास्नान करनेसे तीन कोटि कुलका उद्धार होता है। इस जगह फाल्गुनका मुख्य चन्द्र और चैत्रका गौणचन्द्र होने पर भी स्नानके संकल्पमें चैत्रका उल्लेख होगा। सधवा स्त्रीको वारुणीमें स्नान न करना चाहिये तथा सामान्य शतभिषामें (अर्थात् पूर्वोक्त प्रकार योगादिके बिना मिले जो शतभिषा हो उसमें भी स्नान करना ठीक नहीं। शतभिषा नक्षत्रयुक्त चन्द्रमें जो स्त्री स्नान करती है, वह निश्चयसे सात जन्म तक विधवा और हतभागिनी होती है। वारुणीमें स्नानके लिए दिन रातका विचार नहीं, अर्थात् चाहे दिन हो, चाहे रात्रि वा संध्या हो, जब तिथि और नक्षत्रका समागम हो, तभी स्नान करना चाहिये। उस दिन गर्त्तस्थित गङ्गाजलसे स्नान करने पर भी अश्वमेधका फल होता है।

चैत्रमासकी त्रयोदशीमें मदनकी पूजा की जाती है। चैत्रमासकी शुक्ला त्रयोदशीमें जो मदनको पूजा करके व्यजन करता है, उस पर वर्ष भर कोई विपत्ति नहीं पड़ती।

चतुर्दशी—शुक्ला चतुर्दशी पूर्णिमायुक्त और कृष्णा चतुर्दशी त्रयोदशीयुक्त होने पर ग्रहणीय है। कृष्ण पक्षकी अष्टमी और चतुर्दशीमें उपवासादि कार्यमें परविद्धाको छोड़ कर पूर्वविद्धाको ग्रहण करना चाहिये।

ज्येष्ठकी कृष्णा चतुर्दशीका नाम सावित्री चतुर्दशी है। उस दिन अवैधव्यकी कामनासे स्त्रियोंको श्रद्धा और भक्तिपूर्वक सावित्रीव्रत करना चाहिये। यह अनन्तचतुर्दशीको भांति १४ वर्ष पाला जाता है।

सावित्रीव्रत परविद्धा तिथिमें करना चाहिये। यदि दोनों दिन व्रतका समय हो, तो दूसरे दिन व्रत करें और यदि दोनों दिन प्रदोषके समय चतुर्दशी पड़े तो भी दूसरे दिन व्रत करना उचित है। व्रतका समय प्रदोष अर्थात् रजनीमुखका समय है।

"चतुर्दश्याममावस्या यदा भवति नारद ।
तपोष्या पूजनीया सा चतुर्दश्या विधानतः ॥" (ज्योतिष)

भाद्रमासकी कृष्णपक्षीय चतुर्दशीको अघोरा चतुर्दशी कहते हैं। इसमें शिवपूजा और उपवास करनेसे शिवलोककी प्राप्ति होती है।

भाद्रमासकी शुक्लाचतुर्दशीको अनन्त-चतुर्दशी कहते हैं। इस चतुर्दशीमें व्रत करनेसे सर्वकाम और सर्वफलका लाभ होता है। अनन्तव्रतके निमित्त पूजा होमादि करना चाहिये। यह व्रत पूर्वाह्णकालमें न हो सके, तो मध्याह्णकालमें भी व्रत सिद्ध होता है।

चतुर्दशी देखो।

कार्तिककी कृष्णपक्षीय उदयगामिनी चतुर्दशीका नाम भूत-चतुर्दशी है। उस दिन गङ्गास्नान, होम और तर्पण किया जाता है। अपामार्गके पत्ते मस्तक पर फेरें और प्रदोषमें दीपदान करें। उस दिन दीपदान करनेसे नरकसे उद्धार होता है। और यमतर्पणके जो मन्त्र हैं, उन मन्त्रोंको बोल कर एक एकके लिये तिलके साथ तीन बार जल चढ़ावें।

अपामार्ग-पल्लव फेरनेका मन्त्र—

"शीतलोष्णसमायुक्तसकण्टकदलान्वित ।
हर पापमपामार्ग भ्राम्यमानः पुनः पुनः ॥"

अग्रहायण मासकी कृष्णा चतुर्दशीको पाषाणचतुर्दशी कहते हैं। उस दिन रात्रिको गौरीको पूजा करके पाषाणाकार पिष्टक भक्षणपूर्वक व्रत करें।

माघमासकी कृष्णा चतुर्दशीको रटन्ती-चतुर्दशी कहते हैं। इसमें अरुणोदयके समय स्नान करनेसे यमभय जाता रहता है। स्नान और तर्पण द्वारा समस्त पापोंसे छुटकारा मिलता है। इस चतुर्दशीको रटन्ती पूजा होती है। यदि यह तिथि दोनों दिन अरुणोदय व्याप्त पावे, तो पहले दिन स्नान करे और जिस दिन सन्ध्या तक पावे उस दिन रटन्तीपूजा करे। यह रटन्तीपूजा पौषके गौणचान्द्र और माघके मुख्य चान्द्रमें होती।

माघमासके अन्तमें हो या फाल्गुनमासके प्रारम्भमें, कृष्णा चतुर्दशीको शिवचतुर्दशी कहते हैं और उस दिन शिवरात्रिका व्रत होता है। किन्तु माघका गौणचान्द्र और फाल्गुनका मुख्यचान्द्र अवलम्बनीय है। माघमासकी कृष्णा चतुर्दशीको रविवार या मङ्गलवार पड़े तो इसके फलमें आधिक्य होता है। रविवार या मङ्गलवारयुक्त व्रतके दिन यदि शिवयोग पड़े तो इसका फल उत्तमसे भी उत्तमतम हो जाता है। इस तिथिमें यदि पहले दिन महानिशि और दूसरे दिन प्रदोष पड़े, तो प्रथम दिन व्रत और उपवास करे। पहले दिन महानिशिमें चतुर्दशी न हो कर यदि दूसरे दिन प्रदोष व्याप्त हो तो दूसरे दिन व्रतादि करे।

पहले जन्माष्टमीके प्रकरणमें कहा जा चुका है, कि तिथिके अन्तमें पारण करे; किन्तु यह नियम सिर्फ जन्माष्टमीके लिए है, यहां यह विधि नहीं है। जिस तिथिमें उपवास हो, उसी तिथिमें पारण करना उचित है। मध्यरात्रिव्यापिनी चतुर्दशीको यदि शिवरात्रिव्रतका समय हो अर्थात् दिनको चतुर्दशी पतित हो कर यदि मध्यरात्रिव्यापिनी हुई हो, तो उसी चतुर्दशीमें पारण करे। इसमें शास्त्रविधि है—

"ब्रह्माण्डोदरमध्ये तु यानि तीर्थानि सन्ति वै।
पूजितानि भवन्तीह भूतायां पारणे कृते॥" (स्कन्दपु०)

इस पृथिवी पर जितने भी तीर्थ हैं, चतुर्दशीमें पारण करनेसे उन सबकी पूजा करनेका फल होता है। यदि दूसरे दिन तक चतुर्दशी न रहे और दूसरे दिन प्रदोषव्यापिनी तिथि न हो, तो पूर्व निशीथव्यापिनी चतुर्दशीको उपवास और अमावस्यामें पारण करे।

चैत्रमासकी कृष्णा चतुर्दशीका नाम अङ्गारक-चतुर्दशी है। उस दिन गङ्गास्नान और गङ्गामें भोजन करनेसे पिशाचत्वकी प्राप्ति नहीं होती। इसमें फाल्गुनके मुख्य चान्द्र और चैत्रके गौणचान्द्रको पकड़ना है।

पूर्णिमा—चतुर्दशीके साथ युग्मत हेतु पूर्णिमा श्राद्ध और दैवकर्मके लिए आदरणीय है। अमावस्या और पूर्णिमामें चन्द्र और बृहस्पतिका यदि योग हो, तो उसको महापूर्णिमा कहते हैं। इसमें स्नान और उपवासका फल होता है।

ज्येष्ठ मासकी पूर्णिमाको ज्येष्ठानक्षत्रमें यदि गुरु और शशी हो तथा उस दिन गुरुवार हो तो वह महाज्येष्ठी होती है अथवा ज्येष्ठानक्षत्रमें या अनुराधानक्षत्रमें गुरु चन्द्र दोनों हों, तो ज्येष्ठमासकी पूर्णिमा महाज्येष्ठी कहलाती है। यदि ज्येष्ठा या अनुराधा नक्षत्रमें बृहस्पति हो तथा रोहिणी और मृगशिरा नक्षत्रमें रवि हो एवं ज्येष्ठानक्षत्रयुक्त शशी हो, तो वह पूर्णिमा महाज्येष्ठी होती है।

ज्येष्ठ नामके संवत्सरमें ज्येष्ठमासकी पूर्णिमा ज्येष्ठा नक्षत्रयुक्त होने पर महाज्येष्ठीयोग होता है।

जिस वर्षमें ज्येष्ठा या मूला नक्षत्रमें बृहस्पतिका उदय या अस्त हो, उस वर्षको ज्येष्ठसामा संवर कहते हैं।

पूर्णिमा सम्बन्धका विषय पहले कहा जा चुका है, कि माघ और श्रावणी पौर्णमासीमें तथा आश्विनकी कृष्णात्रयोदशीमें श्राद्ध करना जरूरी है। यदि पहले दिन सङ्गवके समय पूर्णिमा तिथि प्राप्त न हो तो उस दिन को श्राद्ध करना उचित है। यदि दोनों ही दिन सङ्गवव्यापिनी न हो, तो दूसरे दिन श्राद्ध करे। सूर्योदयके मुहूर्त समयको प्रातःकाल और उसके बादके मुहूर्त समयको सङ्गवकाल कहते हैं।

कोजागर पूर्णिमा प्रदोषके पाने पर ही ग्राह्य होती है, अर्थात् जिस दिन प्रदोष और निशीथव्यापिनी तिथि हो उसी दिन कोजागर पूर्णिमा समझी जायगी। यदि पहले दिन निशीथसमयमें और दूसरे दिन प्रदोषमें उक्त तिथिका लाभ हो तो दूसरे दिन उसका लाभ होगा। यदि पहले दिन निशीथ समयमें उक्त तिथि हो और दूसरे दिन प्रदोषके समय उक्त तिथिका पतन न हो,

तो निशीथव्यापिनी तिथि में, अर्थात् पहले दिन कोजागर कृत्य होगा। कार्तिककी पूर्णिमामें रासयात्रा और मन्वन्तरा होती है।

पौषमासकी पूर्णिमाके बादसे माघमासकी पूर्णिमा तक प्रति दिन यथानियम विष्णुकी पूजा करें और उस समय तक मूली न खावें। माघमासमें मूली खानेसे ज्यादा दोष लगता है।

फाल्गुनकी पूर्णिमाका नाम दोल-पूर्णिमा है। इसमें श्रीकृष्णको दोलयात्रा करें। दोल देखो।

अमावस्या—अमावस्या प्रतिपद्‌युक्त होने पर ही ग्रहणीय है। भाद्रमासकी अमावस्याको महालया कहते हैं। उस दिन विहित पार्वणश्राद्ध और षोड़श पिण्ड दान किये जाते हैं।

कार्तिककी अमावस्याको दीपान्विता अमावस्या कहते हैं। उस दिन पार्वणश्राद्ध किया जाता है। जो व्यक्ति महालयामें उक्त श्राद्ध नहीं करते, दीपान्वितामें वह श्राद्ध करें।

कार्तिककी अमावस्याको स्नानके बाद दही, चीर और गुड़ आदि द्वारा देवों और पितरोंको भक्तिपूर्वक अर्चना एवं पार्वणश्राद्ध करें। इसमें दीपदान करना पड़ता है। क्योंकि पितृगण आ कर श्राद्धभागको ग्रहण करते हैं और प्रतिगमनकालमें उस आलोकसे उनको मार्ग दिखाना पड़ता है।

इसके सिवा उस दिन लक्ष्मीपूजा और उसी समय देवगृहमें दीपदान किया जाता है। उसके अन्तमें उस दिन कालिकापूजाकी व्यवस्था देखनेमें आती है। यह पूजा प्रदोषकालमें की जाती है। यद्यपि दोनों दिन यह तिथि प्रदोषव्यापिनी होती है, तथापि युग्मादरके कारण दूसरे दिन होगी। दोनों दिन प्रदोषकाल न प्राप्त हो तो पार्वणके अनुरोधसे दूसरे दिन उल्कादान करें।

यदि दिनको चतुर्दशी और रातको अमावस्या हो, तो उस दिन लक्ष्मीपूजा करें। इसका नाम सुखरात्रिकी है। किन्तु इसके एक विशेष वचनमें ऐसा है, कि दूसरे दिन एक दण्ड रजनी तक अमावस्या हो, तो पूर्व दिनको छोड़ कर दूसरे दिन लक्ष्मीपूजा करें। (तिथितत्त्व)

यदि दोनों दिन प्रदोषके समय अमावस्या न पड़े, तो श्राद्धके दूसरे क्षणमें दिनको ही उल्कादान करें। पहले दिन प्रदोष समयमें अमावस्याका योग हो कर दूसरे दिन श्राद्धकाल प्राप्त हो, तो पहले दिन प्रदोषसमयमें उल्कादान करके दूसरे दिन श्राद्ध करें और दोनों दिन अगर प्रदोषकालमें अमावस्या प्राप्त हो, तो दूसरे दिन करना होगा। (तिथितत्त्व)

प्रतिपदादि तिथियोंमें जन्मफल।

प्रतिपदामें जन्म होनेसे सर्वदा नाना रत्नोंसे विभूषित, मनोहरकान्तिविशिष्ट, प्रतापशाली और सूर्यबिम्बके समान अपने कुलरूप कमलका प्रकाश-स्वरूप हुआ करता है।

द्वितीयाका फल—द्वितीयामें जन्म होनेसे वह निर्विघ्न गुणयुक्त, अतिशय शूर, अपने कुमुदकुलके लिए चन्द्रमासदृश, विपुलकीर्तिशाली और अपने भुजबल द्वारा अरातिकुलको पराजित करनेवाला होता है।

तृतीयाका फल—तृतीयामें जिसका जन्म हुआ है, वह सकल गुणयुक्त, गम्भीर, नृपानुरागी, वायुरोगयुक्त, सबका उपकार करनेवाला, अन्यके अधिकारमें आश्रयी, कौतुकप्रिय, सत्यवादी और समस्त विद्यासम्पन्न होता है।

चतुर्थीका फल—जो चतुर्थीमें जनमा है, वह सर्वदा स्त्रीय पुत्रमित्र और प्रमदा, प्रमोदी, हृताभिलाषी, कृपान्वित, विवादशील, विवादमें विजयी और कठोर होता है।

पञ्चमीका फल—पञ्चमीके दिन जन्म हो, तो वह राजमान्य, सुन्दरशरीर, दयावान, पण्डिताग्रगण्य, कामी, गुणवान् और बन्धुजनोंमें एकमात्र माननीय होगा।

षष्ठीका फल, षष्ठीमें जिसका जन्म हुआ है, वह विद्वान्, वरिष्ठ, चतुर, सुन्दर, कीर्तिसंपन्न, आलम्बित बाहु-विशिष्ट, व्रणाकीर्ण देह, सत्यप्रतिष्ठ, धनपुत्रयुक्त और चिरायु होता है।

सप्तमीका फल—जिसका जन्म सप्तमीको हुआ है, वह कन्यासन्ततियुक्त, अरातिमातङ्गके लिये मृग-स्वरूप, विशाल नेत्रवाला, प्रसिद्ध प्रभावशाली, देवद्विजका अर्चनापरायण, रसिक, महात्मा, और पितृधनहारी हुआ करता है।

अष्टमीका फल—अष्टमीको जन्म लेनेवाला, राजलब्ध,

असंयत, क्रमाड़, दुखी, युवतीप्रिय, चेतुपादयुक्त, अन्य भाग्यस पथ और उत्तम और होता है।

नवमीका फल—नवमीके दिन जिसका जन्म हुआ है, वह विरोधकर, शत्रुओंके लिए भयावह, दूसरेके लिए अनिष्टकर, मलिन पथ, पुत्रप्रिय, आचारविहीन, अधम और कठोर होता है।

दशमीका फल—दशमी तिथिमें जन्म लेनेवाला विद्याविनोदी, धनयुक्त सुख, अच्छे आलोकान्, मन्दर्य भी भी अधिक मौख पथ, उदारचेता, मधुमती अन्तःकरण विशिष्ट और दयालु हुआ करता है।

एकादशीका फल—एकादशी तिथिमें जन्म होनेसे, वह क्रोधोत्कटमूर्ति विशिष्ट, क्षेमकरयोग्य, सुमार्गी भोगादिका कर्ता, आत्मोधर्मका एकमात्र भर्त्ता, महा मलिन पथ, देवगुरुका प्रिय और अत्यन्त हृष्ट होता।

द्वादशीका फल—द्वादशीमें जन्म लेनेवाला बहु धनाम-विशिष्ट, सर्वजनानुरागी, दयावान्, अतिथिप्रिय, महासभासदीन और व्यवहारमें दक्ष होता है।

त्रयोदशीका फल—इस तिथिमें जन्म लेनेवाला सुकम्प-शरीर सात्विक-भावयुक्त, शास्त्रज्ञानमें सुखी, जननीको प्रियकर, सर्वदा आलस्ययुक्त और एकमात्र जिह्वालुपचेता होता है।

चतुर्दशीका फल—चतुर्दशीको जिसका जन्म होता है, वह विरक्तस्वभाव, सर्वदा रोषपरायण, चोर, कठोर परवंचक, पराक्रमीजो और परदारामें अनुरक्त होता है।

कृष्णपक्षीय चतुर्दशीका फल पृथक् हुआ करता है। कृष्णा चतुर्दशी तिथिके परिमाणको दण्डको ६ भागोंमें विभक्त करें। प्रथम भागमें जन्म होने पर बालकका शुभ होगा, द्वितीय भागमें जन्म होनेसे पिताकी हानि, तृतीय भागमें जननीकी हानि, चतुर्थ भागमें मामाकी हानि, पञ्चममें वंशका नाश एवं षष्ठ भागमें धनकी हानि और आत्मका नाश हुआ करता है।

पूर्णिमामें जन्म होने पर, वह सम्पत्तियुक्त रूपवान्, युवतीप्रिय, न्यायोपार्जित धनसम्पन्न, सर्वदा सर्वगुण-युक्त, बलवान् और आचारमें दक्ष होता है।

अमावस्या तिथिमें जिसका जन्म होता है, वह क्रूर, साहसिक, उद्धत, त्यागशील और सर्वदा चोरी कामोंमें रत रहता है।

तिथिमें यदि दासी अश्व, गाय घोड़ा हस्ति आदि किसी भी पशुका प्रसव हो तो पशुस्वामी की धनहानि होता है। यदि देवराज इन्द्रके यहाँ भी ऐसी घटना हो, तो उनको भी धनकी हानि उठानी पड़ती है। जैसे गण्ड-प्रसूत दोष वर्णित है, सिनीवालीमें प्रसव होनेसे वैसे ही दोष होते हैं इस तिथिमें प्रसव होनेसे पशुस्वामीकी आयु और धनका नाश होता है।

प्रतिपद् आदि पन्द्रह तिथियाँ नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा इन पाँच भागोंमें विभक्त हैं।

इनमें प्रतिपदा, एकादशी और षष्ठी इन तीन तिथियोंका नाम नन्दा है। द्वितीया, द्वादशी और सप्तमी भद्रा कहलाती है। तृतीया, अष्टमी और त्रयोदशीको जया कहते हैं। चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी ये तीन तिथियाँ रिक्ता हैं। पञ्चमी, दशमी, पूर्णिमा और अमावस्या इन चार तिथियोंका नाम पूर्णा है।

नन्दा तिथिमें जिसका जन्म हुआ है, वह महामानी, पण्डित, देवता-भक्ति निष्ठ और ज्ञातियोंका प्रियवत्सल होता है।

भद्रा तिथिमें जन्म लेनेवाला बन्धुवर्गमें माननीय, राजसेवी धनवान्, संसारसे भयभीत और परमार्थतत्त्व पण्डित होता है।

जयातिथिमें जन्म लेनेवाला राजपूज्य, पुत्रपौत्रादि संयुक्त शासनकर्ता, दीर्घायुविशिष्ट और महाविद्व होता है।

रिक्ता तिथिमें जिसका जन्म हुआ है, वह धनहीन, प्रमादविशिष्ट, गुरुनिन्दाकर, शास्त्रवेत्ता, शत्रुहन्ता और कामुक होता है।

पूर्णा तिथिमें जिसने जन्म लिया है वह धनपूर्ण, शास्त्रार्थमें जयी, तत्त्ववेत्ता, सत्यवादी और शुद्धचेता होता है। (ज्योतिष—जातकाभरण)

मृत्यु-तिथिका निर्णय।

जन्म, राशि और नक्षत्रको एक साथ जोड़ कर मृत्युको भाग करने पर जो बाकी बचेगा, उसके द्वारा नन्दा आदि तिथियोंका निर्णय होगा। एक बाकी बचनेमें नन्दा तिथिमें मृत्यु होगी। इसी तरह दोको बचनेसे भद्रा तिथिमें, ३ बचने पर जयामें, ४ बचने पर रिक्तामें और

५ वाको बचने पर पूर्णा तिथिमें मृत्यु होगी।

मतान्तरमें ऐसा भी है—वयसका अङ्क, राशिका अङ्क और स्वराङ्क इनको एकत्र जोड़ कर युक्ताङ्कका ५से भाग लगावें, जो बाकी बचे उससे नन्दा भद्रा आदि तिथियोंका निर्णय करें।

उक्त राशि और स्वराङ्कको एक साथ जोड़ कर, युक्ताङ्कका ६से भाग करने पर जो अवशिष्ट बचे, उससे मृत्यु-तिथिका निर्णय करें। वयसाङ्क, स्वराङ्क और राशिके अङ्कको एक साथ जोड़ कर, युक्ताङ्कको ६से गुणा करें, फिर उस गुणफलका १५ से भाग करने पर जो अवशिष्ट रहे, उससे मृत्यु-तिथिका निश्चय करें। १ अवशिष्ट होनेसे प्रतिपदामें, २ बचनेसे द्वितीयामें, ३ अवशिष्ट रहने पर तृतीयामें मृत्यु होगी, इसी तरह आगे समझें।

चन्द्र-बल-साधन—शुक्ला प्रतिपदासे १० दिन अर्थात् दशमी तक चन्द्र मध्यबल रहता है। एकादशीसे ले कर दश दिन अर्थात् कृष्णा पञ्चमी तक चन्द्र पूर्णबल और कृष्णाषष्ठीसे ले कर दश दिन अर्थात् अमावस्या तक चन्द्र हीनबल होता है।

तिथिविशेषमें द्रव्यादि भक्षणका निषेध—प्रतिपदाके दिन कुष्माण्ड भक्षण करनेसे अर्थको हानि होती है। द्वितीयाको बृहती, तृतीयाको पटोल, चतुर्थीको मूली, पञ्चमीको बेल, षष्ठीको नीम, सप्तमीको ताड़, अष्टमीको मांस और नारियल खाना निषिद्ध है, तथा नवमीको तुम्बी (लौकी), दशमीको कलम्बी, एकादशीको सेम, द्वादशीको पूतिका, त्रयोदशीको वार्त्ताकु, चतुर्दशीको उड़द और मास तथा अमावस्या और पूर्णिमा तिथिमें मास खाना निषिद्ध है।

आषाढ़की शुक्ला एकादशीसे ले कर कार्त्तिककी शुक्ला द्वादशी तक सफेद सेम, पटोल, बरबटी, कदम्ब, कलमीशाक, वार्त्ताकु और कैथ खाना निषिद्ध है।

कार्त्तिककी शुक्ला एकादशीसे पूर्णिमा तक मत्स्य और मांस खाना निषिद्ध है। (स्मृति)

तिथि-विशेषमें योगिनीका निर्णय—प्रतिपदा और नवमीको योगिनी पूर्व दिशामें रहती है; तृतीया और एकादशीको अग्निकोणमें, पञ्चमी और त्रयोदशीको दक्षिणमें, चतुर्थी और द्वादशीको नैर्ऋतमें, षष्ठी और चतुर्दशीको पश्चिममें, सप्तमी और पूर्णिमाको वायु कोणमें, द्वितीयाको और दशमीको उत्तरमें तथा अष्टमी और अमावस्याको ईशानकोणमें योगिनी रहती है।

यात्राका फल—षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, पूर्णिमा, कृष्ण प्रतिपद्, अमावस्या रिक्ता, यमद्वितीया, अवम और त्र्यहस्पर्शमें यात्रा करना निषिद्ध है; इन तिथियोंके सिवा अन्य दिनकी यात्रा शुभ होती है।

रविवारकी द्वादशी, सोमवारकी एकादशी, मङ्गलवारकी दशमी और बुधवारकी सप्तमी होनेसे, वह तिथि दिनदग्धा होती है। उनमें कोई शुभ कार्य न करना चाहिये।

वर्षप्रवेशमें तिथिका आनयन—गतवर्षको संख्याको ११ से गुणा कर डालें, फिर उसके गुणफलमें १७०का भाग लगावें। जो भागफल उपलब्ध हो, उसका उपर्युक्त गुणफलके साथ जोड़ लगावें। इस युक्ताङ्कको ३०से भाग करने पर जो बाकी बचेगा, उसके साथ जन्म-तिथिके अंकका जोड़ लगानेसे जो अङ्क होंगे, उस अङ्कके द्वारा वर्षप्रवेशको तिथिका निर्णय हो जायगा। वह अङ्क ३०से अधिक होने पर ३०से उसका भाग करें, जो बाकी बचे, उसे ग्रहण करना चाहिये। कभी कभी निरूपित तिथिसे पूर्वकी वा बादकी तिथिमें भी वर्षप्रवेश हुआ करता है। (ज्योतिष)

तिथिभेदसे देवपूजाभेद।

"यद्दिने यस्य देवस्य तद्दिने तस्य संस्थिति।" (नारद)

जिस देवताके लिए जो दिन निर्द्धारित है, उस दिन उसी देवताकी संस्थिति होती है। प्रतिपद्में अग्निकी, द्वितीयाको वेधाकी, दशमीको यमकी, षष्ठीको गुहकी, चतुर्थीको गणनाथकी, तृतीयाको गौरीकी, नवमीको सरस्वतीकी, सप्तमीको भास्करकी, अष्टमी, चतुर्दशी और एकादशीको शिवकी, द्वादशीको हरिकी, त्रयोदशीको मदनकी, पञ्चमीको फणीशको तथा पर्व (अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या और पूर्णिमा)-के दिन इन्द्रकी पूजा करनी चाहिये, इस प्रकार पूजा करनेसे शीघ्र ही फलकी प्राप्ति होती है। (अग्निपु०)

तिथिकृत्य (नं० क्ली०) तिथिषु कृत्यं, ७-तत्। तिथिविहित कार्य, विवाहादि माङ्गलिक कर्म जो निर्दिष्ट तिथिमें किये जाते हैं।

उद्वाह, यात्रा, उपनयन, प्रतिष्ठा, सीमन्तकर्म, वास्तुकर्म, गृहप्रवेश और अन्यान्य मङ्गल-कार्य शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको न करना चाहिए। (श्रीकृष्णानन्द वाक्य)

किसी किसीका कहना है, कि शुक्ला प्रतिपदाकी भाँति कृष्णा प्रतिपदा भी वर्जनीय है किन्तु यह सङ्गत नहीं है। कारण इस वचनमें "आमावास्य तिथौ" ऐसा लिखा है यदि कृष्णपक्षीय प्रतिपद्‌का निषेध होता तो "पक्षाद्य तिथौ" ऐसा पाठ होता। द्वितीयामें राजाभिषेक, चिह्न, वास्तु और व्रत प्रतिष्ठा यात्रा विवाह विद्यारम्भ, गृहप्रवेश आदि समस्त माङ्गलिक कार्य शुभजनक हैं। तृतीयामें उक्त कार्य हितकर हैं। पञ्चमीमें ऋणप्रदानके सिवा अन्यान्य मङ्गल कार्य शुभकर है। षष्ठीमें सम्भव और यात्राके अतिरिक्त पौष्टिक मङ्गल-कार्य विधेय है। द्वितीया तृतीया और पञ्चमीमें जो जो कार्य शुभकर हैं, सप्तमीमें भी वे कार्य शुभजनक हैं। अष्टमीमें संग्राम-योग्य अग्निम वास्तुकर्म, शिल्प, विवाह आदि विधेय हैं।

द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी और सप्तमीमें जो जो कार्य कहे गये हैं, दशमीमें वे काम विधेय हैं। एकादशीमें व्रत उपवास, शिल्पकर्म, समय धर्मकार्य और शिल्पकर्म विधेय है। द्वादशीमें यात्रा और नववस्त्रके सिवा अन्यान्य शुभ कार्य हितकर हैं। त्रयोदशीमें द्वितीयादि तिथियोंके सभी कार्य किये जा सकते हैं। पूर्णिमाको यज्ञक्रिया पौष्टिक और मङ्गलकार्य, संग्राम योग्य अग्निम वास्तुकर्म उद्वाह, शिल्पप्रतिष्ठा आदि समय मङ्गलकार्य किये जा सकते हैं।

अमावस्याको पितृकर्मके सिवा अन्य शुभकर्म वर्जनीय हैं। यदि कोई मोहवश निषिद्ध कार्योंका अनुष्ठान करे तो सब विनष्ट हो जाते हैं। (ज्यो॰ त॰ वशिष्ठवचन)

तिथिक्षय (सं॰ पु॰) तिथीनां तिथ्यवच्छिन्नचन्द्रकलानां क्षयो ध्वंसोऽस्मिन् बहुव्री॰। १ दर्श, अमावस्या। (अमरटीका॰) तिथेर्क्षयः ६-तत्। २ तिथिका नाश, दिनक्षय। (ज्योतिष॰)

एक दिनमें तीन तिथि हों तो उसे दिनक्षय कहते हैं। इसमें वैदिक क्रिया कर्मोंको करना शुभ नहीं होता है। अवम और अहःक्षय देखो।

तिथिपति (सं॰ पु॰) तिथीनां पतयः, ६-तत्। तिथियोंके अधिपति। ब्रह्मा, विधाता, हरि, यम, शशाङ्क षडानन, शक्र, वसु, भुजग, धर्म, ईश, सविता, मन्मथ तथा कलि ये सब देवता प्रतिपदादि तिथियोंके यथाक्रमसे अधिपति हैं। अमावस्याके अधिपति पितृगण हैं। (मु॰ चिं॰ ११ अ॰)

शुक्ल और कृष्ण पक्षके प्रतिपद्‌के अधिपति अग्नि द्वितीयाके प्रजापति, तृतीयाके गौरी चतुर्थीके गणेश पञ्चमीके अहि, षष्ठीके गुह, सप्तमीके रवि अष्टमीके शिव नवमीके दुर्गा, दशमीके यम एकादशीके विश्व द्वादशीके हरि, त्रयोदशीके काम, चतुर्दशीके हर, पूर्णिमा और अमावस्याके अधिपति शशि हैं।

तिथिप्रणी (सं॰ पु॰) तिथिं प्रणयति तिथि प्र-नी-क्विप चन्द्रमा।

तिथियुग्म (सं॰ क्लो॰) तिथ्योर्द्वयोर्द्वितिथियो युग्म ६ तत्। तिथिका जोड़ा दो तिथि।

तिथिसन्धि (सं॰ पु॰) तिथ्योः सन्धि ६ तत्। तिथिकी सन्धि दो तिथियोंका एकमें मिलना।

तिथी (सं॰ स्त्री॰) तिथि कृदिकारादिति वा ङीष्। तिथि देखो।

तिथ्यर्द्ध (सं॰ क्लो॰) तिथीनां अर्द्ध, ६ तत्। करण।

तिदरी (हिं॰ स्त्री॰) वह कोठरी जिसमें तीन दरवाजे या खिड़कियाँ हों।

तिदारी (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी चिड़िया। यह बतककी तरह होती और सदा जलके किनारे रहती है। यह उड़नेमें बहुत तेज है और जमीन पर सूखी घासका घोंसला बनाती है। लोग इसका शिकार करते हैं।

तिदारी (हिं॰ स्त्री॰) वह कोठरी जिसमें तीन दरवाजे या खिड़कियाँ हों।

तिधर (हिं॰ क्रि॰ वि॰) उधर, उस ओर।

तिधारा (सं॰ पु॰) एक प्रकारका थूहर। इसमें पत्ते नहीं होते और नागफनीकी तरह शाखाएँ ऊपरको निकलती हैं। बगीचा आदिकी बाड़ या रक्षाके लिये इसे लगाते हैं। इसका दूसरा नाम वज्रा या नरसीज है।

तिधारीकाण्डकीय (सं॰ स्त्री॰) वज्र थोड़।

तिनकना (हिं॰ क्रि॰) क्रोधित होना, चिढ़ना नाराज होना

तिनका (हिं॰ पु॰) तृण, सूखी घास।

तिनगना (हिं॰ क्रि॰) तिनकना देखो।

तिनगरी (हिं॰ स्त्री॰) एक पकवान।

तिनतिहिया (हिं॰ पु॰) मनुवा कपास।

तिनधरा (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी रेती जिसमें तीन धार रहती हैं। यह आरीके दांतोंको तेज करनेके काममें आती है।

तिनपहल (हिं॰ वि॰) तिनपहला देखो।

तिनपहला (हिं॰ वि॰) जिसमें तीन पार्श्व हों जिसमें तीन पहल हों।

तिनमिना (हिं॰ पु॰) वह माला जिसके बीचमें सोनेका या जड़ाऊ जुगनू हो।

तिनवा (हिं॰ पु॰) बरमा और छोटा-नागपुरमें होनेवाला एक प्रकारका बांस। यह इमारतोंमें लगता है और चटाइयां बनानेके काममें आता है।

तिनाशक (सं॰ पु॰) तिनिश स्वार्थे कन् पृषोदरादित्वात् आत्वं। तिनिश वृक्ष।

तिनिश (सं॰ पु॰) वृक्षविशेष, सीसमकी जातिका एक पेड़। इसकी पत्तियां शमी या खैरकी सी होती हैं। संस्कृत पर्याय—स्यन्दन नेमी रथद्रु, अतिमुक्तक, वञ्जुल, चित्रकृत, चक्री शताङ्ग शकट, रथ, रथिक, भस्मगर्भ, मेषी, जलधर, स्यन्दनि, अच्छक और तिनाशक (Dalbergia Ougeinsis)। इसके गुण—कषाय, उष्ण, कफ, रक्त, अतिवातामयनाशक, ग्राहक, दाह, जनक, श्लेष्मा, पित्त, रक्तदोष, मेद, कुष्ठ, प्रमेह, श्वित्र, दाह, व्रण, पाण्डु और क्रमिनाशक है।

तिन्तिड़ (सं॰ पु॰) तिन्तिड़ी पृषोदरादित्वात् साधुः। वृक्षाम्ल, इमली।

तिन्तिड़िका (सं॰ स्त्री॰) तिन्तिड़ी स्वार्थे कन्-टाप् पूर्व ह्रस्वश्च। तिन्तिड़ी, इमली।

तिन्तिड़ी (सं॰ स्त्री॰) तिम्यते क्लिद्यते मुखाभ्यन्तरमनेन तिम-ईकन् पृषोदरा॰। वृक्षविशेष, इमली। इसके संस्कृत पर्याय—चिञ्चा, अम्लिका, तिन्तिड़िक, तिन्तिड़िका, अम्लीका, आम्लिका, आम्लीका, चुक्र, चुक्रा, चुक्रिका, अम्ला, अत्यम्ला, भुक्ता, भुक्तिका चारिका, गुरुपत्रा, पिच्छिला, यमदूतिका, शाकचुक्रिका, सुचुक्रिका और सुतिन्तिड़ा। (Tamarindus Indica, कच्ची इमली अत्यम्ल, कफ और पित्तकारक तथा वातनाशक होती है।

पक्की इमली दीपन, रुचिकारक, भेदक, उष्ण, कफ और वातनाशक, विष्टम्भनाशक, मधुराम्ल, पित्त, दाह, अस्र और कफदोषप्रकोपक है। पक्की इमलीका मधुराम्ल, रुचिप्रद, शोफ और पाककर है; इसका लेप देनेसे व्रणदोष जाता रहता है। इमलीके पत्तेके गुण—शोफ, रक्तदोष और व्यथानाशक हैं। इमलीकी सूखी छाल—शूल और मन्दाग्निनाशक है। इमलीके पके फलको जलमें अच्छी तरह घोल कर गुड़ और मिर्च मिला दें, बाद लवङ्ग और हींगसे सुगन्धित करें; इस तरहसे जो पानीय प्रस्तुत होता है, वह अत्यन्त मुखरोचक, वातनाशक, पित्तश्लेष्मकर और वह्निबोधक है। (भावप्रकाश)

तिन्तिड़ीक (सं॰ पु॰-क्ली॰) तिम-ईकन् निपातनात् साधु। वृक्षाम्ल, इमली।

तिन्तिड़ीका (सं॰ स्त्री॰) वृक्षाम्ल इमली।

तिन्तिड़ीद्यूत (सं॰ क्ली॰) तिन्तिड़ीभिः तिन्तिड़ीजातद्यूतैः यद्द्यूतं। चुद्धरी वह जूआ जो इमलीके चियोंसे खेला जाय।

तिन्तिराङ्ग (सं॰ पु॰) वज्रलोह, इसपात।

तितिलिका (सं॰ स्त्री॰) तिन्तिड़िका डस्य लत्वं। तिन्तिड़ी, इमली।

तिन्तिली (सं॰ स्त्री॰) तिन्तिड़ी डस्य लत्वं। इमली।

तिन्तिलीका (सं॰ स्त्री॰) तिन्तिड़ीका डस्य लत्वं। इमली।

तिन्तिलीफल (सं॰क्ली॰) जयपालबीज, जमालगोटेका बीया।

तिन्दिश (सं॰ पु॰) टिण्डिश वृक्ष, टिंडसी नामक तरकारी, डिंढसी।

तिन्दु (सं॰ पु॰) तिम्यति आर्द्रीभवति तिम-कु प्रत्ययेन निपातनात् साधुः। तिन्दुक वृक्ष, तेंदूका पेड़।

तिन्दुक (सं॰ क्ली॰) तिन्दुरिव कायति कै-क। १ कर्षपरिमाण, दो तोला। (पु॰ स्त्री॰) तिन्दु स्वार्थे कन्। २ रक्तलोध्र वृक्ष, तेंदूका पेड़। इसके संस्कृत पर्याय—स्फूर्ज्जक, कालस्कन्ध, शितिसारक, केन्दु, तिन्दू, तिन्दुल, तिन्दुकि, तिन्दुकी, नीलसार, अतिमुक्तक, स्वर्णक, रामण, स्फूर्जन, स्यन्दनाह्वय और कालसार।

इसके कच्चे फलके गुण—कषाय, ग्राही, वातकारक, शीतल और लघु। पके फलके गुण—मधुर, स्निग्ध, दुर्जर, कफद, गुरु, व्रण और वातनाशक, पित्त, मेह और रक्तदोषकारक तथा विशद। (राजनि॰)

भावप्रकाशके मतसे इसके कच्चे फलके गुण—ग्राहक, वातवर्द्धक, शीतवीर्य और लघु। पके फलके गुण—मधुररस, गुरु, पित्तदोष प्रमेह, रक्तदोष और कफ नाशक।

तिन्दुकतीर्थ—तीर्थ विशेष एक तीर्थका नाम। यह ब्रज मण्डलके अन्तर्गत है। इस तीर्थमें स्नानादि करनेसे विष्णुलोकको प्राप्ति होती है। (वीरमित्रोदयतीर्थप्रकाश)

तिन्दुकालतिफल (सं॰ पु॰) होमाकार खजूर, एक प्रकारका खजूर।

तिन्दुकादि (सं॰ स्त्री॰) तिन्दुकबीज, तेंद फलका बीया।

तिन्दुकि (सं॰ स्त्री॰) तिन्दुकी निपातनात् ह्रस्वः। तिन्दुक, तेंदूका पेड़।

तिन्दुकिनी (सं॰ स्त्री॰) तिन्दुकफलाकारं फलमस्त्यस्याः तिन्दुक-इनि ङीप्। आवर्तकी लता, भगवत वल्ली।

तिन्दुकी (सं॰ स्त्री॰) तिन्दुक गौरा॰ ङीष्। तिन्दुक, तेंदू।

तिन्दुल (सं॰ पु॰) गोलाकार बोयका पेड़।

तिन्दुल (सं॰ पु॰) तिन्दुक पृषोदरादित्वात् कस्य लः। तिन्दुक, तेंदू।

तिन्धरिया—बङ्गालके दार्जिलिङ्गके अन्तर्गत कार्सियाङ्ग उपविभागका एक ग्राम। यह अक्षा॰ २६ ५१ उ॰ और देशा॰ ८८ २०´ पू॰के मध्य समुद्रपृष्ठसे २०७८ फुट ऊँचे पर अवस्थित है। यहां दार्जिलिङ्ग-हिमालय रेलवे (Darjeeling Himalayan Railway)-का एक कारखाना है। इसके सिवा यहां उक्त रेलवे कम्पनी की ओरसे एक चिकित्सालय भी है।

तिन्नेवेली—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत मदुरा राज्यका एक जिला। यह अक्षा॰ ८ ८´ और ९ ५१ उ॰ तथा देशा॰ ७७ १२ और ७८ २१´ पू॰में अवस्थित है। भूपरिमाण ११५८ वर्गमील है।

मदुरा जब १०६४ ई॰में पाण्ड्यके नायकके राज्यभुक्त हुआ, उसी समयसे तिन्नेवेली एक स्वतन्त्र जिला रूपमें गण्य हुआ है। भारतवर्षके दक्षिण-पूर्व कोणमें केवल यही जिला उपकूलवर्त्ती है। इसके उत्तर और उत्तर पूर्वमें मदुरा जिला, दक्षिणमें मान्नार उपसागर तथा पश्चिममें पश्चिमघाट पर्वतमाला है। इसी पर्वतमालासे यह त्रिवाङ्कुड़ राज्यसे अलग हो गया है। मिन्नार नामक स्थानसे कुमारिका अन्तरीप तकका उपकूल भाग ८५ कोस लम्बा है। जिलेकी लम्बाई १२२ मील और चौड़ाई ७४ कोस है। यहांकी भूमि साधारणतः समतल है, किन्तु पूर्वकी ओर कुछ ढालू है। पश्चिममें पर्वतमाला ४०८० फुट ऊँची है। पर्वतके नीचेकी जमीनकी ऊँचाई समुद्रपृष्ठसे ८०० फुटसे अधिक नहीं है। इस जिलेमें १३ नदियां प्रवाहित हैं, जिनमेंसे प्रधान ताम्रपर्णी ८० कोस बहती है और पश्चिमघाटसे उत्पन्न हुई है। पापनाशम् स्थानमें इसका एक सुन्दर जलप्रपात है। चित्रानदी इसकी प्रधान उपनदी है, जो कुत्तालम् नामक स्थानके ऊपरसे निकली है। ताम्रपर्णीके किनारे तिन्नेवेली और पालामकोटा नगर अवस्थित है। वैपार भी एक दूसरी बड़ी नदी है। इसके किनारे सात्तुर नगर पड़ता है। इस जिलेका उत्तरी भाग प्रायः ऊसर है और दक्षिणी भागमें ताड़वन है।

इतिहास—इसका स्वतन्त्र इतिहास नहीं है वरन् मदुरा और त्रिवाङ्कुड़के इतिहासके साथ लिप्त हुआ है। यहां बहुत दिनोंसे द्राविड़-सभ्यता प्रचलित है। और यहांके मोती निकालनेका व्यवसाय ग्रीक लोगोंको भी मालूम था। कोलकेई नगरमें पाण्ड्य, चेर, और चोल राजगण राज्य करते थे। अन्तमें लड़ाई झगड़ा होनेके बाद पाण्ड्य ही इस देशके अधिपति हुए। अगस्त्य ऋषिने सबसे पहले इस देशमें आर्य-ब्राह्मण उपनिवेश स्थापन किया। प्रवाद है कि अगस्त्य ऋषि ताम्रपर्णी नदीके उत्पत्तिस्थानमें अगस्त्यपर्वत पर आज भी जीवित हैं। ब्राह्मणोंका कहना है कि अगस्त्य ही तामिल भाषाके प्रतिष्ठाता थे। पाण्ड्य राजाओंकी पहली राजधानी कोलकईमें और दूसरी मदुरामें थी। कोलकईका उल्लेख टलेमीके ग्रन्थ तथा पेरिप्लास ग्रन्थमें पाया जाता है। उक्त ग्रन्थोंमें यह नगर मुक्ता निकालनेके व्यवसायका प्रधान

स्थान कह कर उल्लिखित है। यह नगर अभी एक छोटे ग्राममें परिणत हो गया है तथा समुद्रसे केवल ५ मील की दूरीमें पड़ता है। यही स्थान प्राचीन कयाल नगर था। मार्कोपोलोने इसे केइल बतलाया है। इसका वर्त्तमान नाम कोरकेई है। वर्त्तमान रामेश्वरम् नगरका प्राचीन नाम कोटो है। यह भी मुक्ता-व्यवसायके लिये ग्रीकवासियोंके निकट परिचित था। "कोलकेई" का अर्थ सैन्यदल वा स्कन्धावार है। कोलकेई और समुद्रके मध्यस्थित एक स्थानको अब भी प्राचीन कयाल कहते हैं। यह प्राचीन कयाल समुद्रके तीरसे दो मीलकी दूरी पर अवस्थित है। कयालके अर्थमें समुद्रके साथ संयोग विशिष्ट हृहत् हृद आता है। चीन और अरबके साथ कयाल नगरका वाणिज्य-सम्बन्ध था। इसका चिह्न अब भी पाया जाता है। पुर्त्तगीजोंने आ कर कयालको समुद्रसे दूरवर्त्ती देख तुतिकोरिण (तुतकुड़ो) नगरको वाणिज्यका बन्दर बनाया। अब भी तिन्नेवेली जिलेमें तुतकुड़ो एक प्रधान बन्दर है। वर्त्तमान कोरकेई शहर प्राचीन कयालका अंशविशेष था, जो मन्दिरकी खोदी हुई लिपि तथा टकसाल इत्यादिके देखनेसे प्रमाणित होता है। प्राचीन चीनके वाणिज्य-सम्बन्धमें कयालमें किसी जगह जमीनके नीचे नाना प्रकारके चीनी मट्टीके टुकड़े और चीनाके प्राचीन जङ्क नामक जहाजके भग्न-खण्ड पाये जाते हैं। अभी यहां लावि नामक देशीय मुसलमान और रोमन-काथलिक मत्स्यव्यवसायी वास करते हैं। मार्कोपोलो कहते हैं, कि पाण्ड्य वंशीय पांच भाइयोंमेंसे अशाय नामक बड़ा भाई केइलमें राज्य करते थे। एडेन, हरमस प्रभृति अरबीय देशोंसे जहाज इस देशमें आते थे। उन जहाजों पर प्रायः घोड़ेकी आमदनी होती थी। राजाके यथेष्ट मणि माणिक्य था। उनके ३०० स्त्रियां थीं। इस स्थानको खोद कर मि॰ काल्डवेलने बहुतसे कलसके आकार मिट्टीके बरतन पाये थे, जिनमें प्राचीनकालकी एक जाति मुर्दे गाड़ती थी। जितने बरतन पाये गये थे उनमेंसे एकका घेरा ११-फुट था और उसमें मनुष्यका अस्थिपञ्जर पाया गया था। यहां जगह जगह बुद्ध-मूर्त्तियां देखी जाती हैं, उनकी पूजादि नहीं होती। एक जगह एक बुद्ध-मूर्त्तिको उलटा कर धोबी उस पर कपड़ा फींचता है। पुर्त्तगीज जब पहले पहल इस देशमें आये, तब उन्होंने इस देशमें कुइलनके राजाको राज्य करते देखा था। शायद वे तिवांकुरके कोई राजपुत्र होंगे, क्योंकि पुर्तगीज आगमनके समय यह तिवांकुड़ राज्यके अन्तर्भुक्त था। १०६४ ई॰ तक पाण्ड्य राजाओंके अधिकारमें रह कर पीछे यह प्रदेश सुन्दर-पाण्ड्यद्वारा अधिकृत हुआ। १३१० ई॰में मुसलमानोंने एक बार इस पर आक्रमण किया, किन्तु पाण्ड्य राजा विजयी हुए। इस समय २५० वर्ष तक एक प्रकारकी अराजकता फैली हुई थी। पाण्ड्य राजाओंने तथा कर्णाटके नायकोंने इस प्रदेशको खण्ड खण्डकर अधिकार कर लिया था। १५५८ ई॰में विजयनगरके सेनापति नायकोंने मदुराका नायकवंश प्रतिष्ठित किया। १५६३ ई॰में विजयनगरके ध्वंस होने पर यह स्वाधीन हो गया। १७वीं शताब्दीके अन्तको उपकूलमें पुर्त्तगीजोंका प्रभाव बढ़ने लगा, किन्तु ओलन्दाजोंने उन्हें उक्त स्थानसे मार भगाया। इन्होंने तुतकुड़ीमें प्रथम युरोपीय कोठी स्थापन की। १७४४ ई॰में यह स्थान आर्कटके नवाबके नाम मात्रका अधीन हुआ, प्रकृतपक्षमें यह कई एक पालेयकार (पलिगार)के सर्दारोंके अधीन था। १७८१ ई॰ तक यहां केवल सर्दारोंमें परस्पर छोटी छोटी लड़ाई होती रहनेके कारण एक प्रकारकी अराजकता फैली हुई थी। १७५६ ई॰में महम्मद युसुफखांने मदुरा और तिन्नेवेली इन दोनों राज्योंमें सुशृङ्खला स्थापन करनेके लिये तिन्नेवेली एक हिन्दू सर्दारके हाथ, ११०००००) रु॰ वार्षिक कर स्थिर कर अर्पण किया। १७५८ ई॰में महम्मद युसुफखांके चले जाने पर पुनः पूर्ववत् अराजकता दीखने लगी। उन्होंने फिर आकर स्वयं दोनों राज्योंका शासनभार ग्रहण किया। १७६३ ई॰ तक वे राज्य करते रहे, बाद वे राजस्व देनेमें असमर्थ होनेके कारण सैन्यदलसे पकड़े गये और उन्हें फांसीकी आज्ञा दी गई। १७८१ ई॰में बहुत राजस्व हो जानेसे आर्कटके नवाबने यह जिला अङ्गरेजोंको दे दिया।

१७८२ ई॰में चक्कगपत्ति और पाञ्चालमकुरिचि नामक पलिगारके सर्दारोंके दो राज्य कर्नेल फुलार्टोनने

सौंपी। यद्यपि पलिगार सर्दार उस समय भी कई एक स्थानोंके शासनकर्त्ता थे। किन्तु १७९९ ई०में वे विद्रोही हो उठे और शायद वे टीपू सुलतानकी मदद करें इस डरसे अङ्गरेजोंने उनके अस्त्र छीन लिये और दुर्ग तहस नहस कर डाला। १८०१ ई०में पुनः विद्रोह आरम्भ हुआ, किन्तु इस समय समस्त कर्णाट और तिन्नेवेली अङ्गरेजोंके हाथ रहनेसे कोई विशेष गड़बड़ी न मची।

इस जिलेमें २८ शहर और लगभग १७८२ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः २०५९६०७ है। यहां हिन्दू मुसलमान और ईसाइयोंका वास है। मुसलमानोंकी अपेक्षा ईसाइयोंको संख्या अधिक है। मुसलमान प्राचीन अरबियोंके वंशधर हैं। ये अपनेको लोभावर या लोब्बायर कहते और अङ्गरेज लोग उन्हें लाबि कहते हैं। ये सब मछा-व्यवसायी हैं।

हिन्दुओंके मध्य बलीय (मजदूर और कृषक) वेल्ला-लर (कृषिव्यवसायी) शानान (ताड़ीवाले), परिया (चण्डाल जैसी नीच जाति और जातिभ्रष्ट), कम्मा-लर (मिस्त्री) ब्राह्मण, कैकलर (तांती), सनानो (अव मद्गर और नीच जाति) अम्बट्टन (नाई) वन्नन (धोबी), चेट्टी (बनियें) कुसवन (कुम्हार), चक्किल पिम्माकुलम (मोचर), कणक्कन (कायस्थ) प्रभृति जातियां प्रधान हैं। शानान और परवर जातिके लोग इस देशमें एक प्रकारसे प्रधान हैं। परवर जातिके सभी मनुष्य रोमन काथलिक ईसाई हैं। शानान लोग केवल ताड़के पेड़को छीलते काटते हैं। इन लोगोंमें प्रेतोपासना प्रचलित है। ब्राह्मण्य धर्मका प्रभाव यहां बहुत कम है। बहुतसे ब्राह्मण भी प्रेतपूजा करते हैं।

पैकाम्बर जातिमें कोटाई पैकाम्बर नामक एक सम्प्रदाय है। ये मट्टीके दुर्गमें वास करते हैं। इनकी स्त्री जाति उस दुर्गके बाहर नहीं जाती।

समुद्रके किनारे तिरुचेन्दुर, ताम्रपर्णीके उपर पाप-नाशम् और चित्रा किनारे कोत्तालम नामक स्थानमें तीन प्रसिद्ध हिन्दू मन्दिर हैं, कोत्तालमका शिवमन्दिर महर्षि रचित 'तिरुवासगम्' वहां प्रपात् दक्षिण झरनेके नामसे मनोहर है।

१५३२ ई०में पुर्तगीज सेण्ट फ्रान्सिस जेवियर नामक पादरीने परवरोंको पहले पहल ईसाई बनाया। मुसल-मानों के अत्याचारके समय इन्होंने पुर्त्तगीजोंका आश्रय लिया था। तभीसे ये अपनेको सेण्ट जेवियरको सन्तान कहते आते हैं।

मदुरा और तिन्नेवेली जिलेके कहवा और चायके लिए भी इस देशको आदमी भेजे जाते हैं।

यहांके १८ नगरोंमें तिन्नेवेली पालमकोटा, तुतकुड़ी और श्रीविल्लिपुत्तुर नगर प्रधान हैं। यहांकी प्रधान भाषा तामिल है। इसके सिवा यहां तेलगू, कर्णाटी, गुजराती, हिन्दी और पर्त्तुगीज भाषा भी प्रचलित है। यहां धान, चना, कंगनी, चीना, छरद प्रभृति अन्न उपजाते हैं। तम्बाकू, कहवा, प्याज, पान, लाल मिर्च, धनियां, तिल, रुई, ईख और ताड़ यहांके प्रधान उद्भिद्य हैं। तुतकुड़ीसे भेड़, घोड़ा और बैलको रफ्तनी सिंहलमें होती है और कपास, ताड़की मिसरी और लाल मिर्च दूसरे दूसरे देशोंमें भेजी जाती है। उपकूल भागमें मोती और मोती पकड़नेका व्यवसाय विख्यात है। एक समय पोर्त्तगीजोंने यह पकड़नेका व्यवसाय अपने अधि-कारमें कर लिया था। मान्नार उपसागरमें अङ्गरेजों-ने १८८६ ई०में पहले पहल मुक्ता निकालनेका व्यवसाय आरम्भ किया। यहांके मुक्ता उतना उत्कृष्ट नहीं है। शङ्ख व शङ्खमें अधिक भेजे जाते हैं।

शासनको सुविधाके लिए यह जिला ४ भागों और ८ तालुकोंमें बांटा गया है जैसे-तिन्नेवेली तालुक (पालम-कोटा) नाङ्गुनेरी और तेङ्काशी तालुक (तुतकुड़ी) नाङ्गुनेरी अम्बासमुद्रम्, तेनकाशी (श्रम देखो), श्रीविल्लिपुत्तुर, सातूर, सङ्करनयनारकोविल (श्रीविल्लि-पुत्तुर)। रेल लाइन भी इस जिलेमें गई है। माघ और जून महीनेमें यहांका ताप परिमाण छायाको जगहमें ८३ तथा दिसम्बर और जनवरी महीनेमें लगभग ७७ है। वार्षिक वृष्टिपात २६ इंच है।

१ मन्द्राजके अन्तर्गत उक्त जिलेका एक उपविभाग। यह तिन्नेवेली और सङ्करनयनार-कोविल तालुक लेकर संगठित हुआ है।

२ उक्त जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० ८° ३६´ से ८° ५०´ उ० और देशा० ७७ [illegible] से ७७ ५१

पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ३२८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १८४६४७ है। इस तालुकमें दो शहर और १२३ ग्राम लगते हैं। कोदगन, पान्नयन, तिरुवेली, पूर्वीय मरुदूर और पश्चिमीय मरुदूर नामक नहरोंसे जल सिञ्चनका कार्य होता है।

४ इसी नामके तालुक और जिलेका एक प्रधान शहर यह अक्षा० ८°४४´ उ० और देशा० ७७°४१´ पू० में ताम्रपर्णी नदीके किनारे मन्द्राज शहरकी रेलसे ४४६ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। इसका ऐतिहासिक विवरण अस्पष्ट है। १५६० ई०में नायकवंशके अधिष्ठाता विश्वनाथने इस शहरका संस्कार किया था। यहांका एक प्राचीन शिवमन्दिर बहुत प्रसिद्ध है, अन्यान्य बड़े बड़े मन्दिरोंकी नाईं इसमें भी सहस्रस्तम्भ-नाटमन्दिर है।

इस शहरकी लोकसंख्या प्रायः ४०४६८ है, जिनमें ३४६६४ हिन्दू, ४६८८ मुसलमान और ८०७ ईसाई हैं। १८६६ ई०में यहां म्युनिसपलिटि स्थापित हुई है। इस शहरकी वार्षिक आय ३६,५००) और व्यय ३४,८००) रु० है। यहां दो कालेज, एक शिल्पविद्या सिखानेका स्कूल तथा कई एक छोटे छोटे स्कूल हैं।

तिन्मुकिया—आसामप्रदेशके लखिमपुर जिलेके अन्तर्गत डिब्रूगढ़ उपविभागका एक ग्राम। यह अक्षा० २७° २८´ उ० और देशा० ९५° २१ पू०में अवस्थित है। यहां एक चिकित्सालय है। आसाम-बङ्गाल और डिब्रूसदिया रेलवेका यहां सङ्गम होनेके कारण यह स्थान दिनों दिन प्रसिद्ध होता जा रहा है।

तिपड़ा (हिं० पु०) कमखाब बुननेवालोंके करघेकी एक लकड़ी। इस लकड़ीमें तागा लिपटा रहता है और यह दोनों बेसरोंके बीचमें होता है।

तिपतूर—महिसुरके तुमकूर जिलेका तालुक। यह अक्षा० १३°०´ और १३° २६ उ० और देशा० ७६° २१´ और ९६°५१´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ५०८ वर्गमील और लोकसंख्या ८०७०८ है। इसमें चार शहर और ३८१ ग्राम लगते हैं।

तिपसा (हिं० वि०) १ जिसमें तीन पत्ते या पार्श्व हों। २ जिसमें तीन तारे हों।

तिपाई—दक्षिण-आसामकी एक नदी। मणिपुरमें तुमांइ और लुसाइ पर्वत पर तुइवर कहते हैं। लुसाइ पर्वत पर यह नदी घूमती हुई कछाड़के दक्षिण-पश्चिमकोणमें 'बराक' नदीसे मिल गई है। इस सङ्गमस्थल पर तिपाईमुख नामक एक ग्राम है। इस ग्राममें लुसाइयोंके साथ व्यवसाय चलता है। लुसाइ लोग रुई, एक प्रकारका मोटा कपड़ा, भारतीय रबर, हाथीके दांत, मोम इत्यादि वनजात द्रव्योंको अपने साथ ला कर यहांके चावल, नमक लोहेके यन्त्रादि, कपड़े, नकली मोतीकी माला और तमाकूसे बदला करते हैं।

तिपागढ़—मध्यभारतका एक प्राचीन स्थान। यह चन्दा जिलेमें अवस्थित है। यहां तिपागढ़ पर्वतके ऊपर तिपागढ़ नामक एक किला है। इस किलेके निकट एक सरोवरसे तिपागढ़ी नामकी एक नदी निकली है। यह प्राचीन दुर्ग, कर्निंहम साहबके मतसे गोंड़ राजाओंकी कीर्त्ति है। दुरारोह पर्वत, बांसके जङ्गल तथा गम्य पथके अभावसे इस दुर्गमें सहजमें नहीं जा सकते। रास्ता इतना दुर्गम है, कि तिपागढ़ी नदीको ही सात बार पार करना पड़ता है। यह दुर्ग तिपागढ़ पर्वतकी एक दुर्गम उपत्यकाके ऊपर अवस्थित है। इस दुर्गके नीचे एक बड़ा सरोवर है जो पार्वत्य झीलकी नाईं दीख पड़ता है। यह दुर्ग सरोवर चारों ओर दीवारसे घिरा हुआ है। केवल दक्षिण-पूर्वकी ओर दीवार नहीं है। दीवार पर्वतके अधिरोह और अवरोहके अनुसार एकक्रमसे पांच शिखरको घेरे हुए है। इस वेष्टित स्थानमें बहुतसी समतल उपत्यकायें हैं, जिनमें तिपागढ़ी नदीकी उपनदियां प्रवाहित हैं। इन नदियोंका जल प्रायः पहाड़के ढालवां स्थानसे न बह कर इधर उधर समतल भूमिमें गिरता है। बहुतसे छोटे बड़े सोते उत्पन्न होनेका यही कारण है। दुर्गके समस्त अंशको निकटवर्ती हरनदन्द ग्रामके लोगोंने भी नहीं देखा है और पहाड़के उस अंश पर जानेकी सुविधा न होनेके कारण कोई भी वहां नहीं जा सकता। प्राचीर बड़े बड़े प्रस्तरखण्डोंसे गठित है, किन्तु अभी उसकी ऊंचाई किसी जगह भी ५ फुटसे अधिक नहीं देखी जाती है। पर्वतके दक्षिण-पश्चिम शिखरके निकट बहुतसे मकानोंके

भिन्नाकृतिके देवमूर्ति पाते हैं। कहा जाता है, कि यहां एक राजभवन था।

पर्वतमें एक हनुमानकी आकृति खुदी हुई है। यहां कहीं भी कलोक्त शिलालेख नहीं पाया जाता। इस तालाब चारों ओर बड़े बड़े पत्थरोंसे बंधा है। चूना, सुर्खी अथवा और किसी प्रकारके मसालेका व्यवहार कहीं भी नहीं है। पहले इसमें सीढ़ियां बनी हुई थीं। इसके एक तरफका भाग टूट फूट गया है। प्रवाद है, कि इसी मध्यसूत्रसे तिपारगढ़ नदी निकली है, किन्तु उस स्थानसे उसका निकलना अनुमान नहीं किया जाता है। किसी दूसरे दिशासे तिपारगढ़ीकी उत्पत्तिका कारण बतलाते हैं। प्रवाद है, कि इस दुर्गकी अन्तिम रानी एक दिन गोपालित गवके ऊपरसे उतरते समय उसके साथ अदृश्य हो गई, तभीसे यह स्थान परिणत हो गया है। एक दूसरा प्रवाद है, कि हुमदरायने इस दुर्गका निर्माण किया। वे हुमदरागढ़से इसमें और अमीनकी एक सुरंग हो कर यहां आते थे। यहां उनका एक अखाड़ा था। पाठनोंके राजा भी सुरंग हो कर इस अखाड़ेमें आते थे, किन्तु हुमदराज उन्हें कहीं भी देख नहीं सकते थे।

तिपाड़ (हिं० पु०) १ तीन पाट जोड़ कर बनाई हुई चीज। २ वह जिसमें तीन पल्ले हों। ३ वह जिसमें तीन किनारे हों।

तिपारी (हिं० स्त्री०) बरसातमें आपसे आप होनेवाला एक प्रकारका छोटा झाड़। इसके पत्ते छोटे और सिरे पर नुकीले होते हैं। इसमें सफेद फूल गुच्छोंमें लगते हैं। इसके दूसरे नाम—मकोय, परपोटा और छोटी रस भरी।

तिपैरा (हिं० पु०) बड़ा कुआं जिसमें तीन चरसे एक साथ चल सकें।

तिबड़ो (हिं० वि०) जिसमें तीन रस्सियां एक साथ एक एक बार खींची जाय।

तिबारा (हिं० वि०) १ तीसरी बार। (पु०) २ वह मद्य जो तीन बार चलाया गया हो। ३ वह घर या कोठरी जिसमें तीन द्वार हों।

तिबासी (हिं० वि०) तीन दिनका बासी।

तिब्बी (हिं० स्त्री०) चौसरी।

तिब्बत—हिमालयके उत्तरमें एक देश। तिब्बती भाषामें इसका नाम 'पो' है। इसके उत्तरमें चीनतातार, पूर्वमें चीन, दक्षिणमें हिमालय पर्वत और पश्चिममें तुरान है। इसका परिमाणफल १८०१०० वर्गक्रोश और लोकसंख्या प्रायः ६००००० है। इसके दक्षिणमें ऊंचा हिमालय पर्वत है। उत्तरमें भी वैसा ही एक कयलन विस्तीर्ण पर्वत है। दोनों इन पहाड़को 'किउनलुन' हिन्दुस्तानी कैलास कहते हैं। पूर्व और पश्चिममें बहुतसे पर्वत हैं। इन पर्वतोंसे एशियाकी बहुतसी नदियां निकली हैं। यह देश अत्यन्त उन्नत और शीतप्रधान है। शीतका अधिक प्रादुर्भाव होनेसे यहां बहुत उद्भिद नहीं उपजती हैं, इससे यहां खाद्यान्न दुष्प्राप्य है। इस देशमें तरह तरहके पशु पाये जाते हैं। गाय, भैंस और घोड़े तथा खच्चर ही यहांके साधारण पशु हैं। हिमालय-पथ पर बैलगाड़ी अथवा मवेशी इत्यादि नहीं जा सकते हैं, इसी कारण भेड़ें और बकरे ही बोझ ढोनेका काम करते हैं। चमरी नामक एक प्रकारकी गोजाति पाई जाती है, इसीकी पूंछसे चामर बनता है। चमरी देखो। कस्तूरी मृग भी इस प्रदेशमें बहुत हैं। इस देशके बकरेके रोएंसे दुशाले बनते हैं। शाल देखो।

तिब्बतके कुत्ते बहुत बड़े और बलवान् होते हैं। यहांकी खानोंमें सोना, पारा, सुहागा और नमक पाया जाता है। तिब्बतके लोग देशमें बहुत कुछ तातारोंसे मिलते जुलते हैं। वे अत्यन्त शान्त और सन्तुष्टचित्त हैं। नाच और गाने बजानेकी तृष्णा ही इन लोगोंका प्रधान चिह्न है। इनका वाणिज्य चीनके साथ चलता है। मुर्देको जलाने तथा गाड़नेकी प्रथा इस देशमें नहीं है। ये पारसियोंकी भांति मुर्देको श्मशानमें फेंक आते हैं, केवल लामाओंको ही जलाते हैं। भेड़का मांस इन लोगोंका प्रधान खाद्य है। बहुतसे लोग कच्चा मांस खाते हैं। ये सब भाई मिल कर एक स्त्रीसे विवाह करते हैं। बड़े भाई स्त्रीको पसन्द करनेके अधिकारी हैं। तिब्बतवासी बौद्ध हैं। इनका धर्मसम्प्रदाय लामा नामसे प्रसिद्ध है। दलाई-लामा सबसे प्रधान और तशि-लामा उनसे छोटे हैं। तिब्बतवासियोंका विश्वास है कि दलाई लामा स्वयं ईश्वर हैं मनुष्यके वेशमें मनुष्यके मध्य रहते हैं,

उनकी मृत्यु नहीं है ; लेकिन कभी कभी शरीर बदला करते हैं। दलई-लामाको मृत्यु होने पर शास्त्रोक्त विशेष लक्षणयुक्त शिशुको दलई-लामाका 'नवशरीरधारण' जान कर उसीको उक्त पद पर अभिषिक्त करते हैं। सब कोई पहले दलई लामाको देहको मन्दिरमें रख पूजा करते हैं। तशि-लामा बुद्धके अंश समझे जाते हैं। ये चीन-सम्राट्के गुरु और धर्मोपदेशक हैं।

तिब्बतके समस्त मन्दिरोंमें बुद्धप्रतिमा प्रतिष्ठित हैं। यहांकी भाषा स्वतन्त्र है। अक्षर बहुत कुछ नागरी अक्षरसे मिलते जुलते हैं। ईसाकी ७वीं शताब्दीमें यह लिपि भारतवर्षसे तिब्बतको चली गई है। ये काष्ठ-फलकमें खोद कर पुस्तकादि मुद्रित करते हैं।

ले लासा और टिसुलम्बू ये तीन नगर इस देशमें सर्वप्रधान हैं। लासा नगरमें दलई-लामाका मन्दिर है। इसीसे यह बहुत पवित्र स्थान माना गया है। काश्मीरके समीप लद्वग (लदाक) प्रदेशको छोड़ कर तिब्बतके और सभी अंश चीनके अधीन हैं। चीनराजके एक प्रतिनिधि यहांके शासनकर्त्ता हैं। लासा नगरमें ही ये रहते हैं। लदाकको राजधानी ले है। लदाक देखो।

श्रामदो नामक स्थानके लामा सोनपो नोमनखन तिब्बतका भू-विवरण लिख गये हैं, जिससे निम्नलिखित विवरण संग्रहीत हुआ है—

तिब्बत देशमें शीत और उष्णताका अंश बराबर रहनेके कारण यहां न तो अत्यन्त गर्मी पड़ती है और न अत्यन्त शीतहीका प्रादुर्भाव है। इसी कारण यहां दुर्भिक्ष नहीं और हिंसक पशु तथा कीटादि नहीं पाये जाते।

पर्वतमाला।—लोहत्रा प्रदेशमें तेसी, चीमोकनकर, पुंलहरी, कुल-कानृग्री, उत्तर नाग प्रदेशमें हवे ; टो-कान्दस प्रदेशमें छि-कङ्गचरित और नाङ-छेन-मङ्गल है। इनके सिवा यरलह-सहम्बू, तोद्दोकार्पो, खवा-लोटि, सहत्राकार्पो, मछेनपोमर इत्यादि वर्फसे ढकी हुई सफेद शिखरयुक्त ऊंची पर्वतमाला है। छोति-गोङ्गिया. मरि-वर च्यम, जोमोनगरी, कोन्स-तुस्थन छेमो प्रभृति पर्वत सुगन्धि घास, जड़ी बूटोके उद्भिद् और सुन्दर तरुलता-गुल्मसे परिपूर्ण हैं। इसके अतिरिक्त कृष्णपर्वत देश-मय व्याप्त है।

ह्रद।—मफम् यु चहो (मानस-सरोवर), नम-चहो कि-उग-मो, चहा-चहो, यर ब्रो गयु चहो, फग-चहो, चहो कियरिंग ञ्योरङ्ग, खो-स हो, गौया-मो प्रभृति ह्रद हैं। एतद्भिन्न और भी कई एक परिष्कार मीठे और स्वच्छ जलयुक्त ह्रद इस देशके नाना स्थानोंमें देखे जाते हैं।

नदी।—चांग पो (ब्रह्मपुत्र), सेङ्गे खबब् (सिन्धु), मब्चिय खब्ब, चहा-सङ्घिक, ज छू, ङ्गु छू, ब्रि-छू, मछू (होयाङ हो), सि-छू, वे-छू, माङ्ग-छू, हजुलगा-छू और चाङ्ग-छू प्रभृति असंख्य उपनदियोंके साथ इस देशके नाना स्थानोंमें प्रवाहित हैं।

विस्तृत अरण्य, चारणभूमि, तृणमय प्रान्तर, तृणपूर्ण उपत्यका, कर्षित क्षेत्र और मनुर्बर अधित्यका बालुका-मय मरुदेशके नाना स्थानोंमें है। ग्यनग (चीन), ग्यगर (भारतवर्ष), पेरमिग (पारस्य) प्रभृति बृहत् देशोंकी सीमामें जिस तरह बड़े बड़े समुद्र हैं, इसके चारों ओर भी उसी तरह बड़े बड़े पर्वत हैं। इन पर्वतोंके दूसरे पारमें ग्य-नग (चीन), ग्य-गर (भारतवर्ष), मोन् (हिमालय प्रान्तवर्ती प्रदेश), ब-या (नेपाल), खु-छे (काश्मीर), स्तग्-सिसगम् (ताजिक वा पारस्य) और होर (तातार) प्रभृति बड़े बड़े देश अवस्थित हैं। इन देशोंको उर्वरता जिन बड़ी नदियां द्वारा होती है, उनका अधिकांश ही इस 'पो' (तिब्बत वा भोट) देशसे उत्पन्न होनेके कारण यह प्रदेश जम्बुलिङ्ग (जम्बूद्वीप) खण्ड-का केन्द्रस्थान कहा जा सकता है।

'पो' देश प्रधानतः तीन भागोंमें विभक्त है—

१। तोङ्गर-रो कोर-सुम—ऊंचा या छोटा तिब्बत।

२। वु-साङ्ग (चार प्रदेशोंमें विभक्त)—प्रकृत तिब्बत।

३। दो, खम और गङ्ग, बड़ा तिब्बत।

ऊंचा तिब्बत (संक्षेपमें पो कुङ्ग)—इसके कई उप-विभाग हैं—तनग-मो लेदवग, मङ्ग-यूं-सङ्गाङ्ग सुङ्ग, गुगेवुहरङ्ग (पुरङ्ग)। प्रत्येक उपविभाग नौ जिलोंमें विभक्त है।

पहले 'पो' देशको शासन-सीमा तुरुष्क या तुर्कोंके देशके कोण तक विस्तृत थी। ऊंचा तिब्बत प्रकृत उत्तर और दक्षिण इन दो भागोंमें विभक्त है। उत्तरभाग बद-कशानके मध्यमें है। यहां तिब्बतियोंका एक दुसोङ्ग

(दुर्ग) है। डोगपा नामक दुर्दान्त जाति पर शासन रखनेके लिये दुर्गके भीतर तिब्बतनरेशके अधीन प्रतिनिधि रहते हैं। ये पहले डोगपा राज कहलाते थे। पश्चिम तिब्बतके पूर्वमें तुषारमण्डित कांग रिमि (कैलास पर्वत), मपम (मानस-सरोवर) ह्रद और लङ्गचो नामक सिमरंगा वन बहुत पवित्र माना गया है। जो इसे पीते हैं वे मुक्ति पाते हैं। उस शिखर तोगर नामक स्थानमें एक स्वतन्त्र गारपोन (गवर्नर) या शासनकर्त्ताके अधीन है और वे भी लासाके प्रधान शासनकर्त्ताकी मातहतीमें हैं।

मानससरोवर और कैलास पर्वतकी महिमा एक तिब्बतीय पुस्तकमें लिखी है, कि कैलाससे चार प्रधान नदियां निकली हैं। इन नदियोंका उत्पत्तिस्थान क्रमशः हाथी, सिंह, घोड़े और मोरके मुख सरीखा है। अन्यान्य पुस्तकोंमें इन्हें क्रमशः हाथ, घोड़े, मयूर और सिंहमुखके तुल्य बतलाया है। इन्हीं स्थानोंसे गङ्गा, लौहित्य (ब्रह्मपुत्र), वक्षु (अक्सस्) और सिन्धुकी उत्पत्ति हुई है।

सिन्धुनदी पश्चिम दिशामें तिब्बतके अन्तर्गत नगरि प्रदेशमें होती हुई काश्मीरके अन्तर्गत पविखाल नामक स्थानमें दक्षिण-पश्चिमकी ओर भारतमें प्रवेश करती है। शतद्रु नदी कैलासके उत्तरपश्चिमांशसे निकल कर खोकर प्रदेशमें मध्य होती हुई पश्चिमकी ओर तुषारशैलकी दिशामें प्रवेश करती है। कैलास पर्वतसे सोता नामक और एक दूसरी नदी पूर्वकी ओर निकल कर अपनी मानस सरोवरमें गिरती है। कहा जाता है, कि पहले यह देशमें मध्य हो कर पूर्व सागरमें गिरती थी।

कैलासपर्वतके सामनेका गोनपिरी नामक एक छोटा पर्वत तीर्थियों द्वारा 'हनुमन्त' कहलाता है। इस पर्वतमें पत्थरसे जमीन खोदने पर जैसे गढ़े हो जाता है वैसे दाग दीख पड़ते हैं। इसके विषयमें कई एक गल्प है। तिब्बती लोग कहते हैं, कि श्री-सुतुन सिम्बल और मरो पोमकुच नामक दो तिब्बतीय ज्ञानी पण्डितोंके धर्म विचारके समय उनमेंसे एक व्यक्ति नीचे गिर पड़े थे, उन्हींकी देहके भारसे ऐसे चिह्न हो गये हैं। भारत जातियोंके मतसे कार्त्तिकके साथ विवादमें उनके पराघातसे यह चिह्न उत्पन्न हुए हैं। उनका यह भी कहना है, कि पहले यह पर्वत कैलासके ऊपर ही अवस्थित था, किन्तु हनुमान इसको कैलासपर्वतसे अलग कर अलग स्थापनपूर्वक इस पर रखते थे। इसी से माना जाता है कि सोविंक (ब्राह्मण)-गण इसे हनुमान पर्वत कहते हैं। इस पर्वतके ऊपर कई जगह ऐसे चिह्न हैं। भारतवासी इन्हें शिवदुर्गा, कार्त्तिक, गणेश, हनुमान प्रभृतिके पदचिह्न बतलाते हैं। यहां जिगतेन-गोसुमगुमिर नामक एक पवित्र गुहा है। कैलासके पूर्वांचलके लोग कहते हैं कि ये समस्त चिह्न सिद्धपुरुषोंके हैं। 'लदाख' प्रदेशमें भी कई (दो) दुर्ग अवस्थित है। यहांके लोग काश्मीरकी भांति परिच्छद धारते हैं। इनकी टोपी और ड्रेसके अपरापरोंकी टोपीकी होती है। यारकन्दके खास और कासे रंगकी टोपी पहनते हैं। लदाखके पूर्वकी ओर गुगे प्रदेश है। यहांका थोलिङ्गका आश्रम बहुत विख्यात है, जो लोचन-रिन्छेन साङ्पो द्वारा प्रतिष्ठित हुआ है। इसके पूर्वमें पुराङ्ग प्रदेश है। यहां पहले स्रोन-दुसन-गम्पो व स्रोङ-पाका राज्य करते थे। राजा खोर इस वंशमें बहुत प्रसिद्ध हो गये हैं। इसके दक्षिणमें अत्यन्त पुराना और प्रसिद्ध खोचो जमनी का मन्दिर है, जिसे खुरकोर मन्दिर भी कहते हैं। पहले इस स्थानमें कुछ दूरमें एक स ब्यालो रहते थे। उन्होंने अपनी कुटीमें चार बौद्धभिक्षुओंको आश्रय दिया था। ये आचार्य जब भारतवर्षको लौटे थे, तब इन्होंने उन्याओंसे पाच सात और एक घोड़े थे। बहुत वर्ष बीत जाने पर भी वे वापस न गये। अन्तमें स ब्यालोने घोड़ोंको खोज कर देखा, कि उनमें कई एक थैलियां हैं और उन पर 'जमनो' नाम लिखा हुआ है। स ब्यालोने उन थैलियोंको भी खोला उनमें कई एक चांदीके टुकड़े पाये। वे समस्त टुकड़ोंको ले कर खुमवस नामक स्थानको गये और वहां उन्होंने उसी चांदीसे एक बुद्धमूर्त्ति निर्माण कराई। जब प्रतिमा कुटीतक तैयार हो गया तब वह आपसे आप चलने लगी। इस पर स ब्यालो बहुतसे लोगोंको अपने साथ ले उस प्रतिमाको तिब्बत ले चले। यहां पहुंच कर वह प्रतिमा अचल हो गई। उसी स्थान पर स ब्यालोने

इन्हें प्रतिष्ठित कर एक मन्दिर बनवाया और उसका नाम 'जमलो' रक्खा। जमलोका अर्थ अचल है। निम्न पुरलके पूर्वमें लवमन्यम नामक एक बहुत विस्तृत समतल क्षेत्र है, जो पहले लामा शासनकर्त्ताओंके अधीन था। अभी यह नेपालके अधिकारमें है। इसके पूर्वमें जोङ्ग ट्मोङ्ग नामक एक स्थान है। यहां एक बड़ा दुर्ग और कारागार तथा बहुतसे सङ्घाराम हैं। इसके दक्षिणमें किरोङ्ग नामक स्थान है, यही उच्च तिब्बतकी अन्तिम सीमा है। यहांका समतन-लिङ्ग नामका आश्रम पुरातन और पवित्र है। तिब्बतके चार विख्यात चोमो (बुद्ध) मन्दिरोंमें एक की कथा पहले कही जा चुकी है, एक दूसरा अर्थात् चोमो-ओयति सम्प्राङ्ग-नो नामक मन्दिर इस स्थानमें विद्यमान है। इसके दक्षिणमें सम्बु नयाकोट (नवकोट) और अन्यान्य स्थान नेपालाधिकृत है। इसके पूर्ववर्त्ती ललन वा ललम तथा उसके समीपका गुंगवङ्ग नामक स्थान जैंतसुम मिलरप, व-लोचव और तैपङ्ग नामके तीन पण्डितोंकी जन्मभूमि है। चुम्बर नामक स्थानमें मिलरपकी मृत्यु हुई थी। ललमके नीचे ललम नामक गिरिवर्त्म (घाटा) नेपालमें प्रवेश करनेका एक पथ है।

प्रकृत तिब्बतके प्रधानतः दो भाग हैं—तुमाङ्ग और ङ (वू) ये भी फिर चार क अर्थात् सामरिक विभागोंमें विभक्त हैं; यथा—ङ, येक, यानक और रूलम्। और राजाओंके समयमें यह प्रदेश छ थि-कोर नामक विभागोंमें विभक्त था। यामृटो नामका हृदप्रदेश एक स्वतन्त्र थि-कोरके जैसा गिना जाता था। नेपाल-सीमाके जोमो-कङ्गकर नामके ऊंचे तुषारमण्डित पर्वतके निकट मिलरप पण्डित पांच परी-सिद्ध हुए थे। लव-छी नामक शिखर पर तृसेरिङ्ग तृसि-ङ्गा नामक एक परीका वास स्थान था। इसके मूलदेशमें पांच तुषार-ह्रद है, जिनके जलका वर्ण परस्पर विभिन्न है। ये ह्रद उक्त परीके नाम पर उत्सर्ग किये गये हैं। इस स्थानके आश्रमके उत्तरमें कोमा नामक एक बड़ा तुषार-ह्रद है, जो तिब्बतके चार प्रधान तुषार-ह्रदोंमेंसे एक है। इसके समीप रिवो तगसमाङ्ग नामक एक बहुत पवित्र स्थान है। यहीं पद्मसम्भव नामके प्रसिद्ध बौद्धाचार्यको भी तदम् मन्दरवाका प्रिय-आवास था, यहां उस देवबालिका ओंका पदचिह्न देखा जाता है। ललमके उत्तरमें गुङ्ग-मङ्गला नामके ऊंचे पहाड़ पर विख्यात तम्मुयो नामक बारह अप्सराओंका वास था। प्रथम भवने इन्हें शपथ दिला कर तीर्थिक (ब्राह्मण)के पंजेसे बौद्धधर्मको रक्षा तथा भारतवर्षसे शत्रुभावसे ब्राह्मणोंका आना बन्द कर दिया था। तिब्बती लोगोंका विश्वास है, कि तभीसे शत्रुभावमें कोई तीर्थिक तिब्बतमें प्रवेश नहीं कर सकता; किन्तु यह ठीक नहीं है। भारतवर्षसे अब भी ब्राह्मण परिव्राजक तिब्बत देखने जाते हैं। इस पर्वत पर गुङ्ग-यङ्ग-ला गिरिवर्त्म है। इस राह हो कर उत्तरको ओर जानेसे टेङ्गिर नामक जिला मिलता है। यहांका तम्प-साङ्गे नामक पण्डितका तपोवन, गुहा और समाधिस्तम्भ है। ये ही तिब्बतीय धर्मके शिथेत् शाखाके मतप्रवर्तक थे। यहां चीन राजाकी एक दल सैन्य और एक सीमान्तरक्षक सेनापति हैं। इसके पूर्वमें तेंसि जोङ्ग (दुर्ग) और उत्तरमें शिकरटोंमें जोङ्ग (दुर्ग) तथा उसके समीप एक कारागार अवस्थित है। इसके निकट शेकर छोटे आश्रम है। इस आश्रमके पास पा-शाक्य नामका सङ्घाराम है। जिसमें एक इतना लम्बा चौड़ा घर है कि उसमें बहुत आसानीसे घुड़दौड़ हो सकती है। इस घरका नाम दुखङ्ग-कर्म्मो है। यहां तान्त्रिक बौद्धमत प्रचलित है। पा-शाक्य आश्रमसे उत्तरमें एक दिनके रास्ते पर, यङ्गु तग जोङ्ग (दुर्ग) नामक स्थानमें खडुलामा गोनगो याठुव नामक महापुरुष सिद्ध हुए थे। यहां पा-गोन्थिम नामकी एक गुहा और पारिग-कर्पो नामक एक प्रकारके श्वेतवर्ण अक्षरोंमें उत्कीर्ण शिलालेख है। इसके समीप त्रिकोण आकारका एक काला पत्थर देखा जाता है जिसे लोटोन कहते हैं। प्रवाद है, कि यह पा-गोम लामाके हृत्पिण्डकी प्रस्तरीभूत अवस्था है। बहुतसे भक्त इसके चटके हुए टुकड़े उठा ले जाते हैं। यङ्गु-जोङ्गके उत्तरमें एक तुषारावृत ऊंची पर्वतमाला है। इसके दूसरे पारमें ङ्गस्पो नामक चोर (मनुष्यभक्षक) जातिके लोग रहते और ताङ्ग-चोर कहलाते थे। ऐसा साधारण लोगोंका विश्वास है, कि उक्त पर्वतमालाकी तुषारराशिके गल कर जमीन पर गिरनेसे

तिब्बतका बहुत अनिष्ट होता है। इसके अलावा खिमेजाको (मुसलमान) भी वास करते हैं। ये काम गरके अधीन हैं। इन लोगोंके देशके बाद म्यानम् न मको विस्तृत मरुभूमि पड़ती है और फिर चक्क-बाय गतिका नामको एक मुसलमान जाति रहती है। इन लोगोंमें आज बौद्धधर्मकी विरागता जमी आ रही है। बोम बड़ नामक स्थानमें बहुतसे मृत मनुष्योंकी हड्डी और खोपड़ी पाई जाती है। ब्राह्मण और हिन्दुगण धर्मको लड़ाईमें जितने मनुष्य मारे गये थे, शायद ये उन्होंकी अस्थिमाला होगी। पा थाङ्ग सङ्घारामके निकट तमाङ्ग्-पो नदी प्रवाहित है। इसके तीरवर्ती नङ्‌-स्तो ङुम रिङ और ङुम-तम बोन नोङ प्रभृति स्थान म्याङ् गवर्मेण्टके अधीन हैं। इन सब स्थानोंमें बहुतसी पवित्र मूर्तियां देखी जाती हैं। यहांका चोपुन्-नम-चिन नामका स्तूप चोपुन्-लोचनने बनवाया है। ङुम तुमको लिङ नामक आश्रम ङुम-चिदेन-चोमो नङ्‌पोने बनाया है। इस स्थानमें तथा ङुम-चुमो लिङ प्रभृति स्थानोंमें गेन नामक बौद्धाचार्यको शिष्यपरम्परा वास करती तथा बौद्धशास्त्र व्याकरण और विचार प्रभृति पढ़ती थी। ङुम-चुमो-लिङमें बोनङ मत प्रचलित हुआ है। यहां ङुप्‌नर नामक सम्राट्‌के गुरु दोबोन फग-पा रहते थे। बाद बोनङ साम्प्रदायिक मतको छोड़ दिये जानेसे यह मत लोपसा हो गया। इसके दक्षिणमें तशि-ल-ङुम-पो महाराम है, जो गे-नदुनडुप द्वारा स्थापित हुआ है। यहां अमिताभ बुद्ध मनुष्यके आकारमें पञ्चेन रम्‌पा नामसे आविर्भूत हुए थे। तशि-ल्हुनपो नामक आश्रममें इनकी कई एक अच्छी समाधियां हैं। इसके समीप ङुम चाव लिङ नामका प्रासाद पञ्चेन-लामाने बनाया गया है। तशि-ल्हुनपो आश्रमके पूरबको उत्तर ल्हाङ् नामक स्थानमें तिब्बतका तीसरा प्रसिद्ध नगर ग्यन्-त्से अवस्थित है। इस नगरका व्यवसाय बहुत बढ़ा चढ़ा है। पहले यहां सितु-रबतन कुन स पर्व नामक राजाकी राजधानी थी। उस राजाने यहां गोमाङ्ग गम्बोन दिमगो नामक सङ्घाराम स्थापन किया। तशि-ल्हुनपो आश्रमके दक्षिणमें बोदोसिम् दोमि नामक एक ऋषियोंका तपोवन है जिसे लोग पर्वो चाइजोङ कहते हैं। यहां एक पार्वत्यजलका निर्झर है जिसके जलसे रोग नाश होता है। इसके सिवा आर्यावलोकितेश्वरकी मूर्ति पर्वत पर खुदी हुई है। नुमाङ्‌-पो नदीके किनारे नुमाङ्‌-लाङ उपत्यकामें रिन्छेन गुङ्ग जोङ अवस्थित है। यह रिन्छेन पुङ्ग नामक राजाके द्वारा बनाया गया है। निकटवर्ती थम-स्त नामक ग्राममें पञ्चेन रिनपोछे नामक तशिलामाका जन्म हुआ था। इन उपत्यकाके नाना स्थानोंमें बहुतसे आश्रमोंमें अध्ययन किया था। यहां अनेक तपोवन हैं किन्तु बौद्धधर्म उतना प्रसिद्ध नहीं है।

ग्यन्-त्से नगरके दक्षिणमें पर्वतमालाके दूसरी बगल रलुङ नामक स्थान है। इसके पूर्वमें निचङ चोमङ नामक राजाका जन्मस्थान चोन ड्याम है। तशि-ल्हुन पो आश्रमके दक्षिण-पूर्वमें चिङ कारम नामकी पर्वतमालाके दूसरे पारमें खोन-जोङ नामका दुर्ग और एक उसके मध्य कारागार निर्मित है। इस स्थानके बाद फिड़ि जोङ है। इसके दक्षिणमें चोन-डजोङ नामका राज्य है जिसे भारतवासी सिक्किम कहते हैं। ग्यन्-त्से नगरके ठीक पश्चिममें पर्वतमालाके दूसरे किनारे पर रो जोङ नामका दुर्ग अवस्थित है। यहां ल्हासा पथमें स्थूल सीमान्त दुर्ग है। इसके दक्षिण-पूर्वमें ल हो-डुग (भूटान) राज्य है।

उत्तर ल्हाङ नामक स्थानसे खाम्बा पर्वतमाला पार होने पर यरदोक (यम-द्रो) नामक स्थान मिलता है, जो कोच यग रीसे उत्तरमें पड़ता है। यहां तिब्बतके प्रधान चार झीलोंमेंसे दोच-घुमत्सो नामक एक ह्रद है। शीतकालमें ह्रदका ऊपरी भाग जम जाता है। उस समय दूरसे भयानक आर्त्त शब्द हमेशा निकलता रहता है। किसीके मतसे यह शब्द समुद्र या दिव्यो गरज और किसीके मतसे वायुका शब्द है। इस ह्रदकी अधित्यका छोटी और सब एक ही आकारको होती हैं। यरदोक नामक स्थानसे पूर्वमें ल्हाङ्‌-पो और किन्‌चु नामकी नदीके सङ्गमसे कुछ पूर्वको तट पर ग्रङ नामक स्थानमें प्रतिवर्ष नाना लोगोंकी सभा होती है। इसके निकटवर्ती उक्त नदीके किनारे ङम् दोर-ज दगङ नामका मन्दिर राजा रल्‌पचन द्वारा निर्माण किया गया है। इसके पूरबमें सिमपर ग्रीर ग्योल नामक स्थानमें दोम-दोदम शीर नामके देवताकी दो स्वयम्भू प्रतिमाएं हैं।

पड़ती प्रतिमामें शिरा-संस्थान और मांसपेशी समूह साफ-साफ दीख पड़ती है। साङ्गकु उपत्यकामें नेडुखोङ्ग नामका प्रासाद और दुर्ग है। यहां फगमो-दुवरशीय मित् चङ्ग-कुर-ग्यल्गान नामके राजा रहते थे। उसका भग्नावशेष अब गन्धर्वोंका वासस्थान कहा जाता है।

कुछ दूर पूर्वको ओर जानेसे विमो-गेकेल नामक पर्वतके समीप पदनट-पुङ्ग नामका आश्रम है, जो समस्त उत्तरी एशियामें विख्यात है। यहांके बड़े उपासनागृहमें मैत्रेय (चम्पयोङ्गदो)-को बड़ी प्रतिमा स्थापित है। इसके सिवा यहां भारतवर्षीय चन्द्र पण्डितके हस्तलिखित ग्रन्थ, अवलोकितेश्वर (चनरसिग)-की प्रतिमा और रह लोचवको समाधि भी है। यहां टनङ्ग लामाका एक प्रासाद है। यहांके तान्त्रिक मतके देवता वज्रभैरवकी प्रतिमा बहुत प्रसिद्ध है। यहां विनय, अभिधर्म और माध्यमिक दर्शनकी शिक्षा दी जाती है। इसके सिवा प्रज्ञापारमिता तथा नि-ता-तृगङ्ग तान्त्रिकके मतका कुछ अंश भी पढ़ाया जाता है। इसके पूर्वमें तिब्बतकी राजधानी पा-ल ह्टन (लासा) नगर है। आर्यावर्तके किसी वृहत् नगरके साथ इसकी तुलना नहीं होने पर भी तिब्बतके सबा यह एक प्रधान नगर गिना जाता है। लासा नगरके बीचमें एक ऊँचा तिमञ्जला शाक्यबुद्धका मन्दिर है। इसमें शाक्यसिंहकी जो प्रतिमा है, वह उनके बारह वर्षकी अवस्थाका प्रतिरूप है। राजा स्रोन्-तसन गम्पोने चीनकी राजकन्यासे विवाह किया और वहींसे इस प्रतिमाको अपने देशमें लाये थे। यह अवलोकितेश्वर (चनरसिग) और मैत्रेय बुद्धकी स्वयंभू प्रतिमा है। इसके सिवा तुलोङ्गथप, ग्यो-सुन, व्यमोट्सेदो (भारतमें भृंची कामिनी नामसे ख्यात) प्रभृतिकी मूर्त्तियां हैं।

तिब्बतके अधिकांश सम्भ्रान्त और जमींदार लासा नगरमें रहते हैं। चीन, काश्मीर, नेपाल, भूटान प्रभृति स्थानोंसे यहां वणिक् आते हैं। इस नगरसे आध मीलकी दूरी पर पोताला नामक प्रासाद है। प्रवाद है, कि इस प्रासादमें जगन्नाथ अवलोकितेश्वर वास करते थे। वे ही टलइ-लामाके रूपमें वर्त्तमान हैं। स्रोन्-तसन गम्पो नामक राजाने इसे निर्माण किया था। यहां लोहित प्रासाद (फो-दुङ्ग-मर्पो) है। इस प्रासादमें लोकेश्वरकी प्रतिमा और कोनगम-ङ्प नामक ५म टलइ लामाकी समाधि है, जिसमें तेरह रत्न लगे हुए हैं। पोताला प्रासादके दक्षिण-पश्चिममें चग् पोइरी पर्वत पर चिकित्साशास्त्र सिखानेका विद्यामन्दिर है। यह मन्दिर वज्रपाणिके नाम पर तथा पर्वतके पश्चिममें टरि पर्वत आर्यमञ्जुश्रीके नाम पर उत्सर्ग किया गया है। यहां टन्-ङ यङ्गदुङ्ग राजा हैं। पोताला और लासाके मध्यमें यम्पन नामके एक राजकर्मचारीका वास है। वे टलइलामाकी गतिविधि पर दृष्टि रखनेके लिये चीन-सम्राट् द्वारा नियुक्त किये गये हैं। इस नगरके उत्तरमें सेर येग छे-लिङ्ग नामक आश्रममें अवलोकितेश्वरका ग्यारह मुखकी प्रतिमा विराजमान है। उक्त नदीके किनारे होकर पूर्वकी ओर जानेसे एक जङ्गल पार होना पड़ता है, उसके बाद तम्बेर नामक पहाड़के ऊपर अतिपदेवका तपोवन और गुहा, आचार्य (टफुग) पद्मसम्भवके तथा ८० योगियोंकी गुहाएं देखी जाती हैं। यहां अवलोकितेश्वरमूर्त्ति, कृष्णप्रस्तर-सम्भूत स्वयंभू मणि, नीलप्रस्तरचैत्यके मध्यगत श्वेतप्रस्तरसे स्वयं जात तारामूर्त्ति, जम्भल (कुबेर)-मूर्त्ति, रिगचीम (वेदमती)मूर्त्ति और दुव्लोव विश्वपमूर्त्ति हैं। चार मैत्रेयोंसे येरप चामछेनने इस प्रदेशमें अमृतकी वर्षा की थी। यहां पल हयग्रिव नामक एक अद्वितीय देवताकी प्रतिमा है। उक्त नदीके दाहिने किनारे प्रसिद्ध संस्कारक सरचोङ्ग-द्वारा स्वयं स्थापित गधन नामक आश्रम और उनका समाधिस्थान है। इसके सिवा यहां यमान्तक महाकाल कालरूप नामक देवताकी प्रतिमा और गुह्य-समाजका मण्डल है। गध्नके उत्तर पूर्वमें छगल पर्वतके दूसरे पारमें रटेङ्ग नामका आश्रम है इसके दक्षिणमें चीनका यूनान नामक स्थान पड़ता है। नङ्ग नामक स्थानके पूर्व पर्वतके दूसरे पारमें रत्न लहरी अवस्थित है। इसके पूर्वमें ङ्गु-छु (रौप्य) नदीके बायें किनारे रिभोछे नामक प्रसिद्ध सङ्घाराम है और सङ्घारामके पूर्वमें मरखम् प्रदेश है। यहां राजा स्रोन्-त्सन गम्पोके समयमें निर्मित कई एक मन्दिर हैं। इसके पूर्वमें कोङ्ग चे-व नामक स्थान है, यही चीन और तिब्बतकी सीमा है। कोङ्ग्चे-वके पूर्वमें वाह विभागके मध्य यु-व-

जैन धर्मसिंह नामका सङ्घाराम शिगड् नामक स्थानमें अवस्थित है। यहां धर्म-नि शाक्यमतावलम्बी २८०० संन्यासी रहते हैं। शिगड् नामक स्थानके उत्तरपूर्वमें नामरङ् जिला पड़ता है। यहां नामरङ् नगरके किनारे बोद नामका मन्दिर भारतवर्षीय आचार्य पद्मसम्भव (सिद्धपद्माकर पद्मसम्भव)का बोधासन मन्दिर है। यहांसे शेन नामके प्रदेशमें लोचन शिरोवनको राजधानीका स्थान और गुहा है। आमदो प्रदेशमें थ-सम्-ड नामक स्थानके उत्तर पर्वतके पारमें बोड म जिला है। वर्त्तमान बुद्धके द्वितीय गुरु मार बोड्-खप मोर्च सम्ए नामक मन्दिर स स्थापकको जन्मभूमिके ऊपर कुम्बुम नामका सङ्घाराम स्थापित है। यहां एक अपूर्व चन्दनका पेड़ है। प्रवाद है, कि उक्त सङ्घारामके स्थापकके अध्यक्षतामें उसके हरएक पत्तेमें मैत्रेय गुरुको मूर्ति दीखने लगी थी। इस स्थानके उत्तरपूर्वमें आमदो गोमाङ बोमप या सिर पाङ गोम्प नामका सङ्घाराम अवस्थित है। इस सङ्घारामके प्रधान आचार्य लमचे बोमो नामके अवतार हैं। ये ही इस मूर्तिमन्दिरके प्रणेता हैं। यहां धर्मनी मतावलम्बी २००० संन्यासी वास करते हैं। इसके उत्तरमें आमदो पदे नामक जिलेमें कोमोपोर सङ्घाराम बहुत विख्यात है। चमछिङ् नामके एक मन्दिरमें १ लाख बुद्ध मूर्तियां और मैत्रेय बुद्धकी ८० फुट ऊंची प्रतिमा है। बोम्बाउन सङ्घाराममें यमर नामके तान्त्रिक देवताकी मूर्ति है। यह देवता अपनी ही शक्तिको आलिङ्गन करके विद्यमान है। इसके उत्तरमें को कोनर नामका हृद है जिसके बीचमें मछाटेश नामका एक पर्वत है। यहां के कोनर सोहोम नामकी एक सौ चोंकी छोर जाति ११ मर्दोरंगि चरीन वास करती है। ये बौद्ध धर्मावलम्बी हैं। आजकल तिब्बतके पूर्वांशके लोग अम्बर हो अनपूर्व मत ग्रहण करते हैं। लदाखके समुन नामकके मतावलम्बी हैं। इस देशमें कहीं कहीं चीन-तातार, तुर्किस्तान और मङ्गोलियाके मुसलमान रहते हैं। उन्होंने इस देशके दस्यु-स्वभावके लोगोंको मुसलमान बनाया है।

वर्त्तमान तिब्बत राज्य अक्षा० २७ से ३० उ० और देशा० ७९ से १०१ पूर्वमें अवस्थित है। इसके उत्तरमें गोबी नामकी विस्तृत मरुभूमि है। इसकी ऊंचाई या ऊंची समतल भूमि समुद्रतलसे ४० हजार फुट ऊंची है। पर तिब्बतमें इस तरहकी भूमि १२से १६ हजार फुट ऊंची है। तिब्बतको बोडा भाग 'बड़' या 'मिलङ' देश कहते हैं। तिब्बत शब्द तु-पेत-तेइ (तुबो) शब्दका अपभ्रंश है। तिब्बतके लोग अपने देशको 'पो' या 'पो युल' कहते हैं। पो शब्दसे प्राचीन भारतवासियोंने इसे भोट की आख्या दी है। पो शब्द लिपिमें 'बोद' इस तरह लिखा जाता है। सुतरां उससे भोट शब्द होना असम्भव नहीं है। पो युलका अर्थ 'पो' देश है, 'पो-व'का अर्थ पो देशीय पुरुष तथा 'पो मो'का अर्थ पो देशीय स्त्री होता है। तिब्बती लोग मध्य तिब्बतको दो प्रान्तोंमें बांटते हैं। पूर्व तिब्बत साधारणतः 'उस' या बड़ा तिब्बत नामसे पुकारा जाता है। चीन गवर्मेण्टने तिब्बतको दो भागोंमें विभक्त किया है। पूर्व तिब्बत और पश्चिम-तिब्बत। बड़ प्रदेश (प्रकृत तिब्बत) साधारणतः चार भागोंमें विभक्त है—पूर्वमें चोबेन बड़ (खम) मध्यमें उइ बड़, पश्चिमोत्तरमें ह्व् बड़ (प्रकृत तुति) और पश्चिममें नरि (लदाख)।

लदाख प्रदेशमें लेह प्रधान नगर है और इसकी बसति प्रदेशका प्रधान नगर है। बसतिमें सिन्धु नदीके किनारे बसति और तोहडो सि-ङ्गी-ख् नदीके किनारे गरटक्को, तोमलो, पहुंत अमर नदीके किनारे ग्यान और मचिन नदीके किनारे ग्यांनत्सु चोर्तन तथा कि कई नगर हैं।

तिब्बतवाले हिमालय पर्वतको काङ्रि कहते हैं।

गिरिपथ—भारतवर्षसे सतलज नदीके किनारे हो कर एक रास्ता गया है। यही रास्ता तिब्बतका प्रधान रास्ता माना जाता है और यह मध्य एशिया तक विस्तृत है। नेपाल राज्यके मध्य टेसरो प्रदेशमें बोमनपाट गिरिपथ है। इसके अतिरिक्त गढ़वाल राज्यमें नीति और माना गिरिपथ, कुमायूं प्रदेशमें योहर गिरिपथ, कुमायूं राज्यके सीमान्तमें दर्मा और व्यास गिरिपथ है। इनके सिवा भारतवर्षसे तिब्बतमें प्रवेश करनेके और भी कई एक पथ हैं।

अधिवासी—तिब्बतके लोग मङ्गोलीय जातिके हैं। नेपाल और भूटानके लोग भी इसी जातिके अन्तर

हुए हैं। तिब्बती लोग इन समस्त पार्वतीय प्रदेशोंके मनुष्योंको मोन कहते हैं। लदाकके लोग अपनेको भोटिया बतलाते हैं। गोबि-मरुके दक्षिणमें ग्रोप नामक जाति वास करती है। ये उइगुर जातिसे उत्पन्न हुए हैं। होर या होर-प जाति मङ्गोलियाके इलुथ जातिसे उत्पन्न है। ये उत्तर-तिब्बतमें वास करते हैं। मुसलमान लोग साधारणतः खचो नामसे विख्यात हैं।

वेशभूषा—धनी और सम्भ्रान्त लोग ग्रीष्मकालमें चीना-साटन और शीतकालमें इसी साटनके नीचे पशुके रोएँ लगा कर पहनते हैं। साधारण लोग ग्रीष्ममें रोएँके बुने हुए कपड़े और शीतमें रोएँके चमड़े पहनते हैं। सभी लोग जूता पहनते हैं। साधारण लोग शीतमें प्रायः स्नान नहीं करते तथा कपड़े भी सर्वदा नहीं धोते हैं, इसी कारण उनके शरीरमें थोड़ा जल पड़नेसे ही चमड़ा फट जाता है। शहरके लोग जो प्रायः घरसे बाहर नहीं जाते स्नान नहीं करते हैं और वे स्नान करनेको अपयश समझते हैं। यहां कोई भी साबुनका व्यवहार नहीं करता; एक प्रकारके वृक्षके निर्यासको जलमें डाल कर उसीसे कपड़ा साफ करते हैं।

व्यवसाय—पार्वतीय प्रदेशके सभी मनुष्य व्यवसाय करते हैं। ये मार्चसे नवम्बर मास तक उपत्यकामें रहते हैं। इन लोगोंकी स्त्रियां कुछ कुछ कृषिकार्य करती हैं। उत्पन्न अनाजोंमेंसे कुछ चावल, आटा, रुई और चीनी तैयार कर तिब्बतको ले जाते और वहांसे सुहागा, नमक और पशम लाते हैं। नवम्बरसे मार्च तक वे पर्वतको छोड़ कर अलकनन्दाके किनारे कर्णप्रयाग और नन्दप्रयाग-में आ कर नजीबाबादके वणिकोंके साथ वाणिज्य करते हैं। ये दमरा गौको बोझ ढोनेके काममें नियुक्त करते हैं। यह पशु १५०से २०० पौण्ड अर्थात् २॥ मन बोझ ढो सकती है। तिब्बतमें पर्वत और नदीमें स्वर्णरेणु पाया जाता है, किन्तु सुहागाका आदर वाणिज्य व्यापारमें बहुत अधिक है। बहुत दिन हुए, कि यहां चायका व्यवसाय चल रहा है। लगभग चार सेर चायका एक बण्डल २४) रुपयेमें बिकता है। भेड़ और बकरीके रोएँके लिए इन दो प्रकारके पशुओंका पालन ही यहांके निम्न श्रेणीके अधिवासियोंका मुख्य व्यवसाय है। पशु-पालक उन्हें चरानेके लिए १४।१६ हजार फुट ऊपर तक चले जाते हैं, इससे अधिक ऊपर जानेका साहस नहीं होता।

धर्म—बौद्धधर्म ही समस्त देशका प्रधान धर्म है। छोटे तिब्बतके लोग सिया मुसलमान हैं। दलई-लामा बौद्धधर्मके सर्वप्रधान याजक हैं और वे लासा नगरमें रहते हैं। तशिलामा द्वितीय याजक हैं और वे साम्पु (ब्रह्मपुत्रके किनारे) तशिल्हुनपो नगरमें रहते हैं। साधारण याजक (श्रमण) "गइलङ्ग" नामसे पुकारे जाते हैं। इनके बाद "तोहब" वा "तुप्प" गण धर्मशास्त्र-व्यवसायके शिक्षार्थी हैं। ये ८।१० वर्षकी अवस्थामें किसी धर्म मन्दिरमें शिक्षाके लिये प्रवेश करते हैं। १५ वर्षकी उमरमें इन्हें "तुप्प" उपाधि और २४ वर्षमें "गइलङ्ग" उपाधि मिलती है। बौद्धधर्मके लोग यहां दो सम्प्रदायोंमें विभक्त हैं—"गेलुग्प" और "शम्मर"। प्रथम सम्प्रदायके याजक पीले वस्त्र पहनते हैं और विवाह नहीं करते; किन्तु द्वितीय सम्प्रदायके याजक लाल वस्त्र पहनते और विवाह करते हैं। लामा, गइलङ्ग और तुप्पोंके सिवा इनमें और भी कई एक संन्यासी हैं जो सभी तरहके काम काज करते हैं।

उत्सव—किसी गोम्प वा गुम्फके लामाकी मृत्यु-तिथिके उपलक्ष्यमें प्रति वर्ष उसी गुम्फमें उत्सव और रोशनी की जाती है। तशिल्हुनपो गुम्फमें प्रतिवर्ष तीन बार इसी तरहका उत्सव होता है। जिस दिन यहां पहले पहल बौद्धधर्म प्रचार हुआ था, उसी तिथिके अनुसार प्रतिवर्ष लासा नगरमें 'लासा मिउङ्लुम' नामक उत्सव होता है। इसके सिवा कनसुपेच, जुसुपेच, गेसुपेच, मिसुपेच, गोसुङ्गपेच, गैजिपेच, लम्पेच, चिन्दूपेच दुःपेच, कम्युरपेच और लुक्कोपेच नामके बारह वार्षिक उत्सव हैं। इन लोगोंमें बार्हस्पत्य-संवत्सर प्रचलित है। १०२५ ई०से इन लोगोंका अब्द शुरू हुआ है।

६२८से ६४२ ई०के मध्य शाक्यकालमें, दूसरे अशोककालमें (शाक्यकी मृत्युके ११० वर्ष बाद) और तीसरे कनिष्ककालमें (शाक्यकी मृत्युके ४०० वर्षसे भी अधिक समय बाद) भारतवर्षमें जो बौद्धग्रन्थ संगृहीत हुए थे, तिब्बतवासी बौद्धोंके ग्रन्थ भी उन्हींके मतानुयायी थे।

अन्त्येष्टि-विधि—वे न तो शवदाह करते हैं और न गाड़ते, वरन् उन्हें जङ्गलमें फेंक आते हैं। मोटक मांस खा लेते और हड्डी छोड़ देते हैं। धनीकी देहको तख्ते पर रख कर एक ऊँचे पर्वत पर ले जाते हैं, (श्मशानके चारों ओरके जो सब पर्वत अवस्थित होता है) और वहां मुर्देके शरीरसे वे मांस काट कर अलग करते हैं, बाद हड्डीको चूर चूर कर आपसमें बांटते और उसकी उत्पादन करते हैं। मुर्देको देख कर गिद्ध, मोटक आदि पहुँच जाते और उन्हींको काटा हुआ मांस दे दिया जाता है। प्रधान प्रधान लामाओंको अन्त्येष्टि क्रियाके बाद गोम्पाके मध्य नवीन प्रस्तुत समाधिमन्दिरमें गाड़ते हैं। निम्नपद के लामाओंकी देह जलाई जाती है, किन्तु महापापियोंको तावत-पुत्तलिकामें बन्द कर मन्दिरमें रख छोड़ते हैं। साधारण लोगोंके लिए ज्योतिषियोंकी राय लोकाचारसे किया हुआ 'मृतस्थापनस्थान' है। महोजिवामें कोई कोई मृतदेहको जलाते और कोई पत्थरके ढेरमें गाड़ते तथा कोई निर्जन स्थानमें फेंक आते हैं। वे हठात् मृत व्यक्तिको देखनी रास्तेमें फेंक देते हैं।

धर्मविश्वास और धर्मग्रन्थ—तिब्बतमें बौद्धधर्म प्राचीन वा स्ञर और आधुनिक वा कि दर इन दो नामोंसे विभक्त है। लह-थिद्-रग्पो राजाके समयसे अनुमान २८ पुरुष नमरि-स्रोन्-त्सन राजाके राजत्वकाल तक तिब्बतमें बौद्धधर्मकी बात कोई नहीं जानता था। लह-थो रि नन्-त्सन नामक राजाके राजत्वकालमें राजप्रासाद पर कई भाग पवित्र बौद्ध ग्रन्थ पुस्तक आकाशसे गिरी थीं, इन पुस्तकोंका अर्थ नहीं जाननेके कारण तिब्बती लोगोंने जिसका नाम 'ग-सोवा-ब' रखा। यहींसे बौद्धधर्मका सूत्रपात हुआ। राजाको स्वप्नमें मालूम हो गया, कि उनसे अधस्तन पञ्चम पुरुषमें इस पुस्तकका अर्थ प्रकाशित होगा। इसीके अनुसार बोधिसत्त्व अवलोकितेश्वरके अवतार स्रोन्-त्सन गम्पो राजाके अधिकारके समय उनके मन्त्री थोन-मि सम्भोट भारतवर्षमें उपस्थित हुए और यहाँ ने बौद्धधर्मके नाना शास्त्र अध्ययन किये। वे हिन्दुओंके शास्त्रोंमें भी व्युत्पत्ति लाभ कर तिब्बतको लौट गये। तिब्बतमें आ कर उन्होंने ही तिब्बती 'उचन' नामक अक्षरमालाकी सृष्टि की। मालाकुल नामकी अक्षर और मालाचोन ग्युत् अक्षरों (काश्मीरस्तान वा खास देशमें प्रचलित भाषा और अक्षरमाला)से तोड़ फोड़ कर मालाकुल 'उचन' अक्षर निकाले गये हैं। यही तिब्बत देशकी प्रथम वर्णमाला है। राजा स्रोन-त्सन-गम्पो नेपालकी राजकुमारीसे विवाह कर लाये अक्षोभ्य-बुद्धको (अब ज्यामो बुद्धमूर्ति एक) और चीनको राजकुमारीके साथ विवाह कर शाक्य-मुनिकी प्रतिमा लाये थे। ये जो दोनों तिब्बतकी सबसे पहली और प्राचीन बौद्ध प्रतिमा है। रस-प्रुल्नङ् चिड्-खङ नामक मन्दिर बनवा कर राजाने उन दो मूर्तियोंको स्थापित किया। इसी मन्दिरके नामानुसार उनकी राजधानीका नाम 'लासा' पड़ा है। थोन् मि-सम्भोट और उनके अनुगामिगण राजाके आदेशसे तिब्बतके नवसृष्ट अक्षरोंमें तिब्बतीय भाषामें संस्कृतसे बौद्धग्रन्थ अनुवाद करनेमें नियुक्त हुए। स्वयं गम्पो-के प्रभृति अन्य जो समय पहले अनुवादित हुए थे।

थि स्रोन-दे-त्सन् राजा मञ्जुघोषके अवतार माने जाते थे। उनके राजत्वकालमें महापण्डित शान्तरक्षित पद्मसम्भव और अन्यान्य भारतवर्षीय बौद्ध-पण्डित तिब्बतमें आमन्त्रित हुए। इन लोगोंके साथ सात प्रथम बौद्ध संन्यासी भी आये थे, जिनमें वैरोचन प्रधान थे। इनके शिष्यादानसे देशमें धीरे धीरे बहुतसे लोचव (संस्कृत तथा दो वा तीन भाषाविद् तिब्बतीय लोग) हो गये। लोचवोंमें वुद्-नम्पो, सिगोर वैरोचन, आचार्य रिन्छेन छोग, येसे सम्पो, ल्कोग मक्, प्रभृति प्रधान हैं। इन्होंने सूत्र, तन्त्र और ध्यानमार्गका तिब्बतीय भाषामें अनुवाद किया। ये शान्तरक्षित दुल्व (विनय) शास्त्रसे माध्यमिक शास्त्र तक शिक्षा देते थे। पद्मसम्भव जादू टोनेकी तन्त्रशास्त्र सिखाते थे। इस समय ह्वशङ् महायान नामक एक चीन देशीय पण्डितने तिब्बत आ कर एक नया मत प्रचार किया। वे कहते थे "जब हो वा अमत्य, मन जब तक चाव रहेगा, तब तक उसको मुक्ति नहीं है। सफेद कौड़ीका हो या कालीका यह समान भावसे ढकि रखता है। बिना निरासक्त हुए बार बार जन्मग्रहणसे परित्राण नहीं है। यह मत प्रचारित होने पर शान्तरक्षितका धर्मन्याय

अप्रचलित हो गया और अयन महायानका मत बहुत जल्द फैलने लगा। राजा थि-स्रोन-दे-त्सन आकुल हो कर भारतवर्षसे पण्डित कमलशीलको लाये। कमलशीलसे तर्कमें चीन पण्डित परास्त किये जाने पर उनका मत धीरे धीरे लुप्त होने लगा। कमलशील तिब्बतमें पुनः शिक्षा प्रचार करने लगे। शान्तरक्षित और कमलशील दोनों स्वतन्त्र-माध्यमिक मतावलम्बी थे। इनके बाद और कई एक योगाचार्य पण्डित यहां आये थे, किन्तु वे स्वतन्त्र माध्यमिक मतको विरुद्ध कुछ विशेष नहीं कह सके। राजा रल-पचनके राजत्वकालमें पण्डित जिनमित्रने आ कर अनेक धर्मग्रन्थोंका देशीय भाषामें अनुवाद किया था।

इसके बाद जब लन्‌दर्म नामके राजा सिंहासन पर बैठे, तब उनके यत्नसे कुछ समयके लिये बौद्धधर्म तिब्बतसे जाता रहा। इस समय तीन संन्यासी पल-छेन-छु-वोरिसे भाग कर आमदो देशमें गोन-प-रब-सल नामक लामाके शिष्य हुए। इनके बाद और भी दश मनुष्य लामाका शिष्यत्व ग्रहण कर संन्यासी हो गये। लुम छुल-थिम इनमें प्रधान थे। लनदर्मकी मृत्युके बाद वे लौट कर अपने अपने सङ्घाराममें पहुंचे और पुनः बौद्धधर्मके संस्कारमें प्रवृत्त हुए। उन्होंने श्रमणोंकी संख्याको बढ़ानेके लिये उ और तसन् प्रदेशमें कार्य आरम्भ किया। इस तरह पुनः आमदो प्रदेशके लामा गोन परब सल और लुमे छुल-थिम द्वारा तिब्बतमें बौद्धधर्म प्रतिष्ठित हुआ। लह-लामाके समयमें लोचव वरिण छेन सन्‌पो भारतमें शास्त्रादि सीखनेको आये। उन्होंने लौट कर सूत्र और तन्त्रशास्त्रका अनुवाद किया।

लन्‌दर्म राजाके पूर्ववर्त्ती कालको 'न दर' और परवर्त्ती कालको 'छि-दर' कहते हैं।

रिणछेन सनपोने तान्त्रिक मतावलम्बीके अनेक आचार व्यवहारका भी संस्कार किया। धर्मकी दुहाई देकर बहुतोंने अश्लील व्यवहार अवलम्बन किया था। ये प्रसङ्ग माध्यमिक मतावलम्बी थे।

राजा लह-लामाने भारतवर्षसे धर्मपाल और उनके तीन शिष्योंको बुलाया। पूर्व भारतसे धर्मपाल अपने शिष्य सिद्धिपाल, गुण पाल और प्रज्ञापालके साथ इस देशमें आये। इनसे ग्यल वे-शेरब टोसिस होकर नेपालमें विनयशास्त्र सीखनेके लिये हीनयान मतावलम्बी पण्डित प्रेतकके निकट पहुंचे। इन्होंके शिष्य तोटुल्व (उत्तर देशीय विनयवित्) कह कर प्रसिद्ध है। इसके बाद राजा लहदके समयमें काश्मीरके पण्डित शाक्यश्री बुलाये गये। उनसे कई एक शास्त्र अनुवाद कराया गया। उन्होंने जो आचार-विधि प्रचार की, वह 'पञ्छेन डोम ग्युग' नामसे मशहूर है। आमदो देशीय पञ्छेनने दूसरे प्रकारकी आचार विधि निबद्ध की जो 'लछेन डोम ग्युग' नामसे प्रसिद्ध है। इस तरह विनयशास्त्र ही तिब्बतीय बौद्धधर्मके प्राचीर रूपमें और डोमग्युब वा आचार-विधि बौद्धधर्मके आनुष्ठानिक आवरण-रूपमें प्रतिष्ठित हुई।

कालक्रमसे नाना पण्डितोंके नाना व्याख्याबलसे तिब्बतीय बौद्धधर्म भारतवर्षके १८ प्रकारके वैभाषिक मतकी नाईं नाना साम्प्रदायिक मतोंमें विभक्त हो गया। इन लोगोंमें अनेक मत प्रवर्त्तयिताके नामसे, अनेक मतप्रचारके प्रथम स्थानके नामसे और अनेक मत प्रवर्त्तकके भारतीय गुरुके नामसे प्रसिद्ध हो गये तथा बहुतसे मत अपने अपने क्रिया विशेष नामसे भी अभिहित हुए।

समस्त साम्प्रदायिक मत पुनः पुरातन और संस्कृत (गेलुग्‌प) इन दो भागोंमें विभक्त हो गये हैं। पुरातन सम्प्रदायमें निंम-प, कह्‌दम्प, कह्‌ग्युंप, थि-च्छे-प, जोनंप और निछेप ये सात शाखायें हैं। पुरातन सम्प्रदाय साधारणतः दो भागोंमें विभक्त है- निंम-प और शर्मंप। इस भेदकी कथा नाकि तन्त्रशास्त्रमें लिखी गई है। जो सब ग्रन्थ पण्डित स्मृतिके पहले तिब्बतीय भाषामें अनूदित हैं, वेही निंसप और जो रिन्छेन-ससंपोसे अनूदित हैं, वेही शर्मंप कहलाते हैं। मञ्जुश्रीमूल तन्त्रोंके राजा थि-स्रोनके राजत्व कालमें अनूदित होने पर भी वे शर्मतन्त्रमें गिने जाते हैं। इस तरह औरभी दो एक गोलमाल रहने पर भी रिन्छेन्-ससंपोही शर्म तन्त्रके प्रतिष्ठाता कह कर सर्वत्र स्वीकृत हुए। लोचव रिन्छेन्-ससंपोने प्रज्ञापारमिता, मातृ और पितृ तन्त्रका प्रचार किये। सर्वोपरि योगतन्त्र

इन्होंके द्वारा तिब्बतमें प्रचार किया गया। जो नामक तान्त्रिक पण्डितने नागार्जुनके मतके समाजगुह्य मतका प्रचार किया और सर्व नामक तान्त्रिक पण्डितने चित्र तन्त्रके अनुसार यमान्तक शुद्धमत मायातन्त्रके अनुसार महामाया अनुष्ठान, यमवज्र और सम्बर अनुष्ठान विधि प्रचलित की। ये समस्त बौद्धोंके प्रतिष्ठित तान्त्रिक अनुष्ठान और विधि 'शर्मतन्त्र' वा नवतन्त्र नामसे ख्यात है।

राजा ह्रीङ् त्सन-गम्पो जब धर्मोपदेष्टा थे। इनके बाद जो सब पुस्तक व्यवहार करते थे, वे 'को रिम' नामसे और सब बौद्धविधिशास्त्र व्यवहारमूलक 'लोमरिम' नामसे पुकारे जाते थे। स्रोङ्-त्सन-गम्पोके हो समय पहले 'ओं मणि पद्मे हूं' यह मन्त्र प्रचलित किया तथा प्रणिधिको शिक्षा दी। ऐसो भाग्यवर्षके कुमार और महर ब्राह्मण नामके दो आचार्योंको तथा काश्मीरके पण्डित मोक्षगुप्तको लाये। इनके चौथे पुरुषके बाद राजा ठि-स्रोङ् दहने शान्तरक्षितको लाये। इन्होंने तिब्बत लोगोंके धर्माचरणको अवस्था देख कर उन्हें कुछ कुछ अनुष्ठानादि शिक्षाके लिये यहांके 'दशशील' अर्थात् प्राणी हिंसानिषेध, चौर्यनिषेध व्यभिचारनिषेध मिथ्या कथननिषेध परनिन्दा वा कुवाक्यकथननिषेध, तथा मात्सर्यनिषेध लोभनिषेध, अमङ्गलचिन्तानिषेध अथवा अपवादनिषेध, इन दश विधियोंका प्रचार किया। इसके बाद तन्त्रमत शिक्षाके लिये शान्तरक्षितके अनुरोधसे उद्यानसे पद्मसम्भव आये। इन्होंने यहां कुटागारकी भांति एक विहार स्थापन किया। पद्मसम्भवने राजाको योगविद्या दी। राजा और इन्होंने नाना शिक्षित होकर सिद्धि लाभ कर नाना अलौकिक क्षमतापन्न हुए। बाद धर्मकीर्ति, विमलमित्र बुद्धगुह्य, शान्तिगर्भ प्रभृति पण्डित इस देशमें आये। धर्मकीर्तिने वज्रधातुयोग नामक तान्त्रिक आचार और विमलमित्रने तन्त्रके गुह्य रहस्यको शिक्षा दी। इनके मतसे नौ प्रकारके अनुष्ठान हैं—

(१) न-थो (२) रङ्-ग्यल (३) चङ्-सेम (४) क्रिया (५) उप (६) योग (७) महायोग (८) अनुयोग (९) भाव-दिग्गजे अतियोग।

इनमेंसे पहले तीन निम्नाधिकार-बुद्धके (बुद्ध शाक्यसिंह) उपदिष्ट हैं। इन्होंका नाम साधारण 'यान' है। दूसरे तीन सम्भोगकाय-वज्रसत्त्वके उपदिष्ट हैं जिनका नाम बाह्य वा अध तन्त्रयान रखा गया है। शेष तीन धर्मकाय सामन्तभद्र वा कुन्तु सङ्पोके उपदिष्ट हैं और ये ही अनुत्तर अन्तरयोगतन्त्र नामसे ख्यात हैं। कुन्तु सङ्पो यहांके सर्व प्रधान बुद्ध माने जाते हैं। अवतार संस्कृतमें समन्तभद्र सम्यक्‌सिद्धिमें (लिङ्गुगव) प्रधान बुद्ध हैं। वज्रसत्त्व इनके मतसे दूसरे और शाक्यसिंह बुद्धके अवतार रूप कर तीसरे बुद्ध रूपमें अवतरित होते हैं। बाह्य और अन्तर तन्त्रोंमें बुद्ध शाक्यसिंह एवं विशालयोंके उपदेश है और उन का धर्मतन्त्र तथा बोधतन्त्र बैरोचनसे कथित है। अब जाति का ध्यानी बुद्धोंके नाम— (१) अक्षोभ्य (२) वैरोचन (३) रत्नसम्भव (४) अमिताभ और (५) अमोघसिद्ध। प्रत्येक बुद्ध पञ्चकायके पांच ज्ञानोंका प्रतिमा स्वरूप है। अवतार अनुत्तर वा अन्तर तन्त्रके उपदिष्ट कहा है। नि इनके मतानुसार लामाओं भी ये लिखा है—

(१म) बुद्ध जैसे शाक्यसिंह, कुन्तु सङ्पो, दोर्जे छङ्, अमिताभ। (२य) रिगजिन। जो मन्त्र ज्ञानमें हो महत् गुणसम्पन्न और बोधि अपने पैदा और पद्मसम्भवसे महापण्डित और अन्यमें विद्याधरोंसे (रि गे जन्मदान) से अनुप्राणित होते हैं, जैसे-पद्म सम्भव, ज्योति स्नान पुर और अन्यान्य बोधिसत्त्वगण। (३य) न यम-दम वा अनुगृहीत देवतागण, जो बहुत अपने गुप्त विषयको रक्षा करते हैं। (४र्थ) कहदम्-तुन तन-कनादिक और धर्मानुगामित लामागण। (५म) छे-जो गेर—जो सब लामा गुप्त धर्म पुस्तक पाकर बिना किसीकी सहायताके उन्हें समझ सकते और लिख सकते हैं। (६ष्ठ) चोस-क्योङ् तम्-जो सब लामा अवस्थामें सिद्धि लाभ कर ऐश्वरिक शक्ति पाते हैं। इन सब उच्च योगोंके भेदके अतिरिक्त भागप्राप्त अवस्थाके और तीन भेद हैं—(१) रि गजम् (सिद्धिको दूरस्थ योगी) (२) रि-रीम (सिद्धिको निकटस्थ योगी) और (३) मथ मोन्-दग-जन (अघोर मार्ग योगी) पहले योगोंमें पुनः तीन उपविभाग हैं—ग्यु बुम दुपैटो और तिसकोम।

ग्य प्‌ब योगी—ठ र्प और वाम प्रदेशमें व्याप्त है।

पण्डित विमलमित्र इस श्रेणीके प्रतिष्ठाता हैं। इनकी श्रेणीका मूलशास्त्र दो प्रकारका है—मूलतन्त्र और शास्त्रतन्त्र। भारतीय पण्डित दनरक्षितने काश्मीरके धर्मबोधि और वसुधर नामक दो पण्डितोंको उक्त दो पुस्तकोंकी शिक्षा दी। पीछे इन्होंने ही इसे तिब्बतमें प्रचार किया।

सेम-ड्योग श्रेणी भारतीय पण्डित ज्ञानाचार्यके अवतार वैरोचन लोचवसे स्थापित हुई। एयग्याव (तामन) इस श्रेणीके तान्त्रिक देवता हैं। ये क्रोधप्रदर्शक और दैत्यविनाशक हैं। इन लोगोंके मतानुसार जम्पल-कु, पद्मसुंग, थुग्सदुचि, योतनन और कुर्पचिनले नामक पञ्च देवोपासना मोक्षसाधक है। जम्पल-कु नामक देवताकी पूजा शाक्तिधर्मसे प्रवर्त्तित है। इस देवताको मञ्जुश्रीके प्रतिरूप मानते हैं, किन्तु प्रतिमाकी आकृति भयङ्कर अनेक मस्तकयुक्त और बांहमें बुरी तरहसे अङ्कित स्त्री मूर्त्ति है। थंडग नामक देवोपासना हुङ्कार नामक तान्त्रिक योगीसे प्रतिष्ठित है। न्यग्रोध, कुर्प और दुचि उपासना विमलमित्रसे स्थापित हुई है।

अनुत्तरयानतन्त्र ही अभी नेपालमें प्रचलित है। इसका दार्शनिक भाव बहुत बड़ा है। अभियोग इसका प्रधान अनुष्ठान है। इसके सेमदे, लोङदे और मनङगदे नामक तीन प्रकारके शास्त्रग्रन्थ हैं। सेमदे ग्रन्थ १८ हैं, जिनमेंसे ५ वैरोचनसे और १३ विमलमित्रसे बनाये गये हैं। लोङदे ग्रन्थ ८ हैं, जिनके रचयिता वैरोचन और पमिक्रम गोनचे हैं। नामा धर्मबोधि और धर्मसिंह इस शास्त्रके प्रधान उपदेशक थे। मनङदे शास्त्रके तीन ग्रन्थ सुन्दर आलङ्कारिक भाषामें बने हैं। विमलमित्रने इसे राजा थिस्रोनको सिखाया। बुद्ध वज्रधरसे पहले पहल भारतवर्षके पण्डित आनन्दगर्भने इसे पाया था। पीछे उन्होंने यह अपने शिष्य श्रीसिंहको दिया। उन्हींसे पद्मसम्भवने इसे पाया।

इतिहास—शाक्यसिंहके पहले कुरु पाण्डवके युद्ध कालमें रूपति नामक एक क्षत्रिय राजा युद्धमें भय खाकर तुषाराहत तिब्बतको भाग गये। वे कौरवके पक्षके सेनापति थे। दुर्योधनके भयसे वा पाण्डवके पश्चादनुसरणके भयसे उन्होंने स्त्रीके भेषमें एक हजार अनुचरोंके साथ पुंग्रल देशमें आश्रय लिया। यहांके आदिम अधिवासियोंने उनको राजा मान लिया। वे धर्मसम्मत और शान्तप्रिय व्यवहारसे उन लोगोंके यथायोग्य हो कर राज्य करने लगे। इसके बाद ईसा जन्मसे पांच सौ वर्ष पहले तक तिब्बतका और कोई इतिहास जाना नहीं जाता और न तो किसी प्रकारका सुना जाता है। ई० सन्‌से पूर्व थोड़ी शताब्दीका विवरण पढ़नेसे मालूम होता है, कि रूपति वंश ध्वंस होने पर तिब्बत कई एक छोटे छोटे भागोंमें विभक्त हो गया।

भोट-पण्डित बुमानकी गणनाके अनुसार बुद्ध निर्वाणके ४१० वर्ष बाद अर्थात् ११६ ई०की पहले भारतवर्षसे तिब्बतके प्रथम राजा गञ्-थि तनम्पोने जन्म लिया। उनका भारतीय नाम क्या था, वह तिब्बती इतिहासमें नहीं लिखा है। उनके पिता प्रसेनजित्‌ कोशल देशके राजा थे। प्रसेनजित्‌के पञ्चम पुत्रने एक अद्भुत आकारमें जन्म ग्रहण किया। उसकी आंखें उसका माथ यव, भौंह लाल नीलवर्ण, दांत धवल समान और उंगलियां हंसके पावोंकी नाईं चमड़ेसे संयुक्त थीं। जन्मोपरान्त शिशुके सभी दांतोंका पूर्ण विकास हो गया था, और वे शंखके जैसा सफेद दीख पड़ते थे। प्रसेनजित्‌ने इस पुत्रको कुलक्षण समझ कर उसे तांबेके बरतनमें रख गङ्गामें बहा दिया। एक कृषकने उसे निकाल कर प्रतिपालन किया। वह कृषक भोलाभाला मनुष्य था, अतः उसने यह पुत्र उसके औरससे उत्पन्न हुआ है ऐसा कभी भी प्रचार न किया, वरन्‌ वह उसे राजकुमार कहा करता था। जब लड़का बड़ा हुआ तब उसने अपना जन्मवृत्तान्त सुन मन ही मन बहुत क्षुब्ध हो प्रतिज्ञा की, "राजपुत्र होकर मैंने जन्म लिया है, किन्तु अदृष्ट दोषसे कृषकके घरमें कृषक-वृत्तिसे समय व्यतीत करता हूं, इससे मरना ही अच्छा है। यदि राजा हो सकूं तभी मैं अपना जीवन रख सकता हूं, अन्यथा इस कष्टदायक जीवनको किसी हालतसे रख नहीं सकता।" कुछ दिन बाद वह बालक प्रतिपालकके घर और जन्मभूमिको छोड़ कर चुपके जङ्गलमें भाग गया। जङ्गली फलसे जीवन धारण कर वह लड़का कुछ दिन पीछे हिमालय पर्वतको पार कर उससे और भी उत्तरकी ओर आने

गया। विरतुमाराहत पर्वतमालाको पार करनेमें उस पर होने लगा था, किन्तु उसके लिये साधना और सीमा दोनों बराबर था, इस कारण वह क्यों चलोगाव होता? क्रमशः आर्य अवलोकितेश्वरकी कृपासे बालक तिब्बतके सुगारमण्डित कहरि पर्वत पर पहुंचा था। इस बालकको शोभासे मुग्ध होकर वह क्रमशः पार करता हुआ चारों ओर चार पर्वशिखिर समन्वय नामक शालभूमिमें आ पहुंचा। वहांके लोगोंने उसके अलिम्मा लित आकारको देखकर उससे परिचय पूछा। बालक उस देशको भाषा तो नहीं जानता था, केवल इशारेसे उसने सूचित किया कि वह एक राजपुत्र है और कहरि पर्वतकी ओरसे आ रहा है। तिब्बतवासियोंने समझा कि यह ऊपरसे आ रहा है, अत यह बालक देवताके सिवा और दूसरा कोई नहीं हो सकता। उन्होंने उन्हें यथावत् कर उस देशका राजा होनेके लिये उनसे अनुरोध किया। इस पर वह बालक भी राजी हो गया। बाद वे उन्हें एक काठके आसन पर बिठा अपने कन्धे पर चढ़ाकर देशको ले गये। आसन पर बैठ कर मनुष्यके कन्धे पर आनेके कारण बालकका नाम नखि सम्पो (नख-पीठ। कि या थि, काठका आसन त्सम्पो=राजा) रखा गया। अभी वहां यामा नगरी अवस्थित है उसी वंश नर्यो सुपतिने यम्ब-लगर नामकी एक बड़ी अट्टालिका निर्माण की।

उस नवीन भूपतिने नम मूक-मुग नामक एक तिब्बतीय रमणीके साथ विवाह किया। असाध्य प्रशंसा और अपक्षपातसे प्रजाको पालन करते हुए अन्तमें वे पर लोकको सिधारे। पीछे इनके पुत्र मूगठि-त्सम्पो राजा हुए। इसी राजासे लिए सात राजा "नमखि" नामसे इतिहासमें अभिहित हुए हैं। आठवें राजा दि-गुम-त्सम्पोने लुनसनगिर अम नामको कन्याको व्याहा। इसके गर्भसे राजाके तीन पुत्र हुए। लोनसम्बो लोगमसी तथा अभिमानके वशमें आ कर विद्रोह खड़ा किया। घमसान लड़ाई हुई राजा मारे गये। इसी युद्धमें तिब्बतमें पहले पहल युद्ध (बोध-धर्म) व्यवहृत हुआ था। इस प्रदेशके मारपाम नामक स्थानमें एक बालक पहले बार इस देशमें लाया गया था। उसको चढ़ाईमें जब प्राण कर

राजा बन बैठे और उन्होंने एक विधवा रानीसे विवाह कर लिया। तीनों राजकुमारोंने कोङपो नामक स्थानमें भाग कर प्राण रक्षा की। नई रानी और राजकुमारों की माताने बोन धर्मके यड़ लह त्सम्पो नामक उपदेवताको प्रसन्न कर एक पुत्र प्राप्त किया। वह पुत्र कालक्रमसे सम्पोके पद पर अभिषिक्त हुए। बाद उन्होंने दुष्ट मन्त्रि राजको निहत कर उन भगे हुए तीनों राजकुमारोंको अपने देशमें बुलवा न भाया। उनमेंसे बड़े आ-खि नमम्पो राजा हुए। इन्होंने रोम-व नामको एक कन्यासे शादी की। इस वंशके राजा पहलेसे २० पुरुष तक "बोन" नामक धर्मावलम्बी थे। इस धर्ममें अनेक प्रकारके उपदेवताओंकी उपासना है। पहलेसे आठवें राजा दि-गुम त्सम्पोके राजत्व-कालमें इस धर्मकी विशेष उन्नति हुई। इन राजाओंके नाम रखते समय उनके पितामाताके नाम का कुछ कुछ अंश लिया जाता था। दि गुम-त्सम्पो और उनके परवर्ती एक राजा तिब्बतमें पीछे 'टि' नामसे पुकारे जाते थे। राजाकी मृत्युके समय रानी अपनी अपने कामोंको छोड़ कर स्वर्गको चली जाती थी उनका एक भी चिह्न पृथ्वी पर नहीं रह जाता था। नम्खि त्सम्पोके परवर्ती छह राजा 'लेगस' (सोमवार) नामसे इतिहासमें प्रसिद्ध हुए। इनके बाद ८ राजाओंके नामके पहले "दे" उपसर्ग लगाया गया जो संस्कृत 'देव' शब्दार्थप्रकाशक है। उनके बाद तो-रि-की नसन नामके राजा हुए। इनके पांच राजा त्सन (राजा) नामसे विख्यात हुए। यद्यपि इस समय भी बोनधर्मका प्रसुल प्रचार था, तो भी बौद्ध धर्मका बिन्दुमात्र तिब्बतमें प्रचारित न हुआ।

३३१ ई०में तिब्बतके सुविख्यात राजा लह थो थो रि गनत्समनने जन्म ग्रहण किया। ये बोन धर्मके प्रधान देवता कुन्तु त्सम्पोके अवतार माने जाते थे। ये इकोस वर्षकी अवस्थामें राजसिंहासन पर बैठे। राजा लहथो थोरिके ८० वर्षकी उमरमें ४११ ई०को अम्बुका प्रासादके ऊपर आकाशसे एक सोनेका सन्दूक गिरा। उसमें 'दोर्जे समतोग' (सूत्रान्तपिटक) 'चिन्ति-कोर्तन' (सोनेकी बनी हुई एक छोटी चैत्य) 'पनकोन्ग छ मेन पो' (शास्त्रीय मात्र) और 'चिन्तामणि मयो (चिन्तामणि

और पात्र) भरे थे। इन्होंने ही इस तरह तिब्बतके राजाओंमें सबसे पहले देव प्रसाद प्राप्त किया तथा तिब्बती लोगोंसे देवसम्मान पाया है। एक समय राजा मन्त्रीके साथ इन द्रव्योंकी आलोचना कर रहे थे, इतनेमें आकाशसे देववाणी हुई, कि उनसे निम्न चौथे पुरुषके बाद पाँचवें राजाके समय इन समस्त विषयोंका अर्थ प्रकाशित होगा। इस पर राजाने यत्नपूर्वक उन्हें सं-बन-पो (अपरिज्ञात द्रव्य) नाम देकर राज-प्रासादमें रख दिया और उसी दिनसे वे प्रतिदिन उनकी पूजा करने लगे। ५६१ ई०को १२० वर्षकी अवस्थामें उनकी मृत्यु हुई। इनके प्रपौत्र जन्मके ही अंधे थे, किन्तु कोई उत्तराधिकारी न रहनेके कारण अनेक तर्कवितर्कके बाद अन्ध राजकुमार ही राजसिंहासन पर बैठे। इनके अभिषेकके समय उन समस्त देवदत्त द्रव्योंकी पूजा करनेसे उनका अन्धत्व दूर हो गया। आंखके खुलते समय सबसे पहले इन्हें मालूम पड़ा, कि लग्नि पर्वत पर एक भेंड़ भागा जा रहा है। इसी कारण इनका नाम तग्नि नन सिग रखा गया। इनके बाद इनके पुत्र नम-रि-स्त्रोन तसन राजा हुए। उनके राजत्व कालमें तिब्बती लोगोंने चीनसे चिकित्साशास्त्र और अङ्कशास्त्र पहले पहल सीखा। इस समय पशुपालन और गोधनका इतना आदर था और अधिकता भी इतनी थी, कि राजाने अपना राजप्रासाद बनाते समय गाय और चमरीके दूधसे सभी ममाला भिंगो दिया था। इन्होंने (ल्हासाके निकटवर्ती २० मील विस्तृत) व्रगसुम-दिनम नामक झदके किनारे एक सुन्दर द्रुतगामी और बलशाली घोड़ा पाया। यह घोड़ा उनका बहुत प्यारा था और इसका नाम दोवंचं रखा गया। एक दिन इस घोड़े पर सवार हो एक दुर्दान्त चमरीका शिकार कर लौटते समय राजाने विख्यात च्यम गि छ नामक लवण क्षेत्रका सबसे पहले आविष्कार किया। ६३० ई०में इनकी मृत्यु होने पर इनका पुत्र सुविख्यात गम्रुतकर्मा स्रोन-तुसन-गम्पो राजा हुए। इनके समय तिब्बतमें एक नया युग आविर्भूत हुआ।

स्रोन-तुसन-गम्पोने ६००से ६१७ ई०के मध्य जन्म ग्रहण किया था। इनके सिर पर एक उभड़ा हुआ छोटा चिह्न था, जिसे लोग अमिताभ बुद्धकी मूर्त्तिका चिह्न अनुमान करते थे। यह चिह्न बहुत साफ साफ दीखता तथा उससे ज्योति भी निकलती थी, इसी कारण राजा उसे एक लाल साटनकी टोपीसे सदा ढके रहते थे। तेरह वर्षकी अवस्थामें राजसिंहासन पर बैठे। इनके राजत्वकालमें अनेक पर्वतगुहा और पर्वतके नाना स्थानोंमें अवलोकितेश्वर, तारा, हयग्रीव प्रभृति देवताओंकी स्वयम्भू मूर्त्तियां आविष्कृत हुईं। इनके अलावा बहुतसे उत्कीर्ण शिलालिपि भी पाये गये, जिनमें 'ओं मणिपद्मे हुं' यह षडक्षर मन्त्र भी खोदा हुआ था। राजा उक्त देवमूर्त्तियोंका दर्शन कर अपने हाथसे पूजन करते थे। अभी जिस जगह पोताला प्रासाद अवस्थित है, उस जगह राजाने लो-तुनका एक प्रासाद निर्माण किया। ये बहुतसे मन्त्रतन्त्र थे और विद्याबलसे इन्होंने अनेक भूत-प्रेतोंको वश कर उनका एक मन्त्रतन्त्र बना लिया था। ज्ञान और बलवीर्यसे राजाने अधिक प्रसिद्धि पाई थी। प्रतिवेशी राजगण इन्हें बहुमूल्य उपहार भेजते थे। राजा भी उन लोगोंकी सभामें दूत प्रेरण करते। इनके राज्यकालके पहले भी तिब्बतमें कोई लिखन-प्रणाली-सम्बलित भाषा नहीं थी, किन्तु राजा विदेशी राजाओंको उन्हींके देशोंकी भाषामें पत्रादि लिख कर मित्रता रखते थे। संस्कृत, चीन और नेवारी (नेपालकी) भाषामें उनका पूरा प्रवेश था। राजाने आस पासके कई एक प्रदेशोंको लड़ाईमें जीत कर अपने राज्यमें मिला लिया। अन्तमें वे लड़ाईकी ओरसे ध्यान हटाकर धर्मोन्नतिकी ओर विशेष ध्यान रखने लगे।

राजा स्वयं बौद्धप्रिय और भक्त थे। वे स्वराज्यमें बौद्धधर्म प्रचारके लिये विशेष यत्नवान् हुए। उन्होंने देखा, कि लेखनप्रणालीविशिष्ट भाषाके बिना धर्म प्रचारकी सुविधा नहीं हो सकती तथा देश शासनके लिये राजविधि भी प्रचारित नहीं हो सकती है। यह स्थिर कर उन्होंने अनुके पुत्र थोन्-मि-सम्भोटको १६ सहचरोंके साथ भारतवर्षमें संस्कृत भाषा और बौद्धधर्म-शास्त्र सीखनेके लिए भेजा। राजाने उन लोगोंको संस्कृत अक्षरके आधार पर तिब्बतीय भाषाके उच्चारणके अनुसार उस भाषाके लिए उपयुक्त वर्ण निकालनेकी चेष्टा करनेको कहा।

सम्भोट आर्यावर्त्तमें पहुंच कर पण्डितोंको बहुत सुवर्ण आदि उपहार दे लिविकर नामक बौद्ध पण्डितोंसे संस्कृत भाषा सीखने लगे। सम्भोटने बहुत थोड़े ही दिनोंमें संस्कृत भाषा और ६४ प्रकारकी लिपिप्रणाली तथा पण्डित देवसिंहके निकट व्याकरण, शास्त्र और मारसत व्याख्या लब्ध बोध किया। इसके बाद उन्होंने तथा सहचरों ने २४ बौद्ध प्रवचन और रत्नमेघ ग्रन्थ अध्ययन किये। देशमें लौट कर उन्होंने लिपि और व्याकरण सम्बन्धी ग्रन्थ प्रणयन किया। बाद तिब्बतीय भाषा लिखनेके लिये सम्भोटने "ड चन्" (मात्राविशिष्ट) वर्णमालाकी सृष्टि की और उसी भाषामें प्रथम व्याकरण शास्त्र 'सुमचु दग सिग' प्रणयन किया। राजाके हुक्मसे सम्भवतः सभी मनुष्य लिखना पढ़ना सीखने लगे और क्रमशः उन सबके अक्षरोंकी सहायतासे धर्मग्रन्थादि संस्कृतसे तिब्बती भाषा में अनूदित होने लगे। राजाने प्रजाको धर्मनिष्ठ करनेके लिए निम्नलिखित १६ आदेश प्रचार कर उन्हीं उसी नियमके अनुसार चलनेकी आज्ञा दिया।

(१) कोन-चोगमें (ईश्वरमें) विश्वास करो।
(२) धर्मानुष्ठान और धर्मशास्त्रका पाठ करो।
(३) पितामाताकी सेवा करो।
(४) ज्ञानीकी सेवा करो और विद्वान्‌को उच्चासन दो।
(५) उच्च व श्रेष्ठ तथा वयोवृद्धका सम्मान करो।
(६) विनय और न्यायी बनो।
(७) बन्धुबान्धवको अच्छे कामोंमें यत्न करो।
(८) देशका पदानुसरण करो।
(९) उपकारीका प्रत्युपकार और उनके प्रति कृतज्ञ हो।
(१०) मद्यपान और मोतिरस कर हिंसा द्वेष छोड़ो।
(११) धार्मिक सज्जन बन्धु बान्धवों की सेवा शुश्रूषा करो।
(१२) ईर्ष्याके बिना साधन और दयाके कामोंमें तत्पर हो।
(१३) सबसे तौलका (बटखरा) व्यवहार करो।
(१४) स्त्रियोंकी बात मत सुनो।
(१५) नम्रता और सभ्यताका व्यवहार सीखो।
(१६) धैर्य और नम्रतासे विपद् और दैन्यका सहन करो।

इन समस्त व्यवहारोंसे प्रजाका सुख स्वच्छन्द और योग्यता दिनों दिन बढ़ने लगी।

कहा जाता है कि राजा स्रोन त्सन-गम्पोने भारत महासागरके किनारेसे अवलोकितेश्वरके नासिकार चन्दनकी स्वयम्भू प्रतिमा प्राप्त की थी।

राजा नेपालाधिपतिने ज्योतिर्मयीकी कन्याके विवाह किया। यौतुकमें राजाको भारत अमूल्य द्रव्य मिले थे, जिनमेंसे अक्षोभ्य बुद्ध और मैत्रेयकी प्रतिमा, तारा देवीकी चन्दन प्रतिमा तथा रत्नदेव नामक वैदुर्य मणि प्रधान थे।

बाद भोटपतिने चीनराज सैङ्-त्सन-चोकी कन्या कुङ्पिन कुमारीको अपने प्रधान मन्त्री गरके कौशलसे मांग कर उससे विवाह किया। चीन राजकुमारी अपने साथ बुद्धमूर्ति, एक बौद्ध धर्मग्रन्थ तथा चिकित्सा और ज्योतिषशास्त्र लाई थी।

भोटके अधिवासी राजा स्रोन-त्सन गम्पोको चेन रेस सिगपा (अवलोकितेश्वरका) अवतार और उपरोक्त दो रानियोंको तारादेवीकी मानते थे। यथार्थमें इन्हीं लोगोंके यत्नसे तिब्बतमें बौद्धधर्म पक्की भित्तिपर पहुंच गया था। राजाने १०८ बड़े बड़े मन्दिरोंका निर्माण कर उनमें बुद्धमूर्ति प्रतिष्ठित की थीं। ३१ वर्षकी उम्रमें उन्होंने मञ्जुघोषका भजन पेकिङके उत्तरमें १०८ मठ बनानेके लिये अपने भक्तोंको भेजा था।

६९८ ई०में स्रोन त्सनने तिब्बतकी विख्यात ल्हासा नगरी स्थापन की। अनेक पवित्र बौद्ध ग्रन्थोंका अनुवाद करानेके लिये उन्होंने भारतसे कुमार और शङ्कर पण्डित को, नेपालसे पण्डित शीलमञ्जु को और चीनसे ह्-शङ महा-देव नामक प्रसिद्ध आचार्यको बुलवाया था।

चीन-राजकुमारी और नेपाल राजकुमारीसे कोई सन्तान न हुई, इसलिये स्रोन-त्सनने थी-चङ और थि-चन् नामकी दो राजकुमारियोंका पाणिग्रहण किया। पहलेके गर्भसे मन-स्रोन-मन-त्सन और दूसरेसे गुङ-गुन-त्सन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। गुङ-गुन जब १३ वर्षका हुआ तब स्रोन त्सनने उसे राजा बनाया और आपने वानप्रस्थ अवलम्बन किया। किन्तु दुःखका विषय [illegible] कि १८ वर्षकी अवस्थामें राजकुमारकी मृत्यु

मृत्यु हो गई। अतः स्त्रोन तुमन पुनः राजदण्ड धारण करनेको बाध्य हुए। शेषावस्थामें उन्होंने अपना समय केवल शास्त्रचर्चा, धर्मचिन्ता और मन्दिर प्रतिष्ठामें बिताया। बुढ़ापेमें यथासमय वे अमिताभके धर्मकार्यमें संयुक्त हुए। उनकी दो प्रधान स्त्रियां भी तुषित लोकमें जा कर उनके साथ मिलीं। इस लोकको छोड़नेके पहले राजा हयग्रीव और यमपूजाविधि प्रचार कर आये।

उनके बाद मन-स्त्रोन् मन तुमन राजा हुए। इधर चीनराजने देवावतार भोटराजका मृत्यु सम्वाद पाकर तिब्बत पर अधिकार करनेके लिये बहुतसी सेनाएँ भेजीं। लासाके निकट घमसान युद्ध हुआ। युद्धमें चीन-सैन्य परास्त हुई। तिब्बतीय सेनाने भी चीन राज्य पर आक्रमण करनेके लिये शत्रुओंका पीछा किया था। किन्तु इस बार वे चीनासे सम्पूर्ण रूपसे पराजित हुए। इस युद्धमें वृद्ध सेनापति गरने प्राणत्याग किया।

चीनाने आकर लासा नगरी पर आक्रमण किया। तिब्बती लोगोंने बहुत कष्टसे चीन राज-नन्दिनीसे लाई हुई सोनेकी शाक्यमूर्त्तिको छिपा रखा।

चीनाने राजभवन जला डाला। अक्षोभ्य मूर्त्ति भी वे अपने साथ लेते आते थे, किन्तु बहुत भारी होनेके कारण एक दिनके पथ पर ला उसे वहीं छोड़ कर चले गये।

२७ वर्षकी अवस्थामें मनस्त्रोनकी मृत्यु हुई। पीछे उनका छोटा लड़का दु-स्त्रोन्-मनपो राज्यसिंहासन पर बैठा। दु-स्रोनके राज्य कालमें ७ महावीर तिब्बतमें आविर्भूत हुए थे।

दु-स्त्रोनके पीछे उनके पुत्र मेग-अगत्सोम राजा हुए। उन्होंने अपने प्रपितामह स्त्रोनसनका लिखा हुआ एक ताम्रानुशासन पाया था। उसके पढ़नेसे वे जान गये, कि उन्हींके समयमें तिब्बतमें बौद्धधर्म समधिक प्रबल होगा। अभी उस अनुशासन-वाक्यको सुसिद्ध करनेके लिये उन्होंने कैलासवासी भारतीय पण्डित बुद्धगुह्य और बुद्धशान्तिको बुला भेजा। दोनों पण्डितोंने आनेसे अस्वीकार किया, किन्तु जो दूत उन्हें बुलाने गये थे वे पांच भाग महायान-सूत्रान्त कण्ठस्थ कर आये। पीछे उन्होंने ही उसे तिब्बती भाषामें प्रचार किया। राजाने पांच बड़े बड़े मन्दिर निर्माण कर उनके प्रत्येकमें एक भाग करके महायानसूत्रान्त रखा। इसके सिवा उन्हींके यत्नसे सेरढ़ोड तम्प प्रभृति कई एक शास्त्र अनुवादित हुए। उस समय भी तिब्बतमें कोई संन्यासाश्रम ग्रहण नहीं करता था। वे भिक्षुसङ्घ स्थापन करनेके लिये नेपाल (लियुल) से बहुतसे बौद्धसंन्यासीको लाये थे। उन्होंने एक अत्यन्त वृहत् वैदुर्य्यमणिको पाया था। प्रवाद है, कि उस तरहका बड़ा वैदुर्य्य और किसीके पास न था। उन्होंने जन-राजकुमारी चि-तसुकके साथ विवाह किया। उस रानीसे उनके जोनतसा लापोन नामक एक अत्यन्त रूपवान् पुत्र उत्पन्न हुआ। राजाने उस पुत्रके विवाहके लिये अपने राज्यके चारों तरफ एक रूपवती कन्या ढूंढनेको आदमी भेजा, किन्तु उपयुक्त कन्या कहीं भी न मिली। अन्तमें चीनसम्राट् वैकुनके निकट दूत भेजा गया। उनकी कन्या काइम ग्न सङ्गामान्या सुन्दरी थी। राजकुमारीने भी तिब्बतके राजकुमारके अनुपमरूपकी कथा सुन उनसे विवाह करनेकी इच्छा प्रगट की। बाद वह पिताकी आज्ञा ले तिब्बतको चली। किन्तु तिब्बत पहुंचनेके पहले ही तिब्बतके किसी सामन्तने विश्वासघातकतासे राजकुमारको मार डाला था। राजा अगतसोमने शोकसे यह निदारुण सम्वाद चीन राजकुमारीको कहला भेजा। यह सुन कर राजकुमारीको शोक-सीमा न रही और वह फिर चीन देशको न लौटी। तिब्बतका तुषार राज्य और शाक्यमूर्त्ति देखनेके लिये वह यहीं ठहर गई। भोटराजने उस कन्याका खूब सत्कार किया। इसी राजकुमारीके यत्नसे ही तीन वर्षके बाद पुनः अक्षोभ्य मूर्त्ति निकाली गई।

उस चीनकुमारीके रूप पर भोटराज भी मोहित हो गये। उन्होंने उससे विवाह करनेकी इच्छा प्रगट की। पहले तो चीन राजकुमारी सहमत न हुई, लेकिन पीछे न मालूम क्या सोच कर राजासे विवाह करनेको राजी हो गई। इस तरह पुत्रकी जगह पिताने चीनराजकुमारीका पाणि ग्रहण किया।

नई रानीसे थि-स्त्रोन दे-तसन नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। सभी इस राजकुमारको मञ्जुश्रीका अवतार मानने लगे। तिब्बतके इतिहासमें इन्होंने विशेष

प्रतिष्ठा प्राप्त की है। इनका जन्म ७१८ ई०में हुआ और ७४१ ई०में ये राज-सिंहासन पर बैठे। यह एक विज्ञ एवं पण्डित थे। राजपुस्तकालयमें जितने ग्रन्थ थे उन सबकी आलोचना करके ये विशुद्ध धर्ममतके प्रचारमें लग गये थे। इस समय राजदरबारमें दो दलके लोग थे, एक बौद्ध दल और दूसरा बौद्ध विद्वेषी दल। बौद्ध विद्वेषी मन्त्रिगण सर्वदा राजाको कहा करते थे कि बौद्धधर्मसे राज्यमें घोर अनिष्ट हो रहा है, इस कारण राज्यकी रक्षाके लिये राज्यसे सभी बौद्धोंको भगा देना उचित है। प्रधान मन्त्री मपन भी इसी दलमें शामिल थे। किन्तु बौद्धधर्म पर राजाका प्रगाढ़ अनुराग था। बौद्ध सम्प्रदायके प्रधान मनुष्योंने दैवज्ञ और ज्योतिषियोंको रिशवत दे कर अपने वशमें कर लिया। वह ये कहने लगे कि राजाका शीघ्र ही अनिष्ट होनेकी सम्भावना है। यदि सबसे प्रधान दो राजकर्मचारी अन्धकार कन्दरामें तीन मास वास करें तो राजाकी जीवन रक्षा हो सकती है। राजाने सभामें सभी कर्मचारियोंको यह बात कह सुनाई और यह भी कहा, कि जो उनके लिये आत्मोत्सर्ग करेंगे, उन्हें यथेष्ट उपहार दिये जायेंगे। प्रधान मन्त्री मपन राजाके इस प्रस्ताव पर सहमत हो गये। बौद्ध मन्त्री भीने उनका अनुसरण किया। दोनोंने अन्धकार कन्दरामें प्रवेश किया। तीन मनुष्योंकी कब्रके समान वह कन्दरा गहरी थी। दो पहर रातको गोके बन्धुबान्धवोंने पूर्व सङ्केतके अनुसार एक पेड़में रस्सी बांध कर भीको बाहर निकाल लिया और एक बड़े पत्थरसे उस गहरी गुफाका मुंह बन्द कर दिया। इस तरह प्रधान मन्त्री मपनकी प्राणवायु वहीं गह्वरके भीतर उड़ गई। राजाके वयःप्राप्त होने पर ये उपाध्याय शान्तरक्षित और पण्डित पद्मसम्भवको बुला तिब्बतमें बौद्ध धर्मका प्रचार करने लगे। राजाकी सहायतासे पद्मसम्भवने वहां सम्ये नामक एक बड़ा मठ निर्माण किया। इन्हीं राजाके समय प्रवल महायान चीनसे आ कर बौद्ध मतका प्रचार कर रहे थे और कितने मनुष्योंको अपने मतमें लाने लगे। भारतसे कमल शीलने आ कर उन्हें शास्त्रीय तर्कमें पराजित किया। तब राजा भी चीन धर्मावलम्बियों पर विशेष रूपसे शासन करने लगे। उन्होंने अपनी शासन विधिको एक वृहत् पत्थरमें लिखा कर राज्य भरमें प्रचार कर दिया। प्रजा साधारणके मङ्गलके लिये दोकानों और दण्ड विधि प्रचलित हुई। ३६ वर्ष राज्य करनेके बाद राजा इस लोकसे चल बसे। उनकी बड़ी रानी त्से-पों सालके तीन पुत्र थे, जिनमेंसे बड़े मुनि-त्सन्-पो सिंहासन पर आरूढ़ हुए। ये नाबालिग अवस्थामें राजा हुए थे इसलिये उनके धार्मिक मन्त्रिगण उनकी तरफसे राज्य शासन करते रहे। राजा मुनि-त्सन्-पोने अपने प्रतापसे राज्यके धनी दरिद्र उच्च नीच सभी मनुष्योंको एकसा बना दिया। धनी दरिद्रोंका अभाव दूर करनेके लिये अपनी सम्पत्तिमेंसे कुछ कुछ उन्हें बांटने लगे। सचमुच जो किसी राजाके समयमें न हुआ था वह इनके राजत्वकालमें इन्हींके यत्नसे हो सका। किन्तु राजाने देखा कि उनकी इतनी चेष्टा व्यर्थ जा रही है। दरिद्रोंकी दरिद्रता घटती नहीं है और धनी मनुष्योंके धन वितरण करने पर भी वे ज्योंके त्यों धनशाली बने हुए हैं। इस पर राजा बहुत चिन्तित हुए। पण्डित और लोचवने राजाको समझाया कि मानव अपने पूर्व जन्मकी सुकृति और दुष्कृतिके अनुसार इस जन्म सुख दुःख भुगते और ऊंच नीच हो कर जन्मग्रहण करते हैं। जो कुछ हो राजाके साधु उद्देश्यके लिये गरीब प्रजा तक भी उनका नाम लेने लगी। किन्तु इस तरहके राजा बहुत काल तक राजत्व कर न सके। एक वर्ष भी समाप्त नहीं होने पाया था कि, उनकी माताने छोटे पुत्रको राजा बनानेके लिये विष खिला कर उनका प्राण नाश किया। छोटे भाई मुतिग् त्सन्-पोके राजा होने पर राजमाताकी इच्छा पूरी हुई। मुतिगने पद्मसम्भवसे शिक्षा दीक्षा लाभ की थी। आठ या नौ वर्षकी अवस्थामें ये राज सिंहासन पर बैठे। उनके समयमें राज्यकी यथेष्ट श्रीवृद्धि हुई थी और तिब्बती भाषामें बहुतसे संस्कृत बौद्ध ग्रन्थ अनुवादित हुए थे। वृद्धावस्थामें पांच पुत्र छोड़ कर ये परलोकको सिधारे। उनके प्रथम दो पुत्रोंने बहुत थोड़े समय तक राज्यशासन किया था। बौद्ध मन्त्रियोंके षड़यन्त्रसे अल्प दिनोंमें ही उनकी मृत्यु हुई। कनिष्ठ रल-पचनने मन्त्रियोंके निर्वाचनसे राजपद प्राप्त किया।

८४५ से ८६० ई०के मध्य रल-पचनका जन्म हुआ। इनके समयमें तिब्बती भाषाका एक युगान्तर उपस्थित हुआ। इन्होंने मगध, उज्जयिनी, नेपाल, चीन प्रभृति नाना स्थानोंमें लोगोंको भेज कर असंख्य बौद्धधर्म ग्रन्थ संग्रह किये। तिब्बती भाषामें उन समस्त पुस्तकोंको अनुवाद कर प्रकाश करनेके लिये उन्होंने भारतवर्षसे तत्कालीन विख्यात बौद्ध पण्डित जिनमित्र, सुरेन्द्रबोधि, शिलेन्द्रबोधि, दानशील और बोधिमित्रको बुलाया। पहले जिस अनुवादमें भ्रम था और जो असम्पूर्ण था, उसीका संशोधन करनेके लिये रत्नरचित, मञ्जुघोषवर्मा, धर्मरचित, जिनसेन, रत्नेन्द्रशील, जयरचित, कव-पलतसेग, चोटस्यल-तपन प्रभृति पण्डित नियुक्त हुए थे। व्यवसायियोंको सुविधाके लिये राजा रल-पचनने चीन देशकी तौल और मापका अपने राज्यमें प्रचार कर दिया। भारतीय बौद्ध याजकगण जिस तरह विधि और रीतिनीतिका पालन करते थे, उन्होंने यहांके याजकोंमें भी वैसे ही नियम प्रचलित किये। वे जानते थे, कि याजकोंके ही हाथमें धर्म शासन है। इसीसे वे उपयुक्त मनुष्योंको देख कर उन्हें याजक बनाने लगे।

इन्हींके समयमें चीन और तिब्बतमें विवाद छिड़ा था। चीन पर आक्रमण करनेके लिये राजा रल-पचनने बहुतसी सेनायें भेजीं। चीन और तिब्बतके युद्धमें रक्त की नदी बह चली थी। दोनों देशके ज्ञानियोंने इस अनर्थकर रक्त-पातके निवारणके लिये खूब चेष्टा की। उन्हींके यत्नसे लड़ाई रुक गई और सन्धि भी हुई। इस समय गुङ्गुमेरु नामक स्थानमें एक पत्थरका स्तम्भ गाड़ कर दोनों राज्यकी सीमा निर्दिष्ट हुई। एक प्रस्तर स्तम्भमें वह सन्धि-पत्र खोदा गया था।

रलपचनके समय तिब्बतमें अनेक सुनियम प्रचलित हुए थे। इस समय संन्यासी और याजकमण्डलीके प्रति राजाका विशेष लक्ष्य था, जिससे कि वे शास्त्रविधि लङ्घन न कर सकें। अन्तमें किसी दुष्टने गला घोंट कर राजाके प्राण लेलिये। ८०८ से ८१४ ई०के मध्य राजाके भाई लन्दर्मकी उत्तेजनासे यह दुर्घटना घटी थी।

अब दुष्ट लन्दर्म राजा बन बैठे। उनके समान बौद्ध विद्वेषी राजा और कोई देखे नहीं गये थे। वे सदा घूम कर कहा करते थे कि बुद्धकी प्रधानता होनेसे उनके असत्य उपदेशमें आ कर ही भारत और चीनके मनुष्योंने अपनी सुख शान्ति खो दी है। बौद्ध पण्डित उनके दौरात्म्यसे देश छोड़ कर भग चले। लन्दर्मने किसी श्रमणको तो गृहस्थ बनाया और किसीको उनके वास्ते पशु शिकार कर लाने वनको भेजा। जहां जितने बौद्ध ग्रन्थ पाये गये, वे जला और फाड़ दिये गये। कितने बौद्ध मन्दिर उनके आदेशसे विध्वस्त हुए। जिस मन्दिरको तोड़नेकी सुविधा न थी, उसके सामने दीवार खड़ा कर उसका दरवाजा बन्द कर दिया गया। उनके मन्त्री और खुशामदी टट्टुओंने फिर दीवारमें बहुतसी बुरी तसवीरें अङ्कित कर दीं। ये सब अत्याचार धार्मिक तिब्बतवासियोंको असह्य मालूम पड़ने लगे। लहलुन पल पल-दोर्जे नामक एक साधु पापिष्ठ राजाके हाथसे धार्मिकोंको बचानेके लिये एक दिन रणनृत्य करते करते राजाके निकट जा पहुंचे और एक तीक्ष्ण शर द्वारा उन्हें विद्धकर वहांसे बहुत शीघ्र चम्पत हो गये। उस शराघातसे ही राजाकी प्राणवायु उड़ गई। उनके साथ साथ तिब्बतीय राजाओंका एकाधिपत्य भी जाता रहा।

लन्दर्मके दो रानियां थीं। छोटी रानी गर्भवती थी। इससे बड़ी रानीको बहुत ईर्षा हुई। उन्होंने भी गर्भ होनेका एक ढोंग रचा। यथा समय छोटी रानीके एक पुत्र-रत्न उत्पन्न हुआ, जिसका नाम नम-दे होद-सुन रखा गया। बड़ी रानीने उसका वध अथवा हरण करनेकी चेष्टा की थी, किन्तु उस नवजात शिशुके निकट एक जलती हुई बत्ती रहनेके कारण उनका उद्देश्य सफल न हुआ। इससे बड़ी रानी और भी क्षुब्ध हो गई और उसी समय उन्होंने बदला लेनेके लिये एक गरीब लड़केको ला कर उसे अपने पुत्रसा प्रचार किया। बड़ी रानीसे सभी भय खाते थे, इस कारण किसीके सन्देह होने पर भी वे उस पुत्रके विषयमें कोई बात नहीं छिड़ते थे। उस बालकका नाम यिदे-युमतेन पड़ा।

पहले बौद्ध मन्त्रिगण ही राज्यशासन करते रहे। उन्होंने पुनः सभी बौद्धकीर्त्तियोंको स्थापन करनेकी यथेष्ट चेष्टा की थी। लन्दर्मके दौरात्म्यसे जो सब मन्दिर अङ्गहीन हो गये थे, मन्त्रिगण उनका संस्कार कराने लगे।

जब दोनों भाई बड़े हुए, तो राज्यके लिये आपसमें विवाद उठा। अन्तमें समस्त राज्य दो भागोंमें बांटा गया। ओद-स्रुङने पश्चिम भाग और युमतिनने* पूर्व भाग पाया। शासकोंके आपसमें बंट जानेसे राज्यभरमें कुशासन फैलने लगा। इससे राज्यकी आभ्यन्तरिक अवस्था और भी खराब होने लगी।

८८० ई०में ओद-स्रुङका देहान्त हुआ। उनके पुत्र पल-खोरतसन सिर्फ ११ वर्ष राज्य कर (८८१ ई०में) ३१ वर्षकी अवस्थामें मरे। उनके दो पुत्र थे तषिदपल और किद्-क्षि-दे-ञिमगोन। कनिष्ठ ञिमगोन ङारि (लदाख) देशको गये और वहां उन्होंने राजा होकर 'पुराङ' नामकी राजधानी और ञि-जुङ नामक दुर्गकी प्रतिष्ठा की। उनके तीन पुत्रोंमेंसे बड़े पल्गि-दे-रिग-गोन सब पुत्र प्रदेशमें, मझले तषि-दे-गोन पुराङ प्रदेशमें और छोटे देतसुग-गोन शाङसुम (वर्तमान गुगेमें) प्रदेशमें राजा हुए। देतसुग-गोनके दो पुत्र थे, बड़ा खोर रे और छोटा स्रोङ-ङे। ज्येष्ठ ये-शे-ओद नाम धारण कर संन्यासी हो गये।

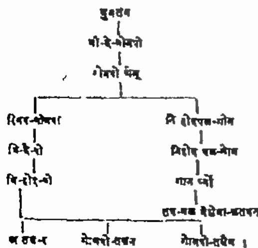
तषि तषेग पके पिताकी मृत्युके बाद राज्य सिंहासन पर अभिषिक्त हुए—उनके तीन पुत्र थे—अत्से, ओद-दे और खि दे।

इस समय तिब्बतमें बौद्ध धर्मका पुनरुत्थान हुआ। लन्दर्माके समयसे इस समय तक कोई भारतीय पंडित तिब्बतमें नहीं आये। बहुत समयके बाद एक नेपाली स्मितनामक पण्डितने (तिब्बतमें स्मृति नामसे परिचित) पण्डित धर्म-रिपाल और स्मृतिको तिब्बतमें बुलाया। किन्तु जब वे पण्डित तिब्बतमें पहुंचे, तो उनकी मृत्यु हो गई, कोई किसीने उन पण्डितोंको आश्रय भी न दिया। इसलिए वही निराश्रय अवस्थामें एक तनग नामक स्थानमें पशु पालकवृत्तिका अवलम्बन करके जीवन निर्वाह करने लगे। कुछ दिन बाद तिब्बती भाषामें उनका प्रवेश हो जानेसे उनकी विद्याकी कथा लोग और धीरे जानने लगे। अन्तमें उन्होंने खम प्रदेशके पण्डितोंके साथ शास्त्रालोचना की। उन्होंने तिब्बती भाषामें एक 'शब्दमाला' बनाई जिसका नाम उन्होंने "वचनायुध" रखा।

राजा स्रोङ-ङे और ... के समय, पश्चिम और ... तिब्बतमें बौद्धधर्मका पुनरुत्थान हुआ। १०१३ ई०में इसका सूत्रपात हुआ था। उस समयसे मगधसे भारतीय पण्डित धर्मपालको बुलाया। उनके साथ तीन शिष्य भी आये हुए थे। राजाने इन लोगोंकी सहायतासे देशमें पुनः धर्मचर्चा आरम्भ और विनयशास्त्रके प्रचारमें विशेष सुविधा पाई।

और ऐसे समयमें ... पण्डित सुभूति श्रीशान्तिको बुलाया। इस महापण्डितने इस देशमें आकर समस्त प्रज्ञापारमिताका (शेर फिन) अनुवाद किया। विख्यात अनुवादक रिनछेन सांगपो सुभूति द्वारा शास्त्रपद पर प्रतिष्ठित हुए। लहदेके तीन पुत्र थे ओद दे, शिब ओद और चन-चुब ओद। कनिष्ठ पुत्रने बौद्धशास्त्र और उनके विरुद्ध मतके दमन शास्त्रादिमें विशेष अभिज्ञता लाभ की। बौद्धधर्मकी उन्नतिके लिए १८ पण्डित राजपुत्रने आर्यावर्त्तमें सर्वशास्त्रविशारद नामी पण्डितोंको ढूंढ़नेके लिए आदमी भेजा। तलाश करने पर प्रभु अतिश पण्डितका नाम और उस तिब्बतमें जाना मालूम हो गया। चन-चुब ओदने उनको बुलानेके लिए नगतो लोचवके साथ और भी कई एक अनुचरोंको भेजा। लोचव आर्यावर्त्तमें वहांके बौद्ध धर्मके प्रधान स्थान विक्रमशील नगरको पहुंचे। वहांके तत्कालीन राजाने उनका खूब सत्कार किया। यह राजा तिब्बतीय लोगोंमें ङ्य तपोन शिनगी नामसे अभिहित हुए हैं। बाद उन्होंने पण्डित प्रभु अतिशके सामने साष्टाङ्ग प्रणिपात कर उन्हें राजप्रेरित

* युमतनके वंशधरो इस तरह पाये जाते हैं—



स्वर्णादि बहुमूल्य उपहार दिये और पोछे तिब्बतमें बौद्ध धर्मका प्रचार, यो वृद्धि, ध्वंस और पुनः प्रचारकी चेष्टा का सारा विवरण उनसे कह सुनाया। कातर हृदयसे उन्होंने यह भी कहा, "अभी आपके सिवा और कोई दूसरा मनुष्य नजरमें नहीं आता जो तिब्बतको इस धर्म विप्लवसे उद्धार कर सके, अतः आपको एक बार तिब्बत आनेका कष्ट दिया जाता है।"

लोचव और उनके अनुयायी पण्डित अतिश का शिष्यत्व ग्रहण कर उनको सम्मति पानेके लिए दासकी नाईं सेवा करने लगे। अन्तमें अतिश तारादेवोकी आकाशवाणी-से तिब्बत जानेको राजी हुए। वे तिब्बतका बहुत उपकार और एक महासाधक (उपासक) का विशेष सहायता करेंगे, इस प्रकारकी आकाशवाणी होनेसे उन्होंने ५८ वर्षकी अवस्थामें १०४२ ई०को अपने प्राणको उपेक्षा करके विक्रमशीलके सङ्घारामका परित्याग कर तिब्बतमें प्रस्थान किया। नह-रि प्रदेशके थोलिङ्ग सङ्घाराममें अतिश रहते थे। उन्होंने राजाको तन्त्रसूत्र सिखाया, वाद उ और तसन प्रदेशमें धर्म प्रचार किया। उन्होंने कई एक शास्त्र ग्रन्थ प्रणयन किये, जिनमेंसे लमदोन (सत्यपथ-प्रदीप) प्रधान है। ७५ वर्षकी अवस्थामें १०५५ ई०को अतिशको मृत्यु हुई। छोट-दे के पुत्र अत्सेटके राजत्व कालमें अतिशने उ, तसन और खम प्रदेशोंके समस्त लामा और श्रमणको एकत्र कर कालगणनाके नूतन नियमका प्रचार किया। उत्तर भारतके मध्यम प्रदेशमें षष्टि-संवत्सरको वर्षचक्रकी गणनाके जो नियम अतिशने पाये थे, वे ही इस समय प्रचारित किये गये। तिब्बती लोगोंने इसका नाम रब-जून रखा। १२०५ ई० तक अतिशके मतसे हो शिक्षा दो गई थो। इस समय विख्यात लोचवने बहुतसे संस्कृत ग्रन्थ तिब्बतोय भाषामें अनूदित किये। तेरहवीं शताब्दीमें पण्डित सर्प, मिल-गोनपो, काश्मोरीय पण्डित शाक्यश्री और अन्यान्य भारतोय पण्डितोंने तिब्बतमें बौद्ध धर्मप्रचारके लिए अशेष सहायता को। तसेदसे निम्न नवम पुरुषमें राजा तग-प-देके* राजत्वकालमें मैत्रेय बुद्धको एक प्रतिमा बनाई गई जिसमें १२००० टोलपद (अर्थात् १५ लाख रुपये) खर्च हुए थे। उन्होंने मञ्जुश्री देवको एक प्रतिमा बनवाई थी जिसमें ७ म्रे अर्थात् एक मन सोना लगा था। इनके पुत्र असोदे पिताको अपेक्षा भक्तिमान् थे और प्रतिवर्ष बुद्धगयाके विश्रामस्थ (दोर्जे-टन) नामक बौद्धपोठमें पूजा भेजते थे। इस प्रथाको इन्होंने अपने जोवन काल तक जारी रखा था। इनके पौत्र अननमल्लने 'कह ग्यु र' नामक धर्मशास्त्रको सम्पूर्ण रूपसे सोनेके अक्षरोंमें लिखवाया था। अननमल्लके पुत्र रिहुमल्लने लासा नगरमें बहुत खर्च करके बुद्धमूर्त्तिको प्रतिष्ठा को, तथा उनके मन्दिरके गुम्बजको स्वर्णमण्डित करा दिया था। रिहुमल्लके पुत्र सङ्-ह-मल शाक्य-प लामाओंसे बौद्धधर्ममें दीक्षित हो राज सिंहासन पर बैठे। इस वंशके अन्तिम राजा अपुत्रक थे। उन्होंने पर-तब-मलके आत्मोय सो-नम-दे का नाम पुण्यमल रख कर राजगद्दो पर बिठाया।

बाद तसेग-प राजाके पुत्र पलदेके वंशधरोंने गुणथन्, लुग्यवल, चित-प, लहतसे, ननलुन और तसकोर प्रदेशों में छोटा छोटा राज्य स्थापन कर वहां राज्य किया। कि-दे के वंशधरोंने सु, जन, तनग, य-रु-लग और ग्यल-तसे जिलोंमें छोटा छोटा राज्य बसाया। छोदके चार पुत्र थे—फवदेसे, थिदे, थिकुन और नग-प। प्रथम और

---

* तसेदकी वंशावली —

(१) तसेद
|
(२) परदे
|
(३) दाशि दे (१म)
|
(४) भदे
|
(५) नागदेव
|
(६) तसल-फ्युग
|
(७) कशि-दे (२य)
|
(८) प्राग-तसन-दे
|
(९) तग-प-दे
|
(१०) असो-दे
|
(११) जे-दर-मल (१म)
|
(१२) अनन मल
|
(१३) रिहु-मल
|
(१४) संग-ह-मल
|
(१५) जे-दर मल (२य
|
(१६) अ-जिन-मल
|
(१७) कलश-मल
|
(१८) पर-तब-मल
|
इसके बाद वंशलोप।

चतुर्थने तसन-चोन प्रदेश पर, द्वितीयने आमदो और लासोगत प्रदेश पर और तृतीयने उ प्रदेश पर अधिकार जमाया। तृतीय चि-त्सुग-दे त्सुग नगरमें राजधानी उठा कर ले गये। चि-त्सुगके* अवसान पद्मसम्भव बोधिसत्व और चे न्-न-रिन-पोछे और पल-फागमो-दु-प नामके दो आचार्योंका विशिष्टरूपसे परिपोषण करते थे।† इनके पौत्र शाक्यवोन प्रसिद्ध शाक्य पण्डितके परिपोषक थे। शाक्यवोनके पौत्र तग् प-रिन-पोछेकी चीन-सम्राटकी बड़ी खूब खातिर होती थी। तग-चो-पोदनमें जो विख्यात प्रासाद है, वह इन्हींका बनाया हुआ है। इनके पुत्र शाक्य-बोन-पो (२य) ने कुम्बुम प्रासादमें एक महाकालकी प्रतिष्ठा की।

तिब्बतमें मुगल अधिकार।—चिङ्गुनख सौव राजवंश बहुत ही दुर्बल थे। जिस मुसलमानोंने भारतवर्ष पर आक्रमण किया था उसी चेङ्गिस खाँने‡ १३वीं शताब्दीके प्रथमभागमें बातकी बातमें समस्त तिब्बत पर अधिकार जमा लिया। चेङ्गिसके बाद उनके एक पुत्र गोगान राजा-पूर्ण अधिकारी हुए। गोगानके दो पुत्र गोदन और कोतुमनने अपनी सभामें शाक्य पण्डितको बुलाया था। इस घटनासे शाक्यवंशके प्रधान पण्डितोंने तिब्बतके राजनीतिक सूत्रमें सुरक्षित धर्म-मत पीठिकासे मेल एक भाव ग्रहण किया।

तिब्बतमें शाक्याधिकार।—(१२७०-१३४० ई०में) चीन देशके प्रथम मुगलसम्राट् प्रसिद्ध कुबले§ (कुबलई) ने शाक्य पण्डितके भतीजे फग प कोटोर्ड ल्लामतुषन् नामक पण्डितको अपनी सभामें बुलाया। वे १८ वर्षकी अवस्थामें चीन-राजसभामें पहुँचे। उनके आनेसे सम्राट्ने उन्हें वर्णमाला, अपनी मुहर, मणिमुक्ताके अलङ्कार, मणिमुक्ताका छत्र, स्वर्णदण्ड और स्वर्णसूत्रका बृहत् वस्त्र तथा मिष्टान्न आदि उपहारमें दिये। पीछे सम्राट्ने उन्हें अपना गुरु बनाया और दीक्षामें अभिषेचन किया। अन्तमें सम्राट्ने गुरुको प्रकृत तिब्बत (उ और तसन प्रदेश) के १३ जिलाओंके‡ शासनका भार और आमदो प्रदेश दानमें दिये। इस समय शाक्य लामा तिब्बतके स्वाधीन शासक

---

† चि-त्सुगके वंशधर—

चित्सुग वा चिछुग	कोनचोगग्यल
देव त्सिक-द-वर	शाक्य-बोन (१म)
धुमवन (१ पुत्र और)	शाक्यवोन
की बद	तग प रिन पोछे
धर्म (अध्यात्म वा मनुष्य)	शाक्यबोनपो (२य) उ और
कोनो-वक और	दे-शाक्य रिन्छेन

* अमिरवा तिब्बती चेङ्गिस खाँ वा तेमूजिन नामसे मशहूर थे। ये कोर्ड नाहुर (बेहादुर) नामक सर्दार (अरकंदार) रोमाके मौरस और रानी हुलन (बहर्लन) के गर्भसे इनका जन्म हुआ था। १८ वर्षकी उमरमें ये पैतृक सिंहासन पर बैठे। २१ वर्ष तक ये भारत, चीन, तुर्किस्तान और एशियाके अन्यान्य प्रदेशों पर आक्रमण करते रहे। बहुतोंसे इन्होंने जीता था और बहुतोंसे लूटा भी था। ६१ वर्षकी अवस्थामें इनका देहान्त हुआ।

‡ अमिश वा चेङ्गिसखाँ देखो।

§ कुबले (कबलाइ) का अर्थ अवतार वा अलौकिक जन्म विशिष्ट है।

‡ तिब्बतके १३ जिले जिन्हें कुबलेने फगपको दानमें दिये, उनके नाम नीचे दिये जाते हैं—

तसन् प्रदेशमें ६—

१। २ ल्होत और ल्होब्जांग (ल्हो-दो)।

३ गुर्मो (कुर्मो)	५ चन्।
४ चुमिग	६ शलु।

उ प्रदेशमें ६—

१ ग्यमि	४ थग— पौ-डे-प
२ ड्रिगुन	५ फग-मु-दु।
३ तसल-प	६ यर-सन्।

ये और तिब्बत् लामोंके पाव दुग वंशदिके (१६ जिले (पश्चोत वा शामू-दो-की जिलाओंके साथ) अधिष्ठित हैं।

कर्त्ता ¶ ठहराये गये। फग-प और टोगन फगप नामसे विशेष प्रसिद्ध हुए। १२ वर्ष तक चीन देशमें रह कर फगप शाक्यभूमिमें लौट आये।

फग-प टो-गोनको जब शाक्यभूमिमें ३ वर्ष हो चुका था, तब इन्होंने कह्ग्युकी पुस्तकको एक प्रस्थ प्रतिलिपि तैयार कराई। यह प्रतिलिपि स्वर्णाक्षरमें लिखी गई थी। प्रकृत तिब्बतके तेरह जिलोंका राजस्व वसूल कर शाक्यभूमिमें इन्होंने एक ऊंचा मन्दिर बनवाया। इसके सिवा इन्होंने एक स्वर्णकी प्रकाण्ड बुद्धप्रतिमा, एक बहुत ऊंचा छोरतेन (चैत्य) और अन्यान्य देव प्रतिमाकी स्थापना की, और प्रति दिन एक सौ श्रमणोंको आहार तथा भिक्षा देनेकी पूरी व्यवस्था कर दी। चीन सम्राट्के प्रार्थनानुसार ये दो बार चीन देशको गये थे। अबकी बार लौटते समय इन्हें ३०० ब्रे स्वर्ण, ३००० ब्रे रौप्य और १२००० ब्रे साटनकी पोशाक मिली थी। शाक्यलामाओंमें ये ही सबसे अधिक क्षमताशाली थे। इनके परवर्त्ती प्रतिनिधिगण दुर्बलमना और अक्षम प्रकृतिके समझे जाते थे। इनके समयमें प्रजाका सुख स्वाच्छन्द्य जाता रहा, सामन्त और सम्भ्रान्त लोग भी बागी हो गये। शाक्यलामा लोग इन सब प्रतिनिधियोंके हाथोंकी कठपुतली हो रहे थे। अतः वे इसका कुछ भी प्रतिकार कर नहीं सकते थे। कलह, युद्ध, षड्यन्त्र, खून खराबी आदि होने पर भी उन सब प्रतिनिधियोंमेंसे किसीने भी लामाओंकी अधीनता न छोड़ी।

फग-पके परवर्त्ती चतुर्थ प्रतिनिधि च्यन्-रिन् क्योपको चीनसम्राटसे एक सनद मिली थी, किन्तु इसके कुछ समय बाद वे अपने एक नौकरके हाथसे मारे गये। इनके परवर्त्ती दशों प्रतिनिधियोंने आर्द्दनादिका संस्कार किया था। अनलेन नामक अष्टम प्रतिनिधिने शाक्य महारामके बेटनी प्राचीरादिका निर्माण किया। इन्होंने ही ग्यन्-र लिन और पोन-पाई रि नामक दो महाराम प्रतिष्ठित किये। इस समय दिगुण सङ्घारामकी क्षमता सबसे प्रबल हो गई थी। यहां उस समय १८ हजार श्रमण वास करते थे। शाक्यमहाराम और दिगुण महाराममें क्षमता प्रधानताको ले कर विवाद उठा। उस विवादकी उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई, यहां तक कि अन्तमें अनलेनने सेना भेज कर दिगुन महारामको लुटवा लिया और जलवा डाला। महाराममें आग लगनेसे कितने श्रमण तो प्राण ले कर भागे और कितने उसीमें जल मरे। इस दुर्घटनाके कई वर्ष बाद पुनः यह महाराम प्रबल और क्षमताशाली हो उठा। उस समय फिर गलुग-प मतावलम्बियोंके साथ विवाद चला। इस बार भी महाराम पूर्ववत् तहस नहस कर डाला गया। लेकिन यह महाराम अभी शाक्यमहाराम-का मुकाबिला कर रहा है। अनलेन जब दिगुण महारामका ध्वंस कर लौटे आ रहे थे, तब रास्तेमें भी किसीने इन्हें मार डाला। वनतसुन नामक शेष प्रतिनिधि फगदु नामक प्रधान मन्त्रीके साथ युद्धमें परास्त हुए। इसके साथ साथ तिब्बतमें जो ७० वर्षसे याजकाधिकार चला आ रहा था, वह भी जाता रहा।

तिब्बतमें चीनाधिकार।—शाक्य महारामका प्रभुत्व लोप हो जाने पर दि-गुन, फग-दुब और तसल नामक महाराम क्रमशः प्रभूत क्षमताशाली हो उठे। १३०२ ई०में

¶ शाक्यप राज-प्रतिनिधिगण—

(१) शाक्य सङ्गपो
कुनगाइ सङ्गपो (इन्होंने राज्य नहीं किया)।
(२) पन् तसुन्
(३) बन कर्वो
(४) च्यन-रिन-क्योप
(५) कुन-पन
(६) पन्-दुन्
(७) च्यन दोर
(८) अन टोन
(९) ल्हेपा-पा-पल
(१०) सुंगेपल
(११) हो-सङ्गेपल
(१२) हो सङ्गेर सेंगे (१म)
(१३) कुन रिन्
(१४) दोन-पो-पल
(१५) योनत्-सुन
(१६) हो-सङ्गेर-सेंगे (२य)
(१७) शाल-ब सङ्गन पो (१म)
(१८) दुन्-क्युग पल
(१९) सो नम् पल
(२०) शाल-ब-सङ्गन-पो (२य)
(२१) अन-तसुन

विख्यात म थि चान छुब-ग्यलतषेन को फग्मो-ड़ु * नामसे प्रसिद्ध हैं उनका जन्म फग्मोड़ु नगरमें हुआ था। उन्होंने ही प्रायः तिब्बतके १३ जिलों और आम प्रदेशको वशीभूत कर वहां अपना राजत्व स्थापित किया। तीन वर्षकी उमरमें इन्होंने लिखना पढ़ना सीख लिया था। ९ वर्षकी उमरमें डो-कि-तोनयन नामाने इन्हें धर्मशास्त्रादि की शिक्षा दी। सात वर्षकी उमरमें ये चायन ग नामाके उपदेश धर्ममें दीक्षित हुए। जब ये चौदह वर्षके हुए तब इन्होंने शाक्यसङ्घाराममें आ कर प्रधान लामा दमछेन रिनपोछेके साथ साक्षात् किया और उन्हें एक दूत उपहारमें दिया। कुछ काल तक शाक्यसङ्घाराममें रहनेके बाद एक दिन प्रधान लामाने भावी समय इन्हें अपना प्रभाव जानेको सुनाया। १७ वर्षकी उमरमें उनकी विद्या-शिक्षा और परीक्षा खतम हुई थी। जब इनकी उमर सिर्फ १८ वर्षकी थी, तब चीनसम्राट्ने इन्हें १० हजार सेनाओंके अधिनायकका सनद लिखी थी। इस सम्मान पर दि गुन् तथा यह तमन और शाक्य प्रदेशके सदार लोग जल उठे। अन्तमें दोनों पक्षमें खूब घमसान युद्ध चला। प्रथम युद्धमें तो फगमोड़ु पराभव हुए लेकिन द्वितीय युद्धमें उन्हींकी जीत हुई। यह युद्ध फिर कई वर्षों तक चलता रहा। अन्तमें फग मोड़ुकी विजयी हुए। विपक्षके सरदारगण पकड़े गये और कैद कर लिये गये। इसके बाद यम् और तमन प्रदेशके सरदार तथा लामाओंने मिल कर चीन सम्राट्से निवेदन किया, कि फगमोड़ु बड़े अत्याचारी हो गये हैं। विशेषतः शाक्य-सरदारोंको इन्होंने कैद कर रखा है।

इधर फगमोड़ुने भी चीनमें स्वयं जा कर तत्कालीन थो मन य म नामक प्रसिद्ध चीन सम्राट्को तरह तरहकी बहुमूल्य मालमें दुर्लभ अलग्य और अनेक मिष्टवस्तु उपहारमें दे कर प्रकृत घटना कह सुनाई। सम्राट्ने सब रहस्य सुन कर फगमोड़ुका पक्ष लिये और अधिक सम्मान किया और न्यायपरताके पुरस्कारस्वरूप उन्हें वंशानुक्रमसे भोग करनेके लिये उ प्रदेश उनके अधिकारमें कर दिया। तमन् प्रदेश शाक्योंके हाथ रहा। चीनसे लौट कर फगमोड़ुने राज्यशासनकी सुव्यवस्था और नियमादि स्थिर कर दिये। प्राचीन राजनीति और आईनका संस्कार किया गया। शाक्य शासनकर्त्ताओंने चीन तमन मस्यो और कि छोनके आईनादिका त्याग कर दिया था। इन्होंने उनका संस्कार कर पुनः उन्हें काम में लाया। इन्होंने नेडोङ नगरमें नामका एक दुर्ग बनवाया था, जहां स्त्रियोंका प्रवेश निषेध था। नियमशास्त्रानुसार फगमोड़ु ब्रह्मचर्यका आचरण करते थे और मद्य तथा रात्रिभोजन इनके लिये हराम था। ये गोनकर, समदर आदि १३ दुर्गोंके तथा छे-थङ सङ्घाराममें प्रतिष्ठाता थे। शाक्य सरदार सब दुर्बलता और अक्षमताका तथा चीन कुगलीय नियमका अवलम्बन करते थे इस कारण प्रजा उनसे बहुत असन्तुष्ट रहती थी। उनके साथ प्रजाका प्रायः विवाद हुआ करता था। फगमोड़ुने यह वृत्तान्त चीन-सम्राट्को कह सुनाया। उन्होंने उन्हें यम् और तिब्बतके अन्यान्य प्रदेशोंको करायत्त करनेका हुक्म दे दिया। कहते हैं कि फगमोड़ुने समस्त तिब्बतका एकाधिपत्य पा कर एक करोड़ धातु प्रतिमा स्थापित की और अपना नाम 'कि सुन' रखा।

फगमोड़ुके अधस्तन चतुर्थ पुरुष शाक्यरिनछेन चीन-सम्राट् की मन-वनकी प्रिय सख्यो थे। चीन सम्राट्ने इन्हें पहले सम्राट्-पुरोहित उच्च पद पर पीछे चीन साम्राज्यका राजस्व-वसूलीके सर्वाध्यक्षके पद पर नियुक्त किया। किन्तु शाक्य रिनछेन सम्राट्को च्युत करानेके लिए चीनके प्रधान मन्त्रीके साथ षड़यन्त्रमें शामिल हो गये। उन्होंने बहुत सी बैल गाड़ियों पर समस्त सेनाओंको छुपा कपड़ेमें आटनेके कपड़ेसे ढक कर सम्राट्पुरीमें भेज दिया। सम्राट्को इस बातकी

* फगमो-ड़ु की वंशावली—

(१) फग-मो-ड़ु (शिरी)
(२) जम-यङ-गुन ठेनपो
(३) ड्रा-प-रिनछेन
(४) सो-नम ड्रग-पा
(५) शाक्यरिनछेन
(६) अपीर ग्यलछन् पल
(७) दम ग्रग्स-ग्युनछे
(८) रिनछेन-दोर्जेपल
(९) ताशीदग-पा
(१०) नगम् कवि
(११) नमखा प्रावो
(१२) अम्बर नामग्यो
(१३) चोस नम् नम् ज्ञाल

४। *Balaena Japonica* or the Japan whale जापान देशीय तिमि—जापान सागर।

५। *Balaena antarctica or Balaena Antipodarum* or the Newzeeland whale—न्यूजिलेण्ड देशीय तिमि—दक्षिण महासागर।

६। *Balaena gibbosa* or the Scrag-whale—अस्थिसार-तिमि—अटलाण्टिक महासागर।

७। *Balaena Hunterius Temminckii*—दक्षिण देशीय शिकारी तिमि—उत्तमाशा अन्तरीप।

८। *Balaena Hunterius Swedenborgii*—उत्तर देशीय शिकारी तिमि।

इन आठ प्रकारके तिमियोंमें वृहत्तिमि (The Right whale) अत्यन्त विख्यात है। ये हिमाच्छन्न उत्तर महासागरमें ही रहते हैं। कभी कभी इन्हें फ्रान्सकी उत्तर सीमा तक आते देखा जाता है। इनकी लम्बाई ६०।७० फुट होती है। इनकी पूंछ ठीक गंगादेवीके वाहन मकरकी तरह २०।२५ फुट विस्तृत होती है। सामनेका पर ८।८ फुट लम्बा और ४।५ फुट चौड़ा होता है। मुख १५।१६ फुट दीर्घ होता है। दोनों आंखें मुखगर्तसे एक फुट ऊंचे पर होती हैं। इनके जल फेंकनेके दो छिद्र खूब सूक्ष्म और मस्तकके सर्वोच्च स्थानमें बने होते हैं। इनके शरीरका रंग चिकना और काला (काली मखमलकी तरह) और पेटकी तरफ सफेद होता है। ये कितने दिनमें गर्भ-धारण करते हैं यह विदित नहीं। एक गर्भमें एक ही सन्तान प्रसव करते हैं। सद्योजात सन्तान १० से १४ फुट दीर्घ होती है। इनका सन्तान-स्नेह अत्यन्त प्रबल होता है। इसीलिए वृहत्तिमिके शिकारी समय समय पर शावकोंकी हत्या कर शावकोंकी जननीको अपेक्षाकृत अल्प श्रमसे पकड़ लेते हैं। तिमिप्रसूति स्थानमें जाके चित होकर पड़ जाती है और सन्तान पेटके ऊपर चढ़कर स्तन्यपान करती हैं। ये साधारणतः घण्टेमें ४।५ मील चल सकते हैं। जलके बहुत नीचे ये नहीं फिरते। चलते समय मुंह फाड कर चलते हैं और गालमें जलके साथ खाद्य द्रव्यके पहुंचते ही मुंह बन्द करके मछलीकी तरह जल बाहर कर देते हैं। दौड़ते समय ये और ज्यादा तेज चलते हैं, शिकारके समय ये वर्षासे आहत होते और कुछ सेकेण्डोंमें पानीके तले चले जाते हैं। इनका बल अत्यन्त प्रचण्ड है। पूंछके झपाटेमें ही बड़े बड़े लड़ाईके जहाज डुबा देते हैं। तिमि पानीके भीतर लगातार आध घण्टेसे कुछ अधिक रह सकते हैं। सांस लेनेके लिए प्रति ८।१० मिनटमें मुख उठा कर तैरते हैं। सांस लेते समय ही जल फेंकते हैं। जल फेंकते समय इनके मस्तेके छेदोंसे फुहारेकी तरह जल ऊपर उठने लगता है। यह जल १०।१५ हाथ ऊपर तक उठता है। कभी कभी ये क्रीड़ा करनेके लिए मस्तक नीचे कर और पूंछ जलके ऊपर कर—ठीक सीधे खड़े हो कर एक प्रकारका शब्द करते हैं जो २।३ मील दूर तक सुना जाता है। ये दल बांध कर नहीं घूमते। प्रायः अकेले कभी कभी नर मादा एक साथ घूमती है। उत्तमाशा अन्तरीपके तिमिका मस्तक अपेक्षाकृत छोटा, वर्ण बिलकुल कृष्णवर्ण होता है। ये तीरके निकट थोड़े जलमें घूमते हैं। इस जातिके तिमि विषुवत् रेखाके निकटसे दक्षिण महासागरके तुषारक्षेत्रके मध्य तक घूमते हैं और उत्तर जापान तक आते जाते हैं। दक्षिण आफ्रिका और न्यूजिलेण्डके निकट तिमि-शिकारी इन्हें ही ज्यादा पकड़ा करते हैं। आइसलेण्डके निकट वृहत्तिमिका (The Rigt Whale) एक उपविभाग है। आइसलेण्ड निवासी उन्हें Nord-kapper कहते हैं। इनका शरीर वृहत्तिमिकी अपेक्षा सबल, मस्तक छोटा, नीचेका जबड़ा गोल और चौड़ा, वर्ण धूसर, मस्तकका निम्न भाग उज्ज्वल श्वेतवर्ण और यह वृहत्तिमिकी अपेक्षा अधिकतर चतुर एवं भयंकर स्वभावका होता है। ग्रीनलैण्डके अधिवासी और ऐस्कुइमो जातिके लोग वृहत्तिमिका मांस खाते हैं और उदरका पतला चमड़ा पहनते हैं।

दन्तहीन तिमिके द्वितीय भागका नाम *Megapatera* or the Humpbacked whale वा कुब्जपृष्ठ तिमि। इस श्रेणीकी पीठमें ऊंटकी तरह कूबड़ होता है। बहुतोंके मतमें कूबड़ और कुछ नहीं, केवल पीठके पङ्ख या पीठके कांटोंका ही रूपान्तर मात्र है। इनके बारेमें और अधिक कुछ नहीं जाना जाता। केवल यही, कि साधारणतः ये समपृष्ठ तिमि श्रेणीके ही अनुसार हैं। इनकी देशभेदसे निम्नलिखित शाखाएं हैं—

१। *Megaptera Longimana* or The Johnstone's Hump-backed whales हहत् कुब्जपृष्ठ तिमि—उत्तर या जर्मन सागर।

२। *Megaptera Kuzira* or the Kuzira कुजीय तिमि या जापान इत्यादि कुब्जपृष्ठ तिमि—जापान सागर।

३। *Megaptera Americana* or the Bermuda Humpbacked whale बार्मुडा द्वीपीय कुब्जपृष्ठ तिमि।

४। *Megaptera poeskop* or the Cape Hump-backed whale उत्तमाशा अन्तरीपका कुब्जपृष्ठ तिमि—दक्षिण आफ्रिका।

५। *M Eschrichtius Robustus*—स्थूलकाय कुब्जपृष्ठ तिमि। *Balaenoptera* or the Rorqual (or the pike whales) रोर्कोल।

इस्ताहीन तिमियोंके तृतीय विभागका नाम है चञ्चुमुख तिमि।

इनका मुख सूक्ष्म होनेके कारण इनका यह नाम पड़ा है। इनकी पीठमें एक छोटेसे पङ्खकी तरह पृष्ठपक्ष होता है। तिमिजातीय जीवोंमें यही सबसे हहत् है। इस तिमिकी अपेक्षा और बड़ा जीव संसारमें दूसरा नहीं है। उत्तर देशका चञ्चुमुख तिमि १०० फुटसे भी बड़ा होता है। यह हहत् जीव ही अङ्गरेजीमें Rorqual नामसे ख्यात है। इसलिये हिन्दीमें इसे रङ्गुयम या हहत्काय चञ्चुमुख तिमि कहा जा सकता है। इस श्रेणीमें २१से२५ फुट लम्बे तिमिकी एक जाति है जिसे अंगरेजीमें pike-whale या अर्थात् भल्ल तिमि कहते हैं। इनके मुखकी आकृति भालेकी आरुख नामक अस्त्रकी तरह होती है। इसी जीवोंके तिमि भ्रमणमें अधिक पाये जाते हैं। उत्तर यूरोपके रङ्गुयामी का रङ्ग स्लेटकी तरह धूसर और उदर सफेद होता है। ये ग्रिनलेण्डके दक्षिणमें नहीं जाते। वर्ष्के एक स्थानमें फिर दो बार बड़ा नहीं करते वरन् मेर बार घूमा करते हैं। घण्टेमें ये चार पांच मील घूम सकते और प्रतिक्षण मन्द करते हैं। ये वर्षोंसे पालन होने पर एक दोड़में १००० फुट पर्यन्त चले जाते हैं। शिकारी लोग इस जाति के तिमि पकड़नेकी नहीं जाते। पहले तो इनका पकड़ना बड़ा कष्टकर और हहत्तिमिकी अपेक्षा विपद्जनक है, उस पर इनकी चर्बी बहुत कम और तिम्यस्थि क्षुद्र और निकृष्ट होती है। रङ्गुयामकी ग्रीवाकी भाग औरोंकी अपेक्षा दीर्घ होती है। इसलिए ये मछलियां इत्यादि खा सकते हैं और छोटे छोटे ; छोड़े मकोड़े तो यह दो झपाटेमें हड़पकर जाते हैं। एक बार एक रङ्गुयामके पेटमें ६० भी काड मछलियोंके अस्थि कर पाये गये थे। इस जातिके केवल दो उपभेद देखे जाते हैं।

१। *Balaenoptera rostrata*—उत्तरदेशीय चञ्चुमुख तिमि—उत्तर या जर्मन सागर पर्यन्त।

२। *Balaenoptera Sibbaldi* or chinensis—चीन देशीय चञ्चुमुख जर्मोसा द्वीपके निकट।

इस्ताहीन तिमिके चौथे विभागका नाम Physalus अर्थात् पृष्ठपक्षी है। ये देखनेमें ठीक रङ्गुयामकी तरह होते हैं। फर्क इतनाही कि इनकी पीठ बड़ी लम्बी चौड़ी और उसमें वाटि होती है। ये भी चञ्चुमुख ही हैं और यथार्थमें तो इन्हें चञ्चुमुख तिमिका एक उप विभाग कहना ही युक्तिसङ्गत जान पड़ता है। इनका स्वभाव इत्यादि भी रङ्गुयामकी भांति होता है। इनके ये भेद हैं—

१। *Physalus Antiquorum* or the Razor back—क्षुरपृष्ठ—भूमध्य और उत्तरमहासागर।

२। *Physalus Boops*—वृष—उत्तरसागर।

३। *Physalus fasciatus* or the Peruvian Finner, पेरु देशीय पृष्ठपक्ष—पेरु उपकूल।

४। *Physalus Iwasi* or the Japan Finner—जापानी पृष्ठपक्ष—जापान उपकूल।

५। *Physalus Australis* or the Southern Finner दक्षिण महासागरका पृष्ठपक्ष—दक्षिण महासागर।

६। *Physalus Duguidii*—चाइनी द्वीपका पृष्ठपक्ष—चाइनी उपकूल।

७। *Physalus Patachonicus*-अमेरिकाका पृष्ठ-कण्टक—रायोप्लाटा उपकूल।

८। *Physalus Sibbaldii*-शिवाल्डी पृष्ठकण्टक—उत्तर सागर।

९। *Physalus sibbaldius borealis* तुषारदेशीय शिवाल्डी—उत्तर सागर।

१०। *Physalus sibbaldius schlegelii*-यवद्वीपका पृष्ठ-कण्टक—यवद्वीपका उपकूल।

११। *Physalus sibbaldius Antarcticus*-दक्षिण मेरु का पृष्ठकण्टक—वोर्नियाका उपकूल।

१२। *Physalus Rudolphins laticeps* रौडल्फका पृष्ठकण्टक—उत्तर सागर।



तिमिकी दूसरी श्रेणी है दन्तयुक्त। यूरोप-के प्राणीतत्त्वविद् इन्हें डेण्टिसिटी (Denticete) कहते हैं। ये प्रधानतः तीन शाखाओंमें विभक्त हैं (१) *Caledontidae* या तैलकर तिमि, (२) *Kogia* or Short headed whales या क्षुद्रशीर्ष तिमि और (३) *eler* या तैलपृष्ठ तिमि। प्रथम शाखाके तिमियोंके नासा-छिद्र दो अलग अलग, ताल्‌ समतल, मस्तक खूब बड़ा और डाढ़ीमें दाँत होते हैं। अंग्रेजीमें ये साधारणतः Catodon, Cachalot या Sperm whale नामसे कहे जाते हैं। इनकी पुरुषजाति कमसे कम ६५ फुट और स्त्रीजाति कमसे कम ३५ फुट दीर्घ होती है। इनके शरीरका रङ्ग सब जगह एकसा नहीं, प्रायः उदर और पूंछका भाग सफेद और बाकी अंश काला होता है। ये अपनी पूंछकी चोटसे पानी फेंक कर क्रीडा करते घूमते हैं। नासाछिद्र द्वारा ये भी १०।१५ मिनटके बाद पानी फेंका करते हैं। इनके शरीरकी तैलकर चर्वी खूब गाढ़ी और प्रायः ८०।९० मन निकलती है। इनके पानी फेंकनेवाली छिद्रनालीके नीचे दक्षिण भागके गह्वर-में तेलकी तरह तरल पदार्थ होता है। वही असली तिमि-तैल (Spermacete oil) है। यह तेल प्रत्येक प्राणीमें प्रायः ४०।५० मन पाया जाता है। इनकी चर्वी-के तेलको Sperm-oil कहते हैं। असली तिमि तेल चर्वीके तेलके साथ मिला रहता है। इस जातिके तिमि भूमध्य-सागरमें भी आते हैं। ये ८० फुट तक दीर्घ होते हैं। इनका मस्तक इतना बड़ा होता है कि वह समस्त शरीरका तृतीयांश कहा जा सकता है। साधारणतः इनका वर्ण गाढ़ा धूसर होता है। पूर्ण वयस्क तिमिको शिकारी लोग Bull-whale (वृषभ-तिमि) कहते हैं। इनका मुख-विवर भी खूब बड़ा और चौड़ा होता है। नीचेके मसूढ़ेसे ऊपरका मसूढ़े कई फुट बड़ा होता है। इनके तिम्यस्थि या दन्त नहीं होते। नीचेके मसूढ़ोंमें दांत होते हैं। मुख बन्द करते समय इन दाँतोंके प्रवेशके लिए ऊपरके मसूढ़ेमें छेद होते हैं। इनकी बाईं आंख दहिना आंखसे छोटी होती है। इनकी पीठका मध्य भाग कुब्जपृष्ठ तिमिका तरह ऊंचा होता है। तैरते समय कुछ भाग जलके ऊपर उठा रहता है। ये घण्टेमें सात मील तक चलते हैं। शिकारियों द्वारा छेड़े जाने पर और भी तेज चलते हैं। इनके पंखे अपेक्षाकृत छोटे होते हैं। पूंछ का पखा खूब चौड़ा होता है। यह जिस समय माथा उठा कर जलके ऊपर विश्राम करते हैं उस समय मालूम पड़ता है मानो कृष्णगिरिका एक खण्ड जलके ऊपर उठा हुआ है। इनकी चर्वीवाली खाल वृहत्तिमिकी तरह मोटी नहीं होती। वक्षमें १४ इञ्च और अन्यत्र ७।८ इञ्च होती है। मस्तकके तैल-गह्वरके नीचे एक चकत्ता चर्वीका होता है जिसे Junk (जङ्क) कहते हैं। इससे चर्वीका तैल निकलता है। चर्वी वाली खाल निकाल कर गलानेसे तेल निकलता है। यह तेल गलाते समय तिमिका चमड़ा ही लकड़ीका काम करता है। ये जलचर जीव अन्यान्य जीवोंको भक्षण करते हैं। ये ५।६ सौ एक साथ मिल दल बांध कर चलते हैं। इनके दलमें स्त्री जाति ही अधिक पाई जाती है। इनके पुरुषोंमें प्रायः ही युद्ध होता है, जिससे दन्त मसूढ़े और ठुड्डीकी हड्डी टूट जाती हैं। इस तिमिकी प्रथम शाखा के ये भेद हैं—

१ *Catodon Macrocephalus*—समस्तमण्डलका तैल कर तिमि—समस्तमण्डलका समुद्र।

२] *Oxyodon cabeoti* से मिलती देशीय शैलकर तिमि—मछलीको उपकूल।

३। *Oxtodon polycyphus* दक्षिण सागरीय शैलकर तिमि—दक्षिणसागर।

इस तिमिकी दूसरी शाखा क्षुद्रमस्तक है। इसकी आकृतिमें मस्तककी क्षुद्रता छोड़ कर और कोई भेद नहीं है, इस श्रेणीके केवल दो उपविभाग हैं। (१) *Kogia Breviceps* or short headed sperm whale क्षुद्र मस्तक शैलकर तिमि दक्षिण-आफ्रिकाके उपकूलमें और (२) *Kogia marbayii* भारतीय क्षुद्रमस्तक शैलकर तिमि अष्ट्रेलिया और भारत-महासागरमें निवास करते हैं।

इस तिमिकी तृतीय शाखा कुब्जपृष्ठ शैलकर तिमिका उपविभाग है। (१) *Physeter tursio* or the black fish कृष्णमत्स्य—स्कटलैण्डका उपकूल और (२) *Euphysetes Grayii* या अष्ट्रेलियाके शैलकर तिमि—दक्षिण महासागर।

तिमिकी यह जाति शिकारियोंके बड़े लोभकी सामग्री है। शिकारी लोग इसे पाकर और कुछ नहीं चाहते। इसके शिकार करनेमें बड़ी विपदोंका सामना करना पड़ता है। ये पूंछके आघातसे नौका उलट देते हैं। इनके शिकारकी प्रणाली बृहत्तिमिके शिकारकी तरह है। शिकारी लोग नौकामें बैठ हारपून (Harpoon) नामक अस्त्रसे आक्रमण करते हैं और इनके ऊपर एक बर्छीकी वर्षा कर मार डालते हैं। हारपूनके आघातसे दुर्बल हो जाने पर इन्हें मार डालना कठिन नहीं होता। हारपूनमें खूब बड़ी रस्सी बंधी रहती है। आघात पाकर ये डूब जाते हैं। उस समय मछली पकड़नेकी तरह रस्सी छोड़ कर नौकामें शिकारी उनके साथ घूमता रहता है। फिर ऊपर उठ आने पर बर्छी छोड़ कर इन्हें पकड़ा जाता है। हारपूनका फला ठीक बंसीके (मछली पकड़नेकी कांटि)की तरह उलटी ओरको झुकाया होता है। यह देखनेमें मछलीके फलकी तरह होता है। नौकामें ३०।४० शिकारी दो हारपून और ४।६ बर्छी होते हैं। नौकासे हारपून फेंकते ही नौका पहले एक दम पीछे हटानी पड़ती है। चोट लगनेसे तिमि मछली मारे भयके आगे नहीं दौड़ती, हमेशा जलके नीचे डूबते हैं। यहां तक कि १०० हाथ नीचे डूब जाते हैं। हारपूनकी रस्सी इससे भी बड़ी रखनी होती है। पानीके नीचे तिमि २०।२५ मिनट डूबे रहते हैं परन्तु इसके बाद श्वासकष्ट होनेसे लाचार फिर ऊपर उठ आते हैं। कभी भी भयसे मार कर नौका उलट देते हैं। ये बर्छेके आघातसे ही मरते हैं। चोट खाकर कोई कोई तिमि ऊपर नहीं उठते और जो ऊपर नहीं उठते वे हाथ नहीं आते। इनके आगेसे बचनेके लिए नौकामें बड़े बड़े लोहेके कांटे लगे रहते हैं। तिमिके मर जाने पर शिकारी नौकाको उसके निकट ले जाते हैं और कई जने उसके शरीरके ऊपर चढ़ कर उसकी चाम और चर्बी निकालना आरम्भ कर देते हैं। इन लोगोंके साथ जहाज रहता है। नौकाको जहाजसे बांध कर या कपड़ा डाल कर इस तरहसे तेल चर्बी इत्यादि संग्रह करते हैं। वसन्त कालमें शिकार आरम्भ होता है और शरद समयमें समाप्त हो जाता है। नौरवेके निवासी नवम शताब्दीमें बृहत्तिमिका शिकार करना जानते थे। अष्टादश शताब्दीमें फरासीसी, स्पेनियर्ड और डच जातियोंने इसका शिकार करना आरम्भ किया। अंग्रेजोंने इसे १६वीं सदीसे शुरू किया है। इंग्लैण्डके कानूनके मुताबिक इंग्लैण्डके उपकूलसे तीन कोसके भीतरमें जो तिमि पकड़े जाय, वे सब राजसम्पत्ति गिने जाते हैं इससे दूर सागरमें जो सबसे पहले बर्छी चला कर तिमिको रोक दे उसको अधिक उसकी चर्बीका अधिकारी होता है, मगर यहाँ सबके अधिकारी अन्य अनुसार प्राप्त होते हैं। इनको छोड़ और भी कई कानून नियम हैं।

२ समुद्र। ३ राजविशेष, पुराण मोक्ष पूर्वके पुत्र। इन्होंने तिमिराजाने ७० वर्ष राजत्व किया था।

तिमिकोष (सं० पु०) तिमेः कोष इव। समुद्र।

तिमिङ्गिल (सं० पु०) तिमिं गिलति गृ-श। (गिलेऽगिल इ। पा ६।३।७०) १ स्वनामख्यात मत्स्यविशेष, एक नाम की बड़ी मछली। २ द्वीपविशेष एक द्वीपका नाम। ३ तत्रदेशके निवासी। (त्रि०) ४ तद्द्वीपजात, जो उस द्वीपमें उत्पन्न हो।

तिमिङ्गिलगिल (सं॰पु॰) तिमिङ्गिलं गिलति तिमिङ्गिल-गट-क, रस्य ल, अगिलस्येति पर्य्युदासात् न मुम्। अति वृहत् मत्स्यभेद, एक प्रकारकी बहुत बड़ी मछली।

तिमिङ्गिलाशन (सं॰ पु॰) तिमिङ्गिलो मत्स्यः अश्यते यत्र अश आधारे ल्युट्। १ दक्षिणस्थ देशभेद, दक्षिणका एक देश-विभाग जिसके अन्तर्गत लङ्का आदि हैं। यहांके निवासी तिमिङ्गिल मछलीका मांस खाते हैं। २ उक्त देश के निवासी। ३ उक्त देशके राजा।

तिमिज (सं॰ क्ली॰) तिमितो जायते जन-ड। मुक्ताभेद, तिमि नामक मछलीसे निकलनेवाला मोती। यह मोती वेधनीय है; किन्तु अपरिमित गुणशाली जान कर इसका मूल्य शास्त्रमें निर्दिष्ट नहीं हुआ है। यह राजाओंका सुत, अर्थ, सौभाग्य और यशःसम्पादक, रोग शोक-हारक तथा कामप्रद हैं। (वृहत्सं॰ ८१ अ॰)

तिमित (सं॰ त्रि॰) तिम कर्त्तरि क्त। १ निश्चल, स्थिर। २ क्लिन्न, आर्द्र, भींगा।

तिमितिमिङ्गिल (सं॰ पु॰) महामत्स्यभेद, एक प्रकार की बड़ी मछली।

तिमिध्वज (सं॰ पु॰) दानवविशेष, शम्बर नामक दैत्य जिसे मार कर रामचन्द्रने ब्रह्मासे दिव्यास्त्र प्राप्त किया था। (रामा॰ २।२०।११)

तिमिर (सं॰ क्ली॰-पु॰) तिम्यतीति तिम-किरच्। इषि मदि मुदीति। उण् १।५१। १ अन्धकार, अंधेरा। २ चक्षु रोगविशेष, आंखका एक रोग। इसका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—

दृष्टिविशारद पण्डितोंका कहना है, कि मनुष्योंको दृष्टि पञ्चभूतोंके गुणसे बनी हुई है। वाह्य पटलमें अव्यय तेज कर्त्तृक आवृत, शीतल प्रकृतिविशिष्ट, खद्योतके दोनों विस्फुलिङ्गोंसे निर्मित और मसूरदल परि-मित विरवाकृतिविशिष्ट, इन सब दृष्टिगत रोगोंके तथा पटलके अभ्यन्तरस्थ तिमिर रोगके लक्षण कहे जाते हैं।

दोष विगुण हो कर शिरा-समूहके अभ्यन्तर जाता है और उसके दृष्टिके प्रथम पटलमें ठहरनेसे सभी रूप अव्यक्त भावसे देखे जाते हैं। विगुणित दोषके द्वितीय पटलमें रहनेसे दृष्टि विह्वल हो जाती है और सब जगह मक्षिका, मशक, केशजाल, मण्डल, पताका, मरीचि और कुण्डल समूह देखनेमें आते हैं, अथवा जलमग्न वा दृष्टि होती है, ऐसा मालूम पड़ता है; अथवा मेघाच्छन्न वा तिमिराच्छन्नके जैसा दीख पड़ता है। दृष्टिकी भ्रान्तिसे दूरस्थित वस्तु निकटमें और निकटस्थित वस्तु दूरमें मालूम पड़ती है और कोशिश करनेसे भी सूचीपार्श्व नहीं देखा जाता। दोषके तृतीय पटलमें रहनेसे वृहदाकार और वस्त्राच्छन्नके जैसा दीख पड़ता है और कर्ण, नासिका तथा चक्षुःविशिष्ट सभी आकृतियां विपरीत भावसे देखनेमें आती हैं। दोष बलवान् हो कर जब दृष्टिके अधोभागमें रहता है, तब समीपस्थ द्रव्य, ऊर्द्ध भाग-में रहनेसे दूरस्थ द्रव्य और पार्श्वभागमें रहनेसे पार्श्वस्थ द्रव्य नहीं दीखता। दोष जब दृष्टिमें चारों तरफ फैल जाता है, तब सभी वस्तु सङ्कुचित दीख पड़ती हैं। दृष्टिके केवल दो स्थानोंमें यदि दोष रहे, तो एक आकृति तीन बार और यदि अवस्थित भावसे रहे, तो बहुत बार देखती है। चतुर्थ पटलमें दोष रहनेसे तिमिर रोग उत्पन्न होता है। तिमिर रोगमें, एक ही समयमें दृष्टिरोध होनेसे वह लिङ्गनाश रोग हो जाता है। तिमिर रोग-के अत्यन्त गभीर होने पर चन्द्र, सूर्य, विद्युत् और नक्षत्रविशिष्ट आकाश तथा निर्मल तेज और ज्योति पदार्थ देखनेमें आते हैं। लिङ्गनाश रोगकी इस अवस्था-को नीलिका वा काच कहते हैं। यह लिङ्गनाश रोग यदि वायुसे उत्पन्न हो, तो सभी पदार्थ लाल, सचल और मैले दीखते हैं। पित्त कर्त्तृक उत्पन्न होनेसे आदित्य, खद्योत, इन्द्रधनु, तड़ित् और मयूरपुच्छके जैसा विचित्र वर्ण अथवा नील वा कृष्णवर्ण, वा श्वेत चामर वा श्वेतवर्ण मेघके जैसा अत्यन्त स्थूल अथवा मेघशून्य समयमें मेघाच्छन्नके जैसा, अथवा सभी पदार्थ जल-प्लावितसे दीखते हैं। रक्त कर्त्तृक उत्पन्न होनेसे सभी रक्तवर्ण और अन्धकारमय, कफसे उत्पन्न होनेसे सभी श्वेतवर्ण और स्निग्ध तैलाक्त जैसे दीखते हैं। पित्त कर्त्तृक उत्पन्न होनेसे परिम्लायिरोग होता है। इसमें सभी दिशाएं नवोदित सूर्यकी नाईं वा खद्योतपूर्ण वृक्ष समूहकी नाईं दीख पड़ती हैं। वायु कर्त्तृक दोष उत्पन्न होनेसे दृष्टिमण्डल रक्तवर्ण, पित्तसे परिम्लायि,

रोगयुक्त अथवा नीलवर्ण-पैत्तिकमें पीतवर्ण श्लैष्मिकसे रक्तवर्ण, और सन्निपातसे विचित्रवर्ण होता है।

परिम्लायिरोगमें दृष्टिमण्डलमें रक्तजन्य पत्रवर्ण मण्डलाकार चक्षु उत्पन्न होता है अथवा समूचा मण्डल कुछ नीलवर्ण हो जाता है। इस रोगमें कभी कभी आपसे आप दोष क्षय हो कर दृष्टिकी शक्ति बढ़ जाती है।

इसके सिवा पित्तविदग्धदृष्टि, श्लेष्मविदग्धदृष्टि, रात्र्यन्धता, धूमदर्शी, ह्रस्वजाड्य, नकुलान्धता और गम्भीरिका ये सात प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं। दृष्टिके स्थानमें दूषितपित्तके रहनेसे वह स्थान पीला हो जाता है तथा सभी वस्तु पीली नजर आती हैं। इसे पित्तविदग्धदृष्टि कहते हैं। दोषके तृतीय पटलमें रहनेसे रोगीको दिनके समय नहीं सूझता, रातको सूझता है। दृष्टि जब श्लेष्मासे विदग्ध होती है, तब सभी पदार्थ सफेद दीख पड़ते हैं।

तीनों पटलोंमें यदि थोड़ा थोड़ा दोष रहे, तो नक्तान्धता दूर न उत्पन्न होती है। इसमें दिनके समय सूर्य किरणमें श्लेष्माको अल्पताके कारण दृष्टिशक्ति प्रकट होती है। शोक, ज्वर, परिश्रम और मस्तकके अभिताप द्वारा दृष्टिके अभिहत हो जाने पर सभी पदार्थ धूम्रवर्ण दिखे जाते हैं। इसको धूमदर्शी कहते हैं। इसमें दिनके समय बारीक वस्तु बहुत कठिनतासे नजर आती है।

रातको नेत्रयुग्म द्वारा पित्तकी अल्पताके कारण वे सब पदार्थ देखे जाते हैं, उसे ह्रस्वजाड्य कहते हैं। जिस रोगमें दृष्टिके दोषाभिभूत हो जानेसे नकुलकी दृष्टिके समान चित्र तथी आभा निकलती है, उसे नकुलान्ध कहते हैं। वायु कर्त्तृक दृष्टिमार्गके विरुद्ध होनेपर भी अथवा अभ्यन्तर भाग बहुत गम्भीर भावसे प्रकाशित होता है।

इन सब रोगोंके सिवा दृष्टिस्थानमें सनिमित्त और अनिमित्त नामक दो प्रकारके और भी वायुरोग हैं। मस्तकके अभितापसे दृष्टि हत होने पर सनिमित्त होता है। यह रोग अभिष्यन्द लिङ्गनाश द्वारा जाना जाता है। देवता ऋषि गन्धर्व, महोरग वा ज्योतिः अथवा दीप्ति मान् पदार्थोंके दर्शनसे दृष्टिहत होने पर अनिमित्त लिङ्गनाश होता है। इस रोगमें दृष्टि स्वच्छ विमल वैदूर्य मणिको तरह दीख पड़ती है। दृष्टि द्वारा अभिहत इस होने पर विदीर्ण, अवसन्न या हीन मालूम पड़ती है।

(सुश्रुत चिकित्सित ७ अ०)

कुपित दोषके चार ग्र पटलमें रहनेसे दृष्टि बिलकुल बन्द हो जाती है इसीको कोई तिमिर और कोई लिङ्गनाश कहते हैं। यह तमोमय तिमिररोग यदि अचिरजात हो तो रोगीको सब पदार्थ चन्द्र, सूर्य नक्षत्र विद्युत्, अग्नि आदिका तेज और सुवर्णादि तेजस्वी पदार्थोंके समान दीखने लगते हैं। इसी लिङ्गनाश रोगको नीलिका और काच कहते हैं। (भावप्र०) इन रोगोंके लक्षण पहले ही लिख चुके हैं। विशेष विवरण चक्षुरोग और नेत्रशब्दमें देखो।

तिमिरनुद (स० पु०) तिमिरं नुदति अपनयति नुद क्विप्। १ सूर्य। (बृहत्सं० ४।२८) (त्रि०) २ अन्धकार नाशक, अन्धकारका नाश करनेवाला।

तिमिरभिद् (स० पु०) तिमिर भिनत्ति भिद क्विप्। १ सूर्य। (त्रि०) २ अन्धकारको नाश करनेवाला।

तिमिररिपु (स० पु०) तिमिरस्य रिपुः, ६-तत्। १ सूर्य। (त्रि० २ तिमिरनाशक, अन्धकार दूर करनेवाला।

तिमिरहर (स० पु०) १ सूर्य। २ दीपक।

तिमिरा (स० स्त्री०) हरिद्रा, हल्दी।

तिमिरारि (स० पु०) तिमिरस्य अरिः, ६-तत्। १ सूर्य। २ अन्धकारका शत्रु।

तिमिरावलि (स० स्त्री०) अन्धकारका समूह।

तिमिरि (स० पु०) तिमि मत्स्य, तिमि नामको मछली।

तिमिरिन् (स० पु०) तिमिर अस्त्यस्य तिमिर इनि। १ अन्धकारवाले, अन्धकार करनेवाला। २ इन्द्रगोप कीट, जुगनू।

तिमिर्ष (स० पु०) दीर्घसूत्र।

तिमिष (स० पु०) तिम इषच्। १ शाक भाजी, ककड़ी, फूट। २ कुष्माण्ड, कुम्हड़ा। ३ नारङ्ग, तरबूज।

तिमी (स० स्त्री०) तिमि पृषोदरादित्वात् लोप। १ तिमि मत्स्य। २ दक्षको एक कन्या। यह कश्यपकी स्त्री और तिमिङ्गिलोंकी माता थी।

तिमोर (स० पु०) वृक्षभेद, एक पेड़का नाम।

तिमुहानी (हि० स्त्री०) १ वह स्थान जहां तीन ओर तीन राह गई हों। २ वह स्थान जहां तीन ओरसे नदियां आ कर मिली हों।

तिम्म (तिम्मप)—इस नामके दाक्षिणात्यमें बहुतसे छोटे छोटे राजा, सामन्त वा सर्दार हो गये हैं। कृष्णा जिलेमें आविष्कृत बहुतसे शिलालेखोंमें उनका नाम उल्लिखित हुआ है। इनमेंसे एक कृष्णदेवरायके मन्त्री थे, जिन्होंने १४३७ शकमें कोण्डवीड़ अधिकार किया था। मङ्गल-गिरिके शिलालेखमें इनका माहात्म्य वर्णित है। मङ्गल-गिरिके गरुड़स्तम्भ मन्दिरमें एक शिलालेख है, जिसमें सक्कराजपुत्र तिम्मका परिचय पाया जाता है। विजय-नगरकी एक शिलालिपिमें चिक्क तिम्मय्यदेवका महा-प्रभुके पुत्र तिम्मराजके नामसे उल्लेख मिलता है। वेङ्कट-गिरिके नायुड़ू वंशमें भी गणि-तिम्म नामके एक परा-क्रमशाली पुरुषका जन्म हुआ था। इनके समयमें पल्नाड़ और कृष्णाके दक्षिणांशस्थित प्रदेशोंमें कुछ दस्यु-सरदा-रोंने मिल कर बहुत उपद्रव किया था। इन्होंने विजय-नगराधिपति अच्युतदेवरायके आदेशानुसार वहां जा कर उनका शासन किया था। इसी तरह १५३० ई०में मलपुरके कृष्णाके कुछ सरदारोंको परास्त किया था। आखिरको रणक्षेत्रमें ही ये मारे गये थे। इनके पुत्रने भी मुसलमान सरदारोंसे घोर युद्ध किया था।

तियला (हिं० पु०) स्त्रियोंकी पोशाक।

तिया (हिं० पु०) तीन बूटियोंका ताशका एक पत्ता। २ नक्कीपुरके खेलका एक दांव।

तिरकट (पु०) अगला पाल।

तिरकट गावासवाई (पु०) वह पाल जो सबसे ऊपर और आगेमें रहता है।

तिरकटगावी (पु०) ऊपरका पाल।

तिरकट डोल (पु०) अगला मस्तूल।

तिरकट तवर (पु०) छोटा और चौकोर अगला पाल। यह सबसे बड़े मस्तूलके ऊपर आगेकी ओर लगाया जाता है। जब धीमी हवा चलती है तो यह पाल काममें लाया जाता है।

तिरकट सवर (पु०) वह पाल जो सबसे ऊपर रहता है।

तिरकट सवाई (पु०) रस्सेमें बंधा हुआ अगला पाल। यह मस्तूलके सहारेके लिये लगाया जाता है।

तिरकाना (हिं० क्रि०) १ ढोला छोड़ना। २ रस्सा ढोला करना।

तिरकुटा (हिं० पु०) सोंठ, मिर्च, पीपल इन तीन कड़ई दवाइयोंका समूह।

तिरखूंटा (हिं० वि०) त्रिकोणयुक्त, जिसमें तीन कोने हों।

तिरच्छ (सं० पु०) तिनिश वृक्ष।

तिरछउड़ी (हिं० स्त्री०) मालखम्भकी एक कसरत।

तिरछा (हिं० वि०) जो ठीक सामनेकी ओर न जा कर इधर उधर हट कर गया हो। २ अस्तरके काममें आने-वाला एक प्रकारका रेशमी कपड़ा।

तिरछाना (हिं० क्रि०) तिरछा होना।

तिरछापन (हिं० पु०) तिरछा होनेका भाव।

तिरछी (हिं० वि०) तिरछा देखो।

तिरछी बैठक (हिं० स्त्री०) मालखम्भकी एक कसरत।

तिरछौहां (हिं० वि०) जो कुछ तिरछापन लिए हो।

तिरछौहैं (हिं० क्रि०-वि०) वक्रता, तिरछापन लिए हुए।

तिरना (हिं० क्रि०) पानीकी सतहके ऊपर रहना, उत-राना। २ तैरना, पैरना। ३ पार होना। ४ मुक्त होना, उद्धार पाना।

तिरनी (स्त्री०) एक डोरी जिससे घाघरा या धोती नाभिके पास बांधते हैं, नीबी तिन्नी। २ नाभिके नीचे लटकता हुआ घाघरे या धोतीका एक भाग।

तिरप (हिं० स्त्री०) नाचमें एक प्रकारका ताल।

तिरपटा (हिं० वि०) जो तिरछी आंख करके देखता हो, ऐंचाताना।

तिरपन (हिं० वि०) १ जिसकी संख्या पचाससे तीन ज्यादह हो। (पु०) २ वह संख्या जो पचास और तीनके योगसे बनी हो।

तिरपाई (हिं० स्त्री०) वह चौकी जिसमें तीन पाये लगे रहते हैं, स्टूल।

तिरपाल (हिं० पु०) १ छाजनमें खपड़ोंके नीचे दिए जानेका फूस या सरकण्डोंके लम्बे पूले। २ वह कन-वस जिसमें रोगन चढ़ा रहता है।

तिरपौलिया (हिं० पु०) वह बड़ा स्थान जिसमें तीन फाटक हों और जिसमें होकर हाथी, घोड़े, ऊंट इत्यादि सवारियां अच्छी तरह निकल सकें।

तिरकमा (हि॰ पु॰) तिरकस देखो ।

तिरखो (हि॰ स्त्री॰) सिन्धु देशमें एक प्रकारकी नाव-का नाम ।

तिरमिरा (हि॰ पु॰) १ कमजोरीके कारण नजरका एक दोष । २ तीक्ष्ण प्रकाशमें नजरका न ठहरना चकाचौंध । ३ घी तेल इत्यादिके छींटे जो पानी दूध प्रभृति तरल पदार्थोंके ऊपर तैरते दिखाई देते हैं ।

तिरमिराना (हि॰ क्रि॰) रोशनीके सामने नजरका न ठहरना, चौंधना, झपना ।

तिरवट (हि॰ पु॰) तिल्लानेकी जातिका एक प्रकारका राग ।

तिरवा (फा॰ पु॰) किसी कमानको उसकी पूरी कहां तक एक तीर जा सके ।

तिरश्च (स॰ स्त्री॰) मध्याकारका तिर्यक् पदच्छ्म, खारपाईके तिरछे पाये ।

तिरश्चता (स॰ त्रि॰) तिरश्चीन तिरछा ।

तिरश्चया (स॰ अव्य॰) गुप्तरूपसे छिपके ।

तिरश्चिराजि (स॰ पु॰) आङ्गिरस वंशके एक ऋषिका नाम ।

तिरश्ची (स॰ स्त्री॰) तिर्यक् जाति' जिससे ङीष् । १ पशु पक्षियोंकी स्त्री, मादा । (पु॰) २ आङ्गिरस वंशके एक ऋषिका नाम ।

तिरश्चीन (स॰ त्रि॰) तिर्यगेव स्वार्थे ख । १ तिर्यग्-भूत, तिरछा । २ कुटिल, टेढ़ा ।

तिरश्चीनगति (स॰ स्त्री॰) सतरञ्जकी एक गति, ऊंटोंका एक पेंच ।

तिरश्चीननियम (स॰ स्त्री॰) सामभेद ।

तिरश्चीनदृष्टि (स॰ त्रि॰) जिसमें तिरछा दाग दिया गया हो ।

तिरस् (सं॰ अव्य॰) तरति इत्यनेन तॄ-असुन् । १ अन्तर्धान, गायब । २ तिर्यग्, तिरछा । ३ तिरस्कार ।

तिरसठ (हि॰ वि॰) १ जिसकी संख्या साठसे तीन अधिक हो । (पु॰) २ वह संख्या जो साठ और तीनके योगसे बनी हो ।

तिरसा (हि॰ पु॰) एक तरहका थान जिसका एक सिरा चौड़ा और दूसरा तंग हो ।

तिरस्कर (स॰ त्रि॰) तिरस्करोति तिरस् क्लीव' तिरयति आच्छादयति । तिर करोति कृ-ट । आच्छादक, परदा करनेवाला, ढांकनेवाला ।

तिरस्करिन् (स॰ त्रि॰) तिरः करोति कृ णिनि । आच्छा दक, ढांकनेवाला ।

तिरस्करिणी (स॰ स्त्री॰) तिरस्करिन् न शापूर्वक-विधेरनित्यत्वात् तथात्वाय ततो ङीप् । १ पटमय आच्छा दक पदार्थ, परदा, कनात, चिक । २ ओट, आड़ । ३ मनुष्यको अदृश्य करनेकी एक प्रकारकी विद्या ।

तिरस्कारी (हि॰ पु॰) आच्छादक परदा ।

तिरस्कार (स॰ पु॰) तिरस् कृ घञ् । १ अनादर, अप मान । २ भर्त्सना फटकार । ३ अनादरपूर्वक त्याग । (त्रि॰) ४ अवज्ञाकारक, अपमान करनेवाला ।

तिरस्कारिन् (स॰ त्रि॰) तिरस् करोति कृ णिनि । १ आच्छा दक, ढांकनेवाला । (पु॰) २ पटभेद कनात चिक । (त्रि॰) ३ अवज्ञाकारक, अपमान करनेवाला ।

तिरस्कृत (स॰ त्रि॰) तिरस् कृ-कर्मणि क्त । १ अनादृत, जिसका तिरस्कार किया गया हो । २ आच्छादित, परदे में किया हुआ । ३ अनादरपूर्वक त्याग किया हुआ । (स्त्री॰) ४ तन्त्रसारोक्त मन्त्रविशेष तन्त्रसारका एक मन्त्र । इसके मध्यमें द्वकार और मस्तक पर दो वषट और अस्त्र होते हैं ।

तिरस्क्रिया (स॰ स्त्री॰) तिरस् कृ भावे श । १ अनादर, तिरस्कार । २ आच्छादन । ३ वस्त्र पहरावा ।

तिरस्य (स॰ पु॰) तिरस् आच्छादितात् यत् । अन्तर्धान, गायब ।

तिरहुत—यह अङ्गरेज तोरभुक्ति शब्दका अपभ्रंश है । १८७४ ई॰के शेष तक यह भारतवर्षके अन्तर्गत बिहार प्रदेशके पटना विभागके सर्वोत्तरवर्ती एक जिला था । बङ्गालके छोटे लाटके अधीन ऐसा बड़ा और अधिक जनाकीर्ण जिला दूसरा नहीं था । इसमें मुजफ्फरपुर, हाजीपुर, सीतामढ़ी, दरभङ्गा, मधुबनी और ताजपुर ये छह उपविभाग लगते थे । उस समय इसके उत्तरमें नैपालराज्य उत्तर-पूर्वमें भागलपुर जिला, दक्षिण-पश्चिम में मुङ्गेर जिला, दक्षिणमें गङ्गानदी, दक्षिण-पश्चिममें सारण जिला या गण्डक नदी, उत्तर-पश्चिममें चम्पारण

जिला था। उत्तर सीमामें नेपालराज्यके साथ अंग रेजी राज्यके सीमानिर्द्धारणके लिये खाई, नदी, ईंटे और काठ आदिके स्तम्भ हैं।

१८७५ ई०को १ली जनवरीसे यह बड़ा जिला शासनकार्यकी सुविधा और सुव्यवहारके लिये दो स्वतन्त्र जिलाओंमें विभक्त हुआ। मुजफ्फरपुर, हाजीपुर, सीतामढ़ी इन तीनों उपविभागोंको ले कर मुजफ्फरपुर तथा दरभङ्गा, मधुवनी और ताजपुर इन तीन उपविभाग लेकर दरभङ्गा जिला संगठित हुआ है। वास्तवमें अभी वङ्गाल-विहारके मानचित्रसे तिरहुत जिलेका अस्तित्व लोप हो गया है। मुजफ्फरपुर और दरभङ्गा इन दो जिलों का विवरण अब भी स्वतन्त्र भावसे संगृहीत नहीं हुआ है; सुतरां तिरहुत नाममें ही इनका कुछ कुछ विवरण दिया जाता है।

१७६५ ई०में जब सूबा विहार अंगरेजोंके हाथ आया, तब गङ्गाके उत्तरकूलवर्ती सारण, चम्पारण, तिरहुत और हाजीपुर ये चार स्थान सरकारमें विभक्त थे। उस समय सरकार तिरहुतका परिमाण ५०५२ वर्गमील और सरकार हाजीपुरका परिमाण ७८३५ वर्गमील था, किन्तु उस समय सारे तिरहुत जिलेका परिमाण केवल ६३४३ वर्गमील था, पहले सरकार तिरहुत और सरकार हाजीपुर इन दोनोंमें १०४ परगने थे। इन सब परगनोंके नामकी तालिका नहीं पाई जाती, पर सरकारी कागजातसे जाना जाता है, कि उस समय भागलपुर और मुङ्गेर जिलोंके अधिकांश स्थान इन्हीं दो सरकारोंके अधीन थे।

१७८५ ई०में भागलपुर और मुङ्गेरके अन्तर्गत बलिया, मस्जिदपुर, वादेभुसारी, इमादपुर, कुढ़ा, गावखण्ड, कवखण्ड, नारादिगर, छय, फरकिया, मालकी वभोया, मानले गोपाल और नयपुर ये तेरह परगने तिरहुत कलेक्टरीके अन्तर्गत हुए, किन्तु १८३७ ई०में ये पुनः तिरहुतसे अलग कर दिये गये। १८६५ ई०में सारणके अन्तर्गत परगना बावरा और मुङ्गेरके अन्तर्गत परगना वादे भुसारी तिरहुतके अन्तर्भुक्त हुआ तथा १८६८ ई०में गङ्गानदीकी गति परिवर्त्तित हो जानेसे पटनाके अन्तर्गत भीमपुर, गयासपुर तथा आजिमाबाद इन परगनोंके कई अंश तिरहुतके अन्तर्भुक्त हुए।

तिरहुत जिलेका भूभाग साधारणतः पङ्कमय है, बीच बीचमें नदी है, कई जगह जङ्गल भी हैं। बांस और आमके वन यथेष्ट हैं। समस्त भूभाग जमीनकी प्रकृतिके अनुसार तीन भागोंमें विभक्त किया जा सकता है। दक्षिण-पश्चिममें हाजीपुर, बालागाछा, सरैसा, विपाड़ा, रति और गदेश्वर परगनेको लेकर एक विभाग बना है; इसकी जमीन ऊंची और उर्वरा है। बाद छोटी गण्डक और बाघमती नदियोंके अन्तर्गत दुआब भूभाग है; इसकी जमीन पङ्कमय है, वर्षामें नदी बढ़ जाती है। यहांका प्रधान शस्य खरीफ है। तृतीय विभाग बाघमती नदीके उत्तर और पूर्वमें है, यहांकी जमीन भी पलड़ी है और जिलेका मध्य भाग सबसे अधिक स्वास्थ्यकर है। हैमन्तिक धान ही इस अञ्चलका प्रधान शस्य है।

जमीन स्वभावतः रेतीली है, कहीं कङ्कर और कहीं मट्टीमें सोरा तथा नमक पाया जाता है। नुनिया नामकी एक जाति सोरा और नमकसे अपनी जीविका निर्वाह करती है।

तिरहुतमें गङ्गा, बड़ी गण्डक, वया, छोटी गण्डक और तिलयुगा ये चार नदियां प्रवाहित हैं। इनमेंसे गङ्गा, गण्डक, छोटी गण्डक, बाघमती छोटी बाघमती, तिलयुगा और कराई इन सात नदियोंमें वर्ष भरमें सभी समय जा आ सकते हैं। इनके सिवा केवल वर्षाकालमें कमला और इसकी शाखा नदी बलान, धाउस, झिम, लाखनदाई, पुरानी बाघमती और वयामें भी गमनागमन होता है।

गंगा—शिकमागेपुरके निकट गङ्गानदी इस जिलेकी दक्षिणी सीमाके रूपमें गिनी जाती है। हाजीपुरके निकट चामताघाटसे कई कोस उत्तर-पूर्वमें बाढ़ नामक स्थानके सामने गण्डक गङ्गामें जा मिली है। वर्षाकाल छोड़ कर दूसरे समयमें गङ्गाकी चौड़ाई आध कोस तक रहती है, किन्तु वर्षाकालमें बहुत बढ़ जाती है। सारण दियारासे गङ्गाकी एक स्वाभाविक खाड़ी निकल कर हाजीपुरके निकट नेपाली मन्दिरके नीचे गण्डकके साथ मिली है। इसकी चौड़ाई इतनी थोड़ी है कि इसे किसी हालतमें नदी नहीं कह सकते। गङ्गामें जब जल बढ़ आता है, तब तीरवर्ती सभी स्थान जलमग्न हो जाते

है और मनुष्यकृत् बाँध भी क्षतिग्रस्त हो कर उसमें गङ्गा का जल प्रवेश हो जाता है जिससे तीरवर्ती ग्राम प्लावित हो जाते हैं। लालगंज उपविभागमें प्रतिवर्ष प्लावन होता है। गङ्गाके किनारे तिरहुतमें कोई विख्यात ग्राम नहीं है। बाढ़के मार्गमें से गङ्गा उत्तरपूर्वको ओर घूम कर बाजितपुर तक आई है और दक्षिण-पूर्वको ओर तिरहुत जिलेसे दूर हट गई है।

गण्डक—हाजीपुरके निकट यह गङ्गाके साथ मिली है। यह नदी कहीं कहीं नारायणी तथा शालग्रामी नामसे भी पुकारी जाती है। हिमालयसे उत्पन्न हो कर मुजफ्फरपुरके बघौस मोतकोठीके निकट यह तिरहुतमें प्रवेश करती है बाद दक्षिण-पूर्वकी ओर प्रवाहित हो कर हाजीपुर तक चली आई है। गण्डकके किनारे लालगंज ही प्रधान शस्य का बाजार है। इसका स्रोत बहुत प्रबल है। नाव द्वारा आने जानेमें बहुत खतरा है। हजार मन बोझ लाद कर नाव लालगंज तक अच्छी तरह आ सकती है। गण्डकको तरह तीर भूमिकी अपेक्षा ऊँचा हो गया है। इसीसे बाढ़ रोकनेके लिये दोनों किनारों पर बाँध दिये गये हैं। सारन जिलेकी ओर जो बाँध है, वह बहुत ऊँचा है, किन्तु तिरहुत जिलेका बाँध उतना ऊँचा नहीं है, इसी कारण बाँध पार हो कर प्लावन हो जाता है।

बया—चम्पारन जिलेमें गण्डकसे बया निकल कर बरहोल गोमकोठीके निकट तिरहुत जिलेमें प्रवेश करती है। दक्षिण-पूर्वको ओर यह क्रमशः कुढ़नी, मरिहा सठोलिया, बिलसारा और लालपुर पतोरी गोल-कोठीके बगल हो कर जिलेके दक्षिण-पूर्व प्रान्तमें गङ्गाके साथ आ मिली है।

छोटी गण्डक—यह चम्पारन जिलेसे निकल कर मुजफ्फरपुर विभागमें घोघे बाग ग्रामके निकट तिरहुत जिलेमें प्रवेश करती है, बाद मुजफ्फरपुरके समीप टेढ़ी हो कर पठारकोठीके नीचे होती हुई शहरके कोस पश्चिम गङ्गामें गिरी है। वर्षाकालमें नाव गङ्गासे दो हजार मन बोझ ले कर दबीस तक और, हजार मन ले कर मुजफ्फरपुर तक आ सकती है। नगर बस्तीके निकट इस नदीके ऊपर हो कर 'दरभङ्गा स्टेट रेलवे' गई है।

इसके किनारे मुजफ्फरपुर समस्तीपुर, और बघैरा प्रधान वाणिज्य केन्द्र हैं।

वलान—यह लालगंजके निकट छोटी गण्डकसे निकल कर लालपुर दक्षिण समरावके समीप होती हुई जहाँ बागमती नदी सुन्दरके पास छोटी गण्डकमें मिली है ठीक उससे कुछ ऊपरमें बागमतीके साथ मिली है।

बागमती यह नेपालमें काठमाण्डू नगरके निकट उत्पन्न हो कर सीतामढ़ी उपविभागमें मनियारी घाटके निकट तिरहुत जिलेमें प्रवेश करती है। कुछ दूर जा कर इसमें लालबकिया नदी आ मिली है। बाद यह कटरा तक छोटी गण्डकके साथ समान्तर भावमें जा कर पहले इसके पासके निकट छोटी गण्डकमें हो मिली थी, किन्तु अभी घूम कर हयाघाटके निकट करई नदीके सहारे तिल-युगा नदीमें आ गिरी है। बागमतीका पुराना गर्भ आज भी पुरानी बागमती नामसे पुकारा जाता है। दरभङ्गा और मुजफ्फरपुर शहरसे दूर गाईघाटसे नामक स्थानसे नूतन बागमती दरभङ्गा और मुजफ्फरपुर रास्तेको काटती हुई चली गई है। तुर्की नामक स्थानमें बाढ़का पानी रोकनेके लिये बाँध है। इस नदीमें अदौरी नामक स्थानके पास लालबकिया, मनियारी घाटके पास सूरंगी नदी, सीतामढ़ीके नीचे दरभङ्गा और मुजफ्फरपुरके रास्तेसे ८ कोस दक्षिणमें लखनदेई नदी मिली है। बाद तीन नामक स्थानमें बसवा नदी और ग्रामोंमें पूर्वसे दाउस और पश्चिमसे भिन्न नदी छोटी बागमतीमें मिल गई है। इसके बाद छोटी बागमती दरभङ्गा शहरसे ८ कोस दक्षिणमें हयाघाटके निकट बड़ी बागमतीमें आ गिरी है।

करई—बागमती जब पुरानी बागमती नदीसे हो कर बहती थी, तब यह एक सामान्य नदी थी, अभी यही हयाघाटके नीचे बागमतीका प्रधान स्रोत हो गई है। सुन्दरको सीमामें शिवनगर नामक स्थानके निकट यह तिलयुगा नदीमें मिली है।

तिलयुगा—यह नेपालसे निकल कर नानपुरके पास तिरहुतकी सीमामें गिरी है। राजनागर ग्रामके निकट यह दो भागोंमें विभक्त हो कर भेजापामके समीप पुनः

मिल गई है। पश्चिमको भागामें आगता नामक स्थानके पास यह बलान नदीमें मिली है। बाइमारीसे ले कर नदीके गर्भ तक जगह जगह बांध दिये हुए हैं। नाव जाने आनेका कोई रास्ता नहीं है।

कमला—यह नेपालसे निकल कर जयनगर नामक स्थानसे तिरहुतमें प्रवेश करती है। पहले यहां शिला-नाथ नामक एक शिवमन्दिर था जो क्रमशः नदीकी गति बदल जानेसे, नदीके गर्भमें पड़ गया है। कमतौलके निकट कमला बाघमतीमें मिली है। कमलाकी पुरानी खाई तिलकेश्वरके निकट तिलयुगा नदीमें गिरती है।

इनके सिवा छोटी बलान नयाधार, कमला, धरडोन नाला आदि नदियां हैं।

ताजपुरसे ५ कोस दक्षिण-पश्चिममें सरैसा परगनेके मध्य तालबरैला नामक नाला ही विख्यात है। इसकी लम्बाई ३ कोस और क्षेत्रफल २० वर्गमील है।

तिरहुतमें खनिज द्रव्य कुछ भी उत्पन्न नहीं होता, लेकिन मट्टीके साथ सोरा और नमक पाया जाता है। हरौली नामक स्थानमें छोटी गण्डकसे कङ्कर निकाला जाता है।

वन्य द्रव्योंमें मधु, शम्बुक, मोम, आदिकी ढेरोंसे प्रस्तुत चूना, चिरायता, मदनकोस, गुग्ग, मुण्डि, तालमूली तथा मकाइ प्रभृति भेषज उत्पन्न होते हैं। जङ्गलमें भाँगका पेड़ भी होते हैं। यथार्थमें इस जिलेमें उतना जङ्गल वा परती जमीन नहीं है। जामुन, शीशम, भाव, आम, कटहल, महुआ आदिके वृक्ष भी यथेष्ट हैं।

इस देशमें सैकड़े पीछे ८८ हिन्दू और ८ मुसलमान हैं। धोघेवात नामक स्थानमें एक पार्वतीय जाति वास करती है। पहले वे एक नेपाली सुबेदारके भृत्यके रूपमें थे। सुबादारका वंश लुप्त हो गया है। उनके भृत्य खेती करके अपनी जीविकानिर्वाह करते हैं।

ब्राह्मणोंमें मैथिल और गौड हैं, जो विशेष कर मधुबनी और दरभङ्गामें रहते और तिरहुतिया ब्राह्मण कहलाते हैं। मैथिल ब्राह्मणोंमें श्रोत्रिय लोग श्रेष्ठ हैं। ये भलगैती, योगिया और गृहस्थ वा मैथिल, श्रोत्रिय, योगचड्डोला तथा पण्डित इन पांच भागोंमें विभक्त हैं। श्रोत्रिय लोग सबसे माननीय हैं। दरभङ्गके महाराज भी इसी श्रेणीके अन्तर्गत हैं। ये बङ्गालके कुलीन ब्राह्मणोंकी नाईं बहु-विवाह और इच्छानुसार कुछ दिन एक श्वशुरालयमें और कुछ दिन दूसरे श्वशुरालयमें रहते हैं। श्वशुरसे प्रति बार ये लोग रहनेके लिये रुपये आदि ले लेते हैं। सौराठ नामक स्थानके देव-मन्दिरमें यावदीय ब्राह्मणोंका मेला लगता है। इस मेलेमें अपनी अपनी श्रेणीके पण्डित प्रत्येक व्यक्तिको वंशतालिका खोलकर विवाह-सम्बन्धका निरूपण करते हैं। उच्च कुलकी सन्तानके पिता निम्न कुलमें विवाह होनेसे कुलमर्यादा स्वरूप रुपये आदि पाते हैं। इस मेलेके दिन वर और कन्याका नाम निरूपित होता और उनके पिताकी सम्मति-सूचक एक तालिका लिखी जाती है। श्रोत्रिय लोग यदि अपनी श्रेणीके सिवा भिन्न श्रेणीमें विवाह करें तो वे उसी श्रेणीके हो जाते और आत्मीय स्वजन परित्यक्त होते हैं। ये लोग अपने हाथसे कुदाल द्वारा पारते और जमीन सींचते हैं। केवल हल जोतनेके लिये किसी दूसरे (निम्न श्रेणीके लोगों) को नियुक्त करते हैं। पहले ये लोग किसीके यहां नौकरी नहीं करते थे, किन्तु अभी बहुतसे तहसीलदार और गुमस्ते हो गये हैं। इन लोगोंमेंसे बहुतसे आमके बगीचे लगा कर जीविका चलाते हैं। मैथिलब्राह्मण देखो।

ब्राह्मणोंके बाद इस देशमें राजपूतोंका सम्मान अधिक है। ये अधिकांश जमींदार और कृषक हैं। आज कल कुछ पुलिसके चौकीदार, प्यादे और घोड़ोंदार-का काम करते हैं। राजपूत और ब्राह्मणके बाद बाभन नामकी एक दूसरी जाती है। वे राजपूतोंकी अपेक्षा हीनमर्याद होने पर भी दूसरी दूसरी जातिकी अपेक्षा गण्य मान्य हैं। ये लोग जमीन्दार वा अयाचक-जीवी ब्राह्मणके नामसे परिचित हैं। बाभन देखो।

तिरहुतमें निम्नलिखित शहर विशेष प्रसिद्ध हैं—

मुजफ्फरपुर—यह मुजफ्फरखाँ नामक एक व्यक्ति द्वारा स्थापित हुआ था, इसीसे इसका नाम मुजफ्फरपुर पड़ा है। यह शहर अक्षा० २६° ७' २३" उ० और देशा० ८५° २६' २३" पू०में छोटी गण्डकके किनारे अवस्थित है। इसी नगरमें जिलेकी सदर अदालत है। यहां म्युनिसिपालिटी, कलेक्टरी, दीवानी और फौजदारी अदालत, जेल,

मर्त्तबान और स्तूप है। शहर बहुत परिष्कार और सड़कें प्रशस्त हैं। यहांके बाजार बड़े बड़े हैं और सुन्दर माल सस्तेमें बिकी होती है। जगन्नाथके समीप मान सागर नामक एक मट्टीके महत जलाशय है जो किसी नदीके पुरातन गर्भका एक भाग है। बाजारमें तालाबके किनारे राय-भोला और शिवका मन्दिर है। यह शहर बहुत प्राचीन मालूम नहीं है। इसके स्थापनकर्त्ता मुजफ्फर खाँ एक 'आमिल' वा 'सबका नाए (नायब)' थे। अन्यलोगोंको होवाली मिलनेके बहुत पहले सर्कारमें उत्तरमें सिकन्दर पुर ग्राम, पूर्वमें बलौंगी ग्राम दक्षिणमें सैयदपुर और पश्चिममें मारिफ़गंजसे ७२ बीघे जमीन निकाल कर उसी में अपने नाम पर नगर स्थापन किया। क्रमशः इसकी उन्नति होती गई। १८१० ई॰ में छोटे गण्डकमें बाढ़से इसकी बहुत क्षति हो गई है।

रसूपा—यह मुजफ्फरपुरसे १ कोस दूर, पूना रास्तेके ऊपर अवस्थित एक छोटा ग्राम है। यहां शुक्रवार भादो में ७ दिनका एक मेला लगता है। यहां पीरका एक स्थान है जहां बहुतसे बाजे एकत्र होते हैं।

हरिया—यह मुजफ्फरपुरसे दक्षिण-पश्चिम ८ कोस दूर, गया नदीके किनारे अवस्थित है। यहां नीलकी एक कोठी है। यहांके ऊपर इसरावे रास्ते पर तीन गुम्बजका एक स्तूप है। यद्यपि थोड़े दूर जानेसे पर पत्थरका एक स्तम्भ है जो किसी एक ब्राह्मण द्वारा स्थापित हुआ है। लोग इसे 'भीमसेनका लाठा' कहते हैं। यह २० फुट ऊंचा और सिर्फ एक पत्थरका बना हुआ है। इसके ऊपर चौकोन पत्थर पर एक पत्थरकी सिंहमूर्त्ति है। सिंहमूर्त्ति तक स्तम्भकी ऊंचाई ४० फुट है। डा॰ राजा राजेन्द्र लाल मित्रके मतसे यह एक अशोकस्तम्भ है। इसके बगलमें एक गहरा कूआं है।

बसन्तपुर—हरियाको नीलकोठीसे कुछ दक्षिणमें यह वृहत् ग्राम अवस्थित है। यहां ग्राम्यसमिति है।

मानिकगञ्ज—मुजफ्फरपुरसे १५ कोस उत्तर-पश्चिममें गया नदीके किनारे पर यह शहर अवस्थित है। यद्यपि मोतिहारी मोतीपुर और जामजपुर तक सड़कें गई हैं। यहांका बाजार बहुत सस्ता होता है। तिलहन अनाज सिंह, रुई और नमकका व्यवसाय अधिक होता है। अन्यजातिको नील कोठी बाजारसे बहुत समीप है। यद्यपि उसे दूसरे देशमें भेजे जाते हैं।

जयराई—यह मुजफ्फरपुरसे ४ कोस दूर मोतिहारीके रास्ते पर अवस्थित है। इसी स्थानमें जयराई नील कोठी है। पहले यहां गोराको भी कोठी थी। सप्ताहमें दो बार हाट लगती है। यहां लोगपुरका रास्ता मुजफ्फरपुरके रास्तेमें आ मिला है।

बैसबाड़ा वर्त्ता—यह मुजफ्फरपुरसे १४ कोस दूर सीतामढ़ीके रास्ते पर अवस्थित है। यह स्थान पुरानी बाघमती नदीके किनारे बसा है। यहां एक बड़ी नीलकी कोठी है।

रामचक—मुजफ्फरपुरसे ११ कोस उत्तर पूर्वमें यह बड़ा ग्राम अवस्थित है। यहां मैरव नामका एक बड़ा मेला लगता है। इस मेलेमें गाय बैलकी बिक्री होती है। यहां एक नीलकी कोठी है। पहले यहां चीनीका कार-खाना था। इसके पश्चिममें लखनदाई नदी प्रवाहित है।

जटवा या पंचवटपुर—यह लखनदाई नदीके किनारे पर अवस्थित है। इसके पश्चिममें एक टूटा फूटा मट्टीका किला है। किलेका परिमाण प्रायः ६० बीघा और दीवार १० फुट ऊंची है। रामचन्द्र नामक एक व्यक्ति इस दुर्गके अधिपति थे। दरभङ्गा जाते समय वे अपने परिवारवर्गसे कह गये थे कि यदि उनको ध्वजा गिर जाये तो उनकी मृत्यु निश्चित समझना चाहिये। एक कुरमी राजाका शत्रु था, उसने ध्वजा तोड़ डाली और राजपरिवारको इसकी खबर दी। इस पर वे जलती हुई चितामें जल मरे।

मधुबनी—दरभङ्गा शहरसे ८ कोस उत्तर पूर्वमें यह शहर अवस्थित है। यह मधुबनी उपविभागका सदर थाना है। यहांका बाजार बहुत विस्तृत है। माछ मछली और कपड़े आदि प्रधान वाणिज्य द्रव्य हैं। शहरके उत्तरमें दरभङ्गा राज्य मधुमि हरि लोगसे जड़की कीर्त्ति शिलका भग्न "मधुबनीके बाबू" नामसे प्रसिद्ध है। इन्होंने अबकी परगनेके कई ग्राम राजपरिवारसे पाये हैं। इस शहरके भीतर नेपाल जानेका प्रधान पथ है।

भौवारा—मधुबनीसे पाव कोस दक्षिणमें यह बड़ा

ग्राम अवस्थित है। इसके दक्षिणमें एक दुर्गका भग्नावशेष देखा जाता है। पहले इस दुर्गमें ईंटोंकी दीवार थी। रघुसिंह नामक एक व्यक्तिने यह दुर्ग निर्माण किया था। ये दरभङ्गा-राजके वंशोद्भव थे। १७६२ ई०में इनके वंशीय प्रतापसिंह यहांसे अपना वासस्थान उठा कर दरभङ्गा ले गये। यहां एक मसजिदका भग्नावशेष है। अकबरके समसामयिक शासनकर्त्ता अलाउद्दोनने यह मसजिद निर्माण की थी।

बिरटपुर (विराटपुर)—यह खजोली थानाके अन्तर्गत एक ग्राम है। यहां भी एक दुर्गका ध्वंसावशेष और गृह-प्राचीरादिके चिह्न हैं। एक जगह गड्ढेमें महादेवको लिङ्ग मूर्त्तिके कुछ अंश हैं। कहा जाता है कि महाभारतके अनुसार राजा विराटने इस दुर्गको निर्माण किया था। तेली लोग राजाको स्वजाति और गड्ढेके शिवलिङ्गको कोल्हूका मूसल बतलाते हैं।

सौराठ—यह मधुवनीसे ४ कोसकी दूरी पर है। ३० वर्ष पहले दरभङ्गाके राजाओंने यहां एक शिवमन्दिरकी प्रतिष्ठा की है। उसी मन्दिरके निकट तिरहुतीय ब्राह्मणोंका वार्षिक मेला लगता है। कभी कभी लाखसे अधिक ब्राह्मण एकत्रित हो जाते हैं। इस मेलेमें वरकर्त्ता और कन्याकर्त्ता पुत्रकन्याका विवाह सम्बन्ध स्थिर करते हैं।

भञ्झारपुर—यह मधुवनीसे पूर्व दक्षिणमें ७ कोसकी दूरी पर अवस्थित है। इस छोटे ग्राममें दरभङ्गा राजवंशीय प्रतापसिंहके नाम पर प्रतापगञ्ज और राजा मधुसिंहकी बहन ओदेवीके नाम पर ओगञ्ज नामक दो बाजार हैं। दरभङ्गा राजको सभी सन्तान इस ग्राममें भूमिष्ठ हुई हैं, इसीसे यह प्रसिद्ध है। राजवंशके बहुतोंके निःसन्तान अवस्थामें मरने पर राजा प्रतापसिंहने निकटवर्त्ती सुर्णमग्रामवासी महन्त शिवरतनगिरिकी सेवा-सुश्रुषा की। महन्त भञ्झारपुर आये और अपनी जटाकी एक शिखा इस स्थानमें जला कर बोले कि जो यहां वास करेगा उसके पुत्ररत्न होगा। उनके कथनानुसार प्रतापसिंहने यहां एक वासस्थान निर्माण किया, किन्तु मकान तैयार होनेके पहले ही अपुत्रक अवस्थामें उनकी मृत्यु हुई। बाद उनके भाई माधसिंह मकान तैयार करा कर रहने लगे। यह ग्राम पहले राजपूतोंका था। महाराज छत्रसिंहकी स्त्री गर्भिणी हो कर प्रसवकाल तक इस घरमें थीं, इसीसे छत्रसिंहने इस ग्रामको खरीद लिया। यहां रक्षमालादेवीका एक मन्दिर है। इस ग्रामका पीतलका पनबट्टा और 'गङ्गाजली' नामका जलपात्र बहुत प्रसिद्ध है।

मधेपुर (मध्यपुर)—यह बरहमपुर, हरसिंहपुर, गोपालपुरघाट और दरभङ्गाके मध्यस्थान पर अवस्थित है। प्राचीन मिथिलाका केन्द्रस्थल होनेसे यह मधेपुर और मध्यपुर नामसे प्रसिद्ध है। महाराज मधुसिंहके चौथे लड़के रमापतिसिंह पच्चि परगना पा कर इस ग्राममें रहते थे। तिरहुत और पूर्णियाके रास्ते पर यह ग्राम अवस्थित होनेसे व्यवसायका केन्द्रस्थल माना गया है।

वासुदेवपुर—मधुवनीसे ५ कोस पूर्वमें यह ग्राम अवस्थित है। पहला इसका नाम गङ्गरपुर था। पीछे इसका नाम गङ्गरपुर-गन्धवार पड़ा और अन्तमें वासुदेवपुर हुआ है। इस विषयमें किम्बदन्ती इस प्रकार है यहां गन्ध और भैरव नामके दो भाई रहते थे। दोनों पराक्रमशाली और नाममात्रको तिरहुत राजाके अधीन थे। तिलयुगाके पूर्व-तीरवर्त्ती कई स्थानोंमें गन्धको जमींदारी थी और कराई नदीके दक्षिणमें भैरवका अधिकार था। तिरहुतके राजाने स्वयं उन्हें दमन नहीं कर सकने पर किसी दो विदेशियोंसे उन्हें मरवा डाला। जिस हत्याकारीने जिसे मारा, उसने उसीकी जमींदारी पुरस्कारमें पाई। गन्ध हन्ताके वंशधर "गन्धमारिया' और भैर हन्ताके वंशधर 'भौरमारिया' नामसे प्रसिद्ध हुए। गन्धमारियावंश गङ्गरपुरमें और भैरमारियावंश सिंहिया ग्राममें रहते हैं। इसीसे गङ्गरपुरका गन्धवार नाम पड़ा है। महाराज छत्रसिंहने विवाहके समय यह ग्राम यौतुकमें पाया था। महारानी छत्रपति कुमारी मरते समय यह ग्राम अपने मंझले लड़के वासुदेवको सौंप गई। छत्रसिंहकी मृत्युके बाद कुटरसिंहने राजा हो कर वासुदेवको जराइल परगना दान किया, उन्होंने इस राज्यपर अपना दावा करके विवाद ठान दिया। अन्तमें कुमार वासुदेवने जराइल परगनेको ग्रहण न कर, मातृदत्त गङ्गरपुरका नाम बदल कर अपने नाम पर रक्खा और वे वहीं जा कर रहने लगे।

मिर्जापुर—मधुबनीसे ४ कोस उत्तर-पूर्वमें यह ग्राम अवस्थित है। यहांके बाजारमें नेपालकी तराईसे अनाज आता है। यहांसे ६ कोस उत्तर-पूर्वमें मकरानाका ध्वंसावशिष्ट दुर्ग है। इस ग्रामका नाम भी मकरानापुर है। दुर्गकी लम्बाई ४सौ गज और चौड़ाई २सौ गज है। मकराना कौन थे इसका पता नहीं।

जयनगर—यह नेपालकी सीमा पर अवस्थित है और एक प्राचीन दुर्गका भग्नावशेष है। पहाड़ियोंको शासनमें रखनेके लिये किसी मुसलमानने यह दुर्ग निर्माण किया था। दुर्ग बनवाते समय इसीसे एक बलि दी गई थी इसीसे कारण यह स्थान पवित्र समझा जाता है। सम्भवतः १६९९ ई०में नवाबके शासनकर्त्ता अलाउद्दीनने कामरूपसे बेतिया तक जो सीमान्त दुर्ग निर्माण किये थे, उन्हींमेंसे यह एक दुर्ग होगा। नेपाल युद्धके समय यहां अंगरेजोंका स्कन्धावार था। इस ग्राममें नीलकी कोठी और चीनीका कारखाना है।

सिलानाथ—जयनगरके निकट कमलाके किनारे सिलानाथ ग्राम है। बैशाख महीनेमें यहां पन्द्रह दिन तक मेला लगता है। इस मेलेमें तिरहुतके अनाज और मवेशी तथा नेपालके मोरपिच्छ, कुठार, तेजपत्ता और कस्तूरी आती है। मेलेमें पहले शिवदर्शनके लिए बहुत से आदमी आते थे, किन्तु आजकल उस मन्दिर और प्रतिमाका लोप हो जानेसे आदमी बहुत कम आते हैं।

ककरौल—दरभङ्गासे ६ कोस उत्तरमें यह ग्राम पड़ता है। यहां तिरहुतीय ब्राह्मणोंका वास अधिक है। कुश्की कपड़ेके लिए यह स्थान प्रसिद्ध है, नेपाली लोग इस कपड़ेको अधिक व्यवहारमें लाते हैं। कुबेरपुर नामक ग्राममें कपिलेश्वर महादेवका एक मन्दिर है। प्रवाद है कि पुराणोक्त कपिल मुनि यहां रहते थे। वे ही शिवके प्रतिष्ठाता माने जाते हैं। माघ मासमें यहां एक मेला लगता है, जिसमें कुश्की कपड़े पीतलके बरतन और अनाज आदि बिकते हैं। यहांकी पुष्करिणीमें मखाना नामक एक प्रकारका सुस्वादु फल उपजता है।

दरभङ्गा—यह तिरहुतमें सबसे बड़ा नगर है। यह अक्षा० २६ १०´ ४० और देशा० ८५ ५४ पूर्वमें छोटी बागमतीके बांये किनारे पर अवस्थित है। यह एक उपविभागीय सदर थाना है।

दरभङ्गा शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

त्रिमण—यह दरभङ्गासे डेढ़ कोस पूर्व कमलाके किनारे पर है। यहां कार्त्तिक और माघी पूर्णिमामें एक मेला लगता है जिसमें सुहागिनी हिन्दू स्त्रियां कमलामें स्नान करने आती हैं। उनका विश्वास है कि स्नान करनेसे बन्ध्यात्वदोष दूर हो जाता है।

भौरा—यहां तीन बड़े दिग्गी हैं। बुड़दीह नामकी एक दिग्गी (दिग्घी) २ कोस लम्बी है। दरभङ्गाके राजा शिवसिंह पुष्करिणी खनन करनेका संकल्प करके एक हाथमें जलपूर्ण झारी ले घोड़े पर सवार हुए और जल गिराते गये। उन्होंने प्रण किया था कि झारीका जल जहां खतम हो जायगा, पुष्करिणीकी लम्बाई भी उतनी ही दूर तक रक्खी जायगी। वह यही दीर्घिका है। अभी इसमें उतना अधिक जल नहीं है। इसके एक अंशमें सामान्य जल है और अन्यान्य अंशोंमें खेती होती है। कमला नदी किसी समय इस दीर्घिकाके समीप हो कर बहती थी वह इसका अब जल निकास हो गई है। इसके निकट ११ बीघा जमीनमें शिवसिंहके प्रासादका भग्नावशेष है।

सिंहिया—बहेरासे ६ कोस दक्षिण सिंहिया ग्राम में करारै नदीके किनारे एक कोसकी दूरी पर महुल नामका एक दुर्ग है। इस दुर्गकी परिधि प्रायः डेढ़ कोस है। इसके चारों ओर १०।४० फुट ऊंची मिट्टीकी दीवार और उसके बाद गहरी खाई है। महुलगढ़के भीतरमें अभी कोई अट्टालिका नहीं है, बल्कि वहां खेती होती है। किन्तु १० से २ फुट नीचे खोदनेसे बहुतसी ईंटें देख पड़ती हैं। इसका इतिहास कुछ भी जाना नहीं जाता है। प्रवाद है, कि बनराजाने दुर्गाधिपति राजा महुलको पराजय और निहत किया था। गढ़के पूर्वमें गोसाईंकी कोठी है।

अहियारी—कामटौल ग्रामके दक्षिण पूर्वमें यह ग्राम अवस्थित है। यहांकी लोकसंख्या प्रायः ढाई हजार है। बैशाख महीनेमें अहल्यास्थान या सिंहेश्वर नामक स्थानमें एक मेला लगता है जो केवल एक दिन तक रहता

है और लगभग १० हजार मनुष्योंका समागम होता है। इस मेलेमें न कोई चीज खरीदी जाती है और न बेची जाती, केवल पुण्यकार्यका अनुष्ठान होता है। यात्री लोग यहां आ कर पहले देवकाली नामक पवित्र कुण्डमें स्नान करते हैं, बाद एक पत्थर परके एक पदचिह्नको देख कर आते हैं। यह सीता वा रामका पदचिह्न कह कर प्रसिद्ध है। इसी चिह्नके ऊपर एक मन्दिर बना है जिसे अहल्यास्थान कहते हैं। रामायणके अहल्यागौतम-सम्वादमें इसकी उत्पत्ति बतलाई गई है। यहां दरभङ्गाके राजका बनाया हुआ एक बहुत ऊँचा देवालय है।

मालीनगर—छोटी गण्डकके उत्तरी किनारे पर अवस्थित एक ग्राम। यहां रामनवमीसे ले कर पांच दिन तक मेला लगता है, जिसमें २ हजारसे ४ हजार तक मनुष्य एकत्रित होते हैं। १८४१ ई०में यहां एक शिवमन्दिर प्रतिष्ठित हुआ है उसी मन्दिरके निकट "राम नवमी" नामक उक्त मेला लगता है। शिव नामक कोई मध्यवित्त वैश्य थे। गुरुके उपदेशसे उन्होंने एक देव-मन्दिर निर्माण किया। इनके वंशधर क्रमशः धनी हो गये और सिपाही-विद्रोहके समय इसी वंशके बाबू नन्दीपत्‌सिंहने गवर्मेण्टको सहायता कर रायबहादुर उपाधि पाई थी। पूसा जमींदारी इन्हीं लोगोंकी है। इस वंशके मुखियाके मतानुसार शिवके पुरोहित निर्वाचित होते हैं।

पूसामें मालीनगर और बख्तियारपुर नामके गवर्मेण्टके दो खास ग्राम हैं। मालीनगर पहले दरभङ्गा राजकी मिलकीयतमें गिना जाता था। पहले यहां गवर्मेण्टके घोड़ेके बछड़े आदि उत्पादन तथा पालन करनेका स्थान था। किन्तु १८७२ ई०में वह काम बन्द कर दिया गया। यहां अफीम तथा कुसुमफूल उपजाये जाते हैं।

सीतामढ़ी—लाखनदाई नदीके पश्चिमी किनारे पर अक्षा० २६°३५´ उ० और देशा० ८५°२२´ पू०में यह शहर अवस्थित है। यहां प्रायः ६ हजार मनुष्य वास करते हैं। यह सीतामढ़ी उपविभागका सदर थाना है। सरसों आदिका तेलहन अनाज, धान, गायका चमड़ा और नेपालके द्रव्यादि ही यहांके प्रधान वाणिज्य द्रव्य हैं। सखुआ नामक काठ वर्षाकालमें नदीमें बहा ले जाते हैं। चैत-मासमें यहां पन्द्रह दिनका एक मेला लगता है। मेलेमें रामनवमीके दिन ही खूब उत्सव होता है। इसमें सब प्रकारकी चीजोंकी आमदनी होती है। हाथी और घोड़े भी बिकने आते हैं, किन्तु बैलोंके विक्रयके लिये ही यह मेला प्रसिद्ध है। सीतामढ़ीके बैल बहुत ताकतवर और सुन्दर होते हैं। प्रवाद है—सीतामढ़ी ही राजर्षि जनककी कर्षित यज्ञभूमि थी। इसी जगह सीताका जन्म हुआ था। खेतके जिस गड्ढेमें सीताकी उत्पत्ति हुई थी, वह अभी पुष्करिणीके रूपमें परिणत हो गया है। फिर किसीका मत है, कि निकटवर्ती पनौरा नामक स्थानमें सीताका जन्म हुआ था। सीतामढ़ीमें सीताका एक मन्दिर है। इसी मन्दिरके निकट हनुमान, शिव, दाही आदिके और भी ८ मन्दिर हैं।

शिउहर (शिवहर)—सीतामढ़ीसे ८ कोस दक्षिण-पश्चिममें यह ग्राम अवस्थित है। यहां बेतिया राजके एक ज्ञाति राजा हैं। उन्होंने एक लाख रुपये खर्च करके ग्राममें बहुतसे मन्दिर बनवाये हैं।

पनौरा—यह सीतामढ़ीसे तीन मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। लोग इस स्थानको सीतादेवीको जन्मभूमि बतलाते हैं। यहां एक मट्टीका बना हुआ बड़ा राक्षस और वानरकी मूर्ति है। जो हनुमान तथा रावणके युद्धका दृश्य कह कर प्रसिद्ध है। राक्षस मूर्त्तिके दो मस्तक हैं। इन दोनों प्रतिमाके निकट एक महन्त रहते हैं और प्रतिवर्ष उनका अङ्गराग होता है।

देवकाली—शिवहर ग्रामसे २ कोस पूर्वमें यह ग्राम अवस्थित है। यहां फाल्गुन महीनेमें एक मेला लगता है और एक बहुत ऊँचा शिवमन्दिर भी है। शिवको जल चढ़ानेके लिये बहुत दूरसे यात्री आते हैं।

भैरागिनिया—उत्तर सीमान्तवर्त्ती एक स्थान। यहां एक बड़ा बाजार है। जहां नेपाली और पहाड़ी वणिक पण्य द्रव्य बेचा करते हैं। इसके दक्षिणकी ओर वे नहीं जाते हैं।

बेलामी चपकोनी—इस ग्रामका नाम बेला है, किन्तु यहांका जल बहुत खराब है।

हाजीपुर—यह गण्डकके उत्तरी किनारे अक्षा० २५°

अ० २५° ४१´ उ० और देशा० ८५° १३´ २४´´ पू०में अवस्थित है। यह इसी नामके उपविभागका सदर थाना है। लोकसंख्या प्रायः २२५ हजार है। यह पटना शहरके विपरीत दिशामें पड़ता है और इसके तीनों ओर नदी रहनेके कारण जिलेमें यह एक विशेष प्रयोजनीय वाणिज्यकेन्द्र हो गया है। यहां एक दुर्ग और एक सराय, मन्दिर और मसजिदके भग्नावशेष हैं। जिनमेंसे एक सराय है जहां सैनिकगण कभी कभी आया करते हैं। सरायके मध्य एक दोतलाका बौद्धमन्दिर है। इस मन्दिर काष्ठकी शिल्पकारी तथा अट्टालिकाकी बनावट प्रशंसनीय है। मन्दिर ८० वर्ष पहलेका बना हुआ है। मोमिनपुरघाटके निकट जामीमसजिद नामकी पत्थरकी बनी हुई एक मसजिद है। हाजी इलियास् नामके किसी मुसल-मानने इसी वर्ष पहले यह शहर स्थापन किया था। मस-जिद भी उन्हींकी बनाई हुई है। मोमापुर और हाजीपुरके बाजारमें और दो मसजिदें हैं। मोमापुरकी मसजिदके प्रतिष्ठाताका नाम हमामखां है। शहरके पश्चिममें राम मन्दिर है। प्रवाद है कि जनकपुर जाते समय राम-चन्द्रजी यहां कुछ काल तक ठहरे थे। उनके अवस्थिति स्थान पर ही यह मन्दिर बना हुआ है। इसी कारण जिलेमें जो गोनपुरका मेला लगता है पहले वह हाजी-पुरमें ही लगता था। उस मेलेमें, नदीमें स्नान करनेका जो नियम था वह अब गण्डकके उत्तरी किनारे अर्थात् हाजीपुरमें हुआ करता है। पहले जिस दुर्गके सम्बन्धमें उल्लेख किया जा चुका है वही भी हाजी इलियासने १५० बीघा जमीनके ऊपर बनाया है।

१५७२ ई०में अकबरके एक सेनापति मुजफ्फरखाँने अफगान विद्रोहियोंके हाथसे हाजीपुर छीन लिया, किन्तु वे नदीके किनारे ठहरनेके समय शत्रुसे मार डाले गये। दो वर्षके बाद सुलेमान करानीके छोटे लड़के दाऊदने पटनेके दुर्गको तहस नहस कर दिया। इस पर दाऊद को पटने तथा बिहार पर शासन करनेके लिये अकबरको मुगलोंसे युद्ध करना पड़ा। दाऊदने हाजीपुरकी किलेमें आश्रय लिया। मुगल-सेनाने दुर्ग अवरोध किया। अकबरको यह संवाद मिलने पर वे स्वयं पटनेकी ओर चल पड़े। उन्होंने तीन हजार सेना साथ ले हाजी-पुरके गढ़को छीननेका संकल्प किया। हाजीपुरके अमीर गजपति सेनापति हो कर लड़ने गये। कुमारपति फतेहखान आदि तथा और भी बहुतसे सैनिक मारे गये। समीपके मसूम टाउनके निकट मिल गये, जिसका उद्देश्य यह था कि वे इससे अपना परिणाम समझ सकेंगे। अक-बर अपना युद्ध देखनेके लिये पञ्च-पहाड़ीके ऊपर गये और फिर लौट आये। पांच दिनके बाद दाऊद भाग-के उड़ीसा भाग आये; वहां वे पराजित हो कर सन्धि करनेको बाध्य हुए, किन्तु १६०० ई०में उन्होंने विद्रोही हो कर मुगल सैन्यको हाजीपुरसे निकाल भगाया। पीछे मुजफ्फरखाँने उन्हें अच्छी तरहसे परास्त किया। १६०८ ई०में विद्रोही शरव बहादुरने इस दुर्गमें आश्रय लिया। हाजीपुरके दीवान मुहम्मद तामिका द्वारा उनका जागीर छीन ली जाने पर वे बागी हो गये। मुहम्मद (अमोल), पुरुषोत्तम (बकायी) और अमर्पर (बकिमा)ने शरव बहादुरका पक्ष लिया। अन्तमें शरव बहादुरने पुरुषोत्तमको मार कर सारा बिहार प्रदेश हस्तगत किया, किन्तु पटनेके युद्धमें पराजित हो कर उन्होंने हाजीपुरके दुर्गकी शरण ली। महाराजाओंने एक मास अवरोध करनेके बाद उन्हें यहांसे निकाल दिया। १६८० ई०में मसूमखांके सेनापति भाग्यवान इसी स्थान पर परा-जित हुए थे। किसी समय यही हाजीपुर सरकार हाजीपुरका प्रधान शहर था, उस समय इस में ११ परगने लगते थे। अभी इसके कई एक परगने मुजफ्फरपुर जिलेमें मिला दिये गये हैं।

लालगंज—गण्डकके पूर्वी किनारे पर हाजीपुरसे ६ कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित एक प्रधान वाणिज्य केन्द्र और विख्यात शहर। इसके कुछ दूरमें थे डिया नील कोठी है। पहले ओलन्दाज लोग इस कोठीमें शोरेका कारोबार करते थे। तिरहुतमें यूरोपीय कोठियोंमें केवल यही एक आदि और पुरातन है। १७८१ ई०में ओलन्दाज इष्टइण्डिया कम्पनीने यह कोठी और इसके सम्पर्क १३ बीघा जमीन जगन्नाथ सरकार नामक एक व्यक्तिसे एक हजार रुपयेमें खरीदी थी। इस विषयके कागजात अब भी विद्यमान हैं। जिसे जगन्नाथ सरकारके वंशधरोंसे पीछे गवर्मेंटने खरीद लिया है।

तिरहुतमें आम, कटहल, बेल, नीबू, अनार, केला, अमरूद, और जामुन यथेष्ट उपजते हैं। तालाबमें मखाना बहुत होता है।

धान तीन प्रकारका होता है—आउस या भदई, अगहनी या हैमन्तिक और भाठो। यहांकी प्रधान उपज गेहूं, जौ, चना, उड़द, कोदों, जुनहरी, मडुआ, कोटो, श्यामा, चेना, अरहर, खेसारी, मूंग मसूर आल्, तिल, तिसी, रेंडी, रुई, पान, ईख, तमाखू, अफोम, कुसुमफूल आदि हैं। खनिज द्रव्योंमें सोराका काम भी खूब बढ़ा चढ़ा है।

शासनविभाग–तिरहुत जिला दरभङ्गा और मुजफ्फरपुर इन दो जिलोंमें विभक्त हुआ है। इसके प्रत्येक जिलेमें तीन उपविभाग हैं। इन छः विभागों वा पूर्वतन तिरहुत जिलेमें अभी कुल निम्नलिखित ८४ परगने लगते हैं— १)अहिलवर (२) अहीम (३) अकबरपुर (४)आला-पुर (५) बावरा नं० १ (६) बावरा नं० २ (७) बावरा तुर्की (८) बाटेभुसारी (९) बहादुरपुर (१०) बालागाछ (११) बालूयन (१२) बरैल (१३) बसोतरा (१४) बेगई (१५) भटवार (१६) भाला (१७) भरवारा (१८) भौर (१९) बिचौर (२०) बोचुहा (२१) चकमणि २२) धरौरा (२३) ढटनबंगरा (२४) दिलवरपुर (२५) फखुआबाद (२६) फरदपुर (२७)गटेश्वर (२८) गड़चांट (२९) गरजौल (३०) गौर (३१) गोपालपुर (३२) हाजीपुर (३३) हमोटपुर (३४) हाटी (३५) हवेली दरभङ्गा (३६) हावी (३७) हिरनी (३८) जबदी (३९) जहांनाराबाद (४०) जखनपुर (४१) जाखर (४२) जराल (४३) कस्वरा (४४) कनहौली (४५) कसमा (४६) खन्द (४७) खुरसन्द (४८) लदुआरी (४९) लोवन (५०)महिला (५१) महिला जिला तुर्की (५२) महिन्द (५३) मकरवपुर (५४) महवाकला (५५) महवा-खुर्द (५६) ननपुर (५७) नारङ्गा (५८) नौतन (५९) निजामउद्दीनपुर बोगरा (६०) ओघरा (६१) पक्री (६२) पछिम (पश्चिम) भोगो (६३) पद्री (६४) परहारपुर जबदी (६५) परहारपुर मोवाम (६६) परहारपुर राघो (६७) पिण्डारुज (६८) पिङ्री (६९) पूरब (पूर्व) भोगो (७०) रामचन्द्र (७१) रती (७२) सद्दोरा (७३) सलोमाबाद (७४) सलीमपुर महवा (७५) सराय हमीदपुर (७६) सरैसा (७७) शाहजहानपुर (७८) ताजपुर (७९) तप्पा भातगाला (८०) तिरमाल (८१) तिरयानी (८२) तिलकचान्द (८३) तिरहुत (८४) चोकला हैं।

सिपाही विद्रोह—१८५७ ई०में संवाद आया, कि सिपाही विद्रोहमें उन्मत्त अवस्थामें विद्रोही सिपाही स्वदेश तिरहुतको लौटे आ रहे हैं। यहांके अंगरेज पहलेसे ही रक्षाका उपाय खोज रहे थे। अनेक मनुष्य भयभीत हो कर अपने अपने परिवारको अन्यत्र भेजनेकी व्यवस्था कर रहे थे। जून महीनेके लोगोंमें ऐसा सुना गया कि वारिसअली नामक एक व्यक्ति जिसका जन्म दिल्लीके बादशाह वंशमें था, पटनेके मुसलमानोंके साथ इस विषयमें पत्रव्यवहार कर रहा है। इस पर एक नवयुवक मिचिलियम और चार लोनकार साहब उसे पकड़नेके लिये गये और पटने तथा गयाके मध्यवर्ती किसी स्थानसे एक सरहद्दार अदालतको, जो इस विषयमें चिट्ठी लिख रहा था, पकड़ लाये। वारिसअलीको फांसी हुई। बाद जरोफखांने उन लोगोंके अधिनायक हो कर मुङ्गेरको डाक तथा कलक्टरका घर लूट लिया। पीछे उन्होंने राजकोष कोषागार पर धावा मारा, किन्तु पुलिस और नाजिमोंने इन्हें मार भगाया। विद्रोही लोग अन्योंगंजको भाग गये। इसके सिवा यहां और कोई गड़बड़ी नहीं हुई, मगर अनेक तरहको शंकाएं अवश्य हुई थीं।

तिरहुतिया (हिं० वि०) १ तिरहुत सम्बन्धी, जो तिरहुतका हो। (पु०) २ वह जो तिरहुतमें रहता हो (स्त्री०) ३ तिरहुतकी बोली।

तिरा (हिं० पु०) एक प्रकारका पौधा। इसके बीजोंसे तेल निकलता है।

तिराटी (सं० स्त्री०) निसोत।

तिरानवे (हिं० वि०) १ जिसकी संख्या नब्बेसे तीन अधिक हो। (पु०) २ वह संख्या जो नब्बे और तीनके योगसे बनी हो।

तिराना (हिं० वि०) १ पानीके ऊपर ठहराना। २ तैरना। ३ पार करना। ४ निस्तार करना, तारना।

तिरासी (हिं० वि०) १ जिसकी संख्या अस्सीसे तीन अधिक हो। (पु०) २ वह संख्या जो अस्सी और तीनके योगसे बनी हो।

तिराहा (हिं॰ पु॰) वह स्थान जहांसे तीन रास्ते तीन ओर गये हों, तिमुहानी।

तिराहो (हिं॰ स्त्री॰) तिराह नामक स्थानकी बनी कटार या तलवार।

तिरिटिक्किन (स॰ पु॰) दक्षिण एक पेड़का नाम।

तिरिटि (स॰ पु॰) वस्त्र-ग्रन्थि धोतीकी गिरह या गांठ।

तिरिचीकाष्ट (स॰ पु॰) पारिजातका पेड़।

तिरिन्दिर (स॰ पु॰) एक राजाका नाम।

तिरिम (स॰ पु॰) त-रमच्। शालिभेद, एक प्रकारका धान।

तिरिया (हिं॰ स्त्री॰) स्त्री, औरत।

तिरिय (स॰ पु॰) त-यच्। शालिभेद, एक प्रकारका धान।

तिरीट (स॰ क्ली॰) तीर्यते तिरोभिवत्येभिरिति तृ-कीटन्। उण् ३।१४७। १ किरीट, मुकुट। २ स्वर्ण, सोना। ३ लोध्रवृक्ष, लोधका पेड़।

तिरीटी (स॰ त्रि॰) तिरीट अस्त्यस्य तिरीट-इनि। मस्तकाच्छादन-युक्त, जिसका सिर ढका हो।

तिरीवृक्ष (हिं॰ पु॰) दन्तीवृक्ष।

तिरीछिरो (हिं॰ वि॰) तिरीछिरी देखो।

तिरीप्याति (स॰ पु॰) तीन ऋषीमें होनेवाला एक प्रकारका धान।

तिरुअनुर—चेङ्गलपट् जिलेके मध्य चेङ्गलपट् नगरसे ११ कोस दक्षिण-पूर्वमें स्थित एक ग्राम। यहां दो प्राचीन शिवमन्दिर हैं जिनमें बहुतसे प्राचीन शिलालेख मौजूद हैं।

तिरुअण्णामलैश्वर—त्रिचिनापल्ली जिलेका एक ग्राम और नदी। यह बरार्ड स्टेशनसे आध कोसकी दूरी पर अवस्थित है। इसको प्राचीन चेर, चोल और पाण्ड्य राज्य की सीमा समझना चाहिए।

तिरुअलर—तञ्जोर जिलेके अन्तर्गत मनारगुडीसे ८ कोस पूर्वमें स्थित एक छोटा ग्राम। यहांका शिवमन्दिर अत्यन्त प्राचीन है, जिसमें प्राचीन शिलालेख और पांच ताम्रपत्र मिले हैं।

तिरुअवदुर्द—तञ्जोर जिलेके मायावरमसे ७ कोस दक्षिण पश्चिममें अवस्थित एक ग्राम। यहां एक प्राचीन शिव मन्दिर और उसमें एक शिलालेख है।

तिरुआसूर—एक प्रसिद्ध ग्राम। यह तिरुनेल्वेलि जिलेके अन्तर्गत श्रीवैकुण्ठ नामक स्थानसे २ कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। यहां एक अत्यन्त प्राचीन शिवमन्दिर और एक विष्णु मन्दिर है। यहांके स्थलपुराणमें विष्णु मन्दिरका माहात्म्य वर्णित है। यहांका पेरुमोक्कपाक्कम नामक शिवमन्दिर भी अत्यन्त प्राचीन है। यहांके एक शिलालेखमें लिखा है कि १५१२ ई॰में विजयनगरके राजा मार्त्तण्डवर्मने देवसेवाके लिये शासन दिया था। ग्रामके बीचमें एक प्रस्तरस्तम्भ पर शिलालेख है।

तिरुकुरम्—एक प्राचीन ग्राम। यह मलबार जिलेके अन्तर्गत मञ्जेरीसे १ कोस दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है यहांका शिवमन्दिर अत्यन्त प्राचीन है। टीपू सुलतानके समयका यहां एक दुर्ग है। इसके अलावा यहां कई एक पत्थरकी कब्रें भी हैं।

तिरुकोइलुर (तिरुकोविलूर) —१ मन्द्राजके दक्षिण आर्काट जिलेका एक उपविभाग। इसमें तिरुकोइलुर और कल्लकुरची नामके दो तालुक लगते हैं।

२ उक्त उपविभागका एक तालुक। यह अक्षा॰ ११ १८ से १२ १ उ॰ और देशा॰ ७८ ३ से ७८° ११ पू॰में अवस्थित है। क्षेत्रफल ६८३ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः २०८१०८ है। इसमें इसी नामका एक शहर और ३३० ग्राम लगते हैं। पोन्नियर और मलत्तम नामकी दो नदियां इस तालुकमें प्रवाहित हैं।

३ उक्त तालुकका एक प्रधान शहर। यह अक्षा॰ ११ ५८ उ॰ और देशा॰ ७८ १२ पू॰में पोन्नेयार नदीके दक्षिणतट पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८,११० है। इस शहरमें श्रीवैष्णव सम्प्रदायका एक प्रसिद्ध विष्णुमन्दिर है। इसकी कारुकार्य्य तिरुवण्णमलय- के शिव मन्दिरसे कहीं अच्छी है। स्तम्भ-मण्डपके स्तम्भ पर अत्यन्त सुन्दर कारुकार्य है और बाहरके आंगन की दीवारके ऊपर तीन तथा मन्दिरके दरवाजेके ऊपर एक गोपुर है। इस मन्दिरमें बहुतसे शिलालेख हैं। किलूरके शिव मन्दिरकी अपेक्षा यह मन्दिर नया मालूम पड़ता है। इसमें विष्णु-मूर्त्ति विद्यमान है। उनके हाथमें शङ्ख चक्र, गदा, पद्म, कण्ठमें १०८ मणि युक्त शालग्राम माला, वक्षःस्थल पर महामणि है।

इनका भार बायें पैर पर है और दहिना पैर ब्रह्मलोक की ओर फैला हुआ है। प्रतिमाके पास ही पद्मयोनि सनकादि ऋषि पूजा कर रहे हैं। माघ मासकी शुक्ल-पञ्चमीसे ले कर पूर्णिमा तक विष्णुके वार्षिक उत्सव, दोलोत्सव, रथोत्सव आदि बहुत समारोहसे मनाये जाते हैं।

यहां नित्य वेदपाठ और देवनर्त्तकियोंका नाचगान हुआ करता है। प्रति शुक्रवारको अभिषेकादिका उत्सव होता है। उस दिन वहां बहुत मनुष्योंका समागम होता है। इस मन्दिरके खर्चके लिये गवर्मेण्ट प्रति-वर्ष १८ सौ रुपये देती है। मन्दिरके धर्मकर्त्ताको उक्त रुपये खर्च करनेका अधिकार है। यहां विल्वपुर-गुण्टा-कुल रेलवेका एक स्टेशन है, जो पेन्नर वा पिणाकिनी नदीके बायें किनारे देवनूर नामक ग्रामके समीप अवस्थित है। स्थलपुराणमें वर्णन है, कि पूर्व समयमें बालखिल्य महर्षियोंने देवनूर ग्रामके निकट पिणाकिनीके किनारे तपस्या की थी, लेकिन तपस्या करनेके स्थानका पता नहीं चलता।

इतिहास—पहले यह शहर जिञ्जीके हिन्दू-राजाओंके अधीन था। पीछे विजयनगरके राजाओंके हाथ लगा। प्रायः १६५४ ई०में गोलकुण्डाके सूबेदारने वेलूरके नरसिंहरायको जीत कर जिञ्जीको मुसलमान राज्यभुक्त कर लिया और आप वहांके नवाब बनाये गये। वे ही यहांके शासनकर्त्ता थे। १६७७ ई०में शिवाजीने जिञ्जो अधिकार कर वहां एक सुदृढ़ दुर्ग स्थापन किया। शिवाजी स्वदेशको लौटते समय वहां एक शासनकर्त्ता छोड़ आये थे। किन्तु उनके आनेके बाद ही मुसलमान शासन-कर्त्ताने इस पर अपना अधिकार जमा लिया। जिञ्जीके हिन्दू राजाओंने ही यहांका मन्दिर स्थापना किया था। तिरुवन्नमलयकी ओर २८ निगिड़वनम् रैल-स्टेशनसे तिरुवन्नमलयकी ओर २८ मील दूरमें भग्नावशिष्ट जिञ्जीका दुर्ग है।

तिरुकोइलूरके विष्णु-मन्दिरसे आध मीलकी दूरीमें पिणाकिनी नदीके किनारे किउलुर ग्राम अवस्थित है। यहां एक पुरातन शिवमन्दिर विद्यमान है। यह मन्दिर लगभग ५०० वर्षका होगा। मन्दिरका प्रबन्ध सुचारु रूपसे चलाया जाता है। फाल्गुन मासमें यहां एक उत्सव मनाया जाता है जिसमें दूर दूरके लोग आते हैं।

तिरुकोट्टूर—एक प्राचीन ग्राम, जो मदुरा जिलेके मध्य-वर्ती शिवगङ्गासे ८ कोस उत्तरमें अवस्थित है। यहांका शिवमन्दिर बहुत विख्यात है। यहांके शिलालेखके पढ़नेसे मालूम पड़ता है कि रघुनाथ तिरुमलय सेतुपतिने १६०? ई०में मन्दिरके खर्चके लिये बहुत जमीन दान की थी।

तिरुकरुकावूर—तञ्जोर जिलेके प्रधान कुम्भकोणमसे ७ कोस दक्षिण पश्चिममें अवस्थित एक ग्राम। यहां एक अत्यन्त प्राचीन शिवमन्दिर और उसमें एक शिलालेख है।

तिरुकरुकुण्डम्—चेङ्गलपट्ट जिलेके मध्यवर्त्ती चेङ्गलपट्ट-शहरसे ४ कोस दक्षिण पूर्वमें स्थित एक मनोहर प्राचीन ग्राम। यहां हिन्दूराजाओंके समयका एक बड़ा मण्डप है जो पहाड़ काट कर प्रस्तुत किया गया है। इसके सिवा यहां एक सुन्दर शिल्पकार्ययुक्त प्राचीन मन्दिर है।

तिरुकाट्टुपल्ली—तञ्जोरसे ६॥ कोस उत्तरमें अवस्थित एक प्रसिद्ध ग्राम। यहां चोलराज-निर्मित एक प्राचीन शिव-मन्दिर है जिसमें खुदा हुआ शिलालेख देखा जाता है। बहुतसे यात्री यहांके शिवलिङ्ग देखनेके लिये आते हैं।

तिरुकारवाशाल—तञ्जोरके तिरुवालूर रेल स्टेशनसे ४॥ कोस दक्षिणमें अवस्थित एक ग्राम। यहां शिवमन्दिर है जिसमें प्राचीन कालका शिलालेख पाया जाता है।

तिरुकोलकुड़ि—मदुरा जिलेका एक अत्यन्त प्राचीन ग्राम जो मदुरा शहरसे १५ कोस उत्तरपूर्वमें अवस्थित है, यहांके प्राचीन शिवमन्दिरमें पाण्ड्य राजाओंके समयके खुदे हुए बहुतसे शिलालेख हैं जिनमेंसे दो त्रिभुवन चक्रवर्त्ती सुन्दर पाण्ड्यके ११वें और २०वें वर्षमें तथा एक त्रिभुवन चक्रवर्त्ती वीर पाण्ड्यदेवके राज्यत्वके ११वें वर्षमें उत्कीर्ण हुए हैं।

तिरुचङ्गगोड़ु—सलेम जिलेके अन्तर्गत तिरुचोङ्गड तालु-कका सदर। यह अक्षा० ११° २२´ ४४´´ उ० और देशा० ७७° ५६´ २०´´ पू० शङ्खगिरि दुर्गसे साढ़े तीन कोस दूर एक ऊंचे पर्वतके नीचे समतलभूमिसे १२०० फुट ऊंचे पर अवस्थित है। शहरमें तथा गिरिचूड़ामें कई एक शिवमन्दिर हैं, जिनमेंसे अर्द्धनारीश्वरके मन्दिरमें १५२२से १५८१ शकमें उत्कीर्ण बहुतसे शिलालेख हैं। कैलास-नाथेश्वरके मन्दिरमें भी कई एक शिलालिपि हैं, जिनमेंसे

पढ़नेसे मालूम होता है कि उस मन्दिरका सम्मुख गोपुर १५८८ ई०में मदुराके विजयरङ्ग चोक्कलिङ्ग नायक द्वारा निर्मित हुआ है। वहांके एक ताम्रशासनमें लिखा है कि चोलपुरुषक मन्दिरको देवसेवाके लिये १५५६ ई०में महिसुरके अधिराज कृष्णराजने बहुतसी जमीन दान की थी।

इस शहरको जनसंख्या हजारसे अधिक है। यहां मुसलमान ही अधिक हैं। यहां अनेक कपड़े बुननेवालोंकी कोठी मशहूर होती है।

तिरुचेन्दूर—तिन्नेवेलि जिलेके श्रीवैकुण्ठ तालुकके अन्तर्गत एक शहर। यह अक्षा० ८ २९ १० उ० और देशा० ७८ १० १० पू० श्रीवैकुण्ठसे ८ कोस पूर्व-दक्षिण कोणमें समुद्रकूल पर अवस्थित है। यहांका सुब्रह्मण्यस्वामीका मन्दिर अत्यन्त विख्यात है। स्कन्दपुराणमें यहांका माहात्म्य वर्णित है। प्रतिवर्ष अनेक यात्री यहां आया करते हैं। मन्दिरका शिखरगोपुर अत्यन्त सुन्दर है जिसमें अनेक प्राचीन शिलालेख पाये जाते हैं। समुद्रके किनारे जो सब स्तम्भ खड़े हैं उनमें भी प्राचीन लेख खुदे हुए हैं।

तिरुतान्नूर—आर्काट जिलेका एक पुण्यस्थान। यह तिरुपतिसे ११ कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। यहां कामाक्षी वरदराजस्वामी, कपालस्वामी और अगस्त्येश्वर प्रभृति प्राचीन देवमन्दिर हैं, जिनमेंसे यहांके स्कन्दपुराणमें लक्ष्मीका माहात्म्य विस्तारपूर्वक वर्णित है। कपालस्वामी और अगस्त्येश्वर मन्दिरमें कई एक शिलालेख हैं।

तिरुतुनई—मदुरा जिलेका एक ग्राम। यह मेलूरसे ७॥ कोस उत्तरमें त्रिचिनापल्लीके रास्ते पर अवस्थित है। कहा जाता है कि यहांका देवमन्दिर पराक्रम द्वारा चोलराजसे बनाया गया है। इस मन्दिरमें बहुतसे शिलालेख देखे जाते हैं। जिनमेंसे एक आधुनिक शिलालेखके पढ़नेसे मालूम पड़ता है कि १७०१ ई०में उस मन्दिरका संस्कार हुआ था।

तिरुपूर्नई—मदुरा जिलेके मध्य रामनादसे २२ कोस पश्चिम उत्तरमें अवस्थित एक तालुकका सदर। यहां पराक्रम पाण्ड्य निर्मित एक वृहत् शिवालय है। प्रति वर्ष बहुतसे यात्री शिवलिङ्गको देखने आते हैं।

तिरुविरई—तञ्जोरके मध्यवर्ती कुम्भकोणम्से १ कोस दक्षिण पूर्वमें अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। यहां एक प्राचीन विष्णुमन्दिर है जिसमें बहुतसे शिलालेख हैं।

तिरुतनि (तिरुत्तनि)—१ मन्द्राजके आर्काट जिलेको एक जमींदारी तहसील। क्षेत्रफल ३०१ वर्गमील और लोक संख्या प्रायः १०१००१ है। इसमें इसी नामका एक शहर और १२७ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त जमींदारी तहसीलका एक प्राचीन शहर। यह अक्षा० १३ ११ उ० और देशा० ७९ ३७ पू० मद्रासकी रेलवेसे १२ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ५५८० है। 'तिरुतनि' इस नामकी उत्पत्तिके विषयमें स्थानीय प्रवाद इस तरह प्रचलित है—

प्राचीन कालमें सुब्रह्मण्य स्वामीने तारकासुर, सिंह, गजासुर, सुरपद्मासुर प्रभृति असुरोंको मार कर इस स्थानमें आ विश्राम किया था। "तिरुतनिको अर्थ सुविश्राम है, इसीसे यह नाम उत्पन्न हुआ है और इसीका अपभ्रंश तिरुतनि है। इन्द्र उपद्रव-रहित हो स्वर्गराज्यमें रहने लगे और सुब्रह्मण्य स्वामीके प्रति सन्तुष्ट हो उन्होंने अपनी कन्या देवसेनाको उन्हें अर्पण किया। सुब्रह्मण्य उनसे विवाह कर यहां रहने लगे। इसके पीछे इन्होंने वल्लीका नामकी एक दूसरी रूपवती रमणीका पाणिग्रहण किया। इस विषयमें दो प्रवाद सुने जाते हैं। १ला प्रवाद—वल्लीका किसी एक ब्राह्मणके औरस और चाण्डाल-कन्याके गर्भसे उत्पन्न हुई थी। उसकी माताने अपने स्वामीसे मिल कर प्रार्थना की कि सद्योजात शिशुको वनमें छोड़ कर वह आपका अनुसरण करेगी। सुतरां वल्लीके जन्म होनेके साथ ही उसको माता उसे वनमें छोड़ आप पतिकी अनुगामिनी हो गई। किसी परम्य जातिने उसका भरण पोषण किया। युवती होने पर वह (बहुत रूपवती होनेसे) सब जगह प्रसिद्ध हो गई। वहीं पहाड़ पर बैठ कर अपने पालक पिताके शस्यक्षेत्रको रक्षा करती थी। एक दिन सुब्रह्मण्य स्वामी उसे देख मोहित हो गये। बाद उससे विवाह करनेके उद्देश्यसे वे तिरुतनिसे एक सुरंग खोद कर उसीके द्वारा प्रति दिन वल्लीके निकट आने जाने लगे, पीछे उसे ग्रहण कर तिरु

तनिमें ले आये। उत्तर आर्काटके अन्तर्गत चित्तुर तालुकके मेलपाडि ग्राममें वल्लीम्माका पालक पिता रहता था। इस ग्रामसे १ मील पश्चिममें जहां पहले दोनोंमें मुलाकात हुई, पीछे मिलन और विवाह हुआ। वहां अब भी एक मन्दिरमें सुब्रह्मण्यस्वामी और वल्लीम्माकी मूर्त्ति विराजित है। वल्लीकी माता किसी अस्पृश्य जातिकी कन्या थी। कोई कोई कहते हैं, कि वल्लीकी माता सुप्रसिद्ध तामिलकवि तिरुवल्लूवरकी बहिनके सिवा और कोई नहीं है।

२रा प्रवाद—किसी समय लक्ष्मी और नारायणने हरिण और हरिणीके रूपमें कौतुक क्रीडा की थी। हरिणी रूपकी लक्ष्मी इस समय एक कन्या प्रसव कर उसे उसी स्थान पर छोड़ स्वस्थानकी चली गई। पीछे सपतीका नगरीके कुरव नामके राजने वल्लीमलय नामक पहाड पर उसका पालनपोषण किया। वल्लीमलयके निकट पाये जानेसे लड़कीका नाम वल्लीम्मा रखा गया। किसी समय सुब्रह्मण्य स्वामीने शिकार करते समय उसे देखा। पीछे वे उसके रूप पर मोहित हो कर राजाके निकट इस कन्याके कर प्रार्थी हुए। इस पर राजाने वल्लीम्माको उसे अर्पण किया। सुब्रह्मण्य उससे विवाह कर अपने देशको चले गये।

तिरुतनिका मन्दिर बहुत पुराना है। ग्यारहवीं शताब्दीकी चोल राजाओंके समयमें इसका मूलपत्तन और विजयनगरके राजाओं द्वारा इसका संस्कार हुआ। यह मन्दिर एक ऊंचे पहाड पर अवस्थित है। पहाड़के ऊपर जानेके लिये दो पथ हैं और दोनोंमें सुन्दर सीढ़ियां बनी हुई हैं। यात्रियोंके रहनेके लिये, पथके बगलमें बहुत सी कोठरियां हैं। मन्दिरके पास ही कुमार, ब्रह्मा, अगस्त्य, इन्द्र, शेष, राम, विष्णु, नारद और सप्तर्षि नामके छोटे बड़े नौ तीर्थ हैं। प्रत्येक माहात्म्यका विषयक स्वतन्त्र इतिहास है। मन्दिरके सामने जो पुष्करिणी है, उसे लोग कैलासतीर्थ कहते हैं। सुब्रह्मण्य स्वामीकी पत्थरमय मूर्ति चतुर्भुज है और उसकी लम्बाई मनुष्य-सी है। कहा जाता है, कि ये शैशवकालमें कृत्तिका द्वारा बांधे गये थे, इसीसे प्रति वर्ष कार्त्तिक मासके कृत्तिका नक्षत्रको इस मन्दिरमें विशेष समारोहके साथ उत्सव होता है, जिसमें दूर दूरके देशोंके यात्री आते हैं। देवसेना और वल्ली माताका मन्दिर पृथक् रूपसे निर्दिष्ट है और पूजादि भी अलग अलग होती है। तिरुतनि चार अंशोंमें विभक्त है। १ला स्थान तिरुतनि, यह पर्वतके ऊपर और देवालयके बगलमें है। यहां अधिकांश वैदिक अर्चक वास करते हैं। २रा, मठ ग्राम, यहां ३० मठ़ी १० छ—और २३ मण्डप हैं, इसीसे इस स्थानको मठम कहते हैं। ३रा, नल्लोनगुण्टा, नल्लोन नामके किसी राजाने ८० वर्ष पहले एक बड़ी पुष्करिणी खुदवाकर पहाड़के चारों ओर ब्राह्मणोंके लिए एक पक्का घर बनवा दिया है, तभीसे राजाके नाम पर उक्त ग्रामका नाम पड़ा है। ४था, अमृतपुर—यहां ऐसा प्रवाद है, कि यहांके वर्त्तमान जमींदारके पितामह वेङ्कट पेरुमल राजाने किसी समय अत्यन्त कठिन रोगाक्रान्त हो इस स्थानपर दूध और मट्ठा पीकर आरोग्य लाभ की थी, तभीसे इस स्थानका नाम अमृतपुर हुआ है। देवालयके दक्षिण १ मीलकी दूरीमें एडुवन नामक एक जङ्गलमें ७ कुण्ड हैं। इनके समीप सप्तकुमारियोंका एक मन्दिर है। जो अभी भग्नावस्था में पड़ा है। कारवेट नगरके जमीन्दार मन्दिरका खर्च देते हैं।

तिरुइतुरैपुण्डि—तञ्जोर जिलाके तिरुइतुरैपुण्डि तालुकका सदर। यह तञ्जोरसे १८ कोस पूर्व-दक्षिणमें अवस्थित है। यहां अत्यन्त प्राचीन शिवमन्दिर है जिसमें उत्कीर्ण शिलालेख है।

तिरुत्तङ्गल—तिन्नेवेली जिलेके शातुर तालुकके मध्यस्थित एक प्राचीन ग्राम। यहांके विष्णुमन्दिरकी बाहरी दीवारमें प्राचीन शिलालेख खुदे हुए हैं।

तिरुत्तरकोशमङ्गै—मदुरा जिलेमें रामनादसे ४ कोस दक्षिण-पश्चिम अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। प्रवाद है कि यहां पाण्ड्य राजाओंकी प्राचीन राजधानी थी। यहांका भास्कर और शिल्पकार्ययुक्त शिवमन्दिर देखने योग्य है। मन्दिरमें बहुतसे शिलालेख खुदे हुए हैं जिनमें सबसे प्राचीन लिपि १३०५ ई०में वीर पाण्ड्य देवके राजत्वकालमें उत्कीर्ण हुई है।

तिरुननूरियूर—तञ्जोर जिलेके मायावरमसे २ कोस दक्षिण

पश्चिममें अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। यहां एक अत्यन्त प्राचीन शिवमन्दिर है जिसमें बहुतसे शिलालेख देखनेमें आते हैं।

तिरुनरुंकुन्रम्—दक्षिण आर्काटके अन्तर्गत तिरुक्कोयलूरसे १० कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित एक ग्राम। यहां अत्यन्त प्राचीन शिवमन्दिर और जैनमन्दिर है। शिवमन्दिरमें बहुतसे बड़े बड़े शिलालेख हैं। यहांके स्थलपुराणमें जैन मन्दिरका माहात्म्य वर्णित है।

तिरुनवारि—मलबार जिलेके पोन्नानी तालुकके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह कुत्तिपुरम् और तीरूर रेलवे स्टेशनके बीचोंबीच अवस्थित है। गांवके पास ही नदीके किनारे ऊपर एक बांध है। पहले प्रति बारह वर्षके अन्तमें राज्याभिषेकके उपलक्ष्यमें यहां महोत्सव होता था। प्रायः १०० वर्ष हुए, यह प्रथा सदाके लिये बन्द हो गई है। इसके पास ही एक पहाड़ी कन्दरा है इसी जगह ठहर कर राजा बलि दिया करते थे। गांवमें रामचन्द्रजीका एक मन्दिर है।

तिरुनामनल्लूर—दक्षिण आर्काट जिलान्तर्गत तिरुक्कोयलूर शहरसे प्रायः १० कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित एक प्राचीन ग्राम। यहां एक शिवमन्दिर है, जिसमें बहुतसे प्राचीन शिलालेख हैं। ११११ ई०के पहले भी यह मन्दिर विद्यमान था क्योंकि ९०८ ई०के उत्कीर्ण शिलालेखमें पुरोहितोंके साथ देवसेवाके प्रबन्धकी कथा वर्णित है। इसके सिवा विख्यात सम्वत्सरमें उत्कीर्ण महा-मण्डलेश्वर नरसिंह देव और श्रीवराय कोनेरि-नायक कोप्पनकी कई एक अनुशासन-लिपियां हैं।

तिरुपनन्दाल—तञ्जोर जिलाके कुम्भकोणम् तालुकके अन्तर्गत एक शहर। यहांकी जनसंख्या प्रायः ६ हजार है। जिसमें सभी मत कुमनेका प्रधान स्थान है। यहां प्राचीन शिवमन्दिर भी है।

तिरुमिरइयूर—एक प्राचीन ग्राम। यह तञ्जोर जिलेके कुम्भकोणमसे ढाई कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। यहां शिवमन्दिर है जिसमें प्राचीन कालके शिलालेख हैं।

तिरुपति (त्रिपति)—उत्तर-आर्काट (अर्काड़) जिलेका एक प्रधान वैष्णवतीर्थ और चन्द्रगिरि तालुकका प्रधान शहर। यहां पाश्चात्य मद्रास रेलवेका एक स्टेशन है जो शहरसे १ मील दूरी पर है। यहां पहाड़के ऊपर श्रीनिवासदेवका मन्दिर प्रतिष्ठित है। उक्त पहाड़ तिरुमलय नामसे प्रसिद्ध है। यह निम्न तिरुपतिसे ६ मील पूर्वमें है। तिरुमलय पर चढ़नेके लिए चार प्रधान मार्ग हैं। पहला मार्ग निम्न तिरुपतिसे उत्तरकी तरफ, दूसरा चन्द्रगिरिकी ओरसे पूर्वोत्तर दिशामें, तीसरा नागपट्टमसे पश्चिमकी तरफ और चौथा मार्ग बालपल्लिसे पूर्वकी तरफ है। इनके सिवा और भी कई-एक छोटे छोटे मार्ग हैं। इस पर चढ़नेकी चोटी निम्न तिरुपतिसे ९ मील दूर होगी। इस पहाड़की सात प्रधान शिखरें हैं। प्रत्येक शिखर भिन्न भिन्न नामसे प्रसिद्ध है। इनमेंसे शेषाचल नामकी शिखर पर श्रीनिवासदेवका मन्दिर है; इसलिए कोई कोई इसे 'शेषाचलम्' भी कहते हैं। इस पर्वतका दूसरा नाम 'व्यङ्कट' है। स्कन्दपुराणीय व्यङ्कटगिरिमाहात्म्यमें इसका विवरण इस प्रकार लिखा है—

किसी समय विष्णु अन्तःपुरमें रमाके साथ क्रीड़ा कर रहे थे। शेषनाग द्वारदेश पर द्वाररक्षाके लिए नियुक्त थे। इतनेमें वायुने आ कर अन्तःपुरमें प्रवेश करनेकी चेष्टा की। शेषनागने उन्हें भीतर जानेके लिए निषेध किया, किन्तु वायु उनकी बातकी कुछ भी परवाह न कर जबरन भीतर जानेकी कोशिश करने लगे। दोनोंमें खूब झगड़ा होने लगा। कलह-शब्द सुन कर विष्णु द्वार पर आये और कहने लगे—"तुम लोग विवाद क्यों कर रहे हो?" विष्णुने विवादका कारण जान कर शेषसे कहा—"इस बारमें वायु ही सबसे बलवान् है।" शेषने कहा—"भगवन्! दोनोंमें कौन बलवान् है, आप इसका प्रमाण कर दीजिये। स्वर्णनदतटमें व्यङ्कटगिरि है, मैं उसे घेरे रहूंगा। वायु यदि उसे स्थानच्युत कर सके तो समझूंगा यह सबसे बलवान् है।" शेषनागके व्यङ्कटगिरिको वेष्टित करने पर वायुने तीव्र प्रभञ्जनसे उड़ा कर पचास हजार योजन दूर, दक्षिणसमुद्रसे १२ योजन उत्तरमें पूर्वसमुद्रके पश्चिमभागकी सुवर्णमुखी नदीके वामभागमें फेंक दिया। शेषका शरीर विदीर्ण हो गया। वे अपनेको अपमानित समझ लज्जासे शेषाचल हो गिरिनाथ पर भगवान् विष्णुका ध्यान करने लगे। विष्णुने प्रसन्न हो कर उनसे वर मांगनेके लिए कहा। शेषने यह

वर माँगा कि "आप जैसे मेरे कुण्डल पर वैकुण्ठमें सर्वदा अवस्थित हैं, उसी तरह व्यङ्कटस्थित शैलरूप मेरे शरीर पर सदा वास करें।" भगवान् 'तथास्तु" कह कर तभीसे शङ्खचक्र हाथमें लिए शेषाचल पर वास करते हैं। ये व्यङ्कटगिरिके ऊपर हैं, इसलिए व्यङ्कटेश या व्यङ्कटपति कहलाते हैं। वराहपुराणमें लिखा है त्रेतायुगमें श्रीरामचन्द्रने लङ्का जाते समय अपने दल-सहित स्वामितीर्थमें स्नान किया था। उक्त पुराणके ४१वें अध्यायमें यह भी लिखा है कि पाण्डवोंने वनवासके समय इस पर्वत पर एक वर्ष तक वास किया था और जिस तीर्थतट पर वे थे, उसका नाम है पाण्डवतीर्थ। स्कन्दपुराणके व्यङ्कटाचलमाहात्म्यमें लिखा है—रामानुजाचार्यने व्यङ्कटशैल पर जा कर आकाशगङ्गाके किनारे विष्णुके षडक्षर-मन्त्रका ध्यान किया था और विष्णुने तुष्ट हो कर उन्हें दर्शन दिये थे। रामानुजने कलिके ४११८ अब्दमें जन्म लिया था; इस हिसाबसे ८०० वर्षसे पहले भी यह स्थान महातीर्थके नामसे प्रसिद्ध था।

पर्वतश्रेणीके भिन्न भिन्न स्थानमें झरना और उसके नीचे बड़े बड़े जलाशय हैं, जो पुण्यतीर्थके नामसे प्रसिद्ध है। इनमें सात तीर्थ प्रधान हैं,—१म स्वामितीर्थ, २य वियद्गङ्गा, ३य पापविनाशिनी, ४र्थ पाण्डवतीर्थ, ५म तुम्बोरकोण, ६ष्ठ कुमारधारिका और ७म गोगर्भ। स्वामितीर्थ १०० गज लम्बा और ५० गज चौड़ा है, इसके चारों तरफ ग्रेनाइट-पत्थरकी सीढ़ियां बनी हुई हैं। यह तीर्थ देवालयके पास ही है। यात्रिगण इसमें स्नान किया करते हैं। पापविनाशिनीतीर्थ देवालयसे २ मील दूरी पर एक सामान्य जलप्रपातके नीचे अवस्थित है। इस जल प्रपातके नीचे खड़े हो कर स्नान करनेसे ब्रह्महत्या आदि महापातक विनष्ट होते हैं। यहां ऐसी किम्वदन्ती है कि, पापके तारतम्यके हेतु जलका वर्ण तक मलिन हो जाता है। पहाड़के पूर्व की ओर जो जलप्रपात है, वही तुम्बुरुकोण (तुम्बिरकोण) कहलाता है। स्कन्दपुराणके मतसे—पहले ऋषिगण यहीं वास करते थे। इस समय यह स्थान जङ्गलसे भरा हुआ है। यहां कोई मानत करनी हो, तो कपिलतीर्थमें स्नान करके स्वर्ण वा रौप्यनिर्मित व्यङ्कटेशका काँटा गलेमें धारण करना चाहिए। ऐसा प्रवाद है, कि पीछे स्वामितीर्थमें स्नान करनेसे वह काँटा उसके कपोलदेशसे अपने आप खुल जाता है। कपिलतीर्थके पीछे जो बृहत् गोपुर है, वह आलपिरि नामसे प्रसिद्ध है। इस गोपुरके द्वार तक सब श्रेणीके मनुष्य जा सकते हैं; इसके आगे हिन्दुओंके सिवा अन्य किसी भी जातिकी गति नहीं है। इस जगहसे ऊपर चढ़नेके लिए पक्की सीढ़ी शुरू होती है। यह सीढ़ी करीब एक मील लम्बी और समतलभूमिसे १ हजार फुट ऊँची होगी। बीच बीचमें विश्रामस्थान भी हैं। सीढ़ीके सर्वोच्च स्थानमें एक बृहत् गोपुर है जो "गालि-गोपुर"के नामसे मशहूर है। इसके पीछे वैकुण्ठ नामके मन्दिरमें राम लक्ष्मणकी मूर्त्ति विराजमान है। इस मन्दिरके ईशान कोणमें वैकुण्ठ-गुहा नामक एक गुफा है। श्रीरामचन्द्रके श्रीशैल आने पर उनके अनुचरगण इसी गुफामें ठहरे थे। इस स्थानसे व्यङ्कटेशके मन्दिरको जानेकी पक्की सड़क है।

तिरुमलय-गिरिस्थित नगर बहुत मामूली है। यह स्वामितीर्थके व्यङ्कटस्वामीके मन्दिरके चारों तरफ अवस्थित है। यहां हिन्दुओंके सिवा अन्य कोई भी जाति वास नहीं कर सकती। यहांकी जनसंख्या १६ हजारसे ज्यादा न होगी। यात्रियोंके ठहरनेके लिए यहां बहुत से छत्र हैं जिनको महिसुर और कोचीनके राजा तथा कालहस्ती और व्यङ्कटगिरिके जमींदारोंने बनवा दिया है। मन्दिरके पार्श्वमें सहस्रस्तम्भ मण्डप हैं, इसका शिल्पनैपुण्य उत्तम है। यह ग्रेनाइट पत्थरके स्तम्भ पर विस्तृत है। रास्तेकी तरफ प्रत्येक स्तम्भ पर मूर्त्ति खुदी हुई है। इस मण्डपका एक अंश गिर पड़ा है। एक लाख रुपयेसे उसका जीर्णसंस्कार हुआ है। इसके एक बगल एक अपूर्व प्रस्तररथ पड़ा हुआ है। चन्द्रचोल नामक किसी राजाने इस प्रस्तर-रथको बनवाया था। यहांके स्वामितीर्थमें स्नान करना चाहिये। तीनों देवालय भिन्न भिन्न प्राचीरोंसे वेष्टित हैं। बाहरकी दीवार काले ग्रेनाइट पत्थरकी बनी है जिसके एक पार्श्वमें एक बृहत् अनुशासनलिपि खुदी हुई है। इसके द्वार पर एक साधारण गोपुर है। यह प्राचीर १२७ गज लम्बी और ८७

मंत्र जोड़ो है। मन्दिरमें चतुर्भुज विष्णुमूर्ति खड़ी है जिसके दाहिने हाथमें चक्र, दूसरा हाथ भूमिकी तरफ और बायें हाथमें शङ्ख दूसरेमें पद्म है। इस मूर्तिके साथ शक्ति न होनेके कारण लोग अनुमान करते हैं कि पहले यहां केवल शिवमूर्ति ही थी, रामानुजके समयमें इसी मूर्तिमें शङ्ख और चक्रसे शोभित हो जानेसे हाथ लगा दिये गये हैं। प्रकट है, कि कुलोत्तुङ्ग चोलके पुत्र तोण्डमन चक्रवर्तीने इस प्रसिद्ध मन्दिरकी प्रतिष्ठा की थी।

इस मन्दिरमें देवदर्शन करने पर कुछ दर्शनी देनी पड़ती है। देवका पुष्पस्नान देखनेसे (१०) रुपये और अपूर्णस्नोकमें देवदर्शन करनेसे १) रु० देना पड़ता है। दिनके १२ बजेसे १ बजे तक पूजा आदि होती है। साधारणके दर्शनके लिए आठ प्रहर तक द्वार खुला रहता है। अकबरशाह, अंग्रेज जबसे अंग्रेजोंके शासनाधीन हुआ है तबसे १८४० ई० तक यह मन्दिर अंग्रेजोंकी देखरेखमें था। पीछे इसका भार महन्तके ऊपर सौंपा गया। अब भी महन्त पर ही इसका भार है। इस देवालयकी वार्षिक आय करीब ९१ हजार रुपये और व्यय ११ हजार रुपये है। अन्यान्य देवालयोंकी भांति इसमें देवदासी नहीं है। पहले यहां कोई भी कुमारी प्रवेश न कर सकती थी, किन्तु अब यह बात नहीं रही उसका बहुत कुछ व्यतिक्रम हो चुका है। जिन महात्माओंने इस मन्दिरकी उन्नति की थी, उनका नाम अब भी सम्मानके साथ उच्चारित होता है। देवालयकी हस्तलिपिमें उसका इस प्रकार विवरण मिलता है—'परीक्षित्‌के पाण्डवके दूसरे प्राचीर और उनके पुत्र जनमेजयने बाहरकी प्राचीर बनवाई थी। पीछे विक्रम नामके किसी दूसरे राजाने इस मन्दिरका संस्कार कराया था। कोई कोई कहते हैं, कि तोण्डमन चक्रवर्त्ती महाराजने वर्त्तमान मूलमन्दिर बनवाया था। ब्रह्मपुराण और व्यङ्कटेश माहात्म्यमें स्पष्ट लिखा है कि—"जिस समय नारद पृथिवी पर्यटन करके भगवान् वैकुण्ठनाथके दर्शन करने गये थे, उन्होंने यह कहा था कि 'गङ्गासे एक हजार कोस दक्षिण और पूर्वसागरसे ५१ कोस पश्चिममें एक मनोहर पर्वत है।" विष्णुने इसके उत्तरमें कहा—"कलियुगमें चोल राजपुत्र चक्रवर्त्ती द्वारा प्रतिष्ठित हो कर मैं वहां रहूंगा।" यहांका प्रधान उत्सव आश्विन मासमें १० दिन तक होता है। उत्सवके पांचवें दिन गरुड़ोत्सव और दशवें दिन नारायणवनमें पद्मावतीके साथ वास्तविक कल्याणोत्सव हुआ करता है।

व्यङ्कटेश्वरस्वामीके मन्दिरके बाहर स्वामी पुष्करिणीके किनारे एक सामान्य मन्दिर है, जिसमें वराहस्वामीकी मूर्ति है। किसीके मतसे, कोई ब्रह्मराक्षस विचरण करते हुए उस स्थानमें आये थे इसलिए वे उस स्थानके अधिष्ठाता देवता हैं। उसीसे यहां वराहस्वामी प्रतिष्ठित हैं। यात्रीगण व्यङ्कटेश स्वामीसे पहले इनकी पूजा करते हैं। व्यङ्कटेश स्वामीके मन्दिरके समीप गोपमंतोष है और उसके पास ही देव बलिगुप्ति नामक एक प्रस्तरमय स्तम्भ है। इस स्तम्भके पास कोई भी मिथ्या वचन कहनेका साहस नहीं करता। जिन विषयोंकी सत्यताका निर्णय करना विचारकोंकी शक्तिसे बाहर है, वे विषय भी यहां सुगम जाते हैं। वादी और प्रतिवादी लोगसंतोषसे स्नानपूर्वक भीगी धोती पहने स्तम्भके पास जा कर जो कुछ कहते हैं, वह सत्य समझा जाता है। इस प्रकार शपथ करनेके लिए वादी और प्रतिवादीको सात सात रुपये जमा करने पड़ते हैं। उसके बाद विचारके पूजा, अन्न और दक्षिणाका भोग होता है यात्रियोंको उस भोगका प्रसाद मिलता है।

तिरुपत्तूर—मन्द्राज प्रदेशके सलेम जिलेका एक तालुक और उस तालुकका प्रधान नगर। यह शहर अक्षा० १२° २८´ ३″ उ० और देशा० ७८° ३४´ ३०″ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग १४३८८ है, जिसमें अधिकांश हिन्दू और कुछ मुसलमान हैं। यहां समस्त राजकीय कार्यालय हैं। जिलेमें इस स्थानसे चारों ओर रास्ते गये हैं। जिस कारण यहां पण्यद्रव्यकी आमदनी अधिक होती है। यहां चमड़ेका व्यवसाय भी होता है। इस शहरमें एक बहुत बड़ा तालाब है जिसके सुन्दरताका और दूसरा तालाब जिलेभरमें नहीं देखा जाता है।

तिरुपरङ्गाडु—एक प्राचीन ग्राम। यह दक्षिण आर्कट जिलेके अन्तर्गत आर्कट शहरसे दस कोस पूर्वमें अव

स्थित है। यहांके प्राचीन मन्दिरमें कई एक शिला-लेख हैं।

तिरुपुडैमरुदूर—एक ग्राम। यह तिन्नेवेलि जिलेके मध्य अम्बासमुद्रसे डेढ़ कोस उत्तर-पूर्व में, जहां घटना नदी ताम्रपर्णीके साथ मिली है उसी सङ्गमस्थान पर अवस्थित है। यहां अनेक पवित्र देवमन्दिर है। प्रधान मन्दिरमें १५ वीसे १७ वीं शताब्दीके मध्य प्रदत्त कोल-ल्वाट-अङ्कित कई एक शिलालेख और एक ताम्रशासन देखनेमें आता हैं।

तिरुपुर—कोयम्बतुर जिलेके अन्तर्गत एक शहर और रेल स्टेशन। यह अक्षा० ११° ३७´ उ० और देशा० ७७°४०´´ ३० पू०में अवस्थित है। यहांकी लोकसंख्या प्रायः ४००० है।

तिरुपोलूर—चेङ्गलपट्ट जिलेके अन्तर्गत कोभलङ्ग शहर से ३½ कोस दक्षिण-पश्चिम और चेङ्गलपट्ट शहरसे ७ कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित एक स्थान। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है। ४० वर्ष पहले प्रधान असिष्टेंट कल-क्टरको इस मन्दिरके पास ही कई एक प्राचीन ताम्र शासन मिले थे।

तिरुप्पंतिरुत्ति-तञ्जोर जिलेमें तिरुवाडीसे १ कोस पश्चिममें अवस्थित एक स्थान। यहां शिल्पकार्य खचित एक प्राचीन शिवमन्दिर है, जिसमें बहुतसे शिलालेख हैं।

तिरुप्पट्टूर—त्रिशिरापल्ली जिलेमें मुसीरी तालुकका एक ग्राम। यह मुसीरी शहरसे १२ कोस पूर्वमें अवस्थित है। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है और उसमें कई एक शिलालेख हैं।

तिरुप्पत्तूर—मदुरा जिलेके मध्य तिरुमङ्गलम तालुकका एक ग्राम। यह तिरुमङ्गलम् शहरसे ½ कोस उत्तर-पश्चिममें पड़ता है। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर और उसमें बहुतसे शिलालेख हैं।

तिरुप्पदिकुन्रम्—चेङ्गलपट्ट जिलेके काञ्चीपुर तालुकका एक स्थान। यह काञ्चीपुरसे १½ कोस दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है, यहां एक प्राचीन, अत्यन्त सुन्दर शिल्पकार्य विशिष्ट शिवमन्दिर है जिसमें बहुतसे शिलालेख हैं। एक शिलालेख कृष्णदेव महाराजके राजत्वकालका (१५१८का) खुदा हुआ है। उसमें मन्दिरके लिये भूमि दानका उल्लेख है।

तिरुप्पदिरिप्लियुर—दक्षिण आर्काट जिलेमें कूडालूर शहर-से ४ मील उत्तरपश्चिममें अवस्थित एक ग्राम। इसके पास ही रेल-टेशन है। यहां एक उत्तम शिल्पकार्य विशिष्ट प्राचीन मन्दिर है, जिसमें बहुतसे शिला लेख है।

तिरुप्पनन्दाल—तञ्जोर जिलेमें कुम्भकोणम् शहरसे ११ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित एक ग्राम। यहां एक सम्पत्तिशाली शूद्र द्वारा प्रतिष्ठित मन्दिर है। उस मन्दिरमें तामिल भाषामें लिखे हुए बहुतसे प्राचीन ग्रन्थ पाये जाते हैं। इसके सिवा मन्दिरमें एक तेलगू भाषाका और तीन तामिल भाषाके ताम्रशासन हैं। तुरइयुव नामक स्थान इस मन्दिरके लिये दान किया गया है जिसका दानपत्र तेलगू भाषामें है और वह १७४४ ई०में धनगिरि नामक स्थानमें वेङ्कटपतिरायके राजत्वकालमें खोदा गया है। उक्त तामिल भाषाके शासनोंमेंसे एक १७५३ ई०में रामेश्वरके पास उक्त मठको कुछ भूमिदान करने-के लिए रामनादके सेतुपति सर्दार हिरण्यगर्भ-याचि-कुमार मुत्तु विजय रघुनाथ सेतुपतिके द्वारा खुदाया गया है।

तिरुप्परकुन्—मलवार जिलेमें वल्लवनाद तालुकका एक ग्राम। यह अङ्गदपुरसे ५ कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहां ३८ डोलमेन (प्राचीन कालमें असभ्य जातियों-में मृत मनुष्योंके स्मृतिचिह्नके लिये चार पत्थरोंके ऊपर एक बड़ा चौड़ा पत्थर रख कर आसनवत् स्थान बनता था, इसीको डोलमेन कहते हैं)।

तिरुप्पलङ्गुडि—मदुरा जिलेकी रामनाद जमींदारीका एक स्थान, जो रामनाद शहरसे १८ मील उत्तर-पूर्वमें समुद्रके किनारे पर है। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है, जिसमें एक ताम्रशासन और मन्दिरके सामने बहुतसे शिलालेख हैं।

तिरुप्पलात्तुरइ—त्रिशिरापल्ली जिलेका एक स्थान जो त्रिशिरापल्ली शहरसे ३½ कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है और उसमें एक शिला-लेख है।

तिरुप्पाक्कुडी—चेङ्गलपट्ट जिलेके काञ्चीपुर तालुकका एक स्थान। यह काञ्चीपुर शहरसे ३½ कोस पश्चिममें

पड़ता है। यहां एक प्राचीन विष्णुमन्दिर है, जिसमें विभिन्न पत्थरोंमें खुदे हुये शिलालेख हैं।

तिरुपार्श्वकूल—उत्तर आर्काट जिलेके अन्तर्गत वण्डावासिट से ४ कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित एक पुण्यतीर्थ। यहांका विष्णु मन्दिर विख्यात है। स्थानीय स्थलपुराणमें विष्णुमन्दिर और उस तीर्थका माहात्म्य वर्णित है। यहां बहुतसे प्राचीन शिलालेख हैं। किसीके मतसे पहले यह शिवमन्दिर था, फिर पीछे यह विष्णुमन्दिरके रूपमें परिणत हो गया है।

तिरुप्पापूर (तिरुपापुर)—चेङ्गलपट्‌ जिलेका एक शहर। यह तिरुवल्लूरसे १ कोस दक्षिण अक्षा० १२° ८' २०" उ० और देशा० ७९° ११' पूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः साढ़े तीन हजार है।

यह स्थान एक पवित्र तीर्थ समझा जाता है। हिन्दू राजाओंके समयमें निर्मित यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है। यहांके स्थलपुराणमें इस स्थानका तथा शिवमन्दिरके माहात्म्यका विस्तारपूर्वक वर्णन है। मन्दिरमें अनेक जगह चोल-राजाओंके समयके शिलालेख हैं। यहांके स्थलपुराणमें लिखा है, कि महाराज हरिश्चन्द्रने कुरुम्ब-रियोंको जीता था।

पहले अंगरेजोंने टीपूसुल्तानके डरसे यहांके किले बहुतसे मनुष्य इस दुर्गमें आश्रय लेते थे। १७८२ ई०में हैदर अलीके पुत्र टीपूने इस दुर्ग पर आक्रमण किया। उसके ही समयमें यहां विभिन्न अंगरेजोंके सैनिक वास करते थे। बाद कभी कभी गोरोंकी फौज भी यहां आ कर ठहरती थी।

तिरुप्पिरम्बियम्—यह स्थान तञ्जोर जिलेमें, कुम्भकोणमसे २½ कोस उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। यहां एक अति प्राचीन शिवमन्दिर है, जिसमें अब तक बहुतसे शिलालेख हैं।

तिरुप्पुणर—तञ्जोर जिलेके नागपट्टन शहरसे ५ कोस दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित एक स्थान। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है जिसमें बहुतसे शिलालेख देखनेमें आते हैं।

तिरुप्पुरापुर—कृष्णा जिलेमें विजुकोण्ड शहरसे ३ कोस उत्तरमें अवस्थित एक ग्राम। यहां अनेक जातियोंके मत-धर्मादि निर्दशक बहुतसे प्रस्तरखण्ड हैं।

तिरुप्पुल्लाणि—इसका असली नाम दर्भशयनम् है। यह स्थान मदुरा जिलेके रामनाद जमींदारीके अधीन रामनाद शहरसे ३ कोस दक्षिणमें पड़ता है। स्कन्दपुराण और सेतुमाहात्म्यमें इस स्थानका एक पवित्र तीर्थके जैसा वर्णन किया है। रामेश्वरके यात्रिगण प्रायः इस स्थानको देखने जाते और यहां के विष्णुकी दर्भशयन मूर्त्तिकी पूजादि करते हैं। सेतुमाहात्म्यमें लिखा है, कि रामचन्द्र जी यहां आये समय समुद्रके किनारे आ कर वरुणदेवको खुश करनेके लिये तीन दिन तक दर्भ या कुश शय्या पर सोये थे; इसीलिये यह स्थान दर्भशयन नामसे विख्यात है। यहां जो मूलमन्दिरमें शेषशायी विष्णु-मूर्त्ति की है उसको लोग रामचन्द्रकी दर्भशयन-मूर्त्ति बतलाते हैं। देखनेसे जो जान पड़ता है, कि किसी समय यह स्थान समुद्रके किनारे पर था। अभी उस स्थानसे समुद्र प्रायः तीन कोस पीछे हट गया है। मूल मन्दिरके सामने एक बड़ा सरोवर है, जिसे सेतुमाहात्म्यमें चक्रतीर्थ बतलाया है। यह सरोवर चारों ओर पत्थरसे बंधा था, किन्तु अभी उसका अधिकांश नष्ट हो गया है। इसके उत्तरमें एक पुष्करिणी है, जिसे रामतीर्थ कहते हैं। मन्दिरकी दीवारकी लम्बाई तथा चौड़ाई प्रायः ३०० फुट होगी। प्रवेश-द्वारके ऊपर एक बड़ा गोपुर है।

मूल मन्दिर यद्यपि बड़ा नहीं है, तो भी इसके चारों ओर बड़े बड़े मण्डप हैं। विश्वनाथ सेतुपतिने इन पत्थरके मण्डपोंको बनवाया था। यहां के जगन्नाथजीका मन्दिर ही सबसे प्रधान है। प्रवाद है—तिरुमङ्गै आल्वार नामक एक व्यक्तिने चौर्यवृत्ति कर यह मन्दिर निर्माण किया था। मूलमन्दिर अच्छत लोन पत्थरसे बना हुआ है। यह मन्दिर कब बनाया गया इसका निश्चय नहीं है। किन्तु यहांके चोल राजाओंके समयमें उत्कीर्ण नियमों शताब्दीके शिलालेखमें इस मन्दिरका प्रसङ्ग रहनेसे अनुमान किया जाता है कि यह मन्दिर उससे पहले ही बनाया गया होगा।

दर्भशयनके मन्दिरके समीप चक्रकुण्ड है। सेतुमाहात्म्यमें लिखा है—रामचन्द्रजीने तीन दिन दर्भशयनमें रह कर जब देखा कि वरुणदेव नहीं आये, तब उन्होंने गुस्सा कर समुद्रको सुखानेके लिये तीर छोड़ा।

समुद्र भयसे किनारा छोड़ कर एक योजन पीछे हट गया। तब वरुणने उक्त कुण्डसे निकल स्तुतिवादपूर्वक रामचन्द्रको प्रसन्न किया, तभीसे वह कूप वरुणकुण्ड नामसे मशहूर हो गया है।

चक्र, वरुण और रामतीर्थके अलावा यहां सेतु और अगस्त्य नामके और दो तीर्थ हैं। यात्रिगण नियमपूर्वक इन पञ्चतीर्थों में स्नान करते हैं। दर्भशयन मूर्त्तिके सिवा महालक्ष्मी, श्रीदेवी, भूदेवी, जगन्नाथ, कोदण्ड राम स्वामी और सन्तान रामस्वामीके कई एक मन्दिर हैं। मन्दिरोंमें बहुतसे प्राचीन शिलालेख हैं।

तिरुप्पत्तूर—मलवर जिलेमें कोट्टयम् शहरसे ३ कोस दक्षिणमें अवस्थित एक ग्राम। यहांके पहाड़ पर (खुदी हुई) एक कन्दरा है।

तिरुमङ्गलम्—मन्द्राज प्रदेशके मदुरा जिलेका एक तालुक और उसका प्रधान सदर। तालुकका भूपरिमाण ६२५ वर्गमील है। शहर अक्षा० ८°४८´२०´´ उ० और देशा० ७८° १´१०´´ पू०में पड़ता है। शहरकी लोकसंख्या प्रायः छः हजार है। १५६६ ई०में यहां वेल्लालर जाति आ कर बस गई है।

तिरुमङ्गलक्कुरी—यह स्थान तञ्जोर जिलेके कुम्भकोणम्से ४ कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है जिसमें अन्याक्षरमें उत्कीर्ण शिलालेख पाये जाते हैं।

तिरुमनुर—त्रिशिरापल्ली जिलेके उदैयारपल्लैयम् तालुकके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यहां सुन्दर भास्कर्ययुक्त एक शिवमन्दिर है। जिसमें कई एक शिलालिपि उत्कीर्ण हैं।

तिरुमल नायक—मदुराके एक विख्यात राजा। इनका प्रकृत नाम 'महाराज मान्यराज श्री तिरुमल अवेरोनायणि आय्यलु गारू' था। इन्होंने त्रिशिरापल्ली परित्याग कर मदुरामें अपनी राजधानी स्थापन की थी। इनके यत्नसे मदुरामें सुन्दर राजप्रासाद और बहुतसे देवमन्दिर बने थे। इन्होंने पहले ही पहल विजयनगरका अधीनतापाश विच्छिन्न कर एक बार स्वाधीन होनेकी चेष्टा की थी। इस समय महिसुरने सैना दण्डिगुल नामक स्थानमें आकर उन्हें सहायता दी, किन्तु वे सम्पूर्ण रूपसे पराजित हुए थे।

१६२३ ई०में रोवर्ट डि नोविलियम नामक प्रसिद्ध जेसुट मदुरा पहुंचे, उस समय मदुराके राजा तिरुमलके साथ रामनादके सेतुपतिका घमसान युद्ध हो रहा था। इस युद्धमें तिरुमल कृतकार्य न हो सके थे।

वे हमेशा विजयनगरके राजाको अपनी अधीनताका चिह्नस्वरूप उपहार भेजते थे, किन्तु एक बार उसको अवहेला कर १६५७ ई०में विजयनगरके राजकुमारने तिरुमल पर शासन करनेके लिये उसके साथ युद्ध-घोषणा कर दी। इस पर तिरुमल तञ्जोर और जिञ्जोर नायकोंके साथ मिल गये। विजयनगरकी सेनाने जिञ्जी पर आक्रमण किया। इधर तिरुमलके बहकानेसे मुसलमानोंने भी विजयनगर पर धावा किया। वे क्रमशः मुसलमानराज्यको विस्तार करते हुए दक्षिणमें आ विजयनगरके करद राज्य पर आक्रमण करने लगे। उस समय तिरुमल भाग कर मदुरामें आ टिके। अन्तमें वे गोलकुण्डाके मुसलमान राजाओंके साथ मिल कर महिसुर और विजयनगराधिकृत अवशिष्ट राज्य पर आक्रमण करते लगे। महिसुरके राजा उदैयारने तिरुमलको विश्वासघातकताका बदला लेनेके लिये तिरुमल पर आक्रमण किया। भीषण युद्धके बाद मदुराके राजा तिरुमलको जीत हुई, किन्तु इसी साल इनका देहान्त हो गया।

तिरुमल देव—विजयनगरके एक प्रसिद्ध राजा। ये सुविख्यात राम राजके भाई थे। विजयनगरके नानास्थानोंमे तिरुमलके समयमें उत्कीर्ण शिलालेख आविष्कृत हुए हैं जिनके पढ़नेसे जाना जाता है कि तालिकोटके युद्धमें रामराजका अधःपतन होनेसे तिरुमलने ही विजयनगरके राजवंशमें प्राधान्य लाभ किया था तथा पेन्नकोण्ड नामक स्थानमें राजधानी बनाई थी। इन्होंने १५६०से १५७? ई० तक राज्य किया था। इनकी मृत्युके बाद इनके बड़े लड़के श्रीरङ्ग राजा हुए थे।

तिरुमलपुरमा—उत्तर आर्काट जिलेमें वालाजापेट तालुकका एक ग्राम, जो पुन्नुर रेल-ष्टेशनसे २॥ कोस उत्तरमें अवस्थित है। यहां एक अति प्राचीन भग्न विष्णुमन्दिर है, जिसमें बहुतसे शिलालेख देखे जाते हैं। तिन्नेवेली जिलेमें भी इसी नामक स्थान है जो तिन्नेवेली शहरसे ६ कोस उत्तर पश्चिममें पड़ता है। इस

ग्रामके पास ही एक बड़ा प्रस्तर निर्मित महाशिवका सम्मानमीय पड़ा हुआ है।

तिरुमाठक्कालाम् कोइ—मदुरा जिलाके रामनादसे १० कोस पश्चिममें अवस्थित एक ग्राम। यहां एक अति सुन्दर भास्करमें पुष्पयुक्त पुरातन शिवमन्दिर है और उसमें बहुतसे शिलालेख हैं।

तिरुमुक्कूडल—चिङ्गिलपत्तोके कुणिलवम शहरसे ८ कोस पश्चिममें एक पुण्यस्थान जो अमरावती और कावेरी नदीके सङ्गम-स्थान पर अवस्थित है। यहांके अति प्राचीन शिवमन्दिरमें बहुतसे शिलालेख मिलते हैं।

तिरुमुरुगनपूण्डि—कोयम्बतुर जिलेके तिरुपुर रेल-स्टेशनसे २ कोस उत्तर-पश्चिममें अवस्थित एक ग्राम। यहांके दो प्राचीन मन्दिरोंमें बहुतसे शिलालेख देखे जाते हैं।

तिरुमूर्त्तिकोविल—कोयम्बतुर जिलेका एक प्राचीन ग्राम। यह अक्षा० १०° १७´ उ० और देशा० ७७° १२´ पू०में अवस्थित है। यहां एक बड़े और सुन्दर मन्दिरमें ब्रह्मा विष्णु और महेश्वरकी मूर्त्तियां विराजमान हैं, इसीके लिए यहांका स्थान मनोहर है। स्कन्दपुराणमें इसका माहात्म्य सविस्तर वर्णित है। यहां प्रति रविवारको मेला लगती है।

देवताके वार्षिक उत्सवके समय यहां हजारों मनुष्य एकत्र होते हैं। यहांके सरस प्राकृतिक दृश्य देखने योग्य है। ग्रामके पास ही एक पहाड़ है। पहाड़ पर कहीं कहीं शिवके पदचिह्न खुदे हुए देख पड़ते हैं।

तिरुमोहूर—यह ग्राम मदुरा जिलेके मदुरा शहरसे २ कोस दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। यहां अति प्राचीन शिवमन्दिर और विष्णुमन्दिर है। दोनों मन्दिरोंमें बहुतसे शिलालेख मिलते हैं। एक शिलाफलकमें लिखा है कि १६२२ ई०में दलवाय सेतुपतिने यहांके शिवमन्दिरका संस्कार किया था।

तिरुपक्करै—दक्षिण आर्काट जिलेके विल्लुपुरम् शहरसे ६ कोस उत्तर-पश्चिममें अवस्थित एक ग्राम। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है। जिसमें एक गोपुर भी है और उसके चारों ओर अनेक तरहके शिलालेख दृष्टिगत होते हैं। कहा जाता है कि यह मन्दिर चोलके किसी राजा द्वारा निर्माण किया गया है।

तिरुवल्लोर—यह स्थान त्रिवाङ्कुड़ राज्यके पद्मनाभतीर्थसे ३ कोस उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। यहां तामिल अक्षरमें लिखे हुए दो प्रस्तरस्तम्भ हैं। इसके अलावा यहां एक ईसाइयोंका प्राचीन गिर्जा भी है। पहले इस प्रदेशमें एक कुप्रथा थी कि उसमें नीचा हिन्दू रमणियोंके किसी निर्दिष्ट दिनमें बाहर निकलने पर पुलिया नामक नीच दासजाति उन्हें पकड़ कर ले जाती थी। यहांके एक शिलालेखमें इस कुप्रथाको रोकनेके लिये इकागोप राजाको ओरसे कठोर आदेश दिया गया है।

तिरुवल्लार—त्रिवाङ्कुड़के अन्तर्गत कल्लकुलमसे ११ कोस उत्तर-पश्चिममें अवस्थित एक ग्राम। यहां अनेक प्राचीन देवमन्दिर हैं जिसमें शिलालेख भी देखे जाते हैं।

तिरुवलम्दे—चेङ्गलपट जिलेके चेङ्गलपट शहरसे ७ कोस उत्तर पूर्व तथा कोवलङ्गसे १ कोस दक्षिण-पश्चिम समुद्रके किनारे अवस्थित एक ग्राम। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है जिसमें उत्कीर्ण शिलालिपि भी देखी जाती है।

तिरुवलञ्जूर—तञ्जोर जिलेमें कुम्भकोणम् तालुकके अन्तर्गत एक शहर। यह अक्षा० ११° उ० और देशा० ७८° २०´ पू० कुम्भकोणम् शहरसे १ कोस उत्तर-पूर्व और कोल्लडम नदीके किनारे अवस्थित है। यहां रेलवे स्टेशन है। लोकसंख्या प्रायः ११२६० होगी। यहां एक अति प्राचीन शिवमन्दिर है। जिसमें तामिल भाषामें उत्कीर्ण १२८८ ई०के रामराज बल्लन देवरायके राजत्वकालका एक शिलालेख मिलता है। मन्दिरका शिल्पनैपुण्य देखने योग्य है। इसके सामने एक सुन्दर गोपुर है।

तिरुवदि—तिरुवार देखो।

तिरुवदि मूल—एक ग्राम। यह चेङ्गलपट जिलेमें चेङ्गलपट तालुकसे पूर्व एक पहाड़ पर अवस्थित है। यहां एक प्रसिद्ध मन्दिर है। कहा जाता है कि कुछ वर्षोंमें यहां भी एक दुर्ग ११वीं सदीमें निर्माण किया था। विजयनगरकी प्रभावकालके समय दो सर्दार यहांके दुर्गका अधिकार कर विजयनगरके प्रभुत्वको अवहेला करते थे। विजयनगरकी उनका नाश होने पर दुर्ग भी विनष्ट हो गया। इस विषयकी अनेक कहानियां सुनी जाती हैं।

तिरुवरङ्कुतुरै—तञ्जोर जिलेके मयारगुड़ि शहरसे २ कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित एक ग्राम। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है जिसमें १३५७ ई०का खुदा हुआ एक शिलालेख है इससे मन्दिरके विषयका पूरा पता चलता है।

तिरुवल्लियुर—मन्द्राज प्रदेशके चेङ्गलपट्, जिलेके अन्तर्गत सैदापेट तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १३°१०' उ० और देशा० ८०°१८' पू० सेंट जोर्ज किलासे ६ मील उत्तरमें अवस्थित है। यहांकी जनसंख्या प्रायः १५८१८ है। यहां एक अति प्राचीन शिवमन्दिर है। मन्दिरके बाहर और भीतर अन्यप्रस्तरमें खुदा हुआ शिलालेख पाया जाता है। १६०३ ई०में फायर साहब इस मन्दिर और शिलालेखको देख गये हैं।

तिरुवत्तूर—मन्द्राजके उत्तर अरुकाडु (आर्काट) जिलेका एक शहर। यह आर्काट शहरसे ११ कोस दक्षिण-पूर्व चेयार नदीके उत्तरकूल पर अवस्थित है। पहले यह जैनियोंका एक प्रधान शहर था। यहांका देवमन्दिर पहले स्थानीय पौराणिक मताचार्योंके हाथ था। इसके सामने नदीके दूसरे पार पूर्णावत्ती नामक स्थानमें एक जैन मन्दिरका ध्वंसभाग अवशिष्ट है। कहा जाता है, कि उस मंदिरको तहस नहस कर उसके द्रव्यादिसे तिरुवत्तूरका मन्दिर निर्मित हुआ है। पूर्णावत्तीके मन्दिरकी जैन प्रतिमा अभी पृथ्वी पर पड़ी हुई है। उसके पास ही एक नहर है; सुना जाता है कि उस नहरमें मंदिरके पीतलका किवाड़ और धनरत्न रखा हुआ है। मंदिरके ध्वंसके समय बहुतसे जैन कानों पर अस्त्राघातसे तथा कोल्हूमें पेर कर मारे गये थे। मंदिरमें खुदे हुए चित्रसे इसका पूरा प्रमाण झलकता है। मंदिरकी एक खुदी हुई तसवीरमें एक ताड़का पेड़ है। वहांके लोगोंका विश्वास है कि महादेवकी अर्द्धनारीश्वर मूर्त्तिके प्रतिमास्वरूप यह पेड़ खुदा हुआ है। इस तसवीरका लेख अत्यन्त निस्थान है। यह एक मण्डप पर अवस्थित है और इसकी ऊंचाई लगभग ८ फुटकी होगी। मंदिरकी दीवारमें बहुतसे अस्पष्ट अक्षरोंमें शिलालेख देखे जाते हैं।

तिरुवन्दिपुरम्—दक्षिण-आरकाड (आर्काट) जिलेका एक शहर। यह कुडलूर शहरसे २॥ कोस उत्तर-पश्चिममें पड़ता है। यहां एक प्राचीन विष्णुमन्दिर है, जिसके नाना स्थानोंमें भिन्न प्रस्तरोंमें खुदे हुए बहुतसे शिलालेख पाये जाते हैं। मन्दिरके भीतरकी दीवारमें भी एक शिलालिपि है। इसके पास ही तिरुमणिक्कुलि नामक ग्राम है, यहां बृहत् यथेष्ट कारुकार्य विशिष्ट एक शिवमन्दिर है। प्रवाद है कि यह मन्दिर १२वीं शताब्दीमें निर्माण किया गया है। इसमें भी बहुतसे शिलालेख हैं। पूर्वकी ओर प्रवेशद्वार पर १८ इञ्च चौड़ी और १५ गज लंबी एक लिपि है। द्वारके दोनों बगल दीवारोंमें बहुतसे शिलालेख खुदे हुए हैं।

तिरुवन्नमलय—मन्द्राज के दक्षिण आर्काट जिलेका उत्तर-पश्चिमीय तालुक। यह अक्षा० ११°५८' से १२°३५' उ० देशा० ७८°३८' से ७९°१७' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण १००८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २४४७०८५ है। बारामहलसे चेङ्गमगिरिपथकी राहमें यही सबसे पहला शहर पड़ता है, इसीसे घाट पर्वतके उपरिस्थित स्थानसमूहका व्यवसाय इस शहरमें चलता है। पर्वतके ऊपर स्कन्धावार है। १७५३ ई०से १७९१ ई०के मध्य इस पर दश बार धावा मारा गया था। १७६० ई०में यहां अंगरेजोंका एक स्कन्धावार था। १७६७ ई०में कर्णल स्मिथने हैदरअली और निजामके साथ युद्धके समय चेङ्गमगिरिपथ हो कर आते हुए इस स्थानमें उनके सहयोगियोंको एक एक करके परास्त किया; किन्तु १७९१ ई०में यह टीपूके हाथ लगा। टीपूके अधःपतनके बाद यह फिर अंगरेजोंके दखलमें आया।

तिरुवन्नमलय दक्षिण प्रदेशमें मन्द्राजके मध्य एक प्रधान तीर्थ है। यहां एक रेलवे स्टेशन भी है जो शहरसे ½ मीलकी दूरी पर पड़ता है। स्टेशन अरुणाचल पहाड़के पूर्वकी ओर है। यह तीर्थ संस्कृत शास्त्रोंमें अरुणाचल नामसे प्रसिद्ध है। यहां महादेवकी पाञ्चभौतिक मूर्त्तिकी तेजोमूर्त्ति विराजित हैं। अरुणाचल गिरिशृङ्ग समुद्रपृष्ठसे २६६४ फुट और शहरसे २०१५ फुट ऊंचा है।

महादेवकी तेजोमूर्त्तिके आविर्भावके विषयमें एक रोचक कहानी इस प्रकार है—किसी समय हर और पार्वती कैलासके पुष्पोद्यानमें भ्रमण कर रहे थे

पार्वतीने कौतुक करनेकी इच्छासे शिवके आ कर महादेवकी आंख मूंद दी। महादेवकी आंख बन्द हो जानेसे सम्पूर्ण विश्वमें अन्धकाराच्छन्न हो गया। यद्यपि यह देवियोंका थोड़े ही समय तकके लिये थी तो भी पृथ्वी पर अन्धकार बहुत काल तक रहा। चन्द्रसूर्यका उदय बन्द हो गया। प्रकाशके अभावसे त्रिभुवन हाहाकार करता हुआ शिवजीके निकट पहुंचा। शिवजी सारी बात सुन कर पार्वतीके ऊपर असन्तुष्ट हुए और कहने लगे आप हंसते हुए बोले 'अब तुमसे पृथ्वीका अमङ्गल हुआ है तब तुम्हें पृथ्वी पर जा तपस्या करके प्रायश्चित्त करना पड़ेगा।' इस तरह शाप दिये जाने पर पार्वती महर्षि किनारे तपस्या करने लगीं। बहुत समय व्यतीत होने पर आकाशवाणी हुई, 'काञ्चीपुरमें जा कर तपस्या करो।' इस पर पार्वती काञ्चीपुरमें जाकर तपस्या करने लगीं। उस स्थान पर बहुत समय बीत चुकने पर पुनः दैववाणीके आदेशानुसार पार्वती अरुणाचल पर जा तपस्या करने लगीं। इस समय पार्वतीने पञ्चाग्नि तप आरम्भ किया। कुछ कालके बाद महादेवजीने सन्तुष्ट हो कर पर्वत-शिखरके ऊपर ज्योतिर्मयरूपमें उन्हें दर्शन दिया। पार्वतीका प्रायश्चित्त समाप्त हो गया। हर-पार्वती उसी मूर्त्तिमें अरुणाचल पर ही रहने लगे। अरुणाचल पर अभी महादेव और महादेवीकी मूर्त्ति है। महादेव तिरु-अरुणाचलेश्वर वा अरुणाचलेश्वरके नामसे और महादेवी अपीत कुचाम्बा वा उण्णामलै नामसे अभिहित हैं। यहां विघ्नेश्वर, सुब्रह्मण्य, चण्डिकेश्वर प्रभृति देवमूर्त्तियोंकी एवम् पृथक् पूजा होती है। दाक्षिणात्यके नियमानुसार अरुणाचलेश्वरकी भी दो मूर्त्तियां हैं एक स्थावरमूर्त्ति और दूसरी उत्सवमूर्त्ति। मूलमूर्त्ति पत्थरकी और उत्सव मूर्त्ति धातुकी बनी हुई है। अरुणाचलेश्वर किस समयकी प्रतिमा है उसका कोई निश्चय नहीं है, किन्तु अनुमान किया जाता है यह चोलराजाओंके समयमें स्थापित हुई है। मन्दिर सुरखुरा (Granite) पत्थरका बना हुआ है।

मन्दिरके चारों ओर प्राङ्गण है और प्राङ्गणके चारों तरफ दुरारोह पत्थरकी दीवार। दक्षिण प्रदेशमें युद्धविग्रहके समय ये सब उच्च प्राचीर-वेष्टित देवमन्दिरादि एक प्रकारके सुदृढ़ स्थान सदृश व्यवहृत होते थे। १७५२ ई०में मूर्त्तजा अली और महाराष्ट्रीय सेनापति मुरारिरावने यह मन्दिर अवरोध किया था, किन्तु कर्णाटकके नवाबद्वारा मन्दिरकी रक्षा की गई। १७५७ ई०में फ्रांसीसियोंने यह स्थान अधिकार किया।

१७६० ई०में शिवायकके कृष्णरावने पुनः इस पर दखल किया। १७६० ई०में कप्तान स्मिथने कर्णाटकके नवाबकी ओरसे इसका उद्धार किया। १७९० ई०में यह टीपूके हाथ लगा। अन्तमें १७९२ ई०को टीपूके साथ सन्धि हो जाने पर यह अंगरेजोंके अधिकारमें आया।

मन्दिरके बाहरकी दीवार पर चार गोपुर हैं। मन्दिर सात प्रकोष्ठमें विभक्त है। सामनेका प्रकोष्ठ उत्सव मण्डप कहलाता है। इसके पीछे छः प्रकोष्ठ हैं। ये प्रकोष्ठ क्रमशः छोटे और अन्धकारमय हैं। प्रत्येक प्रकोष्ठके दरवाजे पर प्रकाश देनेकी अच्छी व्यवस्था की गई है। दिनके समय भी यहां रोशनी हो जाती है। अन्तिम प्रकोष्ठ सबसे छोटा और अन्धकारमय है। इस घरका नाम मूलस्थान है और यहां देवताकी स्थावरमूर्त्ति विराजित है। इसमें बाहरका प्रकाश आनेकी अच्छी व्यवस्था नहीं है। इस अन्धकारको दूर करनेके लिये हमेशा रोशनीकी जरूरत पड़ती है। मूलस्थानमें पुजारीके सिवा दूसरेको जानेका अधिकार नहीं है। यात्री लोग मूर्त्ति देखनेके लिये दरवाजे पर खड़े रहते हैं और पुजारी भीतर जा कर उनके प्रतिनिधि-स्वरूप अष्टोत्तरशत वा सहस्र नाम पाठ द्वारा अर्चना करते हैं। नारियल केला पान और सुपारी नैवेद्य दिया जाता है। पीछे पुजारी बाहर आ कर वेद-पाठ करते हुए आरती उतारते हैं और उसी प्रकाशमें यात्री लोग देवता दर्शन करते हैं। कार्त्तिककी शुक्लचतुर्दशीसे पूर्णिमा तक अरुणाचलेश्वरका वार्षिक उत्सव होता है, जिसे दीपोत्सव कहते हैं। उत्सवके अन्तिम दिनमें जनताकी अधिक जमाव होता है। इस उत्सवमें उपलक्ष्यमें प्रायः १।० लाख मनुष्य एकत्र होते हैं। डिपुटि मजिष्ट्रेट शान्तिरक्षाके लिये वहां पहुंचते हैं। पुलिस-इन्सपेक्टर सब मन्दिर द्वार पर रक्षा करते हैं। मण्डपको उसके एक कमरेमें यात्रियोंके आश्रय दिये जाते हैं। कत

मनुष्योंसे भर जाता है। संध्याके बाद हो अरुणाचलेश्वर और अपीतकुचाम्बल देवोकी उत्सवमूर्त्ति नाना मणिमुक्ताके अलङ्कारसे भूषित कर कंधे पर मण्डप स्थानमें लाई जातो है। मूलस्थानसे घृतपूत कपूरका प्रकाश कपड़ेसे ढाक कर प्राङ्गणके मध्यस्थलमें लाया जाता है। उसी समय एक प्रकारको आतशबाजो होती है और तब कपूरके प्रकाशका आवरण अलग किया जाता है। आतशबाजोके ऊपर जाने पर अरुणाचलका सर्वोच्चशृङ्ग प्रकाशमय हो जाता है। वहाँ एक कुण्ड है जिसे स्थलपुराणके मतसे भगवतोकी तपस्याका अग्नि-कुण्ड कहते हैं। इस कुण्डमें पहलेसे घो, नया कपड़ा और कपुर इत्यादि दिये जाते हैं और वहां एक मनुष्य रोशनो ले कर हमेशा खड़ा रहता है। मन्दिर-प्राङ्गणसे आतशबाजो ऊपर उठने पर हो उस कुण्डमें आग उत्पन्न हो जातो है और यह प्रकाश बहुत दूरसे देखनेमें आता है। यहांके बहुतसे लोग इस दिन उपवासी रहते और प्रकाशको देख जलग्रहण करते हैं। इस मन्दिरका खर्च निभानेके लिये वृटिश-सरकार प्रति वर्ष ८ हजार रुपये देती है। मन्दिरके अभिभावक 'धर्म-कर्त्ता' नामसे पुकारे जाते हैं। प्रवाद है, कि गौतम मुनिने यहां तपस्या की थो। वे चिरजोवी हैं, अभो भी हर एक रातको वे अरुणाचलेश्वरको पूजा कर जाते हैं।

२०से ४० तक ब्राह्मणकुमार यहां वेद अध्ययन कर सकते हैं। नित्य प्रति जो नियमित भोग चढ़ाया जाता है, उसे अभ्यागत ब्राह्मण और पूजक लोग पाते हैं। दाक्षिणात्यके नियमानुसार इस मन्दिरमें भी देवनर्त्तको हैं जिनको संख्या लगभग ५० है।

यहां बहुतसे धर्मक्षेत्र हैं, जहां ब्राह्मण यात्री तीन दिन तक बिना खर्चके भोजन पाते हैं। शूद्र जातिके लिये पृथक् धर्मशाला भो है जहां वे केवल रह सकते हैं, किन्तु भोजन नहीं मिलता। रसोई करनेके लिये स्वतन्त्र घर हैं।

इस देशके नटकोटा शेठो प्रधान धनो हैं। उन्होंने अनेक स्थानके अनेक देवालय और यात्रियोंके सुविधाके लिये बहुतसे छत्र बनवा दिये हैं।

तिरुभुवत्तुर—दक्षिण-आर्काट जिलेके विल्वपुरम् शहरसे ३ कोस पूर्वमें अवस्थित एक स्थान। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है, जिसमें बहुतसे शिलालेख देखे जाते हैं।

तिरुवयार (तिरुवाडी)—मन्द्राजके अन्तर्गत तञ्जोर तालुक और जिलेका एक शहर। यह अक्षा० १०° ५३' उ० और देशा० ७९° ६' पू०में तञ्जोर शहरसे ६ मोल उत्तर कावेरी नदीके किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ७८२१ है। तञ्जोरके प्रथम आक्रमणके समय शिवाजोने यहां स्कन्धावार स्थापित किया था। यहां पत्थरका एक प्राचीन शिवमन्दिर है। मंदिर देखनेमें सुंदर और कारुकार्य-विशिष्ट है। इसकी गिनती प्रधान तीर्थोंमें की गई है। उत्सवके समय हजारों यात्री एकत्रित होते हैं। उत्सवका नाम सरथस्नान है। इस स्थानके देवताका नाम तिरुनन्दि वा त्रिनंदिकेश्वर है। एक तो उत्सव, दूसरे पञ्चनाथी नामकी पुष्करणीमें स्नान करनेके लिये यात्रियोंकी संख्या और भी बढ़ जाती है। यात्री बहुत दूर दूर देशोंसे आया करते हैं। दशहराके दिन गङ्गास्नान करनेमें जो फल मिलता है, वही फल पञ्चनाथीमें भी स्नान करनेका है। शिवमंदिरके प्राङ्गणमें यह पुण्य सरसी अवस्थित है। कहते हैं न्यायमिश्र नामक किसी ऋषिने यहां स्वयम्भू शिवलिङ्गकी तपस्या की थी। तपस्यासे सन्तुष्ट हो कर शिवजीने उनसे कहा, 'लिङ्गमूर्त्तिके समीप उत्तरकी ओर तीन गोष्पद चिह्न हैं। उन्हींको खोदनेसे आपकी मनस्कामना पूरी होगी।' तदनुसार ऋषिने जब उन्हें खोदा, तो पहलेमें ईंटोंका, दूसरेमें चूना सुरखीका और तीसरेमें सोनेका ढेर मिला। बाद ऋषिने उसी सामानोंसे स्वयम्भू लिङ्गके ऊपर वर्त्तमान मन्दिर बनवाया। सरथस्नानके विषयमें प्रवाद है, कि त्रिशूली नामके कोई ब्राह्मण थे। शैशवकालमें जब वे जङ्गलमें खेल रहे थे, एक ऋषिकी दृष्टि उन पर पड़ गई। कौतुक करनेके लिये बालक त्रिशूलीने ऋषिके भिक्षापात्रमें अर्थदानके बहाने एक लोष्ट्र डाल दिया। ऋषि बिना कुछ कहे चल दिये। वयःप्राप्त होने पर त्रिशूली इस सामान्य घटनाको भूल गये। क्रमशः विवाहादि कर संसारधर्ममें प्रवृत्त हुए। बहुत दिन बीत गये, पर उनके एक भी सन्तान न हुई। अतः वे बहुत दुःखित हो नाना धर्मानुष्ठान और व्रतनियमादि करने लगे। एक

दिन अपर्णमें उस ऋषिने दर्शन दिया और उनकी ऐसी चरित्रकी कुरूपताके लिये बहुत तिरस्कार करते हुए कहा, 'तुमी कर्मदोषसे आपने अब तक पुरुषसुख दर्शन नहीं किया है।' बाद शिष्योंने इसके लिये प्रायश्चित्त करनेकी ठी विचारा—"भोजनसदमें एक बार ऐसे ब्राह्मणमें ऋषियोंको आनेके लिए मैंने जो पत्थर भिजवाये दिया था उसी भूमि परसे भोजन करना उचित है।" ऐसा स्थिर कर के पश्चात् आप स्नान कर छोटे छोटे पत्थरके टुकड़े खाने लगे। उसका नाम शिलाशरण (शिलाभक्षण) पड़ा। प्रायश्चित्तसे सन्तुष्ट हो कर भगवान्ने अपना दर्शन दिया और कहा, 'अमोघ चोटी पर एक स्तम्भ और उसमें एक लिंग मिलेगा।' वैसा ही हुआ। शिष्योंको कहा मिला उसका मनुष्य का शरीर और गोका मुख था। शिशुको पा कर शिष्योंने उसे महादेवके नाम पर अर्पण कर दिया। महादेवने उसे अपने अनुचरों का अधिनायक बनाया। इसीका नाम था तिरुनन्दि या शिलनन्दी। जो शिवजीका वाहन बन कर प्रसिद्ध है। उ ऋषियोंके वरुणके साथ शिलनन्दीका विवाह हुआ था। शिलनन्दीको समवाधिकल्याणके समय जब अभिषेक होता है तब उनके मस्तक पर शिवके हस्तका कमण्डलुका जल, शिवके मस्तकका गङ्गाजल, शिववाहन वृषभके मुखका जल और चन्द्रमाकी अमृतधारा गिरती है, शिलनन्दीके मस्तक परसे यह चार प्रकारका जल गिर कर नदीको धाराके साथ एक गड्ढेमें जमा हो जाता है। इसी नदीमें वर्तमान पञ्चनामी कावेर है। वर्तमान शियाली शहरके समीप प्राचीनकालमें इन्द्रका एक शिव कानन था। एक बार वर्षा नहीं होनेसे यह बिलकुल सूख गया था। वरुणके अधिकारमें यद्यपि रहनेके कारण इन्द्र इसका कुछ भी प्रतीकार कर न सके। बाद नारदने आ कर उनसे कहा 'पाञ्चयम् नामक पर्वत शिखर पर अगस्त्य ऋषिके कमण्डलुमें गङ्गाजल रखा हुआ है। यदि आप विनायक नामक देवताको सहायतासे उस जलको चुरा लावें तो आपको इच्छा पूरी हो।' इन्द्रने वैसा ही किया। विनायक भी मूर्त्ति धारण कर कमण्डलुका जल पीने गये। अगस्त्यने सामान्य गौ जान कर उसे हटा दिया। ऐसा करनेमें कमण्डलु उलट गया और जल नदीके रूपमें बह चला। यही नदी पूर्वोक्त अभिषेक जलके साथ मिल कर पहले पञ्चनदीक्षेत्रमें मिले है, पीछे इन्हीके मिलने कावेरी नदीको उत्पत्ति हुई है।

शिलनन्दी उत्सवकी समय पालकी पर सात स्वतन्त्र स्थानोंमें लाये जाते हैं। कहते हैं कि इन सात स्थानोंमें सात ऋषि शुभभावसे तपस्या करते हैं। उन्हींको दर्शन देनेके लिये ही ऐसा किया जाता है। प्राचीनकालमें सूर्य व सोम महाराज सूरज इस उत्सवमें बहुत रुपये खर्च करते थे। तञ्जोर-तालुक बोर्डके निरीक्षणमें यहां एक संस्कृत हाईस्कूल है। इसके सिवा एक वैदिक स्कूल और एक अंगरेजी हाई स्कूल भी है।

तिरुवरङ्ग—दक्षिण आर्काट जिलेमें कल्लकुरिच शहरसे १० कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित एक ग्राम। यहां एक प्राचीन विष्णुमन्दिरमें बहुतसी शिलालिपियां पाई जाती हैं।

तिरुवरम्बूर—त्रिचिनापल्ली जिलेमें तञ्जोरके रास्ते पर अवस्थित एक ग्राम। यह त्रिचिरापल्ली शहरसे ४ कोस पूर्व और उत्तरमें पड़ता है। यहां एक रेलवे स्टेशन है। इसके पास ही एक ऊंचे पहाड़के ऊपर एक सुन्दर शिवमन्दिर है। दूरसे इस मन्दिरकी शोभा अपूर्व बोध पड़ती है। इसकी दीवारोंमें बहुतसे शिलालेख मिलते हैं। इस स्थानका दूसरा नाम एरुम्बीश्वर है।

तिरुवल्लम—त्रिवाङ्कुड़ राज्यका एक ग्राम जो त्रिवेन्द्रम् शहरसे १० कोस उत्तरमें अवस्थित है। यहां एक अति प्राचीन मन्दिर है। त्रिवन्द्रम्के प्रसिद्ध मन्दिरके बाद ही इस स्थानके मन्दिरका उल्लेख किया जाता है।

तिरुवलञ्चुड़—तञ्जोर जिलेके शियाली शहरसे ४ कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित एक ग्राम। यहां एक प्राचीन शिव मन्दिर है जिसमें बहुतसे शिलालेख खुदे हुए हैं और यहांके कल्याणसुन्दरके मन्दिरमें एक ताम्रशासन है।

तिरुवलम्बुरि—तञ्जोर जिलेके कुम्भकोणम् तालुकका एक ग्राम। यह कुम्भकोणम् शहरसे ६ कोस दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है जिसमें बहुतसे उल्लेख शिलालेख पाये जाते हैं। यह मन्दिर अत्यन्त उच्च और सुन्दर गोपुर विशिष्ट है।

तिरुवल्ल—उत्तर-आर्काट जिलेके वेल्लुर शहरसे ५ कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित एक ग्राम और रेलवे स्टेशन। यहांके विश्वनाथेश्वर स्वामीका मन्दिर अत्यन्त बड़ा है। उसकी दीवार पर बहुतसे अस्पष्ट शिलालेख खुदे हुए हैं।

तिरुवल्लुवर—एक प्रसिद्ध तामिल कवि और दार्शनिक त्रिवल्लूवर देखो।

तिरुवाङ्कोड़—मन्द्राज प्रदेशके त्रिवाङ्कुड़ राज्यका एक ग्राम। यह अक्षा० ८° १५´ उ० और देशा० ७७° १८´ पू० त्रिवन्द्रम् शहरसे २४ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। यहांको जनसंख्या १८३८ है। यह त्रिवाङ्कुड राज्यको प्राचीन राजधानी है। यहां एक प्राचीन शिवमन्दिर है जिसमें बहुतसे शिलालेख भी खुदे हुए हैं। त्रिवाकड देखो।

तिरुवालूर—१ मन्द्राज प्रदेशके तञ्जोर जिलेके अन्तर्गत नागपट्टन तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १०° ४६´ उ० और देशा० ७९° ३९´ पू०में तञ्जोर-नागपट्टन रेलपथ पर अवस्थित है। यहांकी लोकसंख्या प्रायः १५४३६ है। यहां डिपुटी तहसीलदार और जिलेके मुनसिफ रहते हैं। यहां चावलकी कल, हाई-स्कूल तथा बहुतसे प्राचीन देव-मन्दिर हैं।

२ चेङ्गलपट्ट जिलेमें और एक विष्णुधाम है, वह भी तिरुवल्लूर नामसे प्रसिद्ध है। यह मन्द्राजसे १३ कोसकी दूरी पर अवस्थित है। यहांकी लोकसंख्या प्रायः पाँच हजारसे अधिक नहीं होगी। यहां एक रेल-स्टेशन भी है। यहांकी विष्णुमूर्त्ति देखनेके लिये दूर दूरके मनुष्य आते हैं। यहां हृत्तापनाशिनी नामका एक तीर्थ है। प्रवाद है, कि शालिहोत्रज ऋषिने बहुत समय तक इस हृत्तापनाशिनीके किनारे कठोर तपस्या की थी। तपस्यासे सन्तुष्ट होकर विष्णुने उन्हें दर्शन दिया। ऋषिने वर मांगा कि इस सरोवरमें स्नान करनेसे महा-पापीका भी पाप दूर हो। विष्णु उनके मस्तक पर हाथ रख 'ऐसा ही होगा' कह कर अन्तर्द्धान हो गये। तभीसे यह तीर्थ हृत्तापनाशिनी नामसे प्रसिद्ध है। यहांकी अनन्तशायी चतुर्भुज विष्णुमूर्त्तिका एक हाथ शालि-होत्रज ऋषिके मस्तक पर रखा हुआ दीख पड़ता है। एक मन्दिरमें कनकवल्ली देवी विराजमान है। कहा जाता है कि यह मूर्त्ति स्वर्ण सीताके अनुरूप है। यहां भी कई एक शिलालेख देखे जाते हैं।

तिरूर—मन्द्राजके मलवार जिलेके अन्तर्गत पोनाई तालुकका एक ग्राम। यह अक्षा० १०° ५३´ उ० और देशा० ७५° ५६´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ४४४४ है। यह एक रेलवेष्टेशन है।

तिरूरङ्गाडी—मन्द्राजके मलवार जिलेके अन्तर्गत अर्णाड तालुकका एक शहर। यह अक्षा० ११° २´ उ० और देशा० ७५° ५६´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५४०० है। यहां डिपुटी-तहसीलदार और सहकारी मजिष्ट्रेटकी अदालत तथा प्रसिद्ध माविल्ल फकीर तारामल टङ्गलकी एक समाधि है। मछली, सुपारी और नारियल यहांका वाणिज्यद्रव्य है।

तिरैंदा (हिं० पु०) समुद्रमें तैरता हुआ पीपा। समुद्रका पानी जहां छिछला रहता है वहीं पर संकेतके लिये यह रखा जाता। २ मछली मारनेकी वंसीमें बंधी हुई पांच छः अंगुलकी लकड़ी। यह लकड़ी पानीमें तैरती रहती है और इसके डूबनेसे मछलीके फंसनेका पता लगता है।

तिरे (हिं० पु०) फीलवानोंका एक शब्द। जिसे वे बहाते हुए हाथियोंको लिटानेसे प्रयोग करते हैं।

तिरोअह्न (सं० वि०) अहनि भवं अह्नः भवेच्छन्द-सीतियत्। तिरोहितोऽह्नः। एक दिनसे अधिकका।

तिरोगत (सं० वि०) अदृश्य, गायब।

तिरोजन (सं० अव्य०) मनुष्यसे पृथक्।

तिरोध (सं० स्त्री०) तिरस्-धा-क्विप्। अन्तर्धान, अदर्शन।

तिरोधातव्य (सं० वि०) तिरस-धा-तव्य। आच्छादन-योग्य, ढाकने लायक।

तिरोधान (सं० क्ली०) तिरस् धा-भावे ल्युट्। अन्तर्धान, अदर्शन, गोपन।

तिरोधायक (सं० पु०) गुप्त करनेवाला, छिपानेवाला। आड़ करनेवाला।

तिरोभवित्व (सं० त्रि०) तिरस् भू-त्वच्। १ तिरोभाव, अन्तर्द्धान। २ गुप्तभाव, गोपन, छिपाव।

तिरोभाव (सं० पु०) तिरस् भू-भावे घञ्। १ अन्तर्धान,

अदर्शन, लोप। २ आच्छादन। ३ गुप्तभाव, छिपाव।

तिरोभूत (सं॰ त्रि॰) तिरस भू क्त। अन्तर्हित, गुप्त छिपा हुआ।

तिरोरी—मध्य-प्रदेशके भण्डारा जिलेकी उत्तरीय तहसील। यह अक्षा॰ २१ १०' और २१ ३०' उ॰ तथा देशा॰ ७९ ३१ और ८० ३' पूर्वके मध्य अवस्थित है। भूपरि-माण ११२८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १८१५२४ है। इस तहसीलमें ६०१ ग्राम और ११ जमींदारियाँ हैं। जमींदारी ईंटका रकबा ७१८ वर्गमील है, जिसमें १६१ वर्गमील जङ्गल है।

तिरोधर्ष (सं॰ त्रि॰) तिर तिरोहित,धर्षा यत्र। दृष्टि से रहित जिसका बरसाने वर्षण हुआ हो।

तिरोहित (सं॰ त्रि॰) तिरस्-धा क्त। १ अन्तर्हित, अदृष्ट, छिपा हुआ। २ आच्छादित, ढका हुआ।

तिरोऽह्न—तिरोऽह्न्य देखो।

तिरौंदा (हिं॰ पु॰) तिरेंदा देखो।

तिरौर—पञ्जाबके कर्नाल तहसील और जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा॰ २९ ३८' उ॰ और देशा॰ ७६ ५८ पू॰ के मध्य थानेश्वरसे १४ कोस दक्षिणमें अवस्थित है। ११९१ ई॰में अजमेरके चौहान राजा पृथ्वीराजने महम्मद घोरीको इसी स्थान पर पराजय किया था और फिर ११९२ ई॰में आप भी यहीं पर पराजित हुए थे। इसका प्राचीन नाम आजमाबाद है, क्योंकि यहाँ औरङ्गजेबके पुत्र आजमशाहका जन्म हुआ था। १७३८ ई॰में नादिर शाहने इसे जीता था। पहले यह समृद्धशाली नगर था, आज कल इसकी अवस्था शोचनीय है।

तिर्य (सं॰ त्रि॰) तिरस्-निर्मित जो तिरछा बना हो।

तिर्यञ्च् (सं॰ त्रि॰) वक्र, टेढ़ा, आड़ा, तिरछा। मनुष्य-को छोड़ पशुपक्षी आदि समस्त जीव तिर्यञ्च कहलाते हैं क्योंकि खड़े होनेमें उनके शरीरका विस्तार ऊपरकी ओर नहीं रहता, आड़ा हो जाता है। इनका खाया हुआ अन्न पेटमें सीधे ऊपरसे नीचेको और नहीं जा कर आड़ा जाता है (पु॰)। २ पक्षस धातु, पारा।

तिर्यक्चित (सं॰ त्रि॰) तिर्यक् वक्रभावेन चित वक्र भावसे चित, जो तिरछा गिरा हो।

तिर्यक्‌ता (सं॰ स्त्री॰) तिर्यञ्च् भावे तल। वक्रता तिरछा-पन, आड़ापन।

तिर्यक्त्व (सं॰ क्ली॰) तिर्यञ्च् भावे त्व। १ वक्रत्व तिरछापन।

तिर्यग्गति (सं॰ स्त्री॰) तिरश्ची गतिः कर्मधा॰। वक्र गति तिरछी चाल।

तिर्यक्‌पातो (सं॰ त्रि॰) तिर्यक् पतति पत-णिनि। १ वक्र प्रसारित आड़ा फैलाया हुआ। २ कुटिलप्रसारित, जो कुटिल प्रसारित हो।

तिर्यक्‌प्रमाण (सं॰ क्ली॰) तिर्यक् प्रमाणं कर्मधा॰। विस्तार प्रमाण, चौड़ाई।

तिर्यक्‌प्रेक्षण (सं॰ त्रि॰) तिर्यक् प्रेक्षणं यस्य, बहुव्री॰। वक्रदृष्टिकारी, तिरछी नजरसे देखनेवाला।

तिर्यक्‌प्रेक्षी (सं॰ त्रि॰) तिर्यक् यथा तथा प्रेक्षते प्र ईक्ष णिनि। वक्रदृष्टिकारी, जो तिरछी नजरसे देखता हो।

तिर्यक्‌भेद (सं॰ पु॰) दो आधार पर रक्खी हुई वस्तुका बीचमें दबाव पड़नेसे टूटना।

तिर्यक्‌लोक (सं॰ पु॰) जैनमतानुसार वह लोक जहाँ मनुष्य, देव और नारकियोंका अस्तित्व न हो। यह लोक-शिल नाड़ीके बाहर है। 'जैनधर्म' शब्दमें लोकवर्णन देखो।

तिर्यग्व्यतिक्रम (सं॰ पु॰) जैनमतानुसार दिग्व्रतका एक अतीचार। दिग्व्रतिक्रम देखो।

तिर्यक्‌स्रोतस् (सं॰ पु॰) तिर्यक् वक्र स्रोतः आहार सञ्चारो यस्य बहुव्री॰। पशु पक्षी प्रभृति। भागवतमें इनके विषयमें इस प्रकार लिखा है—तिर्यक्‌स्रोताओं अर्थात् पशुपक्षियोंकी सृष्टि षष्ठम है। ये २८ प्रकारके माने गये हैं। ये ज्ञानशून्य तथा तमोगुणविशिष्ट हैं, इसीसे आहाराग्निमात्र परायण हैं। ये केवल घ्राणेन्द्रिय द्वारा ही अपने अर्थोंकी सिद्धि करते हैं इनके अन्तःकरण में किसी प्रकारका ज्ञान नहीं बतलाया गया है। तिर्य-क्‌स्रोताओंके नाम—(दो खुरवाले) गाय, बकरी भैंस, कृष्णसारमृग, सूअर, नीलगाय रुरु नामक मृग, भेड़ और ऊँट। (एक खुरवाले-) गदहा घोड़ा, खच्चर, गौर भृग शरभ, सुरागाय। (पञ्चनख) कुत्ता, गीदड़, भेड़िया, बाघ, बिल्ली खरहा, सिंह, दर, हाथी, कछुआ,

मेढक, (जलचर—) मकरादि जन्तु; (नभचर—) गोध, बगला, मोर, हंस, कौवा, पेचक इत्यादि।

तिर्यग (सं० पु०) तिर्यग ग, कुटिलगामी पशुपनशादि, वे पशुपची जिनको चाल टेढ़ी हो।

तिर्यगतिक्रम (सं० पु०) जैनमतानुसार दिग्व्रतके पांच अतीचारोंमेंसे तीसरा अतीचार। पर्वतादिकी गुफाओं तथा सुरंग आदिमें टेढ़ा जाना, जिससे व्रतमें दोष लगे, तिर्यक्-अतिक्रम कहलाता है। (तत्त्वार्थसूत्र ७।३०)

तिर्यगन्तर (सं० क्ली०) दो द्रव्योंके मध्यस्थानका परिमाण।

तिर्यगयन (सं० क्ली०) तिरश्चां अयनं, ६ तत्। १ पशुपक्षियोंकी गति तिर्यक् अयनं कर्मधा०। २ वक्रगति, टेढ़ी चाल।

तिर्यगागत (सं० त्रि०) तिर्यक् वक्रभावेन आगतः। जो वक्रभावसे आता हो।

तिर्यगीक्ष (सं० त्रि०) तिर्यक् ईक्ष-अच्। वक्रभावसे देखना, जो तिरछी नजरसे देखता हो।

तिर्यगीश (सं० पु० कृष्णका एक नाम।

तिर्यगेकादश—जैनमतानुसार ग्यारह तिर्यक् प्रकृतियोंका नाम। तिर्यंचगति आदि २, एकेन्द्रियादि जाति ४, आताप उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण—ये ११ तिर्यक प्रकृतियां हैं। इनका उदय तिर्यञ्चगतिमें ही होता है, इसीसे 'तिर्यगेकादश' ऐसा पड़ा है।

(गोम्मटसार कर्मकाण्ड ४१४) देखो।

तिर्यग्ग (सं० त्रि०) तिर्यक् गच्छति तिर्यक्-गम-ड। कुटिलगामी, जिसकी गति टेढ़ी हो।

तिर्यग्गत (सं० त्रि०) तिर्यक् वक्रभावेन गतः। वक्रगामी।

तिर्यग्गति (सं० स्त्री०) तिरश्चां गतिः, कर्मधा०। १ वक्रगति, तिरछी या टेढ़ी चाल। कर्मवश पशु-योनि-प्राप्त। तिर्यग्गति देखो। (त्रि०) २ तिर्यक् गति यस्य। ३ वक्रगमन शील, जिसकी चाल टेढ़ी हो।

तिर्यग्गम (सं० क्ली०) तिर्यक् गम गमनं। वक्रगमन, टेढ़ी चाल।

तिर्यग्गमन (सं० क्ली०) तिर्यक् गम्-ल्युट्। १ वक्र गमन, टेढ़ी चाल (त्रि०) तिर्यक् गमनं यस्य। २ वक्र। ३ गतिशील वायु।

तिर्यग्ज (सं० त्रि०) तिर्यक् जन ड। १ जो पक्षी इत्यादिमें उत्पन्न हो। (पु०) पक्षी इत्यादिकी जाति।

तिर्यग्जन (सं० पु०) तिर्यक् जनः कर्मधा०। कुटिल, कपटी मनुष्य आदमी।

तिर्यग्जाति (सं० स्त्री०) तिरश्चां जाति ६-तत्। पशुजाति।

तिर्यग्दिश् (सं० स्त्री०) तिर्यक् दिश्-क्विप्। उत्तरदिशा।

तिर्यग्धार (सं० पु०) तिर्यक् धृ-घञ्। वक्रधार, जिसका किनारा तेज हो।

तिर्यग्नासा (सं० स्त्री०) तिर्यक् नासा यस्य, बहुव्री०। वह जिसकी नाक तिरछी या टेढ़ी हो।

तिर्यग्भागव्यतिक्रम (सं० पु०) सागारधर्मामृत नामक जैन ग्रन्थमें वर्णित अतीचार-भेद।

तिर्यग्यवोदर (सं० क्ली०) जौका दाना (Barley corn)

तिर्यग्यान (सं० क्ली०) तिर्यक् यानं यस्य, बहुव्री०। कुलीर, केकड़ा।

तिर्यग्योन (सं० पु०) शुकसारिकादि पक्षी-जाति, तोता और मैना पक्षीकी जाति।

तिर्यग्योनि (सं० स्त्री०) पशुपक्ष्यादि तिर्यक् जाति। गृहस्थ यदि ब्रह्मचारियोंका वेश धारण कर भिक्षादि द्वारा जीविका निर्वाह करें, तो वे तिर्यग्योनिको प्राप्त होते हैं। पशु, पक्षी, मृग, सरीसृप और स्थावर इन्हीं पांच भागोंमें तिर्यक्योनि विभक्त है।

तिर्यग्योन्यन्वय (सं० पु०) तिर्यक् योनीनां अन्वयः ६-तत्। पशुपक्ष्यादि जाति।

तिर्यग्विद्ध (सं० त्रि०) तिर्यक् भावेन विद्धः। सुश्रुतोक्त एक प्रकारका शिरावेध। तिर्यक् (वक्र)-भावसे अस्त्रपात होनेसे यदि समस्त अङ्ग कट जांय, केवल थोड़ा ही बच रहे तो उसे तिर्यक् विद्ध कहते हैं। यह तिर्यग्वेध अत्यन्त दूषणीय है। (सुश्रुत चिकि० ८अ०) २ जो तिर्यक्-भावसे विद्ध किया गया हो।

तिर्यङ्नास (सं० पु०) वह जिसकी नाक टेढ़ी हो।

तिर्यच् (सं० पु०) तिरो अञ्चति तिरस् अञ्च क्विप्, तिरसः तिरि आदेशः अञ्चेर्न लोपश्च। विहङ्ग प्रभृति, पक्षी इत्यादि। पाप करने पर मनुष्य पक्षी-योनिमें जन्म लेता

है। (भाग० ११।११।१२५) (त्रि०) २ वक्रगामी, जिसकी गति टेढ़ी हो।

तिर्यंच (सं० पु०) जैनमतानुसार मनुष्य, देव और नारकियोंके सिवा जगत्‌में जितने भी जीव हैं, वे सब तिर्यंच हैं। तिर्यंच जीवके दो भेद हैं—त्रस और स्थावर।

जैनधर्म शब्दमें जीव-तत्त्व प्रकरण देखो।

तिर्यगानुपूर्वी (सं० स्त्री०) जैनमतानुसार जीवकी एक गति। इसमें इसे तिर्यग्योनिमें जाते हुए कुछ काल तक रहना पड़ता है।

तिर्यंची (सं० स्त्री०) तिर्यंच् स्त्रियां ङीप्। तिरछी, पशु पक्षियोंकी स्त्री मादा पशु या पक्षी।

तिल (सं० पु०) तिलति स्निह्यति तैलेन यद्वा भवति तिल-क। स्वनामख्यात शस्यविशेष (Sesamum Indicum)। इसके पर्याय—होमधान्य, पवित्र, पितृतर्पण, पापघ्न, पूतधान्य, जटिलक और वनमुद्ग।

तिलकी गिनती 'धान्य'में की गई है। इसका व्यवहार भारतमें प्राचीन है, यहां तक कि जब और किसी बीजसे तेल नहीं निकाला गया था तब तिलसे निकाला गया। इस कारण उसका नाम ही "तैल" (तिलसे निकाला हुआ) पड़ गया। पर आज कल अन्यान्य दूसरे बीजोंसे (सरसों पोस्त, बादाम आदि) जो निर्यास निकलता है, वह भी "तैल" नामसे ही प्रसिद्ध हो गया है। अभी 'तेल' शब्दसे तिलका तेल न समझ कर सरसोंका तेल ही समझा जाता है।

तिल पौधमण्डलका शस्य है। पाश्चात्य उद्भिद्‌शास्त्रवेत्ताओंका अनुमान है कि तिलका आदि स्थान अफ्रीका महाद्वीप है। आज तक केवल १२ जातिके तिल पाये गये हैं। अफ्रीकामें आठ बारह प्रकारके तिलोंमेंसे आठ प्रकारके तिल अपने आप उपजते हैं। तैलप्रद बीजकी खेती अफ्रीकामें भी बहुत पहलेसे प्रचलित है। ग्रीक लाटिन और अरबीय प्राचीन ग्रन्थकारोंके ग्रन्थोंमें सिसेम वा सिसेमम शब्द (अरबीय सिम्‌सिम्) पाया जाता है। थियोफ्रेस्टस और डायस्कोरिडिस्‌ने लिखा है, कि "मिस्रमें सिसेम नामक द्विदल बीजकी खेती होती है।" ग्रीको कुछ और भी लिख गये हैं—कि तिल भारतवर्षसे इस देशमें लाया गया है। अरबीय "सिमसेम" वा "सिमसम" शब्दसे ही ग्रीक 'सिसेम' शब्द निकला है।

पाश्चात्य पण्डित लोग जो कुछ कहें पर तिलका व्यवहार भारतवर्षमें बहुत पहलेसे चला आ रहा है। यूरोप जब अफ्रीकाका विवरण बिलकुल नहीं जानता था, अफ्रीकावासी जब अरबीय सभ्यता विस्तार नहीं हुई थी तभीसे भारतमें तिलका व्यवहार प्रचलित है। इसीसे प्राचीन ग्रन्थोंमें इसका उल्लेख है (अथर्ववेद २।८।३, ६।१४०।२, शुक्ल यजुर्वेद १८।१२ और शतपथब्राह्मणमें ८।१।१।४)। इसके सिवा हिन्दूके श्राद्ध और तर्पणादिमें बहुत प्राचीन कालसे तिलका व्यवहार चला आ रहा है। एतद्भिन्न भारतवर्षके विभिन्न स्थानोंकी विभिन्न भाषाओंमें इस शस्यके जितने भी नाम प्रचलित हैं, उन सभोंमें तिल यह नाम एक प्रकार अविकृत भावसे ही लिया गया है। किसी दूसरे शस्यके नामोंकी इस प्रकार समता भारतवर्षमें नहीं है। तिड्‌म्, तिल्कि आदि कल्पित नाम यद्यपि अरबीय 'सुन्‌सुम्' शब्दका रूपान्तर है, तो भी यही आदिम नाम है, ऐसा नहीं कह सकते। भारतीय आयुर्वेद शास्त्र सबसे प्राचीन है। उसमें भी तिलके आविर्भावके गुणभेद आदि बतलाये गये हैं। पौधमण्डलका शस्य मान कर मध्यभारतके किसी स्थानमें जङ्गली तिल यद्यपि नहीं भी मिलता है, तो भी हिमालय, अफगानिस्तान फारस, अरब मिस्र आदि देशोंमें जो इसकी खेती होती है, उससे अनुमान किया जाता है कि वह भारतका आदि शस्य न भी हो, पर यह आर्यों द्वारा इस देशमें पहले पहल लाया गया था, इसमें सन्देह नहीं। इसका आर्य-नाम तिल और ईरानी नाम 'सिम सिम' देख कर अनुमान किया जाता है कि बहुत पहले तिल एक ऐसे स्थानमें उपजता था जहांसे इसकी खेती पूर्व और पश्चिमकी ओर फैलती फैलती बहुत दूर तक फैल गई है। अ डिकण्डोल इन्होंके आधार पर कहते हैं कि इसकी स्रोत नदीके किनारेसे ले कर उत्तर-भारत तक मध्यएशियाके किसी स्थानमें इसका आदि वास था। उसी स्थानसे आर्य लोग इसे भारतवर्षमें, पीछे भारतीय द्वीपपुञ्जमें लाये। भारतमें प्रचार होनेके पहले तिल अरब वा यूरोपमें नहीं भेजा जाता था, यह सब भाषातत्त्वके प्रमाणसे पता चलता है। विलवाके गर्भमें पहुंचने तक भी भारतीय पक्ष ग्रन्थोंका विवरण न पढ़ कर्मसे फिर

की वर्ष पहले निपुण हुए हैं, उनके अनुसन्धानसे प्रकाशित हुआ है कि पारस्यनाथ पहाड़में १५०० फुटसे लेकर ३५०० फुटकी ऊंचाई पर तथा हिमालयके उत्तर-दक्षिण भागमें इस जातिका गाछ जङ्गलोत्पन्न पाया गया है। जङ्गली और खेती तिलमें बहुत फर्क रहता है। खेती तिलका फूल सफेद और जङ्गलीका काला होता है। पत्ते डंठल और मूलमें भी अनेक प्रभेद देखनेमें आते हैं।

प्लिनि और पेरिप्लसके ग्रन्थोंसे जाना जाता है, कि तिलका तेल गुजरात और सिन्धदेशसे बेरिगाजा होता हुआ यूरोपको जाता था।

आइन-इ-अकबरीमें सफेद तिल और काला तिलका उल्लेख है। यह प्रायः सभी प्रान्तोंमें गिना गया है। आगरा, इलाहाबाद, अयोध्या, दिल्ली, लाहोर, मुलतान, मालवा आदि सूबोंमें इसकी खेती होती थी।

थोड़े ही दिनोंसे इसका कारोबार बहुत बढ़ गया है, विदेशोंको भी यह भेजा जा रहा है।

खेती—भारतवर्षके प्रायः सब देशोंमें इसकी खेती होती है। बोम्बई प्रान्त प्रदेशमें यह ग्रीष्मकालका शस्य, दूसरी जगह शरद् शस्य और शीत प्रदेशमें ग्रीष्मकालका शस्य है। पञ्जाब प्रदेशमें वर्षाकालमें इसकी खेती होती है। मध्यभारतमें और मन्द्राजमें वसन्त तथा शरत् कालमें इसकी फसल दो बार उपजायी जाती है। मध्यभारत और उत्तर-भारतकी बालुकामय भूमिमें इसकी जैसी वृद्धि और पुष्टि देखी जाती है, ब्रह्म, आसाम और बङ्गालकी सजल भूमिमें वैसी नहीं देखी जाती। तिल साधारणतः चार श्रेणियोंमें विभक्त है। लेकिन यह नहीं कह सकते कि, ये चार श्रेणियां जातिके अनुसार हैं अथवा खेतीके प्रथानुसार। वर्ण देख कर यदि इसकी श्रेणी कायम की गई हो तो भी इसकी संख्या चार ही है; श्वेत, कृष्ण, रक्त और धूसर। भारतवर्षमें कहीं भी इसका पौधा १८ इञ्चसे अधिक ऊंचा नहीं देखा गया है, कहीं कहीं तो इसकी ऊंचाई केवल तीन ही चार फुट है। इसकी पत्तियां आठ-दस अंगुल तक लम्बी और तीन-चार अंगुल चौड़ी होती हैं। ये नीचेकी ओर तो ठीक आमने सामने निकली रहती हैं, पर ऊपर कम या बेस क्रमसे होती हैं। पत्तियोंके किनारे भी कहीं कहीं टेढ़े-मेढ़े होते हैं। फूल गिलासके आकारका रंगा और सफेद, उसमें निशान रहता है। फूल सफेद रंगका होता है, जिसके मुंह पर जामुनी और बैंगनी धब्बे दिखाई देते हैं। यह सब देख कर मालूम पड़ता है, कि तिल और धानकी खेती प्रायः एक ही समयसे आरम्भ हुई है। धान देखो। किसी किसी तिलके पत्तेमें तीन भाग और किसीमें पांच भाग रहते हैं। इससे प्राचीन निघण्टुका तथा अमरकोषसे ऐसा जाना जाता है कि जितने प्रकारके तैलद्रव्य हैं, उनमेंसे तिल ही सबसे पहले मनुष्योंके व्यवहारमें आया और इसीका तेल संसारमें प्रथम तैल हुआ।

पूर्व भारतमें तिलका पौधा समभावसे उगता है। सफेद तिलकी पत्तियां प्रायः तिलकी पत्तियोंसे चौड़ी होती हैं। फूलका रंग सफेदी और पत्तीका मोटा, खुरदरा, गहरा होता है। सफेद तिलका बीज मोटा, दाना मोटा और बड़ा होता है।

भारतवर्ष भरमें तिलकी खेती कहां और किस प्रकार होती है, वह नीचे दिया जाता है—

बङ्गाल—यहां बालुई मिट्टीमें इसकी खेती खूब होती है। यह धानके साथ ही मिला कर बोया जाता है। खेत तैयार होनेके समय पहले खरके भागको जब यदि खेतमें रह गई हो, तो उसे जला देते हैं। बाद हल चलाते हैं। जमीन यदि अधिक सूख गई हो तो इसके साथ साथ ही बोआ देना चाहिये और यदि नरम हो, तो बोआई देनेकी जरूरत नहीं पड़ती। पहली बार बीज बोने आनेके पन्द्रह दिन बाद फिर एक बार तिलको जोतते हैं। इसी प्रकार तीन चार बार जोत कर प्रति बीघेमें डेढ़ सेर तिल और १० दस सेर आमन धान एक साथ मिला कर बोते हैं। माघसे फागुनके अंत तक बोनेका अच्छा समय है। जब इसका अंकुर ४।५ इञ्चका हो जाता है, तब खेतको एक बार कुदालसे कोड़ते हैं और घने पौधे उपजने पर उनमेंसे कितनेको काट डालते हैं। दस पन्द्रह दिनके बाद खेतको एक दफा और कोड़ देनेसे सब घास मर जाती है। जेठके

मद्रासमें तिल पकने पर काट लेते हैं और उसे कई दिनों तक ढेरमें रखते हैं। बाद झाड़के और कर अनाज निकाल लेते हैं। प्रति बीघेमें २।३ मन तिल उपजता है। ढाकामें कहीं कहीं चावल, आमन और तिल तीनों एक साथ मिला कर बोते हैं। चैत्र मासके अन्तमें एक बार पानी हो जानेसे पूर्ववत् खेत तैयार करते और प्रति बीघेमें ३। सेर तिल, १० सेर चावल और ६ सेर आमन बोते हैं। [illegible] उगने पर एक बार उसको नीचे फिर देते हैं। जेठ मासमें जब तिल पक जाते हैं, तो उसे काट लेते हैं।

मेदिनीपुर—कृष्णतिल और श्वेततिल ऊंची जमीनमें आषाढ़ मासमें बोते और अगहन वा पूस मासमें काटते हैं तथा अपरापर तिल ऊंचे खेतमें चैत्र वैशाख मासमें बोते और जेठ आषाढ़ मासमें काटते हैं। [illegible] वा माघीय तिल उत्कृष्ट जमीनमें आषाढ़ श्रावण मासमें बोया और माघमें काटा जाता है।

हुगली—कृष्णतिल आषाढ़-श्रावण मासमें बोते और आश्विन-कार्त्तिक मासमें काटते हैं। पिसारीकी तरह इस जिलेमें तिल भी धानकी जमीनमें दूसरी फसलके रूपमें बोया जाता है। पर जब उसी सालमें होता है, तब अतिवृष्टिसे धान सड़ जाता है।

फरीदपुर—यहां ऊंची जमीनमें माघ फाल्गुन मासमें काला तिल बोते और आषाढ़ श्रावणमें काट लेते हैं। जो जमीन नीची है, उसमें सफेद तिल श्रावण भादोंमें बोते और अग्रहायण पौषमें काटते हैं। इस जिलेमें तिल और तिलका तेल दोनों ही प्रचुर होते हैं।

रंगपुर—यहां श्रावण भादोंमें कृष्ण तिल बोया जाता और अग्रहायण पौषमें काटा जाता है। ऊंची जमीनमें ही यह फसल अच्छी लगती है। कहीं कहीं अरहरके साथ ही साथ इसे बोते हैं। अच्छी फसल लगने पर प्रति बीघेमें १॥ या २ मन दाना निकलता है। सरसोंकी तरह इसकी खेती होती है। लाल या श्वेत तिल बहुत कम बोया जाता है। पौष माघ मासमें इसे बोते और ज्येष्ठ आषाढ़में काट लेते हैं। इसकी दर सरसोंसे कम रहती है।

राजशाही—धानकी जमीनमें चैत्र वैशाखमें बोते और आषाढ़ श्रावणमें काटते हैं। कृष्णतिल वैशाख मासमें बोया जाता और अग्रहायणमें काट लिया जाता है। इस जिलेमें तिलकी खेती बहुत कम होती है।

बगुड़ा—यहां तीन प्रकारके तिल उपजते हैं। कार्त्तिक तिल हीकी फसल अच्छी होती है। माघके अन्तमें बोया जाता और ज्येष्ठके आरम्भमें काट लिया जाता है।

कोचविहार—तिल या तिसको भादों आश्विनमें ऊंची जमीनमें बोते और चैत्र वैशाखमें काटते हैं। पञ्जाब—निजामका यह एक प्रधान अंश है। कृषिकार्यमें काफी उपजता है। इस देशमें तिल प्रति बीघे १॥ मन पैदा होता और १५) से ले कर २) २० मन बिकता है।

आसाम—यहां तिलकी खेती होती है और बहुत देशमें रफ्तनी होती है।

ब्रह्म—तिलकी खेती यहां बहुत कम है। मन्द्राजसे इसकी आमदनी होती है। इस देशमें तिल नहीं होने पर भी ब्रह्मवासी इसका व्यवहार खूब करते हैं।

बरार—यहां १८९१६८ बीघा जमीन तिलकी खेतीमें लिये है। प्रति बीघे सवा मनके हिसाबसे उपजता है। निजाम राज्यका और बरार प्रदेशका तिल बहुतायतसे बम्बई होता हुआ यूरोप भेजा जाता है।

मध्यप्रदेश—नागपुर नर्मदा आदि स्थानोंमें तिलकी खेती खूब होती है। यहांके तिलकी रफ्तानी भी बम्बई होते हुए है। इस प्रान्तमें शरद और वासन्ती दोनों फसलमें ही तिल उपजता है। शरत्के तिलको सफेद तिल और वसन्तके तिलको काला तिल कहते हैं। गरीब कृषक ही कई जमीनमें इसकी खेती करते हैं। इसमें उन्हें न तो अधिक परिश्रम करना पड़ता है और न अधिक रुपये ही खर्च होते हैं। जमीन परसे जंगल आदिको साफ कर एक दो बार हल जोत देते और तब बीज बो देते हैं। एक मुट्ठी तिलसे तीन बीघा जमीन बोई जाती है। एक बार कोड़ना भी पड़ता है। जब तक वह अच्छी तरह पक नहीं जाता, तब तक भी, बकरे, भैंसे आदि इसका कुछ अनिष्ट नहीं कर सकते। पकनेके बाद ही इसे काट लेना चाहिये। अच्छीसे अच्छी जमीनमें यह प्रति बीघे २॥-३ मन उपजता और २॥)-३) २० मन बिकता है। इससे किसान प्रति बीघेमें रुपये आठ आने बचे भी पड़ते हैं। तिल काट कर उस जमीनमें बाजरा या ज्वार कोई बोया तो उस घाटेकी पूर्ति हो कर लाभ हो सकता है। यहां ८ सेर तिलसे ३ सेर तेल निकलता है

और ६ सेर खली। खली या ओगाड़का भाव ।−)॥ या ।≈) है। घानीसे तेल निकालनेका कोई खास रास्ता नहीं रहता है। तेल और खली दोनों एक साथ मिल कर घानीके ऊपर चले आते हैं। बाद पानी दे कर खली और तेल अलग अलग कर लिया जाता है, इसीसे यहांका तेल खराब होता है।

पञ्जाब—प्रायः सभी जिलोंमें थोड़ा बहुत तिल बुआ जाता है। करांची बन्दर हो कर इसकी अधिकांश रफ्तनी होती है। रावलपिण्डीकी पहाड़ी जमीनमें इसकी फसल अच्छी होती है। इस देशमें तिल प्रायः अन्यान्य शस्ययुक्त खेतोंके किनारे किनारे बोया जाता है। काला तिल ही यहां अधिक उपजता है। गरम जल द्वारा इसकी भूसी अलग कर बाजारमें बेचते हैं। यहां ५ सेर तिलमेंसे २ सेर तेल निकलता है।

सिन्ध—मरुस्थलकी मट्टीमें तिल अच्छा होता है। इस देशमें पतली मट्टीकी सतहसे आच्छादित बालूके ऊपर तिल बोया जाता है और उपजता भी खूब है। ज्वार, उरद, मूंग आदिके साथ मिला कर इसे बोते हैं। एक ही दो बार जोतनेसे खेत तैयार हो जाता है। श्रावण भाद्र मासमें इसे बालूमें मिश्रित कर प्रति बीघे ४॥ सेर बोते हैं। उत्तरी वायुके लगनेसे फूल झड़ जाता है।

मोण्टगोमरी—यहां ज्वार, मोठ, मूंग आदिके साथ मिला कर बोया जाता है। वर्षाकालमें इसकी खेती होती है। जल सींचनेकी सुविधा रहनेसे दूसरे समय भी हो सकती है। वर्षाके बाद हलसे खेतको एक बार जोत लेते और तब मट्टी या किसी दूसरे अनाजमें मिला कर इसे बोते हैं। बोनेके बाद एक बार फिर हलसे जोत देना अच्छा है। प्रति बीघे तीन पाव बीज लगता है। यदि पौदे घने जगे हों, तो कुछ उखाड़ डालना चाहिये। जन-साधारणमें प्रवाद है, कि जौके फरक फरक बोने, तिलके घने बोने, भैंसके बछड़ा जनने तथा स्त्रीके कन्या जननेमें जो कष्ट होता है, वह कहा नहीं जाता। यहां केवल काला तिल ही उपजता है। इस देशमें बिजलीके अधिक कड़कनेसे खेतोंमें बहुत नुकसान होता है। तिल काट कर उसके डंठलोंके मुंहको एक ओर करके ढेर कर रखते हैं और ऊपरसे कोई भारी चीज दबा देते हैं। ऐसा करनेसे तिलकी ढोंढी नरम हो जाती है। बाद पौदोंको उठा कर इसीसे मुंह कर धूपमें सीधे खड़ा कर देते हैं। नीचे कपड़ा भी बिछा रहता है। धूपमें जब ढोंढी फट जाती है, तब तिल झाड़ कर कपड़ेमें जमा हो जाता है। इस देशमें १५ सेर तिलसे ६ सेर तेल निकलता है। तिलका भूसा ईंधन जलानेके काम आता है।

बरार—यहां तिलका कोई भेद नहीं है। काली जमीनमें यहां तिल अच्छा होता है। इसी कारण [illegible]के समीप तिलकी खेती कुछ अधिक होती है। यहां इसे ज्वारके साथ मिला कर बोते हैं, कारण, जिस तरह ज्वारकी खेती होती है, उसी तरह इसकी भी। तिल काट कर धूपमें सुखाते हैं। अच्छी तरह सूख जाने पर ढोंढी झाड़ लेते हैं और डंठलको फेंक देते हैं। यहां पांच सेर तिलमें एक सेर तेल निकलता है। इसीसे सब लोगोंमें यही तेल काम आता है। इस देशमें तिलके पौधेमें एक प्रकारका कीड़ा लगता है। जिसके एक बार लगनेसे फिर पौधोंका बचाना मुश्किल हो जाता है।

बुन्देलखण्ड—इस देशमें सफेद और काला तिल उपजता है। सफेद तिलको 'तिल' और काले तिलको 'तिली' कहते हैं। कालेकी अपेक्षा सफेद तिल ज्यादा बिकता है। तिलको ज्वारके साथ और कालेको कपासके साथ मिला कर बोनेसे फसल अच्छी होती है। तिलके तेलकी अपेक्षा कालीका तेल उत्तम कार्यमें अच्छा माना गया है। हिमालयके नीचे देश, पीलीभीत, बस्ती, गोरखपुर आदि स्थानोंमें तिलकी खेती साधारण तौर पर होती है, पर बुन्देलखण्डमें अधिक है। इलाहाबादमें भी तिल उपजाया जाता है। इस देशमें इसकी गिनती खरीफमें की गई है। मौसममें यह बोया जाता और कातिक अगहनमें काटा जाता है। हलकी जमीनमें यह खूब होता है। बुन्देलखण्डमें हलकी पीली मट्टी इसके लिये उपयोगी है। तिलके बाद उस जमीनमें निकृष्ट कोदों या कुटकीके सिवा और कुछ नहीं उपजता। तीन बार खेतको भली भांति जोत कर कपास ज्वार आदिके साथ इसे मिला कर बोते हैं। किसान अपनी इच्छानुसार तिल मिलाते हैं। सिर्फ तिल

प्रति बीघे २॥ सेर लगता है। तिलके पक जाने पर उसे काट लेते और आँटिया बाँध कर धूपमें सुखाते हैं। जब ढोंढी फट जाती है तब तिल झड़ने लगता है बाद उसे परिष्कार कर अलग रख देते हैं। तिलका डंठल जलानेके काममें आता है। अपक्व हृष्टि हो या धूप लगती अधिक हो, तो इसका बहुत नुकसान होता है। आखिरमें हृष्टि होनेसे तो यह फसल बिलकुल हो नहीं लगती। ज्वार या कपासके साथ बोनेसे प्रति बीघे आध मन तीन सेर और यदि अलग बोया जाय तो १॥ मनसे २ मन तक उपजता है।

सिन्धुप्रदेश—यहाँका तिल एक प्रधान शस्य है। सब जिलोंमें इसकी खेती होती है। अपरपारकी जिलेकी जमीन तिलके लिए बहुत उपयोगी है। इस जिलेमें प्रति अठारह दिन तिलका खेत सींचा जाता है। साढ़े चार महीनेमें तिल पकता है और प्रति बीघे ४॥ मन उपजता है। शिकारपुर जिलेमें तिल आषाढ़ मासमें खरब ऊसर जमीनमें बोया जाता है। हर एक खेतमें आठ बार जल देना पड़ता है। यहाँ पाँच महीनेमें तिल पकता और प्रति बीघे बीस सेर उत्पन्न होता है।

बम्बई प्रदेशके गुजरात, खानदेश, पूना, नासिक, कर्ना-टक कोङ्कण, रत्नगिरि आदि स्थानोंमें तिलकी खेती होती है। कनाड़ामें अधिक वर्षा होनेके कारण वहाँ बिलकुल तिल नहीं होता। उक्त स्थानोंमें कृष्ण और श्वेत दोनों प्रकारके तिल उपजते हैं। धूसर तिल केवल गुजरातमें ही होता है। यहाँ बाजरेके साथ मिला कर इसे बोते हैं। काठियावाड़ प्रदेशमें श्वेत, कृष्ण और रक्त तीनों प्रकारके तिल पाये जाते हैं। श्वेत तिलका तेल अन्य किस्मोंके तेलसे सुस्वादु और अधिक तैलद होता है। वहाँ मुरकिया तिल काफी उपजता है।

मन्द्राज प्रदेशके गोदावरी जिलेमें तिलको काट कर आँटियामें बाँधते और ताड़के पत्तोंसे ढक कर आठ दिन धूपमें रख छोड़ते हैं। पीछे आँटियोंको झाड़नेके कारण आधा तिल नीचे गिर पड़ता है और जो कुछ रह जाता है वह भी दो तीन दिन तक धूप खानेसे बाद झड़ जाता है। कोयम्बतोर जिलेमें काला दुमट और काली सूखी जमीनमें तिल उपजता है। यहाँ 'कार' और 'टइ' ऐसे दो प्रकारके तिल मिलते हैं। प्रथम कारका तिल ही उत्कृष्ट होता और ग्रीष्मकालमें उपजता है। उत्तर अर्काट जिलेमें बड़े और छोटे-के भेदसे दो प्रकारका तिल होता है। यहाँ काठकी पीठ कर तिल निकालते हैं। इस ढेंकीमें ४ सेर तिलमें १ सेर तेल निकलता है। यहाँ सभी प्रकारके तिलोंके तिलके तेलका ही आदर अधिक है। यह तेल रसोईमें तथा सभी कामोंमें व्यवहृत होता है। यहाँसे अधिकांश तिल यूरोपको भेजा जाता है।

महिसुरमें 'गौर एलु' 'कार एलु' और 'गुर एलु' ऐसे तीन प्रकारके तिल उपजते हैं। तिलकी खेती जो जला कर जो राख बनती है उसे वे खादकी तरह खेतमें डालते हैं।

तिलका व्यवसाय —तिलका व्यवसाय बहुत विस्तृत है। बङ्गाल और आसाममें जो तिल पैदा होता है उसमेंसे कुछ तो बङ्गालमें ही खप जाता है और अधिकांश मन्द्राज भेजा जाता है। मन्द्राजमें जो कुछ उपजता तथा बङ्गालसे जितना भी आता है उसमेंसे बारह आना हिस्सा अमेरिकाको रवाना होता है। इसीसे मन्द्राजमें तिलका व्यवसाय खूब चलता है। अयोध्या और युक्तप्रदेशकी उपजमेंसे कुछ तो बम्बई और कुछ बङ्गालको भेजा जाता तथा अवशिष्टांश वहीं देशमें खर्च होता है। मध्यभारतका समस्त तिल बम्बई भेजा जाता है। बम्बईमें जो कुछ उपजता तथा जो कुछ आमदनी होती है उसमेंसे अधिकांश उसी देशमें खर्च होता है और जो बचता है, वह यूरोपको रवाना होता है। सिन्धुप्रदेशका अधिकांश तिल यूरोप जाता है। यूरोपमें तिलसे कोट आयल, अलिभ आयल आदि तैयार हो कर, फिर इस देशमें आते हैं। त्रिपुराके पार्वत्यप्रदेश तथा काश्मीर प्रदेशसे भी तिल भारतवर्षमें आता है।

तिलकी भूसी मवेशी आदिको खिलाई जाती है। पञ्जाब तथा सिन्ध प्रदेशके गरीब मनुष्य भूसीको आटेमें मिला, रोटी बना कर खाते हैं। पश्चिममें इसकी बिकता है।

तिलका भैषज्यगुण —तिल अर्शरोगका रामबाण है। रक्तस्रावी अर्शमें, तिलको पानीमें मक्खन मल कर

उसका प्रलेप देनेसे रोगी बहुत जल्द आरोग्य हो जाता है। तिलका लड्डू, तिलकुट, तिलका बड़ा आदि तिल-द्रव्य अर्श रोगीका पथ्य है। तिल और तिलका तेल आमाशय तथा मूत्र-रोगमें बड़े कामकी चोज है। यह स्निग्धकारक है। रज-रोध रोगमें तिलका चूर्ण कमर-भर गरम जलमें डाल कर यदि उसमें रोगी खड़ा रहे, तो वह बहुत जल्द आरोग्यता प्राप्त कर सकता है। तिल-सिद्ध जलमें चीनी मिला कर रखनेसे खांसी जाती रहती है। तिल और तीसी-सिद्ध जलसे कामोद्दीपन होता है तथा वन्ध्यादोष भी दूर हो सकता है। अग्नि-दग्ध स्थानमें तिल पीस कर लगानेसे चंगा हो जाता है। तिलका फूल चक्षुरोगका अव्यर्थ महौषध है। मृदु विसूचिका, आमाशय, दमा, पीनस, श्वेत-प्रदर और मूत्र नालीके रोगोंमें इसकी पत्तियोंको भिगो कर जलके साथ खानेसे बहुत उपकार होता है। दो ताजी पूर्ण-पुष्ट पत्तियां लगभग डेढ़ पाव जलमें डाल कर कुछ समय तक छोड़ देनेसे वह जल पीने योग्य हो जाता है। यदि पत्तियां सूखी हों, तो गरम जल देना उचित है। भारतवर्षमें तिलकी पत्तियां छोटी होती हैं, अतः वे बहुत लगती हैं। डाक्टर एमर्स कहते हैं (मार्च १८७५) कि 'मैंने तिलकी पत्तियोंको भिगो कर उसका पानी जितने आमाशय रोगोंमें प्रयोग किया है, सभी आरोग्य हो गये हैं।' गर्भिणीके लिये तिल अपथ्य है। इससे गर्भस्राव होनेकी सम्भावना है। तिलकी पत्तियोंको जलमें भिगो कर यदि वह जल बालमें लगाया जाय, तो बालकी वृद्धि होती है। भुने हुए तिलसे अन्त्रमें शिथिलता आ जाती है।

कलमें चीनी प्रस्तुत करते समय चीनीकी मैल काटनेके लिये तिल व्यवहृत होता है।

आयुर्वेदके मतसे—तिल चार प्रकारका होता है, कृष्ण, शुक्ल, रक्तवर्ण और एक जो छोटा छोटा होता है, उसे जंगली तिल कहते हैं। तिलके गुण—कटु, तिक्त मधुर-कषाय-रस, गुरु, कटु, मधुर, विपाक, स्निग्ध, उष्ण-वीर्य, कफघ्न, पित्तनाशक, बलकारक, बालका, हित सम्पादक, शीतलस्पर्श, चर्मके, हितकर, स्तन्यवर्द्धक, व्रण हितकारक, और दांतोंका दृढ़तासम्पादक, ईषत मूत्रकारक, मलशोधक, वायुनाशक और अग्नि तथा बुद्धिप्रदायक है। उक्त चार प्रकारके तिलोंमेंसे कृष्णतिल सबसे उत्तम, शुक्लतिल मध्यम और रक्तवर्णादि तिल अधम माना गया है। (भावप्रकाश)

जंगली तिलको उपतिल कहते हैं। इस तिलके गुण—अलङ्कार, बालकी हितकर, कषाय, उष्ण, तीक्ष्ण मधुर, तिक्त, बलकारक, कफ, वात, व्रण और कण्डूनाशक, कान्तिप्रद, वस्ति, अभ्यङ्ग, पान, नस्य, कर्ण और अक्षि-पूरणमें हितकर है। (राजनि०)

तिल तेल—सरसोंकी नाईं तिल भी घानीमें पेर कर तेल निकलता है। तिलतेल स्वच्छ, परिष्कार और तरल होता है। इसका वर्ण मलिन पीताभ रक्त है। इसमें गन्ध नहीं होती, पुराना होने पर भी यह न तो गाढ़ा होता और न महो बू हो निकलती है। भारतमें तिल-तैल रन्धनमें, गात्र मर्दनमें तथा दीपमें व्यवहृत होता है। देशी साबुन भी तिलतेलसे बनाया जाता है। यूरोपमें यह केवल दीप और साबुन बनानेके काम आता है। बादामके तेल और घीमें तिलका तेल मिला रहता है। भारतमें जो यूरोपीय "अलिभ आयेल" भेजा जाता है, उनमें अधिकांश यह तिलका तेल ही रहता है। चीनमें बादाम, तिल और कुसुमफूलको एक साथ पीस कर एक प्रकारका तेल बनाया जाता है, जिसे 'गोरा तेल' कहते हैं। सभी प्रकारके फुलेल तिलके तेलसे ही बनते हैं। तीन गुण फूल और तीन गुण तेलको एक साथ मिला कर बोतलमें भर रखें और बोतलके मुंहको कागसे बन्द कर धूपमें कुछ काल तक छोड़ दें, तो एक प्रकारका सुन्दर फुलेल तैयार हो जाता है। अथवा एक स्तर फूलके ऊपर तिल और फिर द्विगुण फूलके ऊपर तिल रख कर उसे फूलोंसे ढके रहें, तो थोड़ी देर बाद तिलमें फूलोंकी गन्ध आ जाती है। अब इस तिलसे जो तेल निकलेगा, वह बहुत सुगन्धयुक्त होगा। व्यवसायी लोग अतरमें तिलका तेल मिला कर अतरकी दरमें बेचते हैं।

तिलतैलका भेषज गुण—सभी प्रकारके जख्मोंमें यह व्यवहृत होता है। ख्रोट ऑयल वा अलिभ ऑयल जिस तरह व्यवहृत होता है, यह भी उसी तरह व्यवहृत होता। मेहरोगमें तिलका तेल बहुत उपकारी है।

इससे शरीरमें जब एक प्रकारका शोथ या अपष्ठभाव रोग उत्पन्न होता है, तब डाक्टर लोग नश्तरसे उन्हें बाहर निकालनेकी सलाह देते हैं। किन्तु यदि उसमें तिलका तैल प्रयोग किया जाय तो वे सब नरम हो कर नीचे गिर पड़ते हैं और प्रत्येक गांठकी जड़में पुंसी पक कर फट जाती है। पीछे तिलके तेलसे वह आराम हो जाती है। जो तिल भूसी रहित तिलसे निकलता है, वह बहुत उत्कृष्ट होता है। कृष्ण तिल प्रत्येक धर्मकार्यमें व्यवहृत होता है। तिलका दान लेना पाप है। किन्तु तिलदानसे अधिक पुण्य प्राप्त होता है।

जो ब्राह्मण मातृदायमें एक बार तिल दान करते हैं वे सब प्रकारके पापोंसे छुटकारा पाते हैं। अतः तीर्थमें तिल-दान किया जाता है। जो मनुष्य तीर्थमें हेमगर्भ तिलदान करते हैं, उनके पितृगण तिल व स्वर्ण सर्वदा स्वर्गलोकमें वास करते हैं। हिमयमें तिल दान पाप एकोद्दिष्ट श्राद्धके दिन किया जाता है।

अशौचान्तके द्वितीय दिन और आद्यश्राद्धके दिनमें पहले तिल-दान कर पीछे दूसरे दानादि किये जाते हैं इस तिलदानको जो ब्राह्मण ग्रहण करते हैं वे पतित समझे जाते हैं इसी कारण यह दान महाब्राह्मण (अग्रदानी) लिया करते हैं। श्राद्ध देखो।

तिलसे पितृगणका तर्पण किया जाता है। किन्तु सभी दिन तिल तर्पण करना निषिद्ध है। महादि तीर्थमें और पितृपक्षमें (प्रतिपद्से महालया अमावस्या पर्यन्त) तिल-तर्पण कर सकते हैं। तर्पण देखो।

षट्तिलाके दिन जो तिल द्वारा स्नान तिल-मिश्रित, तिलहोम, तिलप्रदान तिलभक्षण और तिलोदर्तन करते हैं, वे चिरायु होते तथा दूसरे सब कष्ट जाते रहते हैं।

रातको न तो तिल खाना चाहिये और न तिल मिश्रित कोई द्रव्य ही। सप्तमी नवमी, चतुर्दशी अष्टमी अमावस्या पूर्णिमा और संक्रान्ति इन सब तिथियोंमें तिलका तैल लगाना निषिद्ध है।

२ तिलकालक, देहस्थित तिलाकार चिह्नविशेष, काले रङ्गका छोटा दाग जो शरीर पर होता है। सामुद्रिक तिलोंके स्थानमें अनेक प्रकारके शुभाशुभ बतलाये जाते हैं। यह तिल यदि पुरुषके शरीरमें दाहिनी ओर और स्त्रीके शरीरमें बाईं ओर हो तो शुभ है। अधिकांश तिल सौभाग्यसूचक समझा जाता है। ३ तिलपुष्पके समान, तिलके बराबरकी कोई वस्तु। ४ एक प्रकारका गोदना जो काली बिन्दीके आकारका होता है। स्त्रियां शोभाके लिए इसे अपने गाल ठुड्डी आदिमें गुदाती हैं। ५ आंख की पुतलीके बीचो-बीचकी गोल बिन्दी। इसमें सामने पड़ी हुई वस्तुका छोटासा प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ता है।

तिलअग्नी (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी मिठाई जो चीनी में तिलको पाग कर बनाई जाती है।

तिलगजर (हिं॰ पु॰) हिमालय पर्वतके उस पार नेपाल पञ्जाब तथा अफगानिस्तानमें होनेवाला एक प्रकारका पेड़। इसकी लकड़ी इमारतोंमें लगती है तथा इस और अस्सामका छल आदि बनानेके काममें आती है।

तिलगा (हिं॰ पु॰) अंगरेजी फौजके देशी सिपाही। पहले पहल ईस्ट इंडिया कम्पनीने मन्द्राजमें किला बनवा कर वहांके तिलंगियोंको अपनी सेनामें भरती किया था। तभीसे अंगरेजी फौजके देशी सिपाही नाम तिलंगा पड़ गया।

तिलङ्गना (हिं॰ पु॰) तैलङ्ग देश।

तिलङ्गी (हिं॰ वि॰) तिलङ्गनाका रहनेवाला, तैलङ्ग।

तिलक (सं॰ क्ली॰) तिलवत् तिलपुष्पवत् आकृति येन। चन्दनादि द्वारा ललाट आदि द्वादश अङ्गों पर सांप्रदायिक चिह्न, टीका। जिसे लोग चन्दन और केसरादि ललाट, बाहुमूल, बाहु आदि अङ्गों पर शोभा अथवा साम्प्रदायिक सङ्केतके लिये लगाया जाता है। अनेक लोकोंमें इसे टीका भी कहते हैं। पर्याय—तमालपत्र, चित्रक और विशेषक। (अमर॰)

द्वादश तिलक लगानेकी विधि—प्रत्येक अंगको जानेके बाद विष्णुके द्वादश नाम लेकर अपने द्वादशअङ्ग पर तिलक लगाना चाहिये। (हरिभक्तिवि॰)

ललाट पर तिलक लगाते समय केशवका नाम लेना चाहिये। इसी तरह उदर पर नारायण, वक्षस्थल पर माधव, कण्ठकूप पर गोविन्द दक्षिण कुक्षिमें विष्णु, बाहु पर मधुसूदन, कन्धरमें त्रिविक्रम, वामपार्श्वमें वामन,

वाम बाहु पर श्रीधर, वाम कन्धरमें हृषीकेश, पृष्ठ पर पद्मनाभ और कटि पर दामोदरका नाम लेकर तिलक लगाना उचित है। (पद्मपु०) तिलके लगाते समय ललाट पर प्रथम ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करना चाहिए। फिर ललाटादि पर क्रमशः तिलक लगाना चाहिए। (पद्मपु०।

सम्प्रदायानुसार सर्वार्थसिद्धिके लिए मस्तक पर करीटमन्त्र (न्यासपूर्वक) धारण करना चाहिए।

किरीटमन्त्र—"ओं श्रीकिरीटकेयूरहारमकरकुण्डल-चक्र-शंख-गदा-पद्महस्त पीताम्बरधर श्रीवत्सांकित-वक्षःस्थल-श्री भूमि-सहित-स्वात्मज्योतिर्दीप्तिकरायतहस्रादित्यतेजसे नमो नमः।"

(हरिभक्तिवि० ४ वि०)

ललाटादि द्वादश अङ्गोंके तिलक हरिमन्दिरके नामसे प्रसिद्ध है।

वाम पक्षः, नेत्रान्त, मुण्ड और स्कन्ध, इन स्थलों पर शङ्ख चिह्नित तिलक करना चाहिए। इसी प्रकार दक्षिण नेत्रान्त आदि स्थल पर चक्र-चिह्नित तिलक लगाना चाहिए।

ऊपर लिखे अनुसार द्वादश अङ्गों पर विष्णुका नाम लेकर तिलक लगानेवाले वैष्णवको प्रति दिन प्रेम और भक्तिकी प्राप्ति होती है। (हरिभक्तिवि०)

जो वैष्णव गलेमें तुलसीकाष्ठकी माला धारण करते, द्वादश अङ्गों पर पूर्वोक्त प्रकारसे तिलक लगाते और श्रीकृष्ण पर दृढ़ भक्ति रखते हैं, उनके द्वारा जगत् मात्र पवित्र होता है।

मध्यदेश-छिद्रयुक्त ऊर्ध्व पुण्ड्राख्य तिलक हरिमन्दिरके नामसे प्रसिद्ध है। यह तिलक नासिकामूलसे लेकर शिरोमध्यगत पर्यन्त लगाया जाता है।

ऊर्ध्वपुण्ड्रके बीचमें पीली रेखा होने पर, वह रामानुजतिलक कहलाता है। (पद्मपु०)

जो लोग रामोपासक हैं, उनके तिलकमें यदि ऊर्ध्वपुण्ड्रक तथा भ्रूद्वयके बीचमें बिन्दु हो तो उसे हरिके मत्स्यादि अवतारोंको उपासकोंका तिलक समझना चाहिये।

ब्राह्मणोंको ऊर्ध्वपुण्ड्रक करना चाहिए, क्षत्रियोंके लिए भी ऐसी ही व्यवस्था है वैश्यों और शूद्रोंको मण्डलाकृति तिलक लगाना चाहिए। जो ऊर्ध्वपुण्ड्रके बीचमें छिद्र नहीं करते हैं, वे नराधम हैं; एवं उनके ललाट पर वह तिलक कुत्तेके पैरके समान है। यदि किसी द्विजातिके मस्तक पर इस प्रकारका तिलक दीख पड़े तो कृष्णके नामका स्मरण कर वस्त्रसे मुँह ढक लेना चाहिये।

ललाटके दक्षिणमें ब्रह्मा, वामपार्श्वमें महेश्वर और बीचमें विष्णु वास करते हैं, इसलिए बीचका अंश शून्य रखना चाहिए। गोल, टेढ़ा, छिद्रहीन, छोटा, लम्बा और विस्तृत, ये षड्लक्षणयुक्त तिलक निरर्थक हैं।

त्रिपुण्ड्रका प्रमाण दीर्घ होगा; नासिकाके मूलसे लेकर ब्रह्मान्त्र तक; शूद्रके लिए इसका प्रमाण एक अङ्गुल और ब्राह्मणोंके लिए चार अङ्गुल है। नासिकको तीन भागोंमें विभक्त करने पर जो भाग होता है वह अर्थात् भ्रूद्वयके मध्यभागके अधःस्थानको विद्वानोंने मूल कहा है।

ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ, गृहस्थ और यतिगण जो ऊर्ध्वपुण्ड्रक करते हैं, उसका नाम है हरिमन्दिर। वैष्णव विप्र, भूपाल, वैश्य, शूद्र और भक्तजनोंके ऊर्ध्वपुण्ड्रको भी हरिमन्दिर है। नर वा नारी यदि कृष्णपदमें चित्त लगानेकी इच्छा करें, उन्हें यत्नपूर्वक तुलसी माला और हरिमन्दिर (तिलक) धारण करना चाहिए। दण्डाकार दो रेखायें मूलदेशमें कोणक (अर्थात् कोणयुक्त और मध्यमें छिद्रयुक्त होने पर उसे ऊर्ध्वपुण्ड्र कहा जा सकता। (पद्मपु०)

अधोमुख पद्मकलिकाके आकार, मध्यदेश छिद्रयुक्त और दो युग्म रेखाएं होने पर, उसे ऊर्ध्वपुण्ड्र-तिलक कहते हैं। तीर्थ-मृत्तिका, यज्ञकाष्ठ, विल्व, अश्वत्थ और तुलसी मूलकी, मृत्तिका गोष्पदमृत्तिका, गङ्गा-मृत्तिका, महानिम्ब, तुलसीकाष्ठ-मृत्तिका, कस्तूरी, कुङ्कुम फला, सिन्दूर रक्त चन्दन, गोरोचन, गन्धकाष्ठ, जल, अगुरु, गोमय और धात्रीमूलके द्वारा सन्ध्या आदि सम्पूर्ण कार्योंमें तिलक लगाया जा सकता है।

प्रति दिन स्नान करनेके बाद तिलक लगाना सभी वर्णोंका कर्त्तव्य है। नित्य, नैमित्तिक, काम्य ये तीन प्रकारके कर्म तथा पैत्रादि कर्म विना तिलकके निष्फल होते हैं। तिलक और दर्भके विना स्नान, संध्या

जपयज्ञ, दैव और होमादिकर्म में यह नियम है, ब्राह्मणों को ऊर्ध्वपुण्ड्र, क्षत्रियोंको त्रिपुण्ड्रक, वैश्योंको अर्धचन्द्र और शूद्रोंको वर्तुलाकार तिलक करना चाहिये।

(आह्निकतत्त्व०)

ऊर्ध्वपुण्ड्र मिट्टीसे, त्रिपुण्ड्र भस्मसे और तिलक चन्दनसे करना चाहिये। (आचार०) जो पापिष्ठ और दुराचारी हैं तथा मनमें पापाचरण करते हैं वे भी त्रिपुण्ड्रक तिलकके धारण करनेसे समस्त पातकोंसे मुक्त हो जाते हैं। ऊर्ध्वपुण्ड्र का धारक चाहे जहां मरे और मर कर चण्डाल ही क्यों न हुआ हो वह स्वर्गलोकमें जाता है। (पद्मपु०)

श्राद्धकर्त्ताको पैत्रिक कार्य अर्थात् श्राद्ध करते समय ऊर्ध्वपुण्ड्र, त्रिपुण्ड्र, वा चन्द्राकार तिलक करके श्राद्ध वा पैत्रिक कार्य न करना चाहिये। (स्मृति०)

वेदनिष्ठ ब्राह्मणोंको ऊर्ध्वपुण्ड्र, त्रिशूल, धनुर्वाण, शङ्ख वा चक्रपद्मादि चिह्न नहीं धारण करना चाहिये। वेदनिष्ठ ब्राह्मण आदि अज्ञानतावश इन चिह्नोंको धारण करे, तो वह अवश्य ही पतित होगा, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं। (निर्णयसि० सूत०)

तिलकसेवा वैष्णवोंका एक मुख्य साधन है। वे लोग ललाटादि द्वादश अङ्गों पर गोपीचन्दन और श्वेत मृत्तिका द्वारा नाना प्रकार तिलक लगाया करते हैं। इनके तिलकद्रव्योंमें द्वारकाका गोपीचन्दन ही सर्वापेक्षा प्रशस्त है। ललाटादिकी मृत्तिका भी तिलकके लिए उत्कृष्ट कही गई है।*

परम भक्तिपूर्वक ललाटादिके ऊपरको मृत्तिका ले कर ऊर्ध्वपुण्ड्रक तिलक धारण करना चाहिए। ऐसा करनेसे हरिके परम लोककी प्राप्ति होती है। कोई कोई गण नासामूलसे ले कर केश पर्यन्त दो लम्बी रेखाएं अङ्कित करते हैं और उन दोनों रेखाओंके नासामूलस्थ उभयप्रान्त अन्य एक अनुप्रस्थगत रेखाके द्वारा संयुक्त हो जाते हैं तथा उन दोनों ऊर्ध्वपुण्ड्रके बीचमें पीत अथवा रक्तवर्णकी और एक रेखा अङ्कित करते हैं।

इनके सिवा वे लोग हृदय और बाहुओं पर गोपी-चन्दनसे शङ्ख चक्र, गदा और पद्मका प्रतिरूप चित्रित किया करते हैं।

शङ्ख आदिके बीचमें एक रक्तवर्णकी रेखा रहती है जो लक्ष्मीस्वरूप समझी जाती है। वाराहपुराणमें इन वैष्णवाचारोंके विषयमें इस प्रकार लिखा है,—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वा अन्य कोई यदि शरीर पर शङ्ख-चक्र आदि चिह्न अङ्कित करे तो उन्हें देखते ही पाप विनष्ट होते हैं।

बहुतोंके पास इन तिलकोंकी लकड़ी वा धातुकी छाप रहती है। वे उसे ही अङ्गविशेष पर अङ्कित कर शरीरको पवित्र बनाते हैं। कोई कोई उस धातुमय मुद्राको उत्तप्त करके शरीर पर अङ्कित करते हैं। परन्तु यह शास्त्रविरुद्ध है। बृहन्नारदीयपुराणमें लिखा है—यदि कोई पुरुष चक्रादि चिह्नको उत्तप्त करके शरीरमें लगावे, तो वह पातालका भोग करता हुआ शत कोटि कल्पपर्यन्त चण्डालयोनिमें रहता है और नरकमें जाता है। ऐसे व्यक्तिके साथ बातचीत करनेसे नरक भोगना पड़ता है।*

श्रीसम्प्रदायकी तरह रामानन्दियोंमें भी तिलकसेवा प्रचलित है। परन्तु वह वे अपनी अपनी रुचिके अनुसार ऊर्ध्वपुण्ड्रकी अन्तवर्ती रेखाका रूप और परिमाण कुछ विभिन्न कर देते हैं और प्रायः रामानुजीयोंकी अपेक्षा कुछ छोटा बनाते हैं।

दादूपन्थी लोग तिलकसेवा और माला धारण नहीं करते। सुथराशाही सम्प्रदाय ललाट पर एक छोटी रेखा अङ्कित करता है।

रामसनेही सम्प्रदायके लोग ललाट पर एक श्वेतवर्ण ऊर्ध्वपुण्ड्र लगाया करते हैं।

सनकादि सम्प्रदाय अर्थात् निमात लोग गोपीचन्दनकी दो रेखाएं और उसके बीचमें एक काला वर्तुलाकार तिलक लगाते हैं।

---

* इनसाइक्लोपि० एफ् गाइडमन, हीलसिटि० ११वां भा०।

* "तप्तानि तप्तमुद्राणि लिङ्गचिह्नानुलेपनः।
स तप्तानलकर्मापि चाण्डालो जन्मकोटिभिः॥
स द्विज तप्तमुद्रादिभिरङ्कितवपुः इव।
सम्भाष्य रौरवं याति यावदिन्द्राश्चतुर्दश॥"

(बृहन्नारदीयपु०)

विट्ठल-भक्त सम्प्रदायके लोग वैष्णवोंकी तरह ललाट पर दो श्वेतवर्ण ऊर्ध्व रेखा चिह्नित करते हैं।

वल्लभाचारी सम्प्रदायके लोग ललाट पर दो ऊर्ध्वपुण्ड्र बना कर फिर उसे नासामूलमें अर्द्धचन्द्राकृति करके मिला देते हैं, इन दो पुण्ड्रके बीचमें एक वर्तुलाकार रक्तवर्णका तिलक बनाते हैं। इस सम्प्रदायके भक्तगण दोनों बाहुओंकी तरह बाहु और वक्षःस्थल पर शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म अङ्कित करते हैं तथा कोई कोई श्यामविन्दी नामकी काली मिट्टी अथवा अन्य प्रकारकी काले रंगकी धातु द्वारा उल्लिखित वर्तुलाकार तिलक धारण करते हैं।

चरणदासी सम्प्रदायके लोग ललाट पर चन्दन वा गोपीचन्दनकी एक लम्बी रेखा खींच कर तिलक करते हैं। उदासीन शैव हो वा वैष्णव, तिलक देख कर उन्हें सहजमें पहचाना जा सकता है।

वैरागी लोग नासामूलसे ले कर केश पर्यन्त ऊर्ध्वरेखा और शैव लोग ललाटके वामपार्श्वसे लगा कर दक्षिणपार्श्व तक विभूतिसे तीन रेखाएँ खींचते हैं। प्रथमोक्त तिलकको ऊर्ध्वपुण्ड्र कहते हैं और शेषोक्तको त्रिपुण्ड्र। वैष्णव ऊर्ध्वपुण्ड्र लगाते हैं और शैव त्रिपुंड्र। बङ्गालमें जैसे तिलकके पार्थक्यसे अतिवड़ी और विन्दुधारी आदि सम्प्रदायोंकी पहचाना जाता है, उसी प्रकार हिन्दुस्थानमें भी हरिव्यासी, रामप्रसादी, बड़गल आदिको अनायास ही पहचाना जा सकता है।

निमात सम्प्रदायी हरिव्यासी लोग अन्यान्य अंशोंमें रामानन्दियोंकी भांति ही तिलकसेवा करते हैं, विशेषता सिर्फ इतनी ही है कि वे ललाटस्थ पुंड्रके बीचमें रक्तवर्ण 'श्री' (ऊर्ध्वपुंड्रकी मध्यरेखाका नाम 'श्री' है) न बना कर भ्रू-युगलके बीच श्यामविन्दी नामक कृष्णवर्ण मृत्तिका द्वारा एक छोटी विन्दी बनाते हैं। श्यामविन्दीका अभाव हो तो गोपीचन्दन द्वारा शुभ्रवर्ण विन्दु बनाया जा सकता है। रामानन्दी लोग भ्रूयुगलके नीचे तथा नासिकाके ऊपर गोपीचन्दनका लेपन कर जो अर्द्धगोलाकृति वा तदनुरूप एक प्रकारकी आकृति बनाते हैं; उसे सिंहासन कहते हैं। हरिव्यासी लोग इस तरह सिंहासन न बना कर अर्द्ध-गोलाकृति रेखामात्र अङ्कित करते हैं। उस रेखाके उभय प्रान्त ललाटस्थ ऊर्द्धपुंड्रके निम्नभागमें लगे रहते हैं। भारतवर्षके दक्षिणखण्डके अन्तर्गत मुंगीपट्टन हरिव्यासियोंका आदि वासस्थान है। रामात सम्प्रदायी रामप्रसादी लोग भ्रूके बीचमें काली विन्दी न लगा उससे कुछ ऊँचे (ललाटके बीचमें) सफेद विन्दु लगाते हैं। यह विन्दु हरिव्यासियोंकी अपेक्षा बड़ा होता है। इस तिलकको वेणीतिलक कहते हैं। इसमें ऐसी किम्वदन्ती प्रसिद्ध है, कि सीतादेवीने अपने हाथसे रामप्रसादके ललाट पर यह तिलक अङ्कित किया था। बड़गल नामक रामात-सम्प्रदायके वैष्णव ऊपर लिखे अनुसार विन्दु न करके रामानन्दियोंकी तरह ऊर्ध्वपुंड्रके बीचमें रक्तवर्ण 'श्री' अङ्कित करते हैं। परन्तु उनकी तरह नासिकाके ऊपर और भ्रूके नीचे सिंहासन नहीं बनाते। इसी सम्प्रदायके लस्करी नामक वैष्णव रामानन्दियोंकी भांति सिंहासन बनाते हैं, पर उनकी तरह रक्तवर्ण नहीं बल्कि श्वेतवर्ण।

चतुर्भुजोंका तिलक रामानन्दियोंके समान होता है, सिर्फ ललाट पर 'श्री' नहीं होता। 'श्री'का स्थान खाली रहता है। वैष्णवधर्ममें तिलककी बड़ी महिमा बतलाई है। बङ्गालमें भिन्न भिन्न वैष्णव सम्प्रदायोंमें विभिन्न प्रकारके तिलक प्रचलित हैं। नित्यानन्द प्रभुके परिवारमें वेणुपत्राकृति, अद्वैत प्रभुके परिवारमें वटपत्राकृति, आचार्यप्रभुके परिवारमें तिलपुष्पाकृति, गौरीदासके परिवारमें रसकलिकाकृति इत्यादि नाना प्रकार तिलक प्रचलित हैं। ये सभी तिलक नासिका पर लगाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त उपर्युक्त वैष्णव-परिवारके लोग ललाट पर भी नाना प्रकारके ऊर्ध्वपुंड्र देखनेमें आते हैं।

गोपीचन्दनमें सफेद रङ्ग, श्यामविन्दी नामकी मिट्टीमें काला रङ्ग तथा हल्दी, सुहागा और नीबूका रस मिला कर पीला और लाल तिलक लगाया जाता है। इस (शेषोक्त) तिलकके उपादानमें सुहागाका अंश अधिक होनेसे रंग लाल हो जाता है, नहीं तो एक तरहका पीला रंग हो जाता है।

२ सौवर्चल लवण, सोचर नमक। ३ कृष्णवर्ण सौवर्चल लवण, काला सोंचर नमक। ४ राजसिंहासन पर अधिरोहण, राज्याभिषेक, राजगद्दी। ५ विवाह-सम्बन्ध

स्थिर करनेको एक प्रथा या रिवाज जिसे टीका कहते हैं। इसमें कन्यापक्षके लोग वरके ललाट पर दधि अक्षत आदिका तिलक लगाते और उसके साथ कुछ द्रव्य भी देते हैं। ६ स्त्रियोंका एक गहना जो माथे पर पहना जाता है, टीका। ७ क्लोम, पेटकी तिल्ली। ८ किसी ग्रन्थकी अर्थसूचक टीका या व्याख्या।

(पु०) ११ मोक्षक, मोखा पेड़। १ मरुवकवृक्ष मरुवा। १२ रोगविशेष, तिलकालक रोग। १३ अश्वभेद, एक जातिका घोड़ा घोड़ेका एक भेद। १३ पांशुलवण विशेष, एक प्रकारका नमक, सोंचर नमकका एक भेद।

१४ पुष्पवृक्षविशेष पुन्नागकी जातिका एक पेड़। काष्ठ काट कर रोपनेसे यह पुनः जीवित होता है। वसन्त ऋतुमें पुष्पादिके लगनेसे इसमें अपूर्व सुन्दरता आ जाती है। इसके पुष्प कानोंके आकारके होते हैं। शोभाकी वृद्धिके लिए इसका पेड़ बगीचोंमें लगाया जाता है। इसकी छाल और लकड़ी औषधके काम आती है। पर्याय—विशेषक, क्षुरप्रसव, पुण्ड्र, पुण्ड्रक स्थिरपुष्प, विशकट, दग्धरुह, पत्र-बोध तरुणीकटाक्षकाम, वापिकासुन्दर, तुण्डक, भाल-विभूषणक, पुन्नाग रेचक, क्षुरक, श्रीमान् पुरुष, मुख पुष्पक। (राजनि० भावप्र०)

गुण—यह पाकमें कटु, वात, पित्त और कफनाशक, व्रण, वृद्धि और मेद-कारक ह्रद्य और लघु होता है। इसकी छाल—कषाय, उष्ण, कुष्ठ, दन्तरोग कृमि शोथ, व्रण और रक्तदोष-नाशक है।

१५ भूर्जवृक्षविशेष, भूर्जका एक भेद। इसके पत्तोंका बरतनमें प्रयोग अधिक होते हैं। ([illegible])

१६ मूत्राधार।

(क्लि०) १७ श्रेष्ठ, शिरोमणि किसी समुदायका श्रेष्ठ व्यक्ति। (माघ १।६३)

तिलक—लोकमान्य बालगङ्गाधर तिलक। महाराष्ट्र-देशीय सर्वजन-मान्य सुपरिचित देशनायक। साधारण जनता इन्हें "तिलक महाराज" कहा करती थी।

१८५६ ई०में पवित्र चित्पावन ब्राह्मणकुलमें तिलकका जन्म हुआ था। आपके पिता स्वर्गीय गङ्गाधर रामचन्द्र तिलक पहले रत्नगिरि-विद्यालयके अन्यतम सहकारी शिक्षक थे। बादमें वे थाना और पूनाके शिक्षाविभागके सहकारी डिप्टी-इन्स्पेक्टर नियुक्त हुए थे। शिक्षकका कार्य करते समय गङ्गाधर रामचन्द्र पण्डित लोकप्रिय हो गये थे। उन्होंने व्याकरण तथा त्रिकोणमिति-सम्बन्धी कई पुस्तकें भी लिखी थीं। बालगङ्गाधरने पहले पिताके पास ही गणितकी शिक्षा प्राप्त की थी और इस विषयमें वे इतने निपुण हो गये थे कि सोलह वर्षकी उम्रमें पिताको भी बता दिया करते थे।

पिताकी मृत्युके चार मास बाद, १८७२ ई०के अन्तमें आप मैट्रिक परीक्षामें उत्तीर्ण हुए और फिर पूनाके डेक्कन-कालेजमें अध्ययन करने लगे। १८७६ ई०में आप बी० ए०में आनर हो कर पास हुए। १८७९ ई०में बम्बई-विश्वविद्यालयकी आईन-परीक्षामें उत्तीर्ण हो कर आपने एल एल० बी०, की उपाधि प्राप्त की। आईन या 'ला' पढ़ते समय परलोकगत मि० आगरकरसे आपकी मित्रता हो गई। इन दोनों मित्रोंने मिल कर निश्चय किया कि "हममेंसे कोई भी सरकारकी नौकरी नहीं करेगा। एक राष्ट्रीय (गैर-सरकारी) विद्यालय या महाविद्यालय (कालेज) खोल कर उसीकी उन्नतिके लिए आत्मसमर्पण करेंगे। देशके होनहार युवकोंको कम खर्चमें यथायोग्य शिक्षा दे कर उन्हें मनुष्य बनानेका प्रयत्न करेंगे।"

उसी समय मि० विष्णुकृष्ण चिपलोणकर सरकारी शिक्षा विभागके कार्यको छोड़ कर स्व स्वाधीन-भावसे शिक्षा देनेके लिए उद्युक्त हुए। आपकी साधारण जनता में विष्णुशास्त्रीके नामसे प्रसिद्धि थी। आप एक प्रतिभावान लेखक थे। इनके सङ्कल्पकी बात युवक तिलक और आगरकरके कानमें पड़ी। दोनोंने जा कर विष्णुशास्त्रीसे मुलाकात की। उसी समय परलोकगत एम० बी० नामजोशी भी इनमें मिल गये। इस प्रेम योगके फलसे तथा स्वर्गीय मि० नामजोशीके उत्साह और अध्यवसायसे आनुप्राणित हो तिलक और चिपलोणकरने १८८० ई०की २री जनवरीको "पूना न्यू-इंग्लिश स्कूल"की प्रतिष्ठा की। कुछ मासमें मि० वी० एस० आपटे एम० ए० ने इनके शिक्षा दान-रूप शुभकार्यमें योग दिया और उसी वर्ष आगरकरने भी एम० ए० पास कर, उसी स्कूलमें पढ़ाना आरम्भ कर दिया। शिक्षा-दानके साथ साथ लोगोंको

युवकोंने मिल कर "केशरी" और "मराठा" इन दो संवाद पत्रोंका निकालना शुरू कर दिया। "केशरी" मराठीमें निकला और "मराठा" अंग्रेजीमें। ये दोनों संवादपत्र अब भी महाराष्ट्रके श्रेष्ठ पत्र समझे जाते हैं। तिलक महाराज "केशरी"के लिए ही अधिकतर परिश्रम किया करते थे। कारण, उन्हें मालूम था कि देशको जनशक्तिको उद्बुद्ध करनेके लिए देशीय भाषामें लिखित संवादपत्रको ही आवश्यकता है। अंग्रेजी भाषाके जानेवाले बहुत कम हैं। इसलिए तिलक महाराजने देशकी भाषामें देशकी बात प्रगट करनेका निश्चय कर लिया। "केशरी"का महाराष्ट्रमें जितना प्रभाव था, उतना प्रभाव भारतके और किसी भी पत्रका नहीं था। "केशरी"को क्या धनी और दरिद्र, सब समान भावसे पढ़ते थे।

'न्यू-इङ्गलिश स्कूल' धीरे धीरे उन्नति करता गया और पूनाके समस्त स्कूलोंमें उसीने श्रेष्ठ स्थान पाया। विष्णु शास्त्री चिपलोनकरने दो प्रेस खोल दिये। इन कार्यक्षेत्रोंमें पांचों युवक मिल कर पूर्ण उत्साहसे कार्य करने लगे।

इसी समयसे देशके काममें तिलकने आत्मत्याग किया और साथ ही उन पर विपत्तियां भी पड़ने लगीं। 'केशरी' और 'मराठा'में कोल्हापुरके तदानीन्तन महाराज शिवाजीरावके प्रति दुर्व्यवहारके सम्बन्धमें तीव्र प्रतिवाद करके अपना मन्तव्य प्रकट किया था; इसके लिए तिलक महाराज और आगरकर पर मानहानिकी नालिश हुई। अदालतने दोनोंको ४।४ महीनेकी कैदकी सजा दी। पर इस कारादण्डके फलसे तिलक और आगरकरकी जन-प्रियता सौ गुनी बढ़ गई और वे नवीन उत्साहसे सारी शक्ति लगा कर जन-सेवा करने लगे।

इस समय इन निर्यातित देश-प्राण युवकोंकी सहायताके लिए एक नाटक खेला गया, जिसमें स्वयं गोखलेने नाटककी भूमिका ग्रहण की थी।

१८८४ ई०के अन्तमें तिलक महाराजने "दाक्षिणात्य-शिक्षा-समिति"की स्थापना की। इसमें पहले सिर्फ उनके मित्रगण ही सदस्य थे; पर कुछ दिन बाद बहुतसे युवक इस समितिके सभासद हो गये और उत्साहके साथ काम करने लगे। केलकर, पटनकर और गोखले भी इस समितिमें शामिल थे। धीरे धीरे इनके स्कूलने कालेजका रूप धारण कर लिया, जो कि "फर्गूसन कालेज"के नामसे पूनामें अब भी मौजूद है। शिक्षा समितिके सदस्योंने प्रतिज्ञा की कि "बीस वर्ष तक नाममात्रको वेतन लेकर इस कालेजमें अध्यापना करेंगे।" दाक्षिणात्य शिक्षा-समितिके अधीनस्थ सभी संस्थाएं धीरे धीरे उन्नति करने लगीं। समितिने युवकोंके खेलनेकूदनेके लिए दो मैदान खरीद लिए। बम्बईके पूर्ववर्ती शासनकर्त्ता सर जेम्स फर्गुसनको प्रतिश्रुतिके अनुसार परवर्त्ती शासनकर्त्ता लार्ड रीने उक्त कालेजको बढ़ा करनेके लिए और भी कुछ जमीन दे दी। युवक-सङ्घने चतुरसिंगीके पास कालेजके लिए एक बड़ा सुन्दर भवन बनवाया। तिलक कालेजमें गणितकी शिक्षा देते थे और आवश्यक होने पर कभी कभी विज्ञान तथा संस्कृत भी पढ़ाया करते थे। तिलक उक्त तीनों विषयोंमें समान कृतित्व दिखलाते थे। गणितकी शिक्षा देनेमें तिलककी समानता और कोई भी नहीं कर सकता, ऐसी छात्रोंकी धारणा थी। अध्यापकोंमें इनका यश सर्वत्र व्याप्त हो गया था।

परन्तु १८९० ई०में आपको अध्यापकका पद त्याग देना पड़ा। बहुत दिनोंसे समितिके सदस्योंमें मनोमालिन्य चला आ रहा था। समाज और धर्मके विषयमें आपका मत कट्टर हिन्दुओंके समान था। इसलिए राष्ट्रकी सहायता लेकर किसी समाजके संस्कार करनेकी आवश्यकता है, इस बातको आप स्वीकार नहीं करते थे। परन्तु आगरकरका मत इनसे सम्पूर्ण विपरीत था। वे समाज-संस्कारको आशु प्रयोजनीय समझते थे। समितिके अन्यान्य सदस्य भी आगरकरके मतानुवर्ती थे। किन्तु इस समय तिलकके पदत्याग करनेका और भी एक गुरुतर कारण उपस्थित हुआ। १८८८ ई०में अध्यापक गोखले पूनाकी 'सार्वजनिक सभा'के सम्पादक (वा मन्त्री) नियुक्त हुए। इसमें तिलकको आपत्ति थी। आपका कहना था कि "जो दाक्षिणात्य समितिके आजीवन सभ्य हैं, उन्हें अपनी सम्पूर्ण शक्ति और समय कालेजकी उन्नतिके लिए व्यय करना चाहिए।" गोखले शिक्षक हो कर भी राजनीतिक सभाके मन्त्री होते हैं

और समितिके अन्यान्य सदस्य उनसे सहमत हो गये थे। यही तिलकके पदत्यागका मूल कारण था। इस तरह तिलकने अपने मनोऽनुकूल कार्य—अध्यापनकार्यको छोड़ दिया और राजनीतिक जीवन यापन करनेमें प्रवृत्त हो गये।

इसी समय सरकारने "सहवास-सम्मति" नामका प्रस्ताव पास करना चाहा, जिस पर देश-व्यापी तुमुल आन्दोलन शुरू हो गया। तिलक इस कानूनके पास होनेके विरुद्ध जी-जानसे कोशिश करने लगे। जिस नीतिके अनुसार विदेशी विजेता लोग भारतमें एक प्रजाके धर्म और समाज सम्बन्धी सब नियमोंमें हस्तक्षेप कर स्वाधीनता-मूलक कानून बनानेके लिए अग्रसर हों, तिलक महाराज उस नीतिके कट्टर विरोधी थे। सहवास सम्मति कानूनका पास होना कितना ही हितकर क्यों न हो, भारतमें एक सम्पूर्णक ऐसी व्यवस्था करती थी इस कारण समाज संस्कारके विशेष पक्षपाती और भी बहुतसे व्यक्ति इस कानूनके घोर विरोधी हो गये थे।

कालेजके अध्यापकका पद त्याग कर तिलकने पुनः कानून पढ़ानेकी व्यवस्था की। बम्बई-प्रेसिडेन्सीमें यही प्रथम-लॉ-कालेज है। कालेजमें छात्र कोर्टके लिए वकालतकी विद्या पढ़ानेका बन्दोबस्त हो गया। इसके बाद दाक्षिणात्य समितिके सभ्योंमें एक बटवारा हुआ जिसमें तिलक महोदय "केसरी" और "मराठा" पत्रके स्वत्वाधिकारी और सम्पादक हुए। "केसरी"के सम्पूर्ण भावसे तिलकके कर्तृत्वाधीन होने पर, दिनों दिन उसकी उन्नति होने लगी।

तिलकने राजनीतिक क्षेत्रमें पदार्पण करने पर भी अपनी असाधारण मनीषाको केवलमात्र उसीमें निबद्ध नहीं रखा था, प्रत्युत विद्यामें भी उनका असीम अनुराग था। अवसर पाते ही आप शास्त्राध्ययन करते थे। वेदके काल-निर्णयके विषयमें आपने कई निबन्ध लिखे हैं जिनसे आपके असाधारण पाण्डित्यका यथेष्ट परिचय मिलता है। १८९२ ई०में लन्दनमें प्राच्यविद्याविद् विद्वानोंकी एक अन्तर्जातीय बैठक हुई थी, उसमें तिलक महाराजके उक्त निबन्ध भेजे गये थे। उनसे तिलककी विद्वत्ता और प्रतिभा चारों ओर व्याप्त हो गई। १८९३ ई०में ये निबन्ध पुस्तकाकारमें प्रकाशित किये गये, पुस्तक का नाम "ओरायन" रखा गया। इस पुस्तकमें ग्रीक की अपेक्षा हिन्दू सभ्यताकी प्राचीनताके विषयमें आपने बहुतसे प्रमाण दिये हैं। ग्रीक ज्योतिषियोंने मृग शिकारीके 'ओरायन' नामक नक्षत्रराशिमें काल-पुरुषको जो कहा है, उसके साथ (उक्त नक्षत्रराशिका हिन्दू-नामकरण) मृगशिरा और मृगशीर्षनक्षत्र मार्गशीर्ष मासका भी सम्बन्ध साक्ष्य है। इस विषयको विस्तृत आलोचना कर तथा 'अग्रहायण' (मार्गशीर्ष) शब्दका अर्थ 'वर्षका प्रथम दिन, क्यों है, इसका विचार कर तिलक महोदयने दिखलाया है कि ऋग्वेदके जिन श्लोकोंमें उक्त अग्रहायण शब्दका उल्लेख है या उस विषयकी नाना आख्यायिका हैं, वे जिस समय रची गई थीं उस समय तक ग्रीक लोग हिन्दुओंसे पृथक् नहीं हुए थे। सूर्यदेवके वसन्तविषुवत्में अवस्थान करते समय जब वत्सरका प्रथम मास शुरू होता था, तब (अर्थात् ईसासे चार हजार वर्ष पहले) सम्भवतः दोनों प्राचीन जातियां एक ही स्थानमें रहती थीं और उस समय ऋग्वेद की शाखाएं रची गई थीं। प्राच्य और प्रतीच्य विद्यामें कैसी प्रगाढ़ विद्वत्ता होने पर और कैसी तीक्ष्ण दृष्टिसे गवेषणा करने पर ऐसा सिद्धान्त स्थिर किया जा सकता है, यह बात सहज ही समझ सकते हैं। उक्त गणित विद्यामें तथा फलित ज्योतिषमें तिलकके असाधारण अधिकारका परिचय इसीसे मिल सकता है। इस ग्रन्थके प्रकाशित होनेपर अध्यापक मोक्षमूलर, जेकोबी, वेबर और ह्विटनी आदि प्रमुख पाश्चात्य विद्वानोंने तिलकको भूरि भूरि प्रशंसा की थी। 'जन हपकिन्स विश्वविद्यालय' के डाक्टर ब्लूमफिल्डने विश्वविद्यालयके वार्षिक अधिवेशन पर कहा था, कि "ओरायनके लेखकने अपने प्रतिपाद्य प्रधान विषयों पर भूमि विन्यास करनेके लिए साध्य किया है, यह बात मैं मुक्तकण्ठसे कहता हूं। ओरायन अब साहित्य जगत्में कुछ समयके लिए महा आन्दोलनकी सृष्टि करता रहेगा।" साहित्य और इतिहासके क्षेत्रमें वस्तुतः ही 'ओरायन'ने विप्लवकी सृष्टि की है।

इसी समय तिलक महाराज बम्बई प्रान्तिक व्यवस्थापक सभाके सभ्य नियुक्त हुए। लगातार पांच अधिवेशनों तक

आप ही इसका कार्य सम्हालते रहे। पांचवें अधिवेशनमें सबसे अधिक सफलता प्राप्त हुई। १८८७ ई०में इसका एक अधिवेशन हुआ। इसके दूसरे वर्ष लार्ड डफरिन-की भेदनीतिके कारण हिन्दू-मुसलमानोंमें बड़ा भारी दंगा हो गया। तिलकने अपने व्याख्यानमें भेदनीतिको बात प्रकट कर दी, जिससे सरकार भीतर ही भीतर तिलक महाराजसे जलने लगी। यहींसे तिलक पर सरकारकी कड़ी निगाह रही, उनके प्रत्येक कार्य पर सरकार लक्ष्य रखती थी। तिलक महाराज कुछ सरकारी कर्मचारियोंकी अनुसृत नीतिके विरोधी हो गये। कर्मचारियोंके इसी सम्पर्कसे, जनसाधारण पर तिलकके असाधारण प्रभावकी बात मालूम हो गई। "केशरी"की सहायतासे ही तिलकने अपना प्रभाव समग्र मराठा-समाजमें फैला दिया था। तिलकके प्रभावसे मराठा-जातिमें इस समय एक नवीन भाव जाग्रत् हुआ था। शिक्षित समाजमें भी तिलकका काफी प्रभाव था, इसी बीचमें आप दो बार बम्बईकी व्यवस्थापक-सभाके सभ्य निर्वाचित हुए थे और बम्बई-विश्वविद्यालयके 'फेलो' हुए थे। १८८५ ई०में आपको पूनाकी म्युनिसिपालिटीने सदस्य चुना। इसी साल पूनामें कांग्रेसका ग्यारहवां अधिवेशन होना निश्चित हुआ और आप उसकी अभ्यर्थना समिति-के मन्त्री निर्वाचित हुए। तिलकने सेप्टेम्बर मास तक इसके लिए बहुत परिश्रम किया। उपरान्त कांग्रेसके पण्डालमें समाज-संस्कारके विषयमें आलोचना हुई, जिसका तिलक महाराजने विरोध किया और आखिरको इसी कारणवश आपने मन्त्रि-पदसे इस्तीफा दे दिया। परन्तु कांग्रेसकी सफलताके लिए आपने एक दिन भी परिश्रम करना न छोड़ा था।

१८८५ ई०में आपने मराठा जातिमें स्वदेश-प्रेम लाने-के अभिप्रायसे शिवाजीकी पूजाका प्रवर्तन किया। जातीय देशनायकोंके जीवनचरित्रकी आलोचना करनेसे जातीयताकी वृद्धि होती है, ऐसा समझ कर ही तिलक महाराजने इस अनुष्ठानका प्रचार किया था। शिवाजीकी स्मृति-रक्षाके आन्दोलनमें योग देनेके बाद तिलक महाराजने 'केसरी' में इस विषयका लेख लिखा। उस लेखके परिमाणस्वरूप २० हजारका चन्दा हुआ, जिससे रायगढ़में शिवाजीके समाधिमन्दिर-का संस्कार हो गया। तभीसे यहां प्रति वर्ष शिवाजी-पूजाका अनुष्ठान चिरस्थायी हो गया।

१८९६ ई०में महाराष्ट्र-प्रदेशमें भीषण दुर्भिक्ष और प्लग फैल गई। लोकहितमें प्राण विसर्जन देनेवाले महामति तिलकका हृदय क्रन्दन करने लगा। आपने इस समय स्वार्थ-त्यागका ऐसा अपूर्व दृष्टान्त दिखलाया कि उसीसे आपका नाम अक्षय हो सकता था। दुर्भिक्षके समय विपन्न नरनारियोंको सहायता पहुंचानेके लिए जो सरकारी व्यवस्था है, उसको काममें लानेके लिए आपने बम्बई सरकारसे विशेष लिखा-पढ़ी की थी। परन्तु तिलकका अनुरोध व्यर्थ गया सरकारने कुछ भी सुनाई न की। आखिर तिलक विपन्नोंके क्लेश-निवारणार्थ स्वयं ही अग्रसर हुए। आपने पूनामें स्वल्पमूल्यमें खाद्यशस्य बेचने और अन्नवितरणकी व्यवस्था कर दी। इस समय यदि ऐसी व्यवस्था न होती, तो दंगा फसाद हुए बिना कभी न रहता। शोलापुर और नागरके जुलाहोंकी दुर्व्यवस्थाके विषयमें संवाद पाते ही आप वहां-के लिए रवाना हो गए। आपने स्थानीय नेताओंसे परामर्श किया और सरकारी कर्मचारियोंके साथ मिल कर विपन्न नरनारियोंको सहायता पहुंचानेकी व्यवस्था कर दी। युक्तप्रदेशके दुर्भिक्षके समय वहांके तदानीन्तन छोटे लाट महोदयने जिस व्यवस्थाके अनुसार काम कर सुयश प्राप्त किया था, तिलक महाराजने शोलापुर प्रान्त-के लिए भी वैसी ही व्यवस्था की थी। परन्तु तिलक महाराजके कार्य-कलापोंसे उस समय बम्बई-सरकारको सहानुभूति न होनेके कारण, वह उस व्यवस्थाके अनुसार कार्य करनेको तैयार नहीं हुई। तिलकके अन्यान्य प्रस्ताव भी इसी तरह सरकारके द्वारा उपेक्षित हुए थे।

पूनामें प्लेग उपस्थित होते ही महाप्राण तिलकने वहां हिन्दू-प्लेग-अस्पतालकी स्थापना कर दी। इस अस्पतालके व्ययके लिए आपने आवश्यक अर्थ-संग्रह करनेमें भी यथेष्ट परिश्रम किया था। प्लेगके भयसे पूनाके प्रायः सभी नेता बाहर खसक दिए। यह देख तिलक दूने उत्साहसे कार्य करने लगे। प्लेगके रोगियोंकी सेवा आप उसी तरह करने लगे, जिस तरह एक योग्य स्वयं

पैदा करता है। इसके लिए लगानको टेक्स-टेक्स भी माफ की करते थे। प्लेगको भागहाके लिए आदमियोंको मकानसे हटा कर छावनीमें रखा गया था। उनके लिए आपने अन्नसत्र खोल दिया। प्रजा सरकारकी आज्ञा से बाहर हो रही थी, इसके लिए तिलक महाराजने बहुत लिखा-पढ़ी की और उन कर्मचारियों के साथ काम कर लिये। किन्तु आपने अपने दोनों संवादपत्रोंमें प्लेग-दमनकी सरकारी व्यवस्थाका संपूर्ण समर्थन किया था।

१८९७ ई० ता० १२ जूनको "केसरी"में शिवाजी-उत्सवका एक विवरण प्रकाशित हुआ। उत्सव १० जूनको हुआ था। इस साल प्लेगके कारण शिवाजीके जन्मदिनको यह उत्सव न हो पाया था, मुकुटोत्सवके दिन हुआ था। अबकी बार इस उत्सवमें उपदेश, व्याख्यान, पुराण-पाठ आदि अनेक प्रकारकी व्यवस्था हुई थी। इस उत्सवमें एक श्लोक पढ़ा गया था। तिलक महाराजने उसे "केसरी"में छाप दिया। २२ जूनको मि० रैण्ड और लेफ्टिनेण्ट आयर्स्ट गुप्त घातकके हाथसे मारे गये। "शिवाजी-उत्सव" शीर्षक लेखसे इस घटनाका सम्बन्ध है इस सन्देह पर सरकारने तिलक महाराजको गिरफ्तार कर लिया। हाई-कोर्टमें तिलकके नाम राजद्रोहका मामला चला। बम्बई गवर्मेण्टने ता० २६ जूनको तिलक-को गिरफ्तारीका हुक्म निकाला। २७ तारीखको तिलक गिरफ्तार हुए। आखिर ता० २ अगस्तको जब मामला हाई-कोर्टमें आया, तब जस्टिस बदरुद्दीन तय्यबजीने आपको जमानत पर छोड़ दिया। ता० ८ सितम्बरको मुकदमा दायर हुआ और एक सप्ताह तक उसकी सुनवाई हुई। कलकत्तेसे बैरिस्टर प्यू० तिलकके पक्षका समर्थन करनेके लिये बम्बई गये। मि० गार्थ प्यू०की सहायताके लिए उपस्थित थे। माननीय विचार-पति मि० स्ट्राचीने इस मुकदमाका फैसला किया। जो जूरियोंमेंसे ६ यूरोपियनोंने तिलकको दोषी ठहराया और ३ हिन्दुस्तानियोंने उन्हें निर्दोष बतलाया। परिणाम यह हुआ कि तिलक महाराजको १८ मास सख्त कारावासका आदेश दिया गया। 'फुल-बेंच'की प्रार्थना की, पर वह व्यर्थ हुई। आखिर प्रिवि-कौन्सिलमें अपील की गई। विलायतमें मि० आसक्वियने तिलकके पक्षका समर्थन किया। मन्त्रि-सभाके अन्यतम सदस्य लार्ड हैलसबरीने प्रिवि-कौन्सिलमें (१८९७ ई०के नवम्बर मासमें)-तिलकके मुकदमेका विचार किया। मि० आसक्वियने बम्बईके जूरियोंको भ्रान्त करना और स्ट्राचीके विचारके विषयमें बहुत कुछ समझाया पर कुछ फल न हुआ। अन्तमें अध्यापक मोक्षमूलर और विलियम हण्टरने तिलकको अपूर्व विद्यावत्ताका उल्लेख कर महारानी विक्टोरियासे दयाके लिए प्रार्थना की। तिलकको भी यह प्रतिज्ञा लिखनी पड़ी कि 'कभी भी सरकारके विरुद्ध असन्तोष-उत्पादक वक्तृता न दूंगा और न लिखूंगा।' तारीख ६ सेप्टेम्बर (१८९८ ई०)को तिलक छूट गये।

कारागारमें तिलकका शरीर अत्यन्त दुर्बल हो गया था इसलिए जेलसे छूटनेके बाद वे महीने तक वे आरोग्योन्नतिकी कोशिशमें रहे। पहले कुछ दिन सिंहगढ़के स्वास्थ्य निवासमें रहे फिर दिसम्बर महीनेमें मद्रासकी कांग्रेसमें शामिल हुए। मद्रासमें आपने सिंहल भ्रमणके लिए यात्रा की।

कारागारमें रहते समय आपको जितना भी अव-काश मिलता था उतना समय आप ग्रन्थ लिखनेमें व्यय करते थे। आपका "उत्तरमेरुमें वैदिक निवास" नामक ग्रन्थ इसी समयका लिखा हुआ है। इस ग्रन्थमें आपने नाना युक्तियों द्वारा यह प्रमाणित किया है, कि प्राचीन आर्योंका वैदिक निवास उत्तर मेरुमें था। इसकी भूमिकामें आपने लिखा है कि 'इस पुस्तकके लिखनेमें मैंने दस वर्ष समय व्यतीत किया है।'

तिलक प्रारम्भसे ही दारिद्र्यके साथ युद्ध करते आये थे। इसलिए वे कभी किसीके सामने हाथ न पसारते थे। जब आपको भीषण राजद्रोहके मामलेमें फंसना पड़ा, उस समय भी आपने किसीका मुँह नहीं ताका। आपने लातूरमें एक कारीब खोला था और लातूरमें आपका कारखाना भी था, उसीकी आमदनीसे आपके परिवारका खर्च चलता था। आपके जेल चले जाने पर आपका आईल-आफिस गड़बड़ीमें बन्द हो गया और लातूरके कारखानेमें अव्यवस्थाके कारण नुकसान हो गया। जिस समय तिलक "केसरी"के मालिक हुए थे, उस समय उसके कुल ४००० ग्राहक

थे, किन्तु अब उसकी ग्राहक संख्या काफी बढ़ने लगी। राजद्रोहके मुकदमाके समय इसके सात हजार ग्राहक हो गये। जेलसे लौट कर आपने "केशरी"का पहलेका कर्ज सब चुका दिया। आइन-कालेजके बन्द हो जाने तथा कारखानेमें नुकसान पड़ जानेसे अब आपके अर्थागमका उपाय सिर्फ "केशरी" ही रह गया। इसलिए आपको "केशरी"के लिए और भी अधिक परिश्रम करना पड़ा।

ग्रोवावा महाराज नामक एक सरदार तिलकके मित्र थे। उनका भी वासस्थान पूना था। ग्रोवावा महाराजकी स्त्रीका नाम था ताई महाराज। मरते समय उन्होंने एक 'इच्छापत्र' लिखा जिसमें तिलकको वे अपनी सम्पत्तिके परिचालक नियुक्त कर गये। यह घटना तिलकके हाजतसे छुटनेके बाद ही हुई थी। ग्रोवावाका कुछ ऋण भी था, तिलक महाराजने ऋण चुका दिया और विशेष यत्नके साथ उनकी सम्पत्तिका रक्षणावेक्षण करते रहे। ग्रोवावाके कोई पुत्र न था, इसलिए आपने ताई महाराजको दत्तकपुत्र ग्रहण करनेका परामर्श दिया। ताई महाराजने अपनी इच्छानुसार एक बालकको पुत्ररूपमें ग्रहण कर लिया। तिलककी सुव्यवस्थासे औरोंके स्वार्थमें बाधा पड़ी। आखिर स्वार्थी लोग ताई महाराजको कुपरामर्श दे कर बहकाने लगे। ताई महाराज भी बातोंमें आ गई। उन्होंने पवित्रहृदय तिलक महाराज पर जाल, प्रवञ्चना, सम्मति न होने पर भी दत्तक-ग्रहण करना आदि दफा सातमें नालिश कर दी। १९०१से १९०४ई० तक, चार वर्ष मामला चला। छोटी अदालतने तिलकको दोषी ठहरा कर १॥ वर्षकी सजाका हुक्म दिया। सेशनमें अपील की गई। जजने दण्ड घटा कर ६ महीनेकी सजाका हुक्म दिया। फिर हाई कोर्टमें अपील हुई और खलास हो गये। जजने स्पष्ट शब्दोंमें प्रकट कर दिया कि मि० तिलकने किसी प्रकारकी भी प्रवञ्चना नहीं की, जालका अभियोग मिथ्या है। इसके बाद आपने ताई महाराजकी सम्पत्तिके तत्त्वावधायकका पद छोड़ दिया।

इसके दूसरे वर्ष तिलक महाराजका ध्यान अपनी सम्पत्ति पर गया। आप अपने दो संवादपत्रों और प्रेसके इन्तजाममें लग गये। इस समय "केशरी"की ग्राहकसंख्या बहुत ही बढ़ गई थी। इसलिए आपको प्रेसके लिए एक अच्छी मशीनकी जरूरत पड़ी। महाराज गायकवाड़ने आपको स्वल्पमूल्यमें पूनाका 'गायकवाड़-वाड़ा' बेच दिया। उस जमीन पर आपने प्रेसके लिए मकान बनवाया। तिलक महाराजने मुद्रण-यन्त्रकी उन्नतिके लिए अपनी असामान्य प्रतिभा नियोजित कर वहां भी एक अद्भुत कार्य कर डाला। लीनो-यन्त्रमें काम आवे ऐसा मराठी टाइप बनाया जा सकता है या नहीं, आप इस विषयकी चिन्ता करने लगे। आपने लीनोयन्त्रके लिए जैसे मराठी टाइप बनानेकी कल्पना की थी, उसका विलायतवालोंने अनुमोदन किया। परन्तु वैसे हरूफोंके साथ लीनो-यन्त्रके मंगानेमें बाधा पड़ गई, विलायतके कारखाने उस तरहकी सिर्फ एक ही मशीन ढाल कर भेजना स्वीकार नहीं किया।

समग्र भारतमें, एकता स्थापनके उद्देशसे एक ही लिपिके प्रचारके लिए तिलक महाराजने यथेष्ट प्रयास किया था। १९०५ ई०में "एकलिपि-विस्तार-समिति" के अधिवेशनमें बाबू रमेशचन्द्र दत्त महाशय सभापति हुए थे, जिसमें तिलक महाराजने भारतके सर्वत्र नागरी अक्षरके प्रचलन पर जोर दिया था और नाना युक्तियों द्वारा उसे उपयोगी बतलाया था। वास्तवमें देखा जाय तो एक लिपि हुए बिना सम्पूर्ण जातियोंमें एकताका होना असम्भव है।

तिलक धार्मिक और सामाजिक उन्नतिके परिपन्थी न थे। १९०६ ई०में आपने काशीमें हिन्दूसमाजके संस्कारके विषयमें जैसा मत दिया था, उससे ऐसा ही प्रतीत होता है। आपने कहा था, कि वैदिक युगमें भारतका बाहरकी किसी भी समाज वा जातिसे संस्रव न था; भारतके अधिवासी उस समय परस्पर एक दूसरेके साथ घनिष्ट संबन्धसे संबद्ध थे और सबकी मात्र एक ही विराट् जाति थी। भारतके नेताओंका कर्तव्य है कि उस एकताकी पुनः प्रतिष्ठा करें। काशीके हिन्दू जैसे हैं, बम्बई, मन्द्राजके हिन्दू भी ठीक वैसे ही हैं। विभिन्न देशवासी हिन्दुओंकी भाषा और पहनावेमें अन्तर हो सकता है, पर जिस अनुप्राणनासे वे अनुप्राणित

है वह एक ही है। अतएव विभिन्न देशोंके हिन्दुओंका एकताके सूत्रमें आबद्ध होना आवश्यक है।

लोकमान्य तिलक कांग्रेसके आरम्भसे ही उसके संविद थे। कांग्रेसके काममें आप प्रतिवर्ष कम भाग लेते थे। १८८८ ई०को प्रयाग-कांग्रेसकी विषय-निर्वाचिनी समितिके सदस्योंमें आपका नाम चुना गया था इसी वर्ष आपने व्यवस्थापक सभा सम्बन्धी प्रस्तावका समर्थन किया था। नागपुरकी सातवीं कांग्रेसमें आपने आर्म्स एक्टके सम्बन्धमें प्रस्ताव उठाया था, लाहौरकी नवम कांग्रेसमें चिरस्थायी बन्दोबस्त सम्बन्धी प्रस्तावका समर्थन किया था पूनाकी ग्यारहवीं कांग्रेसमें सभा सम्बन्धीय प्रस्तावके आप प्रस्तावक बने थे और कलकत्तेकी बारहवीं कांग्रेसमें आपने माइसोर राज्यके विषयमें अधिक शिक्षितों और स्वाधीनता देनेका प्रस्ताव किया था। लखनऊकी कांग्रेसमें भी तिलकने जन-साधारणके एक प्रस्तावका समर्थन किया था। कलकत्तेकी सत्रहवीं कांग्रेसमें बिना सम्बन्ध कोई प्रस्ताव पेश हुआ था जिस पर आपने एक बड़ी वक्तृता दी थी। इसके बाद प्रतिनिधि भेजनेके विषयमें स्वर्गीय सर वेडरबर्नने जो प्रस्ताव पेश किया था तिलक महाराजने उसका समर्थन किया था। इन बातोंका तात्पर्य यह है कि राजनीतिक आन्दोलनमें आपका खूब उत्साह और विश्वास था। आप प्रायः यह कहा करते थे कि "हमारे कार्याकार्यके विचारकर्त्ता इङ्गलैण्डमें हैं।" आप ब्रिटिश प्रजातन्त्रकी और प्रशंसा करते थे। ब्रिटिश प्रजा साधारण पर आपको श्रद्धा थी। १८०५ ई०में जब काशीमें कांग्रेस हुई थी, उस समय तिलक महाराजकी विशेषरूपसे सम्बर्द्धना की गई थी। इस कांग्रेसमें आपने दुर्भिक्ष, दारिद्र्य और भारतकी अर्थनीति अवस्थाके विषयमें अनुसन्धान तथा मैकमिलनके नामसे एक प्रस्ताव उपस्थित किया था। १८०६ ई०में कलकत्तेकी कांग्रेसमें स्वर्गीय प० आनन्दचार्लू ने स्वदेशी आन्दोलनके विषयमें जो प्रस्ताव किया था उसके आप समर्थक थे।

परन्तु भारतकी राजनीति-क्षेत्रकी शान्ति अब नष्ट हो गई। विधि-संहित राजनीतिक आन्दोलन पर जो भारतवासियोंकी श्रद्धा थी लार्ड कर्ज़नने उसके मूल पर कुठाराघात किया। लार्ड कर्ज़नके यह समझनेके बाद भारतवासियोंने जैसा भारत इतिहासमें अभूतपूर्व आन्दोलन उठाया, उधर नौकरशाहीने भी मेंथेके कठोरतम शासनसे देशको विक्षोभित कर दिया। साधारणमें सभा समितियोंका होना बन्द कर दिया गया। अनेक माननीय जन नायकोंको बिना विचारके निर्वासित किया गया, बहुतोंको फांसी पर भी लटकाया गया। जो लोग कभी राजनीतिक आन्दोलनकी छायामें भी न आते थे वे भी इस बड़े प्रवाहमें बह उठे। इस विभीषिकाका परिणाम यह हुआ कि भारतके कुछ व्यक्तियोंने पुरानी "आवेदन-निवेदन"की प्रथा सर्वथा त्याग दी। राजनीतिक युवकोंमें ये इतर और प्रबल चरम-पन्थीमतके पक्षपाती हो गये। एक एक करके बहुतोंने पुरानी विचारधाराका त्याग किया। भारतके इस नव-गठित "चरम-पन्थियों"में भी विभिन्न दलोंकी सृष्टि हुई। इस दलबन्दीके कारण सूरतकी कांग्रेसमें विच्छेद हो गया। भारतके इस राजनीतिक विच्छेद और गड़बड़के समयमें लोकमान्य तिलकने "चरमपन्थियों"का नेतृत्वपद ग्रहण किया।

लोकमान्य तिलकने अपने राजनीतिक मतवादकी निम्नलिखित रूपसे व्याख्या की —"हमारे इस राजनीतिक सम्प्रदायको जो चरम पन्थोंकी आख्या प्राप्त हुई है वह उसकी उद्देश्यकी विशिष्टताके लिए नहीं, बल्कि कर्म-पन्थाकी भिन्नताके कारण मिली है। भारतमें ऐसे ब्रिटिश-शासनका उच्छेद करना चाहते हों या ब्रिटिश-शासनसे किसी तरहका सम्बन्ध नहीं रखना चाहते हों, ऐसे राजनीतिक मतके समर्थक या पोषक भारतमें बहुत कम हो हैं। उनसे अब हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है—वह सुदूर भविष्यकी बात है। इस लोगोंमें किसी तरहकी शक्ति नहीं है, सम्पूर्ण निरस्त्र हैं, दल-विच्छेदके कारण दुर्बल हैं, अतः हम कैसे ब्रिटिश-आधिपत्यसे छुटकारा पा सकते हैं? ये सब बातें सुदूर भविष्यके लिए छोड़ देना ही हमारे लिए संगत और उचित है। वर्तमानमें, हमारे देशका शासन-भार क्रमशः अधिकतर हमारे ही हाथमें आवे यही हमारा उद्देश्य है। हमारी यह भविष्यकी आशा है —

भारतके विभिन्न प्रदेश सम्मिलित हो कर एक युक्त-राज्यका सङ्गठन करेंगे तथा ब्रिटिश औपनिवेशिक स्वायत्त-शासनके द्वारा, देश-देशवासियोंके द्वारा और भारतके प्रधान केन्द्रीय गवर्मेण्ट इंग्लैण्डमें रह कर निखिल भारत सम्बन्धी समस्याओंका समाधान करेगा। स्वायत्त-शासनकी व्यवस्थासे प्रादेशिक गवर्मेण्टोंमें भी सुव्यवस्थाकी आकांक्षाका हम पोषण करते हैं। परन्तु ये भी बहुत दूरकी बातें हैं, अबसे शुरू होने पर बहुत दिनों बाद सम्भव पर हो सकती हैं। फिलहाल हम अपनी कार्य-पद्धतिके जरिये नौकरशाहीको समझाना चाहते हैं, कि उनकी सभी कार्य पद्धति अच्छी हो, ऐसा नहीं। सम्प्रति हमारे ब्रिटिश-कर्मचारियोंकी गतिविधि बहुत ही बिगड़ गई है। ....किस प्रकारसे हम नौकरशाहीको सचेत कर सकते हैं, यही हमारी वर्तमान समस्या है। इस नौकरशाहीमें हमारे प्रतिनिधि स्थानीय व्यक्ति उतने नहीं हैं, निम्नपदों पर अधिकार करनेके सिवा हमारा नौकरशाहीके साथ और कोई सम्बन्ध नहीं हो पाया है। यहीं पर 'माडरेटों'के साथ हमारे मतका पार्थक्य है। 'माडरेट'-गण अब भी यह आशा रखते हैं, कि हम इंग्लैण्डमें प्रतिनिधि भेज कर अंग्रेज जन-साधारणकी मतिगतिमें परिवर्तन ला सकते हैं। इस देशमें जितने भी अंग्रेज हैं, उनके मति-परिवर्तनकी आशा तो दोनों ही दलोंने, बहुत दिन हुए छोड़ दी है। 'माडरेट' गण इंग्लैण्डके लोगोंसे अब भी आशा रखते हैं पर 'चरमपन्थी' गण ऐसी आशा नहीं रखते। ....हमारा आदर्श है, 'आत्म-निर्भरता'—भिक्षा वृत्तिका तिरोधान।

'साधारण स्वदेशी-आन्दोलनके सिवा बायकाट और निष्क्रिय प्रतिकूलता भी हमारे अस्त्र हैं। हम बायकाटके लिए किसी पर बल-प्रयोग करनेके पक्षपाती नहीं हैं। हम किसीको विलायती चीजें खरीदनेके लिए मना नहीं करते और न दूकानदारके दरवाजे पर जा कर धरना देनेकी ही सलाह देते हैं। और निष्क्रिय प्रतिकूलतामें भी हम सिर्फ 'राजद्रोहसभा-निषेध'की आईन जैसी व्यवस्थाकी उपेक्षा करेंगे। हमारे भाग्यमें जो कुछ है, होने दो, उसके लिए हम चिन्तित नहीं हैं। हम भारतवासी जन-साधारणके महान् उद्देश्यकी सिद्धि के लिए व्रती हुए हैं। नौकरशाही यदि हमारे ३।४ हजार भाइयोंको एक साथ कैद कर ले तो भी विव्रत होनेके सिवा उन्हें कोई सुफल नहीं प्राप्त हो सकता। व्यवसायक्षेत्रमें असुविधाकी सृष्टि कर एवं सरकार वा नौकरशाहीके विरोधी हो कर हम इंग्लैण्ड की दृष्टि आकर्षित करना चाहते हैं। रेल चला कर, शिक्षाकी व्यवस्था कर और सरकारी कार्यमें एक मात्र अंग्रेजी भाषाका व्यवहार कर इंग्लैण्ड भारतकी एकताके आदर्शकी परिपुष्टि तो की है, पर यह सब कुछ उन्होंने अपनी इच्छासे नहीं किया। ब्रिटिश-आधिपत्यके प्रबल प्रतापसे भारतवासी अपने ही आप ही एकताके सूत्रमें आबद्ध होना सोच रहे हैं। किन्तु इस एकताकी परिपुष्टि कई पीढ़ियोंके बाद हो सकती है। अतएव हमें अभीसे ही अपने उद्देश्यकी पुष्टिके लिए सम्मुखीन होना चाहिए; हमको दूसरे मार्ग पर न चल कर पहले इसी मार्ग पर चलना उचित है।"

लोकमान्य तिलक महाराजने एक जगह कहा है—"हमारा यह विद्रोह सम्पूर्णभावसे बिना रक्त-पातके ही होना चाहिये। किसीको भी ऐसा न समझ लेना चाहिये कि रक्त-पात न होगा, इस कारण लोगोंको दुःख कष्ट भी न होगा, कष्टोंका सामना तो हर हालतमें करना पड़ेगा। बिना रक्त-पातके ही हमें जिन कष्टोंको भोगना पड़ेगा, वे सामान्य नहीं है। यह बात निश्चित है कि यदि हम दुःख-कष्ट सहनेके लिये तैयार नहीं है, तो हमारे द्वारा किसी भी उद्देश्यकी सिद्धि नहीं हो सकती।"

सूरत-कांग्रेसके विच्छेदके बाद भारतके राजनीतिक क्षेत्रमें और भी भीषण घटनाएं होने लगीं। सरकारने अपनी दमननीतिकी कठोरताका किञ्चिन्मात्र भी ह्रास नहीं किया। परिणाम यह निकला कि बङ्गालमें विद्रोह उपस्थित हो गया। मुजफ्फरपुरमें बम फटा। जिसे मारना चाहते थे उसे तो मारा नहीं, आततायियोंने दो अङ्गरेज रमणियोंको मार डाला। बम फेंकनेके बारेमें संवादपत्रोंमें आलोचना होने लगी। 'केशरी' में भी इसके प्रतीकारके विषयमें कई धारावाहिक लेख प्रकाशित हुए। इन लेखोंमें देशकी तदानीन्तन अवस्थाका

कई भाषाओंमें वर्णन किया गया था और बतलाया गया था कि "बम कि बमोंका कार्य अत्यन्त गर्हित है, इसमें सन्देह नहीं किन्तु सरकारी दमननीति और अन्याय्य व्यवहारके दोषसे ही ऐसा हुआ है। अब यदि इस अस्वाभाविक स्थितिसे कठोरतर दमननीतिकी व्यवस्था की गई, तो उसका फल यह होगा कि देशमें विद्रोहका विस्तार होने लगेगा। विद्रोह निवारणका उपाय यही है, कि देशके आदमियों पर सहानुभूति-पूर्ण हृदयसे उनके लिये नाना विषयोंमें सुव्यवस्था कर देना। इस परसे अदर्सैयकने प्रमाणित किया कि 'केसरी'के लेखोंमें कौमनके इससे व्यवहारका समर्थन किया गया है और उसके लिए लोगोंको उत्तेजना दी गई है। तिलक महाराज ही 'केसरी'के सम्पादक हैं, ऐसा सरकारको मालूम था। अतएव उनके प्रेस और सिंहगढ़के व्याख्यान-निवासमें खानातलाशी हुई। तलाशीमें एक पोस्ट-कार्ड मिला जिसमें विस्फोटकोंकी दो पुस्तकोंका नाम लिखे थे। तिलक महाराज गिरफ्तार हो गए। सरकारने उन्हें जमानत पर भी नहीं छोड़ा। आप पर दो अभियोग लगाए गए। १३ जुलाईको हाई-कोर्टमें मुकदमा शुरू हुआ। स्पेशल जूरीमें सात यूरोपियन और दो पारसी चुने गये। 'केसरी'के जिन लेखोंके लिए तिलक गिरफ्तार हुए थे, वे सब मराठी भाषामें लिखे हुए थे। जज और जूरियोंमें कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जो मराठी भाषा जानता हो। तिलकने अपने पक्ष समर्थनके लिए वक्तृता दी। मुकदमाके तीसरे दिन चार बजेसे आपकी वक्तृता शुरू हुई थी, परवर्ती बुधवारको (मुकदमाके आठवें दिन) दो पहरको अन्त तक खतम हुई। अपना पक्ष-समर्थन करते समय आपने व्यवहार शास्त्रमें अपनी विशेष दक्षताका परिचय दिया था। एडवोकेट जनरलने तिलककी वक्तृताका उत्तर देते समय कुछ व्यङ्ग किया था, उनकी वक्तृता उसी दिन शामको समाप्त हो गई। जजने कहा—'हम रात तक मुकदमा करेंगे और आज ही इस मामलेको खतम कर देंगे।" विचारपति मि० दावरने जूरियोंको मामला समझाते समय तिलकके विरुद्ध वक्तृता दी। रातके आठ बजे जूरी लोग आपसमें सलाह करनेके लिए इजलाससे एक तरफ दूसरे कमरेमें चले गये। ८॥ १० मिनिटके समय जूरी लोग इजलासमें आये। सात जूरियोंने तिलकको दोषी ठहराया और दोने निर्दोष। जजने अधिकांश जूरियोंके मतानुसार तिलकको अपराधी ठहराया और उन्हें छः वर्षके लिए द्वीपान्तर वास तथा एक हजार रुपये जुर्मानाका हुक्म सुनाया। दण्ड देते समय तिलक महाराजके लिए जजने कहा था—'आपमें असाधारण प्रतिभा है, असीम शक्ति है और जन-समाज पर आपका यथेष्ट प्रभाव है। इस प्रतिभाको यदि आप अपने देशके हितके लिए नियोजित करते तो आज जिस जन समाजके लिए आप चिन्तित हैं, उनके सुख-सन्तोषमें कारण हो सकते थे। राजनीतिक आन्दोलनमें इसका व्यवहार विधि-सङ्गत उपाय है, यह बात विद्वेष-प्रसूत और उच्छृङ्खलगामीके सिवा और कोई भी नहीं कह सकता, और तो क्या इसकी चिन्ता भी नहीं कर सकता। और आपने जो लेख लिखे हैं, वे विधिसङ्गत हैं यह बात भी विकृतमस्तिष्कके सिवा और कोई नहीं कह सकता। आप जैसे असाधारण और उच्चपदस्थ व्यक्तिको कैसा दण्ड देनेसे आईन और विचार का उद्देश्य सिद्ध हो सकता है, इसीको मैं चिन्ता कर रहा हूं। आपकी वयस और अन्यान्य पारिपार्श्विक अवस्था विचार करते हुए मैं विवेचना-पूर्वक स्थिर करता हूं कि देशकी शान्ति और सुव्यवस्थाकी रक्षाके लिए तथा जिस देशकी सेवाके लिए आपने आत्म नियोग किया है उस देशके मङ्गलके अर्थ आपको कुछ दिनोंके लिए उस देशसे दूर रखना ही विशेष वाञ्छनीय है।'

विचारपतिके इस मन्तव्य-पाठसे तिलक महाराजने अपना अपमान समझा। मि० दावरने जब तिलकको आपका शेष वक्तव्य कहनेके लिए कहा, तब आप खड़े होकरके अनुद्वेग-स्वर और मर्मस्पर्शी भाषामें बोल उठे—'मैं सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूं कि जूरियों के द्वारा अपराधी ठहराये जाने पर भी, मैं निरपराध हूं। एक महाशक्ति जगत्के भाग्यका नियन्त्रण किया करती है भगवान्की इच्छा शायद ऐसी ही है, कि मैंने जिस उद्देश्यकी सिद्धिके लिए आत्म-नियोग किया था, मेरे स्वाधीन रहनेकी अपेक्षा मेरे दुःख कष्ट सहनेसे ही उसमें अधिक सफलता प्राप्त होगी।"



लोकमान्य बालगङ्गाधर तिलक।

तिलक महाराजके इस दण्डके प्रतिवाद करनेके लिए महाराष्ट्र प्रदेशमें प्रबल आन्दोलन और उत्तेजना फैल गई। मध्यवित्त व्यक्तियोंने एक सप्ताह तक कोई कामकाज हो नहीं किया। देशी और विदेशी प्रायः सभी संवादपत्रोंमें इस-दण्डाज्ञाके विरुद्ध प्रतिवाद प्रकाशित हुआ था। जनता तिलकके लिए इतनी क्षुब्ध हो गई कि शहरमें जहां-तहां दङ्गा-फिसाद होने लगा। इसके दमनके लिए शहरमें सेना लाई गई, जिनकी गोलियोंसे १५ आदमी मर गये और १८ घायल हुए। मध्यवित्त शिक्षित समाजने भी एक सप्ताहके लिये अपना व्यापार बन्द रक्खा था।

दण्डाज्ञाके अनुसार तिलक महाराज शीघ्र ही बम्बईसे अहमदाबाद भेजे गये। परन्तु मालूम नहीं, सरकारने क्या सोच कर, उन्हें आन्दामन नहीं भेजा। छः वर्ष तक आप मन्दालयमें ही रक्खे गये। अहमदाबाद पहुंचते ही सरकारने जुर्मानेके एक हजार रुपये माफ कर दिये थे। आपके आत्मीय बन्धु जब हाई-कोर्टमें बार बार आवेदन दे कर व्यर्थमनोरथ हो गये, तब प्रिविकौन्सिलमें अपील करनेके लिये मि० खापर्डे को विलायत भेजा। परन्तु प्रिविकौंसिलका विचार भी भारत गवर्मेण्टके परामर्शानुसार होता है, इसलिए उससे भी कोई सुफल नहीं हुआ।

मन्दालयमें निर्वासनके समय तिलक महाराजने अपने प्रिय ग्रन्थ 'श्रीमद्भगवद्गीता' की आलोचना

करना प्रारम्भ कर दिया। गीताकी आलोचनामें आप निर्वासनकी निरङ्कुशताको बिलकुल भूल गये और आपको आपका शारीरिक कष्ट भी दूर हो गया। परन्तु हाय! इसी समय आपकी कर्मक्षेत्रमय जीवनकी चिरसङ्गिनी, सहधर्मिणीका देहान्त हो गया जिससे आप अत्यन्त व्यथित हुए। आप विद्वान् थे, शोक तो दर्शन और धर्म-सम्बन्धीय आलोचनामें मन लगा कर आपने कुछ शान्ति लाभ की। आपने बहुत आलोचना करनेके बाद मौलिक गवेषणा-पूर्ण 'गीता रहस्य' नामक एक विशाल ग्रन्थकी रचना की। निर्वासन-कालके बाद आपने यह ग्रन्थ प्रकाशित किया, जिससे देशमें एक नव-जागरणकी आवाज गूंज उठी। तिलकजीकी असामान्य विद्वत्ता, गम्भीर अनुभूति और हिन्दू शास्त्रकी मर्यादा इस 'गीता-रहस्य'में ही प्रकट हो जाती है।

१९१४ ई०में तिलक मुक्ति पाकर अपने देशमें आये। आपने एक पत्रमें अपनी अहिंसा राजनीतिक मतवाद प्रकट किया कि—'गवर्मेण्ट धीरे धीरे भारतकी उन्नतिके लिये प्रयत्न कर रही है, अतएव इस महायुद्धके इस दुस्समयमें प्रत्येक भारतवासीको सहायता देनी चाहिए।' इतने पर भी पूना पहुँचते ही सरकारने आप पर तीक्ष्ण दृष्टि रखनेकी व्यवस्था की थी।

सन् १९१५ की कांग्रेसमें तिलक महाराजने नरम और गरम दलका विरोध मिटा दिया। आपके उद्योगसे १९१६ ई०के सेप्टेम्बर मासमें, पूनामें "होमरूल लीग" नामकी एक सभा स्थापित हुई। इस बार आपने लखनऊकी कांग्रेसमें भारत शासनके सम्बन्धमें वक्तृता दी थी और अपना मन्तव्य प्रकट किया था। ६१ वीं वर्षगांठमें लोगोंने आपको १ लाख रुपयेकी थैली भेंटमें दी थी।

१९१७ ई०में मण्टेगू साहब जब भारतवर्षमें नवीन शासन-प्रथा प्रवर्त्तन करने आये तब तिलक महाराजने होमरूल लीगकी तरफसे उनसे मुलाकात की थी। आपने विलायतकी ब्रिटिश जनताको भारतकी आशाजनक अवस्थाका परिज्ञान करानेके लिए विलायत जानेकी इच्छा प्रकट की, किन्तु मण्टेगूने इन्हें वहां जानेकी आज्ञा न दी। १९१८ ई०में इम्पीरियल वार कान्फरेन्समें पहले तिलक महाराजको निमन्त्रण नहीं दिया था किन्तु पीछे जन साधारणके आन्दोलनके बाद निमन्त्रित हुए थे। तिलकने वहां राजभक्ति प्रस्तावका समर्थन करते हुए कहा था— जब तक देशमें भारत शासनकी व्यवस्थाका विरोध करनेवाला कानून रहेगा तब तक कोई भी हृदयसे राजभक्ति नहीं दिखा सकता।" बाद सभापतिने तिलकको वक्तृता देनेसे रोका इस पर तिलक और उनके बन्धु बान्धवने अपना अपमान समझा और उसी समय सब सभासे उठ कर चले आये। वास्तवमें तिलक राजभक्ति दिखानेके विरोधी न थे। दूसरी सभामें उन्होंने सब इस बातको अच्छी भांति समझा दिया था। बाद बाइसरायके उक्त व्यवहारके विरुद्ध बम्बईमें एक सभा हुई। तिलकने उसमें कहा कि "यदि सरकार भारतवासियोंको सैन्य-विभागमें ग्रहण करे, तो मैं इसी समय पांच हजार सेना इकट्ठी करके दे सकता हूं।" परन्तु गवर्नमेण्टने आपकी यह स्वतःप्रणोदित सहायता ग्रहण करनेमें शायद अपना अपमान समझा।

नवीन शासन सुधारका खसड़ा जब छप कर प्रकाशित हुआ तब तिलकने उस पर असन्तोष प्रकट किया था।

सर वैलेण्टाइन चिरोलने अपनी "भारतमें अशान्ति" नामक पुस्तकमें तिलकके विरुद्ध बहुतसी झूठी बातें लिख मारी थीं। इसलिए चिरोल पर मुकदमा चलानेके लिए १९१८ ई०में आप विलायत गये। वहां मुकदमा करके आप कृतकार्य न हुए। आपने विलायतके श्रमजीवी सम्प्रदायकी दृष्टि भारतकी शासनप्रणालीकी ओर आकर्षित की थी। विलायतमें आप ब्राह्मणके हाथकी रसोई जीमते थे।

भारत लौट कर १९१९ ई०में आप अमृतसरकी कांग्रेसमें शामिल हुए और उसकी प्रबन्धकारिणी समितिको आपने अपने आदर्शमें अनुप्राणित किया। इस बार कांग्रेसका कार्य सिर्फ आप ही के मतानुसार चला था।

१९२० ई०के जुलाई मासमें तिलक महाराजको बीमारीने घेर लिया। सुयोग्य चिकित्सकोंके बहुत परिश्रम करने पर भी आपको पुनः स्वास्थ्य लाभ नहीं हुआ।

अन्तमें ३१ जुलाई, शनिवार रात्रिको १२ बजके ४० मिनट पर आप सर्वदाके लिए धराधाम त्याग कर स्वर्ग सिधारे। दूसरे दिन महात्मा मोहनदास करमचंद गान्धी, खापर्डे, मुनजी, देशपाण्डे, कारन्दिकर, शौकतअली, छोटानी, वैपटिष्टा आदि हिन्दू-मुसलमान नेतागण विषण्ण हृदयसे अपने सम्मानित सहयोगीको अन्तिम क्रिया सम्पादनके लिए पैदल अरथीके साथ गये थे। भारतके सर्वत्र ही इस महापुरुषके लिए शोकप्रकाश किया गया था।

तिलक वास्तवमें भारतमाताके ललाटके उज्ज्वल तिलक थे। आपके चरित्रसे हमें असाधारण दृढ़ता, आत्यन्तिक सरलता, अकृत्रिम देशभक्ति और समाजनिष्ठा की शिक्षा मिलती है। आपकी मृत्युसे जातीय-जीवनको जो क्षति हुई है, सहजमें उसकी पूर्ति न हो सकती।

तिलकक (सं० पु०) काश्मीरके एक राजाका नाम। (राजतर० ८।१६६८)

तिलककामोद (सं० पु०) एक रागिणीका नाम। यह कामोद और विधिव अथवा कान्हड़ा कामोद और पठ योगसे मिल कर बनी है।

तिलकट (सं० क्लो०) तिलस्य रजः तिल-कटच्। तिलका चूर्ण।

तिलकत्वक् (सं० स्त्री०) तिलका छिलका।

तिलकना (हिं० क्रि०) ताल आदिकी मट्टीका सूख कर दरारके साथ फटना।

तिलकमुद्रा (सं० पु०) चन्दन आदिका टीका और शङ्खचक्र आदिका छापा। इसे भक्त लोग लगाते हैं।

तिलकराज (सं० पु०) काश्मीरके एक राजाका नाम। (राजतर० ७।३१९)

तिलकल्क (सं० पु०) तिलस्य कल्कः ६-तत्। तिलकुट, तिलका चूर्ण।

तिलकल्कज (सं० त्रि०) तिलकल्कात् जायते तिल कल्क-जन-ड। जो तिलके चूर्णसे उत्पन्न हो।

तिलकसिंह (सं० पु०) काश्मीरके एक राजाका नाम। (राजतर० ८।१४३२)

तिलकहार (हिं० पु०) वह मनुष्य जो कन्याकी ओरसे वरको तिलक चढ़ानेके लिये जाता है।

तिलका (सं० स्त्री०) तिलमिव बोजकोष इव कायति तिल-कै-क टाप्। १ हारभेद, कण्ठमें पहननेका एक आभूषण। २ शरीरमें गन्धादि द्वारा तिल पुष्पके आकारका चिह्न। ३ छन्दोभेद, एक वृत्तका नाम जिसके प्रत्येक चरणमें ६ अक्षर होते हैं।

तिलकालक (सं० पु०) तिल इव कालकः कृष्णवर्णः। १ देहस्थित तिल, शरीर परका तिलके आकारका काला चिह्न, तिल। इसके संस्कृत पर्याय—तिलक, कालक, पिप्लु और जड़ुल। जिसका परिमाण तिलके समान तथा वर्ण काला होता और जिसको वृद्धि नहीं होती और जो कष्टदायक नहीं होता, उसे तिलकालक कहते हैं। वात पित्त और कफकी अधिकता होनेसे यह तिल उत्पन्न होता है। २ रोगविशेष। इसका वर्ण काला अथवा विचित्रवर्ण विपाक होता है। इसमें पुरुषकी इन्द्रिय पक जाती है और उस पर काले काले दागसे पड़ जाते हैं और थोड़े दिनके बाद मांस गल कर गिरने लगता है। ३ तिलयुक्त व्यक्ति, वह मनुष्य जिसके तिल हो।

तिलकाश्रय (सं० पु०) तिलकस्य आश्रयः ६-तत्। वह स्थान जहां तिलक लगाया जाता है, ललाट।

तिलकिट्ट (सं० क्लो०) तिलस्य किट्टं ६-तत्। तिलमल, तिलकी खली।

तिलकित (सं० त्रि०) तिलकोऽस्य सञ्जातः तारकादित्वादितच्। अङ्कित, छापा हुआ।

तिलकी (सं० त्रि० तिलकमस्त्यस्य तिलक इनि। तिलकयुक्त, जो तिलक लगाता हो। तिलक धारण कर सब काम करना चाहिये।

तिलकुट (हिं० पु०) कुटे हुए तिल जो खांड़की चाशनी में पगे हों।

तिलकेश्वरतीर्थ (सं० क्लो०) तिलकेश्वर नामका तीर्थ। शिवपुराणोक्त एक तीर्थका नाम।

तिलखलि (सं० स्त्री०) तिलस्य खलिः ६-तत्। तिलकी खली।

तिलखा (हिं० पु०) एक चिड़ियाका नाम।

तिलङ्ग—एक प्राचीन जनपद। स्कन्दपुराणके कुमारिकाखण्डमें इस जनपदका उल्लेख है। मालूम होता है कि यह त्रिकलिङ्ग शब्दका अपभ्रंश है। अभी यह तैलङ्ग नामसे मशहूर है। तेलंग देखो।

तिलपटा (हिं॰ पु॰) एक प्रकारका लोहुर।

तिलचावली (हिं॰ स्त्री॰) १ तिल और चावलकी खिचड़ी। (वि॰) जो कुछ सफेद और कुछ काला हो।

तिलपिष्टपाक (सं॰ पु॰) तिलपिष्टानि तिलकल्कं पिच्छि-लानि पचति पच अनुडो॰ अप। तैलकल्क।

तिलचूर्ण (सं॰ क्ली॰) तिलस्य चूर्णं ६-तत्। चूर्णीकृत तिल, तिलकुट। पर्याय—तिलकल्क, पलल और पिष्टक है इसका गुण रूक्ष पित्त दृढ़ वात और पुष्टिकारक है।

तिलवृक (सं॰ पु॰) ईहामृग बोक, भेड़िया।

तिलज (सं॰ क्ली) तैल, तेल।

तिलभट्टा (सं॰ स्त्री॰) तिलमयूरी, तिलका ॥ वर।

तिलगन्धा (सं॰ स्त्री॰) तिलवासिनी धान्य एक प्रकारका धान जिसकी सुगन्ध तिल जैसी होती है।

तिलयुगा—युक्तप्रदेशमें प्रवाहित एक नदी। यह नैपाल की तराईसे निकल आजमगढ़ जिला होती हुई तिल केश्वर ग्रामके निकट दक्षिणपूर्वकी ओर घूमकर नरहरी परगनेमें प्रविष्ट हुई है। फिर चलकर नारायणपुर भागलपुर जिलेमें प्रवेश कर थोड़ा पूर्वकी ओर जा कर भोगावती ग्रामके निकट कोसी नदीमें मिली है। इस नदीमें बारहो मास नाव आती जाती है। इससे कई एक शाखा नदी और नाले निकले हैं।

तिलहना (हिं॰ क्रि॰) बेचैन होना, विकल रहना।

तिलड़ा (हिं॰ वि॰) १ जिसमें तीन लड़ें हों। (हिं॰ पु॰) २ सुनार मलमीनाकारोंका एक छेनी इससे वे टेढ़ी लकीर या नक्काशीदार गहनाएँ बनाते हैं।

तिलड़ी (हिं॰ स्त्री॰) तीन लड़ोंकी एक माला। इसके बीचमें सुगनी लटकती है।

तिलतण्डुलक (सं॰ क्ली॰) तिलस्य तण्डुल इव आकृति र्यत्र। १ आलिङ्गन। (पु॰) तिलश्च तण्डुलश्च, द्वन्द्व। १ मिश्रित तिल, बिना भूसीका तिल। २ तिलमिश्रित तण्डुल, तिल मिला हुआ चावल।

तिलवेला (सं॰ स्त्री॰) तिल इव वेलति गुणादि तिल अच टाप्। कालाम्बिक, एक प्रकारकी बेल।

तिलतैल (सं॰ क्ली॰) तिलस्य तैलं तिल-तैलम्। तैले तैलम् इति सुश्रुत मार्कण्डेयका तैलम्। तिलतैल, तिलका तेल। सब प्रकारके तैलोंमें तिलका तेल उत्तम है।

इसके गुण—कषाय स्वादु, उष्ण, पित्तकृत् वात-नाशक श्लेष्मवर्द्धक तीक्ष्ण व्यवायी, कुष्ठ और विकार नाशक कृमि और गर्भाशयशोधक।

छिन्न, भिन्न, च्युत दृष्ट, मथित, भग्न, अग्निदग्ध, अस्थिभग्न, विद्ध, क्षाराग्निदग्ध, भग्न, अस्थिच्युत इन सब कामोंमें तिलका तेल हितकर है। (भावप्र॰)

तिलका तेल आग्नेय, उष्ण तीक्ष्ण, मधुर पुष्टिकर बलकर, व्यवायी सूक्ष्म, विशद, गुरु, सारक, विकाशी, लेखनकर, मेधा, शरीरकी कोमलता, और मांसको दृढ़ करनेवाला, वर्णकर, बलकर, दृष्टि शक्तिका नाशक मूत्ररोधक मेदनकर तिक्त, कषाय, पाचक, वातश्लेष्मनाशक कृमिघ्न योनिशूल, शिरःशूल और कर्णशूलमें शान्तिकर, गर्भाशयका शोधक, छिन्न भिन्न, विद्ध, विद्ध, च्युत, मथित क्षत भग्न स्फुटित क्षारदग्ध, अग्निदग्ध विश्लिष्ट दारित, अभिहत, दुर्भग्न और व्याघ्रादि दष्ट इन सब कामोंमें तिलका तेल बहुत हितकर है। (सुश्रुत)

तिलदानी (हिं॰ स्त्री॰) दरजियोंकी सुई, तागा, अंगुस्ताना आदि औजार रखनेकी कपड़ेकी थैली।

तिलदेश्वरतीर्थ (सं॰ पु॰) तिलदेश्वर इति नाम्ना प्रसिद्ध तीर्थ। रेवानदीके तीरवर्ती तीर्थविशेष, एक तीर्थका नाम जो रेवानदीके किनारे अवस्थित है। इसका दूसरा नाम तिलेश्वरतीर्थ है। रेवाखण्ड।

तिलद्वादशी (सं॰ स्त्री॰) द्वादशीभेद। इसको देखो।

तिलधेनु (सं॰ स्त्री॰) तिलनिर्मिता धेनु, मध्यलो॰ कर्मधा॰। विधानपूर्वक तिलनिर्मित धेनु एक प्रकारका दान जिसमें तिलोंकी गाय बना कर दान करते हैं। पद्मपुराणमें लिखा है षोडश आढ़क अर्थात् चौंसठ सेर तिलकी गाय और चार आढ़क अर्थात् सोलह सेर तिलके बछड़ा बनाना चाहिये। उसके ईखके दण्डोंके पैर, फूलोंके दाँत, कस्तूरीकी नाक और गुड़की जीभ होनी चाहिये। इसी तरह तिलधेनु प्रस्तुत होती है। पीछे उसे आगे कलसमें स्थापित कर मन्त्र द्वारा

आच्छादन और पञ्चरत्नोंसे सुशोभित करते हैं। बाद मन्त्रपूत कर दान किया जाता है। तिलधेनु दान करनेसे सब कामना सिद्ध होती है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं।

तिलनामा (सं० स्त्री०) एक प्रकारका धान।

तिलनालमूति (सं० स्त्री०) तिलका चार। तिलकी गाछ।

तिलनी (सं० स्त्री०) धान्यविशेष, एक प्रकारका धान।

तिलपट्टी (हिं० स्त्री०) खांड या गुड़में पगे हुए तिलोंका कतरा।

तिलपपड़ी (हिं० स्त्री०) तिलपट्टी देखो।

तिलपर्ण (सं० पु०) तिलस्येव पर्णं यस्य। १ श्रीवेष्ट सरलका गोंद। (क्ली० २ रक्तचन्दन। ३ तिल पेड़का पत्ता।

तिलपर्णिका (सं० स्त्री०) तिलपर्णी स्वार्थे कन् टाप् च रक्तचन्दन।

तिलपर्णी (सं० स्त्री०) तिलस्येव पर्णोऽस्याः ङीप्। तिलपर्णी नदी आकरोऽस्य नाः इति अच् ङीच्। १ रक्तचन्दन। २ नदीविशेष, एक नदीका नाम।

तिलपिच्चट (सं० क्ली०) तिलस्य पिष्टकं पृषोदरादित्वात साधु। तिलपिष्टक, तिलोंकी पीठी।

तिलपिञ्ज (सं० पु०) निष्फलस्तिलः तिल-पिञ्ज। निष्फल तिलवृक्ष, वह तिलका पौधा जिसमें फूलफल नहीं लगते, वंध्या तिलका पेड़।

तिलपिण्डी (सं० स्त्री०) तिलकल्क, तिलका चूर्ण।

तिलपिष्टक (सं० क्ली०) तिलस्य पिष्टकं ६-तत्। तिलपिच्चट, तिलोंकी पीठी। इसका पर्याय पलल है। गुण—यह बलकृत्, वृष्य, वातघ्न, कफ, पित्तकृत्, बृंहण, गुरु, स्निग्ध, मूत्राधिक्यकारक और निवर्त्तक है।

तिलपीड़ (सं० पु०) तिलं पीड़यति पीड़-अच्। तैलिक, तेली।

तिलपुष्प (सं० क्ली०) तिलस्य पुष्पं ६-तत्। १ तिलका फूल। २ व्याघ्रनखवृक्ष, बघनखी।

तिलपुष्पक (सं० पु०) तिलस्येव पुष्पमस्य कप्। १ विभीतकवृक्ष, बहेड़ा। २ तिलका फूल। ३ नासिका, नाक। इसकी उपमा तिलके फूलसेकी जाती है। इसलिये नाककी तिलपुष्प कहा गया है।

तिलपेज (सं० पु०) निष्फलस्तिलः तिल-पेज। १ निष्फल तिल, वंध्या तिलका गाछ। २ श्वेततिल, सफेद तिल।

तिलबटा (हिं० पु०) चौपायोंका एक रोग। इसमें गलेके भीतरके मांसके बढ़ जानेसे वे कुछ खा-पी नहीं सकते।

तिलबर (हिं० पु०) एक प्रकारका पक्षी।

तिलभार (सं० पु०) देशभेद, एक देशका नाम जिसका विवरण महाभारतमें आया है।

तिलभाविनी (सं० स्त्री०) तिलं भावयति तिल भू-णिनि स्त्रियां ङीप्। तैलभाविनी, चमेलीका पेड़।

तिलभुग्गा (हिं० पु०) तिलकुट।

तिलभृष्ट (सं० क्ली०) तिलेन भृष्टं ६ तत्। तिल द्वारा भर्जित, तिलके साथ भूना या पकाया हुआ। महाभारतमें लिखा है कि तिलके साथ भुनी हुई वस्तुका खाना निषिद्ध है। स्मृतियोंमें तिल मिला हुआ पदार्थ बिना देवार्पित किए खाना वर्जित है।

तिलभेद (सं० पु०) खाखस, पोस्तेका दाना।

तिलमय (सं० वि०) तिलस्य विकारः असंज्ञायां मयट्। तिलका विकार।

तिलमयूर (सं० पु०-स्त्री०) तिलपुष्पचिह्नितः मयूर मध्यलो०। मयूरभेद, एक प्रकारका मोर जिसके शरीर पर तिलके समान काले चिह्न होते हैं।

तिलमापट्टी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी कपास जो दक्षिणमें विलारी और करनूलमें होती है।

तिलमिल (हिं० स्त्री०) चकाचौंध, तिरमिराहट।

तिलमिलाना (हिं० क्रि०) तिरमिराना देखो।

तिलमिश्र (सं० वि०) तिलेन मिश्रः ३-तत्। जिसमें तिल मिला हो।

तिलमोदक (सं० क्ली०) तिलोंका लड्डू, तिलवा।

तिलरस (सं० पु०) तिलस्य रसः ६-तत्। तिलका तेल।

तिलरा (हिं० पु०) कसेरेकी एक छेनी जिससे वे टेढ़ी लकीर बनाते हैं।

तिलवट (हिं० पु०) तिलपट्टी, तिलपपड़ी।

तिलवन (हिं० स्त्री०) जंगलों और बगीचोंमें मिलनेवाला एक पौधा। इसके दो भेद हैं—एक सफेद फूलका, दूसरा नीलापन लिये पीले फूलका। इसके बीज, फूल आदि दवाके काममें आते हैं। इससे गरम और वातगुल्म आदि जाते रहते हैं।

तिलवा (हि॰ पु॰) तिलीका लड्डू ।

तिलवासिनी (स॰ पु॰-स्त्री॰) एक प्रकारका धान जिसकी सुगन्ध तिलकी होती है ।

तिलव्रती (स॰ त्रि॰) तिलस्य व्रतमस्त्यस्य तिल-व्रत-इनि । तिलव्रतधारी, जो तिलव्रतका अनुष्ठान करता है ।

तिलशकरी (हि॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी मिठाई जो तिल और चीनीके मेलसे बनाई जाती है, तिलपपड़ी ।

तिलशस् (स॰ अव्य॰) तिल तिल तत् परिमित अर्थे तोभि प्रमाणेत्वात् बीप्सायां कारकार्थे शस् । धीरे धीरे, थोड़ा थोड़ा करके ।

तिलशालि (स॰ पु॰ स्त्री॰) धान्यविशेष, एक प्रकारका सुगन्धित धान ।

तिलशैल (स॰ पु॰) तिलनिर्मितः शैलः मध्यमलो॰ कर्म्मधा॰ । दान करनेके लिये तिलकल्पित शैल । दानके लिए दश पर्वत कल्पित हुए हैं उनमेंसे तिलशैल एक है । तिलशैलके दो भेद हैं, पहला दश तला तिलमय प्रधान भेद, दूसरा तिलशैलके पश्चात् कल्पित तिलमय विष्कम्भादि । इस शैलदानका विधान इस प्रकार लिखा है—

अयन, विषुव, व्यतीपात, दिनक्षय युगादितीया, अमा वस्या विवाह उत्सव, यज्ञ, द्वादशी, शुक्लदिन आदिमें यह शैलदान करना पड़ता है । यथाशक्ति इस शैल-के दान करनेसे मनुष्य सनातन विष्णुलोकको जाते हैं ।

दश द्रोण परिमित तिलका जो शैल कल्पित होता है, वह उत्तम, पाँच द्रोणका मध्यम और तीन द्रोणका अधम माना गया है ।

इस तरह यथाशक्ति १०,५ या ३ द्रोण द्वारा शैलमें शैल बनाते हैं ; पीछे इस मन्त्रसे आमन्त्रण करना पड़ता है ।

मन्त्र— 'यस्मात् मधु वधे विष्णोर्देहस्वेदसमुद्भवाः ।

तिलाः कुशाश्च माषाश्च तस्माच्छं नो भवत्विह ।

हव्ये कव्ये च यस्माच तिलाः एवाभिरक्षणम् ।

भवादुद्धर शैलेन्द्र तिलाचल नमोऽस्तु ते ॥'

इस मन्त्रसे आमन्त्रण कर ब्राह्मणको दान करना चाहिये । इससे विष्णुलोकको प्राप्ति होती है और पुनर्जन्म नहीं होता । तिलविष्कम्भादि करनेमें इसी नियमसे तिलपर्वतको अतीव सुगन्धित पुष्प, सुवर्ण, पिप्पल और हिरण्मय हंस-युक्त बनाना पड़ता । पीछे पूर्वोक्त रूपसे यथाविधि दान करते हैं । (मत्स्यपु॰ ८३।८२ अ॰)

तिलशुद् (स॰ त्रि॰) तिलं शुदति शुद-शम् मम् । तिलको पेरनेवाला तेली ।

तिलशौच (स॰ पु॰) तिलस्य शौच, ६ तत् । तिलका तेल ।

तिलस्म (हि॰ पु॰) १ इन्द्रजाल, जादू । २ चमत्कार, करामात ।

तिलस्मी (हि॰ वि॰) इन्द्रजाल सम्बन्धी, जादूका ।

तिलहन (हि॰ पु॰) एक प्रकारका पौधा । इसके बीजोंसे तेल निकलता है ।

तिलहर—१ युक्तप्रदेशके शाहजहांपुर जिलेकी एक तहसील । यह अक्षा॰ २७ ५१ से २८ १९´ उ॰ और देशा॰ ७८ २० से ७८ ११´ पू॰में अवस्थित है । क्षेत्र-फल ३१८ वर्ग मील और लोकसंख्या प्रायः २२७०१९ है । इसमें तिलहर, सुदाय च और कटरा नामके तीन शहर और ६९८ ग्राम लगते हैं । इस तहसीलमें रामगङ्गाके बहनेसे यहांकी मट्टी बहुत उपजाऊ हो गई है ।

२ उक्त तहसीलका एक शहर । यह अक्षा॰ २७ ५८ उ॰ और देशा॰ ७९ ४४´ पू॰ शाहजहांपुरसे ६ कोस पश्चिममें अवस्थित है । लोकसंख्या प्रायः १८०८९ है । किसी समय यह शहर चारों ओर ६ टीकी दीवारसे घिरा था अभी उसका केवल भग्नावशेष रह गया है । सिपाही विद्रोहके समय यहाँके सम्भ्रान्त मुसलमानगण विद्रोही हुए थे, इसीसे उनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली गई । अब यहाँ अभी मुसलमान बहुत थोड़े हैं । यह शहर गुड़के व्यवसायके लिए प्रसिद्ध है ।

तिला (हि॰ पु॰) लिङ्गलेप, वह तैल जो लिङ्गेन्द्रिय पर उसकी शिथिलता दूर करनेके लिए लगाया जाय ।

तिलाक (हि॰ स्त्री॰) स्त्री पुरुषके सम्बन्धका टूटना । ईसा इयों और मुसलमानोंमें यह प्रचलित है । वे अपनी विवा हिता स्त्रीसे एक विशेष नियमके अनुसार सम्बन्ध तोड़ देते हैं । सम्बन्ध टूट जाने पर स्त्री और पुरुष दोनोंको पृथक् पृथक् विवाह करनेका अधिकार हो जाता है ।

तिलाद्रितत्त्व (स॰ पु॰) तिलवत् अद्रित न यस्य, बहुव्रो॰ । ते बबन्द ।

तिलाञ्जली (सं० स्त्री०) मृतक संस्कारका एक अङ्ग। मुरदेके जल चुकने पर स्नान करके यह क्रिया की जाती है। इसमें हाथकी अङ्गुलियोंमें जल भर उसमें तिल डाल कर उसे मृतकके नामसे छोड़ते हैं।

तिलान्न (सं० क्लो०) तिलमिश्रितं अन्नं, मध्यलो० कर्मधा०। कृशर, तिलकी खिचड़ी।

तिलपत्या (सं० स्त्री०) तिलस्येव क्षुद्रः अपत्य वीजमस्याः, बहुव्री०। कृष्णजीरक, काला जीरा।

तिलाम्बु (सं० क्लो०) तिलमिश्रितः अम्बु, मध्यपदलो० कर्मधा०। तिलकोदक, तिल मिला हुआ पानी।

तिलार्द्ध (सं० क्लो०) तिलस्य अर्द्धं, ६-तत्। तिलका आधा, बहुत छोटा पदार्थ।

तिलावा (हिं० पु०) १ बड़ा कुआँ। २ रातके समय कोतवाल आदिका शहरमें गश्त लगाना, गौंद।

तिलित्स (सं० पु०) गोनस सर्प, एक प्रकारका साँप।

तिलिन—ऊपर ब्रह्मके पकोक्कु जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २१° २७´ और २१° ५७´ उ० तथा देशा० ८३° ५८´ और ८४° २२´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ४८८ वर्गमील और लोकसंख्या १०८४३ है। इसमें कुल १२० ग्राम लगते हैं। शहरमें माव नामकी नदी प्रवाहित है।

तिल्लिया (हिं० पु०) मरपत।

तिली—बङ्गालकी एक प्रभावशाली हिन्दू जाति। इस जातिमें धनाढ्य और जमींदारोंकी संख्या काफी है। भारतवर्षके अन्यान्य प्रदेशोंमें जो तेली जातिके लोग रहते हैं, उनके साथ इनके आचार-व्यवहार और सामाजिक सम्मानमें बिलकुल सौसादृश्य नहीं है; इसलिए इसको हम स्वतन्त्र जाति कह सकते हैं।

तिली जाति कृषि, वाणिज्य, व्यवसाय, महाजनी आदिका कार्य कर जीविकानिर्वाह करती है।

शास्त्रोंके प्रति दृष्टिपात करने पर भी हमें दीख पड़ेगा, कि तिल तेली और तैलकारक जातिकी उत्पत्तिमें कितना अन्तर है। ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें तैलिक जातिकी उत्पत्ति-विषयमें इस प्रकार लिखा है—

"गोपालिन्या वारजीवात् तैलकस्य च सम्भवः।"

अर्थात् वारुजीवि वा तमोलीके औरस और ग्वालिनके गर्भसे तैलिक जातिकी उत्पत्ति हुई है। किन्तु तेलीके सम्बन्धमें इस प्रकार लिखा है—

"कुम्भकारश्च वीर्येण सद्यः कोटकयोषितः।
बभूव तैलकाग्थ कुटिलः पतितो भुवि॥"

अर्थात् तैलकार वा तेलीजाति कुम्भकारके औरस और राज (वा संगतराश)के गर्भसे उत्पन्न हुई है, जो कि कुटिल और पतित है।

इससे मालूम होता है कि तैलकार वा तेली जाति हिन्दू-समाजमें बहुत समयसे पतित है। परन्तु तैलिकगण किसी शास्त्रमें शङ्करोंमें मध्यम श्रेणीके और किसी शास्त्रमें उत्तम श्रेणीके माने गये हैं।

पराशरपद्धतिमें तिलियोंके सामाजिक अवस्थानके बारेमें इस प्रकार कहा गया है—

"गोपो माली तथा तैली तन्त्र मोदको बारुजिः॥
कुलालः कर्मकारश्च नापितो नवशायकाः।
एते सत्शूद्रजाताश्च नवशाखा प्रकीर्तिताः॥"

इस प्रमाणसे तैलिक तथा तैली जाति एक हो सकती है। तैलिक जातिको बृहद्धर्मपुराणमें एक स्थल पर तौलिक कहा गया है, जिसका स्थान उत्तम सङ्करोंमें तथा गुवाकविक्रय-जीविकोंमें निर्दिष्ट हुआ है। ब्रह्मवैवर्तपुराणके ब्रह्मखण्डमें भी लिखा है,—

"तासां सङ्करजातेन बभूवुर्वर्णसङ्कराः।
गोपनापितभीलाश्च तथा मोदककूवरौ॥
ताम्बुलीवर्णकारौ च तथा वणिजजातयः।
इत्येवमाद्या विप्रेन्द्र सच्छूद्राः परिकीर्तिताः॥"

इस श्लोकसे तोल वा तिली जाति सत्शूद्र प्रमाणित होती है।

ऊपर जितने भी संस्कृत वचन उद्धृत किये गये हैं, उनमें एक भी ऐसा नहीं जिसे हम प्राचीन शास्त्र-सम्मत कह सकें। पराशरपद्धति अथवा परशुराम वा भार्गवरामकृत जातिमालाकी दुहाई दे कर जितनी भी वर्णसङ्करोत्पत्तिकी कथाएं कीर्तित हैं, वे सब बङ्गालकी निजस्व हैं; बङ्गालके बाहर कहीं भी उनका प्राचीन अस्तित्व नहीं मिलता। बंगालके नाना स्थानोंसे उक्त पद्धति वा जातिमालाकी जितनी भी पोथियां निकली हैं, उनमेंसे कोई भी सौ वर्षसे ज्यादा पुरानी नहीं है। किसी भी महापुराण वा उपपुराणोंकी सूचीमें बृहद्धर्मपुराणका नाम नहीं मिलता। अथवा यों कहिए, कि प्राचीन स्मृतिके-

लिकम्में ब्रह्मवैवर्तपुराणके वचन उद्धृत नहीं हुए। कलकत्तेमें विभिन्न स्थानोंसे जितने भी ब्रह्मवैवर्तपुराण मुद्रित हुए हैं उनके उत्तरखण्डमें (शेषभागमें) १९वें और १०वें अध्यायमें जो वर्णसङ्करप्रकरण वर्णित हुआ है, वह एक अपूर्व वस्तु ही मालूम पड़ती है। जिन धर्मसूत्र और स्मृतिसंहिताओंमें वर्णसङ्करका प्रसङ्ग है, उनमें सर्वत्र अनुलोम और प्रतिलोम सङ्करोंका पृथक् पृथक् उल्लेख किया गया है, परन्तु ब्रह्मवैवर्तपुराणमें अनुलोम और प्रतिलोम दोनों प्रकारकी १० सङ्करजातियोंको श्रेष्ठ वर्णसङ्कर कहा गया है। आश्चर्यकी बात है कि ब्रह्मवैवर्तपुराणके पाठभेदसे तैलिक वा तौलिक जातिको एक मान लेने पर भी उक्त पुराणको 'वैश्याद् विप्रकन्यायां जातौ ताम्बूलितौलिकौ।' (१०।११) अर्थात् 'वैश्यके औरस और ब्राह्मणकन्याके गर्भसे ताम्बूलि और तौलिक जाति उत्पन्न हुई है' इस प्रकार उत्पत्तिको मान कर ताम्बूलि और तौलिक जातिको किसी प्रकार भी श्रेष्ठ वर्णसङ्करोंमें नहीं लिया जा सकता। ऐसी दशामें उन्हें प्रतिलोमजात हीन वर्णसङ्कर माना जा सकता है।

इसमें सन्देह नहीं कि ब्रह्मवैवर्तपुराणके ब्रह्मखण्डका १०वां अध्याय, जिसमें वर्णसङ्कर जातिमाला कीर्तित हुई है वह भी नितान्त आधुनिक समयकी रचना है। उक्त अध्यायमें यह श्लोक मिलता है—

"म्लेच्छात् कुविन्दकन्यायां जोला जातिर्बभूव ह।" (१०।१२१)

अर्थात् म्लेच्छ वा मुसलमानके औरस और कुविन्द-कन्याके गर्भसे 'जोला' जाति उत्पन्न हुई है।

'जोला' शब्द केवल बङ्गालमें ही प्रचलित है, बङ्गालको छोड़ कर उत्तरपश्चिम प्रान्तोंमें 'जुलहा' कहते हैं। बंगालमें मुसलमानोंके आनेके बाद, उनसे सम्बन्धसे यह जुलहा जातिकी उत्पत्ति हुई है और इसीलिए ब्रह्मवैवर्तपुराणके ब्रह्मखण्डमें वर्णित वर्णसङ्करजातिमालाका अंश आधुनिक सिद्ध होता है। ब्राह्मणकुलमें "राढ़ीय" और "वारेन्द्र" श्रेणीका उल्लेख (प्रकृतिखण्ड ५० अ०)से यह बात प्रमाणित होती है कि प्रचलित ब्रह्मवैवर्तमें बहुतसे श्लोक ऐसे भी हैं जो पीछेसे ब्राह्मणोंने बना लिए हैं। इसलिए पूर्वोद्धृत श्लोकोंके अनुसार 'तिली' 'तैलिक' वा 'तौलिक' और 'तैलकार' जातिकी उत्पत्तिका निर्णय करना आवश्यक नहीं है। जातिके विषयमें उद्धृत श्लोक किसी विशेष उद्देश्य साधनके लिए आधुनिक समयमें रचे गये हैं, इसमें कोई भी सन्देह नहीं है।

बङ्गालमें साधारणतः तिली, तेली और 'कोलू' ये तीन जातियां पाई जाती हैं। जिनमेंसे तिली जातिका आचार-व्यवहार उच्चश्रेणीके हिन्दूओंके समान है। उपनयनके सिवा इस जातिमें अन्य सब संस्कार शुद्ध वा गौण रूपसे प्रचलित हैं। इस समाजमें विधवा विवाह प्रचलित नहीं है, किन्तु विधवाएं यथारीति ब्रह्मचर्यका पालन करती हैं। तिली और तेली जातिमें परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है। तेली जातिका सामाजिक आसन तिली जातिसे बहुत नीचे है। कभी कभी तेली जातिका पानी नहीं चलता, परन्तु तिली जातिका पानी सर्वत्र और उच्च ब्राह्मण भी ग्रहण करते हैं। उक्त तिली और तेली जातिकी अपेक्षा 'कोलू' जातिकी सामाजिक अवस्था और भी हीन है। कहीं भी इसका पानी नहीं चलता, सर्वत्र ही यह अस्पृश्यजातिकी तरह मानी जाती है। बङ्गीय शास्त्रकारोंने तिलीजातिका 'तैलिक' नामसे तथा 'कोलू' जातिका 'तैलकार' नामसे उल्लेख किया है, ऐसी दशामें पराशर वा पराशरपद्धति ब्रह्मवैवर्त वा ब्रह्मवैवर्तपुराणमें जो तैलिकजातिका प्रसङ्ग है उसे हम तिली मान सकते हैं और जहां तैलकार जातिका प्रसङ्ग है, उसे "कोलू"। यह पहले ही लिखा जा चुका है कि ब्रह्मवैवर्तपुराणके 'तैलिक'को जगह 'तौलिक' भी पाठ है। और भी देखिये—

"तौलिकेभ्यश्च लोकानां गुवाकानि ददौ ह।" (१५।१४)

अर्थात् तौलिकको गुवाक (सुपारी) विक्रय करनेके लिए आज्ञा दी गई थी। यही किसी किसी मुद्रित पुस्तकमें तौलिक पाठ रहनेसे कोई कोई ऐसा समझते हैं कि तिली जातिमें कोई कोई सुपारीका रोजगार करते हैं, इसलिये तिली और तौलिक दोनों एक ही जाति हैं। परन्तु यह उनका भ्रम है। तौली वा तौलिक शब्दका आभिधानिक अर्थ चित्रकर (अर्थात् जो तूली वा कूंचीसे चित्रादि द्वारा जीविकानिर्वाह करे) है। आधुनिक ब्रह्मवैवर्तपुराणमें तौलिक जातिका गुवाक-

व्यवसाय निर्दिष्ट किया गया है; परन्तु जरा विचार करनेसे सहज ही मालूम हो सकता है कि सिर्फ तिली जातिमें ही नहीं, बल्कि ताम्बूलि, बारुई, गन्धवणिक् आदि सभी जातियोंमें बहुत समयसे गुवाक वा सुपारीका व्यवसाय प्रचलित है। फिलहाल तिली जातिका कोई निर्दिष्ट व्यवसाय ही नहीं है। यह पहले ही कहा जा चुका है कि यह जाति कृषि, वाणिज्य, व्यवसाय, महाजनी आदि द्वारा जीविका निर्वाह करती है। यह कहना फिजूल है, कि शास्त्रानुसार उपर्युक्त कार्य ही वैश्यजातिकी उपजीविकाके लिए योग्य हैं।

तिली शब्दका मुख्यार्थ तिलोत्पादनकारी है। अमरकोषके वैश्यवर्गमें इस प्रकार लिखा है—

"तिल्य' तैलीनवन्मापोमाण्युमंगाद्‌द्विरूपता।" (२।९।७)

अर्थात् तिल्य और तैलीन शब्दसे तिलोत्पादक (खेतादि) का बोध होता है। तिली शब्द 'तिल्य' और 'तैलीन' शब्दका एकार्थवाची है। ऐसी दशामें तिली शब्द भी वैश्यवर्गमें पड़ता है।

महाभारत शान्तिपर्वमें तुलाधार वैश्य और जाजलि संवादमें लिखा है—

"विक्रीणतः सर्वरसान् सर्वगन्धांश्च वाणिज।
वनस्पतीनोषधीयाश्च तेषां मूलफलानि च ॥
अध्यगा नैष्ठिकीं बुद्धिं कुतस्त्वामिदमागतम्।
एतदाचक्ष्व मे सर्वं निखिलेन महामते ॥" (२६१।२।३)

जाजलिने तुलाधारसे पूछा—'हे वणिक्‌पुत्र! तुम सर्व प्रकार रस, सर्व प्रकार गन्ध, वनस्पति, ओषधि और फल-मूल बेचा करते हो, तुमने किस प्रकार ऐसा निश्चय बुद्धि और ज्ञान प्राप्त किया है? हे महामते! मुझे सब समझा दो।'

इस प्रकार विस्तृतरूपमें धर्मतत्त्व प्रकट करते हुए तुलाधारने कहा—

"ये च छिन्दति वृषणान् ये च भिन्दति नस्तान्।
वहन्ति महतो भारान् बध्नन्ति दमयन्ति च ॥३७॥
हत्वा सत्त्वानि खादन्ति तान् कथं न विगर्हसे ॥३८॥
पंचेन्द्रियेषु भूतेषु सर्वं वसति दैवतम्।
आदित्यश्चन्द्रमा वायुर्ब्रह्मा प्राणः क्रतुर्यमः ॥४०॥
तानि जीवानि विक्रीय का मृतेषु विचारणा।
अजोऽग्निर्वरुणो मेषः सूर्योऽश्वः पृथिवी विराट् ॥४१॥
धेनुर्वत्सश्च सोमो वै विक्रीयैतन्न सिद्ध्यति।
का तैले का घृते ब्रह्मन् मधुन्यप्यौषधेषु वा ॥४२॥"

अर्थात्—'जो गो-समूहका मुष्कमोचण और नासिका भेदन कर उनको गुरु-भारसे प्रपीड़ित, वद्ध और दमित करते हैं तथा जो नाना प्रकारकी जीवहिंसा कर मांस भक्षण करते हैं, उनकी क्यों न निन्दा की जाय? पञ्चेन्द्रिय-विशिष्ट जीवमात्रमें ही सूर्य, चन्द्र, वायु, ब्रह्मा, प्राण, क्रतु और यम वास करते हैं; सुतरां जीवदेह विक्रय द्वारा जो अपनी देह त्याग करते हैं, वे भी क्या निन्दनीय नहीं हैं? छागमें अग्नि, मेषमें वरुण, अश्वमें सूर्य, पृथिवीमें विराट् तथा धेनु और वत्समें चन्द्र अवस्थान करते हैं; इसलिए जो व्यक्ति इनको विक्रय करते हैं, उन्हें कभी भी सिद्धि प्राप्त नहीं होती। परन्तु तैल, घृत, मधु और औषध-विक्रय द्वारा किसी पापस्पर्शकी सम्भावना नहीं है।' उद्धृत विवरणसे धार्मिक वैश्यका क्या क्या कर्तव्य है? सो मालूम हो जाती है।

मनुसंहिताके दशवें अध्यायमें लिखा है—

"अपः शस्त्रं विषं मांसं सोमं गन्धांश्च सर्वशः।
क्षीरं क्षौद्रं दधि घृतं तैलं मधु गुडं कुशान् ॥"

अर्थात्—जल, शास्त्र, विष, मांस सोमवल्ली, सर्व प्रकार गन्ध, दुग्ध, चीर, दधि, घृत, गुड़, तैल, मधु और कुश इन वस्तुओंको ब्राह्मण नहीं बेच सकता; यह वैश्यके लिए पालनीय है। परन्तु आपद्‌कालमें ब्राह्मण भी उक्त वैश्यके व्यवसायको ग्रहण न कर सकता है।

अब देखा जाता है कि अमरकोष, महाभारत और मनुसंहिताके अनुसार तिलोत्पादन, तिल और तैल बेचना वैश्यकी उपजीविकामें था; परन्तु गाय वा बैलका अण्डकोष छेदन और नासिका भेदन निन्दित समझा गया है। कोलू जाति, कोल्हूमें जुत कर बिना सङ्कोचके काम करेगा इस खयालसे, बैलका मुष्क छेदन करती है और इसी निन्दितकर्मके द्वारा वह हिन्दू-समाजमें अस्पृश्य एवं पतित समझी जाती है। तेलीजाति ऐसा हीन काम न करने पर भी चक्रमें जोत कर बैलको कष्ट देती है; इसलिए वह कोलूकी तरह अतिहीन न होने पर भी विपरीत आचरण द्वारा वैश्यसमाजके बाहर

बनो गई है। बङ्गालमें तिली नवशाखमें शामिल किये जाते हैं। तिली जातिमें अब बहुतोंने कोल्हू चलाना छोड़ दिया है और भिन्न व्यवसाय करने लगे हैं। इनमें जो 'घानी' (कोल्हू) चलाते हैं, वे 'घनातिली' कहलाते हैं। यह कहना व्यर्थ है कि उक्त विभिन्न प्रकार कार्योंसे तिली जातिका कोई सम्पर्क नहीं है। सम्भवतः यह जाति बहु पूर्वकालसे तिल उत्पादन और तिलका क्रय विक्रय करती थी और इसीसे इसका नाम तिली पड़ा है।

तिली जातिका वर्त्तमान हिन्दूसमाज पर कितना प्रभाव है, इस बातका निर्णय उनकी शिक्षा दीक्षा और सम्पन्नताकी आलोचना करनेसे ही हो सकता है। तिली लोग आचार-व्यवहारमें ब्राह्मण और कायस्थोंकी तरह सदाचारी होते हैं। स्त्री-जातिका परिश्रम कर जीविका निर्वाह करना सामाजिक नीचताका चिह्न है; किन्तु तिलियोंमें ऐसी स्त्रियां बहुत कम हैं जो कायिक परिश्रम द्वारा जीविकानिर्वाह करती हों।

इस जातिमें हजार पीछे १८ शिक्षित व्यक्ति हैं।

तिली जाति बहुत प्राचीन है, इसमें सन्देह नहीं। बङ्गालमें बहुतोंने सम्मानजनक काम कर कीर्ति प्राप्त की है। पुण्यकीर्ति रानी भवानीने इसी जातिके दयारामको दीवानीका पद दिया था। अंग्रेजोंके अभ्युदयके प्रारम्भ में कासिमबाजार-राजवंशके प्रतिष्ठाता कान्त बाबूने वारेन् हेष्टिंग्स आदि उच्चपदस्थ व्यक्तियोंका सौहार्द प्राप्त किया था। कान्त बाबूके आन्तरिक प्रयत्न और चेष्टासे, हेष्टिंग्सको इस देशमें सुशासन स्थापन करनेमें बहुत कुछ सहायता मिली थी। कहा जाता है कि छत्र समर्थ सुप्रसिद्ध राजा कृष्णचन्द्रने तिलीजातीय एक व्यक्तिको राजमन्त्रीका पद दिया था।

इस युगमें कृष्णदास पाल इस जातिका मुखोज्ज्वल कर गये हैं। आप असामान्य प्रतिभाशाली वक्ता और असाधारण वाग्मी थे। आपका राजनीतिक मतवाद उस समय सर्वत्र आदरके साथ गृहीत होता था। तिली जातिके रामकृष्ण राय भी सुप्रसिद्ध कवि और ग्रन्थकार एवं लोकप्रसिद्ध हो गये हैं। विख्यात कासिमबाजार-के लोकमान्य महाराज सर मणीन्द्रचन्द्र नन्दी बहादुर, जिन्होंने इसी तिलीजातिमें जन्म लिया है, अपनी औदार्य वदान्यता, धर्मप्रियता आदि गुणोंसे बङ्गालके एक आदर्श पुरुषके रूपमें सम्मान पा रहे हैं।

बङ्गालमें तिली जातिके धनाढ्योंकी संख्या काफी है। कासिमबाजार, दीघापतिया, राणाघाट, मयड़ा, शैयदपुर, गोराङ्गपुर, फरासडाङ्गा, फरीदपुर, भाग्यकुल, चुड़ामन आदि स्थानोंके बड़े बड़े धनी जातिके हैं।

तिलित्ती (हिं॰ स्त्री॰) तिलकमकी खूंटी जो धनक चाटीके पर खेतमें रख जाती है।

तिलेदानी (हिं॰ स्त्री॰) तिल्लेदानी देखो।

तिलंगू (हिं॰ स्त्री॰) तेलङ्ग देखो।

तिलोकपति (हिं॰ पु॰) विष्णु।

तिलोकी (हिं॰ पु॰) त्रिलोकी देखो।

तिलोचन (हिं॰ पु॰) त्रिलोचन देखो।

तिलोत्तमा (स॰ स्त्री॰) तिलप्रमाण सर्वरत्नानां यस्यां उत्तमा। स्वर्गकी अप्सराओंमें एक अप्सरा। सुन्द और उप सुन्द नामके दो असुर [redacted] जो देवताओं द्वारा अवध्य और प्रबल पराक्रमी थे। वे दोनों भाई यदि परस्पर न लड़ते, तो उनको मारना होता दुर्घट था। लोकपितामह भगवान् ब्रह्माने इन दोनों असुरोंके विनाशार्थ समस्त रत्नोंका तिल तिल ग्रहण कर तिलोत्तमाकी सृष्टि की थी*।

इसके समान रूपवती रमणी स्वर्गराज्यमें दूसरी न थी। तिलोत्तमाके रूपलावण्यका विषय इस प्रकार वर्णित है—'एक दिन एक असामान्य रूपलावण्यमतीने महादेवको प्रलोभित करनेके लिए उनके चारों ओर घूमना शुरू कर दिया। उस समय महादेव भी उस पर मोहित हो गये और उसको देखनेकी अभिलाषासे, जिस तरफ वह गई, शीघ्रतासे उसी तरफ वे अपना मुंह बनाने लगे। इस प्रकार तिलोत्तमाके दर्शनके लिए महादेवको चार मुंह बनाने पड़े थे §।

* "तिलं तिलं समानीय रत्नानां यद्विनिर्मिता।
तिलोत्तमेति तत्तस्या नाम चक्रे पितामहः॥"
(भारत आदि॰ २११ अ॰)

§ "ततो पार्श्वं वा सुदती मामुपायात् प्रदक्षिणे।
ततस्ततो मुखमभवन्मम देवि विनिर्गतम्॥
तां दिदृक्षुरहं योगाच्चतुर्मूर्तित्वमागतः।
चतुर्मुखश्च संवृत्तो दर्शयन् योगमुत्तमम्॥"
(भारत अनु॰ १४१।२१)

तिलोत्तमाको पानेके लिए सुन्द और उपसुन्दमें परस्पर विवाद हो गया और उसी युद्धमें दोनोंकी मृत्यु हो गई।

तिलोथु—शाहाबाद जिलेके ससेराम उपविभागका एक ग्राम। यह अक्षा० २४° ४८´ उ० और देशा० ८०° ६´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः २५८२ है। यहां शीतलादेवीकी एक प्रतिमूर्त्ति है, जिस पर १३३२ ई० अङ्कित है। इस देवीके कारण यह स्थान बहुत मशहूर हो गया है। प्रति वर्ष कार्त्तिक मासमें यहां एक मेला लगता है जिसमें १००००० मनुष्य एकत्रित होते हैं।

तिलोदक (सं० क्लो०) तिलमिश्रितः उदकं, मध्यलो० कर्मधा०। तिलमिश्रित जल, तिल मिला हुआ पानी।

तिलोरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी मैना।

तिलौंछना (हिं० क्रि०) तेल लगा कर चिकना करना।

तिलौदन (सं० क्लो०) तिलमिश्रितं ओदनं, मध्यलो० कर्मधा०। कृशर, तिलकी खिचड़ी।

तिलौंछा (हिं० वि०) जिसका स्वाद या रंग तेलसा हो।

तिलौरी (हिं० स्त्री०) तिल मिली हुई उरद या मूंगकी बरी।

तिल्पिञ्ज (सं० पु०) तिल पिञ्ज वेदे डित्व। वन्यतिल, वंध्या तिल।

तिल्य (सं० क्लो०) तिलानां भवनं क्षेत्रं वा तिल-यत्। विभाषा तिलमाषोमाभंगाणुभ्यः। पा ५।२।४। १ तिलका खेत। (वि०) २ तिलाय हितं हितार्थे यत्। तिलका हितकर। ३ तिलोत्पादक।

तिल्लना (हिं० पु०) तिलक्का नामक वर्णवृत्त।

तिल्लर (हिं० पु०) १ एक प्रकारका चिड़िया। (वि०) २ सिलड़ा।

तिल्ला (अ० पु०) १ कलावत्तूका नाम। २ पगड़ी, दुपट्टे या साड़ीका कलावत्तूका काम किया हुआ अंचल। ३ वह वस्तु जो शोभा बढ़ानेके लिये किसी चीजमें लगाई जाती है।

तिल्लाना (हिं० पु०) तराना देखो।

तिल्ली (हिं० स्त्री०) पेटके भीतरका एक अवयव। यह मांसकी पोली गुठलीके आकारको होती है और पसलियोंके नीचे पेटको बाईं ओर रहती है। इसमें खाए हुए पदार्थका रस कुछ समय तक रहता है। जब शरीरके रक्त द्वारा यह रस सोख लिया जाता है तो तिल्ली पिचक कर पूर्ववत् हो जाती है लेकिन इसके पहले यह रससे बढ़ी हुई दीख पड़ती है।

ज्वर होने पर यह तिल्ली कुछ बढ़ जाती है, क्योंकि उसमें रस आ जाता है। ऐसी अवस्थामें उसे छेदनेसे लाल लोहू निकलता है। इस रोगमें मनुष्य बहुत कमजोर हो जाता है और मुंह सूखा रहता है। वैद्यकशास्त्रमें लिखा है कि दाहकारक तथा कफकारक पदार्थोंके विशेष सेवन करनेसे लोहू कुपित हो कर कफ द्वारा प्लोहाको बढ़ता है तब तिल्ली बढ़ आती है। आयुर्वेदके अनुसार जवाखार, पलासका क्षार, शङ्खकी भस्म आदि प्लोहाकी उपयुक्त औषध है। डाक्टरोंमें कुनेन, संखिया और लोहा-मिश्रित औषध तिल्ली बढ़ने पर दी जाती है। इसे प्लोहा और पिलही भी कहते हैं।

२ तिल नामका अन्न। ३ आसाम और बरमामें ऊंची पहाड़ियों पर मिलनेवाला एक प्रकारका बांस। इसकी ऊंचाई पचास फुट तक और गांठें दूर दूर पर होती हैं।

तिल्व (सं० पु०) तिलतीति तिल-वन्। लट्वादयश्च। उण् ४।६५। इति सूत्रेण निपातनात साधुः। १ लोध्रवृक्ष, लोधका पेड़। २ श्वेतवर्ण लोध्र। ३ रक्तलोध्र, लाल लोध।

तिल्वक (सं० पु०) तिल्व-स्वार्थे कन्। १ लोध्र, लोध। २ तिनिश।

तिल्वनी (सं० स्त्री०) कर्णस्फोटा, एक प्रकारकी बेल।

तिल्विल (सं० पु०) देवयजन-स्थान, वह जगह जहां देवताकी पूजा की जाती है।

तिवारी—ब्राह्मण-जातिकी एक उपाधि। इस नामके ब्राह्मण गौड़ व कान्यकुब्ज आदि सम्प्रदायमें विशेष हैं। यह शब्द त्रिवेदी-शब्दका अपभ्रंश रूप है। पूर्वकालमें जो लोग तीनों वेदोंके ज्ञाता थे, उन्हें राजधर्मसभासे और विश्वविद्यालयोंसे त्रिवेदीकी उपाधि मिलती थी। तदनुसार उनका कुल भी त्रिवेदी कहाते कहाते भाषाभाषियों द्वारा तिवारी कहाने लग गया।

तिवासी (हिं० वि०) तिबासी देखो।

तिवी (हिं० स्त्री०) खेसारी।

तिमना (फा० पु०) ताना मेहना।

तिष्ठ (स० त्रि०) अवस्थान करो, ठहरो, रहो।

तिष्ठद्गु (सं० पु०) तिष्ठन्ति गावो यस्मिन् काले तिष्ठद्गु प्रभृतिभ्यश्च निपातनात् अव्ययीभावः। दोहन काल यह समय जब गायें अपने खूँटे पर घर घर आ जाती हैं सन्ध्या, शाम।

तिष्ठद्गुप्रभृति (स० स्त्री०) पाणिन्युक्त गणविशेष, पाणिनि की एक गणका नाम। अव्ययीभाव समासमें निपातप्रयुक्त तिष्ठद्गु प्रभृति कई एक शब्द सिद्ध होते हैं, यथा— तिष्ठद्गु, वहद्गु, आयतीगवम्, खलेयवम्, खलेबुसम्, लून यवम्, लूयमानयवम्, पूतयवम्, पूयमानयवम्, संहृतयवम्, संह्रियमाणयवम्, संहृतबुसम्, समभूमि, समपदाति, सुषमम्, विषमम्, दुःषमम्, निःषमम्, अपसमम्, आयतीसमम्, प्रोढम्, पापसमम्, पुण्यसमम्, प्राह्णम्, प्ररथम्, प्रमृगम्, प्रदक्षिणम्, अपरदक्षिणम्, सम्प्रति और असम्प्रति। (पाणिनि)

तिष्ठहोम (स० त्रि०) तिष्ठता होमो यत्र। अग्निष्टोम यागभेद। इस यागमें वषट्कार मन्त्रद्वारा होम करना पड़ता है।

तिष्ठा (स० स्त्री०) तिस्ता नामकी नदी। यह हिमालय पर्वतके पासमें निकल कर नवाबगंज के पास गङ्गामें जा मिली है।

तिष्य (स० पु०) तुष्यन्त्यस्मिन् तुष क्यप् निपातनात् साधुः। १ पुष्य नक्षत्र। (क्ली०) तिष-दीप्तौ बाहुलकात् यक् निपा० साधुः। २ कलियुग। तिष्य नक्षत्र-युक्तस्य पौर्णमासी अण्। ३ पौषमास। पुष्यानक्षत्रमें पौषमासकी पूर्णिमा होती है। (त्रि०) तिष्ये नक्षत्रे जातः अण् तस्य लुक्। ४ पुष्यानक्षत्रजात जो पुष्य नक्षत्रमें उत्पन्न हो। ५ माङ्गल्य, कल्याणकारी।

तिष्यक (स० पु०) तिष्य एव स्वार्थे कन्। पौषमास।

तिष्यपुष्पा (स० स्त्री०) तिष्यं माङ्गल्यं पुष्पं यस्याः, बहुव्री०। आमलकी आँवला।

तिष्यफला (स० स्त्री०) तिष्यं फलं यस्याः, बहुव्री०। आमलकी।

तिष्या (स० स्त्री०) तिष्यं माङ्गल्यं हेतुत्वेनास्त्यस्याः अच्। आमलकीवृक्ष, आँवलेका पेड़।

तिसपुर (हि० स्त्री०) [illegible] देखो।

तिसरायत (हि० स्त्री०) तीसरा होनेका भाव।

तिसटैत (हि० पु०) १ मध्यस्थ। २ तीसरे हिस्सेका मालिक।

तिसृका (स० स्त्री०) तिस्रो भवन्ति वाम् तिसृ कायेय। तिसृ-कायै ग्रामाणां कन्नुपसंख्यानम्। पा ४।२।५६। ग्रामभेद, एक गाँवका नाम।

तिसृधन्व (स० क्ली०) तिसृभिरिषुभिर्युक्तं धन्व धनुः, वैदिक प्रयोगे षच् समासान्तः आपमश्चावपि पेदे तिसादेशः। वह धनुष जिसमें तीन बाण लगे हों।

तिसा (स० स्त्री०) मधुपुष्पी।

तिस्स (हि० पु०) अशोक राजाके सगे भाईका नाम।

तिहत्तर (हि० वि०) १ जिसकी संख्या सत्तरसे तीन अधिक हो। (पु०) २ वह संख्या जो सत्तर और तीनके योगसे बनी हो।

तिहद्दा (हि० पु०) वह स्थान जहां तीन सीमा मिलती हों।

तिहन् (स० पु०) तुह अर्दने कनिन् निपातनात् साधुः। १ व्याधि, रोग, पीड़ा। २ व्रीहि, धान। ३ धनु, धनुष। ४ सज्जन।

तिहरा (हि० वि०) १ तेहरा देखो। (स्त्री०) २ मट्टीका बरतन जिसमें दही जमाया जाता है।

तिहराना (हि० क्रि०) तीन बार करना।

तिहरी (हि० स्त्री०) १ तीन लड़ोंकी माला। २ दूध जमानेका मट्टीका बरतन। (वि०) ३ तिहरा देखो।

तिहवार (हि० पु०) त्योहार, पर्वका दिन।

तिहवारी (हि० स्त्री०) त्योहारी देखो।

तिहाई (हि० पु) १ तृतीयांश, तीसरा हिस्सा। (स्त्री०) २ खेतकी उपज, फसल।

तिहानी (हि० स्त्री०) पूर्वी बङ्गालमें काममें आने वाली एक प्रकारकी बजड़ी। यह एक बालिश्त ऊँची और तीन अङ्गुल चौड़ी होती है।

तिहायत (हि० पु०) तिसटैत मध्यस्थ।

तिहानी (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी कपासकी बौंड़ी।

तिहैया (हि० पु०) तृतीयांश, तीसरा भाग।

तीउर (हि० पु०) खेतकी उपजकी बँटाई। इसमें तिहाई भाग जमींदार और दो तिहाई असामी लेता है।

तीक्ष्ण (सं॰ क्ली॰) तेजयति तेज्यतेऽनेन वा तिज क्स्न दीर्घश्च। तिजेर्दीर्घश्च। उण् ३।१८। १ उष्णता, गरमी। २ विष, जहर। ३ लोहभेद, इस्पात। ४ युद्ध, लड़ाई। ५ मरण, मौत। ६ शस्त्र, हथियार। ७ सामुद्र लवण, समुद्री नमक, करकच। ८ मुष्क, मोखा। ९ चव्यक, चाव। १० मरक, महामारी, मरी। (त्रि॰) ११ तीक्ष्णतायुक्त, तेज या तीखे स्वादवाला। प्रतिभा, हीरक, कटाक्ष, दुर्वाक्य, नख, लवण, रविकर ये सब तीक्ष्ण वस्तु हैं। (कविकल्पलता) १२ आत्मत्यागी। १३ निरालस्य, जिसे आलस्य न हो। १४ तेज धारवाला। १५ तीव्र, प्रखर, उग्र। १६ कर्णकटु, जो सुननेमें अप्रिय हो। १७ असह्य, जो सहन न हो सके। (पु॰) १८ यव क्षार, जवाखार। १९ श्वेतकुश, सफेद कुश। २० कुन्दुरुक, कुंदुर गोंद। २१ ज्योतिषोक्त नक्षत्रगण, आर्द्रा, अश्लेषा, ज्येष्ठा और मूला नक्षत्र। २२ योगी।

तीक्ष्णक (सं॰ पु॰) तीक्ष्ण संज्ञायां कन्। १ श्वेतसर्षप, सफेद सरसों। २ मुष्कक, मोखावृक्ष।

तीक्ष्णकण्टक (सं॰ पु॰) तीक्ष्णानि कण्टकानि यस्य, बहुव्रो॰। १ धुस्तूर, धतूरा। २ इङ्गुदीवृक्ष। ३ बर्बूर, बबूलका पेड़। ४ करीर, करीलका पेड़। (त्रि॰) ५ तीक्ष्ण कण्टकयुक्त, जिसमें तेज कांटे हों।

तीक्ष्णकण्टका (सं॰ त्रि॰) तीक्ष्ण कण्टक-टाप्। कन्यारी वृक्ष एक पेड़।

तीक्ष्णकन्द (सं॰ पु॰) तीक्ष्णः कन्दोमूलं यस्य, बहुव्रो॰। पलाण्डु, प्याज।

तीक्ष्णकर्म (सं॰ त्रि॰) तीक्ष्णं कर्म यस्य, बहुव्रो॰। कार्यदक्ष, जो काम-काज करनेमें तेज हो।

तीक्ष्णकल्क (सं॰ पु॰) तीक्ष्णः कल्को यस्य, बहुव्रो॰। तुम्बुरुवृक्ष, धनिया।

तीक्ष्णकान्ता (सं॰ स्त्री॰) तीक्ष्णा उग्रा कान्ता कमनीया कर्मधा॰। मङ्गलचण्डिकाकी मूर्त्ति विशेष, तारादेवी, उग्रतारा।

कालिकापुराणमें लिखा है, कि दिक्करवासिनी देवीकी पीठ पर स्वयं भगवान् शम्भु लिङ्गरूपमें, विष्णु शिलारूपमें और ब्रह्मा लिङ्गरूपमें अवस्थित हैं। फिर वहां देवी दुर्गा तीक्ष्णकान्ता और उग्रतारा इन दो रूपोंमें विहार करती हैं। ललितकान्ता नामक परात्परा मङ्गलचण्डिकाका नाम ही तीक्ष्णकान्ता है। तीक्ष्णकान्ता देवी कृष्णवर्णा, लम्बोदरी और एकजटाधारिणी हैं। साधकको इस देवीका पूजन सर्वदा करना चाहिए। मन्त्रपाठ पूर्वक इसका त्रिकोणमण्डल करना चाहिये—"ऐते सुरेन्द्रे तथा तिष्ठन्तु" यही तीक्ष्णकान्ताका मण्डलन्यास मन्त्र है।

नरान्तक, त्रिपुरान्तक, ईशान्तक, यमान्तक, वेतालान्तक, दुर्द्दरान्तक, गणान्तक और अमान्तक ये तीक्ष्णकान्ताके द्वारपाल हैं। मण्डलके आठ और इन सबोंको पूजा करनी चाहिये। पूजा करते समय सम्बोधनान्त एक नाम, पीछे "वस्त्रपुष्पं" तब "स्वाहा" सबको मिला कर जो बने वही इन द्वारपालकोंका मन्त्र है। तीक्ष्णकान्ता और उग्रतारा इन्हीं दो मूर्त्तियोंमें पाद्य, उपकरण, स्नान, न्यास प्रभृति कहना पड़ता है। चामुण्डा, कराला, सुभगा, भीषणभगा और विकटा ये छः देवीकी योगिनी हैं।

'हे भगवत्यैकजटे विद्महे थि कटदंष्ट्रे धीमहि तन्नस्तारे प्रचोदयात्।'

यही पीठदेवी तीक्ष्णकान्ताकी गायत्री है। विकटचण्डिका देवी इनकी निर्माल्यधारिणी हैं।

मृण्मय वा रुद्राक्षसे इनकी जपमाला करनी पड़ती है। तीक्ष्णकान्ता देवीकी पूजामें यही विशेष है। इसके सिवा उपचार बलिदान जप आदि समस्त कार्य कामाख्या पूजाके अनुसार करने पड़ते हैं। तीक्ष्णकान्ता देवीके जलमें मदिरा, बलिमें नरबलि और नैवेद्यमें मोदक, नारियल, मांस, व्यञ्जन और ईख ही प्रशस्त और प्रीतिप्रद हैं। इनकी पूजा करनेसे साधक अभीष्ट लाभ करता है।

(कालिकापु॰ ८० अ॰)

तीक्ष्णक्षीर (सं॰ क्ली॰) १ अकर्कर, अकरकरा। २ शुक्लमदनवृक्ष, सफेद मदनका पेड़।

तीक्ष्णक्षीरी (सं॰ स्त्री॰) वंशलोचन।

तीक्ष्णगन्ध (सं॰ पु॰) तीक्ष्णः प्रचण्डो गन्धो यस्य, बहुव्रो॰। १ शोभाञ्जनवृक्ष, सहिजनका पेड़। २ रक्ततुलसी, लाल तुलसी। ३ श्वेततुलसी, सफेद तुलसी। ४ कुन्दुरु नामक गन्धद्रव्य।

तीक्ष्णगन्धा (सं॰ स्त्री॰) तीक्ष्णगन्ध-टाप्। १ श्वेतवचा,

सफेद बच। २ कल्यारीका वृक्ष। ३ राजिका राई। ४ बचा, बच। ५ कोमको। ६ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची। ७ मेषमोरक, सफेद कोया।

तीक्ष्णगन्धोया (स० स्त्री०) ग्रहबचा सफेद बच।

तीक्ष्णतण्डुला (सं० स्त्री०) तीक्ष्ण तण्डुला यस्याः, बहुव्री०। पिप्पली, पीपल।

तीक्ष्णतरु (स० पु०) पिलुवृक्ष, एक पेड़।

तीक्ष्णता (स० स्त्री०) तीक्ष्णस्य भाव तीक्ष्ण भावे तल् टाप्। तीव्रता, तेजी।

तीक्ष्णताप (स० स्त्री०) तीक्ष्ण तापो यस्य। महादेव शिव।

तीक्ष्णतैल (स० क्लो०) तीक्ष्णस्य तैल यस्मै तैलस्य वा तीक्ष्ण तैल यस्मै यस्य। १ थूहीका दूध, सेहुँड़का दूध। २ सर्जरस, राल। ३ मद्य, शराब। ४ सरसोंका तेल।

तीक्ष्णतन्त्र (स० पु०) तुम्बुरु धनिया।

तीक्ष्णदंष्ट्र (स० पु० स्त्री०) तीक्ष्ण दंष्ट्रा यस्य, बहुव्री०। १ व्याघ्र, बाघ। (त्रि०) २ तीक्ष्ण दंष्ट्रायुक्त, जिसके दांत तेज हों।

तीक्ष्णदंष्ट्रा (स० स्त्री० वाघनाख वृक्ष।

तीक्ष्णदन्त (स० पु) वह जानवर जिसके दांत बहुत तेज या नुकीले हों।

तीक्ष्णदृष्टि (स० स्त्री०) तीक्ष्ण दृष्टि कर्मधा०। सूक्ष्म दृष्टि जिसकी दृष्टि सूक्ष्मसे सूक्ष्म बात पर पहुंचती हो।

तीक्ष्णद्रु (स० पु०) पिलुवृक्ष एक प्रकारका कांटेदार पेड़।

तीक्ष्णधार (स० पु०) तीक्ष्णा धारा यस्य, बहुव्री०। १ खड्ग। (त्रि०) २ तीक्ष्ण धारयुक्त, जिसकी धार बहुत तेज हो।

तीक्ष्णपत्र (स० पु०) तीक्ष्णानि पत्राणि यस्य बहुव्री०। १ तुम्बुरु, धनिया। २ कुमारिका, नाक चिकनाका पेड़। (त्रि०) ३ तीक्ष्णपत्रयुक्त जिसके पत्तोंमें तेज धार हो।

तीक्ष्णपुष्प (स० क्लो०) तीक्ष्ण पुष्प यस्य बहुव्री०। १ लवङ्ग लौंग। (त्रि०) २ तीक्ष्ण पुष्पयुक्त जिसके फूलमें तेज धार हो।

तीक्ष्णपुष्पा (स० स्त्री०) तीक्ष्णपुष्प-टाप्। केतकी।

तीक्ष्णप्रिय (स० पु०) यव जौ।

तीक्ष्णफल (स० पु०) तीक्ष्ण फल यस्य, बहुव्री०। १ तुम्बुरु, धनिया। २ तेजफल।

तीक्ष्णफला (स० स्त्री०) तीक्ष्णफल टाप्। राजसर्षप, राई।

तीक्ष्णबुद्धि (स० पु०) तीक्ष्णा बुद्धिर्यस्य, बहुव्री०। प्रखर मति जिसकी बुद्धि बहुत तेज हो।

तीक्ष्णमञ्जरी (स० स्त्री०) पर्णलता, पानका पौधा।

तीक्ष्णमूल (स० पु०) तीक्ष्ण मूल यस्य बहुव्री०। १ शोभाञ्जन, सहिजन। २ कुलञ्जन। (त्रि०) ३ तीक्ष्णमूलक, जिसकी जड़में बहुत तेज गन्ध हो। (क्लो०) तीक्ष्ण मूल कर्मधा०। ४ तीक्ष्ण मूल, तेज जड़।

तीक्ष्णरश्मि (स० पु०) तीक्ष्णा रश्मयो यस्य, बहुव्री०। १ तिग्मांशु, सूर्य। (त्रि०) २ तीक्ष्ण रश्मियुक्त जिसकी किरणें बहुत तेज हों।

तीक्ष्णरस (स० पु०) तीक्ष्णो रसो यस्य बहुव्री०। १ यव क्षार, जवाखार। तीक्ष्ण रस कर्मधा०। २ तीक्ष्णरस, खारा। (त्रि०) ३ तीक्ष्णरस युक्त जिसका रस बहुत तेज हो।

तीक्ष्णलौह (स० क्लो०) तीक्ष्ण लौह कर्म। लौहभेद, इस्पात।

तीक्ष्णवल्क (स० पु०) तुम्बुरु, धनिया।

तीक्ष्णवृक्ष (स० पु०) पिलुवृक्ष, एक प्रकारका कांटेदार पेड़।

तीक्ष्णवेग (स० त्रि०) तीक्ष्णः वेगः यस्य, बहुव्री०। वर्धित वेगयुक्त जिसकी तेज गति हो।

तीक्ष्णशूक (स० पु०) तीक्ष्ण शूको यस्य यस्य, बहुव्री०। १ यव, जौ। (त्रि०) २ धारशूकयुक्त, जिसकी नोक तेज हो। (क्लो०) तीक्ष्ण शूक, कर्मधा०। ३ धारशूक तेज नोक।

तीक्ष्णसारा (स० स्त्री०) तीक्ष्णः सारोऽस्याः सारो यस्या बहुव्री०। १ शिंशपावृक्ष, सीसमका पेड़। २ मधुकवृक्ष, महुवेका पेड़। ३ तीक्ष्ण लोहा। ४ (त्रि०) तिग्मसार युक्त, जिसका रस बहुत तेज हो। (क्लो०) ५ खरसार, तेज रस।

तीक्ष्णा (स० स्त्री०) तीक्ष्ण टाप्। १ वचा, बच। २ सर्प कङ्कालिकाक्ष्य। ३ कपिकच्छु, केवांच। ४ महाज्योति-

पती लता, बड़ी मालकंगनी। ५ अत्यम्लपर्णी लता।, ६ जलौका, जोंक। ७ कटुवीरा, मिर्च। ८ तारादेवीका एक नाम।

तीक्ष्णांशु (सं० पु०) तीक्ष्णाः अंशवो यस्य, बहुव्री०। तिग्म रश्मि, सूर्य।

तीक्ष्णांशुतनय (सं० पु०) तीक्ष्णांशुः सूर्यस्तस्य तनयः, ६-तत्। सूर्यतनय, सूर्यके पुत्र।

तीक्ष्णाग्नि (सं० पु०) १ छातीका एक रोग। २ अजीर्ण रोग। ३ जठराग्नि।

तीक्ष्णाग्र (सं० वि०) तीक्ष्णःअग्रो यस्य, बहुव्री०। सूक्ष्माग्र, पैनी नोकवाला, जिसका अगला भाग तेज या नुकीला हो।

तीक्ष्णायस (सं० क्ली०) अय एव आयसं तीक्ष्णञ्च तत् आयसञ्चेति, कर्मधा०। लौहविशेष, इस्पात लोहा। इसके संस्कृत पर्याय—लौह, शस्त्रायस, शस्त्र, पिण्ड, पिण्डायस, शठ, आयस, निशित, तीव्र, खड्ग, मुण्डित, अयस, चित्रायस और चीनज। इसके गुण—उष्ण, तिक्त; वात, पित्त, कफ, प्रमेह, पाण्डु और शूलनाशक तथा तीक्ष्ण।

इस्पातका चूर्ण और त्रिफलाका चूर्ण एकत्र मिला कर दूधके साथ सेवन करनेसे शूलरोग जाता रहता है।

तीक्ष्णेषु (सं० पु०) असह्य वाणयुक्त।

तीखा (हिं० वि०) १ तीक्ष्ण, जिसकी धार या नोक बहुत तेज हो। २ प्रखर, तीव्र, तेज। ३ उग्र, प्रचण्ड। ४ जिसका स्वभाव बहुत उग्र हो। ५ बढ़िया, अच्छा। ६ अप्रिय वचन। ७ जिसका स्वाद बहुत तेज या चरपरा हो।

तीखी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका काठका औजार जो रेशम फेरने वालोंके काममें आता है। इसके बीचमें गज डाल कर उस पर रेशम फेरा जाता है।

तीखुर—हलदीकी जातिका एक प्रकारका पौधा। इसकी जड़से अरारूट प्रस्तुत किया जाता है। अरारूट देखो। मध्य भारतमें यह प्रचुर परिमाणमें पैदा होता है। बङ्गाल, मन्द्राज और बम्बईके पहाड़ी प्रदेशोंमें भी इसकी खेती होती है। हरिद्रा, कचूर और आमहल्दी प्रभृतिकी तरह मध्यभारतके रायपुर जिलेमें तीखुरका भी खूब बड़ा व्यवसाय होता है। उत्तर-पश्चिम हिमालय, कनाड़ा जिलेके रामघाट पर्वत, त्रिवाङ्कोर और कोचीनमें भी यह उगता है। यह दो प्रकार होता है; अंग्रेजीमें इन दो जातियोंके नाम Curcuma augustifolia एवं Curcuma Leucorrhiza है। हिन्दीमें दोनों अंगियां तीखुर और तैलङ्गमें अराकूटगड्डालू नामसे कही जाती है।

कई लोगों का कहना है कि इसकी प्रथम श्रेणीका देशी नाम कुआ या कुया और दूसरीका नाम तीखुर है।

इसकी खेती ठीक हल्दीकी खेतीकी तरह होती है; लेकिन इसे खोदते समय हल चलानेकी जरूरत होती है। इसकी जड़ इतनी कठिन होती है कि बिना हल चलाये निकाली नहीं जा सकती। यत्न पूर्वक इसकी खेती करने पर इससे विलायती आरारूटकी तरह उत्कृष्ट द्रव्य बनता है।

कनाड़ा, कोचीन और त्रिवाङ्कोरसे इससे आरारूट प्रस्तुत होता है। इसका आटा काशीके बाजारोंमें बिकता है वहांके हलवाई इससे एक प्रकारके मीठे लड्डू बनाते हैं, जो खानेमें अत्यन्त सुस्वादु होते हैं। इसके बिस्कुट भी अच्छे बनते हैं। यह कुछ कोष्ठबद्धकर (कब्ज करनेवाला) है। बम्बईमें पानी मिलाया दूध या चार गाढ़ा करनेके लिए यही आटा काममें लाया जाता है। यह रोगोंके लिए भी हितकर है। नाना स्थानोंमें यह नाना उपायोंसे प्रस्तुत किया जाता है। उनमेंसे गोदावरी जिलेमें जो उपाय अवलम्बित किये जाते हैं, वे ही आरारूट शब्दमें लिखे गये हैं। अधिक धूप लगनेसे इसमें तनिक खट्टापन आ जाता है। यत्नसे,प्रस्तुत करने पर एक बीघेमें डेढ़ सौ रुपया लाभ हो सकता है।

तीखुल (हिं० पु०) तिखुर देखो।

तीज (हिं० स्त्री०) १ प्रत्येक पक्षकी तीसरी तिथि। २ हरतालिका तृतिया, भादों सुदी तीज।

(हिं० वि०) हरतालिका देखो।

तीजा (हिं० पु०) १ मुसलमानोंमें किसीके मरनेके दिनसे तीसरा दिन। (हिं० वि०) २ तृतीय, तीसरा।

तीतर (हिं० पु०) समस्त एशिया और युरोपमें मिलनेवाला एक प्रसिद्ध पक्षी। इसके दो भेद हैं, चितकबरा

और काला। इसका पेट कुछ भारी दुम छोटी और पैरमें चार चार अंगुलियां होती हैं। यह एक जगह ज्यादा देर तक स्थिर नहीं रहता। हिन्दुस्तानमें यह प्रायः कपास, गेहूं या धानके खेतोंमें जालमें फंसा कर पकड़ा जाता है। इसके अंडे चित्ते और धब्बेदार होते हैं।

विशेष विवरण तित्तिर शब्दमें देखो।

तीता (हिं॰ वि॰) १ तिक्त जिसका स्वाद तीखा और चरपरा हो। २ कटु, कड़ुआ। ३ गीला, नम। (हिं॰ पु॰) ४ खेतमें होनेवाली जमीनका गीलापन। ५ उर्वर भूमि। ६ ढेंकी या रहटका अगला भाग। ७ मलोरैके झाड़का एक नाम।

तीन (हिं॰ वि॰) १ जो दोसे एक अधिक हो। (पु॰) २ वह संख्या जो दो और एकके योगसे बनती हो।

तीनपान (हिं॰ पु॰) एक प्रकारका बहुत मोटा रस्सा। इसकी मुटाई एक फुटसे अधिक नहीं होती।

तीनपाम (हिं॰ पु॰) तीनपान देखो।

तीनलड़ी (हिं॰ स्त्री॰) तीन लड़ियोंकी माला, तिलड़ी।

तीनी (हिं॰ स्त्री॰) तिन्नीका चावल।

तीपड़ा (हिं॰ पु॰) एक प्रकारका औजार जो रेशमी कपड़ा बुननेवालोंके काममें आता है। इसके नीचे ऊपर दो लकड़ियां लगी रहती हैं।

तीपरा (तिप्रा)—त्रिपुरा और चट्टग्रामके पार्वत्य प्रदेशवासी एक असभ्य जाति। आराकानमें इन्हें मगह कहते हैं। इस जातिका प्रकृत जातिगत नाम तीपरा नहीं है। इनमेंसे बहुतोंका त्रिपुराके पार्वत्य प्रदेशमें वास होनेके कारण ये लोग तीपरा नामसे मशहूर हो गये हैं। पूछने पर भी ये अपनेको बहुधा 'तिपारा' बतलाते हैं। यूरोपीय नृतत्त्वविद्गण इस जातिको मोंगोलियनमें भुक्त करते हैं। इन लोगोंका आकार प्रकार बहुत कुछ बदल गया है, ध्यान देने पर भी वे उनसे सम्भूत मालूम पड़ते हैं।

ये लोग खेतीबारी करके अपनी जीविका निर्वाह करते हैं।

इन लोगोंकी छोटी बड़ी सब जातियां होती हैं। कुमाई, मग और हिन्दुओंको अपने हाथसे खानेमें ये तनिक भी आपत्ति नहीं करते।

बाल्यविवाहकी प्रथा इन लोगोंमें प्रचलित नहीं है। स्त्रियां प्रायः स्वाधीना होती हैं। विवाहके समय कोई विशेष अनुष्ठानादि नहीं करने पड़ते। खाना पीना और नाच गान यही विवाहका प्रधान अङ्ग है। इस समय वन और नदी देवताके उद्देशसे एक सूअरके बच्चेकी बलि दी जाती है। कन्याकी माता एक पात्रमें शराब लाकर उसे कन्याके हाथमें अर्पण करती है। फिर कन्या वरकी गोदमें बैठ कर उस पात्रको वरके हाथमें दे देती है। बाकी शराब तो वर खुद पी लेता और बाकी बरातियोंको पिलाता है। कन्याके मातापिताकी इच्छाके विरुद्ध यदि विवाह हुआ हो तो वरको तीन वर्ष तक श्वशुरालयमें रह कर काम काज करना पड़ता है।

ये लोग काली और सत्यनारायणकी पूजा करते हैं। पूजामें ब्राह्मण नियुक्त नहीं होते। औचाई नामक स्वजातीय एक नर है जो ब्राह्मणके पुरोहितका काम करता है। जब किसीकी मृत्यु होती है, तब वे मृत देहको घरके बाहर ले जाते और एक मुर्गीको मार कर लाशके साथ उसे मृत व्यक्तिके पांव तले रख देते हैं, बाद दाहकर्म होता है, वहां मृतके आत्मीयगण ७ दिन तक आते और प्रति दिन मृतके उद्देश्यसे एक एक मुर्गी मार कर उसे लाशके साथ वहीं रख जाते हैं। पीछे मृतकी अस्थि लाकर पहाड़के ऊपर रखते और उसके ऊपर एक कोठरीसा घर बना कर उसमें मृतके वस्त्र-भूषण बहुत खाद्यपानादि रख छोड़ते हैं। इनमेंसे एक श्रेणी राजवंशी नामसे प्रसिद्ध है। ये अपनेको त्रिपुराके राजवंशीय बतलाते हैं।

तीमारदारी (फा॰ स्त्री॰) रोगियोंकी सेवा-शुश्रूषाका काम।

तीय (हिं॰ स्त्री॰) स्त्री, औरत।

तीर (सं॰ क्ली॰) तीर-अच्। नद्यादिका कूल, नदी आदिका किनारा। नदी किनारेसे ६० हाथ तक परिमित स्थानको तीर कहते हैं। भाद्र मासकी कृष्णा चतुर्दशी तिथिमें जहां तक जल प्लावित होता है, वहां तक गर्भ और उस जगहसे १५० हाथ तक तीर कहलाता है। पुराणोंके मतसे गङ्गादि पुण्य नदीके किनारे किया हुआ पुण्य या पाप चिरस्थायी रहता है, इसलिये भूलसे भी पुण्यनदीके किनारे पाप कार्य नहीं करना चाहिये और अन्य

यथाशक्ति पुण्योपार्जनमें यत्नवान् होना चाहिये। (पु०) २ सीसक, सीसा नामक धातु। ३ वाण, शर। ४ त्रपु, टीन। ५ समीप, निकट, पास।

तीरंदाज (फा० पु०) वह जो तीर चलाता हो।

तीरंदाजी (फा० स्त्री०) तीर चलानेकी विद्या।

तीरगर (फा० पु०) १ तीरप्रस्तुतकारी, तीर बनानेवाला कारीगर। २ एक श्रेणीके मुसलमान। अहमदाबाद जिलेमें इनका वास अधिक है। पहले ये युद्धके लिये तीर बनाते थे; इसीसे इनका नाम तीरगर पड़ा है। अभी तीरका आदर जाता रहा; सुतरां इन्होंने भी जातीय व्यवसायका परित्याग किया है। अभी ये चोवदार या दामका कार्य कर जीविका निर्वाह करते हैं।

तीरग्रह (सं० पु०) देशभेद, एक देशका नाम।

तीरण (सं० क्ली०) लताभेद, करञ्जिका, करंज।

तीरभुक्ति (सं० पु०) देशविशेष, इसका नामान्तर विदेह है। तिरहुत देखो।

तीररुह (सं० त्रि०) तीरे रोहति रुह-क। वृक्ष, पेड़।

तीरवर्त्ती (सं० त्रि०) १ जो तट पर रहता हो। २ पास रहनेवाला, पड़ोसी।

तीरस्थ (सं० त्रि) तीरे तिष्ठति तीर-स्था-क। १ तीर स्थित, तट पर रहनेवाला। २ नदीके तीर पर पहुंचाया हुआ मरणासन्न व्यक्ति। बहुत जगह जब रोगी मरनेको होता है, तब उसके सम्बन्धी पहलेहीसे उसको नदीके तीर पर ले जाते हैं। धार्मिक दृष्टिसे नदीके तीर पर मरना अधिक उत्तम समझा जाता है।

तीराट (सं० पु०) लोध्र, लोध।

तीरान्तर (सं० क्ली०) तीरस्य अन्तरं, ६-तत्। दूसरे पार।

तीरित (सं० त्रि०) तीरस्था। कार्यसमाप्ति।

तीरु (सं० पु०) १ शिव, महादेव। २ शिवकी स्तुति।

तीर्ण (सं० त्रि०) तृ क्त। १ उत्तीर्ण, जो पार हो गया हो। २ अभिभूत, हराया हुआ। ३ आप्लुत, जो भोगा हुआ हो। ४ अतिक्रान्त, जो सीमाका उल्लंघन कर चुका हो।

तीर्णपदा (सं० स्त्री०) मूसली, तालमूल।

तीर्णपदी (सं० स्त्री०) तीर्णः पादोः मूलमस्याः अन्त्य-लोपः कुम्भपद्या० ङीष्। तालमूली, मूसली।

तीर्णा (सं० स्त्री०) प्रतिष्ठाख्य वृत्तिविशेष, एक वृत्त जिसके प्रत्येक चरणमें एक नगण और गुरु होता है।

तीर्थ (सं० क्ली०) तरति पापादिकं यस्मात् तृ-थक। पातृ तुदि वचीति। उण् २।२। १ शास्त्र। २ यज्ञ। ३ क्षेत्र, स्थान। ४ उपाय। ५ नारीरज, रजस्वला स्त्रीका रज। ६ अवतार, अवतरण। ७ ऋषिजुष्ट जल, वह जल जिसे ऋषिगण सेवन करते हैं। ८ पात्र, बरतन। ९ उपाध्याय, गुरु। १० मन्त्री, वजीर। ११ योनि, भग। १२ दर्शन। १३ घाट। १४ विप्र। १५ आगम। १६ निदान। १७ वह्नि, अग्नि। १८ पुण्यस्थानादि। काशीखण्डमें तीर्थका विषय इस प्रकार लिखा है,—तीर्थ तीन प्रकारका है, जङ्गम, मानस और स्थावर। जगत्में ब्राह्मणगण जङ्गम तीर्थ हैं। ये पवित्रस्वभाव और सर्वकामप्रद हैं। इनके वाक्योदकके द्वारा मलिन मनुष्य विशुद्ध हो जाते हैं। ब्राह्मणोंकी सेवा करनेसे पाप नहीं रहते और समस्त कामनाओंकी सिद्धि होती है।

मानसतीर्थ—सत्य, क्षमा, इन्द्रियनिग्रह, दया, ऋजुता, दान, दम, सन्तोष, ब्रह्मचर्य, प्रियवादिता, ज्ञान, धैर्य और तपस्या ये मानसतीर्थ हैं; इनमें भी मनकी विशुद्धता ही सबसे श्रेष्ठ है। देशभ्रमण करनेसे आत्माकी उन्नति वा बहुदर्शिता होती है, इसलिए भी तीर्थयात्राको हिन्दूगण अति पुण्यदायक समझते थे। तीर्थमें जानेसे मन विशुद्ध होता है और साधुओंके दर्शनसे आत्मा भी पवित्र होती है। जिन महात्माओंके आश्रममें जाते हैं, उनका वृत्तान्त स्मरण करनेसे जगतकी अनित्यता स्पष्ट ही प्रतीयमान होने लगती है; न कहीं मनुष्य उन आश्रमोंमें आ कर जन्म और मृत्युके हाथसे उद्धार हुए हैं। इन सब विषयोंकी चिन्ता करनेसे मनमें एक उदारभावका उदय होता है और सर्वदा पापोंसे दूर रहनेकी इच्छा जाग्रत होती है। अतएव प्रत्येक मनुष्यको आत्माकी उन्नतिके लिए तीर्थयात्रा करनी चाहिये। मात्र शरीरको पानीमें डुबा कर स्नान कर लेनेसे तीर्थस्नान नहीं होता; यथार्थ तीर्थस्नानी वही

है जिसने अपनी पाँचों इन्द्रियोंको जीत लिया है। जो लोभी, क्रूर, दाम्भिक वा विषयासक्त हैं और सैकड़ों बार तीर्थस्नान करते हैं वे उससे भी पापसे मुक्त नहीं होते। केवल शरीरका मैल दूर करनेसे ही मनुष्य निर्मल नहीं हो जाता, मनके मैलको निकाल देनेसे ही मनुष्य यथार्थमें निर्मल हो सकता है। तीर्थयात्राका वास्तविक उद्देश्य चित्तकी शुद्धि प्राप्त करना है। यदि अन्तःकरणका भाव पवित्र न हुआ तो दान, तप, यज्ञ, शौच तीर्थसेवा अथवा श्रवण आदि सदनुष्ठान करने पर भी कोई फल नहीं होता। मनुष्य अपनी इन्द्रियोंको जय करके चाहे जहां कहीं न बैठ रहे वहीं उसके लिए कुरुक्षेत्र, नैमिषारण्य और पुष्कर आदि तीर्थस्थान हैं। जो लोग राग द्वेष आदि मलोंको दूर करके विशुद्ध ज्ञानरूप जलमें स्नान करते हैं उन्हींको उत्कृष्ट गति प्राप्त होती है।

स्थावरतीर्थ—गङ्गा आदि पुण्यनदियोंको स्थावर तीर्थ कहते हैं। जैसे शरीरका अङ्गविशेष पवित्र माना जाता है, उसी तरह पृथिवीके भी कुछ प्रदेश पुण्यतम माने जाते हैं। स्थावर और मानसतीर्थमें जो लोग नित्य अवगाहन करते हैं, उनको उत्कृष्ट फलकी प्राप्ति होती है। (काशीखं०)

तीर्थयात्राके द्वारा जो फल होता है, वह फल विपुल दक्षिणाके साथ अग्निष्टोम यज्ञद्वारा भी नहीं होता। जो लोग क्रोध और लोभको संयत करके विद्या, तपस्या और कीर्तिसम्पन्न हो चुके हैं, उन्होंने यथार्थमें तीर्थफल प्राप्त किया है। प्रतिग्रहसे निवृत्त हो कर जो व्यक्ति जिस किसी तरह सन्तुष्ट रहता है, उसीको तीर्थका फल मिलता है। जो व्यक्ति दाम्भिक नहीं है, जिनका आरम्भ निष्काम हो चुके हैं, जो सब द्वन्द्वोंसे निवृत्त क्रोधरहित, जितेन्द्रिय, अल्पाहारी, निरहङ्कार और समस्त प्राणियोंको अपने समान देखते हैं, वे ही तीर्थका फल भोगते हैं। इन्द्रियोंको संयत करके, श्रद्धा और धीरताके साथ तीर्थ भ्रमण करनेसे पापी मनुष्य विशुद्ध हो जाते हैं। साधुओंकी तो बात ही क्या? तीर्थानुगमन करनेसे तिर्यग्योनि वा कुदेशमें जन्म नहीं होता। तीर्थगमनकारी व्यक्ति दुःखी नहीं होता और अन्तमें स्वर्गगामी होता है। जिसको श्रद्धा नहीं, जो पापात्मा और नास्तिक है, जिसका संशय दूर नहीं हुआ है, जो निरर्थक तर्क करता है, उसे तीर्थका फल नहीं मिलता।

जो शीतोष्णको सह कर धीरताके विधिपूर्वक तीर्थयात्रा करते हैं वे स्वर्गगामी होते हैं।

तीर्थयात्राके लिए जानेवाले व्यक्तिको प्रथमतः घरमें संयत हो कर उपवास करना चाहिए। पीछे यथाशक्ति गणेश, पितृगण, ब्राह्मण और साधुओंकी पूजा करना उचित है। तदनन्तर पारण करके नियम अवलम्बनपूर्वक आनन्दसे यात्रा करनी चाहिए। तीर्थयात्रासे लौट कर पुनः पितरोंकी पूजा की जाती है। ऐसा करनेसे उसका फल मिलता है। तीर्थमें ब्राह्मणकी परीक्षा न करनी चाहिए। कोई अन्न मांगे तो उसे यथाशक्ति देना चाहिए और किसी पर क्रोध न करना चाहिए। तिल-पिष्ट और गुड़से श्राद्ध भी करना पड़ता है। श्राद्धमें अर्घ्यप्रदान और आवाहन करना उचित नहीं। काल विशुद्ध हो या न हो, किसी तरहका विघ्न न करनेसे ही श्राद्ध और तर्पण करना चाहिए। प्रसङ्गाधीन तीर्थमें जा कर यदि स्नान किया जाय, तो उसका फल प्राप्त होता है, किन्तु तीर्थयात्राके निमित्त स्नान करनेसे फल लाभ नहीं होता। तीर्थयात्रासे पापात्माओंके पाप नष्ट होते हैं और शुद्ध-अन्तःकरण व्यक्तियोंको यथोक्त फल प्राप्त होता है। जो दूसरेके लिए तीर्थयात्रा करते हैं उन्हें षोडश अंश फल प्राप्त होता है और जो प्रसङ्गाधीन यात्रा करते हैं, उनको आधा फल प्राप्त होता है। जिनके लिए कुशकी प्रतिकृति बना कर उसे तीर्थमें स्नान कराया जाता है। उस व्यक्तिको अष्टमांश फल प्राप्त होता है। तीर्थमें उपवास और मस्तक-मुण्डन करना चाहिये। तीर्थमें मस्तक मुड़ानेसे शिरोगत समस्त पाप नष्ट होते हैं। जिस दिन तीर्थमें जाना हो, उसके पहले दिन उपवास करना चाहिये और तीर्थमें पहुंचने पर श्राद्ध करना चाहिए। काशी, काञ्ची, माया, अयोध्या, द्वारका मथुरा और अवन्ती ये सात पुरी मोक्षप्रद एवं श्रीशैल और केदार उनसे भी ज्यादा मुक्तिप्रद हैं।

तीर्थराज प्रयागसे अविमुक्त क्षेत्र विशेष मुक्तिप्रद है। अविमुक्तक्षेत्रमें जो निर्वाण वा मुक्त होते हैं, वे फिर कहीं भी जन्म नहीं लेते। अन्यान्य तीर्थमें जो मुक्तिप्रद

है, वे सब काशीमें मिलते हैं, अन्य किसी क्षेत्रमें ऐसा नहीं होता। (काशीख० ३ अ०)

ब्रह्मपुराणमें तीर्थका विषय इस प्रकार लिखा है,—विशुद्ध मन ही पुरुषका तीर्थ है। तीर्थ वही यथार्थ और आवश्यक है, जिससे अन्तःकरण निर्मल हो, जब तक मन विशुद्ध न हो, तब तक किसी भी तीर्थका फल प्राप्त नहीं होता। जैसे मद्यपात्रको सौ बार धोने पर भी वह पवित्र नहीं होता, उसी तरह अविशुद्धात्माओंको सैकड़ों बार तीर्थ-जलसे धोये जाने पर भी कभी फलकी प्राप्ति नहीं होती। दुष्टाशय दाम्भिक लोगोंका व्रत, दान आदि सब निष्फल है। मनुष्य इन्द्रियोंको दमन करके चाहे जिस जगह वास करे, वह स्थान उसके लिए पुष्कर नैमिषारण्य आदि तीर्थ हो जाता है। (पद्मपु०)

तीर्थमें आ कर जिनके चित्तका मल दूर नहीं हुआ, उनको तीर्थ करने पर भी कुछ फल नहीं मिलता। प्रयागतीर्थमें जा कर पितरोंका श्राद्ध और केशमुण्डन करना चाहिये; अन्यथा वह उचित नहीं। तीर्थयात्रासे पहले और तीर्थसे लौट कर पितरोंका श्राद्ध करना उचित है। ऐश्वर्यमत्त धनी जो मानादि द्वारा तीर्थयात्रा करते हैं, उनकी तीर्थयात्रा वृथा है। (मत्स्यपु०)

सत्ययुगमें पुष्कर, त्रेतामें नैमिषारण्य, द्वापरमें कुरुक्षेत्र और कलियुगमें गङ्गा ही श्रेष्ठ तीर्थ है। तीर्थमें प्रतिग्रह नहीं करना चाहिए। नारायणक्षेत्र, कुरुक्षेत्र, वाराणसी, बदरीनाथ, गङ्गासागरसङ्गम, पुष्कर, भास्कर, प्रभास, रासमण्डल, हरिद्वार, केदार, सरस्वती, वृन्दावन, गोदावरी, कौशिकी, त्रिवेणी आदि तीर्थोंमें जो लोग इच्छापूर्वक प्रतिग्रह करते हैं, उनको कुम्भीपाक नरकमें जाना पड़ता है। तीर्थमें जा कर, प्राण कण्ठगत होने पर भी दान ग्रहण न करना चाहिये। अकाल, मलमास और यावोक्त निषिद्ध दिनको छोड़ कर तीर्थयात्रा करनी चाहिये। किन्तु गयाक्षेत्रको अकालमें भी जा सकते हैं, अथवा संक्रान्तिमें सभी तीर्थमें जा सकते हैं।

इस पृथिवी पर कितने तीर्थ हैं, इसका निर्णय करना दुःसाध्य है। एक पद्मपुराणमें ही साढ़े तीन करोड़ तीर्थोंका उल्लेख है। ऐसी दशामें सम्पूर्ण तीर्थोंका निर्णय करना असम्भव है। एकमात्र इस भारतवर्षमें ही इतने तीर्थ हैं, जिनकी शुमार नहीं। जहां कहीं भी कोई महापुरुष आविर्भूत हुए हैं, अथवा जहां किसी देव या महात्माने लीला की है, धर्मप्राण हिन्दुओंने उसी स्थानको तीर्थ मान लिया है। इसलिए समस्त तीर्थोंके नाम एकत्र प्रगट करके ग्रन्थकी कलेवरवृद्धि करना वृथा है।

तीर्थोंके नामानुसार उन्हीं शब्दोंमें विवरण दिया गया है।

यहां महाभारतके अनुसार कुछ प्राचीन तीर्थोंका उल्लेख किया जाता है।

पुष्कर—इसका नाम तीर्थराज है। इस तीर्थमें त्रिसन्ध्या दश कोटि तीर्थोंका आगमन होता है, इसमें स्नानादि करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। जम्बुमार्ग—इससे अश्वमेधसदृश फल और विष्णुप्राप्ति होती है। तुण्डलिकाश्रम—इसका फल है दुर्गतिविनाश और ब्रह्मप्राप्ति। अगस्त्य-सरोवर—इसमें तीन रात उपवास करनेसे वाजपेय यज्ञका फल और शाकभोजन करनेसे कौमारलोककी प्राप्ति होती है। धर्मारण्य—यहां कण्वाश्रम है, प्रवेश करते ही पापक्षय होता है। देवपितृपूजा द्वारा अश्वमेधफल और देवलोककी प्राप्ति होती है। ययातिपतन—यहां जाते ही अश्वमेधका फल होता है। कोटीतीर्थ—यहां महाकाल नित्य विराजित रहते हैं। स्नान करनेसे अश्वमेध-तुल्य फल होता है।

भद्रवट—नर्मदा नदी, यहां पितरोंका तर्पण करनेसे अग्निष्टोम करनेका फल होता है। दक्षिणसिन्धु—यहां ब्रह्मचर्य आचरण करनेसे अग्निष्टोम तुल्य फल और स्वर्गप्राप्ति होती है। चर्मण्वती नदी—यहां इन्द्रियनिग्रह करनेसे ज्योतिष्टोम तुल्य फल होता है। अर्बुदाचल—यहां वशिष्ठाश्रम है, एक रात्रि उपवास करनेसे सहस्र गोदानके समान फल होता है। पिङ्गतीर्थ—यहां इन्द्रिय जय करनेसे सवत्स शत कपिलादान तुल्य फल होता है। प्रभास—यहां हुताशन स्वयं विराजित हैं, अतः अग्निष्टोम सदृश फल होता है। सरस्वतीसागरसंगम—यहां स्नान करनेसे सहस्र गोदानतुल्य फल और तीन दिन उपासे रह कर देवताओं और पितरोंका तर्पण करनेसे अश्वमेधतुल्य फल होता है।

वरदान—यहां दुर्वासाने विष्णुको वर प्रदान किया

था, अतः स्नान करनेसे गोदानतुल्य फल होता है।

दारावतीका पिण्डारकतीर्थ—यहाँ पद्मचिह्नयुक्त मुद्रा और शूलचिह्नित पद्म अब भी देखनेमें आते हैं। महादेव सदा इस स्थानमें हैं। यहाँ स्नान करनेसे सुवर्णदान यज्ञसदृश फल प्राप्त होता है।

समुद्रसिन्धुसङ्गम—यहाँ स्नान और पितरोंका तर्पण करनेसे वरुणलोककी प्राप्ति होती है। शिमोतीर्थ—यहाँ महादेव सदा विराजित हैं, स्नान करनेसे अश्वमेधका फल और महादेवके दर्शन या पूजनसे सम्पूर्ण पाप नष्ट होते हैं। वसुधारातीर्थ—इसके दर्शन करनेसे अश्वमेधका फल, स्नान और तर्पण द्वारा पितृलोककी प्राप्ति होती है। सिन्धूत्तमतीर्थ—यहाँ स्नान करनेसे बहुसुवर्ण फल प्राप्त होता है। भद्रतुङ्गतीर्थ—यहाँ जानेसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। कुमारिका और शक्रतीर्थ—यहाँ स्नान करनेसे सम्पूर्ण पापोंका नाश होता है। पञ्चनदतीर्थ—इसमें पञ्चयज्ञका फल प्राप्त होता है। भीमास्थानतीर्थ—यहाँ स्नान करनेसे मनुष्य देवीका पुत्र होता है और सहस्र गोदानतुल्य फल मिलता है।

गिरिमुञ्जतीर्थ—यहाँ स्वयं ब्रह्मा विराजित हैं। उनको प्रणाम करनेसे सहस्र गोदानतुल्य फल होता है। विमलतीर्थ—अब भी यहाँ सोनेका और रजत मत्स्य मौजूद हैं। स्नान और पानद्वारा वाजपेय सदृश फल प्राप्त होता है। वितस्तानदी—यहाँ तर्पण करनेसे वाजपेय फल और स्वर्गलोक गमन होता है। काश्मीरमें वितस्ता नामक तक्षकनागस्थान तीर्थमें स्नान करनेसे वाजपेय फल और स्वर्गलोक प्राप्त होता है। वडवातीर्थ—यहाँ सन्ध्याकालमें स्नान और अग्निको चरु प्रदान करनेसे सहस्र अश्वमेधका फल प्राप्त होता है।

रुद्रपदतीर्थ—यहाँ महादेवके दर्शन करनेसे अश्वमेध सदृश फल होता है। मणिमान् पर्वत—यहाँ तीन दिन उपवास करनेसे ज्योतिष्टोम सदृश फल होता है। देविकानदी—यह महादेवका स्थान है यहाँ स्नान, महादेवके दर्शन और महादेवको चरु प्रदान करनेसे समस्त कामनाओंकी सिद्धि और दीर्घसत्र, राजसूय और अश्वमेधका फल होता है। विनशनतीर्थ—यहाँ स्नान करनेसे वाजपेय सदृश फल होता है। चमसोद्भेदतीर्थ—यहाँ स्नान करनेसे अग्निकी भाँति दीप्ति और सहस्र गोदान तुल्य फल होता है। कुमारकोटितीर्थ—यहाँ स्नान तथा पितृ और देवताओंका पूजन करनेसे अयुतगवदान जैसा फल होता है। रुद्रकोटितीर्थ—यहाँ एक करोड़ ऋषियोंने मिल कर ऐसा प्रण किया था कि 'हम पहले महादेवको देखेंगे'। उनके प्रणाम करने पर रुद्र सन्तुष्ट हो कर यहाँ कोटि हुए थे। यहाँ स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और कुलका उद्धार होता है। सरस्वतीसङ्गमतीर्थ—यहाँ जनार्दन सदा विराजते हैं; अतः स्नान करनेसे बहु सुवर्णदानका फल प्राप्त होता है। शशयानतीर्थ—यहाँ जानेसे सहस्र गोदानका फल होता है।

कुरुक्षेत्रतीर्थ—यहाँ जानेसे समस्त पापोंका नाश और मचक्रुक द्वारपालको पूजा करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है। विष्णुस्थान—यहाँ स्नान और दर्शन करनेसे अश्वमेधका फल और विष्णुलोकमें गमन होता है। पारिप्लवतीर्थ—यहाँ अग्निष्टोम और अतिरात्र यज्ञका फल मिलता है। पृथिवी तीर्थ—यहाँ सहस्र गोदान तुल्य फल होता है। शालूकिनीतीर्थ—स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है। सर्पिदोतीर्थ—यहाँ जानेसे अग्निष्टोमका फल और नागलोकको प्राप्ति होती है। तरन्तुकद्वारपाल तीर्थ—यहाँ रात्रिवास करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है।

पञ्चनदतीर्थ—यहाँ स्नान करनेसे अश्वमेधका फल होता है। अश्वितीर्थ—फल उत्तमरूप। वराहतीर्थ—फल अग्निष्टोमतुल्य। जयन्तीतीर्थ—फल राजसूययज्ञतुल्य। एकहंसतीर्थ—फल सहस्र गोदानतुल्य। कृतशौचतीर्थ—फल पुण्डरीकयज्ञ तुल्य।

मुञ्जावटतीर्थ—यह महादेवका स्थान है; यहाँ एक रात्रि वास करनेसे गाणपत्यकी प्राप्ति होती है। कामदम्पालपुष्कर तीर्थ—यहाँ स्नान पूजा करनेसे अश्वमेधका फल होता है। रामह्रदतीर्थ—परशुरामके क्षत्रियोंके विनाश करने पर उनके रक्तसे ५ ह्रद उत्पन्न हुए थे। यहाँ पितरोंका तर्पण करनेसे बहु सुवर्णयज्ञका फल होता है। वंशमूलकतीर्थ—यहाँ स्नान करनेसे कुलका उद्धार

होता है। कायशोधनतीर्थ—यहां स्नान करनेसे देहकी शुद्धि होती है। लोकोद्धारतीर्थ—फल, स्वकीय लोकोद्धार। श्रीतीर्थ—फल, उत्तम श्रीप्राप्ति। कपिलातीर्थ—यहां स्नान तथा देवता और पितरोंकी पूजा करनेसे सहस्र कपिलादानका फल होता है। सूर्यतीर्थ—यहां उपवास, पितृपूजा और स्नान करनेसे अग्निष्टोम फल और देवलोककी प्राप्ति होती है। गोभवनतीर्थ—यहां अभिषेक करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है। शङ्खिनीतीर्थ—यहां स्नान करनेसे उत्तम वीर्यकी प्राप्ति होती है।

ब्रह्मावर्त्ततीर्थ—स्नानका फल, ब्रह्मलोककी प्राप्ति। सुतीर्थ—यहां स्नान, पितृ और देवपूजा करनेसे अश्वमेध तुल्य फल और पितृलोककी प्राप्ति होती है। अम्बुमतीतीर्थ—यहां स्नान करनेसे समस्त रोगोंका नाश और ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। शीतवनतीर्थ—यहां केशमुण्डन करनेसे पवित्रता होती है। स्वानलोमापहतीर्थ—यहां स्नान करनेसे परमगति प्राप्त होती है। दशाश्वमेधतीर्थ—स्नानका फल, शिवलोकगतिकी प्राप्ति। मानुषतीर्थ—यहां व्याधपीड़ित कृष्णमृगोंको, अवगाहन करनेसे मानुषत्व प्राप्त हुआ था। फल, पापोंका विनाश। आपगानदी—यहां देवता और पितरोंके उद्देशसे ब्राह्मणभोजन करनेसे कोटि ब्राह्मणभोजनका फललाभ होता है। ब्रह्मोदुम्बर तीर्थ—यहांके सप्तर्षिकुण्डमें स्नान करनेसे सम्पूर्ण पापोंका नाश और ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है।

कपिलकेदारतीर्थ—यहां तपस्या करनेसे समस्त पापोंका नाश और अन्तर्द्धानकी प्राप्ति होती है। सरकतीर्थ—वृषध्वजको प्रणाम करनेसे समस्त कामनाओंकी सिद्धि और शिवलोक प्राप्ति होती है। इलास्पदतीर्थ—स्नान, देवता और पितृपूजासे दुर्गतिका विनाश और वाजपेयका फल प्राप्त होता है। किन्दानतीर्थ—स्नानसे अप्रमेय दानका फल प्राप्त होता है। किंजप्यतीर्थ—स्नानसे अप्रमेय जपका फल होता है। अम्बाजन्मतीर्थ—यह नारदका स्थान है, यहां मृत्यु होनेसे अनुत्तम लोककी प्राप्ति होती है। वैतरणीनदीतीर्थ—यहां महादेवकी पूजा और स्नान करनेसे समस्त पापोंसे मुक्ति और परमपदकी प्राप्ति होती है। फलकीतीर्थ और मिश्रकतीर्थ—नारदने यहां सभी तीर्थ मिलाये हैं; स्नान करनेसे सर्वतीर्थ स्नानका फल होता है। मधुवटीतीर्थ—स्नान देवता और पितृपूजन करनेसे सहस्र गोदान तुल्य फल होता है। कौशिकीदृषद्वतीसङ्गमतीर्थ—स्नानसे पापोंका नाश होता है। विन्दूत्तकूप तीर्थ—तिलप्रस्थदान करनेसे ऋणत्रयसे मुक्ति और परमसिद्धि प्राप्त होती है। वेदीतीर्थ—स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है। अहः और सुदिनतीर्थ—यहां दान करनेसे सूर्यलोक प्राप्ति होती है।

मृगधूमतीर्थमें स्नान और वामनपूजा करनेसे सम्पूर्ण पापोंका नाश और सूर्यलोकप्राप्ति, सरस्वतीतीर्थमें स्नान करनेसे स्वर्गवास और नैमिषकुञ्जतीर्थमें स्नान करनेसे अश्वमेधका फल होता है। कन्यातीर्थमें स्नान करनेसे ज्योतिष्टोमका फल, ब्रह्मस्थानतीर्थमें स्नान करनेसे शूद्रको ब्राह्मणत्व-प्राप्ति, सप्तसारस्वततीर्थमें स्नान और जप करनेसे ब्रह्मलोक-प्राप्ति, अग्नितीर्थ स्नानसे वह्निलोक लाभ, विश्वामित्रतीर्थ स्नानसे ब्राह्मण्यप्राप्ति, ब्रह्मयोनितीर्थ स्नानसे ब्रह्मलोकवास, पृथूदकतीर्थमें अभिषेक करनेसे अश्वमेध-फल और पापियोंको स्वर्गलाभ होता है। मधुस्रवतीर्थमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है। सरस्वत्यरुणासङ्गमतीर्थमें तीन रात्रि उपवास और स्नान करनेसे ब्रह्महत्याजनित पापका नाश होता है।

अवकीर्णतीर्थ-स्नानसे दुर्गतिका नाश होता है। शतसहस्रतीर्थ और साहस्रकतीर्थमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है, दान और उपवाससे फलकी शतगुण वृद्धि होती है। रेणुकातीर्थमें अभिषेक, देवता और पितृपूजन करनेसे समस्त पापोंका नाश और अग्निष्टोमयज्ञका फल होता है। विमोचनतीर्थमें स्नान करनेसे समस्त प्रतिग्रह पापोंसे मुक्ति मिलती है। पञ्चवटतीर्थ—फल, महत् पुण्यलाभ और स्वर्गगमन। तैजसतीर्थ—यहां ब्रह्मादि देवोंने कार्त्तिकेयको सेनापति पद पर अभिषिक्त किया था। कुरुतीर्थमें स्नान करनेसे रुद्रलोक प्राप्त होता है। स्वर्गद्वारतीर्थमें जानेसे अग्निष्टोमयज्ञका फल प्राप्त होता है। अनरकतीर्थमें जानेसे दुर्गति नष्ट

होती है। अग्निपुरतीर्थ—इस जगह पितृ और देवताओंका तर्पण करनेसे अग्निष्टोमका फल होता है। गङ्गाह्रदकूपतीर्थमें स्नान करनेसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। स्थाणुवटतीर्थमें स्नान और एक रात्रि उपवास करनेसे रुद्रलोककी प्राप्ति होती है। बदरीपाचनतीर्थ—यहां वसिष्ठका आश्रम है। तीन रात्रि उपवास और बदरी फल भक्षण करनेसे अश्वमेधका फल और इन्द्रलोककी प्राप्ति होती है। इन्द्रमार्गतीर्थमें अहोरात्र उपवास करनेसे इन्द्रलोककी प्राप्ति होती है। आदित्याश्रमतीर्थ-स्नानसे स्वर्गलोक प्राप्त होता है। सोमतीर्थमें स्नान करनेसे सोमलोकमें गमन होता है। ब्रह्मावर्ततीर्थ—यहां तीन रात्रि अवस्थान और उपवास करनेसे ब्रह्मलोकमें गमन होता है। दधीचितीर्थ-स्नानसे सारस्वतयज्ञका फल होता है। सन्निहितीतीर्थ—यहां अमावस्याके दिन सम्पूर्ण तीर्थोंका समागम होता है। अमावस्याके दिन और सूर्यग्रहणके समय स्नान करनेसे शत अश्वमेधका फल होता है। सूर्यग्रहणमें स्नानमात्रसे समस्त पापोंका नाश और ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। गङ्गाह्रदतीर्थमें स्नान करनेसे राजसूय और अश्वमेधयज्ञका फल होता है। इसके बाद नारायणस्तीर्थमें स्नान करनेसे अग्निष्टोमयज्ञका फल और विष्णुलोककी प्राप्ति होती है।

सौगन्धिकवनतीर्थ—यहां ब्रह्मा आदि देव प्रति दिन आया करते हैं, इस वनमें प्रवेशमात्रसे ही समस्त पापोंका विनाश होता है। ब्रह्मसरस्वतीतीर्थमें स्नान, पितृ और देवपूजा करनेसे अश्वमेधयज्ञका फल होता है। ईशानाध्युषिततीर्थ—यहां त्रिरात्रोपवास और मासाहार करनेसे द्वादशवर्ष मासाहारका फल होता है। शुभ पांचतीर्थ—यहां महादेव स्वयं विराजित हैं, शिवपूजा द्वारा अश्वमेधयज्ञका फल और गाणपत्यकी प्राप्ति होती है। धूमावतीतीर्थमें त्रिरात्र उपवास द्वारा मनस्कामनाकी सिद्धि होती है। रथावर्ततीर्थमें आरोहण करनेसे महादेवके प्रसादसे परमगति होती है। धारातीर्थमें स्नान करनेसे शोक नष्ट होता है। गङ्गाद्वारतीर्थमें स्नान करनेसे पुण्डरीक यागका फल होता है।

सप्तगङ्ग त्रिगङ्ग और शक्रावर्ततीर्थ—इन तीन तीर्थोंमें पितृ और देवताओंका तर्पण करनेसे पुण्यलोककी प्राप्ति होती है। गङ्गायमुनासङ्गमतीर्थमें स्नान करनेसे दशाश्वमेधका फल और कुलका उद्धार होता है। कनखलतीर्थमें स्नान और त्रिरात्र उपवास करनेसे वाजिमेध फल और ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। कपिलावटतीर्थमें एक दिन उपवास करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है। कपिलानागराजतीर्थमें अभिषेक करनेसे सहस्र कपिलादानका फल होता है। ललितिकातीर्थमें स्नान करनेसे दुर्गतिका नाश होता है। सुगन्धातीर्थमें जानेसे समस्त पापोंका नाश और ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। गङ्गासरस्वतीसङ्गमतीर्थमें स्नान करनेसे अश्वमेधका फल और स्वर्ग गमन होता है। भद्रकर्णतीर्थमें स्नान और शिवपूजा करनेसे दुर्गति नहीं होती। कुमारिकतीर्थमें जानेसे सर्वकाम, अरुन्धतीवटतीर्थमें एक रात्रि वास करनेसे सहस्र गोदानका फल और कुलोद्धार होता है। ब्रह्मावर्ततीर्थमें जानेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल और ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। यमुनाप्रभवतीर्थ-स्नानसे अश्वमेध-फल और ब्रह्मलोकगमन होता है। सिन्धुप्रभवतीर्थमें पञ्चरात्र वास करनेसे बहुसुवर्णयज्ञका फल होता है। सर्वदेवीतीर्थमें जानेसे अश्वमेधयज्ञका फल और स्वर्गलोकका लाभ होता है। वासिष्ठोमहीतीर्थमें जानेसे सभी वर्णोंको द्विजत्वकी प्राप्ति और स्नानोपवास करनेसे ऋषिलोक प्राप्ति होती है। भृगुतुङ्गतीर्थमें जानेसे अश्वमेधका फल, वीरप्रमोक्षतीर्थमें जानेसे समस्त पापोंका नाश, विद्यातीर्थस्नानसे सर्वत्र विद्यालाभ और महाश्रमतीर्थमें उपवास करनेसे शुभलोककी प्राप्ति होती है।

महालयतीर्थमें उपवास और एक मास वास करनेसे अपने साथ २१ पीढ़ीका उद्धार होता है। वेतसीतीर्थ गमनसे अश्वमेधफल और औशनसगति प्राप्ति, सुन्दरिकातीर्थ-गमनसे रूपप्राप्ति, ब्राह्मणिकातीर्थ गमनसे ब्रह्मलोक लाभ, नैमिषतीर्थमें प्रवेश करनेसे समस्त पापोंका नाश, स्नान करनेसे सप्तकुलोद्धार और प्राणत्याग द्वारा स्वर्गकी प्राप्ति होती है। गङ्गोद्भेदतीर्थमें तीन दिन उपवास करनेसे वाजिमेधका फललाभ और विष्णुलोकमें वास होता है। देवता और पितृतर्पण करनेसे सारस्वतलोकमें वास होता है। बाहुदानदीतीर्थमें एक रात्रि वास करनेसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है।

गोप्रचारतीर्थमें स्नान करनेसे समस्त पापोंका नाश और देवलोकको प्राप्ति होती है। रामतीर्थमें स्नान करनेसे अश्वमेधका फल, शतसहस्रतीर्थमें जानेसे राज-सूय और अश्वमेधका फल, राजगृह तीर्थमें स्नान करनेसे कुबेर-तुल्य सन्तोष, मणिनागतीर्थमें जानेसे सहस्र गो-दानका फल और सर्पविष भय नष्ट होता है। गौतमवन तीर्थ—यहांके अहल्याहृदमें स्नान करनेसे परमगति प्राप्त होती है। श्रीदेवीतीर्थमें जानेसे श्रीप्राप्ति, उदपान तीर्थमें अभिषेक करनेसे वाञ्छित फल प्राप्ति, जनकराज कूप तीर्थमें अभिषेक करनेसे विष्णुलोक प्राप्ति, विनशन-तीर्थमें जानेसे वाजपेय-फलप्राप्ति, गण्डकीतीर्थमें स्नान करनेसे सूर्यलोकमें वास, कम्पनानदीमें जानेसे पुण्डरीकयज्ञका फल, विशालनदीतीर्थमें जानेसे अग्निष्टोमका फल और स्वर्गलोकमें निवास, माहेश्वरी तीर्थमें जानेसे अश्वमेधका फल और स्वकुलोद्धार, दिवौकःपुष्करिणीमें जानेसे दुर्गतिका विनाश और वाजिमेधका फल, शालग्रामतीर्थमें जानेसे अश्वमेधका फल, महेश्वरपदतीर्थमें स्नान करनेसे अश्वमेधका फल, नारा-यणस्थानतीर्थमें जानेसे अश्वमेधका फल और इन्द्रलोक-में वास तथा जातिस्मरतीर्थमें स्नान करनेसे जातिस्मरत्व प्राप्त होता है।

वटेश्वरपुरतीर्थमें केशवके दर्शन, पूजन और उपवास करनेसे अभीष्टकी सिद्धि होती है। वामनतीर्थमें जाने-से दुर्गतिका विनाश और विष्णुलोक प्राप्ति, भरतकाश्रम तीर्थमें एक रात्रि अवस्थान करनेसे सहस्र गोदानका फल, कोटीश्वरतीर्थमें एक रात्रि उपवास करनेसे अग्नि-ष्टोमका फल, कन्यासंवेद्यतीर्थमें [illegible] करनेसे मनुलोककी प्राप्ति, निश्चीरानदीतीर्थमें जानेसे अश्वमेध-का फल और स्वकुलोद्धार तथा वशिष्ठाश्रममें अभिषेक करनेसे वाजपेययज्ञका फल प्राप्त होता है। देवकूट तीर्थमें वाजपेयका फल और स्वकुलोद्धार होता है।

कौशिकमुनिह्रद—इस स्थानमें एक मास वास करने-से अश्वमेधका फल होता है। सर्वतीर्थवरह्रद—यहां वास करनेसे बहुसुवर्णयागका फल और दुर्गतिका विनाश होता है। वीराश्रमतीर्थमें जानेसे अश्वमेधका फल अग्निधारा-तीर्थमें जानेसे अश्वमेधका फल और स्वकुलोद्धार, पितामहसरमें अभिषेक करनेसे अग्निष्टोम-का फल, कुमारधारातीर्थमें स्नान करनेसे कृतार्थता और ब्रह्महत्यादि पापका विनाश, गौरीशिखरतीर्थमें आरोहण, स्नान, देवता और पितृपूजन करनेसे वाजिमेध-का फल और स्वर्गगमन, [illegible]तीर्थ और श्रोत-स्थानतीर्थमें अभिषेक करनेसे सकल पापोंका नाश, ब्रह्म-तीर्थमें जानेसे वाजपेयका फल, चम्पातीर्थमें जानेसे सहस्र गोदानका फल ललितिकातीर्थमें जानेसे राजसूयका फल तथा [illegible]तीर्थमें स्नान करनेसे सिद्धि प्राप्त होती है। [illegible]में जानेसे [illegible]का फल, [illegible]तीर्थमें एक रात्रि उपवास करनेसे [illegible]का फल और [illegible]में जानेसे सहस्र गोदानका फल और स्वर्गवास होता है। [illegible]में स्नान और त्रिरात्र उपवास करनेसे कामनाओंकी सिद्धि, [illegible]तीर्थमें जानेसे समस्त पापोंका नाश और [illegible]तीर्थमें जानेसे चन्द्रमाकी भांति शान्ति लाभ होता है। [illegible]में जानेसे पाप नष्ट होते हैं। [illegible]में पितृ और देव-तर्पण करनेसे अग्निष्टोमका फल प्राप्त होता है। सोम-प्रभव, नर्मदासङ्गम और वंशगुल्म इन तीन तीर्थोंमें स्नान करनेसे अश्वमेधका फल प्राप्त होता है। ऋषभ-तीर्थमें जानेसे सहस्र गोदानका फल, पुण्यतीर्थमें स्नान और त्रिरात्र उपवास करनेसे सहस्र गोदानका फल और कुलोद्धार होता है। बदरिकाश्रममें स्नान करनेसे दीर्घायुलाभ और स्वर्गगमन होता है। महेन्द्र-पर्वत पर रामतीर्थमें स्नान करनेसे अश्वमेधका फल, मतङ्ग-केदार स्नानसे स्वर्गलोक लाभ, श्रीपर्वतनामक पर्वती-र्थमें स्नान करनेसे अश्वमेधका फल और स्वर्गगति प्राप्त होती है। ऋषभपर्वत पर जानेसे वाजपेयका फल, कावेरीतीर्थमें जानेसे सहस्र गोदानका फल, कन्यातीर्थ स्पर्शनसे समस्त पापोंका नाश, गोकर्णतीर्थमें स्नान, उप-वास, पूजा आदि करनेसे अश्वमेध यज्ञादिका फल, गायत्री-तीर्थ-गमनसे रूप और सौभाग्यप्राप्ति, वेणातटमें देवता और पितृतर्पण करनेसे मयूर और हंसयुक्त विमान प्राप्ति, गोदावरीतीर्थमें जानेसे वायुलोक-प्राप्ति, वेणा-सङ्गममें स्नान करनेसे सब पापोंका नाश, वरदासङ्गममें स्नान करनेसे वाजिमेधका फल तथा ब्रह्मस्थानमें तीन

दिन उपवास करनेसे सहस्र गोदानका फल प्राप्त होता है।

कृष्णप्रश्नतीर्थमें स्नान और उपवास करनेसे अन्त-मेधकी प्राप्ति होती है। देवकूट, कामवेष्णा-मसुकुमन, ज्योतिर्मीवकूट और कन्याश्रम, इन चार तीर्थोंकी यात्रा करनेसे अग्निहोमयज्ञका फल होता है। पयोष्णी नदीमें स्नान और तर्पण करनेसे सहस्र गोदानका फल तथा दण्डकारण्य, शरभङ्गाश्रम और शुक्राश्रममें जानेसे दुर्गतिका नाश और अक्षयोद्धार होता है। शूर्पारक, रामतीर्थ सप्तगोदावर, देवपथ तुङ्गकारण्य मेधाविक, कालञ्जरपर्वत, हिमकूट, चित्रकूटपर्वत, मन्दाकिनी, ज्येष्ठ स्थान, शृङ्गवेरपुर, सुवर्णकूट आदि तीर्थोंमें स्नान, दान, पूजा, तर्पण आदि करनेसे अश्वमेध आदि यज्ञका फल और स्वर्गलाभकी प्राप्ति होती है।

प्रयाग वासुकितीर्थ, अयोध्या, मथुरा, गया, काञ्ची, काशी, अवन्ती, पुरी और द्वारावती ये सब तीर्थ मोक्षदायक हैं। पुष्कर, केदार, इक्षुमती मदूषक आदि तीर्थ पितृकार्यके लिये प्रशस्त हैं। अमरकण्टक, वरोदक, मङ्गलेश्वर, महालय, महेश्वर, विष्णुपद, नर्मदातट और गया ये सब पितृतीर्थ कहलाते हैं। गयाकी तरह यहां भी पिण्डदान करनेसे मुक्ति होती है। ये तीर्थ समस्त पापोंको हरण करनेवाले हैं, इनका नामस्मरण करनेसे ही पवित्र पुण्य होता है, पिण्डदानकी तो बात ही क्या? प्रयागीर्थ, अक्षयवट, अमरकण्टकपर्वत, वराह पर्वत नर्मदातीर, मथुरा कृष्णावती, विशाल, सुमन्ना, माधवधारो, फल्गु, महासरा, कुमारधारा, प्रभास, सरस्वती, प्रयाग महासागरसङ्गम नैमिषारण्य, वाराणसी अगस्त्याश्रम, कौशिकी, सरयूतीर्थ शोणो ज्योतिष्मती, विपाशा वितस्ता शतद्रु, चन्द्रभागा और इरावती ये सब तीर्थ श्राद्धके लिये प्रशस्त हैं। (विष्णुसंहिता)

ऊपर जो कुछ तीर्थोंका फल कहा गया है वह सब उन्हींके लिए है जो जितेन्द्रिय हैं। अजितेन्द्रियोंके तीर्थमें जानेसे उनका मन पवित्र होता है, विषयासक्ति घट जाती है, इसलिए प्रत्येकको तीर्थयात्रा करना उचित है। तीर्थमें पापाचरण करनेसे वह पाप अक्षय हो जाता है। अतएव तीर्थोंमें इन्द्रिय, पद और इन्द्रियोंको विशेष रूपसे संयत रखना चाहिये।

१९ हस्तस्थित तीर्थ शास्त्रमें कोई विशिष्ट स्थान। दाहिने हाथके अङ्गूठेमें उसके जो रेखा गई है उस का नाम ब्रह्मतीर्थ है। आचमनके समय इस ब्रह्मतीर्थ-से जल ले कर आचमन करना चाहिये। तर्जनी और अंगुष्ठका मध्यभाग पितृतीर्थ है। इस तीर्थके द्वारा नान्दीमुखके सिवा अन्य समस्त श्राद्धोंमें पिण्डादि दिये जाते हैं। अङ्गुलिके अग्रभागमें देवतीर्थ है इसके द्वारा देवकार्य करना चाहिये। कनिष्ठा अङ्गुलिके अधो-भागका नाम काय वा प्राजापत्यतीर्थ है; इसके द्वारा पितरोंके साथ देवताओंका कार्य किया जाता है।

(मार्क॰ पु॰ ३४।१०२—१०७)

२० मन्त्री आदि राजाकी अठारह सम्पत्तियां, जिनके नाम इस प्रकार है—१ मन्त्री, २ पुरोहित, ३ युवराज, ४ भूपति, ५ द्वारपाल, ६ अन्तर्वंशिक, ७ कारागाराधि-कारी, ८ द्रव्यसञ्चयकारक, ९ कृत्याकृतमें अर्थका विनि-योजक १० प्रदेष्टा, ११ नगराध्यक्ष, १२ कार्यनिर्माण कारक, १३ धर्माध्यक्ष, १४ सभाध्यक्ष १५, दण्डपाल, १६ दुर्गपाल, १७ राष्ट्रान्तपाल, १८ अटवीपाल। राजा इन अठारह तीर्थोंमें अवगाहन करके कृतकृत्य होते हैं अर्थात् इनको भलीभांति काम देनेसे ही राजा राजकार्य सुचारुरूपसे चला सकते हैं। (नीलकण्ठ)

२१ पुण्यस्थान। २२ वह जो तार दे, तारनेवाला। २३ ईश्वर। २४ अतिथि अभ्यागत। २५ पितामाता। २६ पैरलाभका काम कर परस्पर उचित व्यवहार।

२७ अग्न्याधानका पर्वविमान प्रदेश। पर्वविमान स्थानको छोड़ कर योगकार्य करना चाहिये। (बालिकस्तव)

२८ ब्राह्मणोंको उपाधिविशेष। जो तत्त्वमस्यादि वाक्यरूप तिर्थोंसहरमें तत्त्वार्थमात्रके स्नान कर चुके हैं, वे ही तीर्थ उपाधिके योग्य हैं। २९ अवसर।

तीर्थक (सं॰ त्रि॰) तीर्थ कन्। १ योग्य, लायक। (पु॰) २ तीर्थ जाती, वह जो तीर्थोंकी यात्रा करता हो। ३ ब्राह्मण। ४ तीर्थंकर।

तीर्थंकर (सं॰ पु॰) तीर्थं शास्त्रं करोति कृ-ट। १ जिन। २ विष्णु। ३ जो चौदह विद्याओं शास्त्रविद्याओंमें प्रणेता तथा प्रवक्ता हैं, उन्होंने उपयोग रूपमें सह और कैटभको मार

कर सृष्टिके पहले ब्रह्माको समस्त श्रुति और अन्य विद्याओं-का उपदेश दिया था तथा असुर और दस्युओंको मोहित करनेके लिये बाह्यविद्याका प्रदान किया था। (त्रि०) २ शास्त्रकार।

तीर्थकाक (सं० पु०) तीर्थे काक इव लोलुपत्वात्। तीर्थस्थित काककी नाईं व्यवहारी, जिस तरह कौवा इधर उधर भोजन ढूंढनेमें व्यस्त रहता है, उसी तरह बहुतसे मनुष्य तीर्थमें जा कर कौवेकी नाईं अर्थानुसन्धानमें व्यस्त रहते हैं वे अत्यन्त पापी होते और अन्तमें नरक वास करते हैं। (पुराण)

तीर्थकृत (सं० पु०) तीर्थं करोति तीर्थ-कृ क्विप् तुगागमश्च। १ जिनदेव। (त्रि०) २ शास्त्रकार।

तीर्थङ्कर (सं० पु०) तीर्थं संसारसमुद्रतरणं करोति कृ-अच्-मुमच। जिन, जिनेन्द्र भगवान्, जैनोंके उपास्य देव जो देवताओंमें भी श्रेष्ठ और सब प्रकारके दोषोंसे रहित, मुक्त और मुक्तिदाता हैं। इनकी मूर्तियां दिगम्बर होती हैं और उनकी आकृति प्रायः एकसी होती है। केवल उनका वर्ण और सिंहासनका आकार ही एक दूसरेसे भिन्न होता है। तीर्थङ्करोंकी जितनी भी मूर्तियां देखनेमें आती हैं, वे सब या तो पद्मासन होती हैं या खड्गासन। इनके आसनके नीचे वृषभ, गज, अश्व आदि विभिन्न चिह्न * अङ्कित रहते हैं, जिनसे उनका परिचय मिलता है कि ये अमुक (ऋषभनाथ वा अजितनाथ आदि) तीर्थङ्करकी प्रतिमूर्ति है।

जैन-हरिवंश, जिनेन्द्रपञ्चकल्याणक आदि ग्रन्थोंके अनुसार नीचे तीर्थङ्करोंका संक्षिप्त विवरण लिखा जाता है—

जिस समय तीर्थङ्कर भगवान् स्वर्गके विमानोंसे च्यवन कर अपनी माताके गर्भमें अवतरण करते हैं, उसके छः महीने पहलेसे ही सौधर्म नामक प्रथम स्वर्गके इन्द्र उस नगरकी शोभा वर्द्धनके लिए कुवेरको भेजते हैं। कुवेर नगरमें आकर वहां रत्नोंके मन्दिर, वन, उपवन कूप, बावड़ी आदि निर्माण करते हैं; और साथ ही नगरमें रत्नोंकी वर्षा करते हैं, जिससे नगरस्थ कोई भी व्यक्ति दरिद्र नहीं रहता। सब आनन्दसे कालातिपात करते हैं। इन्द्रकी आज्ञा पा कर रुचिक पर्वत पर रहनेवाली देवियां आ कर नाना प्रकारसे माताकी सेवा करने लगती हैं। छः महीने बीतने पर तीर्थङ्करकी माताको रात्रिके शेष भागमें श्वेत ऐरावत हस्ती आदि १६ स्वप्न दिखाई देते हैं। स्वप्नोंसे माता पिताको यह निश्चय हो जाता है कि उनको त्रिभुवनविजयी पुत्ररत्नकी प्राप्ति होगी। दोनों भगवान्‌के जन्मावधि सहर्ष कालातिपात करते हैं। गर्भमें ही उनके मति, श्रुति और अवधि ये तीन ज्ञान होते हैं। जिस समय मति-श्रुत-अवधिज्ञान-विशिष्ट तीर्थङ्कर भगवान्‌का जन्म होता है, उसी समय तीन लोकके प्राणी आनन्दित होते हैं और इन्द्रका आसन कांपने लगता है। इससे उनको तीर्थङ्करके जन्मका संवाद मालूम हो जाता है। साथ ही भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके भवनोंमें घण्टा आदिका रव होने लगता है, जिससे उनको भी मालूम हो जाता है कि भगवान्‌का जन्म हुआ। उसी समय कुवेर नव योजन परिमित † ‡ नगरीकी रचना करते हैं, जिस पर इन्द्र अपने परिवार सहित चढ़ कर मर्त्यलोकमें अवतरण पूर्वक जय जय शब्द करते हुये नगरकी प्रदक्षिणा देते हैं। इन्द्राणी प्रसूतिगृहमें जा कर भगवान्‌की माताको मायाबलसे निद्रित कर देती हैं और वहां दूसरे मायामयी बालकको रख कर तीर्थङ्कर भगवान्‌को बाहर ले आती हैं। इन्द्र जब भगवानके रूपको देखते देखते तृप्त नहीं

* चिह्नोंका विवरण "जैनधर्म" शब्दमें 'जिनपाठ' शीर्षक तालिकामें देखना चाहिये।

† सोलह स्वप्न इस प्रकार हैं—१ श्वेतवर्ण ऐरावत हस्ती, २ सुन्दर स्कन्धविशिष्ट श्वेत वृषभ (बैल), ३ उछलते हुये सुन्दर कान्तिविशिष्ट केशरी वा सिंह, ४ निर्मलजलपूर्ण दो स्वर्णघटोंसे नहाती हुई लक्ष्मी, ५ आकाशमें लटकती हुई कल्पवृक्षोंके पुष्पोंकी दो माला, ६ पूर्ण चन्द्र, ७ सूर्य, ८ जलमें केलि करती हुई दो मछलियां, ९ केशर चन्दनादिलिप्त रत्नपूर्ण दो घट, १० निर्मल जलपूर्ण सरोवर, ११ समुद्र, १२ रत्नजड़ित सुवर्णका सिंहासन, १३ देव-देवाङ्गनाओंसे शोभित रत्नजड़ित इन्द्रका विमान, १४ पृथिवीको चीर कर निकलता हुआ धरणेन्द्रका भवन, १५ पंचवर्णविशिष्ट रत्नराशि और १६ धनदहनशिखा विशिष्ट अग्नि।

‡ यह नगरी देवकृत मायामयी होती है, इसलिए इसके आगमनसे किसीको बाधा नहीं होती।

होता तब वह उसी समय १००० नेत्र बना लेता है। प्रथम स्वर्गके सौधर्म इन्द्र प्रभुको भगवान्‌को गोदमें लेते हैं और द्वितीय स्वर्गके ऐशान इन्द्र उन पर छत्र लगाते हैं। तीसरे और चौथे स्वर्गके इन्द्र दोनों तरफ खड़े हुए भगवान् पर चमर ढारते हैं। अन्य समस्त इन्द्र एवं देव आदि 'जय जय' शब्द उच्चारण करते हैं। अनन्तर भगवान्‌को ऐरावत हस्ती पर चढ़ा कर महासमारोहके साथ सुमेरु पर्वत पर ले जाते हैं। वहाँ अर्द्धचन्द्राकार पाण्डुकशिला पर रखे हुए रत्नमयी सिंहासन पर भगवान्‌को विराजमान करते हैं। उस समय अनेक प्रकारके बाजे बजते हैं, अप्सरायें मङ्गलगान करती हैं और देवकुमार नृत्य करते हैं। देवगण हाथों हाथ क्षीर-समुद्रके १००८ कलश भर कर लाते हैं और सौधर्म एवं ऐशान इन्द्र उनसे भगवान्‌का अभिषेक करते हैं। फिर इन्द्राणी तीर्थङ्कर भगवान्‌को वस्त्राभूषण पहनाती है। पश्चात् उसी प्रकार समारोहके साथ नगरकी ओर लौटते हैं और भगवान्‌को माताके हाथमें सौंप कर ताण्डवनृत्य करते हैं। अनन्तर माताकी सेवाके लिए कुबेरको नियुक्त कर इन्द्र, इन्द्राणियां और समस्त देव अपने अपने स्थानको चले जाते हैं। बाल्य अवस्थामें तीर्थङ्करोंके साथ खेलनेके लिए देवगण बालकका रूप धारण कर क्रीड़ा करते हैं। तीर्थङ्कर किसीके निकट अध्ययन नहीं करते।

इसी तरह जब भगवान् राज्यादि भोग कर दीक्षा ग्रहण करते हैं, तब ५म ब्रह्मस्वर्गके लौकान्तिक नामक देव आ कर उनके वैराग्यकी प्रशंसा करते हैं और इन्द्र पालकी पर चढ़ा कर उन्हें वनमें पहुंचा आते हैं। तीर्थङ्कर "नमः सिद्धेभ्यः" कह कर केशलुञ्चन करते हैं। इन्द्र उन केशोंको रत्नमयी पिटारीमें रख कर क्षीरसागरमें निक्षेप करते हैं। इसके बाद केवलज्ञान प्राप्त होने पर इन्द्रकी आज्ञासे कुबेर आदि देवगण समवसरण (तीर्थङ्करोंकी सभा) की रचना करते हैं। इसके सिवा निम्न-लिखित विशेषताएं हो जाती हैं। एक सौ योजन तक सुभिक्ष हो जाता है। तीर्थङ्कर बिना इच्छाके आकाश मार्गमें विहार करते हैं और उनके चरणोंके नीचे देव कमल रचते जाते हैं। उनका मुख चारों दिशाओंमें दीखता है किन्तु होता एक ही है। उन पर किसी तरहका उपसर्ग नहीं होता और न वे भोजन ही करते हैं। समवसरणमें आये हुए प्राणी भी परस्पर अविरोधी मैत्रीभाव धारण करते हैं। आकाश, दिशाएं और पृथ्वी निर्मल हो जाती हैं। छहों ऋतुओंके फूल एक साथ फल आते हैं। चतुस्त्रिंशदतिशय देखो। इसके बाद जब उनको मोक्षकी प्राप्ति होती है, तब स्वर्गसे इन्द्रादि देव आते हैं। चन्दनादिके साथ अग्निकुमार जातिके देवोंके मुकुटोंकी अग्निसे दाह-क्रिया सम्पन्न होती है। इन्द्रादि देव उनका भस्म मस्तकमें लगाते और स्तुति पूजादि करते हैं।

तीर्थङ्कर हमेशा २४ ही होते हैं, इसमें न्यूनाधिक्य नहीं होता; न तेईस ही हो सकते हैं और न पचीस।

जैनागममें उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी इन दो कालविभागोंका उल्लेख है। जैनधर्म देखो। उत्सर्पिणी कालमें निम्नलिखित २४ तीर्थङ्कर हो गये हैं, जिन्हें साधारणतः "अतीत चौबीसी" कहते हैं। यथा—

(१) श्रीनिर्वाण (२) सागर, (३) महासाधु, (४) विमलप्रभु, (५) श्रीधर, (६) सुदत्त, (७) अमलप्रभु, (८) उद्धर, (९) अङ्गिर, (१०) सन्मति, (११) सिन्धुनाथ (१२) कुसुमाञ्जलि, (१३) शिवगण, (१४) उत्साह (१५) ज्ञानेश्वर, (१६) परमेश्वर, (१७) विमलेश्वर, (१८) यशोधर (१९) कृष्णमति, (२०) ज्ञानमति (२१) शुद्धमति, (२२) श्रीभद्र, (२३) अतिक्रान्त, और (२४) शान्ति।

वर्त्तमान अवसर्पिणीकालमें जो २४ तीर्थङ्कर हो गये हैं उन्हें साधारण 'वर्त्तमान चौबीसी' कहते हैं और उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) ऋषभदेव* या आदिनाथ (२) अजितनाथ, (३) सम्भवनाथ, (४) अभिनन्दननाथ (५) सुमतिनाथ, (६) पद्मप्रभ, (७) सुपार्श्वनाथ, (८) चन्द्रप्रभ (९) पुष्पदन्त, (१०) शीतलनाथ (११) श्रेयांसनाथ (१२) वासुपूज्य (१३) विमलनाथ (१४) अनन्तनाथ (१५) धर्मनाथ, (१६) शान्तिनाथ, (१७) कुन्थुनाथ (१८) अरनाथ (१९) मल्लिनाथ, (२०) मुनिसुव्रतनाथ, (२१) नमिनाथ (२२) नेमिनाथ (२३) पार्श्वनाथ और (२४) वर्द्धमान या महावीर स्वामी।

* श्रीमद्भागवतके मतसे ये ही विष्णुके अष्टम अवतार हैं।

इनमेंसे १म तीर्थङ्कर श्रीऋषभनाथ भगवान् कैलाश पर्वतसे, १२वें श्रीवासुपूज्य चम्पापुरीसे, २२वें श्रीनेमिनाथ गिरनार पर्वतसे, २४वें श्रीमहावीरस्वामी पावापुरसे और शेष बीस तीर्थङ्कर श्रीसम्मेदशिखर वा पार्श्वनाथ पहाड़से मोक्ष वा निर्वाणप्राप्त हुए हैं।

भविष्यमें होनेवाले २४ तीर्थङ्करोंको सचराचर "अनागत चौबीसी" कहते हैं; जिनके नाम इस प्रकार हैं—

(१) श्रीमहापद्म, (२) सुरदेव, (३) सुपार्श्व, (४) स्वयंप्रभु, (५) सर्वात्मभूत, (६) श्रीदेव, (७) कुलपुत्र-देव, (८) उदङ्कदेव, (९) प्रोष्ठिलदेव, (१०) जयकीर्ति, (११) मुनिसुव्रत, (१२) अरह (अमम), (१३) निष्पाप (१४) निःकषाय, (१५) विपुल, (१६) निर्मल, (१७) चित्रगुप्त, (१८) समाधिगुप्त, (१९) स्वयंभू, (२०) अनिवृत्त, (२१) जयनाथ, (२२) श्रीविमल, (२३) देवपाल और (२४) अनन्तवीर्य।

इनके सिवा जैनग्रन्थोंमें यह भी वर्णन है कि सम्प्रति विदेहक्षेत्रके विभिन्न स्थानों वा क्षेत्रोंमें २० तीर्थङ्कर अब भी विद्यमान हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं—(१) सीमन्धर, (२) युगन्धर, (३) बाहु, (४) सुबाहु, (५) सुजात, (६) स्वयंप्रभु, (७) वृषभानन, (८) अनन्तवीर्य, (९) सूरप्रभु, (१०) विशालकीर्त्ति (११) वज्रधर, (१२) चन्द्रानन, (१३) चन्द्रबाहु, (१४) भुजङ्गम, (१५) ईश्वर, (१६) नेमप्रभ, (१७) वीरसेन (१८) महाभद्र, (१९) देवयश, और (२०) अजितवीर्य। विशेष विवरणके लिये जैनधर्म शब्द तथा जैन-पुराण ग्रन्थ देखना चाहिये।

तीर्थङ्करनामकर्म (सं० क्ली०) जैनधर्मानुसार वह शुभ कर्म-प्रकृति जिसके उदयसे अचिन्त्य विभूति-संयुक्त तीर्थङ्करत्वकी प्राप्ति हो। दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता आदि षोडश भावनाओंका पूर्णतया अनुशीलन करनेसे भव्य पुरुष (आत्मा) जन्मान्तरमें तीर्थङ्कर हो सकता है। अतीतकालमें जितने भी तीर्थङ्कर हुए हैं तथा भविष्यमें जितने भी होंगे, सबमें यही कर्म-प्रकृति कारण है। जैनगण इन पवित्रपावन षोडशभावनाओंकी पूजादि करते हैं। षोडशकारण और जैनधर्म देखो।

तीर्थतम (सं० क्ली०) अयमेषामतिशयेन तीर्थं तीर्थ-तमप्। श्रेष्ठ तीर्थ, तीर्थराज।

तीर्थदेव (सं० पु०) तीर्थमिव देवः। शिव, महादेव।

तीर्थध्वाङ्क्ष (सं० पु०) तीर्थे ध्वाङ्क्ष इव। तीर्थकाक देखो।

तीर्थपति (सं० पु०) तीर्थराज देखो।

तीर्थपाद (सं० पु०) तीर्थं पादो यस्य, बहुव्री० समासे पाद शब्दस्य पदादेशः। हरि, विष्णु।

तीर्थपादीय (सं० पु०) वैष्णव।

तीर्थभूत (सं० त्रि०) तीर्थभुक्त। तीर्थस्वरूप।

तीर्थमहाह्रद (सं० पु०) तीर्थरूपो महाह्रदः। स्वनामख्यात तीर्थभेद।

तीर्थमृत्युयोग (सं० पु०) तीर्थे मृत्युविषयकः योगः। योगविशेष, इस योगके रहनेसे मनुष्यकी मृत्यु तीर्थमें होती है। इसका विषय ज्योतिषमें इस प्रकार लिखा है। जन्म कालीन चन्द्रमा यदि उच्च स्थानमें रहे तथा दशम स्थानमें बृहस्पतिकी दृष्टि रहे, अथवा अष्टम स्थानमें शुक्र और द्वितीय स्थानमें बृहस्पति रहे तो जात मनुष्यको तीर्थमृत्यु होती है।

वृष राशिमें रवि, नवम स्थानमें बृहस्पति, लग्नमें शुक्र रहे और अष्टम स्थानमें बुधकी दृष्टि पड़ती हो तो मनुष्यकी मृत्यु गङ्गाजलमें होती है।

लग्नमें शुक्र और बृहस्पति रहे, अष्टम स्थानमें चन्द्रमा रहे और उसके प्रति लग्नाधिपतिकी दृष्टि पड़ती हो तो मनुष्यकी मृत्यु काशीमें होती है।

जिस मनुष्यका जन्म सिंहलग्नमें हुआ हो और उसके षष्ठ स्थानमें शनि, मिथुनमें बृहस्पति तथा अष्टम स्थानमें लग्नाधिपतिकी दृष्टि पड़ती हो, तो उस मनुष्यकी मृत्यु तीर्थ स्थानमें होती है।

जिसके जन्मकालमें तीन ग्रह राशि और लग्नसे भिन्न किसी भी गृहमें रहें तो वह मनुष्य विविध सुख सम्पद भोग कर जाह्नवी जलमें प्राण परित्याग करता है।

यदि लग्नके चतुर्थ, षष्ठ, सप्तम, अष्टम या दशम स्थानमें बृहस्पति रहे और वह बृहस्पति यदि उच्च स्थानमें हो तथा जात बालकका लग्न यदि मीन हो, तो उसको तीर्थमृत्यु होती है और वह अन्तमें मोक्ष पाता है।

(ज्योतिष०)

तीर्थयात्रा (सं॰ स्त्री॰) तीर्थमुद्दिश्य यात्रा। पवित्र स्थानमें दर्शन स्नानादिके लिये जाना।

तीर्थराज (सं॰ पु॰) तीर्थानां राजा ६-तत्। प्रयागतीर्थ।

तीर्थराजि (सं॰ स्त्री॰) तीर्थानां राजिरत्र, बहुव्री॰। पवित्र काशीक्षेत्र। यहां सभी तीर्थ विराजित हैं, इसलिये काशीको तीर्थराजि कहा जा सकता है। किस किस देशसे कौन कौन तीर्थ काशीमें आये हैं, उनका वर्णन काशीखण्डमें इस प्रकार किया है,—

स्वर्ग, मर्त्य और पातालमें जितने भी सुविशिष्ट धर्म आयतन हैं, वे सभी काशीमें आये गये हैं। कुरुक्षेत्रसे देवदेवके स्थाणु नामक महाशिव यहां आविर्भूत हुए हैं, वहां उनको समामास अवस्थित है। इसके पास ही श्रीमार्कण्डेयके पश्चिमकी तरफ नन्दिनी नामक महापुष्करिणी है, यहीं कुरुक्षेत्रतीर्थ है। नैमिषक्षेत्रसे देवदेव ब्रह्मावर्त्तकूपके साथ आये, जो दुण्ढिराजके उत्तरकी ओर अवस्थित हैं और उनके पास ही ब्रह्मावर्त्तकूप है। जो वर्षके महालय नामक लिङ्ग और प्रभासतीर्थसे शशिभूषण नामक लिङ्ग आये, जो कपिमोचनतीर्थके पूर्वकी ओर अवस्थित हैं। उज्जयिनीसे पापनाशन लिङ्ग आये, जो ओङ्कारेश्वरलिङ्गके पूर्वकी तरफ विद्यमान हैं। पुष्करसे आयोगन्धेश्वर लिङ्ग आये जो मन्दोदरीके उत्तरमें हैं, पट्टनसे महानादेश्वरलिङ्ग आये जो त्रिलोचनके उत्तरमें हैं, मरुकोटसे महोत्कटेश्वरलिङ्ग आये जो कामेश्वरके उत्तरमें हैं, विमलाचलसे विमलेश्वर लिङ्ग आये जो कर्कोटके पश्चिममें हैं महेन्द्रपर्वतसे महाव्रत नामक महालिङ्ग आये जो स्कन्देश्वरके पास है, और गयातीर्थसे फल्गु आदि मातृकोटि परिमित तीर्थों-सहित पितामहेश्वर यहां आ कर अवस्थान कर रहे हैं। गयातीर्थसे मुण्डक नामक महेश्वर तीर्थराज सहित आकर चित्रघण्टाके दक्षिणमें अवस्थान कर रहे हैं तथा महादेव आदि, महाकालेश्वरप्रमुख महातेज लिङ्ग, स्थूलकोटितीर्थसे महायोगीश्वर लिङ्ग, भुवनेश्वर क्षेत्रसे स्वयं कृत्तिवास और कुरुजाङ्गलसे कपोतेश्वर यहां आये हैं।

वाराणसी तीर्थसे स्वयं भगवान् नीलकण्ठ आये हैं तथा वाग्मीरसे विजयलिङ्ग आ कर मायावटके पूर्वमें अवस्थान कर रहे हैं। किष्किन्धापुरीसे भगवान् कपीश्वर यहां आये हैं और कुमाण्डक नामक गणपतिको सामने रख कर अवस्थान कर रहे हैं। मत्स्येश्वर क्षेत्रसे नीलकण्ठ नामक लिङ्गका आगमन हुआ है, वे मत्स्य नामक विनायकको उत्तरदिशामें रख कर अवस्थान कर रहे हैं।

नागनाथ नामक महातीर्थसे भगवान् कपर्दीश्वर त्रिसन्ध्येश्वरतीर्थमें आप आविर्भूत हुए हैं। अम्बिकेश्वरक्षेत्रसे सूक्ष्मेश्वर आये जो विकटदन्त गणपतिके समीप अवस्थित हैं। मधुकेश्वरसे जयन्त नामक महालिङ्गका आगमन हुआ, वे लम्बोदर गणपतिके सामने अवस्थित हैं। श्रीशैलसे देवदेव त्रिपुरान्तक आये जो विघ्नेश्वरके सामने भगवान् कुक्कुटेश्वर जालेश्वरसे भगवान् त्रिशूली रामेश्वरसे अरोदेव, विन्ध्याचलसे देवदेव शङ्कर हरि चन्द्र क्षेत्रसे भगवान् हरीश्वर मध्यमेश्वरसे भगवान् शर्व कालेश्वरसे यशोधर महालिङ्ग, दधीचिक्षेत्रसे तमोहारी दधीचिलिङ्ग, वृषभध्वजक्षेत्रसे भगवान् वृषेश्वर, कुदारक्षेत्रसे ईशानेश्वर लिङ्ग, ईशानक्षेत्रसे मनोहर भैरवमूर्ति, कनखलतीर्थसे त्रिविष्ट भगवान् उग्र, चक्राङ्ग नामक महाक्षेत्रसे भगवान् महादेव हाटकसे भगवान् दण्डी, भद्रकर्णह्रदसे भद्रकर्ण-सहित साक्षात् शिव हरिश्चन्द्रपुरसे भगवान् शङ्कर और जालन्धरक्षेत्रसे आचार्य नकुलीश पाशुपतव्रतावलम्बी अपने शिष्योंके साथ आकर यहां अवस्थान कर रहे हैं। महालयसे अमरेश्वर सात गोदावरीसे भगवान् भीमेश्वर भूतेश्वरक्षेत्रसे भगवान् भस्मगात्र नकुलीश्वरसे भगवान् स्वयम्भू, हिमकूट पर्वतसे विरूपाक्ष गङ्गासागरसे त्रिसन्ध्येश्वर, कैलाससे सप्तकोटि प्रधान महागण गणाधिपोंके साथ गणाधिप, मन्दराचल पर्वतसे मूर्धन्य नामक लिङ्ग कनखलसे पवित्र कपिल लिङ्ग और कोटीश्वरतीर्थसे श्रेष्ठलिङ्गका यहां आगमन हुआ है। ये सभी तीर्थ काशीमें अवस्थान कर रहे हैं, इसलिये इसका नाम तीर्थराजि पड़ा है। अन्य पुण्य तीर्थोंमें स्नान, दान आदि करनेसे जितना पुण्य होता है, काशीके सभी तीर्थोंमें स्नानादि करनेसे होता है उससे कहीं कोटिगुना अधिक पुण्य होता है।

(काशीख॰ ६६ अ॰ काशी देखो।)

तीर्थवत् (सं॰ त्रि॰) तीर्थं विद्यतेऽस्य तीर्थ-मतुप् मस्य

यादेशः । बहुसंख्यक तीर्थविशिष्ट, बहुत तीर्थोंसे घिरा हुआ।

तीर्थवाक (सं० पु०) तीर्थस्येव याको वचनं यस्य, बहुव्री०। केश, बाल।

तीर्थवायस (सं० पु०) तीर्थे वायस इव। तीर्थकाक तीर्थकाक देखो।

तीर्थशिला (सं० स्त्री०) किसी तीर्थमें स्नान करनेकी पत्थरकी सीढ़ी।

तीर्थशौच (सं० क्लो०) तीर्थस्य खट्टस्य शौचं परिष्कारः ६-तत्। खट्टादि परिष्कार।

तीर्थसेनि (सं० पु०) कुमारानुचर मातृभेद, कार्त्तिकेय-की एक मातृकाका नाम।

तीर्थसेवा (सं० स्त्री०) तीर्थसेवा, ७-तत्। तीर्थगमन, तीर्थयात्रा।

तीर्थसेवी (सं० पु० स्त्री०) तीर्थं वह्रादिजलप्राप्तिस्थानं सेवते सेव-णिनि। १ वकपची, बगला। (त्रि०) २ तीर्थ-यात्री, जो तीर्थमें जाता है।

तीर्थाटन (सं० पु०) तीर्थयात्रा।

तीर्थिक (सं० पु०) १ तीर्थकारी ब्राह्मण, पंडा। २ बौद्ध-मतानुसार बौद्ध धर्मविद्वेषी ब्राह्मण। ३ तीर्थङ्कर।

तीर्थिया (हिं० पु०) तीर्थङ्करोंको माननेवाले, जैनी।

तीर्थीकरण (सं० त्रि०) पवित्रीकरण, जिससे आदमी पवित्र हो जाय।

तीर्थीभूत (सं० त्रि०) तीर्थ-भू अभूततद्भावे च्वि। तीर्थ स्वरूप पवित्र। गौ जिस स्थान पर विचरण करती हैं, वही स्थान पवित्र अर्थात् तीर्थस्वरूप है।

तीर्थ्य (सं० पु०) तीर्थे भव यत्। १ रुद्रभेद, एक रुद्रका नाम। २ सहाध्यायी, सहपाठी।

तीलखा (हिं० पु०) एक प्रकारकी चिड़िया।

तीली (फा० स्त्री०) १ बड़ा तिनका, सींक। २ धातु आदिका पतला पर कड़ा तार। ३ पटवोंका एक औजार। इससे रेशम लपेटो जाती है। ४ नरी पहनाई जानेकी करघेमें दरकीकी सींक। ५ जुलाहोंके सूत साफ करने की तीलियोंकी कूंची।

तीवर (सं० पु०) तीर्यते तृ-ष्वरच। छित्वरछत्वरेति। उण् ३।१। १ समुद्र। तीर्यति कर्म समाप्तिं करोति तीर-ष्वरच। २ व्याध, बहेलिया।

३ वर्णसङ्कर जातिविशेष। ब्रह्मवैवर्तके मतसे, यह जाति क्षत्रियके औरस और राजपूतस्त्रीके गर्भसे उत्पन्न * हुई है। पराशर पद्धतिके अनुसार यह जाति सूर्णकके औरससे उत्पन्न हुई है और प्रधानतः मछली और हलव्यवसायी है। यह जाति अन्त्यज है। इसी तीवर जातिसे तेलीकी स्त्री-द्वारा दस्यु और लेट जातिकी उत्पत्ति हुई है। तीवरी और लेटसे माल, मल्ल, माठर भट्ट, कोल और कन्दर इन छः जातियोंकी उत्पत्ति है।

बङ्गाल और बिहारके किसी किसी स्थानमें यह तीयर, तीओर, राजवंशी अथवा मछुआ नामसे प्रसिद्ध है।

किसी किसीने तीयर और धीमर इन दोनों जाति-योंको एक बतलाया है, पर ऐसा समझना भ्रम है। धीमर कहार जातिकी एक श्रेणी है। परन्तु तीवरोंका कहारोंसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। आकृति और प्रकृतिमें भी धीमरोंकी अपेक्षा तीयर निकृष्ट मालूम पड़ते हैं।

भागलपुरके तीयरोंमें बामनगोत्य और गोबरिया ये दो थाक पाये जाते हैं। बामनगोत्य सच्छूद्र समझे जाते हैं और मैथिल ब्राह्मण उनका पौरोहित्य करते हैं। ये दशनामी गुरुके शिष्य हैं। परन्तु गोदावरिया लोग हीन समझे जाते हैं और शराब, सूअरका मांस आदि भक्षण करते हैं। बङ्गालके गोस्वामी लोग गोबरियोंसे गुरु-का काम करते हैं। पतित ब्राह्मण इनके पुरोहित हैं।

पूर्व बङ्गालमें तीयर लोग अपनेको राजवंशी कहा करते हैं। मैमनसिंहके तीयर अपनेको तिलकदल बतलाते हैं और गङ्गा किनारेके तीयर सूरजवंशी।

तीयर जातिमें चौधरी, छड़ीदार, मझाह, समझन (महाजन), सरर, सुखियार आदि उपाधियां पायी जाती हैं। इनमें दतवाल, काश्यप और अर्यसिंह इस तरह तीन गोत्र हैं।

पूर्वबङ्गालके तीवर तीन भागोंमें विभक्त हैं—प्रधान, परामाणिक और गण। प्रधान सबसे श्रेष्ठ हैं, उसके

* "अथ: क्षत्रियवीर्येण राजपूतस्य योषिति।
बभूव तीवरश्चैव पतितो राजदोषितः॥"
(ब्रह्मवै० ब्र १० अ०)

बाद पाणग्रहण विधि और उसके पीछे गमन। पीछे वापस लौटने पर स्त्रीको बहुत मिलो पड़ती है। इसके सिवा कन्याके पिताको यथेष्ट रुपये न देनेसे उनका ब्याह नहीं होता। इनमें विधवा विवाह प्रचलित नहीं है। जो गरीब विधवाके पास धन रहता है उसको ग्रहण करता है, उसको कलह करता है। अथवा स्वयं भी भोग-मांस कर अपना गुजारा करती है।

तीवरी (सं॰ स्त्री॰) तीवर स्त्रियां ङीष्। १ तीवरपत्नी, तीवरकी स्त्री। २ व्याधपत्नी, व्याधकी स्त्री।

तीव्र (सं॰ त्रि॰) तीव्‌ रक्‌ वा तिज् नियामे रन् दीर्घ। (उणादि॰ २।२८ सूत्रे उज्ज्वल)१ अतिशय, अत्यन्त। २ तीक्ष्ण, तेज। ३ अत्युष्ण बहुत गरम। ४ कटु, कड़ुआ। ५ अतिशययुक्त, नितान्त, बेहद। ६ असह्य, न सहने योग्य। ७ प्रचण्ड। ८ तीखा। ९ वेगयुक्त, तेज। (सं॰ क्ली॰) १० लौहभेद, इस्पात। ११ तीर, नदीका किनारा। १२ रांगा, टीन। १३ लौहमात्र साधारण लोहा। (सं॰ पु॰) १४ शिव, महादेव। १५ वैराग्यका उपायविशेष। (पातञ्जल १।२१ २२)

किसी किसी मनुष्यको शीघ्र योगी कहते हैं। योग साधनका उपाय तीन तरहका है मृदु मध्य और अधिमात्र अर्थात् तीव्र। जो वे विविध उपाय अवलम्बन करते हैं, उन्हें यथेष्ट फल प्राप्त होता है। वह भी तीन प्रकार का है मृदु उपाय मध्य उपाय और तीव्र उपाय। फिर इसके तीन भेद हैं—मृदु संवेग, मध्य संवेग और तीव्र संवेग। दूसरी योगियोंके उपाय भी प्रकारके हैं। जो तीव्र संवेग हैं उनको सिद्धि अविलम्ब है। (पातञ्जलभाष्य)

तीव्रकण्ठ (सं॰ पु॰) तीव्रः कण्ठो यस्मात् बहुव्री॰। सूरण कन्द, जमीकन्द, ओल।

तीव्रकन्द (सं॰ पु॰) तीव्रः कन्दः मूलं यस्य। १ सूरण जमीकन्द। २ पलाण्डु, प्याज।

तीव्रगति (सं॰ त्रि॰) तीव्रा गतिर्यस्य बहुव्री॰। १ जिसकी चाल तेज हो। (पु॰) २ वायु हवा।

तीव्रगन्ध (सं॰ क्ली॰) तीव्रः गन्धो यस्य। तीव्रगन्धयुक्त वह पदार्थ जिसकी गन्ध बहुत तेज हो।

तीव्रगन्धा (सं॰ स्त्री॰) तीव्रगन्ध टाप्। यवानी, अजवायन।

तीव्रगन्धिका (सं॰ स्त्री॰) यवानी अजवायन।

तीव्रज्वाली (सं॰ त्रि॰) तीव्रज्वालविशिष्ट। अत्यन्त-ज्वाली बहुत प्रज्वलन्त।

तीव्रज्वाला (सं॰ स्त्री॰) तीव्र यथा तथा ज्वालयति ज्वल णिच्‌-अच टाप्। धातकी वृक्षका फूल। लोग कहते हैं कि इसके छूनेसे शरीरमें घाव हो जाता है। (त्रि॰) २ तीव्रज्वालायुक्त जिसमें बहुत जलन हो। तीव्रा ज्वाला कर्म धा॰। तीव्रज्वाला, तेज जलन।

तीव्रता (सं॰ स्त्री॰) तीव्रस्य भावः तीव्र-तल्। उग्रता तीक्ष्णता, तेजी, तीक्ष्णपन।

तीव्रदाह (सं॰ क्ली॰) तीव्र दाह कर्मधा॰। तीव्रदाह, तेज जलन।

तीव्रतम (सं॰ पु॰) तीव्रं तमो यस्मात् बहुव्री॰। तामस गुण, तमोगुण।

तीव्रवेदना (सं॰ स्त्री॰) तीव्र वेदना कर्मधा॰। अत्यन्त यन्त्रणा बहुत पीड़ा ज्यादा तकलीफ।

तीव्रसंवेग (सं॰ पु॰) तीव्रः संवेगः कर्मधा॰। तीव्र वैराग्य। तीव्र देखो।

तीव्रसन्ताप (सं॰ पु॰) अतिसन्ताप, ताप।

तीव्रसव (सं॰ पु॰) एकाह यागभेद, एक दिनमें होने वाला एक प्रकारका यज्ञ।

तीव्रसुत (सं॰ त्रि॰) सोमका अवयवभूत प्रातः सवनिक।

तीव्रा (सं॰ स्त्री॰) तीव्र-टाप्। १ कटुरोहिणी कुटकी। २ गण्डदूर्वा, गांडर दूब। ३ राजिका राई। ४ महा ज्योतिष्मती, बड़ी मालकांगनी। ५ तरदीक्षक तरदो का पेड़। ६ तुलसी। ७ नदीविशेष, एक नदीका नाम। ८ षड्‌ज स्वरकी चार श्रुतियोंमेंसे पहली श्रुति। ९ महाकालिनी, खुरासानी अजवायन। (त्रि॰) १० तीव्र वेगयुक्त जिसमें बहुत तेज गति हो।

तीव्रानन्द (सं॰ पु॰) तीव्र आनन्दो यस्य। शिव, महादेव।

तीव्रान्त (सं॰ त्रि॰) तीव्र या तीक्ष्ण अन्त।

तीव्रानुराग (सं॰ पु॰) जैन-मतानुसार एक प्रकारका अतीचार। जैसे—परस्त्री या परपुरुषसे अत्यन्त अनुराग करना अथवा कामकी वृद्धिके लिये अफीम, कस्तूरी

आदि खाना। इससे स्वदार-सन्तोष व्रतमें दूषण लगता है।

तीस (हिं॰ वि॰) १ जो इकतिसमें एक कम हो। (पु॰) २ वह संख्या जो बीस और दशके योगसे बनी हो।

तीसट (सं॰ पु॰) एक वैद्यक-ग्रन्थकार।

तीसरा (हिं॰ वि॰) १ जो दोके बाद आता हो। २ सम्बन्ध रखनेवालोंसे भिन्न।

तीसवां (हिं॰ पु॰) जो उनतीसके बाद आता हो, जिसके पहले उनतीस और हों।

तीसी (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारका तेलहन-अनाज। भिन्न भिन्न भाषामें इसके नाम इस प्रकार हैं—

हिन्दी (भाषामें) अलसी, तीसी। बङ्गाल—तीसी, मसीना। विहार-तीसी, चिकना। उडीसा-पेश्च। युक्तप्रदेश-विजरी। कमायुन—तीसी, अलसी। काश्मीर-फियुन, आलिस। पञ्जाब—आलशि, तीसा, अलसी। काशगर—जिघिर। बम्बई-अलसी, जरसा, जरस। गुजरात-अलसी। तामिल (भाषामें) अलसी विराइ। तेलगु (भाषामें) आतसी, उन्न, सुल् मदन-गिञ्जालु। कर्णाटक—अलसी, अलासी। मलय-चेरु, चाना, विच्तिन्ते, विलसा। तुर्की-गिगर। अरब-कत्ताम वा बजरत कत्तान। पारस्य-जव जघिर, कुतान वा तुखमें कुतान। हिब्रु (भाषामें) पिस्ता। संस्कृत (भाषामें) अतसी, उमा, क्षुमा, मालिका, मसृणी, शण। लाटिन (भाषामें) लाइनम्। इंगलैण्ड-लिनसीड। केलटिक (भाषामें) लिन।

इसका वैज्ञानिक नाम Linum usitatissimum है। तीसीमें तीसीका बीज, तेल और खरी बनती है, किन्तु यूरोप और अमेरिकामें इसके पौधेसे सन सरीखा एक प्रकारका सूत प्रस्तुत होता है जो लिनेन (Linen) वा विलायती लाटिन नामसे इस देशमें प्रसिद्ध है। यूरोपीय पण्डितोंका कहना है, कि यूरोपमें आर्य लोगोंको विस्तृतिके समय तीसीका व्यवहार प्रचलित हुआ था। मिस्रके प्राचीन समाधि-मन्दिरकी दीवारमें जो अङ्कित छवि हैं, उनमें तीसीके पौधेसे सूता तैयार कर कपडा बुननेके सब काम अच्छी तरह चित्रित हैं। प्राचीन मिस्रवासियोंका समाधिवेष्ट इसी तीसीके सूतसे बनता था। ईसा-जन्मके २३ शताब्द पहले मिस्रमें तीसीके सूतेका व्यवहार हर एकको मालूम था, यह प्रमाणित है। हिब्रु और ग्रीक-ग्रन्थोंमें तीसीके सूतेका २५३०० बार उल्लेख है। स्वीजर्लैण्डके हदनालाके निकट जो सब प्राचीन स्तूपाकार वासस्थान आविष्कृत हुए हैं, उनमें तीसीका पौधा आदि पाया गया है। उत्तर यूरोपमें गालिसेने अन्यान्य प्रयोजनीय वृक्षोंकी नाईं तीसीकी खेती प्रचलित की, किन्तु नरौवे और स्वीडनमें बारहवीं शताब्दीमें इसका प्रचार हुआ है।

ष्ट्रेनबन नामक यूरोपीय पण्डितने १८४८ ई॰में यह प्रकाश किया कि तीसीके तीन भेद हैं—(१) Linum usitatissimum (२) L. humili और (३) L. angustifolium। हियर नामके एक दूसरे पण्डितने प्रमाण कर दिखला दिया है, कि उक्त ३य श्रेणीकी तीसी ही सबसे उत्कृष्ट है तथा प्रथम श्रेणीमें इसकी गिनती होती है। इस प्रथम श्रेणीकी तीसीके फिर भी दो भेद हैं,—(क) सामान्य (alpha vulgar) और हुमिलि (Beta humilji) इनमें से पहला भेद भारतवर्षमें और दूसरा पारस्यमें प्रचलित है। लाइनम अगिष्टिफोलियम (L augustifolium) भूमध्यसागरके दोनों ओर पार्श्वस्थप्रदेशमें जंगली अवस्थामें उपजता है। भिन्न भिन्न मूल भाषामें इसका नाम जिस तरह स्वप्रधान है, उससे जाना जाता है, कि विभिन्न देशोंमें विभिन्न जाति द्वारा यह प्राचीनकालसे प्रचलित है।

भारतमें भी तीसीका प्रचार बहुत पहलेसे है। आजकल इस देशमें तीसीके बीज और तेलके सिवा उसके सूतेका व्यवहार नहीं है, किन्तु पहले था। संस्कृत शास्त्रमें क्षौम-वस्त्रका यथेष्ट व्यवहार देखा जाता है। बहुतेरे क्षौमवस्त्रका अर्थ रेशमी वस्त्र लगाते हैं। किन्तु वह नहीं है। क्योंकि तीसीका एक नाम जब 'क्षुमा' है तब उससे प्रस्तुत वस्त्रको ही क्षौम वस्त्र कहते हैं। चीनमें क्षुमा नामको एक प्रकारको घास होती है उसके रेशे या सूतेसे एक प्रकारका वस्त्र प्रस्तुत होता है, जो देखनेमें ठीक रेशमी सा मालूम पड़ता है और रेशमी नामसे प्रचलित भी हो गया है। इससे अनुमान किया जाता है कि क्षौम वस्त्र भी इसी प्रकार रेशमी वस्त्र कहलाता है। मनुसंहितामें लिखा है, कि वैश्यलोग क्षौम्य-सूत्रका उपवीत धारण करते थे।—

तीसीका बीज। भारतवर्षमें तीसीके पौधेसे तीसीका बीज, बीजसे तेल और खली या खली बनती है। इस देशमें तीसीके रेशे नहीं निकालते हैं, इस कारण बीज बहुत पतला बोया जाता है। पतले पौधेमें टहनियां और फूल बहुत निकलते हैं। फूल झड़नेपर छोटी घुण्डियां बनती हैं। इन्हीं घुण्डियोंमें बीज रहते हैं। यूरोपमें केवल रेशेका ही आदर अधिक है। इस कारण वे बहुत घना बीज बोते हैं, जिससे पौधेमें टहनियां न निकलें और पौधे भी बड़े हों। भारतवर्षमें किसीके दोष या गुणसे तीसीका दाना पतला और मोटा हुआ करता है तथा रंग भी कई तरहके हो जाते हैं। तीसी सफेद और खाकी रंगकी होती है। खेतोंकी प्रकृति और जड़की गुणसे बाज तीसीके भी फिर कई भेद हैं जिन्हें केवल महाजन लोग ही पहचानते हैं।

सफेद तीसीका बीज बाज तीसीके बीजसे पुष्ट और बीजका छिलका पतला होता है। इससे तेल भी ज्यादा निकलता है। इसका छिलका (भूसी) भी नरम और स्वादु होता है। सफेद तीसी मीठ और अधिक मोलमें बिकती है। जबलपुरमें इस प्रकारकी तीसी बहुत उपजती है। नर्मदाके दक्षिणमें इस तीसीका व्यवहार अधिक है। जबलपुरकी सफेद तीसी दूसरे देशमें उपजानेसे नाश हो जाती है।

बहुत वर्षा होनेसे तीसी नुकसान हो जाती है क्योंकि इससे पत्तेमें मोर्चेका दाग पड़ जाता है, इससे प्रायः आधेसे अधिक पौधे नष्ट हो जाते हैं। इसके सिवा इसमें और भी कई तरहके कीड़े लगकर इसका सत्यानाश कर डालते हैं।

महानदीके मध्य वर्त्तमान-विभागमें सर्वत्र इसकी खेती नहीं होती है। दियारेकी तीसी अच्छी होती है। कछारी तथा दलदल जमीन तीसीकी खेतीके लिये उपयोगी है। ऊंची जमीनमें तीसी नहीं उपजती। तीसीके खेतका पानी अच्छी तरह बाहर निकाल देना चाहिए क्योंकि खेतमें पानीके रह जानेसे इसका बहुत नुकसान होता है। जिस खेतका पानी सूख गया हो तथा जिसमें धानके पौधे भी हो रहे हों, वैसे खेतमें प्रति बीघे ७२ सेर तीसी बोई जाती है। अन्तमें जब धान पकता है तब वह काट लिया जाता है और तीसी उसमें चैत्र मास तक लगी रहती। दियारेकी जमीनमें तीसी अधिक होती है। गेहूं, चने, सरसों या कुसुमीमें इसे मिला कर बोते हैं अथवा बिना किसी दूसरे अन्नमें मिलाये भी यह बोई जाती है, जो खेत बहुत गहरा जोता गया हो उसमें तीसी अच्छी नहीं उपजती है। तीसी बो कर खेतको चौरस कर देना अच्छा है। अच्छी फसल होनेके बाद खेतमें एक बार जल पटाया जाता है, कोई तीसी को कर दो बार भी जल देना पड़ता है। यह फसल आश्विन और कार्त्तिक मासमें बोई जाती और चैत्रमें काटी जाती है। केवल तीसी बोनेमें प्रति बीघे ६ सेर और मिलाकर बोनेमें १४ सेर बीज लगता है। सिर्फ तीसी प्रति बीघे २ मन उपजती है। यहांके किसान इसकी फसल अच्छी समझते हैं। फसल अच्छी तरह पक जानेसे पहले ही इसे जड़से काट डालते हैं।

इलाहाबादमें यह भी मटर आदिके साथ मिला कर बोई जाती है। युक्तप्रदेश और पंजाबके सभी जिलोंमें इसकी खेती होती है। काश्मीरके पर्वतमालामें भी यह कम नहीं उपजती है। इसका तेल उस देशमें बहुत व्यवहृत होता है। मद्रास और ब्रह्म देशमें इसकी खेती नाम मात्रकी बराबर समझना चाहिये। बम्बई प्रदेशमें भी इसका खूब आदर है। पूना, शोलापुर, नासिक, खान्देश, अहमदनगर, गुजरात आदि स्थानोंमें भी यह कुछ कुछ उपजायी जाती है। मध्यभारत और बरारमें कुछ अधिक होती है, हैदराबादमें भी कम नहीं उपजती।

तीसीका तेल। बीजकी पुष्टि और भेदोंके अनुसार इससे तेलका परिमाण जाना जाता है। पुराने बीजसे नये बीजमें तथा पतले दानेसे मोटे दानेमें अधिक तेल निकलता है। कमसे कम १८ सेर बीजमें १ सेर तेल पाया जाता है किन्तु दाना अच्छा रहनेसे [illegible] सेरमें एक सेर तेल निकलता है। इलाहाबादमें यह तेल दीयेमें व्यवहृत होता है। जलानेके समय इस तेलसे धुआं निकलता है। विलायतसे भी तीसीका तेल इस देशमें आता है, वह विशुद्ध होता है और रंगसाजी तथा मिस्त्रीके छापेकी स्याही बनानेके काममें आता है। इसके सिवा उस तेलमें सुखानेका गुण अधिक है। किन्तु इन दोनोंके देशको

तोसों अन्य तैलहन बीजके साथ मिलकर खराब हो जाती है तथा इसके तेलमें सुखानेका गुण कम रह जाता है। इस देशका तेल एक दफा विलायतमें बेचनेके लिये भेजा गया था किन्तु वहां जब यह तेल जांचा गया, तब बाजारकी दरसे दश पन्द्रह रुपये कममें बिका। तभीसे इसकी रफतनी बहुत कुछ बन्द हो गई है। मिर्जापुरकी लाल तीसीका तेल विलायतके तेलसे बढ़ी और अच्छा होता है, किन्तु कोल्हमें पेरे जानेके कारण उतना आदर नहीं है। घानीसे तेल निकालनेमें खर्च भी ज्यादे पड़ते हैं। १०० मन तेलमें प्रायः ८०) रु० खर्च होते हैं। विलायती वाष्पीय कलमें १०० मन तेल निकालनेमें लगभग १८) रु०खर्च पड़ते हैं।

तीसीका सूता अभी यूरोपीय विद्वानोंके यत्न और चेष्टासे भारतवर्षमें कई जगह तीसीका सूता तैयार होने लगा है। १७८०से १७८८ ई०में पहले पहल इस विषयमें चेष्टा की गई। इस देशके किसान लोग पहले तीसीसे रेशा निकालनेमें किसी तरह सहमत न हुए। इन लोगोंका विश्वास था, कि जो काम बाप-दादाने नहीं किया है वह काम करनेमें विशेष अनिष्ट होगा। इन सब अज्ञान मनुष्योंके दृढ़ विश्वासको हटानेमें साहबोंको जितना कष्ट झेलना पड़ा था वह अकथनीय है। लाभकी कथा उदाहरण या उपदेश किसीसे भी इन लोगोंका ध्यान इस ओर आकर्षित न हुआ। डा० रक्सबर्गने सबसे पहले इष्टइण्डिया कम्पनीके राज्यमें रिसड़ाके सनकी कोठीमें सूत तैयार करनेकी व्यवस्था कर दी। उनका प्रस्तुत सूता बहुत उमदा होता था। १८३८ ई०में लण्डनमें एजार्स नामक एक व्यक्तिके अधीन एक कम्पनी संगठित हुई। रिगा और ओलन्दाजी बीजके साथ एक वेलजियमका कृषक और एक वेलजियमवासी तीसीसे सूत प्रस्तुत करनेवाला यूरोपीय यन्त्रादि लेकर इस देशमें आया। यहां उन्हें इसके लिये खेती नहीं करनी पड़ी। क्योंकि उनके उपदेशसे ही यहांके मनुष्य इस विषयमें चेष्टा करने लगे। काशीके निकट बलिया नामक स्थानमें १७४० ई०को जो खेती की गई, वह सन्तोषजनक नहीं हुई थी। क्योंकि असमयमें खेती करने और सूत निकालनेमें सब बरबाद हो जाता है।

१८४१ ई०में सुन्दरबनमें इसका प्रयत्न किया गया। तीन वर्ष परिश्रम करनेके बाद १८४४ ई०में सूत कुछ कुछ परिष्कार और कोमल होने लगा, किन्तु गवर्नमेण्टकी ओरसे किसी प्रकारकी सहायता नहीं मिलनेसे कुछ समयके बाद कारबार बन्द हो गया। अन्तमें नर्मदाके किनारे जब्बलपुरमें इस विषयकी ओर लोगोंका अच्छा ध्यान था। यहांके तीसीके पौधेसे उत्कृष्ट सूत तैयार होता है। शाहाबादमें १८३७ ई०को इसकी परीक्षा आरम्भ हुई। यहां जो सूत तैयार होता है वह बहुत कड़ा होता है। रूसियाके सूत सरीखा यह भी विलायतमें कम दरमें बिकता है। एक समय मन्द्राज देशमें भी इसकी खूब उन्नति हुई। चट्टग्राममें जो सूत तैयार होता था, वह लम्बाईमें म होने पर भी कम्पनीकी परीक्षा द्वारा बहुत उत्कृष्ट प्रमाणित हुआ था। वर्तमानमें चार प्रकारके सूत प्रस्तुत हुए, जिनमेंसे तीसरा प्रकारका सूत सबसे उमदा समझा जाता था।

इस तरह नाना स्थानोंमें तीसीके सूतके लिये जब खेती आरम्भ हुई, तब धीरे धीरे किसान लोग अपनेसे ही बहुत कुछ इसमें उपजाने लगे।

१८५५ ई० को पञ्जाबमें लाहोरके निकटवर्ती सियालकोट और दीननगरमें इससे जो सूत बनता वह चार पाई आदिकी रस्सीके काममें आने लगा। काङ्गड़ा उपत्यकासे १८५८ ई०में जो सूतका नमूना विलायत भेजा गया, उसका वहां खूब आदर हुआ और ऊंची दरमें बिक गया। अतः भारतवर्षमें रोनिसनमें व्यवसाय चलानेकी इच्छासे वेलफाष्ट शहरमें १८६१ ई०को वेलफाष्ट भारतीय तीसी सूतकी कम्पनी नामक एक दल अंगरेज इस काममें प्रवृत्त हुए।

सियालकोटमें इन लोगोंका एजेगट-आफिस स्थापित हुआ। पहले इनकी इतनी उन्नति हुई कि कारबार प्रायः उठने उठने पर हो गया था। अन्तमें होम-गवर्नमेण्टके वार्षिक साहाय्यसे इन लोगोंका प्रस्तुत सूत आइरिश सूतसे मिलता-जुलता था, किन्तु अधिक जमीन और कृषकके नहीं मिलनेसे उक्त कारबार बन्द हो गया। १८६८ ई०में एक दूसरी कम्पनीने इस काममें हाथ डाला।

पेशावरमें तीसीसे खड़खर्स-बोकेबारके लिये रस्सा तैयार करते हैं। इसके सिवा पञ्जाबमें और किसी दूसरे स्थानमें तीसीके सूतीका व्यवहार नहीं होता है और न वहांके लोग इस ओर ध्यान ही देते हैं। किन्तु यहां जो कुछ सूत तैयार होता है उसको गिनती पञ्जाबमें है। मुम्बईप्रदेशमें भी सूत तैयार नहीं होता है। वहां तीसीका बीज निकाल कर उसके पौधोंको चण्टियोंमें बांधते और उन्हें सात आठ दिन तक तालाबके जलमें रख छोड़ते हैं। प्रति दिन चण्टियां उलटानी पड़ती हैं। अन्त दिन बाद (पश्चिम प्रदेशके समयमें छः दिन बाद) इसको बड़की फाड़ कर देखना पड़ता है, कि पट् पैसे समान इसकी छाल अलग हुआ है या नहीं। ऐसा होने पर पन्द्रह दिन तक उन्हें बाहर छतमें फैला करके सुखाना पड़ता है। यदि वृष्टि होनेकी आशङ्का हो, तो चण्टियोंको गोदामघरमें भीतर जमा कर रखना चाहिये। पीछे मोगरी वा मूसलके डण्ठको चूर चूर करना पड़ता है। तब परिष्कार कर बण्डलमें बांधकर रख छोड़ते हैं। यह बम्बई हो कर विलायत भेजा जाता है। किसी स्थानमें अभी इसका व्यवसाय आरम्भ नहीं किया है।

मध्यभारतमें तीसीका पौधा एक फुटसे अधिक ऊंचा नहीं होता है, किन्तु तीसी बहुत ज्यादे निकलती है। इस देशमें यह प्रायः रस्सी आदिके काम आती है। बरारमें भी ऐसा ही है। इन दो स्थानोंमें कहीं भी सूत नहीं होता है।

सिन्धुप्रदेशकी उत्तरी सीमामें तीसीसे सूत तैयार होता है, जमींदार लोग इसको रस्सी बनाते हैं। सिन्धुके और किसी भागमें तीसीकी खेतीका नाम भी नहीं है। अजमेरमें बीजसे केवल तेल निकाला जाता है, सूत कभी भी तैयार नहीं होता। मन्द्राजमें भी यही हाल है। मन्द्राजमें यदि यत्न किया जाय तो सूतसे रस्सी, चटाई आदि बन सकती हैं। कलकत्तेमें निकट बङ्गालके दूसरे किनारे किसी समय तीसीके सूतका टाट और किरपालका बहुत बढ़िया कपड़ा तैयार हुआ था।

भारतमें अभी सब जगह तीसीका बीज ही व्यवहृत होता है। पौधा या तो मवेशीको खिलाया जाता या जला दिया जाता है। यदि यह बरबाद न किया जाय, वरन् चण्टियोंको सुखा कर कागजकी कलमें भेजा जाय तो दोनोंके लिये विशेष लाभ हो।

तीसीका व्यवसाय—भारतवर्षमें तीसीका कितना खर्च है वह ठीक ठीक जाना नहीं जाता। इस देशमें तीसीकी सुन्दर कल कहीं भी देखनेमें नहीं आती है। इसको पका कर साफ करके एक प्रकारका वार्णिश भी बनता है। अभी लोगोंके घरमें किवाड़ तथा आलमारियोंमें जो सफेद रंग दिया जाता है, वह यही वार्णिश है। प्रति वर्ष कई सौ मन बीज विदेशमें भेजे जाते हैं।

तीसीका व्यवहार। यदि प्रस्तुत कर सकें तो इसके रेशेसे रस्सी, चटाई, किरपाल आदि बन सकती हैं। यदि सूत निकाल न सकें तो इसके पौधोंको सुखा कर कागजकी कलमें भेज देनेसे बहुत लाभ होता है। बीजोंसे छापेकी स्याही, रंगसाजी तथा वार्णिशके सिवा इससे लकड़-चित्रिया रबर और नरम साबुन बनता है। तैल विकृत होने पर ये सब चीजें अच्छी बनती हैं। किन्तु भारतमें मिश्रित तेल ही अधिक है।

तीसी औषधके काममें भी आती है। इसकी बीजको पीस कर उसकी पुलटिस बांधनेसे सूजन बैठ जाती है वा कच्चा फोड़ा शीघ्र पक कर बह जाता है। दर्द भी कम जाता है। पशु वात रोगमें भी यह काममें आती है। मेह और मूत्ररोग तथा निकृष्ट पीड़ामें भी यह बहुत उपकारी है। डाक्टर चिकित्साशास्त्रमें तीसीको ... में सिद्ध कर उसे शिरारोगोंको सेवन कराते हैं। बीजके चूर्णको चीनीके साथ मिला कर खानेसे मेहरोग शान्त होता तथा कामाग्नि बढ़ती है। बम्बईमें भी यह तिलकी नाईं भिगाई जाती है। इस देशमें तेल कम होता है। इसलिये भाव भी कम होता है। किन्तु इंगलैण्डमें परीक्षा कर देखा गया है, कि भारतीय गौओंको खिलानेसे उनके दूधमें मक्खन अधिक होता है।

तु (स॰ अव्य॰) १ निरर्थक पादपूरण। २ भेद। ३ अव-धारण ४। समुच्चय। ५ पक्षान्तर। ६ नियोग। ७ प्रशंसा। ८ निग्रह। ९ सम्पर्क। १० किन्तु। ११ आधिक्य।

तुआल (हिं॰ पु॰) जुटके बनी हुई एक प्रकारका जाल। यह मछली आदिके पकड़नेके लिये पोखरोंके ऊपर डाला जाता है।

तुँदैला (हिं० वि०) लम्बोदर, बड़े पेटवाला, तोंदवाला।

तुँवड़ी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका छोटा पेड़। इसकी लकड़ी मकानोंमें लगती है जो सफेद, नर्म और चिकनी मालूम पड़ती है। मवेशी इसके पत्ते बड़े चावसे खाते हैं।

तुअर (हिं० पु०) अरहर, आढ़की।

तुई (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी बेल जो कपड़े पर बुनी हुई रहती है।

तुक् (सं० पु०) तुज क्विप्। अपत्य, सन्तान।

तुक (हिं० स्त्री०) १ किसी पद्य या गीतका कोई खण्ड, कड़ी। २ वह अक्षर जो किसी पद्यके अंतमें रहता है। ३ अन्त्यानुप्रास, पद्यके दोनों चरणोंके अन्तिम अक्षरोंका परस्पर मेल।

तुकज्योतिर्विद्—एक प्राचीन हिन्दू ज्योतिर्विद्।

तुकबंदी (हिं० स्त्री०) १ भद्दी कविता करनेकी क्रिया। २ ऐसा पद्य जिसमें काव्यके गुण न हो, भद्दा पद्य।

तुकमा (फा० पु०) घुंडी फसानेका फंदा।

तुकान्त (हिं० स्त्री०) अन्त्यानुप्रास, काफिया।

तुक्का (फा० पु०) बिना गांसीका तीर, वह तीर जिसमें गांसीकी जगह घुंडीसी बनी हो।

तुकाक्षीरी (सं० स्त्री०) तुगाक्षीरी पृषोदरादित्वात् साधुः। वंशलोचन।

तुकार (हिं० स्त्री०) अशिष्ट सम्बोधन, 'तू' का प्रयोग जो अपमान-जनक समझा जाता है।

तुकारना (हिं० क्रि०) अशिष्ट सम्बोधन करना, तू तू करके पुकारना।

तुकाराम—महाराष्ट्र देशके एक प्रसिद्ध भक्तकवि। भारतवर्ष धर्मविद तथा महापुरुषोंकी लीलाभूमि है। प्रति युगमें और देश देशमें भगवद्भक्त महापुरुष जन्मग्रहण करके इस देशका गौरव बढ़ाते हैं। कोई भक्ति, कोई ज्ञान, कोई वैराग्य, इत्यादि सद्गुणों द्वारा स्वदेशवासियोंका बहुत उपकार साधन कर गये हैं। वैदिक मन्त्रोंसे लगाकर वर्तमान समयके धर्मसङ्गीत तक सभी धर्मभावमें अनुप्राणित हैं। हमारे देशकी आधुनिक भाषाओंमें धर्म-भावोद्दीपक पदावलियोंका अभाव नहीं है। हिन्दीमें तुलसीदास, बङ्गलामें रामप्रसाद, तामिलमें तिरुवल्लुवर तथा मराठोंमें तुकाराम प्रत्येक नरनारीके हृदयमें विराजित हैं। हिन्दुस्थानमें ऐसी कोई हिन्दू-सन्तान नहीं है, जिसने तुलसीदासके कवितोंको न सुना हो। राजपथमें, नगरमें, ग्राममें ऐसा कोई स्थान नहीं, जहां तुलसीदासकी कविता न सुनी जाती हो। तुलसीदासने युक्तप्रान्तमें जैसा स्थान पाया है, तुकारामने भी महाराष्ट्रदेशमें भी वैसा ही गौरवका आसन प्राप्त किया है। ये भक्तमहापुरुष अपनी जन्मभूमिमें देवांश या देवानुगृहीतके समान प्रतिष्ठाभाजन हुए हैं। इनके समस्त पद अभङ्ग नामसे परिचित हैं। ये सब अभङ्ग महाराष्ट्र जातिके हृदयके रत्नस्वरूप हैं। भिक्षुकसे लेकर राजचक्रवर्ती सम्राट् तक इनके अभङ्गको आदरसे गाते और सुनते हैं। बहुतसे धर्म मन्दिरमें यह देवीमाहात्म्य या गीताकी नाईं आदरसे पढ़ा जाता है।

महाराष्ट्रकी राजधानी पूनासे आठ कोस पश्चिमोत्तरमें इन्द्रायणी नामक एक छोटी नदी है। इसके किनारे देहु नामका एक ग्राम अवस्थित है। इस ग्राममें "मोरे" उपाधिधारी शूद्र जातिका एक महाराष्ट्र-परिवार वास करता था। वाणिज्य ही उनका प्रधान व्यवसाय था। यह वंश अत्यन्त धर्मपरायण था। तुकारामके पूर्वपुरुष भक्ति और वैराग्यमें उस समय सबसे श्रेष्ठ थे। तुकारामके ऊर्ध्व सप्तम पुरुषका नाम विश्वम्भर था। ये वाणिज्य-व्यवसायी थे किन्तु साधारण वणिक्की नाईं अन्यायाचारी न थे। जब कभी अतिथि और संन्यासीसे मुलाकात हो जाती, तो ये बहुत यत्नसे उनकी सेवा करते थे और रातको भक्तवृन्दोंके साथ मिल कर बहुत आनन्दसे सङ्कीर्त्तन करते थे।

पण्ढरपुरके विठोबादेवकी पूजा करना इन लोगोंकी कौलिक रीति थी। उसीके अनुसार प्रत्येक एकादशीको वे पण्ढरपुर जाकर विठोबा देवकी पूजा करते थे। किन्तु एक दिन उन्होंने स्वप्नमें देखा कि विठोबा देव स्वयं उपस्थित होकर उनसे कह रहे हैं कि "वत्स! मैं तुम्हारी भक्तिसे बहुत प्रसन्न हुआ हूं, अब तुम्हें पण्ढरपुर जानेकी कोई आवश्यकता नहीं। तुम अपने ग्राम देहुतमें ही

सुझे पाओगी।" इसके बाद विश्वम्भरने वैसी मूर्ति स्वप्नमें देखी थी ठीक वैसी ही एक विठोबाकी मूर्ति आम्र काननमें देखी। देहूके पास ही इन्द्रायणीके तीर पर उन्होंने मन्दिर बनवा कर उसमें उस मूर्तिकी स्थापना की और आप स्वयं ही उनकी पूजामें नियुक्त हो गये। ये बहुत ही धर्मपरायण थे इसीसे उन्होंने तुकाराम जैसे भक्तके गौरव महात्माको पुत्रको प्राप्त किया था।

तुकारामका जन्म १६०७ ई०में हुआ था। इनके पिताका नाम बोल्हाबा और माताका नाम कनकाई था। बोल्हाबा सद्गुणोंसे विभूषित थे और कनकाई अत्यन्त पतिपरायणा थी। इनके प्रथम पुत्रका नाम सावजी था। तुकाराम पिताके द्वितीय पुत्र थे। कनकाई जब गर्भवती हुई, तब संसारके प्रति उनका अत्यन्त विराग उत्पन्न हुआ था और वे सर्वदा निर्जन स्थानमें बैठकर हरिनाम जपा करती थीं। वे पहलेसे ही जानती थीं कि उनका पुत्र (तुकाराम) एक भक्तशिरोमणि होगा। तुकारामके बाद भी कनकाईके एक पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई थी। तुकारामके पिता इतर जैसे पुत्रकन्याओंसे सम्पन्न थे, वैसे ही उनके धनसम्पत्तिकी भी कमी न थी। अवस्था उन्नत होनेसे ही प्रायः सभी भगवान्‌का नाम भूल जाया करते हैं किन्तु बोल्हाबा और कनकाई ये दोनों उस प्रकृतिके मनुष्य नहीं थे। सांसारिक सब प्रकारके सुखोंको प्राप्त करने पर भी वे भगवान्‌की कथा न भूलते थे। यथासमय पुत्रकन्याका विवाह हुआ किन्तु धन जन सुख प्रभृति होनेपर भी उन्हें [illegible] हुआ तब न था। ज्येष्ठ पुत्र सावजीके वयःप्राप्त होने पर उनके ऊपर संसारका भार अर्पण कर उन्होंने निश्चिन्त चित्तसे भगवान्‌की आराधनामें जीवन व्यतीत करनेका संकल्प किया और तदनुसार ज्येष्ठ पुत्र सावजीको गृहस्थीका भार ग्रहण करनेके लिये अनुरोध किया। किन्तु सावजी बाल्यकालसे ही विरक्त थे। उन्होंने इस भारको लेना स्वीकार न किया। तब बोल्हाबाने मध्यमपुत्र तुकारामसे कहा। पिताकी आज्ञा शिरोधार्य कर तुकारामने तेरह वर्षकी अवस्थामें गृहस्थीका गुरुतर भार अपने ऊपर ले लिया।

तुकारामके दो विवाह हुए थे। उनकी पहली स्त्रीका नाम रखमाबाई और दूसरीका जिजाबाई था। जिजाबाई साधारणतः आवलीबाई या आवलाई नामसे प्रसिद्ध थीं। पहली स्त्री श्वासरोगग्रस्त थी, इसीसे उन्होंने दूसरा विवाह किया था। उनकी दोनों स्त्रियोंके ऊपर ही गृहस्थीका भार था। तुकारामने यद्यपि थोड़ी ही अवस्थामें संसारका गुरुतर भार ग्रहण किया था तो भी वे इस गुरुतर भारको वहन करनेमें अकृतकार्य न हुए थे, वरन् वे अत्यन्त दक्षताके साथ सांसारिक कर्मोंका सम्पादन करने लगे।

लौकिक वाणिज्य व्यवसायमें उनको विशेष प्रतिष्ठा हुई एवं थोड़े ही दिनोंमें उन्होंने बहुतसे धनाढ्य वणिकोंके विश्वासभाजन होकर यथेष्ट अर्थ उपार्जन किया। तुकारामके सौभाग्य-लक्षण सब विषयोंमें ही दिखाई देने लगे। मनुष्यकी अवस्था सब दिन एकसी नहीं रहती। प्रायः सुखके बाद दुःख आ कर अपना स्थान अधिकार कर लिया करता है। तुकारामको भी यह सुखकी अवस्था अधिक दिन तक न रही। सत्रह वर्षकी अवस्थामें इन्हें पहले पिताका और फिर माताका वियोग-दुःख सहना पड़ा।

तुकाराम माता-पिताके वियोगसे बिल्कुल अधीर हो उठे। इसी शोकने [illegible] समस्त ममत्वको पराजित कर तुकारामके चित्तकी निर्मलता सम्पादन किया। भगवद्भक्ति और वैराग्य तुकाराममें पुरुषानुक्रमसे वर्तमान था। किन्तु सम्पद् माता पिताका स्नेह, पितृ मातृभक्ति और संसारके भारने एकत्र हो कर इतने दिन उन्हें आध्यात्मिक उन्नति साधनमें अवसर प्रदान नहीं किया। दुःख जिसे कहते हैं, तुकारामने इसे एक दिन भी अनुभव नहीं किया। इतने दिन संसार उनके निकट सुखमय था। किन्तु माता पिताके साथ ही उनका प्राण बहुत उद्विग्न हो उठा। संसार अनित्य है, दुःख अवश्य आता है यह वे अच्छी तरह जान गये। तुकारामने तेरह वर्षसे ही संसारका भार ग्रहण किया था सही किन्तु जबतक माता पिता जीवित रहे, तब तक वह भार इतना गुरुतर नहीं मालूम होता था। परन्तु अब यह भार उनके लिये

अत्यन्त कष्टदायक मालूम पड़ने लगा। भवितव्य अनतिक्रमणीय है, यह सोचकर वे सांसारिक कार्यको करनेमें यत्नवान् हुए। दुःखके बाद दुःख आता है, इस समय एक दूसरी दुर्घटनाने उन्हें और विपद्‌में डाल दिया। इस समय इनके बड़े भाईकी स्त्रीका अकाल ही प्राणान्त हुआ। शान्तजी एक तो सब विषयोंमें उदासीन थे ही, दूसरे माता पिताकी मृत्युसे उनकी उदासीनता और ज्यादा बढ़ गई। अब स्त्रीके मर जाने पर अपनेको संसारके सब बन्धनसे मुक्त समझ कर उन्होंने तीर्थ-पर्यटन और धर्म-चर्चाके लिये घर छोड़ दिया।

इस समय तुकारामकी उम्र अठारह वर्षकी थी। तुकाराम जिस कार्यके लिये इस पृथिवी पर आये हुए थे, क्रमशः उनका वह पथ उन्मुक्त होने लगा।

भ्रातृजायाकी मृत्यु और ज्येष्ठ भ्राताके गृहत्यागसे भगवद्भक्ति तुकारामके हृदयमें जागरित हो गई और वे क्रमशः भगवद्‌प्रेममें निमग्न होने लगे तथा संसारके प्रति क्रमशः उनकी उदासीनता झलकने लगी। व्यवसायके प्रति ध्यान नहीं रहनेसे वाणिज्यमें उन्हें बहुत घाटा लगा। तुकारामका धन क्रमशः नाश होने लगा। व्यवसाय-वाणिज्य चलानेमें आदान प्रदान विशेष आवश्यक है; किन्तु इसे ह्रास होते देख व्यवसायिगण तुकारामके साथ आदान-प्रदान बंद करने लगे, परन्तु तुकाराम जिनसे रुपये पाते थे, वे इन्हें व्यवसायमें उदास देख कर ऋण-परिशोधमें विलम्ब करने लगे। सुतरां दिनों दिन तुकारामकी अवनति होने लगी। सांसारिक व्यय जैसाका तैसा बना रहा, आयका पथ क्रमशः घटने लगा। तुकाराम अत्यन्त विपद्‌में पड़ गये। पूर्वकी अवस्थाको पलटानेकी इन्होंने सैकड़ों यत्न किये, लेकिन वे सफलता प्राप्त न कर सके। उनका हृदय जिस भगवद्भक्तिसे पूर्ण था, वह क्रमशः बढ़ने लगा। इस समय तुकारामने पहलेकी नाईं महाजनी व्यवसायमें उन्नतिकी सम्भावना न देख कर एक साधारण दाल-चावलकी दूकान खोली। इस समय तुकाराम जहां बैठते थे, वहीं हरि-कीर्तन करते थे।

ग्राहकके आने पर वे सोचते थे कि उन्हें द्रव्य दाम देनेसे अधम होगा, यह सोच कर ग्राहककी इच्छाके अनुसार द्रव्यादि देते थे। इस व्यवसायमें लाभकी बात तो दूर रहे, असलमें भी बहुत घाटा हुआ। जब इन्होंने देखा कि दूकानदारीमें कोई लाभ नहीं; तो वे एक नवीन व्यवसायमें प्रवृत्त हुए। किन्तु उसमें भी उन्हें सुविधा न हुई। इस समय चारों ओरसे इनकी निन्दा होने लगी। एक तो सांसारिक कष्ट और दूसरे चारों ओरसे आत्मीय स्वजनोंके कटुवचनकी बौछार; वे अधीर हो उठे। कोई कहता कि तुकाराम अत्यन्त निर्बोध है, कोई कहता कि तुकाराम अकर्मण्य और व्यवसाय-कार्यमें नितान्त मूर्ख है। इन्हीं कारणोंसे तुकारामका मन अत्यन्त चञ्चल हो उठा। अनेक चेष्टा करने पर भी वे अपने मनको संसारके प्रति आकृष्ट कर न सके। उनका हृदय जिस भावसे पूर्ण हो गया था, उसके वेगको दमन करना असाध्य था। तुकाराम काम-काज तो करते थे; किन्तु उनका अन्तःकरण सर्वदा हरिभक्तिमें रहा करता था। धीरे धीरे तुकारामका समस्त मूलधन जाता रहा। इस समय उनके अत्यन्त सांसारिक कष्ट उपस्थित हुआ।

तुकाराम इस कष्टको निवारण करनेके लिए फिर भी व्यवसाय कार्यमें प्रवृत्त हुए। किन्तु अब उनके पास मूलधन कुछ भी न बचा था। तब वे भार ढोनेवाले बैलको पीठ पर धान लाद कर गांव गांव बेचने लगे। रात दिनके परिश्रमसे, आहार-निद्रा समय पर न होनेसे, शीत ग्रीष्मसे किसीसे भी वे विचलित न हुए, किन्तु इस कार्यमें भी उन्हें लाभ न हुआ। उनका दुःख जितना ही अधिक बढ़ने लगा, उतना ही वे विठोबाके चरणमें आत्म-समर्पण करने लगे। इस समय तुकारामका अलङ्कार इत्यादि जो कुछ था, वह धीरे धीरे निःशेष होने लगा। तब प्रतिवासी वणिक् आ कर उनका कागज पत्र देखने लगे। बाद उन्होंने अनुमान किया कि तुकारामकी रक्षाका अब कोई उपाय नहीं है, तुकाराम दिवालिया हो गये। व्यवसायीके लिए दिवाला निकलने और निन्दा फैलनेसे बढ़ कर और कोई कष्ट नहीं। यह सम्वाद सब जगह बिजलीकी तरह फैल गया। सब महाजनोंने आ कर उनका दरवाजा घेर लिया। इसी समय तुकाराम पर बड़ी भारी विपत्ति थी, वे बिलकुल हतबुद्धि हो गये। तब उनके आत्मीयस्वजनोंमेंसे किसीने अर्थसे सहायता

है कर और किसीने अपमान दे कर तुकारामको बहुत विपत्तिमें डाला हो। तुकारामके अनुयायियोंकी ऐसी धारणा थी कि विठोबाकी भक्ति ही उनकी अवनतिका कारण है। एक दिन कई अनुयायियोंने तुकारामसे कहा— "तुम विठोबाकी भक्ति छोड़ कर सांसारिक कार्यमें लग जाओ, इस संसारमें विठोबाकी भक्ति करके किसने उन्नति प्राप्त की है?" इस तरह तुकाराम चारों ओरसे तिरस्कृत होने लगे। घरमें स्त्रियोंकी भी ऐसी धारणा थी, वे भी सर्वदा कहती थीं कि विठोबा-भक्तिसे ही हम लोगोंकी अवनति हुई है। घरमें स्त्री और बाहरमें अनुयायिगण सभी उनको तंग करने लगे। इधर महाजनोंका दारुण कष्ट था, उधर इन लोगोंका झंझट। तुकाराम सभीकी बातें सह लेते थे। वे विठोबाके प्रेममें निमग्न रहते, इसीसे सांसारिक दुःख उन्हें उतना कष्टकर नहीं मालूम पड़ता था। लोगोंकी ताड़नासे, ज्यों ज्यों मर्म जाने उनका भगवत्प्रेम और भी अधिक बढ़ता जाता था।

वणिकोंके लिए व्यवसायके सिवा जीविका-निर्वाहका कोई दूसरा उपाय नहीं है। दूसरी तुकारामने इस बार अन्तिम उद्यमका बोझा उठाया। उनके पास जो कुछ पूंजी बची थी उसीसे उन्होंने माल मिर्च खरीदी और उसे बेचनेके लिए कोंकणदेश गये। यद्यपि वे नये उद्यमको ले कर भिन्न देशमें गए थे तोभी उनके व्यवसायकी रीति पूर्ववत् थी। नूतन व्यवसायीको देख कर कुछ ठग कुछ ग्राहक आने लगे और मूल्य दे कर इच्छानुसार थोड़ा थोड़ा ले गये। बहुतोंने उधार भी लिया। इस तरह थोड़े ही दिनोंमें लाभकी बात तो दूर रही, मूलधन भी गायब हो गया। सिर्फ़ कुछ जो उनके पास बचा, उसे ले कर घरको लौटे। किन्तु दैवकी ऐसी विडम्बना हुई कि रास्तेमें आते समय वे एक ठगके चक्रमें फँस गये। वह ठग उन्हें पहनने के कृत्रिम सुवर्णालङ्कार दे कर इनकी सब पूंजी ले नौ दो ग्यारह हो गया। तुकाराम घर आ कर इस दुर्घटनाके कारण शारीरिक व्याधियोंसे बड़े आक्रान्त हुए।

इधर महाजनोंके कर्जसे भी अपना पूरा [illegible] लिया था, उनको लोगोंने सोचा कि स्वामी सर्वस्वान्त हो गये, उनके ऊपर लोगोंका विश्वास जाता रहा, अब किसीसे कर्ज मिलना दुर्लभ है। अवलाई मातापिताकी सम्पत्तिकी पाई हुई थी, उसके ऊपर बहुतोंका विश्वास था। उसने २०० रु० कर्ज ले कर स्वामीको दिये और बहुत समझा बुझा कर व्यवसाय करनेके लिये कहा। तुकाराम रुपये लेकर व्यवसायके लिए बालाघाट प्रान्तमें जाने लगे। इस बार खरीद बेच कर उन्हें [illegible] लाभ हुआ। घर लौटते समय तुकारामने देखा कि एक ब्राह्मणको ऋण न चुका सकनेके कारण बांध कर ले जा रहे हैं, उसकी स्त्री भी रोती हुई उसके पीछे जा रही है। ब्राह्मणने ऋण परिशोधके लिये १२ वर्ष तक ग्रामान्तर भीख मांगी किन्तु वह कुछ संचय न कर सका। ब्राह्मणकी ऐसी दुर्दशा देख कर तुकारामका हृदय दयासे पिघल गया। उन्होंने अपना व्यवसायसे प्राप्त सब द्रव्य ब्राह्मणको दे कर उसे उसी समय ऋण-मुक्त किया तथा ब्राह्मणके परितोषार्थ और दासको दक्षिणामें दस ब्राह्मणोंका भोजन कराया। इस बार तुकारामकी बची-खुची सब पूंजी खतम हो गई।

तुकारामके घर वापस पहुंचने पर चारों ओर हल्ला हो गया और सब उन्हें पागल समझने लगे। अवलाई दरिद्रताकी चोटसे कठोरस्वभावा हो गई थी। स्वामीके इस व्यवहारसे उसने अग्निमूर्ति धारण की। अब तुकारामका घरमें रहना भी कठिन हो गया। इसी समय दारुण दुर्भिक्ष भी उपस्थित हुआ। रुपयेमें दो सेर धान बिकने लगा। इस दुर्भिक्षमें तुकारामका परिवार सर्व प्रकार अभावके दारुण क्लेश भोगने लगा। जब तुकाराम पड़ोसियोंसे सहायता मांगने जाते, तो वे उन्हें अपमान सह भगा देते थे; कोई कोई तो उन्हें यह कह कर चिढ़ाते थे कि "अब तुम्हारा विठ्ठल देवता कहाँ गया? विठ्ठल-भक्तिका परिणाम देख लो न।" इन बातोंसे तुकाराम बहुत ही मर्माहत होते थे। किन्तु इस समय दुर्भिक्षका प्रकोप बढ़ता ही जाता था, तुकारामकी बड़ी स्त्री तो पहलेसे ही कासरोगसे पीड़ित थी। अनाहार और रोगसे इस समय उसने इस लोकका परित्याग किया। उसकी मृत्युसे भी तुकारामको चिरविश्राम न मिला। इसके कुछ दिन बाद तुकारामके बड़े पुत्र सन्तोबाका भी प्राणान्त हुआ। तुकाराम सन्तोबाको पर

अत्यन्त स्नेह करते थे। पुत्रको अकालमृत्युसे तुकारामके हृदय पर गहरी चोट पहुँची।

तुकारामका ज्ञान अब तक पूर्ण विकसित न हुआ था; किन्तु इस तरह बार बार विपत्तियोंके सहते रहनेसे वे अच्छी तरह समझ गये, कि इस संसाररूप कर्मक्षेत्रमें कहीं भी सुखका स्थान नहीं है। सांसारिक-सुख अलीक और भ्रान्तिमात्र है। पहली स्त्री और पुत्रकी मृत्युसे तुकारामका संसार मोह इतने दिनों तक अलक्ष्य था। तुकारामने सोचा, कि सांसारिक सुखकी आशासे कितनी ही चेष्टायें कीं; किन्तु कुछ फल न हुआ, वरन् दुःख ही बढ़ता गया। संसारका दुःख पर्वत-प्रमाण और सुख भ्रान्तिमात्र है। ऐसा विचार कर तुकाराम संसार-बन्धनको छिन्न कर देहूतके निकटवर्त्ती भाम्बनाथ नामक पर्वत पर जा भगवदाराधनामें लीन हो गये। इस पर्वत पर पहुँच कर उन्होंने शान्ति-लाभके लिये सप्ताह-व्यापी अविश्राम आराधना और चिन्तनके बाद शान्ति-लाभ की।

तुकाराम जब भाम्बनाथ चले गये, तब उनके आत्मीय-स्वजन चारों ओर उनकी पर्यटन कर उसी स्थान पर आ पहुँचे। बार बार अनुरोध करने पर तुकाराम पर्वतसे उतर कर इन्द्रायणीके किनारे आये। सात दिनों तक उन्होंने कुछ खाया-पीया न था। भोजन करनेके बाद उन्होंने रोते हुए अपने भाईसे सांसारिक अवस्था कही। व्यवसायमें तुकारामकी समस्त सम्पत्ति नष्ट हो जाने पर भी उनके पिताने लोगोंको जो रुपए दिया था, वह उन्होंने पूर्णतया वसूल न किया था। भाईने रोते हुए इनसे कागजात मांगे। तुकारामने कागजात ला कर छोटे भाईसे कहा—'भाई अब वृथा आशा क्यों करते हो आज इन कागजातोंको इन्द्रायणीके जलमें फेंक दो।' इस पर भाईने कहा—"आप संसारत्यागी हैं, आपसे यह काम हो सकता है; किन्तु मुझे जब इस परिवार-वर्गका प्रतिपालन करना ही है तब मुझसे यह काम होना असम्भव है।" तुकारामने छोटे भाईको इस बातको सुन कर उसका अर्द्धांश उन्हें दे दिया और अर्द्धांशको इन्द्रायणीके जलमें फेंकते हुए कहा,—'आजसे तुम निश्चिन्त हो जाओ, भिक्षासे ही मैं जीवन निर्वाह करूंगा।'

तुकारामको इस अवस्थामें देख लोग तरह तरहको बातें उड़ाने लगे। कोई कहता था कि व्यवसायमें क्षतिग्रस्त हो कर तुकारामका मस्तिष्क विकृत हो गया है, कोई कहता था कि तुकारामने जीविकाके लिये यह साधु-भाव धारण किया है; इत्यादि किन्तु तुकारामके लिए निन्दा और स्तुति एक ही समान थी। वे इच्छानुसार नाना स्थानोंमें घूम-घूम कर धर्मचिन्तामें समय व्यतीत करते थे।

तुकारामके पूर्वपुरुष विश्वम्भरने देहूतमें विठोवाके लिये जो मन्दिर निर्माण किया था, वह संस्कारके अभावसे भग्नप्राय: हो गया था। तुकारामने मन्दिर संस्कार कराना चाहा; किन्तु इतना धन उनके पास नहीं जिससे उनका अभीष्ट सिद्ध हो; परन्तु साधु-उद्देश्यसे निरस्त होना इस भगवद्भक्तके लिये सुकठिन थे। तुकारामने अपने हाथसे मन्दिर-संस्कारका संकल्प किया एवं स्वयं मट्टी खोद कर मन्दिरनिर्माणका कार्य आरम्भ किया। सदिच्छा-प्रणोदित-कार्य कभी असंपूर्ण नहीं रहता। क्रमशः प्रतिवासी इस कार्यमें सहायता देने लगे। तुकारामने आदिसे अन्त तक साधारण श्रम जीवियोंकी तरह मन्दिर निर्माणके कार्यमें परिश्रम किया तथा सर्वसाधारणकी सहायतासे मन्दिरकी प्रतिष्ठा कर दी। अब तो तुकाराम नव-अनुरागसे विठोवाकी पूजा करने लगे और रामकीर्त्तनमें नियुक्त हुए। अन्यान्य भक्तगण अभिनव पदावली रचना कर विठोवाके चरणमें उपहार प्रदान करते थे; किन्तु तुकारामके इस तरहकी पदावली रचकर भेंट देनेकी यथेष्ट इच्छा करने पर भी भक्ति ग्रन्थोंमें अभिज्ञता न होनेसे उनकी वासनाकी पूर्ण न होती थी। इसलिये वे पूर्वतन साधु भक्तोंकी ग्रन्थावलीका मनोयोगके साथ पाठ करने लगे। महाराष्ट्र देशीय प्राचीन भक्त-कवि नामदेवको अभङ्ग, कबीरकी पदावली ज्ञानेश्वरकृत गीताव्याख्या, अमृतानुभव नामक अध्यात्म-ग्रन्थ, योगवाशिष्ठ और श्रीमद्भागवत प्रभृति भक्ति-ग्रन्थोंका अनुशीलन करनेसे उनका हृदय और भी भक्तिसे परिपूर्ण हो गया। इनकी स्मृति-शक्ति अत्यन्त तीक्ष्ण थी, इससे थोड़े ही समयमें वे उक्त ग्रन्थोंके तत्त्वावधारणमें समर्थ हुए। उस समय वे ध्यान, धारणा,

निःस्पृहता प्रकृतिमें अभ्यस्त होने लगे। इस तरह तुकारामका धर्मजीवन संगठित होने लगा।

तुकाराम देहूके निकट भण्डारे पहाड़को भाड़ू और पत्थरों को फेंकनेमें नियुक्त हुए। जिस स्थान पर हरिकीर्तनके लिये १० मनुष्य एकत्र होते, उस स्थानको वे अपने हाथसे परिष्कार कर दिया करते थे, जिससे कि भक्तोंके चरणमें कठिन कङ्कड़ोंका आघात न लगे। जब जब कोई हरि-कथा समाप्त करके प्रवेश करते, तब वे उनके जूतोंकी रक्षा करते थे। दूसरेका उपकार और साधुओंकी सेवाके अतिरिक्त उनके जीवनका और दूसरा कोई लक्ष्य ही न था। तुकारामकी ऐसी अवस्था देख बहुतसे लोग उनसे व्यर्थ परिश्रम कराते थे। यह व्यवहार तुकारामकी स्त्री सहन न कर सकती थी, इस कारण वह सभोंसे कलह करती थी। तुकारामके जीवनी लेखकोंने तुकारामकी स्त्रीका वर्णन करते समय उन्हें दुष्ट प्रकृतिका कह कर दूषित किया है किन्तु पर्यालोचना करके देखा जाय तो उन्हें प्रकृत-पतिपरायणाके सिवा और कुछ नहीं कह सकते। अवलाई धनी बापकी कन्या थीं। जब उनका विवाह हुआ था, तब तुकारामकी अवस्था अच्छी थी। बादमें अदृष्ट दोषसे क्रमशः दरिद्रताके कारण वह सर्वदा अन्नकी चिन्तामें व्यस्त रहती थीं। तुकारामने विठोबाकी भक्तिमें अपना सर्वस्व खो दिया है, यह धारणा उनके हृदयमें बैठ गई थी। इसी कारण अवलाई तुकारामको कभी कभी तिरस्कार करती थी, किन्तु उनमें एक प्रधान गुण यह था कि वह स्वामीको बिना खिलाये आप कभी न खाती थीं। इसलिये तुकाराम जब कभी कहीं अदृश्य हो जाते थे, तब अवलाई नदीतीर प्रान्तर, पर्वत, गुहा अथवा जङ्गलमें जो कहीं वह उन्हें खोज लातीं और भोजन कराती थीं उन्हें खिलाये बिना वह किसी काममें न लगती थीं। जब तुकाराम भाम्बनाथ पर्वत पर रहते थे, तब वहां भी अवलाई आहार्य द्रव्य ले कर पहुंचती थीं। एक दिन इसी पर्वतमें कड़ी धूप और पथ श्रमसे क्लान्त हो कर वह मूर्च्छित हो पड़ी थीं। तुकाराम अपनी स्त्रीके इस प्रेमको देख कर भण्डारेसे देहूमें चले गये और वहीं रहने लगे थे।

तुकारामने नामदेव रचित अभङ्गसे अपने धर्म जीवनके विकासमें विशेष सहायता पायी थी। इस समय एक दिन उन्होंने स्वप्नमें देखा, कि विठोबा देव उपस्थित हो कर उनसे कह रहे हैं—"तुकाराम! मैंने भक्त नाम देवने जितने अभङ्ग रचनेकी इच्छा की थी उतने पूरे न हुए इसलिये तुम उन्हें समाप्त कर लोगोंका कल्याण करो। मैं तुमको मर्मस्थ ज्ञान प्रदान करता हूं।" इतना कह कर विठोबा अन्तर्धान हो गये।

तुकारामने पहले भागवतके दशम स्कन्धमें वर्णित श्रीकृष्णकी बाल्यलीलाका ८०० सौ श्लोकोंमें वर्णन कर एक ग्रन्थ बनाया और महीपतिके समय उनके मुखसे भावमयी कविताएं अनर्गल निःसृत होने लगीं। धर्मपिपासु लोग तुकारामके उस उपदेश-पूर्ण अभङ्गोंको सुन कर आत्म-विस्मृत हो जाते थे। इनके अभङ्गोंमें ऐसी एक मोहिनी शक्ति थी कि जो इसे एक बार सुन लेता वह उसे कभी न भूलता था, प्रत्युत वह उसके हृदयमें दृढ़रूपसे अङ्कित हो जाता था।

पहले जो तुकारामको पागल समझ कर घृणा करते थे, अभी वे उनका भाव देख कर विस्मित होने लगे। क्रमशः तुकारामका गौरव और प्रतिष्ठा बढ़ने लगी। सबको पूरा विश्वास हो गया कि तुकाराम यथार्थमें एक प्रकृत साधु हैं। तुकारामने पहले स्थिर किया था कि निर्जन स्थान ही तपस्याके लिये उपयुक्त है, किन्तु अभी उनके मनका भाव बदल गया। संसारमें रह कर भी मानव अनायास जीवनका कल्याण साधन कर सकते। यह सोच कर संसारके प्रति उनका विराग घटने लगा। वे पुनः संसारमें प्रविष्ट हुए और अनासक्त भावसे संसारमें रह कर नाम-कीर्तन करने लगे। उनके इस कीर्तनको सुननेके लिये दूर दूर देशोंसे अनेक लोग आने लगे। इस समय इनके दस तुकारामके शिष्य होने लगे। तुकाराम भले प्रभु राम और कृष्णके कीर्तन करते थे। तुकारामके शिष्योंमें महादजीपन्त नामक एक ब्राह्मण और गङ्गाजी नामक एक तेलिन ये दो मनुष्य प्रधान थे। तुकारामके कीर्तनके समय वे करताल और वीणा ले कर घूमते फिरते थे। महादजीपन्तके ऊपर तुकारामकी कविता लिखनेका भार था। इस समय कष्ट

धार्मिकगण तुकारामके ऊपर अत्याचार करने लगे। मन्वाजी बाबा गुसाईं नामक एक ब्राह्मणने इनके प्रति पहले अत्याचार आरम्भ किया। मन्वाजी इस ग्राममें एक मठ बनाकर यहांका महन्त हो गये थे, पहले इनको मब कोई भक्ति करते थे। अब तुकारामके प्रति सभीका अनुराग देख कर वे उन्हें स्थानच्युत करनेके लिये विशेष चेष्टा करने लगे। तुकारामको एक भैंसने एक दिन मन्दिरको तोड फोड दिया। इस पर गोसाईंने उन्हें गाली दी। एक दिन सन्ध्या समय एकादशीको विठोवाका दर्शन करनेके लिये इस मन्दिरमें बहुतसे लोग एकत्रित हुए थे चारों ओर कांटेके रहनेके कारण दर्शकोंको अत्यन्त कष्ट होता था इसलिये तुकारामने अपने हाथसे कांटेको उखाड़ कर स्थान परिष्कृत किया था। मन्वाजी गोसाईं तुकारामको कांटा उखाड़ते देख क्रोधित हो उठे और उसी कांटेसे तुकारामको मारने लगे। एकके बाद एक करके १०।१५ कांटेकी छडी तुकारामको पीठ पर टूट गईं, बाद इसके मन्वाजी क्लान्त हो कर बैठ गये। गोसाईं प्रभु इस तरहसे तुकारामको प्रहार कर मन्दिरमें प्रत्यावृत्त हुए; तुकारामने बिना शब्द किये इस कष्टको सहन कर लिया। तुकारामकी ऐसी अवस्था देख सबके नेत्रमें आंसू भर आये। तुकारामने इस प्रकारकी उपलक्ष करके कई एक अभङ्गकी रचना की।

तुकाराम किस तरहके असाधारण पुरुष थे, उसका वर्णन करना असाध्य है। वे इस प्रकारसे दण्डित हो कर घरको लौटे, उनकी स्त्री अवलाई उनकी अङ्ग वेदनाको दूर करनेके लिये सेवा शुश्रूषामें लग गईं। तुकारामके सुस्थ होने पर एकादशीके हरिजागरणके लिये समस्त आयोजन हुआ, कीर्तन सुननेके लिये झुण्डके झुण्ड मनुष्य आने लगे, किन्तु मन्वाजी गुसाईं नहीं आये। इस पर तुकारामने उनको बुलानेके लिये किसी एकको भेजा। शरीर अस्वस्थ कह कर गुसाईंजीने उस आदमीको लौटा दिया। तब तुकारामने स्वयं जा दण्डवत् कर कहा, "अपने हाथसे बहुत कालतक कड़ी प्रहार करनेमें प्रभु थक गये होंगे, इसमें मेरा ही दोष है। अभी मुझे क्षमा कर कीर्तनमें योगदान करनेकी कृपा करें।" मन्वाजी तुकारामके इस व्यवहारसे एकदम स्तम्भित हो गये, उसी दिनसे उनका विद्वेष भाव जाता रहा और तुकारामके प्रति आन्तरिक प्रेम उत्पन्न हो आया।

दीक्षा नहीं होनेसे ज्ञान सम्पूर्ण नहीं होता, इसीसे एक दिन विठोबाने स्वप्नमें ब्राह्मणका रूप धारण कर तुकारामको "राम, कृष्ण, हरि" इस मन्त्रसे दीक्षित किया। स्वप्नदृष्ट महापुरुषके अन्तर्द्धानसे तुकाराम अत्यन्त व्याकुल हो गये। उन्हें कुछ भी शान्ति न मिली। अन्तमें उन्होंने सोचा कि पुनः संसारमें प्रवेश ही शान्ति नहीं पानेका कारण है। यह सोच कर फिर कुछ दिनके लिये उन्होंने संसार परित्याग किया। उस ग्रामके निकट वक्षालर घन नामक एक अरण्यमें जाकर वे रहने लगे और प्रति दिन प्रातःकाल इन्द्रायणी नदीमें स्नान कर विठोवाका दर्शन करनेके लिये अवश्य जाते थे। एक दिन जब वे वहांसे न लौटे तब उनकी स्त्री अवलाई अत्यन्त व्याकुल हो उन्हें खोजने लगीं; अन्तमें इन्द्रायणी तीर पर उनसे भेंट हुई और बहुत कह सुन कर उन्हें घर लौटा लायीं और बोलीं "आज दिनसे मैं फिर कभी धर्मकार्यमें व्याघात न करूंगी।" किन्तु अवलाई इस प्रतिज्ञाको अनेक दिन तक पालन न कर सकीं, क्योंकि तुकारामके तीन कन्या और दो पुत्र थे। तीनों कन्याओंका नाम भागीरथी, काशी और गङ्गा तथा पुत्रका नाम महादेव और विठोबा था। एक तो पुत्र कन्याओंका प्रतिपालन, दूसरा प्रभूत अतिथि-समागम, इससे अवलाई बहुत व्यस्त रहती थीं। इसी कारण अनेक बार वह तुकारामको दो चार बातें कहा करती थीं। इसके सिवा प्रथमा कन्या विवाहके योग्य हो गई थी, जिसके लिये वह सर्वदा वर ढूढ़नेके लिये हठ करती थी। एक दिन तुकाराम पात्रानुसन्धानको गये और स्वजातीय तीन बालकको देखकर उन्हें अपने घर लाया और एक ही दिन तीनों लड़कीका विवाह करा दिया गया।

तुकारामने इस बार अवलाईके हाथसे छुटकारा पाया। इनकी ख्याति धीरे धीरे फैलने लगी। दूर दूर देशोंसे मनुष्य आकर इनका उपदेश ग्रहण करने लगे। तुकाराम शूद्र होकर ब्राह्मणको उपदेश देते थे,

आध्यात्मरञ्जित होने पर भी बाधाका अन्त नहीं आया। इनके विरुद्ध प्रचार करते थे जो किसी किसीको अच्छा मालूम पड़ने लगा। समाजीकी भाँति रामेश्वरभट्ट नामक एक ब्राह्मण तुकारामके ऊपर अत्याचार करने लगे। रामेश्वर राजमान्य भावज्ञ पण्डित कहकर परिचित थे। उन्होंने ग्रामाधिकारीसे शिकायत कर कहा कि तुकाराम शूद्र होकर श्रुतिका मर्म प्रकाश करते हैं। जब ग्रामाधिकारीको मालूम हुआ कि तुकाराम सब धर्म कर्मको उत्पाटित कर नाम महिमा प्रचार और भक्तिपथ स्थापनमें चेष्टा कर रहे हैं तब उन्होंने तुकारामको निर्वासनका आदेश प्रदान किया। तुकाराम विषम विपद्में पड़ गये। अन्तमें उन्होंने सोचा इस समय रामेश्वरका शरणापन्न होनेसे इस विपद्से उद्धार हो सकता है, यह सोचकर उन्होंने रामेश्वरकी शरण ली। रामेश्वर अत्यन्त गर्वित थे, इसीसे इसका विपरीत फल हुआ। रामेश्वरने कहा, 'तुमने जो समस्त अभङ्गोंकी रचना की है, उसमें श्रुतिका अर्थ प्रकाशित होता है इस कारण तुम उन अभङ्गोंको इन्द्रायणीके जलमें फेंक डालो।

ब्राह्मणकी आज्ञा अपरिहार्य समझकर तुकारामने अपने हृदयके धन उन अभङ्गोंको इन्द्रायणीके जलमें फेंक दिया।

तुकाराम इस काम पर बहुत ही व्यथित हुए और अन्न जल परित्याग कर विठोबाके चरणमें अनवरत ध्यान करने लगे। इस तरहसे तेरह दिन व्यतीत हो गये। अन्तमें विठोबाने कह दिया 'मैंने उन अभङ्गोंकी रक्षा की है तुम उन्हें उद्धार करो।' ग्रामके लोगोंने उन कविताओंको उद्धार कर तुकारामको समर्पण किया। तुकारामने इस उपलक्षमें ४ अभङ्गोंकी रचना की। बाद रामेश्वर भी उनके एक प्रधान शिष्य हो गये थे।

इस समय बाहुबल, ज्ञानबल और भक्तिबलसे सारा महाराष्ट्र अपूर्व गौरवान्वित हो गया था। बाहुबलके अवतारस्वरूप शिवाजी, तथा ज्ञानबलके अवतार रामदास स्वामी थे, इधर भक्तिबलमें तुकाराम महाराष्ट्रदेशमें सर्वमाननीय हो गये थे। तुकाराम, शिवाजी तथा रामदास स्वामी केवल एक समयमें ही नहीं हुए थे वरन् एक दूसरेके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध भी था। तुकारामके साथ शिवाजीका साक्षात् और सम्मिलन ये दोनों उनके जीवनकी एक एक विशेष उल्लेखयोग्य घटना है। शिवाजी तुकारामको पूनामें लानेके लिये सम्मानसूचक छत्र, अश्व और एक कारकुन भेजे किन्तु तुकाराम सम्पत्तिको विषके समान मानते थे। अतएव कोई पूना शहरमें आनेकी उनकी तनिक भी इच्छा न हुई। उन्होंने शिवाजीके लिये कई एक अभङ्ग रचना कर कारकुनको विदा किया, किन्तु शिवाजी तुकारामका अभङ्ग और गुण सुनकर एक दम मोहित हो उठे थे इसलिये वे स्थिर रह न सके। शिवाजी राजपदको तुच्छ समझ कर तुकारामकी पर्णकुटी पर गये। उन्होंने तुकारामको प्रचुर स्वर्णमुद्रा प्रदान की; परन्तु तुकारामने शिवाजी-प्रदत्त प्रचुर स्वर्ण राशिकी ओर दृष्टि तक भी न डाली और शिवाजीसे कहा,—"महाराज! हरि-प्रेमके निकट मृत्तिका और सुवर्ण मुझमें कुछ भी पार्थक्य नहीं है इससे केवल मोह और आशा बढ़ती है। यह दृश्य यथार्थमें ही अवलोकनीय था। इधर राजचक्रवर्ती शिवाजी कृताञ्जलि पुटसे दण्डायमान थे, उधर प्रचुर स्वर्णमुद्राका ढेर लगा था। शिवाजी उनकी निस्पृहता देख कर बिलकुल स्तम्भित हो गये और अपने राजपदको तुच्छ समझ कर इस अवस्थाकी ममताको ही अधिक मानने लगे। उन्होंने राजकार्यमें अवहेलाकर तुकारामके कीर्तन और धर्म चर्चामें जीवन व्यतीत करनेका दृढ़ सङ्कल्प कर लिया बाद तुकारामने उन्हें उपदेश देकर पूना-नगरमें भेज दिया। इस तरह तुकारामकी प्रतिपत्ति और विश्वास दिन दूनी और रात चौगुनी बढ़ने लगी। सब कोई तुकारामको ईश्वरावतार और ईश्वरानुगृहीत पुरुष समझ कर अर्चना करने लगे। इस समय तुकाराम सर्वदा कहा करते थे, 'प्रभो! अब मुझे वैकुण्ठ ले चलिये।'

फाल्गुनी-पौर्णमासीमें यहाँ अनेक प्रकारका कुत्सित आमोद प्रमोद हुआ करता था, इस बार तुकारामने लोगोंके इस कुत्सित आमोदको बन्द कर हरिकीर्तनको उत्साहके साथ प्रचार किया। इस रात्रिमें उन्होंने १४ अभङ्गकी रचना की, जो "बाय ग्रन्थकार",

अर्थात् "ब्रह्ममें देहसमर्पण" नामसे परिचित है। दूसरे दिन सवेरे उन्होंने कोर्त्तन कर शिष्योंको अनेक प्रकारके उपदेश देते हुए कहा 'मैं वैकुण्ठ जाऊंगा' बाद अपनी स्त्री अवलाईको भी यह संवाद भेजा कि 'तुम्हें वैकुण्ठ जाना हो तो आओ, हम दोनों मिल कर एक साथ वैकुण्ठको चलें।' अवलाईने सोचा, कि प्रभु सायद कोई तीर्थ जा रहे हैं, यह सोच कर उद्देशको प्रकाश नहीं करके खबर दी कि 'एक तो मैं गर्भवती हूँ दूसरे इस संसारको फेंक कर क्यों कर जाऊँ ?' इस तरह तुकाराम सभीसे विदा ले कर नाम-घोषणा करते हुए बाहर निकले। तुकारामने सत्य ही जो महाप्रस्थान किया वह किसीको भी विश्वास न हुआ। १५७२ ई०को फाल्गुनी कृष्णा द्वितीया तिथिमें तुकारामने महाप्रस्थान किया। उस दिनसे तुकाराम फिर कभी नहीं देखे गये। तुकाराम अन्तर्द्धान हो गये हैं, यह संवाद चारों ओर बिजलीकी नाईं फैल गया। सब कोई हाहाकार करने लगे। उनके चरित-लेखकोंने ऐसा निर्देश किया है कि वे स्वशरीरसे स्वर्गको चले गये। तुकारामने जाते समय अपनी स्त्री अवलाईको कहा था कि तुम्हारे गर्भसे इस बार जो सन्तान उत्पन्न होगी उसका नाम नारायण रखना और यह सन्तान विशेष भक्तिवान् होगी। तुकारामकी यह भविष्यवाणी सफल हुई थी। यथार्थमें नारायण विशेष हरिभक्तिपरायण निकले। कुछ दिनके बाद शिवाजी हरि-भक्त शिष्यको देखनेके लिए देहुत ग्राम आये थे और इन्होंने इस परिवारके भरण-पोषणके लिए कोई एक ग्राम जागीर दी थी। आज भी उनके वंशीयगण उस जागीरका भोग कर रहे हैं।

तुकारामने जिन सब अभङ्गोंकी रचना की थी वे सब प्रायः निम्नलिखित भावोंमें लिखे गये हैं—

१। सुख, दुःख, सम्पद्, विपद्, सब अवस्थामें भगवान्की भक्ति करनी चाहिये।

२। भीता और शरणमें आये हुए व्यक्तिको अभयदान देना चाहिए।

३। ईश्वर केवल भक्ति-लभ्य है। वाह्यानुष्ठानसे वे प्राप्त नहीं किए जा सकते।

४। जीवके प्रति अनुकम्पा, चरित्रकी निर्मलता, आत्मानुभूति ये सब धर्मके मधान हैं। शरीरमें भस्म लगाना, यह सिर्फ धर्मका निकृष्ट अंग है।

५। द्विज, शूद्र, स्त्री, पुरुष प्रभृति सबके सब भगवान्की कृपाके अधिकारी हैं।

६। भगवान्के साथ जीवोंका सम्बन्ध अत्यन्त निकट तथा अत्यन्त मधुर है। वे हम लोगोंसे दूर नहीं हैं। व्याकुल हृदयसे पुकारने पर हमें दर्शन देते हैं।

ये ही तुकारामके प्रचारित धर्मके मूलमन्त्र हैं, तथा इन्हींसे उन्होंने महाराष्ट्रदेशको आबालवृद्धवनिताको मोहित किया था।

तुकोजीराव होलकर—इन्दौरके एक अधिपति। मलहारराव के पुत्र खण्डेरावके पिताके जीवन कालमें ही (१७५४ ई०) कुम्भके दुर्ग घेरनेके समय मारे गये थे। खण्डेरावका विवाह भारतप्रसिद्ध अहल्यावाईसे हुआ था। उसके गर्भसे मल्लिरावने जन्म ग्रहण किया। मलहाररावके मरने पर मल्लिराव सिंहासन पर अभिषिक्त हुआ। किन्तु उसने अधिक दिन राज्य नहीं किया। अभिषेकके ८ मास बाद ही वे कालग्रासमें पतित हुए।

इस समय मलहाररावके और कोई उत्तराधिकारी न थे। अहल्यावाईको एक कन्या थी सही किन्तु एक भिन्न श्रेणीके सामन्तके साथ उसका विवाह हुआ था, इसलिए हिन्दूधर्मशास्त्रानुसार वह उत्तराधिकारी न हो सकी। इसी समय अहल्यावाईने अपने हाथमें राज्यशासन दण्ड ग्रहण किया। किन्तु सैन्यपरिचालना करना स्त्रियोंके लिए संगत नहीं है, यह सोच कर उसने स्वजातीय तुकोजी होलकरको १७६७ ई०में सेनापतिपदमें नियुक्त किया। इन्दौरके इतिहासमें तुकोजी होलकरका अभिषेक इसी समयसे गिना जाता है।

मलहारराव होलकरके साथ तुकोजीका कोई निकट सम्पर्क न था। वे मलहाररावके अधीन काम करते थे। उनकी वीरता, प्रभु-भक्ति और साहससे सन्तुष्ट हो कर मलहाररावने उन्हें बहुत सी सेनाओंके नायकपद पर नियुक्त किया। बुद्धिमति अहल्याबाईने तुकोजीकी दक्षता और विचक्षणतासे सन्तुष्ट हो कर उन्हें राज्यका प्रधान बनाया। अहल्याबाईकी अनुमतिके अनुसार

तुकोजी अपनी उच्चपदके निदर्शनस्वरूप सेनाके साथ जानेके लिए महाराष्ट्र-राजधानीकी ओर अग्रसर हुए। पूनामें तुकोजीने यथेष्ट सम्मान लाभ किया।

उनके समयमें गङ्गाधरने प्रधान मन्त्रित्व प्राप्त किया। होलकरराज्यमें इनका भी यथेष्ट आदर था। अहल्याबाईने सेनापतित्वके सिवा थोड़े ही तुकोजीको 'होलकर' अथवा राज सम्मान-सूचक उपाधि प्रदान की। अहल्याबाईने होलकरवंशके यह सम्मान प्रदान किया था, जिससे कि कोई भी उनके साथ असन्तोष प्रकाश कर न सके। तुकोजीने सिर्फ बादमें १० वर्ष तक यह उच्च सम्मान भोग किया था। इतने दिनोंमें अहल्याबाईके गुणसे एक क्षणके लिए भी राज्यमें कोई विघ्न न हुआ।

अहल्याबाईने जो उपकार किया था, उसे तुकोजी एक दिनके लिए भी विस्मृत न हुए। अहल्याबाईसे अधिक उमर होने पर भी वे उन्हें मातृसम्बोधन करते थे; किन्तु अहल्याबाईके अभिप्रायसे उनकी मुद्रामें 'मल्हारराव होलकरके पुत्र तुकोजी' अङ्कित की।

तुकोजीने होलकर उपाधि ग्रहण करनेके बाद बारह वर्ष तक मध्य और दक्षिण देशमें वास किया। इस समय सातपुरा गिरिमालाका दक्षिणांश उनके अधीन तथा उत्तरांश अहल्याबाईके शासनाधीन था। जब वे हिन्दुस्तानमें थे, तब वे राजपूताने और बुन्देलखण्डके अन्तर्गत देशोंसे स्वयं कर वसूल करते थे। वे सर्वदा दूर देशमें रह कर अपनी इच्छानुसार कार्य करते थे सही, किन्तु अहल्याबाईके निकट कार्यविवरणी नियमित भेजा करते तथा उनके मन्त्रणानुसार कार्य करते थे।

वस्तुतः अहल्याबाई जितने दिन बची थीं, उतने दिन राजपद पा कर भी तुकोजी केवल प्रधान सेनापति और अपने निकटवर्त्ती स्वामीके राजस्व-आदायकारी कर्मचारी की नाईं काम करते थे। ऐसे उन्नत और ऐसी उच्च प्रकृतिके मनुष्य होलकरराज्यमें कभी नहीं देखे गये।

ये जैसे प्रभुभक्त थे वैसे ही मितभाषी भी थे। पानीपतकी लड़ाईके बाद मुसलमान-राज्य पर आक्रमण कर प्रतिशोध लेनेके लिए महाराष्ट्र-वीरोंकी इच्छा पूरी हुई। उस समय तुकोजी पूना जा कर पेशवाके निकट रहते थे। पेशवाके आदेशसे रामचन्द्र गणेशके साथ वे उत्तम स्थान समरमें भेजे गये। इस समय नाजिब-उद्दौला एक प्रधान मुसलमान सर्दार थे। इनसे महाराष्ट्रोंने १७७० ई०में उनके अधिकृत नाजिबाबाद दुर्ग पर आक्रमण किया। नाजिब खांके साथ मल्हारराव होलकरकी मित्रता थी। तुकोजी उसी सूत्रसे उनके साथ कथा वार्त्ता करने लगे; किन्तु इस पर माधोजी सिन्धिया असन्तुष्ट हो कर बोले, 'हम लोग प्रतिशोध लेनेके लिए आ रहे हैं न कि सन्धि स्थापन करनेके लिए। मैं अपने भाई और भतीजेके शोणितका प्रतिशोध क्यों न लूं? तुकोजी मुसलमान उमरावके साथ भ्रातृभाव स्थापन कर रहे हैं। पूनामें पेशवाको सम्वाद देना चाहिए। हम लोग उनके केवल आदेशकारी हैं उनके आदेशानुसार ही काम करेंगे।' किन्तु तुकोजीने सिन्धियाका प्रस्ताव ग्राह्य नहीं किया। जिसको उन्होंने एक बार वचन दे दिया है उसके विरुद्ध किसी प्रकारकी कार्रवाई करनेमें वे सहमत न हुए। उन्होंने नाजिब-उद्दौलाके साथ पूर्व मित्रताकी रक्षा की। इससे महाराष्ट्रोंको अधिक सुविधा हुई। वे जाट और राजपूत राज्यमें बहुत लूटमार और कर वसूल करने लगे।

नाजिब-उद्दौला तुकोजीकी उदार प्रकृतिसे अत्यन्त आकृष्ट हुए थे। यहां तक कि वे मृत्युके पहले अपने प्रियपुत्र जाबिता खांको तुकोजीके हाथ समर्पण कर गये थे। वे जानते थे कि उनकी मृत्युके बाद महाराष्ट्रोंमें न्यायपरायण तुकोजीके सिवा दूसरा कोई भी उनके परिवारवर्गोंकी रक्षा नहीं कर सकते।

यथार्थमें उनकी बातके बाद महाराष्ट्रोंने हिन्दुस्तानका अधिकांश अपने दखलमें कर लिया। इस समय सिन्धिया हिन्दुस्तानमें सबसे बढ़े चढ़े थे। तुकोजी स्वयोग्योंकी उन्नतिसे सन्तुष्ट थे सही, किन्तु उनके अधीन सामन्तकी नाईं काम करनेमें प्रस्तुत नहीं थे। इसलिये वे लौट कर मालवको चले आये।

कुछ दिनके बाद पेशवा माधवरावकी मृत्यु तथा राघवरावके पेशवाके कनिष्ठ भाई नारायणरावकी मृत्यु होने पर महाराष्ट्र सामन्तगण दाक्षिणात्यमें आ पहुंचे। रघुनाथरावके विरुद्ध इस समय 'बार भाई' नामक महाराष्ट्र-सर्दारोंने एक दल संगठित किया था। माधोजी

सिन्धिया और तुकोजीने इस दलमें योग दिया था। इसीसे ब्रिटिशगवर्मेण्टके साथ तुकोजीको युद्ध करना पड़ा था।

नारायणरावकी मृत्युके बाद मधुराव नामक उन्हें एक पुत्र उत्पन्न हुआ। सर्दारोंने उसी मधुरावको पेशवाके पद पर नियुक्त किया, किन्तु प्रकृत-क्षमता बालाजी जनार्दनके हाथ रही। इतिहासमें ये नानाफड़नवीसके नामसे विख्यात हैं। रावके विरुद्ध जो सैन्यदल संगठित हुआ था, उसमें जनार्दनने यथेष्ट कार्य किया था। १७७६ ई०में कर्नल आपटनकी मध्यस्थतासे दोनों दलमें सन्धि हो गई। किन्तु वह सन्धि कायम न रही। अन्तमें सालबाई नामक स्थानमें दूसरी बार सन्धि स्थापन की गई इससे युद्ध कुछ कालके लिए शान्त रहा।

पूना गवर्मेण्टने निजामकी सहायतासे टिपु सुलतानके विरुद्ध जो युद्ध किया था, उसमें तुकोजीने प्रधान कार्य का भार लिया था। दूसरे वर्ष उन्होंने महेश्वर पहुंच कर अहल्याबाईके साथ मुलाकात की और इसीसे सब गड़बड़ी मिट गई।

प्रथम बाजीरावकी औरस और एक मुसलमान-रमणीके गर्भसे अली बहादुर नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। बुन्देलखण्डके अधिकांशमें अली बहादुरका अधिकार तथा समस्त भारतवर्षमें माधोजी सिन्धियाका अधिकार फैलानेके लिये महाराष्ट्रोंने यथेष्ट चेष्टा की, इस विषयमें योग देनेके लिये तुकोजी तैयार हुए, किन्तु तुकोजी, माधोजी सिन्धियाके प्रति सहायता करनेमें सहमत न हुए। इसी सूत्रसे लड़ाई छिड़ी, किन्तु इसमें तुकोजीने कोई उपकार न पाया। अन्तमें हिन्दुस्थानके राज्यमें होलकर और सिन्धियाका बराबर बराबर अंश स्वीकृत हुआ। रणजी सिन्धिया और मलहारराव होलकरके देन-लेनमें जो गड़बड़ी थी वह इस समय मिट गई। ऋण परिशोधके लिये कई एक जिला तुकोजीको देने पड़े, किन्तु माधोजीके प्राबल्यसे तुकोजीने कोई विशेष लाभ प्राप्त न किया। माधोजी इस समय पूनाके दरबारमें अपनी प्रभुता स्थापन करनेके लिये जब उपस्थित हुए तब तुकोजी सर्दारोंके साथ विवादमें लिप्त हो गये। १७९२ ई०में सिन्धियाके प्रतिनिधि लुकुदादाः-लाखिरी गिहड़ सहरमें तुकोजीके डि-वयन नामक फरासीसी सेनापतिके पदातिक दलसे पराजित हुए। जब सिन्धियाकी सेना भागने लगी, तब तुकोजीकी सेनाओंने इन्दौर तक उनका पीछा किया। किन्तु मालवके मध्य सिन्धियाकी कोई क्षति न हुई। इस युद्धमें सिन्धिया और होलकरका कुछ भी स्वार्थ न था। दोनों दलके सर्दारोंकी स्पर्द्धा प्रकाश करना ही उद्देश्य था।

तुकोजी मालवमें कई एक मास रहे। इस समय बहुत दिनोंसे सङ्कल्पित निजामअली खांके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये पूनामें सर्दारगण एकत्र हो रहे थे, उन्होंने तुकोजीको बुलाया। १७९५ ई०में यह लड़ाई छिड़ी। इस समय तुकोजीकी उम्र ७० वर्षकी थी। माधोजी सिन्धियाके मरने पर, ये सबसे प्राचीन सर्दार कह कर सम्मानित होते थे, किन्तु दौलतराव सिन्धियाकी क्षमता ही सबसे अधिक थी। निजामको पराजित करनेके लिये जितनी लड़ाइयां हुई, उनमें होलकरने प्रकृत पक्षमें सिन्धियाको केवल परामर्श दानमें सहायता की, विशेष कार्यमें कुछ भी नहीं। इस युद्धके समाप्त होनेके पहले ही तुकोजीकी मृत्यु हुई। ये वीर पुरुष, समर-कुशल और कृतज्ञ थे। उन्नतिके पथ पर अग्रसर होते हुए मृत्युपर्यन्त अहल्याबाईके निकट, जैसे वाध्य, वशीभूत और कृतज्ञ थे उसके लिये सौ मुखसे उनकी प्रशंसा करनी चाहिये।

तुकड़ (हि० पु०) वह जो भद्दी कविता बनाता हो।

तुक्कल (फा० स्त्री०) मोटीडोर पर उड़ाई जानेकी एक प्रकारकी बड़ी पतङ्ग।

तुक्का (फा० पु०) १ बिना गांसीका तीर। २ क्षुद्रपर्वत, छोटी पहाड़ी, टीला। ३ सीधी खड़ी वस्तु।

तुङ्गेश्वरी पहाड़—आसामके मध्य ग्वालपाड़ा जिलेका एक पहाड़। इसके शिखर पर बिजनीके किसी एक राजासे बना हुआ एक सुन्दर प्राचीन मन्दिर है, जिसमें दुर्गादेवीकी मूर्त्ति प्रतिष्ठित है। मन्दिर अत्यन्त सुदृश्य कारुकार्य विशिष्ट है। इसकी गठन प्रणालीमें यथेष्ट कौशल देखे जाते हैं। यहां भिन्न भिन्न स्थानके संन्यासी और यात्री आते हैं। पर्वत केवल संन्यासियोंका वासस्थान है। संन्यासियोंमेंसे एक राजाकी और संन्यासीनियोंमेंसे एक रानीकी उपाधि ग्रहण करती है। ये ही

यहांके सामाजिक विषयोंके अनेक बातें मानी जाती हैं।

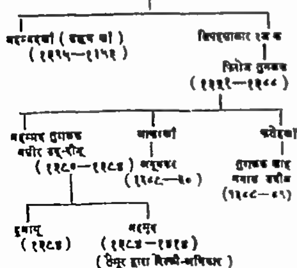
तुष (सं० पु०) १ छिलका, भूसी। २ धान्यके ऊपरका छिलका।

तुषार (सं० पु०) विन्ध्यपर्वतस्थ जातिभेद। (हरिवं० ५ अ०)

महर्षियोंने सोमान्ध और मदमत्त वेनको निपात करके मन्थन किया था उसी समय इस जातिको उत्पत्ति हुई थी। ये विन्ध्य पहाड़ पर रहती हैं। ये अत्यन्त नृशंस तथा परस्वापहारी हैं और तुखार या तुषार नामसे प्रसिद्ध हैं।

२ एक देशका प्राचीन नाम। इसका उल्लेख अनेक पौराणिक रामायण, महाभारत इत्यादिमें पाया है। पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे यह देश हिमालयके उत्तर-पश्चिममें बतलाया गया है। वर्तमान नाम तुखारिस्तान है। यहांके घोड़े प्राचीनकालमें बहुत अच्छे माने जाते थे। तुखार देखो।

तुग़लक (तुग़लक)—सुलतान गयास् उद्दीन तुग़लककी एक क्रीतदास। इनके पुत्रने (१३२१ ई०में) खुसरुशाह को मार कर गयास उद्दीन तुग़लक नाम धारणपूर्वक दिल्लीके सिंहासन पर बैठे थे। इस वंशके राजा लोग तुग़लकवंश नामसे इतिहासमें प्रसिद्ध हुए हैं। तुग़लक वंशमें जो राजा हुए हैं उनकी एक वंशावली दी जाती है।



तुष्ट (सं० स्त्री०) तुष भावे क्त। सन्तोष। यह मन-काय, वाक् और काम-विनाशक है।

तुषाग्नि (सं० पु०) तुषका एक चोरे। अग्र बीचका।

तुग्र (सं० पु०) तुज हिंसायां बाहुलकात् रक्। वैदिक कालके एक प्रसिद्ध राजर्षि। वे अश्विनीकुमारोंके उपासक थे। इनके पुत्रका नाम भुज्यु था। इन्होंने द्वीपान्तर वासी शत्रुओंको परास्त करनेके लिये अपने पुत्रको जहाज पर चढ़ा कर समुद्र पथसे भेजा था। भुज्यु देखो। मार्गमें जब एक बड़ा तूफान आया और वायु नौकाको उलटाने लगी तब भुज्युने अश्विनीकुमारोंकी स्तुति की थी। अश्विनीकुमारोंने सन्तुष्ट हो कर भुज्युको बिना छिद्र अपनी नौका पर ले कर तीन दिनमें उसके पिताके पास पहुंचा दिया था। (ऋक् १।११६।३)

तुग्य (सं० स्त्री०) १ जल, पानी। २ तुग्रके पुत्र भुज्यु।

तुग्या (सं० स्त्री०) तुग्य-टाप्। जल, पानी।

तुग्यावृध् (सं० त्रि०) तुग्या-वृध-क्विप्। उदककर्मयिता जलको बढ़ानेवाला।

तुग्वन् (सं० त्रि०) तुज-क्वनिप् न्यङ्कादित्वात् कुत्व। हिंसक, हिंसा करनेवाला।

तुघरिल खाँ—ये दिल्लीके सुलतान अलतमसके एक क्रीतदास थे। इनका पूरा नाम मालिक इख्तियार उद्दीन उजबक-ए तुघरिल खाँ था। उनके समयमें ये बादशाहके पालकियोंके अधिकारी अध्यक्ष (आमिर आखुर? …) थे। सुलतान रुकन उद्दीन फिरोज शाहके समयमें इन्हें भी दरबारमें सुखपाल (अमीर ए मजलिस)-का पद पाया था। इसके बाद हस्तिशालाके अध्यक्ष हुए।

सम्राट्‌के क्रीतदास जब विद्रोही हो उठे थे तब तुघरिल खाँने भी विद्रोहमें योग दिया था, किन्तु सुलतान रजियाके राजत्व-कालमें वे अश्वशालाध्यक्षके पद पर नियुक्त हुए। बहराम शाहके राजत्वमें (६३८ हिजरीमें) तुर्की मालिक और अमीरोंने जब दिल्ली पर आक्रमण किया, तब मालिक तुघरिल खाँ और मालिक कराकाश खाँ विपक्षदलमें रह कर भी सम्राट्‌के दलमें मिल गये और विपक्षियोंसे लड़ने लगे, किन्तु युद्ध शत्रुके सर्द हाथमें कारागार भेजे गये। अन्तमें दिल्लीके उद्धार होने पर उनको मुक्ति हुई। अलाउद्दीनके राजत्वकालमें इन्होंने

तवर-हिन्द और लोहनका शासनभार पाया, इसके बाद ये कन्नौजके शासनकर्त्ता हुए। इस स्थानका अधिकार पा कर ये विद्रोही हो उठे, किन्तु मालिक कुतबउद्दीन् हुसेनसे पराजित हो कर दिल्लीको लौट आये। इसके कुछ दिनोंके बाद इन्होंने अयोध्या तथा लक्ष्मणावतीका शासनभार ग्रहण किया। इनके साथ जाजनगरके अधिपति (उत्कलके राजा)-को लड़ाई छिड़ी। जाजनगराधिपतिके मन्त्री सेनापति हो कर आये थे, किन्तु तुघरिल तीनों लड़ाईमें पराजित हो कर भाग चले। तीसरी लड़ाईमें मालिक तुघरिलखांने दिल्लीसे सैन्यसाहाय्यको प्रार्थना को, बाद लक्ष्मणावतीसे एक वृहत् सैन्यदल ले कर जाजनगराधिपतिके अधिकारभुक्त अमर्दन देश पर हठात् आक्रमण किया।

यहांके राजा अपने परिवारवर्गका छोड़ कर भाग गये। धनरत्न हाथी घोड़े सब तुघरिल खांके हाथ लग गये।

तुघरिल राजधानी लौट कर रक्त, श्वेत और कृष्ण वर्णके चन्द्रातप व्यवहार करने लगे; बाद अयोध्या पर चढ़ाई करनेके लिये अग्रसर हुए। अयोध्या नगरमें प्रवेश कर सब जगह इन्होंने अपने नाम पर खुतवा * पाठ करनेका आदेश किया तथा अपनेको सुलतान मुघिस उद्दीन् नामसे प्रचार किया। एक पक्षके बाद सम्राट्के अधीन् एक अमीरने हठात् आ कर संवाद दिया कि सम्राट्की सैन्य बहुत नजदीक पहुंच गई है। यह सुनते हो तुघरिल खांने नौका पर चढ़ कर लक्ष्मणावतीको ओर प्रस्थान किया।

इस विद्रोहाचरणसे मुसलमान और थोड़े हिन्दू भी उन पर विरक्त हो गये थे। जो कुछ हो, उन्होंने लक्ष्मणावती लौट वाग्मती नदीको पार कर कामरूप पर आक्रमण किया। कामरूपाधिपति पराजित हुए। तुघरिलने कामरूप नगर और धनरत्न अधिकार किया।

* कुरानका कोई विशेष अंश मंगलविधानके लिये पाठ किया जाता है जो हम लोगोंके चण्डीपाठकी नांई है। किसी व्यक्तिविशेषके नाम पर खुतवा पाठके अर्थमें हम लोगोंके "श्री-विष्णु प्रीतिकाम" वचनकी नांई भगवान्के नामकी जगह उस व्यक्तिका-नामोल्लेख किया जाता है।

कामरूपाधिपतिने कर दे कर राज्य पानेको आशासे एक विश्वासी मनुष्यको उनके पास भेजा, किन्तु तुघरिल इस पर सहमत न हुए। तब कामरूप-पतिने अपनी सैन्य और प्रजाओंको धन दे कर कहा कि जितना मूल्य लगे उतना दे कर कामरूपका सब अनाज खरीद लाओ। प्रजाओंने उनके कथनानुसार वैसा हो किया। तुघरिलने देशको उर्वरता पर विश्वास कर असम्भव दरमें सब अनाज बेंच डाला। इसके बाद काटनेके समय कामरूपपतिने चारों ओरके जलपथ या नाला खोल दिया जिससे कि प्रस्तुत किया हुआ अनाज बह गया। मुसलमानोंने निराहार मरनेके डरसे लक्ष्मणावतीको भाग जानेका विचार किया। देश जलसे बह रहा है, रास्ता कहीं न मिला, किन्तु पथदर्शकको सहायतासे सब कोई पहाड़ी रास्तासे भाग निकले। अन्तमें एक सङ्कीर्ण रास्तेमें आकर हठात् हिन्दुओंने आक्रमण किया; इस युद्धमें शराघातसे तुघरिल खां हाथोको पीठ परसे नीचे गिर पड़े और हिन्दुओंके हाथसे बन्दी हुए। आतुर सैनिक भी बहुतसे मरे और बहुतसे बन्दी हुए। तुघरिलको सन्तानादि तथा पत्नीवर्ग भी बन्दी हुआ था।

तुघरिल कामरूपपतिके सामने लाये गये। यहां उन्होंने अपनी सन्तानसे भेंट करनेकी इच्छा प्रकट की। पुत्रके उपस्थित होने पर उन्होंने उसे अपनी गोदमें ले मुख-चुम्बन करते करते प्राणत्याग किया।

तुघान खां—दिल्लीके सम्राट् अल्तमसका एक क्रीतदास। इनका पूरा नाम मालिक आइजुद्दीन-तुघ्रिल-तुघान् खां था। ये सुन्दर रूपवान् पुरुष थे। इनमें गुण भी यथेष्ट थे। दया, दाक्षिण्य, महिमा, भद्रता, उच्चाशय और लोकप्रियतासे सभी इनकी बड़ाई करते थे।

सुलतान अल्तमसने इन्हें खरीद कर सबसे पहले साकि-इ-खास (पानपात्र वाहक)-के पद पर तथा उसके बाद सरदीवत-दार (प्रधान लेख्याधार-रक्षक)-के पद पर नियुक्त किया। इसके बाद ये क्रमशः बादशाही पाकशालाके अध्यक्ष और अश्वशालाध्यक्ष नियुक्त हुए। इसके बाद ६३० हिजरीमें ये बदाऊं प्रदेशके शासनकर्त्ता बनाये गये। इस स्थान पर सुख्याति लाभ करनेके बाद इन पर विहारका शासनभार सौंपा

गया। १२२१ ई०में लक्षणावतीके शासनकर्त्ता मालिक मुघलतातकी मृत्यु होने पर तुग़ान खाँ वहाँ शासनकर्त्ता हुए। जब सुलतान अलतमसकी मृत्यु हुई तब तुग़ान खाँ और आवज आमाद राढ़प्रदेशके शासनकर्त्तामें विवाद हुआ। मिनहाजने लिखा है, कि इस समय लक्षणावती दो भागोंमें विभक्त थी—एक भाग लखनउर था राढ़ और दूसरा भाग बसनकोट था वरेन्द्र का। तुग़ान खाँ वरेन्द्रभूमिके और आवज राढ़के शासनकर्त्ता थे। लक्षणावती नगरीके अन्तर्गत बसनकोट नगरके अधिकारके लिये दोनोंमें लड़ाई छिड़ी। आवज साहसी पुरुष थे एवं सब कोई आपोर खाँ कहते थे। युद्धमें तुग़ान खाँने आपोर खाँको समरक्षेत्रमें पराजित कर मार डाला। आवजके मरने पर दोनों प्रदेश तुग़ान के अधीन आ गये।

सुलताना रजियाके राजत्वकालमें तुग़ान खाँने दिल्ली-के दरबारमें अनेक उपयुक्त व्यक्ति और उपहार भेज दिया। सुलतानाने भी अम्ब्रताप, राजदण्ड, पताका, नक्कारा इत्यादि प्रदान करके तुग़ानको सम्मानित किया। इसके बाद तुग़ानने तिरहुत पर आक्रमण किया और बहुत धनरत्न लूट कर घर लाये।

सुलतान मुइज्ज-उद्दीन् बहराम शाहके राजत्वकालमें भी तुग़ान खाँ सम्राट्के साथ सद्भाव रखते थे। सुलतान अलाउद्दीन् मसऊद शाहके राजत्वके पहले तुग़ानके शिविरमें विख्यात मिनहाजउद्दीन् सिराज जुरियानीने अयोध्या कोरा-मानिकपुर और उत्तरदिक् अधिकारमें लानेके लिये प्रतिज्ञा की। १२४० ई०में तुग़ान खाँ कोरा मानिकपुरमें उपस्थित हुए, बाद अयोध्याकी सीमामें कुछ दिन रह कर लक्षणावतीको लौट आये।

१२४१ ई०में आजमगढ़ (उत्कल)के राजाने लक्षणावती राज्यमें उत्पात आरम्भ किया। तुग़ान खाँने आजमगढ़-सैन्यके उत्पात-निवारणके लिये कर्ण अतासीन्के निकट दो नदियोंके पार मार भगाया। वे एक वे तर्फ जङ्गलमें छिप रहे। अन्तमें जब मुसलमान सैनिक खानेपीनेके लिये शिविरको आये, तब हिन्दू-सैन्यने पीछेसे आक्रमण कर बहुतसे मुसलमानोंको विनष्ट कर डाला। तुग़ानका विजय मनोरथ हो राजधानी लौट आये। राजधानीमें आ कर उन्होंने अपने मन्त्रीको दिल्ली भेजा। मर्जबान-सुल्तानने दिल्ली-दरबारमें आ कर सम्राट् अलाउद्दीन मसऊद शाहसे साहाय्यकी प्रार्थना की। सम्राट्ने भी कमालउद्दीन अबाजीको खिलात्, अम्ब्रातप, ताज और राजचिह्न दे कर प्रेरण किया तथा कमरउद्दीनके अधीन हिन्दुस्तानी सैन्य दलको एक बड़ा नदीके पूर्वीय भागमें सैन्यदलको भेजा। अयोध्याके शासनकर्त्ता तमर खाँने भी विजयके सैन्य लक्षणावतीकी सहायतार्थ प्रेरण किया।

१२४२ ई०में आजमगढ़राधिपति अलाउद्दीन्के युद्धका प्रतिशोध लेनेके लिये, लक्षणावती पर आक्रमणके उद्देश्यसे बहुत से अश्वारोही और पदाति सैन्य ले कर वहाँ आ पहुँचे। राढ़में इस समय तुग़ानके अधीन फखर-उल्-मुल्क करीम-उद्दीन् लाघरी शासनकर्त्ता थे। आजमगढ़के सेनापतिने पहले राढ़ देश पर ही आक्रमण किया। युद्धमें करीम-उद्दीन्की बहुतसी सेना मारी गई। अन्तमें करीम दल-सहित लक्षणावतीको भाग गये। जाजेसर शब्द देखो। आजमगढ़के सेनापतिने उनका पीछा किया किन्तु जब उन्होंने सुना कि दिल्लीसे सेना आ रही है तब वे युद्ध करनेको बाध्य हुए। दिल्लीके प्रेरित सैन्यदलने उपस्थित हो कर देखा कि विपद नहीं है और न युद्ध ही हो रहा है। अन्तमें तमर खाँके साथ तुग़ान खाँका युद्ध छिड़ा। किन्तु वही एक घंटा युद्ध करनेके बाद एक व्यक्तिकी मध्यस्थतासे लड़ाई बन्द हो गई। तमरके हार पर भी तुग़ान खाँका शिविर था, वे सब सैन्य शिविरमें जा अश्वादि स्नान कर विश्रामका उद्योग करने लगे। किन्तु तमर खाँने शिविरसे कुछ दूरीमें रह कर उन्होंने अश्वादि बाँधके उनके शिविरमें जा अकस्मात् मन्त्रीको पराजय किया और हठात् आ कर तुग़ान खाँ पर आक्रमण किया। तुग़ान खाँने घोड़े पर सवार हो नगरमें प्रवेश कर अपने प्राण बचाये। तुग़ानके अनुरोधसे मिनहाज-उद्दीन् सिराजी-ने दोनोंमें सन्धिका प्रस्ताव किया। तमर खाँने प्रस्ताव किया कि तुग़ान खाँ यदि उन्हें लक्षणावती राज्य छोड़ कर दिल्ली चले जायँ, तो सन्धि हो सकती है। तुग़ान खाँ इस प्रस्तावसे सम्मत भये कि यह तमरखाँ-

का प्रस्ताव नहीं है, दिल्लीके सम्राट्ने ही उन्हें ऐसा करनेका उपदेश दिया है, नहीं तो ऐसा असङ्गत प्रस्ताव तमर खाँ कभी करनेका साहस नहीं करते। जो कुछ हो, तुघान खाँ राजभक्तिके बलसे वैसा ही कर अपना धनरत्न, हाथी, घोड़ा और अनुचरोंको साथ ले ६४० हिजरीमें दिल्लीको गये। लक्ष्मणावती नगर तमरखाँके अधीन हो गया। तुघानखाँने दिल्लीमें जा कर महा सम्मान प्राप्त किया और उनकी राजभक्ति तथा कार्य्यवृत्ति स्वरूप उन्हें तमर खाँके परित्यक्त अयोध्याका शासन-कर्तृत्व दिया गया। इसके कई एक महीने बाद सम्राट् नसीरुद्दीन् महम्मद शाहके सिंहासन पर आरूढ़ होने पर तुघान खाँने अयोध्या जा कर वहांका शासन-भार ग्रहण किया। यहां पर उन्होंने यथेष्ट सुख-शान्ति पाई थी, किन्तु कुछ कालके बाद ही उनकी मृत्यु हो गई। आश्चर्यका विषय यह था कि जिस रातमें अयोध्यामें तुघान खाँकी मृत्यु हुई, ठीक उसी रातको बङ्गालमें तमर खाँकी भी जीवनलीला शेष हुई।

तुङ्ग—(सं० पु०) तुज हिंसायां अच्, न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वं। १ पुन्नागवृक्ष। २ पर्वत, पहाड़। ३ नारिकेल। ४ बुधग्रह। ५ गण्डक। (त्रि०) ६ उच्च, ऊँचा। (क्ली०) ७ ग्रहविशेषका राशिभेद, ग्रहोंकी उच्चराशि। ज्योतिषमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है,—यवनाचार्य्यके मतसे मेषादि सब राशि, सूर्यादि सब ग्रहोंके दशमादि अंश यथाक्रमसे उच्च और परमोच्च हैं। मेष राशिका दशांश रविसे उच्च तथा दशांशका शेष अंश ही परमोच्च है। वृष राशिके तीन अंश चन्द्रसे उच्च और तृतीयांशका शेष अंश परमोच्च है। मकर राशिका अट्ठाईसवाँ अंश मङ्गलसे उच्च तथा अट्ठाईसवेंका पूर्णांश ही परमोच्च है। कन्याराशिका पन्द्रहवाँ अंश बुधसे उच्च और पन्द्रहवांका पूर्णांश ही परमोच्च है। कर्कट राशिका पांचवां अंश उच्च और पांचवेंका शेष अंश ही परमोच्च है। मीन राशिका सत्ताईसवां अंश शुक्रसे उच्च और सत्ताईसवेंका शेष अंश ही परमोच्च है। तुला राशिका बीसवां अंश शनिसे उच्च और बीसवेंका शेष अंश ही परमोच्च है। इन मेषादि सब राशियोंके सातवें घरमें रवि प्रभृति सब ग्रहोंके दशमादि अंशके यथाक्रमसे नीचे और दशांशका शेष अंश और भी नीचे है। इसी तरह चन्द्र, मङ्गल, बुध, वृहस्पति, शुक्र और शनि इनके वृश्चिक, कर्कट, मीन, मकर, कन्या और मेषराशिमें पूर्वोक्त अंशांशके अनुसार नीच परमनीच विचार करना पड़ेगा। इन सब अंशोंका तीसवां अंश स्फुटगणनामें सम्हालना चाहिये।

मेषराशि रविका उच्च गृह, वृषराशि चन्द्रका, मकर मङ्गलका, कन्या बुधका, कर्कट वृहस्पतिका, मीन शुक्रका और तुला शनिका उच्च गृह है। सब ग्रह उच्च गृहस्थितमें यदि पूर्वोक्त दशांशमें रहे, तो ग्रहोंको सम्पूर्ण बली समझना चाहिये। इन्हीं ग्रहोंके ऊंचे स्थानका नाम तुङ्ग है तथा परमोच्च स्थानका नाम सुतुङ्ग है। ग्रहगण नीच घरमें यदि नीचांशमें रहे तो उन्हें बलहीन जानना चाहिये। जन्मकालीन सिंह, वृष, कन्या और कर्कट राशिमें राहुग्रहके रहनेसे तुङ्ग होता है। राहु तुङ्ग होनेसे मनुष्य नाना धनरत्न भूषित राजराजाधिपति और चिरायु होता है। (कोष्ठी प्र०)

मूल त्रिकोणको भी तुङ्ग कहते हैं। सिंहराशि रविका त्रिकोणगृह, वृष राशि चन्द्रमाका मूल त्रिकोण है, मेष मङ्गलका, कन्या बुधका, धनु वृहस्पतिका, तुला शुक्रका और कुम्भ शनिका मूल त्रिकोणगृह है। त्रिकोण अंश रवि प्रभृति सब ग्रहोंके सिंहादि सब राशिका विंशादि अंश यथाक्रमसे मूलत्रिकोणांश कहकर प्रसिद्ध है। यथा, रविको सिंहराशिका बीसवां अंश, मङ्गलको मेषराशिका बारहवां अंश, वृहस्पतिको धनुराशिका दशवां अंश, शुक्रको तुला राशिका पन्द्रहवां अंश और शनिको कुम्भराशिका बीसवां अंश मूलत्रिकोण अंश है। इनमें बुध और चन्द्रमें विशेषता यह है कि बुधके सु-उच्चांशके बाद दशांश और चन्द्रमाके सु-उच्चांशके बाद सत्ताईसवां अंश मूलत्रिकोण अर्थात् बुधका पन्द्रहवां अंश सु-उच्च है, इसलिये कन्याराशिके पन्द्रहवें अंशके बाद दशांश मूल-त्रिकोण तथा चन्द्रमाके तृतीयांश सुउच्चके बाद सत्ताईसवां अंश मूल त्रिकोण होता है। मिथुनराशि राहुका उच्च गृह है, कुम्भराशि मूल त्रिकोण, कन्या राशि स्वगृह शुक्र और शनि मित्र तथा, सूर्य, चन्द्र और मङ्गल ये शत्रु और मिथुनके बीसवें अंशको उच्चांश समझना चाहिये। सिंहराशि केतुका मूलत्रिकोणगृह है; धनु

उसके मीनराशि अपरह, शुक्र और शनि शत्रु, सूर्य मङ्गल और चन्द्र ये मित्र हैं, बृहस्पति और बुध ये न तो शत्रु हैं और न मित्र, और बुधराशिके बीस अंशको तुङ्गका उच्चांश समझना चाहिये।

मेषमें रवि, वृषमें चन्द्र, कन्यामें बुध, कर्कटमें गुरु, मीनमें शुक्र, मकरमें मङ्गल एवं तुलामें शनिके रहनेसे तुङ्ग होता है।

"आदित्यमेषे वृषभे शशाङ्को कन्यागते च बुधो गुरुः कर्कटे।
मीने च शुक्र मकरे महीजे शनौ तुलायामिति तुङ्गगेहाः॥"
(समयामृत)

तुङ्गका फल—रवि अपनी राशिमें रहनेसे मनुष्य पण्डित धार्मिक, धीरस्वभावसम्पन्न, धनी, साधुओंके प्रति पालक, दाता, बहु सुख सम्भोगकारी तथा मण्डलेश्वर नृपति होता है।

जन्म समयमें बुध यदि अपने उच्च स्थानमें रहे तो मानव बन्धु, पुत्र और उत्तम रत्नसम्पन्न राजाके समान भोग राज्यके एकदेशका अधिकारी, आज्ञाकारीमें आमोद युक्त तथा सर्वदा सौभाग्यविशिष्ट होता है।

जन्म समयमें बृहस्पति यदि अपनी उच्च राशिमें रहे तो मनुष्य उत्तम मन्त्रिसम्पन्न, अत्यन्त बलवान्, मान भोग भोगी, अत्यन्त धनवान्, यशस्वी, धन यान और उत्तम स्त्रीका स्वामी तथा बहुत मनुष्योंका प्रतिपालक होता है।

जन्म समयमें शुक्र यदि अपनी उच्च राशिमें रहे तो मनुष्य विलासभोगी, उत्तम गुणयुक्त राजमन्त्री, दीर्घायु, दाता, ऐश्वर्यशाली, अन्न तथा उत्तम भोगी होता है।

जन्म समयमें शनि यदि अपने उच्च स्थानमें रहे, तो मनुष्य बड़ो विख्यात, उत्तम कीर्त्तिशाली, अत्यन्त धनवान् दीर्घायु, राज्यके एकदेशका अधिपति, पण्डित, दाता तथा भोक्ता होता है।

"एक तुङ्गे नरैश्चापि त्रितुङ्गे च नरेश्वरः।
त्रितुङ्गेण नरेन्द्रश्च चतुर्थे चक्रवर्तिन॥"

जन्मकालीन एक ग्रह तुङ्ग होनेसे भोगी, दो ग्रहसे धनी, तीनमें राजा और चारमें राजचक्रवर्ती होता है।

यदि ग्रह, निधन और व्ययपदमें यथाक्रम तुङ्ग हो तो अजित समस्त फल व्यर्थ होते हैं, और मित्र या त्रिकोणमें होनेसे यथोक्त फल होता है। तुङ्गका संज्ञा लग्न और दशम स्थान केन्द्र माना जाता है। (ज्योतिषप्रदीप)

८ किञ्जल्क। ९ उच्च। १० प्रधान। ११ उन्नत। (पु०) १२ शिव, महादेव। १३ वरिष्ठपुत्र। इन्होंने तपके प्रभावसे नारायणको सन्तुष्ट करके [illegible] शब्द-ब्रह्म एवं पुत्र प्राप्त किया था। १४ एक प्रसिद्ध क्षत्रिय राजवंश।

तुङ्ग (सं० पु०) तुङ्ग स्वार्थे क, स स्वार्थे कन् वा। १ पुन्नाग वृक्ष, नागकेसर। (स्त्री०) २ तुङ्गी सम्प्रदाय। ३ अरण्य तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम। पहले यहां सारस्वत मुनि ऋषियोंको वेद पढ़ाया करते थे। एक बार जब वेद नष्ट हो गये तब अङ्गिराके पुत्रने ॐ मन्त्रका यथाविधि उच्चारण किया था। इस मन्त्रके उच्चारणके साथ ही पूर्वाभ्यस्त सब वेद उपस्थित हो गया। तब ऋषि और देवगण वरुण, अग्नि, प्रजापति, हरि, नारायण भगवान् पितामह ब्रह्मादिने महाद्युति भृगुको यज्ञ करनेके लिये नियुक्त किया। उन्होंने यथाविधि ऋषियोंके अधीन यज्ञ करना शुरू किया। [illegible] द्वारा अग्नि सन्तुष्ट हो गई। बाद देवता और ऋषि अपने अपने स्थान को गये। यह अरण्य तुङ्गकारण्य नामसे प्रसिद्ध हुआ। पुरुष या स्त्री इस स्थानमें जानेसे सब पाप नष्ट हो जाते हैं और एक मास यहां रहनेसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है तथा सब कुलका उद्धार होता है।

तुङ्गकूट (सं० पु०) तुङ्ग कूटमस्य। उच्चशृङ्ग पर्वतभेद, ऊँची चोटीका एक पहाड़।

तुङ्गता (सं० स्त्री०) तुङ्गस्य भाव तुङ्ग तल्। उच्चता, ऊँचाई।

तुङ्गत्व (सं० क्ली०) तुङ्गस्य भावः, भावे त्व। उच्चता, ऊँचाई।

तुङ्गधन्वन् (सं० पु०) तुङ्गं उन्नतं धनुर्यस्य बहुव्रीहि। धनुर्धारी। उच्च धनु।

तुङ्गनाथ (सं० पु०) हिमालय पर एक शिवलिङ्ग और तीर्थस्थान।

तुङ्गनाभ (सं० पु०) तुङ्गा नाभिर्यस्य बहुव्री०। कीटभेद, एक प्रकारका विषैला कीड़ा। [illegible] देखो।

तुङ्गप्रस्थ (सं० पु०) रामगढ़के निकटस्थ एक पर्वत।

तुङ्गबल (सं० पु०) तुङ्ग देखो।

तुङ्गप (सं० क्लो०) तुङ्गं भं कर्मधा०। सूर्यादिको उच्चराशि मेष प्रभृति। तुंग देखो।

तुङ्गभद्र (सं० पु०) तुङ्गोऽपि भद्र। मदमत्त हस्ती, मतवाला हाथी।

तुङ्गभद्रा (सं० स्त्री०) तुङ्गप्रधाना भद्रा निर्मला च। नदीविशेष, एक नदीका नाम।

"तुंगभद्रा सुप्रयोगा वाह्या कावेरी नैव हि।
दक्षिणापथनद्यस्ताः सह्यपादाद्विनिःसृताः॥"
(मत्स्यपु० ११३।२९)

यह दक्षिण प्रदेशको एक बड़ी नदी है। तुङ्ग तथा भद्रा नामक दो नदीके संयोगसे यह उत्पन्न हुई है। महिसुरकी दक्षिण-पश्चिम सीमामें सह्य पर्वतके गङ्गामूल नामक शिखरसे ये नदियाँ निकल कर दक्षिण-कनाड़ा होती हुई प्रवाहित है। महिसुरके मध्य १४° उत्तर अक्षां०में और ७५° ४३' पूर्व-देशां०में सिमोगा जिलेके कुदलो नामक ब्राह्मण-ग्राममें ये दोनों नदियाँ आ कर मिली है। यह नदी प्रायः आध मील चौड़ी है और इसकी गहराई भी कम नहीं है। पश्चिमस्थ वनके बड़े बड़े काठादि नदीमें बहा कर ले जाते हैं। ३०० वर्ष पहले विजयनगरके राजाओंने इस नदीमें ७ 'आनिकट' निर्माण किये थे। महिसुर और धारवार जिलेसे वर्धा और कुमुद्वती नामको दो नदिया तथा दक्षिणमें विलारी जिलेसे हगारी तथा कर्णूलसे हिन्दरी नदी आकर इसमें मिली है। तुङ्गभद्रा ८ कोस बह कर कृष्णा नदीमें मिली है। इस नदीकी लम्बाई कुल २०० कोस है। बांस या बेंत द्वारा लोग नदी पार होते हैं। इसके किनारे महिसुरके मध्य हरिहर, बैलारीके मध्य कम्पिलि तथा कर्णूल नगर अवस्थित है। हरिहर नगरमें एक ईंट और पत्थरका बना हुआ सेतु है। नदीमें कुम्भीर अधिक हैं। बैलारीके मध्य रामपुर नामक स्थानमें ५१ खंभोंके ऊपर बना हुआ मन्द्राज रेलवेका पुल है।

इस नदीका प्रचलित नाम तुंभद्रा है। आयुर्वेदमें इसका जल स्निग्ध, निर्मल, स्वादु, गुरु, कण्डु और पित्तास्रदायक, प्रायः शोभाकर तथा मेधाकर कहा गया है। (राजनि०)

तुङ्गमुख (सं० पु०) गण्डक, गैंडा।

तुङ्गरस (सं० पु०) तुङ्गः श्रेष्ठो रसो यस्य। गन्धद्रव्यभेद।

तुङ्गवाहु (सं० पु०) तलवारके ३२ हाथोंमेंसे एक।

तुङ्गबीज (सं० क्लो०) तुङ्गस्य शिवस्य बीजं, ६-तत्। पारद, पारा।

तुङ्गवेणा (सं० स्त्री०) नदीभेद, एक नदीका नाम।
'तिनदी पिंगला वेणा तुंगवेणा महानदी।' (भारत भीष्म० ९ अ०)

तुङ्गवृक्ष (सं० पु०) नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़।

तुङ्गशेखर (सं० पु०) तुङ्ग उन्नतं शेखरं यस्य। १ पर्वत, पहाड़। (क्लो०) तुङ्गं शेखरं, कर्मधा०। २ पहाड़की ऊँची चोटी। (त्रि०) ३ उच्च शेखरयुक्त जिसकी चोटी ऊँची हो।

तुङ्गस्कन्धफल (सं० पु०) नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़।

तुङ्गा (सं० स्त्री०) तुङ्ग-टाप्। १ वंशलोचन। २ शमी वृक्ष।

तुङ्गारण्य (सं० पु०) एक जङ्गल जो झांसीसे ६ कोस दूर ओड़छाके पास है। यहां एक मन्दिर है और प्रतिवर्ष मेला लगता है।

तुङ्गारि (सं० पु०) श्वेत करवीरवृक्ष, सफेद कनेरका पेड़।

तुङ्गिन् (सं० स्त्री०) तुङ्गं मेषादिकं स्थानमाश्रयत्वेनास्त्यस्य इनि। १ उच्चस्थित ग्रह। (त्रि०) २ प्रधान स्थानस्थ।

तुङ्गिनी (सं० स्त्री०) तुङ्गिन्-ङीप्। १ महाशतावरी, बड़ी शतावर।

तुङ्गी (सं० स्त्री०) तुङ्ग गौरादित्वात् ङीप्। १ हरिद्रा, हल्दी। २ रात्रि, रात। ३ बर्बरीवृक्ष, बबई, ममरी।

तुङ्गीनास (सं० पु०) तुङ्गी हरिद्रेव पीता नासा यस्य, बहुव्री०। कीटभेद, एक विषैला कीड़ा। तुङ्गीनास, विचिलिक, तालक, वाहक, कोठागारी, क्रमिकर, मण्डलपुच्छक, तुङ्गनाभ, सर्पपोक, अवल्गुली और शम्बुक ये बारह प्रकारके कीड़े प्राणनाशक हैं। इन कीड़ोंके काटनेसे सांपके काटने जैसा विषका कोप देखा जाता है, एवं सान्निपातिक जन्य वेदना और तीव्र यातना उत्पन्न होती है। क्षार या आगसे जला हुआ शरीरका भाग जैसा हो जाता है, काटा हुआ स्थान भी वैसा ही हो जाता है और उसमेंसे पीला, काला और लाल रंगका

मोह निकलते देखा जाता है। ज्वर, घर्मस्राव, रोमाञ्च वेदना, वमन, अतीसार, तृष्णा, दाह, मूर्च्छा शोथ, शोफ, हिक्का, दाह, मोह, कम्प, श्वास, भ्रमि, मण्डलाकार चिह्न, दद्रु, कर्णिका, विसर्प प्रभृति, दोषोंकी प्रकृतिके अनुसार ये समस्त उपद्रव होते हैं।

(सुश्रुत कल्प० ८ अ०)

तुङ्गीपति (सं० पु०) तुङ्गा रात्रेः पतिः। चन्द्रमा।

तुङ्गीश (सं० पु०) तुङ्गी अर्धचन्द्राकार ईश, कर्मधा०। १ शिव। २ कृष्ण। ३ सूर्य। तुङ्गा ईशः, ६-तत्। ४ चन्द्रमा।

तुच्छ (सं० पु०) त्यज-क्विप् तस्य चारणे तुच्छ क्विप् पृषो दरादित्वात् साधुः। १ धनरत्व, समान।

तुच्छ (सं० स्त्री०) तोदति व्यथामुत्पादयति तुच्छ। बाद लिख्यविन्दोद्भुम्नाग्ध क्विप् पीछे रत्न। ... १ तुषान, भूसी छिलका। २ शोभ, तुच्छ भाषोज। (त्रि०) तुद् क्विप् तिन न वा ह्रदोति हो क। ३ शून्य, निकम्मा कोमलका। ४ अल्प, थोड़ा। (पु०) ५ नीलीवृक्ष, नीलका पौधा। ६ तुच्छ तूतिया।

तुच्छज्ञान (सं० स्त्री०) तुच्छज्ञान ज्ञान ६ तत्। सामान्य बोध।

तुच्छता (सं० स्त्री०) तुच्छस्य भाव तल टाप। सामा न्यता, हीनता ओछापन। २ क्षुद्रता ओछापन। ३ अल्पता।

तुच्छत्व (सं० स्त्री०) तुच्छस्य भावः। १ हीनता, हीनता। २ क्षुद्रता, ओछापन।

तुच्छद्रु (सं० पु०) तुच्छो हीनोद्रुः क्वा कर्मधा०। एरण्ड वृक्ष, रेडीका पेड़।

तुच्छधान्यक (सं० स्त्री०) तुच्छ धान्य स्वार्थे कन्। तुषाक, भूसी छिलका।

तुच्छा (सं० स्त्री०) तुच्छ बेदे स्वाय स्वार्थे का पत्। १ तुच्छमन्दार। २ तुच्छधान्य।

तुच्छा (सं० स्त्री०) तुच्छ-टाप। १ तुच्छ, तूतिया। २ नीलीवृक्ष, नीलका पेड़। ३ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची।

तुच्छीकृत (सं० त्रि०) अतुच्छ तुच्छ कृत अभूततद्भावे च्वि। अवज्ञात, जिसका अपमान किया गया हो।

तुच्छातितुच्छ (सं० त्रि०) अत्यन्ततुच्छ, छोटेसे छोटा।

तुज (सं० स्त्री०) तुज-क्विप्। १ रक्षणसमर्थ, जो रक्षा करनेमें समर्थ हो।

तुजि (सं० त्रि०) बलवान् ताकतवर।

तुजि (सं० पु०) एक राजाका नाम।

तुजक (हि० स्त्री०) चतुष्क समान।

तुज्य (सं० त्रि०) तुज हिंसायां अमरादयश्चेति यत्। हिंसा हिंसा करने योग्य।

तुञ्ज (सं० पु०) तुजि-अच्। १ वज्र। २ दान धन दानवता।

तुञ्जीन (सं० पु०) काश्मीरके एक राजाका नाम।

तुञ्जिष्ट (सं० पु०) विष।

तुट्टुम (सं० पु० स्त्री०) तुट्टुम नाटयति छन्दसात तुट वाहुल्यकात् उम। इन्दुर, चूहा।

तुड़वाना (हि० क्रि०) तोड़नेका काम किसी दूसरेसे कराना।

तुड़ाई (हि० स्त्री) १ तुड़ानेकी क्रिया या भाव।

तुड़ाना (हि० क्रि०) १ तोड़नेका काम किसी दूसरेसे कराना। २ बन्धन छुड़ाना। ३ सम्बन्ध तोड़ना। ४ रुपया तुड़ाना भुनाना।

तुड़ि (सं० स्त्री०) तुड़-इन-क्विप्। तोड़न, तोड़नेकी क्रिया।

तुड़ुम (हि० पु०) तुरही, बिगुल।

तुणि (सं० पु०) तुण स कोचे इन् पृषोदरादित्वात् साधुः वा तुणति सङ्कोचयति तुण इन् (सर्वधातुभ्य इन्। उण् ४।११८) तुणवृक्ष तुनका पेड़। यह उत्तरीय भारतमें सिन्धु नदीसे लेकर सिक्किम और भूटान तक होता है। यह पहाड़ोंमें लेकर पचास हाथ तक ऊंचा और दस बारह हाथ मोटा होता है। शिशिरऋतुमें इसके सब पत्ते गिर जाते हैं। वसन्तके प्रारम्भमें ही इसमें नीमके फूलकी तरहके छोटे छोटे फूल गुच्छोंमें लगते हैं। इन फूलोंसे एक प्रकारका पीला वसन्ती रंग निकलता है। इसके फूल जब झड़ जाते हैं तो रंग बनानेके लिये लोग उन्हें इकट्ठा करके सुखा लेते हैं। इसकी लकड़ी लाल रंगकी और बहुत मजबूत होती है। इसमें दीमक और घुन आदिका डर नहीं रहता है। इसका संस्कृत पर्याय—तुणि तुणक आपीन, तुनिक, कच्छप कुठेरक,

कान्तलक, नन्दिवृक्ष नन्दक। इसका गुण—कटु, विपाक, कषाय, मधुर, तिक्तरस, लघु, धारक, शीतवीर्य, शुक्रवर्द्धक तथा व्रण, कुष्ठ और रक्तपित्तनाशक।

तुणिक (सं० पु०) तुणि स्वार्थे कन्। नन्दिवृक्ष, तुनका पेड़।

तुण्ड (सं० क्लो०) तोड़ने अच्। १ मुख, मुँह। (पु०) २ महादेव। ३ राक्षसविशेष, एक राक्षसका नाम। (भारत० ३।२८४।८) ४ एक दानव जो अत्यन्त बलशाली था। यह आयुके पुत्र नहुष द्वारा मारा गया था। (पद्मपु०) (क्लो०) ५ चंचु, चोंच। ६ थूथन, निकला हुआ मुँह। ७ खड्गका अग्रभाग, तलवारका अगला हिस्सा।

तुण्डकेरिका (सं० स्त्री०) कार्पासी कपासका वृक्ष।

तुण्डकेरी (सं० स्त्री०) प्रशस्तं तुण्डं प्रशंसायां कन्। तदोर्त्तं ईरयति वा ईर-अण् स्त्रियां ङीप्। १ कार्पासी, कपास। २ बिम्बिका, कुंदरु।

तुण्डकेशरी (सं० पु०) मुखका एक रोग। इसमें तालुकी जड़में सूजन होती और दाह पीड़ा आदि उत्पन्न होती है।

तुण्डदेव (सं० पु०) तुण्डरूपो देवः तुण्डेन दीव्यति दिव अच्। एक राजाका नाम।

तुण्डि (सं० पु०) तुण्डते निष्पीडयति तुण्ड-इन्। सर्व धातुभ्य इन्। उण् ४।११७। १ मुख, मुँह। २ चञ्चु, चोंच। ३ बिम्बिका, बिंबाफल, कुँदरू। ४ बन्दा। (स्त्री) ५ नाभि।

तुण्डिका (सं० स्त्री०) तुण्डिरेव तुण्डि-स्वार्थे कन् टाप् च। १ नाभि, ढूंडी। २ बिम्बिका कुंदरू।

तुण्डिकेरी (सं० स्त्री०) १ कार्पासी, कपास। २ बिम्बिका, कुंदरू। इसके पर्याय—तुण्डि, रक्तफल, बिम्बी और बिम्बिका। ३ कीटविशेष, एक कीड़ा। ४ तालुगत रोगविशेष, मुखका एक रोग। इसमें तालुकी जड़में सूजन होती और दाह पीड़ा आदि उत्पन्न होती है। इस रोगमें शस्त्रकार्य उचित है।

तुण्डिकेशी (सं० स्त्री०) बिम्बिका, कुंदरू।

तुण्डिभ (सं० त्रि०) तुण्डिवृत्ता नाभिरस्य तुन्दिभ। तुन्दि-वालवटेभः। ५।२।१४०। वृद्धनाभि जिसकी नाभि निकली हुई हो।

तुण्डिल (सं० त्रि०) तुण्डि सिध्मादित्वादिलच्। १ वृद्ध-नाभि, जिसकी नाभी निकली हुई हो। २ तोंदवाला, निकला हुआ पेटवाला। ३ मुखर, बकवादी, मुँहजोर।

तुण्डी (सं० त्रि०) १ मुखयुक्त, मुंहवाला। २ चंचुयुक्त, चोंचवाला। ३ थूथनवाला। (पु०) ४ गणेश। (स्त्री) ५ नाभि ढूंडी।

तुण्डीगुदपाक (सं० पु०) एक रोग। इसमें बच्चोंकी गुदा पक जाती और नाभिमें पीड़ा होती है।

तुण्डीरमण्डल (सं० पु०) दक्षिणके एक देशका नाम।

तुतकुड़ी (Tuticorin)—समुद्रतीरवर्त्ती एक प्रसिद्ध बन्दर सत्रहवीं शताब्दीके प्रारम्भमें पुर्तगीजोंने यहां प्रथम आवास स्थापन किया। १६५८ ई०में वे इसे अपने अधिकारमें लाये। इसके बाद प्रायः १७०० ई०में डेनमार्कोंने यहां एक छोटा दुर्ग निर्माण किया। उस समय तिन्नेवेलीके सन्निहित समुद्रसे मोती, सीप और शङ्ख संग्रह करनेके लिये ७ सौ नावें रहा करती थीं।

इस कार्यका भार उन्हीं लोगों पर सौंपा गया था। उन लोगोंका यह व्यवसाय बहुत दिनों तक चलता रहा और इससे उन्हें यथेष्ट आय होती रही।

१७८२ ई०में अंगरेजोंने तुतकुड़ी पर अधिकार जमाया और १७८५ ई०में उन्होंने इसे फिर डेनमार्कोंको प्रत्यर्पण किया। १७९५ ई०में अंगरेजोंने इसे पुनः अपने अधिकारमें कर लिया। १८१८ ई० तक इसे अपने अधिकारमें रख कर उन्होंने फिर डेनमार्कोंको लौटा दिया। १८५२ ई०में डेनमार्कोंने इसे पुनः अंगरेजोंको दे दिया। आज तक यह अंगरेजोंके अधिकारमें है। यात्री इसी बन्दरसे कलम्बो जाते हैं। इसके किनारे अधिक जल न होनेके कारण बड़े बड़े जहाज किनारेके निकट नहीं आते हैं। ष्टीम-लञ्च द्वारा यात्रिगण जहाज पर चढ़ते हैं, यहां कईएक रुई और सूतेकी कलें हैं। यहां रुई और सूते गांठमें बंधे जानेके बाद विलायत भेजा जाता है। इस स्थानसे मनार उपकूल पर मोती-सीप निकालनेका बन्दोबस्त किया गया है। समुद्रके किनारे बीच नामक एक प्रशस्त रास्ता है। यहां आम, नारंगी और केला आदि अनेक प्रकारके फल पाये जाते हैं, नारियल तथा ताड़के वृक्ष भी यथेष्ट

है। ताड़का गुड़ और ताड़की चीनी यहां अधिक पाई जाती है। यहांका स्वास्थ्य उत्तम है, किन्तु मीठे जलका बहुत अभाव है। आजकल म्युनिसिपलिटीने कूप खोदे गये हैं। शहरके समुद्रतीरवर्ती बहुत पथ प्रभाविशिष्ट और समस्थियाको हैं। यहां हिन्दुओंके रहनेके कईएक धर और साहबोंके लिये एक उत्तम होटल है। यहां 'तुतकुडी ट्रामवे' नामक रेलवेका एक स्टेशन है।

तुतराना (हिं० क्रि०) तुतलाना देखो।

तुतलाना (हिं० क्रि०) शब्दों और वर्णोंका अस्फुट उच्चारण करना साफ न बोलना।

तुतलो (हिं० वि०) तोतली देखो।

तुतात (सं० पु०) मीमांसकभेद।

तुतुई—एक तरहका छोटा जलपात्र। यह प्रायः माङ्गलिक कर्म और देवमन्दिरोंमें व्यवहृत होता है।

तुतुमार्चि (सं० पु०) तूर्णीभविमर्च अन्नमस्य पृषोदरादित्वात् साधुः। तूर्ण भक्षण, जल्दी जल्दी भक्षण करनेकी क्रिया।

तुत्थ (सं० पु०) तुदति पीड़यत्यनेन तुद-थक्। पातु हुतेस्ति। उण् २।२। १ प्रस्तर, पत्थर। २ अग्नि आग। ३ अञ्जनभेद। ४ नीलवर्ण नीलका पौधा। ५ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची। ६ उपधातुविशेष, तूतिया। इसके संस्कृत पर्याय—नीलाञ्जन हरिताश्म, दुत्थक, मयूरग्रीवक ताम्रगर्भ, अमृतोद्भव, मयूरतुत्थ, शिखिकण्ठ, नील, तुत्थाञ्जन, शिखिग्रीव, वितुन्नक, मयूरक, मूतक मूषातुत्थ, चक्षुष्य और हेमसार। इसमें ताम्रका भाग थोड़ा ही है। इसमें अन्यान्य द्रव्य व गुण हैं, इसीसे इसमें दूसरे दूसरे गुण भी हैं। इसके गुण—क्षारसंयुक्त, कटु, कषायरस, वमनकारक, लघु, विषनाशगुणयुक्त, भेदक, शीतवीर्य, चक्षुका हितकर एवं कफपित्त विष, अश्मरी, कुष्ठ और कण्डूनाशक है। (भावप्र०) रसेन्द्रसारसंग्रहके मतसे इसकी शोधन-प्रणाली इस तरह है—बिल्ली और कबूतरकी बीटके साथ तूतिया पीस कर उसके दस भागोंमेंसे एक भागके बराबर सुहागा मिलाते और मृदु पुटमें पाक करते हैं। इसके बाद सैन्धव लवणके साथ मधु दे कर पुट देनेसे यह विशुद्ध होता है।

दूसरे प्रकारसे—बिल्लीकी बीटके साथ तूतिया पीसते और उसमें चतुर्थांश मधु और सुहागा मिला कर तीन बार पुट देनेसे वमन और भ्रमिकर शक्ति रहित होनेसे शुद्ध हो जाता है। शोधनकी दूसरी रीति—तूतियामें उसका अर्द्धांश गन्धक मिलाकर चार दण्ड पाक करते हैं। वमन और भ्रमशक्ति-रहित होनेसे पाक सिद्ध होता है। तूतियाके गुण—कटु, क्षार, कषाय रस, विषद, लघु, लेखन, भेदक, चाक्षुष्य कण्डू, कृमि और विषनाशक है। (रसेन्द्रसार०)

तुत्थक (सं० क्लो०) तुत्थमिव स्वार्थे कन्। तुत्थ, तूतिया।

तुत्था (सं० स्त्री०) तुत्थ-टाप्। १ नीली वृक्ष, नीलका पौधा। २ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची।

तुत्थाञ्जन (सं० क्लो०) तुत्थस्य तत् अञ्जनञ्चेति कर्मधा०। उपधातुविशेष, तूतिया, नीलाथोथा।

तुद (सं० पु०) तुद् अच् तुदादित्व। पृषो० साधुः। १ व्यथन कर्त्ता, मारनेवाला, व्यथा करनेवाला। २ ब्रह्म। ३ दक्षिणाग्निमात्मक, ब्रह्मरूप अग्निभेद।

तुदन (सं० पु०) १ व्यथा देनेकी क्रिया पीड़न। २ व्यथा पीड़ा। ३ चुभाने या गड़ानेकी क्रिया।

तुदादि (सं० पु०) धातुगणविशेष। इस गणकी धातुके बाद 'श' आता है। "तुदादिभ्यः श" इस 'श' प्रत्ययके होनेसे गुण नहीं होता, इसीसे इसका नाम अगुण हुआ है। विशेष विवरण धातु शब्दमें देखो।

तुन (हिं० पु०) एक बहुत बड़ा पेड़। तुनि देखो।

तुनकामीज (फा० पु०) छोटा समुद्र।

तुनकी (फा० स्त्री०) एक तरहकी खस्ता रोटी।

तुनतुनी (हिं० स्त्री०) तुन तुन शब्द देनेवाला एक प्रकार का बाजा।

तुनि—१ मन्द्राजके गोदावरी जिलेकी एक जमींदारीका तहसील। यह अक्षा० १७ ११ और १७ ३१´ उ० तथा देशा० ८२ ८´ और ८२ २६ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण २१६ वर्गमील और लोकसंख्या ५८०४२के लगभग है। इसमें एक शहर और ४८ ग्राम लगते हैं। तहसीलका पश्चिमांश पहाड़ और जङ्गलसे आच्छादित है।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० १७° २२' उ० और देशा० ८२° ३२' पू० मन्द्राजसे ४२५ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ८८४२ है।

तुनी (हिं० स्त्री०) तुनका पेड़।

तुनीर (हिं० पु०) तूणीर देखो।

तुन्तुभ (सं० पु०) सर्षपवृक्ष, सरसोंका पौधा।

तुन्द (सं० क्ली०) तुदतीति तुद दन् (अन्दादयश्च। उण् ४।१९८) उदर, पेट।

तुन्दकूपिका (सं० स्त्री०) तुन्दस्य कूपिकेव। क्षुद्र कूप, नाभि, ढ़ोंड़ी।

तुन्दकूपी (सं० स्त्री०) तुन्दस्य कूपीयस्य। नाभि, टुंडी।

तुन्दपरिमाज (सं० त्रि०) तुन्दं परिमष्टि तुन्द परि-मृज-क तुन्द परि-मृज-अण्। मन्द, सुस्त। २ अलस, आलसी।

तुन्दमृज (सं० त्रि०) तुन्दं मार्ष्टि-मृज्-क। तुन्दपरिमार्ज देखो।

तुन्दवत् (सं० त्रि०) तुन्दं विद्यते अस्य। तुन्द-मतुप्। तुन्दिल, तोंदवाला, निकला हुआ पेटवाला।

तुन्दादि (सं० पु०) पाणिनिकथित शब्दगणविशेष, इस तुन्दादि शब्दके बाद अस्त्यर्थमें इलच् प्रत्यय आता है।

तुन्दि (सं० क्ली०) तुद-इन् बाहुलकात् नुमच्। १ गन्धर्व विशेष एक गन्धर्वका नाम। (स्त्री०) २ नाभि, टुंड़ी।

तुन्दिक (सं० त्रि०) अतिशयित तुन्दमुदर मस्त्यस्य तुन्द-ठन्। विशाल जठरयुक्त, तोंदवाला, बड़े पेटवाला।

तुन्दिकर (सं० पु०) तुन्दिं करोति कृ-अच्। तुन्दिल, बड़े पेटवाला।

तुन्दिकफला (सं० स्त्री०) खीरेकी बेल।

तुन्दिका (सं० स्त्री०) तुन्दिक-टाप्। नाभि।

तुन्दित (सं० त्रि०) तुण्डिल, जिसकी नाभी निकली हो।

तुन्दिन (सं० त्रि०) तुन्दोऽस्त्यस्य इनि। तुन्दयुक्त, निकले हुए पेटवाला।

तुन्दिभ (सं० त्रि०) तुन्दि वृहत् नाभिरस्त्यस्य तुन्दि-भ। तुन्दिवलिवटेर्भः। पा ५।२।१३९। तुन्दिल, तोंदवाला।

तुन्दिल (सं० त्रि०) तुन्दकस्यास्ति तुन्द-इलच्। तुन्दादिभ्य इलच्। पा ५।२।११७। स्थूलोदर, बड़े पेटवाला।

तुन्दिफला (सं० स्त्री०) तुन्दिलं वृहत्फलं यस्याः। त्रिपुषी, खीरा।

तुन्न (सं० पु०) तुद-क्त। १ नन्दि, तुनका पेड़। २ फटे हुए कपड़ेका टुकड़ा। (त्रि०) ३ व्यथित, दुःखित। ४ छिन्न, कटा या फटा हुआ।

तुन्नकारिका (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भुईआंवला।

तुन्नवाय (सं० पु०) तुन्नं छिन्नं वयति तुन्न-वे-अण्। सौचिक, कपड़ा सीनेवाला, दरजी।

तुन्नसेवनी (सं० स्त्री०) तुन्नं छिन्नं सीव्यतेऽनया सिव् कारणे ल्युट् ङीप्। सूचीभेद, एक प्रकारका दरजो।

तुपक (हिं० स्त्री०) १ छोटी तोप। २ बन्दूक, कड़ाबीन।

तुफंग (हिं० स्त्री०) १ हवाई बन्दूक। २ एक लम्बी नली। इसमें मट्टी या आटेकी गोलियां तथा छोटे तीर आदि डाल कर फूंकके जोरसे चलाए जाते हैं।

तुभना (हिं० क्रि०) स्तब्ध रहना, ठक रह जाना।

तुम (हिं० सर्व०) 'तू' शब्दका बहुवचन।

तुमकूर—१ महिसुर राज्यका एक जिला। यह अक्षा० १२° ४५' और १४° ६' उ० तथा देशा० ७६° २१' और ७७° २८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४१६८ वर्गमील है। इसके उत्तरमें मन्द्राजके अनन्तपुर जिला, पूर्वमें कोलर और बंगलूर जिला, दक्षिणमें महिसुर जिला और पश्चिममें चितलद्रुग, कडूर तथा हसन जिले हैं।

जिलेका पूर्वीय भाग छोटे छोटे पहाड़ोंसे भरा है, पर्वत उत्तरसे दक्षिण तक फैले हुए हैं। यों तो यहां अनेक नदियां प्रवाहित हैं, पर जयमङ्गली और शिमशा ये दो दो प्रधान हैं। यहांका जलवायु बहुत मनोरम तथा स्वास्थ्य-कर है। जिलेका दक्षिणी भाग बहुत कुछ बंगलूर जिलेसे मिलता जुलता है। वार्षिक वृष्टिपात ३८ इञ्च है।

कहते हैं, कि प्राचीन कालमें यह स्थान गङ्गवंशके अधिकारमें था। पीछे यह होयसल राजवंशके अधिकारमें आया। वे अधिक दिन तक राज्य न कर पाये। कालक्रमसे यह जिला विजयनगरके अधीन आ गया। विजयनगरके अधःपतन होने पर १६३८ ई०में बीजापुरराजने इस पर अपना पूरा दखल जमाया और इसे शिवाजीके पिता शाहजीके निरीक्षणमें

छोड़ दिया। १६८० ई०में मुगलोंने इसे जीता और मीरामें राजधानी स्थापित की। मुगलोंके अधीन यह स्थान सत्तर वर्ष तक लगभग रहा। पीछे यह १७५० ई०में महाराष्ट्रोंके हाथ लगा, लेकिन दो वर्ष बाद ही उन्होंने पुनः सन्धि हो जाने पर मुगलोंको प्रत्यर्पण किया। सन्धि टूट जाने पर १७५६ ई०में महाराष्ट्रोंने फिरसे इसे अपने अधिकारमें कर लिया। बहुत दिनों तक वे इसका भोग न कर सके। १७७४ ई०में टीपू सुलतानने इस पर अपना अधिकार जमा लिया।

तुमकूरकी लोकसंख्या लगभग ६०८२६२ है। यहां हिन्दू, जैन, मुसलमान, ईसाई तथा अन्यान्य जातिके लोग रहते हैं। हिन्दुओंकी संख्या सबसे अधिक है। इसमें १८ शहर और २७११ ग्राम हैं। धान, चना, ईख, रूई, रागी और तेल यहांके प्रधान उत्पन्न-द्रव्य हैं। यहां सूतके मोटे कपड़े, कम्बल, रस्से नारियलके रेशे तथा कारोबार रेशमका सूत प्रस्तुत होता है। दक्षिण महाराष्ट्र रेलवे इसी जिलेमें हो कर बङ्गलूरसे पूना तक गई है।

राजकार्यकी सुविधाके लिए यह जिला आठ तालुकोंमें विभक्त है। डिपटी कमिश्नर जिलेके प्रधान माने जाते हैं। इसके अधीन उपविभागोंमें बांट कर हर एक उपविभागको एक एक सहकारी कमिश्नरके अधीन रखा गया है।

२ तुमकूर जिलेका पूर्वीय तालुक। यह अक्षा० १३ ० और १३ ३२´ उ० तथा देशा० ७६ ४८ और ७७ २१ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४११ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १०७११६ है। इस तालुकमें २ शहर और ३०० ग्राम लगते हैं। इसका पूर्वीय भाग जङ्गल तथा पहाड़ोंसे परिपूर्ण है। यहांकी जमीन बहुत उर्वरा है, अतः प्रति वर्ष अच्छी फसल होती है। सुपारी तथा नारियलके पेड़ सब जगह नजर आते हैं।

३ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० [illegible] २१ उ० और देशा० ७७ ६ पू०; बङ्गलूरसे ४३ मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या ११८८८ के लगभग है। यह शहर एक उच्च स्थान पर बसा हुआ है। इसके चारों ओर छोटे और ताड़के वन हैं। प्रवाद है कि वर्तमान शहर महिषासुरके [illegible] परन्तु [illegible] द्वारा स्थापित हुआ है। यहां १८०० ई०में म्युनिसपालिटी कायम हुई है।

तुमड़ी (हिं० स्त्री०) १ कड़ुए गोल कद्दूका सूखा फल। २ यह पात्र जो सूखे गोल कद्दूको खोखला कर के बनाया जाता है। ३ सूखे कद्दूका एक बाजा जिसको मुंहसे फूंक कर बजाते हैं।

तुमतड़ाक (हिं० स्त्री०) तुमतराक देखो।

तुमसर—मध्यप्रदेशके भण्डारा तहसील और जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २१ २३´ उ० और देशा० ७९ ४६´ पू०के मध्य भण्डारा शहरसे २० मील और बम्बईसे ६०० मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ८०१६ है। यहां १८६७ ई०में म्युनिसिपालिटी स्थापित हुई है। यह एक प्रधान वाणिज्यकेन्द्र है। शहरके आस पास धानकी अच्छी फसल लगती है। यहां देशी कपड़ोंका खूब बढ़िया वस्त्र तैयार होता है जो विशेष कर नागपुर और बरारको भेजा जाता है। शहरमें एक अस्पताल, मिडिल स्कूल एक बालिकाओंका स्कूल तथा एक चिकित्सालय है।

तुमाना (हिं० क्रि०) तुमनेका काम किसी दूसरेसे कराना।

तुमिनकट्टी—बम्बईके धारवार जिलेके अन्तर्गत रानीबेन्नूर तालुकका एक छोटा शहर। यह तुङ्गभद्रा नदीके किनारे रानीबेन्नूर शहरसे १६ मील दक्षिणमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ४१४१ है। यहां केवल दो विद्यालय हैं।

तुमुली (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी चिड़िया।

तुमुर (सं० क्ली०) तुमुल [illegible]। १ तुमुल, सेनाका कोलाहल। २ पक्षियोंकी एक जाति। इसका उल्लेख पुराणोंमें पाया है।

तुमुल (सं० क्ली०) तु सौत्र धातु, बाहुलकात्, मुलक्। १ रणसङ्कुल, लड़ाईकी हलचल। २ सेनाका शब्द, बहेड़ेका पेड़। ३ व्याकुल युद्ध, सबकी गड़बड़। (त्रि०) ४ प्रचण्ड उग्र, तीव्र।

तुमुलयुद्ध (सं० पि०) तुमुल युद्ध। घोरतर संग्राम, घमसान लड़ाई।

तुम्ब (सं० पु० स्त्री०) तुम्बति नाशयत्यरुचिं तुम्ब अच्। अलाबू लौकी।

तुम्बक (सं० पु०) तुम्ब-कन्। १ अलाबु, लौआ, लौकी। २ [illegible]।

तुम्बर (सं० क्ली०) तुम्बं तदाकारं राति रा-क। वाद्यभेद, एक प्रकारका बाजा। २ तुम्बरु गन्धर्व।

तुम्बरचक्र (सं० क्ली०) तुम्बरं चक्रं, कर्मधा०। नरपतिजयचर्य्योक्त चक्रभेद। चक्र देखो।

तुम्बरु (सं० पु०) गन्धर्वभेद, एक गन्धर्वका नाम।

तुम्बवन (सं० पु०) वृहत्संहिताके अनुसार एक देश। यह दक्षिणमें १२।१३।१४ नक्षत्रके मध्य अवस्थित है।

तुम्बा (सं० स्त्री०) तुम्ब-टाप्। १ अलावु, कड़ुआ कद्दू। २ गवो, एक प्रकारका जङ्गली धान। यह नदियों या तालोंके किनारे आपसे आप होता है।

तुम्बि (सं० स्त्री०) तुम्बति नाशयति अरुचिं तुम्ब-इन्। अलावु, कड़ुआ कद्दू।

तुम्बिका (सं० स्त्री०) तुम्ब-ण्वुल् टापि अत इत्वं। १ अलावु, कद्दू। २ कटुतुम्बी, कड़ुआ कद्दू।

तुम्बिनी (सं० स्त्री०) तुम्ब णिनि-ङीप्। कटुतुम्बी, कड़ुआ कद्दू, तित लौकी।

तुम्बी (सं० स्त्री०) तुम्बि-ङीष्। १ अलावु, छोटा कड़ुआ कद्दू। २ कुलिक वृक्ष, वहेड़े का पेड़। (रत्नमाला)

तुम्बीतैल (सं० क्ली०) अलावुतैल, कद्दूका तेल।

तुम्बीपुष्प (सं० क्ली०) तुम्ब्याः पुष्पमिव पुष्पमस्य। अलावु पुष्प, कद्दूका फूल।

तुम्बुक (सं० क्ली०) तुम्ब बाहुलकात् उकः। अलावु फल, कद्दूका फल।

तुम्बुकी—भारतवर्षीय एक प्राचीन आनद्ध यन्त्र, चमड़ेसे मढ़ा हुआ एक प्रकारका बाजा।

तुम्बुगुठ—महाराष्ट्र ब्राह्मण जातिका एक भेद।

तुम्बुर (सं० पु०) विन्ध्यपर्वत-स्थित जातिभेद, विन्ध्य पहाड़ पर रहनेवाली एक जाति। (हरिवंश ५ अ०)

तुम्बुरी (सं० स्त्री०) तुम्बरं आकारं राति रा क ङीप पृषोदरादित्वादुत्वं। १ कुषकुरी, कुतिया। २ धन्याक, धनिया।

तुम्बुरु (सं० क्ली०) १ धन्याक, धनिया। (पु-क्ली०) २ तपस्वीविशेष, एक तपस्वीका नाम। ३ एक जिन उपासकका नाम। ४ फलवृक्षविशेष। इसका बीज धनियेके आकारका पर कुछ कुछ फटा हुआ होता है। इसके संस्कृत पर्याय—शूलघ्न, सौरज, सौर, वनज, सानुज, द्विज, तीक्ष्णकल्क, तीक्ष्णफल, तीक्ष्णपत्र, महामुनि, स्फुटफल, सुगन्धि। इसके गुण—कफ, वात, शूल, गुल्म, उदराध्मान, क्रिमिनाशक और अग्निप्रदीप्तकारक है। भावप्रकाशके मतसे इसके पर्याय—सौरभ, सौर, वनज, सानुज और अन्धक। इसके गुण—तिक्त, कटुरस, कटु, विपाक, रूक्ष, उष्णवीर्य, अग्निदीप्तिकारक, तीक्ष्ण, रुचिकारक, लघु, विदाही एवं वातश्लैष्मिक रोग, चक्षुरोग, कर्णरोग, ओष्ठगत रोग, शिरोरोग शरीरका गुरुत्व, क्रिमि, कुष्ठ, शूल, अरुचि, श्वास और प्लीहा प्रभृति रोग-नाशक।

तुम्बुरु (सं० पु०) १ एक गन्धर्वका नाम। ये मधु अर्थात् चैत्र मासमें सूर्यके रथ पर रहते हैं। सङ्गीत विद्यामें ये विशेष पारदर्शी थे। इन्होंने ब्रह्माके निकट सङ्गीतविद्या सीखी थी। ये विष्णुके अत्यन्त प्रिय पार्श्वचर थे।

अद्भुत-रामायणमें लिखा है,—त्रेतायुगमें कौशिक नामके एक ब्राह्मण थे। वे वासुदेवके अत्यन्त भक्त थे और सर्वदा उन्हींका गुण गान किया करते थे। हरिगुण गानके सिवा उनका कोई दूसरा कार्य्य हो न था। वे विशृङ्खल नामक अनुत्तम हरिक्षेत्रमें जा कर वहां मूर्च्छनाके उन्नतियोगमें तालवर्णसे पूरित अत्यन्त भक्तिके साथ हरिगुण करनेमें प्रवृत्त हुए तथा भिक्षा द्वारा जीवनयात्रा निर्वाह करने लगे। वहां पद्माक्ष नामक एक ब्राह्मण रहते थे। वे कौशिकका गान सुन कर सर्वदा उन्हें अन्न दान करते थे। जब कौशिकको अन्न-चिन्ता जाती रही, तब वे और भी हरिप्रेममें उन्मत्त हो कर हरिगुण गान करने लगे। पद्माक्ष भी उस गानको भक्तिपूर्वक सर्वदा सुनते थे। धीरे धीरे कौशिकके क्षत्रिय, वैश्य और ब्राह्मणकुलोत्पन्न ज्ञान और विद्यामें श्रेष्ठ ७ शिष्य हो गये। पद्माक्ष सभीको अन्नदान देने लगे। उसी स्थानमें मालव नामक विष्णुभक्तिपरायण एक वैश्य रहते थे। वे हृष्टचित्तसे हरिको प्रतिदिन दीपमाला प्रदान करते थे। मालती नामकी उनकी पतिव्रता स्त्री भी प्रीत-मनसे हरिक्षेत्रके चारों ओर गोमय लेपन करती थीं। हरिके निमित्त कुशस्थलसे ५० ब्राह्मण आकर कौशिकके कार्य साधनार्थ वहां रहने लगे। क्रमशः यह गान अत्यन्त

कपड़ा बुनकर लपेटते जाते हैं। २ वह बेलन जिस पर गोटा बुन कर लपेटते जाते हैं।

तुरई (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारकी बेल। इसके लम्बे फलोंकी तरकारी बनाई जाती है। 'तुरही' देखो।

तुरक (हिं० पु०) तुर्क देखो।

तुरकटा (फा० पु०) मुसलमान। यह घृणासूचक शब्द है।

तुरकाना (हिं० पु०) १ तुर्कों जैसा। २ तुर्कोंका देश या बस्ती।

तुरकानी (फा० वि०) १ तुर्कोंकी जैसी (स्त्री०) २ तुर्ककी स्त्री।

तुरकिन (फा० स्त्री०) १ तुर्ककी स्त्री। २ तुर्क जातिको स्त्री।

तुरकिस्तान (सं० पु०) तुरुष्क देखो।

तुरकी (फा० वि०) १ तुर्क देशका। २ तुर्क देश सम्बन्धी। (फा० स्त्री०) तुर्किस्तानको भाषा।

तुरग (सं० पु०-स्त्री) तुरेण वेगेन गच्छति गम-ड। १ घोटक, घोड़ा। २ चित्त। (त्रि०) ३ शीघ्रगामी, तेज चलनेवाला।

तुरगगन्धा (सं० स्त्री०) तुरगस्येव गन्धो यस्याः बहुव्री०। १ अश्वगन्धा, असगंध।

तुरगदानव (सं० पु०) तुरगाकारः दानवः मध्यलो० कर्मधा०। केशी नामक दैत्य। यह दैत्य कंसकी आज्ञासे कृष्णको मारनेके लिये वृन्दावनमें घोड़ेका रूप बना कर रहता था। इसके अत्याचरसे वह स्थान जन-प्राणिशून्य हो गया। दुरात्मा तुरगवेशी दैत्य गोपोंको मारने लगा। यहां तक कि उसके डरसे समस्त वन कम्पित हो उठा। कोई भी दूसरी बार वन जानेका साहस न करता था। एक दिन वह दैत्य काल प्रेरित हो घोष-पल्लीमें प्रविष्ट हुआ। उसे देख घोपविष्टने भयभीत हो श्रीकृष्णकी शरण ली। केशी भी ऊपरका मुख किये, आंख फैलाये, दांत दिखलाते, और बहुत जोरसे गरजते हुए कृष्णकी ओर अग्रसर हुए। बहुत देर बाद कृष्ण-ने उसे मार डाला। (हरिवं ८० अ०)

तुरगप्रिय (सं० पु०) तुरगाणां प्रियः, ६-तत्। यव, जौ।

तुरगब्रह्मचर्य (सं० क्लो०) तुरगस्येव ब्रह्मचर्यं ततः स्वार्थे कन्। स्त्रीके अभाव हेतु अङ्गनात्याग रूप ब्रह्मचर्यभेद, वह ब्रह्मचर्य जो केवल स्त्रीके न मिलनेके कारण हो हो।

तुरगमेध (सं० पु०) तुरगेण मेधः ६-तत्। अश्वरक्षक, वह जो घोड़ेकी रक्षा करता हो।

तुरगरक्षक (सं० पु०) तुरगस्य रक्षकः ६-तत्। अश्व रक्षक। (वृहत्स० १५।२६)

तुरगलीलक (सं० पु०) सङ्गीतका तालविशेष, सङ्गीत दामोदरके अनुसार एक तालका नाम।

तुरगातु (सं० वि०) तुरेण गातु, गम वेदे गतु। १ शीघ्र-गमनकारक, जल्दी चलनेवाला। (क्लो०) तूर्ण गमन, जल्दी जानेकी क्रिया।

तुरगानन (सं० पु०) तुरगस्य आननमिव आननमस्य। किन्नरभेद, एक प्रकारके देवता, जिनका मुख घोड़ेके जैसा और शेष अङ्ग मनुष्य जैसा हो।

तुरगारोह (सं० पु०) अश्वारोही, घुड़सवार।

तुरगिन् (सं० त्रि०) तुरग वाहनत्वेनास्त्यस्य इनि। अश्वारोही, घुड़सवार।

तुरगी (सं० स्त्री०) तुरगवत् गन्धोऽस्त्यस्य, अर्श आदि-त्वात् अच ततो ङीष्। १ अश्वगन्धा, असगंधा। २ अश्वी, घोड़ी।

तुरगीय (सं० पु० स्त्री०) अश्वसम्बन्धीय।

तुरगुला (हिं० पु०) कर्णफूल नामक कानके गहनेमें लटकाये जानेका लटकन, झुमका, लोलक।

तुरगोपचारक (सं० पु०) अश्वसादी, घुड़सवार। शनिके अश्विनीनक्षत्रमें विचरण करनेसे घोड़ा, घुड़सवार, कवि, वैद्य और अमात्योंको हानि होती है। (वृहत्सं० १०।३)

तुरङ्ग (सं० पु०-स्त्री०) तुरेण गच्छति तुर-गम-खच् वा डिच्। १ घोटक, घोड़ा। (क्लो०) २ चित्त। ३ सैन्धव-नमक। ४ सातकी संख्या। (त्रि०) शीघ्रगामी, जल्दी चलनेवाला।

तुरङ्गक (सं० पु०) तुरङ्ग इव कायति कै-क। १ हस्ति-घोषातकी, बड़ी तोरई। स्वार्थे कन्। २ घोटक, घोड़ा।

तुरङ्गगन्धा (सं० स्त्री०) तुरगगन्धा देखो।

तुरङ्गगौड़ (सं० पु०) गौड़रागका एक भेद। यह वीर या रौद्र रसका राग है।

तुरङ्गद्वेषिणी (सं० स्त्री०) तुरङ्गो द्विष्यतेऽनया तुरङ्ग-द्विष्-बाहु० क्युङीप्। महिषी, भैंस।

तुरङ्गप्रिय (सं॰ पु॰) तुरङ्गस्य प्रियः, ६ तत्। यव, जौ।

तुरङ्गम (सं॰ पु॰-स्त्री॰) तुर त्वरया गच्छति गम्-खच् मुम्। १ घोटक, घोड़ा। २ चित्त। ३ एक वृत्तका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें दो नगण और दो गुरु होते हैं। (त्रि॰) ४ घोड़गामी, अश्वपर चलनेवाला।

तुरङ्गमशाला (सं॰ स्त्री॰) तुरङ्गमस्य शाला गृह, ६ तत्। अश्वशाला, घुड़सार।

तुरङ्गमेध (सं॰ पु॰) अश्वमेध।

तुरङ्गमुख (सं॰ पु॰) तुरङ्गस्येव मुखमस्य। अश्वमुखाकार किन्नरभेद, घोड़े जैसा मुखवाला किन्नर।

तुरङ्गवदन (सं॰ पु॰) तुरङ्गस्येव वदनमस्य। अश्वमुखाकार किन्नरभेद, घोड़े जैसा मुखवाला किन्नर।

तुरङ्गारि (सं॰ पु॰) तुरङ्गस्य अरिः, ६-तत्। १ करवीर, कनेर। २ महिष, भैंस।

तुरङ्गिका (सं॰ स्त्री॰) तुरङ्गवत् आकारोऽस्त्यस्याः। तुरङ्ग-ठन्। देवदालो लता, बंदरबेल।

तुरङ्गिन् (सं॰ त्रि॰) तुरङ्गो वाहनत्वेन अस्त्यस्य। तुरङ्ग-इन्। अश्वारोही, घुड़सवार।

तुरङ्गी (सं॰ स्त्री॰) तुरङ्गस्य गन्धोऽस्त्यस्याः अच् गौरादित्वात् ङीष्। १ अश्वगन्धा, असगन्ध। जातौ ङीष्। २ अश्वा, घोड़ी।

तुरण (सं॰ स्त्री॰) तुर भावे क्युट्। क्षिप्र गमन, जल्दीसे चलनेकी क्रिया।

तुरण्य (सं॰ पु॰) तुरण्य कण्ड्वादित्वात् भावे यक्। त्वरा, शीघ्र।

तुरण्यसद् (सं॰ त्रि॰) तुरण्य-सद क्विप्। जो बहुत जल्द जाते हों।

तुरत (हिं॰ अव्य॰) तत्क्षण, शीघ्र, फ़ौरन।

तुरत—हिन्दीके एक कवि। ये १७५४ ई॰में विद्यमान थे। सुजानचरित्रमें इनका नाम आया है।

तुरपई (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी सिलाई।

तुरपन (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी सिलाई। इसमें कोड़ेको पहले दबाकर कस टाँके चार चार सिला देते हैं फिर निकले हुए छोरको मोड़ कर तिरछे टाँकोंसे कसा देते हैं। लुढ़ियावन।

तुरपवाना (हिं॰ क्रि॰) तुरपाना, तुरपानेका काम दूसरेसे कराना।

तुरपाना (हिं॰ क्रि॰) तुरपवाना देखो।

तुरपना (हिं॰ क्रि॰) लुढ़ियाना।

तुरम् (सं॰ अव्य॰) तुर अम्। त्वरा, जल्दी।

तुरम (हिं॰ पु॰) तुरही।

तुरमती (हिं॰ स्त्री॰) एक चिड़िया जो बाज की तरह शिकार करती है। इसका आकार बाजसे छोटा होता है।

तुरमसी (हिं॰ स्त्री॰) नारियल रेतनेकी रेती।

तुरया (सं॰ त्रि॰) तूर्ण शीघ्र, जल्द।

तुरस् (सं॰ स्त्री॰) त्वरा, शीघ्र।

तुरस्पेय (सं॰ क्ली॰) तुरस-पा यत्। तूर्णपेय।

तुरही (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारका बाजा जो मुंहसे फूंक कर बजाया जाता है।

तुरा—आसाममें गारोहिल जिलेका एक शहर। यह अक्षा॰ २५ ३१ उ॰ और देशा॰ ९० १३ पू॰में अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १३०५ है। यहांकी आबहवा गरम और अस्वास्थ्यकर है। यहां एक छोटा बाजार और एक अस्पताल है।

तुराब—एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि। इनकी रसपूर्ण कविता सराहनीय है। उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं—

"आयोरी आयो बसन्त सुहावन।
आयेरी सखियो बन हिलमिलके बन बन टेसूनों बसन देखावन।
गई बहार नई ऋतु आयी नई नई कलियों खिलायो डिठावन।
अबकी बसन्त पिया घावनमें आयो सो घर आगे मनावन।
कहें तुराब पिय की कृपा चाहे मन्दरोमें धूम मचावन।"

तुरायण (सं॰ क्ली॰) तुर-अय् ल्युट्। १ यज्ञ। २ यज्ञभेद, एक प्रकारका यज्ञ जो चैत्र शुक्ला पञ्चमी और बैशाख शुक्ला पञ्चमीको होता है। ३ परायण, आसक्त, लीनता।

तुरावत् (हिं॰ वि॰) वेगयुक्त, वेगवाला।

तुरावती (हिं॰ वि॰) वेगवाली, जल्दी चलनेवाली।

तुरावान् (हिं॰ वि॰) तुरावत् देखो।

तुराषाट् (सं॰ पु॰) इन्द्र।

तुरासाह् (सं॰ पु॰) तुर त्वरित साहयति शत्रु-णिच् क्विप्

तुरङ्गप्रिय (सं॰ पु॰) तुरङ्गस्य प्रियः, ६ तत्। यव, जौ।

तुरङ्गम (सं॰ पु॰-स्त्री॰) तुरं त्वरितं गच्छति गम-खच् मुम्। १ घोटक, घोड़ा। २ चित्त। ३ एक छन्दका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें दो नगण और दो गुरु होते हैं। (त्रि॰) ४ शीघ्रगामी, जल्दी चलनेवाला।

तुरङ्गमशाला (सं॰ स्त्री॰) तुरङ्गमस्य शाला गृहं, ६ तत्। अश्वशाला, घुड़सार।

तुरङ्गमेध (सं॰ पु॰) अश्वमेध।

तुरङ्गमुख (सं॰ पु॰) तुरङ्गस्येव मुखमस्य। अश्वमुखाकार किन्नरभेद, घोड़े जैसा मुखवाला किन्नर।

तुरङ्गवदन (सं॰ पु॰) तुरङ्गस्येव वदनमस्य। अश्वमुखाकार किन्नरभेद, घोड़े जैसा मुखवाला किन्नर।

तुरङ्गारि (सं॰ पु॰) तुरङ्गस्य अरिः, ६-तत्। १ करवीर, कनेर। २ महिष, भैंस।

तुरङ्गिका (सं॰ स्त्री॰) तुरङ्गवत् आकारोऽस्त्यस्याः। तुरङ्ग-ठन्। देवदालो लता, घघरबेल।

तुरङ्गिन् (सं॰ त्रि॰) तुरङ्गः आरोहणत्वेन अस्त्यस्य। तुरङ्ग-इन्। अश्वारोही घुड़सवार।

तुरङ्गी (सं॰ स्त्री॰) तुरङ्गस्य गन्धोऽस्त्यस्याः अच् गौरादित्वात् ङीष्। १ अश्वगन्धा, असगन्ध। जातौ ङीष्। २ अश्वी, घोड़ी।

तुरण (सं॰ क्ली॰) तुर भावे ल्यु। क्षिप्र गमन, जल्दीसे जानेकी क्रिया।

तुरण्य (सं॰ पु॰) तुरण कण्ड्वादित्वात् भावे यक्। त्वरा शीघ्र।

तुरण्यसद् (सं॰ त्रि॰) तुरण्य-सद-क्विप्। जो बहुत जल्द जाते हों।

तुरत (हिं॰ अव्य॰) तत्क्षण, शीघ्र, चटपट।

तुरत—हिन्दीके एक कवि। ये १७५४ ई॰में विद्यमान थे। सुजानचरित्रमें इनका नाम आया है।

तुरपई (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी सिलाई।

तुरपन (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी सिलाई। इसमें कपड़ोंकी पहले कच्चाईसे बेल टांके डाल कर सिया जाता है फिर सिलाई हुए जोड़को मोड़ कर तिरछे टांकोंसे जमा देते हैं। लुढ़ियावन।

तुरपवाना (हिं॰ क्रि॰) तुरपाना, तुरपानेका काम दूसरेसे कराना।

तुरपाना (हिं॰ क्रि॰) तुरपवाना देखो।

तुरपना (हिं॰ क्रि॰) लुढ़ियाना।

तुरम् (सं॰ अव्य॰) तुर बसु। त्वरा, जल्दी।

तुरम (हिं॰ पु॰) तुरही।

तुरमती (हिं॰ स्त्री॰) एक चिड़िया जो बाज़की तरह शिकार करती है। इसका आकार बाज़से छोटा होता है।

तुरमनी (हिं॰ स्त्री॰) नारियल रेतनेकी रेती।

तुरया (सं॰ त्रि॰) तूर्ण, शीघ्र, जल्द।

तुरस् (सं॰ स्त्री॰) त्वरा, शीघ्र।

तुरश्पेय (सं॰ स्त्री॰) तुरश्या यत्। तूर्णपेय।

तुरही (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारका बाजा जो मुंहसे फूंक कर बजाया जाता है।

तुरा—आसाममें गारोहिल जिलेका एक शहर। यह अक्षा॰ २५ ३१ उ॰ और देशा॰ ९० १४ पू॰में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १६०८ है। यहांकी आबहवा गरम और स्वास्थ्यकर है। यहां एक छोटा कारागार और एक अस्पताल है।

तुराब—एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि। इनकी रस-पक्वकी कविता सराहनीय है। उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं—

"आयो री आयो बसन्त तुराब।
आयोरी कलियां बन हिमगिरिके नए नए रंगलों मदन देलावत।
नई बहार नई ऋतु आयी नई नई नई कलियों सियाको रिझावत।
जबको बसन्त पिया आवनमें आयो सो घर आय न आवत।
भई तुराब पिय की कृपा जाहे नवेलीको सुख बढ़ावत॥"

तुरायण (सं॰ क्ली॰) तुरस्य तस्य अयनं। १ असङ्ग। २ यज्ञभेद, एक प्रकारका यज्ञ जो चैत्र शुक्ला पञ्चमी और वैशाख शुक्ला पञ्चमीको होता है। ३ परायण, आसक्त, लीनता।

तुरावत् (सं॰ त्रि॰) वेगयुक्त, वेगवाला।

तुरावती (हिं॰ त्रि॰) वेगवाली, जल्दीसे साथ चलनेवाली।

तुरावान् (हिं॰ त्रि॰) तुरावत् देखो।

तुराषाट् (सं॰ पु॰) इन्द्र।

तुरासाह (सं॰ पु॰) तुरं त्वरितं साहयति सह-णिच्

क्षिप्। अन्येषामपि दृश्यन्ते इति सूत्रेण दीर्घः। इन्द्र। तुरादि शब्दके बाद सह धातुका जब षाढ रूप होगा तभी सह धातुका ष पत्व होगा, षाढ़ रूप नहीं होनेसे नहीं होगा। तुराषाट् जनाषाट् प्रभृतिका ष पत्व हुआ, किन्तु त्वरासाह् जनासाह प्रभृतिका स पत्व नहीं हुआ।

तुरि—एक युद्धप्रिय जाति। अफगानिस्तानके निकट वर्नी कुरम नदीके किनारे इस जातिका वास है। इन लोगोंमें ५५०० योद्धा हैं। ये लोग दूसरी दूसरी जातिके साथ मिल कर मोरञ्जाइ उपत्यकामें बहुत उत्पात मचाते हैं। यह अंगरेज-द्वेषी हैं और सर्वदा अंगरेजाधिकृत कोहाट जिलेमें लूट-पाट किया करते हैं तथा दूसरी जातिको भी अङ्गरेजोंके विरुद्ध उत्तेजित करते हैं। १८५३ ई०में कप्तान कोकने एक दल तुरि विद्रोहियोंको, जब वे नमकको खान खोदने जा रहे थे, पकड़ा था। १८५४ ई०में दोनोंमें सन्धि हो गई, लेकिन थोड़े समयके बाद २००० तुरियोंने मोरञ्जाइ पर आक्रमण कर सन्धि तोड़ दी। काबुल-युद्धमें (१८७८—८० ई०में) इन्होंने कोई उपद्रव नहीं किया था।

दाऊदपुत्र, बिजनोट, नोक, लोकायेट, उदुर आदि स्थानोंमें एक दल तुरि वास करता है। ये लोग अपने ऊंटको किराये पर देते हैं किन्तु बावरी और खेङ्गारोंकी नाईं चोरीमें प्रवृत्त होनेके कारण ये लोग शैतानके वंशधर तथा भूत-प्रेत कहलाते हैं।

तुरि (सं० स्त्री०) तुर-इन्। तन्तुवायका काष्ठादिनिर्मित वयन-साधन, जुलाहोंका काठका बना हुआ तोढ़िया नामका औजार।

तुरी (सं० स्त्री०) तुरि-ङीप्। १ तुरि, जुलाहोंका तोरिया या तोड़िया नामका यन्त्र। पर्याय—तन्त्रकाष्ठ, तुली, तुलि। २ जुलाहोंकी कूची, हत्थो। (त्रि०) ३ त्वरायुक्त, वेगवाली।

तुरी (हिं० स्त्री०) १ घोड़ी। २ बाग, लगाम। (पु०) ३ अश्वारोही, सवार। (अ० स्त्री०) ४ फूलोंका गुच्छा। ५ मोतीकी लड़ोंका झब्बा जो पगड़ीमें कानके पास लटकाया जाता है।

तुरीय (सं० वि०) तुरीय अच् चतुर्णां पूरणः चतुर छ; आद्यलोपश्च। १ गतियुक्त, जिसमें चाल हो। २ चतुर्थका पूरण, चौथा। ३ तारक, तारण वा उद्धार करनेवाला। (पु०) ४ चतुर्थी वैखरीरूप वाक्।

वेदमें वाणी वा वाक्के चार भाग किये गये हैं-- परा, पश्यन्ति, मध्यमा और वैखरी। वैखरी वाक्यका नाम तुरीय है। नादात्मक वाणी मूलाधारसे उठी है। इसका निरूपण नहीं हो सकता। इसीसे इसका नाम परावाक् हुआ। परावाक्को योगी भोग हो जान सकते हैं, इस कारण इसे पश्यन्तिवाक् कहते हैं। फिर जब वाणी बुद्धिगत हो कर बोलनेकी इच्छा उत्पन्न करती है, तब उसे मध्यमा कहते हैं। अन्तमें जब वाणी मुखमें आ कर उच्चारित होती है, तब उसे वैखरी या तुरीय कहते हैं। इनमेंसे परादि तीन वाक्य हृदयके अन्तवर्त्तित्वके लिए भीतर रक्खे गये और चौथे तुरी वाक्य सब कोई उच्चारण करने लगे। (ऋक् १।१६४।४५ सायण)

५ सर्वाधारभूत अनुपहित चैतन्य परब्रह्म।

वेदान्तसारमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है,—वन वा तदवस्थ आकाश और वृक्ष वा तदवस्थित आकाश एवं जलाशय वा तद्गत प्रतिविम्बस्थित आकाशादिका आश्रयरूप अनुपहित महाकाशकी नाईं यह समष्टि, व्यष्टि, अज्ञान, और तदुपहित चैतन्योंका आधार जो अनुपहित चैतन्य है, उसे तुरीय ब्रह्मचैतन्य कहते हैं। इस विषयमें श्रुति प्रमाण इस प्रकार है—मङ्गलस्वरूप अद्वितीय चैतन्यको चौथा मानते हैं। वे हो आत्मा हैं, वे हो विज्ञेय हैं। जिस तरह दग्ध लोहपिण्डके साथ अभिन्नरूप अग्नि "अयो दहति" इस वाक्यका वाच्य है, लोहपिण्डभिन्नरूपमें उसका लक्ष्य कहते हैं, उसी तरह यह समष्टि, व्यष्टि, अज्ञान, और तदुपहित चैतन्यके साथ अभिन्नरूप यह तुरीय चैतन्य "तत्त्वमसि" इत्यादि महावाक्यका वाच्य और भिन्नरूपमें महावाक्यका लक्ष्य होता है।

तुरीयक (सं० पु०) तुरीय स्वार्थे क। चतुर्थ, चौथा।

तुरीयन्त्र (सं० पु०) सूर्यको गति जाननेका एक यन्त्र।

तुरीयवर्ण (सं० पु०) तुरीयः वर्णः कर्मधा०। चतुर्थ वर्ण, शूद्र।

तुरुप (हिं० पु०) ताशका एक खेल। इसमें कोई एक रंग प्रधान मान लिया जाता है। इस रङ्गका छोटेसे छोटा पत्ता भी दूसरे रङ्गके बड़ेसे बड़े पत्तेको मार सकता है।

तुरपना (हिं॰ क्रि॰) तुरपन देखो।

तुरबतर—मन्द्रिपुरके चितलदुग जिलेके अन्तर्गत चितलदुग तालुकका एक नगर। यह अक्षा॰ १४ २६´ उ॰ और देशा॰ ७६ २१´ पू॰ चितलदुग नगरसे ११ कोस उत्तरपूर्वमें अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ५०११ है। यहां रुई, कपड़ा और कम्बल तैयार होता है। १८७९ ई॰में म्युनिसिपलिटी स्थापित हुई है।

तुरुष्क (तुर्की)—एसिया और यूरोपके अन्तर्गत एक देशका नाम। यह देश प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त है एसियाई तुरुष्क और यूरोपीय तुरुष्क। इन दोनोंमें एसियाई तुरुष्क ही बड़ा है। एसियाई तुरुष्क ही एसियाका पश्चिमांश देश है। इसके उत्तरमें कृष्णसागर और एसियाई रूसिया, पूर्वमें पारस्य दक्षिणमें अरब और भूमध्य-सागर तथा पश्चिममें भूमध्य-सागर है। आकारमें यह देश भारतवर्षसे आधा है। इस प्रदेशमें निम्न लिखित प्रदेश लगते हैं—एसिया-माइनर, सिरीया आर्मेनियाके कई अंश, कुर्दिस्तान, अल जेजिराह या मेसोपोटेमिया, ईराक अरबी (या काल्डिया) और अरबिस्तान (या तुरुष्काधिकृतअरब)।

वामनपुराणमें भारतवर्षको उत्तरसीमा निम्न तुरुष्क देशका उल्लेख है, वह तुरुष्क नहीं है वह अभी तुर्किस्तान नामसे मशहूर है।

एसिया-माइनर (छोटा एसिया)—यह एक बड़ा उपद्वीप है और कृष्ण-सागर तथा भूमध्य-सागरके बीचमें अवस्थित है। इसके अभ्यन्तर भागमें जो मालभूमि है। इस प्रदेशको प्रधान नदियां किजिल इर्माक (कोजिलनदी इसका प्राचीन नाम हालिस है) और सकेरिया कृष्ण सागरमें जा गिरी हैं। मियन्दर बयूक और सारावत नदियां मिसरके उपसागरमें गिरी हैं। अङ्गोरा नामक स्थानमें लोमश छाग पाया जाता है। इनके रोएं से इस देशमें शाल बनता है। यह प्रदेश पूर्व पश्चिममें आना तोलिया, मध्यस्थलमें कारामानिया उत्तरपूर्वमें तुरकमानिया इन कई एक भागोंमें विभक्त है। स्मरना इस देशमें सबसे बड़ा शहर और वाणिज्य स्थान है। स्कुटारि, अङ्गोरा, सिनोपि त्रिबिजन्द, कोनिह (प्राचीन नाम आइकोनियम), शिवास प्रभृति नगर प्रधान हैं। इसके पश्चिमका ऐसा अन्तरीप ही एसियाके सर्वपश्चिम अन्तरीप है।

सिरीया एसिया माइनरके दक्षिण तथा अरबके उत्तरमें अवस्थित है। ईसाइयोंका पवित्र स्थान पलेस्टाइन इसी सिरीयाके मध्य पड़ता है। यह इस प्रदेशका पश्चिम विभाग है। जेरुसलेम इसका प्रधान नगर है। बेथलेहम शहरमें योशुका जन्म हुआ था। सिरीयाको राजधानी अलेपो है। दमिश्क या आन्ताकिया ऐटा (प्राचीन सिदोन) तायर, एकर, जाफा, गाजा प्रभृति कई एक विख्यात शहर हैं।

आर्मेनिया प्रदेश कृष्णसागरके दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। इसका समस्त भाग पहले तुरुष्कके अधिकारमें था पीछे रूस तुरुष्क युद्धके बाद इसका पूर्वांश रूस राजाने अधिकार किया गया। इसके पूर्वमें आरारट पर्वत पारस्य रूस और तुरुष्क इन तीन बड़े राज्योंके सीमा-स्वरूप दण्डायमान है। इसको शिखर १६ कोस तक ऊंची है। इस प्रदेशमें युफ्रेटिस नदी दक्षिणकी ओर और अरस पूर्वको ओर बह काश्पीय ह्रदमें गिरती है। आर्जरूम इसकी राजधानी है और भानभगर भानह्रदके किनारे अवस्थित है।

कुर्दिस्तानका प्राचीन नाम असीरीया है। यह प्रदेश आर्मेनियाके दक्षिण तायग्रीस नदीके उत्तरमें पड़ता है। यहांके लोग कुर्द नामसे प्रसिद्ध हैं। वे हृषिजीवी हैं, किन्तु दस्युवृत्तिशाली और नृशंसस्वभाव हैं। इन लोगोंका धर्म मुसलमानधर्म है सही, किन्तु उनमें प्रेतको उपासना और अग्निको उपासना विदित है। यहां तायग्रीसके किनारे प्राचीन नगर निनिभीका ध्वंसावशेष देखनेमें आता है।

अल-जेजिराका प्राचीन नाम मेसोपोटेमिया है। यह कुर्दिस्तानके दक्षिण तायग्रीस और युफ्रेटिस इन दो नदियोंके बीचमें अवस्थित है। तायग्रीसके किनारे मोसल नगर इसको राजधानी है। यहां प्राचीन समयमें बहुत महीन कपड़ा तैयार होता था जिसे मसलिन (मसलिन) कहते थे।

ईराक-अरबी प्रदेशका प्राचीन नाम काल्डिया या बाबिलोनिया है। यह पारस्य सागरके निकट अवस्थित है। पहले यह प्रदेश बहुत उर्वर था। किन्तु अभी इसका अधिकांश मरुभूमि हो गया है। बागदाद नगर

इसकी राजधानी है इसी नगरमें पहले खलीफाओंकी राजधानी थी। युफ्रेतिसके किनारे प्राचीन नगर बाबि-लनके ध्वंसावशेषके मध्य वर्त्तमान हिल्ले ह नगर अव-स्थित है। युफ्रेतिस और ताइग्रोस नदीने इस प्रदेशमें मिलकर साट अल्-अरब नाम धारण किया है। इस युक्त-नदीके किनारे वसोरा या बजरा नगर अवस्थित है। इस नगरका वाणिज्य बहुत फैला हुआ है। यहांका गुलाबका फूल बहुत उमदा होता है।

यूरोपीय तुरुष्क—इसके उत्तरमें अष्ट्रिया, सर्भिया और रुमानिया, पूर्वमें कृष्णसागर, दक्षिणमें इजियन-सागर और ग्रीस तथा पश्चिममें आड्रियाटिक सागर है। दानियुब नदी उत्तरमें शाखा प्रशाखाओंके साथ संपूर्णदेशमें बहती हुई कृष्णसागरमें गिरी है। दक्षिणांशमें बहुत सी छोटी नदियां हैं। इस देशका जलवायु स्वास्थ्यकर और साधारणतः न अधिक उष्ण और न शीत है। किन्तु समय समय पर बहुत ग्रीष्म और शीत पड़ता है। यूरोपीय तुरुष्कमें निम्नलिखित कई एक प्रदेश लगते हैं—रूमे-निया, पूर्व-रूमेनिया अलबानिया और बुलगेरिया।

कनस्तान्तिनोपल वा इस्ताम्बुल शहर तुरुष्क साम्राज्य की राजधानी है। यह नगर बसफरसके किनारे अव-स्थित है। नगर देखनेमें बहुत सुन्दर लगता है। अट्टा-लिकायें प्रायः नहीं हैं। अधिकांश घर काठके बने हुए हैं। रास्ते बहुत तंग और गलीज हैं। कलकत्तेकी अपेक्षा यह शहर छोटा है।

गलिपोली शहर दर्देनेलिस प्रणालीके किनारे अव-स्थित है। यह शहर तुरुष्क-राज्यके नौ-सेनाके रहनेका प्रधान अड्डा है। एड्रियानोपलमें (रोमके सम्राट् एड्रियन द्वारा प्रतिष्ठित) तुर्कोंकी प्राचीन राजधानी थी। यही राज्यका दूसरा शहर है। सलोनिका (प्राचीन थेसा-लोनिका) दूसरा बन्दर है।

बुलगेरिया प्रदेशमें बुलगेरिया और रूमेलिया, बल-कान पर्वतकी घाटी पर अवस्थित है। यह सुदृढ़ दुर्गसे घिरा हुआ है। वर्णा कृष्णसागरके किनारे एक बन्दर है। सिलिष्ट्रीया, त्रिनोभा और सोफिया (बुलगेरियाकी राजधानी) तथा और भी कई एक प्रधान नगर हैं।

अरबिस्तान वा तुरुष्काधिकृत अरब प्रदेश-इसका क्षेत्र-फल १ लाख ४० हजार वर्गमील है। बोगदाद ही इसकी राजधानी है। शासनविभागके अनुसार कुर्दि-स्तानके कई अंश इसके अन्तर्गत हैं। मेसोपोटेमिया भी इसके अधीन है। अंगरेज लोग इष्ट-इण्डिया-कम्पनीके नामसे जब भारतवर्षमें आये थे, तभीसे इस प्रदेशके साथ उनका सम्बन्ध चला आता है। उस समय बसोरामें उनकी एक कोठी थी और बन्दर अब्बास नामक स्थानमें उनके एक एजेंट रहते थे। १८३३ ई०में इस एजेंटकी राजनीतिक क्षमता बोगदादके अंगरेज-प्रतिनिधिके हाथ चली गई है।

यूरोपीय तुरुष्कके अधिकांश स्थल ही पर्वताकीर्ण हैं। बलकान पर्वत अभी यद्यपि रूसके अधीन है, तोभी इसके गिरिपथ तुरुष्कके काममें आते हैं। यहांके खनिजों-मेंसे लोहा ही अधिक है, इसके अलावा चांदी मिला हुआ सीसा, तांबा, गन्धक, नमक, फिटकरी और कोयला भी पाया जाता है।

यूरोपीय तुरुष्कमें ७६८ मील और एशियाके तुरुष्कमें केवल ५०० मील तक रेल लाइन गई है।

यूरोपीय और एशियाके तुरुष्कके अधीन अफ्रिकामें कई एक देश हैं। ये सब मिल कर यूरोपमें तुरुष्क साम्राज्य वा अटोमान-साम्राज्य कहलाता है। तुरुष्क साम्राज्य एक समय समस्त दक्षिण-यूरोप तथा उत्तर-आफ्रिका तक फैला हुआ था। रूस-तुरुष्कयुद्धके बाद अभी तुरुष्क साम्राज्यके अधीन अफ्रिकामें त्रिपली, बार्का, मिसर और एशियामें एशियाके तुरुष्क तथा तुरुष्काधि-कृत अरब मात्र रह गया है।

तुरुष्कमें तुर्की, यहूदी और ग्रीकचर्चके ईसाई तथा अन्यान्य श्रेणीके लोग भी वास करते हैं।

तुरुष्कमें इस्लामधर्म प्रधान है। सम्राट् भी मुसल-मान थे। अबसे कुछ पहले यहांके सम्राट्का नाम सुलतान अबदुल हमीद (२य) था। इनका जन्म १८४२ ई०में हुआ था। ये १८७६ ई०में राज्य सिंहासन पर अभिषिक्त हुए थे। अब साधारणतन्त्र प्रचलित हुआ है।

राज्यकी शासनप्रणाली—तुरुष्कके सुलतान स्वेच्छा-चारी राजा थे। उनकी इच्छामें कोई भी बाधा नहीं हो सकती है। आइन देशकी प्रचलित प्रथा वा प्रजाका

अभिभाव इनमेंसे कोई भी उन्हें किसी कामके लिए बाध्य नहीं कर सकता किन्तु कुरानके मतानुसार उन्हें चलना पड़ता है। कुरानके अनुसार उनको विधि निषेध करनेके लिये उनकी एक पण्डित-सभा है। ये सब पण्डित अच्छी तरह कुरान जानते हैं और वे 'उलमा' नामसे पुकारे जाते हैं। पण्डितसभाके सभापतिको शेख उल्-इसलाम तथा सुलतानको मुफ्ती कहते हैं। इस सभामें सब तत्त्वज्ञ, राजनैतिक, फौजदारी, दीवानी और सामरिक विषयकी मीमांसा कुरानके मतानुसार की जाती है। इसके सिवा और भी कई प्रकारके आईन हैं। कुरानके अनुसार जो सब विधि राज्यारम्भके समयसे आज तक पण्डित-सभा तथा सुलतान द्वारा चलाये गये हैं वे ही 'कानून-नामो' नामसे चले आ रहे हैं। कुछ धर्म विषयके विचारमें सुलतान अपनेसे कुछ नहीं कर सकते, उन्हें पण्डितसभाका मत लेना पड़ता है।

राजसभाका सम्मानकर पद दो प्रकारका है—विद्याका सम्मान और सत्ताका सम्मान। विद्याका सम्मान तीन प्रकारका है—रिकाब पाशा और पाशा। राजाकी मन्त्रि-सभाके सदस्य दिवान कहाते हैं। इन लोगोंके मुख-पात्र उज़ प्रधान वज़ीर है। इनके अधीन (राजधानीके सब विभागोंके विभिन्न मन्त्रिगण), रईस-एफेन्दि (विदेशी मन्त्रिदल) चाउस-बाशी (शासन-परिचालक मन्त्री और प्रधान कर्मचारिगण) प्रधान हैं। राजस्व-विभागके प्रधान कर्मचारी 'बाशा' कहलाते हैं। पहले, दूसरे और तीसरे प्रधान कर्मचारी दफ्तरदार नामसे पुकारे जाते हैं। निशानजी-बाशा (सुलतानके मोहर-रक्षक) और रेइस अल-खमोनी (राजस्व-विभागका परिदर्शक) इसी श्रेणीके अन्तर्गत हैं। इनको मन्त्रि-सभाके सदस्य भी वज़ीर कहलाते हैं। वज़ीर मण्डलीका नाम 'दीवान' है। अनेक तरहके दीवानी और सामरिक कर्मचारी 'पाशा' नामसे मशहूर हैं। इनमेंसे "कसडानजी बाशी" (अस्त्रपुरीरक्षकोंके अध्यक्ष) तोपची बाशी 'तोपखाना गोला गोली, बारूद और तोपोंके अध्यक्ष', मीरो आलम (महम्मदका विशुद्ध पताका-वाहक) प्रभृति मुख्य हैं।

सामरिक सम्मान भी तीन प्रकारका है—अग्रो, पाशा बे-सब। वज़ीर तीन निशानधारी पाशा हैं, प्रादेशिक शासनकर्त्ता दो निशानधारी पाशा और बे सब एक निशानधारी हैं। बे-गण पाशा नहीं कहलाते। युद्धके सेनापति भी वज़ीरोंकी तरह तीन निशानधारी हैं, उन्हें 'सिरस्कर' कहते हैं।

सम्पूर्ण साम्राज्य कई एक प्रदेशोंमें विभक्त है। प्रत्येक विभागमें एक पाशा शासनकर्त्ता है जिन्हें 'वाली' (प्रतिनिधि Viceroy) कहते हैं। वालीके अधीन रहनेके कारण प्रदेशको 'वालियत' कहते हैं। प्रत्येक वालियत पुनः कई एक सनजक वा लिवामें विभक्त है। प्रत्येक लिवामें एक 'काय-मकाम' (सहकारी प्रतिनिधि वा Lieutenant Governors) है। प्रत्येक लिवा भी पुनः कई एक कज़ा (ज़िला) में विभक्त है। प्रत्येक कज़ा फिर कई एक 'नहिय' (परगना वा मण्डल वा कस्बा) में विभक्त है। वालियत और लिवाके शासनकर्त्ताकी उपाधि 'पाशा' है, कज़ा प्रभृतिके शासकोंकी उपाधि 'बे' है। पाशाके हाथमें सामरिक, दीवानी, फौजदारी और राजस्व-विभागका पूरा अधिकार है। पाशाका अधीनस्थ शासनकर्त्ताओंके ऊपर प्रभुत्व है सही, किन्तु वह केवल नाममात्रको लिये है।

यहांके अधिवासी प्रधानतः दो भागोंमें बंटे हैं—तुर्की और रावा। मुसलमान लोग (तुर्की, कुर्द, अरबी, बोसनियावासी मुसलमान, आलबेनियावासी मुसलमान और प्राचीन एशियावासी मुसलमान) साधारणतः तुर्की कहलाते हैं। विधर्मी विदेशी मात्र ही 'रावा' नामसे पुकारे जाते हैं।

इतिहास—ओसमानलि तुर्की एशियाकी तूरानीय जातिकी ही एक शाखा है। एशिया-माइनर, रूमेलिया, आनाम प्रभृति स्थानोंके ये ही लोग प्रधान अधिवासी हैं। हिरोदोतसके ग्रन्थमें वर्त्तमान किल सागरके दक्षिण-पश्चिममें 'तयूरकी' नामक एक जातिका उल्लेख है। इस जातिका वास्तविक नाम अभीके ग्रन्थोंमें 'तुर्की' कह कर उल्लिखित है। प्लिनीने इसे 'तुर्की' (Turk) कहा है। यूरप नामक एक मंगोलीय आदिम जाति अब भी एशिया-माइनर तथा आरबमें रहती है। तुर्की और तुरुष्क

देशमें बात चौथी या पांचवीं शताब्दीके प्रारम्भमें यूरोपमें विज्ञापित हुई। इसके कई सौ वर्ष पहले चीना लोग इस विषयका कुछ कुछ हाल जानते थे।

तुर्कोंके कई एक प्राचीन वंश-विभाग हैं—(१) ओघुज (२) सेलजुक और (३) ओसमान-ली।

(१) ओघुज—प्रवाद है, कि तुर्किस्तानमें (मध्य एशियाके तूरान देशमें) ओघुजखाँ नामके एक पराक्रान्त तुर्की नरपति रहते थे। उनके पिताका नाम कारा खाँ था। ओघुजखाँ इब्राहिमके समसामयिक थे। इनका राज्य इनके कईएक उत्तराधिकारियोंमें विभक्त हुआ। पूर्वाञ्चलमें तीन भाइयोंने चीन तक अपना राज्य फैलाया और पश्चिमाञ्चलमें दूसरे तीनखाँओंने अक्षु और जकजर्तिस नदीके चारों ओर राज्य विस्तार किया था। इनमेंसे प्रथम खाँ पार्वतीय खाँ नामसे विख्यात थे। ये तुर्कमान (वर्तमान काम्पीयन-सागर-तीरवर्ती तुर्की) जातिके आदि पुरुष थे। द्वितीय खाँ सामुद्रिकखाँ नामसे मशहूर थे। ये ही सेलजुकोंके आदिपुरुष माने जाते हैं। तृतीय खाँ स्वर्गीय खाँ नामसे विख्यात थे। ये कायि जातिके आदि पुरुष रहे। इसी कायि जातिसे ओसमान-ली तुर्कोंको उत्पत्ति हुई है। ओघुज लोग बहुत काल तक पारस्यके साथ लड़ाईमें उलझे रहनेके कारण ७११ ई०में अरबके साथ विद्रोहमें लिप्त हो गये। अरबोंने इस समय बुखार और समरकन्द जय किया। बुगराखाँ हारूनने ८८८ ई में चीन तक अपना राज्य फैलाया। बाद अन्तर्विद्रोहसे सेलजुकोंने प्रबल हो कर इनका राज्य जीत लिया।

(२) सेलजुक-१० वीं शताब्दीके अन्तमें सेलजुकोंके अधिपति प्रबल हो उठे। इनके पौत्र तुघरिल बेग ११ वीं शताब्दीके मध्यभागमें एक स्वाधीन राजा थे। इस समय बोगदादमें खलीफा अलीकायम राज्य करते थे। उनके पुत्र बेसासिरि पितृ-राज्य जय करनेकी इच्छासे सेलजुकपति तुघरिलसे मारे गये। खलीफाने सेलजुकपतिको अपना रक्षक समझ कर उन्हें अमीरउल्-उमरा-ई (राजाधिराज) की उपाधि दी, और उनकी बहनसे आपने विवाह किया तथा अपनी लड़कीसे उनका विवाह करा दिया।

१०६८ ई०में तुघरिल बेगका भतीजा अलप-आर्सलान राजा हुए और उन्होंने खलीफा कायमको एक कन्याके साथ विवाह किया। उन्होंने पारस्यके उत्तर-पश्चिमांश, आर्मेनिया, जर्जिया, मेसोपोटेमिया और सिरीया आदि देशोंको फतह किया। १०७१ ई०में उन्होंने ग्रीक सम्राट् रोमिनसको पराजित कर उन्हें कैद कर लिया। इनके पुत्र मालिकशाहने एशिया-माइनरका अधिकांश जय किया। इसके बाद १३० वर्ष तक इस वंशके राजा अत्यन्त पराक्रान्त रहे। इन्होंने पश्चिम एशियाके प्रायः समस्त भाग अधिकार कर लिये थे। सेलजुकोंके अन्तिम राजा द्वितीय अलाउद्दीन् १२०७ ई०में मुगलोंके हाथ विनष्ट हुए। इनके पीछे इनका राज्य कई एक सर्दारोंने आपसमें बांट लिया। तुर्किस्तान देखो। इन लोगोंके समयमें कोनि नगरमें राजधानी थी।

(३) ओसमान-ली- सुलेमान शाह कायि जातिके राजपुत्र थे। १३ वीं शताब्दीके प्रारम्भमें वे खुरासानके अन्तर्गत महान् नामक स्थानमें राज्य करते थे। चङ्गेज खांके भयसे वे १२३४ ई०में ५०००० लोगोंके साथ आर्मेनियाके मध्य आखलत और आरजेनजान नामक स्थानमें जा कर रहने लगे थे। ७ वर्ष पीछे कोन नगरके सेलजुक राज अलाउद्दीन्के खुरासान और ख्वारिज्म अधिकार कर लेने पर वे पुनः स्वदेशको लौटे, किन्तु रास्तेमें जाबेर शहरके निकट यूफ्रेतिस नदी पार करते समय वे डूब मरे। उनके अनुयायियोंने वहां उनका एक समाधिमन्दिर निर्माण किया जो आज भी वर्तमान है। इन्हींके एक पुत्र अरतुघरिलने पश्चिम देशमें वास करनेके लिये कृतसंकल्प हो अलाउद्दीन सेलजुककी अधीनता स्वीकार की और मुगलोंके साथ लड़ाईमें उन्हें सहायता पहुंचा कर उस युद्धमें जय लाभ की। इस पर अलाउद्दीनने सन्तुष्ट हो कर उन्हें अङ्गोरा प्रदेशकी जागीर दी और उन्हें सामन्तराज स्वीकार किया। इसके सिवा अरतुघरिलने अलाउद्दीन्को ग्रीक और मुगल-युद्धमें साहाय्य किया था। इस समय वे सेलजुक राज्यके पश्चिम सीमान्त-रक्षक कह कर सम्मानित हुए। १२८८ ई०में उनकी मृत्यु हुई। उन्हींके पुत्रका नाम ओसमान था।

(१२८८—१३२६) - ओसमानने राजा हो कर ग्रीक शासकोंके साथ लड़ाई करके उनके अनेक स्थान जीत लिये। सेलजुक-राज अलाउद्दीनकी मृत्यु होने पर ओसमानने एशिया-माइनरके बहुतसे छोटे छोटे राज्यों पर अपना प्रभुत्व जमाया। १० वर्ष पीछे उन्होंने ब्रूसा अधिकार किया। उन्हींके नामानुसार इस प्रदेशके आदि जातीय तुर्क लोग ओसमान-ली नामसे प्रसिद्ध हुए। १३२१ ई०में ओसमानकी तुर्कोंने बसफोरस पार कर कनस्तान्तिनोपलके निकटवर्ती प्रदेश अधिकार किये, १३२६ ई०में उनकी मृत्यु हुई। उनके बड़े लड़के उर-खाँ राजा हुए। ओसमान मरते समय उत्तरमें बिथिनिया, पूर्वमें गालाशिया, दक्षिणमें फ्रिजिया और पश्चिममें माइ-रियस नदीके किनारे तक राज्यसीमा बढ़ा गये थे। यहीं से तुरुष्क साम्राज्यका सूत्रपात है। वर्तमान ओस-मन्ली सम्राट् इन्हींके वंशधर हैं।

(१३२६—१३६०)—उर खाँने राजा हो कर अपने भाई अलाउद्दीनको प्रधान मन्त्रीके पद पर नियुक्त किया। उर खाँने अपने नाम पर सिक्का चलाने तथा खुतबा पढ़नेका आदेश दिया। केवल इन्होंने ही स्थायी सेना अवलम्बन की। राज्यशासनके लिये इन्होंने जो कर्मचारी नियुक्त किये, आज तक उन्हीं पदों पर कर्मचारी नियुक्त होते आ रहे हैं। उनकी शासन-प्रथा अब भी प्रचलित है। इन्होंने अलाउद्दीनकी आज्ञा पालन करते हुए पहलेसे जो सेना रखनेके बदलेमें एक नियमित सैन्यदल संगठित किया। इस तरहकी सेना यूरोपमें पहले किसीने भी नियुक्त न की थी, इस काममें प्रधान विचारक कारा खलील चेन्दरेलीने उन्हें सहायता दी थी। इस सैन्यदलको जेनिसेरी कहते हैं। इसीसे वर्तमान तुरुष्कके जेनिसेरी (नववाहिनी येनि-चेरि) शब्दकी उत्पत्ति हुई है। १३३० ई० में इसी सैन्यको ले कर फिलोक्रेनीके युद्धमें सम्राट् उरखाँने अपने छोटे भाई आन्द्रनिकसको पराजित किया। इस लड़ाईमें उन्होंने निकिया जीता और वहां राजधानी स्थापित की। छह वर्ष बाद (१३३६ ई०में) इन्होंने निकोमिडिया दखल किया। १३३३ ई०में सम्राट आन्द्र-निकसने एक सन्धि की जिसमें उन्होंने अपना एशियाका राज्य उर खाँको दे दिया। १३५० ई०में सेना उरखाँने हेलेस्पन्ट पार कर ग्रीकराज्य पर आक्रमण किया। सम्राट् जन केण्टाकुजीनसने अपनी कन्या उरखाँको व्याह दी और (१३४६ ई०में) उन्हें शान्त करनेकी चेष्टा की, किन्तु कुछ फल न निकला। उरखाँके पुत्र सुलेमानने १३५४ ई०में दार्दानेलिस पार कर जिम्पि दुर्ग अधिकार किया। तुर्कोंका यूरोपमें यही सबसे पहला अधिकार था और तभीसे यह उनके हाथमें है। सम्राट् जन कण्टाकुजीनस और उनके एक दूसरे जामाता पालियोलोगसके बीच विद्रोह उपस्थित हुआ। उरखाँने दार्दानेलिसके द्वारा गालिपोलि दुर्ग पर आक्रमण और अधिकार किया। १३६० को ७१ वर्षकी उम्रमें उरखाँकी मृत्यु हुई। उनके मरनेके बाद उनका साम्राज्य कई भागोंमें बँट गया। प्रति विभागमें एक पाशा नामक राजा हुए। पारसीक "पद शाह" शब्दसे पाशा शब्दकी उत्पत्ति है, जिसका अर्थ 'जो पारस्यके शाहकी प्रधानता स्वीकार करें' होता है।

(१३६०-१३८९)—उरखाँके बड़े लड़के सुलेमान घोड़ेसे गिर कर मर गये इसलिये छोटे पुत्र मुराद राजा हुए। राजा होनेके साथ ही उन्होंने अपरिमित बल अवलम्बन साम्राज्य अधिकार करनेका उद्योग किया। १३६१ ई०में उन्होंने आड्रियानोपल अधिकार किया और वहां राजधानी स्थापित की। हङ्गरि, बोसनिया, सर्विया और वालाचियाके राजगण मुरादके विरुद्ध हो गये। किन्तु वे सबके सब तुर्कोंके हाथसे १३६३ ई०में पूर्ण-रूपसे पराजित हुए। इस युद्धमें थ्रेस, बुलगेरिया, मासिडोनिया, थिसाली और एपिरस तुर्कोंके हाथ लगी। १३८६ ई०में मुरादने कारामानियाके सेलजुकराज अला उद्दीनको वशीभूत कर अपने अधीन राजाके जैसा स्वीकार किया। इतनेमें सर्वियाके राजा लाजारसने बोसनिया, बुलगेरिया, हङ्गेरी, पोलैण्ड और वाला-चियाके राजाओंकी सहायता पा कर तुर्कोंके विरुद्ध जङ्ग ठान दी। १३८९ ई०में सर्वियाके दक्षिण कोसोवा नामक स्थानमें मुरादके साथ लड़ाई छिड़ी। लड़ाईमें रक्तकी नदी बहने लगी। लाजारस कैद कर लिये गये। सहायकारी राजगण भाग चले। प्रधान

प्रधान की दो शिविरमें हो मुराटके सामने लाये गये।

मिलोश कोविलेविच नामक सर्भियाके एक सेनापतिने मुरादके सामने साष्टाङ्ग दण्डवत् कर उनका पद चुम्बनादि किया और पीछे हठात् कमरसे एक तेज छुरी निकाल कर उनकी छातीमें भोंक दी। मुराट सिंहासनसे नीचे गिर पड़े और उसी समय सर्भियाके राजा लाजारसने अपने सेनापतिका सिर छेद डालनेकी आज्ञा दी। उनके सामने ही यह कार्य किया गया। मुरादके मरने पर उनके बड़े लड़के बयाजिद राजा हुए और उन्होंने सर्भियाको अपने राज्यमें मिला लिया।

(१३८९-१४०३)—बयाजिद मुरादके बड़े लड़के थे। इन्हीं ने ओसमान-लोगोंमें सबसे पहले 'सुलतान' की उपाधि ग्रहण की। सिंहासन पर बैठनेके साथ ही उन्होंने पहले अपने छोटे भाई याकुबका सिर काट डालनेका आदेश दिया। १३९१ ई०में उन्होंने कनस्तान्तिनोपल पर आक्रमण किया। इस समय कईएक फ्रांसीसी वीरोंने नगरकी रक्षा की। पीछे सात वर्ष तक घेरा डाला गया। एशिया-माइनरमें बयाजिदने कारामानिया और कईएक सेलजुक राज्य जय किये। इस समय हङ्गेरि-राज सिगिसमन्दने वार्गण्डी-पति जन, नेभार्के काउण्ट और चुने हुए फ्रांसीसी अश्वारोही योद्धाओंकी सहायतासे बयाजिद पर धावा किया। १३९६ ई०को निकिपोलिसमें घमसान लड़ाई हुई। युद्धमें बयाजिदकी ही जीत हुई। दूसरे वर्ष उन्होंने ग्रीकदेश पर आक्रमण किया, पीछे हङ्गेरि जीतनेका संकल्प किया था किन्तु तैमूरके अभ्युदय होने पर उन्होंने एशियाका अधिकार बचानेके लिये यात्रा की। अन्तमें १४०२ ई०को अङ्गोराकी लड़ाईमें वे तैमुरसे पराजित तथा बन्दी हुए। इसके दूसरे ही वर्ष पिसिडियाके आक शहरमें तातार-शिविरमें उन्होंने प्राणत्याग किया।

(१४०२—१४१३)—अङ्गोराके युद्धके बाद तैमूरने कारामानिया, अइदिन प्रभृतिके सेलजुक राजकुमारोंको पुनः पैतृक राज्यमें स्थापित किया। किन्तु वे आपसमें लड़ने लगे। इधर ओसमानका सिंहासन लेकर सुलेमान, ईशा और महम्मद इन तीन पुत्रोंमें विवाद उपस्थित हुआ। अन्तमें सुलेमान यूरोपमें स्वाधीन हुए। ईशा और महम्मदने सेलजुकोंको परास्त कर पितृराज्य उद्धार करनेके बाद, ब्रुसामें ईशा और आमासियामें महम्मद स्वाधीन भावसे राज्य करने लगे। किन्तु महम्मदसे तीन बार परास्त हो कर ईशा कारामानियाको भाग गये। इसके बाद उनका नाम सदाके लिये लुप्त हो गया। बयाजिदके मूसा नामक और एक पुत्र थे। वे महम्मदके अधीन होनेसे सुलेमान पर आक्रमण करनेके लिये महम्मदद्वारा भेजे गये। १४१० ई०में सुलेमान परास्त हुए और रास्तेमें उनका देहान्त हुआ। मुसा यूरोपमें तुर्कोंके अधिपति हुए। इस समय मूसा और महम्मदमें लड़ाई छिड़ी। करापू नदीके उत्पत्तिस्थानके समीप चामूरला क्षेत्रमें १४१३ ई०को मूसा सम्पूर्णरूपसे पराजित हुए। सुतरां महम्मद अब एकमात्र सुलतान हुए।

(१४१३-१४२१)—रूपमें, गुणमें, शौर्यमें, वीर्यमें सब तरहसे महम्मद (१म)-ने ख्याति लाभ की। चामूरला क्षेत्रसे एशिया आकर उन्होंने सेलजुकोंको अपने अपने राज्यसे भगा दिया। १४२१ ई०में वे कनस्तान्तिनोपलमें सम्राट मानुयलसे जा मिले। यहां बहुत समारोहसे सम्राट ने उनका स्वागत किया। इसी वर्ष महम्मद अपने पुत्र (२य) मुरादको राज्य सौंप कर परलोकको चल बसे।

(१४२१—१४५१)—१८वर्षमें महम्मदके तीसरे पुत्र (२य) मुराद राज्यसिंहासन पर बैठे। महम्मदको मृत्युके बाद ही मुस्तफा नामक बयाजिदके एक पुत्रने आ कर सिंहासनका दावा किया। मुरादने भिनिसके नौ-सेनापति मउरनोको सहायतासे मुस्ताफाको पराजय तथा विनष्ट किया। १४४२ई०में हङ्गेरीके राजाके साथ उनका युद्ध छिड़ा। युद्धमें बहुतसी तुरुष्क-सेना निहत हुई। अन्तमें सन्धि हो जानेसे सब गड़बड़ी जाती रही। मुराद शान्तिप्रिय थे। हङ्गेरीके साथ सन्धि हो जाने पर वे ज्ञानचर्चाके लिये पुत्र महम्मदके ऊपर राज्य भार सौंप कर आप एशियाको चले गये। किन्तु सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर हो जानेके दश सप्ताह बाद मुरादने सुना, कि हङ्गेरीकी सेना उनके राज्य पर आक्रमण करनेको आ रही है। उन्होंने बहुत जल्द सैन्य ला कर हङ्गेरीके राजाको परास्त किया। इस युद्धमें हङ्गेरी-

राज और दूसरे कईएक प्रधान सम्भ्रान्त मारे गये थे। इसके पीछे मुरादने पुनः एक बार अपने पुत्र पर राज्य भार अर्पण किया था।

(१४५१ - १४८१)—२य मुरादके पुत्र महम्मद २१ वर्षको अवस्थामें सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। इनके समयमें तुरुष्कराज्यको क्षमता और सम्पत्ति बहुत बढ़ गई थी। इन्होंने १४५३ ई०को २९ वीं मईको कनस्तान्तिनोपल, सर्भिया, पिलपनिसस, त्रिबिजन्द, काफा, क्रिमिया प्रभृति राज्य जय किये। पाश्चात्योंकी जो कुछ स्वाधीनता बची थी, त्रिबिजन्द जीतनेके बाद वह भी विलुप्त हो गई। महम्मदके पराक्रमसे यूरोपीय राजगण तक भी भीत और विचलित हो गये थे। धर्म, विज्ञान, आईन और अस्त्रशास्त्र सिखानेके लिये इन्होंने नाना स्थानोंमें विद्यालय खोले थे।

(१४८१—१५१२)—२य महम्मदकी मृत्युके बाद २य बायाजिद सिंहासन पर बैठे। किन्तु उनके भाई जेमने राज्य पानेके लिये गृहविवाद आरम्भ किया। कईएक युद्धके बाद जेम रोड्स-द्वीपको भाग गये, वहां फिर भी पकड़े जाने पर वे फ्रान्सके राजाके निकट भेजे गये। बादमें जेम पोपका आश्रय पानेके लिये रोम देशको गये। किन्तु इस बार उनकी आयु भी शेष हो गई।

इनके अलावा बायाजिदके राजत्वकालमें इजिप्ट, भिनिस, हङ्गेरी, पोलैण्ड और अष्ट्रियामें युद्ध छिड़ा। इन्हींके समयमें १४९९ ई०को सबसे पहले रूस-दूत कनस्तान्तिनोपलमें पहुंचा था। अन्तिम अवस्थामें बायाजिद अपने पुत्र सलीमके साथ युद्धविग्रहमें व्यतिव्यस्त हो गये। अन्तमें वे सलीमको राज्य अर्पण कर निश्चिन्त हुए। १५१२ ई० में उनका प्राणान्त हुआ।

(१५१२—१५२०)—सलीम बड़े निष्ठुर थे। ये बड़े ही कार्यकुशल और वीर भी थे। उनका समय तुरुष्कके इतिहासमें बहुत प्रसिद्ध है। राजा होनेके बाद ही इन्होंने अपने छोटे भाई कोरकुड और पांच भतीजोंका प्राणनाश किया। पीछे १५१३ ई० में इन्होंने अपने दूसरे भाई अहमदको परास्त कर उनका प्राणनाश किया। १५१४ ई० में पारस्यके साथ जो युद्ध हुआ, उसमें सलीमने दियारबकरको जीत कर सार्वभौमिक अधिकार किया। इसके थोड़े समय बाद ही इन्होंने आर्मेनियाके कोरासानिया तथा मूसाकके अधिपति अलाउद्दौलत् पर आक्रमण किया। अलाउद्दौलत् युद्धमें पराजित हुए। उनका विस्तीर्ण राज्य तुरुष्कके साम्राज्यभुक्त हुआ। पीछे १५१६।१७ ई०में इन्होंने इजिप्ट और सिरीया पर अधिकार किया। इस समय ये मुसलमान-समाजमें सबसे प्रधान गिने जाने लगे। मक्काके अधिवासीगणने सलीमके हाथ मक्काकी चाभी सौंप दी। सलीम एक कट्टर सुन्नी थे। विद्वेषवश इन्होंने शिया मुसलमानोंको मार डालनेकी आज्ञा दी और जो ईसाई मुसलमान धर्म स्वीकार न करेंगे उन्हें भी विनष्ट करनेकी इच्छा की, किन्तु उनके मन्त्रीने यह कह कर उन्हें रोक दिया, कि सब विधर्मी जिजियाकर दिया करते हैं, कुरानमें उन्हें विनाश करनेकी विधि नहीं है। १५२० ई०में अधिक अफीम खानेसे सलीमकी मृत्यु हुई।

(१५२०—१५६६ —सलीमके मरने पर उनके पुत्र सुलेमान राजगद्दी पर बैठे। ओसमान-वंशके राजाओंमें वे अत्यन्त प्रबल पराक्रान्त थे। राजा होनेके साथ ही दूसरे वर्ष उन्होंने बेलग्रेड और रोड्स द्वीप अधिकार किया। उसी साल वालाखियाके राजा राडूल उनकी अधीनता स्वीकार करनेको बाध्य हुए। १५२६ ई०में हङ्गेरिराज लुईने सुलेमानके विरुद्ध युद्धयात्रा कर मोहाककी लड़ाईमें प्राणत्याग किया। सुलेमानने हङ्गेरी प्रवेश कर राजधानी बुडा नगर और पीछे ट्रान्सिल्भानिया राज्य अधिकार किया। १५२८ ई०में इन्होंने जर्मनीमें प्रवेश कर भियाना नगर अवरोध किया, किन्तु ३ मास के बाद ही लौट जानेको बाध्य हुए। इसके बाद उन्होंने पारस्य देश पर धावा किया। उस समय शाह तमास्प पारस्यके राजा थे। तुरुष्कके अधीनस्थ बेदलिस राज्य शरीफ-बेगने विद्रोही हो कर पारस्यके शाहकी शरण ली थी। इसीसे पारस्यके साथ लड़ाई छिड़ी। यह युद्ध १५५४ ई० तक चला था। तुर्कोंने बोगदाद अधिकार किया, किन्तु पारस्यके विद्रोहियोंको युद्धके समयमें सहायता नहीं पहुंचाने पर सुलेमानने छीने हुए स्थान उन्हें लौटा दिये। पारस्यके युद्धके समयमें सुलेमानकी नौ-सेनाने भिनिसियोंके साथ युद्ध किया था। दक्षिण-सागरमें

वस्तुतसे द्वीप इस युद्धमें तुरुष्कके हाथ लगे। ट्रानसिलभानियाके राजा जापोलाको मृत्यु होने पर अष्ट्रियाके राजा फार्डिनण्डने हङ्गेरो अधिकार किया। १५४१ ई०में हङ्गेर जीतनेके लिये सुलेमानने सेना भेजो। १५४७ ई०में अष्ट्रियाके राजा बुडा वा ओफेन नगरके साथ हङ्गेरीका अधिकांश छोड़ देनेको बाध्य हुए। दो वर्षके बाद हङ्गेरी ले कर फिर लड़ाई छिड़ो। अन्तमें १५६२ ई०को एक सन्धि हुई, जिसमें यह स्वीकार किया गया कि समस्त हङ्गेरो राज्य तुरुष्कके अधीन हो, केवल उत्तर-हङ्गेरो राज्य अष्ट्रियाके अधिकारमें रहे और वे उसके लिए तुरुष्क-पतिको वार्षिक कर देवें। इस सन्धिसे पहले सुलेमानके दोनों पुत्र सलीम और बयाजिद् सम्राट्‌को मृत्युके बाद सिंहासनके लिए लड़ने लगे। कोने नगरमें दोनों भाइयोंका युद्ध हुआ। युद्धमें पराजित हो कर बयाजिदने अपने चार पुत्रोंके साथ ले पारस्य देशमें आश्रय लिया। सुलेमानद्वारा सलीम उत्तराधिकारी स्वीकार किये जाने पर पारस्यके राजाने बयाजिद् और उनके चारों पुत्रोंको सम्राट्के हाथ सौंप दिया। सुलेमानके आदेशसे १५६१ ई०में बयाजिद् पुत्र समेत मार डाले गये। इनके समयमें तुरुष्कको नौ-सेना खूब बलो बनी थी। नौ-सेनाके अध्यक्ष सर्वदा इटाली, रोम और अफ्रिकाके बन्दरादि पर आक्रमण किया करते और रेगियो, सोरेण्टो, बुजिया, ओरान और मेजर्का द्वीप अधिकार भो कर चुके थे। १५६०ई०में जार्वारके निकट इटली और स्पेनको एकत्र सेना तुरुष्कको नौ-सेनासे परास्त हुई। एक दूसरो तुर्की सेना लोहित-सागर, पारस्यसागर और भारतसागरमें घूमा करती और पुर्तगोजोंके साथ इस दलका सदैव युद्ध हुआ करता था। जर्वारके युद्धमें जय प्राप्त कर सुलतान सुलेमान माल्टा जीतनेको अग्रसर हुए और १६६० ई०में एक बड़ी सेना साथ ले माल्टाका अवरोध छोड़ कर हङ्गेरी युद्धमें जा पहुंचे। उस युद्धमें १६६६ ई०को स्जिगेथ अधिकार करते समय वे परलोकको चल बसे।

(१६६६—१५७४)—सुलेमानके मरणके बाद उनके पुत्र २य सलीम राजा हुए। इन्होंने राजसिंहासन पर बैठते हो जीनिसेरियोंका एक विद्रोह दमन किया और अष्ट्रियाके राजा द्वितीय म्याक्सिमिलियनके साथ सन्धि स्थापन कर १५६२ ई०की सन्धिको शर्तें रद्द कर दीं। पीछे १५७० ई०में इन्होंने अरबके अन्तर्गत येमेन प्रदेश और साइप्रस द्वीप अधिकार कर लिया। बाद १६७० ई०में स्पेनियोंसे अफ्रिकाके अन्तर्गत टिउनिस दखल किया। १५७२ ई०में तुरुष्कको ऐसी प्रबल नौ-सेना भी लेपाण्टोको लड़ाईमें अष्ट्रियाके डन-जुयनद्वारा प्रायः ध्वंस हो गई।

(१५७४—१५९५)—२य सेलिमके पुत्र ३य मुराद राजा हुए। विलदिरके युद्धमें तुरुष्कसम्राट्ने ऐरिवन, जर्जिया और दागिस्तान जय किया। क्रिमियाके खाँ इस समय रूस द्वारा आक्रान्त थे। तुरुष्कसेनापति ओसमान पाशा उनको सहायता पहुंचानेके लिए आगे बढ़े। १५८४ ई०के युद्धमें उन्होंने क्रिमिया पलटा लिया। इनके राजत्वका अन्तिम समय पारस्यके साथ लड़ाईमें बीता। ट्रानसिलभानिया, मलदोरिया, वालासिया प्रभृतिके राजाओंने इनको स्वाधीनता स्वीकार की और युरोपीय राजन्यवर्गके साथ कुछ कुछ सम्बन्ध रखा। इंगलैण्डके साथ प्रथम वाणिज्य-व्यवसायको सन्धि इन्हींके समयमें हुई थी।

(१५९५—१६०३)—तृतीय मुरादबाद उनके पुत्र महम्मद अपने १८ भ्राता और ७ गर्भवती बेगमको मार-कर राज्य सिंहासन पर बैठे। इनका समस्त राजत्व काल अष्ट्रियाके साथ युद्धमें बीता, किन्तु किसी युद्धमें ये जय अथवा पराजित न हुए। सिजिलमण्ड नामक ट्रानसिलभनियाके राजा विद्रोही हो कर पुनः उनके वशीभूत हुए और अधीनता स्वीकार की। इनके राजत्वकालमें एशियाके दिलहुसैन विद्रोही हुए थे।

(१६०३—१६१७)—तृतीय महम्मदके पुत्र प्रथम अहमद २४ वर्षको अवस्थामें राज्यसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। दिल होसेनके विद्रोहोने पारस्यके प्रबल राजा शाह अब्बासको सहायतासे और भी विषम रूप धारण किया। १६१३ ई० तक यह युद्ध होता रहा। पितामहसे जोते हुए तीनों राज्य ये पारस्यके राजाको लौटा देनेमें बाध्य हुए। अष्ट्रियाके सम्राट् द्वितीय रोडलफने अन्यान्य राजन्यवर्गके साथ मिल कर हङ्गेरी पर

आक्रमण किया। बहुतसे मुसलमान बन्दी हुए। अन्तमें १६०६ ई०को अहमदने सिटमाटोरोक नामक स्थानमें सन्धि कर ली। इस युद्धमें सुलतानने अष्ट्रिया को उसके अधिकृत उत्तर हङ्गेरीका कर छोड़ दिया। इस समय नेदारलण्डके साथ वाणिज्य स्थापित हुआ। अहमद बोयाकने इस समय एशियामें सालनय नगर नष्ट और ध्वंस किया। सुलतान स्त्री और मित्रवर्गों- के हाथ कठपुतलीसे थे इस कारण इनके समयमें तुरुष्क साम्राज्यकी अधिक क्षति हुई थी।

१६१७ ई०में इनकी मृत्यु होने पर इनके भाई प्रथम (१) मुस्तफाने ३ मास तक राज्य किया। अन्तःपुर वासियोंके षड़यन्त्रसे ये कैद कर लिये गये थे।

(१६१८—१६२२)—प्रथम अहमदके पुत्र २य ओसमान राजा हुए। ओसमानका युद्ध इनके राजत्वकाल में प्रथम और प्रधान घटना था। तुरुष्क सम्राट केवल दासोंके सिवा और दूसरी स्त्रियोंसे विवाह नहीं कर सकते थे। इन सम्राट ने यह नियम उल्लङ्घन कर प्रधान धर्मयाजकोंकी कन्याओंमेंसे तीनके साथ विवाह किया इस कारण ये प्रजाके अप्रीतिभाजन हो गये। जैनिसेर लोग विद्रोही हो उठे। उन्होंने मुफ्तीके परामर्शसे सुलतान को कैद किया और उनके कृपापात्र ऐटामेटालोंको मार डाला। प्रथम मुस्तफा कारागारसे मुक्त कर राज्याभि- षिक्त किये गये किन्तु उनके पागल हो जानेसे द्वितीय ओसमानके भाई चतुर्थ मुराद राज्यसिंहासन पर बैठे।

(१६२३—१६४०)—चतुर्थ मुराद १२ वर्षकी अवस्थामें राज्याभिषिक्त हुए। प्रथम दस वर्ष तक उनकी माता उनकी अभिभाविका थीं, पीछे वे निडर तथा कार्यदक्ष सम्राट निकले। इनके समयमें बोगदादके शाह विद्रोही हुए और बोगदाद पारस्यके अधीन हो गया। क्रिमियाके तातारोंने विद्रोही हो कर तुर्की सेनापति कपूदान पाशाको परास्त किया। प्रायः [illegible] हजार कोसाक इस समय बसफरसके किनारे लूटपाट मचाने लगे। तब जैनिसेरियोंने कातर हो कर अपनी [illegible] कान्स्टाण्टिनोपलके एक अंशमें आग लगा कर सम्राटको चेता दिया कि, 'आपको तलवारकी सहायताके बिना राज्य का भार दूर नहीं हो सकेगा।' १६३३ ई०में इस बातसे तुरुष्क सम्राट को बहुत उत्साह हुआ। अन्तःपुर स्वाधीन कर वे सैन्यको संगठनमें दत्तचित्त हुए। दो वर्षके बाद एशियाको कूच कर उन्होंने आर्जरूम एरिवन और ताब्रिजका उद्धार किया। १६३८ ई०में बोगदाद भी उद्धार किया गया। इस युद्धमें ८० हजार मनुष्योंकी जानें गई थीं। १६३९ ई०में पारस्यके साथ सन्धि हो गई, जिसमें यह स्थिर किया गया कि बोगदाद राज्य तुरुष्कके और एरिवन पारस्यके अधीन होगा। इस जयके [illegible] बाद मदिराको और कामिनीके साथ हो सम्राट की मृत्यु हुई।

(१६४०—१६४८)—चतुर्थ मुरादके बाद उनके भाई १म इब्राहिम राजा हुए। इन्होंने अपने शासनकालमें कोसाकके हाथसे आजफ जीत और वेनिसकी लड़ाईमें कानडिया अधिकार किया। राजा दिनरात भोगविलासमें ही रहते थे। जैनिसेरिके विद्रोहमें ये मारे गये।

(१६४८-१६८७)—प्रथम इब्राहिमकी मृत्युके बाद उनका सात वर्षका लड़का चतुर्थ महम्मद राज्यसिंहासन पर बैठा। १म अहमदकी स्त्री और इनकी पितामही इनकी अभिभाविका थीं। नाबालिग अवस्था में वजीरोंके फेरमें राज्यमें बहुत गड़बड़ी और क्षति हुई थी। १६४८से १६५६ ई के मध्य १८ बार प्रधान मन्त्री परिवर्त्तित हुए, अन्तमें वृद्धा सुलताना [illegible] अन्तःपुरके षड़यन्त्रसे मारी गई। १६५६ ई में महम्मद कैप्रिलोने प्रधान वजीर हो कर राज्यकी दुर्दशा दूर की। ट्रान्सिलभानियाके राजा रागोजीने अष्ट्रियाको कई एक देश दे कर सम्राट १म लियोपोल्डके साथ मैत्री स्थापन किया। तुरुष्क सेनाने बहुत से देश दखल किये। १६६४ ई०में एक युद्धमें तुरुष्क सेना पराजित हुई। बाद सन्धि हो जाने पर ट्रान्सिलभानिया और हङ्गेरीके और भी कई एक अंश अष्ट्रिया साम्राज्यभुक्त हुए। सुलतानने १६६८ ई०में कण्डिया- जीत कर इसकी क्षति पूरी की। १६७२ ई०में उन्होंने पोलण्डके बहुत अंश जय किये। १६८२ ई०को हङ्गेरीमें विद्रोह उपस्थित हुआ। उसकी सहायता देनेमें तुरुष्कके साथ अष्ट्रियाका पुनः युद्ध छिड़ा। १६८३ ई०में प्रधान वजीर कारा मुस्तफाने २ लाख सेना साथ ले भियेना नगर अवरोध किया, किन्तु काउण्ट ष्टारेम

१७७४ ई०में एक सन्धि हुई। इस सन्धिमें अजदो पाजक, क्रिमकन, कार्च बेनिकोल, बोग और निपर नदीके मध्यस्थ प्रदेश कुपसामर, कफकस तथा दार्दानेलिसमें चलाचलकि पथ मलदेविया और वालाकियाका रक्षाभार तथा तुरुष्क साम्राज्यके समस्त ग्रीकसमाज भुक्त ईसाइयोंके ऊपर रूसका प्रभुत्व फैल गया था।

क्रिमियाके यों स्वाधीन हो गये। तीन वर्ष बाद अष्ट्रियाको बुकोविना छोड़ देना पड़ा। इसके पीछे रूसके क्रिमिया ले लिये जाने पर तुरुष्कमें घमसान युद्धकी तैयारियां होने लगीं। रूसिया भी अष्ट्रियाके साथ मिल गया। १७८७ ई०में यह युद्ध आरम्भ हुआ। इस युद्धमें तुरुष्कोंने अष्ट्रियाके ऊपर अपना महत्त्व जमाया, किन्तु वे रूसियासे पराजित हो गये। इसके बाद सुलतानकी मृत्यु हुई।

(१७८९—१८०१)—इनके बाद तृतीय मुस्ताफाके पुत्र तृतीय सलीम राजा हुए। इस समय रूस और अष्ट्रियामें लड़ाई छिड़ी हुई थी। कई एक युद्धमें तुरुष्क पराजित हुए। इस युद्धमें तुरुष्क तहस नहस हो जाता, किन्तु इङ्गलैण्ड, प्रसिया और प्रोसिन इनके बीचमें पड़ गये। १७९१ ई०में सिष्टोवामें अष्ट्रियाके साथ सन्धि स्थापन हुई, जिसमें तुरुष्कने अपना खोया हुआ राज्य पुनः पाया। १७९२ ई०का जेसीमें रूसियाके साथ सन्धि हुई। तुरुष्कने क्रिमियाका दावा छोड़ दिया और निष्टर नदी दोनों राज्योंके सामाज्यमें निर्धारित हुई। इस समय बोनापार्टीने मिसर जीत कर फ्रांसके साथ युद्ध ठान दिया किन्तु इङ्गलैण्डने मिसर उद्धार कर १८०१ ई०में तुरुष्कको प्रदान किया। १८०० ई०में सुलतान सलीमने रूसिया, ग्रेटब्रिटेन और इङ्गलैण्डके साथ सन्धि कर आयोनियन द्वीपकी रक्षा की। सुलतान सलीमने इस समय युरोपीय सैन्यगठन तथा दीवानी परिवर्तन की। इनमेंसे इङ्गलैण्ड और रूसियाके बीच प्रतिद्वन्द्विता उत्पन्न हुई। फ्रांसीसियोंकी उत्तेजनासे रूस और तुरुष्कमें १८०६ ई०को लड़ाई छिड़ी। इङ्गलैण्डने तुरुष्कका सहायता की। इस दार्दानेलिसके किनारे अग्रसर होने लगा। जेनेसरि और सुफ तिमें मिल कर सुलतानको राज्यच्युत और कैद किया।

(१८०७—८)—इनके बाद प्रथम अबदुल हामिदके पुत्र मुस्ताफा राजा हुए। इन्होंने तृतीय सलीमको संस्कारविधि परित्यागपूर्वक प्राचीन प्रथा अवलम्बन करके विद्रोह दमन किया। इससे तुरुष्कको सैन्य पराजित हुई। रुश्चुक पाशाके अध्यक्ष पाशा मुस्ताफा बैरक्तरने सेना लेकर सुलतानको राज्यच्युत करना चाहा। कारागार तृतीय सलीमको इस विद्रोहका मूल समझ कर सुलतान मुस्ताफाने उन्हें मार डालनेकी आज्ञा दी; किन्तु वे भी बहुत जल्द पापासे राज्यच्युत हुए।

(१८०८—३९)—इनके बाद इनके भाई द्वितीय महमूद राजा हुए। इन्होंने सुलतान तृतीय सलीमको कारागारसे मुक्त किया। वे इन्हींके मतानुसार राज्य करने लगे। पश्चिमी युरोपीय पाश्चात्य राज्योंके साथ मेल ता वाजनेसे तुरुष्कमें जिस तरह संस्कारको आवश्यकता होगी, वह सुलतान नये सुलतानको उन्होंके विषयमें उपदेश देने लगे। पाशा मुस्ताफा प्रधान वजीर हुए। संस्कारविधि अवलम्बन कर जेनिसेरी पुनः विद्रोही हुए। विद्रोहियोंने सराय पर आक्रमण किया। राज्यकी रक्षाके लिये प्रधान वजीरने राज्यच्युत-सुलतान चतुर्थ मुस्ताफाको मार डाला और आप भी जेनिसेरियोंके गुर्जमें पड़ कर मृत्युको प्राप्त हुए। सुलतान द्वितीय महमूदने जनसाधारणका च ख़बर बतला कर प्राण पाया। इन्होंने भी अपना सिंहासन निष्कण्टक करनेके लिये चतुर्थ मुस्ताफाके शिशुपुत्रको मरवा डाला। जेनिसेरियोंकी इच्छानुसार इन्होंने संस्कार-प्रथा परित्याग की। वे इङ्गलैण्डके साथ सन्धि करके रूसियाके साथ लड़ने लगे। इस समय सर्वियाके अधीनराज्य स्वाधीन हो गये। अन्तः उनको बाध्य हो कर १८१२ ई०को बुखारेस्टमें रूसियाके साथ सन्धि करनी पड़ी। प्रथ और बेसारेबियाके पूर्वस्थ समस्त देश विशेषकर क्रूक च प और दानियुबका मुहाना रूसियाको देने पड़े। ग्रीकोंने इस समय स्वाधीनता अवलम्बन कर तुरुष्कको सम्मुख रूपसे प्रतिद्वन्द्वी बना दिया। बहुतसे युरोपीय राज्य ग्रीकके पक्षमें आ गये। इङ्गलैण्ड फ्रांस और रूसियाको सेनाने मिल कर १८२७ ई०को नावारिनोके युद्धमें तुरुष्कको सेनाको अच्छी तरह तहस-नहस कर डाला। इस युद्धमें

बाद ग्रीस सम्पूर्ण रूपसे स्वाधीन हो गया। बवेरिया-राजवंशके उथो प्रथम राजा हुए।

१८०२ ई०को बाद विद्रोहोंको दमन करते समय इन्होंने अपना प्रिय पत्नी और श्रेष्ठ राजपुरुषोंको खोते हुए भी मह्मुद जैन्सीरियोंका मूलोच्छेद किया। ऐसा होनेसे तुरुष्कमें नवयुगका सूत्रपात हुआ। मलदेविया और वालाचिया ले कर बहुत दिनोंसे रूसके साथ झगड़ा चल रहा था। १८२६ ई०में श्राक-वार्मानकी सन्धिके अनुसार सब गड़बड़ी दूर हो गई। इस समय मह्मुदने दलबल बहुत बढ़ा लिया। तब भी ग्रोबदा विवाद चल रहा था। यूरोपीय राजगण ग्रीकको स्वाधीनताके पक्षपाती थे। मह्मुद यूरोपीय राजाओंका युद्धको दे कर ग्रीसमें मुसलमान-अधिकार स्थायी करनेके लिये विशेष यत्नवान् हुए। १८२६ ई०में रूसके साथ सन्धि की गई। रूसके सेनापति डिविसने (Dieb t-ch मामला नामक स्थानमें तुर्कमेनियोंको पराजय कर यड्रियानापल अधिकार किया। इस समय पास्किविच नामक एक दूसरे रूस-सेनापतिने आरजरुम पर आक्रमण किया। मह्मुदने आड्रियानोपलमें १८२८ ई०को रूसके साथ सन्धि स्थापन की, जिससे ग्रीसराज्य निर्विवाद स्वाधीन हो गया। मलदेविया और वालाचियाने स्वाधीन शासन शक्ति लाभ की। इसके सिवा और कई एक देश रूसके अधिकारमें आ गये। १८३१ ई०में सुलतानने इजिप्टके पाशा महम्मद अली पर धावा किया, किन्तु इस युद्धमें सुलतानकी सैन्य हो परास्त हुई। इसके दूसरे वर्ष इब्राहिम पाशा कनस्तान्तिनोपल-से ६५ कोस दूर कुटाया नामक स्थान तक अग्रसर हुए थे। १८३३ ई०में एक सन्धि की गई, जिससे मुहम्मद अलीने समस्त सिरीया-राज्य तथा इब्राहिम पाशाने आदन का कर्तृत्व पाया। इस समय विजयी इब्राहिम पाशाके हाथसे कनस्तान्तिनोपल बचानेके लिये रूस-सम्राट् निकोलसने जलपथसे एक सैन्य-दल भेजा। इसी कारण १८३३ ई०को आड्रियार स्कोलेसिसमें एक सन्धि हुई, जिसमें यह स्थिर हुआ कि रूसका कोई विपक्ष दार्दनेलिस पार कर न सकेगा। १८३५ ई०में तुरुष्कको नौसेनाने त्रिपली अधिकार किया। इसके बाद सुलतान मह्मुदने महम्मद अलीको दमन करनेके लिये पुनः नयी लड़ाई आरम्भ कर दी; किन्तु १८३८ ई०को २४वीं जूनको इब्राहिम पाशाके निकट तुरुष्कको सेना सम्पूर्ण रूपसे पराजित हुई। उसके कुछ दिनके बाद ही मह्मूद की मृत्यु हुई।

२य मह्मूदके पुत्र अबदुल मेजिद १६ वर्षकी अवस्थामें राज्य सिंहासन पर बैठे। इस समय नेजिब-युद्धमें पराजय, कपुदान पाशाकी विश्वासघातकतासे महम्मदअलीके नौ-सेना-दलका नाश तथा विजयी इब्राहिम पाशाके आगमनसे मानों तुरुष्क-साम्राज्य विलुप्तप्राय हो गया था। इस सङ्कटके समय सुलतानने अंग्रेजोंके साथ (लण्डनमें १८४० ई०को १५ वीं जुलाई-को) एक सन्धि स्थापन की। सन्धिके अनुसार एक दल अंग्रेजी और फ्रांसीसी नौसेनाने आकर एकर, सिडन, और सिरीयाके उपकूलवर्ती कई एक नगर अधिकार किये। इब्राहिम पाशाने उक्त स्थान बाध्य हो कर छोड़ दिये। शीघ्र ही शान्ति विराजने लगी। महम्मद अली वार्षिक कर दे कर पुरुषानुक्रमसे पाशा हो कर रहने लगे।

इस समय तुरुष्कके थोड़े मुसलमानोंने उत्पात मचाना आरम्भ कर दिया उन्होंने सोचा 'इस बार ऐसा मालूम पड़ता है कि सभी ईसाईका अनुकरण करेंगे, पहलेकी रीति-नीति जाती रहेगी। सुतरां इसलाम-धर्मकी अवनति होगी।' ऐसा जान कर उन्होंने अस्त्र धारण किया। रशीद पाशाने सबके सामने यह प्रचार किया, कि सुलतानके अधीन प्रजाके मध्य सभी धर्मके मनुष्य एक दृष्टिसे देखे जायेंगे। सब कोई समानभाव-से अपना-अपना धर्म पालन कर सकते हैं, विधर्मियोंके ऊपर अन्याय करके किसी प्रकारका कर नहीं लिया जा सकता है; किन्तु यह प्रस्ताव तुरुष्कके दृढ़ धर्मोरउमराओंको अच्छा न लगा। अतः वे सबके सब असन्तोष प्रकाश करने लगे। इधर यूरोपीय तुरुष्कमें बहुतसी ईसाई-प्रजा वास करती थी। वे भी अभी सुविधा पा कर अपना स्वार्थसंरक्षणके लिये रूस-राजके हाथमें राज्य समर्पण करनेको प्रस्तुत हुए। इधर फ्रांस, अष्ट्रिया और इङ्गलैण्डके राजदूतगण तुरुष्कका

समयमें यूरोप खोज रहे थे ; किन्तु इस समय बुद्धिमान् सुलतानने निरपेक्ष आइन प्रचार कर ईसाई प्रजाको शान्त किया। यथार्थमें अभी भी यूरोपीयगण अब्दुल मेजिदको अनुपम-प्रकृतिकी बड़ाई किया करते हैं। १८४८ ई०में कई हंगेरीके प्रधान राजपुरुषोंने आ कर सुलतानका आश्रय ग्रहण किया। अष्ट्रिया और रूस सम्राट्ने उन्हें पकड़वा देनेका अनुरोध किया। किन्तु सुलतानने धर्मके पक्षपातको उपेक्षा करते हुए कहा "आश्रित मनुष्योंको रक्षा करना ही हम लोगोंका जातीयधर्म है। प्राण विसर्जन करते हुए भी हम लोग जातीय धर्मको रक्षा किया करते हैं।"

पहले रूसके साथ तुरुष्कको कई एक सन्धि हुई थी सही किन्तु उनमें रूसका ही स्वार्थ भरपूर था। रूस बराबर तुरुष्कके ऊपर तीव्र दृष्टि रखा करते थे।

तुरुष्कके ग्रीक-समाजभुक्त ईसाइयोंने सुलतानके विरुद्ध रूस-राजके निकट अभियोग किया। जारने पूर्व सन्धिपत्रके विरुद्ध सब काम काज कर तुरुष्कके आभ्यन्तरिक व्यापारमें हस्तक्षेप किया। रूसने आगे बढ़ कर मलदेविया और वालाकिया अधिकार कर लिया। तब सुलतान भी निश्चिन्त न रह सके। उनके सेनापति उमार पाशाने बलकान और दानियुब नदी तीरस्थ दुर्ग अधिकार कर लिये। इधर फ्रांसीसी और अंग्रेजी-सेनाने बेसिक उपसागरमें आ कर लङ्गर डाला। अक्टूबर मासमें तुरुष्कने रूसके विरुद्ध युद्ध-घोषणा कर दी और अंग्रेज तथा फ्रांसीसियोंको मदद देनेके लिये बुलाया।

आर्मेनियामें दोनों दलमें कई बार युद्ध हुए, प्रति युद्धमें ही रूससैन्य हारने लगी। नवम्बर मासमें रूसकी नौ-सेनाने सिनोप-बन्दरमें निवास कर सिनूपके पास पर तुर्कीके कुछ जहाजोंको नष्ट किया। पीछे १८५४ ई०में रूससैन्यने दानियुब नदी पार कर दोबरुचाके दुर्गों पर आक्रमण किया। इस समय अर्मेनिया-प्रान्तमें लड़ाई छिड़ी हुई थी। १९ जूनको रूसगण अशेष चेष्टा और बहुतसी सैन्य नष्ट करनेके बाद सिलिस्ट्रिया पर आक्रमण कर लौट रहे थे। तुर्की-सेनाने भी दानियुब पार कर रूससैन्यका पीछा किया। गिउरगीवो नामक स्थानमें रूस-सेना पराजित हुई। इस देशमें अष्ट्रियाकी सेनाने तुरुष्कके अधिकारभुक्त जो सब देश दखल किये थे, उन्हें भी अभी छोड़ दिये। इसी बीचमें अङ्गरेज और फ्रांसीसीके जहाजोंने कृष्णसागरमें प्रवेश कर ओडेसा नगरके ऊपर गोला बरसाने लगे। रूसके जहाजोंने आ कर सिवास्टोपोल बन्दरमें आश्रय लिया था। १८५४ ई०को १४वीं सितम्बरको मार्शल सेण्ट आर्णड और लार्ड रागलेनके अधीनमें अंग्रेजों और फ्रांसीसी सेना क्रिमिया प्रदेशमें उतरी। इस समय जो भीषण युद्ध हुए थे, वे ही यूरोपीय इतिहासमें 'क्रिमिया-समर' के नामसे प्रसिद्ध है।

२०वीं सितम्बरको आलमामें युद्ध हुआ। कुमार मेन्शिकफके अधीन रूसकी सेना सम्पूर्ण रूपसे पराजित हुई। बहुत थोड़े ही अंग्रेजों और फ्रांसीसी सेनाने आ कर बालाक्लावा और कामिश बन्दर अधिकार किया। २६वीं सितम्बरको वे सिवास्टोपोलका दक्षिणांश दखल कर बैठे। इस समय कठिन शीतसे सिवास्टोपोलके ऊपर अंग्रेजों और फ्रांसीसी सैन्यको तुरुष्क राज्यकी रक्षाके लिये जो कष्ट भुगतना पड़ा था वह अकथनीय है। भीतर और बाहर महाममयासे रूससैन्य उन्हें घेरे हुए है, रूस अपना गौरव बचानेके लिये प्राण पणसे चेष्टा कर रहा है। किन्तु उसके सामने मुट्ठी भर फ्रांसीसी और अंग्रेजी सेनाने तुर्क सेनाकी सहायतासे रूसका वह विपुल गौरव मट्टीमें मिला दिया। उसका काम यथार्थमें अत्यन्त प्रशंसनीय था। इस समय तुर्क सेनापति उमार पाशाने भी जिस तरह बुद्धिमत्ता और विचक्षणताका परिचय देते हुए रूसियोंको बार बार पराजय किया था वह तुरुष्कके पक्षमें महागौरवका विषय था, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। अन्तमें फ्रांसकी राजधानी पेरिस नगरमें सन्धि हो जानेसे सब झगड़ा मिट गई। तुरुष्कपतिने मलदेविया और बेसराबियाके समुद्रवर्ती नदीके मुहाने तक समस्त देश तथा निस्तार और दानियुब नदीके उत्तरांश कई एक प्रदेश लौटा पाये।

१८६१ ई०में अब्दुल अजीज सिंहासन पर बैठे।

इनके समयमें मोण्टनिग्रो तुरुष्कके अधीन राज्यरूपमें गिना जाने लगा। १८७६ ई०में अबदुल हमीद (२य) राज्यसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। इन्हींके समयमें विख्यात रूस और तुरुष्कका युद्ध आरम्भ हुआ था। रूसने अपना नष्ट-गौरव पुनरुद्धार करनेके लिये इस बार भीमबलसे तुरुष्क पर आक्रमण किया। बारबार रूसको जय होने लगी। अन्तमें तुरुष्कराजने १८७८ ई०में रूसको बटम, कारस और आर्डाहन छोड़ दिये। वे रूसका युद्धव्यय ३२ करोड़ रुपये देनेको राजी हुए और उसीके अनुसार उन्हें प्रति वर्ष ३१८१८० रुपये रूस गवर्मेण्टको देने पड़ते थे।

तुरुष्क-राज्य पहले बहुत विस्तृत होने पर भी अभी इसका भूपरिमाण ६६५०० वर्गमील और लोकसंख्या लगभग ४६६८००० है।

बीसवीं शताब्दीमें तुरुष्क—उन्नीसवीं शताब्दीके शेष भागसे ही तुरुष्कमें नव जागरणकी आवाजें उठी थीं। तुरुष्कके युवक-सम्प्रदायने युरोपीयोंके समक्ष यह प्रमाणित करना चाहा 'कि तुरुष्क बिलकुल मरा हुआ नहीं है—उसमें अब भी प्राण हैं।' अबदुल हमीदके शासनकालमें "नव्य तुर्की-सम्प्रदाय" नामसे तुरुष्कमें युवकोंकी एक संस्था स्थापित हुई थी। इन लोगोंका उद्देश्य था, कि अबदुल हमीदका उच्छेद कर तुर्कीका नवीन रीतिसे संगठन किया जाय पहले उन लोगोंने तुर्कीके सैन्यदलको वशमें किया। फिर १९०८ ई०को २२वीं जुलाईको नियाजिबके अधिनायकत्वमें तत्कालीन तुर्की-गवर्मेण्टके विरुद्ध इन लोगोंने विद्रोहकी घोषणा की। मनष्टि और अखिदाके मध्यपथमें रेजना नगरमें ही प्रथम विद्रोह शुरू हुआ। इस आकस्मिक घटनासे रूस और इंग्लैण्डने फिर तुर्कीके बीच हस्तक्षेप करनेका साहस न किया। दूसरे दिन आनोयार-वेके सभापतित्वमें सैलनिकाकी 'ऐक्य और उन्नति-सम्मति की तरफसे नवीन राजतन्त्रकी घोषणा हुई। उन लोगोंने सुलतानसे उक्त घोषणा मान्य करनेके लिए अनुरोध करते हुए यह भी सूचित किया, कि यदि शीघ्र ही उन लोगोंके प्रस्ताव पर सुलतान सम्मति न देंगे, तो दो और तीन नम्बर सेना कनष्टण्टिनोपल अधिकार करनेके लिये अग्रसर होगी। कुछ भी हो, २८ तारीखको अब्दुल हमीदने उन लोगोंके इस प्रस्तावको स्वीकार कर घोषणापत्रके द्वारा पूर्वतन १८७६के राजतन्त्रको माननेकी प्रतिज्ञा की। यद्यपि इस विद्रोहको सम्पूर्ण सफल नहीं कहा जा सकता, तथापि इससे सुलतानका स्वेच्छाचार बहुत कुछ प्रशमित हुआ तारीख ६ अगस्तको ग्रीक, आर्मेनियन, शेख उल इसलाम आदि समस्त सम्प्रदायके प्रतिनिधियोंको ले कर एक नवीन 'कबिनेट' (मन्त्रिसभा) संगठित हुआ।

परन्तु नव्यतुर्की दलकी विजय अधिक दिन तक निष्कण्टक न रही। सुलतानके अनुचरगण अपनी पूर्वक्षमता प्राप्त करनेके लिए भरसक कोशिश करने लगे। इसलिए नव्यतुर्कीदलने अबदुल हमीदको सिंहासनसे उतार दिया और उनके कनिष्ठ भ्राता महम्मद रेशाद एफान्दोको सुलतान पद प्रदान किया; परन्तु अबसे वास्तवमें नव्यतुर्कीदलके ख्यातनामा नेता आनोयार वे ही समग्र तुर्कीका शासन करने लगे।

इस समय मुस्तफा कमाल पाशाने इच्छानुसार सैन्यसंस्कार किया। उनके आदेशसे असंलग्न सैनिकोंमें संघबद्धभावसे आधुनिक समर-विधानुमोदित तुर्की सेनाके लिए उपयोगी कूच-कवाजोंका प्रचलन हुआ। वे पहलेसे ही सेनाकी युद्धोत्साहितकी ओर दृष्टि रखते थे। नव्य-तुर्की-विप्लवके प्रथम वर्षमें उन्होंने सैलोनिकामें सैन्यपरिचालनमें अपना कृतित्व दिखा कर तत्कालीन प्रवीण तुर्की-सेनापतियोंको विस्मित कर दिया। १९१० ई०में कमाल पाशा समर-सचिवकी अनुमति अनुसार फ्रान्स गये और पिकार्डिमें उन्होंने कौशलपूर्ण परिचालना द्वारा फ्रान्सको सहायता पहुंचाई। यहीं उन्हें फरासीसी जातिके आचार-व्यवहार और सेनाकी युद्धनीतिके साथ विशेषरूपसे परिचित होनेका सुयोग प्राप्त हुआ था।

बलकानके युद्धमें तुर्कीको बड़ी विपत्तिमें पड़ना पड़ा था, परन्तु अनोयार और कमाल पाशाने इस विपत्तिसे तुर्कीकी रक्षा की थी। बुलगेरियाके हाथसे आड्रियानोपलने तुर्कीको छीन लिया।

१९१४ ई०के अगस्त महीनेमें युरोपमें महायुद्धका सूत्रपात हुआ। तुर्कीके साथ इस युद्धका कुछ भी सम्बन्ध न

था, परन्तु धुरन्धर जर्मनोंने झूठ-मीठी बातसे सुनम्र तुर्कों को भी इस युद्धमें घसीट लिया। जर्मनोंकी तरफसे तुरुष्कके युद्धक्षेत्रमें अवतीर्ण होनेमें कमाल पाशाका बिलकुल विरुद्ध मत था। परन्तु जब युद्धकी घोषणा हुई, तब उन्होंने भी संग्राममें योग दिया। कुछ दिन बाद मित्र-सेनाने कनस्टाण्टिनोपलकी ओर अग्रसर होनेकी चेष्टा की। इससे प्रधान सेनापति विचलित हो उठे, परन्तु निर्भीक कमाल पाशाने उस समय प्रस्ताव किया कि 'मुझे युद्ध-परिचालनका भार दिया जाय।' उन्होंने अपने ऊपर भार ले कर अंग्रेजी सेनाको गल्लीपोलीमें इस तरह परास्त किया, कि समस्त जगत् उस असाधारण घटनाको देख कर दंग हो गया। इसमें सन्देह नहीं कि उनकी इस विजयसे ही तुर्की-साम्राज्य निश्चित ध्वंसके हाथसे बच गया। इसके बाद जर्मनोंने षड्यन्त्र कर बारम्बार वीर कमाल पाशाको नाना विपदोंमें डालनेका प्रयत्न किया था।

परन्तु शीघ्र ही पुनः तुरुष्कके जीवन-मरणकी समस्या उपस्थित हुई। कमाल पाशा कोशिश करने पर भी कुछ न कर सके। जर्मन लोग बोगदादमें पराजित हो गये। १९१८ ई०में जब महायुद्धका अवसान हुआ तब (३० अक्टूबरको) आर्मिस्टिसकी सन्धिके अनुसार बड़े मान-सम्मानसे एक मित्र-शक्तिके समक्ष सम्पूर्ण रूपसे आत्म-समर्पण करनेके लिए बाध्य हुई। कनस्टाण्टिनोपल इस समय मित्रशक्तिके अधिकारमें था। पेरा और गालाटामें अंग्रेजी सेनाने तथा इटालियनोंने अदालोमें सेनाने शिविर सन्निवेश किया था। सुलतान उस समय अंग्रेजोंके यहाँ नजरबन्द थे। आर्मिस्टिसके समयसे ही मातृभूमिकी रक्षाके लिये तुर्कोंमें सर्वत्र ऐसे छोटे छोटे दलोंका संगठन हो रहा था। कमाल पाशाने उन्हीं छोटे छोटे दलोंको एक कर जातीय सङ्घका रूप दे दिया। इसी समय ग्रीसने स्मरना अधिकार कर लिया। स्मरना तुर्कियोंका एक सर्वश्रेष्ठ वाणिज्य-केन्द्र था। कमाल पाशा अंग्रेज और ग्रीक सेनाको बाधा देनेके लिए अग्रसर हुए। तुर्कियोंने ग्रीक सेनाकी उपस्थितिमें ही पश्चिम-आनातोलिया पर कब्जा कर लिया। पश्चात् प्रायः १५ सौ सवारोंकी सेनाको देख कर ही चालीस हजार ग्रीक सैनिकोंका प्रबल दल समस्त कर डरके मारे ग्राम छोड़ कर भाग गये।

१९१९ ई०के अक्टूबर मासमें एशिया माइनरके दो भागोंमें युद्ध आरम्भ हुआ था। एक स्मरना और पश्चिमका अंश था (अंग्रेजोंकी सहायतासे ग्रीक लोग इसी तरफ थे) और दूसरा बोगदादका अंश जहाँ ब्रिटिश-सेना उपस्थित थी। तुर्कोंका जातीय सङ्घ इन दोनों दलोंके साथ अद्भुत वीरता और सतर्कताके साथ युद्ध करनेके लिए अग्रसर हो रहा था। कमाल पाशा इस समय तुर्कीजातिके अन्दर आत्मविश्वास लानेके लिए भी चेष्टा कर रहे थे। उन्हींके निर्देशानुसार तुर्कोंकी राष्ट्रीय महासभा परिचालित होती थी। उन्होंने अङ्गोरामें एक महासभा कर उसमें कुछ जातीय शर्तें निर्धारित की थीं। जो नीचे लिखी जाती हैं —

१। जिन प्रान्तोंमें अरबवासियोंकी संख्या अधिक है, उन प्रान्तोंसे तुर्कोंका दावा उठा लिया जायगा, परन्तु तुर्कोंके अधिकृत अंश एक राष्ट्र एकत्र [illegible] और एक धर्मकी समष्टि समझी जायगी।

२। पश्चिम थ्रेसके अधिवासिगण अपने देशकी इतिकर्तव्यताके सम्बन्धमें विचार कर सकेंगे। परन्तु पूर्व थ्रेसके विषयमें कोई भी मध्यस्थता न मानी जायगी।

३। अवश्य यदि युद्धमें नवीन क्षुद्रराज्योंके लिए जितनी भी शर्तें कायम की हैं वे मान्य होंगी।

४। कनस्टेण्टिनोपल और समुद्र-घाटियों (प्रणालियों)-को बिना शर्तके तुर्कियोंको दे देना पड़ेगा। हाँ, वाणिज्यके सुभीतेके लिए आपसमें स्थिर मति सन्धिका व्यवहार सब मान्य होगा।

५। राष्ट्रीय आर्थिक और विचार सम्बन्धीय समस्त कार्योंमें तुर्कोंकी स्वाधीनताको मानना पड़ेगा। अन्य राष्ट्रोंमें भी समझना चाहिए कि तुर्कोंके सिवा अन्यान्य देशोंसे तुरुष्कको जितना भी ऋण है, उनको [illegible] देना होगा।

इसी बीचमें सुलतानने सेवर्सकी सन्धि स्वीकार कर ली जिससे जातीय दल अत्यन्त क्षुब्ध हो गया। १९२१ ई०को जनवरीमें ग्रीक सेना युद्ध-यात्राके लिए प्रस्तुत हुई। कमाल पाशाने उन्हें पद पद पर बाधा पहुंचाई

जिससे ग्रीकोंको बड़ी मुसीबत झेलनी पड़ी। उनके बहुतसे देश हस्तच्युत हो गये। इस युद्धके कारण जातीय दलकी शक्ति और भी बढ़ गई। तीन महीने के भीतर ग्रीक लोग तुर्कीसे निकाल भगाये गये।

ग्रीकोंके भगाये जाने और स्मरनाके जातीय दलके अधिकारमें आ जानेसे एशिया-माइनरमें कमाल पाशाका प्रभुत्व अविसंवादी हो गया था। इस समयसे ले कर सुलतान महम्मद अलीके भागने तक जिस फुरतीके साथ कमाल पाशाने समस्त प्रकार राष्ट्रीय प्रचेष्टाएं की थीं, वह यथार्थमें प्रशंसनीय है। उन्होंने शीघ्र ही थ्रेस और कनष्टेण्टिनोपल अधिकार करनेके लिए डार्डानेलिस प्रणाली (समुद्रसंकट)-की ओर सेना भेजी। सेभर्सकी सन्धिके अनुसार तुर्कीका कोई कोई स्थान मित्रशक्तिके हाथ लग गया था। उन स्थानोंका नाम था निर्द्दन्द्व स्थान इन स्थानोंमें तुर्कियोंको प्रवेश करनेका अधिकार न था। परन्तु अपनी शक्ति पर भरोसा रखनेवाले विजयी कमाल पाशा सेना-सहित बल-पूर्वक उधर अग्रसर हुए जिससे यूरोपीय राष्ट्र-समूह अत्यन्त चञ्चल हो उठे। फरासीसी और इटलीसेनाका वहां रहना अनावश्यक समझ वह पहलेसेही वहांसे हटा ली गई थी। मात्र थोड़े से अंग्रेज सैनिक कुछ अंगरेजजहाजोंके साथ, तुर्कीको स्वार्थ-रक्षाके बहानेसे वहां पहरा दे रहे थे। कमाल पाशाको इस विजयसे इङ्गलैण्डको तमाम कूट-कल्पनाएं नष्ट होती देख, ब्रटिश-मन्त्रियोंको भीतरी चोट पहुंचा। उन लोगोंने तुर्कीका अपवाद उड़ाया कि तुर्कियोंने ग्रीकों पर अमानुषिक अत्याचार किया है तथा यूरोप और अमेरिकाकी समस्त सहानुभूति पानेके लिए कोशिश भी की; परन्तु 'फरासीसी अनुसन्धान-समिति'से प्रमाणित हुआ कि तुर्की द्वारा अत्याचार किये जानेकी अफवाह बिलकुल झूठी है।

इसी बीचमें जातीय पदातिक और अश्वारोही सेना चालकके पास पहुंच गई थी। कमाल पाशाने भी 'थ्रेस और कनष्टेण्टिनोपल अधिकार करेंगे' ऐसी घोषणा कर दी। मध्य थ्रेस पर आक्रमण करनेके लिए भी तुर्की-सेना तैयार हो गई। लायड जार्जने अब चुप रहना उचित न समझा। इंग्लैण्ड तुर्कीके विरुद्ध युद्ध करनेके लिए तैयार हुआ, परन्तु फ्रान्स और इटलीने साफ कह दिया कि हम इसमें सहायता न देंगे। इधर रूसकी सोवियेट-गवर्नमेण्ट तुर्कीको न्याय्य हक दिलानेमें सहायक हुई। फिर एक महायुद्धकी आशङ्कासे सब चिन्तित हो उठे। अन्तमें मित्र-शक्तिके अनुरोधसे कमाल पाशाने 'निर्द्दन्द्वप्रदेश पर आक्रमण नहीं करेंगे' ऐसा प्रकट किया। आखिर एङ्गोरा (तुर्की)-गवर्नमेण्टकी स्वाधीनता संपूर्ण शक्तियोंके द्वारा स्वीकृत हुई। फिलहाल कमाल पाशा ही तुर्कीके सुलतान और अंग्रेजोंके द्वैतशासनका अवसान कर एङ्गोरा-गवर्नमेण्टकी स्वाधीनतासे चला रहे हैं।

तुरुष्क गोड़—तुरंगगोड़ देखो।

तुरुही (हिं० स्त्री०) तुरही देखो।

तुरैया (हिं० स्त्री०) तुरही देखो।

तुर्क (हिं० पु०) १ तुर्किस्तानका निवासी। २ तुरुष्कका निवासी, तुर्कीका रहनेवाला।

तुर्कमान (फा० पु०) तूतुर्क जातिका मनुष्य। २ तुर्की घोड़ा जो बहुत बलिष्ठ और साहसी होता है।

तुर्कसवार (फा० पु०) एक विशेष प्रकारका सवार।

तुर्किन (फा० स्त्री०) १ तुर्क जातिकी स्त्री। २ तुर्ककी स्त्री।

तुर्किनी (हिं० स्त्री०) तुर्किन देखो।

तुर्की (फा० वि०) १ तुर्किस्तानका। (स्त्री०) २ तुर्किस्तानकी भाषा। ३ तुर्किस्तानका घोड़ा। ४ तुर्कीकी ऐंठ, अकड़, गर्व।

तुर्घर खां—एक मुगल-सर्दार। १३०३ ई०में अला-उद्दीन जब चितोर-आक्रमण करने गये थे, तब तुर्घर खांने भारतवर्ष लूटनेकी तैयारियां की थीं। १२०००० अश्वारोही सेना ले कर दिल्लीके समीप जमुनाके किनारे आ कर इन्होंने पड़ाव डाला था। अलाउद्दीनको पहले ही मालूम हो गया था, वे शीघ्र ही राजधानीमें लौट आये। यद्यपि अलाउद्दीन तुर्घर खांसे पहले ही राजधानीमें पहुंच गये थे, तथापि वे सेनाको रास्तामें छोड़ आनेके कारण अग्रसर हो कर तुर्घरसे युद्ध न कर सके, सिर्फ दिल्लीके उपकण्ठके बाहर परिखा खुदवा कर दो महीने तक बैठे रहे। मुगलोंने बाहर रह

कर शहरमें रसद भेजना बन्द कर दिया और नगरके उपकण्ठमें लूट मचाने लगी। १९०४ ई०में एक तुर्कमान नाम फकीरके किये आक्रमणसे त्रासित होकर ये मुगल लोग सब छल कर गये और पश्चात्‌की विरासतको छोड़ कर भाग गये। तुर्क रसको इतने डर गये थे, कि वह पहले तक उन्होंने रास्तेमें कहीं भी पड़ाव न डाला था।

तुर्फरी (स० त्रि०) हन्ता, हिंसाकारी, शत्रु-घाती। हन्ता, यह कुशका मारनेवाला भाला जो सामने पोथी नोककी ओर होता है।

तुर्फरीतु (स० त्रि०) हन-फरीतु पृषोदरादित्वात् साधुः। हन्ता। तुर्फरी देखो।

तुर्य (स० त्रि०) चतुर्णां पूरणः चतुर यत् च आद्यच लोपः। चतुर्थ, चौथा।

तुर्यमौक (स० पु०) भावप्रकाशोक्त यज्ञभेद समय जाननेका एक यन्त्र।

तुर्यवाह (स० पु०) तुर्य चतुर्वर्षं वहति वह-ण्वि। चार वर्षका पशु।

तुर्या (स० स्त्री०) तुरीय ज्ञान, वह ज्ञान जिससे मुक्ति हो जाती है।

तुर्यायण (स० पु०) चतुर्थायण, षड्भावात्मक।

तुर्रा (अ० पु०) १ घुँघुराले बालों की लट जो माथे पर हो। २ कलगी सोमजाता। ३ पगड़ीके ऊपर लगाने का बादलेका गुच्छा। ४ फूलोंकी लड़ियोंका गुच्छा। यह दूल्हेके कानके पास लटकता रहता है। ५ टोपी आदिमें लगा हुआ फुंदना। ६ पक्षियोंकी चोटी, शिखा। ७ हाशिया, किनारा। ८ मकानका छज्जा। ९ करघारके कुर्मांचिय नामका फूल। १० चाबुक, कोड़ा। ११ गाठ या भौं च हुन लम्बी एक प्रकारकी बुलबुल। चाइकी ऋतुमें यह भारतवर्षके पूर्वीय भागोंमें रहती है। यह करमियोंमें चीन और साइबेरियाको चली जाती है। १२ एक प्रकारका बटेर, लुबको। (वि०) १३ अद्भुत अनोखा।

तुर्वणि (स० त्रि०) तूर्य बाहुर्ये वस् सम्भवे वन् पृषो दरादित्वात् साधुः। तूर्णं भक्ता।

तुर्वन्द (अ० स्त्री०) मसूड़ा छिदना, दुखनेका आरम्भ।

तुर्वश (स० पु०) सुप्रसिद्ध एक राजाका नाम। ये ययातिके पुत्र थे। यहां तक सम्भव है ये ही तुर्वसु नामसे सुप्रसिद्ध हैं।

तुर्वशे (स० अव्य०) अन्तिक, निकट, पास।

तुर्वसु (स० पु०) ययाति राजाके एक पुत्रका नाम। ययातिके औरस और देवयानीके गर्भसे इनका जन्म हुआ था। एक दिन ययातिने इन्हें बुला कर कहा—"पुत्र! विषय भोगों से मुझे अभी तक तृप्ति नहीं हुई है, इसलिए मैं तुमसे यौवन चाहता हूं। हजार वर्ष तुम्हारे यौवनका उपभोग कर मैं उसे फिर तुम्हें वापस कर दूंगा।" तुर्वसुने उत्तर दिया—"पिता! मैं बुढ़ापा लेनेको तैयार नहीं हूं।"

"न कामये जरां तात! कामभोगप्रणाशिनीं।
बलरूपान्तकरणीं बुद्धिप्राणप्रणाशिनीं॥" (भारत आ०)

ययाति पुत्रका उत्तर सुन कर बहुत क्रुद्ध हुए और पुत्रको उन्होंने इस प्रकार अभिशाप दे डाला—

"मेरे शरीरसे जन्मग्रहण करने पर तुमने मुझे अपना यौवन न दिया, इसलिये तुम कहींके राजा होओगे, जहांको प्रजाका क्षय होगा। और जिनमें धर्माधर्मका ज्ञान नहीं है, जो प्रतिलोमाचार, मांसभक्षक, सर्वदा परदाररत और तिर्यक योनि हैं, उन्होंके तुम राजा होओगे तथा नाना प्रकारका कष्ट पाओगे।"

(भारत आ० ८४)

तुर्वसुका वंशविवरण विष्णुपुराणमें इस प्रकार लिखा है—तुर्वसुके पुत्र वह्नि, उनके पुत्र गोभानु, उनके पुत्र त्रैशानु, उनके पुत्र करन्धम और करन्धमके पुत्र मरुत्त थे। मरुत्तके कोई सन्तान न थी, इसलिए उन्होंने पुरुवंशीय दुष्मन्तको पुत्ररूपसे ग्रहण किया। इस प्रकार ययातिके अभिशापसे तुर्वसुके वंशमें पौरव वंशका आश्रय लिया था। (विष्णुपु० ४ अंश, १६ अ०)

तुर्वीति (सं० पु०) वैदिक राजर्षि, एक राजाका नाम।

तुर्श (फा० वि०) खट्टा।

तुर्शरू (फा० वि०) कठोर स्वभाववाला, बदमिजाज।

तुर्शाना (फा० क्रि०) खट्टा हो जाना।

तुर्शी (फा० स्त्री०) खटाई, खटाई।

तुर्शीदंदा (फा० स्त्री०) घोड़ेके दांतोंमें खोट या मैल जमनेका रोग।

तुल (हिं॰ वि॰) तुल्य देखो।

तुलछराय—मारवाड़के एक राजपूत कवि। ये गीत कवित्तके कईएक ग्रन्थ बना गये हैं।

तुलना (हिं॰ क्रि॰) १ तौला जाना। २ उद्यत होना, उतारू होना। ३ गाड़ीके पहियेका औंगा जाना। ४ पूरित होना, भरना। ५ नियमित होना, अंदाज होना। ६ ठीक अन्दाजके साथ टिकना। ५ तुल्य होना, तौलमें बराबर उतरना।

तुलना (सं॰ स्त्री॰) १ सादृश्य, समता, बराबरी। २ तारतम्य, मिलान।

तुलनी (हिं॰ स्त्री॰) वह लोहा जो तराजू वा कांटेकी डाँडीमें सूईके दोनों तरफ लगा रहता है।

तुलबुली (हिं॰ स्त्री॰) जल्दबाजी

तुलभ (सं॰ पु॰) तुरेण वेगेन भाति भा-डस्य लः आयुधजीवि सङ्घभेद।

तुलव—महाराष्ट्र सम्प्रदायी ब्राह्मण जातिका एक भेद। दक्षिण कनाड़ाके आस पास इस जातिका वास है। वहां इनकी स्थिति और आ तपट साधारण है। ये लोग कम पढ़े लिखे होते हैं।

तुलवाई (हिं॰ स्त्री॰) १ तोलनेकी मजदूरी। २ पहिये-की औंगनेकी मजदूरी।

तुलवाना (हिं॰ क्रि॰) १ तौल करना, वजन करना। २ गाड़ीके पहियेकी धुरीमें घी तेल आदि दिलाना, औंग-वाना।

तुलसारिणी (सं॰ स्त्री॰) तुरेण वेगेन सरति सृ-णिनि-ङीप्। तृण, घास।

तुलसी (सं॰ स्त्री॰) तुलां सादृश्यं स्यति नाशयति सो-क गौरादित्वात् ङीप्, शकन्ध्वा॰। स्वनामख्यात वृक्ष। (Ocymum Sanctum) "तुलसी" की नामोत्पत्तिके विषयमें इस प्रकार लिखा है। इस अखिल संसारमें जिस देवीकी तुलना नहीं है, वही तुलसी नामसे प्रसिद्ध है। (शब्दार्थचि॰)

वृहद्धर्मपुराणके मतसे—तकारसे मरण और उकार युक्त होनेसे मृत समझा जाता है अर्थात् मृतव्यक्ति जिसके प्रभावसे "लसति" अर्थात् दीप्ति पाता है, उसीका नाम तुलसी है। (वृहद्धर्मपु॰ ७।६१)

पर्याय—सुभगा, तीव्रा, पावनी, विष्णुवल्लभा, सुरेज्या, सुरसा, कायस्था, सुरदुन्दुभि, सुरभि, बहुपत्री, मञ्जरी, हरिप्रिया, अपेतराक्षसी, श्यामा, गौरी, त्रिदशमञ्जरी, भूतघ्नी, भूतपत्री, पर्णास, वृन्दा, कठिञ्जर, कुठेरक, वैष्णवी, पुण्या, पवित्रा, माधवी, अमृता, पत्रपुष्पा, सुगन्धा, गन्धहारिणी, सुवल्ली, प्रेतराक्षसी, सुवहा, ग्राम्या, सुलभा, बहुमञ्जरी, देवदुन्दुभि।

शुक्लपत्र तुलसीके पर्याय—खरपत्र, जम्बीर, पत्रपुष्प, फणिज्झक, अल्पपत्र, समीरण, मरुवक प्रस्थपुष्प। गन्धतुलसीके पर्याय—सुगन्धक, गन्धनामा, तीक्ष्णगन्ध, गन्धफणिज्झक, सुगन्ध, देवदुन्दुभि। विल्वगन्धके पर्याय—वैकुण्ठक, विल्वगन्ध, अम्लपानक। श्वेत तुलसीके पर्याय—अर्जक श्वेतपर्णास, गन्धपत्र, कुठेरक, भूस्तृणार्जक, तीक्ष्ण, तीक्ष्णगन्ध और सितार्जक।

कृष्ण तुलसीके पर्याय—कृष्णार्जक, कृष्णवर्णी, सुरभि, कालमाल, करालक, कालपर्णी, मालका, कालमालक और वर्वरी।

वर्वरी तुलसीके पर्याय—सुरभि, सुरभिद्रपा, सुरसा, अपेतराक्षसी, वर्वरी, खरवी, तुङ्गी, खरपुष्पा और अज-गन्धिका।

गुण—कटु, तिक्तरस, हृदयग्राही, उष्णवीर्य, दाह-जनक, पित्तकारक, अग्निप्रदीपक एवं कुष्ठ, मूत्रकृच्छ्र, रक्तदोष, पार्श्वशूल, कफ और वायुनाशक। शुक्ल तुलसी और कृष्ण तुलसी दोनोंके गुण एकसे हैं।

वर्वरी तुलसीके गुण—यह रूक्ष, शीतवीर्य, कटुरस, विदाही, तीक्ष्ण, रुचिकारक, हृदयग्राही, अग्निप्रदीपक, लघुपाकी, पित्तवर्द्धक एवं कफ वायु, रक्त, कण्डु, कृमि और विषनाशक है। (भावप्र॰)

इसकी उत्पत्तिका विवरण ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें इस प्रकार लिखा है—तुलसी नामकी एक गोपिका गोलोकमें राधाकी सखी थी। एक दिन राधाने इसे कृष्णके साथ विहार करते देख शाप दिया कि 'तू मनुष्य शरीर धारण कर।' तुलसी यह शाप सुन कर बहुत दुःखित हुई और कृष्णके शरणमें पहुंची। कृष्णने उसे कहा, 'तू मनुष्ययोनिमें जन्म ले कर तपस्याके द्वारा मेरा अंश पावेगी।' शापके अनुसार तुलसी धर्मध्वज राजाके

ध्वज और उनकी पत्नी माधवीके गर्भसे कार्त्तिक पूर्णिमाके दिन उत्पन्न हुई। इनके रूपकी तुलना किसीसे नहीं हो सकती थी, इसीसे इनका नाम तुलसी पड़ा। पीछे तुलसी वनमें जा कर कठोर तपस्या करने लगी। इनकी घोरतर तपस्यासे सभी चकित हो गये। जितनी कठोर तपस्या हो सकती थी, तुलसीने कुछ भी न छोड़ी। इस तपस्यासे ब्रह्मा भी स्थिर न रह सके और तुलसीके निकट आ कर बोले, 'तुलसी! तुम अपना अभीष्ट वर माँगो।'

तुलसीने ब्रह्मासे कहा, 'प्रभो! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो जिस वरके लिये लालसा करती हूँ सो सुनिये। आप सर्वज्ञ हैं, आपसे कोई बात छिपी नहीं है। मेरा नाम तुलसी गोपी है, मैं पहले गोलोकमें रहती थी। एक दिन मैं गोविन्दके साथ विहार करते करते मूर्च्छित हो गई थी, तिस पर भी मेरी इच्छा पूरी न हुई। इसी समय रासेश्वरी राधा वहाँ पहुँच गईं और ऐसी अवस्थामें हम दोनोंको देख कृष्णको तो अनेक कटु वचन कहे और मुझे शाप दिया। बाद कृष्णने मुझसे कहा कि तू तपस्या करके मेरा चतुर्भुज अंश पावेगी। अब मैं उन्हींको पति रूपसे पाना चाहती हूँ।'

इस पर ब्रह्मा बोले, 'श्रीकृष्णके अंशसे उत्पन्न सुदाम नामक गोपने राधिकाके शापसे दानवकुलमें जन्म लिया है। शङ्खचूड़ उसका नाम है। गोलोकमें तुम उसे देख कर मोहित हो गई थी, पर राधिकाके भयसे कुछ कर न सकी। अभी उसीको तुम पतिरूपसे ग्रहण करो। पीछे कृष्ण मिल जायंगे। नारायणके शापसे तुम एक वृक्षमें परिणत हो कर सभीसे पूज्य और विश्वपावनी होओगी एवं सब पुष्पोंमें प्रधान और नारायणकी प्राणप्रिया होओगी। बिना तुम्हारे सभी पूजा निष्फल होगी।' तुलसीने ब्रह्माके मुखसे यह सुन कर कहा, 'आपने जो कुछ कहा वह सच होवे। किन्तु कृष्णकी रतिसे मैं तृप्त नहीं हुई, अतः श्यामसुन्दर द्विभुज कृष्णसे मिलनेकी इच्छा करती हूँ। आपके प्रसादसे उनका मिलना दुर्लभ नहीं है। किन्तु अभी सबसे पहले मेरे जो राधाका भय है उससे मोचन कीजिये।'

ब्रह्माने षोड़शाक्षर राधिकामन्त्र, स्तव, कवच, आदि सभी दे दिये और 'तुम राधाकी तरह सुभगा होओ' ऐसा वर दे कर वे अपने स्थानको चल दिये। तुलसी भी तपस्या को समाप्त कर फिर घरमें बैठी। कुछ समय बाद ब्रह्माके कथनानुसार शङ्खचूड़ नामक दानवसे इनका विवाह हुआ। शङ्खचूड़को वर मिला था कि बिना उसकी स्त्रीका सतीत्व भङ्ग हुए उसकी मृत्यु न होगी। शङ्खचूड़ने बलवान हो कर देवताओंका अधिकार छीन लिया था। जब देवता लोग कुछ भी उसका कर न सके, तब वे सबके सब ब्रह्माके पास गये। ब्रह्मा उन्हें अपने साथ ले कर शिवके पास आये। शिवजी उन्हें वैकुण्ठमें विष्णुके निकट ले गए। विष्णुने कहा, 'आप लोग मिल कर शङ्खचूड़के साथ युद्ध कीजिये, हम शङ्खचूड़का रूप धारण कर तुलसीका सतीत्व भङ्ग करेंगे। पीछे शङ्खचूड़ आप लोगों द्वारा मारा जायगा।' यह कह नारायणने तुलसीका सतीत्व नष्ट किया। जब तुलसीको मालूम पड़ा कि ये नारायण हैं तब उसने उन्हें शाप दिया कि "तुम पत्थर हो जाओ।" स्वामीकी मृत्युके बाद तुलसी नारायणके पैर पर गिर कर रोने लगी। तब नारायणने कहा 'तुम यह शरीर छोड़ कर लक्ष्मीके समान मेरी प्रिया होओगी। तुम्हारे शरीरसे गण्डकी नदी और केशसे तुलसी वृक्ष होगा।' उसी समय वैसा ही हो गया। तबसे बराबर शालग्रामकी पूजा होने लगी और तुलसीदल उनके ऊपर चढ़ने लगा। बिना तुलसीके उनकी पूजा नहीं होती।

(ब्रह्मवै० प्रकृति० १९—२१ अ०)

हरिवंशपुराणके मतसे—प्राचीन कालमें कनक-पुरीमें धर्मदेव नामक विष्णुभक्तिपरायण एक सात्त्विक ब्राह्मण रहते थे। उनकी स्त्रीका नाम वृन्दा था। वृन्दा धर्मचारिणी और पतिव्रता थी।

एक दिन धर्मदेव ब्राह्मणकी सभामें जा कर कथाका कुछ काम कर रहे थे। इधर भोजनका समय बीत गया, वृन्दा अपने घरमें पद्मासन पतिकी पूजा करके मनोहर वस्त्रालङ्कार पहन प्रतिवासियोंके घर घूमने चली गई। इसी बीचमें धर्मदेव अपने घर आये और पत्नीको दुराचारा तथा चञ्चला जान कर बहुत बिगड़े। वृन्दा पर नजर पड़नेके साथ ही उन्होंने शाप दिया कि 'तू दुरात्मा हो कर अपना घर छोड़ इधर उधर

घूमती फिरती है, इस कारण राक्षसीका शरीर धारण कर।' वृन्दा उसी समय राक्षसी बन कर पृथ्वी पर आई और सब जन्तुओंको खाने लगी। किन्तु पूर्व स्मृतिके कारण वह गो, ब्राह्मण और वैष्णवादिको नहीं मारती थी। अनेक जीवोंके नष्ट हो जानेसे पृथ्वी अस्थिमालिनी हो गई। जब वृन्दाको और कोई जन्तु न मिला, तो उसने तीन दिन उपवास किया।

पीछे जीवोंके अन्वेषणमें वह कैलासको गई और वहां भी शैवके अतिरिक्त और कोई सत्व न मिला। उसने सात दिन अनाहार रह कर शरीर त्याग दिया। एक दिन महादेव पार्वतीके साथ भ्रमण करते करते वहीं पहुँच गये जहां वृन्दाकी लाश पड़ी थी। महादेव बोले, यह रूपवती वृन्दा धर्मदेवकी पत्नी है। अभिशापवश राक्षसी-का रूप धारण करके भी उसने आज तक ब्राह्मणहत्या नहीं की है। अतः उसका शरीर निष्फल रहना उचित नहीं है। हमारे वचनानुसार यह वृन्दा पृथ्वी पर वृक्षके रूपमें जन्म लेगी और सभीको प्रेमभाजना होगी। जब यह वृक्ष होवेगी, तब इसके पत्ते विष्णु पर चढ़ाये जायगे। इसके पत्तोंके सिवा मणिमुक्ता आदि किसीसे भी विष्णुकी पूजा नहीं हो सकेगा, वृक्ष तुलसीके नामसे प्रसिद्ध होगा। पार्वती और हम इसके अधिष्ठात्री देवता होंगे।

तुलसी कार्त्तिक मासकी अमावस्या तिथिमें पृथ्वी पर वृक्षके रूपमें उत्पन्न हुई थी। (वृहद्धर्मपु० ८ अ०)

तुलसीका माहात्म्य—कार्त्तिक मासमें तुलसीदलसे जो नारायणकी पूजा करते एवं दर्शन, स्पर्शन, ध्यान, प्रणाम, अर्चन, रोपण तथा सेवन करते हैं, वे कोटिसहस्र युग तक स्वर्गपुरीमें वास करते हैं। जो तुलसीका वृक्ष रोपते हैं, उनका पुण्य उतनाही युग सहस्र वर्ष विस्तृत हो जाता है जितना उसका मूल फैलता है। तुलसीदलसे जो नारायणकी पूजा करते हैं, उनके जन्मार्जित सभी पाप जाते रहते हैं। वायु तुलसीकी गन्ध जिस ओर ले जाती है, वही दिक् पवित्र हो जाती है। तुलसीके वनमें पितृश्राद्ध करनेसे पितृगण बहुत प्रसन्न होते हैं। जिनके घरमें तुलसी-तलकी मट्टी रहती है, उनके घरमें यम-किङ्कर नहीं जा सकते। तुलसी-मृत्तिकासे लिप्त यदि किसी मनुष्यका देहान्त हो, तो वह कितना ही पापी क्यों न हो, तो भी यमकिङ्करगण उसके समीप आनेकी बात तो दूर रहे, उसे देख भी नहीं सकते। जो तुलसीके मूलमें दीप दान करते हैं, उन्हें विष्णुपद प्राप्त होता है। जिसके घरमें तुलसीकानन है, उसका घर तीर्थ स्वरूप है तथा नर्मदा और गोदावरीमें स्नान करनेसे जो फल मिलता है वही फल तुलसीवन संसर्गमें है। जो तुलसी मञ्जरी द्वारा विष्णुका पूजन करते हैं, उन्हें फिर गर्भवास-यन्त्रणा नहीं भुगतनी पड़ती अर्थात् उन्हें मोक्ष मिलता है।

पुष्करादि तीर्थ, गङ्गादि सरित्, वासुदेव आदि देवता सर्वदा तुलसीदलमें वास करते हैं।

जहां केवल एक तुलसीका वृक्ष है, वहां ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि त्रिदश अवस्थित हैं।

तुलसी पत्रमें केशव, पत्राग्रमें प्रजापति, पत्रवृन्तमें शिव सब समय रहते हैं। इसके पुष्पमें लक्ष्मी, सरस्वती, गायत्री, चन्द्रिका और शची आदि देवियां तथा शाखामें इन्द्र, अग्नि, शमन, वरुण, पवन और कुवेर आदि देव-गण अवस्थित हैं। आदित्यादि ग्रह, वसु, मनु और देवर्षि विद्याधर, गन्धर्व आदि समस्त देवयोनि तुलसी-पत्रमें रहती है।

जो वैशाखमासमें तुलसीका वृक्ष सींचते हैं, उन्हें अश्वमेधका फल मिलता है। तुलसीके समान पुण्य और मुक्तिप्रद वृक्ष और दूसरा कोई नहीं है।

तुलसी हाथमें रख कर यदि कोई मिथ्या शपथ करे अथवा मिथ्या वचन बोले, तो जब तक चौदहों इन्द्र रहेंगे, तब तक उसे बार बार कुम्भीपाक नरकमें रहना होगा।

तुलसीचयननिषेध—पूर्णिमा, अमावस्या, द्वादशी और संक्रान्तिमें तुलसी नहीं तोड़ना चाहिये। तेल लगा कर मध्याह्नस्नान किये बिना निशि और सन्ध्या कालमें एवं रात्रिवास परिधान कर जो तुलसीदल तोड़ते हैं, वे हरिका मस्तक छेदन करते हैं।

तुलसीचयनविधि—मध्याह्नस्नान कर और पवित्र वस्त्र पहन कर तुलसीदल तोड़ना चाहिये। तुलसीदल इतने आहिस्ते आहिस्ते तोड़े जिससे कि शाखा हिलने

न पावे। मालाके टूट जानेसे महापाप होता है। तोड़नेके पहले भक्तिपूर्वक निम्नलिखित मन्त्रका पाठ कर तीन बार ताली बजानी चाहिये और तब धीरे धीरे तोड़ना चाहिये। तोड़नेका मन्त्र—

"मातस्तुलसि ! गोविन्दहृदयानन्दकारिणि ।
नारायणस्य पूजार्थं चिनोमि त्वां नमोऽस्तु ते ॥
तुलसि पारिजातानि तुलसीरपि केशव ।
त्वया विना नैव यतः चिनोमि त्वामतः शुभे ॥
त्वया विना महात्मने प्रयतः कर्म विष्णवे ।
मातस्तुलसि देहि त्वां चिनोमि वरदा भव ॥
चयनोद्भवदुःखं यद्देवि ते हृदि वर्त्तते ।
तत्क्षमस्व जगन्मातस्तुलसि त्वां नमाम्यहं ॥"
(क्रियायोगसार)

"तुलस्यमृतजन्मासि सदा त्वं केशवप्रिया ।
केशवार्थं चिनोमि त्वां वरदा भव शोभने ॥
त्वदङ्गसम्भवैः पत्रैः पूजयामि यथा हरिम् ।
तथा कुरु पवित्राङ्गि कलौ मलविनाशिनि ॥"
(स्कन्दपु०)

इन सब मन्त्रोंका पाठ कर तुलसीदल तोड़ें और विष्णुकी पूजा करे, तो लक्षकोटि फल मिलता है। द्वादशी आदि तिथियोंमें तुलसी चयनका निषेध है। विष्णुपूजाके लिये एक द्वादशी तिथिको छोड़ कर और सब निषिद्ध दिनोंमें तुलसीदल तोड़ सकते हैं।
(विष्णुधर्मोत्तर)

तुलसीकाष्ठ मालाका माहात्म्य—सर्वत्र विष्णुभक्तिपरायण वैष्णवको तुलसीकाठकी माला अवश्य धारण करनी चाहिये। जो तुलसीकी माला धारण करते हैं, उन्हें पद पद पर अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है। तुलसीमाला वैष्णवोंके चिह्नस्वरूप है। अन्य वचनानुसार, ब्राह्मणको काठकी माला पहने पतितको किसी सवारी पर चढ़े और विधवाको चारपाई पर सोये हुए देखें तो सचैल स्नान करना चाहिये।

"काष्ठमालाधरं विप्रं पतितं यानरोहिणम् ।
खट्वास्थां विधवां दृष्ट्वा सचैलं स्नानमाचरेत् ॥"
(पद्मपु०)

इस वचनके अनुसार ब्राह्मणको तुलसीमाला धारण करना निषिद्ध है। इसके उत्तरमें वैष्णव कहते हैं—तुलसीकाठकी मालाके सिवा और दूसरे काठकी माला निषिद्ध है। तुलसीमाला धारणका निषेध है, यह इस वचनसे नहीं झलकता।

स्मार्त्त पण्डितोंका कहना है कि यह विप्रोंके लिये निषिद्ध है। इसके प्रमाणमें वे ये वचन देते हैं—

"तुलसीकाष्ठजातेन मालेन मम सुव्रत ।
विप्रस्य न च तत् धारणमाला नरकाय ध्रुवम् ॥"
(पद्मोत्तरख०)

इसके सिवा दूसरोंके मतसे—विष्णुदीक्षाविहीन विप्रोंको इसका धारण करना उचित नहीं है।

तुलसीका ध्यान—

"वृन्दा वृन्दावनी विश्वपूजिता विश्वपावनी।
पुष्पसारा नन्दिनी च तुलसी कृष्णजीवनी ॥
एतन्नामाष्टकं चैव स्तोत्रं नामार्थसंयुतम् ।
यः पठेत्तां च संपूज्य सोऽश्वमेध फलं लभेत् ॥"
(ब्रह्मवैवर्त्तपु०)

जो यह स्तव प्रति दिन पाठ करते हैं, उन्हें अश्वमेधयज्ञका फल मिलता है। तुलसीपत्रसे गणेश-पूजा नहीं करनी चाहिये। "न तुलस्या गणाधिपम्" (स्मृति)

तुलसीविवाह और तुलसीप्रतिष्ठा विधि—अपने तुलसीवृक्ष घरमें अथवा किसी दूसरे जगह रोपते हैं। कोई तीन वर्ष पूरे होने पर वहां एक वेदिका बनाते हैं। इसके अनन्तर विष्णुशयनमें या कार्त्तिकमासके शुक्लपक्षमें वहां मण्डप और कुण्डवेदी निर्माण करते हैं। यह प्रतिष्ठा पूर्णिमामें भी विशेष फलप्रद है।

बाद शान्तिकर्म, मातृस्थापन, वृद्धिश्राद्ध आदि विवाहविधिके अनुसार सब काम करने पड़ते हैं। वेद वेदाङ्गपारग ब्राह्मणोंको ऋत्विक् नियुक्त करना चाहिये और वैखानसविधानके अनुसार ग्रहोंका स्थापन करना चाहिये। वहां मण्डपमें लक्ष्मीनारायणकी मूर्त्ति स्थापन करनी पड़ती है। सूर्यके अस्त होने पर ब्राह्मणोंसे मन्त्रपूर्वक विवाह कर तत् सब कार्य करके होम करना होता है। मन्त्र—

"ओं नमो श्रीकृष्णाय नमः स्वाहा, नारायणाय स्वाहा, गोपाय गोविन्दाय विष्णवे मधुसूदनाय त्रिविक्रमाय वाम

नमः श्रीधराय हृषीकेशाय पद्मनाभाय दामोदराय उपेन्द्राय अनिरुद्धाय अच्युताय अनन्ताय गदिने चक्रिणे विष्वक्सेनाय वैकुण्ठाय जनार्दनाय मुकुन्दाय अधोक्षजाय स्वाहा" इस मन्त्रसे होम करना चाहिये। बाद यजमानको स्त्री और सगोत्र बन्धुओंके साथ मिल कर इसका प्रदक्षिण करते हैं। वेदिक पर तुलसीके पाणिग्रहणमें सूक्त, शान्तिस्वाध्याय, जप और सैन्धवसंहिताका पाठ भी करना पड़ता है।

पीछे तरह तरहके मङ्गलवाद्य कर पूर्णाहुति देते और तब श्रमिय कविधि समाप्त कर ऋत्विकोंको दक्षिणा दे विदा करते हैं। इस प्रकार विष्णुके साथ साथ देवी तुलसीको अर्चना करनी पड़ती है। जो इस विधान-से तुलसी-प्रतिष्ठा, तुलसी-रोपण और तुलसीकी सेवा करते हैं, वे विपुल भोग प्राप्त कर मोक्ष पाते हैं।

(हरि भक्तिवि० ११ विला०)

प्रत्येक मनुष्यको अपने घरमें कमसे-कम एक तुलसीवृक्ष अवश्य लगाना चाहिये।

तुलसी कवि—हिन्दीके एक कवि। इनके पिताका नाम यदुराय था। इन्होंने १६५५ ई०में कविमाला नामक एक हिन्दी-ग्रन्थ रचा था। इस ग्रन्थमें पूर्ववर्त्ती ७५ कवियोंकी कविताएं उद्धृत की गई हैं।

तुलसीदल (सं० पु०) तुलसीपत्र।

तुलसीदाना (हिं० पु०) एक आभूषण।

तुलसीदास—हिन्दुस्तानके सर्वप्रधान भक्त-कवि। किसीका मत है, कि ये कनौजिया ब्राह्मण थे, और कोई इन्हें सरयू-पारीण ब्राह्मण बतलाते हैं। कनौजिया ब्राह्मण भिक्षा-वृत्तिसे बड़ी नफरत रखते हैं; पर तुलसीदासने अपनी कवितामें लिखा है—"जायो कुल-मंगन" अर्थात् 'जिस कुलमें मांगनेकी प्रथा है, उस कुलमें मेरा जन्म हुआ'। इससे उन्हें कनौजिया न समझ सरयूपारीण समझें तो कोई आपत्ति नहीं। इनकी दुबे उपाधि थी और गोत्र पराशर। वि०सं० १५८९में इनका जन्म हुआ था। पहले बहुतसे हिन्दुओंकी ऐसी श्रद्धा थी, कि 'जो ज्येष्ठाके अन्त और मूलाके प्रारम्भमें अभुक्तमूल (गण्ड) में जन्म-ग्रहण करता है, वह पितृहन्ता और अत्यन्त नीच-हृदय होता है। ऐसे पुत्रको त्याग देना ही उचित है, यदि ऐसा अवश्य त्याग न सकें, तो कम-से-कम आठ वर्ष तक उसका मुंह तो देखना ही नहीं चाहिए।' यह ज्योतिष-का आदेश है।

तुलसीदासका जन्म भी उक्त अभुक्तमूल नक्षत्रमें हुआ था। सम्भवतः इसीलिए उनके पिताने उन्हें त्याग दिया था। उस समय ऐसे बच्चोंको पालनेके लिए अन्य गृहस्थ भी तैयार नहीं होते थे। सौभाग्यवश तुलसीदास एक साधुके हाथ पड़ गये थे। कविवरने अपनी विनयपत्रिका-में लिखा है—

'जननी जनक तजो जनमि करम बिनु बिधिहू सिरज्यो अवडेरे।'

अर्थात् जनमनेके बाद मातापिताने मुझे छोड़ दिया था; विधिने भी मेरा भाग्य अच्छा नहीं किया; इसीलिए मुझे छोड़ दिया है।

वे साधु ही तुलसीदासके गुरु थे; उन्होंकी सङ्गतमें तुलसीदासने भारत भ्रमण किया था और उन्हींसे उन्हें आध्यात्मिक शिक्षा मिली थी।

इनके कवित्त-रामायणके पढ़नेसे मालूम होता है कि इनका यथार्थ नाम रामबोला था; पिताका नाम आत्माराम शुक्ल, माताका हुलसी, पत्नीका रत्नावली, श्वसुरका दीनबन्धु पाठक और पुत्रका नाम तारक था। शैशवावस्थामें ही पुत्रकी मृत्यु हो गई थी।' जैसा कि कविवरने स्वयं लिखा है—

"दूबे आतमराम है, पिता नाम जगजान।
माता हुलसी कहत सब, तुलसी है सुन कान॥
प्रह्लाद उचारन नाम करि, गुरुको सुनिए साथ।
प्रगट नाम नहिं कहत जग, कहे होत अपराध॥
दीनबन्धु पाठक कहत, श्वसुर नाम सब कोइ।
रत्नावलि तिय नाम है, सुत तारक गत सोइ॥"

बहुतोंका विश्वास है, कि तुलसीदासका यह नाम उनके गुरुका दिया हुआ है। इनके जन्मस्थानके विषयमें भी नाना मत हैं। कोई कहते हैं कि दोआबके अन्तर्गत तरी नामक स्थानमें इनका जन्म हुआ था तो कोई हस्ति-नापुरमें बतलाते हैं, कोई चित्रकूटके निकटवर्ती हाजि-पुरको इनकी जन्मभूमि मानते हैं तो कोई बांदा जिलेमें यमुनाके किनारे राजपुर नामक स्थानमें इनका जन्म हुआ बतलाते हैं। परन्तु आनुषङ्गिक प्रमाण द्वारा यही

अनुमित होता है कि सूरो ग्राम ही इनकी जन्मभूमि है।

बाल्यावस्थामें इन्होंने शूकरक्षेत्रमें (वर्तमान सोरों नामक स्थानमें) विद्याभ्यास किया था। परन्तु यहां ये स्थानाभावसे विशेष पाण्डित्य लाभ न कर सके थे। साधुओंके सहवाससे यथासमय विद्याध्ययनमें रत रह कर इन्होंने संस्कृत, हिन्दी और उर्दू भाषा सीखी थी। इनके बनाये हुए रामायणमें उत्तरकाण्डकी महाभारतके श्लोकोंके पढ़नेसे मालूम होता है कि संस्कृतभाषामें इनका विशेष दखल न था।

तुलसीदासके उपदेशाका नाम था नरहरि। रामानन्दने जिस प्रकार रामानुजके विशिष्टाद्वैतमतका प्रचार किया था, तुलसीदास उस पन्थके बहुत कुछ पक्षपाती थे। ये कट्टर वैरागी वैष्णवोंकी तरह द्वैतवादको नहीं मानते थे। अयोध्यामें इनकी 'स्मार्त्त' सम्प्रदायके नामसे प्रसिद्धि है। इन्होंने शङ्कराचार्य प्रवर्तित वेदान्तके अद्वैतवादका निर्विशेषाद्वैत नामसे उल्लेख किया है। इनके रामायणमें कई जगह शङ्कराचार्यका मत ग्रहण किया गया है। शङ्कराचार्यके ब्रह्मको इन्होंने 'राम'के नामसे प्रसिद्ध किया है।

शङ्कराचार्यके अनुयायी प्रसिद्ध मधुसूदन सरस्वती तुलसीदासके एक मित्र थे।

रामानन्दसे जो गुरुपरम्परा प्रचलित है, उनमेंसे दो तालिकाओंमें तुलसीदासका नाम पाया जाता है। यथा—

१ रामानुजस्वामी २ शठकोपाचार्य, ३ कुरेशाचार्य ४ लोकाचार्य, ५ पराशराचार्य, ६ वाक्याचार्य, ७ लोकाचार्य, ८ देवाधिदेव, ९ शैलेशाचार्य १० पुरुषोत्तमाचार्य ११ गङ्गाधराचार्य, १२ रामेश्वरानन्द १३ द्वारानन्द, १४ देवानन्द १५ श्यामानन्द १६ श्रुतानन्द १७ नित्यानन्द, १८ पूर्णानन्द, १९ हर्यानन्द २० श्रर्य्यानन्द, २१ हरिवर्यानन्द, २२, राघवानन्द, २३ रामानन्द, २४ सुरसुरानन्द, २५ माधवानन्द, २६ गरिबानन्द, २७ लक्ष्मीदास, २८ गोस्वामीदास, २९ नरहरिदास और ३० तुलसीदास।

तुलसीदासके श्वशुर दीनबन्धु श्रीरामचन्द्रजीके उपासक थे। इनकी बालिका कन्या, तुलसीदासके साथ विवाह होनेके बाद भी, बहुत दिनों तक पिताके घर रही थीं। ये भी रामचन्द्रजीकी भक्ति करती थीं। यथासमय रत्नावली अपने पतिके घर आ कर रहने लगीं। उनके एक पुत्र हुआ। तुलसीदास स्त्रीको छोड़ कर क्षणभर भी न रह सकते थे। वे अत्यन्त स्त्रैण हो गये थे। एक दिन तुलसीदासकी पत्नी पतिसे बिना पूछे ही अपनी मायके चल दीं। इससे तुलसीदासको बड़ी चिन्ता हुई, वे तुरन्त ही पत्नीके पीछे पीछे दौड़े गये और रास्तेमें उन्हें पकड़ लिया। इस पर रत्नावलीने कहा—

'लाज न लागत आपको दौरे आयेहु साथ।
धिक धिक ऐसे प्रेमको कहा कहौं मैं नाथ॥
अस्थिचर्ममय देह मम तामें जैसी प्रीति।
तैसी जो श्रीराम महँ होत न तौ भवभीति॥" *

स्त्रीकी मीठी भर्त्सनासे तुलसीदासकी आंखें खुल गईं। उन्होंने फिर स्त्रीकी तरफ ताका भी नहीं। रत्नावली नहीं जानती थीं, कि इस जरासी बातसे उनके स्वामीके हृदयमें गहरी चोट पहुंचेगी। उन्होंने तुलसीदासको वहां ठहरा कर उनसे आहारादिके लिये बहुत कुछ प्रार्थना की, परन्तु कुछ फल न हुआ। उसी समय तुलसीदास राम नामको पाथेय मान संन्यासी हो गये।

वे पहले तो अयोध्यामें और फिर काशीमें बहुत दिनों तक रहे। इसी बीचमें वे मथुरा वृन्दावन कुरुक्षेत्र प्रयाग और पुरुषोत्तमक्षेत्र दर्शन कर आये।

रत्नावलीने स्वामीके घर छोड़नेके बाद अपने पति तुलसीदासको एक पत्र लिखा—

'कटिकी खीनी कनक सी, रहत सखिन संग सोइ।
मोहि फटे को डर नहीं, अनत कटे डर होइ॥"

अर्थात्—कनककटरी सी पतली कटि मैं, सखियोंके साथ रहती हूं, मेरी छाती फटे इसका मुझे डर नहीं, डर इसी बातका है कि तुम्हें कोई दूसरी स्त्री न ले ले।'

* भक्तमाल और भक्तिमाहात्म्य नामक ग्रंथमें लिखा है,—तुलसीदासकी स्त्री बालकोंको ले कर पीहर जा रही थी, मार्गमें उन्होंने पतिको पीछे पीछे आते देख यह बात कही थी ; परन्तु अयोध्यामें ऐसी किंवदन्ती है कि, तुलसीदासके ससुराल पहुंचने पर स्त्रीने ये दोहे कहे थे।

तुलसीदासने इसका उत्तर दिया—

"कटे एक रघुनाथ संग, बाँधि जटा सिर केस ।
हम तो चाखा प्रेमरस, पत्नीके उपदेस ।"

कैसी मधुर बात है । पतिका उत्तर पा कर रत्नावली निश्चिन्त हो गईं । जी भरके पतिकी प्रशंसा करने लगीं ।

वर्षों बीत गये । तुलसीदास इस समय वार्द्धक्यमें पदार्पण कर चुके थे । उन्हें घर-द्वार कुछ भी स्मरण न था । नाना स्थानोंमें पर्यटन करते हुए दैवयश वे अपनी सुसराल पहुँचे और अतिथि बन कर एक दिन वहीं रहे । उन्हें याद हो न थी कि यह उनकी सुसराल है । उन्हींकी वृद्धापत्नी उनका अतिथिसत्कार करने आईं । उन्होंने भी अपने पतिको न पहचाना । उन्होंने तुलसीदासके लिए आहारादिकी व्यवस्था कर दी । तुलसीदास स्मार्त-वैष्णव थे, वे अपने हाथसे रसोई बनाने लगे । दो एक बात सुन कर रत्नावलीने अपने पतिको पहचान लिया । उन्होंने अपने मनका भाव छिपा कर कहा—'आपको मिर्च ला दूं ।' तुलसी बोले—'जरूरत नहीं, मेरी झोलीमें है' । रत्नावली बोलीं—'तो क्या जरासा कपूर ला दूं ?' तुलसीने कहा—'वह भी मेरी झोलीमें है ।'

इसके बाद साध्वी, पतिसे, कुछ न कह कर उनके चरण प्रक्षालनके आगे बढ़ीं । परन्तु तुलसीदासने निषेध कर दिया, जिससे उनकी मनस्कामना सिद्ध न हुई । उस दिन रातको उन्हें नीन्द भी न आई । सिर्फ यही चिन्ता थी—"किस तरह मैं हृदयेश्वरकी पादसेवा कर सकूंगी ?' बहुत सोचा-विचारीके बाद निश्चय किया कि जो अभी जरा जरासी चीजोंको भी त्याग नहीं कर सके हैं, वे क्या अपनी धर्मपत्नीको सर्वथा त्याग सकते हैं ! दूसरे दिन प्रातःकाल आ कर उन्होंने पतिसे पूछा—'देव ! आपने क्या मुझे पहचाना ।' तुलसीदासने उत्तर दिया, 'नहीं ।' रत्नावलीने फिर पूछा, 'आपको क्या यह भी नहीं मालूम कि आप किसके घर ठहरे हुए हैं ?' उत्तर मिला, 'नहीं ।' फिर पूछा, 'इस स्थानका नाम जानते हैं ?' इसका भी उत्तर मिला, 'नहीं' । फिर रत्नावलीने धीरे धीरे अपना पूरा परिचय दे कर उनसे सङ्गकी प्रार्थना की । परन्तु तुलसीदास किसी प्रकार भी राजी न हुए । रत्नावलीने बड़े दुःखके साथ कहा—

"खरिया खरी कपूर लौं उचित न पिय तिय त्याग ।
कै खरिया मोहि मेलि कै अचल करो अनुराग ॥"

अर्थात् जब तुम्हारी झोलीमें खड़ी ले कर कपूर तकको स्थान मिल गया, तब प्रियतम ! स्त्रीको त्याग देना उचित नहीं । या तो मुझे भी झोलीमें रख लीजिए, अथवा (सर्वत्यागी हो कर) उस भगवानमें अनुराग कीजिए ।'

स्त्रीकी बात सुन कर साधु तुलसीदासको ज्ञानोदय हुआ । उन्होंने मान लिया कि उनकी अपेक्षा उनकी स्त्रीने अधिक ज्ञान प्राप्त किया है । फिर क्या था, तुलसीदास सर्वत्यागी हो गये—झोली एक ब्राह्मणको दे दी ।

तुलसीदास, बलिया जिलेके अन्तर्गत भृगुके आश्रम, हंसनगर, पारासिया (पाराशरीय) आदि पुण्यस्थानोंके दर्शन करते हुए गायघाटके राजा गम्भीरदेवकी आतिथेयता पर मुग्ध हो कुछ दिन वहीं रहे । वहांसे ब्रह्मेश्वरनाथ नामक महादेवके दर्शन करनेके लिये आरा जिलेके ब्रह्मपुरमें गये । वहांसे वे कान्ह-ब्रह्मपुर गये, यहांके अधिवासियोंकी राक्षसी नीतिको देख कर उन्हें बड़ा दुःख हुआ । यहां सङ्करु नामके एक अहीरने तुलसदासकी बहुत सेवा की थी । अहीरकी सेवासे खुश हो कर इन्होंने उससे कुछ मांगनेके लिए कहा । दरिद्र अहीरने प्रार्थना की—"भगवान् पर मेरी पूर्ण-भक्ति रहे और मेरा वंश दीर्घजीवी हो, इतनी ही मेरी प्रार्थना है ।" तुलसीदासने कहा,—"यदि तुमने (वा तुम्हारे परिवारमेंसे और किसीने) चोरी न की हो, अथवा किसीके मनको कष्ट न दिया हो, तो तुम्हारा अभिप्राय सिद्ध होगा ।" बलिया और शाहाबाद जिलेके लोग अब भी इस किम्वदन्तिको कह करते हैं, तुलसीदासकी बात सच्ची निकली ।

कान्हसे तुलसीदास बेलापतीत नामक स्थानमें चले गये । यहां पण्डित गोविन्दमिश्र नामक एक शाकद्वीपी ब्राह्मण और रघुनाथसिंह नामक एक क्षत्रियने बड़े आदरसे इनको अपना अतिथि बनाया था । उनके

कथनानुसार वेणीमाधवका नाम रघुनाथपुर प्रसिद्ध हुआ। यहां जिस चौतरे पर ये बैठा करते थे उसको अब भी लोग मन्दिरको निशानसे दिखाते हैं। रघुनाथपुरके निकटवर्ती कायथ ग्राममें जोरावरसिंह नामक एक क्षत्रियने इनसे दीक्षा ग्रहण की थी।

तुलसीदास पहले अयोध्यामें आ कर कुछ दिन हनुमान्-वैष्णवके रूपमें रहे थे। उस समय भगवान् रामचन्द्रने उनको स्वप्नमें दर्शन दिये और भाषामें रामायण लिखनेका आदेश दिया। १६३१ संवत्‌में इन्होंने रामायण लिखना प्रारम्भ किया। अरण्यकाण्ड समाप्त होनेके पहले ही वैरागी वैष्णवोंसे उनका मतभेद हो गया। ये काम छोड़ कर काशी चले आये। लोलार्क कुण्डके पास असीघाटमें इनका डेरा था। यहीं पर १६८० संवत्‌में इन्होंने स्वर्गवास किया। जहां ये रहते थे उसके पासका घाट अब भी 'तुलसीघाट' कहलाता है। उसके पास ही उक्त कवि द्वारा प्रतिष्ठित एक हनुमान्‌का मन्दिर है।

काशीमें इनके विषयमें बहुतसी किम्वदन्तियां प्रसिद्ध हैं—

सुना जाता है, कि रामायण समाप्त होनेके बाद, एक दिन तुलसीदास मणिकर्णिका-घाटमें स्नान कर रहे थे। इतनेमें एक संस्कृतके ज्ञानकार पण्डितने आ कर उनसे कहा,—"आप आपतो संस्कृत जानते हैं फिर भाषामें रामायण क्यों लिखी?" तुलसीदासने हंस कर उत्तर दिया—"मेरी भाषा निःसन्देह तुच्छ है यह मैं मानता हूं पर यह आपके 'मणिकाञ्चनर्म' की अपेक्षा अनेक अंशोंमें उत्तम है।" पण्डितने कहा—"कैसे?" तुलसीदासने उत्तर दिया—

"मणिभाजन विष पाई पूरन अमी निहारि।
का छोड़िय का संग्रहिय कहहु विवेक विचारि॥"

गङ्गाराम नामक एक अच्छे कवि थे हिन्दीकी कविता इनकी बहुत अच्छी होती थी। एक दिन कुछ पण्डितोंने उनसे संस्कृत भाषामें कविता बनानेके लिए कहा। इस पर ये बोले— "मैं तुलसीदाससे पूछ कर उत्तर दूंगा।" तुलसीदाससे पूछने पर उन्होंने उत्तर दिया—

"का भाषा का संस्कृत प्रेम चाहिये सांच।
काम जु आवहि कामरी का लै करै कुमाच॥"

किसी समय कुछ डकैत तुलसीदासको मारने आये थे। उन्होंने अपनी रक्षाके लिए प्रयत्न न कर कहा था—

"बासर ढासनिके ढका रजनी चहुं दिसि चोर।
दलत दयानिधि देखिये कपि केसरी किसोर॥"

तुलसीदासके कथनानुसार हनुमान्‌ने दर्शन दिये। उनके उस भीम आकारको देख कर डकैत लोग मूर्च्छित हो कर गिर पड़े।

अकबर बादशाहके राजस्व-सचिव टोडरमल तुलसीदासके एक परम मित्र थे। १६४६ सं०में टोडरमलकी मृत्यु होने पर, उनके बारेमें तुलसीदासने निम्न लिखित दोहे रचे थे—

"महले चारो गांवके मनको बड़ा महीप।
तुलसी या कलिकालमें अथये टोडरदीप॥
तुलसी राम सनेहको सिर पर भारी भार।
टोडर कांधे ना दियो सब कहि रहे उतार॥
तुलसी उर थाला विमल टोडर गुनगन बाग।
समुझि सुलोचन सींचिहैं उमगि उमगि अनुराग॥
रामधाम टोडर गये तुलसी भयेउ असोच।
जियबो मीत पुनीत बिनु यही जानि संकोच॥"

अकबर-राज मानसिंह और जगतसिंह आदि हिन्दू राजकुमारगण अक्सर इनसे मिला करते थे। एक दिन किसीने तुलसीदाससे पूछा—"बड़े आदमी आपके पास क्यों आते हैं?" तुलसीदासने इसका उत्तर दिया—

"लहै न फूटी कौड़िहू को चाहै केहि काज।
सो तुलसी महंगो कियो राम गरीबनिवाज॥
घर घर मांगे टूक पुनि भूपति पूजे पांय।
ते तुलसी तब राम बिनु ते अब राम सहाय॥"

इस प्रकार तुलसीदासके सम्बन्धमें और भी बहुतसी किम्वदन्तियां प्रसिद्ध हैं। 'बनारसी विलास' नामक हिन्दी ग्रन्थमें कविवर बनारसीदासकी जीवनीमें लिखा है कि "सं० १६८०में जिस समय तुलसीदासका शरीरपात हुआ था, उस समय जैनकवि बनारसीदास की आयु ३० वर्षकी थी। आगरेमें तुलसीदासके साथ बनारसीदासकी भेंट हुई, तुलसीदासने रामायणकी

एक प्रतिलिपि करा कर उन्हें उपहारस्वरूप दी। इसके २१३ वर्ष बाद दोनोंका पुनः समागम हुआ, तो तुलसीदासने रामायणके सौन्दर्य विषयमें उनसे प्रश्न किया। बनारसीदासने उसी समय यह कविता रच कर सुनाई—

"विराजै रामायण घट माहिं ॥
मरमी होय मरम सो जाने, मूरख जाने नाहिं, विराजै० ॥
आतमराम ज्ञानगुन लछमन सीता सुमति समेत।
शुभपयोग वानरदल-मंडित, वर विवेक रणखेत; विराजै० ॥
ध्यान धनुष टंकार शोर सुनि, गई विषयदिति (१) भाग।
भई भस्म मिथ्यामत लङ्का, उठी धारणा आग, विराजै० ॥
जरे अज्ञान भाव राक्षस कुल, लरे निकांछित सूर।
जूझे रागद्वेष सेनापति, संसै गढ़ चकचूर, विराजै० ॥
बिलखत कुम्भकरण भवविभ्रम, पुलकित मन दरयाव।
थकित उदार वीर महिरावण, सेतुबन्ध समभाव; विराजै० ॥
मूर्छित मन्दोदरी दुराशा, सजग चरन हनुमान।
घटी चतुर्गति परणति सेना, छुटे छपक गुण बान, विराजै० ॥
निरखि सकति गुन चक्रसुदर्शन, उदय विभीषण दीन।
फिरै कबन्ध मही रावणकी, प्राणभाव शिरहीन; विराजै० ॥
इह विधि सकल साधुघट अन्तर होय सहज संग्राम।
यह विवहारदृष्टि रामायण, केवल निश्चय राम ॥
विराजै रामायण०"

तुलसीदास यथार्थमें हिन्दीके महाकवि थे। उनकी रचनाका माधुर्य, लिपिचातुर्य और आध्यात्मिकभाव सत्त्व-विश्व अत्यन्त प्रशंसनीय है। हिन्दीभाषा-भाषी अति उच्च राजा महाराजाओंसे ले कर दीन दरिद्र भिक्षुक तक तुलसीदासके दोहोंका आदर करते हैं। इनके नामसे बहुतसे ग्रन्थ प्रचलित हैं, किन्तु वे सभी इन्हींकी लेखनीसे निकले हुए हैं या नहीं, इसमें सन्देह है।

निम्नलिखित ग्रन्थ खास उन्हींके रचे हुए समझे जाते हैं,—

१ रामलीला नहछू, २ वैराग्यसन्दीपनी, ३ बरवै रामायण, ४ पार्वतीमङ्गल, ५ जानकीमङ्गल, ६ रामाज्ञा (ये छः ग्रन्थ छोटे छोटे हैं), ७ दोहावली वा सतसई, ८ कवित्त रामायण वा कवितावली, ९ गीत-रामायण वा गीतावली, १० कृष्णावली वा कृष्ण-गीतावली, ११ विनयपत्रिका, १२ रामचरितमानस। अन्तके ६ ग्रन्थ बड़े बड़े हैं। रामचरितमानस सबसे बड़ा ग्रन्थ है और यह साधारणमें 'तुलसीरामायण' के नामसे प्रसिद्ध है।

तुलसीदुङ्गरि—विशाखपत्तन जिलान्तर्गत वस्तार राज्यकी एक विस्तृत गिरिमाला। यह अक्षा० १८° ४५' उ० और देशा० ८२° ३० से ८२° ४०' पूर्वमें अवस्थित है। इसकी ऊंची चोटीका नाम तुलसी है। जो समुद्र पृष्ठसे ३८२८ फुट ऊंची है।

तुलसीद्वेषा (सं० स्त्री०) तुलसीं द्वेष्टि तुच्छगन्धत्वात् द्विष अण्, तत-टाप्। बर्बरी, वन तुलसी।

तुलसीपत्र (सं० क्ली०) तुलस्याः पत्रं ६-तत्। तुलसीका पत्ता।

तुलसीपुर—१ अयोध्याके गोण्डा जिलेके अन्तर्गत एक परगना। इसके उत्तरमें हिमालय, दक्षिणमें बलरामपुर परगना, पूर्वमें बारनाला नदी और बहराइच जिला है। इस स्थानका प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त मनोरम है। उत्तरभागमें पहाड़के ऊपर शालसे ढका हुआ विस्तीर्ण वनविभाग है और उसके बाद ही छोटे छोटे पहाड़ोंसे घिरे हुए ऊंचे नीचे भूमिखण्ड हैं। यहांकी जमीन उत्तम होने पर भी जलवायु बहुत अस्वास्थ्यकर है। इसी कारण यहां बहुत कम मनुष्य बसते और इतना अच्छा कृषिकार्य भी नहीं होता है।

परगनेका प्रधान अंश जङ्गलीय है किन्तु यहां धानकी फसल अच्छी होती है। इसके सिवा जौ, गेहूं और उरद भी कम नहीं उपजते। यहां हिन्दुओंकी संख्या ही सबसे अधिक है जिनमेंसे थारु जातिका नाम ही उल्लेखयोग्य है। थारुलोग तूराणी जातिके जैसा होने पर भी ये अपनेको चितौरके राजपूत कुलोद्भव बतलाते हैं।

अधिक दिनकी बात नहीं है, कि तुलसीपुर परगनेका अधिकांश ही शालवनसे ढका हुआ था। बीच बीचमें दो एक घर थारु अपने अपने सर्दारके अधीनमें वहां स्वाधीन-भावसे रहने लगे। ये सब थारु-सर्दार दो प्रकारके कर देते थे। एक कर 'दखिनाहा' या दक्षिणांशमें बलरामपुरके राजाको और दूसरे 'उत्तराह' या उत्तरांशमें दङ्ग राजाको मिला करता था।

(१) सूर्पनखा राक्षसी।

प्रवाद है, कि प्रायः ५०० वर्ष पहले यहाँ मेघराज नामक चौहान वंशीय एक राजाने और पीछे उनके वंशधरोंने बहुत दिनों तक थारुओंके ऊपर आधिपत्य किया था।

प्रायः सौ वर्ष बीत चुके, बलरामपुरके राजा पृथ्वीपाल सिंहकी मृत्यु हुई। उनके पुत्र नवलसिंह राजा होनेको थे किन्तु उनके भतीजे दलपति सिंहने उन-को भगा कर राज्य अधिकार कर लिया। चौहानराजाने गिरि कन्दरमें आश्रय ले कर दो हजार धानुकोंकी सहायतासे अपना पैत्रिक राज्य उद्धार किया। तब राज्य हारोंने पहाड़ पर जा कर आश्रय लिया। कुछ दिन बाद नेपालराजके उन पर आक्रमण करने पर उन्होंने पुनः बलरामपुरमें आकर नवलसिंहकी शरण ली। नवल सिंहने उनकी सहायतासे तुलसीपुरके बाग़ी सर्दारोंको दमन किया और उसका नाम तुलसीपुर रखा। वे भी बलरामपुरके राजाको वार्षिक ६६ हजार कर देनेको राजी हुए। उनके पुत्र दलेल सिंह उचित रीतिसे कर २४ पा रहे थे। उनके बाद दानबहादुर सिंह राजा हुए। उन्होंने कर देना बन्द कर दिया।

१८२८ ई०में गवर्नर जेनरल तुलसीपुरमें शिकारको गये। राजाकी आतिथ्यसेवासे खुश हो कर बड़े लाटने अयोध्याके नवाबको हुक्म दिया कि वे कुछ वार्षिक कर ले कर तुलसीपुर परगनेका चिरस्थायी बन्दोबस्त दान बहादुरके साथ कर दें।

दान बहादुरके समयमें राज्य उन्नतिके शिखर पर पहुंच गया था। १८४१ ई०में दान बहादुरकी मृत्यु होनेके बाद उनके लड़केका दृगराजसिंहने पितृ सम्पत्ति पाई। कोई कोई कहते हैं कि दृगराज सिंह-के षड़यन्त्रसे ही उनके पिताकी मृत्यु हुई। दृगराजा-को भी अधिक दिन राज्य नहीं भोगना पड़ा। उनके पुत्र दिग्नारायण सिंह १८४० ई०में पिताको राज्यसे बाहर निकाल कर आप राजा बन बैठे। दृगराजने बल-रामपुरमें जा कर आश्रय लिया। उनकी सहायताके लिए हटिश गवर्मेण्टने एक दृढ़ सेना भेजी। दृगराजने इन सेनाओंकी मददसे अपना राज्य अधिकार किया। किन्तु दुर्दान्त पुत्रके हाथसे उन्हें बहुत कष्ट भुगतना पड़ा। दिग्नारायणने समय पा कर पिताको कैद कर लिया और विष खिला कर मरवा डाला।

अयोध्या प्रदेश हटिश शासनाधीन होने पर गवर्मेण्टने दिग्नारायणसे कर मांगा। किन्तु हीनमति दिग्-नारायण कर देनेको राजी न हुए। इसी कारण वे बन्दी कर लखनऊ नगर लाये गए। इसी समय विद्रोह आरम्भ हुआ। बन्दी अवस्थामें दिग्नारायणकी मृत्यु हुई। उनकी रानीने भी विद्रोहमें साथ दिया था। इस लिए तुलसीपुर राज्य जब्त कर गवर्मेण्टने बलरामपुरके राजाको अर्पण किया।

२ उक्त परगनेका एक प्रधान नगर। यहाँ तुलसीपुर राजाओंका बनाया हुआ एक पुराना गढ़ है। प्रायः दो सौ वर्ष अतीत हुए, तुलसीदास नामक किसी कुर्मीने यह नगर कायम किया। उन्हींके नामानुसार तुलसीपुर नाम पड़ा है।

तुलसीबाई—इन्दौरके राजा यशवन्तराव होलकरकी एक प्रेयसी। यह पहले एक सामान्य नर्तकी थी, पीछे इसने महाराज यशवन्तरावका हृदय अधिकार कर लिया था। यशवन्तरावके शेषावस्थामें उन्मादरोगग्रस्त होने पर तुलसीबाई होलकर राज्यकी सर्वेसर्वा हो गई. तुलसीबाईने अपनी रूपके मधुर बातोंसे और मनोहर हावभावसे थोड़े ही दिनोंमें सबको मोहित कर लिया। तुलसीके कोई सन्तान न थी। यशवन्तरावकी मृत्युके बाद उनके पुत्र मल्हाररावको दत्तकपुत्र ग्रहण कर तुलसी-बाई राज्य चलाने लगी। दीवान गणपतरावसे तुलसी-बाईकी कुछ अनबन थी, इसलिए सरदार लोग तुलसी-बाईसे नाराज हो गये।

रूपमें अप्सरा और बातोंमें मूर्तिमयी चपला होने पर भी तुलसीबाईका हृदय क्रूर अभिसन्धियोंसे भरा हुआ था। तुलसीबाईसे जो लोग किसी प्रकारका द्वेष रखते थे, उनके सर्वनाशको चिन्तामें वह सर्वदा मग्नचित्त रहती थी।

उस समय महाराष्ट्र लोग ब्रिटिशशक्तिको परास्त करनेके लिए एक जोट हुए थे। तुलसीबाईने भी सरदारों-के अभिप्रायको जान उसमें साथ दिया। परन्तु गणपतराव समझ गये कि मराठे सरदार किस तरह

एकत्र हो रहे हैं, उससे यह प्रतीत होता है कि उन पर और तुलसीबाई पर शीघ्र ही आपत्ति आनेवाली है। यह विचार कर उन्होंने ब्रिटिश-पक्षमें मिलनेके लिए दूत भेज दिया। १८१७ ई०, तारीख २० दिसम्बरको प्रातःकालके समय बालक मल्हारराव तम्बूके बाहर खेल रहा था, उसी समय शत्रु लोग कुमारको पकड़ कर ले गये और एक दल सैनिकोंने आ कर तुलसीबाईको घेर लिया। तुलसीबाईने आसन्न विपद् देख उन लोगोंसे सावधान रहनेके लिए कहा और तिरस्कार भी किया। परन्तु किसीने भी उनकी बातपर ध्यान नहीं दिया। अन्तमें रक्षक लोग तुलसीबाईको पाल्कीमें बिठा कर शिप्रा नदीके किनारे ले गये और उसका शिर काट कर नदीमें फेंक दिया।

तुलसीबाम (हिं० पु०) अगहनमें होनेवाला एक प्रकारका महीन धान। इसका चावल बहुत सुगन्धि होता है और कई साल तक रह सकता है।

तुलसीमाला (सं० स्त्री०) तुलस्याः माला। तुलसीकी माला। तुलसी देखो।

तुलसीवन (सं० पु०) १ तुलसीके वृक्षोंका समूह, तुलसीका जङ्गल। २ वृन्दावन।

तुलसीविवाह (सं० पु०) तुलस्याः विवाहः। तुलसीका विवाह। तुलसी देखो।

तुलसीश्याम—जूनागढ़के अन्तर्गत ऊना वा उदतनगरसे प्रायः ११ कोस उत्तरमें अवस्थित एक पुण्यस्थान। यहां विष्णु, शिव और हनुमानके अनेक मन्दिर तथा उष्ण प्रस्रवण हैं। यहां आकर वैष्णव लोग हाथमें विष्णुके शङ्ख और चक्रका छाप देते हैं।

तुला (सं० स्त्री०) तोल्यतेऽनया तुल-अङ्। १ सादृश्य, तुलना, मिलाना। २ गृहका दारुबन्ध काष्ठ, घरका धरन। ३ मान, तोल। ४ शत पल परिमाण, प्राचीन कालकी एक तौल जो १०० पल या पांच सेरके लगभग होती थी। ५ भाण्ड, अनाज आदि नापनेका बरतन। ६ राशि विशेष, ज्योतिषकी बारह राशियोंमेंसे सातवीं राशि। मोटे हिसाबसे दो नक्षत्र और एक नक्षत्रके चतुर्थांश अर्थात् सवा दो नक्षत्रकी एक राशि होती है। चित्रा नक्षत्रके शेष ३० दण्ड और स्वाती तथा विशाखाके आद्य ४५ दण्ड तुलाराशि होते हैं। इसकी स्वरूप संज्ञा तुला पुरुष, घर, नानावर्ण, रस, उष्णस्वभाव, पश्चिम दिशाका स्वामी वायु प्रकृति विक्रम, वरशून्य, समचारी, अल्पस्त्रीसङ्गप्रिय, अल्पसन्तान संख्या, शूद्रवर्ण, उग्रस्वभाव, दिनबली, द्विपद, समान और शिथिलाङ्ग है।

(नीलकण्ठताज०)

यवनेश्वरके मतसे—पुण्यधर, पुरुष, उपाङ्ग, नाभि, कटि, वस्ति देश, वीथि विक्रयस्थान, नगर, पेषणशिलादि, पथ, मुक्तागण, धनागार पर्याधिवास अर्थात् मिट्टीका आदिके ऊपर, या गृहके ऊपर, एवं शस्यकी भूमि, पहाड़का पार्श्व, पर्वतकी चूड़ा वृक्ष, मृगया स्थान, उत्तम वायु आदि तुला शब्दमें हैं

(भट्टोत्पलधृत यवनेश्वर।)

इन सब संज्ञाओंसे नाना प्रकारकी गणनाएं की जा सकती हैं। जिस तरह, प्रश्न वस्तुकी प्रश्नगणनामें यह राशि जिस स्थानमें अवस्थित है, उसका ज्ञान हो जाता है एवं उस राशि द्वारा जिस तरह शरीरका विभाग है, उस उस स्थानमें ग्रहोंके रहनेसे व्रणादिके चिह्न तथा ग्रहोंके अभावसे उस उस अङ्गप्रत्यङ्गकी हानि वा दौर्बल्य इत्यादि जाना जाता है।

इस राशिका आकार तराजू लिए हुए मनुष्यका सा है। इसके अधिपति देवताका भी आकार शस्य-दहन तुलावान् पुरुष जैसा माना जाता है। यह राशि कृष्ण वर्ण और सक्रिय है।

तुलाराशिमें जिनका जन्म होता है, वह देवता, ब्राह्मण और साधुओंकी अर्चनामें रत, बुद्धिमान्, पवित्र, स्त्रीविजित, उन्नतदेह और उन्नत नासिकायुक्त, कृश, चञ्चलगात्र शिथिल, अटनशील, धनयुक्त, हीनाङ्ग, क्रयविक्रयमें कार्यकुशल, रोगी, बन्धुओंका उपकारी, क्रोधी, बन्धु द्वारा निन्दित एवं बन्धुसे परित्यक्त होता है।

(वृहज्जातक)

कोष्ठीप्रदीपके मतसे तुलाराशिमें जिसका जन्म होता है, वह अतिशय दीर्घताविहीन, शिथिल गात्रविशिष्ट, अर्थादि द्वारा बान्धवोंका परितोषकारक, अत्यन्त बहुभाषी, ज्योतिःयज्ञ और भृत्योंका अनुरक्त होता है।

(कोष्ठीप्र०) राशि देखो।

तुलाई (हिं० स्त्री०) १ रूईसे परिपूर्ण दोहरा कपड़ा,

दुबाई। ४ तौलनेका काम या भाव। ५ तौलनेकी मजदूरी।

तुलाकावेरी—कावेरी नदीका उत्पत्तिस्थान। कुर्ग राज्यके पश्चिम सह्याद्रिका जो अंश ब्रह्मगिरि नामसे प्रसिद्ध है उसीके ऊपर अक्षा० १२ २१ १०˝ उ० और देशा० ७५ ३३ १०˝ पू०में समुद्रपृष्ठसे ४४०० फुट ऊँचे भाग मर्करासे १ कोसकी दूरी पर तुला-कावेरी अवस्थित है। वहाँ स्थानके निकट एक बहुत पुराना देवमन्दिर है। देव दर्शन करनेके लिए हजारों तीर्थयात्री यहाँ आते हैं। तुला कावेरीके अनेक माहात्म्य पाये जाते हैं जिन में कोई तो अग्निपुराणीय, कोई ब्रह्मवैवर्त्तपुराणीय और फिर कोई ब्रह्मवैवर्त्त पुराणीय नामसे प्रचलित है। स्कन्दपुराणमें लिखा है कि तुला या कार्त्तिक मासमें यहाँ महाभीड़ होती है। उस समय यहाँ स्नान करनेसे अशेष फल मिलते और सब पाप नाश हो जाते हैं।

इस नदीमें कूर्गके प्रायः हर एक जातिके एक एक मनुष्य महाभीड़ पूजा करने आते हैं।

मन्दिरकी देखरेखके लिए गवर्मेण्टकी ओरसे वार्षिक २११र०) मिलते हैं।

तुलाकूट (स० क्ली०) तुलायाः कूटं (-तत्)। तुलामानका कूट तौलमें कपट। तुलायां कूटं यस्य। तुलाका कूट कारक लोक, तौलमें कपट करनेवाला, डाँड़ी मारनेवाला मनुष्य।

तुलाकोटि (स० स्त्री०) तुलां कोटयति कोटयति कुट-णिच्। १ नूपुर। तुलायाः कूटाति कुटअच्। २ मानभेद, एक तौलका नाम। ३ तराजूको डाँड़ीके दोनों छोर जिनमें पलड़ोंको रस्सी बंधी रहती है। ४ अर्बुद संख्या।

तुलाकोश (स० पु०) तुलायाः परिमाणस्य कोश इव। तुला परीक्षा।

तुलाजा (तुलजा) काठियावाड़के अन्तर्गत भावनगर राज्यका अवस्थित एक प्राचीरवेष्टित नगर। यह अक्षा० २१ २१ १५˝ उ० और देशा० ७२ ३ ४० पू० पहाड़के ढालुआँ भाग पर अवस्थित है। इसके चारों ओर अत्यन्त सुन्दर और मिस्त्रियोंसे पूर्ण बहुत पुराने जैनमन्दिर हैं। पहाड़के शिखर पर प्रसिद्ध तुलजाभवानीका मन्दिर और एक सुन्दर सरोवर विद्यमान है। सैकड़ों तीर्थ-यात्री तुलजा देवीका दर्शन और सरोवरमें स्नान करनेके लिए यहाँ आते हैं। स्कन्द पुराणीय तुलजामाहात्म्यमें इस स्थानकी कथा विशेषरूपसे वर्णित है। यहाँके पहाड़ पर खोदी हुई अनेक गुफा हैं जिनमें १८२२ ई० तक घोर कलंत लोग रहते थे।

तुलाजापुर—(तुलजापुर) १ हैदराबाद राज्यके ओसमानाबाद जिलेका पूर्वीय तालुक। यहाँकी लोकसंख्या ८०११२ और भूपरिमाण ४११ वर्गमील है। इसमें दो शहर और ११५ ग्राम लगते हैं। २ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १८ १ उ० और देशा० ७६ ५ पू०में सोलापुरसे २८ मील और ओसमानाबादसे १४ मील दूरमें अवस्थित है। लोकसंख्या ६६१२ है। यहाँ एक पुलिस इन्सपेक्टरका आफिस, एक अस्पताल, डाकघर, डाक बंगला और एक स्कूल है। यह व्यवसाय-का एक प्रधान केन्द्र है। पहाड़के नीचे तुलजाभवानीका एक मन्दिर है जहाँ दुर्गापूजाके समय दूर दूर देशोंसे आये हुये यात्रियोंका समागम होता है। कहते हैं कि सतारा और कोल्हापुरके राजाओंने उक्त मन्दिरका निर्माण किया है। प्रति मङ्गलवारको यहाँ हाट लगती है।

तुलाजी—तञ्जोरके शिवाजीवंशके एक प्रसिद्ध राजा। इन्होंने १७६५ से १७८८ ई० तक राज्य किया था। इन्होंने निम्न लिखित ग्रन्थ रचे हैं—१ धन्वन्तरिविलास ग्रन्थ, २ रत्न-कुल लीलानिधि (ज्योतिष) ३ धन्वन्तरीसारनिधि ४ सङ्गीतसारामृत ग्रन्थ ५ राजधर्मसारसंग्रह, ६ राम ध्यान, ७ वाक्यामृत और संङ्गीतसारामृत।

तुलाजी आङ्ग्रिय—प्रसिद्ध महाराष्ट्र दस्यु कनोजी आङ्ग्रियाका पुत्र। कनोजीके जैसा इनके उत्पातसे अंगरेज और महाराष्ट्रगण बहुत व्यस्त हो गये थे। अन्तमें बम्बई गवर्मेण्ट और महाराष्ट्र-सेनापतिने मिल कर तुलाजीको परास्त किया था।

तुलादण्ड (स० पु०) तुलायाः दण्डः। मानदण्ड, नापने की छड़ी।

तुलादान (स० क्ली०) तुलया परिमाणेन दान। तुला पुरुषदान महादान एक प्रकारका दान जिसमें किसी मनुष्यकी तौलके बराबर द्रव्यका दान होता है। यह षोडश महादानोंमेंसे एक है। तुलापुरुषदान देखो।

तुलाघट (सं० पु०) तुलायै तोलनार्थं घटः। तुलाधार दण्ड, तराजूको डंडो जिसमें रस्सी बंधी रहती है।

तुलाधर (सं० पु०) तुलाया मान दण्डस्य धरः धृ-अच्। १ वाणिजक, वनिक धर्मपुरुष। २ तुलाराशि। ३ सूर्य। ४ तुला गुण, तराजूकी डोरी। (त्रि०) ५ तुला-दण्ड धारक, तराजूको पकड़नेवाला।

तुलाधार (सं० पु०) तुला धृ-अण्। १ तुलाराशि। २ तुला-गुण, तराजूको डोरी जिसमें पलड़े बंधे रहते हैं। ३ वाराणसीनिवासी एक व्याध। यह सदा माता पिता-की सेवामें तत्पर रहता था, इसी पुण्यसे यह सर्वदर्शी हुआ था। कृतबोध नामक एक व्यक्ति जब इनके सामने आया तब इसने उसका समस्त पूर्व वृत्तान्त कह सुनाया। इस पर उस व्यक्तिने भी माता पिताकी सेवाका व्रत ले लिया। (वृहद्धर्मपु० ३ अ०) ४ वाराणसी निवासी वणिक्, इन्होंने महर्षि जाजलिको मोक्षधर्मका उपदेश दिया था। (भारत १२।२६० अ०)

तुलापरीक्षा (सं० स्त्री०) अभियुक्तोंकी एक परीक्षा। प्राचीन कालमें यह अग्निपरीक्षा विष-परीक्षादिके समान प्रचलित थी। इसकी परीक्षा इस तरह थी - एक खुले स्थानमें यज्ञकाष्ठको एक बड़ीसी तुला खड़ी की जाती और चारों ओर तोरण आदि बांधे जाते थे। फिर मन्त्र-पाठ पूर्वक देवताओंकी पूजा करते थे और अभि-युक्तको एक बार तराजूके पलड़े पर बिठाकर मट्टी आदिसे तोल लेते थे। फिर उसे उतार कर दूसरी बार तौलते थे। यदि पलड़ा कुछ झुक जाता था, तो अभियुक्त दोषी समझा जाता था।

तुलापुरुषकृच्छ्र (सं० पु०) एक प्रकारका व्रत। इसमें पिण्याक (तिलकी खली), भात, मट्ठा, जल और सत्तू इनमेंसे प्रत्येकको क्रमशः तीन तीन दिन तक खा कर पन्द्रह दिनों तक रहना पड़ता है। यमने इसे २१ दिनोंका व्रत लिखा है। इसका पूरा विधान याज्ञवल्क्य, हारीत आदि स्मृतियोंमें पाया जाता है।

तुलापुरुषदान (सं० क्ली०) तुलापुरुषस्य तुलास्थित पुरुष-भारसम परिमित द्रव्यस्य दानं ६ तत्। षोड़श महादानके अन्तर्गत दानविशेष, सोलह प्रकारके दानोंमेंसे एक दान। यह सब दानोंसे प्रधान और आदिदान है तथा यह अयन, विषुवसंक्रान्ति, व्यतीपात, दिनक्षय, युगादि, मन्वन्तरादि, संक्रान्ति, पौर्णमासी, द्वादशी, अष्टका आदिमें किया जाता है। संसार-भयभीतको तीर्थ, गृह, वन, तड़ाग अथवा मनोज्ञ स्थानमें यह महादान करना होता है। जीवन अनित्य है, धन अत्यन्त चञ्चल है। ऐसा जान कर इस दानमें हाथ डाले। पुण्यतिथिमें ब्राह्मणको निर्दिष्ट कर मण्डप प्रस्तुत करे और उसमें सात हाथ तोरण एवं चारों ओर चार कुण्ड और पूर्णकुम्भ स्थापन करे। इसके पूर्वोत्तरमें एक हाथकी वेदी बनावे इस वेदीमें ग्रहादि ब्रह्मा, शिव, अच्युत आदि देवताओंकी पूजा फल, वस्त्र और मालासे करनी होती है। ब्रह्मा, शिव और अच्युतकी पूजा प्रतिमामें तथा अन्य देवताओंकी पूजा स्थण्डिलमें करते हैं।

साल, इङ्गुदी, चन्दन, देवदारु, श्रीपर्णी और विल्व आदि लकड़ियोंकी एक तुला बनानी होती है। तुला-दण्डकी ऊंचाई ५ हाथ और बीचमें चार हाथका फासला रखे। तुलाकी सीकर लोहेकी होनी चाहिये। उसे सुवर्णयुक्त रत्नमाला, माल्यविलेपन आदिसे विभू-षित कर उसमें पांच रङ्गको पांच पताका लगा देनी चाहिये।

इस दानमें विधान दक्ष वेदविद् ब्राह्मण नियुक्त रहे। ऋग्वेदी होनेसे पूर्वको ओर यजुर्वेदी होनेसे दक्षिणकी ओर, सामवेदी होनेसे पश्चिमकी ओर तथा अथर्ववेदी होनेसे उत्तरकी ओर दो ब्राह्मणोंकी रखना होता है। पीछे विनायकादि लोकपाल आदित्य आदि ग्रहगण, ब्रह्मा आदि देवताओंकी पूजा करते और स्व स्व मन्त्र द्वारा होम चतुष्टय जपसूक्त आदि यजमानके साथ यथा विहित मन्त्र द्वारा करते हैं। पीछे देवता और ऋत्विकों-को हेमभूषण दान देते हैं। जापकगण शान्तिक अध्यायका जप करते और आदि अन्त और मध्यमें ब्राह्मण स्वस्तिवाचन करते हैं।

बाद तीन बार तुलाकी प्रदक्षिणा कर पुष्पाञ्जलि ले इस मन्त्रसे उसे आमन्त्रण करते हैं—

"नमस्ते सर्वदेवानां शक्तिस्त्वं शक्तिमास्थिता।
साक्षीभूता जगद्धात्रा निर्मिता विश्व योनिना॥"

एकत्र सर्वकर्माणि तथा भूतयतानि च ।
धर्मो धर्मकृता मध्ये स्थापितानि त्वयैव हि ॥
त्वं तुले सर्वभूतानां प्रमाणमिह कीर्तिता ।
मां तोलयन्ती संसारादुद्धरस्व नमोऽस्तु ते ॥
नमो नमस्ते गोविन्द ! तुलापुरुषसंज्ञक ।
त्वं हरे ! तारयस्वास्मानस्मात् संसारसागरात् ॥
पुरुष पञ्चभूतात्म कृतार्थिनां पुनः ।
पुन गृहीत पुरुष त्वं तुलामारोहयेत् ॥
स चक्रवर्ती सम्पत्ती सर्वोपरत्नभूषितः ।
सर्वे राजमहाराज हेम मुर्येण संयुत ॥"

इस मन्त्र पाठके बाद ब्राह्मणगण दान द्रव्यको तराजूके पलड़े पर रखते और फिर निम्नलिखित मन्त्र पढ़ते हैं ।

"नमस्ते सर्वभूतानां साक्षीभूते सनातनि ।
पितामहेन देवि त्वं निर्मिता परमेष्ठिना ॥
त्वया धृतं जगत् सर्वं सहस्थावरजङ्गमम् ।
सर्वभूतात्मभूतस्थे नमस्ते विश्वधारिणि ॥"

यह मन्त्र पढ़ कर तराजू परसे दान-द्रव्यको नीचे उतारते और उसमें आधा गुरुको देते, बाकीमें दूसरे दूसरे को बांट देते हैं । तुलाश्रित द्रव्यको अधिक काल तक घरमें नहीं रखना चाहिये ।

तुलादानमें तराजूके एक पलड़े पर दान करनेवाला बैठता है और दूसरे पलड़े पर उसीको तौलके बराबर सोना चांदी आदि द्रव्य रखे जाते हैं ।

हेमाद्रिमेंपरसे तुला बनानेमें ये सब फल लिखते हैं । जो मनुष्य पलाशकी तुला बनाते, वे मानसिक, वाचिक और कायिक सभी पापोंसे मुक्त होते हैं एवं जितने दिन वे सब वस्तु रहेंगी, उतने सौ कोटि वर्ष स्वर्गलोकमें वास करते हैं । पीछे पुण्यक्षय होने पर वे इस भूमिमें जन्म लेते एवं धन-धान्य द्वारा समृद्ध होते हैं । जो सोनेको तुला बनाते, उनके पूर्वके दश पुरुष एवं पीछेके दश पुरुष उद्धार पाते हैं तथा आप भी स्वर्गगामी होते हैं और कभी भी दरिद्रताको प्राप्त नहीं होते । जो चांदीकी तुला बनाते, वे स्वर्गगामी होते हैं और पृथ्वी पर राजा हो कर जन्म ग्रहण करते हैं । सुवर्णकारी कुल-दोषो आदि महापातकग्रस्त मनुष्य भी तांबेकी तुला बना कर निष्पाप होते हैं तथा स्वर्गलोकमें वास करते हैं ।

कांसेकी तुला बनानेसे इन्द्रका पद, लोहेसे उत्तम स्थान लाभ, पीतलसे स्वर्ग लोकसे गन्धर्व लोकमें वास रांगेसे चन्द्रका सायुज्य लाभ, सीसे सिक्कों और सेलको तुला बनानेसे अरोगी और सुखी होते हैं ।

जितने प्रकारके दान हैं उनमेंसे तुलादान ही सर्व-प्रधान है । सोलह दानमें प्रत्येक मनुष्यको यह दान करना उचित है । विभवके अनुसार सुवर्णादि तुलादान यथाक्रम विहित है । (हेमाद्रि)

२ व्रतभेद एक प्रकारका व्रत जो १५ या २१ दिनों तक करना होता है ।

१५ दिन साध्यव्रतमें पिण्याक मांड़ मट्ठा जल और सत्तू प्रत्येक तीन तीन दिन खा कर रहना पड़ता है । २१ दिन साध्यव्रतमें पूर्वोक्त ५ द्रव्य तीनदिन करके १५ और शेष ६ दिन तक वायुभक्ष अर्थात् उपवास करना पड़ता है ।

तुलापक्ष (सं० पु०) तुला म-पक्ष पद । तुलादण्ड, तराजूमें बंधी हुई डोरी ।

तुलाप्रग्राह (सं० पु०) तुला-प्रग्रह पत्र । तुलादण्ड तराजूकी डोरी ।

तुलाबीज (सं० क्ली०) तुलाया तोलनस्य बीज ६ तत् । गुञ्जा घुंघची जो तौलके काममें आते हैं ।

तुलाभवानी (सं० स्त्री०) महाद्रिविजयके मतानुसार एक नदी और नगरीका नाम । (तुकतुर देखो ।)

तुलामान (सं० क्ली०) तुलायै तोलनायै मान मोयति-इनि वा करणे ल्युट । १ तुलादण्ड तराजूकी डोरी । २ वह परिमाण या मान जो तौल कर लिया जाय । ३ बाट, बटखरा ।

तुलायष्टि (सं० पु०) तुलाया यष्टि ६ तत् । तुलादण्ड तराजू ।

तुलायष्टि (सं० स्त्री०) तुलाया यष्टि ६-तत् । तुलादण्ड तराजूमें बंधी हुई डोरी ।

तुलाराम सेनापति—पहले ये कछारके अन्तिम हिन्दू-राजा गोविन्दचन्द्रके एक सिपाही वा चपरासी

थे। विद्रोहमें पिताके मारे जाने पर तुलारामने पहाड़ पर जा कर आश्रय लिया और वहां वे अपना प्रभुत्व फैलाने लगे।

१८२४ ई०में ब्रह्म-सेनाने आ कर जब कछारराज्य पर आक्रमण किया, तब उस समय तुलारामने उन लोगोंको कुछ सहायता की थी। १८२८ ई०में कछार राज्यको बाध्य हो कर तुलारामके लिए कुछ पार्वतीय भूभाग छोड़ देना पड़ा। १८३४ ई०में राजा गोविन्द चन्द्रकी हत्याके बाद तुलारामने महर और दयाङ्ग नदी-मध्यवर्ती तथा दयाङ्ग और कापिली नदीको मध्यवर्ती भूमि गवर्मेण्टको छोड़ दी।

इससे पहले तुलारामने 'सेनापति' उपाधि ग्रहण कर ली थी। उत्तरमें दयाङ्ग और जमुना नदी, दक्षिणमें महा नदी, पूर्वमें धनेश्वरी तथा पश्चिममें दयाङ्ग नदीकी मध्यवर्ती समस्त भूमि तुलाराम सेनापतिके अधिकारमें थी। इस स्थानका सरकारी कागजातोंमें 'तुलाराम सेनापतिका राज्य, वा 'महाल रङ्गिलापुर'के नामसे उल्लेख किया गया है।

तुलाराम पहले गवर्मेण्टको प्रतिवर्ष ४ हाथी (बादमें ४८० रु०) कर देते थे। अत्यन्त वृद्ध हो जानेके कारण १८४४ ई०में इन्होंने अपनी सम्पत्ति दोनों पुत्रोंको बांट दी। १८५० ई०में इनकी मृत्यु हो गई। इनके बड़े लड़केका नाम था नकुलराम १८५१ ई०में नागाओंके विरुद्ध युद्ध करते समय मारे गये।

इसके बाद तुलाराम सेनापतिके राज्यमें नाना प्रकारकी विशृङ्खला होने लगी, जिससे वृटिश-गवर्मेण्टने (१८५४ ई०में) तुलारामके परिवारके ५ व्यक्तियोंको कुछ लाखराज जमीन और सामान्य वृत्ति ठहरा कर समस्त भूभाग उत्तर-कछारमें शामिल कर लिया। उस समय उक्त भूभागका परिमाण १००० वर्गमील था।

तुलावत् (सं० त्रि०) तुला विद्यतेऽस्य तुला-मतुप्, मस्य वः तुलाधारी, तराजू पकड़नेवाला।

तुलावा (हिं० पु०) गाड़ीकी एक लकड़ी। इसके सहारे गाड़ी खड़ी करके धुरीमें तेल दिया जाता है और पहिया निकाला जाता है।

तुलासूत्र (हिं० क्ली) तुलायै तोलनार्थं सूत्र। तुलादण्डस्थित सूत्र, तराजूकी रस्सी जिससे पलड़े बंधे रहते हैं।

तुलि (सं० स्त्री०) तुलि-इन्‌ वा। १ तुरी, जुलाहोंकी कूँची। २ चित्रकरकी वर्त्तिका, चित्र बनानेकी कूँची।

तुलिका (सं० स्त्री) तोलयति सादृश्यं गच्छति तुल आन्दोलकात्‌ ण्वुल्‌ टाप्‌ अत इत्‌। १ खञ्जनपक्षी। २ तुलि, कूँची।

तुलित (सं० त्रि०) तुल-तत्‌-करोतीति णिच्‌ कर्मणि क्त। १ परिमित, तुला हुआ। २ बराबर, समान।

तुलिनी (सं० स्त्री०) तुलमस्ति फलेऽस्याः तुल इनि ङीप्‌ पृषो० ह्रस्वः। शाल्मली, सेमरका पेड़।

तुलिफला (सं० स्त्री०) तुलि तुलयुक्तं फलं यस्याः पृषो० ह्रस्वः। शाल्मली, सेमरका पेड़।

तुली (सं० स्त्री०) तुरी रस्य लः। तन्तुवायकी तुरी, जुलाहोंकी कूँची।

तुली (हिं० स्त्री०) छोटा तराजू, कांटा।

तुलुव (सं० पु०) दक्षिणके एक प्रदेशका प्राचीन नाम। यह सह्याद्रि और समुद्रके बीच अक्षा० १२° २७' से १३° ५८' उ० और देशा० ७४° ४१' से ७५° उ० पू० कल्याणपुर और चन्द्रगिरि दोनों नदियोंके किनारे अवस्थित है। सह्याद्रिखण्डमें यह स्थान "तौलव" देश नामसे प्रसिद्ध है।

"ततः सह्याद्रिशिखरे ह्यदूरे दृष्टवान्मुनिः।
नानाफलप्रसवर्णैर्नानाकन्दरसानुभिः॥
अवतीर्य ददर्शाथ तौलवं देशमुत्तमम्।
तत्रैव ग्रामवान रामो मेधावी भृगुनन्दनः॥
महालिङ्गेश्वरं सम्यक्‌ पूजयामास शाश्वतः।"
(उत्तरार्द्ध २१।५२-५७)

इस स्थानके अधिवासी भी सह्याद्रिखण्डमें "तौलव" नामसे मशहूर हैं। (सह्याद्रि २।५।१) आजकल इस प्रदेशको उत्तर कनाड़ा कहते हैं। स्कन्दपुराणके 'तुलुवनाद उत्पत्ति' नामक ग्रन्थमें इस स्थानका माहात्म्य वर्णित है।

इस प्रदेशमें तुलुभाषा प्रचलित है। प्रायः चार लाख मनुष्य यह भाषा बोलते हैं। यह प्रधान द्राविड़ भाषाओंमें तुलु भी एक है। इस भाषामें कोई ग्रन्थ आज तक नहीं बनाये गये हैं। मलयालम् अथवा कनाड़ी अक्षरोंमें ही इस भाषाके लिखनेका काम लिया जाता है।

कनाड़ाके इतिहासके साथ तुलुवका इतिहास मिला हुआ है।

तुलूनी (हिं० स्त्री०) पैदल चलनेवाली वह चोट जो घूर्ण खाकर जो कुछ दूर पर जा कर पड़े।

तुलोप्तुला (सं० स्त्री०) तुला और उपतुला, चतुर्थभागका भाग तुला और तृतीय भागका नाम उपतुला है।

"भवति तुलोपतुल्ला मूल पादेन पादेन।"

(वृहत्संहिता ५३।१०)

तुल्य (सं० त्रि०) तुलया सम्मितं यत्। नौवयोधर्मेति। पा ४।४।९१) सादृश्य, बराबरी। इसके संस्कृत पर्याय—सम, सदृश, सदृक्ष, सदृश, साधारण समान, सवर्ण, सन्निभ और सरूप। इनके उत्तरपदमें रहनेसे तुल्यवाचक होता है। जिस, संकाश, नीकाश प्रतीकाश, उपमा, भूत, रूप, कल्प प्रभ, ये भी तुल्यके पर्याय हैं। २ समान, बराबर। (पु०) ३ समासव्यात अव्यय।

तुल्यकोणिक (Equiangular) जिस क्षेत्रके सब कोण बराबर हों।

तुल्यगम (सं० पु०) तुल्य आगाति तुल-आ-गम। तुल्यगामी, बराबर बराबर जानेवाले।

तुल्यता (सं० स्त्री०) तुल्यस्य भावः तुल्य तल्-टाप। १ सादृश्य। २ समता, बराबरी।

तुल्यदर्शन (सं० त्रि०) तुल्य दर्शन यस्य, बहुव्री०। समान दर्शन।

तुल्यपान (सं० क्ली०) तुल्यं सह पान। सजातिके लोगोंके साथ मिलजुल कर खानापीना।

तुल्यप्रधानव्यङ्ग्य (सं० पु०) वह व्यङ्ग्य जिसमें वाच्यार्थ और व्यङ्ग्यार्थ बराबर हो।

तुल्यबल (सं० त्रि०) तुल्य बल यस्य। १ समशक्ति सम्पन्न, समान ताकतवाला। (क्ली०) तुल्य बलो कर्मधा०। २ समान बल, बराबर जोर।

तुल्यभावन (सं० क्ली०) तुल्य भावन। एक प्रकारको गणितका हिसाब।

तुल्यमूल्य (सं० त्रि०) तुल्य मूल्य यस्य। १ समान मूल्य विशिष्ट, बराबर दामवाला। २ समान बराबर।

तुल्ययोगिता (सं० स्त्री०) काव्यालङ्कारविशेष, एक अलङ्कार जिसमें प्रस्तुतों या अप्रस्तुतोंका अर्थात् बहुतसे उपमेयों या उपमानोंका एक ही धर्म बतलाया जाय।

तुल्ययोगी (सं० त्रि०) समान सम्बन्ध रखनेवाला।

तुल्यरूप (सं० त्रि०) तुल्य रूप यस्य। एकरूप सदृश।

तुल्यशक्ति (सं० त्रि०) तुल्या शक्तिर्यस्य। एक व्यवसायी, एक रोजगारी।

तुल्यशः (अव्य०) तुल्य वीप्सार्थे-शस्। बराबर बराबर।

तुल्याकृति (सं० त्रि०) तुल्या आकृतिर्यस्य। सदृशाकृति, जो देखनेमें एकसे हों।

तुल्वल (सं० पु०) ऋषिविशेष, एक ऋषिका नाम।

तुव—तव देखो।

तुवर (सं० पु० क्ली०) तवति हिनस्ति रोगान् तु बाहु-लकात् करन्। १ कषाय रस कसैला रस। २ धान्यविशेष एक प्रकारका धान। ३ आढ़क, अरहर। ४ नदियों और समुद्रके तटपर होनेवाला एक पौधा। इसके फल इमलीके समान होते हैं जिनके खानेसे पशुओंका दूध बढ़ता है। ५ पशातकका गवि, वह गाय जिसके सींग नहीं निकले हों। (त्रि०) ६ कषाय, कसैला। ७ तिक्त तीता। ८ अश्मश्रु, बिना दाढ़ी मूछका।

तुवरयावनाल (सं० पु०) तुवरः कषायः यावनालः कर्मधा०। धान्यविशेष लाल ज्वार, लाल जुन्हरी। पर्याय—तुवर, कषाययावनाल, रक्तयावनाल, लोहित कुशस्थ, जुन्हरी धान्य। यह शुष्क—कषाय, उष्ण, विरेचक संग्राही, वातनाशक, विदाही और शोषकारक है।

तुवरिका (सं० स्त्री०) तुवर कषायरसोऽस्त्यस्याः तुवर-ठन्। १ सौराष्ट्रमृत्तिका गोपीचन्दन। २ आढ़की, अरहर।

तुवरी (सं० स्त्री०) तुवर स्त्रियां लिङ्गात् ङीष्। १ आढ़की अरहर। २ धान्यभेद एक प्रकारका धान। गुण यह धारक, लघु, तीक्ष्ण उष्णवीर्य, अग्नि कारक और कफ, विष, रक्त, कण्डु, कुष्ठ और कोष्ठगत

रोगनाशक है। २ सौराष्ट्रमृत्तिका, गोपीचन्दन। पर्याय—मृत्, सौराष्ट्री, मृत्स्ना, आमङ्क, मसो, सुराष्ट्रजा, मृत्तालक, काली, मृत्तिका, मृत्स्या, काक्षो, सुजाता। गुण—यह तिक्त, कटु, कषाय, उष्ण, लेखन, चक्षु को हितकर, ग्राही, छर्दि और पित्तके लिये जृम्भानाशक है।

तुवरीमृत् (सं० स्त्री०) सौराष्ट्रमृत्तिका, गोपीचन्दन

तुवरीशिम्ब (सं० पु०) तुवर्या इव शिम्बा फललक्ष यस्य। चक्रमर्द्द वृक्ष, चकवड़का पेड़, पँवार।

तुवि (सं० स्त्री०) तुम्बी पृषो० साधुः। १ तुम्बी, तूँबी। २ बहुशर्द्धार्थ, जिसके कई अर्थ हों।

तुविकूर्मि (सं० त्रि०) बहुकर्मा, युद्धमें अनेक प्रकारके काम करनेवाला।

तुविग्र (सं० त्रि०) १ प्रभूतगमन, बहुत शब्द जानेवाला। २ बहुत जोरसे शब्द करनेवाला। ३ बहुत खानेवाला।

तुविग्राभ (सं० त्रि०) बहुग्राहक, जोरसे पकड़नेवाला।

तुविग्र (सं० त्रि०) पूर्ण घोष, बहुत प्रशंसनीय।

तुविग्रिव (सं० त्रि०) विस्तीर्णकन्धर, जिसका कंधा बहुत मजबूत हो।

तुविजात (सं० त्रि०) १ ओजस्वी, ताकतवर। २ जो बहुतोंकी रक्षाके लिये उत्पन्न हुआ हो। ३ जिससे बहुतोंको उत्पत्ति हो। यहां तुविजात इन्द्रका विशेषण है।

तुविद्युम्न (सं० त्रि०) तुवि बहु द्युम्नं धनं यस्य। प्रभूतधनेन्द्र, जिसके पास बहुत धन हो।

तुविनृम्ण (सं० त्रि०) प्रभूत बलयुक्त, जो बहुत ताकत रखता हो।

तुविप्रति (सं० त्रि०) १ बहुप्रतिगन्ता, बहुतोंसे भेंट करनेवाला। २ बहुतोंसे मुकाबला करनेवाला।

तुविबाध (सं० त्रि०) बहुपीड़क, बहुतोंको कष्ट पहुचानेवाला।

तुविब्रह्मन् (सं० त्रि०) बहुस्तोत्र, जिसके अनेक स्तोत्र हों।

तुविमघ—तुवीमघ देखो।

तुविमन्यु (सं० त्रि०) प्रवृद्धमति, जिसका पक्का विचार हो।

तुविस् (सं० क्लो०) तु-वृद्धौ पूर्त्तौ वा इसि किच्च। १ वृद्धि, बढ़ती। २ प्रज्ञा, बुद्धि, ज्ञान। ३ बल, ताकत।

तुविम्रक्ष (सं० त्रि०) जिसके वरसनेमें बहुतोंका अनिष्ट हो।

तुविराधस् (सं० त्रि०) प्रभूत धनयुक्त, धनी, जिसके पास खूब दौलत हो।

तुविवाज (सं० त्रि०) प्रभूत बलयुक्त, बलवान्, ताकतवर।

तुविशग्मम (सं० त्रि०) बहु सुखयुक्त, सुखी, जिसे यथेष्ट आराम हो।

तुविशुष्म (सं० त्रि०) बहुबल, बलवान्, ताकतवर।

तुविश्रवस् (सं० त्रि०) बहु अन्नयुक्त, जिसके पास बहुत अनाज हो।

तुविष्टम (सं० त्रि०) बहुतम, बली, ताकतवर, जोरावर।

तुविष्मत् (सं० त्रि०) तुविस्-मतुप्। १ प्रज्ञावान्, बुद्धिमान्। २ जोरावर।

तुविष्वणस् (सं० त्रि०) प्रभूतध्वनियुक्त, जिससे बहुत शब्द निकलता हो।

तुविष्वणि (सं० त्रि०) महाशब्दयुक्त, जिससे खूब आवाज आती हो।

तुविष्वन् (सं० त्रि०) बहु शब्दयुक्त, जिसमें बहुत शब्द हों।

तुवीमघ (सं० त्रि०) प्रभूत धनयुक्त, बहुत धनी।

तुवीरव (सं० त्रि०) बहु शब्दयुक्त, जिसमें बहुत आवाज हो।

तुवीरवत् (सं० त्रि०) तुवो मत्वर्थीयो रः ततो मतुप्, मस्य व। बहु स्तोत्रयुक्त, जिनमें अनेक स्तोत्र हों।

तुव्योजस् (सं० त्रि०) तुवि ओजः यस्य। बहुबलयुक्त, बहुत बलवान, जो खूब ताकत रखता हो।

तुशियार (हिं० पु०) पश्चिम-हिमालयमें होनेवाला एक भाड़। पुरुनो इसके छिलकेसे रस्सियाँ बनाई जाती हैं।

तुष (सं० पु०) तुष क। १ धान्यत्वक्, अन्नके ऊपरका छिलका, भूसी। २ विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़। ३ अंडेके ऊपरका छिलका।

तुषग्रह (सं० पु०) तुषेण गृह्यते ग्रह कर्मणि अप्। अग्नि, आग।

तुषज (सं० त्रि०) तुषे जायते जन-ड। तुषजात अग्नि प्रभृति, वह आग जो भूसीसे निकली हो।

तुषधान्य (सं॰ क्लो॰) तुषावृत धान्य। सतुषधान्य, छिलका सहित धान।

तुषसार (सं॰ पु॰) तुष सरति अनुसरति सृ-अण्। आग भूसोके बीच बहुत धीरे धीरे धँसती है, इसीसे इसका नाम तुषसार रखा गया है।

तुषानल (सं॰ पु॰) तुषस्य अनलः। १ तुषजातवह्नि, भूसीको आग, करसीकी आँच। २ तुषाग्निमें आत्मदाह रूप प्रायश्चित्तविशेष, भूसी या घास फूसकी आगमें भस्म होनेकी क्रिया जो प्रायश्चित्तके लिए की जाती है। कुमारिलभट्ट तुषाग्निमें ही भस्म हो कर मरे थे।

तुषाम्बु (सं॰ क्लो॰) तुषस्य अम्बुः ६-तत्। तुषोदक एक प्रकारकी कांजी जो भूसीसहित कूटे हुए जौको सड़ा कर बनाई जाती है। गुण—अग्निदीप्तिकारक, हृदयग्राही, तीक्ष्ण, उष्णवीर्य, पाचक, रक्तपित्तजनक एवं पाण्डु, क्रिमि और बस्तिगत शूलविनाशक है।

तुषार (सं॰ पु॰) तुषत्यनेन अजाद् तुष-आरन्। (उणा॰ ३।१३८) १ हिम बरफ। २ हिमकण, पाला।

शिशिरवर्षण ही तुषारकी उत्पत्तिका प्रधान कारण है। रातको इसके ऊपरकी सभी वस्तु जब अपना ताप विकीर्ण कर वायुराशिकी अपेक्षा अधिक ठण्ढी हो जाती है तब चारों ओरकी वायुके अन्तर्गत जलीय वाष्प घनीभूत हो कर तुषारके बिन्दुके रूपमें उनके ऊपर जम जाती है।

उष्णताका जितना ही ह्रास होता है, वायुराशिमें उतनी ही कम वाष्प रहती है अर्थात् उतनी ही कम वाष्प द्वारा वायुराशि परिपूर्ण होती है। सुतरां दिनके समयमें जो वाष्प रहती है, रातमें कुछ कुछ शीतल हो कर यदि वह उससे परिपूर्ण हो जाय तो शीतलत्वके संस्पर्शसे ही उसमें अवस्थित कुछ वाष्प अभी ही कर तुषारके रूपमें परिणत हो जाती है। वायुमें जितनी ही अधिक वाष्प रहती है उतना ही कम यदि वह ठण्ढी हो जाय तो तुषार जमता है। इस देशमें ग्रीष्मकालमें दिनकी वायुराशि बहुत गरम रहती है, किन्तु रातको उतनी ठण्ढी नहीं रहती, इसी कारण उसमें मिली हुई है। वाष्प भी तुषाररूपमें परिणत नहीं होती है। जिन सब वस्तुओंकी शिशिरवर्षणशक्ति प्रबल रहती है, वे रातको कुछ शीतल हो जाती हैं। यही कारण है कि उन सब वस्तुओंके ऊपर कुछ तुषार जम जाता है। सभी धातु द्रव्यों की शिशिरवर्षणशक्ति बहुत कम है, इसीसे उनके ऊपर उतना तुषार नहीं जमता, किन्तु मट्टी, काँच, घास, वृक्षपत्र, पशम आदि द्रव्योंमें शिशिरवर्षणशक्ति अधिक है इस कारण उनके ऊपर तुषार भी अधिक जम जाता है उससे पृथ्वीतलमें तेज शिशिरको तथा तुषारउत्पत्तिको प्रतिबन्धकता होती है। जब आकाशमण्डल मेघाच्छन्न रहता है, तब वह भूपृष्ठ तेज-विकिरण द्वारा उतना ठण्ढा नहीं हो सकता, क्योंकि मेघखण्डोंसे तेज विकीर्ण होता हुआ उससे ऊपर गिरता है। यही कारण है, कि मेघाच्छन्न रात्रिमें उतना तुषार नहीं पड़ता। विस्तृत आकाशविशिष्ट स्थानके सिवा भी तुषार नहीं जमनेका यही कारण है। जब वायु जोरसे चलती है, तब वह वस्तु अधिक ठंढी हो जाती है और तुषारोत्पत्ति बहुत कुछ ज्यादा हो जाती है। क्योंकि उतनी ही कम शीतल होनेसे वायु वाष्पकणसे परिपूर्ण हो जाती है। यद्यपि वस्तु तक अभी वायुमण्डलका अन्तवर्ती तेज व्योममें हुए हैं अवयवसमूह वाष्पाकारमें ऊपर जा कर जो जम गिरता है उसे तुषारकण कहते हैं। यह तुषारकण प्राणियोंके लिये तो अहितकर है, पर वृक्षोंके लिये विशेष उपकारक है। भावप्रकाशके मतसे इसके गुण—शीतल रूक्ष, वायुवर्द्धक, पित्तनाशक, एवं कफ, उरुस्तम्भ, कण्ठरोग, मन्दाग्नि, मेद और गलगण्डादि रोगनाशक। (भावप्रकाश॰) ३ शीतलस्पर्श। ४ कर्पूरभेद, एक प्रकारका कपूर, भीमसेनी कपूर। ५ देशभेद, हिमालयके उत्तरका एक देश। चीन लोगोंके ग्रन्थोंमें यह देश तोखारि नामसे प्रसिद्ध है। ७ तुषारदेशोद्भव जाति, तुषारदेशमें बसनेवाली जाति। प्रत्नतत्त्वविदोंके मतानुसार यह जाति यवजातिकी एक शाखा है। इसी शताब्दीमें इन लोगोंने भारतवर्षमें प्रवेश कर अनेक स्थानों पर आक्रमण किया था। (त्रि॰) ८ शीतल स्पर्शयुक्त, छूनेमें बरफकी तरह ठण्ढा।

तुषारकण (सं॰ पु॰) तुषारस्य कणः ६-तत्। हिमकण।

तुषारकर (सं॰ पु॰) १ हिमकर, चन्द्रमा। २ कर्पूरभेद, एक प्रकारका कपूर।

तुषारकाल (सं॰ पु॰) तुषारस्य कालः ६-तत्। शीतकाल।

तुषारकिरण (सं॰ पु॰) हिमकिरण, चन्द्रमा।

तुषारगिरि (सं॰ पु॰) हिमालय।

तुषारगौर (सं॰ वि॰) तुषारवत् गौरः। १ जो हिमसा उजला हो। (क्लो॰) २ कर्पूर, कपूर।

तुषारनविहार—प्रतापगढ़ जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन शहर। अयोध्याके मध्य यह स्थान बहुत प्राचीन और सुप्रसिद्ध है। मुसलमानोंके शासनकालमें यह जिलेका प्रधान शहर था। अब भी यह स्थान सूजा-विहार नामसे मशहूर है। गङ्गाके प्राचीन तलके ऊपर यह नगर बसा है। नगरके पश्चिमभागमें ऊंचे मट्टीके स्तूप हैं, जिनमेंसे कहीं कहीं खोद कर प्रत्नतत्त्ववित् कनिंहम साहबने बड़ी बड़ी ईंटें निकाली थीं। उनके मतानुसार चीन परिव्राजक यूएनचुअङ्गने जो अयोमुख वा हयमुख नामक स्थानका उल्लेख किया है वही यह तुषारनविहार हो सकता है। यहां पहले बौद्धमतका प्राधान्य था। अभी भी यहांके बुद्ध और बुद्धिकी मूर्त्ति प्रसिद्ध हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है, कि पहले इस स्थानको तुषारराम-विहार कहते थे, उसीके अपभ्रंशसे तुषारन-विहार नाम पड़ा है। यहांका अष्टभुजाका मन्दिर उल्लेखयोग्य है।

तुषारपाषाण (सं॰ पु॰) १ ओला। २ हिम, बरफ।

तुषारमूर्त्ति (सं॰ पु॰) तुषारः मूर्त्तिर्यस्य। हिमकर, चन्द्रमा।

तुषाररश्मि (सं॰ पु॰) तुषारः रश्मिर्यस्य। हिमकर, चन्द्रमा।

तुषाराद्रि (सं॰ पु॰) तुषारस्य अद्रिः। हिमालय पर्वत। इस पहाड़ पर बहुत बरफ गिरता है, इसीसे इसका नाम तुषाराद्रि पड़ा है।

तुषाराम्बु (सं॰ क्लो॰) नीहारका जल, कुहरेका पानी, ओस।

तुषित (सं॰ पु॰) तुष्यति तुष बाहुलकात् कितच्, तारकादित्वात् इतच वा। १ गणदेवताभेद, एक प्रकारके गणदेवता। इनकी संख्या बारह है, किन्तु मन्वन्तरके भेदसे इनके नाम बदला करते हैं। इनके नाम ये हैं—प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, चक्षु, श्रोत्र, रस, घ्राण, स्पर्श, बुद्धि और मन। (गारुड़ग्री)

चाक्षुषमन्वन्तरमें तुषित नामक बारह देवताओंने वैवस्वतमन्वन्तरके आने पर मनुष्योंकी भलाईके लिये अदितिके गर्भमें जन्म लिया था, वैवस्वतमन्वन्तरमें ये द्वादश आदित्यके नामसे प्रसिद्ध हुए थे। (हरिवंश ३ अ॰)

इनके नाम इस प्रकार हैं—तोष, प्रतोष, भद्र शान्ति, इड़स्पति, इध्म, कवि, विभु, स्वाह्न, सुदेव और रोचन। कोई कोई तो इनकी संख्या ३६ और कोई १२ बतलाते हैं। किसीने इनकी इसप्रकार मीमांसा की है—एक एक मन्वन्तरमें १२, इस हिसाबसे तीन मन्वन्तरमें ३६ हुए। इसी अभिप्रायसे "षट्त्रिंशत् तुषिता मताः" ऐसा लिखा गया है। २ विष्णु। (भारत शान्ति ३८ अ॰)

३ बौद्धमतानुसार एक स्वर्गका नाम।

४ जैनधर्मानुसार ब्रह्मस्वर्गकी दिशाओंमें रहनेवाले सारस्वत आदित्य आदि आठ प्रकारके लौकान्तिक देवोंमेंसे एक। ये तीर्थङ्करोंके तपकल्याणकमें आते और उनके वैराग्यका अनुमोदन करते हैं। (तत्त्वार्थसूत्र ४।२५)

तुषोत्थ (सं॰ क्लो॰) तुषादुत्तिष्ठति उद-स्था-क। तुषोदक, काञ्जी।

तुषोदक (सं॰ पु॰) तुषस्य उदकं, ६-तत्। १ तुषाम्बु, छिलके समेत कूटे हुए जौको पानीमें सड़ा कर बनाई हुई कांजी। यह अग्निदीपिकारक, हृदयग्राही, तीक्ष्ण, उष्णवीर्य, पाचक, रक्तपित्तजनक एवं पाण्डु, कृमि और वस्तिगत शूलनाशक है।

सौवीरक भी तुषोदकके समान गुण-सम्पन्न है। कच्चे अथवा पक्के जौको भूसी निकाल कर जो कांजी बनाई जाती है, उसीको सौवीर कहते हैं। सौवीर और तुषोदकमें भेद यही है कि छिलके समेत जौकी कांजीका नाम तुषोदक है और विना छिलकेकी कांजीका नाम सौवीर। सौवीर देखो।

तुष्ट (सं॰ त्रि॰) तुष कर्त्तरि-क्त। १ सन्तोषयुक्त, तृप्त। २ प्रसन्न, राजी, खुश। (पु॰) ३ विष्णु। ये ही एक मात्र आनन्दस्वरूप और आनन्दाश्रय हैं, इसीसे तुष्ट शब्द कहनेसे विष्णु का बोध होता है।

तुष्टि (सं॰ स्त्री॰) तुष-भावे क्तिन्। १ तोष, सन्तोष, तृप्ति। २ तुष्टिमद। यह तुष्टि नौ प्रकारकी है, चार आध्यात्मिक और पांच बाह्य। (सांख्यका॰ ५१)

आध्यात्मिक तुष्टियां ये हैं—प्रकृति, उपादान, काल और भाग्य। आध्यात्मिकका अर्थ आत्मगत है। प्रकृति सगुण है या निर्गुण यह सभी तत्त्व प्रकृतिके ही कार्य हैं। यह जाननेसे जो तुष्टि होती है, उसे प्रकृत्याख्य तुष्टि कहते हैं।

उपादान—कोई कोई तत्त्वोंको न जान कर केवल उपादान ग्रहण करते हैं अर्थात् संन्याससे विवेक होता है ऐसा समझ संन्याससे जो तुष्टि होती है, उसे उपादानाख्य तुष्टि कहते हैं।

काल—काल पा कर आप ही विवेक या मोक्ष प्राप्त हो जायगा। अतः तत्त्वाभ्यास निष्प्रयोजन है ऐसा जो जानता है और जो इसीमें सन्तुष्ट रहता है, इस प्रकारकी तुष्टिको कालाख्य तुष्टि कहते हैं।

भाग्य—भाग्यमें होगा तो मोक्ष हो ही जायगा, ऐसी तुष्टिको भाग्याख्य तुष्टि कहते हैं। ये चार प्रकारकी तो आध्यात्मिक तुष्टि हुई।

अब बाह्य तुष्टिका विषय कहते हैं। बाह्य विषयोंकी विरक्तिसे जो शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्धरूप पांच प्रकारकी तुष्टियां उत्पन्न होती हैं उन्हें बाह्यतुष्टि कहते हैं। अर्जन रक्षण, क्षय, सङ्ग और हिंसा इन पांच विषयोंसे विरत अर्थात् इनमेंसे प्रत्येकका दोष देख कर उनसे विरत हो जानेका नाम पांच बाह्य तुष्टि है।

(सांख्यका॰)

तुष्टि आध्यात्मिकादिके भेदसे ९ प्रकारकी है चार आध्यात्मिकी तुष्टि और पांच बाह्यतुष्टि। आत्मसाक्षमें या आत्मतुष्टिसे उत्पन्न होनेका नाम आध्यात्मिक है। प्रकृतिसे विवेकख्यातिको ही मुक्ति कहते हैं इस कारण प्रकृति ही उपास्य है। प्रकृतिके सिवा और दूसरा उपास्य ही नहीं है ऐसा सोच कर जो तुष्टि होती है उसे प्रकृति तुष्टि कहते हैं इसका नाम अम्भ है। प्रव्रज्या और संन्यासादिके बिना विवेकसे मुक्ति नहीं है; यही मुक्ति के प्रतिकारण हैं, ऐसा समझ कर अनेक व्रती हो जाते हैं और सन्तुष्ट रहते हैं। इस प्रकारकी तुष्टिका नाम उपादानतुष्टि है, इसीको सलिल कहते हैं। अतो जो तुष्टि है, समय पा कर मुक्ति हो जायगी, ऐसी तुष्टिका नाम काल है, इसीको ओघ कहते हैं। भाग्यमें रहनेसे मुक्ति अवश्य होगी ऐसी तुष्टिको भाग्य कहते हैं, इसका नाम वृष्टि है।

इनके सिवा विषयत्यागजनित ५ प्रकारकी तुष्टि है, जिनका विवरण इस प्रकार है—

धनोपार्जन करनेमें बहुत कष्ट होता है। अतः धन का कोई प्रयोजन नहीं, ऐसा जान कर जो सन्तोष रखा जाता है, उसे पारतुष्टि कहते हैं। धनकी रक्षा करना और भी कठिन है ऐसा जान कर विषयादि त्यागपूर्वक सन्तुष्ट रहनेमें जो सन्तोष है, उसका नाम सुपारतुष्टि है। धनके नाश हो जानेसे बहुत दुःख होता है उतना नहीं रहना ही अच्छा है ऐसी तुष्टि को पारापारतुष्टि कहते हैं। ज्यों ज्यों भोग करते हैं, त्यों त्यों इच्छा बढ़ती जाती है अतः भोग भी दुःखदायक है। उसका त्याग करना ही श्रेय है। इस प्रकार त्याग बुद्धिसे जो सन्तोष उत्पन्न होता है उसे अनुत्तमाम्भतुष्टि कहते हैं। विषय सम्बन्धमें हिंसादि नाना प्रकारके दोष होते हैं अर्थात् बिना दूसरेको कष्ट दिये सुख नहीं मिलता यह जान कर विषय विमुख होनेमें जो सन्तोष है, उसे उत्तमाम्भतुष्टि कहते हैं। ये जो ९ प्रकारकी तुष्टियां आत्मज्ञानकी उद्बोधक या वर्त्तक हैं। इनके नहीं रहनेसे ज्ञाननाशक और मोक्षनाशक विपर्यय अशक्तियां प्रबल हो जाती हैं। (सांख्यत॰) ३ तुष-कर्त्तरि क्तिन्। ४ गौर्यादि षोडश मातृकाओंमेंसे एक मातृकाका नाम। ५ रेणुका देवी। ६ शक्तिविशेष। (देवीभाग॰ १।१२।११) ७ क सखी आठ मातृकोंमेंसे एक।

तुष्टिकर (सं॰ त्रि॰) तुष्टिं करोति तुष्टि-कृ-ट। सन्तोषकर, तृप्तिजनक।

तुष्टिजनक (सं॰ त्रि॰) तुष्टेर्जनकः ६-तत्। सन्तोषजनक, तृप्तिकर।

तुष्टिमत् (सं॰ त्रि॰) तुष्टिरस्त्यस्य तुष्टि मतुप्। १ तोषयुक्त, सन्तुष्ट। (पु॰) २ उग्रसेनके पुत्र कंसके भाई।

(भाग॰ ९।२४।२४)

तुट्ठु (सं० पु०) तुष वाहुलकात् तुक्। कर्णस्थित मणि, वह मणि जो कानमें पहना जाता है।

तुष्य (सं० पु०) तुष्य कर्त्तरि क्यप्। महादेव, शिव। तुट्ठिद्र देखो।

तुस (सं० पु०) तुष पृषो० वस्य सत्वं। तुष, भूसी।

तुसी (हिं० स्त्री०) अन्नके ऊपरका छिलका भूसी।

तुस्त (सं० क्ली०) तुन-क्त। रेणु, धूल, गर्द।

तुहमत (हिं० स्त्री०) तोहमत देखो।

तुहर (सं० पु०) तुह-वाहु० करण्। कुमारानुचरभेद, कुमारके एक अनुचरका नाम।

तुहार (सं० पु०) तुह-वाहु० आरन्। कुमारानुचरभेद, कुमारका एक अनुचर।

तुहिन (सं० क्ली०) तुह्यतेऽनेन तुह इनन् गुणे प्राप्ते ह्रस्वय। वेपितुह्योर्ह्रस्वश्च। उण् २।५२। १ हिम, बरफ। २ चन्द्रमाका तेज, चांदनी। ३ तुषार, कुहरा, पाला। (त्रि०) ४ शीतल, ठंडा।

तुहिनकण (सं० पु०) तुहिनस्य कणः, ६-तत्। हिम-कण, बरफ।

तुहिनकर (सं० पु०) तुहिनं करोऽस्य। १ चन्द्रमा। २ कर्पूर, कपूर।

तुहिनकिरण (सं० पु०) चन्द्रमा।

तुहिनकिरणपुत्र (सं० पु०) तुहिनकिरणस्य पुत्रः ६-तत्। १ चन्द्रपुत्र, बुध। इन्होंने ताराके गर्भसे जन्मग्रहण किया था। तारा देखो।

तुहिनगिरि सं० पु०) हिमालय पर्वत।

तुहिनगु (सं० पु०) तुहिनाः गावोऽस्य। शीत, चन्द्रमा।

तुहिनदीधिति (सं० पु०) चन्द्रमा।

तुहिनद्युति (सं० पु) चन्द्रमा।

तुहिनरश्मि (सं० पु०) तुहिन, चन्द्रमा।

तुहिनशैल (सं० पु०) तुहिनस्य शैलं ६-तत्। हिमा-लय पर्वत।

तुहिनांशु (सं० पु०) चन्द्रमा।

तुहिनांशुतैल (सं० क्ली०) तुहिनांशो तैलं ६ तत्। कर्पूर-तैल, कपूरका तेल।

तुहिनाचल (सं० पु०) हिमालय।

तुहिनाद्रि (सं० पु०) हिमालय।

तुहिनाभ्र (सं० पु०) १ चन्द्रमा। २ कर्पूर।

तुहुण्ड (सं० पु०) १ दनुवंशके एक दानवका नाम। यह दानव बहुत पराक्रमी था। (भारत आदि ६५ अ०) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। (भारत आ० १८६ अ०)

तू (हिं० सर्व०) १ एक सर्वनाम। यह उस पुरुषके साथ आता है, जिसे संबोधन करके कुछ कहा जाता है। (हिं० स्त्री०) २ कुत्तोंको बुलानेका शब्द।

तूँ (हिं० सर्व०) तू देखो।

तूंबड़ा (हिं० पु०) तूंबा देखो।

तूंबना (हिं० क्रि०) तूमना देखो।

तूंबा (हिं० (पु०) १ कड़ुआ गोल कद्दू, तितलौकी। २ कद्दूको खोखला करके बनाया हुआ बरतन। इसे प्रायः साधु अपने साथ रखते हैं, कमण्डल।

तूंबी (हिं स्त्री०) १ कड़ुआ गोल कद्दू। २ कद्दूको खोखला करके बनाया हुआ बरतन।

तूटना (हिं० क्रि०) टूटना देखो।

तूण (सं० पु०) तूण्यते पूर्यते वाणैः तूण पूरणे घञ्। १ वाणाधार, तीर रखनेका चोंगा, तरकश। पर्याय—उपासङ्ग, तूणीर, निषङ्ग, इषुधि, तूणी। २ चामर नामक वृक्षका नाम।

तूणक (सं० क्ली०) छन्दोविशेष, एक प्रकारका छन्द। इसके प्रत्येक चरणमें १५ अक्षर होते हैं, पहलेसे ले कर एक एकके बाद एक एक गुरु रहता है।

तूणक्ष्वेड़ (सं० पु०) वाण, तीर।

तूणधार (सं० पु०) तूणं धारयति धारि-अन्। तूणधारी, वह जो तीर धारण करता हो।

तूणव (सं० पु०) तूणस्तदाकारोऽस्त्यस्य केशादित्वात् व, तूणं तदाकारं वाति वा-क इति वा। तूणाकार वाद्यभेद, एक प्रकारका बाजा जिसका आकार तूणसा होता है।

तूणवध्म (सं० पु०) तूणवः वाद्यभेदं धमति ध्मा-क। तूणव वाद्यकारक, वह जो तूणव नामका बाजा बजाता हो।

तूणवत् (सं० त्रि०) तूण अस्त्यर्थे मतुप् मस्य व। १ तूण युक्त, धानुष्क, जो तीर चला कर अपनी जीविका चलाता हो।

तूणि (सं॰ पु॰) तून देखो।

तूणिक (सं॰ पु॰) तूणीक देखो।

तूणिन् (सं॰ पु॰) तूणमस्यास्तीति तूण इनि। नन्दीवृक्ष, तूनका पेड़। पर्याय—तूणी, कच्छक, आपीन, तूणिक, कच्छप, कुठेरक, कान्तलक, नन्दिवृक्ष, नन्दक। गुण—यह कटु, पाक, कषाय, मधुर, लघु, तिक्त, शीतल, बलकारक, व्रण, कुष्ठ और रक्तपित्तनाशक है। (त्रि॰) २ तूणयुक्त, जो तरकश लिये हो।

तूणी (सं॰ स्त्री॰) तूणति पूर्यते बाणैः तूण कर्मणि घञ् गौरादित्वात् ङीष्। १ तूण, तरकश। २ नीलीवृक्ष, नीलका पौधा। ३ वातरोगविशेष। इसमें मूत्राशयसे पायुमें दर्द उठता है और गुदा तथा पेड़ू तक फैलता है। मलद्वार और मूत्राशयसे पायुमें वेदना उत्पन्न होकर बहुत तीव्र पक्वाशयमें चले जानेको प्रतितूणी कहते हैं।

तूणीक (सं॰ पु॰) तूणी तूण इव कायति कै-क। नन्दीवृक्ष, तुनका पेड़।

तूणीर (सं॰ पु॰) तूणवत् पूर्यते आपूर्यते तूण बाहुलकात् ईरन्। तूण, तरकश।

तूणीरवत् (सं॰ त्रि॰) तूणीर अस्त्यर्थे मतुप् मस्य व। तूणीरधारी, जो तीर रखनेका अपनी कोषिका निर्माण करता हो।

तूत्थ (सं॰ क्ली॰) तुत्थ पृषो॰ साधु। तुत्थ, तूतिया, नीलाथोथा।

तूती (फा॰ स्त्री॰) १ एक प्रकारका छोटा सुआ या तोता। इसकी चोंच पीली, गरदन बैंगनी और पैर लाल होते हैं। २ कनारी द्वीपमें आरालवर्णमें पानेवाली एक प्रकारकी छोटी सुन्दर चिड़िया। इसकी बोली बहुत मधुर होती है। इसे लोग पिंजड़ोंमें पालते हैं। ३ एक प्रकारकी छोटी चिड़िया। इसका रंग मटमैला होता है। इसकी बोली भी बहुत मीठी है। जाड़ेमें यह सारे भारतवर्षमें पाई जाती है पर गरमियोंमें कश्मीर-काबुल और अफगानिस्तान आदिकी ओर चली जाती है। ४ एक प्रकारका बाजा या खिलौना जो मुंहसे बजाया जाता है। ५ एक छोटी टोंटीदार बधिया जो मदारीको सभी होती है जो। जिससे बच्चे खेलते हैं।

तूतुजान (सं॰ पु॰) तुज बलाय तुजादित्वात् अभ्यास दीर्घः बाहु॰ बलोप। क्षिप्र, तेज़ी।

तूतुजि (सं॰ स्त्री॰) तुजि बधे दाने वा तुजे-कि द्वित्वं तुजां अभ्यासदीर्घं बाहु बलोपश्च। १ क्षिप्र तेज़ी। २ दाता।

तूतुज्यमान (सं॰ पु॰) तुजि कर्मणि शानच् द्वित्व अभ्यास दीर्घं बाहुलकात् बलोप तथाभूतः यगति दीप्यते अन-यक्। क्षिप्र, तेज़ी।

तूतुम (सं॰ त्रि॰) तुद पन् द्वित्वं अभ्यासदीर्घः पृषो॰ साधुः। तूर्ण चलतो।

तूद (सं॰ पु॰) तुदति तुद क पृषोदरादित्वात् दीर्घ। १ तूतवृक्ष, तूतका पेड़, शहतूत। २ इसी नामका एक पेड़, इसे कोई कोई फारस फिरस्त भी कहते हैं। पर्याय—तूद, तूणपूर, ब्रह्मण्य, ब्रह्मदारु। पके तूदफलका गुण—यह गुरु, मधुर, रस, शीतवीर्य और पित्त तथा वायुनाशक है। कच्चे तूदफलके गुण—यह गुरु, सारक, अम्लरस, उष्णवीर्य और रक्तपित्तकारक है।

तूदा (फा॰ पु॰) १ राशि, ढेर। २ सीमाका चिह्न, हदबन्दी। ३ मट्टीका वह टीला जिस पर तीर, बन्दूक आदिसे निशाना लगाना सीखा जाता है।

तूदी (सं॰ स्त्री॰) हिमालयके एक देशका नाम।

तून (हिं॰ पु॰) १ तुनका एक पेड़। २ तून नामका लाल कपड़ा।

तूना (हिं॰ क्रि॰) १ चूना, टपकना। २ पक्का न रह पचकना, गिरना। ३ गर्भपात होना, गर्भ गिरना।

तूनीर (हिं॰ पु॰) तूणीर देखो।

तूफान (फा॰ पु॰) १ आपत्ति दैवि, प्रलय आफत। २ हल्लागुल्ला। ३ उपद्रव, झगड़ा, बखेड़ा, फसाद। ४ डुबानेवाली बाढ़। ५ वायुके वेगका उपद्रव, आंधी, झटिका। पश्चिमोत्तरप्रदेश भारत और चारों ओरसे प्रायः २५ कोस वायुमण्डलमें पवन (हवा) है। यह वायुराशि नाना कारणोंसे सर्वदा चंचल रहती है। जब यह कोमल और मन्द मन्द वायुसे पवित्र गन्धसे सुगन्धित पुष्पोंको ले कर चलती है, तब सबोंको आनन्दित कर देती है। बहुत समय यह वायुराशि नाना तरहके व्याघात विघ्न कारणोंसे विलोड़ित हो कर भीषण प्रभञ्जनरूप

वेगसे प्रवाहित होतो है एवं कभो कभो क्षणमात्रमें अधिक दूर तक विस्तृत स्थानके हक्षोंको उन्मूलित, मकानोंको छिन्न भिन्न, उद्यानोंको तहस नहस, नाव आदिको भग्न और यानवाहनादिको छिन्न भिन्न कर डालतो है। इस वेगवान वायुमण्डलको लोग तूफान कहते हैं। हिन्दुओंके पुराणादि ग्रन्थोंमें ४८ पवनोंका उल्लेख है। वे पवन कभो कभो एक एक और कभो कभो सब मिल कर तूफान पैदा करते हैं। चोनके अधिवासियोंका विश्वास है कि टाइफुन (किजय अर्थात् तूफानको अधिष्ठात्री देवोको अनेक सन्तान) कभी कभो भिन्न भिन्न दिशाओंमें जानेवाले तूफान रूपो अपनी सन्तानको ले कर क्रोडा करतो हैं, वही घूर्ण वायु अथवा टाइफुन है।

तूफान जैसा उत्पात मचाता है उसमें पहलेहोसे सावधान रहने पर बहुत अनिष्टसे बच सकते हैं। यूरोपके पण्डित वायुमान-यन्त्रके द्वारा अनेक तूफानको सम्भावना निश्चय करते हैं। पहले सभो देशोंमें कितने लक्षणोंको तूफानके पूर्वलक्षण बतला कर विश्वास करते थे तथा उसोके द्वारा तूफान और दृष्टिका निर्णय करते थे। उदय और अस्तकालमें सूर्यको कान्ति, मेघका वर्ण और वायुको गति आदिके द्वारा अब भी अनेक तूफान और वृष्टिको सम्भावना की जाती है। सार यह है कि ये सब नितान्त अमूलक नहीं है।

वायु और प्रलय शब्द देखो।

यूरोपोयोंके प्रयत्नसे पृथ्वीके प्रायः सभो स्थानोंमें वायुकी गति और दाब-निर्णय, वृष्टिपरिमाण प्रभृति विषय देखनेके लिए यन्त्रादि आविष्कृत हुए हैं। इन यन्त्रोंकी सहायतासे तथा प्राकृतिक विज्ञानादिके द्वारा उन्होंने तूफानके प्रकृततत्त्व, उत्पत्ति, गति, विस्तार और पूर्वसूचना आदिको मालूम किया है। किन्तु अब तक सब स्थानोंके वायविक परिवर्त्तनादिकी तालिका पर्याप्त रूपसे प्राप्त न होनेके कारण इनका सूक्ष्म तत्त्व अभ्रान्तरूपसे प्रतिपादित नहीं हुआ है। यूरोपके विद्वानोंने बहुत परीक्षाओंके द्वारा तूफानकी उत्पत्ति, प्राकृतिक गति, और व्याप्ति प्रभृति जिस प्रकार निर्द्धारण को है, उसका मूल मर्म नोचे लिखा जाता है।

पृथ्वी यदि निश्चला होतो और सर्वत्र समान उत्तप्त होतो तो वायुमण्डल भी निश्चल होता तथा वायु-प्रवाह होता हो नहीं, किन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं है। पृथ्वीके गोलत्व हेतु निरक्षरेखाके उभय पार्श्ववर्ती कितनेहो स्थानोंमें लम्बरूपसे पतित होता है, सुतरां दोनों मेरुप्रदेशको अपेक्षा निरक्षदेश अधिक उत्तप्त होता है। इससे निरक्षदेशमें भूपृष्ठसंलग्न वायुराशि भी उत्तप्त होनेके बाद लघु हो कर ऊपर उठ जातो है एवं पार्श्ववर्तीकी अपेक्षा शीतल वायु आ कर उसका स्थान पूर्त्ति कर देता है। इस प्रकार पृथ्वी पर नियत उत्तर और दक्षिण प्रदेशसे वायुराशि निरक्षदेशको ओर तथा वायुसागरके ऊपरी भागमें निरक्षदेशसे वायुराशि दोनों मेरुप्रदेशको ओर प्रवाहित होतो है। पृथ्वी यदि निश्चला रहती तो वायुराशि ठीक उत्तर और दक्षिणाभिमुख बहती, किन्तु पृथ्वी मेरुदण्डके ऊपर पश्चिमसे पूर्वको ओर वेगसे आवर्त्तन करती है, सुतरां भूपृष्ठका वायुप्रवाह ठोक सरलतासे नहीं आता। इसी प्रकार निरक्षदेशके उत्तरभागमें वायुप्रवाह ठोक उत्तरसे नहीं आ कर उत्तर-पूर्व दिशासे तथा निरक्षके दक्षिण-भागमें पूर्वदक्षिणसे आता है। किन्तु भूपृष्ठ पर स्थल और जलराशिका असमान संस्थान, सुदीर्घ और अत्युच्च पर्वतोंके अवस्थान इत्यादि कारणोंसे वायुराशि उक्त समस्त नियमोंके वशवर्त्ती न हो कर अनेक स्थानोंमें परिवर्त्तन हो जाता है। इसी प्रकार वाणिज्य वायु, मौसुम वायु (Monsoon) प्रभृति वायुप्रवाह उत्पन्न होता है। इनका विस्तृत विवरण वायुप्रवाह तथा तत्तत् शब्दमें लिखा जायगा।

किसो स्थानको वायु किसो कारणसे उत्तप्त होने पर विस्तृत होतो है सुतरां लघु हो कर ऊपर उठ जातो है तथा चारों ओरसे वायुराशि इस स्थानाभिमुख दौड़तो है। ये समस्त विभिन्नमुखो वायु एकत्र संहृष्ट हो कर घूमतो हुई गमन करतो हैं, इसो घूर्णायमान वायुको घूर्णवायु कहते हैं; इसका व्यास कभी कभो कई गजका हो जाता है। उस समय यह अत्यल्प भूभागके ऊपरसे घूमतो हुई भोषण वेगसे गमन करतो है किन्तु कभो कभो इन समस्त घूर्णवायुका व्यास

१ मीलसे १०००-१२०० मील पर्यन्त हो जाता है। इन समस्त प्रभापक घूर्णवायुके केन्द्रके निकट वायु प्रायः स्थिर रहती है, किन्तु परिधिकी तरफ वायुप्रवाह भीषण तूफान रूपमें प्रवाहित हो कर वृक्ष और मकान आदिको भग्न और चूर चूर कर डालता है। भारततत्त्वज्ञ पण्डितोंने निर्णय किया है, कि हम लोग जिन बड़े बड़े तूफानोंको देखते हैं वे एक एक प्रभापक घूर्णवायु मात्र हैं। ये समस्त घूर्णवायु १से १६० मील विस्तृत स्थान तक फैल कर घूमते घूमते गमन करते हैं। उसमें ५०० से ६०० मील व्यास युक्त घूर्णवायु हो अधिक है। इस प्रकार एक एक घूर्णवायु ८।१० पर्यन्त विद्यमान रहती है तथा सौ सौ मील स्थानके ऊपर हो कर गमन करती है, अंगरेजीमें इन सबको साइक्लोन (Cyclone) कहते हैं। इन समस्त घूर्णवायुकी परिधि ही अतिभयङ्कर है। केन्द्रस्थान बिलकुल शान्तभावापन्न होता है। उसके चारों ओर चक्राकारसे तूफान प्रवाहित होता है। घूर्णवायु चलनेके समय एक ही स्थानमें अनेक स्थानमें विभिन्न मुखी तूफानको उत्पन्न करते करते अग्रसर होती है। पहले ही कहा जा चुका है, कि केन्द्रस्थानमें वायु प्रायः स्थिर रहती है, सुतरां जिस स्थानके ऊपर हो कर केन्द्र आता है, वहां पहले एक ओरसे तूफान बहता है। पीछे कुछ काल शान्त रह कर फिर ठीक विपरीत दिशासे तूफान आता है।

जिस स्थानके ऊपर हो कर केन्द्र आयगा वहां पहले और अन्तमें दो विपरीत दिशामें तूफान होगा तथा दोनोंमें केन्द्र आनेके समय वह शान्त रहेगा। यदि एक घूर्णवायका केन्द्र समुद्रके ऊपर हो कर पश्चिमाभिमुख जाय, तो वहां पहले उत्तर पश्चिमसे तूफान बहेगा, बाद वह वायु पश्चिम और क्रमशः दक्षिण पश्चिमसे बह कर शेष हो जायगी।

तूफान एक समयमें जितने स्थानमें फैल कर रहता है, उसीको तूफान अथवा घूर्णवायुका आकार कह सकते हैं। यह व्यासमान ठीक ठीक नहीं होता। किसीमें हो समय उसके आयामको नाई है। कुछ स्थानकी अपेक्षा बड़ा व्यास दो तीन गुना बड़ा होता है। जिस दिशामें घूर्णवायु गमन करती है उसी दिशामें कुछ व्यास विस्तृत रहता है। वायु व्यास गमनपथके साथ समकोण करके अवस्थान करता है। व्यासभाग जितना कम होता है उतना ही तूफानका वेग अधिक होता है। बहुत स्थानोंमें यही सामान्य घूर्णवायु विषयक कितने ही नियम नीचे दिखलाये जाते हैं।

१। भूमध्यरेखा निरक्षदेशमें दोनों ओर अक्षांश पर्यन्त मध्यवर्ती प्रदेशमें निरक्षरेखाके निकटवर्ती वाणिज्य वायु प्रवाहके आरम्भस्थलमें मौसमवायुके समय किम्वा मौसमवायुके परिवर्तनके समय उत्पन्न होती है। विषुव प्रदेशमें कभी तूफान नहीं होता है। कभी कोई तूफान विषुवरेखाके पास नहीं देखा जाता, पर-इसकी दोनों दिशाओंमें एक ही ऋतुमें परस्पर १०।१२ अंशके मध्यमें तूफानका एक ही समयमें प्रवाहित होना सुना गया है। दोनों गोलार्द्धमें घूर्णवायु प्रथम भागमें पश्चिमाभिमुख और शेष भागमें पूर्वाभिमुख गमन करती है। सर्वत्र ही उनकी गति निरक्षदेशसे वक्राकार हो कर मेरुकी तरफ हो जाती है।

२। उनकी गति दिक्परिवर्तनशील है अर्थात् केन्द्रके चारों ओर अविरामचक्र प्रवाहित रहता है, फिर उसी प्रकार आवर्तन करते करते घूर्णवायु अग्रसर हो जाती है। उत्तर गोलार्द्धमें यह आवर्त्तन दक्षिणी ओरसे बायीं तरफ अर्थात् घड़ीकी सुई जिस तरह घूमती है उसके ठीक विपरीत दिशामें रहता है। दक्षिण-गोलार्द्धमें यह आवर्त्तन घड़ीकी सुईके अनुरूप होता है।

सभी घूर्णवायुका गमनपथ एक विस्तीर्ण क्षेत्रकी नाईं है। इसका सिर पश्चिमदिशामें तथा दोनों बाहु पूर्वदिशामें विस्तृत रहते हैं। यह सिर उत्तर-गोलार्द्धमें प्रायः १० और दक्षिण गोलार्द्धमें प्राय २६ रेखांशोंको किसी याम्योत्तररेखाको स्पर्श करता रहता है।

३। कर्कटादि निरक्षरेखाके निकट विस्तीर्ण क्षेत्रके पूर्व प्रान्तमें सूर्यकी अस्फुट क्रान्तिको (Declination of the sun) समपरिमाण अक्षरेखाकी भ्रमणगति उत्पन्न होती है इसी प्रकार पश्चिमकी ओर जाते जाते अन्तमें शीर्ष स्थानका प्रदक्षिण करके पूर्वाभिमुख गमन करती है। शेष भागमें यह क्रमशः निरक्षरेखासे दूर चली जाती है। चीन-सागरके अनेक तूफान इसके ठीक

विपरीत हैं अर्थात् गमनकालमें निरक्षरेखाके निकटवर्त्ती रहते हैं ।

४। समस्त घूर्णवायुओंकी गति पृथ्वीके अनेक स्थानोंमें भिन्न भिन्न रूपमें होती है, यहां तक कि एक ही स्थानमें एक ही ऋतुमें भिन्न भिन्न हो जाती है। पश्चिम भारतीय द्वीपपुञ्जमें और उत्तरी-अमेरिकामें उसकी गति घण्टेमें ८ मीलसे १२ मील तक होती है। दक्षिण-भारत महासागरमें इसकी गति १० मीलसे कम २ मील तक होती है। बंगोपसागरमें उसका परिमाण घण्टे में २से ३८ मील, चीनसागरमें ७से २४ मील तथा प्रशान्त महासागरमें १०से २४ मील तक होता है। कोई कोई घूर्णवायु तो इतनी धीमी चलती है, जिसको भ्रमसे स्थिर भी कह सकते हैं। इसी प्रकार घूर्णवायुका तूफान बहुत काल तक एक ही दिशासे प्रवाहित होता रहता है।

५। इन समस्त झंझावातोंका व्यास ५००।६०० मील तक और कभी कभी १००० मील अथवा उससे भी अधिक हो जाता है ! गमन-कालमें कभी आकुंचित अथवा कभी प्रसारित होता है, तथा आकुञ्चनकालमें यह अति भीषण वेगशाली हो जाता है। पश्चिम भारतीय द्वीपपुञ्जमें इस वायुका व्यास प्रायः १०० अथवा १५० मीली है, किन्तु अटलाण्टिक महासागरमें आते ही वह प्रसारित हो जाता है, उस समय कभी कभी इसका व्यास १००० मील पर्यन्त हो जाता है। बङ्गोपसागरमें सभी झंझावायुओंका परिसर प्रायः ३००वा ३५०मील है। कभी यह ६०० मील और कभी १५० भी हो जाता है, शेषोक्त समयमें तूफानका वेग भीषण रूपसे बढ़ता है। अरबसागरमें उसका व्यास २४० मीलसे अधिक नहीं होता, ऐसा बहुतोंका अनुमान है। चीन-सागरके सभी टाइफुनका व्यास ६०।७० मील तक होता है।

घूर्णवायु आवर्त्तन करते करते गमन करती है। सुतरां झटिकाचक्रकी वायुकी गति और घूर्णवायुकी गति एक ही दिशामें होती है, वहां तूफान सबसे प्रबल रहता है। जहां परस्पर विपरीत है, वहां इसकी गति मन्द हो जाती है। ये दोनों बिन्दु गमनपथके दोनों पार्श्व परस्पर विपरीत भागसे रहते हैं, फिर घूर्णवायु पहले पश्चिमकी ओर और पीछे तेजोहीन हो कर पूर्वकी ओर गमन करती है। यही कारण है, कि उत्तर गोलार्द्धमें अग्रगामी घूर्णवायुकी दक्षिणदिशाका तथा दक्षिण-गोलार्द्धमें बाईं दिशाका तूफान सबसे तेज होती है।

तूफानके समय वायु जिस दिशासे प्रवाहित होती है, वास्तवमें उसी दिशासे तूफान नहीं आता, अर्थात् घूर्णवायुकी गति उस दिशासे नहीं होती। पहले ही कहा गया है, कि इसके चारों ओर सभी दिशाओंसे वायु प्रवाहित हुआ करती है। इस झटिकाचक्रका जो अंश जिस स्थानके ऊपर हो कर जाता है, उस अंशमें वायु जिस दिशासे बहती है उसी स्थान पर और उसी दिशासे तूफान बहता है। ऐसा भी हो सकता है कि यदि पूर्वदिशासे तूफान आवे तो उस हालतमें वायुका वेग पश्चिम और दक्षिण आदि दिशाओंसे हो सकता है।

घूर्णवायुकी गति घंटेमें २से ४० मील तक होती है, कभी कभी उससे भी अधिक हो जाती है। इसके द्वारा तूफानका वेग नहीं समझा जा सकता। झटिकाचक्रका आवर्त्तवेग इसकी अपेक्षा बहुत अधिक है। इसलिए तूफानका वेग कभी कभी घण्टेमें ८०।९० मील तक हुआ करता है।

अनेक समय क्षुद्र क्षुद्र घूर्ण व गुए प्रबल तूफान उत्पन्न करके बहुत अनिष्ट करती हैं। इनका व्यास कई गजसे १ मील वा उससे भी कुछ अधिक हुआ करता है। ये अधिक देर तक नहीं ठहरतीं, किन्तु इनका तेज बड़ा ही भयानक होता है। दो चार घण्टोंमें ही ये वृक्ष, मकान, मनुष्य, पशु, जो कुछ सामने आता है, उसे नष्टभ्रष्ट कर डालती हैं।

ये सभी तूफान स्वभावतः कई घण्टों तक एक स्थान पर विद्यमान रहते हैं, किन्तु अनेक स्थानोंमें ८।१० वा उससे भी अधिक दिनों तक प्रबल तूफान प्रवाहित होता है। यह तूफान घूर्णवायुसे उत्पन्न नहीं होता, पृथ्वीपृष्ठस्थ सामयिक वायु-प्रवाहसे उत्पन्न होता है। इसी प्रकार वाणिज्य-वायु पश्चिमकी ओर आमेजन नदीके प्रान्तसे प्रवाहित हो कर आन्द्रिज पर्वतके निकट प्रबल होती तूहुई फामके रूपमें परिणत हो जाती है। पार्वत्य प्रदेशमें सामयिक वायुप्रवाह निर्विघ्नतया चलने नहीं पाता,

सुतरां वह प्रतिहत हो कर जगह जगह तूफान उत्पन्न कर देता है। फिर उष्ण वायुके लघु होने पर अर्धगमन-कालमें प्रवाहके द्वारा पर्वत पर आनेसे यदि वह वहांके शीतप्रभावसे फिर शीतल, घनीभूत, और गुरु हो जाय तो अधिक भारके कारण वह पर्वतगात्र हो कर नीचेको ओर बहती है। इसी प्रकार एक स्थानमें १०।१२ दिनतक एक हो दिशासे भीषण तूफान होता रहता है।

तूफानकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें पण्डितोंमें मतभेद है। प्रोफेसर टेलर (Taylor) साहबका मत है, कि स्थानीय तापके कारण जब किसी स्थानकी वायु ऊपर जाती है तब चारों ओरसे वायुप्रवाह उस स्थान पर दौड़ जाता है। उसके परस्पर प्रतिघातसे और इन्होंके आवर्तके लिए घूर्णवायु उत्पन्न होती है। फिर कितने पण्डित यह कहते हैं कि परस्पर विपरीतमुखी दो वायुप्रवाहके संघर्षसे यह उत्पन्न होता है। मि० ब्लानफोर्ड (Blanford) कहते हैं कि किसी कारण किसी स्थान पर वायुमें रहनेवाली जलराशि घनीभूत हो कर मेघमें परिवर्तित हो जाती है और वहांका वायुस्तर अवनत हो जाता है। सुतरां चारों दिशाओंमें रहनेवाली वायु उस स्थानसे चालित हो कर तूफान उत्पन्न करती है। शेषोक्त सिद्धान्त ही बहुत कुछ ठीक प्रतीत होता है। अनेक प्रकारकी परीक्षाओं द्वारा पण्डित लोग इस सिद्धान्तको स्वीकार कर रहे हैं। जिस जिस स्थान पर वायुराशिका ह्रास ज्यादा होता है, चारों ओर रहनेवाला अधिक दाबयुक्त स्थानसे उस अल्पदाबयुक्त भूभाग पर वायुकी गति हुआ करती है। यदि चारों दिशाओंमें रहनेवाली वायुराशिका ह्रास थोड़ी थोड़ी घटती जाय, तो वायुप्रवाह धीरे धीरे गमन करता है, और यदि समीपहीमें अधिक दाबयुक्त प्रदेश रहे तो वायुराशि वेगसे दौड़ती है। कहीं भी इसका व्यतिक्रम नहीं देखा जाता। किसी स्थान पर वायुमानके द्वारा Barometer पारदकी अवनति देखने पर उस समय यदि पार्श्ववर्ती देशोंमें उन्नति हुई हो तो समझना चाहिये, कि शीघ्र ही तूफान आनेवाला है। नाविक लोग इसी उपायसे तूफान आदिका आगमन पहलेसे ही जान कर सावधान हो जाते हैं तथा अनेक दुर्घटनाओंके हाथसे त्राण पाते हैं।

जिन जिन समुद्रोंमें तूफान और वृष्टि आदि हुआ करती है, उन सब समुद्रोंमें हो कर यदि निरापद जाना चाहें तो पहलेसे वायुमानयन्त्रके पारदकी उन्नतिकी ओर लक्ष्य करना अवश्य कर्तव्य है। परीक्षा द्वारा प्रमाणित हुआ है कि ग्रीष्मप्रधान या उसके निकटवर्ती स्थानमें जब यन्त्रस्थ पारदकी अवनति होती है, तभी तूफान आता है। कभी कभी पारदकी यह अवनति २। इञ्च तक हुआ करती है। तूफानके केन्द्रस्थलमें ही अवनति सबसे अधिक होती है। बहुतोंका कहना है, कि सभी तूफान क्रमशः अथवा एक साथ ही कुछ टेढ़ा मेढ़ा हो चारों ओर चक्कर लगाते हुए आते और उन घूर्णके कारण केन्द्रापसारिणी शक्तिके द्वारा केन्द्रसे वायुराशि परिधिकी ओर गमन करती है। केन्द्रस्थान पर पारदकी अवनति एवं प्रान्तभाग पर उन्नति होनेका यही कारण है। बहुतसे लोग इसमें आपत्ति दिखला कर कहते हैं, कि तूफान बार बार चक्कर लगा कर नहीं आता। उसी समय इसकी केन्द्राभिमुख दौड़नेकी प्रवृत्ति देखी जाती है। वे यह भी कहते हैं, कि जब केवल केन्द्रापसारिणी शक्तिसे यह अवनति उत्पन्न होती है, तब उसका परिमाण बहुत घट जाता है। क्योंकि तूफानका व्यास ५०० मील है और प्रान्तभागमें यह घण्टेमें ७० मीलके वेगसे प्रवाहित होता है तो भी इसकी केन्द्रापसारिणी शक्ति अवश्य पारदको १/१० इञ्चसे अधिक अवनत नहीं कर सकती। किन्तु सर्वत्र एक इञ्च वा उससे भी अधिक अवनति होते देखी जाती है।

जो कुछ हो तूफानके पहले तथा समयकालमें वायुराशिकी चापकी असमता प्रयुक्त वायुमानयन्त्रस्थ पारद एक बार ऊंचा और एक बार नीचा होता रहता है। इस लिए यन्त्रस्थ पारदका इस प्रकार स्पन्दन देख कर समझना चाहिये कि तूफान पहुंचनेवाला है। १८७० ई०के अक्तूबर मासमें बोम्बासागरमें जिस तूफानसे मौसकुच्छा नामक मुहानेका जहाज डूब गई थी, उस तूफानके आरम्भ होनेके पहले ही २७ घण्टे तक वायुमानयन्त्रस्थ पारद स्पन्दित हुआ था। किसी दूसरे जहाजने इस दुर्घटनासे उद्धार पाया था, उसीसे उल्लिखित जानकारी पायी गई है।

तूफानके शेष होनेसे पहले ही यन्त्रमें पारदका उन्नति देखी है। पिडिंटन साहब कहते हैं, कि यही निदर्शन तूफानमें पड़े हुए नाविकोंके निराश हृदयमें आशाका सञ्चार करता है।

किसी किसी तूफानके समय पारदकी उन्नति और अवनति अत्यन्त धीरे धीरे और किसी समय अत्यन्त शीघ्र शीघ्र हुआ करती है। जितना शीघ्र यह परिवर्त्तन होता है, तूफानका प्रकोप भी उतना ही अधिक बढ़ता है। तूफानके केन्द्रके किसी स्थान पर आनेके ३से ६ घंटे पहले ही पारद सहसा अवनत हो जाता है। तूफानके प्रकोपके अनुसार इस अवनतिका तारतम्य होता है। इसका वेग जब अत्यन्त अधिक होता है, तब यह अवनति २॥ इञ्चसे अधिक हो जाती है, अर्थात् यन्त्रस्थ पारद २८.८ इञ्चसे २६.३० इञ्च पर्यन्त उतर जाता है।

तूफानका पूर्वलक्षण—तूफान आनेके पहले वायु निश्चल और सूक्ष्म रहती है, निःश्वास प्रश्वासमें कष्ट मालूम पड़ता है। उसके बाद उच्छृङ्खलभावसे एक एक दिशासे मन्द मन्द वायु प्रवाहित होती है। तदनन्तर एक घण्टा वा उससे भी अधिक काल तक शान्तभाव लक्षित होता है तथा उसके बाद ही उस दिशासे प्रबल तूफान उठने लगता है। तूफानके साथ साथ प्रायः विद्युत्, वज्राघात, मेघ और वृष्टि सङ्घटित रहती है। तूफानके पहले तापमानयन्त्रमें तापकी अधिकता देखी जाती है। इसके आनेसे ही ताप घट जाता है तथा मेघ और वृष्टि होने लगती है। तूफानके बाद शीतका अनुभव न हो कर यदि फिर गरमी मालूम पड़े तो समझना चाहिये कि शीघ्र ही और एक तूफान आवेगा। बड़े बड़े तूफानके समय समुद्र उद्वेलित और उच्च तरङ्गाकारमें बहुत वेगसे लहराता है और कभी कभी आस पासके देशोंको भी प्लावित कर डालता है। यह तरङ्ग दो प्रकारकी होती है—एक तो समग्र घूर्णवायु द्वारा विताड़ित हो कर इसके आगे आगे चलती है और दूसरी घूर्णवायुके चारों ओर रहनेवाले झटिका-चक्रसे सभी दिशाओंमें उत्पन्न होती है।

भूमण्डलके किस प्रदेशमें कब किस दिशासे तूफान आता है यह अब तक अच्छी तरह स्थिर नहीं हुआ है। पश्चिम-भारतीय द्वीपपुञ्जमें वर्षाके शेष हो आने पर सूर्य जब मस्तक पर आ जाते हैं, तभी प्रायः तूफान होता है। अटलाण्टिक महासागरके उत्तरीय भागमें जून माससे ले कर दिसम्बर तक तूफानका समय है। विशेषतः अगस्त मासमें तो कई बार तूफान आता है। दक्षिण भारत महासागरमें नवम्बरसे जून पर्यन्त तूफानका समय रहता है, जिसमें जनवरी और मार्च मासमें सबसे अधिक तथा जून और नवम्बर मासमें अल्प हुआ करता है। वङ्गोपसागरमें अक्टूबर और नवम्बर मासमें अर्थात् प्रबल उत्तर-पूर्व मौसुम वायुके समयमें ही प्रायः तूफान होता है। तद्भिन्न दक्षिण-पश्चिममें मौसुम वायु रहनेके समय अर्थात् मई और जून मासमें भी तूफान हुआ करता है। चीनसागरमें सर्वत्र जूनसे नवम्बर मासके मध्य तक तूफानका प्रकोप है जिसमेंसे सितम्बरमें सबसे अधिक और जून मासमें कम होता है। अरबसागरमें दोनों प्रकारकी मौसुम वायुके समयमें ही तूफान होता है।

१८वीं शताब्दीके प्रारम्भसे भारतवर्ष और उसके निकटवर्ती समुद्रमें जो भीषण तूफान हो गया है, उसका विवरण अनेक अंग्रेजी पुस्तकोंमें वर्णित है। हेनरि पेडिंटन (Henry Peddington) साहबने, १८३८से १८५१ ई० तक पर्यन्त जो तूफान हुए हैं उनका विवरण लिखा है। इन्होंने पहले पहल स्थिर किया था कि भारतवर्ष और निरक्ष-रेखाके उत्तरके समुद्रोंमें जो तूफान आता है, वहां सबल चक्रवत् परिभ्राम्यमान घूर्णवायु है। उन्होंने सभी तूफानोंका वेग तथा चलनेका रास्ता भी स्थिर किया है।

मन्द्राजके १०८ मील उत्तरसे ले कर १२० मील दक्षिण तकके स्थानोंमें तूफानका प्रकोप अत्यन्त अधिक है। १७४६ से १८८१ ई० पर्यन्त १७ भीषण तूफान हुए थे जिनसे बहुतोंकी हानि हुई थी।

वङ्गोपसागरमें जो भीषण तूफान हो गये हैं, पेडिङ्टन आदिकी पुस्तकोंमें उनमेंसे १३के उल्लेख है। ब्लानफोर्ड साहबने हिसाब लगा कर देखा है, कि जनवरी मासमें २, फरवरीमें ०, मार्चमें १, अप्रोलमें ५, मईमें १७, जूनमें ४,

जुलाईमें २, अगस्तमें २, सितम्बरमें ३, अक्तूबरमें २० नवम्बरमें १४, और दिसम्बर मासमें ३ तूफान होते हैं। इनमेंसे नवम्बरसे अप्रैल तक जितने तूफान आते हैं वे तो बङ्गोपसागरके दक्षिणांशमें आबद्ध रहते हैं, मई और जून तथा अक्तूबर और नवम्बर मासमें प्रथम प्रशान्त सागरके उत्तर भागमें तूफान होते हैं। मध्यवर्ती समयमें अर्थात् दक्षिण-पश्चिम मौसमवायुके समय कभी कभी उत्तर भागमें तूफान होता है सही किन्तु उसकी संख्या बहुत कम है।

कप्तान टेलरने बङ्गोपसागरके तूफानके विषयमें इसी प्रकार लिखा है। किसी जहाजके ऐसे जो तूफानमें पड़नेसे पहले एक दिशासे अति तूफान आ घेरता है उसके कुछ देर बाद वायु शान्त भाव धारण करती है तथा आकाश निर्मल हो जाता है। तदनन्तर विपरीत दिशासे फिर भीषण तूफान आता है। इन समस्त झटिकावर्तोंकी गति पूर्वोक्त नियमानुवर्ती अर्थात् पूर्ववायुसे उत्तरांशमें तूफान पूर्वसे, दक्षिणांशमें पश्चिमसे और पश्चिमांशमें उत्तरसे प्रवाहित होता है। ये पूर्ववायुएं प्रायः दक्षिण-पूर्व कोणसे उत्तरपश्चिम कोणकी ओर जाती हैं।

मन्द्राज और उसके चतुःपार्श्ववर्ती स्थानोंमें अनेक बार भीषण तूफान हो गये हैं। इन सभी तूफानोंका उत्पादक पूर्ववायु है जो पूर्व-दक्षिणकी ओरसे उत्तर पश्चिमकी ओर बहुत वेगसे बहती है। जब यह किनारे पहुंचती है, तब इसकी गति परिवर्तित हो कर पश्चिम वा उत्तर-पश्चिमकी ओर हो जाती है। इसका व्यास प्रायः १५० मील है और इसका आवर्त्तन घड़ीके कांटेसे विपरीत दिशामें रहता है।

१७४६ ई०में ३ अक्तूबरको द्वि-प्रहर रात्रिके समय मन्द्राज नगरमें एक भीषण तूफान आया था। उस समय फरासी सेनापति लाबोर्डनेने मन्द्राज नगर पर अधिकार कर वहां २१ दिन तक ठहर गया था। पोतके आश्रयमें बहुतसे अच्छे जहाज तथा नावें थीं। प्राय सभी भग्न और जलमग्न हो गयी थीं। तीन नावोंमें लगभग १२ हजार मनुष्य थे, उनकी भी जान गई।

१७४८ ई०की १२वीं और १३वीं अप्रैलको रात्रिके समय कडालूरके निकट तूफान आया था। यह तूफान उत्तर-पश्चिमकी ओरसे प्रवाहित हुआ था और दो दिन तक एक ही गतिसे बहता रहा था। पेम्ब्रोक जहाज पार्टोनोभोके बहुत समीप ही जलमग्न हो गया था केवल मात्र १२ मनुष्योंने उस उपद्रवसे रक्षा पाई थी। देवी कोटके समीप जो नामूर नामक जहाज टूट फूट गया और उसमेंसे १२० अंग्रेज आरोही पुरुष और आरोही जलमें डूब मरे। सेण्टडेभिड कोटके निकट जो दह दक्षिण कम्पनीके दो बड़े जहाज और सभी छोटी छोटी नावियां नष्टभ्रष्ट हो गई थीं।

१७५२ ई०की ३१वीं अक्तूबरको एक भयानक तूफान उठा था। १७६१ ई०की १ली जनवरीको पुदिचेरीमें जो भीषण तूफान आया था, उसमें जितने अंग्रेज थे तो डूब मरे और कितनों ने बहुत मुश्किलसे प्राण रक्षा की। ८ युद्धजहाजोंमें केवल चार जहाज बच गये थे और ३ टूटफूट गये। किन्तु वे किसी प्रकार जलमग्न होनेसे बच गये थे। सिकन्दराबाद प्रभृति ६ जहाज तीरमें निक्षिप्त हुए एवं शेष ३ जहाज डूब गये। ११०० से अधिक आरोहियोंमेंसे केवल मात्र ७ यूरोपियन और ७ देशीय मनुष्य मरे थे।

१७७२ ई०में २१वीं अक्तूबरको मन्द्राजमें प्रबल तूफान हुआ था। उस समय पोताश्रयमें जितने जहाज लङ्गर लगाये थे, वे सभी विनष्ट हो गये।

१७८२ ई०में उत्तर पश्चिमसे तूफान आरम्भ हुआ था। दूसरे दिन प्रातःकालमें १०० देशीय पोत तीरमें निक्षिप्त हुये। इसके पहले अधिपतिके दो जहाज कुछ विलम्ब हो कर बड़े कष्टसे बम्बई पहुंचे। इस समय हैदर अलीके उत्पीड़नसे बहुत लोग प्राणके भयसे मन्द्राज नगरमें आश्रय लिया था। तूफानके बाद जो एक दुर्घटना हुई थी। गवर्नर मेकार्टनीने उन लोगोंके कष्टको दूर करनेके लिये यथासाध्य यत्न किया था।

१७८९ ई०को २०वीं अक्तूबरको प्रबल तूफान हुआ था। इस समय वायुमानयन्त्रमें पारदकी उन्नति २८.३१५ इञ्चसे कम नहीं थी।

१८११ ई०की २री मईको मन्द्राजमें जो भीषण तूफान आया था, उससे प्रायः अगणित जहाज और छोटे छोटे पोतादि नष्ट हुए थे। केवल दो जहाज समुद्र-

में पड कर बच गये थे। इस तूफानके तेजसे समुद्रकूलसे प्रायः ४ मील तकको भूमि ३६ हाथ जलके नीचो चलो गई थी।

१८१८ ई०को २४वीं अक्तूबरको मन्द्राज नगरमें उत्तरसे तूफान आरम्भ हुआ था। क्रमशः तूफानका वेग वृद्धि होकर एक बार रुक गया, हठात् दक्षिणको ओरसे फिर पहलेके समान प्रबल तूफान आया। यह घूर्ण वायु मन्द्राज नगरसे पश्चिमाभिमुख आई थी। वायुमान-यन्त्रसे पारा २८.७८ इञ्च तक चढ़ गया था।

१८३६ ई०को ३०वीं अक्टूबरको मन्द्राज नगरमें उत्तरसे तूफान आया था। अपराह्न चार बजेके समय वायु उत्तर-पश्चिम तथा उत्तरदिशासे प्रवाहित हो कर आध घण्टा तक ठहरी, अनन्तर सायंकाल ७ बजेके समय द्विगुण वेगसे दक्षिणकी तरफसे तूफान आने लगा, इस समय वायुमानयन्त्रमें पारा २८.१८५ इञ्च चढ़ा था। घूर्णवायु नगरके ऊपर हो कर चलती थी।

१८४६ ई०को २५वीं नवम्बरको जो तूफान हुआ था, उससे मन्द्राजके मानमन्दिरके वायुगतिपरिमापक यन्त्रादि नष्टभ्रष्ट हो गये थे।

१८६४ ई०की १ली नवम्बरको मसुलीपत्तनमें जो भयानक तूफान आया था, उसके प्रकोपसे समुद्र स्फीत हो उठा था। उपकूल भागमें १२।१३ मील तक और कहीं कहीं तो १७ मील तक प्रायः ७८० वर्गमील स्थान प्लावित हो गया था। इस भीषण प्लावनमें प्राय ३०००० मनुष्य यमपुरको सिधारे थे।

झटिका द्वारा सुन्दरवनकी बड़ी हानि हुई थी। १५८५ ई०में हरिणघाटा और गङ्गाके मध्यवर्ती स्थानमें अर्थात् वर्त्तमान समग्र बरिशाल और बाखरगञ्ज जिला तूफानके द्वारा ताड़ित समुद्रकी तरङ्गोंमें प्लावित हो गया। चन्द्रद्वीप देखो। उसके बाद ही मग और पोर्तुगीज लुटेरोंने नगरको तहस नहस कर डाला। १६२२ ई०में यह देश फिर जलप्लावित हो गया। उसमें प्रायः १०००० मनुष्योंने प्राण त्याग किये तथा कितने गृहादि नष्ट हो गये।

एक अंग्रेजी सामयिक पत्रमें लिखा है, कि १७३१ ई०में कलकत्तेमें एक भीषण तूफान हुआ था। इस तूफानसे समुद्रमें ऐसी भीषण तरंग आई थी, कि कल-कत्तेको प्लावित कर दिया था। उसमें प्रायः ३०००० प्राणी मर गये थे। १७३६ ई०में लक्ष्मीपुरके निकट मेघना नदीका जल ६ फुट ऊंचा हो गया था। १८३१ ई०के प्रबल तूफानसे कलकत्तेके चारों तरफ ३०० ग्राम और प्रायः ११ सहस्र मनुष्य बह गये थे।

१८३३ ई०के प्रबल तूफानसे सागरद्वीप १० फुट नीचे जलमें डूब गया था तथा यहांके समस्त मनुष्य और यूरोपके तत्त्वावधारकगण नष्टभ्रष्ट हो गये थे।

१८५८ को कलकत्ते में एक प्रबल तूफानने बहुतसे मनुष्योंको नष्टभ्रष्ट कर दिया।

१८६४ ई०को ५वीं अक्तूबरको रात्रिमें समुद्रसे एक भीषण तूफान कलकत्तेके ऊपर होकर गया। इस तूफानमें बहुतसे ष्टीमर और ६०।७० सहस्र मन बोझा लादनेवाले जहाजोंमेंसे कुछ तो टूट टाट गये, कुछ तीरमें निक्षिप्त हुए और जलमें डूब गये। प्रायः ३०० मील तकके गृहवृक्षादि बिलकुल धराशायी हो गये। यह तूफान आन्दमान द्वीपके निकट उत्पन्न हो कर उत्तर-पश्चिम-के सम्मुख बालेश्वर और हिजलीके निकट उपकूल-भागमें प्रतिहत हुआ था। बाद वहांसे यह ५ अक्टूबर-को कलकत्ता आया और कृष्णनगर तथा बगुड़ाके ऊपर हो कर गाड़ो पहाड़ पर जा पहुंचा। इस तूफानके प्रकोपसे बहुत अनिष्ट हुआ था। सागरने ३० फुट ऊंचा तरंगित हो कर भागीरथीके उभयकूलवर्त्ती प्रायः ८ मील पर्यन्त स्थानको जलप्लावित कर दिया। कलकत्ते और हवड़ेके प्रायः १८६४८१ मकान बह गये। मेदनीपुर जिले और सुन्दरवनमें इससे भी अधिक हानि हुई थी। यहां तककि जिलेके प्राय ३॥ अंश अधिवासी तूफानके प्रकोप-से बह गये थे। अभी बहुत रुपये खर्च करके २५।३० वर्षके कठिन परिश्रमके बाद जलप्लावनके हाथसे सुन्दर-वन आदि स्थानको रक्षा की गई है। तूफानके समय कलकत्तेमें जिस तरह बहुतसे अधिवासियोंको अकाल-मृत्यु हुई है, उसका उल्लेख करते हुए बालफोर साहबने लिखा है, कि गङ्गा यदि टेम्स और लण्डनसे कम अधि-वासीयुक्त हो कर कलकत्ता होती, तो पृथ्वीके चारों ओर हाहाकारको ध्वनि सुनाई पड़ती तथा सिंसबनका

भू कम्प इत्यादि दुर्घटनाये जो इतिहासमें इतनी प्रसिद्ध हो गई हैं, वह बङ्गदेशके तूफानके विषम उत्पातके सामने बहुत तुच्छ गिनी जातीं। इस तूफानमें प्रायः २००जहाज और ७००००० मनुष्य नष्ट हुए थे।

मेघना नदीके मुहानास्थित स्वद्वीप, साहबाजपुर, हतिया प्रभृति बाल्यदेश तथा व्यारियनमें सुशोभित सभी द्वीपको भी तूफानने अनेक बार हानि पहुंचाई थी। ये द्वीप जलसे बहुत कम ऊंचे पर अवस्थित हैं। इस लिये जो कुछ हानि हुई वह विषम तूफानसे हो। वायुतापमापक यन्त्रादि साहाय्य मान और पथ्यादिकी मान्यता द्वारा बङ्गदेश पश्चिमी पश्चिमसे भी तूफान आगमन मालूम कर सकते हैं। किन्तु १८७६ ई०को ३१वीं अक्टूबरको तूफान सहसा उत्तरकी ओर आया। दूसरे दिन अर्थात् पहली नवम्बर को बहुत वेगसे बहने लगा। ज्वार बहुत ऊंचा उठ आया। इसके बाद पश्चिम दक्षिणके कोनसे भारी तूफान आ जानेसे १०से १४ फुटतक सागरतरङ्ग बढ़ गई। ४ बजे तक जल बढ़ता रहा, पीछे धीरे धीरे घटने लगा, इसमें प्रायः ११६१०४० मनुष्योंके प्राण गये थे।

तूफानी (फा० वि०) १ ऊधमी, उपद्रवी बखेड़ा करने वाला, फसादी। २ झूठा कलङ्क लगानेवाला तोहमत जोड़नेवाला। ३ उग्र प्रचण्ड।

तूबर (स० पु०-स्त्री०) तु हिंस् तू ब्रह्म अच् वा १ पर इष्टौ० पक्ष अ। १ अश्मश्रु पुरुष, बिना मोंछका बैल बूढ़ा बैल। २ वै दाढ़ीमूंछका मनुष्य। ३ अक्षम पुरुष का लक्षण। ४ कषाय रस कसैला रस। (त्रि०) ५ कषायरसयुक्त जिसमें कसैला रस हो।

तूमडूर—तुमडूर देखो।

तूमड़ी (हि० स्त्री०) १ तूंबी। २ सपेरोंके बजानेका तूंबी का बना हुआ एक प्रकारका बाजा।

तूमतड़ाक (फा० स्त्री०) १ तड़क भड़क, शान शौकत धाम धाम। २ आडम्बर, ठसक।

तूमना (हि० क्रि०) १ रूईके गालेमें सटे हुए रेशोंको कुछ अलग अलग करना, उधेड़ना। २ नोचो खसोटी करना। ३ बातके मर्मको ढूंढ़ना बरना। ४ इधर उधर खोलना खोज खोलना, बातको उधेड़ना।

तूमार (अ० पु०) बातका व्यर्थ विस्तार, बातका बतंगड़।

तूमारिया सूत (हि० पु०) खूब महीन काता हुआ सूत।

तूय (स० स्त्री०) तोय पृषोदरादित्वात् साधु। १ जल, पानी। २ विष, विषो।

तूया (हि० स्त्री०) नामी नरसों।

तूर (स० त्रि०) तूर-ऋतु रि-क्विप्। १ वेगयुक्त, तेज। (स्त्री०) २ वेग, तेजी।

तूर (स० स्त्री०) तूर्यते मुखं तूर अच्। १ वाद्यभेद, एक प्रकारका बाजा नगाड़ा। २ तुरहो नामका बाजा, तुरही।

तूर (हि० स्त्री०) १ जुलाहोंके करघेको गज-डेढ़गज लम्बी एक लकड़ी। इसमें ताना लपेटी जाती है। इसके दोनों सिरों पर दो छेद और चार छेद होते हैं लपेटनी अभिधान। २ जनानी गाहनोंमें चारों ओर ख लो हुई एक रस्सी। यह इनके पररा उक कामोंमें बनाती है। ३ अरहर।

तूरत (हि० पु०) एक प्रकारका पक्षी।

तूरना (हि० पु०) एक चिड़ियाका नाम।

तूरान (फा० पु०) फारसके उत्तरमें अवस्थित मध्य एशिया का सारा भाग। यह तुर्क, तातारी, मुगल आदि जातियोंका निवास स्थान है।

ईरान अर्थात् पारस्यदेशके उत्तर और उत्तर पूर्वमें अवस्थित मध्यएसियाके समस्त देशको पारसी लोग 'तूरान' कहते हैं। जिस तरह हिन्दू आर्य और म्लेच्छ ये दो शब्द व्यवहार करते हैं, उसी तरह पारसी 'ईरान' और 'तूरान' कहते हैं। तूरानदेशके लोगोंको तूरानी कहते हैं।

पाश्चात्य जातितत्त्वविद् कुमीरका मत है, कि सबसे पहले (आयतर्कीय) जातिका आदि वासस्थान खोअर मीबाके अन्तर्गत अल्टाई पर्वत पर था। यहांसे वे उत्तर और मध्य एसिया तथा महा नदीके उत्तरप्रदेश तक आ बसे। वर्त्तमान समयमें तारम तुर्की, मुगल, चीन आदि जातियां इसी बड़ी तूरानी जातिकी शाखा कहलाती हैं।

प्रागैतिहासिक कालमें एक दल और जाति जो हिमालयके इस पार अनराय तक्षको हरत् पर्वतमालाको अधित्यका प्रदेशमें वास करती थी, वह प्राचीन समस्त

मिव। तूलस्फोटनार्थं धनुः, रूई धुननेका यन्त्र, धुनकी, फटका।

तूलग्रन्थिसमा (सं॰ स्त्री॰) शटि नामकी औषध।

तूलचाप (सं॰ पु॰) तूलाय तूलस्फोटनाय चाप इव। तूलकार्मुक, धुनकी।

तूलत (हिं॰ स्त्री॰) जहाजकी रेलिंग या कठघरेकी छड़में लगी हुई एक खूंटी जिसमें किसी उतारे जानेवाले भारी बोझमें बंधी रस्सी अटका दी जाती है ताकि बोझ धीरे धीरे उतर जाय।

तूलता (हिं॰ स्त्री॰) समता, बराबर।

तूलना (हिं॰ स्त्री॰) १ धुरीमें तेल देनेके लिये पहियेको निकाल कर गाड़ीको किसी लकड़ीके सहारेपर ठहराना। २ पहियेको धुरोमें तेल या चिकना देना।

तूलनालिका (सं॰ स्त्री॰) तूल-निर्मिता नालिका। पिञ्जिका, रूईकी पोली बत्ती जिसमें कातने पर बढ़ बढ़कर सूत निकलता है, पूनी।

तूलनाली (सं॰ स्त्री॰) तूलनिर्मिता नाली। पिञ्जिका, पूनी।

तूलपिचु (सं॰ स्त्री॰) पिच-कुन तूलप्रधानः पिचुः। तूल वृक्ष, रूईका पौदा।

तूलफल (सं॰ पु॰) अर्कवृक्ष, अकवनका पेड़।

तूलफला (सं॰ स्त्री॰) शाल्मली वृक्ष, सेमरका पेड़।

तूलमूल (सं॰ क्ली॰) काश्मीरको चन्द्रभागा नदीके किनारेका एक देश।

तूलवती (सं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, नील।

तूलवृक्ष (सं॰ पु॰) तूलस्य वृक्षः। शाल्मलीवृक्ष, सेमरका पेड़।

तूलशर्करा (सं॰ स्त्री॰) तूलस्य शर्करेव। कार्पासबीज, कपासका बीया, बिनौला।

तूलसेचन (सं॰ क्ली॰) तूलस्य सेचनं इ-सत्। तूलसूत्र कर्त्तन, रूईसे सूत कातनेका काम।

तूला (सं॰ स्त्री॰) तूल-अच् ततः टाप्। कार्पासी, कपास।

तूलि (सं॰ स्त्री॰) तूल-इन् सच कित्। इगुपध इ कित्। उण् ४। ११६। चित्रकारकी वर्त्तिका, चित्रकारोंकी कूंची।

तूलिका (सं॰ स्त्री॰) तूलिरेव स्वार्थे कन्। चित्रकरोपकरण, रंग भरनेकी कूंची। पर्याय—ईषिका, ईषीका, तुलि, तुली। २ द्रव सुवर्णपरीक्षार्थं शलाका, गला हुआ सोना परखनेकी बत्ती। ३ गलाया हुआ सोना ढारनेका बरतन। ४ वीरणादि शलाका, लालटेन आदिकी बत्ती। तूल-ठन् कापि अतइत्वं। ५ शय्योपकरणविशेष, तोशक।

तूलिनी (सं॰ स्त्री॰) तूलोऽस्त्यस्या इनि-ङीप्। १ शाल्मली-वृक्ष, सेमरका पेड़। २ लक्ष्मणाकन्द। (त्रि॰) ३ तूल-युक्त, जिसमें रूई हो।

तूलिफला (सं॰ स्त्री॰) तूलि तूलवत् फलं यस्याः। शाल्मलीवृक्ष, सेमरका पेड़।

तूली (सं॰ स्त्री॰) १ नीलवृक्ष। २ रंग भरनेकी कूंची। ३ जुलाहोंका लकड़ीका एक यन्त्र। इसमें कूंचीके रूपमें खड़े खड़े रेशे जमाए रहते हैं।

तूवर (सं॰ पु॰) तु-बाहुलकात् वरच् दीर्घश्च। १ तूवर-शब्दार्थ। २ कषाय रस, कसैला रस। (त्रि॰) ३ कषाय-रसयुक्त, जिसका रस कसैला हो।

तूवरक (सं॰ पु॰) अजातशृङ्गपशु, डूंड़ा बैल, बिना सींगका बैल। २ बे-दाढ़ीमूंछका मनुष्य। ३ कषाय-रस, कसैला रस।

तूवरिका (सं॰ स्त्री॰) तूवर संज्ञायां कन टाप् अतइत्वं। १ आढ़की, अरहर। २ सौराष्ट्रमृत्तिका, गोपीचन्दन।

तूवरी (सं॰ स्त्री॰) तूवर गौरा॰ ङीष्। १ आढ़की, अर-हर। २ सौराष्ट्रमृत्तिका, गोपीचन्दन।

तूष्णींशील (सं॰ त्रि॰) तूष्णीं शीलं यस्य। मौनावलम्बी, मौन, चुप। इसका नामान्तर तुष्णिक है।

तूष्णीक (सं॰ त्रि॰) तूष्णीं शीलं यस्य। शीलेको मलोपश्च। पा ५।३।७२ इति वार्त्तिकोक्त्या कः मलोपश्च। मौनी, मौन साधनेवाला।

तूष्णीका (सं॰ अव्य॰) तुष्णीम् कां। अकच प्रकरणे तूष्णीमः कां वक्तव्यः। पा ५।३।७२। इति वार्त्तिकोक्त्या कां। मौन, चुप।

तूष्णीम् (सं॰ अव्य॰) तूष बाहुलकात् नीम्। मौन।

तूष्णीम्भूव (सं॰ पु॰) तूष्णीं भू घञ्। मौनावलम्बन, निस्तब्धता, सन्नाटा।

तूष्णीम्भूत (सं॰ त्रि॰) तूष्णीं भू-क्त। मौन, चुप, शान्त।

तूस (हि॰ पु॰) १ भूसी, भूसा। २ हिमालय पहाड़ पर काश्मीरसे ले कर नेपाल तक पाई जानेवाली एक पहाड़ी बकरीका ऊन, पशम पशमीना। यह बकरी पहाड़के बहुत ऊँचे स्थान पर पाई जाती है। यह काश्मीरसे ले कर मध्य एशियामें अल्टाई पर्वततक ठंढे स्थानोंमें पाई जाती है। इसके शरीर पर घने घने मुलायम रोयोंकी बड़ी मोटी तह होती है। इसकी भीतरी तहको काश्मीरमें असली तूस या पशम कहते हैं। यह दुशालेमें दिया जाता है। इसके ऊपरके ऊन या रोयें से या तो रस्सियां बांटी जाती हैं या एक भद्दा कपड़ा बुना जाता है। ३ तूसके ऊनका जमाया हुआ व बना या नमदा।

तूसदान (हि॰ पु॰) कारतूस।

तूसा (हि॰ पु॰) भोकर, भूसी।

तूसी (हि॰ वि॰) १ तूसके रंगका, खर काई। (पु॰) २ करंज या स्लेटके रंगकी तरहका एक रंग।

तूस्त (सं॰ क्ली॰) तुस-बाहुलकात् तन् दीर्घश्च। १ रेणु, धूल। २ जटा। ३ पाप, कलुष। ४ सूक्ष्म पदार्थ, अणु कणिका।

तृष (सं॰ स्त्री॰) तृष भावे क्विप्। पिपासा, प्यास, लालस।

तृक्ष (सं॰ पु॰) तृक्ष-अच्। कश्यप ऋषि।

तृक्षाक (सं॰ पु॰) तृक्ष-षाकन्। ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम।

तृक्षि (सं॰ पु॰) तृक्ष-इन्। त्रसदस्युके पुत्र एक ऋषिका नाम।

तृच (सं॰ क्ली॰) तृच-अ समा॰ साधुः। जातीयक, [illegible]।

तृचा (हि॰ स्त्री॰) त्वचा देखो।

तृच (सं॰ क्ली॰) त्रिऋचानां समाहारः, तिस्र ऋचो यत्र वा अच् समासान्तः सम्प्रसारणं। समान देवता और समान छन्दके तीन ऋक्।

तृण (सं॰ क्ली॰) तृह्यते भक्ष्यते तृह-नक् वा तृह-क हकारलोपश्च। तृह्‌ को तृणत्व। तृण घास। नड़ादि, मरकट घास आदि। पर्याय—अर्जुन, निड, मट, पोट हरित और तारुण्य। तृणस्य घय मिथा॰ अच।

२ ताल। शस्यादिको तृण हटनेसे अधिक पुष्ट होता है। यज्ञादि पवित्र नक्षत्रोंमें घरके लिये तृण और काष्ठ आहरण नहीं करना चाहिये। आहरण करनेसे अग्नि, चौरभय, रोग, राजपीड़ा और धन क्षय होता है। ३ गन्धद्रव्यविशेष, रामकपूर। पर्याय—कुटुम्ब, पूत, सुगन्ध पूतोतन।

तृणक (सं॰ क्ली॰) तृण स्वार्थे कन्। १ अल्पतृण, थोड़ी घास। २ मामूली जैसा घास।

तृणकर्ण (सं॰ पु॰) तृणमिव कर्णोऽस्य। ऋषिभेद एक ऋषिका नाम।

तृणकाण्ड (सं॰ क्ली॰) तृणानां समूहः पूर्वादित्वात् काण्डच्। तृणसमूह, घासका ढेर।

तृणकीय (सं॰ वि॰) तृण सन्निकर्षे-छ नड़ादित्वात् कुक् च। तृणमय, जो घासमें उपजा हो।

तृणकुङ्कुम (सं॰ क्ली॰) तृण सम्भूत कुङ्कुम। सुगन्ध द्रव्यविशेष, एक सुगन्धित घास, रोहिष घास। पर्याय—तृणध्वज, गन्धि, तृणशोणित, तृणपुष्प गन्धाधिक तृणोत्थ, तृणशीर, लोहित। गुण—यह कटु, उष्ण, कफ, वात, शोथ, कण्डू, शीत और पामदोषनाशक तथा परममास्वर है।

तृणकुटी (सं॰ स्त्री॰) तृणाच्छादिता कुटी। तृणाच्छादित घर, वह घर जो घाससे छाया रहता है। पर्याय—[illegible]।

तृणकुटीरक (सं॰ क्ली॰) तृणोटजः। तृणनिर्मित घर, घासका घर।

तृणकूट (सं॰ क्ली॰) तृणराशि, घासका ढेर।

तृणकूर्म (सं॰ पु॰) तृणमय कूर्म। मीठा तुम्बी, सफेद कद्दू या लौकी।

तृणकेतकी (सं॰ स्त्री॰) १ वंशरोचन। २ तृणखोर भेद एक प्रकारका तोमुर।

तृणकेतु (सं॰ पु॰) तृणेषु केतुरिव। १ वंशवृक्ष, बांस। २ तालवृक्ष, ताड़का पेड़।

तृणकेतुक (सं॰ पु॰) तृणकेतु स्वार्थे कन्। वंश, बांस।

तृणकेसर (सं॰ क्ली॰) तृणकुङ्कुम, रोहिष घास।

तृणगड (सं॰ पु॰) समुद्र कर्कट, समुद्रका एक प्रकारका केकड़ा। २ कीटभेद, कीड़ा।

तृणगन्धा (सं॰ स्त्री॰) तृणवत् गन्धो यस्याः। विदारी, भालपर्णी।

तृणगोधा (सं० स्त्री०) तृणस्य गोधेव क्षुद्रत्वात्। १ चित्रक्रील, छिपकली। २ तृणजलौका, एक प्रकारकी जोंक।

तृणगौर (सं० क्ली०) सुगन्ध द्रव्यभेद, एक सुगन्धित घास; रोहिस घास।

तृणग्रन्थि (सं० स्त्री०) तृणमिव ग्रन्थयस्य। स्वर्ण जीवन्ती वृक्ष।

तृणग्राही (सं० पु०) तृणं गृह्णाति तृण-ग्रह-णिनि मणिविशेष, एक रत्नका नाम, नीलमणि। पर्याय—शूकापृष्ठ, तृणमणि।

तृणचर (सं० पु०) तृणेषु चरति चर-अच्। १ गोमेद मणि। (त्रि०) २ तृणचारिमात्र, तृण चरनेवाला।

तृणजम्भन् (सं० त्रि०) तृणं जम्भो भक्षं यस्य। जम्मासुहरिततृणसोमेभ्यः। पा ४।१।२५। इति निपातनात् साधुः। १ तृणभक्षक, घास चरनेवाला। तृणमिव जम्भो दण्डो यस्य। २ तृण तुल्य दन्तयुक्त, जिसके दांत घासके रंगसे हों।

तृणजलायुका (सं० स्त्री०) तृणाकारा तृणजाता वा जलायुका। जलौकाभेद, एक प्रकारकी जोंक।

तृणजलूका (सं० स्त्री०) जलौकाभेद, एक प्रकारकी जोंक।

तृणजलौका (सं० पु०) जलौकाविशेष, एक प्रकारकी जोंक।

तृणजलौकान्याय (सं० पु०) तृणजलौकाके समान। नैयायिक लोग इस वाक्यका प्रयोग तभी करते हैं, जब उन्हें आत्माके एक शरीर छोड़ कर दूसरे शरीरमें जानेका दृष्टान्त देना होता है। जिस प्रकार जोंक जलमें बहती हुए तिनकेके अग्रभाग तक पहुंच कर जब दूसरा तिनका पकड़ लेती है तब पहलेको छोड़ देती है, उसी प्रकार आत्मा जब दूसरे शरीरमें जाती है तब पहलेको परित्याग कर देती है।

तृणजाति (सं० स्त्री०) तृणमेव जातिः। उलपादि रुण।

तृणजीवन (सं० त्रि०) तृणेन जीवति जीवन-ल्युट्। जो प्राणी घास खाकर जीवन धारण करते हैं।

तृणज्योतिष (सं० क्ली०) तृणेषु मध्ये ज्योति ज्योतिज्यष्मतः। तिष्मती लता।

तृणता (सं० स्त्री०) तृणमिव तायते ताय-क्विप्। १ धनु, चाप, कमान। २ तृणत्व तृणका भाव।

तृणद्रुम (सं० पु०) खडव स्मि।

तृणद्रुम (सं० पु०) तृणमिव द्रुमः असारत्वात्। १ नारिकेल, नारियल। २ ताल, ताड़का पेड़। ३ गुवाक, सुपारी। ४ ताली, एक प्रकारका छोटा ताड़। ५ केतकी। ६ खजुर, खजूरका पेड़। ७ हिन्ताल। इसके निर्यासके गुण यह शीतल, लघु, मोहन, बलकारक, हृद्य, तृष्णा और सन्तापनाशक है।

तृणधान्य (सं० क्ली०) तृणवहुलं धान्यं। १ धान्यविशेष, तिन्नीका धान। २ तिन्नीका चावल। ३ सावां।

तृणध्वज (सं० पु०) १ वंश, बांस। २ तालवृक्ष, ताड़का पेड़।

तृणनिम्ब (सं० पु०) तृणाकारः निम्बः। नेपालनिम्ब, चिरायता।

तृणप (सं० पु०) तृणं पाति पा-क। गन्धर्वभेद, एक गन्धर्वका नाम।

तृणपञ्चमूल (सं० क्ली०) तृणरूपाणां पञ्चानां मूलं। पञ्चाङ्गविशिष्ट पाचन। कुश, काश, शर, दर्भ, इक्षु ये पांच तृणपञ्चमूल है। शालि, इक्षु, कुश, शर और काश ये भी पांच तृणपञ्चक हैं। इनके मूलके गुण—यह तृष्णा, दाह, पित्त, असृक् और मूत्रनाशक है।

तृणपति (सं० पु०) राजघास, काला कपूर।

तृणपत्रिका (सं० स्त्री०) तृणस्येव पत्रमस्त्यस्याः ठन् टाप्। इक्षुदर्भ तृण, एक प्रकारकी घास।

तृणपत्री (सं० स्त्री०) तृणमिव पत्रमस्याः ङीष्। तृणपत्रिका, एक प्रकारकी घास।

तृणपदी (सं० स्त्री०) तृणस्येव पादोऽस्याः अन्त्यलोपः ङीपि पद्भावः। तृणतुल्य मूलयुक्त लता, वह लता जिसकी जड़ घासकी जैसी होती है।

तृणपाणि (सं० पु०) ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम।

तृणपीड़ (सं० क्ली०) तृणस्येव पीड़ा यत्र। युद्धभेद, एक प्रकारकी लड़ाई।

तृणपुष्प (सं० क्ली०) तृणस्य पुष्पमिव। १ तृण कुङ्कुम, तृणशर। २ ग्रन्थिपर्णी, गठिवन।

तृणपुष्पिका (सं० स्त्री०) सिन्दूरपुष्पी नामक घास।

तृणपूली (सं॰ स्त्री॰ तृणस्य पूला प्रतिकृतिः गौरादित्वात् ङीष्। चटा, घासकी बनी हुई चटाई।

तृणप्राय (सं॰ त्रि॰) निकम्मा, बेमतलब, बुरा।

तृणमणि (सं॰ पु॰) तृणग्राहको मणिः। तृणग्राहिमणिभेद, एक रत्नका नाम।

तृणमत्कुण (सं॰ पु॰) प्रतिभू, जो दूसरेकी जमानतमें पड़ता हो, जामिन।

तृणमय (सं॰ त्रि॰) तृणस्य विकारः तृण-मयट्। तृण विकार, घासका बना हुआ।

तृणमयी (सं॰ स्त्री॰) तृणमय-ङीप्। तृण निर्मिता, घासकी बनी हुई चीज।

तृणमल्लिका (सं॰ स्त्री॰) मल्लिकापुष्पभेद, एक प्रकारका चमेलीका फूल।

तृणसुह (सं॰ पु॰) श्यामाकधान्य, एक प्रकारका धान।

तृणमुष्टिका (सं॰ स्त्री॰) तृणशून्य, मोथा नामको घास।

तृणमूल (सं॰ क्ली॰) तृणजमूल देखो।

तृणमेद (सं॰ पु॰) वृहत् तृण।

तृणराज (सं॰ पु॰) तृणेषु राजते राज-अच्, वा तृणानां राजा। १ तालवृक्ष, ताड़का पेड़। २ नारियलका पेड़। ३ वंश, बांस। ४ इक्षु, ईख। ५ खर्जूर, खजूर।

तृणराजधर्म (सं॰ पु॰) तृणराजानां धर्म। तृणमूल, सुपारी, ताड़, हिन्ताल, केतकी, खजूर, नारियल और ताड़ी ये सात तृणराजधर्म हैं। इनसे कभी चाहिये दतुवन नहीं करना चाहिये।

तृणवल्वजा (सं॰ स्त्री॰) तृणरूपा बल्वजा। बल्वजा तृण, एक प्रकारकी घास।

तृणबिन्दु (सं॰ पु॰) एक ऋषिका नाम। ये २४वें द्वापर में एक वेदोंको विभाग कर वेदव्यास हुए थे। ये ऋषि महाभारतके कालमें भी थे और इनसे पाण्डवोंके साथ वनवासकी अवस्थामें भेंट हुई थी।

तृणबिन्दुसरोवर (सं॰ पु॰) तृणबिन्दोः ६ तत्। तृण बिन्दु ऋषिके सरोवर रूप तीर्थ यह सरोवर काम्यक वनके निकटवर्ती मरुभूमिके प्रान्तभागमें अवस्थित है।

(भारत वन २५७ अ॰)

तृणबीज (सं॰ क्ली॰) तृणका बीज ६ तत्। श्यामाक, तिन्नीका धान।

तृणबीजोत्तम (सं॰ पु॰) तृणबीजेषु उत्तमः। श्यामाक, तिन्नी धान।

तृणवृक्ष (सं॰ पु॰) तृणमिव वृक्ष असारत्वात्। १ नारिकेल, नारियल। २ ताल, ताड़। ३ गुवाक सुपारी। ४ ताड़ी, एक प्रकारका छोटा ताड़। ५ केतकी। ६ खर्जूर, खजूर। ७ हिन्ताल।

तृणशय्या (सं॰ स्त्री॰) घासका बिछौना, चटाई, साथरी।

तृणशीत (सं॰ क्ली॰) तृणेषु शीत शीतल। गन्ध तृण, रोहिषघास जिसमेंसे नींबू जैसी सुगन्ध आती है।

तृणशीता (सं॰ स्त्री॰) तृणेषु शीता। जल पिप्पली।

तृणशून्य (सं॰ क्ली॰) तृणमिव शून्य अन्तरहित। १ केतकीपुष्प। २ मल्लिका, चमेली। ३ नागरङ्ग नारङ्गी। (त्रि॰) तृणेन शून्य। ४ तृणरहित, बिना घासका।

तृणशूली (सं॰ स्त्री॰) तृण शूलमिव शोषकाय यस्याः गौरा॰ ङीष्। लताभेद, एक लताका नाम।

तृणशोषित (सं॰ क्ली॰) तृणकुङ्कुम रोहिष घास।

तृणशोषक (सं॰ पु॰ स्त्री॰) तृणमपि शोषयति शुष णिच् अच्। राजिमत् जातीय सर्पभेद, एक प्रकारका सांप।

तृणशौण्डिका (सं॰ स्त्री॰) तृणेषु शौण्डिका। [illegible] तृण।

तृणषट्पद (सं॰ पु॰) तृणमिव षट्पदः। कीटविशेष, एक प्रकारको कीड़ा।

तृणसंघ (सं॰ पु॰) तृण संघ यस्य। तृणसमूह। कुश, काश, नल, दर्भ, बल्वज और इख ये तृणसंघ हैं।

तृणसारा (सं॰ स्त्री॰) तृणस्येव सारो यस्याः। कदली वृक्ष, केलाका पेड़।

तृणसिंह (सं॰ पु॰) तृणेषु सिंह इव नाशकत्वात्। कुठार, कुल्हाड़ी।

तृणसोमाङ्गिरा (सं॰ पु॰) दक्षिणदिक्स्थित युधिष्ठिरके ऋत्विक्भेद, युधिष्ठिरका पुरोहितके नाम। उषङ्गु, [illegible], [illegible] [illegible] अर्थवाद, तृणसोमाङ्गिर और [illegible] पुत्र [illegible] ये ७ ऋषि युधिष्ठिरके पुरोहित थे और दक्षिणप्रदेशमें वास करते थे।

तृणस्कन्द (सं० पु०) तृणमिव स्कन्दति स्कन्द-अच्। तृणवत् चञ्चल स्वभावयुक्त, जिसका स्वभाव तृणसा चंचल हो।

तृणस्पर्शपरिषह (सं० पु०) जैनधर्मानुसार मुनियोंके लिए आवश्यक पालनीय बाईस परिषहोंमेंसे एक मार्ग चलते समय कांटे या कांच आदिसे चरण विद्ध होने पर भी मुनिगण उस क्लेशको वीतराग भावसे सहन करते हैं, उसे दूर करनेका कोई प्रयत्न नहीं करते। इसीका नाम तृणस्पर्शपरिषह है।

तृणहर्म्य (सं० पु० क्ली०) तृणाच्छादितो हर्म्यः। तृणयुक्त अट्टालिका, वह अटारी जिसके ऊपर खड़का घर बना हुआ हो।

तृणाक्षिप (सं० पु०) तृणरूपः अड क्षिपः। मन्थानक तृण, एक प्रकारकी घास।

तृणाग्नि (सं० पु०) तृणजातः। अग्निः। तार्ण अग्नि, घास फूसकी आग; करसीकी आँच।

तृणाञ्जन (सं० पु०) तृणमिव अञ्जनः। ककलास, गिरगिट।

तृणाटवी (सं० स्त्री०) तृणप्रचुरा अटवी। तृणमय वन

तृणाढ्य (सं० क्ली०) तृणेषु आढ्य। पर्वतजात तृण, वह घास जो पहाड़ पर उगी हो।

तृणादि (सं० पु०) तृणको आदिमें रख कर समत्वय निमित्त पाणिनि-उक्त गण विशेष। तृण, नड़, मूल, वन, पर्ण, वर्ण, विल, पूल, फल, अर्जुन, अर्ण, सुपर्ण, वल, चरण, वसु ये तृणादि हैं। (पाणिनि)

तृणान्न (सं० क्ली०) तृणस्य तृण धान्यस्य अन्न। तन्नि घासका भात।

तृणामल (सं० क्ली०) त्रिमल, तृणमलो तीर्थ।

तृणाम्ल (सं० क्ली०) तृणेषु अम्लःलवण तृण, नोनिया, अमलोनी।

तृणारणिन्याय (सं० पु०) न्यायभेद, और तृण अरणी रूप स्वतन्त्र कारणोंके समान व्यवस्था। यों तो अग्निके पैदा होनेमें तृण और अरणी दोनों कारण हैं पर परस्पर निरपेक्ष अर्थात् अलग अलग कारण हैं। अरणिसे अग्नि उत्पन्न होनेका कारण दूसरा है और तृणमें अग्नि लगानेका कारण दूसरा।

तृणावर्त (सं० पु०) तृण आवर्त्तयति भ्रमयति आ-वृत-णिच्-अण। १ वात्यारूप वातसमूह, घूर्ण वायु, बवंडर।

२ कंसराजके एक दैत्यका नाम। एक दिन कंसने इसे श्रीकृष्णको मारनेके लिये गोकुल भेजा था। चक्रवात (बवंडर)का रूप धारण कर इसने गोकुलमें हलचल मचा दिया। धूलसे सबोंकी आंखें बन्द हो गईं तथा इसके घोर गर्जनसे सब दिशाएं गूंज उठीं थीं। यह असुर बालक कृष्णको कुछ ऊपर भी ले गया था। वहां श्रीकृष्ण इतने भारी हो गये कि भूरिभार वहन करना उसके लिये दुःसाध्य हो गया। धीरे धीरे वायुवेग घटने लगा। इससे उस दैत्यको श्रीकृष्ण और भी पर्वतके समान मालूम पड़ने लगे। श्रीकृष्ण उसका गला पकड़े हुए थे। इस कारण वह उन्हें छोड़ भी नहीं सकता था। अधिक समय तक गला पकड़े रहनेके कारण वह चेष्टाशून्य हो गया और उसकी दोनों आंखें बाहर निकल आईं। पीछे वह भयानक शब्द करता हुआ गतासु हो कर श्रीकृष्णको साथ लिये व्रजमें गिरा। आकाशसे शिला पर गिरनेके कारण तृणावर्तकी हड्डी चूर चूर हो गई और वहीं पञ्चत्वको प्राप्त हुआ।

(भाग० १०।७ अ०)

तृणावस्तीतीर्थ (सं० क्ली०) तीर्थ विशेष, तृणामल तीर्थ।

तृणासृज् (सं० क्ली०) तृणेषु असृगिव रक्तत्वात्। तृणकुङ्कुम, रोहिस घास

तृणाह्वी (सं० स्त्री०) तृणविशेष, एक प्रकारकी घास।

तृणेक्षु (सं० पु०) तृणमिक्षुरिव मधुररसत्वात्। वल्वजा, सागीवागी।

तृणेन्द्र (सं० पु०) तृणा इन्द्रइव। तृणराज, ताड़का पेड़।

तृणोत्तम (सं० पु०) तृणेषु उत्तमः। उखर्वल तृण, उखल घास।

तृणोत्थ (सं० क्ली०) तृणकुङ्कुम, रोहिस घास।

तृणोद्भव (सं० पु०) तृणेषु उद्भवति उद् भू-अच्। १ नीवार धान्यभेद, तीनी धान, पसहीं। २ तृणजात अग्नि, घास फूसकी आग। (त्रि०) ३ तृणजात मात्र, जो केवल घाससे उत्पन्न हुआ हो।

तृणोलप (सं० क्ली०) उलप तृण, एक प्रकारकी घास।

तृणोल्का (सं० स्त्री०) तृणजाता उल्का। तृणजा उल्का, घास फूसकी मशाल।

तृणौकस (सं० क्ली०) तृण निर्मितं ओकः। तृणनिर्मित गृह, घास फूसका घर।

तृणौषध (सं० क्ली०) तृणात्मक औषध। एलवालुक नामक गन्धद्रव्य, एलुवा।

तृणमान (सं० वि०) तृणयुक्त।

तृण्या (सं० स्त्री०) तृणानां समूहः तृण-य। तृणसमूह, घास फूसका ढेर।

तृतीय (सं० त्रि०) त्रयाणां पूरणः त्रि-तीय सम्प्रसारण। तीनका पूरण, तीसरा।

तृतीयक (सं० पु०) तृतीय-कन्। विषम ज्वरविशेष, तीसरे दिन आनेवाला ज्वर, तिजारा। आमाशय, हृदय, कण्ठ, शिर, और सन्धि ये पांच कफके स्थान माने गये हैं। दिन और रात ये दो दो दोषके प्रकोपकाल हैं। इसलिये जब एक प्रकोपके समय दोष हृदयमें लीन हो कर दूसरे प्रकोपकालमें ज्वर उत्पन्न कर देता है। दोष यदि कण्ठमें स्थित हो, तो ज्वरदिवस हृदयमें रह कर तीसरे दिनमें आमाशय आक्रमण करता और ज्वर पैदा करता है। इसीको तृतीयक ज्वर कहते हैं। यह ज्वर एक दिनके बाद आता है। (सुश्रुत)

भावप्रकाशमें भी लिखा है, कि जो ज्वर एक दिन बाद आता है, उसे तृतीयक ज्वर कहते हैं। जो तृतीयक ज्वर कफपित्तसे उत्पन्न होता है, उसमें त्रिकस्थानमें, वायु और कफसे उत्पन्न होनेसे पीठमें तथा वायु पित्तसे उत्पन्न होनेसे मस्तके शिरमें दर्द होता है। तृतीयक ज्वरके यही तीन भेद हैं। (भावप्र०) ज्वर देखो।

तृतीयकविपर्यय (सं० पु०) तृतीयक ज्वरविशेष। जो ज्वर बीचमें एक दिन हो कर, आदि और अन्तिम दिनमें विमुक्त हो जाता है उसे तृतीयकविपर्यय कहते हैं। "मध्ये दिनं ज्वरयति आद्यन्ते च दिने विमुंचति तृतीयकविपर्ययः।" (भावप्रकाश)

तृतीयता (सं० स्त्री०) तृतीय भावे तल्। तृतीयत्व, तीनका भाव।

तृतीयप्रकृति (सं० स्त्री०) तृतीया प्रकृतिः प्रकारः। पुरुष और स्त्रीसे अतिरिक्त एक तीसरी प्रकृतिवाला नपुंसक क्लीव, हिजड़ा।

तृतीययुगव्यय (सं० पु०) तृतीयस्य युगस्य द्वापरस्य परिवर्त्तं यत्र काले। वह समय जब द्वापर युगका तृतीय पर्व उपस्थित हो।

तृतीयसवन (सं० क्ली०) सूयते सोमोऽस्मिन् तृतीय सवन कर्मधा०। यज्ञादि, अग्निष्टोम आदि यज्ञोंका तीसरा सवन। वह यज्ञ प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल में करना होता है। कात्यायन श्रौतसूत्रमें इस प्रकार लिखा है—प्रातःकालके यज्ञमें जो सब कर्म उच्चस्वर द्वारा करनेके हैं उन्हें उच्चस्वरसे नहीं करके प्रथम स्वरसे, मध्याह्नमें जो सब कर्म नीच और उच्चस्वरसे करनेके हैं उन्हें मध्यमस्वरसे और सायंकालमें जो नीच और मध्यमस्वरसे करनेके हैं, उन्हें प्रथमस्वरसे करना चाहिए।

तृतीयांश (सं० पु०) तृतीयश्चासौ अंशः। तृतीय भाग, तीसरा हिस्सा।

तृतीया (सं० स्त्री०) तृतीय टाप्। १ तिथिविशेष प्रत्येक पक्षका तीसरा दिन तीज। तिथि देखो। २ व्याकरणमें करण-कारक।

तृतीयाकृत (सं० त्रि०) तृतीय कार-कृञ। बारम्बार कर्षित खेत, वह खेत जो तीन बार जोता गया हो।

तृतीयाप्रकृति (सं० स्त्री०) तृतीया प्रकृतिः। ... पा ६।३।१८। इति न पुंवद्भावः। नपुंसक, हिजड़ा।

तृतीयाश्रम (सं० पु०-क्ली) तृतीय आश्रम। वानप्रस्थाश्रम। गृहस्थाश्रमके बाद यही आश्रम अवलम्बन करना पड़ता है।

तृतीयासमास (सं० पु०) तृतीया सह समासः। समास विशेष, तृतीया तत्पुरुष समास। तृतीया विभक्तिके साथ यह समास होता है, इसीलिए इसका नाम तृतीया समास रखा गया है। समास देखो।

तृतीयी (सं० त्रि०) तृतीय अस्त्यर्थे इनि। तृतीय भागार्ह, तीसरे हिस्सेका हकदार।

तृपु (सं० त्रि०) तृद बाहुलकात् उक। हिंसक, नाश करनेवाला।

तृदिल (सं० त्रि०) तृद-बाहु० इलच्। १ भेदक, छेद करनेवाला। २ छिद्र, पपर।

तृपत् (सं० पु०) तृप्नोति प्रीणयति तृप-अति। वर्त्तमाने ... इति सूत्रेण निपातनात् साधुः। १ चन्द्र, चन्द्रमा। २ छत्र, छतरी। ३ इन्द्र।

तृपल (सं॰ वि॰) तृप्यति-तृप-कल । फलल, पलव । उण् १।१०६ । क्षिप्र, तेज, चञ्चल ।

तृपला (सं॰ स्त्री॰) तृपल-टाप् । १ लता । २ त्रिफला ।

तृपलप्रभर्मन् (सं॰ वि॰) १ प्रस्तरादि द्वारा प्रहारकारक, जो पत्थर आदिसे चोट करता हो । २ क्षिप्र प्रहारकारक, जो बहुत तेजीसे मारता हो ।

तृपाना (सं॰ स्त्री॰) तृप-कानच् । लता ।

तृप्त (सं॰ वि॰) तृप-क्त । १ तृप्तियुक्त, तुष्ट, अघाया हुआ, जिसकी इच्छा पूरी हो गई हो । २ प्रसन्न, खुश ।

तृप्ता (सं॰ स्त्री॰) तृप्त-टाप् । गायत्रीभेद, एक प्रकारकी गायत्री ।

तृप्ता (सं॰ स्त्री॰) तृप्त-टाप् । गायत्रीभेद, एक प्रकारको गायत्री ।

तृप्तांश (सं॰ वि॰) तृप्तः अंशुर्यस्य । तर्पितावयव, जिसका शरीर तृप्त हो गया हो ।

तृप्ति (सं॰ स्त्री॰) तृप-क्तिन् । भक्षणादि द्वारा आकांक्षा निवृत्ति, इच्छा पूरो होनेसे प्राप्त शान्ति और आनन्द, संतोष । इसके पर्याय—सौहित्य, तर्पण, प्रोणन और असितम्भव हैं ।

तृप्तिकर (सं॰ वि॰) तृप्तिं करोति कृ-ट । प्रीतिप्रद, आह्लादजनक, खुश करनेवाला ।

तृप्तिदा (सं॰ स्त्री॰) तृप्तिं ददाति दा-क-टाप् । गायत्रो-भेद, एक प्रकारको गायत्री । तृप्ता देखो ।

तृप्तिन् (सं॰ वि॰) तृप्तोऽस्त्यस्य तृप्त इनि, सुखादिभ्यश्च पा ५।२।१३१) तृप्तियुक्त, प्रसन्न, खुश ।

तृप्तिमत् (सं॰ वि॰) तृप्तिः विद्यते अस्य तृप्ति-मतुप् । १ तृप्तियुक्त, आह्लादविशिष्ट । (क्लो॰) २ उदक, जल ।

तृप्नु (सं॰ वि॰) तृप-क्नु । तृप्तिशील, खुश रहनेवाला ।

तृप्र (सं॰ पु॰) तृप्यत्यनेन तृप-रक् । स्फायितञ्चीति । उण् २।१३ । १ घृत, घो । २ पुरोडास । (क्लो॰) ३ दुःख, तकलीफ । (वि॰) ४ तर्पक, तृप्त करनेवाला ।

तृप्रालु (सं॰ वि॰) तृप्रं दुःखं न सहते असहने तृप्राआलु । दुःखासहन, जो दुःख सहन न कर सकता हो ।

तृफला (सं॰ स्त्री॰) तृम्फति पोड़यति तृफ-कलच् टाप् । त्रिफला, हड़, बहेड़ा आंवला ।

तृफू (सं॰ स्त्री॰) तृफति पीड़यति तृफ-क । सर्पजाति, एक प्रकारका सांप ।

तृम्फादि (सं॰ पु॰) धातुगणविशेष । तृम्फ, तुम्फ, दृम्फ, ऋम्फ, गुम्फ, उम्फ, शुम्फ ये सब धातु तृम्फादि हैं ।

तृष् (सं॰ स्त्री॰) तृष-क्विप् । तृषा देखो ।

तृषा (सं॰ स्त्री॰) तृष-टाप् । १ आकांक्षा, इच्छा, अभि-लाषा । पर्याय—इच्छा, स्पृहा, ईहा, तृट्, वाञ्छा, लिप्सा, मनोरथ । २ पिपासा, प्यास । ३ कामकन्या, कामदेवको लड़की । ४ लाङ्गली वृक्ष, कलिहारी । ५ लोभ, लालच ।

तृषाभू (सं॰ स्त्री॰) तृषायाः भूरुत्पत्तिस्थानं । क्लोम, पेटमें जल रहनेका स्थान ।

तृषालु (सं॰ वि॰) पिपासित, प्यासा ।

तृषावान् (सं॰ वि॰) पिपासित, प्यासा ।

तृषास्थान (सं॰ पु॰) क्लोम, पेटमें जल रहनेका स्थान ।

तृषाह (सं॰ क्लो॰) तृषां हन्ति हन-ड । १ जल, पानी । २ मधुरिका, एक प्रकारको सौंफ ।

तृषित (सं॰ वि॰) तृषा जाता अस्य तारकादित्वादितच् । १ तृष्णान्वित, प्यासा । २ लुब्ध, लोभो, लालची । ३ इच्छुक, अभिलाषो ।

तृषितोत्तरा (सं॰ स्त्री॰) तृषित उत्तरो यस्याः । पयन-पर्णोवृक्ष, पटसन ।

तृषु (सं॰ क्लो॰) तृ-इक् पृषोदरादित्वात् साधुः । १ क्षिप्रता, तेजो, शोघ्रता । (वि॰) २ क्षिप्रतायुक्त, तेज ।

तृषुच्यवस् (सं॰ त्रि॰) तृषु च्यवः यस्य । क्षिप्रगमनयुक्त, बहुत तेज चलनेवाला ।

तृषुच्युत् (सं॰ वि॰) तृषु-च्यु तु-क्विप् । क्षिप्रगमनशील, जो तेजोसे चलता है, जिसको गति बहुत तेज हो ।

तृष्ट (सं॰ वि॰) तृष-क्त वेटे बाहुलकात् इडभावः । १ दाहजनक । २ तृषित, प्यासा ।

तृष्टामा (सं॰ स्त्री॰) तृष्टं दाहं अमयति गमयति अम-णिच्-अच् । नदो, दरया ।

तृष्णज् (सं॰ वि॰) तृष्यति आकांक्षति तृष नजिङ् । १ लुब्ध, लोभी । २ तृषित, प्यासा ।

तृष्णा (सं॰ स्त्री॰) तृष न, सच कित् । १ पिपासा, प्यास । पर्याय—उदन्या, तृष्, तर्ष, तृषा, तर्षण । (जटाधर) २ लिप्सा, लोभ, लालच । ३ अप्राप्त अभिलाष । ४ रोग-

भेद, एक बीमारी। इसका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—

जलपानसे तृप्ति न हो कर यदि फिर फिर जलको आकांक्षा बनी रहे तो उसे तृष्णा कहते हैं। भय, श्रम, क्षोभ, शोक, श्रम, मद्यपान, रूक्ष अम्ल उष्ण और कटु रूक्ष भोजन; धातुक्षय, वमन तथा ताप इन सबोंके द्वारा पित्त और वायुकी वृद्धि हो कर जलीय धातुवाही सभी स्रोतोंको दूषित करती है। इन सब स्रोतोंके दूषित हो जानेसे प्रबल तृष्णा उत्पन्न होती है। इसकी उत्पत्तिके सात भेद हैं—वायुसे, पित्तसे, कफसे, क्षतसे, क्षयसे (धातुक्षय), आमसे तथा कटु, तिक्त आदि भोजन करनेसे।

तालु, ओष्ठ कण्ठ एवं मुखका सूखना, दाह, सन्ताप, मोह भ्रम, विलाप और प्रलाप ये सब तृष्णाके पूर्वलक्षण हैं। विशेषतः वायुसे उत्पन्न तृष्णामें मुखशोष, शङ्खदेश (कपालास्थि), शिरोदेश तथा गण्डदेशमें पीड़ा, स्रोतस्थका अवरोध, मुखका वैरस्य और शीतल जलकी इच्छा होती है। मूर्च्छा, प्रलाप, अरुचि, मुखशोष, पीत नेत्र, अत्यन्त दाह, शीताभिलाष, मुखको तिक्तता और कण्ठसे धूमोद्गम ये सब पित्तसे उत्पन्न तृष्णाके लक्षण हैं। जठराग्निके कफ द्वारा रुद्ध हो जाने पर उसकी वाष्प रुक जाती है जिससे जलवाही स्रोतपथ दूषित हो कर मुख्य तृष्णा उत्पन्न करता है।

निद्रा, देहकी गुरुता, मुखको मधुरता, शीतज्वर, वमन, अरुचि ये सब कफसे उत्पन्न तृष्णाके लक्षण हैं। शोणितके कारण पीड़ा वा शोणितके गिरनेसे तृष्णाके सब लक्षण पाये जाने पर भी अधिक जलको आकांक्षा नहीं रहती। इसको क्षतसे उत्पन्न तृष्णा कहते हैं। रस आदि धातु क्षय होनेसे जो तृष्णा पैदा होती है, दिनरात बार बार जल पीने पर भी उसकी शान्ति नहीं होती। इसे कोई कोई सान्निपातिक तृष्णा कहते हैं। आमज तृष्णामें त्रिदोषके सभी लक्षण देखे पड़ते हैं। इनके सिवा हृच्छूल, निष्ठीवन और शरीरमें अवसाद आदि लक्षण भी उत्पन्न होते हैं। अतिमात्र घी, अम्ल वा लवण अथवा गुरुपाक अन्न खानेसे भी तृष्णा पैदा होती है, इसे भोजनसे उत्पन्न तृष्णा कहते हैं। तृष्णार्त मनुष्य यदि क्षीण, मानसिक क्रियाहीन और बधिर हो तथा उसको शोष निकल गई हो, तो रोगको असाध्य समझना चाहिये। (सुश्रुत उत्तरतन्त्र ४८ अ०) भावप्रकाशमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है—

भय, परिश्रम, बल क्षय तथा पित्तवर्द्धक द्रव्य खानेसे पित्त और वायु कुपित हो कर ऊपरको ओर चला जाता है और तालुमें पहुंच कर पिपासा उत्पन्न करता है। रस, कफ, आमरससे दूषित दोष जलवाही स्रोतोंको दूषित कर तृष्णा उत्पन्न करता है। तृष्णाके सात भेद हैं—वातज, पित्तज कफज, क्षतज क्षयज आमज, और भक्तज। सुश्रुतके '[illegible]' इसके बहुदलका ह्रास होनेके कारण करके मतानुसार जिह्वा, हृदय, गलदेश और क्लोम (मूत्राधार)को शोष होता है अर्थात् तृष्णा होनेके समय दोष इन्हीं सब स्थानोंमें रहता है।

तृष्णाका सामान्य लक्षण—तृष्णाके उपस्थित होने पर रोगोके तालु, ओष्ठ, कण्ठ और मुखमें वेदना तथा जलन पैदा होती है; एवं सन्ताप, मोह भ्रम और प्रलाप भी होता है।

वातज तृष्णाका लक्षण—वातसे उत्पन्न तृष्णारोगमें मुखमें मलिनता और विरसता, शङ्ख (कपालास्थि) और मस्तकमें वेदना होती एवं रस और अम्बुवाहिधमनी बन्द हो जाती है।

पित्तजका लक्षण—पैत्तिक तृष्णारोगमें मूर्च्छा, अन्नमें अरुचि, प्रलाप दाह, रक्ताक्ष, अत्यन्त मुखशोष, शीतलाभिलाष, मुखको तिक्तता और धुआं निकलनेकी जैसा मालूम पड़ता है।

कफजका लक्षण—कफसे उत्पन्न तृष्णारोगमें आपसे आप कुपित कफ जठराग्निका आच्छादन करता तथा क्रमशः तृष्णाको रोक देता है। यह अवरुद्ध ऊष्मा जलवाही स्रोतको रोक कर कफ-वात्‌से तृष्णा उत्पादन करती है। इस रोगमें निद्राधिक्य देहमें गुरुत्व मुखमें मधुरता और तृष्णापीड़ित व्यक्ति अत्यन्त क्षय हो जाता है।

क्षतजका लक्षण—शस्त्रादि द्वारा क्षत मनुष्यको जो वेदना तथा रक्त निःसरणके कारण तृष्णा उत्पन्न होती है, उसको क्षतज तृष्णा कहते हैं।

क्षयजका लक्षण-रसक्षयप्रयुक्त जो तृष्णा उत्पन्न होती है, उसे क्षयज तृष्णा कहते हैं। क्षयज तृष्णारोगमें रोगी दिनरात सभी समय जल पी कर भी तृप्तिलाभ नहीं कर सकता तथा रसक्षयके सभी लक्षण दिखलाई देते हैं। कोई कोई इसे सान्निपातिक तृष्णा भी कहते हैं।

रसक्षयका लक्षण—रसक्षय होने पर हृदयमें वेदना, कम्प, मुखशोष, हृदयमें शूल, शोष और शून्यता होती है।

आमजका लक्षण—आमज तृष्णा सान्निपातिक तृष्णाकी नाईं लक्षणयुक्त होती है। इसमें हृदयमें वेदना, निष्ठीवन और शरीरमें अवसन्नता होती है।

अन्नजका लक्षण—स्निग्धद्रव्य, अम्ल, लवण और कटु, रसयुक्त द्रव्य तथा गुरुद्रव्य सेवन करनेसे शीघ्र ही तृष्णा उत्पन्न होती है। इस तृष्णाको अन्नज तृष्णा कहते हैं।

उपसर्ग तृष्णाका लक्षण—जिस तृष्णामें रोगीका स्वर क्षीण हो जाता है, मूर्च्छा और क्लान्ति आने लगती है तथा मुखशोष, हृदय-शोष और तालुशोष हो जाता है उस धातु-शोषणकारी तृष्णाको कष्टसाध्य समझना चाहिये।

तृष्णारोगका उपसर्ग और अरिष्ट—ज्वर, मोह, क्षय, कास और श्वासादियुक्त अत्यन्त मुखशोषादि कठिन उपद्रवयुक्त रोगोंसे क्षश और वमिवेगसे कातर ये सब लक्षण रोगीको मृत्युके कारण हैं।

तृष्णाकी चिकित्सा—वातज तृष्णारोगमें वायुनाशक अथच कोमल, लघु और शीतल द्रव्योंसे चिकित्सा करानी चाहिये। वातज तृष्णारोगमें गुड़मिश्रित दही खाना प्रशस्त है। पित्तज तृष्णारोगमें मधुर और तिक्तरसयुक्त द्रव्य तथा तरल और शीतल द्रव्य हितकर है। मोथा, पित्तपापड़, वाला, धनियाँ, खसकी जड़ और श्वेतचन्दन इनोंके मिश्रित परिमाण दो तोलेको दो सेर पानीमें उबालते हैं। जब पानी जल कर एक सेर बचता है, तो उसे उतार लेते हैं। ठण्डा करके सेवन करनेसे पिपासा दाह और ज्वर घट जाता है। ८ तोले लाईका चूर्ण-को ३८ तोले उष्ण जलमें डाल कर एक रात रख छोड़ते हैं। दूसरे दिन उसमें मधु ४ माशा, गुड़ ४ माशा, गाम्भारीफलचूर्ण ४ माशा और चीनी ४ माशा मिला कर सेवन करनेसे पैत्तिक तृष्णा जाती रहती है।

आर्द्र वस्त्रोंकी शय्या पर सोनेसे तथा उनसे शरीर ढकनेसे तृष्णा और उग्र दाह दूर हो जाता है। द्राक्षा, इक्षुरस, दुग्ध, यष्टिमधु, मधु और नीलोत्पल इन सब द्रव्योंको पीस कर जलके साथ उसे नाक द्वारा पीनेसे कठिनसे कठिन तृष्णा नष्ट हो जाती है।

अनार, सेव, लोध, कैथ और खट्टा (नीबू) इन सब-को एक साथ पीस कर मस्तक पर लेप देनेसे तृष्णा जाती रहती है।

ठण्डा जल भर पेट पी कर पान और अल्प मधु खा कर वमन करनेसे तृष्णा प्रशमित हो जाती है। धनियें-के काढ़ेको चीनीके साथ प्रति दिन सवेरे पीनेसे तृष्णा और दाह जाता रहता है। आँवला, पद्ममूल, कुट, लाक्षा, वटरोहक इन सबको चूर्ण कर मधुके साथ गोली बनाते हैं। बाद उस गोलीको मुखमें रखनेसे प्यास और दारुण मुखशोष नष्ट हो जाता है। क्षयज तृष्णामें बरा-बर भाग जलमिश्रित दूध वा मांस रस अथवा असम परिमाणका मधुमिश्रित जल हितकर है। आमज तृष्णामें बिल्व और वचका क्वाथ सेवन करना चाहिए। अधिक खाने पर यदि तृष्णा उपस्थित हो जाय तो वमि करनेसे इसका प्रतिकार होता है। इस प्रक्रिया द्वारा क्षयज तृष्णाके सिवा अन्य प्रकारके तृष्णारोग भी अच्छे हो जाते हैं।

मूर्च्छा, वमि, अनाह, रक्त पित्त और मदात्यय रोगीं-को एवं रमण और मद्याकर्षित व्यक्तिको शीतल जल पिलाना चाहिए। हितकर अन्न और औषधद्वारा तृषित व्यक्तिकी तृष्णा दूर करना कर्त्तव्य है, क्योंकि तृष्णाकी शान्ति होनेके बाद अन्य रोगकी चिकित्सा की जा सकती है। तृष्णातुर मनुष्यको यदि जल न मिले तो वह उत्कट व्याधियुक्त वा मरणापन्न हो जाता है। तृष्णासे मोह और मोहसे जीवननाश होता है, इसी कारण हर हालत-में जल देना उचित है। भोजन न करनेसे भी जीवन धारण हो सकता है, किन्तु तृष्णातुर मनुष्यको जल न मिले तो शीघ्र ही उसकी मृत्यु हो जाती है।

(भावप्र० तृष्णाधिकार)

तृष्णाक्षय (सं० पु०) तृष्णायाः क्षयो यत्र। १ शान्ति। तृष्णाके नहीं रहने पर आदमी सुखी रहता है। तृष्णायाः

क्षय इ-तत्। २ पिपासानाश, प्यासका दूर होना।

तृष्णाघ्न (सं० त्रि०) तृष्णां हन्ति तृष्णा-हन्-क्विप्। १ जल, पानी। २ तृष्णानाशक, जिससे तृष्णा जाती रहती हो।

तृष्णार्त्त (सं० पु०) तृष्णया ऋतः ३ तत्। पिपासाकुल, पिपासातुर, वह जो प्याससे छटपटाता हो।

तृष्णारि (सं० पु०) तृष्णाया अरिः ६-तत्। १ पर्पट, पित्तपापड़ा। (त्रि०) २ तृष्णानाशक, प्यास दूर करने वाला।

तृष्णातुर (सं० पु०) तृष्णाया आतुरः ६-तत्। पिपासा-युक्त वह जिसे प्यास लगी हो।

तृष्णालु (सं० त्रि०) तृष्णा अस्त्यर्थे आलु। १ तृषित प्यासा। २ लुब्ध, लालची, लोभी।

ते (सं० अव्य०) १ त्वया, तुमसे।

तेइस (हिं० वि०) तेईस देखो।

तेइसवाँ (हिं० वि०) तेईसवाँ देखो।

तेईस (हिं० वि०) १ जो बीसमें तीन अधिक हो। (पु०) २ वह संख्या जो बीस और तीनके योगसे बनी हो।

तेईसवाँ (हिं० वि०) जो क्रममें तेईसके स्थान पर पड़ता हो।

तेंतरा (हिं० पु०) वह लकड़ी जो बैलगाड़ीमें पहिये नीचे लगी रहती है।

तेंतालिस (हिं० पु०) तेंतालीस देखो।

तेंतालिसवाँ (हिं० वि०) तेंतालीसवाँ देखो।

तेंतालीस (हिं० वि०) १ जो गिनतीमें चालीससे तीन अधिक हो। (पु०) २ वह संख्या जो चालीससे तीन अधिक हो।

तेंतालीसवाँ (हिं० वि०) जो क्रमसे तेंतालीसके स्थान पर पड़ता हो।

तेंतिस (हिं० वि०) तेंतीस देखो।

तेंतिसवाँ (हिं० वि०) तेंतीसवाँ देखो।

तेंतीस (हिं० वि०) १ जो गिनतीमें तीससे ज्यादा हो। (पु०) २ वह संख्या जो तीस और तीनके योगसे बनी हो।

तेंतीसवाँ (हिं० वि०) जो क्रममें तेंतीसके स्थान पर पड़ता हो।

तेंदुआ (हिं० पु०) अफ्रीका और एशियाके बड़े जङ्गलोंमें मिलनेवाला एक हिंसक पशु। यह बिल्ली या चीते की जातिका होता है। रंग और बनावटमें यह शेर और चीतेसे कम नहीं है। किन्तु यह चीतेसे छोटा होता और चीतेकी तरह इसकी गरदन पर भी अयाल नहीं होती। यह चार पाँच फुट लम्बा होता है। इस के शरीरका रंग कुछ पीलापन लिए भूरा होता है। इस जातिके कुछ जानवर काले रंगके भी होते हैं।

तेंदू (हिं० पु०) भारतवर्ष, लंका, बरमा और पूर्व-बङ्गालके पहाड़ों और जङ्गलोंमें होनेवाला एक प्रकारका वृक्ष। पुराना होने पर इसके भीतरकी लकड़ी बिलकुल काली हो जाती है जो बाजारमें आबनूसके नामसे बिकती है। इसके पत्ते अमरूदके, गोलदार, चुरचुरे और महुएके पत्तों की तरहके पर उनसे छोटे होते हैं। इसका छिलका काला होता और जलानेसे चिड़चिड़ाता है। २ इसी पेड़का फल। यह नींबूकी तरहका गोल और पीला होता है। जब यह फल पकता है, तब इसका रंग पीला हो जाता और खानेके काममें आता है। इसके कच्चे फलके गुण—स्निग्ध, कसैला, हलका, मलरोधक, शीतल, अरुचि और वातोत्पादक। पके फलके गुण—भारी, मधुर, कफकारी और पित्त, रक्तरोग तथा वातनाशक। ३ एक प्रकारका तरबूज जो सिन्ध और पंजाबमें पाया जाता है।

तेग (फा० स्त्री०) खड्ग, तलवार।

तेगबहादुर (तेगबहादुर)—सिख-सम्प्रदायके ९वें गुरु, ६ठे गुरु हरगोविन्दके पुत्र। हरगोविन्दके तीन स्त्रियोंसे पाँच पुत्र थे, जिनमें दामोदरीके गर्भसे [illegible] गुरुदत्त हुए थे और नानकीके गर्भसे तेगबहादुर। पिताको जीवित अवस्थामें ही गुरुदत्तकी मृत्यु हो गई; परन्तु उनके पुत्र हरराय पर हरगोविन्दका बड़ा स्नेह था। इन्हीं हर-रायको हरगोविन्द अपनी गद्दी दे गये। इस पर नानकीने पतिके सामने अपना दुःख प्रकट किया। मरते समय हरगोविन्द नानकीसे कह गये कि "भविष्यमें तेगबहादुर को ही गद्दी मिलेगी। तुम मेरे इस कवच (तावीज) को रख दो। जब ९म गुरु होगा, तब उसे देना।"

गुरु हररायके भी दो पुत्र थे—रामराय और हर किशन। हररायके बाद हरकिशन भी अल्प उम्रमें गुरु हो

गये। इनको चेचककी बीमारीसे मौत हो गई। मरते समय वे अपने शिष्योंसे कह गये" कि 'आओ, तुम्हारे गुरु विपाशानदीके किनारे बकाला ग्राममें हैं।'

तेगबहादुर बहुत दिनों तक पटनेमें थे, उसके बाद नाना स्थानोंमें घूमते हुए गोविन्दवालके पास बकाला ग्राममें पहुंचे और वहीं रहने लगे। हरकिसनकी मृत्युके बाद उनके अनुगत शिष्योंने तेगबहादुरको अपना गुरु बना लिया। किन्तु सोधियोंने हरकिसनके भ्राता रामरायको गुरु बनानेका निश्चय कर लिया था। उनके प्रयत्नसे रामराय दिल्लीमें गुरुपद पर अभिषिक्त हुए। उस समय हरगोविन्दके एक प्रधान शिष्य मकवनशाह दिल्लीमें ही थे, इनका सिख-सम्प्रदाय पर अच्छा प्रभाव था। अब मकवनशाह भी गुरुवाक्यको सुसिद्ध करनेकी इच्छासे बकाला पहुंचे और तेगबहादुरको गुरु मान कर उन्हें नजराना भेंट किया। परन्तु तेगबहादुरने उसे ग्रहण नहीं किया, कहा-"मुझे क्यों देते हैं? जो राजा हैं उन्हें नजराना दीजिए।" अन्तमें माता और मकवनशाहकी कोशिशसे तेगबहादुर गद्दी पर बैठे। माताने उन्हें वह कवच और हरगोविन्दकी तलवार ला कर दी। तेगबहादुरने कहा—"इनको लेने लायक मैं नहीं हूं। आप लोग मुझे तेगबहादुर (महायोद्धा) समझते हैं, मगर मेरा नाम है देग-बहादुर (अर्थात् पाकस्थलीका रक्षक)।"

तेगबहादुरके अन्तिम वाक्य पर तमाम सिख समाज उन्हें भक्तिकी दृष्टिसे देखने लगी और उन्हींको सिख-धर्मका रक्षक मानने लगी। थोड़े ही दिनोंमें उनके सैकड़ों शिष्य बन गये। अब तेगबहादुर पितासे भी अधिक प्रसिद्ध हो गये।

पहले इन्होंने सोधियोंके उच्छेदका विचार किया था, किन्तु मकवनशाहके कहनेसे शान्त हो गये। अब ये महा आड़म्बरसे समय बिताने लगे। हजारों घुड़सवार इनकी आज्ञा पालनेके लिए सशस्त्र तैयार रहते थे। शिष्योंके उपहारोंसे इनके पास यथेष्ट धन भी सञ्चित हो गया था, जिससे कर्तारपुरमें इन्होंने एक सुदृढ़ दुर्ग बनवाया। वहां इनकी धर्मसभा संस्थापित हुई। रामराय अब तक कोई बहाना ढूंढ़ रहे थे, इन्होंने मौका जान दिल्लीश्वर औरङ्गजेबको खबर दी कि 'तेगबहादुरने आपके साथ शत्रुता करनेके लिए दुर्ग बनवाया है, शीघ्र ही उनका दमन करना चाहिये।" दिल्लीके दरबारसे तेगबहादुरको पकड़ लानेके लिए परवाना निकला। तेगबहादुर अपने परिवार-सहित दिल्ली पहुंचे और वह जयपुरराजके प्रासादमें ठहरे। जयपुरराजने उनको तरफसे बादशाहको खबर दी, कि "तेगबहादुर एक शान्त एवं शिष्ट फकीर हैं, उपद्रव मचाना वा राज्यका अनिष्ट करना उनका उद्देश्य नहीं है। नाना तीर्थोंमें भ्रमण करना ही उनका उद्देश्य है।" कुछ भी हो, इस बार जयपुरराजके प्रयत्नसे तेगबहादुर बाल बाल बच गये। फिर वे जयपुरके राजाके साथ बङ्गालमें चले आये। पीछे वे पटनेमें ही परिवार-सहित रहने लगे। यहां इनकी पत्नी गुजरीने भावी सिख-गुरु प्रसिद्ध गोविन्दसिंहका प्रसव किया। पटनामें तेगबहादुर करीब पांच-छ वर्ष थे, उनका अधिकांश समय पूजा और ध्यानमें व्यतीत होता था। यहां उन्होंने सिखोंको धर्मनीति सिखानेके लिए एक विद्यालय स्थापित किया।

अनन्तर ये अपने देश लौट आये। कहलूर-राज देवीमाधवसे, ५०० रु० दे कर, इन्होंने आनन्दपुरमें थोड़ीसी जमीन खरीदी, जिसमें मखेरवाल नामक नगर बसाया। अब भी यह नगर मौजूद है, सिख लोग इसे पवित्र मानते हैं।

बङ्गालमें एक उदासीनसे इन्होंने कुछ उपदेश ग्रहण किया था। उस उपदेशके प्रभावसे ये पञ्जाब पहुंचते ही एक डकैत बन गये। हांसी और शतद्रु नदीके मध्यवर्ती समस्त भूभाग इनके उपद्रवोंसे तंग हो गया। बहुतसे गृहस्थ घर छोड़ कर भगने लगे। इसी समय आदम हाफिज नामक एक धर्मध्वजी भी तेगबहादुरके साथ हो लिया। मुगल बादशाहके पंजेसे बचनेके लिए बहुतसे भागे वा छुपे हुए व्यक्तियोंने भी इनका साथ दिया। धीरे धीरे तेगबहादुरका दल सम्प्रदायी हो गया। बादशाहने इनके दमनके लिए फौज भेजी। उसके साथ इनका एक छोटा-मोटा युद्ध भी हो गया। आखिर तेगबहादुर कैद कर लिये गये। दिल्ली जानेसे पहले वे गोविन्दको अपने पद पर अभिषिक्त कर गये। भविष्यमें ये ही गुरु गोविन्दसिंह नामसे प्रसिद्ध हुए हैं। तेगबहा-

गुरुके दिल्ली लाये जाने पर, औरङ्गजेबने उनसे धर्म-विषयक बहुतसी बातें पूछीं। अन्तमें उन्होंने तेगबहा-दुरको मुसलमानधर्म ग्रहण करनेके लिये बाध्य किया। परन्तु तेगबहादुरने मुसलमान होना स्वीकार नहीं किया।

पहले उन्हें कारागारमें रक्खा गया और मुसलमान बनानेके लिये काफी यत्न किया गया। अन्तमें तेगबहा-दुरने बादशाहको कहला भेजा कि "दरबारमें मैं अपनी एक करामत दिखाना चाहता हूं"।

औरङ्गजेबने उन्हें दरबारमें हाजिर होनेके लिये हुक्म दिया। तेगबहादुरने एक कागज पर कुछ लिखा और उसे गर्दन पर रख कहा—"मेरे इस मन्त्रके प्रभावसे कटा हुआ सिर छूट जायगा।" उन्होंने उसी समय जल्लादसे सिरको अलग कर देनेके लिए कहा। भरे दरबारमें तेग-बहादुरका सिर धड़से अलग हो गया। सभी बड़े आश्चर्यसे उस कागजकी ओर दृष्टि डाली, उस पर लिखा था—"सिर दिया, पर सार न दिया" अर्थात् मस्तक दिया पर मनकी बात न दी। १६७५ ई०में यह घटना हुई थी।

तेगबहादुरने इस तरह १२ वर्ष ७ मास २१ दिन गुरु-आई की थी। फिर भी बादशाहने उसी वक्त उनकी देहको रास्तेमें फेंक देनेके लिए हुक्म दिया। दिल्ली वाले सिक्खोंने गुरुके पवित्र मस्तकका दाह किया और वहां एक समाधि मन्दिर बनवा दिया। मजहबी सिक्खोंमेंसे भगवीसिंह (वा भाई दास) उनके उस मस्तक हीन शरीरको आनन्दपुर ले आये। वहां गुरु गोविन्दने महा समारोहके साथ अन्त्येष्टि कार्य समाप्त किया। आनन्दपुरमें तेगबहादुरके स्मरणार्थ एक बड़ा मन्दिर बनवाया गया।

अब भी सिख सम्प्रदाय तेगबहादुरको "सच्चा बादशाह" कह कर उनका खूब सम्मान करता और भक्ति दिखाता है।

तेगा (स० क्लो०) तिज-पुंदि ... । पार्वतीय देवता भेद, एक सामान्य देवताका नाम।

तेगा (अ० पु०) १ खड्ग, खांड़ा। २ दरवाजेको ईंट पत्थर आदिसे बन्द करनेकी क्रिया। ३ कुश्तीका एक दांव या पेंच। इसका दूसरा नाम कमरबिन्ना है।

तेङ्कुमला—दक्षिण कनाड़ाका एक ग्राम। यह कासर-गोड़से ८ मील उत्तरमें समुद्रके किनारे अवस्थित है। यहां इक्केरि राजाओंका बनाया हुआ एक पुराना किला है। किलेके प्रवेशद्वार पर एक कनाड़ी शिलालेख देखनेमें आता है।

तेंदूर—मदुरा जिलेमें पेरिय कुलमके पास कोस पूर्वमें अवस्थित एक पुण्यस्थान। यहांका सुब्रह्मण्यका मन्दिर बहुत पुराना है। मन्दिरमें बहुतसे शिलालेख विद्यमान है।

तेंदूरर—तिन्नेवेलि जिलेके अन्तर्गत तेंदूरर तालुकका एक शहर। इसका दूसरा नाम आइवारतिरु नगरी है। यह अक्षा० ८° ३६' उ० और देशा० ७८° १०' पू० तूत-कुड़ीसे १८ कोस दक्षिण-पश्चिममें तथा ताम्रपर्णी नदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। यहां तेंदूरर सरोवरके समीपमें एक शिलालेख मौजूद है।

तेंकासि—मन्द्राज तिन्नेवेलि जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० ८° ४८' और ९° ८' उ० तथा देशा० ७७° ११' और ७७° १८' पूर्वमें पड़ता है। भूपरिमाण १०४ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ११६६१० है। इसमें तीन शहर और ८१ ग्राम लगते हैं।

२ तिन्नेवेलि जिलेके इसी नामके तालुकका एक शहर। यह अक्षा० ८° ५८' उ० और देशा० ७७° १८' पू० तिन्नेवेलि शहरसे [illegible] मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग १८११८ है।

दक्षिणकाशी समझे जानेसे इसे तेंकासि नाम पड़ा है। यहांके अधिवासी इस स्थानको काशीके जैसा पवित्र समझते हैं। यहांका विश्वनाथस्वामीका मन्दिर प्रसिद्ध है। इसके सिवा और भी कई एक शिवालय हैं जिनमें काशी विश्वनाथस्वामीका मन्दिर बहुत सुन्दर देख पड़ता है। यहांके कल्लुप्पनमें एक मन्दिर तथा यहांके तीर्थोंका माहात्म्य लिखा है। इन सब मन्दिरोंमें पाण्ड्यराजाओंके समयमें खोदे हुए बहुतसे शिलालेख देखे जाते हैं।

किसी समय यह दक्षिणवासी दुर्दम्य दुर्ग प्रासाद आदिसे घिरा हुआ था। पलिगारोंके युद्धकालमें ये सब तहस नहस कर डाले गये।

तेङ्गल (तेङ्गलई)—मन्द्राज प्रदेशके वैष्णवोंकी एक श्रेणी। इस प्रदेशके वैष्णवगण दो सम्प्रदायोंमें विभक्त हैं—एक वड़गल या उत्तरदेशी और दूसरा तेङ्गल या दक्षिणदेशी। रामानुजके समय ये लोग एक ही सम्प्रदायभुक्त थे। उसके बाद रामानुजके शिष्य मनवलमहामुनि या रम्यजामातृ मुनिके मतानुवर्त्ती तेङ्गल और रामानुजके अन्य शिष्य वेदान्ताचार्य या वेदान्तदेशिकके अनुवर्त्ती लोग वड़गल नामसे प्रसिद्ध हुए। किसी किसीका कहना है, कि काञ्चीपुरवासी वेदान्तदेशिकने यह प्रचार किया था कि "मैं दाक्षिणात्यके ब्राह्मणकुलके आचार व्यवहारका संशोधन करने और दाक्षिणात्यके उत्तरांशके सनातन ज्ञान धर्मको पुनः प्रतिष्ठाके लिए भगवान्‌द्वारा प्रेरित हुआ हूं।" वड़गलोंने उनका मत मान लिया, पर तेङ्गलोंमें किसीने भी नहीं माना। इसलिए दोनों दलोंमें विषम विरोध खड़ा हो गया। परन्तु दोनों सम्प्रदाय विष्णुके उपासक हैं। वड़गल लोग विष्णुकी भांति विष्णुशक्तिका अस्तित्व और उनका प्रभाव भी मानते हैं, किन्तु और किसी भी विषयमें उनकी कर्मभोगमता स्वीकार नहीं करते। इसी मतभेदको ले कर दो दलोंमें विरोध और विषम विद्वेष खड़ा हो गया है। इस विषयमें अनेक वादानुवाद भी हो चुका है।

इसके सिवा तिलकसेवाके विषयमें भी बहुत वाक्‌वितण्डा हुआ करता है। तेङ्गलोंके तिलकमें सिंहासन होता है, पर वड़गलोंमें नहीं पाया जाता। दोनों ही दल अपने अपने तिलकको शास्त्रसम्मत और विपक्षियोंके तिलकको शास्त्रविरुद्ध सिद्ध करनेकी चेष्टा करते रहते हैं। कभी कभी इस विषयको ले कर लड़ाई भी हुआ करती है।

वड़गल और तेङ्गल दोनों विरुद्धवादी होने पर भी एक जाति होनेसे परस्पर विवाह सम्बन्ध होता है।

तेज (हिं॰ पु॰) तेजस् देखो।

तेज (फा॰ वि॰) १ तीक्ष्ण धारका, जिसकी धार पैनी हो। २ जो चलनेमें बहुत तेज हो। ३ जो काम करनेमें फुरतीला हो। ४ तीक्ष्ण, तीखा, झालदार। ५ बहुमूल्य, महँगा। ६ उग्र, प्रचण्ड। ७ जिसमें भारी प्रभाव हो। ८ जिसकी बुद्धि बहुत तीक्ष्ण हो। ९ जो बहुत चञ्चल या चपल हो।

तेजःपुञ्ज (सं॰ पु॰) तेजसां पुञ्जः। तेजोराशि, प्रभाका समूह।

तेजःफल (सं॰ क्ली॰) जिसके फलमें तेजः अर्थात् तीक्ष्णता या प्रकाश है। एक पेड़का नाम, तेजफल। पर्याय—बहुफल, गन्धपत्रक, तेजःफल, शङ्खफल, शल्यफल। गुण—यह कटु, तीक्ष्ण, उष्ण, दीपन, पाचक और वातविनाशक माना जाता है।

तेजकरन—ग्वालियरके एक राजा। इनका दूसरा नाम दूलह राय था। भाट कवि चन्दराय आदिके ग्रन्थमें तेजकरनका विस्तृत वर्णन लिखा है। दौसाके राजा रत्नसिंहकी कन्याके साथ इनका विवाह हुआ था। रत्नसिंहके कोई पुत्र न था, इसलिए उन्होंने तेजकरनको ही अपना राज्य दे दिया। तेजकरनके विषयमें कर्नल टाड साहब और कनिंघम साहबने जो लिखा है, वह ठीक नहीं मालूम होता।

देखो ग्वालियर शब्द, पृ॰ ४०१, भाग ६।

तेजगामी (हिं॰ वि॰) शीघ्रगामी, चलाक।

तेजन (सं॰ पु॰) तेजयति शाणं करोति तिज-णिच्-ल्यु। १ बंस, बांस। २ मुञ्ज, मूंज। ३ शरवृक्ष, सरकण्डा, सरपत। (क्ली॰) ४ दीपन, तेज करने या तेज उत्पन्न करनेकी क्रिया या भाव। ५ तीक्ष्ण। ६ पजाई। ७ तीरकी नोकका फुल्ला।

तेजनक (सं॰ पु॰) तिज-णिच्-ल्यु, संज्ञायां कन् वा। शरवण, सरपत।

तेजनाह्व (सं॰ पु॰) तेजन आह्वा यस्य। मुञ्ज तृण, मूंज।

तेजनाह्वय (सं॰ पु॰) मुञ्ज तृण, मूंज।

तेजनी (सं॰ स्त्री॰) तेजन-गौरा॰ ङीष्। १ मूर्वा। २ चविका, चव्य, चाब। ३ तेजोवती, तेजबल। ४ ज्योतिष्मती, मालकंगनी।

तेजपत्ता (हिं॰ पु॰) दारचीनीकी जातिका एक पेड़। संस्कृतमें इसका नाम तमाल है और अंगरेजी उद्भिद् शास्त्रोंमें Cinnamomum Tamala है। इससे अनुमान किया जाता है, कि यह संस्कृत उद्भिद्‌शास्त्रोंके तमाल जातीय दारुके अन्तर्गत है। अंगरेजी उद्भिद् शास्त्रोंमें इसका दूसरा नाम Cassia Lignea या Cassia Cinnamon है।

तेजपत्ता दो प्रकारका होता है—तेजपत्ता (Cinnamomum Tamla) और राम तेजपत्ता (Cinnamomum Obtusifolium)

तेजपत्तेका पौधा अधिक बड़ा नहीं होता। जिस स्थान पर कुछ समय तक अच्छी वर्षा हो कर पीछे धूप पड़ती हो, वहां यह पेड़ अच्छी तरह बढ़ता है। हिमालयके पूर्वांशमें यह ३ से ७ हजार फुटकी ऊंचाई पर पाया जाता है। नहा, दार्जिलिङ्ग, कांगड़ा, जयन्तिया, खासिया, ब्रह्मदेश और अन्दामन द्वीपमें यह बहुत उपजता है। सिन्धुके किनारेसे ले कर समुद्रके किनारे तक भी इसका पेड़ कहीं कहीं देखनेमें आता है। जयन्तिया और खासियामें इसकी खेती होती है। इसके बीजको पास पास फुटका दूरी पर बोते हैं। पौधा जब पांच वर्षका हो जाता है, तब उसे दूसरे स्थान पर रोप देते हैं। जब तक इसके पौधे छोटे रहते हैं, तब तक विशेष रक्षाकी आवश्यकता होती है। धूप आदिसे बचानेके लिए उन्हें झाड़ियोंकी छायामें रख देते हैं। पांचवें वर्षमें जब यह दूसरे स्थानपर रोपा जाता है तभी इसके पत्ते काममें आने योग्य हो जाते हैं।

इसकी छाल और पत्तियां दोनों ही काममें लाई जाती हैं। दारचीनीकी भांति तेजपत्तेकी छाल भी सुगन्धित होती है और बहुत कुछ दारचीनीके साथ मिलती जुलती भी है। छालसे एक प्रकारका तैल और साबुन तथा पत्तियोंसे एक प्रकारका रंग बनाया जाता है।

छाल।—दारचीनीकी भांति इसकी बड़ी और मोटी डालियोंसे छाल निकाल कर उसे दारचीनीकी तरह काममें लाते हैं। दारचीनीकी अपेक्षा इसकी छाल पतली होती है सही पर उस तरह सिकुड़ी नहीं होती, वरन् ठीक मोमबत्त बनी रहती है। दारचीनीकी छालका ऊपरी भाग यत्नपूर्वक जितना काट कर अलग कर दिया जाता है, उतना इसमें नहीं। इसी कारण इसमें कई जगह ऊपरी भाग भी लगा हुआ देख पड़ता है। इसकी मात्रा या बढ़ती छालकी अपेक्षा सूक्ष्मतन्तुकी छालमें दारचीनीकी गन्ध अधिक रहती है। मणिपुर प्रान्तमें पौधेकी छाल न लेकर सूक्ष्म तन्तुकी छाल ली जाती है। तेजपत्तेकी छालका गुण भी दारचीनीके जैसा है, लेकिन उतना उत्कृष्ट नहीं। केवल सूक्ष्मतन्तुकी छालका गुण दारचीनी जैसा देखनेमें आता है। चीनके कान्टन, कलकत्ता और बम्बई आदि स्थानोंमें इसका खूब व्यवसाय होता है।

तैल—इसकी छालका ऊपरी भाग को काट कर अलग कर दिया जाता है, क्योंकि एक प्रकारका सुगन्ध तैल बनता है। १० सेर छालमें लगभग ½ छटांक तैल निकलता है। यह तैल देखनेमें लाल, पीलापन तथा दारचीनीके समान गन्धविशिष्ट होता है, किन्तु गुणमें दारचीनीके तैलसे कुछ हीन है। इस तैलसे खास कर साबुन (Military soap) बनाया जाता है।

फूल और फल—इसका फूल और फल ठीक लवङ्ग जैसा होता है। फल बहुत नहीं दिया जाता। यह भी लवङ्गकी भांति गुणविशिष्ट है। प्राचीन कालमें हिपोक्रस (Hippocras) नामक सुगन्ध मद्य इसीसे बनाया जाता था। यूरोपमें यह Casiabud नामसे और बम्बईमें 'नागकेशर' नामसे मशहूर है। चीन और दक्षिण भारतवर्षसे यह बम्बईको भेजा जाता है। 'चीना' और 'मलबारी' नामसे इसके दो भेद हैं। दक्षिण प्रदेशके मुसलमान लोग व्यञ्जनादिको सुगन्धित करनेके लिये इसे मसालेकी तरह काममें लाते हैं।

पत्ता—तेजपत्तेकी पत्तियां साधारणतः भारतवर्षमें प्रायः तरकारी आदिमें मसालेकी तरह डाली जाती हैं और औषधके काममें भी लाई जाती हैं। प्रतिवर्ष कुआरसे अगहन तक और कहीं कहीं फागुन तक इसकी पत्तियां तोड़ी जाती हैं। साधारण वृक्षोंसे प्रति वर्ष और पुराने तथा दुर्बल वृक्षोंसे प्रति दूसरे वर्ष पत्तियां ली जाती हैं। सबल वृक्षोंसे प्रति वर्ष १०से २५ सेर तक पत्तियां निकलती हैं। गोटका रंग बनानेके समय इसकी पत्तियोंकी बुकनी, बहेड़ा और आंवलेके साथ मिला देते हैं जिससे रंग पक्का हो जाय। इसी प्रदेशसे प्रतिवर्ष १००।१५० मन पत्तियोंकी रामनगर और शारदा मध्यवर्ती स्थानोंसे रफ्तनी होती है।

औषध—इसकी छाल और पत्तियां वात रोगमें उत्तेजक रूपमें एवं उदरामय और आमाशयमें। केवल

पत्तियां ही व्यवहृत होती हैं। हकीम लोग मूत्रकृच्छ्र, प्लीहा, उदरामय, पेटव्यथा, सर्पदंशन और अफीमके विषमें इसकी पत्तियोंका प्रयोग करते हैं। इसके फूल और फल लवङ्गके बदले व्यवहृत होते हैं। और तेलमें सिर-दर्द, अधकपारी जाती रहती है। पीपल, मधु और तेजपत्तोंका अवलेह सेवन करनेसे खांसी, सरदी और श्वास दूर हो जाती है। यदि प्रसवका स्राव दूषित हो कर अधिक गिरने लगे, तो इसके पत्तोंका चूर्ण खिला देनेसे अच्छा हो जाता है। वैद्यगण भी बहुतसे ज्वरोंकी औषधमें इसकी पत्तियोंका व्यवहार करते हैं। जापानमें एक श्रेणीका तेजपात है जिसके मूलतन्तुसे यथेष्ट कपूर निकलता है।

बहुतोंका मत है, कि यह पेड़ भारतवर्षका आदिम पेड़ नहीं है। पहले पहल चीन देशसे यह इस देशमें आया था। और अभी इसका प्रचार बहुत दूर तक हो गया है। किन्तु यह ठीक प्रतीत नहीं होता। क्योंकि तेजपत्तोंका व्यवहार भारतवर्षमें बहुत पहलेसे था। ईसाके जन्म पहलेसे भी इसके पत्ते भारतवर्षसे युरोपमें भेजे जाते थे। प्लिनीने मालबथम (Malabathrum) नामक जिस पत्रका उल्लेख किया है, वही भारतीय तमाल पत्रम् शब्दका अपभ्रंश है। चीनसे प्रति वर्ष लगभग ढाई लाख रुपयेकी छाल और पत्तियां इस देशमें आती हैं और अरब, पारस्य तथा तुरुष्क देशोंमें प्रायः लाख रुपयेका द्रव्य भेजा जाता है।

तेजपत्र (सं॰ क्ली॰) तेजयति तिज-णिच्-अच् तेजः पत्रमस्य। स्वनामख्यात पत्र, तेजपत्ता। पर्याय—गन्धजात, पत्र, पत्रक, त्वक्पत्र, वराङ्ग, भृङ्ग, चोच, उत्कट। गुण—यह कफ, वायु, अर्श, हृल्लास और अरुचिनाशक है। भावप्रकाशके मतानुसार—यह लघु, उष्ण, कटु, स्वाद, तिक्त, रूक्ष, पित्तल, कफ, वात, कण्डु, आम और अरुचिनाशक है। तेजपत्ता देखो।

तेजपाल—गुर्जरके एक विख्यात मन्त्री। अश्वराजके पुत्र, वस्तुपालके भाई, चौलुक्यराज वीरधवलके बन्धु और प्रधान मन्त्री। इनकी स्त्रीका नाम था अनुपमा और पुत्रका लावण्यसिंह। जैनधर्मके ये प्रधान उत्साहदाता थे। १३ वीं शताब्दीमें तेजपाल और वस्तुपाल प्रचुर रुपये व्यय कर अर्बुद और गिरना पहाड़के ऊपर तीर्थङ्करोंके उद्देशसे कई एक सुन्दर और सुरम्य जैनमन्दिरोंका निर्माण कर गये हैं। आबू और वस्तुपाल देखो।

तेजपुर—१ आसामके दरंग जिलेका प्रधान नगर और सदर। यह अक्षा॰ २६° ३७' १५" उ॰ और देशा॰ ९२° ५२' ५" पू॰में ब्रह्मपुत्रके उत्तरी किनारे भरली और ब्रह्मपुत्रके सङ्गम स्थान पर अवस्थित है।

इस नगरकी बनावट अच्छी है दो छोटे छोटे पहाड़ोंके मध्य समतल क्षेत्रके ऊपर नगर बसा हुआ है। यह बहुत प्राचीन नगर है। इसके पास ही शिल्पनैपुण्ययुक्त प्राचीन देवालयका भग्नावशेष देखा जाता है। किसी किसी प्राचीन भग्न मन्दिरमें शिलालिपि है। देवद्वेषी मुसलमानोंके उत्पातसे इन मन्दिरोंका सत्यानाश हो गया है।

प्रवाद है—यहां बाण राजाके साथ श्रीकृष्णका युद्ध हुआ था। यहां राजकीय कार्यालय, कारागार, अंगरेजी विद्यालय और दातव्य चिकित्सालय है। दिनों दिन इस शहरकी उन्नति देखी जाती है। वाणिज्य-व्यवसाय भी दिन दूना और रात चौगुना बढ़ रहा है।

२ बंबईके अन्तर्गत महीकांठेका एक छोटा राज्य।

तेजबल (हिं॰ पु॰) हरिद्वार तथा उसके आस पासके प्रान्तोंमें अधिकतासे होनेवाला एक कांटेदार जङ्गली वृक्ष। इसका छिलका लाल मिर्चकी तरह बहुत चरपरा होता है। पहाड़ी लोग दाल मसाले आदिमें इसको जड़ मिर्चकी तरह काम लाते हैं। इसकी जड़को छाल चबानेसे दांतका दर्द जाता रहता है। गुण—यह गरम, चरपरा, पाचक, कफ और वातनाशक तथा श्वास, खांसी, हिचकी, और बवासीर आदिका नाशक है।

तेजन (सं॰ पु॰) तेजसि अतिशयेन पालयति शावकानिति तेज-शाहुलकात् कलच्। कपिञ्जल पक्षी, चातक, पपीहा।

तेजवती (सं॰ स्त्री॰) तेजोवती, तेलवल।

तेजवन्त (हिं॰ वि॰) तेजवान देखो।

तेजवान् (हिं॰ वि॰) १ तेजस्वी, जिसमें तेज हो। २ वीर्यवान्। ३ बली, ताकतवाला। ४ कान्तिमान्, चमकीला।

तेजस् (सं॰ क्लो॰) तिजयति तेज्यतेऽनेन वा तिज-असुन्। १ दीप्ति, कान्ति, चमक दमक। २ प्रभाव रोब दाब। ३ पराक्रम जोर, बल। ४ रेतस, शुक्र वीर्य। ५ तेज कान्ति, शरीरकी चमक दमक। ६ नवनीत, मक्खन, नैनी। ७ वह्नि अग्नि आग। ८ सुवर्ण, सोना। ९ मज्जा। १० पित्त। ११ अधिक्षेप और अपमानादि असहनरूप नायकका गुणभेद। पर प्रयुक्त अधिक्षेप और अपमानादि प्राणनाश और सह्य नहीं करनेका नाम तेज है। १२ सार रसादि शुक्रान्तः धातुका तेज पदार्थ।

गर्भोत्पत्तिके समय तेजधातु जब अधिकांश जल धातुके साथ मिलती है तब गर्भ गौरवर्ण और जब पार्थिव धातुके साथ मिलती है, तब कृष्णवर्ण हो जाता है। अधिकांश पृथ्वी और आकाश धातुके साथ मिलने से कृष्णश्याम और अधिकांश जलीय तथा आकाश धातु के साथ मिलनेसे गौरश्याम हो जाता है। तेजधातु अच्छी दृष्टियोंके साथ जब नहीं मिलती, तब जात बालक शोणितके साथ मिलनेसे रक्ताक्ष पित्तके साथ मिलनेसे चक्षु पीतवर्ण, कफके साथ मिलनेसे शुक्लाक्ष और वायु के साथ मिलनेसे विकृताक्ष होता है। (सुश्रुत शारीरस्थान)

१३ प्रागल्भ्य साहस। १४ पराभिभव सामर्थ्य। तेज दूसरोंको पराभूत करनेकी सामर्थ्य रखती है। १५ सत्त्वका अनभिभावात्मक वह गुण जिससे शत्रु विजय नहीं प्राप्त कर सकता। १६ अप्रतिहताज्ञत्व वह आज्ञा जिसे लङ्घन नहीं कर सकते। १७ चैतन्यात्मक ज्योतिः। १८ सत्त्वगुणप्रधान लिङ्गदेह, सत्त्वगुणसे उत्पन्न लिङ्ग शरीर। १९ अश्वका वेग घोड़ेको चलनेकी तेजी। घोड़ेका स्वाभाविक स्फुरण (हिलाव) ही तेज है। वह तेज दो प्रकारका है, सततोत्थित और मदोत्थित। कोड़ी को चलाये बिना जो स्वाभाविक स्फुरण होता है उसी का नाम सततोत्थित तेज है। चाबुकसे अथवा मद दिखलानेसे जो स्फुरण होता है उसे मदोत्थित तेज कहते हैं। (शौनक)

२० पञ्चमहाभूतका तृतीय भूत, पाँच महाभूतोंमेंसे तीसरा भूत। इसका अर्थ उष्ण, रूप प्रभा और भास्वर है। किसी वस्तुके स्पर्श करनेसे जो उष्णता मालूम पड़ता है, उसका नाम तेज है। यह तेज, शब्द और तन्मात्रके साथ रूप तन्मात्रसे उत्पन्न हुआ है। इसी कारण तेजमें तीन गुण हैं शब्द, स्पर्श और रूप। (सांख्य॰)

न्याय और वैशेषिक दर्शनके मतसे यह दो प्रकारका है—नित्य और अनित्य। परमाणुरूप नित्य है और कार्यरूप अनित्य। यह अनित्य अर्थात् कार्यरूप तेज शरीर इन्द्रिय और विषयके भेदसे तीन प्रकारका है। शरीर तेज आदित्यलोकमें प्रसिद्ध है, इन्द्रियतेज रूपग्राहक चक्षु है और विषयतेज चार प्रकारका है—भौम दिव्य औदर्य तथा आकरज। भौम अग्नि प्रभृति है, दिव्य विद्युदादि है, भुक्तद्रव्योंके परिपाकका कारण औदर्य है और उदरमें जो तेज है उससे भुक्तद्रव्य परिपक्व हो कर शरीर पुष्ट होती है। आकरज सुवर्णादि है। इसका धर्म, रूप द्रवत्व प्रत्यक्षयोग्य है। इसका गुण—स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व अपरत्व, रूप, द्रव्य वेग है। इसका द्रवत्व और नैमित्तिक है, किन्तु यह सांसिद्धिक द्रव पदार्थ नहीं है, निमित्तके लिए ही द्रव हुआ करता है।

रूप, स्पर्शेन्द्रिय पाक, सन्ताप, तीक्ष्णता, लघु (गौरादि) ज्वालित्व, अमर्ष, शौर्य और साहस ये सब तेजके गुण हैं अर्थात् तेजसे ये सब उत्पन्न होते हैं। शरीरमें तेज पदार्थ है इसीसे प्राणी रूपवान् दर्शनेन्द्रिय-सम्पन्न प्रभृति गुणविशिष्ट होते हैं और इसीसे भुक्त द्रव्य भी अच्छी भाँति परिपक्व हो जाता है। २१ तेजस्वी उपचारके कारण तेजवत् अर्थसे तेजस्वीका बोध होता है। (भारत अनुशा॰)

तेजसिंह—प्रसिद्ध सिख-सेनापति। ये गौड़ब्राह्मणवंशमें उत्पन्न हुए थे। इनका असल नाम तेजराम और इनके पिताका नाम निधिराम था। ये महाराज रणजित् सिंहके सिपाही खुशालसिंहके भतीजे थे। खुशालसिंह रणजितसिंहके यहां द्वारपालका काम करते थे। खुशालसिंहकी आज्ञा लिये बिना कोई भी रणजित सिंहसे मुलाकात नहीं कर सकता था। जब कभी कोई सम्भ्रान्त व्यक्ति रणजितसिंहसे मुलाकात करना चाहते थे तब खुशालसिंहको बहुत रुपये घूस लगते थे। इस प्रकार खुशालसिंह धीरे धीरे बहुत धनी हो गये और

सिखराज्यमें एक प्रधान व्यक्ति समझे जाने लगे। मेरठ-में उनका आदि निवास था। वहांसे उन्होंने तेजरामको सिख-दरबारमें बुलाया भेजा। १७१६ ई०में तेजरामने सिखधर्म अवलम्बन कर अपना नाम तेजसिंह रखा। अपने चचाकी तरह ये भी धीरे धीरे सिख-दरबारमें गण्य-मान्य हो उठे।

१८४५ ई०की २१ सितम्बरको जवाहिरसिंहकी हत्याके बाद महारानी झिन्दन लालसिंहको प्रधान वजीर और तेजसिंहको प्रधान सेनापति बना कर राज्य चलाने लगीं। किन्तु लालसिंह और तेजसिंह पर खालसा सेना बहुत विरक्त थी। अनेक कारणोंसे वह विरक्ति-भाव क्रमशः बद्धमूल होने लगा। इस समय खालसा-सेनाकी क्षमता भी कुछ बढ़ गई थी। सभी राजपुरुष उससे डरा करते थे। इस कारण तेजसिंह खालसा-सेनाके पराक्रमको खर्व कर डालनेके लिये नाना प्रकारको चेष्टाएं करने लगे। लालसिंहने भी इस षड़यन्त्रमें हाथ दिया। इन्होंने यह स्थिर कर लिया कि वृटिश सेनाके सिवा खालसा सेना किसीसे भी विदलित नहीं हो सकती। उन्होंने दरबारमें यह घोषणा कर दी कि अंग-रेजी सेना शतद्रु नदी पार कर सिख राज्य पर आक्रमण करनेको आ रही है। इस समय उन्हें भी वृटिशराज्य पर धावा मारना उचित है। एक दिन दरबारमें प्रधान प्रधान सिख-योद्धाओंके सामने दीवान दीननाथने कई एक मिथ्या पत्र पढ़ कर यह कहा, कि मातृभूमिकी रक्षाके लिये अभी सभीको अस्त्रधारण करना उचित है। महारानीकी इच्छा है, कि राजा लालसिंह वजीर और तेजसिंह प्रधान सेनापति हों।

स्वदेशानुरागी खालसा सेना यह सुन कर उत्तेजित हो उठी। इस समय राजा लालसिंहको वजीर और तेजसिंहको सरदार बनानेमें किसीने आपत्ति न की। नीचाशय तेजसिंहने अभी खालसा-सेनाके ऊपर अपना आधिपत्य पा कर उन्हें ध्वंस करना चाहा। बिना किसी कारणके सिखयुद्ध छिड़ गया। जहां जहां खालसा सेनाके साथ वृटिशसेनाका संसर्ग था, वहां दुर्मति तेजसिंहने विश्वासघातकता करनेमें कोई कसर उठा न रखी, किन्तु सिखसेनाने इस ओर तनिक भी ध्यान न दिया। बार बार अपने सरदारकी कूटनीति देख कर भी वह जैसी वीरता दिखलाती आ रही थी, वह अत्यन्त प्रशंसनीय थी। जहां अंगरेजोंको जीतकी कुछ भी आशा न थी, तेजसिंहकी विश्वासघातकतासे वहां उन्होंने बहुतोंकी खूनखराबी कर जय प्राप्त कर ली। जिस फिरोजशाहके युद्धमें सिख सेनाकी सम्पूर्ण रूपसे हार हुई थी, जिस विख्यात युद्धमें अंगरेजी सेनानायकोंने स्वदेशमें सम्मान प्राप्त किया था, वह युद्ध केवल इसी दुर्वृत्त तेजसिंहकी विश्वासघातकतासे समाप्त हुआ था। उस युद्धमें तेजसिंह बीस हजार पदाति और पांच हजार अश्वारोही सेनाओं-के साथ उपस्थित थे।

उन्होंने अपनी आंखोंसे लालसिंहकी पराजय देखी थी, लेकिन वे कुछ भी मदद न पहुंचाई। वे परिश्रान्त और निरुपाय वृटिशसेनाकी अवस्थासे भी अच्छी तरह जानकार थे। उनके सभी योद्धा युद्ध करनेके लिये उत्तेजित हो गए थे, लेकिन कापुरुष तेजसिंह विश्वघातकतासे उन्हें भुलावेमें डाल कर शतद्रु नदीके पार लौटा लाये। अन्तमें जब उन्हें तेजसिंहकी चालबाजी अच्छी तरह मालूम हो गई, तब वे दांत पीस कर रह गये। प्रथम सिखयुद्धके बाद तेजसिंहने वृटिश-शिविरमें जा कर गवर्नर-जेनरलसे मुलाकात की और सन्धि करनेकी कहा, किन्तु बड़े लाटने उनका प्रस्ताव नामंजूर कर दिया। अन्तमें सिखसेनाके भयसे तेजसिंह दहल उठे। कब कौन आ कर उनका प्राण ले लेगा, इस आशङ्कासे उन्हें रातको नींद नहीं आती थी। उन्होंने किसी ज्योतिषीके कहनेसे निरापद रहनेके लिए एक अद्भुत दुर्ग बनवाना विचारा था। जो कुछ हो, अन्तिम दशामें वे मानसिक दुःखसे ही पञ्चत्वको प्राप्त हुए थे।

यदि सरदार तेजसिंह पदपदमें विश्वासघातकता नहीं करते, तो सिखयुद्धका इतिहास भिन्नरूपसे लिखा जाता। सिखयुद्ध देखो।

तेजसिंह—१ प्रोग्वाटवंशीय एक सामन्त। इनके पिताका नाम विजयसिंह और पितामहका नाम विक्रम था। इन्होंने देवपालङ्गि नामक एक ज्योतिर्ग्रन्थ रचा है।

२ बुन्देलखण्डवासी एक कवि। ये जातिके कायस्थ थे। ये दफतरनामा ग्रन्थ बना गये हैं।

तेजसी—मारवाड़के एक राजपूत कवि। इनकी कभी कविताएं प्रशंसनीय होती थीं।

तेजस्कर (सं० त्रि०) तेजः करोति कृ-ट। तेजोवृद्धि कारक, तेज बढ़ानेवाला।

तेजस्क (सं० त्रि०) तेजांसि सन्ति-अत्। १ तेज साधन। (पु०) २ महादेव।

तेजस्य (सं० पु०) महादेव, शिव।

तेजस्वत् (सं० त्रि०) तेजस् अस्त्यर्थे मतुप्, मस्य व। तेजोयुक्त, तेजस्वी तेजपुञ्ज।

तेजस्वती (सं० स्त्री०) गुप्तवर्माकी कन्या। कथासरित्सागरमें इसकी कथा इस प्रकार लिखी है—उज्जयिनीमें आदित्यसेन नामक एक राजा थे। एक दिन ससैन्य गङ्गाके किनारे ठहरे हुए थे। उस प्रदेशके गुप्तवर्मा नामक किसी धनी व्यक्तिके तेजस्वती नामकी एक कन्या थी। गुप्तवर्माने आदित्यसेनको उपयुक्त वर जान अपनी लड़कीका विवाह उनके साथ कर दिया। राजा तेजस्वतीके रूप और गुण पर मोहित हो राजकार्य भी भूल गये थे। कुछ दिन बाद उनके गर्भसे एक कन्या उत्पन्न हुई। राजा तेजस्वतीके रूपसे इतने मुग्ध हो गये थे कि एक क्षण भी उन्हें अलग नहीं रख सकते थे। एक दिन राजाने उन्हें हाथी पर चढ़ा और आप घोड़े पर चढ़ शत्रु राज्य पर चढ़ाई करनेके लिये प्रस्थान किया। रास्तेमें मन्त्रियोंको खुश करनेके लिये राजाने बहुत तेजसे अपना घोड़ा छोड़ा। क्षणभरमें घोड़ा आंखोंकी ओट हो गया। अनेक अनुसन्धान करने पर भी जब राजा न मिले तब असमर्थतावश मन्त्रियोंको राजधानी वापिस आये। उधर राजा दिग्भ्रान्त हो विन्ध्याटवीके मध्य आ पहुंचे। आप बहुत थके थे, अतः घोड़ेको अपनी इच्छानुसार चलने दिया। घोड़ा भी अपनी जातीय बुद्धिसे उनको राजाकी उज्जयिनीकी ओर ले चला। इसी समय रात हो गई, नगरका दरवाजा बन्द हो गया। राजा भी घोड़े पर घूमते घूमते थक हो गये। श्मशानके निकट वाम्दन ब्राह्मणोंका एक गांव था, जहां राजा अकस्मात् आ पहुंचे। गांवके बीच एक मन्दिर था। जब राजा मन्दिरमें प्रवेश करने लगे तब वहांके लोगोंके साथ इनका विवाद हुआ। इसी बीचमें विदूषक नामक एक ब्राह्मण वहां आये और मध्यस्थ हो कर उन्होंने राजाको आश्रय दिया। विदूषकने अपने तपके प्रभावसे अग्निसे एक खड्ग पाया था।

विदूषकने परिवारके द्वारा राजाकी सेवा शुश्रूषा कराई और लोगोंको एक उमदा काम भी दिया। उनकी शरीर रक्षाके लिये आप रात भर जगते रहे। सुबह होने पर राजा उठ कर क्या देखते हैं, कि विदूषक घोड़ेको अच्छी भांति चला कर सामने खड़ा है। राजा घोड़े पर सवार हो अपनी नगरको लौट आए। राजाको देख कर सभीके आनन्दका पारावार न रहा। राजाने कृतज्ञताके उपकार स्वरूप विदूषकको एक सौ गांवका आधिपत्य और राजपुरोहित्य अर्पण किया। विदूषकने अपनी सारी सम्पत्ति मन्दिरके ब्राह्मणों को दे दी। कुछ दिन बाद ब्राह्मण लोग विदूषकको अनाथ कर आपसमें झगड़ने लगे। इस बीचमें चक्रधर नामक एक व्यक्ति वहां आ पहुंचे और बोले, 'तुम लोगोंमें एक नायकका होना आवश्यक है, अतः तुममेंसे जो अधिक साहसी है, वही इस गांवका नायक होगा। तब सभीने नायक होनेकी अपनी अपनी इच्छा प्रकट की। इस पर चक्रधर ने उन लोगोंसे कहा, देखो। श्मशानमें तीन चोर शूलसे मरे पड़े हैं, तुममेंसे जो उनकी नाक काट लावेगा, वही नायकके योग्य होगा। यह काम करनेमें और सभोंने तो अपनी अनिच्छा प्रकट की, मगर विदूषक बिलकुल तैयार हो गये। पीछे विदूषकने अग्निदत्त खड्गको ले दो पहर रातको श्मशानकी ओर प्रस्थान किया। वहां उन्हें बहुत डर मालूम हुआ और जब वे तीनों मुर्दोंके पास पहुंचे तो वे भूत पिशाच बन कर उन्हें मुष्टिप्रहार करने लगे। तब विदूषकने भूतका भय दूर करनेके लिये तलवारसे वार किया और तीनोंकी नाक काट कपड़ेमें बांध ली। पीछे थोड़ी समय वे क्या देखते हैं, कि एक मनुष्य शवके ऊपर बैठ कर जप कर रहा है। विदूषक यह कौतुक छिपके देखने लगे। कुछ कालके बाद पास मध्य शव भूतकी अग्नि हो कर फुत्कार करने लगा जिससे उसके मुंहसे अग्नि और नाभिसे सरसों निकलने लगीं। योगीने सरसों उठा ली और बसबर उसे तमाचा मारा। बाद वह शव उठ कर खड़ा हो गया। योगी

उसके कन्धे पर चढ़ लिया और वह धीरे धीरे चलने लगा। विदूषक भी अलक्षितरूपसे उसके पीछे पीछे जाने लगे। क्रमशः वे दोनों एक कात्यायनीके मन्दिरमें पहुँचे। योगीने शवको छोड़ कर मन्दिरमें प्रवेश किया। विदूषक मन्दिरकी भीतमें कान लगाये खड़े रहे। कुछ काल बाद देववाणी हुई, यदि तुम अभिलषित वर चाहते हो, तो आदित्यसेनाकी एकमात्र कन्याको इसे उपहार दो।' यह सुन कर योगी फिर वेतालके सहारे नभोपथसे चल दिये। विदूषकने सोचा कि मैं अवश्य ही प्रतिपालक की कन्याकी रक्षा करूंगा। ऐसा सोचते हुए वे हाथमें तलवार लिये उसी जगह खड़े रहे। योगी जब राजकन्याको ले कर वहां पहुँचा तब विदूषकने उसे कतल कर डाला। तब फिर देववाणी हुई, 'विदूषक! यह योगी महावेताल और सर्पसिद्ध था, केवल पृथ्वी और राजकन्या सम्भोगकी कामना आज उसकी जाती रही। तुम इन सब सर्पोंको ग्रहण करो, इन्हींके प्रभावसे आज रातको आकाशमार्गसे अभीष्ट देशको पहुंच जावोगे।' यह सुन विदूषकने सर्पोंको ग्रहण कर राजकन्याको अपनी गोदमें बिठा लिया। पीछे दैववाणी हुई, 'मासके अन्तमें फिर यहां आ जाना।"

विदूषकने प्रणाम कर आकाशपथसे राजपुरकी ओर प्रस्थान किया। कुछ समय बाद राजकन्याके घर पर पहुंच कर जब विदूषकने उसे अपनी खाट पर सुला दिया, तब वह बोली, 'आर्य! आप यहांसे न जांय' नहीं तो भयसे मेरा प्राणान्त होगा।' विदूषक भी वहीं पड़ रहे। सुबहको जब ये सब बातें राजाको मालूम हुईं, तब उन्होंने विदूषकको पुरस्कारस्वरूप अपनी कन्या दे दी। जब महीना शेष होनेको चला, तब राजकन्याने दैववाणीकी बात विदूषकको याद दिला दी। विदूषक फिर श्मशान गये और कात्यायनीके मन्दिरके समीप जा कर बोले, 'मैं विदूषक आ गया।' मन्दिरके भीतरसे आवाज आई, 'भीतर चले आओ।' भीतर जा कर विदूषकने देखा कि वहां सुन्दर वासभवन है और एक असामान्य रूपवती कन्या बैठी हुई है। पूछनेसे पता चला, कि यह विद्याधरकी कन्या है और उसका नाम है भद्रा। पीछे उसके अनुरोधसे विदूषकने उसका पाणिग्रहण किया और दोनों वहीं रहने लगे। इधर दूसरे दिन राजकन्या स्वामीको न देख कर व्याकुल हो गई। कई दिन बीत गये, तो भी उनका कुछ पता नहीं। सबके सब चिन्तित हो गये। पीछे भद्राने अपनी सहचरी योगेश्वरीसे सुना कि विद्याधरगण इसके लिए उस पर बहुत क्रुद्ध हो गये हैं।

इस पर भद्राने विदूषकसे कहा, 'आप यहीं ठहरिये। मैं पूर्वसागरके पार कर्कोटक नदीके पार्श्वस्थित शीतोदा नदीके दूसरे किनारे उदयगिरिके सिद्धाश्रमको जाती हूं।' इतना कह उसने यादगारीमें अपनी मुंदरी उन्हें दे दी और आप उस स्थानको चली गई। विदूषक भी पागल जैसे, 'हा भद्रे!' करते हुए उस घरसे निकल पड़े। पीछे राजा आदित्यसेनने ऐसी अवस्थामें देख इनकी चिकित्सा कराई। दुःसाध्य रोग समझ कर एवं चिकित्सकोंकी सलाह ले कर राजाने उन्हें यथेच्छ व्यवहार करनेका अधिकार दिया। विदूषक भद्राकी तलाशमें निकले। दिन रात पूर्वदिशाकी ओर जाते जाते एक दिन वे शामको पौण्ड्रवर्द्धन नगरमें पहुँचे। वहां उन्होंने एक राक्षसको परास्त कर देवसेन राजाकी दुःखलब्धिका नामक कन्यासे विवाह किया। पीछे वे वहांसे ताम्रलिप्त नगरको चले गये। यहां स्कन्ददास नामक वणिक‌्के साथ उन्होंने समुद्रपथसे यात्रा की। कुछ दिन बाद स्कन्ददासका जहाज समुद्रमें रुक गया। इस पर बहुत दुःखित हो कर बोला, 'जो मुझे इस विपद्से उद्धार करेगा, उसे मैं अपना आधा धन और कन्या दूंगा।' विदूषकने स्कन्ददाससे कहा, 'कमरमें रस्सी बांध कर यदि आप मुझे समुद्रमें गिरा दें तो मैं आपका यह शंकट दूर कर सकता हूं।' विदूषकने वैसा ही किया, किन्तु स्कन्ददासने रुपये देनेके भयसे उनकी बन्धन रस्सी काट दी, जिससे वे नीचे समुद्रमें गिर पड़े और अपने घरकी राह ली। जब विदूषक बहुत मुश्किलसे समुद्र पार कर गये, तब दैववाणी हुई, 'विदूषक! तुम धन्य हो। जिस स्थान पर तुम लाये गये हो, इसका नाम नग्नराज्य है। यहांसे पूर्वकी ओर सात दिनका रास्ता तै करनेके बाद ही कर्कोट नगर पहुंचोगे।' तदनुसार सातवें दिनमें वे कर्कोटनगर

तेजोराशि (सं० पु०) तेजसां राशिः। तेजःपुञ्ज, तेजका समूह।

तेजोरूप (सं० क्ली०) तेजः सर्वप्रकाशकं चैतन्यं रूपं यस्य। १ ब्रह्म। ये ज्योतिरूप प्रकाशात्मक हैं, ब्रह्मका स्वरूप ज्योतिरूपमें प्रकाशित होता है। तेजसा रूपः। २ जो अग्नि या तेजरूप हो।

तेजोवत् (सं० वि०) तेजस् अस्त्यर्थे मतुप् मस्य व। तेजयुक्त, जिसमें तेज हो।

तेजोवती (सं० स्त्री०) तेजोवत् ङीप्। १ गजपिप्पली। २ चविका, चव्य। ३ महाज्योतिष्मती, मालकंगनी। तेजस्वती देखो। ४ अग्निका विमान।

तेजोविद् (सं० वि०) जिसमें तेज वा दीप्ति हो।

तेजोविन्दु (सं० पु०) एक उपनिषद्का नाम।

तेजोविन्दूपनिषद् (सं० स्त्री०) उपनिषद्भेद, एक उपनिषद्का नाम। नारायणने इसकी दीपिका रची है।

तेजोवीज (सं० क्ली०) मज्जा।

तेजोवृक्ष (सं० पु०) क्षुद्राग्निमन्थ वृक्ष, छोटी अरणीका वृक्ष।

तेजोवृत्त (सं० क्ली०) तेजसो वृत्तं, ६-तत्। वीर्यानुरूप।

तेजोह्वा (सं० स्त्री०) तेजः ह्वयते स्पर्द्धते ह्वे-क। १ तेजोवती, तेजबल। २ चविका, चव्य।

तेतालीस (हिं० वि०) तेंतालीस देखो।

तेतीस (हिं० वि०) तेंतीस देखो।

तेदनी (सं० स्त्री०) देवताभेद, एक देवताका नाम।

तेन (सं० पु०) ते गौरी न शिवो यत्र। गानाङ्गभेद, गानका एक अङ्ग।

"तेनेति शब्दस्तेन स्यात् मङ्गलानां प्रदर्शकः।"

ते और न ये दो शब्द मङ्गल प्रदर्शक है। ते शब्दसे गौरी और न शब्दसे हरका बोध होता है। इसीसे तेन शब्द माङ्गलिक है। गानके पहले हर-गौरीका प्रसाद प्राप्त करनेके लिये यह शब्द उच्चारण किया जाता है।

तेनसेरिम—ब्रह्मदेशका एक विस्तीर्ण विभाग। यह अक्षा० ८° ५८' से १८° २८' उ० और देशा० ८५° ४८' से ८८° ४०' पूर्व्वमें अवस्थित है। इसके उत्तरमें अपर बरमा, पूर्वमें करेनी और श्याम, पश्चिममें पेगु विभाग और बङ्गालकी खाड़ी तथा दक्षिणमें मलयप्रायोद्वीप है। भूपरिमाण ४६७३० और लोकसंख्या प्रायः ११५८५५८ है, जिनमें बौद्धोंकी संख्या अधिक है। इस विभागके अन्तर्गत अमहर्ष्ट, तावय, मार्गुइ, थयेतमिउ, तोङ्गङ्ग, मौलमिन और सालउइन शैलभूभाग नामके ७ जिले हैं। इसमें ४६६१ ग्राम और ८ शहर लगते हैं।

२ उक्त तेनसेरिम विभागके मार्गुइ जिलेका प्रधान शहर। यह अक्षा० ११° ११' से १३° २८' उ० और देशा० ८८° ५१' से ८८° ४०' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ४०२३३ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १००१२ है। छोटा और बड़ा तेनसेरिम नदीके सङ्गम पर मार्गुइ नगरसे ७० कोस दक्षिण-पूर्वमें पड़ता है। इसके चारों ओर पहाड़ और जङ्गल है। एक समय यह नगर उन्नतिके ऊंचे शिखर पर पहुंचा हुआ था। ब्रह्म और श्यामराजाके बार बार आक्रमण होते रहनेसे अभी यह श्रीहीन हो गया है।

१३१३ ई०में श्यामवासियोंने बहुत यत्नसे यह नगर निर्माण किया। अबभी बड़े बड़े पत्थरके स्तम्भ पूर्वगौरवका परिचय दे रहे हैं। स्तम्भमें यद्यपि कोई लिपि उत्कीर्ण नहीं है, तो भी ब्रह्मदेशके लोगोंका कहना है कि नगरकी भावी उन्नतिके लिये देवताओंके प्रीत्यर्थ यहां एक रमणीकी जीवन्त समाधि हुई थी। अब भी नगरके चारों ओर प्रायः ४ वर्गमील स्थान मट्टीकी दीवारसे घिरा हुआ है। १०५८ ई०में ब्रह्मदेशके राजा आलंपयाने यह नगर अधिकार किया और शासनकर्त्ताकी तेजतलवारके आघातसे बहुतसे अधिवासियोंकी जानें गईं। उसी समयसे श्यामवासियोंने इस स्थान पर दखल करनेके लिये कई बार चेष्टा की थी। शहरकी पूर्वश्री जाती रही और अब एक सामान्य ग्रामसा हो गया है।

मार्गुइ जिलेमें दो नदियोंके आपसमें मिल जानेसे इसका तेनसेरिम नाम पड़ा है। यह नदी प्रायः ढाई सौ मील जा कर समुद्रमें गिरी है। इसके बहुतसे मुहाने हैं।

३ उक्त मार्गुइ जिलेके इसी नामके शहरका एक ग्राम। यह अक्षा० १२° ६' उ० और देशा० ८८° १' पू० बड़ी और छोटी तेनसेरिम नदियोंके सङ्गमस्थान पर अवस्थित है। किसी समय यह ग्राम बहुत समृद्धशाली था इसमें केवल एकसौ घर रह गये हैं।

तेनाली—१ मन्द्राजके अन्तर्गत गुन्टूर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १५ ५९´ से १६ २५´ उ० और देशा० ८० ११´ से ८० ५४´ पू०के मध्य कृष्णा नदीके बायें किनारे अवस्थित है। भूपरिमाण ६३४ वर्गमील और लोकसंख्या प्राय २८८१२० है। इसमें कुल ११० ग्राम लगते हैं। राजस्व प्राय: १२०१००० रु० का है। कृष्णा नदीसे जो नहर काटी गई है, उसीसे खेतका काम चलता है। यह तालुक उस प्रान्तमें सबसे बड़ा है।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १६ १५´ उ० और देशा० ८० १८´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या १०२०५ है। इष्ट-कोष्ट-रेलवे (East Coast Railway)-के खुल जानेसे यह शहर दिनो दिन बहुत तरक्की कर रहा है। यहांका मन्दिर बहुत प्राचीन है और उसमें बहुतसे शिलालिपियां हैं। इसी शहरमें विजयनगरके राजा कृष्णदेवके समान्तकवि गर्वपति रामलिङ्गमका जन्म हुआ था।

तेन्दूखेड़ा—मध्यप्रदेशके नरसिंहपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २३ १० उ० और देशा० ७८ १८´ पू० गाडरवाड़ा रेल-स्टेशनसे ११ कोस दूरमें अवस्थित है। इस नगरसे एक कोसकी दूरी पर लोहेकी खान है।

तेम (स० पु०) तिम-घञ्। आर्द्रभाव, आद्रता गीला पन।

तेमन (सं० क्लो०) तिम-ल्युट्। १ आर्द्रीकरण, भीगा-करनेकी क्रिया। २ व्यञ्जन, पका हुआ भोजन।

तेमनी (स० स्त्री०) तेमन-ङोप्। चूल्हेमें का चूल्हा।

तेमरु (हि० पु०) तेंदूका वृक्ष, आबनूसका पेड़।

तेरज (हि० पु०) खतिवोनीका जोड़वारा।

तेरस (हि० स्त्री०) त्रयोदशी, किसी पक्षको तेरहवीं तिथि।

तेरह (हि० वि०) १ जो गिनतीमें दससे तीन अधिक हो। (पु०) २ दस व तीन को दस और तीनके योगसे बनी हो।

तेरहवां (हि० वि०) जो क्रमसे तेरहके स्थान पर पड़े।

तेरहीं (हि० स्त्री०) किसी मनुष्यकी मृत्युके दिनसे तेरहवीं तिथि। इसमें पिण्डदान और ब्राह्मणभोजन करके दाह करनेवाला और मृतकके घरके लोग शुद्ध होते हैं।

तेरा (हि० सर्व०) मध्यम पुरुष, एकवचन सम्बन्धकारक सर्वनाम।

तेरि—१ पञ्जाबके कोहाट जिलेको एक तहसील। यह अक्षा० ३२ ४८´ से ३३ १३ उ० और देशा० ७०° [illegible] से ७२ १´ पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण १६१६ वर्गमील और लोकसंख्या प्राय ८१९९६ है। इसमें कुल १६६ ग्राम लगते हैं। तहसीलकी आय लगभग ८६०००) रु०की है। यहां सुप्रसिद्ध खटक जातिका वास है उनके सर्दार ख्वाजा महम्मदखांने इंग्लिश गवर्मेण्टको सिक्ख लड़ाईमें सहायता पहुंचाई थी, इसी पर गवर्मेण्टने आपको तेरि तहसील जागीरके तौर पर दे दी है।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० [illegible] १८ उ० और देशा० ७१ ०´ पूर्व्में अवस्थित है। यहां प्राय साढ़े सात हजार मनुष्योंका वास है। जागीरदारका प्रासाद इसी नगरमें है। इसके सिवा यहां और भी बहुत सी मसजिदें तथा सुन्दर अट्टालिकायें हैं। नगरके बीचमें बाजार, पान्थनिवास, थाना, विद्यालय और औषधालय हैं।

तेरितोई—कोहाट जिलेकी एक नदी। मीरनजईसे दो छोटे छोटे स्रोत निकल कर तिरिनगरसे १ कोस दूरमें आ कर एक दूसरेसे मिल गये हैं। उसी जगह यह नदी तेरितोई नाम धारण कर पूर्वकी ओर बहती हुई सिन्धु नदीमें जा गिरी है। जिन पहाड़ोंसे यह नदी बहती है, प्राय: उनके समीप नमककी खानें हैं।

तेरदाल—सांगली सामन्त रक्षित महाराष्ट्र राज्यके अन्त-र्गत एक नगर। यह अक्षा० १६ ३० उ० और देशा० ७५ ३ पू० कृष्णा नदीके दक्षिण किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या प्राय: ५१११ है। पूर्व समयमें यह शहर खाई और दीवारसे घिरा था। अब भी दुर्गके प्राकारका भग्नावशेष देखनेमें आता है। यह शहर वाणिज्यका केन्द्र है। यहां साड़ी धोती और कपड़े कपड़े सामान तैयार होते हैं। यहांके ११८० ई०में बने हुए मठग्रामो और भगवान् नेमनाथ स्वामीके जैनमन्दिर बहुत प्रसिद्ध हैं। यहां विद्यालय और चिकित्सालय भी हैं।

तेवन्वार १ मध्यभारतके रेवा राज्यको एक तहसील। यह अक्षा० २३ ३१´ और २४ १९´ उ० तथा देशा० ८१

१६° और ८१° ५८' पू०में अवस्थित है। भूपरिमाण ८१६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १०५१५४ है। इसमें एक शहर और ५०५ ग्राम लगते हैं। पञ्चा पर्वत इसे दो भागोंमें विभक्त करता है। टतोन्स नदी तहसीलके मध्य हो कर बहती है यहांकी आय तीन लाख रुपयेसे अधिककी है।

-२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २४° ५८' उ० और देशा० ८१°४१' पू०के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या १५८३ के लगभग है। यहां एक स्कूल और एक चिकित्सालय है।

तेवांरा —पालनपुरके शासनाधीन एक देशीय राज्य। इसके उत्तरमें दिवदर, पूर्वमें कांकरेज, दक्षिणमें राधनपुर और पश्चिममें भारत राज्य है। भूपरिमाण १२५ वर्गमील और लोकसंख्या लगभग ८ हजार है। यहांकी जमीन समतल है, मट्टीकाली और बालू-मिश्रित है। वर्षभरमें केवल एक फसल होती है। २० से ५० हाथ नीचे धरती खोदने पर जल मिलता है।

पहले यहां बघेला राजपूत लोग राज्य करते थे। १७१५ ई०में नवाब कमालउद्दीनखांने इसे अधिकार किया। उस समय यह राज्य राधनपुरके नवाबके शासनाधीन था। किन्तु प्रदेशसे मुसलमानका एक दल आ कर नवाबके यहां घुड़सवारमें भर्ती हो गया। उनमेंसे बलुचखां प्रधान थे। १८२२ ई०में पालनपुरके सुपरिण्टेण्डेण्टने बलुचखांको यह स्थान प्रदान किया। तभीसे बलुचखांके वंशधर यहां राज्य करते आ रहे हैं।

तेल (हिं० पु०) तेल देखो।

तेलकूपी—मानभूम जिलेको दामोदर नदीके किनारे अवस्थित एक ग्राम। यहां बहुतसे सुन्दर, सुदृश्य और सुवृहत् प्राचीन देवमन्दिर हैं। ये सब मन्दिर कब बनाये गये हैं, उसका ठीक पता नहीं चलता। उक्त मन्दिरोंमें शिवमन्दिर ही अधिक है, इसके बाद विष्णुमन्दिर और तब सूर्यमन्दिर। इतने प्राचीन मन्दिर रहने पर भी शिलालिख अधिक देखनेमें नहीं आते। केवल दो जगह दो अक्षर देखे जाते हैं और वे भी १०वीं शताब्दीके प्रतीत होते हैं। राजा मानसिंहने भी कईएक मन्दिर निर्माण किये थे। दामोदर नदीकी बाढ़से यहांके प्रायः सभी ईंटोंके बने हुए मन्दिर बरबाद हो गये हैं. किन्तु प्रस्तरनिर्मित मन्दिरोंमेंसे अधिकांश मट्टीके नीचे दब गये हैं। यहां भगवान् महावीरस्वामीके उद्देशसे बनाया हुआ एक अति प्राचीन जैनमन्दिर है, जिसे स्थानीय लोग बौद्धका मन्दिर कहते हैं। प्रायः सभी मन्दिर वणिकोंके यत्नसे बनाये गये हैं। प्रवाद है, कि राजा विक्रमादित्य दुल्मीके कातार-पोखरमें स्नान करनेके पहले यहां आ कर तेल लगाते थे, इसीसे इस स्थानका नाम तैलकूपी या तेलकूपी पड़ गया है।

तेलगू (हिं० स्त्री०) तैलंग देशकी भाषा।

तेलङ्ग (सं० पु०) १ तैलङ्ग देश। २ तैलङ्ग देशके मनुष्य। त्रिलिंग देखो।

तेलचढ़ाई (हिं० पु०) १ तेल लगाना, तेल मलना। २ विवाहकी एक प्रथा। इसमें वधू पक्षवाले जनवासेमें वरपक्षवालोंके लगानेके लिए तेल भेजते हैं।

तेलसुर (हिं० पु०) चटग्राम और सिलहटके जिलोंमें होनेवाला एक जंगली वृक्ष। यह बहुत ऊंचा होता है। इसके हीरकी लकड़ी कड़ी और सफेदी लिए पीली होती है। इसकी लकड़ी नाव बनानेके काममें आती है।

तेलहंडा (हिं० पु०) मट्टीका बड़ा बरतन जिसमें तेल रखा जाता है।

तेलहंडी (हिं० स्त्री०) मट्टीका छोटा बरतन जिसमें तेल रखा जाता है।

तेलहन (हिं० पु०) वे बीज जिनसे तेल निकलता हो।

तेला (हिं० पु०) तीन दिनरातका उपवास।

तेलिन (हिं० स्त्री०) १ तेलीकी स्त्री। २ एक बरसाती कीड़ा। यह कीड़ा जहां शरीरसे छू जाता है, वहां छाले पड़ जाते हैं।

तेलियर (हिं० पु०) काले रंगका एक पक्षी। इसके सारे शरीर पर सफेद बुंदकियां या चित्तियां होती हैं।

तेलिया (हिं० वि०) १ जो तेलकी तरह चिकना और चमकीला हो। (पु०) २ वह रंग जो काला, चिकना और चमकीला हो। ३ इसी रंगका घोड़ा। ४ एक प्रकारका बबूल। ५ एक प्रकारकी छोटी मछली। ६ तेलिये रंगका कोई पदार्थ या जानवर। ७ सींगिया नामक विष।

तेलियाकन्द (हिं० पु०) तैलकन्द देखो।

तेलियाकत्था (हिं० पु०) एक प्रकारका कत्था। इसका भीतरी भाग कालापन लिये रंगका होता है।

तेलियाकाकरेजी (हिं० पु०) कालापनके लिये गहरा ऊदा रंग।

तेलियाकुमैत (हिं० पु०) १ घोड़ेका एक रंग। यह अधिक कालापन लिये लाल या कुमैत होता है। २ इसी रंगका घोड़ा।

तेलियागढ़ी—सन्थाल परगनेके अन्तर्गत एक परगना और इसी परगनेके मध्य एक गिरिपथ। तेलियागढ़ी गिरिपथके उत्तरमें राजमहल और दक्षिणमें गङ्गा है। पूर्व समयमें मुसलमानोंके आक्रमणसे गौड़राज्यकी रक्षाके लिये यह स्थान काममें लाया जाता था।

तेलियागर्जन (हिं० पु०) गर्जन देखो।

तेलियापानी (हिं० पु०) एक तरहका पानी जिसका स्वाद बहुत खारा और कुछ कड़ुआ सा पड़ता है।

तेलियासुरंग (हिं० पु०) तेलियाकुमैत देखो।

तेलिया सुहागा (हिं० पु०) एक प्रकारका बहुत चिकना सुहागा।

तेली—हिन्दुओंकी एक जाति जिसकी गणना शूद्रोंमें होती है। इस जातिके लोग प्रायः सारे भारतवर्षमें फैले हुए हैं और सरसों, तिल आदि पेर कर तेल निकालनेका व्यवसाय करते हैं। कुछ स्थानोंमें द्विज लोग इन लोगोंका छूआ हुआ जल ग्रहण नहीं करते। इस जातिकी उत्पत्तिके विषयमें मतभेद पाया जाता है। मिर्जापुरके तेलियोंका कहना है कि प्राचीन समयमें किसी मनुष्यके तीन पुत्र थे। उनके और कोई सम्पत्ति तो थी नहीं केवल बावन महुएके पेड़ थे। मरते समय उसने लड़कोंमें उन्हें आपसमें बराबर बराबर बाँट लेनेको कहा। बावन पेड़ोंके तीन समान भाग हो नहीं सकते, इसलिये वे उनकी पैदावार को आपसमें बाँट लेनेको राजी हुए। एकने तो उसकी पत्तियां लीं और वह भड़-भूँजा नामसे प्रसिद्ध हुआ। आजतक भी इस जातिके लोग भाड़में पत्तियां जलाते हैं। दूसरेने उसके फूल लिये और वह कलवार कहलाने लगा। तीसरेने उसके कोदा (गुलैंदा) लिये और वही तेली नामसे प्रसिद्ध हुआ है। परन्तु यह कहां तक सत्य है, कह नहीं सकते।

इस जातिके कई एक विभाग हैं, जैसे—व्याहुत, भैंसवार, जौनपुरिया कनौजिया मथुरिया राठोर, गोला पूरब उमरो आदि। मिर्जापुरके तेली व्याहुत, कनौजिया, गोलापूरब और पाँचवाला ये भेदयुक्त हैं। ये लोग विशेषतः भैंस पर माल लाद कर अपनी जीविका निर्वाह करते हैं। बनारसमें व्याहुत कनौजिया जौनपुरिया, गोलापूरब, बनरसिया भैंसवार मोहोरिया, गुलहरिया और गुलहानी ये कोई तेली रहते हैं। इनमें गुलहानी सबसे निकृष्ट समझे जाते हैं। जौनपुरिया तेलीगण तेलका व्यवसाय न कर केवल दालका व्यवसाय करते हैं। अब आगरेमें राठोर धामासी ऐसी भैंसवार गोवार मथुरिया और सियाल तेलीका तथा बस्तीमें व्याहुत, जौनपुरी, कनौजिया, तुरकिया और बैठवार तेलियोंका वास है। इनमेंसे गोरखपुरके वेधिया कान पुरके धानासी, इलाहाबादके सुरहिया ... और बस्तीपुरके बासरा, मिर्जापुरके साहुर बरनिया दक्खिनाहा गोरखपुरके सिन्धूलेतिया, मड़ौंवके मड़ौंविया प्रतापगढ़के सलनपुरी तेली सबसे श्रेष्ठ माने जाते हैं। ये लोग निकृष्ट-सम्प्रदायोंके साथ आदान-प्रदान नहीं करते। पिता और माताकी तरफ कमसे कम तीन पीढ़ी तक जब कोई सम्बन्ध नहीं ठहरता तभी विवाह स्थिर करते हैं।

अन्य नीचे हिन्दुओंके समान इन लोगोंमें भी विवाहके नियम प्रचलित हैं। व्याहुत तेलीको छोड़ कर प्रायः सभी तेली विधवा विवाह करते हैं। इसीलिए इनमें लड़कियाँ ब्याही जाती हैं लेकिन पुरुषकी उमर जबतक १०।११ वर्षकी नहीं होती तब तक उसका विवाह नहीं होता है। विशेषतः विधवा अपने देवरसे ही विवाह कर लेती है। पुरुष जब अपनी स्त्रीका चाल चलन खराब देखता अथवा उसमें दूसरा कोई दोष पाता, तो उसे त्याग सकता है। इस जातिके कोई कोई लोग शराब पीते तथा मछली मांस आदि खाते हैं। इन लोगोंके पुरोहित विश्वयोग्य ब्राह्मण होते हैं, जो तेलिया-ब्राह्मण कहलाते हैं। अन्य नीचे हिन्दुओं जैसा ये लोग भी शिव, काली, दुर्गा आदि देवदेवियोंकी पूजा किया करते हैं। इस जातिके लोग बड़े कंजूस

होते, वैसा ही भलो होने पर भी उसकी क्षमता नहीं जाती। इस पर एक कहावत भी प्रचलित है—"तेली खसम किया रूखा खाये।"

बंगालमें दो प्रकारके तैलजोवी या तेली पाये जाते हैं; तेली और 'कोलू'। इनकी उत्पत्तिके विषयमें दो प्रवाद प्रचलित हैं,—

(१) महादेव सर्वदा भस्म लगा कर रहते थे। सहसा एक दिन उन्हें तेल लगानेकी इच्छा हुई। इच्छा होनेके साथ ही उनके दाहिने हाथके पसोनेसे एक दिव्य पुरुष उत्पन्न हुआ। यही पुरुष तेलियोंके आदिपुरुष रूपनारायण या मनोहरदास थे। शिवजीका वर पा कर इन्होंने पहले पहल कोल्हू बनाया। कोई कोई ऐसा कहते हैं, कि पहले कोल्हूमें दो बैल जोते जाते थे और उनकी आँखोंमें अँधोटी नहीं लगायी जाती थी। 'कोलु'ओंने एक बैल जोतना और उसकी आँखोंमें अँधोटी बाँधना शुरू कर दिया, जिससे वे पतित हो गये।

(२) एक दिन भगवतीने स्नानके समय हल्दी मल कर, उस उबटनसे दो पुरुषोंकी सृष्टि की और उनसे शीघ्र ही तेल बना लानेके लिए कहा। एक पुरुष बहुत ही जल्दी तेल बना कर ले आया और दूसरेको उससे दूनी देर हो गई। भगवतीने देरीका कारण पूछा, तो उसने उत्तर दिया कि 'पेषणोंसे सबको भिगो कर तेल संग्रह किया था, इससे देर हो गई।' जो जल्दी आया था, उसने कहा 'मैंने पेषणोंके बीचमें एक छेद कर दिया था जिससे मूत्राधारकी तरह तेल पात्रमें आप टपकता था, इसलिए जल्दी आ गया।' भगवतीको क्रोध आ गया। मूत्र-निर्गमकी भाँति जो तेल सञ्चित हुआ है, वह उनके लिए लाया गया, यह बात उन्हें सह्य न हुई। उन्होंने शेषोक्त व्यक्तिको अभिशाप दिया, जिससे वह पतित हो गया।

इनमेंसे प्रथम व्यक्ति तेलियोंके आदिपुरुष थे और द्वितीय व्यक्ति 'कोलु'ओंके। बंगालमें 'कोलू'लोग तेलकार और विशुद्ध तेली लोग तैलिक कहाते हैं। तिली देखो। बंगालके तेलियोंमें दो प्रधान श्रेणी विभाग हैं—एक एकादशतेली और दूसरा द्वादशतेली। इन श्रेणी-विभागोंके सम्बन्धमें एक प्रवाद है कि—आदि तेली मनोहरदास व्यापारी बन कर नाना देशोंमें वाणिज्य करनेके लिए गये थे। इनको दो स्त्रियाँ थीं। सहसा एक दिन घर पर खबर आई कि मनोहर मर गये। इस खबरके पाते ही ज्येष्ठा पत्नीने अलङ्कारादि त्याग दिये और विधवाके सदृश रहने लगीं, परन्तु कनिष्ठाको इस संवाद पर विश्वास न हुआ और इसलिए वह सधवाकी भाँति रहने लगी। कुछ दिन बाद जब मनोहर घर आये, तो भ्रम दूर हो गया। इन दोनों स्त्रियोंसे गर्भजात सन्तान दो श्रेणियोंमें बँट गई। ज्येष्ठ पत्नीकी सन्तान एकादशतेली कहलाने लगी और कनिष्ठाकी द्वादशतेली।

पूर्व-बङ्गालमें और एक श्रेणीके तेली रहते हैं, जो 'घानी' या 'गाड़ुआ' कहलाते हैं। इनका कोल्हू 'कोलु'ओंके कोल्हूसे भिन्न प्रकारका होता है, उसमें तेल टपकनेके लिए छेद नहीं रहता।

बङ्गालमें 'घानीतेली' और 'कोलु'ओंके सिवा अन्य तेली (एकादश, द्वादश आदि) कोल्हू नहीं चलाते। अधिकांश लोग अनाज वगैरहकी महाजनी करते हैं। कोई कोई सोना या मूङ्गेका रोजगार भी करते हैं और कोई कोई दाल-चावलकी दुकान भी।

तेलियोंमें जो लोग तेल बेचते हैं, वे सिर्फ तिलसे ही तेल निकालते हैं। अन्यथा करने पर जातिच्युत किये जाते हैं। वे लोग तेल पेरनेके लिए दो प्रकारके कोल्हुओंमेंसे किसीका भी व्यवहार नहीं करते। पहले तिलको जरा उबालते हैं और फिर मुसलमानोंसे कुटवा लेते हैं। वे तिलको कूट कर सिर्फ छिलका अलग कर देते हैं; उसके बाद तेली लोग उसे एक बड़े मट्टीके बरतनमें डाल कर ऊपरसे गरम पानी छोड़ देते हैं। बारह घण्टे भीगनेके बाद सवेरे एक बांसकी सोटी-से घोटते हैं। फिर उसमें थोड़ासा गरम पानी छोड़ देते हैं और कुछ देर तक यों ही रहने देते हैं। उसके बाद ही पानीके ऊपर तेल बहने लगता है, जिसे कपड़ेसे उठा कर अन्य पात्रमें निचोड़ लेते हैं।

जो लोग ऊपर लिखे अनुसार तेल बनाते हैं, वे बंगालमें सच्छूद्र समझे जाते हैं। युक्तप्रदेशमें जो लोग उक्त प्रकारसे दूसरोंसे तिल कुटवा कर तेल बनाते हैं, वे

भी अन्यान्य तेलियोंसे श्रेष्ठ माने जाते हैं। ये लोग अपनेको विशुद्ध वैश्य समझते हैं।

इनमें स्थानभेदके कारण और भी अनेक श्रेणियां पाई जाती हैं और उनमें बहुतसी ऐसी भी हैं, जिनमें परस्पर ब्याह-शादी नहीं होती।

दाक्षिणात्यमें सतारा जिलेमें तेलियोंके दो विभाग हैं—एक लिङ्गायत और दूसरा मराठा। इन दोनोंमें परस्पर ब्याह-शादी या खाना-पीना आदि नहीं होता। ये लोग तिल, नारियल और अण्डीसे तेल निकालते हैं तथा तेल और घी बेचा करते हैं। लिङ्गायत लोग देवताको नहीं पूजते। जङ्गम ब्राह्मण लोग इनके पुरोहित हैं। मराठा तेली महाराष्ट्रीय हिन्दू हैं। इन-गतोंके विवाहकी रीति प्रायः कुनबियोंके समान है। ये लोग रजस्वला स्त्रीको चार दिन तक नहीं छूते। छह दिनसे छोटे लोग मुर्देको गाड़ते हैं और दस दिनका अशौच मानते हैं। ये जातीय व्यवसायके सिवा अन्य किसी प्रकारका रोजगार नहीं करते।

पूना जिलेके तेली शनिवारे सोमवारे परदेशी और लिङ्गायत इन चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं। शनिवारे और सोमवारे तेली उक्त दो वारोंको कोई भी काम नहीं करते। इन लोगोंका आचार कुनबियों जैसा है। परस्पर खाना पीना या शादी-ब्याह नहीं होता। इनके घर घर 'घाना' (कोल्हू) चलता है सभी मह-परिच्छदधारी हैं। स्त्रियां अति सुन्दरी होती हैं, माथे पर कुङ्कुम नहीं लगातीं। ये लोग नारियल तिल, खोपा बादाम (मूँगफली) सरसों आदिका तेल निकालते हैं। इनमें स्मार्त्त हैं तथा गणपति मारुति आदि गृहदेवता भी हैं। देशीय ब्राह्मणगण इनका पौरोहित्य करते हैं। बच्चा होने पर पांचवें दिन ये 'सट्वाई' (षष्ठी) देवीकी पूजा करते हैं। १२वें या १३वें दिन बच्चेका नामकरण होता है। रजोदर्शनसे पहले लड़कियोंका विवाह नहीं होता और पुत्रोंका विवाह २०।२१ वर्षकी अवस्थामें होता है। विधवाओंका विवाह भी इनमें प्रचलित नहीं है। ये मुर्देको जलाते हैं और दस दिनका अशौच मानते हैं। किरासिन तेलके प्रचारसे इनका जातीय व्यवसाय बिलकुल नष्ट हो गया है। अब ये गाड़ी चलाते तथा खेतीबारी और मजदूरी करते हैं। बहुतसे मांस-मछली और शराब भी पीते हैं।

अहमदाबाद जिलेकी तेलीजाति कुनबी जातिका अंश समझी जाती है। तेलका व्यवसाय करनेके कारण वे शायद ये पतित हुए होंगे। इनमें दिवाकर, दोलये, गायकवाड़, चौहाण्के, मंगर, सेलन्दार, काठेवाड़ और कम्बु कवार—ये आठ विभाग हैं। इनमें परस्पर एक दूसरेसे शादी-ब्याह नहीं होता। ये लोग चोटीके सिवा तमाम मस्तक मुड़ाते हैं, पर दाढ़ी और मूँछ नहीं मुड़ाते। इनका व्यवसाय पूनाके तेलियोंके समान है। ये वैष्णव हैं और मोढ़ ब्राह्मण लोग इनका पौरोहित्य करते हैं।

प्राचीन हिन्दू-शास्त्रोंमें तेलीके विषयमें इस प्रकार पाया जाता है। मनुसंहितामें लिखा है—

"सूनाचक्रध्वजवतां वेशेनैव च जीवताम्।" (४।८४)

अर्थात् जो पशुमारणमांसविक्रयजीवी हैं जो तिलादि बीजोंसे तेल निकाल कर बेचते हैं अर्थात् तैलिक हैं, मद्यविक्रेता शौण्डिक और वेश्याकी आयसे जो जीविका निर्वाह करते हैं, उनसे दान लेनेका निषेध है। कारण—'दशसूनासमं चक्रं दशचक्रसमो ध्वजः' (मनु ४।८५) अर्थात् दशसूनाघात या मांसविक्रेतामें जो दोष है, वही दोष चक्रवान् या तैलिकमें है।

याज्ञवल्क्यसंहितामें लिखा है—

"पिशुनानृतिनोश्चैव तथा चाक्रिकबन्दिनाम्।
एषामन्नं न भोक्तव्यं सोमविक्रयिणस्तथा॥" (१।१६१)

अर्थात् पिशुन, मिथ्यावादी, चाक्रिक वा तैलिक, बन्दी और सोमविक्रयी, इन लोगोंका अन्न न खाना चाहिए।

विष्णुसंहितामें इस प्रकार लिखा है—

"चर्म्मिसौचिकचाक्रिकवस्त्रनिर्णेजकान्न।" (५१।१५)

अर्थात् चमार, सौचिक, तैलिक और वस्त्रधोतकारी (धोबी) इन लोगोंका अन्न अभक्ष्य है।

तेंद (अ० पु०) ऐपमेद, एक राजाका नाम।

तेलौनी (हिं० स्त्री०) तेल रखनेकी छोटी प्याली, मलिया।

तेवट (हिं० स्त्री०) सात दीर्घ अथवा १४ लघु मात्राओंका एक ताल।

तेवन (सं० क्ली०) तेव भावे ल्युट्। १ क्रीडा, खेल। २ केलिकानन, प्रमोदकानन।

तेवर (हिं० पु०) कुपित दृष्टि, क्रोधभरी नजर। भ्रुकुटी, भौंह।

तेवरसी (हिं० स्त्री०) १ ककड़ी। २ खीरा। ३ फूट।

तेवरा (हिं० पु०) दूनमें बजाया हुआ रूपक ताल।

तेवरना (हिं० क्रि०) १ भ्रममें पड़ना, सन्देहमें पड़ना। २ विस्मित होना, आश्चर्य करना। ३ मूर्च्छित हो जाना, बेहोश हो जाना।

तेवरी (हिं० स्त्री०) त्योरी देखो।

तेवहार (हिं० पु०) त्योहार देखो।

तेवार (तेयार) मध्य भारतका एक छोटा ग्राम। यह जब्बलपुरसे ६ मील पश्चिम, बम्बईके रास्ते पर अवस्थित है। यहांके अधिकांश अधिवासी पत्थर काट कर अपनी जीविका निर्वाह करते हैं। प्राचीन नगर करणबेलके ध्वंशावशेषसे तथा मन्दिरोंसे ही ये लोग पत्थर काट लाते हैं। इस गांवके पूर्वमें बाल-सागर नामक एक सुन्दर बड़ा तालाब है। सीढ़ियां चौकोन पत्थर और लोहेकी बनी हुई हैं। तालावके बीचमें एक छोटा द्वीप है। उस द्वीप पर एक आधुनिक मन्दिर विद्यमान है। गांवके पश्चिम प्रान्तमें एक बड़े वृक्षके नीचे कारुकार्यविशिष्ट बहुतसे छोटे छोटे पत्थरके खण्ड एकत्र हैं। उनमेंसे अधिकांश अच्छे दिखाई पड़ते हैं। और बहुतसे टूट फूट भी गये हैं। ये सब पत्थरके खण्ड करणबेल नगरके ध्वंशावशेषसे लाये गये हैं। इस ग्रामके दक्षिण-पश्चिम पाव कोसकी दूरी पर प्राचीन करणबेल शहरका खण्डहर अवस्थित है। एकत्र पत्थरोंमेंसे एकमें "वज्रपाणि" बुद्ध मूर्ति खोदी हुई है। वह एक चौकोन पत्थर पर उत्कीर्ण है। इसके पीछे "ये धर्म हेतु" इत्यादि लिखा हुआ है। चन्द्रातपके नीचे वज्रपाणि उपविष्ट हैं। इनके बायें बगलमें वज्रधर मनुष्य मूर्ति और दहिने बगलमें हाथ जोड़े हुई एक मनुष्य मूर्ति नीचे घुटनेके बल बैठी हुई है। बोधिमंचके नीचे एक लम्बी चौड़ी शिलालिपि है। इसके अलावा एक दूसरी प्रतिमा भी एक बड़े पत्थर पर खोदी हुई है। शय्या पर एक पुरुष-मूर्ति सोई हुई है, जिसका दाहिना घुटना उठा हुआ है और उस पर बायां हाथ रखा हुआ है। दाहिना हाथ सिरके ऊपर है। मूर्तिके चारों बगल बहुतसी मनुष्य मूर्तियां हाथ जोड़े खड़ी हैं। सिरके निकट हाथ जोड़े हुई एक स्त्री मूर्ति बैठी है और पैरके नीचे पुरुष मूर्ति खड़ी है। इनके भी पीछे शिलालिखित दो पंक्तियां हैं किन्तु उनके अक्षर प्रायः लुप्त हो गये हैं। सोई हुई मूर्तिका आकार पुरुषाकार होने पर भी ग्रामके लोग उन्हें त्रिपुरा देवी कहा करते हैं। और भी एक पुत्तलिकाकी प्रतिमा है। वे कुम्भीर पर चढ़ी हुई चार हाथवाली देवी मूर्ति हैं। स्थानीय मनुष्य "नर्मदा माई" नामसे इनकी पूजा करते हैं। शायद यह किसी प्राचीन मन्दिरकी गङ्गाकी प्रतिमा है। इसके सिवा शिव, कृष्ण और भैरवादिकी मूर्तियां भी हैं। एक बड़ी शिला पर उलंगिनी गोपियोंसे घिरी हुई वंशीवदन कृष्णकी मूर्ति बड़ी ही खूबीसे खोदी हुई है।

जैनोंके दिगम्बर सम्प्रदायकी आदिनाथकी मूर्तिका शिलाफलक भी विद्यमान है।

करणबेल और तेवार ग्राम बहुत प्राचीन कालसे इतिहास पुराणादिमें मशहूर है। इन दोनों ग्रामका प्राचीन नाम त्रिपुर नगर है, जहां किसी समय चेदि राजाओंकी राजधानी थी। कहा जाता है, कि महादेवने जिस जगह त्रिपुरको मारा था, वही जगह त्रिपुर नामसे विख्यात है। नर्मदाके उत्पत्ति-स्थलस्थ प्रदेशमें पहले पौराणिक युगमें प्रबल पराक्रान्त हैहयवंशके राजा राज्य करते थे। चेदिराज्य भी यहां तक विस्तृत था। महाभारतमें उपरिचर, शिशुपाल, भीष्मक आदिके नाम पाये जाते हैं। उपरिचर वसुकी राजधानीका नाम महाभारतमें नहीं है, किन्तु शुक्ति नदीके किनारे अवस्थित थी ऐसा लिखा है। कालक्रमसे चेदिराज्य दो भागमें विभक्त हुआ एक भाग महाकोशल कहलाया जिसकी राजधानी मणिपुरमें थी। दूसरा भाग चेदि नामसे ही मशहूर था और उसकी राजधानी वर्त्तमान तेवारी वा त्रिपुर नगरीमें थी। हेमकोषमें त्रिपुरनगरका दूसरा नाम चेदिनगरी लिखा है। चेदि नाम क्यों पड़ा इसका पता नहीं

बनता। कनिङ्हम साहबने अनुमान किया है, कि मणिपुर राजाकी कन्याके विवाहदाताके नामसे 'चित्राङ्गदी देश' "चाङ्गदेश" "चित्रदेश" ऐसा रूपान्तर हुआ है, किन्तु यह युक्ति सङ्गत प्रतीत नहीं होता। उनके मतसे टलेमीका "थागिट्" शब्द भी, यदि कहलाता है, किन्तु उन दोनोंके स्थानमें "तागिट्" सांकेत शब्दका ही रूप है। महाभारत पढ़नेसे जाना जाता है, कि मणिपुर कलिङ्ग राजके अधीन था। रत्नपुरके शिलालेखोंमें कलचुरीके राजा जाजल्ल पुरुषवाधिपति नामसे वर्णित है। कनिङ्हमने मणिपुरि शब्दका मूल अनुसन्धान करते हुए उस उपाधिसे ही "कुरुदूर" शब्दका रूपान्तर अनुमान किया है। कल्चुरि देखो।

वर्त्तमान ग्राममें अब भी बहुतसे भग्नावशेष पड़े हैं, किन्तु तेवारके लोगोंने उस स्थानसे पत्थर आदि ला कर प्राचीन कीर्त्तिका लोप कर डाला है। तेवारसे १॥ मील दूर बारोहसम्भु पर्वतके निम्नभागमें एक गुहा है। यहांके लोग इस गुहाको भनियाका घर कहा करते हैं। इस गुहाके २०० फुटकी दूरी पर दो महाशिवालयोंका भग्नावशेष विद्यमान है। अब यहां मट्टीकी माईं दीख पड़ता है केवल स्तम्भकी चोटी पर जो कलस थे, वह अब नहीं है। उसके चारों ओर घूम कर एक छोटे पहाड़ सरीखे एक स्तूपके निकट जाना होता है। इसका ऊपरी भाग समतल, प्रशस्त तथा ईंटोंसे आच्छादित है। यह स्तूप बड़ा कर्णिकामय कामसे मनोहर है। यहांकी ईंटें लगभग १ फुट लम्बी चौड़ी हैं।

पश्चात् छोटे छोटे पहाड़ोंके ऊपर भी इसी तरह बहुत सी ईंटें देख कर अनुमान किया जाता है, कि एक समय यह सब स्थान प्राचीर द्वारा मजबूतीसे घिरा हुआ था। एक जगह कोई दुर्गका भग्नावशेष भी दिखाई जाता है। इसकी दीवारें छोटे छोटे पत्थरके टुकड़ोंसे बनी थीं। इसके नाम और समकड़ा नामकी छोटी नदी चारों ओर घूम गई है। नदीके किनारे पत्थरका रास्ता दुर्गम है। यहां एक बड़ी प्रतिमा है जिसके तीन मस्तक हैं। हर एक मस्तक पर बड़ी बड़ी टोपी है। प्रत्येक मुखमें तीन तीन आंखें हैं। नाकें मुखको विकट रूपमें कर रखी है। प्रतिमा केवल ६ फुट ऊंची है और उसका निम्नांश (कमर तक) टूट फूट गया है। इसके समीप एक विस्तीर्ण मन्दिरके भग्न सञ्चित हो कर एक छोटा तालाब जैसा हो गया है। ग्राम बीचके निकट एक पवित्र पुष्करिणी है और उसकी निकट भी प्रस्तरमूर्त्तिका पीठ पर उत्कीर्ण लिपिके शेष भागमें "ईशानशिव मूर्ति कल्पित" लिखा हुआ है।

तेवरा (हिं० वि०) १ तीन परत किया हुआ, तीन बार उलटा। २ जिसका एक साथ तीन प्रतियां हो। ३ जो दो बार हो कर फिर तीसरी बार किया गया हो।

तेवराना (हिं० क्रि०) १ तीन बार उलट या परतना करना। २ वृद्धि आदि दूर करनेके लिये किसी कामको तीसरी बार करना।

तेहवार (हिं० पु०) त्योहार देखो।

तैंडा (हिं पु०) १ छोटा गुच्छा। २ [illegible]।

तैंडो (हिं० वि०) १ छोटो जिसमें गुच्छा हो। २ [illegible] हो।

तैंतालीस (हिं० वि०) तेंतालीस देखो।

तैंतीस (हिं० वि०) तैंतीस देखो।

तै (अ० पु०) १ मीमांसा निबटेरा, फैसला। २ पूर्त्ति, पूरा करनेकी क्रिया। (वि०) १ जिसका फैसला हो गया हो। २ समाप्त, जो पूरा हो चुका हो

तैकायन (स० पु) तिकस्य ऋषेः गोत्रापत्यं तिक-फञ्। तिक ब्यादिके अन्तर्गत।

तैकायनि (स० पु०-स्त्री) तिकस्य ऋषेः गोत्रापत्य युवा तैकायनि-छ। तिक ब्यादिके युवा व अन्त।

तैक्ष्ण (स० पु०) तिक्ष्णका भाव तीखापन, चरपराहट।

तैक्ष्णायन (स० पु०) तीक्ष्णस्य ऋषेः गोत्रापत्यं। तीक्ष्ण-फक् (अश्वादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०) तीक्ष्ण अश्वादि गण।

तैक्ष्ण्य (स० क्ली०) तीक्ष्णका भाव तीक्ष्ण-ष्यञ्। १ तीक्ष्णता, तेजी। २ कठोरता, कड़ाई, उग्रता। ३ क्रूरता, निठुरता बेदर्दी।

तैखाना (हिं० पु) तहखाना देखो।

तैग्म्य (स० क्ली०) तिग्मका भाव तिग्म-ष्यञ्। तिग्मता, प्रखरता तीक्ष्णता।

तैजनिलव (सं० स्त्री०) एक प्रकारका छोटो याला।

तैजस (सं० क्ली०) तेजसो विकारः तेजस्-अण। १ घृत, घी। २ धातु द्रव्यमात्र। (मनु ५।११) ३ तीर्थ विशेष। (भारत ८।४६।१०२)

४ सांख्योक्त रजोगुणोत्पन्न एकादशेन्द्रियादि।

"सात्विक एकादशकः प्रवर्तते वैकारादहंकारात्।

भूतादेस्तन्मात्रः स तामसस्तैजसादुभयं॥"

(सांख्यका० २५)

वैकृत (अर्थात् सात्विक अहङ्कार)-से एकादशक (अर्थात् एकादश इन्द्रिय), तामससे तन्मात्र और तैजससे दोनों ही प्रवर्तित होते हैं। अहङ्कारका जब सात्विक अंश प्रबल होता है, तब उसको वैकृत संज्ञा होती है, फिर उसे सात्विक अहङ्कार कहा जा सकता है। इस वैकृत (सात्विक) अहङ्कारसे ही एकादश इन्द्रियों-की उत्पत्ति हुई है। इसलिये इन्द्रियोंमें सत्वांश अधिक होनेके कारण वे अपने विषयको ग्रहण करनेमें समर्थ होती हैं। तामस भूतादिसे तन्मात्र हुआ है अर्थात् जब तम द्वारा सत्त्व और रजः अभिभूत होता है, तब उस अहङ्कारको तामस कहते हैं। सांख्याचार्योंने इस तामस अहङ्कारको भूतादि कहा है। भूतादिसे पञ्च तन्मात्रकी उत्पत्ति होती है। तैजससे इन दोनों (अर्थात् एकादश इन्द्रिय और पञ्च तन्मात्र)-का प्रवर्तन हुआ है। रज द्वारा जब सत्व और तम अभिभूत होता है, तब वह अहङ्कार ही तैजस संज्ञा पाता है। पूर्वोक्त सात्विक अहङ्कार जब वैकृत हो कर एकादश इन्द्रियों-की उत्पन्न करता है, तब उसे तैजस अहङ्कारकी सहा-यता लेनी पड़ती है। सात्विक निष्क्रिय है, तैजस अहङ्कारके साथ बिना मिले उसमें कार्य करनेकी शक्ति नहीं आती। इसलिए तैजसके साथ मिल कर एका-दश इन्द्रियोंको उत्पन्न करता है। इसी तरह भूतादि तामस अहङ्कार भी निष्क्रिय है, वह तैजसके साथ मिल कर तन्मात्रोंको उत्पन्न करता है। इसलिए तैजससे ही इन दोनों (एकादश इन्द्रिय और पञ्च तन्मात्र) की उत्पत्ति होती है। तैजस ही एकमात्र इनकी उत्पत्तिमें कारण है। तैजसको सहायताके विना सत्व और तम कोई भी कार्य नहीं कर सकते।

(सांख्यद०)

५ पराक्रम। ६ शरीरकी वह शक्ति जो आहारको रस और रसको धातुमें परिणत करती है।

(पु०) ७ सूक्ष्म शरीर व्यष्टि परिच्छिन्न चैतन्य। (वेदान्तसा०) ८ सुमतिके एक पुत्रका नाम। (ब्रह्माण्डपु० ३१ अ०) ९ बहुत तेज चलनेवाला घोड़ा। १० भगवान्। ११ एक प्रकारकी शारीरिक शक्ति। यह शक्ति आहारको रसमें और रसको धातुमें परिणत करती है। (त्रि०) १२ तेजः-सम्बन्धी, तेजसे उत्पन्न।

तैजसावर्त्तनी (सं० स्त्री० आवर्त्ततेऽत्र आवृत-ल्युट्, स्त्रियां ङीप्, तैजसानां आवर्त्तनी। मूषा, सोना गलानेकी घरिया।

तैजसी (सं० स्त्री०) गजपिप्पली।

तैतल (सं० पु०) ऋषिभेद, एक ऋषिका नाम।

तैतिक्ष (सं० त्रि०) तितिक्षा शीलमस्य, तितिक्षा छत्रादि त्वात् ण। तितिक्षाशील, क्षमाशील।

तैतिक्ष्य (सं० पु०-स्त्री०) तितिक्षस्य ऋषेः गोत्रापत्यं गर्गा यञ्। तितिक्ष ऋषिके वंशज।

तैतिर (सं० पु० क्ली०) तैत्तिर पृषो० साधुः। तित्तिर पक्षी, तीतर। २ गण्डक, गैंडा।

तैतिल (सं० पु०) १ गण्डक, गैंडा। (क्ली०) २ ग्यारह करणोंमेंसे चौथा करण। फलित ज्योतिषके मतसे इस करणमें मनुष्यका जन्म होनेसे वह कलाकुशल, रूपवान्, वक्ता, गुणी, सुशील और कामी होता है। ३ देवता।

तैतिलन (सं० पु०) गोत्रप्रवर्त्तक ऋषियोंका प्रवरभेद।

तैत्तिर (सं० क्ली०) तित्तिराणां समूहः तित्तिर-अण्। अनुदात्तादेरञ्। पा ४।२।४४। १ तित्तिर पक्षी, तीतर। २ गण्डक, गैंडा।

तैत्तिरि (सं० पु०) १ कुकुरवंशके एक राजाका नाम। २ ऋषिभेद, कृष्ण यजुर्वेदके प्रवर्त्तक एक ऋषिका नाम।

तैत्तिरीय (सं० पु०) तित्तिरिणा प्रोक्तं अधीयते छन्। तित्तिरीय प्रोक्त समस्त शाखाध्यायी। यह शब्द बहु-वचनान्त है।

इसके सम्बन्धमें भागवतादि पुराणोंमें इस प्रकार लिखा है—एक बार वैशम्पायनने ब्रह्महत्या की। उसके प्राय-श्चित्तके लिए उन्होंने अपने शिष्योंको यज्ञ करनेकी आज्ञा

हो और जब गिरा तो उसे खानेके लिए प्रस्तुत हो गये, पर याज्ञवल्क्य प्रस्तुत न हुए। इस पर वैशम्पायनने कहा तुम हमारी शिष्यता छोड़ दो। याज्ञवल्क्यने 'वैसा ही होगा' यह कह कर जो कुछ उनसे पढ़ा था सब उगल दिया। पश्चात् सहपाठियोंने तीतर बन कर उस वमनको चुग लिया। इसी कारण उसका नाम तैत्तिरीय पड़ा। यजुर्वेद शब्दमें विस्तृत विवरण देखो। २ इसी शाखाका उपनिषद्। यह तीन भागोंमें विभक्त है। पहले भागका नाम संहितोपनिषद्। इसमें व्याकरण और षड्वेदांग सम्बन्धी बातें हैं। दूसरे भागका नाम आनन्दवल्ली और तीसरेका भृगुवल्ली है। इन दोनों अन्तिम भागोंको वारुणी उपनिषद् भी कहते हैं। तैत्तिरीय उपनिषद्में केवल ब्रह्मविद्या पर ही विचार नहीं किया है, बल्कि स्मृति श्रुति और इतिहास सम्बन्धी भी बहुत सी बातें हैं। इस उपनिषद् पर शङ्कराचार्यका बहुत अच्छा भाष्य है।

तैत्तिरीयक (सं० पु०) तैत्तिरीय स्वार्थे कन्। तैत्तिरीय शाखाका अनुयायी या पढ़नेवाला।

तैत्तिरीय ब्राह्मण (सं० पु०) कृष्णयजुर्वेदीय ब्राह्मण। भिन्न भिन्न प्रकारके सदुपदेशोंसे पूर्ण है।

तैत्तिरीया (सं० स्त्री०) तित्तिरिणा प्रोक्ता अण् टाप्। यजुर्वेदकी एक शाखाका नाम। यजुर्वेद देखो।

तैत्तिरीयारण्यक (सं० पु०) तैत्तिरीय शाखाका आरण्यक ग्रन्थ। इस ग्रन्थमें वानप्रस्थोंके लिए उपदेश है।

तैत्तिरीयोपनिषद् (सं० स्त्री०) उपनिषद्भेद, एक उपनिषद्का नाम।

तैत्तिल (हिं० पु०) तैतिल देखो।

तैनात (अ० वि०) नियत, नियुक्त मुकर्रर।

तैनाती (हिं० स्त्री०) नियुक्ति, मुकर्ररी।

तैन्तिडीक (सं० क्ली०) तिन्तिडीकेन संस्कृतं कोपधत्वात् अण्। १ तिन्तिडीक संस्कृत व्यञ्जनादि, वह व्यञ्जन जिसमें इमली डाली गई हो। २ तिन्तिडीकविकार, इमलीका [illegible]।

तैमिर (सं० पु०) तिमिरमेव अण्। नेत्ररोग भेद, आँखकी एक बिमारी। तिमिर देखो।

तैमिरिक (सं० त्रि०) तैमिरो रोगोऽस्यास्ति ठन्। तिमिर रोगयुक्त, जिसको तिमिर रोग हुआ हो।

तैया (हिं० पु०) मट्टीका मोटा बरतन। इसमें छीपी कपड़ा छापनेके लिए रंग रखते हैं, थहर।

तैयार (अ० वि०) १ दुरुस्त, ठीक, लैस। २ उद्यत, तत्पर, मुस्तैद। ३ प्रस्तुत, मौजूद। ४ हृष्टपुष्ट, मोटा ताजा।

तैयारी (हिं० स्त्री०) १ दुरुस्ती। २ तत्परता, मुस्तैदी। ३ शरीरकी पुष्टता, मोटाई। ४ समारोह, धूमधाम। ५ सजावट।

तैर (सं० क्ली०) तीरे भवः अण्। कुन्दरू, कुन्दुरु।

तैरणी (सं० स्त्री०) तीरे नमति नम ड, ततः स्वार्थे अण् स्त्रियां गौरादित्वात् ङीष्। क्षुप विशेष, एक प्रकारका क्षुप। इसके पर्याय—तैरण, तैर, कुन्दनी और रामट। इसके गुण—यह शिशिर तिक्त, व्रणनाशक और [illegible] है।

तैरना (हिं० क्रि०) १ पानीके ऊपर ठहरना, उतराना। २ शरीरको अंग संचालन कर पानीमें चलना, पैरना तरना।

तैरश्च (सं० त्रि०) तिरश्चामिदं तिर्यच् अण् तस्यात् तिरश्चादेश। तिर्यक् जाति सम्बन्धीय।

तैराई (हिं० स्त्री०) १ तैरनेकी क्रिया। २ तैरनेके बदलेमें मिलनेवाला धन।

तैराक (हिं० वि०) तैरनेवाला, जो अच्छी तरह तैरना जानता हो।

तैराना (हिं० क्रि०) १ तैरनेका काम किसी दूसरेसे कराना। २ घुसाना, धँसाना, गोदना।

तैर्थ (सं० त्रि०) तीर्थे दीयते कार्यं वा शुण्डादित्वात् अण्। १ वह कार्य जो तीर्थमें किया जाय। २ तीर्थमें देने योग्य। ३ तीर्थ सम्बन्धी। ४ वह द्रव्यादि जो तीर्थ स्वरूप किसी दूसरे स्थानसे आता है।

तैर्थिक (सं० त्रि०) तीर्थं सिद्धान्तविषयं शिक्षा पठति हितादि० ठक्। १ तीर्थसिद्धान्ताभिज्ञ, शास्त्रकार कपिल कणाद आदि। तीर्थं वेत्ति ठक् वा। सिद्धान्ताभिज्ञ, जो सिद्धान्त जानता हो। तीर्थे भवः ठक्। ३ तीर्थभव, जो तीर्थमें उत्पन्न हो।

तैर्थ्य (सं० त्रि०) तीर्थं गहादित्वात् ष्य। तीर्थं समीपादि, जो तीर्थके निकट हो।

स्थिर तैलमें कार्बन, हाइड्रोजन और अक्सिजन रहता है। विश्लेषण करनेसे इस तैलसे दो तरहके पदार्थ निकलते हैं—तैलसार और तैलघनीभूत। तैलके तरल अंशको पाश्चात्य विद्वान् Oleum (या Liquid portion of oil) या तैलसार कहते हैं और उसके स्वच्छ एवं चिकने अंशको Margarine (a pearllike substance in some Oil) या तैलघनीभूत। प्राणिज तैलमें और वीजोत्पन्न तैलमें तथा कपूर जातीय पदार्थके तैलादिमें Stearine (aproximate principle of fat) या चरबीका सार नामक और भी एक उपादान पाया जाता है।

तैलका व्यवहार बहुत ज्यादतीसे होता है। साबुन और बत्ती बनानेमें, लोमा बनानेमें, मशीनमें, पायस बनानेमें, रंग और वार्निश बनानेमें, नाव, तलवारोंमें, दवाइयोंमें, कामिनियोंके बालोंमें, फलादिके अचारोंमें, केश कार्य्यके व्यवहारमें, तथा सुगन्धित तैल और इत्र आदिके बनानेमें तैलका यथेष्ट व्यवहार होता है। इसके सिवा और भी बहुतसे छोटे छोटे कामोंमें तैलका व्यवहार होता है।

खनिज तैल या मिट्टीका तैल—इसका अंग्रेजी नाम 'पेट्रोलियम' है। यह तैल पृथ्वीके भीतर उत्तर पारस्यके बाकू नामक स्थानमें, उत्तर भारतमें, चीन और ब्रह्मदेशमें उत्पन्न होता है। इस तैलसे कई तरहकी चीजें बनती हैं जिनमें एक प्रकारका सुगन्धित कठिन मोम और एक तरहका उमदा सुगन्धित तैल भी मुख्य है।

हमारे आयुर्वेदके मतसे सभी तैल वायुनाशक हैं, जिनमें तिलका तैल ही सबसे श्रेष्ठ है। इसके पर्याय—स्नेह, श्रेष्ठ, अभ्यञ्जन। (हेम०)

तैल आग्नेय, उष्ण, तीक्ष्ण, मधुर, पुष्टिकर, प्रीतिकर, व्यवायमें उत्तेजक, सूक्ष्म, विशद, गुरु, सारक, विकाशी, तेजस्कर, त्वक्के लिए प्रसन्नतासम्पादक, मेधा, शरीरकी कोमलता और मांसको दृढ़ करनेवाला, वर्णकर, बलकर, दृष्टि हितकर, मूत्ररोधक, लेखनकर, तिक्त, कषाय, पाचक, वातश्लेष्मा और कृमिनाशक, योनिशूल, शिरःशूल और कर्णशूलको नाश करनेवाला एवं गर्भाशयका शोधक होता है। छिन्न, भिन्न, उत्पिष्ट, विद्ध, च्युत, मथित, क्षत, पिच्चित, भग्न, स्फुटित, क्षार दग्ध, अग्निदग्ध, विश्लिष्ट दारित, अभिहत, दुर्भग्न, मृगव्याघ्रादि द्वारा दष्ट, इनमें तथा परिषेचन, मर्दन और अवगाहनके लिए तिलका तैल ही प्रशस्त है।

वस्तिक्रियामें, पीनेमें, नस्यमें, कर्णरन्ध्र-पूरणमें, अन्न पानके योगमें तथा वायुकी शान्तिके लिए तैलका व्यवहार किया जाता है।

सर्षपतैल (सरसोंका तेल)—यह अग्निदीप्तिकारक, कटुरस, कटुविपाक, लघु, लघुताकारक, उष्णस्पर्श, उष्णवीर्य, तीक्ष्ण, रक्तपित्त-प्रकोपक तथा कफ, मेद, वायु, अर्श, शिरोरोग, कर्णरोग, खुजली, कोढ़, कृमि, श्वित्र कोढ और दुष्टव्रण नाशक होता है। काली और सफेद सरसोंका तेल भी उक्त गुणसम्पन्न एवं मूत्रकृच्छ्रोत्पादक होता है।

एरण्डतैल (रेंडीका तेल)—यह तैल मधुर, उष्ण, तीक्ष्ण, अग्निकर, कटु और पीछेसे कषाय, सूक्ष्म, नाड़ी शोधक, त्वक्के लिए हितकर, वृष्य, पाकमें मधुर एवं वयःस्थापक (जिसके व्यवहारसे शरीर शीघ्र बूढ़ा नहीं होता), योनि और शुक्रका शोधक, आरोग्य, मेधा, कान्ति और बलको उत्पन्न करनेवाला तथा वातश्लेष्मा और शरीरके अधोभागके दोषोंका नाशक है।

निम्ब, अतसी, मधु कुसुम्भ, मूलक, देवताड़, हलवेलन, (जोलायन) अर्क, काम्पिल्ल, हस्तिकर्ण, पृथ्वीका (बड़ी इलायची) पीलु, करञ्ज, इङ्गुदी, शिग्रु, सर्षप, सुवर्चला (सोंची), विडङ्ग, ज्योतिष्मती इनके बीज और फलका तैल तीक्ष्ण, लघु, उष्णवीर्य, रस और पाकमें कटु, सारक तथा वातश्लेष्मा, कृमि, कुष्ठ, प्रमेह और शिरोरोगका नाशक है।

अतसीतैल—वातघ्न, मधुर, बलकारक, कटु, चक्षुके लिए अहितकर, स्निग्धोष्ण, गुरुपाक और पित्तकर होता है।

इङ्गुदीका तैल—कृमिघ्न, ईषत् तिक्त, लघु, कुष्ठ एवं कृमिनाशक, और दृष्टि, शुक्र एवं बलक्षयकर होता है।

कुसुम्भतैल—परिपाकमें कटु, समस्त दोषोंका वर्धक, रक्तपित्तजनक, तीक्ष्ण, चक्षुके लिए अहितकर और विदाही (जिससे छाती जलने लगे) होता है।

किराततिक्त (चिरायता), तिनिश, विभीतक, नारिकेल, कोल, पोलु जयन्ती पियाल, कर्कटा, सूर्यवल्ली, त्रपुष, एर्वारुक, कर्कटिक, कुष्माण्ड आदिका तैल मधुर वायु और पित्तको शान्त करनेवाला, शीतवीर्य, चक्षुके लिए अहितकर, मलमूत्रजनक और अग्निमान्द्यकर होता है। मधुक, गम्भारी और पलाशका तैल मधुर, कषाय और कफ पित्तको शान्त करनेवाला है।

तुवरक और भल्लातकका तैल—उष्ण, मधुर, कषाय, पीछेसे तिक्त, कटु, एवं कुष्ठ, मेद, मेह, और कृमिका नाशक तथा ऊर्ध्व और अधोभागके दोषोंको दूर करनेवाला है।

सरल, देवदारु, गण्डीर, शिंसपा और अगुरु इनके सारभागका तैल—तिक्त, कटु, कषाय, दूषित व्रणोंका शोधक तथा कृमि, कफ, कुष्ठ एवं वायुका शान्त करनेवाला है।

तुम्बी, कोषाम्र दन्ती, द्रवन्ती, शयामा, सप्तला, नालिकम्पिल्ल और शङ्खिनीका तैल--तिक्त, कटु, कषाय शरीरके अधोभागके दोषोंका नाशक तथा कृमि, कफ, कुष्ठ और वायुको शान्त करनेवाला एवं दूषित व्रणोंका संशोधक है।

यवतिक्तका तैल—सब दोषोंको शान्त करनेवाला, ईषत् तिक्त, अग्निदीप्तिकर, लेखन, पथ्य, पवित्र और रसायन है।

ऐकेपिका (वकपुष्प)-का तैल—मधुर, अति शीतल, पित्त शान्तिकर, वायुप्रकोपक और श्लेष्मावर्द्धक है।

आम्रबीजका तैल—ईषत् तिक्त, अति सुगन्धित, वात श्लेष्माशान्तिकर, रूक्ष, मधुर, कषाय और इसके रसकी भांति अतिशय पित्तकर है।

जिन फलोंके तैलोंका उल्लेख किया गया है, वे फल भी तैलकी तरह वायुशान्तिकर हैं। सब तैलोंमें तिलका तैल ही उत्कृष्ट है। तैलके सदृश कार्यकारी और उसी प्रकार गुणयुक्त होनेके कारण ही अन्यान्य तैलोंमें तैलत्व स्वीकार किया जाता है।

वाग्भटका कहना है, कि जिस चीजसे जो तैल उत्पन्न होता है, उसमें उस चीजके गुण विद्यमान रहते हैं। इसलिए तैलोंके गुण नहीं लिखे गये हैं, उनके गुण उपादान-कारणके सदृश समझ लेना चाहिये। शरीर पर तैल लगानेसे शरीर मुलायम रहता है, कफ और वायु नष्ट होते हैं, धातु पुष्टिकर होती है, तेज और वर्ण प्रसन्न रहता है, पैरोंके तलवे पर तैल मलनेसे खूब नींद आती है, आखोंको तरावट पहुंचती है और पादरोग नष्ट होता है; परन्तु कफरोगोंके लिए यह अनिष्टकर है। शरीरमें तेल मल कर स्नान करनेसे बल बढ़ता है। लोम-कूप एवं शिराओंके मुखमें तैल प्रविष्ट होनेसे नाड़ी तृप्त रहती है। तैल-द्वारा मस्तकको भीगा रखनेसे शिर शूल, मांस-लोलित और गंजरोग नहीं होता, प्रत्युत केश घने, मजबूत और काले होते हैं तथा इन्द्रियां प्रसन्न और मुख श्री-युक्त रहता है। कानमें तेल डालनेसे कर्णरोग नष्ट हो जाता है। मर्दन वा लगानेके लिए सरसोंका तेल ही सबसे उत्तम है।

तैल-पक्व खाद्यके गुण—विदाही, गुरुपाक, परिपाकमें कटु, उष्ण, वायु और दृष्टिके लिए अहितकर, पित्तकर एवं त्वक्‌दोषोत्पादक है। तैलपक्व मांस सुखप्रिय, रुचिकर एवं लघुपाक होता है।

तैल जितना पुराना होता जाता है, उसमें उतनी ही गुणोंकी वृद्धि होती है। (भावप्र०, सुश्रुत, द्रव्यगु०)

प्रातःस्नान (सूर्योदयसे पहले), व्रत, श्राद्ध, द्वादशी और ग्रहणके दिन तैल नहीं लगाना चाहिए।

"प्रातःस्नाने व्रते श्राद्धे द्वादश्यां ग्रहणे तथा।
मद्यलेपसमं तैलं तस्मात्तैलं विवर्जयेत्॥" (कर्मलोचन)

उक्त श्लोकमें तैलका निषेध किया गया है। तिलतैलपर, अर्थात् पूर्वोक्त कार्योंमें तिलका तैल नहीं लगाना चाहिये।

घृत, सर्षपका तैल और पुष्पवासित तैल तथा पक्व तैल शरीर पर न लगाना चाहिए, क्योंकि इन तैलोंका लगाना दोषावह है। (तिथितत्त्व)

वार विशेषमें तैल ग्रहणका फल—रविवारको तैल लगानेसे हृदयका विनाश होता है, सोमको कीर्तिलाभ, मङ्गलको मृत्यु, बुधको पुत्रलाभ, बृहस्पतिवारको अर्थनाश, शुक्रवारको शोक और शनिवारको तैल लगानेसे दीर्घायु प्राप्त होती है। (ज्योतिस्तत्त्व)

घी मलनेकी अपेक्षा तैल मर्दन करनेसे ८ गुना फल होता है।

और उनको मीमांसा कर देते थे। लोगोंका कहना है कि जो कुछ इन्हें खानेको दिया जाता था उसे वो वे खुशी से खा लेते थे। काशीधाममें अनेक धार्मिक मनुष्य वास करते हैं। एक दिन किसी दुष्ट व्यक्तिने २० सेर चूनेका एक कलस स्वामीजीके हाथमें पकड़ा दिया। डाकेति दुर्जनोंने उसे देख कर सोचा कि यदि स्वामीजीको शराब पिला कर बेहोश कर दें तब यह कलस हम लोगोंके हाथ लग जाय। यह सोच कर उन्होंने स्वामीजीको आठ बोतल शराब पिला दी, किन्तु इससे स्वामीजीका कुछ भी अनिष्ट न हुआ। पीछे इन्होंने स्वयं अपने हाथसे लोटेका कलस खोल कर उन दुष्टोंको दे दिया।

स्वामीजी सर्वदा नंगे घूमते फिरते थे। एक दिन पुलिस इन्हें पकड़ कर मजिष्ट्रेटके सामने ले गई। साहबने नंगा घूमनेसे मना किया और कहा 'यदि तुम कपड़ा नहीं पहनोगे, तो हम अपना खाना तुम्हें खिला देंगे।' इस पर स्वामीजी बोले 'पहले तुम हमारा खाना खाओ, तब हम तुम्हारा खायेंगे।' साहबने जब पूछा कि तुम्हारा खाना क्या है? तब स्वामीजी उसी समय मल त्याग कर उसे खाने लगे। यह देख कर साहबको ज्ञान हुआ और उन्होंने स्वामीजीको छोड़ कर यथेच्छा भ्रमण करनेकी अनुमति दी।

दयानन्द सरस्वतीने किसी समय काशीधाममें आकर हिन्दू देवदेवियोंके अवतारत्वका खण्डन किया तथा पुराणादिकी निन्दा करते हुए जनताको अपने मतमें लाना चाहा और "एकमेवाद्वितीयम्" यह मत सर्वसाधारणमें प्रचार किया। अब यह हुआ कि बहुतसे लोग मूर्खोंकी नाईं अपने धर्मकी निन्दा करने लगे। किसी दिन दयानन्दका इन कुछ होने लगा। बाद स्वामीजीसे शिष्योंने यह सब हाल इन्हें कह सुनाया। इस पर स्वामीजीने एक कागजके टुकड़े पर कुछ लिख कर उसे अपने शिष्य महेशप्रसाद ठाकुरके हाथ दयानन्दके पास भिजवा दिया। कागज पढ़ कर दयानन्दने उसी समय काशीधाम छोड़ दिया। कागज पर जो कुछ लिखा था वह दयानन्द और स्वामीजीके अतिरिक्त कोई नहीं जान सकता था।

१८०४ शताब्दीमें काशीधाममें पञ्चगङ्गाके गर्भमें से कर स्वामीजीने "नाद" नामक एक पत्थरका शिवलिङ्ग स्थापित किया। इसके कुछ दिन बाद इन्होंने पञ्चगङ्गाके ऊपर, जिस आश्रममें ये रहते थे उस आश्रममें, बहुत समारोहके साथ विश्वेश्वर नामक एक दूसरे शिवलिङ्गकी प्रतिष्ठा की। महेशप्रसाद ठाकुर उसके सेवक नियुक्त हुए। इस आश्रममें स्वामीजीकी एक मूर्ति भी विद्यमान है। काशीवासी तथा आगन्तुक इस मूर्तिका भक्तिपूर्वक दर्शन करते हैं।

महात्मा त्रैलिङ्गस्वामीने देहत्याग करनेके १५ दिन पहलेसे खाना पीना भी बन्द कर दिया था। जिस घरमें ये रहते थे, उस घरके सभी द्वार बन्द करा कर आप समाधिस्थ हुए थे। कालपूर्ण होने पर सन्ध्याके पहले दरवाजा खोला गया और आप बाहर निकल कर आसन पर बैठे। पीछे इन्होंने आत्माको परब्रह्ममें लीन कर महाप्रयाण किया।

१८०८ शताब्दीमें पौषकृष्ण एकादशीके दिन सन्ध्या समय स्वामीजीने अपना कलेवर छोड़ा था।

इनका बनाया हुआ "महावाक्यरत्नावली" नामक एक ग्रन्थ मिलता है जिसमें निम्नलिखित उपदेशपूर्ण विषय लिखे हुए हैं—

ब्रह्मोपदेशवाक्य, चिदचिद्भावाख्य, अद्वैतवाक्य, जीव, ब्रह्मैक्यवाक्य, मननवाक्य, जीवन्मुक्तवाक्य, स्वानुभूतिवाक्य, समाधिवाक्य, पञ्चकोषवाक्य, पुंलिङ्गनिरूपणवाक्य, स्त्रीलिङ्गनिरूपणवाक्य, नपुंसकलिङ्गनिरूपणवाक्य, आत्मरूपवाक्य, कर्मवाक्य और विदेहवाक्य।

स्वामीजीने दीर्घ जीवन भोग कर जीवन्मुक्ति प्राप्त किया। ये सुप्त पुरुष थे। शिष्यगण इन्हें शिवका द्वितीय अवतार मानते थे। इन महापुरुषके स्वरूपका वर्णन करना असाध्य है। इनको जाननेके लिये दो लोगोंमें गुप्तभाव गीताके वर्षके पुरस्कार पाया है। जिनमें दो लोगोंने इनका दिव्यत्व मान कर अपनेको धन्य समझा है।

इनके शिष्यगण देवदेवकी नाईं इनका भी नाम सवेरे स्मरण किया करते हैं।

तैक्ष्णोरिका (स० स्त्री०) तेज पोरणि दुरालभा

पृषो० साधुः। तैलपायिका, तेलिन नामका कीड़ा।

तैलचौरिका (सं० स्त्री०) तैलस्य चौरिकेव। तैलकीट, तेलका कीड़ा।

तैलत्व (सं० क्ली०) तैलस्य भावः तैल-त्व। तेलका भाव या गुण।

तैलद्रोणी (सं० स्त्री०) तैलपूर्णा द्रोणी मध्यलो० क०। प्राचीन कालका काठका एक प्रकारका बड़ा पात्र जिसकी लम्बाई आदमीकी लम्बाईके बराबर हुआ करती थी। इसमें तेल भरकर चिकित्साके लिये रोगी लिटाए जाते थे और सड़नेसे बचानेके लिये मृतशरीर रखे जाते थे। इस पात्रमें लेटे रहना—वातरोग, व्याधि, कुष्ट-रोग, पङ्गु, बाधिर्य मिनृमिन, गद्गद, हन्वङ्गस्तब्ध, पृष्ठप्रचलित, पवन, गात्रकम्प, ग्रीवाभङ्ग, अपतन्त्र, क्षय, रुधिर, मूत्रकृच्छ्र और वस्ति आदि रोगोंमें हितकर है। राजा दशरथकी मृत्यु होने पर उनका शरीर कुछ समय तक तैलद्रोणीमें रखा गया था। तैलद्रोणीमें मृत शरीर रखनेसे जल्दी सड़ता नहीं।

"तैलद्रोण्यां तदामात्याः संवेश्य जगतीपतिं।
राज्ञः सर्वाण्यथादिष्टाश्चक्रुः कर्माण्यनन्तरम्॥"
(रामा० २।६६।१४)

तैलधान्य (सं० क्ली०) तैलोपयोगि धान्यं। तैलोपयोगी सतुष शस्य, धान्यका एक वर्ग जिसके अन्तर्गत तीनों प्रकारकी सरसों, दोनों प्रकारकी राई, खस और कुसुमके बीज हैं।

तैलनिर्यास (सं० पु०) गन्धराज।

तैलनी (सं० स्त्री०) तैलकिट्ट, खली।

तैलपक (सं० पु०) तैलं पिबति पा-क। तैलपायिका, तेलिन नामका कीड़ा। तेल चुरानेवाला दूसरे जन्ममें तैलपायिका-योनिमें जन्म लेता है।

तैलपर्णक (सं० पु०) तैलोक्षमिव पर्णं यस्य कप्। ग्रन्थिपर्ण वृक्ष, गठिवन।

तैलपर्णिक (सं० क्ली०) तैलं तैलयुक्तमिव पर्णमस्य वा तिलपर्णी वृक्ष उत्पत्तिस्थानत्वेनास्त्यस्य ठन्। १ हरि-चन्दन, लालचंदन। २ चन्दनभेद, एक प्रकारका चन्दन। पर्याय—श्रीखण्ड, चन्दन, भद्रश्री, तैलपर्णी, गन्धसार, मलयज और चन्द्रद्युति। ३ वृक्षविशेष एक प्रकारका पेड़।

तैलपर्णी (सं० स्त्री०) तिलपर्णी वृक्षे जातः तत्र जातं इत्यण् ततो ङीप्। १ चन्दन। २ श्रीवास, सलईका गोंद। ३ सिह्लक, शिलारस या तुरुष्क नामका गन्धद्रव्य।

तैलपा (सं० स्त्री०) तैलं पिबति पा-क टाप्। तैल-पायिका, तेलका कीड़ा।

तैलपायिका (सं० स्त्री०) तैलं पिबति पा-ण्वुल् टापि अतइत्वं। कीटविशेष, झींगुर, चपड़ा। पर्याय—ऱ्योगो, तैलचौरिका, तैलपा, तैलाम्बुका और खला घारा।

तैलपायी (सं० पु०) तैलं पिबति पा-णिनि। तैल-पायिका, झींगुर।

तैलपिञ्ज (सं० पु०) निर्विञ्ज, बंझा तिलवृक्ष।

तैलपिपीलिका (सं० स्त्री०) तैलप्रिया पिपीलिका। पिपीलिकाभेद, एक प्रकारकी चींटी। पर्याय—उदया और कपिजाह्निका।

तैलपिष्टक (सं० पु०) तैलस्य पिष्टकः। तैलकिट्ट, खली।

तैलपीत (सं० त्रि०) पीतं तैलं येन, समासे पर-निपातः। पीततैलक, जिसने तेल पीया हो।

तैलफल (सं० पु०) तैलप्रधानं फलं यस्य। १ इङ्गुदी। २ विभीतक, बहेड़ा।

तैलभाविनी (सं० स्त्री०) तैलं भावयति सद्गन्धं करोति भू-णिच्-णिनि ङीप्। जातीपुष्प वृक्ष, चमेलीका पेड़।

तैलमर्दन (सं० क्ली०) तैलस्य मर्दनं। शरीरमें तेल लगानेकी क्रिया।

तैलमाली (सं० स्त्री०) तैलाना माला समूहो यत्र ततो ङीप्। वर्त्ति, तेलकी बत्ती, पलीता।

तैलम्पाता (सं० स्त्री०) तिलपातोऽस्यां वर्त्तते तिलपात-ञ् मुम्। स्वधा।

तैलयन्त्र (सं० पु०) तैलमर्दनार्थं यन्त्रं। तिलादि निष्पीडनार्थ यन्त्रभेद, कोल्हू।

तैलवक (सं० पु०) तैलुनृपस्य विषयो देशः राजन्या वुञ्। तैलुराजाका देश।

तैलवल्ली (सं० स्त्री०) तैलार्त्त व वल्ली। लघुशतावरी, शत-मूली।

तैलसाधन (सं० क्ली०) तैलं साधयति सुगन्धीकरोति

भाव-विष् ण्वुल्। गन्धद्रव्यविशेष शीतल चीनी कबाब-चीनी। पर्याय—कक्कोल, कोलक, गन्धव्याकुल, कक्कोलक और कोषफल।

तैलस्फटिक (सं॰ पु॰) तैलाक्त स्फटिक इव। १ एक मणि, कहरवा। यह प्रायः समुद्रमें मिलती होता है। २ अम्बर नामका गन्धद्रव्य।

तैलस्पन्दा (सं॰ स्त्री॰) तैलमिव स्पन्दते स्यन्द अच्। १ श्वेत-गोकर्णी, सुरहटी। २ काकोली, एक प्रकारकी दवा। ३ भूमिकुष्माण्ड, भूपौंवला।

तैलाक्त (सं॰ वि॰) तैलेन आक्त। तैलमर्दित, जिसमें तेल लगा हो।

तैलाख्य (सं॰ पु॰) तुरुष्क नामक गन्धद्रव्य, शिलारस नामका गन्धद्रव्य।

तैलाटुक (सं॰ स्त्री॰) तैलाटमिव चलुक। दालचुक नामक गन्धद्रव्य, चमरको ककड़ो।

तैलाढ्य (सं॰ पु॰) बकुल वृक्ष मौलसरीका पेड़।

तैलाटी (सं॰ स्त्री॰) तैलेन तैलस्रावेण अटति पूरे भवति अट-अच् गौ॰ ङीष्। बरटा नामका कीड़ा, बर्रे, भिड़।

तैलाधार (सं॰ पु॰) तैलस्य आधार। तेल रखनेका बरतन।

तैलाभ्यङ्ग (सं॰ पु॰) शरीरमें तेल मलनेकी क्रिया तेल-का मालिश।

तैलाम्बुका (सं॰ स्त्री॰) तैलं अम्बु जलमिव पिब अस्याः कप् टाप्। तैलपायिका झींगुर।

तैलिक (सं॰ पु॰) तैलं पण्यमस्य तैल ठञ्। तेलकार, तेली। तिली और तेली देखो।

तैलिकयन्त्र (सं॰ पु॰) कोल्हू।

तैलिन (सं॰ त्रि॰) तैल निष्पादकत्वेनास्त्यस्य तैल-इनि। १ तेलकार, जो तेल निकालता हो। २ तैलयुक्त जिसमें तेल मिला हो।

तैलिनी (सं॰ स्त्री॰) तैल अस्त्यस्य आश्रयत्वेन वा स्त्रियां तैलिन्-ङीप्। १ गोटसीद एक प्रकारका कीड़ा। पर्याय—तैलकीट, मधुबिल्या दद्रुनाशिनी। २ दशावर्ती, दियेकी बत्ती।

तैलिशाला (सं॰ स्त्री॰) तैलिन शाला। यन्त्रगृह, वह स्थान जहाँ तिल पेरनेका कोल्हू चलता हो।

तैलीन (सं॰ क्ली॰) तिलानां भवनं क्षेत्रं तिल खञ्। (विभाषा तिलमाषे ति। पा ५।२।४) तिलक्षेत्र, तिलका खेत। तिली देखो।

तैलक (सं॰ पु॰) कोल, चोल। २ (त्रि॰) १ जो तेलके बकड़ोंसे बना हो।

तैलपूप (सं॰ स्त्री॰) पूपभक्ष, पुआरो।

तैव्र (सं॰ क्लि॰) तीव्र गुण। तीव्र, तेज। तीव्र देखो।

तैव्रदारव (सं॰ क्लि॰) तीव्रदारव इदं शस्त्रादिभ्यात् अण्। तीव्रदारु सम्बन्धी।

तैष (सं॰ पु॰) पाथेय युक्त कोष, भुस्सा।

तैष (सं॰ पु॰) तष्यो तिष्यनक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी अस्मिन् इति तैषो मासिमन् पौर्णमासीति अच्। पौष मास पूसका महीना। एक प्रतिपदसे हि कर अमावस्या तक चान्द्र पौषमासका नाम तैष है। पौष मासकी पूर्णिमाके दिन तिष्य (पुष्या) नक्षत्र होता है।

तैषी (सं॰ स्त्री॰) तिष्येण नक्षत्रेण युक्ता तिष्य अण्। पुष्यनक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी पूसकी पूर्णिमा।

तैसा (हिं॰ वि॰) उस प्रकारका।

तोंद (हिं॰ स्त्री॰) पेटके आगेका बढ़ा हुआ भाग पेटका फुलाव।

तोंदल (हिं॰ वि॰) तोंदवाला, जिसका पेट आगेकी ओर बढ़ा और खूब फूला हुआ हो।

तोंदा (हिं॰ पु॰) १ वह माल जिसमें छेदकर तम्बाकूका पानी निकलता हो। २ ढोहा या मट्टीको ढोकर जिस पर तीर या बन्दूक चलानेका अभ्यास करनेके लिये निशाना बनाते हैं। ३ राशि, ढेर।

तोंदी (हिं॰ स्त्री॰) नाभी, ढोंढी।

तोंदीला (हिं॰ वि॰) तोंदल देखो।

तोंदैल (हिं॰ वि॰) तोंदल देखो।

तोंबा (हिं॰ पु॰) तूंबा देखो।

तोंबी (हिं॰ स्त्री॰) तूंबी देखो।

तोई (हिं॰ स्त्री॰) १ कुरते आदिमें दामन पर लगी हुई पट्टी या गोट। २ चोदर या दोहर आदिकी गोट। ३ कैंचीका मिया।

तोंवरघार—मध्यभारतके ग्वालियर राज्यका एक जिला। यह अक्षा० २५° ४८' और २६° ५२' उ० तथा देशा० ७७°३२' और ७८° ४२' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १८७८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ३६८४१४ है। यहांके प्रधान अधिवासी तोंवर ठाकुरके नाम पर ही जिलेका नामकरण हुआ है। इसमें गोहद नामका एक शहर और ७०४ ग्राम लगते हैं। यह चार परगनोंमें विभक्त हैं, अम्बा, गोहद, जोरा और नूराबाद। राजस्व १११२००० रु० का है।

तोक (सं० क्ली०) तौति पूरयति गृहं तु-बाहुलकात् क। १ अपत्य, लड़का वा लड़की। २ शिशु, बालक, बच्चा। ३ श्रीकृष्णचन्द्रके सखाओंमेंसे एक।

तोकक (सं० पु०) चापपक्षी, नीलकण्ठ।

तोकरा (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी लता। यह प्रायः कपासके पौधों पर लिपट कर उन्हें सुखा देती है।

तोकवत् (सं० त्रि०) तोकं विद्यतेऽस्य तोक-मतुप् मस्य व। पुत्रादियुक्त, जिसके पुत्रपौत्र हों।

तोक्म (सं० पु०) तकन्ति हसन्ति आनन्दिता भवन्ति लोका अनेन तक-बाहुलकात् म ओत्वञ्च। १ हरिद्वर्ण अपक्व यव, हरा और कच्चा जौ। २ हरिद्वर्ण, हरा रंग। ३ मेघ, बादल। (क्ली०) ४ कर्णमल, कानकी मैल। ५ नवप्ररूढ़ यव, जौका नया अङ्कुर। ६ पत्रवयुक्त अङ्कुर, वह अंकुर जिसमें पत्ते निकल गये हों।

तोक्मन् (सं० क्ली०) तोक-मनिन् पृषोदरादित्वात् अतः उत्वं। १ नवप्ररूढ़ यव, जौका नया अंकुर। २ अपत्य, लड़का, लड़की।

तोटक (सं० क्ली०) १ द्वादशाक्षरपाद छन्द, बारह अक्षरका वर्णवृत्त। इस छन्दके प्रत्येक चरणमें १२ अक्षर होते हैं। २ शङ्कराचार्यके चार प्रधान शिष्योंमेंसे एक। इनका दूसरा नाम नन्दीश्वर था।

तोटका (हिं० पु०) तोटका देखो।

तोड़ (हिं० पु०) १ तोड़नेकी क्रिया। २ नदी आदिके जलकी तेजधारा। ३ दुर्गकी दीवारों आदिका वह अंश जो गोलेकी मारसे टूट फूट गया हो। ४ प्रतिकार, मारक। ५ दहीका पानी। ६ कुश्तीका एक पेच जिससे कोई दूसरा पेच रद हो। ७ वार, झोंक, दफा।

तोड़जोड़ (हिं० पु०) १ युक्ति, चाल। २ चढ़े बढ़े लड़ा कर काम निकालना।

तोड़न (सं० क्ली०) तुड़ भावे ल्युट्। १ भेदन, छेद करनेकी क्रिया। २ दारण, चीरने या फाड़नेका काम। ३ हिंसन, मारनेका काम।

तोड़ना (हिं० क्रि०) १ भग्न, विभक्त या खण्डित करना। २ किसी वस्तुके अंगको किसी प्रकार अलग करना। ३ किसी वस्तुका कोई अंग बेकाम करना। ४ किसी संगठन व्यवस्थाको नष्ट कर देना। ५ खरीदनेके लिए किसी पदार्थका दाम घटा कर निश्चित करना। ६ सेंध लगाना। ७ किसीका कुमारीत्व भङ्ग करना। ८ जोर दुर्बल करना। ९ निश्चयके विरुद्ध आचरण करना। १० दूर करना, अलग करना। ११ स्थिर न रहने देना, कायम न रहने देना।

तोड़ल (सं० क्ली०) तन्त्रभेद, एक तन्त्र।

तोड़ा—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत नीलगिरिनिवासी एक असभ्य जाति। किसीका मत है, कि तामिल 'तोरवम्' वा तोरम् शब्दसे तोड़ वा तोड़ा शब्द निकला है जिसका अर्थ है पशुपाल वा यूथ।

तोड़ोंके मतानुसार इनके चार पांच यूथ हैं जिनमेंसे दो तो निःशेष प्रायः हैं।

इस जातिके लोग देखनेमें लम्बो, शरीरानुरूप गठन, वलिष्ट तथा स्वाधीन प्रकृतिके होते हैं। नाक लम्बी, ललाट चौड़ा, गण्डस्थल गोल, चिवुक और भौंके बाल खूब काले होते हैं। देखनेमें मानो ये पाश्चात्य सभ्य जातिकी एक शाखा हैं। इन लोगोंका जैसा स्वभाव है, वैसी ही पोशाक भी है, पर कुछ विशेषता है। ये लोग एक कपड़ेको दोहरा कर पहनते हैं। स्त्री पुरुष दोनों ही सिर पर पगड़ी धारण करते हैं।

तोड़ालोग स्वभावतः बहुत अपरिष्कार रहते हैं। स्त्री बहु विवाह कर सकती है। अकसर दो चार भाईमें एक स्त्री रहती है।

मवेशी आदिका पालन करना ही इन लोगोंका प्रधान उपजीविका है। ये लोग प्रधानतः दूध, दही, घी और नाना प्रकारके दलहन अनाज खा कर रहते हैं।

ये लोग घने जङ्गलमें घर बना कर रहते हैं जिसे

मरुह' या 'मगत' कहते हैं। प्रति मचानमें पाँच पाँच घर रहते हैं। जिनमेंसे तीन तो रहनेके लिए, एक दूध दही रखनेके लिए और शेष एक आनेवालेके लिये। ये सब घर दूरसे बालामें रखे ढोल जैसे पड़ते हैं। प्रत्येक घर १० फुट ऊँचा या ११ फुट लम्बा और ८ फुट चौड़ा रहता है। सभी घर बांसके बने होते और उनमें गोबर का लेप दिया रहता है। बाहरका भीतरी भाग ६ से ७ फुट तक चौड़ा होता है। बीचमें दो फुट ऊँचा चबूतरा रहता है जिस पर हरिण या भैंसके चमड़ा अथवा चटाई बिछा कर सोते हैं। उनके पश्चिमकी ओर महो और महोले चारों तरफ अलगाव रहता है। दूधका घर सबसे बड़ा होता है। यह घर टहनियोंसे दो भाग कर भागोंमें विभक्त रहता है। एक भागमें दूध घी आदि रखे जाते और दूसरेमें उन लोगोंके इष्टदेवताकी पूजा होती है।

तोड़ा (हिं॰ पुं॰) १ सोने चाँदी आदिकी सिकरी। यह लच्छेदार और चौड़ी होती है। यह तोड़ा आभूषणकी तरह पहननेके काममें आता है। इसके कई भेद हैं। कोई कोई इसे पैरों हाथों या गलेमें पहनते हैं। पहले सिपाही लोग अपने अपकोंके ऊपर चारों ओर भी तोड़ा लपेट लेते हैं। २ रुपये रखनेकी टाट आदिकी थैली। ३ तट, किनारा। ४ वह मैदान जो नदीके संगम आदि पर बालू, मही जमा होनेके कारण बन जाता है। ५ घाटा, कमी, टोटा। ६ रस्सी आदिका खण्ड। ७ आभका एक टुकड़ा। ८ हलकी लम्बी लकड़ी, हरिस। ९ पनौता, पनोता। १० एक प्रकारकी नाच जिसकी गति प्रायः मिश्रोंकी तरह होती है और उससे शोभा बनाते हैं। ११ वह पलीता जिससे बन्दूक पर आगसे आग निकलती है। १२ तीन बार तक व्याई हुई भैंस।

तोड़ाई (हिं॰ स्त्री॰) तुड़ाई देखो।

तोड़ाना (हिं॰ क्रि॰) तुड़ाना देखो।

तोड़ी (सं॰ स्त्री॰) तुड़-अच् गौरा॰ ङीष्। १ तोन मालव षाड़व मेल, एक प्रकारका राग। २ वसन्तरागकी स्त्री। इसका षड्ज ग्रह और न्यास अंश है।

तोड़ी (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी सरसों।

तोतई (हिं॰ वि॰) जिसका रंग तोतेके रंगसा हो, धानी।

तोतर गो (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारकी चिड़िया।

तोतरा (हिं॰ वि॰) तोतला देखो।

तोतराना (हिं॰ क्रि॰) तुतलाना देखो।

तोतला (हिं॰ वि॰) १ अस्पष्ट बोलनेवाला, जो तुतला कर बोलता हो। २ जिसमें उच्चारण साफ साफ न हो।

तोतम् (सं॰ अव्य॰) तु-बाहुलकात्। १ मात्र। २ तू, तुम।

तोता (फा॰ पु॰) एक प्रसिद्ध पक्षी। इसके शरीरका रंग हरा और चोंच लाल होती है। इसकी दुम छोटी होती है। और पैरोंमें दो, आगे और पीछे दो इस प्रकार चार अंगुलियाँ होती हैं। यह मनुष्योंकी बोलीका अनुकरण अच्छी तरह कर सकता है। इसकी बोली बहुत मीठी होती है, इसीलिये लोग इसे अपने यहाँ पालते हैं। और छोटे मोटे पद तथा "राम राम" सिखाते हैं। इसके कई भेद हैं, जिनमेंसे अधिकांश फल खाते और कुछ मांस भी खाते हैं। तोतेकी लम्बाई कमसे कम तीन फुटकी होती है। कुछ ऐसे भी होते हैं जिनका स्वर बहुत कटु, अप्रिय होता है। नर और मादाका रंग प्रायः एकसा ही होता है। अमेरिकामें कई प्रकारके तोते मिलते हैं। होरामन, कातिकनूरी, काकातूआ आदि तोतेकी जातियाँ हैं। जिस तरह दूसरे दूसरे पालतू पक्षी अपने मालिकके यहाँसे भाग जाने पर फिर लौट आते हैं उस तरह तोते छूट जाने पर फिर कभी अपने पालनेवालेके पास नहीं आते। इसलिये तोता कृतघ्न पक्षी कहलाता है। २ बन्दूकका घोड़ा।

तोताचश्म (फा॰ पु॰) तोतेकी तरह आँखें फेर लेनेवाला, वह जो बहुत बे-मुरौवत हो।

तोताचश्मी (फा॰ स्त्री॰) बेमुरौवती, बेवफाई।

तोताराम—हिन्दी तथा संस्कृतके एक प्रसिद्ध विद्वान्। इनका जन्म सन् १८०४में जायसवालमें हुआ था। कुछ दिन सरकारी नौकरी करके इन्होंने अलीगढ़में वकालत जमाई। वकालतमें इन्हें अच्छी आमदनी होती थी। इन्होंने कुछ दिन 'भारतबन्धु' नामक साप्ताहिक पत्र भी निकाला था। कीर्त्ति-इत्यादि नामक नाटकग्रन्थ इन्हींका बनाया हुआ है। आप वाल्मीकीय रामायणका राम रामायण नामक एक अच्छा छन्द दोहा चौपाइयोंमें

बनाते थे, लेकिन वह अधूरा ही रह गया। संवत् १८५८में आपका देहान्त हो गया।

तोती (फा॰ स्त्री) १ तोतेकी मादा। २ उपपत्नी रखनी।

तोत्र (सं॰ क्ली॰) तुद्यते ताड्यतेऽनेन तुद-ष्ट्रन्। गवादि ताडनदण्ड, वह छड़ी या चाबुक आदि जिससे जानवर हाँके जाते हैं।

तोत्रवेत्र (सं॰ क्ली॰) विष्णुदण्ड, विष्णुके हाथका दण्ड।

तोद (सं॰ पु॰) तुद-भावे घञ्। १ व्यथा, पीड़ा, तकलीफ। (त्रि॰) तुदतीति तुद-अच्। २ पीड़ादायक, कष्ट पहुंचानेवाला।

तोदन (सं॰ क्ली॰) तुद्यतेऽनेन तुद-करणे ल्युट्। १ तोत्र, चाबुक, कोड़ा। २ व्यथा, पीड़ा। ३ फलवृक्षविशेष, एक प्रकारका फलदार पेड़। इसके फलके गुण—कषाय, मधुर, रूक्ष कफ और वायुनाशक।

तोदपर्णी (सं॰ स्त्री॰) तोदं तोदकं पर्णमस्याः गौरा॰ ङीष्। कुधान्यभेद, एक प्रकारका खराब धान।

तोदरी (फा॰ स्त्री॰) एक प्रकारका बड़ा कंटीला पेड़ जो पारस्य देशमें पाया जाता है। इसमें पतले छिलके-वाले फूल लगते हैं। इसके बीज औषधोपयोगी होनेके कारण भारतवर्षके बाजारोंमें आकर बिकते हैं। ये बीज तीन प्रकारके होते हैं, लाल, सफेद और पीले। बीजोंका गुण—रक्तशोधक, पौष्टिक और बलवर्द्धक है। इनके सेवनसे शरीरका रंग खूब खुल जाता तथा चेहरेका रंग लाल हो जाता है।

तोटी (हिं॰ स्त्री॰) एक प्रकारका ख्याल।

तोन्नूर—मन्द्राजके उत्तर अर्काट जिलाके अन्तर्गत श्रीङ्गरपहम् तालुकका एक ग्राम। यह अक्षा॰ १२° ३३´ उ॰ और देशा॰ ७६° ३८´ पू॰के मध्य श्रीङ्गरपहमसे १० मील उत्तरपश्चिममें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६४३ है। १२५८ ई॰को बनाई हुई यहां एक मुसलमान समाधि है। इसके पास ही मोती नामका एक तालाब भी है। इसका प्राचीन नाम तोन्दनूर है। आधुनिक नाम १७४६ ई॰में दक्षिण-प्रदेशके सूबेदार द्वारा रखा गया है।

तोप (तु॰ स्त्री॰) एक प्रकारका बहुत बड़ा अस्त्र। यह प्रायः दो या चार पहियोंकी गाड़ी पर रखा रहता है। इसमें ऊपरकी ओर बन्दूककी नलीकी नाईं एक बहुत बड़ा नल लगा रहता है जिसमें छोटे छोटे गोले रख कर युद्धके समय शत्रुओं पर चलाये जाते हैं। गोले चलानेके लिये नलके पिछले भागमें बारूद रख कर पलीते आदिसे आग लगा दी जाती है। तोपके कई भेद हैं—छोटी बड़ी, मैदानी और जहाजी। प्राचीन कालमें प्रथम दो प्रकारकी तोपें काममें लाई जाती थीं, एक मैदानी और दूसरी छोटी। उनके खींचनेके लिये बैल या घोड़े जोते जाते थे। इसके सिवा और एक प्रकारकी तोप होती थी जिसके नीचे पहिये नहीं रहते थे। इस प्रकारकी तोपें चोटी, ऊंटों या हाथियों पर रख कर रण-भूमिमें पहुंचायी जाती थीं। आजकल यूरोप आदि देशोंमें बहुत बड़ी बड़ी जहाजी, मैदानी और किले तोड़नेवाली तोपें तैयार होती हैं। उनमेंसे किसी किसी तोपका गोला ७५ मील तक जाता है। और एक प्रकारकी तोपें हैं जो बाइसिकिलों, मोटरों और हवाई जहाजों आदि परसे चलाई जाती हैं। इनका मुंह ऊपर-की ओर रहता है। किसी प्रसिद्ध पुरुषके आगमन पर अथवा किसी महत्वपूर्ण घटनाके समय बिना गोलेके बारूद भर कर शब्द किया जाता है।

तोपखाना (फा॰ पु॰) १ तोपें तथा उनका कुल सामान रहनेका स्थान। २ गाड़ियों आदि पर लदी हुई युद्धके लिये सुसज्जित चारसे आठ तोपोंका समूह।

तोपची (फा॰ पु॰) वह जो तोप चलाता हो, गोलन्दाज।

तोपचीनी (हिं॰ स्त्री॰) चोबचीनी देखो।

तोपड़ा (हिं॰ पु॰) १ एक प्रकारका कबूतर। २ एक प्रकारकी मक्खी।

तोपा (हिं॰ पु॰) एक प्रकारकी सिलाई जो एक टांकेमें की हुई रहती है।

तोपाना (हिं॰ क्रि॰) तोपवाना देखो।

तोपास (हिं॰ पु॰) वह जो झाड़ू देता हो, झाड़-बरदार।

तोफगी (फा॰ स्त्री॰) अच्छापन, उमदा होनेका भाव, खूबी।

तोबड़ा (फा॰ पु॰) चमड़े या टाट आदिका थैला। इसमें दाना भर कर घोड़ेके खानेके लिये उसके मुँह पर बांध दिया जाता है।

तोबा (अ० स्त्री०) पश्चात्ताप, भविष्यमें दुष्कार्य न करने की प्रतिज्ञा।

तोम (फा० पु०) समूह, ढेर।

तोमड़ी (हिं० स्त्री०) तुम्बड़ी देखो।

तोमर (सं० पु० क्ली०) तुम्यति हिनस्ति तुम्ब बाहुलकात् अर प्रत्ययेन साधुः। १ प्राचीन भारतीय युद्ध शस्त्रविशेष, भालेकी तरहका एक प्रकारका अस्त्र जिसका व्यवहार प्राचीन कालमें होता था। अनेको लोकोंमें इसे शर्वला या शावल कहते हैं। यह शावल दो प्रकारका होता है, एक दण्डमय और दूसरा लौहमय। इसके तीन भेद हैं, उत्तम, मध्यम और अधम। पाँच हाथका उत्तम साढ़े चार हाथका मध्यम और चार हाथका अधम माना गया है। इसी प्रकार यह ७ अंगुलीका तोमर उत्तम, साढ़े पाँच अंगुलीका मध्यम और पाँच अंगुलीका अधम है।

२ हस्तिवैद्य दण्डविशेष वह वस्तु जिसको मुख बांधते हो। ३ जनपदविशेष, एक देशका नाम। ४ इसी देशके अधिवासी। ५ पिङ्गल छन्दशास्त्रोक्त, ८ अक्षरयुक्त छन्दोविशेष, एक प्रकारका छन्द जिसमें विषम ८ मात्रायें रहती हैं।

तोमर—राजस्थानका एक प्राचीन राजपूत क्षत्रिय राजवंश। इस वंशके राजपूत अब प्रायः सर्वत्र बराबर हैं। आगरेमें प्रायः तीन हजार और कोटा, झांसी तथा फर्रुखाबादमें बहुत थोड़े घर हैं। राजपूतानेमें ये लोग तुआर नामसे प्रसिद्ध हैं। यह नाम किस प्रकार पड़ा, इसका कोई ऐतिहासिक सूत्र नहीं मिलता। अबुल फजलकी आइन-इ-अकबरीमें तुआर व तोमर लिखा है। कनिंघम साहबने बीकानेर, गढ़वाल कुमायूं और ग्वालियरके इस विषयमें जो सब हस्तलिखित इतिहास आदि संग्रह किये हैं उन सबको मिला कर यदि देखा जाय तो अबुलफजलका मत ठीक प्रतीत होता है। अबुलफजलके मतानुसार दिल्लीमें तुआरवंशीय निम्न लिखित राजगण राज्य कर गये हैं।

नाम	राज्यारोहण शुभाब्द, संवत्	व० मा० दि०
१ अनङ्गपाल	७९६।१।१०	१८।०।७
२ वासुदेव	८१५।१।०	१८।१।१८
३ गाङ्गेय	८३३।१।१७	२१।३।२८
४ पृथिवीपालमल्ल (पृथ्वी)	८८३।७।१६	१९।५।१८
५ जयदेव	८९६।३।१७	१०।७।२८
६ नीर या नरपाल	९३४।११।१५	१३।४।८
७ उदयराज	९४८।३।२	२६।७।११
८ विजय या अच	९७५।१०।१३	२१।२।१३
९ बिक्ष या अनेक	९८०।१।१६	२९।३।१६
१० रिक्षपाल	९९८।४।२२	२१।६।५
११ सुखपाल या अनिकपाल	९४०।१०।२०	२०।४।४
१२ गोपाल या महीपाल	९६१।३।१	१८।३।१२
१३ सल्लक्षणपाल	९७९।६।१६	२५।१०।१०
१४ जयपाल (२य)	१००५।७।२६	१६।४।३
१५ कुमारपाल	१०२१।७।२८	२९।७।१८
१६ अनङ्गपाल (२य) या अनेकपाल (२य)	१०५१।६।१०	२९।६।१८
१७ तेजपाल / विजयपाल	१०८२।१।१५	२४।१।१६
१८ महीपाल	११०५।५।२२	२४।२।२३
१९ अनङ्गपाल (३य) या अक्रूरपाल	११२०।१।१७ अर्थात् (११४१।७।१८)	२१।५।१९

प्रवाद है कि तोमरवंशीय अनङ्गपाल नामक एक राजाने प्राचीन दिल्ली या इन्द्रप्रस्थ नगरका पुनरुद्धार किया था। ऐसा जनश्रुति द्वारा विक्रमादित्यके बाद ७९२ वर्ष तक दिल्ली नगर बिलकुल उजाड़ था। अन्तमें, ७३६ ई०में तोमरवंशीय अनङ्गने इसे पुनः बसाया। दिल्ली देखो।

१म अनङ्गपालके परवर्ती कई एक राजाओंकी राजधानी दिल्लीमें ही थी। पीछे न मालूम क्यों वे राजधानी उठा कर कन्नौज ले गये। महमूदके ऐतिहासिक ओटबीने कन्नौजमें तोमरवंशीय राजा जयपाल-का उल्लेख कर गये हैं। अनङ्गपालके [illegible] पीढ़ी पीछे थे। ८११ ई०में जब सुविख्यात मुसलमान गीजोनिवासी महमूद इस देशमें आये थे, तब उन्होंने भी कन्नौजमें तोमरवंशीय राजाको राज्य करते देखा था।

फिरिस्ताका कहना है कि कन्नौजराज जयपाल महमूद गजनीसे १०१७ ई०में पराजित हो कर उनके अधीन हो गये थे। उनके पीछे वर्ती राजगण मुसलमानोंके

दायसे कन्नौजका उद्धार करनेके लिए जयपालके विरुद्ध हो गये। १०२१ ई०में महम्मूदको जब यह खबर मिली तब वे पुन: इस देशको लौटे, लेकिन उनके आनेके पहले ही जयपाल मार डाले गये थे। पीछे १०२२ ई०में महमूदका जब कन्नौज पर अधिकार हो गया, तब तोमरवंशीय राजकुमारने वहांसे ३ दिनके रास्तेसे दूर गङ्गाके पूर्वीय किनारे वारि नामक स्थान पर राजधानी स्थापित की। मुसलमानोंके दो बार आक्रमणसे कन्नोजकी रक्षा नहीं होनेसे हो जहां तक समझते हैं कि जयपालके परवर्ती कुमारपाल वारि नामक स्थानमें राजधानी उठा ले गये थे। इस समय कन्नौजके राठोर राजवंशके प्रतिष्ठाता चन्द्रदेवने पुन: कन्नौज राज्यका मुसलमानोंके कवलसे उद्धार किया। चन्द्रदेवके पुत्रपौत्रादिके राज्यारोहणके विषयमें जो खोदितलिपि मिली है, उससे जाना जाता है कि चन्द्रदेवके पुत्र मदनपाल १०८७ ई०में राजा थे। इस हिसाबसे १०५० ई०में चन्द्रदेवका राजा होना स्वीकार किया जा सकता है। उस समय तोमरवंशीय द्वितीय अनङ्गपाल राज्य करते थे। शायद उन्होंने दिल्ली नगरमें फिरसे राज्यस्थापन और लालकोट नामका दुर्ग स्थापन किया था। लालकोटका भग्नावशेष अब भी विद्यमान है। दिल्लीके विख्यात लौहस्तम्भमें एक खोदित लिपि है जिससे अनङ्गपाल द्वारा लालकोटका बनाया जाना साबित होता है। उसमें "संवत् दिहलो ११०९ अनंगपाल वहि' लिखा है; अर्थात् ११०८ संवत्में (१०५२ ई०में) अनङ्गपालने दिल्लीको बसाया। फिर कुमायूंके ग्रन्थमें लिखा है—"कि दिल्लीका कोट कराया लालकोट कहाया।' याने दिल्लीका दुर्ग निर्माण कर उसका नाम लालकोट रखा। लालकोट नाम कुतुबउद्दीनके समय तक प्रचलित था' वह इस वचनसे प्रमाणित होता है। "लालकोट तथा नगारो बाजतो था" कुतुब-उद्दीनने यह नियम चला दिया था, कि लालकोटकी सीमाके अन्दर कोई नगाड़ा नहीं बजा सकता। यही नियम कानिंहमके समयमें भी प्रचलित था। अनङ्गपाल लालकोटके मध्य 'अनङ्गपाल' नामक १६९ फुट लंबा और १५२ फुट चोड़ा एक जलाशय और २७ देवमन्दिर बनवा गये हैं। अनङ्गपालका जब कुतुब-मीनार बनाते समय सूख गया है। अब केवल शुष्क गर्भ मात्र रह गया है। उक्त मन्दिर भी मुसलमान तहस नहस कर डाले गये हैं। दुर्गका अंश विशेष अभी पूर्ववत् दृढ़ है। इन्होंने बलरामगढ़ जिलेमें अनेकपुर नामक एक नगर भी बसाया था। यह नगर आज भी उसी नामसे ग्रामके रूपमें वर्त्तमान है। इनके पुत्र सूर्यपालने अनेकपुर नगरके समीप १०६१ ई०में सूर्यकुण्ड नामका तालाब खुदवाया जो अब भी मौजूद है। इनके तेजपाल (विजयपाल) नामक एक पुत्रने गुड़गांव और अलवरके बीच तेजोया नगर, दूसरे एक पुत्र इन्द्रराजने 'इन्द्रगढ़', रङ्गराजने अजमेरके निकट तारागढ़ और अचलराजने भरतपुर तथा आगराके बीच "अचेव" वा अचनेर नामका नगर स्थापित किया। द्रोपद नामक इनके और एक पुत्र थे जो असि वा हांसीमें रहते थे। इनके एक पुत्र शिशुपालने शोर्प वा शिशवल स्थापन किया जो अभी शिरसोपाटन नामसे मशहूर है। ये सब प्रवाद यदि सत्य तो कह सकते हैं, कि द्वितीय अनङ्गपालका राज्य उत्तरमें हांसीसे ले कर दक्षिणमें आगरा, पश्चिममें अलवार और अजमेरसे ले कर पूर्वमें सम्भवत: गङ्गा नदी तक विस्तृत था।

दन्त-कहानीमें तोमरवंशीय कर्णपाल नामक एक विख्यात राजाका नाम पाया जाता है। इनके भी छह लड़के थे। वे भी नगरादि स्थापन कर गये हैं। इनमेंसे एकका नाम था बचदेव। इन्होंने नरनौलके समीप 'बाघोर' और अजमेर-टोडाके समीप 'बाघोरा' वा 'बाचेरा' नगर स्थापित किया, इसी प्रकार नागदेवने अजमेरके निकटस्थ 'नागोर' और 'नागद', कृष्णरायने 'किशनगढ़' नानिलरायने अलवारके पश्चिम 'नारायणपुर, श्यामसिंहने अलवार और जयपुरके बीच 'अजबगढ़' और हरपालने अलवारके पश्चिम 'हरसोरा' और उत्तरमें 'हरसोली' नगर स्थापित किया है। इसके सिवा अलवारके उत्तरपूर्वमें जो 'बहादुरगढ़' है, वह स्वयं कर्णपालका बसाया हुआ है।

कुतुब-मीनारसे एक कोस दूर महीपाल नामक ग्राम भी इसी वंशके राजा महीपालकी कीर्त्ति है। इस वंशमें महीपाल नामके दो राजा हो गये हैं, उनमेंसे यह

जिनकी कीर्त्ति है, नहीं वह मरते।

दिल्लीके दक्षिण-पश्चिममें तुआरघाटी या तोमरघाटी नामका एक ज़िला है। यहां आज भी एक तोमरवंश गोत्र वास करते हैं। तोम्पुर और ग्वालियरके बीच तोमरगढ़ वा तुआरगढ़ नामका जो एक ज़िला और दुर्ग है, सम्भवतः उसी द्वार भी इसी तोमरका वंश है।

द्वितीय अनङ्गपालके बाद तीन तोमरराज दिल्लीमें राज्य कर गये हैं। इनमेंसे अन्तिम तृतीय अनङ्गपाल पृथ्वीराजके समयमें चौहान विशालदेवने दिल्ली पर अधिकार जमाया। कनिंहमके मतानुसार यह घटना ११५१ ई०में घटी।

विशालदेवके पुत्र सोमेश्वरने तृतीय अनङ्गपालकी कन्यासे विवाह किया था। इन्हींके गर्भसे सुविख्यात पृथ्वीराज वा राय पिथौराका जन्म हुआ। ११९८ ई०में ये महम्मदसे मार दिये गये।

ग्वालियरमें प्रायः दो शताब्दतक एक तोमरवंशने राज्य किया था। तुआरगिरा वा वर्त्तमान तोमरगढ़के ज़मींदार अपनेको दिल्लीके अनङ्गपालके वंशधर बतलाते हैं। इस वंशके इतिहास-लेखक कवि खड्गराय तोमरवंशको पाण्डुवंशीय यौधेय वंशका वर्णन कर गये हैं। राजपूत लोग भी इसे स्वीकार करते हैं।

कनिंहम साहबको १८६४-६५ ई०में यहांके ज़मींदारोंसे एक वंशपत्रिका मिली थी। शिलालिपिमें भी ग्वालियरराज्य तोमर-भूपतिके नाम पाये गये हैं। खड्गरायके इतिहासके साथ मिला कर कनिंहमने ग्वालियरके तोमरराजवंशकी तालिका इस प्रकार स्थिर की है।

नाम	ई०सन्
देवपाल	१०८१
मदनपाल	११०२
अन्तसिंह	११३०
रतनसिंह	११४१
श्यामचन्द	११७२
चन्द्रदेव	११९०
वीरमराय	१२११
मदनराज	१२४०
भूपसिंह	१२७१
कुमारसिंह	१३००
वीरमदेव	१३११
उद्धरण	१३३०
राजा वीरसिंह देव	१३७५
उद्धरणदेव, विरमदेव और गणपतिदेव	१४००
गणपतिदेव	१४१९
डुङ्गरसिंह	१४२४
कीर्त्तिराय वा कीर्त्तिसिंह	१४५४
कल्याणमलराय वा कल्याणमल्ल	१४७९
मानसिंह	१४८६
विक्रमादित्य	१५१६

राजा वीरसिंहसे ले कर विक्रमादित्य तक जो यथार्थमें ग्वालियरके राजा हुए। विक्रमके समय १५१८ ई०में इब्राहिम लोदीने ग्वालियर पर अधिकार किया। पीछे यह राजवंश ज़मींदारके रूपमें गिना जाने लगा। इन राजाओंके बाद खड्गराय अपने और भी कई एक राजाओंके नाम लिखते हैं, जैसे—

रामशाह	१५२६
शालिवाहन	१५६५
श्यामशाह	१५८५
२ रामशाह	१६१०
कृष्णराय	१६५०

बाद तोमरवंशकी वंशतालिकामें दो और नाम हैं—

विजयसिंह	१७१०
हरिसिंह	

सम्राट् अलाउद्दीन् खिलजीके समयमें वीरसिंह देव ग्वालियरके स्वाधीन राजा हुए। यह कब ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता है, किन्तु १३१६ ई०में अलाउद्दीन्की मृत्यु हुई, उसके बाद खिलजीका अभ्युदय और अलाउद्दीन्की मृत्यु, इन दो घटनाओंके बाद १३२० सन् था वर्ष पड़ता है। खड्गरायने इस समय वर्णन करते समय कहा है कि दिल्लीमें सम्राट् वहां प्रधान सरदार थे। फिर अन्य स्थलमें कहते हैं कि सिकन्दरकी प्रधान वजीर थे। इन दोनोंका नाम मिला कर यदि विचार किया जाय, तो ऐसा अनुमान होता है, कि वीरसिंह, न कुछ मास बादशाहके कुछ पहले स्वाधीन हुए। इसी

समय सिकन्दर, हुमायुं और नसरत दिल्लीको आधिपत्य पानेके लिए आपसमें झगड़ रहे थे।

वोरसिंह ग्वालियरके उत्तर इन्दरौली नामक स्थानके जमींदार थे। ये ही बादशाहके प्रधान वजीरके किसी कार्य में नियुक्त हो कर उनके पास रहा करते थे। इसी अवसरमें उन्होंने बादशाहसे ग्वालियरके दुर्गकी अध्यक्षता और शासनकर्तृत्व प्राप्त किया था। फजल अली कहते हैं, एक सैयद उस समय ग्वालियर-दुर्गके अधिपति थे, वे दुर्गका अधिकार छोड़ देनेको राजी न हुए। अन्तमें वीरसिंहने सैयद और उनके सेनापतियोंको निमन्त्रण कर भोजनमें अफीम मिला दी। नशामें जब वे बेहोश हो गये, तब वीरसिंहने उन्हें कैद कर दुर्ग पर अपना अधिकार जमा लिया।

वीरसिंह आदि कई एक पुरुष दिल्लीके अधीन रह कर खिजिर खांको कर देते थे। वीरसिंहके बाद विरमदेव राजा हुए। शिलालिपिमें इसका प्रमाण है; किन्तु खड़्गरायके ग्रन्थमें राजा उद्धारणका नाम मिलता है। ये वीरसिंहके भाई थे, यथार्थमें ये राजा हुए वा नहीं इसका कोई प्रमाण नहीं है। विक्रमदेवके बाद शिलालिपिमें गणपतिदेवका नाम पाया जाता है। लक्ष्मीसेनके राज्यप्राप्तिका कोई प्रमाण नहीं है, केवल खड़्गरायके ग्रन्थमें उनके नामका उल्लेख है।

१४२४ ई०में डुङ्गरसिंहके राजा होने पर मालवके होशङ्गशाहने ग्वालियरका अवरोध किया। अन्तमें दिल्लीके मुबारकशाहने आ कर उन्हें परास्त किया। मुबारक शाह डुङ्गरसिंहसे कर वसूल कर दिल्लीको वापिस आये थे। पीछे १४३२ ई० तक उन्होंने कर न दिया। और तब सुलतान महमूद बहुत बिगड़े और स्वयं बहुत सी सेनाओंको साथ ले ग्वालियर पर धावा मारा। जब डुङ्गरसिंहने उपायका रास्ता न देखा, तब उन्होंने अपनी राजधानीको सम्राट्‌की क्रोधाग्निसे बचनेके लिए मालवके अधिकृत नरवर दुर्गको जा घेरा। सम्राट्‌की सेना ग्वालियरको छोड़ नरवरदुर्गकी रक्षाके लिए चल पड़ी। डुङ्गरसिंह नरवर दुर्गमें परास्त हुए। वे निराश हो कर ग्वालियर आये और सम्राट्‌की सेना विजयी होकर दिल्लीको वापिस चली गई। ग्वालियर कुशलसे बच गया। डुङ्गरसिंहके दीर्घ राजत्वकालमें ही ग्वालियरके पार्वतीय भास्करकर्मोंका सूत्रपात हुआ। उस समय इनकी क्षमता उत्तर-भारतमें बहुत प्रसिद्ध थी। समय समय पर दिल्ली, जौनपुर और मालवके मुसलमान राजगण ग्वालियरसे सहायता लेते थे।

डुङ्गरसिंहके बाद उनके लड़के कीर्त्तिसिंह राजा हुए। इन्होंके समयमें पार्वतीय गुहामन्दिरका काम समाप्त हुआ। ये पहले जौनपुरके साथ मिल कर दिल्लीके प्रति विरुद्धाचरण करते थे। पर इनके लड़के कीर्त्तिराय और पृथ्वीरायने दिल्लीका पक्ष अवलम्बन किया था। बहलोल लोदी और जौनपुरके राजा महम्मद शर्कीके साथ जो युद्ध हुआ, उसमें पृथ्वीराय फते खाँ हाजीके हाथसे मारे गये। पीछे कीर्त्तिरायने फते खाँको परास्त कर उसे कैद कर लिया और सिर काट कर बहलोलको उपहारमें भेज दिया। १४६५ ई०में जौनपुर-पति हुसैन शर्कीने एक वृहत् सेनाको साथ ले ग्वालियर दखल किया। कीर्त्तिराय सन्धि करके कर देनेको राजी हुए और जौनपुरका पक्ष ग्रहण किया। जौनपुरपतिकी माताके मरने पर कीर्तिरायके पुत्र कल्याणमल्ल जौनपुरमें मातमीयताको रक्षा करने आये थे। १४७८ ई०में बहलोल राबिरी नामक स्थानमें हुसैन शर्कीको सम्पूर्ण रूपसे परास्त कर ये ग्वालियर पहुंचे। कीर्त्तिसिंहने तुरन्त ही लाखों रुपये, तम्बू, घोड़े, ऊँट आदि भेंट दे कर उनकी अधीनता स्वीकार कर ली और बाद उनके साथ काल्पी पर चढ़ाई करनेके लिए चल दिये। १४७९ ई०में कीर्त्तिसिंहकी मृत्यु हुई। पीछे कल्याणमल्ल राजा हुए। इनके थोड़े राजत्वकालमें कोई उल्लेखयोग्य घटना न हुई। १४८६ ई०में कल्याणमल्लके पुत्र मानसिंह राजा हुए। ये सिंहासन पर बैठते न बैठते बहलोल लोदीसे आक्रान्त हुए। पीछे उन्होंने ८० लाख रुपये दे कर उनसे छुटकारा पाया। १४८९ ई०में बहलोलकी मृत्यु होने पर सिकन्दर लोदीने सम्राट् हो कर ग्वालियरराज मानसिंहको पोशाक आदि भेंटमें दीं। मानसिंहने भी अपने भतीजेके साथ एक हजार सेना और उपहार द्रव्यादि भेज कर सम्राट्‌की संवर्द्धना की। १५०१ ई०में नेहाल नामक एक दूत दिल्लीको भेजा गया।

सम्राट्‌ने जब उससे ग्वालियरका समाचार पूछा, तब उसने बहुत अमधुरतासे उत्तर दिया। इस पर वह उसी समय दरबारसे निकाल बाहर किया गया और सिकन्दरने स्वयं ग्वालियरके विरुद्ध यात्रा की। मानसिंहने सैयद, बाबर खाँ और रायगणेश नामक तीन प्रधान व्यक्तियोंको सम्राट्‌के हाथ सौंप, अपने लड़केको उनके पास उपहारके साथ भेजा। इसी समयसे युद्ध बन्द हो गया, किन्तु १५०५ ई०में सिकन्दरने पुनः ग्वालियर पर चढ़ाई कर दी। इस बार देशके मनुष्य भी उनके विरुद्ध हो गये। वे हिन्दू लोगोंके हाथमें पड़ कर भूखसे कातर हो लौट जानेको बाध्य हुए। अन्तमें शत्रुके भयसे उन्हें एक गुप्त स्थानमें छिपना पड़ा और वहाँसे किसी प्रकार भाग कर प्राण बचाया। उनकी सारी सेना नष्ट हो गई। सिकन्दर जब ग्वालियर दुर्ग लेनेमें हताश हो गये तब दूसरे वर्ष उन्होंने ग्वालियरके अधीन हिम्मतगढ़को ही जीत कर सन्तोष किया। १५१० ई० में ग्वालियरको तहस-नहस कर डालनेकी इच्छासे उन्होंने दूर दूर देशसे सामन्तगण निमन्त्रण किया। इसी बीच सिकन्दरकी मृत्यु हो गई। इब्राहिम लोदी सम्राट् हो कर उनके विद्रोही भाई जलालखाँको आश्रय देनेके अपराधमें मानसिंहके प्रति बहुत क्रोधित हुए। तदनुसार ३० हजार अश्वारोही और ३ सौ हाथी अधीन हुमायूँ नामक सेनापतिके अधीन ग्वालियरके विरुद्ध भेजे गये। पश्चात् आजमके और भी सात सेनापति अधीनसे पृष्ठावलम्बन करनेमें नियुक्त हुए। इस युद्धमें ग्वालियरका दुर्ग हाथ आ गया और युद्धके थोड़े दिनोंके बाद मानसिंह इस लोकसे चल बसे। राजा मानसिंह बहुत साहसी वीरपुरुष थे, शत्रु-मित्र दोनोंसे एक ही तरह सम्मानित होते थे। कभी भी किसीके प्रति इन्होंने अत्याचार न किया। निजामत उल्ला नामक एक ऐतिहासिक उनको यहाँ तक कह गये हैं कि हिन्दू रहने पर भी मुसलमानोंके प्रति कभी बुरी निगाह न डाली, बाहरसे तो हिन्दू-भाव रखता था, पर भीतर मुसलमानी भाव अधिकतर भरा था। इन्होंने ही ग्वालियरको 'मोती झील' बनवाई। तोमरवंश और शिल्पविद्यामें जितनी कीर्ति है वे भी राजा मानसिंहकी ही कीर्त्ति है। स्थापत्यविद्यामें, भास्करशिल्पमें और सङ्गीतविद्यामें इनका बड़ा प्रेम था। उनका प्रासाद और उनकी बनाई मनोताल भी इसका निदर्शन है। ये ही ध्रुपदी नामक गीतरागिनीके प्रतिष्ठाता थे। इन्होंने अपनी गुर्जरीरमणियोंके मनोरञ्जनके लिए इस नव सुरका नामकरण किया। उनसे ही गुर्जरीरागिनीके बहुलगुर्जरी, मालगुर्जरी, मङ्गलगुर्जरी और सिंहलगुर्जरी ये चार विभाग कल्पित हुए हैं। इनके दो सौ गायिकाओंमेंसे अधिकांश ही थी तथा कम गाती थी। राजकार्यमें भी वे खूब विचक्षण थे जिसकी तारीफ मुसलमान कर गये हैं।

इनके बाद इनके लड़के विक्रमादित्यने कुछ दिनोंमें राज्य काम किया। इनके समयमें अधीन हुमायूँ आदिल गढ़का तोरण ढहा कर उस पर अधिकार कर बैठा। यही ग्वालियरका पहला द्वार था। दूसरे और तीसरे तोरणमें घनघोर युद्ध हुआ, अन्तमें वे भी मुसलमानोंके हाथ लगी। लक्ष्मणपुर नामक चौथे तोरण पर अधिकार करते समय दिल्लीके एक प्रधान सेनापति ताजनिजामकी मृत्यु हो गई। जब अन्तिम तोरण हतियापुर पर अधिकार करने पाये, तब राजा विक्रमने अपमानित तथा क्षुद्र आश्रय होनेके भयसे आत्मसमर्पण किया। राजा आगरा लाये गये। वहाँ सम्राट्‌ने उन्हें शमसाबाद प्रदेश जागीरमें दिया। ग्वालियरका तोमर या तोमरवंश इसी प्रकार ध्वंस हो गया। मुगलके साथ पानीपतकी लड़ाईमें १५२६ ई०को इब्राहिम लोदीकी तरफसे लड़ते हुए राजा विक्रम मारे गये।

बाबर पानीपतकी लड़ाईमें जयलाभ कर आप ही दिल्लीके सम्राट् बन बैठे और अपने पुत्र हुमायूँको ग्वालियर भेज दिया। राजा विक्रमके परिवारने उन्हें बहुतसे हीरा, मणिमुक्ता उपहारमें दिये। इनमेंसे एक हीरा बहुत बड़ा था, जिसका वजन फिरिस्ताने ८ मिस्काल २२४ रत्ती बतलाया है। ये पारस्यिक और टाभार्निअर इन दोनों हीरेको नामीको कोहिनूर कह कर वर्णन कर गये हैं। ये पहले सम्राट् अलाउद्दीन खिलजीके हाथ लगी थीं।

१५२६ ई०के अन्तमें राजा मङ्गलराय नामक तोमर

वंशीय मीरने जब ग्वालियरके अफगान शासनकर्त्ता तितर खाँको बहुत तंग किया, तब बाबरने रहीमदाद नामक एक सेनापतिको उनके विरुद्ध भेजा। रहीमके आने पर तितर खाँका मन बदल गया और उन्होंने रहीमको दुर्गमें प्रवेश न होने दिया। किन्तु महम्मद गाउस नामक एक व्यक्तिके कौशलसे रहीमदादने दुर्ग पर अधिकार कर ही लिया। १५२७ ई०में राजा मङ्गलरायने (मङ्गलदेव) ग्वालियरको अवरोध किया। ये कीर्त्तिसिंहके छोटे लड़के माने जाते थे। तोमरगढ़के अन्तर्गत धुन्धारो, अस्वा आदि १२० ग्रामोंके ये जमींदार थे। इनकी वंशावली आज भी उक्त ग्रामोंमें है। ग्वालियरके अवरोधमें वे हतकार्य न हुए।

सम्राट् हुमायुं १५४२ ई०में ग्वालियरके दुर्गमें रहते थे। इस समय राजा विक्रमके पुत्र रामसहायने ग्वालियरके दुर्गको अपने अधिकारमें लानेके लिये उनसे प्रार्थना की, किन्तु व्यर्थ हुई। इस पर वे बहुत दुःखित हुए और शेरशाहके साथ मिल गये। बाद इन्होंने शेरशाहके सेनापति सुजा खाँके साथ युद्धमें जा कर मालव फतह किया।

फिरिस्ता कहते हैं—१५५६ ई०में सम्राट् अकबरके प्रधान मन्त्री बैराम खाँने ग्वालियरके शासनकर्त्ता सुहेल खाँके विरुद्ध सैन्य भेजनेका उद्योग किया। सुहेल खाँने यह सम्वाद पाकर उक्त रामसहायको लिख भेजा कि "आपके पूर्वपुरुष ग्वालियरके राजा थे। कालक्रमसे यह अभी मेरे हाथ है। सम्प्रति मुगल बादशाह चढ़ाई करने आ रहे हैं। हममें उतनी शक्ति नहीं कि उन्हें रोकें। आप यदि मुझे कुछ अर्थ प्रदान करें, तो मैं अपने हाथसे ग्वालियरराज्य दे सकता हूं।" यह सुनकर रामसहाय ग्वालियरको चल पड़े; किन्तु एकशाल खाँ नामक ग्वालियरके एक निकटवर्त्ती जमींदारने सैन्य संग्रह कर रास्तेमें ही रामसहायको परास्त किया। रामसहाय परास्त होकर मीरके राणाके राज्यमें भाग गये। फजल अली नामक एक ऐतिहासिकका कहना है, कि शेरशाहके पुत्रके मरने पर ग्वालियर बहबल नामक एक क्रीतदासके हाथ लगा। सम्राट् अकबरके समयमें रामसहायने राजपूतोंकी सहायतासे ग्वालियर पर चढ़ाई कर दी। मुगल-सेनापति काबा खाँ ग्वालियरकी रक्षाके लिये भेजे गये। रामसहायके साथ काबा खाँका युद्ध हुआ। तीन दीन तक युद्ध होते रहनेके बाद काबा खाँकी ही जीत हुई। अकबर जब चित्तौरमें घेरा डाले हुए थे (१५६८ ई०, तब उस युद्धमें ग्वालियरराज शालिवाहनको (रामसहायके पुत्र) रक्षा मिली थी। शालिवाहन किसी शिशोदीय राजकुमारीका पाणिग्रहण कर राणाके पास ही रहते थे। ग्वालियर अकबरके अधीन होने पर भी शालिवाहन राजपूत-राजसभामें ग्वालियरके राजा कह कर सम्मानित होते थे।

पीछे रोहिताश्वकी खोदितलिपिसे जाना जाता है, कि शालिवाहनके श्यामसहाय और मित्रसेन नामक दो पुत्र थे। ये दोनों कालक्रमसे अकबरके अधीन काम करते रहे। १६३१ ई०में श्यामसहायकी मृत्यु हुई। मित्रसेन मुगलके अधीन ग्वालियर-दुर्गके अध्यक्ष हुए। इनके सिवा मित्रसेनका और हाल मालूम नहीं। श्यामसहायके वंशधर तोमरगढ़की जमींदारी और नाममात्र "ग्वालियर-राज" की उपाधि लेकर सन्तुष्ट थे। श्यामसहायके दो पुत्र थे—संग्रामसिंह और नारायणदास। संग्रामको १६७० ई०में 'ग्वालियरराज'की उपाधि मिली और उनके पुत्र राजा कृष्णसिंहकी १७१० ई०में मृत्यु हुई। कृष्णसिंहके पुत्र विजयसिंह और हरिसिंहने उदयपुरमें आश्रय लिया। विजयसिंहका निःसन्तान अवस्थामें १७८१ ई०को उदयपुरमें देहान्त हुआ। हरिसिंहके वंशधर अब भी उदयपुरमें हैं। इनकी एक दूसरी शाखा आज भी तोमरगढ़की जमींदारी भोग करती है।

तोमरग्रह (सं० पु०) तोमरं गृह्णाति ग्रह-अच्। तोमरास्त्रग्राही, वह योद्धा जो तोमर अस्त्र ले कर लड़ता हो।

तोमरधर (सं० पु०) धरतीति धरः धृ-अच् तोमरस्य धरः। १ अग्नि, आग। २ तोमरधारी योद्धा।

तोमराण (सं० पु०) काश्मीरके एक राजाका नाम। ये लक्षिय राजाके पुत्र थे। (राजतर० ५। २३७)

तोमरिका (सं० स्त्री०) तोमर संज्ञायां कन् स्त्रियां टाप् अतइत्वं। तुवरिका, गोपीचन्दन।

तोय (सं॰ क्ली॰) तु-विच् ततो पूर्व्वे धाति या-क वा तयति-हुं विसर्गेण तु यत् निपातनात् साधुः । १ जल, पानी । २ पूर्व्वाषाढ़ा नक्षत्र । ३ मन्मसागरमें चौथा स्थान ।

तोयकर्म (सं॰ क्ली॰) तोयेन कर्म । तर्पण ।

तोयकाम (सं॰ पु॰) तोयं जलं कामयते कम-अण् । १ परिव्याध वृक्ष, एक प्रकारका बेंत जो जलके समीप उत्पन्न होता है, जलबेंत । (त्रि॰) २ जलाभिलाषुक, जो जल चाहता हो ।

तोयकुम्भ (सं॰ पु॰) तोयस्य कुम्भ इव । सेंवार, सिवार ।

तोयकृच्छ्र (सं॰ क्ली॰) तोयेन तोयमात्रपानेन कृच्छ्रं व्रतं ॰ । जलमात्र पानरूप व्रतविशेष, एक प्रकारका व्रत जिसमें जलके सिवा और कुछ आहार ग्रहण नहीं किया जाता । यह व्रत एक महीने तक करना होता है ।

तोयक्रीड़ा (सं॰ स्त्री॰) तोयस्य क्रीड़ा ६-तत् । जल-क्रीड़ा ।

तोयचर (सं॰ त्रि॰) तोये जले चरति चर अच् । जलचर ।

तोयज (सं॰ त्रि॰) तोये जायते जन-ड । जलज, जो जलसे उत्पन्न होता हो ।

तोयडिम्ब (सं॰ पु॰) तोयस्य डिम्बइव । मेघोपल, ओला ।

तोयद (सं॰ पु॰) तोयं ददाति दा क । १ मेघ, बादल । २ मुस्तक, नागरमोथा । (क्ली॰) ३ घृत, घी । (त्रि॰) ४ विधिपूर्व्वक जलदाता, जो विधिपूर्व्वक जल देता हो । जलदान करनेसे महत्फल होता है । जलदान करना मानो प्राणदान करना है । प्राणदानसे अधिक और कुछ नहीं है, किन्तु जलके बिना अन्नादि भी व्यर्थ जाते हैं इसीसे जलदान को सबसे श्रेष्ठ माना गया है । जलदाता सब प्रकारकी कामना और कीर्त्ति लाभ कर अक्षयलोकोंको प्राप्त होते हैं और उनके सब पाप नष्ट होते हैं । (भारत शान्तिपर्व्व) ।

"तोयदो मनुजव्याघ्र ! स्वर्गं गत्वा महाद्युते !
अक्षयान् समवाप्नोति लोकानित्यब्रवीत् प्रभुः ॥"

(भारत शान्तिप॰)

तोयदागम (सं॰ पु॰) तोयदस्य आगमः ६-तत् । मेघा-गम, वर्षाऋतु, बरसात ।

तोयधर (सं॰ पु॰) धरतीति धरः धृ-अच् तोयस्य धरः । १ मेघ, बादल । २ मुस्तक, मोथा । ३ सुनिषण्ण शाक, एक प्रकारका साग ।

तोयधार (सं॰ पु॰) तोयानां धारा यत्र । १ मेघ, बादल । २ मुस्तक, मोथा । वारि धार्य्यं यत्र तोयस्य धारा । ३ जलप्रवाह ।

तोयधारा (सं॰ स्त्री॰) जलसन्तति, जलकी धारा ।

तोयधि (सं॰ पु॰) तोयानि धीयन्तेऽत्र धा-कि । समुद्र, सागर ।

तोयधिप्रिय (सं॰ क्ली॰) प्रीणाति प्री-क तोयधि प्रियो यस्य । लवङ्ग, लौंग ।

तोयनिधि (सं॰ पु॰) तोयं निधीयतेऽस्मिन् तोय-नि-धा कि । समुद्र ।

तोयनीवी (सं॰ स्त्री॰) तोयं समुद्रोदकं नीवीव यस्याः बहुव्रीहौ कप् । पृथ्वी ।

तोयपर्णी (सं॰ स्त्री॰) १ क्षुपविशेष एक प्रकारका साग । २ कारवेल्ल लता करेला ।

तोयपाषाणजमल (सं॰ क्ली॰) कपूर कपड़ा ।

तोयपिप्पली (सं॰ स्त्री॰) जलपिप्पली ।

तोयपुष्पी (सं॰ स्त्री॰) तोयेन बहुजलदानेन पुष्पाण्य-स्याः । पाटलावृक्ष, पाडर ।

तोयप्रसा (सं॰ स्त्री॰) तोयपुष्पी देखो ।

तोयप्रसादन (सं॰ क्ली॰) प्रसादयति प्र-सद-णिच् ल्युट् तोयस्य प्रसादनं । कतकफल, निर्मली । यह फल जलमें घिस देनेसे जल परिष्कार हो जाता है ।

तोयप्रसादनफल (सं॰ क्ली॰) तोयप्रसादनाय फलं । कतकफल निर्मली ।

तोयफला (सं॰ स्त्री॰) तोयप्रधानं फलं यस्याः । १ फल, लताविशेष तरबूजको बेल । २ ककड़ी, ककड़ी ।

तोयमल्लरी (सं॰ स्त्री॰) जलाधाराभांश एक प्रकारकी औषध ।

तोयमल (सं॰ क्ली॰) समुद्रका फेन ।

तोयमुच् (सं॰ पु॰) तोयं मुञ्चति मुच क्विप् । १ जल मुच, मेघ, बादल । २ मुस्तक, मोथा ।

तोययन्त्र (सं॰ क्ली॰) १ कालज्ञानार्थ घटी यन्त्रविशेष कालसूचक जलघड़ी । जलीयन्त्र देखो । २ जलयन्त्र-भेद, फुवारा ।

"इक दीनी अधीनी करैं बतियां जिनकी कटि छीनी छलामैं करैं ।
इक दोष धरैं अफसोस भरैं इक रोसके नैन ललामैं करैं ॥
कहि तोष जुटी जुग जंघनसों उर दे भुज स्यामैं सलामैं करैं ।
निज अम्बर माँग कदम्ब तरे ब्रज बामैं कलामैं मुलामैं करैं
तोतनमैं रविको प्रतिविम्ब परैं किरनैं सो घनी सरसाती ।
भीतर हूं रहि जात नहीं अँखियाँ चकचौंध ह्वै जात है राती ॥
बैठि रहौ बलि कोठरिमैं कहि तोष करौं विनती बहुभाँती ।
सारसी नैन लै आरसी सो अँग काम कहा कढ़ि घामैं जाती ॥

तोपयितव्य (सं० त्रि०) तुष-णिच्-तव्य । तोषणीय, खुश करने योग्य।

तोषल (सं० पु०) १ कंसके एक असुर मल्लका नाम। धनुर्यज्ञमें श्रीकृष्णने इसे मार डाला था। (क्ली०) तोषं लुनाति लू बाहुलकात् ड। २ अस्त्रभेद, मूसल।

तोषाम—पञ्जावके अन्तर्गत हिस्सार जिलेका एक ग्राम। यह हांसी नगरसे २८ मील दक्षिणमें अवस्थित है। यहां बालुकामय समतल क्षेत्रसे ८०० फुट ऊँचे एक पहाड़ पर बौद्ध और वैष्णवोंके यत्नसे कई एक उत्कीर्ण शिला-लेख है। प्रवाद है, कि पतियालेके अमरसिंहने तुपाम पर्वत पर एक दुर्ग निर्माण किया था। किन्तु दुर्ग न देखनेसे मालूम होता है, कि यह दुर्ग अमरसिंहसे पहले बनाया गया था। अमरसिंहने इसका केवल संस्कारकिया है।

कोई कोई अनुमान करते हैं, कि यहां तुपार जातिका एक सङ्घाराम था जिसे तुपाराराम कहते थे। उसोके अपभ्रंशसे तुपाम या तोपाम नाम हुआ है।

तोषित (सं० त्रि०) तुप-णिच् क्त। तृप्त, तुष्ट।

तोषिन् (सं० त्रि०) तुष्यतीति तुष-णिनि। तुष्टकारक, जो तृप्त करता हो।

तोष्य (सं० त्रि०) तुष-ण्यत्। तोषणीय, तुष्ट करने योग्य।

तोहफगी (फा० स्त्री०) भलाई, अच्छापन।

तोहफा (अ० पु०) उपायन, उपहार, भेंट।

तोहमत (अ० स्त्री०) मिथ्या अभियोग, झूठा कलङ्क।

तोहमती (अ० वि०) झूठा अभियोग लगानेवाला।

तोहान—१ पञ्जावके हिस्सार जिलेके अन्तर्गत फतहाबाद तहसीलकी एक उप-तहसील। इसका भूपरिमाण ४१० वर्गमील है। इसमें ११७ ग्राम लगते हैं। राजस्व लगभग ८६०००) रु० का है।

२ उक्त उप-तहसीलका एक ग्राम। यह अक्षा० २९° ४२' उ० और देशा० ७५°५४' पू० हिस्सार शहरसे ४० मील उत्तरमें अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ५८२१ है। किसी समय इसकी गिनती अच्छे शहरोंमें होती थी। कहते हैं, कि दिल्लीके तोमर राजा अनङ्गपालने इसे बसाया था और चौहान राजाने इसे तहस नहस कर डाला। १३९८ ई०में इसी स्थान पर तैमूरसे जाट लोग परास्त हुए थे।

तौंकना (हिं० क्रि०) तौंसना देखो।

तौंस (हिं० स्त्री) धूपसे उत्पन्न प्यास जो किसी भांति न बुझे।

तौंसना (हिं० क्रि०) गरमीके कारण सन्तप्त होना या झुलस जाना।

तौंसा (हिं० पु०) अधिक ताप, कड़ी गरमी।

तौक (अ० पु०) १ एक प्रकारका गहना जो हँसुलीके आकारका होता और गलेमें पहना जाता है। यह पटरीकी तरह कुछ चौड़ा होता और इसके नीचे घुंघरू आदि लगे होते हैं। २ इसी आकारको हत्ताकार पटरी या मेंडरा। इसको तौल हँसुलीसे बहुत भारी होती है। यह अपराधी या पागलके गलेमें पहनाया जाता है जिससे कि वह अपने स्थानसे हिल न सके। ३ पक्षियों आदिके गलेमें इसी आकारका प्राकृतिक चिह्न। ४ चपरास, पट्टा। ५ कोई गोल घेरा या पदार्थ।

तौक्षिक (सं० पु०) धनु राशि।

तौग्र (सं० पु०) तुग्रके पुत्र।

तौचा (हिं० पु०) सिर पर पहननेका एक प्रकारका गहना।

तौजा (अ० पु०) १ विवाहादिमें खर्च करनेके लिये खेतिहारोंको पेशगीमें दिये जानेका द्रव्य, बियाहो। (वि०) २ हाथउधार। दस्तगर्दी।

तौजी (अ० स्त्री०) वह हिसाब जिसमें प्रजाका नाम, जमीनकी तायदाद और जमाबन्दी आदि लिखी रहती है।

तौतातिक (सं० क्ली०) तुतातभट्टेन निवृत्तं तुतात-

ग्रन्थ । सुतातमतस्य दर्शनयाख्य,' कौमारिल शास्त्र ।

तौतातित—सुप्रसिद्ध कुमारिलभट्टका नामान्तर । माधवाचार्यने सर्वदर्शनसंग्रहमें इसी नामसे कुमारिलके वचन उद्धृत किये हैं । इसके पहले कुमारिलभट्ट शब्दमें कुमारिलके धर्ममतकी विस्तृत आलोचना की गई है । उस शब्दमें लिखा है, कि कुमारिल पांचवीं शताब्दीमें प्रादुर्भूत हुए थे, किन्तु आजकलके प्रमाणसे उनका ८ वीं शताब्दीके बहुत परवर्ती होना जान पड़ता है ।

चीन-परिव्राजक इत्सिङ्ग ७ वीं शताब्दीमें भारतवर्ष आये थे। उनके मतानुसार वाक्यप्रदीपके रचयिता भर्तृहरिने ६५० ई०में अपनी मानवलीला समाप्त की । कुमारिल भट्टरचित मीमांसावार्तिकमें वाक्यप्रदीपसे अनेक वचनोद्धार और उसकी समालोचना कर गये हैं ।

प्रसिद्ध दि० जैनाचार्य समन्तभद्र स्वामीने आप्तमीमांसामें अर्हत्की सर्वज्ञता प्रतिपादन की है । जैन ग्रन्थकार अकलङ्कदेवने अष्टशती नामक आप्तमीमांसाकी टीकामें लिखा है, कि अर्हत्की किसी इन्द्रियज्ञानकी आवश्यकता नहीं है । उसीका प्रतिवाद कुमारिलने किया है । यहां समन्तभद्रका मूल और अकलङ्ककी टीका उद्धृत कर दिखाते हैं—

"सूक्ष्मान्तरितदूरार्थाः प्रत्यक्षाः कस्यचिद्यथा ।"

(स्वामी समन्तभद्राचार्य)

अकलङ्कदेवने अपनी टीकामें 'अन्तरित' अर्थात् 'काल विप्रकर्षि' 'अतीतादि' लिखा है । कुमारिलने समन्तभद्राचार्यका मूल और अकलङ्कदेवकी टीका उद्धृत कर इस प्रकार प्रतिवाद किया है—

"एवं यैः केवलज्ञानमिन्द्रियाद्यनपेक्षिणः ।
सूक्ष्मातीतादिविषयं जीवस्य परिकल्पितम् ॥
न ते तदागमात् सिद्धेत् न तेनागमो विना ।
दृष्टान्तोऽपि न तद्योऽन्यो नृषु कश्चित् प्रवर्तते ॥"

(तन्त्रवार्तिक)

फिर दि० जैनग्रन्थकार विद्यानन्दिने श्लोकवार्तिकमें कुमारिल भट्टका मत उद्धृत कर लिखा है—

"एवं यद्दूषणमपि भट्टश्च
नैवं केवलज्ञानमिन्द्रियाद्यनपेक्षिणः ।
सूक्ष्मातीतादिविषयं सूक्ष्मजीवस्य तैरदः ॥"

कुमारिलके तन्त्रवार्तिकमें कई जगह इसी प्रकार अकलङ्ककी अष्टशतीकी आलोचना और उसका प्रतिवाद देखा पड़ता है । दूसरी तरफ विद्यानन्दि भी अकलङ्कदेवका मतसमर्थन करते हुए निज अष्टसहस्री ग्रन्थमें कई जगह कुमारिलका तीव्र प्रतिवाद कर गये हैं । इस प्रकार अकलङ्कदेव और विद्यानन्दिके समयका निरूपण हो जानेसे ही हम निःसन्देह कुमारिलका प्रकृत समय स्थिर कर सकते हैं ।

८४१ शकमें पम्प कर्णाटीभाषामें लिखित आदिपुराणमें तथा ८८१ शकमें सोमदेवने अपने यशस्तिलक चम्पूमें अकलङ्कदेवको श्रेष्ठ प्रमाणशास्त्रवित् माना है । फिर जिनसेनाचार्यने ७६० शकको जैन-आदिपुराणमें अकलङ्कदेवका नामोल्लेख किया है । जिनसेनाचार्य राष्ट्रकूटराज १म अमोघवर्षके गुरु थे । उन्होंने आदिपुराणमें एक जगह प्रभाचन्द्रके चन्द्रोदय नामक न्याय-ग्रन्थका उल्लेख किया है । प्रभाचन्द्रने अपने न्यायकुमुदचन्द्रोदयमें और विद्यानन्दिने अष्टसहस्री ग्रन्थमें अपनेको अकलङ्कदेवका शिष्य बतलाया है । इधर प्रभाचन्द्रने बाणभट्टकी कादम्बरी और भर्तृहरिका वाक्यप्रदीप उद्धृत किया है फिर दि० जैनग्रन्थकार ब्रह्मनेमिदत्तने लिखा है अकलङ्कदेव राष्ट्रकूटराज (१म) कृष्णराजके समसामयिक थे । गुजरातसे आविष्कृत राष्ट्रकूटराज दन्तिदुर्गके ताम्रशासनसे जाना जाता है कि ६७५ शकमें ये राज्य करते थे । पीछे उनके चाचा कृष्णराज उत्तराधिकारी हुए । जिनसेनाचार्यने उत्तरपुराणमें लिखा है, कि ७०५ शकमें कृष्णराजके पुत्र वल्लभराजको राजगद्दी मिली ।

पहले ही लिखा जा चुका है, कि इत्सिङ्गके मतानुसार ६५० ई०में वाक्यप्रदीपके रचयिता भर्तृहरिकी मृत्यु हुई । कुमारिलने वाक्यप्रदीपका श्लोक उद्धृत किया है । अकलङ्कदेवके शिष्य प्रभाचन्द्र और विद्यानन्दि दोनों ही कुमारिलके तन्त्रवार्तिककी आलोचना कर गये हैं । फिर कुमारिलने भी अकलङ्कदेवकी अष्टशतीसे अनेक वचन उद्धृत किये हैं । किन्तु अकलङ्कदेवने कहीं भी कुमारिलके मतका प्रतिवाद नहीं किया । इस हिसाबसे कुमारिल धर्मकीर्ति और वाक्यप्रदीपके रचयिता भर्तृहरिसे परवर्ती, अकलङ्कदेवके समसामयिक और उनसे

शिष्य विद्यानन्दि तथा प्रभाचन्द्रसे कुछ पूर्ववर्त्ती होते हैं। अकलङ्कदेव राष्ट्रकूटके राजा कृष्णराजके समयमें (६७५ शकके बाद और ७०५ शकके पहले) विद्यमान थे। सुतरां कुमारिलभट्टने भी उसी समय आविर्भूत हो कर वैदिक धर्मका प्रचार किया था।

तौतिक (सं० क्लो०) १मोती। २ शुक्ति, मोतीकी सीप।

तौदी (सं० स्त्री०) विषनाशक वृक्षभेद, हतकुमारी।

तौन (हिं० स्त्री०) गाय दुहते समय उसके बछड़ेको उसीके अगले पैरमें बांधनेकी रस्सी।

तौनो (हिं० स्त्री०) १ रोटी सेंकनेका छोटा तवा तई तवी। तौन देखो।

तौवा (हिं० स्त्री०) तोबरा देखो।

तौम्बुरविन् (सं० पु०) तुम्बुरुणा यत्प्रोक्तं तदधीयते इनि। तुम्बुरुप्रोक्त शाखाध्यायी, तुम्बुरु प्रोक्त शाखाका अध्ययन करनेवाला।

तौर (सं० क्लो०) यागभेद, एक प्रकारका यज्ञ।

तौर (अ० पु०) १ चरित्र, चालचलन, चलढाल। २ अवस्था, दशा, हालत। ३ तरीका, ढंग। ४ प्रकार, भांति, तरह।

तौरा (हिं० पु०) वह रस्सी जिससे मथानी मथी जाती है, नेती।

तौरयान (सं० क्लो०) तूर्णं यानमस्य पृषोदरादित्वात् साधुः। तूर्णगमनयुक्त, बहुत तेजीसे चलनेवाला।

तौरश्रवस (सं० क्लो०) तौरश्रवसा अङ्गिरसा दृष्टं साम-अण्। सामभेद, एक प्रकारका साम।

तौरात (हिं० पु०) तौरेत देखो।

तौरायणिक (सं० त्रि०) तुरायणं यज्ञं वर्त्तयति तुरायण-ठञ्। तुरायणयज्ञकारी, जो तुरायण यज्ञ करता हो।

तौरेत (अ० पु०) यहूदियोंका प्रधान धर्मग्रन्थ। यह हजरत मूसा पर प्रगट हुआ था। इसमें सृष्टि और आदमकी उत्पत्ति आदि विषय लिखे गये हैं।

तौर्य (सं० क्लो०) तूर्ये मुरजादौ भवं तूर्य-अण्। तूर्य-वाद्य, ढोल मंजीरा आदि बाजे। २ ढोल मंजीरा आदि बजानेकी क्रिया।

तौर्यत्रिक (सं० क्लो०) त्रयोंऽशाः यस्य त्रिमंख्यायां कन् तौर्योपलक्षितं त्रिकं। समुदित नृत्य गीत और वाद्य, नाचना, गाना और बाजे बजाना आदि काम। मनुने इसे कामज व्यसन कहा है और त्याज्य बतलाया है। (मनु० ७।४७)

विष्णुगृह या देवालयमें नाच, गान और बाजे बजानेसे पुण्य होता है और अन्तमें विष्णुलोककी प्राप्ति होती है। (वराहपुरा०)

तौल (सं० क्लो०) तुला एव स्वार्थे अण्। स्वार्थिकाः प्रत्ययाः क्वचित् लिङ्गवचनानि अतिवर्त्तन्ते इत्युक्तेः देवतादिवत् क्लीवता। १ तुला, तराजू। (पु०) २ तुलाराशि।

तौल (हिं० स्त्री०) १ किसी पदार्थके गुरुत्वका परिमाण, वजन। २ तौलनेकी क्रिया या भाव।

तौलकर (सं० त्रि०) तौलं करोति कृ-ट। परिमापक, तौलनेवाला।

तौलना (हिं० क्रि०) १ वजन करना, जोखना। २ साधना, ठीक करना। ३ तारतम्य जानना, मिलान करना। ४ गाड़ीका पहिया औंगना, गाड़ीके पहियेमें तेल देना।

तौलवाई (हिं० स्त्री०) तौलाई देखो।

तौला (हिं० पु०) १ मट्टीका बरतन जिसमें दूध मापा जाता है। २ अनाज तौलनेवाला मनुष्य, बया। ३ तविया। ४ मट्टीका कमोरा। ५ महुएकी शराब।

तौलाई (हिं० स्त्री०) १ तौलनेकी क्रिया या भाव। २ तौलनेके बदलेमें दिये जानेका धन, तौलनेकी मजदूरी।

तौलाना (हिं० क्रि०) तौलनेका काम किसी दूसरेसे कराना।

तौलिक (सं० पु०) तुल्या तुलिकया जीवति तुलि ठक्। १ चित्रकार। २ ब्रह्मवैवर्त्तपुराणोक्त वर्णसंकर जातिभेद। तिली देखो।

तौलिकिक (सं० पु०) तुलिकया जीवति तुलिका-ठक्। चित्रकार। संस्कृत पर्याय—रङ्गाजीव, चित्रकृत्, तौलिक।

नवम भाग सम्पूर्ण।